January to March 2018
E-Jouenal, Volume IV, Issue XXI
U.G.C. Journal No. 64728

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Impact Factor - 5.110 (2017)

Naveen Shodh Sansar

(An International Multidisciplinary Refereed Journal)
(U.G.C. Approved Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, **NEEMUCH** (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, **Email** : nssresearchjournal@gmail.com, **Website** www.nssresearchjournal.com

Index/अनुक्रमणिका

01. Index/ अनुक्रमणिका 02
02. Regional Editor Board / Editorial Advisory Board 13/14
03. Referee Board 15
04. Art movement in Colonial India : Special Reference : "Amrita Sher-Gil' - The most influential women artist of the era (Dr. Kingshuk Mukherjee) 17
05. पूर्वी उत्तर प्रदेश में द्वितीय श्रेणी महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन (डॉ. ओम प्रकाश शर्मा, डॉ. अजय) 21
06. चार्टड एकाउण्टेंट की मुख्य परीक्षा में असफल रहने वाले विद्यार्थियों के मनोवैज्ञानिक व व्यक्तिगत कारकों का अध्ययन (भानुप्रिया सेन, डॉ. सरिता मेनारिया) 24
07. पूर्वी उत्तर प्रदेश में द्वितीय श्रेणी महिला शिक्षकों के नैतिक विकास के प्रभाव का अध्ययन (डॉ. ओम प्रकाश शर्मा, डॉ. अजय) 27
08. बालश्रम एक समस्या एवं उसका निराकरण (डॉ. गरिमा पारीक) 29
09. कृषि क्षेत्र में महिलाओं की भागीदरी (धार जिले के विशेष सन्दर्भ में) (प्रो. राजेश मईड़ा) 32
10. Green Products From Agricultural Waste For Sustainable Environment - Review (Dr. Rashmi Ahuja) 35
11. Qualitative and Quantitative Analysis and Nanotechnology Applications in Water Purification of Drinking Water Samples of Different Localities in Gandhi Nagar Area of Bhopal (Santosh Ambhore) 37
12. ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि तकनीकी में परिवर्तन का अध्ययन(धार जिले के विशेष सन्दर्भ में) (प्रो. राजेश मईड़ा) 40
13. Impact Of Arsenic In Drinking Water On Human Health (Dr. Kanti Pachori) 44
14. भीष्म साहनी का कथा साहित्य : मानवीय त्रासदी का इतिहास (डॉ. अंजली सिंह) 47
15. बिलासपुर जिले के पर्यटन उद्योग का आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास पर प्रभाव का अध्ययन (राकेश कुमार गुप्ता, डॉ. के. के. शर्मा) 49
16. बैगा जनजाति में परंपरागत चिकित्सा पद्धति एक अध्ययन (सीमा सिंह, डॉ. शैलजा दुबे) 56
17. गरीबी उन्मूलन अभियान में शारदा ग्रामीण बैंक का योगदान (गरिमा सिंह) 57
18. पर्यावरण एवं परम्परा एवं सामाजिक आदतें (ऋचा एस. मेहता) 59
19. The Impact Of Yoga On Students Life (Dr. K.G.Pandey, Dhermender) 61
20. ग्रमीण एवं शहरी माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षिकों के शिक्षक दायित्व (डॉ. कृष्ण गोविन्द पाण्डेय, सत्यपाल सिंह) 64
21. Radaition Hazards-Sources, Prevention and Control (Dr. Meena Swamy) 66
22. Socio Political Forces and Indian English Fiction (Dr. Rajkumari Sudhir) 69
23. हिन्दी महिला लेखन-सर्वेक्षण (डॉ. मिथिलेष अग्निहोत्री) 73
24. मध्यप्रदेश आदिवासी वित्त विकास निगम की योजनाओं का हितग्राहियों की आर्थिक स्थित पर प्रभाव (डॉ. रावेन्द्र सिंह पटेल) 72
25. अर्थव्यवस्था में ग्रामीण उद्यमी महिलाओं की सहभागिता (डॉ. मिथिलेष अग्निहोत्री) 76
26. सामाजिक उत्थान में निमाड़ के सन्तों का योगदान (डॉ. मधुसूदन चौबे) 78
27. राजस्थानी नीतिकाव्य का अलंकृति पक्ष - एक विवेचन (सुधा शर्मा) 80
28. निमाड़ में भोंगर्या - मान्यता और वस्तुस्थिति (डॉ. मधुसूदन चौबे) 84
29. मास मीडिया और विज्ञापन यूग (डॉ. पूनम कुमारी) 87
30. निमाड़ के दर्शनीय स्थल (डॉ. मधुसूदन चौबे) 89
31. ग्रामीण विकास - नीति एवं संरचना (सचिन कुमार पाण्डेय) 92
32. निमाड़ में सन्त परम्परा - एक पुनरावलोकन (डॉ. मधुसूदन चौबे) 96
33. बैंकों में नवीन तकनीक एवं लागत नियंत्रण (सचिन दुबे, डॉ. घनश्याम अग्रवाल) 99

34. प्राचीनकालीन निमाड़ (डॉ. मधुसूदन चौबे) 100
35. Consumer Problems And Relevant Legislations (Shalini Sharma, Dr. Manju Dubey) 102
36. Reduction in CO_2 emission by the use of Composite cement Using Mathematical Modelling 106
(Dr. Sapna Shrimali, R.K. Mishra)
37. Consumer Protection Act 1986 & Consumer's Satisfaction (Shalini Sharma, Dr. Manju Dubey) 113
38. बड़वानी जिले में उद्यमिता विकास कार्यक्रम और उद्यमिता विकास केन्द्र मध्यप्रदेश (सेडमैप) 120
(राहुल सूर्यवंशी, डॉ. घनश्याम अग्रवाल)
39. Environmental impact and human health issues from pesticide use: A study (Santosh Ambhore) ... 123
40. Tourism Indsutry In Chhattisgarh (Dr.Sunita Dubey, Dr. Daya Shankar Jagat) 128
41. मध्यकालीन संत एवं भक्त कवि कबीर और सार्वभौमिक मानव मूल्य (डॉ. के. एस. बघेल) 130
42. कृषि उपज मण्ड़ी समिति के जनप्रतिनिधियों की निर्वाचन प्रक्रिया का अध्ययन (बड़वानी जिले के विशेष सन्दर्भ में) ... 133
(सुनीता बेले, डॉ. कान्ता अलावा)
43. Public Distribution System And Food Security In India (Archana Gaur) 135
44. भारत में वस्तु एवं सेवा कर (GST) एक अध्ययन (डॉ. आर. के. चौकसे) 137
45. छिन्दवाड़ा जिले के आदिवासी क्षेत्रों में स्वास्थ्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में परिवर्तन (1991-2011) 140
(ऋतेश कुमार कहार, डॉ. मोहन निमोले)
46. युवाओं का चुनौतिपूर्ण जीवन और नैतिकता की संभावना (डॉ. निशा जैन) 143
47. अगस्त क्रांति में महिलाओं का योगदान (डॉ. प्रेरणा ठाकुर) 146
48. अजयमेरू का जल स्थापत्य (डॉ. बनवारी लाल यादव) 148
49. Study on adsorption of Methylene blue by Activated Carbon derived from Ipomoea Carnea 152
(Dr. Geeta Paryani, Shikha Shrivas)
50. भारतीय संगीत वाद्यों का प्राचीन वर्गीकरण (कंचन सिंह) 156
51. Adsorption studies on the removal of colouring agent phenol red Using Activated carbon 158
as adsorbent (Dr. Geeta Paryani, Shikha Shrivas)
52. A Study On Awareness And Perception Of Integrated Child Development Service (ICDS) 162
Supervisors In Southern Rajasthan (Kusum Sukhwal, Dr. Usha Kothari)
53. मध्यप्रदेश में खाद्यान्न उत्पादन व उत्पादकता का एक अध्ययन (डॉ. भेरूलाल चौरडिया) 166
54. साइबर आतंकवाद एक चुनौती (डॉ. अजय कुमार जैन) 168
55. सार्वजनिक पुस्कालय व समाज में उनकी भूमिका (डॉ. संतोष कापसे) 169
56. पारिवारिक बजट : एक अवलोकन (डॉ. एकता गांगिल) 171
57. Infrastructure Development and Changes of Betterment : Study of People’s opinion of 173
Bhopal City (Geetu Chaudhary, Dr. Mahipal Singh Yadav)
58. Swami Vivekananda's Concept of Human Nature (Akhilesh Mani Tripathi) 179
59. Infrastructure Status of Madhya Pradesh and in Particular Bhopal City 182
(Geetu Chaudhary, Dr. Mahipal Singh Yadav)
60. आर्थिक विकास में बाधक तत्व (इन्दौर के विशेष संदर्भ में) (डॉ. दीपक जैन) 188
61. भारत में महिला सशक्तिकरण हेतु सरकार एवं अन्य संस्थाओं का योगदान(इन्दौर के संदर्भ में) (डॉ. दीपक जैन)...... 190
62. स्वच्छ भारत अभियान में इन्दौर (म.प्र.) का योगदान (डॉ. दीपक जैन) 192
63. माल एवं सेवाकर (जी.एस.टी.) एक व्यावहारिक अध्ययन (डॉ. दीपक जैन) 195
64. स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में स्टेट बैंक समूह और भारतीय महिला बैंक के विलय का अध्ययन (कामरान अहमद खान) 197
65. Urban Cooperative banks in India : Challenges and probable solutions (Dr. Smriti Singh).......... 201
66. साहित्य में भाषा शिक्षण की उपादेयता (डॉ. धीरेन्द्र सिंह) 205
67. मध्यप्रदेश के धार जिले में स्वरोजगार की सम्भावनाएँ और वित्त प्रबन्ध हेतु सरकार द्वारा क्रियान्वित योजनाएँ - 208
एक अध्ययन (डॉ. सुरेन्द्र कुशवाह)
68. अग्रणी बैंकों का आर्थिक विकास में योगदान (डॉ. मोनिका बापट) 212
69. नगरीय मध्यम परिवारों में बालक-बालिकाओं में भेदभाव (डॉ. संगीता बगवैया) 214

70. म.प्र. के आर्थिक विकास में अग्रणी बैंकों की भूमिका (डॉ. मोनिका बापट) 217
71. Effect of International Advertising on Sales (Dr. Hitesh A. Kalyani) 219
72. ग्रामीण अंचलों में लोकोक्तियों का महत्व (डॉ. निरपेन्द्र कुमार सिन्हा) 221
73. Legislative And Judicial Measures To Curb Drug Menace (Dr. Navin Chouhan) 223
74. मादक पदार्थो का व्यसन, अवैध परिवहन एंव वर्तमान कानून व्यवस्था (डॉ. नवीन कुमार चौहान) 224
75. भारतीय परिप्रेक्ष्य में शैक्षिक दूरदर्शन : एक परिदृश्य (डॉ. महेश कुमार मुछाल) 226
76. Multimedia as an Instructional Tool: Opportunities and Challenges 229
(Dr. Mahesh Kumar Muchhal, Kavita Agarwal)
77. महिला अपराध और सशक्तिकरण (डॉ. गोविन्द बाबू) 233
78. जनसंख्या वृद्धि : जनसंख्या शिक्षा एवं विकास (डॉ. महेश कुमार मुछाल) 234
79. आदिवासी क्षेत्रों में महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का क्रियान्वयन 236
(बड़वानी जिले के विशेष संदर्भ में)(प्रो. अरविन्द कुमार सोनी, डॉ. पुरूषोत्तम गौतम)
80. A Comparative Study Of Self Confidence Among Female Kabaddi Players : With Reference 239
To Level Of Participation (Pramod Kumar Mahto, Dr. B. John)
81. Problems Of Women Entrepreneur In India (Mamta Jaisiyan) 241
82. The Effects Of Yogic Practices On Intellectual Development In Urban School Children 243
In Rajasthan (Dr. Ramneek Jain)
83. देश की जीवन्त परम्परा-लोकोत्सव और निमाड़ की लोक संस्कृति (डॉ. इस्माईल अली बेग) 246
84. Freedom Of Speech And Expression In India And Press (Bhola Prasad Shau) 248
85. Law relating to patent right, enforcement and misuse- A critical analyses (Lok Narayan Mishra) 251
86. Priority Sector (Marginalized class) and Position of Banking Advances in Globalized Era 254
(Dr. Shweta Singh)
87. नये प्रकाश की खोज (डॉ. बुद्धरतन राजौरिया) 257
88. जलती हुई अंगारों में चलने का पर्व : मण्डा (रामजय नाईक) 260
89. विकलांग बच्चों में शिक्षण तकनीकी का विकास (सरदार कुमार चौधरी, डॉ. हीरालाल चौधरी) 262
90. भारतीय स्टेट बैंक का कृषि विकास में योगदान : उज्जैन जिले के विशेष सन्दर्भ में (आशाराम चौहान,डॉ. मनोहर जैन) 264
91. डॉ. अम्बेडकर के सामाजिक और राजनीतिक चिन्तन (डॉ. बैद्यनाथ चर्मकार) 266
92. स्वामी विवेकानन्द के विचारों में 'शिक्षा' के सामाजिक परिवर्तन (ममता चौहान) 268
93. जनजातीय समुदाय की प्रकृति और समस्याओं का भौगोलिक अध्ययन (डॉ. राजेन्द्र कुमार साकेत) 270
94. आवर्ती विपरण केन्द्रों का स्थानिक वितरण प्रतिरूप (डिण्डौरी जिले के सन्दर्भ में) (किशोर श्याम) 272
95. महाकवि भवभूति के दर्शन में मानवीय मूल्यों की प्रासंगिकता (डॉ. तुलसीराम साकेत) 274
96. प्राचीन धार्मिक परम्पराओं में प्रतिपादित पर्यावरण संरक्षण (डॉ. दीपक सिंह) 276
97. A study of satisfaction level of Hunar Se Rozgar Tak Trainees after Training with special 279
reference to Udaipur (Prof. Ashok Singh, Om Prakash Meena)
98. छत्तीसगढ़ की साहित्य परम्परा में पं.श्यामलाल चतुर्वेदी जी का अवदान (डॉ. श्रद्धा मेश्राम,त्रिलोकी सिंह क्षत्री) 22
99. Impact of NPA on performance of M.P. State Co-operative Bank Bhopal 284
(Dr. G.C. Gupta,Dr. R.B. Gupta,Sadabati Thakur)
100. मध्यप्रदेश में प्रारम्भिक शिक्षा 'शाला सिद्धि' योजना के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं का अध्ययन 288
(प्रकाशचन्द्र शर्मा, डॉ. भंवरलाल नागदा)
101. सिंहस्थ कुम्भ के आध्यात्मिक मूल्यों की प्रासंगिकता (रीता टेटवाल) 290
102. Phytochemical screening and effect of pH on antimicrobial activity of Tinospora Cardifolia 292
leave extract with reference to some specific bacteria (Nahid Usmani, R.S. Nigam, O.P. Rai)
103. वैश्वीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव (क्रितिका सिंह, रूपेश द्विवेदी) 296
104. मानव एकता के लिए धर्म (देवदास साकेत) 297

105. पर्यटन केन्द्रों के धार्मिक महत्व का ऐतिहासिक अध्ययन (डॉ. मनोरमा सिंह) 301
106. पर्यावरण से मानव का शैक्षिक विकास (डॉ. स्वर्णलता त्रिपाठी) 303
107. 'पशुसंसाधन विकास का भौगोलिक अध्ययन' उज्जैन जिले के सन्दर्भ में (डॉ. सी.एल. खिंची, सीताराम बलवान) 305
108. Husband's Employability Dynamics : Grounds of Shared Household Violence 307
(Dr. Minakshi Kar)
109. भारतीय जीवन बीमा निगम एवं रिलायन्स बीमा निगम के व्यवसाय का तुलनात्मक अध्ययन (खरगोन जिले के संदर्भ में) 311
(शिल्पी गुप्ता, डॉ. सहदेव पाटीदार)
110. प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रो मे भारतीय स्टैट बैंक द्वारा वितरित ऋणों की उपादेयता का मूल्यांकन 315
(जांजगीर चाम्पा जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. अनूप दीक्षित, अभिषेक देवांगन)
111. बाल अधिकारों के संरक्षण में विधियों की भूमिका (राजू देवांगन) 318
112. Cocoon Production In Chhattisgarh State With Particular Reference To Bilaspur District 320
(Bharati Dewangan, Dr. Prabhakar Pandey)
113. Impact of the Silk Route on Ancient India (Dr. Nilesh Sharma) 324
114. A Study on Entrepreneurship and GST (Priyanka Anand, Dr. S.K. Shrivastava) 327
115. The Study Of Determinants Of Ad Performance W.R.T. Online Advertisements 329
(Swati Jain, Dr. Anshu Bhati)
116. भारतीय स्वतंत्रता का उत्तर युग- मुद्राओं की नई चित्रभाषा - एक उपलब्धि (डॉ. सुनील कुमार, डॉ. सचिन सैनी) 334
117. चित्रकला की मौलिक 'शारीरिक भाषा' का कला-विज्ञान रूप-बोध का ही उत्कर्ष (डॉ. सुनील कुमार, डॉ. सचिन सैनी) 337
118. भारत में न्यायिक सक्रियता : एक अवलोकन (डॉ. सुनील कुमार श्रीवास्तव, शिल्पी शर्मा) 339
119. अपराध पीड़ितों के मानव अधिकारों के संरक्षण में न्यायपालिका का योगदान (मधु सिंह) 341
120. Wind Energy Production : A study in India scenario (Dr. Rashmi Arnold, Ramdeo Saket) 343
121. म.प्र. सरकार के बजट घाटों का अध्ययन व विश्लेषण (डॉ. चन्द्रप्रकाश पँवार) 345
122. भारतीय इतिहास में मृण्मूर्तिकला का धार्मिक विवेचना (ईश्वर लाल चौहान) 349
123. म.प्र. सरकार की लोक आय का अध्ययन व विश्लेषण (डॉ. चन्द्रप्रकाश पँवार) 351
124. योग दर्शन : अध्यात्म और विज्ञान (मंजू तिवारी) 359
125. व्याकरणशास्त्र और आचार्य भामह (अंकुर माहेश्वरी) 362
126. Security and privacy in mobile devices: Issues and Solutions 364
(Shaloo Dadheech, Dr. Tarun Shrimali)
127. A Comprehensive study on cloud based e-learning (Deepika Ameta, Dr.Tarun Shrimali) 367
128. Database Management on Clouds through NoSQL (Dr. Neetu Agarwal, Dr. Sanjay Chaudhary) 371
129. Importance of Yoga in Physical Education (Dr. Avinash Verma) 379
130. चर्मकारों का बढ़ता शैक्षिक स्तर राजस्थान के विशेष संदर्भ में (डॉ. योगेश चन्द्र जोशी) 382
131. समाज और देश के निर्माण में शिक्षक की भूमिका (डॉ. योगेश चन्द्र जोशी) 385
132. किसान क्रेडिट कार्ड योजना का मूल्यांकन (डॉ. पी.डी. ज्ञानानी) 388
133. खाद्य संसाधन एंव विश्व आहार समस्या (डॉ. पी.डी. ज्ञानानी) 391
134. संत रविदास के चिन्तन में साहित्यक परिदृश्य (प्रदीप कुमार साकेत) 394
135. मध्यप्रदेश में राष्ट्रीय सम-विकास योजना की उपयोगिता एवं प्रभाव (डॉ. अजय वाघे) 396
136. भारत के आर्थिक विकास में वित्त आयोगों का योगदान (डॉ. पीताम्बर सिंह चौहान) 398
137. धर्म - सम्प्रदायों में मम, सम और सद्भाव (डॉ. मनीषा दुबे) 401
138. उदयपुर जिले के आदिवासी एवं गैरआदिवासी किशोर विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति अभिवृति का 405
तुलनात्मक अध्ययन (श्रीमती श्वेता वैष्णव,डॉ. प्रेमलता गाँधी)
139. राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी 407
योजनाओं की वस्तु स्थिति के प्रति शिक्षक एवं अभिभावक का अभिमत (चेतना भारद्वाज, डॉ. अनीता कोठारी)
140. *सिम्बोपोगोन सिट्रेटस ट्राईगोनेला फीनमग्रीकम* एवं *ओसिमम सेंकटम* के प्राथमिक पादपरासायनिक और कुल 410
फीनालिक मात्रा का तुलनात्मक अध्ययन (दीपाली साहू, रश्मि व्यास)

141. उच्च तथा निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन 414
(डॉ. गुरमीत सिंह कचूरा, मिथुन भट्ट)
142. विद्यार्थियों के गृह वातावरण का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन (डॉ. गुरमीत सिंह कचूरा, मिथुन भट्ट) 416
143. पर्यावरण संरक्षण पर आधारित मानव मूल्यों का भौगोलिक अध्ययन (डॉ. हीरालाल चौधरी, डॉ. के.पी. आजाद) 418
144. मध्यप्रदेश में राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन का योगदान (मण्डला जिले के संदर्भ में) 420
(डॉ. श्रीमति शुभांगी धगट, श्रीमति अनामिका तिवारी)
145. A Study on Relationship between Psychological Stress and Infertility in Female Population 423
undergoing Infertility Treatments (Sumita Mathur, Prof. Usha Kothari)
146. बांसवाड़ा शहर के एक विकास खण्ड गढ़ी का चयन कर उसमें चल रही आनन्ददायी शिक्षा के अन्तर्गत पाठ्य 426
सहगामी क्रियाओं का एवं इससे सम्बन्धित समस्याओं का अध्ययन करना (डॉ. दीपा त्रिवेदी)
147. Women's Political Participation in India : Global to National (Dr. Kaniya Meda) 429
148. संगीत जगत के नवसृजीत कलाकार - संस्थाओं की देन (डॉ. स्वाती तेलंग) 434
149. जनजाति क्षेत्र के छात्र-छात्राओं की संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. वनिता त्रिवेदी) 436
150. Peace Education - Concept (Dr. Premlata Gandhi) 439
151. नारी सशक्तिकरण एवं आधुनिक समाज (डॉ. प्रेमलता गाँधी) 441
152. मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर आहारीय परामर्श के प्रभाव का अध्ययन 443
(डॉ. प्रगति देसाई, श्रीमती मेघा परमार)
153. Study of Component Based Software Development Protyping Models 448
(Priyanka Bhatewara Jain, Dr. Akhil Khare, Sonia Bhargava)
154. भीमल रेशों द्वारा धागों का निर्माण कर उत्तराखण्ड के घरेलू उद्योगों के लिए एक योगदान (गुँजा सोनी) 452
155. Career Lattice Model - A Meaningful link between pre-service, in-service, and continuing 455
education (Dr. Premlata Gandhi)
156. पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण में प्रयुक्त शिक्षण विधियों की प्रभावशीलता का अध्ययन 458
(रेखा दाधीच, डॉ. अनिता कोठारी)
157. Robo Tutor- A Research on Future of Teaching (Dr. Premlata Gandhi) 460
158. A Study on Financial Performance of Stock Exchange in India (Chanda Parmar) 464
159. Analyzing Impact Of Online Social Platform On Internet Buying Behavior (Dr. Ganpat Joshi) 468
160. Practises for Building Quality Software with Automation: A Practical Approach 471
(Vikas Kumar Choudhary, Dr. Sanjay Chaudhary)
161. बदलते परिदृश्य में अभिजात महिलाओं की स्थिति की भूमिका (डॉ. रोमा श्रीवास्तव) 474
162. महेश्वर हथ करघा उद्यमियों में योगासन के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना (प्रतिष्ठा दासौंधी, डॉ. मंजु शर्मा) ... 476
163. मध्यप्रदेश में आदिवासी जनजातियों द्वारा वनोषधियों का संग्रहण के आर्थिक महत्त्व तथा संभावनाओं का.................. 478
भौगोलिक अध्ययन (डॉ. सुमनलता पुरोहित, मिताली पॉल)
164. मध्यप्रदेश में सूचना का अधिकार का क्रियान्वयन : एक समीक्षा (डॉ. ओम प्रकाश परमार) 481
165. A Study on Green Initiative Product of FMCG Companies (Mrs. Usha Sharma, Dr. Deepak Singh) 483
166. मध्यप्रदेश पंचायत निर्वाचन (2004-2005) एक विश्लेषणात्मक विवेचन (डॉ. अमृतलाल परमार) 486
167. Influence of Period of Investment on the Investment Decision Factors (Mradul Panthi) 489
168. Customer Satisfaction In Online Banking Services - An Over View 492
(Suman Gunjetia, Dr. Payal Sachdev)
169. Issues And Challenges Related To Pedagogical Strategies For Inclusive Education 495
(Dr. Monisha Mishra, Alka Asati)
170. मध्यप्रदेश के निमाड़ में पर्यटन उद्योग की समस्याऐं और समाधान (डॉ. सुनील मोरे) 499
171. जनजातीय विकास का भौगोलिक अध्ययन (संदीप कुमार सिंह, डॉ. सुमन सिंह) 501
172. Planning and Control System in Banks in India : Some Aspects (Dr. Sushma Maheshwari) 503
173. भारिया जनजाति पर वैश्वीकरण का प्रभाव (डॉ. पूजा तिवारी) 511

174. डॉ. भीमराव अम्बेडकर का राजनैतिक चिन्तन (डॉ. नवीन कुमार, पुष्पा साकेत) 513
175. महिला सशक्तिकरण एक विधिक अध्ययन (राकेश कुमार चौरासे) 515
176. महिलाओं के उत्थान हेतु राष्ट्रीय कानूनों का एक विधिक अध्ययन (कमलेश मौर्य) 517
177. GREEN AUDIT: A Case Study of Saifee Golden Jubilee Quaderia College, Burhanpur, M.P. India (Prof. Iftekhar A.Siddiqui, Dr. Suchi Modi) 519
178. Introduction to the Theory of Mimesis (Dr. Uttam.B. Parekar) 526
179. आवर्ती विपणन केन्द्र का भौगोलिक अध्ययन (सत्यनारायण मालवीय) 530
180. जैव विविधता संरक्षण एवं उपाय (डॉ. कल्पना कोठारी) 532
181. बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्वारा बौद्ध धर्म की दीक्षा: ग्रहण सामाजिक परिवर्तन का सार्थक प्रयास (डॉ. हितेन्द्र यादव) 534
182. Environmental Awareness Among Students Of Undergraduate Level (Dr. Bhavna Singh) 537
183. शिक्षण प्रभावशीलता एवं परीक्षण (खुशबू कुमावत) 540
184. अध्ययन आदतें एवं मापन (रंजीता माटा) 543
185. कार्य सन्तुष्टि की अवधारणा एवं परीक्षण (डॉ. अनुपा शर्मा) 545
186. शिक्षकों की व्यावसायिक प्रतिबद्धता एवं परीक्षण (डॉ. मोनिका बाबेल) 547
187. द्वि वर्षीय बी. एड. प्रशिक्षण कार्यक्रम में आंकलन संबंधी चुनौतियां (मधु वसीटा) 549
188. कृषि विकास संरचना एवं उन्मूलन - समस्या निदान एवं सुझाव (निशा विश्वकर्मा) 551
189. छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जाने वाली त्रुटियों का अध्ययन (पूनम रावल) 554
190. राजस्थान राज्य पथ परिवहन निगम लाभालाभ स्थिति -एक दृष्टिकोण (डॉ. कपिल व्यास) 557
191. निजी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के बालक एवं बालिकाओं की व्यावसायिक आकांक्षाओं के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन (रतलाम जिलें के संदर्भ में)(किरण पाटिल, डॉ. भवरलाल नागर) 559
192. A Study of Regional Rural Banks in Uttar-Pradesh (Vijay Kumar Gupta) 563
193. A comparative study of attitude of secondary school students towards mathematics (Sant Lal Ravat) 566
194. Empowering Women the Real Architects of Society (Dr. Rachna Mathur) 570
195. Study of Secondary School Teachers' Classroom Verbal Behaviour in Relation to Their Emotional Intelligence (Amit Kumar Tyagi, Sangita Sirohi) 573
196. Impact Of Tourism In Improving Local Economy (Deepak Agarwal, Dr. S.S. Chaudhary) 577
197. Innovations In Teacher Education (Dr. Rakesh Kumar Sharma) 580
198. माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण अभिक्षमता का अध्ययन (लीला चतुर्वेदी, डॉ. पूजा गुप्ता, डॉ. एम.के. तिवारी) 583
199. नवीकरणीयसंसाधन और धारणीत विकास (डॉ. मनीष जैन) 587
200. आकाशवाणी राँची से प्रसारित नागपुरी नाटक का संक्षिप्त परिचय (कोरनेलियुस मिंज) 590
201. A Study of Various Factors Affecting the Science Subject to School Students Studying in Nagpur Region (Sarika Manthanwar) 593
202. An Analytical Study of Various Mutual Fund Schemes (Dr. Hitesh A. Kalyani) 596
203. Retail Banking : Challenges And Opportunities (Dr. Pankaj Kukkar) 600
204. किशोर विद्यार्थियों के आत्म-प्रत्यय व परीक्षा दुश्चिन्ता का अध्ययन (डॉ. रितू बाला, नेकराम) 601
205. Corporate Social Responsibility : Significance, Challenges And Impact (Dr. Pankaj Kukkar) 604
206. बाल मजदूरी पर एक सामाजिक विधिक अध्ययन उदयपुर जिले के विशिष्ट संदर्भ (राहुल आगाल, डॉ. सतीश के. नागर) 606
207. भारतीय परिदृश्य में कन्या भ्रूण हत्या पर एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (उदयपुर जिले के विशिष्ट संदर्भ में) (प्रियंका माहेश्वरी, डॉ. सतीश के. नागर) 609
208. An Overview on Education for All and Delors Report (Prof. Krishna Kant Sharma) 612
209. Women and Democracy in India: A Study of their Role in Democratic process (Jan Mohammad Dar, Dr. Ravi Ranjan) 615

210. Production Problems of Horticulture Sector in Jammu and Kashmir: A Case Study of District Anantnag (Mushtaq Ahmad Khan, Dr. K.K.Vaidya) 618
211. Sports Competition Anxiety of University Level Badminton Players of Haryana and Rajasthan (Dr. Ravi Kumar, Jaswinder Singh) 622
212. हिन्दी कहानी के दलित साहित्य : स्वरूप तथा दशा व दिशा (दशरथ) 625
213. नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक में आधुनिक बैंकिंग सेवा (गोपाल कुरील, डॉ. सुनील मोरे) 628
214. An Overview On Cyber Space & Security (Dr. Neena Pyasi) 631
215. A Hybrid Inteligent System For Legal Reasoning (Dr. Pooran Singh, Prof. Neeraj Bhargava, Parul Baghla) 634
216. Image Compression Using Digital Wavelet Transform With Global Hard Thresholding (Brij Mohan Pareek, Dr. Amit Kumar Vyas) 637
217. पर्यावरण सचेतना और विद्यार्थियों का पर्यावरणीय संज्ञान (किरण पवार, डॉ. साधना देवेश वर्मा) 644
218. भारत की ग्रामीण शासन व्यवस्था तथा जनप्रतिनिधियों की कार्यप्रणाली एवं राजनीतिक जागरूकता की स्थिति (सर्वेक्षण पर आधारित अध्ययन) (डॉ. हितेन्द्र यादव) 647
219. Human Resource Development Policies in Public Sector and Private Sector Banks (Dr. Jaspreet Singh Mujral, Gurpreet Kaur) 650
220. Effect of Cyber Crime on Bank's Finances (Neeta, Pankaj Kumar) 653
221. GST and its Impact (Yogesh Kumar Swami) 656
222. E-Marketing- its Impact on Indian Society(Dr. Vijay Prakash Mishra) 658
223. महिला बेरोजगारी उन्मूलन में स्वसहायता समूह की भूमिका का अध्ययन (बिलासपुर जिले के कोटा ब्लाक के ग्राम पंचायतों के विशेष संदर्भ में)(नेहा सिंह, डॉ. ऋचा यादव) 664
224. Chakravyuh Challenges of the Indian Economy (Dr. P.K. Sirothia) 667
225. Glitches in the Way of Good Governance of India (Mukhtar Ahmad Lone, Dr. Niraj Kumar Jha) 670
226. Engagement of United Nations on the Kashmir Conflict (Mudasir Ahmad Bhat, Dr. Ravi Ranjan) 673
227. A Study on Women Entrepreneureship in Ujjain District (Asmita Jain, Dr. Rakesh Dhand) 676
228. Decomposition Analysis of Horticulture Sector in the State of Jammu and Kashmir (Rather Tajamul Islam, Mudasir Amin) 680
229. Variability in Horticulture Sector of Jammu and Kashmir – India : A Study of Two Decades (Rather Tajamul Islam) 683
230. मुगल बादशाह बहादुर शाह ज़फर का साहित्यक योगदान (डॉ. नीलम सोनी) 687
231. Role of Regional Rural Banks in the Development of India (Vijay Kumar Gupta) 690
232. Effect of Food Habits, Gender and their interaction on Academic Performance of College going students of Indore division of Madhya Pradesh (Dr. Sushama Sharma, Priyanka Gehlot) 693
233. समसामयिक भारत में दलित उत्पीड़न एवं सामाजिक न्याय प्रस्थिति (महेश कुमार रचियता, डॉ. सुनील महावर) 697
234. सरकारी एवं निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरत युवाओं का शैक्षणिक प्रदर्शन (डॉ. बी.के. गुप्ता) 700
235. सरदार पटेल की बारदोली सत्याग्रह आन्दोलन में भूमिका (डॉ. मनोज दाधीच, जयश्रीबेन डी. मेंवाड़ा) 703
236. योग – समुत्कर्ष एवं निःश्रेयस का अद्‌भुत रहस्य (डॉ. दिनेश कुमार कौशल) 707
237. वाल्मीकि रामायण में पत्नी का स्वरुप (डॉ. पंकज कुमार सिंह) 709
238. आदिकवि वाल्मीकि द्वारा नारी वर्णन (डॉ. पंकज कुमार सिंह) 711
239. Effects Of Various Teaching Methodology On Schools Students (Lokesh Jain) 715
240. Preferred Payment Options after Demonetization in India (Dr.Yadu Rao) 717
241. पर्यावरण संरक्षण एवं हमारा दायित्व (डॉ. शुभ्रा तिवारी) 722
242. भवन निर्माण में कार्यरत श्रमिकों के बच्चों के लिए संचालित की सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का मूल्यांकन (उषा राजे, डॉ. महेश गुप्ता) 724

243. भारत की गरीबी निवारण योजनाओं का मूल्यांकन (डॉ आराधना शुक्ला, निधी श्री) 728
244. रामायण और आधुनिक काल में दाम्पत्य की अवधारणा व स्वरूप (डॉ. अभयवीर) 730
245. People Management Recent Trends In Training And Developments In India (Dr. Prabhat Chopra) 733
246. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उच्चशिक्षा पर निजीकरण व उदारीकरण का प्रभाव (डॉ. वीनस शाह, डॉ. मोनिका बापट, डॉ. सविता अग्रवाल) 737
247. The Impact of Knowledge Management on Organizational Performance (Dr. Sanjay Patni) 739
248. नवीन भारत के समुचित विकास हेतु सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा अनुसूचित जाति एवं अन्य वर्ग हेतु किये जाने वाले सार्थक प्रयास (डॉ. सोनिया चंदानी) 745
249. ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था में के.पी.ओ. के बढते कदम (डॉ. कविता चंदानी) 746
250. Milk mother ; An outline of Women as a productive body and means of livelihood (Papiha Amin, Dr. Meenakshi Choubey) 748
251. काव्य प्रभेद और अंधा युग (डॉ. विनय शर्मा) 750
252. गुजरात के आदिवासियों की अर्थव्यवस्था (डॉ. अजातशत्रु सिंह राणावत, नरेन्द्रकुमार केशवभाई राठौड़) 752
253. A comparative Study Of Wordsworth and Pant as a poet of nature (Hridesh Srivastava, Dr. Kranti Vats) 754
254. Working of National Conference- Congress Coalition Government in Jammu & Kashmir 2008- 2014 (Nisar Ahmad Sheergogry, Dr. Chetna Shrivastava) 757
255. ग्लोबल वार्मिगं से कृषि उत्पादकता पर प्रभाव (रामरतन) 762
256. हरिवंश राय बच्चन की मधुशाला में राष्ट्रभक्ति परक विविध आयाम (कमलसिंह भूरिया, डॉ. शहजाद कुरैशी) 764
257. मध्यप्रदेश में आदिवासी विकास परियोजनाओं का क्रियान्वयन एवं उपलब्धियों का मूल्यांकन (संदर्भ: प्रधान मंत्री आवास योजना झाबुआ जिले में विगत पांच वर्षों की उपलब्धियां) (डॉ. सुनील कुमार शर्मा, शशि सिसौदिया) 766
258. Pollution status of Water Quality Parameters in selected Stretch of Narmada River, Madhya Pradesh (Sunil kumar Kakodiya, Dr. Sudhir Mehra) 772
259. An Evaluation Of The Different Factors For Construction Projects (Tophique Qureshi) 774
260. The Regional Impacts of India-Us Nuclear Deal (Javeed Ahmed Tali, Dr. Ratan Senha) 778
261. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शिशुओं के मानव अधिकारों का संरक्षण – एक विवेचना (डॉ. जैनेन्द्र कुमार पटेल) 782
262. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों के व्यापार का एक अध्ययन (कुसुम एवं पलाश लाख के विशेष संदर्भ में) (राकेश कुमार गुप्ता, डॉ. के.के.शर्मा) 784
263. विधानसभा क्षेत्र में विधायकों कि भूमिका कि स्थिति का अध्ययन (साधना खराडी) 787
264. The Changing Nature of Employee and Labour- Management Relationship (Dr. Niket Shukla) 789
265. चन्द्रकान्त देवताले के काव्य में संस्कृति और मानव मूल्य (प्रो. मुकेश भार्गव) 792
266. A Study of Consumer Behaviour and Preferences towards E- tailing (Dr. Suresh Shrawan Patil) 795
267. A Study of Customer Satisfaction in Public Sector Banks (Arti Padiyar, Dr. C.M. Mehta) 802
268. Physio Chemical Study of Water in Ganga at Kanpur (Dr. Shikha Yadav) 805
269. महिदपुर युद्ध की वीरांगना 'भीमाराजे होलकर' (संध्या गर्ग) 807
270. Financial Analysis History Of Pharmaceutical Industry In India (Dr. Vinay Kumar) 809
271. जेंडर बजटिंग : वर्तमान परिदृश्य में महिला सशक्तिकरण का आधार(प्रो. रेणु जटाना, कन्हैया लाल) 812
272. Chromosomal Abnormalities in Children with Poor Scholastic Performance (Kavita Singh, Shadma Siddiqui, CBS Dangi) 817
273. Robust and Real Time Data Delivery Mechanism (RRTD) (Dr. Kalpna Middha, Meenu Bajaj) 821
274. A Study on Shopping Malls in Indore District (Dr. Vijay Grewal, Jaya Kameriya) 825
275. In Vitro and in Vivo Antidiabetic Activity of Momordica Dioica Roots Extracts in Streptozotocin Induced Diabetic Albino Wistar Rats (Manoj Kumar Gajbhiye, Arun Kakkar, Hemant Ganweer) 829

276. A Study of Socio Economic Status in Relation to Emotional Intelligence and Personality of Secondary School Students (Vinaysheel Narang, Dr. Parshotam Dass Swami) 833
277. A Study Of Personality Of Secondary School Teachers In Relation To Their Scientific Attitude, Self Concept And Mental Health (Divya Gagneja, Dr. Parshotam Dass Swami) 836
278. जन-धन हितग्राहियों की स्थिति का अध्ययन (मध्यप्रदेश के सतना जिले के विशेष सन्दर्भ में) (रामभजन साकेत, डॉ. विजय सिंह परिहार, डॉ. अखिलेश मिश्रा) 839
279. A Critical Study Of E-Marketing In India (Akbar Ali) 842
280. हाशिये का विमर्श और आज की कविता में लोकतंत्र (उमेश कुमार विश्वकर्मा) 844
281. अहिंसा : एक महाशक्ति (डॉ. सन्ध्या श्रीवास्तव) 847
282. राजस्थान में प्राथमिक विद्यालयी विद्यार्थियों की स्वच्छता आदत एवं सामाजिक आर्थिक स्तर में सहसम्बन्ध का अध्ययन (डॉ. डी.पी. सिंह , डॉ शालिनी बिस्सू) 851
283. श्रीगंगानगर जिले में सर्व शिक्षा अभियान द्वारा उच्च प्राथमिक विद्यालयों में छात्रों के नामांकन, ठहराव का अध्ययन (डॉ. राजेन्द्र गोदारा, डॉ. मीनाक्षी मिश्रा) 854
284. न्यायाधीशों की नियुक्ति और उनका स्थानान्तरण : एक विश्लेषण (महेन्द्र कुमार पटेल) 858
285. गीता का दिव्य ज्ञान (डॉ. सन्ध्या श्रीवास्तव) 863
286. मालती जोशी की कहानियों में नारी संवेदना (अनीता भदौरिया, प्रो. विजयलक्ष्मी राय) 866
287. संगीत और नाद (डॉ. इभा सिरोठिया) 868
288. क्रांतिज्योती सावित्रीबाई फुले यांचे शैक्षणिक - स्त्री शिक्षण विषयक विचार व कार्य (डॉ.रविंद्रनाथ महादेवराव केवट) 870
289. Evalution of Health Insurance Schemes by LIC to the People of Chandrapur District (B. K. Dhongde, Dr. Pradip Ghorpade) 873
290. म.प्र. ग्रामीण विकास की समस्या एवं सुझाव (राजेश कुमार कुशवाहा) 875
291. छत्तीसगढ़ राज्य की खाद्य सुरक्षा योजना के अन्तर्गत लाभार्थी प्राथमिकतामूलक परिवार का एक अध्ययन (कोटा विकासखण्ड के विशेष सन्दर्भ में) (राकेश कुमार गुप्ता, डॉ. के.के.शर्मा) 878
292. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के योगदान का बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड के सर्वेक्षित ग्रामों में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के उपभोग की मदें और उपभोग किया को प्रभावित करने वाले कारकों में एक अध्ययन (डॉ. के.के.शर्मा) 886
293. म्यांमार सीमा पर भारत की सुरक्षा चुनौतियां (संजय तिलकवार) 892
294. ग्रामीण विकास मे शासकीय योजनाओं का योगदान राजगढ जिले के संदर्भ में (वनिता अहिरवार, डॉ.सरोज श्रीवस्तव) 895
295. Effect of Supplementation of wheat straw with dried leaves of some trees on the growth and production of *Pleurotus sajor-caju* (Dr. Abhai Deep Mishra) 899
296. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के योगदान का एक अध्ययन (बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड के विशेष सन्दर्भ में) (राकेश कुमार गिरि) 902
297. स्वतंत्रता के अधिकार के विशेष संदर्भ में भारतीय न्यायपालिका की भूमिका (डॉ. तहसीलदार तमोली) 907
298. भारतीय संसदीय व्यवस्था में राज्यपाल की स्थिति (डॉ. विनोद कुमार सिंह) 909
299. हाथ करघा उद्योग एवं ग्रामीण विकास (डॉ. के.एल.टाण्डेकर, डॉ. ई.व्ही.रेवती) 912
300. चर्म उद्योग मे मानव प्रबंधन स्थिति एवं सम्भावनाएं (मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ में) (डॉ. ई.व्ही. रेवती, डॉ.के.एल.टाण्डेकर) 915
301. प्रगतिशील काव्य चेतना और नागार्जुन (डॉ. त्रिभुवन कुमार साही) 917
302. पंचायती राज और संवैधानिक प्रावधान (डॉ. हनुमान प्रसाद मीना) 919
303. सिन्धु कला का अनुपम प्रतीक- मोहरें एवं मुद्राएं (डॉ. सुनीता मीना) 925

304. समेकित बाल विकास सेवा कार्यक्रम का लेखकीय अध्ययन (खमनोर परियोजना के संदर्भ में) 928
(प्रो. अनिता शुक्ला, मनीष श्रीमाली)

305. पत्रकारिता : प्रारंभ विकास एवं भारतेन्दु (संजीव मिश्र) 931

306. अण्णा भाऊ साठे : एक दलित साहित्यिक (प्रा. डॉ. हेमचंद सोमाजी दुधगवळी) 933

307. The Right of Liberty & Equality and Challenges (Mr. Bijay Kumar Yadav, Dr. Gurpreet Singh) 935

308. संस्कृत साहित्य में काव्य बोध का चिन्तन (राम प्रसाद वर्मा) 937

309. Impact of GST on Indian Banking Sector (Pravinkumar M. Lonare) 939

310. पूर्व विद्यालयीन शिक्षा व्यवस्था शिक्षा के आयाम के रूप में अध्ययन (श्रीमती धर्मिष्ठा शेरवाल शर्मा)............. 941

311. Improvement of Productivity in Small Scale Industries 943
(Dr. Sanjeev Kumar Bansal, Dr. Praveen Kukkar)

312. A Study on Domestic Violence Against Women (Dr. Anita Dani) 946

313. मुक्तिबोध का यथार्थ बोध (डॉ. विनीता कौशिक).. 948

314. आदिवासियों के सामाजिक एवं शैक्षणिक विकास में मामा बालेश्वर दयाल का योगदान (कान्तिलाल कटारा).......... 950

315. फणीश्वर नाथ रेणु कृत मैला आंचल की पृष्ठभूमि : एक अध्ययन (डॉ. सूर्यप्रकाश नापित) 955

316. नवम् राजस्थान विधानसभा के प्रसंग में राजनीतिक संस्कृति (डॉ. गोपाल सिंह) 959

317. Awareness of Cyber Law : Special Reference of Ahmedabad City 964
(Geetaben Ramjibhai Makwana)

318. Performance of Business Finance in Entrepreneurship (Dr. Suresh Shrawan Patil) 968

319. Strategic Human Resource Management of Indian Armed Forces (Saurabh Dubey)..................... 972

320. राजस्थान की मीणा जनजाति के देवी देवता एवं उनके प्रतीक (डॉ. हरिचरण मीना) 974

321. Estimation of Heritability of Different Economic Trails in While Leghorn Strain 'B' Flock 977
(Bhagat Singh)

322. Ageing in India: Some Social Challenges to Elderly Care (Mohd Ashraf, Ajaz Ahmad Dar) 979

323. Tulsi: The Queen of Herbs (Dr. Savita Chahar) 982

324. भारतीय नाट्य जगत में लोक नाटकों की यात्रा (डॉ. रचना बिमल) 984

325. Internally Displaced Persons: Unheard Cries (Anukriti Mishra).. 988

326. श्रीमद्भागवत कालीन शिक्षा प्रणाली (डॉ. बिहारी लाल मीना) 991

327. Study on Raja Rao's Kanthapura with Special Reference to Gandhian Ideology.......................... 994
(Rakesh Kumar, Dr. Puran Singh)

328. Different Thermal Analysis Techniques for Characterization of Glasses (M. D. Sharma).............. 996

329. मुस्लीम कालखंडातील जालहनापूर (डॉ. श्रीनिवास सातभाई) 998

Regional Editor Board - International & National

1. Dr. Manisha Thakur - Fulton College, Arizona State University, America.
2. Mr. Ashok Kumar - Employbility Operations Manager, Action Training Centre Ltd. London, U.K.
3. Ass. Prof. Beciu Silviu - Vice Dean (Management) Agriculture & Rural Development, UASVM, Bucharest, Romania.
4. Mr. Khgendra Prasad Subedi - Senior Psychologist, Public Service Commission, Central Office, Anamnagar, Kathmandu, Nepal.
5. Prof. Dr. G.C. Khimesara - Former Principal, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.) India
6. Prof. Dr. Pramod Kr. Raghav - Research Guide, Jyoti Vidhyapeeth Women University, Jaipur (Raj.) India
7. Prof. Dr. N.S. Rao - Director, Janardhanrai Nagar Raj. Vidhyapeeth University, Udiapur (Raj.) India
8. Prof. Dr. Anoop Vyas - Former Dean, Commerce, Devi Ahilya University, Indore (India) India
9. Prof. Dr. P.P. Pandey - HOD, Commerce(Dean), Avadesh Pratapsingh University, Rewa (M.P.) India
10. Prof. Dr. Sanjay Bhayani - HOD, Business Management Deptt., Saurashtra University, Rajkot (Guj.) India
11. Prof. Dr. Pratap Rao Kadam - HOD, Commerce, Govt. Girls PG College, Khandwa (M.P.) India
12. Prof. Dr. B.S. Jhare - Professor, Commerce Deptt., Shri Shivaji College, Akola (Mh.) India
13. Prof. Dr. Sanjay Khare - Prof., Sociology, Govt. Auto. Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
14. Prof. Dr. R.P. Upadhayay - Exam Controller, Govt. Kamlaraje Girls Auto. PG College, Gwalior (M.P.) India
15. Prof. Dr. Pradeep Kr. Sharma - Professor, Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) India
16. Prof. Akhilesh Jadhav - Prof., Physics, Govt. J. Yoganandan Chattisgarh College, Raipur (C.G.) India
17. Prof. Dr. Kamal Jain - Prof., Commerce, Govt. PG College, Khargone (M.P.) India
18. Prof. Dr. D.L. Khadse - Prof., Commerce, Dhanvate National College, Nagpur (Maharastra) India
19. Prof. Dr.Vandna Jain - Prof., Hindi, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) India
20. Prof. Dr. Hardayal Ahirwar - Prof.,Economics, Govt. PG College, Shahdol (M.P.) India
21. Prof. Dr. Sharda Trivedi - Retd. Professor, Home Science, Indore (M.P.) India
22. Prof. Dr. Usha Shrivastav - HOD, Hindi Deptt., Acharya Institute of Graduate Study, Soldevanali, Bengaluru (Karnataka) India
23. Prof. Dr. G. P. Dawre - Professor, Commerce, Govt. College, Badwah (M.P.) India
24. Prof. Dr. H.K. Chouarsiya - Prof., Botany, T.N.V. College, Bhagalpur (Bihar) India
25. Prof. Dr. Vivek Patel - Prof., Commerce, Govt. College, Kotma, Distt., Anooppur (M.P.) India
26. Prof. Dr. Dinesh Kr. Chaudhary - Prof., Commerce, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) India
27. Prof. Dr. P.K. Mishra - Prof., Zoological, Govt. PG College, Betul (M.P.) India
28. Prof. Dr. Jitendra K. Sharma - Prof., Commerce, Maharishi Dayanand Uni. Centre, Palwal (Haryana) India
29. Prof. Dr. R. K. Gautam - Prof., Govt. Manjkuwar Bai Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.) India
30. Prof. Dr. Gayatri Vajpai - Professor, Hindi, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.) India
31. Prof. Dr. Avinash Shendare - HOD, Pragati Arts & Commerce College, Dombivali, Mumbai (Mh.) India
32. Prof. Dr. J.C. Mehta - Fr. HOD, Research Centre, Commerce, Devi Ahilya Uni., Indore (M.P.) India
33. Prof. Dr. B.S. Makkad - HOD, Research Centre Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) India
34. Prof. Dr. P.P. Mishra - HOD, Maths, Chattrasal Govt. PG College, Panna (M.P.) India
35. Prof. Dr. Sunil Kumar Sikarwar - Professor, Chemistry, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
36. Prof. Dr. K.L. Sahu - Professor, History, Govt. PG College, Narsinghpur (M.P.) India
37. Prof. Dr. Malini Johnson - Professor, Botany, Govt. PG College, Mahu (M.P.) India
38. Prof. Dr. Vishal Purohit - M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Miadan, Indore (M.P.) India

Editorial Advisory Board, INDIA

1.	Prof. Dr. Narendra Shrivastav	-	Scientist , ISRO, Bengaluru (Karnataka) India
2.	Prof. Dr. Aditya Lunawat	-	Director, Swami Vivekanand Career Guidance deptt. M.P. Higher Education, M.P. Govt., Bhopal (M.P.) India
3.	Prof. Dr. Sanjay Jain	-	Former Controller, Madhya Pradesh Professional Examination Board Bhopal (M.P.) India
4.	Prof. Dr S.K. Joshi	-	Former Principal, Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) India
5.	Prof. Dr. J.P.N. Pandey	-	Fr. Principal, Govt. Auto.Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
6.	Prof. Dr. Sumitra Waskel	-	Principal, Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.) India
7.	Prof. Dr. P.R. Chandelkar	-	Principal, Govt. Girls PG College, Chhindwara (M.P.) India
8.	Prof. Dr. Mangal Mishra	-	Principal, Shri Cloth Market, Girls Commerce College, Indore (M.P.) India
9.	Prof. Dr. R.K. Bhatt	-	Former Principal, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.) India
10.	Prof. Dr. Ashok Verma	-	Former HOD, Commerce (Dean) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
11.	Prof. Dr. Rakesh Dhand	-	HOD, Student Welfare Deptt., Vikram University, Ujjain (M.P.) India
12.	Prof. Dr. Anil Shivani	-	HOD, Commerce /Management Deptt. Shri Atal Bihari Vajpai Hindi University, Bhopal (M.P.) India
13.	Prof. Dr. PadamSingh Patel	-	HOD, Commerce Deptt., Govt. College, Mahidpur (M.P.) India
14.	Prof. Dr. Manju Dubey	-	HOD (Dean), Home Science Deptt. Jiwaji University, Gwalior (M.P.) India
15.	Prof. Dr. A.K. Choudhary	-	Professor, Psychology, Govt. Meera Girls College, Udiapur (Raj.) India
16.	Prof. Dr. T. M. Khan	-	Principal, Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) India
17.	Prof. Dr. Pradeep Singh Rao	-	Principal, Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.) India
18.	Prof. Dr. K.K. Shrivastava	-	Professor, Eco., Vijaya Raje Govt. Girls PG College, Gwalior (M.P.) India
19.	Prof. Dr. Kanta Alawa	-	Professor, Pol. Sci., S.B.N.Govt. PG College, Badwani (M.P.) India
20.	Prof. Dr. S.K. Jain	-	Professor, Commerce, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
21.	Prof. Dr. Kishan Yadav	-	Asso. Professor, Research Centre Bundelkhand College, Jhasi (U.P.) India
22.	Prof. Dr. B.R. Nalwaya	-	Chairman,Commerce Deptt.,Vikram University, Ujjain (M.P.) India
23.	Prof. Dr. Purshottam Gautam	-	Dean, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
24.	Prof. Dr. Natwarlal Gupta	-	HOD, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
25.	Prof. Dr. S.C. Mehta	-	Professor/HOD, Govt. Bhagat Singh PG College, Jaora (M.P.) India
26.	Prof. Dr. Tapan Chore	-	HOD,Economics, Vikram University, Ujjain (M.P.) India

****

Referee Board

Maths - (1) Prof. Dr. V.K. Gupta, Director Vedic Maths - Research Centre, Ujjain (M.P.)
Physics - (1) Prof. Dr. R.C. Dixit, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
(2) Prof. Dr. Neeraj Dubey, Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
Computer Science - (1) Prof. Dr. Umesh Kumar Singh, HOD, Computer Study Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
Chemistry - (1) Prof. Dr. Manmeet Kaur Makkad, Govt. Kalidas Girls College,Ujjain (M.P.)
Botany - (1) Prof. Dr. Suchita Jain, Govt. Girls PG College, Kota (Raj.)
(2) Prof. Dr. Akhilesh Aayachi, Govt. Adarsh Science College, Jabalpur (M.P.)
Life Science - (1) Prof. Dr. Manjulata Sharma, M.S.J. Govt. College, Bharatpur (Raj.)
- (2) Prof. Dr. Amrita Khatri, Mata Jijabai Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
Statitics - (1) Prof. Dr. Ramesh Pandya, Govt. Arts - Commerce College, Ratlam (M.P.)
Military Science - (1) Prof. Dr. Kailash Tyagi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
Biology - (1) Dr. Kanchan Dhingara, Govt. M.H. Home Science College, Jabalpur (M.P.)
Geology - (1) Prof. Dr. R.S. Raghuvanshi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Suyesh Kumar, Govt. Adarsh College, Gwalior (M.P.)
Medical Science - (1) Dr.H.G. Varudhkar, R.D. Gardi Medical College, Ujjain (M.P.)
Microbiology Sci. - (1) Anurag D. Zaveri, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat)

***** Commerce *****

Commerece - (1) Prof. Dr. P.K. Jain, Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Shailendra Bharal, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
(3) Prof. Dr. Laxman Parwal, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)

***** Management *****

Management - (1) Prof. Dr. Rameshwar Soni, HOD, Research Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
(2) Prof. Dr. Anand Tiwari, Govt. Autonomus PG Girls Excellence College, Sagar (M.P.)
Human Resources - (1) Prof. Dr. Harwinder Soni, Pacific Business School, Udaipur (Raj.)
Business Administration - (1) Prof. Dr. Kapildev Sharma, Govt. Girls PG College, Kota (Raj.)

***** Law *****

Law - (1) Prof. Dr. S.N. Sharma, Principal, Govt. Madhav Law College, Ujjain (M.P.)
(2) Prof. Dr. Narendra Kumar Jain, Principal, Shri Jawaharlal Nehru PG Law College, Mandsaur (M.P.)

***** Arts *****

Economics - (1) Prof. Dr. P.C. Ranka, Sri Sitaram Jaju Govt. Girls PG College, Neemuch (M.P.)
(2) Prof. Dr. J.P. Mishra, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.)
(3) Prof. Dr. Anjana Jain, M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Maidan, Indore (M.P.)
Political Science - (1) Prof. Dr. Ravindra Sohoni, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.)
(2) Prof. Dr. Anil Jain, Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
(3) Prof. Dr. Sulekha Mishra, Mankuwar Bai Govt. Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.)
Philosophy - (1) Prof. Dr. Hemant Namdev, Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
Sociology - (1) Prof. Dr. Uma Lavania, Govt. Girls College, Bina (M.P.)
(2) Prof. Dr. H.L. Phulvare, Govt. PG College, Dhar (M.P.)
(3) Prof. Dr. Indira Burman, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)
Hindi - (1) Prof. Dr. Kala Joshi , ABV Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)

		(2)	Prof. Dr. Chanda Talera Jain, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Jaya Priyadarshini Shukla, Vansthali Vidyapeeth (Raj.)
		(4)	Prof. Dr. Amit Shukla, Govt. Thakur Ranmatsingh College, Rewa (M.P.)
English	-	(1)	Prof. Dr. Ajay Bhargava, Govt. College, Badnagar (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Manjari Agnihotri, Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
Sanskrit	-	(1)	Prof. Dr. Bhawana Srivastava, Govt. Autonomus Maharani Laxmibai Girls PG College, Bhopal (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Balkrishan Prajapati, Govt. PG College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
History	-	(1)	Prof. Dr. Naveen Gidiyan, Govt. Autonomus Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.)
Geography	-	(1)	Prof. Dr. Rajendra Srivastava, Govt. College, Pipliya Mandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
		(2)	Prof. Kajol Moitra, Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.)
Psychology	-	(1)	Prof. Dr. Kamna Verma, Principal, Govt. Rajmata Sindhiya Girls PG College, Chhindwara (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Saroj Kothari, Govt. Maharani Laxmibai Girls PG College, Indore (M.P.)
Drawing	-	(1)	Prof. Dr. Alpana Upadhyay, Govt. Madhav Arts-Commerce-Law College. Ujjain (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Rekha Srivastava, Maharani Laxmibai Govt. Girls PG College, Bhopal (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Yatindera Mahobe, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.)
Music/Dance	-	(1)	Prof. Dr. Bhawana Grover (Kathak),Swami Vivekanand Subharti University, Meerut (U.P.)
		(2)	Prof. Dr. Sripad Aronkar, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.)

***** Home Science *****

Diet/Nutrition Science	-	(1)	Prof.Dr. Pragati Desai, Govt. Maharani Laxmibai Girls PG College, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Madhu Goyal, Swami Keshavanand Home Science College, Bikaner (Raj.)
		(3)	Prof. Dr. Sandhya Verma, Govt. Arts & Commerce College, Raipur (Chhattisgarh)
Human Development	-	(1)	Prof. Dr. Meenakshi Mathur, HOD, Jainarayan Vyas University, Jodhpur (Raj.)
		(2)	Prof. Dr. Abha Tiwari, HOD, Research Centre, Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.)
Family Resource Management	-	(1)	Prof. Dr. Manju Sharma, Mata Jijabai Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Namrata Arora, Vansthali Vidhyapeeth (Raj.)

***** Education *****

Education	-	(1)	Prof. Dr. Manorama Mathur, Mahindra College of Education, Bangluru (Karnataka)
		(2)	Prof. Dr. N.M.G. Mathur, Principal/Dean, Pacific EducationCollege, Udaipur (Raj.)
		(3)	Prof. Dr. Neena Aneja, Principal, A.S. College Of Education, Khanna (Punjab)
		(4)	Prof. Dr. Satish Gill, Shiv College of Education,Tigaon, Faridabad (Haryana)

***** Architecture *****

Architecture	-	(1)	Prof. Kiran P. Shindey, Principal,School of Architecture,IPS Academy, Indore (M.P.)

***** Physical Education *****

Physical Education	-	(1)	Prof. Dr. Joginder Singh, Physical Education, Pacific University, Udaipur (Raj.)

***** Library Science *****

Library Science	-	(1)	Dr. Anil Sirothia, Govt. Maharaja College, Chhattarpur (M.P.)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Art movement in Colonial India : Special Reference : 'Amrita Sher-Gil' - The most influential women artist of the era

Dr. Kingshuk Mukherjee *

Preface - Radical changes came into the social scenario of the art infused cultural set up of India during the medieval period of Indian history. The Islamic and British rule brought about transformations on our art scene that were far more influential and far-reaching as compared to the pre-historic and historic eras (Dalmia, 2003).

Especially, the British colonial administration had a huge impact on the Indian art scene. They attempted to systematically impose the disciplined and structured approach of 'European art training' in the newly established official art schools in the commercial capitals of India, namely Calcutta, Bombay and Madras, and the other princely provinces in the vicinity of these commercial capitals. In the process, artists were somewhat stuck between their roots and modernity. The period ranging from the late 19th Century to the middle of the 20th century (1880-1947) has been termed as a period of 'art-turmoil' in India, which includes both breakdown as well as rediscovery of our rich art tradition at a point when European aesthetic norms were introduced. These conflicts between indigenous and western artistic modes lead to a prolonged period of art-turmoil and conflicting stands among some of the most eminent Indian artists of the era (Brown, 1953).

Art and Cultural Changes during Colonial India - Cultural Changes were inevitable, especially when the cultural monopoly had given way to the exposure of world contacts. The painter Jackson Pollock quoted in the 1940s, "The idea of an isolated American painting, so popular in this country during the 1930s seems absurd to me just as the idea of creating a purely American mathematics or physics will seem absurd….the basic problems of painting are independent of any country" (Subramanyan,1978).

But apparently this 'getting together of the world' had not wiped out regional specialties as one thought it might. Some of the changes that had occurred in art practices over time have shown appreciable consideration for the past, while the others tried to break free. The theory of the 'avant-garde' is one of the most thorough analyses of the modern art situation. The idea of avant-garde grew rapidly. L'Art Nouveau (new art) was celebrated all across and had influenced the Indian modern art scene as well. Abanindranath Tagore's works fall in line with the work of the artists of Art Nouveau. In a nutshell, as 'global art' was gaining rapid momentum in Colonial India, it did not completely wipe out the concept of 'local art' or 'folk art' traditions. Both 'Global art' as well as 'folk art' coexisted across the various strata of the Indian society. Our folk arts have gained a new respectability with art scholars. But this gave rise to conflicting view-point between the various artists who had diverse perceptions and opinions about the direction in which art was moving (Parimoo & Sarkar, 2009). Modernity continued to gain momentum in various parts of India from the early 20th century. The period ranging from the late 19th Century to the mid-20th century (1880-1947) has been termed as a period of 'art-turmoil' in India, which included both fall and re-discovery of our rich art tradition at a point when European aesthetic norms were introduced. This conflict between indigenous and western mannerism led to further conflict when Indian artists faced the early waves of modern European art (Peers, 2006).

The classification 'Naturalism' addresses the setting up of new art schools with European style art training which resulted in a new direction to art movement. An intellectual and creative churning took place in the early 20th century when traditional art began to be rediscovered in fresh creative ventures which is widely accepted as 'Revivalism'. Revivalist movement led to the expression of ethnicity, identity, and re-embodiment of traditions. (Subramanyan, 1978).

Colonialism led to India being portrayed as a modern nation. Although the colonial authorities introduced the British educational patterns and syllabi in a few universities including English language, to produce 'de-nationalized' professional Indians for imperial administration, the impact of this phenomenon had other benefits for the country. Generations of educated Indians emerged who propagated the ideas in favor of broadening our traditional outlook and adaptation of social reforms in the country. Many Indians

*Assistant Professor, Deptt. of Design, Banasthali Vidyapith (Rajasthan) INDIA

seriously studied India's glorious ancient past history and philosophy. Revivalism in visual arts, closely interdependent with the scholarly efforts of reassessment of India's artistic heritage, is a belated but glorious culminating phase of India's 'Renaissance' during the colonial rule (Parimoo & Sarkar, 2009).

Continuation of the ongoing East-West Dilemma and the emergent modern artifacts - Amrita Sher-Gil and Jamini Roy made a huge impact in the art scene of the colonial India. They tried reunion of Eastern and Western characteristics in their work. These painters and sculptors have enlarged their horizons, set up better standards in craftsmanship and encouraged serious thinking in the arts. During the fifties a number of these artists travelled abroad and observed what was happening there in the other parts of the world. The art scene in the west was undergoing drastic changes in the fifties and there were serious reconsiderations of values. The sixties brought into Indian art a great increase in spectrum; painters, sculptors and printmakers of all kinds could be found in every part of India; their knowledge of media and cleverness of handling was equal to any from anywhere in the world (Parimoo & Sarkar, 2009).

The west-east confrontation created new terminologies such as "Western Style" and "Eastern Style" art. In another few years, exposure to what was happening simultaneously in the West added still another category—Modern Style. All-India Exhibitions separated the exhibits under these newly created heads and showed them in separate galleries.

Amrita Sher-Gil: An introduction - At the juncture of early modernity in Indian Art Scene, as women started to appear in the social scenario in more influential positions, women artists gradually started to emerge. The mixture of styles by the Punjabi-Hungarian artist, Amrita Sher-Gil, left a huge impact in the art scene of the colonial India. She tried reunion of Eastern and Western characteristics in her work. She led the way for the entry of women in the newly emerged Commercial Indian Art and served as an inspiration to the new wave of women artists in the independent India. Amrita Sher-Gil was in Paris as an art student from 1929 to 1934. In India, at that time, 'Art trade' was catching up and the successful artists were no longer the suffering bohemians they used to be. Born of a Sikh father from an aristocratic, land owing family, and a Hungarian mother, Amrita Sher-Gil's life veered between Europe and India. Her Hungarian mother had given her a proper European upbringing during her eight years of childhood in Hungary and the following eight years in Simla but this was not enough to implant her in contemporary Paris. She was blessed with beauty, breeding, charismatic personality and extra ordinary talent as a painter. In 1929, she joined the Ecole des Beaux Arts in Paris. Her painting skills were recognized and acclaimed; she loved the bohemian life of artists in Paris. In 1934 she explains in a letter to her father that her long stay in Europe had aided her to discover India, and Modern art had led her to the comprehension and appreciation of Indian painting and sculpture. She had already made some contact with the mainstream of Indian Art through the Parisian collections and through the orientalism of artists like Gauguin or Modigliani, whose work had roused her admiration (Peers, 2006).

With her parents settled in India, she was a part of the Indian social scene. In 1936 Amrita travelled south on what came to be for her a voyage of discovery of the historical art of India. She visited Ajanta first and the mural paintings of Ajanta came to her as a tremendous revelation. She found them 'vital', 'vibrant', and subtle. The Ajanta Murals opened up to her many possibilities of contact. Amrita Sher-Gil, after seeing the Ajanta murals in 1936, quoted - 'It is because there are many possibilities in Indian art that I am literally opposed to those that have not explored these possibilities'. From Ajanta she travelled still further south and saw murals of 'Padmanabhapuram' and 'Mattancheri', so different from that of Ajanta; also arrested her attention. She acknowledged Karl Khandalvala's comments on Post-Impressionism. According to him, Post-Impressionism had a fundamental analogy with Ajanta. Down the line, she came across the miniature work of Mughals and the Rajput. She started to grow fond of these styles. She seems to have realized that to her needs the language of the Rajput and Mughal paintings came nearest. In 1937, she tries a multi-perspective composition like a Rajput or Mughal miniature. In 1938 she tries to read the Rajput and Mughal expression into the village scenes around her producing a number of paintings such as 'Hill Scene', 'Red Clay elephant', 'Elephants bathing in a Green Pool' (Dalmia, 2003).

Her use of Indian subject matter too is no more the rare and the sentimental – the beggar, the widow, the sad nude, but common village sights as people clustered round the trees or houses, girls on a swing, elephants in village landscape. She sometimes bases these rather closely on Mughal and Rajput stereotypes such as 'Horse and Groom', 'Studies of Elephants', 'Ancient Storyteller'; often her attempts to scatter around object details are quite indigenous; also where she attempts multi-perspective.

Amrita Sher-Gil: Modern Indian Art in the last few decades of Colonial India - Sher-Gil's painting style at this time reflected the European idiom with its naturalism and textured application of paint. Many of the paintings done in the early 1930s are in the European style, and include a number of self portraits. There are also many paintings of life in Paris, nude studies, still life studied, as well as portraits of friends and fellow students. Of these, the self portraits form a significant corpus. They captured the artist in her many moods- somber, pensive and joyous- while revealing a narcissistic streak in her personality. Her style underwent a radical change by the mid- 30s. she yearn for India, and by 1934, the family returned. This time, she looked at India with the eyes of an artist. The colours, the textures, the vibrancy and the earthiness of the people had a deep impact on the young artist. In India, she appropriated the language

of miniatures. The complexities of her life- she was of mixed parentage and her art school background in Paris made her both, an insider and outsider, as did her ambivalent sexuality- promoted her to constantly reinvent her visual language. She sought to reconcile her modern sensibility with her enthusiastic response to traditional art-historical resources.

The majority of works by Amrita Sher- Gil in the public domain are presently with the NGMA, New Delhi, which houses over 100 paintings by this meteoric artist. Few of the notable paintings from the collection of NGMA, New Delhi:

References :-

1. Brown, P. - The Heritage of India-Indian Paintings: 6th Edition. Calcutta: Y.M.C.A. Publishing House, 1953.
2. Dalmia, Yashodhara - Contemporary Indian Art-Other Realities. Delhi: The Marg Foundation, 2003.
3. Subramanyan, K.G. - Moving Focus-Essays on Indian Art. New Delhi: Lalit Kala Akademi, 1978.
4. Parimoo, Ratan & Sarkar, Sandip - Historical Development of Contemporary Indian Art. New Delhi: Lalit Kala Akademi, 2009.
5. Peers, Douglas - India under Colonial Rule: 1700-1885 (Seminar Studies In History). London and New York: Routledge, Taylor and Francis group, 2006.
6. Thakur, Abanindranath - Apon Katha. Calcutta: Signet Press, 1946.
7. Mitter, Partha - Art and Nationalism in Colonial India, 1850-1922, Occidental Orientations. Cambridge: Cambridge University Press, 1994.
8. C.Sivaramamurti-Indian Painting, New Delhi, National Book Trust, 1970

Fig.1: Hungarian Village Market, Oil on Canvas, Amrita Sher-Gil

Fig.2: Notre Dame, Oil on Canvas, Amrita Sher-Gil

Fig.3: Two elephants, Oil on Canvas, Amrita Sher-Gil

Fig.4: Brahmacharis, Oil on Canvas, Amrita Sher-Gil

Fig.5: Bride's Toilet, 1937, Oil on Canvas, Amrita Sher-Gil

****

पूर्वी उत्तर प्रदेश में द्वितीय श्रेणी महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन

डॉ. ओम प्रकाश शर्मा * डॉ. अजय **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति के अध्ययन के संदर्भ में अध्ययन किया गया है। शोध के लिये प्रस्तुत शोध अध्ययन में उपकरण के रूप में स्व-निर्मित अभिमतावली का प्रयोग किया गया है जिसमें 20 प्रश्न थे, जिनका उत्तर हॉ/ नहीं में देना था तथा न्यादर्श के रूप में उत्तर प्रदेश के बिहार क्षेत्र के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों का चयन किया गया, जिसमें 100 द्वितीय श्रेणी की महिला शिक्षकों को सम्मिलित किया गया है। शोध परिणामों से प्राप्त हुआ कि सरकारी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों में अभिवृति, गैर सरकारी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति से अधिक पाई गई।

प्रस्तावना – मानव द्वारा आदिकाल से ही ज्ञान का संचय किया जा रहा है प्रत्येक नयी पीढी को पुरानी पीढी द्वारा कुछ न कुछ ज्ञान प्राप्त होता ही है और कुछ वह स्वयं अर्जित करता है। मानव की प्रत्येक पीढी में सीखने की प्रक्रिया के माध्यम से और हस्तातंरण द्वारा ज्ञान की वृद्धि होती गई है। ज्ञान की यह परम्परागत श्रृंखला ही शिक्षा है। शिक्षा ने ही मानव को पशु स्तर से उँचा उठाया है। और श्रेष्ठ सांस्कृतिक प्राणी बनाया है। शिक्षा आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है। व्यक्ति अपने जन्म से मृत्य तक जो कुछ भी सीखता है और अनुभव करता है। वह सब शिक्षा के व्यापक अर्थ के अन्तर्गत माना जाता है। उसके सीखने और अनुभव करने का परिणाम यह होता है कि वह धीर-धीरे विभिन्न प्रकार से अपने भौतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण से अपना सामंजस्य स्थापित करता है।

भारतीय समाज पूर्णरूप से पितृ सत्तात्मक समाज है। मगर महिलाये शिक्षा के क्षेत्र में पुरूषों के स्थायित्व वर्चस्व को चुनौती दे रही है, शिक्षा के क्षेत्र में महिलाये पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही है। लेकिन पूर्व में उत्तर प्रदेश में महिला शिक्षकों की स्थिति अत्यधिक दयनीय थी। महिला शिक्षकों के लिये शिक्षण कार्य का सफर कतई आसान नहीं था। मसलन लंबा सफर करके स्कूल पहुचना, स्कूल जाने से पहले घर का सारा काम पूरा करना, बच्चों को तैयार करना, घर के बाकि सद्स्यों का ख्याल रखना आदि, जिनके कारण महिला शिक्षकों को घर से बाहर जाने नहीं दिया जाता था जिसके कारण उन्हे अपने शिक्षण कार्य में कई कठिनाईयों का सामना करना पडता था। वर्तमान में भी महिला शिक्षकों की स्थिति पहले से थोडी ठीक है परन्तु आज भी द्वितीय श्रेणी महिला शिक्षकों को विशेष सुविधायें नहीं प्राप्त है।

अभिवृति का अर्थ – प्रत्येक व्यक्ति का अपना दृष्टिकोण होता है। जिसके कारण वह अपना प्रत्यक्षीकरण करता है। व्यक्ति की विभिन्न वस्तुओं के प्रति इस धारणा को ही अभिवृति कहते हैं। दूसरे शब्दों में किसी व्यक्ति की विशिष्ट घटना के प्रति भावना तथा विश्वास को ही अभिवृति कहते हैं। अभिवृति व्यक्ति को उस दृष्टिकोण की ओर संकेत करती है, जिसके कारण वह किसी वस्तु परिस्थिति संस्था या व्यक्ति के प्रति विशिष्ट व्यवहार करता है।

स्कीनर के अनुसार – अभिवृति की परिभाषा व्यक्तित्व के समूह या किसी संस्था के प्रति सामान्यीकृत चित्तवृद्धि के रूप में की जाती है।

संबंधित साहित्य का अध्ययन – लारेन्स एवं अन्य (2004) द्वारा शोध अध्ययन 'माध्यमिक स्तर पर महिला शिक्षकों की संस्कृत भाषा पढाने में रूचि' किया गया। जिसकी परिकल्पना थी – 1 संस्कृत भाषा के विभिन्न पक्षों में धनात्मक सह संबंध था। 2 इनमें से कुछ संस्कृत भाषा में उपलब्धि बढाते रहे। 3 संस्कृत भाषा की उपलब्धि के प्राप्तांक सामान्य रूप से वितरित थे। इस अध्ययन के निष्कर्ष थे – 1 माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो का व्याकरण एवं शब्द भंडार अधिक हैं। 2 उच्चारण, ज्ञान तथा शब्द की संरचना की तुलना में व्याकरण शब्द भंडार और उच्चारण बोझ अधिक पाया गया। संस्कृत भाषा की उपलब्धि स्तर विभिन्न पाई गई।

जेनिसन एवं बेस्विक, माइकल एवं किम (2009), 'अंश व हर (Frictions)के सवालों को सीखने के लिए विद्याथियों का अभिभावकों, शिक्षकों एवं शिक्षण विधि का प्रत्यक्षीकरण' पर शोध अध्ययन किया। इस शोध अध्ययन के उद्देश्य थे- 1 अंश व हर के सवालों का गणित विषय में महत्व को जानना। 2 इन सवालों को पढाने के लिए उपयुक्त विधि का पता लगाना तथा विद्यार्थियों की अभिक्षमता का पता लगाना। इस शोध अध्ययन में सर्वेक्षण विधि व प्रश्नावली प्रविधि का उपयोग किया गया। इस शोध अध्ययन के निष्कर्ष थे- 1 विद्यार्थी इन सवालों को सीखने के प्रति सकारात्मक अभिवृति रखते हैं। 2 विद्यार्थियों को इन सवालों के अवबोध कराने के लिए प्रविधि में परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की गई। 3 इन सवालों को समझने के लिए छात्रों की सहभागिता को बढाना आवश्यक माना गया है।

मटिबा एवं मेथिस (2009), 'तंजानिया के माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों अभिभावकों एवं शिक्षको का प्राइवेट ट्यूशन के प्रति प्रत्यक्षीकरण।' पर शोध अध्ययन किया। जिसके उद्देश्य थे- 1 अभिभावकों का ट्यूशन के प्रति रूझान का अध्ययन। 2 शिक्षकों का टयुशन के प्रति आकर्षण के कारणों का पता लगाना। इस शोध अध्ययन में उपकरण

* प्राचार्य, महिला विद्या मंदिर, शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, प्रतापगढ (राज.) भारत
** प्रो. चोधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ (उत्तर प्रदेश) भारत

व्यक्तिगत अध्ययन प्रविधि, साक्षात्कार, एवं समूह चर्चा का प्रयोग किया गया। इस शोध के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है, कि वर्तमान में शिक्षा के क्षेत्र की समस्याओं के फलस्वरूप ट्यूशन का प्रभाव बढ गया है। अभिभावकों द्धारा समयभाव के कारण ट्यूशन की ओर आकर्षित होता है। परीक्षा में पास करवाने हेतु ट्यूशन को आवश्यक मानते हैं। विषय विशेषज्ञों की विषय में कमी होने के कारण भी ट्यूशन का प्रभाव बढा है। शिक्षकों द्धारा अपनी आय को बढाने के लिए ट्यूशन के प्रति आकर्षण बढा है।

औचित्य – स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमारी राष्ट्रीय सरकार शिक्षा के प्रति सजग रही है। समय समय पर विभिन्न आयोगों का गठन किया गया, किंतु जनसंख्या के दबाव के कारण शैक्षिक समस्याऍं बढती रही है । जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में स्कूलों, कॉलेजों की स्थापना नहीं हो पायी, जिससे कक्षा में छात्रों की संख्या बढ गई। साथ ही पुरूष शिक्षकों की भर्ती के साथ महिला शिक्षकों को भी आरक्षण देकर शिक्षक पद के लिये अधिकाधिक भर्ती की जाने लगी। इसलिये शोधार्थी ने इन महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति के संबंध में अध्ययन करने का निश्‍ किया।

समस्या कथन – पूर्वी उत्तर प्रदेश में द्धितीय श्रेणी महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन

उद्देश्य :

1. सरकारी विद्यालय एवं गैर सरकारी विद्यालय के द्धितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों में अभिवृति का अध्ययन करना।

परिकल्पना :

1. गैर सरकारी विद्यालय के द्धितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों में अभिवृति एवं सरकारी विद्यालय के द्धितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।

सीमांकन – प्रस्तुत शोध उत्तर प्रदेश के बिहार क्षेत्र के द्धितीय श्रेणी के सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालय के महिला शिक्षकों पर किया गया । अत: समय एवं सीमित साधनों से परिणाम प्राप्त किये गये।

उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में उपकरण के रूप में स्व–निर्मित अभिमतावली का प्रयोग किया गया है जिसमें 20 प्रश्न थे, जिनका उत्तर हॉ/ नहीं में देना था।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श के रूप में उत्तर प्रदेश के बिहार जिले में सरकारी विद्यालयों एवं गैर सरकारी विद्यालयों में कार्यरत 100 महिला शिक्षकों को लिया गया है।

प्रदत्तों का संकलन एवं विश्लेषण

सरकारी विद्यालय एवं गैर सरकारी विद्यालय के द्धितीय श्रेणी महिला शिक्षकों अभिवृत्ति की का अध्ययन

सारणी क्रमांक –1

क्र.	कथन	सरकारी पूर्णांक 100 प्राप्तांक	निजी पूर्णांक 100 प्राप्तांक
1	प्रधानाध्यापक द्धारा महिला शिक्षकों को प्रताडित करना	43	57
2	पुरूष शिक्षकों द्धारा महिला शिक्षकों को ट्युशन न करने देना	22	78
3	कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या अधिक होने के कारण महिला शिक्षकों द्धारा कन्ट्रोल न होना	61	39
4	अतिरिक्त विद्यालयीन कार्य महिला शिक्षकों को सौंपना	69	34
5	प्रायोगिक परीक्षा को ठीक से न करवा सकना।	40	60
6	महिला शिक्षक विद्यार्थियों को गहन अध्ययन के लिये प्रेरित करना।	39	71
7	विद्यालय में पाठ्यक्रम समय पर पूर्ण न होने के कारण महिला शिक्षकों को परेशान करना ।	34	66
8	महिला शिक्षकों के द्धारा ट्यशन करने का दबाव बनाना	22	78
9	अभिभावक के पास समयाभाव होने के कारण विद्यार्थियों को ट्यूशन करने के लिये उकसाना।	17	83
10	घर के कार्यो को स्कूल में आकर बताना	67	33
11	अभिभावकों की इच्छा पूर्ति हेतु विद्यार्थी की ट्यूशन करना।	33	67
12	परीक्षा में अच्छे अंक पाने के लिये ट्यूशन के लिये प्रेरित करना	44	56
13	पुरूष शिक्षकों द्धारा महिला शिक्षकों के कार्य में किसी भी प्रकार का सहयोग न देना	54	46
14	महिला शिक्षकों द्धारा विद्यार्थी की विषयगत कमजोरी दूर करने का प्रयास करना।	91	43
15	विद्यालय पाठ्यक्रम के अलावा ज्ञानवृद्धि के लिये अतिरिक्त पुस्तकों का अध्ययन करना	51	52
16	बोर्ड परीक्षा परिणाम उच्च लाने के लिये पुरूष शिक्षक की अपेक्षा अधिक प्रयास करना	24	76
17	भविष्य की महत्वाकांक्षा पूर्ण करने के लिये कठिन परिश्रम करना।	37	63
18	संस्था में प्रतिदिन देरी से पहुचने पर शर्मिंदा होना	53	47
19	महिला शिक्षको द्धारा विद्यार्थियों से मातृत्वपूर्ण व्यवहार करना।	42	58
20	महिला शिक्षकों द्धारा अपने साथी पुरूषों को समय समय पर सहयोग करना।	24	76

$$\frac{N\sum xy - \sum x.\sum y}{\sqrt{[N\sum x^2 - (\sum x)^2]\,[N\sum y^2 - (\sum y)^2]}}$$

$$r = \frac{19 \times 1344 - (-26) \times (-76)}{\sqrt{[19 \times 5142 - (-26)^2][19 \times 2156 - (-76)^2]}}$$

$$r = \frac{25536 - 1976}{\sqrt{[97698 - 676]\,[40964 - 5776]}}$$

$$r = \frac{23560}{\sqrt{97022 \times 35188}}$$

$$r = \frac{23560}{\sqrt{3414010136}}$$

$$r = \frac{23560}{58429.5314}$$

$$r = 0.40322$$

निष्कर्ष – सरकारी विद्यालय एवं गैर सरकारी विद्यालय के महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति में सहसंबंध का मूल्य 0.40 प्राप्त हुआ , जो कि पियर्सन के सहसंबंध गुणांक के आधार पर निम्न कोटि का सहसंबंध है। अत: परिकल्पना 'गैर सरकारी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों में अभिवृति एवं सरकारी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।', निरर्थक सिद्ध हुई। सारणी के अनुसार गैर सरकारी विद्यालय के महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति सरकारी विद्यालय के महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति अधिक सकारात्मक नहीं पाई गई, क्योंकि सरकारी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी की महिला अध्यापकों को कक्षा में व्यवस्थित न पढाने या किसी भी अन्य कार्य को करने नहीं करने की स्थिति में भी उन पर प्राचार्य द्वारा विशेष दबाव नहीं डाला जाता और उनकों अपनी नौकरी न रहने का खतरा भी नहीं रहता है, इसके विपरीत गैर सरकारी विद्यालयों में कार्यरत महिला शिक्षकों को अत्यधिक कार्यभार संभालना पडता है। और हर समय उनकी नौकरी एक तलवार की नौंक पर टिकी रहती है। इसलिये उनमें सरकारी विद्यालयों में कार्यरत महिला शिक्षकों की अपेक्षा अभिवृत्ति कम पाई जाती है।

शैक्षिक निहितार्थ – विभिन्न विद्यायलों के वातावरण का विद्यार्थियों की संस्कृति उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया जा सकेगा तथा विद्यालय के वातावरण में सुधार किया जा सकेगा।

किसी भी क्षेत्र में किये गये शोध कार्य उसकी वर्तमान में उपयोगिता को ध्यान में रखकर किये जाते हैं। इसकी उपयोगिता शिक्षकों के लिये हो या विद्यार्थियों के लिये पालकों को लिये या फिर सामान्य व्यक्तियों के लिये हो, उसका निहितार्थ आवश्यक है।

इस शोध कार्य द्वारा पुरूष शिक्षक विद्यालय में अपनी संकुचित मानसिकता को बदलते हुये महिला शिक्षकों के प्रति सहयोग जागृत करेगें, जिससे उनकी विचारधार में बदलाव लाया जा सकेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. राजा, नमिता, 'उच्चतर माध्यमिक स्तर पर संस्कृत के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन' अप्रकाशित एम.एड. लघु शोध अध्ययन, एम के कालिया शिक्षा अनुसंधान संस्थान युनिवर्सिटी रोहतक 2015.
2. बेरी एवं बेर, नीमिशा एवं अनुप, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी पंजाब
3. अरूण, आर. एस यट्यूशन के परिप्रेक्ष्य में विद्यार्थियों अभिभावकों एवं अध्यापकों की संस्कृत भाषा में रूचि लेम्बर्ड एकेडमी पब्लिशिंग 2012
4. अग्रवाल, जे.सी. (1996), एजुकेशन रिसर्च एन इन्ट्रोडक्शन, आर्य बुक डिपो, न्यू दिल्ली।
5. http://www.education.edu
6. http://www.education.nic.in
7. http://www.wikipidiya

****

चार्टड एकाउण्टेंट की मुख्य परीक्षा में असफल रहने वाले विद्यार्थियों के मनोवैज्ञानिक व व्यक्तिगत कारकों का अध्ययन

भानुप्रिया सेन * डॉ. सरिता मेनारिया **

प्रस्तावना – 'शिक्षा का महत्व अन्य सभी विषयों से बढ़कर है। एक राष्ट्र का निर्माण उस देश के नागरिक करते हैं और शिक्षा उन नागरिकों का निर्माण करती है।' **– पं. जवाहरलाल नेहरू**

बालक राष्ट्र की धरोहर होते हैं। विख्यात अंग्रेज कवि मिल्टन का कथन है कि जैसे सूर्योदय होने पर ही दिन होता है, वैसे मानव का उद्‌भव भी बालक से ही होता है। अत: प्रत्येक राष्ट्र का यह कर्तव्य है कि वह अमूल्य छात्रगत निष्पत्ति की रक्षा करें। बालकों के भविष्य पर ही राष्ट्र का भविष्य निर्भर करता है तथा शिक्षा के माध्यम से ही बालक का सर्वांगीण विकास किया जा सकता है। एक बालक अपने जीवन को उत्कृष्ट व सार्थक बनाने के लिए शिक्षा के विभिन्न स्तर जैसे प्राथमिक, माध्यमिक उच्च माध्यमिक आदि को उत्तीर्ण कर अपनी रूचि व योग्यता को ध्यान में रखते हुए एक ऐसे क्षेत्र का चुनाव करता है जिसमें वह जीवन भर अपनी योग्यता व कौशल का अच्छा प्रदर्शन कर सके। ध्शिक्षा के जगत में अलग अलग संकाय के विद्यार्थी अलग अलग विषय लेकर अपने भविष्य का निर्माण करते है । आज के व्यावसायिक युग में कई विद्यार्थी अपने कैरियर का निर्माण करने हेतु वाणिज्य संकाय से संबंधित कई कोर्सेज है उनमें प्रवेश लेकर पढ़ाई कर रहे है । उनमें से एक प्रमुख कोर्स है चार्टेड एकाउटेन्ट का है। यह एक उच्च स्तर का कोर्स है इस कोर्स को करने वाले विद्यार्थी को समाज में सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है । यह कोर्स पूरे भारत में एक ही संस्था Institute of chartered Accountant of India New Delhi द्वारा कराया जाता है।

इस कोर्स में प्रवेश पाने के दो तरीके है :–

1. सी.पी.टी. उत्तीर्ण करना।
2. वाणिज्य विषय में स्नातक व स्नातकोतर में मान्य विश्वविद्यालय से 55 प्रतिशत की डिग्री।
3. करने के लिए विद्यार्थी को निम्नलिखित सोपानों को उतीर्ण करना होता है जो इस प्रकार से है:–
4. सी.पी.टी. (कॉमन प्रोफिंसियेन्सी कोर्स) – यह सी.ए. की मुख्य परीक्षा में प्रवेश की प्रथम सीढ़ी है यह एक वस्तुनिष्ठ परीक्षा होती है जिसमें नकारात्मक अंकन होता है। यह परीक्षा वर्ष में दो बार होती है प्रथम तो जून में तथा द्वितीय दिसम्बर माह में होती है। इसमें चार विषय होते है :–

1. अकाउन्टिंग (Accounting)
2. मर्केनटाईल लाज (Mercantile laws)
3. सामान्य अर्थशास्त्र(General economics)
4. मात्रात्मक रूझान (Quantative Aptitude)

यह परीक्षा कुल 200 अंक की होती है तथा यह परीक्षा दो सेशन मेंहोती है जिसमें चार भाग होते है तथा प्रत्येक सेशंन के लिए दो घंटे दिये जाते है। प्रत्येक सेशंन 100 अंक का होता है।विद्यार्थी के सी.पी.टी. उत्तीर्ण करने के बाद उसको सी.ए.की मुख्य परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए आईपीसीसी ,आर्टिकलशिप एवं फाईनल परीक्षा को उत्तीर्ण करना होता है।

मुख्य शब्द – चार्टेट एकाउण्टेंट परीक्षा ,विद्यार्थी एवं असफलता

असफलता के मुख्य कारक :–

1. पारिवारिक कारक
2. सामाजिक कारक
3. आर्थिक कारक
4. शारीरिक या स्वास्थ्य संबंधी कारक
5. मनोवैज्ञानिक कारक
6. नैतिक कारक
7. आध्यात्मिक कारक
8. व्यक्तिगत कारक

शोध उद्देश्य – इस शोध अध्ययन हेतु शोधार्थी ने निम्नलिखित उद्देश्यों का निर्धारण किया है :

1. चार्टड एकाउण्टेंट की मुख्य परीक्षा में असफल रहने वाले विद्यार्थियों के मनोवैज्ञानिक कारकों का अध्ययन करना।
2. चार्टड एकाउण्टेंट की मुख्य परीक्षा में असफल रहने वाले विद्यार्थियों के व्यक्तिगत कारकों का अध्ययन करना।

शोध विधि – शोधकर्त्री को सीमित समय में विस्तृत जानकारी विविध पक्षों के लिए चाहिए जो सर्वेक्षण विधि से संभव है। अत:प्रस्तुत शोध की प्रकृति के आधार पर सर्वेक्षण विधि का चयन किया गया।

शोध उपकरण – शोधकर्त्री ने दत्त संकलन हेतु मनोवैज्ञानिक व व्यक्तिगत कारक संबंधी जाँच सूची का निर्माण किया जिसके आधार पर सीएक़ी मुख्य परीक्षा में असफल रहने वाले विद्यार्थियों के दत्तों का संकलन किया गया है।

शोध का न्यादर्श – प्रस्तुत शोध में न्यादर्श चयन के लिए उदयपुर जिले के ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के कुल 400 सी.ए.की मुख्य परीक्षा में असफल विद्यार्थियों का चयन सोद्देश्य प्रतिचयन विधि द्वारा चयन किया गया, जिसमें 200 ग्रामीण तथा 200 शहरी क्षेत्र से चयन किए गये।

* पी.एच.डी. शोधार्थी, जनार्दनराय नागर विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान) भारत
** पी.एच.डी.पर्यवेक्षक, विद्यापीठ, डबोक,उदयपुर (राजस्थान) भारत

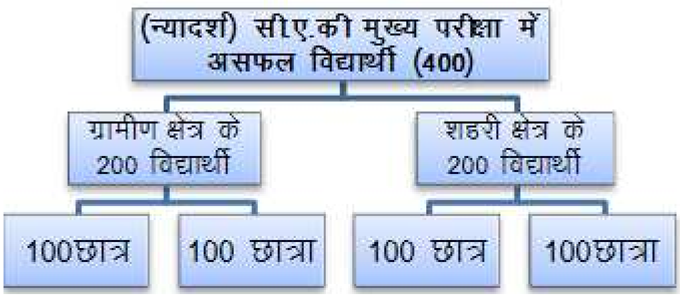

परिणाम व विवेचना – चार्टड एकाउण्टैंट की मुख्य परीक्षा में असफल रहने वाले विद्यार्थियों के मनोवैज्ञानिक कारकों का प्रतिशतवार विश्लेषण

क्र.	कथन	हाँ	नहीं
1.	शिक्षक जल्दी–जल्दी कोर्स पूरा करवाते है।	78	22
2.	परीक्षा के दिनों में दोहरान का पर्याप्त समय नहीं मिलता है।	89	11
3.	वर्तमान पाठ्यक्रम के विस्तृत व पेचिदा होने से पढ़ने व समझने में थकान होती है।	81	19
4.	परीक्षा परिणाम को लेकर चिन्तित रहता हूँ।	77	23
5.	परीक्षा से पूर्व कोर्स पूरा करने की चिन्ता रहती है।	85	15
6.	परीक्षा के दौरान कम सो पाता हूँ।	76	24
7.	परीक्षा के दौरान उचित मार्गदर्शन के अभाव में चिन्तित रहता हूँ।	80	20
8.	साथी सहपाठियों से अधिक अंक प्राप्त करने के प्रयास में भी चिन्तित रहता हूँ।	70	30
9.	सी. ए. मुख्य परीक्षा में असफल होने का भी भय बना रहता है।	82	18

व्याख्या व विश्लेषण – चार्टड एकाउण्टैंट की मुख्य परीक्षा में असफल रहने वाले विद्यार्थियों के मनोवैज्ञानिक कारकों का प्रतिशतवार विश्लेषण करने पर निम्नलिखित परिणाम परिलक्षित होते है:–

1. चार्टड एकाउण्टैंट की मुख्य परीक्षा में असफल रहने वाले विद्यार्थियों का जाँच सूची के कथन संख्या 1,2,3,4,5,6,7,8,तथा 9 पर सहमति का प्रतिशत क्रमश:78,89,81,77,85,76,80,70 व 82 प्राप्त हुआ। निष्कर्षत: विद्यार्थी सी.ए.की मुख्य परीक्षा में मनोवैज्ञानिक कारकों जैसे परीक्षा संबंधी तनाव , परीक्षा संबंधी सही मार्गदर्शन का प्राप्त न होना , पाठ्यक्रम विस्तृत व पेचीदा होना आदि के कारण असफल होता है।

चार्टड एकाउण्टैंट की मुख्य परीक्षा में असफल रहने वाले विद्यार्थियों के व्यक्तिगत कारकों का प्रतिशतवार विश्लेषण

क्र.	कथन	हाँ	नहीं
1.	मैं निर्धारित समय में पाठ्यक्रम पूरा नहीं कर पाने से परेशानी व चिन्ता अनुभव करता हूँ।	80	20
2.	मुझे उचित अध्ययन वातावरण के अभाव में पढ़ाई में कठिनाई होती है।	90	10
3.	मुझे शरारती बालकों के साथ अध्ययन करने में परेशानी महसूस होती है।	70	30
4.	कोचिंग में गहराई से अध्ययन नही कराते है जिससे सम्प्रत्यय के बारे में जानकारी अधूरी रह जाती है।	60	40
5.	विद्यालय में स्वच्छता न होने से मै हमेशा खिन्न रहता हूँ।	75	25
6.	कभी कभी दूसरों के परिणाम देखकर मुख्य परीक्षा की तैयारी नहीं कर पाता हूँ।	82	18
7.	मैं एक साथ 8 से 10 घंटे तक पढ़ाई तक नहीं कर पाता हूँ।	62	38
8.	मैं पारिवारिक जिम्मेदारी निभाते हुए सी.ए. करना चाहता हूँ।	65	35
9	मैं पढाई सदैव एकान्त व शान्त माहौल मे ही कर सकता हूँ।	55	45
10.	मैं समूह के साथ पढ़ाई नही कर पाता हूँ।	84	16

व्याख्या व विश्लेषण – चार्टड एकाउण्टैंट की मुख्य परीक्षा में असफल रहने वाले विद्यार्थियों के व्यक्तिगत कारकों का प्रतिशतवार विश्लेषण करने पर निम्नलिखित परिणाम परिलक्षित होते है:–

1. चार्टड एकाउण्टैंट की मुख्य परीक्षा में असफल रहने वाले विद्यार्थियों का जाँच सूची के कथन संख्या 1,2,3,4,5,6,7,8,9तथा10 पर सहमति का प्रतिशत क्रमश: 80,90,70,60,75,82,70,62,65,55व 84 प्राप्त हुआ। निष्कर्षत: विद्यार्थी सी.ए.की मुख्य परीक्षा में व्यक्तिगत कारकों जैसे निर्धारित समय में पाठ्यक्रम पूरा न होना , दूसरों के परिणाम देखकर , पारिवारिक जिम्मेदारी , समूह के साथ पढ़ाई नहीं आदि के कारण असफल होता है।

सी.ए. की मुख्य परीक्षा में सफलता हेतु सुझाव :

1. परीक्षा की तैयारी के लिए विद्यार्थी को सही व चयनित विशेषज्ञ से निर्देशन प्राप्त कर तैयारी आरम्भ करनी चाहिए।
2. परीक्षा की तैयारी के साथ परम पिता परमेश्वर में पूर्ण आस्था रखनी चाहिए जिससे आत्मबल में वृद्धि होती है।
3. परीक्षा की तैयारी हेतु सर्वप्रथम परीक्षा पेटर्न को अच्छी तरह से समझकर उसी के अनुसार तैयारी करे।
4. परीक्षा में सफल होने के लिए बार बार दोहरान करना चाहिए जिससे स्थायी स्मृति हो सके।
5. कठिन विषयों की तैयारी के लिए सुबह जल्दी उठकर तैयारी करना चाहिए।
6. परीक्षा के दिनों में खान पान का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

वर्तमान में प्रांसगिकता – प्रस्तुत शोध आलेख का महत्व वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों, सी.ए. की कोचिंग सेन्टर के सी.ए. पाठ्यक्रम निर्माणकर्त्ताओं, नवीन अनुसंधान एवं सी.ए. परिणामके दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। विद्यार्थी प्रेरित होकर सी.ए. मुख्य परीक्षा में सफल हो सकते है।

Research Survey in Education :-

1. Buch, M.B. (1970): A Survey of Research in Education CASE, M.S. University, Baroda.
2. Buch, M.B. (1973): Second Survey of Research in Education, Baroda, Society for Educational Research and Development.
3. Buch, M.B. (1983): Third Survey of Research in Education, Baroda, Society for Educational research and Development.
4. Buch, M.B. (1993): Forth Survey of Research in Education NCERT, New Delhi.
5. Buch, M.B. (1995): Forth Survey of Research in Education NCERT, New Delhi.

Books :-

1. Best, J.W. Kahn, James V. (2006): "Research in Education" Prentice Hall of India, New Delhi
2. Ehrhart, Mark G. et.al(2014) :"Organizational Climate and Culture", New York, Rpitledge
3. Evans, Linda(1998):Teacher Morale, Job Satisfaction and Motivation, London, Paul Chapman Publishing Ltd.
4. Fox, J.D.(1969):The Research Process in Education New York, Rineharc and Winston Inc.
5. Good and Halt(1952) :Method in Social Research, New York, McGraw Hill Book Co.
6. Good, C.V. (1959):Introduction to Educational Reseach, New York, Appleton Century Crofts Inc.
7. Guilford, J.P. (1965) :Fundamental Statistics in Psychology and Education, New York Mcgraw Hill Book Co.
8. Karlinger F. (1983): Fundamental of Behavioral Research, New Delhi, Surjeet Publication.
9. Pareekh, Uday (1991):Making Organizational role effective, New Dehli, Tata McGraw Hill Pub. Co.

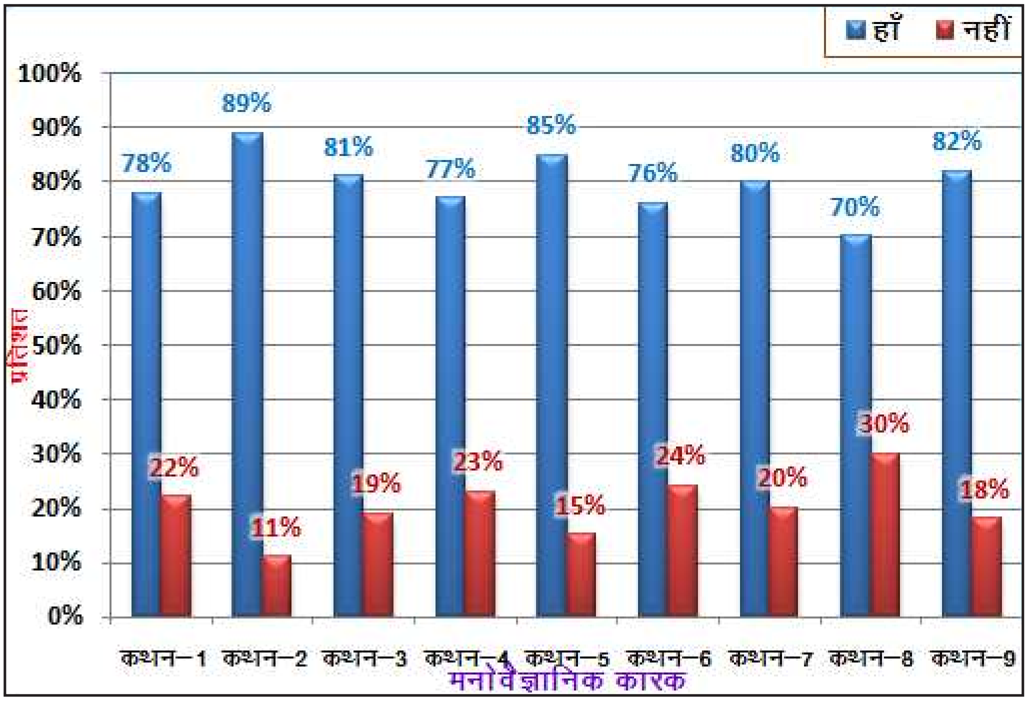

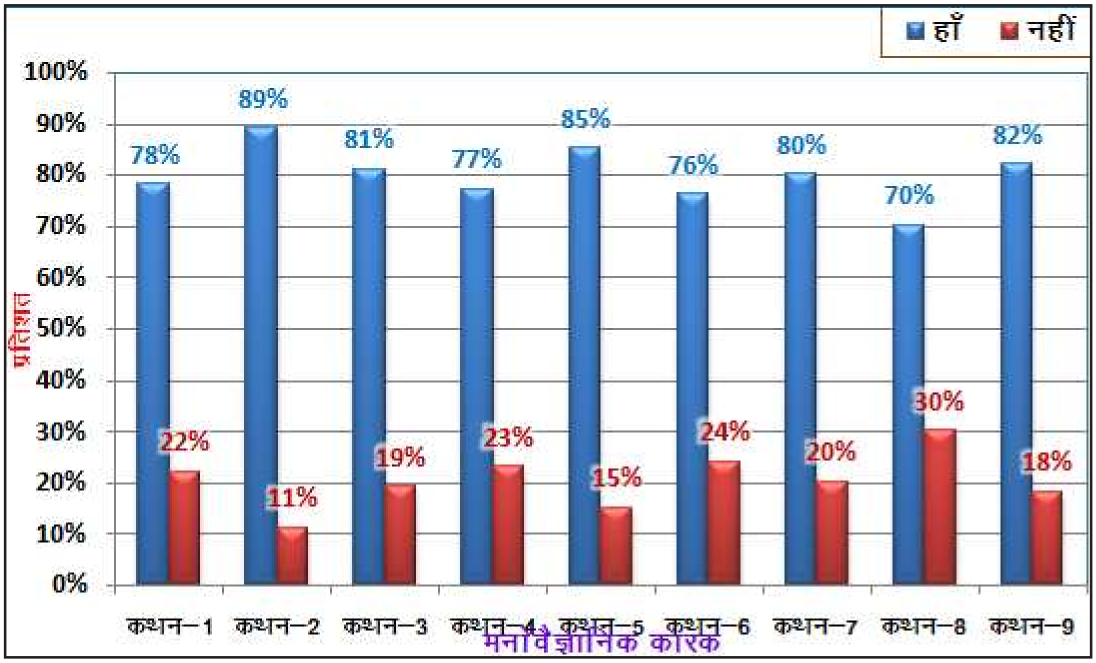

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

पूर्वी उत्तर प्रदेश में द्वितीय श्रेणी महिला शिक्षकों के नैतिक विकास के प्रभाव का अध्ययन

डॉ. ओम प्रकाश शर्मा * डॉ. अजय **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में प्रस्तुत शोध में द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति के अध्ययन के संदर्भ में अध्ययन किया गया है। शोध के लिये प्रस्तुत शोध अध्ययन में उपकरण के रूप में स्व-निर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है जिसमें 20 प्रश्न थे, जिनका उत्तर हॉ/ नहीं में देना था तथा न्यादर्श के रूप में उत्तर प्रदेश के बिहार क्षेत्र के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों का चयन किया गया, जिसमें 100 द्वितीय श्रेणी की महिला शिक्षकों को सम्मिलित किया गया है। शोध परिणामों से प्राप्त हुआ कि सरकारी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों में अभिवृति, गैर सरकारी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों की अभिवृत्ति से अधिक पाई गई।

प्रस्तावना – जिस प्रकार हम जीवन को किसी परिभाषा में नहीं बाँध सकते, उसी प्रकार शिक्षा को भी किसी एक परिभाषा में बाँधना अत्यंत कठिन हैं। जीवन के समान ही शिक्षा भी बहु आयामी है। जब हम शिक्षा की चर्चा करते हैं तब शिक्षा के विभिन्न पहलु हमारे सामने साकार हो जाते हैं। कुछ विद्धान शिक्षा को विद्यालयीन शिक्षा तक सीमित रखना चाहते हैं। यह शिक्षा का अत्यंत संकुचित अर्थ है। कुछ विद्धान शिक्षा को आजीवन चलने वाली प्रक्रिया मानते हैं। अपने दैनिक व्यवहार में बहुधा हम कहते हैं कि मेरा पुत्र पढ़ रहा है अथवा उसकी शिक्षा पुरी हो गई है। इन उद्धारों से यही अर्थ ध्वनित होता है कि शिक्षा- संस्थाओं में ग्रहण की जाने वाली शिक्षा ही सच्ची शिक्षा है। इससे एक अर्थ यह भी निकलता है कि स्कूल जाने के पहले भी बच्चा बहुत कुछ बातें सीखता है और विद्यालय छोड़ने के पश्चात् कुछ सीखता रहता है। वास्तव में शिक्षा का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। उसके अंतर्गत हमारा सम्पूर्ण जीवन आता है। दूसरे शब्दों में सम्पूर्ण जीवन ही शिक्षा काल है। शिक्षा बालक को संस्कारित कर नया जीवन देती हैं, उसका रूपान्तरण करती है। शिक्षा बालक का संस्कारित कर उसे पवित्र तथा शुद्ध बनाती हैं।

नैतिक व्यवहार जन्मजात नहीं होता है। इसे सामाजिक परिवेश से सीखा या अर्जित किया जाता है। सर्वप्रथम बालक का अनौपचारिक रूप से अपने आस-पडोस तथा स्कूल में नैतिक विकास होता है। निसंदेह बच्चा पुरस्कार, दण्ड, प्रशंसा या निंदा के द्धारा अच्छे आचरण सम्पन्न करता है, जो बुरे आचरण का त्याग कर देता है और किशोराव्यस्था में उसके भीतर विवके पैढा होता है। और इसी विवके के द्धारा वह नैतिक व्यवहार को सीखता जाता है। जब नैतिक व्यवहार के बाहरी स्त्रोत समाप्त हो जाते हैं, तो वह आंतरिक स्त्रोत अर्थात विवेक के द्धारा नैतिक व्यवहार को सीखता है और अपने आचरण को नैतिक बनाने का प्रयास करता रहता है।

जब बालक का जन्म होता है, तो वह न तो नैतिक होता है और न ही अनैतिक होता है। बल्कि वह तो अच्छा या बुरा, सही या गलत सभी आचरण समाज से ही सीखता है। इसलिये कहा गया है कि विकास की प्रक्रिया में वातावरण की भूमिका होती है। जो व्यक्ति अपने समाज की मान्यताओं या अपेक्षाओं के अनुसार आचरण करता है। वह नैतिक कहलाता है। इसके विपरीत जो इनका अनुसरण नहीं करता है, वह अनैतिक कहलाता है।

हरलॉक ने नैतिक व्यवहार को सीखने के लिये कुछ बातों को आवश्यक माना है, जो निम्नलिखित है-

1. बालक को स्पष्ट रूप से यह बता देना चाहिये कि क्या सही है ? और क्या गलत है ?
2. यदि बालक अच्छा आचरण करे तो उसे स्वयं ही प्रसन्नता का अनुभव होना चाहिये और यदि वह बुरा आचरण करे तो उसे स्वयं ही खेद का अनुभव होना चाहिये।
3. बालक को यह भी बताने का प्रयास करना चाहिये कि कोई व्यवहार या बात क्यो सही है और क्यों गलत है ?

नैतिक व्यवहार का विकास बालक के सामाजीकरण का महत्वपूर्ण लक्ष्य होता है। नैतिक विकास के साथ माता-पिता की अभिवृत्तियों, पालन-पोषण की विधियों तथा परिवार की सामाजिक आर्थिक दशा का सीधा संबंध होता है। बच्चों के लिये उसके माता-पिता व परिवार के अन्य सदस्य व अध्यापक प्रभावशाली नमूनों या मॉडल का कार्य करते हैं। बालक ऐसे मॉडल का अनुकरण करके ही नैतिक व्यवहार को सीखता है। और नैतिक विकास की ओर अग्रसर होता है।

संबंधित साहित्य का अध्ययन – लारेन्स एवं अन्य (2004) द्धारा शोध अध्ययन 'माध्यमिक स्तर पर महिला शिक्षकों की संस्कृत भाषा पढानें में रूचि' किया गया। जिसकी परिकल्पना थी – 1 संस्कृत भाषा के विभिन्न पक्षों में धनात्मक सह संबंध था। 2 इनमें से कुछ संस्कृत भाषा में उपलब्धि बढाते रहे। 3 संस्कृत भाषा की उपलब्धि के प्राप्तांक सामान्य रूप से वितरित थे। इस अध्ययन के निष्कर्ष थे – 1 माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो का व्याकरण एवं शब्द भंडार अधिक हैं। 2 उच्चारण, ज्ञान तथा शब्द की संरचना की तुलना में व्याकरण शब्द

* प्राचार्य, महिला विद्या मंदिर, शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, प्रतापगढ (राज.) भारत
** प्रो. चोधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ (उत्तर प्रदेश) भारत

भंडार और उच्चारण बोझ अधिक पाया गया। संस्कृत भाषा की उपलब्धि स्तर विभिन्न पाई गई।

मटिबा एवं मेथिस (2009), 'तंजानिया के माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों अभिभावकों एवं शिक्षको का प्राइवेट ट्यूशन के प्रति प्रत्यक्षीकरण।' पर शोध अध्ययन किया। जिसके उद्देश्य थे- 1 अभिभावकों का ट्यूशन के प्रति रूझान का अध्ययन। 2 शिक्षकों का टयुशन के प्रति आकर्षण के कारणों का पता लगाना। इस शोध अध्ययन में उपकरण व्यक्तिगत अध्ययन प्रविधि, साक्षात्कार, एवं समूह चर्चा का प्रयोग किया गया। इस शोध के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है, कि वर्तमान में शिक्षा के क्षेत्र की समस्याओं के फलस्वरूप ट्यूशन का प्रभाव बढ गया है। अभिभावकों द्वारा समयभाव के कारण ट्यूशन की ओर आकर्षित होता है। परीक्षा में पास करवाने हेतु ट्यूशन को आवश्यक मानते हैं। विषय विशेषज्ञों की विषय में कभी होने के कारण भी ट्यूशन का प्रभाव बढा है। शिक्षकों द्वारा अपनी आय को बढाने के लिए ट्यूशन के प्रति आकर्षण बढा है।

औचित्य – पूर्व में पुरूष शिक्षको की भर्ती की जाती थी महिला शिक्षकों को हीन भावना से देखा जाता था। पुरूष शिक्षकों ने सदैव महिला शिक्षकों क साथ भेदभाव पूर्ण व्यवहार किया लेकिन वर्तमान में पुरूष शिक्षकों की भर्ती के साथ महिला शिक्षकों को भी आरक्षण देकर शिक्षक पद के लिये अधिकाधिक भर्ती की जाने लगी। इसलिये शोधार्थी ने इन महिला शिक्षकों के नैतिक विकास के प्रभाव के संबंध में अध्ययन करने का निश्य किया।

समस्या कथन

पूर्वी उत्तर प्रदेश में द्वितीय श्रेणी महिला शिक्षकों के नैतिक विकास के प्रभाव का अध्ययन

उद्देश्य :

1. निजी एवं सरकारी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों के नैतिक विकास के माध्य फलांकों में तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना :

1. निजी एवं सरकारी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों के नैतिक विकास के माध्य फलांकों में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।

सीमांकन – प्रस्तुत शोध उत्तर प्रदेश के बिहार क्षेत्र के द्वितीय श्रेणी के सरकारी एवं निजी सरकारी विद्यालय के महिला शिक्षकों पर किया गया। अतः समय एवं सीमित साधनों से परिणाम प्राप्त किये गये।

उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में उपकरण के रूप में नैतिक विकास के लिये प्रो. दुर्गानंद सिन्हा एवं डॉ. मीरा वर्मा द्वारा निर्मित प्रामाणिक मापनी का उपयोग किया गया है। इलाहाबाद के प्रो. दुर्गानंद सिन्हा एवं डॉ. मीरा वर्मा ने 1962 में नैतिक विकास मूल्यांकन प्रपत्र का निर्माण विद्यार्थियों के नैतिक विकास को जानने के उद्देश्य से किया। इस प्रमापनी में कुल 6 भाग दिये गये है, तथा भाग 1 एवं 2 में 10-10 प्रश्न, भाग 3 एवं 4 में 8-8 प्रश्न , भाग 5 में 6 प्रश्न एवं भाग 6 में 8 प्रश्न दिये गये है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श के रूप में उत्तर प्रदेश के बिहार जिले में सरकारी विद्यालयों एवं गैर सरकारी विद्यालयों में कार्यरत 50-50 कुल 100 महिला शिक्षकों को लिया गया है।

प्रदत्तों का संकलन एवं विश्लेषण

तालिका 1 – (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका 1 से पता चलता है कि बिहार जिले के शासकीय एवं निजी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों के नैतिक विकास का **t** का मान 6.96 है, जो **df = 98** के सार्थकता के स्तर 0.01 पर सार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना 'निजी एवं सरकारी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों के नैतिक विकास के माध्य फलांकों में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।' निरस्त की जाती है। निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि निजी विद्यालय के क्षितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों के नैतिक विकास के माध्य फलांकों का मान 55.52 हैं, जो शासकीय विद्यालय के क्षितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों के नैतिक विकास के माध्य फलांकों के मान 45.82 से सार्थक रूप से ज्यादा है। अर्थात् निजी विद्यालय के क्षितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों का नैतिक विकास शासकीय विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों के नैतिक विकास की तुलना में अधिक है। निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि निजी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों का नैतिक विकास शासकीय विद्यालय के द्वितीय श्रेणी के महिला शिक्षकों के नैतिक विकास से सार्थक रूप से अधिक है।

निष्कर्ष – सारणी के अनुसार निजी विद्यालय के महिला शिक्षकों का नैतिक विकास सरकारी विद्यालय के महिला शिक्षकों के नैतिक विकास से अधिक सकारात्मक पाया गया, क्योंकि निजी विद्यालय के द्वितीय श्रेणी की महिला अध्यापकों को कक्षा में व्यवस्थित न पढाने पर या किसी भी अन्य कार्य को करने नहीं करने की स्थिति में भी उन पर प्राचार्य द्वारा विशेष दबाव डाला जाता और उनकों अपनी नौकरी न रहने का खतरा भी सदैव रहता है, इसके विपरीत सरकारी विद्यालयों में कार्यरत महिला शिक्षकों को अत्यधिक कार्यभार नहीं संभालना पडता है। और हर समय उनकी नौकरी नहीं जाने का खतरा भी नहीं रहता है। विद्यालय में ठीक से न पढानें पर भी अभिभावकों द्वारा लडनें आनें से भी उनकों कोई फर्क नहीं पडता है। और न ही विद्यालय में विद्यार्थियों के वरिणामों से उनको कोई फर्क पडता है। इसलिये उनमें सरकारी विद्यालयों में कार्यरत महिला शिक्षकों की अपेक्षा निजी विद्यालय में कार्यरत महिला शिक्षकों के नैतिक विकास में वृद्धि पाई गई।

शैक्षिक निहितार्थ – विभिन्न विद्यायलों के वातावरण का विद्यार्थियों की संस्कृति उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया जा सकेगा तथा विद्यालय के वातावरण में सुधार किया जा सकेगा।

किसी भी क्षेत्र में किये गये शोध कार्य उसकी वर्तमान में उपयोगिता को ध्यान में रखकर किये जाते हैं। इसकी उपयोगिता शिक्षकों के लिये हो या विद्यार्थियों के लिये पालकों को लिये या फिर सामान्य व्यक्तियों के लिये हो, उसका निहितार्थ आवश्यक है।
इस शोध कार्य द्वारा पुरूष शिक्षक विद्यालय में अपनी संकुचित मानसिकता को बदलते हुये महिला शिक्षकों के प्रति सहयोग जागृत करेगें, जिससे उनकी विचारधार में बदलाव लाया जा सकेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. राजा, नमिता, 'उच्चतर माध्यमिक स्तर पर संस्कृत के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन' अप्रकाशित एम.एड. लघु शोध अध्ययन, एम के कालिया शिक्षा अनुसंधान संस्थान युनिवर्सिटी रोहतक 2015.
2. बेरी एवं बेर, नीमिशा एवं अनुप, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी पंजाब
3. अरूण, आर. एस यट्यूशन के परिप्रेक्ष्य में विद्यार्थियों अभिभावकों एवं अध्यापकों की संस्कृत भाषा में रूचि लेम्बर्ड एकेडमी पब्लिशिंग 2012
4. अग्रवाल, जे.सी. (1996), एजुकेशन रिसर्च एन इन्ट्रोडक्शन, आर्य

बालश्रम एक समस्या एवं उसका निराकरण

डॉ. गरिमा पारीक *

प्रस्तावना - आज के बालक ही कल के विश्व के नागरिक होंगे। उनका निर्माण उनकी परिपक्व आयु उपलब्ध होने पर नहीं, बाल्य काल में ही संभव है, जब उनमें संस्कारों का समावेश किया जाता है। संतानोत्पादन के बाद सबसे महत्वपूर्ण उपक्रम है उन्हें बड़ा करना, उन्हें शिक्षा व विद्या दोनों देना तथा संस्कारों से अनुप्राणित कर उनके समग्र विकास को गतिशील बनाना। सद्गुणों की सम्पत्ति ही वह निधि है जो बालकों का सही निर्माण कर सकती है।

बच्चों का विकास बहुत अधिक माता-पिता, शिक्षको, गुरु एवं वातावरण पर निर्भर करता है। उपेक्षा और उदासीनता के द्वारा जिस प्रकार बच्चों को क्रूर एवं निकम्मा बनाया जाता है, उसी प्रकार प्रयत्न और भावना पूर्वक उन्हें तेजस्वी और मनस्वी भी बनाया जा सकता है, प्राचीन काल में यही व्यवस्था थी। प्यार के साथ सुधार की, तप-तितीक्षा-योगाभ्यास की व्यवस्था बनी रहने से एक समग्र व्यक्तित्व विकसित होता था। दुर्भाग्य से अपने देश से वह वातावरण गुरुकुलों, आश्रमों, आरण्यकों के समापन के साथ ही समाप्त होता चला गया, इसीलिए आज हमारी संतति निस्तेज, खोखली होती चली जा रही है। यह हमारी उपेक्षा, वातावरण की विषाक्तता एवं सांस्कृतिक मूल्यों को भूल जाने का ही परिणाम है। भोगवाद की दौड़ में हमने संततियों की उपेक्षा की है, उसी का परिणाम आज भोग रहे हैं।

शिशु अवस्था वस्तुत: कोरे कागज के समान है। इस कोरे कागज पर चाहे काली स्याही से लिख दें अथवा रंगीन कलाकृति ढाल दें। बालक वस्तुत: उस रूप में ढलता चला जाता है जैसा वह बड़ों को, औरो को करते देखता है। इस नाजुक अवस्था में यदि इस समय का सही उपयोग संस्कारों की गहरी छाप डाली जा सके तो जैसा हम चाहते है, वैसा ही नागरिक ढाला जा सकना संभव है। पं. श्रीराम शर्मा आचार्य लिखते है कि प्रेम, प्रोत्साहन, सम्मान तथा सुरक्षा की आवश्यकता बड़ों से अधिक बच्चों को है। एक अनचाहा, उपेक्षित बच्चा, एक रोगी व समस्यापूर्ण बच्चा ही नहीं, अपराधी भी बन सकता है। मात्र थोड़े से स्नेह व दुलार-सुधार की समन्वित नीति से बच्चों को वह दिशा दी जा सकती है जिससे वे राष्ट्र के एक जिम्मेदार नागरिक बन सके। यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि राष्ट्र का आधार है समर्थ सशक्त भावी पीढ़ी, जो संस्कारवान हो। आज के आस्था संकट व सांस्कृतिक प्रदूषण के युग में यह एक अनिवार्य आवश्यकता है कि भौतिक विकास के साथ-साथ बालकों के भावनात्मक नवनिर्माण व सर्वांगीण विकास पर भी समान रूप से ध्यान दिया जाय।

किन्तु यह हमारे राष्ट्र की विडम्बना ही है कि हम बालकों की शिक्षा पर तो ध्यान देने का प्रयास करते है किन्तु दीक्षा (संस्कार) पर नहीं। पारिवारिक परिस्थितियों व आर्थिक मजबूरियों के कारण वे नन्हे-नन्हें हाथ जिन्हें कलम अथवा खिलौना से सुसज्जित होना चाहिए था वे कारखानों, भट्टियों एवं भारी भरकम गोदामों में काम करते दिखाई देते है अथवा मानसिक उद्वेलन व आस-पास की भौतिक, अनैतिक चकाचौंध से दिग्भ्रमित होकर अपने हाथों में हथियार थामते व अपराध करते दृष्टिगोचर होते हैं। यह चिन्ताजनक राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है। जो समूल नष्ट होनी चाहिए ताकि हमारी कर्णधार भावी पीढ़ी का सद्निर्माण हो सके।

बच्चों का कोमल मन जीवन के विभिन्न प्रलोभनों की ओर शीघ्रतापूर्वक आकृष्ट होते हैं। इसी कारण वे अपराधी-प्रवृत्ति के शिकार सरलता से होते हैं। जैसे कहा जाता है कि आज का बालक कल का नागरिक है। अत: यदि उसकी आपराधिक प्रवृत्ति पर यथासमय नियंत्रण नहीं रखा जाता तो आगे चलकर उसके अभ्यस्त अपराधी बन जाने की संभावना को नकारा नहीं जा सकता।

बाल्यावस्था में उनकी कोमल सुकुमार कल्पना का सोचसमझकर और सूझ-बूझ के साथ ही स्पर्श होना चाहिए। जिस प्रकार एक खिलता हुए फूल ताप की अधिकता व जल की कमी से पूर्ण विकास को प्राप्त करने की बजाय मुरझा जाता है। उसी प्रकार सुकुमार बच्चे भी परिवार की पाठशाला तथा समाज के कठोर व उपेक्षित वातावरण में अपने गुणों का विकास नहीं कर सकते।

आज के समय के बच्चों, किशोरों तथा नवयुवकों के आचार-व्यवहार की लोग आलोचना तो करते हैं पर यह उत्तरदायित्व स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है कि उन्होंने जो सीखा है वह अपने बड़ों की पीढ़ी से सीखा है। बच्चों के आचार व्यवहार की पाठशाला विद्यालय नहीं वरन् परिवार और समाज है। इन सब बातों में उनके गुरु, उनसे बड़े लोग हैं। हम जब बच्चों या नवयुवकों की पीढ़ी को कोसते हैं तो परोक्ष में स्वयं को ही कोसते है। इस बात को हम जितना जल्दी समझ लें, उतना ही अच्छा है।

अनुमान है कि कम से कम 20 करोड़ बच्चे देश में मजदूरी करते हैं और ग्यारह राज्यों में तो यह संख्या 90 प्रतिशत के लगभग है। एक सरकारी संस्था की रिपोर्ट के अनुसार इन बच्चों को मजदूरी करने के लिए मजबूर किया जाता हैं। सम्पूर्ण दक्षिण एशिया के देशों में बाल मजदूरी एक बहुत बड़े दोष के रूप में व्याप्त है। भारतीय संविधान की धारा 24 के अन्तर्गत यह स्पष्ट है कि 14 वर्ष से कम आयु वाले बच्चें कारखानों या किसी भी ऐसी जगह जहां उनके स्वास्थ्य के लिए खतरा हो, काम नहीं करेंगे। लेकिन आजादी के 62 वर्ष पश्चात् भी हमारा देश इस बुराई से मुक्ति नहीं पा सका है। साधारणत: छोटे-छोटे रेस्टोरेंटों, होटल, कारखानों, यहां तक कि स्लेट और ब्रास के कारखानों में छोटे बच्चे काम करते दिखाई देते है। जनसंख्या वृद्धि, गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी आदि बहुत बड़े कारण हैं जिनकी वजह से इस

* प्राचार्या (राजनीति विज्ञान) बाबा श्याम ऋषि संस्कृति पी.जी. महाविद्यालय, खाटूश्यामजी, सीकर (राज.) भारत

समस्या को हल करने का उपाय नहीं सूझता। बाल मजदूरी बढ़ने के कई कारण हैं-काम करने वाले बच्चें कम पैसों में मिल जाते हैं। छोटे-छोटे बच्चों को डराना-धमकाना आसान होता है तथा मालिक उन्हें डरा-धमकाकर कम पैसे देकर अपना काम करता है। छोटे बच्चों से मालिकों को कोई खतरा भी नहीं होते, उन पर भरोसा किया जा सकता है। यहां तक कि यदि कारखानों में काम करते समय बच्चा बुरी तरह घायल हो जाए तब भी वह आवाज नहीं उठा सकता। कारखानों में काम करने वाले बच्चों को अक्सर सांस की बीमारी फेफड़ों की बीमारियां हो जाती है।

बच्चों से उनका बचपन छीनकर उन्हें एक प्रकार से भट्टी में झोंक दिया जाता है। न उन्हें उच्च शिक्षा प्राप्त होती है न खेलने को मिलता है, न ही वे जीवन का कोई आनंद उठा पाते हैं। बड़े होते हुए यह बच्चे इतने व्यसनी हो जाते है कि उनमें अधिकांश अपराध की ओर मुड़ जाते है। बाल मन सामान्यत: अपने घर-परिवार तथा आस-पास की स्थितियों से अपरिचित रहा करता है। स्वच्छंद रूप से खाना-पीना एवं खेलना ही वह जानता है एवं प्राय: इन्हीं बातों का अर्थ समझा करता है। कुछ ओर बड़ा होने पर तख्ती, स्लेट और प्रारम्भिक पाठमाला लेकर पढ़ना-लिखना-सीखना प्रारम्भ कर देता है, लेकिन परिस्थितियां कुछ ऐसी बन गई अथवा बन रही है कि उपयुक्त कार्यों का अधिकार रखने वाले बालकों के हाथ-पैर दिन रात मेहनत-मजदूरी करने के लिए विवश होकर धुलि-धूसरित तो हो ही चुके हैं, कठोर एवं छलनी भी हो चुके होते हैं। चेहरों पर बाल सुलभ मुस्कान के स्थान पर अवसाद की गहरी रेखायें स्थायी डेरा डाल चुकी है। फूल की तरह ताजा गंध से महकते रहने योग्य फेफड़ों में धूल-धुआं भरकर उसे अस्वस्थ एवं दुर्गन्धित कर चुके होते हैं। ऐसे बाल मजदूर कई बार तो डर, भय, बलात् कार्य करने जैसी विवशता के बोझ तले दबे-घुटे प्रतीत होते है और कई बार बड़े-बूढ़ों की तरह दायित्व बोध से दबे हुए भी। कारण कुछ भी हो, बाल मजदूरी न केवल किसी एक स्वतंत्र राष्ट्र अपितु सम्पूर्ण मानवता के माथे पर कलंक है। बालमजदूरी करने वाले बच्चों से बारह-चौदह घण्टे काम लिया जाता है, बदले में वेतन बहुत कम दिया जाता है न ही अन्य प्रकार की कोई सुविधा दी जाती है। यहां तक कि इनके स्वास्थ्य का भी ध्यान नहीं रखा जाता। इतना ही नहीं, यदि ये बीमार पड़ जाये तब भी इन्हें छुट्टी नहीं दी जाती अपितु काम करते रहना पड़ता है। ढाबों-चाय घरों आदि में या फिर हलवाइयों की दुकानों पर काम कर रहें बच्चों की दशा तो और भी अधिक दयनीय होती है। कई बार तो उन्हें बचा-खुचा जूठन ही खाने-पीने को बाध्य होना पड़ता है। इस प्रकार बाल मजदूरी का जीवन बड़ा ही दयनीय एवं यातनापूर्ण होता है।

बाल श्रम का अर्थ समाज में व्याप्त उस गलत व्यवस्था से है जिसमें कम आयु के छोटे बच्चे अपनी इच्छा के विपरीत अथवा विवशता के कारण छोटी उम्र में ही मजदूरी करने के लिए मजबूर होते है। एक सर्वे के अनुसार कोई भी बालक अपनी इच्छा से इस उम्र में श्रम नहीं करना चाहता, किंतु हमारे समाज में फैली असमान आर्थिक व्यवस्था व बिगड़ते सामाजिक ढाँचे के कारण ही इस बुराई का जन्म हुआ है और बाल मजदूरी जैसे अनैतिक कार्य को बढ़ावा मिला है।

किसी भी शिशु के जन्म से वयस्क होने तक के बीच की अवस्था अत्यंत कोमल और संवेदनशील होती है। इसी बालपन की अवस्था में बालक को अपने भविष्य व जीवन की सही दशा व दिशा का ज्ञान होना आवश्यक होता है। अनेक ऋषि-मुनियों से लेकर विद्वानों ने बच्चों की तुलना कच्ची मिट्टी से करते हुए कहा है 'बच्चा उस कच्ची मिट्टी के समान है जिसे-जिस रूप व आकार में ढाला जाए वह उसी के अनुसार बन जाता है।' बच्चों को कोमल पौधे व फूल के समान भी माना गया है, जिसकी अगर सही प्रकार से देखभाल न हो तो वे मुरझा जाते हैं व समय से पहले ही नष्ट हो जाते हैं। हम सभी का कर्त्तव्य बन जाता है कि हम बच्चों व राष्ट्र के भविष्य की रक्षा करें तथा बाल मजदूरी जैसी सामाजिक बुराई को जड़ से समाप्त करें। इसके लिए यह परमावश्यक है कि हम बाल मजदूरी के कारणों को जानें तथा बाल मजदूरी के कारणा होने वाले दुष्परिणामों को समझें। इसके बाद ही हम बाल मजदूरी को रोकने व समाप्त करने के प्रयास कर सकते हैं।

बाल श्रम भारत की एक भयावह ज्वलंत समस्या है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 24 के द्वारा 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को काम पर लगाने से रोक 20 नवम्बर, 1989 को 'संयुक्त राष्ट्र महासभा' द्वारा 'बाल अधिकार' घोषणा, 10 दिसम्बर, 1996 को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा बाल मजदूरी को गैर-कानूनी घोषित करने के बावजूद अधिकांश बालकों को सामाजिक परिस्थितियों एवं आर्थिक विपन्नता के कारण शिक्षा प्राप्त करने के बजाय श्रमिक बनना पड़ता है।

बाल श्रम के निम्नलिखित दुष्परिणाम भुगतने पड़ते है:-

1. मानसिक उत्पीड़न
2. शारीरिक प्रताड़ना
3. यौन उत्पीड़न
4. अशिक्षा
5. कुपोषण

बाल मजदूरी रोकने के प्रयास – बाल मजदूरी जैसी गंभीर समस्या को रोकने के लिए कानून द्वारा अनेक नियम, प्रतिबंध व दण्ड आदि की व्यवस्था की गई है। वर्ष 1986 के एक्ट के अनुसार 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों से श्रम कराने पर दण्ड की व्यवस्था की गई है जिसमें दोषी व्यक्ति के पकड़े जाने पर 8 वर्ष की सजा तथा 5000 रुपये जुर्माना रखा गया है।

सुझाव :

1. बच्चों को प्रथम वरियता दी जाये।
2. निर्धनता उन्मूलन बच्चों में निवेश।
3. किसी बच्चे को पीछे नहीं छोड़ना।
4. प्रत्येक बच्चे की देखभाल।
5. प्रत्येक बच्चे को शिक्षित करना।
6. बच्चों का हानि एवं शोषण से संरक्षण।
7. बच्चों हेतु पृथ्वी का संरक्षण।
8. बालकों का चारित्रिक विकास सदगुणों से।
9. बच्चों को प्रताड़ना नहीं, प्रेरणा की जरूरत।
10. बालकों के लिए सत्साहित्य जुटाया जाय।
11. प्रेरणा दायक फिल्मों व धारावाहिकों का निर्माण।
12. उत्तराधिकार में बालकों को पाँच रत्न मिले :- बच्चों के श्रेष्ठ निर्माण हेतु उन्हें पाँच सद्गुण प्रदान किये जाने चाहिये यथा बालकों को श्रमशीलता की शिक्षा, उदारता के दिव्यगुण से अवगत कराना, सफाई और सादगी से रहना, सदा समय का सदुपयोग करना, शिष्टाचार और सज्जनता का आचरण करना।
13. बाल संस्कार केन्द्रों की स्थापना।
14. शिशु मृत्युदर पर रोक लगाना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नाटाणी, प्रकाश नारायण : महिला एवं बाल विकास के नूतन आयाम, माया प्रकाशन मंदिर, जयपुर, 2004

2. शेण्डे, हरिदास रामजी (सुदर्शन) : बाल श्रम, अपराध एवं समाधान, साहित्यागार, जयपुर, 2007
3. शर्मा श्रीराम : बालको का भावनात्मक निर्माण, युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 2004
4. शर्मा, लीलापत : बाल नीति शतक, युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 2003
5. कुशवाह, अलका : कच्ची उम्र में मजदूरी का बोझ, योजना, 1995
6. बघेल, एस. : अपराध शास्त्र, विवेक प्रकाशन, दिल्ली, 1995
7. कर्मयोगी आर.पी. : विधार्थी जीवन की दिशा धारा, युगान्तर चेतना, शान्तिकुन्ज हरिद्वार, 2000
8. मिर्डिया एस.एस. : बाल मजदूरों की दशा, समस्या एवं निराकरण, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा, 1980

****

कृषि क्षेत्र में महिलाओं की भागीदरी (धार जिले के विशेष सन्दर्भ में)

प्रो. राजेश मईड़ा *

प्रस्तावना - कृषि में महिलाओं की भागीदारी काफी अहम है। कृषि क्षेत्र में कुल श्रम की 60 से 80 प्रतिशत तक हिस्सेदारी महिलाओं की होती है। खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार हिमालय क्षेत्र में प्रति हेक्टेयर प्रतिवर्ष एक पुरूष औसतन 12-12 घंटे और एक महिला 34-85 घंटे कार्य करती है। इस तथ्य के माध्यम से महिलाओं की कषि में भूमिका को समझा जा सकता है। महिलाओं की कृषि में यह सह-भगिता क्षेत्र विशेष की खेती पर निर्भर करती है फिर भी उनके योगदान को नकारा नहीं जा सकता है। कृषि कार्यो के अतिरिक्त महिलाएं मछली पालन, कृषि वानिकी, और पशु पालन में महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

महिला ग्रामीण और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास की रीढ़ है इनमें दुनिया के 43 प्रतिशत कृषि श्रमिक बल सम्मिलित है जो कुछ देशों में 70 प्रतिशत तक है। भारत के 48 प्रतिशत कृषि से सम्बन्धित रोजगार में महिलाऐं है जबकि लगभग 7.5 करोड़ महिलाऐं दुग्ध उत्पादन तथा पशुधन व्यवसाय से सम्बन्धित गतिविधियों में सार्थक भूमिका निभाती है।भारत एक कृषि प्रधान देश है जंहा महिलाओं के साथ कंधे से कंधा मिला कर खेत में काम करती है। महिलाओं का योगदान भी कृषि में उतना ही सराहनीय होना चाहिए जितना श्रेय पुरूषों को मिलता है। एक महिला अपने घर के साथ-साथ खेती-बाड़ी में भी उतनी ही निपुण होती है। विष्व खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार भारतीय कषि में महिलाओं का योगदान लगभग 32 प्रतिशत है, जबकि कुछ राज्यों विशेष पहाड़ी, उत्तरपूर्वी क्षेत्र तथा केरल में महिलाओं का योगदान कृषि तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पुरूषों से भी ज्यादा है।

यद्यपि स्वतंत्रता के पश्चात् नियोजित विकास कार्यक्रमों की शुरुआत के साथ ही राष्ट्रीय स्तर पर स्वास्थ्य नीतियों के निर्माण, स्वास्थ्य सेवाओं के प्रारंभ व प्रसार के संदर्भ में महत्तवपूर्ण कार्य हुए हैं, तथापि यह भी प्रमाणित तथ्य है कि हमारी स्वास्थ्य नीतियाँ कभी-भी महिला केन्द्रित नहीं रहीं और औसत भारतीय स्त्री का स्वास्थ्य व पालन पोषण के कार्य तथा प्रजनन-दर नियंत्रण आदि को ध्यान में रख कर ही बनाई जाती हैं, जिसे उचित नहीं कहा जा सकता। महिला स्वास्थ्य के सभी पक्षों को ध्यान में रखते हुए एक समन्वित स्वास्थ्य नीति का निर्माण होना अनिवार्य है।

अध्ययन के उद्देश्य - धार जिले में कृषि क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि एवं समंक विश्लेषण - प्राथमिक समंकों के संकलन के लिए धार जिले के कृषकों से कृषि कार्यो में महिलाओं की भूमिका के अध्ययन के **दैव निदर्शन विधि द्वारा 35 ग्राम पंचायत** में प्रत्येक से **10 कृषक परिवार**का चयन दैव निदर्शन विधि के आधार पर किया गया है।ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका के अध्ययन के लिए **कुल 350 कृषक उत्तरदाताओं** का साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यों का विष्लेषण विभिन्न तालिकाओं के आधार पर किया गया है :-

तालिका क्रमांक - 1 : उत्तरदाताओं के परिवार में महिलाओं की सामान्य जानकारी

क्र.	विवरण	विशेषता	आवृत्ति	प्रतिशत
1	परिवार में महिलाओं की संख्या	1 से 2	139	39.71
		2 से 4	124	35.44
		4 से अधिक	87	24.85
2	परिवार में महिलाओं का शिक्षा स्तर	अशिक्षित	223	63.71
		माध्यमिक से कम	91	26
		माध्यमिक से अधिक	36	10.29

स्रोत:-सर्वेक्षण आधारित समंकों का विश्लेषण।

भारत में 11 प्रतिशत परिवारों की मूखिया महिला है।[2]उपरोक्त तालिका 1 के अनुसार परिवार में महिला सदस्यों की संख्या 39.71 प्रतिशत परिवार में 1 से 2 सदस्य, 35.44 प्रतिशत परिवार में 2 से 4 सदस्य तथा 24.85 प्रतिशत परिवार में 4 से अधिक महिला सदस्य हैं।

महिलाओं की शिक्षा का स्तर 63.71 प्रतिशत महिलाएँ अषिक्षित है। 26 प्रतिशत परिवार में माध्यमिक से कम तथा 10.29 प्रतिशत परिवार में माध्यमिक से अधिक षिक्षित महिलाएँ हैं। जनगणना 2011 के अनुसार भारत में महिला साक्षरता 65.5 प्रतिशत है जो पुरूष साक्षरता प्रतिशत से 16.6 प्रतिशत कम है।1
जनगणना 2011.

तालिका क्रमांक - 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 2 से स्पष्ट है कि कृषि सम्बन्धि कार्यो के अन्तर्गत बुआई 64.29 प्रतिशत, बीजों की साफ-सफाई 78 प्रतिशत, निराई-गुड़ाई 88.86 प्रतिशत, सिंचाई 60.28 प्रतिशत, कटाई का निर्णय 74 प्रतिशत, मजदूरों की व्यवस्था 76.28 प्रतिशत, कटाई उपरान्त विक्रय का निर्णय 23.71 प्रतिशत, दिन का सबसे अधिक समय कृषि भूमि पर 95.42 प्रतिशत, प्रमुख वस्तुओं की आवश्यकता का अनुमान 70.57 प्रतिशत, मजदूरी दर अधिक 2.28 प्रतिशत, रासायनिक छिड़काव 35.72 प्रतिशत, फसल विक्रय माध्यम (महाजन, बाजार अथवा मण्डी) का चुनाव 56.28 प्रतिशत, मजदूरों के रूप में आप किसे महत्व 95.42 प्रतिशत महिलाऐं महत्वपूर्ण जिम्मेदारी वहन करती है।कृषि कार्यो में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका होने के बावजूद महिलाओं को मिलने वाली मजदूरी पुरूषों की तुलना में कम होती है। फसल उत्पादन के पश्चात उपज विक्रय का निर्णय पुरूषों द्वारा लिया जाता

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

है।महिला की भूमिका फसल उत्पादन तक सिमित होती है जबकि आर्थिक निर्णय पुरूषों द्धारा लिए जाते हैं। कृषि के अतिरिक्त अन्य सहायक कार्यो में महिलाओं की भूमिका का वर्णन तालिका क्रमांक 3 में किया गया है-

तालिका क्रमांक - 3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 3 से स्पष्ट है कि घरेलू तथा कृषि कार्यो के अतिरिक्त पशु पालन के कार्य 92057 प्रतिशत, पशुओं के चारे की व्यवस्ाी के उपरान्त दुध निकालने का कार्य 97.42 प्रतिशत महिलाएँ करती है। घरेलु साग-सब्जी एवं फुलों-फलों की कृषि 98.57 प्रतिशत, तथा उनके विक्रय हेतु बाजार ले जाने के कार्य 70.57 प्रतिशत महिलाओं द्धारा संचालित किए जाते है।

कृषि में अहम योगदान देने के बावजूद महिला श्रमिकों की कृषि संसाधनों और इस क्षेत्र में मौजूद असीम संभावनाओं में भागीदारी काफी कम है। इस भागीदारी को बढ़ाकर महिलाओं को कृषि से होने वाले मुनाफे को बढ़ाया जा सकता है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के डी.आर.डब्ल्यू.ए. के अनुसार प्रमुख फसलों के उत्पादन में महिलाओं की 75 प्रतिशत भागीदारी, 79 प्रतिशत बागवानी में, कटाई उपरान्त कार्यो में 51 प्रतिशत महिलाओं का योगदान होता है। पशु पालन में 58 प्रतिशत और मछली उत्पादन में 95 प्रतिशत महिलाओं का योगदान होता है। महिलाओं को कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने के लिए उचित अवसर के साथ आधुनिक तकनीकी की उपलब्धता प्रशिक्षण दिया जाए तो कृषि को द्धितीय हरित क्रान्ति की ओर ले जाया जा सकता है।

नेषनल सेम्पल सर्वे संगठन के तथ्यों के अनुसार 23 राज्यों में कृषि, वानिकी और मछली पालन में कुल श्रम शक्ति का 50 प्रतिशत भाग महिलाओं का है। छत्तीसगढ़, बिहार और मध्य प्रदेश में 70 प्रतिशत से ज्यादा महिलाएं कृषि क्षेत्र पर आधारित हैं जबकि पंजाब, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु और केरल में यह संख्या 50 प्रतिशत है। मिजोरम, आसाम, छत्तीसगढ़, अरूणाचल प्रदेश और नागालैंड में कृषि क्षेत्र में 10 प्रतिशत महिला श्रम शक्ति है। कृषि में पुरूषों के साथ महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाकर सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों को काफी हद तक बदला जा सकता है। इससे महिलाओं के सशक्तिकरण को और अधिक बढ़ावा मिल सकता है।

निष्कर्ष - कृषि क्षेत्र में तेजी से परिवर्तन हो रहा है। यह परिवर्तन वातावरण, जलवायु और तकनीकी सभी क्षेत्रों में हो रहे है। इसका असर समाज के सभी क्षेत्रों में समान रूप से पड़ रहा है। समाज में आ रहे परिवर्तनों जैसे परिवार की संरचना, पलायन और अर्न्तराष्ट्रीय राजनीति सभी का प्रभाव होता है। ऐसे में नई रणनीतियों को बनाते समय सभी परिवर्तनों का अनुमान लगाया जाना कठिन कार्य है।

संपूर्ण विश्व की दृष्टि से महिला सशक्तिकरण की आवश्यकता सर्वविदित है। स्वतन्त्र भारत में रोजगार के अवसरों में वृद्धि, महिला योग्यता तथा कौशल को स्वीकृत प्रदान किए जाने तथा शैक्षणिक अवसरों में वृद्धि के परिणाम स्वरूप महिला वर्ग को नवीन अवसर प्राप्त हुए हैं। महिलाओं के प्रति सामाजिक दृष्टि में परिवर्तन के साथ ही उनको अपेक्षाकृत अधिक सकारात्मक अवसर भी उपलब्ध हुए है। इसके दूरगामी परिणामों की आशा अवश्य की जा सकती हैं महिलाओं स्थिति में यद्यपित क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए है तथापि अभी महिला सशक्तिकरण के संदर्भ में बहुत कुछ किया जाना शेष है। यह विडम्बना की बात है कि आज देश में इक्कीसवीं सदी में भी अन्तराष्ट्रीय महिला दिवस मनाने की आवश्यकता पड़ रही है। यह तथ्य ही आधुनिक सभ्य समाज के लिए गंभीर चिंतन का विषय है। सभी देशों के संविधानों में पुरुषों व महिलाओं को समान मानकर एक जैसे अधिकार दिये गए हैं। फिर भी महिलाओं की स्थिति पुरुषों की तुलना में उपेक्षित, कमजोर व पिछड़ी बनी हुई है। उनका शोषण करने में समाज आज भी किसी प्रकार का संकोच करता नहीं दिखाई दे रहा है। इसी कारण संयुक्त राष्ट्र की यूनिफेम, यूएनएडीएफ, यूएनडीपी, अनिसेम संस्थाओं का आग्रह है कि लिंगभेद को समाप्त करने के लिए महिलाओं को सामाजिक विकास के विशेष अवसर दिलाने तथा उन पर होने वाली ज्यादतियों को समाप्त करने के लिए विशेष अभियान चलाया जाए। भारत तथा मध्य प्रदेश सरकार ने महिला एवं बाल विकास मंत्रालय और नेशनल अलायंस फॉर वूमेन की भागीदारी में सन् 1996 से लिंग भिन्नता पर विशेष ध्यान देने की जरूरी कार्यवाही की है।

एक ओर महिलाओं के उत्थान सर्वागीण विकास के लिए सरकार द्धारा अनेक प्रयास किए जा रहे है। चाहे वे गैर-सरकारी योजनाएँ एवं कार्यक्रम, महिला सशक्ति वर्ष आदि वहीं स्वतन्त्रता के पश्चात आज तक इन महिलाओं की स्थिति में कितना सुधार आया है। ये प्रशासनिक प्रायास कितने सफल है? इनसे संबंधित आँकड़ों पर विचार करना ज्यादा जरूरी हो गया है। क्योंकि आज भी लाखों महिलाएँ प्रतिदिन कई तरह के अत्याचारों, शोषण आदि का शिकार हो रही हैं तथा 40 प्रतिशत महिलाओं की स्थिति इतने प्रयासों के बाद भी वैसी ही है जो हमारी असफलताओं ओर संकेत दे रही है।

पिछले कुछ वर्षो से महिलाओं पर पक्ष में धीरे-धीरे स्पष्ट बदलाव देखने को मिला है। पहले महिलाओं के लिए केवल कल्याणोन्मुख योजनाएँ चलाई जाती थीं, जिनमें महिलाओं को दया का पात्र समझा जाता था, बाद में उनके विकास के कार्यक्रम चलाए जाने लगे और अब उनके सशक्तिकरण की बात हो रही है और उन्हें प्रगति के मार्ग में समान भागदारी माना जाने लगा है।

सरकार द्धारा महिला उत्थान के लिये अनेक प्रयास करने के बावजुद भी इनकी दशा में विशेष परिवर्तन नहीं आया हैं, श्रमिक महिलाओं की सामाजिक स्थिति को सुधारने को तथा उसे सम्मानित भयमुक्त तथा शोषण मुक्त जीवन प्रदाय करने के लिये आवश्यकता है एक ऐसी स्त्री उन्मुख राष्ट्रीय कार्यक्रम की जिसके अंतर्गत सही अर्थो में नारी की प्रगति के प्रयास हो ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्र, जय प्रकाष (2004), 'कृषि अर्थशास्त्र', साहित्य भवन पब्लिकेषन, आगरा। पृ. 259
2. विनायक, एस. आर. (2001): 'भारतीय कृषि की समस्याएँ' एस. चन्द कम्पनी लि. नई दिल्ली। पृ. 114
3. Damisha, R- Samndi and M. Yohana (2007), " Woman Participation in Agricultural Production – A probit Analysis" Journal of Applied Sciences. 7(3):412-416.
4. Census of India, (1981) Series India, Primary Census Abstract, General Population, Part 11B (i), pp.7-8
5. Thakur, Devendra (1992): "Agricultural Sector Development" Deep and Deep Publications New Delhi
6. http://pib.nic.in/newsite/hindifeature.aspx?relid=11278
7. Bala. N (2010), "Selective discrimination against women in Indian Agriculture -A Review" Agricultural Reviews. 31 (3): 224 –228.

तालिका क्रमांक - 2 : कृषि उत्पादन कार्यो में महिलाओं की भूमिका विवरण

क्र.	विवरण	महिला		पुरूष		कुल
		आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति
1	कृषि में बुआई हेतु फसल का चुनाव कौन करता है?	225	64.29	125	35.71	350
2	बुआई हेतु बीजों की साफ-सफाई का कार्य कौन करता है?	273	78	77	22	350
3	फसलों के सम्बन्ध में निराई- गुड़ाई का ध्यान कौन रखता है?	311	88.86	39	11.14	350
4	फसलों की सिंचाई का कार्य कौन करता है?	211	60.28	139	39.72	350
5	फसलों की कटाई का निर्णय कौन लेता है?	259	74	91	26	350
6	कृषि कार्यो में मजदूरों की व्यवस्था व भुगतान कौन करता है?	267	76.28	83	23.71	350
7	फसल कटाई उपरान्त विक्रय का निर्णय कौन लेता है?	83	23.71	267	76.28	350
8	दिन का सबसे अधिक समय कृषि भूमि पर कौन बिताता है?	334	95.42	16	4.57	350
9	कृषि में लगने वाली प्रमुख वस्तुओं की आवष्यकता का अनुमान कौन लगाता है?	247	70.57	103	29.43	350
10	कृषि कार्यो में किसकी मजदूरी दर अधिक होती है?	8	2.28	342	97.72	350
11	फसलों पर विभिन्न रासायनिक छिड़काव का निर्णय किसका होता है?	125	35.72	225	64.28	350
12	फसल विक्रय माध्यम (महाजन, बाजार अथवा मण्डी) का चुनाव कौन करता है?	197	56.28	153	43.71	350
13	कृषि कार्यो में मजदूरों के रूप में आप किसे महत्व देते है?	334	95.42	16	4.572	350

स्रोत:-सर्वेक्षण आधारित समंकों का विश्लेषण।

तालिका क्रमांक - 3 : कृषि सम्बन्धि सहायक गतिविधियाँ

क्र.	विवरण	महिला		पुरूष		कुल
		आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति
1	मुख्य रूप से पशुओं की देखभाल कौन करता है?	324	92.57	26	7.42	350
2	पशुओं के दुग्ध निकालने सम्बन्धित कार्य कौन करता है?	341	97.42	9	2.58	350
3	बागवानी की देखभाल कौन करता है?	345	98.57	5	1.43	350
4	बागवानी में उत्पादित सब्जी-फल का विक्रय कौन करता है?	247	70.57	103	29.43	350

स्रोत:-सर्वेक्षण आधारित समंकों का विश्लेषण।

****

Green Products From Agricultural Waste For Sustainable Environment - Review

Dr. Rashmi Ahuja *

Abstract - Agricultural wastes are basically unusable substances which may be either liquid or solid produced as result of cultivation processes viz fertilizers, pesticides, crop residues and animal waste. These substances are widely available on earth can be a good source of energy or converted in to useful products. There are a number of potential environmental impacts associated with agricultural wastes. The present paper revealed that awareness about utilization of biogas plant waste, wheat waste, mushroom, mustered and horticultural waste and it also deals with the research work carried out in the past related to conversion of biomass and agricultural waste. An attempt is carried out to increase the economic value of agricultural waste in to useful products. Employment opportunities will increase if industries like processing units for making value added products, handicrafts etc. This study will highlight some of the trends that could be adopted in the agricultural waste management so that the farmers become aware and take full advantage of various plant waste cycling, recycling and further utilization for economic purpose.
Keywords - Agricultural waste, biomass, sustainable, utilization.

Introduction - Agricultural waste is composed of organic waste ie animal excreta in the form of slurries and farmyard manures, spent mushroom compost, soiled water and silage effluent. Reduce indiscriminate disponsible or burning of waste products which cause both soil, water and air pollution, for maintaining the fertility of soil, conversion of all forms of vegetable and crop waste in to organic matter suitable for needs of growing crops.

Agricultural waste management is part of the ecological cycle in which everything is cycled and recycled such that in an interdependent relationship is maintained in the ecosystem. By waste management all the agricultural wastes are placed at the right place and right time for the best utilization in order to convert in to useful products and pollution control.

Utilization of agricultural waste is very important concern especially when the world scenario of energy demand gap is being reported. The resolution to mitigate this gap use of biomass to being investigated so that it can be used as an alternative source of energy production and some commercial products. Lots of work has been reported regarding utilization of biomass. A few studies conducted in this area are as under.

Converting Wood and paper waste in to Ethanol - Dr. Irving S Gold Stein has developed a process using Conc. HCl for converting the cellulose content of wood and papers waste in to ethanol.

In this process proper proportions of HCl and cellulose are mechanically agitated at 50^0C, a complete breakdown – hydrolysis is possible. After hydrolysis, electrodyialysis removes and reclaims Hcl from the sugar for reuse. The remaining sugar solution contains a very high concentration of Glucose from which ethanol is fermented and distilled.

Use of Waste paper to slick oil - when a giant tanker breaks up, thousands of tonnes of oil are spilled in to the sea. A new way of using waste shredded paper to clean oil slicks. If the shreds are find enough, the paper will absorb 27 times of tis own weight of oil.

Paper from agricultural waste Agricultural-waste as raw material - Studies conducted at various research institutes in India have shown the possibility of using agricultural wastes in combination with waste paper, cotton wastes, rage etc. for manufacture of document paper, high grade stationary card sheets, album papers, filter papers and electrical insulting papers.

Future scope - In India about 350 hand made paper mills making paper. It is handly 0.6% of the total production of paper in our country. Development of such small scale industries would not only solve the problem of waste disposal but also the problem of rural unemployment.

Utilization of agricultural waste - An agricultural waste sugarcane bagasse is a chief source of cellulose, but it burnt away as a cheap fuel. For better economy, it is an essential step to get some byproducts like protein from waste materials, which will not only solve the protein deficiency, but also reduces the wastes.

Recently studies shows that the feasibility of utilizing the coffee waste in production of bricks. In this methodology, control brick and three different percentage of coffee waste 1, 3 and 5 percent, bricks were manufactured and fired at

*Professor Of Chemistry, Govt. M.V.M., Bhopal (M.P.) INDIA

1050^0C. The properties like shrinking density, compressive strength were considered.

Wheat Waste - Straw is a byproduct of wheat crop, which can be used for making many products like particle board and other products like brequettes, dry flowers, mats, hats carpets, and other handicraft.

Cotton Waste - Cotton stick after picking of cotton are used as fuel, it can also be used in biogas production by treating it anaerobically. CH_4 were produced from cotton stalks, cotton seed hull and cotton oil cake in presence of basal medium.

Horticulture waste - Damaged or spoiled fruits, vegetables, dead plants, branches, leaves are the horticultural wastes. Various chemicals viz citric acid, lactic acid, acetic acid can also be extracted from wastes. Potato residue can also be used for extraction of pectin.

Waste saw dust can be used for removal of methylene blue dye which has adverse impact on photosynthesis. in aquatic environment.

Recent studies prove the effective utilization of Neem as natural absorbent in treatment of diary products. Studies show the feasibility of utilizing wheat bran. agricultural waste to produce bio alcohol. It also demonstrated the utilization of agricultural waste in stabilizing land fill soil. The main constituents of material was palm oil ash and rice husk ash as a sustainable substitute instead of using traditional Portland cement.

Medicines from agricultural wastes - Furan compounds occur widely in nature which are cheap raw materials. Furfural is readily obtainable from agricultural wastes like corn cobs and oat hulls. It is produced commercially by the reaction of corn cobs with sulphuric acid and is the basic material used for the nitrofurans. These are important germicides

Nitrofurazone or furacin is now being used for treatment of eye, ear, sinus diseases, post-surgery skin infection. Nitro fuians and a related form furoxone are widely used in treating poultry diseases. Furan-ether exhibits germicides properties against molds which cause great damage to crops and animals.

Recovery of Heavy metals from agricultural waste - In recent years the presence of toxic heavy metalions in agricultural waste was found the attention of scientists. Metal like Hg, Pb, Cd, Cu, Zn Ni, Co, Mn, and As even in trace quantities are extremely toxic. Many mining and manufacturing concern are finding it extremely difficult to meet economically and increasingly stringent limits imposed by WHO on the metal ions concentration in the waste streams.

Liquid fuels from Agrowaste - Prof. B.S. Hartley have reported that agricultural waste have the potential to become a major source of liquid fuels. The Key technology of making transport fuels from agro waste is fermentation. The waste contain a large amount of cellulose and hemicellulose which can be broken down into sugars and then fermented into alcohol, usually called bioethanol.

Conclusion - In the past the agrowaste and biomass, obtained due to crop production or from plant growth, were destroyed by burning or naturally converted in to organic fertilizes, or allowed to decoy in public places in open air creating environmental pollution. Thus by managing these crop wastes in a well planned manner we can maintain a healthy environment for all living creatures. Nowadays biomass produced from agrowaste are used to generate energy as it carries great potential to convert in to energy. Newer development in technology in process development and product develop is necessary to increase the economic values of the products . More research and renovation in the existing technologies are required for sustainable use of agrowaste and healthy environment.

References :-

1. International forestry Resources and Institutions Field Manual- Bloomington, USA-(2002) .
2. Kumar PG, Hate S., Community based forest management and its impact on vegetation. A case study- i forest -2-93-98 (2009) .
3. Harshwardhan K, Upadhyaya K. effective utilization of agricultural waste, J Fun dam renewable energy Appl 7:237 (2017).
4. Zhahg Chunpeng and Taihu. The optimization of pectin extraction from sweet potato residues : Engineering and Environmental of Biosystems- Vol-46, P-2274-2280 (2011) .
5. ISCI, A ; Demiror, Biogas production potential from cotton wastes. In Reweable Energy vol. 32(5) P.-750-757 (2006)
6. P.S. Shehrawat, Nitu Sindhu,Agricultural waste utilization for healthy environment and sustainable life style -Third International scientific symposium “Agro sym Jahorina” (2012).
7. Environmental Chemistry - B.K. Sharma.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Qualitative and Quantitative Analysis and Nanotechnology Applications in Water Purification of Drinking Water Samples of Different Localities in Gandhi Nagar Area of Bhopal

Santosh Ambhore *

Abstract - The complete analysis of 05 drinking water samples was carried out to develop a data base on the quality of water being consumed in different sites. The qualitative and quantitative analysis of water samples of different localities was conducted to determine the exact amount of different pollutants present in water. The drinking water samples were taken from the main water sources where maximum peoples were using them for drinking purpose. The results indicated certain sources of water-borne diseases in drinking water, which are common in the people of a particular area.

New concepts and technologies are fast replacing the traditional methods of water distribution, supply and purification. Nanomaterials are well suited for water purification, disinfection and wastewater treatment applications as they have as large specific surface area, high reactivity, high degree of functionalization, size dependent properties, affinity for specific target contaminants, etc. Membranes and filters synthesized using nanomaterials have selective permeability, good flux rates, increased durability, reliability in purification and reusability, and thus are energy saving and cost effective. Various types of nanomaterials such as antimicrobial nanomaterials, carbon nanotubes (CINTs), nanosorbents, dendrimers, self-assembled monolayers on mesoporous silica (SAMMS), single enzyme nanoparticles (SENs), their mechanisms, synthesis and applications are reviewed in this paper.

Key words: nonmaterial's, drinking water, qualitative and quantitative analysis.

Introduction - Good quality water is odourless, colourless, tasteless, and free from faecal pollution .A reliable supply of clean wholesome water is highly essential in a bid to promoting healthy living among the inhabitants of a defined geographical region. Water is the most vital element among the natural resources, and is critical for the survival of all living organisms including human, food production, and economic development. Good quality of water resources depends on a large number of physico-chemical parameters and biological characteristics.

Study Area - Present district of Bhopal study area Gandhinagar and Bairagarh area; was carved out of Seehore district in 1972 .Bhopal is the picturesque capital of Madhya Pradesh and known as "city of lakes". Bhopal territory the largest state of India is situated on 23°16'N Latitude and 77°25' Longitude and is located on Hard pink sand stone of Vindhya region. .Bhopal is a city of historical importance and full of natural beauty.

Sampling Stations - five sampling stations have been chosen for present study during study year ;selected sampling stations are as follows-

SS_1 Jhirniya **SS_2** Gondipura **SS_3** One Tree Hill Area
SS_4 Jatkhedi **SS_5** Pardi Mohalla

The complete analysis of 05 drinking water samples was carried out to develop a data base on the quality of water being consumed in different areas of study. The qualitative and quantitative analysis of water samples of different localities was conducted to determine the exact amount of different pollutants present in water. The drinking water samples were taken from the main water sources where maximum peoples were using them for drinking purpose. The results indicated certain sources of water-borne diseases in drinking water, which are common in the people of a particular area. The results of the present research work showed that drinking water collected from different areas was not found to be suitable for human health due to various issues.

Methodology - Samples for analysis with standard procedure in accordance with standard method of American Public Health Association (APHA, 1986) and National Environmental Engineering Research Institute (NEERI, 1986), Nagpur. The instruments have been used in the limit of precise accuracy and chemical used of G.R. grade. Temperature, pH, TDS were measured. The T-H, Ca-H, Mg-H has measured titrimetrically using EDTA, chlorides by Mohr's Argentrometric titration and K_2CrO_4 as indicator, D.O. by Winkler's method. Total alkalinity was determined

*Department of Chemistry, Government Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA

by Titrimetric methods using phenolphthalein and methyl orange indicators. Nitrates, sulphates and phosphate were measured by spectrophotometer.

New **nanotechnology** is now being used to purify water and waste water in an environmentally friendly way. The new technology uses organic polymers which act as molecular sponges. Derived from crustacean shells or plant fibers, the nanometer-sized polymers are custom programmed toabsorb specific particles for remediation or retrieval purposes. This includes cleaning out acids, hydrocarbons, pathogens, oils and toxins in water.

Nanotechnology and Nanomaterials commercialized for water purification - Currently nanotechnology plays a vital role in water purification techniques. In nano-technology, nano membranes are used with the purpose of softening the water and removal of contaminants such as physical, biological and chemical contaminants. There are variety of techniques in nanotechnology which uses nano particles for providing safe drinking water with a high level of effectiveness. Some techniques have become commercialized. For better water purification or treatment processes nanotechnology is preferred. Many different types of nanomaterials or nanoparticles are used in water treatment processes. Nanotechnology holds great promise in remediation, desalination, filtration, purification and water treatment.

Observation Table – The observation's are summarized here in table during study period in various places/sampling station's of study area.

Table 1 (See in next page)

Result And Discussion - In present study Temperature varied from16^{0}C-22^{0}C, pH ranged from 4.62-6.4, Electrical Conductivity ranges from 232-398 µ mhos/cm^{-1}, Free CO_2 varied from 6.12-11.47 ppm, Total Hardness ranged from 212-417 ppm, Ca-H noted as102-270 ppm, Mg-H varied from 104-158 ppm, Dissolved Oxygen varied from 1.10-2.42 ppm, Biological Oxygen Demand ranged from 1.62-4.80 ppm and Chemical Oxygen Demand varied from 12.10-42.00 ppm during all observation's.

The main features that make nanoparticles effective for water treatment are-

1. More surface area
2. Small volume
3. The higher the surface area and volume, the particles become stronger, more stable and durable
4. Materials may change electrical, optical, physical, chemical, or biological properties at the nano level
5. Makes chemical and biological reactions easier

Conclusion - The above findings are similar with those of Gharde,B.D.(2010),Bheshdadia,B.M.(2011), M.Hussain, T.V.D. Prasad Rao,H.A.Khan and M.Satyanarayan,Oriental J. Chem.,27(4):1679-1684,P.Sannasi and S.Salmijah, Oriental J. Chem.,27(2):461-467(2011),P.Sannasi and S.Salmijah,Oriental J. Chem.,27(2):461-467(2011), Kataria,H.C. Ind,J. Environment Prot.IJEP,24(12):894-896(2004) and Poll.Res,19(4):645-649(2000)

The result of different physical and chemical parameters shows that Drinking water of concern study area is affected by various human activities , domestic wastes effluents etc. values of some parameters are beyond the permissible limits while some others are well within the limits. the result of most of the parameters has concluded that the water of study area is suitable for drinking purpose after proper required treatment.

Advantages and Disadvantages of Nanotechnology - While nanotechnology is seen as the way of the future and is a technology that a lot of people think will bring a lot of benefit for all who will be using it, nothing is ever perfect and there will always be pros and cons to everything. The **advantages and disadvantages of nanotechnology** can be easily enumerated, and here are some of them:

Advantages of Nanotechnology - To enumerate the advantages and disadvantages of nanotechnology, let us first run through the good things this technology brings:

1. Nanotechnology can actually revolutionize a lot of electronic products, procedures, and applications. The areas that benefit from the continued development of nanotechnology when it comes to electronic products include nano transistors, nano diodes, OLED, plasma displays, quantum computers, and many more.
2. Nanotechnology can also benefit the energy sector. The development of more effective energy-producing, energy-absorbing, and energy storage products in smaller and more efficient devices is possible with this technology. Such items like batteries, fuel cells, and solar cells can be built smaller but can be made to be more effective with this technology.

Disadvantages of Nanotechnology - When tackling the advantages and disadvantages of nanotechnology, you will also need to point out what can be seen as the negative side of this technology:

1. Included in the list of disadvantages of this science and its development is the possible loss of jobs in the traditional farming and manufacturing industry.
2. Atomic weapons can now be more accessible and made to be more powerful and more destructive. These can also become more accessible with nano-technology.
3. Presently, nanotechnology is very expensive and developing it can cost you a lot of money. It is also pretty difficult to manufacture, which is probably why products made with nanotechnology are more expensive.

References :-

1. APHA (1985)standard method for examination of water and waste water . APHA,AWWA,WPEC 16th Edition NewYork.
2. APHA (1992). Standard Methods for the Examination of Water and Waste Water. APHA, AWWA, WPEC, 18th Edition, Washington.
3. APHA, AWWA, WEF, Standard methods for the examination of water and waste water (20th edn.)

Washington, DC: American Public Health Association (1998)
4. APHA, Standard methods for the examination of water and wastewater, APHA, AWWA, WPCF, 16'n Ed., New York (1986).
5. BIS, 1991, Specification for drinking water IS : 10500 : 1991 Bureau of Indian Standards, New Delhi. IS: 10500 Indian Standards Specification for drinking water, ISJ, New Delhi, IS:10500 (1983).
6. Environmental Protection Agency (1980) Ambient water quality criteria for Heavy Metals as Zn, Mn and Fe ;publication-440/8-80-79 EPA.
7. ICMR: Manual of standards of quality for drinking water supplies Special report series No. 44, 2nd edition. (1975)
8. Kataria H.C. ,Analytical Study of trace elements in ground water of Bhopal City.Ind,J. Environment Prot.IJEP,24(12):894-896(2004)
9. Kataria H.C.,Prelimnary study of Drinking Water of Pipariya township,Poll.Res,19(4):645-649(2000)
10. M.Hussain,T.V.D. Prasad Rao,H.A.Khan and M.Satyanarayan,Oriental J. Chem.,27(4):1679-1684,P.Sannasi and S.Salmijah, Oriental J. Chem.,27(2):461-467(2011)
11. NEERI : Manual on water and waste water analysis, National Environmental Engineering Research Institute, Nagpur, P. 340-42, (1986).
12. Oote,A.D. and Laconde,K.V.(1977).Environment assessment of municipal sludge utilization at nine locations in the united states proceding 1[9th] Cornwell Agricultural waste management conferences APHA Cornwell university, Ithaca, New York page 135-146.
13. *Park, J; Bazylewski, P; Fanchini, G (2017). "Porous graphene-based membranes for water purification". Nanoscale.* ***8****: 9563–71.*
14. *Vecitis, CD; Schnoor, MH; Rahaman, MS; Schiffman, JD; Elimelech, M (2017). "Electrochemical carbon nanotube filters for water and wastewater treatment". Environ Sci Technol. 4536729.*
15. *Voisin, H; Bergström, L; Liu, P; Mathew, AP (2017). "Nanocellulose". Nanomaterials (Basel).*
16. WHO Hardness in drinking water,Background documents for developments of WHO guideline for drinking water quality series No:WHO/HSE/WSH/10.01/10/Rev/1.World Health Organization Geneva (2011 b)
17. WHO, Guidelines for drinking water quality Vol. 1, Recommendations, World Health Organization, Geneva, 1-30 (1984).

Table 1 : Mean seasonal value (pre and post monsoon)

parameter	**Unit**	**SS_1**	**SS_2**	**SS_3**	**SS_4**	**SS_5**
Temperature	0^0C	18	16*	22**	19	17
pH	-	4.62*	5.4	6.4**	5.7	6.0
Elect.Cond.	µ mhos/cm^{-1}	232*	270	382	398**	374
Free CO_2	ppm	6.12*	7.24	8.72	11.47**	10.44
T-H	ppm	320	417**	400	212*	280
Ca-H	ppm	215	270**	240	102*	134
Mg-H	ppm	104*	150	158**	106	146
D.O.	ppm	1.12	1.10*	1.82	2.12	2.42**
B.O.D.	ppm	1.62*	1.84	2.84	3.92	4.80**
C.O.D.	ppm	12.42	12.10*	30.24	42.00**	40.84

**= maximum value * = minimum value

****

ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि तकनीकी में परिवर्तन का अध्ययन (धार जिले के विशेष सन्दर्भ में)

प्रो. राजेश मईड़ा *

प्रस्तावना – कृषि दक्षता और उत्पादन पूर्णत: कृषि आदानों और उत्पादन की विधियों पर निर्भर है। विकासशील कृषि के लिए अनुकूल कृषि आदानों एवं विधियों में सुधार करना आवश्यक है। तकनीकी परिवर्तनों के अन्तर्गत कृषि क्षेत्र की क्षमता बढ़ाने वाले समस्त तत्व सम्मिलित होते है। तकनीकी परिवर्तन कृषि क्षेत्र के उत्पादन फसल चक्र को और उच्च उत्पादन करने में सहायक होता है। तकनीकी परिवर्तनों के प्रभाव को दो रूपों में देखा जा सकता है।[1] कृषि आगत की दी हुई मात्रा से अधिक उत्पादन प्राप्त करना अथवा कृषि उत्पादन की समान मात्रा अपेक्षकृत कम लागत से प्राप्त करना।[2]

कृषि में होने वाला तकनीकी परिवर्तन भूमि और श्रम की उत्पादकता बढ़ाने वाला रहा है, इसलिए एक ओर इसे भूमि बचत करने वाले कारक के रूप में देखा जा सकता है। भूमि बचत करने वाले कारकों में अधिक उपज देने वाले गुणवत्ता युक्त बीजों, रासायनिक किटनाषक एवं उर्वरक, सिंचाई सुविधाओं का विस्तार और फसल संरचना में परिवर्तन महत्वपूर्ण है।3 इनके अतिरिक्त मषीनी उपकरणों के अन्तर्गत ट्रेक्टर, थ्रेषर, परिवहन के साधन एवं अन्य कृषि उपकरण श्रम एवं समय की बचत करने वाले महत्वपूर्ण घटक है।[4]

ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों में कृषक गरीबी एवं अशिक्षा के कारण कृषि में परम्परागत अवैज्ञानिक कृषि तकनीकी के कारण अधिक श्रम एवं लागत के परिणामस्वरूप अल्प अथवा न्यून उत्पादन के कारण ऋणग्रस्तता के जाल में फंसा हुआ है।[5]वर्तमान में कृषि में वैज्ञानिक तकनीकी को अपनाए बिना कृषि को लाभ की कृषि बनाना असम्भव है। कृषक स्वयं उक्त उपकरणों को क्रय करने और उपयोग करने में सक्षम नहीं है। अत: स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् कृषि विकास कार्यक्रमों पर विशेष ध्यान दिया गया, विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि के विकास एवं उत्पादन वृद्धि हेतु केन्द्र एवं राज्य सरकारों के द्वारा कृषकों के तकनीकी परिवर्तन एवं विकास के लिए विभिन्न कार्यक्रम, प्रावधान एवं योजनाएँसंचालितहै जिनमें फसलों की बीमारियों की रोकथाम के लिए दवाईयों की व्यवस्था, रासायनिक उर्वरकों, उन्नत बीजों, दवाईयों, सिंचाई के साधन व आधुनिक उपकरण के साथ वित्तीय सहायता, कृषि तकनीकी प्रशिक्षण सम्मिलित हैं। परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में लगातार वृद्धि हुई है। शासन द्वारा संचालितकृषि योजनाओं के लाभ द्वारा कृषि में प्रयुक्त तकनीकी परिवर्तन का अध्ययन शोध पत्र में प्रस्तुत किया गया है। कृषि में तकनीकी परिवर्तन स्थिति का मूल्यांकन करना मुख्य उद्देश्य हैं।

साहित्य समीक्षा – कृषि तकनीकी परिवर्तन को प्रभावित करने वाले कारको मेंकृषकों की विशेषताएँ जैसे– जाति, शिक्षा, कृषक के परिवार की सामाजिक–आर्थिक स्थिति, कृषि तकनीक उत्पादनसे प्रभावित होती हैसंबंधित साहित्य का पुनरावलोकन दिशा–निर्देश का कार्य करता है।शोध समस्या से सम्बन्धित साहित्य अवलोकननिम्न प्रकार है–

Venkateshwarlu A. (1998)[6]: उक्त अध्ययन में दो कारकों पर केन्दीत है– अनार्थिक कारकतथा परिवर्तित घटनाओं की व्याख्या स्थिर घटकों से की है। **Dastane N.G. (1969)[7]:**उर्वरकों के उपयोग को कृषि की विशेषताएँ प्रभावित करती हैं। फसल पद्धति में भिन्नता तथा सिंचित क्षेत्र दो प्रमुख कारक हैं जो उर्वरकों के उपयोग को तेजी से बढ़ातेहैं।**Gunvant M. Desai, P.N. Chary and S.C. Bandopadhyay (1970)[8]:** तकनीकी परिवर्तन की धीमी गति से विकास, कम मूल्य वाली फसलों को अत्यधिक महत्व देना प्रमुख कारण बताया। **GOI (2007)[9]:** तकनीकी परिवर्तन में नकारात्मक पक्ष आर्थिक दृष्टि से कमजोर होना है। आर्थिक भिन्नता के कारण ग्रामीण विकास कार्यक्रम विफल है। **कौशिक एस.डी. (1998)[10]:** 'ग्रामीण निर्धनता' ने अनुसूचित जाति के लघु एवं सीमान्त कृषकों की आर्थिक दशा को मजबूत बनाने में सरकार की भूमिका को महत्वपूर्ण बताया है। **Gupta Arun, Ved Prakash, Joshi Deeksha, Gupta H.S.(2008)[11]:**आर्थिक परिवर्तन तकनीकी परिवर्तन को प्रेरित करता है। **Swaminathan M.S. (1969)[12] :** तकनीकी परिवर्तन को सामाजिक कारकों का सकारात्मक प्रभाव होता है।**यादव सुबह सिंह (1997)[13]:** कृषि रोजगार में वृद्धि ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण है। **वर्मा सवलिया बिहारी, (2003)[14]:** भूख की समस्या भूमिहिनों अनुसूचित जाति, जनजातियाँ, महिलाओं अप्रशिक्षित श्रमिकों के लिए ज्यादा महत्वपूर्ण है। **कलवार सुगनचंद एवं मीणा तेजराम, (2001)[15]:** परंपरावादी तथा ज्ञान के अत्यंत निम्न स्तर वाले किसान नवीन कृषि तकनीकी प्रयोग करने को तैयार नहीं होते हैं। प्रत्येक तथ्य करे भाग्यवाद की भावना से स्वीकार करते हैं। उनके लिए कृषि वाणिज्य व्यापार की वस्तु न होकर जीवन की एक प्रणाली है। निम्न उत्पादकता आर्थिक विकास के लिए घातक है जबकि नवीन तकनीकी प्रयोग एवं परिवर्तन द्वारा अधिक लाभदायक हो सकते हैं। **Gunvant M. Desai (1971)[16] :** सिंचित क्षेत्र तथा अच्छी उपज ऐसे कारक हैं जिनसे तकनीकी परिवर्तन का प्रभाव विभिन्न फसलों तथा कृषि क्षेत्र पर तेजी से बढ़ता है।

अध्ययन के उद्देश्य – धार जिले में कृषकों हेतु संचालित कृषि विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन पश्चात् कृषि उत्पादकता में परिवर्तन का अध्ययन करना।

परिकल्पना – H_0: कृषि तकनीकी के प्रयोगतथा कृषि उत्पादकता में वृद्धि

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

के मध्य सम्बन्ध नहीं हैं।

शोध प्रविधि – प्राथमिक समंकों के संकलन के लिए धार जिले के कृषि विभाग द्वारा संचालित कृषि योजनाओं के लाभार्थियों को सर्वेक्षण आधार बनाया गया है। कृषि विकास योजनाओं से हितग्राही कृषकों के कृषि तकनीकी में परिवर्तन के अध्ययन के लिए धार जिले के अन्तर्गत **दैव निदर्शन विधि द्वारा 35 ग्राम पंचायत**में प्रत्येक से **10 कृषकों** का चयन दैव निदर्शनविधि के आधार पर किया गया है।ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषकों की कृषि तकनीकी को जानने के लिए **कुल 350 उत्तरदाताओं** का साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण विभिन्न तालिकाओं के आधार पर किया गया है :-

उत्तरदाताओं की सामान्य जानकारी

तालिका क्रमांक – 1

क्र.		विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	उत्तरदाता की आयु	20 से 35 वर्ष	126	36
		35 से 50 वर्ष	189	54
		50 वर्ष से अधिक	35	10
2	शिक्षा	अशिक्षित	79	22.57
		माध्यमिक से कम	212	60.57
		माध्यमिक से अधिक	59	16.85

स्रोत: प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारिक समंक।

तालिका 1 में उत्तरदाताओं की आयु के अन्तर्गत 36 प्रतिशत 20 से 35 वर्ष, 54 प्रतिशत 35 से 50 वर्ष तथा 10 प्रतिशत 50 वर्ष से अधिक आयु है। उत्तरदाताओं की आयु का वर्गीकरण उनकी मानसीक एवं शारीरिक परिपक्वता को प्रदर्शित करता है। उत्तरदाताअें में 22.57 प्रतिशत अशिक्षित, 60.57 प्रतिशत माध्यमिक से कम तथा 16.85 प्रतिशत माध्यमिक से अधिक शिक्षित है। शिक्षा की स्थिति उत्तरदाता कृषकों की विचार एवं तार्किक निर्णय क्षमता का परिचायक है।

तालिका क्रमांक – 2 : कृषि भूमि स्वामित्व

क्र.	विवरण	5 एकड़ से कम	5 से 15 एकड़	15 एकड़ से अधिक
1	कुल	115(32.86)	182(52)	53(15.14)
2	सिंचित	196(56)	145(41.43)	9(2.57)

स्रोत: प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारिक समंक।

चयनित उत्तरदाता कृषक की कुल कृषि भूमि के अन्तर्गत 32.86 प्रतिशत 5 एकड़ से कम, 52 प्रतिशत 5 से 15 एकड़ एवं 15.14 प्रतिशत 15 एकड़ से अधिक कृषि भूमि का स्वामित्व है। कृषि भूमि के अन्तर्गत सिंचित भूमि 56 प्रतिशत 5 एकड़ से कम, 41.43 प्रतिशत 5 से 15 एकड़ तथा 2.57 प्रतिशत 15 एकड़ से अधिक सिंचित है। धार जिले में वर्षा अधिकतम 1147.9 मि.मी. तथा न्यूनतम 772.5 मि.मी. दर्ज की गई।17म सिंचाई के प्रमुख स्रोत के अन्तर्गत कुँआ प्रमुख है। इसके बाद नलकूप, नहर, तालाब, नदी-नालों पर निर्भरता है।

तालिका क्रमांक – 3

क्र.	खेत तैयार करने के लिए कृषि यंत्र	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हल, बख्खर (बैलों द्वारा चलित)	134	38.29
2	ट्रेक्टर (किराए पर उपलब्ध)	216	61.71
	कुल	**350**	**100**

स्रोत: प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारिक समंक।

तालिका 3 से स्पष्ट है कि तकनीकी उपयोग के अन्तर्गत परम्परागत साधनों में मुख्य रूप से हल, बख्खर, बीज बोने का यंत्र, घांस कटाई हेतु हसिया, कुदाली आदिद्धारा 38.29 प्रतिशत कृषक पूर्णत: निर्भर हैं। जबकि ट्रेक्टर द्वारा 61.71 प्रतिशत कृषि कार्यो में उपयोग किया जाने लगा है।ट्रेक्टर की उपलब्धता प्रत्येक कृषक के पास नहीं है किन्तु किराये पर मशीनी साधन उपलब्ध हैं। अध्ययन क्षेत्र में किराये पर साधनों को संचालित करने के लिए राजस्थान, गुजरात, पंजाब एवं हरियाणा से वाहनों को संचालित करने के लिए भारी संख्या में प्रतिवर्ष साधन लाए जाते है।

तालिका क्रमांक – 4

क्र.	बुआई हेतु बीज उपयोग	आवृत्ति	प्रतिशत
1	परम्परागत (संग्रहित बीज)	244	69.71
2	संकर बीज (कृषि केन्द्र से क्रय)	106	30.28
	कुल	**350**	**100**

स्रोत: प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारिक समंक।

तलिका 4 के अनुसार बुआई हेतु बीज की पूर्ति 69.71 प्रतिशत द्वारा परम्परागत अथवा पूर्व वर्ष उत्पादन का संग्रहित हिस्सा बुआई हेतु उपयोग किया गया जबकि 30.28 प्रतिशत द्वारा कृषि वस्तु विपणन केन्द्र से संकरीत बीज का उपयोग किया गया है। संग्रहित बीज का उपयोग करने का प्रमुख कारण बीज हेतु उपलब्ध अनाज की किमतों का अत्यधिक मूल्य होना है। गरीब अथवा ऋणग्रस्त कृषक के लिए अत्यधिक मूल्य देकर अनाज क्रय करना संभव नहीं है। बाजार से क्रय कर बुआई करने पर वर्षा की अनिश्चितता एवं सिंचाई की पूर्ति नहीं होने पर अधिक नुकसान का खतरा बना रहता है।

तालिका क्रमांक – 5

क्र.	सिंचाई तकनीक	आवृत्ति	प्रतिशत
1	परम्परागत क्यारी बनाकर	289	82.57
2	ड्रीप, फंवारा आदि	61	17.43
	कुल	**350**	**100**

स्रोत: प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारिक समंक।

तालिका 5 के अनुसार 82.57 प्रतिशत कृषक सिंचाई हेतु परम्परागत क्यारी नुमा नालियों का निर्माण कर सिंचाई करते है। इस तकनीक में पानी का अत्यधिक अपव्यय होता है जबकि आधुनिक तकनीकी का उपयोग करने वाले 17.43 प्रतिशत है। आधुनिक सिंचाई तकनीकी के उपयोग से पानी की बचत तो होती है। पौधों में आवश्यक नमी बनाए रखने में सहायक होता है। पौधों को आवश्यकता के अनुसार पानी की पूर्ति की जा सकती है।

तालिका क्रमांक – 6

क्र.	खाद एवं उर्वरक का प्रयोग	हाँ	नहीं	कुल
1	रासायनिक उर्वरक (NPK)	132 (37.71)	218 (62.29)	350 (100)
2	रासायनिक किटनाशक	187 (53.43)	163 (46.57)	350 (100)
3	गोबर खाद	285 (81.42)	65 (18.57)	350 (100)
4	रासायनिक उर्वरक, किटनाशक एवं गोबर खाद	145 (41.42)	205 (58.57)	350 (100)

स्रोत: प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारिक समंक।

भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि तथा बनाए रखने के लिए वर्तमान में रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक प्रयोग किया जाने लगा है अध्ययन क्षेत्र के 37.71 प्रतिशत कृषक रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करते है जबकि 62.29 प्रतिशत रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग नहीं करते है। फसलों को विभिन्न प्रकार के नुकसानदायक किटों के प्रकोप से बचाने के लिए रासायनिक किटनाषकों का प्रयोग 53.43 प्रतिशत कृषकों द्धारा किया जाता है जबकि 46.57 प्रतिशत कृषक रासायनिक किटनाषकों का प्रयोग नहीं करते है।गोबर खाद का उपयोग भूमि की उर्वरता में वृद्धि के लिए उत्तम साधन है। 81.42 प्रतिशत कृषक गोबर खाद का उपयोग वर्ष में एक बार करते है। जबकि 18.57 प्रतिशत कृषक गोबर खाद का उपयोग नहीं करते है इसका प्रमुख कारण पशुओं की अनुपलब्धता है। रासायनिक उर्वरक, किटनाषक एवं गोबर खाद सभी का उपयोग करने वाले कृषक 41.42 प्रतिशत है जबकि सर्वाधिक 58.57 प्रतिशत सभी साधनों का उपयोग करने में सक्षम नहीं है। इसका प्रमुख कारण आर्थिक रूप से पिछड़ापन एवं ऋणग्रस्तता प्रमुख कारण है।

तालिका क्रमांक – 7

क्र.	फसल कटाई का माध्यम	आवृत्ति	प्रतिशत
1	मजदूरों द्धारा हाथों से	229	65.42
2	ट्रेक्टर, हार्वेस्टर अथवा मशीनों द्धारा	121	35.58
	कुल	**350**	**100**

स्रोत: प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारिक समंक।

तालिका 7 से स्पष्ट है कि 65.42 प्रतिशत कृषक मजदूरों द्धारा फसल कटावाया जाता है जबकि 35.58 प्रतिशत कृषक ट्रेक्टर, हार्वेस्टर तथा अन्य मषीनी उपकरणों का उपयोग करते है।मजदूरों द्धारा फसल कटाई के लिए प्रमुख कारण पालतू पशुओं के लिए चारे की उपलब्धता प्रमुख कारण है जबकि मषीनों के द्धारा फसल कटाई से चारे का पूर्णत: नुकसान होता है। इसके अतिरिक्त कई फसलों में मषीनों का उपयोग सम्भव नहीं केवल मजदूर एक मात्र विकल्प है।

तालिका क्रमांक – 8 : कृषि तकनीकी के प्रयोग से उत्पादन पर प्रभाव

क्र.	फसल कटाई का माध्यम	आवृत्ति	प्रतिशत
1	वृद्धि	259	74
2	कमी	12	3.42
3	यथावत	47	13.43
4	कहा नहीं जा सकता	32	9.15
	कुल	**350**	**100**

उपरोक्त तालिका 8 से स्पष्ट है कि सर्वाधिक उत्तरदाता मानते है कि कृषि में तकनीकी के प्रयोग से उत्पादन में वृद्धि होती है। जबकि 3.42 प्रतिशत के अनुसार उत्पादन में कमी होती है इसका प्रमुख कारण अत्यधिक रासायनिक के प्रयोग से भूमि की उत्पादन क्षमता में कमी होती है जिसका प्रभाव से भविष्य में भूमि की उत्पादन क्षमता नष्ट हो जायेगी। 13.43 प्रतिशत उत्तरदाता के अनुसार तकनीकी प्रयोग से उत्पादन समान होता है जबकि लागत में वृद्धि हो जाने से व्ययों में वृद्धि बढती है।

परिकल्पना परीक्षण :–

H_0: कृषि तकनीकी के प्रयोगतथा कृषि उत्पादकता में वृद्धि के मध्य सम्बन्ध नहीं हैं।

H_1: कृषि तकनीकी के प्रयोगतथा कृषि उत्पादकता में वृद्धि के मध्य महत्वपूर्ण सम्बन्ध हैं।

Chi-Squer Tests	Value	df	Asymp. Sig. (2_sided)
Pearson Chi-Squere	455.600	3	.000
N of Valid Cases	349		

काई वर्ग तालिका से स्पष्ट है कि 5 प्रतिशत सार्थकत्ता स्तर (3 Degree of Freedom) पर X^2का तालिका मूल्य (7.815) है जबकि X^2का आंकलित मूल्य (455.600) है। सारणी मूल्य एवं आंकलित मूल्य की तुलना के आधार पर स्पष्ट है कि दोनों गुण स्वतंत्र न होकर आपस में सम्बन्धित है। विश्लेषण में; $X_c^2 = 455.600$ तथा $X_t^2 = 7.815$ है, आंकलित तथा सारणी मूल्यों से स्पष्ट है कि $X_c^2 > X_t^2$ अत: हमारी शून्य परीकल्पना अस्वीकृत होती है तथा '**H_a:कृषि तकनीकी के प्रयोग तथा कृषि उत्पादकता में वृद्धि के मध्य महत्वपूर्ण सम्बन्ध हैं।**'स्वीकृत होती है। अत: कहा जा सकता है कि कृषि में तकनीकी परिवर्तन से कृषि उत्पादन में वृद्धि होने के साथ–साथ समय एवं श्रम की बचत के साथ अधिक उत्पादन प्रापत किया जा सकता है।

निष्कर्ष – कृषि विकास की धिमी गति का प्रमुख कारण यंत्रीकरण का अभाव है। कृषि में आधुनिक साधनों का पूर्ण अभाव है। इसका मुख्य कारण कृषि तकनीक का परम्परागत होना तथा आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण मंहगे यंत्रतकनीक का उपयोग गरीब कृषक के लिए संभव नहीं है। कृषि उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारकों में सिंचाई के साधनों का विषेष महत्व है। सिंचाई हेतु पानी की पूर्ती होने पर उर्वरकों, संकरीत बीजों और आधुनिक कृषि तकनीकी के प्रयोग से उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है किन्तु अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई के साधनों का पूर्ण अभाव है। कृषक मानसुन आधारित कृषि पर निर्भर है। भूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि के लिए कम्पोस्ट खाद अथवा प्राकृतिक जैविक खाद तथा उर्वरकों के प्रयोग से उपजाऊ क्षमता को बढ़ाया जा सकता है।ग्रामीण क्षेत्र के कृषकों को मिट्टी परीक्षण के प्रति जागरूकता का अभाव हैं। जोत का आकार छोटा होने के कारण कृषक आधुनिक कृषि तकनीक का उपयोग नहीं कर पा रहे हैं। कृषि पर जनसंख्या का भार बढ़ता जा रहा है, प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि कम होती जा रही छोटी जोत के कारण उन्नत उपकरणों, बीज आदि की सहायता से वैज्ञानिक कृषि करना संभव नहीं है। घटते जोत के आकार तथा भूमि पर निर्भरता ने कृषि रोजगार में कमी तथा बेरोजगारी गरीबी का मुख्य कारण है। कृषक कृषि के अतिरिक्त गैर–कृषि रोजगार पर निर्भरता में वृद्धि हुई है।अशिक्षा के कारण कृषक परम्परागत कृषि करते है। अशिक्षा के परिणामस्वरूप कृषक आधुनिक कृषि तकनीकी को अपनाने में संकोच करता है। आधुनिक खाद, बीज के अतिरिक्त उर्वरक, रासायनिक खाद, किटनाषक यंत्रों के प्रयोग को समझने में कठिनाई के कारण कृषि में परम्परागत तकनीक उपयोग किया जाता है। रासायनिक उर्वरकों की मांग अधिक एवं पूर्ती में कमी होने के कारण व्यापारियों द्धारा उच्च कीमत पर विक्रय किया जाता है। सार्वजनिक वितरण के माध्यम से कृषकों को पर्याप्त उर्वरक नहीं मिलता।रूढ़िवादी, अज्ञानता एवं पारम्परिक होने के कारण आधुनिक तकनीकों को नहीं अपना सके हैं। कृषि कार्य के लिए संस्थागत साख की व्यवस्था सहकारी बैंको, वाणिज्यिक बैंको तथा अन्य योजनाओं के माध्यम से की गई है। इनमें फसल बुआई, बीमा, उपकरण, आदि कार्यो के लिए षासकीय स्तर पर वित्त की व्यवस्था की गई है किन्तु संस्थागत ऋण में अनेक कागजी कार्यवाही,

बैंकों का शहरों में स्थिति होना, आकस्मिक व्यय, आदि कार्यो के लिए बैंकों द्धारा ऋण नहीं दिए जाने के कारण कृषकों को असंस्थागत ऋण पर निर्भर रहना पड़ता है। कृषि उपकरणों का प्रयोग तकनीकी उपयोग नहीं करने का एक मुख्य कारण छोटे जोत का होना, कम उत्पादकता तथा मौसमी असन्तुलन प्रमुख कारक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुकरेजा, सुन्दरलाल (1989): कृषि आदान एवं खाद्यान्न उत्पादन, योजना 16-31 अक्टूबर, पृ. 16।
2. दत्ता, आर. एवं सुन्दरम, के. पी. एम. (1980): 'इन्डियन इकोनॉमिक्स' एस. चन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली। पृ. 252
3. Balakrishnan, Pulapre (2000). Agriculture and Economic Reforms: Growth and Welfare. Economic and Political Weekly, 35 (12): 999-1004.
4. Bhalla, G S and Gurmail Singh (2001). Indian Agriculture: Four Decades of Development. New Delhi: Sage Publications. P- 234
5. Chand, Ramesh and S S Raju (2009). Instability in Indian Agriculture During Different Phases of Technology and Policy. Indian Journal of Agricultural Economics, 64 (2): p. 285
6. Venkateshwarlu A. (1998), **"Developing Agricultural Techonology"**, Rawat Publications, Jaipur, p. 14.
7. Dastane N.G. (1969**),"New Concepts in Irrigation: Necessary Changes for New Strategy"**,Economic and Political Weekly, Vol. IV, No., Jan 26., p. A-27.
8. Desai Gunvant M. (1970), **"Factors Determining Demand For Pesticides",**Economic and Political Weekly, Vol. (52), No. V, 26 December, p. A-181.
9. GOI (2007),"Measures of Imapact of Science and Technology in India: Agriculture and Rurle Development", M.S. Swaminathan Research Foundation, Chennai, p. 3.
10. कौशिक एस.डी. (1998) **: 'मानव तथा आर्थिक भूगोल'** रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ।
11. Gupta Arun, Ved Prakash, Joshi Deeksha, Gupta H.S.(2008), **"Verietal Releases, VL Madira 207 barnyard Millet", A Science and Technology,** *ICAR Newsletter,* Vol. 14, No. 04, October-December, p. 10.
12. Swaminathan M.S. (1969), **"Scientific Implications of HYV Programme",**Economic and Political Weekly, No. IV, Jan 26., p. 69.
13. यादव, सुबहसिंह एवं यादव सत्यभान (1997): **'ग्रामीण विकास का आधुनिक दर्शन'**, सबलाइम पब्लिकेशन्स, जयपुर, भारत। पृ. क्र. 303-309
14. वर्मा सवलिया बिहारी, (2003): **'ग्रामीण भारत के सर्वोन्मुखी विकास एक परिदृश्य'**, संजय प्रकाशन, नईदिल्ली, भारत।
15. कलवार सुगनचंद एवं मीणा तेजराम, (2001): **'निर्धनता उन्मूलन एवं ग्रामीण विकास'** पोईंटर पब्लिशर्स, जयपुर।
16. Desai Gunwant M. (1971), "Growth of Fertiliser Use in Inidian Agriculture: Past trends and Future Demand", Cornel University Press, New York, pp. 7-8.
17. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, जिला सांखिकी कार्यालय, धार। 2016

****

Impact Of Arsenic In Drinking Water On Human Health

Dr. Kanti Pachori *

Abstract - In terms of its impact on human health, arsenic is unique in that most of the evidence linking it to diseases comes from epidemiological work; animal studies have not provided good models.. To date, we know that arsenic from drinking water can cause severe skin diseases including skin cancer; lung, bladder, and kidney cancers, and perhaps other internal tumors; peripheral vascular disease; hypertension; and diabetes. It also seems to have a negative impact on reproductive processes (infant mortality and weight of newborn babies). The toxicology of arsenic involves mechanisms that are still not completely understood, but it is clear that a number of factors can affect both individual and population-level susceptibility to the toxic effects of arsenic-contaminated drinking water.
Keywords - arsenic, health effects, drinking water, chronic exposure, arsenic metabolism.

Introduction - The toxicological and human health effects caused by arsenic exposure were first described centuries ago, yet there are still many areas of inquiry that have not been elucidated, particularly with respect to the mechanisms of action of arsenic and the factors that may affect susceptibility to the damaging effects of this element and its compounds. . Excellent comprehensive reviews have been published within the last few years by the International Program on Chemical Safety of the World Health Organization (IPCS 2001) and by the US National Research Council (NRC 1999, updated in 2001).

Early Reports Of Health Effects - Descriptions of dermatological effects caused, Cases of lung cancer from occupational exposure to arsenic were described in the 1940s (IPCS 2001). In Argentina, the effects of arsenic were first reported in 1917 by Astolfi, and the term “Bell Ville Disease” was coined to describe frequent skin disorders found among residents of a town by that name in the province of Córdoba (detailed in Hopenhayn-Rich et al. 1996). Most case studies were based upon observations by local dermatologists, and the characteristic “arsenicosis” led to the term “HACRE”—Hidroarsenicismo Crónico Regional Endémico (Regional Endemic Chronic Hydroarsenicism)— “Bell Ville Disease” was coined to describe frequent skin disorders found among residents of a town by that name in the province of Córdoba (detailed in Hopenhayn-Rich et al. 1996 the characteristic “arsenicosis” led to the term “HACRE”—Hidroarsenicismo Crónico Regional Endémico (Regional Endemic Chronic Hydroarsenicism)—. Thousands of shallow “tube” wells were dug, which were free of the viruses, bacteria, and parasites found in rivers, therefore providing much cleaner water for human consumption.

Metabolism And Toxicity - The main forms of arsenic found in water used for human consumption and, to a lesser extent, in foodstuff are inorganic arsenic (In-As), occurring either as trivalent (As+3) or pentavalent (As+5) compounds. Other forms of arsenic, including organic compounds such as arsenobetaine or arsenocholine, are found in seafood. Sometimes these occur in relatively high concentrations, but they are much less toxic than the inorganic forms and are eliminated rapidly and unchanged through the urine. Ingested In-As is quickly absorbed from the gastrointestinal tract and passes through a series of steps while being metabolized through reduction reactions of pentavalent to trivalent arsenic forms, and methylation to monomethylarsonic acid (MMA) and then to dimethylarsinic acid (DMA).

Exposure Assessment - In order to assess the health effects of arsenic, it is essential to assess exposure as accurately as possible. The methods of assessment, accordingly, depend on the source of exposure. In particular, the methods for environmental measurements of inhaled versus ingested arsenic focus on air and dust content versus water and food., human biomarkers of exposure for both routes of entry into the body are similar, such as in urine, blood, hair, and nails. Finally, duration of exposure or cumulative exposure is usually estimated, and some studies have used this factor to correlate with health effects (IPCS 2001).

Results And Discussions - Arsenic causes or increases the risk of numerous illnesses. Some of them have been repeatedly observed in different epidemiological investigations. Examples are skin damage including keratoses and skin cancer, internal cancers such as lung and bladder, and diseases of the vascular system. Other health problems, such as diabetes, cancers of other organs, and adverse reproductive outcomes have been observed, but the evidence is not yet conclusive, although it keeps increasing. In terms of carcinogenicity (NRC 1999; Schoen et al. 2004). Some of these mechanisms, such as oxidative stress to cells, could account for some of the noncancer

*Associate Professor (Chemistry) Govt. Nirbhay Singh Patel Science College, Indore (M.P.) INDIA

negative health effects.

Magnitude Of The Problem: The Global Perspective - Arsenic is probably the environmental contaminant that is responsible for the highest risks of morbidity and mortality worldwide, both because of its toxicity and the number of people exposed. Unlike other chemical contaminants that are found in limited locations or only in restricted areas around a point source, dangerously high levels of arsenic have been identified in many water supplies around the world. Moreover, in some affected areas, such as in India, Bangladesh, Taiwan, and possibly China (Sun 2004), the sizes of the exposed populations are very large. Globally, many millions of people currently drink water containing unacceptably high arsenic levels, which are responsible for increases in a wide range of illnesses. In many countries, water supplies are still not routinely tested for arsenic, although as testing becomes more widespread, more and more locations of arsenic contamination are being discovered. Finally, in some high-risk areas, we are probably only seeing the “tip of the iceberg.” Several studies suggest that there is a long latency period between exposure to arsenic and the development of internal cancers, sometimes forty years or more..

References :-

1. Borgõno JM, Vicent P, Venturino H, Infante A (1977) Arsenic in the drinking water of the city of Antofagasta: epidemiological and clinical study before and after the installation of a treatment plant. Environmental Health Perspectives 19: 103-105
2. Chen CJ, Kuo TL, Wu MM (1988) Arsenic and cancers (letter). Lancet i: 414-415 Chen YC, Su HJ, Guo YL, Hsueh YM, Smith TJ, Ryan LM, Lee MS, Christiani DC (2003) Arsenic methylation and bladder cancer risk in Taiwan. Cancer Causes & Control 14: 303-310
3. Chowdhury UK, Biswas BK, Chowdhury TR, Samanta G, Mandal BK, Basu GC, Chanda CR, Lodh D, Saha KC, Mukherjee SK, Roy S, Kabir S, Quamruzzaman Q, Chakraborti D (2000) Groundwater arsenic contamination in Bangladesh and West Bengal, India. Environmental Health Perspectives 108: 393-397
4. Ferreccio C, Gonzalez C, Milosavjlevic V, Marshall G, Sancha AM, Smith AH (2000) Lung cancer and arsenic concentrations in drinking water in Chile. Epidemiology 11: 673-679
5. Hopenhayn C, Ferreccio C, Browning SR, Huang B, Peralta C, Gibb H, HertzPicciotto I (2003) Arsenic exposure from drinking water and birth weight. Epidemiology 14: 593-602
6. Hopenhayn-Rich C, Biggs ML, Fuchs, Bergoglio R, Tello EE, Nicolli H, Smith AH (1996) Bladder cancer mortality associated with arsenic in drinking water in Argentina. Epidemiology 7: 117-124
7. Hopenhayn-Rich C, Biggs ML, Smith AH (1998) Lung and kidney cancer mortality associated with arsenic in drinking water in Cordoba, Argentina. International Journal of Epidemiology 27: 561-569
8. Milton AH, Smith W, Rahman B, Hasan Z, Kulsum U, Dear K, Rakibuddin M, Ali A (2005) Chronic arsenic exposure and adverse pregnancy outcomes in Bangladesh. Epidemiology 16: 82-86
9. National Research Council (1999) Arsenic in drinking water. National Academy Press, Washington, DC National Research Council (2001) Arsenic in drinking water: 2001 update. National Academy Press, Washington, DC Schoen A, Beck B, Sharma R, Dube E (2004) Arsenic toxicity at low doses: epidemiological and mode of action considerations. Toxicology and Applied Pharmacology 198: 253-267
10. Smith AH, Goycolea M, Haque R, Biggs ML (1998) Marked increase in bladder and lung cancer mortality in a region of northern Chile due to arsenic in drinking water. American Journal of Epidemiology 147: 660-669
11. Steinmaus C, Yuan Y, Bates MN, Smith AH (2003) Case-control study of bladder cancer and drinking water arsenic in the western United States. American Journal of Epidemiology 158: 1193- 1201
12. Sun G (2004) Arsenic contamination and arsenicosis in China. Toxicology and Applied Pharmacology 198: 268-271
13. Vahter M (2000) Genetic polymorphism in the biotransformation of inorganic arsenic and its role in toxicity. Toxicology Letters 112-113: 209-217
14. Vahter M (2002) Mechanisms of arsenic biotransformation. Toxicology 181-182: 211-217
15. Wu MM, Kuo TL, Hwang YH, Chen CJ (1989) Dose-response relation between arsenic concentration in well water and mortality from cancers and vascular diseases. American Journal of Epidemiology 130: 1123-1132
16. Yang CY, Chang CC, Tsai SS, Chuang HY, Ho CK, Wu TN (2003) Arsenic in drinking water and adverse pregnancy outcome in an arseniasis-endemic area in northeastern Taiwan. Environmental Research 91: 29-34
17. Yu RC, Hsu KH, Chen CJ, Froines JR (2000) Arsenic methylation capacity and skin cancer. Cancer Epidemiology Biomarkers & Prevention 9: 1259-1262
18. Zaldívar R (1974) Arsenic contamination of drinking water and food-stuffs causing endemic chronic poisoning. Beitr Path Bd 151: 384-400
19. D, Saha KC, Mukherjee SK, Roy S, Kabir S, Quamruzzaman Q, Chakraborti D (2000) Groundwater arsenic contamination in Bangladesh and West Bengal, India. Environmental Health Perspectives 108: 393-397
20. Ferreccio C, Gonzalez C, Milosavjlevic V, Marshall G, Sancha AM, Smith AH (2000) Lung cancer and arsenic concentrations in drinking water in Chile. Epidemiology 11: 673-679
21. Hopenhayn C, Ferreccio C, Browning SR, Huang B, Peralta C, Gibb H, HertzPicciotto I (2003) Arsenic exposure from drinking water and birth weight. Epidemiology 14: 593-602

22. Hopenhayn-Rich C, Biggs ML, Fuchs A, Bergoglio R, Tello EE, Nicolli H, Smith AH (1996) Bladder cancer mortality associated with arsenic in drinking water in Argentina. Epidemiology 7: 117-124
23. Hopenhayn-Rich C, Biggs ML, Smith AH (1998) Lung and kidney cancer mortality associated with arsenic in drinking water in Cordoba, Argentina. International Journal of Epidemiology 27: 561-569
24. IPCS (2001) Arsenic and arsenic compounds, second edition. World Health Organization, Geneva, Switzerland Lamm SH, Engel A, Kruse MB, Feinleib M, Byrd DM, Lai S, Wilson R (2004) Arsenic in drinking water and bladder cancer mortality in the United States: an analysis based on 133 U.S. counties and 30 years of observation. Journal of Occupational and Environmental Medicine 46: 298-306
25. Milton AH, Smith W, Rahman B, Hasan Z, Kulsum U, Dear K, Rakibuddin M, Ali A (2005) Chronic arsenic exposure and adverse pregnancy outcomes in Bangladesh. Epidemiology 16: 82-86
26. National Research Council (1999) Arsenic in drinking water. National Academy Press, Washington, DC National Research Council (2001) Arsenic in drinking water: 2001 update. National Academy Press, Washington, DC Schoen A, Beck B, Sharma R, Dube E (2004) Arsenic toxicity at low doses: epidemiological and mode of action considerations. Toxicology and Applied Pharmacology 198: 253-267
27. Smith AH, Goycolea M, Haque R, Biggs ML (1998) Marked increase in bladder and lung cancer mortality in a region of northern Chile due to arsenic in drinking water. American Journal of Epidemiology 147: 660-669
28. Steinmaus C, Yuan Y, Bates MN, Smith AH (2003) Case-control study of bladder cancer and drinking water arsenic in the western United States. American Journal of Epidemiology 158: 1193- 1201
29. Sun G (2004) Arsenic contamination and arsenicosis in China. Toxicology and Applied Pharmacology 198: 268-271
30. Vahter M (2000) Genetic polymorphism in the biotransformation of inorganic arsenic and its role in toxicity. Toxicology Letters 112-113: 209-217
31. Vahter M (2002) Mechanisms of arsenic biotransformation. Toxicology 181-182: 211-217
32. Wu MM, Kuo TL, Hwang YH, Chen CJ (1989) Dose-response relation between arsenic concentration in well water and mortality from cancers and vascular diseases. American Journal of Epidemiology 130: 1123-1132
33. Yang CY, Chang CC, Tsai SS, Chuang HY, Ho CK, Wu TN (2003) Arsenic in drinking water and adverse pregnancy outcome in an arseniasis-endemic area in northeastern Taiwan. Environmental Research 91: 29-34
34. Yu RC, Hsu KH, Chen CJ, Froines JR (2000) Arsenic methylation capacity and skin cancer. Cancer Epidemiology Biomarkers & Prevention 9: 1259-1262
35. Zaldívar R (1974) Arsenic contamination of drinking water and food-stuffs causing endemic chronic poisoning. Beitr Path Bd 151: 384-400

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

भीष्म साहनी का कथा साहित्य : मानवीय त्रासदी का इतिहास

डॉ. अंजली सिंह *

प्रस्तावना – वर्तमान समय का सबसे बड़ा सत्य मानवीय पीड़ा और यातना है जीवन की जटिलताओं के बीच जीने की कामना को रखने का एक मात्र कारक है मनुष्य की संविदनशीलता एवं उसकी संघर्ष क्षमता जो मानवीय पीड़ा और यातना से निरन्तर जूझती रहती है। मानवीय पीड़ा से संघर्ष एवं उससे युक्ति का बीड़ा कथा–साहित्य भीष्म साहनी ने उसी विशिष्ट धारा जिसे प्राय: यथार्थवादी धारा के रुप में जाना जाता हैं को व्यापक फलक एवं संपूर्णता देने का कार्य किया अपने रचना संसार में भीष्म साहनी मानवीय व्यक्तित्व की संपूर्णता के लिए निरन्तर अनेक जोखिम को उठाये और संघर्ष भी किये है। आजीविका के लिए नये नये कामों की खोज पुरातन संस्कारों के बीच से गुजरता तथा भारत–विभाजन त्रासदी के बीच न केवल मानवीय पीड़ा को भोगा है बल्कि आत्मसात भी किया है। उनके उपन्यास और कहानी का कथन आम आदमी की जीवन्त कथा है। यह संघर्षशील दृष्टि ही उनकी रचना शक्ति के रुप में साहित्य में आद्योपांत विद्यमान है। उनके साहित्य में मानवीय जीवन की चाह का तात्पर्य उन विषयों में निहित मूल्यों से है। जो मानव के आन्तरिक सहज स्वरुप के सबसे निकट होते है तथा उसके संवेदनामय व्यक्तित्व से सबसे अधिक सीधे और गहन रुप से जुड़े होते है।

मूल्यों का सामाजिक महत्व है क्योकि इनका संबंध मनुष्य के सत्य से है और यह सत्य साक्षेपत: सामाजिक परिस्थितियों से निर्मित होता है। भीष्म जी की सारी रचनॉए नैतिकता के सवालों को नई तरह से उठाती है। चाहे वह तमस हो या माधवी या बाड़चू या चीफ की दावत, भीष्म जी की कोई भी रचना आखिरी शब्द के साथ खत्म नही हो जाती। भीष्म जी को पढने का मतलब है जीवन के बारे में बात करने को मजबूर होना जीवन की सार्थकता मानव मूल्यों को स्वीकारने मे ही निहित है। इस दृष्टि से उन्हे ही मानवीय जीवन की चाह का पर्याय माना जा सकता है। जिसमें मानव जीवन का उत्कर्ष हो एंव उसकी सृजनशीलता रागात्मकता गतिशील रहे। परन्तु मानवीय जीवन की चाह में मानवीय हित की कमी चिन्ता सर्वाधिक प्रधान मूल्य है। जिससे समस्त जीवन की अभिव्यक्ति एवं सम्पूर्ण ज्ञान–चेतना का बोध होता है।

स्वातत्रोत्तर युग की सभी विधाओं में मानव मूल्यों का प्रयोग हुआ है। उन्होंने अपने साहित्य में नैतिकता, प्रेम, संघर्ष, धैर्य आदि जीवन मूल्यों को महत्व दिया है। वस्तुत: वे सामाजिक रुझान वाले व्यक्ति थे। वह सच्चे अर्थो में यथार्थवादी थे। वे मानव समाज के बदलते मूल्य और बदलती संवेदनाओं और जीवन की ढेरों सच्चाइयों को आमने – सामने खड़ा करने की कोशिश करते है साथ ही समाज में व्याप्त अंतर्विरोधो को रेखांकित करने का प्रयत्न भी स्वतंत्रता आन्दोलन से लेकर वर्तमान स्थिति तक भारतीय समाज जाति धर्म सम्प्रदय के त्रिकोण पर घूमता जूझता रहा है। यहां वर्ग बनते है विगड़ते है जिसका सीधा लाभ विघटनकारी शक्तियों को होता है। भारतीय समाज में भाग्यवाद की जड़े आज भी बहुत गहरी है और यह चेतना भारतीय जन–मानस में इस तरह घुलकर बैठ गयी है कि वह अपना सीधा प्रहार मानवीय आस्था को विकृत करने में करती है साथ ही उचित मूल्यों के अभाव में श्रम से अविश्वास और परायापन भी हो जाता है। विभेद के कई औजार बहुत पहले से यहां गढ लिए गये। भीष्म साहनी के साहित्य में इस तथ्य को सफलता के साथ उद्धाटित किया गया है।

भीष्म साहनी यथार्थवादी परम्परा के प्रगतिशील धारा के कथाकार है। उनकी सभी कृतियां कला की एकांत साधना के स्थान पर जीवनव्यापी विसंगतियों के विरुद्ध संघर्ष का प्रयास करती है। उनकी रचनाओं में मध्यवर्ग की समस्याओं पर विशेष आग्रह दिखाई पड़ता है, किन्तु साहनी ने अन्य वर्गो की समस्याओं विशेषताओं को भी बेहद बारीकी के साथ उभारा है। साहनी जी एक सच्चे मार्क्सवादी रचनाकार के रुप में समूची मानवीय आस्था, प्रगतिशील दृष्टि तथा वैज्ञानिक सोच को वे भारतीय जीवन के संदर्भ में अपनी धरती से जुडे, अपने जातीय जीवन की जय–पराजय में शामिल और सामान्यजन को सम्बोधित अपनी रचना को वे पक्षकार भूमिका के साथ प्रस्तुत करते है।

इनका साहित्य परिवेश बोध साहित्य है सर्वप्रथम प्रेमचन्द्र के करीब से गुजरता है उसके बाद यशपाल के समानान्तर चलने लगता है। साहनी जैसे समर्थ रचनाकार ने हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण कर न केवल अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया बल्कि तत्कालीन समय के समाज की सभी समस्याओं को देखा, परखा और अपनी लेखनी का आधार बनाकर उसका समाधान भी प्रस्तुत किया। भीष्म साहनी का कलाकार जिस दृष्टिकोण से जीवन, समाज और उनके विभिन्न अंगो प्रत्यंगो को देखता है उन्हे उसी रुप में जनता के समक्ष प्रस्तुत करता है।

भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में भी मूलत: सामाजिक समस्याओं, नीतियों आन्दोंलनों और विचारों की खुलकर अभिव्यक्ति हुई है। उन्होने अपने उपन्यासों में जीवन के विधिक पक्षों, सामाजिक विशेषताओं सांस्कृतिक स्थितियों और राजनैतिक प्रभावों का विस्तृत चित्रण किये है। उपन्यास में सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। उनकी सूक्ष्म दृष्टि महलों से लेकर झोपड़ी तक और गांव से लेकर नगर तक पहुंची है। अर्थात उन्होने सिद्ध किया है कि न तो कोरे यथार्थवाद से जनकल्याण संभव है और न ही कोरा आदर्शवाद ही कल्याणकारी हो सकता है। प्रगतिशील चिन्तनधारा से प्रभावित भीष्म साहनी की रचनाओं में शोषण के विरोध का स्वर अधिक मुखर है। भीष्म साहनी ने अपने उपन्यासों में जितने अधिकार से समसामयिक विषयों पर लेखनी चलाई है उतने ही अधिकार से ऐतिहासिक विषयों पर चलाई है। उनके उपन्यासों की सफलता की एक बड़ा कारण उनकी पात्र सृष्टि की सजगता है। उनके सभी उपन्यासों

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय माधव सदाशिवराव गोलवलकर महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

में पात्रों का नियोजन बड़ी कुशलता के साथ किया गया है। उनकी रचनाओं के सभी छोटे-बड़े पात्र अपनी-अपनी भूमिकाओं में अत्यनत सार्थक और अनिवार्य सिद्ध हुये है। उन्होने परिवेशगत दबावो और आन्तरिक द्वन्दों का प्रभाव बड़ी कुशलता से दिखाया है। शहरी एवं ग्रामीण समाज के एक-एक पहलू को लेकर उपन्यास का सृजन किया है इसके अतिरिक्त इर्द-गिर्द का पूरा समाज भी यथार्थ रुप से हमारे सामने अभिव्यक्ति हुआ है। वातावरण निर्माण के साथ-साथ पात्र जिस परिवेश में जीते है लेखक उसका अनुभूति श्रवण चित्र हमारे सामने प्रस्तुत करता है। समाज में प्रचलित रुढ़ परम्पराएँ, प्रथाएँ, लोक रीतियॉ, खान-पान के नियम आदि सभी बातों का चित्रण भीष्म साहनी ने यथार्थ रुप में किया है। उनकी कहानियॉ यथार्थ जीवन पर आधारित है। उनके कथा साहित्य के पात्र संसार की भीषण त्रासदियों में संघर्ष करने की क्षमता रखते है। विश्वास है कि बिना संघर्ष किये सामाजिक जीवन में परिवर्तन संभव नही है उनकी कहानियॉ जैसे गंगो का जाया, नीली ऑखे, निशाचर, के पात्र उपेक्षा और अभावों के बाद भी निरन्तर संघर्ष करते है ये संघर्षशील पात्र वर्ग विशेष का प्रतिनिधि बनकर आते है। साथ ही रचनाकार इस बात की ओर संकेत करता है कि बसन्ती की बस्ती का बार-बार टूटने का मतलब यह है कि आजादी साधारण लोगो के लिए न होकर पूँजीपति नेताओं और अधिकारियों के लिए है।

भारत विभाजन के दौरान हुए साम्प्रदायिक दंगे शरणार्थियों के काफिले और पशुओं को लज्जित कर देने वाली घटनाओं को उन्होने करीब से देखा था। इसी का परिणाम है कि साम्प्रदायिकता की त्रासदी का दर्द 26 साल के बाद तमस एवं अमृतसर आ गया जैसी रचनाओं में व्यक्त हुआ है। यह पीड़ा उनके अवचेतन में कहीं पकती रही। उचित अवसर पाकर उसने उपन्यास एवं कहानी का रुप धारण किया।

साहनी जी अपनी रचनाओं में भाषा के प्रति सृजनात्मक और उदार दृष्टि रखते है। कहानी लेखन में भीष्म साहनी जी का विशेष स्थान है। उनके कहानी साहित्य में मध्यवर्ग और निम्न वर्ग की विविध समस्याओं को निरुपति किया गया है। उनकी कहानियॉ आधुनिक युग की ज्वलंत समस्याओं को जो आज हमारे देश की शक्ति को कमजोर एवं खोखला कर रही है। यथार्थ रुप में हमारे सामने प्रस्तुत करती है। उनकी कहानियों में भारतीय समाज का परिदृष्य दृष्टिगत होता है। कही दमन - शोषण की बात है, कहीं आर्थिक विषमता की, कहीं पारिवारिक दाम्पत्य जीवन और कहीं साम्प्रदायिकता की, समाज की इन विसंगतियां पर आपने बेधड़क कलम चलाई है। उनकी कहानियां मानव जीवन संदर्भो ,राष्ट्रीय समस्याओं और विश्व मानव की स्थितियों को उजागर करने में पूर्णतया सफल है। संवेदनशील होने के कारण निम्न वर्ग पर उनकी रचनात्मक दृष्टि अधिक रही है। निम्नवर्ग की आर्थिक विष्मताओं शोषण की यातनाओं और आर्थिक अभाव में पिसती जनमानस की वेदनाओं का मार्मिक चित्रण तक वे अपने को सीमित नहीं रखते उनके अन्दर सहभोक्ता का एक दर्द भी उठता है। जिसके कारण वे कई समस्याओं के समाधान का मार्ग भी ढूंढने का प्रयास करते है।

साहनी जी मानव चरित्र के सहज विकास में विश्वास करते है घटनाओं, समस्याओं, संघर्षो के बीच ही उनके मानव चरित्र का विकास होता है। उनकी कहानियॉ प्रवृत्तियों संवेदनाओं और भावनाओं को लेकर चलती है। साहनी जी पात्रों को लेखक के हाथ की कठपुतली नही बनाते बल्कि कथा में उनके स्वाभाविक विकास को दिखलाते है। विकास में द्वन्द्ध है, उतार-चढाव है, संघर्ष है जीने की चाह है। आपके पास बडी स्पष्टता सहजता के साथ उभरकर सामने आते है। इनके कहानियों के पात्र इतने सजीव है कि हम उन्हे अपने बीच का कोई व्यक्ति पाते है। इनकी कहानियों के प्राय: सभी पात्र किसी न किसी वर्ग का सफल प्रतिनिधित्व करते है।

भीषम साहनी सामाजिक चेतना सम्पन्न प्रगतिशील कहानीकार है। आपकी कहानियॉ जीवन के यथार्थ अनुभव पर आधारित है। उच्च वर्ग और निम्न वर्ग की अनेक विशेषताओं की झॉकी मिलती है। तथापि उनका मुख्य केन्द मध्य वर्ग से जुडी समस्याओं से प्रभावित जीवन स्थितियों और विभिन्न स्तरों पर उनकी परिणतियॉ ही उनकी कहानियों का मुख्य प्रतिपाद्य है। मध्यम और निम्न वर्ग के जीवन की तह तक भीष्म साहनी की सूक्ष्म दृष्टि पहुँची है। इनकी कहानियों में भारतीय जन-जीवन अपने पूरे परिवेश के साथ उभरकर सामने आया है। प्रगतिशील सोच के कथाकार होते हुये भी वे विचारों को ऊपर से आरोपित न कर उन्हे अपनी भाषा शैली और रचनाशीलता से सहर्ष संवृत्त कर प्रस्तुत करते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भीष्म साहनी,श्याम कश्यप, पृष्ठ 215
2. आलेचना पत्रिका,सं. नामवर सिंह,पृष्ठ 139
3. भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना,राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकुर, पृष्ठ 247
4. भीष्म साहनी का कथा संसार, डॉ. राकेश कुमार तिवारी, पृष्ठ 62
5. भीष्म साहनी : उपन्यास साहित्य,विवेक द्विवेदी, पृष्ठ 38

****

बिलासपुर जिले के पर्यटन उद्योग का आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास पर प्रभाव का अध्ययन

राकेश कुमार गुप्ता * डॉ. के. के. शर्मा **

प्रस्तावना – बिलासपुर जिले में पर्यटन उद्योग के विकास के क्षेत्र में असीम सम्भावनाएं हैं और यह तेजी से पर्यटन स्थल के रूप में विकसित हो रहा है। पर्यटन उद्योग इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि माल और सेवाओं के व्यापार से पर्यटन स्थल से जुडे हुए लोग धन व रोजगार प्राप्त करते हैं। बिलासपुर जिले में पर्यटन की दृष्टि से प्राकृतिक सुन्दरता अभूतपूर्व है। पर्यटन आज विश्व का सबसे बड़ा एवं सबसे तीव्र गति से विस्तार करने वाला उद्योग है। इसके विस्तृत बाजार का सीमांकन नहीं किया जा सकता है। यूनाइटेड चैम्बर्स ऑफ कामर्स के अनुसार किसी भी क्षेत्रीय, प्रान्तीय या सामुदायिक विकास कार्यक्रम के लिये पर्यटन की उन्नति एक मुख्य संचालक है। कई देशों में पर्यटन क्षेत्रीय विकास के एक मुख्य साधन के रूप में आर्थिक गतिविधियों को बढाने का कार्य कर रहा है। इससे पर्यटन केन्द्रों के आसपास रहने वाले लोगों को आर्थिक रूप से फायदा होता है। संस्कृत साहित्य में 'पर्यटन' के लिए तीन शब्दों का प्रयोग किया गया है, जिन सबका उद्गम 'पर्यटन' से हुआ है। 'पर्यटन' का अर्थ है अपने निवास स्थान को छोड़कर कहीं बाहर जाना ये तीन शब्द निम्नलिखित हैं –

(क) पर्यटन – इसका अर्थ है आराम एवं ज्ञान प्राप्ति के लिए यात्रा करना।
(ख) देशाटन – विदेशों में मुख्यत: आर्थिक लाभ के लिए यात्रा करना।
(ग) तीर्थाटन – धार्मिक लाभों के कारण यात्रा करना।

शोधकार्य का उद्देश्य –

1. बिलासपुर जिले में वर्तमान पर्यटन विकास की स्थिति का पता लगाना।
2. बिलासपुर जिले में पर्यटन का आर्थिक विकास पर प्रभाव को आंकना।
3. बिलासपुर जिले में पर्यटन केन्द्रों की जानकारी प्राप्त करना।
4. पर्यटन केन्द्रों के विकास का आसपास रहने वाले लोगों के आय में विकास के मध्य सम्बन्ध ज्ञात करना।
5. पर्यटन की विकास की समस्याएं जानना एवं उनका निदान के लिये मार्ग ज्ञात करना।

शोध प्रविधि – अध्ययन के लिए निदर्शन विधि के द्वारा क्षेत्रों का चयन किया गया। बिलासपुर जिले के पर्यटन स्थलों में आने वाले पर्यटकों से प्राथमिक आंकडे प्रश्नावली, अनुसूची और अवलोकन के माध्यम से एकत्रित किए गये द्वितीयक आंकडो का संकलन विभिन्न शासकीय कार्यालयों एवं जिला सांख्यिकीय पुस्तिका से किया गया।

शोध की सीमाएं – प्रस्तावित अध्ययन बिलासपुर जिले में पर्यटन का आर्थिक विकास पर पडने वाले प्रभाव का अध्ययन है, जिसमें चयनित पर्यटन स्थलों का अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक समंको के आधार पर किया गया। साथ ही इन पर्यटन स्थलों से जुडी समस्याएं एवं उनका समाधान प्रस्तुत किया गया।

बिलासपुर जिले के प्रमुख पर्यटन स्थल – बिलासपुर की पहचान उसकी पुरातात्विक धरोहरों से होती है, जो उसे कालजयी बनाते हैं। बिलासपुर जिले से 25 किलोमीटर दूर आस्था की नगरी रतनपुर में मां महामाया, भैरो बाबा, गिरजावन के हनुमान मंदिर, लखनी देवी के दर्शन के लिए देश ही नहीं बल्कि विदेशों से भी लोग पहुंचते हैं और मनोकामना ज्योति प्रज्वलित करतें हैं। रतनपुर के अलावा मल्हार, तालागांव और गनियारी में भी सोलहवीं सदी की प्राचीन मूर्तियों का अनूठा संग्रह है। पुरातात्विक धरोहरों के अलावा जिले के जंगल, पहाड़, चिड़ियाघर और टाइगर रिजर्व बिलासपुर को छत्तीसगढ़ का प्रमुख पर्यटक स्थल बनाते है।

बिलासपुर जिले के भीतर दर्शनीय स्थल :

1. मल्हार–ऐतिहासिक महत्तव
2. कानन–पेंडारी चिड़ियाघर
3. ताला गाँव–रूद्र शिव की प्रतिमा
4. सेतगंगा का श्रीरामजानकी मन्दिर
5. रतनपुर का महामाया मन्दिर
6. काली मन्दिर, तिफरा
7. अय्यप्पा मन्दिर, तिफरा पुल के पास
8. खुड़िया एवं खूटाघाट बाँध, रतनपुर
9. रानी सती मन्दिर
10. मनोरंजन पार्क

बिलासपुर शहर के भीतर दर्शनीय स्थल :

1. विवेकानंद उद्यान
2. दीनदयाल उद्यान
3. ऊर्जा–पार्क
4. स्मृति–वन
5. यातायात–पार्क (बिलासपुर–सीपत रोड के लगरा ग्राम में स्थित)
6. बिलासा ताल
7. रामकृष्ण आश्रम (कोनी)
8. अरपा रिवर व्यू
9. स्मृति वाटिका

पर्यटन स्थलों का बिलासपुर जिले के आर्थिक एवं सामाजिक–सांस्कृतिक विकास पर प्रभाव का विश्लेषण – बिलासपुर जिले में स्थित अधिकांश पर्यटन केन्द्रों तक पहुंचने के लिए बसें और टैक्सियां बिलासपुर से लिया जा सकता है। बिलासपुर शहरी सार्वजनिक यातायात सोसायटी

*सहायक प्राध्यापक, डॉ. सी.वी. रामान् विश्वविद्यालय, कारगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
**सहायक प्राध्यापक, डी.पी.विप्र. महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

शहर में 12 रूट पर 50 सिटी बसें चला रही हैं। सिटी बसों से लोगों को सुविधाएं दिलाने के लिए कोलकाता की एक कम्पनी इंटेलिजेंट ट्रांसपोर्ट सिस्टम से एक मोबाइल ऐप तैयार करेगी, कोई भी नागरिक आसानी से इसे डाउनलोड कर देख सकेगा कि वह जिस बस की प्रतीक्षा कर रहा है वह कहां पहुंची है। सिटी बसों के लिए महिला कंडक्टरों की भर्ती की जा रही हैं, महिला कंडक्टरों के रहने से यात्री विशेष तौर पर महिलाएं अपने आप को ज्यादा महफूज समझती हैं। आने वाले दिनों में बिलासपुर छत्तीसगढ़ का पहला ऐसा शहर होगा जहां, महिला सिटी बसों का संचालन खुद महिलाएं करेंगी, यानी कि सिटी बसों की स्टीयरिंग महिला हाथों में होगी। बिलासपुर में चल रही बसों के संचालन का जिम्मा महिलाओं को सौंपा जा रहा हैं, इसके अलावा 34 सीटर 10 एसी सिटी बसें भी शहर में चल रही हैं, वर्तमान में ये पूर्व निर्धारित रुटों पर चलने लगी है। सेवायें, गुणवत्ता और कुशलता पर्यटन उद्योग के प्रमुख विषय है। इसी की प्राप्ति के लिए पर्यटन उद्योग के प्रत्येक घटक के लिए प्रशिक्षित एवं कुशल श्रमशक्ति अपेक्षित है। एयरलाइन्स के लिए प्रशिक्षित चालक, अभियन्ता विमान परिचारिकायें और अन्य तकनीशियन आवश्यक हैं। टैक्सी चालकों, कोच आपरेटरों व अन्य कर्मियों को प्रशिक्षित होना आवश्यक है ताकि वे पर्यटकों के साथ ठीक व्यवहार कर सके। होटल, रेस्तरां यात्रा अभिकर्त्ता, टूर आपरेटर के साथ-साथ पर्यटक सेवार्थ उपलब्ध कराने वाले अन्य कर्मियों को भी व्यावसायिक दृष्टि से प्रशिक्षित होना चाहिए। ऐतिहासिक और वन्य अभ्यारण्य आदि में मार्गदर्शन एवं देखरेख के प्रति अधिक जवाबदेह हो सके। इस प्रकार पर्यटन के संवर्धन में मानव संसाधन एक बड़ा साधन है। रतनपुर में मंदिर ट्रस्ट के द्वारा महामाया मंदिर परिसर में दो धर्मशालाओं का संचालन किया जा रहा है। यह दर्शनार्थियों के लिए नि:शुल्क है तथा आवश्यकता पड़ने पर विद्युत जनरेटर भी उपलब्ध है, बिलासपुर जिले में पर्यटकों के आवास की मुख्य व्यवस्था बिलासपुर शहर में है।

तालिका 1 - (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

आरेख क्रमांक 1

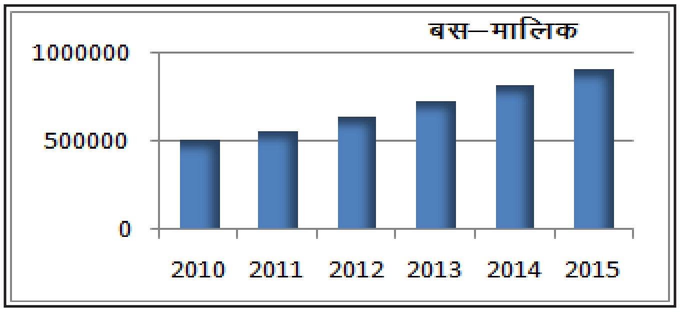

उपर्युक्त आरेख में रतनपुर क्षेत्र में बस मालिक की आय में वर्ष 2010 से 2015 के बीच होने वाले परिवर्तन को दर्शाया गया है। 2010 के अपेक्षा 2015 में इनकी आय में 80 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सबसे अधिक वृद्धि वर्ष 2014 में दर्ज की गई है।

आरेख क्रमांक 2

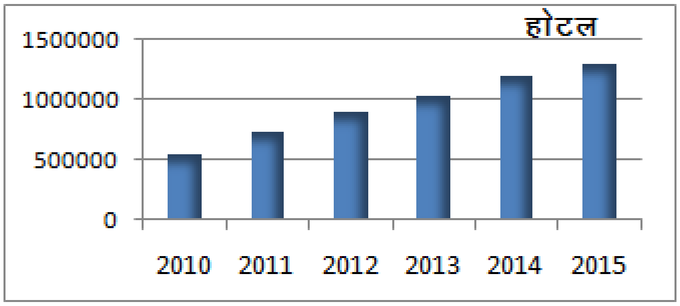

उपर्युक्त आरेख में रतनपुर क्षेत्र में होटल व्यवसाय के अर्जित आय में वर्ष 2010 से 2015 के बीच होने वाले परिवर्तन को दर्शाया गया है। इस व्यवसाय में 2010 की तुलना में 2015 में 136 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सबसे अधिक वृद्धि वर्ष 2011 में दर्ज की गई।

आरेख क्रमांक 3

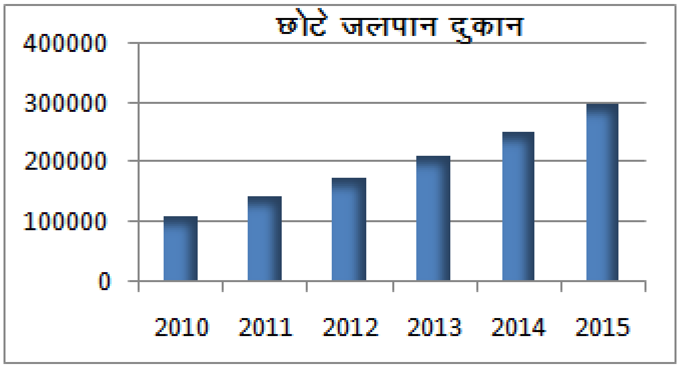

उपर्युक्त आरेख में रतनपुर क्षेत्र में छोटे जलपान दुकानों के आय में वर्ष 2010 से 2015 के बीच होने वाले परिवर्तन को दर्शाया गया है। वर्ष 2010 की तुलना में 2015 में 172 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है। सबसे अधिक वृद्धि वर्ष 2015 में हुई है।

आरेख क्रमांक 4

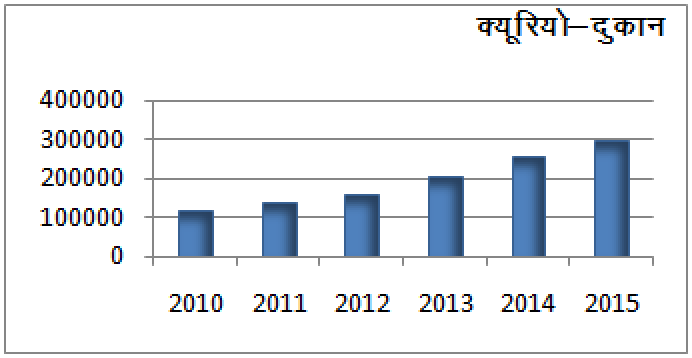

उपर्युक्त आरेख में रतनपुर क्षेत्र में क्यूरियो-दुकान के अर्जित आय में वर्ष 2010 से 2015 के बीच होने वाले परिवर्तन को दर्शाया गया है। इसमें 2010 की तुलना में 2015 में 150 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सबसे अधिक वृद्धि वर्ष 2014 में दर्ज की गई है।

आरेख क्रमांक 5

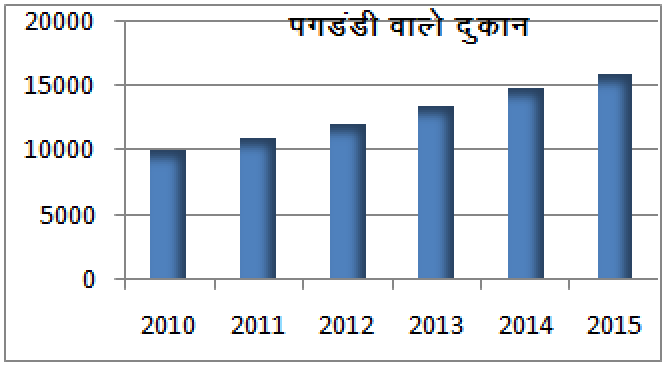

उपर्युक्त आरेख में रतनपुर क्षेत्र में पगडंडी वाले दुकानों के अर्जित आय में वर्ष 2010 से 2015 के बीच होने वाले परिवर्तन को दर्शाया गया है।

इसमें 2010 की तुलना में 2015 में 60 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सबसे अधिक वृद्धि वर्ष 2013 में दर्ज की गई है।

रतनपुर बिलासपुर जिले का प्रमुख पर्यटन स्थल है विगत वर्षो में इसका अन्य पर्यटन स्थलों की अपेक्षा अधिक विकास हुआ है। इस विकास का असर वहां पर्यटन व्यवसाय से जुड़े लोगों की आमदनी पर भी पड़ा है।

बिलासपुर जिले के प्रमुख पर्यटन स्थलों की समस्याएं एवं उनका निराकरण – आज पर्यटन सेक्टर के सामने अनेक प्रकार की समस्यायें देखी जा सकती हैं जैसे सरकार का इसके विकास के लिए उचित ध्यान न देना, उत्ताम इन्फ्रास्ट्रक्चर का अभाव, विधि–व्यवस्था की समस्या, वीसा की समस्या, स्वास्थ्य एवं सफाई की अपर्याप्तता तथा प्रदूषण इत्यादि। सरकार का ध्यान इसके विकास–सम्भावनाओं के अनुकूल नहीं है। बजट में जितना धन होना चाहिए उससे कम सिर्फ 6.4 प्रतिशत ही है। पर्यटकों के व्दारा अदा किये गये टैक्स भारत में सर्वाधिक है। दूसरे एशियाई देशों की तुलना में जो 3.6 प्रतिशत ही होटल का टैक्स लेते हैं, जबकि भारत में यह टैक्स 40 प्रतिशत है। इसी कारण भारत में दुबारा विदेशी पर्यटक बहुत कम आना पसन्द करते हैं। असुविधाजनक इन्फ्रास्ट्रक्चर दूसरी समस्या है यहाँ की अधिकांश सड़के उबड़–खाबड़ तथा सरकारी और शहरों में शौचालय गंदे हैं। हवाई मार्ग में जहाजों में सीट की अपर्याप्तता भी है। ज्यों ही विदेशी पर्यटक भारत में आते हैं, लोगों का ध्यान उनसे अधिक–से–अधिक कमाई की ओर तुरन्त चला जाता है। आवास के लिए, स्थानीय मेला के लिये खान–पान तथा स्थानीय शिल्पकला की वस्तुयें खरीदने पर उनसे अधिकाधिक पैसे लिये जाते हैं। ऐसे पर्यटकों के धोखाधड़ी, लूट, छेड़खानी, बलात्कार तथा हत्या की घटना समाचार–पत्रों में प्राय: आती रहती है। इन वर्षो में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के कारण साधारणत: औसत से काफी कम वर्षा के कारण पेय–जल की विशेष असुविधा हो गयी है। लगभग सभी पर्यटक केन्द्रों पर यह समस्या देखने को मिलती है। फ्रिज–जल की अनुपलब्धता भी पायी गयी है। 20वीं तथा वर्त्तामान शताब्दी में जनसंख्या में आशातीत वृद्धि के कारण प्राकृतिक संसाधनों पर अत्यधिक दबाव पड़ा रहा है, जिसके कारण निरन्तर बढ़ती जनसख्ंया की आवश्यकताओं की आपूर्त्ति के लिए इन प्राकृतिक संसाधनों का लोलुपतापूर्वक धुँआधार विदोहन हो रहा है। आधुनिक प्रौद्योगिकी (Technology) में प्रगति तथा मनुष्य के आर्थिक क्रियाकलापों में वृद्धि के कारण प्राकृतिक संसाधनों के विदोहन में और तेजी आयी है।

पर्यटन विकास के कुछ उपाय – बिलासपुर में पर्यटन को बढ़ावा देने हेतु इस उद्योग से सम्बन्धित समस्याओं को दूर करना होगा तथा राज्य स्तरीय एक्शन प्लान का गठन कर उनके सुझाये गये सुझावों पर अमल करना चाहिए। बिलासपुर में पर्यटन के विकास हेतु निम्नलिखित उपाय किया जा सकते हैं।

1. पर्यटन के साथ यहाँ के आदिवासी संस्कृति का संगम किया जाए।
2. नूतन पर्यटक बाजार की खोज की जानी चाहिए।
3. पर्यटन स्थलों पर आवासीय समस्यायों का समाधान करना चाहिए। इस हेतु निजी अतिथि गृहों, पर्यटक आवास, वन आवास आदि जैसे अनुपूरक व्यवस्था की जानी चाहिए।
4. पर्यटकों को सुरक्षा प्रदान की जाए।
5. पर्यटन स्थल से सम्बन्धित यात्रा कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
6. पर्यटकों हेतु दूरसंचार की उत्ताम व्यवस्था की जानी चाहिए।
7. आवागमन हेतु सड़क एवं रेलमार्ग में सुधार किया जाना चाहिए।
8. बिलासपुर के मुख्य पर्यटक स्थलों की जानकारी देशी एवं विदेशी पर्यटकों को विभिन्न सूचना केन्द्रों के माध्यम से दी जाय।
9. समय–सयम पर यहाँ विभिन्न महोत्सव, का आयोजन किया जाना चाहिए।

पर्यटन विकास के लिए कुछ नीतियाँ :

1. पर्यटन को एक इन्फ्रास्ट्रक्चर उद्योग घोषित करना चाहिए जिसके कारण कम खर्च पर इसका विकास किया जा सकता है।
2. सरकारी सहायता में वृद्धि करना जो अभी 1 प्रतिशत है उसे बढ़ाकर 6 प्रतिशत कर देना चाहिए जो की विश्व–स्तर से (6.8 प्रतिशत) से कम है।
3. टूरिज्म मिनिस्ट्री के अन्तर्गत मजबूत कार्य योग एक कमिटी होनी चाहिए जो पर्यटक उद्योग से सम्बन्धित समस्याओं का निदान कर सके।
4. पर्यटक के आगमन पर वीसा बनाने की व्यवस्था होनी चाहिए। विश्व के अनेक देशों जैसे थाईलैण्ड में उनके आने पर वीसा बनायी जाती है।
5. प्रधान क्षेत्रों में आने वाले पर्यटकों के लिए वीसा की आवश्यकता से मुक्त कर देना चाहिए।
6. हवाई–जहाजों में सीट बढ़ने की नितान्त आवश्यकता है।
7. स्थानीय शिल्प–कला, संगींत का प्रसार–प्रचार करना आवश्यक है।
8. पर्यटक–केन्द्रों का पर्याप्त एडवरटाइजमेंट (प्रचार) करना जिसमें उसका इतिहास, परम्परा, कला, संगींत, जलवायु तथा आवागमन की सुविधा का विस्तार में जिक्र हो।
9. उद्योग के बढ़ावा देने के लिए स्थानीय/देशी पर्यटन विकास पर बल देना चाहिए।
10. पर्यटक–केन्द्रों के सौन्दर्यीकरण पर भी जोर देना चाहिए जिससे बड़ी संख्या में पर्यटक आकृष्ट हो सके।
11. फिर, विधि–व्यवस्था को सख्ती से पेश आते हुए उसे उन्नत बनाना चाहिए।

सारांश एवं निष्कषन – पर्यटन एक सामाजिक– आर्थिक क्रिया है। पर्यटन से विभिन्न क्षेत्र के लोगों के मध्य सामाजिक– सांस्कृतिक सम्पर्क तो स्थापित होता ही है साथ ही पर्यटन स्थल में स्थानीय लोगों की आय में वृद्धि भी होती है। रतनपुर में विभिन्न प्रकार के कार्य जो पर्यटन से प्रभावित होते है, का अध्ययन करने से ये बात सामने आयी कि रतनपुर में पर्यटन के विकास का सीधा असर वहां के लोगों की आय में पड़ा है। 2010 से 2015 तक के आय का अध्ययन करने से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि पर्यटन विकास से स्थानीय होटल, परिवहन व अन्य सेवाओं के आय में वृद्धि होती है। बिलासपुर ने समय के साथ लगातार विकास किया है, लेकिन सरकार को अभी बहुत कुछ करना शेष है। सर्वप्रथम सरकार को उन मुद्दों के लिए जिम्मेवार होना चाहिए जो मुद्दे बिलासपुर की ज्वलंत समस्या है। शिक्षा एवं कार्य संस्कृति में बदलाव लाना होगा। किसी भी स्थान के विकास के लिए सिर्फ प्राकृतिक एवं खनिज सम्पदाएं ही पर्याप्त नहीं होती। वहाँ की कुशल मानवीय संसाधनों को भी विकसित करने की आवश्यकता होती है। संसाधन उद्यमिता तकनीक, योजना एवं रणनीति के आधार पर क्षेत्र को विकसित किया जाता है।

पर्यटन के विकास के साथ–साथ पर्यटन के अनेक प्रकार हो गये हैं, जो पर्यटकों के भ्रमण के उद्देश्य पर निर्भर करता है। पर्यटन के अनेक प्रकार किये जा सकते हैं, जैसे इको–टुरिज्म, साहसिक पर्यटन, वन्य–जीवन पर्यटन, भारतीय हस्तशिल्प एवं पर्यटन, भारतीय चित्रकला पर्यटन, भारतीय

कला, संस्कृति, लोकनृत्य एवं नृत्य धराने का पर्यटन, भारतीय त्यौहार, पर्व और मेले-सम्बन्धी पर्यटन, भारत के धर्म पर्यटन, प्राचीन ऐतिहासिक स्मारक, संग्रहालय एवं वास्तुकला पर्यटन, तीर्थयात्रा पर्यटन, ट्राइबल टुरिज्म, मैरिज पर्यटन इत्यादि। इन प्रकारों को ध्यान में रखकर पर्यटन विकास की रणनीति चाहिए। औद्योगिक प्रतिष्ठान एवं औद्योगिक इकाई के इन्फ्रास्ट्रक्चर भी पर्यटकों को आकृष्ट करते हैं। बहुत सारे पर्यटक-देशी व विदेशी ऐसे संस्थानों की इमारत, कार्यविधि, श्रमिक तथा उनके आवास को देखने की इच्छा रखते हैं। बिलासपुर में ऐसे कल-कारखानें स्थापित हैं, जो खनन-कार्य से लेकर विद्युत उत्पादन में लगे हुये हैं। इनमें से कुछ हैं - एन.टी.पी.सी सीपत, एस.सी.सी.एल., हिर्री माइंस, इत्यादि।

बिलासपुर की नदियाँ, पहाड़ एवं जंगल पर्यटन की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण है जो बड़ी संख्या में पर्यटकों को आकृष्ट करते हैं। अरपा, मनियारी यहां की प्रमुख नदियाँ हैं। बिलासपुर के जंगलों में रंग-बिरगीं स्तब्धता तथा एक स्वर्गिक शाश्वत संगीत अनुभव करने वाला अद्भुत जादू लिपटा है। परन्तु पर्यटन के विकास के साथ ही प्राकृतिक और सांस्कृतिक भू दृश्यों से छेड़छाड़ भू दृश्य के विकृत करके पारिस्थैतिक असंतुलन पैदा करती है। भू दृश्य की इसी कुप्रबन्ध से बचाकर रचनात्मक व सृजनात्मक प्रबंधन पैदा करती है। भूदृश्य को और अधिक सरंक्षित, सुरक्षित और सवंर्धन करना ही भू दृश्य प्रबन्ध संकल्पना कहा जाता है। सेवायें गुणवत्ता और कुशलता पर्यटन उद्योग के प्रमुख विषय हैं। इसी की प्राप्ति के लिए पर्यटन उद्योग के प्रत्येक घटक के लिए प्रशिक्षित एवं कुशल श्रमशक्ति अपेक्षित है। तीर्थस्थल-पर्यटक केन्द्रों पर ठहराव व्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न स्तर के होटल तथा धर्मशालायें आते हैं। तीर्थयात्री-वातावरण या विशेष व्यवस्था की जाती है। इसके अन्तर्गत रतनपुर एवं मल्हार में पुलिस (सुरक्षा), सफाई, स्वास्थ्य-सेवा, प्रकाश जलापूर्ति तथा ठहराव के रख-रखाव व्यवस्था की जाती है। फिर पर्यटक-केन्द्रों पर उचित गाइड-सुविधा, विजुअल ऐड तथा शौचालय की व्यवस्था होनी चाहिए। पैकेज टूर भी पर्यटन को बढ़ावा देता है।

वर्तमान समय में पर्यटन का महत्व आर्थिक एवं सामाजिक-सांस्कृतिक विकास के दृष्टिकोण से बढ़ता जा रहा है। विश्व में सभी देशों में इन दिनों पर्यटन को एक महत्तवपूर्ण आर्थिक क्रिया माना जा रहा है। बिलासपुर के लिए भी यह एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा वह अपने आर्थिक क्रियाओं में तेजी ला सकता हैं। परम्परागत रूप से यह माना जाता रहा है कि पर्यटक विभिन्न देशों के बीच और क्षेत्र के अन्दर अपनी समझ और तालमेल स्थापित करता है और भावनात्मक एकीकरण को बढ़ाता है, पर इसकी आर्थिक प्रभाव से लोग आमतौर पर परिचित नहीं है। वास्तव में पर्यटन से किसी क्षेत्र का आर्थिक विकास अत्यधिक होता है। पर्यटन से उन क्षेत्रों में रोजगार पैदा किया है जहाँ रोजगार के वैकल्पिक अवसर बहुत कम उपलब्ध थे। पर्यटन के विकास का रोजगार-प्राप्ति तथा आय पर प्रत्यक्ष अच्छा प्रभाव पड़ता है। पिछले वर्षो में बिलासपुर जिले के अल्प रोजगार वाले क्षेत्रो में पर्यटन गतिविधियों में वृद्धि से रोजगार सृजन हुआ है। फिर, सामाजिक- सांस्कृतिक प्रभावों को आसानी से आधुनिकीकरण की प्रक्रिया से अलग नहीं किया जा सकता है। पर्यटन से सामाजिक-सांस्कृतिक लाभ भी काफी हो रहा है।

आज पर्यटन सेक्टर के समक्ष अनेक प्रकार की समस्यायें देखी जा रही हैं जैसे सरकार का इसके विकास के लिए उचित ध्यान न देना। उत्ताम इन्फ्रास्ट्रक्चर का अभाव, विधि-व्यवस्था की समस्या, बीमा की समस्या, स्वास्थ्य एवं सफाई की अपर्याप्तता तथा प्रदूषण आदि। बिलासपुर जिले में भी पर्यटन की तीन कठिनाईयाँ स्पष्टत: पायी जाती हैं - आवागमन, पर्यटन-साहित्य और शौचालय की। फिर, पर्यटक बड़ी संख्या में किसी पर्यटन केन्द्र पर इकट्ठे होते हैं, जिससे वहाँ पर के स्थानीय सेवाओं पर दबाव पड़ने से तथा उनके द्वारा ठोस मलवे उत्पन्न करने से पर्यावरणीय अवनयन उत्पन्न होता है। बिलासपुर में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए इस उद्योग से सम्बन्धित समस्याओं को दूर करना होगा तथा जिले में पर्यटन उद्योग के विकास की रणनीति तैयार करने के लिए समीति का गठन कर उनके बताये नये सुझावों पर अमल करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लाल, डॉ. शंकर (2015), 'पर्यटन प्रबन्ध के मूल आधार', गीता प्रकाशन, हैदराबाद
2. शर्मा, अतुल (2012), 'आर्थिक विकास में पर्यटन का योगदान',शशिका पब्लिशिंग हाउस, जयपुर
3. कमलेश, एस.आर. (2002), 'छत्तीसगढ़ की भौगोलिक समीक्षा',साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
4. मिश्र एवं पुरी, (2006), 'भारतीय अर्थव्यवस्था', हिमालया पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
5. गजपाल, डॉ किरण (2006), 'छत्तीसगढ़ का भूगोल', वैभव प्रकाशन, रायपुर

पत्र-पत्रिकाएं :

1. दैनिक भास्कर नवभारत हरिभूमि प्रतियोगिता दर्पण

वेब साइट :

1. cgtourism.choice.gov.in
2. www.bilaspur.gov.in/tourism.html
3. mahamayaratanpur.com
4. bilaspur.gov.in/bilasaandsmallzoo.html

तालिका 1 - तीर्थ-यात्री के आगमन तथा उनसे विभिन्न वर्गों के लोगों की आय में वृद्धि (रूपये)

क्र.	कार्य के प्रकार	वार्षिक आय (रूपये में) 2010-2015					
		2010	**2011**	**2012**	**2013**	**2014**	**2015**
1	बस-मालिक	500000	550000	630000	720000	815000	900000
2	होटल	550000	730000	900000	1020000	1185000	1300000
3	छोटे जलपान दुकान	110000	145000	175000	210000	250000	300000
4	क्यूरियो दुकान	120000	140000	160000	205000	255000	300000
5	पगडंडी वाले दुकान	10000	11000	12000	13500	14900	16000

स्त्रोत: फील्ड-सर्वेक्षण तथा आँकड़ों का विश्लेषण

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

बैगा जनजाति में परंपरागत चिकित्सा पद्धति एक अध्ययन

सीमा सिंह * डॉ. शैलजा दुबे **

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश का एक महत्वपूर्ण भू-भाग आदिवासियों से बसा हुआ है। आदिवासी क्षेत्र विज्ञान की आधुनिक अल्पविधियों से सर्वथा अछूते, संस्कृति के वर्तमान स्वरूप से सर्वथा अपरिचित कृषि, उद्योग-धन्धे, शिक्षा आदि से जीते रहे हैं। मध्यप्रदेश का काफी बड़ा भाग आदिवासी घोषित हुआ है। इनकी अनेक जातियां और अनेक बोलियां है। प्रत्येक जाति की अपनी विशेषताएँ और प्रत्येक बोली के अपने अलग लहजे और शब्दावली है। भौगोलिक दृष्टि से पास-पास रहते हुए भी भाषा और रीति-रिवाजों की दृष्टि से ये जातियां परस्पर काफी दूर है। यदि इनमें परस्पर कोई साम्य है, तो वो है अशिक्षा, गरीबी, नवीन सभ्यता से भय और प्राकृतिक साधनों पर गुजारा करने की प्रवृत्ति। इतनी भिन्नता होने के बावजूद भी इन जातियों में हमारे लिए कुछ आकर्षण है। इनमें प्रमुख है-जीवन की सरलता, सच्चाई, ईमानदारी और मानस गृन्थिहीनता। खुले उन्मुक्त वातावरण में पलने वाले इन स्त्री-पुरूषों का हृदय भी प्रकृति के समान उन्मुक्त है।

आदिवासी क्षेत्रों में प्रविष्ट होकर वहां सभ्यता का प्रकाश पहुंचाने का प्रथम श्रेय ईसाई मिशनरियों को मिलता है। जिसमें श्री बेरियर ऐल्विन, ऐसे लोगों में से एक थे, जिनके ग्रन्थों ने सभ्य समाज का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया। बादमें महात्मा गांधी की दृष्टि इस ओर गयी और उन्होने आदिवासी सेवा-संघ की स्थापना का स्वर्गीय ठक्कर वाप्पा को आदिवासी उत्थान का काम सौंपा। संघ के प्रयत्न से आदिवासी क्षेत्रों में सुधान का कार्य काफी आगे बढ़ा। ईसाई मिशनरियों के सेवा संस्थान धार्मिक प्रचार के लिए थे। स्वतंत्रता के पष्चात भारत सरकार ने आदिवासियों की सर्वांगीण उन्नति का कार्य अपने हाथो में ले लिया। अब तो भारत सरकार का अधिकार प्राप्त कमीषन उनके हितों की देख-रेख करते है। प्रतिवर्ष देश ओर विदेशों से अनेकों समाजशास्त्र के शोध कर्ता इन क्षेत्रों में जाते हैं और इनकी समस्याओं का अध्ययन करते है। आदिवासियों की भाषा, साहित्य, सामाजिक प्रथाओं, धार्मिक विष्वासों आदि का विस्तृत अध्ययन किया जा रहा है। मध्यप्रदेश के आदिवासी जातियों में बैगा भी एक है। शासकीय दृष्टि से यह अनुसूचित आदिम-जाति है और जो कि मध्यप्रदेश के बालाघाट और मण्डला जिले में ज्यादातर निवासरत है। बैगा लोगों के रीति-रिवाज अन्य आदिवासियों से अनेक बातों में भिन्न हैं।

क्षेत्र एवं बैगा जनजाति का परिचय-

बालाघाट जिले का संक्षिप्त विवरण-

लार्ड डलहौजी ने सन् 1845 में गोद लेने की प्रथा समाप्त कर भारतीय राज्यों को ब्रिटिष राज्यों में शामिल करना प्रारंभ किया तो उससे गोंडवाना राज्य भी अछूता नही रहा। गोंडवाना राज्य भी अंग्रेजो के अधीन आ गया। तब यह गोंड़वाना राज्य में शामिल था। ब्रिटिश राज्य के समय इस स्तन का मूल नाम बराहघाट था। बालाघाट अंग्रेजों के समय में तत्कालीन सेन्ट्रल प्राविन्स का हिस्सा था। जिसकी राजधानी नागपूर थी। 1867 ई. में सेन्ट्रल प्रविन्स के भंडारा, सिवनी एसं मंडला जिले के हिस्सों को मिलाकर बालाघाट जिले का गठन किया गया। इस जिले के मुख्यालय का नाम उस समय बूढ़ा या बुरहा था जो कालांतर में बालाघाट में तब्दील हो गया। जिस समय इस जिले का गठन किया गया था उस मात्र दो ही तहसील थी बालाघाट और बैहर। बालाघाट विदेशी सैलानियों के लिए पर्यटन स्थल बन गया है। कान्हा राष्ट्रीय पार्क जिसमें से एक है जो कि विदेशी पर्यटको के लिए नैसर्गिक सौन्दर्य से परिपूर्ण मध्यप्रदेश के बालाघाट जिले में चहुंओर बिछी हरियाली आंगतुको का स्वागत् करती है।

चारों ओर घने जंगलों से घिरा बालाघाट दक्षिण मध्यप्रदेश का एक शान्त, सुन्दर छोटा सा शहर है। सतपुड़ा पर्वत माला के छोर पर मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़ की सीमा पर बसा यह शहर शुद्ध हिन्दी भाषी है। यह एक नगरपालिका व बालाघाट जिले का प्रशासकीय मुख्यालय है। बालाघाट जिले का क्षेत्रफल 9245 किलो मीटर तक फैला हुआ है। बालाघाट जिले से बैनगंगा नदी बहती है जो कि काफी विश ाल रूप में है। बालाघाट जिले को नक्सली प्रभावित क्षेत्र भी घोषित किया गया है। वर्तमान में जनगणना 2011 के अनुसार जिले की कुल जनसंख्या 1701698 है।

परम्परागत चिकित्सा पद्धति एवं उपचार में प्रयुक्त जड़ी-बूटियां व तंत्र-मंत्र – सर्वेक्षित बैगा जनजाति में बीमारियों/रोगो का होना के संबंध में अनेक कारण भी मानते हैं जैसे किसी देवी-देवता की समय पर पूजा,वृत आदि न करना जिसके कारा इस देवी या देवता का रूठ जाना नाराज हो जाने के कारण यह माना जाता है कि देवी देवता की यह पूजन न करने से यह रोग हुआ है।

कभी है जो संबंधी बीमारी हो जाती है तो यह मानतेहै कि उनकी ग्राम देवी की समय पर पूजा नही की गई है उनकी नाराजगी का ही यह फल है।

इस प्रकार अनेक धार्मिक मान्यताएँ है जिन्हें समय एवं विधिवत पूजन न करने के कारण अनेक बीमारियों होती है।

इसी प्रकार भूत प्रेतात्मा संबंधी अवधारणा है कि कुछ रोगों का कारण भूत प्रेत है जैसे किसी महिला का गर्भवती न होना, अचानक किसी स्वस्थ व्यक्ति का बेहोश हो जाना बीमार हो जाना तो यह माना जाता है कि कोई भूत-प्रेत का प्रकोप है। बैगा जनजाति इन सब भूत-प्रेत पर विश्वास करते है।

* शोध छात्रा, बरकतउल्ला, भोपाल (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (समाजशास्त्र एवं समाजकार्य) उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, भोपाल (छ.ग.) भारत

रोगी के होने के संबंध में अन्य मान्यताएँ भी है जैसे-किसी व्यक्ति को किसी से बदला लेना है जो वह गुनियाओं नाना प्रकार के जादू टोना करवाते हैं जिसे वह व्यक्ति किसी न किसी रोग बीमार से पीड़ित होता रहता है कई प्रकार के कष्ट होते है।

कुछ रोगो का संबंध पुर्नजन्म के पाप-पुण्य भी मानते हैं जैसे किसी के संतान का न होना ही माना जाता है कि वह नि:संतान इसलिए है कि इससे पूर्व जन्म में जरूर कोई पास किया है इस कारण इसे संतान सुख नहीं है।

इसी प्रकार कुछ रोग बीमारिया का संतान देवीय प्रकोप मानते हैं, क्योकि ये लोग देवीय प्रकोप से डरते हैं। यदि किसी प्रकार का कोई देवीय/प्राकृतिक प्रकोप हो जाता है तो विभिन्न प्रकार की बीमारियों का जन्म होता है। इन बीमारियों से बचने के लिए लोग देवीय/प्रकृति की पूजा करते हैं।

रोगो की परम्परागत चिकित्सा पद्धति एवं उपचार में प्रयुक्त जड़ी-बुटियां/ **मंत्र-तंत्र-**

रोगो की परम्परागत चिकित्सा पद्धति एवं उपचार के संबंध में सर्वप्रथम यह जानना आवश्यक है कि परम्परागत लोक चिकित्सक कौन है9 अत: जनजातीय समाज में इस प्रकार की भूमिका अथवा पारम्परिक रूप से कार्य करने वाले जानकारों को चार प्रकार से समझा जा सकता है:-

1. जादू कार्य आधारित गुनिया
2. वनौषधि/जड़ी बूटी का आधारित पण्डा या वैद्य
3. हड्डी जोड़ने वाला हड़जोड़
4. प्रसव कार्य दाई या बसोरन

रोगो के उपचार के प्रचार :

1. देवी देवता से सम्पर्क
2. जादू-मंत्र-तंत्र, झाड-फूंक
3. बनौषधि उपचार

निदान विधियां :

1. जादुई धार्मिक विधियां
2. देव पीड़ा चवल गेंहू दाने से पीड़ा का कारण ज्ञात करना
3. थाली विधि
4. सूपा झाड़ना
5. नाड़ी विधि
6. नाड़ी तंत्र की प्रवाह गति को ज्ञात कर रोग का पता लगाना कि रोग आंतरिक है या सामान्य।

लाक्षणिक विधि :

1. मन मस्तिष्क शरीर के लक्षणों से रोग ज्ञात करना।

रोगो की उपचार विधि :

1. पूजा - बैगा जनजाति के लोगो का विश्वास है कि नियमति अपने देवी-देवता तथा अन्य देवी देवताओं का पूजन, वृत्त आदि किया जाय तो अवश्य व्यक्ति स्वस्थ हरेगा, उसे किसी प्रकार के कष्ट, रोग बीमारी नही होगी। विवाह के अवसर पर दूल्हा देव की पूजा की जाती है। यदि दूल्हा देव की पूजा नही की जाय तो विवाह में बाधांए उत्पन्न होती है। ग्राम देव की वर्ष में एक बार पूजा की जाती है। इनकी पूजा करने से ग्राम में किसी प्रकार का संकट नही आजा है। इनके मुख्य देवी-देवता जैसे-काली कस खेरापति, बीजासेन, बड़े देव पीर बाब सिद्ध बाबा गुरू बाबा, गैलासुर, मुडी देव, अग्नि देवता, दूल्हादेव आदि की पूजा की जाता है। इन्हें प्रसन्न करने के लिए पेजा वृत आदि रखते है , जिससे कि देवी देवता किसी प्रकार की क्षति या कष्ट न पहुंचा सकें। बीमार व्यक्ति के ठीक होने के लिए अपने देवता या देवी की पूजा की जाती है। इस व्यक्ति के ठीक होने के लिए यह बोल दिया जाता हे कि हम यह प्रसाद चढ़ाएंगे। अवश्य पूरा करते हैं। रोग मुक्ति हेतु विधिवत पूजा की जाती है।

जड़ी बूटियां एवं बीमारी में उपयोग विधि - सर्वेक्षित क्षेत्रांतर्गत निवासरत बैगा जनजाति के जब कोई व्यक्ति बीमार हो जाता है, तब उसे सर्वप्रथम गांव या अन्य नजदीक के जानकार व्यक्ति वैद्ध अपने ज्ञान से परम्परागत विधि से इलाज करता है जैसे-झाड़ फूंक करना, नाडी तंत्र देखना आदि। अनेक बीमारियों के इलाज जड़ी बूटियों से किया जाता है। एक बीमारी के इलाज हेतु विभिन्न जड़ी-बूटी उपयोग में लायी जाती है। दूरस्थ क्षेत्रों में आधुनिक चिकित्सक सुवधा उपलब्ध न होने के कारण परमपरागत चिकित्सा पर विश्वास करते हैं। प्रशासन द्वारा आधुनिक चिकित्सा पद्धति का प्रचार-प्रसार की कोशिश की जा रही है। शहरीकरण के प्रसार के कारण लोगो के विचारों में परिवर्तन हो रहा है। इस जनजाति के लोग असाध्य रोगो का इलाज जड़ी-बूटियों से करते हैं। कुछ वृक्षो की जड़े कुछ वृक्षो के फल-फूल इलाज हेतु उपयोग में लाते हैं। वैद्य का सम्मान किया जाता है, क्योकि वह अनेक कष्टों को दूर करता है।

विभिन्न बीमारियों के इलाज हेतु उपयोग में लाई जाने वाली जड़ी-बूटियां निम्नानुसार है:

क्र.	जड़ी-बूटी का नाम	बीमारी का नाम	उपयोग विधि
1.	मदन भस्म	घात	बरीक पीसकर दूध के साथ सेवन करना
2.	रामदातौन की जड़	महवारी अनियमित नि:संतान होना	बारीक पीसकर दूध के साथ सेवन करना
3.	नागदौन	सर्प का काटना	बीज पीसकर लेप करना
4.	सतावर	दूध न निकलना	जड़ पीसकर दूध में पीना
5.	आवंला की जड़	दांत दर्द	पीसकर कान में डालना
6.	तिनपनु की जड़	जानवरों के खता	पीसकर गाय के मूल के साथ लेप करना
7.	गंगेरूआ की जड़	पेट दर्द	जड़ पीसकर पेट में लेप लगाना
8.	लाल पथरचटा	अंदरूनी खता	जड़ पीसकर गाय के दूध के साथ पीसना
9.	ग्वारभाटा	जलने पर	छाल पीसकर दूध के साथ खाना
10.	मेढा लकडी	दस्त	छाल पीसकर दूध के साथ खाना
11.	भिरा	पेट में सून पडता दर्द होना	छाल जलाकर गुड़ के साथ खाना
12.	अकउवा	बिच्छु का काटना	रस सूघंने से छीक आ जाय तो बिच्छु का जहर खत्म करना
13.	घवा की छाल, सागोन की छाल किरवारा की छाल केवटी की छाल	पेट मे वल धूल होना	सभी जड़ी बूटी का घोल बनाकर पीना
14.	भटकटइया गटेरन	सीत	अरंडी के पत्ते में लपेटकर

			आग में गाढ़ना जिसजाने पर रस निकालकर शहद के साथ खाना
15.	आम की छाल जामुन, तिन्सा की छाल	आंव	पीसकर कपड़े में छानना चूर्ण को गाय के दूध मे पीना

उपरोक्तानुसार जड़ी-बूटियों के द्वारा विभिन्न रोगों का परामपरागत ढंग से चिकित्सा उपचार किया जाता है।

मवेषियों की बीमारियाँ:-

खुरहा की बीमारी:- इसमे मवेशी के चारों पैरों मकें फोड़े हो जाते हैं। इसके लिए अरण्डी, अलसी, भिलवा का तेल उसके खुरों में लगाते हैं। इस बीमारी से मवेशी की खुरी-खुर निकल जाते हैं।

माता की बीमारी:- मवेशी के शरीर में फोड़े हो जाते है, जिससे वह चरना बंद कर देता है। शाम को मवेशी की आरती उतारते है। सुबह स्नान करके गुड़, घी, धूप जलाते हैं। इस बीमारी को दूर करने के लिए कुल बोलना बदना करते हैं जब यह बीमारी ठीक हो जाती है तो भजन-पूजन इत्यादि करते हैं।

पेट फूलना:- इससे मवेशी का पेट फूल जाता है । पण्डा या ग्वाल मंत्र फूकता है बांये कान के अन्तिम छोर को थोड़ा सा काटकर बास की कमची से कान को एठते है या ठोकते हैं । ऐसा करने से खून टपता है और बीमारी ठीक हो जाती है। इस बीमारी के लिये जंगली जड़ी-बूटियों का उपयोग किया जाता है।

थाती की बीमारी:- रेपेट में, सीने में, बदन पर थाती हो जाती है। (जो बाहर निकलता है) उसे बाहर थाती कहते हैं व अन्दर वाले को अन्दर थाती कहते हैं। इसका इलाज नही होता।

तंत्र-मंत्र विधि से रोगो का इलाज:- इस जनजाति के लोग जब कोई व्यक्ति बीमार हो जाता है, तो उसे गुनिया (पंडा) के पास ले जाते है। गुनिया या पडा के पास मुख्यत: तब ले जाते हैं जब रोगी व्यक्ति जड़-बूटी या अन्य इलाज से भी ठीक नहीं हो रहा हो। गुनिया बीमार व्यति का दलाज तत्र-मंत्र से करता है। ये लोग अपनी कुशलता हेतु पूजा का सहारा होते है। देवी देवताओं की पूजा करते है मनोति करते है, ताकि फिर कोई संकट न आये ।बच्चों को किसी की नज़र न लगे इससे बचाने के लिए गुनिया (पंडा) से मंत्र व दवा से तावीज भ्रवाकर गले में पहना दिया जाता है। गुनिया व्यक्ति मंत्र की सिद्धी करते है। अमावस्या की रात व दीवाली के दिन की रात्रि में मंत्रों को जगाते है।

गुनिया मंत्रोचारण पूर्व अपने गुरू को भजता है, इसके बाद मंत्र उच्चारण करता है। मरीज के परिवार वाले गुनिया को मुर्गा, बकरा, प्रसाद, नारियल आदि देते है। यदि कोई बच्चा अचानक बीमार हो जाता है तो गुनिया उसे झांड-फूंक कर ढीक करता है, इसी प्रकार अन्य बीमारियों का इलाज झाड़-फूंक द्वारा ठीक किया जाता है। गुनिया मरीज को अपने सामने बैठा लेता है, तत्पष्चात् मंत्र प्रांरभ करता है। बीमारी के उपचार संबंधी कुछ मंत्र निम्नानुसार है:-

आंख का मंत्र:- कुम्हारिन बैटीतनेर बाप कहां के मारी कोड मारील का करही-चुकिया बनाही। चुकिया जा का करही- गुगा जमुना के पानी लाही। पानी ला का करही-आंख में डारही। काकर फूंके, मोर, फूंके, मोन गुरू धोबिन गुरू, ईश्वर गौरा वारवती, महादेव फूंके ले गंगा जमुना कस पानी आंख जुड़ाये।

बिच्छु का मंत्र:-बिछि-बिछि केउ जात हाही। बिछिया अठाराह जात छै यकारी, छै कलौरी बिछी उतरे डंक छावी, काकर, फूंके, मोर फूंके, मोर गुरू के फुंके, कौन गुरू धोबिन गुरू, ईश्वर गौरा पारवती, महादेव ले फूंके केबिच्छी डक सहित उतर जाये।

इत्यादि तंत्र-मंत्र द्वारा बीमारियों को इलाज करने का पारंपरिक पद्धति का प्रचलन है।

आधुनिक चिकित्सा पद्धति का प्रमाण- सर्वेक्षित क्षेत्रान्तर्गत निवासरत बैगा जनजाति में आधुनिक चिकित्सा पद्धति का प्रभाव पड़ा है। सड़क के किनारे स्थित ग्रामों मे आदिवासी लोग अनेक बीमारियों के इलाज हेतु समीप के परसाटोला, बैहर के शासकीय चिकित्सालयों में जाकर इलाज कराते हैं। परम्परागत अवधारणाओं में भी परिवर्तन देखने को मिलता है।

शिक्षा का प्रभाव शासकीय कर्मियों के सपर्क में आपे के कारण ये लोग आधुनिक चिकित्सा पद्धति पर विश्वास करने लगे है साथ ही थोड़ी बहुत जागरूकता के कारण ये लोग शासकीय अस्पताल भी जाने लगे है।

निष्कर्ष एवं सुझाव - बैगा आदिम जाति आरण्य एवं बीहड़ वनों में रहने वाली जाति है। यहां पर इनमें जो परिवर्तन आज नजर आते हैं उसे हम निम्नानुसार देख सकते हैं। इस समाज पर भारतीय समाज व संस्कृति का प्रभाव पूर्ण रूपेण दृष्टिगोचर होता है।

हिन्दुओं के प्रभाव का और संकेत यह है कि इनके घरों की दीवारों पर रंग से बने हिन्दू देवी-देवताओं के चित्र अंकित किये हुए है, ऐसा देखने में आताा है। एक गांव में मैने हनुमान, गरूण, कृष्ण भगवान तथा गणति के चित्र दो बार घर में दीवारों पर देखे थे। साथ में सत्य-शिवं-सुंदरम, अहिंसा परमों धर्म:, सत्यमेव जयते इत्यादि संस्कृत भाषा में सुभाषित भी लिखे रहते हैं।

बैगा जनजाति की समस्यांए तथा उनका समाधान - अब तक बैगा लोगो के विषय में हमने जो देखा है, उससे आर्थिक, सामाजिक एंव शैक्षिणिक समस्याएं समझ में आती है। भूमि उनके पास आवस्यक मात्र में नहीं है। भूमि की उर्वरता बहुत कम तथा कृषि तकनीकी निम्न स्तर की हैं वन आदिवासियों की अमूल्य वस्तु है पर उससे लाभ के बदले में कष्ट अधिक मिलते हैं । चारागार के स्थान भी नहीं बने हैं। ये लोग राज्य सरकार के निमयो से मिलने वाली सुख सुविधाओं से वंचित भी रह जाते हैं। थोडी बहुत जागरूकता आने के बावजूद भी ये लोग उसका उपभोग नहीं कर पाते हैं। बैगा जनजाति को राष्ट्रीय मानव का दर्जा प्राप्त है इसलिए सरकार की यह जिम्मेदारी होनी चाहिए कि इनको प्रचार प्रसार का माध्यम से सुविधा उपलब्ध कराई जावे ताकि ये अपने सुख सुविधाओं से वंचित न रह सके। ये जनजाति जंगलों में दूर दराज क्षेत्रों में निवास करते हैं इसलिए किसी का ध्यान भी इनकी ओर नहीं जाता है। शायर यही कारण है कि इनको मिलने वाली सुख सुविधाएं सिर्फ कागजों में ही सिमट कर रह जाती है। इसके लिए जरूरी है कि जनजाति घोषित किए गए क्षेत्रों में चलाये जाने वाले अभियान के माध्यम से इनके बीच जागरूकता लाई जा सके तभी ये विकसीत हो सकते हैं। गैर सरकारी संस्थाओं को चाहिए कि वे आदिवासियों को कानून कायदे से अवगत करायें जो कि उनके हित के लिये बनाये गये हैं। इसके अतिरिक्त उन्हें आर्थिक व कानूनी सहायता प्रदान करें।

वन ग्रामों के संबंध में सरकार द्वारा बनायी गई नीति को लागू करके शीघ्र कदम उठाना चाहिए। इस कार्य के लिए वन विभाग, रेवेन्यू विभाग तथा विकास विभाग के अधिकारियों पर स्थिर सहयोग की भावना होनी चाहिये तथा इसके प्राप्त आय भी ग्राम पंचायतों को दी जानी चाहिए।

बैगा जनजाति में तथा अन्य जनजातिय समाजों में प्रचलित पारंपरिक चिकित्सा प्रणाली एवं पारम्परिक चिकित्सा इलाज में प्रयुक्त जड़ी-बूटियों को संरक्षित किया जाना चाहिए। इस विधा के जानकार व्यक्तियों को

चिन्हांकित कर प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए जिससे वे इस विधा को जीवित रख सकेंगे। इससे ग्रामीण आदिवासी समाज तथा अन्य लोगों को भी विभिन्न बीमारियों का प्रारंभिक इलाज स्थानीय स्तर पर प्राप्त हो सकेगा।

इस प्रकार आदिवासियों के उत्थान चिकास के लिये जो कार्यक्रम किये जा रहे है उस कार्यक्रमों को नियोजित ढंग से लागू करने की आवश्यकता है। वर्तमान परिस्थितियों में आयुर्वेद दवाओं का काफी सेवन किया जा रहा है। इनकी प्राप्ति जंगलो से ही वनो के द्धारा प्राप्त की जा रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल जी.के. एवं पाण्डेय एस.एस.- सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान- 1987
2. मिश्र उमाशंकर एवं तिवारी प्रभात कुमार - भारतीय आदिवासी- 1975
3. मुखर्जी आर. एन. - भारतीय सामाजिक संस्थाएं- 1983
4. मुखर्जी एवं अग्रवाल भरत - संस्कृति व सामाजिक संस्थाएं- 1985
5. सिद्दीकी के.ए. - भारत के आदिवासी- 1984
6. पटेल डॉ. जी.पी. - जनजातियों में परम्परागत चिकित्सा पद्धति- 1998-99
7. मूर्ती आर. - एक जनजातीय समाज- 1972
8. मेरियट मेकम अनुवादक राव हरिकृष्ण - ग्रामीण भारत- 1960
9. उत्प्रेति - भारतीय जनजातियां 1970
10. रिपोर्ट ऑफ द शेड्यूल्ड ऐरिया एण्ड शेड्यूल्ड ट्राईब्स....कमीशन वाल्यूम 1

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

गरीबी उन्मूलन अभियान में शारदा ग्रामीण बैंक का योगदान

गरिमा सिंह *

शोध सारांश – शारदा ग्रामीण बैंक सतना ने गरीबी उन्मूलन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। शारदा ग्रामीण बैंक से ऋण प्राप्त हितग्राहियों की जहाँ एक ओर आय में वृद्धि हुई है वहीं दूसरी ओर रोजगार दिनों में भी वृद्धि हुई है। शारदा ग्रामीण बैंक ने हितग्राहियों को कम ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराकर साहूकार एवं महाजनों के शोषण से मुक्ति दिलाया है। यह शोध पत्र पी–एचडी के शोध कार्य पर आधारित है।
शब्दकुंजी – गरीबी, बेरोजगारी, हितग्राही, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, गरीबी उन्मूलन अभियान, आर्थिक नियोजन, प्रतिव्यक्ति आय, आर्थिक शोषण।

प्रस्तावना – इलाहाबाद बैंक द्वारा प्रवर्तित शारदा ग्रामीण बैंक की स्थापना क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अधिनियम 1976 की धारा 31(1) के अंतर्गत दिनांक 31 मार्च 1979 को भारत का राजपत्र (असाधारण) प्राधिकार से प्रकाशित संदर्भ संख्या भाग खख खण्ड 3 उपखण्ड (खख) जारी अधिसूचना के अंतर्गत प्रसिद्ध देवी माँ शारदा के नाम पर हुई थी। कारोबार का प्रारंभ 21 मई 1979 से किया गया। शारदा ग्रामीण बैंक का उद्देश्य किसानों का सस्ती ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराकर साहूकारों एवं महाजनों के शोषण से मुक्ति दिलाना तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विकास कर उसे आत्मनिर्भर बनाना है। शारदा ग्रामीण बैंक लोन संबंधी कार्य, डीडी, चेक एवं खाते संबंधी समस्त कार्यो को सम्पादित करता है।[1]

गरीबी का अर्थ उस स्थिति से है, जिसमें समाज का एक भाग अपने जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं को संतुष्ट करने में असमर्थ रहता है। प्रसिद्ध गाँधीवादी अर्थशास्त्री नरेन्द्र दुबे के अनुसार गरीबी का आकलन करने के लिए – सामान्यत: गरीबी का आकलन इस आधार पर किया जाता है कि किसी मानव समुदाय का भोजन, वस्तु, निवास, शिक्षा, चिकित्सा, मनोरंजन आदि का स्तर क्या है? निर्धनता रेखा के निर्धारण के लिए सुरेश तेंदुलकर द्वारा सुझाए गए फॉर्मूले में उपभोग व्यय को आधार माना गया है। शहरी क्षेत्र में प्रतिदिन रू. 28.65 व ग्रामीण क्षेत्र में रू. 22.42 प्रतिदिन से कम उपभोग व्यय वालों को इस फॉर्मूले के तहत 29.8 प्रतिशत लोगों को निर्धनता रेखा से नीचे माना गया है।[2] योजना आयोग के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिव्यक्ति 2400 कैलोरी प्रतिदिन तथा शहरी क्षेत्र में 2100 कैलोरी प्रतिदिन के हिसाब से भी जिन्हें प्राप्त नहीं हो पाता, उसे गरीबी रेखा से नीचे माना गया हैं।[3]

शारदा ग्रामीण बैंक गरीबी उन्मूलन संबंधी अनेक योजनाओं का संचालन कर रही है, जिसमें प्रमुख रूप से शारदा किसान क्रेडिट कार्ड, मुख्यमंत्री ग्रामीण आवास योजना, श्री यादे माटीकला योजना, कपिल धारा योजना, दीनदयाल मार्केट विकास योजना, बहन निवेदिता स्वसहायता समूह विकास योजना, स्वर्ण जयंती ग्रामीण स्वरोजगार योजना, रानी दुर्गावती अनुसूचित जाति/जनजाति रोजगार योजना, मुख्यमंत्री ग्रामीण आवास योजना, शारदा किसान शक्ति योजना हैं। शारदा ग्रामीण बैंक अपनी इन योजनाओं के माध्यम से किसानों, लघु एवं कुटीर उद्योगों को ऋण उपलब्ध कराकर उनके विकास में सहयोग प्रदान कर रही है। सुबोध कुमार[4] (1992) ने अपने अध्ययन में पाया कि नियोजन पूर्व काल में ऋणग्रस्तता को गरीबी का पर्याय समझा जाता था, बैंक ने समाज के इस भ्रम को तोड़कर गरीबों की आर्थिक स्थिति सुधारनें में अपना अहम योगदान दिया है।

उद्देश्य –

1. शारदा ग्रामीण बैंक से ऋण लेने के पहले किसानों की आर्थिक स्थिति एवं ऋण लेने के बाद की आर्थिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. शारदा ग्रामीण बैंक को ऋण प्रदान करने में एवं ग्रामीण किसानों को ऋण प्राप्त करने में आने वाली समस्याओं का अध्ययन करना।
3. परम्परागत व्यवसाय पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र पी–एच.डी के शोध कार्य पर आधारित है। इसमें म.प्र. के सतना जिले का चयन अध्ययन के क्षेत्र के रूप में किया गया है। यह प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों समंकों पर आधारित है। जहाँ एक ओर प्राथमिक समंकों का संकलन साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन एवं प्रश्नावली भरवाकर किया गया है, वहीं द्वितीयक समंको का संकलन अग्रणी बैंक इलाहाबाद बैंक की रिपोर्टो, वार्षिक कार्ययोजना, विभिन्न पुस्तकों, पत्र एवं पत्रिकाओं आदि से किया गया है। इसमें उन हितग्राहियों का चयन दैव निदर्शन विधि से किया गया है जो वर्ष 1991 से 2010 तक शारदा ग्रामीण बैंक सतना की विभिन्न योजनाओं से लाभान्वित हुए हैं।

रोजगार – रोजगार के बिना मानव विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। रोजगार के बिना मानव के अंदर विद्यमान शक्ति का हास हो जाता है और मानव निर्धनता के दुश्चक में फंसा रहता है। इसलिए रोजगार उपलब्ध कराना सरकार की प्राथमिकता में है। शारदा ग्रीमण बैंक भी स्वरोजगार के लिए ऋण प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। हितग्राहियों को प्राप्त रोजगार संबंधी जानकारी निम्नलिखित है –

शारदा ग्रामीण बैंक द्वारा प्रदान ऋण की हितग्राहियों के रोजगार (दिन संख्या) पर प्रभाव

रोजगार दिन/वार्षिक	ऋण के पहले		ऋण के बाद	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
100 से कम	84	42	20	10
100-200	68	34	26	13
200-300	32	16	96	48

* अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

300 से अधिक	16	08	58	29
योग	**200**	**100**	**200**	**100**

स्रोत : व्यक्तिगत सर्वेक्षण

उपरोक्त सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट है कि शारदा ग्रामीण बैंक सतना से ऋण प्राप्त करने के बाद हितग्राहियों को प्राप्त होने वाले रोजगार दिनों में वृद्धि हुई है और वह आत्म निर्भर हुए हैं।

आय– इस शोध में यह जानने का प्रयास किया गया था कि क्या शारदा ग्रामीण बैंक सतना से ऋण प्राप्त करने के बाद हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति में बदलाव आया है ? इससे संबंधित अध्ययन क्षेत्र की जो स्थिति रही वह निम्नलिखित है –

शारदा ग्रामीण बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण का हितग्राहियों की आय पर प्रभाव

आय मासिक (रू. में)	ऋण के पहले		ऋण के बाद	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
5000 से कम	70	35	18	9
5000–10,000	52	26	32	16
10,000–20,000	34	17	76	38
20,000–30,000	24	12	36	18
30,000 से अधिक	20	10	38	19
योग	**200**	**100**	**200**	**100**

स्रोत : व्यक्तिगत सर्वेक्षण

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि ऋण के पहले कम आय प्राप्त करने वाले हितग्राहियों की संख्या अधिक थी, लेकिन ऋण प्राप्त करने के बाद अधिक आय प्राप्त करने वालों की संख्या अधिक हो गई। इस प्रकार शारदा ग्रामीण बैंक द्वारा जो ऋण प्रदान किया गया वह आय में वृद्धि के लिए सहायक रहा। इसी प्रकार भारतीय वेदी[5] ने अपने शोध में पाया कि बैंक के ऋण योजनाओं से हितग्राहियों का आर्थिक लाभ हुआ है।

निष्कर्ष – शोध से प्राप्त प्रमुख निष्कर्ष निम्नलिखित है :

1. शारदा ग्रामीण बैंक सतना से ऋण प्राप्त करने के बाद हितग्राहियों को प्राप्त होने वाले रोजगार दिनों में वृद्धि हुई है और वह आत्मनिर्भर हुए हैं। इस प्रकार शारदा ग्रामीण बैंक सतना रोजगार सृजन कर अपनी महती भूमिका अदा कर रहा है।
2. शारदा ग्रामीण बैंक सतना से ऋण प्राप्त हितग्राहियों की आय में वृद्धि हुई है अर्थात आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है।
3. शोध में पाया गया कि 74 प्रतिशत हितग्राहियों ने ऋण योजना का लाभ लेने के लिए शारदा ग्रामीण बैंक के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को घूस दी है। साथ ही यह भी पाया गया कि हितग्राहियों को समय पर ऋण नहीं मिलता है और उन्हें ऋण प्राप्त करने हेतु घूस देनी पड़ती है।
4. शोध में पाया गया कि साहूकार एवं महाजन आज भी गरीब किसानों से 75 प्रतिशत तक ब्याज वसूलते हैं अत: अधिक ब्याज लेकर उनका आर्थिक शोषण किया जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वार्षिक ऋण योजना 2012–13, इलाहाबाद बैंक (अग्रणी बैंक), सतना म.प्र. पृ. 3
2. रेणु त्रिपाठी, 'ग्रामीण विकास और निर्धनता उन्मूलन' ओमेगा पब्लिकेशन्स, दरियागंज, नई दिल्ली, 2011
3. योजना आयोग, भारत सरकार, नई दिल्ली।
4. सुबोध कुमार, 'बैंक और भारतीय कृषि वित्त' कुरूक्षेत्र 37 (9), जुलाई 1992, पृ.30,31
5. भारती वेदी, 'ट्राईसेम योजना का अनुसूचित जनजातियों की व्यावसायिक गतिशीलता पर प्रभाव' पी–एच.डी शोध प्रबंध, बानिस महू, 2001 पृ. 295
6. मध्यांचल ग्रामीण बैंक, सतना म.प्र.।

****

पर्यावरण एवं परम्परा एवं सामाजिक आदतें

ऋचा एस. मेहता *

प्रस्तावना - वृक्ष है तो मानव हैं। वृक्ष फलदार हो, इमारती हो या औषधीय वह काम जीवमात्र के आता हैं। पशु-पक्षी कीड़े-मकोड़े ही नही, जितने भी जीव है, वृक्ष उनके सहयोगी है। उनके जीवन का आधार है। हम भारतीयों ने वृक्षों की इसी आस्था, विश्वास और उपयोगिताओं की समझ के आधार पर संवद्रधन और संरक्षण किया हैं। हमारी बहुत सी धार्मिक आस्थाएँ और सामाजिक परम्पराएँ इसी आधार पर बनी हैं। तीज त्यौहार के केन्द्र में भी पेड़ हैं। पूरा औषधि विज्ञान तो वनस्पति जगत पर ही निर्भर है।

सामाजिक आदत से अभिप्राय है जब किसी कार्य की पुनरावृति बार-बार की जाए तब वह आदत के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं और जब इस आदत को समाज अपना ले तब वह सामाजिक आदत कहलाती हैं। भारतीय संस्कृति की यह विशेषता रहीं है कि जड़ चेतन द्रव्यों में जो भी जीवपयोगी प्रतीत हुआ समय-समय पर उसके प्रति आभार व्यक्त किया गया, साथ ही उसे धार्मिक भावनाओं में समायोजित किया गया ऐसे अनेक प्रमाण मिलते हैं जिनमें पच तत्वात्मक द्रव्यों की स्तुति का वर्णन हैं। अग्नि, वायु, भूमि तथा नदियों की स्तुतियों से संबंधित हमारे ग्रंथों में हमें अनेक उल्लेख मिलते है। औषधाय शांति: वनस्पतय: शांति: जैसे मंत्रों का सृजन ऐसी भावनाओं का उदाहरण है।

भारतीय संस्कृति का रूझान प्रकृति संरक्षण की ओर प्रारंभ से ही रहा है, प्रकृति के प्रति सम्मान और परस्पर साहचर्य एवं प्रकृति संरक्षण को श्रेष्ठतम कार्य का दर्जा दिया गया है। प्रकृति के प्रति हमारी सम्मान भावना दैनिक जीवन में रची बसी हैं। पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रयासरत सभी बुद्धिजीवियों व संस्थाओं का मानना है कि प्रकृति की रक्षा उसके साथ ही रहकर की जा सकती हैं ना कि प्रकृति से अलग रहकर।

आज भी हमारे देश में ऐसे अनेकों पर्व है जिनके प्रति हमारे पूर्वज सम्मान और कृतज्ञता प्रकट करते थे और समय-समय पर पूजा करके प्रकृति के प्रति आभार व्यक्त करते थे। हम वर्तमान परिवेश में इन पर्वो के माध्यम से सदियों पुरानी परम्पराओं को क्षीण होने से बचा सकते है। हम अब ऐसे ही कुछ विशेष पर्वो के विषय में चर्चा करेंगे -

1. वसंत पंचमी : यह माघ शुक्ल पंचमी को मनाया जाता हैं आमों पर बौर और गेहूँ की फसल में बाले आने लगती है इसी दिन बसंत ऋतु का आगमन भी होता है, विद्यादात्री सरस्वती माँ का पूजन महोत्सव भी मनाया जाता है। बुंदेलखण्ड में इस दिन माँ शारदा का जन्मोत्सव भी मनाया जाता है कई जगह महाकवि निराला जयंती भी मनाई जाती है इस दिन से ही कवि अपनी नूतन रचनाएँ भी प्रारंभ करते है।

आयोजनों को सामाजिक आदत में बदलना :

1. प्रकृति से प्रेरित कविताओं का आयोजन।
2. स्थानीय प्रजाति के वृक्षों का वृक्षारोपण।
3. बच्चों के लिए चित्रकला निबंध प्रतियोगिता का आयोजन।
4. प्रबुद्ध पर्याविद्व (शिक्षाविदु) समाज व संस्कृति से जुड़े विशेषज्ञों के व्याख्यान।

2. नर्मदा जयंती : यह माघ शुक्ल सप्तमी को मनायी जाती है नदियों को भारतीय संस्कृति में माँ की मान्यता दी गयी है तथा उसकी पूजा अर्चना हमारी संस्कृति का एक प्रमुख अंग है। विश्व की सभ्यताएँ नदियों के किनारे पर ही विकसित हुई परन्तु आज सभ्यता के इस विकास की दिशा की परिणति पर्यावरण प्रदूषण विशेषकर नदियों तालाबों के प्रदूषण के रूप में परिलक्षित हो रही हैं। नदियों के प्रति हमारी अगाध आस्था सिर्फ जल की महिमा गान तक ही सीमित नहीं थी बल्कि उसके संरक्षण से भी जुड़ी हुई थी, दिल्ली और कानपुर में यमुना सिर्फ मैला बहाने का जरिया रह जाती है, गंगा नदी में शव बहाए जाते है और नर्मदा नदी में शवों की राख बहायी जाती है। वनों का विनाश औद्योगिक व नगरीय प्रदूषण अत्यधिक तथा अनियंत्रित मानवीय हस्तक्षेप नदियों को नालों में तब्दील कर रहे है, जिसे हमने माँ स्वरूप समझा। आज उसके अस्तित्व पर ही प्रश्न चिन्ह लगा हुआ है। यदि पर्यावरण के संकट को सही अर्थो में बचाना है तो हमें फिर से इन पर्वो को सामाजिक आदतों में शामिल करना होगा।

3. आँवला नवमी : आंवला नवमी कार्तिक महीने की शुक्ल पक्ष की नौवी तिथि को मनाया जाता है यह पर्व उत्तर भारत में ज्यादा मनाया जाता हैं। इन पर्वो के माध्यम से हम सभी वनस्पतियों एवं औषधियों के प्रति अपनी आस्था व्यक्त करते है भारत में प्रकृति के विभिन्न अंगों के प्रति हमारा पूज्य भाव रहा है, हम नदियों, पहाड़ों पशुओं की पूजा भी करते है इसके साथ ही वृक्षों की पूजा प्राचीनकाल से ही हमारी संस्कृति का आवश्यक अंग रहा है क्योंकि यह वृक्ष किसी ना किसी रूप से हमारी रक्षा करते है।

ऋग्वेद 9/5-10 के अनुसार

वनस्पति पवमान मध्वा समडिग्यधारया सहस्त्रवल्शं हरितं भ्राजमान हिरण्यम अर्थात हे सोम देवता:। तुम अपनी मधुमयी धारा से इस वनस्पति को सिंच दो तथा सम्पूर्ण धरा को अपनी सम्पदा से भर दो। धर्मो रक्षति: वृक्षो रक्षति रक्षत:। जो धर्म की रक्षा करता हैं धर्म उसकी रक्षा करता है उसी तरह जो वृक्ष की रक्षा करता है वृक्ष उसकी रक्षा करता है।

आयोजनों को सामाजिक आदत में बदलना :

1. संस्थागत सामाजिक और व्यक्तिगत स्तर पर सघन वृक्षारोपण (संभव हो तो औषधि वृक्ष)
2. वृक्ष और पर्यावरण से जुड़े विषयों पर व्याख्यान।
3. नगर के समस्त वृक्षों का सूचीकरण उन्हें बचाने का प्रयास।
4. वृक्षों से संबंधित लोक कथाओं लोक गीतों, श्लोकों कविताओं का संकलन और प्रकाशन व प्रदर्शनी।

* एसोसिएट प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ (म.प्र.) भारत

4. गंगा पूजन (गंगा सप्तमी/गंगा दशहरा) : यह ज्येष्ठ माह के शुक्ल की दसवीं तिथि को मनाया जाता है। यह पर्व गंगा के किनारे बसे हुए नगरों और गाँवों में मनाया जाता है। परन्तु उत्तर भारत की नदियों की पूजा अर्चना के रूप में मनाया जाता है इस दिन पुरूष नदियों में स्नान कर सूर्य को जल अर्पित करते है साथ ही प्रार्थना करते है कि भगवान इसी तरह नदिया भरपूर जल हमें प्रदान करती रहें और अपना दया भाव हमारे प्रति रखें।

आयोजनों को सामाजिक आदत में बदलना :

1. जल स्त्रोतों के समन्वित संरक्षण हेतु प्रयास।
2. नदी प्रदूषण के बारे में बच्चों को जागरूक करना।
3. परम्परागत विधि से पर्व मनाए परन्तु नदी और जल स्त्रोतों को प्रदूषण से बचाए।
4. जल स्त्रोतों से संबंधित लोक कथाओं का संकलन।

5. वट अमावस्या : वट अमावस्या का पर्व ज्येष्ठ माह की अमावस्या को मनाया जाता है, भारतवर्ष में वैदिक काल से ही वनस्पतियों का महत्व पहचाना गया है। यदि हम प्राचीन समय में जाए तो भारतीय सभ्यता पूर्णत: वनों पर ही आश्रित थी आयुर्वेद गंथों में विविध वनस्पतियों के क्षुप, गुल्म, वृक्ष लता, वल्ली इत्यादि तथा मूल कंद पल्लव, पुष्प, मज्जा कलिका मकरंद पराग इत्यादि विभिन्न वनस्पतियों के आश्रय स्थल, वृक्षवाटिका प्रभदवन, विपिन, कानन, उद्यान इत्यादि का उल्लेख भारतीय ग्रंथों में मिलता है आज के संदर्भ में आवश्यकता इस बात की हैं कि जनसामान्य को यह वनस्पतियों के संरक्षण का महत्व समझाया जाए और उसे बचाने की कोशिश भी की जाए।

ज्येष्ठ महीने की अमावस्या को मनाया जाता है। संस्कृत साहित्य में पंचवटी के पाँच वृक्षों वट वृक्ष सबसे प्रमुख हैं अपने स्वरूप के कारण वट वृक्ष वृक्षों का राजा कहलाता हैं वह वृक्ष हमेशा स्वयं ही अपने को नवीनीकृत करता रहता हैं अपनी शाखाओं को तने में बदल देने के गुण के कारण इस वृक्ष को अद्वितीय माना गया है। भारत में सर्वत्र जिन दो वृक्षों की पूजा होती है, उसमें से एक वट वृक्ष है यह पर्व हमें देश के सभी हिस्सों में दिखाई देता है।

हिन्दू धर्म की मान्यताओं में बरगद के वृक्ष का उच्च स्थान हैं आषाढ माह भी भीषण गर्मी में बरगद की छांव तले विवाहित स्त्रियाँ वटवृक्ष की पूजा करती हैं और वट वृक्ष के समान ही अपने वंश की वृद्धि सुख और समृद्धि की कामनाएँ करती हैं।

6. हरियाली अमावस्या : यह पर्व सावन महीने की अमावस्या को मनाया जाता हैं। छत्तीसगढ़ में यह पर्व हरेली तथा मालवा में दिवासा के नाम से लोकप्रिय हैं। यह पर्व वर्षा ऋतु के कारण प्रकृति में आए सौंदर्यपूर्ण बदलाव का स्वागत करता हैं। उस दिन कृषक अपने पशुधन और उपकरणों की पूजा करते हैं। मालवा क्षेत्र में यह पर्व सभी जाति अपने पशुधन और उपकरणों की पूजा करते हैं। मालवा क्षेत्र में यह पर्व सभी जाति और सम्प्रदाय में मनाया जाता हैं इस दिन महिलाएँ परम्परागत गीत गाते हुए गेरू और चूने से दीवारों पर वृक्षों के चित्र बनाती हैं जिसमें प्रकृति का सौंदर्य दिखायी देता है, इस दिन मान्यतानुसार वृक्षारोपण का विशेष महत्व है जैसे तुलसी का पौधा इसी दिन लगाया जाता है।

हमारे देश में प्रकृति की सम्पूर्णता के विचार का महत्व दिया गया है। इसलिए हमारे यहाँ पर्यावरण पर एक शास्त्र भी विकसित किया गया। पेड़ निर्जिव वस्तु तो नहीं है कि उसको कहीं भी कभी भी किसी भी तरह से लगा दिया जाए, वृक्षारोपण के समय इस बात का ध्यान रखा जाता है कि कौन से पेड़ कब और कहाँ लगाना चाहिए किस पेड़ के लिए कौन सी दिशा और कौन सी मिट्टी बेहतर हैं, समाज की वृक्षों में रूचि रहे इसलिए वृक्षारोपण के ज्ञान को धार्मिक पहलू से जोड़ दिया ताकि ये ज्ञान जनसाधारण तक पहुँचे। तरू महिमा के श्लोकों में पेड़-पौधे लगाने का महत्व बताया गया है।

आयोजन को सामाजिक आदत में बदलना :

1. वृक्षारोपण हेतु जागरूकता अभियान, वृक्षारोपण की तैयारी।
2. वृक्षों की परम्परागत रीति-रिवाजों से पूजा।
3. वृक्षों का महत्व पर प्रतियोगिता करवाएं।
4. वृक्षों के विनाश को रोकने के लिए जागरूकता लाएँ।

7. शरद पूर्णिमा : यह पर्व आश्विन माह की पूर्णिमा को मनाया जाता है ऋतु चक्र कभी थमता नहीं हर मौसम में समा जाता हैं उसकी खास मिठास, निखर आता हैं उसका सौंदर्य। कभी बसंत, कभी फागुन, कभी ग्रीष्म कभी सावन और फिर शरद ऋतु वर्षा की समाप्ति और शीत ऋतु के आगमन के बीच हैं शरद ऋतु। शरद ऋतु का अत्यधिक महत्व हैं। मान्यता है सभी वनस्पतियों में औषधियों में इस और प्रभाव की उत्पत्ति शरद ऋतु में होती हैं। ऐसी धारणा है शरद पूर्णिमा की रात अमृत बरसता है इस रात को सभी लोग खीर बनाते है और अपनी छत पर खुला रख देते है तथा पूर्णिमा के चन्द्रमा की रश्मियों से सारोबार इन व्यंजनों को ग्रहण करते हैं।

प्रस्तावित आयोजन :

1. आकाश में तारामण्डल का अध्ययन तथा दर्शन।
2. परम्परागत रिवाजों से पर्व का आयोजन।
3. प्रकृति व निसर्ग पर केन्द्रित कविताओं का पाठ।
4. वायु प्रदूषण के संबंध में जानकारी व नियंत्रण करना।
5. मिट्टी की जाँच तथा उसके अनुसार उर्वरकों का प्रयोग।
6. जल ग्रहण क्षेत्र का विकास।

सुझाव :

1. प्रकृति के सानिध्य का सुख समझे। अपने आसपास छोटे या बड़े वृक्ष लगाएं।
2. अपने या बच्चों को जन्मदिन हो या कोई भी यादगार क्षण पेड़ लगाकर उन यादों को चिरस्थायी बनाने।
3. घरों में या विभिन्न सामाजिक आयोजनों में उपहार में पुष्प गुच्छ के स्थान पर पौधे देकर सम्मानित करें।
4. ब्रश करते समय नल खुला ना छोड़े।
5. यह प्राकृतिक सम्पदा बहुत कीमती वह मँहगी भी है। इसका पुनउत्पादन बहुत लम्बा है। इसकी बचत करें।
6. अपने आसपास जागरूकता फैलाए।
7. शिक्षण संस्थाओं में पेड़ जागरूकता पर पोस्टर लगवाएं।

निष्कर्ष - वृक्ष और पेड़ पौधे सूर्य की रोशनी को अपने में निहित कर लेते है। पेड़ पौधे एक सीमा तक ऊर्जा प्रदान करने का कार्य करते है। यदि हम प्रकृति से दूर जाएंगे तो हम प्रलय में अपनी सहभागिता निभाएंगे यदि हम अपनी प्रकृति को बचाना चाहते है तो उसके पास ही रहना होगा उसका विकास करना होगा हम सभी को अपने आसपास और सारे देश को हरियाली से भरना होगा। 'जियो और जीनो दो'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तथ्य भारती पत्रिका।
2. स्वयं के विचार द्वारा।
3. पत्र-पत्रिकाएँ एवं दैनिक समाचार-पत्र।
4. टॉल एल.एस - हमारा पर्यावरण।
5. समाजशास्त्र - गुप्ता एण्ड शर्मा।

The Impact Of Yoga On Students Life

Dr. K.G.Pandey * Dhermender **

Abstract - Maharshi Patanjali has defined yoga as action and pointing to what is central in the activity that is yoga. Yoga is recognized as one of the most important and valuable heritage of India. Today, whole world is looking towards yoga for answering various problems. Today, yoga is not popular as a system of philosophy but as a system of practical discipline. The application of yogic techniques is seen for getting the benefit of health and cure of diseases, such as stress. Even though our attitudes to the nature of yoga itself may be different from those through whom yoga evolved, its wisdom still applies. Yoga is for everybody, every place, and every age -group.The message of yoga is loud and simple "Take good care of yourself and all else is taken care of".

Introduction - Yoga is recognized as one of the most important and valuable heritage of India. Students face many pressures from school, which can amount to a significant amount of stress. Learn about the different causes of school stress and find resources for overcoming it, including study tips and stress relievers specifically designed for students. Contrary to contemporary attitudes stress is not the secret to success. We do not perform at a higher level academically and professionally when we are tight, anxious and stressed but rather when we are focused, claim, loosened-up and breathing on a regular basis.

Statement Of The Problem

"The Impact Of Yoga On Students Life"

Concept of Yoga - Yoga is recognized as one of the most important and valuable heritage of India. Today, whole world is looking towards yoga for answering various problems. Inspite of this, no field is so grossly misunderstood as yoga, even in India. If one take a cross section of the society and take a general survey of the public opinion about yoga, one shall find that there are many m isbeliefs. H ow ever, yoga is respected by the Indian schools of philosophy and other philosophers because of its practical aspect containing various psycho-physiological practices rather than its philosophy. Patanjali has attem ptetd to define clearly the sense of the term in the "Yoga Surta": H ere 'nirodha' has modifications which means that yoga is the restrain of mental fluctuations and been employed in the sense of a verb, in the sense of purposeful action undertaken in order to achieve a specific end.Tapa, swadhyay, Ishwar, Pranidhnani kriyayoga.

Patanjali has defined yoga as action (K riya) and pointing to what is central in the activity that is yoga. According to Sampoornanand (n.d) yoga word is originated from 'Yug Dhatu', which means integration. Yoga is that organized activity in which there is a mating of human soul and super soul. The aim of yoga itself is integration of personality in its all aspects. In order to help the developm ent of such an integration various techniques are em ployed. "Balancing of mind is called yoga".

Gita - Yoga is closely allied to nature. Nature has decreed, barring exceptionally unfortunate cases, that the functions of the body and mind are properly aligned and m utually related. The philosophy of yoga assumes that man, in his natural, unpolluted condition of body and mind, functions as a part of the cosmic rhythm in which both the processes of grow th and decadence are normal and smooth flowing. Today, yoga is not popular as a system of philosophy but as a system of practical discipline. The application of yogic techniques is seen for getting the benefit of health and cure of diseases, such as stress -management; and for improving the efficiency of the individuals in different fields. Yoga is being utilized from the most fundamentally personal to the social and educational implications of the society as a whole. No matter how times and life styles changes, the soundness of the judgement of the ancient sages in matter relating to life and conduct is still relevant. Even though our attitudes to the nature of yoga itself may be different from those through whom yoga evolved, its wisdom still applies. It is in this spirit that a modest guide to Yogãsanas be prepared to provide instructions as well as warning. The practice of Yogãsanas is open to all age groups and even to those who suffer from physical and emotional ailments. The food we eat, the water we drink, the air we breathe and the way we react to changing environment and situations, all factors influence our life.

The science of yoga also takes full cognizance of these factors because it looks at life in its totality. It emphasizes the organic unity be tween man and his environment, and

*Asso. Prof. (Education) Digambar Jain College, Baraut, Distt. Baghpat (U.P.) INDIA
** Research Scholar, Singhania University (Raj.) INDIA

between discipline and well-being. It seeks to restore the sense of balance and poise that a thousands little things in the environment seek to disturb or destroy. Yoga is for everybody, every place, and every age -group.

The message of yoga is loud and sim ple "Take good care of yourself and all else is taken care of".

Before analyzing what Yogãsana is, it is better to know what it is not?. Yogãsana is neither some kind of gymnastic nor it is entertainment, meant to am use an audience. Besides, it does not seek to develop only the physique. It doesn't require any external tools for its practice. Some people have the impression that Y ogãsana is transcendental meditation; though it can be preparatory exercise for it. Sadhna is a spiritual endeavourer and its aim is to enable the Sadhaka to activate what may be called the divine flame' within him by constant practice under expert guidance. Y ogãsana is therefore not easy to cultivate unless there is a personal guidance of a qualified person.

Review Of Related Literatiure - An attempt has been made by the research scholar to locate literature to this study. A brief review of studies of specific performance related to this study cited below:

Weinberg (1978) studied the effect of resultant achievement motivation (N.Arch) on the efficiency of motor performance and also finds out that under achievement oriented conditions persons with high achievement need. Based from scores Merabaiam Achievement Scale 20 male College students were classified as low in resultant achievement (N.Arch)20 participants within each motive group were randomly assigned either through relax or achievement oriented conditions. 27 trials each of 10 seconds duration were administered on a rotor interval. After 10 minutes rest participants completed 27 more trials. Statistical Analysis included both (2) x Block of Trial (2) x ANOVA for each session with repetition on final factor.

Maxson (1982) conducted a study to find relation between motivation and performance in competitive swimming. The mehrabiam measure of achievement tendency and a survey of a swimming achievement tendency and a survey of a swimming achievement tendency and a swimming achievement instrument designed by investigator were given to 44 college swimmers (29 males, 15 females) from four universities

Selection of training programme - The six weeks training programme was given to the subjects which included the sheetkari pranayam practice once a day in morning. The exercise was practiced as directed in books, inhalation through the mouth and exhalations through the both the nostril.

Analysis Of Data And Result Of The Study - The statistical analysis of data based on academic stress collected on 30 male and female subjects belonging to experimental group is presented in this chapter.

To determine the effect of sheetkari pranayam on academic stress of experimental group and control group analysis of covariance was used and analysis of data pertaining to this study are presented in table

Analysis Of Covariance Of The Mean Of Experimental Groups And Control Group On Academic Stress

Group			Sum of square	Mean of square	F ratio
	Experimental group	Control group			
Pre test mean	36	38	47.1	46.1	46.89
Post test mean	31	40	48.72	44.04	49.01
Adjusted post test mean	36	39	36.02	32.07	33.72

Discussion of hypothesis - There for it was hypothesized that there would be definite changes in academic stress level due to six weeks of sheetkari pranayama had been accepted in this study

Paired adjusted mean and differences between means for experimental groups and the control group on academic group

Mean		Difference between the mean	Critical difference for adjusted mean
Experimental group	Control group	0.20	0.46
44	48		

Significant at 0.05 level of confidence.

Discussion of findings - There was no change found in control group because the control group was not edged in any type of systematic yogic breathing practice as the better performance of experimental group as compared to the control group may be due the fact that the experimental group have undergone systematic and progressive training program for duration of six weeks where as control group did not participated in any kind of normal training. It sin an established fact that regular training of sheetkari pranayama helps the students to overcome the psychological problems of academic. As the result of the study sheetkari brings a positive effect on academic stress by reduce it.

Summary - The purpose of study was to find out the effect of sheetkari pranayamaacademic anxiety scale for children questionnaire consists of 20 items each items has got two choices to answer the subjects were asked to tick on the place provide for each.

After the treatment of sheetrkari pranayama for six weeks the groups were again tested by using the same questionnaire and their scores were recorded. The analysis of co-variance on academic stress indicated that the resultant in case of pre test was found to be significant at level of 0.05 levels. The different between for adjusted post means of two groups was significant.

Conclusion - Within the limitations of the study the following conclusion was drawn

1. There is significance difference between score of the pre test experimental, group has gained progress in academic stress scores by reducing it.
2. The difference found in

References :-

1. Clarke David H. and Clarke Harrison, **Research Process in Physical Education** (Englewood Clifts, N.J: Prentice Hall INC, 1984).
2. Cratty Byrant J., **Psychology and physical Activity** (Englewood Cliffs, N.J.Prentice Hall Inc., 1968).
3. Cratty Byrant J., Psychology and the Superior Athlete (London: Me Million Company Ltd., 1983).
4. Kamlesh M.L., **Psychology of Physical Education and Sports** (New Delhi: Metropolitan Book Company, 1983).
5. Martens Rainer, **Sports Competition Anxiety Test** (Human Kinetic Publishers, 1982).
6. Robbers Glyn C., Kelkins, Spink S. and Cynthia L. Pemberton Learning **Experiences in Sports Psychology** (Human Kinetics Publishers Inc., 1986).

****

ग्रामीण एवं शहरी माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षक दायित्व

डॉ. कृष्ण गोविन्द पाण्डेय * सत्यपाल सिंह **

शोध सारांश – शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक की अहम भूमिका है। शिक्षा बाल केन्द्रित होती है। शिक्षा समाज के उन्नयन तथा राष्ट्र के कल्याण के लिए होती है। शिक्षा की यह प्रक्रिया शिक्षकों के द्वारा संचालित होती है। शिक्षक का यह कर्त्तव्य है कि वह बालकों, समाज और राष्ट्र के कल्याण हेतु शैक्षिक कार्यक्रमों का दायित्वपूर्ण संचालन करे। शिक्षक छात्रों के सर्वागीण विकास के लिए जवाबदेह, जिम्मेदार और उत्तरदायी है। बालक यदि विकसित होता है, कक्षा में प्रथम आता है, समाज में प्रतिष्ठा पाता है, राष्ट्र के लिए गौरवपूर्ण कार्य करता है, तो उसकी वाहवाही शिक्षक को ही मिलती है। बालक बड़े ही सृजनात्मक होते हैं। जैसे प्रश्न वे करते हैं, उनके सामने जो भौतिक वस्तुएँ आती हैं उनके विभिन्न उपयोग वे खेल में जिस प्रकार करते हैं, हम जो प्रश्न उनसे करते हैं या जो समस्याएँ उनके सामने रखते हैं, उनके समाधान वे जिस प्रकार सुझाते हैं: इन सब में उनकी सृजनशक्ति की अभिव्यक्ति दृष्टिगोचर होती है, यदि इसको देखने की सही दृष्टि हम विकसित कर सकें। बच्चों के विचारने, कार्य करने, प्रश्नों व पहेलियों के हल सुझाने में ताजगी व सृजन-शक्ति को शिक्षक कुण्ठित न कर दे, यही उसका सर्वोपरि दायित्व है। इसको पहचानना ही उसकी संवेदनशीलता है।

प्रस्तावना – प्रारम्भिक अवस्था में शिशु का शरीर कुछ कोष्ठों का केवल योग होता है तथा जन्म के समय जो उसे जैवकीय वंश परम्परा से तत्व प्राप्त होते हैं, वे अकेले शिशु को इस योग्य नहीं बना पाते कि वह अपने सामाजिक परिवेश के साथ सफलतापूर्वक समायोजन कर सके। वास्तव में शिक्षा व्यक्ति में वह अपेक्षित आदतें, कौशल तथा अभिवृत्तियाँ विकसित करने का माध्यम है, जिससे व्यक्ति के व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास होता है।

शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक की अहम भूमिका है। शिक्षा बाल केन्द्रित होती है। शिक्षा समाज के उन्नयन तथा राष्ट्र के कल्याण के लिए होती है। शिक्षा की यह प्रक्रिया शिक्षकों के द्वारा संचालित होती है। शिक्षक का यह कर्त्तव्य है कि वह बालकों, समाज और राष्ट्र के कल्याण हेतु शैक्षिक कार्यक्रमों का दायित्वपूर्ण संचालन करे। शिक्षक छात्रों के सर्वागीण विकास के लिए जवाबदेह, जिम्मेदार और उत्तरदायी है। बालक यदि विकसित होता है, कक्षा में प्रथम आता है, समाज में प्रतिष्ठा पाता है, राष्ट्र के लिए गौरवपूर्ण कार्य करता है, तो उसकी वाहवाही शिक्षक को ही मिलती है। यदि बालक अनुत्तीर्ण होते है, अनुशासनहीन बनकर समाज में दुर्व्यवहार करते है, राष्ट्र विरोधी गतिविधियों में लगते है, तो इसके लिए गाली भी उसी को सुननी पड़ती है। शिक्षक अपने दायित्व को जितनी प्रामाणिकता से पूर्ण करता है उसी अनुपात में शिक्षा और बालकों का विकास होता है। अत: शिक्षकों में दायित्व बोध की मात्रा ही वह कसौटी है जिसके आधार पर हम किसी भी शिक्षक को अच्छा या बुरा शिक्षक कह सकते हैं।

शैक्षिक दायित्व शिक्षकों की एक ऐसी मानसिक अवस्था, रुझान अथवा कर्त्ताव्य संकल्प है जिसके फलस्वरुप शिक्षक अपने क्रियाकलापों के प्रति समर्पित तथा जागरुक रहते हुए अपने निजी स्वार्थों से ऊपर उठकर शिक्षा के हित में ही कार्य करता है।

1. शिक्षकों का छात्रों के प्रति दायित्व बोध,
2. शिक्षकों का अभिभावकों के प्रति दायित्व बोध,
3. शिक्षकों का विद्यालय के प्रति दायित्व बोध,
4. शिक्षकों का समाज के प्रति दायित्व बोध

शिक्षा का शाब्दिक अर्थ – शिक्षा शब्द अंग्रेजी भाषा के 'एजूकेशन' का हिन्दी रुपान्तरण है।इसकी उत्पत्ति लेटिन भाषा के 'एडूकेटम' शब्द से हुई है, जिसका अर्थ होता है-ज्ञानार्जन करना।

शिक्षित करना अथवा शिक्षण कला। इसमें 'ई' का अर्थ-अन्दर से तथा ड्यूको का अर्थ है-प्रशस्त करना या आगे बढ़ाना। इस प्रकार एजुकेशन का शाब्दिक अर्थ है कि 'बालक के अन्दर छिपी शक्तियों का बाहर की तरफ सम्पूर्ण विकास करना।'

'अन्तर्निहित प्रतिभाओं को बाहर निकालना था विकसित करना शिक्षा या Education है।'

भारतीय ग्रन्थों के अनुसार शिक्षा का अर्थ- शिक्षा की उत्पत्ति संस्कृत की शिक्ष् धातु से हुई है, जिसका अर्थ है- ज्ञानार्जन करना। उपनिषद् में शिक्षा को आत्मान तथा ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने की प्रक्रिया कहा गया है। एक अन्य भारतीय ग्रन्थ में 'सा विद्या या विमुक्तयेय कहकर मुक्ति को विद्या का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इस प्रकार शिक्षा एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। यह वातावरण से अंगीकृत है और यह लगातार चलने वाली वह प्रक्रिया है, जो जीवन भर चलती है।

आधुनिक युग में शिक्षा का महत्व – मानव के विकास मे ज्ञान का भी विशेष महत्व है। आज व्यक्ति जो भी प्रगति एवं आगे बढ़ रहा है, वह सब ज्ञान के माध्य से ही बढ़ रहा है। जैसे-जैसे व्यक्ति आगे बढ़ता जा रहा है, उसका ज्ञान भी बढ़ता जा रहा है। आज मनुष्य के ज्ञान के कारण सूर्य एवं चन्द्रमा तक पहुँच गया है। आज का व्यक्ति सभी कार्य कर सकता है। उसके लिए सभी कार्य बहुत ही सरल है।

यदि देखा जाये तो शिक्षा कृत्रिम है और ज्ञान नैसर्गिक। शिक्षा किसी के द्वारा दी जाती है और ज्ञान का अनुभव करने के बाद ही पता चलता है।

संक्षेप में, शिक्षा ही ऐसा धन है जो बाटने से कभी नही घटता है। वस्तुत: मनुष्य के जीवन का मूल आधार शिक्षा होना चाहिए।

* एसोसिएट प्रोफेसर, शार. शिक्षा विभाग दि.जै. महाविद्यालय, बड़ौत (उ.प्र.) भारत
** शोधार्थी, सिंघानिया विश्वविद्यालय (राजस्थान) भारत

सन्दर्भ साहित्य की समीक्षा

यादव आकांक्षा (2012), 'शिक्षकों की भूमिका व कर्त्तव्यों पर पुनर्विचार' शोध पत्र में पाया कि शिक्षा सिर्फ अक्षर-ज्ञान या डिग्रियों का पर्याय नहीं हो सकती बल्कि एक अच्छा शिक्षक अपने विद्यार्थियों का दिलो-दिमाग भी चुस्त-दुरुस्त बनाकर उसे वृहद आयाम देता है। शिक्षक का उद्देश्य पूरे समाज को शिक्षित करना है। शिक्षा एकांगी नही होती बल्कि व्यापक आयामों को समेटे होती है।

डा. राधाकृष्णन शिक्षा को जानकारी मात्र नहीं मानते बल्कि इसका उद्देश्य एक जिम्मेदार नागरिक बनाना है। शिक्षा के व्यवसायीकरण के विरोधी डा. राधाकृष्णन विद्यालयों को ज्ञान के शोध केंद्र संस्कृति के संवाहक मानते थे। यह डा. राधाकृष्णन का बड़प्पन ही था कि राष्ट्रपति बनने के बाद भी वे वेतन के मात्र चौथाई हिस्से से जीवनयापन कर समाज को राह दिखाते रहे।

शर्मा, बी. बी.(2007) ने, अपने आलेख 'शिक्षक और शिक्षार्थी: समाज के दो पहलू' में पाया कि बच्चे में प्रारम्भ से ही सही संस्कारों को जन्म देना परम आवश्यक है जिससे भविष्य में उत्तम निखार आ सके और ये सब अच्छी शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव है। इसके लिए शिक्षक और शिक्षार्थी के बीच की कड़ी को मजबूत बनाने के लिए दोनों कर्त्ताओं को अपने-अपने कर्त्तव्यों का सही निर्वाह करना चाहिए, जिससे समाज में शिक्षा रूपी प्रकाश सदैव प्रकाशित रहे और अज्ञान रूपी अन्धकार सदैव के लिए हमारे देश से जड़ से समाप्त हो सके।

मखीजा, कुलभूषण लाल (2007) ने, अपने आलेख 'पालक, शिक्षक का यथार्थ दायित्व' आधुनिक शिक्षा जगत में शिक्षक की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। शिक्षक को समुचित मानदेय, वेतन तथा साधन उपलब्ध कराए जाएँ तब वह पालक वर्ग के समान ही भावी नागरिकों वर्तमान छात्रों के स्वस्थ निर्माण में सार्थक सहयोग दे सकता है। सामान्यत: शिक्षक वर्ग केवल निर्धारित पाठयक्रम को पढ़ाने में तल्लीन रहता है। अपने विशय-विशेष तक ही उसका ध्यान केन्द्रित रहता है।

सिंह, तेज प्रताप (2006) ने,शीर्षक 'शैक्षिक गिरावट का जिम्मेदार कौन ?' में पाया कि वह देश जो ऋग्वेद सहित अनेक वेदों का रचनाकार है। जिसने विश्व को सभ्यता और संस्कृति की दीक्षा दी। जो अनेक सदियों तक विश्व का पुरोधा बना रहा, उस देश की शिक्षा गिर चुकी है। यह सुनकर दुखद आश्चर्य होता है। गिरावट शब्द सुनते ही मन में एक घिनौनी स्मृत्ति छा जाती है। यद्यपि कहीं-कहीं गिरावट का अर्थ अच्छाई से लगाया जाता है। जैसे यदि व्यक्ति के स्वार्थ, लोभ, मोह, क्रोध आदि में गिरावट दिखाई पड़े तो अच्छी बात है, लेकिन यदि चरित्र, कर्त्तव्य, धर्म, सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों में गिरावट आती है तो व्यक्ति की सामाजिक मृत्यु हो जाती है।

सिंह, श्रवण (2006) ने, 'शिक्षा के गिरते हुए स्तर को कैसे ऊँचा उठाया जाये ?' अपने प्रपत्र में पाया कि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विद्यालयों में समाज का अनावश्यक दखल अथवा दूशित राजनीति शिक्षक-समुदाय की सुरक्षा के लिए खतरनाक सिद्ध हो रही है। जो शिक्षक पहले आदर्श, त्याग और तपस्या के सहारे बिना खौफ के स्वच्छन्द वातावरण में बच्चों को शिक्षा देते थे, जिन्हें समाज अपना पद-प्रदर्षन एवं राष्ट्र-निर्माता मानता था, आज उन्हीं शिक्षकों पर उल्टे-सीधे लाँछन लगाये जाते हैं।

गाँधी, जगदीश(2006) में, 'उद्देश्यपूर्ण शिक्षा द्वारा ही समाज के अन्धकार को रोका जा सकता है!' शीर्षक में पाया कि बच्चों की शिक्षा का कार्य संसार की सभी सेवाओं में श्रेष्ठतम माना गया है। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य जीवन जीने की कला सीखता है। आज संसार में जो आपाधापी दिखाई दे रही है उसके मूल में उद्देश्यहीन शिक्षा ही मुख्य कारण है। जैसै एक व्यवसायी वही माल बनाता है जो कि बाजार में अच्छे लाभकारी दाम में बिक सके। वर्तमान भारत में शिक्षक का दायित्व हमारी भावी परिकल्पना में महान् आदर्श या मूल्यों को हमें शामिल करना होगा। इस प्रकार की परिकल्पना को साकार रुप प्रदान करने के लिए शिक्षक को महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करनी होगी।

यह सत्य है कि समस्त प्राचीन बातें आज सत्य नही हो सकती। परन्तु हमारी परम्परा में शिक्षक अपने आप में प्रभुता-सम्पन्न रहे है, साथ ही जनता के सेवक भी। वे अपनी भावनाओं पर अद्भुत नियन्त्रण रखते आये हैं और मानवता को उन्होंने अपरिमित अवदान दिया है। हमारे महान् शिक्षक वे है जिन्होंने हमारी सभ्यता को जीवन्त बनाया है। महान् शिक्षकों की बदौलत ही हमारी बौद्धिक विरासत तथा तकनीकी कौशल एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तान्तरित होते रहे है ताकि सभ्यता का दीपक जगमगाता रहे। आज की वर्तमान परिस्थितियों में भारतीय परम्परा को जीवित बनाये रखने के लिए शिक्षक को एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करनी होगी।

1. प्राथमिक वस्तु शिक्षक का चरित्र है
2. कर्त्तव्यनिष्ठा- आज दुर्भाग्य से देश में प्रत्येक क्षेत्र में कम-से-कम काम करने की वृत्ति बनती जा रही है,
3. श्रम की प्रतिष्ठा- समाज में श्रम के मूल्य की पुन: स्थापना करने के लिए शिक्षक को उदाहरण प्रस्तुत करना आवष्यक है।
4. आत्मसंतोष- भौतिक सुख-सुविधाओं की प्राप्ति के लिये आज होड़ लगी हुई है।
5. छात्रों के प्रति संवेदनशीलता
6. आत्ममूल्यांकन-शिक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह स्वयं का मूल्यांकन करे।

निष्कर्ष— शिक्षक का काम बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है। वह राष्ट्र निर्माता कहलाता है साथ ही उसे भावी नागरिकों का निर्माता भी कहा जाता है। इन कार्यो को करने के लिए उसे स्वयं को एक समर्पित व्यक्ति बनाना होगा- जिसका मनुश्य के भवितव्य में विश्वास हो, साथ ही मानवता के भवितव्य, देश और दुनिया के भवितव्य में विश्वास हो।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि शिक्षक को छात्र के प्रति 'शिव' संकल्पयुक्त बनने की आवश्यकता है। प्रस्तुत शोध कार्य के परिणाम इस तथ्य की ओर इंगित करते हैं कि तुलनात्मक दृष्टि से अधिकांश परिस्थितियों में ग्रामीण एवं शहरी माधयमिक विद्यालयों के शिक्षिकों के चाहे अध्यापक उनकी कार्य संतुष्टि की तुलना में बेहतर है। इसका मुख्य कारण यह प्रतीत होता है कि सरकारी प्राथमिक विद्यालयों का वेतनमान निजी प्राथमिक विद्यालयों की तुलना में बेहतर होना, साथ ही सेवाकाल की पूर्ण निश्चितता उनके कार्य संतुष्टि के स्तर को बेहतर बनाती है जबकि विद्यालयों में भविष्य के प्रति असुरक्षा, वेतनमान में विसंगतिया तथा सेवाकाल की अनिश्चतता उनके कार्य-संतुष्टि को कम कर देती है। विद्यालयों में भी यदि सरकारी प्राथमिक विद्यालयों की भाति सेवाकाल का स्थायीकरण, भविष्यनिधि की सुविधा तथा वेतनमान की समानता प्रदान की जाए तो इनके भी कार्य संतोष का स्तर बेहतर हो सकता है जिसके परिणामस्वरूप वे शिक्षण कार्य में पूरी एकाग्रता तथा लगन एवं निष्ठा के साथ शिक्षण कार्य सम्पादित करेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

Radaition Hazards-Sources, Prevention and Control

Dr. Meena Swamy *

Abstract - “Life on earth has developed with an ever present background of radiation. It is not something new, invented by the wit of man. Radiation has always been there.”Eric J Hall, Professor of Radiology, College of Physicians and Surgeons, Columbia University, New York, in his book “Radiation and Life”.

Spontaneous decay of radioactive materials produces radiation. Radiation may be ionizing and non-ionizing. Alpha and beta, gamma and X-rays particles are the most common forms of ionizing radiations. Radioactive iodine is a beta particle released during nuclear plant accidents.The amount of energy the radiations can deposit in a given space varies with each type. Radiations also differ in the power to penetrate. Inside the body the alpha particle will deposit all its energy in a very small volume of tissue while gamma radiation will spread energy over a much larger volume.

Keyword - *Radiation, Radiology,* Radioactive materials, Ionizing and non-ionizing radiation.

Introduction - Radiation is a part of environment. The background radiation is contribute by tree sources namely terrestial radiation, cosmic radiation and radiation from radioactive elements in our bodies. Since ionising radiations have the capacity to ionise the molecules, so when ionisiong radiation enters into our body, they ionise the tissue molecules and chemical dissocialn takes place. Due to this there is distortion of DNA chain and body cells take place. The cell production rare increases and malignant tumour is formed. These type of radiations are unnecessary to the body.

Radiation Hazards - Hence the damages due to unwanted radiation to the body parts is termed as radiation Hazards. Radiation Hazards mainly take place due to two types of sources.

1. Internal sources of radiation
2. External sources of radiation

The damaging of body cells due to radiation from external source of radiation is much less than that of internal sources or radiation.

Radiation Hazard from the Internal source of radiation - This type of radiation hazard are due to:

1. Deposition of radioactive nuclide by injection to the body.
2. Depositions of radioactive nuclide by inhalation in the body.
3. Deposition of radioactive nuclide bye swallowing.

Radiation Hazard from External source of radiation - It is due to the careless handling and use of radioactive source and therapy unit of 60 Co etc.

These two categories of hazards are due to the use of radioactive sources by workers or individuals. Also depending upon the roduction of radiation, the hazards are:

1. Due to natural radiation
2. Due to artifical radiation

Hazard due to natural radiation - Cosmic radiation to earth’s atmosphere gives some radiation effect. The global yearly dose (average) due to cosmic radiation is 0.39 MSV. Earth crust is made of up of radioactive materials such as uranuim. Rock soils contain uranium ie. Radioactive material so they irradiate the whole body more or less uniformly. The global dose per year is 0.46 MSV

Radon is naturally radioactive gas coming from Uranium that is widespread in earth crust. It is emitted from rocks or soils. When radon is inhaled it can lodge in lung and irradiate tissue. The global dose is 1.3 MSV

Food and water contain radioactive material when food and water are taken, these radioactive materials are taken, they enter int he body and irradiate tissue. The global dose is 0.23 MSV.

Hazard due to artifical source of radiation - The radiation hazard take place due to artificial source of radiation such as:

Medical - Radiation is used in medicine to diagnosis disease and to kill cancer cells. During treatment or diagnosis indivisuals are exposed to radiation that may cause hazards

Institutions - Many medical institutions discharge radioactive materials into environment that causes radiation hazard

Environmental radiation - Due to testing of atom bombs and other nuclear activities, radioactive materials set free in atmosphere. These cause irradiation in human due to radioactive material deposition on the ground or from inhalation of air borne radioactivity and from injectio of radioactive material in food and water.

* **Assistant Professor (Zoology) Govt. Auto. P.G. College, Chhindwara (M.P.) INDIA**

Nuclear power industry - The release radioactive material at each stage int he nuclear fuel cycle

Non-Nuclear industries - They produce radioactive discharge in the processing of ores containing radiation. The discharged products processing of ores containing radiation. The discharged products transfer throough the food chain from the population

Accidental release of radioactive material - In normal operation the radioactivity can be widely dispersed accidentally which causes radiation hazard

Radiation in consumer products - In consumer goods such as smoke detectors, luminious watches, dolls etc may emit radiaton to cause hazard.

Effects Of Radiation On The Human Body - Radiation can be harmful to humans. Radiation can harm people directly by damaging their cells. The cells might stop functioning, or they might be unable to reproduce. Radiation can also cause cells to reproduce in an out-of-control fashion, causing cancer. It also causes radiation sickness, an ailment with various symptoms depending on the type of radiation a person was exposed to and on the size of the dose received. Radiation sickness can be fatal when high doses of radiation are involved.

Radiation damages the cells that make up the human body. **Low levels** of radiation are not dangerous, but medium levels can lead to sickness, headaches, vomiting and a fever.

High levels can kill you by causing damage to your internal organs. It's difficult to treat high radiation exposure.

Exposure to radiation over a long time can cause cancer. Radiation can also interfere with human reproduction. It can cause sterility, making reproduction impossible. It can also cause mutations in developing embryos, which are usually detrimental or even fatal.

There are several effect of radiation on different part of the body:-

(1) Hair - *The losing of hair quickly and in clumps occurs with radiation exposure at 200 rems or higher.*

(2) Brain - *Since brain cells do not reproduce, they won't be damaged directly unless the exposure is 5,000 rems or greater. Like the heart, radiation kills nerve cells and small blood vessels, and can cause seizures and immediate death.*

(3) Thyroid - *The certain body parts are more specifically affected by exposure to different types of radiation sources. The thyroid gland is susceptible to radioactive iodine. In sufficient amounts, radioactive iodine can destroy all or part of the thyroid. By taking potassium iodide, one can reduce the effects of exposure.*

(4) Blood System - *When a person is exposed to around 100 rems, the blood's lymphocyte cell count will be reduced, leaving the victim more susceptible to infection. This is often refered to as mild radiation sickness. Early symptoms of radiation sickness mimic those of flu and may go unnoticed unless a blood count is done.According to data from Hiroshima and Nagaski, show that symptoms may persist for up to 10 years and may also have an increased long-term risk for leukemia and lymphoma.*

(5) Heart - *Intense exposure to radioactive material at 1,000 to 5,000 rems would do immediate damage to small blood vessels and probably cause heart failure and death directly.*

(6) Gastrointestinal Tract - *Radiation damage to the intestinal tract lining will cause nausea, bloody vomiting and diarrhea. This is occurs when the victim's exposure is 200 rems or more. The radiation will begin to destroy the cells in the body that divide rapidly. These including blood, GI tract, reproductive and hair cells, and harms their DNA and RNA of surviving cells.*

(7) Reproductive Tract - *Because reproductive tract cells divide rapidly, these areas of the body can be damaged at rem levels as low as 200. Long-term, some radiation sickness victims will become sterile.*

Radiation Exposure Symptoms - Long-term exposure to small amounts of radiation can lead to gene mutations and increase the risk of cancer, while exposure to a large amount over a brief period can lead to radiation sickness. The ways symptoms manifest in cases of radiation exposure are described below.

1. Acute radiation exposure, where an individual is exposed to a large amount of radiation all at once, is usually associated with nausea and vomiting. Headache, weakness and fatigue are other symptoms. The greater the dose of radiation exposure, the more severe these symptoms of radiation sickness will be.
2. Initial nausea and vomiting symptoms usually manifest within 12 to 24 hours after mild radiation exposure. these initial symptoms may be followed by a symptom-free period before the symptoms associated with higher doses of radiation start to manifest.
3. Exposure to 2 Sv/200 rem of radiation or more causes destruction of any rapidly dividing cells in the body.
4. Other tissues made up of rapidly dividing cells are also damaged including the blood, hair follicles and reproductive tissue. Among cells that survive the damage, the DNA and RNA are damaged.

Radiation Exposure Treatment - In a case of radiation exposure, it is not possible to reverse the effects of any damage caused to tissues. It may be possible to alleviate some of the symptoms by using antiemetics to counteract vomiting, for example or antibiotics to fight infection if the immune system has been affected. Severla substances are also used to eliminate any remaining radioactibe materil in the body after exposure.

Some examples of the steps taken to minimize the effects of radiaiton exposure are described below;

1. The exposed individual is removed from the source of radiation.
2. Antiemetics may be used to treat nausea and vomiting/ Examples include metoclopramide, domperidone, ondansetron and granisetron.
3. Antibiotics may be administered to prevent secondary infections caused by immune system deficiency. If

radiation exposure has led to destruction of the bone marrow, the number of healthy white blood cells produced in the bone marrow will be depleted. This reduces the body's ability to fight infection and antibiotics are therefore required to reduce the risk of infeciton occcurring. .

4. In the event of damaged bone marrow tissue due to radiation exposure, blood transfusions and a bone marrow transplant may also be required.
5. If only part of the body has been exposed to radiaiton rather than the whole body, treatment may be easire because humans can withstand radiation exposure in large amounts to non-vital body parts such as the feet, for example, without the effects being widespread across the body. For example, the hands received a dose of 100 Gy, the overall average dose across the body would be lees than 1 Gy, in which case use of the hands may be lost due to severe,localized burning but the patient may not have to endure radaiation poisoning.
6. Potassium iodide is administered to prevent thyroid cancer in cases of exposure to radioactive iodine.
7. Neumune is an androstenediol that has been developed as a radiation countermeasure and has progressed to phase I trials and achieved investigational new drug (IND) status.
8. The bisphosphonates (used to treat osteoporosis) have also shown promise as treatments for reducing the harmful effects of radiation exposure.

Conclusion - Sunshine is one of the most familiar forms of radiation. It delivers light, heat and suntans. We limit its effect on us with sunglasses, shade, hats, clothes and sunscreen.There would be no life on Earth without lots of sunlight, but we have increasingly recognised that too much of it on our persons is not a good thing. Common sense and some basic information can greatly reduce radiation exposure and risk for most people. In fact it may be dangerous, so we control our exposure to it.

References :-

1. Radiation Hazards by Dr. Nithin Jayan and Dr. Simi Paknikar.
2. "Nikola Tesla and the Discovery of X-rays". *RadioGraphics*. **28** (4): 1189–92. By Hrabak, M.; Padovan, R. S.; Kralik, M.; Ozretic, D.; Potocki, K. (July 2008).
3. http://www.nhs.uk/Conditions/Radiation/Pages/Introduction.aspx
4. http://www.epa.gov/radiation/docs/402-k-10-008.pdf
5. www.nuclearsafety.gc.ca/.../Introduction-to-Radiation-eng.pdf
6. www.iaea.org/Publications/Booklets/RadPeopleEnv/pdf/radiation_low.pdf

****

Socio Political Forces and Indian English Fiction

Dr. Rajkumari Sudhir *

Abstract - Indo-English literature is basically a bi-cultural product. Though it is written by Indians and thus is an ostensible expression of Indian sensibility and its socio-cultural and philosophical milieu. It is written in English, a language that the Indians received as a colonial heritage. Now, a language cannot be considered as totally natural, for it is shaped and nourished by the cultural soil of the place where it is born and bred. And yet, it it is flexible enough, as English certainly is, it can accommodate the experience of diverse people belonging to diverse races and cultures. Therefore, though English is not an Indian language, it occupies a privileged position in India even today, not only because of historical conditions but also because of its resilient flexibility makes it possible to be a medium of expression of Indian experience and sensibility.
Key words - bi-cultural, cultural soil, resilient, flexibility.

Introduction - The sociology of the Indian novel in English is a problematic subject, in the sense that it cannot be established by taking into account the conflicts that crop up between various classes. Hindu society is not meaningful in terms of Mandan ideology. Terms like “bourgeois” and “proletariat” do not illuminate the struggles and tensions which Hindu society has been subjected to since times immemorial. Moreover, the sociological landscape in India during British rule doesn’t suggest any contrast between a city and a village. We don’t come across in the regional literatures novels exclusively preoccupied with human problems in a metropolis like the novels of Balzac, Dostoevsky, Dickens, Thackeray, Flaubert, Zola, and Dreiser. The obvious reason appears to be that both in the city and in the country the significant classification of the population is on the principle of caste and community. People who do menial jobs are segregated to a separate area outside the city or the village.

Indian imagination, nourished on the heroic mode we have in the epics and the erotic epyllions of the middle ages, understands and dramatizes life in terms of the ideal norms of human behaviour and conduct. This imagination was exposed to Western literary realism in the-middle of the nineteenth century and since then it has preoccupied itself with the bunting social issue of the times, such as untouchability, casteism, opposition to British rule, and harassment of orphans and young widows.

Social Reality - Fiction, being the most flexible and popular form of literary expression today, occupies the pride of place in Indo-English literature. Novelists like Mulk Raj Anand, Raja. Rao and R.K. Narayan have acquired an international prominence. All great fiction is an artistic and imaginative reconstruction of social and human reality. But there is no one-to-one relationship between a novel and a society of which it is a product. The relationship between the two is rather complex and dialectical. A novel is really neither a sociological tract nor a pure work of art. Those people who are obsessed with the literary purity and propaganda-free content of art are clearly the victims of a particular ideology. Whether a novelist justifies or defies his society depends upon his own ideological persuasions and predilections. V.S. Naipaul was horrified when he found from his own experience of India that the innocuous-looking social comedies of R.K. Narayan were really religious fables that attempted to justify a “cruel and overwhelming”’ reality.

That the major themes of Indo-English fiction are all rooted in social reality is obvious, from an excellent summary provided by S.C. Harrex in his significant book; *The Fire and the Offering: The English Language Novel of India, 1935-1970 Vol. I:*

The 1950s witnessed a steady of indo-English novel. Among the more important novels of this decade are three written by R.K. Narayan and two by Bhabani Bhattacharya, besides one each by the Mulk Raj Anand, K.A. Abbas and Khushwant Singh. Narayan’s *The Financial Expert* (1952) is an ironic exposure of people’s love of money because of its great power and its tenuous stability when obtained through unscrupulous and foul means.

During the 1960s, more than three dozen significant novels were published. Mulk Raj Anand’s *The Old Woman and the Cow* (1960) and *The Road* (1961) express the theme of the necessity of emancipating women and the untouchables from the shackles of blind tradition, humiliating servility and unjust social oppression, while his *Death of a* Hero (1963) is a passionate protest against the unholy-alliance between religious fanaticism and political aggression.

Raja Rao is basically a novelist of spiritual India and

*Asst. Professor (English) Govt. Sarojini Naidu Girls P.G. College, Bhopal (M.P.) INDIA

his novels reveal a marked metaphysical predilection. His two novels published during the sixties are both exercises in metaphysical speculation on the nature of human existence. Bhabani Bhattacharya's recording of social reality sometimes acquires allegorical undertones. His *A Goddess Named Gold* (1960), though ostensibly a diatribe against people's mad worship of money, is, actually a parable of freedom.

Ruth Jhabvala is penetratingly aware, of the moral, psychological, and human problems arising out of the dialectical relationship between man and society in India. She also deals in her fiction with the dilemmas implicit in - the interaction between European and Indian cultures.

The fictional world of Anita Desai is located in the corridors of human consciousness. She is almost obsessively concerned with the dark, uncannily oppressive, inner world of her intensely introverted characters. Manohar Malgonkar's concern in his novels is with the psychological and historical impact of war and conflict on social institutions, national affairs and human sensibility.

The 1970s have produced nearly two dozen significant novels, half of which are written by women novelists. Santha Rama Rau's *The Adventuress* (1971) is a picturesque novel about a woman's search for fulfillment in a world of crumbling values and ideals. Kamala Markandaya's *Two Virgins* (1975) has for its theme the agonizing consequences of lack of sex education, while her *The Nowhere Man* (1973) deals with the predicament of man in a society torn by class rivalries and racial antagonisms, particularly the pathetic fate of colour immigrants in England.

The year 1976 belonged to the leading trio of male novelists - Anand, Narayan and Rao- who produced a novel each, while 1977 belonged to the leading trio of women novelists — Markandaya, Sahgal and Desai — who similarly published one novel each during this year. R.K. Narayan's *ThePainter of Signs* is a subtle exploration of the relationship between two fascinating characters Raman and Daisy one being thoroughly conventional and the other cherishing advanced ideas about woman's independent personality and existence .

Kamala Markandya's *The Golden Honeycomb* (1977) is a novel of epic dimensions and provides an excellent critique of Capitalism and colonialism, both of which user religion as their handmaid o exploitation, along with the pernicious influence of the Brahmins and the British on the Indian psyche through their intricate network of the ceremonial and puppetry.

Political Consciousness - The nascent national political consciousness in India which was slowly percolating to the grass-roots has been faithfully mirrored in Indo-Anglican fiction. Indeed this sense of commitment to national awareness was an important factor which made the early novelist chisel the genre _M.K. Naik in his study of the evolution and growth of Indo-Anglican fiction, notices the urnblical link between political consciousness and the Indian novel in English.

Political consciousness flows in the very life-blood of Indo-Anglican fiction Political consciousness, with which the novels of the early practitioners of Indo-Anglican fiction are imbued, can also be viewed as part of the novelists' Endeavour to relate themselves to the mainstream. The intelligentsia in the pre-Independence phase found itself in an unenviable position of being the privileged unprivileged-privileged for they possessed western education social clout, and often wealth to boot; unprivileged for they were actually aware of their subject-status in a subjugated state, their education and other distinctions only serving to heighten the unsavory reality.

The English contributed in another way too. Western education through the medium of the English language exposed the Indians to English constitution, the British institutions, the idea of freedom and other liberal political ideologies. This gave them new ambitions against the colonial experience by defining their vague aspirations into a shape and direction. This aggrieved elite, made politically conscious but also left high and dry economically on account of the discriminatory policies of the government in matters of employment and commerce, threw up leaders like Bal Gangadhar Tilak, Lajpat Rai and Bipin Chandra Pal who were to function as disseminators of this consciousness.

The second half of the 19th century witnessed the flowering of national political consciousness and the foundation and growth of an organized national Movement. While the news of the Russian Revolution (November 1917) put heart into the nationalists, the Montagu-Chelmsford Reforms failed to enthuse there. The advent of Gandhi into the political arena provided a new light of hope. Gandhi brought a sea-change in the Indian scenario by making the people not only politically conscious but also politically active.

Political inactivity, the irrelevance of the Khilafat cause after the abolition of the Caliphate in Turkey, and frustration led to the outbreak of communal violence in different parts of the country in 1924, '25 and '26, engulfing even small town ships. Another ominous development was the emergence of sectional political groups, particularly among the so-called "untouchables' and other depressed classes.

The Government of India Act (1935) brought the princely states into the national mainstream, for the Federal Union was to comprise of them as well as of the provinces of British India. The immediate post-Independence phase saw a soaring of hopes despite the pricks of prohibition, obscurantism and socialism felt in some quarters. The era of planned development was heralded and the first two plans were quite successful. However, as real politic replaced abstract, airy Utopias there grew a general dis-enchantment with politics and politician.

To recapitulate in brief the growth of political consciousness in India, there were discerned three stages, neatly marked out. These stages didn't materialize in sequential order, for, given the geographic and socio-economic complexity of the country, the simultaneous

existence of two or more stages would be easily possible. Perceiving the British Raj as their *mai-bap,* early Indians sought to attain political adulthood under the benign guidance of their colonial masters. This was the first phase. Then, as the awareness of the wise gulf between expectation and reality sank in, widespread disenchantment followed. Therefore, the second phase was a reaction to the first and heralded a revival of traditional values to counterbalance the shame of subjugation. The awareness of subjugation and faith in regenerated tradition was followed by a demand for greater political participation. This was the third phase. All these phases are well-mirrored in Indo-Anglican fiction as the following examine would illustrate.

Early novels like A Journal of Forty Eight Hours of the Year 1945 (1885) by K.C. Dutt, The Republic of Or is s a—Annals From the Pages of the 20th Century (1845) by S.C. Dutt and Govinda Samant (1874) by Lai Behari Day depict a stage when national political consciousness had not yet developed and the perspective was necessarily blinkered. The Prince of Destiny (1909) by S.K. Chose and Hindupore (1909) by S.M. Mitra, both exhibit the state of political consciousness of the time when the foreign rule was deemed a divine dispensation and the endeavour was to groom the people for self-governance.

Murugan the *Tiller* (1927) and *Kandan the Patriot* (1932) by S.K. Venkataramani are novels full of Gandhian politics, exploring and applauding the ideals of Satyagraha and overtly calling on the Indians to work for freedom and regeneration as a nation. Raja Rao's *Kanthapura* (1938) stands in a peculiarly advanced position with regard to its success in capturing the whole gamut of the complex phenomenon that Gandhi was.

Mulk Raj Anand's *Morning Face* (1968) is set in the early years of the 20th century with Gandhi having just entered the Indian stage, and cast a spell with his political Utopia, *Hind Swaraj.* Waiting for the *Mahatma* (1955) by R.K. Narayan captures to some extent the charisma of Gandhi and also his essential humanity. The Quit India movement is projected as the only political strategy which could wield the nation together.

Aamir Ali's *Conflict* (1947) depicts another dimension of the Independence movement: the youth-Hindus or Muslims - as the harbingers of the escalating national political consciousness, spreading the eddies to the remotest village in the tumultuous 1940's Train *to Pakistan* (1956) by Khuswant Singh, *The Rape* (1974) by Raj Gill and *Ashes and Petals* (1978) by H.S. Gill—all convey a consciousness of the human waste in the wake of Partition.

Mulk Raj Anand's *Death of a Hero - Epitaph for Maqbool Sherwani* (1963) presents one significant aspect of the post-Independence reality-the confrontation between democracy and secularism on the one hand and religious bigotry and obscurantism on the other.

Indo-Anglican fiction has thus been imbued with political consciousness and reflects the chequered political history of the nation's awareness. Bhattacharya, Malgonkar and Sahgal hail from different and distant geographic regions and have their differences of perspective and temperament. Yet they belong to the same group insofar as the political consciousness with which their novels are imbued is concerned.

There are studies of nationalism, as reflected in fiction. G.P. Sarma's Nationalism in Indo-Anglican Fiction and Suresh Ranjen Bald's Novelists and Political Consciousness - Literary Expression of Indian Nationalism 1919-1947. Nayantara Sahgal's novels present even more obviously a chronological account of Indian politics from the last phase of the freedom struggle to the breakdown of democracy in mid-1970s . Nayantara Sahgal fairly reflects the new crop of post- Independence leaders.

What is perhaps Nayantara Sahgal's singular-most achievement is her perceptive depiction of the political scene. She gazes at the politics of the time so minutely that even mere straws in the present air spring into view as tokens of typhoons in store.

We have already seen that one significant aspect of the treatment of political consciousness in the novels of Bhattacharya, Malgonkar and Sahgal is that the narrative is frequently interspersed with objective accounts of the political development An example of the artistic exigencies of such incorporation would obviously form part of this study.

Conclusion - Fiction is the expression of the most intimate social awareness of the society in which it is born and evolves. It can well be perceived as society ruminating aloud and bringing into focus its very sinews. All great fiction is an artistic and imaginative reconstruction of social and human reality.

The Political novel has flourished numerically in Indian writing in English. "Politics in a work of literature"', as Stendhal has said in a well-known passage, "is like a pistol-shot in the middle of a concert, something loud and vulgar, and yet a thing to which it is not possible to refuse one's attention." But it is possible to make the sound of the pistol-shot and indeed the very din of politics an organic element in the fictional symphony, transforming what is merely 'loud and vulgar' into an element which has an integral role to play in the music of the fictional sphere.

References :-

1. Auden, W.H. "The Novelist." *W.H. Auden: Collected Poems.* London : Faber and Faber, 1976. 147. Print.
2. Bhattacharya, Bhabani. " Tagore as a Novelist." *Rabindranath Tagore : A Centenary Volume*. Ed. S. Radhakrishnan. New Delhi : SahityaAkademi, 1961. 101. Print.
3. *Music for Mohini*. New Delhi: Orient Paperbacks, 1952. n.p. Print.
4. -"Literature and Social Reality." New Delhi : The Aryan Path, Sep 1955. 128. Print.
5. Chand, Tara. *Freedom Movement*. New Delhi: Government of India Publication, 1967.II.

74-7, 388. Also Ram,Tulsi. *Trading in Language.* Delhi: G.D.K. Publications, 1983. 238. Print

6. Chandra, Bipan et al. *Freedom Struggle.* New Delhi: National Book Trust, 1980. Print.
7. Chandra, Bipan. *Modern India.* New Delhi: NCERT, 1971. Print.
8. Deutsch, Karl W. *Nationalism and Social Communication*. Cambridge: Massachusetts Institute of Technology Press, 1967. Print.
9. Goyal, S. Bhagwat. "Indo-English*". Contemporary Indian Literature and society*. Ed. Jotwani, Motilal Wadhumal. New Delhi: Heritage Publishers, 1979.34. Print.
10. Iyengar,K.R,Srinivasa. *Indian Writing in English*. New Delhi : Sterling ,rev. ed., 1984. 314-20. Print
11. Leavis, F. R. *Lectures in America*. New York: Doubleday, 1969. Print.
12. Malik, Yogendra K., ed. *Politics and the Novel in India.* New Delhi: Arnold Heinemann, 1978. Print.
13. Narayan, R. K. *The Guide*. New Delhi: Orient Paperback, 1984. Print.
14. Nehru, Jawaharlal. *The Discovery of India*. New York, Anchor Books,1959.Print.
15. Narayan, R. K. *The Guide*. New Delhi: Orient Paperback, 1984. Print.
16. Rao, Raja. *Kanthapura*. Madras : OHP, 1974. Print.
17. *The Cow of the Barricades and other stories*. Madras : OUP, 1947. Print.
18. *The Serpent and the Rope*. Delhi : Hind Pocket Books, 1968. Print.
19. *The Cat and Shakespeare*. Delhi : Hind Pocket Books, 1971. Print.
20. Roy, Arundhati. *The God of Small Things.* New Delhi: India Ink, 1977. Print.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

हिन्दी महिला लेखन-सर्वेक्षण

डॉ. मिथिलेष अग्निहोत्री *

प्रस्तावना - हिन्दी साहित्य में महिला लेखन की विशिष्टता अत्यंत उल्लेखनीय है, आधुनिक काल में सभी शिक्षा के प्रसार और नवजागरण इत्यादि के कारण स्त्रियाँ समाज में ही नहीं, साहित्य में भी सामने आई हैं।

इस युग में महादेवी वर्मा और सुभद्रा कुमारी चौहान जैसी कवियित्रियां हुई। इन रचनाकारों ने काव्य के क्षेत्र में ही नहीं गद्य के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत विशेषकर 'नई कविता और नई कहानी' उपन्यास जैसे आन्दोलनों के फलस्वरूप महिलाओं का एक बड़ा वर्ग सृजन में सक्रिय हुआ और उन्होंने महिला लेखन को नई दिशा दी और उसकी नई पहचान बनाई। यह तथ्य निर्विवाद रूप से सत्य है कि स्वतन्त्रता के बाद हिन्दी कथा लेखन में महिलाओं ने अपनी उपस्थिति सक्रिय रूप से दर्ज की है। नारी जागरण और स्त्री शिक्षा के व्यापक प्रचार-प्रसार के कारण महिला रचनाकारों की एक सशक्त पीढ़ी का उदय हुआ है, जिसमें शिवानी, कृष्णासोवती, दीप्ति खण्डेलवाल, मृणाल पाण्डेय, नासिरा शर्मा, सूर्यबाला, मणिका मोहिनी, प्रतिमा वर्मा, सुधा अरोरा, इन्दुबली एवं मालती जोषी ने अपना नाम दतिहास में दर्ज कर लिया है।

शकुन्त माथुर, मन्नु भण्डारी, कृष्ण सोवती जैसे नाम इस संदर्भ में सहज ही याद आते हैं, किन्तु सातवें दशक के उपरान्त महिला लेखन के क्षेत्र में रचनात्मकता का जैसा विस्फोट हुआ है वह हिन्दी साहित्य की परम्परा में अद्वितीय है। इसके अनेकानेक कारण है। सामाजिक क्षेत्रों में महिलाओं की उपस्थिति अब तक लगभग स्वीकार्य हो चुकी थी। वे प्राध्यापक, पत्रकार, अधिवक्ता, राजनेता, वैज्ञानिक, उद्यमी, अभियंता, एक्टीविस्ट जैसे उन क्षेत्रों में भी सक्रिय हुई जो अभी तक पुरूषों के लिये ही सुरक्षित माने जाते थे। महिलाऐं इस दौर में शिक्षित हुई और विश्व साहित्य से उनका परिचय हुआ। उन्होनें समिन-दा बुआ जैसी लेखिकाओं को पढ़ा।

भारत में ही कमलादास और अमृता प्रीतम, शोभा डे जैसी लेखिकाओं ने जीवन और साहित्य में अनेक दुस्साहस पूर्ण प्रयोग किये। महिलाओं ने परम्परागत वर्जनाओं को तोड़ा और यह घोषणा की, स्त्री जीवन के अनेक सत्य ऐसे हैं जिनका ज्ञान केवल स्त्रियों को ही हो सकता है। मनोवज्ञान, जैविकी इत्यादि के नन से युक्त इन महिलाओं ने विमर्श की एक नई कोटि स्थापित कर दी। तस्लीमा नसरीन की आत्मकथा से उपजा विवाद और उसके फलस्वरूप बांग्लादेश की लेखिका को मिली प्रतिष्ठा ने हिन्दी की महिला रचनाकारों को भी एक आत्मविश्वास दिया। हिन्दी में इस समय जितनी लेखिकाएँ सृजनरत हैं, उतनी पहले कभी नहीं रहीं। इस समय महिला विर्ष और दलित विमर्श हिन्दी की जितनी चर्चित प्रवृत्तियाँ हैं उतनी कोई अन्य प्रवृत्ति नहीं है। अलका सरावगी, प्रभा खेतान, मैत्रेयी पुष्पा, राजी सेठ, चित्रा मुद्गल, मालती जोषी, मेहरून्निसा परवेज, मृदुला गर्ग, मंजुला भगत, मृणाल पांडे, गीतांजलि श्री, मधु काकरिया, जया जादबानी, महुआ माजी जैसी अनेकानेक लेखिकाओं ने समाज और जीवन में अनेक अगम्य और लगभग निशिद्ध रचनात्मकता के प्रमाण प्रस्तुत किये हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में शिक्षा के प्रचार प्रसार ने महिलाओं के अंतर्चितन अस्तित्व को एक नया रूप दिया सन् 60 के बाद महिला तथा लेखिकाओं की संख्या में इजाफा हुआ हैं। पुरूष कथाकारों की तुलना में महिला कहानीकारों की रचनाऐं अधिक संवेदनशील यर्थाथवादी और मनोवैज्ञानिक है। परिवेश के परिवर्तन की गतिमानता के चलते महिलाओं की स्थिति ने अकल्पित उचाईयों को ही पार नहीं किया बल्कि अपनी स्वतंत्रता के नये - नये प्रतिमान भी गढ़े है। अपने परिवेश की सामाजिक मान्यताओं को नकारते हुये अपने होने की अहमान्यता को स्वीकार करवाने की उहा-पोह में कभी जीवन को सुलझाने की चेष्टा की, कभी स्वयं को उलझाया भी है। इन महिलाओं की कहानियों में स्वतंत्र चेतना स्त्री के विरोध का स्वर स्पष्ट दिखाई देता है। वेदों पुराणों और धार्मिक ग्रंथों में वर्णित नारी के दायरे के टूटने से अब उसकी वह छबि या सुरक्षा या सम्मान की सामाजिक पारिवारिक चिंता का संरक्षण वाला अगला स्वरूप टूटकर स्वयं में स्त्रेणता की नाजुक भ्रांतियों को त्यागति वह आज विमर्ष के रूप में पुरूष के समक्ष समान रूप, अधिकार और कर्तव्यों, के मापदण्ड स्वयं ही नहीं गढ़ रही है, वरन् समाज और कानून को उसे कसने के लिए बाध्य कर रही है। कुछ आलोचकों का मानना है कि कृष्णा सोबति की 'ऐ लड़की' के माध्यम से पीढ़ियों और बदलाव और संघर्ष की कहानियाँ है। पुरानी पीढ़ी की माँ चिंतित है। चाहती है कि बेटी उसके अनुभवों से कुछ सीख लें, परंतु नई पीढ़ी की बेटी आत्म सम्पन्न है, माँ के अनुभवों से नि:षक्त निष्कर्ष उसके किसी काम के नहीं।

इस प्रकार इन महिला कथाकारों की कहानियों में प्रभुत्व स्त्री विमर्श के रूप में स्थापित हुई है। वह अपने अधिकारों के प्रति सचेत है। वह अपनी भावनाओं और आवश्यकताओं की महत्ता प्रतिपादित करने वाली नारी है। वह अपनी मानसिक और शारिरिक अहम मान्यता के समक्ष पुरूष से समझौता कर सकती है। वह परिवार के दायरे से बाहर जूझने को तैयार है। वह भावना और कल्पनाओं को भी महत्व देती हुई मानव होने का हक प्राप्त करने को आतुर है। वह नारित्व से जुड़ी संकल्पनाओं से परे समान अस्तित्व को तलाशती अच्छे और बुरे के भेद को स्पष्ट करते हुए अपने वजूद को मनवाना चाहती है। लेकिन इन सब उपलब्धियों के बावजूद आधुनिकता की दोड़ में ये लेखिकाएँ मीडिया और पाष्चात्य संस्कृति से प्रभावित होकर वह संदेश जो साहित्य और समाज की श्रेष्ठता का परिचायक है बहुत कम कथा लेखिकाएँ दे पायी है।

संभावना है कि आने वाले समय में ये कथा लेखिकाएँ अपने समाज-परिवेश अभिभूत सत्यों को समाज के समक्ष प्रत्यक्ष करती समाज में नये मूल्यों की स्थापना करने में सक्षम होंगी, समानता के सम्मान को प्राप्त करती घर-परिवार की संरचना में परिवर्तन लाकर भी उसकी पुरातन आदर्शवादी गरिमा को स्थापित करने की दृष्टि को स्थापित करेंगी।

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

मध्यप्रदेश आदिवासी वित्त विकास निगम की योजनाओं का हितग्राहियों की आर्थिक स्थित पर प्रभाव

डॉ. रावेन्द्र सिंह पटेल *

प्रस्तावना – म.प्र. आदिवासी वित्त एवं विकास निगम की स्थापना इंडियन कंपनी एक्ट 1956 की धारा 25 (लाभ के लिए नहीं) के अंतर्गत 29 सितम्बर 1994 में की गई। निगम द्वारा प्रदेश के आदिवासीजनों के कल्याणार्थ विभिन्न स्वरोजगार योजनाओं का क्रियान्वयन 01 अप्रैल 1995 से प्रारंभ किया गया है।

म.प्र. आदिवासी वित्त एवं विकास निगम की स्वरोजगार योजनाएँ, भारत सरकार द्वारा म.प्र. के लिए घोषित आदिवासी सदस्यों की स्वरोजगार प्रदाय करने की योजनाएँ हैं। इन योजनाओं के क्रियान्वयन से इस वर्ग के सदस्यों के आर्थिक एवं सामाजिक स्तर में परिवर्तन आवेगा। आदिवासी वर्ग के ऐसे व्यक्ति जो स्वरोजगार इकाई स्थापित करना चाहते हैं परन्तु आर्थिक परिस्थितियों के कारण स्वरोजगार इकाई नहीं लगा पाते हैं, उनको स्वरोजगार उपलब्ध कराने के लिए निगम द्वारा वित्तीय सहायता के साथ-साथ अन्य सहायता भी प्रदान की जाती है। आदिवासी वित्त एवं विकास निगम द्वारा ट्रेक्टर ट्राली योजना, बकरी पालन योजना, डेयरी फर्मिंग योजना, साईकल रिक्शा योजना, ट्रक योजना, फोटो कॉपियर योजना, जनरल स्टोर योजना, मिनी राइस मिल योजना, आटाचक्की योजना, मेडिकल स्टोर योजना, ईंट निर्माण योजना, प्रिंटिंग प्रेस योजना, बास टोकरी योजना एवं झाडू निर्माण योजना आदि है। निगम द्वारा प्राप्त होने वाले ऋण की अधिकतम सीमा रू. 10 लाख प्रति इकाई है, जिसमें केन्द्र सरकार का हिस्सा योजना लागत का 90 प्रतिशत एवं म.प्र. सरकार का योजना लागत का 5 से 15 प्रतिशत है। आदिवासी हितग्राही का हिस्सा एक लाख तक की योजना लागत पर कुछ नहीं, एक लाख से 2.50 लाख तक की योजना लागत पर 2 प्रतिशत, 2.50 लाख से 5 लाख तक 3 प्रतिशत एवं 5 लाख से अधिक पर 5 प्रतिशत लागत लगानी पड़ती है। इसमें ऋण अदायगी का समय 5 वर्ष से 10 वर्ष तक होता है। निगम द्वारा बहुत ही कम ब्याज दर पर अनुदान के साथ ऋण उपलब्ध कराया जाता है।

उद्देश्य :

1. आदिवासी वित्त एवं विकास निगम की योजनाओं का हितग्राहियों की आय पर प्रभाव।
2. निगम की योजनाओं का हितग्राहियों के परम्परागत व्यवसाय, व्यवसायिक गतिशीलता एवं रोजगार सृजन पर प्रभाव।
3. निगम को ऋण प्रदान करने में एवं हितग्राहियों को ऋण प्राप्त करने में आने वाली समस्याओं का अध्ययन।

शोध प्रविधि – यह शोध मेरे पी-एच.डी. के अध्ययन पर आधारित है। इसमें प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों समंको का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक समंको के संग्रहण के लिए साक्षात्कार विधि एवं अवलोकन विधि का सहारा लिया गया है। द्वितीयक समंकों का संग्रहण आदिवासी वित्त एवं विकास निगम की मार्गदर्शिका, रिपोर्ट एवं विभिन्न पुस्तकों, पत्र एवं पत्रिकाओं से किया गया है। इसमें अध्ययन क्षेत्र के रूप में सतना जिले का चयन किया गया है तथा केवल उन्हीं हितग्राहियों का चयन किया गया है जो 1996-97 से 2011-12 के मध्य ऋण प्राप्त किए हैं।

आय – आदिवासी समाज में अजीविका का प्रमुख साधन कृषि है। अधिकांश आदिवासी अपनी अजीविका कृषि -श्रम से प्राप्त करते हैं। शर्मा, मूर्ति और सिंह (1988) ने आदिवासी क्षेत्रों में असमान आय एवं निर्धनता स्थिति का विश्लेषण करते हुए पाया कि आदिवासी क्षेत्र में उच्च असमानता है। आदिवासी वित्त एवं विकास निगम द्वारा आदिवासी क्षेत्रों में आदिवासियों की आर्थिक स्थिति ठीक करने के लिए जो ऋण प्रदान किया गया है, उसके प्रभाविता का अध्ययन किया गया जो निम्नलिखित है :-

आय संबंधी जानकारी

वास्तविक आय (मासिक/रू. में)	ऋण के पहले		ऋण के बाद	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
2000 से कम	20	40	05	10
2000-4000	12	24	20	40
4000-6000	10	20	08	16
6000-8000	06	12	11	22
8000 से अधिक	02	04	06	12
योग	**50**	**100**	**50**	**100**

स्त्रोत – व्यक्तिगत सर्वेक्षण

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि ऋण प्राप्त करने के बाद हितग्राहियों की आय में वृद्धि हुई है क्योंकि ऋण के पहले कम आय वर्ग में हितग्राहियों की संख्या अधिक थी, बाद में हितग्राही अधिक आय वर्ग की ओर शिफ्ट हुए है।

रोजगार – रोजगार किसी भी व्यक्ति के अजीविका का प्रमुख साधन होता है। बिना रोजगार के व्यक्ति की शक्ति भी नष्ट हो जाती है। आदिवासी वित्त एवं विकास निगम ने आदिवासियों की आर्थिक स्थिति को सूद्रण करने का बीणा उठाया है। हितग्राहियों से प्राप्त जानकारी निम्नानुसार है –

रोजगार संबंधी जानकारी

रोजगार(दिनों में/वार्षिक)	ऋण के पहले		ऋण के बाद	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
100 से कम	30	60	02	04
100-200	12	24	05	10
200-300	06	12	12	24
300 से अधिक	02	04	31	62
योग	**50**	**100**	**50**	**100**

स्त्रोत : व्यक्ति सर्वेक्षण

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि आदिवासी वित्त एवं विकास निगम रोजगार सृजन करने में सफल रहा है तथा हितग्राहियों को स्वरोजगार प्रदान कर उनकी अजीविका की सुरक्षा मुहैया करा रहा है।

निष्कर्ष – आदिवासी वित्त एवं विकास निगम सतना ने अपने हितग्राहियों को ऋण उपलब्ध कराकर न केवल उनकी आय में वृद्धि की है, बल्कि उनको स्वरोजगार भी मुहैया कराया है। इससे हितग्राही निम्न आय स्तर से उच्च आय स्तर की ओर अग्रसर हुए है। अध्ययन में पाया गया है कि लगभग 70 प्रतिशत हितग्राही को ऋण प्राप्त करने हेतु निगम के अधिकारी एवं कर्मचारी को घूस देनी पड़ती है। निगम के अधिकारियों ने बताया कि मात्र 02 प्रतिशत हितग्राही ही अपनी ऋण किस्त समय पर चुकाते हैं तथा 48 प्रतिशत हितग्राही अपना ऋण चुकाते ही नहीं हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आदिवासी वर्गों के लिए स्वरोजगार योजनाओं की नियमावली 1995, आ.वि.वि. निगम म.प्र. शासन भोपाल 1990, पृ. 01
2. मार्गदर्शिका एवं प्रक्रिया 1998, म.प्र. आदिवासी वित्त एवं विकास निगम, म.प्र. शासन भोपाल, पृ. 06
3. शर्मा, आर.बी, एच.आर. मूर्ति एवं के सिंह हिमाचल प्रदेश के आदिवासी क्षेत्र में असमानता एवं गरीबी जर्नल ऑफ रूरल डेवलपमेन्ट, वाल्यूम 7, नं. 3 पृ. 323
4. गिलिन एण्ड गिलिन 'कल्चर सोसियोलॉजी' पृ. 282
5. डी.एन. मजूमदार ' रेसेज एण्ड कल्चर्स ऑल इंडिया' बाम्बे, 1958, पृ. 93
6. ब्रम्हादेव शर्मा, 'आदिवासी विकास –एक सैद्धान्तिक विवेचन' म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल 1990

****

अर्थव्यवस्था में ग्रामीण उद्यमी महिलाओं की सहभागिता

डॉ. मिथिलेष अग्निहोत्री *

प्रस्तावना – अर्थव्यवस्था की दृष्टि से देखा जाए तो हमारा भारत समाज कृषि प्रधान देश है। कृषि हस्तषिल्प से सम्बधित वस्तुओं के उत्पादन और विक्रय में महिलाओं ने परम्परागत रुप से सफल योगदान दिया है। मानवीय संसाधनों का विकास राष्ट्र के सामाजिक आर्थिक विकास के लिए तब तक सफल नहीं है, जब तक स्त्रीयों को आर्थिक जीवन में भाग लेने का अवसर न दिया जाए। भारत में जो निम्न और मध्यम जाति की महिलाऐं बेरोजगारी या सस्ते श्रम के द्धारा जमीदारी व्यवस्था को दृढ़ता प्रदान करने लगी है। महिलाओं का कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण स्थान था, परन्तु उन्हे जो स्थान प्राप्त होना था वो नहीं मिला। मगर आज इस स्वतंत्र भारत में महिलाओं का आर्थिक दृष्टि से नवीन आयामों का विस्तार हुआ हैं। आर्थिक विकास कार्यक्रम विशेष रूप से महिलाओं के शैक्षणिक और आर्थिक विकास के लिए अनेक विशेष कार्यक्रम अपनायें जा रहे है, और महिलाओं की प्रतिबंधित आर्थिक सहभागिता को विस्तृत करने में सामाजिक, आर्थिक विकास, ग्रामीण पुननिमार्ण कार्यक्रम और महिला आरक्षण कार्यक्रम में पर्याप्त मात्रा में योगदान दिया है। यदि हम ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक शक्ति एवं उनकी प्रभावशीलता का विस्तार चाहते है, तो इसके लिये यह आवश्यक है कि पुरूष प्रधान समाज का नारी के प्रति दृष्टिकोण परिवर्तित हो। परिवार में महिलाओं के सामाजीकरण एवं उसकी भूमिका के नवीन प्रतिमानों का विकास हो। यदि हम ऐसा करेंगे तो सही मायने में ग्रामीण महिलाऐं आर्थिक रूप से सशक्त हो सकती है। जिसमें भारतीय ग्रामीण समाज की भी शहरीय समाज की भांति आर्थिक रूप से मजबूत एवं सशक्त होगा। अर्थव्यवस्था का परिवर्तन के परिणाम स्वरूप इस बात की आवश्यकता उत्पन्न होती है, की समाज में सभी महिलाओं को आर्थिक ज्ञान, शिक्षा और क्रियात्मकतों का लाभ प्राप्त हो। आधुनिक समाज में जनसंख्या और सामाजिक परिवर्तन के क्षेत्र में जो नवीन प्रवुत्तियॉ दृष्टिगोचर हो रही है। उसके अनुसार परिवार और समाज में स्त्रियों की भूमिका को पुर्नपरिभाषित करने की आवश्यकता है। विवाह की आयु नगरीकरण, जीवन जीवन स्तर की उच्चता इत्यादि परिवर्तन के ऐसे क्षेत्र है। जो महिलाओं की भूमिका और उत्तरदायित्व में परिवर्तन की उपेक्षा करते हैं। सामाजिक अर्थव्यवस्था संकट में निवारण और सामाजिक व्यवस्था में संतुलन बनाये रखने के लिये महिलाओं की भूमिका में परिवर्तन आवष्यक हैं। ऐसा न होने पर सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया सुचारू रूप से संचालित न हो सकेगी। कई तर्को के आधार पर यह अनुभव किया जा रहा है कि महिलाओं को आर्थिक जीवन में अपेक्षाकृत अधिक सहभागी बनाया जाये तथा उनकी स्थिति पुरूषों के समकक्ष हो जायें। मानवीय संसाधनों का पूर्ण एवं प्रभावशाली उपयोग किया जायें। विकास का पूर्ण लाभ तभी मिल सकता है, जब महिलाओं को अर्थिक क्रियाकलापों से प्रथक न रखा जायें। एवं उन्हे विकास की प्रति भेदभाव महिलाओं को पुरूषों के समान राजनिति, अर्थव्यवस्था, सामाजिक एवं समाज के कल्याण के विरूद्ध है। यह भेदभाव के प्रति अवरोध के कारण उनके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास भी नहीं हो पाता है। यह कार्य संभव नही हो पाता है यह कार्य तभी संभव है जब स्त्रियों को अर्थव्यवस्था में भाग लेने का पूर्ण अवसर प्राप्त हो।

प्राचीन काल से महिलाये परिवार तथा दो की आर्थिक उन्नति में किसी ना किसी प्रकार से अपना योगदान देती है। महिलाओं की आर्थिक स्थिति अभी तक कही न कही भिन्न है। औधोगिक क्रांति में महिलाओं को घर से बाहर उन के अवसर प्रदान किये है। फलस्वरूप महिला श्रमिको की मांग दिन प्रतिदिन बटती जा रही है। वर्तमान स्थिति यह है कि महिलाये औधोगिक क्षेत्रों के आज प्रत्येक उघोग चाहे वे कुटीर हो या लघु या उद्योग आदि में उनकी अहम भूमिका रही है। जो हमारी भारतीय अर्थव्यवस्था को बटाने सहायक है। श्रम की दृष्टि से पुरूष व स्त्री दोनो की महत्वपूर्ण साधन है। स्त्री और पुरूष सृष्टि के आदि काल से ही एक दूसरे के पूरक रूप में चले आ रहै है। भारत में सामाजिक आर्थिक विकास की प्रक्रिया के संदर्भ में ग्रामीण उद्यमी महिलाओं की स्थिति की विचवेचना करते हुए ज्ञात होता है कि सामाजिक सांस्कृतिक मान्यताओं मर्यादा तथा पुरुष प्रधान समाज एवं पितृ सरनामक परिवारिक संगठन के परिणाम स्वरुप महिलाओं की प्रतिबंधित आर्थिक विकास ग्रामीण आरक्षण कार्यक्रम में प्र्याप्त मात्रा मे योगदान दिया है।

'ग्रामीण उद्यमी महिलाएँ बदल सकती है देश की अर्थव्यवस्था'

अगर हम ग्रामीण महिलाओं को सामाजिक आर्थिक रुप में सशक्त कर सके तथा छोटे बड़े घरेलु उद्योगो से जोड़ सके तो नही महिलाएँ अपना एक अलग अस्तित्व बनाने में सक्षम होगी वास्तविकता देखे तो महिलाओं के लिए अब भी भारतीय समाज में चुनौतिया बनी हुई है। भारत में महिलाये कुल जनसंख्या का करीब 48 फीसदी ही है। राष्ट्रीय अपराध ब्यरो के रिकार्डो के अनुसार महिलाये राजनीति कारोबार कला तथा नौकरियो मे पहुँचकर नये आयाम गढ़ रही है। यदि हम तकरीबन 41 करोड ग्रामीण महिलाओ को सामाजिक व आर्थिक रुप से सुदृढ़ तथा पाये तो यही मूलगंज होना गाँव व भारत देश के विकास का यही ग्रामीण उद्यमी महिलाये अपने घरेलु उद्योगो हर भारत की अर्थव्यवस्था मे अपना योगदान देने मे सक्षम होगा।

किसी भी स्वस्थ समाज के निर्माण में स्त्री और पुरुष दोनो की सहयोगिता आवश्यक है। जब भी इन दोनो के बीच संतुलन डगमगाता है, सामाजिक व्यवस्था के बिखरने के खतरे बढ़ने लगते है। यदि हम सृष्टि के

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

प्रारंभ से आज तक हुये विकास का अवलोकन करे तो निश्चित रुप से कह सकते है कि जो प्रगति हमने बीसवी सदी में की है उसकी तुलना इतिहास के किसी भी युग से नही की जा सकती। हमारे देश की जनसंख्या में स्त्री व पुरुषो की जनसंख्या की गणना अलग-अलग न करते हुये इन्हें जोड़ दिया जाये अर्थात् यदि हम महिलाओ की उद्यमशीलता की क्षमताओ का उपयोग कर ले और इन्हें बड़ा सहयोग करे तो इससे छोटे कारोबारी समूह खड़ा करने मे काफी मदद मिलेगी।

भारत में महिलाये अपना कारोबार शुरु नहीं कर पाती। इसके पीछे कई कारण होते है जैसे- प्रमुख परिवारिक जिम्मेदारी। अधिकतर महिलाये एक बड़ी बाधा मानती है। दूसरा कारोबार शुरु करने के लिये धन का इन्तजाम कैसे करे, निजी वित्तीय सुरक्षा को लेकर चिंता। इसके आलवा कारोबार शुरु कैसे और कहाँ करे की जानकारी न होना ये तीन समस्याएँ पाई गयी। प्रस्तुत शोध लेख महिला उद्यमीयों की समस्याओं एवं सामाधान तथा उद्यमिता विकास में महिलाओं की क्षमता के उपयोग पर आधारित द्वितीयक तथ्यों का विश्लेषण है। इस संदर्भ में भारत में महिलाओं के हालात पर किये गये फेसबुक के एक अध्ययन के अनुसार हर पाँच में से चार महिला उद्यमी बनाना चाहती है। परंतु उनके समक्ष चुनौतिया है। अत: अध्ययन में यह दावा किया गया है कि इन समस्याओं को दूर कर दिया जाये और सिर्फ 52 प्रतिशत महिलाओं को कारोबार शुरु करने लायक बना दे तो आर्थिक वृद्धि के साथ-साथ 1.55 करोड़ नये कारोबार पैदा करने और 6.40 करोड़ नौकरिया खड़ी करने में मदद मिलेगी। यह प्रयास वर्ष 2021 तक संभव किया जा सकता है।

रेशम उत्पादन के रुप में परिचय :- रेशम एक मूल्यवान वस्त्र है, रेशम और उससे बनने वाले उत्पाद अपने ऊँचे मूल्य के कारण अपने अपने निर्माताओं के लिये आय के अच्छे स्त्रोत होते है।

रेशम उत्पादन कृषि पर आधारित कुटीर उद्योग है। रेशम उत्पाद के लिये ऐसी भूमि होना आवश्यक है, जिस पर शहतुत के पौधों की रोपती किया जा सके। एक उद्यमी के लिये 1.50 एकड़ रकबा काफी होता है। रेशम के कीड़ो का भोजन इन पेड़ो की पत्तियाँ होती है। कच्चे रेशम से रेशम चरखे, तुकली द्धारा रोल किया जाता है, जिसे रीलिंग कहते है, तभी रेशम बिक्री योग्य होता है, जब उसको कपडद्धे के रुप में बुन लिया जाए। बुनाई हेतु हथकरधा जैसे सेवाग्राम करधा, नेपाली करधा, चितरंजन करधा आदि उपयोगी है।

भूमिका :- जनसंख्या की दृष्टि से लगभग आधा हिस्सा महिलाओं का है और वे उत्पादन तथा अर्थव्यवस्था की सामाजिक प्रक्रियाओं के लिये अति महत्वपूर्ण है। परिवार के साथ-साथ आर्थिक विकास एवं सामाजिक परिवर्तन में महिलाओं का योगदान एवं भूमिका मुख्य है। अन्य योजनाओं की भाति रेशम उद्योग में भी महिलाओं का योगदान बहुत अधिक है। परंतु इस उद्योग के एवं निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु अभी तक बहुत कम कार्य किया गया है।

निष्कर्ष :-

1. रेशम उत्पादन के विभिन्न क्रियाकलापो को निजी क्षेत्र में प्रोत्साहित करते हुये ग्रामीण क्षेत्रो में अधिकाधिक रोजगार सृजन।
2. रेशम धागे की माँग एवं आपूर्ति के अंतर को कम करना।
3. विभिन्न क्षेत्रो में रेशम उत्पादन की संभावनाओं के अनुरुप योजनाओं/परियोजनाओं की संरचना कर उनका क्रियान्वयन कराया जाना।
4. रेशम उद्योग के विकास की सुदृढ़ व्यवस्था सुनिश्चित कराया जाना।

वर्तमान भारतीय अर्थव्यवस्था के दो पहलू हैं :- शहरी एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था। शहरी अर्थव्यवस्था का मूल आधार जहाँ उद्योग, व्यापार, व्यवसाय एवं सेवा क्षेत्र हैं वही ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मूल आधार कृषि है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास कृषि क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान हो रहा है। एवं भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी रहा है। कृषि आज भी ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी है। और कृषि में ग्रामीण महिलाओ का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में किसान की घनिष्ठ सहयोगी घर की महिलाएँ होती है। ग्रामीण महिलाये पुरुषों के साथ कंधे से कंधे मिलाकर खेती बाड़ी के कामों में सहयोग करती है।महिलाएँ रोज 8 से 9 घण्टे काम करती है। भारत की कृषि अर्थव्यवस्था या ग्रामीण अर्थव्यवस्था में प्रमुख कार्यबल के रुप में महिलाएँ रही है।कृषि क्षेत्र में कुल श्रम की 70-80 प्रतिशत हिस्सेदारी महिलाओं की होती है।कृषि कार्यो के साथ मछली पालन, कृषि वानिकी, पशुपालन, कुटीर एवं लघुउद्योगो में अपनी सहभागिता दे रही है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् केजीआरडब्लू की ओर से 9 राज्यों में किये गये शोध से ज्ञात हुआ है कि प्रमुख फसलों के उत्पादन में महिलाओं की 75 फीसदी भागीदारी होती है। पशुपालन में 58 प्रतिशत एवं मछली पालन में 95 प्रतिशत भागीदारी निभाती है।

कृषि से संबंधित क्षेत्रों में ग्रामीण महिलाओं का योगदान तो रहा है किन्तु आर्थिक आत्म निर्भरता के लिए आज उद्यमिता आवश्यक है। विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं में उद्यमिता आवश्यक हैं, क्योंकि महिला उद्यमिता आर्थिक प्रगति का महत्वपूर्ण स्त्रोत है। ग्रामीण महिला उद्यमी अपने व अन्य लोगों के लिए नये कार्य सृजित कर सकती हैं। किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में महिला उद्यमियों की संख्या कम है। इसके पीछे सामाजिक परिस्थितियां व कई कारण जिम्मेदार रहे है। यद्यपि वर्तमान में महिला उद्यमियों के प्रति लागों के नजरिया में बदलाव आया है और अब ग्रामीण महिला उद्यमियों के लिये अवसर उपलब्ध हो रहे हैं। सरकार व विभिन्न सामाजिक संगठनों, एन.जी.ओ. के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी महिलाओं की प्रस्थिति में बदलाव की दरकार है। उद्यमशीलता की ओर प्ररित करने की आवश्यकता है। 2011 की जनगणना सर्वे के अनुसार लगभग 40.51 करोड़ महिलाऐं ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

सामाजिक उत्थान में निमाड़ के सन्तों का योगदान

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना – सन्त वाणी भारत के भूखण्ड में बहुत बड़े हिस्से में अंकुरित और पल्लवित हुई है तथा इसने बहुत बड़ी जनसंख्या की मानसिकता को पोषित किया है। निमाड़ में भी इसके स्वर गुंजे। इनके व्यक्तित्व और विचारों ने सामाजिक उन्नयन में योगदान दिया। प्रस्तुत शोध पत्र में भक्ति आंदोलनकालीन निमाड़ के सन्तों की सामाजिक उत्थान में भूमिका की विवेचना की गई है।

तत्कालीन सामाजिक स्थिति – निमाड़ में सन्त मत के उद्गम के समय इस्लामिक सत्ता का प्रभुत्व था। धर्म के कतिपय ठेकेदारों एवं शास्त्रों का मनमाना निर्वचन करने वाले लोगों ने हिन्दू समाज को ना-ना प्रकार के बन्धनों में आबद्ध कर कूपमण्डूक बना दिया था। धर्म पथ न केवल जटिल हो गया था, अपितु अधर्मस्वरूप हो गया था। समाज में कई प्रकार की अप्रासंगिक रूढ़ियां, प्रथाएं एवं परम्पराएं व्याप्त थीं। जाति प्रथा, अस्पृष्यता जैसे रोग समाज को खोखला कर रहे थे।

सन्तों का योगदान – सन्तों ने समाज को सहज बनाने के लिये प्रतिबद्ध होकर परिश्रम किया। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों, अन्धविश्वासों, धार्मिक विकृतियों की ओर जन सामान्य का ध्यान आकृष्ट किया तथा इन्हें नकारने का आवाहन किया। सिंगाजी ने तो स्पष्टत: कहा कि देव पूजा, तीर्थयात्रा एवं गंगा स्नान आदि घोर आडम्बर हैं। नदी का जल केवल तन का मेल धो सकता है मन को पवित्र करने के लिये भक्ति ही श्रेष्ठ राह है। तीर्थ यात्राएँ समय और साधनों की बर्बादी के अलावा कुछ नहीं है। सिंगाजी का निमाड़ के लागों पर व्यापक प्रभाव रहा है। उनके द्वारा पूजा-पाठ, कर्मकाण्ड, मूर्तिपूजा, बहुदेववाद, जाति-वर्ण रोजा-नमाज आदि बाहरी आडम्बरों का घोर विरोध किये जाने तथा साधना के भीतरी पक्ष को अपनाने पर जोर दिये जाने का जनता पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। जनमानस दिखावे की धार्मिक क्रियाओं से विरत् होकर अन्त:करण की शुद्धता के साथ भक्ति भाव में संलग्न हो गया। उन्होंने कहा कि झूठ-मूट का जाप करने से नहीं अपित निरंजन ब्रह्म को पहचानने से सद्गति की प्राप्ति होती है। बड़वा-भोपा का प्रचलन तत्कालीन गवली समाज में बहुत अधिक था। ये खौफ उत्पन्न करके भोली-भाली निमाड़ी जनता का शोषण करते थे। उन्होंने इसके विरुद्ध साहसी स्वर मुखरित किये। बड़वों की गतिविधियों को ढोंग तथा भूतों को कोरी कल्पना घोषित कर उस समय के लिहाज से सिंगाजी ने सामाजिक क्रांति का उद्घोष माना जा सकता है।

जाति प्रथा भारतीय समाज में अभिशाप बनकर कहर ढा रही थी। जातिगत ऊँचनीच की भावना शोषण और दमन का आधार बनी हुई थी। समाज में असन्तोष और वैमनस्य व्याप्त था। कथित निम्न वर्ग के लोग हिन्दू समाज में स्वयं को सहज नहीं पा रहे थे। अत: वे थोड़े से दबाव या प्रलोभन के चलते धर्मांतरण करने के लिये तत्पर हो जाते थे। निमाड़ के सन्तों ने जाति-पाँति, अस्पृश्यता, आदि का घोर विरोध किया। सिंगाजी ने लोगों को समझाया कि ऊँचे कुल या जाति में जन्म लेने मात्र से कोई ऊँचा नहीं हो जाता, बल्कि कर्म के आधार पर मनुष्य को ऊँचा-नीचा माना जाना चाहिये। सन्त अफजल ने जातिगत श्रेष्ठता या निम्नता को बिल्कुल महत्व नहीं दिया तथा इसे मनुष्य की पिछड़ी हुई बुद्धि का परिणाम बताया। उन्होंने जातिवाद की संकीर्ण धारणा में विश्वास रखने वाले लोगों को बुरी तरह से फटकार लगाई और उन्हें दृष्टिकोण को व्यापक बनाने के लिये शिक्षा भी दी। उन्होंने समझाया कि शरीर चाहे हिन्दू का हो या मुसलमान का, उनका चेतन तत्व, रक्त, माँस और चमड़ा एक ही है। सन्त पुरुषोत्तम नागर ने सिद्ध किया कि वर्ण व्यवस्था सामाजिक संगठन की पूर्ति के लिये बनाई गई थी। चारों वर्णो ने समाज को संचालित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यह कर्मगत् व्यवस्था थी तथा इसका ऊँच-नीच से कोई सम्बंध नहीं था। सन्त मौनी बाबा ने भी जाति-पाँति, छुआ-छूत, छोटा-बड़ा जैसी धारणाओं को शास्त्र प्रणीत नहीं माना है। सन्तों के उपदेशों के फलस्वरूप निमाड़ी समाज में जातिवाद घिनौने रूप में अपने अस्तित्व को कायम नहीं रख सका। इसके बंधन यहाँ बहुत ही शिथिल रहे।

समाज में समरसता की स्थापना करना सन्तों का परम लक्ष्य था। इसे अर्जित करने के लिये उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता की भावना का प्रसार किया। निमाड़ के कमोबेश प्रत्येक सन्त ने इस दिशा में सकारात्मक प्रयास किये हैं। कुछ सन्तों का प्रभाव तो इतना अधिक था कि राजसत्त से सम्बद्ध मुस्लिम भी उनसे आशीष प्राप्त करने के लिये उनके द्वार पर पहुंचते थे। उदाहरण के तौर पर सिंगाजी का उल्लेख किया जा सकता है। फारूखी वंष के सुल्तान भी उनके प्रति श्रद्धा रखते थे।

सन्त अफजल ने भी हिन्दू-मुस्लिम सम्प्रदायों को निकट लाने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। दोनों ही वर्ग के लोग उनके अनुयायी थे। यहां तक कि उनकी परम्परा को आगे बढाने वाले अधिकांष षिष्य जैसे- सन्त बोंदरू, सन्त खुश्याल दास, सन्त दशरथ आदि हिन्दू समाज के सदस्य थे। सन्तों के प्रयासों का परिणाम निमाड़ में हिन्दू-मुस्लिम एकता के रूप में आज भी विद्यमान है। स्वतन्त्रोपरान्त देश के अनेक भागों में हिन्दू-मुस्लिम विद्वैष फैला और मार-काट मची, लेकिन निमाड़ इससे अप्रभावित रहा। यहाँ दोनों वर्गो में अतुलनीय भ्रांतृत्व भाव है।

स्त्रियों के संबंध में भारतीय समाज में दो अतिवादी व्यवस्थाएँ अस्तित्व में रहीं। एक ओर उन्हें पूज्या बताया गया है तथा यहाँ तक घोषित कर दिया कि जिस स्थान पर नारी की पूजा होती है, वहाँ देवताओं का वास होता है। दूसरी ओर उन पर अनेक बन्धन अधिरोपित कर उनका जीवन नारकीय

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

बना दिया गया। अधिकार विहीन स्त्री पूर्णतः पुरुषाश्रित होकर अपना अस्तित्व खो बैठी। उसे केवल भोग्या माना गया। निमाड़ के सन्तों ने स्त्रियों को दी जाने वाली यातनाओं और उनकी उपेक्षा की निन्दा की। उन्होंने स्त्री-पुरुष समता का विचार समाज के समक्ष प्रस्तुत किया। सन्त लालदास स्त्री अस्मिता के बड़े संरक्षक हुये। उन्होंने स्त्रियों के सम्मान एवं अधिकारों का दृढ़ता से समर्थन किया। सन्त अफजल ने चरित्रवान स्त्रियों की प्रशंसा करते हुये उन्हें सृष्टि के संचालक ब्रह्मा, विष्णु और महेश की जन्मदात्री बताते हुये उनकी महानता के प्रति विश्वास व्यक्त किया। सन्तों ने स्त्री शिक्षा की वकालात की। सन्तों ने अवलोकन किया कि समाज के कुछ लम्पट लोग पराई स्त्री को कुदृष्टि से देखते हैं तथा उन्हें अपनी वासना का षिकार बनाते हैं। यह प्रवृत्ति न केवल संबंधित स्त्रियों और पुरुषों के लिये अपितु समूचे समाज के लिये पतन का सोपान बनती है। इसलिये निमाड़ के सन्तों ने परस्त्रीसंगति से दूर रहने की शिक्षा दी। सन्त अफजल ने तो परस्त्री की तुलना विषैले साँप तक से की।

सन्तों ने स्त्रियों से भी अपेक्षा की कि वे उदात्त चरित्र का परिचय दें। बहुधा सन्देह के चलते ही स्त्रियों को चहारदीवारी में सीमित कर दिया जाता है। उन्होंने गुणी स्त्रियों की बहुत प्रशंसा की है तथा स्त्री को लोकलाज, मर्यादा आदि का प्रतीक माना है। सन्तों ने नारी के काम्य स्वरूप को श्रेयस न मानकर, उसके सात्विक, पातिव्रत्य से युक्त पत्नी, माता, बहन आदि के रूपों को ही श्रेष्ठ माना है। नारी समाज की रीढ़ की हड्डी होती है। उसकी नैतिक उच्चता समाज की दृढ़ता का आधार है, अतः स्त्रियों को भी सन्मार्ग पर चलना चाहिये। यह सन्तों के कार्यों का ही परिणाम है कि निमाड़ की स्त्रियाँ पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर परिवार को चलाने के लिये सक्रिय हैं। निमाड़ मुख्यतः ग्रामीण समुदायों का क्षेत्र है। यहाँ के ग्रामों में स्त्री-स्वातंत्र्य देखते ही बनता है। भक्ति सन्तों के प्रताप से आज निमाड़ में श्रम, शिक्षा, प्रषासन, राजनीति सहित प्रत्येक क्षेत्र में महिलाएँ अपनी सशक्त उपस्थिति से नारी विमर्श को धार प्रदान कर रही हैं।

सन्त ऐसे नागरिकों से समाज का निर्माण करना चाहते थे, जो निर्व्यसनी हो और जिनका नैतिक स्तर उच्च हो। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये उन्होंने मद्य निषेध, चोरी, बेईमानी, व्यभिचार, कामचोरी जैसी दुष्वृत्तियों से बचने के लिये उपदेश दिये तथा अपने शुद्ध आचरण से व्यक्तिगत उदाहरण प्रस्तुत किया। सन्त दलूदास तत्कालीन सामाजिक प्रवृत्तियों को कलियुग की विशिष्टताएँ मानते थे, जिसमें गुरुजनों एवं वरिष्ठ परिजनों की नेक सलाहों का तिरस्कार किया जाता था और क्षणिक लाभ एवं शारीरिक सुख के लिये व्यक्ति किसी भी स्तर पर पतन के लिये तैयार हो जाता था। सन्त कालूदास की मान्यता थी कि समाज में अच्छी विचारधारा वाले लोगों की कमी है और संकीर्ण दृष्टिकोण वाले लोगों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है।

सन्त हरिदास ने देशवासियों द्वारा पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण से चिन्तित थे। आदिवासी सन्त डेमनिया भाई विगत तीन दशकों से शराब सेवन, मांसभक्षण, जुआ-सट्टा, गाली-गलौज जैसी बुरी आदतों के विरुद्ध मुहिम चलाये हुये हैं। करीब एक लाख आदिवासी उनके प्रभाव से व्यसन मुक्त हो चूके हैं। सन्तों की पवित्र वाणी जीवन के शाष्वत सन्देशों को लेकर सहस्त्रमुखी हो बराबर बहती रही। यह अपने अविरत् प्रवाह से भारतीय जनमानस को सरस एवं प्रफुल्लित बनाती रही। इस वाणी के प्रभाव के कारण जनता भौतिक समृद्धि के अभाव में भी पूर्ण योग के साथ अपने आध्यात्मिक जीवन का निर्वाह करती रही।

उपसंहार - इस प्रकार सन्तों ने समाज को सहज बनाने के लिये प्रतिबद्ध होकर परिश्रम किया। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों, अन्धविश्वासों, धार्मिक विकृतियों की ओर जन सामान्य का ध्यान आकृष्ट किया तथा इन्हें नकारने का आ5ान किया। उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता, स्त्री-पुरुष समानता, मद्य निषेध आदि पर बल दिया तथा जाति-पाँति, अस्पृश्यता, रूढ़िवादिता आदि का विरोध करते हुये इनके उन्मूलन की पहल की।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंगाजी की परचरी, लेखक- सन्त खेमदास, प्रकाशक- व्यंकटेश्वर प्रेस, बम्बई (मुम्बई), संस्करण- विक्रम संवत, 1751,
2. निमाड़ के सन्त कवि सिंगाजी, लेखक- रमेशचन्द्र गंगराड़े, प्रकाशक- हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ, संस्करण- 1967,
3. निमाडी साहित्य के कलमकार-कलाकार,, लेखक- बाबूलाल सेन, प्रकाशक- माहिष्मती प्रकाशक, महेश्वर, संस्करण- 1995,
4. सन्त कालूजी, लेखक- विट्ठल शर्मा, प्रकाशक- सरदार सोहनसिंह, इन्दौर, संस्करण- 1987, पृष्ठ- 45.
5. निमाडी और उसका साहित्य, लेखक- डॉ. कृष्णलाल हंस, प्रकाशक- हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, संस्करण- 1956.,
6. निमाडी साहित्य के कलमकार-कलाकार, लेखक- बाबूलाल सेन, प्रकाशक- माहिष्मती प्रकाशक, महेश्वर, संस्करण- 1995, पृष्ठ- 44.

****

राजस्थानी नीतिकाव्य का अलंकृति पक्ष – एक विवेचन

सुधा शर्मा *

प्रस्तावना – सौन्दर्य काव्य का अनिवार्य गुण है। कलात्मक सौन्दर्य के अन्तर्गत शिल्पगत सौन्दर्य का अनुशीलन किया जाता है। काव्य में अलंकारों का महत्त्व तथा वर्चस्व प्राचीन काल से ही सुमान्य रहा है। सभी अलंकारवादी आचार्यो ने अलंकारों को काव्यकृति के चमत्कार एवं शोभावर्द्धन का मूल धर्म स्वीकार किया है तथा उनकी काव्यगत महत्ताा और अनिवार्यता का समर्थन किया है।

राजस्थानी नीतिकाव्य उच्च नैतिक मूल्यों का प्रतिष्ठापन एवं उदात्ता परम्पराओं का गौरव-गान है। इसका मूल प्रयोजन नैतिकता के प्रतिष्ठापन द्वारा समाज को सन्मार्ग की ओर अग्रसर करना तथा लोक कल्याण का विधान करना है। इस कारण यह नीतिकाव्य मूल रूप से जीवन मूल्यों एवं जीवनादर्शो का काव्य है तथा इसमें मूल्यधर्मिता प्राणधारा के समान सर्वत्र परिव्याप्त है।

इस नीतिकाव्य के शैल्पिक प्रतिमानों का सौन्दर्य प्रशंसनीय है। भावपक्ष की समृद्धि हेतु तथा अभिव्यक्ति को सशक्त एवं सौन्दर्ययुक्त बनाने के लिए इस काव्य के प्रणेताओं ने अपनी रचनाओं में अलंकार योजना को यथोचित स्थान दिया है। अपनी सुघड़ एवं लघु रचनाओं में नीति कवियों ने बिन्दु में सिन्धु को समेटने का प्रयास किया है। अपनी सहज सम्प्रेषणीयता के कारण कवियों का यह वाणी वैभव जन-जिह्वा का श्रृंगार बनकर लोकजीवन के साथ एकाकार हो गया है। इन्हीं विशेषताओं से प्रेरित इस शोध लेख में राजस्थानी नीतिकाव्य के अलंकृति पक्ष का विवेचन किया गया है, जो एक नूतन प्रयास है।

अलंकार के दो प्रमुख भेद माने जाते हैं – शब्दालंकार और अर्थालंकार। राजस्थानी नीतिकाव्य में दोनों का ही सुन्दर प्रयोग दृष्टिगत होता है।

शब्दालंकार – जो अलंकार शब्द विशेष पर निर्भर रहकर काव्य सौन्दर्य में वृद्धि करते हैं, उन्हें शब्दालंकार के अन्तर्गत रखा जाता है। राजस्थानी नीतिकाव्य में वयण सगाई (वैण सगाई), चौकड़िया अनुप्रास, अनुप्रास, यमक, श्लेष आदि शब्दालंकार प्रयुक्त हुए हैं।

वयण सगाई – 'वयण सगाई' या 'वैण सगाई' शब्द 'वरणसगाई' शब्द से बना है, जिसका अर्थ है वर्ण-संबंध। वस्तुत: वयण सगाई एक प्रकार का शब्दालंकार है, जो चरण के प्रथम और अन्तिम शब्दों में मैत्री स्थापित करता है।

यह अलंकार राजस्थानी काव्य की एक अनूठी विशेषता है, कविता में इसका निर्वाह प्राय: अनिवार्य रूप से किया जाता है।

इसके मुख्यत: तीन भेद माने गये हैं – आदि मेल, मध्यमेल और अन्तमेळ।

आदिमेल – जहाँ चरण के प्रथम शब्द के आदि वर्ण को चरण के अन्तिम शब्द के आदि में पुन: लाकर संबंध स्थापित किया जाय, वहाँ आदिमेल वयण (वैण) सगाई होती है। आदिमेळ के प्राय: अनेक उदाहरण मिलते हैं। यथा –

तरु संतोष तणेह, नर छाया बैठा नहीं।
कळकळती किरणेह, बाँका भटकै लोभ बन।।[1]

मध्यमेळ – जहाँ प्रथम शब्द के आदि वर्ण की आवृत्ति चरणान्त शब्द के मध्य में हो, वहाँ मध्यमेळ वयण (वैण) सगाई होती है। यथा–

गरज कियां सूं वागरी, कदे न तजै सिकार।
रटै हरी गुण वारता, कटै कळेस विकार।।[2]

अन्तमेळ – जहाँ प्रथम शब्द के आदि वर्ण की आवृत्ति चरणान्त शब्द के अन्त में हो, वहाँ अन्तमेळ वयण (वैण) सगाई होती है। यथा –

निरख्यौ इम संसार नै, लुक छिप रांमत खेलअ
मिनख भलां री है कमी, लाख मिळै बिगड़ेल।।[3]

कतिपय ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं, जिनके दो चरणों में वैण सगाई है और दो में नहीं अथवा तीन चरणों में वैण सगाई है और एक में नहीं है। एक उदाहरण प्रस्तुत है –

तिगुणो सोनो तोल, रोज दियाँ ईं कम पड़ै।
मायड़-ममता मोल, बता सक्यो कुण, बावळा।।[4]

चौकड़िया अनुप्रास – दूहे और सोरठे के चारों चरणों में यदि एक जैसी वृत्ति के चार अनुप्रास आएँ, तो वहाँ 'चौकड़िया अनुप्रास' बनता है। यदि अच्छे भाव के साथ ऐसा अलंकरण हो तो सोने में सुगन्ध प्रतीत होती है।

दूहे में चौकड़िया अनुप्रास –

कृपण बराटक पावियां, नाटक करै निलज्ज।
सुण जाचक खाटक करै, सब दिन फाटक सज्ज।।[5]

सोरठे में चौकड़िया अनुप्रास –

जस गुण तणौ जहाज, कुळ समाज अंजस करै।
आखै दुनियां आज, रंग घणा जसराज नै।।[6]

अनुप्रास – स्वरों में वैषम्य होने पर भी वर्णो की एक ही क्रम में आवृत्तिा को अनुप्रास अलंकार कहते हैं। इसके पाँच भेद हैं – छेक, वृत्त्य, श्रुति, लाट तथा अन्त्य। अनुप्रास अलंकारों में वृत्त्यनुप्रास काव्य-सौन्दर्य में सर्वाधिक अभिवृद्धि करता है, इसमें एक या अनेक वर्णो की अनेक बार आवृत्तिा होती है। राजस्थानी नीतिकाव्य में प्राय: वृत्त्य अनुप्रास अनेक स्थलों पर तथा छेक, लाट व अन्त्य कहीं-कहीं प्रयुक्त हुए हैं। उदाहरण दृष्टव्य हैं –

जणणी जमि म गब्ब कर, पूत पराक्रम जोइ।[7] – (छेक)
वैण विलास विनोद विधि, विद्या विनय विवेक।
वेस बड़प्पन बातड़ी, धन बिन भलो न एक।।[8] – (वृत्त्य)

*शोधार्थी (हिन्दी) ज.रा.ना. राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड) विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

धन संच्या कांई हुवै, जद है पूत कपूत।
धन संच्या कांई हुवै, जद है पूत सपूत।।[9] – (लाट)
ज्यांरा जेहा माजना, त्यांरा तेहा वइण।
ज्यांरा जेहा आचरण, त्यांरा तेहा सइण।।[10] – (अन्त्य)

यमक – जब एक ही पद में किसी शब्द की अनेक बार भिन्न अर्थो में आवृत्ति हो तब वह शोभाकारक विशेषता यमक अलंकार कहलाती है। राजस्थानी नीतिकाव्य से एक उदाहरण द्दष्टव्य है –

भँवर पड़ंता पाण, भँवर फँसै जा भँवर में।
घर–ग्रिस्थी री घाण, बुरो भँवरजी, बावळा।।[11]

श्लेष – जहाँ एक शब्द के एकाधिक अर्थो की प्रतीति अमिधा के द्वारा होती है, वहाँ श्लेष अलंकार होता है। इसके दो भेद है शब्द श्लेष और अर्थ श्लेष। शब्द श्लेष में श्लेष किसी शब्द विशेष पर निर्भर करता है। यदि उस शब्द को बदलकर उसका पर्यायवाची शब्द रख दें तो श्लेष नष्ट हो जाता है। उदाहरण द्दष्टव्य है –

पंडत ओर मसालची, दोऊँ उळटी रीत।
ओर दिखावै चाँनणो, आप अँधेरे ब़ीच।।[12]

अर्थालंकार – जहाँ अलंकार शब्द विशेष पर निर्भर न रहकर अर्थ विशेष के कारण चमत्कार उत्पन्न करता है, वहाँ अर्थालंकार होता है। अर्थालंकार वाले पद में यदि किसी शब्द को बदलकर उसके स्थान पर उसका पर्यायवाची शब्द रख दिया जाये तो भी काव्य सौन्दर्य नष्ट नहीं होता।

यहाँ राजस्थानी नीतिकाव्य में प्रयुक्त 'अर्थालंकारों' के विभिन्न रूपों का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है –

उपमा – जहाँ परस्पर भिन्न उपमेय और उपमान की समता का वर्णन हो, वहाँ उपमा अलंकार होता है। उपमा के दो भेद हैं – पूर्णोपमा और लुप्तोपमा। जहाँ उपमा के चारों अंग (उपमेय, उपमान, साधारण धर्म तथा वाचक शब्द) विद्यमान हों वहाँ पूर्णोपमा होती है। जहाँ उपमा के चारों अंगों में से कोई लुप्त हो, वहाँ लुप्तोपमा होती है।

वारवधू ही हरण वित, नेह जणावै नैंण।
यूं सिर लेवा ऊचरै, वैरी मीठा वैंण।।[13]

यहाँ वैरी उपमेय, वारवधू उपमान, स्नेहप्रदर्शन साधारण धर्म और यूं वाचक शब्द है।

उपर्युक्त उदाहरण में उपमा के चारों अंग विद्यमान हैं, अत: पूर्णोपमा अलंकार है।

सज्जण थोड़ा हंस ज्यूँ, विरळा कोइ दीसंत।
दुरजण काळा नाग ज्यूँ, महियळ घणा भमंत।।[14]

उपर्युक्त उदाहरण में वाचक धर्म लुप्त है, अत: लुप्तोपमा अलंकार है।

रूपक – जहाँ अत्यन्त साद्दश्य प्रकट करने के लिए उपमेय में उपमान का अभेद आरोप किया जाता है, वहाँ रूपक अलंकार होता है। राजस्थानी नीतिकाव्य में विशेष रूप से संत कवियों के काव्य में रूपक अलंकार के प्रयोग की प्रवृत्ति विशेष रूप से द्दष्टिगत होती है। कवि बाँकीदास ने शरीर रूपी तालाब को दु:ख रूपी जल से भरा बताकर अभेद आरोप किया है –

तन दुख नीर तड़ाग, रोज विहंगम रूखड़ो।
विसन सलीमुख बाग, जरा बरक ऊतर जबल।।[15]

इस प्रकार रूपक के अनेक उदाहरण राजस्थानी नीतिकाव्य में द्दष्टिगत होते हैं।

उत्प्रेक्षा – जहाँ प्रस्तुत वस्तु (उपमेय) में अप्रस्तुत वस्तु (उपमान) की सम्भावना का वर्णन हो, वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। राजस्थानी नीतिकाव्य में उत्प्रेक्षा अलंकार को कई कवियों ने अनेक स्थलों पर काव्य–सौन्दर्य का साधन बनाया है। एक उदाहरण द्दष्टव्य है –

ब्याई फटी न पांव, के जाणै पर पीड़नै।
ज्यूं बेश्या को जाम, श्राद्ध न समझै शेखरा।।[16]

यहाँ वेश्या पुत्र द्वारा श्राद्ध कर्म को नहीं जानने और जिसके पैर में बिवाई नहीं फटी, उसके द्वारा दूसरे की पीड़ा को नहीं समझने की सम्भावना व्यक्त की गई है।

अर्थान्तरन्यास – जहाँ सामान्य कथन से विशेष कथन का अथवा विशेष कथन से सामान्य कथन का समर्थन किया जाए, वहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार होता है। राजस्थानी नीतिकाव्य में उक्त अलंकार का प्रयोग प्राय: हुआ है। उदाहरण द्दष्टव्य है –

मोताहल़ मंगताह, पेरायां मेल़ न पडै।
गजरी झूल गधाह, भूंडी लागे भेरिया।।[17]

कुपात्र को आभूषण धारण कराने पर वे शोभा नहीं देते, इस विशेष कथन का समर्थन, हाथी की झूल गधे को पहनाने से अशोभनीय लगती है, इस सामान्य उक्ति से किया गया है।

उदाहरण – उदाहरण अलंकार में कोई सामान्य बात या वाक्य कहकर 'ज्यों' या 'जैसे' शब्दों के साथ उसका कोई विशेष उदाहरण देकर समता या एकता दिखाई जाती है। राजस्थानी नीतिकाव्य का यह बहुप्रयुक्त अलंकार है –

मिंत ज औगण मिंत का, अनत नहिं भाखंत।
कूप छांह ज्यों आपणी, हीयै में राखंत।।[18]

यहाँ सच्चे मित्र के स्वभाव को कुँए के उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया गया है।

द्दष्टान्त – इस अलंकार में सामान्य बात कहकर द्दष्टान्त देते हैं। परस्पर समान धर्म वाले वर्ण्य विषयों का बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव को ही द्दष्टान्त अलंकार कहते हैं। राजस्थानी नीतिकाव्य में द्दष्टान्त अलंकार का बहुलता से प्रयोग हुआ है। उदाहरणार्थ –

जुगड़ै रो अंधियार, ग्यान दीप सूं ई मिटै।
गंगा जी री धार, मैल मिटावै भायला।।[19]

यहाँ ज्ञानदीप से मन के अन्धकार का निवारण और गंगाजी द्वारा मैल (पाप) मिटाने में बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव है।

प्रतिवस्तूपमा – प्रतिवस्तूपमा का अर्थ है, वस्तु या प्रत्येक वाक्यार्थ के प्रति उपमा। इसमें उपमेय और उपमान के पृथक–पृथक् दो वाक्यों में एक ही समान धर्म, शब्द भेद द्वारा कहते हैं। राजस्थानी नीतिकाव्य का यह सुपरिचित अलंकार है –

निंदो सकल निराट, कलंक साध चढ़ै न को।
कंचन लागै काट, न सुण्यो कानै, नाथिया।।[20]

साधु पर निंदा का प्रभाव नहीं होना तथा कंचन पर काठ नहीं चढ़ने का समान धर्म बताया गया है।

विशेषोक्ति – जहाँ कारण रहते हुए भी कार्य की उत्पत्ति न हो, वहाँ विशेषोक्ति अलंकार होता है। आलोच्य काव्य में इसका प्रयोग यत्र–तत्र द्दष्टिगत होता है। उदाहरणार्थ –

दाख भखे मुख पकत है, होत कागकूँ रोग।
भागहीणकूँ ना मिळै, भली वुसतको भोग।।[21]

भाग्यहीन व्यक्ति को उत्ताम वस्तु प्राप्त नहीं होती – कौए के उदाहरण द्वारा, कारण के होते हुए भी कार्य का नहीं होना बताया गया है।

काव्यलिंग – काव्यलिंग अलंकार में किसी बात को कहकर उसका ज्ञापक

कारण कहा जाता है। आलोच्य काव्य में इसका प्रयोग कहीं-कहीं ही मिलता है। एक उदाहरण दृष्टव्य है -

बेटी बेचे बाप, रूपया ले राजी हुवै।
परतक भोगे पाप, करम कियोड़ा केसवा।।[22]

बेटी का सौदा करने वाला पिता, पाप का भागी होता है। बात कहकर उसका कारण स्पष्ट किया गया है।

अप्रस्तुतप्रशंसा - जहाँ अप्रस्तुत के वर्णन द्वारा प्रस्तुत की प्रतीति हो, वहाँ अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार होता है। यहाँ 'प्रशंसा' का अर्थ यवर्णनमात्र ही लेना चाहिए। आलोच्य काव्य में इस अलंकार का यत्र-तत्र प्रयोग दृष्टिगत होता है। उदाहरणार्थ -

हिरण रहै थिर होय, बीणा सुर सूं बांकला।
जिण कारण सूं जोय, पारथियां पांनै पड़ै।।[23]

उक्त दोहे में वीणा के स्वरों (अप्रस्तुत) के वर्णन द्वारा, हिरण (प्रस्तुत) का शिकारियों के आधीन होने की प्रतीति होने के कारण यहाँ अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार हुआ।

विकल्प - जहाँ इस प्रकार का वर्णन हो कि यह होगा या वह, वहाँ विकल्प अलंकार होता है। आलोच्य काव्य से एक उदाहरण दृष्टव्य है -

यो न होत तो होत यो, यो न कहै मतिमान।
जो न होत तो होत क्यों, हो न होत जिय जान।।[24]

विनोक्ति - जहाँ एक वस्तु के बिना दूसरी वस्तु के शोभित अथवा अशोभित होने का वर्णन किया जाय, वहाँ विनोक्ति अलंकार होता है। आलोच्य काव्य से कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं -

किसी के बिना शोभित होना -

हुवै भला ही नेक, बैरी भलो न धूळ रो।
चायै पीसो अेक, देणो भलो न दूदिया।।[25]

किसी के बिना अशोभित होना -

गुण व़िन ठाकर ठीकरो, गुण व़िन मीत गँवार।
गुण व़िन चंदण लाकड़ी, गुण व़िन नार कु-नार।।[26]

अन्योक्ति - अन्योक्ति का शाब्दिक अर्थ है अन्य के प्रति कही गई उक्ति। इस अलंकार में किसी के लिए कही उक्ति, घटित किसी अन्य पर होती है। राजस्थानी नीति काव्य में राजिया, नाथिया, बाँकीदास आदि कवियों ने इस अलंकार का बहुलता से प्रयोग किया है। अन्य कवियों ने भी इस अलंकार का सुन्दर प्रयोग किया है। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं -

पय मीठा कर पाक, जो इमरत सींचीजिये।
उर कड़वाई आक, रंच न मूकै राजिया।।[27]

यहाँ 'आक' के पेड़ के माध्यम से कुटिल प्रकृति के मनुष्य द्वारा अपने स्वभाव में परिवर्तन नहीं करने की बात कही गई है।

हाथळ बळ निरभै हियौ, सरभर न को समत्थ।
सीह अकेला संचरै, सीहां केहा सत्थ।।[28]

प्रस्तुत दोहे में सिंह के गुणों के वर्णन द्वारा शूरवीर के गुणों की प्रशंसा की गई है।

लोकोक्ति - किसी भी प्रसंग में किसी लोकोक्ति के प्रयोग से लोकोक्ति अलंकार होता है। आलोच्य काव्य में इसका प्रयोग प्रायः हुआ है। उदाहरण दृष्टव्य है -

बीती ताहि बिसार, आगै री सुध राख तू।
घबड़ा कर मझदार, रुळ जाज्यो मत रमणियां।।[29]

यहाँ 'बीति ताहि बिसार दे आगे की सुध लेय' लोकोक्ति का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

उपर्युक्त वर्णित प्रमुख अलंकारों के अतिरिक्त आलोच्य काव्य में अनेक अलंकारों का यत्र-तत्र प्रयोग मिलता है। कतिपय उदाहरण प्रस्तुत हैं -

उदात्त - **दाता आगै मंडियौ, दाता हंदी हत्थ।**
दातारां सिर ऊपरै, सो नित रहौ समत्थ।।[30]

विभावना - **गुमना राम रिझावरे, बिन कर बेन बजाय।**
बिन मुख ते मन राम रट, सुरत राम विच लाय।।[31]

तद्गुण - **च्यारूं दिस कीरत रही, पीर तणी छित छाय।**
जग मैं नीर तळाय सह, वणिया खीर तळाय।।[32]

विचित्र - **अळगौ ही उरमै बसै, नींद न आवण देह।**
ससिवदनी री साहिबौ, कै दोयण असनेह।।[33]

व्याघात - **अै बक मूनी ऊजळा, मीठा बोला मोर।**
पूछौ सफरी पनग नूं, क्रत ऊथड़ै कठोर।।[34]

क्रम - **वैरी रा मीठा वचन, फळ मीठा किंपाक।**
वे खाधां वे मानियां, हुवा कृतांत खुराक।।[35]

उपर्युक्त वर्णित उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि राजस्थानी नीति कवियों ने विविध अलंकारों के द्वारा नीति की बात को काव्य सौन्दर्य युक्त एवं सहज ग्राह्य बनाया है। रचनाकार सौन्दर्यांकन की दृष्टि से सूक्ष्म दृष्टा एवं कुशल सृजनकर्त्ता कहे जा सकते हैं।

निष्कर्ष - राजस्थानी नीतिकाव्य के अलंकृति पक्ष के विवेचन से यह तथ्य उजागर होता है कि राजस्थानी कवियों ने अपनी नीतिपरक रचनाओं के सृजन में अलंकारों के सुन्दर एवं समुचित प्रयोग द्वारा काव्य सौन्दर्य की सृष्टि का भव्य प्रयास किया है। उनकी अलंकार सज्जा सहज रही है, सायस नहीं। एक ओर इन रचनाओं में परम्परित शब्दालंकार 'वयण सगाई' के निर्वाह से कर्णप्रिय ध्वन्यात्मक सौन्दर्य की सृष्टि हुई है, वहीं आनुप्रासिकता के कारण नादात्मकता एवं लयात्मकता भी प्रशंसनीय बन पड़ी है।

शब्दालंकारों में वयण सगाई (वैण सगाई), चौकड़िया अनुप्रास, वृत्तय अनुप्रास, यमक एवं श्लेष काव्य सौन्दर्य की वृद्धि में सहायक हुए हैं। अर्थालंकारों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास, उदाहरण, दृष्टान्त, अन्योक्ति एवं लोकोक्ति अलंकारों का प्रयोग प्रमुखता से हुआ है तथा अन्य अलंकारों का भी सन्दर्भानुसार काव्य सौन्दर्यांकन में उपयोग हुआ है। रचनाओं में उपमान, प्रतीक एवं बिम्ब सभी लोकजीवन से ग्रहण किए गए हैं।

अलंकारों के सहज प्रयोग से नीतिपरक रचनाओं की अभिव्यक्ति और सम्प्रेषणीयता में वृद्धि हुई है जो इस नीतिकाव्य में उदात्त मानवीय मूल्यों एवं नैतिक आदर्शों की प्रतिस्थापना में सहायक रहीं हैं। इसी सशक्त अभिव्यंजना के कारण ये कालजयी रचनाएँ सूक्तियों के रूप में जन-जन की कण्ठहार बन गई हैं तथा व्यक्ति और समाज का जीवन पथ में नैतिक मार्गदर्शन कर रहीं हैं।

निष्कर्षत: राजस्थानी नीतिकाव्य के कुशल प्रणेताओं की अलंकार-योजना सराहनीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बारहट, कविया मुरारीदान एवं खारैड, महताबचन्द्र, 1938, संतोष बावनी, 'बाँकीदास-ग्रंथावली', तीसरा भाग, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पृ. 54/5।
2. कविया, डॉ. शक्तिदान, 2011, प्रस्तावना, 'राजिया रा सोरठा', राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 12।

3. वही, पृ. 12।
4. ताऊ शेखावाटी , 1999, 'सोरठां री सौरम (बावळा रा सोरठा)', रचना प्रकाशन, जयपुर, पृ. 22/15।
5. दूगड़, रामनारायण, बारहट, कविया मुरारीदान एवं खारैड, महताबचन्द्र, 1931, कृपण दर्पण, 'बाँकीदास-ग्रंथावली', दूसरा भाग, इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग, पृ. 32/10।
6. कविया, डॉ. शक्तिदान, 2011, प्रस्तावना, 'राजिया रा सोरठा', पूर्वोद्धृत, पृ. 11।
7. पुरोहित, मोहनलाल, वि. सं. 2017, 'राजस्थानी नीति दूहा', सादूळ राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट, बीकानेर, पृ. 95/688।
8. चारण, चन्द्रदान राणीदान, 2015, 'नीति के राजस्थानी दोहे', राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 70/81।
9. पुरोहित, मोहनलाल, वि. सं. 2017, 'राजस्थानी नीति दूहा', पूर्वोद्धृत, पृ. 171/1255।
10. वही, पृ. 91/661।
11. ताऊ शेखावाटी, 1999, 'सोरठां री सौरम (बावळा रा सोरठा)', पूर्वोद्धृत, पृ. 40/50।
12. स्वामी, नरोत्तमदास, 1961, 'राजस्थान रा दूहा', सादूळ राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट, बीकानेर, पृ. 43/53।
13. पं. रामकर्ण (जोधपुर-निवासी), वि. सं. 1981, नीति-मंजरी, 'बाँकीदास-ग्रंथावली', पहला भाग, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पृ. 65/22।
14. स्वामी, नरोत्तमदास, 1961, 'राजस्थान रा दूहा', पूर्वोद्धृत, पृ. 14/5।
15. दूगड़, रामनारायण, बारहट, कविया मुरारीदान एवं खारैड, महताबचन्द्र, 1931, मोह मर्दन, 'बाँकीदास-ग्रंथावली', दूसरा भाग, पूर्वोद्धृत, पृ. 41/9।
16. व्यास, चन्द्रशेखर, वि. सं. 2014, 'शेखर का सोरठा', (प्रकाशक) गोविन्द अग्रवाल, चूरू, पृ. 22/81।
17. शर्मा, गिरधारीलाल, 1956, 'राजस्थानी दोहावली' - भाग 1, साहित्य संस्थान, राजस्थान विश्व विद्यापीठ, उदयपुर, पृ. 173/504।
18. राजस्थानी गंगा, 1986, खंड 2, भाग 4, अक्टूबर-दिसम्बर, 1986, पृ. 48/687।
19. 'मरुधर', भानसिंह शेखावत, 1988, 'भायला रा सोरठा', भूमिका प्रकाशन, जयपुर, पृ. 12।
20. नाहटा, अगरचन्द, 1966, 'नाथिये रा सोरठा - शिक्षा-सार', मरु-भारती, वर्ष 14, अंक 2, जुलाई 1966, पृ. 27/55।
21. स्वामी, नरोत्तमदास, 1961, 'राजस्थान रा दूहा', पूर्वोद्धृत, पृ. 28/10।
22. यमयंक, डॉ. मांगीलाल व्यास, 1973, केसवा रा सोरठा, 'राजस्थानी सोरठा संग्रह', कलम घर प्रकाशन, जोधपुर, पृ. 39/19।
23. पं. रामकर्ण (जोधपुर-निवासी), वि. सं. 1981, नीति-मंजरी, 'बाँकीदास-ग्रंथावली', पहला भाग, पूर्वोद्धृत, पृ. 68/32।
24. चतुरसिंह, 2000, 'चतुर चिन्तामणि', राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 27/146।
25. जोशी, महावीर प्रसाद, 2008, 'दूदिया', शेखावाटी बोध, फरवरी 2008, पृ. 36।
26. स्वामी, नरोत्तामदास, 1961, 'राजस्थान रा दूहा', पूर्वोद्धृत, पृ. 47/84।
27. कविया, डॉ. शक्तिदान, 2011, 'राजिया रा सोरठा', पूर्वोद्धृत, पृ. 30/39।
28. पं. रामकर्ण (जोधपुर-निवासी), वि. सं. 1981, सीह-छतीसी, 'बाँकीदास-ग्रंथावली', पहला भाग, पूर्वोद्धृत, पृ. 9/2।
29. जैथलिया, जुगल किशोर, 2005, रमणियां रा सोरठा, 'कन्हैयालाल सेठिया समग्र (राजस्थानी)', राजस्थान परिषद्, कोलकता, पृ. 5/17।
30. पं. रामकर्ण (जोधपुर-निवासी), वि. सं. 1981, दातार-बावनी, 'बाँकीदास-ग्रंथावली', पहला भाग, पूर्वोद्धृत, पृ. 59/53।
31. कोठारी, डॉ. देव, 1990, भूमिका, 'गुमान ग्रंथावली', प्रथम खंड, साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर, पृ. 43।
32. पं. रामकर्ण (जोधपुर-निवासी), वि. सं. 1981, दातार-बावनी, 'बाँकीदास-ग्रंथावली', पहला भाग, पूर्वोद्धृत, पृ. 58/51।
33. पं. रामकर्ण (जोधपुर-निवासी), वि. सं. 1981, नीति-मंजरी, 'बाँकीदास-ग्रंथावली', पहला भाग, पूर्वोद्धृत, पृ. 67/29।
34. वही, पृ. 68/36।
35. वही, पृ. 66/23।

****

निमाड़ में भोंगर्या - मान्यता और वस्तुस्थिति

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना - निमाड़ क्षेत्र की बहुसंख्यक आबादी आदिवासी समाज से संबंधित है। इस क्षेत्र में आने वाले चारों जिलों बड़वानी, खण्डवा, खरगोन एवं बुरहानपुर जिलों में जनजातीय जनसंख्या का बाहुल्य है। आदिवासियों की जिंदगी के बहुरंगी आयामों में भोंगर्या का विशेष स्थान है। इसका चलन मध्यप्रदेश के झाबुआ, आलीराजपुर, बड़वानी, खरगोन, धार जिलों में अधिक सघनता के साथ है। कुछ वर्षों पूर्व तक यह भगोरिया के नाम से जाना जाता था, लेकिन वर्तमान में इसे भोंगर्या कहने का आग्रह किया जा रहा है। इसके संबंध में परंपरागत मान्यताओं और वर्तमान वस्तुस्थिति में बहुत अंतर है। प्रस्तुत शोध पत्र में इसी तथ्य का विश्लेषय किया गया है।

भोंगर्या - एक परिचय - प्रत्येक वर्ष मार्च में होली के एक सप्ताह पूर्व भगोरिया हाट लगता है। फाल्गुन की मदमाती बयारों तथा बसन्त के साथ भगोरिया का आगमन होता है। विशेष श्रृंगार करके भगोरिया हाट में पहुँचे आदिवासी युवक-युवती माँदल और ढोल की थाप तथा बाँसुरी की मधुर धुन पर नाचते एवं गाते हैं।

इस अवसर पर किये जाने वाले नृत्य की मुद्राएँ आकर्षक होती हैं। रंग-बिरंगी वेशभूषा में सजी-धजी युवतियाँ एवं हाथ में तीर-कमान तथा फालिया लिये युवकों का लय और गति के साथ नाचना भीलों के श्रृंगार एवं शौर्य का दिग्दर्शन कराता है। इन दिनों तीर कमान-फालिया आदि की अनुमति नहीं है। रंग-बिरंगी पन्नियों से सजे नये छाते इनका स्थान लेते जा रहे हैं।

'इस उत्सव को सम्पन्न करने के लिये दूर गाँव गया व्यक्ति भी समय पर लौट आता है। परिवार के पास कपड़े नहीं होने पर वह एक सप्ताह पूर्व ही कपड़े की व्यवस्था करता है या उसी हाट से खरीदकर बच्चों को पहनाता है। इस दिन दुकानों में बड़ी मात्रा में मिठाइयाँ, गुड़ की जलेबी, हार-कंकण, मीठी सेव और नमकीन की खपत होती है। इसके अतिरिक्त शराब, पान, गुलाल और किराना की दुकानें भी इस बाजार में अपने ढंग की होती हैं। चकरी झूले, हडम्बा झूला, मौत का कुआँ, गर्दन काटकर दिखाने वाला खेल आदि के द्वारा भील युवक एवं युवतियाँ अपना मनोरंजन करते हैं। इस उत्सव को सम्पन्न करने के लिये कस्बे के आसपास निवास कर रहे भील भारी मात्रा में इकट्ठे होने लगते हैं तथा दोपहर 12 एवं 1 बजे के मध्य गुट बनाकर ढोल और माँदल के साथ थिरकने लगते हैं। उनके ढोल की लोक धुन का स्वर कस्बाई लोगों के लिये विशेष आकर्षण का केन्द्र बिन्दु होता है। नये-नये और रंगीन मोहक कपड़ों में भील बालाएँ, जिनकी आँखों में चमक और उमंग होती है, युवकों से लजाती-शरमाती देखी गई हैं। आदिवासी युवक भी इस पर्व पर अपने को सजाने-संवारने में कोई चुक नहीं करता है। सुन्दर रंगीन साफा और चौकड़ी की कमीज उसके बलिष्ठ शरीर पर खूब फबती है।'[1]

भगोरिया - परंपरागत मान्यताएं - जनजातियों पर लिखी गई किताबों, भोंगर्या के अवसर पर समाचार पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित आलेखों, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में प्रस्तुत रिपोर्ट्स, सामान्य ज्ञान की किताबों के आधार पर परंपरागत मान्यत यह रही है कि भगोरिया भील जनजाति के प्रणय पर्व है। उस दिन युवक द्वारा युवती को पान देना एवं गुलाल लगाना प्रणय-प्रस्ताव तथा बदले में युवती द्वारा युवक को गुलाल लगा देना उसकी स्वीकृति माना जाता है। युवक-युवती विवाह सूत्र में बंधने के लिये जंगल में या रिश्तेदारों के यहाँ भाग जाते हैं, इसलिये इसे भगोरिया कहा जाता है। भगोरिया के दिन भगोर देवता की पूजा की जाती है।

वर्तमान वस्तुस्थिति - 2018 के भोंगर्या के पूर्व और दौरान सोशल मीडिया पर जनजातीय युवाओं ने ऐसी अनेक पोस्ट्स डालीं, जिनमें इसे 'भगोरिया', 'प्रणय पर्व', 'त्योहार' आदि न कहने का आग्रह किया गया। कुछ पोस्ट्स नाराजगी से युक्त भी थी कि बार-बार समझाने और निवेदन करने के बावजूद गैर जनजातीय समाज और कुछ समाचार माध्यम सुनी-सुनाई परंपरागत बातों को दोहरा रहे हैं। इन पोस्ट्स में कुछ पोस्ट्स कॉलेज के मेरे विद्यार्थियों की भी थीं। मैंने उन्हें बहुत गौर से पढ़ा। याद आया कि कुछ वर्ष पूर्व सेंधवा में जनजातीय समाज का एक वृहत् सम्मेलन हुआ था, वहां भी भगोरिया के संबंध में प्रचलित बातों का विरोध किया गया था। जनजातीय विद्यार्थियों और अन्य व्यक्तियों से बातचीत करके तथा इस बार के भोंगर्या में सम्मिलित होकर मैंने साक्षात्कार एवं क्षेत्र अवलोकन के आधार पर इसकी वर्तमान वस्तुस्थिति को समझने का प्रयास किया है।

वर्तमान में इसको भोंगर्या हाट माना जाता है। निमाड़-मालवा तथा कुछ अन्य क्षेत्रों में पचलित हाट का शाब्दिक अर्थ होता है- बाजार। गांवों, कस्बों, छोटे नगरों में सप्ताह के अलग-अलग दिनों में बाजार लगता है, उसे ही हाट कहते हैं। यह हाट हर सप्ताह लगता है। इस हाट में दैनिक उपयोग की वस्तुओं के विक्रेता आते हैं। वस्तुएं अपेक्षाकृत गुणवत्तायुक्त, विविधतायुक्त और सस्ती मिल जाती है। अत: हाट के दिन बाजारों में विक्रेता और क्रेता दोनों बड़ी संख्या में आते हैं।

इसी श्रृंखला में होली के पहले वाले सप्ताह में जो हाट लगते हैं, उन्हें सामान्य हाट न कहकर भोंगर्या हाट कहा गया है। सामान्य हाट और भोंगर्या हाट में मुख्य अंतर यह है कि सामान्य हाट में केवल खरीदी करने के आषय से आते हैं, जबकि भोंगर्या हाट में नये वस्त्र, आभूषण पहनकर, सजधजकर, समूह में वाद्ययंत्रों के साथ आते हैं और पूर्ण उत्साह के साथ नृत्य करते हैं। जहां तक बड़वानी नगर के भोंगर्या का प्रश्न है। यह 25 फरवरी, 2018, रविवार को सम्पन्न हुआ। ज्ञात हुआ कि आस पास के गांवों से अलग अलग दल आते हैं। कुछ दल शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

महाविद्यालय, बड़वानी के खेल मैदान में इकट्ठे हुए और नृत्य करने लगे। मैं अपने विद्यार्थियों अंतिम मौर्य, प्रीति गुलवानिया, सोनिका पाटीदार, सुनिल बामनियां, उमेश राठौड़, राहुल मालवीय, सलोनी शर्मा, भारती धार्वे, किरण वर्मा के साथ गया। बड़वानी में भोंगर्या का मुख्य आयोजन दशहरा मैदान में होता है। सभी प्रक्रियाओं का ध्यान से अवलोकन किया। यह पाया कि अब भोंगर्या हाट का आयोजन सुव्यवस्थित ढंग से होता है। दशहरा मैदान में एक बड़ा स्टेज बनाया जाता है। स्टेज के सामने अलग अलग गांव से आये दलों को नृत्य करने का निर्धारित समय दिया जाता है। मांदल की थाप, थाली की मधुर ध्वनि, कुर्राटियां आदि मिलकर बहुत ही मनोहारी परिवेश का निर्माण करती हैं। और नृत्य के तो कहने ही क्या? सधी हुई मुद्राएं। मनमोहक लयबद्धता। अद्‌भुत तालमेल। कुल मिलाकर देखने वाले अपनी सुधबुध खो देते हैं। यही हाल हमारा भी हुआ। हमें कहीं भी आदिवासी युवक-युवती एक-दूसरे को गुलाल लगाते या पान खिलाते नहीं दिखे। बस नृत्य और उल्लास का वातावरण दिखा। सायं होते होते ये दल तथा दल से अलग आये आदिवासी वर्ग के सभी आयु वय के स्त्री-पुरुष विभिन्न प्रकार की वस्तुओं से भरी थैलियां और पोटलियां ले जाते हुए प्रसन्न मुद्रा में अपने अपने क्षेत्रों मे लौटते हुए मिले।

उपसंहार - इस तरह जिसे हम वर्षो से भगोरिया कहते, सुनते, पढ़ते आये हैं, वह वस्तुत: भोंगर्या है। यह एक पर्व या उत्सव न होकर एक विशेष हाट है। इसे भोंगर्या हाट कहना ही उचित होगा। प्रेम विवाह सभी वर्गों और समाजों में होते हैं। इसे भोंगर्या से जोड़कर देखना उचित नहीं है। भोंगर्या के अवसर पर आदिवासी समाज का उत्साह देखते ही बनता है। गैर आदिवासी समाज के लोग भी उनके उत्साह और खुशियों के साक्षी तथा सहभागी बनते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भीलों की सामाजिक व्यवस्था, लेखक - डॉ. एम. एल. वर्मा, प्रकाशक - क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, संस्करण - 1992, पृष्ठ - 107 -108

बड़वानी भोंगर्या- 2018 - सहभागिता और अध्ययन

भोंगर्या हाट – चित्रात्मक झलक

****

मास मीडिया और विज्ञापन यूग

डॉ. पूनम कुमारी *

प्रस्तावना – संचार माध्यम अंग्रेजी के मीडिया शब्द से बना है जिसका अभिप्राय होता है दो बिन्दुओं को जोड़ने वाला अर्थात् संचार माध्यम की सम्प्रेषक और श्रोता को परस्पर जोड़ते है।

हेराल्ड, लॉसवेल के अनुसार, संचार माध्यम के मुख्य कार्य सूचना संग्रह एवं प्रसार, सूचना विश्लेषण, सामाजिक मूल्य एवं ज्ञान का सम्प्रेषण तथा लोगों का मनोरंजन करना है।

अर्थात् मास मीडिया, मीडिया प्रौद्योगिकियों का एक विविध संग्रह है जो बड़े पैमाने पर संचार के माध्यम से विभिन्न लोगों तक पहुंचता है तथा संचार सम्बन्ध स्थापित करने में सहायता प्रदान करता है।[1]

संदेश के प्रवाह में प्रयुक्त किए जाने वाले माध्यमों का अस्तित्व समाज में अनादिकाल से ही रहा है। यह अलग बात है कि उनका स्वरूप अलग-अलग होता था। जैसे-जैसे तकनीकी प्रौद्योगिकी ने विकास किया उसी तरह सूचना प्रौद्योगिकी भी विकसित होती गई। प्राय: मास मीडिया का अर्थ सम्मिलित रूप से समाचार-पत्र, पत्रिकाए, रेडियो, दूरदर्शन और चलचित्र आदि से लिया जाता है जो समाचार एवं विज्ञापन दोनों के प्रसारण के लिए प्रयुक्त होते है।

विज्ञापन शब्द की संरचना दो शब्दों वि+ज्ञापन के संयोग से हुई है, जिसमें वि का अर्थ विशेष तथा ज्ञापन का अर्थ सूचना या जानकारी देना अर्थात् विशेष सूचना या जानकारी देना ही विज्ञापन है। विज्ञापन उपभोक्ता का ध्यान किसी वस्तु, विचार या सेवा की ओर आकर्षित करने का कार्य करता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि सेवाओं एवं व्यापार की वस्तुओं की ओर ध्यान आकर्षण करना ही विज्ञापन है।[2]

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विज्ञापनों का जितना महत्व है उतना ही महत्व इन संदेशों के वाहक यानी मीडिया का भी है ताकि संदेश अपने सम्पूर्ण रूप में उपभोक्ता तक पहुंचे। ये वाहक एक तकनीकी उपकरण है जिनके माध्यम से संदेश प्रेषित किए जाते हैं। समाचार पत्र-पत्रिकाएं, दूरदर्शन, बाह्य माध्यम (पोस्टर, होर्डिंग, कियोस्क, बैनर आदि) इंटरनेअ, पी0 ओ0 पी0 आदि विशिष्ट मास मीडिया है जो विज्ञापनकर्ता की सम्भावित उपभोक्ता तक पहुंचने में सहायता प्रदान करता है। यही माध्यम निर्माता और उपभोक्ता के बीच मध्यस्थ का कार्य करते है। विज्ञापन माध्यम के जरिये ही संदेश उचित समय, स्थान और इच्छित व्यक्तियों तक पहुंच पाता है। वैश्वीकरण के इस युग में विज्ञापन माध्यमों का महत्व और बढ़ जाता है क्योंकि-

- बाजार एक ही जैसे उत्पादों से भरा पड़ा है।
- उत्पादों की सफलता पर कम्पनी का अस्तित्व निर्भर करता है।
- विज्ञापनों के संदेश प्रस्तुतीकरण का तरीका भी दिनों दिन निखर रहा है, क्योंकि विज्ञापन के क्षेत्र में व्यवसायिक दक्षता के कारण इस क्षेत्र में गुणवत्ता भी काफी बढ़ी है।

हर माध्यम का एक अलग उपभोक्ता वर्ग है। जैसे-इंटरनेट कम्प्यूटर साक्षरों का, रेडियो ग्रामीणजनों का, सिनेमा सिने प्रेमियों का तो पत्र-पत्रिकाएं शिक्षित वर्ग के माध्यम माने जाते हैं। इसलिए एक साथ अनेक माध्यमों का चुनाव कर उत्पाद निर्माता बहुसंख्यक मध्यवर्ग तक पहुंचने की कौशिश करता है क्योंकि बहुत सारे निरक्षर, साक्षर, शहरी ओर ग्रामीण लोग मध्यमवर्ग का हिस्सा है। अब तो विज्ञापन माध्यमों के दायरे में परम्परागत माध्यमों से लेकर जनसंचार की चौथी लहर के माध्यम भी शामिल हो चुके है।

मुद्रण के आविष्कार के बाद संचार के क्षेत्र में क्रांति आई। हालांकि इससे पूर्व हस्तलिखित पत्रों के माध्यम से सूचना सम्प्रेषण का कार्य प्रारम्भ हो चुका था, लेकिन उसकी पहुंच कुछ सीमित लोगों तक ही थी। मुद्रित माध्यम के प्रचलन के बाद संचार को मानो पर लग गया। मुद्रण तकनीकी के क्षेत्र में लगातार हो रहे विकास ने मुद्रित माध्यम को पहले ही अपेक्षा काफी अधिक प्रभावी बना दिया है।

इलैक्ट्रोनिक्स मीडिया की मदद से दूर-दराज के क्षेत्रों में त्वरित गति से सूचना देने में टी0वी0, मोबाइल, इंटरनेट आदि ने अपनी विशेष भूमिका निभाई है।

प्रत्येक माध्यम एवं उसके वाहनों की संदेश पहुंचाने एवं सम्भावित उपभोक्ताओं को प्रभावित करने की अपनी-अपनी क्षमता होती है। माध्यम मालिक अपने माध्यम की सूचना क्षमता और मनोरंजन की योग्यता के आधार पर पाठाकों को आकर्षित करता है। और इन्हीं पाठकों की उपस्थिति को विज्ञापनकर्ता को बेचता है। इसलिए विज्ञापनकर्ता के विज्ञापन संदेश को लक्षित उपभोक्ताओं तक पहुंचाने की ऐवज में माध्यम विज्ञापनकर्ता या विज्ञापन एजेंसी से धन प्राप्त करता है जो माध्यम की आय का मुख्य स्त्रोत होता है।

भारत में वर्ष 2015 में विभिन्न माध्यमों को विज्ञापन से लगभग 47500 करोड़ रू प्राप्त हुए जिनमें से 40 प्रतिशत मुद्रण माध्यमों 38 प्रतिशत टी0वी0, 5 प्रतिशत बाह्य माध्यमों, 13 प्रतिशत डिजिटल माध्यम तथाा 7 प्रतिशत रेडियो को प्राप्त हुआ है।

विज्ञापन के परम्परागत जनसंचार माध्यम के सक्षम डिजिटल पर्याय माध्यम के रूप में उभर कर सामने आ रहे है। परम्परागत विज्ञापन माध्यमों में परिवर्तन आवश्यक है क्योंकि उपभोक्ता लम्बे समय से इन्हीं माध्यमों से परिचित है। वर्ष 2015 में डिजिटल माध्मय का गत वर्ष की

* व्याख्यता (व्यवसायिक कला) फतहचन्द महिला महाविद्यालय, हिसार (हरियाणा) भारत

अपेक्षा 38.2 प्रतिशत प्रतिशत वार्षिक वृद्धि दर से 6010 करोड़ रू विज्ञापन से प्राप्त हुए हैं जो सभी माध्ममों को प्राप्त कुल विज्ञापन आय का लगभग 13 प्रतिशत है। इस माध्यम को अपनी कुल विज्ञापन आय में से 5110 करोड़ रू डेस्कटॉप विज्ञापन से तथा 900 करोड़ रू मोबाइल से प्राप्त हुए है।

वर्ष 2016 से 2020 तक यह विज्ञापन आय 33.5 प्रतिशत वृद्धि दर से बढ़ कर 25520 करोड़ रू तक पहुंचने की सभी माध्यमों की कुल विज्ञापन आय को लगभग 26 प्रतिशत होगी।

विज्ञापन सम्भावित उपभोक्ता तक पहुंचने के लिए विभिन्न उपलब्ध माध्यमों का वैकल्पिक रूप से प्रयोग करता है तथा अपने उत्पाद एवं सेवा का अधिक से अधिक प्रचार, प्रसार कर लाभान्वित होता है तथा उपभोक्ता भी अनेकों तरह की सूचनाएं तथा जानकारी ग्रहण कर अपने आप को मानसिक सन्तुष्टि प्राप्त करता है। अपने अंततः वर्तमान परिस्थितियों और बाजारवाद के दौर में मास मीडिया और विज्ञापन एक दूसरे के पूरक से बने नजर आते हैं। जहां एक तरफ उत्पादित वस्तुओं को बहुविज्ञापित कर उपभोक्ता की जेब से पैसा निकलवाने की क्रिया का सम्पादन होता है वही मास मीडिया विज्ञापन कम्पनियों से पैसा कमा कर अपना तन्त्र सुचारू रूप जारी रखने में सफलता बनाए रखता है अगर हम यह कहे कि मास मीडिया और विज्ञापन दोनों ही एक दूसरे के लिए अपनी प्रासंगिकता को तय करते है तो यह बात अतिश्योक्तिपूर्ण न होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. https//hi.wikipedia.org
2. यादव, नरेन्द्र सिंह, विज्ञापन प्रबन्ध, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, द्वितीय संस्करण–2013, पृ0 सं0–3।
3. नकवी, हेना, पत्रकारिता एवं जनसंचार, उपकार प्रकाशन, आगरा, पृ0 सं0–201
4. यादव, नरेन्द्र सिंह, विज्ञापन तकनीक एवं सिद्धान्त, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, सातवां संस्करण–2017, पृ0 स0–211

****

निमाड़ के दर्शनीय स्थल

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना – वर्तमान में पर्यटन वैश्विक अर्थव्यवस्था का आधार स्तम्भ बनता जा रहा है। प्रत्येक देश इसके विकास के लिए सतत् प्रयत्नशील है। इसमें एक बार निवेश के उपरांत दीर्घ काल तक लाभ एवं आय की प्राप्ति होती है। जहाँ यह आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, वहीं पर्यटन की सामाजिक समरसता और सांस्कृतिक प्रसार में भी अद्धितीय भूमिका है। दुनिया की सबसे पहली सभ्यता-संस्कृति के केन्द्र भारत में सर्वत्र दर्शनीय स्थलों की प्रचुरता है। आदि मानव की क्रीड़ा स्थली रहा निमाड़ ऐतिहासिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, प्राकृतिक दृष्टि से दर्शनीय स्थलों का समृद्ध केन्द्र है। लेकिन राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर यहाँ कुछ स्थल ही बना सके हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में निमाड़ के चार जिलों, बड़वानी, खरगोन, खण्डवा एवं बुरहानपुर के दर्शनीय स्थलों की विवेचना की जा रही है।

निमाड़ का परिचय – निमाड़ विंध्याचल और सतपुड़ा पर्वत श्रेणियों की तलहटी में नर्मदा के किनारे स्थित है। यह मालवा के पठार की तुलना में निचला भू-भाग है। मालवा से निमाड़ की ओर आने पर निरन्तर नीचे की ओर उतरना पड़ता है। इस तरह निम्नगामी होने से इसका नाम 'निमानी' और उससे बदलकर 'निमारी' और 'निमाड़ी' हो गया।

यह मध्यप्रदेश के दक्षिण-पश्चिम भाग में इन्दौर संभाग में स्थित है। 'आयताकार निमाड़ $21^0 5'$ उत्तरी अक्षांश से $22^0 38'$ उत्तरी अक्षांश तक तथा $74^0 2'$ पूर्वी देशान्तर से $77^0 13'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है।'[1] 1 नवम्बर, 1956 को नये मध्यप्रदेश के निर्माण के समय निमाड़ को दो भागों में विभक्त किया गया- 1. पश्चिमी निमाड़ एवं 2. पूर्वी निमाड़।'[2] खरगोन को पश्चिमी निमाड़ का एवं खण्डवा को पूर्वी निमाड़ का जिला मुख्यालय बनाया गया। '25 मई, 1998 को सिंहदेव आयोग की अनुशंसा को क्रियान्वित करते हुये मध्यप्रदेश में 16 नये जिले बनाये गये, जिनमें से एक बड़वानी निमाड़ क्षेत्र में है।'[3] 15 अगस्त, 2003 को पूर्वी निमाड़ से पृथक करते हुये बुरहानपुर को नया जिला बनाया गया। वर्तमान में इस क्षेत्र में चार जिले सम्मिलित हैं।

निमाड़ का दर्शनीय स्थलों का वर्गीकरण – निमाड़ में स्थित दर्शनीय स्थल बहुआयामी हैं। जहां गौरवशाली इतिहास को अभिव्यक्त करते महान दुर्ग एवं अन्य स्मारक हैं, वहीं ईश्वर के प्रति श्रद्धा के केन्द्र धर्म स्थलों की प्रचुरता है। प्रकृति भी निमाड़ के किन्हीं भागों में मेहरबान होकर मनोहारी झरनों, टापू, नदी तट, पहाड़ी आदि के माध्यम से सैलानियों को सम्मोहित करती है। गणगौर, भोंगर्या जैसे सामाजिक-सांस्कृतिक उपादान भी पर्यटन को बढ़ावा देने की दृष्टि से कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। प्राय: प्रत्येक गांव, कस्बे, शहर में एकाधिक ऐसे स्थान हैं जिनकी टूरिज्म वेल्यू है और थोड़े से प्रयासों से वह सैलानियों को अपनी और आकृष्ट करने का बल उत्पन्न कर सकते हैं।

बड़वानी जिले के दर्शनीय स्थल – जिला पुनर्गठन आयोग की अनुशंसा के अनुसार बड़वानी जिले का गठन 25 मई, 1998 को किया गया। खरगोन जिले के भूभाग को विभाजित करके उसके पश्चिमी क्षेत्र से बड़वानी जिला बनाया गया है। 'बड़वानी जिले का क्षेत्रफल 5,433 वर्ग किलोमीटर है। 2011 की जनगणना के अनुसार जिले की जनसंख्या 13,85,881 थी।'[1] बड़वानी जिले के गठन के समय इसमें छह तहसीलें सम्मिलित थीं- बड़वानी, ठीकरी, राजपुर, पानसेमल, सेन्धवा एवं निवाली। वर्ष 2008 में अंजड़ एवं पाटी तहसीलों का निर्माण किया गया, जिससे तहसीलों की संख्या बढ़कर वर्तमान में आठ हो गई। जिले में कुल सात विकास खण्ड शामिल हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं- बड़वानी, पाटी, ठीकरी, राजपुर, पानसेमल, सेन्धवा एवं निवाली।

बड़वानी नगर में अनेक दर्शनीय स्थल हैं, जैसे- भीमा नायक प्रेरणा केन्द्र, रेवा सर्कल, ओलम्पिक तिराहा, नया कलेक्टोरेट, सेगांव टेकड़ी हनुमान मंदिर, गौशाला स्थित राधा-कृष्ण मंदिर, साईं मंदिर, शनि मंदिर, वैष्णव देवी मंदिर, हनुमान मंदिर, सिद्धेश्वर मंदिर, बंधान, धोबड़िया तालाब, जॉगर्स पार्क, राजा का महल, रानी का महल, तीर-गोला, कारंजा शहीद स्मारक, गांधी समाधि, राजघाट नर्मदा तट, कसरावद नर्मदा तट आदि।

बड़वानी के निकट स्थित ग्वाल बयड़ा का प्राकृतिक सौंदर्य अद्भुत है। निकट ही छोटा सा तालाब है। जैन मंदिर अपनी सात्विकता के साथ विद्यमान हैं।

बड़वानी से आठ किलोमीटर दूर स्थित बावनगजा अंतर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित कर चुका है। यहां आदिनाथ जी की विषाल प्रतिमा है। अनेक अन्य मंदिर हैं। वर्षा ऋतु में बावनगजा तथा आसपास का प्राकृतिक सौन्दर्य इतना निखर जाता है कि दर्शक मुग्ध हो जाते हैं।

बड़वानी जिले में 1857 के महान क्रांतिकारी भीमा नायक की गढ़ी, धाबा बावड़ी, कई अन्य बावड़ियां, रामगढ़, सेंधवा का किला सहित अनेक ऐसे स्थल हैं जहां पर्यटक जाना पसंद करते हैं।

नागलवाड़ी के शिखरधाम की ख्याति निरंतर बढ़ रही है। यहां भीलट देव का प्राचीन मंदिर था, जिसे वर्तमान में भव्य रूप दे दिया गया है। प्राकृतिक सौन्दर्य भी यहां अद्भुत है। निकट स्थित ग्राम ओझर का शिवटेकड़ी धाम भी प्रसिद्ध है।

खरगोन जिले के दर्शनीय स्थल – इसको पश्चिमी निमाड़ जिला भी कहा जाता है। 'खरगोऩ जिले का क्षेत्रफल 8011 वर्ग किलोमीटर है।'[1] 'सन् 2011 की जनगणना के अनुसार इसकी जनसंख्या 1873046 थी।'[2]

खरगोन जिले को प्रशासनिक सुविधा की दृष्टि से नौ तहसीलों में गठित किया गया है। ये हैं- खरगोन, भगवानपुरा, सेगाँव, भीकनगाँव,

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

झिरन्या, महेश्वर, बड़वाह, कसरावद एवं गोगांवा।

इस जिले में कुल नौ विकासखण्ड हैं- खरगोन, गोगाँवा, भगवानपुरा, सेगाँव, भीकनगाँव, झिरन्या, महेश्वर, बड़वाह एवं कसरावद।

नर्मदा के पवित्र तट पर स्थित निमाड़ जिले का प्रसिद्ध पर्यटन स्थल, शंकराचार्य और मंडन मिश्र के शास्त्रार्थ का स्थल, पुराण प्रसिद्ध महिष्मति नगरी, आधुनिक महेश्वर के नाम से जानी जाती है। यहाँ पर स्थित अनेक प्राचीन मन्दिर, बावड़ियाँ, होल्कर घराने की कुलवधू देवी अहिल्याबाई की धर्मपरायणता, दानशीलता और कल्याणकारी भावना के ज्वलंत उदाहरण हैं। इसी नगरी में भगवान शंकर के अनेक भव्य मन्दिर बने हुए हैं।

काशी और उज्जैन के बाद आने वाला खरगोन का नवग्रह मन्दिर, जिसके कारण इसे नवग्रह नगरी के नाम से भी जाना जाता है, धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसी मन्दिर के नाम से यहाँ प्रतिवर्ष नवग्रह मेला लगता है। इसके अलावा खरगोन में स्थित श्री गोवर्धननाथ का मन्दिर, जो वैष्णवों को सहज ही अपनी ओर आकर्षित करता है, ऊन में स्थित जैन तीर्थ तथा अनेक मन्दिर, सेगाँव में स्थित लालबाई व फूलबाई का मन्दिर, सतपुड़ा की श्रृंखलाओं में स्थित तथा पुरातत्ववेत्ताओं के लिये शोध का विषय सिरवेल महादेव मन्दिर, ग्राम भग्यापुर के नजदीक स्थित अति प्राचीन नन्हेष्वर मंदिर भी कम महत्व के नहीं हैं।

खण्डवा जिले के दर्शनीय स्थल – यह अभी भी पूर्वी निमाड़ जिले के रूप में अभिहित किया जाता है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार तत्कालीन पूर्वी निमाड़ जिले की कुल जनसंख्या 13010061 थी।'[1]

जिले में चार तहसीलें सम्मिलित हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं- खण्डवा, पंधाना, हरसूद एवं पुनासा । जिले में सात विकास खण्ड बनाये गये हैं, जिनके नाम हैं- खण्डवा, पुनासा, छेगाँवमाखन, पंधाना, हरसूद, बलड़ी (किल्लोद)एवं खालवा।

नर्मदा के पावन जल के किनारे स्थित सौन्दर्य तीर्थ ओंकारेश्वर, जहाँ पर बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक लिंग ममलेश्वर महादेव स्थित है, तथा हरसूद तहसील में फिफराड़ नदी के किनारे स्थित सन्त सिंगाजी की समाधि स्थल सिंगाजी, पूर्वी निमाड़ के प्रमुख तीर्थ स्थल हैं। सिंगाजी में सन्त सिंगाजी की स्मृति में निमाड़ का सबसे बड़ा मेला लगता है।

खण्डवा जिले में हाल ही में विकसित हुआ हनुवंतिया टापू मध्यप्रदेश का स्विटजरलैंड और मध्यप्रदेश का गोवा कहलाता है। यहां आयोजित हुए जलमहोत्सव के दौरान बड़ी संख्या में पर्यटक आये।

खण्डवा स्थित दादाजी धूनीवाले का आश्रम श्रद्धालुओं के आकर्षण का प्रमुख केन्द्र है। गुरु पूर्णिमा पर यहा विशाल जनसमुदाय उमड़ता है। प्रतिदिन भी भक्तों का आगमन होता है।

सुविख्यात गायक और फिल्म अभिनेता किशोर कुमार का स्मारक भी खण्डवा के पर्यटन का उल्लेखनीय मुकाम है।

इसके अलावा घंटाघर, मध्यकालीन किला, विंध्याचल पर्वत श्रृंखला, इंदिरा सागर बांध, नवचंडीदेवी धाम, नागचुन बांध आदि सहित अनेक दर्शनीय स्थान हैं।

बुरहानपुर जिले के दर्शनीय स्थल – पूर्वी निमाड़ जिले का विभाजन करके दिनांक 15 अगस्त, 2003 को बुरहानपुर जिले का गठन किया गया है। 2011 की जनगणना के अनुसार 'इस जिला क्षेत्र में सम्मिलित भू-भाग की जनसंख्या 757847 पाई गई थी।'[1]

बुरहानपुर जिले में तीन तहसीलें- बुरहानपुर, खकनार एवं नेपानगर तथा दो विकासखण्ड- खकनार एवं बुरहानपुर हैं।

ताप्ती नदी के किनारे स्थित मुगल शासकों के महत्वपूर्ण केन्द्र बुरहानपुर में बनी हुई सोलहवीं शताब्दी की भव्य मस्जिद आज भी अपनी गौरव गाथा सुना रही है। ताजमहल भले ही यहाँ नहीं बन सका हो, लेकिन जिसकी याद में आगरे का सुप्रसिद्ध ताजमहल बना है, उस मुमताज की मृत्यु यहीं पर हुई है और पूरे तीन माह तक उसका शव 'आहू खानेय में रखा गया था। खण्डवा से 30 मील दक्षिण में, सतपुड़ा की ऊंची चोटी पर स्थित निमाड़ का अजेय दुर्ग असीरगढ़ के खण्डहर आज भी इतिहास के खोजकर्ताओं की समस्या बने हुए हैं। इस किले के निर्माण के संबंध में विद्वानों में मतभेद हैं, लेकिन इसे महाभारत के अष्वत्थामा के नाम से जोड़ा जाता है। इसका वर्णन अश्वत्थामा पलायन लोककथा में मिलता है।

'बुरहानपुर अपने एक नहीं अनेक पर्यटन स्थलों के कारण पहचाना जाता है। बुराहनपुर से होकर दक्षिण को जाने वाला एक प्रमुख मार्ग गुजरता है। इस मार्ग पर एक बहुत ही पुराना असीरगढ़ का किला मौजूद है। अपने सामरिक महत्व के कारण इस किले को दक्षिण की चाबी भी कहा जाता है। इसके अतिरिक्त बुरहानपुर में देखने के लिए और भी कुछ है। पर इनमें सर्वाधिक आकर्षित करता है खूनी भण्डारा। अब्दुल रहीम खानखाना ने बुरहानपुर में मुगल सूबेदार की हैसियत से अनूठी जल वितरण व्यवस्था में खूनी भण्डारा का निर्माण किया था। इस प्रकार की जल वितरण व्यवस्था को भारत के अलावा ईरान में भी अपनाया गया। इस जल वितरण व्यवस्था से भू-गर्भ में जलस्रोतों की खोज करके जल को भूमिगत नहर से कनाट गैलेरी पद्धति से शहर तक पानी ले जाने का कार्य बिना किसी बाहरी उपकरण या मषीन की मदद से पानी खूनी भण्डारा से बुरहानपुर तक पहुंचाया गया। जल वितरण की यह व्यवस्था आज भी कायम है।'[1]

उपसंहार – इस प्रकार स्पष्ट है कि निमाड़ में पर्यटन उद्योग के विकास की असीम संभावनाएं हैं। बड़वानी के बावनगजा, ग्वालबयड़ा, सेंधवा का किला, नागलवाड़ी का शिखर धाम, खण्डवा के ओंकारेश्वर और हनुवंतिया, खरगोन का महेश्वर तथा बुरहानपुर का असीरगढ़ ऐसे नाम हैं, जिन्हें ठीक से प्रचारित-प्रसारित किया जाये तो न केवल मध्यप्रदेश के अपितु भारत के सभी क्षेत्रों और दुनिया के अन्य देशों के पर्यटक भी खींचे चले आयेंगे। महेश्वर पिछले कछ वर्षो से फिल्मी दुनिया के लोगों को विशेष प्रभावित करने में सफल हुआ है और यहां अनेक फिल्मों की शूटिंग हुई है। संयुक्त राज्य अमेरिका की पूर्व विदेश मंत्री श्रीमती हिलेरी क्लिंटन ने हाल ही में महेश्वर की यात्रा की थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश – एक भौगोलिक अध्ययन, लेखिका – डॉ. प्रमीला कुमार, प्रकाशक – मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, संस्करण – 2002, पृष्ठ – 41
2. मध्यप्रदेश – विस्तृत अध्ययन, लेखक – पूर्णेन्दु कुमार, प्रकाशक – अहिहन्त पब्लिकेशन्स (इ) प्राइवेट लिमिटेड, मेरठ, संस्करण – 2008, पृष्ठ – 86
3. वही, पृष्ठ – 89
4. वही, पृष्ठ – 77
5. मध्यप्रदेश संदर्भ – 2010, प्रकाशक – जनसम्पर्क विभाग, मध्यप्रदेश शासन, भोपाल, द्वितीय संस्करण – 2010, पृष्ठ – 517 एवं 518.

ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

निमाड़ के दर्शनीय स्थल (चित्र संयोजन-डॉ. पंकज कानूनगो)

ओंकारेश्वर

ओंकारेश्वर

महेश्वर

[illegible] मंदिर, खरगोन

[illegible] देव मंदिर, [illegible]

[illegible] प्रतिमा, बावनगजा

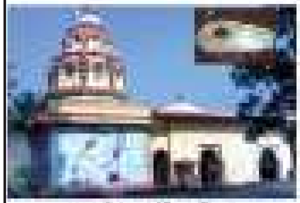
राजराजेश्वर मंदिर, सेंधवा

सेंधवा का किला

महालक्ष्मी मंदिर, ऊन

नीलकंठेश्वर एवं बल्लालेश्वर मंदिर, ऊन

[illegible] मंदिर

[illegible] देवी मंदिर, [illegible]

[illegible] महादेव मंदिर, [illegible]

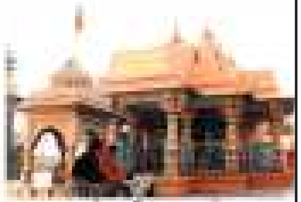
[illegible] शिवालय, [illegible]

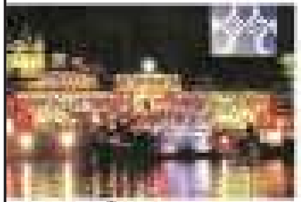
निमाड़ उत्सव

निमाड़ उत्सव

****

ग्रामीण विकास - नीति एवं संरचना

सचिन कुमार पाण्डेय *

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यस्था एक मिश्रित अर्थव्यवस्था है। अत: यहॉ सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र दोनों का ही देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहता है। देश के आर्थिक नियोजन में सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्रों की आयोजना को अंगीकृत किया गया है। अब तक हमारे आर्थिक आयोजन का ढॉचा केन्द्रीयकृत और संकेन्द्रित प्रकार का रहा है। योजना अयोग लक्ष्यों को निर्धारित करके उसकी पूर्ति या प्राप्ति का उत्तरदायित्व अर्थव्यवस्था के दोनों क्षेत्रों – 'सार्वजनिक एवं निजी' के विभिन्न विभागों एवं संस्थाओं को सौंप देता है, लेकिन योजना आयोग के माध्यम से नियोजन का जो केन्द्रीयकृत ढॉचा विद्यमान है, उसे बदलने की आवश्यकता है। आठवीं नियोजन हेतु योजना अयोग की भूमिका में परिवर्तन लाया गया था। जैसा कि योजना आयोग के पूर्व उपाध्यक्ष प्रणव मुखर्जी का कहना था – 'बदली हुई परिस्थितियों के अनुरूप हमने योजना आयोग की भूमिका को नए सिरे से परिभाषित किया है। आयोजना की अत्यधिक केन्द्रीकृत प्रणाली से अब हम निदेशात्मक योजना प्रणाली की ओर अग्रसर हो रहे हैं। यह योजना (1992-1997) निर्देशात्मक प्रकृति की रही है। इसके भविष्य के लिए दीर्घकालीन कार्यनीति बनाने पर जोर दिया गया है तथा राष्ट्र की प्राथमिकतायें निर्धारित की गयी हैं। योजना में सार्वजनिक क्षेत्र के विभिन्न विकल्पों की विस्तृत जॉच और विशिष्ट परियोजनाओं का पता लगाने का प्रयास किया गया है। अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों के लिए इसमें क्षेत्रवार लक्ष्य निर्धारित किये गये हैं जिससे अर्थव्यवस्था को निर्धारित दिशा में अग्रसर करने के लिए प्रोत्साहन मिल सके।'

सच तो यह है कि आठवीं योजना में लोकतांत्रिक आयोजन पर जोर दिया गया अर्थात् पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से लोकतांत्रिक नियोजन के द्वार तक पहुँचना प्रमुख ध्येय रहा है।

विकेन्द्रीकृत नियोजन – विकेन्द्रीकृत नियोजन में योजना का निर्माण एवं उसका क्रियान्वयन केन्द्र से न होकर विभिन्न क्षेत्रों द्वारा संचालित होता है। इसके अन्तर्गत योजना निर्माण एवं संचालन में स्थानीय क्षेत्र विशेष के लोगों की सक्रिय भागीदारी रहती है।

लोकतांत्रिक नियोजन विकेन्द्रीकृत नियोजन का एक प्रमुख रूप है। इस प्रकार के नियोजन में योजनाओं को बनाने तथा उनका क्रियान्वयन करने में मुख्यत: जन सामान्य की भागीदारी रहती है। पंचायती राज प्रणाली में हम लोकतांत्रिक नियोजन का स्वरूप देख सकते हैं। भारत में योजनाओं की नीति, लक्ष्य आदि का निर्धारण योजना-आयोग करता रहा है। साथ ही क्षेत्र विशेष की समस्याओं का स्वरूप लोकतांत्रिक नहीं रहा है। यही कारण है कि भारत में सरकार एवं जनता का विश्वास दिन-प्रति-दिन कम होकर दोनों के मध्य अविश्वास की खाई बढ़ती जा रही है। किसी भी आयोजन की सफलता इस बात पर अधिक निर्भर करती है कि आज जनता की भागीदारी उसमें किस सीमा तक विद्यमान है।

प्रो. कामताप्रसाद का मानना है कि पंचायती राज प्रणाली के जरिए योजना में लोगों की भागीदारी से योजना के और सक्षम एवं बेहतर दृष्टिकोण होने की आशा है क्योंकि स्थानीय लोगों का अपनी आवश्यकताओं के बारे में बेहतर दृष्टिकोण होता है तथा स्थानीय संसाधनों के संबंध में उन्हें अच्छी जाकारी होती है। भारत में आज जिन राज्यों में पंचायती राज संस्थाऍ कार्य कर रही हैं वहॉ उनकी भूमिका केवल सतही ही है क्योंकि योजना द्वारा समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लाभार्थियों के चयन में अथवा ग्रामीण विकास योजनाओं में ये संस्थायें साधारण रूप से भागीदार रही हैं।

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण अथवा ग्रामीण भारत में सामाजिक तथा आर्थिक स्थितियों में सुधाार लाने और स्थानीय प्रयासों की उपयोगिता को बनाये रखने के उद्देश्य से जनवरी 1957 में बलवन्त राय मेहता समिति गठित की गयी। जिसने 24 नवम्बर 1957 को अपनी रिपोर्ट में कहा कि राज्य के निचले स्तर पर अधिकारों एवं दायित्वों का विकेन्द्रीकरण करना नितान्त आवश्यक है। समिति ने आगे कहा – 'सत्ता ऐसी संस्था को सौंपी जाये जा अपने अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत सभी विकास कार्यो के लिए उत्तरदायी हों और सरकार का काम मार्गदर्शन, उच्च स्तर की योजना बनाना तथा जहॉ आवश्यकता हो धन उपलब्ध कराना ही रहना चाहिए।'

पंचायती राज संस्थाऍ हमारी लोकतांत्रिक संस्थाओं की रीढ़ रही हैं, जिनके चारों ओर गॉव की समूची सामाजिक एवं आर्थिक गतिविधियॉ चलती थीं। वैदिक काल से लेकर ब्रिटिश काल तक ये पंचायतें ही हमारे गॉवों एवं ग्रामीणों की आवश्यकताओं की देखभाल करती थी। आज हमें पुन: ग्राम पंचायतों की सक्रिय भूमिका को लेकर नियोजन एवं उसकी कार्य प्रणाली का संचालन करना चाहिए।

नियोजन प्रणाली के विभिन्न रूप – विगत चार-पॉच दशकों के दौरान भारत में ग्रामीण विकास हेतु अपनायी गयी रणनीति में अनेक प्रकार की नियोजन पद्धतियों का अनुसरण किया गया है, जिसमें प्रमुख इस प्रकार हैं-

1. **अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन नियोजन –** अल्प या लघु अवधि के लिए जो नियोजन प्रक्रिया अपनायी जाती है, उसमें तात्कालिक आवश्यकताओं एवं समस्याओं को सामने रखा जाता है। तात्कालिक समस्याऍ आर्थिक एवं सामाजिक दोनों तरह की हो सकती हैं। इस प्रकार लघु अवधि की नियोजन प्रणाली तात्कालिक समस्याओं को हल करने के

*शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

लिए उपयोगी होती है। इसमें एक वर्षीय व कभी-कभी त्रिवर्षीय योजनाएँ बनाई जाती हैं। जैसे - भुगतान संतुलन एवं विदेशी विनिमय कोषों के अभाव से निपटने के लिए बनायी गयी योजना, बजटीय व्यवस्था अल्पकालिक नियोजन में शामिल होती है। दूसरी ओर, अल्पकालिक नियोजन के अलावा या इसके साथ-साथ दीर्घावधि की योजनायें भी तैयार की जाती हैं। इसमें संस्थानिक एवं संरचनात्मक परिवर्तन शामिल रहते हैं। इसमें पंचवर्षीय योजनायें तथा दस वर्षीय या बीस वर्षीय योजनायें शामिल रहती हैं। जैसे आार्थिक विकास हेतु दीर्घकालिक योजना, जनसंख्या नियंत्रण हेतु नीति, भुगतान संतुलन की संरचनात्मक असामान्यता को सुधारने हेतु योजना आदि। लघु अवधि की योजनायें दीर्घ अवधि की योजना की रणनीति की सहायक होती है। लघु एवं दीर्घ अवधि की योजनाओं के मध्य सामंजस्य बनाये रखना होता है। भारत में वार्षिक योजनायें वार्षिक बजट से जुड़ी होती हैं, उन्हें पंचवर्षीय योजनाओं के साथ जोड़ा जाता है। इस तरह दोनों ही प्रकार की योजनायें क्रमिक रूप से निरन्तर चलती रहती हैं। नियोजन एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। एक पंचवर्षीय योजना को संशोधित रूप में अगले पॉच वर्षो के लिए बनाया जाता है।

2. **क्षेत्रीय नियोजन -** क्षेत्रीय नियोजन प्रणाली के द्वारा पिछडे क्षेत्रों तथा विशेषकर पर्वतीय क्षेत्र, मरुस्थलीय क्षेत्र जैसी भौगोलिक परिस्थितियों वाले क्षेत्रों की समस्याओं को हल करने का प्रयास किया जाता है। इनमें पर्वतीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम जैसे उत्तर प्रदेश पर्वतीय विकास कार्यक्रम, मरुस्थलीय विकास कार्यक्रम आदि शामिल हैं। क्षेत्रीय नियोजन कार्य प्रणाली में क्षेत्र विशेष के आर्थिक एवं सामाजिक सुधार हेतु अनेकानेक कार्यक्रम लागू किये जाते हैं।

3. **बहुधन्धी नियोजन -** भारत में नियोजन के माध्यम से ग्रामीण विकास हेतु प्रथम प्रयास सामुदायिक विकस कार्यक्रमों के साथ प्रारम्भ हुआ। वर्ष 1952 में, देश में सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के जरिए ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक कार्यक्रम चलाये गये। इसमें कृषि एवं पशुपालन के अलावा सिंचाई, स्वास्थ्य, शिक्षा, लघु एवं कुटीर उद्योग, सड़क, आवास, दूर-संचार आदि अनेक परियोजनाओं को अंगीकृत किया गया है। अर्थात् इसमें एक साथ अनेक धन्धों को अपनाया गया। विकास की यह नियोजन पद्धति बहुधन्धी नियोजन पद्धति कहलाती है।

4. **वर्गीकृत एवं स्थानिक नियोजन -** संतुलित आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए वर्गीकृत तथा स्थानिक योजनाओं का विशेष महत्त्व है। ये योजनायें संतुलित आर्थिक विकास की अवधारणा पर आधारित हैं। स्थानिक विकास एवं क्षेत्रीय विकास की अवधारणा काफी मिलती-जुलती है। वर्गीकृत नियोजन के अन्तर्गत प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक क्षेत्र की क्रियाओं को शामिल किया जाता है जो इस प्रकार से वर्गीकृत हैं-

प्राथमिक क्षेत्र - कृषि, पशुपालन एवं संबंधित क्रियायें, खनन, वानिकी आदि।

द्वितीयक क्षेत्र - विनिर्माण यथा ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग।

तृतीयक क्षेत्र - बैंकिंग, बीमा, परिवहन, व्यापार आदि।

5. **सामान्य एवं बहु-स्तरीय नियोजन -** सामान्य नियोजन के अन्तर्गत नियोजन का प्रारूप राष्ट्रीय स्तर पर निर्मित होता है। राष्ट्रीय स्तर पर नियोजन का निर्माण कर उसे निम्न स्तर की इकाइयों (प्रशासनिक इकाइयों) को क्रियान्वित करने का निर्देश दिया जाता है। ऐसी स्थिति में निम्न स्तर के अधिकारियों को योजना की तकनीकी जानकारी नहीं हो पाती है। इसके कारण नियोजन का अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाता है। इस प्रकार की नियोजन प्रणाली से क्षेत्रीय असंतुलन बढ़ता है। सामान्य नियोजन प्रणाली केन्द्रीय कुल योजना प्रणाली की जरूरत है। विकेन्द्रीकृत नियोजन में बहु-स्तरीय योजना की अवधारणा अधिक सही एवं उपयुक्त मानी जाती है। बहुस्तरीय नियोजन प्रणाली में योजना का निर्माण विभिन्न प्रशासनिक स्तर (छोटे तथा बडे) पर विस्तृत गहन एवं विचार विमर्श के फलस्वरूप होता है। इसके अन्तर्गत नियोजन की प्रक्रिया छोटे स्तर से बड़े स्तर की ओर उन्मुख होती है। इसमें क्षेत्रीय असंतोष के स्थान पर क्षेत्रीय अन्तर्सम्बद्धता का गुण पाया जाता है।

6. **लक्षित वर्ग नियोजन -** लक्षित वर्ग नियोजन प्रणाली के अन्तर्गत वर्ग विशेष, जिसमें निर्धन वर्ग को लक्ष्य बनाकर नियोजन प्रक्रिया अपनायी जाती है। ग्रामीण विकास हेतु लक्षित वर्ग प्रणाली के अन्तर्गत 'निर्धन वर्ग' की आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति को सुधारने के लिए योजना बनायी जाती है क्योंकि समेकित योजना के तहत निर्धन वर्ग को समुचित लाभ मिलने की संभावनायें प्राय: कम रहती हैं। अत: इसके लिए 'लक्षित वर्ग प्रणाली' उपयुक्त मानी जाती है।

विकेन्द्रीकृत नियोजन का स्तरीकरण - भारत में अधिकांश जनसंख्या श्रम शक्ति तथा भूमिगत क्षेत्र व ग्रामीण क्षेत्रों में शामिल है। अत: विकेन्द्रीकृत नियोजन को विभिन्न स्तरों में विभाजित करना उपयुक्त रहता है। इसमें योजनाओं का निर्माण एवं क्रियान्विति राष्ट्र, प्रान्त, जनपद, विकास-खण्ड, ग्राम तथा परिवार स्तर पर होता है। इस प्रकार बहुस्तरीय नियोजन की प्रक्रिया भारत के ग्रामीण एवं समग्र आर्थिक एवं सामाजिक विकास हेतु आवश्यक ही नहीं, एक उपयोगी पहल है। विकास नियोजन का स्तरीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है -

1. पारिवारिक नियोजन, 2. ग्राम स्तरीय नियोजन, 3. खण्ड स्तरीय नियोजन, 4. जिला स्तरीय नियोजन, 5. क्षेत्रीय नियोजन, 6. प्रान्तीय नियोजन, 7. राष्ट्रीय नियोजन।

पारिवारिक नियोजन - परिवार स्तरीय नियोजन बनाते समय इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि परिवार के पास उपलब्ध संसाधन या उसके आस-पास के परिवेश में उपलब्ध संसाधनों की क्या स्थिति है। इससे परिवार को कच्चा माल या अवसंरचनात्मक असुविधा नहीं होगी तथा योजना का अनुकूल लाभ भी मिल सकेगा। योजना के तहत यदि परिवार को उचित 'प्रोजेक्ट' उपलब्ध कराया जाये तथा उसके समुचित लाभ प्राप्त कराए जायें तो परिवार गरीबी की रेखा से ऊपर उठ सकेगा तथा आर्थिक विकास के मार्ग में अग्रसर होगा। यह प्रोजक्ट उत्पादन के प्राथमिक, द्वितीयक व तृतीयक क्षेत्रों से किसी से भी लिया जा सकता है। चूंकि ग्रामीण इलाकों में प्राथमिक क्षेत्र में जनशक्ति की निर्भरता अधिक है। उसके कारण कृषि क्षेत्र में सीमान्त उत्पादकता ऋणात्मक है तथा अदृश्य बेरोजगारी विद्यमान है। अत: बेहतर यह होगा कि परिवार को द्वितीयक एवं तृतीयक क्षेत्र में परियोजना उपलब्ध करायी जाये। द्वितीयक क्षेत्र के तहत उद्योगों की स्थापना हो सकती है।

परिवार को उद्योगों की ओर प्रोत्साहित करने से पूर्व इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि इसमें इसकी संबद्धता, उद्यमशीलता की इच्छा तथा प्रशिक्षण की सुविधा सुलभ हो। तृतीयक क्षेत्र में परिवार के लोगों को खुदरा व्यापार, भवन निर्माण, परिवहन, विपणन, बीमा, दस्तकारी सेवा, व्यापार आदि सेवाओं में लगाया जा सकता है।

ग्राम स्तरीय नियोजन - ग्राम स्तरीय नियोजन को परिवार की योजनाओं के आधार पर तैयार किया जाता है। ग्राम के लिए योजना बनाते समय वहॉ

के प्राकृतिक संसाधनों के साथ-साथ श्रम शक्ति तथा वित्तीय स्त्रोतों को भी ध्यान में रखा जाता है। प्रत्येक परिवार की योजनाओं की जानकारी एकत्र करने के बाद उसका विश्लेषण कर गॉव के लिए एक समग्र योजना तैयार की जाती है। ग्राम के लिए बनाई गयी योजना के लक्ष्यों को निर्धारित करके उसे निश्चित समय में पूरा कर गॉव की आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाया जा सकता है। गॉव के लिए योजना निर्माण में इस बात का ध्यान रखना होता है कि उसमें गॉव के संसाधनों का समुचित उपयोग हो। ग्राम क्षेत्र में उपलब्ध कच्चे माल, मानव शक्ति आदि संसाधनों का अनुकूलतम स्तर का उपयोग किया जाना चाहिए। वर्ष 1978-79 में एकीकृत ग्राम विकास योजना के प्रारम्भिक वर्षो में ग्रामीण सर्वेक्षण किया गया तथा निर्धनता की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों के संबंध में विस्तृत ब्यौरा दिया गया, जिसके आधार पर ग्राम योजना तैयार की गयी। लेकिन यहॉ पर यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि जिन परिवारों की सूचना को विकास खण्ड कार्यालयों में एकत्रित किया गया था, उनकी अधिकांश सूचनाएॅ वास्तविकता से दूर थीं। ग्राम नियोजन हेतु आज तक सही दृष्टि से कोई काम नहीं हो पा रहा है।

खण्ड स्तरीय नियोजन - विकास खण्ड स्तर पर नियोजन का उद्देश्य आर्थिक, सामाजिक एवं मानवीय विकास करना है। इस स्तर पर किया गया नियोजन क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय नियोजन के लिए नींव की ईंट का काम करता है। विकास खण्ड स्तर के लिए योजना निर्माण हेतु ग्राम एवं उसमें निवास करने वाले परिवारों के उद्यमों को आधार बनाया जाता है। इस योजना में स्थानीय संस्थाओं, ग्रामों की निर्धनता, बेरोजगारी, पिछड़ापन तथा सामाजिक ढॉचा आदि तत्वों पर विचार करते हुए कार्यक्रमों को प्रारम्भ किया जाता है। वर्ष 1952 में देश में विकास खण्डों में सामुदायिक विकास कार्यक्रम चलाये गये। विकास खण्ड स्तर पर इस कार्यक्रम को चलाने के लिए पंचायत समिति इसकी एक महत्वपूर्ण कड़ी थी, क्योंकि विकास खण्ड का अयोजन विकास इकाई के रूप में ग्रहण करते समय स्थानीय स्वायत्त शासन संगठनों अथवा पंचायती राज संस्थाओं को तीन स्तरों के रूप में चुना गया था - जिला, विकास खण्ड तथा ग्राम सामुदायिक विकास। इन कार्यक्रमों के तहत विकास खण्ड से सिंचाई, विद्युत, सड़क, भवन-निर्माण तथा प्राथमिक, द्धितीयक क्षेत्र की क्रियाओं को अपनाया गया, लेकिन सामुदायिक विकास कार्यक्रम के शुभारम्भ के 10-15 वर्ष बाद विकास खण्ड स्तर पर इसका बजट सीमित हो गया तथा खण्ड स्तर की स्वयत्तशासी संस्था पंचायत समिति विकास खण्ड के लिए संसाधन जुटानें में असमर्थ हो गयीं। इस प्रकार खण्ड स्तर पर योजनायें क्रमशः घटती चली गयीं।

1978 में जब एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये तो इसमें यह तय किया गया था कि ये कार्यक्रम खण्ड स्तर पर तैयार किये जायेंगे तथा उसके बाद उसे जिलास्तर पर 'जिला ग्राम्य विकास अभिकरण' के साथ जोड़ा जायेगा, लेकिन ऐसा नहीं हो सका। योजनाए जिला स्तर पर तैयार करके विकास खण्डों पर थोप दी जाती हैं। अतः विकास खण्डों को मात्र सूचनायें एकत्र करने तथा कार्यक्रम चालू करने का माध्यम बनाया गया, योजना निर्माण के लिए नहीं।

जिला स्तरीय नियोजन - जिला स्तरीय नियोजन-राष्ट्रीय नियोजन, राज्य तथा क्षेत्रीय नियोजन के लिए प्रमुख एवं महत्वपूर्ण कड़ी का कार्य करता है। दूसरी तरफ यह परिवार, ग्राम तथा विकास खण्ड स्तरीय योजनाओं को जोड़ने का कार्य भी करता है। जिला स्तरीय योजना को पंचवर्षीय आधार पर तैयार कर उसमें आर्थिक एवं सामाजिक कार्यक्रमों को शामिल किया जाता है।

जिला स्तरीय नियोजन हेतु निम्नांकित बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है -

1. प्राकृतिक संसाधनों का सर्वेक्षण एवं उनका युक्ति संगत उपयोग।
2. मानव संसाधन अर्थात् श्रम शक्ति का पूरा-पूरा उपयोग।
3. उवसंरचनात्मक सुविधाओं की स्थापना करना।
4. वित्तीय संगठनों की स्थापना करना।
5. संगठन एवं संस्थाओं की स्थापना तथा उनका उत्पादन कार्यो के लिए उपयोग करना।
6. ग्रामीण क्षेत्रों के लिए श्रम-गहन तथा सरल तकनीकी का विकास करना।
7. स्थानीय ऊर्जा स्त्रोतों अर्थात् पवन, जल आदि का नियोजत विकास करना।
8. न्यूनतम उपभोक्ता वस्तुओं एवं सेवाओं की व्यवस्था करना।

इसके अलावा जनपद स्तरीय योजना बनाते समय इस बात का विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए कि इसमें नीचे के स्तर - विकास, ग्राम तथा परिवार स्तर की योजनाओं को समुचित स्थान मिलना चाहिए। वास्तविक रूप में जनपद स्तरीय नियोजन को निचले स्तर की योजनाओं के मूलाधार पर तैयार किया जाना चाहिए।

भारत में पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान जिला स्तरीय नियोजन पर जोर दिया जाता रहा है। पंचवर्षीय योजनाओं में जनपद स्तर पर अनेक कार्यक्रम चालू किये गये जिनमें कृषि, सिंचाई, भूमि संरक्षण, वानिकी, पशुपालन, शिक्षा, स्कूल-भवन, पेयजल-आपूर्ति, सड़कों का निर्माण तथा चौथी योजना (1969-74) में महत्त्व दिया गया। वर्ष 1969 में योजना आयोग ने देश में जिला स्तरीय योजना तैयार करने के लिए राज्यों को निर्देश दिये। इसके बाद जिला स्तरीय नियोजन का महत्त्व बढ़ता रहा है। छठी एवं सातवीं पंचवर्षीय योजना की 'एकीकृत ग्राम्य विकास योजना' को जिला स्तरीय नियोजन का एक रूप कहा जाए, तो कोई अतिशंयोक्ति नहीं होगी। बाद में आठवीं एवं नवीं योजना में इसे प्राथमिकता दी गई है।

क्षेत्रीय नियोजन - क्षेत्रीय नियोजन द्धारा स्थानीय समस्याओं एवं विषमताओं को दूर करने में सहायता मिलती है। क्षेत्रीय नियोजन 'संतुलित क्षेत्रीय विकास' को सुदृढ़ करती है। क्षेत्रीय विशेषता चाहे आर्थिक पिछडेप़न से हो या भौगोलिक विभिन्नता से हो या फिर किसी अन्य सामाजिक रूप में हो, राजस्थान का मरुभूमि क्षेत्र हो या उत्तर प्रदेश का पर्वतीय क्षेत्र इनका नियोजन क्षेत्रीय नियोजन के अन्तर्गत ही आता है।

क्षेत्रीय नियोजन का महत्त्व क्षेत्रीय विकास के लिए अधिक है। कुछ क्षेत्र ऐसे होते हैं जहॉ का आर्थिक एवं सामाजिक विकास सामान्य स्तर से काफी नीचे होता है। अतः ऐसे क्षेत्रों को सामान्य स्तर तक लाने के लिए एक अलग से योजना बनाने की जरूरत पड़ती है। अतः इस प्रकार का नियोजन संतुलित क्षेत्रीय विकास के लिए अत्यधिक उपयोगी रहता है क्योंकि सामान्य नियोजन के माध्यम से पिछडे क्षेत्रों या विशेषकर भौगोलिक क्षेत्रों का विकास सम्भवतः कम ही हो पाता है।

क्षेत्रीय नियोजन द्धारा पिछड़े या विशिष्ट भौगोलिक परिवेश वाले क्षेत्रों में विकास योजनाएॅ सक्रिय रूप से चलाकर उस क्षेत्र को आर्थिक विकास की गति के साथ अग्रसर होने का अवसर दिया जाता है। इन क्षेत्रों में औद्योगिक पिछड़ापन प्रमुख होता है। लोग प्राथमिक क्षेत्र की क्रियाओं पर जीवित रहते हैं। अतः औद्योगिकीकरण के माध्यम से वहॉ पर उद्योगों की

स्थापना की जाती है तथा लोगों को रोजगार उपलब्ध कराकर उनके जीवन स्तर में सुधार किया जाता है। अवसंरचनात्मक सुविधाओं को बढ़ाया जाता है ताकि द्वितीयक एवं प्राथमिक क्षेत्र की क्रियाएँ सुचारू रूप से चल सकें। क्षेत्रीय नियोजन के माध्यम से क्षेत्रीय विषमताओं, आय की असमानता, निर्धनता तथा सामाजिक विषमताओं को कम करने में सहायता मिलती है।

प्रान्तीय नियोजन – प्रान्तीय नियोजन प्रक्रिया में राज्य सरकारें स्वयं क्रियाशील एवं सम्बद्ध रहती हैं। राज्य या प्रान्तीय स्तर पर नियोजन करने का कार्य प्राय: राज्य सरकार का होता है। प्रादेशिक नियोजन का मुख्य उद्देश्य आर्थिक-सामाजिक विकास के साथ-साथ पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखना भी होता है। अत: प्राकृतिक संसाधनों का समुचित ढंग से उपयोग करना ताकि पारिस्थितिकी संतुलन बना रहे, राज्य सरकारों का कार्य है। इस बात को ध्यान में रखकर उन्हें नियोजन करना चाहिये।

प्रान्तीय नियोजन क्षेत्रीय तथा राष्ट्रीय नियोजन के बीच एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। राष्ट्रीय नियोजन प्रक्रिया में प्रान्तीय नियोजन की प्रक्रियाओं को ध्यान में रखा जाता है और प्रान्तीय नियोजन में क्षेत्रीय नियोजन को महत्त्व दिया जाता है। प्रान्तीय करों एवं बचतों के माध्यम से वह कितना विनियोग कर पाएगी तथा केन्द्र किस सीमा तक उसकी नीतियों के क्रियान्वयन में सहायता करेगा, इस बात का ध्यान राज्य नियोजन में रखा जाता है। राज्य नियोजन राष्ट्र एवं क्षेत्र दोनों प्रकार के नियोजनों को समन्वित रूप में रखकर किया जाता है।

राष्ट्रीय नियोजन – जब सम्पूर्ण राष्ट्र को एक इकाई मानकर नियोजन किया जाता है तब यह राष्ट्रीय स्तर का नियोजन कहलाता है। इस प्रकार के नियोजन में सम्पूर्ण प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों के अलावा वित्तीय संसाधनों को एक समग्र रूप में रखा जाता है तथा इसी के अधार पर सम्पूर्ण राष्ट्र के आर्थिक विकास हेतु नियोजन किया जाता है। नियोजन की इस प्रक्रिया में सामाजिक न्याय के साथ आर्थिक विकास को महत्त्व दिया जाता है। भारत में राष्ट्रीय स्तर के नियोजन का निर्माण योजना आयोग द्वारा किया जाता है। इस आयोग के अध्यक्ष स्वयं प्रधानमंत्री होते हैं। राष्ट्रीय स्तर पर तैयार किये नियोजन का संचालन केन्द्र सरकार द्वारा किया जाता है।

राष्ट्रीय स्तर के नियोजन में एक कमजोरी यह होती है कि इसमें जन सामान्य की भागीदारी न्यूनतम एवं अप्रत्यक्ष रूप में होती है क्योंकि यह नियोजन योजना निर्माण विशेषज्ञों तथा उच्च स्तरीय नेतृत्व के द्वारा होता है। वर्तमान में राजनीतिक पार्टियाँ अपनी पार्टी की नीतियों के अनुरूप ही नियोजन की संरचना करते हैं। इस बात को विगत वर्षों में भारतीय राजनीतिक मंच पर तेजी से आये बदलाव के रूप में देखा जा सकता है। योजना के उद्देश्यों में पार्टियों के अपने मुद्दे भी शामिल रहते हैं ताकि उनका राजनीतिक भविष्य सुरक्षित बना रह सके।

बहु-स्तरीय नियोजन में अन्तर्सम्बन्ध – नियोजन की प्रक्रिया में राष्ट्रीय स्तर से लेकर परिवार स्तर तक की एक कड़ी होती है। इनमें परिवार, ग्राम, विकास खण्ड, जनपद, क्षेत्र, प्रदेश तथा अन्त में राष्ट्र होता है। इन विभिन्न स्तरों के नियोजन के अभाव में जब राष्ट्रीय स्तर पर नियोजन किया जाता है तो उसकी जाकारी समग्र रूप में नहीं हो पाती है। योजना सीमित तथा संभ्रान्त लोगों तक ही रह जाती है। भारत में विगत वर्षो के दौरान राष्ट्रीय स्तर के नियोजन को ही अधिक महत्त्व दिया जाता रहा है। इसके कारण स्थानीय जनता को समुचित लाभ नहीं मिल पाया, जिससे आय की असमानता बढ़ी है, क्योंकि योजना संभ्रान्त परिवारों तक सीमित रह गयी थी तथा पिछड़े ग्राम व परिवार इसकी पकड़ से बाहर रह गए। छठी योजना (1980-85) में स्थानीय नियोजन पर बल दिया गया। अर्थात् बहु-स्तरीय नियोजन में यह आवश्यक होता है कि विभिन्न स्तर की योजनाओं के मध्य समन्वय स्थापित हो।

अत: विकेन्द्रीकृत नियोजन प्रणाली में राष्ट्रीय नियोजन तथा स्थानीय नियोजन के बीच प्रवाह होना आवश्यक है। राष्ट्रीय नियोजन के लक्षण स्थानीय नियोजन में तथा स्थानीय नियोजन के लक्षण राष्ट्रीय नियोजन में परिलक्षित होने चाहिए। राष्ट्रीय नियोजन प्रणाली को विकेन्द्रीकृत होकर स्थानीय लक्ष्यों की ओर अग्रसर होना चाहिए।

विकेन्द्रीकृत नियोजन में स्थानीय नियोजन – विकेन्द्रीकृत नियोजन प्रक्रिया में नियोजन को केन्द्र से स्थानीय नियोजन की ओर अग्रसर किया जाता है। स्थानीय नियोजन का दृष्टिकोण लोकतांत्रिक है क्योंकि इसके द्वारा नियोजन प्रक्रिया में आम लोगों की भागीदारी बढ़ जाती है। योजना निर्माण का कार्य जब स्थानीय लोगों द्वारा होता है तो समस्याओं को और अधिक व्यावहारिक ढ़ंग से समझा जा सकता है तथा उसके लिए उचित रणनीति व्यावहारिक तौर पर व स्थानीय समर्थन पर बनायी जा सकती है जबकि केन्द्र द्वारा थोपी गयी रणनीति में यह गुण नहीं पाया जाता है। अत: स्थानीय नियोजन का अपना एक विशेष महत्त्व रहता है।

स्थानीय नियोजन की अपनी समस्यायें भी हैं। यदि ग्रामीण विकास की प्रक्रिया में विकेन्द्रीकरण की नीतियाँ राजनीतिक इच्छाओं के प्रतिकूल हों तो स्थानीय स्तर की उपलब्धियाँ बुरी तरह प्रभावित होती हैं। स्थानीय लोगों में प्रबन्धकीय कुशलता की कमी रहती है। फलत: नियोजन के संचालन में समस्या उत्पन्न होती रहती है।

कार्यकारी नियोजन – पाँचवीं-पंचवर्षीय योजना (1974-79) के अन्त में जब देश में एकीकृत ग्राम विकास योजनायें प्रारम्भ की गयी, जिसमें निर्धनता रेखा के नीचे रहने वाले परिवेशों के जीवन स्तर में सुधार लाकर उन्हें राष्ट्रीय आर्थिक विकास की धारा में प्रवाहित करने का लक्ष्य रखा गया, तो कार्यकारी नियोजन की अवधारणा विकसित हुई। इसमें लाभार्थियों को तुरंत या शीघ्र फायदा पहुँचाने की दृष्टि से वार्षिक आधार पर योजनाएँ तैयार करके उनको लागू किया गया। तुरन्त निष्कर्ष देने वाली ये वार्षिक आधार की योजनायें कार्यकारी याजनाओं के रूप में ही जानी गई। इनके तहत लाभार्थियों की आर्थिक स्थिति में शीघ्रतापूर्वक सुधार आना प्रारम्भ हो गया। इसमें लाभर्थी को कार्यकारी योजना के अन्तर्गत इस प्रकार का प्रोजेक्ट दिया जाता है जिससे शीघ्र उत्पादन प्राप्त हो।

वर्ष के अन्त में कार्यकारी योजना की समीक्षा की जाती है और उसी आधार पर अगले वर्ष की कार्यकारी योजना का पूर्वानुमान लगाया जाता है। कार्यकारी योजना बनाते समय इस बात का ध्यान रखना होता है कि लाभार्थी का चयन, उसको दिया गया प्रोजेक्ट, अन्य विभागों से उसको मिलने वाली सहायता तथा लाभार्थी की अभिरुचि आदि की पहचान ठीक ढंग से हुई या नहीं, अन्यथा कार्यकारी योजना का आपेक्षित लाभ नहीं मिल पायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. के.के. शर्मा – भारत में पंचायती राज।
2. एस. आर. माहेश्वरी – भारत में स्थानीय शासन।
3. रविन्द्र शर्मा – ग्रामीण स्थानीय प्रशासन।
4. बी.एम. सिंन्हा – भारत में नगरीय सरकारें।
5. अशोक शर्मा – भारत में स्थानीय प्रशासन।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

निमाड़ में सन्त परम्परा - एक पुनरावलोकन

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध पत्र में निमाड़ में 15 वीं से 20 वीं सदी ईसवी तक के लगभग छह सौ वर्षों की दीर्घ अवधि में निमाड़ की सन्त परम्परा का पुनरावलोकन प्रस्तुत किया जा रहा है।

मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन की राष्ट्रव्यापी धारा की उत्तंग लहरे निमाड़ में भी उत्पन्न हुई। यहाँ अनेक सन्त हुये हैं, जिन्होंने मानववादी पथ पर चलकर भेदभाव, जाति-पाँति, छुआछूत, पाखण्ड, आडम्बर आदि के अभिषापों से समाज को मुक्ति प्रदान करने में योगदान दिया है। वे न केवल स्वयं के मोक्ष के प्रति साधनारत रहे, अपितु उन्होंने जन कल्याण के लिये प्रत्येक पल सक्रिय रहे। उन्होंने भक्ति भाव, अध्यात्म, दर्शन आदि की अभिव्यक्ति के लिये काव्य एवं गद्य का सृजन किया। हैं।

ज्ञात ही है कि मध्यप्रदेश के दक्षिण-पश्चिम भाग में इन्दौर संभाग में निमाड़ स्थित है। 'आयताकार निमाड़ 21°5' उत्तरी अक्षांश से 22°38' उत्तरी अक्षांश तक तथा 74°2' पूर्वी देशान्तर से 77°13' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है।'[1] 1 नवम्बर, 1956 को नये मध्यप्रदेश के निर्माण के समय निमाड़ को दो भागों में विभक्त किया गया- 1. पश्चिमी निमाड़ एवं 2. पूर्वी निमाड़।'[2]

शोध प्रविधि – शोध पत्र हेतु तथ्य संकलन के लिये सन्तों की रचनाओं को मूल आधार बनाया गया। इतिहास लेखन के लिये स्त्रोतों की प्रामाणिकता अनिवार्य आवश्यकता होती है। सन्त ब्रह्मगीर, सन्त सिंगाजी, सन्त कालूजी, सन्त दलूदास, सन्त खेमदास, सन्त धनजीदास, सन्त फकीरानाथ, सन्त बोंदरू, सन्त अफजल, सन्त हरिदास, सन्त पुरुषोत्तम नागर ने बहुत लिखा है या इनका कहा हुआ इनके अनुयायी लिपिबद्ध करते रहे। इनके अधिकांश भजनों को संग्रहित कर निमाड़ के या निमाड़ पर लिखने वाले साहित्यकारों जैसे डॉ. कृष्णलाल हंस, श्री रामनारायण उपाध्याय, डॉ. रमेशचन्द्र गंगराड़े, डॉ. श्रीराम परिहार, श्री बाबूलाल सेन, श्री रामशंकर गंगराड़े आदि ने संकलित एवं अनुदित कर पुस्तकाकार में प्रकाशित किया है। कुछ भजन मण्डलियों के पास डायरियों में हस्तलिखित भजन भी पढ़ने को मिले। सन्त साहित्य से तत्कालीन स्थितियों और उनकी शिक्षाओं पर प्रकाश पड़ता है, उसे संचित, विश्लेषित कर शोध पत्र की रचना की गई है।

सन्त परम्परा – सैद्धांतिक विवेचन – सन्त परम्परा पर अनुसंधान करने पर स्पष्ट हुआ है कि भिन्न-भिन्न संज्ञाओं के रूप में इसका अस्तित्व भारत में प्राचीन काल से रहा है। कालान्तर में सन्त शब्द के अर्थ का विकास होने पर यह 'अच्छा', 'सदाचारी', 'शान्त', 'पवित्रात्मा', 'परोपकारी' आदि का द्योतक हो गया। साधु या महात्मा के अर्थ में सन्त शब्द का प्राचीनतम प्रयोग विट्ठल बारकरी सम्प्रदाय के ज्ञानदेव एवं अन्य सन्तों के लिये हुआ है। सन्त मत बौद्ध धर्म और उसके साहित्य से अनुप्राणित है। बौद्ध धर्म की वज्रयान शाखा की घोर तांत्रिक प्रक्रिया से उदित नाथ सम्प्रदाय से प्रेरणामूलक तत्वों को लेकर सन्त मत अवतरित हुआ। गीता, रामचरितमानस जैसे ग्रन्थों के अनुसार सन्त उदात्त गुणों से युक्त तथा प्रत्येक स्थिति में सम रहने वाला होता है।

मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में भारत में सन्त परम्परा का प्रारम्भ जयदेव (12 वीं सदी) से माना जाता है। जयदेव से लेकर आधुनिक काल तक हुये सन्तों में रामानन्द, कबीर, नानक, तुलसीदास जैसे अनेक महान सन्त हुये। निमाड़ में सन्त परम्परा ब्रह्मगीर से प्रारम्भ हुई है, जिसे मनरंगीर, भावसिंह, कालूजी, अफजल, लालदास, कालूदास, खुश्यालदास, दशरथ, नन्दलाल, हरिदास स्वामी आदि ने आगे बढ़ाया।

निमाड़ की सन्त परम्परा – निमाड़ के प्रमुख सन्तों को का अध्ययन दो-दो शताब्दियों के कालखण्ड में विभक्त करके किया गया।

अ- पन्द्रहवीं-सोलहवीं सदी के प्रसिद्ध सन्त – पन्द्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी में ब्रह्मगीर, मनरंगीर, सिंगाजी, जगन्नाथगीर, भावसिंह, कालूजी आदि ने सन्त के रूप में ख्याति अर्जित की। सन्त ब्रह्मगीर निमाड़ की सन्त परम्परा के प्रथम सन्त तथा निमाड़ के सन्त साहित्य के आद्य प्रवर्तक थे। वे निर्गुण निराकार के साधक थे। उन्होंने लोक प्रीति के स्थान पर ब्रह्म आराधना का आग्रह किया। उनके असंख्य षिष्य हुये, जिनमें मनरंगीर विशेष प्रसिद्ध हुये। मनरंगीर भी अपने गुरू की भाँति निर्गुण निराकार के उपासक थे। उनकी अभिव्यक्ति सम्मोहक थी, जो न केवल उन्हें विचारपूर्वक सुनने के लिये उपस्थित हुये भक्तों को अपितु उनकी आवाज की परिधि से गुजरते राह चलते लोगों को भी पूर्णत: प्रभावित करती थी। स्वामी मनरंगीर निमाड़ के पहले सन्त हैं, जिनके साथ चमत्कारिक जनश्रुतियाँ सम्बद्ध हैं। सिंगाजी एवं जगन्नाथगीर उनके प्रमुख शिष्य थे। सिंगाजी सर्वकालिक महान सन्त थे। वे निमाड़ के ही नहीं सम्पूर्ण भारत के भक्ति आन्दोलन के सन्तों की अग्रगण्य पंक्ति में सम्मिलित किये जा सकते हैं। सन्त सिंगाजी निमाड़ के लोकजीवन के सर्वप्रेरक सन्त-साधक थे। उनका व्यक्तित्व बहुआयामी था। उनमें दर्शन की सार्थकता, ज्ञान की गंभीरता, प्रेम की तरलता और हठयोग की कठोर साधना का एक साथ दिग्दर्शन होता है। इस अंचल में वे ऐसे अवतारी पुरुष के रूप में मान्य हैं, जो पृथ्वी के कष्टों को दूर करने के लिये संसार में अवतरित हुये थे। उन्होंने अल्प जीवनकाल में अप्रतिम उपलब्धियाँ प्राप्त कीं। सिंगाजी के ग्यारह सौ भजन निमाड़ की धरोहर बन गये। उनके जीवनकाल में असंख्य लोग उनके अनुयायी बन गये थे। उनके द्वारा समाधि ग्रहण करने के बाद उन्हें मानने और पूजने वालों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई। वर्तमान में निमाड़ का यादव समाज ही नहीं बल्कि हर समाज का व्यक्ति सिंगाजी को देवरूप में देखता है। सन्त जगन्नाथगीर सन्त सिंगाजी के समकालीन थे। उन्होंने अपने काव्य तथा उपदेशों में जीवन की सादगी पर बहुत बल दिया।

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

उनकी मान्यता थी कि अत्यधिक महत्वाकांक्षा कष्ट का कारण बनती है। सन्त भावसिंह सन्त सिंगाजी को अपना गुरू स्वीकार करते थे। सन्त भावसिंह ने एकेश्वरवाद का समर्थन किया और कहा कि समस्त सृष्टि का सृजक एवं पालक एक ही ब्रह्म है। सन्त के रूप में उनकी ख्याति असीम थी और जन सामान्य में उनके प्रति अटूट आस्था थी। सन्त कालूजी सन्त सिंगाजी के ज्येष्ठ पुत्र थे और उन्हें ही अपना गुरु मानते थे। वे कर्मवादी थे और उन्होंने अपने अनुयायियों को कर्म का सन्देश दिया है। तथा मानवीय गुणों के विकास का स्नेहपूर्वक आग्रह किया। प्रथम दो शताब्दियों में हुये छह सन्तों में से तीन सिंगाजी, भावसिंह एवं कालूजी ने जीवित समाधि लेकर यह सिद्ध किया कि उन्हें जीवन के प्रति कोई मोह नहीं था। इन्होंने निमाड़ में भक्ति आन्दोलन की दृढ़ नींव ही नहीं स्थापित की अपितु उसकी ऊँची अट्टालिका भी निर्मित कर दी।

ब– सत्रहवीं–अठारहवीं सदी के प्रसिद्ध सन्त – सत्रहवीं–अठारहवीं शताब्दी में निमाड़ में प्रमुख रूप से दलूदास, खेमदास, धनजीदास, लालदास, बोंदरू, अफजल आदि सन्त हुये। इनमें अफजल सर्वकालिक महान सन्त थे। सन्त दलूदास सन्त कालूजी के पुत्र और सन्त सिंगाजी के पौत्र थे। वे सन्त सिंगाजी के अनन्य भक्त थे तथा उन्हें अपना गुरू मानते थे। वे तत्कालीन सामाजिक प्रवृत्तियों से चिन्तित थे और उन्हें कलियुग की विशिष्टताएँ मानते थे। सन्त खेमदास सन्त सिंगाजी के षिष्य और उनके पौत्र थे। 'सिंगाजी की परचरी' उनके द्वारा रचित बहुमूल्य पुस्तक है। यह एकमात्र रचना है, जिसे पढ़कर सन्त सिंगाजी का पूर्ण परिचय ज्ञात होता है। सन्त धनजीदास भी सन्त सिंगाजी के षिष्य थे। वे एक उत्कृष्ट कोटि के साहित्यकार थे। उन्होंने श्रीमद्भागवत एवं महाभारत की घटनाओं के आधार पर अनेक कथाओं की रचना की है। सन्त लालदास भगवान कृष्ण के परम भक्त थे। उन्होंने हरिजन समाज में जन्म लेकर अपने सदकार्यों से समाज का गौरव बढ़ाया। सन्त बोंदरू को गुरू, गुरू मंत्र एवं गुरू दीक्षा की प्राप्ति सेवा के प्रतिफलस्वरूप हुई। आम आदमी से लेकर बड़वानी के तत्कालीन राजा–रानी तक उनके अनुयायी थे। सन्त अफजल निर्गुण निराकार के उपासक, भक्ति और योग के समन्वय कर्ता होने के साथ ही अध्यात्म का ज्ञान देने वाले धर्म गुरू थे। उनके साहित्य के अध्ययन से स्पष्ट है कि उनकी दृष्टि व्यापक थी और वे समाज सुधारक के रूप में सर्वधर्म समन्वयकारी थे। इस कालखण्ड के दो सन्तों लालदास और बोंदरू ने जीवित समाधि ग्रहण की थी।

स– उन्नीसवीं–बीसवीं सदी के प्रसिद्ध सन्त – भारत में उन्नीसवीं शताब्दी पुनर्जागरण आन्दोलन की शताब्दी के रूप में सुविदित है।

इस दौर में निमाड़ में रंकनाथ, दीनदास, फकीरानाथ, बुखारदास, कालूदास, खुश्यालदास, दशरथनाथ, नंदलाल, हरिदास, दादा धूनी वाले, पुरुषोत्तम नागर, मौनी बाबा, डेमन्या बाबा जैसे महत्वपूर्ण सन्त हुये। सन्त रंकनाथ का वास्तविक नाम कृष्णानन्द था। उन्होंने गंगागीर नामक संन्यासी से दीक्षा ली थी। कृष्ण भक्त रंकनाथ बहुभाषाविद् थे। उन्होंने माया, ममता, तृष्णा आदि मनोविकारों का प्रभावी दृष्टान्तों के माध्यम से विवेचन किया है और उनसे परे रहने की अपेक्षा जनमानस से की है। सन्त दीनदास का वास्तविक नाम सदाशिव था। वे बाल्यावस्था से पौरोहित्य कार्य करते हुये प्रभुभक्ति की ओर अग्रसर होते रहे। उन्होंने सन्त रंकनाथजी से दीक्षा ग्रहण की थी। सन्त फकीरानाथ की रचनाएँ निमाड़ी लोक साहित्य में आधुनिक काल का प्रारम्भ मानी जाती हैं। सन्त बुखारदास ने स्वामीदास बाबा से दीक्षा ग्रहण की थी। उन्होंने उपदेश हेतु भजनों की अपेक्षा वार्तालाप शैली को अधिक अपनाया है। सन्त कालूदास के गुरु सन्त अफजल थे। उन्होंने धर्म के नाम पर बाह्य आडम्बरों में उलझने को निरर्थक निरुपित किया और निर्मल मन से सात्विक भक्ति की प्रेरणा दी। सन्त खुश्यालदास पर सन्त अफजल तथा सन्त कालूदास की शिक्षाओं का विशेष प्रभाव था। वे अनामी सम्प्रदाय की नागझिरी गुरुगादी के महन्त थे। उनके अनुसार चौरासी लाख योनियों में भटकने के पश्चात् पुण्यों के फलस्वरूप मिले मानव शरीर का सदुपयोग प्रति क्षण साधना करते हुये किया जाना चाहिये। सन्त दशरथ ने सन्त खुश्यालदास से गुरू दीक्षा ग्रहण की। उन्होंने दृश्य जगत के भौतिक तत्वों के मध्य सूक्ष्मतम आत्मतत्व की उपस्थिति का प्रभावी चित्रण किया है। सन्त नन्दलाल का वास्तविक नाम नन्ददास था। उन्होंने सन्त अफजल से मानसिक दीक्षा ग्रहण की और सन्त नन्दलाल हो गये। वे अनामी सम्प्रदाय की नवीन सनावद शाखा के महन्त के पद पर आसीन हुये। सामाजिक विसंगतियों के प्रति अपने अनुयायियों को सजग करने वाले सन्त नन्दलाल का दृष्टिकोण तार्किक तथा वैज्ञानिक था। उनकी शिक्षाएँ तर्क की कसौटी पर खरी उतरती हैं तथा श्रोताओं का उत्कृष्ट व्यावहारिक जीवन के लिये पथ–प्रशस्त करती हैं। सन्त हरिदास का मूल नाम हरिसिंह था। उन्होंने श्री सीताराम महाराज से दीक्षा ग्रहण की। वे अनामी सम्प्रदाय की हरदा शाखा से संबंधित थे। वे काव्य रचना और शास्त्रीय संगीत में कुशल थे। भारत की उदात्त सांस्कृतिक परम्पराओं से प्रभावित सन्त हरिदास ने देशवासियों द्वारा पाश्चात्य वेशभूषा, शिक्षा, व्यवहार आदि अपनाये जाने पर भी चिन्ता व्यक्त की है। सन्त दादा धूनीवाले का बाल्यावस्था का नाम माधव था। वे सदैव धूनी रमाकर तपस्या करते थे। इसीलिये वे दादा धूनीवाले के नाम से विख्यात हुये। श्री गौरीशंकर महाराज ने उन्हें दीक्षा देकर उन्हें केशवानंद नाम दिया। 1930 ई. में वे खण्डवा आये। उसी वर्ष उन्होंने भवानी माता मंदिर के पास समाधि ले ली। इस स्थल को दादाजी दरबार के नाम से जाना जाता है। उनके अनन्य शिष्य हरिहरानंदजी महाराज आश्रम के उत्तराधिकारी बने और छोटे दादा धूनीवाले के नाम से प्रसिद्ध हुये। देशभर में फैले लगभग 27 आश्रम खण्डवा के मुख्य आश्रम से जुड़े हुएहैं। सन्त पुरुषोत्तम नागर स्वाध्याय और स्वसाधना के द्वारा अध्यात्म के मार्ग पर अग्रसर हुये। चौदह वर्षो तक उन्होंने कठिन तपस्या एवं साधना की। उन्होंने अकूत मात्रा में सत्साहित्य का सृजन किया। उन्होंने खरगोन में 'प्रभुकृपा' आश्रम की स्थापना की थी। सन्त मौनी बाबा का वास्तविक नाम सन्त रामदास है। उन्होंने सन् 1959 में श्री अयोध्यादासजी महाराज से दीक्षा ग्रहण की थी। साधना सम्बन्धी मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिये उन्होंने श्री रामसेवकदास जी को गुरू बनाया था। मौन रहकर ईश्वर चिन्तन करना उनकी साधना का प्रमुख अंश है, अत: वे मौनी बाबा के नाम से सुविख्यात हुये। वैदिक याज्ञिक कर्म में उनकी विशेष आस्था है। मध्यप्रदेश के महेश्वर में तथा कर्नाटक के यादगीरी में उनके आश्रम स्थित हैं। सन्त डेमन्या का जन्म जनजाति परिवार में टाण्डा ग्राम में हुआ। वे गायत्री परिवार के कार्यों से प्रभावित हुये। इन्हें गायत्री परिवार के अधिष्ठाता आचार्य श्रीराम शर्मा के दर्शन करने का अवसर प्राप्त हुआ। व्यसन मुक्त समाज बनाने के मिशन के प्रति उनके हार्दिक समर्पण के कारण वे न केवल निमाड़ में अपितु सम्पूर्ण भीलांचल में समाज सुधारक सन्त के रूप में सम्मान प्राप्त कर चुके हैं।

उपसंहार – इस प्रकार नर्मदा उपत्यका सेवानिष्ठ सन्तों की दीर्घ परम्परा की पोशक और साक्षी रही है। कबीर के समकाल से लेकर अद्यतन धर्म, दर्शन और अध्यात्म की धारा यहाँ प्रवाहित है। सन्त सिंगाजी और सन्त अफजल का अवदान अखिल भारतीय स्तर पर स्वीकार्य एवं प्रशंसित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुमार, डॉ. प्रमीला, मध्यप्रदेश – एक भौगोलिक अध्ययन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 2002, पृष्ठ–41.
2. वंशी, बलदेव, भारतीय सन्त परम्परा, किताब घर, नईदिल्ली, 2010, पृष्ठ–23.
3. उपाध्याय, रामनारायण, निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास, विश्वभारती प्रकाशक, नागपुर, 1980, पृष्ठ– 142.
4. सेन, बाबूलाल, नर्मदांचल के सन्त कवि, माहिष्मती प्रकाशक, महेश्वर, 1995, पृष्ठ– 1–2.
5. उपाध्याय, रामनारायण, निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास, विश्वभारती प्रकाशक, नागपुर, 1980, पृष्ठ– 188.
6. परिहार,डॉ श्रीराम, कहे जन सिंगा, मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल, 1996, पृष्ठ– प्रस्तावना–08–10.
7. यह पाण्डुलिपि निमाड़ लोक संस्कृति न्यास, खण्डवा के संग्रहालय में संरक्षित है।
8. हंस, डॉ. कृष्णलाल, निमाडी और उसका साहित्य, हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, 1956, पृष्ठ– 284.
9. उपाध्याय, रामनारायण, निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास, विश्वभारती प्रकाशक, नागपुर, 1980, पृष्ठ– 161.
10. हंस, डॉ. कृष्णलाल, निमाडी और उसका साहित्य, हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, 1956, पृष्ठ–289–90.
11. पाण्डेय, डॉ. नन्दकिशोर, सन्त साहित्य की समझ, रचना प्रकाशक, जयपुर, 2001. पृष्ठ–147.
12. सेन, बाबूलाल, नर्मदांचल के सन्त कवि, माहिष्मती प्रकाशक, महेश्वर, 1995, पृष्ठ– 25.
13. सेन, बाबूलाल, निमाड़ी साहित्य के कलमकार–कलाकार, माहिष्मती प्रकाशक, महेश्वर, 2003, पृष्ठ– 51.
14. हंस, डॉ. कृष्णलाल, निमाडी और उसका साहित्य, हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, 1956, पृष्ठ– 295.
15. सेन, बाबूलाल, निमाड़ी साहित्य के कलमकार–कलाकार, माहिष्मती प्रकाशक, महेश्वर, 2003, पृष्ठ– 73.
16. नागर, पुरुषोत्तम, शतक समग्र, श्री पुरुषोत्तम साहित्य सुधालय, इन्दौर, प्रथम संस्करण, पृष्ठ– 02.

****

बैंकों में नवीन तकनीक एवं लागत नियंत्रण

सचिन दुबे * डॉ. घनश्याम अग्रवाल **

प्रस्तावना – बैंक में दावों के निपटान के लिए उन्नत कौशल एवं बेहतर शर्तो के साथ न्यूनतम् दरों पर बैंक की सम्पत्तियों के लिए बीमा पॉलिसियां खरीदने हेतु कारपोरेट केन्द्र में बैंक के बीमा कक्ष का गठन किया गया है। बैंक ने 99.50 प्रतिशत की सीमा तक यूनिक कस्टमर आइडेंटिफिकेशन कोड (यूसीआईसी) पर भारतीय रिजर्व बैंक के अनुदेशों का पालन भी किया है। परिचालन लागत कम करने की दृष्टि से बैंक ने करेंसी चेस्ट को युक्तिसंगत बनाना प्रारंभ किया है, जिसमें से वित्त वर्ष 2016 के दौरान 105 करेंसी चेस्टों को बंद किया गया, जिसके कारण लगभग 50 करोड़ रुपए प्रतिवर्ष की आवर्ती खर्चे से बचत हो रही हैं।

बैंक की सीपीसी रीडिजीइन एवं अन्य परियोजनाएं कार्यकुशलता बढ़ाने के लिए जोखिम निर्धारण एवं चुनौतियों व बैंक के विभिन्न उत्पादों व सेवाओं की सुपुर्दगी सहित प्रक्रिया में परिवर्तन एवं रीडिजाइन पर लगातार कार्य कर रही हैं। पर्याप्त लागत नियंत्रण एवं घटाव हासिल करने के लिए बैंक ने रजिस्टरों एवं फार्मो की खरीदियों को भी केन्द्रीकृत एवं युक्तिसंगत बनाया है और लेखन सामग्री प्रबंधन के लिए आउटसोर्सिंग मॉडल प्रारंभ किया है। घटी हुई वेस्टेज एवं सवंर्धित कुशलता की दृष्टि से थोक खरीदी का इष्टतम लाभ उठाने के लिए लेखनसामग्री मदों की आंतरिक आपूर्ति के स्थान पर वेब आधारित लेखन सामग्री प्रबंधन के आउटसोर्सिंग मॉडल को लागू किया जा रहा है। इस पहल से परिसर के किराये, भंडारण के प्रबंधन, अप्रचलित लेखन सामग्री की मदों, श्रमशक्ति एवं परिवहन आदि पर इस समय हो रहे व्यय को कम करने में सहायता मिलेगी। डिजिटाईजेशन एवं खाता खोलने के फामों के आसान रिट्रीवल के लिए वर्ष के दौरान इलेक्ट्रॉनिक डाटा प्रबंधन प्रणाली शुरु की गई। खाता खोलने के फार्मो के डिजिटाईजेशन का उद्देश्य खाता खोलने के फार्म को इलेक्ट्रॉनिक रुप में रखने और सभी 14 एलसीपीसी मे उनके चित्र को रिट्रीव करना है। यह पेन इण्डिया आधार वर्ष 2016-17 तक पूर्ण हो जाएगा।

बैंकों ने अपने सूचना प्रौद्योगिकी बजट के अधिकांश भाग का स्वचालन किया है और कुशल प्रबंधन एवं वित्तीय नियंत्रण हेतु संसाधनों का उपयोग सुनिष्चित करता है। कॉरपोरेट संस्कृति में आरओआई को और पक्का बनाने के लिए चार्ज बैंक मॉडल की शुरुआत वर्टिकल द्वारा की गई हैं।

वित्तीय संस्थान व्यवसाय इकाई बैंकों, म्युचुअल फंडों, बीमा कम्पनियों, दलाली फर्मो और गैर बैंकिंग वित्तीय कम्पनियों जैसे वित्तीय संस्थानों के संभावित व्यवसाय को प्राप्त करने के लिए स्थापित की गई इकाई है। इन संस्थानों के नकदी प्रबंधन को आसान बनाने के लिए संग्रहण और भुगतान के विभिन्न उत्पाद उपलब्ध कराने के अलावा बीमा कम्पनियों को 'ईजि कलेक्ट' सुविधा दी गई हैं, जिसके अन्तर्गत प्रीमियम का संग्रहण सभी शाखाओं में हो सकता है। म्युचुअल फंडों को इंट्रा-डे लिमिट सुविधा प्रदान की गई हैं। पूंजी बाजार व्यवसाय करने वाले ग्राहकों और दलालों की आवष्यकताएँ पूरी करने के लिए पूंजी बाजार शाखा (सी. एम. बी.) जो विशेष प्रकार की शाखा है, मुंबई में कार्यरत है। वित्त वर्ष 2016 में सी एम बी ने 119 बांडो, एफ. पी. ओ., आइ. पी. ओ. का प्रबंध किया और निर्गम के बैंकर (बी आइ टी) के रुप में 29,307 करोड़ रुपये (कासा) का संग्रहण किया। प्राथमिक बाजार क्षेत्र (ऋण सार्वजनिक निर्गम, बोलियाँ बैंक) और प्राथमिक बाजार क्षेत्र (ईक्विटी-आइ. पी. ओ., एफ. पी. ओ. बोलियाँ-बैंक) में सन् 2016 में बी. एस. ई. के तीन शीर्ष निष्पादकों में से एक का स्थान सी. एम. पी. का है।

नकद राशि प्रबंधन उत्पाद (सी एम पी) – नकदी प्रबंधन सेवाओं में संग्रहण, भुगतान और चलनिधि आदि सम्मिलित होता है। बैंक जो सेवाएँ उपलब्ध करा रहा है, वे इस प्रकार है-चेक और नकदी संग्रहण (जिसमें द्वारस्थ बैंकिंग शामिल है), सार्वजनिक निर्गमों के लिए संग्रहण, ई-संग्रहण ई-भुगतान, मेंडेट एवं अन्य कागजी प्रलेखों जैसे कि लाभांश वारंट, रिफंड और ब्याज वारंट, सममूल्य पर जारी कारपोरेट चेक तथा बहुनगरीय चेक का प्रबंधन। कारपोरेट और संस्थात्मक ग्राहकों को संग्रहण की सुविधा प्रौद्योगिकी प्लेटफॉर्म एबीआई एफ ए एस टी (अल्पतम समय में निधि की उपलब्धता) देश भर की 1854 प्राधिकृत शाखाओं के नेटवर्क के माध्यम से उपलब्ध कराई गई हैं, वहीं एसबीआई की 16,400 से अधिक शाखाओं का संपूर्ण नेटवर्क बड़े मध्य कारपोरेटों, लघु एवं मध्यम उद्यमों, गैर बैंकिंग वित्तीय कम्पनियों, संस्थात्मक ग्राहकों, म्युचुअल फंडों और बीमा कम्पनियों को संग्रहण की सुविधा विशेष रुप से डिजाइन किए गए उत्पादों के माध्यम से उपलब्ध कराता है, इसमें ईजी कलेक्ट, पॉवर ज्योति, प्री लोड आदि प्रमुख है। बैंक ई-भुगतान के विभिन्न उत्पाद भी उपलब्ध करता है, जिनकी प्रक्रिया सुरक्षित होती हैं और जो होस्ट-टू-होस्ट सुविधा वाले अन्य पोर्टल के माध्यम से उपलब्ध कराई जाती हैं। इस व्यवसाय में पिछले तीन वर्षो से निरन्तर वृद्धि हो रही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एसबीआई वार्षिक रिपोर्ट 2015-16
2. जैन, डॉ. एस. सी. - भारत में बैंकिंग विधि एवं व्यवहार
3. राजन, कमला - भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में क्षमतावर्धन और मानव संसाधन विकास, किताब घर पब्लि. डिस्ट्री., नई दिल्ली, 2014.
4. स्वविवेक पर आधारित।

*शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
**प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा, जिला-बड़वानी (म.प्र.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

प्राचीनकालीन निमाड़

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना – वर्तमान में मध्यप्रदेश के इन्दौर संभाग में स्थित निमाड़ क्षेत्र का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। पाषाणकाल से लेकर आज तक इसके इतिहास में निरंतरता है। दुनिया के जो क्षेत्र आदिमानव की आवास स्थली माने जाते हैं, उनमें निमाड़ क्षेत्र भी सम्मिलित है। प्रस्तुत शोधपत्र में निमाड़ के प्राचीन इतिहास की विशिष्टताओं का विवेचन किया जा रहा है।

पाषाणकालीन निमाड़ – सामान्यत: प्रारम्भ से इस्लामिक सत्ता की स्थापना के पूर्व अर्थात् 12 वीं सदी ईसवी तक की अवधि प्राचीन काल के अन्तर्गत मानी जाती है।

निमाड़ के प्राचीन इतिहास का प्रारम्भ पाषाण काल से होता है। यह क्षेत्र मध्यप्रदेश का प्राचीनतम संस्कृति और सभ्यता का संयुक्त केन्द्र स्थल रहा है। कसरावद से करीब पाँच किलोमीटर दूर स्थित इतबर्डी नामक टीले की खुदाई 1936 में नर्मदा व्हैली रिसर्च बोर्ड के सचिव व्ही. आर. करन्दिकर के निर्देशन में प्रारम्भ की गई थी। इनकी मृत्यु के पश्चात् यह कार्य इन्दौर संग्रहालय के क्यूरेटर व्ही. एन. सिंह द्वारा जारी रखा गया। यहाँ खुदाई में बौद्ध स्तूप, निवास गृह, मृदभाण्ड तथा मिट्टी, पत्थर एवं धातु की बनी हुई वस्तुएँ प्राप्त हुईं। इसी तरह महेश्वर के ठीक सामने नर्मदा के दूसरे तट पर नावडाटोली नामक स्थान का उत्खनन डेक्कन कॉलेज रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना के संचालक डॉ. हंसमुख धीरजलाल सांकलिया के निर्देशन में 1952-53 एवं 1957-59 के दौरान किया गया था। खुदाई में प्राप्त अवशेषों के अनुसार निमाड़ के इस क्षेत्र में पूर्व पाषाणकाल, मध्य पाषाणकाल एवं ताम्र-पाषाणकाल में मनुष्य का निवास था। मण्डलेश्वर तथा सहस्त्रधारा के मध्यवर्ती क्षेत्र में खुदाई में चार सौ से अधिक पुरापाषाणिक औजार प्राप्त हुये हैं। इनमें से कुछ औजार उन समूहों के थे, जिन्हें डि टेरा और पेटरसन ने क्रमश: 'निम्न' तथा 'उच्च' नर्मदा समूह की संज्ञा दी है। ये औजार प्रारम्भिक पाषाण काल के हैं तथा प्रागैतिहासिक काल की प्रथम सांस्कृतिक विकास अवस्था के द्योतक हैं।

भारत में सर्वाधिक चित्रित शिलाश्रय मध्यप्रदेश में प्राप्त हुये हैं। पूर्वी निमाड़ में भी कुछ शिलाश्रय मिलते हैं। इनकी भीतरी छतों और दीवारों पर चित्रकारी की गई है। विविध आयुधों से पशु-पक्षियों का शिकार, जानवरों की लड़ाई, मानवों के परस्पर युद्ध, पशुओं की सवारी, गीत, नृत्य, पूजन, मधुसंचय आदि को चित्रित किया गया है।

महाकाव्यकालीन निमाड़ – रामायण एवं महाभारत के वर्णनों में महाकाव्य काल में निमाड़ भू-भाग में भी महत्वपूर्ण राजसत्ता होने का उल्लेख है।

सुदूर रामायण काल में ईसवी पूर्व 1600 में यहाँ पर महिष्मती (आधुनिक महेश्वर) को राजधानी बनाकर एक सशक्त राज्य स्थापित था। महिष्मती को हैहयवंशीय राजा सहस्त्रार्जुन की राजधानी होने का गौरव प्राप्त था। वाल्मीकि रामायण में हैहयवंशीय सहस्त्रार्जुन को महिष्मती नगर का राजा महाविजयी अर्जुन लिखा है। महाबली रावण को सहस्त्रार्जुन ने महेश्वर में पराजित किया था। 'सहस्त्रार्जुन ने जहाँ अपने सहस्त्रों हाथों से नर्मदा को रोका था, वह महेश्वर के निकट आज भी 'सहस्त्रधारा' के रूप में विख्यात है।'[1] यहीं सहस्त्रार्जुन और रावण में युद्ध हुआ था, ऐसा उल्लेख वाल्मीकि रामायण में मिलता है।

महाभारत युग में कौरव-पाण्डवों का प्रभाव निमाड़ के धरमपुरी, सिरवेल, कसरावद, महेश्वर, बड़वानी आदि क्षेत्रों में व्याप्त था। महाभारत काल में युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के प्रसंग में चेदीवंश के राजा शिशुपाल की राजधानी महिष्मती में होना बताया गया है। महाभारत में कई स्थानों पर आये वर्णनों से निमाड़ की महत्ता का पता चलता है। सभा पर्व के अनुसार महिष्मती एक प्राचीन नगरी थी, जो राजा नील की राजधानी थी। राजा नील महाभारत के युद्ध में कौरव पक्ष की ओर से पाण्डवों के विरुद्ध सम्मिलित हुआ था। 'दक्षिण दिग्विजय के समय सहदेव ने इस नगरी पर आक्रमण करके राजा नील को परास्त किया था।'[2]

महाजनपदकालीन निमाड़ – बौद्ध ग्रंथ अंगुत्तर निकाय, जैन ग्रंथ भगवति सूत्र या व्याख्या-प्रशस्ति तथा अन्य ग्रंथों से ज्ञात होता है कि छठी शताब्दी ईसवी पूर्व के लगभग उत्तर भारत में सोलह महाजनपद राज्य स्थापित थे। इनके नाम थे- अंग, मगध, काशी, कोशल, वत्स, कुरू, पांचाल, मत्स्य, शूरसेन, अवन्ति, गांधार, कम्बोज, चेदि, अस्मक, वज्जि एवं मल्ल। इनमें मगध, कौषल और अवन्ति दूसरों की अपेक्षा अधिक सुसंगठित एवं शक्तिषाली थे। चेदि और अवन्ति जनपद मध्यप्रदेश क्षेत्र में स्थित थे। अवन्ति जनपद वर्तमान उज्जैन तथा उसके निकटवर्ती क्षेत्रों से मिलकर बना था। वेत्रवती नदी द्वारा यह प्रदेश उत्तर तथा दक्षिण दो प्रान्तों में विभक्त था। उत्तर अवन्ति की राजधानी उज्जयिनी और दक्षिण अवन्ति की राजधानी महिष्मती थी। राजगृह से प्रतिष्ठान तक जाने वाले सुप्रसिद्ध दक्षिणी राजमार्ग पर महिष्मती स्थित थी।

मगध साम्राज्य के समय निमाड़ – छठी शताब्दी ई. पू. में मगध का एक शक्तिशाली साम्राज्य के रूप में उत्थान हुआ। प्राचीन मगध आधुनिक बिहार के पटना और गया जिलों के क्षेत्रों में फैला हुआ था। इसका क्रमश: विस्तार होता गया। मगध को सशक्त करने का श्रेय हर्यक वंश, शिशुनाग वंश, नन्द वंश एवं मौर्य वंश के सम्राटों का महती योगदान रहा है। अवन्ति (जिसके अन्तर्गत निमाड़ का क्षेत्र भी सम्मिलित था) में हुये चण्डप्रद्योत जैसे शक्तिशाली शासक ने दीर्घ काल तक राज्य को मगध का हिस्सा बनने से बचाये रखा। शिशुनाग वंश के संस्थापक सम्राट शिशुनाग ने अवन्ति को परास्त किया। नन्द वंश के सम्राट महापद्मनन्द एवं उसके उत्तराधिकारियों

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

तथा मौर्य वंश के सम्राटों ने भी इस क्षेत्र पर अपना आधिपत्य बनाये रखा। चन्द्रगुप्त मौर्य के पुत्र बिन्दुसार के शासन काल में उसका पुत्र अशोक अवन्ति का प्रान्तपति बनाया गया था। पुरातात्विक स्त्रोतों से भी प्रमाणित होता है कि मध्यप्रदेश का क्षेत्र मौर्य साम्राज्य के अन्तर्गत था। मध्यप्रदेश के विभिन्न भागों में मौर्यकालीन ब्राह्मी लिपि में लिखे हुये अभिलेख मिले हैं। ये स्थान हैं- आरंग, कसरावद (निमाड़), कारीतलाई, खरवई, भैन्यपुरा तथा रामगढ़। इसी तरह मौर्य काल के आहत सिक्के भी अनेक स्थलों पर प्राप्त हुये हैं।

हैहेय वंश के समय निमाड़ - तीसरी शताब्दी में निमाड़ के उत्तरी भाग पर हैहेयवंषी राजाओं का अधिकार था, उन्होंने भी महिष्मती को राजधानी बनाया था। ऐसा ज्ञात होता है कि यह वंश 'सर्वप्रथम 240 ईसवी में महेश्वर आया और यहीं से कुछ हैहेयवंशी पूर्व की ओर जाकर बुंदेलखण्ड में बस गये।'[3]

गुप्त साम्राज्य के समय निमाड़ - 275 ई. में श्रीगुप्त द्धारा स्थापित गुप्त साम्राज्य अपनी समग्र उपलब्धियों के कारण प्राचीन भारत के स्वर्ण युग के रूप में अभिहित है। सन् 360 से 533 ई. तक निमाड़ क्षेत्र पर गुप्त वंष के राजाओं का शासन रहा। इस अवधि में समुद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त द्धितीय (विक्रमादित्य), कुमारगुप्त, स्कन्दगुप्त प्रभृति महान सम्राटों का राज्य रहा। समुद्रगुप्त ने अपनी दिग्विजयों के द्धारा मध्यप्रदेश के बड़े भाग पर अपना अधिकार कर लिया था। इसके उत्तराधिकारी चन्द्रगुप्त द्धितीय ने साम्राज्य को और अधिक विस्तार एवं दृढ़ता प्रदान की। उसने पाटलिपुत्र के साथ ही अवन्तिका को भी राजधानी बनाया था। इसके सिक्कों से मध्यप्रदेश पर इसकी सत्ता का प्रमाण मिलता है। स्कन्दगुप्त के परवर्ती सम्राटों में पुरुगुप्त, बुधगुप्त, नरसिंहगुप्त, कुमारगुप्त द्धितीय एवं विष्णुगुप्त हुये। बुधगुप्त के समय महिष्मती में सुबन्धु के शासन का उल्लेख मिलता है। यह मूलत: गुप्त साम्राज्य का सामन्त था, लेकिन अभिलेखों में अधीनतासूचक उल्लेख नहीं मिलने से अनुमान है कि केन्द्रीय सत्ता दुर्बल हो गई थी, और सामन्तगण स्वतंत्र शासक की तरह व्यवहार करने लगे थे।

कलचुरि वंश के समय निमाड़ - निमाड़ के इतिहास में कलचुरि राजवंश का महत्वपूर्ण स्थान है। ये स्वयं को चन्द्रवंशी तथा कार्तवीर्य सहस्त्रार्जुन की सन्तान मानते हैं। इनकी प्राचीन राजधानी महिष्मती थी। छठी शताब्दी में ये सशक्त हुये। कृष्णराज, शंकरगण, बुद्धराज आदि इस वंश के निमाड़ में प्रमुख सम्राट हुये। कालान्तर में चालुक्य नरेश पुलकेशी ने कलचुरियों से उनके राज्य का बड़ा भाग छीन लिया। इसके बाद कलचुरि वंश की शक्ति क्षीण हो गई और उनकी राजनीतिक प्रवृत्तियाँ प्राय: समाप्त हो गई।

परमारकालीन निमाड़ - नवीं सदी के पूर्वार्द्ध में मालवा में परमार राजवंश का उदय हुआ। उपेन्द्र, वैरिसिंह प्रथम, सीयक प्रथम, वाक्पति प्रथम, वैरिसिंह द्धितीय आदि प्रारंभिक परमार राजा राष्ट्रकूटों अथवा गुर्जर-प्रतिहारों के अधीन सामन्त थे। सीयक द्धितीय इस वंश का प्रथम स्वतंत्र सम्राट था। उसने परमार सत्ता को ताप्ती नदी तक विस्तृत कर दिया था। इस वंश में मुंज तथा भोज जैसे बड़े सम्राट हुये। भोज ने धारानगरी (वर्तमान धार) को राजधानी बनाकर मालवा क्षेत्र पर दृढ़तपूर्वक शासन किया। भोज ने इस क्षेत्र को संवारा था। भोज की मृत्यु के उपरान्त गुजरात के चालुक्य नरेश भीम प्रथम एवं त्रिपुरि के कलचुरि नरेश कर्णने मालवा पर अधिकार कर लिया। परवर्ती परमार शासक उदयादित्य ने पुन: मालवा पर अधिकार किया। उसके समय में मांधाता से प्राप्त सन् 1055 ई. के शिलालेख व हरसूद के सन् 1218 ई. के शिलालेख से ज्ञात होता है कि निमाड़ प्रदेश के उत्तरी भाग पर परमार राजा जयसिंह का राज्य था। धार के परमारों का निमाड़ क्षेत्र पर प्रभाव था। सन् 1526 ई. तक इस क्षेत्र पर परमारों का न्यूनाधिक प्रभाव बना रहा।

उपसंहार - इस तरह स्पष्ट है कि निमाड़ का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। यहां आदिकाल से लेकर आज तक ऐतिहासिक श्रृंखला अनवरत् चलती रही है। निमाड़ के प्राचीन युग ने कई गौरवशाली दौर देखे हैं। महिष्मति की गणना देश की प्रमुख नगरियों में होती थी।

****

Consumer Problems And Relevant Legislations

Shalini Sharma * Dr. Manju Dubey **

Introduction - Every human, dependent or self-reliant is essentially a consumer. The moment he takes birth in this world, starts playing the role of a consumer in the form of either milk or medicine. Maximum satisfaction or utility is the motive behind all such consumptions. Since human needs are infinite and resources to satisfy these needs are generally scarce leading to the role of choice ushering into the consumer market and paving the way of exploitation by producers in some way or the other, need for protecting the interest of the consumers becomes very relevant. The more a consumer is aware about the availability of different qualities of goods at different places, the lesser is the chance of his exploitation. Different modes of information's and communication with regard to quality, availability and nature of goods and services can play vital role in creating awareness among consumers. The more they are informed, the lesser they are cheated.

Normally a consumer is cheated by a producer and suppliers of products in the following ways-

(i) By supplying sub quality goods.
(ii) By supplying lesser quantity of goods.
(iii) By creating oligopoly or artificial monopoly and charging more than the genuine price of the products.
(iv) By Giving false information through advertisement.
(v) By creating artificial scarcity of a product and forcing the consumers to pay more.
(vi) Not following the bindings given to consumers at the time of sale in the form of guarantee or warrantee.
(vii) Tharashing the consumers into courts to avoid commitments or forcing the pity consumers to avoid litigation due to heavy cost in terms of time and money.
(viii) Adulterating the edible items without taking care of the health of consumers.

These and many other ways are adopted by producers and suppliers to cheat and harass consumers. On the other hand, law making bodies have never let them roam freely since the inception of civilized life to the present day world.

Who are Consumers?

Consumers are central points of all economic activities. The ultimate aim of all production, storage and distribution is ensure maximum sale for maximum profit. Professor Marshall has defined a consumer in the following words.

"When a person is willing to sacrifice something in the market to purchase goods and services in order to gain utility from the consumption of these, he is called a consumer".

Thus a consumer wants to maximize his utility and satisfaction from the consumption of goods and services and the producer wants to maximize his profit by his sales and as a result, a conflict between the two is seen. Consumer protection legislations helped to reduce such conflicts so that both the parties can be made satisfied and happy.

Consumer Protection Norms and Legislations - When we talk of ancient India, Vedas, Puranas and five Smiritis, i.e., Manu Smiriti, Yajnavalkaya Smiriti, Narad Smiriti, Brihaspati and Katyana Smiritis were the main sources of knowledge for moral as well as legal guidance for humans. In these Smiritis are the source of ancient law in India. In ancient India, there were four offences with regard to the consumer's exploitation e.g. adulteration of food stuff, fabrication of weights and measure, charging exorbitant prices and selling of forbidden articles. These exploitations came under the purview of offences.[12] A heavy and severe punishment was also provided for every criminal act specially for adulteration, deceit, fraud and misrepresentation.[13] Consumer protection measures and punishments were specifically mentioned in Kautilya's Arthashastra. Kautilya was a minister of Chandragupta Maurya and a great preceptor of state-craft whose wise teaching have a universal validity. His celebrated work "Arthashastra" was compiled somewhere about 300 B.C.[14] His celebrated work in which reference are made to the 'Code of Ethics' of various professions.[15] Kautilya recognized four types of consumer offences Adulteration, Weight and Measures, Exorbitant prices and Cheating/ Fraud.

In the medieval period, the hoarding of grains or commodities was considered a major offence. The seeds of consumer protection are found during the rule of Sultan Alauddin Khilji, who introduced strict price control measures based on production costs.[16] The mughal emperors also

*Research Scholar, K.R.G. (P.G.) College, Gwalior (M.P.) INDIA
** Co-Guide, K.R.G. (P.G.) College, Gwalior (M.P.) INDIA

emphasized tjhe strict price control. The kinds did not favour written laws in any field, as they were mainly interested in the enlargement of their territories and collection of maximum revenue.[17]

Britishers did not pass any act to save the interest of the Indian consumers. Nevertheless, a few acts were enacted which aimed at fetching revenue to the Britishers as they were busy more in economic activity rather than welfare activities.[18] The Britishers were mainly concerned with promoting and protecting their own interest and not the interest of the consumers, which were being exploited by erring and cunning business commuinity.[19] Moreover, certain acts were enacted like Indian Penal Code, 1860,[20] Indian Control Act, 1872, Sale of Goods Act, 1930, Agriculture Produce (Grading and Marketing) Act 1937 & Drug & Cosmetic Act, 1940.

When India became free in 1947, it accepted a written constitution formed by the drafting committee. The constitution of India came into force on 26th January 1950. The preamble of the constitution lays stress on socio-economic and political justice. It was felt that the socio economic justice ushering a social reconstruction of Indian society is a sine-quanon for an effective exercise for all other basic rights guaranteed in free India and consumer justice as a facet of socio-economic justice thus flows from our constitutions the basic philosophy and working parameters. Thus, preamble of the constitution declared India as Socialist, Sovereign, Secular, democratic, Republic and liberty, equality and justice were the guiding principles to protect the interest of all humans and consumers were not exceptions. Article 14 of the constitution declares that the states shall not deny to any person equality before law or equal protection of laws within the territory of India.

The fundamental rights in part III of the constitution are enforceable and justifiable legal rights. On the other hand, the directive principles of state policy enshrined in part IV of the constitution of India, are fundamental in the governance of the country as laid down in Article 37 of the constitution which is reproduced below:

The provisions contained in this part shall not be enforced by any court, but the principles therein laid down are nevertheless fundamental in the governance of the country and it shall be the duty of the state to apply these principles in making laws.

The underlying philosophy behind these directive principles was so living that it was supposed while making laws that the state shall regard the rising of nutrition and the standard of living of its people and the improvement of public health as among its primary duties and in particular, the state shall endeavor to bring about prohibition of the consumption except for medicinal purposes, of intoxicating drinks and of drugs which are injurious to health.

After Independence the Government of India enacted a plethora of acts to safeguard the interest of consumers. All the modern legislations (on the subject) accepted the need for providing protection to the consumers, and a law what is commonly known as unfair trade practices namely, misleading advertisement, false informations to dupe consumers etc, came into being. It was then felt that this law alone is not enough to protect the interest of consumers. As a result, several other laws were also passed by the parliament, namely Prevention of Food Adulteration Act, 1954, Essential Commodities Act, 1955, Drugs and Magic Remedies Act, 1955, Protection of civil Rights Act, 1955, Trade and Merchandise Marks Act 1958, Monopolies and Restrictive Trade Practice Act, 1969, Standard Weights and Measurement Act, 1976, Consumer Protection Act, 1986 Amendment 2002 and soon.

Prior to the enactment of Consumer Protection Act, 1986, many consumer laws were in existence in India, but they failed to protect the interest of consumers. The problem of the consumer is that there are so many legislations which can teach the naughty trader a lesson in his life time, but the procedures are long; and a general apathy of our police, administrative and judicial system has made the healthy and blossoming society to become into one that is adulterated, spurious, defective, poisonous, heavily drug peddled and unacceptable. Who is responsible? Whether government or businessman or someone else. But it is sure that consumer is equally responsible for that. Ignorance of law is no excuse. Many of us are blissfully ignorant of this ignorance. A careful study of all the aforesaid acts clearly shows that they are either preventive or punitive in nature. They did not provide any relief to the aggrieved and cheated consumers and they are continuously being trapped by misleading, misrepresenting and fraudulent allurements and advertisements of trading agencies.

There are so many reasons which necessitated the enactment of the Consumer Protection Act. All the previous acts could not yield satisfactory results because the procedure followed by the courts was / is very lengthy; frequent stay of proceeding at all stages; lawyer's encouragement of postponement of case; expensive as court fee is required to institute a civil suit; adjournments sought on flimsy, false, fabricated and concocted grounds; majority of judges non-serious to sit in the court room or keep a tight eye on every proceedings of court; absence of check on procedural failures of judges; generally, these laws do not provide compensation to the aggrieved party, but they provide for only punishment to the wrong doer.

It is the only Consumer Protection Act that protects consumers interest directly while all other laws protect consumers interest indirectly. Other laws can help a person only during his life time, but Consumer Protection Act protects his interest not only from cradle to grave but even before and after these two shores e.g. a child in the womb, if suffers for any reasons due to maltreatment of a medical practitioner attending on him, the mother can claim compensation by filing a complaint under Consumer Protection Act. All these acts laws during British period or after are discussed below.

1. The Dangerous Drugs Act, 1930: In the area of drugs

control the Dangerous drugs Act, 1930 is an important central legislation which empowers the central government to control certain operations relating to dangerous drugs. It further empowers to increase and render uniform penalties for offences relating to operations of dangerous act.

2. The Sale of Goods Act, 1930: Some spirit of concept of consumerism is also evident in the Sale of Goods Act, 1930. Before this enactment,' the situation was uncertain with regard to "sale of goods or movables, the law on the subject was not only uniform throughout British India but was also outside the limits of the original jurisdiction of the high court, extremely uncertain in its application." The Sale of Goods Act contains the spirit of the concept of consumer protection in several provisions which include contract of sale, conditions and warranties in the sale, transfer of property between seller and buyer, duties of seller and buyers, right of unpaid sellers against the goods and suits for the breach of the contract.

3. Agricultural Products (Grading and Marketing) Act, 1937: This act provides for grading and certifying quality standard of agricultural commodities which are allowed to be stamped with AGMARK seal of the Agricultural Marketing department of the Government. 4. The Drugs and Cosmetics Act, 1940n:-In order to defend the cause of consumer in the area of drugs and cosmetic industries in India, Drugs and cosmetic act of 1940 was enacted so as to regulate the airport, distribution and sale of drugs.

In pursuance to the recommendations of the pharmaceutical enquiry committee appointed by the Government of India, the drugs and cosmetics act, 1940 empowers the central government to control the manufacture of drugs, to appoint inspectors for inspecting manufacturing premises and taking samples of drugs, to appoint government analysts to whom samples drawn by such inspectors could be sent for analysis and to issue the state government for carrying into any of the provisions of the Act.

5. Industries (Development and Regulation) Act, 1951: This Act provides for control over production and distribution of manufactured goods. According to this Act, the central government may order investigation of any industry, if it is of the opinion that there has been substantial fall in the volume of production, or a marked decline in the quality of the product or any unreasonable rise in price. After due investigation, the government may issue directions to set things right. If the directions are not acted upon, the government may take over the concerned undertakings.

6. Prevention of Food Adulteration Act, 1954: This Act provides for severe punishment for adulteration of food articles. In the case of sale of adulterated food which is injurious to health and likely to cause death, life imprisonment with a minimum fine of Rs. 3000 may be payable. Food inspectors are appointed and they have powers to lift samples and send them for analysis. Penalties are also provided under the act for offences committed by persons with regard to manufacture, import, storage, sale and distribution of adulterated food articles.

7. Essential Commodities Act, 1955: Under this Act, the Government has the power to declare any commodity as essential in the public interest. Thereby the government can control the production, supply and distribution of the trading of such commodities. It also provides for action against anti-social activities of profiteers, hoarders and black marketeers.

8. The standards of Weights and Measures Act, 1956: This Act provides for the use of standard measures of weights and standard measures of length throughout the country. 'Meter' has been specified as the primary unit for measuring length, and 'kilogram' as the primary unit for measuring weight. Before this act came into force, different system of weights and measures were used in different parts of the country like 'pound', 'Chhatak' and 'Seer' as weights, yard, inch and foot for length, etc. These differences provided ample opportunities for traders to exploit the consumers. Now it is not possible for any trader to exploit consumers in these ways.

9. Monopolies and Restrictive Trade Practices Act, 1969: Under the provisions of this act, as amended in 1983 and 1984, consumers and consumer groups can exercise their right of redressal by filing complains relating to restrictive and unfair trade practices. The government has constituted the MRTP commission which is empowered to deal with the consumer complaints after due investigation and enquiry. The Commission has power to award compensation for any loss or injury suffered by consumers.

10. The Code of Criminal Procedure, 1973: Nevertheless, the criminal laws of the country do protect the consumer in some degree or so. In this regard section 153 of the code empowers .a station- house officer of a police station without warrant to enter any place within the limits of such station for the purpose of inspecting or searching for any weights or measures or instruments for weighing, used or kept and whenever there is reason to believe that in such place weights, measures or instruments for weighing are false.

11. Prevention of Black-Marketing and Maintenance of Essential Supplies Act, 1980: The primary objective of this act is to provide for detention of persons involved in hoarding or black marketing with a view to prevention of black-marketing and maintenance of supplies of commodities essential to the community. The maximum detention for persons acting in any manner against the intention of the act can be imprisonment upto 6 months.

12. Bureau of Indian Standards Act, 1986: The Bureau of Indian Standards has been set up under this Act, replacing the Indian Standards institution (ISI), to protect and promote consumer interest. It has two major activities: formulation of quality staadards for goods and their certification through the BIS certification marks scheme by which manufacturers are permitted to use the standardization mark (ISI) on their products after due verification of conformity with prescribed quality standards of safety and performance. The Bureau has set up a consumer affairs department to create quality consciousness among ordinary consumers. There is also a public grievances cell to which consumers can make complaint about the quality of product carrying ISI mark.

13. Consumer Protection Act, 1986: This Act provides

for consumer protection more comprehensively than any other law. Consumers can seek legal remedy for a wide range of unfair practices not only with respect to goods but also for deficiency in services like banking, insurance, financing, transport, telephone, supply of electricity or other energy, housing boarding & lodging, entertainment, amusement etc. This act also includes provisions for the establishment of consumer protection councils at the centre and the state. For the settlement of consumer disputes, the act has provided for a semi judicial system. It consists of District Form, State Cominission and National Commission for redressal of consumer disputes. These may be regarded as consumer courts which are quasi-judicial in nature.

India being one of the signatory to the Resolution of the United Nations, enacted the Consumer Protection Act, 1986 to fulfill its obligation'. The parliament enacted the legislation in December 1986, which, came into force on April 15, 1987. The main objectives of the Act are to provide for better protection of the consumers and for that purpose to make provision for the establishment of consumer councils and other authorities for the settlement of consumers' disputes.

The act provides effective, people oriented, broad and efficient remedy to consumers against unfair dealings and exploitation. The act applies to all goods and services whether provided by private, public or co-operative body unless it is especially exempted by the Central Government by a notification in the Official Gazette. The Act is an improvement over the other existing laws for consumer protection as it is compensatory in nature, whereas remedies under other laws are basically punitive or preventive in nature and are designed to provide relief only in specific situations. The remedy under the Act is in addition to and not in derogation of provisions of any other law for the time being in force. The Act gives statutory recognition to six consumer rights which are right to safety, right to information, right to choose, right to be heard, right to seek redressal and right to consumer education. The Act postulates establishment of advisory and adjudicatory bodies to safeguard the interest of consumers. The advisory structure is in the form of Consumer Protection Councils at Centre, State and District levels. These Councils are constituted on public private partnership (PPP) basis. The purpose of those bodies is to review the consumer related policies of the Government and suggest measures for further improvements in future.

The Act also provides for quasi-judicial adjudicatory machinery at three levels i.e. District, State and National levels called District Forum. State Consumer Disputes Redressal Commission and National Disputes Redressal Commission. At present, there are 621 District Forums, 35 State Commission and apex body the National Commission. The District Forum can adjudicate on matter, where the value of claim is upto rupee twenty lakh, the State Commission, where value of claim is more than twenty lakh but upto rupee one crore and the National Commission, where the claim is over one crore. These adjudicatory bodies are quasi-judicial bodies and are regulated according to the principal of natural justice. They are required to decide complaint within a period of three months from the date of notice where no testing is required and within a period of five months where testing is required.

The Consumer Protection Act, 1986 is a socio-economic legislation to protect and promote the interest of consumers in a more unified and effective manner. Consumer Protection Act is a weapon in the hands of consumers to fight against the exploitation by the sellers, manufacturers and traders related to defective goods, deficiency in service and restrictive and unfair trade practices. From the time of its inception as on January 1, 2010, the Consumer courts at National, State and District level have together registered 33,30,237 cases and 29,58,875 cases have been disposed.

References :-

1. Times of India, 6-5-2014
2. C. Naseema & Nisha KM, Consumer awareness and consumer behaviour of commerce graduate students, edu tracks December 2009, Vol. 9, N4, PP 41 to 45.
3. Deepa Sharma, Consumer Grievance Redressal under the CP Act, Delhi, New Century Publications 2002, P. 1
4. Agrawal VK, Consumer Pdtotection Law and Practices, New Delhi, BLH Publishers, 2003, P. 3.
5. http://www.articlebase.com/customer-service-articles/role=of-consumer-redressal-forum-in-consumer-protection-1280333. httml#ixzz0xFdjgrAK
6. Shukla Hansa "Media's Role..." International Referred Research Journal, Dec. 2011, PP 8-9.
7. Chatterjee, A., Sahoo, S., (2011) Consumer Protection Problems and Prospects, Postmodern Openings, Year 2, Vol. 7, September, 2011, PP. 157-182.
8. Chatterjee, A., Sahoo, S. (2011) Consumer Protection Problems and Prospects, Postmodern Openings, Year 2, Vol. 7, September, 2011, PP. 157-182.
9. Chatterjee, A., Sahoo. S. (2011), Consumer Protection Problems and Prospects, Postmodern Openings, Year 2, Vol. 7, September, 2011, PP. 157-182.
10. George Cherriyan, Rural Consumers and Role of Local bodies in consumer protection, CUTS International.
11. Consumer Awareness Guidelines, Government of Tamil Nadu, Civil Supplies and consumer protection department, Chennai.
12. Neelam Singh, "Consumer Protection Act 1986; A milestone" Upabhohta Jagran, Vol. 11 & 12 Dec. 2011, P. 37
13. S. Mustafa Alam Naqui, Expanding Horizons of Consumeerism in India & Abroad Special Reference to Professional Deficiency, Consumer Protection and Trade Practices Journal, Vol. 10, P. 55.
14. S.K. Puri, P. Cit. (11), P. 5
15. Sunita Zalpuri Koul, Op. Cit. (2), P. 13
16. Sunita Zalpuri Koul, Op. Cit (2), P. 14.

Reduction in CO_2 emission by the use of Composite cement Using Mathematical Modelling

Dr. Sapna Shrimali * R.K. Mishra **

Abstract - Today the world is facing the environment problem due to imbalance release of greenhouse gases by industry. 5% of global CO_2 is contributed by cement industry. Through this paper by using operational research methodology we try to explain that by use of new cement that is composite cement we are able to reduce CO_2 emission from 36.84 % to 68.42% against the use of OPC cement which is a huge amount. This canachieved by varying the fly ash(15 % to 35 %)& slag (20 % to 50 %) in mix proportion. This report is also useful for better utilization of industrial waste like fly ash,slag , and saving of resources coal/petcoke ,power and limestone reserves. Use of composite cement results in saving of crore of rupees.
Key words - OPC, Composite cement, Slag, Fly ash,Clinker.

Introduction - In today's world the major issue is of global warming. In lay man terms rise in temperature of earth. This results in many changes all over the world. To overcome the global warming a committee of IPCC was established. Every country under the flag of his government set guideline for every industry to mitigate the effect of global warming.

In context of India we contributes 7% of global CO_2 according to report of IEA 2012 which was 4 % in 2003. This is alarming for us. We have to set a bench mark for us to overcome from this without affecting our economical and industrial growth.

Our main focus area is cement as it highly energy intensive. Cement industry is responsible for 5% of global CO_2emission. The widely used building material is cement. By the introduction of new cement composite cement we mitigate the effect of global warming that is to reduce emission of carbon dioxide.

Materials and Method - After china we are second largest producer of cement in the world and accounts for about 6% of world's production. India is arising as a future superpower so we have to be very careful about our growth .It is well known that we are third in steel sector as well in power generation. Report tell us that we generate 600 million tons of fly ash upto 2030 from power station and presently we generate about 10-12 million tons slag from steel industry. These two figures are too big and it is not going to less but it will increase day by day.

The second problem is that for production of cement we have to produce clinker. As per IPCC default value of CO2 / ton clinker is 865 kg. This value is sum of 535 kg CO_2 / ton clinker from calcination of limestone and 330 kg CO_2/ton clinker from fuel for heat in Kiln.

To minimize these two effects we have to find a way by which we may consume these industrial wastes and lower down the release of carbon dioxide in the atmosphere during production of cement. Cement is one of the essential building material. To solve these two problem we produce such a cement in which we utilizes these waste by lowering down the clinker percentage.

International Energy Agency and Cement Sustainability set a benchmark to lower down CO_2 emission from 2 billion tonsto 1.55 billion tons up to 2050.

For this many initiatives taken from every section. We focus on reducing the use of clinker and maximizing the use of industrial wastes. Reduction in CO_2 emission is possible by use of composite cement. As per BIS we use fly ash and slag in mixed proportion 15%-35% & 20 %-50% respectively by varying percentage. We use this as a base data for our calculation and study purpose. We try to design our model as per the figure (see in last page)

By use of composite cement we can eliminate three stage i.e. (Raw material, grinding raw material and burning process)

We try to replace clinker and use in mix proportion the slag and fly ash as per BIS limit. By doing this we can reduce the emission of CO_2. We designed our model as per figure 1.

Mathematical methodology to proof that by use of composite

*Associate Professor & Head, Department of Mathematics and Statistics, Pacific Academy of Higher Education & Research University, Udaipur (Rajasthan) INDIA
** Research Scholar, Department of Mathematics and Statistics, Pacific Academy of Higher Education & Research University, Udaipur (Rajasthan) INDIA

cement reduces CO_2 emission.

CASE I

Normal OPC production

Clinker = C , Gypsum= G

Product OPC = C+ G(C= 95 %, G= 5%)

CASE II

Composite Cement Clinker based methodology

Clinker = C , Gypsum= G , FLY ASH = F , Slag =S

Product Composite Cement= C+G+F+S (as per BIS value of C= 35% TO 65%, G=5%(To fulfil the requirement of BIS), F=15%-35%,S=20%-50%)

CASE III

Composite Cement OPC based methodology

OPC = P, Fly ash = F , Slag = S

Product Composite Cement = P+F+S (as per BIS value of P =35 % TO 65 % , F= 15%-35%, S= 20%-50%)

Case I Normal OPC – Clinker =C , Gypsum = G, 1 Ton clinker emits as per IPCC default value =865 Kg $CO_{2,}$ MT=Unit metric tons

C MT	G MT	Product= (C+G) MT	[C/(C+G)] =HMT	H* 865Kg CO_2/ Ton Cement Produced
95	5	100	0.95	821.75
115	5	120	0.958	828.67
135	5	140	0.964	833.86
155	5	160	0.969	838.185
175	5	180	0.972	840.78

Case II (using clinker in the range 35 % to 65 %)

As per BIS 16415-2015 we produce cement using clinker from 35% to 65% remaining part in mix proportion fly ash and slag that value will be in the range of 65 % to 35 % (min & max value of fly ash and slag is fix as per BIS)

Clinker = C, Gyp= G, Fly ash= F, Slag =S

Let us take example of production of 100 ton composite cement keeping slag % at min value as per norms that is 20% & varying the % of Fly ash as per norms.(CO_2 emission per ton clinker is 865 kg as per standard value)

Table 2 (See in last page)

Case III (Clinker in the range 35 % to 65 %) Keeping value of fly ash constant that is 20% and vary slag at % CO_2 released per ton clinker default value is 865 kgCO_2 as per IPCC

Clinker =C , Gyp =G, Fly ash = F , Slag =S

Table 3 (See in last page)

Case III

Clinker = C, Gyp =G, Fly ash = F, Slag = S

Table 4 (See in last page)

All the tables calculation are valid for use of OPC in the proportion of 35% to 65% of production of composite cement product.

Now the formula for CO_2 released during production of Composite cement = (C % of product)× 865 kg co_2/ ton clinker [value of C vary from 35 % to 65%]

Where C stands for = clinker

Product = sum of clinker ,gypsum ,fly ash and slag where value of fly ash & slag vary from 15% - 35% and slag from 20%-50% at best possible option keeping in view the value of C as per norms % Saving of clinker on same production =[(Clinker used in OPC –Clinker used in Composite cement)/Cement produced]×100 % Saving of CO_2 released against OPC = [(CO_2 released by clinker used in OPC production –CO_2 released by clinker used in Composite cement)/CO_2 released by clinker used in OPC production]×100 Where we have to multiply in both production clinker used with 865 kg CO_2/ton clinker.

Let us take the example of 100 ton OPC for this we have to use 95 ton clinker and suppose gypsum 5 tons

For same 100 ton composite cement clinker saving is:

Clinker in tons	Gypsum in tons	Fly ash in tons	Slag in tons	Composite cement in tons	% Saving clinker on same production 100 ton OPC
60	5	15	20	100	35 %
55	5	20	25	100	40%
50	5	25	20	100	45%
45	5	30	25	100	50%
40	5	35	30	100	55%
35	5	15	35	100	60%
30	5	20	45	100	65%

Conclusion - Hence to minimize the emission of CO_2in the climate mathematical model is useful tool to know the % release as well as saving against the use of OPC.

By use of this we are able to judge the best method to use what percentage of fly ash and slag used to minimize the release the CO_2 in the atmosphere as well as % saving of clinker against varying the fly ash and slag on the production of cement.

Acknowledgment - We are thankful to Shri A.K.Bartaria (Sr. V.P.) UCWL for his guidance and support.

References :-

1. Prasad. P.S.R ,KumarA.V.P,Rao. K.B and Muthanna K.M., Experimental Investigation on Long Term Strength of Blended and O.P.C Concretes, National Conference on Recent Developments in Structural Engineering MIT, Manipal, pp. 84-390 (2005).
2. Ogonowski. M ,Houdashelt.M ,Schmidt. J , Lee. J andHelme. N.,Greenhouse Gas Mitigation in Brazil, China and India:Scenarios and opportunities through 2025(centre for clean air policy), pp.1-43 (2006).
3. Cao.J, Ho. M.S, and Jorgenson. D.W “Co-Benefits” of Greenhouse Gas Mitigation Policies in China an Integrated Top-Down and Bottom-Up Modeling Analysis ,Environment for Development, EfD DP 08-10, (2008).
4. Ponssard.J.P and Walker.N , EU Emissions Trading and the cement sector: A Spatial Competition Analysis. Climate Policy, 8, pp.467-493 (2008)
5. Gallagher.K.S , Acting In Time On Climate Change,

Acting In Time On Energy Policy Conference , pp. 1-24 (2008).

6. TheLoreti Group, Green House Gas Emission Reduction from Blended Cement Production, Prepared by California Climate Action Registry, pp.1-33 (2008).
7. Christopher. L, Arlington, Massachsetts ,Cement Sector Green House Gas Emissions Reduction Case Studies, California Energy Commission,C EC- 600-2009- 005 (2009).
8. Ishida .A, Araki .A, Yamamoto. K, Morioka . M, Hori. A, Application of Blended Cement in Shotcrete to Reduce the Environmental Burden, XI Engineering Conferences International, pp.1-9 (2009).
9 Chennoufi.L , Grey.H.H, Breisinger.M, Boulet.E and URS France,An Approach to Reconciling the Financing of Cement Manufacturing Plants with Climate Change Objectives, pp.1-17 (2010).
10. Moesgaard.M, Yue.Y, Glass Particles as an Active and Co_2 Reducing Component in Future Cement , Faculty Of Engineering And Science, Aalborg University,pp1-54 (2010).
11. Thomas .M, Kazanis.K, Cail.K, Delagrave.A, Blair.B, Lafarge North America , Lowering the Carbon Footprint of Concrete by Reducing the Clinker Content of Cement, Annual Conference of the Transportation Association of Canada Halifax, Nova Scotia, pp.1- 13 (2010).
12. Sector Policies and Programs Division Office of Air Quality Planning and Standards U.S. Environmental Protection Agency Research Triangle Park, North Carolina 27711, Available and Emerging Technologies for Reducing Greenhouse Gas Emissions from the Portland Cement Industry , pp.1-45 (2010).
13. Mitsubishi Research Institute Inc, New Mechanism Feasibility Study on CO_2 Abatement through Utilization of Blast Furnace Slags as Blending Material for Cement in Viet Nam, New Mechanism Feasibility Study, pp.1-24 (2011).
14. Fukui .A and Krishna. S , IGES- TERI CDM Reform Paper: Linking Ground Experience with CDM Data in the Cement Sector in India, Institute for Global Environmental Strategies (IGES) the Energy and Resources Institute (TERI) , pp.1-16 (2011).
15. Gupta.A and Cullinen.M.S , The Carbon war Room , Cement Primer Report, pp. 1- -22 (2011).
16. Kargari.A and Ravanchi.M.T, Carbon Dioxide: Capturing And Utilization, Greenhouse Gases-Capturing, Utilization and Reduction, pp.1-30 (2012).
17. Charkovska.N, Bun. R, Nahorski.Z, Horabik.J, Mathematical Modeling and Spatial Analysis of Emission Processes in Polish Industry Sector: Cement, Lime and Glass Production, Econtechmod: An International Quarterly Journal, **01**(4), pp.17–22 (2012).
18. Ansari.N, Seifi.A, A System Dynamics Model for Analyzing Energy Consumption and CO_2 Emission in Iranian Cement Industry under Various Production and Export Scenarios, Energy Policy 58, pp.75–89 (2013).
19. Stripple.H ,Greenhouse Gas Strategies for Cement Containing Products, IVL Report B2024, pp.1-101 (2013).
20. Mukherjee .S.P andVesmawala .G, Literature Review on Technical Aspect of Sustainable Concrete, International Journal of Engineering Science Invention ,**2** (8), pp. 01-09 (2013).
21. KPMG Advisory Services Pvt. Ltd. (KASPL), Human Resource and Skill Requirement in Construction Material and Building Hardware Sector (2013-17,2017-2022), Government of India Ministry of Skill Development and Entrepreneurship. N.S.D.C National Skill Development Corporation Transforming the Skill Landscape, **6**, pp. 1-57 (2014).
22. Guynn .J and Kline. J, Maximizing SCM Content of Blended Cements, 2015-CIC- 00043978-1-4799-5580-0/14/IEEE
23. Tsimas.S and Moutsatsou .A , Hydration of Cao Present in Fly Ashes, National Technical University of Athens School of Chemical Engineering Laboratory of Inorganic & Analytical Chemistry , pp.1-74 (2015).
24. Ridhhi, Sustainable Materials in the Construction Industry, Sustainability Outlook , (2015).
25. Krishnan.M.R , Quality Of Life For All: A Sustainable Development Framework for India's Climate Policy , Center for Study of Science, Technology and Policy (CSTEP), (2015).
26. Lee .H.S and Wang.X.Y , Evaluation of the Carbon Dioxide Uptake of Slag- Blended Concrete Structures, Considering the Effect Of Carbonation, Sustainability 2016, 8, 312; pp.1-18 (2016).

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

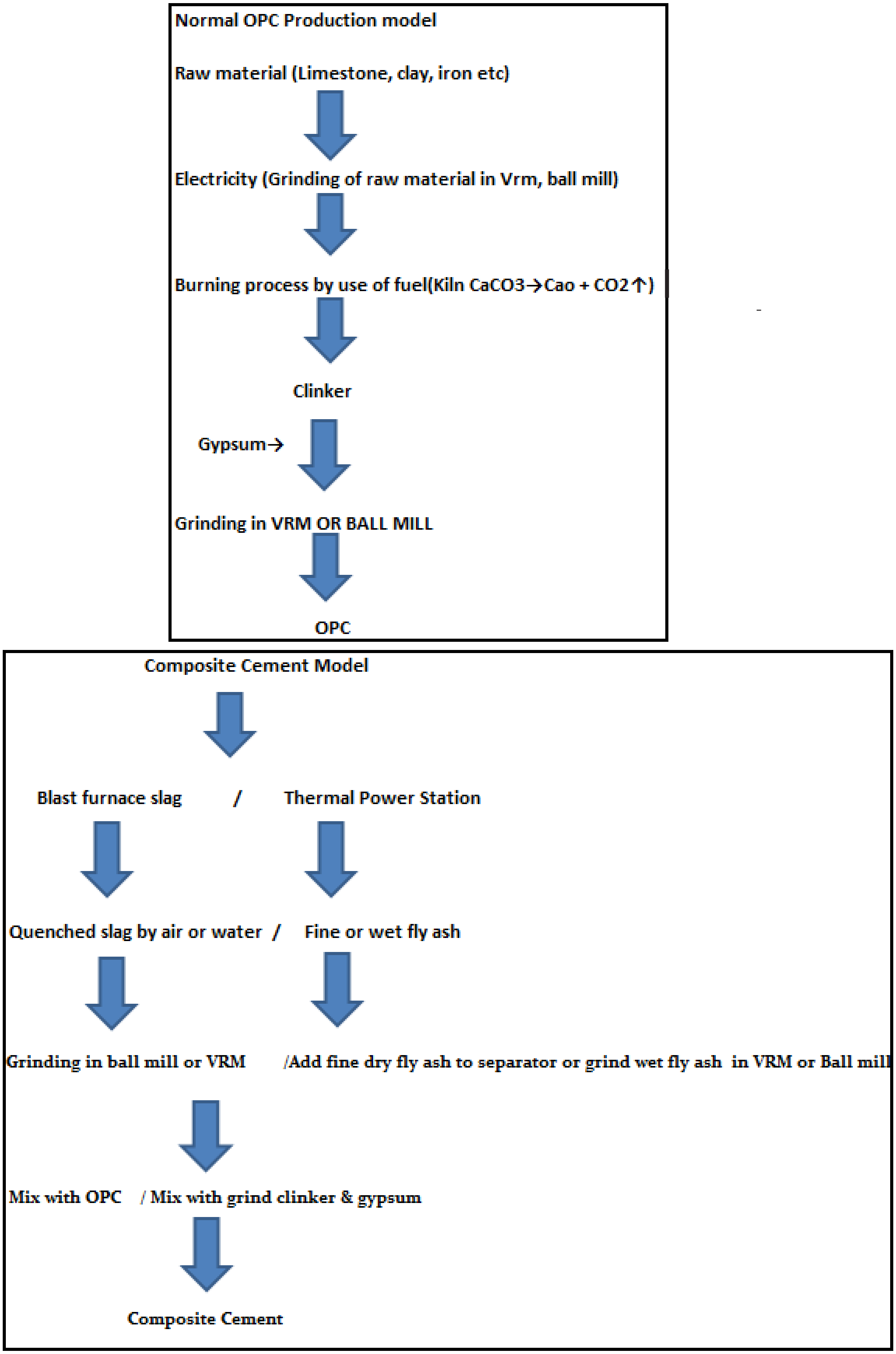

FIGURE-1 Production model of OPC V/S Composite Cement

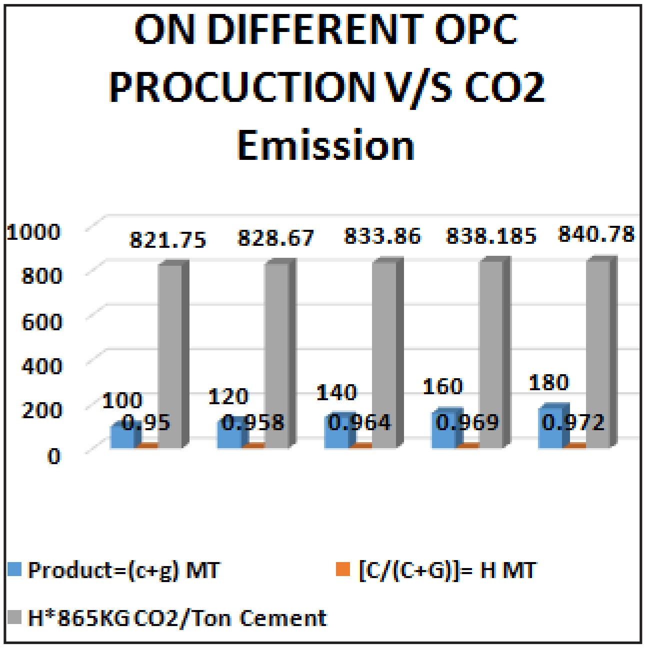

C in Tons	G in Tons	F in Tons	S in Tons	Product=(C+G+F+S) in Tons	H= (C/Product)	H* 865 Kg CO_2/Ton composite cement= I	Reduction in release of CO_2 against OPC on same composite cement production= (821.75-I)	% Saving in reduction in release of CO_2 against OPC on same composite cement production=[(821.75-I) /821.75]*100
60	5	15	20	100	0.60	519	302.75	36.84%
55	5	20	20	100	0.55	475.75	346	42.10%
45	5	25	20	100	0.45	389.25	432.5	52.63 %
45	5	30	20	100	0.45	389.25	432.5	52.63%
40	5	35	20	100	0.40	346	475.75	57.89%

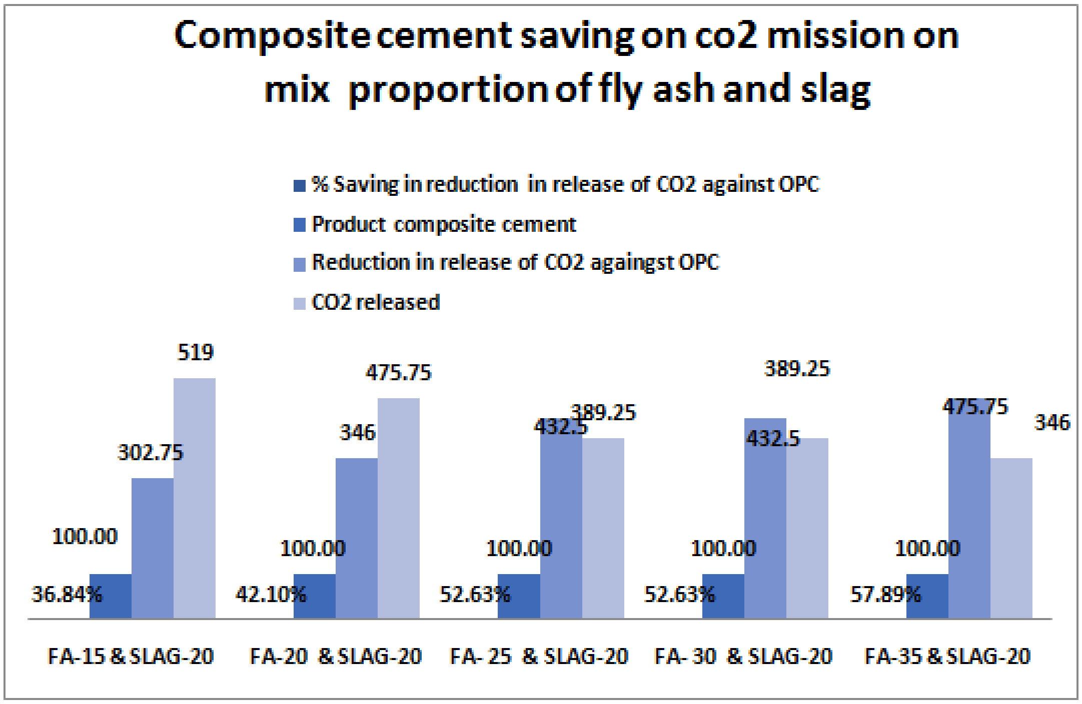

C in tons	G in tons	F in tons	S in tons	Product=(C+ G+F+S)	H= C/ Product	H* 865=I	Value reduction in CO_2 emission against same production of OPC	% Saving in CO_2 emission against OPC [(821.75-I) /821.75]*100
50	5	20	25	100	0.50	432.5	389.25	47.37
45	5	20	30	100	0.45	389.25	432.5	52.63
40	5	20	35	100	0.40	346	475.75	57.89
35	5	20	40	100	0.35	302.75	519	63.16
30	5	20	45	100	0.30	259.5	562.25	68.42

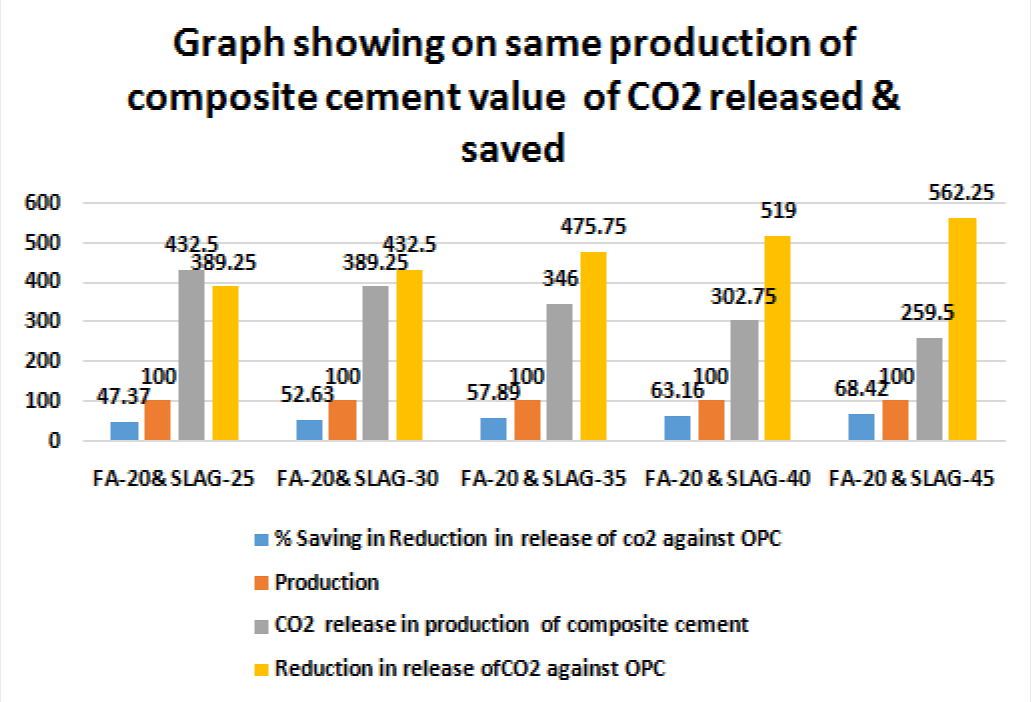

C in tons	G in tons	F in tons	S in tons	Product=(C+ G+F+S)	H= C/ Product	H* 865=I	Value reduction in CO_2 emission against same production of OPC	% Saving in CO_2 emission against OPC [(821.75-I) /821.75]*100
30	5	15	50	100	0.30	259.5	562.25	68.42
30	5	20	45	100	0.30	259.5	562.25	68.42
30	5	25	40	100	0.30	259.5	562.25	68.42
30	5	30	35	100	0.30	259.5	562.25	68.42
30	5	35	30	100	0.30	259.5	562.25	68.42

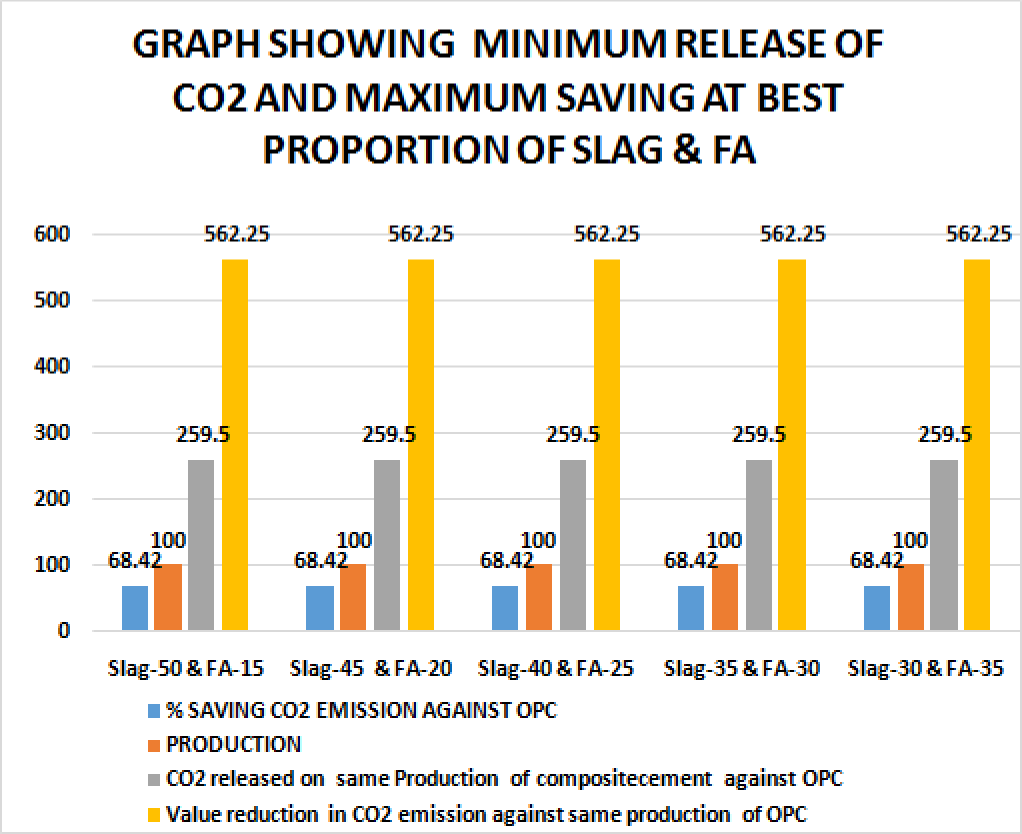
GRAPH SHOWING MINIMUM RELEASE OF CO2 AND MAXIMUM SAVING AT BEST PROPORTION OF SLAG & FA
600
500
400
300
200
100
0
562.25
259.5
100
68.42
Slag-50 & FA-15
Slag-45 & FA-20
Slag-40 & FA-25
Slag-35 & FA-30
Slag-30 & FA-35
% SAVING CO2 EMISSION AGAINST OPC
PRODUCTION
CO2 released on same Production of compositecement against OPC
Value reduction in CO2 emission against same production of OPC

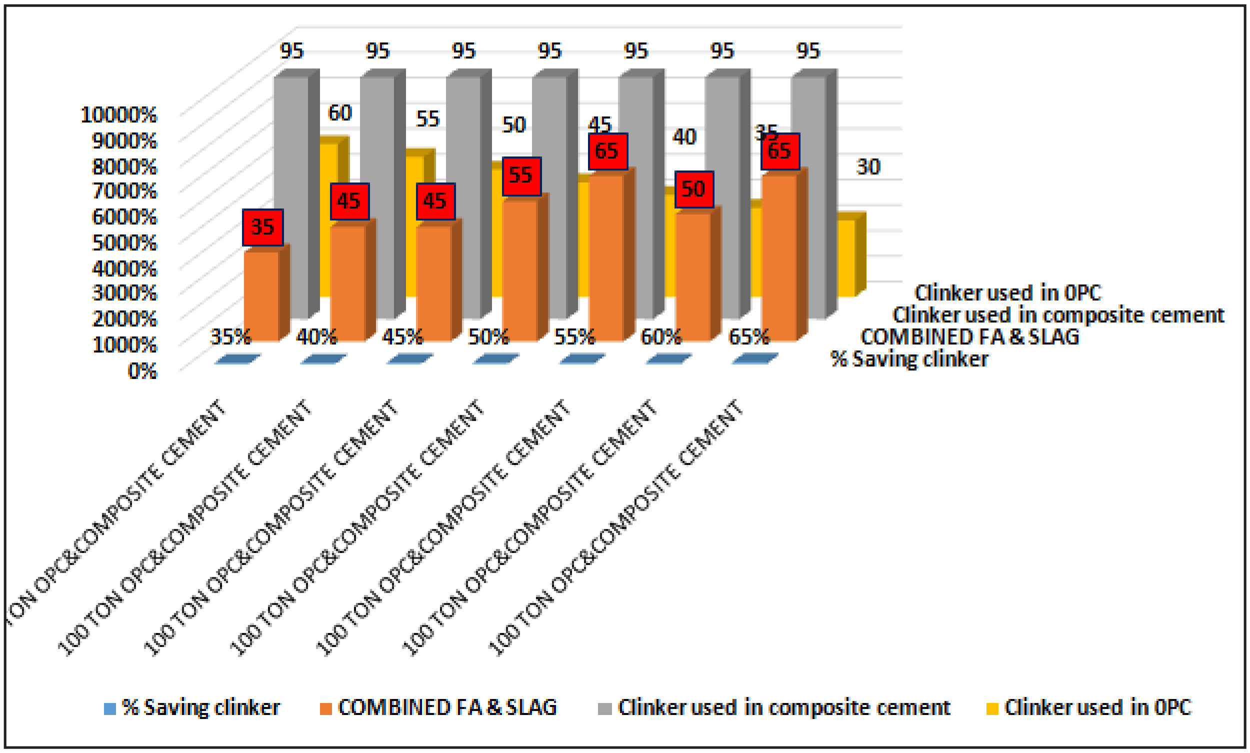
95
60
55
50
45
40
35
30
10000%
9000%
8000%
7000%
6000%
5000%
4000%
3000%
2000%
1000%
0%
35
45
45
55
65
50
65
35%
40%
45%
50%
55%
60%
65%
Clinker used in OPC
Clinker used in composite cement
COMBINED FA & SLAG
% Saving clinker
TON OPC&COMPOSITE CEMENT
100 TON OPC&COMPOSITE CEMENT
% Saving clinker
COMBINED FA & SLAG
Clinker used in composite cement
Clinker used in OPC

Consumer Protection Act 1986 & Consumer's Satisfaction

Shalini Sharma * Dr. Manju Dubey **

Introduction - Consumers are central points of all economic activities. The ultimate aim of all production, storage and distribution is to ensure maximum sale for maximum profit. Professor **Marshall**has defined a consumer in the following words:

"When a person is willing to sacrifice something in the market to purchase goods and services in order to gain utility from the consumption of these, he is called a consumer".

Thus a consumer wants to maximize his utility and satisfaction from the consumption of goods and services and the producer wants to maximize his profit by his sales and as a result, a conflict between the two is seen. Consumer protection legislations helped to reduce such conflicts so that both the parties can be made satisfied and happy. **Chaterjee & Sahoo** added that the main objective of the Consumer Protection Act is to ensure the better protection of consumers. Unlike existing laws which are either punitive or preventive in nature, the provisions of this Act are compensatory in nature. The Act is also intended to provide simple, speedy and inexpensive redressal to the consumers' grievances, and relief of a specific nature and award of compensation wherever appropriate to the consumer. The act has been amended in 1993 both to extend its coverage and scope and to enhance the powers of the redressal machinery.

The salient features of the Act can be summed up as:

1. The Act applies to all goods and services unless specifically exempted by the Central Government.
2. It covers all the sectors whether private, public or cooperative.
3. The provisions of the Act are compensatory in nature.

It enshrines the following six rights of consumers**:**

1. Right to be protected against the marketing of goods and services which are hazardous to life and property of the people;
2. Right to be informed about the quality, quantity, potency, purity, standard and price of goods or services so as to protect the consumer against unfair trade practices;
3. Right to be assured, wherever possible, access to a variety of goods and services at competitive prices;
4. Right to be heard and to be assured that consumers' interests will receive due consideration at appropriate forums;
5. Right to seek redressal against unfair trade practices and unscrupulous exploitation of consumers; and
6. Right to consumer education.

One of the six rights given to CPA 1986 is right to consumer education. He has been given two rights in this regard.

1. Right to acquire knowledge and skills necessary to be an informed consumer
2. Take action by attending seminars, workshops, to ensure consumer education taking place in schools.

Thus, right to consumer education envisages the right to knowledge and skills needed for taking action to influence those factors which can influence consumer decision and interest.

Review of related Literature : Perveen Dalal (2012) on the basis of his studies concluded that protection of consumers is not only a responsibility of the state but also a mandate against commercial and business entities. A satisfied consumer base is essential for the successful existence of commercial enterprises. Dr. Hansa Shukla (2011) discussed the role of media in her research paper "the role of media in consumer protection" in detail. Deepa Sharma (2005) analyzed the mechanism of grievance redressal of consumers as provided under CPA86. Ashok Kumar Chandra (2011) Concluded that CPA86 was one of the socio-economic legislations which have been enacted for protecting the interests of consumers in India. Sashi Nath Mandal (2009) is of the view that the battle for consumer protection has to be fought by many agencies. The government has to play an important role by enacting suitable laws and enforcing them effectively. India has been observing 15th March since 1989 as the National Consumer Day. This day has a historic importance as it was on this day in 1962 that the bill for consumer right was moved in US Congress. Steps have been taken by various acts and other measures to help consumers. Chaterjee & Sahoo (2011) suggested that consumers must be educated to develop an understanding about their rights and responsibilities as consumers. Sunita Zalpuri Koul (2000)

*Research Scholar, K.R.G. (P.G.) College, Gwalior (M.P.) INDIA
** Co-Guide, K.R.G. (P.G.) College, Gwalior (M.P.) INDIA

in her focused on the contributions of these consumer courts to the development of a comprehensive consumer law. The output in terms of redressal decisions delivered by the authorities under the act has far exceeded the expectation.

Objectives of the Study - CPA86 amended in 1993 is no doubt a boon for consumers in today's age of consumerism. It has reduced many of their problems but many more still need to be addressed that consumers are facing even today. This study is an attempt to know those problems that CPA86 has not been able to address and some modifications is still in demand by the people to make the act more vibrant and beneficial for consumers in general.

Hypotheses of the Study - Following hypothesis will be tested by this study:

1. Consumer forums are functioning properly in the opinion of the consumers.
2. There is no correlation between consumer awareness and consumer problems. Along with testing with theses hypotheses the researcher will also find out the answer of the following questions : (i) What are different types of practical problems faced by consumers in general from market to consumer's forum? (ii) To what extent can Consumer Protection ACt solve the practical problems of consumers.

Method & Procedure

Sample : 480 male & female respondents from Bijnor and Gwalior Districts each representing all income and age Groups were taken randomly for the purpose of study.

Research Tools : Two research tools were used here:

1. Consumer Awareness Scale (CAS) : This scale consisting of three subscales having 20 items each namely consumer awareness consumer problems and attitude of consumers towards CPA86 was constructed and standardized by the research herself:

2. Consumer Awareness Intgerview Schedule (CAIS) : An open end interview schedule was also administered on 20% respondents from each group of the sample to study the problems of the consumers and possible solutions suggested by them thoroughly.

Satistical Techniques used : Chi-Square test, Karl Pearson's product moment coefficient of correlation and percentage were used for analysis of data.

Results & Discussions

Hypothesis N1

Consumer forums are functioning properly in the opinion of consumers.

This hypothesis is related to the third sub scale of CAS. Interpretations of all the 20 items individually on the basis of results given in table N12 of chapter 4 are given below.

1. 58.33% consumers of Bijnor and 65.83% consumers of Gwalior consider consumer forums as boon for consumers. Only about 25% of them do not think so and the difference in both the cases is also significant at 0.001 level. Thus opinion of consumers surely goes in favor of CPA 86.
2. The statement that excess of petitions in consumer forums is not benefitting consumers at all is agreed by 44.37% consumers of Bijnor and 41.25% consumers of Gwalior but the number of those opposing the statement is also very high, i.e., 31.25% and 35.41% respectively. Moreover difference is not significant here. Thus consumers are equally divided here. About half of them are benefitting from such petitions.
3. The statement that timing for consumer court in the evening is more convenient for consumers is supported by two third majority of consumers. Those who consider present timings of consumer courts suitable are only 15%. Since difference of opinion is significant at 0.001 level so action may be taken to change the timing in the interest of consumers.
4. 88% consumers of Bijnor and 85% consumers of Gwalior support the view that consumer courts should have powers to send the culprits to jail and those disagreeing the statement are negligible.
5. About 80% consumers are of the view that corruption of administrative machinery has increased the burden of consumer courts. Only 12.48% consumers of Bijnor and 10.83% consumers of Gwalior do not support this view. This huge difference of opinion is also significant at 0.001 level showing the shortcoming of administration not of CPA 86.
6. Only about 21% consumers in both the cities believe that number of judges in the consumer courts is sufficient but about 37.5% consumers of Bijnor and 39.58% consumers of Gwalior do not agree with this statement but since this difference is not significant so we consider the opinion of respondents divided at this issue.
7. Only 25% consumers of Bijnor and 33.54% consumers of Gwalior support the statement that consumers are not benefitting due to corruption in consumer courts. On the other hand, about 33.75% consumers of Bijnor and 25% consumers of Gwalior oppose the statement and this statement is also not significant so we consider respondents divided on the issue.
8. The statement that interest of consumers is put at the top in consumer courts is agreed by 59% consumers of Bijnor and 55% consumers of Gwalior as against 29.16% and 35.83% respectively opposing the statement and this difference is also significant at 0.001 level in each case. It means that majority of consumers is satisfied with the role of consumer courts in this respect.
9. 57.7% consumers of Bijnor and 47.08% consumers of Gwalior are of the view that decisions are not given in the consumer courts in the stipulated time of 3-5 months as against 25% and 35.83% respectively negating the statement and satisfied with its role. This difference is also significant at 0.001 level in both the cases. Hence majority of consumers are not satisfied with the speed of trial in consumer courts.
10. The opinion that consumer courts should be changed

into a fully judicial body is supported by 21% consumers of Bijnor and 26% consumers of Gwalior only but those opposing the statement are also very low, i.e., 25% and 24% respectively in Bijnor and Gwalior. So opinion is fractured here.

11. 54.8% consumers of Bijnor and 47.7% consumers of Gwalior support the statement that government is taking adequate measures to make the consumers aware. Only 20.62% consumers of Bijnor and 18.95% consumers of Gwalior want something more to be done by the government. The first difference is significant at 0.001 level and the second one is significant at 0.01level.
12. As far as sale of open products is concerned, the role of consumer courts is not satisfactory. This item is supported by 54.8% consumers of Bijnor and 45.83% consumers of Gwalior as against 25% consumers negating the statement in both the cities. Difference of opinion is significant at 0.001 level in the first case and 0.10 level in the second case so, something needs to be done to deal with such cases.
13. The item that powers of consumer forums are limited is agreed by 40.62% consumers of Bijnor as against 21% but difference is not significant. The same item is agreed by 43.85% consumers of Gwalior as against 16.66% negating the statement and this difference is significant at 0.001 as $X^2 = 62$. Hence, majority of voice is there for change and increasingpowers of such courts.
14. 67.08% consumers of Bijnor and 70.83% consumers of Gwalior are of the opinion that consumer laws should be made stringent enough to create deterrence among defaulters. Only 16.66% of them oppose the statement here and difference is also significant at 0.001 level in both the cases. Thus, huge majority favors stringent consumer laws.
15. The statement that one consumer court in the whole district is sufficient is supported only by 12.5% consumers of Bijnor and 11.25% consumers of Gwalior and about 77% of them oppose it. Since difference is also significant at 0.001 level in both the cases so we can say that one consumer court in a district is not enough according to huge majority of consumers.
16. 75% consumers of Bijnor and 69% consumers of Gwalior are of the view that those living far away from the district headquarter are not benefiting from consumer courts. Those opposing the statement are only few. Hence opinion of majority of consumers prevails.
17. 87.91% consumers of Bijnor and 58.95% consumers of Gwalior agree the statement that consumer courts have taken service related complaints seriously as against negligible percentage of consumers negating the statement. So, it can be said that consumer courts are dealing not only products and sales sectors but also service sector equally.
18. 79.12% consumers of Bijnor and 70.83% consumers of Gwalior are of the view that traders have invented new methods of cheating to cheat consumers. Only 11.87% consumers of Bijnor and 17.91% consumers of Gwalior oppose the statement. It means that CPA 86 provisions need to be reviewed as is stated by a huge majority of consumers and difference is also significant at 0.001 level in both the cities.
19. The statement that CPA 86 is not the solution of daily consumption items of bread, butter and clothing is approved by only 13.33% consumers of Bijnor and 17.08% consumers of Gwalior. A huge majority of 53% consumers on an average oppose it and difference is also significant at 0.001 level. It means that CPA 86 is dealing all the aspects of consumer related problems in the opinion of huge majority of consumers.
20. 46.45 consumers of Bijnor and 45.2% consumers of Gwalior are of the view that interests of poor consumers can be protected only by making administrative machinery accountable. On the other hand 37.5% consumers of Bijnor and 38.75% consumers of Gwalior oppose it but since the difference is significant at 0.001 level in both the cases, so it can be stated that accountability of administration is more important than implementing CPA 86.

Thus, in this sub scale consumers are fully satisfied with six points of CPA 86out of 20 important points and they are divided in their opinion on five points. However, there are nine points on which change is still required. Thus, on the basis of these results we have no option but to reject the research hypothesis here. For proper functioning of consumer forums and CPA 86, it should be revised and changed on many fronts.

Hypothesis N2:

There is no relationship between consumer problems and their awareness as consumers.

Consumer problems and consumer awareness region wise and gender wise have been analyzed in Table N3. Correlation r = 0.04 showing negligible correlation between consumer awareness and consumer problems with respect to male consumers are found. It means that awareness of male consumers of Bijnor is not related to their problems and vice-versa. They may have lots of problems though being aware consumers. In case of male consumers of Gwalior r = -0.22 as is clear from table 5. This correlation is negligible though very low which may not be significant for drawing a conclusion. It can be stated simply that more aware consumers of Gwalior have less problems and vice-versa but this nature of relationship is manifested in only few cases as r=-0.22 is very low. The same relationship is shown in case of female consumers of Bijnor where r=-0.21 as is clear from the table so female consumers of Bijnor and male consumers of Gwalior both do not differ much with regard to two variables i.e., consumer awareness and consumer problems.

However, considerable negative coefficient of

correlation is seen among the females of Gwalior with respect to their awareness as consumers and their problems as r=-0.38 (table N8). It means that less aware female consumers of Gwalior have more problems and more aware ones have fewer problems. Thus null hypothesis N2 is only partially accepted. In half of the cases it is seen that negative relationship between consumer awareness and consumer problems is there from low to moderate level, i.e., r=-0.21 and r=-0.22 show low level of negative correlation and r = -0.38 shows moderate level of correlation. Despite enactment of CPA 86 there are still many problems before consumers. The important problems that consumers are still facing have been isolated by asking direct open end questions from consumers through consumer awareness interview schedule (CAIS) and all these problems have been listed in table 14 of chapter 4. Mainly consumers have pointed out 22 major problems that are still there before them. These problems are adulteration, inflation, corruption, faulty weight and measures, false advertisement, cheating by shopkeepers, conveyance, hoarding, short supply, lack of consumer education, conservatism, black marketing, lack of quality control, dishonesty, sale of expired goods, incomplete informations on packets, skipping of warrantee and guarantee, faulty billing (of electricity), not giving bill and cash memo, malpractice of telephone companies and use of chemicals in fruits and vegetables. Something more needs to be done to save consumers from exploitation. Table 4 shows that the respondents on CAIS have pointed 10 measures that must be adopted to save consumers from exploitation. These measures are improvement in CPA 86, consumer education, making CPA 86 more strict, delicensing of corrupt sellers, opening more consumer courts in a district, improving quality of supply inspectors, provision of jail for defaulters, empowering consumer forums, regular checking by inspectors and consumer representation in company forums.

Conclusion :

1. CPA has been able to reduce only 4 out of 20 problems of consumers isolated for the purpose of study. Some of these problems are related to proper implementation of CPA 86 and some problems are related to fundamental changes in CPA86. First category of problems are adulteration, incomplete informations supplied by producers, profiteering, cheating on unsealed products, duplicacy of items, black marketing, high cost of advertisement and so on and second category of problems are related to theoretical aspect of CPA 86 such as timing of consumer forums, cash memo not binding on sellers, luring schemes of producers to cheat buyers, high number of pending cases in consumer courts, artificial creation of short supply by producers, credit system prevailing in the market and so on.
2. Consumers have mainly pointed out 22 major problems that are still to be solved by CPA86 and consumers and government both are responsible for these problems. It means that consumers will have to change their own behavior in order to solve some of their problems. Consumers have suggested ten measures to be adopted by the government to save consumers from exploitations such as improvement in CPA 86, consumer education, delicensing of corrupt sellers, opening more than one consumer courts in a district, provision of jail for defaulters and so on.

Thus we can say that behavior of consumers has improved to a great extent today. This is evident from 10 good habits adopted by consumers. Much of this credit goes to CPA 86 which has drastically improved the behavior of consumers in general. Despite this fact many consumers still believe that CPA 86 is only a half success. Much more still needs to be done for making it a full success. Consumers have pointed out 9 such points. Educating consumers through different media and methods is one of them. Unless consumers are fully educated, they cannot benefit from consumer protection acts.

Suggestions - On the basis of this study in the field of consumer behavior, consumer awareness and consumer protection following suggestions can be given:

1. CPA 86 is a landmark legislation with respect to protection of consumer rights but certain amendment in this act is still needed as is viewed by consumers of Bijnor and Gwalior and almost similar views may be seen from consumers of other parts of the country. A draft of amendment of CPA 86 is going to be presented in Parliament sooner or later.
2. The new draft should incorporate all the remaining problems of consumers that they are facing even now so that a compressive consumer protection act might be prepared and enacted.

Analysis & Interpretation

Table 1 (see in last page)

Table 2 : Correlation between Consumer Awareness and Consumer Problems (Bijnor & Gwalior)

Sex	Bijnor	Gwalior
Male	0.04	-0.22
Female	-0.21	-0.38

Table 4 : Consumer Protection & Related Action

	Action	Percentage of People Supporting
1.	Improvement in implementation of CPA86	94%
2.	Consumer needs to be educated and made aware	100%
3.	CPA86 be hardened	96%
4.	Delicencing of corrupt sellers	99%
5.	Establishing more consumer forums in a district	86%
6.	Supply inspector should be honest and hardworking	96%

7.	Severe punishment including jail to corrupt sellers and producers	92%
8.	More rights to consumer forums	86%
9.	Regular checking by supply inspectors	92%
10.	Consumers representation in the forums of companies	72%

References :-

1. Chandra, Ashok Kumar, (2011),"Consumer perception and awareness about consumer rights and Consumer Protection Act. A study in District Raipur" (C.G.) Home Vol.1 no 8 (2011) RISSM March 21. 2012
2. Chatterjee, A., Sahoo, S., Consumer Protection Problems and Prospects, Postmodern Openings, Year2, Vol. 7, September, 2011, pp: 157-182
3. Deepa Sharma, Consumer Grievance Redressal under the CP Act, Delhi, New Century Publications 2002, P. 1
4. **Dr. Shukla Hansa, "**Media's role of Consumer Protection and Welfare in India International Referred Research Journal, December, 2011, ISSN – 0974-2832, RNI-RAJBII, 2009/29954; Vol., III *ISSUE-35
5. **Koul Sunita Zalpuri, *Development of Consumer Laws through Consumer Courts in India***, unpublished Ph.D. Thesis, faculty of Law, University of Jammu, Jammu 2000, p. 6
6. **Mandal Sahshi Nath,** "Protection of Consumer Right Through Judicial and Extra Judicial Mechanism in India" Available at SSRN. http//SSRN.COM abstract=1707572, 2009
7. **Praveen Dalal,** Consumer Protection and Right to information *Advocate, Arbitrator and consultant, Supreme Court of India. Managing partner-perry4Law (First Techno-Legal and ICT Firm, New Delhi, India) LL.M. PhD – Cyber Forensics (Pursuing).

Table 1 : Role of Consumer Forums in the eyes of Consumers of Bijnor & Gwalior

Item N1		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=280	FO=84	FO=116		
		90	36.1	12.1	138.2	0.001
	%age	58.33	17.5	24.16		
	Gwalior	FO=316	FO=84	FO=100		
		152.1	36.1	22.5	210.7	0.001
	%age	65.83	17.5	20.83		
Item N2		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=213	FO=137	FO=150		
		17.55625	3.30625	0.625	21.4875	Not sig.
	%age	44.37	28.54	31.25		
	Gwalior	FO=198	FO=112	FO=170		
		9.025	14.4	0.625	24.05	Not sig.
	%age	41.25	23.33	35.41		
Item N3		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=330	FO=80	FO=70		
		180.625	40	50.625	271.25	0.001
	%age	68.75	16.66	14.58		
	Gwalior	FO=300	FO=106	FO=74		
		122.5	18.225	46.225	186.95	0.001
	%age	62.5	22.08	15.41		
Item N4		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=422	FO=52	FO=6		
		429.025	72.9	148.225	650.15	0.001
	%age	87.91	10.83	1.25		
	Gwalior	FO=406	FO=54	FO=20		
		378.225	70.225	122.5	570.95	0.001
	%age	84.58	11.25	4.16		
Item N5		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=380	FO=40	FO=60		
		302.5	90	62.5	455	0.001
	%age	79.12	8.33	12.48		
	Gwalior	FO=381	FO=47	FO=52		
		305.2563	79.80625	72.9	457.9625	0.001
	%age	79.37	9.79	10.83		

Item N6		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=99	FO=201	FO=180		
		23.25625	10.50625	2.5	36.2625	0.20
	%age	20.62	41.87	37.5		
	Gwalior	FO=104	FO=186	FO=190		
		19.6	4.225	5.625	29.45	Not sig.
	%age	21.66	38.75	39.58		
Item N7		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=120	FO=198	FO=162		
		10	9.025	0.025	19.05	Not sig.
	%age	25	41.25	33.75		
	Gwalior	FO=161	FO=199	FO=120		
		0.00625	9.50625	10	19.5125	Not sig.
	%age	33.54	41.45	25		
Item N8		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=283	FO=57	FO=140		
		94.55625	66.30625	2.5	163.3625	0.001
	%age	58.95	11.87	29.16		
	Gwalior	FO=264	FO=44	FO=172		
		67.6	84.1	0.9	152.6	0.001
	%age	55	9.16	35.83		
Item N9		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=277	FO=83	FO=120		
		85.55625	37.05625	10	132.6125	0.001
	%age	57.70	17.29	25		
	Gwalior	FO=226	FO=82	FO=172		
		27.225	38.025	0.9	66.15	0.001
	%age	47.08	17.08	35.83		
Item N10		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=100	FO=260	FO=120		
		22.5	62.5	10	95	0.001
	%age	20.83	54.16	25		
	Gwalior	FO=125	FO=240	FO=115		
		7.65625	40	12.65625	60.3125	0.001
	%age	26.04	50	23.95		
Item N11		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=241	FO=140	FO=99		
		41.00625	2.5	23.25625	66.7625	0.001
	%age	54.80	29.16	20.62		
	Gwalior	FO=229	FO=160	FO=91		
		29.75625	0	29.75625	59.5125	0.01
	%age	47.70	33.33	18.95		
Item N12		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=241	FO=120	FO=119		
		41.00625	10	10.50625	61.5125	0.001
	%age	54.80	25	24.79		
	Gwalior	FO=220	FO=140	FO=120		
		22.5	2.5	10	35	Not sig.
	%age	45.83	29.15	25		
Item N13		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=195	FO=185	FO=100		
		7.65625	3.90625	22.5	34.0625	Not sig.
	%age	40.62	38.54	20.83		
	Gwalior	FO=211	FO=189	FO=80		
		16.25625	5.25625	40	61.5125	0.001
	%age	43.95	39.37	16.66		

Item N14		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=322	FO=78	FO=80		
		164.025	42.025	40	246.05	0.001
	%age	67.08	16.25	16.66		
	Gwalior	FO=340	FO=60	FO=80		
	202.5	62.5	40	305	0.001	
	%age	70.83	12.48	16.66		
Item N15		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=60	FO=50	FO=370		
		62.5	75.625	275.625	413.75	0.001
	%age	12.5	10.41	77.08		
	Gwalior	FO=54	FO=54	FO=372		
		70.225	70.225	280.9	421.35	0.001
	%age	11.25	11.25	77.5		
Item N16		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=360	FO=30	FO=90		
		250	105.625	30.625	386.25	0.001
	%age	75	6.24	18.76		
	Gwalior	FO=330	FO=80	FO=70		
		180.625	40	50.625	271.25	0.001
	%age	68.75	16.66	14.58		
Item N17		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=422	FO=52	FO=6		
		429.025	72.9	148.225	650.15	0.001
	%age	87.91	10.83	1.25		
	Gwalior	FO=283	FO=140	FO=57		
		94.55625	2.5	66.30625	163.3625	0.001
	%age	58.95	29.16	11.87		
Item N18		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=380	FO=80	FO=20		
		302.5	40	122.5	465	0.001
	%age	79.12	16.66	11.87		
	Gwalior	FO=340	FO=54	FO=86		
		202.5	70.225	34.225	306.95	0.001
	%age	70.83	11.25	17.91		
Item N19		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=64	FO=150	FO=266		
		57.6	0.625	70.225	128.45	0.001
	%age	13.33	31.25	55.41		
	Gwalior	FO=82	FO=148	FO=250		
		38.025	0.9	50.625	89.55	0.001
	%age	17.08	30.83	52.08		
Item N20		Agree	Undecided	Disagree	X^2	Level of Significance
	Bijnor	FO=223	FO=77	FO=180		
		24.80625	43.05625	2.5	70.3625	0.001
	%age	46.45	16.04	37.5		
	Gwalior	FO=217	FO=77	FO=186		
		20.30625	43.05625	4.225	67.5875	0.001
	%age	45.20	16.04	38.75		

****

बड़वानी जिले में उद्यमिता विकास कार्यक्रम और उद्यमिता विकास केन्द्र मध्यप्रदेश (सेडमैप)

राहुल सूर्यवंशी * डॉ. घनश्याम अग्रवाल **

प्रस्तावना – बड़वानी जिले की स्थापना सन् 1998 में हुई। यह क्षेत्र पश्चिम् निमाड़ अंचल में स्थित है इसके पहले यह जिला खरगोन जिलें का एक महत्वपूर्ण भाग था। यह जिला मध्यप्रदेश के दक्षिण पष्चिम् में स्थित है। अमृतसरिता नर्मदा इस क्षेत्र की उत्तरी सीमा बनाती हैं तथा जिले के दक्षिण में सतपुड़ा तथा उत्तार में विंध्यांचल पर्वत श्रेणियाँ है। बड़वानी नाम की उत्पत्ति **'बड़'** के वन से हुई हैं, जिनसे शहर पुराने समय में घिरा हुआ था। **'वानी'** शब्द बगीचे के लिये प्रयोग किया जाता है, इसलिये शहर को **बड़वानी** नाम से जाना जाता है।

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार बड़वानी जिले की जनसंख्या 13,85,659 है। जिसका क्षेत्रफल 5,427 वर्ग किलोमीटर है। प्रशासनिक रुप से यह जिला दस तहसीलों से घिरा है। जिसमें बड़वानी, राजपुर, ठीकरी, सेंधवा, पानसेमल, अंजड़, निवाली, पानसेमल, पाटी और वरला में बटा हुआ है। यह क्षेत्र मध्यप्रदेश और देश के अन्य राष्ट्रीय राजमार्गो से जुड़ा है। जो कि खण्ड़वा–बड़ौदा राजमार्ग संख्या 26 पर एवं लगभग 50 किलोमीटर दूर जुलवानिया ग्राम के आगरा–मुबंई राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 3 से जुड़ा हुआ है।

किसी भी राष्ट्र के औद्योगिक विकास के लिए आधारभूत संरचना के साथ–साथ यह भी आवश्यक होता है कि उस क्षेत्र में औद्योगिक विकास का वातावरण निर्मित किया जाए। इसका सर्वोत्तम साधन **'उद्यमिता विकास'** है। इसके लिए युवाओं को स्वरोजगार मार्गदर्शन, कौशल विकास (उन्नयन) कार्यक्रम, वित्तीय ऋण एवं अनुदान सहायता, प्रशिक्षण कार्यक्रम, भूमि की उपलब्धता, न्यूनतम दरों में बिजली की आपूर्ति, करों में रियायत जैसे प्रयास कर उद्यमिता विकास किया जाना आवष्यक है। उद्यमिता विकास के कार्यक्रमों को निरन्तर दीर्घकाल तक संचालित करने के बाद ही औद्योगिक विकास का वातावरण निर्मित हो सकता है।

उद्यमिता विकास के लिए कौषल विकास और उद्यमिता मंत्रालय, प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम, सुक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय, इण्डिया टूडे प्रमोशन ऑर्गेनाइजेशन, प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना, मेक इन इण्डिया, स्किल इण्डिया, स्टार्टअप इण्डिया, श्रम एवं रोजगार मंत्रालय, वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय सभी समिल्लित रुप से प्रयास कर रहे हैं। सन 2014 से भारत सरकार ने उद्यमशीलता विकास पर विशेष रुप से ध्यान दिया है। भारत सरकार के सभी उद्यमिता विकास कार्यक्रम का संचालन राज्य सरकार के सहयोग से किया जाता है। केन्द्र सरकार द्वारा संचालित उद्यमिता विकास योजनाओं के साथ–साथ राज्य सरकार भी प्रदेश में औद्योगिक विकास हेतु पृथक से उद्यमिता विकास की योजनाऐं संचालित करती हैं। इस प्रकार उद्यमिता विकास हेतु केन्द्र और राज्य अलग–अलग सामूहिक रुप से भी उद्यमिता विकास हेतु प्रयासरत् है।

औद्योगिक विकास हेतु हमारे देश में सभी बारह पंचवर्षीय योजना तक औद्योगिक विकास हेतु विशेष प्रावधान किया गया है। सन् 1990 से उदारीकरण की नीति के बाद विदेशी पूंजी निवेष को उद्यमिता के क्षेत्र में बढ़ावा दिया गया है। सन् 2014–15 से मेक इन इण्डिया की नीति के तहत् भारतीय उद्यमिता का ब्राण्ड तैयार किया जा रहा है।

मध्यप्रदेश में उद्यमशीलता की स्थिति – देश का हृदय स्थल मध्यप्रदेश उद्यमीशीलता संभावनाओं से भरा समृद्ध प्रदेश है। यहां समृद्ध खनिज संसाधन, वन संसाधन, जल संसाधन एवं मानव संसाधन हर दृष्टि से अभूतपूर्व है। मध्यप्रदेश में गत एक दशक में विकास के सभी क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति की है। मध्यप्रदेश में उद्यमिता विकास हेतु औद्योगिकरण को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। मध्यप्रदेश सरकार ने सन् 2004 व 2014 की औद्योगिक नीति में भी इसे प्रमुखता दी हैं। राज्य में पीथमपुर, मण्डीदीप, मालनपुर, मनेरी, देवास आदि प्रमुख औद्योगिक केन्द्र है। ग्रामोद्योग के अन्तर्गत हथकरघा, हस्तषिल्प, रेशम तथा खादी उद्योगों को बढ़ावा दिया जा रहा है। राज्य की चन्देरी और महेश्वरी साडी विश्व में अपनी विशिष्ट पहचान बना चुकी हैं। बुरहानपुर का पॉवरहेण्डलुम व बाग प्रिन्ट भी ख्याति प्राप्त औद्योगिक स्थल है। राज्य में औद्योगिक क्षेत्रों की सभी आवश्यक सुविधाऐं उपलब्ध कराने के लिए चौदह औद्योगिक केन्द्र स्थापित किए गए हैं। यद्यपि मध्यप्रदेश मुख्यत: कृषि आधारित राज्य है, लेकिन राज्य सरकार बड़े उद्योग स्थापित करने की दिषा में बाहरी पूंजी निवेश को भी आमंत्रित कर रही हैं। राज्य सरकार ने स्वतन्त्रता पश्चात् से ही निरन्तर प्रदेश के औद्योगिक विकास हेतु अनेक औद्योगिक स्थान स्थापित किए हैं जो प्रदेश में उद्यमिता विकास को बढ़ावा दे रहे हैं।

तालिका क्रमांक 01 : मध्यप्रदेश में स्थापित उद्यमिता विकास संस्थान

क्र	उद्यमिता विकास के लिए स्थापित संस्थान	स्थान	स्थापना वर्ष
1	मध्यप्रदेश राज्य उद्योग निगम	भोपाल	1969
2	मध्यप्रदेश लघु उद्योग विकास	भोपाल	1969
3	मध्यप्रदेश औद्योगिक विकास निगम	भोपाल	1965

*शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
**प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा, जिला- बड़वानी (म.प्र.)भारत

4	मध्यप्रदेश वस्त्रोद्योग मण्डल	भोपाल	1972
5	मध्यप्रदेश माइनिंग कॉर्पोरेशन	भोपाल	1962
6	मध्यप्रदेश खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड	भोपाल	1990
7	मध्यप्रदेश वित्त निगम	इन्दौर	1956
8	मध्यप्रदेश वस्त्रोद्योग निगम	इन्दौर	1970
9	मध्यप्रदेश इण्डस्ट्रीज कॉर्पोरेशन	भोपाल	1987
10	मध्यप्रदेश निर्यात निगम	भोपाल	1977
11	मध्यप्रदेश हस्तशिल्प विकास निगम	भोपाल	1976
12	उद्यमिता विकास केन्द्र मध्यप्रदेश	भोपाल	1988

उद्यमिता का विकास वर्तमान युग की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है। वैश्वीकरण से उत्पन्न आर्थिक समस्याओं का सामना करने के लिए भी उद्यमिता का महत्व बढ़ गया है। इस कारण विश्व के सभी राष्ट्रों में उद्यमिता विकास को अर्थव्यवस्था में विशेष स्थान दिया जा रहा है और उद्यमिता विकास के लिए अनेक प्रकार की योजनाओं का संचालन किया जा रहा हैं। उद्यमिता विकास, उद्यमियों के विकास तथा उद्यमशील श्रेणी के व्यक्तियों को प्रोत्साहित करने की सतत् प्रक्रिया है। यह व्यक्तियों में उद्यमशीलता की क्षमताओं को पहचानने, विकसित करने तथा उन्हें अधिकतम अवसर उपलब्ध कराने की प्रक्रिया है। उद्यमिता का विकास एक रचनात्मक कार्य है जिसमें शिक्षा, प्रशिक्षण, प्रोत्साहन, सहायता, साधनों की उपलब्धता आदि तत्वों का समावेश होता है। उद्यमिता विकास के माध्यम से उपलब्ध संसाधनों का बेहत्तार उपयोग कर न केवल रोजगार में वृद्धि होगी, बल्कि राष्ट्र आत्मनिर्भरता की ओर भी तेजी से अग्रसर होगा।

भारतीय समाज में अवधारणात्मक रुप से व्यावसायिक जगत में पीढ़ी-दर-पीढ़ी व्यवसाय का संचालन होता रहा हैं। किसान का बेटा किसान, व्यापारी का बेटा व्यापारी, राजनेता का बेटा राजनेता और उद्योगपति का उद्यमी बनता रहा है, लेंकिन स्वाधीनता के पश्चात् इस परम्परा में बदलाव हुआ है और वैश्वीकरण ने इस परम्परा को लगभग तोड़ दिया हैं। उद्यमी में परिश्रम, धैर्य, ऊर्जा, सृजनषीलता, दृढ़ता, हिम्मत आदि गणों का विकास करने के लिए ही उद्यमिता विकास कार्यक्रमों की रचना की गई हैं।

बड़वानी जिलें में उद्यमिता विकास कार्यक्रम – मध्यप्रदेश के निमाड़ में स्थित बड़वानी जिले की एक विशिष्ट पहचान है। जिले में प्राकृतिक एवं खनिज संसाधनों, कृषि पर आधारित उद्योगों के विकास की अपार संभावनाऐं है। जिलें में स्थापित उद्योगों को राज्य सरकार ने नवीन औद्योगिक नीति 2014 के अनुसार अनुदान सहायता व प्रोत्साहन दिया है। जिलें में कृषि उपज पर आधारित उद्योग जैसे कपास उद्योग (जिनिंग, प्रेसिंग, आईल मिल, मैदा मिल, सूत मिल) दाल मिल मिर्च प्रसंस्करण उद्योग, ट्रेक्टर ट्राली निर्माण, टाइल्स उद्योग, मोटर बॉडी निर्माण, सोना-चांदी आभूषण निर्माण, फर्नीचर उद्योग आदि की अनेक इकाईयाँ संचालित है और इन उद्योगों की नवीन इकाईयों की स्थापना हेतु भी पर्याप्त अवसर उपलब्ध है।

बड़वानी जिलें में औद्योगिक विकास के लिए आधारभूत संरचना बिजली, सड़क, पानी की उपलब्धता है। सन् 1990 के दशक में बड़वानी जिलें के सेंधवा, खेतिया तथा अंजड़ नगर में कॉटन जिनिंग, प्रेसिंग उद्योग की लगभग 150 से अधिक औद्योगिक इकाईयां संचालित हो रही हैं। शासन की दोषपूर्ण करारोपण नीति के कारण इनमें से अधिकांश इकाईयां बंद होकर महाराष्ट्र राज्य में स्थापित हो गई हैं। मध्यप्रदेश सरकार पुन: कपास उद्योगों की स्थापना के लिए प्रयास कर रही हैं। मध्यप्रदेश सरकार द्वारा औद्योगिक पिछडेपन के कारण जिलें को पिछडे हुए जिलों की 'स' श्रेणी में शामिल किया है।

बड़वानी जिलें की ठीकरी तहसील व पानसेमल में दो शकर के कारखाने संचालित है। जिले में सेमल्या (सेंधवा), अंजड़, केरवा-कुआ, सेंगांव (बड़वानी), जुलवानिया, रेल्वा-खजुरी (राजपुर) में औद्योगिक क्षेत्र विकसित किए जा रहे हैं। इन स्थानों पर जिलें में उपलब्ध खनिज संसाधन, वन संसाधन के साथ कृषि उत्पाद आधारित उद्योगों का विकास किया जाएगा। यह जिला मध्यप्रदेश के पश्चिमी सीमावर्ती राज्य महाराष्ट्र व गुजराज राज्यों से घिरा हुआ है।

उद्योग स्थापना की प्रक्रिया :

उद्यमिता क्षेत्र अपनाने का निर्णय
|
परियोजना चयन
|
परियोजना प्रतिवेदन
|
एम. एम. एम. ई. ऑनलाईन (भाग-1 अभिस्वीकृत)
|
विभिन्न विभागों की अनुमति अथवा सहमति
|
वित्तीय व्यवस्था
|
भवन शेड निर्माण
|
मशीनरी आर्डर एवं मशीनरी स्थापना
|
कच्चे माल की व्यवस्था
|
उत्पादन
|
एम. एम. एम. ई. ऑनलाईन (भाग-2 अभिस्वीकृत)
|
विभाग द्वारा घोषित सुविधाओं के लिये आवेदन-पत्र

उद्यमिता विकास केन्द्र मध्यप्रदेश (सेडमैप) – उद्यमिता विकास केन्द्र मध्यप्रदेश (सेडमैप) यह मध्यप्रदेश शासन के और सार्वजनिक वित्तीय संस्थानों, राज्य निगमों तथा राज्य के अग्रणी बैंकों द्वारा प्रवर्तित स्वायत्ताशासी संस्था है। इस संस्था का मूल उद्देश्य प्रदेश में उद्यमिता विकास से संबंधित सूचनाओं के द्वारा स्वरोजगार के लिए प्रचार-प्रसार करना तथा नये उद्यमियों को उद्योग, व्यवसाय स्थापित करने के लिए प्रशिक्षण देना है। इसके साथ-साथ इसका कार्य, कार्यरत् लघु उद्यमियों की कार्यकुशलता में वृद्धि करना, उद्यमिता के लिए उचित वातावरण विकसित करने हेतु प्रयास करना और अपने विभिन्न प्रकाशनों के माध्यम से लोगों को उद्यमिता एवं स्वरोजगार की ओर प्रेरित करना है। इन्हीं उद्देश्यों को पूरा करने के लिए केन्द्र ने अपने उद्यमिता विकास कार्यक्रमों, स्वरोजगार योजना, प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अन्तर्गत प्रशिक्षण, व्यापक रोजगार योजना, बहुउद्देशीय मेकेनिक प्रशिक्षण योजना के अन्तर्गत स्वरोजगार उन्मुखी प्रषिक्षण कार्यक्रमों तथा औषधीय एवं सुगंधीय पौधों से सम्बन्धित प्रशिक्षण कार्यक्रमों में लगभग 1.25 लाख रुपये युवाओं को प्रशिक्षण प्रदान करने का महत्वपूर्ण

कार्य किया जाता है। उद्यमिता के लिए उचित वातावरण तैयार करने के उद्देश्य से, उद्योग स्थापना से संबंधित विभाग, संस्थाओं के प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण प्रदाय करने, विद्यार्थियों एवं समाज के विभिन्न वर्गो के लिए उद्यमिता जागरुकता शिविर आयोजित करने एवं लागों को प्रेरित करने के लिए विभिन्न प्रकाशनों को तैयार करने का कार्य भी किया है। इस केन्द्र द्धारा प्रदेश में उद्यमिता के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जा रही हैं। इससे लाखों नवीन उद्यमी बन रहे हैं।

मध्यप्रदेश सरकार द्धारा उद्यमिता विकास योजनाओं का क्रियान्वयन करने हेतु पृथक से उद्यमिता विकास केन्द्र की मध्यप्रदेश में स्थापना की है। इसके अतिरिक्त जिला उद्योग केन्द्र, रोजगार कार्यालय एवं अन्य शासकीय संस्थाओं की इसमें सहभागिता हो रही हैं। उद्यमिता विकास समूचे विश्व की महत्ती आवश्यकता है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए केन्द्र सरकार भी विविध प्रकार से उद्यमिता विकास को निरन्तर बढ़ावा देने के लिए अनेक योजनाऐं संचालित कर रही हैं। इसी प्रकार मध्यप्रदेश सरकार ने भी उद्यमिता योजनाओं को क्रियान्वित किया है। इन योजनाओं से धींरे-धींरे ही सही मध्यप्रदेश और बड़वानी जिलें में औद्योगिक विकास का वातावरण निर्मित हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उद्यमिता, मासिक पत्रिका, उद्यमिता विकास केन्द्र मध्यप्रदेश (सेडमेप) भोपाल
2. मिश्रा, अरुण : उद्यमिता विकास, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
3. जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, बड़वानी
4. स्वविवेक पर आधारित

****

Environmental impact and human health issues from pesticide use: A study

Santosh Ambhore*

Abstract - Pesticides are chemical or biological agents that are used to protect crops from insects, weeds, and infections. Acutely toxic organophosphate (OP) pesticides are widely used. Pesticides are used on fruits, vegetables, wheat, rice, olives and canola pressed into oil, and on non-food crops such as cotton, grass, and flowers. The OP pesticides malathion and chlorpyrifos are commonly used on all fruits, vegetables, and wheat. Pesticides are used on crops that are fed to animals, although residue from pesticides is generally not found in meat or dairy products. The federal Environmental Protection Agency (EPA), the Food and Drug Administration (FDA) play a role in regulating and measuring pesticides in food. The EPA is responsible for regulating pesticides by enforcing the 1996 Food Quality Protection Act. The EPA registers pesticides for use evaluates potential new pesticides and their proposed uses, reviews the safety of older pesticides, registers pesticide producers, and enforces pesticide requirements. EPA has enacted stricter safety standards for infants and children and restricted many OP pesticides from residential use in order to reduce exposures in children.

Pesticides benefit the crops; however, they also impose a serious negative impact on the environment. This research paper intends to discuss about pesticides, their types, usefulness and the environmental concerns related to them. Pollution as a result to overuse of pesticides and the long term impact of pesticides on the environment are also discussed in the paper. Moving towards the end, the chapter discusses the methods to eradicate the use of pesticides and finally it looks forward towards the future impacts of the pesticide use the future of the world after eradicating pesticides.

The impact of pesticides consists of the effects of pesticides on non-target species. Pesticides are chemical preparations used to kill fungal or animal pests. Over 98% of sprayed insecticides and 95% of herbicides reach a destination other than their target species, because they are sprayed or spread across entire agricultural fields. Runoff can carry pesticides into aquatic environments while wind can carry them to other fields, grazing areas, human settlements and undeveloped areas, potentially affecting other species. Other problems emerge from poor production, transport and storage practices. Over time, repeated application increases pest resistance, while its effects on other species can facilitate the pest's resurgence.
Keywords- pesticides, toxic, exposures, resistance, insecticides, biodiversity.

Introduction - A pesticide is a toxic chemical substance or a mixture of substances or biological agents that are intentionally released into the environment in order to avert, deter, control and/or kill and destroy populations of insects, weeds, rodents, fungi or other harmful pests. Pesticides work by attracting, seducing and then destroying or mitigating the pests. Pests can be broadly deûned as " the plants or animals that jeopardize our food , health and / or comfort ". Pesticides are chemical or biological agents that are used to protect crops from insects, weeds, and infections. Acutely toxic organophosphate (OP) pesticides are widely used . Pesticides are used on fruits, vegetables, wheat, rice, olives and canola pressed into oil, and on non-food crops such as cotton, grass, and flowers. The OP pesticides malathion and chlorpyrifos are commonly used on all fruits, vegetables, and wheat. Pesticides are used on crops .

The use of pesticides has increased many folds over the past few decades. According to an estimate, about 5.2 billion pounds of pesticides are used worldwide per year. The use of pesticides for pest mitigation has become a common practice all around the world. Their use is not only restricted to agricultural ûelds , but they are also employed in homes in the form of sprays, poisons and powders for controlling cockroaches, mosquitoes, rats, û eas, ticks and other harmful bugs. Due to this reason, pesticides are frequently found in our food commodities in addition to their presence in the air .Pesticides can be natural compounds or they can be synthetically produced. They may belong to any one of the several pesticide classes. Major classes include organochlorines, carbamates, organophosphates, pyrethroids and neonicitinoids to which most of the current and widely used pesticides belong .

*Department of Chemistry, Government Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA

Pesticide formulations contain active ingredients along with inert substances, contaminants and occasionally impurities. Once released into the environment, pesticides break down into substances known as metabolites that are more toxic to active ingredients in some situations. Pesticides promise the effective mitigation of harmful bugs, but unfortunately, the risks associated with their use have surpassed their beneficial effects. Non-selective pesticides kill non-target plants and animals along with the targeted ones. Moreover, with the passage of time, some pests also develop genetic resistance to pesticides. This chapter focuses on the use of pesticides since the ancient times,

Classification of Pesticides - Pesticides are known to be one of the extremely useful and beneficial agents for preventing losses of crops as well as diseases in humans. Based on the action, pesticides can be classified as destroying, repelling and mitigating agents. Insects and pests are getting immune to the commercial pesticides due to over usage. Recently pesticides have been developed which target multiple species (Speck- Planche et al. 2012).

On the level of population, the effects of pesticides depend on exposure and toxicity, as well as on different factors like life history, characteristics, timing of application, population structure and landscape structure (Schmolke et al. 2010). Nerve targets of insects which are known for development of neuro active insecticides include acetyl cholinesterase for organophosphates and methylcarba-mates, nicotinic acetylcholine receptors for neonicotinoids, gamma-aminobutyric acid receptor channel for polychlorocy clohexanes and fiproles and voltage gated sodium channels for pyrethroids and dichlorodiphenyltrichloroethane (Casida and Durkin 2013).

It is an observation that the use of neonicotinoid pesticides is increasing. These pesticides are associated with different types of toxicities (Van Djik 2010). Worldwide pesticides are divided into different categories depending upon their target. Some of these categories include herbicides, insecticides, fungicides, rodenticides, molluscicides, nematicides and plant growth regulators. Non-regulated use of pesticides has led the environment into disastrous consequences. Serious concerns about human health and biodiversity are raising due to overuse of pesticides (Agrawal et al. 2010).

Pesticide Use in India - There are 234 pesticides registered in India. Out of these, 4 are WHO Class Ia pesticides, 15 are WHO Class Ib pesticides and 76 are WHO Class II pesticides, together constituting 40% of the registered pesticides in India. In terms of consumption too, the greatest volumes consumed are of these poisons.

The following is a broad picture of the top pesticide-consuming states in India (total pesticides consumed, in metric tonnes of technical grade material, during 2005-06 to 2009-10, as per official data of the Directorate of Plant Protection, Quarantine and Storage, Govt of India)

S. No.	State	Total pesticides consumed (metric tonnes)
1	Uttar Pradesh	39948
2	Punjab	29235
3	Haryana	21908
4	Maharashtra	16480
5	Rajasthan	15239
6	Gujarat	13430
7	Tamil Nadu	12851
	All India	210,600

Most consumed pesticides in the country (during 2005-06 to 2009-10)

S. No.	Pesticide (Technical Grade)	Quantity consumed (metric tonnes)
1	Sulphur (fungicide)	16424
2	Endosulfan (insecticide)	15537
3	Mancozeb (fungicide)	11067
4	Phorate (insecticide)	10763
5	Methyl Parathion (insecticide)	8408
6	Monocrotophos (insecticide)	8209
7	Cypermethrin (insecticide)	7309
8	Isoproturon (herbicide)	7163
9	Chlorpyrifos (insecticide)	7163
10	Malathion (insecticide)	7103

Carcinogenic Pesticides: Indian Situation - The following is a list of 24 pesticides registered and used in India, classified as Potential Carcinogens by the US EPA:

Acephate (C), Alachlor (B2), Atrazine (C), Benomyl (C), Bifenthrin (C), Captan (B2), Chlorothalonil (B2), Cypermethrin (C), Dichlorvos (C), Diclofop-Methyl (C), Dicofol (C), Mancozeb (B2), Methomyl (C), Metolachlor (C), Oxadiazon (C), Oxyflourfen (C), Permethrin (C), Phosphamidon (C), Propiconazole (C), Propoxur (B2), Thiodicarb (C), Thiophanate Methyl (C), Triadimefon (C), Trifluralin (C).

As can be seen, some of these are also listed in the most-consumed pesticides list in the table above! Around 50 farmers have died, and 800 are hospitalised in the Yavatmal and neighboring districts of Maharashtra after an insecticide known as 'Profex Super' was sprayed on their Bt cotton plantations. They died after accidentally inhaling toxic fumes. At least 20 have lost vision too. The recent deaths of the farmers in Maharashtra and also elsewhere have again reopened the debate about the rationale of using all such pesticides in India which are either banned or restricted elsewhere in the world due to their high toxicity.

Against the backdrop of the Maharashtra incidents, a Delhi-based organisation 'Centre for Science and Environment (CSE)' on 18 October came out with a list of seven immensely or highly hazardous pesticides which continue to be used in India despite these being banned in many countries, reports The Times of India.

Pesticide Economy in India - The increasing demand for agricultural products and the resultant commercialization of agriculture have induced a rising use of agricultural chemicals in India. The shift of agriculture management strategies to the mode of agribusiness laid emphasis on risk management as one of the major challenges in agriculture. Some estimates project that 35-45 per cent crop production is lost due to insects, weeds and diseases, while 35 per cent crop produces are lost during storage. This naturally has facilitated the growth of the crop protection market to the size of which, as per reports, was worth $3.8 billion (2011-12).

India is at the fourth position in the global suppliers of agrochemicals, after USA, Japan and China. The Indian pesticide industry is the biggest in Asia and 12th in the world. According to the Indian Insecticides Act 1968, all pesticide products are to be registered before they are manufactured, sold, exported or imported. The Pesticides Unit, under the Ministry of Agriculture, Government of India, monitors the demand and availability of pesticides in the states. The Unit coordinates with states/ UTs, Ministry of Chemicals & Fertilizers, Department of Chemicals & Petrochemicals and the pesticide industry for assessing the demand for pesticides to ensure their timely availability. It also collects/ compiles data on pesticide consumption, production, import/ export and sale points for the distribution of pesticides in the country. According to The India Pesticides Industry Analysis, the CAGR (compound annual growth rate) is 14.7 per cent making the predicted size of market at '2,29,800 million by 2018.

Trends in Pesticide use in India - Pesticide Consumption and Distribution Pattern, The demand and availability position of different pesticides is reviewed regularly during the zonal conferences on inputs for kharif and rabi with the state representatives of the Departments of Agriculture. The data from Government of India show that the consumption of chemical pesticides (in terms of technical grade) has declined from 72,130 tonnes in 1991-92 to 56,090 tonnes in 2012-13. The consumption of pesticides shows wide fluctuations over the years, which may be due to its relation with weather parameters and availability in the market. During extreme years of drought, like in early-2000s, the consumption tends to move downwards. The intensity of use (consumption per hectare of gross cropped area) has also exhibited a similar trend.

Potential Health Effects of Pesticides - With most (but not all) pesticides, the more a person is exposed to a particular substance, the greater the chance of harm. Two aspirin may get rid of your headache, but a bottle will make you sick. At a Glance n Toxicity is the ability of a chemical to cause harm to health. The amount needed to cause harm depends on the chemical. n With most pesticides, the longer you are exposed the greater the chance of harm. n People can be exposed by breathing a pesticide, getting it into the mouth (by eating or drinking, for example), or by contact with the skin or eyes. n Some people are more at risk than others, depending on their age, gender, individual sensitivity, or other factors

Pesticides are used to kill the pests and insects which attack on crops and harm them. Different kinds of pesticides have been used for crop protection for centuries. Pesticides benefit the crops; however, they also impose a serious negative impact on the environment. Excessive use of pesticides may lead to the destruction of biodiversity. Many birds, aquatic organisms and animals are under the threat of harmful pesticides for their survival. Pesticides are a concern for sustainability of environment and global stability. This chapter intends to discuss about pesticides, their types, usefulness and the environmental concerns related to them. Pollution as a result to overuse of pesticides and the long term impact of pesticides on the environment are also discussed in the chapter. Moving towards the end, the chapter discusses the methods to eradicate the use of pesticides and finally it looks forward towards the future impacts of the pesticide use the future of the world after eradicating pesticides

The impact of pesticides consists of the effects of pesticides on non-target species. Pesticides are chemical preparations used to kill fungal or animal pests. Over 98% of sprayed insecticides and 95% of herbicides reach a destination other than their target species, because they are sprayed or spread across entire agricultural fields. Runoff can carry pesticides into aquatic environments while wind can carry them to other fields, grazing areas, human settlements and undeveloped areas, potentially affecting other species. Other problems emerge from poor production, transport and storage practices. Over time, repeated application increases pest resistance, while its effects on other species can facilitate the pest's resurgence.

Each pesticide or pesticide class comes with a specific set of environmental concerns. Such undesirable effects have led many pesticides to be banned, while regulations have limited and/or reduced the use of others. Over time, pesticides have generally become less persistent and more species-specific, reducing their environmental footprint. In addition the amounts of pesticides applied per hectare have declined, in some cases by 99%. However, the global spread of pesticide use, including the use of older/obsolete pesticides that have been banned in some jurisdictions, has increased overall.

The Marketing Scene - The manufacturing, imports, distribution and use of pesticides in India is regulated by the Central Insecticides Board and Registration Committee (CIBRC), which was established under the Department of Agriculture and Cooperation, Government of India. The CIBRC is responsible for registering the insecticides which are manufactured in or imported to the country and registration is a fundamental requirement for its sale and distribution. The claims of the manufacturer/importer regarding the efficiency and efficacy of the chemical are verified by the agency before issuing the registration

certificate. The Board is the technical body to advise the government regarding the pesticides. It also prescribes the methods for safe use and handling of pesticides. A total of 256 pesticides are registered in India. The Food Safety and Standards Authority of India (FSSAI) which was established under the Food Safety and Standards Act 2006, is the agency to fix and monitor the pesticide residue standards (tolerance limits) in food commodities. At the state level, the prescriptions for use of pesticides in agriculture are provided by the State Agricultural Universities (SAUs) and Commodity Boards.

The pesticide distribution in India is managed by 1,78,979 sale points, across the country. Of these, the number is highest in Maharashtra (19%), followed by Andhra Pradesh (11%) and Uttar Pradesh (10.86%). The bulk (90%) of retail trade is managed by the private sector and the cooperatives handle roughly 7 per cent of the retail outlets. The Department of Agriculture (public sector) has registered its presence only in 11 states (Himachal Pradesh, Meghalaya, Mizoram, Nagaland, Punjab, Sikkim, Tamil Nadu, Tripura, Uttar Pradesh, Uttarakhand and Union Territory of Delhi). In North Eastern states (Mizoram, Meghalaya and Nagaland), the public sector has a major share in pesticide retailing. Due to the absence of public sector outlets in most of the states, the pesticide markets have almost monopoly of the private sector .

The Logical Indian Take - Pesticide poisoning is a chronic problem in the country. Every year, there are about 10,000 reported cases of pesticide poisoning in India. In 2015, nearly 7,000 people died because of accidental intake of insecticides and pesticides. After the death of the farmers in Yavatmal, Maharashtra, the state government on 17 October had ordered a Special Investigation Team (SIT) probe into the death of farmers due to inhalation of pesticides. But the primary issue remains unattended to. The Logical Indian urges the government to take into account the plight of the farmers and bring out legislation to ban these pesticides immediately.

Conclusions - Pesticides have proved to be a boon for the farmers as well as people all around the world by increasing agricultural yield and by providing innumerable benefits to society indirectly. But the issue of hazards posed by pesticides to human health and the environment has raised concerns about the safety of pesticides. Although we cannot completely eliminate the hazards associated with pesticide use, but we can circumvent them in one way or the other. Exposure to pesticides and hence the harmful consequences and undesirable effects of this exposure can be minimised by several means such as alternative cropping methods or by using well-maintained spraying equipments. Production of better, safe and environment friendly pesticide formulations could reduce the harmful effects associated with the pesticide usage. There are organo-chlorines, which are used as pesticides. These pesticides are least biodegradable and their use is banned in many countries. Besides this fact, organo-chlorines are highly used in many places. This results in serious health hazards. Water pollution is on the rise due to these pesticides, even at low concentration, these pesticides have serious threat to the environment (Agrawal et al. 2010).

In future chemical pesticides can be used in combination with natural treatments and remedies which result in more sustainable elimination of pests and insects. This combination not only promises environmental sustainability, but also has diverse applications in controlling of urban pests and invasive species (Gentz et al. 2010). Pesticides have also posed a serious threat on biological integrity of marine and aquatic ecosystems. It is the need of time to integrate the studies of different disciplines including toxicology, environmental chemistry, population biology, community ecology, conservation biology and landscape ecology to understand direct and indirect effects of pesticides on the environment (Macneale et al. 2010) .

The policy towards use of chemical pesticides during green revolution era has been primitive in nature. The pesticide application has often been adopted as a risk avoidance strategy, where the chances of pest incidence/ critical pest population are often wrongly perceived to be on the higher side. The professionalism in the choice of chemical and its application has slowly been replaced by the private operators who handle the retail sales, mostly without any formal training or information on these aspects. Consequently, the concerns on the negative externalities of chemical pesticides across the world have resulted in increasing awareness on the pesticide use, especially in the socioeconomically advanced societies. Despite this, the supply side of pesticide management is largely a neglected area, where the operators lack proper awareness, training, and education (Devi, 2015).

The WHO reports that the negative externalities due to pesticide exposure as more prominent in the developing economies despite their lower consumption. It indicates adoption of unscientific use practices that exist in these regions. The analysis has pointed out to the need for a detailed look on the pesticide-use pattern, distribution systems and regulatory mechanism at a micro level. The attainment of green growth strategies and sustainable development goals necessitates the adoption of safe production practices in agriculture. This can be ensured through scientific management of supply chain systems.

References :–

1. Agrawal A, Pandey RS, Sharma B (2010) Water pollution with special reference to pesticide con-tamination in India. J Water Res Prot 2(5):432–448
2. Bhatia MR, Fox-Rushby J, Mills M. Cost-effectiveness of malaria control interventions when malaria mortality is low: insecticide-treated nets versus in-house residual spraying in India. Soil Sci Med. 2004;59:525.
3. Casida JE, Durkin KA (2013) Neuroactive insecticides: targets, selectivity, resistance, and second-ary effects. Annu Rev Entomol 58:99–117
4. Chakravarty P, Sidhu SS. Effects of glyphosate,

hexazinone and triclopyr on in vitro growth of five species of ectomycorrhizal fungi. Euro J For Path. 1987;17:204–210.

5. Devi, P.I. (2009) Health risk perceptions, awareness and handling behavior of pesticides by farm workers. Agricultural Economics Research Journal, 22(9): 263-268. Devi, P.I. (2010)
6. FAO (Food and Agricultural Organization) (1975) Report of the First Training Course in Crop Pest Control with Special Reference to Desert Locust Control and Research. Dakar, Senegal. 17 February-21 March (progress report).
7. Gupta SK, Jani JP, Saiyed HN, Kashyap SK. Health hazards in pesticide formulators exposed to a combination of pesticides. Indian J Med Res. 1984;79:666.
8. Kashyap R, Iyer LR, Singh MM. Evaluation of daily dietary intake of dichlorodiphenyltrichloroethene (DDT) and benzenehexachloride (BHC) in India. Arch Environ Health. 1994;49:63.
9. Kumar Y. Pesticides in ambient air in Alberta . Edmonton, Alta: Report prepared for the Air Research Users Group, Alberta Environment; 2001. ISBN 0-7785-1889-4.
10. Lekei, E.E., Ngowi, A.V. and London, L. (2014) Hospitalbased surveillance for acute pesticide poisoning caused by neurotoxic and other pesticides in Tanzania. doi:10.1016/j.neuro.2014.02.007.
11. Macneale KH, Kiffney PM, Scholz NL (2010) Pesticides, aquatic food webs, and the conservation of Paciû c salmon. Front Ecol Environ 8:475–482
12. Nepal Bhardwaj, Tulsi and Sharma, J.P. (2013) Impact of pesticides application in agricultural industry: An Indian scenario, International Journal of Agriculture and Food Science Technology, l4(8): 817-822.
13. Nigam SK, Karnik AB, Chattopadhyay P, Lakkad BC, Venkaiah K, Kashyap SK. Clinical and biochemical investigations to evolve early diagnosis in workers involved in the manufacture of hexachlorocyclohexane . Int Arch Occup Environ Health. 1993;65:S193.
14. Nyakundi, W.O., Muruga, G., Ocharaand, J. and Nyenda, A.B. (2010) A study of pesticide use and application patterns among farmers: A case study from selected horticultural farms in Rift valley and central provinces,
15. Ramesh A, Tanabe S, Iwata H, Tatsukawa R, Subramanian AN, Mohan D, Venugopalan VK. Seasonal variation of persistent organochlorine insecticide residues in Vellar River waters in Tamil Nadu, South India. Environ Pollut. 1990;67:289–304.
16. Rashid B, Husnain T, Riazuddin S (2010) Herbicides and pesticides as potential pollutants: a global problem. Plant adaptation phytoremediation. Springer, Dordrecht, pp 427–447
17. Schmolke A, Thorbek P, Chapman P, Grimm V (2010) Ecological models and pesticide risk assessment: current modeling practice. Environ Toxicol Chem 29(4):1006–1012
18. Singh JB, Singh S. Effect of 2,4-dichlorophenoxyacetic acid and maleic hydrazide on growth of bluegreen algae (cyanobacteria) Anabaena doliolum and Anacystis nidulans. Sci. Cult. 1989;55:459–460.
19. Speck-Planche A, Kleandrova VV, Scotti MT (2012) Fragment-based approach for the in silico discovery of multi-target insecticides. Chemom Intell Lab Syst 111:39–45
20. US EPA. Water protection practices bulletin. Washington, DC: Office of Water; 2001. Jul, Managing small-scale application of pesticides to prevent contamination of drinking water. EPA 816-F-01-031.
21. Van Djik TC (2010) Effects of neonicotinoid pesticide pollution of Dutch surface water on non- target species abundance .
22. Wadhwani AM, Lall IJ, editors. Harmful Effects of Pesticides. New Delhi: Indian Council of Agricultural Research; 1972. Report of the Special Committee of ICAR; p. 44.
23. WHO. Geneva: World Health Organization; 1990. Public Health Impact of Pesticides Used in Agriculture; p. 88.
24. WHO. The world health report. Geneva: World Health Organization; 2001. Mental health: new understanding, new hope. 2001.

****

Tourism Indsutry In Chhattisgarh

Dr.Sunita Dubey * Dr. Daya Shankar Jagat **

Introduction - Advent of easier and easily available modes of travel, increase in the purchasing power of citizens and a fast growing culture which believes more in spending and less in saving. These factors have combined to make tourism industry one of the fastest growing industries in India. This paper is an attempt to study tourism possibilities in the state of Chhattisgarh and the present state of affairs in the tourism sector in the state.

Methodology - This paper has been prepared with a secondary data procured from the internet. The data and the related information have then been compiled to fulfill the objective stated in the introduction. The links to the references has been given at the end of this paper.

Tourism Possibility In Chhattisgarh - Chhattisgarh is a relatively newly formed state of the nation situated geographically at the heart of India. On 1st November 2017 it completes 17 years of its formation. The state might be new but the land of Chhattisgarh is quite ancient and finds a mention also in the epic RAMAYAN by the name of Dakshin Kosal. It is believed that queen Koshalya was from the Kosal kingdom. Nature has also been very kind to this state with close to 42% land being covered with forest. And thus the state is rightfully called a green state. One combines both these factors and the result is a very good opportunity for the presence and development of tourism industry. In this paper let's explore the presence and possibilities of the tourism industry in Chhattisgarh.

The tourism industry can be broadly divided into the following categories

1. Natural & wildlife Tourism
2. Historical & the Archeological Tourism
3. Religious Tourism
4. Cultural Tourism
5 Eco and Adventure Tourism

1. Natural & Wildlife Tourism - For a land gifted with close to 42% forest land it is but natural to have an abundance of national parks and wildlife sanctuaries. The same holds true for Chhattisgarh. The state boasts of 3 national parks and 11 sanctuaries. They are

National Parks

1. Kanger Ghati National Park, Bastar District , Ares is 200 Sq KM
2. Indravati National Park, Bijapur District, Area is 1258 Sq KM
3. Guru Ghasi Das National Park, Korea District, Area is 2893 Sq KM

Sanctuaries

1. Achanakmar, Bilaspur
2. Badalkhol, Jashpur
3. Bhairamgarh, Bijapur
4. Barnawapara, Baloda Bazar
5. Gomarda, Raigarh
6. Pamed, Bijapur
7. Semarsot, Balrampur
8. Sitanadi, Dhamtari
9. Udanti, Gariyaband
10. Tamor Pingla, Sarguja
11. Bhoramdeo, Kawardha

Such large forest area has also been blessed by a wide variety of wildlife starting from the king of the forest- The Tiger. Incidentally the Indrâvati National Park is also the only tiger reserve of the state. Other animals include the wild boar, Nilgai & the different variety of Deer's, Bison, striped hyena, jackal, wild dogs to name a few. The Kanger Ghati Park is also famous for its bio diversity and presence of crocodiles. The leopard is found in abundance across the forests of the state.

Caves & Waterfalls - Apart from the flora and fauna, nature has also been kind to gift the state with a number of natural caves and waterfalls. The prominent caves are

1. Gadiya mountain in Kanker district
2. Kotumsar cave in Bastar district
3. Kailash Gufa, Ramgarh & Sita Bengra in Sarguja district
4. Singharpur caves in Raigarh district

Out of these the most famous is the Kotsamar caves as it is the only place in the world to have the blind fishes.

The waterfalls are not left behind and they are -

1. Amrit Dhara in Koriya district
2. Tiger Point in Mainpat in Sarguja district
3. Chitrakote and Teerathgarh in Bastar district

The most famous of these is the Chitrakot waterfall near

*Asst.Prof. (Commerce) Govt. Pt. Shyamacharan Shukla College, Dharsiwa, Raipur (C.G.) INDIA
** Principal, Govt. Pt. Shyamacharan Shukla College, Dharsiwa, Raipur (C.G.) INDIA

Jagdalpur city and is also called as the Niagra's of India. The height of the fall is 30 meters which is a very picturesque sight especially at the time of the monsoons till the onset of summer.

The latest edition to the wildlife tourism is the inauguration of the Jungle Safari in the Naya Raipur in the year 2016. When completed it is slated to be the biggest safari in the entire Asia.

2. Historical & Archeological Tourism - As mentioned earlier, the land of Chhattisgarh is mentioned in the very ancient of the epics. Thus the state also has historical sites worth visiting. One of the spots near the Dhamau Dhara waterfall in the Janjgir-Champa district has a stone inscription dating back to the 1st century C.E. Apart from this the other sites worth seeing are

1. Barasoor that host a thousand year old Ganesh idols and Mama Bhanja temple in Bastar
2. The recently discovered Dholkal Ganesh. Situated at the top of Dholkal mountain at a height of 3000 ft built by the Chindak Nagvanshi kings
3. Sirpur near Mahasamund is famous for the brick temples and believed to be 1500 year old
4. Very recently Tarrighat has been excavated some 35 KM's from Raipur and is believed to be 10000 years old.
5. The Bhoramdev temple near Kawardha is also known as the 'Khajuraho of Chhattisgarh' and was built in the same style as the world famous Khajuraho temples and also around the same time.

3. Religious Tourism - Religious sites in India are found in abundance and Chhattisgarh is no exception. The sites of the female goddess are especially found across the country with a local name around the length and breadth of the country. Here also Chhattisgarh is in line with the country. Apart from such temples dedicated to the DEVI, there are Buddhist and Jain pilgrimage sites also available in the state. The places are -

1. The Rajiv Lochan temple at Rajim is a Vishnu temple dating back to 7th Century C.E.
2. The Doodhadhari Math and Mahamaya temple in Raipur are believed to be 400 years old
3. The Bamleshari devi temple in the hill top of Dongergarh
4. The Devi temple at Ratanpur near Bilaspur
5. The Danteshwari devi temple at Dantewada in Bastar
6. Champaran is believed to be the birthplace of Sant Mahaprabhu Vallabhacharya of the Vallabha sect. Champaran is situated 60 KM's from the city of Raipur.

4. Cultural Tourism - A state which boasts of as large as 32 different tribal groups has clearly much to offer in terms of cultural tourism. For the one who is interested in studying tribal culture, Chhattisgarh is a paradise. The tribal's are spread across the length and breadth of the state still living a life style which is light years away from the modern world. Their clothing, customs and culture at large has not undergone much change in spite the world around them changing fast. Many scholars, since the time of the British era have been investing time in this trial land to learn about their tribal ways. The most famous amongst them has been the British born Verrier Elwin who was also awarded the Padma Bhushan by the Indian Government for his work on the tribal's. His notable works include "The Muria and their Ghotul" and "Folk songs of Chhattisgarh". The tribal practice of Ghotul has especially been a subject of much hype and curiosity amongst the western researchers. Studying the tribal culture is an onerous task which is only undertaken by the most serious of scholars.
The 75 days long Bastar Dussehra is a unique cultural festival which is now famous all over India. The celebrations are different from the more famous DUSSEHRA festival celebrated across India which has its roots in the story of the Ramayana. The Bastar festival is centered on the Goddess Danteshwari who is the Kul Devi of almost all the tribes of this land. This festival is close to 500 years old and is celebrated with much colour and vigour and with its growing popularity attracts a lot of national / international tourists.

Mainpat a small village located in the Sarguja area of the state is situated at a distance of 40 KM's from the city of Ambikapur. It is famous for its natural beauty and this hill station is also referred as the Switzerland of the Chhattisgarh. This village has been used to rehabilitate the Tibetan exiles and over the years the Buddhist impressions can be found around the area. A Buddhist temple has got built and this small village has now developed as the Buddhist cultural center of the state.

Talking about the Buddhist culture, here it is again important to mention SIRPUR. The site is not only famous for the centuries old Lakshman temple made of bricks but has historically been a rich Buddhist site. The famous Chinese traveler Huen Tsang has mentioned it as a very important center in his memoirs dated 7-8th century C.E. The Buddhist importance of the site can be gauged from the fact that the great spiritual leader Dalai Lama has visited the site twice. Similarly one more community, the Sindhi community considers SHADANI DARBAR situated in Raipur as a very important pilgrimage site

5. Eco & Adventure Tourism - A state blessed with nature's generosity has ample scope of developing and promoting the Eco tourism and the Adventure tourism. The state is one of the most bio diverse states in India. It boasts of unparallel flora and fauna and thus gives ample delight to the eco tourist in its forests. The mountain ranges in the northern Chhattisgarh have potential to get developed as trekking hot spots.

Tourism Infrastructure - So far so good!!! But does the man made facilities match the facilities provided by the nature? Let's explore. Raipur the state capital does boast of a well made Airport with direct flights to most of the big cities of India. Raipur also has a well connected Railway route. The second biggest city of the state of Chhattisgarh is Bilaspur. The city is the headquarters of SECR. South

Eastern Central Railway or the SECR is one of the 17 zones of Railways in India. Being the HO of the SECR enables Bilaspur to be well connected with most of the railway routes of India. The road network has been laid well across the state and the quality of road is better than most of the developing states of India. This also enables the tourist to travel by road in the private taxi's though the bus service needs a lot of improvement.

Hospitality forms the backbone of the tourism industry and having good places to stay becomes the prerequisite to attract tourists from across the globe. The capital city of Raipur does boast of national hotel brands like the HYATT, SAYAJI & MARRIOT. Apart from that good local hotels are available all across the major cities and towns of Chhattisgarh. The state government has also established more than 35 hotels + resorts for the tourist to stay. The resorts built in the forest sanctuaries are also well furnished and well equipped.

Tourist Visiting Chhattisgarh - A Positive Sign

S.	Year	Local	Foreign	Total
1	2015	185000	31300	216300
2	2014	121000	21810	142810

The source for this data is a report published in the HITAVADA.

Way Forward - Tourism industry is one of the fastest growing industries. It is evident from the kind of effort every state government is doing to promote local tourism. It all started with Gujarat roping in film star Amitabh Bachchan to promote Gujarat Tourism. Following the footsteps of Gujarat a very good marketing strategy by creating interesting advertisements were done by the Madhya Pradesh Government. The reason for such interest is that the industry provides the following benefits

1. It raises direct/ indirect employment
2. With influx of foreign tourist the foreign exchange also comes in
3. A good tourist experience enforces credibility of the state
4. Positive word of mouth establishes the state in the National & International maps
5. Economy and infrastructure gets a boost
6. The world gets introduced to the indigenous talents like the handicrafts and artifacts

Chhattisgarh is the 10th largest state of India but it is not amongst the top ten tourist destination in India. The growth is encouraging but a lot of work still needs to be done. The task becomes uphill because the state most of the times get highlighted in the national media because of naxal violence. This keeps lot of tourists away especially from the Bastar area. This was evident when the tourist inflow saw a steep down ward trend post the May 2013 Jheeram Ghati attacks.

Though the tourism industry is taking a lot of initiatives especially in the digital world still a lot needs to be done to make Chhattisgarh a credible tourist destination. Highlighting a safe Chhattisgarh in the national media should be the most important aspect of this campaign. The second step should be taken to improvise the intra state Bus service.

References :-

1 Tourism in Chhattisgarh- Wikipedia https://en.wikipedia.org/wiki/Tourism_in_Chhattisgarh
2 Chhattisgarh Tourism – official website http://cgtourism.choice.gov.in/
3 The Hitavada report dated 5th July 2016 http://thehitavada.com/Encyc/2016/7/5/Chhattisgarh-state-records-60—rise-in-number-of-foreign-and-domestic-tourists.aspx
4 Bastar Dassehra https://en.wikipedia.org/wiki/Bastar_Dussehra
5 Verrier Elwin- Wikipedia https://en.wikipedia.org/wiki/Verrier_Elwin
6 Archeological sites- Tourism of Chhattisgarh – Travel Themes http://travelthemes.in/archaeological-sites-tourism-of-chattisgarh/

****

मध्यकालीन संत एवं भक्त कवि कबीर और सार्वभौमिक मानव मूल्य

डॉ. के. एस. बघेल *

शोध सारांश – मध्यकालीन संतों एवं भक्तों मे शिरोमणी महामना कवि कबीर सार्वभौमिक मानव मूल्यों के प्रतिष्ठापक एवं विलक्षण व्यक्तित्व सम्पन्न युग द्रष्टा थे। भारत भूमि पर अवतरित कबीर सामाजिक चेतना के कवि हैं वे ऐसे दौर की उपज थे, जहां भक्ति की प्रधानता थी, इसलिए उन्होंने सार्वभौमिक मानव मूल्यों की स्थापना के लिए भक्ति को माध्यम बनाया है। उन्होंने बाह्य आडम्बरों का विरोध कर मानव मूल्यों की स्थापना की।

प्रस्तावना – महापुरूष अपने समय की देन होते हैं। महात्मा कबीर मध्यकाल के तिमिराच्छन्न वातावरण में अपना ज्ञानदीप लेकर अवतरित होते हैं, जिससे भूली-भटकी जनता उचित पथ और सम्बल पाती है। कबीर के आगे दिग्भ्रमित पतनोन्मुखी समाज है। चुँकि कबीर समाज के निचले स्तर से आये थे जिससे सामान्य जनता से उनका परिचय था। प्रतिदिन अनुभव में आने वाली वस्तुओं एवं व्यवहारों की वर्तमान स्थिति से असंतुष्ट होकर उनकी वास्तविकताओं को उजागर कर मानव मूल्यों की स्थापना पर बल दिया।

कबीर अपने युग की आवश्यकताओं और बुराईयों को देखा तथा धर्मान्ध में डुबे हुए भटकते समाज को सही मार्ग प्रशस्त करने का बीडा उठाया। उन्होंने आम लोगों को ऊँच-नीच, छोटे-बडे, हिन्दु-मुस्लिम के भेदभाव को मिटाने का रास्ता दिखाया। ईश्वर एक है वह सर्वशक्तिमान और सर्वोपरि है। इसलिए उसी की साधना करनी चाहिए। वही कल्याण करेगा। कबीर का काव्य मानवीय मूल्यों का प्रतिष्ठापक है। कबीर ने आम लोगों को जो संदेश दिया वह आज भी लोगों के कंठ और मन में गूंज रहा है। कबीर लोक से साक्षात्कार करते हुए लोकमय हो गए और लोक कबीरमय।

मध्य युग के प्रखर, यशस्वी सच्चे समाज सेवी, समाज सुधारक, कबीर भारतभूमि पर शोषित समाज का उध्दार करने और शोषकों को राजमार्ग दिखाने के लिए जन्मे थे। समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र आदि अनेक उपजातियों में विभाजित था। समाज व्यवस्था वर्ण आधारित और अत्यंत कठोर थी। वर्ण व्यवस्था कर्मणा न होकर जन्मना हो गयी थी। मनुष्य के कर्म, उनके मानवीय संस्कार प्रमुख नहीं थे बल्कि उनका कुलीन होना सम्मान की बात थी। वस्तुत: मानव की उपेक्षा हो रही थी। कबीर ने मानव को महत्व देते हुए मानवीय कार्य किए, जो आज के समय में भी प्रासंगिक है।

कबीर हिन्दुओं में व्याप्त वर्ण और जाति-भेद के विरोधी थे। उनके मत से ये भेद उपरी कृत्रिम और मिथ्या है। ब्राह्मण और शुद्र प्रकृति ने नहीं बनाए, यह भेद समाज में व्याप्त था।

एक बुँद, एकै मल-मूतर, एक चाम एक गूदा।
एक जाति में सब उपजाना, को वामन को सूदा।।

आज के भारत के लिए कबीर का यह ब्राह्मण-शुद्र के भेद को मिटाने का आह्मन कितना मानवीय मंगलकारी है।

कबीर ने धर्म और आडम्बर का भेद कर सच्चे मानव मूल्यों को स्थापित किया है। धर्म का संबंध सत्य से जोडकर पाखण्ड और असत्य का निषेध किया। मूर्ति पूजा, तीर्थाटन, जप, तिलक और मस्जिद में आवाज देकर चिल्लाने वालों को पाखण्डी कहा है।

कांकर पाथर जोरि के, मस्जिद लई बनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय।।

कबीर सच्चे अर्थो मे धर्म-निरपेक्ष संत थे। वे न तो हिन्दु थे, न मुसलमान और वे हिन्दु भी थे , मुसलमान भी। अभिप्राय यह है कि उन्हें धर्मोन्धता किसी की भी स्वीकार नहीं थी, अच्छाई सबकी स्वीकार थी। कबीर ने उस धर्म निरपेक्षता के महान आदर्श का प्रचार किया, जिसकी घोषणा आज का भारतीय लोकतंत्र करते नहीं थकता।

कबीर एक ऐसी व्यवस्था के पक्षधर थे जो किसी व्यक्ति की कुल जन्माधारित श्रेष्ठता या निम्नता घोषित न करके, व्यक्ति की व्यक्तिगत योग्यता के आधार पर मूल्यांकन कर सके। इसी विवेकसम्मत समाज व्यवस्था के लिए कबीर कहते है-

जो तू बाम्हन बाम्हनी जाया।
आन बाट तू काहे न आया।।

कबीर को ऐसा कोई भी मत स्वीकार्य नहीं जो मनुष्य-मनुष्य के बीच भेद पैदा कर सके-कोई भी अनुष्ठान या साधना पद्धति या शास्त्र स्वीकार्य नहीं जो विवेक सम्मत न हो। प्रत्येक अविवेकी व्यवस्था को स्वीकार करने का साहस लेकर कबीर पैदा हुए थे। ऐसी ही अविवेकी व्यवस्था है। वर्ण व्यवस्था जो मनुष्य की श्रेष्ठता या निम्नता का मूल्यांकन जातिगत आधार पर करती है। कबीर समाज-सत्ता के सापेक्ष एक मनुष्य के व्यक्तिगत सत्ता की स्वीकृति की भी मांग करते है। वर्णाश्रम व्यवस्था मनुष्य की समानता की संकल्पना का विरोधी है। वर्णाश्रम द्वारा प्रतिपादित नैतिकता के ये नियम मनुष्यता की सार्वभौमिक मूल्यों की सर्वथा विपरित है।

यह उनमुन रहनि सो परगट करि गाई।
दु:ख से एक परे परम पद सो पद है सुखदाई।।

कबीर वैचारिक और व्यवहारिक धरातल पर लोक परम्परा के अन्वेशक थे। आज भी उनका साहित्य धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विसंगतियों के खिलाफ एक सक्रिय विरोध है। कबीर धार्मिक सहिष्णुता वर्ग सामंजस्य, जाति सामंजस्य चाहतें हैं। उनकी चिन्तनधारा का आध्यामिक पक्ष सामाजिक चेतना के रूप में देखा जा सकता है। आध्यात्मिकता का सहारा लेकर उन्होंने माया का विरोध करते हुए बेहतर मूल्य जगत की प्राप्ति का मार्ग खोजा।

* प्राध्यापक (हिन्दी) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बडवानी (म.प्र.) भारत

कबीर महान समाज सुधारक थे। उनके समकालीन समाज में अनेक अंधविश्वासों, आडम्बरों, कुरीतियों एवं विविध धर्मो का बोलबाला था। कबीर ने इन सबका विरोध करते हुए समाज को एक नवीन दिशा देने का पूर्ण प्रयास किया। उन्होने जाति-पांति के भेदभाव को दूर करते हुए शोषितजनों के उध्दार का प्रयत्न किया तथा हिन्दु-मुस्लिम एकता पर बल दिया। उनका मत था-

जाति पांति पूछै नहीं कोई
हरि को भजै सो हरि का होई।।

कबीर के विचार आज भी उतने ही सार्थक है। आज का मानव भी इन्ही समस्याओं से जुझ रहा है जो उस समय में विद्यमान थी। वर्गगत संकीर्णताएँ, साम्प्रदायिकता उन्माद आज भी है, किन्तु आज भी कबीर का अनुशीलन और अध्ययन सार्थक एवं समीचीन है।

कबीर का जीवन जनता के उद्बोधन में व्यतीत हुआ। वह अपने लिए नहीं दूसरों के लिए रोते और विलाप करते रहे। कबीर का जन्म भले ही आज से लगभग 600 वर्षों पूर्व हुआ हो परन्तु उनके द्वारा स्थापित मानव मूल्य आज भी प्रासंगिक हैं। उस समय में युग की अपेक्षा आज उनके द्वारा दी गई शिक्षाओं का अधिक महत्व है। उनकी प्रासंगिकता कभी खत्म नहीं हो सकती। उस समय भी साम्प्रदायिक हिंसा, छुआछुत, बाह्य आडम्बर, धर्मगत लडाई, होती थी। आज भी यह सब समस्याएँ विद्यमान है। तब से लेकर आज तक के मानव ने क्या प्रगति की है ? यदि की है तो भौतिक ही मानसिक नहीं। समाज में धर्म विद्धेष, पाखण्ड आज भी व्यापत है। कबीर ने अत्याचारो, रूढ़ियों, अंधविश्वासों पर कठोर प्रहार किया था।

कबीर ने सभी धर्मो को एकजुट करने का संदेश दिया। कबीर ने भक्ति का जो मार्ग दिखाया वह सदा ही अनुकरणीय एवं सार्वभौमिक है। कबीर ने एक 'बूँद' ते विस्व रचयौ है, कहकर धर्मो को एक सूत्र में बॉधने का कार्य किया। वे विवेकसम्मत समाज व्यवस्था चाहते थे। कबीर मध्यकाल मे ही नहीं आज भी समान रूप से प्रासंगिक है। आज हम जिस समाज में रह रहे हैं उस समाज में जो विद्रुषताएँ, विद्धेष दिखाई देता है, उसमें कबीर की शिक्षाएँ अत्यधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

कबीर सभी मनुष्यों को एक ही शक्ति से उत्पन्न मानते हुए उसमें न तो किसी प्रकार का भेद करते थे और न देखने को कहते थे। उन्होंने जीवन में समानता दया, करूणा, संतोष प्रेम, सदाचार, जीवन, सत्य, अहिंसा आदि मानवीय मूल्यों का सुत्रपात किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कबीर ग्रंथावली- भगवत स्वरूप मिश्र
2. कबीर ग्रंथावली- भगवत स्वरूप मिश्र
3. कबीर ग्रंथावली- राम किशोर शर्मा
4. कबीर वाणी- जयदेव
5. लोक में कबीर- कपिल तिवारी
6. बुन्देली लोक में कबीर- नर्मदा प्रसाद गुप्ता

****

कृषि उपज मण्ड़ी समिति के जनप्रतिनिधियों की निर्वाचन प्रक्रिया का अध्ययन (बड़वानी जिले के विशेष सन्दर्भ में)

सुनीता बेले * डॉ. कान्ता अलावा **

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम, 1972 की धारा 11 के अनुसार मण्डी समिति का गठन धारा 10 एवं धारा 11 (क) में वर्णित नियमों के अधीन किया जाता है। मण्डी समिति में न्यूनतम् 08 सदस्य तथा अधिकतम् 20 सदस्य होते हैं। मण्डी समिति में से दो तिहाई सदस्य कृषकों के प्रतिनिधि होते हैं। ये सदस्य राज्य सरकार अधिसूचना से तय किये जाते हैं। इन सदस्यों का निर्वाचन ग्राम पंचायत द्वारा किया जाता है।

राज्य सरकार कृषि उपज मण्डियों के माध्यम से यह प्रयास करती हैं कि कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य प्राप्त हो सकें। यदि बाजार में कृषि उपज का उचित मूल्य कृषकों को नही प्राप्त होता है तो सरकार स्वयं न्यूनतम् खरीदी मूल्य निर्धारित कर कृषि उपज को खरीद लेती हैं। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में प्रशासनिक अधिकारी, कर्मचारी, सत्ताधारी दल व विपक्ष के जनप्रतिनिधियों की बड़ी भूमिका होती हैं। परोक्ष रूप से व्यापारी भी इस प्रक्रिया में भागीदारी कर अपने हितो की पूर्ति करते हैं।

बड़वानी जिले की सभी 05 मण्डियों तथा 07 उपमण्ड़ियों में राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा विहित प्रक्रिया अनुसार मण्डी संचालक मण्ड़ल का गठन किया गया हैं। इस मण्ड़ल में अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, कृषक सदस्य, व्यापारी सदस्य, हम्माल-तुलावटी सदस्य तथा अन्य प्रतिनिधियों को मिलकर कार्यप्रणाली का संचालन करना होता है।

मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम, 1972 के अनुसार राज्य शासन द्वारा बनाए गए मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्ड़ी (मण्डी समिति का निर्वाचन) नियम, 1997 के तहत् जिला स्तर पर मण्डी समितियों के निर्वाचन संबंधी व्यवस्था का दायित्व जिला कलेक्टर को दिया गया है। मण्डी समितियों के निवार्चन के संचालन के लिए नियुक्त किए गए या निर्वाचन में लगाए गए समस्त अधिकारी तथा कर्मचारी कलेक्टर के निर्देषन तथा नियंत्रण में निर्वाचन का कार्य करते हैं।

मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी नियम, 1997 के नियमों के अनुसार जिले के कलेक्टर को जिला निर्वाचन अधिकारी नियुक्त कर अनुविभागीय अधिकारी, अपर या संयुक्त या डिप्टी कलेक्टर अथवा राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत कृषि अधिकारी को जो नायब तहसीलदार से निम्न पद श्रेणी का न हो, रिटर्निंग आफिसर बनाया जाता है। जिला निर्वाचन अधिकारी द्वारा रिटर्निंग आफिसर के लिए एक या अधिक व्यक्तियों को सहायक रिटर्निंग आफिसर के रुप में नियुक्त किया जाता है। सहायक रिटर्निंग ऑफिसर, रिटर्निंग ऑफिसर की उन सभी षक्तियों का उपयोग करता है, जो उसे (रिटर्निंग आफिसर द्वारा) प्रत्यायोजित की जाती हैं।

सदस्यों की योग्यताएँ – मण्डी समिति के सदस्यों का निर्वाचन अधिनियम के नियमों के अनुसार होता है। मण्डी समिति की सदस्यता के लिए यह आवश्यक है कि उम्मीदवार चुनाव लड़ने की निर्धारित योग्यता रखता हो। साधारणत: समिति की सदस्यता का चुनाव लड़ने के लिए उम्मीदवार की आयु 18 वर्ष या अधिक होना चाहिए तथा उसका नाम संबंधित मतदाता सूची में होना आवश्यक है।

मण्डी अधिनियम के अनुसार कृषक सदस्यों के चयन हेतु बाजार क्षेत्र को निर्धारित नियमों के अनुसार अलग-अलग वार्ड़ों में बांटा जाता है। इन वार्ड़ों के अंतर्गत आने वाले पंच, सरपंच तथा बड़ी सोसायटी के अध्यक्ष आदि के द्वारा अपने वार्ड़ के सदस्य के रूप में एक प्रतिनिधि चुन लिया जाता है।

मण्ड़ी समिति निर्वाचन – राज्य में मण्डी समितियों के निर्वाचन के संबंध में महत्वपूर्ण दिषा निर्देश जिनका पालन निर्वाचन की प्रक्रिया में किया जाना आवष्यक होता है-

1. प्रत्येक मण्डी समिति के लिए एक व्यापारी प्रतिनिधि, एक तुलैया-हम्माल प्रतिनिधि एवं 10 कृषक प्रतिनिधियों का प्रत्यक्ष रुप से चुनाव किया जाता है। एक मतदान केन्द्र से लगभग 1000 मतदाता संबद्ध किए जाते हैं। अत: प्रत्येक मण्ड़ी क्षेत्र में, मतदाताओं की संख्या के अनुसार, मतदान केन्द्र होते हैं, परन्तु प्रत्येक ग्राम को एक मतदान केन्द्र से सम्बद्ध किया जाता है।
2. निर्वाचन प्रक्रिया हेतु जिला निर्वाचन अधिकारी द्वारा मतदाता सूची तैयार की जाती हैं और इसी मतदाता सूची के आधार पर निर्वाचन होता है। मतदाता सूची में न्यूनतम आयु 18 वर्ष या अधिक के व्यक्तियों के नाम होते हैं। मतदान के लिए दल को सामान्यत: एक बड़ी मतपेटी या दो, तीन छोटी मतपेटियाँ दी जाती हैं। छोटी मतपेटियों का उपयोग एक के बाद एक आवश्यकता के अनुसार किया जाता है।
3. साधारणत: जिला निर्वाचन अधिकारी (कलेक्टर) के नियन्त्रण व मार्गदर्शन में रिटर्निंग ऑफिसर मण्डी निर्वाचन कार्य के लिए जिलें में पदस्थ विभिन्न शासकीय कार्यालयों के कर्मचारी-अधिकारी की नियुक्ति करता है। निर्वचन कार्य के लिए सभी कर्मचारियों को दो बार मतदान प्रक्रिया का प्रशिक्षण भी दिया जाता है।
4. प्रत्येक मतदान दल में एक पीठासीन अधिकारी और दो या तीन मतदान अधिकारी नियुक्त किये जाते हैं। पीठासीन अधिकारी मतदान केन्द्र पर सम्पूर्ण मतदान प्रक्रिया को निष्पक्ष रुप से संचालित करने के लिए

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म. प्र.) भारत
** प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तार महाविद्यालय,बड़वानी (म. प्र.) भारत

उत्तरदायी माना जाता है। मतदान प्रक्रिया में नियुक्त पीठासीन अधिकारी व मतदान अधिकारी द्वारा लापरवाही व त्रुटि करने की दशा में उन पर कठोर कार्यवाही की जाती हैं।

5. किसी भी मतदान दल का कोई मतदान अधिकारी यदि गंभीर रुप से अस्वस्थ हो जाने के कारण कार्य करने की स्थिति में न रहें तो आपात व्यवस्था के तौर पर, पीठासीन अधिकारी उपलब्ध किसी उपयुक्त व्यक्ति को मतदान अधिकारी नियुक्त कर सकता हैं, परन्तु किसी ऐसे व्यक्ति को मतदान अधिकारी नियुक्त नहीं किया जाता है, जो मण्डी समिति के निर्वाचन में या उसके संबंध में किसी अभ्यर्थी द्वारा या उसकी ओर से नियोजित किया गया हो या उसके लिए अन्य प्रकार के कार्य कर रहा हो।
6. निर्वाचन में मतदाताओं को मतपत्रों की सरलतापूर्वक पहचान के लिए अलग-अलग रंगों में छपवाया जाता है इसमें-

(अ) **कृषक** प्रतिनिधि के लिए **- गुलाबी रंग** का मतपत्र

(ब) **व्यापारी** प्रतिनिधि के लिए- **पीला रंग** का मतपत्र

(स) **तुलैया-हम्माल** प्रतिनिधि के लिए- **हल्का पीला रंग** का मतपत्र

7. कृषक प्रतिनिधियों, व्यापारी प्रतिनिधि तथा तुलैया-हम्माल प्रतिनिधि के लिए चुनाव प्रतीक चिन्ह अलग-अलग होते हैं।
8. प्रत्येक मतपत्र और उसके प्रतिपर्ण (काउन्टर फाइल) पर मतपत्र का क्रमांक अंकित रहता है। मतपत्र जारी करते समय प्रतिपर्ण पर मतदाताओं के हस्ताक्षर या अंगूठा निशान मतदान अधिकारी द्वारा लिए जाते हैं।
9. मतपत्र के पीछे, रबर की सुभेदक मोहर लगाई जाती हैं और उसके नीचे पीठासीन अधिकारी के हस्ताक्षर करना होते हैं। इससे मतपत्र की वैधता स्पष्ट होती हैं, यदि किसी मतपत्र पर पीठासीन अधिकारी के हस्ताक्षर नहीं होते हैं तो ऐसा मतपत्र अवैध माना जाता है।
10. मतदान केन्द्रों के क्रमांक सम्पूर्ण मण्डी क्षेत्र के लिए निर्धारित किये जाते हैं। मतदान के लिए मतदाता, मतदान केन्द्र पर पंक्तिबद्ध होकर उपस्थित होते हैं। मतदान केन्द्र में बारी-बारी से मतदाताओं को मतदान के लिए प्रविष्ट किया जाता है।

मतदान केन्द्र पर मतदान दल के सदस्यों (शासकीय कर्मचारियों), पीठासीन अधिकारी व मतदान अधिकारी के अतिरिक्त उम्मीदवार स्वयं अथवा उसका अभिकर्ता (प्रतिनिधि) उपस्थित रहता है। मतदाता, मतदान के लिए मतदान केन्द्र में प्रविष्ट होता है तो साधारणत: वह एक अशासकीय पर्ची साथ में लेकर आता है। इस पर्ची में उसका नाम, मतदान केन्द्र क्रमांक का उल्लेख रहता है। मतदान दल के सदस्यों में मतदान अधिकरी क्रमांक 01 मतदाता सूची की चिन्हित प्रति का प्रभारी होता है। वह मतदाता की पहचान सुनिश्चित करने के लिए उत्तरदायी अधिकारी होता है।

मतदाता अपने साथ इस पर्ची के अलावा पहचान पत्र वोटर आईडी अथवा अन्य पहचान के लिए मान्य दस्तावेज लेकर उपस्थित होता है। मतदाता की पहचान सुनिश्चित होने पर मतदान अधिकारी क्रमांक 01 मतदाता सूची की चिन्हित प्रति में मतदाता के नाम के सामने सही (√) का निशान लगाता है तथा महिला मतदाता की स्थिति में उसके नाम को अण्डर लाइन करता है। इसके पश्चात् मतदान अधिकारी क्रमांक 02 जो अमिट स्याही व मतपत्रों का प्रभारी होता है। उसके पास एक मतदाता रजिस्टार भी होता है, जिसमें मतदाता के हस्ताक्षर लिए जाते हैं और इसके बाद मतदाता के बॉए हाथ की तर्जनी पर अमिट स्याही लगाई जाती हैं एवं मतदाता को मतपत्र जारी किया जाता है।

मतदाता मतपत्र लेकर मतदान प्रकोष्ठ में जाकर गोपनीय रुप से अपनी पसन्द के उम्मीदवार के नाम के सामने घूमते हुए तीरों वाली रबर की सील मतपत्र पर लगाकर मतांकन करता है। मतांकन के पश्चात् वह मतपत्र लेकर मतदान अधिकारी क्रमांक 3 जो मतपेटी का प्रभारी होता है, उसके सामने मतपत्र मतपेटी में डालता है। इसी प्रकार की मतदान प्रक्रिया निर्धारित समयानुसार दिनभर संचालित होती हैं।

मतपेटी तैयार करना - मतदान आरम्भ करने के लगभग 15-20 मिनट पूर्व उपस्थित उम्मीदवार अथवा प्रतिनिधियों की उपस्थिति में निर्धारित प्रक्रिया अनुसार मतदान के लिए मतपेटी तैयार की जाती हैं और पीठासीन अधिकारी मतदान आरम्भ करने की घोषणा करता है।

मतदान की समाप्ति व मतगणना व परिणाम - मतदान के निर्धारित समय समाप्ति के पश्चात् मतदान केन्द्र पर ही मतदान दल के सदस्य मतगणना का कार्य करते हैं। इसके लिए सबसे पहले मतपेटी में से मतपत्र निकालकर उनकी छंटनी रंग के आधार पर की जाती हैं, फिर 50-50 मतपत्रों की गड्डी बनाई जाती हैं। बाद में उम्मीदवार के अनुसार मतपत्रों की छटनी कर गिनती की जाती हैं। मतदान दल के पीठासीन अधिकारी द्वारा उम्मीदवारों को प्राप्त मतों की संख्या उम्मीदवारों को अथवा उनके प्रतिनिधियों को बताई जाती हैं, लेकिन उम्मीदवार के विजेता अथवा पराजित होने की घोषणा नहीं की जाती हैं। इसकी घोषणा अगले निर्धारित दिवस को मतदान नियंत्रण कक्ष से निर्वाचन अधिकारी के द्वारा की जाती हैं। निर्वाचन अधिकारी विजेता उम्मीदवार को पद की शपथ दिलाकर प्रमाण-पत्र जारी करता है। इस प्रकार मतदान की प्रक्रिया सम्पन्न होती हैं।

राज्य निर्वाचन आयोग ने मण्डी समिति के संचालकगण की निर्वाचन प्रक्रिया में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के लिए स्थान आरक्षित किये हैं। अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के सदस्यों का यह दायित्व होता है कि वे संबंधित वर्ग के कृषकों के हितों की रक्षा करें, उनकी सहायता करें व आवश्यक मार्गदर्शन दे जिससे कि संबंधित वर्ग के कृषकों का शोषण नही हो और उन्हें उनकी कृषि उपज का उचित मूल्य प्राप्त हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश राज्य निर्वाचन आयोग, इलेक्ट्रानिक मतदान मशीन।
2. इलेक्ट्रानिक मतदान मशीन निर्देशिका भारत निर्वाचन आयोग।
3. मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972, भोपाल।
4. कार्यालय कृषि उपज मण्डी समिति, बड़वानी, सेंधवा, बलवाडी से प्राप्त जानकारी।
5. व्यक्तिगत साक्षात्कार पर आधारित।

****

Public Distribution System And Food Security In India

Archana Gaur *

Introduction - India's population is increasing rapidly which implies that with each passing year we have increased number of people below the poverty line. This has in turn led India to become a country which has one of the largest number of hungry people in the world. Over 10 million people die every year of chronic hunger and hunger-related diseases, of which a quarter deaths take place in India.

Almost 50 percent of Indian children are underweight, 30% of new-born have low weight at birth, and over 55% of married women and about 80% of young babies in the age group 6 - 35 months are anaemic.The problem of malnutrition is complex, multi-dimensional and inter-generational in nature. The varied causes include inadequate consumption of food, frequent infections, lack of availability of safe drinking water and proper sanitation, illiteracy specially in women, poor access to health services, low purchasing power, socio-cultural factors such as early marriages of girls, lack of care during pregnancy and infancy, ignorance about nutritional needs of infants and young children, etc.

Thus, to improve the health conditions and provide food grains to common people at affordable prices, the universal Public Distribution System (PDS) was introduced in India in 1965. PDS evolved as a system for distribution of food grains at affordable prices and management of emergency situations. Over the years, the term PDS has become synonymous with the term 'food security' and also an important part of Government's policy for management of food economy in the country.

It served the aim of (a) maintaining stability in the prices of essential commodities across regions and (b) keeping a check on private trade, hoarding and black-marketing.

Initially PDS wastarget less and only aimed at helping poor families. In 1997, PDS was made a Targeted service and called Targeted PDS where the population was classified into Above Poverty Line and Below Poverty Line. The category of population falling in BPL were made eligible for subsidized purchase of commodities from the ration shops.TPDS established Fair Price Shops for the distribution of food grains at subsidized rates.Unfortunately, this method did not produce any good results due to governmental loopholes.

In 2001, the People's Union for Civil Liberties (PUCL) filed a writ petition in the Supreme Court contending that the "right to food" is essential to the right to life as provided in Article 21 of the Constitution. During the ongoing litigation, the Court has issued several interim orders, including the implementation of eight central schemes as legal entitlements. These include PDS, Antyodaya Anna Yojana (AAY), the Mid-Day Meal Scheme, and Integrated Child Development Services (ICDS). In 2008, the Court ordered that Below Poverty Line (BPL) families be entitled to 35 kg of food grains per month at subsidised prices. After this the National Food Security Act was enacted in the year 2013.

The National Food Security Act, 2013 gives statutory backing to the TPDS. This legislation marks a shift in the right to food as a legal right rather than a general entitlement. The Act classifies the population into three categories: excluded (i.e., no entitlement), priority (entitlement), and Antyodaya Anna Yojana (AAY; higher entitlement). It establishes responsibilities for the centre and states and creates a grievance redressal mechanism to address non-delivery of entitlements.

The Act provides for coverage of up to 75% of the rural population and up to 50% of the urban population for receiving subsidized food grains under Targeted Public Distribution System (TPDS), thus covering about two-thirds of the population. Under the Act, the eligible persons will be entitled to receive 5 kgs of food grains per person per month at subsidized prices of Rs. 3/2/1 per Kg for rice/ wheat/coarse grains.The TPDS operates through a coordinated system between the Centre and the state governments wherein the Centre is responsible for setting the Minimum Support Prices (MSP) for foodgrains bought from the farmers and allocates this purchase among the states at the Central Issue Price (CIP).

Issues with TPDS :

1. Identification of poor people
2. Inadequate storage capacity with FCI
3. The gap between required and existing storage capacity.
4. Leakage and diversion of food grains during transportation.

Reforms in PDS :

*Professor, S.N.G.G.P.G. College, Bhopal (M.P.) INDIA

1. Adhaar Linked and digitized ration cards: This allows online entry and verification of beneficiary data. It also enables online tracking of monthly entitlements and off-take of foodgrains by beneficiaries.
2. Computerized Fair Price Shops: FPS automated by installing 'Point of Sale'device to swap the ration card. It authenticates the beneficiaries and records the quantity of subsidized grains given to a family.
3. DBT: Under the Direct Benefit Transfer scheme, cash is transferred to the beneficiaries' account in lieu of foodgrains subsidy component. They will be free to buy food grains from anywhere in the market. For taking up this model, pre-requisites for the States/UTs would be to complete digitization of beneficiary data and seed Aadhaar and bank account details of beneficiaries. It is estimated that cash transfers alone could save the exchequer Rs.30,000 crore every year.
4. Use of GPS technology: Use of Global Positioning System (GPS) technology to track the movement of trucks carrying foodgrains from state depots to FPS which can help to prevent diversion.
5. SMS-based monitoring: Allows monitoring by citizens so they can register their mobile numbers and send/ receive SMS alerts during dispatch and arrival of TPDS commodities
6. Use of web-based citizens portal: Public Grievance Redressal Machineries, such as a toll-free number for call centers to register complaints or suggestions.

We can say that the government has taken significant steps in ensuring better changes in PDS system and recognising right to food as a basic right for every individual. NFSA is slowly being implemented in most of the states which are also undertaking necessary PDS reforms.

****

भारत में वस्तु एवं सेवा कर (GST) एक अध्ययन

डॉ. आर. के. चौकसे *

प्रस्तावना – 115 वॉ संविधान संशोधन विधेयक वस्तु एवं सेवा कर अधिनियम 3 अगस्त 2016 को राज्य सभा से स्वीकृत होने के पश्चात राष्ट्रपति जी के हस्ताक्षर पश्चात से समस्त अप्रत्यक्ष कर कानून के स्थान पर नया वस्तु एवं सेवा कर अधिनियम 2017 प्रभावशील हो गया 1 जुलाई 2017 का दिन भारतीय कर व्यवस्था के इतिहास में एक महत्वपूर्ण तारीख बन गया है 1 जुलाई 2017 से ही 'एक देश एक कर एक बाजार' के रूप में वस्तु एवं सेवा कर अमल में आ गया है 17 तरह के करो और 23 प्रकार के उपकरो को मिलाकर एक वस्तु एवं सेवा कर निश्चित तौर पर आजादी के बाद की सबसे बडी कर क्रांति है। भारत वस्तु एवं सेवा कर लागू करने वाला 161 वॉ देश वन गया है।

अनुसंधान क्रिया विधि – शोधपत्र अनुभव जन्य अध्ययन पर आधारित है यह वर्णात्मक शोध पत्र का एक प्रकार है

अध्ययन के उद्देश्य :-

1. वस्तु एवं सेवा कर की अवधारणा को समझाना।
2. भारत में वस्तु एवं सेवा कर के कार्यतंत्र की व्याख्या करना।

समंक संग्रहण – यह पत्र विभिन्न पुस्तकों अनुसंधान पत्रिकाओं समाचार पत्रों के लेखो से एकत्रित द्वितियक समंको पर आधारित एक वर्णात्मक शोधपत्र है।

वस्तु एवं सेवाकर लागू होने के पूर्व भारत की कर संरचना :- भारतीय संविधान में संघ और राज्यों के बीच वित्तीय संबंध निर्धारित किये गये है इसके अनुसार कुछ मदो पर केंद्र सरकार को कर लगाने का अधिकार है तो कुछ मदों पर राज्य सरकारों को इसी अवधारणा के अनुसार भारतीय कर संरचना निम्नानुसार है।

कर

- प्रत्यक्ष कर (केन्द्र सरकार के कर)
  1. आयकर
  2. धनकर
  3. निगम कर
- अप्रत्यक्ष कर
  - केंद्र सरकार के कर
    1. केंद्रीय उत्पाद शुल्क
    2. सीमा शुल्क
    3. केंद्रीय अधिभार एवं उपकर
  - राज्य सरकार के कर
    1. विक्रय कर
    2. चुंगी कर
    3. बिलासिता कर
    4. लाटरी टैक्स
    5. क्रय कर
    6. आक्ट्राय
    7. स्टाम्प डयूटी कर

उपरोक्त कर संरचना में वस्तु के उत्पादन से लेकर अंतिम उपभोक्ता को विक्रय की श्रंखला में केन्द्र एवं राज्य सरकार के बहुत से कर लगाए जाते है कर लगाने तथा वसूल करने की प्रक्रिया जटिल होने के कारण वस्तु का मूल्य बढ़ जाता है तथा कर चोरी की संभावनाए अधिक हो जाती है उदाहरण आपको लेपटाप खरीदना है तो सर्वप्रथम उत्पादक द्वारा केन्द्रीय उत्पाद शुल्क का भुगतान करना होगा तत्पश्चात राज्य सरकार का वाणिज्यिक कर (वैट) तथा प्रवेश शुल्क आदि का भुगतान करना होता है इस प्रक्रिया में दो से अधिक वार कर निर्धारण तथा संकलन करना होता है फलस्वरूप वस्तु का मूल्य बढ़ जाता है अत: कह सकते है कि भारत भले ही राजनीतिक रूप से एक देश है पर आर्थिक रूप से बिखरा हुआ है। व्यापारी एवं उद्योग जगत को तरह तरह की कर पैंचीदगियों का सामना करना पड़ता है जिसका अंतिम प्रभाव उपभोक्ता पर ही पड़ता है।

दोहरे / तिहरे करारोपण के स्थान पर एक कर वस्तु एवं सेवा कर लगाया गया है जिसे संक्षिप्त में जी एस टी के नाम से जाना जाता है। इसमें केन्द्र तथा राज्य सरकारों के निम्न करो को समाप्त किया गया है।

केन्द्र सरकार के कर	**राज्य सरकार के कर**
केंद्रीय उत्पाद शुल्क	विक्रय कर/ वैट
अतिरिक्त उत्पाद शुल्क	केंद्रीय विक्रय कर
अतिरिक्त सीमा शुल्क	क्रय कर
सेवा कर	मनोरंजन कर
सर चार्ज एवं सैस	विलासता कर
	प्रवेश / चुंगी कर
	आक्ट्राय लाटरी एवं सटट्।
	व्यापार कर
	सर चार्ज एवं सैस

अपवाद:- वस्तु एवं सेवा कर निम्न को शामिल नही किया गया है

1. मादक पदार्थो पर राज्य सरकार द्वारा लगाया गया आवकारी शुल्क।
2. पैट्रोलियम पदार्थो पर वैट एवं प्रवेश शुल्क।
3. विद्युत उत्पादन पर टैक्स।

भारत में वस्तुओं के उत्पादन व्यापार क्रय विक्रय एवं वितरण पर विविध प्रकार के अप्रत्यक्ष कर केंद्रीय उत्पाद शुल्क सीमा शुल्क तथा राज्य सरकार के विक्री कर, वैट, प्रवेश कर लगाए जाते है साथ ही विभिन्न सेवाओं की पूर्ती पर सेवा कर बसूल किया जाता है भारत सरकार के इन सभी करों उपकरो शुल्क एवं दरो को समाप्त कर एकीकृत कर व्यवस्था 1 जुलाई 2017 से वस्तु एवं सेवा कर के नाम से लागू की गई है यह सर्वविदित हैकि कोई भी माल या वस्तु या सेवा उत्पादक से उपभोक्ता तक एक श्रृंखला से होकर गुजरती है वितरण की इस श्रृंखला में प्रत्येक पक्ष अपनी लागत में व्यय एवं

*प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

लाभ जोड़कर अपना माल एवं सेवा की आपूर्ती करता है ऐंसी स्थिति में वस्तु का मूल्य प्रत्येक हस्तांतरण के साथ बढता जाता है ऐसी प्रत्येक वृद्धि पर एक वार कर बसूलना वस्तु एवं सेवा कर का मूल आधार है।

'माल एवं सेवा कर एक ऐसी प्रणाली है जिसके अनुसार कर पूर्ति की प्रक्रिया में प्रत्येक बिंदु पर की वृद्धि पर ही लगाया जाता है यह मूल्य वर्धन पूर्तिकर्ता द्वारा की जाती है'। वस्तु एवं सेवा कर अधिनियम में माल के विक्रेता और सेवा के प्रदायक दोनो को पूर्तिकर्ता की संज्ञा दी गई है। वस्तु एवं सेवा कर को अमली जामा पहनाने के लिए निम्न कानून बनाए गए है।

1. केंद्रीय माल एवं सेवा कर अधिनियम (सीजीएसटी एक्ट 2017)।
2. राज्य माल एवं सेवा कर अधिनियम (एसजीएसटी एक्ट 2017)।
3. एकीकृत माल एवं सेवा कर अधिनियम (आईजीएसटी एक्ट 2017)।
4. संघ राज्य क्षेत्र माल एवं सेवा कर अधिनियम (यूटीजीएसटी एक्ट 2017)।
5. माल एवं सेवा कर (राज्यों को क्षतिपूर्ति)अधिनियम 2017।

वस्तु एवं सेवा कर – भारत में संघीय शासन व्यवस्था है यहां संविधान में केंद्र और राज्यों को उनके उपयुक्त कानून के माध्यम से करारोपण और संग्रहण करने की शक्तियां प्रदान की गई है दोनो सरकारों के लिए अलग अलग जिम्मेदारियों के निष्पादन हेतु संविधान में शक्तियों का विभाजन निर्धारित किया गया है भारत में एकल वस्तु एवं सेवा कर लागू करने बजाएं दोहरा वस्तु एवं सेवा कर वित्तीय संघवाद की सांवैधानिकता को ध्यान में रखकर बनाया गया है। केन्द्र और राज्यों के साथ एक समान कर आधार पर आरोपित एक दोहरा वस्तु एवं सेवा कर लागू किया गया है भारत में वस्तु एवं सेवा कर का वर्गीकरण निम्नानुसार है।

1. **एक ही राज्य में वस्तु एवं सेवा की आपूर्ति:–** पंजीकृत व्यक्ति द्वारा जब राज्य के अन्दर माल एवं सेवा की आपूर्ति की जाती है। तो केन्द्रीय जीएसटी के साथ साथ राज्य जीएसटी भी लगाया जाता है। इसी प्रकार यदि पंजीकृत व्यक्ति द्वारा एक संघ क्षेत्र के अंदर आपूर्ति की जाती है तो केन्द्रीय जीएसटी के साथ साथ संघ क्षेत्र जीएसटी भी लगाया जाता है दूसरे शब्दो में केन्द्रीय जीएसटी + राज्य जीएसटी अथवा संघ क्षेत्र जीएसटी।
2. **अंतर्राज्जीय आपूर्ति :–** अंतर्राज्जीय व्यापार में आपूर्ति दो राज्यों अथवा दो संघ शासित प्रदेशों अथवा एक राज्य तथा दूसरा संघ शासित प्रदेश के बीच होने वाले वस्तु व सेवा की आपूर्ति कर एकीकृत जीएसटी (आईजीएसटी) लगाया जाता है एकीकृत जीएसटी हमेशा केंद्रीय जीएसटी और राज्य जीएसटी के कुल योग के बराबर होगा। वस्तु एवं सेवा कर को एक नजर में निम्नानुसार समझा जा सकता है

वस्तु एवं सेवा की आपर्ति

एक ही राज्य में आपूर्ति — अंतर्राज्जीय आपूति

एकीकृत वस्तु एवं सेवा कर (IGST)

केंद्रीय वस्तु एवं सेवा कर (CGST) — राज्य वस्तु एवं सेवा कर (SGST) /संघ क्षेत्र वस्तु एवं सेवा कर (UTGST)

वस्तु एवं सेवा कर के प्रकार :

1. माल एवं सेवा कर लागू होने के पूर्व केन्द्र सरकार कारखानों में माल के उत्पादन पर केन्द्रीय उत्पाद शुल्क एवं इससे संबंधित अन्य उपकर जैसे अतिरिक्त उत्पाद शुल्क विशेष उत्पाद शुल्क तथा सीमा शुल्क अतिरिक्त सीमा शुल्क आदि कर लगाती थी इसके अलावा कर योग्य सेवाओ की पूर्ति पर 15 प्रतिशत सेवा कर लगाया जाता था इन सब करों को समाप्त करके इनके स्थान पर माल एवं सेवाओं के उत्पादन तथा वितरण पर केंद्रीय माल एवं सेवा शुल्क लगाया जाता है जिसे सीजीएसटी के नाम से जाना जाता है केंद्रीय सीजीएसटी से प्राप्त सम्पूर्ण राशि केंद्र सरकार के खाते मे जमा होगी ओर इस सम्पूर्ण राशि का उपयोग का अधिकार केंद्र सरकार को होगा इसमें से कोई भी राशि राज्य सरकारों को नही दी जाती है। सीजीएसटी की दर जीएसटी की सामान्य दर से आधी है।

2. **राज्य माल एवं सेवा कर :–**माल एवं सेवा कर लागू होने के पूर्व प्रत्येक राज्य सरकारे तथा केन्द्रशासित प्रदेश अपने राज्य में होने वाले माल के विक्रय पर वाणिज्य कर (वेट) तथा प्रवेश कर आदि लगाते थे। इन करों को समाप्त कर इनके स्थान पर राज्यों में राज्य माल एवं सेवा कर एसजीएसटी तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में संघ क्षेत्र वस्तु एवं सेवा कर यूजीएसटी लगाया जाता हे राज्य जीएसटी से प्राप्त कर राशि सम्बनिधत राज्य द्वाराव माल एवं सेवा की आपूर्ति कर्ता तथा प्राप्तकर्ता एक ही राज्य के होंगे तभी राज्य वस्तु एवं सेवा कर लगेगा एसजीएसटी उपयोग की जायेगी राज्य जीएसटी का प्रशासन राज्य के वाणिज्यिक कर विभाग द्वारा किया जाता हे प्रत्येक राज्य सरकारो ने अलग अलग माल एवं कर अधिनियम तैयार किये है। जिनके प्रावधान केन्द्रीय जीएसटी के अनुरूप है।

3. **एकीकृत माल एवं सेवा कर :–** अंतर्राज्जीय विक्रय की दशा में जीएसटी के पूर्व केन्द्रीय विक्रय कर लगाया जाता था राज्यों के बीच बाधा रहित माल एवं सेवाओं की पूर्ति सुनिश्चित करनें के लिए केंद्रीय विक्रय कर को समाप्त करके उसके स्थान पर एकीकृत माल एवं सेवा कर (आईजीएसटी) लागू किया गया है यह कर एक प्रकार से केंद्रीय जीएसटी एवं राज्य जीएसटी का समन्वित रूप है यह दोहरे जीएसटी का सबूत है। जो अंतर्राज्जीय आपूर्ति की दशा में लगाया जाता है इसमें जीएसटी की सामान्य दर ही लागू होती है। अंतर केवल इतना है कि अंतर्राज्जीय आपूर्ति की दशा में बीजक में आधा भाग सीजीएसटी एवं आधा भाग एसजीएसटी दर्शाने के बजाए सम्पूर्ण कर एकीकृत जीएसटी (आई जीएसटी)के रूप में दिखाया जाता है एकीकृत जीएसटी केन्द्र सरकार द्वारा लगाया गया एवं एकीकृत किया जाता है। एकीकृत जीएसटी से संग्रहित राशि केन्द्र सरकार अपने पास टेम्परेरी खाते में जमा करेगी। इस खाते से केंद्र का हिस्सा केंद्र सरकार प्राप्त करेगी तथा राज्यों का हिस्सा स्वमेव राज्यों को स्थानांतरित कर दिया जाता है।

वस्तु एवं सेवा कर का भारत में संचालन

1. **एक ही राज्य में विक्रय तथा उसी राज्य में पुन: विक्रय की दशा में :–** एक ही राज्य में प्रथम विक्रय की दशा में केंदीय वस्तु एवं सेवा कर तथा राज्य वस्तु एवं सेवा कर लगेगा उसी राज्य में पुन: विक्रय की दशा में उपरोक्त दोनो कर लगेंगें परन्तु इनपुट टेक्स की क्रेडिट प्राप्त होगी। उदाहरण के लिए इंदौर का ए व्यापारी 100 रूपये का माल भोपाल के बी व्यापारी को विक्रय करता है और भोपाल का बी व्यापारी पुन: विक्रय 200 रूपये में जबलपुर के सी व्यापारी को करता है जिस पर जीएसटी की दर 16 प्रतिशत है इनका कर निर्धारण निम्नानुसार होगा।

ए व्यापारी द्वारा बी को विक्रय	100
राज्य वस्तु एवं सेवा कर 8%	8
केन्द्रीय वस्तु एवं सेवा कर 8%	8
	16

बी द्वारा सी को विक्रय	200
राज्य वस्तु एवं सेवा कर 8%	16 – (8 Input SGST) =8
केन्द्रीय वस्तु एवं सेवा कर 8%	16 – (8 Input SGST) =8
	16

2. एक राज्य में विक्रय तथा दूसरे राज्य में पुन: विक्रय :– एक राज्य में विक्रय की दशा में केंद्रीय वस्तु एवं सेवा कर तथा राज्य वस्तु एवं सेवा कर लगेगा परन्तु किसी अन्य राज्य में पुन: विक्रय की दशा में एकीकृत वस्तु एवं सेवा कर लगेगा । जिस पर इनपुट टेक्स रिवेट प्राप्त होगी उदाहरण इन्दौर का ए व्यापारी भोपाल के बी व्यापारी को 100 का माल विक्रय करता है तथा भोपाल का बी व्यापारी नागपुर के सी व्यापारी को पुन: विक्रय 200 रूपये में कर देता है जिस पर जीएसटी की दर 16 प्रतिशत है तो कर निर्धारण निम्नप्रकार होगा

ए व्यापारी द्वारा बी को विक्रय	100
राज्य वस्तु एवं सेवा कर 8%	8
केन्द्रीय वस्तु एवं सेवा कर 8%	8
	16

बी द्वारा सी (नागपुर)को विक्रय	200
एकीकृत (IGST) राज्य वस्तु सेवा कर 16%	32–(16 SGST+ CGST एवं INPUT TAX REBEAT) =16

3. अन्य राज्य में विक्रय साथ ही उसी राज्य में पुन: विक्रय:– जब एक राज्य का व्यापारी किसी अन्य राज्य के व्यापारी को माल का विक्रय कर्ता है तो एकीकृत वस्तु एवं सेवा कर लगाया जाएगा परन्तु उसी अन्य राज्य में पुन: विक्रय किया जाता है तो एसजीएसटी एवं सीजीएसटी पुन: लगाया जाएगा जिस पर आईजीएसटी की इनपुट टैक्स रिवेट प्राप्त होगी । उदाहरण के लिए इंदौर का ए व्यापारी 100 का माल नागपुर के बी व्यापारी को बेचता है तथा नागपुर का बी व्यापारी माल का पुन: विक्रय 200 में मुंबई के सी व्यापारी को करता है जिस पर कर की दर 16 प्रतिशत है तो कर निर्धारण निम्न प्रकार होगा।

ए द्वारा बी (नागपुर)को विक्रय	100
एकीकृत (IGST) राज्य वस्तु एवं सेवा कर 16%	16

बी व्यापारी द्वारा सी मुंबई को विक्रय	200
राज्य वस्तु एवं सेवा कर 8%	16–(8 IGST INPUT TAX REBEAT) = 8
केन्द्रीय वस्तु एवं सेवा कर 8%	16– (8 IGST INPUT TAX REBEAT) = 8
	16

माल एवं सेवा कर अधिनियम की कुछ अन्य महत्वपूर्ण विशेषताए :

1. दैनिक जीवन की कई अनिवार्य वस्तुओं की जीएसटी से कर मुक्त घोषित किया गया है इन्हे सरकार ने शून्य कर श्रेणी में रखा है
2. मादक पदार्थो शराब आदि पर प्रांतीय उत्पाद शुल्क लगता है इसे जीएसटी से बाहर रखा गया है ।
3. सहमति न बनने के कारण पैट्रोलियम पदार्थो क्रूड आयल, पैट्रोल, डीजल, प्राकृतिक गैस तथा टरबाईन ईधन को अस्थाइ रूप से जीएसटी से बाहर रखा गया है ।

जीएसटी के लाभ :

1. यह माल एवं सेवाओं की कीमतो में कमी लाएगा जिससे उपभोग में वृद्धि होगी।
2. यह व्यापार उद्योग के लिए अनुकूल वातावरण बनाएगा जिससे जीडीपी में वृद्धि होगी ।
3. अनेक करो के जंजाल से छूट प्राप्त होगी एक ही टैक्स रहने से टैक्स लेने वाले तथा टेक्स देने वाले को सुविधा होगी ।
4. तरह तरह के टैक्स के बदले एक टैक्स होने से सरकार को कर वंचन पर लगाम रखने की सुविधा होगी।
5. जीएसटी से भारत के अंदर विभिन्न राज्यो के बीच व्यवसाय सरल होगा तथा संचालन खर्च में कमी आएगी क्यो कि एक तो चुंगी कर नही देना होगा दूसरा परिवहन लागत कम होगी क्यो कि ट्रक को अलग अलग चुंगी स्टेशनो पर रूकना नही पडेग़ा।

जीएसटी के हानि – प्रस्तावित वस्तु एवं सेवा कर संरचना तभी सफल होने की संभावना है जब देश में मजबूत सूचना प्रोद्यौगिकी तंत्र विकसित हो परन्तु भारत अभी उभरते हुए देशो में एक है जहां बहुत सारे ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट कनेक्टीविटी सही तरीके से उपलब्ध नही है ऐसी स्थिति में जीएसटी के द्वारा ई बिलिंग करना कठिन प्रतीत होता है ।ग्रमीण एवं अर्द्ध शहरी क्षेत्रों में अक्सर देखा जा रहा है कि व्यापारी जीएसटी के नाम पर वस्तु के मुल्य बढा दिए है पर जीएसटी का पक्का बिल नही देने के कारण जीएसटी का पैसा व्यापारी अपनी जेब में रख रहा है देश में भवन निर्माण क्षेत्र में जीएसटी लागू होने के बाद निर्माणी लागतो में बृद्धि देखी गई है ।

निष्कर्ष – जीएसटी लंबी समय अवधि की रणनीति है जिसके प्रारंभ में कुछ नकारात्मक प्रभाव अल्प समय के लिए देखे जा सकते है परन्तु लम्बे समय में सकारात्मक प्रभाव देखने को मिलेंगे भारतीय अर्थव्यवस्था में जीएसटी अभी शिशु चरण में है जीएसटी इस तरह से डिजाईन किया गया है कि इससे राजस्व में वृद्धि होगी कर चोरी में कमी आएगी तथा वस्तु एवं सेवाओं के मूल्य में कमी आएगी जिससे सरकार व्यापार एवं उद्योग तथा आम उपभोक्ता को लाभ प्राप्त होगा ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. अप्रत्यक्ष कर, श्रीपाल सकलेचा सतीश प्रिंटर्स इन्दौर।
2. वस्तु एवं सेवा कर श्रीपाल सकलेचा सतीश प्रिंटर्स इन्दौर।
3. भारतीय अर्थव्यवस्था पर माल एवं सेवा कर के प्रभाव पर शोध पत्र शेफाली दाणी।
4. प्रबंधन के आईओएसआर जर्नल ई–आईएसएसएन:2278–487x,1
5. LINK- http://www.pradhanmantriyojna.co.in/gst-bill-2016-17
6. LINK- http://www.deepawli.co.in/gst-bill-2015-in hindi.html

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

छिन्दवाड़ा जिले के आदिवासी क्षेत्रों में स्वास्थ्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में परिवर्तन (1991-2011)

ऋतेश कुमार कहार * डॉ. मोहन निमोले **

प्रस्तावना - स्वास्थ्य एवं शिक्षा एक ऐसा क्षेत्र है जिसके महत्व को सभी स्वीकार करते हैं। वैज्ञानिक सिद्धातों एवं विधियों के अधिकाधिक प्रयोग के परिणाम स्वरूप स्वास्थ्य एवं शिक्षा के ज्ञान की आवश्यकता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। स्वास्थ्य प्रत्येक व्यक्ति के लिये आवश्यक है। प्रजातंत्र को सफल बनाने के लिये उत्तम स्वास्थ्य वाले शक्तिशाली नागरिको का होना अनिवार्य है। अस्वस्थ शरीर मनुष्य के हर कार्य क्षेत्र में बाधा पैदा करता हैं, आधुनिक युग में वैज्ञानिक तकनीक तथा औद्योगिक प्रगति के कारण जीवन में व्यस्तता तथा जटिलता बढ़ती जा रही है स्वास्थ्य मनुष्य समाज की रीढ़ की हडी समझा जाता हैं, स्वास्थ्य एवं शिक्षा में केवल व्यक्तिगत स्वास्थ्य ही नही बल्कि यदि हम देखे तो उसमें सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा विद्यालय स्वास्थ्य दोनों ही शामिल हैं।

स्वास्थ्य एवं शिक्षा वह प्रक्रिया है जो एकत्रित किये गये ज्ञान को अनुभव कराती है। जिसका उद्देश्य ज्ञान द्धारा शिक्षा और व्यवहार पर प्रभाव डालना हैं जो व्यक्ति और लोगों के स्वास्थ्य से जुडे हैं। स्वास्थ्य शिक्षा उन समस्त अनुभूतियों का योग हैं जो स्वास्थ्य से संबधित आदत आचरण एवं ज्ञान का प्रभावित करती हैं।

मनुष्य अपनी प्रगति के लिये पर्यावरण से न केवल समायोजन करता हैं अपितु उसके साधनों का दोहन कर उसका विरूपण भी करता रहा हैं। उससे जीवन के सभी पक्ष प्रभावित होते हैं, इन्ही में से एक पक्ष मानव स्वास्थ्य भी हैं। मनुष्य के क्षेत्रीय एवं कालिक प्रतिरूपों का अध्ययन एवं व्याख्या स्वास्थ्य भूगोल एवं चिकित्सा भूगोल में किया जाता हैं, जो की भूगोल की एक नवीनतम् शाखा हैं।

इस शाखा में मनुष्य के स्वास्थ्य संबंधी तथ्यों को रखा गया हैं जो समग्र भूगोल की विषय सामग्री का एक भाग हैं जो पूर्णत: भौगोलिक तथ्यो पर आधारित है जिससे पर्यावरण प्रभावित होता है और पर्यावरण मनुष्य पर प्रभाव डालता हैं।

मनुष्य समाज के अंग हैं और व्यक्तियों के समूह से ही समाज बनता हैं। व्यक्तियों की स्वच्छता ही समाज की स्वच्छता हैं। व्यक्तियों को शरीर स्वस्थ रखने के लिए केवल पौष्टिक आहार ही आवश्यक नहीं बल्कि स्वास्थ्य का ध्यान रखना भी आवश्यक है। एक व्यक्ति तभी स्वस्थ्य रह सकता है जब वह निवास स्थान, शरीर और वस्त्र साफ रखें। व्यक्ति को स्वस्थ्य जीवन निर्वाह करने के लिए पानी, हवा, संतुलित भोजन, व्यायाम, विश्राम एवं पर्याप्त निद्रा भी आवश्यक हैं।

भारत में शिक्षा की महत्ता सभी कालों में रही है। भारतीय मनीषियों ने तो यहां तक कह दिया है 'बिन शिक्षा नर पशु समान' यहां पर नर से आशय केवल बालक से नही बल्कि बालिका भी हैं। यदि सिर्फ बालक के लिए आशय होता तो नर की जगह बालक कहा गया होता नर से आशय मानव हैं व मानव की शिक्षा बाल्यकाल से आरम्भ होती हैं।

महाभारत काल में सान्दीपनि ऋषि के आश्रम में कृष्ण और सुदामा राजपुत्र और रंक के एक साथ शिक्षा प्राप्त करने और जीवन पर्यन्त मित्रता निभाने का उदाहरण स्मरणीय हैं।

उद्देश्य :

1. आदिवासी क्षेत्रों मे स्वास्थ्य एवं शिक्षा के स्तर का अध्ययन करना।
2. पिछड़ी हुई जनजातियों के धर्म, संस्कृति, रीति-रिवाज, रहन-सहन, व्यवसाय आदि में हुए परिवर्तनों का अध्ययन करना।
3. शिक्षा के क्षेत्र में वृद्धि, बेहतर स्वास्थ्य एवं दशाब्दिक वृद्धि दर का अध्ययन करना।

पूर्ववर्ती शोधकार्य की संक्षिप्त समीक्षा - 1952 में अंतर्राष्ट्रीय भूगोल संघ द्धारा चिकित्सा भूगोल उन भौगोलिक कारकों का अध्ययन करता हैं जिनसे रोग एवं मानव स्वास्थ्य प्रभावित होता हैं।

इस समय विश्व स्वास्थ्य संगठन ने मनुष्य के स्वास्थ्य की चिंता व्यक्त करते हुए 1964 में स्वास्थ्य को परिभाषित किया- स्वास्थ्य संपूर्ण शारिरिक मानसिक एवं सामाजिक कल्याण की दशा है न की केवल रोग की अनुपस्थिति अथवा उसकी नगण्यता।

विश्व स्तर पर जी. फील्ड (1980) ने विकसित देशों में शिक्षा एवं आय का वितरण : एक साहित्यिक समीक्षा पर अपना शोध प्रस्तुत किया। 1995 में यूनेस्को के पेरिस के सम्मेलन में शिक्षा को प्रधानता दी गई।

स्वास्थ्य एवं शिक्षा में परिवर्तन - भारत जैसे विकासशील देश के प्राचीन निवासी जिन्हें हम आदिवासी तथा भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजाति के नाम से जानते हैं। जो सम्पूर्ण भारत के सभी राज्यों में निवासी है वर्तमान में आदिवासी समाज की सीमाएं जंगलों तक सीमित नही रही इनका संपर्क शहरों व कस्बों के निवासियों से होने लगा हैं। इनमें संस्कृतीकरण का विकास हुआ हैं। औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, नवाचार, उदारीकरण के कारण स्वास्थ्य एवं शिक्षा में परिवर्तन आया है शिक्षा के अभाव में आदिवासी न अपने अधिकारों को जानते हैं न शासकीय योजनाओं को और न ही शासकीय योजनाओं का लाभ उठा पाते हैं।

स्वास्थ्य : आदिवासी क्षेत्रों में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के क्षेत्र में भी आधुनिक चिकित्सा प्रणाली का अभाव था अनुसूचित जनजाति की आबादी के स्वास्थ्य

* पी-एच.डी. शोधार्थी (भूगोल) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

सेवा संकेतको में पिछले दसको के दौरान यकीनन सुधार हुआ हैं। हालांकि सामान्य आबादी की तुलना में काफी खराब स्थिति में है अनुसूचित जनजाति की आबादी के लिए सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा सबसे कमजोर कड़ी है। जरूरत है उनके लिए किसी भी नीति अथवा कार्यक्रम का सिद्धांत भागीदारी क्षेत्र विशेष और आदिवासी भावनाओं के अनुरूप नियोजन तथा अंतर क्षेत्रीय समनवयन पर आधारित हो। अनूसूचित की जनजातियों की आबादी की मृत्यु दर के संकेतकों के दौरान सुधार हुआ हैं-

तालिका क्रमांक 1 - छिन्दवाड़ा जिला : आदिवासी क्षेत्र में स्वास्थ्य सुविधाओं में परिवर्तन

क्र.	स्वास्थ्य सुविधाएं	संख्या		अन्तर
		1991	2011	
1	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	25	26	01
2	उप-स्वास्थ्य केन्द्र	139	162	23
3	सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र	-	07	07
4	पशु चिकित्सालय	04	09	05
5	आयुर्वेदिक-होम्यो औषधालय	24	23	-1
	योग	**192**	**227**	**35**

स्रोत : छिन्दवाड़ा जिला सांख्यिकी पुस्तिका, 1991-2011.

उपरोक्त तालिका अनुसार वर्ष 1991 में छिन्दवाड़ा जिले के आदिवासी क्षेत्रों में सार्वजनिक स्वास्थ्य हेतु प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 25, उप-स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 139, पशु चिकित्सालयों की संख्या 04 एवं आयुर्वेदिक-हौम्यो औषधालयों की संख्या 24 थी जिसमें परिवर्तन की दृष्टि से यह आंकड़े संतोषजनक नहीं हैं। वर्ष 2011 में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 26, उप-स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 162, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 07, पशु चिकित्सालयों की संख्या 09 एवं आयुर्वेदिक-हौम्यो औषधालयों की संख्या 23 प्राप्त हुई है।

इस प्रकार वर्ष 1991 एवं 2011 के मध्य सार्वजनिक स्वास्थ्य की खाई को भरने के लिए और अधिक परिवर्तन की आवश्यकता हैं। वर्ष 1991 में आदिवासी क्षेत्रों में कुल स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 192 थी जो बढ़कर 2011 में 227 हो गई हैं। इन दो दशकों में स्वास्थ्य सुविधाओं में 35 की वृद्धि हुई हैं।

सार्वजनिक स्वास्थ्य के प्रसांगिक क्षेत्रो पर सहस्राब्दिक लक्ष्य ने सिर्फ उर्ध्वाधर दृष्टिकोण को अपनाया, वहीं सतत् विकास लक्ष्य, स्वास्थ्य के प्रति जीवन का संदर्भगत् अध्ययन करने का दृष्टिकोण अपनाकर स्वास्थ्य को बढ़ावा देना है हाल ही में एस ई.ए.आर.सी.एच. गढ़चिचोली में जनजातीय स्वास्थ्य सेवा में बेहतरीन पद्धतियों पर एक राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन किया गया। देश में ऐसा सम्भवत: पहली बार किया गया इसमें 23 बेहतरीन पद्धति प्रस्तुत की गई और उन पर चर्चा हुई हमें इस विशेष समूह की रिपोर्ट की प्रतीक्षा करनी चाहिए आशा है कि यह आशा की राह दिखायेगी। सतत् विकास का एकमात्र स्वास्थ्य लक्ष्य सभी के लिये स्वस्थ्य जीवन और हर उम्र में आरोग्य हैं।

शिक्षा : शैक्षणिक दृष्टि से आदिवासी समाज में पर्याप्त परिवर्तन देखने को मिले हैं आदिम जाति विभाग द्वारा वर्ष 2005-06 में प्रदेश के 89 आदिवासी विकास खण्डों में 12643 प्राथमिक शालाएं, 4369 माध्यमिक शालाएं, 510 हाई स्कूल, 476 उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, 09 आदर्श उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, 03 कन्या शिक्षा परिसर एवं 14 क्रीड़ा परिसर का संचालन किया हैं।

तालिका क्रमांक 2 - छिन्दवाड़ा जिला : आदिवासी क्षेत्र में शैक्षणिक सुविधाओं में परिवर्तन

क्र	शैक्षणिक सुविधाएं	संख्या		अन्तर
		1991	2011	
1	प्राथमिक शाला	830	1364	534
2	माध्यमिक शाला	159	408	249
3	हाई स्कूल	46	74	28
4	उच्चतर माध्यमिक विद्यालय	15	59	44
5	अन्य शालाएं	13	41	28
6	व्यावसायिक एवं अन्य	-	03	03
7	महाविद्यालय	02	05	03
	योग	**1065**	**1954**	**889**

स्रोत : छिन्दवाड़ा जिला सांख्यिकी पुस्तिका, 2012.

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता हैं कि छिन्दवाड़ा जिले के आदिवासी क्षेत्र में शैक्षणिक सुविधाओं में निश्चित ही परिवर्तन आया हैं। वर्ष 1991 में शैक्षणिक सुविधाओं का कुल योग 1065 था जो बढ़कर 2011 में 1954 हो गया हैं तथा इनके मध्य अन्तर 889 प्राप्त हुआ हैं। वर्ष 1991 में जिले के आदिवासी क्षेत्रों में प्राथमिक शालाओं की संख्या 830 माध्यमिक शालाओं की संख्या 159 और हाई स्कूलों की संख्या 46, उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों की संख्या 15, अन्य शालाएं 13 एवं महाविद्यालयों की संख्या 02 थी। वर्ष 2011 में प्राथमिक शालाओं की संख्या 1364, माध्यमिक शालाओं की संख्या 408, हाई स्कूलों की संख्या 73, उच्चतर माध्यमिक विद्यालय 59, अन्य शालाएं 41, व्यावसायिक एवं अन्य की संख्या 03, महाविद्यालयों की संख्या 05 हैं। इस प्रकार वर्ष 1991 से 2011 तक शैक्षणिक सुविधाओं में उत्तरौत्तर वृद्धि हुई हैं।

शिक्षा आर्थिक विकास का सबसे प्रभावशाली व महत्वपूर्ण तत्व हैं प्राकृतिक शक्तियों पर नियंत्रण में इन संसाधनों के विदोहन तथा व्यवस्थित व न्याय पर आधारित समाज के निर्माण में जो विभिन्न उपकरण सहायक सिद्ध होते है उनमें शिक्षा सबसे शक्तिशाली हैं।

आजादी के समय से लेकर 1961 से 1971 के दशक में 20 विश्वविद्यालय, 500 कॉलेज को जबकि 2011 में 725 विश्वविद्यालय, 37204 कालेज 11356 डिप्लोमा देने वाले संस्थान भारत उच्च शिक्षा के क्षेत्र में दुनिया का महत्वपूर्ण देश बन गया हैं जहां सबसे अधिक संख्या में छात्र पढ़ते हैं।

सुझाव :

1. आदिवासी क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओ के लिये अलग अलग दृष्टिकोण की आवश्यकता हैं जो उनके अनुसार उनके प्रति सवेदनशील हो।
2. शिक्षा एवं व्यवहार सम्बंधी कमी दूर करने के लिये स्वस्थ्य और साक्षरता एवं संचार को प्रथम माध्यम बनाया जा सकता हैं।
3. आदिम जाति कल्याण विभाग द्वारा जो विभिन्न योजना आदिवासी समुदाय हेतू चलायी जा रही है उन योजनाओ का लाभ उन्हे मिलना चाहिए।
4. जिन क्षेत्रो में आदिवासी बहुल जनसंख्या है उन क्षेत्रों में अधिक से अधिक प्राथमिक विद्यालय एवं उप स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना की जाये।

निष्कर्ष - छिन्दवाड़ा जिले के आदिवासी क्षेत्रों में स्वास्थ्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में परिवर्तन स्पष्टत: दृष्टिगोचर हुए हैं। वर्ष 1991 एवं 2011 के मध्य

सार्वजनिक स्वास्थ्य की खाई को भरने के लिए और अधिक स्वास्थ्य एवं शैक्षणिक सुविधाओं की आवश्यकता हैं। वर्ष 1991 में कुल स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 192 थी जो वर्ष 2011 में बढ़कर 227 हो गई। इस प्रकार कुल 35 स्वास्थ्य सुविधाओं की वृद्धि हुई हैं। इस प्रकार जिले में शैक्षणिक सुविधाओं में भी परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखाई देता हैं। वर्ष 1991 में शैक्षणिक सुविधाओं का कुल योग 1065 था जो वर्ष 2011 में बढ़कर 1954 हो गया तथा वर्ष 1991 से 2011 के मध्य 889 शैक्षणिक सुविधाओं की वृद्धि हुई हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कवर रमेश चन्द्र (2011); आरोग्य शास्त्र एवं स्वास्थ्य शिक्षा, अमित ब्रदर्स पब्लिकेशन नागपुर।
2. चौबे कैलाश (2001); स्वास्थ्य एवं चिकित्सा भूगोल, म.प्र. ग्रन्थ अकादमी भोपाल।
3. खत्री हरीश कुमार : स्वास्थ्य भूगोल।
4. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, 1991-2011.
5. शर्मा निशा : जनजातियों में अर्थोपार्जन के साधन एवं सामाजिक आर्थिक परिवर्तन शोध समवेत।
6. राजपूत उदय सिंह : म.प्र. में आदिवासी विकास : समस्यायं एवं सम्भावनाएं।
7. कुमार विमल : नई सरकार में शिक्षा की नई उड़ान योजना।
8. बांग अभय : जनजातीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाएं वर्तमान और भविष्य योजना।
9. Fields G. (1980); “Education and income Distribution in Developing Countries A Review of Literature” In T. King (Ed.) Education and Income World Bank Staff working Paper.

****

युवाओं का चुनौतिपूर्ण जीवन और नैतिकता की संभावना

डॉ. निशा जैन*

प्रस्तावना – परिवर्तन चक्र तीव्र गति से घूम रहा है। सामाजिक स्थिति बहुत तेजी से बदल रही है। ऐसे में मनुष्य एक विचित्र से झंझावात में फंसा हुआ है। बाह्य रूप से चारों ओर भौतिक एवं आर्थिक प्रगति दिखाई देती है, सुख-सुविधा के अनेकानेक साधनों का अंबार लगता जा रहा है, दिन-प्रतिदिन नए-नए आविष्कार हो रहे हैं, पर आंतरिक दृष्टि से मनुष्य टूटता और बिखरता जा रहा है। उसका संसार के प्रति विश्वास, समाज के प्रति सद्भाव और जीवन के प्रति उल्लास धीरे-धीरे समाप्त हो रहा है। अब तो समाज में चारों ओर आपसी सौहार्द, समरसता एवं सात्विकता के स्थान पर कुटिलता, दुष्टता और स्वार्थपरता ही दृष्टिगोचर होती है। बुराई के साम्राज्य में अच्छाई के दर्शन अपवाद स्वरूप ही हो पाते हैं।

जो देश कभी जगद्गुरु हुआ करता था, उसी भारतवर्ष के राष्ट्रीय, सामाजिक, पारिवारिक एवं व्यक्तिगत जीवन में चतुर्दिक् अराजकता और उच्छृंखलता छाई हुई है। जीवन मूल्यों एवं आदर्शों के प्रति आस्था-निष्ठा की बात कोई सोचता ही नहीं। वैचारिक शून्यता और दुष्प्रवृत्तियों के चक्रव्यूह में फंसा हुआ दिशाहीन मनुष्य पतन की राह पर फिसलता जा रहा है। उसे संभालने और उचित मार्गदर्शन देने वालों का भी अभाव ही दिखाई देता है। कुछ गिने-चुने धार्मिक-आध्यात्मिक संगठन, सामाजिक संस्थाएं और प्रतिष्ठान ही इस दिशा में सक्रिय हैं अन्यथा अधिकांश तो निजी स्वार्थ एवं व्यवसायिक दृष्टिकोण से ही कार्यरत लगते हैं। ईमानदारी, मेहनत और सत्यनिष्ठा के साथ नि:स्वार्थ भाव से स्वेच्छापूर्वक जनहित के कार्य करने वालों को लोग मूर्ख ही समझते हैं। उनके परिश्रम एवं भोलेपन का लाभ उठाकर वाहवाही लूटने वाले समाज के ठेकेदार सर्वत्र दिखाई देते हैं।

समाज सेवा का क्षेत्र हो या धर्म-अध्यात्म अथवा राजनीति का, चारों ओर अवसरवादी, सत्तालोलुप, आसुरी प्रवृत्ति के लोग ही दिखाई देते हैं। शिक्षा एवं चिकित्सा के क्षेत्र, जहां कभी सेवा के उच्चतम आदर्शों का पालन होता था, आज व्यावसायिक प्रतिस्पर्धा के केन्द्र बन गए हैं। व्यापार में तो सर्वत्र कालाबाजारी, चोरबाजारी, बेईमानी, मिलावट, टैक्सचोरी आदि ही सफलता के मूलमंत्र समझे जाते हैं। त्याग, बलिदान, शिष्टता, शालीनता, उदारता, ईमानदारी, श्रमशीलता का सर्वत्र उपहास उड़ाया जाता है। सामान्य नागरिक से लेकर सत्ता के शिखर तक अधिकांश व्यक्ति अनीति-अनाचार के आकंठ डूबे हैं। प्रत्येक व्यक्ति के मन में निजी स्वार्थ व महत्वाकांक्षाओं के साथ-साथ ईर्ष्या, घृणा, बैर की भावनाएं जड़ जमाए हुए हैं। ऐसी विकृत मानसिकता के चलते मनुष्य वैज्ञानिक प्रगति से प्राप्त सुख-सुविधा के अनेकानेक साधनों का भी दुरुपयोग ही करता रहता है। फलत: उसका शरीर अन्दर से खोखला होकर अनेकानेक रोगों का घर बनता जा रहा है। मनुष्य की इच्छाओं व कामनाओं की कोई सीमा नहीं है, धैर्य व संयम की मर्यादाएं टूट रही हैं, अहंकार व स्वार्थ का नशा हर समय सिर पर सवार रहता है। ऐसी स्थिति में क्या सामाजिक समरसता व सहयोग की भावना जीवित रह सकती है? सुख, शान्ति व आनन्द के दर्शन हो सकते हैं? जहां चारों ओर धनबल और बाहुबल का नंगा नाच हो रहा हो, घपलों-घोटालों का बोलबाला हो, उस समाज में क्या वास्तविक प्रगति कभी हो सकती हैं?

मानव के इस पतन-पराभव का कारण खोजने का यदि हम सच्चे मन से प्रयास करें तो पता चलेगा कि सारी समस्याओं की जड़ पैसा है। सारा संसार की अर्थप्रधान हो गया है। प्रत्येक व्यक्ति हर समय अधिक से अधिक धन कमाने की उधेड़बुन में लगा रहता है। इसके लिए अनीति, अनाचार, भ्रष्टाचार जैसे सभी साधनों का खुले आम प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार कमाए हुए धन के कारण ही समाज में सर्वत्र मूल्यविहीन भोगवादी संस्कृति का अंधानुकरण और विलासिता का अमर्यादित आचरण चारों ओर देखा जा सकता है। यह सब जानते समझते हुए भी आदमी पैसे के पीछे पागल हो रहा है।

युवा वर्ग पर इसका प्रभाव – आज का युवा वर्ग ऐसे ही दूषित माहौल में जन्म लेता है और होश संभालते ही इस प्रकार की दुखद एवं चिन्ताजनक परिस्थितियों से रूबरु होता है। आदर्शहीन समाज से उसे उपयुक्त मार्गदर्शन ही नहीं मिलता और दिशाहीन शिक्षा पद्धति उसे और अधिक भ्रमित करती रहती है। ऐसे दिग्भ्रमित और वैचारिक शून्यता से ग्रस्त युवाओं पर पाश्चात्य अपसंस्कृति का आक्रमण कितनी सरलता से होता है, इसे हम प्रत्यक्ष देख ही रहे हैं। भोगवादी आधुनिकता के भटकाव में फंसी युवा पीढ़ी दुष्प्रवृत्तियों के दलदल में धंसती जा रही है। विश्वविद्यालय और शिक्षण संस्थान जो युवाओं की निर्माण स्थली हुआ करते थे आज अराजकता एवं उच्छृंखलता के केन्द्र बन गए हैं। वहां मूल्यों एवं आदर्शों के प्रति कहीं कोई निष्ठा दिखाई ही नहीं देती। सर्वत्र नकारात्मक एवं विध्वंसक गतिविधियां ही होती रहती हैं। ऐसे शिक्षक व विद्यार्थी जिनमें कुछ सकारात्मक और रचनात्मक कार्य करने की तड़पन हो, बिरले ही मिलते हैं। इसी का परिणाम है कि हमारा राष्ट्रीय एवं सामाजिक भविष्य अंधकारमय लग रहा है।

होनहार बिरवान के होत चीकने पातकृजैसा बीज होगा, जैसी पौध होगी, उसी के अनुरूप तो वृक्ष विकसित होगा, पुष्पित, पल्लवित और फलित होगा। आज की युवा पीढ़ी की जो दुर्दशा हो रही है उसका सर्वप्रथम दायित्व तो उनके माता-पिता और परिवार का ही है। वे स्वयं ही दुष्प्रवृत्तियों के शिकंजे में फंसे हुए हैं फिर अपनी संतान को उचित शिक्षा व संस्कार कहां से दे सकेंगे? युवावस्था की प्रारम्भिक स्थिति में अनेक शारीरिक व मानसिक परिवर्तन होते हैं। जीवन का यह काल अत्यन्त उथल-पुथल भरा होता है जब वह चारों ओर की परिस्थितियों का अपने अनुसार विवेचन करता है। इसमें अनेक प्रतिमान ध्वस्त होते हैं और नए बनते हैं। इस अवधि में वह

* सहायक प्राध्यापक (समाज शास्त्र) शासकीय कन्या महा विद्यालय, बीना, जिला सागर (म.प्र.) भारत

अपने अस्तित्व को परिवार व समाज में स्थापित करने का प्रयास करता है। अपनी अस्मिता को खोजता है और ऐसे मार्गदर्शक नायक की तलाश करता है जिसके अनुरूप स्वयं को ढाल सके। इस खोजबीन की उलझन में उसे घर से तो कुछ विशेष मिल नहीं पाता और बाहर उसका सर्वत्र शोषण ही होता है। एक समय था जब अभिमन्यु को गर्भावस्था में ही माता-पिता से शिक्षा और संस्कार प्राप्त हुए थे। आज के माता-पिता एवं समाज के कर्णधार स्वयं ही यह चिन्तन करें कि वे अपने अभिमन्युओं को क्या बना रहे हैं?

पहले युवापीढ़ी को अपने आदर्श ढूंढ़ने के लिए परिवार व समाज के अतिरिक्त पुस्तकों का भी सहारा रहता था जो कि भारतीय संस्कृति की बहुमूल्य धरोहर हैं। आज वेद, उपनिषद्, पुराण आदि को पढ़ना या उन पर चर्चा करना तो दूर, उनका नाम लेना भी पिछड़ेपन की निशानी समझा जाता है। आदर्श व प्रेरक साहित्य के प्रति अभिरुचि में भारी कमी आई है। अश्लील एवं स्तरहीन साहित्य की भरमार है। उच्चस्तरीय साहित्यिक रचनाएं पढ़ने की परम्परा लुप्त हो रही है। युवावर्ग समझ ही नहीं पाता कि वह क्या पढ़े और कैसे पढ़े? देव संस्कृति की इस उपेक्षा के कारण ही आज वह किसी सज्जन, वीर, महात्मा और महापुरुष को अपना आदर्श बनाने के स्थान पर टी.वी. और फिल्मों के पर्दे पर उनको खोजता है। वहां उसे फिल्मों के पर्दे पर उनको खोजता है। वहां उसे हिंसा, अश्लीलता, फैशनपरस्ती, स्वच्छंदता, फूहड़ता आदि के अतिरिक्त कुछ मिलता ही नहीं। इसी सब का अनुसरण करने को वह प्रगतिशीलता समझता है। यही कारण है कि चारों ओर अनुशासनहीनता की पराकाष्ठा और स्तरहीन आदर्शों की अंधभक्ति ही दिखाई देती है। ऐसे में टी.वी. पर अनेकानेक सैटेलाइट चौनलों द्वारा हमारी लोक-संस्कृति को तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत करने का ही यह परिणाम है कि खान-पान, वेश-भूषा, आचार-व्यवहार आदि सभी क्षेत्रों में युवाओं द्वारा पाश्चात्य अपसंस्कृति का अंधानुकरण हो रहा है। भारत की बहुमूल्य सांस्कृतिक परम्पराओं की वह अवहेलना करता है या उपहास उड़ाता है। पाश्चात्य संस्कृति के जीवन मूल्य को अपनाती युवा पीढ़ी अपने देश की संस्कृति को हेय दृष्टि से देखने लगी है। प्रगतिशीलता के नाम पर नैतिकता का परित्याग और भारतीयता का विरोध विशेष उपलब्धियों को गिना जाता है। उसी को आदर्श हीरो का सम्मान मिलता है।

राजनीतिज्ञों के दुष्चक्र ने तो युवा पीढ़ी को और अधिक उलझा दिया है। शिक्षा केन्द्र तो पूरी तरह से राजनैतिक द्वंद्व का अखाड़ा बन गए हैं। इस युद्ध में युवावर्ग का प्रयोग कच्चे माल के रूप में खुले आम होता है। सुरा-सुंदरी तक उन्हें उपलब्ध कराने में राजनीतिक दलों को कोई हिचक नहीं होती। काले धन की थैलियां तो खुली ही रहती हैं। इस प्रकार के दूषित वातावरण में युवापीढ़ी ऐसी कुसंस्कृति को अपनाने के लिए मजबूर है जहां व्यक्तिगत जीवन में नैतिकता और नाते-रिश्तों की पवित्रता का कोई अर्थ नहीं रह जाता। यौन उच्छृंखलता को फैशन व आधुनिकता का प्रतीक समझा जाता है जिससे युवक-युवतियां आत्मघाती दुष्चक्र में उलझते जाते हैं। उनकी ऊर्जा और प्रतिभा किसी सार्थक कार्य में लगने के स्थान पर सौन्दर्य प्रतियोगिताओं, फैशन शो और फिल्मों में बर्बाद होती है तथा अपराधी व बुरे लोगों के जाल में उनके फंसने की संभावनाएं बढ़ती जाती हैं। उच्च आदर्शों एवं प्रेरणा स्रोतों के अभाव में वे नित नए कुचक्रों में उलझते रहते हैं। सामाजिक एवं राष्ट्रीय दायित्व बोध से कटे हुए ऐसे लोगों का जीवन मात्र स्वार्थपरता के संकुचित घेरे तक ही सीमित रह जाता है।

भविष्य की संभावनाएं - ऐसे अन्धकारमय परिदृश्य में भी आशा की किरण तो होती ही है। माना कि हताशा व निराशा से ग्रस्त युवा पीढ़ी में परिस्थितियों से जूझने की क्षमता चुकती जा रही है पर वह समाप्त नहीं हुई है। उसे विकसित करने के अनेकानेक साधन उपलब्ध हैं। सांस्कृतिक एवं मानसिक परतन्त्रता के अदृश्य पाश से स्वयं को मुक्त करके विश्वक्रांति का अग्रदूत बनने की क्षमता भी उसमें है। युवाशक्ति की राष्ट्र की उज्ज्वल आशा का प्रतीक है। देश को दुर्गति से प्रगति के पथ पर ले जाने की शक्ति उसके रग-रग में समाई हुई है। शून्य से शिखर तक पहुंचने का पुरुषार्थ वही कर सकता है।

दुनिया में बुराई तो बहुत है। चारों ओर झूठ, फरेब, धोखा और बेईमानी फैली हुई है। पर हर समय इन्हीं बातों पर चिन्तन और चर्चा करते रहने से क्या लाभ? संसार में आसुरी प्रवृत्ति के लोग तो सदैव रहे हैं चाहे वह रामायण-महाभारत काल हो या आज का युग। उनकी संख्या अवश्य कभी कम तो कभी अधिक होती है। इसी सात्विक एवं दैवी प्रवृत्ति के लोग भी समाज में रह समय रहते हैं। हनुमान जी को भी रात के अंधेरे में लंका के राक्षसों के बीच एक देवस्वरूप व्यक्ति विभीषण के रूप में मिल गया था। हम भी यदि थोड़ा सा सजग होकर देखें तो अपने आस-पास अनेक अच्छे व्यक्ति हमें मिल जायेंगे जो ईमानदारी, अच्छे चरित्र वाले और नैतिक मूल्यों का पालन करने वाले हैं। वे सदैव जीवन के प्रति आशावादी एवं सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं।

युवा पीढ़ी में तो ऐसे सच्चरित्र लोगों की भरमार है। समस्या केवल इतनी भर है कि उन्हें बिगड़ने से किस प्रकार बचाया जाए और वे स्वयं भी किस प्रकार इस काजल की कोठरी से अपने को बचाकर बेदाग बाहर निकल सकें। असली दायित्व तो युवाओं का ही है। यदि वे सांसारिक दुष्प्रवृत्तियों के मकड़जाल में फंसने के कुप्रभावों को समय रहते समझ लें और उनके प्रलोभन में न आएं तो कोई भी उन्हें कुमार्ग पर नहीं ले जा सकेगा। यदि उनमें स्वयं को सुधारने की इच्छाशक्ति जागृत हो जाएगी तो अन्य सत्पुरुषों की बातें भी सरलता से उनके गले उतर जाएंगी। स्वयं को सुधार कर ही वे सारे संसार को सुधार सकेंगे। 'अपना सुधार संसार की सबसे बड़ी सेवा है', इस तथ्य को समझ लेने से ही सबका कल्याण है।

सामाजिक स्थिति में समय-समय पर बदलाव तो आते ही रहते हैं कभी सकारात्मक और कभी नकारात्मक। वर्तमान समय में तो परिवार, समाज और राष्ट्र की धुरी बुरी तरह से लड़खड़ा रही है और सम्पूर्ण व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन आवश्यक हो गया है। इसे कौन कर सकता है? और कौन करेगा?

इतिहास साक्षी है कि संसार में जितनी भी महत्वपूर्ण क्रान्तियां हुई हैं, उनमें युवाओं की भूमिका सदैव ही अत्यन्त महत्वपूर्ण रही है। मानव जीवन का सर्वश्रेष्ठ समय युवावस्था ही होता है। उत्साह एवं उमंग से भरपूर युवाओं में पहाड़ से टकराने की ललक होती है। कठिन से कठिन परिस्थितियों से भी जूझने का साहस होता है। उनकी शारीरिक एवं मानसिक शक्तियां भी अपने विभिन्न रूपों में प्रस्फुटित होती हैं और असंभव को भी संभव कर दिखाने की क्षमता रखती हैं। नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस स्टडीज के अनुसार भारत में 16 से 25 वर्ष के युवाओं की संख्या 21.5 करोड़ है। इतनी बड़ी जनशक्ति यदि नकारात्मक गतिविधियों में लिप्त हो जाए तो देश को शीघ्र ही रसातल में पहुंचा सकती है। पर यदि यह युवा शक्ति सकारात्मक और रचनात्मक मार्ग पर चल पड़े तो भारत को संसार का सिरमौर बना दे। आज अपने धनबल और बाहुबल के बूते कोई देश संसार में अपनी दादागीरी तो चला सकता है पर केवल कुछ समय के लिए ही। अपने सद्गुणों और सद्विचारों के बल पर ही भारत कभी विश्व में जगद्गुरु कहलाता था। उसे पुन: उसी पद पर पुनर्स्थापित

करने का सामर्थ्य केवल हमारी युवा पीढ़ी में ही है।

निष्कर्ष – सर्वप्रथम युवाओं को अपने मन से निराशा एवं हताशा के भावों को जड़ से उखाड़ फेंकना होगा। अपनी शक्तियों पर अपनी क्षमता व प्रतिभा पर अटूट विश्वास जगाना होगा। नैपोलियन ने कहा था कि असंभव शब्द उसके शब्दकोश में है ही नहीं। इसे अपने जीवन का आधार बनाकर सदैव यही विचार करना होगा कि संसार में ऐसा कोई कार्य नहीं जो हम न कर सकें। कल्पना करें कि आपके शरीर में शक्ति स्रोत फूट रहा है ऊर्जा की धाराएं प्रवाहित हो रही हैं जो कठिन से कठिन कार्य को भी चुटकियों में पूरा कर सकती हैं। उज्ज्वल भविष्य हमारे स्वागत हेतु तत्पर है। अपने भीतर इस प्रकार का आत्मविश्वास दृढ़तापूर्वक स्थापित करने पर ही हम जीवन की अनेक चुनौतियों का सामना करने में सफल हो सकेंगे।

हमारे भीतर यह आत्मविश्वास कैसे जागे और कैसे परिपुष्ट हो? हम किस प्रकार अपने जीवन को उत्कृष्ट बनाएं और वर्तमान चुनौतियों का भी सफलतापूर्वक सामना कर सकें? इसे समझने से पहले हमें भारत के महान युवा संन्यासी स्वामी विवेकानन्द के एक संदेश को आत्मसात करना होगा। उन्होंने कहा है 'प्रत्येक व्यक्ति की भांति प्रत्येक राष्ट्र का भी एक विशेष जीवनोद्देश्य होता है। वही उसके जीवन का केन्द्र है, उसके जीवन का प्रधान स्वर है, जिसके साथ अन्य सब स्वर मिलाकर समरसता उत्पन्न करते हैं। किसी देश में जैसे इंग्लैण्ड में राजनीतिक सत्ता ही उसकी जीवन शक्ति है। भारतवर्ष में धार्मिक जीवन ही राष्ट्रीय जीवन का केन्द्र है और वही राष्ट्रीय जीवन रूपी संगीत का प्रधान स्वर है। यदि कोई राष्ट्र अपनी स्वाभाविक जीवन शक्ति को दूर फेंक देने की चेष्टा करे, शताब्दियों से जिस दिशा की ओर उसकी विशेष गति हुई है, उससे मुड़ जाने का प्रयत्न करे और वह इस कार्य में सफल हो जाए तो वह राष्ट्र मृत हो जाता है। अतएव यदि तुम धर्म को फेंककर राजनीति, समाजनीति अथवा अन्य किसी दूसरी नीति को अपनी जीवनशक्ति को केन्द्र बनाने में सफल हो जाओ तो उसका फल यह होगा कि तुम्हारा अस्तित्व तक न रह जाएगा। यदि तुम इससे बचना चाहो तो अपनी जीवन शक्ति रूपी धर्म के भीतर से ही तुम्हें अपने सारे कार्य करने होंगे। अपनी प्रत्येक क्रिया का केन्द्र इस धर्म को ही बनाना होगा। सामाजिक जीवन पर धर्म का कैसा प्रभाव पड़ेगा, यह बिना दिखाए मैं अमेरिका वासियों में धर्म का प्रचार नहीं कर सकता था। इंग्लैण्ड में भी बिना यह बताए कि वेदांत के द्वारा कौन–कौन से आश्चर्यजनक परिवर्तन हो सकेंगे, मैं धर्म प्रचार नहीं कर सका। इसी भांति भारत में सामाजिक सुधार का प्रचार तभी हो सकता है, जब यह दिखा दिया जाए कि इस नई प्रथा से आध्यात्मिक जीवन की उन्नति में कौन सी विशेष सहायता मिलेगी? अत: भारत में किसी प्रकार का सुधार या उन्नति की चेष्टा करने से पहले धर्म प्रचार आवश्यक है।'

****

अगस्त क्रांति में महिलाओं का योगदान

डॉ. प्रेरणा ठाकुर*

शब्द संक्षेप – 'जीरो अवर' – ऑपरेशन जीरो अवर 12 बजे के पूर्व भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के नेताओं की गिरफ्तारी का आदेश था।

'बा' (गुजराती भाषा में) – संक्षेपिका – अगस्त क्रांति या भारत छोड़ो आंदोलन एक ऐसी घटना थी कि प्रत्येक भारतीय यह मेहसूस कर रहा था कि भारत अब स्वतंत्र होने ही वाला है। संपूर्ण चैतन्यता के साथ जागृत भारतवासी, देश के किसान, मजदूर, महिलाऐं तक राष्ट्रीय आंदोलन में शामिल हो चुके थे देश के पूर्वोत्तर से लेकर पश्चिम में तथा उत्तर से सुदूर दक्षिण तक 'अंग्रेजों भारत छोड़ों का नारा बुलन्द किया जा रहा था।'

'क्रप्स मिशन की असफलता के बाद भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सभी बड़े नेता चिंतित थे तथा जनमानस आक्रोशित था ऐसे में 8 अगस्त 1942 को कांग्रेस का महाधिवेशन मुंबई में हुआ इसमें 'भारत छोड़ों' प्रस्ताव पारित हुआ और गांधीजी ने अपने ऐतिहासिक भाषण में 'करो या मरो' का नारा दिया। 8 अगस्त की रात को कांग्रेस की बैठक रात में विलम्ब से समाप्त हुई और ऑपरेशन जीरो अवर के तहत रात 12 बजे सभी महत्वपूर्ण नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया गांधीजी को पूना में आगा खाँ महल तथा अन्य नेताओं को अहमद नगर जेल में रखा गया। इसके विरोध में संपूर्ण भारत जुलूस, हड़ताल व सार्वजनिक सभा हुई। जयप्रकाश नारायण, राममनोहर लोहिया और श्रीमती अरुणा आसफ अली जैसे दूसरी पंक्ति के नेताओं ने नेतृत्व संभाला।

महिलाओं में सुचेता कृपलानी, विजयलक्ष्मी पंडित, डॉ. प्रभावती, उषा मेहता, जैसी नेत्रियों ने कमान संभाली। किंतु अरुणा गांगुली, अरुणा आसफ अली ने बम्बई के ग्वालिया टैंक मैदान में भारतीय ध्वज फहराकर मुख्य रुप से नेतृत्व किया। इस अगस्त क्रांति या भारत छोडों आंदोलन में अग्रणी रही कुछा महिलाओं का योगदान इस प्रकार है:-

अरुणा आसफ अली – 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन या अगस्त क्रांति की प्रमुख नायिका डॉ. अरुणा आसफ अली ही थी क्योंकि 9 अगस्त 1942 को बम्बई के ग्वालिया टैंक मैदान में ब्रिटिश राष्ट्र ध्वज 'यूनियन जेक' को हटाकर भारतीय ध्वज फहराने का प्रमुख कार्य डॉ. अरुणा आसफ अली ने ही किया था। यद्यपि 1930 से ही अरुणा जी सक्रिय राजनीति में शामिल थी और सविनय अवज्ञा आंदोलन में आपने उत्साह पूर्वक हिस्सा लिया था और तभी गाँधी जी के आदेश व मार्गदर्शन से खादी पहनना भी प्रारंभ किया स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग व विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार करने के दौरान ही अरुणा गांगुली जी की नेतृत्व क्षमता खुलकर सामने आयी आपकी साहसी, आत्मविश्वासी भूमिका के कारण ही सविनय अवज्ञा आंदोलन में भाग लेने वाली अन्य महिलाओं को जब 6 महीने की जेल हुई तब अरुणा जी को एक वर्ष तक रिहा नहीं किया गया यहां तक की गांधी इरविन एक्ट के बाद भी उनकी सक्रिय भूमिका के कारण उन्हें जेल से नहीं छोड़ा गया। उनकी नेतृत्व व क्षमता देखते हुए जेल में उन्हें अन्य कैदियों से अलग रखा गया। जेल में भी अरुणा जी ने भूख हड़ताल की और कैदियों के साथ सरकार को अच्छे व्यवहार के लिये मजबूर किया।

भारत छोड़ो आंदोलन के दौराने अरुणा जी का वारंट जारी करते हुए सरकार ने उनकी गिरफ्तारी पर 8 हजार रुपये का ईनाम रखा उस समय इतनी बड़ी धनराशि का इनाम रखा जाना सिद्ध करता है कि वे ब्रिटिश सरकार के लिये कितना बड़ा सिरदर्द थी।

1942 से 1946 तक उनके नाम वारंट जारी रहा। महत्वपूर्ण नेताओं की गिरफ्तारी के बाद राममनोहर लोहिया, अच्युत पटवर्धन, जयप्रकाश नारायण आदि के साथ महाराष्ट्र और विशेषकर बम्बई में सक्रियता से कमान संभाली और सबसे महत्वपूर्ण यह था कि बम्बई के ग्वालिया टैंक मैदान पर आयोजित सबसे बड़ी सभा में भारतीय ध्वज फहराया। इस सभा के पश्चात अरुणा जी ने भूमिगत रहकर काम करना प्रारंभ किया जबकि अन्य नेता गिरफ्तार हुए। भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लेने के कारण अरुणा जी की संपत्ति जब्त कर ली गयी लेकिन संपत्ति की चिंता न करते हुए निरंतर अपने उद्देश्य में वे लगी रही लोहिया जी के साथ मिलकर 'इंकलाब' नामक अखबार में अपने विचार व्यक्त करते हुए यह लिखा कि प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह देश की आजादी की लड़ाई में हिस्सा ले और अपनी भूमिका निभाये यह भूमिका हिंसा या अहिंसा किसी भी मार्ग पर चलकर यह लड़ाई लड़े किन्तु शांत न बैठे। स्वतंत्रता के संबंध में इंग्लैण्ड से किसी भी प्रकार का समझौता करना असंभव है हम अपने अधिकारों की भीख इंग्लैंड से नहीं मांगेंगे, अपना अधिकार हम लड़कर हासिल करेंगे।

स्वतंत्रता के पश्चात 1958 में अरुणा जी दिल्ली की प्रथम मेयर बनी। अपना संपूर्ण जीवन आपने महिलाओं व बाल कल्याण के लिये समर्पित किया साप्ताहिक लिंक व दैनिक पेट्रियाट नामक अखबार निकाले तथा पदम भूषण अंतर्राष्ट्रीय लैखिका पुरस्कार, जवाहरलाल नेहरु पुरस्कार आदि प्राप्त किये।

सरोजिनी नायडू – हैदराबाद में 13 फरवरी 1871 को जन्मी डॉ. सरोजिनी नायडू प्रसिद्ध वैज्ञानिक अधोरनाथ चटोपाध्याय तथा श्रीमती वरदासुंदरी की पुत्री थी। सरोजिनी को कविता लेखन के गुण अपनी माताजी से प्राप्त हुए थे क्योंकि वे भी बंगला भाषा में कविताएं लिखती थी। उच्च शिक्षा के लिये वह इंग्लैण्ड गयी। 1918 में गोखले जी तथा गांधी जी से प्रभावित होकर राजनीति में पदार्पण किया।

गोखले जी ने सरोजिनी को कहा कि – 'अपने सपने, विचार तथा जीवन सब कुछ भारत माता के नाम कर दो। सोये हुए भारत को जगाओ इस

* श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला व वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

देश से निराशा का अंधकार को दूर करके आशा का संदेश देना ही तुम्हारी (सरोजिनी) काव्य प्रतिभा का उच्चांक होगा।' - गोपालकृष्ण गोखले

अपने राजनैतिक गुरु गोखले जी का आदेश मानते हुए सरोजिनी जी ने राजनीति में पदार्पण किया। 1918 में जब महात्मा गांधी जी के संपर्क में आई तभी से वे सत्याग्रह आदि में सम्मिलित होने लगी। 1919 में मांटेग्यू चेक्स फोर्ड सुधारों में जब महिलाओं को किसी भी प्रकार के अधिकार देने की घोषणा नहीं हुई तब सरोजिनी नायडू ने 800 महिलाओं के हस्ताक्षर युक्त ज्ञापन शासन को सौंपा। गांधी जी ने भी सरोजिनी जी से कहा था कि मैं इस देश की महिलाओं को उनके चौके-चूल्हे से बाहर तो ले आया हूं किंतु अब उनका मार्गदर्शन कर उनको सिर्फ घर तक सीमित न रहने देने की जिम्मेदारी महिला नेत्रियों की है।

1921 में सरोजिनी जी महिलाओं को मताधिकार दिलाने में सफल हुई। उनकी योग्यता और देश सेवा से प्रभावित होकर कांग्रेस ने उन्हें अध्यक्ष चुना। वे कुषल वक्ता थी उनकी वाणी में जादू था लंदन के किंग्सले हॉल में जलिया वाला बाग कांड के विरुद्ध उन्होंने प्रभावशाली भाषण दिया।

1922 में जब गांधी जी जेल गये तब अपने विकल्प के रुप में खुद की गैरहाजिरी में उन्होंने सरोजिनी नायडू को नेतृत्व के लिये चुना कहा - कि तुम्हारे हाथों में भारत की एकता का काम पूर्ण विश्वास के साथ सौंपता हूँ।

1931 में सरोजिनी नायडू ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। मधुर स्वर में कविता पाठ करने के कारण उन्हें 'भारत कोकिला' की उपाधि दी गयी। वे अमेरिका व अफ्रीका भी गयी और वहां के लोगों को भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के विषय में बताया। मोहम्मद अली जिन्ना को वे हिंदू मुस्लिम एकता का राजदूत कहती थी।

1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में सरोजिनी जी ने अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

कस्तुरबा गांधी - 'बा' के नाम से लोकप्रिय राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की धर्मपत्नी श्रीमती कस्तुरबा गांधी सच्चे अर्थों में पूर्ण समर्पित अर्धांगिनी, जीवन संगिनी थी। गांधी जी की प्रेरणा तथा मार्गदर्शन से वे भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की नेत्री बनी। यद्यपि 13 वर्ष की अल्पायु में ही गांधी जी के साथ विवाह हो जाने से उनकी प्रारंभिक शिक्षा अधूरी थी तथापि गांधी जी की प्रेरणा से गुजराती भाषा का ज्ञान कस्तुरबा गांधी ने प्राप्त किया। दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के विरुद्ध बने कानूनों का विरोध करने वाले आंदोलनों व सत्याग्रहों में तो उन्होंने भाग लिया ही भारत में भी चंपारन, बारदोली आंदोलनों में भी वे सक्रिय रही। असहयोग आंदोलन में भाग लेने के साथ ही बा ने सत्याग्रहों में भाग लेना ग्रामीण महिलाओं को स्वच्छता का पाठ पढाना, चरखा चलाना, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार तथा शराब की दुकानों पर धरना देने जैसे कार्यक्रमों में नेतृत्व किया।

भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान 9 अगस्त 1942 को जब महात्मा गांधी और उनके अनुयायी गिरफ्तार हो गये तब गांधी जी की अनुपस्थिति में 9 अगस्त की शाम को शिवाजी पार्क मुंबई में बा ने भाषण देने का निश्चय किया किंतु बा को गिरफ्तार कर आगा खाँ महल में नजरबन्द कर दिया गया। गांधी जी को भी इसी महल में रखा गया था और वे निरंतर सत्याग्रह 21 दिनों से उपवास कर रहे थे। गांधी जी के उपवास से बा का हृदय व्यथित हो उठा था हृदय रोग, निमोनिया व किडनी फेल होने के कारण 22 फरवरी 1944 को शिवरात्रि के दिन बां ने अंतिम सांस ली। गांधी जी ने बा के संबंध में कहा - बा के स्नेहशील जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती वे मेरे जीवन का अविभाज्य अंग थी। वे सहनशील थी अपने कठोर नियमों से जो दुख मैंने अपनी पत्नी को दिया उसके लिये मैं कभी स्वयं को क्षमा नहीं करुंगा।

मरणोपरांत बा को अमेरिका के जार्जिया प्रांत के अटलांटा स्थित मोर हाउस कालेज ने डॉक्टरेट की मानद उपाधि सन 2000 में प्रदान की।

बा भारतीय सती नारीयों सावित्री व सीता के आदर्शों पर चलने वाली नारी थी।

डॉक्टर प्रभावती - यह गुजरात प्रांत के सूरत नगर में डॉक्टर थी आप राजनैतिक मरीजों का इलाज करते हुए उनसे प्रभावित होकर प्रभावती जी स्वयं भी राष्ट्रीय आंदोलन में शामिल हो गयी जुलूस तथा नारेबाजी के साथ-साथ उन्होंने उग्र आंदोलन में भी हिस्सा लिया तथा गिरफ्तार हुई यहां तक उन्होंने तोड़-फोड़ तक में भाग लिया जिसके कारण उन्हें जेल में डाल दिया गया वे बीमार पड़ गई किंतु उनके उपचार की व्यवस्था नहीं की गई, जब उनके उपचार की आशा नहीं रही तब उन्हे जेल से छोड़ दिया गया।

कनकलता बरुआ - किशोर अवस्था में ही राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने वाली यह आसाम के गोहपुर ग्राम की 14 वर्षीय बालिका थी जिसने भारत छोड़ो आंदोलन में अपने गाँव में निकले जुलूस का नेतृत्व किया तथा पुलिस थाने पर झंडा फहराने का प्रयास किया किंतु ग्राम के थानेदार ने उस पर गोली चला दी और वह देशभक्त किशोरी वहीं शहीद हो गयी राष्ट्र आज उसे नमन कर कृतज्ञता ज्ञापित करता है।

मातंगिनी हाजरा - बंगाल के तमलुक में रहने वाली यह एक देशभक्त थी जो 73 वर्ष की आयु में भारत छोड़ों आंदोलन के दौरान 9 अगस्त 1942 को सरकार के विरोध में निकाले गये जुलूस में शहीद हो गयी।

उषा मेहता - राष्ट्रीय आंदोलन के महत्वपूर्ण चरण भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लेने वाली उषा मेहता एक जज की पुत्री और परिवार के विरोध के बावजूद अगस्त क्रांति में भाग ले रही थी अपने साथियों के साथ आपने एक गोपनीय रेडियो स्टेशन की स्थापना की यह रेडियो स्टेशन कांग्रेसी नेताओं द्वारा संचालित होता था और उषा मेहता जी इसमें उदघोशिका थी इस रेडियो स्टेशन से स्वतंत्रता संग्राम सेनानी अपने विचार व्यक्त करते थे। उषा जी ने महात्मा गांधी के हरिजन समाचार पत्र में भी कार्य किया। 9 अगस्त 1942 को मुंबई के अगस्त क्रांति मैदान में चूंकि सभी बड़े नेता गिरफ्तार हो चुके थे अत: इस महत्वपूर्ण स्थान पर तिरंगा झंडा अरूणा आसिफ अली के साथ उषा मेहता जी ने फहराया था। 11 अगस्त 2000 को 80 वर्ष की अवस्था में इनका निधन हुआ।

सुचेता कृपलानी - सुचेता कृपलानी जी का जन्म 1908 में हरियाणा प्रांत के अंबाला में एक बंगाली परिवार में हुआ था। आपने प्रारंभिक शिक्षा अंबाला में किंतु उच्च शिक्षा दिल्ली के सेंट स्टीफन कालेज तथा इन्द्रप्रस्थ कालेज से प्राप्त की थी। आप बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में प्राध्यापिका भी रहीं। 1936 में सुचेता जी का विवाह आचार्य कृपलानी जी के साथ हुआ। आचार्य कृपलानी भारत में समाजवादी विचारधारा के प्रमुख प्रर्वतकों में से एक थे। आचार्य कृपलानी के सानिध्य में ही आप भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से जुडी तथा अरुणा आसफ अली तथा उषा मेहता जी के संपर्क में आयी और भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय भागीदारी की। अरुणा जी के साथ सुचेता कृपलानी ने 'भूमिगत स्वयं सेवक दल' बनाया और भूमिगत रहकर कार्य किया। भारत छोड़ो आंदोलन के समय चूंकि सभी बड़े नेता गिरफ्तार थे अत: दूसरी पंक्ति के इन नेताओं की भूमिका महत्वपूर्ण थी। सुचेता कृपलानी ने राष्ट्रीय कांग्रेस के महिला विभाग की भी स्थापना की थी। 1944 में गिरफ्तार हुई कि एक वर्ष बाद ही 1945 में इन्हें जेल से छोड़ दिया गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात

यह भी राजनीति में उ.प्र. में सक्रिय रही और 1963 में स्वतंत्र भारत की प्रथम महिला मुख्यमंत्री बनी। 1971 में राजनीति से सन्यास ले लिया तथा 1974 में सुचेता जी का देहान्त हो गया।

विजय लक्ष्मी पंडित – संयुक्त राष्ट्र महासभा की अध्यक्ष बनने वाली पहली महिला डॉ. विजयलक्ष्मी पंडित मोतीलाल नेहरु की पुत्री तथा प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरु की बहन थी चूंकि इनके पिता व भाई राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय थे अत: डॉ. विजयलक्ष्मी पंडित का राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय होना स्वाभाविक ही था।

डॉ. विजयलक्ष्मी पंडित का जन्म 1900 में तथा विवाह 1921 में श्री रंजीत सीताराम पंडित के साथ हुआ था। विवाह के पश्चात भी विजय लक्ष्मी जी राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय रहीं तथा 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन या अगस्त क्रांति के दौरान जब लगभग सभी बड़े नेता गिरफ्तार हो चुके थे तब विजयलक्ष्मी जी ने सक्रिय भागीदारी निभायी। 1937 में विजयलक्ष्मी जी का निर्वाचन युनाइटेड प्रॉविंसेस के विधान मंडल में हुआ था उन्हें स्थानीय स्व प्रशासन व जनस्वास्थ्य विभाग का मंत्री बनाया गया और वे 1939 तक तथा 1946-47 में इस पद पर कार्यरत रही तथा भारत छोड़ो आंदोलन का हिस्सा बनी।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात 1954 में संयुक्त राष्ट्र महासभा की पहली अध्यक्ष बनने वाली वे भारत ही नहीं विश्व की प्रथम महिला थी। 1962 से 1964 तक वे महाराष्ट्र की राज्यपाल रही। द इवॉल्यूशन ऑफ इंडिया तथा द स्कोप ऑफ हेप्पीनेस आय-पर्सनल मेमॉयर उनके द्वारा लिखी गई प्रमुख पुस्तकें है। वे इंग्लैण्ड, अमेरिका तथा सोवियत संघ में भारत की राजदूत भी रही।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कॉग्रेस का इतिहास, पट्टाभि सीतारमैया
2. आधुनिक भारत - सुमित सरकार
3. आजादी के बाद भारत - विपिन चन्द्र, मृदुला मुखर्जी, आदित्य मुखर्जी
4. इंडिया टूडे- रजनीपाम दत्त
5. आधुनिक भारत का इतिहास - यशपाल व ग्रोवर
6. भारत की चर्चित महिलाएँ - सुधा गोस्वामी
7. विकिपीडिया।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

अजयमेरू का जल स्थापत्य

डॉ. बनवारी लाल यादव *

प्रस्तावना – भारतीय साहित्य में चौंसठ कलाओं का उल्लेख मिलता है। कामशास्त्र में इनका उल्लेख किया गया है। शुक्रनीति में भी इन चौंसठ कलाओं का उल्लेख है। प्रबन्ध कोश में 72 कलाओं का उल्लेख है जबकि बौद्ध धर्म ग्रन्थ ललित विस्तार में 85 कलाओं के नाम गिनाये गये हैं, परन्तु आधुनिक काल में कलाओं का वर्गीकरण दो आधार बिन्दुओं पर किया जाता है–
1. उपयोगी कला व 2. ललित कला। उपयोगी कला मानव समाज के लिए उपयोगी होती है जबकि ललित कला केवल सौन्दर्य प्रधान होती है। प्रथम श्रेणी में हम कृषि, वस्त्र बुनने व भोजन कला आदि को ले सकते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि इस श्रेणी में वे सब कलाएं सम्मिलित हैं जो मानव जीवन की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं। द्वितीय श्रेणी के अन्तर्गत आने वाली कलाओं से सौन्दर्य की अनुभूति तथा आनन्द की प्राप्ति होती है। ललित कलाओं का उल्लेख प्राचीन भारतीय साहित्य में कहीं भी उपलब्ध नहीं है, अत: द्वितीय श्रेणी की कला का नामकरण पाश्चात्य सम्पर्क की देन है। पाश्चात्य विद्धानों ने ललित कलाओं के अन्तर्गत पांच कलायें मानी हैं और वे क्रमश: ये हैं–स्थापत्य, मूर्ति, चित्र, संगीत तथा काव्य कला।[1]

राजस्थान में जल नामक प्राकृतिक तत्व को बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है तथा इसे संरक्षित करने के लिए अलग अलग काल में विशेष प्रकार की जल संरक्षण सम्बन्धित परम्परा का विकास हुआ। छोटी खाटू के पास स्थित एक पहाड़ी पर पृथ्वीराज चौहान द्धारा निर्मित एक प्राचीन दुर्ग स्थित है जिसमें सरोवर तथा कुंआ आदि आज भी दर्शनीय है।[2]

आना सागर झील भारत के सुन्दरतम स्थानों में से एक है। अजमेर नगर की समृद्धि और विस्तार का जितना श्रेय तारागढ़ दुर्ग को जाता है उससे कहीं अधिक इस झील को जाता है। इस झील के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर ही मुगलों ने अजमेर को इतना महत्त्व दिया। अंग्रेज तो इस झील के दीवाने ही थे। इस झील का निर्माण, अन्तिम हिन्दू नरेश पृथ्वीराज चौहान (तृतीय) के दादा अर्णोराज ने करवाया था। अर्णोराज, 'चौहान आनाजी' के नाम से भी जाना जाता है। ई. 1133 में वह महाराजाधिराज परमेश्वर अर्णोराजदेव के नाम से अजमेर की गद्दी पर बैठा। उसके शासनकाल में तूरूष्कों (तुर्को) ने अजमेर तथा पुष्कर पर बड़ा भारी आक्रमण किया। वह बार–बार के मुस्लिम आक्रमणों से तंग आ चुका था अत उसने अपनी पूरी ताकत एकत्र करके तारागढ़ से कुछ किलो मीटर दूर के विशाल मैदान में तुर्को का भयानक नरसंहार किया। तुर्को की विशाल सेना का इतना खून बहा कि पूरा मैदान रक्त से लथपथ हो गया। मांस के लोथड़ों से वहां सड़ांध फैल गई। इस दृश्य को देखकर अर्णोराज का दिल दहल गया। उसने पुष्कर की पहाडियों से निकलने वाली चन्द्रा नदी के जल से इस मैदान को साफ करने की योजना बनाई और एक नहर बनाकर चन्द्रा नदी का पानी इस तरफ मोड़ा। कुछ इतिहासकार नदी को लूनी तथा कुछ बान्डी नदी के रूप में चिह्नित करते हैं जो अजमेर के पास की नाग पहाड़ियों से निकलती हैं। जब यह मैदान साफ हो गया तब अर्णोराज ने इस मैदान के चारों तरफ विशाल पक्की दीवार का निर्माण करवाया। इस कार्य में उसने जनता की मदद ली। जब यह झील बनकर तैयार हो गई तब उसने पुष्कर की पहाड़ियों से निकलने वाले निर्मल जल से भर दिया। इस झील से अजमेर के लोगों तथा पशुओं के लिए पीने का जल उपलब्ध हो गया। इतना ही नहीं अब एक विशाल सेना को इस क्षेत्र में लम्बे समय तक बनाये रखना संभव हो गया। इस झील के कारण अजमेर नगर का विकास तेजी से हुआ।[3]

राजस्थान का अजमेर मेरवाड़ा क्षेत्र मुख्यत: पहाडी इलाका है, सिचाई के लिए वर्षा के अतिरिक्त अन्य साधनों का भारी अभाव था। सारा क्षेत्र विरान रेगिस्तान में परिवर्तित हो गया था। लेकिन अग्रेंज अधिकारी कर्नल डिक्षन की उदारता, तत्परता, कार्यकुशलता, लगन व जन सामान्य के हितैषी होने के कारण इस समस्या का गहराई से निदान सम्भव हुआ।[4]

राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली व राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर की अंग्रेजी राज्य में प्रयोग में ली गई सरकारी रिर्पोटो में ब्रिटिश सरकार द्धारा करवाये गये सरकारी निर्माणों का वर्णन किया गया है। इन आर्काइव्स रिपोर्ट के आधार पर जलाशयों के निर्माण की जानकारी निम्नानुसार प्राप्त की। इसमें कुछ जलाशय एवं बावड़िया हैं जो कि चूने, पत्थर तथा सीमेन्ट द्धारा निर्मित हैं। इनकी लम्बाई, चौड़ाई तथा ऊँचाई आदि प्राप्त है। कुछ जलाशयों में पानी का माप भी प्राप्त है। उस जलाशय की गहराई के हिसाब से कितनी मात्रा में पानी एकत्रित किया जा सकता है, इसका विस्तृत विवरण आर्काइव्स रिपोर्टो में प्राप्त है। कुछ स्थानों पर सरकार द्धारा जो व्यय हुआ उसका हिसाब भी प्राप्त होता है।

सन् 1839 में प्रस्तावित देवतन जलाशय जो ब्यावर परगने के देवतन गांव की पहाडी नाले पर बनाया गया, सन् 1840 में स्वीकृति प्रदान की गई। इसकी पानी की तरफ वाली दीवार को पूर्णत: चूने से बनाया गया। इसका मेटेरियल आकलन अभिलेखागार रिपोर्ट के अनुसार पक्का मेसनरी पत्थर व पत्थरमय चूना सीमेन्ट कुल लम्बाई 1388 फीट जलाशय दीवार भूमि आधार 7 से 4 फीट जलाशय उपरी आधार 3 से 2 फीट जलाशय विस्तार 20 से 2 फीट।5 चादर पक्की मेसनरी लम्बाई 102 फीट विस्तार 6 फीट ऊंचाई 13 फीट। कला पक्का मेसनरी पत्थर मय कला सीमेन्ट लम्बाई 775 फीट आधार विस्तार 4 से 3 फीट ऊपरी सतह 3 से 2 फीट ऊंचाई विस्तार 10 से 8 फीट। रियर रिटेनिंग दीवार सूखी मेसनरी 170 फीट लम्बाई 3 फीट चौड़ी 6 फीट ऊंचाई। भूमिगत मुख्य बीम लम्बाई 132 फीट निचला आधार विस्तार 60 से 30 फीट ऊपरी सतह विस्तार 15 से 9 फीट ऊंचाई

* राज. उ. मा. वि., कराडी, जि. पाली (राजस्थान) भारत

विस्तार 10 से 6 फीट। भूमिगत अछतभाग निर्माण 300 फीट लम्बा, 6 फीट चौड़ा, 6 फीट ऊंचा आकलित खर्च पक्का मेसनरी पत्थर पत्थरमय चूना सीमेंट। 50-120 क्यूबिक फीट 4 रूपये आठ आना। 100 क्यूबिक दर 22 रुपये 6 आना। कला पक्का मेसनरी, पत्थर मय कला सीमेन्ट 17.500 क्यूबिक, 2 रूपये आठ आना 2.50 पैसा। 100 क्यूबिक फीट दर 550 रुपये 2 आना ड्राप मेसनरी – पत्थर (बिना सीमेंट के) 3060 क्यूबिक फीट 1 रूपया 12 आना 4 पैसा प्रति 100, कीमत 5/रुपये भूमिगत बीम 2.95, 2.6 क्यूबिक फीट 4 आना 65 पैसे पर (746 रूपये 2 आना 6 पैसे) कुल लागत 3596 रुपये 100 आना।[6]

सूरजपुरा जलाशय का निर्माण सन् 1839-40 में ब्यावर परगने की चोवरा निमड़ी ढाणी की छोटी पहाड़ियों के बीच किया गया। यह सूरजपुरा जलाशय के निकट ही स्थित था। जलाशय में जल दबाव सहन करने हेतु भूमिगत भाटा बनाया गया। जलाशय की दीवार 100 फीट लम्बी 18 फीट चौड़ी व 15 फीट ऊंची बनायी गयी।

आकलित मेटेरियल : पक्का मेसन्री पत्थर चूना पिलर सीमेन्ट लम्बाई – 160 फीट, निचली आधार 4 फीट, ऊपरी आधार 3 फीट ऊंचाई – 150 से 8 फीट। ड्राय मेसन्री – पलर (सीमेन्ट विहीन) – लम्बाई 160 फीट निचला आधार 14 फीट, ऊंचाई – 15 से 8 फीट, ऊपरी आधार – 5 फीट। भूमिगत भाग निर्माण : लम्बाई 110 फीट निचला आधार 12 फीट, ऊपरी सतह – 8 फीट ऊंचाई – 7 फीट। आकलित खर्च- पक्का मेसन्री – पत्थर व लाइमस्टोन सीमेन्ट 6.525 क्यूबिक फीट – 3 रूपये 8 आना 5 पैसे प्रति 100 क्यूबिक फीट – 230 रूपये 5 आना।[7] ड्राय मेसन्री – पत्थर (सीमेन्ट विहीन)। 15.275 क्यूबिक फीट 1 रूपये 9 आना 2 पैसे प्रति 100 क्यूबिक फीट) 240 रूपये 6 आना 9 पैसे।

भूमिगत आधार बीम- 8104 क्यूबिक फीट 2 आना/क्यू. फीट) 10 रुपये 2 आना जलाशय की कुल लागत – 480 रूपये 12 आना 9 पैसे। जलाशय का कुल खर्च 8356/-रूपये।

अंग्रेजी सरकार से पूर्व ए.जी.जी. स्पीयर्स द्वारा सन् 1833 में 100 रूपये प्रतिमाह किराये पर जो प्रांतीय सरकार द्वारा वहन किया जाना था, निजी रेजीडेंसी की स्थापना की। इस अस्थायी आवास पर एस्कार्ट करने के हेतु गार्डरूम, बंगला, बरंडा, गार्डन मरम्मत कार्य हेतु (1640 रूपये 15 आना 3 पैसे), बंगला पास परिसर (264 रूपये 9 आना 4 पैसे) में नया कुँआ हेतु 323 रूपया 7 आना व छोटे बाथरूम निर्माण हेतु 18 रूपये, 7 आने 3 पैसे खर्च किए गए। इस प्रकार कुल 1250 रूपये 6 आना, दस पैसे खर्च हुए।[8]

ए.जी.जी. व कमिश्नर हेतु स्थायी इमारत निर्माण हेतु ब्रिटिश सरकार द्वारा 1400 रूपये में दौलतबाग के पास मिस्टर फैगन से भवन खरीदा गया।

दौलत बाग के ऊपरी किनारे के बांध वाले हिस्से पर एजुकेटिव इंजीनियर लेफ्टिनेनट रिले द्वारा ए.जी.जी हाउस प्लान व 1930 रूपये 5 आना व 3 पैसा का खर्च आकलन तैयार किया गया।[9]

सन् 1842 में ब्रिटिश सरकार द्वारा किसान दशा सुधारने हेतु सिंचाई सुविधाओं का विस्तार किया गया। पुराने तालाबों के सुधार व निर्माण को गति प्रदान की गयी। 4 नए तालाब जिनमें राजगढ़ के कल, रामसर के परगना के बामोल जोहरवाड़ा व अजमेर परगना के नोटेरी हेतु क्रमश: 2010 रूपये, 5915 रूपये, 3850 व 4727 रुपये की सिंचाई परियोजना मंजूर की गयी। कुल 16502 रुपये इन जलाशयों हेतु स्वीकृत हुए। सन् 1842 में ही 3 पुराने तालाबों की मरम्मत हुए 3609 रूपये स्वीकृत किए गए। इनमें रामसर परगना के भगवानपुरा, राजगढ़ के रगेल व बोलायादास हेतु क्रमश: 479 रूपये, व 1855 रुपये स्वीकृत किए गए। 4 नये तालाबों व 3 पुराने तालाबों की मरम्मत कार्य हेतु ब्रिटिश सरकार द्वारा कुल 20111 रूपये की वित्तीय स्वीकृति प्रदान की गयी।[10]

डिप्टी कमिश्नर अजमेर प्रान्त के सत्यापित रिपोर्ट के अनुसार सन् 1873 में अमरगढ़ गाव के मांगलियावास किला जसवतसिंह इस्तमररदार के कब्जे में था। यह किला एक ऊँची पहाड़ी पर स्थित था। इस पर कब्जा करना इतना आसान नहीं था। यह पत्थर का बिना किला भी तथा यह आज भी अच्छी दशा में है।[11]

सन् 1842 अजमेर में जनसुविधा विस्तार हेतु टोंक नवाब अब्दुल करीम खान से एक भूमि टुकडा ब्रिटिश सरकार द्वारा स्थान्तरित किया गया।[12] नये कृषि सुधार लाने से पूर्व विभिन्न प्रशासनिक अधिकारियों की इस संबंध में राय जानी गयी। मिस्टर सुंदर के अनुसार नया कुँआ निर्माण करने पर 20 वर्ष तक उस पर कोई सिंचाई कर नहीं लिया जाना चाहिए। केप्टन रेप्सन् ने इस हेतु 12 वर्ष ही पर्याप्त माने थे। कर्नल ब्रुक के अनुसार एक पूर्ण सेटलेमन्ट समय तक सरकारी आदेश के द्वारा सिंचाई कर से मुक्त किया जाना चाहिए अन्त में गवर्नर जनरल द्वारा इसे ही स्वीकृति प्रदान की गयी।[13]

एक पुरानी प्रशासनिक परंपरा के अनुसार जिस व्यक्ति के पास जलाशय आगोर में हुआ हो उसे जलाशय पानी के उपयोग पर रोक लगा दी जाती थी, इसी बात का ब्रिटिश अधिकारियों ने पालना की। कुँआ सिंचित भूमि से भूराजस्व दूर भी उत्पादन का 116 रखी गयी जो काफी उदार भी। इस प्रकार के प्रयासों द्वारा ब्रिटिश सरकार द्वारा कुंआ खुदवाने व निर्माण को प्रोत्साहन दिया गया।

सेटलमेन्ट आफिसर लाटूस ने सन् 1872 में किसानों के कुँए खुदवाने हेतु तकाबी ऋण दिया जाने की अनुशंसा की।[14]

मेरवाड़ा प्रदेश के ब्यावर कस्बे से 6 मील दूर स्थित जालिया गांव में जलाशय बनाने हेतु यह प्लान तैयार किया गया। मेरवाड़ा प्रदेश पिछले 45 वर्षो से सूखा व अकाल से पीड़ित रहा जिसका यहां की अबादी पर दुष्प्रभाव पड़ा। यहाँ सूखा की मुख्य वजह पेड़ों के कम होने से हवा में नमी नहीं रहना है। इस हेतु प्रदेश में वन संरक्षण व नये वनों की स्थापना की जानी चाहिए। हाँलांकि संरक्षण वन स्थापना हेतु ब्रिटिश सरकार द्वारा सन् 1869 में डिप्टी वन संरक्षण अधिकारी सुंदर की नियुक्ति की गयी।[15]

मेरवाड़ा प्रदेश की टाडगढ व दिवेर जलाशयों के बीज इस जलाशय की विशेष आवश्यकता महसूस की गयी। यह जलाशय 600 एकड़ खरीफ फसल व 3250 एकड़ दोहरी फसल हेतु तैयार किया गया।[16]

चीफ कमिश्नर को पत्र जालिया टैंक की कुल सिंचाई क्षमता 454000000 क्यूबीक फीट ओपन की गयी जिसमें कृषि सिंचाई हेतु 400,000,000 क्यूबिक फीट जल उपलब्ध हो सकता है जल वितरण।

600 एकड खरीफ फसल 4500 क्यूबिक फीट प्रतिएकड- 27000,000 2800 एकड़ खरीफ व रबी फसल 135, 030 – 378,000,000 कुल 405000000 क्यूबिक फीट।[17]

उपरोक्त पत्र में आयोधिया प्रसाद, सावर तहसीलदार द्वारा सन् 1871 में खरीफ व ठरबी फसलों हेतु पानी उपलब्धता व जलाशय के आयोग क्षेत्र में कब्जे व पक्के कुओं की गांवों के हिसाब से संख्या दर्ज की गयी थी। इसके अलावा तहसीलदार द्वारा जालिया टेंक के हाई व लोनेवल नहरों द्वारा सिंचाई क्षमता दर्शायी गयी थी।[18]

ब्रिटिश सरकार द्धारा सन् 1864 में वास्तविक जमदर ज्ञात करने, वास्तविक मृत्युदर जाबेन, विवाहों की संख्या व विवाह पंजीकरण को बढ़ावा देने हेतु, जन्म मृत्यु व विवाह नियमावली निर्धारित की गयी। ऐसा करने से ब्रिटिश सरकार को बढ़ती जनसंख्या के अनुसार पेयजल अन्न उत्पादन बढ़ाने व स्वच्छता सुविधाएं उपलब्ध करवाने में सहुलियत रहती थी।[19]

सितम्बर 1871 में ब्रिटिश सरकार द्धारा 22 नये निर्माणकार्यों को स्वीकृती प्रदान की गई जो सिंचाई से संबन्धित थे पिछले दश वर्षो में जो तालाब निर्माण वित्तीय स्वीकृतिया दी गई वो इस प्रकार थे।[20]

आंकड़ों से ज्ञात होता है कि अजमेर मेरवाड़ा, मेवाड़ व मारवाड क्षेत्रों से पिछले दस वर्षो के दौरान सर्वाधिक धनराशि अजमेर मेरवाड़ा सरकार द्धारा सिंचाई निर्माण कार्यो हेतु जारी की गई। यह राशि 203185.6.11 3/4 रूपया, आना पैसा थी। इतनी वित्तीय राशि खर्च बाद प्रथम वाई राजस्व प्राप्ति 327820 9 1/4 आना रही इसमें प्रारभिंक रूप में प्राप्त लाभांश 324635 रूपये 9 1/2 पैसा रहा।[21]

इस प्रकार हम देखते है कि यहां के चौहान शासकों ने अजमेर की उबड खाबड पहाडियों के बीच तटबंध बनाकर जलाषयों का निर्माण किया इसी विधा को अपनाकर अंग्रेजो ने यहां की विकट परिस्थितियों को सुलझाने का प्रयास किया, जो आज हेरिटेज की श्रेणी में आता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुप्ता आर. के., मध्यकालीन समाज, धर्म, कला एव वास्तुकला पोइन्टर पब्लिषर्स, जयपुर, 2004, पृ. 279
2. क्षीरसागर डी.बी., नागौर का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक वैभव, महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाष, जयपुर, 2000, पृ. 27
3. क्षीरसागर डी.बी., पूर्वोक्त, पृ. 27
4. राजस्थान डिस्ट्रीक्ट गजेटियर, अजमेर, पृ. 708
5. क्षीरसागर डी.बी., पूर्वोक्त, पृ. 151-154
6. फॉरेन डिपार्ट. 21 जून 1843, क्रम सं. 75, राष्ट्रीय अभिलेखागार नई दिल्ली, (एन.ए. आई) नई दिल्ली
7. फॉरेन डिपार्ट. पालिटिकल 27 फरवरी 1834, क्रम स. 2, (रा.अभि.) नई दिल्ली
8. फॉरेन डिपार्ट. पालिटिकल 19 अप्रेल 1835, क्रम सं. 15, (रा.अभि.) नई दिल्ली सन् 1835
9. फॉरेन डिपार्ट. पालिटिकल क्र. स. 342 की रिपोर्ट, (रा.अभि.) नई दिल्ली
10 फॉरेन डिपार्ट. क्रम सं. 15, मार्च 1841 ए.जी.जी. सदरलैण्ड का भारत सरकार सचिव मेडार्क अरग्यून को पत्र, रा.अभि., नई दिल्ली, मेजर डिक्सन् की 1841 की रिपोर्ट,
11. फाईल न. 3 (1) 62, सन् 1870, रा.रा.अ., बीकानेर
12. फाईल न. 2 (3) 34, सन् 1869, रा.रा.अ. बीकानेर
13. फारेन डिपार्ट., अक्टूबर 1872, क्रम स. 3/15, रा.अभि., नई दिल्ली
14. पत्र क्रमांक 106, दिनांक 24 अप्रेल 1872, सेटलमेन्ट, आफिसर अजमेर लाटूस का कमिश्नर रा.अभि., नई दिल्ली
15. पत्र क्रमांक 2421, अजमेर, 1872, रेप्सन् डिप्टी कमिश्नर अजमेर का कमिश्नर को पत्र, रा.अभि. नई दिल्ली
16. फॉरेन डिपार्ट, अक्टूबर 1872, क्रम सं. 3/15, रा.अभि., नई दिल्ली
17. पत्र क्रमांक 977 अजमेर, 27 जून 1971, रा. अभि., नई दिल्ली
18. पत्र क्रंमाक 350, 2 दिसम्बर 1871, सहायक कमिश्नर अजमेर मेरवाड़ा डिप्टी कमिश्नर को पत्र, रा.अभि., नई दिल्ली
19. फाईल स. टी 43, वोल्यूम आई 1864, रा.रा.अ., बीकानेर
20. 7 जून, 1871, क्रम स. 277, पोलिटिकल, रा.अभि., नई दिल्ली
21 फॉरेन डिपार्ट, 13 मार्च 1874, क्रम स. 34, रा.अभि., नई दिल्ली

****

Study on adsorption of Methylene blue by Activated Carbon derived from Ipomoea Carnea

Dr. Geeta Paryani * Shikha Shrivas **

Abstract - Activated carbon has been prepared from stem of Ipomoea Carnea by acid treatment Surface structure investigation is carried out by scanning electron microscopy (SEM). Ipomoea Carnea stem waste has been evaluated as raw material for the preparation of activated carbon using HCL with the temperature ranging from 500^0C to 800^0C. The activated carbon prepared was characterized, by iodine value, moisture contain, ash content, pore volume and porosity. The BET surface areas between 864.653 m^2/g and 1159.06 m^2/g and micropores and mesopores with volumes between 0.004 and 0.358041 cc/g. Characterization studies such as SEM, BET, bulk density, moisture content, ash content, fixed carbon content, and surface area have been carried out to assess the suitability of derived carbons as adsorbents in the water and wastewater. The effects of fac-tors such as contact time, adsorbent dose, pH and initial concentration were investigated. The kinetics and equi-librium data were confronted to several models. A study on adsorption of Methylene blue by activated carbon derived from Ipomoea Carnea was done.
Key words - Activated Carbon, Ipomoea Carnea, Carbonization, Activation, Methylene Blue.

Introduction - Solid waste disposal has become a major problem in India, either it has to be disposed safely or used for the recovery of valuable materials as agricultural wastes like turmeric waste, ferronia shell waste, jatropha curcus seed shell waste, delonix shell waste and Ipomea Carnia stem. Therefore these wastes have been explored for the preparation of activated carbon by various techniques. In order to serious water pollution, we must understand the problems and become part of the solution [1].

Activated carbon has since then been used in many industries. In particular, it has been commonly used for the removal of heavy metal and organic dyes from textile waste water. Many agricultural by products and waste materials used for the preparation of activated carbons. The plant Ipomoea Carnea belongs to family Convolvulaceae. Ipomoea Carnea, is a species of morning glory. Activated carbon is widely used for the purpose due to the large surface area available for adsorption or chemical reactions.[2] Dyes are used in chemical, textile, paper, printing, leather, plastics and various food industries. Waste water passed out from the industry. So in this work Activated carbon used as an adsorbent for Methylene Blue dye.

Material And Method

Collection of sample - The Ipomoea Carnea (morning glory), a low-cost and abundantly available plant, was used for removal of heavy metal from aqueous solutions. Ipomoea Carnea stems were collected in and around Neel bad Bhopal M.P., India. The Ipomoea Carnea (morning glory) was certified by Dr. Jiya ul hussan assistant professor department of botney, Safiya College Bhopal M.P. The stem of Ipomoea Carnea was dried at room temperature for a few days and then oven dried at 110^0C over night.

Activation with HCL - *Ipomoea Carnea* stem waste material was treated with HCL for a period of 24 hours. Then the material was placed in the muffle furnace and carbonized at 400-800^0C, for a period of 60 minutes. After activation, the carbon obtained was washed sufficiently with plenty of water, dried and sieved then to desired particle size. [3]

Characterization

Moisture Content Determination - A 1.0 g of the activated carbon sample was weighted and dried in an oven for four hours at 150^oC, until the weight of the sample became constant. [4]

$$Xo = \frac{W_1 - W_2}{W_1}$$

Where:

Xo = Moisture content on wet basis

W_1 = Initial weight of sample, in gm

W_2 = Final weight of sample after drying in gm

Particle Size - For the particle size determination, lots of samples were weighed and placed on top of a set of sieves ranging from 75 to 1.4 × 103 µm. The sieves were shaken manually for two minutes, after which the weight percent of the active carbon retained on the sieves and bottom pan was determined. [5]

pH - 1 gm of the sample was weighed and dissolved in 3

*Department Of Chemistry, Govt. Motilal Vigyan Mahavidhlaya, Bhopal (M.P.) INDIA
** Department Of Chemistry, Govt. Motilal Vigyan Mahavidhlaya, Bhopal (M.P.) INDIA

ml of de-ionized water. The mixture was heated and stirred for 3 minutes to ensure proper dilution of the sample. The solution was filtered out and its pH was determined using a digital pH meter. [6]

Iodine Adsorption Number (IAN) - 1 g sample and 25 ml of standard iodine solution (0.023 M) added. 20 ml of this filtrate solution was titrated with the standard (0.1095 M) thiosulphate solution to the persistent of a pale yellow colour. 5 ml of starch indicator was added and titration resumed slowly until a colorless solution appeared, the procedure was carried out two more times. The titrations were also repeated with 20 ml portions of the standard iodine solution not treated with the sample to serve as the blank titration[6]. The iodine number(IAN) was calculated from the relationship.

IAN = $\frac{12.69\ N\ (V_2 - V_1)}{W}$ mole iodine/g sample

Where:

N is the normality of thiosulphate solution

V_1 is the volume of the thiosulphate (ml) used for the titration of the sample –treated aliquot.

V_2 is the volume of the thiosulphate (ml) used for the blank titration,

W is the mass of the sample used (gm).

Ash content - 2.0 grams of sample was placed into a crucible and reweighed with its content heated in a furnace at 900^{0}C for 3 hours. The sample was cooled to room temperature and reweighed. Ash content was calculated between the differences in weight.

Volatile matter content - A 2 gm of sample was taken in cylindrical crucible closed with a lid. It was then heated to 925Úc for exactly 7minutes in a muffle furnace. Then the crucible was cooled in desiccators and weighted volatile matter on dry basis.

VM = $\frac{100[100(B-F)-M(B-G)]}{[(B-G)(100-M)]}$

B=Mass of crucible, lid and sample before heating

F=Mass of crucible, lid and contents after heating

G=Mass of empty crucible & lid

M=% of moistures determined above

Fixed carbon content - Fixed carbon FC = 100 – (% moisture content+ % volatile matter + % ash content)

BET Test (Brunauer, Emmett and Teller) - The results of BET surface area, macropore, mesopore and micropore volumes of the produced activated carbon. The surface areas were higher for HCL activated carbons and this is expected because chemical activation normally develops more porosity and it gives high surface area. [7]

Scanning electron microscope analysis (SEM) - The surface morphology of the activated carbon was tested using scanning electron microscopy .At such magnification, SEM micrographs clearly revealed that wide variety of pores are present in activated carbon along with fibrous structure. It is also found that there are holes and caves type openings on the surface of the adsorbent. [8]

Adsorption studies of activated carbon - Removal of Methylene Blue dyes from aqueous solution by using Ipomoea Carnea stem waste.

Batch adsorption study - The batch adsorption was carried out at room tempera-ture. The effects of contact time, adsorbent dose, pH of solution and the initial concentration of these adsorbates were studied. The quantity adsorbed by a unit mass of an adsorbent at equi-librium and the adsorption percentage were calculated us-ing the following relations: [9]

$$\%R = \frac{C_0 - C_e}{C_0} \times 100$$

$$Q_e = \frac{(C_0 - C_e)}{m} \times V$$

Where is the concentration of adsorbate at equilibri-um (mg.L-1); is the initial concentration of adsorbate (mg.L-1).

Result - Activated carbon prepared from Ipomoea Caenea stem waste was found effective in adsorption of dye from aqueous solution. The activated carbon was characterized a pH, moisture content, bulk density, pore volume, porosity, and ash content. Iodine no. a measure of the micropore content of the activated carbon is 254 mole iodine/g sample .Moisture content of activated carbon have less than 1% . Ash determination shows that increase in carbonization temperature reduces the ash content. It is known that materials with the lowest ash content are most active. The pH of sample is 6.5.The result showed that the Activated carbons activated with HCL are neutral after washing.An adsorption test has been carried out for Methylene Blue under different experimental conditions in batch mode. The adsorption of Methylene Blue was dependent on adsorbent surface characteristics, adsorbent dose, Methylene Blue concentration, time of contact and temperature. The results indicated that the activated carbon is very useful for removing Methylene Blue from waste-water.

Table-1 Characteristics of activated carbon

S	PARAMETERS	OBSERVATIONS
1.	Moisture content in 2.0g	2.3%
2.	pH 6.5	
3.	Iodine adsorption number(IAS)	254
4.	Ash content	1.40%
5.	Fixed carbon %	81%
6.	ccl_4 adsorption capacity in %	64%
7.	Pore size/value Å	1.89839 nm
8.	BET Surface area in m2 /g	1159.06 m²/g
9.	Langmuir Surface area in m2 /g	2152.48 m²/g
10.	Volatile matter	15.3%

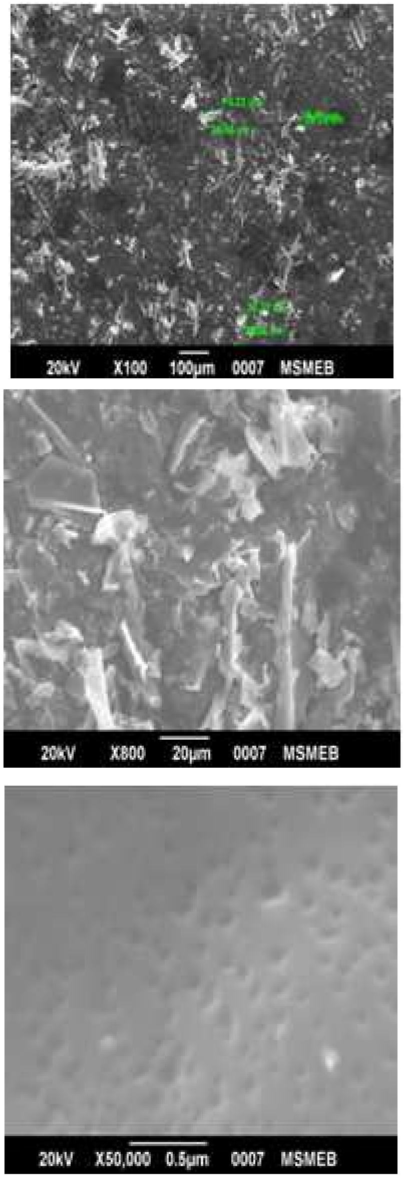

Fig. 1: Activated carbon from Ipomoea Carnea SEM

Adsorption result - The highest adsorption of 95.1% occurred at pH 6. When increase adsorbent dose MB adsorption was increase. Figure-4 shows that the equilibrium was attained at 110 minute when the maximum adsorption onto activated carbon was reached. When Methylene Blue concentration was increase the rate of adsorption was decreases (Fig-5).

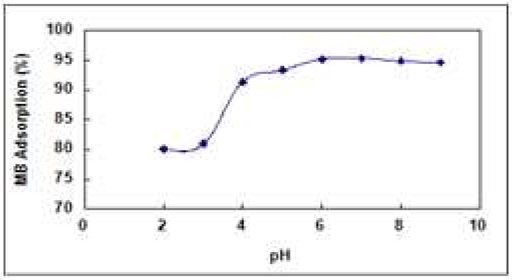

Figure -2 Effect of pH on adsorption of Methylene Blue

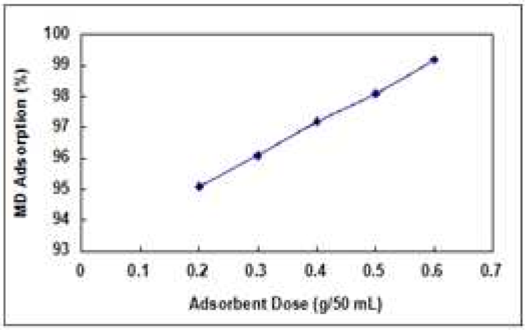

Figure-3: Effect of Adsorbent Dose on adsorption of Methylene Blue

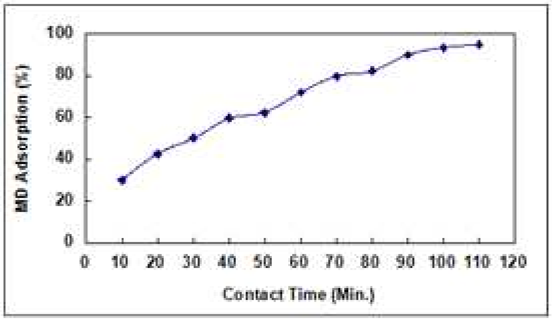

Figure -4. Effect of Contact Time on adsorption of Methylene Blue

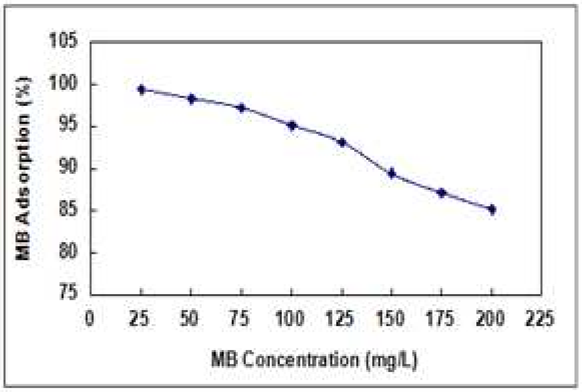

Conclusions - This study indicates that efficient activated carbons can be obtained from Ipeomea Carnea by controlled activation with HCL for a number of industrial and residential applications. Due to the presence of high surface area, porosity, the activated carbon prepared from the agricultural waste it can be used for a variety of environmental application, dye removal, wastewater treatment and adsorption process too. The present study has shown the effectiveness of using AC in the removal of Methylene Blue dye from aqueous solutions. Acid Activated Ipomoea Carnea in different forms has a great role in modern life to clean environment.

References :-

1. S. Karthikeyan and A. Babu Rajendran "Adsorption of Basic Dye (Rhodamine B) by a Low Cost Activated Carbon from Agricultural Solid Waste" An International Quarterly Scientific Journal Vol. 9 No. 3 pp. 461-472 ,2010.

2. Barret, E.P., Joyner, P.B. and Hatenda, P. “The Determination of Pore Volume and Area Distribution in Porous Substances. Computations from Nitrogen Isotherms.’’ Journal of Analytical Chemistry, 73, 373-380. 1951.
3. Arockiaraj I and Renuga V “Sorption kinetics and dynamic studies of basic dye by lowcost nanoporous activated carbon derived from Ipomoea Carnea stem waste by sulphate process” Frontiers in Nanoscience and Nanotechnology 2016.
4. Hameed, B.H, Din, A.T.M & Ahmad, A.L. Journal of hazardous materials. 141(3), , 30 – 60, 2006.[24]
5. Ademiluyi, T, Gumus, R, Adeniji, S.M & Jasem, O.Proceedings of the Nigerian society of chemical engineers, 34th Annual Conference Effurun, Nigeria, 2008.
6. Madu P. C. and Lajide L. J “Physicochemical characteristics of activated charcoal derived from melon seed husk’’. Chem. Pharm. Res., 5(5):94-98, 2013.[26]
7. Ajayi OA, Olawale AS A “comparative study of thermal and chemical activation of Canarium Schweinfurthii Nutshell”. J. Appl. sci. Res., 5(12): 2148-2152. 2009.
8. Chandrakant d. Shendkar1, rasika c. Torane2, kavita s. Mundhe2, sangita m. Lavate1, avinash b. Pawar1, nirmala r. Deshpande. ‘’characterization and application of activated carbon prepared from wasteweed” international Journal of Pharmacy and Pharmaceutical Sciences · March 2013.
9. Lekene Ngouateu R. B., Kouoh Sone P M. A., Ndi Nsami J., Kouotou D., Belibi Belibi P. D., Ketcha Mbadcam J. “Kinetics and equilibrium studies of the adsorption of phenol and methylene blue onto cola nut shell based activated carbon” Int J Cur Res Rev | Vol 7 Issue 9 M ay 2015
10. Rengaraj, S., Moon, S.-H., Sivabalan, R., Arabindoo, B. and Murugesan, V. “Agricultural Solid Waste for the Removal of Organics: Adsorption of Phenol from Water and Waste Water by Palm Seed Coat Activated Carbon’’. Waste Management, 22, 543-548. 2002.

****

भारतीय संगीत वाद्यों का प्राचीन वर्गीकरण

कंचन सिंह *

शोध सारांश – भारतवर्ष में संगीत के क्षेत्र में वाद्यों का प्रयोग न केवल मनोरंजन बल्कि धार्मिक अनुभूतियों को प्रकट करने के लिए प्राचीन काल से ही होता आ रहा है। प्राचीन भग्नावशेषों, धार्मिक स्थलों, आदि ग्रन्थों यथा यसामवेद इत्यादि में वाद्यों की भिन्न-भिन्न आकृति इसका प्रमाण हैं। प्राचीन सांगीतिक ग्रंथों में वाद्यों के विभिन्न स्वरूप तत्, सुषिर, अवनद्ध एवं घन रूप में वर्णित हैं। भरतकृत नाट्यशास्त्र में वर्णित चतुर्विध वाद्य वर्गीकरण वर्तमान में भी प्रचचित एवं सर्वमान्य हैं।

मुख्य शब्द – ध्वनि, वाद्य, चतुर्विध, शारंगदेव, अवनद्ध।

प्रस्तावना – संगीत, सृष्टि की रचना के साथ उद्‌भूत माना गया है। प्रकृति के कण-कण में इसका वास नाद-गति के रूप में विद्यमान है। संगीत के अन्तर्गत गायन, वादन तथा नृत्य तीनों को परिगणित किया जाता है। संगीत का महात्म्य अश्रुण्ण है। संगीत मनुष्य की जन्मजात प्रवृत्ति है जैसे-मनुष्य के नेत्रों के द्वारा इस जगत के सूक्ष्म व्यवहार व्यंजित होते हैं, उसी प्रकार संगीत इस प्राकृतिक वातावरण में सदैव सर्वमान व्याप्त होता है। भारतीय संगीत मानव समाज की अमूल्य धरोहर, परन्तु एक संगीतकार की धरोहर संगीत शास्त्र का ज्ञान, स्वर विज्ञान एवं ताल विज्ञान, का ज्ञान तथा संगीत प्रर्दशन की योग्यता होती है। यदि कहा जाये कि वाद्यों का प्रयोग मानव जीवन के जन्म ले लेकर मृत्यु पर्यन्त जुड़ा है तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

भारतवर्ष में संगीत के क्षेत्र में वाद्यों का प्रयोग न केवल मनोरंजन बल्कि धार्मिक अनुभूतियों को प्रकट करने के लिए प्राचीन काल से ही होता आ रहा है। प्राचीन भग्नावशेषों, धार्मिक स्थलों, आदि ग्रन्थों यथा यसामवेद इत्यादि में वाद्यों की भिन्न-भिन्न आकृति इसका प्रमाण हैं। परन्त वाद्यों की उत्पत्ति कब, कहाँ, कैसे हुई अथवा किस वर्ग का वाद्य पहले बना, प्रमाणों के अभाव में निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता।

आदि काल से मनुष्य किसी न किसी रूप में वाद्यों का प्रयोग करता आया है। सभ्यता, संस्कृति के विकास के साथ मनुष्य द्वारा निर्मित व प्रयुक्त वाद्य भी विकसित होते गये। परन्तु संगीतमय ध्वनि एवं गति को प्रकट करने वाला उपकरण वाद्य कहलाया, ऐसा कह सकते है। **प्रथम वाद्य के रूप में कण्ठ** को ईश्वर निर्मित वाद्य की संज्ञा प्राप्त है।

वाद्यों की धार्मिक मान्यता एवं देवी देवताओं से सम्बन्ध – प्राचीन संगीत ग्रन्थों में हमें वाद्यों की उत्पत्ति का किसी न किसी देवी-देवताओं से सम्बद्ध उपलब्ध होता है। **तत वाद्य देवताओं से, सुषिर वाद्य गन्धर्वो से, अवनद्ध (वितत) वाद्य राक्षसों से**, तथा **घन वाद्य किन्नरों से** सम्बन्धित थे। जब कृष्ण ने अवतार लिया तो वे इन चारो वाद्यों को पृथ्वी पर ले आये।[1] धार्मिक मान्यतानुसार आदि देव महादेव शंकर द्वारा डमरू (अवनद्ध), सरस्वती के द्वारा वीणा (ततवाद्य) आदि की उत्पत्ति मानी गई है। हिन्दू धर्म में वाद्यों का सम्बन्ध देवी-देवताओं से भी बहुत घनिष्ठता से रहा है। बाँसुरी के साथ भगवान 'श्री कृष्ण', डमरू के साथ भगवान 'शिव जी' मृदंग के साथ भगवान 'गणेश जी' और वीणा के साथ 'माँ सरस्वती जी' की कल्पना साकार हो उठती है।'[2]

ऐसी प्रतीत होता है कि सम्यता एवं भाषा के विकास के पूर्व ही वाद्यों का जन्म हो गया होगा, नर-नारि अपने हृदय की प्रसन्नता प्रकट करने के लिए अंग संचालन करते हुए नाचे होंगे तथा दो वस्तुओं के परस्पर घर्षण से ध्वनि उत्पन्न करने के लिए वाद्यों का काम लिया होगा।

वाद्य का अर्थ – संस्कृत भाषा से यवद धातु जिसका अर्थ 'बोलना' होता है। उसमें यणिच और ययत प्रत्यत के योग से यवाद्य शब्द की व्युत्पत्ति हुई है, जिसका अर्थ होता है बोला हुआ 'वाद्य' शब्द को भारतीय संगीत में 'संगीत-यन्त्र' उसे बजाने की क्रिया तथा उस पर बजाई जाने वाली अंर्तवस्तु (Contents) के रूढ़ार्थ में प्रयोग किया जाता है।[3] वाद्य रूप में प्राचीनतम् वाद्यों में झुनझुना माना जा सकता है, जो आज भी जनजातियों में प्रचलित है। आदिकाल से महाभारत युग, रामायण काल से लेकर आधुनिक युग तक वाद्यों का विकास तथा प्रचार इस बात का ज्वलंत उदाहरण है।

संगीतात्मक ध्वनि आधारित वाद्य – संगीतात्मक ध्वनियाँ नखज, वायुज, चर्मज, लोहज, तथा शरीरज होती है। वीणा आदि वाद्य नखज है, वंशी आदि वायुज है, मृदंग आदि वाद्य चर्मज है, ताल मंजीरा आदि वाद्य लोहज है, तथा कण्ठ ध्वनि शरीरज है। इन पाँच प्रकार की ध्वानियों को उत्पन्न करने वाले वाद्यों को **'पंचमहावाद्यानि'** कहा गया है। इनमें से एक ईश्वर द्वारा निर्मित है, जो नैसर्गिक है तथा अन्य चार प्रकार के वाद्य मानव विरचित है।

प्राचीन संगीतज्ञों के मतानुसार वाद्य वर्गीकरण – प्राचीन संगीतज्ञों जैसे भरत, दत्तिल, कोहल, नारद एवं शारंगदेव ने विभिन्न वाद्यों का वर्गीकरण किया है, जिनका विवरण इस प्रकार है-

नारदीय शिक्षा में वाद्य – नारदीय शिक्षा में वाद्यों के पॉच प्रकार बताये गये हैं। नखज, वायुज, चर्मज, लोहज तथा शरीरज इन पाँच प्रकार की ध्वानियों को उत्पन्न करने वाले वाद्यों को **'पंचमहावाद्यानि'** कहा गया है। इनमें से एक ईश्वर द्वारा निर्मित है, जो नैसर्गिक है तथा अन्य चार प्रकार के वाद्य मानव निर्मित है।

'एकं ईश्वरनिर्मितं नैसर्गिकं अन्यच्चतुर्विधं मनुष्यनिर्मितं चेति पंचप्रकारा: महावाद्यानाम्'[4]

कोहल के मतानुसार वाद्य – कोहल ने उपर्युक्त आधार पर पाँच प्रकार के ही सांगीतिक वाद्य स्वीकार किये हैं।

'कोहलस्य मते ख्यातं पंचधा वाद्यमेव च'[5]

भरत के मतानुसार वाद्य – भरत ने चार प्रकार के वाद्यों का वर्गीकरण

* शोध छात्रा एम.ए. (तबला), नेट, प्रवीण संगीत एवं प्रदर्शन कला विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

किया है।

'भरतेन वाद्यं चतुर्विधं प्रोक्तम्।' [6]

दत्तिल के मतानुसार वाद्य – दत्तिल ने भी भरत की भॉति वाद्यों क चार प्रकार स्वीकार किये हैं।

'दत्तिलेन तु आनद्धं ततं घनं सुषिरं चेति चतुविधिं वाद्यं कीर्तितम्।[7]

नारद के मतानुसार वाद्य – नारद ने अन्य विद्वानों से अलग तीन प्रकार के वाद्य बताये हैं।

'नारदमते चार्मणं तान्त्रिकं घनं चेति त्रिधा वाद्यलक्षणम्।' [8]

नख के उपयोग से बजाये जाने वाले, फूँक से बजाये जाने वाले तथा हाथ के उपयोग से बजाये जाने वाले वाद्यों में वीणा, वंशी, मृदंग, ताल आदि वाद्यों का प्रयोग अति प्राचीन काल से किया जा रहा है।

आचार्य भरत का वाद्य-वर्गीकरण – भरतप्रणीत नाट्यशास्त्र नाट्य, संगीत तथा अन्य कलाओं का विश्वकोश है।

'न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न स कला।
नासौ योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन् यन्न दृश्यते।।'[9]
(नाट्यशास्त्र I/117)

अर्थात् ऐसा कोई ज्ञान, ऐसा कोई शिल्प, ऐसी कोई विद्या, कला या योग नहीं जो नाट्यशास्त्र में द्दष्टव्य न हो।

चतुर्विध वाद्य – 'चतुर्विध' शब्द का प्रयोग आचार्य भरतमुनि प्रणीत 'नाट्यशास्त्र' में वाद्यों के वर्गीकरण का प्रथम उल्लेख आतोद्य विधान में चतुर्विध वाद्य के रूप में प्राप्त होता है। भरतकृत नाट्यशास्त्र 36 अध्यायों का वृहद ग्रन्थ है, जिसमें 28-34 अध्याय तक संगीत सम्बद्ध विषयों का निरूपण किया गया है। भरत ने वाद्यों को 4 भागों में वर्गीकृत किया है:- (1) तत (2) अवनद्ध (3) घन (4) सुषिर

'ततं चैवावनद्धं च घनं सुषिरमेव च।
चतुर्विधं तु विज्ञेयमातोद्यं लक्षणान्वितम्।।'[10]
(नाट्यशास्त्र 28/1)

उपरोक्त चार प्रकार के वाद्यों के लक्षण को स्पष्ट करते हुए आचार्य भरतमुनि लिखते हैं –

'तत तन्त्रीकृतं ज्ञेयमवनद्धं तु पौष्करम्।
घनं तालस्तु विज्ञेय: सुषिरो वंश उच्यते।।'[11]
(नाट्यशास्त्र 28/2)

अर्थात् भरत ने वाद्य वर्गीकरण के अन्तर्गत चतुर्विध तत, अवनद्ध, घन एवं सुषिर वाद्य का उल्लेख किया है। तत, अवनद्ध, घन एवं सुषिर वाद्यसे तात्पर्य है क्रमश: तंत्रीवाद्य, पुष्करवाद्य, तालवाद्य, वंशीवाद्य।

शारंगदेव का वाद्य-वर्गीकरण – आचार्य शारंगदेव ने भी प्राचीन कालीन भरतकृत नाट्यशास्त्र के समान अपने ग्रंथ **'संगीत रत्नाकर'** के छठें अध्याय अर्थात् वाद्याध्याय में वाद्यों को चार भागों में विभक्त किया है।

'तत् ततं सुषिरं चावनद्धं घनमिति स्मृतम्।
चतुर्था तत्र पूर्वाभ्यां श्रुत्यादिद्वारतो भवेत्।। 4।।
गीतं ततोऽवनद्धेन रज्यते मीयते घनात्।'[12]

अर्थात् वह (वाद्य) तत्, सुषिर, अवनद्ध और घन इस तरह चार प्रकार से जाना गया है। उनमें से पहले दो (तत् और सुषिर) से श्रुति आदि के द्वारा गीत (उत्पन्न) होता है। उसके बाद अवनद्ध के द्वारा रंजित होता है (और) धन से मापा जाता है।

उपरोक्त प्राचीन वाद्य वर्गीकरण के अनुसार वाद्यों का विवरण अधोलिखित है-

1. **तत वाद्य – 'तन्यते इति ततम्'** तन का अर्थ है तानना। तन धातु से तत् शब्द की उत्पत्ति हुई है। तारों को तानने के कारण इन्हे तंतु वाद्य भी कहते हैं, इनमें ध्वनि तार को छेड़कर उत्पन्न की जाती है। उदाहरणार्थ। वीणा, विपन्ची वीणा आदि।
2. **अवनद्ध वाद्य – 'अवनह्यते स्म-मुखे चर्मणा बध्यते स्म इति अवनद्धम्'** जिन वाद्यों के मुख चर्म से बंधे (आबद्ध) होते हैं उन्हें अवनद्ध वाद्य कहते हैं। इन वाद्यों के मुख पर चमड़ा मढ़ा हुआ होता है तथा उस पर ताड़ना करने से ध्वनि उत्पन्न होती है। उदाहरणार्थ। ढोल, मृदंग आदि।
3. **घन वाद्य –** ये ठोस धातु के बने वाद्य होते है, इनमें ध्वनि आपसी टकराव या अन्य वस्तु से आघात करने पर उत्पन्न होती है। उदाहरणार्थ। मंजीरा, झांझ, कठताल आदि।
4. **सुषिर वाद्य – 'सुषि: छिद्रमस्यास्ति इति सुषिरम्'।**[13] सुषि का अर्थ है छिद्र, जिन वाद्यों में छिद्र हों वे सुषिर वाद्य की श्रेणी में आते हैं। इन वाद्यों में ध्वनि वायु के घर्षण से उत्पन्न होती है। उदाहरणार्थ-वंशी, शहनाई आदि।

उपरोक्त चार वर्गो में विभाजित वाद्यों में तत व सुषिर को स्वरवाद्य तथा अवनद्ध व घन वाद्य तालवाद्य की श्रेणी में रखते हैं। **मनोहर भालचन्द्रराव मराठे** जी के अनुसार, ***'तत व सुषिर से श्रुति, स्वर, मूर्छना, तान, अलंकार इत्यादि द्वारा गीत बनते हैं। अवनद्ध वाद्य द्वारा गीत में रंजकत्व लाया जाता है तथा घनवाद्य से गीत को लय एवं काल में धारण किया जाता है।'***

निष्कर्ष – उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि अधिकतर प्राचीन संगीतज्ञों ने चार प्रकार के वाद्यों का वर्गीकरण किया है। निष्कर्षत: हम कह सकते है कि वाद्यों का प्राचीनकालीन 'चतुर्विध वाद्य' (तत्, सुषिर, अवनद्ध एवं घनवाद्य) वर्गीकरण ही सर्वमान्य है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. शर्मा डॉ. स्वंतन्त्र/पाश्चात्य स्वरलिपि पद्धति एवं भारतीय संगीत/ प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली/तृ0सं01996/पृ0-110
2. श्रीवास्तव गिरीशचन्द्र/ताल परिचय-2/रूबी प्रकाशन, इलाहाबाद/ नवीन सं0/पृ0-14
3. शुक्ल योगमाया/तबले का उद्गम, विकास और वादन शैलियॉ/हिन्दी माध्यम कार्यान्वय, दिल्ली वि0वि0/प्र0सं0सं0 2003/पृ0-22
4. तत्रैव/पृ0-23
5. मिश्र डॉ. लालमणि/भारतीय संगीत वाद्य/भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली/चौ0सं02011/पृ0-41
6. तत्रैव
7. तत्रैव
8. तत्रैव
9. शर्मा डॉ. स्वतंत्र/भारतीय संगीत एक ऐतिहासिक विश्लेषण/भार्गव प्रकाशन, इलाहाबाद/द्वि0सं01995/पृ0-43
10. शास्त्री बाबूलाल शुक्ल/नाट्यशास्त्र(चतुर्थ भाग)/चौखम्भा सं0सं0 प्रकाशन, वाराणसी/2009/पृ0-03
11. तत्रैव
12. चौधरी सुभद्रा/शारंगदेवकृत संगीत रत्नाकर, तृ0 खण्ड/राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली/ प्र0 सं0-2006/पृ0-249
13. सिंह ठा. जयदेव/भारतीय संगीत का इतिहास/वि0वि0 प्रकाशन, वाराणसी/द्वि0सं0 2010/पृ0-311

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Adsorption studies on the removal of colouring agent phenol red Using Activated carbon as adsorbent

Dr. Geeta Paryani * Shikha Shrivas **

Abstract - Activated carbon has been extensively used as a good adsorbent. This work deals with the study of phenol red adsorption on activated carbon The adsorption characteristics and operational parameters were determined by monitoring different parameters such as effect of pH, effect of concentration of the dye, amount of adsorbents and contact time. The adsorption phenol red was investigated using UV-Vis spectrophotometer at maximum absorption of 558 nm. The adsorption of dye increased with increasing initial dye concentration and adsorbent dosage. Nearly 60 minute of contact time was found to be sufficient for the adsorption to reach equilibrium. The Langmuir and Freundlich models adsorption were applied to describe the isotherm equilibrium and to determine its constants.
Key words- Activated carbon, phenol red, adsorption, isotherm equilibrium.

Introduction - Due to speedy industrial development, pollution of water bodies by industries is an issue of main concern. It is estimated that an enormous amount of dyes of global production is discharged by textile industries due to partial exhaustion of colouring material and washing operations [1].Coloured wastewater generally comes from dye manufacturing, textile industries, pulp and paper mills and laboratories. The waste water generated by these industries is highly noticeable even at very low concentrations. The removal of such materials into water bodies not only destructs the nature but also interferes with the diffusion of sunlight, thus disturbing the food chain existing in water ecosystems [2]. The bulk amounts of the dyes discarded into the water bodies by industries are toxic and even carcinogenic to both animals and humans. Due to their chemical structure which usually contains complex aromatic structures, dyes are toxic, carcinogenic and resistant to fading on exposure to light, heat ,water, microbes and many chemicals[3] [4].

The present study deals with the applicability of adsorption means in the removal of the dye phenol red from wastewaters. Phenol red is a highly water soluble fabric dye. It is therefore widely employed as a pH indicator in cell biology laboratories and for water testing applications. Toxicity data make known that phenol red inhibits the growth of renal epithelia cells [5]. Direct or indirect contact with the dye leads to irritation to the eyes, respiratory system and skin. Phenol red dyes are reported to reason mutagenic effects [6] and are a toxic to muscle fibres [7]. Therefore for the removal of phenol red we used activated carbon derived from Ipomoea Carnea it is an efficient and cost effective technique for the removal of dye from waste water .The plant Ipomoea Carnea belongs to family Convolvulaceae. Ipomoea Carnea is a species of morning glory [8]. So in this work activated carbon used as an adsorbent for phenol red dye.

Materials and Methods

Preparation of activated carbon - The Ipomoea Carnea stem , used as adsorbent for removal of phenol red .were cut and dried in sunlight until then oven dried at 110^{0}C over night. Dried material was treated with HCL for a period of 24 hours. Then the material was placed in the muffle furnace and carbonized at 400-800°C, for a period of 60 minutes[9]. Chemical activation promotes the high adsorption capability due to its high internal surface area and porosity formed during carbonization.

Adsorbent - The dye used in the study was phenol red, 4'-(3H- 2, 1-benzoxathiol-3-ylidene) bis-phenol, S,S-dioxide having molecular formula $C_{19}H_{14}O_5S$ and molecular weight 354.38 its chemical structure shown in Figure 1. Phenol red is also commonly known as phenol sulfonephthalein. An intense colour is due to the extended conjugation systems of the alternate double and single bond in the dye structure [10]. Phenol red dye stock solution is prepared by 0.1 gram of the phenol red dye was accurately weighed and made up to 1000 ml of distilled water. The stock solution was further diluted with distilled water to desired concentration for obtaining the test solutions.

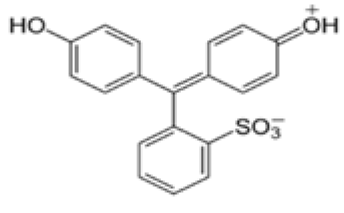

Figure 1. Chemical structure of phenol Red

*Department Of Chemistry, Govt. Motilal Vigyan Mahavidhlaya, Bhopal (M.P.) INDIA
** Department Of Chemistry, Govt. Motilal Vigyan Mahavidhlaya, Bhopal (M.P.) INDIA

Batch Adsorption Studies - Batch adsorption experiments were carried out at ambient temperature. In order to investigate the nature of activated carbon and phenol red interaction, initially the effect of pH on % adsorption was carried out and then further experiments on the effect of contact time, initial concentration, adsorbent dose and contact time were conducted on optimized pH. Only one parameter was changed at a time while others were maintained constant. The quantity adsorbed by a unit mass of an adsorbent at equi-librium and the adsorption percentage were calculated us-ing the following relations [11].

$$\%R = \frac{C_0 - C_e}{C_0} \times 100$$

$$Q_e = \frac{(C_0 - C_e)}{m} \times V$$

Where is the concentration of adsorbate at equilibri-um (mg.L-1); is the initial concentration of adsorbate (mg.L-1);

Results and discussion

Adsorption studies

Effect of pH - The effect of pH on the percentage of the phenol red dye removed was studied over the pH range of 2 to 10. It was observed that with the increase of the pH of the solution, the extent of the dye removal increased. The maximum removal of phenol red dye was recorded at pH of 8, decreases as the pH was increased up to pH 10 Figure- 2

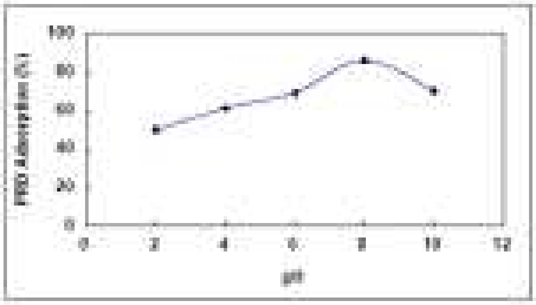

Figure -2. Effect of pH on adsorption of phenol red dye

Effect of Adsorbent Dose - The effect of dosage was studied for adsorbent dosages in the range of 0.2 g to 0.6 g. It can be seen that the rate of dye removal increases with increase in amount of adsorbent (Figure- 3). The result shows that the adsorbent was efficient for maximum removal of dyes at the level of adsorbent dosage. The increase in the percentage removal of dyes with the increase in adsorbent dosage was due to the increased surface area with more active functional groups which also gave rise to availability of more adsorption sites [12].

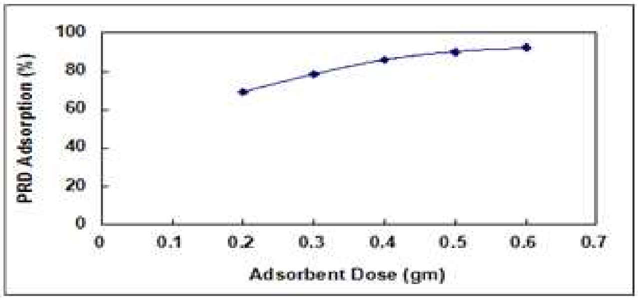

Figure - 3. Effect of Adsorbent Dose on adsorption of phenol red

Effect of Contact Time - The results showed that as the time increased, the percentage adsorbed increased, until equilibrium was reached at about 60 minute, as shown in Figure-4. The initial rapid adsorption was due to the availability of positively charged surface of the adsorbents for the adsorption of phenol red.

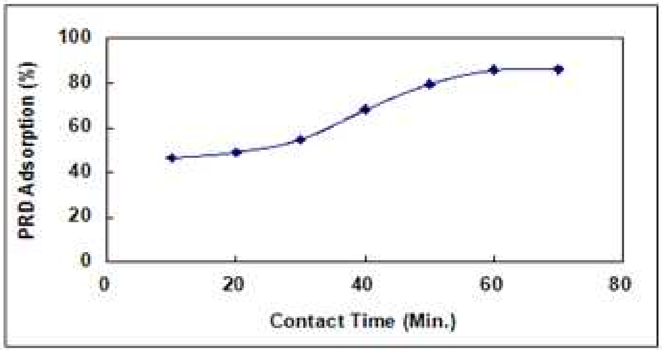

Figure -4. Effect of Contact Time on adsorption phenol red

Effect of phenol red ions concentration - The effect of initial ion concentration shows a decrease in percentage adsorbed, with the increase of the initial ion concentration of dyes, as seen in Figure- 5. This is because at lower concentration, the ratio of the initial number of the dye molecules to the available surface area was low [13].

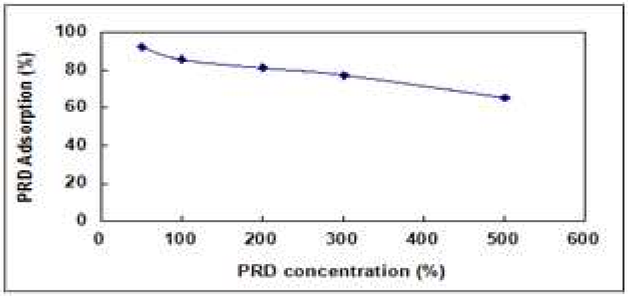

Figure - 5. Effect of phenol red concentration on adsorption

Adsorption isotherm Data Analysis - The relation between the amount of a substance adsorbed at constant temperature and its concentration in the equilibrium solution is called the adsorption isotherm. The results obtained from the Langmuir and Freundlich isotherm model for the removal of phenol red dye onto activated carbon are shown in Table-1.

Table-1. Comparison of the coefficients isotherm parameters for phenol red adsorption

Isotherm Model	**Coefficients Parameters**		**Isotherm**
Langmuir	**Q_m (mg/g)** 54.64	**b (L/mg)** 0.0169	**R^2** 0.9987
Freundlich	**1/n** 0.6119	**K_f (mg/g)** 1.999	**R^2** 0.9783

The correlation coefficients reported in Table-1 showed strong positive evidence on the adsorption of phenol red onto activated carbon, following the Langmuir and Freundlich isotherm. The applicability of the linear form of both the models to activated carbon was proven by the high correlation coefficients, R^2 grater then 0.98. This suggest that the both the models provides a good model of the sorption system. It will be noted that the value of 1/n was between 0 and 1 indicating the adsorbent prepared are favourable for adsorption of the phenol red. The maximum monolayer capacity Qm obtained from the Langmuir is 50.25 mg/g.

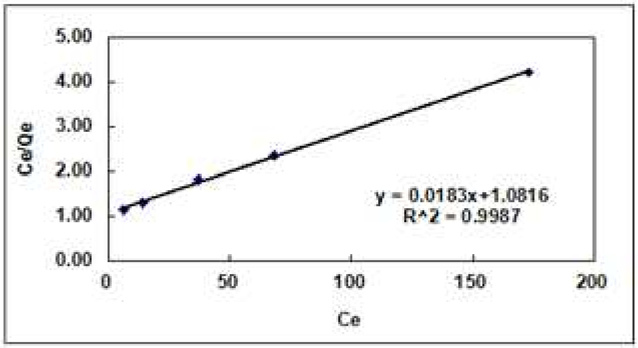

Figure-6 Linear plot of Langmuir isotherm for phenol red adsorption

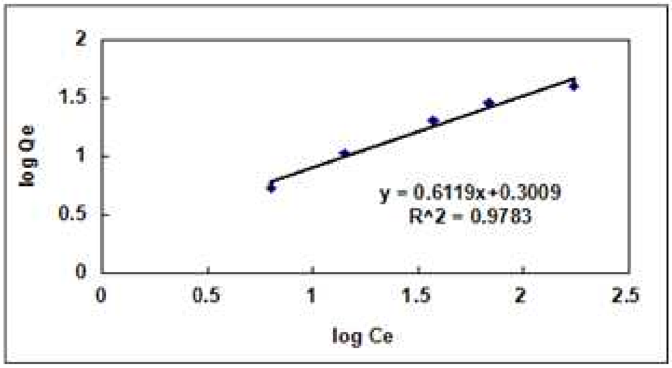

Figure-7 Linear plot of Freundlich isotherm for phenol red adsorption

Conclusions - The present study reports batch studies for the removal of phenol from activated carbon derived from Ipomoea Carnea stem waste Due to the presence of high surface area, porosity, and the activated carbon prepared from the agricultural waste it can be used for a variety of environmental application, dye removal, wastewater treatment and adsorption process too. Adsorption of phenol was dependent on initial pH, adsorbent dosage, contact time and initial phenol concentration. It can be concluded that some low cost material can be used as effective and alternative adsorbents for the sorption of organics such as phenol from aqueous solution, because of they are readily available, hence reducing pollution

References : -

1. S. Pirillo, M.L. Ferreira, E.H. Rueda, "Adsorption of alizarin, eriochrome blue black R, and fluorescein using different iron oxides as adsorbents" Ind. Eng. Chem. Res. 46 ,8255–8263,2007.
2. G. Mishra, M. Tripathy, "A critical review of the treatment for decolourization of textile effluent" Colourage 40, 35–38, 1993.
3. Pagga U.M. and K. Taeger, "Development of a Method for Adsorption of Dyestuffs on Activated Sludge". Water Resource Research. 28: 1051-1057, 1994.
4. Robinson T., G. Mullan, R. Marchant and P. Nigam, "Remediation of Dyes in Textiles Effluent: A Critical Review on Current Treatment Technologies with a Proposed Alternative". Journal of Bio resource Technology. 77: 247-255, 2001.
5. Walsh-Reitz M.M. and F.G. Toback, Phenol Red Inhibits Growth of Renal Epithelial Cells. American Journal of Physiology Renal Physiology. 262: F687-F691,1992.
6. Chung K., G.E. Fulk and A.W. Andrews, "Mutagenicity Testing of Some Commonly Used Dyes",Applied Environmental Microbiology 42: 641- 648. 1981.
7. Baylor S.M. and S. Hollingworth, "Absorbance signals from resting frog skeletal fibres" The Journal of General Physiology.96: 449-471, 1990.
8. S.Karthikeyan , P.Sivakumar and P.N.Palanisamy Department of Chemistry, "Activated Carbons from Agricultural Wastes and their Characterization '' net Vol. 5, No., pp. 409-426, April 2008
9. Arockiaraj I and Renuga V "Sorption kinetics and dynamic studies of basic dye by lowcost nanoporous activated carbon derived from Ipomoea Carnea stem waste by sulphate process" Frontiers in Nanoscience and Nanotechnology 2016.
10. Mittal A., D. Kaur, A. Malviya, J. Mittal and V.K. Gupta, "Adsorption Studies on the Removal of Coloring Agent Phenol Red from Wastewater Using Waste Materials as Adsorbents" Journal of Colloid and Interface Science. 337: 345-354, 2009.
11. Lekene Ngouateu R. B., Kouoh Sone P M. A., Ndi Nsami J., Kouotou D., Belibi Belibi P. D., Ketcha Mbadcam J. "Kinetics and equilibrium studies of the adsorption of phenol and methylene blue onto cola nut shell based activated carbon" Int J Cur Res Rev | Vol 7 Issue 9 M ay 2015rocess" Frontiers in Nanoscience and Nanotechnology 2016
12. N.A. Oladoja, I.O. Asia, "Studies on the sorption of basic dye by rubber (Hevea brasiliensis) seed Shell". Turkish J. Eng. Env. Sci., 32, 143-152, 2008.
13. Y.C. Sharma, B. Singh, Uma, "Fast removal of malachite green by adsorption on rice husk activated carbon", The Open Environment Pollution and Toxicology Journal, 1, 74-78, 2009.

****

A Study On Awareness And Perception Of Integrated Child Development Service (ICDS) Supervisors In Southern Rajasthan

Kusum Sukhwal * Dr. Usha Kothari **

Abstract - The ICDS program was launched on 2nd October, 1975, the 106th birth anniversary of Mahatma Gandhi, the Father of Nation. The supervisor assumes a pivotal role in the ICDS scheme due to her crucial link between AWWs and CDPO and officials of allied department in the implementation of the program. The objective of this paper is to find out the extent of the awareness of ICDS Supervisors regarding selected terminologies of ICDS scheme and yo investigate the clarity of the ICDS Supervisors perception about ICDS Scheme. A purposive sample (n = 124) of ICDS supervisors were selected in Southern Rajasthan. There are six districts as Udaipur, Rajsamand, Chittorgarh, Banswara, Dungarpur, Pratapgarh in Udaipur Division. To collect data used researcher developed awareness and perception interview. The data reveal that 52.4% Supervisors were post graduate. Majority of Supervisors (77.4%) were trained. 38.7% Supervisors job duration were 10-20 years. 77.4% Supervisors awareness score was 21-25 which were good and majority of Supervisors (57.6%) perception level was good, they agreed all perception statements of ICDS scheme. The correlation coefficient between awareness and perception was 0.335, it indicates moderate positive linear relationship between awareness and perception of ICDS Supervisors.
Keywords - ICDS Supervisors; Awareness; Perception;

Introduction - Integrated Child Development Services (ICDS) Scheme launched on 2nd October 1975, today, ICDS Scheme represents one of the world's largest and most unique programs for early childhood development. ICDS is the foremost symbol of India's commitment to her children– India's response to the challenge of providing pre-school education on one hand and breaking the vicious cycle of malnutrition, morbidity, reduced learning capacity and mortality.

Target Group of ICDS Scheme - The target group of ICDS Scheme consist of children from 0 to 6 years of age, pregnant and nursing others as well as other women between 15-45 years of age. These groups are termed as vulnerable groups, because the nutritional requirements are increased and lack of adequate nutritional diet adversely affects the whole life. The program also aims at disseminating health and nutrition education among the age group of 15 to 45 years of women.

Objectives of ICDS Scheme - The objectives of ICDS as stated in the manual on ICDS (1984) are as follows:-

1. To improve the nutritional and health status of children in the age group of 0 to 6 years.
2. To lay the foundation for proper psychological, physical and social development of children.
3. To reduce the incidence of mortality, morbidity malnutrition and school drop outs.
4. To enhance the ability of mothers to provide proper care of their children, especially their health and nutritional needs.
5. To achieve effective co-ordination among various departments providing developmental services to children.

ICDS Team, Their Role & Job Responsibilities - A CDPO is an overall in charge of an ICDS Project and is responsible for planning and implementation of the project; A CDPO is supported by a team of 4-5 Supervisors who guide and supervise AWWs; In charge ICDS projects, where there are more than 150 AWCs in a project, an ACDPO is also a part of a team; A supervisors has the responsibility of supervising 20, 25 and 17 Anganwadi Workers in rural, Urban and tribal Projects respectively; A supervisor guides an AWW in planning and organizing deliver of ICDS services at AWC and also gives on the spot guidance and training as and when required; An AWW is a community based frontline voluntary worker, selected from within the local community. The selected is made by a committee at the Project level; An AWW is mainly responsible for effective delivery of ICDS Services to children and women in the

***Research Scholar, Home Science (Development Communication and Extension) and , Jai Naraian Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA**
**** Professor, Human Development, Department of Home Science, Jai Naraian Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA**

community; An AWW is an honorary worker who gets a monthly honorarium; At each AWC, a helper is appointed to assist an AWW; Helper is an honorary worker and is paid monthly honorarium.

Health Services in ICDS are given by a team of Health Functionaries comprising Medical Officer, Lady Health Officer, ANM ad Female Health Worker from Primary Health Centre and Sub-Centre in the project. At the community level ASHA will be the first port of cell for any health related demands of deprived sections of the population, especially women and children.

Job Description of Supervisor - The job responsibilities of Supervisor in ICDS project are: The supervisor plans the tour program of AWCs under her control in consultation with concerned AWW. She supervises the working of AWW through regular field visits and checks the correctness of enlisted beneficiaries for different services, ensures proper delivery of these services. Visits each AWC every month in rural and urban projects and is expected to tour for twenty days in a month with ten nights holds outside her headquarters. She reviews every month the progress of the ICDS program in the area under her charge and discusses and resolves operational problems. She helps the AWWs in developing family contacts, making home visits, conducting village meetings etc. She periodically checks all the records, registers, cash in hand and accounts, stock and material at each AWC, gives necessary instructions and suggestions to AWWs in this regard and ensures regular submission of monthly reports by AWW. She generally assists the CDPO in various tasks of project administration and implementation. She guides the AWW in the formation and functioning of village level committees, SHGs and Mahila Mandals establishing close linkages with primary schools.

Role and Responsibility of Supervisors - The role of 'Supervisors/Mukhya Sevikn' is viewed as intensive supervisory inputs to strengthen the working at the grass root level i. e., Anganwadi workers level. The Supervisor is a graduate in Child Development/ Social Work/ Home Science/Nutrition or an allied field and undergoes job-course training for 3 months after her recruitment as Supervisor. She acts as a mentor to AWWs, assists in record keeping. Organizes community visits and provides on-the-job training to AWWs. In other words, she is the person who guides the AWWs right from the selection of beneficiaries to the provision of services meant for them. The supervisor is also a via-media person bringing about the AWWs, CDPOs and officials of allied departments close together for the implementation of the program. Thus, the Supervisor is the crucial functionary of the ICDS project, whose success rests to a large extent on her ability and capability to perform the roles and responsibilities assigned to her effectively.

Keeping in view the critical role the ICDS Supervisor has to play, the job responsibilities have been clearly outlined by National Institute of Public Cooperation and Child Development (NIPCCD, 1992) and they are identified in 8 different areas viz., Administration, Supervision, Training and Continuing education to subordinates, helping CDPOs and AWWs, Service delivery, liaison and linkages, communication and evaluation.

Objectives of this study :

1. To study the background profile with special reference to their professional qualification, Training and length of service of ICDS supervisors.
2. To find out the extent of the awareness of ICDS Supervisors regarding selected terminologies of ICDS scheme.
3. To investigate the clarity of the ICDS Supervisors perception about ICDS Scheme.

Methodology

Selection of Subjects: 124 ICDS supervisors in southern Rajasthan were targeted for sampling. From each district, each block 50% ICDS supervisors was enrolled in this study.

S.	District	Selected Block	Block
1	Udaipur	7	Badgaw, Bhinder, Khairwara, Kotda, Mavli, Sarada, Udaipur City
2	Chittorgarh	6	Begu, Rashmi, Bhadesar, Gangarar, Kapasan, Nimbahera,
3	Rajsamand	4	Amet, Khamnor, Relmagra, Rajsamand Rural
4	Banswara	5	Banswara City, Ghatol, Talwada, Garhi, Chotisarwan
5	Dungarpur	4	Aspur, Bichiwada, Gamri Ahara, Dungarpur
6	Pratapgarh	3	Pratapgarh, Devgarh, Dhariyawad

Background Information: A structured, pre-coded interview schedule was developed to obtain the desire information regarding general profile, educational, training status and job duration of the subjects. Two factors of this study was awareness and perception tool developed by researcher and authorized. Perception factors use the five point rating scale was SA (Strongly Agree), A (Agree), N (Neutral), SD (Strongly Disagree) and DA (Disagree).

Statistical analysis: the data were tabulated and statistically analyzed.

RESULT AND DISCUSSION

Table 1: General Profile of the Subjects

Variables		ICDS Supervisor (n=124)
Age	20-30 Year	19 (15.3)
	30-40 Years	22 (17.7)
	40-50 Years	40 (32.3)
	50-60 Years	43 (34.7)
Religion	Hindu	120 (96.8)
	Muslim	4 (3.2)
Marital Status	Married	99 (79.8)
	Unmarried	12 (9.7)
	Widowed	11 (8.9)
	Divorced	2 (1.6)

*Figure in parentheses denote percentage

Table 1 shows that Mostly of ICDS Supervisors (34%) age was 50-60 of. WCD (Women and Child Development) Department recruits only female for this post. Majority of Supervisor's religion was Hindu (96.8%) and almost Supervisors were married (79.8%).

Table 2: Educational Profile of the Subjects

Variables	ICDS Supervisor (n=124)
Secondary	8 (6.5)
Sr. Secondary	20 (16.1)
Graduation	31 (25.0)
Post Graduation	65 (52.4)
Others	0 (0.0)

*Figure in parentheses denote percentage

As seen in Table 2 most of supervisors were educated up to Post Graduation (52.4%) and college level graduates (25%). The fact is that the ICDS recruit that employs that are qualified and able for these posts, whenever supervisors' qualification were only college graduates. There are some supervisors qualified only 10th and 12th standards they have promotion for this post so they achieve this opportunity.

Fig. 1 Percentage of Educational Status of ICDS Supervisors

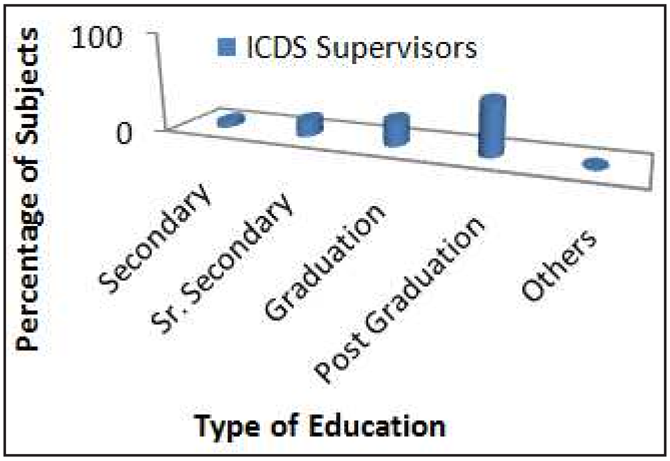

Table 3: Training Status of the Subjects

Variables	ICDS Supervisor (n=124)
Trained	96 (77.4)
Untrained	28 (22.6)

*Figure in parentheses denote percentage

Table 3 indicates that 77.4% Supervisors were trained. They had training like on campus training, off campus training, refresher training and on job training. The supervisors were untrained because they just are newly recruited and their training time table was not confirmed.

Table 4: Job Duration of the Subjects

Variables	ICDS Supervisor (n=124)
>1 Year	31 (25.0)
1-10 Years	6 (4.8)
10-20 Years	48 (38.7)
20-30 Years	33 (26.6)
<30 Years	6 (4.8)

*Figure in parentheses denote percentage

Table 4 depicts the job durations of the subjects. This table shows that 38.7% of supervisor's job duration was 10-20 years. 26.6% Supervisors job duration was 20-30 years. Only 4.8% Supervisors were above 30 years job duration.

Fig. 2 Job Duration's Percentage of the Subjects

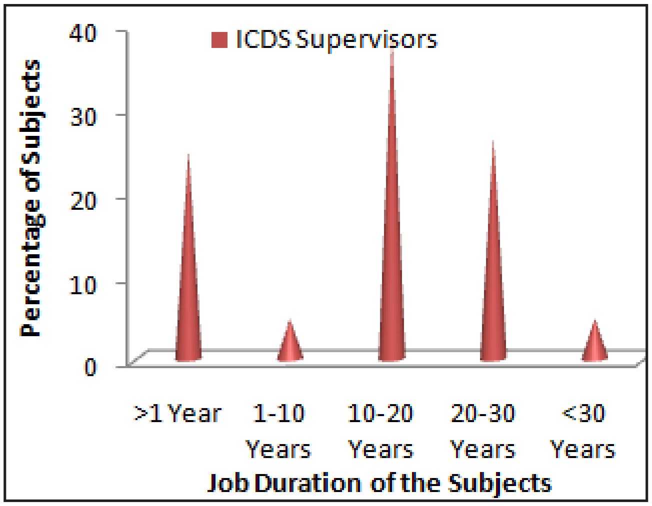

Table 5: Awareness Score of Subjects

Score Category	ICDS Supervisor (n=124)
<=15	7(5.7)
16-20	10(8.1)
21-25	96(77.4)
>25	11(8.9)

*Figure in parentheses denote percentage

In this table 77.4% Supervisors awareness score was 21-25 categories which were good. It reveals that ICDS Supervisors were well known about the ICDS Scheme, ICDS Objectives, 6 basic Services, Records Maintains and functioning of ICDS Scheme. It includes ICDS six basic services for awareness like Supplementary Nutrition, Non-Formal Preschool Education & Growth Monitoring, Immunization, Health Check-up, Referral Services and Nutrition and Health Education.

Fig. 3 Percentage of Awareness Score of Respondents

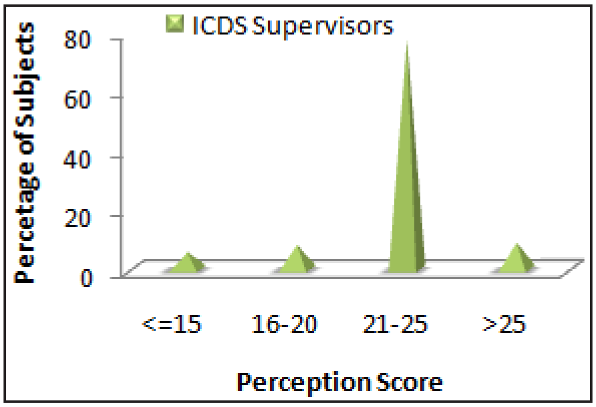

Table 6 (See in last page)

Table 6 depicts that 51.6% of ICDS Supervisors were agree and accept that they clearly know the career path in ICDS. Majority of Supervisors (82.3%) were agreed with engages in activities will directly affect their performance evaluation. Not a single Supervisors were strongly disagree with engage in activities will directly affect their performance evaluation. 50.8% Supervisors were agreed that they like their job. 66.9% Supervisors strongly agreed that they were actively looking for a job outside this project. The main reason was dissatisfy of promotion policies, salary increment, and over work load on ICDS Supervisors such as more than 25 AWC under their supervision, lack of office facility and so on. 54.8% Supervisors were agreed that they are extremely glad that they have an opportunity to work in this project because they were happy do work for children and our nation to reduce child mortality rate, pregnant and lactating women's mortality rate. 51.6% Supervisors were agreed in found opportunities for advancement in the ICDS because they want to do their best performance in their job and satisfy for their job so they want to something special in their job. Supervisors (62.9%) were agreed that they were willing to put in a great deal of effort beyond that normally expected in order to help the ICDS be successful. 63.7% ICDS Supervisors were agree with accept almost any type of job assignment in order to keep working for this project. Most of the Supervisors (69.4%) were agreed that ICDS really inspires the way of job performance. 53.2% Supervisors were agreed that if they leave this job their life was gone as it is because in job they have spent your valuable time with their family and after leaving the job they also spent their time with their family and happy for their life. 44.4% supervisors were agreed that they had board with their and 29.0% Supervisors were strongly agreed that they had board with their job. most of the Supervisors (55.6%) were agrees with that after a day's work, if they really feel like they have accomplished something. 67.7% Supervisors agreed that recruitment and selection process/ system is accurate in ICDS and 8.1% Supervisors were strongly agreed the recruitment process is accurate. 60.5% Supervisors were agreed that they have sufficient leaves and benefits but 12.1 % Supervisors were strongly disagreed that they don't have sufficient leaves because they had extra Anganwadies under the supervision and it was compulsory that in one month supervise every Anganwadi Centre at list one time in one month so they don't got leaves and other benefits. 78.2% Supervisors were agreed and 16.1% Supervisors were strongly agreed that the existing monitoring system was goo, our head of department was good like CDPOs (Block Head) for Supervisors. 76.6% Supervisors were agreed that they feel more confident and better equipped to act as a leader and handle conflicting situations. 68.5% ICDS Supervisors were well known about promotion polices of ICDS Scheme. ICDS Scheme share their promotion polices to all employs so they can do their work according to polices.

Table 7: Aggregate Job Perception of Subjects

Response	ICDS Supervisors 124*18=2232
Strongly Disagree	106(4.7)
Disagree	191(8.6)
Neutral	232(10.4)
Agree	1285(57.6)
Strongly Agree	418(18.7)

*Figure in parentheses denote percentage

This table depicts that majority of Supervisor's (57.6%) perception level was good. Only 8.6% Supervisors job perception were poor and they disagree with perception's statements like their carrier in ICDS, opportunity for advancement in ICDS, they had sufficient leaves, they enjoyed their working hours and work done with team and so on.

Fig. 4 Percentage of Perception Score of Subjects

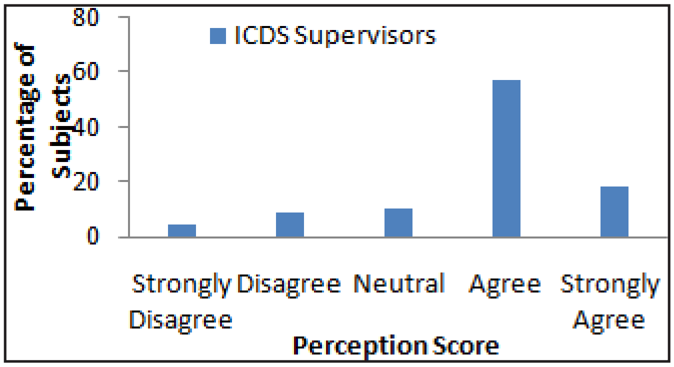

Table 8: Correlation between Awareness and Perception of ICDS Supervisors

Variables	Pearson's Correlation coefficient (p-value)
Awareness and Perception	0.335 (0.000)**

****Correlation is significant at the 0.01 level (2 tailed)**

Correlations between awareness and perception was 0.335 indicate that there are moderate positive correlate both aspect. Supervisor's awareness level was high than perception level also high, if Supervisors perception level was high than automatically their awareness level was high.

Conclusion - The correlation of Awareness and Perception of ICDS Supervisors were moderately positive. Awareness score of the Supervisors was high so that perception level was also good. Supervisor's awareness level was based on six basic services of ICDS Scheme. Supervisor's main work was supervision of Anganwadi Centers which were under their charges. The need of this study is to check the awareness and perception level of the Supervisors in the right manner. ICDS supervisors were aware and their perception regarding ICDS program also positive and the program will achieve their objectives. Hence this study will help to improve the working of ICDS supervisors.

References :-

1. Awareness. Retrieved from www.en.wikipedia.org/wiki/ awareness
2. Friday, 16 September 2011, Role & Responsibility of

Supervisors & ICDS functionaries. Retrieved on 18 July 2014 from http://www.aticdsa.blogspot.in/2011/09/role-and-responsibility-of-supervisors.html

3. Gupta, P. and Maheswari, S. (1985). A study of the concept of ICDS as held by supervisors and Anganwadi Workers. Research on ICDS: An overview (1986-1995). (Vol. 2). New Delhi.
4. Govt. of India. 2010. ICDS Evaluation Report, Dept. of Women and Child Development. Ministry of Human resources \ Development, New Delhi.
5. http://en.wikipedia.org/wiki/Motivation#cite_ref-Pritchard2008_15-0
6. Manhas S. and Dogra A. (2017). Awareness among anganwadi workers and the prospect of Child Health and Nutrition: A study in Integrated Child Development Services (ICDS) Jammu, Jammu and Kashmir, India. Published online: 17th October 2017. Pages 171-175.
7. https://doi.org/10.1080/09720073.2012.11891235
8. visited on 27th Feb 2016
9. Perception. Retrieved from www.education-portal.com/academy/lesson/what-is-perception-in-psychology-definition-theory-quiz.html#lesson.
10. Wikipedia http://en.wikipedia.org/wiki/Main_Page
11. World Health Organization http://www.whoindia.org/en/index.htm
12. www.wcd.gov.in

Table 6: Perception of ICDS Supervisors

S.	Statement	S D	D	N	A	S A
1	I clearly know the possible career path for me in ICDS.	18(14.5)	13(10.5)	15(12.1)	64(51.6)	14(11.3)
2	Engages in activities that will directly affect my performance evaluation.	-	5(4.0)	7(5.6)	102(82.3)	10(8.1)
3	My job is secure and I like my job.	5(4.0)	12(9.7)	13(10.5)	63(50.8)	31(25.0)
4	I am actively looking for a job outside this project.	13(10.5)	13(10.5)	-	15(12.1)	83(66.9)
5	I am extremely glad that I have an opportunity to work in this Project.	5(4)	17(13.7)	25(20.2)	68(54.8)	9(7.3)
6	I find opportunities for advancement in the ICDS.	6(4.8)	30(24.2)	17(13.7)	64(51.6)	7(5.6)
7	I am willing to put in a great deal of effort beyond that normally expected in order to help the ICDS be successful.	-	7(5.6)	15(12.1)	78(62.9)	24(19.4)
8	I would accept almost any type of job assignment in order to keep working for this project.	2(1.6)	-	13(10.5)	79(63.7)	30(24.2)
9	ICDS really inspires the very best in me in the way of job performance.	-	9(7.3)	9(7.3)	86(69.4)	20(16.1)
10	It would take very little change in my present circumstances to cause me to leave this job.	-	10(8.1)	26(21.0)	66(53.2)	22(17.7)
11	I am often bored with my job.	10(8.1)	8(6.5)	15(12.1)	55(44.4)	36(29.0)
12	After a day's work. I really feel like I have accomplished something.	10(8.1)	21(16.9)	13(10.5)	69(55.6)	11(8.9)
13	Feeling that your job tends to interfere with your family life.	16(12.9)	18(14.5)	14(11.3)	40(32.3)	36(29)
14	I feel the recruitment and selection process /system is accurate	6(4.8)	8(6.5)	16(12.9)	84(67.7)	10(8.1)
15	I have sufficient leaves and other benefits.	15(12.1)	12(9.7)	16(12.9)	75(60.5)	6(4.8)
16	I feel the existing monitoring system is good.	-	-	7(5.6)	97(78.2)	20(16.1)
17	I feel more confident and better equipped to act as a leader and handle conflicting situations.	-	3(2.4)	6(4.8)	95(76.6)	20(16.1)
18	In ICDS, promotion policies are known and widely shared with Employees	-	5(4)	5(4)	85(68.5)	29(23.4)

*Figure in parentheses denote percentage

****

मध्यप्रदेश में खाद्यान्न उत्पादन व उत्पादकता का एक अध्ययन

डॉ. भेरूलाल चौरडिया *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश राज्य की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि है। क्षेत्रफल की दृष्टि से मध्यप्रदेश देश का दूसरा बड़ा राज्य है, जिसका कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 308 लाख हैक्टेयर है, जो देश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 9 प्रतिशत है। मध्यप्रदेश 7.2 करोड की कुल जनसंख्या के साथ देश का छठा बड़ा राज्य है जिसकी 72 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण इलाकों में रहती है। मध्यप्रदेश में जंगल, खनिज, नदियाँ और घाटिया, 11 तरह के कृषि-जलवायु जोन, पाँच तरह के फसली जोन और जमीन का विविधतापूर्ण उपयोग मिट्टी के विभिन्न प्रकार, वर्षा व जल संसाधन भी है, जिनका फैलाव 51 जिलों में है।

मध्यप्रदेश की खाद्यान्न फसल मौसम पर आधारित है। राज्य की अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र अग्रणी है और राज्य की ग्रामीण जनसंख्या (72 प्रतिशत) को रोजगार और आजीविका उपलब्ध कराने वाला यह अकेला क्षेत्र भी हैं। जनगणना 2011 के अनुसार, राज्य के कुल कामगारों का 69.8 प्रतिशत और ग्रामीण कामगारों का 85.6 प्रतिशत आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। इसमें 31.2 प्रतिशत किसान और 38.6 प्रतिशत कृषि मजदूर शामिल है। राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान 24.4 प्रतिशत है और इसीलिए राज्य की खासकर खाद्यान्न उत्पादन व उत्पादकता को गति देने के लिए इस क्षेत्र की लगातार सकारात्मक विकास दर बहुत महत्वपूर्ण हैं। मध्यप्रदेश में कृषि और इसकी सहायक सेवाओं ने बीते वर्षो में समग्र रूप से तेजी से आगे कदम बढाए है, जिससे इस क्षेत्र का प्रभावी विकास हुआ है। इसने 2011-12 ओर 2012-13 में सर्वाधिक ऊँची वृद्धि दर के साथ उल्लेखनीय सफलता अर्जित की है। इसने राज्य सरकार के सामने कृषि की मौजूदा विकास दर को बरकरार रखने और आने वाले वर्षो में इसे लाभकारी और स्थिरतामूलक व्यवसाय बनाने की अहम चुनौती भी खडी हो गई है। वह भी इस बात को ध्यान में रखते हुए सुनिष्चित करना कि राज्य की गरीब दो-तिहाई जनसंख्या कृषि व इसके सहायक क्षेत्रों से जुडी है ताकि इस क्षेत्र में आय और रोजगार की संभावनाओं का यथासंभव पूर्ण तरीके से प्रोत्साहन किया जा सके। राज्य में पिछले चार वर्षो में खाद्यान्न उत्पादन लगभग दो गुना हो गया है। वर्ष 2012-13 में कुल खाद्यान्न उत्पादन का लगभग 11 प्रतिशत मध्यप्रदेश राज्य से है। मध्यप्रदेश में कृषि उत्पादन व उत्पादकता में लगातार हो रही गति से यह उत्तर प्रदेश और पंजाब के बाद 7 प्रतिशत की भागीदारी के साथ देश में सबसे बड़ा खाद्यान्न उत्पादक हैं।

अध्ययन के उद्देश्य :-

अध्ययन के उद्देश्य निम्न है-

1. कृषि विकास के अंतर्गत खाद्यान्न क्षेत्रफल का अध्ययन करना।
2. कृषि के अंतर्गत खाद्यान्न उत्पादन व उत्पादकता का अध्ययन करना।

मध्यप्रदेश में खाद्यान्न का क्षेत्रफल, उत्पादन व उत्पादकता – मध्यप्रदेश में खाद्यान्न का क्षेत्रफल, उत्पादन व उत्पादकता को निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट किया गया हैं –

तालिका क्र.1.1

मध्यप्रदेश में खाद्यान्न का क्षेत्रफल, उत्पादन व उत्पादकता

वर्ष	क्षेत्रफल	उत्पादन	उत्पादकता
2007-08	12120	12890	1064
2008-09	12271	14759	1203
2009-10	12739	16471	1293
2010-11	13254	16645	1248
2011-12	13497	23027	1706
2012-13	14234	27784	1952

स्त्रोत:-कृषि विभाग मध्यप्रदेश शासन।

नोट :- क्षेत्रफल हजार हैक्टेयर में, उत्पादन हजार टन और उत्पादकता कि.ग्रा./हैक्टेयर में।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2007-08 में खाद्यान्न फसलों का क्षेत्रफल 12,120 हजार हैक्टेयर था। इसका उत्पादन 12,890 हजार टन था तथा इसकी उत्पादकता 1064 कि.ग्रा./हैक्टेयर थी। जो वर्ष 2012-13 में बढ़कर 14,233 हजार हैक्टेयर, उत्पादन बढ़कर 27,784 हजार टन हो गया तथा इसकी उत्पादकता भी बढ़कर 1952 कि.ग्रा./ हैक्टेयर हो गयी।

अत: स्पष्ट होता है कि खाद्यान्न फसलों के क्षेत्रफल, उत्पादन व उत्पादकता में वर्ष 2007-08 से 2012-13 तक वृद्धि परिलक्षित हुई हैं।

निष्कर्ष – निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि, खाद्यान्न फसलों के क्षेत्रफल, उत्पादन व उत्पादकता में वृद्धि हुई हैं। परन्तु वर्तमान प्रतियोगी युग में हमें खाद्यान्न उत्पादन व उत्पादकता में आत्मनिर्भर बनने के लिए कृषि को तकनीकी रूप देना अत्यंत आवश्यक है। तभी देश की सम्पूर्ण जनता की आवश्यकता को पुरा कर सकेगें। हमें उन सारे उपायों जो खाद्यान्न फसलों के उत्पादन व उत्पादकता को नई दिषा प्रदान करते है को अपनाना होगा व इन उपायों को सफलतापूर्वक क्रियान्वयन के लिए एक विस्तृत कृषि योजना की आवश्यकता हैं।

अत: खाद्यान्न उत्पादन के द्वारा ही हम इस विशाल जनसंख्या का भरण- पोषण कर सकते है तथा देश को समुद्ध बना सकते है।

* अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, कालापीपल, जिला-शाजापुर (म.प्र.) भारत

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्र एस. के. एवं पुरी वी. के. (2014) 'भारतीय अर्थव्यवस्था', हिमालया पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली पृ.क्र. 364।
2. तदैव-पृ.क्र. 361।
3. दत्त रूद्र एवं सुन्दरम के.पी.एम. (2014) 'भारतीय अर्थव्यवस्था', एस. चन्द्र एण्ड लिमिटेड नई दिल्ली पृ.क्र. 496।
4. मिश्र जय प्रकाश (2009) 'कृषि अर्थशास्त्र', साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृ.क्र. 295।
5. मध्यप्रदेश कृषि आर्थिक सर्वेक्षण (2014) योजना, आर्थिक एवं सांख्यिकी विभाग, (म.प्र.) पृ.क्र. 07।
6. तदैव-पृ.क्र. 13।
7. मित्तल एस.जी. (2009) 'कृषि अर्थव्यवस्था एवं सहकारिता', कुमार पब्लिकेशन, आगरा पृ.क्र. 259।
8. नागर विष्णु दत्त एवं मेहता वल्लभदास (2010) 'भारतीय अर्थव्यवस्था', म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृ.क्र. 398।

****

साइबर आतंकवाद एक चुनौती

डॉ. अजय कुमार जैन *

प्रस्तावना – साइबर सुरक्षा इन दिनों चर्चाओं और खबरों में है। इससे जुड़ी दो महत्वपूर्ण घटनाएं पिछले दिनों घटी–चीन के मिलिट्री हैकरों ने पश्चिमी देशों की सरकारों की कम्प्यूटर प्रणाली पर हमला बोला और अमेरिकी एयर फोर्स ने साइबर स्पेस कमान नाम के संगठन का गठन किया।

इसे संयोग ही कहा जायेगा कि दोनों घटनाएं एक ही समय हुई, लेकिन इनसे इक्कीसवीं सदी में साइबर प्रणाली से जुडे खतरों की वास्तविकता और भयावहता का अनुमान लगाया जा सकता है। आज रोजमर्रा की कार्यप्रणाली में साइबर स्पेस का दायरा उत्तारोत्तार बढ़ता ही जा रहा है। सरकारें, प्रशासन, शिक्षा, संचार और सूचना के विस्तार में इसका बढ़–चढ़कर इस्तेमाल कर रही हैं। वहीं दूसरी ओर आंतकवादी समूह साइबर तकनीक का उपयोग अपने प्रचार, विभिन्न गुटों के साथ समन्वय तथा अर्थ प्रबंधन के लिए कर रहे है।

साइबर तकनीक का इस तरह दुरुपयोग देखते हुए अब विशेषज्ञ भी खासे चिंतित हैं। आज कम्प्यूटर का उपयोग करने वाला हर व्यक्ति कम्प्यूटर वायरस के हमले के बारे में जानता है। जब यह खतरा बड़े पैमाने पर हो तो इसकी भयावहता और दुष्परिणाम के बारे में सहजता से समझा जा सकता है।

आज रेलवे, एयरलाइंस, बैंक, स्टॉक मार्केट, हॉस्पिटल के अलावा सामान्य जनजीवन से जुड़ी हुई सभी सेवाएं कम्प्यूटर नेटवर्क के साथ जुडी हैं, इनमें से तो कई पूरी तरह से इंटरनेट पर ही आश्रित हैं, यदि इनके नेटवर्क के साथ छेड़–छाड़ की गयी, तो क्या परिणाम हो सकते हैं यह बयान करने की नहीं अपितु समझने की बात है।

अब तो सैन्य–प्रतिष्ठानों का काम–काज और प्रशासन भी कम्प्यूटर नेटवर्क के साथ जुड़ चुका है। जाहिर है कि यह क्षेत्र भी साइबर आतंक से अछूता नहीं बचा है। इसीलिए सूचना तकनीक के विशेषज्ञ साइबर सुरक्षा को लेकर बेहद चिंतित हैं।

साइबर स्पेस एक ऐसा क्षेत्र है जहां बिना किसी खून–खराबे के किसी भी देश की सरकार को आंतकित किया जा सकता है। साइबर के जरिए आतंक फैलाने वाले, कम्प्यूटर से महत्वपूर्ण जानकारियां निकाल सकते हैं तथा इसका इस्तेमाल धमकी देने व सेवाओं को बाधित करने में कर सकते हैं। अभी सामान्य तौर पर साइबर अपराध के जो छोटे–मोटे अपराध सामने आते हैं, वह प्रायरू युवा या विद्यार्थी वर्ग द्वारा महज मजा लेने या खुराफात करने के होते हैं, लेकिन यदि इन्हीं तौर–तरीकों का उपयोग व्यापक पैमाने पर आतंकवादी समूह करने लगें तो भारी मुश्किलें खड़ी हो जायेंगी।

यह सही है कि साइबर से जुड़ी अभी तक कोई बड़ी आतंकवादी घटनाएं प्रकाश में नहीं आई हैं, पर इसका यह मतलब कतई नहीं कि आने वाले दिनों के एक साधारण से मामले से लगा सकते हैं। 1998 में एक बारह वर्षीय बालक ने अमेरिका के अरिजोना स्थित थियोडोर रूजवेल्ट डैम की कम्प्यूटर प्रणाली को हैक कर उस पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया।

इस प्रणाली के जरिए बाढ़ नियंत्रण व बांध के गेट का संचालन किया जाता था। अब यदि वह हैकर चाहता तो कभी भी बांध के गेट खोल सकता था और इससे कितनी बड़ी आबादी में तबाही मच सकती थी बताने की जरूरत नहीं।

आज इस बात की पुख्ता खुफिया खबरें हैं कि अलकायदा जैसे कई खतरनाक आतंकवादी संगठन साइबर स्पेस के जरिए दुनिया भर में आतंक फैलाने की फिराक में हैं। ऑन–लाइन से जुड़े आतंकवाद के खतरों को अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति बिल क्लिंटन ने 1996 में ही भांप लिया था और उन्होंने तभी इस चुनौती से निबटने के लिए क्रिटिकल इन्फ्रास्ट्रक्चर प्रोटेक्यान कमीशन का गठन किया था।

साइबर स्पेस में आतंकवाद की घुसपैठ का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि भविष्य में होने वाले युद्धों और संघर्षो में यह एक भयावह वास्तविकता के रूप में उभरकर सामने आ सकता है। साइबर आतंकवादी नई संचार तकनीक के औजारों और तौर–तरीकों का इस्तेमाल करके नेटवर्क को तहस–नहस कर सकते हैं, हैकिग के साथ ही कम्प्यूटरों को बड़े पैमाने पर वायरस से संक्रमित कर सकते हैं, ऑनलाइन नेटवर्क सेवाओं को बाधित कर सकते है।

यही नहीं वे सरकारों व प्रतिष्ठानों के महत्वपूर्ण ई–मेल पर भी दखल दे सकते हैं। कोई कम्प्यूटर हैकर आंतकवादियों के साथ मिलकर साइबर से जुड़ी किसी भी खतरनाक घटना को अंजाम दे सकता है। आज जब यह सच दुनिया के सामने आ ही गया है कि आंतकवाद के खूनी खेल में पढे–लिखे विषय विशेषज्ञ, आईटी और मेडिकल के होनहार युवक भी शामिल हो चुके हैं, तो ऐसे में इनकी प्रतिभा का इस्तेमाल नागरिक और सैन्य क्षेत्र के साइबर नेटवर्क को भेदने में सहजता से किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक समाचार पत्र
2. इंडिया टूडे
3. साईबर क्राईम पत्रिका
4. इन्टरनेट

* सहायक प्राध्यापक (समाज शास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, गढाकोटा, जिला सागर (म.प्र.) भारत

सार्वजनिक पुस्कालय व समाज में उनकी भूमिका

डॉ. संतोष कापसे *

प्रस्तावना - सार्वजनिक पुस्तकालय से अभिप्राय जन तांत्रिक भावना से उत्पन्न होकर समाज में इसी भावना का प्रचार कर जनमानस के शैक्षणिक तथा बौद्धिक स्तर को ऊँचा उठाना है। जब यह कहा जाता है कि सार्वजनिक पुस्तकालय जनता के लिए, जनता द्वारा तथा जनता का ही होता है तो यह एक प्रजातांत्रिक सोच को जन्म देता है। इतिहास साक्षी है कि पुस्तक जैसी पवित्र वस्तु भी सदियों तक केवल राजा-महाराजाओं के घरों में शोभा की वस्तु भर बन कर रह गई थी। भारत में सदियों से बहुसंख्यक वर्ग को शिक्षा से वंचित रखा गया था। जिसका सीधा अर्थ है कि यह वर्ग पुस्तक को जानता ही नही होगा। लेकिन जब शिक्षा के दरवाजें सबके लिए खोल दिए गए तो स्वभाविक तौर पर पुस्तकें भी शाही जेल से मुक्त हुई और जनता के बीच आ गई। मुक्ति प्राप्त होना और जनता के बीच आ गई है। मुक्ति प्राप्त होना और जनता के बीच में होना ही तो प्रजातंत्र का मूलमंत्र है। इसलिए सार्वजनिक पुस्तकालय प्रजातंत्र को मजबूत करने का प्रभावी साधन है।

भारत के संदर्भ में सार्वजनिक पुस्तकालय - पुस्तकालय विज्ञान के जनक डॉ. एस.आर.रंगनाथन ने सार्वजनिक पुस्तकालय को समाज के संस्कारों का एक हिस्सा भी कहा है। उनका मानना था कि जीवन के लिए यदि भौतिक पदार्थ हवा, पानी महत्वपूर्ण है तो बौद्धिक उत्पादन और वितरण के लिए पुस्तकालयों का होना बहुत जरूरी है। एक अन्य विद्धान ने तो पुस्तकालय की सामाजिक भूमिका को रेखांकित करते हुए यहां तक कहा कि सार्वजनिक पुस्तकालय एक जन विश्वविद्यालय होता है। समाज में पुस्तकालय का होना और वह भी नि: शुल्क होना इसलिए भी जरूरी है क्योंकि प्रत्येक घर में कभी भी प्रत्येक व्यक्ति की कमाई से घर नही चलता। कोई न कोई व्यक्ति घर पर ही रहता है। ऐसे लोगों को केवल टीवी के सहारे ही छोड़ दिया जाना चाहिए या कोई वैकल्पिक साधन भी मनोरंजन कर सकता है। सार्वजनिक पुस्तकालय मनोरंजन के वैकल्पिक साधन का भी कार्य बखूबी कर रहे है।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हुए प्रयास - सार्वजनिक पुस्तकालयों की आवश्यकता सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि विदेश के प्रत्येक राष्ट्र में भी महसूस की गई। इसी के मद्देनजर संयुक्त राष्ट्र संघ के संयुक्त राष्ट्र शिक्षा, समाज एवं सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) के घोषणा पत्र में भी सार्वजनिक पुस्तकालय के महत्व को परिभाषित किया गया है।

'यूनेस्को ने अपने मेनीफेस्टो फार पब्लिक लाइबेरी-1949 में सार्वजनिक पुस्तकालय की निम्न आवश्यक शर्ते बताई है।'

1. सार्वजनिक पुस्तकालय एक निश्चित अधिनियम से ही स्थापित हो।
2. इनका संचालन पूरी तरह जनसहयोग व जनता के धन से हो।
3. इसकी सेवाओं के लिए कोई भी शुल्क सीधे तौर पर न लिया जाये।
4. ये पुस्तकालय पूरी तरह से नि: शुल्क व समान रूप से जनसाधारण को सेवा प्रदान करें।

यू.एस.ए. की सीनेट का घोषणा पत्र - सीनेट समिति (1949-50) जिसे विलियम एवार्ड समिति भी कहा जाता है, का गठन अमेरिकी संसद द्वारा किया गया था। इसका गठन संसद ने सार्वजनिक पुस्तकालयों के विकास के पर सुझाव देने के लिए किया था। इसी समिति के सुझावों पर अमल करते हुए विश्व का प्रथम सार्वजनिक पुस्तकालय अधिनियम बना।

इससे भी स्पष्ट होता है कि सार्वजनिक पुस्तकालयों का कितना महत्व हैं। बाद में केन्योन समिति (1924-27) ने तब तक पारित व संशोधित अधिनियमों का अध्ययन कर सार्वजनिक पुस्तकालयों को स्थापित करने की सिफारिश की।

अखिल भारतीय पुस्तकालय सम्मेलन घोषणा पत्र - अखिल भारतीय पुस्तकालय सम्मेलन (1937) में सार्वजनिक पुस्तकालयों के प्रशासनिक संगठन पर पहली बार भारत में विचार हुआ। जिसमें राज्य सरकारों को सार्वजनिक पुस्तकालय की अलग से व्यवस्था करने हेतु सिफारिश की गई। बाद में फैजी समिति (1939) का गठन बंबई के सार्वजनिक पुस्तकालयों पर विचार करने के लिए किया गया। इसकी महत्वपूर्ण सिफारिश एक केन्द्रिय तीन खंण्डीय तथा प्रत्येक जिले में सार्वजनिक पुस्तकालय की स्थापना करने की थी।

मेकाल्विन समिति-1942 - मेकाल्विन समिति (1942) ने सार्वजनिक पुस्तकालय सेवाओं की अव्यवस्था व दोष पर अध्ययन करने के बाद अपनी सिफारिश पेश की। इसने जनता के पक्ष में उदासीन, क्षेत्रीय जनता पर प्रभाव डालने में असमर्थ रहे, क्षेत्रीय अध्ययन पर जनसंख्या के हिसाब से अक्षमता व सहयोग का अभाव रहा। आदि कारणों को अव्यवस्था के कारण बचाएं गए तथा सार्वजनिक पुस्तकालयों के सही तरह के मार्गदर्शन के लिए अलग से विभाग बनाने का सुझाव दिया।

अखिल भारतीय पुस्तकालय सम्मेलन घोषणा-पत्र - अखिल भारतीय पुस्तकालय सम्मेलन (1944) -यह सम्मेलन राजस्थान की राजधानी जयपुर में सम्पन्न हुआ था। इस सम्मेलन में प्रभावी सार्वजनिक पुस्तकालय सेवा की स्थापना पर विचार किया गया। इसमें पुस्तकालयों के सफल संचालन के लिए अलग से विभाग की स्थापना की सिफारिश की गई। बाद में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948-49) जिसे डॉ. राधाकृष्णन आयोग के नाम से भी जाना जाता है। उसने पुस्तकालयों के समग्र उपयोग के लिए ओपन प्रवेश प्रणाली की सिफारिश की ताकि पुस्तकों का उपयोग बढ़ाया जा सकें।

डॉ. एस. आर. रंगनाथन - डॉ. एस.आर.रंगनाथन ने भारत के लिए 'राष्ट्रीय

* शासकीय महाविद्यालय, बुदनी, जिला सीहोर (म.प्र.) भारत

पुस्तकालय तंत्र' योजना प्रस्तुत की। 1946 में भारत में पुस्तकालय पुर्न:निर्माण तथा 1948 में सार्वजनिक पुस्तकालय कर्मचारियों के लिए कर्मचारी फार्मूला दिया। डॉ. रंगनाथन ने भारत के लिए सार्वजनिक पुस्तकालयों में विकास के लिए एक तीन वर्षीय योजना बनाई। जिसमें प्रत्येक जिले व ग्राम में पुस्तकालयों की स्थापना की व्यवस्था करने की बात कही गई थी। यूनेस्को ने 1965 में 'सेमिनार ऑन पब्लिक लाईब्रेरी फॉर एशिया' में सार्वजनिक पुस्तकालयों के विकास विषय पर विचार किया। उस अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में सार्वजनिक पुस्तकालयों का गठन व सुचारू संचालन पर जोर दिया। इस संगोष्ठी में भारत में सार्वजनिक पुस्तकालयों की दयनीय स्थिति पर चिंता व्यक्त कर इनके सुधार पर बल दिया गया।

भारतीय पुस्तकालय संघ कांफ्रेंस – आई.एल.ए.कांफ्रेस–1980 में 'लाईब्रेरी सर्विसेस फॉर ए डेवलपिंग सोसायटी' विषय पर विचार विमर्श किया गया तथा सार्वजनिक पुस्तकालयों के विकास के लिए पुस्तकालय अधिनियम पास करने पर जोर दिया गया। 1981 में सार्वजनिक पुस्तकालयों की प्रशासनिक समस्याओं पर एक राज्य स्तरीय सम्मेलन में विचार विमर्श किया गया। जिसमें सार्वजनिक पुस्तकालयो में मानव संसाधनों की स्थिति पर विचार करते हुए इसके लिए एक फार्मूला बनाने तथा सार्वजनिक पुस्तकालय कर्मचारियों के पदों के स्तर में वृद्धि का सुझाव दिया गया।

सार्वजनिक पुस्तकालय परिभाषा :

1. डॉ. रंगनाथन के शब्दों में :– 'सार्वजनिक पुस्कालय समुदाय द्वारा समुदाय के लिए चलाया जाने वाला ऐसा संस्थान है जो समाज के प्रत्येक सदस्य को जीवन भर अध्ययन करने का सरल तरीका ढूंढते है।'[1]
2. मैकाल्विन के अनुसार:– 'सार्वजनिक पुस्तकालय वह है जिसके द्वारा क्षेत्र विशेष में रहने वाले सभी व्यक्तियों को नि: शुल्क सेवा उपलब्ध हो तथा जिसके पास व्यक्तियों एवं जनसमुदायों के विभिन्न आवश्यकताओं को यथासंभव पूर्ण करने के लिए विशाल ग्रंथो का संग्रह हो। जिसे वे प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी धार्मिक, राजनैतिक एवं अन्य किसी भेदभाव के नि: शुल्क सेवा उपलब्ध करा सकें।'[2]
3. यूनेस्कों के अनुसार :– 'सार्वजनिक पुस्तकालय वह है जो समाज या किसी क्षेत्र की जनता को उचित तथा नि:शुल्क सेवा प्रदान करता है। वह सामान्य या विशिष्ट श्रेणी के व्यक्तियों जैसे बच्चों, सेनाओं के सदस्यों, चिकित्सालय क रोगियों, जेल में कैदियों, कारखानों के श्रमिकों आदि को भी सेवा प्रदान करते है।'[3]

निष्कर्ष – विभिन्न प्रकार से सार्वजनिक पुस्तकालयों के अवलोकन व परिभाषाओं से यह निष्कर्ष निकलता है कि सार्वजनिक पुस्तकालय सामाजिक विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है। इन पुस्तकालयों के विकास के लिए न सिर्फ भारत सरकार बल्कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी काफी प्रयास हुए है। जिनके कारण इन पुस्तकालय ने अब आधुनिक रूप धारण करना शुरू कर दिया है। ये सार्वजनिक पुस्तकालय शिक्षा में वैकल्पिक स्रोत तो नही हो सकते है। लेकिन इनकी भूमिका को कम करके भी नही आंका जा सकता है। क्योंकि ये स्कूली शिक्षा व महाविद्यालय की शिक्षा पूर्ण होने के बाबजूद व्यक्ति भी शिक्षा, सूचना आवश्यकता को निरंतर पूरा करते है। वह भी पाठक की सुविधानुसार। यह व्यक्ति के अंतकाल तक उसका मार्गदर्शन करते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कुल श्रेष्ठ, अजय, सार्वजनिक पुस्तकालय प्रशासन, शब्द महिमा प्रकाशन, जयपुर , 1995 पृष्ठ 10
2. सक्सेना एल.एस. पुस्तकालय संगठन तथा व्यवस्थापन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल 1988 पृष्ठ 26
3. त्रिपाठी, एस.एम. आधुनिक वाड्मयात्मक नियंत्रण, वाय.के. पब्लिशर्स, आगरा–1992, पृष्ठ 108–109

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

पारिवारिक बजट : एक अवलोकन

डॉ. एकता गांगिल *

प्रस्तावना – किसी भी संस्था व संगठन में कार्यरत् अधिकारियों कर्मचारियों की आर्थिक सुदृढ़ता के लिए आवश्यक हो जाता है कि उनकी आय कैसी है। इसी तरह यहाँ भी महाविद्यालय के प्राध्यापकों एवं कर्मचारियों के पारिवारिक बजट का उल्लेख किया जा रहा है।

पारिवारिक बजट – पारिवारिक बजट से आशय किसी परिवार के आय व व्यय से है। जिसमें कुछ विद्धानों के विचार निम्नानुसार है :–

एरिस्टोडिम्स के अनुसार – 'धन आदमी को बनाता है।' धन व्यक्ति के ही नही परिवार के सुख और संतोष का भी एक मुख्य आधार है, पर धन से परिवार को अधिकतम संतुष्टि तभी मिल सकती है। जब उसका समुचित व्यवस्थापन हो। पारिवारिक बजट इस व्यवस्थापन का प्रथम चरण है। यह पारिवारिक धन का समुचित आयोजन है। बजट को परिभाषित करें तो हम कह सकते है कि यह पारिवारिक आय और व्यय की एक निश्चित अवधि के लिए योजना है।

ग्रॉस एवं क्रैंडल के अनुसार – 'यह भविष्य में होने वाले व्ययों का आयोजन ही।' जिसमें आय और व्यय दोनों का विशेषकर व्यय का पूरा वर्णन होता है। व्यय की योजना चूँकि भविष्य के लिए बनाई जाती है। अत: वह अनुमानित होती है। पर यह अनुमान पूर्व जानकारी व अनुभव के आधार पर लगाएं जाते है।

अत: बजट की मदों में अधिक फेरबदल की संभावना कम ही रहती है।

इस तरह पारिवारिक बजट से हमें किसी परिवार के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हो जाती है।'[1]

अनुमान – बजट बनाने से पहले अनुमान लगाया जाता है जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि बजट किस तरह बनाया जाये, जो कि निम्नानुसार है :–

प्रथम – परिवार एकाकी है या संयुक्त परिवार है। उसमें सदस्यों की संख्या।

द्वितीय– बजट की पारिवारिक आय की जानकारी इससे परिवार के कमाने योग्य सदस्यों का पता चलने के साथ ही यह भी पता चल जाता है कि परिवार समृद्ध है या नही।

तृतीय– बजट अवधि का ज्ञान–इसमें प्रतिमाह बजट बनाने की अवधि सुविधाजनक होती है।

चतुर्थ– परिवार के सदस्यों द्वारा किन मदों पर कितना व्यय किया जाता है। इसमें उसके जीवन स्तर का पता चलता है।

पंचम– प्रत्येक परिवार आर्थिक सुरक्षा के लिए व संकट काल के लिए बजट की व्यवस्था करता है। बजट कितनी होती है। कुछ परिवार जहाँ पर आय कम है, बचत नही हो पाती है। कभी–कभी ऋण भी लेना पड़ता है।[2]

इस तरह उपरोक्त सभी जानकारी बजट के पूर्वानुमान से लग जाती है।

बजट बनाते वक्त ध्यान रखने योग्य बाते :

1. व्यय किसी भी प्रकार आय से अधिक नही होना चाहिए।
2. व्यय हेतु सर्वाधिक आवश्यक वस्तुओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।
3. बजट इस प्रकार बनाना चाहिए कि व्यय कम से कम हो।
4. धन को उपयोगी बनाने का प्रयास होना चाहिए।
5. एक निश्चित मात्रा में धन की बचत करनी चाहिए।

पारिवारिक बजट किसी परिवार की आर्थिक दशा का दर्पण होता है। इसलिए गृहस्वामियों के अलावा अर्थशास्त्रियों, राजनितिज्ञों, समाज सुधारकों और सरकार के लिए भी महत्वपूर्ण है।

परिवार के बजट को प्रभावित करने वाले तत्व :

(अ) **आय –** व्यय वस्तुत: आय के अनुसार ही होता है। प्रथम तो आवश्यकताओं की पूर्ति करना होता है। जैसे – भोजन, वस्त्र व आवास। कम आय वर्ग की अधिकांश आय इन मूल आवश्यकताओं की पूर्ति में ही समाप्त हो जाती है।

(ब) **परिवार का आकार –** बड़े परिवारों में भोजन व वस्त्रों पर अधिक व्यय होता है। अत: जब तक आय अधिक न हो एक अच्छा जीवन स्तर बनाएं रखना कठिन होता है।

(स) **परिवार का स्वरूप –** आय इस बात पर भी निर्भर करती है कि कमाने वाले कितने है। यदि पति–पत्नी दोनो कमाते है तो एक अच्छा जीवन स्तर बनाए रखना संभव हो जाता है। इसी प्रकार एकाकी परिवार की अपेक्षा संयुक्त परिवार में आय अधिक होती है और व्यय कम।

(द) **परिवार का निवास स्थान –** छोटे शहरों में रहने वाले परिवारों का व्यय बड़े शहरों रहने वाले परिवारों से अपेक्षाकृत कम होता है। जबकि बडे शहरों में आवास आवागमन बच्चों की शिक्षा, मनोरंजन आदि पर व्यय बढ़ जाता है। इसी तरह गांव में व्यय और भी कम हो जाता है।

(इ) **सामाजिक तथा धार्मिक परम्पराएं –** ऐसी परंपराओं के निर्वाह हेतु अधिकांश परिवारों को व्यय करना होता है। भारतीय समाज अपेक्षाकृत अधिक परम्परावादी है। यहाँ ऐसे उत्सवों जैसे – गृह प्रवेश, नामकरण, मुंण्डन, विवाह आदि पर काफी व्यय होता है।

पारिवारिक बजट बनाने की चरण :

(क) **आयोजन –** इसके अंतर्गत परिवार की विभिन्न आवश्यकताओं की सूची तैयार करना जिसमें भोजन, कपड़े, आवास, शिक्षा, आवागमन आदि में बजट को विभाजित किया जा सकता है। इसी तरह सूची में सम्मिलित वस्तुओं की कीमत क्या है। गृहणी को इसका अनुमान लगा लेना चाहिए।

(ख) **नियंत्रण –** व्यय का आयोजन कर लेने के बाद परिवार का यह देख लेना चाहिए कि उसका कार्यान्वयन सफलता से होगा या नही इसके

* अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) शासकीय संजय गांधी स्मृति स्नात्तकोत्तर महाविद्यालय, गंजबसौदा, जिला विदिशा (म.प्र.) भारत

लिए व्यय पर नियंत्रण करना जरूरी हो जाता है। बजट की अवधि के दौरान बीच-बीच में निरीक्षण करते रहना भी व्यय को नियंत्रित करने में सहायक होता है।

(ग) **हिसाब रखना –** बजट की अवधि के दौरान व्यय का नियंत्रण रखने की सबसे अच्छी विधि है। हिसाब रखना कई लोग इसे नापसंद करते है। चूँकि यह कष्ट साध्य है परन्तु इसके बिना समुचित नियंत्रण संभव नही है। हिसाब तीन प्रकार से उपयोगी है।

(i) धन कैसे व्यय हो रहा है। इसकी जानकारी मिल जाती है।

(ii) एक माह के कुल व्यय के पिछले माह के व्यय से तुलना की जा सकती है।

(iii) बजट को संतुलित रखा जा सकता है। तथा बचत की संभावनाएं खोजी जा सकती है।

निष्कर्ष –पारिवारिक बजट निर्माण को और भी अधिक प्रभावी बनाने के लिए उपर की गई विभिन्न विधियों व चरणों तथा प्रक्रियाओं को अपनाकर हम एक आदश्र पारिवारिक बजट का निर्माण कर सकते है। जिसमें परिवार के सदस्यों की सुविधाओं व असुविधाओं को मद्देनजर एक अच्छा संतुलित बजट का निर्माण कर सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पारिवारिक संसाधन प्रबंध – 2009 पृ. 18
2. पारिवारिक संसाधन प्रबंध – 2009 पृ. 94

****

Infrastructure Development and Changes of Betterment: Study of People's opinion of Bhopal City

Geetu Chaudhary *   Dr. Mahipal Singh Yadav **

Abstract - A strong infrastructure set up not only leads to economic growth but also promotes development, creating amenities and providing intangible benefits.The objective of this study is to measure the opinion of people of Bhopal city on infrastructure development bringing about changes of betterment through a sample study of 200 households.
Keywords - Changes of betterment, economic growth, infrastructure development.

Introduction - The benefits of improvement in infrastructure not only create amenities in physical environment but also provide outputs which are valued in their own right. The positive effect of creating infrastructure is reducing costs and increasing the real income and consumption of households, raising their productivity, and giving them free time for higher value activities (Christine Kessides, 1993). (Looney and Frederiksen, 1981; Aschauer 1989; Queiroz and Gautam, 1992; Gramlich, 1994) expressed that infrastructure does contribute towards the growth of output, income and employment of the concerned economy and ultimately to the quality of life of the people. Aschauer (1998) found that public infrastructure underpinned the quality of life as better roads reduced the accidents and improved public safety. The water systems reduced the level of diseases, and waste management improved health and aesthetics of the environment.

(Grundey, 2008; Burinskiene and Rudzkiene, 2009) distinguished the development of infrastructure as one of the most important dimensions in strategic planning to assure sustainable territorial and socio-economic development of a country. De, Prabir (1998) explicitly mentioned that the maintenance and managing of high growth through investment in infrastructure sector was the first priority of the Indian government. The provision of quality and efficient infrastructure services was essential to realize the full potential of the growth impulses that could be surged in the economy by stepping up public investment in infrastructure and by actively encouraging and involving private sector to meet the growing demand.

Development economists (Rosenstein Rodan, 1943; Lewis.1955; A.O. Hirschman, 1958; Myrdal, 1958 and Hansen, 1965) advocated a large comprehensive programme of minimum amount of investment in social and economic overhead capital because of its huge potential for improving the quality of life and its large scale impact on the aggregate economy with the indivisibilities and external economies flowing from it. The investment in social overhead capital permitted and invited directly productive activities to come in as they comprised of such basic services without which primary, secondary and tertiary productive activities could not function.

Aschauer (1989) through his work put across that public expenditure was most productive, and the slowdown of the U.S productivity was related to the decrease in public infrastructure investment. Bristow and Nellthorp (2000) stressed three main impacts of infrastructure with its visible effect on environment; direct impact on welfare by time and cost savings, increasing safety, information network development and economics through employment and economic growth.

Goel (2002) found that an adequate quantity; quality and reliability of infrastructure were important preconditions for overall economic growth. Prakash (2005) emphasized that infrastructure constitutes the wheels of development and plays a key role in the society by representing a broad spectrum of activities and services without which no activity could be undertaken in the economy and AshisNandy (2012) in his perspectives mentioned that the idea of happiness has changed and is now a measurable, autonomous, manageable, psychological variable in the global middle class culture. Human development report (2013) explicitly states that subjective indicators appropriately measured and carefully used can be valuable supplements to objective data to inform policy, particularly at the national level. Fayers and Machin (2000) work underlined quality of life as a multi-dimensional construct where it was impractical to assess all the concepts simultaneously in an instrument. Single-Item questions on these aspects of QOL were likely to be ambiguous and unreliable. Therefore, multi-item measurement scales for each concept could be developed. Baldwin, Godfrey and Propper (1990) in their work accepted quality of life as an ambiguous term. On one hand, it being a quality of an individual's life, reflecting how well his life

*Research Scholar, UTD, RPEG, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor, Institute for Excellence in Higher Education, Bhopal (M.P.) INDIA

was going on and on the other, a broad concept capturing roughly the quality of the living conditions around an individual, where these can be picked out independent of how well the individual's own life goes. These living conditions may encompass the environment and culture in a given society. The empirical evidence in Patra and Acharya (2011) study revealed that acceleration in the field of infrastructure facilities would create more infrastructure facilities at the state level to raise the state domestic product and reduce the level of poverty.

1.1 Objective of Study - To measure the opinion of people of Bhopal city on infrastructure development bringing about changes of betterment

1.2 Research Hypothesis - Opinion of city and outgrowth households differs significantly on Infrastructure development bringing about changes of betterment

1.3 Method - Data:The study uses quantitative approachbased on primary data collected through aself-designed questionnaire.

Sample : A random sample of 200 respondents ('Respondent' being the 'Bread Earner' of the Family) has been drawn from 126 localities of Bhopal city and from the outgrowth parts of the city with 125 respondents from within the city and 75 from outgrowth areas of Bhopal.

Scale: Likert scale was used to measure the opinion of the households with a rating taken on a 4 point scale marking Fully-4; To a Great Extent-3; Somewhat-2; Little Bit-1.

Area was taken on nominal scale; qualification on ordinal; Household size, Monthly Income, and Age were taken on ratio scale.

Procedure : for the primary study,prior to conducting of the main study a pilot survey was undertaken by taking a sample of 85 respondents 60 from city and 25 from outgrowth households. Principal component analysis was performed on the items to measure the adequacy and reliability. The value of KMO came out to be high (Field, 2009) along with a Cronbach Alpha of more than 0.8.

Table : 1 - Reliability Analysis

		Infrastructure development and changes of betterment
KMO Measure of Sampling Adequacy.		.788
Bartlett's Test of Sphericity	Approx. Chi-Square	676.500 df (66) Sig. (.000) Number of Items(12)
Cronbach's Alpha		.884

1.4 Descriptive& Inferential Analysis - (Agenor and Dodson, 2006through their study established that infrastructure services were crucial for health and education quality and availability as it affected welfare. (Snieska and Draksaite, 2007; Martinkus and Lukasevicius, 2008identified that economic competitiveness of a country was determined by a set of different factors, and indicators of infrastructure were one of them. Infrastructure services and physical infrastructure were factors that influenced investment environment on the local level and increased its attractiveness.

To measure the opinion of the city and out growth households on infrastructure development bringing changes of betterment in Bhopal, a descriptive and inferential analysis was done by taking a response of 125 city households and 75 outgrowth households on twelve variables using four point likert scale marking Fully-4; To a Great Extent-3; Somewhat-2; Little Bit-1.

Q: Do you think Infrastructure development will bring following changes of betterment?

Table : 2 - Variables measuring Changes of Betterment

Variables	Variables
Income Earning	Reduce drop-out
Open up new areas of earning income	Reduce crime rate
Create Employment opportunities	Lead to Career Advancement
More participation of people	Reduce time of commuting
More enrollment in schools	Better health care
More enrollment of girls to school	Better Integration

Table : 3 (See in last page)

The descriptive analysis of the data presented in Table 4 showed a high mean score for better health care and better Integration for city and outgrowth households. A low mean score was noticed for reduction in crime rate and dropout rate for city households and opening up of new areas of earning income and reduction in crime rate for the outgrowth households.

Table : 4 - Descriptive Statistics of Households

Variable	City Households		Out Growth Households	
	Mean	Std. D	Mean	Std. D
Income Earning	3.02	.874	3.15	.671
Open up new areas of earning income	3.05	.905	2.87	.859
Create Employment opportunities	3.14	.810	2.99	.687
More participation of people	3.11	.644	3.31	.544
More enrolment in schools	3.20	.630	3.28	.534
More enrolment of girls to school	3.23	.633	3.17	.601
Reduce drop-out	2.85	.877	3.18	.600
Reduce crime rate	2.82	1.01	2.93	.741
Lead to Career Advancement	2.99	.808	3.16	.735
Reduce time of commuting	3.23	.742	3.44	.499
Better health care	3.34	.673	3.48	.502
Better Integration	3.27	.766	3.52	.502

1.4.1 for Households - The correlational matrix of city and outgrowthhouseholds taken together showed a significant and high correlation of .802 between employment

opportunities and opening up of new areas of earning income; of .797 between more enrolment in schools and more enrolment of girls in school; of .711 between more enrolment of girls to school and reduction in drop out and a significant relation between health care and better integration of .842 was noticed. But as depicted from Table 5a low degree of significant relationship of .015 between income earning and leading to career advancement; of 0.16 between income earning and reduction in crime and of 0.169 between opening up of new areas of earning income and reduction in crime was read from the calculations. Thus, the correlational values for creating employment opportunities and opening up new areas; more enrolment in schools and of girls to schools and better health and integration were found to be high and significant for both city and outgrowth households.

Table: 5 (see in last page)

1.4.2 for City and Outgrowth Households - The correlational analysis shown in the correlation matrix Table 6for the city households revealed a significant and positive relationship of 0.771 between opening up of new areas of earning income and employment opportunities getting created; more participation of people and more enrolments in schools with a significant value of 0.702; of .779 between more enrolment in schools and more enrolment of girls in school and a positive and significant relation between health care and better integration of .818.

Whereas, the correlation matrix (Table 7) of outgrowth households showed a significant correlational value of .851 between Income earning and opening up of new areas; of .866 between opening up of new areas and employment opportunities getting created; of .857 between more enrolment in schools and more enrolment of girls in school; of .886 between more enrolment of girls to school and reduction in drop out; of .748 between more enrolment in schools and reduction in drop out; of 0.761between reduce time of commuting and health care and a significant relation of .923 between health care and better integration.

A low and significant correlation value for the city households was noticed between opening up of new areas of earning income, creation of employment opportunities and income earnings, whereas, it was high and significant for the outgrowth households. It was also found that the correlation value was high and significant for outgrowth households for more enrollments in schools, more enrollments of girls in schools and reduced dropouts than for city households.

Table : 6 (see in last page)

Table: 7 (see in last page)

To assess whether infrastructure development brought about changes of betterment the significance of difference in the opinion of city and outgrowth households was measured by the use of t test.

Opinion of city households and outgrowth households differs significantly on Infrastructure development bringing about changes of betterment

Table : 8 - t-test result of Infrastructure bringing betterment

Descriptive Statistics

Area	N	Mean	Std. D	Std. Error Mean
Out growth Households	75	38.35	4.74	.54772
City Households	125	36.70	7.37	.65923

Independent Samples Test

	Levene's Test for Equality of Variances		t-test for Equality of Means		
	F	Sig.	t	df	Sig. (2-tailed)
Equal variances assumed	2.094	.149	1.727	198	.086
Equal variances not assumed			1.917	196.989	.057

the t- test value in table 18indicates no significant difference of .057 for two-tail (t= 1.91, df[196.98], p> .05). Opinion of city households and outgrowth households did not differ significantly on infrastructure development bringing changes of betterment.

Conclusion - Infrastructure is one of the instruments to improve development of a region and infrastructure policy is a conditional policy for regional development to create necessary conditions for achievement of regional development goals (Nijkamp, 1986). Jean Dreze and AmartyaSen (2013) in their work on 'Uncertain Glory- India and its Contradictions' mention the failure of generated public revenues from economic growth getting used in a determined and planned way to expand social and physical infrastructure, thereby, limiting the societal reach to economic progress.

A survey carried out by a private agency at the behest of MP State Planning Commission paints an extremely sorry picture of the government run schools in the state with 86 per cent schools having no water supply in toilets, 14 per cent with no toilets at all, 14 per cent schools having no drinking water and 80 per cent schools having no regular power supply and Madhya Pradesh Human Development Report (2007) puts basic road connectivity to a school and minimum facilities like separate toilets for boys and girls in school buildings as the crucial determinants for the enrolment and attendance of girl children.

Pasha and Hasan (1996) in their paper stated social sector variables (education, health, knowledge) to be critical for long sustainable growth to generate positive externalities. Samli (2011) the social structure make the populace somewhat happier by making them feel free in relation to their movement, choices for living, for shopping, and for conducting business. An access to shopping, entertainment, health care, work, sports, culture and education and to transportation are the key consumer accesses. An industrial development that concentrates on highly value added output of goods and services, highly skilled work force, and higher income for citizens without a

proper infrastructure cannot materialize. Therefore, the quality of life must be considered first and foremost with its enhancement a part of the action plan. The UN Global Survey of 2013 lists i) Good education, ii) Better job opportunities, iii) Better health care, iv) Clean water & sanitation, and v) Affordable, nutritious food as the top five priorities for the Indians.

The initiatives taken by Madhya Pradesh government in the past years for improving the quality of education and health services has been with the objective of providing better quality of life to people at large. The speedy development, transformational progress and good governance require an improvement in infrastructure and strengthening of the delivery of public services with a realization that inclusive policies and programmes at the local governance makes a difference at the macro level.

References :-

1. Agenor, P. R., & Moreno-Dodson, B. (2006). "Public infrastructure and growth: new channels and policy implications". The World Bank Policy Research Working Paper 4064.
2. Aschauer, D.A. (1989). "Is public expenditure productive?".Journal of Monetary Economics. 23, 177-200.
3. Aschauer, D.A. (1998). "Public capital and economic growth: issues of quantity, finance and efficiency". Working Paper No. 233.
4. Baldwin, S., Godfrey, C., and Propper, C (1994). "Quality of life perspectives and policies". Routledge, New York. ISBN: 0-203-42292-9 Master e-book ISBN.
5. Bristow, A. L., &Nellthorp, J. (2000). "Transport project appraisal in the European Union". Journal of the World Conference on Transport Research Society (1).
6. Burinskiene, M., &Rudzkiene, V. (2009). "Future insights, scenarios and expert method application in sustainable territorial planning". Technological and Economic Development of Economy (1).
7. Dreze, Jean &Sen, Amartya (2013). "An uncertain glory-India and its contradictions". Penguin Books India Pvt Ltd. New Delhi.
8. Fayers, Peter M &Machin, D. (2000). "Quality of life: assessment, analysis and interpretation". John Wiley & Sons, Ltd, U.K. ISBN: 0-470-84628-3(Electronic).
9. Ghosh, Buddhadeb, & De, Prabir (1998). "Role of infrastructure in regional development: A study over the plan period". Economic and Political Weekly. Vol. 33, No. 47/48, pp.3039-3048.
10. Goel, D. (2002). "Impact of infrastructure on productivity: Case of Indian registered manufacturing". Working Paper No. 106, Centre for Development Economics, Delhi School of Economics. New Delhi.
11. Gramlich, E.M., (1994). "Infrastructure investment: A review essay". Journal of Economic Literature, Vol 32, No 3.
12. Grundey, D. (2008). "Managing sustainable tourism in Lithuania: Dream or reality?".Technological and Economic Development of Economy, 14(2), 118-129.
13. Hansen, N. M. (1965). "Unbalanced growth and regional development". Western Economic Journal 4.
14. Hirschman, A. O. (1958). "The strategy of economic development". New Haven: Yale University Press.
15. Kessides, Christine (1993). "The Contributions of Infrastructure to Economic Development: A Review of Experience and Policy Implications". World Bank Discussion Papers; 213 as viewed on 09/11/15 ISBN 0"8213"2628"7.
16. Lewis, W. Arthur (1955). "The Theory of Economic Growth". Allen Unwin, London.
17. Looney.R and P. Frederickson (1981). "The Regional Impact of Infrastructure Investment in Mexico". Regional Studies, Vol 15, No 4.
18. Martinkus, B., &Lukasevicius, K. (2008). "Investment environment of Lithuanian resorts: Researching national and local factors in the Palanga case". Transformations in Business & Economics, 7(2), 67-83.
19. Myrdal, G. (1958). "Economic theory and underdeveloped regions". Bombay: Vora& Co.
20. Nandy, Ashis.(2012). "The Idea of Happiness". Economic and Political weekly, Vol XLVII No 2, pp.45- 48.
21. Nijkamp,P.(1986). "Infrastructure and Regional development: A multidimensional policy analysis", Empirical Economics (1), 1-21.
22. Pasha, A., Hafiz.,Hasan, A., Ghaus, Aisha &Rashad, A. (1996). "Integrated social sector macro econometric model for Pakistan". The Pakistan Development Review 35: 4 part II pp.567-579.
23. Patra, Aditya Kumar &Acharya, A. (2011). "Regional disparity, infrastructure development and economic growth: An inter-state analysis". Research and Practice in Social Sciences Vol. 6, No. 2 (February 2011) pp. 17-30.
24. Prakash, H. (2005). "Urban infrastructure- A glimpse". Southern Economist, Vol. 44, 26-30.
25. Querioz, C and S, Gautama. (1992). "Road infrastructure and economic development: Some diagnostics indicators". Policy Research Working Paper 921, World Bank.
26. Rosenstein-Rodan, Paul.N. (1943). "Problems of Industrialisation of Eastern and South Eastern Europe". Economic Journal 53 (June), pp. 202-211.
27. Samli, A. Coskun (2011). "Infrastructuring: The key to achieving economic growth, productivity, and quality of life". Springer, New York. DOI 10.1007/978-1-4419-7521-8.
28. Snieska, V., &Draksaite, A. (2007). "The role of knowledge process outsourcing in creating national competitiveness in global economy". Inzinerine Ekonomimka-Engineering Economics (3), 35-41.

Table : 3 - Demographic Profile of City and Outgrowth Households

Feature	Age				Age			
	City Households				Outgrowth Households			
	20-30	31-41	42-52	53-63	20-30	31-41	42-52	53-63
Qualification								
5th Pass & Less Than	-	6	6	-	8	20	15	3
6-9 Pass	3	-	3	-	6	-	3	-
10 & Above	6	19	57	25	15	3	2	-
Household Size								
5 Members & Less	6	17	50	22	20	15	6	-
More Than 5 Members	3	8	16	3	9	8	14	3
Monthly Income (In Rs)								
10,000 & Less	6	11	4	-	23	23	17	3
More than 10,000 & less than 21,000	3	3	9	-	3	-	-	-
More than 21,000& less than 31,000	-	3	2	-	3	-	-	-
More than 31,000& less than 41,000	-	6	15	6	-	-	-	-
More than 41,000& less than 51,000	-	-	5	3	-	-	3	-
More Than 51,000 & Above	-	2	31	16	-	-	-	-

- **Sample of 200 Households(125 City & 75 Outgrowth Households)**

Table: 5 - Correlation Matrix of Households

Variable	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
Income Earning (1)	1											
Open up new areas of earning income (2)	.660**	1										
Create Employment opportunities (3)	.507**	.802**	1									
More participation of people (4)	.435**	.510**	.507**	1								
More enrolment in schools (5)	.341**	.308**	.239**	.653**	1							
More enrolment of girls to school (6)	.330**	.369**	.319**	.532**	.797**	1						
Reduce drop out (7)	.284**	.361**	.398**	.551**	.655**	.711**	1					
Reduce crime rate (8)	.161*	.169*	.401**	.302**	.375**	.445**	.593**	1				
Lead to Career Advancement (9)	.151*	.193**	.339**	.380**	.403**	.286**	.483**	.483**	1			
Reduce time of commuting (10)	.091	-.032	.085	.319**	.440**	.353**	.392**	.380**	.619**	1		
Better health care (11)	.238**	.261**	.289**	.396**	.354**	.428**	.429**	.468**	.421**	.604**	1	
Better Integration (12)	.217**	.282**	.330**	.348**	.289**	.355**	.365**	.421**	.370**	.518**	.842**	1

**. Correlation is significant at the 0.01 level (2-tailed).*. Correlation is significant at the 0.05 level (2-tailed).

Table : 6- Correlation Matrix of City Households

Variable	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
Income Earning (1)	1											
Open up new areas of earning income (2)	.598**	1										
Create Employment opportunities (3)	.460**	.771**	1									
More participation of people (4)	.362**	.562**	.500**	1								
More enrolment in schools (5)	.428**	.433**	.257**	.702**	1							
More enrolment of girls to school (6)	.421**	.539**	.370**	.592**	.779**	1						
Reduce dropout (7)	.297**	.505**	.483**	.613**	.635**	.686**	1					
Reduce crime rate (8)	.288**	.310**	.505**	.431**	.459**	.527**	.644**	1				
Lead to Career Advancement (9)	.263**	.299**	.335**	.409**	.446**	.335**	.545**	.434**	1			
Reduce time of commuting (10)	.129	.031	.092	.323**	.384**	.247**	.289**	.335**	.676**	1		
Better health care (11)	.301**	.409**	.322**	.402**	.276**	.343**	.346**	.446**	.405**	.549**	1	
Better Integration (12)	.267**	.434**	.391**	.353**	.212*	.275**	.270**	.417**	.304**	.456**	.818**	1

**. Correlation is significant at the 0.01 level (2-tailed).*. Correlation is significant at the 0.05 level (2-tailed).

Table: 7Correlation Matrix of Out Growth Households

Variable	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
Income Earning (1)	1											
Open up new areas of earning income (2)	.854**	1										
Create Employment opportunities (3)	.677**	.866**	1									
More participation of people (4)	.614**	.493**	.625**	1								
More enrolment in schools (5)	.110	.082	.231*	.537**	1							
More enrolment of girls to school (6)	.137	.045	.202	.455**	.857**	1						
Reduce dropout (7)	.235*	.126	.301**	.347**	.748**	.886**	1					
Reduce crime rate (8)	-.224	-.141	.157	-.049	.150	.269*	.453**	1				
Lead to Career Advancement (9)	-.130	.034	.405**	.281*	.297**	.211	.317**	.614**	1			
Reduce time of commuting (10)	-.074	-.145	.135	.242*	.595**	.687**	.678**	.518**	.467**	1		
Better health care (11)	.029	-.038	.253*	.343**	.549**	.660**	.649**	.522**	.447**	.761**	1	
Better Integration (12)	.011	-.025	.255*	.298**	.507**	.636**	.625**	.420**	.539**	.690**	.923**	1

**. Correlation is significant at the 0.01 level (2-tailed).*. Correlation is significant at the 0.05 level (2-tailed).

Swami Vivekananda's Concept of Human Nature

Akhilesh Mani Tripathi *

Abstract - The composition of a moral civic society postulates moral men as its components. Swami Vivekananda propounds that this moral goodness of man is not the outcome of man's rational capability, but it is existent in the spiritual nature of man which ensures that they can go beyond the limits of animal soul characterized with 'me' and 'mine'. The 'self –abnegation', which is the supreme standard of morality, is the possession of spiritual man alone. This spiritual man, who has become the 'spirit beyond' by transcending the limits of time, space and causation, is the Real man- the source and basis of morality. This Real man is the 'Individual' because there is no individuality except in the 'Infinite'. The basic concept of 'individual', conceived in the Western thought of both Liberal and Marxist traditions is in fact the idea of 'Apparent Man' who does not believe in his existence beyond body and mind and, thus , fails to overcome his selfishness. Composition of a moral political society depends on transformation of Apparent Man into the Real Man.
Key Words - Real Man, Apparent Man, Self Abnegation, Spiritual self, Individuality, Infinite, Pure Self, philosopher King, General Will, Real Will, Actual Will ,Reason, Soul.

Introduction - Like all those political philosophers who have evolved their political philosophy by founding it on the discussion of human nature, swami Vivekananda has also depicted his concept of human nature as the basis of his political philosophy. Tradition of the discussion about the human nature goes back to the Greek political philosophers Plato and Aristotle who described the necessity and relevance of the political society in the light of the discussion of human nature. Plato said, 'State is individual writ large'. Aristotle sought to find a moral political society out of the moral man by distinction of being his rational creature. Machiavellie explained the typology of governments in the light of citizen's character, and the Social Contract thinkers reached the conclusion to support a particular type of political society on the basis of their analysis of human nature. The conclusion of their ideational travelogue resulted in their unanimous consent that human nature and political society is interconnected and aspirations for a moral political society postulates the existence of moral man. Swami Vivekananda had assured that achievement of this moral political society is not a myth, but a real idea, provided that human beings composing the society have realized their real existence – the spiritual nature – which alone makes them moral in true sense, while the Western thinkers trace man's morality in his rational character.

Exposition - Aristotle proved the supremacy of human beings, on account of their rational nature. He held that man is the best of all creatures, because he is a moral being, and this morality is present in man because he is by nature a rational being[1]. Aristotle proved the goodness of human beings in the light of their rational character. Vivekananda goes a step ahead. He proves the goodness of man on the basis of his spiritual nature.

Moral man is a spiritual man - Each and every individual, notwithstanding their distinction of sex, caste, religion, race, and origin, is essentially good, because he is by nature a spiritual being, according to Vivekananda. He said, "Each soul is potentially divine"[2]. And with the manifestation of this potential divinity or spirituality, human beings become capable to exalt their character of morality. Until this spirituality in man gets manifested, he cannot attain a personality completely free from animality, i.e., the bruteness and beastness[3]. Therefore, according to Vivekananda, it is the manifestation of spirituality which ensures morality in practical life of human beings. The self-abnegation, which is the standard of morality, is reflected only when man has realized his 'spiritual self'. Vivekananda states, "when man has no more self in him, no possession, nothing to call "me" or "mine", has given up entirely, destroyed himself as it were in that man is God Himself, for in him self – will is gone, crushed out, annihilated.That is the ideal man"[4].

Aristotle based the morality of man on his rationality; Rousseau proved it through the concept of 'General Will' of human beings;[5] and Vivekananda traced its source in the spiritual nature of man. While Rousseau proved the natural goodness of man in the light of his distinction between Actual Will and the 'Real Will',[6] Vivekananda expounded his conception of Ideal Man or good man in the light of his distinction between the 'Apparent Man' and the 'Real Man'.

Real Man and apparent Man - If we take Plato as an

*Assistant Professor (Political Science) Government Autonomous P.G. College, Satna (M.P.) INDIA

exception, in the entire history of the Western political thought the explanation of human nature is confined to the concept of body and mind alone. In the Western political thought, man has been taken as a creature possessed with body and mind alone. This is what, in the Western thought, is conceived as the idea of an individual or real man. But according to Vivekananda, "The body is not the Real Man, neither is the mind, for the mind waxes and wanes" [7]. To Vivekananda, The Real Man is the "Spirit beyond", the spirit "not bound by time and space" [8]. "This is the reality in our souls"[9]. Vivekananda propounds that what the Western thought conceives of a real man or so-called individual is in fact the idea of `Apparent Man', who is "limited by time, space and causation' [10]. Since "there is no individuality except in the Infinite", according to Vivekananda, the Western political thought provides a wrong conception of its real man or individual. The real individuality does not lie in maintaining an independent body and mind, as the Western political thinking upholds, but in transcending them, he argues. He states, "We are not individuals as yet. We are struggling towards individuality and that is the Infinite, that is the real nature of man" [11]. The apparent man, who is the individual of the West, "is merely a struggle to express, to manifest this individuality which is beyond."[12] He propounds that when this apparent man has realized his "Real Man", the Individual or the Spirit, then and then alone he becomes a true moral man. "Even he lives in the body and works incessantly, he works only to do good", says Vivekananda[13]. With the realization of his own Infinite Spirit alone man learns the secret of true love, which is the basis of morality. "Then alone a man loves when he finds that the object of his love is not a clod of earth, but it is the veritable God Himself"[14]. "That man will love his greatest enemy who knows that very enemy is God Himself"[15] .Thus, Vivekananda propounded that the real morality, the infallible goodness, is not the product of reason, as Aristotle thought, nor is it the product of the `General Will, as Roussean upheld, but is the expression of the Pure or Infinite spirit, which is called `soul' in human beings. Reason cannot be the basis of morality, because reason is the product of mind which itself waxes and wanes. In the same way, `free will', what Roussean called as General Will, is `misnomer'. "Will can never be free", because "it is only when the real man has become bound that his will comes into existence, and not before" .[16]

In the Western political theory, human being has been presented exclusively as either good or bad. Thinkers like Aristotle and John Locke present man as exclusively moral being[17]. On the other hand, thinkers like Machiavellie and Hobbes hold man as exclusively selfish and immoral by nature[18]. To each party, man by nature is either moral or immoral.

Spirituality and its manifestation - According to Vivekananda, it is wrong to hold human beings exclusively good or bad. To him, "evil and good are both conditioned manifestations of soul"[19].To him, "evil is the most external coating, and good is the nearer coating of the real man, the Self. And unless a man cuts through the layers of evil he cannot reach the layer of good, and unless he has passed through both the layers of good and evil he cannot reach the Self" [20]. So long man lives in the relative world of good and evil, he cannot have the knowledge of pure morality. According to Vivekananda, the man gets his identification with the true Idea of goodness or morality with the recognition or realization of his 'Pure Self' who is the 'Real Man'. Thus Vivekananda argues that no one by birth or nature is good or bad; and each one is potentially moral, because of one's potential divinity by nature. This potential morality is the matter of manifestation in degrees[21]. One who manifests his divinity or spirituality in low degree is called as bad man, and one who manifests his divinity in higher degree is called as good man. But the supreme morality or goodness is manifested only when man is manifesting his complete divinity after realizing his `spirit' or Pure Self. Perhaps it is this proposition of the moral nature of man, which has found expression in the Platonic idea of the `Philosopher King'.[22]

Conclusion - Swami Vivekananda has propounded that 'spirituality is the true nature of man, and the highest morality lies in the `spirituality' realized by man. He asserts that it is this morality, realized in spiritual man, which is the basis of social morality. He says, "the basis of all systems social, political, rests upon the goodness of man" [23]. Society does not transform an evil man into a good man, rather the good men transform evil society into a good society. Goodness of the inhabitants determine the goodness of the social or political system. He states, "No nation is good or great because parliament enacts this or that but because its men are great and good" [24].

References :-

1. See, Barker, Ernest, The Political Thought of Plato and Aristotle, Dover Publications, New York, 1959, p. 266.
2. Vivekananda,Swami, The Complete Works, Vol-01, Advaita Ashram, Calcutta, 1999, p.258.
3. Vivekananda Said, "The human form is the highest and man the greatest being because here and now we can get rid of the relative world entirely, can actually attain freedom, and this is the goal". See, Vivekananda, Swami, The Complete Works, Vol.07, Advaita Ashrama, Calcutta, 1999, p.79.
4. Vivekananda, Swami, The Complete Works, Vol.IV, Advaita Ashrama, Calcutta, 1966, p.150.
5. See, Wayper, C.L., Political Thought, Teach yourself books, London, 1971, p. 144.
6. Ibid, p. 144.
7. Vivekananda, Swami, The Complete Works, Vol.02, Advaita Ashrama, Calcutta, 1999, p. 79.
8. Ibid, p. 78.
9. Ibid, p. 78.
10. Ibid, p.78.
11. Ibid, p.80.
12. Ibid, p.81.

13. Ibid, p.284.
14. Ibid, p.286.
15. Ibid, p.286.
16. Ibid, p.283.
17. Aristotle propounded that man is by nature a moral being because he is by nature a rational animal. Locke propounded that man, by nature, is peace loving, possessed with goodwill and mutual assistance owing to his faculty of reason.
18. According to Machiavelli, men are "ungrateful, fickle, and deceitful, eager to avoid dangers and avid for gain". Likewise, Hobbes described men as "solitary, poor, nasty, brutish and short".
19. Vivekananda, Swami, op. cit. 22, p.283.
20. Ibid, p.284.
21. See, Vivekananda ,Swami,op.cit.22,pp.263-388.
22. According to Plato, Philosopher King is the man who has raised "the eye of the soul to the universal light, which lightens all the things"; See, Bluhm, W.T. , Theories of the political system ,Prentice Hall of India ,New Delhi ,1981 ,p.46.
23. See, Dasgupta, Santwana, Social philosophy of Swami Vivekananda, The Ramakrishna Mission Institute of Culture, Kolkata, 2009, p 192.
24. Ibid, p. 192.

****

Infrastructure Status of Madhya Pradesh and in Particular Bhopal City

Geetu Chaudhary * Dr. Mahipal Singh Yadav **

Abstract - The socio-economic variables are always taken as indicators of economic development all over the world. Therefore, a study of socio economic conditions of the state of Madhya Pradesh helps to understand the infrastructure level by examining the condition of human development indicators at the state level and in particular Bhopal city.The study looks at the human development indicators and the ranking of the districts on it and further constructs an infrastructure index by taking few relevant variables from Indian Census survey of 2011.
Keywords - Human development,infrastructure index, principal component analysis, Census 2011.

Introduction - The socio-economic variables are always taken as indicators of economic development all over the world. Rao (1980) study explicitly points out the global acceptance of infrastructure as an indicator of economic development by developing physical, social and economic activities. The development economists (Lewis, 1955[4115]; Hirschman, 1958[12316]; Rodan, 1943[3690]) identified education, health, and technology as variables of infrastructure playing a positive role in economic development with a straight effect on the production process and a direct and indirect impact on the productivity of labour and capital. Bhalla (1964)[1] put in his study of how infrastructure facilitates production both as an input and service consisting of both economic and social overheads in terms of power, banking, insurance, transport, communication, science and technology, education, health, welfare etc. and how this dualistic working process contributed significantly to amenities, enhancing the quality of life.

TK Oommen(2009)[10] in his research discusses the imperativeness of registering a high human development index, maximum human freedom index and minimum human distress profile to sustain a claim for a high quality of life. StasysPuskorius (2014) put forward that major dimensions could be determined to define the integral quality of life index and its calculation. Hagerty et al. (2001) [671] in his study proposed 14 criteria to measure quality of life indices and listed the essentials and the purpose to be served in the construct evaluating their validity and usefulness.

Stiglitz, J. E., Chair, Sen A., Fitoussi (2009)[3655] in their working paper on the measurement of economic performance and social progress discusshealth, education and other dimensions that shape the lives of people that need to be considered together.

Mishra, Narendra and Kar (2013)[2] study shows that a Principal Component Analysis (PCA) of infrastructure in seven broad sectors, namely, road construction, railways, electricity, gas and water supply, communications, irrigation, storage, and ports not only to be complementary in nature and mutually reinforcing but also having a huge impact on national and local development.

Rashida and Uzma, (2012)[17] in their survey based study ranked human wellbeing for hundred districts of Pakistan using objective as well as subjective indicators of quality and showed how human wellbeing indices can shed light on a society's quality of life.

1.1 Objective of Study - To understand infrastructure development at state level and in particular for Bhopal

1.2 Method - Data:The study uses quantitative approachbased on secondary data to examine the status of infrastructure in Madhya Pradesh and for Bhopal. Indian census report of 2011[37] has been used for secondary data.

Tools & Techniques:Index constructed using Principal Component Analysis (PCA with an understanding of the concept from the 'Handbook on Constructing Composite Indicators- Methodology and User guide' (OECD, 2008)[83]. The data on some physical and social variables has been taken from Census 2011 of India for making the infrastructure index.

1.3 Formation of the State and its Administrative Division - The state of Madhya Pradesh formed on 1 November 1956 was bifurcated in 2000 as per the Madhya Pradesh Reorganisation Act, 2000 to form Chhatisgarh state. Thus, the present state of Madhya Pradesh came into existence on 1 November 2000 with 45 districts and five more districts namely, Alirajpur, Singrauli, Ashoknagar, Burhanpur, Agar Malwa(created on 16 August 2013)and Anuppur getting added, raising the number of districts in

*Research Scholar, UTD, RPEG, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor, Institute for Excellence in Higher Education, Bhopal (M.P.) INDIA

the state to 51. The census 2011 puts the state population at 725.98 lakh as compared to 603.48 lakhs of 2001 with a 20.3 double digit percentile decadal growth. The state population is about 6 per cent of the country's total population. The state has an urban population of 200.60 lakhs and the rural population is 525.38 lakhs. The ratio of rural urban population is 72.37 per cent. The sex ratio for the state is 930, low as compared to 940 at the national level.

The state population has grown 1.87 percent per annum during 2001-11 as against 1.64 percent per annum of nation. The demographic scenario in the state is still being characterized by a very high birth and death rates. The Infant Mortality Rate at 62 is significantly higher than the all India average of 47 in 2010 and is highest in the country.

The literacy rate in the state, as per 2011 census, is 70.6 per cent as against 74.0 per cent at the National level. The literacy rate among female and male is 60.0 per cent and 80.5 per cent respectively and is lower than literacy rates of 65.5 per cent among female and 82.1 per cent among male at all India level. The literacy rate in rural and urban area of the state stands at 57.8 per cent and 79.4 per cent against 58.7 per cent and 79.9 per cent respectively at the national level.

The estimation of poverty by Government of India for 2009-10, based on 66th Round NSS (2009-10) reveals that All India HCR (Head count Ratio) has declined by 7.3 percentage points from 37.2 per cent in 2004-05 to 29.8 per cent in 2009-10, with rural poverty declining by 8.0 percentage points from 41.8 per cent to 33.8 per cent and urban poverty by 4.8 percentage points from 25.7 to 20.9 per cent, whereas, overall poverty has declined by more than double digit during the period of 2004-05 to 2009-10 in Madhya Pradesh.

1.3.1 Human Development in Madhya Pradesh - The government of Madhya Pradesh presented its first report on human development indicators in 1995. Since then human development report has been presented for 1998, 2002 and 2007 giving a district fact sheet covering physical, social and economic dimensions of infrastructure facilities and the HDI for the districts based on adjusted per capita income, education and health. A positive relationship was stated by Madhya Pradesh human development report of 2007 between infrastructure and economic growth in its briefly examined interrelationship between infrastructure and human development in chapter 'Infrastructure and Human Development in Madhya Pradesh'. The present study took Human Development Report 2005 for analysis and Table 1 presenting HDI for all districts of Madhya Pradesh shows Bhopal at second position to Indore.

Table: 1

District	HDI	Ranking
Indore	0.71	1
Bhopal	0.68	2
Harda	0.652	3
Gwalior	0.638	4
Dewas	0.627	5
Ujjain	0.626	6
Raisen	0.621	7
Narsimhapur	0.619	8
Neemuch	0.606	9
Shajapur	0.605	10
Bhind	0.603	11
Seoni, Dhar	0.596	12
Hoshangabad	0.595	13
Jabalpur, Ratlam, Sidhi	0.589	14
Mandla	0.587	15
Chhindwara	0.578	16
Mandsaur	0.575	17
Damoh	0.571	18
Sehore	0.567	19
Dindori	0.565	20
Shahdol	0.564	21
Sagar	0.563	22
Katni	0.554	23
Vidisha	0.553	24
Datia	0.55	25
Balaghat	0.544	26
Guna	0.539	27
Betul	0.537	28
Rewa	0.526	29
West Nimar	0.525	30
Morena	0.523	31
East Nimar	0.519	32
Satna	0.516	33
Rajgarh	0.511	34
Sheopur	0.506	35
Umaria	0.501	36
Shivpuri	0.49	37
Panna	0.479	38
Tikamgarh	0.459	39
Chhatarpur	0.451	40
Barwani	0.426	41
Jhabua	0.398	42

Human Development Index for Madhya Pradesh, 2005
Source: M.P. Human Development Report, 2007

1.3.2Human Development in Bhopal - Bhopal the city of lakes and home to rich culture and tradition, demographically, supports a population of 1,798,218, with 936,168 males and 862,050 females in the area under Bhopal municipal corporation and for the urban agglomeration(Bhopal metropolitan area)extending beyond Bhopal city a population of 1,886,100 (Census, 2011). The total effective literacy rate (for population aged 7+ years) is 85.24%, with male and female literacy respectively at 89.2% and 80.1%

The status of higher education for the city can be gauged through the census data of 2011(Table 2) showing the percentage of main workers in Bhopal to total main workers in Madhya Pradesh just half of the state and the percentage of graduate and above other than technical degree higher in relation to the percentage of 5.35 for the

state. Similarly, the technical degree or diploma equal to degree to post graduate degree for Bhopal was higher to the state or national level with state at 2.94 per cent to All India level. The percentage of main workers to total main workers with respect to qualification was miniscule for rural with percentage of graduates and technical degree holders in urban being 9 times more to rural in the city.

Table : 2 - Employment and Education Profile of Bhopal in relation to State and All India

Parameter	Total Percent	Rural Percent	Urban Percent
Main Workers in Madhya Pradesh to total Main Workers at All India Level	6.26	6.80	5.12
Main Workers in Bhopal to total Main Workers in Madhya Pradesh	3.11	0.78	9.64
Graduate and above other than technical degree in Madhya Pradesh to total Graduate and above other than technical degree at All India Level	5.35	4.67	5.69
Graduate and above other than technical degree in Bhopal to total Graduate and above other than technical degree in Madhya Pradesh	8.49	1.22	11.55
Technical degree or diploma equal to degree or post-graduate degree in Madhya Pradesh to total Technical degree or diploma equal to degree or post-graduate degree at All India Level Technical degree or diploma equal to degree or post-graduate degree in Bhopal to total	2.94	1.86	3.32
Technical degree or diploma equal to degree or post-graduate degree in Madhya Pradesh	15.19	1.94	17.77

- **Percentage based on census data**
- **Source: Census 2011 http://www.censusindia.gov.in/**

1.3.3 Rural-Urban Youth Population - The analysis of higher secondary/senior secondary status for the city showed 93.17 percent urban and 6.83 percent of rural population in the age group of 20-24.The percentage of graduate and above was less than five percent for rural youth and ninety five per cent for urban.

Table : 3 - Rural and Urban Population of Bhopal in the Age Group of 20-24

Particulars	Rural population	Urban population
As per cent to City Population	16.56	83.44
As per cent in Higher/Senior Secondary	6.83	93.17
As per cent of Graduate & Above	4.24	95.76

- **Percentage based on census data**
- **Source: Census 2011 http://www.censusindia.gov.in/**

1.3.3.1Technical and Non-Technical Higher Education of Bhopal - The study also looked into the technical and non-technical higher education level of the youths belonging to the age group of 20-24 and found that the percentage of technical and non-technical graduates in rural areas was very poor being 7.56 per cent in non-technical and 1.85 per cent in technical, whereas, for the urban youths animpressive per cent of more than ninety was seen.

Table : 4 - Technical and Non-Technical Education of Bhopal for Age-Group of 20-24

	Percentage of Graduate & Above Other Than Technical Degree to Main Workers	Percentage of Technical Degree or P.G. or Diploma equal to Degree to Main Workers
Rural	7.56	1.85
Urban	92.44	98.15
Combined	100	100

- **Percentage based on census data**
- **Source: Census 2011 http://www.censusindia.gov.in/**

1.4 Infrastructure Development at District Level - An attempt has been made in this study to construct an Infrastructure Development Index for the districts of Madhya Pradesh. Since human development is a composite statistic, it was thought useful to calculate and find whether districts secured the same ranking on the infrastructure index or differed. Principal Composite Analysis (PCA) used to construct infrastructure index of identified physical and social variables was taken from census data of 2011 which included percentage of households having drinking water within the premises; using tap water from treated sources; having latrine facility; having closed drainage; using electricity as main source of lighting; having telephone connection; owning mobile; owning two wheeler; owning four wheeler; availing banking service, having bathing facility within the premises and concrete roof. The study found that the ranking of first four districts in Infrastructure Index was same as Human Development Index (Table 5) but more than fifty percent of districts of Madhya Pradesh showed a negative factor scores which indicated a poor level of

infrastructure in the districts concentrated in Damoh and Chhindwara Plateau, Rewa Plateau, Betul Plateau and in Vindhya Range.

Table: 5 - Ranking the Districts on the Basis of PCA Estimation

District	Factor Scores	Ranking
Indore	9.90813	1
Bhopal	6.25899	2
Harda	5.60571	3
Gwalior	4.79377	4
Hoshangabad	4.54804	5
Ujjain	3.81837	6
Sehore	2.86762	7
Dewas	2.80892	8
Mandsaur	2.79628	9
Khargone	2.54733	10
Neemuch	2.44335	11
Ratlam	2.40712	12
Dhar	2.35906	13
Jabalpur	2.11465	14
Khandwa	0.96443	15
Raisen	0.71181	16
Vidisha	0.56441	17
Datia	0.45778	18
Jhabua	0.43833	19
Shajapur	0.25965	20
Betul	0.16394	21
Morena	0.08876	22
Alirajpur	-0.13171	23
Guna	-0.1792	24
Narsimhapur	-0.38777	25
Bhind	-0.73935	26
Sagar	-0.99732	27
Katni	-1.04055	28
Satna	-1.12716	29
Barwani	-1.22649	30
Singrauli	-1.24298	31
Burhanpur	-1.25996	32
Rajgarh	-1.31368	33
Rewa	-1.31876	34
Seoni	-1.39941	35
Chhindwara	-1.41809	36
Chhatarpur	-1.58282	37
Anuppur	-1.92705	38
Ashoknagar	-2.21405	39
Shivpuri	-2.25242	40
Shahdol	-2.32145	41
Sheopur	-2.36436	42
Balaghat	-3.0584	43
Tikamgarh	-3.51276	44
Umaria	-3.82679	45
Sidhi	-3.89267	46
Panna	-3.98007	47
Damoh	-4.16453	48
Mandla	-4.42588	49
Dindori	-5.6209	50

- **PCA estimates based on Census Data of 2011**

Further, Urban Infrastructure development Index was constructed from the matrix of factor loadings after rotation. The values in the rotated component matrix were first squared up and then divided by their respective Eigen values (Table 7). The value of 0.931 was squared and divided by its Eigen value, the value in the first component column i.e. a value of 5.438 to get 0.16 = (0.931*0.931)/ 5.438.

After getting a squared factor loading, the three intermediate composites extracted were aggregated by assigning a weight to each one of them equal to the proportion of the explained variance in the data set by taking a ratio of the column Eigen value to its total. For example, getting a weight of 0.60 by dividing the first component Eigen value with the sum total of Eigen values i.e. 5.438/ 9.096=0.60. The three extracted components explained 75.80 per cent of the variance (Table 6). Thus, the urban Infrastructure Development Index stood at 0.84.

Infrastructure Development Index (Urban)

=0.16*0.60+ 0.14*0.60 +0.13*0.60+ 0.08*0.60+ 0.05*0.60+ 0.37*0.23+0.30*0.23+0.28*0.23+0.26*0.23+0.23*0.23+ 0.58*0.17+ 0.42*0.17

=0.84

Table : 6 - Total Variance Explained for Urban Infrastructure development

Comp -onent	Initial Eigen Values			Extraction Sums of Squared Loadings		
	Total	% of Varia -nce	Cumul -ative%	Total	% of Varia -nce	Cumul -ative%
1	5.438	45.313	45.313	5.438	45.313	45.313
2	2.144	17.867	63.179	2.144	17.867	63.179
3	1.514	12.617	75.796	1.514	12.617	75.796
4	.911	7.589	83.385			
5	.591	4.929	88.314			
6	.528	4.398	92.713			
7	.335	2.793	95.505			
8	.186	1.554	97.059			
9	.152	1.268	98.327			
10	.107	.892	99.219			
11	.055	.461	99.680			
12	.038	.320	100.000			

Table: 7 - Summary of PCA Results for Infrastructure Development Index (Urban)

Rotated Component Matrix			
Variables	**Component**		
	1	2	3
Bathing(p)	.931		
Electricity	.886	.101	.101
Latrine .847	.289	.270	
Tap water from treated sources	.671	.217	
Drinking Water	.528	.160	.392
Four wheeler	.181	.887	.132
Two wheeler	.398	.805	.235
Concrete roof	.121	.775	-.171

Banking service -	.239	.750	.350
Drainage	.439	.710	
Mobile	.940		
Telephone	.423	.325	.794
Eigen Values	**5.438**	**2.144**	**1.514**
Weights	**0.60**	**0.23**	**0.17**

Rotation Method: Varimax with Kaiser Normalization. Rotation converged in 5 iterations.

Squared Factor Loading

Variables	**Component**		
	1	2	3
Bathing(p)	0.16		
Electricity	0.14		
latrine	0.13		
Tap water from treated sources	0.08		
Drinking Water	0.05		
Four wheeler		0.37	
Two wheeler		0.30	
Concrete roof		0.28	
Banking service		0.26	
Drainage		0.23	
Mobile			0.58
Telephone			0.42

Similarly, rural infrastructure index was constructed from the matrix of factor loadings after rotation. The three extracted components explained 80.14 per cent of the variance (Table 8). Thus, the rural Infrastructure Development Index stood at 0.76.

Infrastructure Development Index (Rural)

=0.12*0.65+0.11*0.65+0.08*0.65+ 0.08*0.65+0.07*0.65+ 0.34*0.23+0.32*0.23+0.32*0.23+0.18*0.23+ 0.71*0.12+ 0.51*0.12+0.44*0.12

=0.76

Table: 8 - Total Variance Explained for Rural Infrastructure development

Comp -onent	Initial Eigen Values			Extraction Sums of Squared Loadings		
	Total	% of Varia -nce	Cumul -ative%	Total	% of Varia -nce	Cumul -ative%
1	6.238	51.981	51.981	6.238	51.981	51.981
2	2.236	18.632	70.613	2.236	18.632	70.613
3	1.144	9.535	80.148	1.144	9.535	80.148
4	.707	5.891	86.039			
5	.476	3.963	90.001			
6	.402	3.348	93.350			
7	.273	2.276	95.626			
8	.215	1.788	97.413			
9	.142	1.184	98.597			
10	.129	1.078	99.675			
11	.036	.299	99.974			
12	.003	.026	100.000			

Table : 9 - Summary of PCA Results for Infrastructure Development Index (Rural)

Rotated Component Matrix

Variables	**Component**		
	1	2	3
Four wheeler	.851	.367	.172
Concrete roof	.814		.207
Two wheeler	.699	.503	.426
latrine	.692	.169	.564
Drainage	.683	.199	.404
Mobile	.435	.869	
Telephone	.465	.850	
Banking service	.229	-.842	
Bathing(p)	.253	.639	.587
Tap water from treated sources			.904
Electricity	.354	.118	.766
Drinking Water	.278		.712
Eigen Values	**6.238**	**2.236**	**1.144**
Weights	**0.65**	**0.23**	**0.12**

Rotation Method: Varimax with Kaiser Normalization. Rotation converged in 5 iterations.

Squared Factor Loading of Infrastructure development Index (Rural)

	Component		
	1	2	3
Four wheeler	0.12		
Concrete roof	0.11		
Two wheeler	0.08		
latrine	0.08		
Drainage	0.07		
Mobile		0.34	
Telephone		0.32	
Banking service		0.32	
Bathing(p)		0.18	
Tap water from treated sources			0.71
Electricity			0.51
Drinking Water			0.44

The results show different ranking for Bhopal for rural and urban infrastructure index. Table 10 shows Bhopal at a third position in terms of rural infrastructure development.The comparison of the infrastructure index with HDI of M.P. showed that the first four districts Indore, Bhopal, Harda and Gwalior had the same ranking on both the index. But the position or ranking of the other districts of Madhya Pradesh based on human development index differed from their ranking on infrastructure development index. Though the ranking of Bhopal was the same in HDI and infrastructure development but rural and urban infrastructure index did not place Bhopal at the same rank. It ranked third in rural infrastructure development as compared to a second position in urban.

Table: 10 - Urban and Rural Infrastructure Index

District	**Urban Infrastru-cture Index**	**District**	**Rural Infrastr-ucture Index**
Indore	4.41	Indore	5.50
Bhopal	3.67(2nd Position)	Harda	3.53

Gwalior	3.36	Bhopal	2.59(3rd Position)
Ratlam	2.30	Hoshangabad	2.42
Jhabua	2.29	Khargone	1.79

Conclusion - The study analysed the education level for Madhya Pradesh and Bhopal city in particular by taking Indian census data of 2011 that showed the percentage of main workers in Bhopal to total main workers in Madhya Pradesh just being half of the state and the percentage of graduate and above other than the technical degree higher in relation to the percentage of 5.35 for the state. Similarly, the technical degree or diploma equal to degree to post graduate degree for Bhopal was higher to the state or national level with state at 2.94 per cent to all India level. The analysis of higher secondary/senior secondary status for the city showed 93.17 percent urban and 6.83 percent of rural population in the age group of 20-24.The percentage of graduate and above was less than five percent for rural youth and ninety five per cent for urban.

The study also looked into the technical and non-technical higher education level of the youths belonging to the age group of 20-24 and found that the percentage of technical and non-technical graduates in rural areas was very poor being 7.56 per cent in non-technical and 1.85 per cent in technical, whereas, for the urban youths an impressive per cent of more than ninety was seen.

Further, the ranking of the districts of Madhya Pradesh done on human development indicators was compared with the ranking of the districts on the basis of infrastructure index, the principal composite analysis (PCA) was used to construct the infrastructure index of identified physical and social variables based on census data of 2011. Since human development is a composite statistic of life expectancy, education and income per capita indicators, it was thought useful to calculate and find whether districts secured the same ranking on the infrastructure index or differed.

The comparison of the infrastructure index with HDI of M.P. showed that the first four districts Indore, Bhopal, Harda and Gwalior had the same ranking on both the index. But the position or ranking of the other districts of Madhya Pradesh based on human development index differed from their ranking on infrastructure development index. Though the ranking of Bhopal was the same in HDI and infrastructure development but rural and urban infrastructure index did not place Bhopal at the same rank. It ranked third in rural infrastructure development as compared to a second position in urban.

References :-

1. Bhalla, G.S. (1964). “Theory and practices in public enterprises”. Meenakshi Publication. Meerut.
2. Census 2011, Government of India. Retrieved from http://www.censusindia.gov.in/
3. Hagerty, M. R., Cummins, R. A., Ferriss, A. L., Land, K., Michalos, A. C., Peterson, M. et al. (2001). “Quality of life indexes for national policy: review and agenda for research”. Social Indicators Research, 55: pp. 1–96.
4. Haq, Rashida& Zia Uzma. (2012). “Multidimensional wellbeing: An index of quality of life in a developing economy”. Springer Science+ Business Media Dordrecht 2013. DOI 10.1007/s11205-012-0186-6.
5. Hirschman, A. O. (1958). “The strategy of economic development”. New Haven: Yale University Press.
6. Human Development Report, Government of Madhya Pradesh (2007). “Infrastructure and human development in Madhya Pradesh”. Viewed on December 10, 2012 http://india.gov.in/madhya-pradesh-human-development-report-2007.
7. Lewis, W. Arthur (1955). “The Theory of Economic Growth”. Allen Unwin, London.
8. Mishra, Aswini, Kumar, Narendra, K., &Kar, Prasad, B. (2013). “Growth and infrastructure investment in India: Achievements, challenges, and opportunities”. Economic Annals, Volume LVIII, No. 196 / January – March 2013 UDC: 3.33 ISSN: 0013-3264 viewed on 02/06/13.DOI: 10.2298/EKA1396051M.
9. Oommen, T.K. (2009). “Development policy and the nature of society: Understanding the Kerala model”, Economic& Political Weekly, March 28, 2009, Vol XLIV No 13.
10. OECD. (2008). “Handbook on constructing composite indicators: Methodology and user guide”. ISBN 978-92-64-04345-9 www.oecd.org/publishing/corrigenda.
11. Puskorius, Stasys. (2014). “Theoretical model of estimating the quality of life index”. Intellectual Economics, 2014, Vol. 8, No. 1(19), p. 55–64, ISSN 1822-8038 (online).DOI: 10.13165/IE-14-8-1-04.
12. Rao, V.K.R.V. (1980). “Infrastructure and economic development”. Commerce Annual Number, 141(3628)
13. Rosenstein-Rodan, Paul.N. (1943). “Problems of Industrialization of Eastern and South Eastern Europe”. Economic Journal 53 (June), pp. 202-211.
14. Stiglitz, Joseph E., Sen, A. &Fitoussi, Jean-P. (2009). “The measurement of Economic Progress and Social Progress Revisited”. Columbia University, IEP, OFCE Working Paper, 64 p https://www.ofce.sciences-po.fr/pdf/dtravail/WP2009-33.pdfviewed on July 21, 2014.

****

आर्थिक विकास में बाधक तत्व (इन्दौर के विशेष संदर्भ में)

डॉ. दीपक जैन *

प्रस्तावना - आर्थिक विकास में अनेक तत्व बाधक है जो आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न कर रहे है इन तत्वों में प्रमुख निम्न है - धूर्मपान, नशाखोरी, अतिक्रमण आवारा पशु, भ्रष्टाचार, सट्टा-जुआँ, अंधविश्वास, कानून दोहरा मापदण्ड, गुण्डों का आतंक साम्प्रदायिक, आदि कारणों से आर्थिक विकास अवरूद्ध हो रहा है।

अध्ययन का औचित्य एवं उद्देश्य - इन्दौर शहर जो म प्र. की व्यावासायिक राजधानी है जो महानगर का रूप ले चुका है इसे स्मार्टसिटी के श्रेणी में लिया है इसके तीव्र विकास हेतु आदरणीय लोकप्रिय मुख्यमंत्री शिवराजजी चौहान हर संभव मदद कर रहे है, लोकसभा अध्यक्ष(स्पीकर) एवं इन्दौर सांसद श्रीमति सुमित्रा महाजन एवं महापौर श्रीमति मालिनी गौड़ दिन-रात इन्दौर विकास हेतु प्रयासरत् है।

चूँकि मैं वाणिज्य का छात्र रहा हूँ मैंने वाणिज्य में एम.फिल एवं पीएच.डीकी हैं। मैंने इन्दौर में गुण्डे तत्वों को इन्दौर विकास में बाधा उत्पन्न करते हुए देखा है। अत: मेने इस विषय का चयन किया है।इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु निम्न सहायक उद्देश्य निर्धारित किये है।

1. इन्दौर के आर्थिक विकास हेतु सरकार द्वारा किये गए प्रयास
2. इंदौर के आर्थिक विकास हेतु व्यापारियों द्वारा किए गये सहयोग एवं त्याग का अध्ययन
3. इंदौर के आर्थिक विकास हेतु जनता द्वारा किए गये सहयोग एवं त्याग का अध्ययन

परिकल्पनाएँ :- प्रस्तुत शोध कार्य में उपरोक्त उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित परिकल्पनाएँ रही जिनका परिक्षण एवं अध्ययन किया।

1. इन्दौर के आर्थिक विकास हेतु सरकार द्वारा किये गए प्रयास प्रभावषाली एवं सार्थक रहे।
2. इंदौर के आर्थिक विकास हेतु व्यापारियों द्वारा किए गये सहयोग एवं त्याग का सार्थक रहे।
3. इंदौर के आर्थिक विकास हेतु जनता द्वारा किए गये सहयोग एवं त्याग सार्थक एवं महत्वपूर्ण रहे।

आर्थिक विकास में बाधक तत्वों के प्रभाव एवं निराकरण हेतु प्रयास का अध्ययन

- **धूर्मपान एवं नशाखोरी-** धूर्मपान एवं नशाखोरी की चपेट में आकर युवा वर्ग जो देश के आर्थिक विकास की 'मास्टर की' है कर्महीन, उत्तेजक, मुँहजोर, हिंसक, बुरी संगत एवं देशद्रोही कार्यो में लिप्त हो जाता है। इन युवा वर्ग को धूर्मपानएवं नशाखोरी से बचाने हेतु सरकार ने विद्यालय एवं महाविद्यालय के निकट इनकी बिक्री पर रोक लगा दी है। समाज भी इन बुरी लतों से बचने हेतु समय-समय पर युवा वर्ग को लगातार सलाह देता रहता है।

- **अतिक्रमण-** इन्दौर के आर्थिक विकास में अतिक्रमण एक गम्भीर समस्या है कुछ असमाजिक लोग जगह-जगह अतिक्रमण कर यातायात को जटिल बना देते है जिससे

जगह-जगह चक्का-जाम की स्थिति उत्पन्न हो जाती है इसके कारण समय एवं ईधन की बर्बादी होती है। इन चक्का-जाम के कारण अनेक रोगी को समय पर ईलाज नहीं मिलने पर उनकी मृत्यु हो जाती है एवं अनेक बार दुर्घटनाऍ हो जाती है। इस हेतु नगर निगम लगातार अतिक्रमण ध्वस्त कर Left turn (बायामोड़) चौड़ा कर रही है।

- **सट्टा-जुँआ -** सट्टा-जुँआ भी आर्थिक विकास में बाधक है। लोगों को इसकी लत पड़ जाती है वे कर्महीन, भाग्यवादी हो जाते है सट्टे एवं जुँआ के दलदल में फॅस जाते है और चाहकर भी इस बुरी लत से बाहर नहीं निकल पाते है। वे पैसे के लिए चौरी एवं डकेती एवं अन्य बुरी आदतो में पड़कर समाज एवं देश के अहित में कार्य करने लगते है जिससें आर्थिक विकास में रूकावट उत्पन्न होती है।

- **आवारा पशु-** इन्दौर के आर्थिक विकास में आवारा पशु एक गम्भीर समस्या थी जिससे यातायात रूकता था। अनेक बार आवारा पशु के कारण दुर्घटनाऍ हो रही थी। महापौर ने लगातार प्रयासकर इन्दौर को आवारा पशु से मुक्त कर दिया। गुण्डों द्वारा पाले जाने वाले आवारा सुअर एवं गाय को शहर से बाहर कर उनके बाड़े को तोड़ दिये गये इस प्रकार इन्दौर को आवारा पशु से मुक्त कर दिया।

- **कानून में दोहरा मापदण्ड -** हमारे देश में कानून में दोहरा मापदण्ड अपनाया जाता है। राजनैतिक दवाब के कारण अपराधी पर कार्यवाही न करते हुए फरयादी पर ही कार्यवाही कर दी जाती है जिससे असमाजिक लोगों को अपराध करने का प्रशय मिल जाता है जिससे व्यापारी वर्ग में भय एवं आंतक का वातावरण बना रहता है।

- **गुण्ड़ो का आंतक-** इन्दौर के आर्थिक विकास में गुण्ड़ो का आंतक सबसे बड़ी बाधा है क्योंकि गुण्ड़ो के आंतक के कारण समाज, व्यापारी, सरकारी कर्मचारी एवं जनता हमेशा मुक्त वातावरण मे जीवनयापन करते हैं। जिससे वे पूरी क्षमता एवं मनोबल से कार्य नहीं कर पाते है जिससे आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न होती है ये गुण्ड़े लोगों के दिन के चेन एवं रातों की नींद हराम कर देते है। ये जनता का अनेक प्रकार से शोषण करते है।

- **भ्रष्टाचार -** भ्रष्टाचार भी आर्थिक विकास में बाधक बना हुआ है भ्रष्ट अधिकारी रिश्वत की लालसा में सरकार को राजस्व आय में चुना लगा रहे है भ्रष्ट अधिकारियों के कारण अधिकांश नागरिक जो ईमानदारी से राजस्व भरना चाहते है वे राजस्व की चोरी करते है जिससे आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न होती है। इस हेतु सर्वप्रिय आदरणीय प्रधानमंत्री मोदीजी ने अनेक

* प्राध्यापक, श्री जैन दिवाकर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

करों के स्थान पर जी.एस.टी कर लागू किया जिससे शीघ्र भ्रष्टाचार पर रोक लग जायेगी। जी.एस.टी के पहले अनेक प्रकार के जटिल कर थे। जिन्हें भरने में करदाता को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता था एवं सरकार को कर वसूलने में भी में समस्याएँ होती जिससे भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता था। लेकिन मोदीजी के ऐतिहासिक फैसले से भ्रष्टाचार छूमंतर हो जायेगा।

- **अंधविश्वास –** अंधविश्वास, आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न करता है। यह कथन शत प्रतिषत सत्य है क्योंकि लोग अंधविश्वास के कारण मुक्त वातावरण मे रहते है उनमे साहस की कमी होती है वे सभी कार्य पुजा–पाठ से प्रारंभ करतें है जिससे दनके आत्मविश्वास में कमी हो जाती है वे छिक आने, बिल्ली के रस्ता काटने को अच्छा नहीं मानते और कार्य अवरूद्ध होता है जिससे आर्थिक विकास में रूकावट उत्पन्न होती है।
- **चंदा वसुली–** ये गुण्ड़े बारह महिने त्यौहारों, कथा, कलश यात्रा, भजन–कीर्तन एवं भंड़ारों के बहानों से लोगों एवं व्यापारियों से चंदे के रूप में मोटी रकम वसुलते रहते है तथा लगातार अपनी तिजौरी भरते रहते है इन गुण्ड़ों को राजनैतिक संरक्षण प्राप्त होने के कारण पुलिस प्रशासन इन पर कोई कार्यवाही नहीं करते है एवं जनता तथा व्यापारी इनके जुल्मों को सहते रहते है और काई षिकायत नहीं करते है।
- **सूदखोरी –** ये गुण्ड़े जनता एवं व्यापारी की मजबुरी का फायदा उठाकर उनसे कोरा स्टाम्प एवं चेक लेकर रूपये उधार देते है तथा ऊँची दर से ब्याज वसुलते रहते है। कई बार गरीब लोग मूल राषि से कई गुना ब्याज चुकाने के बाद भी इनके चंगूल में फँसे रहते हुए आत्महत्या (खुदखुशी) कर लेते है। इस प्रकार पूरा जीवन इनके चक्रव्यूह में फंसकर बर्बाद कर लेते है।

निष्कर्ष :

1. यदि भारतीय जनता एक–जूट होकर इसका विरोध करे तो गुण्ड़े शहर छोड़कर भाग जायेगें या साधु बन जायेगें और राज्य में लोग भयमुक्त होकर जीवनयापन करेगें।
2. व्यापारी को एकता का परिचय देते हुए एक–जूट होना चाहिए जिससे गुण्ड़े लोग गुण्ड़ागर्दी छोड़कर सामान्य व्यक्ति के समान जीवनयापन करने लगेगें ।
3. सरकार को ऐसेगुण्डों पर कठोर कार्यवाही करना चाहिये तथा पुलिस प्रशासन को इन पर कार्यवाही हेतु स्वतंत्रता देना चाहिये।
4. मीडिया को इन गुण्डों को प्रषय देने वाले नेताओं के नाम उजागर करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अर्थशास्त्र, डॉ. एस एम शुक्ला, साहित्य भवन पब्लिकेशन,2017–18

पत्रिकाएँ/समाचार पत्र

1. प्रतियोगिता दर्पण, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली
2. दैनिक भास्कर, इन्दौर
3. नई दुनिया, इन्दौर

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

भारत में महिला सशक्तिकरण हेतु सरकार एवं अन्य संस्थाओं का योगदान(इन्दौर के संदर्भ में)

डॉ. दीपक जैन *

शोध सारांश – हम जानते है कि देश के विकास हेतु समाज के लोगों का विकास अतिआवश्यक है, समाज के विकास में महिला का महत्वपूर्ण योगदान है। अत: देश के विकास हेतु हमें समाज में महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार एवं सम्मान दिलाना आवश्यक है। राष्ट्रपिता महात्मा गॉधी, स्वामी विवेकानंद एवं अन्य महापुरुषों ने देश के विकास हेतु समाज में महिलाओं के योगदान को बढ़ाने पर जोर दिया है। हम जानते हैमहिला एवं पुरुष परिवाररुपी गाड़ी के दो पहियों के समान है जिस प्रकार एक पहिये से गाड़ी ठीक प्रकार से नहीं चल सकती ठीक उसी प्रकार केवल पुरुष प्रधान समाज से समाज एवं देश का विकास संभव नहीं हैं। चूॅकि आज भी अनेक समाजों में महिलाओं की स्थिति दयनीय एवं नरकीय होने के कारण मेने इस विषय का चयन किया है।

प्रस्तावना – महिला सशक्तिकरण से आशय परिवार में पुत्री को पुत्र के समान अधिकार, उचित शिक्षा एवं व्यावसायिक कौशल प्रशिक्षण देकर आत्मनिर्भर बनाना है। महिलाओं को पुरुषों के समान सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं वैधानिक क्षेत्र में बराबर का दर्जा दिया जाए, उसे समाज में अबला न मानकर सबला माना जाए।

अध्ययन का औचित्य एवं उद्देश्य –प्राचीन काल में हमारे देश में नारी को देवी तुल्य मानकर उनकी पूजा की जाती थी। समाज में उन्हें सम्मान दिया जाता था तथा धनलक्ष्मी का दर्जा दिया जाता है। वर्तमान में पुरुष प्रधान समाज में उनकी स्थिति बहुत दयनीय है। हम जानते है कि महिला के बिना पुरुषों का अस्तित्व नहीं है फिर भी कुछ समाजों में उनके साथ सोतेला व्यवहार किया जाता है। महिला सशक्तिकरण य हेतु सरकार एवं अन्य संस्थाओं द्वारा किए गये प्रयास एवं इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु निम्न सहायक उद्देश्य निर्धारित किये है–

1. महिला सशक्तिकरण हेतु सरकार द्वारा किए गये प्रयासों का अध्ययन
2. महिला सशक्तिकरण हेतु अन्य संस्थाओं द्वारा किए गये प्रयासों का अध्ययन
3. महिला सशक्तिकरण हेतु समाज द्वारा किए गये प्रयासों का अध्ययन

शोध विधि – इस शोध पत्र में द्वितीय समंकों का अध्ययन एवं विश्लेषण कर सुझाव प्रस्तुत किए गये है। शोध पत्र में इंटरनेट के माध्यम से विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं, पुस्तकों, समाचार पत्रों में प्रकाशित समंकों का अध्ययन कर निष्कर्ष निकाला हैं।

परिकल्पना – उपरोक्त उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित परिकल्पनाऍ रही जिनका परीक्षण एवं अध्ययन किया गया।

1. महिला सशक्तिकरण हेतु सरकार द्वारा किए गये प्रयास प्रभावशाली एवं सार्थक रहे है।
2. महिला सशक्तिकरण हेतु अन्य संस्थाओं द्वारा किए गये प्रयास प्रभावशाली एवं सार्थक रहे है।
3. महिला सशक्तिकरण हेतु समाज की भूमिका प्रभावशाली रही है।

महिला सशक्तिकरण हेतु सरकार द्वारा किए गये प्रयासों का अध्ययन :- पूजनीय एवं लोकप्रिय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदीजी लगातार महिला सशक्तिकरण पर जोर दे रहे है उनके प्रयास से ही आज महिलाओं को देश में सम्मानीय पद प्राप्त हुआ है।

1. लोकसभा अध्यक्ष जैसे महत्वपूर्ण पद पर सुमित्रा महाजन विराजमान है।
2. रक्षामंत्री जैसे महत्वपूर्ण पद पर श्रीमति निर्मला सिथरमन विराजमान है।
3. विदेशमंत्री जैसे महत्वपूर्ण पद पर श्रीमति सुषमा स्वराज विराजमान है।
4. इन्दौर महापौर (मेयर) जैसे महत्वपूर्ण पद पर श्रीमति मालिनी गौड़ विराजमान है।
5. इन्दौर क्षेत्र क्र. 3 की विधायक ऊषा ठाकुरजी म.प्र. की उपाध्यक्ष जैसे महत्वपूर्ण पद पर विराजमान है।
6. नरेन्द्र मोदीजी के प्रयास से ही मुस्लिम समाज में तीन तलाक जैसी बुराई समाप्त हो रही है।

आदरणीय मुख्यमंत्री श्री शिवराज चौहानजी द्वारा चलाई गयी 'लाड़ली लक्ष्मी योजना' आज पूरे भारत में सबसे लोकप्रिय है उनके प्रयास से ही कन्याभ्रूर्ण हत्या पर रोक लगी है तथा लिंग अनुपात में लड़कियों की संख्या लगातार बढ़ रही है। यह महिला सशक्तिकरण का महत्वपूर्ण प्रयास है।

महिला सशक्तिकरण हेतु शिक्षित बेरोजगार महिलाओं को विभिन्न इकाईयों में व्यावसायिक कौशल प्रशिक्षण देकर आत्मनिर्भर बनाने हेतु क्रेन्द्र सरकार के श्रम एवं रोजगार मंत्रालय ने 1992 में आई.टी.आई परिसर परदेशीपुरा इन्दौर में म.प्र. के एकमात्र 'क्षेत्रीय महिला प्रशिक्षण संस्थान' की स्थापना की। म.प्र. सरकार ने इन्दौर में औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना की जिसमें कुछ इकाईयों में महिलाओं के लिए सीट आरक्षित है। आदरणीय मुख्यमंत्री श्री शिवराज चौहानजी द्वारा कामकाजी महिलाओं को औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान द्वारा विशेष प्रशिक्षण देकर उन्हें आत्मनिर्भर बना रहे है।

लाड़ली लक्ष्मी योजना – इस योजना के अन्तर्गत बालिका के नाम पंजीकरण के समय से लगातार पॉच वर्षो तक 6 हजार प्रति वर्ष मध्यप्रदेश लाड़ली लक्ष्मी योजना निधि में जमा किये जाऐगें अर्थात कुल 30000 रूपये

* प्राध्यापक, श्री जैन दिवाकर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

बालिका के नाम से जमा किये जाऐगें। बालिका के कक्षा 6 में प्रवेश लेने पर 2000 रू. कक्षा 9 में प्रवेश लेने पर 4000 रू. कक्षा 11 में प्रवेश लेने पर 6000 रू. कक्षा 12 में प्रवेश लेने पर 6000 रू. ई पेमेंट के माध्यम से भुगतान किया जायेगा। अंतिम भुगनान 1 लाख रूपये बालिका की आयु 21 वर्ष होने पर तथा कक्षा 12 वीं परीक्षा में सम्मिलित होने पर भुगतान की जावेगी किन्तु शर्त यह होगी कि बालिका का विवाह 18 वर्ष की आयु के पूर्व न हुआ हो।

वन स्टॉप सेंटर (सखी)/उषा किरण योजना – केन्द्र सरकार द्वारा वन स्टॉप सेंटर (सखी)/उषा किरण योजना (राज्य-मद) अंतर्गत सभी प्रकार की हिंसा से पीड़ित महिलाओं एवं बालिकाओं को एक ही स्थान पर अस्थायी आश्रय, पुलिस-डेस्क, विधि सहायता, चिकित्सा एवं काउन्सलिंग की सुविधा वन स्टॉप सेंटर (सखी)/उषा किरणकेन्द्रों में उपलब्ध करायी जायेगी।

महिला सशक्तिकरण हेतु गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा किए गये प्रयास – अनेक गैर सरकारी संस्थाऍं भी महिला सशक्तिकरण हेतु व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान नाममात्र शुल्क में चला रही है तथा महिलाओं को आत्मनिर्भर बना रही है।

1. इन्दौर वुमन्स वोकेशनल इंस्टीट्युट गुजराती महाविद्यालय
2. श्री क्लाथ मार्केट कन्या महाविद्यालय प्रशिक्षण संस्थान इन्दौर है इसके अलावा इनेक एन.जी.ओ. के माध्यम से महिलाओं को विशेष कौशल प्रशिक्षण देकर उन्हें आत्मनिर्भर बनाया जा रहा है।

महिला सशक्तिकरण हेतु समाज द्वारा किए गये प्रयास – आज समाज के अध्यक्ष महिला सशक्तिकरण पर जोर दे रहे है वे लगातार महिला को पुरूषों के बराबर अधिकार दिला रहे है। समाज द्वारा दहेज प्रथा पर रोक लगा दी है।समाज के प्रयास एवं आदरणीय मुख्यमंत्री श्री शिवराज चौहानजी द्वारा चलाई गयी 'लाड़ली लक्ष्मी योजना' आज पुरे भारत में सबसे लोकप्रिय है उनके प्रयास से ही कन्याभ्रूर्ण हत्या पर रोक लगी है तथा लिंग अनुपात में लड़कियों की संख्या में लगातार वृध्दि हो रही है।

सुझाव :

1. व्यावसायिक कौशल प्रशिक्षण संस्थानों के विभिन्न इकाईयों में सीटों की संख्या बढ़ाकर और सभी क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाकर महिला सशक्तिकरण को ओर अधिक मजबूत बनाया जा सकता है।
2. महिला प्रशिक्षणार्थियों की समस्यों का शीघ्र निराकरण कर एवं सुरक्षा प्रबंध करमहिला सशक्तिकरण को ओर अधिक मजबूत बनाया जा सकता है।
3. दूर से आने वाली महिला प्रशिक्षणार्थियों को बस सुविधा देकर महिला प्रशिक्षणार्थियों को आत्मनिर्भर बना सकते है।
4. व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थानों की संख्या बढ़ाकरमहिला सशक्तिकरण को मजबूत बना सकते है।
5. सफल महिला प्रशिक्षणार्थियों को आंगनवाड़ी में नौकरी देकर महिला सशक्तिकरण को ओर अधिक सफल बनाया जा सकता है।
6. समाज में दहेज प्रथा को मिटाकर, परिचय सम्मेलन एवं सामूहिक विवाह पर जोर देकर महिला सशक्तिकरण को और अधिक सफल बनाया जा सकता है।
7. विभिन्न समाजों में महिला सशक्तिकरण हेतु आवश्यक आर्थिक मदद देकर महिला सशक्तिकरण को और अधिक सफल बनाया जा सकता है।

सारणी एवं ग्राफ :-

महिला साक्षरता दर

वर्ष	साक्षरता दर
1971	18.69
1981	24.82
1991	32.17
2001	45.15
2011	56.0

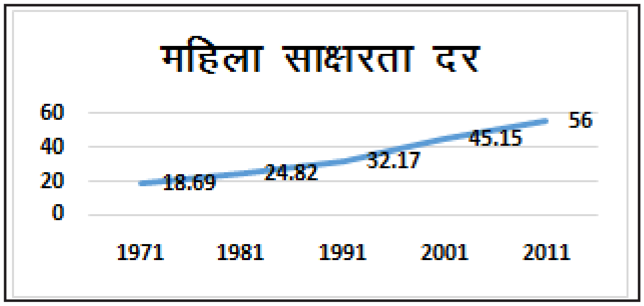

निष्कर्ष – जीवन के सभी क्षेत्रों में आज महिलाएं पुरूषों के कंधे से कंधा मिलाकर कार्य कर रही है और अब महिला सशक्तिकरण एक बहुचर्चित मुदद्ा बन चुका है।घर के अंदर या बाहर सभी जगहों परमहिलाएं अपना एक स्वतंत्र दृष्टिकोण रखती हैं और वे अपनी शिक्षा, व्यवसाय या जीवनशैली से संबंधित सभी निर्णय स्वंय लेती है। कामकाजी महिलाओं की संख्या में लगातार वृद्धि होने के कारण वित्तीय स्वतंत्रता प्राप्त हुई है और इस कारण उनमें जीवन का नेतृत्व खुद करने एवं अपनी पहचान बनाने का आत्मविश्वास भी प्राप्त हुआ है। वे सफलतापूर्वक विविध व्यवसायों को अपनाकर यह साबित करने का प्रयास कर रही है किवे किसी भी मामले में पुरूषों से पीछे नहीं है। लेकिन ऐसा करते हुए भी महिलाएं अपने व्यवसाय के साथ एवं सद्भाव से आसानी से मॉ, बेटी, बहन, पत्नी एवं एक सक्रिय पेशेवर जैसी कई भूमिकाएं एक साथ निभाने में कपमयाब हो रही है। महिला सशक्तिकरण द्वारा समाज और दुनिया को रहने के लिए एक बेहतर जगह बनाने में मदद मिलती है और साथ ही यह समावेशी भागेदारी के रास्ते पर आगे चलने में सहायता करता है। अब महिलाओं की अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ रही है और इस दिशा में प्रयासरत विभिन्न गैर सरकारी संगठनों एवं स्वयंसेवी संस्थाओं का उदय इसका प्रमाण है। अब महिलाएं व्यक्तिगत स्तर पर दमन के बंधनों को तोड़ते हुए इपने अधिकारों के लिए अपनी आवाज बुलंद कर रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रतियोगिता दर्पण, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली
2. दैनिक भास्कर,इन्दौर
3. महिला सशक्तिकरण, राज्य सरकार, 2017-18

स्वच्छ भारत अभियान में इन्दौर (म.प्र.) का योगदान

डॉ. दीपक जैन *

शोध सारांश – हम जानते है कि चीन के बाद भारत विष्व का सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश है। अत्यधिक जनसंख्या के कारण भारत में चारों ओर गंदगी एवं कचरे की भरमार थी। अनेक लोग घरों में शौचालय न होने के कारण खुल्ले में शौच करते थे तथा घरों का कचरा, झुठन एवं प्लास्टिक की थैलियाँ खाली प्लाटों एवं सड़कों पर फेक देते थे। इन गंदगियों में मंक्खियाँ एवं मच्छर तेजी से पनप रहे थे जिससे अनेक प्रकार की महामारी फैल रही थी। इसके अलावा लोग भगवान की प्लास्टर ऑफ पेरिस एवं रसायनिक युक्त मूर्तिया एवं मनुष्य की अस्थियों को जल स्त्रोत एवं नदियों में विसर्जित करते थे जिससे जल पीने एवं वापरने योग्य नहीं रहता था। दूषित जल एवं गंदगियों के कारण देश में अनेक महामारी फेल रही थी।

इस जटिल एवं असंभव प्रतीत होती समस्या के समाधान हेतु लोकप्रिय प्रधानमंत्री मोदीजी ने गाँधी जंयती 2 अक्टूबर 2014 को गॉधीजी के जन्मदिवस पर स्वच्छ अभियान प्रारंभ किया। मोदीजी ने एक के बाद एक अनेक गाँवों को गोद लेकर उनका तेजी से विकास किया अनेक शौचालयों का निर्माण करवाया। अनेक मंत्रियों, मुख्यमंत्रियों, सासंदों, विधायकों एवं महापौरों ने भी प्रधानमंत्री के कार्यो का अनुसरण करते हुए अनेक पिछड़े गाँवों को गोद लेकर उनका तेजी से विकास किया तथा अनेक शौचालयों का निमार्ण किया तथा पूरे भारत में खुले में शौच करने में पाबंदी लगवायी। हम जानते है कि देश के तेजी से विकास एवं उन्नति हेतु वहाँ के नागरिकों का स्वस्थ रहना आवश्यक है एवं नागरिकों के स्वस्थ्य रहने के लिए देश का स्वच्छ रहना आवष्यक है इस जिज्ञासावष मैने उपरोक्त विषय 'स्वच्छ भारत अभियान' इन्दौर म.प्र. का योगदान का चयन किया है।

प्रस्तावना – भारत देश विशाल जनसंख्या वाला देश होने के कारण भारत में अनेक समस्याएँ है जैसे बेरोजगारी, गरीबी, चोरी-डकेती, आतेकवादी घटनाएँ एवं गंदगी तथा महामारी इनमें से गंदगी तथा महामारी की समस्या सबसे जटिल समस्या थी। इस जटिल एवं असंभव प्रतीत होती समस्या के समाधान हेतु लोकप्रिय प्रधानमंत्री मोदीजी ने गाँधी जंयती 2 अक्टूबर को 'स्वच्छ भारत अभियान' प्रारंभ किया। इस अभियान के तहत अनेक शौचालयों का निर्माण करवाया तथा खुले में शौच पर रोक लगा दी गई। घरों से कचरा एवं झुठन एकत्रित कर कम्पोष्ट खाद का निर्माण कराया तथा खुले में शौच करनें वाले को दण्डित किया गया। स्वच्छ भारत अभियान में म.प्र के लोकप्रिय मुख्यमंत्रीं शिवराजजी चौहान ने विशेष रूची लेते पूरे प्रदेश में इस अभियान पर जोर दिया।

अध्ययन का औचित्य एवं उद्देश्य :– काँग्रेस शासन काल में म.प्र. भारत का एक पिछड़ा राज्य था किन्तु लोकप्रिय मुख्यमंत्रीं शिवराजजी चौहान की अच्छी सोच, कड़ी मेहनत एवं उचित योजना के कारण म.प्र. में लगातार कृषि उत्पादन बढ़ रहा है तथा म.प्र. को लगातार अनेक बार कृषि अवार्ड मिला है। परम आदरणीय प्रधानमंत्री मोदीजी ने शिवराजजी चौहान की कार्यप्रणाली की प्रशंसा की है।

म.प्र. के अनेक शहरों में अवैध कालोनियों की भरमार है इन अवैध कालोनियों में विकास के अभाव में चारों ओर गंदगी एवं कचरो का ढेर रहता था। शौचालयों के अभाव में लोग खुले में शौच करते थे। स्वच्छ भारत अभियान में इन्दौर म.प्र. का योगदान के अध्ययन का उद्देश्य नगरनिगम एवं शासन द्वारा किये गये कार्यो का मुल्यांकन करना है। इस हेतु निम्न सहायक उद्देश्य निर्धारित किये गये है।

1. प्रशासन एवं नगर-निगम द्वारा स्वच्छ भारत अभियान हेतु किये गये विकास कार्य का मूल्यांकन
2. नगर-निगम द्वारा सफाई मित्रों एवं कर्मचारियों को दिये गये संसाधनों का योगदान
3. स्वच्छ भारत अभियान में समाचार पत्रों की भूमिका
4. स्वच्छ भारत अभियान में सफाई मित्रों एवं कर्मचारियों का योगदान
5. स्वच्छ भारत अभियान में नागरिकों का योगदान

परिकल्पना – उपरोक्त उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित परिकल्पनाऍ रही जिनका परीक्षण एवं अध्ययन किया गया।

1. प्रशासन एवं नगर-निगम द्वारा स्वच्छ भारत अभियान हेतु किये गये विकास कार्य प्रभावशाली एवं सार्थक रहे है।
2. नगर-निगम द्वारा सफाई मित्रों एवं कर्मचारियों को दिये गये संसाधनों का योगदान प्रभावशाली एवं सार्थक रहे है।
3. स्वच्छ भारत अभियान में समाचार पत्रों की भूमिका प्रभावशाली एवं सार्थक रही है।
4. स्वच्छ भारत अभियान में सफाई मित्रों एवं कर्मचारियों का योगदान प्रभावशाली एवं सार्थक रहा है।
5. स्वच्छ भारत अभियान में नागरिकों का योगदान प्रभावशाली एवं सार्थक रहा है।

स्वच्छ भारत अभियान में इन्दौर म.प्र. में किये गये प्रयासों का मूल्यांकन – 15 अगस्त 1947 को भारत आजाद हुआ। आजादी के बाद भारत में अनेक समस्याएँ थी जैसे बेरोजगारी, गरीबी, जनसंख्या वृध्दि, गंदगी एवं महामारी, चोरी तथा आतंकवाद,इन समस्याओं में गंदगी एवं महामारी, एक जटिल समस्या थी।

आजादी के बाद अनेक प्रधानमंत्रियों ने अनेक योजनाएँ बनायी लेकिन गंदगी एवं महामारियों के निवारण हेतु परम आदरणीय मोदीजी ने 2 अक्टुम्बर गाँधीजी जयंती पर स्वच्छ भारत अभियान प्रारंभ किया। इस अभियान को सफल बनाने के लिए मुख्यमंत्री शिवराजजी चौहान ने दिन-रात मेहनत कर उचित योजना बनायी एवं पूरे मध्यप्रदेश को स्वच्छ रखने हेतु सफाई अभियान

* प्राध्यापक, श्री जैन दिवाकर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

छेड़ा तथा म.प्र के सभी जिलाधिशों, निगम आयुक्तों, महापौरों के माध्यम से अल्प समय में जगह- जगह शौचालयों का निमार्ण कर खुलें में शौच करने पर रोक लगा दी गई।

स्वच्छ भारत अभियान में 1. प्रशासन एवं नगर-निगम 2. नगर-निगम द्वारा सफाई मित्रों एवं कर्मचारियों को दिये गये संसाधनों 3. समाचार पत्रों 4. सफाई मित्रों एवं कर्मचारियों 5. नागरिकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

1. प्रशासन एवं नगर-निगम द्वारा स्वच्छ भारत अभियान हेतु किये गये विकास कार्य – मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराजजी चौहान ने पूरे मध्यप्रदेश में आवष्यकतानुसार जगह-जगह शौचालयों का निमार्ण करवाकर खुलें में शौच करने पर पाबंदी लगा दी इस अभियान में प्रशासन एवं नगर-निगम की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। घर-घर से कचरा एकत्रित कर कचरे से खाद एवं बिजली का उत्पादन कर षहरों को स्वच्छ बना दिया तथा जगह- जगह रखी कचरे की पेटियों को हटवा दी। 14 मई 2017 को स्वच्छता सर्वेक्षण में देश के सर्वाधिक स्वच्छ 100 शहरों में मध्यप्रदेश के 22 शहर सम्मानित हुए। निगम आयुक्त, महापौर की उचित योजना एवं मेहनत रंग लाई और **स्वच्छता सर्वेक्षण में इन्दौर पूरे भारत में प्रथम स्थान पर**, भोपाल द्वितीय स्थान पर रहा है इस प्रकार भारत देश की समस्त राजधानियों में से भोपाल को स्वच्छतम राजधानी का गौरव हासिल हुआ। मध्यप्रदेश के शेष 20 स्वच्छ शहर उज्जैन, खरगोन, जबलपुर, सागर, कटनी, ग्वालियर, ओंकारेश्वर, रीवा, रतलाम, सिंगरौली, छिंदवाड़ा, सीहोर, देवास, होशंगावाद, पिथमपुर, खण्डवा, मंदसौर, सतना, बैतूल एवं छतरपुर स्वच्छता के लिए सम्मानित हुए। इस प्रकार भारत स्वच्छ भारत अभियान में म.प्र. का सर्वश्रेष्ठ योगदान रहा।

2. स्वच्छ भारत अभियान में नगर-निगम द्वारा सफाई मित्रों एवं कर्मचारियों को दिये गये संसाधनों का योगदान – निगम आयुक्त, महापौरजी की उचित योजना एवं मेहनत सफल रही। उन्होनें सफाई मित्रों को घर-घर से कचरा एकत्रित करने हेतु वाहन एवं बकेट उपलब्ध जिससे सड़के (कचरा मुक्त) हो गई अब खाली प्लाट भी स्वच्छ हो गये है जिससे मक्खी एवं मच्छरों की संख्या कम हो गयी है एवं अनेक महामारियों पर रोक लग गई है। नगर-निगम ने जागीरदार प्रथा पर रोक लगाा दी, अतिकम्रण पर रोक लगा दी है। यहाँ तक की पशु पालकों के आवारा पशुओं को पकड़कर शहर से बाहर किया तथा पशुओं के बाड़ों को तोड़ दिया जिससे शहर एकदम गंदगी एवं कचरा मुक्त हो गये है। पशु पालकों की गुंड़ागर्दी से निपटने हेतु प्रशासन ने नगर-निगम की मदद की है। इस प्रकार सीमित संसाधन होते हुए भी नगर-निगम ने इन्दौर को स्वच्छता में पूरे भारत में प्रथम स्थान दिलवाया है।

3. स्वच्छ भारत अभियान में समाचार पत्रों की भूमिका – स्वच्छ भारत अभियान में समाचार पत्रों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। समाचार पत्रों ने नागरिकों, दुकानदारों, व्यापारियों, ठेलेवालों, सब्जीवालों एवं चाटवालों को स्वच्छ भारत अभियान के महत्व एवं उनके कर्तव्य के प्रति जागरूक किया। गंदगी फैलाने वालों एवं खुले में शौच करने वालों को दण्ड़ित करने का भय दिखाकर उन्हें अच्छे नागरिक कर्तव्यों का बोध कराया। 7 मई 2017 को पत्रिका पेपर में 'सफाई में शहर पिछडे तो योगी ने उठाई झाडू' प्रकाशित कर लखनऊ प्रशासन एवं नगर-निगम को स्वच्छ भारत अभियान हेतु जागरूक किया। 7 मई 2017 को पत्रिका पेपर ने 'अमृत बचाने के लिए किया श्रमदान' तहत सिरपुर तालाब एवं अन्य पेयजल के महत्व को समझाया। इस दिन महापौर, कलेक्टर एवं पार्षद के साथ नगर सुरक्षा समिति सदस्यों ने श्रमदान कर सिरपुर तालाब की सफाई की। तथा 9 मई 2017 को नगर-निगम ने सिरपुर तालाब के आस-पास अवैध अतिक्रमण हटाकर 1 पोकलेन एवं 2 जेसीबी एवं 8 डंपरों की मदद से 80 डंपर मिट्टी निकालकर इसे गहरा किया तथा मिट्टी बगीचें में पँहुचायी। 9 मई 2017 को पत्रिका पेपर ने 'विधायक पटवारी के शादी समारोह में शहर को गंदगी का तोहफा' प्रकाशित कर आम नागरिकों को स्वच्छता के प्रति जागरूक किया। इस प्रकार गंदगी फैलाने वाले को नगर-निगम दण्ड़ित कर नागरिकों को स्वच्छ भारत अभियान के महत्व को स्मरण दिला रहा है।

4. स्वच्छ भारत अभियान में सफाई मित्रों एवं कर्मचारियों का योगदान – स्वच्छ भारत अभियान में सफाई मित्रों एवं कर्मचारियों की कड़ी मेहनत एवं लगन के कारण आज इन्दौर जो पहले कचरों एवं गंदगी में नम्बर 1 था आज पूरे भारत में स्वच्छ शहरों में प्रथम स्थान पर है। इन सफाई मित्रों एवं कर्मचारियों ने ईमानदारी से कार्य किया एवं घर-घर से सूखा एवं गीला कचरा अलग-अलग स्थानों पर वाहन में भरकर पूरे शहर को स्वच्छ एवं गंदगी मुक्त किया।

5. स्वच्छ भारत अभियान में नागरिकों का योगदान – स्वच्छ भारत अभियान में नागरिकों का महत्वपूर्ण योगदान है क्योंकि नागरिकों ने ईमानदारी से घर एवं आस पास का कचरा एकत्रित कर उसे कचरा वाहन में ही ड़ाला तथा मोहल्ले में किसी भी असामाजिक व्यक्ति को गंदगी नहीं करने दी सभी ने गंदगी एवं कचरा फैलाने वाले का विरोध किया। इस स्वच्छ भारत अभियान में प्रत्येक नागरिक ने सफाई मित्रों एवं कर्मचारियों की तन-मन एवं धन से मदद कर स्वच्छता सर्वेक्षण 2017 में इन्दौर को भारत का सर्वश्रेष्ठ स्वच्छ शहर में प्रथम स्थान दिलाया।

सुझाव – 15 अगस्त 1947 को भारत आजाद हुआ। आजादी के बाद अनेक प्रधानमंत्रियों ने अपने कार्यकाल में अनेक योजनाएँ बनायी किन्तु इन योजनाओं में परमआदरनीय 'मोदीजी' के स्वच्छ भारत अभियान योजना सर्वश्रेष्ठ है। मोदीजी भारत को विश्व में सबसे अधिक शक्तिशाली एवं सम्पन्न बनाना चाहते है। वे जानते है कि सबसे अधिक शक्तिशाली एवं सम्पन्न बनने के लिए भारत के नागरिकों का स्वस्थ रहना जरूरी है एवं स्वस्थ रहने के लिए भारत को स्वच्छ होना जरूरी है। अतः स्वच्छ भारत अभियान को सफल बनाने हेतु निम्नलिखित सुझाव है

1. शहरों को आवारा पशुओं से मुक्त करना – नगर-निगम ने शहरों को गाय माता, सुअर, बकरा-बकरी एवं अवैध माँस विक्रेताओं से मुक्त कर दिया है लेकिन आवारा कुत्तों से मुक्त नही कराया। ये आवारा कुत्तो जगह-जगह गंदगी करते है जिससे महामारी फैलने का भय रहता है ये आवारा कुत्तो बिना किसी चेतावनी दिये लोगों को काटते है जिससे अनेक लोगों की मूत्यु भी हो जाती है। पालतु कुत्तो भी घरों को एवं पड़ोस के घरों को गंदा कर देते है। यदि नगरनिगम इन आवारा कुत्तों को पकड़कर शेर की तरह चिड़ियॉघर में रख ले तो शहर पूर्णतया स्वच्छ एवं बिमारी मुक्त हो जायेगा।

2. नागरिकों की सहभागिता – प्रशासन एवं नगरनिगम को स्वच्छ भारत अभियान को पूर्णतया सफल बनाने के लिए नागरिकों की सहभागिता बढ़ाना चाहिये स्वच्छ शहर के साथ-साथ स्वच्छ मोहल्ले को भी सम्मानित करना चाहिये।

3. अवैध वसुली पर रोक – प्रशासन एवं नगरनिगम को अवैध वसुली (100 रू प्रतिमाह प्रत्येक नागरिक से) पर रोक लगाना चाहिये। इसके बदले गंदगी एवं कचरा फैलाने वालों को कठोर दण्ड से दण्ड़ित कर प्राप्त

राशि का उपयोग स्वच्छ भारत अभियान में करना चाहिये।

4. जल स्त्रोत प्रदुषित होने से बचाना – जल स्त्रोत को अवैध कब्जे से मुक्त कराकर उनकें आस–पास पौधा रोपण करना चाहिये। ड्रेनेज एवं उद्योगों के पानी को नदी एवं अन्य जल स्त्रोतों में नहीं बहाकर उसे उपचारित कर इसका उपयोग सिंचाई, सफाई एवं मरम्मत कार्य हेतु करना चाहिये।

5. कामचोर एवं लापरवाह कर्मचारियों को सेवामुक्त करना – कामचोर, चापलुस एवं लापरवाह कर्मचारियों को सेवामुक्त कर देना चाहिये ताकि शेष कर्मचारी ईमानदारी से कार्य कर स्वच्छ भारत अभियान का सपना साकार कर सके।

निष्कर्ष – इस प्रकार हम कह सकते है कि 2019 तक भारत को स्वच्छ और हरा–भरा बनाने के लिये स्वच्छ भारत अभियान एक सराहनीय एवं स्वागत योग्य कदम है। जैसा कि हम जानते है कि 'स्वच्छता स्वर्ग की ओर अगला कदम है'। यदि हम सब प्रभावी रूप से इस अभियान का अनुसरण करे तो आने वाले कुछ वर्षो में हमारा देश स्वर्ग बन जाएगा। यदि देश स्वच्छ रहेगा तो देश के नागरिक स्वस्थ रहेगें एवं देश तेजी से विकास करेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पत्रिका
2. दैनिक भास्कर
3. नई दुनिया

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

माल एवं सेवाकर (जी.एस.टी.) एक व्यावहारिक अध्ययन

डॉ. दीपक जैन *

शोध सारांश – देश के अब तक के सबसे बड़े 'कर सुधार' की जिम्मेदारी पूजनीय एवं लोकप्रिय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदीजी ने अपने ऊपर लेकर इसका शुभांरभ 1 जुलाई 2017 शुक्रवार को आधी रात 12 बजते ही राष्ट्रपति श्री प्रणव मुखर्जी एवं प्रधानमंत्री मोदीजी ने एक साथ बटन दबाकर पूरे देश में उक सरल कर व्यवस्था प्रारम्भ की। जिसे माल एवं सेवाकर (जी.एस.टी.)कहते है।

जी एस टी के पहले भारत में माल के उत्पादन,बिक्री,वितरण एवं सेवाओं की पूर्ति पर 17 प्रकार के अप्रत्यक्ष कर एवं 23 प्रकार उपकर लगते थे जो काफी जटिल थे। इन करों को भरने में करदाता एवं कर वसूली में अधिकारियों को अनेक कठिनाईयों का सामना करना पडता था। इसमें कर चोरी से भी सरकार को राजस्व की हानि होती थी इन सभी समस्याओं के निवारण हेतु पूजनीय प्रधानमंत्री मोदीजी ने वास्तव में सहासिक कदम उठाकर इतिहास रचा। कुछ राजनैतिक दलों ने इसका विरोध कर जनता एवं व्यापारियों को जी.एस.टी. के बारे में गलत जानकारी देकर उकसाया जिसमें पूरे देश में जी.एस.टी. विरोध का महौल बनने लगा। इसी जिज्ञासावश मैने इस विषय का चयन किया।

प्रस्तावना – 1 जुलाई 2017 को जी.एस.टी. भारत में लागू हो जाने पर भारत विश्व में जी.एस.टी. कर व्यवस्था में 161वाँ देश बन गया। माल एवं सेवाकर लागू होने हेतु पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने कदम उठाया था। उन्होंने 'एक राष्ट्र, एक कर, एक बाजार' का सपना देखा था। उन्होंने जी.एस.टी.हेतु केलकर समिति का गठन किया था। लेकिन सन् 2004 में सरकार बदल गई। इसके बाद जी एस टी लगाना टलता गया क्योंकि कोई भी सरकार जी एस टी लागु कर खतरा मोल नहीं लेना चाहती थी। किन्तु जिसप्रकार समुद्र मंथन में विष शिवजी ने पीकर देवताओं की रक्षा की ठीक उसी प्रकार पूजनीय प्रधानमंत्री मोदीजी ने माल एवं सेवाकर(जी.एस.टी.) कर लागूकर विपक्षी दलों एवं जनता का विरोध सहन कर देश एवं देशवासियों के हित में साहसिक कार्य किया।

जी एस टी क्या है–जी.एस.टी. एक व्यापक बहुस्तरीय गंतव्य आधारित कर है जो प्रत्येक मूल्य में जोड़ पर लगाया जाता है। कोई भी वस्तु निर्माण से लेकर अंतिम उपभोग तक कई चरणों के माध्यम से गुजरता है पहला चरण कच्चे माल को खरीदना, दुसरा चरण उत्पादन या निर्माण होता है, फिर सामाग्रियों के भंड़ारण या गोडाउन में डालने की व्यवस्था होती है इसके बाद, उत्पाद रीटैलर या फुटकर विक्रेता के पास आता है और अंतिम चरण में, रिटेलर अंतिम उपभोक्ता को माल बेचता है।

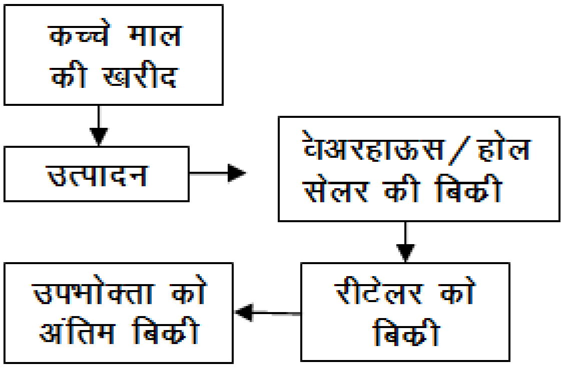

वस्तु एवं सेवा कर इतना महत्वपूर्ण क्यों है – जी.एस.टी. ने वर्तमान टैक्स संरचना को और अर्थव्यवस्था को बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है वर्तमान में भारतीय कर संरचना दो में विभाजित है– प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कर।

प्रत्यक्ष कर वह है जिसमें देनदारी किसी और को नहीं दी जा सकती। इसका एक उदाहरण आयकर है जहां आप आय अर्जित करते हैं और आप उस पर कर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी हैं।

अप्रत्यक्ष कर वह है जिसमें देनदारी किसी अन्य व्यक्तिको को दी जा सकती है।इसका अर्थ यह है कि जब दुकानदार अपने बिक्री पर वैट देता है तो वह अपने ग्राहक को देयता दे सकता है। इसलिए ग्राहक वस्तु की कीमत और वैट भुगतान करता है ताकि दुकानदार सरकार को वैट जमा कर सके। अर्थात ग्राहक न केवल उत्पाद की कीमत का भुगतान करता है, बल्कि उसे कर दायित्व भी देना पड़ता है, और इसलिए, ज बवह किसी वस्तु को खरीदता है तो उसे अधिक खर्च होता है।

जब से जीएसटी लागू हुआ है तो 3 जरह के कर होंगे:

सीजीएसटी:जहां केन्द्र सरकार द्वारा राजस्व एकत्र किया जाएगा

एसजीएसटी:राज्य में बिक्री के लिए राज्यसरकारों द्वारा राजस्व एकत्र किया जाएगा

आईजीएसटी:जहां अंतरराज्यीयबिक्री के लिए केन्द्रसरकारों द्वारा राजस्व एकत्र किया जाएगा

नए शासन के तहत कर संरचना निम्नानुसार होगी :

लेनदेन	नई प्रणाली	पुरानी व्यवस्था	व्याख्या
राज्य के भीतर ब्रिकी	सीजीएसटी+ एसजीएसटी	वैट+क्रेन्दीय उत्पाद शुल्क/ सेवा कर	राजस्व अब केन्द्र एवं राज्य के बीच बांटा जायेगा
दुसरे राज्य को ब्रिकी	आईजीएसटी	क्रेन्दीय ब्रिकी कर +उत्पाद शुल्क/ सेवा कर	अंतरराज्यीय बिक्री के मामले में अब केवल एक कर होगा

अध्ययन का औचित्य एवं उद्देश्य – माल एवं सेवाकर(जी.एस.टी.) से

* प्राध्यापक, श्री जैन दिवाकर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

पहले भारत में माल के उत्पादन, बिक्री, वितरण एवं सेवाओं की पूर्ति पर 17 प्रकार के अप्रत्यक्ष कर एवं 23 प्रकार उपकर लगते थे। इसमें दोहरे कर की समस्या थी। यह एक जटिल प्रणाली थी। इससे करदाता को करभरने एवं हिसाब रखने में कठिनाई होती थी। इसमें कर चोरी की संभावना अधिक रहती थी एवं सरकार को राजस्व की हानि होती है माल एवं सेवाकर(जी.एस.टी.) पूरे भारत में चर्चित मुद्दा होने के कारण मैने इस विषय का चयन किया है।

इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु निम्न सहायक उद्देश्य निर्धारित किये है-

1. जी एस टी का उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव का अध्ययन
2. जी एस टी का आम उपभोक्ता पर प्रतिकूल प्रभाव का अध्ययन
3. जी एस टी का राजस्व पर प्रतिकूल प्रभाव का अध्ययन

परिकल्पना – उपरोक्त उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित परिकल्पनाएँ रही जिनका परीक्षण एवं अध्ययन किया गया।

1. जी एस टी का उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव का अध्ययन
2. जी एस टी का आम उपभोक्ता पर प्रतिकूल प्रभाव का अध्ययन
3. जी एस टी का राजस्व पर प्रतिकूल प्रभाव का अध्ययन

जी एस टी. की दरे

जी एस टी. की दरे इस प्रकार है :-

1.	आवष्यक वस्तुएँ	6%
2.	सामान्य उपयोग के माल/सेवाएँ	5%
3.	मूल आवश्यकता वाली सेवाए/उत्पाद	12%
4.	मानक वस्तुएँ राजस्व तटस्थ दरे	18%
5.	विलासिता/हानिकारक वस्तुएँ	28%

सुझााव – सरकार को हानिकारक एवं विलासिता वस्तुओं पर जी एस टी. की दरों को बढ़ाकर अधिक कर देना चाहिए तथा गरीब लोगों के हित में कुछ और आवश्यक वस्तुओं को जी एस टी.से मुक्त कर देना चाहिए। जी एस टी. की दरों में कमी कर देना चाहिए। कर वसुली के लिए ईमानदार एवं मेहनती अधिकारी की नियुक्ति करना चाहिए। राजस्व शक्ति से वसुलना चाहिए। जी एस टी. की दर इतनी होना चाहिए ताकि उत्पादन पर प्रतिकुल प्रभाव नहीं पड़े। जी एस टी. के लिए उन्नत सॉफटवेयर उपलब्ध कराना चाहिए। सरकार को पेट्रोलियम पदार्थों को शीघ्र जी एस टी. के अंमर्गत लाना चाहिए इससे वैट की दरों की विसंगति दूर होगी और राज्यों द्वारा की गई करों में बढ़ोत्तरी से मुक्ति मिलेगी। सरकार को गरीब एवं मध्यम परिवार के उपभोक्ता द्वारा उपभोग की वस्तुओं एवं सेवाओं पर जी एस टी. की दर कम से कम करना चाहिए। उदाहरण केबल एवं डिश टी.वी पर जी एस टी. कम करना चाहिए ताकि गरीबों का मनोरंजन हो सके इसके बदले सिनेमा, क्रिकेट मैच की टिकटों पर अधिक से अधिक दर से जी एस टी.लगाना चाहिए क्योंकि इससे अमीर लोग मनोरंजन करते है। इसके अलावा बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू, गुटका, शराब एवं अन्य नशीली वस्तुओं पर ऊँची दर से जी एस टी. लगाना चाहिए ताकि इन पर रोक लग सके।

निष्कर्ष – जी एस टी व्यवस्था अभी सुधार समस्या से गुजर रही है इससे सरकार, व्यापारी एवं उपभोक्ता को पीड़ा सहन करना पड़ रही है। यह हर्ष का विषय है कि भारत सरकार ने जी एस टी. के प्रभावों की समीक्षा की है एवं जी एस टी कौंसिल (7.10.17) की मीटिंग में कई सुधारों एवं राहतों की घोषणा की। 28 वस्तुओंपर कर की दरे कम की गई है छोटे सेवा प्रदाता जिनकी करयोग्य सेवाएँ 20 लाख रूपये से कम है उन्हें अंतर्राजकीय सेवा प्रदान करने के लिए पंजीयन से मुक्ति दी गई है जी एस़ टी कौंसिल के अनुसार 200 वस्तुओं की दरे 28% से घटाकर 18% और 18%से घटाकर 12% की गयी है पेनल्टी में भी राहत दी गई और कम्पोजिशन को 1.5 करोड़ रू तक बढ़ाने की अनुशंसा की गई है ये कदम सहरानीय है ताकि जी एस टी भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए वरदान सिद्ध हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रतियोगिता दर्पण, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली
2. दैनिक भास्कर, इन्दौर
3. जी एस टी. , प्रथम वर्ष,श्रीपाल सकलेचा, सतीश पब्लिकेशन, 2017-18
4. अप्रत्यक्ष कर, श्रीपाल सकलेचा, सतीश पब्लिकेशन, 2016-17

****

NSS Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में स्टेट बैंक समूह और भारतीय महिला बैंक के विलय का अध्ययन

कामरान अहमद खान *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के पांच सहयोगी बैंक स्टेट बैंक ऑफ पटियाला, स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर, स्टेट बैक ऑफ हैदराबाद, स्टेट बैंक ऑफ मैसूर, स्टेट बैक ऑफ त्रावणकोर और भारतीय महिला बैंक का भारत के सबसे बड़े सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के साथ हुए विलय का स्टेट बैंक ऑफ इंडिया पर और भारत की बैंकिंग इंण्डस्ट्री पर पड़ने वाले प्रभाव पर है। इस शोध पत्र में यह जानने का प्रयास किया गया है, कि जब नॉन परफारमिंग असेट्स (एन.पी.ए.) में डूबे 6 बड़े बैंकों का देश के सबसे बड़े सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक के साथ विलय किया गया तो बैंक की वित्तीय स्थिति पर क्या प्रभाव पड़ा। प्रस्तुत शोध पत्र में भारत की आज़ादी से पहले अंग्रेजो द्धारा स्थापित बैंक आज जो देश का सबसे बड़ा और अग्रणी बैंक बना हुआ था, उस बैंक के विलय के बाद वित्तीय स्थिति जानने का प्रयास किया गया है। साथ ही इस शोध पत्र में विलय के बाद स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की अंतराष्ट्रीय बैंकिंग बाजार में स्थिति जानने का भी प्रयास किया गया है।

प्रस्तावना

अ) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया – 2 जून 1806 को कलकत्ता में बैंक ऑफ कलकत्ता की स्थापना हुई थी। तीन वर्षो के पश्चात इसको चार्टर मिला तथा इसका पुनर्गठन बैंक ऑफ बंगाल के रूप में 2 जनवरी 1809 को हुआ। यह बैंक ब्रिटिश इंडिया तथा बंगाल सरकार द्धारा चलाया जाता था। बैंक ऑफ बॉम्बे तथा बैंक ऑफ मद्रास की शुरुआत बाद में हुई। बाद में 28 जनवरी 1921 को इन तीनो बैंकों का विलय करके एक नए बैंक इंपिरियल बैंक ऑफ इंडिया की शुरुआत की गई। वर्ष 1951 में जब प्रथम पंचवर्षीय योजना लागू हुई तो इसमें ग्रामीण क्षेत्र के विकास को इसमें सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई। उस समय तक इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया सहित देश के वाणिज्यिक बैंको का कार्य–क्षेत्र शहरी क्षेत्र तक ही सीमित था तथा वे ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक पुन:निर्माण की भावी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पूरी तरह तैयार नहीं थे। 1 जनवरी 1935 को रिजर्व बैंक के राष्ट्रीयकरण के साथ ही 'बैंकिंग नियमन अधिनियम' पारित किया गया, जिसके द्धारा भारतीय रिजर्व बैंक को वाणिज्यिक बैंकों पर नियंत्रण रखने का विस्तृत अधिकार प्राप्त हो गया। यद्यपि ग्रामीण बैंकिंग जांच समिति इम्पीरियल बैंक के राष्ट्रीयकरण के पक्ष में नहीं थी, पर अखिल भारतीय साख समिति ने इम्पीरियल बैंक के साथ कुछ राज्य–सम्बद्ध बैंकों को मिलाकर 'स्टेट बैंक ऑफ इंडिया' की स्थापना की संस्तुति की। फलस्वरूप 1 जुलाई, 1955 से इम्पीरियल बैंक की सभी सम्पत्तियों तथा देनदारियों को अधिग्रहण करके स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने अपना कार्य करना प्रारंभ किया।

ब) स्टेट बैंक समूह – स्टेट बैंक के राष्ट्रीयकरण के बाद 1959ई. में, इसके साथ अन्य 7 बैंकों को स्टेट बैंक के सहायक बैंकों के रूप में बदल दिया गया था और इसे 'स्टेट बैंक समूह' का नाम दिया गया। स्टेट बैंक समूह के वह 7 बैंक इस प्रकार हैं:–

1. स्टेट बैंक ऑफ पटियाला,
2. स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एंड जयपुर,
3. स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद,
4. स्टेट बैंक ऑफ मैसूर,
5. स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर,
6. स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र,
7. स्टेट बैंक ऑफ इंदौर.

स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र 13 अगस्त, 2008 को और स्टेट बैंक ऑफ इंढौर 26 अगस्त, 2010 को स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में विलय कर दिए गए।

स) भारतीय महिला बैंक – भारतीय महिला बैंक (बीएमबी) एक वित्तीय सेवा प्रदाता बैंकिंग कंपनी थी। पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने देश की पहली महिला प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी की 96वीं जयंती के उपलक्ष्य में 19 नवम्बर, 2013 को 1000 करोड़ की पूंजी के साथ देश में पूर्ण रूप से महिलाओं को समर्पित देश के पहले महिला बैंक की स्थापना की। इसमें 100 प्रतिशत अंश पूंजी भारत सरकार की थी। पहले इसको केवल महिलाओं के लिए बनाया गया था, परन्तु बाद में इसमें अन्य लोगों से भी जमा स्वीकारा जाने लगा, लेकिन मुख्य रूप से इसमें महिलाओं के लिए ऋण देने का प्रावधान था। पाकिस्तान और तंजानिया के बाद भारत विशेष रूप से महिलाओं के लिए बैंक खोलने वाला दुनिया का तीसरा देश था।

कार्यप्रणाली – अध्ययनदेश के सबसे महत्वपूर्ण बैंक स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के साथ स्टेट बैंक ऑफ इंडिया समूह के 5 बैंक और भारतीय महिला बैंक के विलय के संदर्भ में है। अध्ययनमें विलय से पहले और विलय के बाद सभी महत्वपूर्ण वित्तीय कार्यप्रणालीयों और उनकी स्थितियों पर प्रकाश डाला गया है। अध्ययनके दौरान सूचना का संकलन द्वितीयक समंकों के द्धारा किया गया है।

उद्देश्य

1. स्टेट बैंक समूह का स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में विलय के बाद भारतीय स्टेट बैक पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययनकरना।
2. विलय के बाद स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की वित्तीय स्थिति में होने वाले बदलाव का अध्ययनकरना।
3. विलय के बाद देश व विदेश में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की स्थिति में

* शोधार्थी (वाणिज्य) शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

होने वाले सुधार का अध्ययन करना।

सीमाएं – संबंधित अध्ययनका क्षेत्र और सीमा सीमित है। अध्ययनके लिए चयनित अवधि सीमित है।

सामान्य परिदृश्य – विभिन्न बैंकों के आपसी विलय तथा गैर बैंकिंग कम्पनियों (एनबीएफसी) के बैंकों में विलय के संबंध में विस्तृत दिशा-निर्देश भारतीय रिजर्व बैंक ने 2005 को जारी किए थे। यह दिशा-निर्देश निजी क्षेत्र के बैंकों के साथ-साथ सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के विलय के मामलों में भी प्रभावी हैं। इनके तहत बैंकों के स्वैच्छिक विलय के लिए अब दोनों बैंको के प्रबंधक मण्डलों की दो-तिहाई बहुमत की सहमति आवश्यक होगी। दो-तिहाई बहुमत केवल उपस्थित सदस्यों का ही नहीं बल्कि सभी सदस्यों का आवश्यक किया गया है। प्रबंधक मण्डलों की दो-तिहाई बहुमत से सहमति के पश्चात् शेयरधारकों की दो-तिहाई बहुमत से सहमति और रिजर्व बैंक की भी अनुमति विलय हेतु इन ईकाइयों को लेनी होगी।

विलय के लिए पहली बार जारी किए गए इन दिशा निर्देशों में यह कहा गया है कि विलय प्रस्ताव पर विचार करते समय बैंक के प्रबंधक मण्डल को विलय किए जाने वाले बैंक की परिसम्पत्तियों, दायित्वों एवं आरक्षित कोषों आदि की स्थिति पर भी विचार करना होगा। साथ ही यह भी देखना होगा कि विलय के लिए प्रस्तावित स्वैप रेश्यो किसी स्वतंत्र मूल्यांकन एजेंसी द्धारा निर्धारित किया गया हो तथा यह उचित हो। प्रबंधकों को इस बात पर भी ध्यान देना होगा कि विलय के पश्चात् 'विलयित इकाई' में किसी व्यक्ति समूह अथवा संस्था की बैंक में शेयरधारिता सम्लणधी भारतीय रिजर्व बैंक के प्रावधानों का उल्लंघन न करें। विलय के उपरांत 'विलय इकाई' की लाभप्रदत्ता तथा उसके पूंजी पर्याप्तता अनुपात पर पड़ने वाले प्रभावों का मूल्यांकन भी सम्बन्धित प्रबंध मण्डल को देखना चाहिए।

विलय का कारण – स्टेट बैंक के 5 सहायक बैंकों और भारतीय महिला बैंक का स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में विलय होने के पीछे निम्न कारण देखे गए हैं :-

1) भारत सरकार राष्ट्रीयकृत बैंकों को उनके डूबत ऋण (एन.पी.ए.) से निपटने के लिए अनुदान (सब्सिडी) देती है, अब भारत सरकार को 6 अलग-अलग बैंको को अनुदान (सब्सिडी) की बजाए एक ही बैंक मर्जर बैंक को देना आसान होगा।
2) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया का पिछले कुछ सालों से लाभ गिरता जा रहा था। अब विलय के बाद स्टेट बैंक ऑफ इंडिया का लाभ उसकी लाभ हानि खातों में कुछ सुधार होता हुआ नजर आएगा। पूरे एसबीआई समूह का लाभ वित्तीय वर्ष 2016 में 12,225 करोड़ रूपये से गिरकर वित्तीय वर्ष 2017 में सीधे 241 करोड़ रूपये आ गया था। यह लाभ विशेषकर स्टेट बैंक समूह के हानि के कारण घटा था।
3) जिन स्टेट बैंक समूह के ऋण एन.पी.ए में बदल गए हैं विलय के बाद उन्हें नए सिरे से वसूली करने में बल मिलेगा।
4) ब्रांच बैंकिंग की लागत में विलय के बाद भारी कमी आयगी जिससे स्टेट बैंक ऑफ इंडिया कि वित्तीय स्थिति सुधरने में सहायक सिद्ध होगी।

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया पर विलय का प्रभाव – स्टेट बैंक समूह और भारतीय महिला बैंक का स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में विलय के परिणामस्वरूप स्टेट बैंक ऑफ इंडिया आज विश्व के 50 बड़े बैंकों की श्रेणी में 45वें स्थान पर आ गया है। यह भारत का इकलौता बैंक है जो विश्व के 50 बड़े बैंकों की श्रेणी में है। अब विलय के बाद स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की संपत्ति 37 लाख करोड़ के भी पार पहुंच गई है, जो भारत में किसी बैंक के पास सबसे ज्यादा है। विलय के बाद स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की संपत्ति में करीब 25 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। आज स्टेट बैंक ऑफ इंडिया समूह 50 करोड़ के विशाल ग्राहक समूह के साथ खड़ा जो 22,500 शाखाओं और 58,000 एटीएम से सीधे बैंकिंग सुविधा का लाभ ले सकते हैं। स्टेट बैंक समूह और भारतीय महिला बैंक के शेयर धारको को अब स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के शेयर दिये जायेगें जो कि उनके लिए लाभदायक होंगे।

चित्र :-1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

चित्र:-2

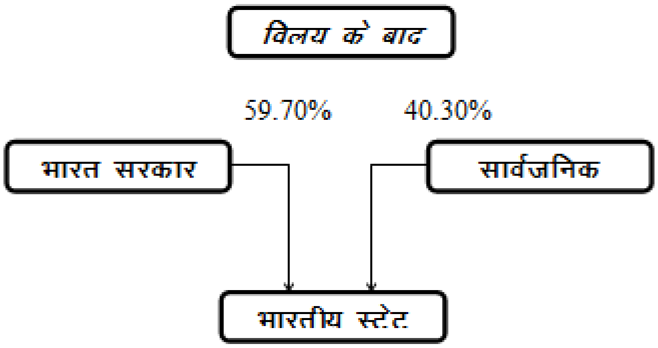

जैसा कि हम **चित्र:-1** में देख सकते हैं कि विलय के पहले स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में भारत सरकार कि हिस्सेदारी 61.30प्रतिशत थी जो **चित्र:-2** में विलय के बाद घटकर 59.70प्रतिशत हो गई वहीं सार्वजनिक शेयरधारकों कि हिस्सेदारी 31.70प्रतिशत से बढ़कर 40.30प्रतिशत हो गई है।

पहली बार कोई भारतीय बैंक दुनिया के शीर्ष 50 बैंकों में आ गया है। एसबीआई, जिसे पहले 52 पर रेट किया गया था, अब एक संयुक्त इकाई के रूप में 45 अंक पर स्थान दिया गया है। विलय के बाद एसबीआई की परिसंपत्ति का आकार अपनी प्रतिद्वंदी आईसीआईसीआई बैंक, जो इस समय संपत्ति आकार के हिसाब से देश में दूसरे स्थान पर है से लगभग 4 गुना ज़्यादा हो गया है।

एसबीआई और स्टेट बैंक समूह के शेयरों का अनुपात – स्टेट बैंक ऑफ इंडिया और स्टेट बैंक समूह कि विलय की शर्तो के अनुसार स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर के प्रत्येक 10 शेयरों के बदले एसबीआई के 28 इक्विटी शेयर दिए जाएंगें। वहीं स्टेट बैंक ऑफ मैसूर के प्रत्येक 10 शेयरों के बदले एसबीआई के 22 शेयर दिए जाएंगें। और स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर के प्रत्येक 10 शेयरों के बदले एसबीआई के 22 शेयर दिए जाएंगें। वहीं स्टेट बैंक ऑफ पटियाला और स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद पूरी तरह से एसबीआई का 100 प्रतिशत अंश धारक बैंक था जो शेयर बाजार में सूची बद्ध नहीं थे।

शाखाओं की अतिव्यापकता – स्टेट बैंक ऑफ इंडिया आज देश के सबसे बड़े शाखाओं के नेटवर्क के जाल के साथ देश का अग्रणी बैंक है। अब विलय के बाद जो स्टेट बैंक समूह की शाखाएं है वह भी एसबीआई के नाम से जानी जाने लगी हैं इस कारण बहुत सी जगह जहां एक ही शाखा की जरूरत है वहां दो-दो या तीन-तीन शाखाएं हो गई हैं। जिस कारण परिचालन व्यय का अतिरिक्त-भार स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के लाभ पर पड़ सकता है।

प्रबंधन की चुनौती – विलय के साथ ही एसबीआई भारत का सबसे बड़ा बैंक बन गया है। विलय के बाद स्टेट बैंक ऑफ इंडिया कि शाखाओं की संख्या 24000 से ज़्यादा हो गई हैं, और 58,000 ए.टी.एम और 2.7 लाख कर्मचारियों के साथ देश का अग्रणी बैंक बन गया है। इन शाखओं और

एटीएमों का प्रबंधन और रख-रखाव करने का ज़िम्मा अब सिर्फ एसबीआई मैंनेजमेंट टीम पर ही निर्भर है। इन सब के परिचालन की चुनौती एसबीआई के सामने बनी हुई है। वहीं वित्तीय स्थिति के अनुसार विलय के बाद एसबीआई अपनी तरलता का प्रबंधन करने के लिए बेहतर स्थिति में होंगे। इस प्रकार उन्हें तरलता समायोजन सुविधा (एलएएफ) और सीमांत स्थायी सुविधा (एमएसएफ) के तहत आरबीआई से उधार लेने के लिए मजबूर नहीं किया जाएगा। एक और लाभ यह है कि लेन-देन की देरी और अनावश्यक लागत में कटौती, जिसके परिणामस्वरूप ग्राहक अनुकूल सेवा और बेहतर प्रशासन होगा।

विशाल डूबत ऋण - स्टेट बैंक ऑफ इंडिया का पहले से ही बहुत ज्यादा ऋण समूह था जो एनपीए की तरफ बढ़ता जा रहा है। विलय के बाद स्टेट बैंक समूह का डूबत ऋण भी एसबीआई के तुलन पत्र में दिखाई देगा। वित्तीय वर्ष 2015-16 में अकेले एसबीआई का स्ट्रैस्ड लोन 66,117 करोड़ रूपये और स्टेट बैंक समूह का स्ट्रैस्ड लोन 35,396 करोड़ रूपये था, जो कि एसबीआई के मुकाबले आधे के बराबर है। इसी के साथ एसबीआई बही खाते में सकल गैर-निष्पादित परिसंपत्ति (एनपीए) का हिस्सा बढ़कर करीब 8.7 हो जाएगा। अब एसबीआई को इस पूरे स्ट्रैस्ड लोन को जल्द से जल्द निपटाने की बहुत बड़ी चुनौती है। वर्तमान में सहयोगी बैंको का एनपीए 7-9 प्रतिशत है जबकि एसबीआई का 6.8 प्रतिशत है। विलय के बाद संयुक्त इकाई का कुल एनपीए आधार प्रभाव के कारण नीचे आने के आसार हैं।

निष्कर्ष - भारतीय रिजर्व बैंक के 2005 के दिशा निर्देशों के अनुसार 1 अप्रैल, 2017 को देश सबसे बड़े बैंक स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में स्टेट बैंक समूह और भारतीय महिला बैंक का विलय कर दिया गया है। विलय के बाद भारती स्टेट बैंक 37 लाख करोड़ की विशाल संपत्ति और 22,500 शाखाओं और 58,000 एटीएम के साथ विश्व में 50 अग्रणी बैंको की सूची में 45वें स्थान पर आ गया है। विलय के बाद स्टेट बैंक ऑफ इंडिया का ग्राहक समूह 50 करोड़ के भी पार पहुंच गया है। वहीं स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के सामने इतने बड़े विशाल ग्राहक समूह को बेहतर ग्राहक सेवा देने की भी चुनौती बनी हुई है। साथ ही साथ विलय के बाद स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एनपीए आधार भाव से नीचे आते दिखा है, परन्तु एसबीआई के सामने विलय स्टेट बैंक समूह का एनपीए निपटाने की भी चुनौती होगी। स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में स्टेट बैंक समूह और भारतीय महिला बैंक समूह का विलय एक विजय के रूप में भी देखा जा सकता है, क्योंकि विलय के बाद स्टेट बैंक ऑफ इंडिया कि वित्तीय स्थिति और ख्याति में काफी सुधार आया है। वहीं विलय के बाद स्टेट बैंक ऑफ इंडिया पहले से और भी ज्यादा विशाल शाखाओं और ग्राहक समूह के साथ विश्व के अग्रणी बैंकों की सूची में आ गया है जो की भारत का इकलौता बैंक है। हालांकि, विलय के बाद नई चुनौतियां उत्पन्न हुई हैं, परन्तु उन चुनौतियों का सामना सही ढंग से किया जाए तो यह फैसला बैंकिंग इतिहास का सबसे सफल फैसलों में से एक होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एसबीआई और उसकी सहयोगी बैंको का विशाल विलयः- डी. सत्यानारायन, डॉ. जी. वी सुब्बा राजू, डॉ. एस. कृष्णमूर्ती
2. Associate Banks Merger – Birds Eye View (By Stakeholder Empowerment Services)
3. https://en.wikipedia.org
4. https://economictimes.indiatimes.com › Industry › Banking/Finance › Banking
5. www.livemint.com › Industry › Financial Services
6. https://www.sbi.co.in
7. https://www.rbi.org.in/
8. www.google.com
9. http://www.thehindubusinessline.com/money-and-banking/merger-of-associate-banks-with-sbi-may-not-be-seamless-for-customers/article9604979.ece

चित्र :- 1

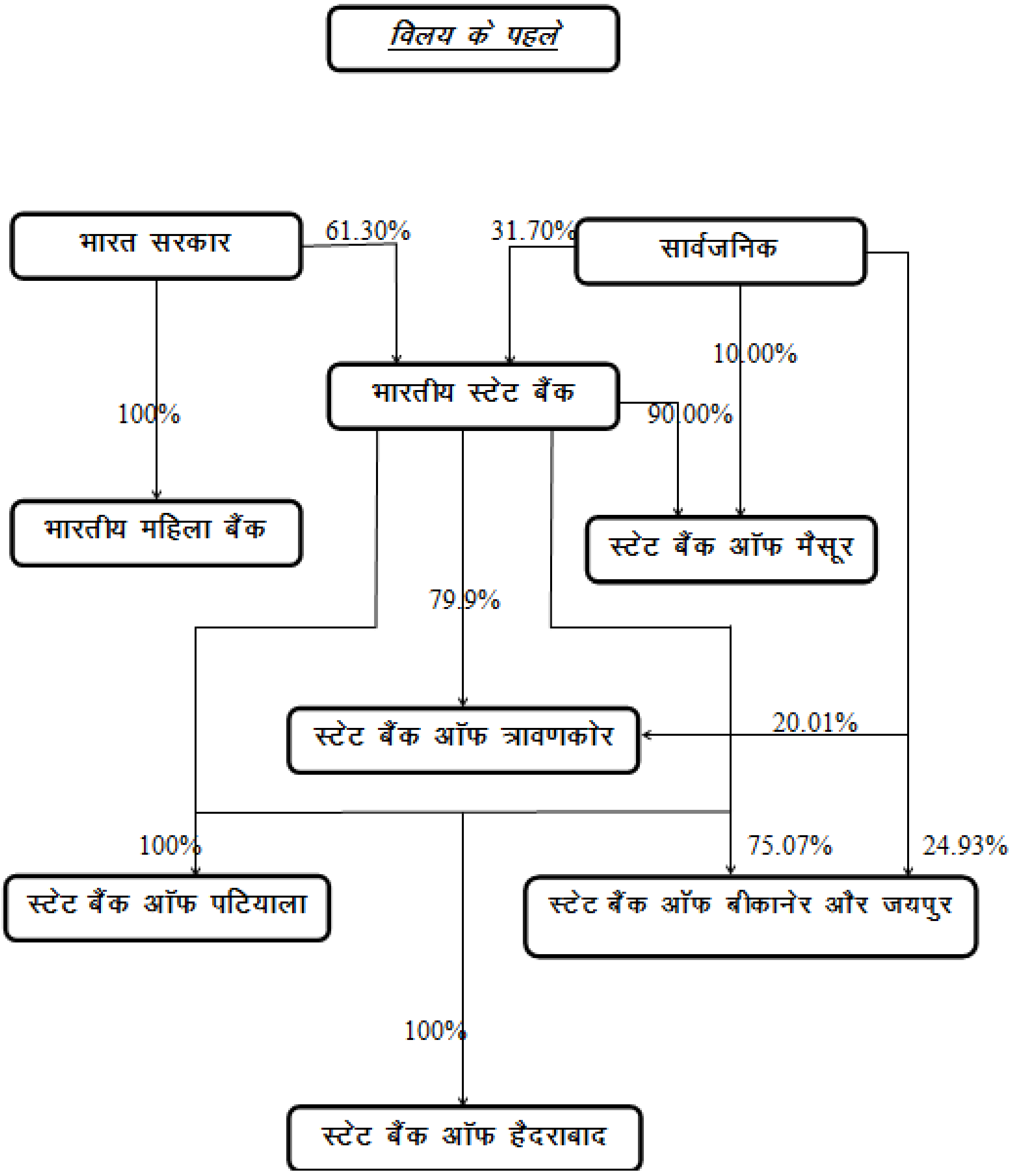
विलय के पहले
भारत सरकार
61.30%
31.70%
सार्वजनिक
10.00%
100%
भारतीय स्टेट बैंक
90.00%
भारतीय महिला बैंक
स्टेट बैंक ऑफ मैसूर
79.9%
स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर
20.01%
100%
75.07%
24.93%
स्टेट बैंक ऑफ पटियाला
स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर और जयपुर
100%
स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Urban Cooperative banks in India : Challenges and probable solutions

Dr. Smriti Singh*

Abstract - The movement of urban cooperative banking came into existence with the objectives of meeting the credit needs of weaker sections in urban areas of the country and to promote their economic position through self-reliance on the principle of equity. The services of urban cooperative banks in deploying credit and rendering other services are indispensable and important for qualitative improvement in the economic conditions of poor people in urban areas. This paper is focused to find out the answer whether the urban cooperative banks are able to achieve their objectives with which they were established and to evaluate the issues and challenges being faced by UCBs. The paper also suggests measures to improve the performance of urban cooperative banks. For the research, data is collected with the help of primary sources i.e questionnaire from selected UCBs in Gwalior region and from secondary sources such as Business-line newspaper, website of sample banks, research reports of Reserve bank of India, and journals.
Keywords - Equity, Cooperative banks, urban areas, Self-reliance,
'Suppose I have come by a fair amount of wealth – either by way of legacy, or by means of trade and industry – I must know that all that wealth does not belong to me; what belongs to me is the right to an honorable livelihood, no better than that enjoyed by millions of others. The rest of my wealth belongs to the community and must be used for the welfare of the community'. ***- Mahatma Gandhi.***

Introduction - The co-operative movement in India is more than a century old. The organization of co-operative institutions in India dates back to the 19th century when the first mutual aid society 'AnyonyaSahakariMandali' was formed in Gujarat at Baroda on February 05, 1889. The first major impetus was provided to these institutions by the passage of the Cooperative Society Act in 1904 and the Kancheepuram Co-operative Credit Society in Tamil Nadu became the first credit society to get registered under this Act. Later in 1919, the subject of co-operation was transferred from Central Government to provincial States.

Conceptual framework: Cooperative credit institutions are an important segment of the banking system and play a vital role in mobilizing deposits and provide credit to people of small means. Rural Cooperatives are primarily mandated to ensure flow of credit to agricultural sector under the provisions of either the State Co-operative Societies Act of the State concerned or the Multi State Co-operative Societies Act, 2002 if the area of operation of the bank extends beyond the boundaries of one State. These banks are licensed by RBI to carry on banking business and hence they are under the dual control of RBI and the Registrar of Co-operative Societies.

Table: GROWTH OF URBAN COOPERATIVES IN INDIA (AMOUNT IN CRORES)

YEAR	NO.OF UCB$_S$	DEPOSITES	LOANS AND ADVANCES
2013	1606	276900	181000
2014	1589	315503	199651
2015	1579	355134	224302
2016	1574	392179	245013
2017	1562	443500	261200

Source: Reserve Bank of India 2012 to 2016, Report on Progress of Banking in India

GRAPH: TOTAL NUMBER AND GROWTH IN ASSETS OF UCB$_S$

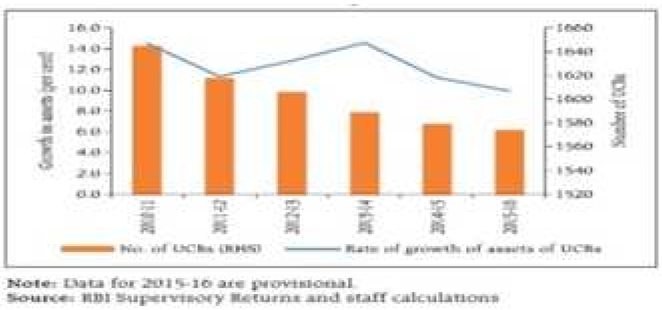

Note: Data for 2015-16 are provisional.
Source: RBI Supervisory Returns and staff calculations

Review of Literature :

Report on Trend and Progress of Banking in India for the year ended (June 30, 2017) summed up in its report that the ongoing improvement efforts were reflected in various performance indicators of urban co-operative banks during the year. Growing deposits and higher investment rate led to a substantial increase in the balance sheet size of UCBs. Their performance improved in terms of profitability, partly due to the diversification strategies facilitated by improving capital positions. But the quality of

* Professor, SJHS Gujarati Innovative College of Commerce and Science, Indore (M.P.) INDIA

their assets somewhat deteriorated partly due to temporary problems.

Rao and Biradarin their study on Belgaum District Co-operative Bank reveals that though UCBs have computerised branches, Phone-in-link services, tele banking services and online bank services but majority of respondents were unaware about these services. The study revealed that high cost of technology, limited geographical area and limited business operations, Convenience banking was the prime reasons for non-adoption of ICT by banks.

Babu and Selkhar(2012) concluded that the UCBs strengthen their uniqueness and growth in the banking industry by taking measures like Professionalization of its management, inculcating good corporate governance, technology absorption and scrupulous adherence to regulatory framework. Further the urban cooperative banking sector should learn from its past experiences and adjust to new realities since banking is risky and challenging business.

JadhavRajani (2010) carried out her research work and analyse that the present co-operative banking scenario is far from modern banking practices. The main cause of this is unavailability of high level of technological tools and the infrastructural facilities like communication system, networking. The researcher also noted that there is lack of awareness amongst the customers about their rights to various banking facilities; lack of knowledge and skills of the employees of the banks and also comments that resistance against change in the system by all levels of the employees and management including top executives of the banks.

Gupta and Jain (2012)observed in their research that though the branch network of cooperatives are widespread across the country but concentrated in certain regions and are less in north-eastern region of the country. Further, efforts are needed to improve banking penetration in the north-eastern part of the country along with improving the financial health of the ground level cooperative institutions.

Objectives of the Study:

1. To diagnose the macro analysis of urban cooperative banks.
2. To study the growth and performance Urban Cooperative Banks in India.
3. To evaluate the issues and challenges being faced by UCBs.
4. To suggest measures to improve the performance of urban cooperative banks.

Research Methodology: For the research, primary sources i.e questionnaire was prepared and circulated to the top and middle level management of sample banks of Gwalior region also personal interviews of Directors, CEOs and senior officers of the selected banks were conducted. Secondary data such asBusiness-line newspaper, website of sample banks, research reports of Reserve bank of India, and journals are used.

Challenges faced by Urban Cooperative Banks:

Neck to neck Competition with Commercial Banks - Cooperative banks are facing stiff competitions with other commercial Banks as commercial banks are at advantageous position:

1. **Considered safer by the customers:** Although the Interest Rates offered by Commercial Banks are less than the rates offered by the UCBs, still the customers feel safer in depositing money with them. During the last few years many UCBs were liquidated, some merged with other stronger banks, and a few are in poor Financial condition. Hence the customers hesitate to make deposits with UCBs.
2. **Huge branch networks of commercial banks:** Commercial banks havehuge network throughout the country whereas due to low Net worth position, most of the UCBs are conducting banking business within one town or city and in few adjacent districts only. UCBs are dependent on other commercial banks for effecting transfer of funds and other important works. This hampers their progress.
3. **Technological setup:** UCBs have limited resources and technological support like Internet banking, Mobile Banking, SMS Banking, Core Banking Systems etc. It is a big hurdle in their development.
4. **Multi-faceted product services:** UCBs do not provide additional services such as Debit Cards, Credit Cards, RTGS, NEFT, Forex Business etc, at par with commercial Private or Foreign Banks. This reduces their Non-Banking business income.
5. **Low cost of lending:** UCBs do not have liberty to consider borrower-wise interest rate. They have to follow their loan policy strictly. But in case of other banks, concessional or reduced rates are applied on loans and advances given to trustworthy customers by the commercial and private banks.
6. **Organized management:** Commercial and private banks offer attractive salaries and facilities to their staff thereby recruiting qualified and experienced personnels. In UCBs things are quite different. There is a dearth of highly qualifiedand trained banking personnel who areunable to attract more business. Also, the customers do not get quick and desired service.
7. **High cost of operation:** Commercial and private banks are managed by professionals and experts hence every precaution is taken to control operating cost while UCBs are not run by professionals. Faulty recruitment system, excess staff, unwanted expenses made by the bank, high interest paid, heavy legal charges paid due to large quantum of litigation etc. ensures that the profit of the bank ultimately reduces.
8. **Lower acceptance by government and other institutions:** There are restrictions on Central, State Govt. Departments, Local Authorities and even Charitable Trusts etc. on having deposit accounts with urban cooperative banks. All low-cost deposits or no interest deposits of these offices go straight to nationalized banks. Even Demand Drafts and Bank Guarantees given by co-operative banks are not accepted by Govt. Departments, Local bodies &

even schools & colleges.

Dual control system - Co-operative banks are jointly controlled by Reserve Bank of India and State Co-operative Department.The multicity of command centers and absence of clear-cut demarcation between the two authorities have been the most complicated problem of urban co-operative banking movement.

Some of the Problems due to Dual Control are as given below:

1. **Dual inspection authorities:** The accounts of the Banks are inspected by RBI & DDR. The Bank has to spare more time for inspections and Audits. They have to submit compliance to both the authorities. This hampers their developmental programs as much time is spent by them for audit and inspection of the bank.
2. **Delay in obtaining Approval:** The Bank has to obtain approval from RCS and RBI for many important decisions. It requires additional time and staff for the purpose.
3. **Non-professional approach of Govt. Department:** State Govt. bodies are not very professional to control the complex system of cooperative banks because of this, often delay takes place in taking major decisions. This automatically results in reduced efficiency of the banks.
4. **Different approach:** The Audit Grade given by RCS is mostly different from the gradation given by RBI. Not only this, many ratios calculated by both the authorities are different.
5. **Issue of Circulars:** RBI is regular in issuing circulars to Banks as and when required and these circulars are available immediately on the web site of the RBI. But this is not so in the case of circulars issued by the RCS.

Other problems - There are some other problemsother than above two types of problems being faced by UCBs.These are:

1. **Lacking in Professional attitude:**The UCB framework is lacking in professional attitude and approach not only at management level but also at operational level. RBI has taken several measures to infuse professionalism in these banks but they are not effective enough in spirit or in implementation.
2. **Poor Salary & Wage Structure:**Highly professional staff is not eager to work in the UCBs due to their poor Wage Structure. This blocks the development of professional attitude and approach among them.
3. **No scope for self-development:**Since many UCBs happen to be small in size, there is no scope for the staff for further promotion to higher positions. Many employees retire in the same grade as they were appointed in. This becomes monotonous and kills their aspirations to make progress in the banking field.
4. **Concentration of Powers:** In some UCBs the powers are centralized in the hands of a few Directors.These powerful directors works as per personal interest and not in the interest of the bank. Also majority of the directors hold the office for years and sometimes office bearers' post passes from father to son or to members of the same family.
5. **Interference of Board Members in the working of the Bank:** Though RBI has issued guidelines to Board not to interfere in the day-to-day working of the Bank, many directors are not inspired by these guidelines and think that it is their right to get the work from the staff as they desire. This obstructs personality development of the staff.
6. **Political Interference:** Many UCBs are under the control of political leaders. The decisions taken by such persons are not in the interests of the bank but always guided by some political motives or goals.

Measures expected to be taken by the Government

1. **Assistance to sick UCBs:** Government should take up rehabilitation of weak and sick UCBs. It should provide those Loans & Advances to be repaid on long term basis as and when required.
2. **Income Tax rebate:** It should exempt UCBs from paying Income Tax. If this is not feasible, then they should be given at least a few more years' tax holiday. Even if tax is to be imposed, it should be at a far lesser rate than that for other banks.
3. **Deputation of Government officers on Board:** It should depute Government Officers with good knowledge and experience of co-operative banking, on Boards to improve the overall health of the bank.
4. **Exclusive Laws for UCBs:** The Government should frame specific laws for UCBs which will help them to recover loans and advances from the borrowers without any scope for wilful defaulters.
5. **Pay Fixation:** The Government should fix Salary & Wages of Urban Bank staff at par with State Government salaries which will definitely boost the morale and efficiency of the working staff and they will give better service to the banks' customers.
6. **Eligibility criteria for Directors:** The Government fix eligibility criteria for the minimum qualifications and experience for appointment as directors of UCBs. At least 50% of the total Directors should have banking experience.

Measures expected to be taken by RBI

1. **Regular inspections by RBI:** Regular inspection of banks should be done by RBI to improve overall health of all Banks. They should do detailed scrutiny so as to make the banking operations defect free.
2. **Qualification & Experience of Directors and Staff:** RBI should fix minimum qualification of chairman and vice –chairman having professional experience of bank. Likewise, some regulatory framework, as regards educational qualifications and experience should be fixed for appointment of clerical staff and officers.
3. **Training Centers at RBI Regional Offices:** RBI should arrange training programs round the year, for the staff of Urban Banks at affordable fees so that these employees will be better equipped to cope with the changing trends in banking.
4. **Single Regulator:** cooperative banks are managed by co-operative department and RBI both. It will be preferable to place them under the single control of RBI

which will bring qualitative improvement in the working of UCBs.

5. Knowledge Support to UCBs: RBI should appoint a full time officer at every regional office, possessing good knowledge of all rules and regulations applicable to UCBs and local language, to solve the problems of UCBs.

6. Exchange of Information & Experience: There is need for an exchange of information and experience between the various UCBs working in the area, and the promotion and creation of co-operative.

7. Social Obligations: Being a part of society every bank has to meet its social obligations. Bank can use their surplus funds for the upliftment of the people living in nearby areas. This will help to maintain good relations with the people in the area and ultimately benefit the bank

Conclusion : UCBs plays an important role in the Indian Financial system. In view of growing networking of UCBs and their utility in financial uplift and financial inclusion there is a need of separate umbrella organization which work exclusively for UCBs also there is a need to take measures like efficient organization system, trained and qualified staff, revised salary structure to staff, training of employees, computerization of its branches, issue of financial package to the banks by RBI, lessening burden of dual control, Professionalization in management, inculcating good corporate governance culture, technology absorption and scrupulous adherence to regulatory framework. For the sustainable development urban cooperative banking sector will learn from its past experiences and adapt them according to competitive and changing environment.

References :-

1. An Information Booklet on Urban Cooperative Banks, their Problems, Expectations and Remedies :An Information Booklet on Urban Cooperative Banks, Edition : January, 2013,ISBN : 978-81-8441
2. Biradar and Rao, "Ict Practices Of Banks: A Study Of Cooperative Banks In Belgaum, Karnataka"IOSR Journal of Economics and Finance (IOSR-JEF) e-ISSN: 2321-5933, p-ISSN: 2321-5925 PP 08-11 www.iosrjournals.org
3. Raveendran P.V. (PuthiaVeettil), 2006"History of urban cooperative Banks" A study on the management of funds in urban co-operative banks in Kerala, Thesis. Department of Commerce and Management Studies, University of Calicut
4. Babu and Selkhar,(2012), The Emerging Urban Co-Operative Banks (Ucbs) In IndiaIOSR Journal of Business and Management (IOSRJBM) ISSN: 2278-487X Volume 2, Issue 5 (July-Aug. 2012), PP 01-05, www.iosrjournals.org
5. Bahulal and Dhanna, (2017) **"**A Study on Co-operative Banks with special reference to Himachal Pradesh Co-operative Bank"IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS) Volume 22, Issue 12, Ver. 7 (December. 2017) PP 67-73 e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845,www.iosrjournals.org
6. Report on Trend and Progress of Banking in India,(2003-04 **),**Developments in Co-operative Banking
7. Gupta and Jain,(2012), " A study on Cooperative Banks in India with special reference to Lending Practices", International Journal of Scientific and Research Publications, Volume 2, Issue 10, October 2012, ISSN 2250-3153
8. Ramu N,(2011),Financial performance of urban cooperative banks(A study with reference to Tamil Nadu),Research Line, Volume IV, No.1, January-June 2011
9. RBI Report on Trend and Progress of Banking in India 2016-17, "Development in cooperative Banking"
10. SoyeliyaUsha L, (2013), "A study on Co-operative Banks in India", International Journal of Research in Humanities and Social Sciences Vol. 1, Issue: 7, September 2013,ISSN :(P) 2347-5404 ISSN:(O)2320-771X
11. Bhaskaran R and Praful Josh P (2000), "Non-Performing Assets (NPAs) in Co-operative Rural Financial System: A major challenge to rural development", Birds s Eye View Dec.2000.
12. DuttaUttam and BasakAmit (2008), "Appraisal of financial performance of urban cooperative banks- a case study." The Management Accountant, case study, March 2008, 170-174.
13. Annual Report 2016- 17- Reserve Bank of India.
14. Annual Report 2015- 16 Reserve Bank of India.

****

साहित्य में भाषा शिक्षण की उपादेयता

डॉ. धीरेन्द्र सिंह *

प्रस्तावना – समाज यदि भाषा की निर्मित में सहायक है तो भाषा भी अपने कर्तव्यों से पीछे नहीं हटती, बल्कि एक स्वस्थ एवं सभ्य नागरिक का निर्माण करती है, जो किसी भी राष्ट्र के निर्माण में अपनी अग्रणी भूमिका निभाता है। भाषा व्यक्ति के व्यक्तित्व का ही निर्धारण नहीं करती अपितु उसे संस्कारवान भी बनाती है जो उसकी प्रगति का अहम हिस्सा साबित होती है। भाषा के संबंध में आमधारणा है कि वह सम्प्रेषण का माध्यम मात्र है किन्तु इसे वैचारिकता के धरातल पर सोचने, परखने की आवष्यकता है। इसके लिए हमें भाषा की भूमिका को ठीक प्रकार से समझने और समझाने की ज़रूरत है। भाषा के बहुआयामी पक्षों यथा (साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक, संरचनागत, सौन्दर्यशास्त्रीय) के पड़ताल की आवश्यकता है जिससे भाषा के मर्म को समझा जा सके।

बच्चे में जन्मजात भाषिक क्षमता होती है जिसके कारण बच्चा नई भाषा को आसानी से सीख सकता है किन्तु भाषा शिक्षण के समय फोकस विषयवस्तु पर होना चाहिए न कि शब्द संरचना (व्याकरण) पर। वैश्वीकरण के इस युग में सर्वाधिक संकट भाषा पर ही मंडरा रहा है। कई बड़ी-बड़ी अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियाँ भाषा को भ्रष्ट करने में लगी हुई हैं। इनकी नज़र विश्व बाज़ार पर है। इन महाषक्तियों द्वारा एक भ्रम फैलाया जा रहा है कि वे ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा का निर्माण कर रही हैं जिससे मनुष्य-मनुष्य के बीच दूरियाँ कम होंगी। वह एक सोची समझी चाल है ताकि वे अपने विश्व बाज़ार के उद्देश्य को सुनिश्चित कर सकें। इसके भुलावे में आने वाले लोग अतिउत्साहित होकर भाषा के इस शंकर रूप में ही दुनिया की सच्ची मुक्ति व उसे प्रगति के लिए अनिवार्य मानते हैं किन्तु सत्य कुछ और ही है।

उत्तर – आधुनिक समय में हुए भाषिक व सांस्कृतिक अमूल्यन को भी देखना होगा। भूमण्डलीकरण ने बाज़ारवादी मूल्यों और संस्कृति के साथ भाषा को अपना पहला हथियार बनाया है। भाषा मनुष्य की सांस्कृतिक अस्मिता की पहली सशक्त अभिव्यक्ति होती है, जिसकी जड़े बहुत गहरी होती हैं। भूमण्डलीकरण ने जहाँ एक ओर सभ्य और शिक्षित समझी जाने वाली जनता को आकर्षित कर लिया है, वहीं दूसरी ओर ठीक इसके विपरीत कृषक, मज़दूर तथा स्त्रियाँ इस आकर्षण के बाहर अपनी संस्कृति और भाषिक अस्मिता को बनाए हुए हैं। किसी भी समाज के सांस्कृतिक पहचान को बनाने और बचाए रखने में लोक की अहम भूमिका है। लोक में भी विशेष रूप से स्त्रियाँ पारंपरिक गीतों, श्रमाधारित गीतों, ऋतु गीतों आदि के माध्यम से भाषा के निर्माण व विकास तथा उन्हें संरक्षित, संवर्धित करने में अहम भूमिका निभाती हैं। प्रत्येक प्रकार के प्रतिरोध की जीवंत प्रक्रिया लोक में देखी जा सकती है।

साहित्य को समझने में भाषा शिक्षण की अहम भूमिका है। भाषा शिक्षण द्वारा साहित्य को रूचिकर एवं बोधगम्य बनाया जा सकता है। एक तरफ भाषा हमारी विचार प्रक्रिया को सुव्यवस्थिति एवं समृद्ध करती है, तो दूसरी तरफ हमें मुक्त भी करती है। हमें ज्ञान व कल्पना की अनखोजी दुनिया में ले जाती है, जहाँ व्यक्ति स्वतंत्र भाव से अपनी रचनात्मकता को आकार देता है। साहित्य भाषा की जटिलता को दूर कर आमजन के लिए ग्राहय बनाता है। साहित्य की भूमिका को रेखांकित करते हुए प्रेमचंद लिखते हैं – 'साहित्य का उद्देश्य जीवन के आदर्श को उपस्थित करना है जिसे पढ़कर हम जीवन में कदम-कदम पर आने वाली कठिनाईयों का सामना कर सकें। अगर साहित्य से जीवन का सही रास्ता न मिले, तो ऐसे साहित्य से लाभ ही क्या? जीवन की आलोचना कीजिए – चाहे चित्र खींचिए, आर्ट के लिए लिखिए चाहे ईश्वर के लिए, मनोरहस्य दिखाइए, चाहे विश्वव्यापी सत्य की तलाश कीजिए – अगर उससे हमें जीवन का सच्चा मार्ग नहीं मिलता, तो उस रचना से हमारा कोई फायदा नहीं। साहित्य न चित्रण का नाम है, न अच्छे शब्दों को चुनकर सजा देने का, न अलंकारों से वाणी को शोभायमान बना देने का। ऊँचे और पवित्र विचार ही साहित्य नाम की जान हैं।' [1]

भारत जैसे भाषाई बहुलतावादी राष्ट्र में अनेक भाषाएँ मिलकर ही एक समृद्ध राष्ट्रीय अस्मिता का निर्माण कर सकती हैं भाषा के मूल्यवान तत्वों द्वारा ही एक ऐसी राष्ट्रीय चेतना निर्मित की जा सकती है, जिसके बलबूते साम्राज्यवादी, औपनिवेशिक ताकतों से मुकाबला किया जा सके। बहुभाषिकता अपने समय का एक अन्वेषण है और परिवर्तन भी। एक आदर्श शिक्षक के लिए बहुभाषिकता का होना अनिवार्य है अन्यथा वह अपने विद्यार्थियों को समयानुकूल शिक्षण नहीं दे सकता। शिक्षक का कार्य मात्र ज्ञान देना नहीं है बल्कि उसे अपने शिक्षार्थियों के मानस में एक ऐसी चेतना शक्ति का विकास करना है जिससे वह चीज़ों को देखने का एक खास नज़रिया विकसित कर सके। आज का समय प्रतिस्पर्धा का है प्रत्येक क्षेत्र में अपनी सषक्त उपस्थिति दर्ज करनी होगी। विश्व संस्कृति और उसके विविध स्वरूपों की जानकारी हेतु बहुभाषिकता का ज्ञान आवश्यक है जिससे तथ्यों को आसानी से ग्रहण किया जा सके। बहुभाषिकता के अभिप्राय को स्पष्ट करते हुए रमाकांत अग्निहोत्री जी लिखते हैं – 'बहुभाषिकता इंसान होने की पहचान है। जो लोग कहते हैं कि वे एक ही भाषा जानते हैं, वे भी वास्तव में बहुभाषी होते हैं। बहुभाषी होने का एक अर्थ यह भी है कि मैं अंग्रेज़ी, फ्रेंच और जर्मन बोलने वालों से इन्हीं भाषाओं में बात करता हूँ। लेकिन बहुभाषी होने का अर्थ यह भी एक ही मैं अपनी एक ही भाषा में ऐसी 'फाइन ट्यूनिंग' करना जानता हूँ कि उसी भाषा में अपने पिता से एक तरह से बात करता हूँ, अपनी माँ से दूसरी तरह से बात करता हूँ, अपने बच्चे से तीसरी तरह से बात करता हूँ, और अपनी कक्षा के छात्रों से चौथी तरह से बात करता हूँ और जब लिखता हूँ या विद्वानों की सभा में बोलता हूँ, तो पांचवीं तरह से बात करता हूँ। यह भी बहुभाषिकता है।' (रमेश उपाध्याय- भाषा और भूमंडलीकरण)

*असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी) क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल (म.प्र.) भारत

साहित्य और भाषा में अन्योन्याथित संबंध है। एक ओर जहाँ भाषा साहित्य का अवलम्ब है वहीं दूसरी ओर साहित्य भाषा की समृद्धि का द्योतक है। भाषा के अभाव में साहित्य की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती है। साहित्य मात्र विचारों, भावों व जीवन की यथार्थ स्थिति का चित्रांकन नहीं है बल्कि अनुभूति एवं अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम भी है। मार्क्सवादी समीक्षक डॉ. नामवर सिंह साहित्य और साहित्यकार के कर्मनिष्ठ सौन्दर्य की पक्षधरता करते हुए उसकी महत्ता को रेखांकित करते हैं। उनका मानना है कि – 'साहित्यकार की गहराई इस बात में है कि वह सतह को तोड़ता है और इस तरह वह भ्रमों को हटाकर वास्तविकता का सही रूप उद्घाटित करता है। उद्घाटन कार्य ही साहित्यकार का रचना कार्य है – वास्तविकता का निर्माण वह उद्घाटन से ही करता है।' [2]

साहित्य मनुष्य में संस्कारवान बनने, सामाजिक विवेक पैदा करने तथा उसके हृदय को पूर्वाग्रह मुक्त बनाने की प्रेरणा देता है, जिससे मनुष्य में जीवन के प्रति सौन्दर्यबोध एवं भविष्य के बेहतरी की संकल्पना निहित होती है। वह जीवन एवं प्रकृति के गूढ़तम रहस्यों को खोलने और संस्कृति से भटके समाज की स्मृति को चेतनाशील बनाने का काम भी करता है। प्रत्येक युग का साहित्य अपने समय, समाज व भाषा का परिचायक होता है। श्रेष्ठ साहित्य वही हो सकता है जिसमें अपने समय और समाज की यथार्थ स्थिति का परिघटन किया गया हो, अन्यथा वह आनन्द का माध्यम मात्र बनकर रह जाता है। साहित्य में बौद्धिकता के बजाय भावप्रवणता को मूल गुणधर्म मानने वाले समकालीन चिंतक डॉ. विजय बहादुर सिंह साहित्य और उसके अध्येता की ओर जनमानस का ध्यान आकष्ट कराते हुए लिखते हैं – 'हमारे साहित्य के अध्यापक भी न जाने क्यों यह मानने लग गए हैं कि अन्य ज्ञान–विज्ञान शास्त्रों की तरह साहित्य भी एक ज्ञान प्रकार और ज्ञानधारा है। वे यह भूल गए हैं कि साहित्य अपनी आधारभूत प्रकृति में बुद्धि जनित व्यापार नहीं है। विपरीत इसके वह भाव प्रेरित मानसिक व्यापार है।' [3]

साहित्य और भाषा के शिक्षक के लिए शब्दों की पूरी परम्परा का ज्ञान होना नितांत आवश्यक है। चूँकि साहित्य के पठन–पाठन से ही हम भाषा की अभिव्यंजनात्मक शक्ति से परिचित हो पाते हैं। साहित्य से मनुष्य का हृदय विकार मुक्त होता है साथ ही सामाजिक सरोकार से नज़दीकी बढ़ती है। साहित्य, समाज और संस्कृति के मूल्यांकनकर्ता आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की मान्यता है कि – 'मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि से देखने का पक्षपाती हूँ। जो वाग्जाल मनुष्य को दुर्गति, हीनता और परमुखापेक्षिता से बचा न सके, जो उसकी आत्मा को तेजोद्दीप्त न बना सके, जो उसके हृदय को परदु:खकातर और संवेदनशील न बना सके, उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है।'[4]

भाषा के बेहतर ज्ञान की परख के लिए साहित्य की शिक्षा ज़रूरी है। मुख्य भाषा के साथ–साथ क्षेत्रीय या लोक भाषाओं की जानकारी होना भी आवश्यक है। किसी भी भाषा की मजबूती का आधार उसकी क्षेत्रीय बोलियाँ होती हैं जिसमें अपार ज्ञान राशि संचालित रहती है। विद्यार्थियों को क्षेत्रीय भाषाओं के ज्ञान से जोड़ना व लाभान्वित करना ज़रूरी है जिससे उनका समन्वित विकास हो सके।

साहित्य मनुष्य को सामाजिक एवं संवेदनशील बनाता है। साहित्य की इसी विशेषता को परखते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं – 'जो साहित्य मनुष्य समाज को रोग–शोक, दारिद्र्य, अज्ञान, तथा परमुखापेक्षिता से बचाकर उसमें आत्मबल का संचार करता है, वह निश्चय ही अक्षय निधि है। उसी महत्वपूर्ण साहित्य को हम अपनी भाषा में ले आना चाहते हैं।' [5]

साहित्य पर भाषा का और भाषा पर साहित्य का बहुत ज़बरदस्त प्रभाव पड़ता है। भाषा द्वारा ही मनुष्य अपने जीवनानुभवों को वयक्त करता है जो कालान्तर में श्रेष्ठ साहित्य के प्रतिमान सिद्ध होते हैं।

दरअसल भारत जैसे भाषाई दृष्टि से बहुलतावादी राष्ट्र में विविध भाषाएँ मिलकर ही एक राष्ट्रीय अस्मिता का निर्माण कर सकती हैं। भाषाई मेल–जोल, आदान–प्रदान द्वारा ही एक राष्ट्रीय चेतना निर्मित की जा सकती है, जिसके आधार पर साम्राज्यवादी, दमनकारी ताकतों से मुकाबला किया जा सके। यह कार्य केवल एक भाषा द्वारा संभव नहीं हो सकता बल्कि समस्त भाषाएँ समन्वित रूप से संगठित होकर उस चेतना का निर्माण कर सकती हैं जिससे सम्पूर्ण राष्ट्र का गौरव और अस्मिता प्रतिबिम्बित हो सके।

साहित्य मनुष्य को सामाजिक एवं मानवीय बनाता है। सामाजिक संदर्भ के बगैर रचना की परिकल्पना नहीं की जा सकती। सामाजिक वास्तविकताएं कल्पना के साँचे में ढलकर साहित्य का रूप ग्रहण करती हैं इसलिए सामाजिक वास्तविकताओं के बदलने से साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता जाता है। इसीलिए भाषा और साहित्य के शिक्षक का यह दायित्व है कि वह साहित्य समाज और भाषा के अटूट संबंध को ध्यान में रखते हुए नवीन प्रवृत्तियों व विचार धाराओं से खुद परिचित हों और अपने छात्रों से भी परिचित कराए। भाषाई प्रश्न को हमें राष्ट्रीय अस्मिता से जोड़कर तार्किक रूप से समझना चाहिए। भाषा को सिर्फ साहित्य तक ही जोड़कर नहीं देखा जाना चाहिए अपितु अन्य अनुशासनों से मिलाकर देखा जाना चाहिए। अन्य अनुशासनों से मिलकर ही सामाजिक संकट से मुकाबला किया जा सकता है। भाषाई स्तर पर अभी भी हमारी मानसिकता गुलामी की है। जब हम अपनी भाषा के बारे में स्वतंत्र मानसिकता से ही विचार करेंगे तब तक हम पिछड़े ही रहेंगे। भाषा और समाज के आपसी रिश्ते से परिचित कराते हुए अजय तिवारी लिखते हैं – 'भाषा शब्द और वाक्य दोनों से बनती है। जैसे व्यक्ति और समाज दोनों से मनुष्यता बनती है। जैसे शब्द कभी अकेला अर्थवान नहीं होता। व्यक्ति कभी भी अकेला मनुष्य नहीं होता। समाज मनुष्य की व्यवस्था है। वाक्य भाषा की व्यवस्था है। व्यक्ति समाज की इकाई है, शब्द भाषा की इकाई है। इसलिए सामाजिक संबंध व्यवस्था के विकास के साथ भाषा की अर्थपरकता भी विकसित होती है।' [6]

शिक्षण के समय अध्यापक को निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए –

1. अध्यापक केवल विषय वस्तु तक ही सीमित न रहे बल्कि अपने ज्ञान को अपडेट कर सूचनाओं का नवीनीकरण करे।
2. शिक्षण से पूर्व छात्रों की अभिवृत्ति को सकारात्मक बनाने का प्रयास करे।
3. कक्षा शिक्षण को जीवन के व्यवहारिक अनुभवों से जोड़कर देखे।
4. शिक्षण व्यापक एवं सतत मूल्यांकन परक हो।
5. साहित्य विचार और सूचना मात्र नहीं है अपितु व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास का सर्वोत्तम साधन है। कबीर का व्यवहारिक अनुभव, तुलसी की समन्व्य वादी चेतना, प्रेमचंद का गोदान केवल विषय की जानकारी ही नहीं देते अपितु उनके पात्रों का चरित्र जनमानस को परिभाषित भी करता है।
6. कक्षा का शिक्षण केवल पंक्तियों की व्याख्या कर देना मात्र नहीं है बल्कि उस अर्थ की प्रतीति कराना है जिसे साहित्यकार जनमानस में संप्रेषित करना चाहता था।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हमें साहित्य और भाषिक शिक्षण इन पर पृथकश:

नहीं बल्कि समवेत चिंतन करना होगा। इनके समन्वित अध्ययन अनुशीलन से हमारी चेतना परिष्कृत होगी और परिष्कृत चिंतन ही सच्चे साहित्य की निष्पत्ति का निमित्ता हो सकता है तथा सच्चा साहित्य ही समाज और राष्ट्र की सांस्कृतिक अस्मिता को संरक्षित और संवर्द्धित कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्यामसिंह शशि – साहित्य और समाज, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत, पृष्ठ सं. 07
2. डॉ. नामवर सिंह – इतिहास और आलोचना, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ सं. 15
3. डॉ. विजह बहादुर सिंह – स्कूल दूसरा घर, श्रेया प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ सं. 36
4. हजारी प्रसाद द्विवेदी – अशोक के फूल, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ सं. 143
5. वही, पृष्ठ सं. 144
6. हिन्दी शिक्षण नए भविष्य की तलाश – (सं.) शंभुनाथ, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, पृष्ठ सं. 234

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

मध्यप्रदेश के धार जिले में स्वरोजगार की सम्भावनाएँ और वित्त प्रबन्ध हेतु सरकार द्वारा क्रियान्वित योजनाएँ - एक अध्ययन

डॉ. सुरेन्द्र कुशवाह *

प्रस्तावना - मध्यप्रदेश के धार जिले की अर्थव्यस्था कृषि के साथ-साथ जिले में चल रही औद्योगीकरण से भी जुड़ी हुई है बढ़ती हुई जनसंख्या का दबाव एवं परिवर्तित होती संस्कृति तथा जीवनशैली के कारण लोगों के लिए सीमित आय में जीवन निर्वाह करना असम्भव प्रतीत होने लगा है। वर्तमान अर्थव्यवस्था सेवा प्रधान बन गई है और स्वरोजगार अर्थव्यस्था का महत्वपूर्ण अंग बन गया है। जैसे-जैसे सरकारी क्षेत्र में नौकरियां कम होती जा रही है वैसे-वैसे स्वरोजगार एवं लघु उद्योगों का महत्व बढ़ रहा है। स्वरोजगर शुरू करने में अधिक धन की आवश्यकता जैसे कठिन प्रश्न सरल हो गये है।स्थानीय संसाधनों के आधार पर छोटे-छोटे उद्योग शुरू किए जा सकते है।उद्यमिता विकास केन्द्र और जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्रों पर विशेष रूप से बनाई गई ऐसे छोटे और कुटीर उद्योगों की सूचियां मौजूद है,जो उस क्षेत्र में सफलता पूर्वक संचालित हो सकते है। न केवल उद्योगों के नामों की जानकारी उपलब्ध है,वरन कच्चे माल, पूँजी, श्रमशक्ति, मशीनों,बाजारों की सम्भावना आदि की भी विस्तृत जानकारियां उपलब्ध है। विभिन्न योजनाओं के तहत स्वरोजगार हेतु लघु/कुटीर उद्योग शुरू किए जा सकते है।

जिले में कुल कार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत 46.73 है जिसमें मुख्यत:73.70 कृषक+खेतिहर मजदुर शामिल है। जिससे यह स्पष्ट है कि जिले में अन्य उद्योगों में जनसंख्या का प्रभाव काफी कम है। जिले में छुपी बेरोजगारी भी एक समस्या है जिसका पता लगाना तथा उसे कम करना भी एक अहम दायित्व है इसी दृष्टिकोण से जिले में उपलब्ध औद्योगिक वातावरण, प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधन अंधोसरचना तथा शासन की विकास नीतियों के आधार पर कृषि, वनोपज, पशुधन पर आधारित उद्योगों के साथ-साथ मांग तथा कौशल पर आधारित उद्योगों की सम्भावनाओं को सुदृढ़ बनाया जा सकता है।

अध्ययन का उद्देश्य - मध्यप्रदेश में बडती बेरोजगारी को दूर करने के मददेनजर सरकार द्वारा युवाओं के लिए उपलब्ध अवसर एवं वित्त प्रबंन्ध हेतु क्रियान्वित योजनाओं-स्वरोजगार पर प्रकाश डालना है।

अध्ययन का विधि - प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक समंक पर आधारित है इसके लिए उद्योग निती तथा स्वरोजगार हेतु उन विभिन्न क्षैत्रो को सम्मिलित किया गया है जिसके अंतर्गत प्रदेश का युवा रोजगार-स्वरोजगार प्राप्त कर आत्मनिर्भर बन सकता है। स्वरोजगार - उद्योग/सेवा/व्यवसाय क्षेत्र से संबंधित इकाई की स्थापना हेतु उद्यमियों को आवश्यक पूंजी उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से सरकार द्वारा क्रियान्वित करवाने के उद्देश्य से सरकार द्वारा क्रियान्वित प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम, मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना तथा मुख्यमंत्री उद्यमी योजना आदि पर भी प्रकाश डाला है ताकि युवा उद्यमी इन योजनाओं का लाभ उठा सके।

अध्ययन का क्षेत्र व सिमाऐं - मध्यप्रदेश में स्वरोजगार की सम्भावनाएॅ और वित्त प्रबंध हेतु सरकार द्वारा क्रियान्वित योजनाएॅ विषय पर अध्ययन हेतु म.प्र. के पिछडे धार जिले को आधार बनाया है। प्रस्तुत अध्ययन में वित्त प्रबंन्ध हेतु क्रियान्वित उन्हीं योजनाओं को सम्मिलित किया है जो जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र द्वारा संचालित कि जा रही है।

प्रदेश में रोजगार/स्वरोजगार के सम्भावित क्षेत्र - स्वरोजगार के तीन स्वरूप है उद्योग,सेवा तथा व्यवसाय इन्ही के आधार पर जिले में व्याप्त विकास की प्रबल सम्भावना को वर्गीकृत किया जा सकता है।

औद्योगिक विकास के क्षेत्र में रोजगार/स्वरोजगार की संभावनाएँ - मध्यप्रदेश के धार जिले में युवा उद्यमी स्वयं का लघु/मध्यम उद्योग जिले में उपलब्ध अधोसंरचना को दृष्टिगत रखते हुए स्थापित कर न केवल स्वयं रोजगार प्राप्त कर सकते हैं बल्की अन्य बेरोजगार युवाओं ही रोजगार उपलब्ध करवा सकते है। जिले में सम्भावित उद्योगों की पहचान के लिए निम्नलिखित मापदण्डो को ध्यान में रखना चाहिए।

1. जिले में उपलब्ध कच्चा माल एवं प्राकृतिक संसाधन
2. वर्तमान औद्योगिकीकरण
3. उपलब्ध मानव संसाधन एवं कुशलता
4. तकनीकी उपलब्धता
5. विपणन व्यवस्था
6. परिवहन एवं संसार साधन
7. स्थानीय मांग पूर्ति

जिले में उपलब्ध पहलू को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित उद्योगों की अच्छी सम्भावनाएं मालूम पड़ती है।

(क) कृषि पर आधारित उद्योग - धार जिलें की लगभग 73.70 प्रतिशत आबादी कृषि एवं खेतिहर मजदुरी से सम्बन्धित है। इस क्षेत्र में युवा उद्यमी अदरक का तेल व अदरक का पावडर, टोमेटो उत्पाद व टोमेटो पेस्ट/पल्प ,मक्का से लिक्विड ग्लूकोज तथा मक्का का तेल, केले की प्रोसेसिंग, दाल मिल, आटा चक्की, पापड़ बड़ी, फुड प्रोसेसिंग, पशु आहार, बेसन मिल, मक्के का पोहा, मुर्गी का चारा, आचार उद्योग, सोया एक्सट्रेक्शन प्लांट, सोया बड़ी निर्माण, सोया मीट, मसाला उद्योग, जेम,जैली,साँस निर्माण, तेल निर्माण ,शक्कर उद्योग, कॉटन मील आदी की ईकाइ स्थापित कर स्वरोजगार प्राप्त कर सकते है।

(ख) मांग पर आधारित उद्योग - इन्हें पॉच भागों में विभक्त कर स्पष्ट

* (वाणिज्य विभाग) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

किया जा सकता है।

(अ) रसायन पर आधारित उद्योग – इन उद्योगों में प्लास्टिक थैली बनाना, डिटर्जेन्ट साबुन, प्लास्टिक बनाना, वाशिंग पाउडर, सुगंधित हैयर आईल, ग्रीस उत्पाद, प्लास्टिक ग्रान्युअल्स, एडेसिव्ह टेप उत्पाद, टायर रिट्रेडिंग, प्लास्टिक खिलोने, फिनाईल बनाना, रिचार्जेबल टार्च, कॉडबोर्ड बावसेस, कापी नोटस/रजिस्टर बनाना, प्रिंटिंग प्रेस, हवाई चप्पल बनाना, एयर फ्रेशनर उत्पाद, पेपर सोफे बनाना, केबल वायर निर्माण, रिफाईण्ड लुब्रिकेटिंग आइल बनाना, इंक बनाना, पेन निर्माण उद्योग, स्टेशनरी आयटमस, बीअर इण्डस्ट्रीज, सर्जिकल कॉटन एवं बेण्डेज निर्माण, सोडियम सिलिकेट आदी की ईकाइ स्थापित की जा सकती है।

(ब) इलेक्ट्रीकल/इलेक्ट्रानिक उद्योग – इसके अन्तर्गत युवा उद्यमी म्यूजिकल इन्स्ट्रमेंट, इलेक्ट्रिक मीटर, रेडियो/टी.वी.असेम्बलिंग, इलेक्ट्रानिक खिलोने, म्युजिकल वाचेस बनाना, विद्युत मोटर निर्माण, इमरजेन्सी लाइट का निर्माण, पंखे, मिक्सर, ग्राईंडर आदि निर्माण, छोटे/बड़े बल्ब तथा सीरिज का निर्माण की ईकाइ स्थापित कर स्वरोजगार प्राप्त कर सकते है।

(स) वनोपज पर आधारित उद्योग – वनोपज पर आधारित अगरबत्ती उद्योग, आइस्क्रीम स्ट्रीक्स, मधुमक्खी/पालन शहर संग्रहण, आंवले की लुगदी, लाख निर्माण, गोंद निर्माण, बांस की टोकरियां बनाना, खेलकूद के सामानों का उत्पाद, झाडू निर्माण, बीड़ी उद्योग, आयुर्वेदिक औषधी निर्माण, जडी बूटी का संग्रहण, कोकून फिडिंग, लकड़ी के फर्नीचर का निर्माण करना, ट्रक/बास की बॉडी तैयार करना आदि क्षेत्रों में स्वरोजगार की प्रबल सम्भावना विद्यमान है।

(द) मेकनिकल आधारित उद्योग – इसके अन्तर्गत हार्डवेअर, मेकनिकल वायर, छोटी लेथ मशीन, थ्रेसींग मशीन, स्टील मशीन, वासर ब्रश, अनाज भण्डार केठिया, बारबेड बायर निर्माण, कृषि उपकरण निर्माण, सर्वे उपकरण आदि तथा कुछ **अन्य निर्माणी ईकाइ** जैसे – बेग निर्माण, सीट कव्हर निर्माण, भवन निर्माण सामग्री, सीमेंट जॉली, हयूम पाईप्स, पैकेजिंग कार्य, चश्मे बनाना, पी.वी.सी.पाइप बनाना, ट्रेक्टर ट्राली बनाना, ऑटो पार्टस निर्माण, सीमेण्ट निर्माण/सीमेण्ट का अन्य सामान निर्माण, आटा चक्की व पाट मय कलपुर्जे निर्माण आदि के क्षेत्र में भी उद्यमीयों के लिए पर्याप्त सम्भावनाएं है।

व्यवसाय एवं सेवा क्षेत्र में विकास की सम्भावना – इसके अन्तर्गत निम्नलिखित व्यवसाय/सेवा इकाई स्थापित कर स्वरोजगार प्राप्त किया जा सकता है– स्क्रनी प्रिंटिंग की इकाई, ब्यूटी पार्लर इकाइ, फोटो कॉपी की इकाई/लेमीनेशन, दुपहिया वाहनों की सर्विसिंग, रीपेयरिंग, फास्ट फूड रेस्टोरेंट, व्यवसायिक कार्य हेतु फैक्समशीन, ऑटोमोबाइल बैटरी की रिपयेरिंग तथा रिचार्जिंग, टेलिविजन सैटस की रिपयेरिंग तथा सर्विसिंग, घरेलू विद्युतीय उपकरणों की मरम्मत तथा इलेक्ट्रीकल गुडस् स्टोर, बुक बाईडिंग की इकाई, मिनी ऑफसेट की इकाई, बैंड बाजा इकाई, प्रिंटिंग प्रेस की इकाई, डीजल फ्यूल पम्प/नोजल परीक्षण तथा सैटिंग इकाई, रेफ्रीजरेशन एवं एयर कण्डीशनिंग वर्कशाप, वीडीयों शूटिंग तथा वीडियों कैसेट निर्माण, बिजली की मोटरों,डायनुमा की मरम्मत तथा सर्विसिंग, विज्ञापन एजेन्सी, ट्रेक्टर ट्राली की सर्विसिंग/रिपयेरिंग हेतु इकाइयां, टेन्ट हाऊस की इकाई, चांदी के आभूषणों पर सोने की प्लेटिंग, हार्ड वेयर व पेंटर्स स्टोर की इकाई, छोटे–छोटे पुर्जो पर निकिल प्लेटिंग, सिलेण्डर/ब्लाक बोरिंग मशीन(लूना तथा मोटर साइकिलों आदि के सिलेण्डर्स की बोरिंग के लिये), मारूती सर्विस स्टेशन की इकाई, कम्प्यूटर साफ्टवेयर डेवलपमेंट एण्ड डाटा प्रोसेसिंग, ऑटो मोबाइल पार्टस तथा अन्य वस्तुओं पर जिंक प्लेटिंग, स्टोन पॉलिशिंग की इकाई, ईट निर्माण की इकाई, वेल्डिंग कार्य, छाता मरम्मत, जुता/चप्पल मरम्मत, एस.टी.डी/पी.सी.ओ., विभिन्न वस्तुओं को क्रय–विक्रय करने के स्टोर्स जैस–कपड़ा,स्टेशनरी, कटलरी, चुड़ी,किराना,नमकीन,दुग्ध/सामान,इलेक्ट्रानिक्स सामान,ऑटो पार्टस दुकान व्यवसाय क्षेत्र से सम्बधित है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि धार जिले में साथ ही प्रदेश में अन्य जिलों में बेरोजगार युवक/युवतियां उपरोक्त उद्योग,सेवा या व्यवसाय से सम्बन्धित इकाइयाँ स्थापित कर स्वरोजगार प्राप्त कर सकते है तथा स्थापित इकाई में आवश्यकतानुरूप अन्य बेरोजगारों को रोजगार उपलब्ध करा सकते है।

स्वरोजगार के चयन हेतु सम्बन्धिन व्यक्ति द्वारा परिवार की पृष्ठभूमि,शैक्षणिक योग्यता,प्रशिक्षण तथा आर्थिक स्थिती पर ध्यान देते हुए परियोजना क्षेत्र अर्थात लघु उद्योग,व्यवसाय या सेवा का चयन करना चाहिए परियोजना के चयन हेतु सुक्ष्म बाजार सर्वेक्षण अति आवश्यक है। इस हेतु जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र,उद्यमिता विकास केन्द्र,राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास केन्द्र,जिले का अग्रणी बैंक तथा लघु संगठन के अधिकारी महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान करते है।

परियोजना चयन के पश्चात हितग्राही को प्रशिक्षण लेना होता है साथ ही स्थान चयन करना तथा प्रोजेक्ट रिपोर्ट बनाना होती है। अंत में उद्यमी को नियोजित प्रयास करना होते है इस हेतु उद्यमी को–

1. चयनित इकाई का जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र के अस्थाई पंजीयन कराना।
2. नगर निगम/पंचायत से अनापत्ति प्रमाण–पत्र प्राप्त करना।
3. म.प्र.विद्युत मण्डल से सहमति पत्र प्राप्त करना।
4. यदि परियोजनाओं की आवश्यकता हो तो सम्बन्धित विभाग (उदाहरण,ड्रग,फूड,माइनिंग प्रदूषण निवारण मण्डल आदि) से लायसेंस प्राप्त करना।
5. मशीनों एवं कच्चे माल के कोटेशन बनवाना
6. आवश्यक मार्जिनमनी (स्वयं के अंशदान) एवं बैंक ऋण हेतु जमानतदार तैयार करना एवं
7. वित्तीय योजना का चयन एवं बैंक से सम्पर्क करना।

वित्त प्रबन्ध हेतु सरकार द्वारा क्रियान्वित योजनायें :

(अ) केन्द्र सरकार द्वार क्रियान्वित प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम – स्वरोजगार के अधिकाधिक अवसर सृजित करने के लिए नया प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम केन्द्र सरकार ने 15 अगस्त, 2008 से शुरू किया है, पूर्व में संचालित दो रोजगार कार्यक्रमों– प्रधानमंत्री की रोजगार योजना व ग्रामीण रोजगार सृजन कार्यक्रम का विलय इस नए कार्यक्रम में कर दिया गया है, इस नए कार्यक्रम को आर्थिक मामलों की मन्त्रिमण्डलीय समिति ने मंजूरी 14 अगस्त, 2008 को प्रदान की थी, सब्सिडी युक्त साख वाले इस कार्यक्रम के तहत् ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में 'माइक्रो एंटरप्राइजेज' की स्थापना के जरिए रोजगार के नए अवसर सृजित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया।

इस कार्यक्रम के तहत् माइक्रो एंटरप्राइज स्थापित करने के लिए ऋण लाभार्थी को उपलब्ध कराए जाएंगे, जिसमें कुछ अंश सब्सिडी का होगा, विनिर्माण क्षेत्र में 25 लाख रू. तक व सेवा/व्यापार के क्षेत्र में 10 लाख रू. तक की परियोजनाएं इसके तहत् स्थापित की जा सकेगी. इसके लिए आय सीमा का कोई बन्धन नहीं होगा, किन्तु विनिर्माण क्षेत्र में 10 लाख रूपए

एवं व्यापार/सेवा क्षेत्र में 5 लाख रूपए एवं अधिक की परियोजनाओं के लिए लाभार्थी को कक्षा 8 वीं उर्त्तीण होना चाहिए, सामान्य श्रेणी के अभ्यर्थियों को परियोजना लागत का 10 प्रतिशत स्वंय वहन करना होगा, जबकि विषेष वर्गो (अनुसूचित जाति, जनजाति, अन्य पिछड़े वर्ग, अल्पसंख्यक, महिला, शारीरिक विकलांग, एक्स–सर्विसमैन, पूर्वोत्तर–पर्वतीय एवं सीमावर्ती क्षेत्र के अभ्यर्थी) को 5 प्रतिशत स्वयं वहन करना होगा, शहरी क्षेत्रों में दिए गए ऋण में सामान्य वर्ग के लाभार्थियों के मामले में 15 प्रतिशत तथा विशेष वर्गो के लाभार्थियों के मामले में 25 प्रतिशित भाग सब्सिड़ी के रूप में होगा, ग्रामीण क्षेत्रों में सब्सिडी का अंश इस मामले में क्रमश: 25 व 35 प्रतिशत होगा, PMEGP के अन्तर्गत वित्तीय (सब्सिडी) सहायता हेतु स्तर इस प्रकार है –

PMEGP के अन्तर्गत लाभार्थियों के वर्ग	**(परियोजना लागत का प्रतिशत)**		
	स्वंय योगदान	**सहायता दर**	
		शहरी क्षेत्र	**ग्रामीण क्षेत्र**
सामान्य	10 प्रतिशत	15 प्रतिशत	25 प्रतिशत
विशंष (अनु. जाति/अनु. जनजाति/अ.पि. व./ अल्पसंख्यक/महिला/पूर्व सैनिक/शारीरिक विकलांग ,उत्तर पूर्व क्षेत्र, पहाड़ी एवं सीमावर्ती क्षेत्र	05 प्रतिशत	25 प्रतिशत	35 प्रतिशत

इस योजना का कार्यान्वयन केवीआईसी एक्ट के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में खादी एवं ग्रामोद्योग द्धारा तथा शहरी क्षेत्रों में डिस्ट्रिक्ट इण्डस्ट्रीज सेंटर (DIC) द्धारा किया जाएगा, राष्ट्रीय स्तर पर योजना के कार्यान्वयन हेतु सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मन्त्रालय के अधीन वैधानिक निकाय–खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग एकमात्र नोडल एजेंसी निर्धारित की गई है। जहॉ से उद्यमी आवश्यकतानुसार समस्त ओपचारिकताओं को पुरा करे किसी भी बैंक से स्वरोजगार हेतु ऋण प्राप्त कर सकता है।

ब. मध्यप्रदेश सरकार द्धारा क्रियान्वित योजना – म.प्र. राज्य शासन द्धारा केन्द्र प्रवर्तित योजनाओं को छोडकर वर्तमान में प्रदेश में संचालित मुख्यमंत्री युवा स्वरोजगार योजना, दीनदयाल रोजगार योजना, रानी दुर्गावती अजाध्अजजा स्वरोजगार योजना, मुख्यमंत्री पिछडा वर्ग एवं अल्पसंख्यक वर्ग स्वरोजगार योजना, मुख्यमंत्री आर्थिक विकास योजना, अंत्योदय स्वरोजगार योजना, मुख्यमंत्री कारीगर स्वरोजगार योजना, माटी कला योजना, टंटया भील स्वरोजगार योजना, मुख्यमंत्री साईकिल रिक्शा चालक कल्याण योजना, मुख्यमंत्री हाथठेला चालक योजना, मुख्यमंत्री स्टीट वेण्डर कल्याण योजना एवं मुख्यमंत्री केश शिल्पी योजना सहित स्वरोजगार की सभी योजनाए निम्नानुसार 3 योजनाओं में समाहित कर दिया गया जो इस प्रकार है।

मुख्यमंत्री युवा उद्यमी योजना – 1 अगस्त 2014 से क्रियान्वित इस योजना अंतर्गत उद्यमी के प्रशिक्षण का भी प्रावधान होगा। मुख्यमंत्री युवा उद्यमी योजना की अर्हता एवं वित्तीय सहायता संबंधी प्रावधान निम्नानुसार होगे।

- **परियोजना लागत –** रूपये 10 लाख से रूपये 01 करोड तक
- **पात्रता :–**

आयु – 18–40 वर्ष
शैक्षणिक योग्यता – न्यूनतम दसवी कक्षा उतीर्ण
आय सीमा – कोई बंधन नही

- **वित्तीय सहायता :–**

मार्जिन मनी सहायता – परियोजना के पूंजीगत लागत का 15 प्रतिशत अधिकतक रू 12 लाख
ब्याज अनुदान – पूंजीगत लागत पर 5 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से अधिकतक 7 वर्षो तक
गारंटी फीस (सीजीटी)– प्रचलित दर से अधिकतम 7 वर्षो तक इस योजनांतर्गत
व्यापारिक गतिविधियॉ पात्र नही होगी।

उद्यमियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था के संबंध में सम्पूर्ण योजना बनाकर वित्त विभाग की अनुमति से संबंधित विभागो द्धारा आवश्यक कार्यवाही की जावेगी।

मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना – 1 अगस्त 2014 से क्रियान्वित इस योजना का मुख्य उद्देश्य योजना का लाभ केवल नवीन उद्यमों की स्थापना हेतु देय होगा। इस योजना के प्रावधान विभिन्न विभागों के लिए समान रहेगे। योजना की अर्हता एवं वित्तीय सहायता संबंधी प्रावधान निम्नानुसार होगे।

- **परियोजना लागत (वित्तीय सहायता) –** रूपये 20 हजार से रूपये 10 लाख
- **पात्रता :–**

आयु – 18–45 वर्ष
शैक्षणिक योग्यता – न्यूनतम पांचवी कक्षा उर्तीण स्व प्रमाणिकरण के आधार पर कोई बंधन नही

- **वित्तीय सहायता**

मार्जिन मनी सहायता – सामान्य वर्ग हेतु परियोजना लागत का 15 प्रतिशत अधिकतम रूपये 1 लाख बीपीएल/अजा/अजजा/अन्य पिछडा वर्ग (क्रिमीलेयर को छोडकर)/महिला/अल्प संख्यक/ निशक्तजन हेतु परियोजना लागत का 30 प्रतिशत अधिकतम रूपये 2 लाख
ब्याज अनुदान – प्रचलित दर से अधिकतम 7 वर्षो तक
गारंटी फीस (सीजीटी) – प्रचलित दर से अधिकतम 7 वर्षो तक

मुख्यमंत्री आर्थिक कल्याण योजना – इस योजना के अंतर्गत समाज के सबसे गरीब वर्ग को कम लागत उपकरण तथाध्या कार्यशील पूंजी उपलब्ध कराई जावेगी। योजना का लाभ केवल नवीन उद्यमों की स्थापना हेतु देय होगा। योजना की अर्हता एवं वित्तीय सहायता के प्रावधान निम्नानुसार होगे।

- **परियोजना लागत** – अधिकतम रूपये 20000
- **पात्रता :–**

आयु – 18–55 वर्ष
शैक्षणिक योग्यता – कोई बंधन नही
आय श्रैणी – बीपीएल (केश शिल्पी, स्टीट वेण्डर, हाथठेला चालक, साइकिल रिक्शा चालक, कुम्हार आदि)

- **वित्तीय सहायता**

मार्जिन मनी – परियोजना लागत का 50 प्रतिशत
सहायता – अधिकतम रूपये 10000

इस प्रकार उक्त योजनाओं का लाभ उठाकर युवा उद्यमी उद्योग विनिर्माण/सेवा/व्यवसाय की इकाई स्थापित करके स्वयं का रोजगार प्राप्त कर सकते है।

निष्कर्ष – उक्त अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है कि उद्यमियों को किसी भी उद्योग की स्थापना एवं स्वरोजगार प्रारंभ करने हेतु किये जाने वाले नियोजित प्रयासों में निष्चित सफलता प्राप्त होती है किन्तु इसकी प्रक्रियों के विभिन्न चरणों में समय लगता है। अत: उद्यमी को धैर्य के साथ उत्साहवर्धक कार्य करना चाहिए।स्वरोजगार स्थापित करने हेतु उद्यमी शासन द्वारा प्रारंभ की गई विभिन्न स्वरोजगार योजनाओं प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम, मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना, मुख्यमंत्री उद्यमी योजना, स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना, अन्त्योदय स्वरोजगार आदि में से योग्यता व स्व-अर्हतानुसार योजना का लाभ ले सकता है। और लघु तथा अतिलघु उद्योगों की स्थापना कर स्वयं रोजगार प्राप्त कर दुसरे युवाओं को रोजगार प्रदान कर सकता है।

इस प्रकार उक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि मध्यप्रदेश के पिछड़े जिलों में उपलब्ध प्राकृतिक एवं मानविय संसाधनों के आधार पर उद्योगिक विकास एवं स्वरोगार की प्रबल सम्भावनाएं विद्यमान है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश शासन वाणिज्य, उद्योग एवं स्वरोजगार विभाग भोपाल प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम (मार्गदर्शिका) मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना
2. लघु उद्योग सेवा संस्थान (लाल श्री एस. / लाड़े श्री डी.जी.) औद्योगिक सम्भावना सर्वेक्षण प्रतिवेदन
3. उद्यमीता विकास केन्द्र म.प्र. उद्यमी, उद्योग स्वरोजगार
4. विकास आयुक्त (लघु उद्योग) लघु उद्योग मंत्रालय भारत लघु उद्योग का जर्नल लघु उद्योग समाचार सरकार प्रकाशन
5. ई. इन्फो (डाटा ई) www.mp.industries.in, www. Mp.govt.in

****

अग्रणी बैंकों का आर्थिक विकास में योगदान

डॉ. मोनिका बापट *

प्रस्तावना – 'आर्थिक विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें दीर्घकाल में अर्थव्यवस्था की वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है।'
प्रस्तुत अध्याय में अग्रणी बैंकों का प्रदेश के विकास में योगदान का वर्णन निम्न बिन्दुओं के माध्यम से किया गया है –

1. कृषि के क्षेत्र में विकास
2. लघु उद्योगों के क्षेत्र में विकास
3. सेवा व स्वरोजगार के क्षेत्र में विकास

1. कृषि के क्षेत्र में विकास – क्षेत्रफल की दृष्टि से मध्यप्रदेश भारत का दूसरा एवं जनसंख्या की दृष्टि से सातवाँ बड़ा प्रदेश है। इसकी 74.73: जनसंख्या गाँवों में रहती है। उसकी आजीविका का मुख्य साधन कृषि है, जो प्रदेश की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार है। भारत के अन्य राज्यों की तरह ही म.प्र. के कृषकों को सतत् कई वर्षो तक कृषि उत्पादों के व्यापार एवं मूल्य निर्धारण की जटिल समस्या से जूझना पड़ा। उन्हें उत्पाद की लागत और लाभ का समुचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता था। किसानों के सतत् प्रयासों के निष्कर्ष स्वरूप सरकार द्वारा कृषि उपज मंडियों की स्थापना प्रत्येक जिले में की गयी जिनका नियमन राज्य सरकार द्वारा ही किया जाता है, इसी तारतम्य में प्रदेश सरकार द्वारा कृषि विश्वविद्यालयों ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका नित नए अनुसंधान एवं कृषकों को प्रशिक्षण प्रदान कर निभाई है। प्रत्येक राज्य की भांति म.प्र. का कृषि वि.वि. जवाहरलाल नेहरू कृषि वि.वि. जबलपुर में स्थित है। किसान क्रेडिट कार्ड एवं किसान समस्या निराकरण केन्द्र अत्याधुनिक सुविधाऐं भी अब सरकार द्वारा कृषकों को प्रदान की जा रही है। जिसके द्वारा किसान को उत्तम क्वालिटी के बीज, सिंचाई के साधन व फसल को उन्नत बनाने हेतु ऋण प्रदान किया जाता है व किसान क्रेडिट कार्ड धारकों के लिए वैयक्तिक दुर्घटना बीमे की भी सुविधा प्रदान की जाती है। यही इस योजना का महत्वपूर्ण पहलू है क्योंकि अच्छी फसल के अभाव में कर के बोझ के कारण किसानों द्वारा आत्महत्या करना एक विचारणीय प्रश्न बन गया है। जिसने सरकारी तंत्र को हिला कर रख दिया है। इस समस्या का समाधान बैंकिंग संस्थाओं के सहयोग द्वारा ही संभव हुआ है। मध्यप्रदेश में भी विभिन्न जिलों में स्थापित अग्रणी बैंक व उनके सहयोगी बैंकों के माध्यम से लक्ष्यों के अनुरूप ऋण प्रदान कर भारतीय अर्थव्यवस्था के आधार को बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है।

2. लघु उद्योगों के क्षेत्र में विकास – आर्थिक व सामाजिक उन्नति के लिए औद्योगिकरण अत्यंत आवश्यक है। मध्यप्रदेश का औद्योगीकरण की दृष्टि से देश में 7 वाँ स्थान है। राज्य में उद्योग धंधों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से सभी जिलों में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र स्थापना की गई है। प्रदेश में बड़े उपक्रमों में मुख्य रूप से भारत है – वी–इलेक्ट्रिकल लिमिटेड भोपाल, मलाजखण्ड ताँबा संयंत्र, बालाघाटा, नेशनल पेपर मिल्स नेपानगर आदि उल्लेखनीय है। राज्य के औद्योगिक विकास में मध्यप्रदेश राज्य उद्योग निगम, मध्यप्रदेश औद्योगिक विकास निगम, मध्यप्रदेश लघु उद्योग निगम और मध्यप्रदेश वित्त निगम का सक्रीय योगदान रहा है। प्रदेश में उद्योगों के विकास हेतु अनेक नैसर्गिक संसाधन उपलब्ध है जिनमें है। सीमेंट उत्पादन में वर्तमान में मध्यप्रदेश का अग्रणी स्थान है। मध्यप्रदेश में भारी तथा मध्यमदर्जे के उद्योगों की संख्या लगभग 518 है और लघु उद्योगों की संख्या 2,64,000 है। मार्च तक राज्य में 826 कुटीर उद्योग है। नये मध्यप्रदेश गठन के पश्चात् वित्तीय साधनों व वैज्ञानिक कुशलता के अभाव के कारण प्राकृतिक संसाधनों का पूर्णरूप से विदोहन नहीं हुआ है, जिसके कारण उद्योग धंधे काफी हद तक प्रभावित हुए है। वर्तमान में म.प्र. लघु उद्योगों के क्षेत्र में चतुर्थ स्थान है। 1990 में भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक की स्थापना से लघु उद्योगों के संस्थागत वित्त को नयी शक्ति प्राप्त हुई। कृषि के पश्चात् लघु उद्योग एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें सर्वाधिक कार्यरत जनसंख्या है। अत: समय–समय पर औद्योगिक नीतियों में परिवर्तन कर व नई नीतियों का निर्माण कर सरकार द्वारा इनमें नई जान डालने का प्रयास किया जाता है। रूग्ण पड़ी इकाईयों को फिर से चलाने हेतु सरकार व बैंकिंग संस्थाऐं अपने–अपने प्रयास करती रहती है। इस प्रयास हेतु प्रत्येक हेतु प्रत्येक जिले में स्थानिय अग्रणी बैंक अपने अन्य सहयोगी बैंकों के माध्यम से जिले का विकास करते हैं व राज्य व केन्द्र के विकास में अपना सहयोग प्रदान करने का प्रयास करते हैं। जिसमें मध्यप्रदेश के विकास में काफी हद तक सफलता प्राप्त की जा चुकी है।

3. सेवा व स्वरोजगार के क्षेत्र में विकास – भारतीय अर्थव्यवस्था श्रम बहुल अर्थव्यवस्था है। जहाँ रोजगार के साधन भले ही सीमित हों, किंतु कुशल तथा अकुशल दोनों ही प्रकार के श्रम यहाँ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। यहाँ मानसिक तथा शारीरिक विकास के अनुरूप सर्वोत्तम जलवायु तो है ही, साथ ही जीजिविषा तथा श्रेष्ठतम के लिए उत्तरजीविता के निमित्त कई तरह की चुनौतियाँ भी मौजूद है। इससे भारत का नागरिक विश्व के किसी भी कोने में किसी भी प्रकार चुनौतियों को स्वीकार कर सकता है।

सेवा क्षेत्र में किसी देश के सामाजिक, आर्थिक विकास के लिए जीवन रेखा है। कृषि के उपरांत यह एकमात्र ऐसा क्षेत्र है, जिसमें अपार संभावनाऐं है व यह कुशल श्रम को रोजगार प्रदान करने के लिए कटिबद्ध भी है। वास्तव में प्रत्येक उत्पाद सेवा क्षेत्र का ही भाग है। इसमें व्यक्ति अपने ज्ञान व कुशल श्रम का प्रदर्शन करते हुए उत्पादकता बढ़ाने में बहूमूल्य सहयोग प्रदान करता है। वर्तमान में शहरीकरण व नीजिकरण ने सेवा क्षेत्र को बढ़ावा देकर ग्लोबल मार्केट में पहचान दिलाई है।

सेवा क्षेत्र के अंतर्गत परिवहन, वितरण, मनोरंजन, स्वास्थ्य, शिक्षा, होटल व्यवसाय, सफाई सर्विसेज, पर्यटन आदि उद्योग धंधे शामिल किये जाते हैं। इन्फॉर्मेशन टेक्नोलॉजी भी सेवा क्षेत्र में अग्रणी क्षेत्र है। जिसने गत

* सहायक प्राध्यापक, एम. के. एच. एस. गुजराती गर्ल्स कॉलेज, इंदौर (म.प्र.) भारत

वर्षों में सकल घरेलू उत्पाद में 33 प्रतिशत योगदान दिया है। पर्यटन उद्योग भी तेजी से उभरकर सामने आया है जिसने 15 प्रतिशत योगदान दिया। वर्ष 2007-08 के अनुसार सकल घरेलू उत्पाद में सेवा क्षेत्र का योगदान 55 प्रतिशत रहा जिसमें सॉफ्टवेयर सर्विसेज का 33 प्रतिशत, होटल व रेस्टोरेंट व्यवसाय का 13 प्रतिशत, बाह्य संसाधनों से व्यवसाय द्वारा 9 प्रतिशत योगदान रहा है। सकल घरेलू उत्पाद में सेवा क्षेत्र का आधे से अधिक योगदान विश्व बाजार में चुनौती के संकेत देता है। इस क्षेत्र में विकास से देश की अर्थव्यवस्था विकसित अर्थव्यवस्था ही राह पर चलती दिखाई दे रही है।

भारत के विशेष संदर्भ में सेवा क्षेत्र का भविष्य स्वर्णिम है। युवा वर्ग की स्वरोजगार की कामना को सेवा व्यवसाय ने साकार रूप प्रदान किया है। मध्यप्रदेश के विशेष संदर्भ में सेवा व स्वरोजगार क्षेत्र में सन् 2007-08 के आंकड़ों के अनुसार 44,000 पर्यटकों ने देश का दौरा किया।

अग्रणी बैंक व उनके सहयोगी बैंकों ने विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत आसान शर्तों पर सुलभ ऋण प्रदान कर स्वरोजगार का मार्ग प्रशस्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एलेन. लेविस एमैनेजमेंट एण्ड ऑर्गेनाइजेशन मैक ग्रो हिल. 1983
2. देसाई वसंतु,मनी एण्ड सेन्ट्रल बैंकिग, हिमालया पब्लिशिंग हाउस बाम्बे 1982
3. डॉ. सत्यदेव, सामाजिक विज्ञानों की शोध पद्धतियाँ, हरियाणा साहित्य अकादमी, चंड़ीगढ़
4. डॉ. विष्णुदत्त नागर, भारतीय अर्थव्यसथा, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी
5. डॉ. आर.एन. त्रिवेदी,रिसर्च मैथडॉलॉली,कॉलेज बुक डिपो जयपुर
6. जे.एल. भारद्वाज, सांख्यिकी के सिद्धांत,रामप्रकाश एण्ड सन्स
7. वी. के.शर्मा.,औद्योगिक प्रबंध एव उद्यामिता, साईटिफिक पब्लिशर्स जयपुर
8. जी.एस सुधा, व्यावसायिक उद्यामिता का विकास,रमेश बुक डिपो जयपुर
9. भरत झुनझुनवाला, भारत में आर्थिक व्यवस्था,रामप्रकाश एण्ड सन्स
10. डी.सी. अग्रवाल, भारतीय अर्थव्यवस्था, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा
11. डॉ. वी.एस. राव एवं एन. एस. कोण्डावार,म.प्र. का आर्थिक विकास, म.प्र. ग्रंथ अकादमी भोपाल
12. शोध प्रपत्र-भटनागर जे.एस.,भविष्य की चुनौतियों निजी क्षेत्र के बैंको का दृष्टिकोण, आई. बी. बुलेटिन, जनवरी, 1993
13. कस्टमर सर्विस इन बैकर्स पर वर्किग ग्रुप ऑन कस्टमर की फायनल रिपोट से उद्धृत बम्बई आई. बी. ए. बुलेटिन 1997

****

नगरीय मध्यम परिवारों में बालक-बालिकाओं में भेदभाव

डॉ. संगीता बगवैया *

प्रस्तावना - देश के विभिन्न भागों से आंकड़ों से प्रमाणित होता है कि बालिकाओं के विरूद्ध बचपन से ही भेदभाव किया जाता है, कभी जानबूझकर तो कभी अनजाने में उनके पालन-पोषण को अनदेखा करके उनको उपेक्षित किया जाता है। इसके दो कारण हैं : एक-यह कि घरेलू कार्यो का बंटवारा करके बालिकाओं पर बोझ डाला जाता है, जबकि बालकों से घरेलू कार्य नहीं करवाया जाता है, यह भेदभाव घरेलू क्षेत्र में होने के कारण इस पर किसी का ध्यान नहीं जाता है। दूसरा-लड़कियों की परीक्षा तो शादी के बाद होती है इसलिए उसकी पढ़ाई-लिखाई की अपेक्षा उसके गृहकार्य के प्रशिक्षण को अधिक महत्व दिया जाता है।

संविधान में समान अधिकार प्राप्त होते हुए भी भारतीय परिवार में बालक और बालिकाओं में भेदभाव एवं पक्षपात पूर्ण व्यवहार की समस्या आज भी अपनी जड़ जमाये हुए है। कभी जानबूझकर तो कभी अनजाने में उनके पालन-पोषण को अनदेखा करके उनको उपेक्षित किया जाता है। बेटा पैदा होने पर खुशियाँ मनाई जाती है। बेटे को कुल का दीपक और वंश का नाम रोशन करने वाला माना जाता है। बेटी के पैदा होने पर उदासी का वातावरण छा जाता है। क्योंकि उसके जन्म के साथ ही माता-पिता को उसके विवाह और दहेज की चिंता शुरू हो जाती है। लिंगभेद भी जन्म से पहले ही शुरू हो जाता है, बालिकाओं को भ्रूणावस्था में ही मार दिया जाता है।

कई सामाजिक शोध के परिणामों से ज्ञात होता है, कि मध्यमवर्गीय परिवारों में आज भी बालिकाओं की मानसिक योग्यता की उपेक्षा की जाती है, इसलिये उच्च शिक्षित होने के बावजूद भी वे मात्र एक गृहणी बनकर रह जाती है। सांस्कृतिक रीति-रिवाज और गलत मान्यताओं के कारण उसकी तकलीफें और भी बढ़ जाती हैं। समाज में महिलाओं की स्थिति का अंदाजा बालिकाओं की स्थिति से लगाया जा सकता है। बालिकाओं को कम देखभाल और ध्यान का हकदार माना जाता है। परिवार के सदस्य यह समझते हैं, कि बालिका की देखभाल यानि एक ऐसे पौधे को पानी देने के समान है, जो किसी और के बगीचे में लगा हुआ है। अपनी मुख्य जरूरतों को पूरा करने के लिए उसे बहुत कम प्राथमिकता होती है। माता-पिता भी पुत्र को पुत्री से अधिक महत्व समाज के चलन के कारण देते हैं। भारत में बालिका के साथ भेदभाव का स्तर विभिन्न राज्यों से भिन्न-भिन्न है।

भारत की लगभग आधी जनसंख्या (49%) स्त्रियाँ हैं। भारत के सबसे विशाल क्षेत्रफल वाले राज्य 'मध्यप्रदेश' जैसे राज्य की राजधानी 'भोपाल' भारत के उन महानगरों में से एक है जो भूदृष्यीय सौन्दर्य, स्वास्थ्यकर जलवायु, सुनहरे इतिहास और प्राचीन परम्पराओं को अपने में धारण किये हुए है।

समाज में बालिकाओं का स्थान पारिवारिक, आर्थिक व सामाजिक तीनों की दृष्टियों से अत्यंत महत्वपूर्ण है। लिंगभेद हमारे समाज का एक अभिषाप है। संवैधानिक समानता के बावजूद बालिकाओं को समाज में बराबर का दर्जा नहीं दिया जाता है। लिंगभेद का, बालक-बालिकाओं में आत्मविश्वास शैक्षिक उन्नति, संबंधों इत्यादि पर जो प्रभाव पड़ता है। उससे असमानता बढ़ती है, जब तक महिलाओं को सामाजिक जीवन में उचित स्थान नहीं मिलेगा तब तक पुरूषों के समान नहीं समझा जायेगा।

सामाजिक दृष्टिकोण भी इस उम्र की बालिकाओं को लेकर बदल जाता है, अब वे बच्ची नहीं रहती, लिहाजा रोक-टोक शुरू होने वाली है। इसी उम्र में महावारी भी शुरू हो जाती है। इसे लेकर कई घरों में आज भी परहेज जारी है। जैसे रसोईघर में नहीं जाना, पीने का पानी नहीं छूना, खटाई न खाना और बिस्तर पर नहीं बैठना। कुल मिलाकर बढ़ती उम्र के नए परिवर्तनों के साथ हर किसी का बदला हुआ नजरिया बच्ची के मन में घबराहट पैदा करता है, और उसका व्यवहार संतुलित हो जाता है। इस स्थिति में बौखलाकर या तो वह विद्रोही बन जाती है या बेहद दब्बू। यदि माता-पिता का सहायोग न मिले, तो बच्चे के व्यक्तित्व पर इस स्थिति में गलत प्रभाव पड़ सकता है।

परिवार की स्थिति यह रहती है कि 11 से 19 की उम्र के बच्चों में अचनाक आ रहा ये बदलाव माता-पिता को सशंकित कर देता है। बच्चों में बढ़ता विपरीत सेक्स के प्रति आकर्षण, गोपनीय बातों के प्रति दिलचस्पी, स्वभाव में अजीबोगरीब परिवर्तन और समाज को उनके प्रति बदलता नजरिया माता-पिता के दिल को सशंकित कर देता है। वे समझते हैं, कि अगर इस वक्त पाबंदियाँ नहीं लगाई गई तो बच्चा निष्चित तौर पर बिगड़ जायेगा। मुसीबत यह है, कि भारत में यौन विषयों को गोपनीय मानकर उनकी जानकारी बच्चे के लिए निशिद्ध मानी जाती है। इस निशेध के चलते माता-पिता झिझक में बच्चे को खुलकर कुछ बता नहीं पाते, उल्टे डॉटकर अपनी बात मानने के लिए दबाव बनाने लगते हैं। इस रवैये से बच्चे और माता-पिता के बीच असंवाद की स्थिति बनने लगती है।

मध्यमवर्गीय परिवार उच्च एवं निम्न परिवारों से बिल्कुल भिन्न है। एक ओर जहाँ उच्चवर्गीय परिवारों में धन साधन होने के कारण उन्हें दहेज तथा पढ़ाई लिखाई पर खर्च करने में सोचने समझने की जरूरत नहीं होती है। बालिकाओं को शिक्षा एवं पार्टी, क्लब आदि में भी आसानी से भेज देते हैं, मनोरंजन के साधन सरलता से प्राप्त होते हैं, पर दूसरी ओर निम्नवर्गीय परिवारों में खुलापन, छूट अधिक होती है, कम उम्र में लड़की की शादी कर दी जाती है, लड़कियां छोटी उम्र से ही माँ के साथ काम करने जाने लगती है, ये लोग आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण घर के काम और बाहर के काम करने पर पर ज्यादा महत्व देते हैं। इन परिवारों में किशोरावस्था में प्रवेश करते ही बालिकाओं की शादी कर दी जाती है। बालिकाओं को पढ़ाना जरूरी नहीं समझते हैं।

मध्ममवर्गीय परिवारों में पैसा सीमित होता है और माता-पिता अगर

* अतिथि विद्वान (गृहविज्ञान) शासकीय कमला नेहरू महिला महाविद्यालय, दमोह (म.प्र.) भारत

लड़की को अच्छे स्कूल में डाल भी देते हैं तो उसकी जरूरतें पूरी नहीं कर पाते हैं। और अगर पैसे की कमी होती है, लड़की तो पराया धन है, बालिका का विवाह भी करना है और दहेज भी देना है। मध्यमवर्गीय परिवार में बालिका बोझ समझी जाती है। आज जब प्रसार कार्यक्रमों का अधिकतर प्रभाव नगरीय क्षेत्रों में देखा जाता है। ऐसी स्थिति में शहरी बालिका की स्थिति में क्या अंतर आया है? यह जानना अत्यंत आवश्यक है। सामाजिक परिवर्तन किस दिशा में जा रहा है? क्या स्त्रियों/बालिकाओं की स्थिति बेहतर हुई है?

1. नगरीय मध्यमवर्गीय परिवारों में बालिका के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन आया है या नही?
2. माता-पिता की बालिका के प्रति कैसी अभिवृत्तियां हैं?
3. बालिका को अपने परिवार में किन-किन बातों की स्वतंत्रता दी जाती है?
4. बालिका के साथ किन-किन बातों में भेदभाव किया जाता है?
5. क्या बालिकाओं की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति बालक के समकक्ष हो रही है?
6. इस अध्ययन में भोपाल के मध्यमवर्गीय परिवारों में बदलती परिस्थितियों में बालिका के संबंध में विचार जानने का प्रयास किया गया है?

परिकल्पना - किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन कार्य में उपकल्पना को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। यह शोधकार्य के लिए गाइड या मार्गदर्शक का काम करती है। उसे उद्देश्यहीन रूप में इधर-उधर भटकने से रोकती है।

रविन्द्रनाथ मुखर्जी लुण्डबर्ग के अनुसार, यह प्रारम्भिक स्तर पर एक अनुमान या काल्पनिक विचार हो सकती है। जिसके आधार पर हम आगे क्रियात्मक कार्य उपकल्पना अध्ययन कार्य को निश्चितता प्रदान करती है तथा अनुसंधान क्षेत्र को सीमित करती है। उपकल्पना अनुसंधान की दिशा निर्धारित करने के साथ-साथ सम्बद्ध तथ्यों में संकलन में सहायक होती है।

प्रस्तुत शोध हेतु उपकल्पनायें निम्नानुसार हैं :-

1. परिवार का आकार जितना छोटा होगा, बालिका की स्थिति उतनी अच्छी होगी।
2. जिस परिवार का प्रकार एकल होगा उस परिवार में बालिका की स्थिति अच्छी होगी।
3. जैसे-जैसे माता की आयु बढ़ती जायेगी, बालिका की स्थिति अच्छी होगी।
4. उच्च शिक्षित माता की बालिका का स्तर अच्छा होगा।

न्यादर्श का चयन -भोपाल शहर में भौगोलिक सांस्कृतिक रूप से दो क्षेत्र हैं - पुराना भोपाल, जो नबाबकाल की संस्कृति को प्रदर्शित करता है, तथा नया भोपाल अधिकतम शासकीय कर्मचारियों का निवास है। अत: मिश्रित संस्कृति प्रदर्शित करता है। प्रस्तुत अध्ययन भोपाल शहर के मध्यमवर्गीय परिवारों में किया गया है। इस हेतु पूरे भोपाल शहर को सम्मिलित करने के लिए पॉच भागों में विभाजित किया गया है। उत्तर, दक्षिण पूर्व, पश्चिम तथा मध्य भोपाल। इन्हीं पॉच क्षेत्रों को अध्ययन के लिए उपवर्ग माना गया है, जिससे सम्पूर्ण शहर का प्रतिनिधित्व हो सके।

उपकरण - अनुसंधानकर्ता के समक्ष हमेशा यह समस्या बनी रहती है, कि वह अपनी परिकल्पना के परीक्षण हेतु आँकड़ों का संग्रहण किस प्रकार करें। इस हेतु उसे अनुसंधान के उपकरणों, विधियों एवं यंत्रों का व्यापक ज्ञान होना आवश्यक है। उपकरण की वैद्यता, विश्वसनीयता एवं वस्तुनिष्ठता द्वारा ही किसी समस्या के वैज्ञानिक विश्लेषण का कार्य किया जा सकता है।

प्रस्तुत अनुसंधान में समस्या से संबंधित उद्देश्यों तथा परिकल्पनाओं के परीक्षण हेतु आंकड़ों के संकलन हेतु एक स्थिति मापनी का निर्माण किया गया है, जिसमें अनुसंधान समस्या से संबंधित तर्कसंगत प्रश्नों की सूची तैयार की गई। शोध में तथ्यों के संग्रहण हेतु निम्नलिखित उपकरण प्रयुक्त हुए हैं :

1. **आर्थिक स्तर मापनी (आयवर्ग मापनी)** - इसके द्वारा मध्यम आय वर्ग की बालिकाओं को चिन्हित किया गया।

2. **स्थिति मापनी** - बालिका की पारिवारिक एवं सामाजिक स्थिति ज्ञात करने हेतु विशेष रूप से निर्मित मापनी को स्थिति मापनी नाम दिया गया। आगे अध्ययन में बालिका की स्थिति मापनी को इसी नाम से जाना जायेगा। इसका प्रयोग बालिका और उसके माता-पिता के व्यवहार एवं दृष्टिकोण को ज्ञात करने के लिए किया गया।

बालिका की पारिवारिक और सामाजिक स्थिति को ज्ञात करना है। एक ओर परिवार के सदस्य विशेषकर माता और पिता की सोच, व्यवहार एवं दृष्टिकोण बालिका के सामाजिक स्थिति की परिचायक है, तो दूसरी ओर बालिका स्वयं अपनी स्थिति का आकलन किस प्रकार से करती है, यह भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, इन्हीं तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए स्थिति मापनी का निर्माण किया गया। जिसको सूत्र रूप में इस तरह से समझा जा सकता है -

परिवार में — बालिका की दृष्टि में
बालिका की स्थिति
समाज में — अभिभावक की दृष्टि में

स्थिति मापनी का बिन्दुवार विवरण - स्थिति मापनी के निर्माण में निर्मित प्रमुख बिन्दु तथा उनका विस्तार क्षेत्र इस प्रकार से है -

1. मूलभूत आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति प्राथमिकताओं में लिंगभेद :भोजन, वस्त्र, आवास, स्वास्थ्य
2. विकासात्मक आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति प्राथमिकताओं में लिंगभेद : शिक्षा, मनोरंजन, अभिरूचि, आत्मनिर्भरता
3. सामाजिक आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति प्राथमिकताओं में लिंगभेद : धर्म, संस्कृति, सामाजिक पारिवारिक आयोजन, पारिवारिक सामाजिक दायित्व
4. वैधानिक आवश्यकतओं की प्रतिपूर्ति प्राथमिकताओं में लिंगभेद : सम्पत्ति अधिकार, विवाह, गोद लेना, तलका

स्थिति मापनी में प्राप्तांकों के आधार पर बालिकाओं की स्थिति स्तर - स्थिति मापनी के प्राप्तांकों के आधार पर बालिकाओं की स्थिति के तीन स्तर है। जिसकी गणना के लिए 98 बालिकाओं के कुल प्राप्तांक 8281 के द्वारा मध्यमान एवं मानक विचलन ज्ञात किया गया जो कि तालिका क्रमांक 3.5 में दर्शाये गये हैं -

तालिका क्रमांक - 1 : बालिका की स्थिति के स्तर

क्र.	बालिका की स्थिति के स्तर	कुल प्राप्तांक सीमा
1.	उच्च स्तर	Mean + SD = Upper limit 84.50 + 12.72 = 97.22 (97 या उससे अधिक प्राप्तांक)
2.	सामान्य स्तर	Between upper & lower limit (96 73 के मध्य प्राप्तांक)
3.	निम्न स्तर	Mean – SD = Lower limit 84.50-12.72 तक = 71.78(72 एवं उससे कम प्राप्तांक)

मध्यमान + मानक विचलन से ऊपर प्राप्तांक होने पर बालिका की समाज में उच्च स्थिति मानी गई। मध्यमान–मानक विचलन से कम प्राप्तांक पर बालिका की स्थिति निम्न मानी गई है, और इसके बीच में प्राप्तांक में स्थिति सामान्य मानी गई है।

मूलभूत आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति में भेदभाव के आंकलन हेतु उपकल्पना परीक्षण :

उपकल्पना : बालिकाओं की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति बालक के समकक्ष हो रही है, दृष्टिकोण में बालिका और माता के विचार में अन्तर होगा।

नगण्य उपकल्पना : बालिकाओं की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति बालक के समकक्ष हो रही है, ऐसे दृष्टिकोण में बालिका और माता के विचार में अन्तर नहीं होगा।

तालिका क्रमांक – 2 : उपकल्पना आवश्यकतायें

क्र.	मूलभूत आवश्यकतायें				
	Score	Mean	Standard Deviation	T Test	
				Calculated Value	Table Value
1.	Girl (98)	1893	16.88	3.03	
2.	Mother (98)	1889	16.88	2.87	.89 < 1.99

टी परीक्षिका मूल्य (.89) था।

टी तालिका मूल्य (1.99) था।

सार्थकता स्तर .05 था, t परीक्षिका मूल्य, तालिका मूल्य से कम है। इसलिए नगण्य उपकल्पना स्वीकार की गयी।

निष्कर्ष : इससे यह सिद्ध होता है कि बालिकाओं की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति बालक के समकक्ष हो रही है, ऐसे दृष्टिकोण में बालिका और माता के विचार में अन्तर नहीं है।

विकासात्मक आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति में भेदभाव के आंकलन हेतु उपकल्पना परीक्षण :

उपकल्पना : बालिकाओं की विकासात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति बालक के समकक्ष हो रही है, ऐसे दृष्टिकोण में बालिका और माता के विचार में अन्तर होगा।

नगण्य उपकल्पना : (Null Hypothesis)

बालिकाओं की विकासात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति बालक के समकक्ष हो रही है, ऐसे दृष्टिकोण में बालिका और माता के विचार में अन्तर नहीं होगा।

तालिका क्रमांक – 3 : उपकल्पना परीक्षण

क्र.	विकासात्मक आवश्यकतायें				
	Score	Mean	Standard Deviation	T Test	
				Calculated Value	Table Value
1.	Girl (98)	1667	17.01	6.65	
2.	Mother (98)	1666	17.00	4.04	.98 < 1.99

टी परीक्षिका मूल्य (.98) था।

टी तालिका मूल्य (1.99) था।

सार्थकता स्तर .05 था, t परीक्षिका मूल्य, तालिका मूल्य से कम है। इसलिए नगण्य उपकल्पना स्वीकार की गयी।

निष्कर्ष : बालिकाओं की विकासात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति बालकों के समकक्ष हो रही है, ऐसे दृष्टिकोण में बालिका और माता के विचार में अन्तर नहीं है।

सामाजिक आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति में भेदभाव के आंकलन हेतु उपकल्पना परीक्षण :

उपकल्पना : बालिकाओं की सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति बालक के समकक्ष हो रही है, ऐसे दृष्टिकोण में बालिका और माता के विचार में अन्तर होगा।

नगण्य उपकल्पना : (Null Hypothesis)

बालिकाओं की सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति बालक के समकक्ष हो रही है, ऐसे दृष्टिकोण में बालिका और माता के विचार में अन्तर नहीं होगा।

तालिका क्रमांक – 4 : उपकल्पना परीक्षण

क्र.	सामाजिक आवश्यकतायें				
	Score	Mean	Standard Deviation	T Test	
				Calculated Value	Table Value
1.	Girl (98)	3834	39.12	7.04	
2.	Mother (98)	3872	39.51	6.51	.54 < 1.99

टी परीक्षिका मूल्य (.54) था।

टी तालिका मूल्य (1.99) था।

सार्थकता स्तर .05 था, t परीक्षिका मूल्य, तालिका मूल्य से कम है। इसलिए नगण्य उपकल्पना स्वीकार की गयी।

निष्कर्ष : बालिकाओं की सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति बालकों के समकक्ष ही हो रही है, ऐसे दृष्टिकोण में बालिका और माता के विचार में अन्तर नहीं है।

वैधानिक आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति में भेदभाव के आंकलन हेतु उपकल्पना परीक्षण :

उपकल्पना : बालिकाओं की वैधानिक आवश्यकताओं की पूर्ति बालक के समकक्ष हो रही है, ऐसे दृष्टिकोण में बालिका और माता के विचार में अन्तर होगा।

नगण्य उपकल्पना : (Null Hypothesis)

बालिकाओं की वैधानिक आवश्यकताओं की पूर्ति बालक के समकक्ष हो रही है, ऐसे दृष्टिकोण में बालिका और माता के विचार में अन्तर नहीं होगा।

तालिका क्रमांक – 5 : उपकल्पना परीक्षण

क्र.	सामाजिक आवश्यकतायें				
	Score	Mean	Standard Deviation	T Test	
				Calculated Value	Table Value
1.	Girl (98)	773	7-88	5-32	
2.	Mother (98)	979	9.98	4.87 8.24	< 1.99

टी परीक्षिका मूल्य (8.24) था।

टी तालिका मूल्य (1.99) था।

सार्थकता स्तर .05 था, t परीक्षिका मूल्य, तालिका मूल्य से कम है। इसलिए नगण्य उपकल्पना स्वीकार की गयी।

निष्कर्ष : बालिकाओं की वैधानिक आवश्यकताओं की पूर्ति बालकों के समकक्ष ही हो रही है, ऐसे दृष्टिकोण में बालिका और माता के विचार में अन्तर है। अर्थात् बालक और बालिकाओं की वैधानिक आवश्यकताओं की पूर्ति में एक जैसा व्यवहार नहीं है। बालिका और माता के विचार में अन्तर है।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

म.प्र. के आर्थिक विकास में अग्रणी बैंकों की भूमिका

डॉ. मोनिका बापट *

प्रस्तावना – बैंकों का राष्ट्रीयकरण देश के संपूर्ण बैंकिग इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना रही है। देश के व्यापारिक बैंकों का राष्ट्रीकरण कुछ विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये किया गया था। इस संबंध में सत्ता के विकेन्द्रीकरण बैंकिंग सुविधाओं के विस्तार के संबंध में संतुलित नीति बचत के अनुपात में आर्थिक संसाधनों के जमा के रूप में अधिकाधिक मात्रा में संग्रहित करना, अर्थव्यवस्था के प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को पर्याप्त वित्तीय सहायता आदि प्रमुख है। प्रो. गाडगिल अध्ययन दल की सिफारिश के अनुरूप आर्थिक विकास हेतु 'क्षेत्र उन्मुखता' की अवधारण को कार्यान्वित करने के उद्देश्य से दिसंबर 1969 में 'अग्रणी बैंक योजना' लागू की गई। जिसके अंतर्गत प्रत्येक जिले में बैकिंग विकास की संभावनाओं का सर्वेक्षण करने संस्थागत साख की कमियों का पता लगाने, साथ ही उन्हें दूर करने का दायित्व बैंकों को सौंपा गया।

'प्रदेश में आर्थिक असंतुलन को दूर करने व उपलब्ध संसाधनों के आधार पर विकास की संभावनाओं को मूर्त रूप प्रदान करने के उद्देश्य से निम्न बैंकों को अग्रणी बैंक के रूप में कार्यभार सौंपा गया व उनको यह दायित्व प्रदान किया गया कि वह प्रदेश में विकास संबंधी योजनाओं व कार्यक्रमों का क्रियान्वयन प्रदेश में कार्यरत अन्य सहयोगी बैंकों के साथ मिलकर संपन्न करेंगे।'

म.प्र. में निम्नलिखित आठ बैंकों को यह दायित्व सौंपा गया –

1. सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया
2. बैंक ऑफ इंडिया
3. स्टेट बैंक ऑफ इंदौर
4. स्टेट बैंक ऑफ इंडिया
5. यूनियन बैंक ऑफ इंडिया
6. इलाहाबाद बैंक
7. पंजाब नेशनल बैंक
8. बैंक ऑफ बड़ौदा

प्रस्तुत शोध प्रबंध के माध्यम से म.प्र. आर्थिक विकास में तीव्रता लाने हेतु विगत 10 वर्षों में अग्रणी बैंकों द्वारा जो भी प्रयास किये हैं उनको रेखांकित करना है।

शोध का उद्देश्य – भारत एक विशाल देश है, जिसमें कई भौगोलिक व आर्थिक विषमताऐं विद्यमान है। इसलिये प्रत्येक भाग का एक साथ समुचित विकास करना अत्यंत कठिन कार्य है। इसका मुख्य कारण यह है कि देश में अलग-अलग क्षेत्रों की आर्थिक स्थिति में बहुत अधिक अंतर है। जिसके परिणामस्वरूप संपूर्ण देश का विकास किसी एक पद्धति के अंतर्गत किया जाना संभव नहीं है। अत: देश के प्रत्येक जिले में विकास के लिये रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया ने अग्रणी योजना का शुभारंभ किया। म.प्र. में 8 लीड बैंक अपने अन्य सहयोगी बैंकों के साथ भूमिका निभा रहे हैं।

शोधार्थी का म.प्र. से संबंध होने के साथ-साथ वाणिज्य की छात्रा होने के कारण निश्चित ही रूचि यह जानने में है कि जिन उद्देश्यों का ध्यान में रखकर संस्था की स्थापना की गई थी वह सफल रही है यह शोध का मुख्य उद्देश्य है।

प्रदेश के सुनहरे भविष्य हेतु रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया द्वारा अग्रणी बैंकों को जो कार्य सौंपे गये थे वह उनमें कहाँ तक सफल हो पायी है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में अग्रणी बैंकों के मूल्यांकन के संबंध में परिकल्पना इस प्रकार है-

1. संस्थागत साख के वितरण में बैंकिंग क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।
2. अग्रणी बैंकों ने विभिन्न क्षेत्रों में प्रदान किये जाने वाले ऋण संबंधी अपने लक्ष्य अर्जित किये हैं।
3. अग्रणी बैंक योजना के संबंध में हितग्राही वित्तीय संस्थाऐं संतुष्ट है।
4. विगत 10 वर्षो में प्रदेश के विकास में अग्रेणी बैंकों ने अपनी भूमिका का निर्वाह सफलतापूर्वक किया है।

अग्रणी बैंकों का परिचय –

1. अर्थव्यवस्था में बैंकिंग क्षेत्र का महत्व – किसी देश के आर्थिक विकास के लिए पूंजी अत्यंत आवश्यक है। बैंक छोटी-छोटी धनराशि एकत्रित करके बचत को बढ़ावा देते हैं। इस एकत्रित धनराशि को उन क्षेत्रों में विनियोजित किया जाता है, जहाँ उनकी आवश्यकता होती है। इस प्रकार बैंक देश में पूँजी की आवश्यकताओं की बड़ी मात्रा में पूर्ति करके देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहण करते हैं।

2. अग्रणी बैंक योजना का परिचय व संगठन – स्वतंत्रता के पश्चात् आर्थिक विकास के लिए पंचवर्षीय योजनाओं का सूत्रपात किया गया। योजनाबद्ध विकास के प्रारंभिक 15 वर्षो में यह पाया गया कि यद्यपि देश में आर्थिक विकास हुआ, राष्ट्रीय आय बढ़ी, लेकिन अंर्तक्षेत्रीय आधार पर आर्थिक असमानताऐं कम नहीं हुई अत: स्थिति का विश्लेषण करने हेतु भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा प्रो. डी.आर. गाडगिल की अध्यक्षता में 'राष्ट्रीय साख समिति' का गठन किया गया। इस प्रकार समिति ने छोटे से छोटे स्तर पर बैंकिंग सेवा का विस्तार करने एवं बैंकों को विकासोन्मुखी बनाने हेतु स्थानीय स्तर पर विभिन्न समितियों का गठन किया जाना चाहिए, जिससे समस्त संबंधित पक्षों का प्रतिनिधित्व हो सके। 'राष्ट्रीय साख समिति' ने गहन विश्लेषण के पश्चात् ग्रामीण साख के विस्तार हेतु एक विशिष्ट योजना का सुझाव दिया। इसे 'अग्रणी बैंक योजना' का नाम दिया गया।

3. मध्यप्रदेश में अग्रणी बैंकों की स्थिति – मध्यप्रदेश में 48 जिलों में कुल 8 बैंक अग्रणी बैंक के रूप में कार्य करते हैं। इन बैंकों के बीच विभिन्न

* सहायक प्राध्यापक, एम. के. एच. एस. गुजराती गर्ल्स कॉलेज, इंदौर (म.प्र.) भारत

जिलों का बंटवारा निम्न प्रकार किया गया है –

क्र.	अग्रणी बैंक का नाम	जिले
1.	सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया	बैतूल, रायसेन, भिंड, मुरैना, ग्वालियर, होशंगाबाद, बालाघाट, छिंदवाड़ा, जबलपुर, मंडला, डिंडोरी, नरसिंहपुर, सिवनी, शहडोल, सागर, मंदसौर
2.	बैंक ऑफ इंडिया	भोपाल, राजगढ़, सिहोर, धार, इंदौर, खंडवा, खरगोन, बड़वानी, देवास, शाजापुर व उज्जैन
3.	स्टेट बैंक ऑफ इंदौर	विदिशा, श्योपुर, गुना, नीमच व शिवपुरी।
4.	पंजाब नेशनल बैंक	दतिया
5.	स्टेट बैंक ऑफ इंडिया	हरदा, कटनी, उमरिया, दमोह, छतरपुर, पन्ना व टीकमगढ़
6.	बैंक ऑफ बड़ौदा	झाबुआ
7.	यूनियन बैंक ऑफ इंडिया	रीवा व सीधी
8.	इलाहाबाद बैंक	सतना

प्राथमिक क्षेत्र में अग्रणी बैंक योजना के प्रावधान – भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा किए जाने वाले प्रावधानों व दिशा–निर्देशों के अनुसार दिसंबर 1969 में देश के 14 बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया, इसके पश्चात् गाडगिल अध्ययन दल की सिफारिशों को एवं आर्थिक विकास की क्षेत्रीय उन्मुखता अवधारणा को लागू करने हेतु अग्रणी बैंक योजना भी लागू की गई।

नवम्बर 1974 में प्रथम बार यह प्रावधान रखा गया कि बैंक मार्च 1979 तक अपने कुल अग्रिमों का 33.33 प्रतिशत प्राथमिकता क्षेत्र को प्रदान करें। वर्तमान में यह 40 प्रतिशत है।

प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों के संबंध में ऋणों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया गया –

1. कृषि क्षेत्र
2. लघु उद्योग क्षेत्र
3. अन्य प्राथमिक क्षेत्र

कृषि क्षेत्र हेतु दो प्रकार से ऋण दिया जाता है, अल्पकालीन व मध्यम व दीर्घकालीन। अल्पकालीन ऋण किसानों को एक लाख रू. तक छः माह हेतु दिया जाता है व दीर्घकालीन ऋण किसानों को प्रत्यक्ष रूप से विकास की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष कार्यो हेतु दिया जाता है।

लघु उद्योगों के क्षेत्र में ऐसे उद्योग शामिल किये जाते हैं जिनका विनियोग उपयोग में आने वाले प्लांट व मशीनरी में एक करोड़ से अधिक न हो।

अन्य प्राथमिक क्षेत्रों में खेरची व्यापारी, व्यक्तिगत फर्म, स्वरोजगार हेतु ऋण ठेकेदार, सुपरवाईजर आदि कार्यो हेतु अधिकतम 5 लाख रूपये का ऋण प्रदान किया जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. दत्त, रूद्र एवं सुन्दरम ,के.पी.एम. भारतीय अर्थव्यवस्था एस. चन्द्र एण्ड कम्पनी लिमि. नई दिल्ली
2. झिंगन,(डॉ.) एम. एल. मौद्रिक अर्थशास्त्र वृंदा पब्लिकेशन्स, प्रा. लिमि. दिल्ली 2000
3. गौड़, श्यामलाल बैंकों में ग्राहक सेवा उपभोक्ता संरक्षण और लोकपाल हिमालया पब्लिशिंग हाऊस, बाम्ब, 1997
4. गुप्ता, जी.पी. द रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया एण्ड मॉनेट्री मैनेजमेन्ट एशिया पब्लिशिंग हाऊस, बाम्बे, 1962
5. जेना, पी.एस. यूथ इण्टरप्रिन्योरशिप इन उड़ीसा इण्टर प्रिन्योरशिप डेव्लपमेंट इन इंडिया, एडिरेड बाय डी.एन. मिश्र. चुग पब्लिकेशस प्रा. लिमि. 1983
6. सेठ, डॉ. एम. एल मुद्रा एवं बैंकिंग शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी आगरा, 1985
7. शर्मा. के. एस. नागर, बी.डी. व शर्मा एस. सी. मौद्रिक अर्थशास्त्र गोयल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, 1982
8. डॉ. एम. डी. अग्रवाल वित्तीय प्रबंध रमेश बुक डिपो, जयपुर
9. डॉ. आर. एम. कुलश्रेष्ठ औद्योगिक अर्थशास्त्र साहित्य भवन, आगरा
10. डॉ. राजेन्द्र शर्मा उद्यमिता विकास यशराज, इंदौर
11. डॉ. चौधरी म.प्र. का आर्थिक विकास आर्थिक एवं साख्यिकी

****

Effect of International Advertising on Sales

Dr. Hitesh A. Kalyani *

Abstract - In this paper, attempt has been made to emphasize the effect of International advertising on Sales. It has been seen over the years that Advertising are perfectly correlated with Sales growth rates. International Advertising is one of the most powerful tools available to corporate management in tis drive to build a profitable business operation and to compete successfully with other comparable business. International Advertising is the tool to spread broad ideas and information regarding product or service to persuade the action in accordance with the eager attention of the adviser. International Advertising is a function and basically a supportive activity which enlarges the possibility of production and makes the selling process more efficient. Its purpose is to create a state of mind conductive to purchase.This paper has tried to highlight the effect of International Advertising on Sales.
Key words - DDB, Grey India, Target Market, Dentsu.

Introduction - International Advertising is transfer of appeals, messages art copy, photographs, stories, videos and film segments from one country to another. International Advertising is key-tool in international Marketing. It is sole representative of the marketer in most of the cases. It is the most cost effective method of communicating with potential buyers and creating markets in other countries. International Advertising is quite different from national or domestic advertising. In national advertising you know your laws, your people, you know their language, their likes and dislikes, customs, traditions and values, taste and preferences and you know the competition, In International Advertising is a business force which through the printed words sells or helps sell, builds reputation and faster goodwill.

Objectives of International Advertising:

Following are the objectives of International Advertising:

1. Creation of New Markets
2. To Give Information of New Product
3. Creation of New Customers
4. To Increase Sale
5. To Get Publicity
6. Increase in goodwill
7. To supplement salesman
8. To Face Competition
9. To Educate the consumers
10. Brand Loyalty

Strategy of International Advertising : There are two forms of International advertising

(i) Standardised Advertising
(ii) Localised Advertising

(i) Standardised Advertising - In Standardised approach the theme or copy of the advertisement is not changed. Products Are advertised the same way in all the countries except that the message is translated into local language. Standardisation argument is based on the fact that people everywhere want the same product for the same reason.

(ii) Localised Advertising - Localised Advertising means that the advertisement in different countries is modified and adopted according to local conditions and environments. According to this approach consumers differ from country to country and advertising should be tailored to suit their tasted, preferences, customs etc. Qualities of a product influence buyer's behaviour differently in different countries. A uniform advertising approach may be unsuitable for both developing and developed countries because there are marked differences between the two in life style, standard of living, market structure and environment.

Determination of International advertising strategy, whether it should be standardised or localised, is not a simpler matter. Conditions differ from country to country while one campaign might have been successfully transferred to another country from home country but another may fail completely. To resolve this problem, Strategy should be formulated after careful analysis and planning.

Factors of International Advertisement - Before deciding about standardised of localised advertising one must consider the following factors:

1. Environmental Factors: It would be desirable to diagnose and identify important environmental factors like education and income levels, beliefs and traditions of people, rate of economic growth, acceptance of international trademarks, trade names, government control on advertising, availability of media etc.

2. Advertising Media : It should be considered whether the type of advertisement media available in one's own country such as newspaper, television, magazines, radio

*Assistant Professor (Commerce) S.N. Mor College, Tumsar, Distt. Bhandara, INDIA

etc. are also available in the countries of import. Also if same type of media are available in importing countries the standardised advertising be adopted.

3. **Objectives of Advertising :** It should be considered whether the advertisement is to be given to educate consumers or to outdo competitors.

4. **Target Market Characteristics :** If the characteristics of targeted markets are similar to home country, standardised advertising campaign will prove economical and successful.

5. **Cost of Advertising :** If the cost of local adaptation exceeds the benefits then standardised advertising should be adopted but if localised advertisement could open up opportunities, it should be preferred.

6. **Product Characteristics :** The nature of the product involved affects choice between standardised or localised advertising campaign. The advertisement has to see whether purchasers in foreign country belong to same income group, advantages and disadvantages of the product in the mind of foreign consumers are basically same.

Advertising Agencies - An advertising agency is a specialised concern acting as a specialist in doing advertisement for others. It acts as an agent or a consultant of the advertiser who may be a manufacturer, a wholesaler or a retailer. Advertising agencies are experts and specialist in planning, creating and placing advertisement. They plan and execute entire campaigns and may conduct market research for the advertiser.

List of Advertising Agencies Worldwide - The five largest agencies, worldwide :

1. WPP Group, London
2. Omnicom Group, New York city
3. Publicis Groupe, Paris
4. Interpublic Group, New York city
5. Dentsu, Tokyo

List of Advertising Agencies in India - In order to capture consumer's attention and stick in their memory, an advertising design blends psychology, marketing, and creativity into a seamless presentation. Although many advertising design professionals focus their energy on their creativity, psychology and marketing often spill over into their everyday work, making this job one that favors those who can multitask. Almost all brands, products, and large corporations have some kind of tagline. List of Advertising agencies in India that promote the product and increase the sales.

1. DDB Mudra Communications: It is known as India's no. one and largest marketing communications services enterprise**.** DDB expertise in four disciplines Media, Outdoor Advertising, Retail and Experiential.

Clients: **Bharat Petroleum,** Pepsi, McDonalds, Colgate, USHA, Reebok, Peter England, Henkel, ACC Limited, Puma etc.

Product : Rasna,
Tagline : I Love You Rasna

2. Grey India : Grey India is a part of Grey global and top second advertising agency of India.

Clients: Gillette, Crocin, Fortis, Cadbury Silk, Kinder Joy, Sensodyne, BNatural, Dell Pantene.
Product: Kinder Joy and BNatural.

3. Rediffusion : Rediffusion is a part of WPP group and the third top adverting agency of India.

Clients: Tata motors, Ambuja, Emani, Evereyday, ITC Stationery.
Product: Tata Motor

4. McCann Erikson India Ltd : It is fourth ranked company in India.

Clients: Cococola, Microsoft, Loris, Spirite, Maybelline
Tagline: Thanda matlab cococola

5. Ogilvy & Mather: It is fifth top agency in India
Clients: IBM, Philips, Dove, Americn Express

6. JWT: It is the top most advertising agency in India.
Clients: Nestle, Unilever, DTC

7. Triverse Advertising: A Gurgaon based agency
Clients: Vardhman, Brijwasi, SMC, Pari India.

8. FCB-Ulka Advertising Ltd.: FCB-Ulka Advertising is top ten advertising agency in India

Cleints: Levi's, Abbot, Amul, HP, Candy Man, Hero, Indian Oil, ITC, Nerolac, Sunfeast, Tata, Whirlpool, Wipro, Zee etc.

8. Chaitra Leo Burnett Pvt. Ltd.: Chaitra Leo Burnett Pvt. Ltd is the top most advertising agency in India.

Clients: P&G, Kellogs, Coco cola, Fiat, Samsung, Altria

9. Madison Communications: The advertising agency specialized in outdoor, entertainment

Client : Asian Paints, BJP, Blue Star, Café Coffee Day, Ceat, Godrej, ITC Kellogg's, Levis ETC.

10. Dentsu Aegis : Dentsu Aegis is top ten advertising agency in India.

Clients: Nissan, TVS, Toyota, Microsoft, MasterCard, Reebok etc.

Conclusion - International Advertising increases the sales of the company, captures the market, join the new customers, to educate the customers and increases the profit of the company through International Advertising.

Bibliography :-

1. Fundamentals of Digital, Pearson
2. Lateral Thinking, A textbook of creativity, Edward De Bono
3. Ogilvy on Advertising, David Ogilvy
4. Pandey monium on advertising, Piyush Pandey
5. My life in advertising, Hopkinns
6. Digital Marketing using google service, Balu
7. Presentation Zen, Garr Reynolds
8. www.Internationationaladvertising.com
9. www.ad.co.in
10. www.advertise.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

ग्रामीण अंचलों में लोकोक्तियों का महत्व

डॉ. निरपेन्द्र कुमार सिन्हा *

प्रस्तावना – लोकोक्ति संस्कृत भाषा का शब्द है इसका अर्थ है लोक+उक्ति। अर्थात् लोक की उक्ति, लोक में प्रचलित और प्रसिद्ध उक्ति। बोलचाल की भाषा में लोकोक्ति को कहावत कहते हैं। व्यापक रूप से 'कहावत' शब्द लोकोक्ति की अपेक्षा अधिक प्रयुक्त होता है। यह उक्ति मानव समाज में व्यापक अनुभव से जन्म लेती है।[1]

लोक साहित्य में लोकोक्तियों का महत्वपूर्ण स्थान है। इनके द्धारा किसी कथन में तीव्रता और प्रभाव उत्पन्न किया जाता है। इससे भाषा में बल आ जाता है और यह श्रोताओं के हृदय पर अपना प्रभाव डालती है। मानव ने युग-युग से जिन तथ्यों का साक्षात्कार किया है उनका प्रकाशन इनके माध्यम से होता है।

अर्थ एवं परिभाषा – लोक सुभाषित में लोकोक्तियों का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है। इनके द्धारा किसी कथन में तीव्रता का प्रभाव उत्पन्न किया जाता है। इसके प्रयोग से किसी कथन की पुष्टि की जाती है और इसका प्रभाव श्रोताओ पर बहुत अधिक पड़ता है। सर्वसाधारण जनता के द्धारा प्रयुक्त होने के कारण इसे लोकोक्ति (लोक = जनता + उक्ति = कथन) कहा जाता है लोकोक्तियाँ अनुभवसिद्ध ज्ञान की निधि है। मानव ने युग-2 से जिन तथ्यों का साक्षात्कार किया है। उनका प्रकाशन इनके माध्यम से होता है। ये चिरकाल अनुभूत ज्ञान के सूत्र हैं। समानरूप में चिर-परिचित तथा अनुभूत ज्ञान का राशि का प्रकाशन इनका प्रधान उद्देश्य पाया जाता है।

कर्नल जैकब के अनुसार 'लोकोक्तियों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। शोध करने से पता चलता है कि वेदों में भी इनकी सत्ता उपलब्ध है। उपनिषदों मे भी लोकोक्तियों प्रचुर परिमाण में पाई जाती है।'[2]

ग्रामीण अंचल में कुछ लोकोक्तियाँ अत्यन्त प्रसिद्ध है जैसे-

'तीन कनौजिया तेरह चूल्हा'

काशी के सम्बन्ध में यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है-

'राँड, साँड सीढ़ी संन्यासी।
उनसे बचे तो सेवे कासी।'

इसी प्रकार के बुन्देलखण्ड के सम्बन्ध में यह लोकोक्ति प्रचलित है:

झाँसी गले की फाँसी, दतिया गले का हार।
ललितपुर नहीं छोड़िये जब तक मिले उधार।।

इससे स्थानीय जनता के व्यवहार का पता चलता है।

लोकोक्तियों की विशेषता एवं महत्व – लोक साहित्य के अन्तर्गत लोकोक्तियों का महत्व कोई कम नहीं है। लोकोक्तियों के माध्यम से किसी बात के कथन में तीव्रता व शक्ति का संचार होने लगता है। लोकोक्तियों अनुभव सिद्ध ज्ञान की अक्षय निधि है। मानव युग-युग से जिन-जिन लथ्यों का साक्षात्कार करता है उनका प्रकाशन इनके माध्यम से होता है। लोकोक्तियों का कार्य चिर संचित ज्ञान की राशि को प्रकाशित करना है।

लोकोक्तियों की परम्परा अति प्राचीन है। वेदों के अन्तर्गत भी इनकी सत्ता देखी जा सकती है। उपनिषदों में भी लोकोक्तियों की न्यूवता देखने को नहीं मिलती है। सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में तो लोकोक्तियों का प्रयोग सुचारू रूप से किया गया है जिसके कारण उनकी भाषा प्रभावोत्पादकता से मण्डित हो गयी है। संस्कृत साहित्य के मर्मज्ञ भारवि व माघ एवं श्री हर्ष के ग्रन्थों में लोकोक्तियों का स्वरूप लक्षित है। नैषध-चरित के रचयिता ने 'हृदे गंभीरे हृदि चावगढ़े शंसन्ति कार्यावतारं हि सन्त' लिखकर अनुभव की बात कही है। महाकवि राजशेखर ने प्राकृत भाषा में लिखे गए 'कर्पूर मंजरी' नामक सट्टक में 'हत्थकंकण कि दप्पणेण पेक्खी' का उल्लेख किया है जो हिन्दी में 'कर कंगन को आरसी क्या' इस सुन्दर व चुस्त रूप में सजीव है। पालि ग्रन्थों में भी ऐसी अनेकानेक उक्तियाँ प्राप्त होती हैं जिनसे अनुभूति की व्यंजना होती रहती है।

पंचतन्त्र, हितोपदेश आदि ग्रन्थों में नीति सम्बन्धी उक्तियों के स्वरूप दृष्टिगोचर होते है। संस्कृत में लोकोक्तियों को सुभाषित या सूक्ति कहा जाता है जिसका अर्थ है कि सुन्दर ढंग से कही गयी बात। बहुत सी ऐसी लोकोक्तियाँ हैं जो कि संस्कृत भाषा से ज्यों के त्यों रूप में हिन्दी भाषा में प्रयुक्त होने लगी हैं।

जब कभी लोकोक्तियों के संग्रह की बात आती है तो संस्कृत साहित्य लोकोक्तियों का अक्षय भण्डार है। इस क्षेत्र में कर्नल जैकब महोदय ने 'लौकिक न्यायांजलि' नाम से संस्कृत साहित्य में उपलब्ध न्यायों का अपूर्व संग्रह तीन भागों में प्रकाशित किया था जिसके अन्तर्गत काकतालीयन्याय, धुणाक्षरन्याय एवं अन्धदर्पण न्याय पर आपके द्धारा स्पष्टीकरण का स्वरूप देखने को मिलता है। इसी प्रकार से 'सुभाषित रत्न भण्डागारम्' नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ में लोकोक्तियों पायी जाती है। श्री फेकलेन महोदय ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'दि डिक्शनरी ऑफ हिन्दुस्तानी प्रोवर्ब्स' में- मारवाड़ी, पंजाबी, भोजपुरी मैथिली महावतों का संकलन किया है। फिर भी इस ग्रन्थ में पूर्वी हिन्दी (भोजपुरी) की लोकोक्तियां ही अधिक है। श्री जे0 एच0 नोबल्स का कार्य काशमीरी लोकोक्तियों पर है। सम्वत् 1994 वि0 में गढ़वाली भाषा ने परवाण लिखकर गढ़वाली लोकोक्तियों पर प्रचुर प्रकाश डाला गया है। इसी प्रकार श्री रतनलाल मेहता ने मालवी कहावतों पर प्रकाश डाला है। मेवाड़ी कहावतों पर भी पर्याप्त कार्य हो चुका है। डॉ0 कन्हैया लाल सहल ने राजस्थानी कहावतों पर महत्वपूर्ण अनुसन्धान किया है। श्री सत्यदेव ओझा ने भोजपुरी लोकोक्तियों पर महत्वपूर्ण कार्य किया।

लोकोक्तियों की विशेषताएं अधोलिखित हैं-

1. सामासिक शैली
2. अनुभूति और निरीक्षण
3. सरलता

*(समाजशास्त्र) चौ. चरण सिंह पी.जी. कालेज, हेंवरा, इटावा (उ.प्र.) भारत

1. **लोकोक्तियों में समास शैली –** इन कहावतों के प्रणेताओं ने गागर में सागर भरने का प्रयास किया है। यद्यपि लोकोक्तियाँ देखने में अत्यन्त लघु होती हैं लेकिन उस लघुता में भावों, विचारों का सागर समाहित है। उदाहरण के लिए – 'तीन कनौजिया तेरह चूल्हा' को ले सकते है। इसका आशय है किकान्यकुब्ज ब्राह्मण अपने को श्रेष्ठ समझते हैं जैसा कि कान्यकुब्जा द्विजा: श्रेष्ठा: इस उक्ति से स्पष्ट होता है। अत: वे लोग खानपान छुआ–छूत को अधिक मानते हैं।

एक अन्य कहावत है 'चार कवर भीतर तब देवता पीतर' अर्थात भोजपनोपरान्त ही देव पूजा की चिन्ता करनी चाहिए। इस लोकोक्ति के अन्तर्गत भौतिक वादी चांर्वाक सम्प्रदाय के सिद्धान्त की ओर संकेत किया गया है यथा–

'यावत् जीवेत् सुखं जीवते ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत्
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुत:'

लोकोक्तियों की यही लघुता उनके प्रचुर भाव का कारण है।

2. **लोकोक्तियों में अनुभूति और निरीक्षण –** लोकोक्तियों के अन्तर्गत मानव जीवन की युग युगान्तर की अनुभूतियों का परिणाम एवं निरीक्षण शक्ति सामाहित है। काशी निवास के सम्बन्ध में एक लोकोक्ति प्रसिद्ध है– घाध और भड्डरी के नाम से हिन्दी साहित्य में अनेकों लोकोक्तियां प्रचलित हैं। इन लोकोक्तियों में ऋतु सम्बन्धी एवं कृषि सम्बन्धी अनेक बातें बतलायी गयी हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि घाघ और भड्डरी महोदय ने अपने सूक्ष्म एवं पैनी दृष्टि का सहारा लेकर ऋतु सम्बन्धी तथ्यों को अनुसन्धान के बाद ही लोकोक्तियों का निमार्ण किया होगा। आकाश में चमकने वाली चंचला के रंग को देखकर निरीक्षण सम्प्रन्न व्यक्ति प्रभंजन आने तथा अकाल पड़ने की सूचना देते है।

3. **लोकोक्तियों की सरलता –** इनकी तीसरी विशेषता सरलता है। यह लोकोक्तियाँ बड़ी हर सरल भाषा में निबद्ध होती हैं जिन्हें अनपढ़ जनता भी बड़ी आसानी से समझ सकती है। इनकी सरलता के कारण श्रोताओं पर इनका अतिशय प्रभाव पड़ता है जैसे–

नसकट नहीं, बटकट जोये;
जो पहिलौठी बिटिया होये।
पातर कृषि, बौराहा भाय;
घाघ कहैं दु:ख कहाँ समाय।

इस लोकोक्ति के भाव को समझने में तनिक भी कठिनाई नहीं होती है। कहावतें गद्य में भी होती है और पद्य में भी। पद्यात्मक लोकोक्तियों को याद करने में बड़ी सुविधा होती है। इनका प्रभाव भी जनता के ऊपर संभवत: अधिक पड़ता है। विस्तृत अर्थ की दृष्टि से हिन्दी साहित्य कोश के सहयोगी लेखक सत्येन्द्र ने लोकोक्ति के दो प्रकार माने हैं3 – 1. पहेली, 2. कहावत। कानपुर अंचल में प्रयोग की जाने वाली कुछ लोकप्रिय कहावतें निम्नलिखित हैं–

खाने का ठिकाना नहीं, नहाना बड़े तड़के,
गुड़ का हसिया, न लीले में, न फेंके में,
नंगा का पीतर बाहर धरे या भीतर
पढ़िअउ पूत सोई–हाडिया खुद–बुद गई
आठ कनउजिया नउ चूल्हे, तेऊ पई फिरइ ऊले–ऊले।

अंग्रेजी शासन काल में 'भभूती' नामक प्रसिद्ध डाकू का कानपुर देहात में तूती बोलती थी। उसक रॉब और दबदबे को लक्षित करके कहा गया है कि 'दिन में राज फिरंगी को, रात भभूती जंगी कोय'। अंग्रेजों के शोषण पर भी ग्रामीण लोग एक कहावत कहते थे:– 'कमाये धोती वालो, खाये टोपी वालोय'।

लोकोक्तियों की भाषा अत्यन्त सरल एवं बोधगम्य है। सरलता के गुणों के कारण ही लोकोक्तियाँ बुद्धि ग्राह्य हो जाती हैं। कहावतें अपनी सरसता और सरलता के कारण ही श्रोताओं के हृदय पर सीधा आघात करती हैं–

'नसकट पनही, बतकट जोय
जे पहलोठी बिटिया होय
पातर कृश बौराहा।
घाघ कहै दु:ख कहा समाय।'

कहावतें गद्य में भी होती है और पद्य में भी। पद्यात्मक कहावतों को स्मरण करने में आसानी होती है। उनका भी प्रभाव जनता के हृदय पर सम्भवत: अधिक पड़ता है।

अत: उक्त विवेचन से लोकोक्तियों की परम्परा और लोकोक्तियों की विशेषताओं पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हरदेव बाहरी और डॉ0 केदार शर्मा, सामान्य हिन्दी, जैन प्रकाशन, पृ0 116
2. कर्नल जैकब, 'ए हैण्ड बुक ऑफ मैक्सिरस'
3. हरदेव बाहरी और डॉ0 केदार शर्मा, सामान्य हिन्दी, जैन प्रकाशन, पृ0 117
4. रामचन्द्र शुक्ल, भ्रमर गीत सार से उद्दत।
5. फेकलेन, द डिक्शनरी आफ हिन्दुस्तानी प्रोबर्व्स।
6. डा0 कन्हैया लाल सहल, राजस्थानी कहावते।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Legislative And Judicial Measures To Curb Drug Menace

Dr. Navin Chouhan *

Abstract - This article reviews menace of illicit drugs trafficking and the the legal measures to curb this serious problem. Drug menace destroy the quality of life, hamper social , Economic and cultural development of nation. Narcotic Drugs are the most lucrative illegal business that generates quick money that is why this problem is increasing day by day. In spite of strict preventive laws this problems has become Serious for the nation but also for the world. It is worldwide problem The conclusion reveals the drug trafficking and the present preventive laws to curb this menace.
Key words - drug menace, drug crime, NDPS.

Introduction - Illegal drug trafficking such as opium , cocain, heroine, morphine and amphetamines (Synthetic stumulents) has long been frustrating features of the international level. Drugs and Crimes are co-related. Drugs are related to crime as drug trafficking. it is orgnised crime. The relationship between drugs and crime is complex. drugs lead people into criminal activity. Drug and crime are directly co-related. To control and eradicate this Serious problem in the country, Indian parliament has made effective provisions by introducing the Narcotic Drugs and psychotropic substances Act 1985 in short NDPS Act 1985. According to the Narcotic drugs and Psychotropic substances Act 1985 the drugs can be classified into two categories:

1. Narcotic drug
2. Psychotropic substances

What is Drug trafficking- Illicit drug smuggling and trafficking is a clandestine activity. This crime is a global threat. This is the most lucrative business for the smugglers. They earn quick money by illegal trafficking drug trafficking is a illicit trade involving the cultivation, Manufacture, Distribution and sale of substances which are subject to the drug prohibition laws. This illegal drug trade is a global black market.

Legal Measures - The statutory control over narcotic drugs was excercised in india through a number of central and state enactments. The central Act namely the opium act 1857, the opium Act 1878 and the dangerous drug Act 1930 were enacted. Many deficiencies in the Laws come into force under the aforesaid Act. Later the Narcotics Drugs and Psychotropic Substances Act 1985 came into effect on November 14, 1985. The NDPS Act is an Act of parliament of India that prohibits person to produce manfacture, cultivate, posses, sell, purchase, transport, stock and consume any Narcotic Drugs or Psychotropic Substances. The Act has since been amended thrice in 1988, 2001, and 2014. This Act extends to the whole of India. This Act is designed to fulfill India's treaty obligation under the single convention on Narcotics Drugs, convention on psychotropic substances and United Nation convention against illicit trafficin N.D.P.S. The Act provides for minimum punishment of ten years rigorous imprisonment with fine of rupees 1 lakh. Extendable to 20 years rigorous imprisonment with fine of rupees 2 lakh. The court have been empowered to impose fines exceeding this limits for reasons to be recorded in their judgment.

In spite of stringent punishment and strict provisions in the NDPS Act 1985. There are some loopholes in the act which has effected the conviction and acquittal rate. The Drug mafia exploits the weak links of the Act. Drug traffickers get benefits of some technical points in the Act and they release. Non compliance of the provisions effect conviction rate.

These are…

1. Non compliance of section 41.
2. Non compliance of section 50.
3. Non compliance of section 52.
4. Non compliance of section 55.
5. No independent witness joined.
6. Contradiction in the statements of prosecution witness
7. Link in the chain of evidence missing.

Conclusion - The implementations of the provisions of the Act is need of today to control this Serious problems. The strict attitude of the judiciary towards the offenders is also needed today. Mandatory provisions of the Act must be fulfilled during arrest, search and seizure.

References :-

1. NDPS Act. 1985
2. Drugs and crimes
3. Criminal procedure code 1973
4. Indian penal code
5. Death penalty

***Asst. Professor (Law) Gyan Mandir Law College, Neemuch (M.P.) INDIA**

मादक पदार्थो का व्यसन, अवैध परिवहन एंव वर्तमान कानून व्यवस्था

डॉ. नवीन कुमार चौहान *

शोध सारांश – मादक पदार्थो के व्यसन एंव परिवहन का अवैध कार्य मनुष्य प्राचीनकाल से ही करता चला आ रहा है व्यवसन से मनुष्य का न केवल शारिरीक एंव मानसिक नुकसान हुआ है बल्कि उसको समाजिक एंव आर्थिक नकुसान का भी सामना करना पडा है मादक पदार्थो के व्यसन के कारण आपराधो के ग्राफ मे भी बढ़ोतरी हुई है क्योकि व्यसन एंव अपराध का संबध हमेशा रहा है व्यसनियो की बढ़ती हुई समस्या के कारण माद्क पदार्थो के परिवहन में भी लगातार बडोतरी हुई है माद्क पदार्थो के अवैध व्यापार में लिप्त माफीया इस व्यापार से कम समय मे अधिक पैसा अर्जित कर इस पैसे को अवैध कार्य में लगाते है और अपराध कारित करते है यहां तक कि इस अवैध आये को कुछ देश आंतकी संगठनो को सुविधाये मुहैया करने में खर्च कर रहे है नारकोटेरोरिज्म इसका उदाहरण है यह विकराल समस्या ना केवल हमारे देश में जडे जमाये हुए है अपितु यह विश्वव्यापक गंभीर समस्या बनकर सामने आ रही है वर्तमान समय में प्रभावी कानून व्यवस्था होने के बावजुद भी यह तीक्ष्ण समस्या दिन प्रतिदिन अपना विकराल रूप ले रही है संयुक्त राष्ट्रसंघ तथा विभिन्न देशो की कानून व्यवस्था भी इस गंभीर समस्या को पूर्ण रूप से नियंत्रित नही कर पा रही है हमारे देश में मौजुदा कानून स्वापक औषधी तथा मन:प्रभावी अधिनियम (NARCOTIC DRUGS & PSYCHOTROPIC SUBSTANCES Act 1985) उक्त समस्या को नियंत्रित करने के सार्थक प्रयास कर रहा है और सफल हो रहा है किन्तु कुछ तकनिकी कमियो के कारण अपराधी रास्ता निकालकर निकल जाते है और अपराध कारित करते है।

शब्द कुजी – व्यसन,अवैध परिवहन एंव एन.डी.पी.एस.

प्रस्तावना – माद्क पदार्थो के व्यसन की समस्या पश्चिमी देशो से भारत में आई है हमारे युवा पश्चिमी संस्कृति का अनुसरण करते है और वह व्यसन का शिकार हो जाते है। हशिश, केनाबिस, मारीजुआना, हिरोइन, अफीम, ब्राउनशुगर, कोकेन, स्मेक आदि नशीले पदार्थो का सेवन एंव अवैध परिवहन दिन प्रतिदिन बडता जा रहा है बडते व्यसन के कारण इनका परिवहन भी लगातार बढ़ रहा है संयुक्त राष्टसंघ का यह आकलन है कि कोकिन,हीरोइन और कृतिम औषधियो के पचास लाख से अधिक नियमित उपभोक्ता है दुनिया के सभी देशो के लिए माद्क पदार्थ एंव उनका अवैध परिवहन गंभीर खतरा बना हुआ है।

व्यसन – माद्क पदार्थो का सेवन या व्यसन एक मन:चिकित्सीय सामाजिक और मनौवैज्ञानिक समस्या है। व्यसन से तात्पर्य उन औषधियो के उपयोग से है जो गैर चिकित्सा के उपयोग में लाई जाती है और यह औषधी शरीर में विभिन्न प्रकार से लेने के पश्चात् मशितसक एंव व्यवहार को प्रभाव करती है नशिली दवाओ का सबसे बडा दुष्प्रभाव मशितस्क पर पडता है जिसके परिणाम स्वरूप तंत्रिकातंत्र प्रभावित होता है और व्यसनी असामान्य व्यवहार कारित करने लगता है अपराध इसकी परिणिति है।

परिवहन – माद्क पदार्थो की तस्करी एक अंतर्राष्ट्रीय अवैध व्यापार है युनाईटिड नेशनस ऑन ड्रग्स एण्ड क्राईम एक अंतर्राष्ट्रीय संगठन है जो माद्क पदार्थो के दुरूपयोग पर और उनके उत्पादन के खिलाफ लड़ रहा है यदि माद्क पदार्थो का व्यसन बढ़ा है तो इसके परिवहन के अपराध भी बढे है माद्क पदार्थो के अवैध परिवहन की समस्या न केवल देश की समस्या है किन्तु यह विश्वव्यापी समस्या बन चुकी है और वर्तमान में बहुत विकराल समस्या बनकर उभर रही है कई बडे अफीम उत्पादक देशो में अवैध परिवहन की समस्या अपना विकराल रूप ले रहे है।

गोल्डन क्रिसेन्ट – अवैध अफीम उत्पादन देश जिसमें अफगानिस्तान, ईरान और पाकिस्तान क्षैत्र संम्मिलित है माद्क पदार्थो के अवैध परिवहन में लिप्त है यह क्षैत्र गोल्डन क्रिसेन्ट कहलाता है ये देश भारी मात्रा में अवैध अफीम उत्पादन के साथ–साथ माद्क पदार्थो के अवैध परिवहन में भी लिप्त है।

गोल्डन ट्रायंगल – वह क्षैत्र जिसमें म्यामर, लाओस और थाईलेंड क्षैत्र सम्मिलित है अवैध परिवहन के लिये विख्यात है यह क्षैत्र गोल्डन ट्रायंगल कहलाता है।

भारत भी अफीम उत्पादक देश है जहां अफीम का उत्पादन कुछ राज्यो में केन्द्रीय सरकार की निगरानी एंव नियंत्रण में किया जाता है यहां भी माद्क पदार्थो के अवैध परिवहन की समस्या जडे जमाए हुई है वर्तमान सख्त कानून होने के बावजुद भी यह समस्या लगातार बढ़ती जा रही है।

कानुनी व्यवस्थाएं – माद्क पदार्थ एंव नशिली दंवाओ के उत्पादन ,आयात एंव निर्यात पर प्रतिबंध के लिए विश्वस्तर पर कई नितिया एंव कानून समय–समय पर बनाए गये है जिसमें संयुक्त राष्ट्रसंध ने सन् 1961 में स्वापक औषधि (NARCOTIC DRUGS) पर एकल कन्वेशन आयोजित किया। सन् 1971 में मन:प्रभावी प्रदार्थो (PSYCHOTROPIC SUBSTANCES) पर द्वितीय कन्वेशन हुआ एंव इसके पश्चात् माद्क तथा मन:प्रभावी पदार्थो के अवैध परिवहन को लेकर 1988 में कन्वेशन आयोजित कि गई।

हमारे देश में माद्क पदार्थ मन:प्रभावी पदार्थो के अवैध बिना लायसेन्स के उत्पादन क्रय विक्रय एंव निर्यात पर प्रतिबंध के लिये स्वापक औषधी तथा मन:प्रभावी अधिनियम (NARCOTIC DRUGS & PSYCHOTROPIC SUBSTANCES Act 1985) संक्षेप में एन.डी.पी.एस.एक्ट 1985 नाम से जाना जाता है।

स्वापक औषधी और मन:प्रभावी पदार्थो के अपराधो को बहुत गंभीरता

* सहायक प्रध्यापक (विधि) ज्ञान मंदिर विधि महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

से लेकर इस अधिनियम में कठोर दण्ड का प्रावधान किया गया है अधिनियम में सजा की मात्रा माद्क पदार्थो की छोटे,वाणिज्यिक और मध्यवर्ती मात्रा से संबधित सजा के अंर्तगत दस वर्ष का न्युनतम सक्षम कारावास का प्रावधान है जो बीस वर्ष तक का हो सकता है और इसमें जुर्माना भी सम्मिलित है। अपराधो की पर्नरावृति पर मृत्यु दण्ड की सजा का प्रावधान भी निहित है।

एन.डी.पी.एस.एक्ट 1985 की धारा 71 के अंर्तगत सरकार को नशीली दवा आदि लोगो की पहचान,ईलाज और पुर्नवास केन्द्र की स्थापना करने का अधिकार प्राप्त है इस अधिनियम को पूणत: पालन करने का निर्देश माननीय उच्चतम न्यायालय ने दिया है न्यायालय ने सभी राज्यो के पुलिस महानिदेशको को अधिनियम की धारा 42 का पालन करने के लिए कहां है धारा 42 के अंर्तगत जांच अधिकारी को बगैर वारंट के तलाशी लेने,माद्क पदार्थ जप्त करने और गिरफतार करने का भी अधिकार दिया गया है इस अधिनियम के अंर्तगत सरकार विशेष न्यायालयो की स्थापना त्वरित मुकदमा चलाने के लिए कर सकती है।

भारत ने सयुंक्त राष्ट्रसंघ द्धारा बुलाएं गये तीनो कन्वेशनो पर हस्ताक्षर कर इस वचन बद्धता का पालन किया है देश में माद्क पदार्थो के व्यसन एंव परिवहन पर पूर्णत:प्रतिबंध लगाने के लिए यह अधिनियम प्रभावी है।

निष्कर्स– माद्क पदार्थो की तस्करी एंव व्यसन को रोकना एक जटिल काम है वर्तमान समय में इस समस्या का खतरा इतना बढ़ गया है कि इसे नजर अंदाज नही किया जा सकता वर्तमान कानून व्यवस्था को और कठोर कर तथा समाज में जागरूकता के माध्यम से इस समस्या पर अंकुश लगाया जा सकता है एन.डी.पी.एस.एक्ट के पालन में जो तकनिकी कमिया अनुसंधान एजेन्सी तथा जांच एजेन्सी में समाने आ रही है उन्हे दुर करना होगा तथा एक्ट का कठोरता से पालन करवाना होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. स्वापक औषधी तथा मन:प्रभावी अधिनियम (NARCOTIC DRUGS & PSYCHOTROPIC SUBSTANCES Act 1985)
2. ड्रग्स एण्ड क्राईम
3. विक्टीम लैस क्राईम
4. भारतीय दण्ड संहिता
5. मानव अधिकार

****

भारतीय परिप्रेक्ष्य में शैक्षिक दूरदर्शन : एक परिदृश्य

डॉ. महेश कुमार मुछाल *

प्रस्तावना – यह तकनीकी युग है। संसार के कोने-कोने में रेडियों और दूरदर्शन जैसे संचार माध्यमों को सर्वाधिक लोकप्रिय जनसंचार माध्यम के रूप में जाना जाता है। संचार तकनीकी और प्रसारण पर आधारित इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों ने सूचना के त्वरित एवं मितव्यता पूर्ण प्रसारण के क्षेत्र में एक नयी गति प्रदान की हैं जनसंचार की आधुनिक तकनीक के रूप में, विशेषकर उपग्रह आधारित प्रसारण तकनीक द्वारा दूरदर्शन ने विश्वव्यापी संचार प्रणाली में एक अहम् भूमिका अदा की है। विकसित देशों में दूरदर्शन आधारित प्रणाली के दूसरे सहायक साधनों के रूप में वीडियो, केबल टी0 वी0, बन्द परिपथ दूरदर्शन (CCTV) जो सामान्य जन के लिए दूरदर्शन का क्षेत्र (दायरा) एवं उपयोगिता बढाते है।

विकासशील देशों में शिक्षा के माध्यम के रूप में दूरदर्शन के सम्भावित क्षेत्र मौजूद है। भारत में दूरदर्शन कार्यक्रमों के प्रसारण की सुविधा देश के 77% क्षेत्र में बसी 59% आबादी के लिए उपलब्ध है। वहॉ दूरदर्शन सामान्यत: लोगों के लिए प्रभावी शिक्षा माध्यम के रूप में और विशेषत: औपचारिक विद्यालयीन शिक्षा एवं दूरस्थ शिक्षा के लिए उपयोगी हो सकता है। दूरदर्शन पर दूरस्थ विद्यार्थियों के लिए राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय द्वारा निर्मित कार्यक्रमों को सप्ताह में दो दिन ज्ञान दर्शन शैक्षिक चैनल केबल द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इस चैनल को 26 जनवरी 2001 से 24 धंटे शैक्षिक प्रसारण के लिए आरम्भ कर दिया है। दूरदर्शन के राष्ट्रीय चैनल पर (इन्सैट 2 सी) के द्वारा शैक्षिक कार्यक्रमों का प्रसारण किया जाता है। दूरदर्शन को देश ग्रामीण प्रौढ़ व्यक्तियों की साक्षरता और साक्षरता कार्यक्रमों को प्रभावी माध्यम के रूप में मान्यता प्राप्त हुई है। यह जन सामान्य के मध्य सामाजिक जागरूकता और क्रियात्मक साक्षरता का निर्माण कर सकता है। मुख्यत: दूरदर्शन का प्रयोग मनोरंजन साधन के रूप में होता है। दूरदर्शन के द्वारा विविध अनुभवों से जुड़े शैक्षिक कार्यक्रमों को विविधतापूर्ण एवं मनोरंजक तरीके से पेश किया जाता हैं साथ ही यह जीवन के वास्तविक अनुभवों को तो सामने लाता ही है, और भावी जीवन के विविध दृश्यों को भी प्रस्तुत करता है। जिससे दर्शक की बहुआयामी विचार शक्ति को बढ़ावा मिलता है। विशेषकर विद्यालयी छात्रों के विषय में इसे शैक्षिक अनुभव के संचार का सहायक एवं वैकल्पिक माध्यम के रूप में जाना जाता है।

शिक्षण पद्धति में दूरदर्शन की भूमिका – दूरदर्शन को निम्न दृष्टि से कक्षा आधारित शिक्षण के सहायक माध्यम के रूप में मान्यता मिली है।

गुणवत्ता में सुधार – शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रमों में सामान्यता ऐसे पाठ्य पुस्तक सूची विशेषज्ञ, कार्यक्रम रचनाकार, दृश्य-श्रव्य कलाकार एवं कार्यक्रम निर्माण एवं सृजन प्रसारण विशेषज्ञों के गहन प्रयासों को शामिल किया जाता है। अत: अन्य संस्थानों द्वारा निर्मित शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रमों में गुणवत्ताबनी रहती है।

योजनाकार के रूप में दूरदर्शन – कक्षा दूरदर्शन शिक्षाविदों को पाठ्य विकल्पों पर पुनर्विचार एवं वर्तमान अध्यापकों एवं प्रविधि के मूल्यांकन के लिए भी प्रेरित करता है। यह अध्यापकों एवं सूचीकारों (योजनाकारों) को योजना हेतु स्त्रोत प्रदान करता है एवं सामयिक प्रथाओं से उन्हें अवगत करता है। कक्षा दूरदर्शन में नवीन शैक्षिक विचारों के त्वरित प्रसार में सहायता प्रदान करता है। शैक्षिक दूरदर्शन की मदद से शैक्षिक क्षेत्र में विकास से सम्बधित विविध विचारों को आसानी से प्रसारित किया जा सकता है।

बालको के अनुभव को विस्तार देने वाले माध्यम के रूप में दूरदर्शन – कक्षा में दूरदर्शन को अकसर विश्व झरोखा की संज्ञा दी जाती है। कार्यक्रमों से विद्यार्थियों को समय व स्थान की सीमाओं को लांघने में मदद मिलती है और समाज को नवीन और अलग नजरिए से देखने की दृष्टि मिलती है। ग्रामीण बालक ग्रामीण (देशी) जीवन को देखता है। दूरदर्शन के द्वारा उपभोग एवं आर्थिक ढ़ॉचे के विविध प्रतिमोल वैकल्पिक धार्मिक स्वरूप, सॉस्कृतिक प्रतिमान एवं लैगिंक भूमिका के आदर्श उपलब्ध होते है।

पर्यावरण सतर्कता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के माध्यम के रूप में दूरदर्शन – प्राथमिक विद्यालयी विद्यार्थियों में पर्यावरण सतर्कता एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकास के लिए दूरदर्शन एक उपकरण के रूप में प्रयुक्त होता है। यह विद्यार्थियों के मध्य परस्पर सहभागिता एवं सम्बद्ध सार्वभौमिक अनुभव प्रदान करता है। वह उन्हें स्वयं के तथा पर्यावरण के बारे में अपने अहसासों को परखने का मौका देता हैं। यह विद्यार्थी की बाहय दृष्टि को बढ़ाता है। विज्ञान एवं तकनीकी के बारे में जिज्ञासा उत्पन्न करता है।

शैक्षिक अवसरों में समानता लाने वाले माध्यम के रूप में दूरदर्शन – दूरदर्शन की सहायता से सभी विद्यार्थियों में शैक्षिक अवसरों की समानता लायी जा सकती है। दूरवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों एवं विशेष क्षेत्रों के अध्ययनकर्त्ता भी उसी तरह से दूरदर्शन कार्यक्रमों से लाभान्वित हो सकते है जिस तरह से उनके शहरी साथी होते है। दूरदर्शन शैक्षिक माध्यम के रूप में विद्यालय को सामुदायिक कल्याण एवं शिक्षा का केन्द्र बनाने में सहायता प्रदान करता है।

शैक्षिक प्रणाली में मितव्यता लाने के माध्यम के रूप में दूरदर्शन – दूरदर्शन बाल शिक्षा में बेहतर अवसर प्रदान करता है जैसे अधिक जनसंख्या पर प्रति इकाई लागत कम खर्चीले साधनों के कारण दूसरे शैक्षिक माध्यमों की तुलना में कम होती है। शिक्षा के अन्य दूसरे साधनों के साथ जोडकर विद्यार्थियों से बेहतर परिणाम प्राप्त करने में भी सहायता प्रदान करता है। भारत जैसे देश में जहॉ शिक्षा के भौतिक संसाधन सीमित है। बाल शिक्षा की दृष्टि से शैक्षिक दूरदर्शन द्वारा शिक्षा के उत्तम अवसर प्राप्त कर सकते है।

दूरदर्शन दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम के अतिसरल एवं प्रभावी साधन के रूप में दूरदर्शन।

* एसोसिएट प्रोफेसर (शिक्षा विभाग) दिगम्बर जैन कॉलेज, बड़ौत (बागपत) (उ.प्र.) भारत

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली द्वारा शिक्षण के संदर्भ में शैक्षिक दूरदर्शन का संचालन अतिसरल है। दूरस्थ शिक्षा नियोजन क्रियान्वयन एवं संचालन में समस्याऐं कुछ सीमा तक वीडियो अनुदेशन एवं दूरदर्शन द्वारा शिक्षण करा कर हल की जा सकती है।

दूरदर्शन अध्यापक पर आश्रितता को कम करता है। दूरदर्शन अधिगमकों में स्व-अध्ययन की आदत को विकास करता है। दूरदर्शन की सहायता से विद्यार्थी स्वयं के प्रयास से सीखता है। शिक्षित होता है। दूरदर्शन के माध्यम से नये ज्ञान, विचार एवं अवधारणाओं को सीखने में उसे शिक्षक की कम से कम आवश्यकता महसूस होती है।

वर्तमान परिदृश्य – वर्षो के दौरान दूरदर्शन ने धीरे-धीरे स्वयं को शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम निर्माण से अलग कर लिया और प्रसारण एजेन्सी के रूप में अपनी भूमिका को रोक लिया।

दिल्ली विद्यालय दूरदर्शन जो शैक्षिक दूरदर्शन के क्षेत्र में देश में अग्रणी था। उसने दिल्ली के विद्यालयों हेतु कार्यक्रमों के उत्पादन व सप्रसारण को रोक दिया। धीरे-धीरे शिक्षा तकनीकी संस्थानों ने शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम उत्पादन एजेन्सी की भूमिका को निभाना शुरू कर दिया। निम्न तीन प्रमुख संस्थाओं द्वारा निर्मित कार्यक्रम अब प्रस्तुत किए जा रहे है।

CIET और SIET प्राथमिक विद्यालय हेतु शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम उत्पादन और प्रसारण के लिए जिम्मेंदार है। सम्पूर्ण विद्यालय सेक्टर प्राथमिक से माध्यमिक स्तर तक आदेश जारी कर दिया है कि प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालय के अध्यापकों के लिए कार्यक्रमों का उत्पादन एवं प्रसारण की जिम्मेंदारी इन्हीं संस्थाओं की है।

दृश्य श्रव्य शोध केन्द्र (AVRC) एवं शैक्षिक माध्यम शोध केन्द्र (EMRC) द्वारा निर्मित कार्यक्रम विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) के अंतर्गत कर्न्सोटीयम फार एजुकेशनल कम्यूनिकेशन (CEC) एक दूसरा बड़ा कार्यक्रम है जो देश व्यापी कक्षा कार्यक्रम के नाम से महाविद्यालयी विद्यार्थियों तथा सामान्य पृष्ठभूमि रखने वाले तथा सामान्य श्रोताओ के लिए शैक्षिक कार्यक्रम को प्रस्तुत करता है।

ज्ञानदर्शन (शैक्षिक चैनल) – विशिष्टता के साथ देश अधिक चैनलों का उदभव हुआ जैसे स्पोट्र्स, मूवी, म्यूजिक आदि। कुछ समय पूर्व से एक शैक्षिक चैनल की आवश्यकता महसूस की जा रही थी। दूरदर्शन एक राष्ट्रीय प्रसारणकर्त्ता भी है इसके सहयोग से उपग्रह ट्रान्सपान्डर (सी-बैन्ड फैलाव) उपलब्ध कराया। सभी शैक्षिक कार्यक्रम उत्पादन करने वाली तीन प्रमुख संस्था केन्द्रीय शिक्षा तकनीकी संस्थान (CIET) और इसके नेटवर्क उपग्रह अनुदेशन दूरदर्शन प्रयोग (SIET), UGC, CEC और इसके नेटवर्क AVRC और EMRC तथा इग्नू ने शैक्षिक चैनल ज्ञान दर्शन का 26 जनवरी 2000 को शुभारम्भ किया। तथा स्थापना हेतु सभी ने मिलकर हाथ बढ़ाया। इस चैनल को केबल आपरेटर के द्वारा केबल सिस्टम से प्राप्त किया जा सकता है। जो 2000 से शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम का प्रसारण 16 घंटे शुरू किया। इन्सैट 2-बी 93.5 डिग्री (अंश) पूर्व पर 4170 मेंगा हट्र्स उर्ध्व ट्रान्सपान्डर C-12 पर जिसके संकेतक उपलब्ध है।

ज्ञान दर्शन को 24 घंटे के चैनल में परिवर्तित करने की योजना थी जो प्रतिदिन 24 घंटे शैक्षिक कार्यक्रम प्रसारित करेगा। इस चैनल को 26 जनवरी 2001 से 24 घंटे शैक्षिक कार्यक्रम का प्रसारण शुरू कर दिया गया। ज्ञान दर्शन में कुछ कार्यक्रमों को इन्दरेक्टिव अंतर्क्रियात्मक बनाने की योजना है जहाँ दर्शक इंटरनेट, टेलीफोन और फैक्स के द्वारा स्टुडियो में उपलब्ध विशेषज्ञों के साथ अंतर्क्रिया (बातचीत) कर सकेगें।

भविष्य का परिदृश्य – दूरदर्शन एक एकांकी माध्यम है दूरदर्शन की यह सीमा सम्प्रेषण विशेषज्ञ, अध्यापकों, विषयवस्तु विशेषज्ञों, माध्यम निर्माताओं द्वारा समझी गई।

कार्यक्रम की एकांकी (एक तरफा) सीमा को ध्यान में रखकर सामान्यत: अधिकांश पाठ लेखक, निर्माता सम्पूर्ण कार्यक्रम के विशेष बिन्दुओं पर पूर्व निश्चित प्रश्न योजना द्वारा चर्चा कर लेते है। तथा उन प्रश्नों को अंतर्क्रियात्मक बनाने का नया तरीका है। CEC देश व्यापी कक्षाकक्ष, पुन: वार्ता (टाक बैंक) प्रयोग के द्वारा टेलीकान्फ्रेन्सिंग के साथ एक तरफा वीडियो तथा दो तरफा ऑडियो (श्रव्य) के माध्यम से प्रयोग की गई है। और इसके बाद एन0 सी0 इ0 आर0 टी0 के द्वारा प्राइमरी विद्यालय अध्यापकों को प्रशिक्षण हेतु इसका प्रयोग किया गया। इग्नू और अन्य संस्थाओं के द्वारा दूरस्थ शिक्षा विद्यार्थियों के परामर्श हेतु भी इसका प्रयोग किया गया।

दूसरा नवीन प्रयोग था जो CIET(NCERT) के द्वारा आयोजित किया गया वह कक्षा कक्ष 2000+ था। जिसमें विभिन्न कक्षा कक्षों में उपस्थिति विद्यार्थी स्टूडियो में बैठे अध्यापक से अंतक्रिया कर सकते थे। विशेष कम्प्यूटर नेटवर्क का प्रयोग करते हुए। अध्यापक निश्चित प्रश्नों के लिए विद्यार्थी निश्चित प्रतिक्रिया को चिन्हित कर सकता था और आवश्यकतानुसार अपनी शिक्षण व्यूह रचना में परिवर्तन कर सकता था। दूसरा उल्लेखनीय प्रयोग जिसमें अर्न्तराष्ट्रीय संस्थाओ में दूरदर्शन भाग ले रहा है उसी तरह गुजरात व मध्य प्रदेश के राज्यों में IPTT/ITV अंतर्क्रिया दूरदर्शन (इन्टरेक्टिव टेलीविजन) प्रयोग किया गया है। प्रशिक्षणार्थी जिला केन्द्रों पर बैठे होगें ये केन्द्र दूरदर्शन केमरा कम्प्यूटर नेटवर्क तथा अन्य सम्प्रेषण सुविधाओं से पूर्ण रूप से सुसज्जित होगें। सभी प्रशिक्षणार्थी अपनी समस्याओं व कठिनाइयों को एक केन्द्रीय स्टूडियों को सम्प्रेषित कर सकेगें जहाँ प्रशिक्षण दाता/विशेषज्ञ बैठे होगे और प्रश्न योजना समस्याओं का उत्तार दे रहे होगें। सम्प्रेषण के दो तरीके होगें। (द्विमार्गीय दृश्य, द्विमार्गीय श्रव्य) प्रशिक्षणार्थी एवं प्रशिक्षणदाता एक दुसरे को देख व सुन सकेगें और कम्प्यूटर नेटवर्क के द्वारा सम्प्रेषण (बातचीत) कर सकेगें। हार्डवेयर व साफ्टवेयर को सही स्थिति में रखने का कार्य प्रगति पर है डिजिटल तकनीकी के आगमन और नवीन सम्प्रेषण विधियों जैसे मोबाइल फोन, वायरलैस एप्लीकेशन (WAP) विधियों के साथ शिक्षा में दूरदर्शन का नवीन प्रयोग तथा नई-नई युक्तियो व तरीके खोजने के लिए व्यापक क्षेत्र उपलब्ध है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल, बी0 सी0 (1978) 'टेलीविज कम्स टू विलेज एन इवेल्यूएशन ऑफ साइट टेक्निकल रिपोर्ट इसरो' - एस0 ए0 सी0 - टी0 आर0 - 7 अहमदाबाद, स्पेस एप्लीकेशन सेन्टर।
2. भाट, बी0 डी0 एवं शर्मा, एस0 आर0 (1992) 'एजुकेशनल टेक्नोलोजी कन्सेप्ट एंड टेक्निक', कनिष्क पब्लिकेशन, न्यू देहली।
3. सी0 ई0 सी0 (1987) 'ए स्टडी ऑफ द इम्पेक्ट ऑफ द ई0 टी0वी0 प्रोग्राम ऑन द चिल्ड्रन ऑफ क्लास-IV-V इन सम्भलपुर डिस्ट्रिक्ट', उडीसा, मिमियोग्राफ्ड्, एन0 सी0 ई0 आर0 टी0, न्यू देहली।
4. सी0 आई0 ई0 टी0 (1983) 'ए स्टडी टू असेस दी नीड आफ द प्राइमरी स्कूल चिल्ड्रन ऑफ उडीसा फार ई0टी0वी' सपोर्ट मिमियोग्राफ्ड्, एन0सी0ई0आर0टी0 न्यू देहली (ए)।
5. सी0आई0ई0टी0 (1984) 'रिपोर्ट आन ई0टी0वी0 यूटीलाइजेशन इन उड़ीसा' (फार द पीरियड एन्डिंग दिसम्बर 1983) मिमियोग्राफ्ड् एन0सी0ई0आर0टी0 न्यू देहली (बी)।

6. सी0आई0ई0टी (1993) 'टेलीकान्फ्रेन्सिंग एन्यूवल रिपोर्ट' न्यू देहली।

7. चौधरी एस0एस0 (1992) 'टेलीविजन इन डिस्टेन्स एजुकेशन द इन्डियन सेन्स', इंडियन जर्नल आफ ओपन लर्निंग, वाल्यूम-1

8. गोयल डी0आर0 (1984) 'एजुकेशन टेलीविजन इन इण्डिया आर्गेनाइजेशन एण्ड यूटीलाइजेशन', अनपब्लिश्ड् पोस्ट डाक्टोरल थीसिस सी0ए0एस0ई0, एम0एस0 यूनिवर्सिटी बडौदा।

9. मलिक प्रभाकर (1995), 'इवेल्यूएशन ऑफ एजुकेशनल टेलीविजन प्रोग्राम्स फार उड़िया मीडियम प्राइमरी स्कूल चिल्ड्रन इन टर्म ऑफ प्रजेन्टेशन, एचिवमेंट विद एंड विद आउट टाक बैक स्कूल एचिवमेंट एंड एटीट्यूड ट्वार्डस एजुकेशनल टेलीविजन', अनपब्लिश पी0एच0डी0 थीसिस, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर।

10. मोहन्ती, जे0 एवं बेहरा एस0सी0 (1985), 'टीचर एजुकेशन प्रोग्राम' अन्डर इन्सेट ई0पी0ए0 बुलेटिन वाल्यूम बी0 नोस 1 एवं 2 ।

11. मोहन्ती जे0 (1976), 'ए स्टडी ऑफ ई0टी0वी0 प्रोग्राम अंडर साइट स्टडी आन एजुकेशन एण्ड रेडिया प्रोग्राम', एजुकेशन टेक्नोलोजी सेल, डायरेक्ट्रेट ऑफ हायर एजेुकशन, उडीसा ।

12. साहू पी0के0 (1984), 'ओपन लर्निंग सिस्टम', न्यू देहली, उप्पल पब्लिशिंग हाउस।

13. साहू पी0के (1999), 'एजुकेशन टेक्नोलोजी इन डिस्टेंस एजुकेशन', न्यू देहली, अरावली।

14. सिंह आई0आई0 एवं सिंह ए0के0 (1984), 'रिपोर्ट ऑफ ई0टी0वी0 न्यूटीलाइजेशन इन उडीसा', (पीरियड एन्डिंग 1983) (इनसैट इवल्यूऐशन सीरीज-IV), मिमियोग्राफ्ड, सी0आई0ई0टी0, एन0सी0ई0आर0टी0, न्यू देहली।

****

Multimedia as an Instructional Tool: Opportunities and Challenges

Dr. Mahesh Kumar Muchhal * Kavita Agarwal **

Abstract - Quality education is an essential requisite in today's competitive environment. Technology has affected us in every aspect. Switching to the new and smart way of learninggives our students the best possible way to learn. The use of multimedia in education imparts itself to more student centred learning settings and often this creates some stress in teachers as well as in students, but with the world moving rapidly into digital media and information, the use of multimedia in education is becoming more and more important and this importance will continue to grow and develop in 21st century. This paper highlights the various impacts of multimedia in contemporary higher education and explore potential future developments. The paper seeks to provides an overview of what constitutes educational "multimedia" and presents research findings of their effectiveness. These research findings consider not only the educational content being delivered, but also associated with the usage of interactive channels. The paper concludes with suggestions fornew research areas that consider different variables and environments not previously studied.
Keywords: Multimedia, technology, pedagogy, higher education.

Introduction - Modern technology is a force that has changed many aspects of the way we live. The teachers play an important role in the performance of students. The professional knowledge of the teachers and how they deliver such knowledge are the aspects that have the main impact on student achievement (Nooraida & Rabiatul Adawiyah, 2010). The teaching method used by teachers has an effect on the students' performance and academic achievement. Therefore, new teaching and learning strategies with new technologies should be implemented by teachers to avoid misconceptions in the learning process (Sadiah, 2008). As a result, teaching and learning strategies should be revised and studied. This should be done to ensure that any new interventions administered by teachers are effective, and lead to a marked improvement in student performance. But there have been a number of factors impeding the wholesale uptake of technology like multimedia in education across all sectors. The main factors are lack of funding to support the purchase of the technology, a lack of training among established teaching faculty, a lack of motivation and need among teachers to adopt multimedia as teaching tools(Starr,2001). But in recent times, factors have emerged which have strengthened and encouraged moves to adopt multimedia into classrooms and learning settings.

This paper tries to provide an updated overview of opportunities and challenges of the use of multimedia for educational purposes. The paper begins with a review of what educators and researchers consider multimedia and its importance to the learning process.

It also tries to discuss the challenges of Multimedia in higher education through various review of research findings and concludes with areas of additional research to guide educators wishing to utilize multimedia tools. This paper provides an overview of both the benefits and the problems associated with its use and suggests some key pedagogical decisions that should be considered when adopting its use.

Background - Use of computers to assist instruction is referred to as Computer Assisted Instruction (CAI). Equivalent terms used are: Computer Assisted Learning (CAL), Computer Assisted Education (CAE), Computer Based Instruction (CBI), and Computer Based Education(CBE). Thevarious kinds of ICT products available and having relevance to education, such as teleconferencing, email, audio conferencing, television lessons, radio broadcasts, interactive radio counselling, interactive voice response system, audiocassettes and CD ROMs have been used in education for different purposes (Bhattacharya and Sharma, 2007).The computers, as learning tool, with these modifications are used with varying degrees of dependence on the computer learner's control over the learning process, and teacher mediation.In the case of the students as well as teachers, it becomes more important that one can access the technology for his/her easy performance in daily life activities in all the ways. The new media technology in education is creating a genre of outreach learning and contributing for the future global leaders.

*Associate Professor, Department of Education, Digambar Jain (P.G.) College, Baraut (U.P.) INDIA
** Assistant Professor, Department of Education, Digambar Jain (P.G.) College, Baraut (U.P.) INDIA

Overview of Under-Researched Areas - The National Commission On Excellence in Education (1983) emphasized that a nation's future depends on citizens who can think and reason creatively, and deliberately develop sound judgments of information, understand and adjust effectively with rapid and constant change.Reeves (1992) defined Interactive Multimedia as a computerized database information in multiple forms, including text, graphics, video and audio. He also explained that effectiveness of Interactive Multimedia is constrained by two important factors; first the design of the user interface and second, the motivation and expertise possessed by the users. It is one of the most effective means of educational technology that can be used at school as well as college levels of educational institutions but we have to be very particular regarding the application or implementation of interactive media as it cannot always give positive results. The reason being besides the treatments, there can be numerous other variables, which can influence the reasoning ability, independently as well as by interacting with the treatment, such as scientific attitude, higher mental ability, creativity etc. Theory of multiple channel communication reveals the importance of multiple channels for delivery of educational content, it confirms that when information is presented by using more than one media, there will be more retention resulting improved learning. (Ellis,2004; Bagui, 1998; Daniels, 1994).Rebetez, C., et.al, (2007) conducted a video game research in cognitive and educational sciences. They provided video games to an experimental group in which more use of accuracy and decision making is required. After some time, they tested this group and found that the students exposed more to the video games are quicker and their progress is more in other subjects also. Kamal, M., (2000) advised adoption, assimilation and integration of computer technology into an existing culture. It will definitely provide a bridge which can affect teaching and learning process at all levels and contexts. Rebetez, C., et.al, (2007) have conducted a video game research in cognitive and educational sciences, they provided video games to an experimental group in which more use of accuracy and decision making is required. After some time, they tested this group and found that the students exposed more to the video games are quicker and their progress is more in other subjects also. Malahat, Y., (2012) studied Mobile based learning verses paper based learning, a quantitative analysis of the results in this research shows that mobile based group outperformed significantly paper based group so a mobile phone can be used as a valuable tool for student's learning. Shilpa, J., (2014) conducted her study on new media technology in education and concluded that this technology should be interwoven in academics giving a multidimensional approach to educational sector and the knowledge economy. Barbara, S. (2008) provides an overview of how the design of multimedia instruction can be informed by the science of learning and the science of instruction, which yields 10 principles of multimedia instructional design that are grounded in theory and based on evidence. Overall, the relationship between the science of learning and the science of instruction is reciprocal.

Furthermore, although not guaranteed by most researchers assessing the effectiveness of instructional multimedia,Holzinger, A., et.al, (2008) conducted a study on use of dynamic media in computer science education and suggested that dynamic media can support learning only when limited cognitive load and learner's mental representations are taken into account during the design and development of learning material containing dynamic media. Tannenbaum (1998) postulated that multimedia must include an interactive meaningful content. This interactive content must allow the learner to interact with the material to gain positive outcome. In fact, Drave (2000) suggested interactivity quality is more important than the content for successful learning.

Ott, Mann and Moores (1990) stated that Personality types also provide clues as to when the use of multimedia will be effective. They hypothesized that the Introvert, Intuitive, Feeling, judging personality types would prefer multimedia training, while the Extrovert, Sensing, Thinking, Perceiving would prefer lectures. Elsevier (2014) in his study Cognitive and Affective processes in multimedia learning explained how emotion and interest facilitate cognitive and affective outcomes processes in multimedia learning. Zhao (2007) conducted a qualitative research to investigate the perspectives and experiences of 17 social studies teachers following technology integration training. The research showed that teachers held a variety of views towards technology integration. These views influenced their use of technology in the classroom. Most teachers were willing to use technology, expressed positive experiences with technology integration training, increased their use of technology in the classroom, and used technology more creativity. Hayes and Jamrozik (2001) studied about internet distance Learning. In their study they described their experiences with internet course development and delivery and also stated different problems and limitations with on-line course production and delivery.

Although some educators may define the use of PowerPoint as a form of multimedia (Butler and Mautz, 1996), few researchers define it as a "strong" form of multimedia whereas few researchers constitute it as a "weaker" form of multimedia based on its use of text, sound, and animation. However, there has been extensive research into the use of PowerPoint as amultimedia learning tool, and therefore in keeping with this paper's purpose, some of that research is included.

Ozaslan & Maden (2013) concluded in their study that students learned better if the course material waspresented through some visual tools. They, also, reported that teachers believed that PowerPoint presentations madethe content more appealing; therefore, they helped them to take students' attention. PowerPoint is a widely used presentation programme thatoriginated in the world of

business but has now become commonplace in theworld of educational technology. However, its use is far from controversial inthis educational context and opinions as to its use range from highlysupportive to significantly negative (Szabo & Hastings, 2000; Lowry, 2003). Craig & Amernic (2006,) did note some studies that suggested PowerPoint presentations lead to improved recall. After a review of these studies, Craig & Amernic (2006,) conclude that PowerPoint's effectiveness is based upon the discipline, the learning objectives, and learner types.As noted earlier, PowerPoint is considered a "weak" form of multimedia, and is well-known for its over-use in both the classroom and the boardroom.Craig & Amernic (2006) studied whether or not the use of PowerPoint led to more effective learning Allan M. Jones (2003) stated that power point use is often limited to an information transmission mode where as it is a very restricted pedagogical use of a very powerful and flexible teaching and learning support tool. Common barriers to its use also hinders the learning process. Staff are often reluctant to invest the time required to convert materials to an appropriate PowerPoint format. Those that do convert current materials may not do so in a very acceptable way, simply using PowerPoint as an alternative way to provide text-based notes. Evans, et .al (2014) studies provide compelling evidence that a carefully designed interface can provide a significant improvement in the student learning experience compared to presenting material as scrollable Web pages consisting simply of pictures and text.

Conclusion and Suggestions for Further Research - This paper tried to provide a brief overview of the status of research in use of multimedia as an instructional tool.The review provides us with the conclusion that teacher's methodology drive multimedia usage rather than the reverse. The main problem with new technology is with the unrealistic expectations of its revolutionary advantages and universal applicability (Krippel G, McKee AJ, Moody J. (2010)). Various studies support the effect of superiority of technology-based lessons as compared to traditional lessons. Various researches revealed that using power point presentations operates as a powerful pedagogical tool for effective teaching. Teachers should consider their students' needs and interests, and the results of different researches indicate that the majority of the students show their positive perceptions towards using technology in their classes. The review provides us with the conclusion that practitioners feel that the use of interactive multimedia tool is sufficient to make their presentations more effective. Whereas studies haveshown that for theoretical content material multimedia will be effective (Butler & Mautz, 1996; Burke, James and Ahmadi, 2009,). On the other hand, for quantitative areas in which the material requires extensive problem solving, the use of multimedia may not be effective (Butler & Mautz, 1996). When used appropriately, it does encourage staff, for the sake of a relatively shallow learning-curve, to improve learning.The study results show that PowerPoint should be used to provide a transparently structured presentation and associated handouts and too much details should not be included. Multimedia should be used as a tool to facilitate teaching and learning. As one of the most important goals of using new ways of teaching science, mathematics, language etc. in schools is to promote students' motivation towards learning. Emphasise the quote by Benjamin Franklin "By failing to prepare, you are preparing to fail". However, after so many years of research in multimedia instruction there is still no convincing results in achieving learning improvements. Lack of appropriate training in both the programme and the technology is a significant problem in many institutes. In service development activities where both seminars and hands-on sessions can be very successful for successful implementation of Multimedia media instructional tool. It should also be mandatory for teachers to understand the educational environments so that they can design relevant multimediainstructional programme to yield superior results and even more importantly to examine those environments where the new technologies either show no improvement over conventional pedagogies This is the utmost responsibility of researchers to identify and define the characteristics of the educational environments in which the new technology has evidence suggesting that it is effective as well as to identify and define characteristics of the educational environments in which the new technology has evidence suggesting that it is ineffective. Based on this evidence, educators can utilize multimedia technologies effectively and efficiently.

References :-

1. Bhattacharya, I. & Sharma, K. (2007). India in the knowledge economy - an electronic paradigm, International Journal of Educational Management Vol. 21 No. 6, pp. 543–568.
2. Burke Lisa A. and Karen E. James. 2008. PowerPoint-Based lectures in business education of student-perceived novelty and effectiveness. Business Communication Quarterly, Vo. 71. No 3 277-296.
3. Butler, J. B. & R. D. Mautz Jr. 1996. Multimedia presentations and learning: A laboratory experiment. Issues in Accounting Education. 259-280.
4. Craig, Russel J. and Joel H. Amernic. 2006. PowerPoint presentation technology and the dynamics of teaching. Innovation in Higher Education. Vol. 31 147:160
5. Daniels, L. 1999. Introducing technology, I the classroom; PowerPoint as a first step. Journal of Computing in Higher Education, 10, 42-56.
6. Elsevier (2014), Cognitive and affective processes in multimedia learning, Learning and Instruction, Vol29
7. Ellis, Timothy. (2004) Animating to build higher cognitive understanding: A model for studying multimedia effectiveness in education. Journal of Engineering Education. January 2004.
8. Evans, C.et al (2014), Virtual Learning in the Biological Sciences: Pitfalls of simply putting notes on the web, Computer and Education, Vol43, Issues1-2, Pgs49-61

9. Evan, Chris and Nicola J. Gibbons (2007) The interactive effect in multimedia learning,Computers & Education. 49 1147-1160
10. Khan FMA (2014), Potential of Interactive Courseware using three different strategies in the learning of biology of Biology for Matriculation students in Malaysia, a centre for Instructional Technology and Multimedia, University Sains Malaysia, Malaysia
11. Hayes, M.H. & Jamrozik, M.L. (2001) The Journal of VLSI Signal Processing-Systems for Signal, Image, and Video Technology 29: 63. https://doi.org/10.1023/A:1011123514771ccess
12. Holzinger, A, et al (2008); Dynamic Media in Computer Science Education, Content Complexity and Learning Performance: Is Less More?
13. Kamal, M, (2000); Information and Communication Technology in Higher Education
14. Krippel G, McKee AJ, Moody J. (2010) Multimedia use in higher education: promises and pitfalls.Journal of InstructionalPedagogies 2010; 2:1-8.
15. Lowry, R. (2003) Through the bottleneck. ILTHE Newsletter 11, Summer2003, p9.
16. Malahat.Y,2012; Mobile Based Learning Versus Paper Based Learning and Collocation Words Learning
17. Nooraida Yakob & Rabiatul Adawiyah Ahmad Rashed. 2010. The teaching profile of Matriculation college science teachers in Malaysia. International Journal for Educational Studies, 3(1), 103-114.
18. Ott, R. L., M.H. Mann, and C.T. Moores .1990. An empirical investigation into the interactive effects of student personality traits and method of instruction (lecture or CAI) on student performance in elementary accounting. Journal of Accounting Education, 8. 17-35.
19. Ozaslan, E. N., & Maden, Z. (2013). The use of power point presentations at in the department of foreign language education at middle east technical university. Middle Eastern & African Journal of Educational Research, Issue 2.
20. Rebetez, C,et. al, (2007); Video Game Research in Cognitive and Educational Sciences
21. Reeves C. Thomas,1992, Evaluating Interactive Media; JSTOR; Educational Technology Publications, Vol32, May 1992, pp47-53
22. Sadiah Baharum. 2008. Unpublished doctoral dissertation. Centre for Instructional Technology & Multimedia: University Sains Malaysia.
23. Starr, L. (2001). Same time this year. [on-line]. Available at http://www.education-world.com/a_tech/tech075.shtml [Accessed July 2002].
24. Szabo, A. & N. Hastings (2000), Using IT in the undergraduate classroom. Should we replace the blackboard with PowerPoint? Computers and Education, 35. 175-187.
25. Zhao, Y. (2007). Social studies teachers' perspectives of technology integration. Journal of Technology and Teacher Education, 15(3), 311-333.

****

महिला अपराध और सशक्तिकरण

डॉ. गोविन्द बाबू *

प्रस्तावना – आज समाज और कानून की दृष्टि से नारी को अधिकार तो प्राप्त हुए है परन्तु फिर भी आज नारी अत्याचार, असमानता, उत्पीडन का दंश झेल रही है। भारतीय संविधान के भाग तीन में मौलिक अधिकारों के रूप में देश की महिलाओं की नागरिकता के समान अधिकार सुनिश्चित कर उन्हें उपेक्षित सामाजिक स्थिति से उबारकर उनके सशक्तिकरण के विविध उपाय कानूनी प्रावधान के रूप में विद्यमान है। फिर भी समाज में नारी असुरक्षित है। आज भी समाज में नारी शोषण, हिंसा एवं व्यभिचार का शिकार हो रही है। कभी उन्हे दहेज की आग में धकेल दिया जाता है और कभी वह उत्पीडन का शिकार होकर रस्सी से झूल जाती है कभी रास्ते में उस पर तेजाब फेका जाता है, तो कभी उस पर ब्लेड मारे जाते है।

महिलाओं पर हिंसा का ग्राफ निरन्तर बढता जा रहा है 74 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। घरेलू हिंसा, दुर्व्यवहार, छेडछाड, अपहरण, शील भंग, दहेज हत्या, बलात्कार आदि की घटनाएं कम होने का नाम नही ले रही है हमारे देश में ससंद के पटल पर राष्ट्रीय अपराध रिकर्ड ब्यूरो द्वारा दर्ज आकडों की राष्ट्रीय औसत के आधार पर देश में हर सातवे मिनट में महिलाओं के साथ एक अपराधिक वारदात दर्ज की जा रही है और देश में लगभग प्रत्येक 20 मिनट में बलात्कार की घटनाएं होती है आज भी महिलाएं बलात्कार जैसे भयावह घटनाओं का शिकार हो रही है महिला उत्पीडन के अनेक केसो में प्रभावशाली व्यक्तियों का नाम आता है उत्तर प्रदेश के पूर्व मंत्री, विधायक अमरमणि त्रिपाठी जैसे व्यक्ति अपनी पत्नी श्रीमती सारा त्रिपाठी की हत्या करने के बावजूद गोरखपुर की जेल के अस्पताल में खुले आम ऐश करते हुए दिखाई देते है।

दिल्ली जैसे बडे और विकसित नगर में जहां कानून का ढोल पीटा जाता है सबसे ज्यादा महिलाओं पर अत्याचार, बलात्कार के मामले सामने आये है। दिल्ली में बहुचर्चित दामिनी गैंग रेप केस को आज भी हम याद करते है तो हम कांप उठते है चूकि दामिनी केस दिल्ली जैसे क्षेत्र का था इसलिए वह प्रकाश में आ गया था। ऐसे अनगिनत केस है जो दबा दिये जाते है। फिल्मों तथा टीवी सीरियलों में भी नारी का उत्पीडन साफ दिखाई देता है यदि वे अर्धनग्न प्रदर्शन ना करे तो उन्हें काम नही मिलता है। हमारे समाज के लोग एक तरफ तो नारी सशक्तिकरण की बात करते है वही दूसरी ओर फिल्मों में नारी को नग्न देखना चाहते है वर्तमान समय मे चारों तरफ नारी असुरक्षित दिखाई देती है। चारों तरफ नारी का शोषण और अत्याचार हो रहा है। नारी दुर्गति का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है। कि बलात्कार की 95000 हजार मामले अदालतों में अटके पडे है और दिल्ली शहर में पिछले वर्ष 600 से ज्यादा बलात्कार के मामले दर्ज हुए है जिसमें सिर्फ एक में न्याय हुआ है। हाल ही में घटित बलात्कार की घटना ने तो साधु–संतों की मानसिक प्रवृत्ति को ही बता दिया है। साधु सन्त जिस पर लोग आंख मूंदकर विश्वास करते है और भगवान के समान मानते है के कृत्यों ने एक बार फिर नारी जाति का अपमान कर उसे कही का नही छोडा है।

सभ्य समाज विज्ञान का भी दुरूपयोग करके कन्या को जन्म से ही रोक रहा है। भ्रूण में ही मार डालता है। 1901 में जहां महिलाओं की संख्या 1000 के मुकाबले 972 थी वही 2001 में 927 तथा 2011 में 914 रह गई 10 से 6 वर्ष के वर्ग में बालिकाओं की स्थिति शोचनीय है। अनेक कारणों से विश्व में 100 करोड महिलाएं लुप्त हो चुकी है।

निष्कर्ष–जेण्डर डवलपमेन्ट के अनुसार भारत का स्थान 115वां है। अतः बहुत कुछ किया जाना शेष है। संवैधानिक व कानूनी प्रावधानों के साथ–साथ मानव मूल्यों को स्थापित करके एवं व्यक्ति की सोच में परिवर्तन लाकर ही महिला सशक्तिकरण को यर्थाथ स्वरूप प्रदान किया जा सकता है। महिलाओं में शिक्षा, रोजगार, आत्मनिर्भरता आदि से ही प्रतिष्ठा प्राप्त होगी क्योंकि शिक्षा में ही शक्ति निहित है। महिलाएं शिक्षित हो तो वे जागरूक होगी और अपने अधिकारों की रक्षा कर पायेगी। क्योंकि कहा गया है शिक्षित नारी कभी ना हारी।

जस्टिस वर्मा कमैटी ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट किया है कि समस्या कानूनी के कमजोर होने की नही है समस्या पुलिस कार्यवाही संवेदनशीलता की समस्या है। न्याय में विलम्ब की जिससे दोषी बैखोफ होकर घटना को अंजाम देते है हमारी आधी फोर्स तो वी0आई0पी0 डयूटी में लगी रहती है। पुलिस प्रशिक्षण में तबदील लायी जाये और न्यायिक सुधार के उपाय भी किये जाये देश में ऐसे संगठनों की कमी है। जो बलात्कार या यौन उत्पीडन के मामलों में तुरन्त कार्यवाही कर सके सरकार प्रत्येक युवा पुरूष को नौकरी देने का प्रयास करें यदि बेरोजगारी कम होगी तो लोग मेहनत करेंगे और गलत दिशा में नही भटकेंगे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. समाज शास्त्र, साहित्य पब्लिकेशन, आगरा/नई दिल्ली
2. वेबसाइड
3. प्रतियोगिता साहित्य पब्लिकेशन,भारतीय अर्थव्यवस्था
4. अर्थशास्त्र बी0ए0 प्रथम वर्ष साहित्य पब्लिकेशन, आगरा/दिल्ली।
5. समाचार पत्र की रिपोर्ट
6. स्वस्थ्य विभाग की वार्षिक रिपोर्ट

*असिस्टेन्ट प्रोफेसर (अर्थशास्त्र विभाग) दिगम्बर जैन कॉलेज, बड़ौत (बागपत) (उ.प्र.) भारत

जनसंख्या वृद्धि : जनसंख्या शिक्षा एवं विकास

डॉ. महेश कुमार मुछाल *

प्रस्तावना - किसी देश के विकास का समुचित विश्लेषण कर परिचय प्राप्त करने के लिए भौतिक, प्राकृतिक संसाधनों के साथ-साथ मानवीय संसाधन इसमें देश की जनसंख्या एवं विशेषताओं के बारे जानना आवश्यक है। प्राकृतिक एवं भौतिक संसाधन के केवल साधन मात्र है जबकि मानवीय संसाधन साधन एवं साध्य दोनो ही है। अत: देश का आर्थिक विकास की कल्पना करने वाले प्रत्येक देश को देश की जनसंख्या के आकार महिला पुरुष अनुपात, बनावट एवं प्रकृति पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। देश में पर्याप्त प्राकृतिक संसाधनो के होते हुए भी जनसंख्या के अनुकूलतम आकार के अभाव में अनेक समस्याऐं उत्पन्न होती है जैसे - जल समस्या को ही लिया जाये कई बड़े शहरों में 1970 में 8-10 घंटे पानी चालू रहता था सन् 1995 में घटकर 2-3 घंटे ही रहने लगा। अब समस्या यहां तक है कि 1 दिन छोड़कर जल आपूर्ति की जाती है। साथ ही जनसंख्या एवं खाद्यान में असंतुलन है। नगरीय क्षेत्रों में जनाधिक्य के कारण बेरोजगारी एवं ऊर्जा संकट की समस्या है। हमारे देश में जनसंख्या वृद्धि प्रतिवर्ष 2% की दर से तथा श्रमिक बल में वृद्धि 2.4% की दर से हो रही है इसलिए बड़े पैमाने पर गरीबी बेरोजगारी तथा भूखमरी के बोझ को वहन करने के कारण हमारे देश की आर्थिक दशा में सुधार नहीं हो पा रहा है। औद्योगीकरण के साथ-साथ नगरीयकरण के कारण कई समस्याओं का जन्म हुआ जैसे - गंदी बस्तियां, बेरोजगारी, बालश्रम एवं बाल दुर्व्यवहार, निरक्षरता, सामाजिक अपराध, वेश्यावृत्ति, एड्स, आंतकवाद, भ्रष्टाचार, नशाखोरी आदि अनेक समस्याऐ उत्पन्न होती है। हमारे देश की जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है आंकड़ो द्वारा स्पष्ट है। 1981-91 के दशक में 16 करोड वृद्धि हुई तथा 1991-2001 के दशक में 18.10 करोड की वृद्धि हुई इस बढ़ी हुई जनसंख्या के लिए प्रतिवर्ष निम्न साधनों को जुटा पाना चुनौती पूर्ण कार्य है। बढ़ी जनसंख्या के लिए एक लाख बीस हजार विद्यालय, तीन लाख बहत्तार हजार पाँच सौ शिक्षक, पच्चीस लाख नौ हजार मकान, एक करोड सत्तासी लाख चवालीस हजार मीटर कपड़ा, एक करोड पच्चीस लाख पैंतालीस हजार तीन सौ क्विंटल भोजन एवं चालीस लाख नौकरियों की अनुमानित आवश्यकता होगी। जिसकी उपलब्धता सीमित साधनों द्वारा असम्भव है।

इस प्रकार बढ़ती हुई जनसंख्या राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक पहलु पर गहरा प्रभाव डाल रही है इससे राष्ट्र की प्रति व्यक्ति आय, जीवन स्तर, संतुलित आहार, शैक्षणिक विकास, यातायात सुविधा, पर्यावरण एवं संसाधनों की कमी होने के कारण अनेक समस्याऐं उत्पन्न हो रही है। इसलिए समाज एवं राष्ट्र को सुनिश्चित दिशा प्रदान करने का सशक्त माध्यम जनसंख्या शिक्षा है।

जनसंख्या शिक्षा सामाजिक चेतना एवं सामाजिक जागृति कर समाज व राष्ट्र का विकास करने का प्रभावी माध्यम है। यही समाज व राष्ट्र को उपयुक्त दशा एवं दिशा प्रदान कर राष्ट्र के विकास में सहायक हो सकती है इसलिए जनसंख्या शिक्षा को राष्ट्र के विकास का आवश्यक अंग मानते हुए शिक्षा के स्तर प्राथमिक, माध्यतिक, उच्चतर माध्यमिक, विश्वविद्यालय, महाविद्यालय सभी स्तरों पर लागू किया गया ताकि राष्ट्र की परिस्थितियों के प्रति विद्यार्थियों में तार्किक दृष्टिकोण एवं राष्ट्रीय विकास में सहभागिता के लिए उत्तारदायी अभिवृत्तियों का विकास हो सके (यूनेस्को, 1971:6-13) प्रस्तुत विषय का आशय यह है कि जनसंख्या शिक्षा एक शैक्षिक कार्यक्रम जो सीखने वाले को जनसंख्या गतिशीलता के अर्न्तसम्बन्धों को समझने जीवन की गुणवत्ता के कारको को जानने व सुधारने तार्किक निर्णय लेने के साथ ही स्वयं, परिवार, समुदाय, राष्ट्र व विश्व को समझने तथा जनसंख्या सम्बन्धी व्यवहारों को अन्तिम लक्ष्य तक पहुचाने में सहायक है। (आर0 सी0 शर्मा 1971:25)

जनसंख्या शिक्षा एक ऐसा अध्याय है जिसके द्वारा छात्रों में परिस्थिति के प्रति तार्किक दृष्टिकोण, पूर्ण अभिवृत्ति तथा व्यवहार को विकसित किया जा सकता है। साथ ही परिवार नियोजन एवं सीमित परिवार तथ स्वास्थ्य सम्बन्धी जानकारी के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न करता है। समाज के महत्वपूर्ण ढांचे सामाजिक संरचना में मानव के अर्न्तसम्बन्ध, अर्न्तक्रिया, साधनों का विकास परिवार संख्या एवं सीमा, गुणात्मक स्तर तथा सुविधाओं के सुधार को भी निश्चित करता है।

जनसंख्या का आकार शिक्षा (साक्षरता) से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित होता है यह पाँच प्रान्तों के आंकड़ो से स्पष्ट है राजस्थान, उत्तार प्रदेश, बिहार, मधय प्रदेश एवं केरल की 1991-2001 जनसंख्या वृद्धि की दर एवं साक्षरता दर को प्रस्तुत किया है जनसंख्या वृद्धि दर क्रमानुसार 28.33, 25.80, 28.43, 24.34 प्रतिशत है जबकि केरल में जनसंख्या वृद्धि दर 9.42 है। साथ ही इन प्रान्तों में साक्षरता दर 2001 के अनुसार 61.03, 57.36, 47.53 एवं 64.11 तथा केरल में 90.92 है। इस प्रकार स्पष्ट है कि जहां साक्षरता दर कम है उन प्रान्तों में जनसंख्या वृद्धि दर अधिक तथा साक्षरता दर अधिक है जैसे - केरल में तो वहां जनसंख्या वृद्धि दर चार प्रान्तों की अपेक्षा कम है। अर्थात् शिक्षा का जनसंख्या वृद्धि की दर पर प्रभाव पड़ता है। साथ ही जनसंख्या वृद्धि का प्रभाव देश के विकास पर भी सकारात्मक रूप से पड़ता है।

स्पष्ट है कि प्रत्येक राष्ट्र आर्थिक विकास की तीन अवस्थाओं से गुजरता है। इस आर्थिक विकास को हम अर्थव्यवस्था कह सकते है। जब देश की अर्थव्यवस्था अल्प विकसित होती है। लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि हो देश औद्योगिक दृष्टि एवं तकनीकी साधनों के अभाव में पिछड़ा होता प्रति व्यक्ति आय का स्तर भी निम्न होता है। इस अवस्था में जन्म दर व मृत्यु दर दोनों ही उच्च होती है। अत: जनसंख्या मंद गति से बढ़ती है। सन्

* एसोसिएट प्रोफेसर (शिक्षा विभाग) दिगम्बर जैन कॉलेज, बड़ौत (बागपत) (उ.प्र.) भारत

1921 से पूर्व भारत इसी अवस्था में था। यह जनसंख्या 1901 में 23.84 करोड 1911 में 25.11 करोड एवं 1921 में 25.13 करोड थी इस प्रकार कहा जा सकता है कि तकनीकी सुविधाओं, दवाओं के अभाव में जन्म दर एवं मृत्यु दर दोनों ही उच्च थी इसलिए जनसंख्या तीव्र गति से नहीं बढ़ी थी। ऊंची जन्मदर व मृत्यु दर और जनसंख्या की धीमी गति से वृद्धि अल्प-विकसित अर्थव्यवस्थाओं की जन साख्यिकीय विशेषताएं है।

विकास की द्वितीय अवस्था विकासशील अर्थव्यवस्था कहलाती है इस अवस्था में आर्थिक विकास में वृद्धि होती है। स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सुविधाओं, रहन सहन के स्तर में सुधार होता है इसलिए जन्म दर की अपेक्षा मृत्यु दर में तेजी से कमी होती है। आंकड़ों से स्पष्ट है कि भारत में शिशु मृत्यु दर 1991 में 146 प्रति हजार जीवित जन्म दर थी जो 1999 में घटकर 70 प्रति हजार जीवित जन्म दर अनुमानित की गयी। भारत आज इस अवस्था से गुजर रहा है। इस अवस्था में रूढ़िवादिता, धार्मिक दृष्टिकोण आदि में मन्द गति से परिवर्तन होने के कारण जन्म दर बहुत धीरे-धीरे कम होती है। विकास की तृतीय अवस्था में अर्थव्यवस्था पूर्ण विकसित होती है आर्थिक विकास तीव्र गति से होता है। स्वास्थ्य व चिकित्सा सुविधाओं में सुधार, उच्च जीवन स्तर शिक्षा का बढ़ता स्तर वैज्ञानिक दृष्टिकोण जन्म दर व मृत्यु दर दोनों को ही प्रभावित करते है। मृत्यु दर घटते-घटते ऐसे स्तर पर पहुंच जाती है और स्थिर हो जाती है। जन्म दर भी तेजी से घटती है जिसके फलस्वरूप जन्म दर और मृत्यु दर के मध्य अंतर बहुत ही कम रहा जाता है। और जनसंख्या बहुत ही धीमी गति से बढ़ती है आज पश्चिमी देश इसी अवस्था में है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि जनसंख्या वृद्धि एवं विकास तथा शिक्षा प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित है। इनके मध्य सकारात्मक सम्बन्ध है। अत: जनसंख्या वृद्धि के कारण कई समस्याओं का जन्म होता है। इन समस्याओं से मुक्ति तथा जनसंख्या वृद्धि को रोकने का सशक्त माध्यम जनसंख्या शिक्षा है।

जनसंख्या शिक्षा समाज में जागृति का अभियान है जो समाज में युवा वर्ग को विवेक पूर्ण व्यवहार के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार व्यक्ति समाज, राष्ट्र व विश्व के प्रति परिवेश में स्वयं के द्धारा होने वाले लाभ के बारे में सोचते है तथा परिवार का आकार सीमित रखने की बात को मानते हुए उसका क्रियान्वयन अपने व्यवहार रूप में करते है। समाज का राष्ट्र का यह कर्तव्य है कि वह शिक्षा के द्धारा विद्यालयों के माध्यम से छात्र-छात्राओं एवं नागरिकों को वस्तु स्थिति से अवगत कराये और महत्व को बताये ताकि देश का प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्रीय जीवन के आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में अच्छा प्रभाव पड सके। जनकल्याण और सामाजिक आर्थिक विकास में घनिष्ट सम्बन्ध होता है। विभिन्न पिछड़े क्षेत्रों में अंधविश्वास भाग्यवादी दृष्टिकोण, रूढ़िवादिता व निरक्षरता की जड़ को उखाड फेंक परिवार कल्याण कार्यक्रम को अपना कर परिवार नियंत्रण का महत्व समझ देश के विकास में सक्रिय भूमिका निभा सके एवं देश के नव निर्माण में विकास में सहयोग देकर जिम्मेदार व्यक्ति की भूमिका अदा कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आहुजा राम **'सामाजिक समस्याऐं'**, रावत पब्लिकेशन जयपुर वर्ष 2000 संस्करण द्वितीय।
2. भारतीय अर्थव्यवस्था **'प्रतियोगिता दर्पण'**, वर्ष 2002 उपकार प्रकाशन, आगरा।
3. मुछाल एवं शर्मा **'जनसंख्या वृद्धि एवं आर्थिक विकास'**, विद्यामेद्य, मेरठ वर्ष 10, अंक 94, मार्च 2005।
4. पाठक एवं सिंह **'नगरीय जनसंख्या वृद्धि प्रवृत्तिाया एवं समस्याऐं'**, योजना जुलाई 2003, वर्ष 47, अंक 4।
5. शर्मा एम0 के0 **'भारत के आर्थिक विकास में अवरोधक जनसंख्या वृद्धि'**, योजना, जुलाई 2003, वर्ष 47, अंक 4।
6. व्यास हरिश्चन्द्र **'जनसंख्या शिक्षा : युगीन प्रश्न'**, भारतीय आधुनिक शिक्षा, NCERT, नई दिल्ली जुलाई 1997, वर्ष 15 अंक।
7. व्यस्त जयपाल सिंह **'जनसंख्या शिक्षा : सामाजिक दिशा एवं चुनौतियां'**, भारतीय आधुनिक शिक्षा, NCERT, नई दिल्ली अप्रैल 1998, वर्ष 15 अंक 4।

****

आदिवासी क्षेत्रों में महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का क्रियान्वयन (बड़वानी जिले के विशेष संदर्भ में)

प्रो. अरविन्द कुमार सोनी * डॉ. पुरूषोत्तम गौतम **

शोध सारांश – मानव के जीवन निर्वाह के लिए रोजगार बुनियादी जरूरतों में से एक हैं। एक व्यक्ति को रोजगार उपलब्ध होने से उसे आर्थिक सुरक्षा और समाज में प्रतिष्ठा मिलती हैं। एक बेरोजगार व्यक्ति को रोजगार उपलब्ध हो जाने से उसके अस्तित्तव में सामाजिक परिवर्तन आता हैं तथा उसकी पहचान बनती हैं और इस प्रकार वह शीघ्र ही अपने सामाजिक वातावरण से जुड़ जाता हैं। 'महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना' भारत सरकार की कार्यनीति भारत निर्माण जैसे कार्यक्रमों में परिलक्षित होती हैं जिसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे लोगों की जीवन शैली की गुणवत्ता को सुधारना हैं। इसके अतिरिक्त उक्त जनकल्याणकारी योजना ने सुनिश्चित किया हैं कि ग्रामीण गरीब लोगों के पास गारंटी युक्त रोजगार के माध्यम से अपनी बुनियादी जरूरतों विशेष रूप से खाद्य के लिये पर्याप्त मात्रा में क्रय शक्ति बची रहती हैं।

शब्द कुंजी – महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना, मनरेगा, जॉबकार्डधारी, विश्लेषण, अनुदान, गरीबी रेखा

प्रस्तावना – महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का परिचय – एमजी–नरेगा को 'राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना' के आधार पर 7 सितंबर, 2005 को प्रख्यापित किया गया था, और पूर्व प्रधानमंत्री डॉ मनमोहन सिंह द्वारा 2 फरवरी, 2006 को शुभारंभ किया गया था। इसे धारा के तहत् परिकल्पित किया गया है। अधिनियम की राज्य सरकार, केन्द्र सरकार द्वारा अधिसूचित राज्य के ऐसे ग्रामीण इलाकों में, हर परिवार को प्रदान करेगी, जिनके प्रौढ़ सदस्य अकुशल मज़दूरी काम करते हैं। इस योजना के अंतर्गत आने वाले ग्रामीण इलाकों में परिवार और जिनके वयस्क सदस्य अकुशल मैन्युअल काम करते हैं, उन्हें अधिनियम के तहत् या उसके तहत् निर्धारित शर्तों के अधीन होता है।

अभ्यास में राज्य सरकारों बीपीएल एक साथ परिवारों को रोजगार गारंटी योजना को प्रतिबंधित करने की संभावना है, (गरीबी रेखा से नीचे) कार्ड। लेकिन बीपीएल सूची को बेहद अविश्वसनीय माना जाता है, और यह प्रतिबंध इस योजना से कई 'गरीब परिवारों' को बाहर करने के लिए बाध्य है। इस रोजगार का मुख्य उद्देश्य होगा गारंटी/अर्थात्, ग्रामीण परिवारों को आर्थिक असुरक्षा से बचाने के लिए/इसके अलावा, यह दृष्टिकोण बीपीएल और गैर बीपीएल परिवारों के बीच खराब सामाजिक विभाजन को तेज करने की संभावना है।

नरेगा दो फरवरी, 2006 को लागू हो गया था। पहले चरण में इसे देश के 200 सबसे पिछड़े जिलों में लागू किया गया था। दूसरे चरण में वर्ष 2007–08 में इसमें और 130 जिलों को शामिल किया गया था। शुरुआती लक्ष्य के अनुरूप नरेगा को पूरे देश में पाँच सालों में फैला देना था। बहरहाल, पूरे देश को इसके दायरे में लाने और माँग को दृष्टि में रखते हुए योजना को 01 अप्रैल, 2008 से सभी शेष ग्रामीण जिलों तक विस्तार दे दिया गया है। 'राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम', 2005 को 23 अगस्त, 2005 को लोकसभा द्वारा सर्वसम्मति से पारित किया गया, जिसे 'महाराष्ट्र रोजगार गारंटी अधिनियम (एमईजीए)' की सफलता से निर्देशित किया गया था। मेगा 1977 से महाराष्ट्र राज्य में कार्य कर रहा है। 'राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम' प्रत्येक ग्रामीण परिवार के 100 दिनों के रोजगार के लिए कानूनी अधिकार प्रदान करता है, जिनके वयस्क सदस्य अकुशल मज़दूरी काम करते हैं।

उद्देश्य – महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र के अकुशल मानव श्रम को कम–से–कम 100 दिवस का रोजगार मुहैया कराना है, ताकि उसे आजीविका के लिए यहाँ–वहाँ न भटकना पड़े साथ ही इस रोजगार की प्राप्ति उसे अपने आस–पास के क्षेत्र में आधारभूत संरचना (सार्वजनिक सम्पत्तियाँ) के निर्माण कार्य से होगी, जो न केवल व्यक्ति का विकास करना, बल्कि क्षेत्र का भी विकास होगा।

महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा/ MGNREGA) भारत में लागू एक रोजगार गारंटी योजना है, जिसे 25 अगस्त, 2005 को विधान द्वारा अधिनियमित किया गया। यह योजना प्रत्येक वित्तीय वर्ष में किसी भी ग्रामीण परिवार के उन वयस्क सदस्यों को 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराती है, जो प्रतिदिन 174 रुपये की न्यूनतम मज़दूरी पर सार्वजनिक कार्य–सम्बंधित अकुशल मज़दूरी करने के लिए तैयार है।

ग्रामीण लोगों को रोजगार दिया जाकर ग्रामों में परिसम्पित्तियों का निर्माण व उन्नयन करना।

शोध परिकल्पना – प्रस्तुत शोध अध्ययन के परीक्षण हेतु यह परिकल्पना की जाती हैं कि,

- महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना ग्रामीण क्षेत्र के अकुशल व्यस्क मानव श्रम के रोजगार का सशक्त माध्यम बन गयी है।
- रोजगार मुहैया कराने के उद्देश्य से जहाँ एक ओर परिवार की आजीविका सुनिश्चित हो रही है। वहीं दूसरी ओर ग्रामीण क्षेत्रों में स्थायी परिसम्पत्तियों का निर्माण, इसी रोजगार के माध्यम से कराया जा रहा

* प्राध्यापक (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** संकायाध्यक्ष एवं डीन (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्व विद्यालय इन्दौर एवं प्राचार्य, शा. कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

है, जो ग्रामीण आधारभूत संरचना का निर्माण कर रहा है।

- ग्रामीण क्षेत्रों के मज़दूरों के पलायन को रोकने में योजना सहायक सिद्ध हो रही है।
- ग्रामीण क्षेत्रों के गरीब वर्ग की क्रय-शक्ति क्षमता में वृद्धि होगी।

शोध विधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन के अनुसंधान में देव निर्देशन पद्धति के आधार पर संकलित प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों का उपयोग किया जावेगा। प्राथमिक समंकों को संकलित करने के लिए निमाड़ में जिला स्तर से प्रत्येक विकास खण्ड अन्तर्गत ग्रामों के 100-100 चयनित पात्र हितग्राहियों का साक्षात्कार प्रश्नावली के अनुसार सर्वेक्षण कार्य किया गया हैं।

बड़वानी जिले में वर्षवार जॉबकार्डधारी व लाभान्वितों का विवरण –

क्र.	वर्ष	दर्ज़ जॉबकार्डधारी परिवार	जॉबकार्डधारी परिवारों को रोजगार उपलब्ध कराया गया
1	2011-12	244773	125493
2	2012-13	244681	83852
3	2013-14	238950	41835
4	2014-15	236822	47293
5	2015-16	234138	53586
6	2016-17	186747	61940

योजना हेतु शासन द्वारा जारी राशि (लागत) का विश्लेषण –

क्र.	वर्ष	कुल प्राप्त	कुल व्यय
1	2012-13	9185.43	6529.51
2	2013-14	2489.67	2307.52
3	2014-15	3066.57	3295.35
4	2015-16	400.89	3117.7
5	2016-17	539.21	5646.19

प्रक्रिया – ग्रामीण परिवारों के वयस्क सदस्य, ग्राम पंचायत के पास एक तस्वीर के साथ अपना नाम, उम्र और पता जमा करते हैं। जाँच के बाद पंचायत, घरों को पंजीकृत करता है और एक जॉब कार्ड प्रदान करता है। जॉब कार्ड में, पंजीकृत वयस्क सदस्य का ब्यौरा और उसकी फोटो शामिल होती है। एक पंजीकृत व्यक्ति, या तो पंचायत या कार्यक्रम अधिकारी को लिखित रूप से (निरंतर काम के कम-से-कम चौदह दिनों के लिए) काम करने के लिए एक आवेदन प्रस्तुत कर सकता है। आवेदन दैनिक बेरोजगारी भत्ता आवेदक को भुगतान किया जाएँगा।

इस अधिनियम के तहत् पुरुषों और महिलाओं के बीच किसी भी भेदभाव की अनुमति नहीं है। इसलिए, पुरुषों और महिलाओं को समान वेतन भुगतान किया जाना चाहिए। सभी वयस्क रोजगार के लिए आवेदन कर सकते हैं।

प्राप्त लाभ की गुणवत्ता तथा औचित्य –

1. स्वास्थ्य एवं पोषण
2. शिक्षा एवं दक्षता विकास
3. परिवहन हेतु सड़क सुविधा में विस्तार

प्राप्त लाभ का परिणाम –

1. ग्रामीण अवसंरचना एवं विकास –
2. सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम –
3. भारत निर्माण –

योजना का प्रभाव – कृषि पर निर्भर ग्रामीण श्रमिक वर्ग लगभग 3 महीने प्रति वर्ष बेरोजगार रहता था, जो नीचे की ओर बढ़ रहा था; कृषि उत्पादकता का रुझान और बदले में गरीबी भी बढ़ती है। बिहार, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान और उत्तर प्रदेश जैसे बड़े राज्यों में गरीबों की संख्या में भी वृद्धि हुई है।

महात्मा गाँधी नरेगा, 2005 के माध्यम से गरीबी को लक्षित करती है, जो रोजगार के अधिकार के रूप में आश्वासन देती है। कानून गाँधीवादी सिद्धांतों पर आधारित है। पिछली रोजगार गारंटी योजनाएँ (ईजीएस) जैसे सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (एसजीआरवाई) या यूनिवर्सल ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम और राष्ट्रीय खाद्य कार्यक्रम कार्यक्रम (एनएफएफडब्ल्यूपी) – दोनों एसजीआरवाई और एनएफएफडब्ल्यूपी को एमजी-नरेगा, 2005 में मिला दिया गया। इसने अल्पकालिक गरीब, आश्वस्त भोजन और नौकरी की सुरक्षा के लिए अकुशल रोजगार और टिकाऊ संपत्तियाँ बनायीं। पहले मज़दूरी रोजगार कार्यक्रमों के विपरीत, एमजी-नरेगा, 2005 इसकी परिभाषा के अनुसार, एक सही-आधारित, माँग-आधारित सार्वजनिक रोजगार कार्यक्रम है, जो मुख्य रूप से ग्राम पंचायत स्तर पर विकेन्द्रीकृत, भागीदारी योजना पर आधारित हैय जिसमें पर्याप्त पारदर्शिता और जवाबदेही प्रभावी क्रियान्वयन के लिए सुरक्षा उपायों।

एमजी-नरेगा को 7 सितंबर 2005 को अधिसूचित किया गया था। एक वित्तीय वर्ष में कम-से-कम 100 दिनों की गारंटीकृत मज़दूरी रोजगार प्रदान करके ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका की सुरक्षा बढ़ाने के उद्देश्य से, प्रत्येक परिवार के जिनके वयस्क सदस्य अकुशल मज़दूरी काम करते हैं। इसके अलावा एमजी-नरेगा, 2005 का उद्देश्य टिकाऊ परिसंपत्तियाँ पैदा करेगा, जो कि गरीबों के लिए उपलब्ध बुनियादी संसाधनों को बढ़ाएगी। न्यूनतम मज़दूरी दर और गाँव के 5 किमी दायरे के भीतर, एमजी-नरेगा के तहत् रोजगार, 2005 एक ऐसा अधिकार है, जो सरकार पर एक दायित्व पैदा करता है, जिसके तहत् बेरोजगारी भत्ता 15 दिनों के अंदर चुकाया जा सकता है। सामुदायिक भागीदारी के साथ, एमजी-नरेगा, 2005 मुख्य रूप से ग्राम पंचायतों द्वारा लागू किया जाना है, ठेकेदारों की भागीदारी प्रतिबंधित है। जल संचयन, सूखा राहत और बाढ़ नियंत्रण के लिए आधारभूत संरचना बनाने जैसे श्रम-गहन कार्यों को प्राथमिकता दी जाती है, से शुरू 2 फरवरी, 2006 को 200 जिलों, एमजी नरेगा, 2005, 1 अप्रैल, 2008 से भारत के सभी जिलों को कवर किया।

यह अधिनियम, राज्य सरकारों को 'मनरेगा योजनाओं' को लागू करने के निर्देश देता है। मनरेगा के तहत् केन्द्र सरकार मज़दूरी की लागत, सामग्री का 3/4 और प्रशासनिक लागत का कुछ प्रतिशत वहन करती है। राज्य सरकारें बेरोजगारी भत्ता, सामग्री का 1/4 और राज्य परिषद की प्रशासनिक लागत को वहन करती है। चूँकि राज्य सरकारें बेरोजगारी भत्ता देती हैं, उन्हें श्रमिकों को रोजगार प्रदान करने के लिए भारी प्रोत्साहन दिया जाता है।

एनआरईजीए से संबंधित प्रावधान, अधिकारों, पात्रताएँ और उनके बारे में जागरूकता का विवरण –

मूलभूत अधिकार	प्रतिशत
रोजगार के 100 दिनों तक	95
एनआरईजीए के लिए न्यूनतम मज़दूरी	90
पुरुषों और महिलाओं के लिए समान वेतन	85
मज़दूरी 15 दिनों के भीतर भुगतान किया	35
बेरोजगारी भत्ता में मामला रोजगार नहीं 15 दिनों के भीतर प्रदान की गई माँग	20

नौकरी चाहने वालों में से एक तिहाई महिलाओं को होना चाहिए	3
काम के लिए यात्रा भत्ता	25
दुर्घटनाओं के मामले में नि:शुल्क इलाज	15
विकलांगता और मृत्यु के लिए मुआवजा	9

मध्य प्रदेश में लघु किसानों के लिए – योजना के अभिसरण से, वर्ष 2015-16 में 307 छोटे और सीमांत किसानों ने प्याज एवं अनार के छोटे बागों को विकसित किया है, एक निश्चित अवधि के पश्चात् आय वृद्धि की माप के रूप में अनार के पौधे लगाए हैं। आईडब्ल्यूएमपी के तहत, किसानों ने बड़वानी (आईडब्ल्यूएमपी वाटरशेड विकास के लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय का एक कार्यक्रम) में एक सिंचाई सहायता के उपाय के रूप में खेत में तालाब खोदे हैं। खेत तालाब एमजीएनआरईजीए का उपयोग कर खोदा जा सकता है।

निष्कर्ष – यह ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि इन सभी गाँवों में ही समरूप समुदाय है, समरूप समुदायों में भी विभिन्न हित समूह हैं। फिर भी, इन सभी गाँवों में, लोग क्या करना है और कैसे करें ? पर आम सहमति बनाने में सक्षम है। यह असामान्य दीखता है, हममें से अधिकांश परिदृश्य से परिचित हैं कि सरकारी योजनाएँ अक्सर पात्र परिवारों की पहचान करती हैं और समुदायों को दो या अधिक समूहों में बाँटती हैं। एक योजना का लाभ प्राप्त करना एक संघर्षरत् डोमेन बन जाता है और अधिक, यदि यह व्यक्तिगत लाभार्थियों के लिए एक योजना है।

ऐसा लगता है कि दो सिद्धांत या अँगूठे के नियम हैं, जो इन सभी गाँवों का पालन करते हैं; (i) गाँव के सभी हितधारकों का विचार और (ii) उनकी आवश्यकता के अनुसार प्राथमिकता। हर परिवार को आश्वासन दिया गया था कि उसे निश्चित समय सीमा में लाभ मिलेगा। एमजीएनआरईजीएस के अंतर्गत उपलब्ध विकल्पों और इसके दायरे के बारे में स्पष्टत: दो प्रमुख कारक हैं जिन्होंने इस उपलब्धि को आसान बना दिया है।

समुदाय में दृष्टि और भागीदारी की अनुपस्थिति में, कार्यों को एक तदर्थ पद्धति में योजनाबद्ध किया गया है। असल में, इसमें लोगों की आकांक्षाओं और जरूरतों की कमी का अभाव है। सफलता की कहानी में हम पाते हैं कि खुद को लोगों ने एमजीएनआरईजीए के माध्यम से ऊपर रखा जाना काम करता है पर फैसला किया है। यह महत्त्वपूर्ण है कि उन्होंने सिर्फ 'रोजगार की माँग नहीं की है', लेकिन रोजगार पैदा करने के लिए लगातार सुझाव दिए। उनकी आजीविका की स्थिति के विश्लेषण ने उन्हें विशिष्ट अंतराल और परिणामी समाधानों की पहचान करने में सक्षम बनाया है। इस विश्लेषण के आधार पर, उन्होंने अपने गाँवों में आजीविका परिदृश्य में सुधार के लिए विभिन्न रणनीतियों को अपनाया है। इसमें शामिल हैं: (अ) परंपरागत/मौजूदा आजीविका गतिविधियों में मूल्य वृद्धि (ब) स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों के अनुरूप नई गतिविधियाँ शुरू करना।

कुछ मामलों में, एमजीएनआरईजीए लागू करने के लिए पहल अभिनव तरीका ले लिया है, अन्य मामलों में, सीएसओ ने जीपी का समर्थन किया है और लोगों को उनकी दृष्टि विकसित करने के साथ-साथ क्षमता भी बनाती है। अभी भी अन्य मामलों में, जिला और राज्य सरकारों ने कुछ विचारों को एक पायलट आधार पर चलाने के लिए विशेष अनुमति दी है और विभिन्न कार्यक्रमों और योजनाओं के अभिसरण सुनिश्चित करने में मदद की है। जमीनी स्तर पर और साथ ही राज्य स्तर पर ऐसी सक्षम स्थितियों का योगदान निश्चित ही है। मनरेगा को प्रभावी ढंग से उपयोग करने की चुनौती को पूरा करने के लिए जिला और राज्य सरकारों के साथ मिलकर काम करना आवश्यक है। दूसरे अध्याय में इस बात पर चर्चा की गई है कि बड़ी परिस्थितियों को सक्षम करने व यह सुनिश्चित करने के लिए कि ऐसी सक्रिय स्थितियों को वास्तव में प्राप्त किया जाएँ, राज्य सरकारों के लिए आवश्यक आदेश पारित करने के लिए आवश्यक होगा, ताकि गाँवों में गरीबों की आजीविका को सुदृढ़ बनाने के लिए मनरेगा की विशाल क्षमता हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 प्रधान डॉ. हरिश जैन, डॉ. जी.एल. खिमेसरा, डॉ. एस.जी.भारत में कृषि उद्योग एवं नियोजन संदीप प्रकाशन, इन्दौर
2 चौधरी, सी. एम. , अनुसंधान प्रविधियाँ 2006, सबलाईन पब्लिकेशन, जयपुर
3 राय. करूणा, भारतीय कृषि विपणन200, 5 मित्तल, पब्लिकेशन, नई दिल्ली

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

A Comparative Study Of Self Confidence Among Female Kabaddi Players : With Reference To Level Of Participation

Pramod Kumar Mahto * Dr. B. John **

Abstract - The present study compared self confidence between national and inter-collegiate level female kabaddi players. To conduct the study, 50 national level female kabaddi players (Av. age 26.23 years) were selected. The selection of national level female kabaddi players were done from top four ranked teams. To fulfil the objectives of the study 50 intercollegiate female kabaddi players (Ave. age 22.18 years) were also selected as sample. Purposive sampling was employed in the present study. To assess self confidence of selected female kabaddi players, self confidence inventory prepared by Pandey (1983) was used. Result reveal that national female kabaddi players were significantly more confident as compared to intercollegiate female kabaddi players. It was concluded that national female kabaddi players have superior psychological quality i.e. self confidence as compared to inter-collegiate female kabaddi players.
Keywords - Self confidence, kabaddi, female players, national, intercollegiate

Introduction - Training body as well as mind has been recognised since ages that contribute to sporting success. In this way sports psychology becomes useful because it addresses the issue of applying psychology in sports so that sportspersons motivation can be enhanced which eventually results in superior performance. Association between psychological factors and sports performance is the main component of sports psychology while sport and exercise psychology uses psychological insight to maximise physical activity level. So knowing how our mind goes about work have an impact on performance. The basic fundamental psychological principles such as behaviour, motivation, stress, pressure, mental toughness etc. are keys to sports performance. It also affects a sportspersons coaching, training and competence. Self assurance in personal judgement, ability and power encompasses concept of self confidence. It is increased from learned experiences of mastering a particular task. Zellner (1970) considered self confidence as the self belief that in the future one can generally accomplish what one wishes to do. Judge et al. (2002) differentiated self confidence with self esteem and opined that self esteem is an evaluation of one’s own worth, whereas self-confidence is more specifically trust in one’s ability to achieve some goal, which one meta-analysis suggested is similar to generalization of self-efficacy. One derives confidence from past achievements, preparation and training to achieve that task. As skill in a particular set of task increases, confidence also proportionally increases for that particular task. To develop self confidence it is necessary for a sportsperson to know the factors and variables that contribute to lack of or elevated confidence level. The example may be high expectations. According to Bull et al. (2005) overcoming self doubts and maintaining self focus that generate tough thinking enables sportspersons to confidently tackle adverse situation. It is very well known fact that sports performance is affected by several factors in which psychological factors are of prime importance. European countries since ages have given special emphasis on psychological characteristics of sportspersons. Although superior skills and hard training schedule are almost the same at the top, hence it is believed that the mind that is the winner. Indian female kabaddi have kept their dominance world over till date. Due to its popularity in India several researchers like Devaraju and Needhiraja (2013), Sharma, Kavita (2014), Mishra (2015), Tangarani (2016) conducted studies with kabaddi as central theme. But so far self confidence in female kabaddi players as a personality construct has not been assessed in the light of level of participation. Hence the present study was planned.

Objective - The main objectives of the present study was to compare self confidence between national and intercollegiate female kabaddi players.

Hypothesis - It was hypothesized that the National female kabaddi players will show more magnitude of self confidence as compared to intercollegiate female kabaddi players.

Methodology - The following methodological steps were taken in order to conduct the present study.

Sample - For the present study 50 national level female kabaddi players (Av. age 26.23 years) were selected. The

*M.Phil. Student, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Assistant Professor (Physical Education) Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

selection of national level female kabaddi players were done from top four ranked teams. To fulfil the objectives of the study 50 intercollegiate female kabaddi players (Ave. age 22.18 years) were also selected as sample. Purposive sampling was employed in the present study.

Tools :

Pandey's Self Confidence Inventory - To assess self confidence of selected female kabaddi players, self confidence inventory prepared by Pandey (1983) was used. This inventory is in Hindi and it consists of 60 questions. The nature of questions in the inventory is mixed i.e. 18 questions are positively worded while 42 questions are negatively worded. The tests has high face and construct validity and it is highly reliable. Lower the score, superior the self confidence is the direction for interpretation of scores.

Procedure - Ethical considerations were followed in the present study. After establishing a good rapport with the subjects they were assured that their responses and their identities will be kept under strict confidence and will not be disclosed anywhere. Thus, they are free to give their answers comfortably and honestly whatever they felt. In this way, subjects were encouraged to give their proper co-operation during the testing.

Self confidence test prepared by Pandey (1983) was administered to each subject. After this, the scoring was completed according to the scoring system prescribed by the authors of the scale. After scoring, the data was tabulated according to their groups.

To compare data, independent sample 't' test was used. The statistical results are depicted in table no. 1.

Result & Discussion

Table 1 : Comparison of Self Confidence between National and Inter-collegiate Female Kabaddi Players

Groups	Self Confidence		Mean Diff.	't'
	Mean	S.D.		
National Female Kabaddi Players (N=50)	15.60	7.59	11.82	6.85 (p<.01)
Intercollegiate Female Kabaddi Players (N=50)	27.42	9.53		

t (df=98) = 2.62 at .01 level

A perusal of entries reported in table 1 indicate that self confidence in national female kabaddi players (M=15.60) was found to be significantly superior as compared to intercollegiate female kabaddi players (M=27.42). The results are interpreted as lower the score, better is the self confidence as depicted in author's manual. The mean difference of 11.82 and calculated t=6.85 also statistically highlight the fact that national female kabaddi players are more self confident as compared to intercollegiate female kabaddi players at .01 level of statistical significance. Studies conducted by Hays et al., 2009; Levy, Nicholls and Polman (2010) in their study also found a significant relationship between self confidence and sports performance, hence the results of the present study are not surprising.

Conclusion - On the basis of results and associated discussion it was concluded that female kabaddi players with higher level of sports participation are significantly much more confident as compared to female kabaddi players with lower level of sports participation.

References :-

1. Devaraju, K. and Needhiraja, A. (2013). Prediction of playing ability in Kabaddi from selected anthropometrical, physical, physiological and psychological variables among college level players. Elixir Psychology 56, 13212-13215.
2. Hays, K., Thomas, O., Maynard, I. and Bawden, M. (2009). The role of confidence in world class sport performance. Journal of Sport Sciences, 27 (11), 1185-1199.
3. Judge, Timothy A.; Erez, Amir; Bono, Joyce E.; Thoresen, Carl J. (2002-09-01). "Are measures of self-esteem, neuroticism, locus of control, and generalized self-efficacy indicators of a common core construct?". Journal of Personality and Social Psychology. 83 (3): 693–710.
4. Levy, A. R., Nicholls, A. R., Polman, C. J. (2010). Pre-competitive confidence, coping, and subjective performance in sport. Scandinavian Journal of Medicine and Science in Sport, 21, 721-729.
5. Mishra, V. (2015). A Comparative Assessment of Reaction towards Frustrating Situations between Elite and Non Elite Kabaddi Players. Research Journal of Physical Education Sciences, Vol. 3(3), 1-2.
6. Sharma, Kavita (2014). A Study of the Personality characteristics of Female Kabaddi Players of Delhi University. International Educational E-Journal, {Quarterly}, Volume-III, Issue-IV, pp. 7-10.
7. Tangarani (2016). A study of anxiety in female kho-kho, kabaddi and softball intercollegiate players. International Journal of Physical Education, Sports and Health; 3(1): 219-222.
8. Zellner, M. (1970). Self Confidence. "Journal of Personality and Social Psychology". Journal of Personality and Social Psychology. 15(1): 87–93.
9. Bull, S. J.; Shambrook, C. J.; James, W. and Brooks, J. E. (2005). Towards an Understanding of Mental Toughness in Elite English Cricketers. Journal of Applied Sport Psychology. 17 (3): 209–227.

****

Problems Of Women Entrepreneur In India

Mamta Jaisiyan*

Introduction - Women entrepreneur may be defined as the women or a group of women who initiate, organize and operate a business enterprise Government of India has defined women entrepreneur as an enterprise owned and Controlled by a women having a minimum financial interest of 51 % of the capital and giving at least 51 % of employment generated in the enterprise to women. Women in business are a recent phenomenon in India. By and large they had confide themselves to petty business and tiny cottage industries. It is a common assumption that majority of women in India are economically non-productive as they are not involved in activities that are financially remunerative. But this trend is gradually changing today's women are taking more ands more professional and technical degrees to cope up with market need and are flourishing as exporters, publishers, garment manufactures and still exploring new avenues of economics participation.

At the some time, it is also recognized that their challenger are immense and complex. For women entrepreneur starting and operating a business involves considerable risks and difficulties , because in the Indian social environment women has always lived as subordinate to men. There have been noticeable changes in the socio-psycho-cultural and economic norms of our society due to liberalized policy of the government of India, increase in the education levels of women and increased social awareness in respect of the rate women plays in the society. It has now been recognized that to promote self. Employment and to reduce the incidence of poverty. Some drastic effort have to be made to accurate self employment of women in various sectors.

Characteristics of women entrepreneurship - Women entrepreneur tend to be highly motivated & self directed they also exhibit a high internal focus of control & achievement. Researchers contend that women business owners possess certain specific characteristics that promote their creativity and generate now ideas and ways of doing things.

Entrepreneurs are also very self motivated. They don't wait for someone to tell them to get to work. They are self propelled and do the work because they want to. They know that it takes discipline and self sacrifice to make their dream come true.

Problems of Women Entrepreneurship in India:

1. **Family Ties :** In our society it is mainly a women's duty to look after the children and other members of the family. In case of married women, she has to strike a fine balance between her business and family. Her total involvement in family leaves little or no energy and time to devote for business. Support and approval of husband's seem necessary condition or women's entry in to business.
2. **Lack of Education :** In India, majority of women are still illiterate. Illiteracy is the root cause of socio economics problem. Due to the lack of education, women are not aware of business, technology and market knowledge. Also lack of education causes low achievement motivation among women. Thus, lack of education creates problem for women in the setting up and running of business enterprise.
3. **Problem of Finance :** Finance is regarded as "Life Blood" for any enterprise, be it big or small. However entrepreneurs suffer from shortage of finance on two counts. Firstly, women do not generally have property on their name to use them as collateral for obtaining funds from external sources. Thus, their access to the external sources of funds is limited. Secondly, the banks also consider women less credit-worthy and discourage women borrowers on the belief that they can at any time leave their business. Many women enterprises fail due to the shortage of finance.
4. **Stiff Competition :** Women entrepreneur do not have organization set up to pump in a lot of money for conversing and advertisement. There they have to face a stiff competition for marketing their products with both organized sector and their male counterparts. Such a competition Ultimately result in the liquidation of women enterprise.
5. **Low Risk-Bearing Ability :** Women in India lead a protected life. They are less educated an economically not self- dependent All these reduce their ability to bear risk involved in running an enterprise. Risk bearing is an essential requisite of a successful entrepreneur. In addition to above problems, inadequate in structural facilities, shortage of power, high cost of production, social attitude, low need for achievement and socio-economics constraints also hold the women back from entering into business.
6. **Marketing Problem :** During the process of marketing of products women entrepreneur faced certain problems

*Associate Professor (Commerce) D.J. College, Baraut (Baghpat) (U.P.) INDIA

viz. poor location of shop, lack of transport facility and tough competition from large and established unites.

7. Production Problems : Production problems faced by maximum women are non-availability of raw material Non-availability of raw material is one of the reasons to the slow growth of women entrepreneur after production problems are non-availability of machine or equipment, lack of training facility and non-availability of labour, high cost of required machine or equipment.

8. Male Dominated Society : Male chauvinism is still the order of the day in India. The constitution of India Speaks of equality between gender But in practice women or looked upon as able i.e. weak in all respects. Women suffer from male reservation about a women's role, ability and capacity and are treated accordingly. In nutshell, in the male dominated Indian society. Women are not treated equal to men. This in turn, service as a barrier to women entry into business.

Government Schemes For Women Empowerment - The govt. programme for women development began as early as 1954 in India but the actual participation began only in 1974. At present, the govt. of India has over 27 schemes for women operated by different departments and ministries. Some of these are:

Integrated Rural Development programme (IRDP)	Working Women's Forum
Traning of Rural Youth for Self Employment (TRYSEM)	Indira Mahila Kendra Indira Mahila Yojna
Prime Minister Rojgar Yogna (PMRY)	Mahila Samiti Yojna Rashtriya Mahila Kosh.
Women's Development Corporation Scheme (WDCS)	Khadi and Village Industries Commission
Indira Priyadershini Yojna	SBI's Sree Shaki Scheme

National Banks for Agriculture and Rural Development's Schemes. The efforts of government and its different agencies are ably supplemented by non-government organization that are playing an equally important role in facilitating women empowerment. Despite concerted efforts of Govts. and NGOs there are certain gaps of c course we have come a long way in empowering women yet the future journey in difficult and demanding.

Suggestions for he Growth of Women Entrepreneur - The following measures are suggested to empower the women to seize various opportunities and face challenges in business.

1. An awareness programme should be conducted on a mass scale with the intention of creating awareness among women about the various areas to conduct business.
2. Organize training programmer to develop professional competencies in managerial, leadership, marketing, financial, production process, profit planning, maintaining books of account and other skills.
3. Vocational training to be extended to women community that enables them to understand the production process and production management.
4. International, National, Local Trade Fair, Industrial Exhibition, Seminars and Conferences should be organized to help women to facility interaction with other women entrepreneurs.
5. Making provision of micro credit system and enterprise credit system to the women entrepreneur at local level.
6. Attempts by various NGO's and Govt. Organization to spread information about policies, plans and strategies on the development of women in the field of industry, trade and commerce. Women entrepreneurs should utilize the various scheme provided by the government.
7. To establish all India forum to discuss the problem, grievances, issue and filing complaints against constraints or short coming towards the economics progress path of women entrepreneurs and giving suitable decision in the favour of women entrepreneur and taking strict stand against the policies or strategies that obstruct the path of economics development of such group of women entrepreneur.

Conclusion - The emergence of women entrepreneurs and their contribution to the national economy is quite visible in India. Since 1980 the govt. of India has shown increasing concern for women issues through a variety of legislation promoting the education and political participation of women. There should also be efforts from all sector to encourage the economic participation of women. It can be said that today we are in a better position wherein women participation in the field of entrepreneurship is increasing at considerable rate, efforts are being taken at the economy as well as a global level to enchance women's involvement in the enterprise sector. This is mainly because of attitude change, diverted conservative mindset of society to modern one, daring an risk-taking abilities of women, support and corporation by society member, changes and relaxations in govt. policies granting various ….. scheme to women entrepreneur etc.

References :-

1. Ram Naresh Tahkur (2009) "Rural Women Enpowerment in India in Empowerment of Rural Women in India Kanishka Publisher, New Delhi.
2. Ramesh Bhandari (2010) Entrepreneurship and women Alfa Publication.
3. Sanjay Tiwari and Anshuja Tiwari (2007) Women Entrepreneurship and Economics Development.
4. Bhatia Anju (2000) " Women Development and NGO's Rawat Publication, New Delhi.

****

The Effects Of Yogic Practices On Intellectual Development In Urban School Children In Rajasthan

Dr. Ramneek Jain *

Abstract - To study the effect of yoga practices on selected cognitive development variables among adolescent urban school children. Materials and Methods: Eighty two students, age ranged from 12-16 years, were randomly divided into experimental (n=40) and control (n=40) groups. Selected cognitive development variables were evaluated at the baseline and at the end of 8 weeks of yoga training in both groups. Results: Significant improvement was observed in measures of mental ability and memory in experimental group. However, no statistically significant changes were observed in measures of mental ability and memory tests in control group. Conclusion: Selected cognitive development variables were improved after 8 weeks of yoga training in adolescent rural residential school children.
Key words - Yoga practices, cognitive development, urban school.

Introduction - Mental health is “a state of well-being in which the individual realizes his or her own abilities, can cope with the normal stresses of life, can work productively and fruitfully, and is able to make a contribution to his or her community.” It can also be defined as a state of emotional and psychological well-being in which an individual is able to use his or her cognitive and emotional capabilities, function in society, and meet the ordinary demands of everyday life. Cognitive performance refers to a person’s mental processes, including memory, attention, producing and understanding language, learning, problem solving, reasoning, and decision making. Cognitive development starts in early adolescence and is influenced by many factors such as postnatal psychosocial environment, poverty, malnutrition, family stressors, environmental stressors, and maternal depression. Adolescent rural children are more likely to be subjected to poor socioeconomic conditions as compared to urban adolescent children. Poor quality of home environment can adversely affect children’s development, leading to cognitive deficits. Findings of one study suggested that the experience of persistent economic hardship, as well as, very early poverty undermines cognitive functioning at five years of age. However, according to a recent experimental research, both acute and chronic aerobic exercise promotes children’s executive function. Goal-directed cognition and behavior which develop across childhood and adolescence. In this context, ancient traditional practice of yoga might be helpful in improving mental health and thus cognitive development. The Sanskrit term yoga means “the union of the individual self (Jiva-atman) with transcendental self (Parama- atman)”. The word ‘Yoga’ is derived from the Sanskrit root verb “Yuj” means bind, make union, control. Patanjali defines yoga as the “restriction of the wheels of consciousness and paths of ecstatic self-transcendence or methodical transmutation of consciousness to the point of liberation from the spell of ego personality”. Yoga has multiple physical, mental and spiritual benefits and holds that the influence of the mind on body is far more powerful than the influence of body on mind.

Materials and Method :

Subjects: Eighty two school children, aged 12 to 16 years studying in 6th to 10th grade in a rural residential school, participated in this study. All the students belonged to different urban areas of Rajasthan, India. There were 40 students in each group at the baseline testing. However, at the end of 8 weeks, there were 40 students in Experimental Group and 40 students in Control group All the students who participated in the research study were in apparent good health.

Research design: Quasi experimental pre post design was used for conducting this research study. The students were randomly assigned into Experimental Group (n=40) and Control (n=40) group by Chit method for random selection. Both Experimental and Control group were assessed on the first day and after 8 weeks of the intervention. The subjects of Experimental Group then underwent a training of yoga practices, under the supervision of a yoga expert, for one hour in the morning, excluding Saturdays, Sundays and holidays for a total period of 8 weeks. The Control group did not undergo any yoga training during this period. However, both the groups continued to participate in their regular extracurricular activities during school hours.

Psychological Assessment: The following tests were administered to the children:

A test battery of Cognition Function tests (CFTs), an Indian adaptation based on Guilford’s Structure of Intellect Model was administered on each student. This test was

*Asst. Prof. (Physical Education) Madhav University, Pindwara (Rajasthan) INDIA

suitable for use in children of 12-16 yrs of age. Standard methods were

Statistical Analysis: Followed for the data extraction for each of the variables (mentioned above). Data was analyzed using paired t-tests, independent t- test and descriptive statistical method. The mean values ± SD of pre and post variables are presented in (Table - 1).

(Table - 1, See in next page)

Result :

Mental Ability Test: The result showed that at the baseline there were no significant differences in all the parameters between groups. In case of within group comparison, experimental group showed significant improvement in two of the nine factors, i.e. Cognition of Figural Systems (CFS) ($p<0.05$) and Evaluation of Figural Classes (EFC) ($p<0.01$).These factors refer to ability to structure a system by joining parts of a figure considering appropriate directions and ability to make judgment regarding adequacy of a figure as member of certain class respectively. Surprisingly, control group also showed significant improvement in two of the nine factors, Cognition of Figural Classes (CFC) ($p<0.05$) and Convergent.

Production of Figural Relation (NFR) ($p<0.05$). These factors refer to ability to recognize or understand common attributes among figures and classify them accordingly and ability to identify relations among presented figures and apply the same to other figures. The remaining factors of mental ability test did not showed any significant difference in both experimental and control groups.

Memory Test: In memory test experimental group showed significant improvement in 'Test-1' ($p<0.05$) which includes memory of figural information. Remaining three tests, which do not show improvement, include memory of information in the form of symbols, language or behavior. Control group did not show significant improvement in any of the memory tests.

Discussion: The findings of this 12wk research study suggests, amply, the effectiveness of yoga training in improving primary cognitive processes such as attention , perception and observation. Overall findings shows that observation and critical evaluation of figural information improved in experimental group which could be result of maturation and intervention. The result of our study is also in line with previous research findings. According to a recent finding, yoga practices improved memory and general well-being of the experimental group subjects. Control group also showed improvement in understanding and logical thinking which could be result of maturation and in part due to the practice effect over time. The findings of memory tests indicate intervention probably has affected primary processing of visual inputs and not higher order processing. According to a study, shorter duration of yoga training does not influence the cognitive development of students. Within limitations, the findings of this study demonstrate that shorter duration of yoga intervention is beneficial in improving some of the mental ability and memory parameters. In fact, future investigations on larger population and longer period of follow up are necessary to establish and expand the results of present study.

Conclusion: The present study has demonstrated that yoga training probably has affected primary cognitive processes such as attention, perception and observation. Yoga, being a simple and inexpensive health regimen, can be incorporated as an effective adjuvant therapy to governmental child health initiatives in school curriculum, and thus, ensures a bright future for our children. Further studies on a larger scale and longer time period would be required to further substantiate these findings.

References :-

1. Laude M. (1999). Assessment of nutritional status, cognitive development, and mother-child interaction in CARC.Rev Panam Salud Publica, 6,164-71.
2. Park, J.M., Fertig, A.R., Allison, P.D. (2011). Physical and mental health, cognitive development, and health care use by housing status of low-income young children in 20 American cities: a prospective cohort study. Am. J Public Health, 101(1), S255-61.
3. Stromswold, K. Biological and psychosocial factors affect linguistic and cognitive development differently: A twin study. Proceedings of the Annual Boston University Conference on Language Development, 2, 595-606.
4. World Health Organization.(ONLINE) Fact sheet no. 220. 2001. Strengthening mental health promotion. Geneva.

Table - 1

Variables	Experimental Group		Control Group	
	Baseline (M±SD)	Final (M±SD)	Baseline (M±SD)	Final (M±SD)
Mental Ability Test 1(CFC)	6 ±2.06	6 .53 ±1.77	5.31 ± 2.30*	6.29 ± 2
Test 2(CFS)	3.96 ± 2.06	48 ± 2.29	3.31 ±1.90	3.91 ±2.22
Test 3 (NFC)	6.73 ±2.76	7.33±2.5	6.45 ±2.82	7.21 ±2.79
Test 4 (EFC)	5.56 ±2.37	6.82 ± 2.71**	5.29 ±2.72	5.96 ±2.90
Test 5 (NFR)	3.53 ±3.14	3.73 ± 3.53	3.04 ±2.66	4.04 ±2.64
Test 6 (NFS)	7.16 ±3.12	7.82 ± 2.93	6.85 ±2.89	7.34 ±3.01
Test 7 (EFR)	1 0.08 ± 2.62	10.16 ± 2.30	9.29 ±3.34	10.21 ± 2.89
Test 8 (EFS)	1 0.25 ± 2.66	10.93 ± 2.89	9.91 ±2.96	10.72 ±3
Test 9 (EFI)	6.90 ±2.14	6.96 ± 2.54	6.53 ±2.78	6.23 ±2.87
Memory Test 1 (MFC)	7.00 ±2.57	7.90 ± 2.15*	7.45 ±2.39	7.72 ±2.04
Test 2 (MSC)	8.76 ±4.02	9.93 ± 5.01	9.31 ±4.33	9.83 ±4.55
Test 3 (MMR)	7.16 ±3.91	7.65 ± 3.49	6.83 ±3.86	6.94 ±3.90
Test 4 (MBC)	7.05 ±3.12	7.50 ± 3.65	6.96 ±3.42	7.51 ±3.02

Table-1]: Pre test and post test mean & S.D. values of selected variables after 12 weeks of yoga training *p<0.05, **p<0.01.

****

देश की जीवन्त परम्परा-लोकोत्सव और निमाड़ की लोक संस्कृति

डॉ. इस्माईल अली बेग *

प्रस्तावना - सर्वविदित है कि भारतीय संस्कृति अनेक प्रकार के विश्वासों का समन्वित रूप है। न जाने कब से इस देश में विदेश से विभिन्न जातियों का आगमन होता रहा है। उनके आचार-विचार और विश्वासों के तह पर तह जमते रहे है। इस देश में जोर जबरदस्ती से विश्वास बदलने का प्रयास नहीं किया गया। जो जातियों या कबीले बाहर से आते रहे वे स्वतंत्र जाति के रूप में अपने विश्वासों और सामाजिक संघटनों के साथ यहीं बस जाते रहे और धीरे-धीरे वे इस विशाल महादेश के जीवन्त अंग बन जाते रहे। वे यहां बसने वाली जातियों के आचार-विचार और विश्वासों से प्रभावित होते रहे और उन्हें भी प्रभावित करते रहे। शताब्दियों तक यह प्रक्रिया चलती रही और आज भी चल रही है। ऐसा संसार में प्राय: सर्वत्र होता रहता है, फिर भी भारतवर्ष की अपनी विशेषता तो है ही। ऐसी विशेषता, जो संसार में अन्यत्र दुर्लभ है। ये मानव मण्ड़लियाँ अपने आचार-विचार और सामाजिक संघटनों को यथासम्भव स्थापित रखते हुए भी धीरे-धीरे एक महाजाति का अंग बन जाती रही।

आज जो इतनी जातियाँ, इतनी विचित्र प्रथाएँ और इनते प्रकार के धार्मिक विश्वास व आस्थाएं दिखाई देते है कि वे इसी प्रक्रिया की देन है। भारतीय समाज में व्यक्ति का धर्मान्तरण नहीं होता था, पुरा का पुरा कबीला या जाति ही इस समाज का अंग बन जाती थी। उनके संस्कारों और आचारों के तारतम्य के अनुसार शास्त्रकार उन्हें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र या अन्य श्रेणी में रख देते थे। एक श्रेणी के लोग अपने विशेष मर्यादा की रक्षा के लिए अन्य श्रेणी के साथ खान-पान और शादी-ब्याह का सम्बन्ध नहीं रखते थे। धीरे-धीरे यह बचाव का उपाय ही अधिकाधिक कठोर एवं अलंघ्य होता गया। अवनति काल में विजातिय संस्कृतियों के कारण वह केवल कठोर ही नहीं बना, धर्म का विशिष्ट अंग भी बन गया। परन्तु इस बहुधा विभाजित भारतीय जन-समूह में एक विचित्र प्रकार की एकता भी बनी हुई है। यह कैसे संभव हुआ? सैकड़ों स्तर में विभाजित जन-समूह कैसे एक दूसरे के निकट आ पाया, यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। इस प्रश्न का उत्तर केवल हमारी संस्कृति की विशालता में ही है।

यह सांस्कृतिक एकता, जाति-भेद की कठोरताओं के बावजूद बनी हुई है, उनमें प्रमुख है-तीर्थ, व्रत, त्योहार और मेले। यद्यपि दीर्घकाल से इस देश में आती रही और यहीं बसने वाली जातियों में अपनी विशेषता बनाए रखने के लिए भी एक दूसरे के विश्वासों के प्रति (उनमें) सदा आदरभाव रहा है और उन्हें सामुहिक रूप से अपनाने का प्रयास निरन्तर होता रहा है। आज के हिन्दू-तीर्थो, व्रतों, त्योहारों और मेलों के अध्ययन से बहुत स्पष्ट हो जाता है कि इनमें विभिन्न जातियों के धार्मिक विश्वासों को अपनाने और सर्वात्मना ग्रहण करने की प्रवृत्ति है। हिन्दूओं के तैंतीस करोड़ देवता न जाने किन-किन जातियों से लिए गए है, जिन्हें बहुत ऊँची सामाजिक मर्यादा नहीं प्राप्त है। नागों, यक्षों, पीरों, भूत-भैरवों, काली-दुर्गा, यहां तक कि शिव, विष्णु की पूजा और तत्सम्बन्धी विश्वास की विभिन्न जातियों, कबीलों और नस्लों के लोगों से ग्रहण किये गये है। इस प्रकार देश की विशाल संस्कृति ने 'अनेक में एक' को प्रतिष्ठित किया है।

मध्य प्रदेश भारतवर्ष का हृदय स्थल है। देश में मध्य भाग में अवस्थित होने के कारण प्राचीन काल में इसे 'मध्य देश' कहा जाता था। स्वतंत्रता के पश्चात् 'मध्य प्रदेश' नामक राज्य का उदय 1 नवम्बर, 1956 को हुआ। प्राचीनतम विन्ध्य श्रृंखलाओं तथा सतपुड़ा श्रृंगमालाओं की गोद में बसा यह राज्य प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक वैभव से सम्पन्न है। यहां के पर्वत, वन, वनस्पतियाँ, मोक्षदायिनी नदियाँ, पुण्यदायी तीर्थ, विभिन्न खनिज सम्पदाओं से समृद्ध भूमिगत भण्डार, शस्य श्यामला कृषि भूमि, इसकी निधियाँ है। म.प्र. सांस्कृतिक दृष्टि से, आंचलिक विशिष्टाओं के कारण, बुन्देलखण्ड, बघेलखण्ड, निमाड़ तथा मालवा की सांस्कृतिक परम्पराओं से समृद्ध है। यहाँ के पर्व, त्योहार, उत्सवों और मेलों में लोक मानस, विश्वास तथा लोक मूल्यों, लोक व्यवहार की आस्था प्रवाहित होती है। मध्य प्रदेश की ऐतिहासिक, पौराणिक, धार्मिक, सांस्कृतिक धरोहरों में पश्चिम निमाड़ जिले का नाम सर्वोपरि है।

पश्चिम निमाड़, म.प्र. का एक आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र इस दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण क्षेत्र है। यहां विभिन्न विश्वासों के आने, बस जाने, आगे बढ़ने और मिल जाने की दीर्घ परम्परा का ऐतिहासिक पक्ष बहुत स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। यहाँ के मेला संस्कृति में यह मिलन प्रक्रिया का जीवन्त रूप अधिक स्पष्ट है। पश्चिम निमाड़, मध्य प्रदेश के दक्षिण पश्चिम भाग में स्थित है। यह जिला तथा पूर्वी निमाड़ जिला मिलकर इंदौर संभाग की दक्षिणी सीमा को निश्चित करते है। भौगोलिक दृष्टि से यह जिला सर्वाधिक विषमताओं वाला है। प्राकृतिक रूप में यह जिला नर्मदा घाटी का मध्यवर्ती भाग है, जिसकी उत्तरी सीमा पर विन्ध कगार तथा दक्षिणी सीमा पर सतपुड़ा पर्वत श्रेणी है। पश्चिमी निमाड़ जिला त्रिकोणीय आकार में फैला हुआ है। इसका एक शिरा पश्चिम की ओर है, जो 13450 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को रेखांकित करता है। इसकी पूर्व-पश्चिम लम्बाई लगभग 362 किलोमीटर है, जबकि उत्तर-दक्षिण चौड़ाई पूर्वी भाग में लगभग 273 किलोमीटर है। राज्य के सर्वेक्षण विभाग के अनुसार जिले का क्षेत्रफल 13450 वर्ग किलोमीटर है।

इस जिले की सीमा उत्तर में धार और इंदौर जिलों से, उत्तर-पूर्व में देवास से, पूर्व में खण्डवा (पूर्व निमाड़), जिले से, दक्षिण में महाराष्ट्र प्रान्त के जलगांव (पूर्व खानदेश) तथा धुलिया (पश्चिमी खानदेश) जिलों से तथा पश्चिम में गुजरात के भड़ौच तथा उत्तर पश्चिम में झाबुआ जिले की सीमाओं को छूती है। जिले की अधिकांश सीमाएं प्राकृतिक आधारों पर आधारित है। उत्तरी सीमा विन्ध्य कगार की जल विभाजक रेखा, नर्मदा नदी और उसकी कुछ सहायक नदियों के साथ निश्चित हुई है। दक्षिण सीमा

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, अंजड़, जिला बड़वानी (म. प्र.) भारत

अनेर नदी तथा मनियल नालों से निर्मित है, जो ताप्ती नदी में जाकर मिलते है। पश्चिम सीमा का एक भाग नर्मदा नदी की सहायक नदी झाड़कल से बना है। इस तरह प्राकृतिक आधारों पर सीमा का निश्चयन हुआ है। केवल पूर्वी सीमा में ही कृतिम सीमा रेखा बनाई गई है।

निमाड़ क्षेत्र मध्य प्रदेश की प्राचीनतम संस्कृति और सभ्यता का केन्द्र स्थल रहा है। इसे 'नर्मदा स्थलीय सभ्यता' का केन्द्र भी कहा जाता है। यह कहा जाता है कि प्रागैतिहासिक युग में आदिम मानव की सतपुड़ा में बहुल्यता थी, इन्होंने विन्ध्यांचल व सतपुड़ा पर्वत श्रेणियों के मध्य स्थापित नर्मदा घाटी व उससे लगे क्षेत्र में घुटनों के बल चलना सीखा था। अत्यन्त प्राचीन काल से निमाड़ (पूर्व निमाड़) की भूमि लोक साहित्य एवं लोक संस्कृति से सौभाग्यशाली धात्री रही है। यह भारत की सबसे प्राचीन पर्वत विंध्यांचल और सात-सात पुड़ वाले सतपुड़ा की पर्वत श्रेणियों से रक्षित है। इसके मध्य से बहने वाली नर्मदा जीवन रेखा की तरह और सूर्य का ताप हरण करने वाली ताप्ती के पवित्र जल से यह सिंचित रही है।

निमाड़ प्राचीन काल से ही संस्कृति का पालनहार रहा है। इतिहास विशेषकर पुराततवीय अन्वेक्षण इसके गवाह है। भौगोलिक दृष्टि से निमाड़ सतपुड़ा और विन्ध्यांचल की घाटी के मध्य फैला है। नर्मदा, ताप्ती, आबना, कावेरी, सुक्ता, कुंदा, गोई, वेदा और अनेक छोटी-बड़ी नदियों से सिंचित यह प्रदेश सांस्कृतिक एवं लोक संस्कृति, प्राकृतिक सौन्दर्य और अपने भारत प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंग औंकारेश्वर के कारण एक विशिष्ट पहचान बना ली है।

यहां की सांस्कृतिक परम्पराओं और विरासत का अपना महत्व है। इतिहास और संस्कृति के परिप्रेक्ष में आदिम काल से लेकर आधुनिक युग तक एतिहासिक-सांस्कृतिक काल से लेकर आधुनिक युग तक एतिहासिक-सांस्कृतिक विकास की सीधी रेखा खींची जा सकती है। इतिहास में भी, अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण निमाड़ का खास स्थान रहा है।

निमाड़ उत्तर-दक्षिण को जोड़ने वाली महत्वपूर्ण कड़ी है। उत्तर और दक्षिण के साम्राज्य निर्माताओं ने सदैव पहले निमाड़ पर आधिपत्य किया उसके बाद ही वे उत्तर या दक्षिण के विजय अभियानों में सफल हो सके। इतिहास के प्रत्येक दौर में निमाड़ क्षेत्र ने अपना सामाजिक और भू-राजनीतिक महत्व बना रखा। यहाँ एक तथ्य ध्यान देने योग्य है कि प्रशासनिक दृष्टि से निमाड़ वर्तमान में अलग-अलग जिलों (पश्चिम निमाड़-बड़वानी, खरगोन, पूर्वी निमाड़-खण्डवा) में विभाजित है। लेकिन सांस्कृतिक स्तर, लोक जीवन, लोक धर्म एवं आस्थाएँ, लोक एवं भाषा, रहन-सहन और रीति-रिवाज, पर्व व त्यौहार दोनों के समान है। दोनों की सांस्कृतिक विरासत भी एक ही है। इतिहास के विभिन्न युगों में भिन्न-भिन्न जातियों और प्रजातियों का निष्क्रमण इस अंचल में हुआ इन्होंने निमाड़ को मिली जुली संस्कृति को जन्म दिया। कालान्तर में इस मिश्रित संस्कृति का समन्वयात्मक स्वरूप प्रगत हुआ और निमाड़ ने संस्कृति के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट पहचान बना ली। इस क्षेत्र में आदिम संस्कृति के प्रतीक स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते है तो नागर और आर्य संस्कृति का भी उसके साथ समायोजन स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। इतिहास के हर युग में निमाड़ की सांस्कृतिक छवि स्पष्ट रूप में दिखाई देती है।

वास्तव में निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास समृद्ध और गौरवशाली रहा है। यहाँ विभिन्न (सभी) जातियाँ निवास करती है। इसीलिए निमाड़ की धरती पर पनपी कला संस्कृति में तत्कालीन संघटनाओं का आवर्तन-प्रत्यावर्तन देखा जा सकता है। पौराणिक नायकों से लगाकर यहाँ अनेक गौरवशाली वंशों का शासन रहा है, जिन्होंने निमाड़ की कला संस्कृति को बहुत गहरे तक प्रभावित किया है। 'निमाड़ की भूमि एक ऐसे स्थान पर है, जहाँ कई जातियों, जनजातियों की संस्कृतियाँ आयी और गयी। आर्य-अणार्य, शक-सीथियन, सातवाहन, राजपुत, मुगल, मराठा आदि प्रमुख संस्कृति सम्पन्न प्रशासक जातियों का सम्पर्क निमाड़ से रहा है।'

निमाड़ में विभिन्न संस्कृतियों के स्मृति चिन्ह यहाँ के जन-जीवन, कला और वाचिक परम्परा के अवशेष के रूप में देखे जा सकते है। समय के परिवर्तन के साथ निमाड़ की मूल जातियाँ सामान्य जीवन जीने के लिये बाध्य होती चली गई। वर्तमान में निमाड़ की कला संस्कृति को धारण करने वाली महत्वपूर्ण जातियों और जनजातियों में ब्राह्मणों में नारमदेव, श्री गौड़, मालवीय बाविसा, जम्बु, खेड़पाल बाहर से स्थापित कान्य कुब्ज सरयुपारीय, गुर्जर, गौड़, सनाढ्य, औदित्य, नागर, महाराष्ट्रीयन आदि। वैश्यों में दशोरा, श्रीमाली, धाकड़, पालीवाल, नीमा, जैन आदि। बाहर से आने वालों में लाड़, अग्रवाल, ओसवाल, खण्डेलवाल, महेश्वरी प्रमुख है। निमाड़ की अन्य जातियों में जिनका महत्व सामान्य जन-जीवन में सबसे अधिक है और जो परम्परा से कला संस्कृति के संवहक है उनमें गूजर, अहीर, भारूढ़, गवली, माली, सुतार, सुनार, लोहार, नाई, दर्जी, तेली, तम्बोली, कहार, नावड़ा, कुलमी, रंगारा, छीपा, भावसार, नाथ, बैरागी, मारू, डाँगी, कोष्ठा, कोरी, कोटवार, परधान, खटिक, आल्या, पारधी, नट कालबेलिया, कोमला, भूत, सांसी, पॉसी, घोसी, झमराल, बरगुण्डा, आदि प्रमुख है।

क्षत्रियों में राजपूत, मराठा, धनगर, यादव महत्वपूर्ण है। मुसलमानों में पिंजारा, नायता, पगन, शेख, सैय्यद, मोमिन, कसाई, बोहरा आदि सभी निमाड़ की संस्कृति में घुल-मिल गए है। जनजातियों में भील-भीलाला, पटलिया, राण्या, मानकर, नायक, कोरकु, गौंड, बंजारा अपनी अलग-अलग संस्कृति और परम्पराओं का निर्वाह करते आए है। ये जातियाँ-जनजातियाँ निमाड़ में रहते-रहते संस्कृति का अभिन्न अंग हो गई है। इनकी अपनी सामुदायिक परम्पराएँ, मान्यताएँ, आस्थाएँ और लोक विश्वास है। इससे क्षेत्र के वैविध्यपूर्ण सांस्कृतिक परम्पराओं का दर्शन तथा लोक उल्लास की जीवन्त परम्परा से साक्षात्कार होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उपाध्याय, रामनारायण : निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास
2. उपाध्याय, रामनारायण : लोक साहित्य समग्र, हिन्दी प्रचारक पब्लिकेशन, वाराणसी
3. पश्चिमी निमाड़, जिला गजेटियर विभाग, म. प्र., भोपाल,
4. निरगुणे, वसन्त : निमाड़ी संस्कृति और साहित्य, मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल
5. चौमासा पत्रिका, भोपाल

****

Freedom Of Speech And Expression In India And Press

Bhola Prasad Shau*

Abstract - Freedom of Expression has always been emphasized as an essential basis for the democratic functioning of a society. freedom of press has remained an issue that has led to endless number of debates acrooss the domocratic world in the past few decades. The democratic credentiais of a state are judged today by the extent of the freedom press enjoys in that state .The Press provides comprehensive and objective information of all aspects of the country,s Social ; Political, Economice and Cultural life.
Key words - press freedom, democracy ,Constitution legislative privilege.

Introduction - "Freedom of press is an ariticle of faith with us, sanctioned by our constitution, validated by four decades of freedom and indispensable to our future as a Nation"

- Rajiv Gandhi

A free press is very important and essential for the effective functioning of a democracy. A free press has also been described as the oxygen of democracy. one cannot survive without the other..Our actual experience since independence and especially in the last dacede or so, also suggests that a free and vigilant press is vital torestrain corruption and injustice at least to theextent that public opinion can be roused as a result of press investigations and comments.

The press serves as a powerful antidote to any abuse of power by goverment officials and as means for keeping the elected officials responsible to the people whom they were elected to serve . The democratic credentials of astate are judged today by the extent of the freedom press enjoys in that state . At this present juncture of time, as we approached the sixth decede of our freedom, it is essential to keep in mind the pertinence of freedom of press which is regarded as the fourth pillar of democracy.

WHAT IS FREEDOM OF PRESS - 'Freedom means absence of control interference or restriction.Hence the expression Freedom of press means the right to print and publish without any interference from the state or any other public authority. but this Freedoms , like other freedom cannot be absolute but is subject to well known exceptions acknowledge in the public interests, which in india are enumerate in Article 19(2) of the constitution .

SIGNIFICANCE OF FREEDOM OF PRESS - Press plays an educative and mobilizing role in moulding public opinion and can be instrument of social change, for the freedom of Press is regarded as the mother of all other libertis in a democratic society . The press serves as a powerful soloution of power by government officials and as a means for keeping the elected officials responsible to the people whom they were elected to serve. A Free press stands as one of the great interpreters between the Goverment and the pople.

HISTORY OF FREEDOMS OF PRESS IN INDIA - The beginnings of the struggle for free speech in india date back to 18th century British india . The history of the feedom of press in india is inseparable from the history of the nationtinoalist movement. The nationalist movement for a free india was fought with repression of the freedom of speech and expression thourt a series of legislations aimed at stifling the possibility of a consolidated outery against colonial subjugation. that the press played an invaluable role in generating, political conscousness is evident from time to time neutralise the power of the print medium.

(1) Press and Registration of Book Act,1867 - The earliest surving enactment specially directed against the press was passed in 1867, the press and Registration of Books Act. The object was however to establish government control over the Freedom of press . It was are gulatory law which enabled government to regulate printing presses and newspapers by a system of registation and to preserve copies of Books and other matter printed in india.

(2) Official Secrets Act, 1923 - A general Act which has a greater impact on the press, in particular is the Offical Secrets Act, 1923, which is aimed at maintainning the security of State against brakeage of secret information sabotage and the like. The Indian press (Emergency) Powers Act 1931 imposed on the Press on obligation to furnish security at the call the Executive. The Act, (as amended by the Criminal law Amendment Act, 1932) empowered a provincial Government to direct a printing press to deposit a security which was liable to be forfeited if the press published any matter by which any of the mishievous acts enumerated in S.4 of the Act were furthered, e.g., bringing the Goverment into hatred or Contempt or inciting disaffection towards the Government; inciting feelings of hatred and enmity between different classess of subjects including a public servant to resign or neglect his duty,

***Research Scholar, A.P.S.University, Rewa (M.P.) INDIA**

(3) Press (Objectionable Matter) Act, 1951 - The preamble of the press (Objectionable Matter) Act, 1951, looked innocuous as it was to provide against the printing and publication of incitement to cirme aid other objectionable matter.

(4) Press Council Act,1965 - Following the British precedent, a press Council was constituted in 1996 under the press council Act 1965, which was enacted to implement the recommendations of the press commission.The object of establishing the council was to preserve the freedom of the press to maintain and improve the standards of newspapers in India. It was to from a code of conduct to present writings which were not legally punishable beet were yet objectionable.

FREEDOM OF PRESS: CONSTITUTIONAL PERSPECTIVE - "Where it is left to me to decide whether we should have a government without newspapers, or newspapers without a government, I should not hesitate a moment to prefer the latter"[1]. The Preamble to the Indian Constitution resolves to secure for all the citizens of India, liberty of thought , expression and belief[2] From Article 19(1)(a) of the Indian Constitution, i.e. 'Freedom of Speech and Expression', the media derives its rights. It is a fundamental right[3]. Freedom of press is not specifically mentioned under the Indian Constitution, but it is included under Article 19(1) (a) of constitution of India. Article 19 (1) (a) of the Constitution from which the media derives its rights guarantees to every citizen of India, Article 19(1) (a) reads:
19.(1) All citiznes shall have the right
(a) to freedom of speech and expression;
The exceptions to the right guaranteed under Article 19(1) (a) are contained in Article 19(2) which reads: Nothing in Sub-clause (a) of Clause (1) shall affect the operation of any existing law, or prevent the state form making any law, in so far as such law imposes reasonable restrictions on the execrise of the right conferred by the said Sub-Clause in the interests of the sovereigntly and integrity of India, the security of the state, friendly relations with foreign states, public order, decency or morality, in relation to contempt of court, defamation or incitement to an offence.

The media derives its rights from the right the freedom of speech and exression available to the citizen. Thus, the media has the same rights —— no more and no less than any individual to write, publish, circulate or broadcast.

Ramesh Thappar v. State of Madras[6], amongst the earliest cases to be decided by the Supreme Court, involved a challenge against an order issued by the government of Madras under Section 9(1-A) of the Madras Maintenance of Public Order Act, 1949 imposing a ban on the entry and circulation of the journal, Cross Roads, printed and published by the petitioner. The Court struck down Section 9(1-A) holding that the right to freedom of speech and expression was paramount and that nothing short of a danger to the foundations of the State or a threat to its overthrow could justify a curtailment of the right to freedom of speech and expression. The impugned provision which authorized the imposition of restrictions for the wide purpose of securing public safety and public order fell outside the scope of the reasonable restrictions permitted Article 19(2) and was held to be unconstitutional.

In **Brij Bhusan v. State of Delhi**[7], the Supreme court quashed a precensorship order passed against the publishers of the Organiser. The order was passed by the authorities under Section 7(i)(c) of the East Punjab Safety Act, 1949. The Court held that Section 7 (i) (c) which authorized such a restriction on the ground that it was necessary for the purpose of preventing or combating any activity prejudicial to the public safety or the maintenance of public order' did not fall within the preview of Article 19 (2).

RECOMMENDATIONS FOR ENSURING FREEDOM OF PRESS:

(1) Codification of Legislative Privileges - A complementary measure will be to insist upon the codification of legislative privileges, with the proviso that where a breach of privilege is alleged, the legislature should only be permitted to file a complaint, the dicision regarding whether contempt is proved and, if so, the punishment to be awarded being left to a Court of Law. The idea that the legislature should itself be both the accuser and the judge might have had a historical reason in England; but there is not reason for such a fundamentally unjust approach to be accepted in our context.

(2) Importance of Constitutional Amendment - All the difficulties in the way of ensuring that the Press can have the maximum freedom to carry out its function of collection facts about different facets of national life, analysing them and commenting upon them so as to keep the general body of citizens in our young democracy well informed show that the Press requires some special protection. Many authorities have held that the Right to Freedom of Speech conferred by Article 19(1) of the Constitution is adequate to protect the freedom of the Press. Further, due regard has to be given to the recommendations made by the National Commission to Review the Working of the Constitution (NCRWC). They have recommended the inclusion of Freedom of Press-media under Article 19(1) (a).

(3)- Press Needs To Improve - The inadequacies of the Indian Press need not be connived at. There is no doubt that private business and those who control it, are treated by most newspapers with kidgloves. This Partly is because of the ownership of many newspapers and therefore the philosophy of those who are appointed to senior journalistic positions. It is seen that the editors and journalists cannot have adequate freedom of collecting and disseminating facts and offering comments as they are under the pressure of the capitalist owners. So, the pressure of the capitalist owners should be minimized.

(4) Positive Assistance To Independent Papers - At the same time, it is important that steps are taken positively to make it possible for independent papers to survive and

develop. Assistance to them should be provided through general institutions meant to help the growth of independent entrepreneurs, including small ones.

(5) The State, should stop becoming the Main Threat - This resistance is necessary because experience all over the world, as well as our own experience since Independence, suggest that the State remains the source of the most potential threat to Press freedom.

Conclusion - On analysing the current scenario, latest issues and developments of Freedom of Press, it can be concluded that although the Press is considered the watchdog of democracy, sadly, there is scant regard for this tursim in a country which is, ironically, the world's largest democracy. In keeping with its affirmation that freedom of expression is "one of the essential foundations of democratic society", the Court has clearly shown a preference for freedom of press. In conclusion, it must be reiterated that the freedom of press and information are fundamental to healthy working of a democracy and therefore, must coexist with the freedom of speech and expression.

References :-

1. Thomas jefferson in a letter to Edward Carrington, Janurary 16,1787
2. Constitution of India, Preamble
3. Fundament right under the Constitution of India Part III
4. Us Constitution, First Amendment, Article 1
5. Brij Bhushan v.State of Delhi, AIR 1950 SC 129; Express Newspapers Ltd. V.Union of India, AIR 1958 SC 578 : Sakal Papers v. Union of India, AIR 1962 SC 305; Bennett Coleman&Co.v. Union of India (1972 2SSC 788 :AIR 1973 SC 106:; Maneka Gandhi v. Union of India, (1978) 1SCC 248
6. AIR 1950 SC 124
7. AIR 1950 SC129

****

Law relating to patent right, enforcement and misuse- A critical analyses

Lok Narayan Mishra *

Introduction - In India, The Indian Patents Act 1970 was implemented in 1972. It made pharmaceutical product innovations, as well as those for food and agro-chemicals, un-patentable in India. It allowed innovations patented elsewhere freely copied and marketed in India. Further, this Act restricted import of finished – formula, imposed high tariff rates and introduced strict price control regulation. This Act was not beneficial to the big foreign multinational organizations and was not in sync with the global patent system. India being a member of WTO, it had to comply with the requirements under the TRIPS Agreement. The inventor of any invention always seeks for a patent protection for his invention. A patent protection protects his/ her invention from unauthorized use and also gives a monopoly to the creator to exploit his invention and derive maximum benefit from it.

A patent protection is granted under the "Patent law in India" and this protection subsists for a period of 20 years. However, not all creations or inventions would warrant a patent protection. The Indian Patent law lays down certain requisites for the filing of an Indian patent. In order to understand these requisites, it is essential to understand as to what amounts to be an invention.

Inventions under the Indian Patent Law - Now, S 2(j) of the India Patent Act 1970 defines an invention as follows: 'invention means a new product or process involving an inventive step and capable of industrial application.' Simply put, any product or process will be deemed to be an invention if it is novel, non-obvious, involves an inventive step and has industrial application. An invention should be novel, this means that such invention should not have existed previously. Next, the invention should be non-obvious implies that any person skilled in that field should not have anticipated the invention. Consider the invention of a chair with wheels. Any person skilled in the art of carpentry could have anticipated this. Therefore, such an invention would not be considered fit for protection under the Patent Law in India. Particularly, there should exist an inventive step. This means that the invention should add to the existing body of technology and science. Lastly, it should have industrial application i.e., it should have some commercial value. Therefore, inventions which do not have any industrial application are termed as utility models. However, utility models are not protected in India. Apart from this, the Patent Law in India also lists out certain inventions which not qualify to be termed as an 'invention' under the Patents Act i.e. they will not qualify for an Indian patent protection. The list is enumerated in Section 3 of the Act.

Not patentable inventions under the Patent Law in India :

1. First, an invention which is frivolous or an invention which claims something contrary to the well established natural laws. Example: If someone claims that he has invented a device that can completely nullify the gravitational force of the earth, it would be deemed a frivolous invention and hence not patentable.
2. Secondly, an invention whose use will prove contrary to public order or morality, or will cause serious detriment to human, animal or plant life. Ex: Any form of arms and ammunition like guns etc are not patentable since its primary use is against public morality.
3. The mere discovery of a scientific principle or the formulation of an abstract theory would not amount to an invention.
4. The mere discovery of a new form of substance which does not result in the enhancement of the known efficacy of the substance would not be termed as an invention.
5. A substance obtained by a mere admixture is also not patentable. Example: Mixing of any acid and base results in the formation of a salt and water. Such salt will not be patentable.
6. The mere arrangement or rearrangement of devices each functioning independently of one another in a known way will not be an invention.
7. No invention with respect to atomic energy is patentable. This is owing to national interest and security of the state. In addition to the above list, you may read our blog post about inventions not patentable in India.

Patents Amendment Act 2005 - This conformity was introduced through the Patents Amendment Act 2005. The main provisions of this Amendment Act are:

1. Product Patent - The Act extends product patent protection in all fields of technology, i.e. drugs, food and

*Research Scholar (Law) Legal Study And Research Center BU, Bhopal (M.P.) INDIA

chemicals. Earlier only process patent was allowed which limited patent rights. For example, a process patent was awarded to the way a cure for, say cancer, is manufactured and not for the cure. This allowed the other manufacturers to produce the same cure by some other method and hence not violate patent rights of the original manufacturer. But now after the 2005 Amendment, patent is awarded to the way cancer cure is manufactured and to the cure as well.

2. Compulsory Licensing - This is a TRIPS compliant provision empowering the governments to check and control the misuse of patents. Inspite of the existence of a patent, the govt can invoke the compulsory license to make available the patented product to the people in case of national emergency for public non-commercial use. The govt can also invoke compulsory licensing if it feels that the public requirements with regard to a patented product have not been met and the product is not available for the public at an affordable price.

3. Embedded Software - The Act allows for patenting of embedded software

4. Other provisions - The Act allows the patent holder to challenge the license so that he can block general production of his drug. Pre-grant and post-grant opposition clause has been provided. The Act also removes provisions relating to EMRs besides strengthening the provisions relating to national security to guard against patenting abroad of dual use technologies.

Patent Misuse - The term "patent misuse" refers to specific types of prohibited behavior engaged in by the owner of the patent rights. Patent misuse is an affirmative defense that recognizes that it is possible for a patent owner to abuse the exclusive right enjoyed as a result of the issuance of a patent. As an affirmative defense, patent misuse cannot be used as a sword, but can only be used by an alleged infringer if and when the patent owner seeks to enforce the exclusive right of the patent in a patent infringement suit.

Once a patent infringement suit is initiated, the alleged infringer, in order to successfully rely upon the patent misuse defense, must "show that the patentee has impermissibly broadened the 'physical or temporal scope' of the patent grant with anticompetitive effect." If the alleged infringer can demonstrate that the patent owner did engaged in prohibited behavior, the patent will be unenforceable despite the fact that it is valid. In this respect, patent misuse is similar to the doctrine of inequitable conduct, which also works to make an entire patent unenforceable.

The taint placed upon the patent by misuse, however, does not necessarily require the patent be held unenforceable for all time. Patent misuse merely prevents the owner of the patent from recovering for infringement for the duration of the misuse. In this respect, patent misuse is dissimilar to inequitable conduct. To be sure, inequitable conduct may find itself at the foundation of the underlying patent misuse defense, but inequitable conduct is unlike patent misuse in that once it has been determined that there was inequitable conduct during the prosecution of the patent, the patent is irretrievably unenforceable.

Over the years courts have identified several prohibited practices that constitute per se patent misuse, including: (1) tying agreements, where the patent owner requires in the license agreement that the licensee of the patent also purchase a separable, staple good; and (2) arrangements that allow the patent owner to effectively extends the term of the patent, thereby requiring royalty payments after the patent term has expired. Generally speaking, there are two separate types of prohibited activity that can lead to a finding of patent misuse. First, if a patent owner engages in conduct that violates the antitrust laws, and the antitrust violation is sufficiently related to the patent in question in the infringement action, the patent owner will be unable to seek redress and the patent will be unenforceable as a result of patent misuse. The second type of patent misuse occurs when the patent owner seeks to extend the exclusive rights beyond those guaranteed by the patent grant. This extension of rights theory is sometimes referred to as the "extension of the monopoly" doctrine, and will come into play when the patent owner engages in conduct that impermissibly broadens the physical or temporal scope of the patent rights granted. Calling this form of patent misuse an extension of the monopoly, however, is dangerous because it perpetuates a myth; namely that a patent is a monopoly.. Nowhere in any statute is a patent described as a monopoly. The patent right is but the right to exclude others, the very definition of "property." That the property right represented by a patent, like other property rights, may be used in a scheme violative of antitrust laws creates no "conflict" between laws establishing any of those property rights and the antitrust laws. The antitrust laws, enacted long after the original patent laws, deal with appropriation of what should belong to others. A valid patent gives the public what it did not earlier have. Patents are valid or invalid under the statute.

Inequitable conduct is indeed a lesser offense than common law fraud and will not support antitrust liability. The net result of this is that it is exceedingly difficult to demonstrate patent misuse under a theory that relies upon the knowing and willful enforcement of an otherwise invalid patent. If the alleged infringer is not able to prove Walker Process fraud they may attempt to demonstrate that the infringement suit was a mere sham. In order to demonstrate that the litigation is a mere sham, the alleged infringer will need to show that the lawsuit is objectively baseless in the sense that no reasonable litigant could realistically expect success on the merits. If an objective litigant could possibly conclude that the suit is reasonably calculated to elicit a favorable outcome, the suit cannot be considered a sham. It will likewise be necessary for the alleged infringer to demonstrate that the litigation was brought for no reason other than attempting to directly interfere with the business relationships of a competitor. Given this strict, unforgiving requiement, it is easy to see how difficult, if not impossible, it is to demonstrate sham litigation. Courts, however, have

never required the defendant raising the patent misuse defense to first establish that an antitrust violation has occurred. Such a prerequisite is not envisioned by the defense.

Similarly, the alleged infringer who is seeking to rely upon the defense of misuse does not need to establish standing in the antitrust sense. This is true because the true focus of the misuse inquiry is not personal in nature, but rather revolves around the harm to the public interest created by the enforcement of patents tainted by loathsome conduct. The patent misuse doctrine, as an extension of the equitable doctrine of unclean hands, allows a court of equity to refuse to lend its support to enforce of a patent that has been misused.

Patent misuse arose as an equitable defense available to the accused infringer, from the desire to restrain practices that did not in themselves violate any law, but that drew anticompetitive strength from the patent right, and thus were deemed to be contrary to public policy. This aspect of the patent misuse defense differs significantly from the justifications upon which antitrust laws are founded. Antitrust laws seek to level the playing field by freeing the market from "unfair" competition. In so doing, the antitrust laws work to increase competition, thereby allowing free market economics to rule corporate behavior.

Conclusion - I have long advocated for greater use of the patent misuse defense because it seems exceptionally clear to me that some of the bad actors in the patent enforcement market, those who many call patent trolls, engage in extortion-like tactics. They bring a lawsuit seeking to collect tens or hundreds of millions of dollars and rupees , or more, yet they offer licenses to settle the matter on the order of a few thousand. Even those who think they don't infringe will face hundreds of thousands of dollars in legal fees at a minimum, frequently well into the millions of dollars. This leads many, if not most, to simply pay the small license fee.I don't see any other way to characterize this other than as patent misuse.The need to have robust enforcement rights is essential if patents are actually a property right, which of course they are. Attempts to curtail patent rights are, in my humble opinion, wholly unjustified. But those who seek to over enforce rights and bully defendants do real harm to the patent system as a whole and need to be stopped. Thankfully, Judges are people too, and they get offended by what they perceive as bad behavior by litigants.

Patent misuse and copyright misuse may become increasingly important tools for warding off what in lay terms is sham litigation.

References :-

1. Personal Research

****

Priority Sector (Marginalized class) and Position of Banking Advances in Globalized Era

Dr. Shweta Singh *

Abstract - Globalization means different things to different people but a key economic dimension of it is undoubtedly the opening up of economies to international competition, allowing goods, ideas, capital and some people to move more freely between countries. Many countries around the world have embraced these aspects of globalization, because governments have become more convinced that a more dynamic economic performance awaits countries that more closely integrate with the global economy. And yet, because it brings with it more rapid domestic economic change, globalization can be disruptive and can generate losers as well as winners.

Introduction - In the present era globalization has gained an enormous importance especially in the last 15 years. Globalization is perhaps the topic of the age. The modern world is seen as the world without geographical boundaries and any kind of barriers. Globalization has been the major force behind this. The process of globalization is an inevitable phenomenon in human history which has been bringing the world closer since the time of early trade and exploration, through the exchange of goods, products, information, jobs, knowledge and culture. Globalization is the process of integration of the whole world into a huge market. It provides several things to several people with removal of all trade barriers among countries. Globalization happens through three channels: trade in goods and services, movement of capital and flow of finance. Globalization in India is generally taken to mean "integrating' the economy of the country with the world economy.

1. Globalization- a smaller world
2. People are closer together
3. A world closer in time and space
4. A world without borders
5. Goods , services and ideas move faster or instantly
6. Driven by technology- transportation, production, agriculture, education
7. Increase sale volume
8. Increase profit margin
9. Capital needs markets- new markets for growing profit
10. Developing countries need to grow, need capital, technology, access to goods and services
11. Investors needs free trade, minimum or no regulation on capital and safeguarding of their investors

Priority sectors and banks - Banks were assigned a special role in the economic development of the country besides ensuring the growth of the financial sector. The banking regulator, the RBI, has hence prescribed that a portion of the bank lending should be for developmental activities which it calls the priority sector. Priority sector comprises:

1. Agriculture
2. Micro, small and medium enterprises
3. Export credit
4. Education
5. Housing
6. Social infrastructure
7. Renewable energy

Targets under priority sector :

1. Agriculture: 18%- within the 18% target for agriculture, a target of 8% of ANBC is prescribed for small and marginal farmers.
2. SSI:- 7.5%
3. Export credit: incremental export credit of up to 2% for domestic banks and foreign banks with 20 branches and above.
4. Education: loans to individuals for education purposes including vocational courses up to 10 lacs.

Banking business in India is getting redefined. It is faced with myriad challenges and opportunities especially beyond 2009 when they would be fully exposed to competition. Banks in India are bracing themselves to be ready through adoption of newer technology. Strengthening their capital base to survive in the competitive environment, reducing their NPAs, bringing down operating costs, enhancing corporate governance and alignments, undertaking organizational restructuring and sharpening the customer-centric initiatives. Consolidation of merger and acquisition route to effectively compete with large global banks may not be far off, when viewed against such preparedness and positive signs from regulators. Some of the challenges banks are facing today are as under:

1. Changing needs of customers

*Assistant Professor (Commerce) S.S Memorial Mahavidyalaya, Etawah (U.P.) INDIA

2. Coping with regulatory reforms
3. Thinking spread
4. Maintaining high quality assets
5. Management of impaired assets
6. Keeping space with technology up-gradation
7. Sustaining healthy bottom lines and increasing shareholders' value.

Globalization and priority sectors

1. Globalization and agriculture - Current status of Indian agricultural sector

a) Share of agriculture in the GDP of the country is only 12.6% in 2013-14
b) The productivity chart of India is still low as compared to some of the other developed nations.
c) It remains the largest contributor towards disguised unemployment in the country.
d) About 75% people are living in rural areas and are still dependent on agriculture
e) Agriculture continues to pay a major role in Indian economy
f) Agriculture sector is changing the socio-economic environment of the population due to liberalization and globalization.

Table 1 :
Growth rate in agriculture & overall GDP (in percentage)

Five Year Plan	Growth Rate in GDP of Agriculture and Allied Activity	Overall GDP Growth Rate
1 Seventh Plan (1985-1990)	3.2	6
2 Annual Plan (1990-92)	1.3	3.5
3 Eight Plan (1992-97)	4.7	6.7
4 Ninth Plan (1997-02)	2.1	5.5
5 Tenth Plan (2002-07)	2.3	7.6
6 Eleventh Plan (2007-12)	2.7	9

Source- Economic Survey G.D.I 2007-08 and 2012-13

Changing face of Indian agriculture in global scenario - Knowledge transfer to the agriculture sector with necessary inputs is most important. The country has a widespread telecoms internet networking which could be put to effective use for delivering knowledge and information to the farming community.

The vision 2020 document of the department of agriculture and cooperation envisages that the tools of ICT will provide networking of the agriculture sector; not only in the country but also globally. It brings farmers, researchers, scientists and administrators together to establishing "Agriculture online" through exchange of ideas and information.

1. New farming practices
2. Improved mechanization in agriculture such as drip irrigation
3. Access to markets
4. Productivity gains
5. New opportunities for employment and income generation
6. Increased investment in sustainable agriculture & development
7. Lack of bio-diversity due to deforestation
8. Rich goes richer and poor goes poorer.

2. Globalization and education :

a) Globalization has also contributed to an increasing interest in English language education world-wide.
b) An increasing number of schools have stepped up English language requirements, even at under graduation levels.
c) The emergence of new education providers such as multinational companies, corporate, universities and media companies.

3. Globalization and Indian business :

a) India has a consumer base of 1.14 billion people.
b) India is the3rd largest global telecom market.
c) India is likely to add over 200 shopping malls in 2010 and 715 malls in 2015.

India is the world's:

1. 2nd largest two-wheeler market
2. 4th largest commercial vehicle market
3. 11th largest passenger car market
4. 7th largest automobile market by 2016

4. Globalization and small scale industries - Small scale industries occupy a strategic place in Indian economy structure due to its considerable contribution in terms of output, promotion of export, creation of employment and alleviation of poverty. This is a fact that small scale industries have been accepted as the engine of economic growth and equitable development of global level. The small enterprises not only play a crucial role in providing large scale employment opportunities at lower capital costs than large scale industries but also helps in industrialization of rural and backward areas thereby reducing not only regional imbalances but ensuring more equitable distribution of national income.

Challenges of SSI in globalization - In the area of globalization when larger corporations supported by international regulations can easily move their resources throughout the world, competition for SSI sector has intensified.

Table 2 & 3 (see in next page)

Banks have to realize that their business has to drive technology and not vice versa. All technological strategies and plans should be based on the principle that any investment in IT should add business value to the banks and their customers. It is worth noting that many operational risks are emanating from the large scale dependence of technology in banking operations and priority sectors (marginalized class)

1. The impact on customers
2. Innovation and branding the product
3. Growth prospects under retail finance
4. Low profitability
5. High NPAs

6. Quantitative targets
7. Government interferences
8. Transaction costs
9. Unable to fulfill the requirement of priority sector according to the technology up-gradation

Objectives of the study -

1. To study the trends of priority sector lending by public banks
2. To compare the target achieved by the public banks in globalised era
3. To study the issues and prepare strategies to develop the priority sector.

Research methodology - The secondary data collected from RBI trends, reports and annual report has been considered for the purpose of this study. Growth rate analysis has been used to assess the growth of the lending during globalization.

Conclusions and findings - Hence it can be concluded that the percentage share of the priority sector advances in public sector banks advances decline from 2006 to 2017. The public sector banks in India were not able to achieve the national target for priority sector (40% of NBC/ANBC). The public sector banks were not able to fulfill the requirement of priority sector according to technology up-gradation in globalised era.

It may be reemphasized that the priority sector need special attention and treatment because most of the prospective beneficiaries under the priority sector have no resource. In a nutshell, shrinking share of real priority sector, neglect of agriculture, neglect of small scale industries and weaker sections are some serious issues which need immediate attention of policy makers.

1. It is clear that the liberal policies adopted by the Indian government have played a dominant role in development of agriculture in India.
2. But the main problem is that he basic issues of rural poverty, corruption, still remain, and are, in fact, getting worse in some aspects.
3. In the long run, globalization is going to play a key role in development and advancement in the field of agriculture resulting in all the fields directly or indirectly getting the benefit from it.
4. India is getting a global recognition and slowly moving towards to become a major economic and political strength.
5. In the long run, with the improvement in educational level and electricity in the rural area, the commercial banks can leverage their technological advantages to good use.
6. A good strategy for the banks will be appointment of a team of local people to provide door-to-door services.
7. The rules laid down to offer loans to the poor people should be simpler and easier to comprehend unlike the current processes.
8. Differential interest rate on education loan can be provided to the different section of the society to promote educational level.
9. Improvement in PSL will instill confidence among the weaker section as they will get loans at a cheaper rate.

References :-

1. Report on trend & progress of India banking RBI Mumbai 2006-07 & 2012-13
2. Economic Survey- Government of India
3. R.K.Uppal " Priority Sector Advances: Trends, Issues and Strategies."
4. www.rbi.co.in
5. Pandey I.M.Financial Management
6. Shahjahan, K.M. Priority Sector Lending: Trends
7. Shilpi Pant. "Priority Sector Bank Lending: Trends, Issue and Strategies" A research Journal.

Table 2 : Priority sector lending by public sector banks

	2006: Amount	2006: Percentage	2007: Amount	2007: Percentage
Priority sector advances	4,09,748	40.3	5,21,180	39.6
Agriculture	1,55,220	15.3	2,05,091	15.6
SSI	82,434	8.1	1,04,703	8.0
Other PS	1,63,756	6.1	2,01,023	15.3

Source: Report on trend and progress of India banking RBI Mumbai 2006-07

Table 3 : Priority sector lending by Public Sector banks

	2006	2007	2012	2013	2016	2017
Priority sector advances	40.3	39.6	37.2	36.3	39.0	39.5
Agriculture	15.3	15.6	15.8	15.0	-	18.3
SSI	8.1	8.1	9.5	9.8	-	9.8
Other PS	16.1	15.3	13.1	13.5	-	11.4

Source: Report and Trend and Progress of India Banking RBI Mumbai 2012-13

****

नये प्रकाश की खोज

डॉ. बुद्धरतन राजौरिया *

प्रस्तावना – जब सिद्धार्थ गौतम ने शाक्य और कोलियो के रोहिणी नदी के पानी को लेकर युद्ध होना तय हुआ था लेकिन गौतम इस युद्ध से सहमत नही थे। सिद्धार्थ गौतम इसका हल वार्तालाप या सन्धि द्धारा हल करना चाहते थे, लेकिन शाक्य संघ यह नही चाहता था। इसी कारण सिद्धार्थ गौतम को युद्ध के लिये तैयार रहना है या फिर अपना राजपाठ छोड़कर ग्रहत्याग करना होगा लेकिन सिद्धार्थ गौतम युद्ध नहीं चाहते थे इस लिये उन्होंने ग्रहत्याग का फैसला लिया। गौतम के ग्रहत्याग के बाद शाक्यों में बड़े आन्दोलन हुआ था कि युद्ध होना ठीक नही है और यह जुलूस निकले की शाक्य एवं कोलियो भाई-भाई है इस कारण युद्ध स्थगित हो गया और सन्धि वार्ता के द्धारा समस्या हल हो गई।

नये प्रकाश की खोज – सिद्धार्थ गौतम जब अन्य पंथो का परीक्षण करने के उद्देश्य से आलार ओर कालाम से भेट करने के लिये राजग्रह छोड़ दिया था, मार्ग में उसने भृगु श्रृषि का आश्रम देखा और यूँ ही जरा देखने के लिये उसमें प्रवेश किया आश्रम के व्राहमण निवासी जंगल से लकड़ी चुन कर लाये थे, उनके हाथ में तपस्या की अत्यावश्यक वस्तुये, समिधा, पुष्प तथा कुश से भरे हुये थे। वे वुद्धिमान अपनी-अपनी कुटियों में न जाकर सिद्धार्थ गौतम की ओर मुड़े ओर आश्रम वासियों द्धारा समूचित रूप से सम्मानित होकर सिद्धार्थ गौतम ने भी आश्रम के बड़े-बूढ़ों के प्रति आदर प्रदर्शित किया था। जब सिद्धार्थ ने उन स्वर्ग कामी तपस्वियों की विचित्र-विचित्र तपस्याओं का निरीक्षण करते हुये उस आश्रम को देखा गौतम ने उस पवित्र वन उन तपस्वियों को वेसी नाना प्रकार की तपस्याऐं करते हुये प्रथम बार देखा था। तपस्याओं के रहस्य के श्रेष्ठ ज्ञाता भृगु व्राहमण ने उसे सभी प्रकार की तपस्याऐं समझायी और प्रत्येक तपस्या का फल भी बताया पानी से उत्पन्न निरग्नि-भोजन मूल और फल यही धर्मशास्त्रों के अनुसार तपस्वियों का भोजन है लेकिन तपस्या के भिन्न-भिन्न नाना रूप है कुछ पक्षियों की भाँति दाने चुग कर गुजारा करते है दूसरे हिरणों की भाँति घास चुगते हैं और तीसरे साँपो की भाँति वायु पंक्षी होते है मानो वे दीमक की बाम्बी ही वन गये हैं। दूसरे बड़ी कठिनाई से पत्थरों से अपने शरीर के लिये पोषण प्राप्त करते हैं दूसरे अपने दाँतो से ही पीस कर अन्न खाते है और तीसरे दूसरों के लिये उबालते है और उनके लिये भाग्यवश जो कुछ थोड़ा बच रहे उसी पर गुजारा करते हैं।

कुछ दूसरे निरन्तर पानी में भीगी जटाओं से दो बार अग्नि देवता को अर्ध्य अर्पण करते है कुछ दूसरे मछलियों की तरह पानी में डूबे रहते हैं उनके बदनो को कछुऐ नोचते रहते है कुछ समय तक इस प्रकार की तपस्या के कष्ठ सहने से मर्त्य लोक वे अन्त में सुख लाभ करते हैं कहा गया है कि कष्ट सहन ही पूण्य का मूल है।

यह सब सुना तो गौतम ने उत्तर दिया 'किसी भी ऐसे आश्रम को देखने का यह मेरा पहला अवसर है मेरी समझ में तुम्हारा यह तपस्या क्रम नहीं आता है' अभी तो में इतना ही कह सकता हूँ आप कि यह निष्ठा स्वर्ग लाभ के लिये है किन्तु मेरी इच्छा भी यही है कि संसार में दुख का मूलकारण का ओर उसके दूर करने का उपाय खोज निकाला जाये क्या मैं आप से विदा ले सकता हूँ में साख्य दर्शन का ज्ञान प्राप्त करना चाहता हूँ और योग्य विधिका भी अभ्यास करना चाहता हूँ और देखना चाहता हूँ कि क्या यह दोनों पद्धतियों मेरी समस्या के हल में किस प्रकार सहायक हो सकते हैं।

जब में सोचता हूँ कि आप लोगों से जो ऐसी निष्ठा से अपने पथ पर अग्रसर हो रहे है। जिन्होंने मेरे प्रति इतने सोहद्रि का परिचय दिया है विदा लेनी होगी तो मुझे बड़ा दुख होता हैं। वैसे ही दुख जैसा मुझे अपने सम्बन्धियों को छोड़ते समय हुआ था जो इस वन से विदा ले रहा हूँ यह कोई आपकी कृति के प्रति वितृष्णा के कारण नहीं क्योंकि आप तो अपने पूर्वज श्रषियों के पथ पर चलने वाले महान श्रषि गण है।

मैं मुनि आलार-कालाम के पास जाना चाहता हूँ जो सुविज्ञ माना जाता है उसका यह संकल्प देखकर आश्रम पति भ्रगु ने कहा राजकुमार तुम्हारा संकल्प महान है तुमने तरूण होने के बावजूद स्वर्ग सुख के ओर मोक्ष लाभ के बारे में गम्भीरता से विचार कर लिया और तुम स्वर्ग सुख के स्थान पर मोक्ष लाभ करना चाहते हो तुम निसन्देह वीर हो। यदि तुम जेसा कहते हो यही तुम्हारी द्दढ निष्चय हो तो शीघ्र विन्ध्यप्रदेश को जाओ। वही पर आलार-कालाम रहता है जो निरपेक्ष सुख के रहस्य का ज्ञाता है।

उससे तुम मार्ग का ज्ञान प्राप्त करोगे लेकिन जहाँ तक मैं देख सकता हूँ तुम वहा भी न रूकोगे तुम उसके सिद्धान्त की भी जानकारी प्राप्त कर और आगे बढ जाओगे गौतम ने उसका धन्यवाद किया और श्रषि मण्डली के प्रति आदर प्रदार्शित कर वहाँ से विदा हुआ वे ऋषिगण भी उसके प्रति यथायोग्य सत्कार सम्मान की भावना प्रदर्षित कर पुन: तपस्या करने के निमित्व वन में जा दाखिल हुऐ।

नये प्रकाश के लिये नियमित ध्यान – साधना – सिद्धार्थ गौतम अपने आप को उस भोजन से तरो-ताजा करने गौतम अपने पूर्व अनुभवों पर विचार किया था तथा उसको यह स्पष्ट हो गया था कि अभी तक के अपनाये गये सभी मार्ग विफल रहे है। विफलता इतनी अधिक थी कि यह किसी को भी सम्पूर्ण रुप से निराश कर सकती है, खेद तो उसे भी था। किन्तु निराशा उसे छू तक न गई थी। उसे विश्वास था उसे रास्ता मिल कर रहेगा इतना अधिक कि जिस दिन उसने सुजाता की दी हुई खीर ग्रहण की उसने पाँच स्वप्न देखे । उसने अपने स्वप्नों की यही व्याख्या की कि उसे बोधि प्राप्त होकर रहेगी।

उसने अपना भविष्य देखने की भी कोशिश की जिस स्वर्ण पात्र में सुजाता की दासी उसके लिये खाीर लाई थी उसने उस स्वर्ण पात्र को नेरंजरा

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) जी.एल.एस. कॉलेज बानमोर, मुरैना (म.प्र.) भारत

नदी में फेंक दिया और कहा 'यदि मुझे बोधि प्राप्त होने वाली है तो यह पात्र धारा के ऊपर की ओर जाये अन्यथा नीचे की ओर' पात्र सचमुच धारा के विरुद्ध ऊपर की ओर जाने लगा और तब काल नाम के राजा के भवन के राजा के भवन के पास जाकर पानी में डूब गया। आशा और दृढ संकल्प से सन्नद्ध होकर उसने उरुवेला छोड़ दिया और राज-पथ पर आगे बढ गया था वह गया जा पहुचा वहां उसने एक पीपल का वृक्ष देखा नये प्रकाश की आशा में जिससे वह अपनी समस्या का हल निकाल सके, उसने उस वृक्ष के नीचे ध्यान लगा कर बैठने की ठानी। अन्य सभी दिशाओं का विचार कर के उसने पूर्व दिशा का चुनाव किया क्लेशों (चित्तमलो) के क्षय के निमित्त ऋषियों ने प्राय: पूर्व दिशा को ही चुना है।

गौतम उस पीपल के वृक्ष के नीचे सीधा पद्धमासन लगाकर बैठे थे बोधि प्राप्त करने का दृढ़ संकल्प करते हुये उसने निश्चय किया 'चाहे मेरी त्वचा नसे और हडिडया ही बाकी रह जाये चाहे मेरा सारा माँस और रक्त शरीर में सूख जाये किन्तु बिना बोधि प्राप्त किये मैं इस ध्यान का परित्याग नही करुंगा। नाग- पति के समान तेजस्वी काल नाम का नाग राज और उसकी स्वर्ण प्रभा नाम की पत्नि पीपल के वृक्ष के नीचे आसनस्थ गौतम के दर्शन से जाग्रत हो गये थे। इस विश्वास के साथ कि वह निश्चयात्मक रुप से बोधि लाभ करेगा उन्होने इस प्रकार स्तुति की 'है मुनि क्योकि तुम्हारे पाव के नीचे दबी पृथ्वी बार - बार गुजायमान होती है और क्योकि तुम सूर्य के समान तेजस्वी हो इसलिये तुम निश्चय से बुद्ध होगे।

क्योकि आकाश में विचरने वाले पक्षी भी तुम्हे नमस्कार कर रहे है। क्योकि आकाश में मन्द - मन्द मलयानिल वह रहा है। इसलिये भी है कमलाक्ष तुम निश्चय से बुद्ध होगे जब वह ध्यान करने के लिये दृढ आसन लगाकर बैठा तो बुरे - विचारों और बुरी - चेतनाओं के झुण्ड के झुण्डों ने जिन्हे पौराणिक भाषा में बार - बार पुत्र कहा गया है उस पर आक्रमण किया।

गौतम को डर लगा कि कही ये उस पर काबू न पा जाये और उसकी साधना न विफल कर दे वह जानता था कि इस भार-युद्ध में बहुत से ऋषि-ब्राह्मण पराजित हो चुके है इसलिये उसने अपना सारा-साहस बटोर कर भार से कहा मुझमें श्रद्धा हे मुझमें वीर्य है मुझ में प्रज्ञा है। चाहे वायु इस नदी के स्त्रोत को सुखाने में भी सफल हो जाय किन्तु तू मुझे मेरे निश्चय से नही डिगा सकता है पराजित होकर जीते रहने की अपेक्षा संग्राम में मर जाना मेरे लिये अधिक श्रेयकर है। उस कौऐ की भांति जो बहुत-सी चर्बी प्राप्त करने की आशा से किसी पत्थर पर जाकर ठोगे मारता है कि यहाँ से कुछ मधुर-मधुर मेरे हाथ में लगेगा मार ने भी गौतम पर आक्रमण किया था जब कौऐ को कही भी कुछ प्राप्त नहीं होता तो वह वहाँ से चल देता है ठीक उसी प्रकार कोऐ की तरह जब मार को भी कहीं कुछ गुंजाईश न दिखाई दी तो वह निराश होकर गौतम को छोड़ कर चल दिया।

ध्यान करने के समय के लिये गौतम ने इतना भोजन एकत्रित करके अपने पास रख लिया था कि चालीस दिन तक कमी न पड़े विघ्नकारी अकुशल विचारों का मूलोच्छेद कर सिद्धर्थ गौतम ने अब भोजन ग्रहण करके अपने आप को तरोताजा कर की अपनी तैयारी कर ली थी ज्ञान प्राप्ति के लिये गौतम को चार सप्ताह तक लगातार ध्यान मग्न रहना पड़ा था उसे अन्तिम अवस्था तक पहुँचने के लिये चार सीढ़ियाँ पार करनी पड़ी।

पहली अवस्था वितर्क और विचार प्रधान थी एकान्त-वास के कारण वह इसे बड़ी सरलता से प्राप्त कर सका। दूसरी अवस्था में इसमें एकाग्रता आ शामिल हुई तीसरी अवस्था में समचित्तता तथा जागरूकता का समावेश हो गया चौथी और अन्तिम अवस्था में और जागरूकता का जब उसका चित्त एकाग्र हो गया था जब वह पवित्र हो गया था जब वह निर्दोश बन गया था जब उसमें तनिक भी कलुश नहीं रह गया था जब वह सुकोमल हो गया था जब वह दक्ष हो गया जब उसमें दृढ़ता आ गई थी जब वह सर्वथा राग-रहित हो गया था तथा जब उसकी नजर एक मात्र उपने उद्धेष्य पर थी तब गौतम ने अपना सारा ध्यान उस एक समस्या के हल करने में लगाया जो हेरान कर रही थी। चौथे सप्ताह के अन्तिम दिन उसका पथ कुछ प्रकाशित हुआ उसे स्पष्ट दिखाई दिया कि उसके सामने दो समस्याये है। पहली समस्या यही थी कि संसार में दुख है और दूसरी समस्या यह थी कि किस प्रकार इस दुख का अन्त किया जाये और मानव जाति को सुखी बनाया जाये इस तरह चार सप्ताह तक लगातार चिन्तन करते के बाद अन्धकार विलीन हुआ प्रकाश प्रकट हुआ अविधा का नाषा हुआ ज्ञान अस्तित्व में आया उसे एक नया पथ दिखाई दिया था।

जिस समय गौतम ध्यान लगाकर बैठा उस समय उस पर सांख्य दर्शन का बड़ा प्रभाव था संसार में कष्ट और दुख है यह तो एक ऐसा यथार्थ सत्य है जिससे इनकार नहीं किया जा दुख को दूर कैसे किया जाये। सांख्य दर्शन के पास इस प्रश्न का उत्तार नहीं था। इसलिये उसने अपना सारा ध्यान इसी प्रश्न के हल करने पर लगाया था कि संसार के कष्ट और दुख को कैसे दूर किया जाये। स्वाभाविक तौर पर पहला प्रश्न जो उसने अपने आप से पूछा वह यही था कि वे कौन-से कारण है वे कौन से हेतु है जिनकी वजह से एक व्यक्ति कष्ट उठाता है और दूसरा व्यक्ति सुख भोगता है उसका दूसरा प्रश्न था दुख का नाश कैसे किया जाये इन दोनो प्रश्नो का उत्तार गौतम को सही-सही उत्तर मिल गया यही सम्यक सम्बोधि कहलाता है इसी कारण पीपल का वह वृक्ष भी जिसके नीचे बैठ कर सिद्धार्थ गौतम ज्ञान प्राप्त किया था बोधि वृक्ष कहलाता है।

सम्यक सम्बोधि प्राप्त करके बोधिसत्व गौतम सम्यक-सम्बुद्ध हो गये - ज्ञान प्राप्ति के पूर्व गौतम एक बोधिसत्व थे ज्ञान प्राप्ति के बाद ही वह बुद्ध बने वोधिसत्व कौन और क्या है जो प्राणी बुद्ध बनने के लिये प्रयत्नशील रहता है उसे बोधिसत्व कहते है एक वोधिसत्व बुद्ध कैसे बनता है बोधिसत्व को लगातार दस जन्मों तक बोधिसत्व रहना पड़ता है बुद्ध बनने के लिये एक बोधिसत्व करना होता है, एक जन्म में वह मुदिता प्राप्त करता है जैसे सुनार सोना चाँदी के मेल को दूर करता है उसी प्रकार एक बोधिसत्व अपने चित्त के मेल को दूर करके इस बात को स्पष्ट रूप से देखता है कि जो आदमी चाहे पहले प्रमादी रहा हो लेकिन यदि वह प्रमाद का त्याग कर देता है, तो वह बादल मुक्त चन्द्रमा की तरह इस लोक को प्रकाशित करता है जब उसे इस बात का बौध होता है तो उसके मन में मुदिता उत्पन्न होती है और उसके मन में सभी प्राणियों का कल्याण करने की उत्कट इच्छा उत्पन्न होती है।

अपने दूसरे जन्म में वह विमला भूमि को प्राप्त होता है। इस समय बोधिसत्व काम चेतना से सर्वधा मुक्त हुआ रहता है वह कारूणिक होता है सब के प्रति कारूणिक न वह किसी के अवगुणको वढावा देता है और न किसी के गुण को घटाता है।

अपने तीसरे जीवन में वह प्रभावकारी भूमि प्राप्त करता है। इस समय बोधिसत्व की प्रज्ञा दर्पण के समान स्वच्छ हो जाती है वह अनात्म और अनित्यता के सिद्धान्त को पूरी तरह से समझ लेता है और हृदयम कर लेता है उसकी एक मात्र आकांक्षा ऊँची से ऊँची प्रज्ञा प्राप्त करने की होती है और उसके लिये वह बड़े से बड़े त्याग करने के लिये तैयार रहता है।

अपने चौथे जीवन में वह अचिश्मती भूमि को प्राप्त करता है इस जन्म में बोधिसत्व अपना सारा ध्यान अर्ष्टागिक मार्ग पर केन्द्रित करता है चार

संम्यक व्यायामों पर केन्द्रित करता है चार प्रयत्नों पर केन्द्रित करता है तथा चार प्रकार के श्रद्धि-बल पर केन्द्रित करता है और पाँच प्रकार की शील पर केन्द्रित करता है।

पाँचवे जीवन में वह सुदुर्जया भूमि का प्राप्त करता है। वह सापेक्ष तथा निरपेक्ष के बीच के सम्बन्ध को अच्छी तरह हृदयगम कर लेता है।

अपने छठे जीवन में वह अभिमुखी भूमि प्राप्त करता है इस अवस्था में चीजो के विकास उनके कारण बारह निदानों को हृदयगम करने की बोधिसत्व को पूरी तैयारी हो चुकी है और यह अभिमुखी नामक विधा उसके मन में सभी अविधा ग्रस्त प्राणियों के लिये असीम करूणा का संचार कर देती है।

अपने सातवे जीवन में बोधिसत्व दूरगमा भूमि को प्राप्त करता है अब बोधिसत्व देश काल के बन्धनों से परे है वह अनन्त के साथ एक हो गया है किन्तु अभी भी वह सभी प्राणियों के प्रति करूणा का भाव रखने के कारण देह-धारी है वह दूसरो से इसी बात में पृथक है कि अब उसे भव-तृष्णा उसकी प्रकार स्पर्श करती जैसे पानी किसी कँवल को। वह तृष्णा मुक्त होता है वह दान शीलता होता है वह क्षमाशील होता हे वह कुशल होता है। वह वीर्यमान होता है वह शान्त होता है वह बुद्धिमान होता है तथा वह प्रज्ञावान होता है।

अपने इस जीवन में वह धर्म का जानकार होता है लेकिन लोगों के सामने वह उसे इस ढंग से रखता है कि उनकी समझ मैं आ जाये वह जानता है कि उसे कुशल व क्षमाशील होना चाहिये। दूसरे आदमी उसके साथ कुछ भी व्यवहार करे वह उद्धिग्नता रहित होकर उसे सह लेता है क्योंकि वह जानता है कि अज्ञान के कारण ही वह उसके मंशा को ठीक-ठीक नहीं समझ पा रहे है। इसके साथ-साथ वह दूसरों का भला करने के अपने प्रयास में तनिक भी शिथिलता नहीं आने देता और न वह अपने चित्त को प्रज्ञा से इधर उधर भटकने देता है। इसलिये उस पर कितनी भी विपत्तिया आये वे उसे सुपथ से कभी नहीं हटा सकती है।

अपने आठवे जीवन में वह अचल हो जाता है अंचल अवस्था में बोधिसत्व कोई प्रयास नहीं करता। वह कृत्य कृत्य हो जाता है उससे जो भी कुशल कर्म होते है वे सब अनायस होते है जो कुछ भी वह करता हे उसमें सफल होता है। अपने नौवे जीवन में वह साधुमती भूमि को प्राप्त हो जाता है जिसने तमाम धर्मो को या पद्धतियों जीत लिया है अथवा उनके भीतर प्रवेश पा लिया है सब दिशाओं को जीत लिया है समय की सीमाओं को लांघ गया है वही साधुमती अवस्था प्राप्त कहलाता है।

अपने दसवे जीवन में बोधिसत्व धर्म-मेधा वन जाता है उसे बुद्ध की दिव्य-दृष्टि प्राप्त हो जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भगवान बुद्ध और उनका धर्म डॉ. भीमराव अम्बेड़कर
2. बुद्ध विश्वविजय : भिक्षु निर्गुणानंद
3. वोधि र्दीन सूत्र : भिक्षु निगुर्णानंद
4. बुद्ध चरित्र : अश्वधोषकृत
5. भगवान बुद्ध : भिक्षु ज्ञान दीप

****

NSS Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

जलती हुई अंगारों में चलने का पर्व : मण्डा

रामजय नाईक *

शोध सारांश – शिव की महीमा अपरंपार है। शिव की भक्ति में षक्ति है। शिव आज हमारे सबके दिलों में रोम – रोम में बसे हुए हैं। इन्हीं की उपासना, आराधना एवं श्रध्दा को लेकर हम जेष्ठ महिने में मण्डा पर्व बड़ी ही उमंग के साथ मनाते हैं। यह महीना में गरमी की चिलचिल्लाती धूप और गरमी की तेज हवा जो मनुष्य के मन को उदास कर देती है। प्रकृति के चारों ओर सन्नाटा – ही – सन्नाटा दिखाई पड़ती है। सभी पशु – पक्षियाँ पानी और छाया की तालाश में कोशों दूर चले जाते हैं, बाकि जो मनुष्य अपने घरों में रहते हैं। लेकिन उनमें से कुछ ऐसे लोग हैं जो शिव के भक्त बनकर दिनभर गरमाहट जमीन में वे नंगे पाँव घूमते और नृत्य करते हैं। बल्कि वे अपने नंगे पाँव से जलती हुई आग की अंगारों में चलते हैं। इस आस्था में स्त्री – पुरूष, छोटे बच्चे सभी की भूमिका होती है। स्त्रियाँ जिसे सोकताइन कहते हैं, वे इस आस्था में भाग लेती हैं और नंगे पाँव अंगारों पर चलती है। यह पर्व में विभिन्न समुदाय, जाति – धर्म के लोग बढ़ – चढ़कर के भाग लेती हैं। हाँ यह बात सही है कि इस पर्व में कोई पशु या पक्षी की बली नहीं दी जाती है। इस पर्व की पूजा को पूर्ण रूप बनाने के लिए वाद्य यंत्र, जो शुरू से लेकर अन्त तक पूरे गाँव – घर में भक्तिमय कर देता है। संजय कृष्ण के मतानुसार – 'आग पर चलने का पर्व दुनिया की कई आदिम संस्कृतियों में है। आस्था का एक ऐसा ही रंग, अंगारों के संग, पूरे छोटानागपुर में देखने को मिलता है, मंडा पर्व के रूप में । चैत्र मास के शुक्ल पक्ष से प्रारंभ होकर यह पर्व ज्येष्ठ मास तक मनाया जाता है। यह त्योहार आग पर चलकर उपासना व साधना की सत्यता प्रमाणित करने के लिए आदिवासियों और सदानों द्वारा सम्मिलित रूप से मनाया जाता है। अलग – अलग गाँवों में यह त्योहार, अलग – अलग दिन मनाया जाता है। शिव की इस उपासना में आदिवासी – सदान का भेद मिट जाता है।
मुख्य शब्द – मंडा पर्व, भगतिया, 'फूलखुंदी', सोखताइन, धुँवासी आदि

शोध प्रविध :– इस शोध पत्र विषय '**जलती हुई अंगारों में चलने का पर्व : मण्डा**' में द्वितीय एवं प्राथमिक तथ्यों के आधार पर शोध पत्र का निमार्ण किया गया है। इसके साथ–साथ पत्र–पत्रिकाओं के तथ्यों को सन्दर्भित करने का प्रयास किया गया है।

उद्देश्य :–

- आदिवासियों में मंडा पर्व का अध्ययन करना।
- मंडा पर्व के परम्पराओं का अध्ययन करना।
- मंडा प्रथा में की जाने वाली तर्पण विधि का अध्ययन करना।
- मंडा पर्व में मानवीय मूल्यों का अध्ययन करना।

मजेदार बात यह है कि आदिवासियों का कोई भी त्योहार बलि और इलि (चावल से बनी शराब) के बिना पूरा नहीं होता, परंतु मंडा पर्व ही इनका ऐसा पर्व है जिसमें किसी प्रकार की बलि नहीं चढ़ाई जाती, इलि का तर्पण नहीं किया जाता, बल्कि पूर्णरूपेण सात्विक रूप से मनाया जाता है। इस त्योहार में मुख्य उपासक जिन्हें भगता या भगतिया कहा जाता है, के नेतृत्व में अन्य सह उपासक धधकती आग पर नंगे पैर चलते हैं, वह भी गरमी के दिनों में। जिस रात को यह त्योहार मनाते हैं, उस रात को 'जागरण' और आग पर चलने की क्रिया को 'फूलखुंदी' कहते हैं।

समस्या :– यह पर्व को विशेष रूप देने के लिए बड़े स्थान चुने जाते हैं। साथ ही एक देवी मण्डप जिसे 'पतरखुटी' के नाम से भी जाना जाता है बनाया जाता है, जहाँ पर भगवानों का वास होती है। उस जगह में एक छोटा सा गढढा खोदा जाता है, जहाँ हमेशा पानी भरा रहता है। नाला के जैसा ही 10 – 12 फीट की लम्बाई और 4 – 5 फीट का चौड़ाई एक गढ्ढा खोदा जाता है, जहाँ पर भक्तों को चलने के लिए आग जलाया जाता है। डॉ. गिरिधारी राम गौझू के मतानुसार – 'मण्डा पर्व की शुरूआत चैत से हो जाती है जो बैसाख और जेठ तक चलता है। इसमें मुख्य रूप से महादेव की आराधना की जाती है। यह पर्व लगभग झारखण्ड के अनेक इलाके में अलग – अलग अन्तराल पर और प्राय: एक जैसा मनाया जाता है।'

महीने की तय तिथि से जैसे अक्षय तृतिया को यह पूजा करने का नियम है। उसके शुरू में ही पूरे गांव में घूम – घूम कर 'डगर' बजाया जाता है अर्थात ढोल नगाड़ा बजाकर लोगों को सूचित किया जाता है कि गांव मे मण्डा पूजा की तैयारी शुरू हो गयी है। उसी दिन गांव के पूजास्थल जहां महादेव मण्डा हो वहां शिवलिंग के उपर मिट्टी का कलश नीचे छोटा छेद कर के टांग दिया जाता है, जिससे बून्द – बून्द कर जल पूरे महीने शिवलिंग पर गिरता रहता है। अरगोड़ा के मण्डा पूजा के अनुसार बैसाख पूर्णिमा के आठ दिन पहले पूजा की शुरूआत होती है। जिसमें सभी अपनी इच्छानुसार आठ दिन, सात दिन, पांच दिन या तीन दिनों के लिए भोक्ता बनकर पूजा अर्चना करते हैं। जो मुख्य भोक्ता होता है उसे 'पट्‌भक्ता' कहते हैं। वह एक ही होता है जो झूलन के दिन प्रात काल से जब तक अंतिम भोक्ता झूलकर पूजा समाप्त नहीं कर लेता है तब तक लकड़ी के पटरे में ठोके गये कांटी के बिस्तर के उपर सोता है। जो अन्य भोक्ता होते हैं उनके साथ एक सोखताइन होती है जो मां, पत्नी, बहन या बेटी होती है। जो भोक्ता की पूजा समाप्ति तक सेवा करती रहती है। पट्‌भक्ता के साथ भी मुख्य सोखताइन होती है। (सोखताइन – जो भोक्ता के कश्ट को सोखती रहती है)

समाधान – क्या है विधि – विधान – कोई भी कार्य हो उसे करने के लिए हमें सबसे पहले सावधानी अपनानी पड़ती है। साथ ही उस कार्य को लेकर पहले से पूरी तैयारियाँ की जाती हैं। इसमें कृषि संबंधी कार्य हो, मेला या कोई अन्य धार्मिक पूजा – पाठ हो। इसी प्रकार मण्डा पर्व को भी शुरू करने से पहले उसके विधि – विधान, उपयोग होने वाले वस्तु, अन्य प्रकार के

*सहायक प्राध्यापक (नागपुरी) जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग, कार्तिक उराँव महाविद्यालय, गुमला (झारखण्ड) भारत

जरूरत सामग्रीयों की गहन व्यवस्था करनी पड़ती है। सबसे पहले गाँव के प्रत्येक मंदिर में पानी चढ़ाते हैं और उनको न्योता देते हैं। साथ ही गाँव को जगाने का प्रयास किया जाता है, जिसे 'डागर देना' कहते हैं। डागर की आवाज सुनते ही कुछ भक्त शिव की उपासना में लिन होकर मंदिर की ओर खिंची चली आती हैं। 8 -10 वर्ष के बालक से लेकर बूढ़े तक भगता होते हैं। यही नहीं गैर आदिवासी भी बन सकता है। ऐसी मान्यता है कि जिस पर शिव के गण की अंश मात्र छाया आ जाय वह भगता के लिए उपयुक्त होता है। ऐसा होने पर वह व्यक्ति अपना सिर धुनने लगत है और धरती पर लेटता हुआ मंदिर के निकट पहुँचता है। मंदिर में पहुँचने के बाद ही वह व्यक्ति शांत होता है। गाँव में परंपरागत रूप से भी भगता और सहायक भगता होते हैं। भगता मुख्य रूप से कहीं पाँच, कहीं सात और कहीं नौ दिन के लिए पदस्थापित होते हैं। पदस्थापन से पूर्व इनका मुंडन कराया जाता है। तब विधिवत पूजा प्रारंभ होती है। पूजा के प्रारंभ दिन से अंतिम दिन तक ये उपवास में रहते हैं तथा ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। प्रतिदिन प्रातः काल जलाषय में जाकर स्नान करते हैं। और तब पूजा पाठ में जुट जाते हैं। मुख्य भगता पूजा पाठ करने के बाद एक - एक गाँव वाले के घर जाकर पूजा करते हैं। उस समय अन्य भगता साड़ी पहनकर सज सँवरकर डगर भरते हैं। 'उमेडण्डा गाँव के अनुसार कहा जाता है कि फूलखुंदी के एक दिन पहले भगता दिन भर उपवास रख कर रात्री में बिना शोर- गुल्ल के साथ में भोजन करते है। खाने के समय किसी भी प्रकार की अवाज शोर सुनाई देने पर खाना भोजन को छोड दिया जाता है। अगर जबरण में खाना, खाने पर दोस समझा जाता है। यह नियम फुलखुँदी के दिन में दिनभर उपवास रखते है। शाम में भक्तों द्वारा सभी का मिलन होता है जिस कार्यक्रम को 'लोटन सेवा' के नाम से जाना जाता है। इसमें पूरे भगतिया और सोकताइन दल - बल के साथ में तालाब में 5 बार स्नान करते हैं। उसके बाद धुँवासी होती है। धुँवासी में सभी केवल भगतिया लडके धूप - धुवन के जलते हुए धुएँ में जाते हैं। बाद में सभी मिलाकर 7 बार वे सभी तलाब में स्नान करने के बाद जलती हुई आग के अंगारों पर चलती है। शिव की आराधना में वे जलती नहीं हैं। उसी रात में भक्तों के जागरन के लिए कोई नागपुरी कार्यक्रम रखा जाता है जिसका बड़े आनन्द के साथ मजे लेते हैं।

इस प्रकार फुलखुँदी के दुसरे दिन में सभी भक्तों द्वारा मेला का आयोजन किया जाता है। मेले में सभी भगतिया (लड़के) साड़ी, धोती, पैर में घुघुर पहनकर नृत्य किया करते हैं। नृत्य को सुन्दर रूप देने के लिए वाद्य यंत्र जिसमें ढाँक, नगाड़ा, शहनाई जिसकी सुन्दरमय आवाज को देने के लिए नाईक (घाँसी) जाति के भाइयों द्वारा पूजा को शुरू से लेकर अन्त तक भक्तिमय बनाते हैं।

वे अपने सहायता के लिए गीत भी गाते हैं। गीत में वे भगवान से गुनगान करते हैं, कहते हैं -

बोले शिवा मली महे
काँषी विश्वनाथ
ऐसा जगरन्नाथ
जय गयाधर
आगे बेनी माधव
बोले पार्वती -महादेव की जय।

निष्कर्षत: हे ईश्वर के ईश्वर, हमें इस चिलचिलाती धूप में रहने के लिए रक्षा प्रदान करना। गाँव - घर के लोगों को खुशी प्रदान करना। वर्षा अधिक करना जिसे पी - पीकर पूरे प्रकृति के जन - मानस अपने प्यास को बुझा सके। इतना ही नहीं वे हर कार्य को अच्छी तरीके से करता जाय और अपने जीवन को सुखमय बनाने का हरदम प्रयास करें। दु:ख - मुसिबतों में सहारा बन कर रहें। आने वाले समय के लिए हमें शक्ति प्रदान करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **संजय कृष्ण** (झारखण्ड के पर्व-त्योहार,मेले और पर्यटन स्थल, पृष्ठ 195 से)
2. **डॉ. गिरिधारी राम गौंझू** (झारखण्ड के पारंपरिक कलाएँ से) उद्धृत हैं।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

विकलांग बच्चों में शिक्षण तकनीकी का विकास

सरदार कुमार चौधरी * डॉ. हीरालाल चौधरी **

शोध सारांश – विकलांग बच्चों की शिक्षा का मूल आधार व्याख्यान नहीं, वार्तालाप था। जिससे विकलांग बच्चों की शैक्षणिक स्थिति का मूल शिक्षण संस्थान था। जहाँ विकलांग बच्चों की प्रारम्भिक स्थिति का वर्णन मानवीय जीवन का आधार ही रहा है। जहाँ पर मानवीय आधार पर ही जीवन निर्भर होता है। विश्व की महान शिक्षक भी इन विकलांग बच्चों के जीवन और शिक्षा पर अधिक ध्यान दिया है। जहाँ मानव की अनेक संस्कृतियों ने विकलांग बच्चों को अनेकों विचारधाराओं को जन्म दिया है। शिक्षा की विचारधारा का निर्मित करने के लिए अनेक विचारकों ने भी जीवन और शिक्षा के दृष्टिकोण को विकलांग बच्चों के सामने आरेख वेन पद्धति और वार्तालाप पूर्ण शिक्षा देने के पक्ष में रहें हैं। जहाँ शिक्षा और समाज की मानवीय अवधारणा का असर इन विकलांग बच्चों पर पड़ता है। दृष्टिहीन बच्चों को शिक्षक की सहायता अधिक पड़ती है। जहाँ ब्रेल लिपि के अध्ययन हेतु उसके अनुसार मेज और कुर्सी होनी चाहिए। ब्रेल यह एक बड़ी पुस्तक होती है। जहाँ पर अधिक जगह की आवश्यकता होती है। क्योंकि ताकि कई बच्चें आसानी से आना-जाना हो सके। ऐसी व्यवस्था का परिणाम प्रत्येक विद्यार्थीयों में होना चाहिए। जहाँ नेत्रहीन छात्रों को स्वतंत्रतापूर्वक घूमने फिरने की जगह होनी चाहिए। जिस हेतु मानवीय जीवन का आधार ही उनकी परवरिस है। चहें जो भी हो। जिसके वातावरण के अनुकूल होने की दशा में नेत्रहीन बच्चों को सावधानी पूर्वक व्यवस्था की जा सके।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र विकलांग बच्चों में शिक्षण तकनीकि का विकास, में प्राथमिक और द्वितीयक शोध सामाग्री के अनुरूप अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि के परिसीमन के कारण राजनीतिशास्त्र में इन मूल्यों को प्राप्त करने के लिए मानवीय आधार विकलांग बच्चों की समझ में आने वाले प्रश्नों के उत्तार के सम्बन्ध में माना जाता है। महान शिक्षाशास्त्री गिजुभाई बधेका ने विकलांग बच्चों की प्राथमिक शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए विशेष योगदान दिये हैं। उनकी प्रविधि को भी सामिल किया गया है।

उद्देश्य :

- विकलांग बच्चों में होने वाले भेदभाव का अध्ययन करना।
- विकलांग बच्चों में प्रशासनिक मदद का अध्ययन करना।
- विकलांग बच्चों को शिक्षा की दिशा में आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करने वाली संस्थाओं का अध्ययन करना।
- विकलांग बच्चों के माता-पिता को विकलांग बच्चें को शिक्षा की सर्वोच्च शिखर तक पढ़ाने की मानसिक स्थिति का अध्ययन करना।

समस्या :

- मानव में कुष्ट रोग जैसी बिमारी ईश्वर का अभिशाप है।
- कुष्ट रोग जन्य विकलांग व्यक्तियों में होते है जिसकी समस्या की यह फैलता जाता है। यह लगातार तीन पीढ़ियों तक होता है।
- कुष्ट रोग से विकलांगता की समस्या हैं। जिसमें व्यक्ति खान-पान में सही तरीका न अपनाने में होता हैं। जिस प्रकार से दूध के साथ माँस का सेवन करने पर कुष्ट रोग होने की सम्भावना होती है।
- इन विमारी से लड़ने वाले व्यक्तियों को दूसरे लोग भी छूत मानते हैं। जो शैक्षिक रूप से यह कमजोर हो जाता है।
- विकलांग व्यक्तियों को शिक्षा से साधन और गरीब वंचित कर देती है। आज मानव विकास की ओर अग्रसर होने के लिए शिक्षा की आवश्यकता है। भारत की सामाजिक और राजनीतिक दशाओं और परिस्थितियों के आधार पर विकलांग बच्चों की उस समय की तत्काल विसंगतियों को खत्म करने का प्रयास एक कुशल शिक्षाविद् ही कर सकता है। जिससे समाज को अपने कर्तव्य एवं अधिकारों के प्रति जागरूकता का प्राप्त हो सके। इस दिशा में विकलांग बच्चों को ज्ञान से परिचित कराने के लिए समाज और राष्ट्र के राजनेताओं को राजनैतिक रूप अपाहिज बच्चों की मदद करनी चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को समाज के विकास में भागीदार के जीवन जीने का अधिकार है। 'विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा मनुष्य के अन्दर छिपे हुए गुणों को पूर्णता प्रदान करने का साधन है। यह ऐसी होनी चाहिए जिससे मनुष्य के चरित्र का निर्माण हो, उसकी मानसिक शक्ति सुदृढ़ हो, बुद्धि कुशाग्र हो और जिससे वह अपने पैरों पर खड़ा हो सके।'[1] स्वामी विवेकानन्द का मानना है कि मानव को शिक्षा के बल पर उसके कष्ट को कम किया जा सकता है। यदि एक विकलांग व्यक्ति प्रशासनिक अधिकारी बनता है तो वहाँ उसके साथ-साथ गाँव परिवार से भेदभाव की जड़ ही खत्म हो जाती है। प्रत्येक काल में शिक्षा को महत्व दिया गया है। जीवन और जगत् की कठिनाईयों का परिणाम व्यक्ति के जीवन की कड़ी परीक्षा मानी जाती है। ऐसी विसंगतियों का मूल्य मानव के लिए हित का कारण बन गई। इसी से समाज में विसंगतियों को खत्म किया जा सकता है। इसीलिए रामकृष्ण मिशन के सहयोग से 1957 में एक विकलांग को पढ़ने में अधिक मददगार साबित हो सका है। इस शिक्षण संस्थान द्वारा नेत्रहीन बच्चों को व्यवसायिक प्रशिक्षण और आर्थिक मदद दिया जाता रहा है। यह बच्चे यहाँ से पढ़ने के बाद समाज की सांस्कृतिक, आर्थिक आदि दायित्वों को पूर्ण रूप से निभा सकते हैं। इस विद्यालय का परिणाम यह रहा है कि नेत्रहीन बच्चे कई विद्यालयों और महाविद्यालयों में पढ़ा रहे हैं। इस विकास की दिशा में आम व्यक्ति को भी अपनी भागीदारी निभानी होगी। ऐसी सोच मानव समाज को आगे बढ़ने में मदद करता है।

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह (स्वशासी एवं उत्कृष्ठता केन्द्र) महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (भूगोल) यूनिक कॉलेज ऑफ टेक्नोलॉजी, अमरपाटन, जिला- सतना (म.प्र.) भारत

समाधान – 'धारा 52 में मानसिक रोगी के लिए संरक्षक और संपत्ति के लिए प्रबंधक नियुक्त करने का प्रावधान है। अगर व्यक्ति इरस कदर बीमार है कि वह न तो अपनी देखरेख कर सकता है और न ही अपनी संपत्ति की तो, ऐसी स्थित में धारा-53 के तहत उसकी देखरेख के लिए संरक्षक की नियुक्ति की जाती है।'[2] यह अधिकार इसलिए प्रदान किये गये हैं कि कोई भी व्यक्ति इन विकलांग व्यक्तियों की जमीन या जायजाद के हक को छीन न सके। यह प्रावधान बिना अभ्यार्थी के सहमति के कोई भी व्यक्ति नहीं ले सकता और न ही बेच सकता है। ऐसे भी प्रावधान है कि यदि विकलांग बच्चे को लगता है कि न्यायधीश द्धारा मेरे पक्ष में गलत फैसला किया गया है तो 60 के अन्दर वह पुनः अपील कर सकता है। मानव समाज के संरक्षक की अभिव्यक्ति को ध्यान रखते हुए मानवीय जीवन का आधार विकलांग व्यक्ति का अधिकार है। जिस प्रकार से विकलांग बच्चों के जीवन में अनेक विचारधाराओं का परिणाम यह हुआ की उनके जीवन एवं विचारों के फलस्वरूप समस्या का निदान किया जाना चाहिए। इससे स्थायी और विकासशील संरचना के निर्माण में विकलांग बच्चों को सहायता प्रदान होगी। स्कूल संचालक के रूप में विकलांग बच्चों की पूर्ण जबावदारी होती है। इस बच्चे के अधिकारों को प्रदान किया जाय। उसे प्रोत्साहित करके आगे बढ़ने का अवसर प्रदान किया जाय। विकलांग बच्चों की शिक्षा की दिशा में अग्रसर करने की प्रवृत्ति में गिजुभाई बधेका कहते हैं कि आज के बच्चों को जिस प्रकार का गीत सुनाया जायेगा वे कल ये बालक उसी प्रकार की रचनायें ही रचेगें। वर्तमान के नन्हें बालकों को इस समय का इतिहास बताओं कल का इतिहास ये बालक ही गढेगें, नन्हें बालकों को त्याग करना सिखाओं और भविष्य में यह त्याग के बल पर समाज के लिए समर्पण कर दिखायेगें। इसी प्रकार से विकलांग बच्चों को नवाचार की शिक्षा देने की आवश्यकता है। जिससे समाज और राष्ट्र की धुरी का निर्माण होगा। समाज के सामने उमड़ाने वाले संकट को खत्म करने के लिए इन विकलांग बच्चों को शिक्षा की ओर उन्मुख करना होगा। ये शिक्षित होगें तभी समाज की पूर्णता की बात की जा सकती है।

'एक विकलांग व्यक्ति रोजगार करके यह साबित कर सकता है कि विकलांगों के लिए भी जन-सामान्य की तरह ही सार्थक काम करना संभव है। वह दूसरे विकलांगों के लिए मो उदाहरण बन ही सकता है, सामान्य लोगों के लिए भी उदाहरण बन सकता है तथा उन लोगों को काम करने के लिए प्रेरित कर सकता है जो स्वस्थ शरीर के बावजूद बैठकर खाने की प्रवृत्ति रखते हैं।'[3] जबकि अधिकत्तार स्थितियों में घर परिवार द्धारा इन विकलांग बच्चों को बोझ समझा जाता है। आम आदमी के निगाहों में भी बोझ लगता है। जिस हेतु विकलांग बच्चों को शिक्षा की धुरी में अग्रसर होकर कार्य करना चाहिए। जिससे सामाजिक स्तर को उठाया जा सकता है। उनके बीच होने वाली उदासीनता को खत्म किया जा सकता है।

शिक्षा एक आवश्यक प्रक्रिया है जो व्यक्ति को जन्मजात प्रवृत्तियों के स्वाभाविक गुणों से परिचित कराती है। उसे सामंजस्यपूर्ण विकास में योगदान प्रदान करती है। विकलांग बच्चों की व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करती है और उसे सामाजिक वातावरण के सामंजस्य में ले जाती है। उसे जीवन जीने की नागरिकता के अधिकारों को शिक्षा प्रदान करती है। इनके कर्तव्यों और दायित्वों के लिए शिक्षा विकलांग बच्चों को तैयार करती है। जिससे उनके व्यवहार सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक सभी दृष्टिकोणों में परिवर्तित करती है। विकलांग बच्चों के व्यवहार और विचारों के दृष्टिकोण में समाज देश और विश्व के लिए एक हितकर परिणाम साबित होता है।[4]

इस प्रकार विकलांग बच्चों को शिक्षा के द्धारा भेदभाव से बचाया जा सकता है। मानव जीवन के सर्वांगीण विकास की आधाशिला शिक्षा और शिक्षा प्रणाली के व्यावहारिक पहलू है। जहाँ मानव की अनेक कठिनाईयों को देखने के लिए निर्धारित करती है। जहाँ शिक्षा व्यवस्था का परिणाम पुराने प्रतिमानों को हटाकर नये आयामों के द्धारा दी जाने वाली व्यवसायिक शिक्षा व्यवस्था विकलांग बच्चों के लिए अधिक महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।[5] इससे यह सबित होता है कि निश्चित तौर पर शिक्षा को जीवन के नये प्रतिमानों को आधार प्रदान करती है। इन्हीं आवश्यकताओं के अनुकूल सामंजस्यता का निरूपण होता है। ऐसी विकसंगतियों और कुरूतियों से मुक्ति के लिए विकलांग बच्चों की सामाजिक स्थिति का एक नया आयाम स्थापित करता है।[6]

निष्कर्षत: केन्द्र सरकार द्धारा देश में विकलांग बच्चों के विकास के लिए कोकेशनल रिहैबिलिटेशन केन्द्र भी खोले गये। इन्हीं केन्द्रों में विकलांग बच्चों को व्यवसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। इन्हीं केन्द्रों के द्धारा रोजगार के कई आयाम भी जुडे होते हैं। जिनके लिए छात्रवृत्ति का प्रावधान भी किया गया है। ये केन्द्रों रोजगार देने के लिए उद्योगों और संस्थाओ से विकलांग व्यक्तियों को उनके कार्य की क्षमता के अनुसार रोजगार उपलब्ध करवाते हैं। उन्हें भी सामान्य कार्मचारियों की तरह वेतन मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विनोद कुमार मिश्रा, ***विकलांगता समस्याएँ व समाधान,*** जगतराम एण्ड संस, दरियागंज नयी दिल्ली, 2010, पृष्ठ 68
2. विनोद कुमार मिश्रा, ***विकलांगों के अधिकार,*** कल्याणी शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ 114-115
3. विनोद कुमार मिश्रा, ***विकलांग स्वस्थ व आत्मनिर्भर कैसे बनें,*** कल्याणी शिक्षा परिषद्, 2011, पृष्ठ 89
4. **शैलेन्द्र कुमार मिश्र,** *विकलांगता अभिशप्त या अग्रणी,* भारत बुक सेन्टर, लखनऊ, 2012, पृष्ठ 8
5. **शैलेन्द्र कुमार मिश्र,** *विकलांगता अभिशप्त या अग्रणी,* भारत बुक सेन्टर, लखनऊ, 2012 पृष्ठ 25
6. डॉ. नरेश कुमार, विकलांग बालकों की शिक्षा, पंकज पुस्तक मन्दिर, दिल्ली, 2010, पृष्ठ 30

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

भारतीय स्टेट बैंक का कृषि विकास में योगदान : उज्जैन जिले के विशेष सन्दर्भ में

आशाराम चौहान * डॉ. मनोहर जैन **

शोध सारांश – भारतीय रिजर्व बैंक की कुछ शर्तें जो अधिनियम, 1934 की धारा 40 के आधार पर बैकों को निर्धारित नगदी की निधि में ही निवेश करने का प्रावधान है। जिसमें कृषि कार्यो हेतु भी बैंक को कर्ज और उसके साथ उद्योगों को भी प्रोत्साहन करने का उत्तरदायित्व माना जाता है। जिसकी निवेश की निधि में 3 सें 14 प्रतिशत तक के बराबर किया जा सकता है। इस समय 9 प्रतिशत है। यहाँ तक की बैंक अगर 15 से 3 प्रतिशत तक का निवेश करता है। उस पर कोई ब्याज नहीं प्राप्त होती है। इससे कृषि हेतु बेहतर सुधार की सम्भावनाऐं दिखाई देती हैं। जब कृषक को सस्ते ब्याज दरों में पैसे प्राप्त होते है। वहाँ से मूल्य साख भी प्राप्त होती है। जिसका मूल कारण यह माना जाता है कि किसान उन्नत किस्म की फसले की बोवाई कर सकता है। जिसरो उसकी अच्छे उत्पादन की शाख प्राप्त होती है। उससे किसान को आमदनी और बैंक के कर्ज वापस करने में कोई कठिनाई नहीं होती है। कृषि का सबसे बड़ा हिस्सा पूँजी पर निर्भर करता है। जिसका फायदा बड़े किसानों को होता हैं। 'विभिन्न अभिकरणों के माध्यम से जो कृषि साख वर्तमान समय में प्रदान की जाती है, वह अपर्याप्त है, उचित प्रकार की नहीं है तथा आवश्यकता की कसौटी को ध्यान में रखते हुए प्राय: सभी व्यक्तियों तक पहुँचाने में असफल रहती है।'[1] छोटे किसानों को न समय पर पूँजी मिल पाती है। न ही उन्हें समय पर बैंक कर्ज देती है। इस स्थिति में उन्हें आर्थिक मंद के दौर से गुजरना पड़ता है। जिनकों कृषि पर कोई आमदनी नहीं होने से उन पर होने वाली गरीबी का बोझ बढ़ जाता है। बैंकों के द्वारा प्रदान करने वाले कर्ज में बीच में खाने वाले दलालों का भी जमबाड़ा होने से छोटे किसान को पर्याप्त धन नहीं मिल पाता है। ऐसी स्थिति में पैसों के कारण उनकी कृषि अच्छी नहीं होने की दशा में बैंक का कर्ज वापस नहीं कर पाते हैं। जिस कारण बैकों को भी बहुत बड़ी हानि का सामना करना पड़ता है। उसकी सबसे बड़ी बजह बीच में खाने वाले दलालों के खत्म होने से कर्ज किसान आसानी से भर सकता है। जी.डी. एच. कौल –'श्रम–संघ से आशय श्रमिकों द्वारा एक अथवा अनेक व्यवसायों में बनाए गये संघ से हैं जो विशेषत: सदस्य–श्रमिकों के प्रतिदिन के कार्य से सम्बन्धित आर्थिक–हितों की सुरक्षा और उनमें वृद्धि के उद्देश्य से बनाये जाते हैं।'[2]

शोध प्रविधि – शोध पत्र भारतीय स्टैंट बैंक का कृषि विकास में योगदान (उज्जैन जिले के विशेष सन्दर्भ में) एक प्रकार का द्वितीयक सामग्री संकलन के द्वारा इस शोध पत्र का निर्माण किया गया हैं। इसमें विश्लेषणात्मक पद्धति के आधार पर अध्ययन की पद्धति को अपनाया गया है।[3] शोध प्रविधि में विद्वानों के मार्गदर्शन, शोध पत्रिकाओं, बैंकों के द्वारा मार्ग दर्शन प्राप्त किया है। जिसके आधार की पुष्टि करने के लिए किसानों का भी मार्गदर्शन लिया गया है। जिससे शोध के द्वारा बैंको द्वारा प्राप्त होने वाले ऋण की जानकारी प्राप्त हो सके। कि यह वास्तविक है। या कागजी ही कार्यवाहीं है। यहाँ तक कि किस प्रकार के कृषकों को ब्याज पर ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है। इस प्रकार के अनेक पहलुओं की जानकारी एकत्रित करने के लिए सन्दर्भ ग्रन्थों के लिए पुस्तकालयों और इन्टरनेट का भी उपयोग किया गया है।

शोध पत्र का उद्देश्य – भारतीय स्टैट बैंक कृषि विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। जिसके द्वारा कृषि विकास को आर्थिक मदद प्रदान करने हेतु स्टैट बैंक ऋण प्रदान करता हैं।

इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य निम्न प्रकार है।

1. बैंकों द्वारा प्रदान ऋण के द्वारा कृषि विस्तार को बढ़ावा देना।
2. बैंकों द्वारा कृषि हेतु बोरवेल सिचाई हेतु अनुदान, कूप निर्माण अनुदान प्रदान का विस्तारित किया जाता है।
3. कृषि को धन्धा बनाने हेतु बैंकों द्वारा व्यक्तियों को अनुदान दिया जाता है।
4. ऋण लेकर उन्नत किस्म के बीजों के उपचार या खरीदी की सहायता से कृषि विकास का विस्तार करना।
5. जोताई हेतु टेक्ट्र के लिए ऋण प्रदान करना। जिससे खेतों की जुताई रोपाई और गहाई आसानी से किया जा सके। जिससे खेतों की उर्वरा शक्ति बनी रहे।
6. बैंकों द्वारा पौधों के रोपण हेतु भी अनुदान का प्रावधान है।
7. उद्योगों की स्थापना हेतु मशीनीकरण को प्रोत्सहन देना।
8. कृषकों द्वारा धान से चावल निकालने के लिए चक्की की स्थापना हेतु प्रोत्साहन।
9. बैकों द्वारा ऋण प्रदान कर उद्योग को स्थापित कर उनसे अच्छी खासी आर्थिक साख प्रदान करना।

समस्या – कृषि विकास हेतु भारतीय स्टेट बैंक अग्रणी हैं। किन्तु ऋण की ब्याज दर अधिक होने के कारण छोटे किसानों को ऋण नहीं मिल पाता है। उसके बीच आने वाले दलालों का जमाबड़ा होने के कारण भी ऐसी समस्या उत्पन्न हो रही है। यहाँ तक उज्जैन में कृषि का विकास में बड़े लोग होने के कारण उन्हें आसानी से ऋण बैंक प्रबंधक दे देता है। मजदूर, गरीब किसान हैं उसके लिए न जाने कितने लोगों की खातेदारी करनी पड़ती है।[4] उससे बैंक प्रबंधक ऋण देने में भी कतराते हैं। क्योंकि बैंक प्रबंधक ऐसी आशा करता है कि वह हमें पैसा वापस नहीं करेगा। चाहे पूँजीपति न वापस करे उसे

*शोधार्थी (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला - रतलाम (म.प्र.) भारत

तुरन्त ऋण बैंक प्रदान करती है। धन हीन का वह भरोसा भी नहीं करता है। जिससे गरीबों को अपनी गरीबी का शिकार होना पड़ता है। ऐसी अनेक कठिनाईयाँ छोटे किसानों के साथ आती हैं। जिस हेतु उज्जैन में गरीबी का मुख्य कारण सही और समय पर ऋण न मिल पाना।

उपयोगिता – इसी कारण बैंकों द्वारा प्रोत्साहन देकर लघु उद्योग क्षेत्र में आर्थिक विकास से बैंक को प्राप्त होने वाले ब्याज लाभ महत्व रखता है। इस हेतु बैंक की नीतियों ने पूँजी को बढ़ाने हेतु भी कृषकों को ऋण प्रदान करते है। भारतीय स्टेट बैंक अधिनियम के अनुसार बैंक की कुल इक्विटी में भारतीय रिज़र्व बैंक का अंशदान 55 प्रतिशत से कम नहीं हो सकता है। इसी बैंककारी विनियमन अधिनियम तथा बैंककारी कंपनी (उपक्रमों का अर्जन और अंतरण) अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार राष्ट्रीयकृत बैंकों की इक्विटी में भारत सरकार का अंशदान 51 प्रतिशत से कम नहीं हो सकता है।[5] जिस कारण भारतीय स्टेट बैंक की अपनी शाखा को बनाये रखने के लिए ऋण आवंटन की व्यवस्था करता है। जो कृषि पर लगाई जानी वाली पूँजी में कोई दिक्कत नहीं होती है। जिससे वह आसानी से ऋण प्रदान कर देते है। इससे उद्योगों की भी स्थापना होती है। जिससे नये-नये टैक्नोलाँजी को उन्नत किस्म के बीजों का उपचार करना भी आसान हो जाता है। इसी के कारण पूँजी तथा टैक्नोलाँजी का प्रवाह वहाँ तक आसानी से पहुँच पा रहा है। क्योंकि बैंकों द्वारा अनुदान आसानी से प्राप्त हो जाते हैं जिसके कारण लघु उद्योग प्रतियोगिता कर रहे हैं। इसी तरह निवेश की सीमा बढ़ाने का सवाल उत्पन्न होता है। इसी के साथ विभिन्न उपक्रमों की पहचान करने तथा अलग-अलग उपक्षेत्रों के लिए विशेष नीतियाँ बनाने में भारतीय स्टेंट बैंक जुड़ा हुआ है।

- रोजगार के अवसर देखते हुए औद्योगीकरण की वृद्धि को विविधतापूर्ण कुशल बनाने के लिए लघु उद्योग के क्षेत्र में लगातार समर्थन और सहायता देने की जरूरत को स्टेट बैंक पूरा कर रहा है।
- टैक्नोलॉजी में बढ़ोत्तरी के लिए अधिकतम धन राशि प्रदान कर पूँजी का निवेश कर रहा है। जिससे प्रतियोगिता के योग्य कुशल क्षमता की मशीनी विकसित करने तथा दक्षता पूर्ण लघु उद्योगों को सुविधाऐं प्रदान करना।
- कृषक और उद्योगों को बढ़ावा देने हेतु सहज आर्थिक सहायता प्रदान होने से दोनों के सम्बन्धों में आर्थिक मजबूती आती है।

बैंक द्वारा कृषक के दस्तकारी संबंधी कुटीर उद्योगों का प्रोत्साहन – बैंकों द्वारा इन उद्योग धन्धों को प्रोत्साहन देते हैं, जिसमें कृषक अपने खाली समय में जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कार्य करता है उदाहरण के रूप में- चटाई निर्माण, जूट द्वारा कुर्सी बिनना, रस्सी बनाना, टोकरी निर्माण, मधुमक्खी पालन, बीड़ी निर्माण इत्यादि।

कृषि को बढ़ावा देने वाले दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले उद्योग – कृषि कार्यो में प्रयोग होने वाले अनेक उद्योग धन्धों में गाँवों की दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने में अहम्‌ भूमिका निभा रहे हैं। जिनके द्वारा बनाये गये हल, फहसुल, खरपें, कटाई हेतु हँसिया आदि का निर्माण ग्रामीण आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु बनाये जाते हैं। 'कृषि वित्त की आवश्यक दशाओं को सन्तुष्ट करने वाली संस्था केवल सहकारी संस्था ही है और इस तथ्य को सभी कृषि प्रधान देशों ने स्वीकार किया है।'[6] इन उद्योगों के लिए अनेक उद्योगों को आर्थिक उपयोगिता हेतु कुशल कारीगर की भी आवश्यकता होती है। कपास उद्योग द्वारा कपड़े का निर्माण करना। जिसकी जरूरत प्रत्येक इन्सान को होती है। इस प्रकार कुशल कारीगर जिनके द्वारा अच्छा कपड़ा बुनने में सक्षम होते हैं। इसी प्रकार मिट्टी के बर्तन बनाने का कार्य भी किया जाता है। इन सभी में एक बैंक और कृषि उत्पादन पर निर्भर करता है।

समाधान – उज्जैन नगर के कृषक और कारीगरों द्वारा उद्योग धन्धों के अन्तर्गत कुशल कारीगर आसनी से प्राप्त हो जाते है। जिनके द्वारा साबून फैक्ट्री को निर्मित करना। इसके साथ कृषक द्वारा गेहूँ उत्पादन भी महत्वपूर्ण है। जो मालवा का गेहूँ और सोयाबीन महत्वपूर्ण फसल के रूप में मानी जाती है। जिसके लिए बैंक से आर्थिक मदद मिल रही है। यहाँ तक की सब्जी की फसल को भी अच्छे किस्मे प्रदान करते है। क्योंकि यहाँ उज्जैन के शहरी क्षेत्र होने के कारण यहाँ पर कुशल श्रमिक आसानी से मिल जाते है। जिसके कारण यहाँ की खेती में अच्छे श्रमिकों के कारण उन सब्जी और फलों को ध्यान देते समय पानी, उपयोगी खाद देने पर अच्छी फसल की पैदावार होती है।[7]

निष्कर्ष – प्रत्येक कृषक के मन और मस्तिष्क में यह विचार उठ रहा है कि राष्ट्रीय उन्नति का मापदण्ड कृषि की आर्थिक बचत के स्तर पर किया जा सकता हैं। अगर लोगों को कृषि में उन्नति होती है। तब बैंकों को भी शाख का हिस्सा प्राप्त होगा। पहली बात तो बैंक ऋण चुकता हो जायेगा। उसे ब्याज की खासी रकम मिल जायेगी। बैंकों को कृषि कार्यो के उत्पादन और बढ़ोत्तर पर ऋण देने में आगे बढ़ेगा। इससे कल्याणकारी राज्य का निर्माण होगा। और बेरोजगार को कम किया जा सकता है। कृषि से अधिक आर्थिक लाभ होने से मीलों जैसे उद्योगों का निर्माण होगा। उससे बेरोजगारों को भी रोजगार मिलेगा। इससे देश में गरीबी और भुखमरी की स्थिति नहीं होगी। आर्थिक तंगी से निजात सरकार को भी मिलेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. के.एस. सक्सेना एवं डॉ. के.एल. गुप्ता, भारतीय अर्थव्यवस्था, नवयुग साहित्य सदन, आगरा, 1999, पृष्ठ 60
2. के.बी. सक्सेना एवं जी.एन. वर्मा, औद्योगिक सन्नियम, रमेश बुक डिपो, जयपुर, 1975-76, पृष्ठ 210
3. डॉ. बी.एम. जैन, शोध प्रविधि एवं क्षेत्रीय तकनीक, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर, 1990, पृष्ठ 20
4. पी. पद्यावती, ग्रामीण अर्थशास्त्र, प्रिंटवैल पब्लिशर्स, जयपुर, 1989, पृष्ठ 75
5. राम किशन गुप्त, बैंकों में निधि प्रबन्धन, शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001, पृष्ठ 26
6. डॉ. बी.एस. माथुर, सहकारिता, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 1990, पृष्ठ 132-133
7. डॉ. डी.सी. पन्त, भारत में ग्रामीण विकास, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 2011, पृष्ठ 1-2

****

डॉ. अम्बेडकर के सामाजिक और राजनीतिक चिन्तन

डॉ. बैद्यनाथ चर्मकार *

प्रस्तावना – राष्ट्रप्रेमी, दलित मुक्तिदाता, भारत रत्न डॉ. भीमराव अम्बेडकर का मानना था कि, भारत में सामाजिक अन्याय और उत्पीड़न पुराने समय का है, यह उत्पीड़न उसी समय प्रारम्भ हो गया था जब पश्चिमोत्तर भारत पर मध्य एशिया में रहनें वाले आर्यों का आक्रमण हुआ था। यह आक्रमण भारत में दलित सभ्यता और संस्कृति पर हुआ था। सिन्धु घाटी की सभ्यता के लोगों और आर्यो के बीच हुए संघर्ष के ठोस प्रमाण नहीं मिलते क्यों कि सिन्धु सभ्यता में हुई पुरातात्विक खुदाई से प्राप्त लेखों को अभी तक पढ़ा नहीं जा सका और उसे चित्राक्षर लिपि बताया गया है, परन्तु आर्यो द्धारा रचित साहित्य ऋग्वेद के आधार पर सामाजिक अन्याय और विषमता का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। उक्त वेद में रक्षा, दस्यु, दास, पणि, शम्बर, किरात लोगों को ऋग्वैदिक आर्य हेय और घृणा की दृष्टि से देखते थे। मूल भारतीय जिन्हें आर्यो ने अनार्य कहा है वे आर्यो के देवताओं में श्रद्धा और विश्वास नहीं रखते थे इसलिए आर्यो ने उन्हें **'अदेवयु'** कहते थे। ऋग्वेद से यह भी ज्ञात होता है कि आर्यों नें युद्ध बल से नहीं बल्कि छल और प्रपंच से **'पणियों'** (मूल भारतीयों) के पशुओं का रहण कर लिया था।[1] उस समय मूल भारत वासियों को आर्यों नें अपने साथ नहीं मिलाया था तथापि ऋग्वैदिक युग के अंतिम चरण में आर्यो नें उन्हें अपनें साथ मिलाया था और उन्हें चतुर्थ वर्ण शूद्र कहा। उत्तरवैदिक काल तक यह वर्णव्यवस्था पुष्ट हो गई थी।

इसी क्रम में आगे चलकर वर्णीय विषमता उभरकर सामने आ गई थी। कर्मकाण्डों का प्रभाव इतना प्रबल हो गया था कि यज्ञ ही स्वर्ग का द्धार मानें जाने लगे और यज्ञों के सम्पादन के लिए ब्राह्मण पुरोहितों की अनिवार्यता हो गई। ऋग्वेद काल के बाद उपनिषद् युगीन वैचारिक क्रांति वस्तुत: सामाजिक अन्याय और असमानता के विरूद्ध आन्दोलन ही था जिसका मूल सूत्र था **'ऋते ज्ञानात न मुक्ति:'** अर्थात् ज्ञान के बिना मोक्ष नहीं मिल सकता। इसके सामने कर्मकाण्ड निरर्थक थे। इस ज्ञान आन्दोलन को मुखर स्वरुप दो क्षत्रिय राजकुमारों बुद्ध और महावीर नें दिया। बुद्ध नें इसे लोगों के जीवन में यथार्थ रुप में उतार दिया। इसका व्यापक सामाजिक प्रभाव इसी से जाना जा सकता है कि चातुर्थ वर्ण व्यवस्था का वर्ण क्रम ही बदल गया। ब्राह्मण, क्षत्रिय क्रम के स्थान पर क्षत्रिय ब्राह्मण क्रम हो गया।

गौतम बुद्ध एवं मुक्ति आन्दोलन – सामाजिक अन्याय अैर असमानता को मिटाकर महामानव बुद्ध ने समानता, स्वतंत्रता, करुणा और मैत्री के आधार पर मानवीय एकता और उसकी गरिमा की प्रतिष्ठा बताई उनका मानना था कि मनुष्य वर्ण एक है उसमें किसी प्रकार का भेदभाव नहीं है। जातियाँ पशु–पक्षियों, कीड़ों–मकोड़ों और वृक्षों में होती है, जिन्हें देखकर ही पहचान लिया जाता है कि यह अमुक जाति का पशु–पक्षी या वृक्ष है। ठीक इसी तरह मनुष्य में आकार–प्रकार या ऐसा कोई भेद प्रतीत नहीं होता जिसे देखकर यह जाना जा सके कि यह व्यक्ति अमुक वर्ण या जाति का है। बुद्ध का मानना था कि मनुष्य की गति, प्रगति और अधोगति में ईश्वर का कोई हाथ नहीं होता है क्योंकि ईश्वर का अस्तित्व ही नहीं है। मनुष्य अपनीं दशा दुर्दशा के लिए स्वयं जिम्मेदार है उन्होंने अपने सिद्धान्त में बताया कि **'मनुष्य अपना स्वामी स्वयं है उसका दूसरा कोई स्वामी नहीं है'** गौतम बुद्ध नें कहा था कि किसी बात को इसलिए मत मानों कि उनका कहना था कि पहले बात को सुनो समझों और विचार करो। जब तुम स्वयं जान लो कि वह बात कल्याणकारी है, क्रोध उत्पन्न करनें वाली नहीं है और इसकों ग्रहण करना हितकर और सुखकर है तभी उसे स्वीकार करो, तभी उसे मानो। यह उपदेश वास्तव में मानव मात्र के लिए चिन्तन की स्वतंत्रता का घोषणा पत्र था।

सम्राट अशोक तथा मुक्ति आन्दोलन – राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक इतिहास में सम्राट अशोक का युग स्वर्ण युग माना जाता है यह पहला अवसर था जब मिश्र, यूनान, सीरिया और एपिरस आदि देशों में भारतीय संस्कृति को स्वीकार किया था। मानवीय समता, एकता और बंधुता के लिए जितना कार्य सम्राट अशोक ने किया था उतना कोई दूसरा शासक नहीं कर सका उसका आधारभूत तत्व ज्ञान, नैतिक आचरण और कर्तव्य पर आधारित थे। अशोक का प्रयत्न रहा था कि सभी सम्प्रदायों के लोग एक साथ हिल–मिलकर रहें और अपनें सम्प्रदायों के सार तत्वों की वृद्धि करें। अपनें धर्म की झूठी प्रशंसा और दूसरे सम्प्रदाय की निन्दा न करें। सम्राट अशोक का मानना था कि जो अपने धर्म की झूठी प्रशंसा और दूसरे के सम्प्रदाय की निन्दा करता है वह दूसरे सम्प्रदाय की हानि तो करता ही है साथ ही वह अपनें धर्म की भी हानि करता है। सम्राट अशोक मानवीय एकता के लिए यह आवश्यक मानते थे कि आवश्यकता से अधिक धन संग्रह न किया जाय। भारत के राजनीतिक इतिहास में यदि किसी ने यह घोषणा की कि वर्ण और जाति के विचार से ऊपर उठकर सभी मनुष्यों के साथ न्याय और दण्ड में समानता बरती जायेगी तो वह अशोक ही था। सम्राट अशोक ने निरीह पशुओं की बलि पर भी प्रतिबंध लगा दिया था।[5]

सम्राट अशोक का मानना था कि शरण बल से शरीर पर विजय प्राप्त की जा सकती है परन्तु उसके मन पर नहीं। कलिंग के भयंकर युद्ध से अशोक ने यही निष्कर्ष निकाला था तभी उसने कहा था कि इस विजय को भी मैं अपनी पराजय मानता हूँ। क्योंकि इसमें एक लाख लोग मारे गये, डेढ़ लाख बंदी बनाये गये, इससे कई गुना लोग स्त्री–पुरूष और बच्चें जो इनके आश्रित होगें असहाय हो गये। इसलिये अब यदि थोड़ी संख्या में भी लोग मारे जाते हैं तो राजा अशोक को महान कष्ट होगा। सम्राट अशोक का यह राज प्रयास भी **मुक्ति आन्दोलन ही था।** नि:संदेह बुद्ध की शिक्षाओं से प्रभावित अशोक

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

स्वयं बौद्ध धर्मानुयायी था, लेकिन यह अन्य धर्मों तथा उनके अनुयायियों का सम्मान करता था। इस प्रकार मानवीय समानता और न्याय पर आधारित इस संस्कृति को भी ब्राह्मणी विचार सेनापति पुष्यमित्र शुंग नें मौर्य शासक वृहद्रथ की हत्या करके मौर्य साम्राज्य को हथिया लिया यही नहीं उसने यह भी घोषणा की कि **'जो व्यक्ति मुझे एक बौद्ध भिक्षु का सिर काटकर देगा उसे मैं सौ दीनार (स्वर्ण सिक्के) दूँगा।'**[6]

अशोक के मुक्ति आन्दोलन के विरुद्ध प्रतिक्रिया ने इतना उग्ररूप धारण कर लिया कि उसे ब्राह्मण धर्म के पुनरूत्थान की संज्ञा दे दी गई। अशोक की संस्कृति को ब्राह्मण धर्मी लोग भारतीय संस्कृति भी नहीं मानते थे। मौर्य युग के बाद शुंग शासक ने ब्राह्मण धर्म के पुनरस्थापक ग्रंथ **'मनुस्मृति'** की रचना करवायी। यह विचारणीय बात है कि अशोक द्वारा समता, न्याय, करुणा और बंधुता पर आधारित संस्कृति के संस्थापक और प्रचार-प्रसार के कारण ही कदाचित ब्राह्मण साहित्य के किसी ग्रंथ में सम्राट अशोक का वर्णन नही किया गया। जब कि सत्य यह है कि वह भारत माँ का गौरव पुत्र था। यह धार्मिक भेदभाव अथवा आधुनिक शब्दावली में साम्प्रदायिकता की चरमसीमा थी। यदि उसके द्वारा पत्थर की चट्टानों पर पहाड़ों की गुफाओं में और स्तम्भों पर लिखवाये गये अभिलेख खुदाइयों में प्राप्त न होते तो शायद भारतीय इतिहास में सम्राट अशोक का नाम और काम नदारत होता।

मनु के इतने प्रतिबंधों के बावजूद शूद्रों का मुक्ति आन्दोलन यत्र-तंत्र चलता ही रहा। शूद्र अपनें राज्य स्थापित करनें की लालसा में थे और कठिन परिश्रम करके धन भी इकट्ठा कर लिया था इसी कारण मनु को लिखना पड़ा कि आर्यो को शूद्र राजा के राज्य में कभी भी निवास नहीं करना चाहिये शूद्र द्वारा अर्जित धन-सम्पति को राजा छीन ले नहीं तो वह शूद्र राजा को ही कष्ट पहुँचायेगा। एक लंबे अंतराल के बाद शूद्र मुक्ति आन्दोलन उन्नीसवीं शताब्दी में पुन: उभरकर सामने आया, जब माली जाति में उत्पन्न ज्योतिबा फुले ने शूद्रों में शिक्षा का प्रचार किया। ज्योतिबा फुले द्वारा चलाया गया यह शिक्षा आन्दोलन महाराष्ट्र तक ही सीमित रह गया परन्तु ज्योतिबा फूले का आन्दोलन प्रकाश का आन्दोलन था जिसे रोंक पाना ब्राह्मणी व्यवस्था के बूते की बात नहीं थी।[7]

निष्कर्ष - डॉ. भीमराव अम्बेडकर तथा आधुनिक काल - समय बीतता गया कुछ अंतराल के बाद भारत के महान सपूत डॉ. भीमराव अम्बेडकर नें इसे इतना आगे बढ़ाया कि सम्पूर्ण भारत ही आन्दोलित हो उठा उनके इस मुक्ति आन्दोलन में मानव के सम्मानपूर्ण जीवन के लिए आवश्यक सभी तत्व निहित थे उनके इस मुक्ति आन्दोलन का विकास क्रम उनके द्वारा और उनकी प्रेरणा से प्रकाशित पत्रिकाओं के नामकरण से ही हो जाता है। पहली पत्रिका **'बहिष्कृत भारत'** थी जो भारत के बहिष्कृत अछूत लोगों की बात करने वाली पत्रिका थी। दूसरा पत्र **'मूकनायक'** था जो बेजुबानों की बात करता था। तीसरा पत्र **'जनता'** चौथा **'समता'** और अंतिम **'प्रबुद्ध भारत'** था। डॉ. भीमराव अम्बेडकर का आन्दोलन मानवीय गरिमा, स्वावलम्बन और स्वाभिमान तथा भ्रातृत्व भाव की स्थापना के लिए थे। ब्राह्मणी विधि विधानों द्वारा शूद्रों की शिक्षा के लिए बंद द्वारों को डॉ. अम्बेडकर ने सिद्धार्थ कॉलेज, मिलिन्द कॉलेज आदि की स्थापना और संचालन करके खोल दिया साथ आन्दोलन को शैक्षणिक दिशा भी दे दी। भारत में नारी विमुक्ति और दास विमुक्ति के लिए डॉ. अम्बेडकर को सदैव स्मरण किया जायेगा। जिस भारत में इस युग में भी तालाब में पानी निकालने के लिए अछूतों की बलियाँ दी जाती हो, शूद्र के हाथों से जल चढ़ाने पर भगवान छू जाते हों, विवाह-शादी के मंगलकारी संस्कारों के अवसर पर भी दूल्हे को घोड़े पर बैठनें से रोंका ही नहीं बल्कि कत्ल कर दिया जाता हो, स्त्रियों को बैलों के साथ हल में जोत दिया जाता हो, जहाँ लक्ष्मी की पूजा करनें पर भी देश कर्जे में डूबता जा रहा हो, सरस्वती के वरदान होते हुए जहाँ के लगभग 2/3 लोगों के स्कूल, खड़िया व पुस्तक नशीब न होती हो, जहाँ धन दौलत पा जाने पर शूद्र को भी क्षत्रिय बना दिया जाता हो, ऐसे अज्ञान और अंधविश्वासों के अंधकार में फंसे हुये लोगों को बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने नई राह दिखाई, मुक्ति का रास्ता बताया।[8]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लाल, डॉ. अँगने, बाबा साहब अम्बेडकर की सांस्कृतिक देन, 2009, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.-183
2. लाल, डॉ. अँगने, बाबा साहब अम्बेडकर की सांस्कृतिक देन, 2009, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.-185
3. लाल, डॉ. अँगने, बाबा साहब अम्बेडकर की सांस्कृतिक देन, 2009, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.-187
4. लाल, डॉ. अँगने, बाबा साहब अम्बेडकर की सांस्कृतिक देन, 2009, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.-188
5. लाल, डॉ. अँगने, बाबा साहब अम्बेडकर की सांस्कृतिक देन, 2009, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.-189
6. लाल, डॉ. अँगने, बाबा साहब अम्बेडकर की सांस्कृतिक देन, 2009, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.-190
7. लाल, डॉ. अँगने, बाबा साहब अम्बेडकर की सांस्कृतिक देन, 2009, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.-191
8. लाल, डॉ. अँगने, बाबा साहब अम्बेडकर की सांस्कृतिक देन, 2009, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.-192

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

स्वामी विवेकानन्द के विचारों में 'शिक्षा' के सामाजिक परिवर्तन

ममता चौहान *

शोध सारांश – 'उठो, जागों और तब तक मत रूको, जब तक अपने उद्देश्य को प्राप्त न कर लो।'

स्वामी विवेकानन्द ने भारत के जन-समुदाय की सामाजिक धार्मिक एवं आर्थिक परिस्थितियों को निकट से देखा तथा समझा था। इसी की पृष्ठभूमि में उनके दार्शनिक चिन्तन का उद्‌भव हुआ। सामाजिक सुधार तथा आध्यात्मिक चिन्तन की सरिता तभी से सतत् प्रवाहमान है। विवेकानन्द जी के अनुसार सामाजिक कुरीतियों, अन्धविश्वास एवं अबौद्धिक रूढ़िवाद के कारण ही उत्पन्न हुए। जिसके कारण लोगों में आध्यात्मिक मूल्यों की समझ कम हो गई थी। समय की माँग के अनुरूप आध्यात्मिक जागरण अनिवार्य है। स्वामी विवेकानन्द पर प्राचीन भारतीय दर्शन-विशेष रूप से 'वेदान्त-दर्शन' का गहरा प्रभाव हुआ। स्वामीजी ने सत्य के सर्ववादी रूप को स्वीकार किया है। उनके दर्शन में 'माया' पर वृहद् विचार-मंथन हुआ है, जो वेदान्त पर आधारित है। वेदान्त के अलावा विवेकानन्द के विचारों पर बौद्ध-दर्शन का प्रभाव भी दिखाई देता है।

शिक्षा दर्शन का क्रियात्मक रूप जीवन आदर्शो को यथार्थ के धरातल पर खड़ा करना है। मनोवृत्तियों और मूल्यों तथा ज्ञान और कौशल दोनों ही क्षमताओं के विकास के माध्यम से शिक्षा लोगों की बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप बनने के लिए उन्हें शक्ति का लचीलापन प्रदान करती है, सामाजिक विकास के लिए प्रेरित करती है तथा समाज को योगदान देने योग्य बनाती है।

प्रविधि – इस शोध पत्र में **स्वामी विवेकानन्द के विचारों में 'शिक्षा' के सामाजिक परिवर्तन** में द्वितीयक शोध सामाग्री के द्वारा अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ धार्मिक साहित्यों, पत्र-पत्रिकाओं और विद्वानों का मार्गदर्शन के आधार पर निर्माण किया गया है।

समस्या – भारतीय शिक्षा की वास्तविक समस्या यह है कि हमारे शैक्षिक प्रबन्धक, प्रशासक एवं शिक्षक सुदृढ़ विचारों को सत्यनिष्ठा से व्यवहारिक रूप नहीं दे पाते हैं। वास्तविक रूप से पाश्चात्य शिक्षा, भारतीय आत्मा की चिन्तन धारा को अवरूद्ध कर रही है। हमारी शिक्षा प्रणाली की दिशा सही नहीं है फिर भी दौड़ रही है, जिसका मुख्य कारण यह है कि हमारे शिक्षा शास्त्री, राजनीतिज्ञ, प्रशासक और शिक्षक स्वार्थी हो गये हैं। विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में गरिमामय वातावरण, आदर्शवादिता, संस्कार एवं चरित्र विलुप्ल होते दिखाई दे रहे हैं।

उद्देश्य :

- शिक्षा के मूल तत्वों का अध्ययन करना।
- मानवीय मूल्यों का अध्यायन करना।
- स्वामी विवेकानन्द के साहित्य में मूल्यों का अध्ययन।

स्वामी विवेकानन्द वर्तमान परिस्थितियों में अत्यन्त प्रासंगिक लगते हैं। मानव भौतिकवादिता के प्रभाव में मानवता को भूल रहा है।

सुझाव – आज शिक्षा को हम सामाजिक परिवर्तन का एक शक्तिशाली माध्यम मानते हैं, अत: हमें विवेकान्द का शैक्षिक दर्शन अत्यन्त महत्वपूर्ण लगता है। स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री स्व. पं. जवाहरलाल नेहरू के अनुसार -'स्वामी विवेकानन्द के जीवन का उद्देश्य समाज सेवा, जन-शिक्षा, धार्मिक पुनरूत्थान और शिक्षा द्वारा जागृत करके मानव जाति की सेवा करना था।'

राष्ट्रकवि रविन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार- 'भारत की आत्मा को समझना हो तो स्वामी विवेकानन्द के जीवन दर्शन का अध्ययन करो।' वास्तव में आज पुन: उनके दर्शन की आवश्यकता प्रतीत होती है, क्योंकि उस समय भौतिकवादिता की चकाचौंध नहीं थी, लेकिन आध्यात्मिकता की सम्पन्नता थी। आज भौतिक सम्पन्नता तो है, परन्तु आध्यात्मिक विपन्नता दिखाई दे रही है। स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा का सम्बन्ध आध्यात्मिक और भौतिक अनुभवों से है, जिसका अधिक जोर शुद्धता और शक्ति को आत्मसात करने पर है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार सम्पूर्ण शिक्षा एवं प्रशिक्षण का एकमात्र उद्देश्य 'मनुष्य का निर्माण' होना चाहिए।

वर्तमान परिवेश में विद्यार्थी ज्ञान का बहिरंग प्राप्त कर रहा है और भौतिक सम्पन्नता से सुखी होने का अहसास तो कर रहा है, परन्तु आत्मिक सुख से वंचित होता जा रहा है। अमेरिका जैसी महाशक्ति, भारतीय युवाओं के ज्ञान से स्तब्ध है, लेकिन मानवता का गुण भारतीय संस्कृति को स्तब्ध नहीं कर पा रहा है।

समाधान – स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा अनेक उद्देश्यों की पूर्ति करती है। वर्तमान परिदृश्य में शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति आवश्यक प्रतीत होती है।

यदि शिक्षा देशप्रेम की प्रेरणा नहीं देती है, तो उसे राष्ट्रीय शिक्षा नहीं कहा जा सकता है।

वर्तमान परिदृश्य में यह प्रासंगिक लगता है, क्योंकि देशप्रेम के पहले आज भौतिक सम्पन्नता एवं प्रेमयुक्त युवा अधिक हैं। युवाओं के पलायन का कारण चाहे राजनैतिक हो, प्रशासनिक नियम हो या सामाजिक प्रतिष्ठा हो, लेकिन देशप्रेम की प्रेरणा हमारी शिक्षा नहीं दे पा रही है। अत: वर्तमान शिक्षा को राष्ट्रीय शिक्षा नहीं कहा जा सकता है।

शिक्षा द्वारा मनुष्य में मानव-प्रेम, समाजसेवा, विश्वचेतना और विश्वबन्धुत्व के गुणों का विकास करना चाहिये।

शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य का धार्मिक, नैतिक, मानसिक, भावात्मक, शारीरिक, सामाजिक, व्यावसायिक और चारित्रिक विकास करना है।

यदि मनुष्य का शारीरिक विकास हो, तो स्वमेव मानसिक, भावात्मक, धार्मिक, नैतिक, चारित्रिक, सामाजिक व व्यावसायिक योग्यता के हेतु वह

* शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) शासकीय माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रयास करेगा। आज की शिक्षा प्रणाली भी स्वामी विवेकानन्द की उस तत्कालीन प्रणाली के विचारों से मेल खाती दिखाई देती है। स्वामी जी युवाओं को परामर्श देते हुए कहते थे कि- 'तुमकों कार्य के सब क्षेत्रों में व्यवहारिक बनना होगा। सिद्धान्तों के ढेरों ने सम्पूर्ण देश का विनाश कर दिया।'

सर्वप्रथम मानव बनो और अन्तिम लक्ष्य अर्थात् मोक्ष जिसे आज की परिस्थितियों में एक त्व के रूप में परिभाषित कर सकते हैं कि स्थिति में जाना ही मनुष्य का ध्येय हो। यह ध्येय शिक्षा से ही प्राप्त किया जा सकता है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की प्रणाली आज का वैश्वीकरण है, जिससे हम हजारों वर्ष पूर्व श्रीमद्‌भागवद्गीता में दे चुके हैं।

धर्म और शिक्षा का समन्वय आज आवश्यक प्रतीत होता है। इसे स्वामीजी की सोंच के साथ चलना आवश्यक है। धर्म शिक्षा का सारतत्व रहा है। धर्म-अनादि सत्यों का संचित कोष है, जिसकी अनुभूमि भारत के प्राचीन ऋषियों ने की है। भारत में युग-युगान्तरों से धर्म शिक्षा का आधार रहा है। जब तक मनुष्य का शरीर है, मन है, मस्तिष्क है, जीवन है, तब तक उसमें धर्म है। जब तक मनुष्य में सोचने की शक्ति रहेगी तब तक किसी न किसी रूप में धर्म रहेगा ही। यदि धर्म और शिक्षा का समन्वय कर दिया जाये तो प्रत्येक मनुष्य के साथ शिक्षा स्वमेव जुड़ जोयेगी। वर्तमान में शिक्षा ज्ञान का विराट रूप हो गया है।

स्वामी विवेकानन्द आदर्श मानव व्यक्तित्व का विकास शिक्षा के माध्यम से करना चाहते थे।

स्त्री शिक्षा का वर्तमान में कार्य हो रहा है। नारी के उत्थान पर स्वामीजी के विचार महत्वपूर्ण प्रतीत होते हैं। पहले अपनी स्त्रियों को शिक्षित करों, तब वे आपकों बतायेंगी कि स्वामी विवेकानन्द जनशिक्षा पर अत्यधिक बल देते थें। जनशिक्षा द्धारा सारी जनसंख्या को राष्ट्र निर्माण के क्रियाकलापों में संलग्न करना अत्यन्त आवश्यक है। देश के पुनरूत्थान के लिए जन-साधारण की शिक्षा को अनिवार्य रूप देने पर स्वामी विवेकानन्द ने हमेशा जोर दिया है। उनके विचारों में जनसाधारण की शिक्षा के क्षेत्र में अवहेलना हमारे पतन का कारण रहा है। अत: वे कहते थे - 'जब तक भारत की सामान्य जनता को एक बार फिर अच्छी शिक्षा, अच्छा भोजन और अच्छी सुरक्षा प्रदान नहीं की जायेगी, तब तक अधिकाधिक राजनीति भी व्यर्थ होगी।'

स्वामीजी अपने भाषणों में कहते थे कि भारतीय पिछड़ी जनता को शिक्षा की आवश्यकता है, जिससे उसका खोया हुआ आत्म सम्मान लौट आए।

जनशिक्षा के प्रसार के लिए स्वामी विवेकानन्द का सुझाव था अपेन पत्र में 1894 में उन्होंने लिखा था। 'मेरा दिल भर आया है और तुम जानते हो- क्यों? जब तक लाखों करोड़ो लोग भूख और अज्ञान के अधंकार में रहते हैं, मैं उस व्यक्ति को देशद्रोही समझता हूँ, जिसे उसके खर्च पर शिक्षा मिली है और फिर उनकी ओर तनिक ध्यान नहीं देता। शिक्षा का मूल कार्य जन-शिक्षा का प्रसार है। स्वामीजी चाहते थे कि घर-घर जाकर जन-शिक्षा का प्रसार होना चाहिये। 'यदि भारत के हजारों साधु-सन्यासियों में से कुछ को धर्म के अलावा अन्य विषयों की शिक्षा प्रदान करने के लिए संगठिन कर लिया जाये तो बड़ी सरलता से घर-घर जाकर वे अध्यापन और धार्मिक शिक्षा दोनों दे सकते हैं।' शिक्षा केवल कुछ चुने हुए लोगों के लिए नहीं, सबके लिए आवश्यक समझी जाती है। स्वामीजी के अनुसार-भारत के जनमानस को शिक्षित करने के लिए सभी उपाय किये जायें ताकि वह इच्छित आदर्श को प्राप्त कर सके। स्वामीजी चाहते थे, भारत के कोने-कोने में ऐसे शिक्षा केन्द्र स्थापित किये जायें, जहाँ से चारों ओर शिक्षा का प्रकाश फैले। स्वामीजी बार-बार यह कहते थे कि सर्वसाधारण को शिक्षित बनाईये और उन्नत कीजिये। तभी एक सशक्त राष्ट्र का निर्माण हो सकता है। वर्तमान में समाज जैसा दिखाई दे रहा है। इसके मूल में कहीं न कहीं शिक्षा आवश्य है। शिक्षा चाहे औपचारिक हो या अनौपचारिक। बालक का समाज में पदार्पण प्राप्त शिक्षा के साथ ही होता है। जब हम 'शिक्षा का सार' भाग 2 परिच्छेद 4 को पढ़ते हैं कि शिक्षा बालक के अन्तर्मन में छिपी शक्तियाँ हैं, जिसे हम उभारते हैं, सँवारते हैं, सजाते हैं, व उसे समाज में रहने के योग्य बनाते हैं।

निष्कर्ष - स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन को ध्यान में रखकर हम वर्तमान राष्ट्रीय शिक्षा नीति को देखें तो वे सारे महत्वपूर्ण बिन्दु जो स्वामी जी के शिक्षा दर्शन में है, वे राष्ट्रीय शिक्षा नीति के बिन्दु भी है। स्वामी जी के अनुसार समाज के शोषित, पीड़ित और पिछड़े वर्ग को शिक्षा देने का पक्ष मजबूत होना चाहिये। शिक्षा, द्धारा सत्य, चिन्तन, सत्य भावना, सद्‌व्यवहार विकसित होना चाहिये। स्वामी विवेकानन्द के विचारों के अनुसार शिक्षा को व्यवहारिक रूप देना चाहिये। तभी शिक्षा समाज में क्रांतिकारी सामाजिक परिवर्तन का आधार बन सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रो. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा : भारतीय दर्शन की रूपरेखा, प्रकाशक, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली, संस्करण, 2002 पृष्ठ 4
2. डॉ. नरेन्द्र सिंह महला : भारतीय दर्शन शब्द कोश, प्रकाशक, जैन प्रकाशन मन्दिर जयपुर, संस्करण 2004 पृष्ठ 117
3. जगदीश सहाय श्रीवास्तव : अद्धैतवेदान्त की तार्किक भूमिका, प्रकाशक किताब महल इलाहाबाद, संस्करण 1999 पृष्ठ 5
4. डॉ. पवित्र कुमार शर्मा : व्यक्तित्व-विकास, प्रकाशक विदुषी नई दिल्ली, संस्करण, 2010 पृष्ठ 18
5. बसन्त कुमार लाल, समकालीन भारतीय दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, पृष्ठ 20
6. जदुनाथ सिन्हा, भारतीय दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिकेशन्स, प्राइवेट लि. नई दिल्ली, पृष्ठ 1
7. हरिम जसटा, आधुनिक भारत में शैक्षिक चिन्तन, परमेश्वरी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 5

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

जनजातीय समुदाय की प्रकृति और समस्याओं का भौगोलिक अध्ययन

डॉ. राजेन्द्र कुमार साकेत *

शोध सारांश – सम्पूर्ण देश में लगभग 450 अनुसूचित जनजातियाँ पायी जाती हैं, जो भारतीय संविधान द्वारा अधिसूचित की गई है। मध्य प्रदेश के लिए 46 अनुसूचित जनजातियाँ घोषित हैं। इनमें से मध्य प्रदेश में लगभग 25 अनुसूचित जनजातियाद्द पायी जाती हैं, शेष 21 जनजातियाँ छत्तीसगढ़ राज्य में पायी जाती है। ये 46 जनजातियाँ भाषा-बोली, आर्थिक स्थिति, सामाजिक स्थिति तथा जाति समूहों के आधार पर लगभग 161 उपजातियों में बंटी हुई है। एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र और एक जाति समूह से दूसरी जाति समूहों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में भी भिन्नतायें हैं। ये आदिम जातियाँ गैर आदिम जातियों की तुलना में आर्थिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से कमजोर तो हैं ही, एक आदिम जाति की तुलना में दूसरी आदिम जाति भी आर्थिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से कमजोर है, विकास के अन्य संकेतकों में भी भारी भिन्नतायें है। मध्यप्रदेश में गोड़ और भील जनजाति समूह सबसे बड़ी जनजाति समूह है। अध्ययन क्षेत्र गोहपारू विकासखण्ड में गोड़, बैगा एवं कोल जनजातियों की संख्या सबसे अधिक है। इन जनजातियों में बैगा जनजाति विशेष पिछड़ी जनजाति के रूप में चिन्हित की गई है। इसके अलावा खोकर, धोबा इत्यादि जनजाति के रूप में चिन्हित की गई है। इसके अलावा खोकर, धोबा इत्यादि जनजातियाँ भी काफी पिछड़ी अवस्था में पायी जाती हैं। ये सभी जनजातियाँ मानव शास्त्र के अनुसार प्रोटो-आस्ट्रोलायड प्रजाति की जनजातियाँ है। अपनी उत्पत्ति के संबंध में प्रत्येक जनजाति की 'मिथ' कथायें हैं। इन जातियों का धार्मिक आधार पशुओं अथवा वृक्षों के नाम पर आधारित है, प्राय: सभी जनजातियों के नाम, वंश, उपनाम, टोटम किसी न किसी पशु या वृक्ष के नाम पर है। ये जनजातियाँ हिन्दू और ईसाई धर्म से प्रभावित है और इन्हीं धर्मो का अनुसरण करती है। इन जनजातियों में अन्ध विश्वास की प्रधानता पायी जाती है। भूत-प्रेतों एवं पूर्वजों की आत्माओं पर अत्यधिक विश्वास करते हैं और उनकी पूजा बलि देकर करते हैं।

शोध प्रविधि – प्रस्तावित शोध-पत्र **जनजातीय समुदाय की प्रकृति और समस्याओं का भौगोलिक अध्ययन** इस शोध पत्र में प्राथमिक और द्वितीय शोध सामाग्री से आधार पर अध्ययन किया गया है। जिसके भौगोलिक अध्ययन हेतु अनुसूचित जनजाति विकास के अनेक पुस्तकों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

समस्या – विधायी, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका से संबंधित प्रावधान भारत के संविधान में पर्याप्त रूप से केन्द्र सरकार और राज्य सरकार को पर्याप्त शक्तियाँ एवं विशेष जिम्मेदारियाँ अनुसूचित जनताति के उत्थान के लिए दिये गये हैं। राज्य और केन्द्र सरकारें सवैंधानिक उत्तरदायित्व की भावना से दलित शोषित समाज की समस्याओं और उनकी परेशानियों तथा कठिनाईयों से मुक्ति दिलाने के उद्देश्य से उपर्युक्त प्रावधान किये गये हैं। गैर अनुसूचित जनजाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों के मध्य शैक्षणिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक विषमता को पाटने के लिए केन्द्र और राज्य सरकारों को सार्थक पहल करने की जिम्मेदारी संविधान में सौंपी गई हैं। अनुसूचित जनजाति क्षेत्रों के विकास की आवधारण निम्नानुसार तीन मापदण्डों के आधार पर सुनिश्चित किये जाने हेतु संविधान में राज्य सरकारों के लिए विशेष उत्तारदायित्व सौंपा है :-

उद्देश्य :

- अधिसूचनाओं द्वारा विधायी प्रावधान
- नियमों और निर्देशों के माध्यम से विधायी प्रावधान।
- संसद और विधान सभाओं द्वारा कानून बनाकर विधायी प्रावधान।

संविधान में दिये गये प्रावधानों के अन्तर्गत इन तीन सामान्य प्रक्रियाओं के माध्यम से सतत् रूप से विगत 68 वर्षों में अनुसूचित जनजाति क्षेत्र तथा इन क्षेत्रों में निवासरत अनुसूचित जनजाति समूह के लिए इनकी आवश्यकता के अनुरूप विशेष नियम और कानून बनाया गया है ताकि संवैधानिक उत्तारदायित्वों का निर्वाह हो सके। इन विशेष प्रावधानों को संवैधानिक सुरक्षा कवच भी कहते हैं।

सुझाव – इस अवधारणा की पूर्ति हेतु निम्नानुसार मापदण्ड़ों के आधार पर किये जाने के सतत् प्रयास हो रहे हैं :-

- अनुसूचित जनजाति समूहों में व्याप्त विभिन्न परम्परागत निर्योग्यताओं को समाप्त करना।
- अनुसूचित जनजाति समूहों को भूमि अपवंचन से रोकना तथा शोषण से मुक्ति दिलाना।
- भूमि पर आजीविका के संसाधन उपलब्ध कराना तथा सामंतवादी बंधनों से मुक्त करना एवं मध्यस्थ व्यापारियों के चंगुल से मुक्त करना।
- भू-स्वामित्व प्रदान करना तथा उत्पादन की विषमता को पाटना।

संचालन, उत्कृष्ठ शिक्षण संस्थाओं का संचालन, अनुसूचित जनजाति क्षेत्रों में प्राथमिक शालायें, माध्यमिक शालायें, उच्चत्तर माध्यमिक शालायें, हाई स्कूल इत्यादि का संचालन शासन द्वारा किया जा रहा है ताकि संविधान के अनुच्छेद 46 के अन्तर्गत संविधान द्वारा सौंपे गये उत्तारदायित्व का निष्पादन पूरी निष्ठा और मनोयोग से हो सके। वर्ष 1989 में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु लागू किया गया है।

समाधान – भारत के संविधान के अनुच्छेद 342 के अन्तर्गत संसद के द्वारा पारित अधिनियम के पालन में अनुसूचित जनजातियों की सूची भारत के राष्ट्रपति के द्वारा जारी किये जाने का प्रावधान है। इस अनुच्छेद के पालन में भारत के राष्ट्रपति के द्वारा वर्ष 1950 तथा वर्ष 1956 एवं वर्ष 1976 में यथा संशोधित सूचियाँ जारी की गई हैं। इन सूचियों में जिन-जिन

* भूगोल, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

जातियों का उल्लेख हुआ हैं उन जातियों के लोगों को भारत के संविधान के अन्य अनुच्छेद जैसे 244, 320, 334, 335 और 339 में किये गये उपबंधों के अनुसार संवैधानिक सुरक्षा प्राप्त है। संवैधानिक सुरक्षा से तात्पर्य यह है कि उन्हें इन प्रावधानों के अन्तर्गत बनाये गये विधान के अनुरूप लाभ प्राप्त करने का अधिकार है, जो उनके जीवन की सर्वांगीण उन्नति से सम्बन्ध रखता है। उदाहरण के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना से पाँचवी पंचवर्षीय योजना तक अनुसूचित जनजातियों के उन्नति के लिए पारिवार मूलक योजनाऐं संचालित की गई परन्तु समीक्षा करने पर सरकार के ध्यान में यह बात लाई गई कि अनुसूचित जनजातियों के लोग अत्यन्त दूरस्थ और पहुँच विहीन क्षेत्रों में रहते हैं इसलिए जबतक क्षेत्र का विकास नहीं किया जाएगा तब तक अनुसूचित जनजातियों का विकास कर पाना चुनौतीपूर्ण रहेगा अत: पाँचवी पंचवर्षीय योजना में आदिवासी विकास के लिए आदिवासी क्षेत्र उपयोजना के नाम से बजट में पृथक से धनराशि का प्रावधान अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या के अनुपात में किया जाना प्रारम्भ किया गया। मध्यप्रदेश से छत्तीसगढ़ विभाजन के बाद 31 आदिवासी विकास की वृहद परियोजनाऐं, 30 नोटीफाइड एरिया डव्हलपमेंट ऐजेन्सी और 6 क्लस्टर बने हैं। इन 31 आदिवासी विकास की वृहद परियोजनाओं में से एक सोहागपुर है जिसके अन्तर्गत गोहपारू विकासखण्ड सम्मिलित है।

आदिवासियों का विकास, आदिवासी क्षेत्र के विकास से जुड़ा है इसलिए विकास की अवधारणा मूल रूप से उनकी आवश्यकताओं तथा क्षेत्र की आवश्यकताओं से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। फलस्वरूप अनुसूचित जनजाति के विकास के लिए योजना बनाने का सुझाव, अनुसूचित जनजाति के विकास के लिए संचालित योजनाओं की समीक्षा, अनुसूचित जनजाति के लोगों की समस्याओं का निराकरण मौके पर जाकर करने का प्रयत्न करना तथा उनके हितों के संरक्षण के लिए हितप्रहरी का कार्य करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 335 के अन्तर्गत राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग तथा मध्यप्रदेश राज्य अनुसूचित जनजाति आयोग का गठन किया गया है।

निष्कर्ष – इसके अलावा अनुसूचित जनजाति के क्षेत्र के विकास के लिए राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति क्षेत्रीय आयोग का गठन संविधान के अनुच्छेद 338 के अनुसार समय-समय पर की जाती रही है। वर्ष 1961 में राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति क्षेत्रीय आयोग का गठन किया गया था जिसे लोकप्रिय रूप में डेव्हर कमीशन के नाम से जाना जाता है। क्योंकि श्री डेव्हर उक्त आयोग के अध्यक्ष थे इसके अलावा श्री दिलीप सिंह भूरिया की अध्यक्षता में राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति क्षेत्रीय आयोग का गठन भी किया गया था जिसे लोकप्रिय रूप से भूरिया आयोग कहते हैं। इन दोनों आयोगों ने भारत सरकार को उपयोगी सुझाव एवं अनुशंसाऐं प्रस्तुत की थीं जिसके फलस्वरूप आदिवासी क्षेत्रों में संचालित योजनाओं के लिए भारत सरकार ने विशेष केन्द्रीय सहायता, केन्द्रीय क्षेत्र योजना, केन्द्र प्रवर्तित योजना एवं संविधान के अनुच्छेद 275 के अन्तर्गत न केवल परिवारमूलक योजनाओं का संचालन किया जा रहा है बल्कि क्षेत्रीय विकास के लिए विभिन्न प्रकार के कार्य किये गये हैं। साथ ही साथ आदिवासी क्षेत्र उपयोजना के रूप में बजट में आदिवासियों की जनसंख्या के अनुपात में धनराशि का प्रावधान इनकी चहुँमुखी विकास के लिए किया जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सी.पी. तिवारी, **जनजातीय पर्यावरण,** आशा पब्लिशिंग, आगरा, 2003, पृष्ठ 193
2. शिवकुमार तिवारी, **म.प्र. की जनजातियाँ,** हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, म.प्र. भोपाल, 1987, पृष्ठ 203
3. चतुर्भुज मानोरिया, **मानव भूगोल,** रस्तोगी प्रकाशन, आगरा, 1977 पृष्ठ 68
4. कृपाशंकर माथुर, **आदिवासी समस्या : एक मानव वैज्ञानिक विश्लेषण,** मानव, पृष्ठ 19
5. बी.डी. चौधरी, **ट्राइबल डेव्हलपमेंट इन इंडिया,** इंटर इंडिया पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1982

****

आवर्ती विपरण केन्द्रों का स्थानिक वितरण प्रतिरूप (डिण्डौरी जिले के सन्दर्भ में)

किशोर श्याम *

शोध सारांश – किसी स्थान विशेष पर जब कोई समूह प्रति सप्ताह, सप्ताह में दो बार, एक निश्चित समय के पश्चात् मिलता है तो उन स्थानों को आवर्ती विपणन केन्द्र कहते हैं। या जिन स्थलों पर प्रतिदिन क्रेता विक्रेता उपस्थित रहकर विपणन क्रियाएं सम्पन्न करता है व केन्द्र दैनिक बाजार केन्द्र या दैनिक आपूर्ति केन्द्र कहलाते हैं।

अत: आवर्ती विपणन केन्द्र के स्थान होते हैं जहाँ नियमित एवं सप्ताहिक रूप से विभिन्न वस्तुओं के विक्रेता एवं ग्राहक एक निश्चित सम्यांतराल पर मिलते है।

प्रस्तावना – हाडर महोदय के अनुसार 'बाजार किसी केन्द्र स्थल पर वस्तुओं, क्रेताओं और विक्रताओं का नियमित सम्यांतराल पर एक अधिकृत जन समूह होता है।' तथा कथित भूगोल विद के अनुसार 'बाजार केन्द्र सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और अन्य क्रियाकलापों का सम्पादन करने वाले केन्द्र स्थल होते हैं यहाँ पर क्रेता विक्रेताओं का समूह होता है तथा किसी वस्तु का मूल्य एवं भुगतान क्रेताओं तथा विक्रेताओं में सामूहिक निर्णय द्वारा निर्धारित होता है।'

अत: कहा जा सकता है कि वे स्थान आवर्ती विपणन केन्द्र कहलाते हैं। जहाँ क्रेता और विक्रेता एक निश्चित सम्यांतराल के बाद मिलते हैं तथा जहाँ आर्थिक क्रियाकलापों के अलावा सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, प्रशासनिक तथा राजनैतिक कार्य संपादित होता है।

जिन दूरवर्ती क्षेत्रो में जीवन निर्वाह कृषि, सीमित क्रय शक्ति तथा न्यून विकसित परिवहन तंत्र के कारण सीमित गतिशीलता पाई जाती है। ऐसे क्षेत्रों में दैनिक विपणन केन्द्र विकसित नहीं हो पाते है। ऐसे क्षेत्रों के आवश्यकता की पूर्ति आवर्ती विपणन केन्द्र करती है। इन्हें क्षेत्रीय भाषा में बाजार हाट बाजार, उठाई बाजार या पेक भी कहते हैं। चूँकि यहाँ के क्षेत्रीय लोगों की आवश्यकता सीमित होती है। इसलिए वे इन बाजारों से सप्ताह में एक या दो बार ही वस्तुओं का क्रय करते हैं ऐसे क्षेत्रों में आवर्ती विपणन केन्द्रों का महत्व बढ़ जाता है ये क्षेत्र ग्रामीण या नगरीय दोनों हो सकते हैं। विशेषकर आदिवासी या ग्रामीण क्षेत्रों में इन केन्द्रों का महत्व कई–कई कारणों से भी होता है। ये क्षेत्र केवल आदिवासियों के लिए क्रय–विक्रय का केन्द्र ही नहीं अपितु आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक व मनोरंजक के केन्द्र भी होते हैं। यहाँ उनके विचारों, अभिव्यक्तियों का समाधान होता है। चूँकि ये केन्द्र अत्यधिक दूरी पर स्थित होने के कारण यहाँ परिवहन के साधनों का अभाव होता है। अत: इन केन्द्रों का अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता है।

जिले की भौगोलिक स्थिति एवं विस्तार इत्यादि प्रस्तुत करने के पूर्व यह ज्ञात करना आवश्यक है कि संबंधित क्षेत्र एवं विवेचित विषय का चयन क्यों किया गया है। अध्ययन क्षेत्र एक एकांकी तथा ग्रामीण प्रदेश है। यहाँ की जनसंख्या तथा अर्थतंत्र संक्रमण की अवस्था से गुजर रहा है। ऐसी स्थिति में अर्थतंत्र के निर्धारण में विपणन केन्द्रों एवं केन्द्र स्थलों की स्थानिक एवं आर्थिक व्यवस्था का अध्ययन जो अब तक अछूता है न केवल एक अभिनय प्रयास होगा। वरन् अर्थतंत्र के नियोजन की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण होगा। जिला कृषि एवं उद्योग की दृष्टि से पिछड़ा हुआ है फिर भी आवर्ती विपणन केन्द्र एवं केन्द्र स्थल क्षेत्रों की आवश्यकताओं की पूर्ति कर रहे हैं। जिले का प्रभाव ग्रामीण क्षेत्र के आर्थिक क्रियाकलापों पर पड़ा है। साथ ही यह क्षेत्र बड़ी तेजी से विकसित हो रहा है। जिले के विपणसन केन्द्र एवं केन्द्र स्थल न केवल बदल रहे हैं। वरन् नये केन्द्र स्थलों का जन्म हो रहा है। इन्हीं उपर्युक्त बातों का ध्यान में रखकर अपने अध्ययन का क्षेत्र जिला डिण्डोरी चुना जो स्थानिक एवं आर्थिक आयामों के अध्ययन हेतु आवश्यक है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र का अध्ययन अनेक विभागों के क्षेत्रीय अध्ययन केन्द्रों से किया गया है। इसका अध्ययन विपणन केन्द्रों के आधार पर भूगोल संबंधी आँकड़ों का संकलन कर प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोंत प्रयोग किया गया है। जिसकी जानकारी जिला सांख्यकीय कार्यालय, पुस्तकालयों, भारतीय सर्वेक्षण विभाग की पुस्तिका पत्रकों से भी जानकारी एकत्रित की गई हैं।

उद्देश्य :

1. आवर्ती विपणन केन्द्रों का स्थानिक वितरण क्षेत्र, जनसंख्या तथा आबाद ग्रामों के आधार पर ज्ञात करना।
2. इन केन्द्रों का स्थानिक वितरण प्रतिरूप समरूपता तथा पूँजीकृत प्रतिरूपों से कितना विचलित होता है यह ज्ञात करना।
3. आवर्ती विपणन केन्द्र एवं केन्द्र स्थलों का वितरण प्रतिरूप ज्ञात करना।

विधि तंत्र – सर्वेक्षण के पश्चात् प्राप्त किये आँकड़ों को तालिका बंध कर उनका विश्लेषण किया गया। विपणन केन्द्रों एवं स्थलों की प्रचलित विधियों का उपयोग किया गया है। जिनमें मुख्यत: निकटतम पड़ोसी बिन्दु विश्लेषण विधि, जो ग्रामीण अधिवासों तथा आवर्ती विपण केन्द्रों एवं केन्द्र स्थलों का स्थानिक वितरण प्रतिरूप ज्ञात करने हेतु उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त जनसंख्या वृद्धि एवं घनत्व ज्ञात करने हेतु स्थानित लबधान विधि का प्रयोग किया गया है। बाजार प्रभाव क्षेत्र गुरूत्व मॉडल तथा अनुभवात्मक एवं गुणात्मक विधियों से ज्ञात किया गया है। इसके अतिरिक्त आवश्यकतानुसार भूगोल ने प्रचलित विभिन्न तकनीकि विधियों का प्रयोग किया गया है।

* शोधार्थी (भूगोल) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

परिकल्पना – अध्ययन क्षेत्र की परिकल्पना में आवर्ती विपणन केन्द्रों का वितरण याद्दच्छिक है।

विश्लेषण – आवर्ती विपणन केन्द्रों का क्षेत्रफल जनसंख्या तथा आबाद ग्राम के अनुसार स्थानिक वितरण।

क्षेत्रफल –आवर्ती बाजार अनुपात – अध्ययन के अनुसार क्षेत्र में प्रति 100 वर्ग कि.मी. में आवर्ती विपणन केन्द्रों की संख्या मात्र 0.63 है जो अत्यन्त कम है। डॉ. वी.के. श्रीवास्तव ने तराई प्रदेशों में यह संख्या प्रति 46 वर्ग कि.मी. में 1 दर्शाई है जो इससे कुई गुना अधिक है।

क्षेत्रफल की दृष्टि से सर्वाधिक क्षेत्र 0.99 समनापुर तहसील में तथा न्यूनतम 0.46 बजाग तहसील में है। चिंत्रानुसार निम्नवर्ती क्षेत्र वर्ग में बजाग तथा मेहंदवानी तहसीले सम्मिलित है इसी तरह मध्यमवर्ती क्षेत्र वर्ग में क्रमश: शहपुरा, केरजिया तथा डिण्डौरी सम्मिलित है तथा उच्चवर्ती क्षेत्र वर्ग में अमरपुर तथा बजाग तहसीले सम्मिलित है।

जिला डिण्डौरी आवर्ती विपणन केन्द्र अनुपात प्रति 100 वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल पर

तहसील/ विकासखण्ड	भौगोलिक क्षेत्रफल वर्ग कि.मी.	साप्ताहिक हाट बाजार की संख्या	प्रति 100 वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल पर आवर्ती विपणन केन्द्रों का अनुपात
बजाग	865	04	0.46
मेहदवानी	764	04	0.52
शाहपुरा	1137	06	0.52
करंजिया	674	04	0.59
डिण्डौरी	1259	08	0.63
अमरपुर	623	05	0.80
समनापुर	806	08	0.99
कुल	6128	39	0.63

जनसंख्या –आवर्ती बाजार अनुपात :–

अध्ययनगत क्षेत्र में प्रति 10,000 जनसंख्या पर आवर्ती विपणन केन्द्रों की संख्या तीनों कारणों में सबसे कम अर्थात् औसतन 0.67 है, जबकि तराई प्रदेश में एक बाजार केन्द्र 12,000 व्यक्तियों की सेवा करता है यह अनुपात समनापुर तहसील में 1.14 सर्वाधिक तथा करंजिया तहसील 0.53 में न्यूनतम है।

चित्रांनुसार प्रकीर्णन विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि निम्नवर्ती क्षेत्र वर्ग में 1 विकासखण्ड करंजिया तथा शहपुरा सम्मिलित है। इसी प्रकार मध्यवर्ती क्षेत्र वर्ग में बजाग मेंहदवानी तथा डिण्डौरी तहसीलें एवं उच्चवर्ती क्षेत्र वर्ग में अमरपुर तथा समनापुर तहसीलें सम्मिलित है।

जिला डिण्डौरी आवर्ती विपणन केन्द्र अनुपात प्रति 10,000 जनसंख्या पर

तहसील/ विकासखण्ड	कुल जनसंख्या	साप्ताहिक हाट बाजार की संख्या	प्रति 100 वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल पर आवर्ती विपणन केन्द्रों का अनुपात
बजाग	71611	04	0.53
मेहदवानी	66796	04	0.59
शाहपुरा	112297	06	0.53
करंजिया	75001	04	0.53
डिण्डौरी	124430	08	0.64
अमरपुर	60704	05	0.82
समनापुर	69891	08	0.14
कुल	580730	39	0.67

आबाद ग्राम – आवर्ती बाजार अनुपात :–

प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र में प्रति 100 आबाद ग्राम पर आवर्ती विपणन केन्द्रों की संख्या 4.32 है जो अन्य कारक क्षेत्रफल एवं जनसंख्या की तुलना में अधिक है। इस आधार पर प्रथम स्थान पर समनापुर 6.95 का है तथा शहपुरा तहसील में 3.14 न्यूनतम आवर्ती बाजार केन्द्र है।

आबादग्राम आवर्ती बाजार अनुपात के आधार पर निम्नवर्ती क्षेत्र वर्ग में शहपुरा तथा मेंहदवानी सम्मिलित है। इसी प्रकार मध्यवर्ती क्षेत्र वर्ग में बजाग तथा डिण्डौरी तहसीलें सम्मिलित है एवं उच्चवर्ती क्षेत्र वर्ग अमरपुर तथा समनापुर तहसीले सम्मिलित हैं।

जिला डिण्डौरी आवर्ती विपणन केन्द्र अनुपात प्रति 100 वर्ग कि.मी. पर आबाद ग्राम

तहसील/ विकासखण्ड	आबाद ग्राम	साप्ताहिक हाट बाजार की संख्या	प्रति 100 वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल पर आवर्ती विपणन केन्द्रों का अनुपात
शाहपुरा	191	06	3.14
मेहदवानी	11	04	3.60
करंजिया	104	04	3.84
डिण्डौरी	188	08	4.25
बजाग	92	04	4.34
अमरपुर	101	05	4.95
समनापुर	115	08	6.95
कुल	902	39	4.32

निष्कर्ष – उक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि, क्षेत्र जनसंख्या तथा आबाद ग्राम के आधार पर आवर्ती विपणन केन्द्रों का अनुपात अत्यन्त कम है। अत: जिला डिण्डौरी के विकास हेतु नवीन आवर्ती विपणन केन्द्रों की स्थापना आवश्यक है। अध्ययन में प्रतिपादित प्रथम परिकल्पना सिद्ध होती हैं कि आवर्ती विपणन केन्द्रों का विपणन प्रतिरूप याद्दच्छिक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. त्रिवेणी, रेणु, विपणन भूगोल, यूनिवर्सिटी बुक हाऊस, 1991, पृष्ठ 48–60
2. Bromle , R.J. : The spatila pattern and temporal synchronization of Periodic Markets, Swansea Geographer II, 1973, PP 15-25 (III)
3. Shirvastava, V.K., Geography of Marketing & Rural Development in Tarai Region of U.P. Inter India Publication, New Delhi, 1987, PP, 82-111
4. D.S. Sarote, सांख्यिकीय आधिकारी जिला योजना कार्यालय, डिण्डौरी
5. श्री आर.एस. वरकडेत्र, सहायक ग्रेट खखख जिला अधिक्षक भू अभिलेख कार्यालय, डिण्डौरी।
6. श्री डी.के. गुप्ता, उपयंत्री जिला नगर पालिका कार्यालय, डिण्डौरी

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

महाकवि भवभूति के दर्शन में मानवीय मूल्यों की प्रासंगिकता

डॉ. तुलसीराम साकेत *

शोध सारांश – भारतीय दार्शनिकों में एक महाकवि भवभूति शब्दब्रह्मविद परिणतप्रज्ञ है। अत: उनके भावो को समझने के लिए सूक्ष्म अध्यन तथा निरीक्षण परीक्षण कि आवश्यकता पड़ती है किन्तु उनकी उस दुरूह और क्लिष्ट भाषा शैली मे विकास लक्षित होता है। 'ईश्वर को वेद में अनेक स्थानों पर शतक्रतु नाम से सम्बोधित किया है जो कि ईश्वर के अनन्त कर्मों का द्योतक है।'[1] उनके अन्तिम नाटक उतररामचरित मे प्रथमिक दो नाटको कि आपेक्षा शैली अधिक सरल स्पष्ट तथा बोधगम्य हो जाती है। इस प्रकार उनकी शैली मे क्रमिक विकास लक्षित होता है। इस विकास ने मानवीय मूल्यों को विकसित किया है। ऐसी विचारधारा मानव को मूल्यों से जोड़ती हैं। जहाँ भारतीय वाङ्मय में निरूपित है।

भावो का वर्णन–व्यंजन में भवभूति की शक्ति अद्वितीय हैं। ऐसे भावो को अत्यंत गम्भीरता से प्रविष्ट होते हैं। अनुभूति के साथ उसका वर्णन करते हैं। यह भवभूति की बहुत बड़ी विशेषता है। भावों की अनुभूति तथा वर्णना में संस्कृत का कदाचित् ही कोई कवि इतनी ऊचाई पर पहुँचा हो। भवभूति के नाटक नाट्य काव्य है। काव्य उनका अभीष्ट विषय है और कालिदास के अन्तर इस कोटि का कोई नहीं हुआ। उनका काव्य–गुण नाटक से ऊपर है और उनकी सभी कृतियों में यह प्रदर्शित हुआ है। मानव के मूल स्त्रोतों तक भवभूति की पहूँच है और वहाँ से प्रवाहित होने वाले नाना भावों, मनोविकारों अथ च संवेगों का उन्हें दर्शन होता है। कलाकार की रंगीन और पच्ची कारी भले ही भवभूति में न मिले और प्रकृति के पावन पुजारी तथा मानव के भावुक पालकी के लिए यह अपेक्षित भी नहीं है। पर वर्णन में तल्लीनता और व्यापकता का यहाँ हमें उन्मुक्त रूप से दर्शन होता है।[2]

प्रविधि – इस शोध पत्र में **महाकवि भवभूति के दर्शन में मानवीय मूल्यों की प्रासंगिकता** में द्वितीयक शोध प्रणाली के आधार पर विश्लेषणात्मक पद्धति से अध्ययन किया गया है। इसके हेतु मूल धर्म ग्रन्थों को भी सन्दर्भित किया गया है।

समस्या :

- मानवीय मूल्यों की समस्या।
- सामाजिक विसंगतियों में मानवीय मूल्यों का क्षरण हो रहा है।
- राष्ट्र में उत्पन्न वैचारिक संघर्ष की समस्या।

भवभूति की शैली में गौडी रीति का प्रधान्य है जिसमें गद्य भाग में समास बहुल भाषा एवं सानुप्राष पद विन्यास की प्रमुखता होती है। यहाँ कालिदास की कमनीय शैली में मधुरिमा है वहाँ भवभूति की शैली में औद्यात्य। यह गुण एक प्रकार से अवगुण का रूप भी धारण कर लेता है क्योंकि इन नाटकों से पूर्ण परिचय जिन दर्शकों या पाठकों ने नहीं प्राप्त किया है। उनके लिए यह गुरू दिखाई पड़ती है। पर भवभूति के पद्यों में यह बात नहीं है। अंतिम नाटक उत्तार रामचरित की भाषा स्पष्ट है। यहाँ यह भी स्मरण कर लेना चाहिए कि यद्यपि भवभूति माधुर्य गुण में कालिदास से अवर कोटि में आते हैं। इन्हीं भावों की गहराई तथा परिस्थितियों के बहुरूपी चित्रण में निश्चित रूप से आगे निकल गये हैं।

उद्देश्य :

- मानवीय मूल्यों का अध्ययन करना।
- दार्शनिक चिन्तन की मूल्य मीमांसीय अध्ययन करना।
- धार्मिक मूल्यों का अध्ययन करना।

समाधान – प्रकृति के बहुरंगी चित्रण में भवभूति की शैली अद्वितीय है। भवभूति को प्रकृति का केवल कोमल पक्ष ही अभीष्ट नहीं है। केवल कोमल एवं मनोहर का चित्रण वास्तविक कवि कर्म नहीं है यह तो मात्र विलास प्रियता और तमासवोनी है। सच्चा कवि तो वह है जो प्रकृति के समस्त रूप का सहृदयता से अवलोकन करे और समान अभिनिवेश तथा तल्लीनता से यथा तथ्य उनका उपन्यास करे।[3] जब हम भवभूति को इस दृष्टिकोण के परिवेश में देखते हैं तो यह स्पष्ट पता चल जाता है कि भवभूति प्रकृति के सच्चे पारखी हैं। कोमल एवं उग्र सुहावनें एवं भयंकर सभी प्रकार के प्राकृतिक दृष्यों को उन्होंने अवलोकन किया है और उनको पूरी तल्लीनता से व्यंजित किया है। भवभूति की शैली उससे बडी चमत्कारणी तथा हृदय हारिणी बन गयी है।

भवभूति की शैली का एक दोश है लंबे–लंबे ससान्त पदों का योग। यह स्थिति उनके गद्य तथा पद्य दोनों में पाई जाती है। लंबे–लंबे गद्य मय संवादों का प्रयोग भी भवभूति में बहुलता में मिलता है। यह अवस्था महावीर चरित्र में है और मालती माधव में अत्यन्त प्रचुरता के साथ पाई जाती है। हो सकता है ऐसा करते समय भवभूति के सामने साहित्य शास्त्रियों का ओज: समासभूयस्त्वमिति गद्यस्य जीवितम् का आदर्श रहा हो। यह अवश्था गद्य काव्यों और निबंधो के लिए प्रशस्त भले ही हो पर नाटक में तो यह अवस्था बैरस्य की उत्पादिका तथा रस प्रतीति में व्यवधान डालने वाली है। महावीर चरित तथा मालती माधव में वे गौरी रीति का प्रयोग करते हैं जिसका लक्षण काव्यानुशासन में इस प्रकार दिया गया है।[4]

गौड़ी रीति के प्रयोग से इन दोनों नाटकों कि स्थिति उत्तर रामचरित से सुतरां भिन्न है। उत्तर रामचरित मानस में करूण रस की व्यंजना है तथा तद्नूकूल कोमल पदों की संघटना है एवं लम्बे समासों एवं कटु वर्णा का अभाव है। इस नाटक में वैर्धभी रीति का कवि ने आशय लिया है जिसका लक्षण इस प्रकार है –

शब्दों तथा वाक्यों के बंधो में कहीं–कहीं सैथिल्य प्रदर्शन होता है। ऐसे भी कुछ वाक्य हैं जो किसी न किसी प्रकार से दोष पूर्ण हैं। पर इसके विपरीत भवभूति की शैली भावनाओं की गहराई तथा उन्हें उतने ही उपयुक्त शब्दों में व्यंजित करने के कारण अपनी प्रभाववुकता में बेजोड़ है।[5] वे गंभीर से गंभीर

* संस्कृत विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

भावों को उतनी समर्थ भाषा में व्यंजित करते हैं जो उस भावना को यथा तथ्य रूप से चित्रित कर देती है। उनकी भाव व्यंजना के विषय में यही कहा जा सकता है।

नवीन उपमाओं की संघटना में भवभूति की शैली कहीं-कहीं कालिदास से भी आगे बढ़ जाती है। संस्कृत के कवियों के नायिका भी आँखों की उपमा मृगी की आँखों से देना बहुत प्रिय था। उनके काव्यों में मृगनयनियों का प्राचुर्य मिलता है।[6] कालिदास की यक्ष वधु की ऑखे समान्य मृगी की ऑखे नहीं अपितु चकित हरणी की ऑखो के समान हैं वह चकित हरिणी प्रेक्षणा (मेघदूत) है एक तो मृगी की ऑखों में स्वाभाविक लौल्य फिर चकित अवस्था में पूछना ही क्या? कभी इधर कभी उधर घमूती रहती है।[7] पर भवभूति को इतने से ही संतोष नहीं हुआ। सीता की आंखे समान हरिणी की आंखों के समान नहीं। उनकी आंखें उस प्रकार चंचल हैं जिसप्रकार एक वर्ष के डरे हुये मृग शावक की आंखे चपल होती हैं। एक तो एक वर्ष का छोटा बच्चा दूसरे त्रस्त! आंखें कभी इस दिशा को कभी उस दिशा को देखेंगी। कालिदास के चकित शब्द में उस स्तब्धता भी हो सकती है पर इस त्रस्त और एकहायन की तो स्थिति ही दूसरी है। यहाँ स्थिरता कहाँ?[8]

कवि के उत्तर रामचरित में वैथर्भी रीति का प्रसार भी दर्शनीय है। भवभूति के ग्रन्थों में सूक्तियों की बहुलता दिखाई पड़ती है भवभूति के मुख से एक बार यदि सुंदर निकल गई तो अवसर आने पर वे उसे पुन: पुन: दोहराते हैं। यही कारण है कि एक ही श्लोक दूसरे ग्रन्थों में भी दुहराया गया मिलता है। ऐसे श्लोक बहुलता से मिलते हैं।[9]

भाषा ही भाव-व्यंजित करने का साधन है। दूसरे शब्दों में वह भावों की वाहिका है। जिस प्रकार शरीर के बिना प्राण की सत्ता नहीं उसी प्रकार भाषा के बिना भी भाव की सत्ता नहीं। समर्थ कवियों में भाषा भाव का अनुगनन करती है।[10] जिस प्रकार के भाव की वर्णना करनी है उसी प्रकार की भाषा ढल जायेगी। समर्थ कवियों की भाषा एक अत्यन्त तरल पदार्थ होती है जो किसी भी ढाल पर ढल जाया करती है।[11] यदि श्रृंगार-रस की वर्णना में कटुवर्ण बहुल भाषा होगी तो यह नितान्त अनुचित तथा अरोचकी बात होगी। इसी प्रकार वीर तथा रौद्र रसों की वर्णना में कोमलकान्तपदावली वाली भाषा दिखाई पडे तो यह अनस्थान बात होगी।[12]

निष्कर्ष - भवभूति की भाषा में भावों की अभिव्यक्ति की अपूर्व शक्ति है। किसी दृश्य को उपस्थित करते समय भाषा उसे मूर्तिमान रूप में उपस्थित कर देती है। भाषा की ध्वनि ऐसी होती है पूरा दृश्य ही ध्वनित हो उठता है। भाषा की शक्ति का ऐसा उदाहरण अन्यत्र दुलर्भ है। 'एते ते कुहरेशु गद्गदद् गोदावरीवारयों' (उत्तर 2/30) इत्यादि उदाहरण इस बात के स्पष्ट द्योतक है। भाषा की शब्दावली ही इस प्रकार ध्वनित हो रही है कि नदी का गद्गदनाद ध्वनित हो उठता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रो. महावीर, वेदों में आर्थिक चिंतन, प्रगतिशील प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ 24
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा भवन, वाराणसी, 1968, पृष्ठ 576
3. पूर्ववत, 321
5. सं सा का इति. आचार्य बलदेव उपाध्याय शारदा भवन वाराणसी, पृष्ठ 322
6. पूर्ववत्
7. सं सा. का इति. आचार्य बलदेव उपाध्याय शारदा भवन वाराणसी, पृष्ठ 323
8. सं. सा. का इतिहास वाचस्पति गैरोला चौ. वि. वाराणासी 1967, पृष्ठ 538
9. सं सा. का इतिहास आचार्य वाचस्पति गैरोला, पृष्ठ 540
10. डॉ. सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव, पातंजलियोगदर्शनम्, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2011, पृष्ठ 357
11. डॉ. एस.एन. दासगुप्त, भारतीय दर्शन का इतिहास (भाग-2), राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1989, पृष्ठ 318
12. डॉ. सच्चिदानन्द मिश्रा, न्यायदर्शन, भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली, 1999, पृष्ठ 360

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

प्राचीन धार्मिक परम्पराओं में प्रतिपादित पर्यावरण संरक्षण

डॉ. दीपक सिंह *

प्रस्तावना – वेदों और उपनिषदों में पंच तत्त्वों, वनस्पति तथा पर्यावरण संरक्षण पर विशेष चर्चा की गई है। प्राचीन मनीषी ऋषि–मुनियों ने शरीर को पंच भौतिक तत्वों से निर्मित माना है और मृत्यु के उपरान्त भी देह वापिस पंच भौतिक तत्वों में विलीन हो जाती है। आत्मां अर्थात् चेतना अविनाशी होने के कारण किसी न किसी रूप में रह जाती है। आत्मा एवम् मन सृष्टि के दो ऐसे मूलभूत तत्व है, जिनका विचार पर्यावरण संरक्षण के संदर्भ में आधुनिक वैज्ञानिकों द्धारा शायद ही किया गया हो। आत्म एवं मन का सीधा सम्बन्ध धर्म से है, धर्म सृष्टि को धारण करने वाला तत्व है। प्रारम्भिक काल में भौतिक प्रगति का आधार था आवश्यकता। धीरे–धीरे आवश्यकता का स्थान सुविधा एवं उपभोग ने ले लिया। वर्तमान में उपभोगवाद की पराकाष्ठा यह है कि मनुष्य ने स्वयं के जीवन एवं स्वास्थ्य को भी सुविधा, सम्पन्नता एवं उपभोग के समक्ष गौण कर दिया है और वह स्वास्थ्य की परवाह न करके वस्तुओं के उपभोग के लिए सतत् प्रयत्नशील है। विडम्बना की बात है कि मात्र सुविधा एवं स्वाथ्य के मूलभूत आवश्यक तत्वों को विकृत किया जा रहा है। महात्मा गाँधी ने कहा था कि 'प्रकृति ने मूल आवश्यकता की पूर्ति के लिए सब कुछ दिया है परन्तु लालच और धान पिपासा को पूरा करने के लिए कुछ भी नहीं।' पूर्व प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने कहा था कि 'पर्यावरण संरक्षण' में रूचि लेना एक भावुकता नहीं है बल्कि मनीषियों ने जिस सत्य की खोज की थी उसका पुन: आविष्कार करना है। भारत की प्रचीनतम संस्कृति अरण्य संस्कृति तो मात्र प्रकृति की उपासना ही है। विश्व की प्राचीनतम मानव सभ्यता के युग से आधुनिक सभ्यता, संस्कृति एवं वैज्ञानिक आविष्कारों का मुख्य आधार भू मण्डल में स्थित प्रमुख चार अवयव जल, अग्नि, वायु और मृदा है। इन चारों वस्तुओं के विषय से सम्बन्धित ज्ञान को वेद कहते है। वेद चार हैं–ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद। इनकी चार अलग–अलग संहिताएं है। भूमण्डल में स्थित चार वस्तुओं में से जल के सम्बन्ध में सामवेद में वर्णन किया गया है। सामवेद में जल के रूपान्तर कार्य तथा गुणों को ज्ञान आदि विश्लेषणात्मक एवं वैज्ञानिक ढंग से सविस्तार उपलब्धा है। ऋग्वेद में अग्नि के बारे में ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। यजुर्वेद में वायु के विभिन्न प्रकार एवं उनके कार्यो के बारे में ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इसी प्रकार अथर्ववेद में मृदा के विभिन्न गुणों के सम्बन्धा में ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। ऋग्वेद में पृथ्वी जल, आकाश तथा वायु को माँ, पिता और पुत्री की तरह स्वीकार किया गया है। शतपथ ब्राह्मण ग्रन्थ में कहा गया है कि सम्पूर्ण जगत जल में व्याप्त है। सम्पूर्ण प्राणियों वनस्पतियों तथा औषधियों में सार तत्व के रूप में जल विद्यमान है, अत: इसे परम रस कहा गया है। यह सब प्राणियों में प्राण का संचार करने के कारण प्राण कहलाता है। श्रृति कहती है कि सूर्य आप (जल) में ही उदय होता है और आप में ही अस्त होता है, यह स्वयं पवित्र है व सभी को पवित्र करने वाला तत्व है। यह अन्न का उत्पादक होने से अन्न भी कहलाता है ऋग्वेद के एक मंत्र में कहा गया है कि वह कौन सा वृक्ष है जिससे ब्रह्म ने सृष्टि की रचना की है इसके उत्तर में कहा गया है कि ब्रह्म रूप वृक्ष से सृष्टि की रचना हुई। विश्व में जो वृक्ष–लताएं, जीव–जन्तु, स्त्री–पुरुष सभी चैतन्य हैं इनका संरक्षण विष्णु ही करते है। महाभारत के रचयिता वेद व्यास ने लिखा है कि फूलों से परिपूर्ण वृक्ष मानव को इस लोक में तृप्त करते हैं जो व्यक्ति वृक्ष का दान करता है, उसे ये वृक्ष पुत्र की ही भांति परलोक में तार देते है। विष्णुपुराण में हरे वृक्षों की कटाई को पाप माना जाता है यथा–

असिपत्रवनं याति वनच्छेदी वृथेव य:।

दुर्गा सप्तशती के एक श्लोक में कहा गया है–

यावद् भूमंडलं धात्ते सशैलंवन काननम्।
तावत् तिष्ठति मेंदिन्यां संन्ती: पुत्रपोत्रिकी।।

अर्थात् जब तक पृथ्वी वृक्षों और पहाड़ों से युक्त रहेगी, तब तक मनुष्यों का पालन–पोषण करती रहेगी। भारतीय संस्कृति में बहुत से ऐसे वृक्ष हैं जो पूजनीय माने जाते है उनकी पूजा बड़ी श्रद्धा से की जाती है प्राचीन काल में जब लोग वृक्षों के नीचे रहते थे तब वे वृक्षों का बड़ा सम्मान करते थे और शान्ति की प्राप्ति के लिए जैसे इन्द्र वरूण आदि देवताओं से प्रार्थना करते है वैसे ही वृक्षों की भी प्रार्थना करते थे।

'वनिनो भवन्तु श्शं नो।' अर्थात् वृक्ष हमारे लिये शान्ति कारक हों। ब्राह्मण ग्रन्थ एवं उपनिषदों में तो पवित्र वृक्षों के नाम तक गिनाये गये है। यज्ञ का जीवन वृक्षों की लकड़ी को माना गया है। यज्ञों में समिधा के निमित्त बरगद, गूलर पीपल और पाकड़ इन्हीं वृक्षों की लकड़ियों को विहित माना गया है और कहा गया है कि यह चारों वृक्ष सूर्य रश्मियों के घर है।

'एते वै गन्धार्वाप्रसरसां गृहम्' बौद्ध गन्थों में तो स्पष्ट वर्णन है कि कुछ देवता वृक्षों पर ही रहते है इसलिये भिक्षुओं के लिए वृक्ष को काटना मना किया गया है, पर जो भिक्षु किसी वृक्ष को काटता है उसे 'पाचितिय' (प्रायश्चित) करना पड़ता है। पीपल, आम, बरगद, आँवला, सिरसा, गूलर, नीम, बेल, बांस, देवदारू, चन्दन, तुलसी आदि के वृक्ष भी पवित्र माने जाते है। बौद्ध धर्म एवं हिन्दु धर्म दोनों में पीपल को विशेष महत्व दिया गया है। बौद्ध जनता इसे बोधिावृक्ष कहकर पूजती है व हिन्दू इसे वासुदेव कहते है। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने 'अश्वत्थ: सर्ववृक्षाणाम्' कह कर पीपल को अपना स्वरूप बतलाया है। हमारे मनीषियों ने पर्यावरण शुद्धिकरण के लिये शान्ति मन्त्रों से स्तवन किया है–

द्यौ: शान्तिरनरिक्षं शान्ति: पृथिवी शान्तिराप:
शान्तिरोपधाय: शान्ति:।
वनस्पतय: शान्तिर्विश्वे देवा: शान्तिर्ब्रह्म शान्तिरू
सर्व शान्ति: शान्तिरेव शान्तिरेधि।।

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर (इतिहास) स्वामी शुकदेवानन्द स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाहजहाँपुर (उत्तर प्रदेश) भारत

भाव यह है कि हमारे लिये आकाश, अन्तरिक्ष, पृथ्वी, जल औषधियाँ, वनस्पतियाँ, विश्वदेव तथा ब्रह्मा सभी शान्ति प्रदान करने वाले हों, चारों ओर शान्ति हो।

इस शान्ति पाठ में पर्यावरण सन्तुलन को बनाये रखने हेतु ऋषियों द्वारा प्रार्थना की गयी है, जिससे स्पष्ट होता है कि वैदिक ऋषि पर्यावरण के प्रत्येक रूप की रक्षा एवं सन्तुलन के प्रति कितने सजग थे। उन्होंने जनसामान्य में श्रद्धाभाव जाग्रत कर प्रकृति के सभी रूपों को अशान्त अर्थात आज के परिप्रेक्ष्य में प्रदूषित न करने की प्रेरणा दी। साथ ही जीवन के प्रति संकट बन रहे प्रदूषण से सजग रहने की प्रेरणा भी दी।

यजुर्वेद में पेड़-पौधों और पशुओं की रक्षा करने की शिक्षा दी गयी है तथा उनको हानि न पहुँचाने का भी उल्लेख प्राप्त होता है। यजुर्वेद में ऋषियों ने पर्यावरण के सभी घटकों की रक्षा के साथ ही यज्ञ की महता को भी पतिपादित किया है तथा प्राकृतिक सन्तुलन बनाये रखने के लिये मानव को प्रेरित किया है। वे चाहते थे कि पर्यावरण के किसी घटक में असन्तुलन न रहें। पारिस्थितिकीय सन्तुलन बना रहे, प्रकृति पूर्ण सौम्यावस्था में रहे।

हमारे ऋषियों ने अपनी प्रखर एवं पैनी दृष्टि से पर्यावरण-परिष्करण के लिये यज्ञ जैसी उत्तम प्रक्रिया का अन्वेषण किया था। शुक्लयजुर्वेद के प्रथम अधयाय में बताया गया है कि अग्नि को आहुतियाँ अर्पित करने का नाम यज्ञ नहीं है अपितु यज्ञ एक भावना है जो समस्त पर्यावरण को सुवासित करती है। वर्तमान में वैज्ञानिकों ने भी इस बात को स्वीकार किया है कि यज्ञ से उत्पन्न धूप से नाइट्रोजन व अमोनिया उत्पन्न होकर वातावरण को कार्बन-डाई-आक्साइड को नष्ट करके वातावरण को शुद्ध बनाती है। शुक्लयजुर्वेद में यज्ञ द्वारा वायु एवं जल को शुद्धि करने के मंत्र दिये गये हैं तथा बताया गया है कि जिस वेद वाणी का यज्ञ में उच्चारण किया जाता है वह भी यज्ञ का ही रूप है क्योंकि इनसे धवनि प्रदूषण नहीं होता है। धवनि प्रदूषण के दुष्परिणाम का मंत्र तथा संगीत के माधयम से भी कम किया जा सकता है। ज्यूरि के डॉ0 हंस जेनी ने धवनि तरंगे किस प्रकार पदार्थ को परिवर्तित करते हैं, का अध्ययन किया है। उन्होंने इस बात की भी खोज की है ओम जैसे मन्त्रों को बार-बार जप करने से तनाव शिथिल हो जाता है तथा व्यक्ति विश्रान्ति एवं आनन्द की अनुभूति करता है। शान्ति कुंज हरिद्वार में गायत्री मंत्र की शक्ति के अनेक परीक्षण किये गये हैं और पाया गया है कि संगीत एवं मंत्र धवनि के घातक प्रभाव को मिटाते है। संगीत की धवनि में लय और तालमेल होता है जिससे हमें आनन्द की प्राप्ति होती है। सुखी एवं स्वस्थ जीवन के लिए पर्यावरण के महत्व को आयुर्वेद ने महत्वपूर्ण स्थान दिया है। आयुर्वेद ने अधर्म को पर्यावरण-प्रदूषण का मूल कारण माना है। अधर्म पर्यावरण को दो प्रकार से प्रभावित करता है, प्रत्यक्ष रूप में ओर परोक्ष रूप में प्रत्येक व्यक्ति का धार्मिक आचरण तीन प्रकार से विभाजित किया जा सकता है- स्वयं के प्रति धर्म समाज के प्रति धर्म एवं प्रकृति के प्रति धर्म।

धर्म के तीनों घटकों के पालन में विसंगति को अधर्म कहा जा सकता है। प्रकृति के प्रति अधर्म प्रत्यक्ष रूप से पर्यावरणय को प्रभावित करता है यह किस रूप में होता है, इसके स्पष्टीकरण के लिये नीचे एक तालिका प्रस्तुत है-

महाभूत	**पर्यावरण प्रदूषण**	**प्रभाव**
1. पृथ्वी	भूमि प्रदूषण	औषधियों एवं खाद्यान्न का हीन गुणयुक्त उत्पन्न होना, भूकम्प, भूमिस्खलन आदि आपदाएं।
2. जल	जल-प्रदूषण	वनस्पति एवं प्राणी स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव, जल के प्रवाह सम्बन्धी उपद्रव-बाढ़, अकाल आदि।
3. तेज	प्रकाश/प्रदूषण	सूर्य प्रकाश की अस्वाभाविकता (अग्नि) प्रदूषण कारण वनस्पति-संरक्षण में बाधा एवं विकारजनक भावों की उत्पत्ति एवं प्राणियों में ऊर्जा (उत्साह) की कमी
4. वायु	वायु-प्रदूषण	वनस्पति एवं प्राणि-स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव।
5. आकाश	धवनि प्रदूषण	वनस्पति एवं प्राणि स्वास्थ्य पर शारीरिक एवं मानसिक प्रभाव।

वर्तमान में प्रकृति के नियमों की अवमानना हर प्रकार से की जा रही है। काल की अवमानना का एक उदाहरण इस प्रकार है ऋतु के अनुसार प्रकृति द्वारा उत्पन्न खाद्य पदार्थ स्वाथ्य के लिये हितकर होता है। इसकी अनदेखी करके विपरीत ऋतु में उसका उत्पादन एवं उपयोग किया जा रहा है। इसी प्रकार दिनचर्या में काल की अवमानना के कई उदाहरण दैनिक जीवन में हमें देखने को मिलते है। प्रचीन काल में रोगोत्पत्ति एवं पर्यावरण प्रदूषण का अधर्म के अतिरिक्त कोई कारण न था, क्योंकि उस समय प्रकृति को दूषित करने वाले अन्य भौतिक साधान उपलब्ध नहीं थे एवं लोगों में प्रकृति के नियमों के प्रति आदर था। वर्तमान में दोनों ही कारणों में विकृति आ गयी है, यही कारण है कि वायु, जल, देश एवं काल का जनपदोधवंसनीय स्वरूप उपस्थित होता जा रहा है। काल के अनुसार धर्म में गुणात्मक परिवर्तन आता है एवं यह सृष्टि का आधाारभूत तत्व होने के कारण पर्यावरण में गुणात्मक कमी का कारण बनती है। सूत्र रूप में यह कहा जा सकता है कि आयुर्वेदीय मत से सुखाय (सुखपूर्वक जीवन यापन) एवं हितायु (प्राणियों के हित में जीवन यापन) श्रेष्ठ काल का निर्माण करती है जबकि दु:खायु (कष्टपूर्वक जीवन यापन) एवं अहितायु (अन्य प्राणियों को दु:ख एवं कष्ट देते हुए जीवन यापन) अवर काल का निर्माण करती है। अत: वर्तमान में सुखायु एवं हितायु की मात्रात्मक एवं गुणात्मक वृद्धि का प्रयास किया जाना चाहिए, जो परिणाम के परिप्रेक्ष्य में यह आयुर्वेदीय सूत्र परम आदरणीय एवं पालनीय है-

सुखार्था: सर्वभूतानां मता: सर्वा: प्रवृत्तय:।
सुखं च न बिना धर्मस्तस्मान्धर्मपरो भवेत्।।

इस तरह धार्मिक ग्रन्थों में कई उल्लेख मिलते हैं जिनसे ये स्पष्ट होता है कि प्राचीन ऋषि मुनियों की दूरदृष्टि तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण ने न केवल पर्यावरण रक्षा की शिक्षा दी अपितु सम्पूर्ण पर्यावरण को संतुलित रखा। आज यज्ञ विषयक वैज्ञानिक अनुसंन्धानों से स्पष्ट हो गया है कि यज्ञ केवल आस्था नहीं बल्कि पर्यावरण संरक्षण का सरल एवं श्रेष्ठ उपाय है। यह वायु प्रदूषण, धवनि प्रदूषण का नियंत्रक होने के साथ-साथ विभिन्न रोगों के निदान में भी महत्वपूर्ण साधान है। इस प्रकार हम देखते है कि वेदों के वर्णन आज के परिप्रेक्ष्य में विशेष उपयोगी है। आज जबकि प्रदूषण सम्पूर्ण प्रकृति में व्याप्त हो रहा है, तब वेद की शिक्षाओं को अपनाना परम आवश्यक है ताकि इस धारा का पुन: उज्जवल बनाया जा सके एवं पर्यावरण को प्रदूषण से मुक्त रखा जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तलवार, एस.सी., पर्यावरण संरक्षण, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर-2001
2. ऋग्वेद खण्ड दो सूत्र-55

3. आवैभिवां इदं सर्वमाप्त 4-5-77 शब्रा
4. आपो हेवा औषधीशं रस, 3, 1,2,10 शब्रा,
5. आपो वै, प्राण-3,8,2,4 श,ब्रा,
6. पवित्रा व आप : 3,1,2,10 श.ब्रा,
7. अना वा आप, 2,1,1,3, श.ब्रा,
8. ऋग्वेद 10-129-7,
9. ऋग्वेद 7-35-5,
10. शत. ब्रा 1,15,14,11,
11. यजुर्वेद 36/17,
12. यजुर्वेद 36/18,
13. यजुर्वेद 36/10,
14. यजुर्वेद 13/18,
15. यजुर्वेद 36/12,
16. यजुर्वेद 4/1,
17. यजुर्वेद 13/27,
18. यजुर्वेद 36/22,
19. यजुर्वेद 14/18,
20. अष्टागहृदय 2/20

****

A study of satisfaction level of Hunar Se Rozgar Tak Trainees after Training with special reference to Udaipur

Prof. Ashok Singh * Om Prakash Meena**

Abstract - Hunar se rozgar tak is a central government funded programme which provides short term courses of six to eight weeks without charging anything. For hospitality sector ministry of tourism introduced capacity building for service providers scheme for increasing skilled manpower**.** The initiative targeted persons with not much means and in need to acquire skills facilitative of employment. It is open for any 8th pass person of age between 18-28. Many candidates have completed HSRT course from affiliated institute, hotels of Udaipur. This paper shows the satisfaction level of HSRT trainees in Hotel. Percentage and mean was applied to find out the result.
Key Words: Hotel industry, Skill development.

Introduction - Hunar se rozgar tak is a central government funded programme which provides short term courses of six to eight weeks without charging anything. For hospitality sector ministry of tourism introduced capacity building for service providers scheme for increasing skilled manpower**.** The initiative targeted persons with not much means and in need to acquire skills facilitative of employment. It is open for any 8th pass person of age between 18-28.

Conduction of HSTR Training Programmes

Food Craft Institute, Udaipur – Overview - Food Craft Institute, Udaipur was established in 1989 by the Govt. of India and Govt. of Rajasthan, Institute is affiliated to National Council for Hotel Management and Catering Technology, Noida. In 2017, institute has been upgraded in State Institute of Hotel Management. The institute is running various types of hospitality courses. Institute has running one and half year trade diplomas in various trades like Food Production, Food & Beverage Service, Front office Operation and House Keeping. Institute has also running various types of Government Skills Development programmes under Capacity Building of Service Providers like **Skill Certification programmes, Hunar Se Rozgar Tak** for hotel industry. Udaipur is a famous tourist destination in Rajasthan and here a number of five star hotels, small hotels have arrived in this area to facilitate the domestic and international tourist. So keeping in view of requirement of trained skilled manpower for guest satisfaction, , better interaction. During 29 years of Hospitality Education, Institute achieved academic excellence and Institute has a best placement record in hotel industry in Udaipur.

Ministry of tourism, Government of India was started skill development programmes in 2009. First certificate course for waiters under Hunar se Rozgar Tak was started in 2010 at Food Craft Institute with 22 students. Since 2017, approx. 997 trainees trained under Hunar se Rozgar tak in various trades by the training institute and Approx. 265 trainees trained by the different hotels in Udaipur,

Training conducted by the State Government/ Union Territory Administration - The State/Union Territory Governments have been given the mandate to select suitable Institutes both government and private for implementation of the HSRT initiative. However, financial assistance are paid to the State / Union Territory Government and Government disburses the same to the Institutes selected as Implementing Agencies. The objective of this extension is to reach out to the young eligible persons in much greater numbers.

Training conducted by Star Category Hotels - To give boost to the HSRT, the Ministry of Tourism has established partnership with Hotel Association of India and Federation of Hotel Restaurants Association of India for training in classified hotels. Besides, developing skilled labour has been made mandatory for hotels from the date of classification and the guidelines for classification / re-classification of hotels have been amended. The main goal of this strategy is to synergize the efforts of Ministry of Tourism and the hotel industry to skill persons in trades specific to hospitality trades.

Review of literature - Ministry of tourism market research (2016) from this study it was found that not all trainees are interested to take placement or work in hotel industry. When researcher tried to find out reasons for it, they found that some of were not interested to work, some of them said that the job offer by hotel was not encouraging. Further study shows that majority of trainees of HSRT working in industry mentioned that they got job by their own

*Professor (Director) (Tourism and Hotel Management) Mohanlal Sukhadia University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar (Tourism & Hotel Management) Mohanlal Sukhadia University, Udaipur (Raj.) INDIA

efforts however, only few mentioned that they got job through institution.

Also mentioned in study about proposed programme of HSRT "Earn while you learn" and "campaign clean India. Programme started in Delhi first on pilot basis.

Study on "evaluating effectiveness of hunar se rozgar tak (HSRT) scheme"-2016.

S.	States/UT	No of trainees trained under Hunar Se Rozgar Tak			
		2012-13	2013-14	2014-15	Total
1.	Andaman and Nicobar islands	0	0	0	0
2.	Andhra Pradesh	0	300	0	300
3.	Arunachal Pradesh	0	400	0	400
4.	Assam	0	0	0	0
5.	Bihar	0	166	315	481
6.	Chandigarh	0	0	0	0
7.	Chhattisgarh	0	0	0	0
8.	Dadra and Nagar Haveli	0	0	0	0
9.	Daman and Diu	0	0	0	0
10.	Delhi	0	0	0	0
11.	Goa	0	0	0	0
12.	Gujarat	0	0	0	0
13.	Haryana	0	810	1401	2211
14.	Himachal Pradesh	0	0	233	233
15.	Jammu & Kashmir	0	0	0	0
16.	Jharkhand	0	0	0	0
17.	Karnataka	1529	6700	6900	15129
18.	Kerala	298	0	258	556
19.	Lakshadweep	0	0	0	0
20.	Madhya Pradesh	1339	2257	916	4512
21.	Maharashtra	25	0	285	310
22.	Manipur	0	150	350	500
23.	Meghalaya	0	0	0	0
24.	Mizoram	0	0	0	0
25.	Nagaland	0	0	0	0
26.	Odisha	1000	1500	750	3250
27.	Puducherry	0	0	0	0
28.	Punjab	0	3308	1906	5214
29.	Rajasthan	499	2546	0	3045
30.	Sikkim	0	150	0	150
31.	Tamil Nadu	0	0	0	0
32.	Telangana	0	0	0	0
33.	Tripura	62	0	0	62
34.	Uttar Pradesh	1350	155	20	1525
35.	Uttarakhand	1408	4085	5853	11346
36.	West Bengal	0	2321	0	2321
	Total	7,510	24,848	19,187	51,545

Source: STUDY ON "EVALUATING EFFECTIVENESS OF HUNAR SE ROZGAR TAK (HSRT) SCHEME"-2016.

The study show that a total number of 51545 trainees have been trained by the State Governments under Hunar se Rozgar Tak scheme during 2012-13, 2013-14, 2014-15. While 7,510 trainees were trained by the state governments under Hunar se Rozgar Tak scheme during 2012-13. During 2013-14, 24,848 trainees were trained, and 19,187 trainees were trained during 2014-15.

Out of 36 states/Union Territories, 18 states governments have taken initiatives in providing trainings to the target group under HSRT scheme during 2012-13, 2013-14, 2014-15. It was observed that there is variation in performances across states in implementing Hunar Se Rozgar Tak Scheme during 2012-13, 2013-14, 2014-15.

As per the table it can be observed that Karnataka and Uttarakhand State Governments has given very good performance providing training to more than 10000 beneficiaries under the scheme during the reference period; while Punjab, Madhya Pradesh, Odisha and Rajasthan State Governments have given good performance by providing training to more than 4000 beneficiaries under the scheme. Further, West Bengal, Haryana and Uttar Pradesh State Government gave average performance by providing training to more than 1000beneficiaries under the scheme. The performance of Kerala, Manipur, Bihar, Maharashtra, Andhra Pradesh, Himachal Pradesh, Sikkim and Tripura State Governments can be rated as poor since less than 1000 beneficiaries have been trained under HSRT Scheme by the concerned State Governments during 2012-13, 2013-14and 2014-15.

Research Methodology - Sampling and sample size: convenience sampling was adopted with sample size of 218.

Statistical tools: mean were used to find out the satisfaction level of trained staff by HSRT.

Table 1.: Job Satisfaction after HSRT Training

Factors	Mean Score	Result
Job security	3.48	**Satisfied**
Job profile	3.50	**Satisfied**
Employment leaves	3.50	**Satisfied**
Working hours	3.71	**Satisfied**
Management policies like insurance & PF	3.21	**Neutral**

Chart 4.6.2: Job Satisfaction after HSRT Training

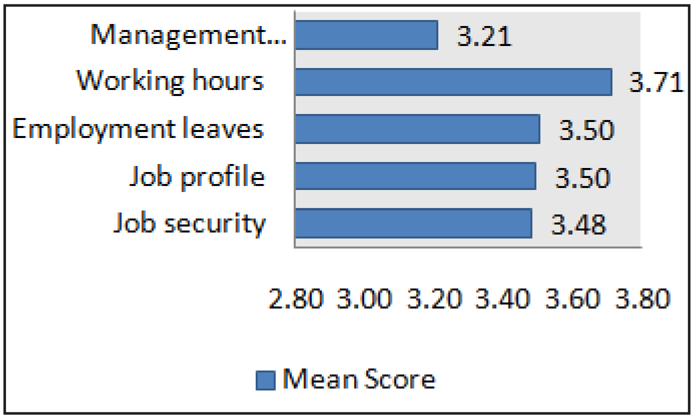

Job Satisfaction after HSRT Training - After the completion of HSRT training program the respondents were asked to indicate their job satisfaction. It has been observed

that after HSRT training respondents are satisfied with Job security (Mean Score=3.48), Job profile (Mean Score=3.50), Employment leaves (Mean Score=3.50), and Working hours (Mean Score=3.71). The respondents have indicated neither satisfaction nor dissatisfaction with Management policies (Mean Score=2.17).

Conclusion - From the above study it can be concluded that person who is joining hotel industry after HSRT training are satisfied with working hours, Job profile, Employment leaves, however, they feels that management policies like PF, Insurance are not as per their expectation. Therefore, hotels needs to improve their policies like Provided Fund , insurance etc.

References :-

1. Paper, T. (2013, January). Engaging Diaspora: The Indian Growth Story. *Eleventh Pravasi Bharatiya Divas* , p. 36.
2. SECRETARIAT (2013, August). Tourism Sector in India. *REFERENCE NOTE .* , pp. 2-4.
3. Department of Tourism, G. o. (2012-13). *Annual Activities Report.* Bhubaneswar: Department of Tourism.
4. Shiksha. (2012, Oct 17). Retrieved November 20, 2017, from https://www.shiksha.com/: https://www.shiksha.com/hospitality-travel/hotel-hospitality-management/articles/irctc-offers-skill-training-in-hospitality-blogId-5061
5. Raju, K. S. (2012, July). SIHRA initiatives. p. 18.
6. Sharma, R. (2012, November). Imparting skills and giving jobs too. *HARYANA REVIEW , 26* (11), pp. 48-49.
7. Gupta, A. (2012, July). Hunar Se Rojgar Programme. *GREAT MANGLA TIMES , 1* (12), p. 2
8. Chakraborty, A. (2012). *Hunar Se Rozgar Yojana.* New Delhi: DDP Publications.
9. Hiremath, S. (2012, November). Hunar Sr Rozgar Tak. *GCCI Bulletin* , p. 36.
10. http://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/110039/8/08_chapter%203.pdf

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

छत्तीसगढ़ की साहित्य परम्परा में पं.श्यामलाल चतुर्वेदी जी का अवदान

डॉ. श्रद्धा मेश्राम * त्रिलोकी सिंह क्षत्री **

प्रस्तावना - भारत विश्व का ऐसा देश है जो अन्य देशों के लिए सदैव आकर्षण का केन्द्र रहा है। भारत के मध्य में स्थित मध्य प्रदेश और उससे निकलकर 1 नवम्बर सन् 2000 में स्वतंत्र एवं पूर्ण राज्य के रूप में अस्तित्व में आया राज्य छत्तीसगढ़। छत्तीसगढ़ राज्य को प्रकृति ने भी मानों बड़े ही उदारता से अपने दोनों हाथ खोल कर सजाया और संवारा है। यहॉं का वन आच्छादित क्षेत्र व रत्नगर्भा भूमि, इतना ही नहीं अपनी ऐतिहासिकता के लिए भी यह क्षेत्र हर युग में अलग-अलग नामों से विख्यात रहा है। अपनी सांस्कृति विविधता लोक जीवन, रीति-नीति, लोक - परम्परा, लोक गीत, लोक नृत्य आदि विभिन्न विशेषताओं से इस राज्य का इतिहास सदैव ही समृद्ध रहा है। इस पावन धरा ने अपनी गोद में ऐसे-ऐसे सपूत देश को दिया जो अपने व्यक्तित्व और कृतित्व के कारण इतिहास में अमर हो गये। छत्तीसगढ़ के इसी पावन भूमि में एक ऐसे ही महान् साहित्यकार व पत्रकार का जन्म हुआ जिसने अपनी मातृभूमी का नाम रौशन किया। एक ऐसा साहित्य का पुरोधा जिसने न केवल छत्तीसगढ़ी भाषा में साहित्य सृजन का कार्य किया बल्कि उसे नया मुकाम दिलाया। जिसकी लेखनी हिन्दी व छत्तीसगढ़ी दोनों भाषाओं में समान भाव से चली। एक ऐसा व्यक्तित्व जो संरक्षक है अपनी लोक परम्पराओं का, जिसने जिया अपनी परम्पराओं को, जिसके कथनी और करनी में कोई विशेष अंतर नहीं मिलता।

छत्तीसगढ़ के माटीपुत्र, जिसने अपने शुभ कर्मो के द्वारा अपनी मातृभूमि, छत्तीसगढ़ राज्य को गौरवान्वित किया। छत्तीसगढ़ी साहित्य को समृद्धि प्रदान किया। वर्तमान में छत्तीसगढ़ शासन ने जिसे **'पद्म श्री'** के सम्मान से सम्मानित किया है। जो**'छत्तीसगढ़ के रखवार'** के नाम से प्रसिद्ध है। छत्तीसगढ़ के इस महान साहित्यकार का नाम है **पं. श्यामलाल चतुर्वेदी जी।** चतुर्वेदी जी को **'छत्तीसगढ़ राजभाषा आयोग'** के प्रथम अध्यक्ष पद पर रहने का गौरव प्राप्त है। पं.श्यामलाल चतुर्वेदी जी किसी परिचय के मोहताज नहीं है। इनका कर्म ही ऐसा पावन और पुनित है, कि ये लोगों के दिलों में राज करते है। चतुर्वेदी जी की रचनाओं में सबसे बडी विशेषता यह है कि इन्होंने साहित्य साधना के लिए अपनी मातृभाषा छत्तीसगढ़ी को चुना। एक तरफ अपनी मातृभाषा छत्तीसगढ़ी में साहित्य सृजन कर मातृभाषा छत्तीसगढ़ी का मान बढ़ाया वहीं छत्तीसगढ़ी भाषा में भावनाओं को व्यक्त करने की पूर्ण क्षमता है इससे सबको अवगत कराया। चतुर्वेदी जी की रचनाओं में सबसे बडी विशेषता यह है कि इन्होंने साहित्य साधना नाम कमाने के उद्देश्य से नहीं वरन् इनकी रचनाऍ इनके हृदय के उद्गार हैं। चतुर्वेदी जी की रचनाऍ अनुभूति परक है इसीलिए वास्तविकता के धरातल पर खड़े प्रतीत होते है। जिसमें कल्पनाओं का कोई विशेष स्थान नहीं है। चतुर्वेदी जी की रचनाओं में छत्तीसगढ़ की मेहनतकश, भोली-भाली, और ग्रामांचल में अभावों के बाद भी जीवन के हर रंग को जिंदादिली से जी रहे ग्रामीण जीवन का जीवंत चित्रण मिलता है। बिना किसी अतिश्योक्ति के जीवन के वास्तविक धरातल पर आपकी रचनाऍ सीधे हृदय में प्रवेश कर जाती है। 'बेटी के बिदा में' जहॉं चतुर्वेदी जी ने बिदाई के करूण और हृदय विदारक बेला का जीवंत चित्रण किया है। वधु पक्ष में किस तरह से वधु के पाणिग्रहण होने पर माता-पिता को परम संतोष होता है, वहीं अपनी लाडली बिटिया को अपनों से दूर जाते देखना। एक-दूसरे के गले से लिपटकर आंखों से गंगा-जमुना की अविरल धारा का प्रवाहित होना। सुख और दु:ख का ऐसा संगम जो दोनों एक ही साथ एक ही समय पर चित्रित करना कोई सरल कार्य नहीं है। दृष्टव्य है कुछ पंक्तियॉं-

जिवराखन हर चल देही, तव जीव रहे म का हे,? 23
बेटी जनमा के जानेंव, का गुरतुर का कस्सा हे?
एक तो बेटी झन होतिस, होतिस त बिदा झन करतिस।
पर जातिस बिदा करे बर, ॲधरी भैरी कर देतिस।।

ऐसे ही 'कर्म प्रधान विश्व रचि राखा य' की मूल भावना को सार्थक करते हुए 'ये धरती करमइता के हय य'नामक शीर्षक से दृष्टव्य है कुछ पंक्तियॉं-

हमर बनौर बनौकी हमर हाथ म,भल अनभल मन चाही। 88
लंगटा कस चाहे दिन काटी, चाहे राजा साही।।
सिरजोइया संसार बनोइया, सब के चेत रखइया।
दुनिया म सब जिनिस बनादिस पाही काम करइया।
कर्ता के ये पिथ्वी हर ये,करम करव लौ लाहो ।
मीठ्ठ फरे हे आमा, खहौ तव सेवाद ल पाहौ।।
मेहनत कर उजोग म रइही, तउने तो सूख पाही।
ठलहा हांथ पांव बिन सरकाये,लुआठ ल खही।।

चतुर्वेदी जी ने छत्तीसगढ़ी गद्य और पद्य दोनों में समान लेखनी चलाई है। इन सबसे बढ़कर इन्होनें पत्रकारिता में भी बड़ी उत्साह के साथ काम किया है। चतुर्वेदी जी की गद्य रचनाऍ 'भोलवा भोलाराम बनिस' में संग्रहित हैं। जिसमें नौ अनमोल कहानियों का संग्रह है। कहानियां जहां सरल, सहज और ग्रामीण परिवेष का चित्रण करती हैं, वहीं उसमें रोचकता और कौतूहल (उत्सुकता) भी बनी रहती है। ग्रामीण जीवन पर प्रत्येक रचना अनमोल मोती हैं, जिसे ठेठ छत्तीसगढ़ी भाषा में लिखा गया है। कहानी को पढ़ते समय पाठक गण कभी दु:ख से द्रवित हो जाते है, तो कभी कहानी को पढ़ते-पढ़ते अकेले ही ठहाके मारकर हॅसने से अपने आप को रोक नहीं पाते क्यों कि कहानियों का वर्णन इतना सजीव व मार्मिक है, जो कहानी में डूब न जाये शायद ही ऐसा कोई पाषाण हृदयी होगा। चतुर्वेदी जी की कहानियों में ग्रामांचल जैसे सजीव हो उठता है। गांवो के रीति-रिवाज, तीज-त्यौहार, गांव का चौपाल, खेत-

*सहायक प्राध्यपक (हिन्दी) डॉ.सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
**शोधार्थी , एम. फिल.- सेमेस्टर द्वितीय (हिन्दी) डॉ.सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग) भारत

खलिहान उस पर असली ठेठ छत्तीसगढ़ी भाषा का चयन जैसे सोने पे सुहागा। कहानियों में मुहावरों और कहावतों का प्रयोग दृश्टव्य है– 'मिरगिन बरोबर मेछरावत हे'। 'मसर मोटी माते हे, बांड़ी मनला'। 'बिनानाथ के बइला कस ढ़िल्ला'। 'मया हर लेवना कस टपके लागिस'। 'आन ल सिखौना दय, अपन बइठ रनिया लय'। 'गोड़ के पथरा ल गुड़ में कचार दिस'। 'दही के भोरहा म कपास ल नइ खान'। 'थूंके–थूंक मा लड़ुवा बांधथे'।34 'हंडिया के मंह म पराई देहा, फेर आदमी के मुंह मा का देहा' । 41 'जियत भर आदमी कतका उधामत करथे, फेर मरे के बेर सब जुच्छा के जुच्छा' । 42 बिन लइका बच्चा के खाए अन्न चाउर होवत हे । 70 ऐसे अनेक उदाहरण भरे पड़े है इनकी कहानियों में। जैसा की विख्यात कहानीकार व उपन्यास सम्राट प्रेमचंद जी ने कहानी के विषय में कहा है, कि 'कहानी का मजा कहने में है और कहने का तरीका हर आदमी का अलग–अलग होता है'। वास्तव में मुंशी प्रेमचंद जी के बाद कहानियों में ग्रामीण जीवन का चित्रण किसी की रचनाओं में मिलता है, तो वह पं. श्यामलाल चतुर्वेदी जी। चतुर्वेदी जी की रचनाओं के बगैर मानों छत्तीसगढ़ी साहित्य अधूरा सा जान पड़ता है। छत्तीसगढ़ी साहित्यकारों की लम्बी सूची है जिन्होंने अपनी–अपनी लेखनी के माध्यम से अपने भावों को साहित्य में उकेरा किन्तु चतुर्वेदी जी की कृतियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है, कि ये ठेठ देहाती छत्तीसगढ़ी का प्रयोग करते हैं। चतुर्वेदी जी का छत्तीसगढ़ी भाषा का शब्द भण्डार समृद्ध तो है ही साथ ही सुरूचि पूर्ण भी हैं। चतुर्वेदी जी की भाषा ठेठ होने पर भी जटिल नहीं लगती ठेठ होने के साथ ही सरल, सहज और मुहावरेदार भी है। मुहावरे बड़े कीमती होते हैं, क्योंकि इनके प्रयोग से भाषा निखरती है, खिल उठती है। चतुर्वेदी जी के जीवन परिचय से पता चलता है, कि इनका शैक्षणिक कार्य रूकावटों के दौर से गुजरा है किन्तु इन्होंने अपनी रचनाओं से सिद्ध कर दिया हैं कि अनुभव मायने रखतें हैं न कि डिग्रियॉ। चतुर्वेदी जी की रचनाओं को पढ़ते समय पाठकों का चित्ता ग्रामीण जन –जीवन में रम जाता है। गांवो का ऐसा सजीव चित्रण छत्तीसगढ़ी साहित्य में अन्यत्र दुर्लभ है जो चतुर्वेदी जी की रचनाओं में हमें देखने को मिलता हैं। चतुर्वेदी जी की कृतियॉ स्वयमेव ही अपने आप में शोध है। फिर भी उनकी रचनाओं में शोधकार्य हुए हैं और हो भी रहे हैं। चतुर्वेदी जी पटु पत्रकार होने के साथ ही हिन्दी कवि, व्यंगकार, निबंधकार के साथ जनपदीय भाषा छत्तीसगढ़ी के प्रतिनिधि, कवि, लोक – साहित्य के अध्येता, कुशल कथाकार के रूप में उल्लेखनीय स्थान रखते हैं क्यों कि चतुर्वेदी जी न सिर्फ लिखते है अपितु उसे जीते भी हैं। शायद यही कारण है, कि चतुर्वेदी जी की रचनाएॅ सीधे हृदय में उतरती है। चतुर्वेदी जी एक कवि, लेखक, पत्रकार और निबंधकार के रूप में आज भी 85 वर्ष के उम्र में निरंतर अपनी लेखनी से कर्म किये जा रहे है।

समाज की परम्परा खासकर ग्रामीण जीवन से जुड़ी परम्पराओं के रखवार के रूप में चतुर्वेदी जी का योगदान समाज के लिए विशेष महत्वपूर्ण है। चतुर्वेदी जी की कृतियों में सन् 1987 में एम.ए. में श्री श्यामसुदर ने पं. श्यामलाल चतुर्वेदी व्यक्तित्व–कृतित्व शीर्षक से डॉ. विनय कुमार पाठक के निर्देशन में लघुशोध प्रबंध प्रस्तुत किया। इससे पूर्व सन् 1987 में ही डॉ. आशा दीवान ने 'पर्रा भर लाई' एक विश्लेषण विषय पर अधिशोध प्रबंध प्रस्तुत किया। इसके बाद डॉ. महेश कुमार जोशी ने पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय रायपुर में पं. द्वारिका प्रसाद तिवारी, विप्र एवं उनके समसामयिक छत्तीसगढ़ के साहित्यकारों का तुलनात्मक अनुशीलन (1987) विषय पर शोध प्रबंध प्रस्तुत करके समसामयिक साहित्यकार के रूप में चतुर्वेदी जी को समावेशित किया। इस प्रकार डॉ. राजेश कुमार दुबे ने समकालीन छत्तीसगढ़ी साहित्य के संदर्भ में पं. श्यामलाल चतुर्वेदी जी के काव्य का अनुशीलन विषय पर शोध–प्रबंध करके सन् 1999 में पी.एच.डी. की उपाधि अर्जित की। पं. श्यामलाल चतुर्वेदी जी की रचनाएॅ जहॉ एक ओर हमें ग्रामीण जीवन के अभावों से अवगत कराती है, वहीं वहॉ पर रहे रहे लोगों के जीवन–शैली का भी दर्शन कराती है। चतुर्वेदी जी की निबंध संग्रह 'मेरे निबंध' में संग्रहित अन्नदान का महायज्ञ 'छेर–छेरा' में जिस प्रकार छेर–छेरा पर्व पर गरीब–अमीर, कमिया–मालिक, ऊँच –नीच हर वर्ग के बच्चे एक साथ अधिकार से घर–घर जा कर सुबह से ही आवाज लगाते हैं 'छेर–छेरा माई कोठी के धान ल हेरते हेरा' में जो समान, समरसता का भाव है, वह कहीं न कहीं एक–दूसरे को आपस में जोड़ने का, एकता व भाईचारा का संदेश देता हुआ जीवन निर्वाह की प्रेणता देती है। वास्तव में आज जहॉ लोग अपनी निजी स्वार्थो में लिप्त होकर नैतिक और मानवीय गुणों को भूलते जा रहें वहीं चतुर्वेदी जी की कृतियॉ हमें मानवता का पाठ पढ़ाता है। आनेवाली पीढ़ी को इसकी विशेष आवश्यकता है। अत: पं. श्यामलाल चतुर्वेदी जी की रचनाएॅ न सिर्फ विद्यार्थियों शोधार्थियों के लिए वरन् पूरे मावन समाज के लिए महत्वपूर्ण है। साहित्य जगत में एक से बढ़कर एक साहित्यकार हुए। जिन्होनें अपने साहित्य साधना के कार्य काल में बहुत सी रचनाएॅ भेंटकर साहित्य जगत को समृद्ध किया।

पं. श्यामलाल चतुर्वेदी जी ने न सिर्फ पत्रकारिता जगत को अपितु हिन्दी साहित्य के साथ छत्तीसगढ़ी साहित्य को समृद्ध बनाने में अभूतपूर्व योगदान दिया है। अनेक पत्र पत्रिकाओं के प्रतिनिधि, संपादन, रचनाएॅ प्रकाशित साथ ही पद्य रचनाएं, गद्य रचनाएॅ इसके अन्तर्गत पर्राभर लाई (पद्य) में 20 एक से बढ़कर एक रचनाएॅ वहीं रामबनवास शीर्षक में छत्तीसगढ़ी पद्य खण्ड काव्य, 'भोलवा भोला राम बनिस' निबंध संग्रह में 9 श्रेणी कहानियॉ संकलित है इसके अलावा मेरे निबंध में 20 निबंध है। आज भी बिना रूके, बिना थके चतुर्वेदी जी का साहित्य साधना निर्बाध गति से चल रही है। विद्यार्थी व समाज के प्रबुद्ध जन अधिक से अधिक अपनी रीति–नीति, लोक–परम्परा, लोक– साहित्य को जान सकें यही इस लघु शोध का महत्व होगा। इस लघु शोध के माध्यम से यह प्रयास होगा की छत्तीसगढ़ी भाषा में भी भावाभिव्यक्यित पूर्ण क्षमता है इस बात को बताना। चतुर्वेदी जी ने अपनी मातृ भाषा को अपनी साधना का माध्यम बनाकर तथा छत्तीसगढ़ी भाषा में साहित्य सृजन कर सिद्ध कर दिया कि अगर मन में चाह है तो सब कुछ संभव है। चतुर्वेदी जी की रचनाएॅ मूलत: ग्रामीण जीवन पर आधारित है वास्तव में चतुर्वेदी जी जनपदीय रचनाकार के रूप में स्थापित है। समय–समय पे विभिन्न आकाशवाणी केन्द्रों से उनकी रचनाओं का प्रसारण भी होता रहा है। जिंदगी के इस भागती–दौड़ती सफर में जहॉ अनेक ऊतार–चढ़ाव के बीच अपनी साहित्य साधना को निर्बाध गति से आगे बढ़ाते हुए ग्रामीण जीवन के प्रति लगाव और यथार्थ चित्रण कर अपने दायित्वों का निर्वहन कर रहे है। गांव में जन्में ग्राम के प्रति अपार प्रेम ग्रामीण जीवन के प्रति अटूट श्रद्धा भाव और अपनी जन्म भूमि की निरंतर सेवा कर रहे चतुर्वेदी जी की इस साहित्य साधना को अधिक से अधिक लोगों तक पहुचाना ही इस शोधपत्र का महत्व होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जनपदीय रचनाकार श्यामलाल चतुर्वेदी की साहित्य साधना–डॉ. आशा दीवान– मित्त एण्ड संस, दिल्ली।
2. मेरे निबंध –श्यामलाल चतुर्वेदी –श्री लब्धि सूरि फाउंडेशन दुर्ग।
3. पं.श्यामलाल चतुर्वेदी और उनकी साहित्य साधना–डॉ. सुषमा शर्मा–

जैमसशन प्रकाशन बिलासपुर।

4. पर्रा भर लाई(छत्तीसगढ़ी कविता संग्रह) - पं.श्यामलाल चतुर्वेदी- भारतेन्दु साहित्य समिति बिलासपुर।

- बेटी के बिदा। 23
- ये धरती करमइता के हय। 88

5. भोलवा भोलाराम बनिस(छत्तीसगढ़ी कहानी संग्रह)- पं.श्यामलाल चतुर्वेदी- भारतेन्दु साहित्य समिति बिलासपुर।

- बटोन नहीं बहोरन चाही।24
- पतिबरता के पानी। 41
- सतवंतिन सुकवारा।42
- मयारू मनमतिया।70

****

Impact of NPA on performance of M.P. State Co-operative Bank Bhopal

Dr. G.C. Gupta * Dr. R.B. Gupta ** Sadabati Thakur ***

Introduction - Co-operative banks have played an important role in the Indian financial system and the credit co-operative system of India, especially at the rural level. In rural finance, the co-operative credit society has no alternative except the traditional system called money lenders act as a means of reaching the last man in need. Still in these, new flourishing socio economic environment, several commercial banks are extending their branches in rural areas but they have not fulfilled to achieve the desired goal because of security conscious habits and urban orientations of manpower. Until now, co-operatives are the most efficient and successful institution a source to serve rural areas of India.

Profile of the Bank - The **Madhya Pradesh State Cooperative Bank Ltd.** had been registered on 02/04/1912 (Under Cooperative Act 1912, dhara 2) at Jabalpur naming "Provisional Cooperative Bank Ltd. Central Provinces brar", later on its Head Office has been transferred to Nagpur. Bank has started its operations with the initial capital of Rs.5.00 lakhs aiming to provide finance in the field of Agriculture.

It is a premier organization providing long term, medium term and short term Agriculture finance in the state with help of NABARD through District Central Co-operative Banks and Primary Agriculture Credit Cooperatives Societies (PACCs) to farmers & different strata of the society in order to fulfil their financial requirements. Apex Bank is operating with their 24 Branches in the State serving through the attractive Loan and deposit schemes. Apex Bank is playing a pivotal in the field of providing rural finance in the M.P. State providing Agriculture/Non-Agriculture Loans and Advances with the help of NABARD under various schemes also offering commercial loans to customer under the Loan portfolio such as Consumer Loans, Housing Loan, Higher Education Loan, Project Loan, Vehicle Loan etc.

Non-Performing Assets (NPA) - Non-Performing Assets are also called as Non-Performing Loans. These are loans on which interest payments or repayments are not being made as per the schedule. Banks treat their assets as non-performing when they are not serviced for some period of time. When the payments are late for short duration of time the loan is called as Past Due. But after payments are late for longer term (normally 90 days), the loan then is classified as being Non-Performing.

Classification Of NPAs

a. **Standard Assets -** Standard assets are those assets which does not disclose any problem and which does not carry more than normal risk attached to business. Thus in general, all the current loans, agricultural and non-agricultural loans, which have not become NPA, may be treated as Standard Assets.

b. **Sub-Standard Assets -**

A. An asset which has remained overdue for a period not exceeding 3 years in respect of both agricultural and non-agricultural loans, should be treated as sub-standard asset.

B. In case of all the types of term loans, where instalments are overdue for a period not exceeding 3 years, the entire outstanding in term loans should be treated as sub-standard assets.

C. An asset where the terms and conditions of the loans regarding the payment of interest and/or payment of principal have been renegotiated or rescheduled, after commencement of production, should be classified as sub-standard asset and should remain so in such category for at least two years of satisfactory performance under renegotiated or rescheduled terms.

c. **Doubtful Assets -** These are the assets the recovery of which is highly questionable and impossible. It is usually a non-performing asset for a period exceeding 3 years in respect of both agricultural and non-agricultural loans. In the case of all types of term loans, where instalments are overdue for more than 3 years, the entire outstanding term loans should be treated as doubtful asset. As in the case of sub-standard assets, rescheduling does not entitle a bank to upgrade the quality of advance automatically.

d. **Loss Assets -** Loss assets are those credit facilities where loss is identified by the bank/auditor/RBI/ NABARD inspectors but the amount has not been written off wholly or partly. In other words, a loan asset which is considered unrealizable and/or of such little value that its continuance

***Swami Vivekanand Govt. College, Susner, Distt. Agar-Malwa (M.P.) INDIA**
**** Shri AtalBihari Vajpayee Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA**
***** Research Scholar, Shri AtalBihari Vajpayee Govt. Arts & Commerce College,Indore (M.P.) INDIA**

as a doubtful asset is not worthwhile, should be treated as a loss asset. Such loss assets will include overdue loans where (a) decrees or execution petitions have become time barred or documents are lost or no other legal proof is available to claim the debt., (b) the members or their sureties are declared insolvent, or have died leaving no tangible realizable assets, (c) the members have left the area of operation of the bank (refers to the borrower in whose name the respective Loan Account with SCB/DCCB) leaving no property and their sureties, have also no means to pay the dues, (d) the loan is fictitious or when gross mis-utilisation is noticed, (e) the amount, which cannot be recovered from the liquidated societies.

Objectives of the study :

1. To study the concept and nature of Non-Performing Assets of the M.P State Co-operative bank Ltd., Bhopal.
2. To study the impact of Non-Performing Assets of the M.P State Co-operative bank Ltd., Bhopal.

Limitations of the study :

i. The study covered a period of five years, i.e., 2010-11 to 2014-15.
ii. As the findings and conclusions of this study are based on data collected from the Madhya Pradesh State Co-operative bank and it deals in co-operative banks, it cannot be generalised for the other non-co-operative banks.

Methodology of the study :

a. Collection of Data - The present study is based on primary as well as secondary data. Primary data were collected through holding personal interviews and detailed discussion with the bank executives/officials as well as the customers of the bank.

Secondary data were collected from the various publications like (Government of India and M.P), journals, reports of M.P. State Co-operative Bank Ltd., Bhopal, and published as well as unpublished works of the scholars associated with the field.

b. Analysis of Data - The researcher had applied various ratio analysis for the purpose of data analysis

c. Period of Study - M.P. State Co-operative Bank Ltd. Bhopal has been selected as sample unit for this study and a period of five years commencing from 2010-11 to 2014-15 are chosen for the same.

Data analysis and Interpretation - Today, NPA is one of the major problems evolving in almost all the banks in the country. High level of NPA has negative impact on the financial performance and profitability of the bank. Thus, NPAs reflect the overall performance of the bank.

The analysing factors for causing NPA, nature and categories for classification of assets etc, are discussed in the present study. Ratio analysis have been used for the study.

Some of the ratios used in this study are gross and net NPA ratio, standard assets ratio, doubtful ratio and loss assets ratio.

1) **Gross NPA Ratio**

$$\text{Gross NPA Ratio} = \frac{\text{Gross NPA}}{\text{Gross Advances}} \times 100$$

Table 1 : Gross NPA Ratio of the M.P.S.C Bank Ltd., Bhopal

(Rs.in lakhs)

Year	Gross NPA	Gross Advances	Gross NPA RatioRatio
2010-11	10501.20	327146.89	3.21
2011-12	6687.67	452906.26	1.48
2012-13	10989.46	643064.70	1.71
2013-14	6783.14	853205.47	0.80
2014-15	14375.52	1001952.89	1.43
Average	9867.40	6556.556	1.726

Source: Audit and Annual Reports of the M.P.S.C. Bank Ltd., Bhopal.

The above table shows it very significantly that the average Gross NPA of the Bank under study is very satisfactory. It also depicts that the Gross NPA which was 3.21% in 2010-11 reduced gradually every year and achieved the lowest 0.80% in the year 2013-14 and with a slight increase reached to 1.43% in the year 2014-15 but much lower than the average Gross NPA (1.726%). Hence, it is depicted that the bank is following the norms of granting loans, so as to maintain good recovery leading to lower Gross NPA, which is quite satisfactory that the Gross NPA ratio in the last four years is much lower than the average 1.726%.

2) **Net NPA Ratio**

$$\text{Net NPA Ratio} = \frac{\text{Gross NPAs-Provisions}}{\text{Gross Advances-Provisions}} \times 100$$

Table 2 : Net NPA Ratio of the M.P.S.C Bank Ltd., Bhopal

(Rs.in lakhs)

Year	Net NPA	Net Advances	Net NPA Ratio
2010-11	2719.78	319365.47	0.85
2011-12	2849.58	449068.17	0.63
2012-13	6706.77	638782.01	1.04
2013-14	2563.90	848981.28	0.30
2014-15	750.73	988328.10	0.07
Average	3118.152	648905.006	0.578

Source: Audit and Annual Reports of the M.P.S.C. Bank Ltd., Bhopal.

The table given above reveals that the Net NPA Ratio of the bank has reduced during the study period except the year 2012-13, (1.04%) as the bank has failed to make sufficient provisions against NPA in this year. However, the bank had succeeded in making provisions and thus they brought down the Net NPA to 0.07%. It is evident that the bank have strictly followed the RBI guidelines by making provisions against NPAs which is very good and satisfactory.

3) **Sub-standard Assets Ratio**

$$\text{Sub-standard Assets Ratio} = \frac{\text{Total Sub-Standard Assets}}{\text{Gross NPAs}} \times 100$$

Table 3 : Sub-standard Assets Ratio of the M.P.S.C Bank Ltd., Bhopal

(Rs.in lakhs)

Year	Sub-standard Assets	Gross NPA	Sub-standard Assets Ratio
2010-11	127.80	10501.20	1.22
2011-12	119.64	6687.67	1.79
2012-13	371.31	10989.46	3.38
2013-14	428.50	6788.14	6.31
2014-15	7420.35	14332.52	51.77
Average	1693.52	9859.79	23.05

Source: Audit and Annual reports of the M.P.S.C. Bank Ltd., Bhopal.

The Sub-standard Assets Ratio of the M.P.S.C Bank Ltd., Bhopal indicates the scope for improvement of NPA accounts. From the table given above, it shows that the Sub-standard assets Ratio of the bank had higher percentage of Sub-standard Assets in the year 2014-15 because of more slippage of good assets to the Sub-standard assets category.

4) **Doubtful Assets Ratio**

Doubtful Assets Ratio= Total Doubtful Assets X 100 / Gross NPAs

Table 4 :Doubtful Assets Ratio of the M.P.S.C Bank Ltd., Bhopal

(Rs.in lakhs)

Year	Doubtful Assets	Gross NPAs	Doubtful Assets Ratio
2010-11	6976.25	10501.20	66.43
2011-12	3003.50	6687.67	44.91
2012-13	3185.76	10989.46	28.99
2013-14	3046.87	6788.14	44.89
2014-15	5414.65	14332.52	37.78
Average	4325.406	9859.79	44.6

Source: Audit and Annual reports of the M.P.S.C. Bank Ltd., Bhopal.

The Doubtful Assets Ratio shows the proportion of total doubtful assets to Gross NPA of the M.P.S.C. Bank Ltd., Bhopal. The above table presents the ratio had been good with slight ups and downs during the study period. The bank should recover as much doubtful advances as possible in order to reduce the Gross NPAs.

5) **Loss Assets Ratio**

Loss Assets Ratio= Total Loss Assets X 100 / Gross NPAs

Table 5 : Loss Assets Ratio of the M.P.S.C Bank Ltd., Bhopal

(Rs.in lakhs)

Year	Loss Assets	Gross NPA	Loss Assets Ratio
2010-11	677.37	10501.20	6.45
2011-12	714.95	6687.67	10.69
2012-13	725.62	10989.46	6.60
2013-14	743.82	6788.14s	10.96
2014-15	789.79	14332.52	5.51
Average	3019.718	9859.79	8.042

Source: Audit and Annual reports of the M.P.S.C. Bank Ltd., Bhopal.

The Loss Assets Ratio shows the proportion of total loss assets to Gross NPA of the M.P.S.C. Bank Ltd., Bhopal. The above table presents the ratio had been good and very low with slight fluctuating during the study period except the year 2011-12 and 2013-14. The bank has to create a provision of 100% which definitely affects the financial health of the bank.

Conclusion - Non-performing Assets affects the performance of the bank. But, the bank is functioning very well by managing its recovery position and NPA position is at low. The bank should take more efforts to check the slippage of standard/good assets into sub-standard assets category. Overall, the Madhya Pradesh State co-operative Bank Ltd., Bhopal is well flourishing with proper management of assets and time to time recovery.

References :-

1. Annual reports of the M.P. State Co-operative Bank Ltd., Bhopal.
2. Pandey I.M. (2003). Financial Management, Vikas Publication House, New Delhi.
3. Kothari C.R. (2010) Business research methods, Vikas Publications, New Delhi.
4. Non-performing Assets in Co-operative Banks, K.Ravichandran,R.Mayilsamy,(2008),Abhijeet Publications, new delhi

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

मध्यप्रदेश में प्रारम्भिक शिक्षा 'शाला सिद्धि' योजना के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं का अध्ययन

प्रकाशचन्द्र शर्मा * डॉ. भंवरलाल नागदा **

उद्देश्य :

(1) विद्यालय में उपलब्ध संसाधनों की पर्याप्तता एवं उपयोगिता से सम्बन्धित समस्याएँ।
(2) सीखना-सिखाना एवं उसका आंकलन से सम्बन्धित समस्याएँ।
(3) विद्यार्थियों की प्रगति, उपलब्धि एवं विकास से सम्बन्धित समस्याएँ।
(4) शिक्षकों का कार्य प्रदर्शन एवं उनके व्यावसायिक उन्नयन से सम्बन्धित समस्याएँ।
(5) शाला नेतृत्व एवं प्रबन्धन से सम्बन्धित समस्याएँ।
(6) समावेशी वातावरण, स्वास्थ्य एवं सुरक्षा से सम्बन्धित समस्याएँ।
(7) विद्यालय विकास में समुदाय की सहभागिता से सम्बन्धित समस्याएँ।

शोध परिकल्पनाएँ - सामान्य एवं जनजाति क्षेत्र के विद्यालयों में 'शाला सिद्धि' योजना के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

शोध उपकरण :

(1) शाला सिद्धि योजना क्रियान्वयन प्रमापनी (संस्था प्रधानों के लिये)
(2) शाला सिद्धि योजना क्रियान्वयन प्रमापनी (शिक्षक के लिये)
(3) साक्षात्कार अनुसूची (विद्यार्थियों के लिये)
(4) रेकर्ड्स अवलोकन प्रपत्र

शोध निष्कर्ष :

(क) संस्था प्रधानों के अनुसार - शाला सिद्धि योजना के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं का सामान्य क्षेत्र तथा जनजाति क्षेत्र के विद्यालयों का मध्यमान क्रमशः 172.56 व 158.96 आया। मानक विचलन क्रमशः 10.774 व 8.655 आया। 'टी' का मान 9.840 प्राप्त हुआ जो कि 'टी' के सारणी मूल्य से अधिक है। अतः अन्तर सार्थक कहा जा सकता है। अर्थात् परिकल्पना सं. 1 को अस्वीकृत किया जाता है।

(ख) शिक्षकों के अनुसार - शाला सिद्धि योजना के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं का सामान्य क्षेत्र तथा जनजाति क्षेत्र के विद्यालयों का मध्यमान क्रमशः 168.64 व158.44 आया। मानक विचलन क्रमशः 8.934 व 9.529 आया। 'टी' का मान 7.808 प्राप्त हुआ जो कि 'टी' के सारणी मूल्य से अधिक है। अतः अन्तर सार्थक कहा जा सकता है। अर्थात् परिकल्पना सं. 2 को अस्वीकृत किया जाता है।

(ग) विद्यार्थियों के अनुसार - शाला सिद्धि योजना के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं का सामान्य क्षेत्र तथा जनजाति क्षेत्र के विद्यालयों का मध्यमान क्रमशः 184.60 व 176.40 आया। मानक विचलन क्रमशः 9.173 व 8.309 आया। 'टी' का मान 6.624 प्राप्त हुआ जो कि 'टी' के सारणी मूल्य से अधिक है। अतः अन्तर सार्थक कहा जा सकता है। अर्थात् परिकल्पना सं. 3 को अस्वीकृत किया जाता है।

शोध समस्याएँ

(क) संस्था प्रधानों के अनुसार

वरीयता क्रम में इस प्रकार है :-

• **सामान्य क्षेत्र**	• **जनजाति क्षेत्र**
• अतिरिक्त राशि का प्रावधान नहीं होने से	• समुदाय के सदस्यों का सहयोग हेतु सक्षम न होना।
• आर्थिक बोझ का बढ़ना	• शिक्षकों का अभाव
• शिक्षकों का अभाव में भेजने में रूचि नहीं लेते है	• पालक विद्यार्थियों को विद्यालय अर्थात् पालकों की निष्क्रियता
• पानी-बिजली की समस्या	• शिक्षण के अलावा अन्य कार्यो का करवाया जाना (प्रतिनियुक्ति पर)
• विद्यार्थियों का नियमित रूप नहीं होने से	• कृषि मजदूरी में पालकों के साथ विद्यार्थियों का पलायन होना।
• पर्याप्त संसाधनों व शिक्षण सामग्री का अभाव।	• विद्यार्थियों की उपस्थिति कम होना।
• SMC सदस्य शिक्षण सुधार हेतु पालकों को प्रोत्साहित नहीं करते।	• कक्षा 6 में आने वाले विद्यार्थियों का शैक्षणिक स्तर अत्यन्त कमजोर होना।
• मानक द्वारा कार्य करवाने में समस्या	• पर्यटन महोत्सव शाला में न हो।
• कागजी कार्यवाही का अधिक होना।	• समन्वय तथा प्रशासनिक मानीटरिंग का अभाव।
• विद्यालय परिसर की चार दीवारी का अभाव।	
• विद्युत उपकरणों का अभाव।	
• डिजिटल सामग्री का न होना।	
• सोशल मीडिया का सहयोग न मिलना।	
• समेटिक आकलन के कार्यक्रम न करवाना।	
• शाला स्टाफ एवं अभिभावकों में समन्वय का अभाव।	

* शोधार्थी, पेसिफिक एकडेमी ऑफ हायर एज्यूकेशन एण्ड रिसर्च यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत
** पर्यवेक्षक, पेसिफिक एकडेमी ऑफ हायर एज्यूकेशन एण्ड रिसर्च यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

(ख) शिक्षकों के अनुसार :

वरीयता क्रम में इस प्रकार है :-

• **सामान्य क्षेत्र**	• **जनजाति क्षेत्र**
• विषयवार शिक्षकों का नहीं होना।	• जन भागीदारी का अभाव
• अतिरिक्त बजट का प्रावधान न होना।	• विद्यार्थियों का स्तर निम्न होना
• पानी, बिजली, कम्प्यूटर का अभाव	• विद्यार्थियों की अनियमितता होना
• विद्यार्थियों की उपस्थिति नियमित नहीं होना।	• शिक्षकों की कमी
• विद्यालय पर आर्थिक बोझ	• भौगोलिक परिस्थितियों के कारण
• विद्युत एवं उपकरणों का अभाव	• प्रशासनिक समन्वय का अभाव
• डिजिटल सामग्री का अभाव	• बजट की कमी
• स्थानीय बोली में बात कर जुड़ाव स्थापित न कर पाना।	• अभिलेखों का संधारण होने से मूल उद्देश्यों से भटकना है।
• भवन सुविधाएँ एवं संसाधनों का अभाव	• जनता का शराब पीकर शिक्षकों से झगड़ा करना तथा मारने को तैयार होना।
• शाला में सुरक्षा के समुचित उपायों एवं उपकरण। उपलब्ध न होना	• SMC सदस्यों का सहयोग न मिलना।
• शाला में जागरूकता कार्यक्रम का अभाव।	
• समुदाय के सदस्यों की निष्क्रिय होना।	
• शाला प्रबन्धन समिति बच्चों के पढ़ाई के नुकसान को गंभीरता से न लेना।	

शोध सुझाव

(क)संस्था प्रधानों के अनुसार

वरीयता क्रम में इस प्रकार है :-

• **सामान्य क्षेत्र**	• **जनजाति क्षेत्र**
• विद्यालयों को क्रियान्वयन हेतु पर्याप्त राशि उपलब्ध करवाई जाये।	• दक्षता सुधार हेतु पांचवी कक्षा का बोर्ड होना।
• शिक्षकों की कमी को पूरा किया जाये तथा शिक्षण के अलावा अन्य कार्यो में शिक्षकों को नहीं लगाया जाये।	• कक्षा 6 में प्रवेश परीक्षा हो।
• पुन: बोर्ड पेटर्न लागू किया जाये।	• विभिन्न शिक्षण विधियों का समावेश।
• विद्यार्थियों से सम्पर्क करने हेतु शिक्षकों को समय दिया जाये।	• पर्याप्त राशि/बजट का प्रावधान।
• पानी, बिजली की समस्या का समाधान किया जाये।	• शिक्षकों की कमी को पूरा किया जाये।
• कागजी कार्यवाही की पूर्ति न कर के प्रक्रिया को सरल बनाया जाये।	• विषयवार शिक्षकों की नियुक्ति हो।
• डिजिटल सामग्री एवं उपकरण उपलब्ध करवाये जाये।	• शैक्षणिक स्तर सुधार के प्रयास हो।
	• पानी बिजली का समस्या का समधान किया जाये।
	• समेटिव आकलन के कार्यक्रम करवाने पर जोर दिया जाये।
	• डिजिटल सामग्री एवं उपकरण उपलब्ध करवाये जाये।

(ख) शिक्षकों के अनुसार :

वरीयता क्रम में इस प्रकार है :-

• **सामान्य क्षेत्र**	• **जनजाति क्षेत्र**
• क्रियान्वयन प्रक्रिया को सरल बनाया जाये।	• शिक्षकों की कमी को दूर किया जावे।
• विषयवार शिक्षकों की व्यवस्था की जाये।	• भवन पर्याप्त उपलब्ध करवाया जाये
• वित्तीय सहयोग की अपेक्षा	• वित्त पोषित किया जावे।
• पानी, बिजली व कम्प्यूटर की व्यवस्था कराये।	• बच्चों को कोचिंग की व्यवस्था (बेरोजगार युवकों से)
• पर्याप्त संसाधन उपलब्ध करवाये।	• सरकार छात्रों को सभी सुविधा उपलबध करवाये।
• शाला प्रबन्धन समितति के सदस्यों में जागरूकता पैदा कर सक्रिय बनाया जाये।	• अतिथि शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया जावे।
• डिजिटल सामग्री की व्यवस्था की जाये।	• बालश्रमिकों पर रोक लगाई जावे।
• शाला में जागरूकता कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया जाये।	• जनजाग्रति अभियान चलाया।
	• शराब पीकर आने वाला व्यक्तियों को पाबन्द किया जाये।
	• विद्यार्थियों को नियमित आने के लिये पाबन्द करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. NCERT, (1988-93) : Fifth Survey of Research in Education" New Delhi (NCERT)
2. गेरिट, हेनरी, ई. (1996) 'शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग' कल्याणजी पब्लिशर्स लुधियाना
3. कपिल, एच.के. (1981) : 'अनुसंधान विधियाँ' हर प्रसाद भार्गव, पुस्तक प्रकाशन आगरा
4. 'शाला सिद्धि हमारी शाला ऐसी हो' मूल्यांकन से शाला उन्नयन कार्यक्रम, राज्य शिक्षा केन्द्र, मध्य प्रदेश, भोपाल (2015)

सिंहस्थ कुम्भ के आध्यात्मिक मूल्यों की प्रासंगिकता

रीता टेटवाल *

प्रस्तावना – उज्जयिनी का इतिहास प्राचीन काल से इस देश में सांस्कृतिक धरोहर के रूप में विद्यमान है। जिसका धार्मिक महत्व अत्यधिक है। यहाँ महाकाल की नगरी के नाम से प्रसिद्ध है। जिनकी दार्शनिक व्याख्या मानवीय जीवन के मूल्यों को प्रभावित करती हैं। ऐसी मान्यताऐं भारतीय संस्कृति और समाज के लिए मूल्य प्रदान करती है। यह उज्जैन प्राचीन काल से काल गणना का केन्द्र बिन्दु के रूप में पहचाना जाता है। इस काल के आराध्य देवता भगवान महाकाल है। जबकि महाकाल बारह ज्योतिर्लिगों में से एक है। इनकी पूजा में भस्म का भी प्रयोग किया जाता है। ऐसी मान्यताऐं विद्यमान है। उज्जयिनी दार्शनिक रूपों में मानवीय मूल्यों को संरक्षित रखने में महत्वपूर्ण माना जाता है।

'कामदेव को विविध नामों एवं वरों की प्राप्ति, काम के प्रभाव से ब्रह्मा तथा ऋषिगणों का मुग्ध होना, धर्म द्धारा स्तुति करने पर भगवान् शिवका प्राकट्य और ब्रह्मा तथा ऋषियों को समझाना, ब्रह्मा तथा ऋषियोंसे अग्निष्वात्ता आदि पितृगणों की उत्पत्ति, ब्रह्माद्धारा काम को शाप की प्राप्ति तथा निवारण का उपाय'।[1]

इसी में सृष्टिकारी दक्ष आदि के द्धारा उनका मुख देखते ही आनन्द से भर उठे ऐसी विचारधाराओं के समन्वय में मानवीय मूल्यों का चरित्र छुपा हुआ था। ऐसी विचारधारा का निरूपण भगवान ब्रह्माजी ने उत्पन्न होने वाले सभी लोगों के नामों को छुपा डाला जिसकी प्रशंसा का मूल कारण सभी लोगों की मानवीय संवेदना ही है। तुम सभी को मन्दोन्मत्त करने में विख्यात हो। जबकि अहंकार युक्त होने वाले व्यक्तियों का जीवन नर्क के समान भारी लगता है। जिसका मूल मन्तव्य मानवीय मूल्यों का विकास करना है।

इसका मूल कारण धार्मिक और तांत्रिक दृष्टियों की तप का संताप मूल्यों को निर्मित करते है। ये दोनों ही साधनाऐं घोर तपस्या के बाद भी किसी को प्राप्त होती है। अन्यथा नहीं मिलती है। जिनका मूल्य ही मानव का कल्याण है। किसी के अहित भाव की कल्पना से तंत्र विद्या भी नहीं सीखी जाती है। न ही उसका फल ही मिलता है। इनकी तपस्या का मूल स्वरूप ही मानव के जीवन को सुखद बनाना है। विशेषतया मानव की विचारधारा यथार्थ के अनुकूल हो प्रतिकूल अवस्था में होने पर विनाश की स्थिति उत्पन्न होती है। ऐसा तंत्र साधना पद्धति का मानना है। जहाँ भक्ति श्रध्दा पुण्य लाभ की लालसा का परिमाप धार्मिक स्थल सिंहस्थ पर देखने को मिलता है। तंत्र की साधना हो या आध्यात्मिक मूल्यों की साधना पद्धति हो दोनों में मानव का कल्याण ही निहित है।

शोध प्रविधि – इस शोध प्रविधि में विषय **सिंहस्थ कुम्भ की आध्यात्मिक मूल्यों की प्रासंगिकता** सिंहस्थ कुम्भ की धार्मिक और तांत्रिक परम्पराओं में मानवीय मूल्यों की पहचान हेतु द्धितीयक शोध सामाग्री और साक्षातकार का अध्ययन समाहित है। जिनकी परम्पराओं और मूल्यों को समझने का प्रयास उज्जैन सिंहस्थ 2016 के वर्णन में निरूपित होता है। ऐसे अनेक धार्मिक ग्रन्थों और विद्धानों का मार्गदर्शन भी समाहित किया गया है। इस हेतु शोध सन्दर्भ को किया पत्र–पत्रिकाओं और धार्मिक स्थलों के दृश्य वर्णन के आधार पर यह शोध पत्र तैयार किया जा रहा है।

उद्देश्य :

1. सिंहस्थ कुम्भ के आध्यात्मिक मूल्यों का अध्ययन।
2. सिंहस्थ कुम्भ में दार्शनिक परिचर्चाओं का अध्ययन।
3. मानवीय मूल्यों का अध्ययन।
4. सिंहस्थ कुम्भ में धार्मिक मूल्यों का अध्ययन।
5. सिंहस्थ कुम्भ में तांत्रिक मूल्यों का अध्ययन।
6. सिंहस्थ कुम्भ में श्रद्धालुओं के वैदिक चिन्तन की परम्पराओं का अध्ययन।
7. सिंहस्थ कुम्भ में संतों की आध्यात्मिक प्रणाली का अध्ययन।

समस्या :

1. मूल्यों की समस्या।
2. आध्यात्मिक चिन्तन हवन सामाग्री की समस्या।
3. सिंहस्थ कुम्भ में प्रबन्धन की समस्या।
4. सिंहस्थ कुम्भ में तात्विक चितन्त की समस्या।

सिंहस्थ कुम्भ में मानवीय मूल्यों की समस्या विकठ रही है। जहाँ भारतीय आध्यात्मिक परम्पराऐं विद्यमान है। वहाँ मानव का एक विवेचक तत्व यदि चोरी, झूठ, के तत्वों को समाहित करता है। वहाँ आध्यात्मिक मूल्यों का क्षरण प्रारम्भ हो जाता है। ऐसी विचारधाराओं को ध्यान में रखकर मानवीय मूल्यों का चिन्तन भारतीय दार्शनिक और सिंहस्थ की मूल्य परम्पराओं में देखने को मिलता है। मानव के मूल्यों की धरोहर उसकी संस्कृति और आचरण है। जिसकी शुद्धता प्रमाणित करती है। मानव का जीवन अच्छा है या बुरा है। ऐसी मान्यताओं का परिणाम सिंहस्थ में देखने को मिलता है। यथार्थ और पुण्य आत्मा का रमण ही आध्यात्मिक परम्पराओं पर निर्भर करता है। जहाँ दैवीय शक्ति के निरूपण में मानव हित का कल्याण देव गुरू बृहस्पति के चिन्तन में भी मिलता है।

सिंहस्थ महाकुम्भ भारतीयता की आत्मा है। जहाँ मानव में सत्य, सद्गुण स्वच्छ सदविचार, सात्विक आहार विहार का संस्मरण आदि परम्पराऐं विद्यमान है। उसी का परिणाम है कि आज भी संस्कृति और धर्म की पहचान भारतीयता की अमर पहचान बनती जा रही है। क्योंकि मूल्य है। पश्चिम सभ्यता ने मानव को मूल्य विहीन बना दिया है। किन्तु मानव को भारतीय संस्कृति हमेशा मूल्यवान रहीं है। जिसका परिणाम भारतीय परम्परा के सिंहस्थ

* शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

महापर्व में दिखाई देता है।

उज्जैन के इस नगरी में सिंहस्थ कुम्भ में भारतीय संस्कृति की झलक स्पष्ट रूपों में दिखाई देती है। जिसका मूल प्राचीन रूपों में आध्यात्मिक और वैचारिक दोनों रूपों में विराजमान है। भगवान कृष्ण की शिक्षा स्थली, महाकवि कालिदास जैसे संस्कृत के विद्धान, राजा भर्तृहरि जैसे सत्यवादी राजा, राज्य संचालक विक्रमादित्य की नगरी जहाँ बत्तीस पुतलियों के कहानी का उल्लेख प्राचीन इतिहास बताता हैं। जिनकी प्रजा की खुशहाली का वर्णन उज्जैन के दार्शनिक इतिहास में मिलता है। इसकी परम्पराऐं अविरल रूप से अध्यात्म की आर बढ़ती जा रही है। ऐसी नगरी में पुण्य का लाभ प्राप्त होता ही है।

सत्यानृता च परूषा प्रियवादिनी च हिंस्त्रा दयालुरपि चार्थपरा वदान्या।
नित्यव्यया प्रचुरनित्यधनागमा च वेश्याग्ङ.नेव नृपनीतिरनेरूपा।।[2]

राजा भर्तृहरि के नीतिशत्क यथार्थ सत्य रूपों को राजनीति के विद्धानों ने भी वर्णन किया है। जिसका परिणाम सुखद होता है। राजा भर्तृहरि ने कहा है कि असत्यवादिता, चोरी, लोभ, चपलता अनीति का माध्यम है। जहाँ व्यक्ति लोभी होता वहाँ उसका विनाश होना स्वभाविक हो जाता है। आध्यात्मिक मूल्यों का वर्णन मानवीय जीवन की चरम सीमा का परिणाम है। जहाँ वैचारिक संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। ऐसी विंसगतियों में मानव का विकास नहीं होता है। भारतीय परम्पराऐं सिंहस्थ में मूल्यों के पहलू ने मानवीय जीवन की जीवन रेखा का वर्णन तर्क पर औचित्य पूर्ण धार्मिक तथ्यों का वर्णन यथार्थ और सत्य को लेकर किया है।

इन्द्रस्य नु वीर्यणि प्र वीचं यानि चकार प्रथमानि वज्री।
अहन्नहिमन्वपस्ततर्द प्र वक्षणा अभिनत् पर्वतानाम्।।[3]

इस प्रकार के प्रकष्ट पूर्ण कर्मो को वर्णन इन्द्र करता है। ईश्वर स्वयं वर्णन करते हैं कि शिला, जल, पर्वत भी गतिरोधक पदार्थों को नष्ट नहीं कर देता है। अन्यत्र दूरस्थ स्थानों में जल को बहा देता है। ऐसी मान्यताऐं विद्यमान है। जिसका मूल कारण मानवीय मूल्यों से जोड़ा जा सकता है। क्योंकि सिंहस्थ कुम्भ में जल की पूर्ति हेतु क्षिप्रा का जल सूखने की स्थिति में माता नर्मदा का जल सिंहस्थ में लाया गया था। इसकी यथार्थता का वर्ण मानवीय जीवन के लिए सुलभ और सुखद् महसूस होते हैं। ऐसी विचारधारा का परिणाम मानव को जीवन और जगत् के मूल्यों में परिवर्तित करता है। जहाँ नदियों को जोड़ा और बड़े-बड़े पर्वतों को काटकर जल प्रवाहित कर रही हैं। ऐसी जीवनदायनी भारतीय नदियों ने मानव को जल से सिंचित कर रही है।

निष्कर्षत: उज्जैन महाकाल की नगरी में होने वाले सिंहस्थ में भारतीय संस्कृति और मानव मूल्यों को जगा दिया है। जिसका वर्णन सिंहस्थ के दर्शन से प्राप्त होता है। जहाँ अन्यत्र जगहों से आने वाले श्रृद्धालुओं के लिए पानी पिलाने और भोजन प्रसादी तक की व्यवस्था मानव को कृतार्थ कर पुण्य लाभ प्रदान करती है। ऐसी महाकाल की महिमा का वर्णन उज्जैन में मिलता है। इसकी विवेचाना के सम्बन्ध में मानवीय मूल्यों को देखा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **महापुराण श्रीशिवमहापुराणाङ्कब** कल्याण, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 221
2. डॉ. ददन उपाध्याय, **भर्तृहरिशतकत्रयम् नीति-श्रृंगार-वैराग्य,** चौखम्बा सुरभारती, वाराणसी, 2013, पृष्ठ 30
3. प्रो. महावीर, **वेदों में आर्थिक चिंतन,** प्रगतिशील प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ 69

****

Phytochemical screening and effect of pH on antimicrobial activity of Tinospora Cardifolia leave extract with reference to some specific bacteria

Nahid Usmani * R.S. Nigam ** O.P. Rai ***

Abstract - The present study revealed phytochemical extraction and screening of antimicrobial activity of Tinospora Cardifolia. The crude drug (leave part) was successively extracted by Soxlet assembly using various solvents like hexane, chloroform, ethanol, and methanol. Antimicrobial activity of Bacillus, Rhizobium, Pseudomonas and lactobacillus species of bacteria estimated by using the agar disc diffusion method. Zone of inhibition of micro organism was measured in (mm).Hexane extract of T. Cardifolia leave exhibited better antibacterial potential. On treating the extract of T. Cardifolia plant leave with different **pH**, it was seen that antimicrobial activity was decreasing on increasing **pH**, but the antimicrobial property was never lost. Preliminary phytochemical screening of T. Cardifolia showed the presence of carbohydrates, glycosides, flavonoids, phenols, tannins and amino acids in the crude drug. Hexane extract was found to be more potent against both the group of bacteria.
Keyword- Tinospora Cardifolia; phytochemical; antibacterial, alkaloids.

Introduction - Herbal medicine is still the mainstay of about 80% of the whole population mainly in developing countries for primary healthcare because of better cultural acceptability, better compatibility with the human body and fewer side effects. However this plant is commonly referred to as amrita or guduchi. It requires fair moisture level and can be grown in a wide range of soil from acid to alkaline [2]. In ayurveda the drug is known for building up the immune system of medicine, it has a special place as a effective adaptogen and aphrodisiac.

Phytochemistry of T. Cordifolia belongs to different classes such as alkaloids, steroids, terpenoid, lactones, glycosides, steroids, diterpenoids phenolic compounds and polysaccharides. Three major groups of compounds, protoberberine alkaloids, terpenoid and polysaccharides of these plants. T. Cordifolia is widely used in folkloric veterinary medicine and traditional ayurveda medicine in India for it's, anti-inflammatory, anti diabetic, anti allergic and anti arthritic activities and various other medicinal properties.

The plant Tinospora cordifolia comes under the class Magnolipsida, orders Ranunculales and belongs to the Menispermaceae family. Guduchi [Tinospora cordifolia (Willd) Hook. F. Thom's] is a large, glabrous deciduous climbing shrub belonging to the family Menispermaceae (Nadkarni, 1992).

The species is widely distributed in India extending from the Himalayas down to the southern part of peninsular India. It is also found in neighboring countries like Bangladesh, Pakistan and srilanka. The Part is also reposted from South East Asian Countries such as Malaysia Indonesia and Thailand etc. The leaves of this plant are rich in protein (11.2%) and are fairly rich in calcium and phosphorus

The aim of this work to find out the optimum condition of **pH** at which Tinospora Cardifolia extract is more effective against Bacillus, Rhizobium, Pseudomonas and lactobacillus species of bacteria.

EXPERIMENTAL SECTION

Material and methods-The Tinospora Cardifolia leaves are collected from the herbal garden of Maihar satna [M.P.] and authenticated in department of biotechnology of AKS university satna.

Selected bacterial species – Bacillus, Rhizobium, Pseudomonas and lactobacillus species of bacteria Obtained from the department of biotechnology of AKS university satna [M.P.].

Preparation of extract- The fresh leaves were washed with distilled water and air dried to constant weight. Extract was prepared by Soxlet extraction method. About 100 gm of powdered material was uniformly packed into a thimble and run in Soxlet extractor. It was exhaustible extracted with hexane, ethyl acetate, chloroform and methanol for the period till the solvent in the siphon tube of extractor become colorless. After that extracts were filtered and filtrate were concentrated by evaporation to make the final volume one – fourth of the original volume and stored at air tight

*Asst. Prof., A.K.S. University, Satna (M.P.) INDIA
** Dean, A.K.S. University, Satna (M.P.) INDIA
*** Prof., Govt. P.G. College, Satna (M.P.) INDIA

bottles.

Test for phytochemical constituents – Freshly prepared extracts were subjected to standard phytochemical analysis for different constituents such as tannins, alkaloids, flavonoids, quinines, glycosides Saponins etc.

Effect of pH on antibacterial activity of extracts of Tinospora Cardifolia - To find out the effect of pH each extracts [hexane, ethyl acetate, chloroform and methanol] having concentration 300µg/ml were taken in three set of test tubes and 1N HCl added drop wise drop with some time interval, until the pH of extract is 2 - 5 [pH is determined by digital pH meter].Now for making the medium alkaline 8-9 pH by increment in pH in every extract is done by using 1N NaOH in three separate test tubes and extracts were then allowed to soaks for some time interval after that period of acid base treatment the extracts were again neutralized with using 1N HCl and 1N NaOH and then every extracts were tested for antibacterial activity by using agar disc diffusion method.

Test procedure:-.Antimicrobial Assay Disc diffusion method Kirby-Bauer method was followed for disc diffusion assay. In vitro antimicrobial activity was screened by the NAM plates, were prepared by pouring 15 ml of molten media into sterile Petri plates. The plates were allowed to solidify for 5 min and 0.1 % inoculums suspension was swabbed uniformly and the inoculums were allowed to dry for 5 min. The 300µl doses of extracts were loaded on 5 mm sterile individual discs at acidic medium and alkaline medium respectively. The loaded discs were placed on the surface of medium and the compound was allowed to diffuse for 5 min and the plates were kept for incubation at 37°C for 24 hr, 48hr and72 hr. Negative control was prepared using respective solvent. At the end of incubation, inhibition zones formed around the disc were measured with transparent ruler in millimeter.

Results and Discussion: - The present study revealed that hexane was the better extractive solvent for antibacterial activity of leave extracts of Tinospora Cardifolia against the selected strain of bacteria and the maximum zone of inhibition 23mm was recorded from 300µl of hexane extract for Pseudomonas at the alkaline medium (9pH) after 72hr and minimum zone of inhibition was recorded as 2.7 mm for 300µlof methanol extract for lactobacillus after same time period at acidic medium (2.5 pH).As the pH of the medium get vary from acidic(2.5) to alkaline(9.0) the antibacterial activity of solvent extract of t. cordifolia also increases.

Table 1,2,3 & 4 (See in next page)

Chart 1,2,3 & 4 (See in next page)

Conclusion- The antimicrobial activity of different spices was calculated that all the spices showed inhibitory effect. Tinospora Cardifolia extracts showed antibacterial study in different condition of pH [acidic and basic]. On treating the extract of T. Cardifolia plant leave with different pH it was seen that antimicrobial activity was decreasing on increasing pH, but the antimicrobial property was never lost. The finding of our studies elaborates the antibacterial properties of different species and effective antimicrobial activity of under various conditions T. Cardifolia plant leave.

References :-

1. Jasbir Singh, Akash Bagla and Vikash Pahal, Hepatoprotective Activity ofHerbal Extracts in Carbon Tetrachloride intoxicated Albino Rats byMeasuring Anti-oxidant Enzymes, International journal of Pharm Tech Research 2010, 2,2112-2115
2. Akash Bagla and Vikas Pahal Hepatoprotective Activity of Herbal Extracts in Carbon Tetrachloride Intoxicated International Journal of Pharm Tech 2010,2 (3) 2018-2025.
3. M. Fatima Rose, K.M. Noorulla, M.Asma, R.Kalaichelvi, K. Vadivel, B.Thangabalan B.N. Sinha invitro antibacterial activity of methanolic root extract of Tinospora cordifolia (Willd) International journal of Pharma.Research 2010: 2(5) 0974-9446.
4. Sivakumar, m.s. Dhana rajan m.s. Riyazullah, preliminary phytochemical screening and evaluation of free radical scavenging activity of Tinospora cordifolia International Journal of Pharmacy and Pharmaceutical Sciences 2010; 2(4) 0975-1491
5. Singh, S. Srivastava, R. Choudhary, S. Antifungal and HPLC analysis of the crude extracts of Acorus calamus, Tinospora cordifolia Journal of Agricultural Technology 2010; 6(1) 149-158
6. Ramya Premanath and N. Lakshmidevi, Studies on Anti-oxidant activity ofTinospora cordifolia (Miers.),Journal of American Science 2010,2, 2112-2115.
7. P. Azadi musliarakathbacker jahfar, Glycosyl composition of polysaccharide from Tinospora cordifolia. II Glycosyl linkages2009;12;34-43
8. Dada Patil, Manish Gautam, Sanjay Mishra, Prajakta Kulkarni, Karupothula Suresh, Sunil Gairola, Suresh Jadhav, Bhushan Patwardhan Quantitative Determination of Protoberberine Alkaloids in Tinospora cordifolia by RP-LC DAD 2009; 142(1) 3-5.
9. Vijay R Salunkhe and Satish B. Bhise Formulation development and real time stability studies of herbal oral liquids containing natural sweetener journal of Pharmacy Research 2009, 2(6) 1055-1061.
10. Nagaraja Puranik K k.F. Kammar Sheela Devi. R Efficacy of Tinospora cordifolia(Willd.) extracts on blood lipid profile in streptozotocin diabetic rats. Is it beneficial to the heart; Biomedical Reseacrh 2008; 19(2): 92-96.
11. Pranav K. Prabhakar Mukesh Doble A Target Based Therapeutic Approach Towards Diabetes Mellitus Using Medicinal Plants, Current Diabetes Reviews, 2008, 4, 291-308.
12. Nagaraja Puranik. K. K.F. Kammar, Sheela Devi Modulation of Morphology and some gluconeogenic enzymes activity by Tinospora cordifolia (Willd) in diabetic rat kidney, Biomedical Research 2007; 18(3):179-183.

Table no. 1- Zone of inhibition Bacterial strains for hexane extract in different time interval and pH range:-

Extract of hexane solvent

Species of Bacterial strain	Dose of extract	Effect of pH			Zone of inhibition in (mm) after 24hr	Zone of inhibition in (mm) after 48hr	Zone of inhibition in (mm) after 72hr
		Original pH	Acidic medium	Basic medium			
Bacillus	300µl.	7.60	2.5	9	11mm.	11.8 mm.	12.4mm.
Rhizobium		7.95	2.5	9	9mm.	10.1 mm.	11.0 mm.
Pseudomonas		7.85	2.5	9	21mm	22.5 mm.	23.8mm.
lactobacillus		7.65	2.5	9	6 mm	6.8 mm.	7.1 mm.

Chart no.1- Graphical representation of antibacterial activity of hexane extract of Tinospora Cardifolia after different time interval with different bacterial species.

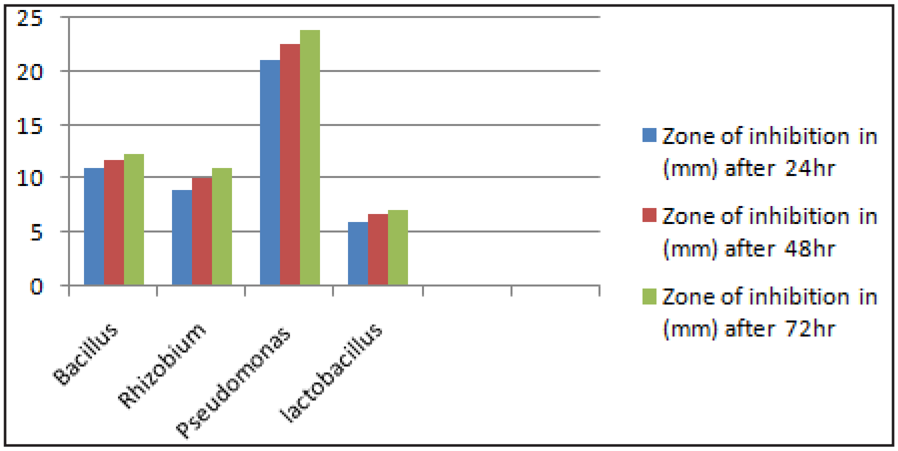

Table no. 2- Zone of inhibition Bacterial strains for methanol extract in different time interval and pH range:

Extract of methanol solvent

Species of Bacterial strain	Dose of extract	Effect of pH			Zone of inhibition in (mm) after 24hr	Zone of inhibition in (mm) after 48hr	Zone of inhibition in (mm) after 72hr
		Original pH	Acidic medium	Basic medium			
Bacillus	300µl..	7.60	2.5	9	8.1mm.	9.2 mm.	9.8mm.
Rhizobium		7.95	2.5	9	5.8mm.	6.5 mm.	7.1mm.
Pseudomonas		7.85	2.5	9	9.0mm	10.3 mm.	10.8mm.
lactobacillus		7.65	2.5	9	1.5mm	1.8mm.	2.1 mm.

Chart no.2- Graphical representation of antibacterial activity of methanol extract of Tinospora Cardifolia after different time interval with different bacterial species.

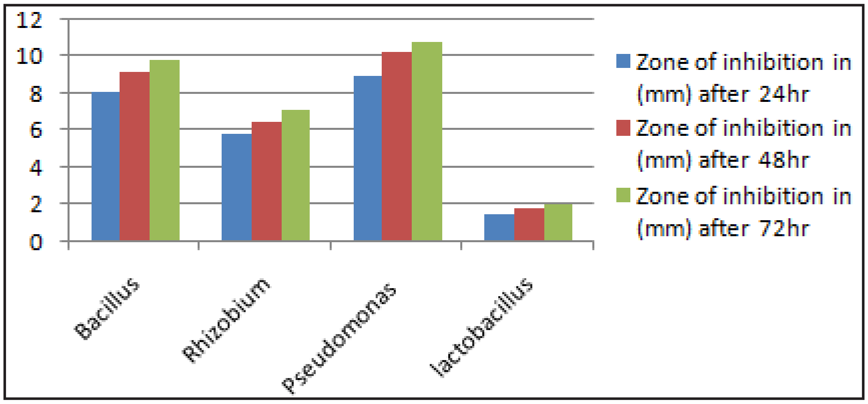

Table no.3 - Zone of inhibition Bacterial strains for chloroform extract in different time interval and pH range:

Extract of chloroform solvent

Species of Bacterial strain	Dose of extract	Effect of pH			Zone of inhibition in (mm) after 24hr	Zone of inhibition in (mm) after 48hr	Zone of inhibition in (mm) after 72hr
		Original pH	Acidic medium	Basic medium			
Bacillus	300µl..	7.60	2.5	9	6.0mm.	6.6mm.	7.2mm.
Rhizobium		7.95	2.5	9	2.1mm.	2.8mm.	3.2mm.
Pseudomonas		7.85	2.5	9	9.2mm	9.8mm.	10.4mm.
lactobacillus		7.65	2.5	9	1.8mm	2.2mm.	2.7.mm.

Chart no.3- Graphical representation of antibacterial activity of chloroform extract of Tinospora Cardifolia after different time interval with different bacterial species.

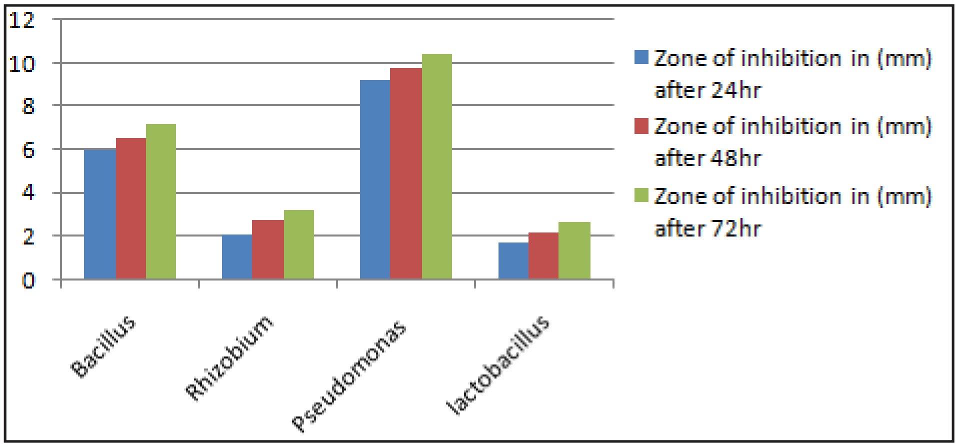

Table no.4 - Zone of inhibition Bacterial strains for ethyl acetate extract in different time interval and pH range

Extract of ethyl acetate solvent

Species of Bacterial strain	Dose of extract	Effect of pH			Zone of inhibition in (mm) after 24hr	Zone of inhibition in (mm) after 48hr	Zone of inhibition in (mm) after 72hr
		Original pH	Acidic medium	Basic medium			
Bacillus	300µl..	7.60	2.5	9	5.2mm.	5.9 mm.	6.5mm.
Rhizobium		7.95	2.5	9	7.0mm.	7.6 mm.	8.0mm.
Pseudomonas		7.85	2.5	9	6.0mm	6.8 mm.	7.4mm.
lactobacillus		7.65	2.5	9	1.1mm	1.4mm.	1.9 mm.

Chart no.4- Graphical representation of antibacterial activity of ethyl acetate extract of Tinospora Cardifolia after different time interval with different bacterial species

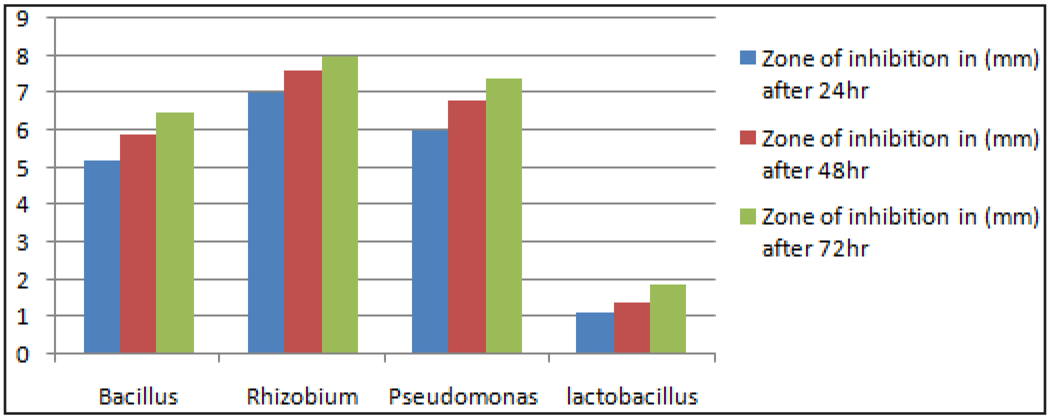

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

वैश्वीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

क्रितिका सिंह * रूपेश द्विवेदी **

प्रस्तावना - दुनिया के सभी देशों का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि के आधार पर एक दूसरे से जुड़ने की प्रक्रिया वैश्वीकरण कहलाती है। आज विश्व में वैश्वीकरण के प्रति कई दृष्टिकोण है, जो इसके स्वरूप, परिणाम और प्रभाव की विवेचना करते हैं। सन् 1991 में सुधार किए गए और बाधाओं को हटाकर अर्थव्यवस्था को विश्व के लिए खोला गया। यह सुधार अपने में तीन अवयवों में समेटा हुआ है। वैश्वीकरण उदारीकरण और निजीकरण अर्थव्यवस्था के विकास के दर को बढ़ाना अतीत में प्राप्त लाभों का समायोजन करना, उत्पादन इकाइयों कि प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता को बढ़ाना, मुख्य उद्देश्य रहे है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के किए कई प्रमुख परिवर्तन किए गए, जैसे कि लाइसेंस व्यवस्था की समाप्ति, निजी निवेश के लिए एमएनसी को प्रोत्साहन, विदेशी विनिमय पर लगी रूकावटों को समाप्त करना, कीमत तथा वितरण संबंधी सारे रूकावटों को हटाना और एमआरपी अधिनियम को समाप्त करना आदि। वैश्वीकरण के तहत देशों में व्याप्त आर्थिक दूरियाँ धीरे-धीरे कम हो जाती है। और आवागवन की सभी तरह की रूकावटें हटा ली जाती हैं।

परिकल्पना :

1. वैश्वीकरण एक जटिल अवधारणा है।
2. वैश्वीकरण के दृष्टिकोण में भिन्नता।
3. आर्थिक विकास के लिए वैश्वीकरण ही पर्याप्त नही
4. छोटे व्यवसायों पर दुस्प्रभाव।

शोध प्रविधि-प्रस्तुत शोध में प्राथमिक एवं द्वितीयक समंको का संकलन किया जाएगा। समंकों का वर्गीकरण, सारणीयन एवं विश्लेषण कर वास्तविक परिणाम प्राप्त किया जाएगा। यदि परिणाम वास्तविकता से मेल नही खाते तो पुन: सर्वेक्षण करके शोध कार्या को दोहराया जाएगा।

उद्देश्य-

1. वैश्वीकरण प्रक्रिया द्वारा विकास के अवसर बढ़ाव देना।
2. अर्थव्यवस्था पर वैश्वीकरण के प्रभाव का अध्ययन करना।
3. अधिकाधिक बेरोजगारी की समस्या को समाप्त करना।
4. प्रोद्योगिकी विकास को बढ़ावा देना।

शोध विश्लेषण- औद्योगीकरण के लिए योजना बनाने के चार दशकों के बाद अब हम नई आर्थिक नीतियों के साथ विदेशी, निवेश, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश, पूँजी प्रौद्योगिकी और बाजार के लिए नयी दिशायें बनाएंगे आर्थिक विकास के साथ द्वितीय स्थिति में भी सुधार होगा। वैश्वीकरण का सबसे अच्छा समय-भारत के सकल घरेलू उप्पाद की विकास की दर 1990 के दशक के बाद लागू हुई जो 6 प्रतिशत 1980-90 के दौरान, 1993-2001 की अवधि में 5-6 प्रतिशत से 7 प्रतिशत की वृद्धि व 2015-16 में देश में प्रति व्यक्ति आय शुद्ध आय में 7.4 फीसदी की बढ़ोत्तरी हुई व 2016-17 में देश में प्रति व्यक्ति आय 9.7 फीसदी बढ़कर 1,03,219 पर पहुंच गई।

वैश्वीकरण दुनियाभर में खेलने के लिए एक विस्तृत भूमिका है। भूमंडलीकरण शब्द ही आत्म व्याख्यामक है। यह पूरी दुनिया में लोगों के रहने वाले मोड Evenness में को बनाए रहने के लिए एक अंतराष्ट्रीय मंच है।

साल 2003-08 कमे दौरान हमारे देश ने अब तक की सबसे शानदार विकास दर्ज की है। इस दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था की विकास दर औसतन 8-9 प्रतिशत सालाना रही है। परन्तु 2007-08 में पश्चिमी अर्थव्यवस्थाओं से शुरू हुयी महामन्दी का इस उछाल पर भी सीधा असर पड़ा है। 2008-12 के दौरान भारत की विकास दर (जीडीपी) दर 6.7-8.4 प्रतिशत के बीच झूलती रही है। 2012 के यूरो जोन संकट के कारण तथा आंशिक रूप से भारतीय अर्थव्यवस्था के भीतर मैन्यूफेक्चरिंग एवं खेतों मे आए ठहराव की वजह से विकास दर और भी नीचे चली गयी। 1991 से अब तक औद्योगिक उत्पादन तिगुना हो गया। जबकि बिजली उत्पादन दुगुने से भी ऊपर चला गया है। 2009 में हमारे यहाँ 2700 से ज्यादा बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ काम कर रही थी।

आर्थिक सुधार के 20 सालों बाद आज भी हम कई चुनौतियों से जूझ रहे है। जैसे-गरीबी, किसानों की मजबूर दशा, बेरोजगारी, मानव-पूंजी निर्माण और ग्रामीण विकास आदि। इस सभी के स्तर पर उस लक्ष्य को नही पाया जा सका है। जिसकी कल्पना हुई थी। इस कारण जरूरत है समावेशी विकास की ताकि अर्थव्यवस्था के हर क्षेत्र का बराबर विकास हो सके, समाज के हर हिस्से को लाभ का समुचित बंटवारा हो सके। इसके लिए हमें सरकार पर इस बात का दबाव बनाना चाहिए कि वे ऐसी नीतियों को मंजूरी दें जिससे हर उस शख्स का विकास हो सके, जिसकी पहुँच सीमित है। ऐसा संभव है अगर हम सभी मिलकर एक सचेत और तार्किक जनमत की तरह विकास मुद्दे को लेकर आंदोलन करें और दबाव समूह के माध्यम से सरकार को बाध्य करें।

समस्याएँ :

1. वैश्वीकरण के सकारात्मक एवं दोनों नकारात्मक प्रभाव है।
2. बहिमुर्खी होती जा रही अर्थव्यवस्था से विदेशी कर्ज में वृद्धि।
3. विदेशी मुद्रा भण्डारण में गिरावट।
4. बजट का अधिकांश हिस्सा कर्जो को चुकाने में जा रहा।
5. भारत का व्यापार घटा।

सुझाव :

1. सुझाव विकास की अर्थव्यवस्था को अपनाना।
2. स्वदेशी व्यापार को प्रोत्साहन।

* अतिथि विद्वान, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

3. अधिक से अधिक निर्यात को बढ़ाना।
4. कम से कम आयात करना।
5. स्वदेशी विकास को बढ़ावा देना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. इंडियाज इकोलॉजिकल फुटप्रिंट : बिजनेस पर्सपिक्टिव जीएफएन एवं सीआईआई, नई दिल्ली 2008।
2. विश्व बैंक के डाटा
3. इकोनॉमिक सर्वे 2008-09 आर्थिक मामले विभाग, वित मंत्रालय भारत सरकार दिल्ली।
4. शोध प्रविधि
5. न्यूजपेपर
6. www.google.com.

****

मानव एकता के लिए धर्म

देवदास साकेत *

प्रस्तावना – मानव एकता के लिए ही सभी धर्म बने हैं। किन्तु प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि इन सब सिद्धान्तों और मूल्यों को व्यक्ति भूलता क्यों जा रहा है? नैतिक मूल्य हमेशा सार्वनिक हितों के संरक्षण रहे हैं। यदि धर्म की परम्पराओं को पाप-पुण्य की विचारधारा से जोड़ दिया जाये। उससे धर्म के सारे सिद्धान्त निरर्थक हो जायेगे, जबकि नैतिक नियमों के सिद्धान्तों को नियमों की संहिताओं से जकड़ दिया गया है। जो कानून की दृष्टि में अपराध कहलाता है। जबकि धर्म एक स्वतंत्र सत्ता है। जहाँ यथार्थ का निर्माण किया जाता है। 'भारत में धर्म व जाति के संस्कार का इतना महत्व है कि इनको शब्दों में वर्णन करना सम्भव नहीं है आज जो घूस, भ्रष्टाचार बढ़ रहा है, अपराध का ताण्डव हो रहा है व संस्कारों व धर्म के अभाव के कारण ही है।'[1]

धर्म और सदाचार मानव जीवन की सबसे बड़ी पूँजी है। भारतीय धर्म दर्शन की परम्पराओं वैदिक दर्शन में पश्चिमी मूल्यों को देखने का प्रयास यदि किया गया। वहाँ अर्थ का अनर्थ हो जायेगा। जबकि भारतीय दर्शन में पुरूषार्थ चतुष्ठय मूलत: सदाचार की शिक्षा प्रदान करता है। चार पुरूषार्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के माध्यम से आश्रम व्यवस्था ने मानव एकता के मूल्यों का मार्ग दिखाया है। सांख्य दर्शन में प्रकृति और पुरूष के समन्वय को तीन तत्व उत्पन्न होते हैं। मानव एकता का सम्बन्ध इन तीन गुणों में मानव की एकता दिखाई देती है। सत्वगुणों वाले व्यक्तियों का एक समूह है। जहाँ पर सद्‌आचरण और नैतिकता के गुणों को आदर्श के रूप में स्वीकार किया गया हैं। क्योंकि भारतीय मनीषियों की यह भारत भूमि में संन्तत जीवन के मार्ग में वर्तमान समय की एकता विखण्डित दिखाई देती है। इसके बाद भी सात्विक गुणों वाले व्यक्तियों का समूह धर्म और एकता के मार्ग की पुष्टि करता है।

दूसरा प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि 'व्यक्तित्व की अवधारणा मानवी व्यक्तित्व से उधार ली हुई है। जब ईश्वर के बारे में यह कहा जाता है। कि वह स्वर्ग में रहने वाला पिता है। मानवी आचरण का न्यायधीश है। दण्ड और पुरस्कार का दाता है, वह अपने धर्म-संस्थापकों से बात करता है, भक्तों की मदद के लिए वह आता है।'[2]

इन सिद्धान्तों के लिए मानव एकता के लिए धर्म स्वत: प्रमाण है। इसे सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि धर्म अपना परिचय स्वयं देता है। धार्मिक दृष्टिकोण से मानव एकता के आत्मिक विश्वास को प्रमाणित करने की आवश्यकता है। धर्म सभी कालों में विचारयुग की धारा को बौद्धिक रूप से सन्तुष्ट किया है। यदि मानव एकता के लिए बौद्धिक समर्थन नहीं होगा उस स्थिति में मानव का अनुभव केवल विश्वास तक सीमित रहेगा। इन्हीं तथ्यों के आधार पर धर्म विश्वास परक है। धर्म ने मानव एकता को सुगठित कर रखा है। यहाँ तक कोई भी धर्म सम्प्रदाय चोरी, झूठ, हत्या, बलात्कार, ठगी का समर्थन नहीं करता है। जबकि धार्मिक अन्तर्दृष्टियों की उपलब्धियाँ तर्क पर आधारित है। इसीलिए वेसले कहते हैं कि 'मान्यता या मान्याताओं का समूह चाहे वह जितने भी सत्य क्यों न हों विश्वास नहीं है। विश्वास आत्मा की अन्तर्दृष्टि है- वह यह प्राणशक्ति है जिसके द्धारा आध्यात्मिक भावों का ग्रहण उसी प्रकार होता है जिस तरह शारीरिक इन्द्रियों से भौतिक पदार्थो का।'[3]

धर्म इष्टं धनं नृणां यज्ञोऽहं भगवत्तम:।
दक्षिणा ज्ञानसन्देश: प्राणायाम: परं बलम्।।[4]

धर्म ही व्यक्ति का मूल धन है। इस हेतु भगवान कहते हैं कि मैं परमेश्वर ही यज्ञ रूप हूँ। ज्ञान रूपी प्रकाश का मार्ग किसी व्यक्ति को देना सबसे बड़ी दक्षिणा है। प्राणायाम ही मानव का श्रेष्ठ बल है। जिससे मानव एकता की दिशा दिखाई देती है। धर्म रूपी ज्ञान का प्रकाश प्राप्त करने के लिए अच्छे लक्ष्यों की प्राप्ति से दूसरों को संदेश प्राप्त होता है। वर्तमान आधुनिकता ने दूसरो की सहायता करना बेहद कठिन कार्य महसूस होने लगा है। जिसकी विवेचना का परिणाम ही मानवीय जीवन की अविरल धारा को प्रवाहित होने से रोकती है। मनुष्य की चेतना समाज के प्रत्येक व्यक्ति के सम्बर्धन का कार्य करती है। जिसे मानवीय जीवन की अनेक घटनाओं से विखंडित नहीं किया जा सकता है। किसी विशेष हितों के लिए धर्म अन्याय का मार्ग प्रसस्त नहीं करता है। यहाँ तक धर्म ने मानव को नैतिक बनने का संदेश गीता देती है। आज के वैज्ञानिक जीवन में दूसरे के प्रति होने वाली कटुता के अनेकों उदाहरण दिखाई देते हैं।

जकात – प्रत्येक मुसलमान का कर्तव्य बनता है। अपनी कमाई का 10 प्रतिशत गरीबों में और धर्म कार्यो के लिए देना चाहिए। प्रार्थना के बाद अमूल्य काम धर्म के कार्यों में सहयोग प्रदान करना। कनिष्क आवश्यकताओं की भरपाई से ज्यादा कमाने वाले सभी मुस्लिम पुरूषों को जकात देना अनिवार्य है। आम तौर पर रमजान के शुभ अवसर पर जकात के रूप में आवश्यकता मन्द लोगों को वस्तुओं के रूप में भी जकात दिया जाता है। इसीलिए जकात को ईस्लाम दर्शन के पाँच आधार स्तम्भ में एक माना जाता है। इसी प्रकार प्रो. अब्दुल हकीम, वाणिज्य के प्राध्यापक ने स्वयं के जीवन में जकात का अनुभव करते हैं। उस अनुभव को स्वयं के वेतन द्धारा 10 प्रतिशत शिक्षा, समाज और मानव कल्याण हेतु दान करते हैं। यहाँ तक शिक्षा से वंचित छात्रों को उनकों शिक्षा की दिशा में अग्रसर होने में स्मरणीय योगदान देते हैं। 'इस्लाम के धार्मिक जीवन में इस अनुभूति का विकास हल्लाज के सुप्रसिद्ध शब्दों मैं सृजनात्मक सत्य हूँ, में अपनी पराकाष्ठा पर पहुँचा।'[5]

क्रिश्चयन – संत मदर टेरसा, क्रिश्चन समुदाय में पहली बार महिला को संत कहा गया। संत कहने के पीछे उनके जीवन के मनोभावों की दिशा में बीमार व्यक्तियों, दीन-दुखियों की सेवा करके मानव एकता को एक अच्छा

* शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

संदेश दिया। शिक्षण व्यवस्था प्रदान किये। चिकित्सा सेवाऐं प्रदान किये। जहाँ मानवीय जीवन का अमूल्य आधार रहा है। मदर टेरसा प्रत्येक बच्चे की सेवा जिस प्रकार से एक माँ अपने बच्चे की सेवा करती है। उसी प्रकार मदर टेरसा उन बच्चों को प्यार दिया। जिन बच्चों का इस दुनियाँ में कोई नहीं था। उन असहायों की सेवा की जिसके लिए मानवीय एकता के लिए वास्तविक धर्म यही है। धर्म का अर्थ है मानव सेवा करना।

बौद्ध धर्म – 'हीनयान में साधक निर्वाण–प्राप्ति से ही सन्तुष्ट हो जाता है, जबकि महायान में बुद्ध–ज्ञान, सर्वज्ञता, अनुत्तरज्ञान या 'सम्बोधि' जिसे तथता भी कहा गया है।'[6] प्रज्ञा, शील, करूणा के अनुभव को गौतम बुद्ध ने चिन्तन का आधार बनाया। इसीकारण बौद्ध धर्म कोई भी बात ऐसी नहीं है जो तर्क से सिद्ध न की जा सके। क्योंकि तर्क और अनुभव को प्रमाणित किया जा सकता है। उसी प्रकार भगवान गौतम बुद्ध ने इस जगत् की अनेक समस्याओं का उत्तर तर्क से प्रमाणित करके देते हैं। 'बुद्ध' का मतलब 'ज्ञान' का प्रतीक है। इसी तथता पर भगवान बुद्ध कहते हैं कि 'दु:ख' ही संसार में जीव जगत् की सच्चाई है। इस सत्य को गौतम बुद्ध ने मनोवैज्ञानिक तथ्यों से प्रमाणित करने का प्रयास किया है। इसी कारण इन्हें मानव इतिहास का सबसे बड़ा मनोवैज्ञानिक कहा जाता है। मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त मनुष्य के मानवीय संवेदना को महसूस करती है। उसी प्रकार गौतम बुद्ध ने अपने जीवन के अनुभव मानव समाज के सामने सृजन करके दिखाया है। यथार्थ क्या है? और अयथार्थ क्या है। दोनों के बीच की कड़ी को बताने का प्रयास किया है। क्योंकि इस दुनियाँ का प्रत्येक जीव नाशवान है। इसी कारण भगवान बुद्ध ने प्रत्यक्ष के माध्यम से चार्य आर्य सत्य के सिद्धान्त की बात कहते हैं।

जैन धर्म –

'विणयमूले धम्मे'[7]

जैन धर्म में विनय को ही मूल धर्म के रूप में माना जाता है। विनयशील मानव में के जीवन में प्रत्येक समय में सुख और आनन्द की प्राप्ति करना चाहता है। विनयशीलता ही व्यक्ति को नैतिक प्रधान बनाती है। इन्हीं तथ्यों के आधार पर स्वामी महावीर ने विनय को ही जीवन का उद्देश्य ही परम् अंग कहते हैं।

'दुर्ग तौ प्रपतत्तामात्मानं धारयतीति धर्मा:'[8]

दु:ख से घिरे समय में भी दुशप्रभावों के चंगुल से निकलने के लिए जो भी आचरण व्यक्ति आत्मा से धारण करता है। वही धर्म है। सद्गुणों से भरा हुआ जीवन ही मानव में नैतिक मूल्यों कितने भी असत्य तथ्य आने पर भी वह सत्य के मार्ग से नहीं भटकता वही वास्तव में नैतिक धर्म कहा जाता है। इसी में मानव एकता के लिए धर्म आवश्यक तथ्य के रूप में सिद्ध होता है।

मानव एकता के लिए विश्व, राष्ट्र और सामाजिक प्राणियों के दु:ख से मुक्ति की भावना के अनुशीलन ही पुण्य प्राप्त होने की विधि को बन्ध कहा जाता है। इसके अतिरिक्त सद्गुणों से युक्त से धर्म का रूप ग्रहण करता है। वहीं निर्जरा के कारण भी बनता है। असत्य भाषण, चौर्यकर्म, हिंसा, मैथुन–काम–विकार, परिग्रह–ममत्व, लैगिंक प्रवृत्ति, मूर्छा, तृष्णा, क्रोध–गुस्सा, संचय, अभिमान, अहंकार, छल, लोभ संचय के संरक्षण, माया–कपट षणयन्त्र, कूटनीति, आशक्ति, द्वेषु–घृणा, ईर्ष्या, तिरस्कार, क्लेश–संघर्ष एवं कलह आदि। बन्ध और बन्ध के कारणों व्यक्ति के अभाव होने वाले परिपूर्ण आत्मिक अनुभव को मोक्ष कहा जाता है। अर्थात् ज्ञानतत्व और वीतराग की चरम दृष्टि ही मोक्ष का कारण बनती है। इसी कारण इस प्रकृति में जीव विचरण करते हैं, जबकि कुछ मनुष्य अधिक सुख की प्राप्त करना चाहते है। फिर भी सभी सुखों की कल्पना करना महत्वपूण है।

पुरूषार्थ से तात्पर्य है कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। जैन दर्शन में पुरूषार्थो के सन्दर्भ में अर्थ और धर्म के लिए साध्य के रूप में नहीं स्वीकार किया गया है। बल्कि काम और मोक्ष को साधन माना गया है। अर्थ–काम के रूप में और मोक्ष धर्म के रूप में साधन रहा है जबकि इस मानव एकता के विषय में शास्त्र मोक्ष है।

सम्यग्दर्शनज्ञान चारत्राणि मोक्षमार्ग: ।[9]

सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, और सम्यक् चरित्र के आधार पर मोक्ष प्राप्ति के साधन बताये गये है। सम्यक् दर्शन के द्वारा जैन दर्शन में तीर्थकारों में पूर्ण श्रद्धा आवश्यक है। धर्म रूपी तत्वज्ञान ही मोक्ष है। चरित्र के सम्बन्ध में आचरण ही मानव का सबसे बड़ा मूल्य है। औपशमिक का तात्पर्य आत्म की शुद्धता से माना जाता है। जब सत्तागत कर्मो के विकास कि दिशा अवरूद्ध हो जाती है। तब परिणाम सामने आता है। इसी प्रकार सम्यक् चरित्र के लिए कहा जाता है कि ज्ञान की पराकाष्ठा मुक्ति की ओर ले जाती है। उद्देश्यों की सिद्ध को को प्राप्त करने के लिए ज्ञान मार्ग की तीव्रगामी गति से चलना आवश्यक है। किन्तु सभी ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं। चरित्र निर्माण हेतु पच्चीस रूप बताये गये है। सोलह कुशाय है इसके साथ नौ कुशाय भी बताये गये। जहाँ हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्री–वेद, पुरूष–वेद, नपुंसक–वेद, अतंतानुबंधी जिसको औपशमिक के रूप में सम्यक दर्शन माना जाता है।[10] नैतिकता से ही मुक्ति सम्बभव है। अनैतिकता से मुक्ति प्राप्त करना असंम्भव है। नैतिक मूल्यों के साथ में ही आत्मिक चरित्र का निर्माण होता हैं। जिसमें स्वतंत्र शक्ति का निर्माण होता है। जिसकी औपचारिकता का परिणाम ही स्वच्छता से ही मुक्ति की प्राप्ति सम्भव है। जिस हेतु त्रिवर्ग ही मोक्ष गामी साधन है। जिसको सम्यक् दर्शन का पुण्य फल तीर्थकारों के प्रति श्रद्धा के प्रति समर्पण से होता है।

लिंगायत :– भय ही धर्म का मूल मानने के काल खण्ड में गुरू वसवर्णा ने दया ही धर्म का मूल इस ध्येय से लिंगायत धर्म की स्थापना 12 वीं शताब्दी में किया। उनके वचना साहित्य में 'दया बिल दा धर्मा या ऊ दया' कर्नाटका भाषा है। इस वचन में गुरू वसवर्णा यह कहते हैं कि जिस धर्म में दया नहीं उसको धर्म नहीं माना जायेगा। दया सर्व प्राणियों के प्रति धर्म का होना अनिवार्य है। इसलिए सभी धर्म को दया अनिवार्य है।

निष्कर्षत: यह सिद्ध होता है कि मानव एकता के लिए धर्म परम आवश्यक है। धर्म ही मानव जीवन बीच एक प्रेम सम्बन्ध को कायम रखा है। धर्म ने मानव को सत्य बोलने के लिए आज भी प्रेरित करता है। क्योंकि धर्म स्वयं में सत्य है। इसी कसौटी के साथ मानवीय एकता धर्म के साथ जुड़ी हुई है। जहाँ मानव का सम्बन्ध एक दूसरे व्यक्ति से भाईचारे की भावना के होने में धर्म की भूमिका है। धर्म के बिना मानव जीवन की एक कोरी कल्पना है। वह पशुत: जीवन बचता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. **पी.डी. शर्मा**, ***एथिक्स, सत्यनिष्ठा एवं अभिवृत्ति,*** रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2015, पृष्ठ 182
2. **सत्यवान पी. कनल अनु. डी.डी. बंदिष्टे,** ***देवात्मा का नीतिशास्त्र,*** देवसमाज प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1991, पृष्ठ 32
3. **डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन,** ***धर्म और समाज,*** चेतक पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2011, पृष्ठ 12
4. ***श्रीमद्भागवतान्तर्गत*** (एकादश स्कन्ध, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 205

5. **डॉ. मुहम्मद इकबाल, *इस्लाम में धार्मिक चिन्तन का पुनर्रचना,*** राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996, पृष्ठ 133
6. **डॉ. नन्दकिशोर देवराज, *भारतीय दर्शन,*** उत्तार प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 2002, पृष्ठ 190
7. **आचार्य देवेन्द्र मुनि, *नीति शास्त्र (जैन धर्म के सन्दर्भ में)*** यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, संस्करण 2000, पृष्ठ 53
8. **आचार्य देवेन्द्र मुनिजी, *धर्म और जीवन,*** यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, संस्करण 1997 पृष्ठ 7
9. ***तत्वार्थ सूत्र* अ.1सू.1 पृष्ठ 128**
10. **छगनलाल जैन, *तत्वार्थसूत्र,*** अ.भा. श्री राजेन्द्र जैन श्वे.तीर्थ पेढ़ी (ट्रस्ट) श्री मोहन खेड़ा तीर्थ, राजगढ़ जिला, धार (म.प्र.) जुलाई 2006 पृष्ठ 7

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

पर्यटन केन्द्रों के धार्मिक महत्व का ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. मनोरमा सिंह *

शोध सारांश – पर्यटन केन्द्रों के धार्मिक महत्व इतिहास के रूप में प्रसिद्ध रहा हैं। यह पर्यटन केन्द्र इतिहास को बार-बार दोहराता है। इस रूप में पर्यटन स्थल के विकसित होने में आधुनिक युगीन व्यक्ति व्यवसाय को लेकर भ्रमण करना प्रारम्भ कर दिया है। भ्रमण के द्धारा आर्थिक लाभ अर्जित करना है। वह भ्रमण के लिए वह व्यवसायिक दृष्टि से सोचने लगता है। इस दौरान पर्यटन स्थालों का दौरा करता है कि कौन सा व्यवसाय स्थापित किया जा सकता है। उन स्थलों का अन्वेषण करता है, जो व्यवसायिक दृष्टि से उसके लिए महत्वपूर्ण हैं। बघेलखण्ड के भ्रमण से पर्यटक अनेक क्षेत्रों में आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकता है। इस क्षेत्र में खनिज और वन सम्पदा उपलब्ध है जिनसे पर्यटक अनेक प्रकार के उद्योग स्थापित कर लाभ प्राप्त करते हैं।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में **पर्यटन केन्द्रों के धार्मिक महत्व का ऐतिहासिक अध्ययन** एक प्रकार से द्धितीयक समंकों के आधार पर शोध पत्र का निर्माण किया गया है। इसके साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं का भी संदर्भित किया गया है।

उद्देश्य :

1. पर्यटन में शरीर के स्वस्थ हेतु आरामदायक यात्रा करना।
2. देशाटन विदेशी मुद्रा का आर्थिक लाभ प्राप्त करना।
3. धार्मिक पुण्य फल हेतु पर्यटन यात्रा करना।
4. पर्यटन केन्द्रों में कुशल प्रबंधक के व्यवहार का अध्ययन करना।
5. पर्यटन केन्द्रों में कुशल कर्मचारियों की दक्षता अध्ययन करना।
6. पर्यटन केन्द्रों होने वाली आवास व्यवस्था का अध्ययन करना।
7. पर्यटन केन्द्रों में स्वच्छ जल की समस्या।

समस्या :

1. पर्यटन केन्द्रों में व्यवस्थित उद्योगों के आवागमन की समस्या।
2. पर्यटन केन्द्रों में कुशल कर्मचारियों की समस्या।
3. पर्यटन केन्द्रों में स्थापित उद्योगों में मुख्य प्रबंधक के व्यवहार की समस्या।
4. पर्यटन केन्द्रों में व्यवस्थित आवास की समस्या।
5. पर्यटन केन्द्रों में स्वच्छ जल की समस्या।

पर्यटन केन्द्र को आर्थिक केन्द्र ही बढ़ावा देते है। जहाँ बाक्साइड ऐलुमिनियम जैसी कीमती धातु पाई जाती है। वहाँ की अर्थव्यवस्था का एक बहुत बड़ा केन्द्र माना जाता है। जिस बात को इतिहास साक्ष्य प्रस्तुत करता है। ऐसे में दक्कन ट्रेप के आधार पर पर्यटक को आने-जाने में सहायता प्राप्त होती है। ऐसी विचारधाराऐं मानव के लिए आर्थिक विकास में अधिक उपयोगी समझी जाती है। मेकल के पठारी स्थलों पर भी बाक्साइट की उच्च कोटि पाई जाती है। यह बाक्साइट रीवा, सतना, शहड़ोल आदि जगहों में पाई जाती है। इसके उत्तरी छोर पर भी चित्रकूट और नागौद आदि क्षेत्रों में भी उच्च कोटि की बाक्साइट प्राप्त होती है। मध्य प्रदेश में आकर इस प्रकार की खनिज सम्पदा को देखने का मौका विदेशी पर्यटकों को मिलता है।

उच्च कोटि का बाक्साइट मेकल पर्वत के पठारी भाग में उपलब्ध है। जहाँ बाक्साइड संरक्षित रखने का महत्वपूर्ण स्थान है। इन स्थिति नगरों में स्थित पहाडों में संचित है। जिस कारण पर्यटक इन स्थानों के लिए पर्यटन के रूप में भ्रमण करने आते है। इससे इन पर्यटकों को प्राप्त होने वाली बाक्साइट के प्रयोग और महत्व का पता चला है। इन्हीं कारणों से इन क्षेत्रों में धार्मिक पर्यटन के रूप में विकसित होता है। वहीं धार्मिक पर्यटन बाद में औद्योगिक फिर व्यवसायिक पर्यटन के रूप में एक व्यापारिक केन्द्र के रूप में विख्यात हो जाता है।

पर्यटन का वास्तव में ऐतिहासिक रूपों में विशेष महत्व है। जहाँ सामाजिक और आर्थिक विचार चिन्तन के लिए उचित सुविधाओं की सफलता हेतु विदेशों से लोग पर्यटन के भ्रमण हेतु आते हैं। यह गन्तव्य स्थानों के आने-जाने में परिवहन की महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जिस हेतु यातायात सुविधाओं के प्रचलन से मानवीय व्यवस्था का परिणाम जीवन को आनन्द की प्राप्ति है। इसी कारण पर्यटन के क्षेत्र में कृत कीड़ा का रूप लेती जा रही है। मनोरंजक रूपों में उद्योगों का भी विकास पर्यटन केन्द्रों में होता जा रहा है। यहाँ पर विसंगतियों का परिणाम सिर्फ आर्थिक लाभ कमाना है। जिस हेतु यात्रा का भ्रमण केन्द्र मूल दस्तकारी रूपों में कामयावी हासिल करते हैं। इसके लिए उद्योगों से निर्मित खिलौने की दुकानों से आर्थिक लाभ प्राप्त होता है।

समाधान – प्राय: 'अर्थशास्त्री पर्यटन पर आधारित संरचना पर अधिक जोर देते हैं क्योंकि वह आर्थिक विकास की गति को तीव्र करने में एक अग्रिम शर्त है, इसीलिए यह देखा गया कि पर्यटन आधारित संरचनाओं के निर्माण में उच्च कोटि के पूँजी नियोजन का होना विकासशील देशों की एक विशेषता रही है।'[1]

किसी भी राज्य में पर्यटन केन्द्र होने से एक अर्थव्यवस्था का मूल साधन भी जुटाया गया है। इससे बेरोजगारों को रोजगार उपलब्ध होता है। मानव की कृपाशीलता में पर्यटन केन्द्रों की अह्म भूमिका दिखाई देती है। विदेशी व्यापारिक केन्द्रों की भी स्थापना होती है। जिससे विदेशी मुद्रा भी इस राज्य को प्राप्त होती है।

भूर्भुव: स्वरिति सा त्रयी।।[2]

ऋग्वेद, यजुर्वेद, और सामवेद इन तीन विद्याओं को ही त्रयी विद्या कहा जाता है। इस विद्या का अर्थ वैदिक काल से सृष्टि का मूल सर्वथा सत्य की ओर रहा है। जहाँ यथार्थ होता वहाँ धार्मिक क्रिया-कलापों का समन्वय होता है। इस स्थिति में परम् सत्य के बल पर पृथ्वी स्थित है। इसका कारण रहा कि आर्य हमेशा से प्रकृति पूजा को महत्व देते हैं। यह प्रकृति ने प्राचीन

* इतिहास विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

काल में प्राकृतिक दृश्य और सौन्दर्य का भ्रमण करने लोग जाते थे। उनका मूल उद्देश्य शिक्षा, ज्ञान और विद्या का केन्द्र बिन्दु यह प्राकृतिक परिदृश्य था। जबकि आज वही प्राकृतिक परिदृश्य मानव के लिए पर्यटन का केन्द्र बिन्दु बन गया है। जहाँ आधुनिकता ने ज्ञान विज्ञान को छोड़कर मौज-मस्ती का एक आलम पर्यटन केन्द्र बन गये हैं। जबकि धार्मिक दृष्टि से पर्यटन के परिदृश्य को देखकर प्राकृतिक सौन्दर्य को बढ़ाने देने की ओर व्यक्ति को कदम उठाना चाहिए। जिससे हमारी संस्कृति, धर्म और मानव मूल्य सुरक्षित रह सकें।

इन व्यवस्थाओं से ग्रामीण बेरोजगारों को भी रोजगार उपलब्ध होता है। इससे क्षेत्रीय विकास मतें काफी महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यदि रोजगार व्यक्तियों को किसी भी पर्यटन केन्द्रों को रोजगार मिलता है।[3] वहाँ व्यवसायिक महत्व और अधिक बढ़ जाता है। क्योंकि ग्रामीण जीवन जीने वाले व्यक्ति कार्य को बहुत ही मजबूती से करते हैं। जहाँ पर्यटन विकास से सम्बन्धित क्रियाओं का सार्वजनिक नियोजनों के परिणामों को कोई नुकशान नहीं होता है। इससे पर्यटन केन्द्रों का विकास भी सम्भव है। जिस हेतु इन योजनाओं का परिणाम सावधानी पूर्वक निकाला जा सकता है। यह आर्थिक नियोजनों का परिणाम विस्तृत और अति दुर्गम लगता है। जबकि पर्यटन केन्द्र के लिए अलग दृष्टिकोण का प्रयोग करके जीवन की वास्तविक आर्थिक स्त्रोतों का परिणाम भी सामने आने लगता है। जहाँ उपभोग की आवश्यक वस्तुओं का कार्य प्रशिक्षित कामगारों की पूर्ति पर निर्भर करता है। जिससे पर्यटन की सौन्दर्यता का वर्णन महत्वपूर्ण रूपों में करता है।[4]

परिभ्रमण मनोरंजन का साधन बनता जा रहा है। जहाँ मानव विकास की सम्भावनाओं की ओर इंगित करता है।

पर्यटन एक ऐसी गतिविधि को अंजाम देती है जो किसी राष्ट्रीय स्तर की सामाजिक भौगोलिक और आर्थिक तीनों अवस्थाओं को प्रभावित करती हैं।

प्रथम स्थिर और दूसरा अस्थिर स्थिर क्षेत्रों में पर्यटन के तहत समान्त आर्थिक नियोजनों और क्रियाकलापों का वास्तविक समुदाय है। जहाँ पर्यटन के निर्माण केन्द्रों की माँ को आकर्षित करते है। परिवहन और पर्यटन-यात्रियों की माँग पर नियंत्रित समुदाय की परम्पराओं का परिणाम मानव समुदाय पर निर्भर करता है।

दिक्षु यत्खुरचतुष्टयमुद्रामभ्यवैमि चतुरोऽपि समुद्रान्,
तस्य पोत्रिवपुषस्तव दंष्ट्रा तुष्टयेऽस्तु मम वास्तु जगत्या:।
उद्भवाजतनुजादज! कामं विश्वभूषण! न दूषणमात्र,
दूषणपशमनाय समर्थं येन देव ! तव वैभवमेव।[5]

प्राचीन काल से ही चारों दिशाओं में वराह स्वरूप धारी भगवान में इस पृथ्वी का संरक्षण कर रखा है। जिनकी मुद्राएँ चरण-चिन्ह, के रूप में प्रकृति लहलहा रही है। जबकि मानव में मानवीय मूल्यों की अनेक विशालता का परिणाम ही विशाल वराह की देहवाले आपकी इस पृथ्वी का सौन्दर्य मनमोहक की तरह दिखाई दे रहा है। जिसकी कल्पना आधुनिक युगीम मानव पर्यटन के रूप में कर रहा है।

अस्थिर वह व्यवस्थाओं पर अल्प कालीन होती है। जिसकी माँग भोजन व्यवस्था प्रवासियों को आवास सुविधा मुहैया करना और खाँन-पान की मूल-भूत सुविधाएँ शामिल है।[6]

पर्यटन उद्योगों में धात्विक उद्योगों का मूल पदार्थ हैं चूना पत्थर है। जहाँ पर अनेक प्रकार के भागों में चूने का व्यवस्थित भण्डार संचित है। इस की विशेषता रासायनिक स्तर का चूने की मात्रा में वृद्धि करना है। जहाँ उत्पादन क्षेत्रों को विकसित कर लोगों को पर्यटन केन्द्रों की ओर प्रेरित किया जाता है।[7]

नीस चट्टानों में सुरमा पत्थर की उपलब्धता का केन्द्र माना जाता है। जहाँ पर पर्यटक इन सुरमा पत्थर के महत्व को जानने की इच्छा रखते हैं। की परतों में सुरमा पत्थर की इस परत पर पर्यटकों ने कफी दिलचस्पी ली है। जहाँ इसका व्यवसायिक लाभ प्राप्त हो रहा है।

निष्कर्ष - पर्यटन केन्द्र के रूप में यह विकसित रूपों में प्रकृति के सौन्दर्य का परिणाम पृथ्वी ही देती है। जहाँ प्राकृतिक सौन्दर्य को निरूपित करने में पर्यटन की भूमिका अह्म है। यह पर्यटन के आधुनिक शक्ति पर निर्भर होता जा रहा है। ऐसी जिसका प्रयोग मशीनीकरण, औद्योगीकरण, नगरीकरण और और व्यवसायिकरण के लिए पूँजी का बहुत बड़ा केन्द्र माना जाता है। इसका ऐतिहासिक महत्व है। धार्मिक रूपों में पर्यटन के मूल्यों का स्मरणीय योगदान मानव विकास के लिए परिलक्षित होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजेश गोयल, पर्यटन एवं परिवहन, वंदना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ 17
2. जैमिनि उ. ब्रा. 2/9/7
3. डॉ. बी.पी. सिंह, पर्यटन विकास समस्याएँ एवं सम्भावनाएँ, आशा पब्लिशिंग काम्पनी, आगरा, 2013-14, पृष्ठ 196
4. राजेश गोयल, पर्यटन सुविधाओं का प्रबन्धन, वंदना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ 26
5. नैषधीय चरित्, 21/ 57, पृष्ठ 67
6. के.एल. अग्रवाल, भारत के सांस्कृतिक केन्द्र, खजुराहों दि मैकमिलन कम्पनी, नई दिल्ली, 1980, पृष्ठ 9
7. राजेश गोयल, भारतीय पर्यटन उद्योग, वंदना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ 82

****

पर्यावरण से मानव का शैक्षिक विकास

डॉ. स्वर्णलता त्रिपाठी *

प्रस्तावना – पर्यावरण मानव जीवन की प्राणवायु प्रदान करता है। परन्तु मनुष्य प्रतिदिन पेड़ों को काट रहा है। प्रकृति का नियम है कि प्रकृति सर्वोत्तम जानकार है। इस नियम की मान्यतानुसार हमें प्रकृति का बेहतर अविष्कारक माना जाता है। मानव के जीवन का संरक्षण पर्यावरण पर निर्भर करता है। इसका मूलत: निदान मनुष्य की पूर्णता पर निर्भर करता है। जिस प्रकार से सभी प्राणियों का मानव में निहित योगदान है। उसी प्रकार पर्यावरण के संरक्षण से मानव स्वस्थ्य विचार का आदान-प्रदान होता हैं।

प्रकृति के नियम तभी तक उचित है जब तक मानव में मानवीय मूल्य विद्यमान है। यदि मूल्य खत्म हुआ प्रकृति का रौद्र रूप सामने आ जाता है। मानव हितों पर विचार की प्रारम्भिक अवस्था का संचार होता है। ऐसी मान्यताओं पर निर्भर समाज का प्रभाव भी पर्यावरण में परिलक्षित होता है। इस प्रकार की मानवीय दशाओं में मानव का हित और पोषण युक्त पौधों का संरक्षण मानव का कर्तव्य है। मनुष्य प्रकृति को अपूरणीय क्षति करने से रोकना होगा। तभी हम गोलोबलवार्मिग के प्रभाव से निजात पा सकते हैं। ऐसी मान्यताऐं मानव के लिए बहुत ही हितकर होती है। जहाँ मानव का समाज और वैचारिक संघर्ष दोनों में अंतर दिखाई देता है। इसी कारण मानव धीरे-धीरे उन्हीं वस्तुओं को नष्ट करने में लगा है। जो उसके जीविकोपार्जन में सहायता करती है। ऐसी मान्यताओं से भरा समाज मानव के लिए मूल्य प्रदान कर रहा है।

प्रविधि – इस शोध पत्र में **पर्यावरण से मानव का शैक्षिक विकास** एक प्रकार से द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार पर अध्ययन किया गया है। इसके सन्दर्भ हेतु पत्र-पत्रिकाओं और विद्वानों का मार्गदर्शन लिया गया है।

समस्या :

1. प्राकृतिक के असन्तुलन होने का कारण।
2. प्रकृति और मानव के मूल्यों की समस्या।
3. प्राकृतिक संसाधनों के क्षरण से पर्यावरण की समस्या।
4. अनियंत्रित खाद दवाईयों से पर्यावरण को नुकशान।
5. जीव-जन्तुओं तथा प्रकृति पर मानव के द्वारा हिंसा।
6. मनुष्य का भोजन तथा स्वास्थ्य कैसे पर पर्यावरण प्रदूषण का बोलबाला।
7. जनसंख्या और पर्यावरण की तीव्र वृद्धि से हिंसा और बढ़ते अपराध।
8. बच्चों पर जल संकट से मानसिक विकास का क्षीण होना।
9. पर्यावरण प्रदूषण में उत्पत्र संकट

उद्देश्य :

1. जीव-जन्तुओं तथा प्रकृति पर मानव की निर्भरता को समझना।
2. पदार्थो की तथा विवेकपूर्ण उपयोग करना।
3. मनुष्य का भोजन तथा स्वास्थ्य पर ध्यान देना।
4. जनसंख्या और पर्यावरण, के बारे में तकनीकि ज्ञान और परम्परिक ज्ञान का समन्वय।
5. जल एवं ऊर्जा, को संरक्षिण रखने में प्रत्येक व्यक्ति को योगदान देना।
6. पर्यावरण प्रदूषण में उत्पत्र संकट को कम करने हेतु वृक्षारोपण में सहायता करना।
7. पृथ्वी एक समाज है इसकों संरक्षिण रखने के लिए खाद और दवाईयों का उपयोग कम करना।

समाधान – मानव अपने मूल आध्यात्मिक गुणों को त्याग कर आर्थिक लाभ के पीछे मानव भागता जा रहा है। प्रकृति के संबंधों के विपरीत होने से मानव के ज्ञान को संकुचित एवं अज्ञानता के को प्रकृति ही नष्ट करती है। सर्वप्रथम मनुष्य इस मान्यता का त्याग कर दे कि हम वृक्षों को नहीं काटेगें। इनका संरक्षण और संवधन करेगें। पर्यावरणीय समस्या का कोई वैज्ञानिक समाधान नहीं है। समाधान सिर्फ मानव है। मानव को पर्यावरण के द्वारा होने वाले लाभ और स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव से परिचित होना होगा। यही पर्यावरण की शिक्षा का मूल उद्देश्य है।

'आज प्रत्येक मानव-समाज में चाहे वह ग्रामीण हो अथवा शहरी हो औद्योगिक तथा तकनीकी की देश में प्रगति कर रहा है। उद्योग तथा कारखानों से बड़ी मात्रा में बेकार वस्तुयें तथा अवशेष निकलते हैं उन्हें जीव-मण्डल में छोड़ते हैं। जिससे परितंत्र सामान्य क्रियायें प्रभावित होती है।'[1]

केन्द्रीय पर्यावरण विभाग द्वारा पर्यावरण प्रदूषण को रोकने के संभावित उपायों के तहत 'राष्ट्रीय पर्यावरणीय चेतना अभिया' की शुरूआत की गई। इन समस्त कार्यो पर होने वाला व्यय भारत सरकार द्वारा वहन किया जाता है। इस योजना के एक प्रोजेक्ट में सामान्यतया दो जिलों के समस्त प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों को रखा जाता है। इस देशव्यापी कार्यक्रम को सर्वप्रथम 1986 में 'पर्यावरण शिक्षा केन्द्र, अहमदाबाद' के द्वारा प्रारम्भ कराया गया। इसके तहत 19 नवम्बर से 18 दिसम्बर तक 'पर्यावरण माह' प्रति वर्ष पूरे देश में मनाया जाता है। इसके अन्तर्गत प्रति वर्ष एक निश्चित विषय-वस्तु (जो कि पर्यावरणीय समस्याओं अथवा संरक्षण) पर आधारित हो, को ध्यान में रखते हुए पद यात्राएँ, रैलियाँ, जनसभाएं, प्रदर्शनियाँ नुक्कड़ नाटक, लोकनृत्य, निबन्ध, वाद-विवाद, चित्रकला, पोस्टर प्रतियोगिताएँ, प्रशिक्षण कार्यक्रम, सेमिनार, कार्यशलाएँ आदि आयोजित किये जाते हैं। ये सभी कार्यक्रम पर्यावरण शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत क्षेत्रीय संसाधन के एन.जी.ओ. द्वारा आज भी संचालित की जा रही हैं।[2]

यह योजना व्यावहारिक पक्ष पर आधारित है। केन्द्रीय पर्यावरण विभाग द्वारा निर्देशित तथा केन्द्रीय शिक्षा विभाग द्वारा संचालित कार्यक्रम को

* प्राचार्य, रीवा कालेज ऑफ एजुकेशन, रीवा (म.प्र) भारत

अब राज्यों के शिक्षा विभाग को सौंप दिया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में पर्यावरण शिक्षा को पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग बनाने की संस्तुति की गयी तथा पर्यावरण संरक्षण के बुनियादी सिद्धान्तों के बारे में विद्यार्थियों में जागरूकता पैदा करने के उद्देश्य से विद्यालयी शिक्षा को पर्यावरणोन्मुख बनाने की आवश्यकता पर बल दिया गया है।[3] इस क्रम में यह भी सिफारिश की गयी कि पर्यावरण शिक्षा को उच्च शिक्षा तथा शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में भी महत्वपूर्ण स्थान दिया जाय। अनेक विश्वविद्यालयों ने स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर पर 'पर्यावरण विज्ञान' के पाठ्यक्रम प्रारम्भ किये हैं। अनेक विश्वविद्यालयों में शोध कार्यो के अंतर्गत पर्यावरण विज्ञान को स्थान दिया गया है। इस कार्य हेतु तात्पर्य अध्यापक शिक्षा विभागों के माध्यम से पर्यावरण शिक्षा को शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों तथा पाठ्यक्रमों का अभिन्न अंग बनाने हेतु संस्तुति जारी है।

पर्यावरण संरक्षण के उपायों के लिए व्यक्ति को स्वयं जागरूक होना होगा। इस प्रकार पर्यावरण प्रदूषण के दायित्वों पर मानव के प्रति ध्यान आकृष्ट कराना चाहिए। जिससे होने वाले पर्यावरण प्रदूषण से मुक्ति मिल सके। पर्यावरण से संबंधित संरक्षण और संवर्द्धन के उपाय को सार्थक बनाने के लिए राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर पहल करने से होने पर इससे निजात पाई जा सकती है। इन आयामों के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण भी मानव हित के लिए सर्वोच्च कार्य है। इससे शिक्षा और समाज में पर्यावरणीय शिक्षा का स्तर और बढेग़ा। ऐसी मान्यताऐं ने भी पर्यवरण के लिए वृक्षों पूजा पद्धति भी सार्थक रूपों में कार्य कर रही है। पर्यावरण संरक्षण के प्रति मानव जागृति करना आवश्यक है।[4]

निष्कर्ष - पर्यावरण के प्रति जन सामान्य में जागरूकता, चेतना एवं संवेदनशीलता विकसित करने की दृष्टि से भारत सरकार द्वारा औपचारिक शिक्षा के साथ-साथ अनौपचारिक साधनों द्वारा भी पर्यावरण शिक्षा को प्रोत्साहन दिया जाता है। इसके अन्तर्गत प्रदर्शनियाँ, 'परिस्थितिकी विकास शिविर' व्याख्यान श्रृंखला, नुक्कड़ नाटकों, प्रशिक्षण कार्यक्रम, फिल्म प्रदर्शन, वृत्तचित्रों आदि के द्वारा पर्यावरणीय जन जागृति के कार्यक्रम चलाये जाते हैं। पर्यावरणीय विचार-विमर्श के लिए कार्यशाला, सेमिनार, विचार गोष्ठियाँ आदि आयोजित की जाती है जिसके द्वारा प्रबुद्ध वर्ग के लोगों को एक साथ मिलकर विचार-विमर्श करने एवं ठोस कार्यवाही करने हेतु योजना का निर्माण करने का अवसर प्राप्त होता है। विभिन्न पर्यावरणीय विषयों से संबंधित प्रतियोगिताएं जैसे चित्रकला प्रतियोगिता, निबन्ध लेखन प्रतियोगिता, प्रश्नोत्तारी प्रतियोगिता, वाद-विवाद प्रतियोगिता पत्रवाचन, प्रतियोगिता, पेंटिंग, पोस्टर, स्लोगन, कविता एवं गीत प्रतियोगिताएँ भी पर्यावरणीय समस्याओं पर जन-सामान्य एवं शिक्षित वर्गो में जागरूकता उत्पन्न करने का महत्वपूर्ण माध्यम है। इन सभी कार्यो में सरकार, शिक्षण संस्थाएँ, स्वयंसेवी संस्थाएँ, निजी संस्थाएँ एवं जन-संचार माध्यम की अहम् भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। इससे मानवीय मूल्यों को संरक्षिण कर पर्यावरण की जागरूकता को शिक्षा के माध्यम से उपयोगी और कार्यशील बनाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आर. ए. शर्मा, पर्यावरण शिक्षा, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, 2007, पृष्ठ 47-48
2. एस.एस. माथुर, शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा 1991, पृष्ठ 48
3. डॉ. अरूण रघुवंशी एवं डॉ. चन्द्रलेखा रघुवंशी, पर्यावरण प्रदूषण, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1993, पृष्ठ 20
4. डॉ. गोविन्द्र तिवारी, शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के मूलाधार, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा, 1985, पृष्ठ 60

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

'पशुसंसाधन विकास का भौगोलिक अध्ययन' उज्जैन जिले के सन्दर्भ में

डॉ. सी.एल. खिंची * सीताराम बलवान **

शोध सारांश – पशु संसाधन विकास भौगोलिक दृष्टि से महत्वपूर्ण कार्य माना जाता है। इसकी विचारशीलता का परिणाम ही पशुओं पर निर्भर करता है। प्राचीन काल से मनुष्य या खाना बदोश पूर्ण जीवन जीता था। वह जंगली जानवरों जैसे घूमता फिरता और जंगलों से प्राप्त जानवरों का भक्षण करता था। किन्तु धीरे-धीरे सभ्यता के विकास ने इनकी संख्याओं में वृद्धि करने लगे। इसका मूल मन्तव्य मानव जीवन का आधार पशु संसाधन रहा है। जहाँ पशुओं से गोबर, की खाद, दूध आदि की प्राप्ति होने लगी। उस काल से ही मानव ने खेती करना भी प्रारम्भ भी कर दिया था। इस हेतु मानवीय जीवन की मूल्यों के स्वरूपों का वर्णन किया जाता है। ऐसी विसंगतियों का परिणाम मानवीय चेतना का संचार होना चाहिए। वैदिक काल का भारतीय संस्कृति और समाज 'आर्य जनों' से मिलकर बना था। आर्यो के पास पशुओं की संख्या थी। इन संख्याओं में गाय, भेंड़, बकरी, भैंस इत्यादि हजारों पालतू पशुओं का संरक्षण होता था। जिनके लिए चारा पानी उपलब्धता की मात्रा अधिक थी। उस समय जंगलों में हरी-हरी घास अधिक मात्रा में उपलब्ध होती थी। पालतू पशु गाय, भैस, बकरी, भेड़ से व्यक्ति को दूध माँस प्राप्त होता था। इन पशुओं का उपयोग मानव सिर्फ कृषि कार्य में ही करता था। समयनुसार इनकी संख्या बढ़ती गई वहाँ से वैदिक सभ्यता का ग्रामीण जीवन अप्रितम विश्वास बढ़ता गया।

प्रस्तावना – प्राचीन काल से ही मानव ने पशुओं की रक्षा और संरक्षण का कार्य उठाना प्रारम्भ कर दिया था। इन पशुओं को धार्मिक कार्यो में जैसे गाय का पूजन किया जाता था। जो आज भी यह परम्परा का निर्वहन किया जाता रहा है। आदिम काल से मानव में मानवीय चेतना का विकास होता वहाँ भौगोलिक वातावरण भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो रहे है। मानव इनसे भोजन और मानसिक विचारधाराओं के परिणामों का उपयोग मानवीय उपयोगिता के आधार पर करता था।

प्रविधि – इस शोध पत्र में **'पशुसंसाधन विकास का भौगोलिक अध्ययन' उज्जैन जिले के सन्दर्भ में** प्राथमिक और द्वितीयक समंकों के द्वारा शोध पर का अध्ययन किया गया है। इसके लिए पत्र-पत्रिकाओं और साक्षात्कार के माध्यमों से भी सन्दर्भित करने का प्रयास किया गया है। प्राथमिक आंकड़ों के तथ्यों से जानकारी एकत्र की गई है। इन आंकड़ों के विश्लेषण के लिए उपयुक्त एवं योग्य सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया गया है। इन विधियों में समान्तर माध्य और माध्यिका के बहुलक और निदर्शन पद्धति के द्वारा वर्गीकरण किया गया है।

उद्देश्य :

1. पशु संसाधन के क्षेत्र की भौगोलिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।
2. पशुओं का पोषण आहार का अध्ययन करना।
3. पशु पालन में होने वाली समस्याओं का अध्ययन करना।
4. कृषि कार्य में संलग्न पशुओं का अध्ययन करना।
5. दूध उत्पादन, वितरण के प्रतिमान का अध्ययन करना।
6. पशु संसाधन की उपयोगिता का अध्ययन करना।
7. विकास दर और मृत्यु दर का अध्ययन करना।

समस्या :

1. प्राथमिक आंकड़े स्वयं पशुओं के संसाधन प्रतिरूप पर केन्द्रित है।
2. पशुओं से उत्पादित दुग्ध की क्षमता के विकास की समस्या।
3. पशु संसाधन में अच्छे पोषण आहार की समस्या।
4. पशुओं को चारागाह के उत्तम विकास की व्यवस्था की समस्या।
5. एक जगह पर पशुओं के बधें रहने से जगड़न की समस्या।
6. शहरी क्षेत्रों में पशुओं पोलिथिंन आदि अपशिष्ट पदार्थो के खाने से होने वाली बीमारी की समस्या।

पशु संसाधन उत्पादक दूध की मात्राओं का परिणाम किसी भी विपणन केन्द्रों में उपलब्धता के मूल्यों पर निर्भर करता है। इस प्रकार पशुओं के संरक्षण और संवर्धन में व्यक्ति को उच्च पोषण आहार की आवश्यकता होती है। इससे अच्छे दूध देने में पशु सक्षम होते हैं। पोष्टिक आहार से पशुओं की कार्यक्षमता अधिक होती है। इस दशा में विपणन केन्द्रों के प्रतिरूपों से उपलब्ध होने वाले पशु पोषण आहार की गुणवत्ता पर निर्भर करता है। जबकि पशुओं से ग्रामीण इलाकों में कृषि कार्य किया जाता है। इनके अतिरिक्त दूध, गोबर से खाना पकाना आदि सुविधाऐं व्यक्ति को पशुओं से प्राप्त होती है। आज भी मवेशियों के गोबर से ईधन तैयार किया जाता है। उन संसाधनों से गैस आदि की जरूरत नहीं पड़ती है। मवेशियों के गोबर से खेतों की उर्वरा शक्ति को भी निर्मित करती हैं। इन उर्वरा शक्ति पर कृषि का कार्य टिका हुआ है। गाय के मूत्र से अनेक प्रकार की औषधीय दवाईयों को तैयार किया जाता है। जहाँ खाज, खुजली, चर्मरोग जैसी बिमारी को हटाने में मदद करता है।

भारत देश कृषि पर निर्भर देश है। जहाँ भारत की अधिक से अधिक जनसंख्या कृषि कार्य में संलग्न है। यही कारण रहा है कि प्रति व्यक्ति भारतीय किसान मात्र कृषि से अपना भरण-पोषण करता है। पशुपालन से बहुत सारे कार्य होते हैं। ऐसी विसंगतियों का परिणाम अच्छी फसल पशुओं के गोबर से प्राप्त होती है। जहाँ पर मानवीय जीवन की अनेक कठिनाईयों का परिणाम मानव के रहित होकर मानव समाज और सद्गुणों का परिणाम ही समाज और

* प्राचार्य, शासकीय सीतामऊ महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (भूगोल) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

संस्कृति पर निर्भर है।

ग्रामीण जीवन में व्यक्तियों का शौक बन गया है। एक या दो पशुओं को रखना जिससे कृषि का पशुओं से गहरा संबंध है। खेती में कार्य स्वयं के भोजन हेतु दूध एवं अन्य पदार्थों की प्राप्ति हेतु दूध और अन्य पदार्थों की प्राप्ति होती है। पशु संसाधन की आवश्यकता होती है। पशु पालन एवं कृषि दोनों परस्पर एक-दूसरे के पूरक है। कृषि के साथ-साथ पशु पालन यहाँ का मुख्य व्यवसाय है। ग्रामों में विशेष रूप से छोटे सीमांत किसान एवं भूमिहीन कृषि मजदूरों के जीवन निर्वाह का मूल साधन पशु पालन, मुर्गी पालन, भैंस पालन, भेड़ पालन, बकरी पालन आदि दूध और अन्य व्यवसायों के लिए उपयुक्त है।

पशु संसाधन में तकनीकी ज्ञान और विकास के लिए आवश्यक हो जाता है। पशुओं के रखरखाव, घास की अच्छी व्यवस्था उत्पन्न होती है। पशुपालन के लिए उपयुक्त सामग्री की बहुत आवश्यक होती है।

तकनीकी ज्ञान की वैज्ञानिकता का परिणाम है। उच्च विकसित पोषण आहार है। जिसकी सहायता से अत्याधुनिक मशीनों और सुविधाओं से भरपूर कर दिया है। ऐसी विसंगतियों ने पशुओं में माँस, दूध, बाल और अन्य गौण उत्पाद प्राप्त किये जाते हैं। डेरी उद्योगों भी स्थापना से दूध का एकत्रित करने में सहायता होती है। यही परिणाम रहा की दूध को एक जगह ले जाने और ले आने के लिए परिवहन व्यवस्था भी आवश्यक है। इसके साथ-साथ क्योंकि कुछ ही घंटों में दूध इकट्ठा करके डेरी संस्थानों में पहुँचाया जाता है। अपने परिवार का भरण-पोषण पूर्णत: कृषि और पशुपालन पर निर्भर करता है। इस हेतु पशुपालन नितान्त आवश्यक है। यद्यपि पशुओं की अधिक लागत के कारण पशुधन रखना किसानों के लिए एक बहुत समस्या है। बैल और भैसा दोनों खेती के लिए उपयुक्त साधन है।

ग्रामीण व्यक्तियों को कृषि से पशुओं का प्रगाढ़ संबंध है। खेती में कार्य हेतु स्वयं के भोजन हेतु दूध और अन्य पदार्थों की प्राप्ति हेतु पशुओं का पालन नितान्त आवश्यक है। अत: कृषि अधिकांशत: पशुओं के द्वारा दूध,गोबर, अंण्डे, बाल आदि से भी आर्थिक मदद मिलती है।

परिणाम :

1. पशु संसाधन के द्वारा दुग्ध उत्पादन की वृद्धि होती है।
2. पशुओं की संख्या में वृद्धि अच्छे पोषण आहारों से होती है।
3. पशुओं के लिए गुणवत्ताा युक्त पोषण की आवश्यकता होती है।
4. दुग्ध उत्पादन से डेयरी उद्योग के विकसित होते है।
5. पशुओं के द्वारा दूध, दही, घी, पनीर आदि का निर्माण किया जाता है।
6. पशु पालन चारे एवं कृषि से प्राप्त भूसा पर आश्रित होते हैं।

निष्कर्ष – पशुओं का उपयोग सवारी के लिए भी किया जाता है। जहाँ उनसे पशुपरिवहन भी सुनिश्चित होती है। इस प्रकार से पशु परिवहन के साधनों का निर्माण पशुओं के द्वारा होता है। उन पशुओं को अधिक गुणवत्ता युक्त पौष्टिक आहार की आवश्यकता होती है। इसके साथ-साथ नगरों एवं शहरों में कई सारे कार्य पशुओं द्वारा ही सम्पन्न किये जाते हैं। इस प्रकार पशु-शक्ति परिवहन का महत्वपूर्ण अंग बन गई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. अखिलेश कुमार द्विवेदी के द्वारा ***भारत पशु प्रबंधन की विधियाँ,*** पत्रिका कुरूक्षेत्र जून 2003।
2. कुमारी मधु ज्योत्सना के द्वारा ***भारत में पशुपालन एवं दुग्ध उत्पादन,*** पत्रिका कुरूक्षेत्र जून 2003
3. डॉ. खाटेन्द्रराज गौतम के द्वारा ***भारत मे पशु संरक्षण की आवश्यकता,*** पत्रिका कुरूक्षेत्र जून-2008।
4. डॉ. प्रकाश नारायणी के द्वारा ***पशु संसाधन की नीति, पत्रिका***, कुरूक्षेत्र जून 2003।
5. डॉ. अनीता मोदी के द्वारा ***पशु के लिए चारे की समस्या,*** पत्रिका कुरूक्षेत्र जून 2008।
6. ऋचा श्रीवास्तव के द्वारा ***भारत में पशु पालन के दूध उत्पादन,*** पत्रिका कुरूक्षेत्र जून 2008।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Husband's Employability Dynamics: Grounds of Shared Household Violence

Dr. Minakshi Kar *

Introduction - As proven, scarcity of economic resources in the family underpins women's vulnerability to violence and their difficulties increases in rescuing themselves from a violent shared household relationship. The connection between violence and lack of economic resources and dependence is spherical. On one hand the threat and fear of violence keeps women from seeking employment, or, at best compels them to keep low paid home based exploitative labour and on the other without economic independence women have no power to escape from abusive relationship. The reverse of this argument also holds true in many parts of the countries; that is women's increasing economic activity and independence is viewed as a threat which leads to increase male violence in shared households. This is particularly true when the male partner is unemployed and feels his power undermined in the shared household **(UNICEF 2000).**

A study was conducted with 504 women victims of domestic violence living in Indore district. The main focus of the study was to examine the causes of domestic violence as perceived by the women victims of urban and rural area. There were many grounds for shared house hold violence. For the feasibility of the study various grounds for shared household violence were categorized into four conflicting dimensions of personal life of individual which are as follows :

Power & Authority Conflict: Dowry, Conflict over property or Family's economical status, Financial stress, Unemployment.

Ego Conflict: Professional jealousy, Conflict for religion & Caste, Instigation by In-laws, Instigation by community, Earlier complaint in police, Being physically challenged.

Gender Role Conflict: Conflict over roles & responsibilities, Alcoholism, Drug addiction, Gambling.

Conflict over Marital Code & Conduct: Suspicious nature, Extra marital affairs, Sexuality related factors, Childlessness, Female child, Death of son, Husband's mental illness/challenged.

Following are some of the tables showing the inter-relationship between husband's various employability status and grounds of shared household violence.

Table 1 (see in last page)

The occupational trend of husbands' has direct impact with those repeated incidences of violence on women within their shared households. **The Rural** area shows that majority (52.2 per cent) husband's are engaged in Seasonal / Agriculture work or are Unemployed, amongst 32 -34 per cent husbands' either fall conflict over Marital Code & Conduct or conflict for Power & Authority which is basically financial in nature. The **Urban trend** shows that majority 40.5 per cent husbands are in Service and the common tendency for the conflict was either Gender Role argument or Power & Authority distress among the individuals as both these causes are found equal in size (about 27 per cent) apart from Marital Code & Conduct conflict (35.7 per cent). The husbands' those who are Self-employed or Seasonal worker and Unemployed are more or less equal in percentage (about 30 per cent) and majority are violating Marital Code & Conduct and their per cent is found almost half. The study finds that there is an association between Nature of Work of Husbands' of Women Victim and the Cause of Domestic Violence in Rural and Urban area.

Table 2 (see in last page)

The Cause of Violence is basically addressing the four major aspect of one's life i.e. first by financial aspect, second by sentimental aspect, third by sanctioned gender role of individuals and fourth by standard ethical values of marital institutions. The table here is showing the behavior of those husband's who are irregular in their employment. Thus about 328 husbands' are found regular in their employment and thus considered as not applicable for this table. Out of 504 women respondents' 176 women has reported the irregularity of employment of their husbands' and it articulates up to 34.9 per cent over all. So out of the irregular employment category of husbands' majority 53.4 per cent husbands' were irregular in employment for less than 12 months amongst 44.7 per cent caused domestic violence in their house due to Marital Code & Conduct conflict and 30.9 per cent causing Power & Authority conflict. The study finds that there is no significant association between the Period of Irregular Employment of Husbands' of Women Victims and the Cause of Domestic Violence as perceived by respondent of the study.

The women victims revealed that the irregular employment period of husbands' is less than 12 months then the intensity of the causes is also less and as the irregular employment period increases (never went to work)

*Asst. Professor, Indore School of Social Work, Indore (M.P.) INDIA

the intensity, of the identified prominent causes also increases. The study finds that when the economic dominance become weak or fails then husband's do marital violence basically through breaking marital code and conduct and also many a times financial trouble is given to wife that means power and authority conflict.

Table 3 (see in last page)

The table 3 is showing the distribution of data of 'Reasons of Husband's Irregular Employment' that frequently 'Causing Violence' within the shared households. Originally women victims identified a number of reasons of their husband's irregular employment practices. All together 34.8 per cent husbands' are found irregular in employment and thus for 65.07 per cent the context is not applicable. Among the crooked husbands' majority 22.2 per cent found having 'Personal vices' that confined them from regular livelihood as because among them a big number (46.4 per cent) fallen over Marital Code & Conduct conflict' and this was followed by another 1/4th portion of husbands those of them causing violence for 'Power & Authority' differences with their wives or their natal family. The personal vices include husband's alcoholism with friends, spending time with other women, gambling with friends and etc.

Study therefore concludes that there is significant association between 'Reasons of Irregular Employment of Husbands' of Women Victims' and the 'Causes that irrupted domestic violence' within the shared household that is as perceived by respondents of the study.

Table 4 (see in last page)

Table 4 overall 46.6 per cent women victims are drawing monthly income less than Rs. 15, 000/- per month and to this level majority 42.6 per cent perceived that conflict with Marital code and conduct raised the violence while nearby to 24 per cent condemned that power and authority tousle and gender role disparities is bulging the violence in their house. Majority of husbands (65.2 per cent) are found drawing monthly income up to Rs.15, 000/- while 27.9 per cent other family members are drawing within this range, with this the pattern of causes by its ratio is more or less found in a similar manner. In the category 15, 000/- to 30, 000/- monthly income 5.9 per cent are women victim where Ego conflict caused violence in 26.7 per cent families. Researcher concludes that there is an association between the variables: Monthly Income of Husband and the Causes that irrupted domestic violence within the shared household that is as perceived by respondents.

Suggestions :

1. Many states in India are considered as the backward state where many areas are growing as commercial cities of the state by means of fast growing in many developmental measures. Consequently the cities are found to be in the transitional phase. So to come out of the vicious circle of violence, department of Industries, Labour welfare, Small scale industries, Human resource ministry, Law ministry, Poly-techniques, I.T.I.s, IITs etc. should develop rigorous extension services to provide better conventional-nonconventional training measures, job opportunities, monetary assistance, marketing exploration for women that could help in developing the economic status of victims.
2. The monthly income status reveals that large percentages of women are still poorly paid that too not very regularly. On other hand taking the account of husbands' and family's income it expose that majorly needs small investment counselling that could multiply their money. Majority of these families are having 6-10 members in the family and good number of families having maximum of 2-6 earning members. This could be considered as an advantage for better human plan within the family. The NGOs could take up innovative projects regarding the occupational rehabilitation of vulnerable families within the equal remuneration act provisions. Their expenditure provisions & investment scope could be guided & monitored for a period of time. Insurance agencies could cater up trainings in this regards to slum youths, women self help group members, CBOs etc.
3. The study reveals that women victims of domestic violence bear the pain of husband's irregularity towards employment, for that reasons their husband's are more responsible. For the clause the employment bureau, employment guaranty programmes, self employment provisions, wage employment opportunities, livelihood development measures, entrepreneurship, self help federations and etc. are to be sensitize towards the issues of women facing the domestic violence and build up appropriate career counselling measures for the same.

References :-

1. Ali, J. (2008). Alarming Rise of Violence against Women: A View from Madhya Pradesh, Women's Link, Vol. 14, No. 2.
2. Bhattacharya, R. (2004). Behind Closed Doors, Domestic Violence in India, Sage Publication, New Delhi.
3. Enderlein, Grace. (2008). Causes of Domestic Violence and its Impact in the Work Place, Sorortimist. www.soroptimist.org

Table 1: Nature of Work of Husband and Grounds of Violence with respect to Place

Place	Nature of Work	Grounds of Violence as Perceived by Victim				Total
		Power & Authority Conflict	Ego Conflict	Gender Role Conflict	Conflict over Marital Code & Conduct	
Rural	**Small Enterprises & Professional unit**	522.7%	313.6%	836.4%	627.3%	**22100.0%**
	Services	1018.5%	916.7%	611.1%	2953.7%	**54100.0%**
	Seasonal Work/ Agriculture Unemployment	2934.9%	1619.3%	1113.3%	2732.5%	**83100.0%**
	Total	4427.7%	2817.6%	2515.7%	6239.0%	**159100.0%**
Urban	**Small Enterprises & Professional unit**	2524.8%	2120.8%	98.9%	4645.5%	**101100.0%**
	Services	3726.4%	1510.7%	3827.1%	5035.7%	**140100.0%**
	Seasonal Work / Agriculture	3129.8%	65.8%	1110.6%	5653.8%	**104100.0%**
	Unemployment					
	Total	**9327.0%**	**4212.2%**	**5816.8%**	**15244.1%**	**345100.0%**

Table 2: Period of Husband's Irregular Employment and Grounds of Domestic Violence as Perceived by Victim

Period of irregular Employment	Grounds of Violence as Perceived by Victim				Total
	Power & Authority Conflict	Ego Conflict	Gender Role Conflict	Conflict over Marital Code & Conduct	
Less than 12 months	2930.9%	1111.7%	1212.8%	4244.7%	**94100.0%**
More than 12 months	1832.7%	610.9%	814.5%	2341.8%	**55100.0%**
Never went to work	933.3% 1	3.7%	0.0%	1763.0%	**27100.0%**
Total	**5631.8%**	**1810.2%**	**2011.4%**	**8246.6%**	**176100.0%**

Table 3: Reasons of Husband's Irregular Employment and Cause of Violence as Perceived by Victim

Reasons	Grounds of Violence as Perceived by Victim				Total
	Power & Authority Conflict	Ego Conflict	Gender Role Conflict	Conflict over Marital Code & Conduct	
Not Applicable	8124.7%	5215.9%	6319.2%	13240.2%	**328100.0%**
Personal Vices	2925.9%	1311.6%	1816.1%	5246.4%	**112100.0%**
Personal Limitations	1864.3%	27.1%	0.0%	828.6%	**28100.0%**
Dependency on Wife's & Parents Income	925.0%	38.3%	25.6%	2261.1%	**36100.0%**
Total	**13727.2%**	**7013.9%**	**8316.5%**	**21442.5%**	**504100.0%**

Table 4: Monthly Income and Cause of Domestic Violence

Monthly Income		Grounds (Cause) of Violence				Total
		PAC	EC	GRC	CMCC	
Less than Rs. 15,000/-.	**W**	56 (23.8)	29 (12.3)	50 (21.3)	100 (42.6)	**235 (100)**
	H	78 (23.7)	40 (12.2)	64 (19.5)	147 (44.7)	**329 (100)**
	F	37 (26.2)	14 (9.9)	28 (19.9)	62 (44)	**141 (100)**
15,000/- to Rs. 30,000/-.	**W**	7 (23.3)	8 (26.7)	4 (13.3)	11 (36.7)	**30 (100)**
	H	17 (23.9)	17 (23.9)	10 (14.1)	27 (38)	**71 (100)**
	F	44 (23.8)	31 (16.8)	32 (17.3)	78 (42.2)	**185 (100)**
More than Rs. 30,000/-.	**W**	-	-	-	-	**-**
	H	13 (30.2)	8 (18.6) 7	(16.3)	15 (34.9)	**43(100)**
	F	36 (25.4)	23 (16.2)	23 (16.2)	60 (42.3)	**142 (100)**
Don't Know and Not Applicable	**W**	74 (31.0)	33 (13.8)	29 (12.1)	103 (43.1)	**239 (100)**
	H	29 (47.5)	5 (8.2)	2 (3.3)	25 (41)	**61 (100)**
	F	20 (55.6)	2 (5.6)	0 (0)	14 (38.9)	**36 (100)**
Total		**137(27.2)**	**70(13.9)**	**83 (16.5)**	**24 (42.5)**	**504 (100)**

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

भारतीय जीवन बीमा निगम एवं रिलायन्स बीमा निगम के व्यवसाय का तुलनात्मक अध्ययन (खरगोन जिले के संदंर्भ में)

शिल्पी गुप्ता * डॉ. सहदेव पाटीदार **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधपत्र के अंतर्गत खरगोन जिले की सार्वजनिक बीमा क्षेत्र की भारतीय जीवन बीमा एवं निजी क्षेत्र की चयनित रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी के बीमा व्यापारों की तुलना पर शोध किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सार्वजनिक क्षेत्र की भारतीय जीवन बीमा कम्पनी का व्यापार अधिक प्रभावशाली है, रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी के व्यापार की तुलना में। जीवन बीमा व्यवसाय का व्यापार सामान्य वस्तुओं एवं सेवाओं से भिन्न है, उसमें भावी जीवन की आवश्यकता परिवार की सुरक्षा के प्रति दायित्व बोध कर प्रावधानों तथा निश्चित आर्थिक प्रबंध के सुझाव देकर व्यक्ति की दीर्घ अवधि के लिये प्रीमियम भुगतान हेतु अनुबंध करने के लिए प्रेरित करता है। दूसरी ओर बीमा संस्था (व्यापार) द्वारा प्राप्त प्रीमियम राशि निवेश कर ब्याज के रूप में लाभांश के रूप में आय प्राप्त करती है, वहीं निवेश राशि से सरकार को भी आय प्राप्त होती है और वह राशि विदेशों में निवेश करने से विदेशी धन की भी प्राप्ति होती है।

शब्द कुंजी – बीमा, बीमाग्राहक, निवेश, निवेशक, व्यापार, व्यवसाय।

प्रस्तावना – व्यक्ति के जीवन में संकटों का आना जाना लगा रहा है। व्यक्ति सामाजिक या कतिपय प्राकृतिक विपत्तियों के कारण उत्पन्न होने वाले इन संकटों पर काबू पाने के लिए भारी व्यय करने की आवश्यकता है। इसके परिणाम स्वरूप परिवार में आर्थिक समस्या गहरा जाती है। संकटो की श्रृंखला बड़ी है, इसमें दुर्घटनाये, बीमारी परिवार के कमाऊ व्यक्ति की आकस्मिक मृत्यु, रोजी-रोटी, फसल तथा संपत्ति का नुकसान, प्राकृतिक आपदा इत्यादि के दौरान किए जाने वाले व्यय को बचत तथा निवेश से धन निकाल कर ऋण लेकर या संपत्तियो को बेचकर पूरा किया जाता है।

पूर्व शोध साहित्य का अवलोकन –

1. आर.एस.जैन ने 'बीमा और उसका स्वरूप'[5] में बीमा व्यवसाय को मूर्त एवं अमूर्त संपत्तियों से जोड़ा है जिसे व्यक्ति स्वयं के श्रम से सृजित और निर्मित करता है जिसकी सुरक्षा के लिये बीमा की मदद लेता है इस प्रकार संभावित आपदाओं से बचाने के लिये भावी निवेश करता है जिसकी प्रतिपूर्ति बीमा कम्पनी उपलब्ध कराता है।
2. शशीकांत ने 'बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण एवं अभिकर्ता'[7] के अंतर्गत वित्तीय, आर्थिक और औद्योगिक नीतियों से क्रांतिक परिवर्तन आया है जिसमें उदारीकरण और वैश्वीकरण से नये औद्योगिक युग की शुरूवात हुई है जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव बीमा क्षेत्र पर पड़ा है परिणामत: बीमा का विस्तार हुआ।
3. श्यामाजॉब ने 'इंश्योरेंस सेक्टर रिफार्म्स ऑफ ट्वेन्टीसेन्चुरी'[8] में निजी क्षेत्र के लिये बीमा व्यवसाय के लिये खोल दिये जाने से प्रतिस्पर्धा नवप्रर्वन तथा सेवाओं को खरीदने के लिये जागरूकता बढ़ी है जिससे बीमा उत्पाद और जोखिम के प्रति सुरक्षा बढ़ी है शोधार्थी ने बीमा क्षेत्र के बढते हुये महत्व को देखते हुये। सार्वजनिक क्षेत्र की भारतीय जीवन कम्पनी तथा निजी क्षेत्र की रिलायन्स बीमा कम्पनी के व्यवसाय का खरगोन जिले का तुलनात्मक अध्ययन विषय को चुना है।

अध्ययन के उद्देश्य – उद्देश्य मानवीय क्रियाओं का आधार है शोधकार्य करने में पूर्व उसके उद्देश्यों को निर्धारित करना आवश्यक होता है, शोध अध्ययन के उद्देश्य निम्नानुसार है –

1. बीमा कम्पनी में निवेश का अध्ययन करना।
2. जनता को निवेश से लाभ का अध्ययन करना।
3. परिकल्पनाओं का परीक्षण कर निष्कर्ष निकालना।

परिकल्पनाये –प्रस्तुत विषय खरगोन जिले में सर्वाधिक क्षेत्र की भारतीय जीवन बीमा कम्पनी एवं निजी क्षेत्र की रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी के व्यापार का तुलनात्मक अध्ययन में निम्नलिखित परिकल्पनाये मानी गई है।

1. रिलायंस जीवन बीमा कंपनी की तुलना में भारतीय जीवन बीमा निगम का व्यापार अधिक प्रभावशाली है एवं रिलायंस जीवन बीमा कंपनी की तुलना में भारतीय जीवन बीमा के हितग्राही अधिक है।
2. हितग्राहियों से जोखिम की तुलना में अधिक प्रीमियम ली जाती है।

अध्ययन प्रविधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन को पूर्ण करने में प्राथमिक एवम् द्वितीयक दोनो संमको का उपयोग किया है अनुसंधान में संमको का सग्रंहण महत्वपूर्ण चरण है वर्तमान अनुसंधान कार्य में प्राथमिक एवम् द्वितीयक दोनो प्रकार के संमको का प्रयोग किया गया है। वर्तमान अध्ययन में प्राथमिक संमको के रूप में खरगोन जिले में स्थित जीवन बीमा निगम एवम् रिलायन्स जीवन बीमा निगम के कार्यालय जाकर प्रत्यक्ष साक्षात्कार के द्वारा विस्तृत जानकारी ली है

द्वितीयक समंको में भारतीय जीवन बीमा निगम व रिलायन्स जीवन बीमा निगम की वार्षिक रिपोर्ट पत्र पत्रिकाये, बीमा संबंधित व्यापार एवम् उद्योग की पालिकाये आदि की सहायता के लिये समंको के वर्गीकरण की प्रक्रिया द्वारा समंको को व्यस्थित किया गया है।

वर्तमान में भारतीय जीवन बीमा निगम की स्थिति – आज भारतीय जीवन बीमा निगम का कामकाज पूरी तरह से कम्प्युटरीकृत 2048 शाखा

*शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

आफिस से 100 डिव्हिजनल आफिस से 7 जोनल आफिसो से और एक कॉपरेट ऑफिस से होता है एल.आई.सी. का वाइड एरिया नेटवर्क 100 डिवीजनल ऑफिसो को और मेट्रो एरिया नेटवर्क सभी शाखा ऑफिसो का आपस में जोडता है।

भारतीय जीवन बीमा निगम ने कुछ बैंको और सुविधाये देने वाली संस्थाओं से भी गठबंधन किया है जिसमें चुने हुये शहरों में ऑनलाईन प्रीनियम भुगतान की सुविधायें दी जा सके। चैन्नई, हैदराबाद, कोलकत्ता, पुणे, नई दिल्ली, और दूसरे शहरो में भी ऑनलाईन सुविधाओं के छोटे दफ्तर और पुछताछ केन्द्र भी बनाये गये है। भारतीय जीवन बीमा निगम ने वर्तमान में एक करोड पॉलिसीयां जारी की है। 15 अक्टुम्बर 2005 में इसमें 1,09,32,955 नई पॉलिसिया जारी करके एक नया कीर्तिमान बनाया है, पिछले साल के मुकाबले 16.67 प्रतिशत की विकास दर हासिल की है। तब से लेकर अब तक भारतीय जीवन बीमा निगम ने बहुत सारे कीर्तिमान बनाये है, जिस आशा से भारतीय जीवन बीमा का घटन किया था।उसी उद्देश्य को लेकर आज भी एल.आई.सी. देश के अधिक से अधिक परिवारो घरो में सुविधायें दे रही है।

वर्तमान में रिलायन्स निप्पान जीवन बीमा की स्थिति – रिलायन्स जीवन बीमा कम्पनी निजी क्षेत्र की 5 सबसे बड़ी कम्पनी में से एक है। तथा 5 प्रतिशत शेयर के साथ निजी बीमा क्षेत्र की सबसे बड़ी कम्पनी है। रिलायन्स निप्पान जीवन बीमा कम्पनी में 7 मिलियन पॉलिसी होल्डर है। 31 मार्च 2016 की रिपोर्ट के अनुसार इसका नेटवर्क 1230 शाखाओं में विभाजित है। तथा 1 लाख 24000 अभिकर्ता भी सम्मिलित है। रिलायन्स निप्पान जीवन बीमा कम्पनी ने अपने बीमा बाजार निप्पान प्रसार बढाने के लिये अपने अभिकर्ताओं की संख्या 30,000 हजार (अनुमानित) बढाने का निर्णय भी लिया है। रिलायन्स जीवन बीमा कम्पनी को रिलायन्स जीवन बीमा कम्पनी के नाम से भी जाना जाता है। रिलायन्स जीवन बीमा कम्पनी का मुख्यालय भी मुंबई में स्थित है। बीमा अधिनियम 1938 के प्रावधानों के अनुसार रिलायन्स निप्पान जीवन बीमा कम्पनी लिमिटेड जीवन बीमा के साथ नियामक एवम् विकास प्राधिकरण दर्जे की लाइसेंस प्राप्त कम्पनी है। रिलायन्स जीवन बीमा की कुल सम्पत्ति 150 बिलियन्स है। इस तरह रिलायन्स जीवन बीमा कम्पनी का नाम परिवर्तित कर रिलायन्स निप्पान जीवन बीमा कर दिया। रिलायन्स निप्पान जीवन बीमा कम्पनी को 'निरसे' के नाम से भी जाना जाता है। 49 प्रतिशत बाजार अंश के साथ जापान की निजी बीमा क्षेत्र की सबसे बड़ी कम्पनी है।

खरगोन जिले का परिचय – खरगोन जिला मध्यप्रदेश की दक्षिणी पश्चिमी सीमा पर स्थित है।

21 अंश 22 मिनिट – 22 अंश 35 मीनिट अक्षांश से 74 अंश 25 मिनिट 76 अंश 14 मिनिट देशांश के बीच यह जिला फैला है। खरगोन जिले का क्षेत्रफल 8030 वर्ग किलो मीटर है यहा कि जनसंख्या 1873046 है। खरगोन जिले के उत्तर में धार, इन्दौर, व देवास दक्षिण में महाराष्ट्र पूर्व में खण्डवा, बुरहानपुर तथ पश्चिम में बडवानी है। खरगोन जिले की प्रमुख नदियां कुंदा तथा वेदा है। खरगोन जिले में 9 तहसील बड़वाह, भगवानपुरा, भीकनगांव, गोगावां, झिरन्या, कसरावद, खरगोन, महेश्वर, तथा सेगांव है। खरगोन जिले में 13779 छोटे तथा 14 मध्यम व बडे उद्योग है। जिले में खरगोन, निमरानी, बडवाह, भीकनगांव औधौगिक क्षेत्र है। ज्वार व मक्का खरीक की तथा गेंहु रबी की प्रमुख फसलें हैं। सफेद सोना, कपास तथा मुंगफली प्रमुख व्यवसायिक फसलें हैं। प्रषासनिक दृष्टि से जिले को 3 अनुविभाग, 9 तहसील, 9 जनपद पंचायत (विकासखण्ड) तथा 1407 राजस्व ग्रामो में बांटा गया है। खरगोन जिला आदिवासी बाहुल्य है। जिसमें 600 ग्राम पंचायतें, 3 नगर पालिकाये, 4 नगर पंचायते तथा 7 कृषि उपज मण्डी है। जिले के प्रमुख नगर खरगोन, कसरावद, भीकनगांव, बडवाह, सनावद, मण्डलेश्वर, महेश्वर है।

परिकल्पना एवं परिकल्पनाओं का परीक्षण 01 रिलायंस जीवन बीमा कंपनी की तुलना में भारतीय जीवन बीमा निगम का व्यापार अधिक प्रभावशाली है एवं रिलायंस जीवन बीमा कंपनी की तुलना में भारतीय जीवन बीमा के हितग्राही अधिक है

भारतीय जीवन बीमा एवं रिलायंस जीवन में बीमा बीमाधारी एवं राशि से संबंधित तालिका

प्रवृत्ति	भारतीय जीवन बीमा (बीमाधारी)		रिलायंस जीवन बीमा(बीमाधारी)	
	संख्या	राशि (लाख में)	संख्या	राशि (लाख में)
2012.13	10405	615.66	360	72
2013.14	11445	47.37	480	96
2014.15	8671	152.76	420	84
2015.16	10285	189.66	360	72
2016.17	10219	199.2	360	72
कुल	**51025**	**1204.65**	**1980**	**396**
औसत	**10205**	**240.93**	**396**	**79.2**

(खरगोन जिले के भारतीय जीवन बीमा एवं रिलायंस जीवन बीमा कार्यालय से प्राप्त जानकारी अनुसार, अप्रैल 2017)

प्रस्तुत तालिका में भारतीय जीवन बीमा एवं रिलायंस जीवन बीमा के व्यापार का तुलनात्मक अध्ययन से हितग्राही से संबंधित तालिका द्वारा अध्ययन किया गया है। तालिका में वर्षो के अनुसार दोनो कम्पनी के बीमाधारियों की संख्या एवं बीमा राशि में विभाजित किया गया है। वर्ष 2012 से लेकर वर्ष 2017 तक उसे बीमा की संख्या एवं धनराशि को अलग-अलग विभक्त किया है।

तालिका के अनुसार वर्ष 2012-13 में भारतीय जीवन बीमा के 10405 व रिलायंस जीवन बीमा के 360 हितग्राही थे। वर्ष 2012-13 के दौरान भारतीय जीवन बीमा के 10405 बीमा हुये जबकि रिलायंस जीवन बीमा के 360 बीमा ही हुये है। भारतीय जीवन बीमा के लगभग 3.45 प्रतिशत ही रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी के बीमे हुये है। वहीं प्राप्त बीमा राशि में भी 615.66 लाख भारतीय जीवन बीमा से है। जबकि रिलायंस जीवन बीमा से 72 लाख रूपये ही प्राप्त हुये है जो लगभग 0.12 प्रतिशत ही है, भारतीय जीवन बीमा की बीमा राशि की तुलना में।

वर्ष 2013-14 के दौरान भारतीय जीवन बीमा में 11445 बीमा हुये है जबकि रिलायंस जीवन बीमा में 480 बीमा ही हुये है। भारतीय जीवन बीमा के लगभग 4.19 प्रतिशत भाग ही रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी के बीमे हुये है, वहीं प्राप्त बीमा राशि में भी 47.37 लाख रूपये प्राप्त हुये है भारतीय जीवन बीमा कम्पनी को जबकि रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी को 96 लाख रूपये प्राप्त हुये है। भारतीय जीवन बीमा कम्पनी को प्राप्त राशि की तुलना में 2.02 प्रतिशत भाग ही रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी को प्राप्त हुई है।

वर्ष 2014-15 के दौरान भारतीय जीवन बीमा में 8671 बीमा हुये जबकि रिलायंस जीवन बीमा में 420 बीमे हुये है। भारतीय जीवन बीमा के

लगभग 4.84 प्रतिशत ही रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी के बीमा हुये है। वहीं प्राप्त बीमा राशि भारतीय जीवन बीमा कम्पनी में 152.76 लाख है जबकि रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी में प्राप्त बीमा राशि 84 लाख रूपये ही है। भारतीय जीवन बीमा में प्राप्त बीमा राशि की तुलना में रिलायंस जीवन बीमा में 0.54 प्रतिशत राशि ही प्राप्त हुई है।

वर्ष 2015-16 के दौरान भारतीय जीवन बीमा में 10285 बीमा हुये है जबकि रिलायंस जीवन बीमा में 360 बीमा हुये है। भारतीय जीवन बीमा की तुलना में रिलायंस जीवन बीमा में लगभग 3.5 प्रतिशत ही है। वहीं प्राप्त बीमा राशि भारतीय जीवन बीमा कम्पनी में 189.66 लाख रूपये है जबकि रिलायंस जीवन बीमा में प्राप्त बीमा राशि 72 लाख रूपये है। वर्ष 2015-16 में भारतीय जीवन बीमा में प्राप्त बीमा राशि की तुलना में रिलायंस जीवन बीमा में 0.38 प्रतिशत (लगभग) राशि ही प्राप्त हुई है।

वर्ष 2016-17 के दौरान भारतीय जीवन बीमा10219 की तुलना में रिलायंस जीवन बीमा ने 360 बीमा ही हुये है। भारतीय जीवन बीमा की तुलना में रिलायंस जीवन बीमा में लगभग 3.52 प्रतिशत ही है। वहीं प्राप्त बीमा राशि भारतीय जीवन बीमा में 199.2 लाख रूपये है जबकि रिलायंस जीवन बीमा में प्राप्त बीमा राशि 72 लाख रूपये है। वर्ष 2016-17 में भारतीय जीवन बीमा में प्राप्त बीमा राशि की तुलना में रिलायंस जीवन बीमा में 3.61 प्रतिशत लगभग राशि ही प्राप्त हुई है।

तालिका के अनुसार 2012-13 से लेकर 2016-17 तक कुल 51025 बीमा भारतीय जीवन बीमा कम्पनी में, वहीं रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी में इन पांच वर्षो में 1980 कुल बीमे हुये है। पिछले पांच वर्षो में भारतीय जीवन बीमा के 3.88 प्रतिशत लगभग बीमे ही रिलायंस बीमा कम्पनी में हुये है। पिछले वर्षो में भारतीय जीवन बीमा में प्राप्त बीमा राशि कुल 1204.65 लाख रूपये लगभग है जबकि रिलायंस जीवन बीमा में प्राप्त बीमा राशि कुल 396लाख रूपये है। भारतीय जीवन बीमा कम्पनी के प्राप्त राशि की तुलना में यह राशि मात्र 0.33 प्रतिशत लगभग है।

वर्ष 2012-13 से 2016-17 तक भारतीय जीवन बीमा में प्रतिवर्ष औसत बीमा 10205 हुये है वहीं रिलायंस जीवन बीमा में 396 औसत बीमा प्रतिवर्ष है। रिलायंस जीवन बीमा में भारतीय जीवन बीमा की तुलना में 3.88 प्रतिशत लगभग बीमे हुये है। भारतीय जीवन बीमा कम्पनी बीमा राशि इन पांच वर्षो में 240.93 लाख औसत प्रतिवर्ष प्राप्त हुये है जबकि रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी को प्रतिवर्ष औसत 79,20 हजार रूपये लगभग ही प्राप्त हुये है जो भारतीय जीवन कम्पनी की तुलना में 0.33प्रतिशत लगभग ही है।

02-परिकल्पना

हितग्राहियों से जोखिम की तुलना में अधिक प्रीमियम ली जाती है।

बीमाधारीयों से जोखिम की तुलना में ली जाने वाली प्रीमियम राशि की तुलना तालिका

प्रवृत्ति	भारतीय जीवन बीमा		रिलायंस जीवन बीमा	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
कम	15	15	9	11.25
बराबर	9	9	7	8.75
अधिक	74	74	61	76.25
कोई जवाब	2	2	3	3.75
कुल	**100**	**100**	**80**	**100**

(प्राथमिक समंक के आधार पर, अप्रैल 2017)

प्रस्तुत तालिका में भारतीय जीवन बीमा एवं रिलायन्स जीवन बीमा कम्पनी में बीमाधारीयों से जोखिम की तुलना में ली जाने वाली प्रीमियम राशि का अध्ययन किया गया है। प्रीमियम राशि जोखिम की तुलना में ली जाने वाली राशि कम है, अधिक है या बराबर है, दोनों कम्पनी की का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

सर्वेक्षण तालिका के अनुसार भारतीय जीवन बीमा में 15 प्रतिशत बीमाधारीयों के अनुसार जोखिम की तुलनामें ली जाने वाली प्रीमियम की राशि कम है। किन्तु रिलायन्स जीवन बीमा कम्पनी के 11.25 प्रतिशत बीमाधारीयों से प्राप्त जानकारी के अनुसार जोखिम की तुलना में प्रिमियम की राशि कम ली जाती है।

इस प्रकार भारतीय जीवन बीमा कम्पनी में 9 प्रतिशत बीमाधारीयों के अनुसार जोखिम की तुलना मे ली जाने वाली प्रीमियम की राशि बराबर ली जाती है। किन्तु रिलायन्स जीवन बीमा में 8.75 प्रतिशत बीमाधारियों से प्राप्त जानकारी के अनुसार जोखिम की तुलना में बराबर राशि ली जाती है।

वही भारतीय जीवन बीमा कम्पनी में 74 प्रतिशत बीमाधारियों से प्राप्त जानकारी के अनुसार जोखिम की तुलना में प्रीमियम राशि अधिक ली जाती हैं किन्तु रिलायन्स जीवन बीमा कम्पनी में 76.25 प्रतिशत बीमाधारीयों से प्राप्त जानकारी के अनुसार जोखिम की तुलना में प्रीमियम राशि अधिक ली जाती है।

अतः उपर्युक्त सर्वेक्षण तालिका से प्राप्त जानकारी के अनुसार 25 प्रतिशत बीमाधारीयों ने कहाँ कि भारतीय जीवन बीमा कम्पनी जोखिम की तुलना में प्रीमियम राशि बराबर लेती है। रिलायन्स जीवन बीमा कम्पनी की तुलना में। वही प्रीमियम की राशि जोखिम की तुलना में कम लेने के लिए भारतीय जीवन बीमा कम्पनी में बीमाधारीयों का 3.75 प्रतिशत अधिक है। रिलायन्स जीवन बीमा कम्पनी की तुलना में।

रिलायन्स जीवन बीमा में बीमाधारी से प्राप्त जानकारी के अनुसार 2.25 प्रतिशत बीमाधारी अधिक है, जिनके अनुसार रिलायन्स जीवन बीमा कम्पनी जोखिम की तुलना में प्रीमियम राशि अधिक लेती है।

उपरोक्त दोनो तालिका के विश्लेषण के पश्चात भारतीय जीवन बीमा एवं रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी में बीमाधारियों से जोखिम की तुलना में अधिक प्रीमियम ली जाती है, का परीक्षण करने के लिए में *काई वर्ग येट* का संशोधन का उपयोग किया गया है जो निम्न तालिका में दर्षाया गया है।

काई वर्ग येट संशोधन अनुसार तालिका

प्रवृत्ति	भारतीय जीवन बीमा		रिलायंस जीवन बीमा	
	अवलोकित मान	प्रत्याशित मान	अवलोकित मान	प्रत्याशित मान
कम	14.5	12.78	8.5	10.22
बराबर	9	8.89	7	7.11
अधिक	74	75	61	60
कोई जवाब	2.5	3.33	3.5	2.67
कुल	**100**	**100**	**80**	**80**

उपरोक्त काई वर्ग येट संशोधन के अनुसार 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर क्राइ सारणी व परिकलित मान

जोखिम की तुलना में अधिक प्रीमियम राशि	काई वर्ग का परिकलित मान		काई वर्ग का तालिका मान	प्रतिशत
	1.00297	<	7.815	5

उपरोक्त काई वर्ग येट तालिका के अनुसार 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर स्वातत्रय संख्या 2 के लिये काई वर्ग येट वर्ग का परिकलित मान काई वर्ग तालिका के मान (1.00297<7.815) से कम है, को स्वीकार करती है अर्थात शून्य परिकल्पना सत्य है। अतः यहां स्पष्ट है कि दोनो ही बीमा कम्पनी बीमाधारियों से जोखिम की तुलना में अधिक प्रीमियम होती है।

बीमा कम्पनी के प्रमुख आय के स्त्रोत में बीमाधारियों से प्राप्त प्रीमियम राशि भी सम्मिलित है किन्तु बीमाधारियों से जितनी बीमा प्रीमियम की राशि प्राप्त की जाती है, उसकी अपेक्षा बीमाधारियों को कम सुविधाये दी जाती है।

निष्कर्ष – ***रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी की तुलना में भारतीय जीवन बीमा कम्पनी के हितग्राही अधिक है।*** तालिका के अनुसार रिलायंस जीवन बीमा के पिछले पांच वर्षो (2012–17) में 1980 हितग्राही है किन्तु भारतीय जीवन बीमा के वर्ष (2012–17) में 51025 हितग्राही है। पांच वर्षो की औसत हितग्राहियों की गणना की गई, तो रिलायंस जीवन बीमा के प्रतिवर्ष 396 हितग्राही ही है, वहीं भारतीय जीवन बीमा के प्रतिवर्ष 10205 हितग्राही है, जो कि रिलायंस जीवन बीमा के हितग्राहियों की तुलना में 26 गुना लगभग अधिक है। अतः शोधार्थी की परिकल्पना सत्य सिद्ध होती है।

भारतीय जीवन बीमा एवं रिलायंस जीवन बीमा दोनों के व्यापार में अंतर है। तालिका में रिलायंस जीवन बीमा का पिछले पांच वर्ष (2012–17) तक में लगभग 3 करोड़ 96 लाख रूपये की बीमा राशि प्राप्त हुई है, वहीं भारतीय जीवन बीमा वर्ष (2012–17) तक में 12 अरब 4 करोड़ 65 लाख रूपये (लगभग) की बीमा राशि प्राप्त हुई जो रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी के लगभग 304.20 गुना अधिक है। वहीं ग्राहकों से प्राप्त जानकारी के अनुसार अन्य सुविधा जैसे सुरक्षा, विनियोजन, कर बचत आदि की दृष्टि से भी भारतीय जीवन बीमा को उपयुक्त बताया है। प्राप्त बीमा राशि के अनुसार भारतीय जीवन बीमा एवं रिलायंस जीवन बीमा दोनों में बहुत अधिक अंतर है। अतः शोधार्थी की परिकल्पना भी सत्य हुई है।

हितग्राहियों से जोखिम की तुलना में अधिक प्रीमियम ली जाती है, के लिये तालिका में काई वर्ग येट संशोधन का प्रयोग किया गया है। तालिका में येट संशोधन के अनुसार रिलायंस जीवन बीमा कम्पनी में जोखिम की तुलना में ली जाने वाली प्रीमियम राशि अधिक है। अतः शोधार्थी की अंतिम परिकल्पना सत्य सिद्ध हुई है।

संदर्भ ग्रंथ

1. अर्थशास्त्र प्रथम वर्ष जी.एस.मिश्र, जीवनलाल भारद्वाज साहित्य भवनरामप्रसाद एण्ड सन्स भोपाल
2. बीमा प्रशासन : के.वी. वेल्सन – उ.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमीअर्थशास्त्र प्रथम वर्ष जी.एस.मिश्र, जीवनलाल भारद्वाज साहित्य भवन रामप्रसाद एण्ड सन्स भोपाल
3. बीमा प्रशासन : के.वी. वेल्सन – उ.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
4. Different News Paper.
5. Different Issues of India Today.
6. Role of the Insurance Corporation in Economic Development in India – santosh K.Choudhary Himlal Publishing House.
7. LIFE Insurance Corporation of India – M.N. Mishra RBSA Publishers.
8. S.P. Gupta – Statistical Method, BML.Nigam Insurance Banking
9. www.licindia.in
10. www.reliancenipponlife.com

****

प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रो मे भारतीय स्टैट बैंक द्वारा वितरित ऋणों की उपादेयता का मूल्यांकन (जांजगीर चाम्पा जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. अनूप दीक्षित * अभिषेक देवांगन**

प्रस्तावना – किसी भी देश के उत्तरोक्त्तर विकास में बैंक की अहम भूमिका होती है और वही यह देश को विकसित राष्ट्र बनाने का एक सशक्त माध्यम भी है जिन देशो ने आज विकसित देश होने का गौरव हासिल कर लिया है वहां बैंको की भूमिका काफी महत्वपूर्ण रही है बैंक के माध्यम से साख (ऋण) उपलब्ध कराया जाता है जिससे कई प्रकार के उद्योग एवं व्यवसाय कि स्थापना संभव हो पाती है। लोगो को रोजगार उपलब्ध हो जाता है अब बैंको मे भारतीय रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया के बाद भारतीय स्टैट बैंक ऑफ इंडिया कि विशेष भूमिका रही है। बैंक का मुख्य कार्य ग्राहकों का धन जमाकर उनको लाभ देना एवं उनके लिए कर्ज की उचित व्यवस्था करना होता है। वस्तुत: बैंक का आधार उनके ग्राहकों द्वारा जमा की गई धन राशि ही होती है एवं उसके साथ ही बैंक उनसे समय-समय पर अपने धन का उचित निवेष भी करती है।

भारतीय इतिहास में सर्वप्रथम सन् 1770 ई. में 'बैंक ऑफ हिन्दुस्ता' के नाम से प्रारंभ हुआ किंतु यह बैंक 1832 ई. तक'जनरल बैकं ऑफ इण्डिया' के नाम से सुचारू रूप से क्रियांवित रहा

भारत में सबसे प्राचीन एवं अभी तक अस्तित्व में रहले वाला शासकीय बैंक 'स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया' है जो कि पूर्व में 'बैंक ऑफ कलकत्ता' के नाम से जाना जाता है। इसकी स्थापना वर्ष 1806 ई. में कलकत्ता में हुई थी परंतु वर्ष 1809 ई. में इसका नाम बदलकर 'स्टेट बैंक ऑफ बंगाल' रखा गया था।

इसके उपरांत 'बैंक ऑफ बॉम्बे' (सन् 1840) और 'बैंक ऑफ मद्रास' (सन् 1843) को अस्तित्व में आये।

भारत में सर्वप्रथम राव बहादुर (T.M.) के द्वारा वर्ष 1899 को 'द तेदुंगली बैंक' के नाम स्वशासी (Pvt.) बैंक की स्थापना की गई थी। 20वीं सदी के प्रारंभ के साथ ही सन् 1901 में 'सीटी यूनियन बैंक' के नाम से देश में प्रथम सुचारू बैकं की स्थापना हुई जो कि क्रांतिकारी रूप से क्रियान्वित हुई।

सन् 1969 में श्रीमती इंदिरा गांधी के द्वारा कुल 18 बैंको को स्वशासी बैंको की श्रेणी से हटाकर भारत शासन का सार्वजनिक उपक्रम घोषित कर दिया गया था। उनके द्वारा किया गया यह घोषणा भारत में बैंकिंग पद्धति के लिए अमृत समान कार्य की तथा भारत की आर्थिक स्थिति को इस फैसले से राहत भी प्राप्त हुई।

प्रस्तुत शोध कार्य के अनुरूप अन्य कोई पूर्व अध्ययन

1. पटेल भानू (25 फरवरी 2018) – प्याज भंडारन योजना पर हमें ऋण चाहिए तो हमको डस्टिन प्याज गोदाम बनाना है।

2. घिल्डयाल ज्योतिष (15 नवम्बर 2017) – बैक के मुख प्रबंधक घिल्डयाल ज्योतिष ने यहॉं कहा है कि मोबाईल बैकिंग वैन सेवा के तहत वाहन गॉव में सडक़ के किनारे खड़ा होगा वहॉं पर लोगो को बायो-मैट्रिक कार्ड के जरिए बैकिंग सुविधाएँ दी जायेगी।

3. सिंह युवराज (7 जनवरी 2016) – वित्त योजनाओ से मिली जानकारी के अनुसार नवम्बर 2015 में मुद्रा बैंक अपने टारगेट से करीब 80 हजार करोड़ रूपये से पिछे था लेकिन दिसम्बर 2015 में 25 हजार करोड़ रूपये का लोन वितरित हुआ है उसे देखते हुए अब बैंक के लिए टारगेट पुरा करना आसान हो गया है। प्रधानमंत्री मुद्रा योजना के तहत तीन प्रकार का लोन दिया जाता है। यह लोन शिशु, किशोर और तरूण लोन है।

4. चौधरी धर्मेन्द्र (2 फरवरी 2016) – भारतीय स्टैट बैक ने नयी होम लोन स्कीन लॉच की है यह सिर्फ सैलरी वालो के लिए है। इसके तहत यंग वर्किंग प्रोफेशनल्स अधिक लोन सहमति कई अन्य सुविधाओं का लाभ उठा सकेगें।

अध्ययन की महत्ता – अनुसंधान के अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए सक्षम अध्ययन जरूरी होता है इसलिए सिर्फ जांजगीर चाम्पा जिले को ही अपने अध्ययन का आधार बनाया है चूंकि मेरा जन्म जांजगीर चाम्पा जिले मे ही हुआ है। अत: जिले के क्षेत्रीय परिवेश को ध्यान मे रखकर मैने जांजगीर चाम्पा जिले के भारतीय स्टैट बैंक द्वारा वितरित ऋण हितग्राहीयों से चर्चा करके उनके उद्योग एवं व्यवसाय में भारतीय स्टैट बैंक के योगदान को अपने शोध के विषय के रूप में चयनित किया है जिससे आवश्यक शोध कार्य के द्वारा आवश्यक परिणाम प्राप्त किया जा सके।

अध्ययन के उद्देश्य – छत्तीसगढ़ राज्य के भारतीय स्टैट बैंक के जांजगीर चाम्पा जिले के चांपा शाखा के संबंध में वितरित ऋणो के तत्व अध्ययन का उद्देश्य यह जानने का प्रयास किया गया कि भारतीय स्टैट बैंक के द्वारा कैसे-कैसे साख (ऋण) उपलब्ध कराया जाता है तथा उन साख (ऋण) का वितरण किस प्रकार से किया जाता है।

किसी भी कार्य को करने से पूर्व उसकी रूपरेखा तैयार की जाती है बिना उद्देश्य के लक्ष्य को प्राप्त करने में बहुत परेशानी का सामना करना पड़ता है इसी प्रकार लघु शोध कार्य करने के पूर्व एक योजना बनाना आवश्यक है मेरे लघु शोध कार्य '**प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रो मे भारतीय स्टैट बैंक द्वारा वितरित ऋणो की उपादेयता का मूल्यांकन छत्तीसगढ़ राज्य जांजगीर चाम्पा जिले के चांपा शाखा का अध्ययन पर लेख मुख्य उद्देश्य निम्न दर्शित है।**

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय , करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (वाणिज्य) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

1. भारतीय स्टैट बैंक द्धारा चलायी जा रही ऋण योजनाओ का अध्ययन।
2. भारतीय स्टैट बैंक की वित्तीय सुदृणता का अध्ययन करना।
3. भारतीय स्टैट बैंक की प्रचलित कार्यप्रणाली का अध्ययन
4. भारतीय स्टैट बैंक द्धारा प्रदत्त ऋण योजनाओ के क्रियान्वयन का मूल्यांकन।
5. ऋण हितग्राही के आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ –परिकल्पना का तात्पर्य पूर्व चिन्तन है। यह अनुसंधान तथा सर्वेक्षण प्रक्रिया का आधारभूत चरण है। कल्पना एक विचार दशा तथा प्रस्ताव है जिसे संभवत: अस्थायी रूप से मान लिया जाता है ताकि तार्किक परिणाम निकाले जा सके। तथा जिससे ज्ञात अथवा निर्धारित किए जाने वाले तथ्यो की सहायता से विचार कि सत्यता की जांच की जा सके।

प्रस्तुत शोध की पूर्ति हेतु परिकल्पनाए निम्न प्रकार निर्धारित की गई है :-

1. भारतीय स्टैट बैंक द्धारा प्रदत्त ऋण का हितग्राही द्धारा सही उपयोग होता है।
2. ऋण वितरण प्रणाली स्पष्ट एवं पारदर्शी है।
3. योजनाओ का क्रियान्वयन बेहतर है।
4. ऋण प्रक्रिया अधिक जटिल है।
5. भारतीय स्टैट बैंक द्धारा चलायी जा रही ऋण योजनाओ का उचित ढंग से प्रचार प्रसार नही किया जाता।
6. ऋण हितग्राही के आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है।

शोध प्रविधि – शोध के उद्देश्यो को प्राप्त करने के लिए शोधकर्ता प्रचलित शोध विधि एवं अन्य उपलब्ध विधियो का अनुकूलतम आधार पर चयन कर अध्ययन करता है। प्रस्तुत शोध समस्या के निरूपण हेतु जांजगीर चाम्पा जिले के चांपा शाखा को समग्र के रूप में चयन किया गया है तथा शहरी वित्त व्यवस्था में भारतीय स्टैट बैंक के योगदान का मूल्यांकन करने के लिए जांजगीर चाम्पा जिले के अंतर्गत स्थित भारतीय स्टैट बैंक के चांपा शाखा को आधार मानकर अध्ययन किया जायेगा।

(1) शोध के साधन – उपरोक्त संदर्भ में भारतीय स्टैट बैंक द्धारा प्रदत्त लाभान्वित ऋण सूचियों का चयन कर द्धितीयक समंको का एकत्रीकरण, साक्षात्कार, प्रश्नावली, एवं अनूसूची के माध्यम से किया जाना है।

(2) समंक का साधन – द्धितीयक समंक संग्रहण हेतु प्रकाशित, अप्रकाशित, व्यक्तिगत एवं संस्थागत सामाग्री का प्रयोग किया जाना है और साथ ही विशय से संबंधित विद्धानो से प्राप्त परामर्श एवं सुझावो का भी सहारा लिया जाना है जो शोध के स्तर को विशय अनुरूप बनाये रखने के लिए उपयुक्त होगा।

अध्यायीकरण :

1. अध्याय –1 प्रस्तावना, शोध का अर्थ, शोध के उद्देश्य एवं शोध प्रविधि।
2. अध्याय –2 जांजगीर–चाम्पा जिले का परिचय।
3. अध्याय –3 बैंक का अर्थ, परिभाषा, बैंको के प्रकार, भारत के बैंकिंग व्यवसाय का उद्‌भव एवं विकास और बैंको का राष्ट्रीयकरण।
4. अध्याय –4 भारतीय स्टैट बैंक की जांजगीर–चाम्पा जिले की चांपा शाखा का संगठन एवं प्रबंध।
5. अध्याय –5 भारतीय स्टैट बैंक की जांजगीर–चाम्पा जिले की चांपा शाखा की वित्तीय स्थिति।
6. अध्याय –6 भारतीय स्टैट बैंक की जांजगीर–चाम्पा जिले की चांपा शाखा का प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रो में ऋण वितरण प्रक्रिया एवं श्रमदान।

आंकड़ो का विश्लेषण एवं व्याख्या – उपरोक्त वर्णित उद्देश्य एवं अध्ययन क्षेत्रो की आवश्यकताओ को ध्यान मे रखते हुए संकलित की गयी समंको का वर्गीकरण, सारणीयन एवं सांख्यिकी विश्लेषण स्वयं के प्रयास द्धारा आवश्यकतानुसार संगणक कि सहायता से किया जावेगा जिसमें सांख्यिकी तथा लेखाकर्म विधियों को समाविष्ट किया जावेगा, ताकि प्रस्तावित शोध कार्य किया जा सके।

निष्कर्ष – जिस बैंक के कर्मचारी अपनी दूरदर्शिता मधुरता संपर्क व्यवहार त्वरित ग्राहक सेवा इत्यादि के द्धारा जितनी अधिक जमा राशियों को बटोर सकते है। वास्तव मे वहीं उनके व्यापार शिल्प की विशेषता हो सकती है।

प्राचीन समय में बैंकिंग प्रणाली रूढ़िवादी बैंकिंग प्रणाली थी जबकि आज की बैंकिंग ग्राहकोमुक्त बैंकिंग है। पहले बैंकिंग शहरों व कस्बों तक सिर्फ धनाढ्य एवं इने–गिने (अर्थात चंद) व्यक्तियों के लिए ही थी जबकि आज की बैंकिंग सुदुर, ग्रामीण क्षेत्रों के छोटे से छोटे व्यक्तियों के लिए भी है। पहले बैंको से बड़े आदमी ही लाभ उठा पाते थे जबकि, आज छोटा से छोटा व्यक्ति भी बैंकिंग सेवा का लाभ उठा रहा है।

19 जुलाई 1969 को इसी उद्देश्य से बैंको का राष्ट्रीयकरण किया गया कि बैंको से जो लाभ समाज के एक वर्ग को मिल रहा है वह हर वर्ग को मिले बैंको का राष्ट्रीयकरण ही इसलिए किया गया था कि उनका दृष्टिकोण वाणिज्यिक न होकर जनहित–कारी ही हो।

अन्य व्यापारी संस्थाओं की भाति बैंक भी व्यापारिक संस्थान है जिस प्रकार दूसरे व्यापारिक संस्थान अपना माल बेचकर लाभ कमाते है उसी प्रकार बैंक अपनी सेवाएं बेचकर अपना लाभ कमाते है बैंको की यह सेवा अपने ग्राहकों से जमा राशि स्वीकार करना, ऋण देना, लॉकर किराए पर देना, चैक सुविधा प्रदान करना, ऋण आदि मुहैया कराने के लिए यह जरूरी है कि बैंको के पास जमा–राशियां काफी मात्रा मे हो। यदि किसी व्यक्ति के पास कुछ पूंजी होगी ही नही तो वह किसी को ऋण कहां से देगा। सीधे शब्दों मे हम कह सकते है कि बैंक तभी ऋण दे सकता है जब उसके पास जमा राशि हो। यदि बैंक के पास स्वयं जमा राशि नही होगा तो वे ऋण कहां से देंगें। इसलिए देश के सर्वोमुखी विकास के लिए यह बहुत आवश्यक है कि बैंको की जमा राशि मे वृद्धि हो।

आधुनिक युग में बैंको का एक महत्वपूर्ण कार्य ग्राहकों से जमा राशि प्राप्त करने का होता है। अधिकांश आधिक साधन बैंक जनता से जमा राशियों को प्राप्त करके ही जुटाते है इसी वजह से बैंको मे पारिस्परिक प्रतिस्पर्धा होना स्वाभाविक है। बैंको में आपस मे प्रतिस्पर्धा दो प्रकार से होती है।

7. ग्राहकों को अधिक से अधिक सुविधाएं प्रदान करना।
8. जमाकर्ता को उनकी जमा राशियों पर अधिक दर पर ब्याज देकर।

प्रत्येक बैंक अपने ग्राहकों को अधिक से अधिक सुविधा तथा कम से कम ब्याज दर पर ऋण देना चाहता है। रिजर्व बैंक के द्धारा जो भी ऋण पर ब्याजदर तथा जमा राशि पर ब्याज दर निर्धारित की जाती है उसका सभी बैंको को पालन करना होता है तथा उसी अनुसार ब्याज दिया एवं ऋण पर ब्याज लिया जाता है। भारतीय स्टैट बैंक भारत का एक प्रमुख व्यवसायिक बैंक है बैंक द्धारा विभिन्न प्रकार की आर्थिक स्थिति के व्यक्ति, फर्म अथवा संस्था जो कि किसी भी प्रकार के व्यवधानिक व्यवसाय अथवा आर्थिक क्रियाक्लाप से संबंधित हो इत्यादि की जमा राशि को स्वीकार किया जाता है। वर्तमान में बैंक के बिना आर्थिक नीतियां एवं देश की अर्थ व्यवस्था दृढ़ता की कामना करना काल्पनिक ही माना जायेगा।

हालाकि हमारी बैंको की कार्यप्रणाली मे समय-समय पर सराहनीय सुधार किए है फिर भी यह कहना न्याय संगत नही होगा कि भविष्य में अब इन्हे किसी भी सुधार की आवश्यकता नही होगी। अधिकोषो के द्धारा अपनी योजनाओं को सजाने एवं संवारने का कार्य जारी रखा है। आज की अर्थव्यवस्था में बैंको की महत्वपूर्ण भूमि है। मानवजागृति ने जनसाधारण को बचत एवं विनिवेश का महत्व समझा दिया है फलस्वरूप समाज का हर सदस्य (व्यापारी, उद्यमी, उद्योगपति, श्रमिक,कृषक, नौकरी पेशा, लघु एवं कुटीर उद्योगो में कार्यरत) बैंको के माध्यम से अपनी धनराशि का संलग्न व व्यय करना पसंद करते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हरिशचंद्र शर्मा : मुद्रा, बैंकिंग एवं राजस्व
2. दुबे एंड पाण्डेय: मुद्रा, बैंकिंग एवं राजस्व
3. डॉ. एन.माथुर एण्ड पी.सी.जैन : भारतीय बैंकिंग प्रणाली
4. रविन्द्रनाथ मुखर्जी : समाजिक शोध एवं सांख्यिकीय
5. पी.सी.मिश्रा : भारतीय आर्थिक समस्याये एवं अंर्तराष्ट्रीय व्यापार
6. इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ बैंकर्स द्धारा प्रकाशित : दि जनरल
7. मौद्रिक अर्थव्यवस्था : टी.टी.सेट्ठी

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

बाल अधिकारों के संरक्षण में विधियों की भूमिका

राजू देवांगन *

शोध सारांश – वर्तमान समय में बाल अधिकारों के संरक्षण का विषय अत्यंत महत्वपूर्ण होता जा रहा है, क्योंकि वर्तमान समय में बाल अपराध बालकों का शोषण की घटनाएं बढ़ती जा रहा है। भारतीय परिपेक्ष्य में सामाजिक बदलाव और सामाजिक मूल्यों में गिरावट इसका महत्वपूर्ण कारण है। भारत के संविधान में बालकों के लिए विशेष प्रावधानों की व्यवस्था की गई है। जिससे बालकों का समुचित विकास हो सके। बालकों का बचपन व्यवस्थित हो इसके लिए विभिन्न विधियों के द्वारा इनके अधिकारों को संरक्षित करने का प्रयास किया गया।

अतंराष्ट्रीय स्तर पर भी बाल अधिकारों के संरक्षण के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ अपने स्थापना काल से ही प्रायासरत रहा है और विभिन्न अभिसमयों के माध्यम से बाल अधिकारों को चिन्हीत कर सदस्य राष्ट्रों कों इस सबंधं में विधि निर्माण के लिए बाध्य किया है। यूनिसेफ महिला एवं बाल विकास कों अपना मूल कर्त्तव्य बनाया है। भारतीय परिपेक्ष्य में बाल अधिकारों का संरक्षण एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय है, क्योंकि बाल अधिकारों का हनन विगत कुछ वर्षो से अधिक होता दिखाई दे रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र में भारत में बाल अधिकारों के संरक्षण के लिए बनाई गई विधियों का अध्न प्रस्तुत करता है।

कुंजी शब्द – बाल अधिकार, संरक्षण, हनन।

अध्ययन का उद्देश्य – इस शोध पत्र का मूख्य उद्देश्य भारत में बालकों के अधिकार संरक्षण हेतु बनाए गए विधियों का अध्ययन कर मूल्यांकन करना है।

शोध प्रविधि – यह शोध पत्र पूर्णत: सैद्धांतिक विधि पर आधारित है जिसमें विषय सें संबंधित सर्वमान्य ग्रन्थ एवं प्रशासकीय दस्तावेजों से प्राप्त सूचनाओं को आधार मानकर अध्ययन किया गया है।

विवेचना – बालकों का संरक्षण एक महत्वपूर्ण विषय है, क्योंकि बालक ही किसी भी देश भविष्य होता है। यदि इन बालकों का बेहतर संरक्षण नहीं होगा तो एक स्वस्थ्य समाज की कल्पना करना निर्थक होगा। भारत के संविधान निर्माताओं ने इसी ध्येय को दृष्टिगत रखते हुए, संविधान में भाग 3 अनुच्छेद 15 (3) में महिलाओं एवं बच्चों को शारिरीक रूप से कमजोर बताया है। स्पष्ट होता है, कि इन वर्गो के लिए विशेष प्रावधानों के द्वारा सक्षम बनाएं जाने का प्रावधान है। जो कि समानता के अधिकार के अपवाद के रूप में जाना जाता है। संविधान के अनुच्छेद 21 (अ) 6 से 14 वर्षो के बालाकों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को मौलिक अधिकारों के रूप में प्रदाय किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 23 एवं 24 में शोषण के विरूद्ध अधिकार के रूप में बाल श्रम एवं अन्य दुरव्यापारों को रोका गया है। इसी प्रकार भाग 4 राज्य के नीति निदेशक तत्वों के अंतर्गत राज्यों को यह दायित्व सौंपा गया है, कि महिलओं एवं बच्चों के पोषाहार एवं स्वस्थ्य के लिए विशेष कार्यक्रमों के द्वारा संचालित किया जायेगा। भारत में बाल अधिकारो के संरक्षण हेतु अग्रलिखित अधिनियमों को अधिनियमित किया गया है।

1. **स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय कारखाना अधिनियम 1948** में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के नियोजन पर पूर्णत: प्रतिबंध लगाया गया। जिससे उन बच्चों का शारिरिक, मानसिक शोषण रूक सके।
2. **भारतीय खान अधिनियम 1952** में भी खदानों में बच्चों एवं महिलाओं के नियोजन को प्रतिबंधित किया गया।
3. बालकों के अधिकारों के संरक्षण में सन् 1986 में बालश्रम (प्रतिषेध तथ विनिमय) अधिनियम, वास्तव में बालश्रम का प्रतिषेध करने के लिए साहसिक कदम है। अधिनियम की धारा 3 ने कुछ उपजीविकाओं और प्रक्रियाओं में बाल नियोजन को निषेध किया है। अधिनियम की अनुसूची का भाग 1 अनुमति नहीं दी जा सकती है। ये है (1) रेलवे द्वारा यात्रीगण, माल अथवा मेल के परिवहन से संबंधित उपजीविकाये, (2) राख के गड्डों में सफाई और सिंडर पिकिंग का कार्य, (3) रेलवे स्टेशन पर भोजन प्रबन्ध के कार्य जिसमें विक्रेता अथवा गाड़ी के एक डिब्बे में जाना और उससे बाहर निकलना होता है, (4) रेलवे स्टेशन के निर्माण लाइनों के बीच किया जाता है, तथा (5) बंदरगाह प्रधिकारी का कार्य किसी बंदरगाह की सीमाओं के अंतर्गत कार्य: भाग ख के अंतर्गत दूसरे संसाधन आते है। इस प्रकार यह अधिनियम बालकों के अधिकार संरक्षण में मिल का पत्थर साबित हुआ।
4. **लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012** 'लैंगिक हमला, लैंगिक उत्पीड़न और अश्लील साहित्य के अपराधों से बालकों का सरंक्षण करने और ऐसे अपराधों का विचारण करने के लिये विशेष न्यायालयों की स्थापना तथा उनसे संबंधित या आनुषंगिक विषयों के लिये उपबंध करने के लिये अधिनियम।

POCSO ACT - पूरा नाम The Protection of Childran from Sexual Affences Act में बच्चों के प्रति यौन उत्पीड़न और शोषण और पोर्नोग्राफी जैसे जघन्य अपराधों को रोकने के लिए महिला एवं बाल विकास मंत्रालय ने बनाया था। वर्ष 2012 में बनाये गये इस कानून के तहत अलग-अलग अपराधों के लिए अलग-अलग सजा तय की गयी है।

5. **बाल विवाह प्रतिशेध अधिनियम 2006-** बाल **विवाहो के अनुष्ठान के प्रतिषेध और उससे संबधित या उसके आनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम।** इस अधिनियम का विस्तार जम्मूकश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर हैं। इस अधिनियम के अनुसार 21 वर्ष के कम उम्र के लड़के और 18 वर्ष के कम उम्र की लड़की के विवाह को प्रतिबंधित किया गया है। बाल विवाह से ऐसा विवाह अभिप्रेत है जिसके बंधन में आने वाले दोनो पक्षकारों में से कोई एक बालक है। यह कानून बाल विवाह के बंधन में बंधने वाले बालक/बालिका को अपना विवाह शून्य घोषित कराने का अधिकार प्रदान करता है। राज्य सरकार राजपत्र में

* एम. फिल. छात्र, डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

अधिसूचना द्वारा या किसी भाग के लिए बाल विवाह प्रतिषेध अधिकारी की नियुक्त कर सकता है। कोई व्यक्ति जो बाल विवाह करता है या करवाता है, अथवा उसमें सहायता करता है, उसे 2 वर्ष कठोर कारावास अथवा जुर्माना एक लाख तक हो सकता है। कोई व्यक्ति बाल विवाह को बढ़ावा देता है या इसकी अनुमति देता है, बाल विवाह में सम्मिलित होता है तो 2 वर्ष कठोर कारावास एंव एक लाख रूपये तक जुर्माना हो सकता है।

6. बाल अधिकारो के संरक्षण के अधिनियम पर शिशुओं के अधिकारों सरक्षण के लिए भारत सरकार द्वारा अपनायी गयी नीतियों को प्रभावशाली ढंग से लागू करने के लिए बाल अधिकारों के सरक्षण के लिए आयोग की व्यवस्था की गई है। जिसके अंतर्गत I अधिनियम 2005 बनाया, जो 20 जनवरी, 2006 से लागू हुआ। इसमें आयोग में एक अध्यक्ष होगा, जिसने शिशुओं के कल्याण के लिए सर्वोत्तम काम किया हो या विख्यात व्यक्ति हो एवं आयोग के 6 अन्य सदस्य होंगे जिसमें से 2 महिलाएं होगी, जिनकी नियुक्ति भारत सरकार द्वारा की जाती है।

उपसंहार – बाल अधिकारों के संरक्षण में विधियों की भूमिका अत्यंत सराहनीय है। जैसा कि इस अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि भारत में स्वंतत्रता प्राप्ति के पश्चात् से ही बालकों के अधिकारों को संरक्षित करने के विधिक उपायों को अपनाया गया और विधियों को अपनाया गया और विधियों के माध्यम से बाल शोषण को रोकने का प्रयास दिखाई देता है लेकिन भारतीय संदर्भ में यदि देखा जाये तो अशिक्षा और गरीबी दो ऐसे पहलु हैं जो बाल शोषण को कहीं न कहीं से बढ़ावा देते हैं। वर्तमान समय में बाल लैंगिक शोषण की घटनाएं बढ़ती जा रही है जिसका प्रमुख कारण सामाजिक मूल्यों का हास है। स्पष्ट है कि सरकार विधि बना का बाल अधिकारों के संरक्षण कर सकती है लेकिन समाज को भी इन अधिकारों के संरक्षण के लिए आगे आना होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अग्रवाल, डॉ. एच. ओ. मानव अधिकार, सेन्ट्रल लॉ. पब्लि., इलाहाबाद
2. डॉ. ईन्द्रजीत सिंह, श्रमिक विधियॉ
3. पाण्डेय, डॉ. जयनारायण, भारत का संविधान सेन्ट्रल लॉ. पब्लि., इलाहाबाद
4. बेयर एक्ट

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Cocoon Production In Chhattisgarh State With Particular Reference To Bilaspur District

Bharati Dewangan * Dr. Prabhakar Pandey**

Abstract - Chhattisgarh has been the leading state in terms of kosa fabric production. Abundant production of Tassar Kosa cocoons has been taken up in the natural Saal and Arjuna trees. The Eggs laid by female moth hatch into Larva, further grown as caterpillar, spins cocoon of silk threads around itself and through these cocoons raw silk is obtained. Cocoons are procured from various silk producing districts of Chhattisgarh state. The present study is descriptive in nature involving secondary data. The study tries to find out the difference between target and achievement level in production of tassar and mulberry cocoons as well as number of beneficiaries and labourers prevalent in Bilaspur district of Chhattisgarh state. Percentage of Increase or Decrease in last five years is also assessed. It is identified that Tassar cocoon production exceeds the target level in the year 2015-16 & 2017-18 where as Mulberry cocoon production exceeds the target level in 2014-15 & 2017-18.
Keywords - Cocoon, Tassar, Mulberry, Target, Achievement, Beneficiaries.

Introduction - The word “Sericulture” has been derived from the word “Su” (Si) which means silk. Sericulture is an art of rearing silkworms for the production of silk. Sericulture is an important agro-based rural industry that helps our economy and generates higher income and employment. It is practiced in a wide range of agro-climatic regions, like forests, hilly areas and plains. In Chhattisgarh, presently three types of silk viz., ‘Mulberry’, ‘Tassar’ and ‘Eri’ silk are producing. Tassar culture is practiced on the forest plants in wild by condition..In Chhattisgarh Tropical Tassar and mulberry are reared on commercial scale. Tassar is really named as Kosa. Chandrapur in Janjgir-Champa and Bilaspur are districts producing silk from Central Chhattisgarh. Apart from this, Raigarh and Chhuri in Katghora Tehsil of Korba from Northern Chhattisgarh are also well known for producing silk. Dewangan community is mostly engaged in weaving of Kosa silk. They have been named as ***Koshta*** in the name of Kosa.

Sericulture components - Commercial rearing of silk producing silkworm is called sericulture. Silk is Nature’s gift to mankind and a commercial fiber of animal origin other than wool. Being an eco-friendly, biodegradable and self-sustaining material; silk has assumed special relevance in present age. Promotion of sericulture can help in ecosystem development as well as high economic returns. It is an agro-based industry comprising three main components: i) cultivation of food plants of the worms, ii) rearing of silk worms, and iii) reeling and spinning of silk. The first two are agricultural and the last one is an industrial component. There are four varieties of silkworms in India, accordingly sericulture is classified into **Mulberry Culture, Tassar Culture, Muga Culture** and **Eri Culture**.

Life cycle of silkworm - Life cycle of the silkworm consists of four stages i.e. egg, larva, pupa. and adult, The duration of life cycle is six to eight weeks depending upon racial characteristics and climatic conditions. The duration of cycle can be categorized into three types i.e. uni-voltine, bi-voltine, multi-voltine.

Stage 1 : Egg - Uni-voltine races produce only one generation during the spring and the second generation of eggs goes through a period of rest or hibernation till the next spring. bi-voltine races produces two generations in one year and Multi-voltine races found in tropical areas have the shortest life cycle Seven to eight generations are produced in multi-voltine races.

Stage 2 : Larva - After 10 days of incubation, the eggs hatch into larva called caterpillar. After hatching caterpillars need continuous supply of food, because they are voracious feeders. Newly hatched caterpillar is about 0.3 cm in length and pale yellowish white.

Stage 3 : Pupa - Pupa is the inactive resting stage of silkworm. It is a transitional period during which definite changes take place. During this period, biological activity of larval body and its internal organs undergo a complete change and assume the new form of adult moth. The mature silkworm passes through a short transitory stage of pre-pupa before becoming a pupa. During the pre-pupal stage, dissolution of the larval organs takes place which is followed by formation of adult organs. Soon after pupation the pupa is white and soft but gradually turns brown to dark brown,

*Research Scholar, Dr .C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** HOD & Prof., Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

and the pupal skin becomes harder

Stage 4 : Adult - The adult of *Bombyx mori* is about 2.5 cm in length and pale creamy white. After emergence the adult is incapable of flight because of its feeble wings and heavy body. It does not feed during its short adult life. The body of moth has general plan of insect body organization. Just after emergence, male moths copulate with female for about 2-3 hours, and die after that. The female starts laying eggs just after copulation, which is completed within 24 hours. A female lays 400-500 eggs.

Cocoon Production - For production of Cocoons, firstly silkworms are reared and the process of rearing silkworm for production of silk is known as Sericulture. Production of Cocoon involves Tree Cultivation and Sericulture. Mulberry trees are to be cultivated for mulberry leaves as Bombyx Mori silkworm feed on mulberry leaves while Tussar silkworm namely, Antheraea Mylitta reared on Arjuna and Sal trees in outdoors unlike mulberry moth which are reared indoors. Silkworms are raised to produce cocoons. Firstly eggs are collected and kept in moist and dark place. After few days, larva stage starts and this is the stage of cocoon formation. Then to form a cocoon, larva secretes a sticky fluid and wrap itself completely. This fluid come in contact with air and dried. Worm is present inside cocoon. After 10-15 days, pupa stage arrives in which worms are destroyed and cocoons are collected but some cocoons are left for further reproduction. These left cocoons converted into moth after two weeks. Then cocoons are reeled to produce silk yarn which is later woven in handloom.

Findings And Discussion:

Table 1 : Representing Target, Achievement and Percentage of Tassar Cocoon Production During the Financial year 2013-14 to 2017-18

S.	YEAR	UNIT	PRODUCTION OF TASSAR COCOONS		
			Target	Achievement	Percentage
1.	2013-14	IN LAKH	41.03	34.55	84.20
2.	2014-15		36.32	31.08	85.57
3.	2015-16		45.90	50.43	109.86
4.	2016-17		54.22	40.83	75.31
5.	2017-18		51.00	51.99	101.94

Table 1 is representing the target and achievement of tassar cocoons during the period of 2013-14 to 2017-18 Tassar cocoons are measured in lakhs and it is found that the achievement in the year 2015-16 & 2017-18 exceeds the target level. In 2015-16 Tassar cocoon is produced 9.86% more than the target level, whereas in 2017-18 rate of achievement is 1.94% more than the target level. In the years 2013-14, 2014-15 & 2016-17 achievement is less than target level and the rate of production is 84.20%, 85.57% and 75.31% respectively.

Fig. 1 (See in next page)

It is revealed that in 2015-16 and 2017-18, cocoon production is more than the target fixed in that particular period. Thus, we can say that in this duration, tassar cocoon production is in rapid pace.

Table 2: Representing Target, Achievement and Percentage of Mulberry Cocoon Production During the Financial year 2013-14 to 2017-18

S.	YEAR	UNIT	PRODUCTION OF MULBERRY COCOONS		
			Target	Achievement	Percentage
1.	2013-14	IN K.G.	1690	1618.700	95.83
2.	2014-15		1620	2379.670	147.00
3.	2015-16		2400	2281.950	95.08
4.	2016-17		3000	1431.400	47.71
5.	2017-18		1650	1810.280	109.71

Table 2 is representing the target and achievement of Mulberry cocoons for the same period , 2013-14 to 2017-18. Mulberry cocoons are measured in kilogram. Here, it is found that the achievement in the year 2014-15 & 2017-18 is greater than the target level. In 2014-15, production of Mulberry cocoon is 47% more than the target level, whereas in 2017-18 it is 9.71% more than the target level. In the years 2013-14, 2015-16 & 2016-17 achievement is less than target level and the rate of production is 95.83%, 95.08% and 47.71% respectively. It is observed that the Target for 2016-17 is highest and rate of achievement is least compared to previous and next years. This is because before fixing the target for 2016-17, failure of 5% in achieving the target in the year 2015-16 is completely ignored.

Fig. 2 (see in last page)

It is revealed that in 2014-15 and 2017-18, cocoon production is more than the target fixed in that particular period. Thus, it is clear that in this duration, mulberry cocoon production is in rapid pace. In rest of the years cocoon production is done in such a way that even the target cannot be reached.

Table — 3 Representing the total beneficiaris involved in tassar and mulberry production

S.	YEAR	TOTAL OF BENEFICIARIS	
		TASSAR BENEFICIARIS	MULBERRY BENEFICIARIS
1.	2013-14	453	71
2.	2014-15	602	75
3.	2015-16	584	82
4.	2016-17	648	50
5.	2017-18	664	62

Table -3 Shows the total beneficiaries in the production of Tassar and Mulberry. The Increase and decrease is clear through the following graphs :

Fig. 3 (see in last page)

It is revealed that the beneficiaries in Tassar production are fluctuating . there is an increase in 2014-15, then decrease in 2015-16 and after that it is increased in the rest two years.

Fig. 4 (see in last page)

It is revealed that the beneficiaries in Mulberry production are increased in the first three years but there is a sudden

decrease in the year 2016-17 with respect to the quantity of production.

Conclusion - From the present study, it can be concluded that, the state of Chhattisgarh is having a temperate climate, as such offers salubrious conditions for production of quality silk. But production of Tassar and Mulberry exceeds the target level only in two years and rest of the years it is below the target level that's why the industry slipped back to take a lead position among the sericultural zones of the country. Thus for future extension of silk industry, propagation of quality mulberry varieties, awareness of the benefits of sericulture activity among farmers, practice of conducting not less than two rearing in a year, a well-organized system of production and supply of disease free eggs, use of by-products of sericulture activity, modernization of reeling sector, rationalization of marketing of cocoons and raw silk, popularization of low cost technologies at farmers level etc. must be adopted and implemented.

References :-

1. **Ramana D.V. (1987):** "Economics of Sericulture and Silk Industry in India";Deep Publication, New Delhi, Ist edition.
2. **Mukherjee Saswati (1992.):** "Sericulture In West Bengal-A Geographical Analysis"; M/S Bhattacharyya & Bros., Calcutta; Ist edition.
3. **Mohanty P.K.: (2003).** "Tropical Wild Silk Cocoons of India", Daya Publishing House,New Delhi, Ist edition.
4. **Dandin, S.B. (2005)** "Institute Village Linkage Programme for Improvement in Productivity and Quality", *Indian Silk*, Vol. 43(8): pp.5-8.
5. **Kumaresan, P. Sumanta Behera and Geetha Devi (2005)** "Impact of Technological Change in Mulberry Cocoon Production", *Productivity*, Vol.46(1): pp.172-177.
6. **S.Rajadurai Selvaraju, N.G. and Jayaram H.(2008)** "Performance of Large Scale Farming in Sericulture – An Economic Analysis", *Indian J. Agric. Econ*., Vol. 63 (4) :641 – 652.
7. **Dewangan S.K., (2010),** Sericulture - A Tool of Eco-System Checking Through Tribal, *Journal of Environmental Research and Development,* vol.6 no.1,pp.284-292
8. **R.K. Sinha (2013),** Silk charecteristics-2, *Indian Silk*, Volume-4, CSB. P-58.
9. **Dewangan S.K. (2013)** , Livelihood Opportunities through Sericulture A Model Of Gharghoda Tribal Block, Raigarh Dist., *American Journal of Environmental*

Fig. 1: Graph representing the target and achievement level of tassar production from the year 2013-14 to 2017-18:

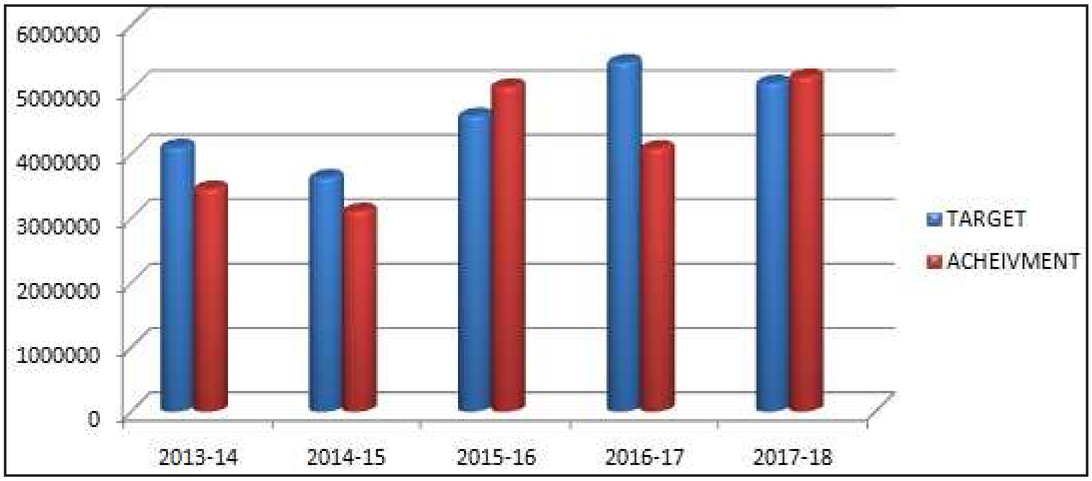

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Fig. 2: Graph representing the target and achievement level of mulberry production from the year 2013-14 to 2017-18:

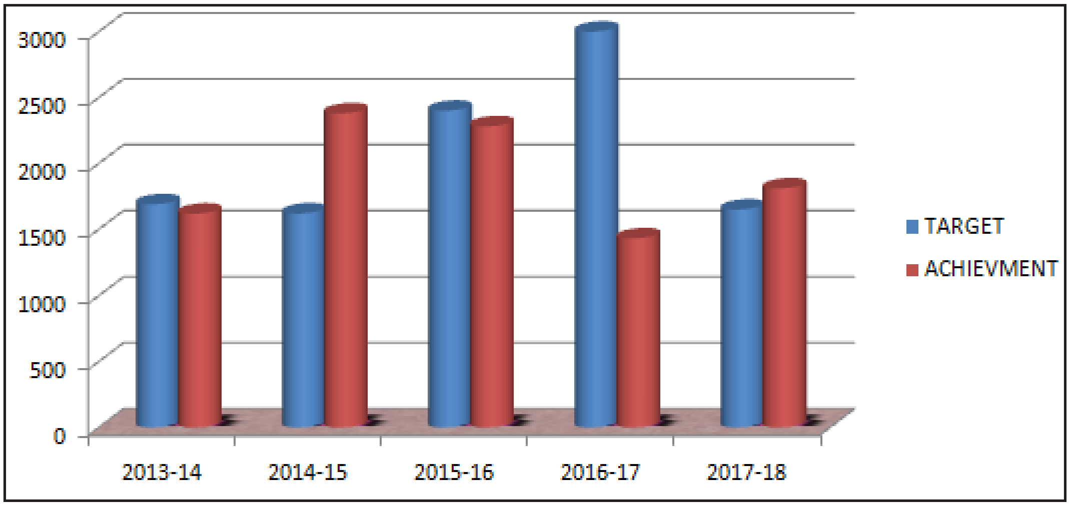

Fig. 3: Graph representing the Tassar beneficiaries:

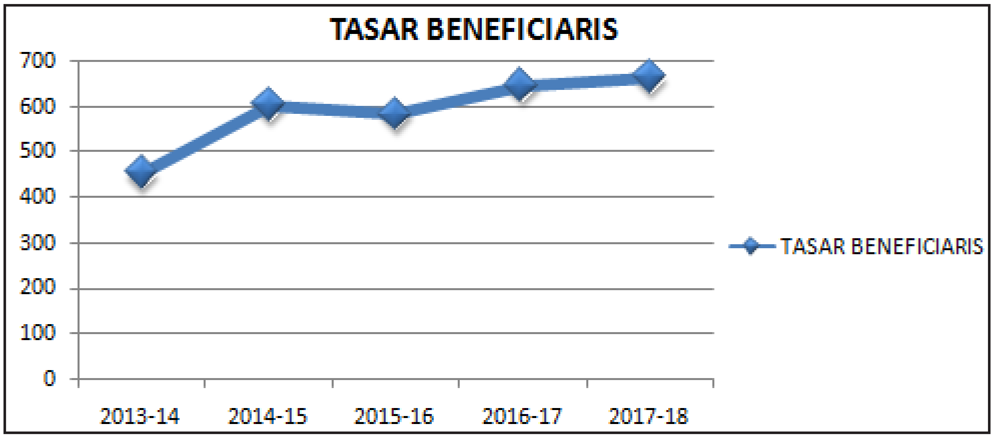

Fig. 4: Graph representing the Mulberry beneficiaries:

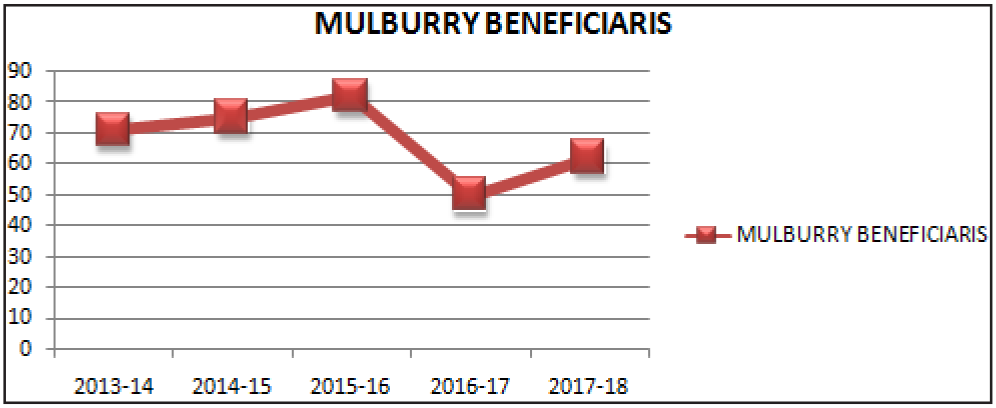

****

Impact of the Silk Route on Ancient India

Dr. Nilesh Sharma *

Introduction - Silk route was a group of historic trade-cultural routes in ancient times and medieval times through which Asia, Europe and Africa were joined. The most well-known part of it is the North Silk Route, which went from China to the West in the Middle East and then to Europe, and from which a branch coming out went towards India. The land area of the Silk Road was 6,500 K.M. long and was named after the name of China's Silk, the trade of which was the main feature of this route. Silk route is known as the commercial route to ancient Chinese civilization. Between two hundred years BC and second century, the trade of silk grew during the rule of Han Dynasty. Earlier the caravans of silk went west from the northern end of the Chinese empire. But then the Central Asian cabins were contacted and gradually, the route reached Rome, from China, Central Asia, today's Iran, Iraq and Syria and northern parts of India. It is noteworthy that on this route only silk was not traded, but all the people associated with it used to trade their own products. In the meantime, trading through the road became dangerous, then the trade started going towards the sea.

The flourishing trade on Silk Route - China began to reach the Han Dynasty. The silk route had a profound impact on the development of the great civilizations of China, India, Egypt, Iran, Arabia and ancient Rome. Apart from trade through this route, knowledge, religion, culture, languages, ideologies, monks, pilgrims, soldiers, ghosts, tribes, and diseases spread. From trade perspective, China was sending silk, tea and porcelain utensils, India sent spices, ivory, clothes, black pepper and precious stones, and from Rome came gold, silver, glass products, liquor, carpets and ornaments. However, by the name of 'Silk Route' it seems that this was the only way. In fact, very few people used to travel on its entire expanse. Most traders used to distribute other city goods from one city to other traders in their parts, and in this way, the goods went from one hand to the other and went thousands of miles away.

Initially, the traders on the Silk Road were mostly Indian and Bactrian, then there was a harmony, and Iranian and Arab were more in the middle. There was also a mixture of communities from the Silk Route, for example, in the Tarim Drooney, there are clues of mix of Bactrian, Indian and Sogdai people. This city was formerly called Shiu-Phu and it was in Han from 206 BC to 220 BCE and in Tung dynasty from 618 AD to 907 AD. In 751 AD, the Chinese were thrashed in the hands of Arab and joined Kashgar Milit-Islamia, and even today there is a connotation of the Muslims. The city was devastated by the attacks of Genghis Khan in 1219 AD. Marco Polo visited Kashgar in 1273 AD. In 1389 AD, without a target of the abate of Kashgar Amir Taimur. After becoming part of the Turks, Uighur, Mongols and Wuxi Asians, in 1759 AD, during rule of Chiang dynasty, Kashgar became a part of China. The Muslims revolted against the rulers many times, but they were crushed every time.

North Silk Road is a historic route located in the northern region of the present People's Republic of China, which travels from the ancient capital of China to the west, to the north from the Taklamkan desert, to the ancient Bactria and Parthia kingdom of Central Asia and then further to Iran and ancient Rome. It is the northern branch of the famous Silk Road, and for thousands of years, business, military and cultural activities have been taking place between China and Central Asia. In the first millennium BC, the Han Dynasty of China organized a lot of campaign against the active castes to secure this path for the Chinese merchants and soldiers, with the use of this route more expansive. Chinese emperors, in particular, made great efforts to reduce the effect of Shiangnu people.

The routine of travelers - It is interesting to ask that in the olden days when people would have been using Silk Route, what they used to eat in the way, because the path was not so simple. Since a vast part of the route was through the desert, it was less likely to find fruits and other food from plantation. The travelers set out from India used to carry dried food products with them. It used to consist of nuts and dried fruits and popular Indian sweets which would boost their energy. They also used to eat breads found in the local Arab or Persian towns and villages where they would stop in between. There are graffiti in the 70,000 square meters of caves on the ancient Silk Road. In some areas, it is known that the wall and about 50 thousand ancient book adventure travelers get details of the diverse details of what they eat on this trade route.

This route connects Xian city of China to Rome. Researcher Gao Kian at the Lanzhou University of Finance and Economics told the Xinhua Dialogue Committee that in many paintings, people are eating dinner kebabs. This food is now prevalent in the whole world. Researchers have also got some food utensils, which were used to prepare

*Guest Faculty (History) Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.) INDIA

these dishes. Through the silk route and its branches, the movement between East and West used to be very busy. According to Chinese historical mentions, the walnuts, melons, watermelon, pepper and carrots that grow in China were all brought from China to the west. During the Thang dynasty period of China from the seventh century to the ninth century AD, the silk path was more than the busiest. The travelers thus had to carry armaments to protect themselves from the looters and dacoits.

Cultural exchange between India and other countries - Cultural exchanges were also very active with trade on the silk route. Buddhism came to China from India in China's Western Han Dynasty (206 BC - 20 CE). In the 3rd century CE, the Gijar cave was dug in Sinchang, China, in which still ten thousand square meter wall paintings are safe, which provides a glimpse of the early history of Buddhism coming into China. It is speculated that Buddhism reached out from India from Silk Road through the Silk Road, then reached there till Tanghung of the Kansu province, after which spread to the inner parts of China. Many Buddhist caves are seen to be safe from the silk route, where Tanghung's Macau cave and Loyang's Lungman cave are world-famous. The artifacts of these caves include the art styles of East and West, which are witnessing cultural exchanges through the silk route, they are now included in the World Cultural Heritage List.

The Persian style of weaving and patterns reached India which can be seen in the Kashmiri kashidakari which is heavily influenced by the Persian designs. One most notable influence of cultural exchange through the silk route can be seen in the Rajput Havelis of Rajasthan. The local Rajput land lords and merchants saw that how the Arabs built lavish mansions to live in with spacious courtyards, impressive arches and intricate paintings on the walls. They were very much impressed by this style of mansions and started building their own mansions which are known as Havelis. The idea of paintings which we can see today on these Rajputi havelis was taken from Arabs. However, since the painters happened to be local Indians, they painted the images of Indian mythology.

Conclusion - The silk route played an important role in opening up northern part of India to the world. India happened to be in the way of the silk route and hence it served as a stoppage of traders and merchants and other travelers which resulted in increased trade and cultural exchanges between Indian provinces and other countries and their empires. The culture that we see today has a lot of influence of other countries which was adapted during the time of silk route. India was immensely benefitted by the silk route and people became wealthy. It was the initial experience for Indians in field of ancient entrepreneurial progress. Indians came in contact with people belonging to a different culture altogether which expanded the view of world for them. Not only was it the Indians who got benefits from the route but also people from other countries gained valuable and exotic assets from India. Thus it can be said that the silk route had a very positive and advantageous impact on the northern territories of ancient India.

References :-

1. Chandra, Moti, "Trade and Trade routes in Ancient India", Abhinav Publications, New Delhi, 1977, Pg. 96-102.
2. Ibid, Pg. 110.
3. Frankopan, Peter, "The Silk Roads: A New History of the World", Bloomsbury Publishing, London, 2015, Pg. 219-224.
4. Ahluwalia, H.P.S., Dorabjee, Hormazd, "Beyond the Himalayas: In Search of the Ancient Silk Route", Kamlesh Shah Publishers, Mumbai, 1999, Pg. 43-47.
5. Elisseeff, Vadime, "The Silk Roads: Highway of Culture and Commerce", Berghahn Books, New York, 2000, Pg. 166-168.
6. Liu, Xinru, "Ancient India and Ancient China: Trade and Religious Exchanges, Ad 1-600", Oxford University Press, New York, 1988, Pg. 39-42.
7. Ibid, Pg. 180-181.
8. Prasad, Prakash Charan, "Foreign Trade and Commerce in Ancient India", Abhinav Publications, New Delhi, 1977, Pg. 154-157.
9. Ibid, Pg. 169.
10. Reid Struan, "Cultures and Civilizations: The Silk and Spice Routes", James Lorimer and Co., Toronto, 1994, Pg. 27.
11. Mishra, Arun Kumar, "Trading Communities in Ancient India: From Earliest times to 300 AD", Anamika Pub. and Distributors, Delhi, 1992, Pg. 81-85.

****

A Study on Entrepreneurship and GST

Priyanka Anand * Dr. S.K. Shrivastava **

Abstract - GST (Goods and Services Tax) is the transparent system of tax administration. The GST has an impact on entrepreneurship sector and it has helped the entrepreneurs to focus on their businesses rather than being engaged themselves in managing tedious tax compliances. Among the tax compliances including tax payers registration, submission of returns, tax payment and refund claims all services can be accessed through GST portal. The very interesting fact of GST is it is a form of taxation which will curb the various forms of indirect tax and make the entrepreneurs to focus on their businesses rather to be worried about paying and managing taxes.
Key Words - Entrepreneurship, GST.

Introduction - The Introduction of GST (Goods and Services Tax) in India was on 1st July 2017. It replaced all other taxes which were levied by the central and state government. The rate of GST is different on different commodities. This tax is executed by both Union and State government. The Goods and Services Tax (GST) is an indirect tax and its reform in India takes Value Added Tax (VAT) to its very logical conclusion.GST to a very much extent avoided the load of multiple taxation (i.e tax on tax).*The* GST *regime breaked inter-state tax barriers and has enabled smooth flow of goods and services across the states. The* GST is a revolution in the entire tax structure of the country. It will act as a single window tax system and will also welcome FDI which will further boost country's economy.

GST has bridged the gap by integrating all the taxes and making one tax to be paid. Resulting, the tax calculations being simple, time saving and will encourage entrepreneurs and to start-ups and focus their businesses despite investing time on compliance and exhausting paperwork.

Input Tax credit (ITC) - The mechanism by which cascading effect of taxes can be avoided is by Input Tax credit (ITC). The GST will mitigate the cascading effect of taxes. Input tax credit basically means when tax is paid by manufacturer on his output and he can deduct the tax which he has previously paid on input at the time of purchase of goods.

Understanding the Input Tax credit : Suppose a manufacturer making pens requires inputs like refill tube, metal clip etc for making pen. These inputs are chargeable to central excise duty and hence suppose the cost of these inputs is Rs 10 on which Central excise duty of Rs 10 is to be made which means Rs 1, let us suppose the cost of manufactured pen is Rs 20 thereby central excise duty of Rs 2 will be paid by the manufacturer. So a manufacturer will be paying Re 1 as duty paid on inputs and Re 1through cash (Total 1 + 1= 2) the price of pen becomes Re 22, overall the manufacturer paid Rs 2 Value added over and above the cost of inputs. The mechanism of ITC will mitigate the cascading effect of taxes as now the manufacturer will be paying VAT on Rs 22 which is the entire cost of the pen and it includes Central excise duty of Rs 2 .This is actually cascading of taxes wherein VAT is paid on value of the pen costing Rs 20 but also on tax Rs 2.

Table No -1 : Comparison of Tax under the Current Indirect Tax System and the GST regime

Transaction	BeforeGST	After GST
Cost of Raw Materials	100	100
Tax on Raw Material @ 10%	10	10
Value added by manufacturer	20	20
Tax payable by Manufacturer	2 (CENVAT: 10%of 20)	2(GST: 10%of 20)
Retailers Cost	132	132
Value added by Retailer	20	20
Tax Payable	15.2 (Sales tax: 10 % of 152)	2 (GST 10% of 20)
Final price paid including Taxes	1 67.2	154
Of which taxes	27.2	14

Source: The Constitution (122nd Amendment) (GST) Bill, 2014.

The major taxes which will be combined together under single levy will be:

Centre Taxes

1. Central Excise duty
2. Service Tax

*Research Scholar, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Professor and Head (Commerce) VR Govt. Girls P.G. College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

3. Surcharges & Cess

State Taxes

1. State VAT/Sales Tax
2. Central Sales Tax
3. Purchase Tax

Types of GST - There are basically three kinds of taxes under the GST :

1. SGST - STATE GOODS AND SERVICE TAX is the tax which is diverted to the state government and which is credited to the revenue department of the state government. This is the one which is generally equivalent to CGST. This basically compensates the loss of existing VAT or Sales Tax revenue to state government. But generally in case of local sales, 50% quantum of tax amount under GST is being diverted to SGST TAX.

2. CGST - CENTRAL GOODS AND SERVICE TAX is the share of GST TAX which is diverted to revenue department of the central government and is also equivalent to SGST. The loss of existing excise duty is compensated with the loss of existing excise duty and the service tax to the central government.

3. IGST - When inter state sales and purchases are made INTEGRATED GOODS AND SERVICES TAX is levied. The tax is transferred in one part to central government and another to state government to whom the goods and services belongs . The IGST is charged only when transactions are between two states.

Significance of GST :

1. **The system of one Tax -** Central Excise Duty, Service Tax, VAT, Octroi, Luxury Tax, Entertainment Tax and a few other indirect taxes will be consolidated under GST. Barring alcohol, the GST will apply on all goods and service. Petrol and petroleum products will are also subject to it.
2. **Single Governance -** Currently VAT is applied differently in every state making compliances more complicated and hence the companies operating in PAN India will be facing difficulities. Enactment of power will be totally with the union, the centre would be acting as deciding power to levy the taxes over interstate supply of goods and services.
3. **Easiness of doing business -** With the popularity of online platform, the starting of new business will be instant under unified laws as against making payments and filing returns separately under VAT regime.
4. **Higher Exemptions to Small Businesses -** Previously VAT registration was applicable to the businesses who have the turnover ore than Rs 5 lacs. GST will on the other hand has increased the limit to Rs 10 lacs.
5. **Improved Logistics Efficency -** GST will improve the interstate movements of goods easily and will also make seamless movements of goods from one state to another.
6. **Simple Registration -** GST has paved the way for the simplification of registration for the company which is centralized. Only a single license is required for the entrepreneur to do business in multiple states.
7. **Higher exemptions to new businesses -** Rupees 10 lacs is the sealing limit of registration of VAT/Service tax currently. This limit will be made higher under GST to Rs 20 lacs. Further there is provision of composition scheme for tax @ 2% up to the turnover of Rs. 50 lacs. This will help entrepreneurs being respite from tax burdens to new established business enterprises.

GST WORKING? - At all stages of Supply chain GST is collected and paid. For running businesses GST is paid when it buys various supplies or services for running their business. All GST registrants will be charging and collecting GST on taxable goods and services which they will be providing (taxable supplies). The GST paid which is on their purchases (input tax credit) will be set off against the GST which will be charged and collected (output tax). The difference of exceed of the output tax over the input tax, is to be remitted to the customs authorities. On the other hand, if input tax is more than output tax, a refund will be given by the Customs authorities.

Benefits of Registering under GST - Registration under GST will have the following Advantages:

1. GST confers proper accounting of taxes paid on input goods and services.
2. GST gives legal authorization to collect taxes from purchaser.

How to Decide IGST or CGST + SGST while raising invoices:

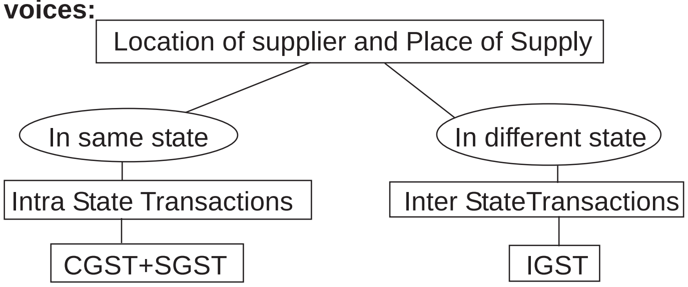

GST Impact on business man - GST has bought all the industries and businesses under tax bracket although it has increased the tax payer base. Under the GST regime the entire filing procedure is online which includes registration, refunds and payments. This will help in making compliance transparent to help the small and medium.

Small Scale Entrepreneurs - Small businesses Whose turnover is less than Rs 20 lacs (And Rs 10 lacs in North Eastern states, Uttrakhand & Himachal Pradesh) are outside the GST net. These entrepreneurs need not register themselves or pay tax, unless they really wish to avail the benefit of input tax credit. This has resulted in a big shift from the existing system of indirect taxes where the businessmen has to register himself under VAT and Service Tax if his turnover is above Rs.10 Lacs (Rs. 5 Lacs in some States). Hence, effectively the threshold for registration is been doubled.

Entrepreneurship in India - The entrepreneurship in India was the understanding of bureaucratic system, function of licences before 1991,the Indian government liberalized the economy and now the scenario has been a total change as with the simple taxation rules and compliances and with the upcoming of GST in India there are subsequently very large numbers of entrepreneurs the phenomenal rise is due

to change in mind set of people and attitude of the people.

During Annual budget large group of entrepreneurs across India was actively waiting for the announcement on GST. The small business owners were at the mercy of VAT tax structure which was although unfair and strict adherence to the VAT tax structure. The GST will be acting as a major replacing tax structure which was the removed the present VAT system of unfair competition as it allows manufacturers to charge different prices of the similar goods across many states due to distinct tax rates.GST will be helping government to fill in the leakages and loopholes while replacing existing VAT structure. GST is the most important fiscal reform of the independent India. At both centre and state level GST will result in being the most simplification of consumption tax. The redistribution of taxes among different goods and services will be result of the final GST base and rate. The GST will simplify the existing tax system thereby reducing the cost of doing business in the country. The firms resist themselves in taking up interstate trade. For instance, the supply chains are designed to make minimum burden of Central Sales Tax as the consumers are located on the same place where there is distribution centre. This basically restricts the firm to take inter-state trade. The removal of central sales tax will optimize supply chains and thus allowing companies to re-evaluate acquirement pattern which are existing, and arrangements for distribution and warehousing. Inventory cost is also reduced by GST. The cash flows will be improved as dealers will be able to claim credit for the tax paid on inventories.

Destination Principle - The destination principle is followed by GST principles which means imports will be subject to GST, while exports are zero rated. Within India if there is interstate transaction the state tax will be applied in state of destination as against state of origin.

Benefits of GST to the traders - Corruption-free tax administration is expected from GST. GST will be levied not at the various points but at the destination point. With the implementation of GST, Exports will be promoted with its implementation which in turn will raise employment.

The central and state taxes will be collected at the point of sale in GST. The manufacturing cost will be charged on both components (the central and state GST). The individual will be benefitted as prices are likely to come down. Consumption will increase when prices are lower, thereby increasing the demand for goods and services.

The benefits are common in certain aspects for every trader from the GST and few different benefits in other aspects are:

The advantages of GST for manufacturers and traders are:

1. Markets are common
2. One tax
3. Difference between goods and services will be abolished
4. Simple Invoicing
5. Exemptions are common between Centre and states
6. Central excise is abolished
7. Identification problems is solved

GST as the Game Changer:

1. Common Indian market will be created.The descending effect of tax on the goods and services will be reduced. It will impact on various aspects likes tax structure, tax incidence, tax computation which further lead to a complete fixation or modernizing the current indirect tax system.
2. Pricing of product, supply chain management, accounting and tax compliances information technology and other business aspects will have a far-reaching after the implementation of GST.

Implementation of GST structure into the system will be benefitted only when difference in the value of GST and indirect cost being marginal. In this case only the new reform of this taxation will be enjoyable.

Conclusion - Goods & Service Tax, will bring buoyancy to government revenue with the help of IT tax enabling mechan -ism. It is also expected that the ill natured activity of tax thefts will be vanished away under Goods and Service Tax regime in order to give benefits to both government as well as the customer. But in reality the extra revenue that the government is expecting to generate is not coming from the consumers' pocket but it is from the reducing the tax theft.

References :-

1. Goods and Service Tax (GST) India – A summary, 2015 September 23, http://www.gstindia.com/goods-and-service-tax-gst-india-a-summary/
2. Suman S, August 2017, Study on New GST Era and its Impact on Small Businesses, Entrepreneurs, Journal of Accounting, Finance & Marketing Technology, Vol. 1, Issue, 02. 24-36p.
3. GST Implementation in India, 2017, http://www.ey.com/in/en/services/ey-goods-and-services-tax-gst
4. GST in India – An Overview, April 2017, https://www.researchgate.net/publication/316505697_GST_IN_INDIA_-_AN_OVER_VIEW
5. How self-employed professionals, entrepreneurs, SMEs can get ready, June 2017, https://economictimes.indiatimes.com/wealth/tax/how-self-employed-professionals-entrepreneurs-smes-can-get-ready-for-gst/articleshow/58972525.cms
6. Impact of GST on small business, October 2017, https://www.entrepreneurshiplife.com/impact-gst-small-business/
7. Tip of the Month: Small Business and GST, June,2010, http://canadianentrepreneurtraining.com/tip-of-the-month-small-business-and-gst.
8. Vasanthagopal D. (2011),GST in India: A Big Leap in the Indirect Taxation System. International Journal of Trade, Economics and Finance, Vol 2(No. 2) http://www.ijtef.org/papers/93-F506.pdf
9. GST India (2015) Economy and Policy.
10. Mehra P (2015),The Hindu, September,7,2015 Modi Govt.'s model for GST may not result in significant growth push. The Hindu

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

The Study Of Determinants Of Ad Performance W.R.T. Online Advertisements

Swati Jain* Dr. Anshu Bhati**

Abstract - Advertisements on internet are being in trend since recent times. Due to the increased usage and easy availability of internet, people are exposed to internet ads more frequently. Marketers look at it as an opportunity to get the visibility of their ads. This affects the audience perception for the brand and hence their purchase decision. The study is an attempt to investigate the performance of online advertisements. The effectiveness of the online ads is examined so that the prevailing ad avoidance can be controlled. The predictors of ad performance are generated that have the maximum loading on the ad performance. For this study, college students are surveyed using questionnaire through judgemental method, targeting those who have exposure to online advertisements. The factors driving the ad performance are identified using statistical graphs and are examined and assessed to improve the ad performance on online media. The literature from the past studies guides the research for the variables affecting the ad performance. Factors have been generated from such studies and their effect has been analyzed through user responses.
Key Words - Ad performance, ad avoidance, online media, determinants of ad performance.

Introduction - Marketers nowadays are spending more and more in advertising. Advertising expenditure of the organizations has increased at a greater pace over the time. With the growing competition it has become vital to promote one's brand in full fledged mode. It is of utmost important to make the products and services noticeable and appealing to customers.

Even customer of this century has undergone development of their buying perceptions. Customer has become more aware, knowledgeable and never sets back to question the companies for their benefit. To deal with the situation of customer being the king, marketers need to design their marketing strategies wisely and implement them appropriately. Also, proper feedback and timely monitoring of the activities is necessary to ensure the effectiveness of their campaigns.

Effectiveness of the advertisements is the soul of the advertising strategy. Ads might be noticeable to the audience but they should appeal their sentiments. The ad performance is the effectiveness of the advertisement or in other words it is the ability of ads to effectively achieve the set target of influencing the customer perception towards the product/service.

Advertisements may be noticeable but not all of them. Some modes of communication are passively consumed by the customer. Also, the ones that are actively consumed may not necessarily be entertained by audience every time. The receptivity of ads is not uniform for all products and age groups. The receptivity is affected by several factors like type of ad, consumer personality etc. (Jain, S. and Bhati, A. 2018). People have the tendency to avoid advertisements through various modes and methods. Thus, their ignorance does not allow the advertisement to influence their perception. This calls for her need to analyze the ad performance and take actions accordingly to sustain and grow in the competitive market.

Internet though proves to be a highly used media amongst audiences but the usage rate does not guarantee the acceptance of ad by the audience. More are the advantages of advertising ads on internet; more are the methods to avoid ads on this medium. Internet ads are different than that of ads on other medium. There are certain elements that affect the ad performance of the internet ads that includes ad colour, ad copy, ad placement, ad quality and the like. This study identifies the most affecting ones among such factors so that it becomes easier for marketers to improve the ad performance on internet.

Review of Literature - Bhargava.A, (2017) focuses specifically on the performance of advertisements on Facebook. It highlights the factors that are responsible in affecting the ad performance. Through a blog article, it was revealed that understanding who the audience is, relevance score, quality of ads, timing of ad placement, designing of ad copy, the landing page where the ad is placed, imagery and social proof of the product are the factors that affect the performance of ads online specifically the Facebook ads. Optimizing the ad campaign (which increases the conversions) and the ad placement are also very important drivers of ad performance.

Ansari.A, and Riasi.A,(2016) investigated 252

***Research Scholar, IIPS, DAVV, Indore (M.P.) INDIA**
****Sr. Asst. Professor, IIPS, DAVV, Indore (M.P.) INDIA**

customers and identified the seven factors affecting the success of brand advertising and its effectiveness (i.e. uniqueness, market research, market share, selection of advertising media, customer relationships, competitiveness, advertising message and creativity). Using path analysis and SEM, it was found that advertising media selection creates maximum impact on the effectiveness of ads followed by advertising message and creativity.

7-point likert scale was used to survey the customer opinions where 52% respondents were male and 50% were below 30yrs. Competitiveness though creates impact on ad performance but the degree of impact is the least among all other factors.

Hey.J,(2016) discusses the importance of ad colour in affecting the ad performance. The colour of ad is very vital element that decides the effectiveness of online advertisements. It helps in improving the perception of audience towards the ad and hence the favourable ad performance.

It studied that one must be objective in choosing the ad colour rather than sticking to ones' personal colour preferences.Similarly, it is suggested that the use of ad colour should be as per the target audience according to the significance for each colour. It advised four rules that affect the online ad performance are eye catching high contrast theme, using combination of two extremely opposite colours, sometimes using analogous colours i.e. colours placed next to each other on the colour scale, and the shade and tint.

Anonymous (2015) explore the technical means of improving the ad performance. It surveyed the major search engines like Google, Bing and Yahoo to identify the mechanisms available to increase an ad performance. Among several methods available including ad ranking, ad sense, ad extensions and sponsored searches; the sponsored search accounts were found to be most effective medium to increase the ad performance online. It was found as an effective way of attracting customers towards one's advertisement on internet.

Gupta.A, and Mateen.A, (2014) conceptualizes the model for the sponsored search advertisements in internet. Using experiences of professional and available literature, it generated factors affecting the ad performance including ad extensions, branding and ad rank. It helps marketers in effectively designing the online ad strategy to enhance the ad performance. Besides, it also investigated the sensitivity of these factors as per the device used for operating internet.

Chaubey.D, Sharma.L, and Pant.M, (2013) conducted an empirical study to understand the effectiveness of online advertisements. Using quantitative method it brings out the variables that catch the customer attention on online advertisements. It revealed that the animated ads and the plain banner text ads are highly successful in grabbing the attention of customers by enhancing their ad recall.

Floating ads, popup ads and embedded videos are comparatively less influential to motivate customers for the successful ad recall. The study can be said to male dominated result oriented as 348 respondents were male. Using ANOVA, the analysis of the study was undertaken.

Ode.A, found several methods that help marketers in generating effective ad ranking which further improves the online ad performance. These include enabling sitelink extensions, enabling callout extensions, and consistent ad copy. All these together increase the ad quality which maximises the bid score and then the ad performance.

These studies provide with the gist of effectiveness of online advertisements and the factors that affect the ad performance of online ads which would reduce ad avoidance and influence ad recall to drive the customers' perception towards favourable purchase decision.

Research methodology -

Research design - The research study is descriptive in nature since it is based on primary data collection to generate the original responses of the people. It answers who, what, why and when questions related to the study.

Sample respondents - The users of internet contributed in the study with their opinions regarding ad performance of internet ads. Specifically includes the students who have exposure to internet advertisements. They are considered fit for generating appropriate responses due to their intellectual level and interest in internet media.

Sampling Technique - The sampling technique used is the non probabilistic judgemental sampling. The respondents are being selected considering their exposure to internet advertisements.

Sample size - The study consists of judgemental responses from 100 students of colleges and universities. Sample size is selected as per the convenience and the limitation of timings.

Data collection tool - Data is collected through structured questionnaire designed in two sections. Section A includes the demographic details of the respondents in terms of age, gender, qualification. Also the timings and usage of internet media is also assessed. In the section B, the variables are defined and measured to understand their impact on ad performance. The variables are identified from the previous researches and studies accomplished by the experts.

Data analysis tools - Data has been analysed through frequency distributions, charts and graphs to identify the factors affecting ad performance in internet media and thereon understand the area of improvement of such ad performance.

Results & Findings - Results reveal the important factors that are held responsible for and affect the ad performance of online ads. **(Graph See in the last page)**

The respondents majorly included the age group of 20-25 yrs, 25.65 from 15-20 yrs agge group whereas only 35 accounted to 25-30 yrs age category. 53% were male and 47% were female respondents. The study mostly included students from graduation background and a majority of people shown their awareness for online ads

and their usage of internet.

The avoidance of online ads has also been identified among the respondents in the study. Only 3% students report that they never avoid ads, 31.3% always avoid ads and 65.7% avoid the online ads sometimes. The presence of ad avoidance can be clearly noticed from the results.

Out of the factors analysed, following were seemed to have comparatively more effect on online ad performance. **(Graph see in the last page)**

A majority of people strongly agreed to the influence of ad timing of online ads in its ad performance. Similarly the placement of advertisements online has also been agreed over by the students to affect the ad performance.**(Graph see in the last page)**

The brand of the ad being advertised online and the user involvement in the task on internet affects the performance. Very few respondents have shown disagreement for the same.**(Graph see in the last page)**

The ad colour received almost equal rating for students being strongly agreeing, agreeing and neutral. Marketers must take care of this feature in ads online.**(Graph see in the last page)**

Out of all the factors, advertising media selection and the ad message resulted in highest agreeing factor that affects ad performance of online ads with almost negligible disagreement.

Marketers must consider the factors highly rated in agreement and design online ads accordingly to reduce ad avoidance by increasing the ad performance.

References :-

1. Ansari.A, and Riasi.A,(2016). An Investigation of Factors Affecting Brand Advertising Success and Effectiveness. International Business Research; Vol. 9, No. 4; 2016
2. ISSN 1913-9004 E-ISSN 1913-9012. www.ccsenet.org/journal/index.php/ibr/article/viewFile/57282/30976
3. Bhargava.A, (2017).Influential Factors That Affect Facebook Ads Performance. Adstriangle.
4. https://adstriangle.com/blog/9-influential-factors-that-affect-facebook-ads-performance
5. Chaubey.D, Sharma.L, and Pant.M, (2013). Measuring the Effectiveness of Online Advertisement in Recalling a Product: An Empirical Study. Management Convergence. Vol. - 4 No. - 2, June-2013
6. ***Danaher.P, and Mullarkey.G, (2002). Factors Affecting Online Advertising Recall. Journal of Advertising Research.***
7. Gupta.A, and Mateen.A, (2014) “Exploring the factors affecting sponsored search ad performance”, Marketing Intelligence & Planning, Vol. 32 Issue: 5, pp.586-599, https://doi.org/10.1108/MIP-05-2013-0083
8. Hey.J,(2016). The Effect of Ad Color on Ad Performance. How ad color affects ad performance. Ezoic Blog. https://blog.ezoic.com/the-affect-of-ad-color-on-ad-performance/
9. Ode.A, The Most Important Factors Affecting Your Ads’ Ranking on Google. Blog Dealer.com. https://www.dealer.com/insights/articles/the-most-important-factors-affecting-your-ads-ranking-on-google/
10. Jain, S. and Bhati, A. (2018). Reviewing the literature to study the viewer ad receptivity w.r.t. electronic media. Swadeshi Research Foundation Vol.-5, No.-6 April 2018. ISSN: 2394-3580
11. (2015) “Making sponsored search ads work better: Factors that improve effectiveness”, Strategic Direction, Vol. 31 Issue: 1, pp.12-14, https://doi.org/10.1108/SD-10-2014-0155

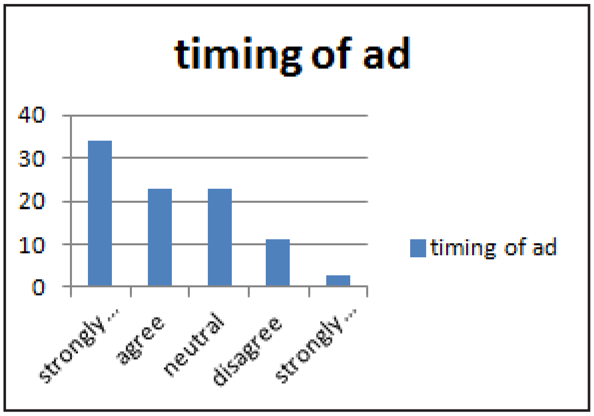

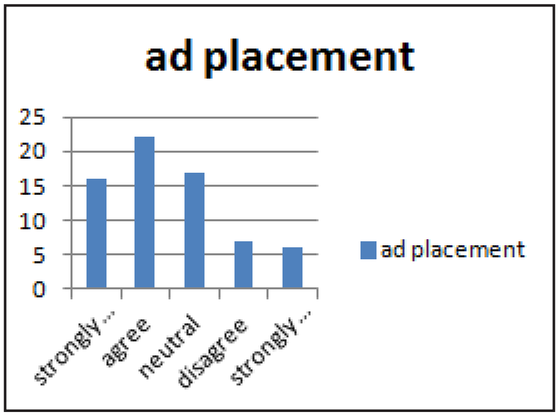

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

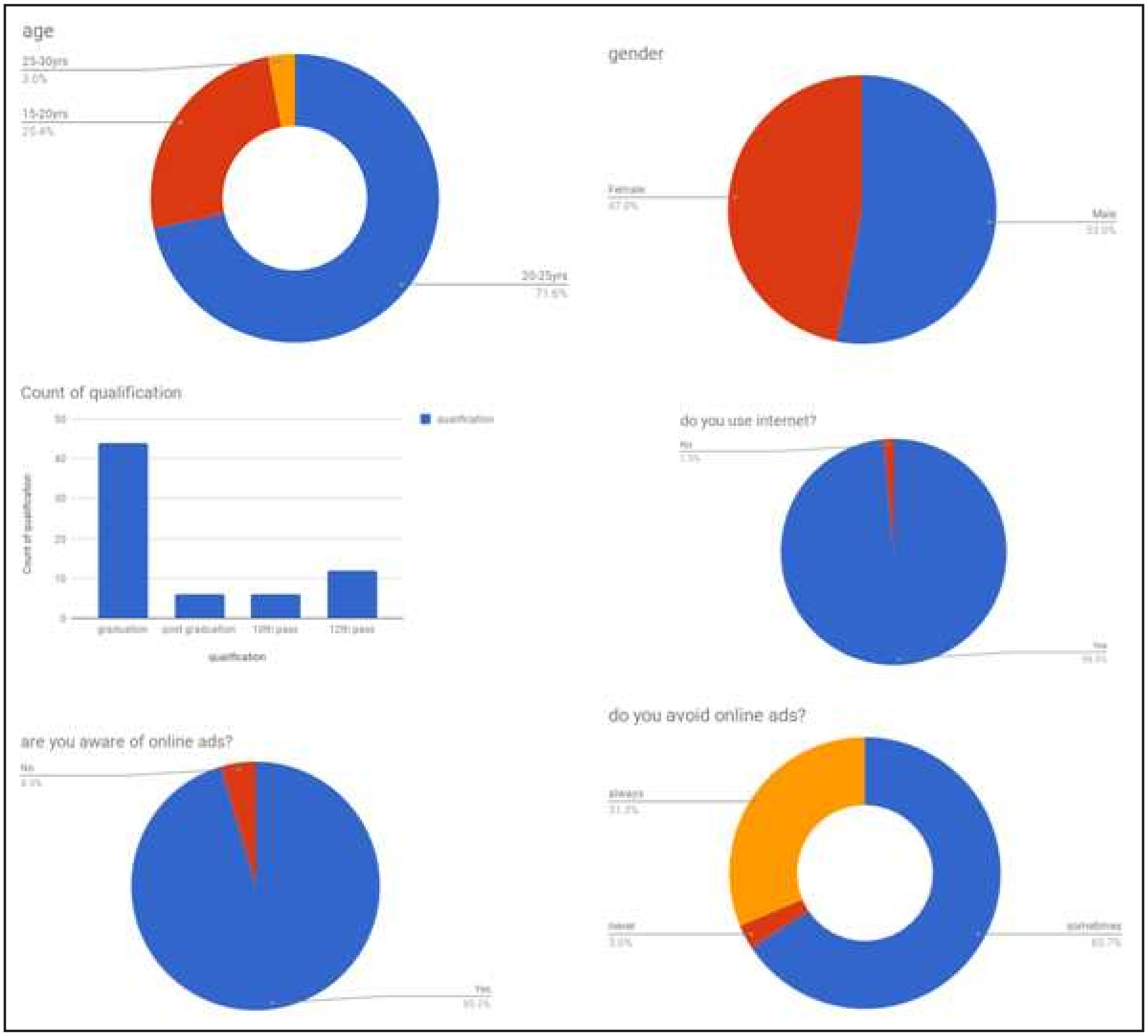

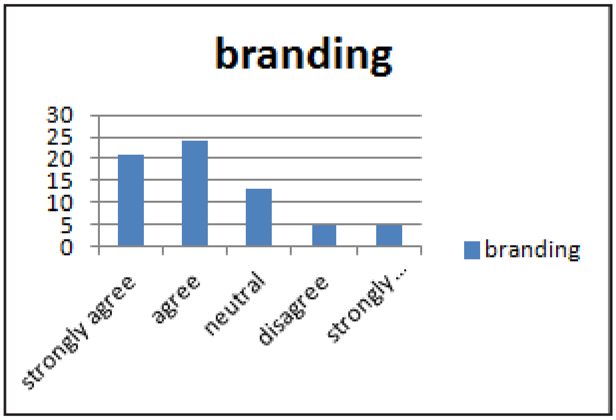

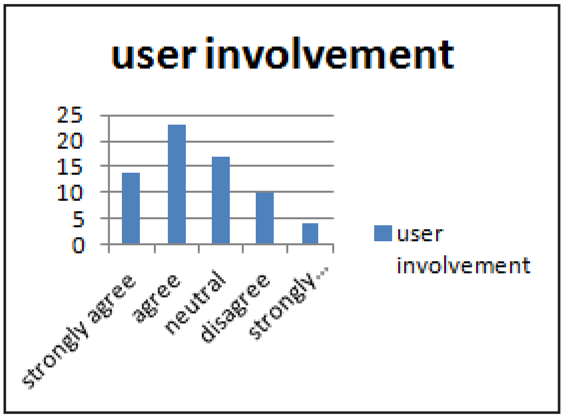

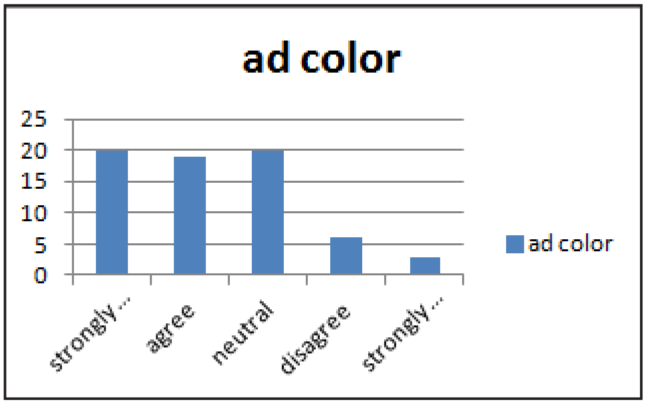
ad color
25
20
15
10
5
0
strongly ...
agree
neutral
disagree
strongly ...
ad color

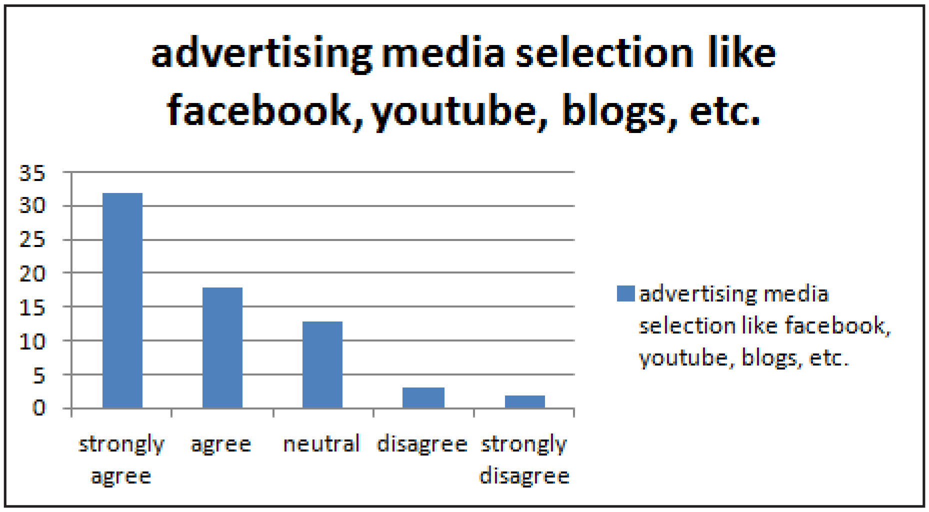
advertising media selection like facebook, youtube, blogs, etc.
35
30
25
20
15
10
5
0
strongly agree
agree
neutral
disagree
strongly disagree
advertising media selection like facebook, youtube, blogs, etc.

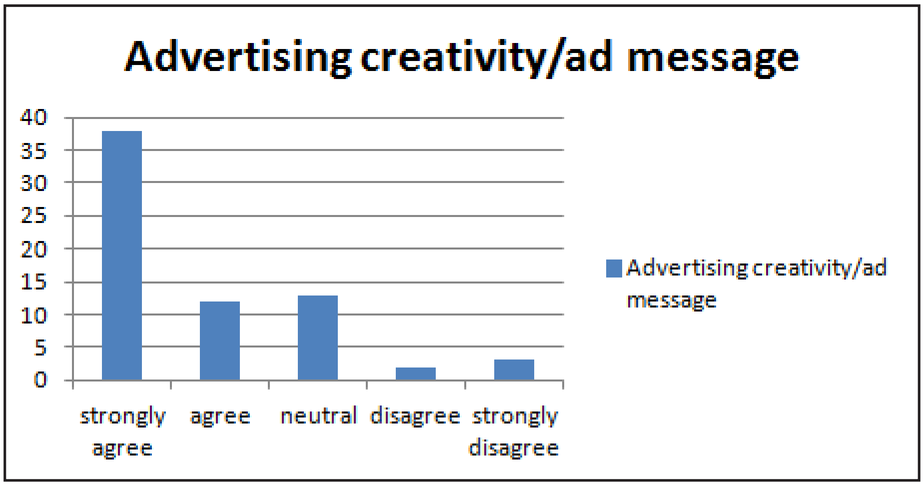
Advertising creativity/ad message
40
35
30
25
20
15
10
5
0
strongly agree
agree
neutral
disagree
strongly disagree
Advertising creativity/ad message

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

भारतीय स्वतंत्रता का उत्तर युग- मुद्राओं की नई चित्रभाषा - एक उपलब्धि

डॉ. सुनील कुमार * डॉ. सचिन सैनी **

प्रस्तावना – वास्तव में स्वतंत्रता के बाद भारतीय चित्रकला त्रिविध धारा में प्रवाहित हुई। कुछ कलाकार परम्परा से ही चिपके रहे और उन्होंने पारम्पारिक चित्रों में नवीनता और आधुनिकता पैदा करने की कोशिश की, किन्तु उस कला को आधुनिक कला के मानदण्डों पर खरा नहीं कहा जा सकता। दूसरी धारा के कलाकारों ने पारम्परिक मूर्त स्वरूपों को डिस्टोर्ट कर सामाजिक संदर्भो से जोड़ कर चित्रांकन किया जिन्होंने व्यक्ति की मनोभावनाओं को अभिव्यक्ति देकर जीवन की गहरी पर्तो को अजागर किया। शहरी जीवन की घुटन, संत्रास, भागमभाग अन्तर्मन की मार्मिक व्यथा को व्यष्टि रूप में अंकित कर उन्होंने भारतीय चित्रकला को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जोड़ दिया। उनका गुणगान अलग विषय है, पर निश्चय ही दूसरी धारा अर्थात समष्टि को जोड़ने वाली चित्रकला का सामाजिक संदर्भ अधिक उभर कर आया है।[1]

चित्र- के. एच. आरा, शीर्षक विहीन

प्रगतिशील कलाकार समूह तथा अन्य कलाकारो का नवीन प्रयोग यह दर्शाता है कि कलाकारों ने आधुनिकता का परिचय आजादी के पश्चात विरासत में मिलि कला शैली को त्यागते हुए समाजिक सरोकारो को ध्यान मे रखकर मनुष्य के अंत:भावों को अपने चित्रों में 'शारीरिक भाषा' का समावेश किया तथा आधुनिक परिभाषा गढ़नी आरम्भ की इस विष्य में वेदप्रकाश भारद्धाज का मत है कि- 'आजादी के बाद के वर्षो में जब भारत में आज की तरह का कला माहौल और सुविधाएँ नहीं थीं, तब मुम्बई में सैयद हैदर रजा, फ्रान्सिस न्यूटन सूजा, मकबूल फिदा हुसैन, आरा, जहाँगीर सबावाला आदि ने भारतीय कला की आधुनिक परिभाषा गढ़नी शुरू की।'[2] इसी क्रम में प्रकाश परिमल ने अंतराष्ट्रीय क्षेत्र में भारतीय चित्रकारों के योगदान इस प्रकार माना है की- 'आजादी के बाद भारत के जिन चित्रकारों ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विकास पा रही चित्रकला के क्षेत्र में अपना योगदान दिया है, उनमें, बेन्द्रे, आरा, सूजा, हुसेन, सतीश गुजराल, जहाँगीर सबावाला, कृष्ण खन्ना, के. के. हेब्बार, तैयब मेहता, अविनाशचन्द्र, परमजीत सिंह, मनजीत बावा, रामचन्द्रन, भूपेन खक्कर, स्वामीनाथन, ज्योतिस्वरूप, मोहन शर्मा और विद्यासागर उपाध्याय आदि प्रमुख है।'[3] स्थापित और ख्यात विश्लेषकों का यह भी मानना है कि आधुनिकीकरण की इस प्रक्रिया में भारतीय चित्रकला की रेखांकन पद्धति, रंगों का अभिव्यंजना से सम्बन्ध आदि ने पूरी दुनिया भर की कला को प्रभावित भी किया है।

चित्र- मकबूल फिदा हुसैन, तुम्हारे और मेरे बीच में शरीर का अभिप्राय (अर्थ) 1971.

भारतीय स्वतंत्रता के उत्तर युग और साठोत्तरी समयावधि में अभिव्यक्ति के कुछ नये स्तरों का निर्माण और विकास होता है। मुद्राओं की नई चित्रभाषा एक उपलब्धि के रूप में हमारे सामने आती है। इस विषय में कला के इतिहासवेत्ता मानते हैं कि- 'सत्तर के दशक के प्रारम्भ में के. जी. सुब्रमण्यन् ने टेराकोटा रिलीफ माध्यम को अपनी अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बना दिया था। इन कलाकृतियों में चेहरों, हाथों, उंगलियों आदि का बहुत प्रभावशाली इस्तेमाल है। मुद्राओं को एक नई चित्रभाषा दी गई है। 1971 का एक काम प्रिसिद्ध है ही जिसमें बहादुरी के तमगों से लदे जनरलों के चेहरे प्रसिद्ध है, जिसमें बहादुरी के तमगों से लदे जनरलों के चेहरे हैं। नीचे एक

* पूर्व निदेशक (प्रदर्शन एवं दृश्य कला विद्यापीठ) इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (नई दिल्ली) भारत
** स्कॉलर, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (नई दिल्ली) भारत

तमगा उल्टे लटके मृत परिवार का भी है। उसी दौर में सोमनाथ होर सरीखे कलाकार अपनी कला में समकालीन समय के जख्मों को एक मार्मिक चित्रभाषा में अभिव्यक्ति दे रहे थे और के. जी. टेराकोटा रिलीफ में समय-समाज और राजनीति की मुद्राओं को मार्मिक अभिव्यक्ति दे रहे थे।'[4]

चित्र- एफ एन पूजा सूजा, क्राइस्ट 1958

वास्तव में यह समझोता वैश्विक भी था। इस काल में कला को मात्र सौन्दर्य से विस्तृत कर अनुभूति और अभिव्यक्ति के विराट पटल से जोड़ा गया। इस स्थिति में मुद्राओं, भाव-भंगिमाओं, और शारीरिक भाषा के जरिये कलाकार ने बहुत कुछ कहने की जो कोशिश की उससे दुनिया भर की कला को नये आयाम मिले - 'हरबर्ट रीड ने लिखा है कि आधुनिक कला बिना किसी अपवाद के सौन्दर्य की उपेक्षा करती हे और कुरूपता में उसके दर्शन करती है। प्राचीन कला रूप की उपासक थी। आधुनिक कला कुरूपता की उपासक है। यह प्राचीन और नवीन दृष्टिकोणों का मौलिक अंतर है। आज कला के प्राचीनतम् मूल्य बदल चुके हैं। इसी कारण कला के नए परिवेश दिखाई देते हैं। रीड ने स्पष्टतम् शब्दों में कहा है 'आधुनिक' (मार्डन) कलाकार ने सौन्दर्य के सिद्धान्त को बार-बार ठुकराया है। कला किसी सौन्दर्य सिद्धान्त का मूर्त रूप नहीं है, बल्कि आत्मबोध है। वह मस्तिष्क की उपज नहीं। आधुनिक कला किसी भी सिद्धान्त से परे है। रीड के अनुसार 'सौन्दर्य की अभिव्यक्ति' और 'अभिव्यक्ति' के मध्य, उद्देश्यों का अंतर है। प्रथम का लक्ष्य इन्द्रियों को आनन्द प्रदान कराना होता है और दूसरे का आध्यात्मिक नव, चेतना। दूसरे को उन्होंने अधिक गहन माना है जो सत्य भी है। उसे इन्द्रियों से अधिक गहरी अनुभूति माना है।'[6]

इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में भारतीय आधुनिक कला अपने यथार्थ को भी नहीं भूलती है। यही कारण है कि उसका भाव-सम्प्रेषण सामाजिक सरोकारों से भी जुड़ा रहता है। इस बारे में मूल्यांकनकर्ता बड़ा ही सटीक लिखते हैं कि - 'भारतीय कला में यथार्थ चित्रण का एक पहलू यही है कि वो समाज के निम्न स्तर के विचारों से सदैव स्वयं को बचाता रहा है। भारतीय कला में वस्तु परक यथार्थ चित्रण शैली ब्रिटिश कम्पनी के पश्चात पनपी। जिसमें राजा रवी वर्मा प्रमुख थे।'[6]

समकालीन कला के समबन्ध में भी भारतीय चित्रकला की भाव-भंगिमा सम्बन्धी प्रतिबद्धताओं का पता चलता है। कहीं कहीं यह भी कह दिया गया है कि- 'भारत में बहुत अधिक कलाकार अमूर्त चित्रण के क्षेत्र में नहीं हैं।'[7] यह पूर्ण सत्य भले ही न हो परन्तु यह तो कहा ही जा सकता है कि भारतीय कलाकार की प्रमुख प्रतिबद्धता मूर्त या शरीरी ही रही है।

साररूप में विचार करें तो वैश्विक दृष्टि और भारतीय कला-दृष्टि - दोनों की ही कलागत व्याख्या हमें आधुनिक और समकालीन कला की हमारे समीक्ष्य विषय के लिहाज से मार्ग आलोकित करती है। - 'प्रो. हरबर्ट रीड के अनुसार यसौन्दर्य के निमय कला के वैविध्य में नहीं रहते।' एक कलाकृति किन्हीं अर्थों में एक प्रतीकात्मक सुझाव होता है जो हमारी कल्पनाओं और भावनाओं को उद्विग्न कर देता है। उसके अनुसार आधुनिक काल में कला सूक्ष्म हो गई है; उसमें रूप व रंग की अपेक्षा भावाभिव्यक्ति या भावाभिव्यंजना की प्रधानता है। कलाकार प्रतीकों के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति करने लगा है। जैसे दो प्रेमियों के मिलन को दो पूरक रंगों की रेखाओं से अभिव्यक्त किया जाता है जो एक दूसरे से लिपटी हुई होती हैं। एकाकी सितारे को बनाकर आशा का संकेत किया जाता है, मानव आत्मा की उत्सुकता को सूर्यास्त की तेजी व लालिमा से। आधुनिक काल में इस प्रकार काल की सूक्ष्म अभिव्यक्ति हो गई है। उनके अनुसार बीसवीं शती में कला के तीन प्रमुख रूप रहे हैं- 1.यथार्थवादी(रियलिस्टिक) 2. प्रतीकात्मक(सिम्बॉलिक) 3. अभिव्यंजनावादी (एक्सप्रेशनिस्टिक)'[8]

चित्र- रामकुमार, खानाबदोश, 1956

दूसरी ओर भारतीय चिंतन इसे वैचारिक धरातल देता रहा अत: उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती - 'भारत में कला परमान्द की शरणागत है, आधुनिक कला की तथाकथित सफलता उसकी कलात्मक असफलता का ही दूसरा नाम है। ऐसी दुर्गति का कारण है वह व्यावसायिक व्यवस्था जिसे स्वतंत्र संसार की संज्ञा दी जाती है। आधुनिक एवं उत्तर आधुनिक कला उत्तार औपनिवेशिक कला की त्रासदी को मूर्तिमान करती है, जो अपने प्रारम्भ मे ही कुछ संकेतों के अतिरिक्त मरुस्थल में खो गई थी। सतही धरातलों से संतुष्ट आधुनिक कला करीब-करीब अपने उस मूल उद्देश्य से विरत हो चुकी है, जिसकी प्रतिबद्धता संस्कृति के गहनतम रूपों के प्रति रही है।'[9]

भारतीय परंपरा ने ऐसे प्रतिमानों को गढ़ा है जिसमें परम्परा से नवकलाबोधक की टकराहट में अवांगार्द सृजनात्मक विस्फोट की पूरी सम्भावनाएँ छुपी रहती हैं। यूरोप में आधुनिक कला का इतिहास ऐसे

विस्फोटक प्रयोगों की दास्तान है। इसीलिए परम्परागत कला कर्म और उसके सोच का समयायिक महत्व नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। समृद्ध भारतीय परम्परा में बहुत कुछ है, जिसमें ऐसी प्रयोग प्रधान सम्भावनाएँ छुपी है। उपरोक्त चर्चित विलक्षण पारम्परिक भारतीय मेधा में ऐसी ही विस्फोटक सृजन सम्भावनाएँ दृष्टिगोचर हो रही है।[10]

अब जो अतिशेष प्रश्न खड़े रह जाते हैं वह इस समकालीन कला की सामाजिक भूमिका को लेकर पाये जाते हैं। यह कला तकनीकी, शैलीगत, प्रभाववादी आदि दृष्टियों से तो विवेच्य हो ही जाती है परन्तु अपनी चरम सामाजिकता भी छोड़ती नहीं है-'निरापद चरित्र के साथ स्वच्छ कला ही केवल वह शांत-मौन स्वर है जिसके क्रोध में तूफान छुपा बैठा है, वे विचार जो कपोत के पाँव के साथ आते हैं और संसार का मार्ग दर्शन करते हैं। आदमी को इतिहास की संकीर्ण गलियों से मुक्ति पानी होगी ताकि वह महाकाल के अस्तित्व का बोध कर सके। इतिहास मनुष्य को तथा उसकी महत्वाकांक्षाओं को बौना बनाता है। अनन्त कालिकता का बोध ही निरापद चरित्र के साथ स्वच्छ कला को जन्म दे सकता है। समकालीन कला की चरम सामाजिकता यहीं जन्म लेती है।'[11]

इसी वजह से समकालीन चित्रकार चित्र के माध्यम से ऐसी भाषा का सृजन करने में सक्षम हुआ है जो केवल मौजूद दृश्य-विधान में अपनी उपस्थिति नहीं देती बल्कि जो भावी संभावनायें मुखरित हो सकती हैं उनका संभाव्य दिग्दर्शन भी कराने में सक्षम होती है। यहां तक कहा गया है कि चित्रकला की यह स्थिति मौखिक भाषा के परे जाकर चित्रों से अभिव्यक्त शारीरिक भाषा को व्यंजित कर देती है। इस विषय में कहा गया है कि- 'चित्रकला उत्पादन की एक ऐसी प्रक्रिया बन गयी है, जो किसी लक्षण अथवा अर्थ को व्यक्त नहीं करती। वह महज सम्भावना जिसका प्रारम्भ अभिव्यक्ति की प्रक्रिया को स्पष्ट करने की सीमित कूट भाषा (एकाध रूपों एवं रंग-विधानों, जो रूप-विशेष को रंग-विशेष से जोड़ते हैं जो अभिव्यक्ति के आधार के रूप में उपलब्ध अवयवों को विश्लेषित करती है) से होता है। इस प्रकार चित्रकला मौखिक भाषा को चुप करा देती है।.........यह प्रवृत्ति कतिपय आधुनिक भारतीय चित्रकारों में भी परिलक्षित होती है। परन्तु वाणी अथवा भाषा को किस प्रकार चुप कराया जा सकता है? चुप्पी की भी अपनी एक भाषा होती है।'[12]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारतीय आधुनिक चित्रकला का विकास विभिन्न सोपानों से गुजरते हुए समकालीन कला तक आता है। वह चाहे ब्रिटिश स्कूल हो या राजा रविवर्मा की चित्रकला। पश्चात शांतिनिकेतन द्वारा स्थापित पद्धतियों का विकास हो या फिर सामाजिक आंदोलनों के परिणामस्वरूप प्रचलित कला-चेतना का स्वतंत्रता एवं स्वातंत्र्योत्तर काल। अथवा इसी क्रम में समकालीन चित्रकारों का विविधतापूर्ण एवं अपनी-अपनी स्वंय की विशिष्टतायें लिए हुए चित्रकला का एक व्यापक संसार। किन्तु इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में चित्रकला के सामाजिक सरोकार, परिवेश, मुखाकृतियां, रूप-विधान, रंग-विधान, दृश्यात्मकता, भाव-भंगिमायें, मुद्रायें, भावाभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त प्रणालियां, चित्रकार का स्वयं की मानस स्थिति द्वारा स्थितियों और परिस्थितियों को प्रकट करने की क्षमता आदि के पीछे भारतीय कला में विकसित शारीरिक भाषा प्रयोगों का विकास निश्चित रूप से अभिभूत करने वाला है। यह विकास हमें समकालीन कला के ऐसे मुहाने पर लाकर छोड़ता है जहां अनेक धारायें अपने समुन्नत रूप में दिखाई देती हैं यह पूर्वपीठिका वर्तमान शारीरिक भाषा प्रयोगों को समझने में भी हमारी बौद्धिकता, भावप्रवणता और कलाकार की सिद्धहस्तता के पीछे चली आ रही एक प्रवाहमयी परम्परा को भी सामने रखने में सहायक होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नीरज, जयसिंह, समकालीन भारतीय चित्रकला के सामाजिक सन्दर्भ, पृष्ठ-58, अंक 18, डॉ. ज्योतिष जोशी-सम्पादक, समकालीन कला, ललित कला अकादमी,नवम्बर -2000
2. सबावाला, जहांगीर से वेदप्रकाश भरद्धाज की बातचीत, पृष्ठ-25, अंक-24, डा. ज्योतिष जोशी-सम्पादक समकालीन कला, दिल्ली, ललित कला अकादमी, फरवरी-मई 2003
3. परिमल, प्रकाश, समकालीन कला और यउत्तार-आधुनिकता, पृष्ठ-25, अंक 20, डा. ज्योतिष जोशी-सम्पादक समकालीन कला, ललित कला अकादमी, अक्टूबर 2001
4. भारद्धाज, विनोद, शान्तिनिकेतन से शान्तिनिकेतन तक, पृष्ठ-10, अंक-23, डॉ. ज्योतिष जोशी-सम्पादक समकालीन कला, दिल्ली, ललित कला अकादमी, अक्टूबर-जनवरी 2002-03
5. गुप्ता, डॉ. श्यामला, सौन्दर्य तत्त्वमीमाँसा, पृष्ठ-126,127, प्रथम संस्करण, दिल्ली-51 सीमा साहिव्य भवन प्रकाशक एवं वितरक, 1992.
6. राठौड, डॉ.मदन सिंह, आधुनिक भारतीय चित्रकला मे अतियथार्थवाद, पृष्ठ-15, जयपुर, शर्मा पब्लिशिंग हाउस, 2001
7. पटेल, अमृत से वेद प्रकाश भारद्धाज की बातचीत, स्वर्ण रेखा प्रदर्शनी, पृष्ठ-12,13, अंक-26, विनोद भारद्धाज-सम्पादक, समकालीन कला, दिल्ली, ललित कला अकादमी, मार्च-जून 2005
8. गुप्ता, डॉ. श्यामला, सौन्दर्य तत्त्वमीमाँसा, पृष्ठ-128, प्रथम संस्करण, दिल्ली-51 सीमा साहिव्य भवन प्रकाशक एवं वितरक, 1992.
9. तिवारी, उदय नारायण, स्वच्छ कला निरापद चरित्र, पृष्ठ क्र-8 अंक 18, डॉ. ज्योतिष जोशी-सम्पादक,समकालीन कला, ललित कला अकादमी,नवम्बर -2000
10. प्रो. राजाराम, उपमेय और उपमान के मध्य आविष्कृत एक रूप, पृष्ठ-17, अंक 32, डॉ. ज्योतिष जोशी- सम्पादक समकालीन कला, ललित कला अकादमी, मार्च-जून 2007
11. तिवारी, उदय नारायण, स्वच्छ कला निरापद चरित्र, पृष्ठ क्र-8 अंक 18, डॉ. ज्योतिष जोशी-सम्पादक, समकालीन कला, ललित कला अकादमी,नवम्बर-2000
12. सेन, अंजन, मिथक निर्माण : गणेश पाइन की कला, पृष्ठ-10, अंक 35, डॉ. ज्योतिष जोशी, समकालीन कलाब ललित कला अकादमी, 2008.

****

चित्रकला की मौलिक 'शारीरिक भाषा' का कला-विज्ञान रूप-बोध का ही उत्कर्ष

डॉ. सुनील कुमार * डॉ. सचिन सैनी **

प्रस्तावना - कला-विज्ञान कला के शिल्प के भीतर भी कलाकृति के सृजन के उत्स टटोलता है। यह कला के प्रतीकों के निर्माण को सामने रखता है तो दूसरी ओर कलाकृति में अंतर्निहित इच्छा, प्रतिभा और प्रेरणा को सामने रखने का कार्य करता है। कला-विज्ञान की दृष्टि से चिंतन करने पर भी यह दृष्टिगत होता है कि कलाकृतियों में रूपाकार और हाव-भाव का आना कलाकार के मानवीय संकल्पों की मनो-निर्मितियों की ही एक अभिव्यक्ति है- 'आज का चिंतन है कि प्रतीक-निर्माण की भांति, मानव-मन बिम्ब निर्माण, भी करता रहता है, अर्थात बाहर से प्रत्यक्ष और स्मृति-अवशेषों को लेकर वह इस सामग्री से अपनी इच्छा-प्रतिभा-प्रेरणा-संकल्प के अनुरूप मनो-निर्मितियां करता है।'[1]

चित्र- राजेंद्र कापसे, की कलाकृति शीर्षक विहीन

यह भी माना गया है कि- 'कला ज्ञानात्मक एवं विचारात्मक तत्वों के श्रेष्ठ संगठन के माध्यम से दुनिया के बारे में हमारी बोध को ऊंचाई प्रदान करती है। कलात्मक सृजन पूरी तरह मानवी मस्तिष्क का कोई भिन्न संकाय नहीं है बल्कि यह अनेक माध्यमों में संकेतन के जरिए चेतना हासिल करने का अपेक्षाकृत अधिक भावप्रण रूप है।[2] कला-विज्ञान के कुछ पारम्परिक प्रतीक और चित्रण विधियां हैं। मिथक हैं। अनेक प्रकार के बिम्ब हैं वास्तव में ये युगों की समष्टि चेतना के अभिव्यक्त रूपाकार ही तो हैं - 'हमारे चिर-परिचित बिम्ब हैं, जैसे - हाथी, कमल, ज्यामितिक आकृतियां - वृत्त, वर्ग, आयत -, वक्र रेखा से बनी आकृतियां, कुछ पशु जैसे-हिरन, पक्षी, यक्ष - मिथुन, सुंदरियां, आदि अनेक मोतिफ हैं जिनका सफल प्रयोग कलाकार अपनी कलाकृतियों में करते हैं। .....वास्तव में, इनकी सर्जना और स्वीकृति के लिए युगों तक समष्टि चेतना सक्रिय होती है।'[3]

कला-विज्ञान ने शारीरिक संरचना के साथ भारतीय दृष्टि चेतना को बृहत् बनाया है। यह प्रकाशित करती है कि शारीरिक चित्रों के अलावा मनोभावों को भी किस प्रकार रंगों में समेटा जा सकता है। मानव शरीरों के अलावा मानवेतर शरीर भी मानवमन के दृष्टिकोंण का परिचायक बन जाते हैं- 'दृष्टि-चेतना से सम्बद्ध होने के कारण रंगों का प्रभाव बहुत व्यापक होता है। चित्रकला-विशारदों का कहना है कि वे सुगन्ध और दुर्गन्ध को भी रंगों के द्वारा व्यक्त कर सकते हैं । इसी प्रकार भाव-व्यंजना की दृष्टि से पीला रंग प्रकाश और प्रसन्नता का द्योतक है। इतना ही नहीं, श्वेत रंग से सात्विक भावनाओं का, नीले रंग से प्रतिष्ठा तथा कुलीनता का और लाल रंग से युयुत्सा, मन्यु (युद्ध प्रिय एवं घाती) तथा खतरे का व्यंजन होता है। रंगों के द्वारा व्यक्त होनेवाली....... भाव-व्यंजना प्रधानत: हमारी वर्ण-संवेदना पर निर्भर करती है। दृष्टि-चेतना से मिलनेवाले वर्ण-संवेदन को हम शरीर-विज्ञान की मान्यताओं के आलोक में भी समझ सकते है। शरीर-विज्ञान के अनुसार पुतलियों के द्वारा प्रकाश आँखों में प्रवेश करता है और अक्षिगोलक की पश्चाद्वर्त्ती झिल्ली पर, जिसे 'रेटिना' कहते हैं, जाकर केंद्रित होता है। अक्षिगोलक की इस पश्चाद्वर्त्ती झिल्ली में दो प्रकार के बहुत छोटे-छोटे कोष होते हैं, जिन्हें शलाका और शंकु कहते हैं। इन कोषों का सम्बन्ध दृष्टि-चेतना के स्नायुओं से होता है। अक्षिगोलक की पश्चाद्वर्त्ती झिल्ली के परिवृत्ता में शलाका नामक कोष पर्याप्त मात्रा में रहते हैं और उन पर केवल प्रकाश तथा छाया का ही प्रभाव पड़ता है। दूसरे प्रकार में शंकु नामक कोष अक्षि-कोटर में अधिक रहते हैं, अक्षि-परिवृत्त में कम। इन शंकुओं को उनके गुणों के अनुसार तीन प्रकारों में विभाजित किया गया है- 1. वे जो लाल और हरे रंग से प्रभावित होते है। 2. वे जिन नीले और पीले रंग का प्रभाव पड़ता है, और 3. वे जो काले तथा सफेद रंग की चेतना को ग्रहण करते हैं। किसी वस्तु के द्वारा विकीर्ण होकर जब प्रकाश अक्षिगोलक की पश्चाद्वर्त्ती झिल्ली पर केन्द्रित होता है, तब शलाका और शंकु नामक दोनो प्रकार के कोष चेतन हो उठते हैं और प्रकाश समेत उस वस्तु की छवि 'रेटिना' पर उतर आती है। तदनन्तर, दृष्टि-चेतना के स्नायुओं के द्वारा उस छवि की सूचना मस्तिष्क तक पहुँच जाती है। ललितकलाओं के तात्त्विक अन्त:सम्बन्ध की विवेचना के प्रसंग में वर्ण-संवेदन के स्वरूप और क्रिया-पद्धति को समझने के लिए इतनी शरीर-वैज्ञानिक व्याख्या है।[4]

कला-विज्ञान रूप-बोध का ही उत्कर्ष है और मन के व्यापार का निर्वचनीय रूपांतरण भी - 'रूप-बोध और रस-चर्वणा की बात कही है। वास्तव में ये मन के व्यापार अथवा घटनायें हैं, किसी वस्तु विशेष की प्राप्ति

* पूर्व निदेशक (प्रदर्शन एवं दृश्य कला विद्यापीठ) इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (नई दिल्ली) भारत
** स्कॉलर, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (नई दिल्ली) भारत

नहीं। किसी भी कला-कृति में उसका एक मूल, स्थिर धरातल होता है जिसमें आंखें टिकती हैं। यह स्थूल और स्थिर है, जिसका प्रत्यक्ष होता है। वह प्रस्तुत है, जैसे दुर्गा की सिंहवाहिनी प्रतिमा। इसे हम अभिधेय भी कह सकते हैं क्योंकि इसे नापा-तौला जा सकता है, वर्णन और निवर्चन भी संभव है।'[5]

चित्र- अनुपम सूद की कलाकृति

कला-विज्ञान भावकत्व जैसे जटिल व्यापार को वस्तुगत रूप में प्रकट करने पर इस प्रकार विचार करता है - 'भावकत्व मन का जटिल व्यापार है। आधुनिक मनोविज्ञान इस व्यापार का विश्लेषण किया है। इसमें अनेक संवेदनों का एकत्रीकरण (integration) ; स्मृति कल्पना, अनुभूति, विचार-तर्क, तुलना, अभिज्ञान (Identification), सामान्यीकरण, ऊहापोह आदि अनेक सूक्ष्म मनोव्यापार सम्मिलित रहते हैं। इन सबकी मिली-जुली क्रिया से हम एक वस्तु को गुलाब के फूल के रूप में देखते हैं।'[6]

कला को आकृति में ढालने की प्रेरणा के लिए कला पर वैज्ञानिक विचार किया गया है- 'मनोवैज्ञानिक द्वारा किये गये शोध से पता चलता है कि मनुष्य में आकृति विषयक समझ की नैसर्गिक क्षमता है। मनुष्य की इसी क्षमता से पता चलता है कि अमुक चीज सुन्दर है और अमुक आकृति आनंददायक है। वास्तव में आकृति के प्रति यह प्रेरणा मनुष्य में इतनी बलवती होती है कि पूरे मानव इतिहास में मनुष्य अपने उपयोग की वस्तुओं को अपनी कलाकृति में बदलते रहता है। वह जो वस्त्र पहनता है, वह जिस घर में रहता है तथा वह जिस बर्तन और औजार का उपयोग करता है ये सभी आकृति में ढालने की उसकी प्रेरणा का ही प्रभाव लिए हुए रहते हैं।[7]

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि कला क्षेत्र में शारीरिक भाषा का किसी न किसी रूप में आदिम युग से ही कलाकृतियों में उपयोग कलाकार ने किया है। इन प्रयोगों को समझने के लिए शारीरिक भाषा के मूल तत्व को न केवल समझने और कला-समीक्षा के क्षेत्र में समालोचना का उपजीव्य बनाने की आवश्यकता है, बल्कि चित्रकला में होने वाले चाक्षुष अनुप्रयोगों के विकासमूलक स्वरूप को समकालीन संदर्भों में भी उल्लिखित करना जरूरी जान पड़ता है। इस स्तर तक चित्रकला की विकासजन्य स्थितियां प्राप्त करवाने में चित्रकार की तूलिका ने सामाजिक अनुष्ठानों के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक प्रकारांतरों का भी भली-भांति अनुपान किया है। चूंकि भावों का सम्बन्ध चिंतन, हृदय, बोध और मन के विज्ञान से है अत: हम कह सकते हैं कि चित्रकला में 'शारीरिक भाषा' की अभिव्यक्ति के पीछे भी ये तत्व उपस्थित रहे हैं। अत: शारीरिक भाषा के प्रयोगों की विशद् यात्रा को समझते हुए इनका वैज्ञानिक विधिसम्मत समालोचकीय अध्ययन हमारे परिप्रेक्ष्य में कई नये तथ्यों को उद्घाटित भी करता है जो संभवत: चित्रकला के भावी स्वरूप को समझने में भी हमारी सहायता कर सकता है कि आखिरकार क्यों एक बड़ा और सक्षम चित्रकार - स्थापित और प्रचलित भाषाओं के परे जाकर - चित्रकला की मौलिक 'शारीरिक भाषा' का सृजनकार बन बैठता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा, डॉ. हरद्वारी लाल कला मनोविज्ञान, पृष्ठ-39, प्रथम संस्करण, मेरठ, मानसी प्रकाशन,1992
2. सिन्हा, सच्चिदानंद, अरूप और आकार, पृष्ठ-37, प्रथम संस्करण, दिल्ली, ललित कला अकादमी, 2012.
3. शर्मा, डॉ. हरद्वारी लाल कला मनोविज्ञान, पृष्ठ-40, प्रथम संस्करण, मेरठ, मानसी प्रकाशन,1992
4. विमल, डॉ. कुमार, सौन्दर्यशास्त्र के तत्व, पृष्ठ-51,52, पाँचवाँ संस्करण, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. 1989.
5. शर्मा, डॉ. हरद्वारी लाल कला मनोविज्ञान, पृष्ठ-40, प्रथम संस्करण, मेरठ, मानसी प्रकाशन,1992
6. शर्मा, डॉ. हरद्वारी लाल कला मनोविज्ञान, पृष्ठ-57, प्रथम संस्करण, मेरठ, मानसी प्रकाशन,1992
7. सिन्हा, सच्चिदानंद, अरूप और आकार, पृष्ठ-39, प्रथम संस्करण, दिल्ली, ललित कला अकादमी, 2012.

****

भारत में न्यायिक सक्रियता : एक अवलोकन

डॉ. सुनील कुमार श्रीवास्तव * शिल्पी शर्मा **

प्रस्तावना - भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकत्रांतिक देश है साथ ही संविधान में लोकतंत्र की रक्षा एवं उसके सफल क्रियान्वयन का भी लक्ष्य पूरा किया जाता है। लोकतंत्र की सफलता का सबसे सुदृढ़ माध्यम न्यायपालिका है इसलिये सभी लोकतांत्रिक देशों में स्वतंत्रत न्यायपालिका का विशेष महत्व होता है। जनता को न्याय दिलाने एवं उसके मौलिक अधिकारों के संरक्षण के लिये न्यायपालिका सदैव प्रतिबद्ध होती है। जो संविधान के संरक्षक के रूप में कार्य करती है। भारत में चूंकि न्यायपालिका को स्वतंत्र रखा गया है। अत: न्यायपालिका निष्पक्ष एवं पारदर्शी न्याय की अवधारणा पर कार्य करती है। जो सामाजिक न्याय एवं समानता के अनुमूल है क्योंकि किसी भी लोकतंत्र की सफल बुनियाद न्याय पर टिकी होती है।

देश में व्यवस्था को विधायिका, न्यायपालिका एवं कार्यपालिका के रूप में बांटा गया। इन तीनों अंगों का अपना-अपना कार्यक्षेत्र भी निर्धारित किया गया और यह तय किया गया कि कोई भी अंग किसी दूसरे के कार्यक्षेत्र और अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं करेगा। विश्व के सबसे मजबूत लोकतंत्र का दावा भारत का इसी आधार पर है कि हमारे यहां तीनो अंगों ने अपनी-अपनी भूमिका का सक्रिय व उचित निर्वहन किया है परंतु कभी-कभी यह देखने को मिलता है कि देश में संवैधानिक संकट की स्थिति हो जाती है। जब एक अंग किसी दूसरे अंग के कार्यक्षेत्र व अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप करता है। कभी-कभी न्यायपालिका का बढ़ता वर्चस्व और न्यायपालिका की सक्रियता भी इन सबके बीच चर्चा का विषय रहती है। न्यायिक सक्रियता भी सकारात्मक और नकारात्मक परिणाम देती है। कभी न्यायालयों की सक्रियता लोकतंत्र में नागरिक अधिकारों को स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। तो कभी यह किसी दूसरे अंग में हस्तक्षेप प्रतीत होते हुए संवैधानिक संकट की स्थिति भी पैदा करती है।

न्यायिक सक्रियता का अर्थ न्यायपालिका द्वारा निभायी जाने वाली वह सक्रिय भूमिका है। जिसमें राज्य के अन्य अंगों को उनके संवैधानिक कृत्य करने को बाध्य करे। यदि वे अंग अपने कृत्य संपादित करने में सफल रहें तो जनतंत्र तथा विधि शासन के लिये न्यायपालिका उनकी शक्तियों एवं भूमिका का निर्वाह सीमित समय के लिये करेगी। यह सक्रियता जनतंत्र की शक्ति तथा जन विश्वास को पुर्नस्थापित करती है। न्यायिक सक्रियता 20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। जॉन मॉर्शल को न्यायिक सक्रियता के विचार का जनक माना जाता है। 1803 में मारवरी बनाम मेडिसन के मामले में ऐतिहासिक निर्णय के बाद इसका विकास हुआ।[1] इसका जन्म अमेरिकी संघीय अदालतों से हुआ। भारत में न्यायिक सक्रियता का तात्पर्य न्यायपालिका द्वारा मौलिक अधिकार व नीति निर्देशक तत्व के बीच सौहार्द्रपूर्ण संबंध स्थापित करने की वजह से त्वरित निर्णय देने से है। इसी संदर्भ में न्यायिक सक्रियता के उद्‌भव का प्रमुख उद्देश्य शासन, प्रशासन एवं सरकार में पारदर्शिता लाना रहा है। न्यायालय की सक्रियता का सोपान जनहितवाद रहा है।

वर्तमान में न्यायिक सक्रियता का प्रयोग किये जाने का कारण न्यायालय के समक्ष लाये गये विवादों का अत्यधिक प्रभावी ढ़ग से निस्तारण है। न्यायिक सक्रियता के ही संदर्भ में कई ऐसे पहलू है जिन पर विमर्श की आवश्यकता है। पूर्व न्यायमूर्ति बालकृष्णन ने न्यायिक सक्रियता को और अधिक सक्रिय करने की आवष्यकता पर बल दिया ताकि प्रशासन और अधिक जिम्मेदार बने। इधर कुछ वर्षों में सिविल सोसाइटी बगैर सरकारी संगठनों की लगातार बढ़ती भूमिका प्रशासन को जनोन्मुख उत्तरदायी बनने पर विवश तो किया ही न्यायपालिका के माध्यम से प्रशासन को उत्तरदायी और जवाबदेही भी बनाया है। न्यायपालिका द्वारा अपनी परम्परागत शक्तियों के क्षेत्राधिकार से बाहर जाकर कार्यपालिका एवं विधायिका के कार्य क्षेत्र में जनहित की दृष्टि से हस्तक्षेप किया जाना न्यायिक सक्रियता कहलाता है। वस्तुत: यह एक ऐसी प्रवृत्ति है, जिसके अंर्तगत देश की न्यायपालिका, सामाजिक एवं प्रशासनिक गतिविधियों को नियमित करने में शासन के अन्य अंगों, विधानमंडल तथा कार्यपालिका से बढ़-चढ़कर भूमिका निभाने लगती है। यह लोकहित, विधि के शासन एवं संविधान की मूल भावना के संरक्षण का एक असामान्य, अपराम्परागत किंतु प्रभावी यंत्र है। न्यायिक सक्रियता से एक ओर जहां कार्यपालिका की त्रुटियों का बोध होता है। संवैधानिक दृष्टिकोण से भारत एक लोकतांत्रिक, समाजवादी, कल्याणकारी देश हैं। जिसमें न्यायपालिका की भूमिका एक सजग पहरी की है।[2] भारत के संविधान द्वारा यद्यपि व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका के कार्यो का स्पष्ट उल्लेख किया गया है तथापि भारत में लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के परिपेक्ष्य में न्यायपालिका की सक्रिय, सजग एवं कर्त्तव्य परायण स्थिति व्यावहारिक रूप से पूर्णत: उचित ही है। भारत में न्यायिक सक्रियता के उदय के रूप में गोलक नाथ बनाम पंजाब राज्य के विवाद को देखा जा सकता है। इस विवाद में यह निर्णय दिया गया कि संसद को मानवाधिकार में संशोधन करने की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है। न्यायिक सक्रियता के विकास में जनहित से संबंधित आश्वासनों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। 1979 में न्यायमूर्ति वाई.वी. चंद्रचूढ़ द्वारा I.32 के अंतर्गत जनहित याचिका से संबंधित व्यवस्था की गई। बाद में न्यायमूर्ति पी.एन. भगवती ने मुख्य न्यायाधीश को भेजे पत्रों को ही जनहित याचिका के रूप में स्वीकार करके न्यायिक सक्रियता को एक नई दिशा प्रदान की।[3]

विगत कुछ वर्षो में न्यायपालिका द्वारा देश की राजनीति, प्रशासन एवं सामाजिक-आर्थिक जीवन में व्याप्त सुस्ती, भ्रष्टाचार एवं अन्याय के निवारण ऐसे अनेक निर्णय प्रेशित किए जो कि न्यायिक सक्रियता का ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। जो कि न्यायिक सक्रियता के दृष्टिकोण से

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, शासकीय महाविद्यालय, बरेला (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

न्यायपालिका द्वारा प्रेशित प्रमुख निर्णय जैसे ताज संरक्षण हेतु आगरा एवं मथुरा की औद्योगिक इकाईयों को नोटिस, शहर की स्वच्छता हेतु दिल्ली महानगरपालिका को सफाई हेतु निर्देश, दिल्ली में ही प्रदूषण की व्याप्त मात्रा को न्यूनतम करने हेतु वाहनों को संपीड़ित प्राकृतिक गैस से चलाने हेतु निर्देश, दिल्ली में यमुना किनारे अवस्थित आवासीय क्षेत्रों में चल रही फैक्टरियों एवं औद्योगिक इकाइयों को स्थानांतरित करने संबंधी निर्देश, चुनाव सुधारों पर सरकार को कारण बताओं नोटिस, राजनीतिक अपराधीकरण को रोकने की दिशा में निर्वाचन आयोग को आवश्यक दिशा-निर्देश आदि।[4] गठबंधन सरकारों के वर्तमान दौर ने विधायिका को जहां कमजोर किया हैं। यही इसने न्यायपालिका और कार्यपालिका को शक्तिशाली बनाया है। न्यायिक सक्रियता इस तथ्य का पक्का सबूत है कि किन परिस्थितियों में संवैधानिक संस्थाऐं निरंकुश बन जाती है तथा अपने अधिकार क्षेत्र की नए सिरे से परिभाषा करके अपने कर्तव्य निर्वहन से अधिक अपनी गरिमा और पवित्रता को कायम रखने पर ध्यान केंद्रित करने लगती है।

न्यायपालिका एक गरिमामय एवं सम्माननीय संस्था है। लोकतंत्र के तीन प्रमुख स्तंभों में एक होने के कारण यदि न्यायपालिका, कार्यपालिका और विधायिका को उसके उत्तरदायित्वों का आभास कराती है तो इसमें लोकतंत्र लड़खड़ाने के स्थान पर और अधिक दृढ़ होता है। न्यायिक सक्रियता से ही विधि के शासन की स्थापना होती है। न्यायपालिका ने देश में न केवल सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त किया है बल्कि भ्रष्टाचार मुक्त समाज के निर्माण की आशा की जा सकती है। समाज के अंतिम व्यक्ति की दशा सुधारने व उसे मानवीय अधिकार दिलाने में भी उसने महत्वपूर्ण एवं सक्रिय भागीदारी दी है। खनन घोटाले, 2 जी घोटाले, कोलगेट खदानों के आवंटन के घपले, महाराष्ट्र से आई.पी.एल मैच का निर्णय हो या मजदूरों के हितों की रक्षा अथवा जनहित के मुद्दे। न्यायिक सक्रियता से देश के नागरिकों की उम्मीद लगातार बढ़ती जा रही है। मार्च 2003 में सर्वोच्च न्यायालय ने अपने ऐतिहासिक फैसले में राजनीति के अपराधीकरण और चुनाव में बाहुबल और धन बल की बढ़ती समस्या से मुक्ति पाने के लिये जन प्रतिनिधित्व कानून की धारा '33-B' को असंवैधानिक करार दिया जो न्यायालय सक्रियता का ज्वलंत उदाहरण है।[5] इसके अलावा 1980 से लेकर 2014 के काल में न्यायिक सक्रियता में निरंतर वृद्धि हुई।

चुनौतियॉ – चूँकि न्यायिक सक्रियता का अर्थ इस रूप में लिया जाता है कि जब राज्य के अंग अपने संवैधानिक कृत्यों को करने में सही भूमिका नहीं निभाते है या विधि के अनुसार न होकर राजनैतिक और व्यक्तिगत हो जाते है तब न्यायपालिका न्यायिक सक्रियता के माध्यम से उन्हें नियंत्रित करने संविधान के संरक्षक एवं जनहित संरक्षक की भूमिका निभाती है लेकिन वर्तमान में भ्रष्टाचार की चरम राजनीतिक स्वेच्छाचारिता एवं जनता के प्रति बढ़ता अन्याय एवं शोषण ने न्यायिक सक्रियता के एक नवीन विकास क्रम को महत्व दिया है इसलिये कार्यपालिका, विधायिका के द्वारा न्यायपालिका के इस कार्य को अधिकारों का अतिक्रमण नाम देकर आलोचना की जा रही है। न्यायिक अतिवादिता के खिलाफ सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी न्यायिक सक्रियता को संयम के साथ कार्य का आदेश दिया जाता है। इन सब गतिरोध एवं न्यायिक चुनौतियों के पीछे मजबूत राजनैतिक इच्छाशक्ति का अभाव जान पड़ता है। एक ओर न्यायिक सक्रियता के माध्यम से न्यायपालिका जनता को न्याय प्रदान करती पाई जाती है वही दूसरी ओर उसके कार्यो को अतिवादिता का नाम देकर न्यायपालिका की भूमिका पर प्रश्न चिन्ह लगाया जाता है जो अशोभनीय है। ऐसे में न्यायिक सक्रियता कई बार टकराव की स्थिति में जान पड़ती हैं।

सुझाव – न्यायिक सक्रियता एवं न्यायिक स्वतंत्रता के संदर्भ में यह स्पष्ट होता है कि जब शक्तियों के विभाजन के बाद भी लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा के लिये विधायिका एवं कार्यपालिका निष्क्रिय लगने लगी। तब विविश होकर न्यायपालिका को सक्रिय होना पड़ता है तथा दोनों अंगों के कार्यो में हस्तक्षेप करना पड़ता है। जो उचित एवं विधि सम्मत भी है।

1. सरकार के अंगों के द्वारा क्षेत्राधिकारों का उचित पालन किया जाना चाहिये।
2. न्यायिक सक्रियता को जनहित याचिका के माध्यम से समाज में त्वरित न्याय की व्यवस्था करना चाहिये।
3. राज्य शासन प्रशासन के कार्यो में स्पष्ट पारदर्शिता लाने का प्रयास करना चाहिये।
4. न्यायिक सक्रियता द्वारा न्यायपालिका को अपनी शक्तियों का प्रयोग राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिये।
5. संवैधानिक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु ठोस कारगर कदम उठाने चाहिये।

निष्कर्ष – न्यायिक सक्रियता सरकार के तीनों अंगों द्वारा अपने कार्यो को सही ढंग से कराने पर जोर देता है। संविधान के द्वारा कार्यपालिका, विधायिका एवं न्यायपालिका के कार्यो एवं क्षेत्राधिकारों का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है किंतु जब कार्यपालिका और विधायिका द्वारा अपने उत्तरदायित्वों का वहन उचित प्रकार से नहीं किया जाता जिसके परिणामस्वरूप समाज में अन्याय और अशांति की स्थापना होने लगे। तब न्यायिक सक्रियता सुधार संभव हो सकता है। ऐसी स्थिति में लोकतंत्र के प्रति जनसाधारण के विश्वास को न्यायिक सक्रियता से बल मिलता है। आज न्यायिक सक्रियता जनहित याचिका के माध्यम से त्वरित न्याय की व्यवस्था कर लोक कल्याणकारी राज्य के उद्देश्य एवं न्यायिक सर्वोच्चता को बनाये रखने का निरंतर प्रयास कर रही है। न्यायिक सक्रियता में जनहित याचिका का एक ज्वलंत मामला भागलपुर (बिहार) जेल में विचाराधीन बंदी कैदियों का भी है। न्यायिक सक्रियता आज प्रांसगिक इसलिये बन गया है क्योंकि शायद कही न कही कमी शासन व्यवस्था के कार्यपालिकीय एवं विधायी अंग में है। लगातार भ्रष्ट्राचार, राजनीतिक स्वेच्छाचारिता, निरंकुशतावाद की बढ़ती प्रवृत्ति ने न्यायिक सक्रियता को अधिक सक्रिय किया है ताकि तीनों अंगों में सामंजस्य बन सके। हालांकि कभी-कभी न्यायपालिका की न्यायिक सक्रियता केंद्रित हो जाती है। जिससे कार्यपालिका एवं विधायिका को आभास होता है कि यह स्वेच्छाचारिता है। हाल ही में कॉलेजियम के मामले पर स्वंय न्यायपालिका कटघरे में खड़ी है।[6] इसके अलावा भी कई मुद्दे कार्यपालिका एवं विधायिका से जुड़े है। जहां न्यायपालिका की अति सक्रियता दिखाई पड़ती है। वास्तव में दोनों कार्यकारी अंगों के बीच जब शून्य सिध्दांत उभरता है। उसे भरने का कार्य न्यायिक सक्रियता द्वारा किया जाना अपरिहार्य है।

न्याय न केवल हो, बल्कि वह होता हुआ नजर भी आए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. www.pravakta.com
2. बाबेल, डॉ. बसंतीलाल, संवैधानिक विधि नई चुनौतियॉ, सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद, 2013, पृ.क्र. 171
3. वहीं पृ. क्र. 172
4. सरकार, एम.के., जनहित याचिका ओरिएंट पब्लिशिंग कंपनी, 2010, पृ. 11
5. वही पृ. क्र. 25
6. www.hindizdictionary.coms

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

अपराध पीड़ितों के मानव अधिकारों के संरक्षण में न्यायपालिका का योगदान

मधु सिंह *

शोध सारांश – अपराध शास्त्र की शाखा के रूप में अपराध-पीड़ितों के अध्ययन से संबंधित शास्त्र अर्थात् प्रपीड़नशास्त्र का प्रारम्भ बीसवी सदी के चौथे दशक 1940 के लगभग से माना जाता है। जब मेन्डोल्सोन (Mendolsohn) वोन हेन्टिग (Von Henting) तथा वूल्फगेंग (Wolfgang) जैसे विख्यात अपराधशास्त्रियों ने अपराध-पीड़ितों को ऐसे नि:सहाय ठगे गए व्यक्ति निरूपित किया जिन्होने अपने बलिकरण (Victimization) को स्वयं न्योता दिया था।

1980 के दशक में 'अपराध पीड़ित' एक ऐसा व्यक्ति माना गया जो किसी प्रतिकूल परिस्थिति या संबंधों में फंस जाने के कारण किसी अपराध का शिकार हुआ है। उल्लेखनीय है कि 'पीड़ित' शब्द का प्रयोग अनेक सन्दर्भों में किया जा सकता है जैसे दुर्घटना या अपघात पीड़ित, अकाल पीड़ित, बाढ़ पीड़ित, सुनामी पीड़ित, गैस त्रासदी पीड़ित, दंगा पीड़ित, युद्ध पीड़ित आदि।

इन सभी में किसी न किसी रूप में वेदना, कष्ट, दर्द, क्षति या नुकसानी आवश्यक रूप से विद्यमान रहती है, जो पीड़ित या पीड़िता के नियन्त्रण के बाहर होती है।

प्रपीड़नशास्त्र तथा अपराधिक विधि के अन्तर्गत 'अपराध पीड़ित' ऐसा व्यक्ति है जिसकी पहचान की जाना सम्भव होता है और जो अपराधी के अपराधकृत्य से वैयक्तिक रूप से प्रत्यक्षत: क्षतिग्रस्त हुआ है तथापि कतिपय अपराधों के संदर्भ में अपराध-पीड़ित को न तो आसानी से चिहिन्त किया जा सकता है और न वह अपराध से सीधें तौर पर जुड़ा रहता है। अपराध पीड़ित व्यक्तियों के संरक्षण में न्यायपालिका का विशेष योगदान है। प्रस्तुत शोध पत्र में भारतीय उच्चतम न्यायालय के योगदान का अध्ययन प्रस्तुत है-

कुंजी शब्द –अपराध पीड़ित, प्रपीड़नशास्त्र, अपराध, न्यायालय।

अध्ययन का उद्देश्य – इस शोध पत्र का मूख्य उद्देश्य भारतीय उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों के द्वारा अपराध पीड़ितों के अधिकार संरक्षण में दिये गये महत्वपूर्ण निर्णयों का अध्ययन कर मूल्यांकन करना है।

शोध प्रविधि – यह शोध पत्र पूर्णत: सैद्धांतिक विधि पर आधारित है जिसमें विषय से संबंधित सर्वमान्य ग्रन्थ एवं प्रशासकीय दस्तावेजों से प्राप्त सूचनाओं को आधार मानकर अध्ययन किया गया है।

विवेचना – अपराधिक न्याय व्यवस्था में अपराध-पीड़ितों की उपेक्षा के प्रति चिंता व्यक्त करते हुए उच्चतम न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश और न्यायिक सक्रियता के लिए विख्यात **न्यायमूर्ति बी.आ.कृष्ण अइयर** ने लिखा कि –

'भारत में दण्ड विधि पीड़ित व्यक्ति-मूलक नहीं है जिसके कारण अपराध पीड़ितों की अनगिनत व्यथाओं, वेदनाओं तथा पीडाओं की इस कारण पूर्णत: अनदेखी हो जाती है क्योंकि न्याय-व्यवस्था में अपराधी के प्रति अपनिहित सहानुभूति दर्शाई गई है।' न्यायपालिका ने समय-समय पर अपने निर्णयों द्वारा अपराध-पीडितों के संरक्षण की बात कही है।

खत्री बनाम बिहार राज्य के वाद में विनिश्चित करते हुए राज्य को आदेशित किया गया है कि पीडितों को तत्काल रिहा किया जाए तथा प्रत्येक के नेत्र परीक्षण तथा चिकित्सीय उपचार की समुचित व्यवस्था राज्य स्वयं अपने खर्चे पर करें और उन्हें क्षतिपूर्ति के रूप में प्रतिकर का भुगतान करें और इस अमानवीय अपराध के लिए दोषी पुलिस कर्मियों के विरूद्ध राज्य सरकार कठोर कार्यवाही कर उन्हें दण्डित करें।

रूदलशाह बनाम बिहार राज्य के वाद में अनुच्छेद 21 के अंतर्गत व्यक्ति को प्राप्त प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन होने पर पीड़ित व्यक्ति को हानिपूर्ति के रूप में प्रतिकर दिलाकर लोकहित वाद के क्षेत्र में एक ऐतिहासिक निर्णय दिया। इस वाद में रूदलशाह को लापरवाही के कारण दोषमुक्ति के बाद भी चौदह वर्ष की दीर्घ अवधि तक प्राण और दैहिक स्वतंत्रता के मूल अधिकार से वंचित रहना पड़ा। इस प्रकरण में न्यायालय ने बिहार राज्य सरकार को आदेशित किया कि वह अभ्यर्थी रूदलशाह को क्षतिपूर्ति के रूप में 30000/- रूपये का भुगतान करें।

भीम सिंह बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य के वाद में उच्चतम न्यायालय ने राज्य द्वारा याचिकाकर्ता की दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार का हनन किये जाने पर उसे पचास हजार रूपये की राशि प्रतिकर के रूप में दिलाई। इस वाद में याचिकाकर्ता एक विधायक था जिसे विधानसभा के सत्र में भाग न लेने देने की नीयत से पुलिस ने जानबूझकर गिरफ्तार कर अभिरक्षा में रखा जो अनुच्छेद 21 का उल्लंघन है न्यायालय ने विनिश्चित किया कि केवल रिहा करना पर्याप्त नहीं होता अपितु पीडित को हुई हानि का प्रतिकर दिलाया जाना चाहिए।

आर. डी. उपाध्याय बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य के मामले में देश के विभिन्न जेलों में परिवीक्षाधीन बन्दी माँ के साथ रहने वाले बच्चों की दयनीय दशा के विषय में उच्चतम न्यायालय ने गम्भीर चिन्ता दिखाई और अभिनिर्धारित किया कि उन्हें अनुच्छेद 21, 23, 39 (e), 39 (f) और 21-क के अंतर्गत भोजन, चिकित्सा सहायता, कपडे और मनोरंजन सुविधायें पाने का अधिकार है।

पीपुल्स यूनियन फार डेमोक्रेटिक राइट्स बनाम पुलिस कमिश्नर दिल्ली

* एम. फिल. छात्रा (विधि) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

पुलिस हेडक्वार्टर के वाद में एक मजदूर कुछ काम करने पुलिस स्टेशन गया मजदूरी मांगने पर उसे मारा पीटा गया और वह मर गया। यह अभिनिर्धारित किया गया कि राज्य प्रतिकर देने के लिए दायी था। मृतक के परिवार को 75000 रू. प्रतिकर देने का निर्देश दिया गया। इसी प्रकार **सहेली बनाम पुलिस कमिश्नर** के मामले में उच्चतम न्यायालय ने दिल्ली प्रशासन को यह निर्देश दिया कि मृतक (9 वर्ष का बालक) की मॉ को 75000 रू. प्रतिकर प्रदान करे जिसकी मृत्यु पुलिस अधिकारी के मारने के कारण हो गयी थी। **नीलबती वेहरा बनाम उडीसा राज्य** के मामले में उच्च्तम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि पुलिस अभिरक्षा में गिरफ्तार व्यक्ति तथा जेल में कैदियों की रक्षा करना राज्य का कर्तव्य है और यदि पुलिस तथा जेल में कैदियों की रक्षा करना राज्य का कर्तव्य है और यदि पुलिस अभिरक्षा या जेल में उसके मूल अधिकारों का राज्य या उसके सेवकों द्वारा उल्लंघन होता है तो राज्य के ऐसे नागरिक को प्रतिकर देना होगा।

बोधिसत्व गौतम बनाम शुभ्रा चक्रवर्ती के वाद में न्यायालय ने विनिश्चित किया कि बालात्कार केवल किसी महिला के शरीर के विरूद्ध अपराध नहीं है अपितु समस्त समाज के विरूद्ध अपराध है। इससे पीड़ित महिला की मनोवैज्ञानिक सोच-समझ नष्ट हो जाती है जिसके कारण वह घोर संवेगात्मक संकट में फंस जाती है और उसके लिए इससे उभरना मुश्किल होता है अत: बलात्कार को एक गंभीरतम अपराध माना जाना चाहिए। इससे पीड़ता का सबसे मूल्यवान प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन होता है जिसमें गरिमामय जीवन जीने का अधिकार समाविष्ट है, जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 21 में वर्णित है।

भारत सरकार ने आपराधिक न्याय प्रशासन तथा पुलिस कार्य प्रणाली में सुधार के लिए उपाय सुलझाने के लिए **कर्नाटक एवं केरल उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीस डॉ. वी.एस. मलीमथ** की अध्यक्षता में एक समीति का गठन किया था जिसने वर्ष 2004 में अपनी रिपोर्ट में आपराधिक न्याय प्रशासन तथा पुलिस - व्यवस्था संबंधी अनेक महत्वपुर्ण अनुशंसाएँ की थी।

अपराध पीड़ितो कि व्यवस्था के प्रति संवेदनशीलता का परिचय देते हुए समिति ने सुझाव दिया कि इन पीड़ितो द्वारा की जाने वाली विचारण न्यायालय के निर्माण के विरूद्ध अपील का दायरा अधिक विस्तृत किया जाना चाहिए तथा पीड़ित पर अपराधी को दोषमुक्ति के निर्णय के विरूद्ध उसे अपील फाईल करने का अवसर दिया जाना चाहिए चाहे इसके लिए अभियोजन (राज्य) सहमत हो या न हो। समिति ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के इस प्रावधान के प्रति भी आश्चर्य प्रकट किया कि अभियुक्ति के दोषमुक्ति या उसे कम सजा दी जाने के विरूद्ध की अपिल केवल उच्च न्यायलय में ही क्यो होनी चाहिए तथा यह किसी अन्य निचली अदालत में क्यों नही ले सकती समिति का सुझाव था कि अभियुक्ति की दोश मुक्ति के विरूद्ध अपील का अधिकार अपराध पीड़ित को भी विस्तृत किया जाना चाहिए। उल्लेखनीय है कि समिति के इस सुझाव को स्वीकार करते हुए दण्ड प्रक्रिया संहित (संसोधित) अधिनियम, 2008 द्वारा धारा 372 में संशोधन कर प्रावधान रखा गया कि पीड़ित को अपराधी कि दोष मुक्ति या उसे कम सजा दिये जाने के विरूद्ध अपील फाईल करने के लिए अभियोजन की अनुमति लेना आवश्यक नहीं है।

अपराधियों को दण्डाविष्ट करते समय यदि न्यायालय अपराध से प्रभावित पीड़ित पक्षकार की पीड़ा व्यथा या समिति आदि का भी आकलन कर उन्हें संरक्षण एवं सुरक्षा प्रदान करें तो पीड़ितो के पुन: स्थापना में उनका सक्रिय योगदान होगा। व्यावहारिक रूप से यह अनुभव किया गया कि आपराधिक प्रकरण में निर्णय देते समय न्यायाधीश का ध्यान केवल अपराध की गंभीरता तथा अभियुक्ति की सजा पर ही केन्द्रित रहता है और इस प्रक्रिया में पीड़ित पक्षकार पर इसका क्या असर पड़ेगा इस और वे विशेष ध्यान नही देते हैं। अनेक प्रकरण में अभियुक्ति को दण्ड विधि के अन्तर्गत देय दण्ड से बहुत कम या न्यूनतम दण्ड देने की प्रवृत्ति न्यायाधीशों में प्राय: देखी जाती है। लेकिन वे इस ओर विशेष ध्यान नही देते कि अभियुक्त के प्रति इस अंवांछित उदारता का पीड़ित पर क्या विपरीत प्रभाव पड़ेगा। नि:सन्देह ही न्यायालयों कि यह प्रविती सामाजिक हित के विपरीत होगी जिसका परिणाम पीड़ित को भोगना पड़ता है।

उपसंहार - अपराध पीड़ितो के अधिकार संरक्षण में न्यायपालिका महत्वपूर्ण योगदान रहा है, 'विभिन्न वाद विधियों के माध्यम से न्यायपालिका के द्वारा कार्यपालिका को यह विवश किया गया कि, अपराध पीड़ितों को उचित प्रतिकर एवं सुरक्षा प्राप्त हो सके।' न्यायपालिका के द्वारा समय-समय पर दिये गये निर्णय से प्रतित होता है कि न्यायपालिका मानव अधिकारों का सजग प्रहरी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अपराध शास्त्र डॉ. वी. एन. पराजंपेय सेन्ट्रल लॉ. पब्लि., इलाहाबाद
2. पाण्डेय, डॉ. जयनारायण, भारत का संविधान सेन्ट्रल लॉ. पब्लि., इलाहाबाद
3. ए.आई.आर. और एस.सी.सी
4. विभिन्न वेबसाइट

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Wind Energy Production : A study in India scenario

Dr. Rashmi Arnold * Ramdeo Saket **

Abstract - Wind energy is a best renewable source of non-polluting energy and is emerging as one of the most potential source of alternate energy, which will be helpful to great extent in bridging the gap between the energy demand and supply.

wind energy was used first in ancient Egyptians in wind mills. Ships were sailed by wind energy and for pumping water from wells for irrigation fields.

Now this energy valued as non- polluting and reviewable energy source, because wind motion moves mills and produce kynetie energy, our country is in fourth position in wind energy production, It's production should be increased for several energy requirements.

Introduction - Wind energy is a renewable source of non-polluting energy and is emerging as one of the most potential source of alternate energy which will be helpful to a great extent in bridging the gap between the energy demand and supply compared to solar energy, the wind is a very complex resource, possessing a three dimensional values compared to solar's two dimensional qualities. The wind resource is more intermittent and is strongly in fluened by terrain or geography factors. Also due to fluid mechanics considerations, there is a non liner (cubic) relationship between wind speed and the power production from a mind turbine (a wind energy cancers on device)

Wind power is as old as the first sailing ship and wind mills for pumping water from wells or for grinding agricultural produce dates back to the earliest times of recorded history. Evidence shows that the ancient Egyptians used in windmill as early as 3600 B.C. to pump water for irrigating their arid fields and to grind grain.

wind, which is essentially air in motion, has kinetic energy by in true of the movement of large masses of air caused by differential heating of the atmosphere by the sum. At any given time, the amount of energy contained in the wind is proportional to the wind speed at that instant in the context of wind based energy production system. This energy can be utilized for performing mechanical and electrical works. Wind twine Can be used to generate electricity, for lifting water from wells; for direct water pumping and many more.

Research Methodology - To complete the research work; a suitable data are essential, so the data collection done by secondary source. Related books articles published in magazines, Journal providing and new papers were helpful . T.V. news and talks and debates are also important for collecting data. After classifying data, tabulation work done and then analysis for finding result.

Hypothesis :

1. wind energy production is depend on moving air.
2. The wind energy can not be generated all time. because sometimes winds movement be comes silent.
3. Heavy machine can not be use to general wind energy.
4. wind energy generating machines can not be established every where.
5. wind energy can not be generated in a large amount of power to consume several work at a same time.

Objectives :

1. To know the wind energy and it's uses
2. To find out the posstion of our country about wind energy production.
3. To compare, our country wind energy production with other countries.
4. To find out shortcoming, effecting negativity to low wind energy production in our country.
5. To suggest to adopt best measures for sufficient wind energy production.

Subject Analysis - Wind energy production is very important electricity producing method. It is renewable and non-polluting system of powder production. This energy producing method may be helpful to save other natural resource as coal, gas, wood, cooking oils and other energy producing matters.

Asia's first wind farms project is at Mandri in kutch district of Gujarat. While a wind form cluster of 150 mw at Muppandal in Tamilnadu is Asia's largest wind farm cluster kayather, muppandal, Ayukudi and tuticorin in tamilnadu ; and mandri, Okha, Tunalamba and Veradale in Gujarat are

* Asst. Professor, Govt. G.D.C. College, Rewa (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Biotechnology) A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA

the famous wind farms in India.

Wind energy generation has been given a strong thrust by ministry of Non- conventional energy sources, Govt. of India. The Gouty has allowed a number of incentives for setting up wind power plants. such as hundred percant depreciation exemption from paying of excise duty and sales tax. Tax holidays, concessional finance and buy back of power. in the exploitation of wind energy is being carried out at the same institutes;

1. National Aeronautical Laboratory (NAL) Bangalore.
2. Marine Chemical research institutes (MCRI) Bhavnagar.
3. Central arid zone research institutes (CAZRI) Jodhpur.
4. Madurai wind mill, Madurai.

Our India was in fourth rank in wind energy production in the world at last years, while the entire wind energy production in the world was 14% less in 2017 in comparison of wind energy production of 2015. New plants having capacity of 3617 Megawatt were established in 2016 and the contribution of India touched up 6.6% while in china having capacity of 23.228 Megawlt established in 2016. The new energy production in world was of 54600 Megawalt in 2016. the courtryuise wind energy production is given in below table.

Table No. : 01 : Statement of country use New production of wind energy in (2016 in %)

S.	Name of country	Wind energy production job	Total production of world in wind energy
1	China	42.7%	
2	America	15%	54600 Megawatt
3	Germany	10%	
4	India	6.6%	
5	Brazil	3.7%	
6	Franch	2.9%	
7	Turki	2.5%	
8	Niderland	1.6%	
9	Britain	1.3%	
10	Canada	1.3%	

Source : World wind energy Council

As per above table China was the largest wind energy producer country it was 42.7%, America(U.S.A) was in second position 15%, Germany 10%, India 6.6%, Brazil 3.7% Franch 2.8 % Turki 2.5%, Nedarland 1.6% and Britain and Canada 1.3 %. India production was 7 times less than China.

Table No. : 02 : Statement of whole wind energy production of world up to 2016 (in%)

S.	Name of country	Wind energy production	Total wind energy production
1	China	34.7%	486479 Megawalt
2	America	16.9%	
3	Germany	10.3%	
4	India	5.9%	
5	Spain	4.7%	
6	Britain	3.0%	

source : World wind energy council

According to the above table China has top position in wind energy production it is 34.7%, America is in second position producing 16.9%, Germany 10.3%, India 5.9%, Spain 4.7%, Britain 3.0%. India is not in satisfactory conduction it is fourth place in the world.

Limitation of wind energy :

1. It has low energy density.
2. It is generally favorable in geographic locations which are away from cties.
3. It is variable, unsteady, irregular intermittent, erratic and sometimes dangerous.
4. wind turbine design, manufacture and institution have proved to be complex due to widely varying atmospheric conditions in which they have to operate.
5. wind farms can be located only in vast open area in locations of favourable wind. generally, such locations are away from load centers.
6. Wind energy is not economic for large scale generation.
7. the energy storage batteries, indirectly and substantially contribute pollution.
8. In case of non availability of winds, alternate source of energy it fall back on.

Suggestion :

1. The sufficient energy cannot be produced by wind farms, which may be used when required.
2. The location of wind farms should not be on migratory routes. Otherwise, It could play have with the birds and night lead to a disaster for some avian populations.
3. The appearance of wind mills on the landscape and their continual writing and whistling can be irritated.
4. The new wind energy Generating machines should be established in open field, produced energy may be use in village needs.
5. Indian Govt. should make suitable policy for more wind power generation.

Sum up - Wind energy is oldest energy source. It was used for sailing ships, wind mills for pumping water from wells or for grinding agricultural purpose. the value of wind energy considered in present as non-polluting energy and renewable. There is no any use of natural resources, only flowing wind is used which has no wastage. Though heavy machines cannot be driven, but domestic. energy requirement and light machines can be satisfied, our country is in fourth position in case of wind energy producer. It should be increased. wind energy must be used in place of other energy sources.

References :-

1. Energy, Environment, Ecology & society. Dhanpat rai & Co.(P) Ltd., New Delhi- 2011, page 1.32-1.36
2. INDIA-2017.
3. Economic survey – 2016-17.
4. Internet, T.V., New papers.

म.प्र. सरकार के बजट घाटों का अध्ययन व विश्लेषण

डॉ. चन्द्रप्रकाश पँवार *

प्रस्तावना – बजट सरकार की राजकोषीय एवं आर्थिक नीति का मुख्य आधार होता है। नियोजित आर्थिक विकास तथा अधिकतम सामाजिक कल्याण को दृष्टिगत रखते हुए सरकारे प्राय: संतुलित अथवा घाटे का बजट बनाती है। सामान्यत: सरकार की समग्र प्राप्तियों की तुलना में समग्र व्यय अधिक होता है तो यह बजट घाटा कहलाता है। इसे घाटे की वित्त व्यवस्था (Deficit Financing) भी कहा जाता है। केंद्रीय सरकार द्वारा सदैव घाटे का बजट ही प्रस्तुत किया जबकि म.प्र. सरकार वर्ष 2004-05 से निरंतर राजस्व आधिक्य की स्थिति में रही। बजट के आधार पर ही सरकारों की आर्थिक स्थिति का अनुमान लगाया जाता है तथा आर्थिक स्थिरता के उपाय किये जाते है। प्राय: बजट घाटे का अध्ययन राजस्व घाटा, प्राथमिक घाटा, तथा राजकोषीय घाटा के रुप में किया जाता है। सरकारें विभिन्न राजकोषीय उपाय अपनाकर इन बजट घाटों को नियंत्रित करने का प्रयास करती है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में म.प्र. सरकार के विभिन्न बजट घाटों का अध्ययन व विश्लेषण कर महत्वपूर्ण निष्कर्ष एवं सुझाव प्रस्तुत किये गये है।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य रहे।

1. म.प्र. सरकार के राजस्व घाटे/राजस्व आधिक्य की प्रवृत्ति का अध्ययन करना।
2. म.प्र. सरकार के प्राथमिक घाटे की प्रवृत्ति का अध्ययन करना।
3. म.प्र. सरकार के राजकोषीय घाटे की प्रवृत्ति का अध्ययन करना।
4. म.प्र. सरकार के राजकोषीय घाटे का सकल घरेलु उत्पाद से मापन करना।

अध्ययन अवधि – शोध पत्र की अध्ययन अवधि वर्ष 2006-07 से 2015-16 तक 10 वर्ष की रही।

प्रयुक्त चल – राजस्व प्राप्तियां, पूंजी प्राप्तियां, लोक ऋण, ब्याज का भुगतान, सकल घरेलु उत्पाद आदि।

समंक संग्रहण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में म.प्र. शासन के संबंधित वर्षो के बजट प्रतिवेदन मे उपलब्ध द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है।

म.प्र. सरकार के बजट घाटे/ आधिक्य का अध्ययन व विश्लेषण – सरकार के बजट घाटो में राजस्व घाटा (Revenue Deficit), राजकोषीय घाटा (Fiscal Deficit) तथा प्राथमिक घाटा (Primary Deficit) सम्मिलित होते है जो कि सरकारों की वित्तीय कार्यकुशलता के मापक है। म.प्र. सरकार के बजट घाटों की तुलनात्मक स्थिति को विश्लेषण तालिका 1 व 2 द्वारा प्रदर्शित किया गया है तथा ग्राफ 1 व 2 द्वारा प्रदर्शित किया गया है। तालिका 1 में बजट घाटो की वास्तविक स्थिति को दर्शाया गया है जबकि तालिका 2 में बजट घाटों के प्रवृत्ति प्रतिशत को प्रदर्शित किया गया है।

1) राजस्व घाटा/आधिक्य – राजस्व घाटा राजस्व व्ययों का राजस्व प्राप्तियों पर अधिशेष है, परंतु बजट में राजस्व आधिक्य की स्थिति रही है। विगत 2004-05 से निरंतर मध्यप्रदेश सरकार के बजट में राजस्व घाटे के स्थान पर राजस्व आधिक्य (Revenue Surplus) की स्थिति रही है। अध्ययन काल के वर्ष 2006-07 से प्रथम छ: वर्षो तक पर्याप्त राजस्व वृद्धि रही जबकि अंतिम चार वर्षो में निरंतर गिरावट की प्रवृत्ति पाई गई तथा वर्ष 2015-16 में राजस्व आधिक्य में तेजी से गिरावट होकर यह मात्र 437.27 करोड़ रुपये तक सीमित रहा, जैसा कि तालिका 1, व तालिका 2 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है। इसका प्रमुख कारण राजस्व व्ययों मुख्यत: आयोजना व्ययो में भी अपेक्षाकृत ऊचीं दरों से वृद्धि हुई जबकि अंतिम वर्ष के राजस्व आधिक्य में न्यून वृद्धि प्रदर्शित हुई। राजस्व आधिक्य में गिरावट की प्रवृत्ति चिंता का विषय है तथा यह प्रदर्शित करती है कि मध्यप्रदेश सरकार राजकोषीय उत्तरदायित्व के के पालन में पिछड़ रही है, फलस्वरुप राजस्व आधिक्य की स्थिति राजस्व घाटे की ओर उन्मुख हो रही हैं।

2) प्राथमिक घाटा – प्राथमिक घाटा राजकोषीय घाटे में से ऋणों का ब्याज भुगतान घटाने पर प्राप्त होता है। सरकार का असली वित्त प्रबंधन तो उसका प्राथमिक घाटा ही प्रदर्शित करता है क्योंकि ब्याज भुगतान तो पुराने ऋणों का भार है। तालिका 1 प्रदर्शित करती है कि अध्ययनकाल के अंतिम चार वर्षो में प्राथमिक घाटे की तेजी से बढ़ने की प्रवृत्ति रही। वर्ष 2006-07 में प्राथमिक घाटा 1214.72 करोड़ रुपये था जो वर्ष 2015-16 में लगभग 10 गुना बढ़कर 12574.94 करोड़ रुपये हो गया। प्राथमिक घाटे का नियंत्रण में न रहना यह प्रदर्शित करता है कि सरकार अपने बढ़े हुए व्ययों का भुगतान नये ऋण लेकर कर रही है। प्राथमिक घाटे में तेजी से बढ़ने की प्रवृत्ति सरकार की वित्तीय अक्षमता को प्रदर्शित करती है। म.प्र. सरकार के राजस्व आधिक्य, राजकोषीय घाटे एवं प्राथमिक घाटे की तुलनात्मक स्थिति ग्राफ 1 द्वारा प्रदर्शित की गई है जिसमें राजस्व आधिक्य की रेखा में निरन्तर गिरावट की प्रवृत्ति प्रदर्शित हो रही है। इसी प्रकार प्राथमिक घाटे एवं राजस्व घाटे में भी निरन्तर ऋणात्मक वृद्धि दर्ज हो रही है।

3) राजकोषीय घाटा – राजकोषीय घाटा प्रदर्शित करता है कि सरकार की कुल प्राप्तियां कुल व्ययों से कम है जिसकी पूर्ति सरकार ऋण लेकर करती है। वर्ष 2006-07 में प्रदेश सरकार का राजकोषीय घाटा 2814.23 करोड़ रुपये था जो वर्ष 2015-16 में 3.42 गुना बढ़कर 21166.89 करोड़ रुपये हो गया। राजकोषीय घाटे में कुल 3.42 गुना वृद्धि हुई जो अध्ययन काल के अंतिम चार वर्षो में ऊंची दर से रही।

तालिका : 1 व 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

ग्राफ 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

1. **राजकोषीय घाटा/सकल घरेलु उत्पाद** - राजकोषीय घाटे का मापन राज्य के सकल घरेलु उत्पाद से एक निश्चित प्रतिशत से किया जाता है। म.प्र. सरकार के राजकोषीय घाटे/सकल घरेलु उत्पाद अनुपात में अध्ययन के वर्षो में उच्चावचन की प्रवृत्ति रही। अध्ययन काल में अंतिम वर्ष को छोड़कर राजकोषीय घाटा म.प्र. राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम 2005 द्वारा निर्धारित राज्य सकल घरेलु उत्पाद की 3 प्रतिशत की सीमा के भीतर रहा जो सरकार के कुशल वित्तीय प्रबंधन को प्रदर्शित करता है। वर्ष 2015-16 के लिये उक्त अधिनियम में राजकोषीय घाटे की सीमा राज्य सकल घरेलु उत्पाद के 3.5 प्रतिशत तक निर्धारित की है। अंतिम वर्ष का राजकोषीय घाटा राज्य सकल घरेलु उत्पाद का 3.49 प्रतिशत है जो कि राजकोषीय लक्ष्यों के भीतर तो है किंतु इसकी बढ़ती हुई प्रवृत्ति वित्तीय संकट की ओर संकेत करती है। ग्राफ 2 राज्य सकल घरेलु उत्पाद से राजकोषीय घाटे की बढ़ती हुई प्रवृत्ति तथा राजस्व आधिक्य की गिरती हुई प्रवृत्ति को प्रदर्शित करता है।

ग्राफ 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

निष्कर्ष - सरकार के राजस्व आधिक्य में अध्ययन के वर्षो में 87 प्रतिशत की गिरावट रही, प्राथमिक घाटे में 10 गुना वृद्धि हुई जबकि राजकोषीय घाटे में 7.5 गुना वृद्धि दर्ज हुई। उक्त तीनों स्थितियाँ वित्तीय संकट का संकेत देती है। सरकार का राजस्व आधिक्य वर्ष 2006-07 में 3331.68 करोड़ था जो वर्ष 2015-16 में मात्र 437.27 करोड़ रह गया। इसी प्रकार राजस्व आधिक्य का राज्य सकल घरेलु उत्पाद से अनुपात वर्ष 2006-07 में 2.6 प्रतिशत से कम होकर वर्ष 2015-16 में नाममात्र का होकर 0.07 प्रतिशत रहा। राजस्व आधिक्य में निरन्तर गिरावट का होना यह प्रदर्शित करता है कि सरकार की राजकोषीय स्थिति में राजस्व आधिक्य के स्थान पर राजस्व घाटे की ओर प्रवृत्ता हो रही है। प्राथमिक घाटा वर्ष 2006-07 में 1214.72 करोड़ था जो वर्ष 2015-16 में 12574.94 करोड़ हुआ। प्राथमिक घाटे में अध्ययन अवधि के दौरान 10 गुना वृद्धि प्रदर्शित हुई जो यह प्रकट करती है कि सरकार बड़े हुए व्ययों की पूर्ति नये ऋण लेकर कर रही है। सरकार का राजकोषीय घाटा वर्ष 2006-07 में 2814.23 करोड़ था जिसमें निरन्तर वृद्धि होकर यह 21166.89 करोड़ रुपये हो गया। राजस्व घाटे का राज्य सकल घरेलु उत्पाद से अनुपात वर्ष 2006-07 में 2.2 प्रतिशत के मुकाबले 2015-16 में 3.49 प्रतिशत तक वृद्धि लिये रहा। इस प्रकार राजकोषीय घाटे में निरन्तर वृद्धि प्रदर्शित कर रही है कि सरकार बढ़े हुये व्ययों की पूर्ति नये ऋण लेकर कर रही है तथा सरकार का ऋण भार निरन्तर बढ़ता जा रहा है। वर्ष 2015-16 में राजकोषीय घाटा सरकार द्वारा निर्धारित राजकोषीय संवहनीयता की सीमा 3.5 प्रतिशत के बराबर रहा। यह स्थिति सरकार के लिये वित्तीय संकट की ओर संकेत करती है। जिसे सरकार व्ययों में मितव्ययता लाकर नियंत्रित कर सकती है। सरकार को वित्तीय घाटा पूरा करने के लिये अब ओर नये ऋण लेना नये वित्तीय संकट को जन्म देना है।

सुझाव :

1. अर्थव्यवस्था की मजबूती के लिये वित्तीय समेकन आवश्यक है। अत: राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम के प्रावधानों का युक्तियुक्तकरण किये जाने की आवश्यकता है। इस संबंध में यह सुझाव है कि राजकोषीय घाटे की एक निश्चित लक्ष्य अथवा सीमा तय न करके एक श्रेणी अथवा दायरा तय किया जाना चाहिए, जिसके भीतर ऋण संसाधन जुटाये जाये अथवा संभव ना होने पर खर्चो में कटौति की जाए। क्योकि तेजी से बदलते परिवेश में सरकार के पास नीतिगत फैसले लेने के लिय पर्याप्त आर्थिक गुंजाइश होनी चाहिये।
2. वर्तमान समय में ऋणों पर ब्याज दरें कम हुई है, पूँजी लागत घटी है। अत: इस वातावरण में राजकोषीय घाटे के निर्धारित लक्ष्यों से विचलन कम करने के लिए एक राजकोषीय समानीकरण कोष (Fiscal Equalisation Fund) के निर्माण का सुझाव दिया जाता है जिसमे सरकार राजस्व आय का एक निश्चित प्रतिशत इस कोष में जमा करे तथा कोष की राशि को पुन: तरल प्रतिभूतियों में निवेशित किया जाये ताकि संकट के समय इस राशि का प्रयोग किया जा सके।
3. सरकार को विकासात्मक कार्यो के वित्तीयन के लिये पृथक से पूंजी - बजट निर्मित करना चाहिये जिसमें प्राथमिकता के आधार पर वित्तीय संसाधनो का आबंटन सुनिश्चित हो साथ ही ऋण साधनों से वित्त पोषण का अनुपात भी पूर्व निर्धारित हो।
4. राजकोषीय घाटे के लक्ष्य को पूरा करने के साथ -साथ राजकोषीय घाटे की गुणवत्ता को भी सुधारना आवश्यक है।
5. अनिश्चित वैश्विक माहौल में विकास की गति बनाये रखने हेतु साख बनाये रखना और ऋण पर नियत्रंण रखना आवश्यक है अत: सरकार को अपने बजट संसाधनो की कार्य कुशलता में सुधार करके अथवा गैर कर राजस्व के नये स्त्रोतो की खोज करके अपनी राजकोषीय गुंजाइश को बढ़ाना चाहिए।
6. अर्थव्यवस्था की पूरी क्षमता का उपयोग करने के लिए आयोजना व्ययो के वित्तीयन में सार्वजनिक - निजी भागीदारी (Public-Private Partnership) संबंधी दिशा-निर्देशों पर विचार करना चाहिए। आयोजित विकास के लिये पर्याप्त संसाधन बजटीय स्त्रोतों से उपलब्ध होना संभव नहीं है। अत: औद्योगिक एवं आधारभूत संरचना विकास के लिये निजी क्षेत्र को आमंत्रित किया जाना चाहिये।
7. आर्थिक वृद्धि को बल देने के लिये सरकार आवश्यकतानुसार उँचे राजकोषीय घाटे पर भी विचार कर सकती है। इस प्रकार का निर्णय सरकार देश/प्रदेश की स्थिति को ध्यान में रखकर कर सकती है। वर्तमान समय में ऋणों पर ब्याज दरें कम हुई है, पूँजी लागत घटी है। अत: इस वातावरण में सरकार राजकोषीय लक्ष्यों का विकास के लिए विवेकपूर्ण विस्तार करे तो कोई नुकसान नहीं है।
8. चौदहवें वित्त आयोग की अनुशंसानुसार राज्यों को बजट घाटा अनुदान तथा राज्य आपदा राहत कोष के लिये सहायता अनुदान का प्रावधान है। अत: इस संबंध में यह सुझाव दिया जाता है कि जिन राज्यों में राजस्व आधिक्य की स्थिति है उन्हें राजस्व आधिक्य का अनुदान देकर प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. म.प्र. सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2006-07 से 2015-16
2. भारतीय लोक वित्त सांख्यिकी, 2014-15, 2015-16
3. आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2014-15, 2015-16
4. तेरहवे वित्त आयोग की रिपोर्ट, वित्त मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली
5. चौदहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट, वित्त मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली
6. वित्तीय क्षेत्र विधायी सुधार आयोग (2013) की रिपोर्ट, वित्त मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली
7. वार्ष्णेय, जे.सी., राजस्व, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2005
8. पंत, जे.सी., लोक अर्थशास्त्र, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, 2014

तालिका : 1 – म.प्र. सरकार की बजट घाटों की स्थिति (करोड़ में)

प्रवर्ग/वर्ष	2006 –07	2007 –08	2008 –09	2009 –10	2010 –11	2011 –12	2012 –13	2013 –14	2014 –15	2015 –16
राजस्व आधिक्य	3331.68	5087.62	4063.33	5497.8	6842.6	9910.37	7458.75	5879.48	6267.97	437.27
प्राथमिक घाटा	1214.72	1406.85	241.61	1744.62	223.07	561.41	3846.55	3489.97	4580.34	12574.94
राजकोषीय (वित्तीय) घाटा	2814.23	2783.92	4433.6	6198.92	5272.02	5861.18	9420.29	9881.29	11651.59	21166.89
राज्य सकल घरेलु उत्पाद (वर्तमान मूल्यों पर)	128202	142500	162525	216958	271681	315387	361874	450900	508006	607269
राजस्व आधिक्य का प्रतिशत जीएसडीपी से	2.6	3.57	2.5	2.53	2.52	3.14	2.06	1.3	1.23	0.07
राजकोषीय घाटे का प्रतिशत जीएसडीपी से	2.2	1.95	2.73	2.86	1.94	1.86	2.6	2.19	2.29	3.49

स्त्रोत: मध्यप्रदेश सरकार के बजट प्रतिवेदन सत्र 2006–07 से 2015–16

तालिका : 2 – म.प्र. सरकार की बजट घाटों का प्रवृति (प्रतिशत में)

प्रवर्ग/वर्ष	2006 –07	2007 –08	2008 –09	2009 –10	2010 –11	2011 –12	2012 –13	2013 –14	2014 –15	2015 –16
राजस्व आधिक्य	100.00	153	122	165	205	297	224	176	188	13
प्राथमिक घाटा	100.00	116	20	144	18	46	317	287	377	1035
राजकोषीय (वित्तीय) घाटा	100.00	99	158	220	187	208	335	351	414	752
राज्य सकल घरेलु उत्पाद (वर्तमान मूल्यों पर)	100.00	111	127	169	212	246	282	352	396	474

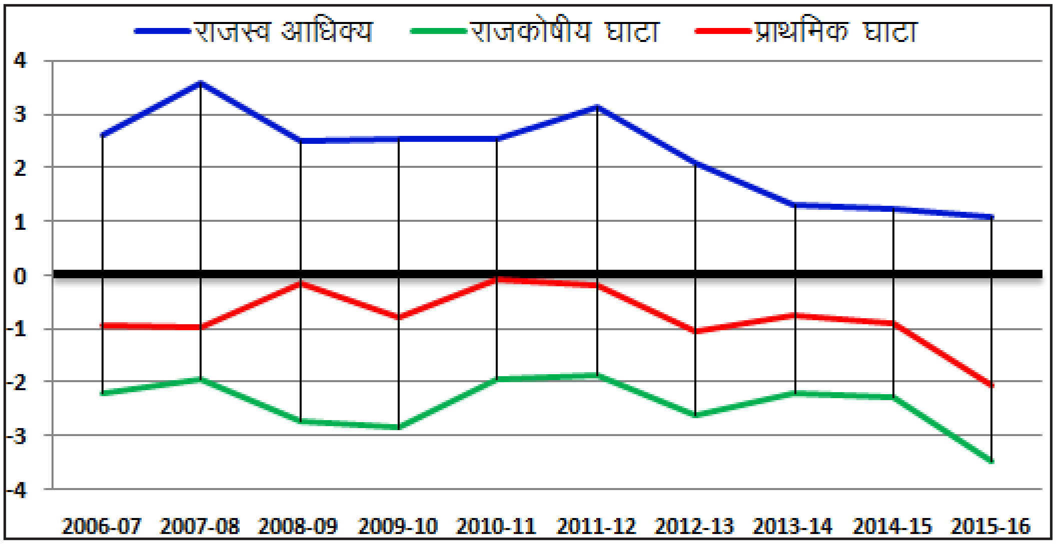

ग्राफ 1 ; म.प्र. सरकार के राजस्व आधिक्य, राजकोषीय घाटे एवं प्राथमिक घाटे की तुलनात्मक स्थिति (राज्य सकल घरेलु उत्पाद से प्रतिशत)

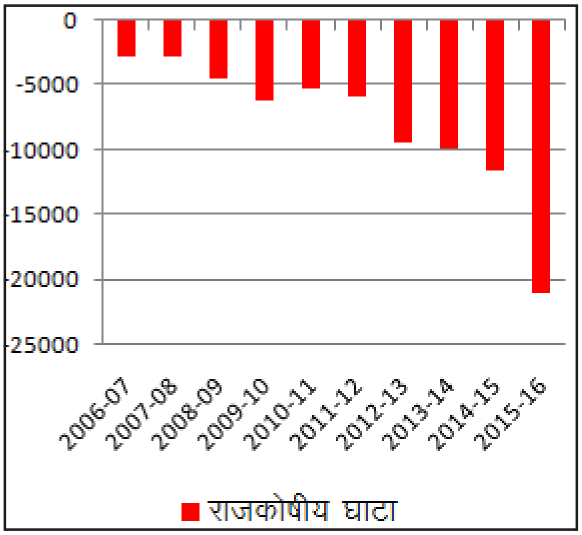

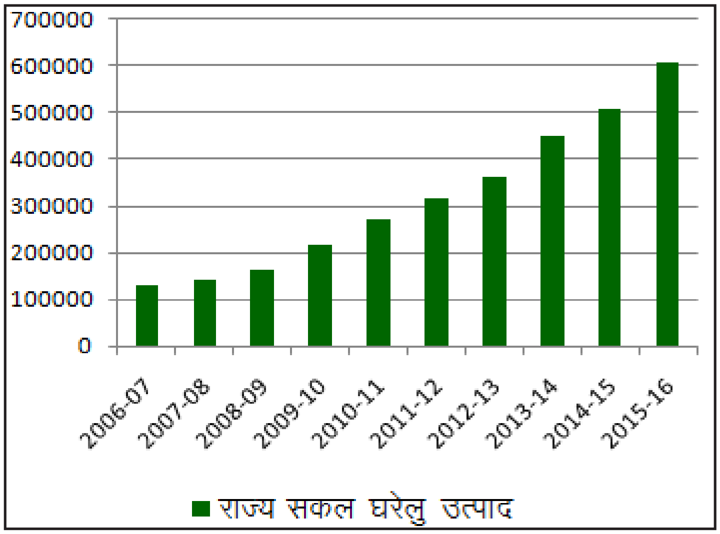

ग्राफ 2 : म.प्र. सरकार के राजकोषीय घाटे व सकल घरेलु उत्पाद की तुलनात्मक प्रवृत्ति

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

भारतीय इतिहास में मृण्मूर्तिकला का धार्मिक विवेचना

ईश्वर लाल चौहान *

शोध सारांश – भारतीय इतिहास का मुख्य आधार सभ्यता रही है। इसका मुख्य कारण गुप्त शासन काल में भी कई उदाहरण मिलते हैं। इसके मध्य उज्जयिनी से लेकर पाटलीपुत्र तक का विस्तृत यह देश बहुतायत में गाँवों का एक नगर जाल था। इसके सबसे पहले छोटे-छोटे ग्रामों से एक बड़े नगर का निर्माण होता है। दूसरी तरफ इन्हीं नगरों के समूहों से एक महानगर निर्मित होता है। जबकि भारतीय इतिहास में मिट्टी की मूर्तियों का धार्मिक महत्व भी एक सामाजिक औचित्य के रूप में उभर कर सामने आते हैं। इसकी सम्पन्नता का सबसे बड़ा स्वर भी गुप्त वंश में ही दिखाई देता है।

प्रस्तावना – मृण्मूर्तियाँ लोक कला का भी आधार मानी जाती है। इन मूर्तियों में धार्मिक मूल्य छिपे हुए है। यह परम्पराऐं हड़प्पा कालीन समय से विद्यमान है। जहाँ धार्मिक क्रिया-कलापों के माध्यम से रीति-रिवाज आदि की जानकारी पुरातत्वों के आधार पर की जा सकती है। 'दुर्ग और नगर दोनों क्षेत्रों में कुछ इमारतें मिली हैं जिन्हें कतिपय विद्वान मंदिर मानते हैं।'[1]

मध्यप्रदेश में मौर्य शासन काल में भी कला की समृद्ध का प्रमाण मिलता है। इसके साथ-साथ भारत भूमि मृण्डमूर्तियों का धार्मिक महत्व अत्यधिक विस्तृत हो जाता है। देश के अनेक भागों से मौर्य काल की अद्वितीय मूर्ति कला के अवशेष प्राप्त होते हैं। इसके सम्बन्ध में कला को दो भागों में विभक्त किया है। जिनकी मान्यताओं ने धार्मिक स्वरूप पा लिया। पहली तो राजकीय कला दूसरी लोक कला, राजकीय कला का उल्लेख विदिशा के निकट साँची से सम्राट अशोक के शासन काल में एक पाषाणस्तम्भ के रूप में मिलती हैं। जिस पर चार सिंह पीठ सटाए बैठे हैं। एक बाराबर पर्वत के पाषाण से निर्मित यह स्तम्भ-मूर्ति की अनोखी छठा दिखाई दे रही है।

प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार पर शोध पत्र विषय **भारतीय इतिहास में मृण्मूर्तिकला का धार्मिक विवेचना** के रूप में अध्ययन किया गया है। सन्दर्भित करने के लिए विदेशी यत्रियों के यात्रा वृतांतों का भी सहारा लिया गया है। जिस प्रकार से मेगस्थनीज, फाह्यान, हेनसांग, अलबरूनी आदि के साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं के यथा उचित स्थान पर सन्दिर्भित किया गया है।

समस्या :

1. उच्च गुणवत्ता युक्त मिट्टी की समस्या।
2. मृण्मूर्तियों को निर्मित करने में कुशल कारीगर की समस्या।
3. मृण्मूर्तियों में देवताओं के स्पष्ट चित्रकांन की समस्या।
4. इन्हें विक्रय हेतु उचित मूल्य के बाजारों की समस्या।
5. इन कार्यों को निर्मित करने वाले दक्ष कर्मचारियों की समस्या।
6. मृण्मूर्तियों में धार्मिक मूल्यों के क्षरण की समस्या।

उद्देश्य :

1. मृण्मूर्तियों के निर्मित करने वाले कुशल कारीगर के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण।
2. मृण्मूर्तियों से उत्पन्न होने वाले सौन्दर्य का अध्ययन।
3. मृदा की उच्च गुणवत्ताओं से निर्मित मूर्तियों का अध्ययन।
4. मृण्मूर्तियों में आस्था के केन्द्र के रूप में धार्मिक मूल्यों का अध्ययन करना।

वैदिक काल के पश्चात् भी भारतीय संस्कृति और इतिहास की जानकारी को एकत्रित करने के लिए महाभारत, रामायण, पुराणों और जनश्रुतियों के माध्यम से होने वाले साधन से मृण्मूर्तियों का साधन वन गई है। जिसका मूल मृण्मूर्तिकला के माध्यम से धार्मिक मूल्यों को संजोया जा सकता है। जबकि कुछ विद्वानों का मानना है कि वैदिक साहित्य में मृण्मूर्तियों को लेकर कुछ भ्रांतियाँ विद्यमान है। जबकि मूर्तकला का पक्ष धार्मिक क्रियाकलानों की ओर प्रेरित करता है।

समाधान – मध्यप्रदेश का छठीं शताब्दी ई.पू. के आसपास महत्व और अधिक बढ़ गया। इसके अन्तर्गत अवन्ति, वत्स, चेदि के महाजनपदों का साम्राज्य स्थापित था। इस उल्लेख का प्रमाण पुराणों, अनुश्रुतियों एवं अनेक धर्म ग्रन्थों में भी उपलब्ध होता है। जिस प्रकार से बौद्ध धर्म का अहिंसा सिद्धान्त भी मृण्मूर्ति के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है। इसी कारण बौद्ध धर्म को अहिंस प्रधान सिद्धान्त के रूप में माना जा सकता है। धार्मिक तथ्यों के आधार पर बौद्ध धर्म में युद्ध और सैनिक शक्ति की ओर प्रोत्साहित नहीं करता है। इसका प्रमाण परवर्ती बौद्धों ने गुप्त सम्राट को अहिंसा सिद्धान्त को अपनाया है। जबकि गुप्त वंश के बराबर कोई भी साहस वीरता का परिणाम में संजोने का प्रयास किया है।

'बौद्ध धर्म की अहिंसा और दया के आधार पर गुप्त नरेश बालादित्य ने नृशंस हूण आक्रांता मिहिरकुल को बंधन मुक्त कर जीवनदान दे दिया।'[2] इन मृण्मूर्तियों को धार्मिक इमारतों के न होने का कारण भौतिकवादी दृष्टिकोण कहा जा सकता है। प्राचीन विश्व की संस्कृति ने अन्य संस्कृतियों का परिणाम इन लोक गाथाओं को न समझने के कारण है। क्योंकि आज भी कुल देवताओं की मिट्टी की मूर्तियों को ग्रामीण व्यक्तियों द्वारा घर के एक निश्चित स्थान में रखते हैं। मिट्टी का धूरसा के रूप में स्थापित करते हैं। मानवीय जीवन में उन्हें ही जीवन रक्षक और देवता के रूप में स्वीकार करते हैं। उनकी मान्यताओं आदि को रूपित करते हैं। ऐसा प्रमाण आज भी ग्रामीण व्यक्तियों में पाया जाता है। जबकि उनकी जगह में चाहे तो पत्थर की भी मूर्तियाँ रखी जा सकती है। किन्तु मिट्टी की मूर्तियाँ आज भी विद्यमान है। इसका प्रमाण

* शोधार्थी, प्रा.भा.इ.सं एवं पुरातत्व अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

इतिहासकार देते हैं।

'इतिहासकारों ने इन मूर्तियों को मातृदेवी की मूर्ति माना है।'[3] इनके मानने का मूल कारण मूर्तियों का अलंकृत होना है। इसी कारण इतिहासकारों ने इन मूर्तियों को मातृदेवी की मूर्ति माना है। इन मातृदेवी की पूजा-पद्धति का प्रारम्भ हड़प्पा काल से प्राप्त होती है। कुछ ऐसे भी जगह हैं जहाँ मातृदेवी की एक भी मूर्तियाँ नहीं मिलती है। इनमें से कुछ को मूर्तियों के माध्यम से इंगित किया गया है कि गर्भिणी, आटा गुड़ते हुए, कुछ बच्चे को लिये हुए। कुछ स्त्रियों की मूर्तियों के चित्रांकन से पता चलता है कि स्तनपान करा रही है। ऐसे अनेकों उदाहरण मूर्तियों में प्राप्त होते हैं। जिस प्रकार से शुंग युग में भरहुत और साँची के स्तूपों की वेदिकाएँ बनीं हुई प्रदर्शित होती है। इनके तोरण द्वार बने हैं और उन पर कलात्मक सौन्दर्य बिखर गया। जनभावना में यक्ष-नाग इत्यादि जो लोकदेवता के रूप में आसीन माना जाता है। उसी प्रकार मिट्टी के भी मूल स्वरूप जैसा ही चित्रांकन किया गया है। इसका आकार उस मूल देवता की आकृतियों के अनुरूप बनाया गया है। मध्यप्रदेश के विदिशा के समीप उदयगिरी नामक पहाड़ी पर कनिंघम को कई मौर्य-शुंगयुगीन अवशेष प्राप्त होते हैं। जिनका संरक्षण ग्वालियर संग्रहालय में सुरक्षित किया गया है।

'पीला चित्रित मृद्भाण्ड न तो रगड़ कर चमकाया गया है और न काँच की तरह चमकाया गया है। बर्तनों पर पकाने के बाद चित्रण किया या था। चित्रण गेरू,जिस में भूरे एवं बैगनी रंग का मिश्रण है।'[4]

कुषाणों एवं गुप्तों का प्रमाण अभिलेख के रूप में दो ही स्थानों पर मिलता है। पहला तो साँची व दूसरा जबलपुर भेड़ाघाट से मिले हैं। लेकिन मृण्मूर्तियाँ की संख्या बहुत कम मिलती है। इसका मूल कारण है कि मिट्टी की मूर्तियाँ बारिस के दिनों में खत्म हो जाती हैं (पिघल जाती है) इन मूर्तियों का मूल केन्द्र मथुरा में मिलता है। गुप्तों में मृण्मूर्ति कला को संरक्षण प्रदान किया। मध्यप्रदेश के अधिकांश जिलो में उसके साक्ष्य प्राप्त होते हैं। जिस प्रकार से उदयगिरी पहाड़ी पर अनेक मृण्मूर्तियाँ प्राप्त हुई है। उदयगिरी, विदिशा, साँची, भरहुत, देउर कोठार आदि में मिट्टी के मूर्तियाँ, ईटों में चित्रांकन और बर्तन आदि प्राप्त हुए है। इसके साथ ही बाघ, होशंगाबाद, जबलपुर, उज्जैन, ग्वालियर आदि भी इसके केन्द्र रहे हैं। किन्तु इनका सृजन उस प्रकार से नहीं हो सका। जहाँ पर मूलता स्वरूपों में पाये जाते हैं।

एक मूर्तिकार के मानसिक चेतना किसी भी मूर्ति को बनाने के लिए कल्पित होती है। उसी प्रकार उस स्वभाव की मूर्तियों का निर्माण करता है। जिसकी आकृति उसके दिमाग में बनी हुई है। इस प्रकार के मूर्तिकला का निर्माण करने में निपुण थे। वह मूर्ति चाहे देवता की हो या पशुओं, जीव-जन्तुओं आदि के आधार पर बनाते हैं। मानव, पशु, देवता या खिलौने की मूर्तियों का निर्माण करते ही। उस शिल्पकार के मन में अनेकों मूर्तितयों का भण्डारण होता है। उसको जिस रूप में चाहता है उसे डाल देता है। जिस प्रकार से धार्मिक आस्था से जुड़ी दसहरा के अवसर पर दुर्गा की मूर्ति एक मूर्तिकार सौन्दर्य परक आकर्षण की मृण्मूर्तियों को निर्मित करता है। वहीं मूर्ति की विशिष्ट जन और धार्मिक प्रयोजन के कारण आभूषणों से सज्जित करके आर्थिक लाभ भी कमाते हैं।[5]

आज भी यह धार्मिक परम्पराओं और मान्यताओं के रूप में दुर्गा की मूर्तियों की स्थापना रामनवमी के अवसर पर किया जाता है। अनेक आभूषणों से सजी-धजी अनेक रंगों से चित्रित अनेक सौन्दर्य परक आकृतियाँ भी मानव निर्मित बनाई गई है। इसके साथ-साथ प्राचीनतम परम्पराओं को इन मूर्तियों के कलात्मक पक्ष से इतिहास को याद दिलाता है। इन मूर्तियों के ऐसे प्रमाण भी मिलते है।[6] जिनका निर्माण स्थाई और आस्थाई तौर भी निर्मित की गई है। इसके निर्माण में बालू, गोबर, पिस्ट, चावल के चूर्ण, खड़ी, पीली मिट्टी, घोड़े की लीद आदि से बनायी जाती थी। लेकिन वर्तमान समय में इसका परिदृश्य ही बदल गया है। जिसका मूल स्वरूप ग्रामीण ईलाकों में ही आज भी स्थापित और निर्मित दिखाई देती है।

निष्कर्ष - इतिहास मृण्मूर्ति कला के प्राचीन परम्पराओं के रूप में धार्मिक स्वरूप को याद दिलाता है। इन्हीं कारणों से जितने भी राजाओं ने इस राष्ट्र का संचालन किया। उन्होंने उतने ही प्रकार के परिवर्तन की दिशा दिया। कुछ तो इन धार्मिक रूढ़ियों और परम्पराओं को नष्ट करने का प्रयास किया और कुछ ने इन धार्मिक परम्पराओं को पल्लवित करने का प्रयास किया है। ऐसा उदाहरण ऐतिहासिक काल से प्राप्त होते है। मृण्मूर्तिकला का राजकीय संरक्षण के द्वारा निर्मित कला का निर्माण शिल्पकारों ने किया है। उसका प्रमाण स्थानीय शैलियों के विकासित मृण्मूर्ति कला में दिखाई पड़ता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अंशुमान द्विवेदी, ***हड़प्पा सभ्यता एवं संस्कृति,*** ज्ञान भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, इलाहाबाद, 2001, पृष्ठ 47
2. बी.एन. लुणिया, ***गुप्त साम्राज्य का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास,*** कमल प्रकाशन, इन्दौर, 1974, पृष्ठ 429
3. अंशुमान द्विवेदी, ***हड़प्पा सभ्यता एवं संस्कृति,*** ज्ञान भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, इलाहाबाद, 2001, पृष्ठ 46
4. अभिनय सत्यदेव, ***भारतीय पुरातत्व के मूल तत्व,*** भवदीय प्रकाशन, श्रृंगारहाट, अयोध्या, फैजाबाद, उ.प्र. 2002, पृष्ठ 70
5. डॉ. राय गोविन्दचन्द, ***प्राचीन भारतीय मिट्टी के बर्तन,*** पुरातत्त्व, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1960, पृष्ठ 80
6. डॉ. श्रीभगवान सिंह, ***गुप्तकालीन हिन्दू देव-प्रतिमाएँ,*** प्रथम खण्ड, रामानन्द विद्या भवन, दिल्ली, 1982, पृष्ठ 65

****

म.प्र. सरकार की लोक आय का अध्ययन व विश्लेषण

डॉ. चन्द्रप्रकाश पँवार *

प्रस्तावना – लोक आय लोक वित्त अथवा राजस्व (Public Finance) का दूसरा महत्वपूर्ण अंग है। वर्तमान समय में लोक व्ययों में हो रही वृद्धि को देखते हुए लोक आय के परिमाण एवं महत्व में भी पर्याप्त वृद्धि हुई है। सरकार की जनकल्याणकारी योजनाओं का क्रियान्वयन, सफलता तथा लोकप्रियता लोक आय पर ही निर्भर होती है। सरकारों की कुशल राजकोषीय नीति सार्वजनिक व्ययों के विरुद्ध सार्वजनिक आय तथा सार्वजनिक ऋणों में संतुलन करके वित्तीय घाटों पर नियंत्रण रखती है तथा अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करती है।

लोक आय अथवा सार्वजनिक आय (Public Revenue) से आशय किसी वित्तीय वर्ष में सरकार को विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त होने वाली कुल प्राप्तियों से है जो राजस्व प्राप्तियाँ (Revenue Receipt) एवं पूंजीगत प्राप्तियाँ (Capital Receipts) में विभाजित की जाती है। प्रस्तुत शोध पत्र में म.प्र. सरकार की लोक आय की विभिन्न मदों का तुलनात्मक अध्ययन व विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित तीन उद्देश्य रहे।

1. म.प्र. सरकार की लोक आय के विभिन्न स्त्रोतों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. लोक आय की प्रवृत्ति का अध्ययन करना।
3. राजस्व प्राप्तियों व पूंजी प्राप्तियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन अवधि – शोध पत्र की अध्ययन अवधि वर्ष 2006-07 से 2015-16 तक 10 वर्ष की रही।

प्रयुक्त चल – राजस्व प्राप्तियां, पूंजी प्राप्तियां, कर राजस्व, कर भिन्न राजस्व, लोक ऋण, लोक लेखों से प्राप्तियां।

समंक संग्रहण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में म.प्र. शासन के संबंधित वर्षो के बजट प्रतिवेदन मे उपलब्ध द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है।

म.प्र. सरकार की लोक आय का अध्ययन व विश्लेषण – लोक आय के अंतर्गत सरकार की कुल बजट प्राप्तियाँ अर्थात राजस्व प्राप्तियाँ एवं पूँजीगत प्राप्तियाँ सम्मिलित होती है। म.प्र. सरकार की वर्ष 2006-07 से वर्ष 2015-16 तक की राजस्व प्राप्तियों एवं पूँजी प्राप्तियों को विश्लेषण तालिका 1, 2, 3 के द्वारा तथा ग्राफ 1 से 6 के द्वारा प्रदर्शित किया गया है। तालिका 1 म.प्र. सरकार की बजट प्राप्तियों यथा राजस्व प्राप्तियों एवं पूंजीगत प्राप्तियों की तुलनात्मक स्थिति को प्रदर्शित करती है। तालिका 2 में बजट प्राप्तियों को प्रवृत्ति प्रतिशत के रुप में प्रदर्शित किया गया है। तालिका 3 में बजट प्राप्तियों की मदो को प्रतिशत के रुप में प्रदर्शित किया गया है। उक्त तालिकाओं में सम्मिलित राजस्व प्राप्तियों तथा पूँजीगत प्राप्तियों का विवेचन इस प्रकार किया गया है।

A. राजस्व प्राप्तियाँ – राजस्व प्राप्तियों के अंतर्गत वे आय सम्मिलित होती है जिनका संबंध चालू वर्ष से होता है तथा इनके बदले में सरकार को कोई भुगतान नहीं करना होता है। तालिका 1 के अनुसार राजस्व प्राप्तियों के तीन स्त्रोत है यथा -कर राजस्व (राज्य कर व केंद्रीय करों में हिस्सा), कर भिन्न राजस्व, केंद्र से सहायता अनुदान।

कर राजस्व : कर राजस्व के रुप में प्रदेश सरकार को राज्य द्वारा लगाये गये करों से तथा केंद्रीय सरकार द्वारा करों में प्राप्त हिस्से से आय होती है। वर्ष 2006-07 में कर राजस्व के रुप में राज्य की आय रुपये 18561.67 करोड़ रुपये थी जिसमें अध्ययन अवधि में निरंतर वृद्धि होकर यह वर्ष 2015-16 में रुपये 80615.78 करोड़ रुपये रही। इसमें अध्ययन अवधि के दौरान 4.34 गुना वृद्धि प्रदर्शित हुई जो कि तालिका 5.2 द्वारा प्रदर्शित है। तालिका 5.3 के अनुसार कुल राजस्व प्राप्तियों में कर राजस्व का हिस्सा वर्ष 2006-07 में 72.24 प्रतिशत था जो अध्ययन अवधि के अंतिम वर्ष में अल्प उच्चावन के साथ 72.54 प्रतिशत रहा अर्थात कर राजस्व एवं राजस्व प्राप्तियों में समानानुपात में वृद्धि हुई।

राज्य कर :- वर्ष 2006-07 में कर राजस्व के रुप में राज्य कर से 10472.2 करोड़ रुपये तथा केंद्रीय करों में हिस्से के रुप में 8089.47 करोड़ रुपये की प्राप्तियाँ थी जो वर्ष 2015-16 में बढ़कर 40910 करोड़ रुपये तथा 39705.78 करोड़ रुपये रही जिसमें अध्ययन अवधि के दौरान क्रमश: 391 प्रतिशत तथा 491 प्रतिशत की वृद्धि प्रवृत्ति प्रतिशत की तालिका 5.2 से प्रदर्शित होती है। वर्ष 2006-07 में राज्य कर एवं केंद्रीय करों का अनुपात कर राजस्व (72.27 प्रतिशत) का क्रमश:40.76 प्रतिशत तथा 31.48 प्रतिशत था जो वर्ष 2015-16 में समान अनुपात की ओर प्रवृत्त होकर क्रमश: 36.81 प्रतिशत तथा 35.73 प्रतिशत रहा जैसा कि तालिका 3 द्वारा प्रदर्शित होता है। यह प्रवृत्ति ग्राफ 1 द्वारा भी प्रदर्शित की गई है जिसमें राज्य कर की रेखा केन्द्रीय करों के हिस्सों की तरफ प्रवृत्त होकर अध्ययन के अंतिम वर्ष में साम्य स्थापित कर रही है।

ग्राफ 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 1 व 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

कर भिन्न राजस्व – तालिका 1 के अनुसार वर्ष 2006-07 में रुपये 2658.46 करोड़ की प्राप्तियाँ थी जो वर्ष 2015-16 में 9707.31 करोड़ रुपये हो गई। प्रवृत्ति प्रतिशत की तालिका 2 के अनुसार इसमें 365 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई जो आय के अनय स्त्रोतों की तुलना में सर्वाधिक न्यून रही। वर्ष 2006-07 में कर भिन्न राजस्व कुल राजस्व का 10.35 प्रतिशत था जो वर्ष 2015-16 में कम होकर 8.74 प्रतिशत रह गया अर्थात कर राजस्व

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

की तुलना में कर भिन्न राजस्व की वृद्धि दर कम रही, जैसा कि तालिका 3 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है।

केंद्र से सहायता अनुदान – राज्यों को केन्द्रीय कर के हिस्से के अतिरिक्त विभिन्न केंद्र व राज्य की योजनाओं के लिये केंद्र से सहायता अनुदान प्राप्त होता है। तालिका 1 के अनुसार वर्ष 2006–07 में रुपये 4474.15 करोड़ रुपये का केंद्रीय सहायता अनुदान प्राप्त हुआ था जो वर्ष 2015–16 में 20807.57 करोड़ रुपये हो गया। इस मद में वर्ष 2006–07 के आधार वर्ष की तुलना में वर्ष 2015–16 की तुलना में 465 प्रतिशत वृद्धि प्रवृत्ति प्रतिशत की तालिका 2 द्वारा प्रदर्शित की गई है। तालिका 3 के अनुसार वर्ष 2006–07 में यह अनुदान अध्ययन के वर्षो में कुल राजस्व प्राप्तियों का औसत 17.41 प्रतिशत रहा। जबकि न्यूनतम वर्ष 2014–15 में 15.55 तथा अधिकतम 19.85 प्रतिशत वर्ष 2014–15 में रहा।

कुल राजस्व प्राप्तियाँ – अध्ययन काल में उक्त स्त्रोतों से कुल राजस्व प्राप्तियाँ 25694.28 करोड़ रुपये से बढ़कर 111130.7 करोड़ रुपये हो गई। तालिका 2 के अनुसार इनमें निंरतर वृद्धि की प्रवृत्ति प्रदर्शित हुई जो वर्ष 2015–16 तक 433 प्रतिशत तक रही। तुलनात्मक रुप से यह वृद्धि सर्वाधिक केन्द्रीय करों से प्राप्त हिस्से व केन्द्रीय सहायता व अनुदान की रही जो क्रमश: 491 तथा 465 प्रतिशत थी। तीसरे व चौथे स्थान पर राज्य करों व कर भिन्न राजस्व से रही जो 391 प्रतिशत तथा 365 प्रतिशत थी। इस प्रकार राजस्व स्त्रोतों की तुलना में केंद्रीय स्त्रोतों की वृद्धि दर अधिक रही। राजस्व प्राप्तियों के चारों स्त्रोतों की तुलनात्मक स्थिति को ग्राफ 2 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है जिसमें वर्ष 2015–16 में राज्य के कर स्त्रोतों में वृद्धि केन्द्रीय कर स्त्रोतों के बराबर प्रदर्शित हो रही है किंतु राज्य के गैर कर राजस्व में यह वृद्धि अनुपातिक रुप से कम प्रदर्शित हुई है। आय के चारों स्त्रोतों की औसत वृद्धि की स्थिति को ग्राफ 3 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है।

ग्राफ 2 व 3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

B. पूंजीगत प्राप्तियाँ : – पूंजीगत प्राप्तियाँ वे दीर्घकालीन प्राप्तियाँ होती है जिनका भुगतान आगामी वर्षो में करना होता है। तालिका 1 के अनुसार पूंजीगत प्राप्तियों के अंतर्गत विविध पूंजीगत प्राप्तियाँ तथा ऋण व अग्रिम की वसूली , शुद्ध लोक–ऋण, लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियाँ सम्मिलित है।

विविध प्राप्तियाँ/ऋण एवं अग्रिम की वसूली – तालिका 1 के अनुसार इस मद में अध्ययन के वर्षो में उच्चावचन की स्थिति रही। अध्ययन के दो वर्षो यथा 2011–12 एवं 2014–15 को छोड़कर शेष वर्षो में कुल पूंजी प्राप्तियों के 1 से 8 प्रतिशत तक रही। जैसा कि तालिका 3 द्वारा भी प्रदर्शित होता हैं वर्ष 2011–12 व वर्ष 2014–15 में इस मद में क्रमश: 9147.86 करोड़ रुपये व 6793.7 करोड़ रुपये की प्राप्तियाँ रही जो कि म.प्र. विद्युत वितरण कम्पनियो को राज्य सरकार द्वारा दिये गये ऋण के समायोजन क्रमश: 9085 करोड़ रुपये व 6693.68 करोड़ रुपये के कारण रही।

शुद्ध लोक–ऋण – कुल प्राप्त लोक–ऋणों में से भुगतान किये गये लोक–ऋणों को घटाने पर शुद्ध लोक–ऋण प्राप्त होता है। वर्ष 2006–07 में लोक–ऋणों की कुल प्राप्तियाँ 4602.97 करोड़ रुपये थी जो वर्ष 2015–16 में 23005.71 करोड़ रुपये हो गई। लोक–ऋणों में यह वृद्धि वर्ष 2010–11 में 2011–12 को छोड़कर निरन्तर परिलक्षित हुई जो तालिका 2 के अनुसार 500 प्रतिशत तक रही। इसी प्रकार लोक–ऋणों के भुगतान में भी निरन्तर वृद्धि की प्रवृत्ति रही जो वर्ष 2015–16 तक 311 प्रतिशत तक रही। भुगतान की यह प्रवृत्ति प्राप्तियों की तुलना में कम रही। लोक–ऋणों की प्राप्तियों एवं भुगतान की स्थिति को ग्राफ 4 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है। शुद्ध लोक–ऋण वर्ष 2006–07 में 2871.44 करोड़ रुपये थी जिसमें वर्ष 2015–16 तक 614 प्रतिशत वृद्धि (तालिका 2) होकर यह 17622.54 करोड़ रुपये हो गये। तालिका 2 के अनुसार लोक–ऋणों की प्रवृत्ति अध्ययन के प्रथम छ: वर्षो तक उच्चावचन की रही तथा अंतिम के चार वर्षो में निंरतर वृद्धि की रही। तालिका 3 पूंजीगत प्राप्तियों से लोक–ऋणों का प्रतिशत प्रदर्शित करती है। पूंजीगत प्राप्तियों में लोक–ऋणो का औसत 89 प्रतिशत रहा। सर्वाधिक कम 19.66 प्रतिशत (3600.46 करोड़ रुपये) वर्ष 2011–12 में रहा जो कि वास्तव में विविध पूंजीगत प्राप्तियों एवं ऋण एवं अग्रिम की वसूली मद में ऊंचा प्रतिशत होने के कारण रहा। तालिका 3 के अनुसार वर्ष 2006–07 व 2009–10 में लोक–ऋण कुल पूंजी प्राप्तियों के क्रमश: 119.21 प्रतिशत व 123.09 प्रतिशत रहे अर्थात लोक–ऋणों की मात्रा कुल पूंजी प्राप्तियों से अधिक रही अथवा इन वर्षो में लोक ऋण मद से लोक लेखा दायित्वों का भुगतान होना रहा। तालिका 1 व 2 वर्ष 2006–07 व वर्ष 2009–10 व वर्ष 2010–11 में लोक लेखों से दायित्व की राशियां ऋणात्मक होना प्रदर्शित कर रही है।

ग्राफ 4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

लोक लेखों से प्राप्तियां : इस मद के अंतर्गत राज्य भविष्य निधि, लघु बचत और आरक्षित निधियों से प्राप्तियाँ सम्मिलित होती है। तालिका 1 के अनुसार अध्ययन के वर्षो में लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियों की कोई निष्चित प्रवृत्ति प्रदर्शित नही हुई। वर्ष 2006–07, 2009–10, तथा वर्ष 2010–11 में लोक लेखा प्राप्तियाँ ऋणात्मक थी अर्थात सरकार ने इस मद से प्राप्तियों से अधिक राशि भुगतान की जिसका स्त्रोत लोक–ऋणों से प्राप्तियाँ रहा। वर्ष 2011–12, 2012–13 तथा 2013–14 में लोक लेखा से प्राप्तियाँ कुल पूंजी प्राप्तियाँ का लगभग एक तिहाई से अधिक रही। औसत रुप में लोक लेखा प्राप्तियाँ कुल पूंजी प्राप्तियों के 9.73 प्रतिशत रही।

कुल मिलाकर पूंजी प्राप्तियाँ जो वर्ष 2006–07 में 2408.66 करोड़ रुपये थी, बढ़कर वर्ष 2015–16 में 21282.74 करोड़ रुपये हो गई। तालिका 2 के अनुसार यह वृद्धि 8.4 गुना रही। पूंजीगत प्राप्तियों के तीन स्त्रोतों में सर्वाधिक हिस्सा 89 प्रतिशत (औसत) लोक–ऋणों का रहा जबकि लोक लेखा प्राप्तियाँ 9.73 प्रतिशत औसत रही। शेष प्राप्तियाँ विविध पूंजीगत प्राप्तियाँ, ऋण एवं अग्रिम की वसूली के अंतर्गत रही। पूंजीगत प्राप्तियों की स्त्रोतवार तुलनात्मक स्थिति ग्राफ 5 द्वारा भी प्रदर्शित की गई है। जिसमें वर्ष 2011–12 तथा 2014–15 में विविध पूँजीगत प्राप्तियों में असामान्य वृद्धि विद्युत वितरण कम्पनियों के ऋणों के समायोजन के कारण रही जबकि लोक लेखे की प्राप्तियाँ वर्ष 2006–07, 2009–10 तथा 2010–11 में ऋणात्मक रही तथा लोक ऋणों में सर्वाधिक वृद्धि अंतिम दो वर्षो में प्रदर्शित हुई।

ग्राफ 5 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

C. कुल प्राप्तियाँ – तालिका 1 के अनुसार वर्ष 2006–07 में कुल प्राप्तियाँ 28102.94 करोड़ रुपये थी जो वर्ष 2015–16 में 132413.4 करोड़ रुपये हो गई। तालिका 2 के अनुसार इन प्राप्तियों में निंरतर वृद्धि परिलक्षित हुई जो 471 प्रतिशत तक रही। तालिका 3 कुल प्राप्तियों में राजस्व प्राप्तियों तथा पूंजीगत प्राप्तियों के अनुपात को प्रदर्शित करती है जिसके अनुसार राजस्व प्राप्तियाँ व पूंजीगत प्राप्तियाँ क्रमश: 91.43 तथा 8.57 प्रतिशत थी जो वर्ष 2015–16 में 83.93 प्रतिशत तथा 16.7 प्रतिशत हो गई अर्थात कुल प्राप्तियों में शनै: शनै: पूंजीगत प्राप्तियों के अनुपात मे वृद्धि दर्ज हुई। इस प्रवृति को ग्राफ 6 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है।

ग्राफ 6 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

निष्कर्ष – शोध अध्ययन के निम्नलिखित निष्कर्ष रहे :

1. राजस्व प्राप्तियों के चार स्त्रोत है यथा राज्य कर, केन्द्रीय करों में हिस्सा, कर भिन्न राजस्व तथा केन्द्रीय सहायता अनुदान। राजस्व के उक्त चारों स्त्रोतो में सर्वाधिक वृद्धि की प्रवृत्ति 491 प्रतिशत केन्द्रीय करों से रही जबकि दूसरे क्रम पर केन्द्रीय सहायता अनुदान रहे जिनमें अध्ययन अवधि में 465 प्रतिशत की वृद्धि हुई। तीसरे तथा चौथे क्रम पर राज्य कर व कर भिन्न राजस्व रहे जिनमें क्रमश: 391 प्रतिशत तथा 365 प्रतिशत की वृद्धि रही। इस प्रकार वृद्धि की यह प्रवृत्ति राज्य के राजस्व स्त्रोतों के तुलना में केन्द्रीय स्त्रोतों में अधिक रही।
2. स्त्रोतवार कुल राजस्व प्राप्तियों से तुलना करने पर पाया कि वर्ष 2015-16 में सर्वाधिक योगदान कर राजस्व का था जिसमें राज्य करों से 36.81 प्रतिशत तथा केंद्रीय करों से 35.73 प्रतिशत राजस्व प्राप्त हुआ था। तीसरे व चौथे क्रम पर क्रमश:केंद्रीय सहायता अनुदान तथा कर भिन्न राजस्व रहे जिनसे 18.72 तथा 8.74 प्रतिशत राजस्व प्राप्त हुआ। कर राजस्व के दोनों स्त्रोतों की तुलना करने पर पाया कि अध्ययन अवधि में सर्वाधिक योगदान राज्य करों का रहा किंतु अध्ययन के अंतिम वर्ष में केंद्रीय करों से प्राप्तियों में वृद्धि होकर वह राज्य करों के समकक्ष रही।
3. राजस्व प्राप्तियाँ कुल प्राप्तियों से औसतन 87.43 प्रतिशत थी। प्रथम वर्ष में राजस्व प्राप्तियों का प्रतिशत 91.43 था जो अध्ययन के अंतिम वर्ष में कम होकर 83.93 प्रतिशत रहा। यह स्थिति प्रदर्शित करती है कि सरकार की पूंजी प्राप्तियों अर्थात ऋणों पर निर्भरता में वृद्धि हुई।
4. पूंजीगत प्राप्तियों में शुद्ध लोक-ऋणों की मात्रा 89 प्रतिशत जबकि लोक-लेखा दायित्व 9.73 प्रतिशत थे शेष राशि विविध पूंजीगत प्राप्तियाँ एवं अग्रिम से वसूली की रही।
5. लोक ऋणों की प्राप्तियों एवं भुगतान की प्रवृत्ति की तुलना करने पर पाया कि प्राप्तियों में अध्ययनकाल में पांच गुना वृद्धि की प्रवृत्ति रही जबकि भुगतान की प्रवृत्ति कम होकर लगभग तीन गुना थी।

सुझाव :

1. अर्थव्यवस्था की मजबूती के लिये वित्तीय समेकन आवश्यकता है। विकास के नाम पर एफ आर बी.एम. के अधिनियम के प्रावधानों का युक्ति युक्तकरण किये जाने की आवश्यकता है इस संबंध में यह सुझाव है कि राजकोषीय घाटे को एक निश्चित लक्ष्य अथवा सीमा तय न करके एक श्रेणी अथवा दायरा तय किया जाना चाहिए। जिसके भीतर ऋण संसाधन जुटाये जाये अथवा संभव ना होने पर खर्चो में कटौति की जाए। क्योकि तेजी से बदलते परिवेश में सरकार के पास नीतिगत फैसले लेने के लिय पर्याप्त आर्थिक गुंजाइश होनी चाहिये।
2. राजकोषीय घाटे के निर्धारित लक्ष्यो से विचलन कम करने के लिए एक राजकोषीय समानीकरण कोष (Fiscal Equalisation Fund) के निर्माण का सुझाव दिया जाता है जिसमे सरकार राजस्व आय का एक निश्चित प्रतिशत इस कोष में जमा कर तथा कोष की राशि को पुन: तरल प्रतिभूतियों में निवेशित किया जाये ताकि संकट के समय इस राशि का प्रयोग किया जा सके।
3. सरकार को विकासात्मक कार्यो के वित्तीयन के लिये पृथक से पूंजी - बजट निर्मित करना चाहिये जिसमें प्राथमिकता के आधार पर वित्तीय संसाधनो का आबंटन सुनिश्चित हो साथ ही ऋण साधनों से वित्त पोषण का अनुपात भी पूर्व निर्धारित हो।
4. अनिष्चित वैश्विक माहौल में विकास की गति बनाये रखने हेतु साख बनाये रखना और ऋण पर नियत्रंण रखना आवश्यक है अत: सरकार को अपने बजट संसाधनो की कार्य कुषलता में सुधार करके तथा गैर कर राजस्व के नये स्त्रोतो की खोज करके अपनी राजकोशीय गुंजाइश को बढ़ाना चाहिए।
5. अर्थव्यवस्था की पूरी क्षमता का उपयोग करने के लिए आयोजना व्ययो के वित्तीयन में सार्वजनिक - निजी भागीदारी (Public-Private Partnership) संबंधी दिशा-निर्देशों पर विचार करना चाहिए।
6. म.प्र. सरकार को अपनी आय का 50 प्रतिशत से अधिक हिस्सा केन्द्र सरकार से प्राप्त हो रहा है जो कि राज्यों के पूँजीगत व्ययों के वित्त पोषण में योगदान देता है अत: राज्यों को अपने राजस्व व्ययों का विश्लेषण करना आवष्यक है। बजट व्ययों को राजस्व से पूँजीगत व्ययों में बदल कर व्यय की गुणवत्ता में सुधार करने पर विचार किया जाना चाहिए जैसा की चौदहवें वित्त आयोग ने भी इस संबंध में सिफारिश की है।
7. राज्य की प्राथमिकताओं में उर्जा क्षेत्र शामिल है अत: विद्युत वितरण कम्पनियों को घाटे से निकाल कर वित्त रूप से आत्म निर्भर बनाना सरकार का लक्ष्य होना चाहिए। इस संबध में यह सुझाव है कि

i. घाटे में चल रही सार्वजनिक इकाइयों का विनिवेशीकरण नही करके निजीकरण कर देना चाहिए क्योकि कुछ मामलों में विकास को लेकर खुली आर्थिक नीति अपनाना नुकसानदायक नही है

ii. चूंकि ऊर्जा क्षेत्र राज्य की प्राथमिकताओ में शामिल है। अत: केंद्र सरकार से इस संबंध में आर्थिक सहायता प्राप्त की जाना चाहिये।

iii. सरकार को इन कम्पनियों की बेकार पड़ी सम्पत्तियो का विक्रय करके भी संसाधन जुटाये जाने चाहिये।

8. नियोजित विकास के लिये पर्याप्त संसाधन बजटीय स्त्रोतों से उपलब्ध होना संभव नहीं है। अत: औद्योगिक एवं आधारभूत संरचना विकास के लिये निजी क्षेत्र को आमंत्रित किया जाना चाहिये।
9. केंद्रीय सरकार की वित्तीय शक्ति एवं साख क्षमता अधिक होने से वह राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजारों से आवश्यकतानुसार कम लागत पर ऋण जुटा सकती है किंतु राज्य सरकारें अपनी सीमित वित्तीय क्षमताओं तथा साख सीमाओं के कारण पर्याप्त मात्रा में ऋण नहीं प्राप्त कर सकती है। राज्य सरकारों को विदेशों से ऋण लेने की अनुमति संविधान में भी नही है। एक ही देश में विभिन्न स्तरों पर ब्याज दरों में असमानता का सामना भी राज्य सरकारों को करना पड़ता है। अत: इस प्रकार की विसंगतियों को दूर करने तथा केंद्र एवं राज्य सरकारों की उधार प्रक्रिया में समन्वय स्थापित करने हेतु एक स्वतंत्र ऋण प्रबंधन एजेंसी की स्थापना की जाना चाहिये।
10. राज्यों को अपनी साख क्षमता का उपयोग करते हुए अल्पकालीन ऋणों के स्थान पर दीर्घकालीन सस्ते ऋण लेने चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. म.प्र. सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2006-07 से 2015-16
2. आर्थिक समीक्षा वर्ष 2006-07 से 2015-16
3. तेरहवे वित्त आयोग की रिपोर्ट, वित्त मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली
4. चौदहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट, वित्त मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली
5. वित्तीय क्षेत्र विधायी सुधार आयोग (2013) की रिपोर्ट, वित्त मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली
6. वार्ष्णेय, जे.सी., राजस्व, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2005

तालिका 1 – म.प्र. सरकार की बजट प्राप्तियों की तुलनात्मक स्थिति (करोड़ में)

प्राप्तियाँ	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16 सं. पू.
A. राजस्व प्राप्तियाँ	25694.28	30688.73	33577.21	41394.7	51854.19	62604.08	70427.28	75749.24	88640.79	111130.7
1. कर राजस्व (1.1+1.2)	18561.67	22221.14	24380.64	28349.79	37057.86	45192.58	51386.86	56267.43	60674.11	80615.78
1.1 राज्य कर	10472.2	12017.63	13613.5	17272.8	21419.34	26973.44	30581.7	33552.15	36567.31	40910
1.2 केंद्रीय करों में हिस्सा	8089.47	10203.51	10767.14	11076.99	15638.51	18219.14	20805.16	22715.28	24106.8	39705.78
2. कर भिन्न राजस्व	2658.46	2738.18	3342.86	6382.04	5719.77	7482.73	7000.22	7704.99	10375.24	9707.31
3. केंद्र से सहायता अनुदान	4474.15	5729.41	5853.71	6662.87	9076.56	9928.77	12040.2	11776.82	17591.44	20807.57
A. राजस्व प्राप्तियाँ	25694.28	30688.73	33577.21	41394.7	51854.19	62604.08	70427.28	75749.24	88640.79	111130.7
B. पूंजीगत प्राप्तियां	2408.66	1932.64	4974.89	5043.88	5009.65	18309.52	8535.44	10448.81	18172.39	21282.74
1. विविध पूंजीगत प्राप्तियां/ ऋण एवं अग्रिम की वसूली	38.42	118.1	78.41	47.82	401.84	9147.86	73.12	131.63	6793.7	349.9
2. शुद्ध लोक–ऋण (2.1–2.2)	2871.44	1693.95	4591.96	6208.46	4928.71	3600.46	5207.22	5536.18	10148.19	17622.54
2.1 प्राप्तियां	4602.97	3370.95	6552.97	8602.51	7457.94	6750.25	8791.16	9540.82	15068.71	23005.71
2.2 भुगतान	1731.53	1677	1961.01	2394.05	2529.23	3149.79	3583.94	4004.64	4920.52	5383.17
3.लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियाँ	-501.2	120.59	304.52	-1212.4	-320.9	5561.2	3255.1	4781	1230.5	3310.3
C. कुल प्राप्तियाँ (A+B)	28102.94	32621.37	38552.1	46438.58	56863.84	80913.6	78962.72	86198.05	106813.2	132413.4

स्त्रोतः मध्यप्रदेश सरकार के बजट प्रतिवेदन सत्र 2006–07 से 2015–16

तालिका 2 – म.प्र. सरकार की बजट प्राप्तियों का प्रवृत्ति प्रतिशत

प्राप्तियाँ	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16
A. राजस्व प्राप्तियाँ	100	119	131	161	202	244	274	295	345	433
1. कर राजस्व (1.1+1.2)	100	120	131	153	200	243	277	303	327	434
1.1 राज्य कर	100	115	130	165	205	258	292	320	349	391
1.2 केंद्रीय करों में हिस्सा	100	126	133	137	193	225	257	281	298	491
2. कर भिन्न राजस्व	100	103	126	240	215	281	263	290	390	365
3. केंद्र से सहायता अनुदान	100	128	131	149	203	222	269	263	393	465
B. पूंजीगत प्राप्तियां	100	80	207	209	208	760	354	434	754	884
1. विविध पूंजीगत प्राप्तियां / ऋण एवं अग्रिम की वसूली	100	307	204	124	1046	23810	190	343	17683	911
2. शुद्ध लोक–ऋण (2.1–2.2)	100	59	160	216	172	125	181	193	353	614
2.1 प्राप्तियां	100	73	142	187	162	147	191	207	327	500
2.2 भुगतान	100	97	113	138	146	182	207	231	284	311
3. लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियाँ (वास्तविक आंकड़े)	-501.2	120.59	304.52	-1212.4	-320.9	5561.2	3255.1	4781	1230.5	3310.3
C. कुल प्राप्तियाँ (A+B)	100	116	137	165	202	288	281	307	380	471

स्त्रोत: मध्यप्रदेश सरकार के बजट प्रतिवेदन सत्र 2006–07 से 2015–16

तालिका 3 – म.प्र. सरकार की बजट प्राप्तियाँ (प्रतिशत के रुप में)

प्रवग्र/ वर्ष	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16	औसत
A. राजस्व प्राप्तियॉं											
1. कर राजस्व (2.1+2.2)	72.24	72.41	72.61	68.49	71.47	72.19	72.96	74.28	68.45	72.54	71.76
1.1 राज्य कर	40.76	39.16	40.54	41.73	41.31	43.09	43.42	44.29	41.25	36.81	41.24
1.2 केंद्रीय करों में हिस्सा	31.48	33.25	32.07	26.76	30.16	29.10	29.54	29.99	27.20	35.73	30.53
2. कर भिन्न राजस्व	10.35	8.92	9.96	15.42	11.03	11.95	9.94	10.17	11.70	8.74	10.82
3. केंद्र से सहायता अनुदान	17.41	18.67	17.43	16.10	17.50	15.86	17.10	15.55	19.85	18.72	17.42
राजस्व प्राप्तियॉं योग	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00
B. पूंजीगत प्राप्तियां											
1. विविध पूंजीगत प्राप्तियां/ ऋण एवं अग्रिम की वसूली	1.60	6.11	1.58	0.95	8.02	49.96	0.86	1.26	37.38	1.64	10.94
2. शुद्ध लोक–ऋण (2.1–2.2)	119.21	87.65	92.30	123.09	98.38	19.66	61.01	52.98	55.84	82.80	79.29
3. लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियाँ	-20.81	6.24	6.12	-24.04	-6.41	30.37	38.14	45.76	6.77	15.55	9.77
पूंजीगत प्राप्तियां योग	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00
कुल राजस्व प्राप्तियां	91.43	94.08	87.10	89.14	91.19	77.37	89.19	87.898	82.99	83.93	87.43
कुल पूंजीगत प्राप्तियां	8.57	5.92	12.90	10.86	8.81	22.63	10.81	12.12	17.01	16.07	12.57
C. कुल प्राप्तियाँ (A+B)	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00

स्त्रोत: मध्यप्रदेश सरकार के बजट प्रतिवेदन सत्र 2006–07 से 2015–16

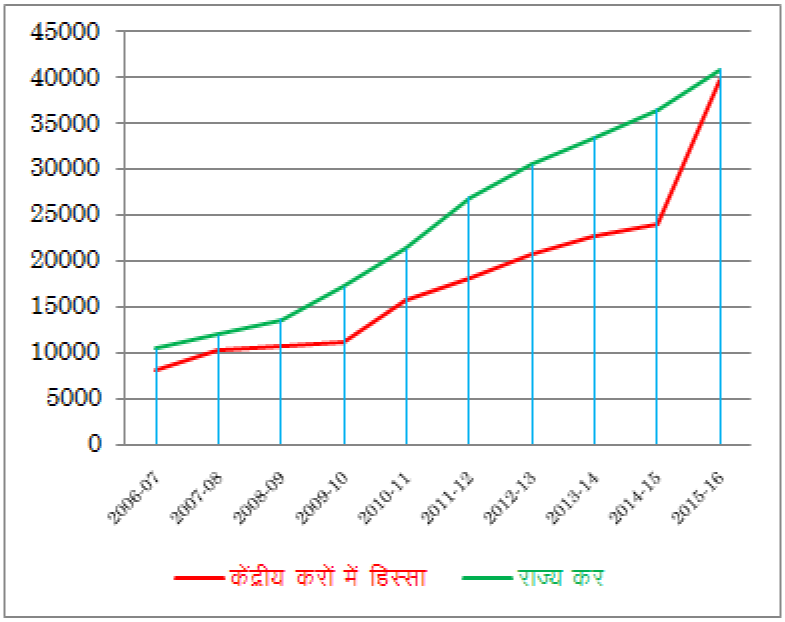

ग्राफ 1 – म.प्र. सरकार के राज्य करों एवं केंद्रीय करों में हिस्से की तुलनात्मक स्थिति

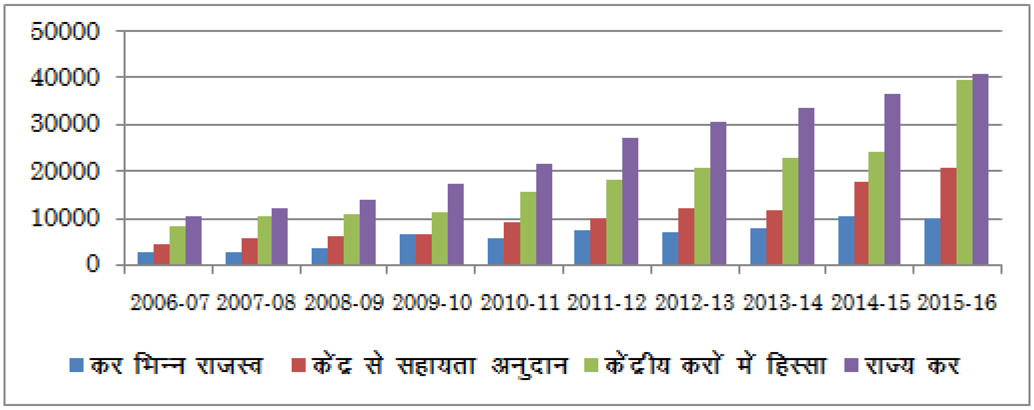

ग्राफ 2 – म.प्र. सरकार की राजस्व प्राप्तियों की तुलनात्मक स्थिति

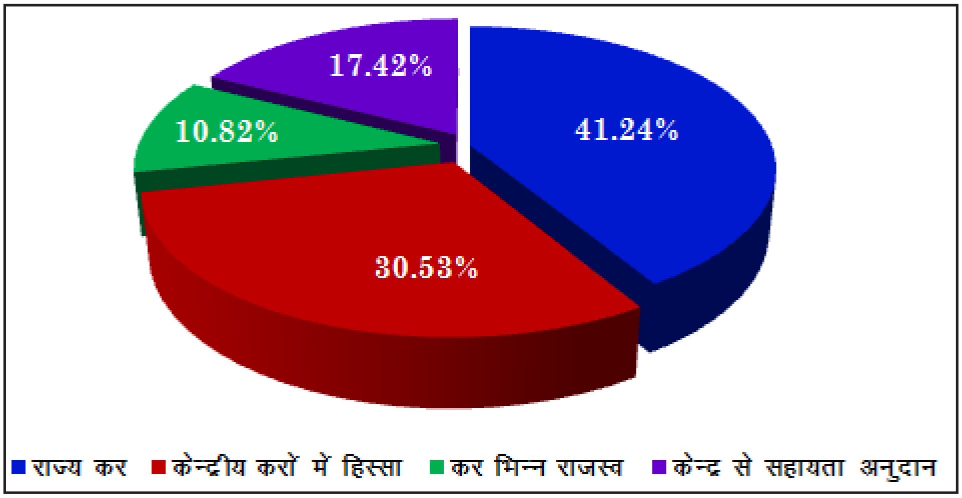

ग्राफ 3 – राजस्व प्राप्तियों के स्रोत (औसत प्रतिशत)

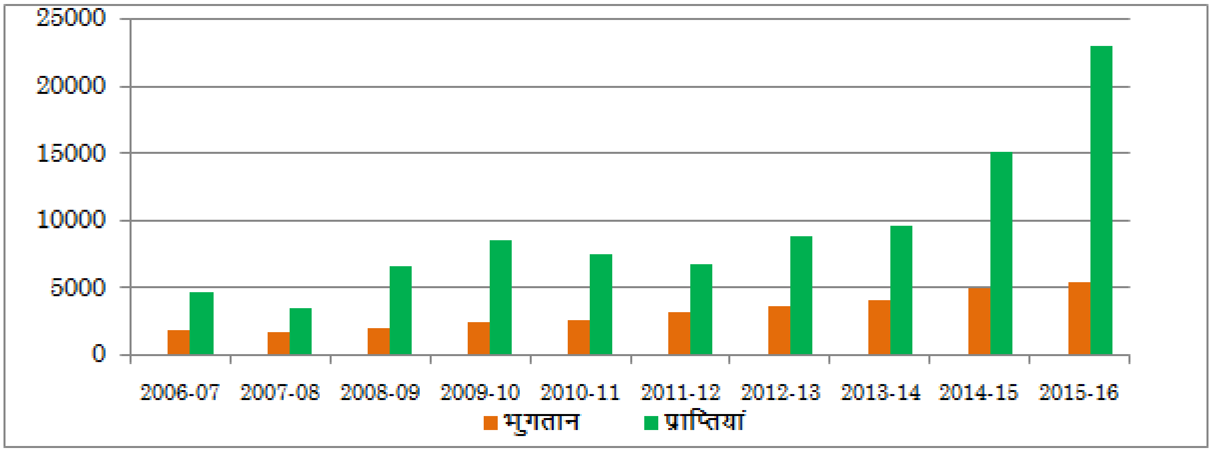

ग्राफ 4 – लोक-ऋणों की प्राप्तियां एवं भुगतान की स्थिति

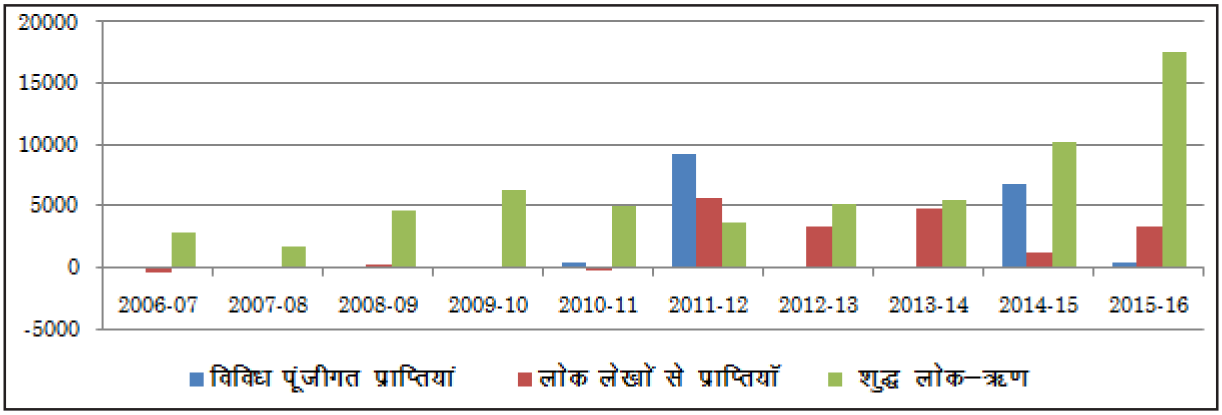

ग्राफ 5 – म.प्र. सरकार की पूंजीगत प्रासियों की तुलनात्मक स्थिति

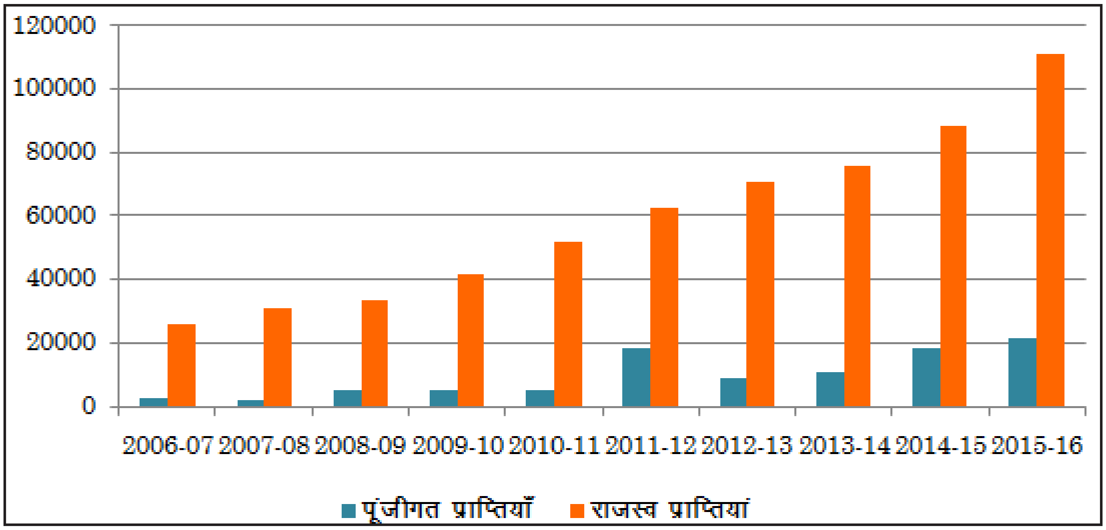

ग्राफ 6 – म.प्र. सरकार की राजस्व व पूंजीगत प्राप्तियों की तुलनात्मक स्थिति

****

योग दर्शन : अध्यात्म और विज्ञान

मंजू तिवारी *

प्रस्तावना - योग दर्शन अनुशासन पद्धति के आधार स्तंभ के रूप में योग समाधि है। समाधि सभी भूमियों को चित्त में रखने वाले साधन धर्म है। तत्तव साक्षात्कार के लिए योग साधना पद्धति आवश्यक है। योग दर्शन की उपयोगिता वैदिक और अवैदिक दर्शन को मान्य है। योग शब्द का अर्थ जीवात्मा को ईश्वर (परमात्मा) से मिलन है। योग के कारण योगी बड़े से बड़े कष्टकारक दु:खों से विचलित नहीं होता है। उसका परिणाम आध्यात्मिक शक्ति है। आध्यात्मिक शक्ति के निरूपण से अनेक कष्टों से लड़ने के लिए व्यक्ति तत्पर रहता है। उसी प्रकार विज्ञान भी अनेक समस्याओं का समाधान प्रयोगात्मक रूपों में प्रदान करती है। जिस प्रकार से योग की साधना पद्धति पूर्णत: वैज्ञानिक परीक्षण में उत्तारित है।

योग दर्शन के आदि आचार्य हिरण्यगर्भ है। हिरण्यगर्भ-सूत्रों के आधार पर (जो इस समय लुप्त है) पतञ्जलि मुनि ने योग दर्शन का निर्माण किया। योगदर्शन के चार पाद है को 195 सूत्रों में विभक्त किया गया है। प्रथमत: समाधिपाद में 51 सूत्रों की व्याख्या है, द्वितीय साधनपाद में 55 सूत्रों में व्याख्या मिलती है, तृतीय विभूतिपाद में 55 सूत्रों का और चतुर्थ केवल्यपाद में 34 सूत्रों का वर्णन के आधार पर योग की प्रासंगिकता है।

शोध प्रविधि - इस शोध पत्र **योग दर्शन : अध्यात्म और विज्ञान** में द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार पर अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ धार्मिक ग्रन्थों के मूल तत्वों को सन्दर्भित करते हुए विद्वानों का मार्गदर्शन लिया गया है। वैज्ञानिक निरूपण हेतु वैज्ञानिक ग्रन्थावलियों को समझने का प्रयास किया गया है। इस आधार पर शोध पत्र तैयार किया गया है।

समस्या :

1. वर्तमान में व्यक्तियों में शारीरिक बीमारी की समस्या।
2. आलस्य की समस्या।
3. मन के स्थिरता की समस्या।
4. मनोविकार की समस्या।

उद्देश्य :

1. योग मानव के मनोविकार को सुलझाने का अध्ययन।
2. योग के द्वारा आलस्य की समस्या को दूर करने का अध्ययन।
3. योग के द्वारा मनुष्य की अन्दर पनप रही बीमारी को हटाने के उपाय का अध्ययन।
4. मानसिक बीमारी से समाधान ढूढ़ने का अध्ययन।

समाधान :

1. **समाधिपाद -** इसमें समाहित चित्त वाले सबसे उत्ताम अधिकारियों के लिए योग का वर्णन किया गया हैं। समाधिपाद एक प्रकार से निम्न तीन सूत्रों की विस्तृत व्याख्या है।

1. योग चित्त की वृत्तियों का रोकना है।
2. वृत्तियों का निरोध होने पर द्रष्टा के स्वरुप में अवस्थिति होती है ।
3. स्वरूपावस्थिति से अतिरिक्त अवस्था में द्रष्टा वृत्ति के समान रूप वाला प्रतीत होता है।

चित्त, बुद्धि, मन और अन्त:करण लगभग पर्यायवाचक समानार्थक शब्द है। जिनका भिन्न-भिन्न दर्शनकारों ने अपनी-अपनी परिभाषाओं के रूप में प्रयोग किया है।

मन की चंचलता प्रसिद्ध है। सृष्टि के सारे कार्यो में मन की स्थिरता ही सफलता का कारण है। सृष्टि के महान पुरुषों की अद्‌भुत शक्तियों में उनके मन की एकाग्रता का रहस्य छिपा होता है।[1]

योग के अन्तर्गत मन को दो प्रकार से रोका जा सकता है-केवल एक विषय में लगातार ध्यानस्थ होने की प्रक्रिया द्वारा और दूसरा दुराग्रह के विचार न आने पावे, इसको एकाग्रता अथवा सम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं।

1. वितर्क - किसी स्थूल विषय में चित्तवृत्ति की एकाग्रता।
2. विचार - किसी सुक्ष्म विषय में चित्तवृत्ति की एकाग्रता ।
3. आनन्द - अहंकार विषय में चित्तवृत्ति की एकाग्रता ।
4. अस्मिता - अहंकार रहित अस्मिता विषय में चित्तवृत्ति की एकाग्रता।

इसकी सबसे ऊँची अवस्था विवेक ख्याति है, जिसमे चित्त का आत्मध्यास छूट जाता है और उसके द्वारा आत्मस्वरूप का उससे पृथक-रूप में साक्षात्कार होने लगता है, किन्तु योग दर्शन में इसको वास्तविक आत्मा स्थिति नहीं बतलाया गया है। यह भी चित्त की एक वृत्ति अथवा मन का ही एक विषय पर एकाग्र होना है। (एक उच्चत्तम सात्तिवक वृत्ति का परिणाम है), किन्तु इसका निरन्तर अभ्यास वास्तविक स्वरूपस्थिति में सहायक होता है।[2]

निरोध अपने स्वरुप का सर्वथा नाश हो जाना नहीं है, बल्कि जड़ तत्तव के अविवेकपूर्ण संयोग का चेतन तत्तव से सर्वथा नाश हो जाना है। इस संयोग के न रहने पर द्रष्टा की शुद्ध आत्मा परमात्मा स्वरुप में अवस्थिति होती है।

2. **साधनपाद -** इसमें विक्षिप्त चित्तवाले मध्यम अधिकारियों के लिए योग का साधन बतलाया गया है।

सर्वबन्धनों और दु:खों के मूल कारण पाँच क्लेश है- अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश।

क्लेशों से कर्म की वासनाएँ उत्पन्न होती है। कर्म-वासनाओं से जन्म रूप वृक्ष उत्पन्न होता है। उस वृक्ष में जाति, आयु और भोग रुपी तीन प्रकार के फल लगते हैं।[3]

इन तीन फलों से सुख-दु:ख रुपी दो प्रकार का स्वाद उत्पन्न होता है। जो पुण्य कर्म (हिंसा रहित दूसरे के कल्याणार्थ) किये जाते हैं उनसे जाति,

*शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

आयु और भोग में सुख प्राप्त होता है। जो पाप कर्म (हिंसात्मक और दूसरों को दु:ख पहुँचाने की लिए) किये जाते हैं। उनसे जाति, आयु और भोग में दु:ख प्राप्त होता है। किन्तु यह सुख भी तत्त्ववेत्ता की दृष्टि में दु:खस्वरूप ही है, क्योंकि विषयों में परिणाम दु:ख, ताप दु:ख और संस्कार दु:ख मिला हुआ होता है। ये तीनों गुणों के सदा अस्थिर रहने के कारण उनकी सुख-दु:ख और मोह रुपी वृत्तियाँ भी बदल जाती है। इसलिए सुख के पीछे दु:ख का होना आवश्यक है। दु:ख के नितांत अभाव का उपाय निर्मल अड़ोल विवेक ख्याति है। विवेकख्याति की सात प्रकार की सबसे ऊँची अवस्था प्रज्ञ होती है।[4]

1. **जो कुछ जानना था जान लिया (दु:ख का कारण)** - अब कुछ जानने योग्य नहीं रहा। अर्थात जितना गुणमय दृश्य है। वह सब परिणाम, ताप और संस्कार दु:खों से दु:ख स्वरुप ही है इसलिए इसे 'हेय' कहा गया है।
2. जो कुछ करना था दूर कर दिया (द अब कुछ दूर करने योग्य नहीं रहा है। अर्थात् द्रष्टा और दृश्य का संयोग जो **'हेय'** 'हेतु' है वह दूर कर दिया।
3. जो कुछ साक्षात् करना था कर लिया, अब कुछ साक्षात् करने योग्य नहीं है। अर्थात् निरोध समाधि द्वारा 'हानि' को साक्षात् कर लिया।
4. जो कुछ करना था कर लिया है। अब कुछ करने योग्य नहीं है। अर्थात् अविप्लव विवेक-ख्याति सम्पादन कर लिया है।
5. चित्त ने अपने भोग अपवर्ग दिलाने का अधिकार पूरा कर दिया, अब कोई अधिकार शेष नहीं रहा।
6. चित्त के गुण अपने भोग अपवर्ग का प्रयोजन सिद्ध करके अपने कारण में लींन हो रहे हैं।
7. गुणों से पर हो कर शुद्ध परमात्मा की स्थिति अवस्थिति हो रही है।

योग के आठ अंग-निर्मल विवेक ख्याति जिसे 'हान' का उपाय बतलाया है उसकी उत्पत्ति का साधन अष्टांग योग है। अर्थात योग के आठ अंगों के अनुष्ठान से-अशुद्धि के क्षय होने पर ज्ञान की दीप्ति-विवेक-ख्याति पर्यन्त बढ़ जाती है।

योग के आठ अंग-याम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि है।

साधनपाद में योग के पाँच बहिरंग साधन यम, नियम, आसान, प्राणायाम, प्रत्याहार बतलाये गए हैं।

विभूतिपाद में उसके अन्तरंग धारणा, ध्यान, समाधि का निरूपण किया गया है।

3. **विभूतिपाद** - धारणा, ध्यान और समाधि-तीनो मिलकर संयम कहते हैं। इस संयम के विनियोग से नाना प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती है। ये सिद्धियाँ-श्रद्धालुओं के योग में श्रृद्धा बढ़ाने में और विक्षिप्त (असमाहित) चित्त वालों के चित्त को एकाग्र करने में सहायक होती है, किन्तु इनमें आसक्ति नहीं होनी चाहिए।

योगमार्ग पर चलने वाले के लिए नाना प्रकार के प्रलोभन आते हैं। अभ्यासी को उनसे सावधान रहना चाहिए, उसमे फँसने से और घमंड से बचना चाहिए। किसी के आदर भाव करने पर लगाव और अभिमान नहीं करना चाहिए। चित्त और पुरुष के भेद जानने वाले सारे भावों के अधिष्ठातृत्तव और सर्वज्ञातृत्त्व को प्राप्त होता है। किन्तु योगी को उनमे भी अनासक्त रह कर अपने असली ध्येय की ओर बढ़ना चाहिए। उसमे भी वैराग्य होने पर, दोषों का बीज क्षय होकर कैवल्य को प्राप्त होता है।[5]

4. **कैवल्यपाद** - इसमें चित्त और चित्त के सम्बन्ध में जो भी शंकाएँ हो सकती है, उनका युक्ति पूर्वक निवारण भी बताया गया हैं।

चित्त की नौ अवस्थाएँ :

1. **जागृत-अवस्था** - सत्त्व गुण गौणरूप से दबा रहता है। तम्, सत्तव को वृत्ति के यथार्थ रूप को दिखलाने से रोकता है। रज प्रधान हो कर चित्त की इन्द्रियों द्वारा बाह्य विषयों में उपरक्त करने में समर्थ होता है।

2. **स्वप्नावस्था** - सत्त्व गुण, गौणतर रूप से दबा रहता है। तम्, रज को इतना दबा लेता है कि वह चित्त की इन्द्रियों द्वारा बाह्य विषयों में उपरक्त नहीं कर सकता है। किन्तु रज् की क्रिया सूक्ष्म रूप से होती रहती है। जिससे वह चित्त को-मन द्वारा स्मृति के संस्कारों में उपरक्त करने में समथर्न प्रदान करती है।6

3. **सुषुप्ति अवस्था** - सत्तव गुण, गौणतम रूप से दब रहता है। तमोगुण, रजोगुण की स्वप्नावस्था वाली क्रियाओं को भी रोक कर प्रधान रूप से चित्त पर फैल जाता है। इसलिए किसी विषय का किसी प्रकार भी ज्ञान नहीं रहता। परन्तु किसी विषय के ज्ञान न होने की स्थिति प्रतीत होती है, अर्थात् रज् का नितांत आभाव नहीं होता, वह कुछ अंश में बना ही रहता है।

4. **प्रलयावस्था** - प्रलय में चित्त के अवस्था सुषुप्ति जैसी होती है, केवल भेद इतना है कि द प्रलय समष्टि चित्त कि सुषुप्ति है- जबकि यह सुषुप्ति-व्यष्टि चित्त की अवस्था में जीव गाढ़ी निद्रा जैसे स्थिति में रहता है।

5. **समाधि प्रारम्भ अवस्था** - तमोगुण गौणरूप से रहता है। रजो गुण को चित्त को चलायमान करने की क्रिया निर्बल होती है। सत्तव गुण प्रधान हो कर चित्त को एकाग्र करने और वास्तु को यथार्थ रूप को दिखलाने में समर्थ होता है।

6. **सम्प्रज्ञात समाधि (एकाग्रता)** - तमोगुण गौणतर रूप में दबा रहता है। सत्त्व गुण रजोगुण को दबा कर प्रधानरूप से अपने प्रकाश को प्रकाशित करता है। उसी प्रकार चित्त वास्तु के तदाकार हो कर उसका यथार्थ रूप दिखलाने में समर्थ होता है। स्थूल शरीर में कार्य बंद हो कर सूक्ष्म शरीर में एकाग्र वृत्ति रहती है।

7. **विवेकख्याति** -सम्प्रज्ञात समाधि और असम्प्रज्ञात समाधि के बीच की अवस्था, तमो गुण गौणतम रूप में नाम मात्र रहता है। सतो गुण का प्रकाश पूर्णतया फैल जाता है। रजोगुण केवल इतना रहता है कि जिससे पुरुष को चित्त से भिन्न दिखलाने की क्रिया हो सके। तम इस वृत्ति को रोकने मात्र में रह जाता है।

8. **असम्प्रज्ञात समाधि (स्वरूपवास्थि)** - सत्त्व चित्त में बाहर से तीनों गुणों के वृत्ति रूप का परिणाम होना बंद हो जाता है। उस स्थिति में चित्त केवल निरोध परिणाम अर्थात् संस्कार शेष रहते हैं, जिनके दुर्बल होने पर उसे फिर व्युत्थान दशा में आना पड़ता है।

9. **प्रतिप्रसव** - चित्त को बनाने वाले गुणों की अपने कारणों में लींन होने की अवस्था। चित्त में निरोध परिणाम अर्थात् संस्कार भी निवृत्त हो जाते हैं। तब पुरुष शुद्ध कैवल्य परमात्म स्वरुप में अवस्थित हो जाता है।

इनको चित्त की क्षिप्त - विक्षिप्त आदि पाँच भूमियों के विषय से पृथक समझना चाहिए।

आज के समय में औद्योगीकरण का विकास और टेक्नोलॉजी ने मानव जीवन के सामने ऐसी स्थितियाँ पैदा कर दिया है। जिसके चलते लोगों ने अपने स्वास्थ्य पर ध्यान देना बिलकुल छोड़ दिया है। यदि हम स्वास्थ्य की बात करे तो अच्छा स्वास्थ्य पाना कोई एक दिन का खेल नही है। इसके लिए व्यक्ति को सालो-साल प्रयास करना पड़ता है। आत्म नियंत्रण और इच्छा

शक्ति से कार्य करने की आवश्यकता है।[7]

स्वस्थ शरीर का बहुत अधिक महत्व है। व्यक्ति में स्वस्थ्य मन का एक स्त्रोत है। जो हमें अपने प्रियजनों के साथ मिलनसार बातचीत का माहौल बनाने में मदद करता है। एक अच्छा स्वास्थ्य मनुष्य को दिया गया, प्रकृति का सबसे अच्छा उपहार है। लेकिन आज के वक्त में व्यक्ति अपनी यांत्रिक जीवन शैली में इतना अधिक व्यस्त होता जा रहा है कि उसने खुद को प्रकृति से बिलकुल विमुख कर दिया है।

एक अच्छे स्वास्थ्य से धन होने के लिए व्यक्ति प्रकृति द्वारा दिए गए रिसोर्सेज को इस्तेमाल करने के बजाय उल्टा उससे दूर होता जा रहा है। अच्छे स्वास्थ्य से उन्मुख होने के कारण आज कम उम्र के लोगो में ही मोटापा व अन्य बीमारियाँ देखने को मिल रही है। इस निराशाजनक स्थिति में यदि फिर भी कोई उम्मीद की किरण है तो वो है प्राकृतिक चिकित्सा और योग। इसका मूल उद्देश्य मानव को सुखी और स्वस्थ्य बनाना है।[8]

Yoga and Naturopathy : कई रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा – योग और नेचुरोपैथी एक अच्छा स्वास्थ्य प्राप्त करने में मदद करता है। साथ ही साथ जीवन की गुणवत्ता भी बढने मे सहायक है। कई सारी बीमारियाँ जो की आधुनिक युग ने दी है जैसे की स्ट्रोक, कैंसर, मधुमेह, गठिया आदि नियंत्रित होती है। इसके अतिरिक्त अन्य रोंग भी नहीं होते हैं।

नेचुरोपैथी एक प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली है। जिसमे दवाओं का उपयोग किये बिना रोगों को ठीक किया जाता है। यह एक प्राचीन और पारंपरिक विज्ञान है जो हमारे शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक पहलुओं को एकीकृत करता है। नेचुरोपैथी में कई रोगों को रोकने की क्षमता है और जो रोंग हो चुके है उसका इलाज आप कर सकते हैं।

Naturopathy Treatment का मुख्य उद्देश्य लोगों को अपनी दिनचर्या बदलकर स्वस्थ रहने की कला सिखाना है। इससे ना केवल आपके रोंग ठीक होते हैं बल्कि आपका शरीर भी मजबूत बनता है और आपके चेहरे पर चमक आती है।

नेचुरोपैथी में क्या तकनीक शामिल होती है? इसका चार भागो में वर्गीकरण किया गया है:–

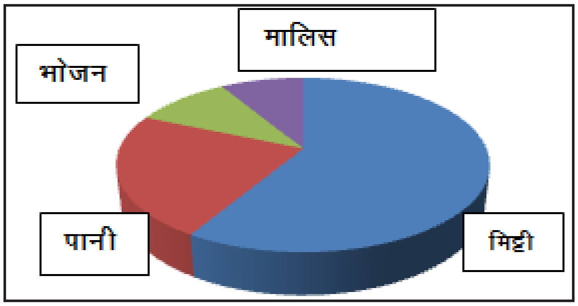

आप यह भी पढ़ सकते है:– जानिए योग क्या है और इसके समस्त प्रकारों का वर्णन **खाद्य थेरेपी– खाद्य थेरेपी** की बात की जाये तो हम इसमें कोशिश करते हैं कि जितना संभव हो किसी भी आहार को उसके प्राकृतिक रूप में ही खाया जाये। प्राकृतिक रूप में सेवन करने पर कई खाद्य पदार्थ अपने आप में एक दवा का रूप ले लेते हैं। आपको इसमें मुख्य रूप से लेना है–ताजे फल, ताजी हरी पत्तोदार सब्जियाँ और अंकुरित अनाज।

आहार को लेना ही काफी नहीं हैं आपको इस बात पर गौर करना होगा की किस चीज को कितने अनुपात में लेना है। साथ ही आपको अपने पेट का कुछ हिस्सा खाली भी छोड़ना आवश्यक है।

मिट्टी थेरेपी शरीर से मादक द्रव्यों निकालने के लिए, मिट्टी का स्नान और मिट्टी का लेप दोनों का इस्तेमाल किया जाता है। यह विशेष रूप से उच्च रक्तचाप, तनाव, सिर दर्द, चिंता, कब्ज, गैस्ट्रिक और त्वचा विकार आदि बीमारियों के लिए किया हितकरी है।

जल चिकित्सा: नेचुरोपैथी में जल चिकित्सा भी अपनाई जाती है। जिसमे स्वच्छ, ताजे और ठंडे पानी का उपयोग किया जाना आवश्यक है। इस उपचार के बाद, शरीर ताजा और सक्रिय महसूस होता है। इस चिकित्सा की अलग–अलग बीमारियों के लिए अलग–अलग परिणाम भी निकलते हैं।[9]

1. हिप बाथ आपके जिगर, बड़ी आँत, पेट, और गुर्दे की दक्षता में सुधार करता है।
2. फुल स्टीम बाथ आपकी त्वचा के पोर्स को खोलता है और मादक द्रव्यों को बाहर निकालता है।
3. एक हॉट फूट बाथ आपको अस्थमा, घुटने के दर्द, सिर दर्द, अनिद्रा, और मासिक धर्म जैसी अनियमितताओं के साथ मदद करता है।
4. इसके अलावा पूरे शरीर की पानी से मालिश की जाती है जिससे विषाक्त पदार्थो को शरीर से दूर किया जा सके।

निष्कर्ष – नेचुरोपैथी कई बीमारियों को दूर करने और रोगों से राहत दिलाने में मदद करती है। जो भी व्यक्ति रिलैक्स होना चाहते हैं वो इसका इस्तेमाल कर सकते हैं। इस बात में कोई संदेह नहीं है कि यह अपने आप में चिकित्सीय पद्धति है। व्यक्ति को स्वास्थ्य के प्रति ध्यान रखने हेतु इन विधियों को बताया गया है। योग व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक दोनों रूपों में उपयोगी है। धसिर रवि Naturopathy उपरोक्त बताई गई। बातो के अनुशरण से व्यक्ति बड़ी से बड़ी बीमारियों से छुटकारा प्राप्त कर सकता है। इसलिए नेचुरोपैथी आपके लिए जीवनदायिनी जड़ी–बूटियों के समान उपयोगी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. **सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव**, *पातञ्जलयोगदर्शनम्*, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2011, पृष्ठ 144
2. ***उपनिषद्,*** गीताप्रेस, गोरखपुर, तेईसवें वर्षका विशेषाङ्क, 2064, पृष्ठ 71
3. डॉ. नन्द किशोर देवराज, ***भारतीय दर्शन,*** उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 2002, पृष्ठ 161
4. **डॉ. भीखन लाल आत्रेय**, *भारतीय नीतिशास्त्र का इतिहास*, हिन्दी समिति सूचना विभाग, उ.प्र. लखनऊ संस्करण 1964 पृष्ठ 41
5. **आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति,** *वेद और उसकी वैज्ञानिकता भारतीय मनीषा के परिप्रेक्ष्य में*, श्रद्धनन्द अनुसन्धान प्रकाशन, केन्द्र गुरूकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, प्रथम सन् 1990 पृष्ठ 80
6. **शिवराज आचार्यः कौण्डिन्न्यायनः**, ***मनुस्मृतिः,*** चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, संस्करण प्रथम 2007, पृष्ठ 84
7. **चन्द्रधन शर्मा,** *भारतीय दर्शन, आलोचना और अनुशीलन,* मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1995, पृष्ठ 160
8. **सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव,** *पातञ्जलयोगदर्शनम्*, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2011, पृष्ठ 39
9. **प्रो. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा,** *भारतीय दर्शन की रूपरेखा,* मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2002, पृष्ठ 271

व्याकरणशास्त्र और आचार्य भामह

अंकुर माहेश्वरी *

शोध सारांश – समस्त भाषाओं की जननी संस्कृत आज विश्व में नये खोज व आविष्कारों को अपने प्राचीन सिद्धान्तों व सन्दर्भों से प्रमाणित करती हुयी, तकनीकि क्रान्ति में शोध का विषय बनी हुयी है। प्रस्तुत शोध पत्र व्याकरणशास्त्र के आचार्य पाणिनि, पतंजलि और कात्यायन के व्याकरणिक सन्दर्भों से, काव्यशास्त्र के आद्याचार्य भामह के ग्रन्थ काव्यालंकार के शब्द विवेक नामक अध्याय से तुलना व समानता प्रस्तुत करने का एक विनम्र प्रयास है।

प्रस्तावना – संसार की प्राचीन भाषाओं में संस्कृत प्राचीनतम् भाषा है। यह भाषा अखिल भाषाओं की आधारभूत वैज्ञानिक एवं दोषरहित भाषा हैं। ज्ञान–विज्ञान की समग्र शाखाएं संस्कृत में प्रचुरमात्रा में उपलब्ध हैं। संश्लेषण और विश्लेषण रूप विशिष्टता के कारण आधुनिक कम्प्यूटर के लिए भी संस्कृत का चयन कर, प्रयोग पर शोध किया जा रहा है।

किसी भी भाषा ज्ञान हेतु उसका व्याकरण ज्ञान होना आवश्यक है, व्याकरण न केवल भाषा प्रवाह को नियन्त्रित करता है बल्कि भाषागत् दोषों का निराकरण कर शब्दों की रक्षा करता हैं। वेदांगों में भी व्याकरण को मुख बताकर उसको सबसे पहले स्थान पर रखा गया है **'मुखं व्याकरणं स्मृतम्'**। महाभाष्यकार ने **'ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः शडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च' इति।। प्रधानं च शट्स्वङ्गेषु व्याकरणम्। प्रधाने च कृतो यत्नः फलवान् भवति'**[1] कहकर व्याकरण की महत्ता को सिद्ध किया है। भर्तृहरि ने दृष्ट और अदृष्ट फलों को देने वाले व्याकरणशास्त्र को वेदों का प्रमुख अंग कहा।

आसन्नं ब्रह्मणस्तस्य तपसामुत्तामं तपः।
प्रथमं छन्दसामंगं प्राहुर्व्याकरणं बुधाः।।[2]

आचार्य भामह ने भी काव्यप्रणयन से पहले व्याकरण का अध्ययन आवश्यक माना–

शब्दश्छन्दोऽभिधानार्था इतिहासाश्रयाः कथाः।
लोको युक्तिः कलाश्चेति मन्तव्याः काव्यगैर्ह्यमी।।[3]

अर्थात् काव्यप्रणयन के लिए व्याकरणशास्त्र, छन्दशास्त्र, शब्दकोश, व्युत्पत्तिशास्त्र, ऐतिहासिक एवं पौराणिक कथाओं, लोकव्यवहार, तर्कशास्त्र और ललित कलाओं का मनन करना चाहिए।

वस्तुतः आचार्य भामह भारतीय काव्यशास्त्र के आद्याचार्य है, इन्होनें तत्कालीन काव्यशास्त्रीय मान्यताओं का सम्यक् अध्ययनकर और महाकवियों की रचनाओं का अनुशीलन कर[4] तथा अहं भाव से नितान्त दूर रहकर[5] काव्यशास्त्र का संकलन, सम्पादन, विवेचन और विश्लेषण किया। आचार्य भामह के ग्रन्थ काव्यालंकार का षष्ठ परिच्छेद 'शब्दविवेक' व्याकरण को समर्पित है। आचार्य भामह कवियों को व्याकरण की काव्योचित सूक्ष्मता दर्शातें हैं–

नापारयित्वा दुर्गाधममुं व्याकरणार्णवम्।
शब्दरत्नं स्वयंगम्यमलंकर्तुमयं जनः ।।[6]

अर्थात् इस दुरवगाह्य व्याकरण रूपी सागर को पार किये बिना कोई व्यक्ति शब्दरूपी रत्न तक पहुँचने में समर्थ नहीं हो पाता।

आचार्य भामह ने शब्दशुद्धि और शब्दों की रम्यता पर विचार किया। शब्दशुद्धि तो पूर्णतः व्याकरणशास्त्र का विषय है किन्तु रम्य पद का संयोजन निश्चय ही काव्यशास्त्र का विषय है। आद्याचार्य भामह ने जिस महत्तवपूर्ण विषय को अपने ग्रन्थ में रखा था, उसे काव्यशास्त्रीय परम्परा में कोई स्थान नहीं दिया गया और एकमात्र आचार्य वामन ही ऐसे विद्वान् रहे, जिन्होनें इस विषय की गम्भीरता को समझा –

छिन्ते मोहं चित्प्रकर्ष प्रयुङ्क्ते सूते सूक्ति सूयते या पुमर्थान्।
प्रीतिं कीर्तिं प्रामुकामेन सैषा शाब्दीशुद्धिः शारदेवाऽस्तु सेव्या।।[7]

परवर्ती आचार्यो ने ही नहीं अपितु, भामह के टीकाकारों ने भी इस विषय की उपयोगिता को लेकर विवेचन किया। डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा का कहना है कि भामह का षष्ठ परिच्छेद व्याकरण की शिक्षा मात्र नहीं देता बल्कि व्याकरण की काव्योचित बारीकियों की ओर ध्यान आकृष्ट करता है।

आचार्य भामह व्याकरण के अंगों को विभिन्न उपमाओं से संयोजित करते हुए व्याकरण अध्ययन की ओर प्रेरित करते हुए कहते है कि

सूत्राम्भसं पदावर्त्तं पारायणरसातलम्।
धातूणादिगणग्राहं ध्यानग्रहबृहत्प्लवम्।।
धीरैरालोकितप्रान्तममैधौभिरसूयितम्।
सदोपभुक्तं सर्वाभिरन्यविद्याकरेणुभिः।।[8]

व्याकरण रूपी सागर के सूत्र जल हैं, वार्तिक आवर्त्त हैं, भाष्य, कौमुदी आदि रसातल हैं, धातुपाठ, उणादि, गणपाठ आदि ग्राह (मकर) हैं। इस सागर को पार करने की नाव चिन्तन और मनन है। धीर व्यक्ति उसके तट को लक्ष्य बनाते हैं और बुद्धिहीन व्यक्ति उसकी निन्दा करते है।

आचार्य भामह व्याकरण निन्दकों की ओर भी ध्यान आकृष्ट करते हुए समाधान करते है। व्याकरण की निन्दा उसकी जटिलता के कारण ही होती है। पारिभाषिक शब्दों की बहुलता और सूत्रशैली के कारण यह शास्त्र अत्यन्त दूरुह्य माना जाता है–

सूत्रैः पाणिनिनिर्मितैर्बहुतरैर्निष्पाद्य शब्दावलिं।
वैकुण्ठस्तवमक्षमा रचयितुं मिथ्याश्रमाः शाब्दिकाः।।
पक्वान्नं विविधं श्रमेण विविधापूपात्र्यसूपान्वितं।
मन्दाग्नीननुरुन्धते मितबलानाघ्रातुमप्यक्षमान्।।

* संस्कृत, विक्रम विश्वविद्यालय,उज्जैन (म.प्र.) भारत

अर्थात् जिस प्रकार मन्दाग्नि वाले व्यक्ति के लिए नानाविध पक्कान्न निरर्थक हैं, उसी प्रकार वैय्याकरणों का नानाविध शब्दनिर्माण का प्रयास भी निरर्थक ही है क्योंकि समाज अपना काम बोलचाल की भाषा से ही चलाता है और विष्णु के स्तवन में सक्षम इस शब्दावली को पचा नहीं पाता।

इस सम्बन्ध में आचार्य भामह प्रत्युत्तर प्रदान करते है कि शब्दों की शुद्धता-अशुद्धता, सूक्ष्म एवं अन्तरंग अर्थ, प्रकृति-प्रत्यय आदि का ज्ञान व्याकरण से ही सम्भव है अत: काव्य प्रणयन की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को व्याकरण का ज्ञान अर्जित करने का प्रयत्न करना चाहिए। दूसरे कवियों के शब्दप्रयोगों को देखकर, जो काव्यप्रणयन किया जाता है, भला उसमें आनन्द कहां।[9]

वस्तुत: जो कवि दूसरे कवियों के शब्दप्रयोगों से ही ज्ञानार्जन करते हैं, वे शब्दनिर्माण की सूक्ष्मता, अर्थ की अन्तरंगता, व्युत्पत्ति आदि को नहीं समझ पाते है। राजशेखर ने भी कहा-

पदान्तरं वेत्ति सुधी: स्ववाक्यपरवाक्यो:।
तदा स सिद्धो मन्तव्य: कुकवि: कविरेव वा।।[10]

अर्थात् जो विद्वान् अपने और दूसरों के वाक्य में पदों के अन्तर को समझता है, वह कवि हो या कुकवि, उसे सिद्ध समझना चाहिए।

आचार्य भामह का कहना है कि जिसके शब्द अन्य कवि के शब्द प्रयोगों पर निर्भर हो अर्थात् जिसकी शब्द संयोजना पूर्ववर्ती कवियों पर आश्रित हो, ऐसा काव्य सरस होने पर भी विद्वानों को उसी प्रकार आनन्दित नहीं करता, जिस प्रकार दूसरों के द्वारा धारण की गई माला सहृदयों को आकर्षित नहीं करती।[11]

अत: व्याकरणाध्ययन परम आवश्यक है। यह विषय काव्यशास्त्र से नहीं बल्कि व्यावहारिक काव्यशास्त्र से सम्बद्ध है और उदीयमान कवियों को इससे लाभ प्राप्त होता है। चिन्ता का विषय यह है कि संस्कृत आचार्यों ने इसका महत्तव नहीं समझा और पारम्परिक काव्यशास्त्र तो क्या, कवि शिक्षा-काव्य समय से सम्बद्ध ग्रन्थ काव्यमीमांसा, अलंकारशेखर आदि में भी इसका समावेश नहीं हुआ। फिर भी भामह ने शब्दशुद्धि नामक परिच्छेद के माध्यम से व्याकरणशास्त्र एवं काव्यशास्त्र में सम्बन्ध प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महाभाष्य, परप्पशाह्निक
2. वाक्यपदीय,ब्रह्मकाण्ड/11
3. काव्यालंकार, 1/9
4. अवलोक्य मतानि सत्कवीनामवगम्य स्वधिया च काव्यलक्ष्म्।। काव्यालंकार, 6/64
5. न दूषणायायऽमुदाहृतो विधिर्न चाभिमानेन किमु प्रतीयते।। काव्यालंकार, 4/51
6. काव्यालंकार, 6/3
7. काव्यालंकारसूत्रवृत्ति, 2
8. काव्यालंकार, 6/1-2
9. काव्यालंकार, 6/4
10. काव्यमीमांसा, चतुर्थ अध्याय
11. काव्यालंकार, 6/5

****

Security and privacy in mobile devices : Issues and Solutions

Shaloo Dadheech * Dr. Tarun Shrimali **

Abstract - Mobile security mainly deals with the way to control and enhance integrity, confidentiality and availability of information stored in the system. Mobile security is the protection given to the device based on its all apps including Bluetooth, calendar, contacts, messages etc., protection of mobile data and device itself. In this paper we have studied the known threats of various mobile devices viz.Cell-phones, tablets, etc. The study finds that software based threats are more vulnerable than physical security issues. The various known solutions have also been studied and analyzed in terms of security. Among these solutions, the best solution for data privacy and protection in mobile devices is also proposed. In the study it is also found that most of the people are not aware in protecting their mobile devices properly, therefore there is a need of in-built protections to protect important data of almost every category of people.
Keywords - Mobile security, Cellphone, Tablet, Data Privacy, Data Protection.

Introduction - The term security means the way or technique by which users data is to be remain safe from unauthorized user or cannot be read by any user other than the authorized. Computer security mainly refers to the protection towards policies, procedures, hardware, and software tools that are necessary to safeguard the computer systems and the information that are to be processed, stored within the systems. Computersecurity deals with the way to control and enhance integrity, confidentiality and availability of information stored in the system. Inthe term relevant to mobile security it is the protection given to the device based on its all apps including Bluetooth, calendar, contacts, messages etc. But taking the use of all this not quietly that much enough as mobile devices are less secure than Personal computers as users can email, do messaging, use social networking apps, interested in doing m-commerce highly, download various applications, can do lots of banking related transaction, provide pay online services etc. Beyond all this transactionfacilities, this is only the measure cause for security. As this monetary transaction specially attracted by cyber attacker as they can easily access the user information and can take full advantage of it by taking all details of one user. Hence mobile security and privacy nowadays plays a major and critical role. By this security is the basic object which is on the main point of developers as well as users. It is the major issue as smartphone is only the device having a full access of the user having its personal details within it. Which can be easily be accessed by any cyber attackers. So, it's a big deal to know the various security threats and issues that are being hang on mobile devices. As the basic security attack abolished through the use of internet. As the internet is the only way by which a person can take access the detail of another person sitting remotely by taking use of various technologies.When mobile was first developed it was only be used for communicating purposes

Literature Review - KengSiau, (2012), Advances in wireless technology increase the number of mobile device users and give pace to the rapid development of ecommerce using these devices. The new type of e-commerce, conducting transactions via mobile terminals, is called mobile commerce. Due to its inherent characteristics such as ubiquity, personalization, flexibility, and dissemination, mobile commerce promises businesses unprecedented market potential, great productivity, and high profitability..Mariantonietta La Polla; Fabio Martinelli; Daniele Sgandurra(2013) paper reviews the best in class on dangers, vulnerabilities and security arrangements over the period, by concentrating on abnormal state assaults, such those to client applications. Here this paper aimed at protecting mobile devices against these classes existing methodologies went for securing cell phones into various classifications, in view of the identification standards, structures, gathered information and working frameworks, particularly concentrating on IDS-based models and apparatuses. Luke Rondeau (2014)**,** an examination on current mobile vulnerabilities and research into security. Likewise, a proof of idea to demonstrate the simplicity of infusing an Android telephone with an infection. The motivation behind this exploration is to expedite mindfulness how PDAs function, uncover the vulnerabilities of cell phones, and to demonstrate the level of trouble and

*Ph.D., Research Scholar, Career Point University, Kota (Rajasthan) INDIA
** Research Advisor, JRNV University, Udaipur (Rajasthan) INDIA

likelihood that a specific mobile phone can be tainted with a malevolent program. In this paper author directed an examination to indicate that it is so natural to infuse an Android cell phone, the Galaxy S2. Syed Farhan Alam Zaidi QaisarJavaid (2016)In their paper, their contribution is twofold. Firstly, they review the threats, attacks, vulnerabilities and their solutions over the period of 2010-2015 with a special focus on smartphones. They classified attacks into two types, i.e., new attacks and old attack, this categorization, provide an easy way to look forward different attacks and the possible results to improve smartphone security

Major Security Threats in Mobile Device -

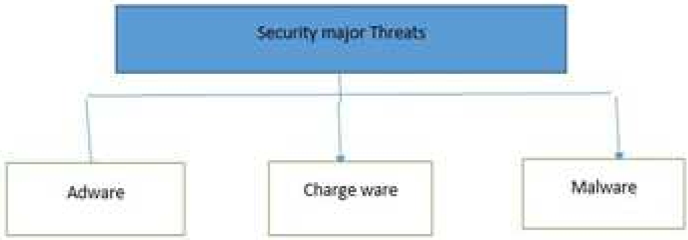

This are the basic criteria by which a security in mobile phones are first been affected. This all affected not only the service of mobile but also affects the detail of that mobile users extremely.

1. Adware:Adware is software basedapplication where advertisement banners are displayed when some other programor application is running. Common adware programs are seen on Web browser. They include features like advanced searching of the Web with different ads technique, provide the ads of different games and utilities.
2. Charge ware:The next cybercrime in mobile technology is based on “charge ware”. Charge ware is mainly the term where an application directly charge a user without giving any kind of notification. Charge ware are mainly based on the phenomenon where a third party indirectly can charge some particular amount from user’s account.
3. Malware: Mobile malware growingfastly both technologically and structurally. It is safe to say that today’s cybercriminal best practice is to develop some kind of malicious code that harm the device. It works as the purpose of serious business operation to generate the money. Basically it is software embedded with malicious code whose main purpose is to break down the security measures, attacks particular customer or user and achieve the targeted goal.

As per this consideration there are various other causes too that can affect the security and privacy of mobile devices they are as follows:

I. Passwords: Most of the mobile devices do not have password entangle with their device. This may cause the loss of privacy of that user as per any person can easily access to the device. Hence the password within the device plays the most crucial role in safeguarding a device at one particular time to safeguard it from unauthorized person.

II. Wireless transmission: Wireless transmission also affect the security issue in mobile device. As wireless transmission is not always be encrypted or safe to access. As while sending the data from such network is quite risky as it can be easily intercepted by third party as the network is not properly encrypt and sending the emails and personal detail through such network may attack towards the loss of privacy.

III. Security Software/ antivirus software’s: The device with no security software may also leads to loss of security and privacy. As security software are mainly developed to keep in notice the malicious code that are running in system or device. If such software is not present within the device definitely it can cause the viruses and malwares to attack the device.

IV. Outdated operating system of mobile device: It is to be recommended that mobile devices are to be fully upgraded as when developing the security policy to a device may work only for that much period as it for what purpose it was designed

V. Outdated software on mobile device: The software that are installed on mobile devices if are not timely be updated than it may cause the risk by involvement of third party to get access to the device and take out the details.

Solution towards safeguarding mobile devices :

1. Install anti-virus andanti-theftsoftware**–** install the antivirus software so that it can safeguard the device by protecting against the malwares and keep the software up-to –date.Example:Avast, AVG, Norton antivirus are some common examples of anti-virussoftware.
2. Provide password: Provide passwords or PIN (personal identification number) to the device so that it cannot be accessed by unauthorized user. Example: password should be apply to the device in such a manner that it should not be easily be cracked up. Password should be apply with the combination of alphabets plus special symbols or with combination of numeric digit.It should be advisable if we change the password frequently, so that no one can easily get access to the device.
3. Encryption: Take the use of encryption technology, make sure all the sensitive data like credit card details, banking details should be kept in encrypted manner on device.
4. Disable the networks: Disable the Bluetooth and Wi-Fi when not currently be in use. Set Bluetooth-enabled devices to non-discoverable to make them invisible to unauthenticated devices.
5. Verify Authenticity of downloaded application: before going to download any application make sure it should be downloaded from authenticate market places. While

downloading check the large number of good users reviews, check the app link of that developer website to see if the app is actively supported.

6. Install a firewall: A personal firewall can protect against unauthorized connections by intercepting both incoming and outgoing connection attempts and blocking or permitting them based on a list of rules
7. Install security updates**:** Software updates can be automatically transferred from the manufacturer or carrier directly to a mobile device.
8. Security policy: Security policies define the rules, principles, and practices that determine how an organization treats mobile devices whether they are issued by organization or owned by individuals. Policies should cover areas such as roles and responsibilities, infrastructure security, device security, and security assessments.

Conclusion - The impact that mobile devices and apps have made on businesses is undeniable. Most industries have seen positive impact by adopting some type of mobile device for their business. Thus providing security and privacy in mobile device leads to lots of benefits as it Increase Flexibility, Business owners are always on go overseeing multiple locations, servicing customers and managing suppliers. With the security management apps, you can have the ability to interact with systems from a mobile device and have the freedom to manage virtually all security controls as if you were on premise. It Improve Productivity, Business owners recently indicated that their productivity increased by up to 25% by working remotelythey also understand that being more productive can give their business a competitive advantage. Whether security personnel are overseeing multiple facilities or heading to the airport to catch a flight, they can still be manage activities such as responding to alerts or allowing access for deliveries. The ability to view and manage multiple locations from one device can help save time and assist in more effectively deploying personnel. As well it Gain Insight into Business Operations Improvements in business operations, no matter of how small, surely can positively impact profits. Security management apps, which allow access to live video, can help you better monitor interactions between employees and customers.

References :-

1. "Gartner Says Worldwide Traditional PC Tablet Ultramobile and Mobile Phone Shipments on Pace to Grow 7.6 Percent in 2014: Android to Surpass One Billion Users across All Devices in 2014" in, Gartner, 2014, [online] Available: www.gartner.com/newsroom/id/2645115.
2. *Security Threat Report 2013: New Platforms and Changing Threats*, Sophos, 2013, [online] Available: www.sophos.com/en-us/medialibrary/PDFs/other/sophossecuritythreatreport2013.pdf.
3. *Mobile Threat Report 2013*, 2013, [online] Available: www.f-secure.com/static/doc/labs_global/Research/Mobile_Threat_Report_Q3_2013.pdf.
4. *Internet Security Thread Report 2014*, Symantec, vol. 19, 2014, [online] Available: www.symantec.com/security_response/publications/threatreport.jsp.
5. S. B. Almin, M. Chatterjee, "A Novel Approach to Detect Android Malware", *Procedia Computer Science*, vol. 45, pp. 407-417, 2015.
6. Manjoo, A Murky Road Ahead for Android Despite Market Dominance, The New York Times, 2015.

****

A Comprehensive study on cloud based e-learning

Deepika Ameta * Dr.Tarun Shrimali **

Abstract - Up gradation in technology offer new prospect in improving teaching and learning. E -Learning systems usually require hardware and software resources. Many educational institutions can't bear such investments. This paper address the contribution of E-Learning standards with the Cloud standards and the impact on using cloud computing for eLearning. An analysis for the prominent issues in current e learning systems through a comprehensive comparison between e learning systems before and after moving to Cloud Computing environment.
Keywords - Cloud Computing; E-learning; Cloud; Campus cloud Architecture; Learning management system.

Introduction - Today worldwide system has supported the e-learning among numerous foundations with the joining of learning advances with tremendous IT framework. The E learning is a learning approach in light of web innovation to start, execute, control and bolster realizing which has improved adaptability and proficiency to conventional technique for instruction.

Literature survey

1. Mansi Bosamia and Atul Patel "AN OVERVIEW OF CLOUD COMPUTING FOR E-LEARNING WITH ITS KEY BENEFITS", International Journal of Information Sciences and Techniques (IJIST) Vol.6, No.1/2, March 2016 :- The objective of this paper is to provide educational environment which is based on reusing the existing web tools, techniques, and services to provide browser based application.
2. Jackson Kipchirchir Machii , Josphat K. Kyalo "Assessment of Cloud Computing" Adoption for E-Learning by Institutions of Higher Learning in Nairobi County, Kenya", International Journal of Scientific Research and Innovative Technology ISSN: 2313-3759Vo l. 3 No. 2; February 2016 :- This paper majorly assesses the cloud computing adoption, benefits and issues
3. Chetan Bulla and Basavaraj Hunshal"Adoption of Cloud Computing in Education System: A Survey". Article · July 2016 :- In this paper based on survey Adoption of cloud computing in Education System
4. Ghazal Riahi, "E-learning systems based on cloud computing",International Conference on soft: - Introduce different models and compare to traditional e learning and cloud e learning
5. Fekry Fouad Ahmed "Comparative Analysis for Cloud Based e-learning"International Conference on Communication, Management and Information Technology (ICCMIT 2015), Computer Science 65 (2015) 368 – 376:- Investigated the issue of how Cloud Computing technology can be employed in e Learning systems in the favor of higher education which have limited budget.
6. Comparative Analysis for Cloud Based e-learning FekryFouad Ahmed (ICCMIT 2015):- This paper analysis for the prominent issues in current e learning systems through a comparison between e learning systems before and after moving to Cloud Computing environment.
7. Zaydoon Mohammad Hatamleh ,EslamNajimBadran, Bilal Mohammad Hatamleh. "A Survey on Utilizing Cloud Services in the E-learning Process" 2015:- The aim of this paper is to discuss the integration of cloud computing (service and deployment models) and e-learning to highlight the benefits and challenges of cloud computing for e-learning in HE institutions.

Basic Concept of Cloud Computing - Cloud computing is a technology utilizing the web to facilitate information access and improve collaboration. Cloud computing provides a group of computing resources with its dynamic scalability and virtualization usage as a service from side to side the internet. This technology is more affiant and cost effective by centralized data storage, process and bandwidth.

Cloud Service Models - The term "service" refers to a summarized task abounding to cloud clients that is the type of service that cloud providers & distribute to the customers.

Cloud Computing Services	Description
Saas	SaaS is deployed over the internet and provides the services on demand, through a subscription, in a "pay-as -you-go" model. **Service providers:-**Google apps, office live. **Runtime management:-** By the customers

*Research Scholar, Career Point University, Kota (Rajasthan) INDIA
** Research Advisor, JRNV University, Udaipur (Rajasthan) INDIA

	Data management :-By the customers **Application management:-**By the customers **Used by:-**Business Users **Visibility:-**End users **No of providers:-** Large numbers of application in the cloud **Type of services :-** Dynamic infrastructure service
Paas	This cloud service modal is the platform for the establishment of software and delivered over the web. This layer providing the facilities to maintain the whole application. **Service providers :-**Azure, Netsuite **Runtime management:-** By the vendor **Data management :-**By the developer **Application management:-**By the developer **Used by:-**Developers and deployers **Visibility:-**Application developers **No of providers:-**Few cloud platforms **Type of service:-**Integration as a service
Iaas	Infrastructure as a Service gives the freedom of storing your data on the Cloud, and then accessing it from anywhere. **Service providers: -** IBM, Amazon. **Runtime management:-** By the vendor **Data management :-**By the vendor **Application management:-**By the vendor **Used by:-**System Manager **Visibility:-**Network architects **No of providers:-**Elite group of providers **Type of service:-**Dynamic application services

Cloud Deployment Models

Model	**Description**	**Examples**
Public	Public clouds are not restricted to any particular users or organizations. They offer services to the public all over the world without any limitations But they are not highly secure as private clouds.	Amazon EC2, Google AppEngine, IBMBlue Cloud and Widows Azure
Community	A communityclouds provide a cloud computing solution to a limited number of individuals or organizations that is governed, managed & secured commonly by all the participating organizations or a third party managed service provider.	Google Apps for Government, Microsoft Government Community Cloud
Private	Private clouds provide services to the users of the particular organi -zations for the security and confidentiality of their private data. The fact is that these private clouds are generally owned and managed by users but they are actually developed and installed by another organization.	Amazon Virtual Private cloud, Eucalyptus Cloud Platform,
Hybird	The combinations of both public and private clouds know as Hybrid cloud. Many organizations and customers can take benefits of both public and private cloud by using hybrid clouds.	CTERA, Red hat open hybrid cloud

E-Learning Based Cloud Computing

Common e-learning vs. e-learning based on cloud computing.

Characteristics	**Common e- learning**	**E-learning based on Cloud Computing**
Hardware costs	High cost of maintenance	Low cost of maintenance
Storage capacity	Fixed capacity	Dynamic capacity
Requires specialized knowledge within the enterprise	Use of E-learning professionals	Using a computer technician
Implementation period	Very long	Shorter than the common method
Processing power	Initial and fixed	In terms of demand
Security, Trust and Related Issues	Internal maintenance moreSecurity and trust	External maintenance reduce Security and trust
Overall costs	Initial invest -ment, fixed and up	pay-per-use

Key benefits of Cloud based in e-learning Computing

key benefits of cloud based e learning	**Description**
Low cost	E-Learning users need not have high end configured computers to run the e-learning applications. They can run the applications from cloud through their PC, mobile phones, tablet PC having minimum configuration with internet connectivity. Since the data is created and accessed in the cloud.

Less maintenances	Less hardware installed no use the specific software however there will be fewer maintenance issues.
Immediate software updates	The cloud based application for e-learning runs with the cloud power, the software's are automatically updated in cloud source. So, always e-learners get updates instantly.
Interoperability across devices	No need to install specific software when move the data pc to Mobile.
Worldwide access to document	Students access anywhere required document on the cloud through the geographically
Incentive for Teacher	Teachers are not needed to invest the anything. Still they will be getting incentives for every access of their lectures by the students.
Better Storage Capacity	Cloud provide the better storage capacity as compare to other servers
Availability, fault tolerance and recovery	guarantee a permanent service (24x7) with the use of redundant systems and to avoid net traffic overflow
High security	In the cloud computing model, data is storied intensively. Relying on one or more data centre, the mangers manage the unified data, allocate the resources, balance load, deploy the software, control security, and do the reliable real time monitoring, thus guarantee the users' data security to the greatest possible degree.
Scalability	Since the application is running on a server farm, the scalability is inherent to the system SaaS server may support many educational institutions. Therefore, as the students or teachers' need grows, the software performance will not degrade.
Energy Efficiently	It is also important to reduce the electric charge by using microprocessors with a lower energy consumption and adaptable to their use.
Flexibility	Scale infrastructure to maximize investments. Cloud computing allows user to dynamically scale as demands fluctuate.

Comparison between e learning systems before and after moving on to Cloud

E Learning Characteristics	Before Moving to Clouds	After Moving to Clouds
Need for Deployments	Y	N
More Loss of control of any application or resources	N	Y
Higher risks of Resource availability and failure	N	Y
Lack of trust in data alteration before storing	N	Y
Denial of Service attack in critical server health	N	Y
Difficult to audit	N	Y
Monitoring of client logs and information by third party	N	Y
Need for Technical IT Support for Fail over	Y	N
Need fore Learning System Development Team	Y	N
Need for extra hardware and software Resources	Y	N
Need to configure latest technology updates	Y	N
Need to arrange own extra power and cooling	Y	N
Lack of computation and accuracy Trust	N	Y
Lack of confidentiality	N	Y
Lack of trust on security policies and access control	N	Y
Daily Storage and Backup burden	Y	N
Huge cost	Y	N
High speed Internet connection	N	Y
Subscription and registration charges	N	Y
Need for requirement gathering and Elicitation	Y	N
Need for Project Management	Y	N
Need for Coding	Y	N
Need for Testing	Y	N

Conclusion - After studying the number of computing articles and case studies, I come to know that cloud computing is the largest buzz in the world of computer now a day. It gains Popularity in almost every field like in information technology and in educational systems. This paper gives the basic idea of cloud computing introduction, its concepts, models and services. This paper also discussed the comparison of three popular clouds delivery models- SaaS, PaaS and IaaS in the form of a table. In this paper also providing comprehensive study on e- learning systems in cloud computing environment. Focus key benefits of cloud based e learning. Cloud computing is the next big trend for an efficient e-Learning systems.

References :-

1. Mansi Bosamia and Atul Patel "AN OVERVIEW OF CLOUD COMPUTING FOR E-LEARNING WITH ITS KEY BENEFITS", International Journal of Information Sciences and Techniques (IJIST) Vol.6, No.1/2, March 2016
2. Jackson Kipchirchir Machii , Josphat K. Kyalo "Assessment of Cloud Computing"Adoption for E-Learning by Institutions of Higher Learning in Nairobi County, Kenya", International Journal of Scientific Research and Innovative Technology ISSN: 2313-3759Vo l. 3 No. 2; February 2016
3. Chetan Bulla and Basavaraj Hunshal "Adoption of

Cloud Computing in Education System: A Survey". Article, July 2016

4. Ghazal Riahi, "E-learning systems based on cloud computing", International Conference onsoft
5. FekryFouad Ahmed "Comparative Analysis for Cloud Based e-learning"International Conference on Communication, Management and Information Technology (ICCMIT 2015), Computer Science 65 (2015) 368 –376
6. Comparative Analysis for Cloud Based e-learning FekryFouad Ahmed (ICCMIT 2015)
7. Zaydoon Mohammad Hatamleh ,Eslam Najim Badran, Bilal Mohammad Hatamleh. "A Survey on Utilizing Cloud Services in the E-learning Process" 2015
8. ShahriarMohammadi,Yousef Emdadi "E-Learning Based on Cloud Computing International Journal of Basic Sciences & Applied Research. Vol., 3 (11), 793-802, 2014
9. FekryFouad Ahmed "Comparative Analysis for Cloud Based e-learning" International Conference on Communication, Management and Information Technology (ICCMIT 2015), Computer Science 65 (2015) 368 – 376
10. Fern´andez, A., Peralta D., Herrera F., & Benitez, J. M. (2012). An overview of e-learning in cloud computing. Proceedings of Learning Technology for Education in Cloud (LTEC '12) (pp. 35-46).
11. Prof.Poonam R.Maskare, Prof.Sarika R.Sulke "Review Paper on E-learning Using Cloud Computing" International Journal of Computer Science and Mobile Computing, Vol.3 Issue.5, May- 2014, pg. 1281-1287
12. Abhay S. Jadhav, Mahesh Toradmal, Ganesh K. Pakle, "Survey on Implementation of E-learning System Using Cloud Solutions", Abhay S. Jadhav et al, / (IJCSIT) International Journal of Computer Science and Information Technologies, Vol. 5 (2) , 2014, 1809-1813

****

Database Management on Clouds through NoSQL

Dr. Neetu Agarwal * Dr. Sanjay Chaudhary **

Abstract - Advances in Web technology and the increasing of mobile devices and sensors connected to the Internet have resulted in immense processing and storage requirements. Cloud computing has emerged as a paradigm that promises to meet these requirements. This work focuses on the storage aspect of cloud computing, specifically on data management in cloud environments.

Traditional relational databases were designed in a different hardware and software era and are facing challenges in meeting the performance and scale requirements of Big Data (The amount of huge data). NoSQL and other data stores present themselves as alternatives that can handle huge volume of data.

In this paper the basic definition of Cloud Computing, Introduction of NoSQL, Examples, and query processing of NoSQL is included.

Keywords - Cloud Computing, Big Data, NoSQL etc.

Definition of Cloud Computing - Cloud computing means that instead of all the computer hardware and software you're using sitting on your desktop, or somewhere inside your company's network, it's provided for you *as a service* by another company and accessed over the Internet, usually in a completely faultless way. Exactly where the hardware and software is located and how it all works doesn't matter to you, where the "cloud" or the Internet represents.

Cloud computing has recently seen a lot of attention from research and industry for applications that can be parallelized on shared-nothing architectures and have a need for elastic scalability. As a result, new data management requirements have emerged with multiple solutions to address them.

The unique features of cloud databases (namely the ability to distribute data across wide geographical areas and among different servers in one physical data center) are based on cloud computing technology made possible by virtualization.

Due to some challenges with the traditional RDBMSs encounter in handling Big Data in the cloud environment, a number of specialized solutions have emerged in the last few years in an attempt to address these concerns. The so-called NoSQL and NewSQL data stores present themselves as data processing alternatives that can handle this huge volume of data and provide the required scalability.

Cloud database management options (Examples) :

1. **MicrosoftAzure/SQLDatabase** – A "full featured relational database-as-a-service," with "Tables" that offer NoSQL capabilities for storing large amounts of unstructured data, and "Blobs" (Binary Large Objects) for storing large amounts of unstructured text, video, audio and images.
2. **AmazonWebServices/DynamoDB/Relational DatabaseService** – Amazon's offerings include NoSQL, MySQL, Oracle and MS SQL Server solutions. SimpleDB is Amazon's "highly available and flexible non-relational data store that [takes on] the work of database administration."
3. **Xeround** – A fully managed MySQL DBAAS that the vendor calls a "drop-in solution" because it "automates all configuration and ongoing DB operations."
4. **GoogleCloudSQL/GoogleAppEngineDatastore** – Google's solutions for storing structured and unstructured data.
5. **ClearDB** – This MySQL DBAAS boasts 100% uptime due to its "multi-regional read/write mirroring."
6. **Database.com** – A native cloud database service developed in house at Salesforce.com that became generally available in 2011. The vendor's website says it was "built with the needs of a social and mobile world at its core, not as an afterthought."

Introduction of NoSQL - The term NoSQL was coined by Carlo Strozzi in the year 1998. He used this term to name his Open Source, Light Weight, DataBase which did not have an SQL interface.

In the early 2009, when users wanted to organize an event on open-source distributed databases, Eric Evans, a Rackspace employee, reused the term to refer databases which are non-relational, distributed, and does not conform to atomicity, consistency, isolation, and durability - four obvious features of traditional relational database systems. In the same year, the "no:sql(east)" conference held in Atlanta, USA, NoSQL was discussed and debated a lot.

*Assistant Professor, Pacific College of Basic and Applied Sciences, Udaipur (Raj.) INDIA
** Professor, Deptt. of CSE, Madhav University, Sirohi (Raj.) INDIA

And then, discussion and practice of NoSQL got a momentum, and NoSQL saw an unprecedented growth.

The load is able to easily grow by distributing itself over lots of ordinary, and cheap, Intel-based servers. A NoSQL database is exactly the type of database that can handle the sort of unstructured, messy and unpredictable data that our system of engagement requires.

NoSQL is a whole new way of thinking about a database. NoSQL is not a relational database. The reality is that a relational database model may not be the best solution for all situations. The easiest way to think of NoSQL is that of a database which does not holding to the traditional relational database management system (RDBMS) structure. Sometimes you will also see it revered to as 'not only SQL'.

It is not built on tables and does not employ SQL to manipulate data. It also may not provide full ACID (atomicity, consistency, isolation, durability) guarantees, but still has a distributed and fault tolerant architecture.

The NoSQL taxonomy supports key-value stores, document store, BigTable, and graph databases.

NoSQL is a non-relational database management system. NoSQL was designed specifically to handle storing and retrieving large quantities of data without defined relationships (i.e., Big Data). But, data stored in a NoSQL database can be structured.

In NoSQL systems SQL does not use as their query language and has distributed, fault-tolerant architecture. While it's true that some NoSQL systems are entirely non-relational, others simply avoid selected relational functionality such as fixed table schemas and join operations. For example, instead of using tables, a NoSQL database might organize data into **objects**, key/value pairs or tuples.

NoSQL, which encompasses a wide range of technologies and architectures, seeks to solve the scalability and big data performance issues that relational databases weren't designed to address. NoSQL is especially useful when an enterprise needs to access and analyze massive amounts of unstructured data or data that's stored remotely on multiple virtual servers in the cloud.

NoSQL has high performance with high availability, and offers rich query language and easy scalability.

Query Processing in NoSQL Data Base with Cluster Point version 4.0(new)

Here are some screen shorts which represents creation of database and various query processing with NoSQL Data Base.

1. Create Data Base Query:- (See in next page)
2. Insert Query:- (See in next page)
3. Select Query:- (See in next page)
4. Update Query:- (See in next page)
5. Delete Query:- (See in next page)
6. Select Query with Where clause (See in next page)

First of all we create database with name "college", insert some data in this database with the help of **Insert** command. We get a message after run query, which is shoeing in the third screen short. After that we execute **Select** command. Then we use **Delete** command for a particular row, for this we have to use id which is generated for each row when data base is created. Now we use **Update** query with particular id for updation in data base and after that we are executing **Select** query with **Where** clause.

Cluster point is a database which is using cloud for data distribution to each and every user as per requirement. It is using NoSQL for this process. It is doping work on Horizontal Scaling in which the data is distributed equally as the user requirement.

NoSQL has many benefits like this data base can be used for **Document-based, Key-value based, Column based, Graphical data bases.** It has constant uptime that keeps you always open for business, scale online for any sized workload, fast performance for Web, mobile applications, very good approach in distributing data across multiple data centers, geographies, and cloud providers, hundreds of nodes are simple to operate and manage etc.

References :-

1. Amazon Web Services. SimpleDB. Web Page. http://aws.amazon.com/simpledb/.
2. B. Cooper, R. Ramakrishnan, U. Srivastava, A. Silberstein, P. Bohannon, H. Jacobsen, N. Puz, D. Weaver, and R. Yerneni. Pnuts: Yahoo!s hosted data serving platform. In Proceedings of VLDB, 2008.
3. F. Chang, J. Dean, S. Ghemawat, W. C. Hsieh, D. A. Wallach, M. Burrows, T. Chandra, A. Fikes, and R. E. Gruber. Bigtable: a distributed storage system for structured data. In Proceedings of OSDI, 2006.
4. http://www.datastax.com/nosql-databases
5. J. Dean and S. Ghemawat. Mapreduce: Simplified data processing on large clusters. pages 137–150, December 2004.www.clusterpoint.com
6. M. Brantner, D. Florescu, D. Graf, D. Kossmann, and T. Kraska. Building a Database on S3. In Proc. of SIGMOD, pages 251–264, 2008.
7. Megan Berry, Database Management in the Cloud Computing Era
8. R. Agrawal, J. Kiernan, R. Srikant, and Y. Xu. Order preserving encryption for numeric data. In Proc. of SIGMOD, pages 563–574, 2004.
9. R. Chaiken, B. Jenkins, P.-A. Larson, B. Ramsey, D. Shakib, S. Weaver, and J. Zhou. Scope: Easy and efficient parallel processing of massive data sets. In Proc. of VLDB, 2008.
10. www.clusterpoint.com

1. Create Data Base Query:-

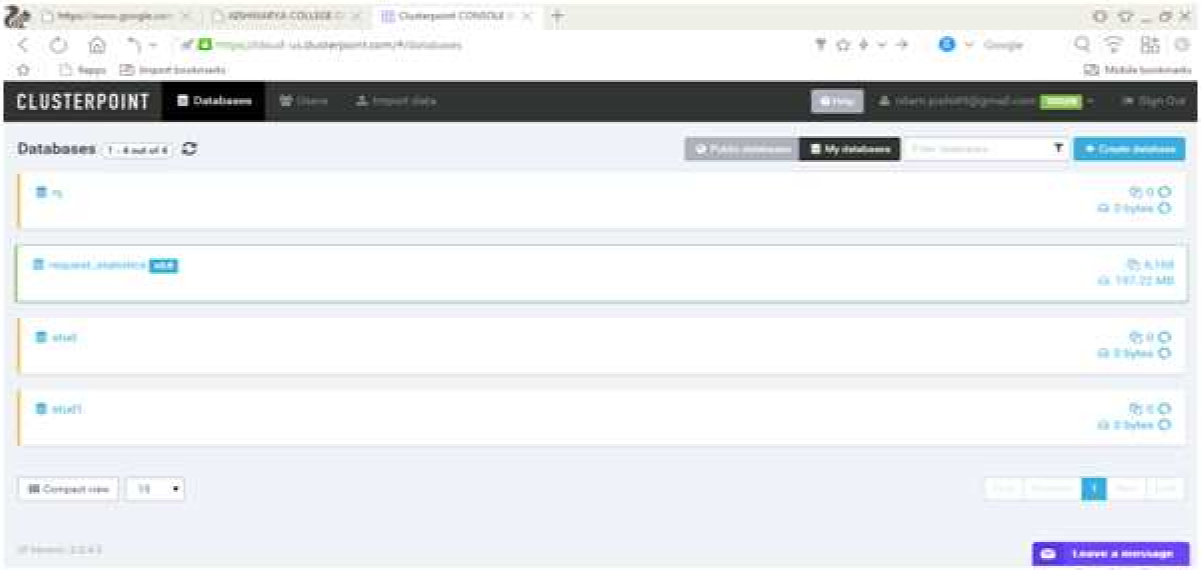

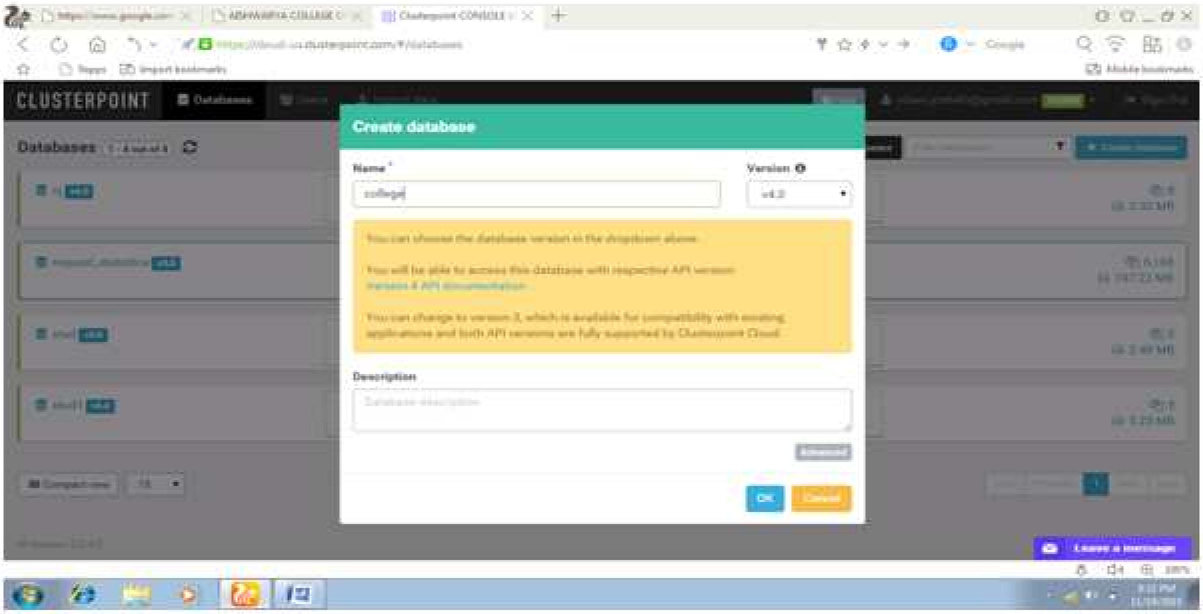

2. Insert Query:-

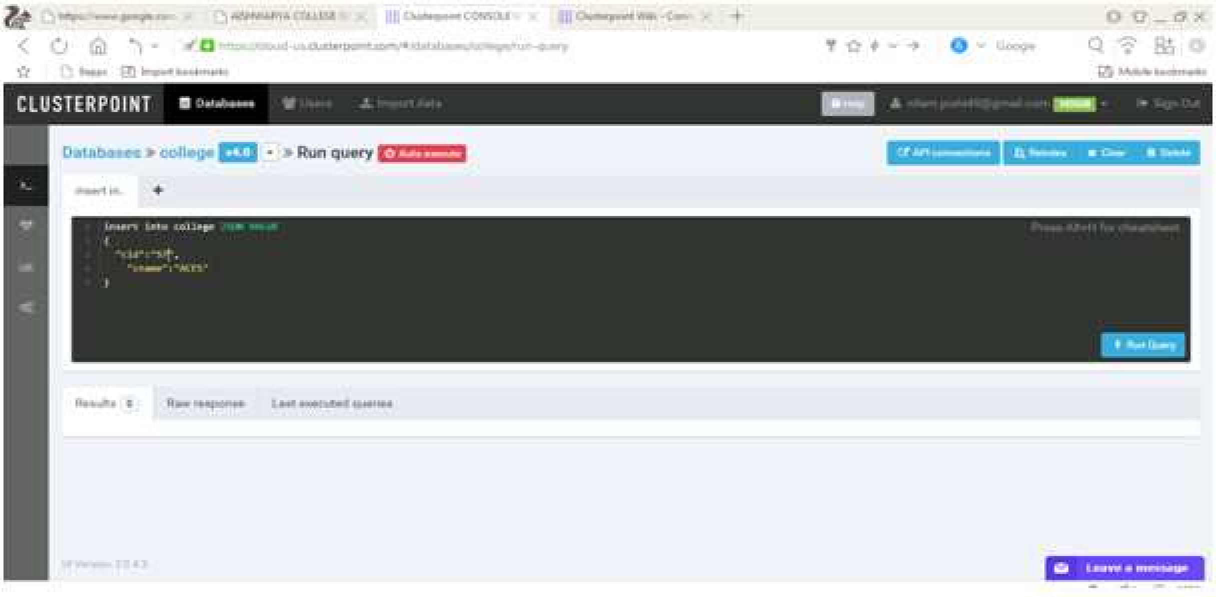

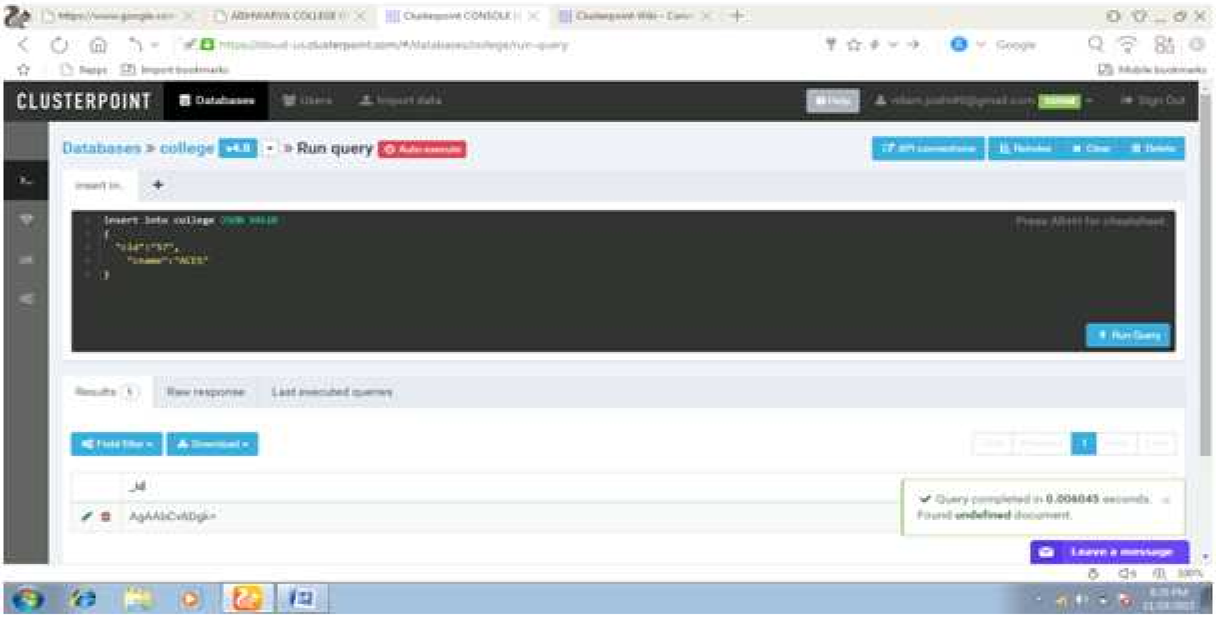

3. Select Query:-

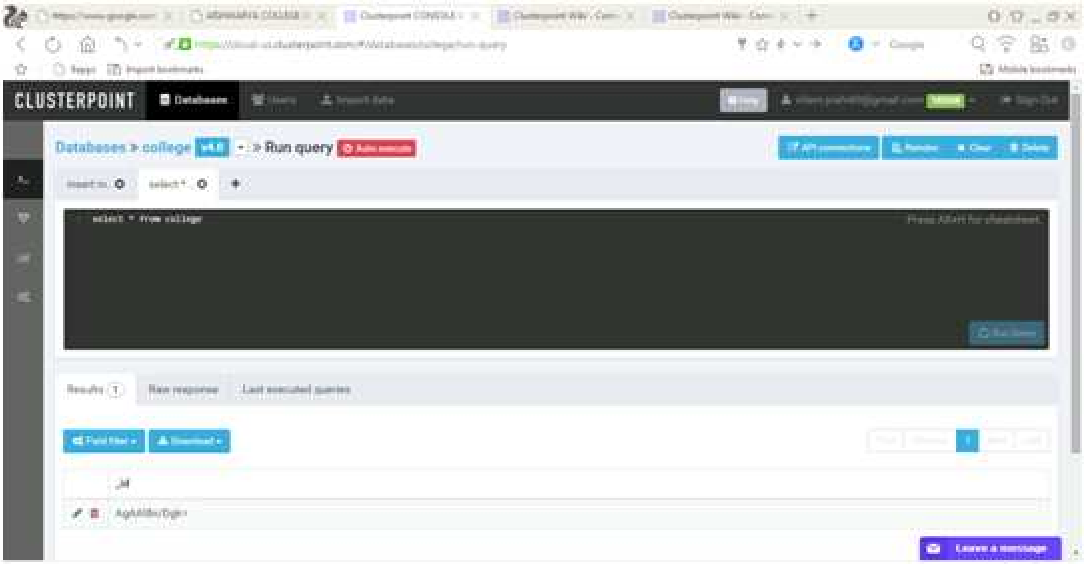

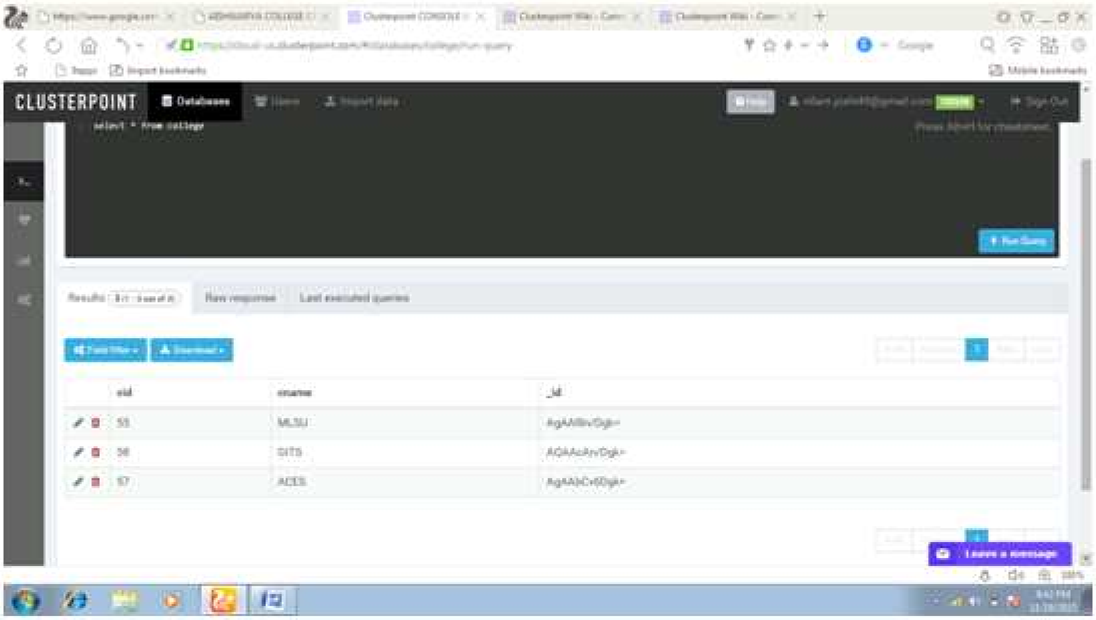

4. Update Query:-

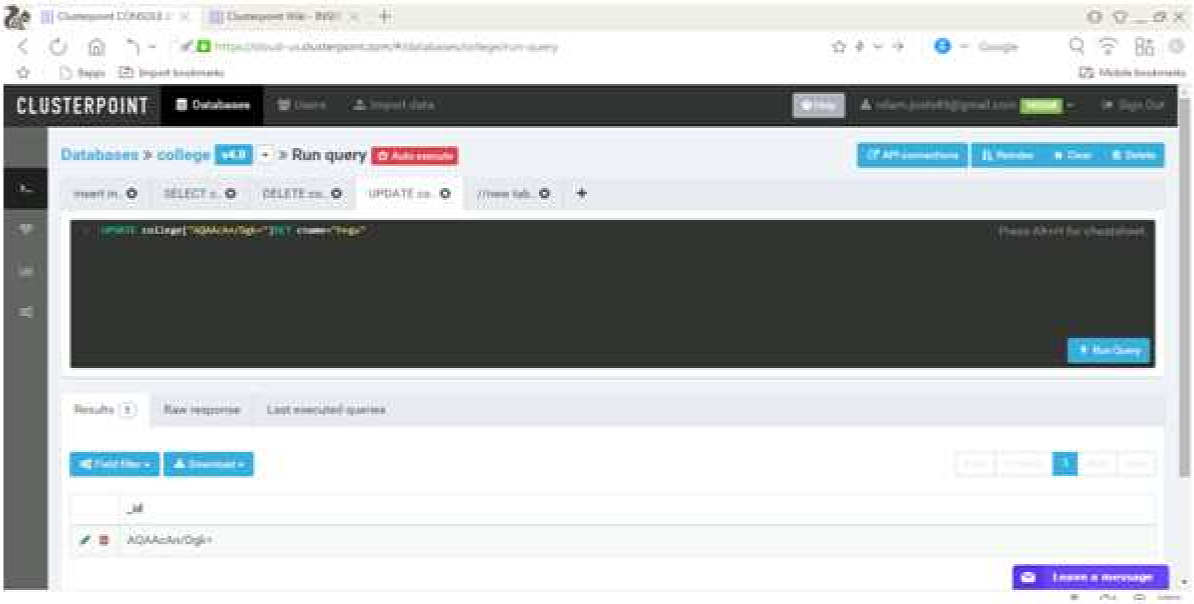

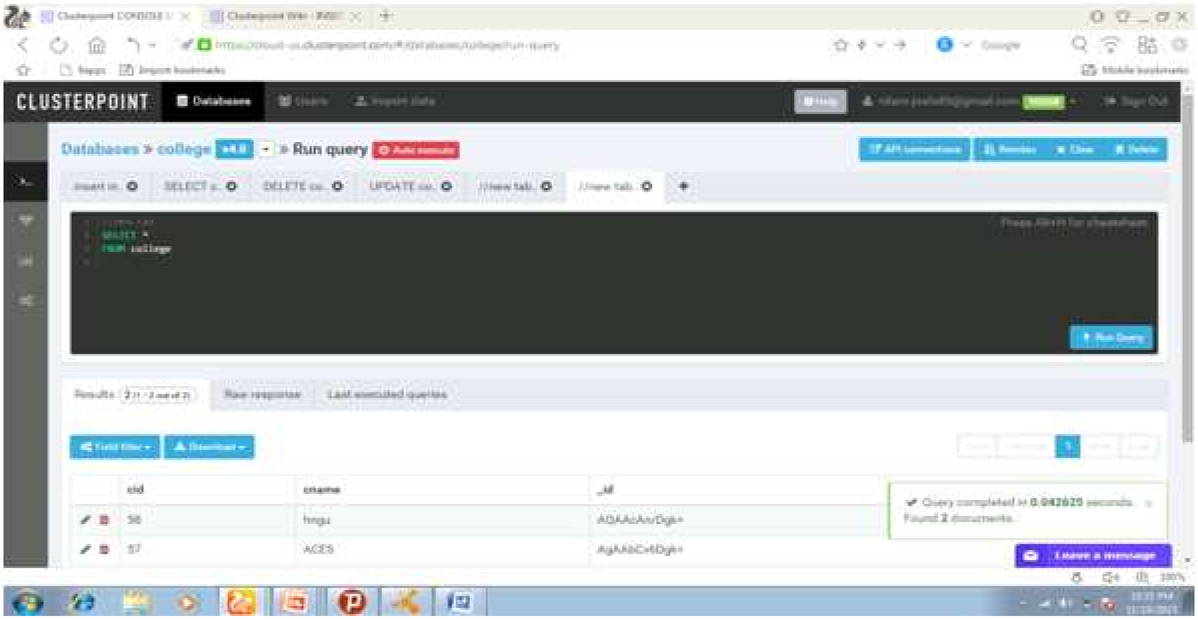

5. Delete Query:-

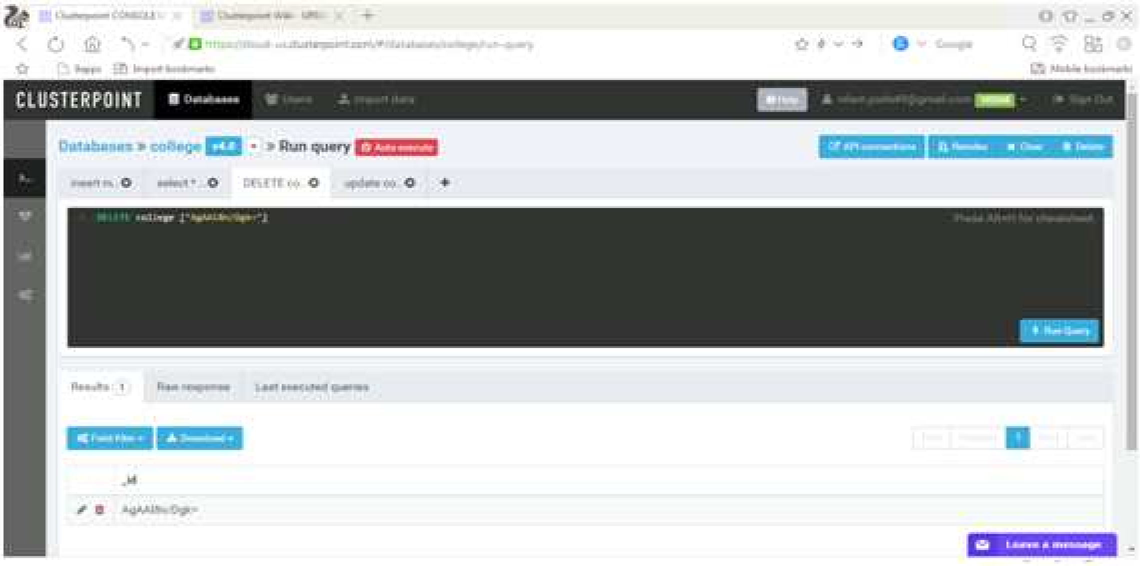

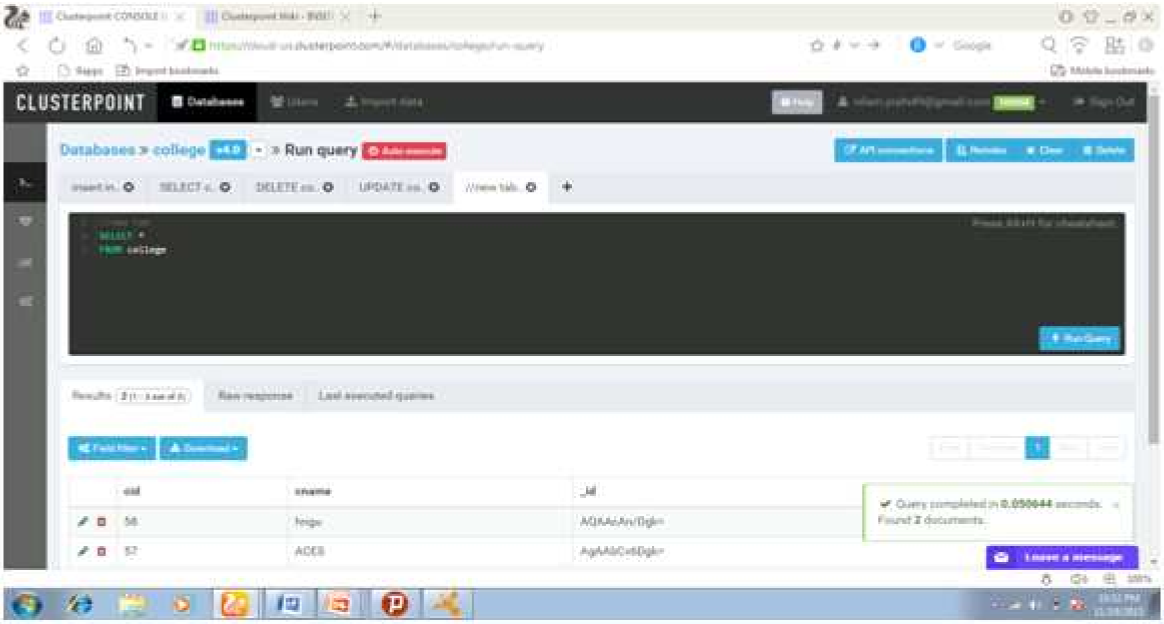

6. Select Query with Where clause

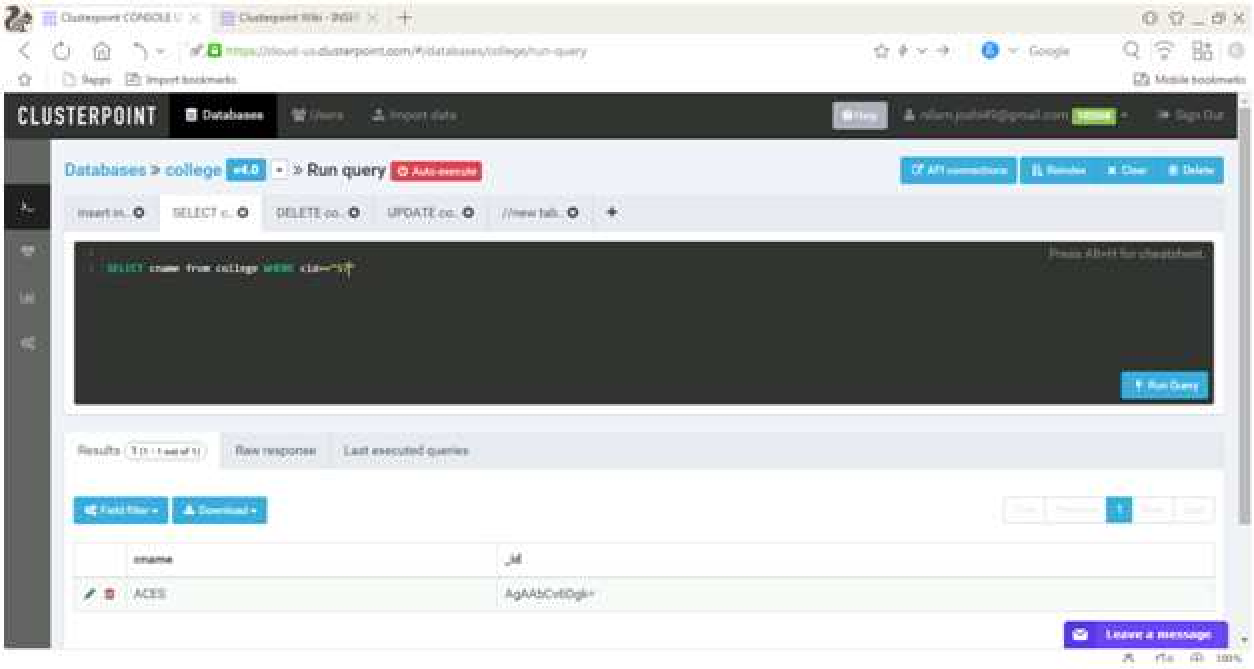

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Importance of Yoga in Physical Education

Dr. Avinash Verma *

Introduction - Yoga is essentially a spiritual discipline based on an extremely subtle science, which focuses on bringing harmony between mind and body. It is an art and scince of healthy living. The word 'Yoga' is derived from the Sanskrit root 'Yuj', meaning 'to join' or 'to yoke' or 'to unite'. As per Yogic scriptures the practice of Yoga leads to the union of individual consciousness with that of the Universal Consciousness, indicating a perfect harmony between the mind and body, Man & Nature. According to modern scientists, everything in the universe is just a manifestation of the same quantum firmament. One who experiences this oneness of existence is said to be in yoga, and is termed as a yogi, having attained to a state of freedom referred to as mukti, nirvana or moksha. Thus the aim of Yoga is Self-realization, to overcome all kinds of sufferings leading to 'the state of liberation' (Moksha) or 'freedom' (Kaivalya). Living with freedom in all walks of life, health and harmony shall be the main objectives of Yoga practice."Yoga" also refers to an inner science comprising of a variety of methods through which human beings can realize this union and achieve mastery over their destiny.Yoga, being widely considered as an 'immortal cultural outcome' of Indus Saraswati Valley civilization – dating back to 2700 B.C., has proved itself catering to both material and spiritual upliftment of humanity.Basic humane values are the very identity of Yoga Sadhana.

A Brief History and Development of Yoga - The practice of Yoga is believed to have started with the very dawn of civilization. The science of yoga has its origin thousands of years ago, long before the first religions or belief systems were born. In the yogic lore, Shiva is seen as the first yogi or Adiyogi, and the first Guru or Adi Guru.

Several Thousand years ago, on the banks of the lake Kantisarovar in the Himalayas, Adiyogi poured his profound knowledge into the legendary Saptarishis or "seven sages". The sages carried this powerful yogic science to different parts of the world, including Asia, the Middle East, Northern Africa and South America. Interestingly, modern scholars have noted and marvelled at the close parallels found between ancient cultures across the globe. However, it was in India that the yogic system found its fullest expression. Agastya, the Saptarishi who travelled across the Indian subcontinent, crafted this culture around a core yogic way of life.

Importance of Yoga - Yoga is not a religion; it is a way of living that aims towards 'a healthy mind in a healthy body'. Man is a physical, mental and spiritual being; yoga helps promote a balanced development of all the three. Other forms of physical exercises, like aerobics, assure only physical well-being. They have little to do with the development of the spiritual or astral body.

yogic exercises recharge the body with cosmic energy and facilitates:

1. Attainment of perfect equilibrium and harmony
2. Promotes self- healing.
3. Removes negative blocks from the mind and toxins from the body
4. Enhances personal power
5. Increases self-awareness
6. Helps in attention, focus and concentration, especially important for children
7. Reduces stress and tension in the physical body by activating the parasympathetic nervous system

The aspirant feels rejuvenated and energized. Thus, yoga bestows upon every aspirant the powers to control body and mind.

Yogic, yoga being a subject of varied interests, has gained world wide popularity. Recent research trends have shown that it can serve us applied science in a number of fields such as eructation, physical education and sports. Health and family welfare, psychology and medicine and also one of the valuable means for the development of human resources for human resources for better performance and productivity, however, there exist controversy and accepting yoga as medicine and therapy because it has generally been believed that yoga is spiritual science having emancipation as its goals and hence can be treated only as a therapy. It is now being realized in all parts of the globe that yoga is not only for better development of mind, socio-control, and spiritual, moral but also a therapy.

Yoga is a Sanskrit word, derived from the root 'Yuj', meaning to meaning to control, to yoke or to unite. It is about to the integration of person's own consciousness and the universal consciousness. Also know as a union of mental and spiritual disciplines i. e. body and soul. Yoga originated in India about 5000 years ago. It was evolved as 'spiritual practice' in Hinduism. There is a legend that knowledge of Yoga was first was passed by lord shiva to

*Asst. Prof. (Physical Education) Sendhwa Physical Education Institute, Sendhwa, Distt. Barwani (M.P.) INDIA

his wife Parvati and from there into the lives of human.
Yoga is one of the six Darshanas (Views) of 'Hindu classical philosophy' :

1. Sankhya- a strongly dualist theoretical exposition of mind and matter.
2. Yoga- a strongly dualist theoretical exposition of mind and matter.
3. Nyaya or logics.
4. Vaisheshika-an empiricist school of atomism.
5. Mimamsa- an anti-ascetic and anti-mysticist school of orthopraxy.
6. Vedanta- opposing Vedic ritualism in favor of mysticism. Vedanta came to be the dominant current of Hinduism in the post-medieval period.

In rest of the world other than India, the term yoga is typically considered as form of 'physical exercise' which is actually associated with Hatha Yoga and it's Asanas (postures). In American society, yoga was first introduced by 'Swami Vivekananda' in late nineteenth century as spiritual practice. Now, in western countries yoga is popular as a way of keeping fit and healthy. It is a combination of breathing exercises, physical postures and mediation. This is only a part of the broad view of yoga.

Types of Yoga- Major Branches of yoga are :

1. Raja Yoga – Compiled in 'Yoga Sutras of Patanjali.'
2. Karma Yoga
3. Gyana or Jnana Yoga
4. Bhakti Yoga
5. Hatha Yoga

As per shiv samihita, shiva syays "I have studied all religions and given the best out of them as yoga and in relation to pranayam or the breath control, he says, if you control your breath, you control the mind you control the breath".

Chakraboty gives importance of yoga as in the ancient adanced cultures like Greek, Spartan, Athens and Indus-Valley civilization; there is a clear proof of regular physical exercise all this know to each and every body. Now amongst the physical exercise most effective ones are yoga and naturopathy. The nature of every yogic practice is psycho physiological and if this conceptual background is not clearly understood, the whole outlook on yogic practice will be disturbed. The relation of yogic in terms of anatomy and psychology would remove misconception about them.

Yoga exercise are scientific means for strengthen of all living of atrophying muscle fibers and tissues. The system teaches how to awake new life pulsation in active tissue. In this context it is from others systems of exercise in as much as it teaches one how to concentrate his attention on the awakened energy which is the direct gives of power along with bodily strength. This aspect of yoga is technically known as "asanas" which will Develop by the latin yogic in to a well organized system of physical culture.

Yoga is also method of self realizations which beings with the perfection of one's physical self and aspires to achieve a state of consciousness. It is, therefore no wonder that from the mythological point of view, God himself is attributed to have discovered yoga (Lord Shiva). Pajama is a science of respiration. It consist of three phase Purack, Khumbhak. It is an admitted psychology fact that the ordinary act of respiration involves, appreciable changes in the pressure condition obtainable in the lungs, in the thorax and in the abdomen if the respiration made deeper, the pressure changes become considerable and under particular circumstances these change are observed to be remarkably great. Pranayama improves the circulation of blood and capable of producing very high pressure in the lungs and in the thorax. Pranayama is one of the first exercises for a weak heart and weak lungs. If it's physiology is properly known and if it is judicially administered exercises capable of giving wonderful results.

Benefits of Yoga - The art of practicing yoga helps in controlling an individual's mind, body and soul. It brings together physical and mental disciplines to achieve a peaceful body and mind; it helps manage stress and anxiety and keeps you relaxing. It also helps in increasing flexibility, muscle strength and body tone. It improves respiration, energy and vitality. Practicing yoga might seem like just stretching, but it can do much more for your body from the way you feel, look and move.

Yoga asanas build strength, flexibility and confidence. Regular practice of yoga can help lose weight, relieve stress, improve immunity and maintain a healthier lifestyle.

In 2014, Indian Prime Minister Narendra Modi suggested United Nations to celebrate June 21 as the International Yoga Day as it is the summer solistice; the longest day of the year in the Northern Hemisphere.

"Yoga is an invaluable gift of India's ancient tradition. This tradition is 5000 years old. It embodies unity of mind and body; thought and action; restraint and fulfilment; harmony between man and nature; a holistic approach to health and well-being. It is not about exercise but to discover the sense of oneness with yourself, the world and the nature. By changing our lifestyle and creating consciousness, it can help in well being . Let us work towards adopting an International Yoga Day."

References :-

1. Yogendra Yoga Physical education (Mumbai) : The Yoga Institution, Santacruz, 1971
2. Swami Kuvalayanada, Pranayama (Lonavala : Kaivayadhama, 1966)
3. Joshi, K. S., Yoga and Personality (Allahabad : Uddiyana Publications, 1967)
4. http://www.mea.gov.in (Dr. Ishwar V basavaraddi, yoga : Its Origin, History and development)
5. Benefits of Yoga, Writ. by Medindia Content Team

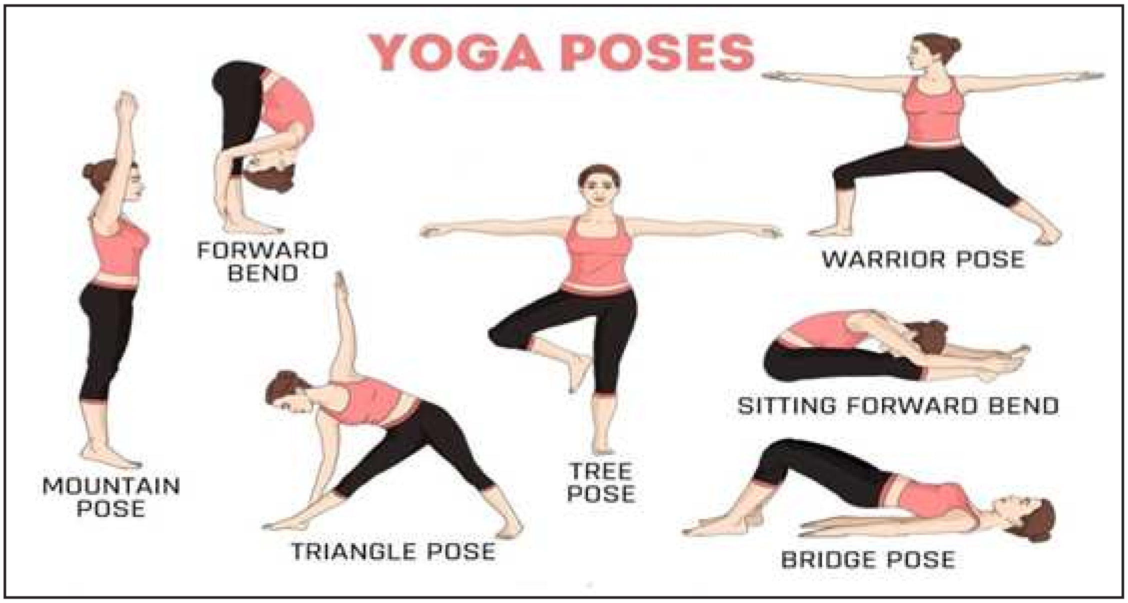
YOGA POSES
FORWARD BEND
WARRIOR POSE
SITTING FORWARD BEND
MOUNTAIN POSE
TREE POSE
TRIANGLE POSE
BRIDGE POSE

****

चर्मकारों का बढ़ता शैक्षिक स्तर राजस्थान के विशेष संदर्भ में

डॉ. योगेश चन्द्र जोशी *

शोध सारांश – चमार अथवा चर्मकार भारतीय उपमहाद्विप में पाई जाने वाली जाति समूह है। वर्तमान समय में यह जाति अनुसूचित जातियों की श्रेणी में आती है। यह जाति अस्पृश्यता की कुप्रथा का शिकार भी रही है। इस जाति के लोग परम्परागत रूप से चमड़े के व्यवसाय से जुड़े हुए हैं। सम्पूर्ण भारत में चमार जाति अनुसूचित जातियों में अत्यधिक संख्या में पाई जाने वाली जाति है, जिनका मुख्य व्यवसाय, चमड़े की वस्तु बनाना है।

आज चर्मकार शिक्षा के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट पहचान बना रहे हैं तथा स्वयं को गौरवान्वित महसूस कर रहे है। वे पहले से अधिक स्वतंत्र एवं मुखर हो गए है। सबसे महत्तवपूर्ण बात यह है कि आज चर्मकारों को शिक्षा सशक्तीकरण के संबंध में सरकार की पूर्ण सहमति भी प्राप्त हो चुकी है। यह बदलाव चर्मकारों में एक बहुत ही बड़े परिवर्तन की शुरूआत है। चर्मकारों में शिक्षा एवं वैचारिक क्रांति के अपूर्व समायोजन ने उनके अन्तर्मन को झकझोर दिया है। आज सम्पूर्ण चर्मकार समाज घर से बाहर निकलकर शिक्षा प्राप्त करने लगा है।

शब्द कुंजी – जाति, समाज, चर्मकार, शिक्षा, शैक्षिक, विद्यार्थी, राजस्थान।

प्रस्तावना – एक सामाजिक व्यवस्था के रूप में भारत में जाति सिर्फ अपना रूप बदल रही है। निर्जात होने की कोई प्रक्रिया कहीं से चलती नहीं दिखती। हम किसी के बारे में कह सकते हैं कि वह आधुनिक है या उत्तर आधुनिक है। लेकिन यह नहीं कह सकते कि उसकी कोई जाति नहीं है। यह एक भयावह त्रासदी है। क्या हो जाति से मुक्ति की परियोजना ? एक विद्यार्थी, एक समाजकर्मी कैसे करे जाति से संघर्ष ? इन्हीं सवालों पर केन्द्रित हैं।

चमार अथवा चर्मकार भारतीय उपमहाद्विप में पाई जाने वाली जाति समूह है। वर्तमान समय में यह जाति अनुसूचित जातियों की श्रेणी में आती है। यह जाति अस्पृश्यता की कुप्रथा का शिकार भी रही है। इस जाति के लोग परम्परागत रूप से चमड़े के व्यवसाय से जुड़े हुए हैं। सम्पूर्ण भारत में चमार जाति अनुसूचित जातियों में अत्यधिक संख्या में पाई जाने वाली जाति है।

चर्मकार जाति के लोगो का मुख्य व्यवसाय चमड़े की वस्तुएं बनाना है। इस जाति के लोग मरे हुए जानवरों के चमडे से विभिन्न कलात्मक वस्तुएं बनाते है, जिसके अन्तर्गत चमड़े के जूते-चप्पल बनाना, चमड़ें के बेल्ट बनाना, चमड़ें के पर्स बनाना, चमड़ें के बैग बनाना, चमड़ें की गोफन बनाना आदि इस जाति के लोगो का पुश्तैनी कार्य रहा है।

संविधान बनने से पूर्व भारत में चर्मकार केवल चमड़े का कार्य ही करते थे, उन्हें पढ़ने-लिखने तथा दूसरे लोगों की तरह बाहर काम करने आदि अनेक क्षेत्रों में अनुमति नहीं थी तथा उनको अछूतों की श्रेणी में रखा जाता था। अंग्रेजों के आने से पहले तक भारत में चमार जाति के लोगों पर बहुत यातनाएं तथा जुल्म किए जाते थे।

आजादी के बाद भी इन पर हो रहे जुल्मों व यातनाओं को रोकने के लिए इनको भारत के संविधान में अनुसूचित जाति की श्रेणी में रखा गया। सभी तरह के जुल्मों तथा यातनाओं को प्रतिबंधित कर दिया गया। इसके बावजूद भी देश में कुछ जगहों पर इन जातियों के साथ यातनाएं आज भी होती हैं।

इस बात पर संत रविदास ने कहा है **– चर्मकार कोई नीच जाति नहीं सनातन धर्म के रक्षक है, जिन्हें भी मुगलों का जुल्म सहना पड़ा था।**

भारत का संविधान 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ था। संविधान लागू होने के बाद सभी को समानता, स्वतंत्रता का अधिकार, शोषण के विरूद्ध अत्याचारों से मुक्ति पाने का अधिकार, धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार, शिक्षा एवं संस्कृति का अधिकार तथा संवैधानिक उपचारों का अधिकार दिया गया। जिसमें चर्मकार समाज को भी सभी के समान अधिकार दिए गए, किन्तु निरक्षरता एवं घरेलू तथा भारतीय धार्मिक परंपराओं के कारण चर्मकार, सरकार द्वारा दिए गये उन समस्त अधिकारों का सम्पूर्ण उपयोग नहीं कर पाए। अत: चर्मकार आज भी अपमानित, उपेक्षित और घृणित है।

भारत में समस्त सुसंगठित पंचायतों से 150 से अधिक चमार जाति की उपजातियों की पहचान होती है, जिनमें जाटव, कुरील, संखवार, ढोहरे, ततवा, मोची, आदि आते है। चूंकि उक्त जातियों का कार्य चमड़े से निर्मित वस्तुओं का व्यापार करना था। परन्तु अब शिक्षा के कारण तथा तीव्र बुद्धि के बल पर उन्होंने प्रत्येक जगह अपनी मजबूत स्थिति बनाई है।

भारत में ब्राह्मण जाति के बाद सर्वाधिक अखिल भारतीय सेवाओं में चमार जाति से है। मध्यकाल में चमार एक अपवित्र जाति के कलंक के रूप में जानी जाती थी। सामान्यत: इन जातियों का निवास हिन्दू जाति के गाँवों में होता है। आज भी कई लोग चमड़े के व्यापार व अन्य परम्परागत व्यवसाय करते हैं और बहुत से लोग खेतिहर मजदूर हैं।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था राजनीतिक दृष्टि से केवल भ्रमित है बल्कि उसकी चिंतन की दिशा भी त्रुटिपूर्ण है। हम राजनीतिक क्षेत्र में मात्र वोट की परिकल्पना से निरंतर आगे बढ़ रहे हैं। जाति, वर्ग, पंथ आदि के भेद को आज देश में उच्च-निम्न की दृष्टि से देखा जाता है। 6500 जातियों व 50000 से अधिक उपजातियों में बँटा हुआ आज का हिन्दू समाज अपनी दुर्दशा पर आँसू बहा रहा है। हिन्दू चर्मकार जाति उसमें से एक है। पूर्व में चार वर्ण, एक सौ सत्रह गोत्र और छत्तीस जातियों में सम्पूर्ण हिन्दू समाज सुव्यवस्थित था।

राजस्थान में चमार जाति के लोग पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश राज्यों के आसपास के जिलों में मिलते है। बीकानेर, श्रीगंगानगर, हनुमानगढ़,

* सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग) माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा, सिरोही (राज.) भारत

चुरू, झुंझुनू, अलवर, भरतपुर और धौलपुर में बसे हुए लोग चमार के रूप में जाने जाते हैं तथा भरतपुर, धौलपुर और अलवर के कुछ हिस्सों में लोग जाटव, रायगर तथा मोची के रूप में जाने-पहचाने जाते है।

राजस्थान में चर्मकार जाति ने आज पढ़-लिखकर शादी-विवाह, दहेज, छुछक, भात, मृत्युभोज आदि सामाजिक रीति-रिवाजों में फिजुल खर्चा करना बंद कर दिया है। अपनी बहन-बेटियों एवं माता-पिता को सलाह दी जा रही है कि यह फिजुल खर्ची बच्चों की शिक्षा पर खर्च किया जाए जिससे बच्चे पढ़-लिखकर आगे बढ़े तथा समाज को अग्रणी बनाए।

राजस्थान सरकार द्वारा अनुसूचित जाति में आने वाली चर्मकार जाति को 30 प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया गया है। अत: चर्मकारों ने पुत्र प्राप्ति का मोह छोड़कर एक या दो संतान पैदा करने का संकल्प किया है तथा उनको पढ़ा-लिखाकर उच्च अधिकारी बनाया जा रहा है एवं बहुत से चर्मकार जाति के अधिकारी राजस्थान में वर्तमान में कार्यरत है।

आज चर्मकारों की शिक्षा की बातें और योजनाएं गाँवों एवं शहरों में फेल रही हैं। राजस्थान के बड़े शहरों और 'मेट्रों सिटी' में रहने वाले चर्मकार शिक्षित, आर्थिक रूप से स्वतंत्र, नयी सोच वाले, ऊँचे पदों पर काम करने वाले बन गए हैं, वही दूसरी तरफ गाँवों में रहने वाले चर्मकार भी आज अपनी अलग पहचान बना रहे है।

वर्तमान में चर्मकारों ने अपने स्तर पर हर क्षेत्र में सफलता हासिल की है। अगर उनकी शिक्षा के विषय में बात करें तों हम अक्सर अखबारों में पढ़ते हैं - राजस्थान बोर्ड परीक्षा परिणाम में चर्मकार के बेटे या बेटी ने बाजी मारी, आईआईटी परीक्षा परिणाम में चर्मकार का बेटा या बेटी सर्वप्रथम। अत: चर्मकार अपने प्रयास और प्रयत्न में पीछे नहीं हैं, किन्तु आवश्यकता है उन्हें सही अवसर प्रदान करने की।

आज चर्मकार शिक्षा के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट पहचान बना रहे हैं तथा स्वयं को गौरवान्वित महसूस कर रहे है। वे पहले से अधिक स्वतंत्र एवं मुखर हो गए है। सबसे महत्तवपूर्ण बात यह है कि आज चर्मकारों को शिक्षा सशक्तीकरण के संबंध में सरकार की पूर्ण सहमति भी प्राप्त हो चुकी है। यह बदलाव चर्मकारों में एक बहुत ही बड़े परिवर्तन की शुरूआत है। चर्मकारों में शिक्षा एवं वैचारिक क्रांति के अपूर्व समायोजन ने उनके अन्तर्मन को झकझोर दिया है। आज तक घर की चार दीवारी में कैद रहने वाले चर्मकार घर से बाहर निकलकर शिक्षा प्राप्त करने लगे है।

राजस्थान में चर्मकार समाज के लोग भीनमाल, जालोर, सिरोही, जोधपुर, उदयपुर, अजमेर, बीकानेर, जयपुर, श्रीगंगानगर आदि जिलों में बहुतायत संख्या में निवास कर रहे है। वहाँ के लोग आज पढ़-लिखकर, उच्च शिक्षा प्राप्त कर सरकारी क्षेत्र में अध्यापक, प्रोफेसर, डॉक्टर, वकील, थानेदार इंजिनीयर बने हुए है। भारतीय आर्थिक सेवा और भारतीय सांख्यिकी सेवा में भी कार्य कर रहे हैं। राजनीति क्षेत्र में सरपंच, विधायक, सांसद तथा नीजि क्षेत्र के अंतर्गत विश्व की कई बड़ी-बड़ी कंपनियों के अध्यक्ष, संचालक, मैनेजर व मुखिया बने हुए हैं साथ ही कई कंपनियों में सीईओ और एग्जीक्यूटिव डायरेक्टर का पद संभाल रहे है तो कोई कंपनी के फाउंडर बने हुए है तो कुछ विदेशों में भी अपने चर्मकार समाज की अलग पहचान बना रहे है।

सरकार द्वारा चर्मकारों को अब कानूनी अधिकार मिल चुके हैं। वे उन्हें प्राप्त कानूनी अधिकारों का उपयोग करते हुए स्वयं को कठिन परिस्थितियों में भी राजनीतिक, आर्थिक एवं शैक्षिक रूप से सशक्त करने में लगे हुए है। अब चर्मकारों का सामाजिक सशक्तिकरण हो गया है, अब वे अपने कानूनी अधिकारों का समुचित उपयोग कर रहे है। शिक्षा शक्ति सम्पन्न चर्मकारों की महत्वकांक्षा को चुनौती देना अब आसान नहीं है।

चर्मकारों के लिए शिक्षा को महत्त्व का विषय मानते हुए राजस्थान सरकार द्वारा कई प्रयास किए जा रहे हैं तथा पिछले कुछ वर्षो में चर्मकारों की शिक्षा के कार्यो में तेजी भी आई है। इन्हीं प्रयासों के कारण चर्मकार स्वयं को दकियानूसी जंजीरों से मुक्त करने की हिम्मत करने लगे हैं। सरकार चर्मकारों की शिक्षा के लिए नई-नई योजनाएँ बना रही हैं, कई एनजीओ भी चर्मकारों के अधिकारों के लिए अपनी आवाज बुलंद करने लगे हैं, जिससे चर्मकार बिना किसी सहारे के हर चुनौती का सामना कर सकने के लिए तैयार हो रहे हैं। अपना शैक्षिक स्तर बढ़ाकर आज चर्मकारों ने सामाजिक स्थिति में सुधार करना प्रारंभ कर दिया।

राजस्थान में चर्मकारों की शिक्षा हेतु सरकार द्वारा किये जा रहे विशेष प्रयासों के अन्तर्गत स्कूल, कॉलेज एवं युनिवर्सिटी में चर्मकारों को शिक्षण शुल्क में छुट भी प्रदान की जा रही है तथा चर्मकारों के विद्याथियों को छात्रवृत्ति भी दी जा रही है। यह छात्रवृत्ति विद्याथियों को उनके भरण-पोषण, पुस्तके, स्टेशनरी आदि हेतु दी जाती है। जिससे गरीब एवं आश्रित चर्मकारों को उच्च शिक्षा प्राप्ति में किसी भी प्रकार की मुसीबत का सामना नही करना पडेगा। इस प्रकार सरकार द्वारा भी चर्मकारों की शिक्षा को बढावा देने हेतु विशेष प्रयास किये जा रहे है।

बदलते दौर में अब चर्मकार शिक्षा प्राप्ति हेतु विशेष रूचि दिखा रहे है। चाहे वह विज्ञान, व्यापार, अंतरिक्ष, खेल, राजनीति आदि हर क्षेत्र में राजस्थान के चर्मकारों ने नए कीर्तिमान स्थापित कर दिए हैं। शिक्षा की विशेष समझ रखने वाले चर्मकार आज सम्पूर्ण दुनिया में अपना वर्चस्व फैला रहे है। चर्मकारों की शिक्षा को बढ़ावा देने और तरक्की के लिए कई कंपनियाँ अपने यहाँ नौकरी दे रही है।

निश्चित रूप से स्वतंत्रता प्राप्ति के इतने वर्षो बाद राजस्थान में चर्मकारों ने अपना शैक्षिक स्तर बढ़ाया है। उन्होने कई उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं, आने वाले समय में प्रवेश करने से पहले चर्मकारों को आत्मनिर्भर बनना होगा, जिसके लिए आवश्यकता है, विचार परिवर्तन की, सामाजिक संकीर्णताओं से मुक्ति पाने की तथा संघर्ष करने की, संघर्ष के बिना कुछ भी नहीं मिलता है। आज संघर्ष के कारण चर्मकार इतनी उन्नति कर पाए है। अत: सफलता के लिए संघर्ष आवश्यक है। इसलिए कहा गया है - **'मन के हारे हार, मन के जीते जीत'**

शिक्षा का स्वरूप बनने से ज्ञानवान, कौशल निपुण एवं सेवाभावी विद्यार्थियों का निर्माण किया जा सकता है। इस प्रकार के विद्यार्थी राष्ट्रीय एवं सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अपना योगदान दे सकते हैं एवं समस्याओं के समाधान में भी अपनी भूमिका का निर्वाह करने में सक्षम हो सकते है। अब राजस्थान के सम्पूर्ण चर्मकार समाज ने संगठित होना शुरू हुआ हैं। उन्होंने शिक्षित बनने-बनाने, संघर्ष करने-कराने का संकल्प लिया है। पीछे मुड़कर नहीं देखने तथा अपनी बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन करने तथा शिक्षित बनने व संघर्ष करने का संकल्प लिया है। राजस्थान सरकार द्वारा भी चर्मकारों को उच्च शिक्षा प्रदान कराने तथा शिक्षा की ओर रूझान बढाने उनकी बनाई गयी पुरानी नीतियों में सुधार किया जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आलेख - जाति का दंश और मुक्ति की परियोजना
2. http://www.wikiwand.com/hi/wiki/चमार
3. निबंध - शिक्षा : समाज के लिए वरदान है, कारोबार नहीं (https://anuradhagaurav.wordpress.com)

4. चमार एवं खटिक जाति का गौरवशाली इतिहास, भाग–2 (https://sanatansewa.blogspot.com/2015/04/blog-post)
5. हिन्दू चर्मकार जाति – विजय सोनकर शास्त्री, प्रभात प्रकाशन, 2014
6. आलेख – सावित्रीबाई फुले सामाजिक–शैक्षिक क्रांति की महानायिका, 2 जनवरी, 2017 (https://ajmernama.com)
7. हिन्दू चर्मकार जाति–एक स्वर्णिम गौरवशाली राजवंशीय इतिहास – डॉ. विजय सोनकर शास्त्री प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2014
8. आलेख – जाति प्रश्न और उसका समाधान : एक मार्क्सवादी दृष्टिकोण – दिशा संधान, अंक – 2 जुलाई–सितम्बर, 2013 (http://dishasandhaan.in)

****

समाज और देश के निर्माण में शिक्षक की भूमिका

डॉ. योगेश चन्द्र जोशी *

शोध सारांश – समाज व देश के निर्माण में शिक्षक की भूमिका महत्तवपूर्ण रही है और भाविष्य में भी इसे नकारा नहीं जा सकेगा। शिक्षक समाज व राष्ट्र के भावी नागरिकों के वास्तविक सम्पर्क में आकर उनका चरित्र निर्माण करता है। इस प्रक्रिया में शिक्षक सबसे महत्तवपूर्ण कड़ी की भूमिका निभाता है। समाज व राष्ट्र के भावी नागरिकों के निर्माण का उत्तारदायित्त्व शिक्षक पर ही है। यदि प्रत्येक शिक्षक विद्यार्थियों हेतु अपने उपयुक्त दायित्वों का निर्वहन करें तो सिर्फ शिक्षक ही समाज व राष्ट्र का निर्माता होगा। इसलिए कहा जा सकता है कि आज के विद्यार्थी कल समाज व राष्ट्र का सुनहरा भविष्य हैं। अत: आज एक शिक्षक द्धारा अच्छी शिक्षा देने का अर्थ कल समाज व देश के सुनहरें भविष्य का निर्माण करना है।

शब्द कुंजी – शिक्षक, विद्यार्थी, नागरिक, समाज, राष्ट्र।

प्रस्तावना – आधुनिक जगत में ज्ञान, तकनीकी एवं सूचना क्रांति के विकास के साथ-साथ सामाजिक मूल्यों एवं मान्यताओं में भारी बदलाव हुआ है, जिसके चलते आज मानवीय समाज अनेक पर्यावरणीय तथा मनोसामाजिक समस्याओं से घिरा हुआ है। ऐसे में शिक्षक भी अछूता नहीं है, परन्तु प्राचीन काल में भारतीय सभ्यता व विश्व की अनेक सभ्यताएं धार्मिक प्रवृत्तिा से समृद्ध थी जिसमें धर्म को आधार मानकर शिक्षा दी जाती थी। मनुष्य मात्र का सम्पूर्ण जीवन सांस्कृतिक चेतना एवं धार्मिक सहिष्णुता से संचालित होता था। इसके साथ-साथ आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, शैक्षिक ढ़ाँचे धार्मिक विचारधाराओं से सिंचित थे। जीवन का लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति था। अत: उस समय शिक्षक की भूमिका ईश्वर के रूप में थी। **'शिक्षक मोक्ष मार्ग का दाता था तथा शिक्षा मोक्ष प्राप्ति का मार्ग थी।'**

भारत देश गुरूकुल परमपरा के प्रति समर्पित रहा है। यहाँ के वशिष्ठ, संदीपन धौम्य आदि के गुरूकुलों से राम कृष्ण, सुदामा जैसे शिष्य निकले, जिन्होंने अपना जन्म तो सार्थक किया ही, साथ ही विश्व वसुधा को सद्ज्ञान का आलोक प्रदान किया और इतिहास को भी धन्य बनाया। भारत कभी जगद्गुरू हुआ करता था। इस देश को जगद्गुरू बनाने वाला एक ही तत्तव है और उसका नाम – शिक्षक, गुरू, आचार्य है।

शिक्षक समाज में उच्च आदर्श स्थापित करने वाला व्यक्ति होता है। किसी भी देश या समाज के निर्माण में शिक्षा की अहम् भूमिका होती है। कहा जाए तो शिक्षक ही समाज का आईना होता है। हिन्दू धर्म में शिक्षक के लिए कहा गया है कि **'आचार्य देवों भव:'** अर्थात शिक्षक या आचार्य ईश्वर के समान होता है। यह दर्जा एक शिक्षक को उसके द्धारा समाज में दिए गए योगदानों के बदले स्वरूप दिया गया जाता है।

शिक्षक का दर्जा समाज में हमेशा से ही पूजनीय रहा है। कोई शिक्षक को 'गुरू' कहता है तो कोई 'आचार्य' तो कोई 'अध्यापक' या 'टीचर' कहता है। ये सभी शब्द एक ऐसे व्यक्ति को चित्रित करते हैं, जो सभी को ज्ञान देता है, सिखाता है और जिसका योगदान किसी भी समाज या देश, राष्ट्र के भविष्य का निर्माण करता है।

सही अर्थ में कहा जाए तो एक शिक्षक ही अपने विद्यार्थी का जीवन गढ़ता है और शिक्षक ही समाज की आधारशिला है। एक शिक्षक अपने जीवन के अंत मार्गदर्शक की भूमिका अदा करता है और समाज को राह दिखता रहता है, तभी शिक्षक को समाज व देश में उच्च दर्जा दिया जाता है।

माता-पिता बच्चे को जन्म देते हैं। उनका स्थान कोई नहीं ले सकता, उनका कर्ज हम किसी भी रूप में नहीं उतार सकते, लेकिन एक शिक्षक ही है, जिसे हमारी भारतीय संस्कृति में माता-पिता के बराबर दर्जा दिया गया है, क्योंकि शिक्षक ही हमें समाज में रहने योग्य बनाता है, इसलिए ही शिक्षक को **'समाज का शिल्पकार'** भी कहा जाता है।

गुरू या शिक्षक का संबंध केवल विद्यार्थी को शिक्षा देने से ही नहीं होता बल्कि वह अपने विद्यार्थी को हर मोड़ पर राह दिखाता है और उसका हाथ थामने के लिए हमेशा तैयार रहता है। विद्यार्थी के मन में उमड़े हर सवाल का जवाब देता है और विद्यार्थी को सही सुझाव देता है तथा जीवन में आगे बढ़ने के लिए हमेशा प्रेरित करता रहता है।

एक शिक्षक या गुरू द्धारा अपने विद्याथियों को स्कूल में जो सिखाया जाता है या जैसा वे सीखते हैं, वे वैसा ही व्यवहार करते हैं। उनकी मानसिकता भी कुछ वैसी ही बन जाती है, जैसा कि वे अपने आसपास होता देखते हैं इसलिए एक शिक्षक या गुरू अपने विद्यार्थी को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। सफल शिक्षक के लिए शिक्षा बहुत ही उपयोगी है, जो हमें गुरू द्धारा प्रदान की जाती है। विश्व में केवल भारत ही ऐसा देश है, जहाँ पर शिक्षक अपने शिक्षार्थी को ज्ञान देने के साथ-साथ गुणवत्ताायुक्त शिक्षा भी देते हैं, जो कि एक विद्यार्थी में उच्च मूल्य स्थापित करने में बहुत उपयोगी है।

किसी भी राष्ट्र का भविष्य निर्माता कहे जाने वाले शिक्षक का महत्तव यही समाप्त नहीं होता, क्योंकि वे न सिर्फ हमको सही आदर्श मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करते हैं बल्कि प्रत्येक शिक्षार्थी के सफल जीवन की नींव भी उन्हीं के हाथों द्धारा रखी जाती है। किसी भी देश या राष्ट्र के विकास में एक शिक्षक द्धारा अपने शिक्षार्थी को दी गई शिक्षा और शैक्षिक विकास की भूमिका का अत्यंत महत्तव है।

शिक्षक समाज व राष्ट्र का अभिन्न अंग है। समाज व राष्ट्र की संरचना एवं सामाजिक परिवर्तन में शिक्षक की अहम भूमिका होती है। प्राचीनकाल से ही शिक्षक को समाज में सर्वोत्ताकृष्ट स्थान प्राप्त है। सामाजिक क्षेत्र में शिक्षक निर्देशन का अत्यधिक महत्तव रखता है। यह नि:संदेह सत्य है कि

* सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग) माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा, सिरोही (राज.) भारत

प्राचीनकाल में भी शिक्षकों की ज्ञान पिपासा एवं धार्मिक स्तर उच्च था। अत: भारत में आज भी शिक्षकों की प्रतिष्ठा एवं सम्मान हेतु प्रतिवर्ष 5 सितम्बर को शिक्षक दिवस मनाया जाता है।

डॉ. के. जी. सैयदन के अनुसार – शिक्षक की प्रतिष्ठा इस बात पर निर्भर करती है कि वे राष्ट्र निर्माण में कहाँ तक रुचि लेते हैं। यदि अध्यापक राष्ट्र व समाज के लिए कार्य करता है तो समाज द्वारा उसका सम्मानित होना स्वाभाविक है।

रुस के शिक्षकों ने राष्ट्र निर्माता बनकर दिखा दिया हैं। सर विलियम कार ने शिक्षण व्यवसायों के विषय में संगठन महामंत्री पद से संबोधित करते हुए कहा था कि 'इस संसार मे शिक्षक का स्तर तब ऊपर उठेगा, जब वह स्वयं को शिक्षक कहलाने में गर्व अनुभव करेगा। मैं यह नहीं कहता कि वह अहंकार करे, मैं यह कहता हूँ कि उसे वास्तव में अध्यापक कहलाने में गर्व होना चाहिए।'

राष्ट्र के विकास का कार्य शिक्षा द्वारा कक्षा शिक्षण से ही प्रारंभ हो जाता हैं। शिक्षक विद्यार्थियों के भाग्य का निर्माता है, परन्तु देश में प्रतिदिन शिक्षाविदों, राजनितिज्ञों, यहाँ तक विद्यार्थियों द्वारा भी चर्चा की जाती है कि शिक्षा का स्तर न्यून है, शिक्षा परिस्थितियों के अनुकूल नहीं है। ऐसा क्यों है। ? विद्यार्थी कक्षा में जाने से क्यों कतराते हैं ? शिक्षक कक्षा अध्यापन के बजाय समय व्यतीत करना चाहता हैं। विद्यार्थियों में असंतोष है। इसलिए शिक्षाविदों एवं विचारकों की मान्यता है कि भारत के भाग्य का निर्माण कक्षाओं में हो रहा हैं। शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक सशक्त माध्यम है और शिक्षक समाज और देश को सही गति एवं दिशा देने में सहायक होता है।

विद्या विनय संपन्ने ब्राह्मणे गनि हस्निीन।
गुनि चैव श्रपाके च पण्डिता समदर्शिन:।।

अर्थात – ब्राह्मण, गाय, हाथी, कुत्ता एवं चांडाल आदि को विद्धान लोग समान दृष्टि से देखते हैं। इस वचन का अर्थ स्पष्ट करते हुए यह कहना सार्थक होगा कि विश्व कुटुंब की अवधारणा में समान अधिकार की कल्पना अमूर्त है। वैश्विक परिवार की कल्पना समानता के तत्त्व पर ही आधारित हैं। वस्तुत: समाज में अगर समता लानी है तो समरसता की आवश्यकता होती है। मनुष्य का मनोमिलन समरसता के बिना संभव नहीं है।

अर्थात शिक्षकों से यह आशा की जाती है कि वह समाज एवं देश के सभी वर्गों तथा समुदाय के लोगों के प्रति समान भावना रखें तथा सभी परिस्थिति में समाज एवं देश के साथ एक रस हो जाए। समाज एवं देश के बदलते नजरिये, बदलते जीवन मूल्यों का प्रभाव शिक्षा जगत पर पड़ा है आज का शिक्षा जगत भी धीरे–धीरे एक व्यावसायिक तंत्र का रूप लेता जा रहा है।

शिक्षक का अहम ध्येय युवा मस्तिष्क को तेजस्वी बनाना है क्योंकि युवा ही समाज व राष्ट्र निर्माता है। भारत की तेजस्वी युवा धरती पर सशक्त संसाधन मौजूद है। शिक्षक की भूमिका उस सीढ़ी जैसी है, जिसके जरिए लोग जीवन की ऊँचाइयों को छूते है, लेकिन सीढ़ी वही की वही रहती है। 'साँप–सीढ़ी' के खेल की भाँति, सीढ़ी एक व्यक्ति को साँपों के लोक तक पहुँचा सकती है और असीमित सफलताओं की दुनिया तक भी। ऐसा ही स्वभाव है इस पेशे का। हमारे भारतीय समाज में और एक बच्चे के जीवन में, एक शिक्षक का स्थान माता–पिता के बाद, लेकिन भगवान से पहले आता है। माता–पिता, गुरू और भगवान ऐसी महत्ता, दुनिया में किसी और पेशे की नहीं है कि वह समाज व देश के लिए अध्यापक से बढ़कर महत्तवपूर्ण हो।

एच.जी.वेल्स ने शिक्षक के महत्तव पर कहा है –

'शिक्षक इतिहास का निर्माता है और राष्ट्र का इतिहास विद्यालयों में लिखा जाता है और विद्यालय अपने शिक्षकों की गुणवत्ता से बहुत भिन्न नहीं हो सकतें।'

यह सत्य ही कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति अपने शिक्षक के स्तर से अधिक ऊपर नहीं जा सकता क्योंकि शिक्षक एक सुदृढ और विकासशील देश की मजबूत नींव है। शिक्षक को समाज और राष्ट्र का निर्माता कहा गया है क्योंकि बालक के माता–पिता के अतिरिक्त शिक्षक ही बच्चें के ज्ञान और जीवन मूल्यों का मुख्य आधार होता है। शिक्षक समाज और विद्यार्थियों का भविष्य निर्माता होता है, उसके हाथ में दोनों का भविष्य सुरक्षित होता है। अत: शिक्षक समाज व राष्ट्र के निर्माण में अहम भूमिका निभाता है।

बालक के विद्यालय में प्रवेश से लेकर उसके उच्च शिक्षा प्राप्त करने तक शिक्षक ही उसे ज्ञान देता है तथा सक्षम व्यक्तित्तव का निर्माण करता है। उच्च शिक्षा के बाद व्यवसायिक शिक्षा में भी प्रशिक्षु को प्रशिक्षण कोई शिक्षक ही देता है। अत: यह एक वास्तविकता है कि शिक्षक का दायित्व केवल विद्यालय एवं कक्षा की चारदिवारी तक ही सीमित नहीं है बल्कि शिक्षक का दायित्व विद्यार्थियों के व्यक्तित्तव के विकास और चरित्र निर्माण का भी एक अहम हिस्सा है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षक विद्यालयों में छात्रों के प्रति अपनी सकारात्मक भूमिका निभा रहे है। जब हम किसी विद्यालय की बात करते हैं तब वास्तव में उस विद्यालय में कार्यरत शिक्षक ही उस विद्यालय में पढ़ने वाले सभी विद्यार्थियों को अर्थपूर्ण शिक्षा प्रदान करते है।जब भी अच्छी शिक्षा देने की बात आती है तब विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय में पढाने वाले सभी शिक्षक इसके प्रणेता नजर आते है। शिक्षा, शिक्षक तथा शिष्य के आत्मीय और निकटतम संबंध को कभी तोड़ा नहीं जा सकता।

समाज और राष्ट्र निर्माण में शिक्षक से अपेक्षा की जाती है कि हमारे विद्यार्थी अपनी शिक्षा से यथासंभव सर्वश्रेष्ठ परिणाम प्राप्त करें। जिससे उन्हें अपने जीवन में अवसरों और अनुभवों को प्राप्त करने के लिए अंतर्दृष्टि और अवसर प्राप्त हो सके। कई बार परिवार के बच्चे जब पहली बार स्कूल जाते हैं, जो कि उनके लिए रोमांचक और चुनौतिपूर्ण दोनों होता है। अत: कक्षा का वातावरण रूचिपूर्ण और रचनात्मक होने से बच्चे स्कूल जाने के लिए और उद्देश्यपूर्ण शिक्षा को हासिल करने के लिए प्रोत्साहित होते है इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में पूर्ण जिम्मेदारी एक अध्यापक की होती है। इस प्रकार वह विद्यार्थियों के विकास में अपनी महत्तवपूर्ण भूमिका निभाता है।

डॉ. राधाकृष्णन ने शिक्षक के महत्तव पर कहा है कि – 'समाज में शिक्षक का महत्तवपूर्ण स्थान है वह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को बौद्धिक परम्पराएं और तकनीकी कौशल पहुँचाने का केन्द्र है और सभ्यता के प्रकाश को प्रज्ज्वलित करने में सहायता देता है।'

आधुनिक इंटरनेट युग में समाज व देश के विकास में शिक्षक की भूमिका भी बहु आयामी हो गई है। आज शिक्षक अपने विद्यालय में शिक्षा देने के साथ ही इंटरनेट के माध्यम से भी शिक्षा प्रदान करवा रहे हैं। और इस प्रकार की शिक्षा में शिक्षक का अपने विद्यार्थियों से सीधा संपर्क नहीं होता है, वे अपने पाठ्यक्रम या विषय की शिक्षा देते समय अपने विद्यार्थियों की संभावित शंकाओं और प्रश्नों का समाधान करते है। विशेष रूप से उच्च और उच्चतम शिक्षा हेतु इंटरनेट शिक्षण का अपना ही महत्तव है। साथ ही शिक्षक की भूमिका भी अपने कक्षाकक्ष से निकलकर गाँव, कस्बा ढाणी, तहसील, जिला, प्रान्त, राज्य, देश और अंतरराष्ट्रीय स्तर तक विस्तारित हो रही है

और यह भी सच है कि आज शिक्षक समाज व देश के निर्माण में अपनी बहु आयामी भूमिका बखूबी निभा रहे है।

महान शिक्षाशास्त्री एवं दार्शनिक अरविन्द ने कहा है – **'शिक्षक राष्ट्र की संस्कृति बनाता है शिक्षक को देश का भावी कर्णधार एवं समाज का मागदर्शक माना गया है। वह राष्ट्र का शिरोमणि निर्माता एवं कर्णधार है।'**

शिक्षक एक व्यक्ति के रूप में, व्यवसायी के रूप में, सामाजिक प्रणेता के रूप में, निर्देशक के रूप में, अनुदेशक के रूप में, कक्षा प्रबंधक के रूप में, विस्तार सेवा के रूप में, नवाचारकर्ता के रूप में, अनुसंधानकर्ता के रूप में, सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में, नेता एवं संगठनकर्ता के रूप में, विद्यार्थी चरित्र निर्माण कर्ता के रूप में आदि विभिन्न रूपों में अपनी भूमिका का निर्वहन कर समाज व देश की भावी पीढ़ी के ज्ञानवृद्धि में अपनी विशिष्ट भूमिका निभा रहा है।

समाज व राष्ट्र निर्माण करना शिक्षक का ध्येय होता है, जिससे कि समाज व देश के विकास की क्षमता में वृद्धि होती है। शिक्षक, विद्यार्थियों में आत्मविश्वास पैदा करते है जिससे विद्यार्थी कल्पनाशील और सृजनशील बनते है। इस रूप में विद्यार्थी का विकास ही उन्हें भविष्य की चुनौतियों का सामना करते हुए प्रतिस्पर्दा में उतारता है। शिक्षक, विद्यार्थियों में बेहतर समझदारी एवं सीखने की प्रवृत्ति विकसित करने का प्रयास करता है, जिससे सर्वसम्पन्न अध्यापक वास्तविक विश्व गुरू कहलाता है।

शिक्षक बनकर एक व्यक्ति अपने समाज और राष्ट्र की सेवा करता है। स्वाभाविक रूप से सरकारी या प्राइवेट विद्यालयों में शिक्षक की नौकरी करते हुए बच्चों का भविष्य निर्माण करता है। यह भी एक वास्तविकता है कि भारत सरकार द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में अपनाई जाने वाली नीतियाँ और योजनाएं केवल प्रशिक्षित, कुशल, समर्थ और समर्पित शिक्षकों के प्रयास से ही साकार हो पाती है। यदि हमें अपने समाज एवं देश को विकासशील से विकसित देश बनाना है तो इसकी पहली शर्त शत–प्रतिशत साक्षरता को प्राप्त करना है। इस संबंध में आज भी हमारे शिक्षक शत–प्रतिशत साक्षरता प्राप्त करवाने में अपनी अहम भूमिका निभा रहे है। अत: कहा जा सकता है कि शिक्षक हमारे समाज व देश के निर्माण के लिए उतना ही महत्तवपूर्ण होता है, जितना एक वृक्ष के लिए उसकी जड़ें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आलेख – समाज और देश के निर्माण में शिक्षकों का अहम योगदान, ब्रह्मानंद राजपूत (https://m.dailyhunt.in)
2. आलेख – शिक्षक की राष्ट्र विकास में अद्भुत भूमिका, सितम्बर, 05, 2014 (http://aryamantavya.in)
3. आलेख – राष्ट्र निर्माण में शिक्षक की भूमिका अहम : शास्त्री, Posted - May, 17, 2017
4. आलेख – समाज के वास्तविक शिल्पकारे होते है शिक्षक – डॉ. जगदीश गांधी, भारत दर्शन (हिन्दी मासिक पत्रिका) (https://www.bharatdarshan.co.)
5. आलेख – शिक्षक की भूमिका और जिज्ञासा जागरण, प्रो. बृज किशोर कुठियाला (https://bhashasankalp.weebly.com)
6. आलेख – शिक्षकों की भूमिका और दायित्व, डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम (http://rnachiexpress.com)
7. आलेख – बदलते परिवेश में शिक्षक, रिपू सूदन सिंह, 23 जनवरी, 2016 (https://www.jansatta.com)
8. आलेख – कैसे बढ़े शिक्षा की गुणवत्ता : एक शिक्षक का दृष्टिकोण, दामोदर जैन, 27 जुलाई, 2012 (http://www.teachersofindia.org)
9. शिक्षक की भूमिका – (https://hi.vikaspedia.in)
10. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक –एम.एम. मित्तल, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, 2004

****

किसान क्रेडिट कार्ड योजना का मूल्यांकन

डॉ. पी.डी. ज्ञानानी *

प्रस्तावना – ऋण देने की परम्परागत बैंकिंग प्रक्रिया के दोषों को दूर करने के लिये भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा 1998-99 में कृषकों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने के लिये एक नवीन योजना प्रांरभ की गई। इस योजना का नाम किसान क्रेडिट कार्ड योजना है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना, कृषकों की अल्पकालीन वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने के उद्देश्य से तैयार की गई। यह साख निर्गमन की एक विशिष्ट योजना है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य कृषि कार्यो में प्रयुक्त किये जाने वाले विभिन्न आदानों जैसे बीज, उर्वरक, दवाईयाँ, चालू कार्य हेतु नकदी तथा उत्पादन से संबंधित अन्य व्ययों की आपूर्ति हेतु आवश्वयक वित्त की व्यवस्था करना है।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना की मुख्य विशेषताएँ :

1. सार्वजनिक क्षेत्र की 27 वाणिज्यिक बैंकों द्वारा यह योजना ज्यों की त्यों अगस्त 1998 में अपना ली गई थी।। शेष बैंकों द्वारा इस योजना में कुछ परिवर्तन कर अपनाया गया। दिसंबर 98 तक किसान क्रेडिट कार्ड योजना संपूर्ण देश में लागू हो गई है।
2. **किसान क्रेडिट कार्ड प्राप्त करने के लिये पात्र कृषक :–** ऐसे किसान जिनका बैंक के साथ पिछले 2-3 वर्षो का ट्रेक रिकार्ड अच्छा था, केवल उन्हीं कृषकों को ये कार्ड जारी किये गये थे लेकिन उसके पश्चात् बैंकों द्वारा अपनी नीति में परिवर्तन किया और योजना को गतिप्रदान करने के लिये सभी कृषकों को ये कार्ड इश्यु किये गये। इस उद्देश्य से विभिन्न बैंकों द्वारा प्रथम नीति अपनाई गई। बैंक ऑफ बडौदा द्वारा नये पुराने सभी ग्राहकों को किसान क्रेडिट कार्ड जारी करने की नीति अपनाई गई। सिन्डिकेट बैंक द्वारा सभी प्रकार के ग्राहकों को कवर करने के लिये अपनी सभी शाखाओं को निर्देशित किया गया कि वे अपने सभी किसान ग्राहकों को अनिवार्यत: 5000 रुपये की क्रेडिट कार्ड जारी करें। इसी प्रकार इलाहाबाद बैंक, पंजाब तथा सिंध बैंक, पंजाब नेशनल बैंक ने क्रेडिट कार्ड जारी करने के न्यूनतम अनिवार्यता एक एकड़ सिंचित भूमि की रखी गई। किसान क्रेडिट कार्ड की संख्या में तेजी से वृद्धि करने के लिये कुछ बैंकों द्वारा ट्रेक्टर ऋण प्राप्त करने वाले कृषकों को अनिवार्यत: किसान क्रेडिट कार्ड जारी किये गये।
3. **न्यूनतम साख सीमा :–** भारतीय रिजर्व बैंक तथा नाबार्ड द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड योजना का प्रारुप तैयार करते समय उन कृषकों के आवश्यकता 5000 रुपये या इससे अधिक थी। यद्यपि न्यूनतम ऋण सीमा की इस सीमा को जारी कर बाद में परिवर्तित कर दिया गया। अधिकांश बैंकों द्वारा यह भी निश्चित किया गया कि वे स्वयं कृषकों को स्थिति एवं उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर उन्हें स्वीकृत किये जाने वाले ऋण की सीमा का निर्धारण करेंगे। सार्वजनिक क्षेत्र की बैंकों द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड के विरुद्ध स्वीकृत राशि का अवलोकन करने से यह भी स्पष्ट हुआ कि बैंकों द्वारा न्यूनतम ऋण सीमा राशि को 5000 से घटाकर 3000 रुपये कर दिया गया है और कुछ बैंकों द्वारा कृषकों में भूस्वामित्व की स्थिति, सिंचित भूमि क्षेत्रफल आदि बातों को ध्यान में रखकार कृषकों को स्वीकृत की जाने वाली ऋण सीमा का निर्धारण किया गया है।
4. **साख सीमा निश्चित करने के आधार :–** भारतीय रिजर्व बैंक तथा नाबार्ड द्वारा अनुशासित किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अंतर्गत कृषकों को साख सीमा स्वीकृत करने में मुख्यत: तीन आधार सुझाये गये थे –

(अ) कृषकों द्वारा धारित कृषि योग्य भूमि

(ब) फसल चक्र से जिला स्तरीय तकनीकी समिति अथवा राज्य स्तरीय तकनीकी समिति द्वारा अनुशासित वित्तीय सीमा।

उन मामलों में जहां पर जिला स्तरीय अथवा राज्य स्तरीय तकनीकी समिति द्वारा कोई अनुशंसा नहीं की गई वहां पर संबंधित बैंकों को ऋण सीमा निश्चित करने हेतु अधिकृत किया गया है।

देश की अधिकांश बैंकों ने भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित प्रारुप के अनुसार ही ऋण स्वीकृत किये गये किंतु कुछ बैंकों द्वारा उपर्युक्त निर्धारित मॉडल में आवश्यक फेरबदल किये। इलाहाबाद बैंक और पंजाब नेशनल बैंक द्वारा कृषि को समस्त साधनों से प्राप्त कुल आय के 50 प्रतिशत तक कार्ड सीमा निर्धारित की गई।

5. **मौसमी साख सीमा का निर्धारण :–** भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड योजना का प्रारुप तैयार करते समय यह अनुशंसा भी की थी कि किसान क्रेडिट कार्ड सीमा का निर्धारण करते समय बैंक कृषक की संपूर्ण वर्ष की कृषि एवं गैर कृषिगत गतिविधियों को सम्मिलित किया जाता है, रिजर्व बैंक द्वारा बैंकों को यह भी परामर्श दिया गया था कि उनके द्वारा कुल साख सीमा का निर्धारण करते समय मौसमी साख आवश्यकता का निर्धारण भी किया जाना चाहिये। इस प्रकार रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित योजना को अनुपालना एवं क्रियान्वयन हेतु देश की सभी बैंकों को जारी किया गया।
6. **वित्तीय सीमा एवं प्रतिभूमि मापदण्ड :–** किसान क्रेडिट कार्ड जारी करने के संबंध में सभी बैंकों द्वारा अपनी अपनी शाखाओं को प्रतिभूमि एवं मार्जिन के संबंध में प्रथम निर्देश जारी किये। बैंकों द्वारा स्पष्ट निर्देश दिये गये कृषि अग्रिम के संबंध में पूर्व में जारी मापदण्डों के अनुसार ही किसान क्रेडिट कार्ड जारी किये जावे।

किसान क्रेडिट कार्ड का पुनर्भुगतान तथा नॉन पर्फोमिंग असेट – किसान क्रेडिट कार्ड के अंतर्गत इस प्रकार साख प्रदान की जाती है कि 12

*प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

माह में प्रत्येक खाते का पुनर्भुतान हो सके अधिकांश: फसल कटाई अथवा विपणन सीजन को ध्यान में ड्यूडेट ज्ञात की जाती है। इसी कारण प्रत्येक बैंक अपनी शाखा को स्पष्ट निर्देश देती है कि किसान क्रेडिट कार्ड के अंतर्गत किसान क्रेडिट कार्ड के अंतर्गत साख स्वीकृत करने से पूर्व उसके पुनर्भुगतान की व्यवस्था सुनिश्चित कर ली जाए, जिला सहकारी बैंक केन्द्रीय बैंक के अंतर्गत किसान क्रेडिट कार्ड पुनर्भुगतान की अवधि 12 माह है जबकि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक तथा वाणिज्यिक बैंक की स्थिति में रबी की फसल के लिये 30 सिंतबर तक साख प्रदान की जाती है। इसी प्रकार खरीफ की फसल की दशा में पुनर्भुगतान 31 मार्च तक हो जाना चाहिये। इस प्रकार स्पष्ट है कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक तथा वाणिज्यिक बैंक केवल 6 माह की अवधि का समय देते है। इस दौरान कृषक को पुनर्भुगतान की व्यवस्था करनी होती है। यदि किसी परिस्थिति में ऋण ओवरड्यू हो जाता है तो ब्याज अनुदान का लाभ आगे नहीं बढ़ाया जाता है और जिला सहकारी बैंक ऋण प्रदान करने की तिथि से 11 प्रतिशत की दर से ब्याज लगाती है और पेनल ब्याज उस दिनांक से लगता है जिस दिनांक से यह ऋण ओवरड्यू हुआ है। अध्ययन से ज्ञात होता है कि नॉन परफोर्मिंग असेट के नियम जिला सहकारी केन्द्रीय, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक तथा वाणिज्यिक बैंक द्वारा उन्हीं निर्देशों पर होते है तो RBI ने इस संबंध में निश्चित किये है।

नये कृषकों को सम्मिलित करना – अध्ययन से ज्ञात होता है कि किसान क्रेडिट कार्ड धारकों में अधिकांश बहुमत 9 वर्षो से किसान क्रेडिट कार्ड सुविधाओं का लाभ उठा रहा है। इस वर्ग में लगभग 31 प्रतिशत किसान क्रेडिट कार्ड धारक है लगभग 20 प्रतिशत धारक विगत सात वर्षो से किसान क्रेडिट कार्ड की सुविधाओं का लाभ उठा रहे है। शेष सभी पांच वर्ष या कम वर्ष से किसान क्रेडिट कार्ड सुविधाओं का लाभ उठा रहे है। इससे यह बात प्रकट होती है कि प्रतिवर्ष एक निश्चित प्रतिशत कृषक संख्या किसान क्रेडिट कार्ड धारक बन रही है। अत: किसान क्रेडिट कार्ड आयोग ने किसान क्रेडिट कार्ड के लक्ष्य के प्रति सजग कदम उठाया तब से यह सुविधा कृषकों में अधिक लोकप्रिय हुई है और प्रतिवर्ष नये कृषक किसान क्रेडिट कार्ड योजना में प्रवेश ले रहे है।

साख पर्याप्तता – दिशा–निर्देशों के अनुसार किसान क्रेडिट कार्ड के अंतर्गत कृषक की समस्त साख आवश्यकताओं की पूर्ति होना चाहिए। अध्ययन से यह तथ्य सामने आया कि 48 प्रतिशत कृषक यह महसूस करते है कि किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अंतर्गत उन्हें जो साख स्वीकृत की गई थी वह पर्याप्त नहीं है। बैंकवार पर्याप्तता की बात करें तो जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक के 60 प्रतिशत किसान क्रेडिट कार्ड धारक यह मानते है कि उन्हें पर्याप्त मात्रा में साख सुविधा उपलब्ध नहीं हुई। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक के 44 प्रतिशत तथा वाणिज्यिक बैंकों के 34 प्रतिशत किसान क्रेडिट कार्ड धारकों का मत है कि उन्हें उपलब्ध साख अपर्याप्त है। जोत के आधार पर अध्ययन यह बताता है कि लगभग 60 प्रतिशत से 65 प्रतिशत छोटे और सीमांत कृषक मानते है कि उनकी साख सीमा अपर्याप्त है जबकि 40 से 454 प्रतिशत मध्यम और बड़े कृषक मानते है कि उनकी साख सीमा आवश्यकता से कम है।

किसान क्रेडिट कार्ड की प्रभावशीलता तथा लाभ – कृषकों की मान्यता है कि किसान क्रेडिट कार्ड एक से अधिक कारणों से उनके लिये लाभदायक है। किसान क्रेडिट कार्ड धारकों को इन तरीको से लाभ प्राप्त होता है।

1. पूर्व वर्ष के लिये फसल उत्पादन हेतु ऋण सुविधा का लाभ।
2. जब साख की आवश्यकता हो तब साख उपलब्ध हो जाती है।
3. रोकड़ के आहरण में लोच तथा किसी भी विक्रेता से क्रय करने की छूट।
4. पुनर्भुगतान सुविधा के साथ साचा की ब्याज दर कम होना।
5. बैंक ऋण प्राप्त करने के लिये लागत की कमी।
6. NASI/PAI में बीमा बहुत ही निम्न प्रीमियम पर।
7. पेपर कार्य कम होना।

इतना सब कुछ होने के बावजूद मैदानी अध्ययन के निष्कर्ष ऋणात्मक अधिक है। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि किसान क्रेडिट कार्ड योजना यद्यपि साख आवश्यकताओं की पूर्ति करती है तथापि बड़ी सीमा तक यह पर्याप्त नहीं है। इसकी अवधि तीन वर्ष है किंतु प्रतिवर्ष पुनर्भुगतान करना आसान काम नहीं है। अध्ययन में यह भी निष्कर्ष आया कि बैंक किसान क्रेडिट कार्ड धारक को चेक बुक नहीं देती है अर्थात कृषक एक बार जाकर ही आहरण कर रहा है और योजना के उद्देश्यानुसार साख चक्र का लाभ नहीं उठा पा रहा है।

बैंकों को लाभ :

1. किसान क्रेडिट कार्ड के कारण बैंकों के कार्यभार में कमी हुई है क्योंकि ब्रांच स्टाफ को बार बार मूल्यांकन करने ऋण प्रक्रिया करने तथा पेपर कार्य में कमी आई है।
2. कोषों का सीसाईकिलिंग सुधरा है तथा ऋण वापसी अच्छी हुई है।
3. बैंकों की व्यवहार लागत कम हुई है।
4. बैंक ग्राहक संबंधो में सुधार हुआ है।

सुझाव – ग्रामीण विकास के लिये किसान क्रेडिट कार्ड एक आदर्श उपकरण है परंतु इसकी कुछ कमियां है।इन कमियों को दूर करने के लिये निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत है –

1. जागरुकता का निर्माण – ग्रामीण जनता कृषकों और यहां तक कि बैंक अधिकारियों में किसान क्रेडिट कार्ड के संदर्भ में जागरुकता कार्यक्रम योजना चलाये जाने चाहिए।

2. मध्यस्थों को हटाना – हितग्राहियों का कथन है कि किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अंतर्गत बिना मध्यस्थों के ऋण प्राप्त करना अत्यधिक कठिन है इतना ही नहीं ये मध्यस्थ अपनी सेवाओं केबदले बड़ी रकम कृषकों को चुकानी होती है यह व्यवस्था बदली जानी चाहिए इसके लिये बैंक की शाखाओं को ग्रामीण क्षेत्रों में शिविर लगाकर अथवा व्यक्तिगत रुप से संपर्क करके आवेदक को किसान क्रेडिट कार्ड प्रदान किये जाने चाहिए।

3. फर्जी भूस्वामियों की पहचान – फर्जी भूस्वामियों की पहचान के लिये कड़े कदम उठाए जाने चाहिए इसके लिये किसान का संबंधित क्षेत्र में उचित डाटाबेस तैयार किया जाना चाहिए।

4. शेष रहे कृषकों का सर्वे – विभिन्न सीमान्त कृषकों जैसे बटाईदार, किरायेदार, मौखिक पट्टेदार आदि को ग्रामीण समाज में सर्वे करके पहचान करनी चाहिए।

5. स्टॉम्प ड्यूटी में कमी – वर्तमान समय में ऋण की स्टॉम्प ड्यूटी अत्यधिक है। यही कारण है कि बड़े ऋण बड़े कृषकों द्वारा ही लिये जाते है। जिनकी संख्या कम है अत: सरकार और बैंक को किसान क्रेडिट कार्ड के संबंध में न्यूनतम ड्यूटी निर्धारित करना चाहिए।

6. ब्याज दर में कमी – यदि ब्याज दर में कमी की जाती है तो सीमान्त और छोटे किसानों का इस योजना में प्रवेश आसान हो जायेगा।

उपसंहार – किसान क्रेडिट कार्ड योजना अनोखी और अद्वितीय है। इसने वित्तीय समावेशन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इससे किसानों और बैंकों दोनों को लाभ हुआ है परंतु कुछ ठोस कदम उठाना अभी भी शेष है ताकि ग्रामीण क्षेत्रों को वह महत्वपूर्ण भाग जो अभी भी इस योजना के लाभ

से वंचित है। उसे वित्तीय समावेशन में शामिल करने के प्रयास किये जाये और वित्तीय समावेशन के विकास के लाभ समाज, राष्ट्र और अर्थव्यवस्था को मिल सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नाबार्ड की प्रकाशित रिपोर्ट
2. कृषि की उच्चस्तरीय रिपोर्ट
3. विभिन्न बैंकों की रिपोर्ट
4. विभिन्न शोध अध्ययन
5. एस.एल.बी.सी. डॉक्यूमेंट (राज्य स्तरीय बैंकर्स समिति)
6. अग्रणी बैंक द्धारा जारी रिपोर्ट
7. कृषि मंत्रालय के साख विभाग की रिपोर्ट
8. रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया ऑफ मुम्बई 2002–03 सर्वे
9. किसान क्रेडिट कार्ड नाबार्ड 1999
10. वार्षिक साख योजना – स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, जिला नीमच
11. व्यावसायिक अर्थशास्त्र – पी.सी. अग्रवाल, एम.डी. अग्रवाल, रमेश बुक डिपो, जयपुर
12. मुद्रा एवं वित्तीय प्रणालियाँ – जे.पी. मिल, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
13. भारतीय अर्थव्यवस्था – डॉ. अनुपमगोयल – शिवलाल अग्रवाल एंड कम्पनी, इन्दौर

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

खाद्य संसाधन एंव विश्व आहार समस्या

डॉ. पी.डी. ज्ञानानी *

प्रस्तावना - खाद्य संसाधन - प्रकृति द्वारा प्रदत्त भूमि एवं जल संसाधनो का मनुष्य द्वारा उपयोग कर, उत्पन्न किये जाने वाले खाद्य पदार्थ या भोज्य पदार्थ खाद्य संसाधन कहलाते है। जीवन के लिए सभी जीवधारियों को भोज्य पदार्थो की आवश्यकता होती है। इस कारण संसाधन के रुप में खाद्यान्न मनुष्य एवं सभी सजीवों के लिये हमेशा महत्वपूर्ण रहे है या रहेंगे। मनुष्य के शरीर के लिए भोजन की आवश्यकता इस कारण होती है क्योंकि भोजन तत्व शरीर की वृद्धि करता है, उसको बनाए रखता है, शरीर के उत्तकों की मरम्मत करता है, शरीर की प्रक्रिया को नियमित करता है और ऊर्जा/शक्ति की पूर्ति करता है। शरीर को सुचारु रुप से संचालित करने हेतु जीवन तत्वों की आवश्यकता होती है। वह रासायनिक मिश्रण एवं तत्व जो मनुष्य के भोजन का निर्माण करते हैं, 6 प्रकार के होते हैं - प्रोटीन्स, कार्बोहाइड्रेट्स, वसा, खनिज, विटामिन्स एवं जल।

प्रारंभिक मानव अपने अधिकांश भोजन की पूर्ति प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं, शिकार एवं जंगली वस्तुओं को एकत्रित कर दिया करता था, इस कारण खाद्यान्न उत्पादन कार्य गौण था, किंतु ईसा से लगभग 9000 वर्ष पूर्व कुछ आदिम मनुष्यों ने कुछ चारागाहों को साफ कर खाद्यान्न उत्पन्न करना प्रारंभ किया। लगभग 6000 ई. पूर्व खाद्यान्न उत्पादक ने नदियों के जल का सिंचाई हेतु उपयोग करना प्रारंभ कर दिया। मानव सभ्यता के विकास के साथ कृषि का विकास हुआ। 1500वीं शताब्दी के पश्चात कृषि कार्य का विश्व में सर्वत्र तीव्रता से विकास हुआ। इस समय मनुष्य ने अपने उपयोग हेतु पर्याप्त अन्न एवं अन्य खाद्य सामग्री का उत्पादन करना प्रारंभ किया। खाद्यान्न के रुप में सर्वप्रथम जौ और गेहूँ को उगाया, फिर धीरे-धीरे चावल, अन्य मोटे अनाज, दलहन एवं तिलहन, फल-सब्जी को पैदा करना प्रारंभ किया गया, उपरोक्त खाद्यान्न के अतिरिक्त माँस-मछली एवं दुग्ध उत्पादों का भी उपयोग किया जाने लगा।

मानव जाति को खाद्य संसाधन प्रकृति में तीन स्त्रोतों से प्राप्त होते है - (अ) पेड़, पौधों, वनस्पतियों से। इसके अन्तर्गत सभी प्रकार के अनाज, दलहन एवं तिलहन, साक-सब्जी, फल एवं बीज आदि प्राप्त होते है। (ब) प्राणियों से - सामान्यत: दूध, अण्डे, शहद, दुग्ध उत्पाद, माँस तथा मछली आदि खाद्य पदार्थ के रुप में प्राप्त होते है। (स) खनिज लवण - यह खाद्य संसाधन चट्टानों एवं जन के द्वारा प्राप्त किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त जल भी मानव शरीर के लिये विभिन्न प्राकृति स्त्रोंतो से प्राप्त किया जाता है, जो कि उसके जीवन के लिये अति आवश्यक है। अत: प्रकृति मानव को खाद्य के भिन्न-भिन्न स्त्रोत प्रदान करती है। अर्थात फसल, पशुधन एवं जलीय स्त्रोतों के रुप में खाद्य सम्पदा प्राप्त होती है।

हरित क्रान्ति - हरित क्रान्ति का आशय कृषि के विभिन्न साधनों को उपयोग में लाकर कृषि उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि करता है। **जार्ज हारर (George Harrer)** के अनुसार — 'हरित क्रान्ति शब्द युग्म का सामान्यतया प्रयोग वर्ष 1966 में विभिन्न देशों भारत, फिलीपिन्स, श्रीलंका, पाकिस्तान, थाईलैण्ड आदि देशों में खाद्यान्नों के उत्पादन में होने वाली आश्चर्यजनक वृद्धि के लिये किया जाता है।' हरित क्रान्ति का मुख्य आधार नवीन उच्च उत्पादन वाले बीजों का प्रयोग है जिससे कृषक उसे 3 से 4 गुना तक अधिक उत्पादन कर सकता है। अर्थात हरित क्रान्ति का आशय कृषि उत्पादन में उस भारी वृद्धि से है जो कि थोड़े से समय में ऊँची उपज वाले बीजों एवं रासायनिक खाद की नई तकनीक के फलस्वरुप प्राप्त हो। ऊँची उपज वाले बीजों एवं रासायनिक खाद्य को सुमेल बनाने हेतु आधुनिक उत्पादन उपकरण सिंचाई सुविधाओं और कीटनाशक, रसायन/औषधियों का भी इसके अंतर्गत समावेश किया गया। कृषि उत्पादन वृद्धि हेतु एक मुस्त कार्यक्रमों **(Package Programmes)** को मूर्तरुप दिया गया।

सातवीं योजना के अंत तक भारतवर्ष खाद्यान्न के उत्पादन में लगभग आत्मनिर्भर हो गया था तथा बढ़ती हुई जनसंख्या **(Population)** के दृष्टिगत रखते हुए वर्तमान योतना के अंत तक अधिक भोजन की व्यवस्था करने संबंधी कार्यक्रम योजनाबद्ध रुप से अपनाये जा रहे है।

खाद्य समस्या - वर्तमान समय में विश्व की जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। इस दशक के अंत तक लगभग 6-7 अरब से अधिक हो जाएगी, जबकि खाद्यान्न का उत्पादन इतना अधिक नहीं बढ़ाया जा सकेगा, जितनी की आवश्कताएँ है, इस कारण खाद्य समस्या विकराल रुप धारण कर सकती है। यद्यपि विकसित यातायात के साधनों एवं संरक्षण एवं भण्डारण **(Storage)** की आधुनिक विधियों ने विश्व में खाद्य आपूर्ति को सरल बना दिया है, तथापि इस सब प्रगति के बावजूद भी वर्तमान समय में अधिकांश देशों के लोग भूखमरी का शिकार हो रहे है। संसार के अनेक देशों के द्वारा अपने यहाँ के देशवासियों के लिये पर्याप्त भोजन प्राप्त करना संभव नहीं हो पा रहा है। इसके कई कारण है- प्राकृति आपदाएँ - भूकम्प, बाढ़, सूखा, वर्षा की कमी, सिंचाई के कम स्त्रोत एवं साधन, युद्ध, आन्तरिक उत्पातों के कारण खाद्यान्न की आपूर्ति संभव नहीं हो पाती है, जिससे अभाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और देशों को अकाल या भूखमरी का सामना करना पड़ जाता है।

विश्व खाद्य समस्याएँ - वर्तमान जनगणना **(Census)** 2011 के अनुसार विश्व की जनसंख्या 7 अरब है। विश्व की जनसंख्या तीव्र गति से निरन्तर वृद्धि कर रही है, विगत 40 वर्षो में विश्व की जनसंख्या दो गुनी से अधिक हो गई है। जनसंख्या की वृद्धि के कारण मनुष्य के पास कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता बहुत कम हो गई और इस उपलब्ध कृषि भूमि पर जो

*प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

भी उत्पादन होता है, वह 50 प्रतिशत से 55 प्रतिशत जनसंख्या के लिये पर्याप्त होता है, शेष प्रति जनसंख्या भूखमरी और कुपोषण का शिकार होती है। सम्पूर्ण संसार की 50 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी, कुपोषण एवं विषमताओं की मार से प्रभावित हो रही है। पिछले दो दशकों में संसार के अनेक भागों – दक्षिण एशिया, लेटिन अमेरिका एवं अफ्रीका का सहारा के आसपास का अधिकांश भाग गरीबी और कुपोषण की मार झेल रहे है। विश्व के अनेक देशों में विकसित यातायात के साधनों यन्त्रीकृत, वैज्ञानिक **(Mechanised Scientific)** विस्तृत कृषि, संरक्षण एवं भण्डारण के आधुनिक तरीकों ने विश्व में खाद्य आपूर्ति को सरल बना दिया है, तथापि इस सब प्रगति के बावजूद भी आज दुनिया के अधिकांश देशों के मनुष्य/भूखमरी एवं कुपोषण का शिकार हैं। वर्तमान में यह कहना असत्य होगा कि जनसंख्या वृद्धि ही संसार/विश्व की खाद्य समस्या का प्रमुख कारण है, बल्कि इसके अनेक कारण है जिनका वर्णन निम्नानुसार है–

1. जनसंख्या वृद्धि – जनसंख्या में वृद्धि खाद्य समस्या का प्रमुख कारण है, क्योंकि (i) विश्व के अनेक देश अपने यहाँ की जनसंख्या के अनुरुप खाद्यान्न उत्पादन नहीं करते, वरन् आदतन खाद्यान्न का आयात **(Import)** कर पूर्ति करते रहते है। पूर्णत: आयात पर निर्भर रहने वाले देशों आयातित खाद्यान्नों की आपूर्ति संभव नहीं होने के कारण खाद्यान्न अभाव की समस्या उठ खड़ी होती है। कुछ देश या विश्व के लगभग सभी देश कुछ न कुछ खाद्यान्न आयात करते है, किंतु उसके बदले अपने यहाँ से भी वे कोई न कोई खाद्यान्न या खाद्य सामग्री किसी अन्य देश को निर्यात **(Export)** करते हैं ऐसे देश अभाव की स्थिति में बहुत कम आते है।

(ii) कुछ देश कुछ खाद्यान्नों के उत्पादन में विशिष्टता प्राप्त कर लेते हैं और वे देश ऐसे अनाजों का उत्पादन करते है, जो दूसरे देशों में उत्पादित नहीं किये जा सकते। सुंयक्त राज्य अमेरिका एवं कनाडा विश्व के ऐसे दो प्रमुख देश है जिन्होंने खाद्यान्न उत्पादन में विशिष्टता प्राप्त कर ली है और ये देश अपना अधिकांश अतिरिक्त उत्पादन विश्व के अनेक देशों को निर्यात करते हैं, लेकिन वे चीनी मसाले, चाय एवं अन्य वस्तुओं का उन देशों से आयात करते हैं, जो कि उसके बदले में उनके परिवर्तित खाद्यान्न लेने हेतु तत्पर रहते है।

(iii) विश्व में कुछ ऐसे देश है जो कि पूर्णरुपेण एक ही प्रमुख फसल/खाद्यान्न पर निर्भर करते हैं। यदि किन्हीं कारणों से यह फसल असफल या नष्ट हो जाती है, तब ऐसे देश को अकाल या भूखमरी का सामना करना पड़ सकता है।

2. भौगोलिक दशाएँ – विश्व में सभी खाद्य पदार्थो का उत्पादन या खाद्यान्न कृषि की जा सकती है। विश्व के सभी देशों में भागौलिक दशाओं – वर्षा, तापमान, मिट्टी, आर्द्रता, भूमि आदि में भिन्नता पाई जाती है, अनुकुल दशाएँ सभी देशों में नही पाई जाती है। इस कारण खाद्य पदार्थो/खाद्यान्न का उत्पादन भी भिन्न–भिन्न होता है और विभिन्न देशों में खाद्यान्न उत्पादन अनुकुल दशाओं पर निर्भर करता है।

3. प्राकृतिक आपदाएँ – संसार में निरन्तर बढ़ती खाद्यान्न असुरक्षा का प्रमुख कारण प्राकृतिक आपदाएँ – भूकम्प, बाढ़, अतिवर्षा, ज्वालामुखी विस्फोट, सूखा, अकाल, ओले, टिड्डी दल का आक्रमण आदि है, जिनके कारण फसल असफल या नष्ट हो जाती है। इस कारण देश को भूखमरी का सामना करना पड़ता है।

4. युद्ध – कभी कभी युद्ध या आंतरिक उत्पातों के कारण खाद्यान्न की आपूर्ति संभव नहीं हो पाती है, जिससे अभाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। उदाहरण : द्वितीय विश्व युद्धकाल में यूरोप में खाद्यान्न की आपूर्ति चौपट हो गई थी, इस कारण सर्वत्र अभाव की समस्या , स्थिति उत्पन्न हो गई थी। भारत–चीन युद्ध, भारत–पाक दोनों युद्ध के समय और उसके पश्चात भारत को खाद्यान्न की समस्या का सामना करना पड़ा।

5. पोषक तत्वों का अभाव – खाद्यान्न समस्या का एक कारण गरीब एवं अविकसित देशों में पोषक तत्वों की कमी है। इन देशों में भोजन के दूसरे अवयव प्रोटिन्स, कार्बोहाइड्रेट्स, वसा, खनिज लवण खाद्यान्नों से ही प्राप्त होते है। यह पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा मे होने चाहिए। अविकसित या विकासशील देशों में अधिकांश मनुष्य असंतुलित भोजन के कारण कुपोषण के शिकार है। नगरीय **(Urban)** क्षेत्रों की अपेक्षा ग्रामीण **(Rural)** क्षेत्रों के मनुष्यों में कुपोषण अधिक देखा गया है। विकसित एवं विकासशील देशों में प्रोटीन एवं कैलोरी की प्रति व्यक्ति उपलब्धता को निम्न तालिका में दर्शाया गया है :–

	प्रतिदिन प्रति व्यक्ति की आवश्यकता	विकसित देशों में	अविकसित देशों में
कैलोरी	2800–2900	2970	2037
प्रोटीन	80–85 ग्राम	83 ग्राम	54 ग्राम
प्राणियों से प्राप्त प्रोटीन	–	37–39 ग्राम	6–8 ग्राम

विश्व में 22–28% मृत्यु कुपोषण या भूखमरी से होती है। शारीरिक एवं मानसिक श्रम करने वाले मनुष्यों की भोजन की कैलोरीज में अन्तर होता हैं। औसत पुरूष के लिए 2400 कैलोरीज एवं औसत महिलाओं के लिए 1800 कैलोरीज की मात्रा पर्याप्त रहती है। ऐसी स्थिति में मनुष्य के लिए अधिकाधिक भोजन एवं भोजन तत्वों को उपलब्ध कराने के साधनों को प्राप्त करना आवश्यक है।

6. असन्तुलित आहार – विश्व के अनेक देशों में मनुष्यों का आहार असन्तुलित है। इन देशों के मनुष्यों के भोजन में दूध,माँस,अण्डे,फल एवं सब्जियों आदि का प्राय: अधिक अभाव पाया जाता है। भारत देश में अधिकांश मनुष्य शाकाहारी है, इस कारण खाद्यान्नों पर उनकी निर्भरता अधिक है। इस कारण खाद्यान्न उत्पादन वृद्धि की दिशा में तो व्यापक कदम उठाये गए है, किन्तु सन्तुलित आहार के अन्तर्गत आने वाली अन्य भोजन सामग्री एवं भोजन तत्व–अण्डे,दूध,माँस,मछली,फल एवं सब्जी आदि की अभिवृद्धि के उस स्तर पर प्रयास नहीं किए गए हैं। विश्व में केवल 2 भोजन की आपूर्ति मछलियों से होती है। खाद्यान्नों पर मनुष्यों की निर्भरता को कम करनेके लिए अण्डा उत्पादन, मछली उत्पादन आदि में वृद्धि करना आवश्यक हो गया है।

7. निर्धनता – खाद्यान्न समस्या का एक अन्य कारण निर्धनता भी है। निर्धन होने के कारण विकासशील **(Developing)** देशों के अधिकांश मनुष्य आवश्यक मात्रा में सन्तुलित,पौष्टिक एवं कैलोरीयुक्त भोजन को नहीं खा पाते है। इस कारण अनेक विकासशील देशों में मनुष्य कुपोषण के शिकार हो रहे है। इन देशों में विकसित देशों कीअपेक्षा दैनिक आय में कमी,स्त्रोतों की कमी के कारण निर्धनता में वृद्धि हो रही है।

8. क्रय शक्ति – खाद्यान्न समस्या का एक प्रमुख कारण मनुष्यों की क्रय शक्ति है। विकासशील देशों के मनुष्यों की आय का अधिकांश भाग ऋण या कर्ज एवं उसके ब्याज को अदा करने में समाप्त हो जाता है। इस कारण इन देशों के मनुष्य अपनी आवश्यकताओं, खाद्यान्नों की पूर्ति को अच्छी प्रकार से पूरा नहीं कर पाते है। खाद्यान्न या खाद्य पदार्थो की पूर्ति करने के लिये क्रय

क्षमता आवश्यक होती है। अनेक धनी एवं अविकसित देश के मनुष्य आवश्यक एवं अनके खाद्यान्न पदार्थो को क्रय करने में सक्षम नहीं हो पाते हैं। इसका सबसे अच्छा उदाहरण तेल उत्पादक एवं निर्यातक अरब देश हैं जहाँ खाद्यान्न उत्पादन कम या बिल्कुल नहीं कर पाते है, लेकिन खाद्यान्न पदार्थो को विश्व के किसी भी देश से किसी भी मूल्य पर खरीद सकते हैं।

9. भूमि का विभाजन – खाद्यान्न समस्या का एक अन्य कारण भूमि का विभाजन एवं प्रति विभाजन है। इस कारण कृषि उत्पादन क्षेत्र छोटे से छोटा होता जा रहा है। कृषि उत्पाद के छोटे एवं अनार्थिक (Uneconomic) क्षेत्रों के कारण खाद्यान्न उत्पादन में कमी आ रही है और विश्व के अनेक देशों में खाद्य समस्या उत्पन्न हो गई हैं।

10. अपर्याप्त सिंचाई सुविधाएँ – विश्व के अधिकांश विकसित एवं विकासशील देशों में कृषि उत्पादन वर्षा एवं सिचांई सुविधाओं पर निर्भर करती है। वर्तमान समय में वर्षा की मात्रा में कमी, सिंचाई सुविधाओं का उपलब्ध नहीं होने के कारण फसलें एवं कृषि उत्पादन में कमी हो जाती है या नष्ट हो जाती है। इस कारण खाद्यान्न समस्या उत्पन्न हो जाती है।

11. पुरानी कृषि उत्पादन विधि – विश्व के अनेक विकासयशील देशों में खाद्य समस्या दिखाई देती है। इन अविकसित देशों में पुरानी कृषि विधि के कारण प्रति हैक्टेयर उत्पादन में कमी होती है, इस कारण खाद्यान्न की कमी होती है और खाद्य समस्या विकराल रुप ले लेती है। इसके विपरीत देशों में आधुनिक, वैज्ञानिक, तकनीकी विधि उपयोग करने के कारण खाद्यान्न उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि होती है।

12. जल की कमी – वर्तमान समय में विश्व स्तर में जल की पूर्ति की कमी खाद्यान्न उत्पादन को अधिक प्रभावित करती है। विभिन्न देशों में जल के वितरण एवं मौसम के अलुसार जल की उपलब्धता में अधिक भिन्नता के कारण अनेक देशों में जल के अभाव की गंभीर समस्या उत्पन्न हो गई है। जल का अभाव भी खाद्यान्न समस्या का एक कारण है यह जलाभाव कृषि उत्पादन में कमी करता है।

उपरोक्त सभी कारणों से विश्व के अधिकांश देशों में खाद्य समस्या उत्पन्न हो गई है। यह खाद्य समस्या वाले देश दूसरे सम्पन्न देशों से खाद्यान्न का आयात कर अपने देशों की खाद्य समस्या की आपूर्ति कर रहे है।

विश्व की खाद्य समस्या को हल करने के उपाय – खाद्यान्न अभाव की समस्या को हल करने के लिये संसार के सभी देशों में प्रयास चल रहे है। खाद्यान्न अभाव की समस्या विश्वव्यापी समस्या है, इस कारण मानवीय दृष्टि से इस पर गंभीरतापूर्वक विचार द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात अनेक देशों ने किया, क्योंकि द्वितीय विश्वयुद्ध के समय यूरोप एवं अन्य देशों में खाद्यान्न अभाव और आपूर्ति की समस्या का कटु अनुभव किया गया था, इस कारण द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात संयुक्त राष्ट्र सहायता एवं पुर्नवास प्रशासन (United Nation Relief and Rehabilitation Administration - UNRAA) ने खाद्यान्न की आवश्यकता जिन क्षेत्रों में बहुत अधिक थी और जो अभावग्रस्त थे, आपूर्ति का कार्य अपने हाथों में लेकर इस कार्य को पूरा किया।

खाद्यान्न अभाव की समस्या को स्थायी रुप से हल करने का कार्य संयुक्त राष्ट्र संघ ने उठाया। 1945 में इसके लिये एक स्थायी अंतर्राष्ट्रीय इकाई के रुप में विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन (The Food and Agricultural organisation - FAO) की स्थापना की गई। खाद्य एवं कृषि संगठन अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पिछड़े एवं विकासशील देशों के लिये ऐसी अनेक योजनाएँ संचालित कर रहा है, जिनसे वहाँ के लोगों को प्रतिदिन भोजन अवश्य उपलब्ध हो सके।

विश्व की खाद्य समस्या को सुचारु रुप से हल करने के लिये निम्नलिखित उपाय प्रयोग में लाना आवश्यक है –

1. जनसंख्या नियंत्रण – वर्तमान समय में खाद्यान्न अभाव की समस्या को हल करने के लिए जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करना आवश्यक है, जिसमें कि कृषि उत्पादन एवं भण्डारण में वृद्धि हो सके।

जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने के साथ साथ कृषि उत्पादन की ओर ध्यान देना आवश्यक है, इस हेतु

1. **यंत्रीकृत कृषि** – वर्तमान समय में अनेक देश यंत्रों की सहायता से – ट्रेक्टर, हार्वेस्टर, विद्युत पम्प आदि से कृषि करने के कारण उत्पादन में वृद्धि प्राप्त कर रहे है। इस विधि के द्वारा कृषि करने से उत्पादन में 10–12 गुना वृद्धि देखी गई है। यान्त्रिक दृष्टि से भारत वर्ष में पंजाब और हरियराणा समृद्ध कृषि प्रधान राज्य है।

2. **मिश्रित कृषि को प्रोत्साहन** – सामान्य कृषि उत्पादन के साथ साथ प्रत्येक देश को कृषि सहायक उद्योगों–पशुपालन, रेशम उत्पादन, मुर्गी पालन, मछली पालन, मधुमक्खी पालन, सूअर पालन आदि को भी प्रोत्साहित करना होगा। कृषि उपज, वन्य उपज के साथ साथ समुद्री संसाधनों के द्वारा भोजन के विभिन्न तत्वों – कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटिन्स, वसा, खजिन लवण आदि को प्राप्त कर भोजन का पर्याप्य विकसित किया जा सकता है और खाद्यान्न अभाव की समस्या को हल किया जा सकता है।

3. व्यापारिक कृषि – खाद्यान्न समस्या को हल करने के लिये व्यापारिक दृष्टिकोण के द्वारा कृषि करने की ओर ध्यान देना आवश्यक है। व्यापारिक दृष्टिकोण से कृषि करने पर अधिक एवं अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है, जैसे कि अनेक पश्चिमी देशों ने व्यापारिक दृष्टिकोण को अपनाकर चाय की कृषि में लाभ प्राप्त किया है।

4. भण्डारण में सुधार एवं वृद्धि – यदि कृषि उत्पादन को उचित एवं अधिक प्रकार से भण्डारण में वृद्धि करने से कृषकों को लाभ मिल सकेगा और कृषक उत्पादन में वृद्धि करने के लिये निरन्तर अधिक प्रयास करेंगे।

वर्तमान समय में कृषि उपज एवं खाद्यान्नों में वृद्धि, मुख्य रुप से मानव जाति की सर्वाधिक महत्वपूर्ण आवश्यकता है, क्योंकि खाद्यान्न जीवन का आधार एवं मानव ऊर्जा का स्त्रोत है। यदि वर्तमान में संसार के मनुष्यों को कुपोषण एवं भूखमरी से बचाना है तो खाद्यान्न उत्पादन में अपार वृद्धि ही नहीं करनी होगी, बल्कि वृद्धि के क्रम को बनाए रखना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नाबार्ड की प्रकाशित रिपोर्ट
2. कृषि विभाग दिल्ली की रिपोर्ट
3. विश्व खाद्य संगठन की रिपोर्ट
4. कृषि की उच्चस्तरीय रिपोर्ट
5. अंतर्राष्ट्रीय रिसर्च एवं रिव्यूह
6. भारतीय अर्थव्यवस्था, डॉ. अनुपम गोयल– शिवलाल अग्रवाल एंड कम्पनी, इंदौर
7. व्यावसायिक अर्थशास्त्र, पी सी अग्रवाल एंड कम्पनी, एम डी अग्रवाल– रमेश बुक डिपो, जयपुर
8. भारत का आर्थिक विकास, डॉ. मामोरिया, डॉ. जैन – साहित्य भवन, आगरा

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

संत रविदास के चिन्तन में साहित्यक परिदृश्य

प्रदीप कुमार साकेत *

प्रस्तावना – समाज में इन मूल्यों को खोजने के लिए संत रविदास ने अपने जीवन को ही समर्पित कर दिये जीवन की अनेक दिशाओं में मानव का मूल्य ही सर्वोपरि है। संत रविदास ने सामाजिक व्यवस्था को परिवर्तन कर एक नया समाज स्थापित किये। जिनकी विचारधारा में मानवीय मूल्यों और साहित्य की चिन्तन धारा निकलती है। दलित चेतना को जागृत करने के लिए अथक प्रयास किये। संत रविदास की चेतना समाज में एक नया दृष्टिकोण स्थापित करना चाहती है। इस हेतु इन्होंने समाज और शिक्षा के साथ परिवर्तन की दिशा को तय किये है। यह समाज मानव की तृष्णा पर आधारित विद्धता का परिणाम जन मानस की एकता पर पड़ा। संत रविदास सामाजिक समरसता मानव के मूल्यों पर सृजन तत्वों के रूपों में अर्थ से दबा यह समाज क्या नैतिक मूल्यों से भी दबा है। नहीं नैतिक मूल्य हमेशा से स्वतंत्र रहे हैं। जिसके स्थायित्व और स्वाभिमान की परम्पराओं ने सामाजिक उन्नति की ओर एक लहर पैदा कर देती है। इस लहर की प्रवाहित होने वाली धारा मूल्यों को जीवित करने में सहायक सिद्ध होती है। यह समाज की परिवर्तित धरातल के परिणाम स्वरूप अमीरों और गरीबों के बीच में एक खाई बढ़ती गई। जिसका मूल उदाहरण कार्लमार्क्स और लेनिन द्वारा प्रस्तुत करते हैं।

कार्ल मार्क्स कहता है कि शोषक और शोषितों के बीच बढ़ने वाली इस विसंगतियों के अधिकारों से ही मिटाया जा सकता है। इन मूल्यों का मन्तव्य समाज में जनक्रान्ति का उमड़ता सैलाव है। इन्हीं विशेषताओं के परिणामस्वरूप यह दलित समाज अधिक पिछड़ता जा रहा है। अनेक घटनाओं के परिणाम स्वरूप विघटन की स्थिति पर परिवर्तन की विचारधारा पर सामाजिक विसंगतियों ने करारा झटका दिया है। इस समय का परिवर्तन समाज स्वयं के रौद्र रूप में खड़ा है। हमें मालूम है। जहाँ परिवर्तन होता है वहाँ दिशाओं का मार्ग स्वयं में परिवर्तित नहीं होने की विसंगतियों का परिणाम है।

संत रविदास समाज के महान चिन्तकों में से एक है। जिन्होंने गरीबों, पीड़ितों, धुतकारने वालों के अधिकारों को दिलाने का अथक प्रयास किया। ऐसी अनेक विसंगतियों ने मानवीय विचारधाराओं के परिणामस्वरूप जीवन और जगत् की अनेक कठिनाईयों का डट कर सामाना करते हैं। इससे यह साबित होता है कि 'गुरू रविदास जी अपने युग के महान क्रान्तिकारी समाज सुधारक एवं दलित चेतना के सफल एवं अन्यतम अगुआ थे।'[1]

रविदास जन्म के करनै होन न कोउ नीच।
नर कूँ नीच करि डारि है, ओछे करम कौ कीच।।[2]

संत रविदास कहते हैं कि मैं मानमा हूँ कि प्रस्तर की मूर्तियों में भगवान का वास है। इन्हीं कारणों से प्रस्तर की मूर्ति पानी में तैरती रहती है। क्योंकि उसमें ईश्वर का अंश हैं। ईश्वरी शक्ति उसमें कार्य कर रही है। ऐसे मूल्यों को मानवीय मूल्यों की खोज में सामिल है। अनेक दु:खों से निवृत्ति का एक मार्ग है। भगवान की भक्ति है। जिनके नाम पर ही ईश्वर शक्ति काम करने लगती है। इससे मानव में मानवीय संवेदना का सागर ही इसी प्रभु भक्ति में जीवन कट सकता है। अन्यथा सब कुछ मिथ्या है। जो व्यक्ति प्रभु का नाम जपता है। वह भव सागर से पार हो जाता है।[3]

संत रविदास की सामाजिक समरसता में मानवीय मूल्यों की पराकाष्ठा दिखाई देती है। मानव विकास के पहरेदार निर्गुण भक्ति मार्गी संत रविदास का जीवन मानवीय मूल्यों से आस्था के रूप में भरा है। जिनकी मानवीय संवेदना मूल्यों को विकसित करने में अह्य योगदान देती है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र **संत रविदास के चिन्तन में साहित्यक परिदृश्य** एक प्रकार से द्वितीयक शोध सामाग्री के समिलित संकलन के द्वारा शोध पत्र का निर्माण किया गया है। इस हेतु जर्नल, पत्र-पत्रिकाओं और विद्वानों का मार्गदर्शन प्राप्त कर शोध सामाग्री को सामिल किया गया है।

उद्देश्य :

1. मानवीय मूल्यों का साहित्यक अध्ययन करना।
2. संत रविदास सामाजिक चिन्तन का साहित्यक अध्ययन करना।
3. संत रविदास और भारतीय संस्कृति के मूल्यों का अध्ययन।

समस्याएँ :

1. व्यक्ति में हो रहे मूल्यों के क्षरण की समस्या।
2. धार्मिक और सम्प्रदायवाद की समस्या।
3. जातिवादी विसंगतियों में समाज में व्याप्त कुरीतियों की समस्या।
4. भारतीय संस्कृति के क्षरण की समस्या।

समाधान – संत रविदास के जीवन में निर्गुण मार्गी भक्ति का सौन्दर्य दिखाई देता है। इन्हीं परम्पराओं के रूप में मानव की विचारधारा का परिणाम मानव समाज के सामने आ रहा है। ऐसी सामाजिक दशाओं के कारण इस प्रकार की विचारधारा के प्रेणाता संत रविदास का साहित्य के सृजन में असीम योगदान है। इनकरी परम्पराओं ने मानव के सामने एक विचारधारा को ही जन्म दे दिया है। ऐसे महामानव जिनकी कर्म प्रधानता ने ईश्वर की आस्था को जीत लेती है। संत रविदास का जीवन मूल्या मानव की आधार सिला के रूप में सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और मूल्यों के सन्दर्भ में दलित चेतना के मसीहा संत रविदास के जीवन का प्रण ही मानव की जिज्ञासा को बढ़ा सकती है।[4]

संत रविदास का जीवन मूल्यों के रूप में ही दिखाई देता है। इनके मूल्यों से सम्पूर्ण संसार परिचित है। इस जीवन की गाथा को मूल्यों में परिणित करने की प्रवृत्ति समाज में उत्कृष्ट रूपों में दिखाई देती है। इन्हीं प्रवृत्तियों के

* शोधार्थी (हिन्दी साहित्य) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

फलस्वरूप मानव जीवन की विसंगतियों को देखना मानव हित के लिए संरक्षण का कार्य करती है। आज भी समाज वैचारिक क्रान्ति से जूझ रहा है। इसके लिए धर्म के ठेकेदार ही जिम्मेदार है।[5] इन विसंगतियों को निरूपित करने में मानव की विचारधारा का परिणाम सामाजिक संघर्ष है। इन्हीं संघर्षो के द्धारा मानव जीतता और हारता है। यहाँ अनेक विसंगतियों के स्तर पर मानव की अनेक वैचारिक स्थितियों का जबावदार स्वयं होता जा रहा है।

सामाजिक और आर्थिक स्वरूपों की यदि चिन्ता किया जाय तो आज भी दलित समाज बहुत ही पिछड़ा है। भारतीय सामाजिक परम्पराओं में मानव को सोचने के लिए मजबूर कर रहा हैं एक प्रकृति और हवा, जल, अग्नि एक तरह की है। मानव भोजन, स्नान, पूजा-पाठ अध्ययन-अध्यापन रहन-सहन एक तरह होने के बावजूद भी भेदभाव पूर्ण जीवन जीने के लिए मजबूर क्यों है। इसका कोई-न-कोई कारण अवश्य है। जिसका निदान मानव के मूल्यों में छिपा हुआ है। इस तरह की विसंगतियों के समाधान हेतु संत रविदास ने मानव मूल्यों का प्रमाण दिखाई देते हैं। ऐसी स्थिति का जाबवदार मानव स्वयं है। हमारी प्रवृत्तियाँ एक समाज की कार्यप्रणाली पर निर्भर करती है। जिसका सृजन साहित्य स्वयं करता है। क्या सही है और क्या गलत है इन्हीं विचार धाराओं के द्धारा मानवीय मूल्यों की ओर प्रेरित करती है।[6]

यह बात सत्य है कि मध्यकालीन समाज से लेकर आधुनिक काल के संतों ने भी समाज में दलितोंद्धार का अथक प्रयास किया है। ऐसे सामाजिक आर्थिक, राजनीतिक विसंगतियों के परिणाम स्वरूप मानवीय मूल्यों का सृजन आवश्यक प्रतीत होता है।[7]

समाज को निम्नस्तर से ऊपर उठाने का कार्य संत रविदास ने किया है। यह परोपकार मानवीय मूल्यों के लिए सामाजिक विसंगतियों के निर्माण में मानवीय जीवन की दिशा दिखाई देती है। अनियंत्रित रूपों में व्याप्त कुरितीयों को जड़ से मिटाने का प्रयास संत रविदास और अन्य समकालीन संतों ने किया है। इसीकारण मानवीय मूल्यों साहित्यों के सृजन में उत्कृष्ठ रहा हैं। सामाजिक विसंगतियों और मानवीय मूल्यों का परिणाम ही जीवन की दिशाओं में देखने का प्रयास किया है।

निष्कर्ष – संत रविदास ने मानवीय मूल्यों के अनेक विसंगतियों का विवेचन औपचारिक रूपों में करते रहे हैं। यहाँ तक समाज इनके योगदान को प्रेरणास्त्रोत के रूप में माने जाते हैं। जिन्होंने ईश्वर की आस्था का मूल्य बीज ही प्रकट कर दिया है। इन्हीं कारणों के दौरान मानवीय संवेदना का संकट ही नहीं जीवन की अनेक विसंगतियों का परिणाम ही मानव पर निर्भर करती है। जिन्होंने मानव के प्रेम और सौहर्द्र का परिणाम जीवन मूल्य है। समाज उन्हें ही अग्रसर करता है। जिनमें समाज के प्रति कार्य करने की क्षमता होती है। इन्हीं के परिणाम स्वरूप वैचारिक श्रेष्ठता की स्थान दिया गया है।[8] यहाँ कहते हैं कि जो ईश्वर के मार्ग में सत्य और धर्म का अनुशरण करता है। उसे ही ईश्वर फल भी प्रदान करते है। इन्होंने प्रत्येक मानव को उपेक्षित होने से सही मार्ग बताते हैं। कि समाज में सद्कर्म जाति से उच्च श्रेणी का समझा जाता है। जहाँ मानव और समाज की सामाजिक विसंगतियों का परिणाम ही मानव को इन रूढ़ियों और प्रथाओं एवं झूठे आडंबरों छुटकारा दिलाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. धर्मपाल सिंहल एवं डॉ. बलदेव सिंह 'बाछन', ब्रह्मर्षि रविदास, मानसी पब्लिबकेशन्स, दिल्ली, 2014 पृष्ठ 61
2. भगवती प्रसाद निदारिया, संत कवि रैदास, इन्द्रप्रथ इटरनेशनल, दिल्ली, 2007, पृष्ठ 21
3. ममता झा, संत रविदास रत्नावली, एस.के. ईटरप्राईजेज, 2016, पृष्ठ 98
4. डॉ. धर्मवीर सन्त रैदास का निर्वर्ण सम्प्रदाय, संगीता प्रकाशन, दिल्ली, 2011, पृष्ठ 15
5. कन्हैयालाल चंचरीक, संत रविदास : जीवन और दर्शन, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ 1
6. डॉ. अरूण कुमार भगत, संत रविदास की रामकहानी दृष्टि और मूल्यांकन, संदर्भ प्रकाशन, दिल्ली, 2016, पृष्ठ 26-27
7. आचार्य पृथ्वीसिंह आजाद, गुरू रविदास, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, 1999, पृष्ठ 22

****

मध्यप्रदेश में राष्ट्रीय सम-विकास योजना की उपयोगिता एवं प्रभाव

डॉ. अजय वाघे *

प्रस्तावना - राष्ट्रीय समविकास योजना केन्द्र एवं राज्य सरकार के संयुक्त प्रयासों से देश के 27 राज्यों के लगभग 147 पिछड़े जिलों में वर्ष 2003-04 में लागू की थी, म.प्र. में यह योजना वर्ष 2004 के अप्रैल माह में प्रारंभ की गयी तथा इस योजना की अवधि तीन वर्षीय थी। म.प्र. में समविकास योजना 10 पिछड़े हुए जिलों क्रमशः खरगोन, बड़वानी, सीधी, सिवनी, मण्डला, बालाघाट, उमरिया, सतना, डिण्डोरी और शहडोल में लागू की गयी थी, योजना हेतु म.प्र. में 10 जिलों में प्रत्येक जिले को 15 करोड़ रूपये प्रतिवर्ष की दर से 3 वर्षो में 45 करोड़ रूपयें उपलब्ध कराये गयें।

शोध-अध्ययन का उद्देश्य :

1. गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन कर रहे परिवारों की आर्थिक स्थिति का पता लगाना।
2. भूमिहिन या सीमांत कृषक परिवारों का अध्ययन करना।
3. योजना का लाभ ग्रामीण क्षेत्रों के परिवारों को मिला है, इसका अध्ययन करना।
4. योजना हेतु पात्र हितग्राहियों का वास्तविक पिछड़ेपन के आधार पर चयन हुआ है, अध्ययन करना तथा जिले के वास्तविक पिछड़े क्षेत्रों का चयन हुआ है अथवा नहीं?
5. मध्यप्रदेश के सम्पूर्ण हितग्राही क्षेत्रों को योजना का लाभ प्राप्त हुआ है, इसका अध्ययन करना।
6. चयनित क्षेत्रों पर बजट अनुसार व्यय हुआ हैं, इसका अध्ययन करना।
7. योजना के कार्य स्तरीय हैं, इसका अध्ययन करना।
8. ग्रामीणों की जीवन शैली में वृद्धि हुई है, इसका अध्ययन करना।
9. ग्रामों में कृषि कार्यो में विकास हुआ है, इसका अध्ययन करना।
10. ग्रामीणों का आर्थिक उत्थान योजनानुसार हुआ है, इसका अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनाएँ :

1. योजना का लाभ ग्रामीण व पिछड़े हुए क्षेत्रों को प्राप्त हुआ है?
2. शासन द्वारा स्वीकृत राशि इस योजना पर पूर्ण रूप से व्यय की गई है?
3. इस योजना से स्वरोजगार को बढ़ावा मिला है?
4. ग्रामीणों के जीवनस्तर में वृद्धि हुई है?
5. म.प्र. के पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत सुविधाओं का लाभ दिया गया है?
6. सिंचाई के साधनों में योजना अनुसार वृद्धि हुई है?
7. कृषि कार्यो को बढ़ावा मिला है।

योजना में संचालित गतिविधियां :

1. कृषि आधारित गतिविधियाँ।
2. वन आधारित गतिविधियाँ।
3. मूलभूत सामाजिक अधोसंरचना का विकास गतिविधियाँ।
4. आर्थिक अधोसंरचना के विकास की गतिविधियाँ।

योजना में संचालित गतिविधियों से प्राप्त लाभ की गुणवत्ता तथा औचित्य - राष्ट्रीय समविकास योजना के अंतर्गत प्रत्येक जिले को समान राशि का प्रस्ताव रहा है, जिससे निम्न कृषि उत्पादकता बेरोजगारी की समस्याओं का समाधान करने तथा अवस्थापन में कमी करने का प्रयास किया गया है। प्रत्येक जिले के लिये 3 वर्षीय कार्य योजना तैयार की गई है, जिससे उस क्षेत्र में विभिन्न योजनाओं से निधियों के प्रवाह का मूल्यांकन किया जा सके। विभिन्न पदों पर किये गये व्ययों का वर्णन निम्न है-

1. स्वास्थ्य एवं पोषण
2. कृषि संबंधी कार्य योजना
3. शिक्षा एवं दक्षता विकास
4. सड़क विकास
5. विद्युत सुविधा
6. सिंचाई सुविधा

राष्ट्रीय समविकास योजना की उपयोगिता - राष्ट्रीय समविकास योजना विकास कार्यों में सहायता प्रदान करना तथा अन्य कार्यक्रमों के महत्व को बढ़ाना है। वि-निर्धारित जिलों में विद्यमान विकास अप्रवाहों को पूरक बनाने के लिए निम्नलिखित वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराए गये ताकि -

1. स्थानीय अवस्थापना व अन्य विकास जरूरतों में क्रान्तिक अन्तरों को पाटना जिनकी विद्यमान अप्रवाहों के माध्यम से पर्याप्त रूप से पूर्ति नहीं हो रही है।
2. इस उद्देश्य हेतु पंचायत और नगरपालिका स्तर अधिषासन को और अधिक उपयुक्त क्षमता निर्माण के साथ सुदृढ़ करना ताकि भागीदारी आयोजना, निर्णय निर्माण, कार्यानवयन और मानीटरिंग सुगम हो सके।
3. सभी केन्द्रीय क्षेत्र केन्द्र प्रायोजित और उप-जिला स्तर पर चल रही राज्य योजनाओं का अभिसरण।
4. सामाजिक विकास, जैसे कि शिक्षा, स्वास्थ्य, खाद्य सुरक्षा, पेयजल आदि के लिए पर्याप्त निवेषों के साथ जिला स्थानीय सरकारी संस्थानों का सषक्तीकरण।
5. पिछड़े क्षेत्रों और असुविध ग्रसित लोगों पर बल देते हुए ग्रामीण और शहरी स्थानीय निकायों के विभिन्न स्तरों के अवस्थापना पर ध्यान केन्द्रित करना।

* प्रभारी प्राचार्य व सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) विद्योदय महाविद्यालय, मनावर, जिला - धार (म.प्र.) भारत

6. आर्थिक और सामाजिक रूप से कमजोर वर्गों की आजीविका और परिसम्पत्तियों के विकास पर बल देना।

राष्ट्रीय समविकास योजना का प्रभाव :

1. योजना का पिछड़े हुए क्षेत्रों पर प्रभाव।
2. योजना का गरीब परिवारों व सीमांत कृषक पर प्रभाव।
3. ग्रामीणों के जीवन स्तर पर प्रभाव।
4. ग्रामीण स्वरोजगार पर प्रभाव।
5. कृषि पर प्रभाव।

योजना का पिछड़े हुए क्षेत्रों पर प्रभाव :

1. राष्ट्रीय समविकास योजना लागू होने के बाद मानव विकास के संकेतक जैसे साक्षरता एवं शिक्षा और मातृ व शिशु मृत्यु दर में सतत् सुधार को देखे गए है।
2. योजना में संचालित गतिविधियों से चयनित पिछड़े जिलों में साक्षरता प्रतिशत 2001 वर्ष के 45 प्रतिशत से वर्ष 2010 के अंत तक बढ़कर 68.8 प्रतिशत हो गया।
3. योजना से वर्ष 2004-10 के मध्य चयनित जिलों के दूरस्थ ग्रामों में स्वास्थ्य संबंधी कार्यों द्वारा शिशु व मातृ मृत्यु दर को 10 प्रतिशत से घटाकर 1 प्रतिशत लाया गया।
4. गरीब व्यक्तियों के लिए आधारभूत सेवाएँ सुनिश्चित हुई जिसमें वहनीय दरों पर सुरक्षा अवधि शामिल है।
5. शहरी गरीबी अन्मूलन तथा गन्दी बस्ती का विकास, समविकास योजना का एक महत्वपूर्ण घटक बना है।

योजना का गरीब परिवारों व सीमांत कृषक पर प्रभाव :

1. राष्ट्रीय समविकास योजना के अंतर्गत वर्ष 2004-10 के मध्य चयनित 10 जिलों में हस्थकला व बागवानी कार्यों के माध्यम से 9665 गरीब परिवारों को स्वरोजगार प्राप्त हुआ जो उनकी गरीबी दूर करने में सहायक हुआ।
2. योजना के द्वारा कृषि क्षेत्र में रोजगार सृजित किये गये।
3. योजना द्वारा गरीब महिलाओं को आंगनवाड़ी कार्यक्रम से जोड़ा गया।
4. योजना के कृषि कार्यक्रम के माध्यम से भू-उत्पादकता बढ़ाते हुए ऐसे प्रयास भी किये गये जिससे कृषिरत लोगों की आय के अवसर बढ़ सके।

कृषिगत आय और कृषि कामगारों के वास्तविक पारिश्रमिक में वृद्धि हुई है, और उनके द्वारा मज़दूरी निर्धारण की क्षमता में सुधार कर आधिक्य श्रमबल बढ़ाया जा सका है।

ग्रामीण स्वरोजगार एवं कृषि पर प्रभाव :

1. **ग्रामीण स्वरोजगार पर प्रभाव -** राष्ट्रीय समविकास योजना के अंतर्गत ग्रामीण स्वरोजगार को बढ़ावा दिया गया है। योजना के माध्यम से ग्रामीणों को विभिन्न प्रशिक्षण प्रदान करके उन्हें स्वरोजगार उपलब्ध कराये गये जिससे उनकी आय में वृद्धि हुई है। ग्रामीण महिलाओं को सिलाई, बुनाई, कढ़ाई, आदि के प्रशिक्षण द्वारा उन्हें स्वरोजगार उपलब्ध कराये गये।
2. **कृषि पर प्रभाव -** राष्ट्रीय समविकास योजना से नई किस्मों से प्रति हैक्टेयर उच्च पैदावार में कुछ उल्लेखनीय वृद्धि रही है। खेती के तरीकों में सुधार हुआ हैं, जिससे पैदावार में 60 से 100 प्रतिशत का अंतर पाया गया।
3. योजना के कृषि कार्यक्रमों के अंतर्गत बागवानी कार्यो को बढ़ावा मिला।

समविकास योजना के क्रियान्वयन में होने वाली समस्याएँ :

1. लक्षित समुदायों के चयन की समस्या।
2. पाँच प्रतिशत से कम जनसंख्या वाले गाँवों के चयन की समस्या।
3. योजना की राशि के आबंटन व वितरण की समस्या।
4. वास्तविक उद्देश्य प्राप्त न होने की समस्या।
5. हितग्राही परिवारों व क्षेत्रों के व्यापाक प्रचार-प्रसार की समस्या।

योजना की समस्याओं के निराकरण हेतु प्रभावी सुझाव :

1. योजना की समस्याओं के निराकरण हेतु प्रभावी सुझाव।
2. लक्षित समुदायों के चयन संबंधी सुझाव।
3. जिलों के उचित ग्रामों के चयन हेतु सुझाव।
4. लाभ के अधिकारीक क्षेत्रों को पूर्ण लाभ दिलाने हेतु सुझाव।
5. राशि के उचित वितरण व आबंटन हेतु सुझाव।
6. योजना के राष्ट्रीय विकास हेतु सुझाव।

अध्ययन का निष्कर्ष :

1. मध्यप्रदेश में यह योजना 10 जिलों क्रमश: खरगोन, बड़वानी, सीधी, सिवनी, मण्डला, बालाघाट, उमरिया, सतना, डिण्डोरी और शहडोल में लागू किया गया है।
2. यह योजना केन्द्र सरकार और राज्य सरकार के संयुक्त प्रयासों से मध्यप्रदेश के पिछड़े हुए जिलों के विकास हेतु लागू की गई है।
3. योजना के सफल संचालन हेतु सरकार द्वारा जिलों की संबन्धित जिला पंचायतों की भागीदारी सुनिश्चित की गई है।
4. योजना से बेहतर आर्थिक अवसर एवं विकास के लिए ग्रामीण अवसंरचना सृजित की गई।
5. प्रधानमंत्री सड़क योजना के जरिए सड़कों से न जुड़ी बसाहटों को इस योजना के माध्यम से जोड़ा गया।
6. योजना से प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल में स्वास्थ्य समस्याओं का समाधान तथा स्वास्थ्य प्रणाली में सुधार हुए।
7. राष्ट्रीय समविकास योजना के अंतर्गत ग्रामीण इलाकों में अवसंरचना और बुनियादी सुविधाएँ जैसे ग्रामीण आवास, सिंचाई क्षमता, पेयजल, ग्रामीण सड़के, विद्युतीकरण और ग्रामीण टेलीफोन व्यवस्था आदि कार्य वर्ष 2005-06 के मध्य शुरू किये गये वर्ष 2010 के अंत तक 80 प्रतिशत कार्य पूर्ण किये गये।
8. राष्ट्रीय समविकास योजना में भूमि के संसाधन के लिए निवेष की आवष्यकता पर बल दिया गया।
9. योजना को भारत निर्माण कार्यक्रम से जोड़ कर वर्ष 2005-09 तक 1.69 लाख मकानों व सरकारी भवनों की मरम्मत में योगदान किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

भारत के आर्थिक विकास में वित्त आयोगों का योगदान

डॉ. पीताम्बर सिंह चौहान *

प्रस्तावना - भारतीय संविधान के अनुच्छेद 280 (1) के अनुसार, राष्ट्रपति द्वारा प्रत्येक पांचवें वर्ष या उससे पहले भी वित्त आयोग का गठन किया जा सकता है।

वित्त आयोग निम्नलिखित आर्थिक विषयों पर राष्ट्रपति को परामर्श देता है

1. केन्द्रीय एवं राज्यों के बीच विभाजन योग्य करों में राज्यों का हिस्सा।
2. भारतीय को संचित निधि से राज्यों को दिए जाने वाले अनुदान।
3. अन्य वित्तीय परामर्श

भारत में प्रथम वित्त आयोग का गठन वर्ष 1951 में के. सी. नियोगी की अध्यक्षता में किया गया। वर्तमान में चौदहवें वित्त आयोग का गठन जनवरी, 2013 में किया गया। वाई वी रेड्डी की अध्यक्षता में गठित यह आयोग अपनी रिपोर्ट 31 दिसम्बर, 2014 में देगा तथा इसका क्रियान्वयन वर्ष 2015-20 में होगा।

वित्त आयोगों कमी सिफारिशों पर केन्द्र से राज्यों को अंतरण

			कर अंतरण	अनुदान	कुल
1	पहला वित्त आयोग	1952-57	371.30	50.00	421.30
2	दूसरा वित्त आयोग	1957-62	822.40	197.20	1019.60
3	तीसरा वित्त आयोग	1962-66	1067.50	250.40	1317.90
4	चौथा वित्त आयोग	1966-69	1328.00	421.80	1749.90
5	पांचवां वित्त आयोग	1969-74	4643.00	710.70	5353.80
6	छठा वित्त आयोग	1974-79	8250.60	2509.60	10760.20
7	सातवां वित्त आयोग	1979-84	19297.10	1609.90	20907.00
8	आठवां वित्त आयोग	1984-89	35683.00	3769.00	39452.00
9	नौवां वित्त आयोग	1989-90 1990-95	11785.64 87882.00	1876.78 18154.43	13662.42 106036.43
10	दसवां वित्त आयोग	1995-00	206343.00	20300.30	226643.30
11	ग्यारहवां वित्त आयोग	2000-05	376318.01	58587.39	434905.40
12	बारहवां वित्त आयोग	2005-10	643112.02	112639.60	755751.62

तेहरवें वित्त आयोग का दृष्टिकोण - तेरहवें वित्त आयोग का गठन राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 280 के अन्तर्गत 13 नवम्बर 2007 को वर्ष 2010 से 2015 के कालखंड के लिए अपनी सिफारिशें देने के संदर्भ में किया गया। डॉ. विजय केलकर तेरहवें वित्त आयोग के अध्यक्ष नियुक्त किये गये।

तेरहवें वित्त आयोग निम्नलिखित विषयों पर अपनी सिफारिशें देने हेतु कहा गया:

1. संघ और राज्यों के बीच करों के शुद्ध आगमों, जो संविधा के भाग 12 के अध्याय 1 के अधीन उनमें विभाजित किए जाने हैं या किए जाएं, का वितरण और राज्यों के बीच ऐसे आगमों के तत्संबंधी भाग का आवंटन।
2. भारत की संचित निधि में से राज्यों के राजस्व में सहायता अनुदान को शासित करने वाले सिद्धान्त और उन राज्यों को, जिन्हें संविधान के अनुच्छेद 275 के अधीन उनके राजस्वों में सहायता अनुदान के रूप में उस अनुच्छेद के खंड (1) के परंतुक में विनिर्दिष्ट प्रयोजनों से भिन्न प्रयोजनों के लिए सहायता की आवश्यकता है, संदत्ता की जाने वाली धनराशियां और
3. राज्य के वित्त आयोग द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर राज्य में पंचायतों और नगरपालिकाओं के संसाधनों की अनुपूर्ति के लिए किसी राज्य की संचित निधि के संबंध आवश्यक अध्युपा।

आयोग, विशेष रूप से, केन्द्रीय सरकार द्वारा बारहवें वित्त आयोग की सिफारिशों के आधार पर आरंभ की गई राज्य ऋण समेकन औरराहत सुविधा 2005-10 के प्रवर्त्तन को ध्यान में रखते हुए, संघ और राज्यों की वित्तीय स्थिति का पुनर्विलोकन करेगा और समान वृद्धि से संगत स्थिर और पोषणीय राजवित्तीय वातावरण को बनाए रखने के लिए उपायों का सुझाव देगा।

राष्ट्रपति द्वारा तेरहवें वित्त आयोग के लिए विचाराधीन विषयों के साथ उसके गठन का आदेश मिलनें के बाद वित्त आयोग ने 30 दिसम्बर 2009 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की।

तेरहवें वित्त आयोग का सामान्य दृष्टिकोण इस प्रकार से था:

1. अधिक हरित और अधिक समावेशी विकास प्राप्त करने की आवश्यक राजकोषीय दृष्टि से मजबूत केन्द्र, राजकोषीय दृष्टि से मजबूत राज्य और राजकोषीय दृष्टि से मजबूत स्थानीय निकाय बनाये जाये।
2. राजकोषीय सुदृढीकरण पर ध्यान केन्द्रित करते हुए मध्यावधिक में ऋण सकल आयोग यह समझता है कि बारहवे वित्त आयोग द्वारा ऋण अनुपात को 75 प्रतिशत के स्तर का लक्ष्य रखा गया था, जबकि बारहवें वित्त आयोग के अंतिम वर्ष में संयुक्त ऋण- सकल घरेलू उत्पाद का अनुपात 65 प्रतिशत और केन्द्र सरकार के ऋण सकल घरेलू उत्पाद का अनुपात 45 प्रतिशत तक लाया जाएगा।

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर (अर्थशास्त्र विभाग) लाजपत राय कालिज, साहिबाबाद, जिला - गाजियाबाद (उ.प्र.) भारत

3. आयोग ने सिफारिश दी कि राजकोषीय समेकन हेतु केन्द्र और राज्यों दोनों का राजस्व घाटा दीर्घकाल में समाप्त किया जाए। हाल ही के वित्त आयोगों डिजाइन के अनुसार तेरहवें वित्त आयोग ने केन्द्र और राज्यों दोनों के लिए समान अनुशासन को रेखांकित किया। जिसमें किसी भी स्तरपर सरकार को प्राथमिकता न देते हुए समान व्यवहार पर ध्यान केन्द्रित किया जाए। इसका अभिप्राय यह है कि राज्य और स्थानीय निकायों के पास राजकोषीय संभावनाएं उपलब्ध है, जिससे तुलनात्मक रूप से समान सार्वजनिक सेवाएं मोटे तौर पर तुलनात्मक रूप से समान कराधन द्वारा उपलब्ध कराई जा सकती है। यह सिद्धांत पुरे देश में सार्वजनिक सेवाओं की समान उपलब्धता की गारंटी नहीं लेता, लेकिन इस हेतु समानता प्राप्त करने के लिए आवश्यक राकोषीय व्यवस्था को रेखांकित अवश्य करता है।

तालिका 2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका- 3 : ग्यारहवें, बारहवें और तेरहवें वित्त आयोग द्वारा प्रदत्तों राज्यों का हिस्सा

राज्य	ग्यारहवां वित्त आयोग	बारहवां वित्त आयोग	तेरहवां वित्त आयोग
आंध्र प्रदेश	7.701	7.356	6.948
अरूणाचल प्रदेश	0.244	0.288	0.328
असम	3.285	3.235	3.634
बिहार	14.598	11.028	10.934
छत्तीसगढ	0.000	2.654	2.474
गोवा	0.206	0.259	0.266
गुजरात	2.821	3.569	3.046
हरियाणा	0.944	1.075	1.050
हिमाचल प्रदेश	0.688	0.522	0.782
जम्मू और कश्मीर	1.290	1.297	1.394
झारखंड	0.000	3.361	2.806
कर्नाटक	4.930	4.459	4.335
केरल	3.057	2.665	2.345
मध्य प्रदेश	8.838	6.711	7.131
महाराष्ट्र	4.632	4.997	5.207
मणिपुर	0.366	0.361	0.452
मेघालय	0.342	0.371	0.409
मिजोरम	0.198	0.239	0.269
नागालैंड	0.220	0.263	0.314
उडीसा	5.056	5.161	4.787
पंजाब	1.147	1.299	1.391
राजस्थान	5.473	5.609	5.862
सिक्किम	0.184	0.227	0.239
तमिलनाडू	5.385	5.305	4.977
त्रिपुरा	0.487	0.428	0.512
उत्तर प्रदेश	0.000	19.264	19.708
उत्तराखंड	19.798	0.939	1.122
पश्चिम बंगाल	8.115	7.057	7.276
सभी राज्य	100.00	100.00	100.00

स्रोत: ग्यारहवें, बारहवें एवं तेरहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट

14वां वित्त आयोग :

1. संविधान के अनुच्छेद 280 में प्रदत्त शक्तियों के तहत सरकार ने 2 जनवरी, 2013 को 14वें वित्त आयोग का गठन किया है।
2. आयोग की अध्यक्षता रिजर्व बैंक के पूर्व गवर्नर डॉ0 वाई0वी0 रेड्डी को सौपी गई है और इसमें चार अन्य सदस्यों के साथ प्रो0 अभिजीत सेन अंशकालिक सदस्य है।
3. योजना आयोग के अन्य सदस्यों में सुषमानाथ (पूर्व केन्द्रीय वित्त सचिव), डॉ0 एम गोविन्द राव (निदेशक राष्ट्रीय लोक वित्त और नीति संस्थान) तथा डॉ0 सुदिप्ति मुण्डले (पूर्व कार्यकारी अध्यक्ष, राष्ट्रीय सांख्यिकी आयोग) शामिल है।
4. आयोग केन्द्रीय करों के बँटवारे, राज्यों को दी जाने वाली नीतिगत सहायता और स्थानीय निकायों को संसाधनों के हस्तान्तरण सम्बन्धी अनुशंसा।
5. आयोग विशेष रूप से केन्द्र सरकार द्वारा 13वें वित्त आयोग की सिफारिशों के आधार पर संघ और राज्यों की वित्तीय स्थिति का पुनर्विलोकन करेगा और समान वृद्धि से संगत स्थिति और पोषणीय राज वित्तीय वातावरण को बनाए रखने के लिए उपायों का सुझाव देगा।
6. आयोग विभिन्न विषयों पर अपनी सिफारिशें करते समय, उन सभी मामलों में जहां करो और शुल्कों तथा सहायता अनुदानों के अन्तरण को अवधारित करने के लिए जनसंख्या एक कारक है, वर्ष 1971 की जनसंख्या के आंकडों को आधार के रूप में लेगा। हालांकि वर्ष 1971 के बाद हुए जनसंख्या परिवर्तनों की नीति को आयोग ध्यान में रख सकता है।

14वें वित्त आयोग की रिपोर्ट - 14वें वित्त आयोग ने 24 फरवरी 2015 को अपनी रिपोर्ट केन्द्रीय वित्त मन्त्रालय को सौपी। इस रिपोर्ट में केन्द्र तथा राज्यों के मध्य वित्तीय प्रबन्धन की प्रक्रिया तथा प्रवृत्तियों को स्पष्ट करते हुए विभिन्न सिफारिशें की गई है। 14वें वित्त आयोग की रिपोर्ट में कर हस्तान्तरण सम्बन्धी सिफारिश लागू होने पर राज्यों को वित्त वर्ष 2015-16 में रुपये 5.26 लाख करोड प्राप्त होंगे। इस वित्त आयोग ने अपनी सिफारिश में राज्यों की कर-राजस्व से होने वाली शुद्ध आय में 42 प्रतिशत हिस्सेदारी तय की है। 13वें वित्त आयोग द्वारा 32 प्रतिशत हिस्सेदारी की सिफारिश की गई थी। 14वें वित्त आयोग द्वारा राज्यों को कर हस्तान्तरण में होने वाला यह अब तक का सबसे बडा बदलाव है।

कर मे बडी हिस्सेदारी वर्ष 2014-15 में राज्यों को किए गए कुल हस्तान्तरण की तुलना में वर्ष 2015-16 के लिए करीब 45 प्रतिशत अधिक हस्तान्तरण की सिफारिश की गई है।

भुगतान राज्यों तथा स्थानीय निकायों को भुगतान वर्ष 2011 के जनसंख्या आंकडों के आधार पर करने की बात की गई है। ये भुगतान शहरी तथा ग्रामीण जनसंख्या के आधार पर दो श्रेणियों में विभाजित होंगे। इसमें नगर निकाय तथा ग्राम पंचायत शामिल है।

अनुदान के प्रकार: अनुदानों को दो भागों में रखा गया है- साधारण अनुदान तथा प्रदर्शन अनुदान। साधारण और प्रदर्शन अनुदानों का अनुपात पंचायतों के लिए 90.10 रखा गया है, वही निकायों के लिए यह अनुपात 80.20 है।

योजनाओं को हटाना: 14वें वित्त आयोग ने आठ केन्द्र प्रायोजित योजनाओं से केन्द्रीय सहयोग समाप्त करने को कहा है। साथ ही अन्य केन्द्र

प्रायोजित योजनाओं के पैटर्न में हिस्सेदारी में बदलाव तथा जवाबदेही तय करने की सिफारिश की गई है।

वित्त सम्बन्धित महत्वपूर्ण समितियां – सरकार के व्यय एवं वित्तीय अनुशासन से सम्बन्धित निम्नलिखित समितियों का गठन किया गया है।

रंगराजन समिति – योजना आयोग ने डॉ0 सी0 रंगराजन की अध्यक्षता में सरकारी व्यय के दक्ष प्रबन्धन के सम्बन्ध में सुझाव देने के लिए एक उच्चस्तरीय विशेषज्ञ समिति गठित की थी, जिसने अपनी रिपोर्ट सितम्बर 2011 में सौप दी है।

इसकी महत्वपूर्ण संस्तुतियां इस प्रकार है :

1. सार्वजनिक व्यय के सम्बन्ध में आयोजन तथा आयोजन भिन्न अन्तर को समाप्त करना तथा बजट व्यवस्था को उत्पादन एवं परिणामों के साथ जोडकर सरकारी व्यय प्रबन्धन के दृष्टिकोण में मूल भूत परिवर्तन लाना।
2. राज्यों में क्रियान्वित हो रहे केन्द्रीय कार्यक्रमों, उप कार्यक्रमों तथा योजनाओं के लिए एक समान करों के साथ एक नवीन बहुआयामी बजट तथा लेखाकरण की शुरूआत करना।
3. सभी नई योजनाओं के लिए 12वीं योजना से सम्पूर्ण राजकोषीय मोड में रूपान्तरण।
4. क्रय शक्ति समानता सम्बन्धी परियोजनावार, क्षेत्रवार तथा मन्त्रालयवार सूचना उपलब्ध कराई जाएगी।
5. राजस्व पूंजी वर्गीकरण को बनाए रखना पर समायोजित राजस्व घाटा।

केलकर समिति

1. सरकार ने वित्तीय अनुशासन को लाने के लिए विजय केलकर की अध्यक्षता में लेखा समिति का गठन किया, जिसने एक माह से भी कम समय में अपनी रिपोर्ट तैयार कर दी।
2. इस रिपोर्ट में वित्तीय स्थिति को चिन्ताजनक बताया गया है। इस रिपोर्ट में कहा गया है कि यदि जल्दी ही वित्तीय अनुशासन लाने के लिए पूर्वत: कदम नही उठाए गए तो स्थिति वर्ष 1991 की तरह चिन्ताजनक हो जाएगी।

निष्कर्ष – भारत के आर्थिक विकास में वित्त आयोग का महत्वपूर्ण योगदान है। वित्त आयोग लागू होने से केन्द्र एवं राज्यों के मध्य वित्तीय प्रबन्धन से मधुर सम्बन्ध बनने है। 14वें वित्त आयोग द्वारा राज्यों को कर हस्तान्तरण वाला सबसे बडा बदलाव है।

तेरहवें वित्त आयोग ने सिफारिश की कि विभाजीय केन्द्रीय करों में राज्यों का हिस्सा वर्ष 2010 से 2015 के कालखंड में प्रतिवर्ष 32 प्रतिशत रहेगा। वित्त आयोग ने पहले से अधिक अनुदान सहायता की भी सिफारिश की। कुल मिलाकर सभी राज्यों को बारहवें वित्त आयोग की तुलना में 136 प्रतिशत अधिक राशि मिलेगी। ऐसा केन्द्र के अपेक्षित राजस्व में वृद्धि और तेरहवें वित्त आयोग द्वारा अधिक बडे हिस्सें को राज्यों को अंतरित करने की सिफारिश के कारण हुआ। बारहवें वित्त आयोग द्वारा कुल केन्द्रीय राजस्व का अधिकतम 38 प्रतिशत राज्यों को दिये जाने की सीमा का संकेत था, जबकि तेरहवें वित्त आयोग द्वारा यह सीमा बढाकर 39.5 प्रतिशत कर दी गई।

इस प्रकार से हम यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि ऊर्ध्व अंतरण की दृष्टि से तेरहवें वित्त आयोग द्वारा राज्यों को अधिक राजस्व अंतरण निर्देशित किया गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. रोशन कुमार रोशन अरिहन्त पब्लि0 इण्डिया लि0 मेरठ 'भारतीय अर्थव्यवस्था'
2. वेबसाइट
3. केन्द्र सरकार की वित्त आयोग रिपोर्ट
4. 'लोक वित्त' साहित्य पब्लि0 आगरा।
5. साहित्य पब्लि0 इण्डिया प्रा0लि0 आगरा 'भारतीय अर्थव्यवस्था'
6. गौरव दत्त एवं सुन्दरम 'भारतीय अर्थव्यवस्था' प्रकाशन: एस. चन्द्र एण्ड कम्पनी लि0 नई दिल्ली।
7. एस0के0 मिश्र, वी0के0 पुरी हिमालया पब्लि0 हाउस दिल्ली 'भारतीय अर्थव्यवस्था'।

तालिका 2 – दसवें से तेरहवें वित्त आयोगों द्वारा प्रदत्त विभिन्न अंतरणों का कुल में हिस्सा

	दसवां वित्त आयोग		ग्यारहवां वित्त आयोग		बारहवां वित्त आयोग		तेरहवां वित्त आयोग	
	राशि (करोड रु0)	कुल का प्रतिशत	राशि (करोड रु0)	कुल का प्रतिशत	राशि (करोड रु0)	कुल का प्रतिशत	राशि (करोड रु0)	कुल का प्रतिशत
1. केन्द्रीय करों एवं शुल्कों में हिस्सा	206343	91	376318	86.5	613112	81.1	1448096	84.8
2. सहायता एवं अनुदान जिसमें स्थानीय निकाय (क) पंचायते (ख) नगरपालिकायें	20300 5381	9 2.4	58587 10000 8000 2000	13.5 2.3 1.8 0.5	1426400 25000	18.9 3.3	258571 87519	15.2 5.1
कुल (1+2)	226643	100	434905	100	755752	100	1706676	100

स्रोत: दसवें, ग्यारहवें, बारहवें एवं तेरहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट

****

धर्म - सम्प्रदायों में मम, सम और सद्भाव

डॉ. मनीषा दुबे *

प्रस्तावना - जब में मानव का सृष्टि में आवरण हुआ तब से ही उसका धर्म से सम्पर्क रहा। यूँ तो सृष्टि रचना से पूर्व ही चतुर्मुख से ज्ञान या विद्या रूप में वेदों का उच्चारण हुआ, ऐसा माना जाता है। इस मान्यता के चलते धर्म को अनादि मानना पड़ता है। आदिमानव के विकास के साथ-साथ, मानव जीवन के प्रत्येक पहलू पर धर्म का आधिपत्य स्थापित होता गया। धर्म द्वारा ही मानव-मानव के बीच सम्बन्धों में समानता, सौहार्द्र एवं सद्भाव बना रहे, इसके लिये कुछ नियम और सिद्धांत अस्तित्व में आए। मानव अपने नाम को सार्थक बनाकर बहुत उँचा उठ जाये, इसलिये उन नियमों के अन्तर्गत जीवन जीने का आदेश भी दिया गया। किन्तु यह सारे सिद्धांत-सिद्धांत ही बने रहे। विभिन्न धर्मावलम्बियों ने धर्म का उपयोग स्वार्थ सिद्ध करने के लिये ही किया। परिणामस्वरूप धर्म के नाम पर ही समाज में वैर, विग्रह जैसी विकृत बुराईयों ने अपना स्थान बना लिया।

संसार में धर्म का ज्ञान अनेक स्थानों पर प्रकट हुआ। उसे देश, काल और परिस्थिति के अनुसार आंशिक रूप दिया गया। उसी अंश ज्ञान को लेकर 'मेरा धर्म महान' की भावना पैदा हुई। उसका अतिरेक हुआ। स्वधर्म के प्रति मम भाव-मोह और अहंकार का भाव जगा। यह धर्म का संकुचित और विकृत विकास था जिससे अन्य सभी मानवों को स्वधर्म में धर्मांतरित करने की दूषित स्पर्धा चली। परधर्म के देवल को तो तोड़कर स्वधर्म का पूजागृह बनाने का दौर चला। धर्मान्तरण कराने में पुण्य समझकर लोग निंदनीय कर्मो में प्रवृत्त हुए: फलस्वरूप मानव द्वारा मानव पर अत्याचार, शोषण एवं हिंसा से यमानव नाम ही तिरस्कृत हुआ। धम्र की आवश्यकता पर भी प्रश्नचिन्ह लगा। इतिहास साक्षी है कि जेरूसलम पर अधिकार करने के लिये यहूदियों, ईसाइओं और मुस्लिमों में इतना रक्तचाप हुआ कि धरती काँप गयी। धर्म के नाम पर संकुचित ममभाव और ममत्व के असंख्य अमानवीय परिणाम बड़े भयानक हुए।

अपने धर्म या ग्रंथ के विषय में ममत्व का भाव बुरा नहीं परन्तु इस भाव के अतिरेक से मानव का दानव बन जाना धर्म का लक्ष्य कदापि नहीं था। ममभाव से अहंभाव पैदा होता है। उत्तार मीमांसा के अनुसार अहंभावी पैदा होता है। उत्तार मीमांसा के अनुसार अहंभावी व्यक्ति के मानस पर अविद्या या अज्ञान का आवरण छा जाता है। परिणामस्वरूप अहंभावी लोग, प्रमाद, दंभ, अभिमान, क्रोध जैसे अवगुणों से ग्रस्त होकर समाज के लिये अभिशाप बन जाते हैं। महामति प्राणनाथ कहते है कि मिथ्या गुमान, अभिमान मानव को गढ़ढे में गिरा देता है। इसे त्यागकर समभावी और समाजसेवी बनना चाहिए-
अब छोड़ो रे मान गुमान ज्ञान को,

एही खाड बड़ी है भाई।
एक डारी त्यों दूजी भी डारों,
जलाए देओ चतुराई।।

मानव देहधारियों को सताने वाली समस्या का समाधान केवल युगपुरूष संतों की वाणियों में मिलता है। संतों की वाणी ही विभिन्न धर्मो के प्रति समभाव पैदा कर सकती हैं। इसलिये महामति कहते है कि सभी धर्म परब्रह्म परमात्मा की ओर सेमानव मात्र को प्रेम का संदेश देने वाले हैं। इसलिये धर्म के नाम पर विकृत, मिथ्या, ममभाव नहीं रखना चाहिये। धर्म गंथों के अध्ययन से पता चलता है कि उनमें साम्य है परन्तु अज्ञानीजन मनमाने अर्थ लगाकर मनुष्यों को एक दूसरे से अलग कर देते हैं-

सब सयानो की एकमत पाई।
पर अजान देखे रे जुदाई।।

समस्त धर्मो के अन्दर जो खूबियाँ, सुन्दर सार शब्द हैं, उन्हें मिला देने से एक मानव धर्म बनता है। सभी धर्मो के प्रति समभाव से ही यह विचार आते हैं।

धर्मशास्त्रों में धर्म का बहुत बड़ा महत्व है। धर्महीन मनुष्य को शास्त्रकारों ने पशु तुल्य बताया है। धर्म शब्द 'धृ' धातु से निकला है जिसका अर्थ है, धारण करना अथवा पालन करना होता है, जो समस्त भूखण्ड में कल्याण का कारण है वही धर्म कहलाता है। महाभारत में कहा गया - 'धर्म सनताहित: पुंसां धर्मश्चैवाश्रय: सताम् धर्माल्लोरुत्रयस्तात् प्रर्वता: सचराचरा:।'

अर्थात् धर्म ही सत्पुरूषों का हित है धर्म ही सत्पुरूषों का आश्रय है और सचराचर तीन लोकों में धम्र से चला जाता है। धर्म शब्द से मजहब या सम्प्रदाय जैसे हिन्दू, मुसलमान, इसाई, यहूदी, बौद्ध आदि समझे जाते हैं। परन्तु मानव धम्र से सभी धर्मो धार्मिक मतों का समावेश हो जाता है। न देश से बधा, न काल से, न जाति से न गोत्र से। चाहे हम भारत में जन्मे हो या अन्य किसी देश में, चाहे किसी का जन्म किसी भी शताब्दी में हुआ हो, कोई अन्तर नहीं पड़ता। मानव धर्म सबके लिए एक समान है।

मानव धर्म का मुख्य सूत्र है कि हमारी जो दिनचर्या सवेरे से शाम तक हम ऐसे कार्य करें जिससे किसी को कोई कष्ट न हो। दूसरा सूत्र है, हमारा कर्म हमें भी आगे चलकर सुखी बनाने वाला हो। भगवान मनु ने धर्म को दस लक्षण बताये है -
धृति: क्षमा दमोडस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रह: । धी: विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

धैर्य, क्षमा, इन्द्रियों का दमन, चोरी न करना, स्वच्छता, इन्द्रियों का विवेकपूर्वक शमन, शुद्ध बुद्धि, विद्या, सत्य और क्रोध न करना ये धर्म के दस लक्षण भगवन् मनु ने बताये हैं। सत्य बात यह है कि मनुष्य जाति के स्वाभाविक धर्म है। इससे किसी जाति, धर्म सम्प्रदाय को आपत्ति नहीं हो सकती है। मनुष्य में मनुष्यत्व का विकास इन्हीं धर्मो के आचरण से सम्भव है । जब मनुष्य इन धर्मो का पलन करना छोड़ देता है, उस समय उसकी अधोगति हो जाती है, जब जब मनुष्य जाति में इन धर्मो की प्रधानता थी तब

* दीनदयाल धाम कॉलोनी, रीवा (म.प्र.) भारत

विश्व में सुख चैन या शान्ति का साम्राज्य था। जब मनुष्यों में इन धर्मो से अलगाव होने लगा, हनन होने लगा तो मनुष्य अपने क्षुद्र स्वार्थ साधन के लिए परस्पर वैर-भाव प्रसव देते हुए हिंसक पशुओं की भांति खुंखार बनकर एक दूसरे को ग्रास करने के लिए तैयार है। इसलिए कहीं भी सुख शान्ति नहीं है। जिधर देखिए उधर ही देश के देश दु:ख के दावानल से दग्ध होते जा रहे हैं।

गरीब तो गरीब, अमीर भी अशान्त प्रतीत हो रहे है। ऊँचे-ऊँचे महलों में रहने वाले मील फैक्टिरियों के मालिक, बडे-बडे पदाधिकारी मन्त्री, सन्तरी, विज्ञान के नए नए अविष्कारक, युद्ध सामग्री का प्रचुर मात्रा में संग्रह करने वाले, दूसरे देशों को भयभीत करने वाले, कवि धर्मोपदेशक, सिर हिलाकर आंख मूंदकर सुनने वाले बड़ी बडी सभाओं में शब्दों के माणिक बना-बनाकर चिल्लाने वाले अन्याय से धन कमाकर व्यापारी बनने वाले आदि। इन सबकी हृदय गुहा में घुसकर देखें तो इन सबके अन्दर अशान्ति की धधकती ज्वाला से ये सब दग्ध मिलेंगे।

इसका मुख्य कारण है कि हम सबने उस परमशक्ति परमात्मा को भूलाकर अपनी प्रतिष्ठा मान-मर्यादा को धारण कर लिया है। मानव मात्र का तिरस्कार किया है। आज अगर हम उँचे पद या व्यापारी है तो यहां तक आने में हमें हमारे माता-पिता (गुरू) अध्यापकगण तथा हमारे हितैषी जन, हमारा समाज (आम आदमी) मानव मात्र का हमको सहयोग प्राप्त हुआ है, इसलिए हमको अहसानमन्द अति अनिवार्य है। मानव धर्म की एक और दृष्टि है। संसार में जितने मजहब है उन सबमें कुछ न कुछ ज्ञानपरक शिक्षा हो सकती है। इसलिए मानव धर्म उन गुप्तचरों की भांति खोजी दृष्टि रखते हुए जिनमें जो तथ्य अनिवार्य और ज्ञानवर्धक है निकालना चाहिए और उनका सत्य से सम्बंध जोडना चाहिए यही लक्ष्य अनिवार्य और उपयोगिताओं से न कि पागलपन या छिछोरी बातों से।

गगर चूंकि हर धर्म का आदमी दूसरे धर्मालवम्बी से चिढ़ता है और अपने से तुच्छ समझता है। ऐसा करने से हम अपना अपने स्वास्थ्य, अपने परिवार समाज, संस्था तथा अपने देश में भी शान्ति कायम रखने में असमर्थ हो जाएंगें। अभी हाल मे पश्चिम उत्तार प्रदेश के साम्प्रादायिक दंगे जीता जागता उदाहरण है।

इस मानव धर्म अर्थात् सम्पूर्ण (पृथ्वी) विश्व में विश्व बन्धुत्व की भावना को जागृत करने वाला एक ही अद्धैत धारण करने वाला मानव धर्म की मिशाल कायम करने रखने वाला निजानन्द सम्प्रदाय है। जिसमें चार सौ वर्ष पूर्व गुजरात मेकं अवतरित हुए महामति श्री प्राणनाथ जी ने इस तरह के मानव धर्म की कायमी करके सम्पूर्ण मानवों को एक सूत्र में बांधकर उस परब्रह्म परमात्मा की एक अद्धैत राह दिखाई है। जिसमें न किसी धर्म का बन्धन है न किसी समाज का एक ऐसी अनोखी राह बताई जिसमें सम्पूर्ण धर्मो सम्प्रदाओं पन्थ पैडों को एक सूत्र में बांध दिया है। आज के इस बिडम्बना पूर्ण संसार को श्री प्राणनाथ जी की इस राह की परम आवश्यकता है। श्री प्राणनाथ जी ने सभी धर्मो का एकीकरण किया है। जम्बूर, तोरेत, इंजीत (फुरकान), कुरान, वेदान्त, गीता भागवत आदि का ज्ञान आपस में मिलता है इनकी उन्होनें अपने अद्धैत खोजी वुत्ति से किया क्योंकि श्री प्राणनाथ जी के अन्दर स्वयं परमात्मा अपनी पांचों शक्तियों से विराजमान थे। उन्होनें अपनी ब्रह्मवाणी में सभी को समझाया।

विस्नु अजाजील फरिस्ता, ब्रह्मा मैकाइल। जबराईल जोश धनी का, रूद्र
तामस अजराईल। खु. 12/45

जिस समय ईसा सत्य की बात कर हरे थे उनके सामने यहूदी थे न की हिन्दू व चीनी। जिस अरब जाति को मोहम्मद अपनी सत्य अनुभूति समझा रहे थे, उसमें यूरोपीयन निवासी नहीं थें। जिस वर्ग को बुद्ध ने उपदेश दिया उसमें अरब और यहूदी शामिल नहीं थे, अर्थात जब इन सत्य ज्ञान की अनुभूति दी गयी वह एकदेशीय वर्ग की थी परन्तु आज सामने हिन्दू है, मुसलमान है, जैन, बौद्ध, सिक्ख, ईसाई सभी है आज हम और हमारे सुन्दरसाथ समस्त वर्गो को श्री प्राणनाथ जी की उस ब्रह्म वाणी की अनुभूति करा सकते है जिस गैव की वाणी को भी प्राणनाथ जी ने छठा दिन मोमिनों का कहकर हमें बख्शा है। सभी धर्मो तथा धर्मग्रन्थों का एकीकरण करके हमें स्वरूप साहिब अर्थात श्री कुलजम स्वरूप की वाणी को दिया है। जिससें मानव धर्म की अनुभूति समस्त भारत वर्ष समस्त विश्व को कराकर इस जागनी की बेला को अमृत बेला बना सकते है। इसलिए श्री महामति जी ने फरमाया है कि-

बोली जुदी सबन की, ओर सबका जुदा चलन।
सब उरझे नाम जुदे धर, पर मेरे तो कहना सबन।। सनंध 1/14

धर्मप्रेमियों, धार्मिक इतिहास जब हम देखते है तो धार्मिक ज्ञान बडी-बडी सकीर्णताओं से भरा पडा है। इतिहास साक्षी है कि मानव जाति ने संसार में धर्म के नाम पर सम्प्रदाय, पन्थ पैडों के नाम पर कितने वीभत्स, हृदय विदारक अतयाचार, अनाचार और पापाचार किए हैं। परन्तु समस्त धर्मो के प्रर्वतकों महापुरूषों ने यही माना है कि पूरे विश्व, समस्त ब्रह्माण्डों संचालन करने वाला सिर्फ एक ही सत्य-परमात्मा है किसी ने उसकों साकार किसी ने निराकार माना ओर इस सत्य को समझाने के लिए उन्होने अनेक उपदेश दिए। धर्मो के आधार पर तलवारों का सहारा लेकर धर्म परिवर्तन कराया जो मानव जाति पर कलंक है। उनक पर अत्याचार करना उनके मान्य बिन्दुओं को नष्ट करके उन्हें मौत के घाट उतार देना उनके तत्कालीन एक सहज वृत्ति हो गयी थी। भारत का मध्यकाल इस धर्मान्धता के कारण सामाजिक राजनैतिक एवं अध्यात्मिक झगडों की घटनाओं से कलंकित ही शोचनीय है

मध्यकाल की इस विभीषिका की अंधेरी गुफा में एक-एक सत्य को परम ज्योतिर्मय मशाल श्री प्राणनाथ जी स्वयं बुद्ध निष्कलंक अवतार ने जलाई। हिंसा चीत्कार में करूणा की ज्योति प्रज्वलित हुई। उन्हीं निष्कलंक बुद्ध जी ने इस पापाचार, दुराचार के कलंक को मिटाया और समझाया यखसम सबन का एक है, नाहि न दूसरा कोय। कलश हि. 14/34

बोली सबों जुदी कर दिया, ताथें समझ न परी किन।।
नाम सारे जुदे धरे, लई सबों जुदी रसम।

विश्व के सभी धर्मो में परस्पर एक-दूसरे धर्म की तुलना में अनेक समानताएँ है। परमात्मा, आत्मा और सुष्टि-फादर, सन एण्ड होली घोस्ट। लगभग एक जैसी शक्ति के नाम हैं। इसी प्रकार गीता के क्षर-अक्षर-उत्तम पुरूष वाणी के क्षर अक्षर अक्षरातीत शक्ति है। जो आत्माओं को लीला दिखाने के लिये अपने सत् या सत्तारूप अक्षर से जगत की रचना करवाती है और फिर ईश्वर अंश रूप से सृष्टि में प्रकट होकर उसका संचालन करती है। क्षर पुरूष-यह जगत हमेशा बनता और मिटता है, अविनाशी अक्षर कुटस्थ भाव से स्थिति है। उत्तम पुरूष इन दोनों से अलग है - उसकी प्रेरणा से ही अक्षर और क्षर लीला करते है। वहीं अंश रूप से ईश्वर पुरूष के रूप में लीला करता है और जगत के देवी देवताओं द्धारा सारे कार्य करवा रहा है।

द्धाविमौ पुरूषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
धर्मो उत्तम: पुरूषस्त्वन्य: परमात्मेत्युदढाहत:।
यो लोक त्रयमाविस्य विभर्त्यव्यय ईश्वरा।

कुरान शरीफ का कलिमा भी तीन भिन्न शक्तियों की बात करता है ला-

नहीं, इलाह–है–इल्लूलाह– इनसे परे परम सत्ता जिसका पैगाम का विवेचन है–

क्षर के परे, अक्षर के पारा।
तहि पुरूष का करो विचारा।
ननक एको सिमरये, जन्म मरण दुख जाये।
दूजा काहे सिमरिये, जन्मिये और मर जाये।।
परम पुरूष का मैं हूं दासा।
देखन आयो जगत तमासा ।।

अर्थात परम पुरूष परमात्मा एक ही है। उसी का ध्यान, चिन्तन, मनन और पूजन करा चाहिये। वही लीला के लिये, अपनी सत्ता से क्षर जगत बनाता है और अपनी आत्माओं के देखने के बाद मिटा देता है। गुरू नानक कहते है उसी पार पुरूष के ध्यान से मुक्ति मिलती है और आवागमन का चक्कर छूट जाता है। क्षर पुरूष के अंशरूप देवी–देवता सुख दिला सकते है मोक्ष नहीं।

महामति श्री प्राणनाथ तीन पुरूष का वर्णन इस प्रकार करते है:–

हद पार बेहद है, बेहद पार अक्षर।
अक्षर पार वतन हैं, जागिये इन घर।।

इस प्रकार अनेक धर्म ग्रंथो मे तीन पुरूषों की शक्तियों की चेतना के भिन्न स्तरों का वर्णन करते हुए, परम सत्ता को ही माने और पूजने के विधान है। उस परब्रह्म के स्वरूप ओर धाम का वर्णन महामति ने बडे स्पष्ट शब्द में किया है।

एक कह्या वेद कतेब ने, जो खुदा रहया सबन।
तनको सारों ढूँढियां, सो एक न पाया किन।।
एक बका सब कोई कहे, पर कोई न कहे बका ठौर।
सब कहें हमों न पाइया, कर कर थके दौर।।

महामति ने कहा कि वेद ओर कतेब यह तो बताते है कि परमात्मा का ठिकाना अखंड परमधाम है किन्तु यह स्पष्ट नहीं कर पाते किवह कहा है ? सबने यही कहा कि हम ढूंढ ढूंढ कर थक गये। वह अखंड धाम बका हमें मिला नहीं। महामति ने उसे स्पष्ट रूप से प्रकट किया। सांसारिक शब्दों मे परमधाम का बडा ही हृदयग्राही और मार्मिक वर्णन कुलजम स्वरूप के परिक्रमा ग्रंथ में हैं ध्यान और चितवन के लिये यह वर्णन मन को इधर उधर भटकने से रोक कर एकाग्र करता है। इस वर्णन से गौरवान्वित होकर आत्मा परमधाम की ओर उन्सुख हो जाती है। महामति ने खुलासा ग्रंथ में यह भी बताया कि इस नश्वर संसार के पार अविनाशी सत्ता अक्षर ब्रह्म की है और उसके पार पूर्ण सत्ता अक्षरातीत परब्रह्म का धाम अर्थात परमधाम है।

परब्रह्म के जगत में प्रकट होने के संकेत भी अनेक धर्मग्रंथो में हैं उनमे ंभी समय, उनके अवतरण के कारण एवं कार्य या लीली के विषय मे जो वर्णन है, उसमें भी साम्य देखा जा सकता है।

हिन्दू धर्म ग्रंथ मे भविष्य पुराण में उल्लेख है कि निष्कलंक बुधावतार होगा। उस समय ग्यारहा मास का वर्ष होगा और धूमकेतु पुच्छल तारा दिखायी देगा। हरिवंश पुराण में भी परम सत्ता के प्रकटीकरण के विषय में कहा गया है

अभाविनो भविष्यन्ति मुनयाग ब्रह्मरूपिणा:।
उत्पन्ना ये कृतयुगे प्रधान पुरूषाश्रया:।
कथा योगेन तान्सर्वाण पूज्यष्यन्ति मानवा:
यस्य पूजा प्रभावेन जीवसृष्टि समुद्धर:।।

अर्थात कलियुग में ब्रह्म स्वरूप मुनिजन उत्पन्न होंगें। वे परब्रह्म स्वरूप से आश्रित होगें। उनकी कथाओं को सुनकर संसार के जीव उनकी पूजा करेगें। फलस्वरूप वे आवागमन के चक्कर से मुक्त हो जायेंगे।

मुसलमानों के धर्मग्रंथ –कुरान और हदीसों मे कहा गया है कि ओर असकी साक्षी जबूर, तौरेत और इंजील भी देते है कि अन्तिम दिन या दौर मे मसीहा इमाम मेंहदी का आगमन होगा। इसका समय सूरा अल फज्र में मुहम्मद साहब के बाद दसवीं, ग्यारवीं, और बांरहवीं सदी में बताया गया। बादशाह औरंगजेब के युग मे वही समय था। महामति ने वेद कतेब ग्रंथो में साम्य दिखाकर, एक विश्वधर्म की नींव रखी और स्वयं में इमाम मेंहदी के प्रकटीकरण की घोषणा की।

सिख धर्म प्रवर्तक गुरू नानक जी की वाणी में भी कहा गया है–

बीतेगा उत्तलीसा दगेगा चालीसा,
तब होरी मर्द मर्द का चेला।
नानक गुरू दिखावे साई, सच सच दी बेला।

उस समय प्रकट होने वाले ब्रह्ममुनियों के लिये उन्होनें कहा–

नानक ब्रह्मजानी कउ सदा नमक सकाऊ
ब्रह्मगिआनी की शोभा ब्रह्मगिआनी बनी
नानक ब्रह्मगिआनी सरब दा धनी।

विक्रम सम्वत् 1735 में ग्यारह मास का वर्ष था और धूमकेतु भी दिखायी दिया था। हरिद्वार कुम्भ मेले में हुए धार्मिक वार्तालाप शास्त्रार्थ का सही वर्णन महामति के जीवन वृत्तों बीतकों मे स्पष्ट रूप से मिलाता है। उस समय सर्वधर्म आचार्यो ने महामति प्राणनाथ जी को निष्कलंक बुद्ध की पदवी से विभूषित किया। भविष्य पुराण की भविष्य वाणी को सार्थक किया तथा गुरूनानक जी की वाणी कि उन्तालीस का साल बीतने और चालीसवां लगने पर महान गुरू शिष्य का मिलन होगा उन्होनें प्रभु से उस समय के दर्शन कराने का भाव प्रकट किया था।

संत गुरू गोविन्द सिंह जी ने भी कुछ ऐसा ही संकेत दिया। उन्हीं के युग में महामति श्री प्राणनाथ जी के संरक्षण में महाराजा छत्रसाल ने मध्यप्रदेश में बुंदेलखण्ड राज्य की स्थापना की। दक्षिण में शिवाजी द्वारा स्थापित मराठा साम्राज्य की डाली गयी नींव को कुद समय तक मराठों ने अपने रक्त से सींचा तभी शायद गुरू गोविंद सिंह ने कहा होगा ।

उठ गई मलेच्छां दी, कर कूड़ पसारा।

असत्य परिस्थापित मल्छ राज्य का अंत हुआ। संसार में सभी प्रकार के झगडे मिटोन वाली सत्ता महामती श्री प्राणनाथ के रूपमें प्रकट हुई। साहेब आए इन जिमी, कारज करने तीन।

सबका झगडा मेट के, या दुनिया या दीन।।

धर्म, जाति, स्वार्थ के झगडों में संतप्त मानवता को त्राण मिला इस तरह संसार के अनेक धर्म ग्रथों में पूणभ्रम परमात्मा के संकेत प्राप्त होते है इस सभ्यता को ज्ञान चक्षुक पुन: से देखा व समझा जा सकता है अनेक धर्म चार्यो एवं महान विभूतियों ने देशकाल वातावरण के अनुसार मानव को सही राह दिखाने के लिए जो कुछ कहां उन मे भी बडा साम्य दिखाई देता है इसा मसीह ने कहां तू अपने प्रति जिस प्रकार के व्यवहार के अपेक्षा रखता है। वेसा ही वर्ताव अन्य लोगों से कर। कन्फ्यूशियस के शब्द भी वैसे ही है। अपने प्रति जिस व्यवहार की तुझे अपेक्षा न हो वैसा व्यवहार किसी के प्रति नहीं करना चाहिए। महात्मा गांधी के शब्दों मेंअकूत प्रेम से ही विश्व में राज्य स्थापित हो सकता हैं सभी धर्म ग्रंथों में कुछ कुछ बातें भिन्न दिखाई देती है इन सद भावना और सही ज्ञान से यह बात समझ मे आती है कि विभिन्न धर्म प्रवर्तकों ने जो कुछ भी कहा वो पूरी मानवता के भले के लिए ही है विभिन्न

धर्मचार्य के युग में परिस्तिथियां भिन्न थी। किन्तु सही ढंग से उनकी वाणियों के सम्यक अध्ययन से पता चलता है कि सब में धर्मभाव एक ही है कि मानव बुराईयों को छोडकर प्रेमभाव से रहे तो उसे परब्रह्म की निकटता प्राप्त होती है प्रेम में ही परमात्मा हैं जो प्रेम भरे आचारण से मिलते हैं।

एकं सद् विप्रा: बहुधा वदन्ति

अर्थात सत्य स्वरूप पूणब्रह्म परमात्मा तो एक ही है किन्तु विद्धान अलग अलग ढंग से उसका वर्णन करते हैं। संत कबीर ने कहा

न्यारे न्यारे बरतन भये, पानी सब में एका।।

इस दृष्टि से देखें तो धर्म ग्रंथों में समता के कई सूत्र पकड में आ जाते है सभी धर्म गंन्थों का उद्देश्य आध्यात्मिक और नैतिक दृष्टि से मानव जीवन को उन्नत बनाना है। सबने परम तत्त्व के प्रति उन्नत भाव, ईश्वरीय शक्तियों एवं अवतारों के प्रति सम्मान धर्म ग्रंथ ईश्वर प्रेरित है ये विश्वास तथा नैतिक आचरण के लिये आग्रह पाया जाता है भौतिक सम्पत्ति से निर्मोही को ही आध्यात्मिक सम्पत्ति प्राप्त होती है प्रार्थना पूजा के प्रति आस्था प्रारबब्ध को अपने कर्मो का फल मानना, सत्य की जय औ असत्य की पराजय का हढ विश्वास इत्यादि असंख्य बातें उनमें एकता दर्शाने वाली हैं। कोई भी धर्म किसी देश जाति या वर्ग के लिये नहीं है वह सम्पूर्ण मानवता का मार्गदर्शन करता है। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि भिन्न भिन्न धर्मो के बाह्य स्वरूप भले ही भिन्न प्रतीत हो उनमें गहरी अन्तर की भाषा में एकता देखी जा सकती है।

जर्मन विद्धान मैक्समूलर ने वेदों का अनुवाद करने के लिये संस्कृत भाषा का अध्ययन किया था। मुगल कुमार दाराशिकोह ने वेंदो तथा उपनिषदों का अरबी भाषा मे अनुवाद किया। भिन्न भिन्न धर्म ग्रंथो के अध्ययन से विद्धानों को पता चला कि सभी धर्मो का उद्देश्य मानव उत्थान ही हैं महामति ने विभिन्न धर्म ग्रंथो के सरतत्व का समन्वय करके विश्व धर्म की बुनियाद रखी। शहंशाह अकबर की दीने इलाही भी कुछ ऐसा ही प्रयास था। सभी धर्म ग्रंथों मे मानव के लिये एक ही पूर्णब्रह्म परमात्मा के पवि? संदेश है जिन्हें पारखी नजर से ही देखा जा सकता है। धर्म के नाम पर संघर्ष युद्ध करने वाले बर्बर शैतान के दास है। महामति ने कहा

जो कुछ कह्मा कतेब ने, सोई कह्मा वेद।
सब बंदे एक साहेब के, पर लडत बिना पाए भेद।।

तातपर्य यह कि निष्पक्ष भाव से दीर्घ दृष्अि से किया गया विभिन्न धर्मो का अध्ययन समभाव पेदा करता है ममभाव को भी उसी में एकाकार कर देता है। सर्वधर्म समभाव ही सद्भाव उत्पन्न करता है जिससे मानव मे परस्पर प्रेम और आदर उत्पन्न होता है वसुवैध कुटुम्बकम का नारा भारत की इसी मन स्थिति और परस्पर सहिष्णुता को प्रकट करता हैं। महामति वाणी इस ओर यथार्थ भूमिका निभा रही है। समग्र संसार को प्रेम भाव में स्थित करके संसार में ईश्वरीय राजय लाने का यही तो एक मात्र उपाय है। महामति कहते है।

छोड गुमान सब मिलती,
ए जो सकल जहान।
जत पात न भांत कोई,
एक खान पान एक गान।।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

उदयपुर जिले के आदिवासी एवं गैरआदिवासी किशोर विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति अभिवृति का तुलनात्मक अध्ययन

श्रीमती श्वेता वैष्णव * डॉ. प्रेमलता गाँधी **

प्रस्तावना – पर्यावरण का मानव के साथ अनन्त काल से घनिष्ठ संबंध रहा है और अपने ही अस्तित्व के लिए भविष्य में भी यही संबंध रहेगा क्योंकि मानव का जन्म और मृत्यु पर्यावरण से ही जुड़ा हुआ है। उसके जीवन का प्रत्येक कार्य पर्यावरणीय संसाधनों पर आधारित है चाहे वह भौतिक हो या आध्यात्मिक, इसलिए भविष्य में अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए पर्यावरण के उचित प्रबंधन की शैक्षिक व सह शैक्षिक योजना का अनुकूल क्रियान्वयन महत्तवपूर्ण है।

आज पर्यावरण की समस्या से कोई भी अपरिचित नहीं है। विश्व स्तर पर इस समस्या के लिए किए जानेवाले प्रयासों में सब से बड़ा योगदान क्षेत्र शिक्षा को चुना गया है। अत: इस दिशा में मनुष्य की जीवन शैली की पुनर्सरचना की आवश्यकता अनुभव की जाती है और यह कार्य बचपन से ही आरंभ कर दिया जाना चाहिए। इसलिए प्राथमिक स्तर पर से ही पर्यावरण शिक्षा को महत्त्वपूर्ण माना गया है। यह शिक्षा भारत देश में भी सर्वत्र अनिवार्य रूप से प्रचलित है। किन्तु प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर दी जाने वाली पर्यावरण शिक्षा पर्यावरण सुधार के उद्देश्यों में कहाँ तक सफल हो रही है, इसका अवलोकन करना भी आवश्यक है। साथ ही यह बात भी महत्त्वपूर्ण है कि पर्यावरण शिक्षा प्रदान करने के लिए किस तरह की योजनाएँ बनाई जाती हैं, उनका क्रियान्वयन कैसे होता है, उनका प्रभाव क्या होता है आदि का पुनरीक्षण करना भी महत्त्वपूर्ण है, ताकि उनकी सार्थकता ज्ञात की जा सके।

इसीलिए आधुनिक विकास की दौड़ में मानव को प्रकृति के साथ और जीवन के साथ एक अटूट संबंध स्थापित करने के लिए अपनी अभिवृत्ति को बदलना पड़ेगा, तभी वह जीवित रह सकता है। इसीलिए आवश्यक है कि प्रकृति द्वारा प्रदत्त निधि का सदुपयोग मानव अपने विवेकपूर्ण तरीके से करें; जिससे आने वाली पीढ़ियों को उसे सुरक्षित रूप में सौंपा जा सके। इसी क्रम को बनाये रखने की चेतना जागृत की जाये और यह चेतना बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि छात्रों को पर्यावरण के बारे में शिक्षा दी जाए, जिससे मानव जाति के भविष्य को नई दिशा प्रदान की जा सके।

शर्मा जे. बी. (2011) ने 'ए डवलपमेन्ट ऑफ साईन्स एजुकशन फॉर अपर प्राइमरी क्लासेज वीथ बेस्ट ऑन द एन्वायीमेन्टल एप्रोच' शीर्षक से शोध अध्ययन किया। जिसमें मुख्य निष्कर्ष के रूप में यह पाया कि उच्च प्राथमिक स्तर पर न केवल छात्रों की पर्यावरण अभिवृति पर प्रभाव डालने के लिए बल्कि छात्रों में पर्यावरण अध्ययन के महत्व के लिए अन्तर्दृष्टि व कौशल का विकास करने के लिए पर्यावरण शिक्षा जरूरी है। विद्यालय के बाहर का पर्यावरण शिक्षा के क्रियात्मक पक्ष को पूरा करने के उद्देश्य से बहुत महत्वपूर्ण है। साथ ही यह भी पाया कि उच्च प्राथमिक स्तर के विषय का पर्यावरण से कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

देवपुरीया आर. पी. (2004) के शोध विषय 'मध्यप्रदेश के विद्यालयों में पर्यावरणीय एवं परम्परागत विधि द्वारा विज्ञान शिक्षण का तुलनात्मक अध्ययन' का उद्देश्य कक्षा पाँचवी, आठवीं, नवीं तथा दसवीं के विद्यार्थियों का विज्ञान के प्रति पर्यावरणीय एवं परम्परागत विधि द्वारा अध्ययन से प्राप्त संज्ञानात्मक निष्पति की तुलना करना तथा उक्त दोनों विधि के शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों में पर्यावरणीय जागरूकता तथा अभिवृत्ति की तुलना करना था। निष्कर्ष के रूप में उन्होने पाया कि प्रयोगात्मक समूह के कक्षा पाँचवीं, आठवीं, नवीं तथा दसवीं के विद्यार्थियों का पर्यावरणीय विधि से शिक्षण के कारण उच्च उपलब्धि अंक प्राप्त होते है तथा प्रयोगात्मक समूह के प्राथमिक विद्यालय के विद्यार्थी पर्यावरणीय जागरूकता के प्रति अत्यधिक सुधार प्रदर्शित करते है। साथ ही "t" के प्राप्तांकों से स्पष्ट होता है कि प्रयोगात्मक समूह के अध्यापकों की पर्यावरणीय विधि से विज्ञान शिक्षण के प्रति अत्यधिक उच्च सकारात्मक अभिवृत्ति पायी गयी।

राव बी. एन. (2002) ने अपनी पुस्तक 'फण्डामेन्टल ऑफ पापुलेशन ज्योग्राफी' में शहरों में प्रदूषण बढ़ने का कारण अधिक जनसंख्या को माना है। उनके अध्ययन का निष्कर्ष यह कि जनसंख्या का घनत्व अधिक होने से पेयजल खाद्यान्न व अन्य समस्याएँ आती है। यह घनत्व शहर के मध्य भाग में अधिक होने से वहाँ पर ध्वनि प्रदूषण भी चरम सीमा पर होते है।

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य उदयपुर जिले के आदिवासी एवं गैरआदिवासी किशोर विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति अभिवृति को ज्ञात करना हैं।

इस हेतु राजस्थान के उदयपुर संभाग की कुल सात पंचायतों (झाड़ोल, सलूम्बर, कोटड़ा, धरियावद, खेरवाड़ा, गिर्वा और सराड़ा) से कुल 700 (प्रत्येक पंचायत से 100-100) किशोर (माध्यमिक स्तर के) विद्यार्थियों (350 छात्र एवं 350 छात्राओं) का चयन इस प्रकार से किया गया कि प्रत्येक संभाग से 50 विद्यार्थी आदिवासी एवं 50 विद्यार्थी गैर आदिवासी थे। पंचायतों के विभिन्न माध्यमिक विद्यालयों से इन विद्यार्थियों को चयनित किया गया। इस प्रकार 175 छात्र एवं 175 छात्राएँ आदिवासी तथा 175 छात्र एवं 175 छात्राएँ गैर आदिवासी विद्यार्थियों का चयन न्यादर्श के रूप में किया गया।

उपकरण के रूप में एक स्वनिर्मित प्रश्नावली का निर्माण कर चयनित

*शोधकर्त्री, शिक्षा संकाय, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड-टु-बी विश्वविद्यालय) प्रतापनगर, उदयपुर (राज.) भारत
** शोध निर्देशिका, वरिष्ठ सहायक आचार्य, लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय (सी.टी.ई.), डबोक, उदयपुर (राज.) भारत

न्यादर्शो पर प्रशासित किया गया। तत्पश्चात् प्राप्त आँकड़ों का सारणियन एवं सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया।

शोध में निम्नलिखित परिकल्पना को शोध के दौरान काम में लेने का प्रयास किया हैं –

1. आदिवासी एवं गैर आदिवासी किशोर विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
2. अध्ययन क्षेत्र के छात्र एवं छात्राओं में पर्यावरण के प्रति अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

सारणी 1 : आदिवासी किशोर विद्यार्थियों एवं गैर आदिवासी किशोर विद्यार्थियों के मध्य पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति संबंधी तुलनात्मक विश्लेषण

	आदिवासी विद्यार्थीगैर	आदिवासी विद्यार्थी
मध्यमान	54.32	40.66
मानक विचलन	4.562	6.741
N	350	350
मध्यमान अन्तर	13.657	
df	348	
टी मूल्य	31.391	
सार्थकता	0.01 स्तर पर सार्थक	

सारणी 1 से स्पष्ट होता है कि आदिवासी किशोर विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति तुलनात्मक रूप से अधिक पाई गई। सारणी का विश्लेषण करने पर मध्यमान अन्तर 13.657 तथा 'टी' का मान 31.391 प्राप्त हुआ हैं जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक हैं एवं यह प्रदर्शित करता हैं कि आदिवासी किशोर विद्यार्थियों एवं गैर आदिवासी किशोर विद्यार्थियों के मध्य पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक रूप से अन्तर होता हैं।

सारणी 2 : कुल किशोर छात्रों एवं कुल छात्राओं के मध्य पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति संबंधी तुलनात्मक विश्लेषण

	कुल छात्र	कुल छात्राएँ
मध्यमान	47.73	47.25
मानक विचलन	8.387	9.451
N	350	350
मध्यमान अन्तर	0.486	
df	348	
टी मूल्य	0.719	
सार्थकता	असार्थक	

सारणी 2 से स्पष्ट होता है कि कुल छात्रों में पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति तुलनात्मक रूप से अधिक पाई गई। सारणी का विश्लेषण करने पर मध्यमान अन्तर 0.486 तथा 'टी' का मान 0.719 प्राप्त हुआ हैं जो कि असार्थक हैं एवं यह प्रदर्शित करता हैं कि कुल छात्रों एवं छात्राओं के मध्य पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक रूप से कोई अन्तर नही होता हैं।

सारणी संख्या 3 से स्पष्ट होता है कि विभिन्न समूह (आदिवासी तथा गैर आदिवासी) के विद्यार्थियों के पर्यावरण चर हेतु ऋमान 988.614 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक हैं एवं यह प्रदर्शित करता है कि पर्यावरण के प्रति अभिवृति में विद्यार्थियों के विभिन्न समूह एक दूसरे से सार्थक रूप से भिन्न हैं।

सारणी के अवलोकन से यह भी स्पष्ट होता हैं कि छात्र एवं छात्राओं के पर्यावरण चर हेतु ऋमान 1.250 प्राप्त हुआ जो कि असार्थक हैं एवं यह प्रदर्शित करता है कि पर्यावरण के प्रति अभिवृति में छात्र एवं छात्रा एक दूसरे से सार्थक रूप से भिन्न नहीं हैं। समूह एवं लिंग की अर्न्तक्रिया में प्रतिबल चर हेतु ऋमान 3.016 प्राप्त हुआ जो कि असार्थक हैं।

निष्कर्ष के रूप में यह प्राप्त हुआ कि आदिवासी किशोर विद्यार्थियों एवं गैर आदिवासी किशोर विद्यार्थियों के मध्य पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक रूप से अन्तर होता हैं। जो यह प्रदर्शित करता है कि चयनित प्रथम परिकल्पना असत्य सिद्ध हुई।

इसके अतिरिक्त यह भी निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि छात्रों एवं छात्राओं के मध्य पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक रूप से कोई अन्तर नही होता हैं। जो यह प्रदर्शित करता है कि चयनित द्वितीय परिकल्पना सत्य सिद्ध हुई। आदिवासी एवं गैर आदिवासी छात्र–छात्राओं में पर्यावरण के प्रति अभिवृति का प्रसरण विश्लेषण भी प्राप्त निष्कर्षों की पुष्टि करता हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. देवपुरिया आर.पी. (2004) 'मध्यप्रदेश के विद्यालयों में पर्यावरणीय एवं परम्परागत विधि द्वारा विज्ञान शिक्षण का तुलनात्मक अध्ययन', पी.एच.डी. देवी अहिल्या विश्वविद्यालय,(म.प्र.)
2. गर्ग, बी. एल. : पर्यावरण प्रकृति और मानव, अभिनव प्रकाशन, अजमेर
3. नायाब, सोलेह मोहम्मद : 'पर्यावरण प्रदूषण एक चुनौती' सन्मार्ग प्रकाशन, 16 पू. बी. बैंगलोर रोड, जवाहर नगर, दिल्ली
4. पुरोहित एस.एस व कुमारी अर्चना : 'पर्यावरण', अजन्ता बुक, सेक्टर–4, जय नारायण व्यास कॉलोनी, बीकानेर – 1992
5. राव बी. एन. (2002), 'फन्डामेन्टल ऑफ पोपुलेशन ज्योग्राफी', देव प्रकाशन, मन्दसोर, (म.प्र.)।
6. Sharma J. B. (2011), A Developmet of Science Education For Upper Primary classes with Best of the environmental approach, Report of SIERT, Govt. of Rajasthan
7. शर्मा मधुसूदन (1986) : 'पर्यावरण शिक्षा क्या ? क्यों ? कैसे ?', चौधरी प्रिन्टर्स एण्ड स्टेशनर्स, उदयपुर
8. उपाध्याय डॉ. राधावल्लभ : 'पर्यावरण शिक्षा', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

सारणी 3 : आदिवासी एवं गैर आदिवासी छात्र–छात्राओं में पर्यावरण के प्रति अभिवृति का प्रसरण विश्लेषण

प्रसरण स्त्रोत	योग का वर्ग	df	माध्य वर्ग	F	सार्थकता
समूह(आदिवासी/गैरआदिवासी)	32640.571	1	32640.571	988.614	0.01 स्तर पर सार्थक
लिंग(छात्र/छात्रा)	41.286	1	41.286	1.250	असार्थक
अन्तर्क्रिया	99.566	1	99.566	3.016	असार्थक
त्रुटि	22979.486	696	33.017		
योग	55760.909	699			

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं की वस्तु स्थिति के प्रति शिक्षक एवं अभिभावक का अभिमत

चेतना भारद्वाज * डॉ. अनीता कोठारी **

शोध सारांश – प्रस्तुत अनुसंधान कार्य का मुख्य लक्ष्य अनुसंधित्सु ने राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं की वस्तु स्थिति के प्रति शिक्षक एवं अभिभावक के अभिमत का अध्ययन करना था। शोधकार्य के निर्धारित समय सीमा को देखते हुए अपने शोधकार्य के लिए कुल 200 शिक्षक एवं 100 अभिभावक का चयन उदयपुर एवं राजसमन्द जिले से किया गया। दत्त संकलन हेतु मानकीकृत उपकरण की अनुलबधता में स्वनिर्मितअभिमतावली का प्रयोग किया गया था। प्रमापनी से प्राप्त दत्तों को विश्लेषण हेतु सारणीयन करते हुए आँकड़ो का विश्लेषण सांख्यिकी प्रविधियाँमध्यमान एवंप्रतिशत मध्यमान सांख्यिकी का प्रयोग किया गया था। निष्कर्ष स्वरूप पाया गया किराजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं की वस्तु स्थिति एवं क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं के प्रति शिक्षक एवं अभिभावक के सकारात्मक अभिमत पाया गया है।

शब्द कुंजी – नामांकन, ठहराव, वस्तु स्थिति।

प्रस्तावना – राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव के लिए समय –समय पर राज्य सरकार द्वारा कई योजनाएँ चलाई गई जिन्होने प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित किया है उनमें से प्रमुख योजनाएँ इस प्रकार से है:–

1. मीना मंच
2. अध्यापिका मंच
3. मिड डे मिल्क
4. साक्षर भारत मिशन
5. राजीव गाँधी डिजिटल विद्यार्थी योजना
6. राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान
7. देव नारायण छात्रा स्कूटी वितरण एंव प्रोत्साहन योजना
8. चाइल्ड ट्रैकिंग सिस्टम
9. सम्बलन कार्यक्रम
10. लर्निंग गारन्टी स्कूल कार्यक्रम
11. पढो राजस्थान कार्यक्रम
12. सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन
13. शिक्षाकर्मी परियोजना
14. जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम
15. सर्व शिक्षा अभियान द्वारा संचालित योजनाएँ

अ. कम्प्यूटर एडेड लर्निंग प्रोगाम
ब. राजस्थान एज्यूकेशन इनिशिएटिव
स. स्कूल चले हम

16. बाल गणेश चिरंजीवी स्वास्थ्य योजना
17. ट्रांसपोर्ट वाउचर योजना
18. महिला शिक्षण विहार
19. शिक्षा आपके द्वार योजना
20. मिड डे मील योजना
21. भामाशाह सम्मान योजना
22. नि:शुल्क पाठ्य पुस्तक वितरण योजना
23. लोक जुम्बिश परियोजना
24. प्रवेशोत्सव कार्यक्रम
25. शाला जल स्वच्छता एवं स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रम
26.. शिक्षक का अपना विद्यालय योजना
27. चल विद्यालय योजना

इस तरह प्रारम्भिक शिक्षा के विकास हेतु सरकार द्वारा निरन्तर प्रयास किए जा रहे है फिर भी आँकड़ो से यह कहा जा सकता है कि आज भी राजकीय विद्यालय में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन व ठहराव की स्थिति दयनीय है। उक्त परिस्थितियों से प्रभावित होकर शोधार्थी ने अपना शोध आलेख उक्त विषय पर प्रस्तुत करने का विचार बनाया है।

उद्देश्य – शोधार्थी द्वारा निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये गये थे जो इस प्रकार से है:–

शोधकर्त्री ने अपने अनुसंधान कार्य को समय सीमा में पूर्ण करने हेतु निम्नलिखित उद्देश्यों को निर्धारित किये जो इस प्रकार से है :–

1. राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं का पता लगाना।
2. राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं की वस्तु स्थिति के प्रति शिक्षकों के अभिमत का अध्ययन करना।

* रिसर्च स्कोलर, जर्नादनराय नागर राजस्थान विद्यपीठ (डीम्ड- टू-बी विश्वविद्यालय) उदयपुर (राज.) भारत
** पी.एच.डी गाईड, जर्नादनराय नागर राजस्थान विद्यपीठ (डीम्ड- टू-बी विश्वविद्यालय) उदयपुर (राज.) भारत

3. राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं की वस्तु स्थिति के प्रति अभिभावकों के अभिमत का अध्ययन करना।
4. राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं का पता लगाना।
5. राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं के प्रति शिक्षकों के अभिमत का अध्ययन करना।
6. राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं के प्रति अभिभावकों के अभिमत का अध्ययन करना।
7. राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को बढ़ाने हेतु आवश्यक सुझाव प्रस्तुत करना।

अनुसंधान का विधिशास्त्र :

1. प्रस्तुत शोध में शोधार्थी को *'राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं की वस्तु स्थिति एवं क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं के प्रति शिक्षक एवं अभिभावक का अभिमत का अध्ययन करना था।'* जो कि सर्वे विधि द्वारा ही संभव है इसकी प्रकृति को देखते हुए शोधार्थी ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया था।
2. दत्त संकलन हेतु मानकीकृत उपकरण की अनुलब्धता में स्वनिर्मित अभिमतावली का प्रयोग किया गया था।
3. संकलित दत्तों की सारणीयन का विश्लेषण सांख्यिकी प्रविधि मध्यमान एवं प्रतिशत मध्यमान के द्वारा विश्लेषण किया गया।
4. शोधकार्य के लिए कुल 200 शिक्षक एवं 100 अभिभावक का चयन उदयपुर एवं राजसमन्द जिले से किया गया।

सारणीयन एवं विश्लेषण :

सारणी संख्या -1 : राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं की वस्तु स्थिति के प्रति शिक्षकों के अभिमत का प्रतिशत मध्यमान के आधार पर विश्लेषण

क्र.	आयाम	प्रतिशत मध्यमान	वरीयता क्रम
1.	प्रवेशोत्सव कार्यक्रम	24.70	प्रथम
2.	सम्बलन कार्यक्रम	16.68	चतुर्थ
3.	नि:शुल्क पाठ्य पुस्तक योजना	22.19	द्वितीय
4.	मिड-डे-मील	19.91	तृतीय
5.	सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन	16.52	पंचम

विश्लेषण एवं व्याख्या - राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं की वस्तु स्थिति के प्रति शिक्षकों का अभिमत सकारात्मक सबसे अधिक प्रवेशोत्सव कार्यक्रम तथा सबसे कम सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति पाया गया।

सारणी संख्या -2 : राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं की वस्तु स्थिति के प्रति अभिभावकों के अभिमत का प्रतिशत मध्यमान के आधार पर विश्लेषण

क्र.	आयाम	प्रतिशत मध्यमान	वरीयता क्रम
1.	प्रवेशोत्सव कार्यक्रम	21.03	तृतीय
2.	सम्बलन कार्यक्रम	18.13	चतुर्थ
3.	नि:शुल्क पाठ्य पुस्तक योजना	21.25	द्वितीय
4.	मिड-डे-मील	22.02	प्रथम
5.	सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन	17.56	पंचम

विश्लेषण एवं व्याख्या - राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं की वस्तु स्थिति के प्रति **अभिभावकों** का अभिमत सकारात्मक सबसे अधिक मिड डे मील तथा सबसे कम सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के प्रति पाया गया।

वर्तमान में प्रासंगिकता - प्रस्तुत शोध आलेख से राजकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के नामांकन एवं ठहराव को प्रभावित करने वाली सरकारी योजनाओं की वस्तु स्थिति को जानकर विद्यालय में शिक्षक एवं अभिभावक नामांकन एवं ठहराव को बढ़ाने में अपना योगदान कर सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल जे.सी. (1995) भारत में माध्यमिक शिक्षा नई दिल्ली विद्याविहार।
2. अग्निहोत्री, आर. (1989) भारतीय शिक्षा की वर्तमान समस्याएं मेरठ : सूर्या पब्लिकेशन।
3. ढ़ोढीयाल, एस.एन., फाटक, ए.बी. (2003) शैक्षिक अनुसंधान का विधिशास्त्र जयपुर: राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
4. गुप्ता, एस.पी., गुप्ता अल्का (2007) : उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन।
5. कौल, लोकेश (1998) शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली, दिल्ली विकास पब्लिशिंग हाउस।

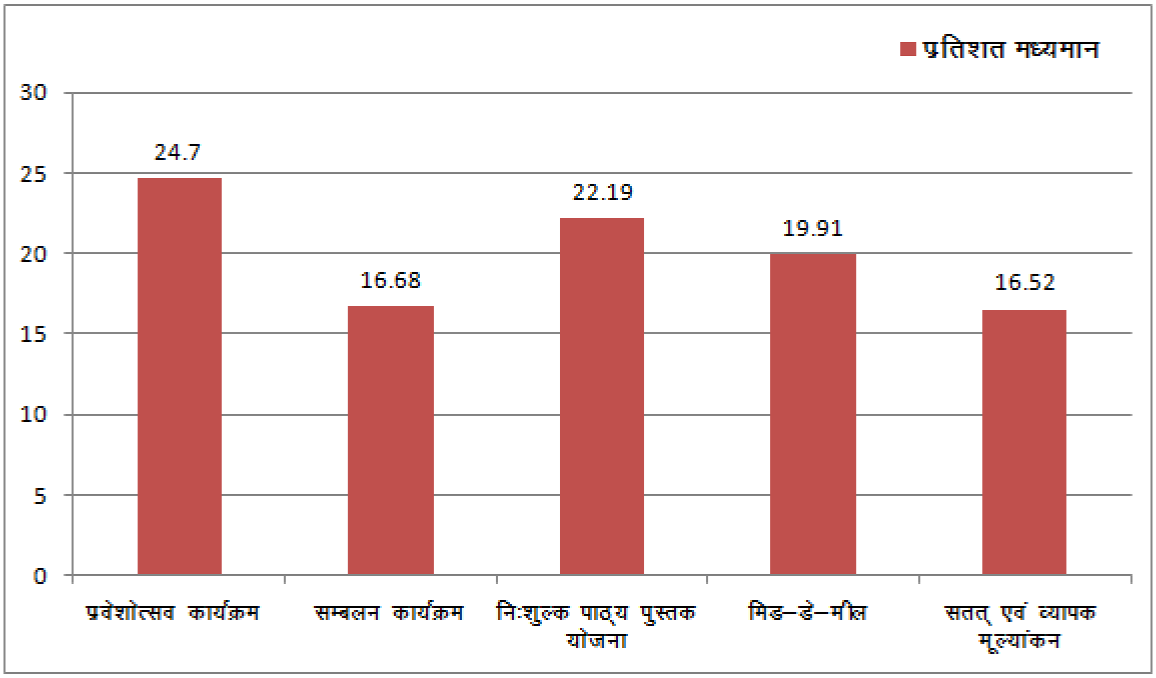
प्रतिशत मध्यमान
30
25
20
15
10
5
0
24.7
16.68
22.19
19.91
16.52
प्रवेशोत्सव कार्यक्रम
सम्बलन कार्यक्रम
निःशुल्क पाठ्य पुस्तक योजना
मिड–डे–मील
सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन

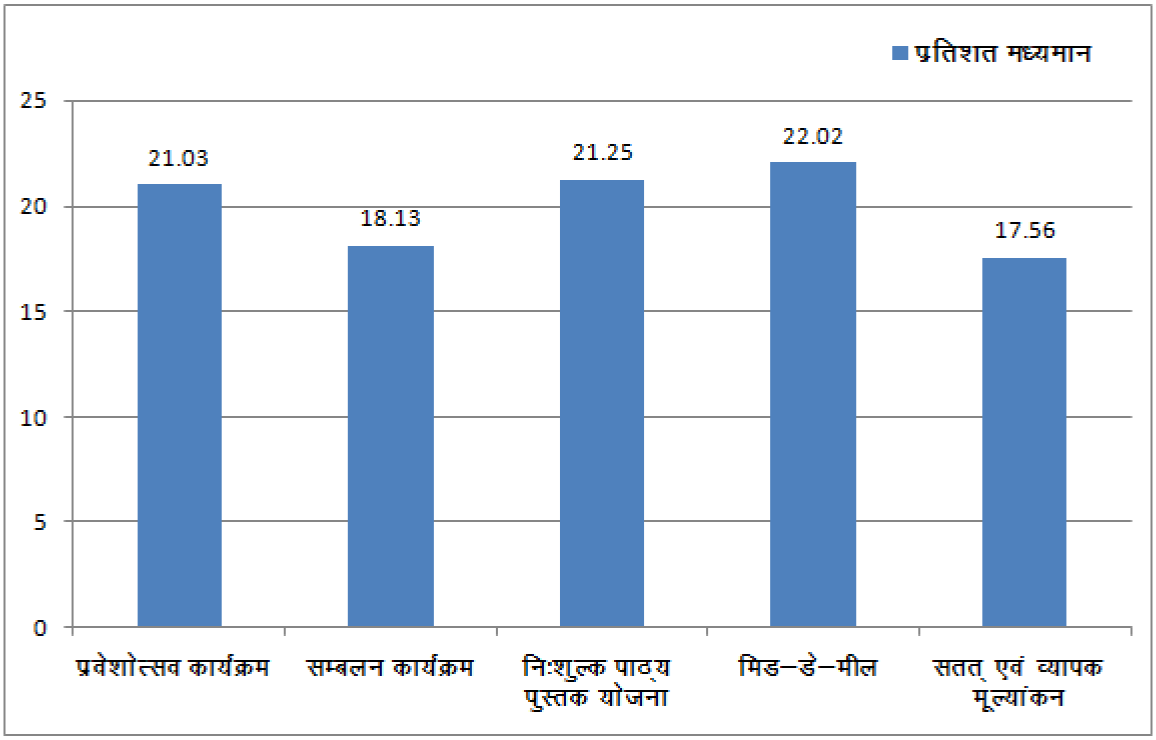
प्रतिशत मध्यमान
25
20
15
10
5
0
21.03
18.13
21.25
22.02
17.56
प्रवेशोत्सव कार्यक्रम
सम्बलन कार्यक्रम
निःशुल्क पाठ्य पुस्तक योजना
मिड–डे–मील
सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन

****

सिम्बोपोगोन सिट्रेटस ट्राईगोनेला फीनमग्रीकम एवं ओसिमम सेंकटम के प्राथमिक पादपरासायनिक और कुल फीनालिक मात्रा का तुलनात्मक अध्ययन

दीपाली साहू * रश्मि व्यास **

शोध सारांश – इस अध्ययन मे औषधीय रूप से महत्वपूर्ण वनस्पति, *सिम्बोपोगोन सिट्रेटस ट्राईगोनेला फीनमग्रीकम* एवं *ओसिमम सेंकटम* के पेट्रोलियम ईथर और मेथनॉल अर्क का तुलनात्मक पादपरासायनिक परीक्षण मानक पद्धति द्वारा एवं कुल फीनॉलिक तत्व का आंकलन फोलिन-किओकल्टेयू अभिकर्मक से किया गया है। गुणात्मक रूप से *ओसिमम सेंकटम* मे सबसे अधिक रसायन पाये गये। फिनाल की सर्वाधिक मात्रा *ओसिमम सेंकटम* के अर्क मे देखी गयी।

शब्द कुंजी – *सिम्बोपोगोन सिट्रेटस* (लेमन ग्रास), *ट्राईगोनेला फीनमग्रीकम* (मेथी), *ओसिमम सेंकटम* (तुलसी), फिनॉल

प्रस्तावना – *सिम्बोपोगोन सिट्रेटस* का लेमन ग्रास नाम बहुप्रचलित है जो कि पोएेसी कुल का पौधा है। *ओसिमम सेंकटम*, तुलसी लेमिऐसी कुल का ऐरोमेटिक वनस्पति है। *ट्राईगोनेला फीनमग्रीकम* (मेथी) सामान्यत: घरो में उपयोग मे लाया जाता है, यह फेबिएसी कुल की वनस्पति है। इनके औषधीय गुण इनमे विद्यमान प्राथमिक तथा द्वितीयक चयापचय तत्व के कारण है जो अनेक रोगों के उपचार हेतु उपयोग किया जाता है।

सामग्री एवं विधि:-

पौधों का संग्रहण, चयन एवं प्रमाणीकरण: भोपाल शहर के विभिन्न क्षेत्रों से *सिम्बोपोगोन सिट्रेटस ट्राईगोनेला फीनमग्रीकम* तथा *ओसिमम सेंकटम* के पौधों का संग्रहण किया गया। इनका वनस्पतिज्ञ द्वारा वर्गीकरणात्मक प्रमाणीकरण कराया गया। अध्ययन के लिये औषधीय पौधों की पत्तियों को चुना गया। इन्हें स्वच्छ एवं सूखे स्थल मे सुखाकर, पीसकर साफ पात्र में अध्ययन हेतु रखा गया।

पौधों से निस्सारण: निस्सारण प्रक्रिया के लिए सम्मर्दन विधि का उपयोग किया गया। सर्वप्रथम पेट्रोलियम ईथर से निर्वसीकृत किया गया। निस्सारण के लिए मेथनॉल (मेथनॉल: आसुत जल, 8:2) विलायक लिया गया।

गुणात्मक पादप रासायनिक परीक्षण: सी. के कोकाटे(1) के मानक पद्धति द्वारा विभिन्न पादप रासायनिक तत्व की उपस्थिति का परीक्षण किया गया।

प्रोटीन एवं एमिनो अम्ल परीक्षण:-

बाईयुरेट परीक्षण: अर्क को 10 प्रतिशत सोडियम हाईड्रोक्साईड से अभिक्रियित एवं गर्म कर 0.7 प्रतिशत कॉपर सल्फेट की एक बूँद इस मिश्रण में मिलाया जाता है। बैंगनी या गुलाबी रंग का निर्माण प्रोटीन की उपस्थिति को दर्शाता है।

निनहाईड्रिन परीक्षण: 3 मि.ली. प्रतिदर्श को 10 मिनट जल उष्मक मे रखा जाता है। एमिनो अम्ल उपस्थित होने पर नीले रंग का निर्माण होता है।

कार्बोहाइड्रेट परीक्षण:-

मोलिष संपरीक्षण: परीक्षण नली में 2 मि.ली. जलीय अर्क लेकर उसमे 2 बूँद अल्फा नेप्थाल विलयन डालकर1 मि.ली. सांद्रित सल्फ्यूरिक अम्ल किनारे से धीरे धीरे डाला जाता है। विलायक की संधि मे बैंगनी रंग के वलय का निर्माण कार्बोहाइड्रेट की उपस्थिति को दर्शाता है।

एल्केलाइड परीक्षण: अम्लीय अर्क में तनु हाइड्रोक्लोरिक अम्ल डाला जाता है, इसे अच्छे से हल्लन विधि द्वारा मिलाकर विलयन का निस्यंदन कर प्राप्त निस्यंद से निम्नलिखित परीक्षण किया गया।

मेयर्स परीक्षण: 2-3 मि.ली. निस्यंद में मेयर्स अभिकर्मक को परखनली के किनारे से डाला जाता है। एल्केलाइड उपस्थित होने पर सफेद रंग का अवक्षेप प्राप्त होता है।

हेगर्स परीक्षण: 1-2 मि.ली. निस्यंद मे हेगर्स अभिकर्मक की कुछ बूँदे परखनली मे डाली जाती है, लाल रंग के अवक्षेप एल्केलाइड की उपस्थिति दर्शाते है।

फ्लेवोनॉइड परीक्षण:

लेड एसिटेट परीक्षण: अर्क को लेड एसिटेट की कुछ बूँदे के साथ अभिकृत कराया जाता है, पीले रंग अवक्षेप फ्लेवोनॉइड की उपस्थिति को बतलाता है।

क्षारीय अभिकर्मक परीक्षण: परीक्षण नली में अर्क को सोडियम हाईड्रोक्साईड की कुछ बूँदों के साथ अभिक्रिया कराई जाती है। पीले रंग का निर्माण होना तथा तनु अम्ल की कुछ मात्रा मिलाने पर रंग का गायब हो जाना, फ्लेवोनॉइड की उपस्थिति का सूचक है।

ट्राईटर्पीनॉइड एवं स्टीरॉयड परीक्षण:-

सल्वोसकी परीक्षण: अर्क मे क्लोरोफॉर्म मिलाकर घोल तैयार कर उसका निस्यंदन किया जाता है। निस्यंद से सांद्र सल्फ्यूरिक अम्ल की कुछ बूँद डालकर हिलाया जाता है। इसके पश्चात उसे 10 मिनट के लिए स्टैंड में रख कर छोड़ देने पर अगर कुछ समय बाद निम्न परत लाल रंग की दिखाई दे तो स्टीराल उपस्थित है और अगर स्वर्ण पीले रंग का हो तो ट्राईटर्पीन उपस्थित है।

लीबरमन-बर्कार्ड परीक्षण: अर्क को क्लोरोफॉर्म से अभिकृत किया जाता

* शोधार्थी, बरकतुल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, बरकतुल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

है। इसमे ऐसिटिक एनहाईड्राईट की कुछ बूँदे डाली जाती है। इस विलयन को जल उष्मक की सहायता से गर्म करके कुछ समय ठंडा हो जाने के लिए रख दिया गया। ठंडा हो जाने पर परखनली के किनारे से सांद्रित सल्फ्यूरिक अम्ल डाला जाता है। दो परत की संधि मे अगर भूरे रंग के वलय का निर्माण होता है तथा ऊपर की परत हरे रंग की हो जाए तो यह स्टीरायड की उपस्थिति दर्शाता है। परन्तु अगर यह गहरे लाल रंग का बनता है तो ट्राईटर्पीनॉइड की उपस्थिति बताता है।

टैनिनि एवं फीनालिक यौगिक परीक्षण:

फैरिक क्लोराइड परीक्षण: आसुत जल मे अर्क की कुछ मात्रा मिलाकर घोल तैयार किया जाता है, इस विलयन में 5 प्रतिशत फैरिक क्लोराइड की 2 मि.ली. मात्रा मिलाया जाता है। नीला, हरा या बैंगनी रंग फीनालिक यौगिक उपस्थित होने पर बनता है।

लेड एसिटेट परीक्षण: अर्क की थोड़ी सी मात्रा लेकर उसका आसुत जल मे घोल बनाया जाता है और उसमे लेड एसिटेट की कुछ बूँदे डालने पर सफेद रंग के अवक्षेप फीनालिक यौगिक की उपस्थिति का प्रमाण देते है।

ग्लाइकोसाइड परीक्षण:

बोर्नट्रेगर परीक्षण: 3 मि.ली. प्रतिदर्श विलयन में तनु सल्फ्यूरिक अम्ल मिलाकर 5 मिनट उबालकर छान कर प्राप्त निस्यंद को ठंडा कर उसमे सामान मात्रा मे क्लोरोफॉर्म मिलाया जाता है। प्राप्त आर्गेनिक स्तर को पृथक कर उसमे अमोनिया मिलाया जाता है। गुलाबी से लाल रंग की परत एन्थ्राक्विनोन ग्लाइकोसाइड की उपस्थिति दर्शाता है।

लीग्ल्स परीक्षण: 1 मि.ली. प्रतिदर्श को पाईरिडिन मे घोला जाता है। उसमे 1 मि.ली. सोडियम नाईट्रोप्रुसाइड मिलाकर क्षारीय किया जाता है, झाग की परत सैपोनिन की उपस्थिति का सूचक है।

मात्रात्मक फीनालिक तत्व परीक्षण: मानक पद्धति (2) द्वारा कुल फीनालिक तत्व का परीक्षण किया गया। इस विधि मे स्पेक्ट्रमी प्रकाशमापी से गणना की जाती है इस पद्धति में गैलिक अम्ल के मानक सांद्रता के विभिन्न विलयन बनाये जाते है। इस अध्ययन में 10,20,30,40,50 मि.ग्राम./मि.ली. मेथनॉल में गैलिक अम्ल के विभिन्न विलयन बनाये गये।

परिणाम: पौधों के पाद्पराासायनिक लक्षण तालिका 1 मे संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है

तालिका 1 : पादपरासायनिक जाँच:

औषधीय पादप	*सिम्बोपोगोन सिट्रेटस*		*ओसिमस सेंकटम*		*ट्राईगोनेला फीनमग्रीकम*	
	पे.ई	मेथ.	पे.ई	मेथ.	पे.ई	मेथ.
प्रोटीन	–	–	–	–	–	–
ऐमिनो अम्ल	–	–	–	–	–	–
कार्बोहाइड्रेट	–	+	–	+	–	+
एल्केलाईड	–	–	–	–	–	–
फ्लेवोनॉइड	–	+	–	+	–	+
ट्राईटर्पीनॉइड	+	–	+	–	+	–
स्टीरॉयड	+	+	+	+	+	–
टैनिन एवं फीना-लिकयौगिक	–	–	–	+	–	–
ग्लाइकोसाइड	–	–	–	+	–	–
सैपोनिन	–	+	–	+	–	+

= उपस्थित, — = अनुपस्थित, पे.ई = पेट्रोलियम ईथर अर्क, मेथ. = मेथनॉलिक अर्क

मात्रात्मक फीनालिक तत्व परीक्षण (टी.एफ.सी.)

तालिका 2. गैलिक अम्ल के विभिन्न सांद्रता के अवषोषणान्क

क्र.	संद्रता (µ ग्राम. /मि.ली.)	अवशोषणान्क			मध्य मान
1	10	0.1098	0.1096	0.1102	0.1099
2	20	0.1767	0.1764	0.1764	0.1765
3	30	0.2472	0.2468	0.2466	0.2468
4	40	0.2979	0.2983	0.2983	0.2981
5	50	0.3259	0.3255	0.3260	0.3258

लेखाचित्र 1: मानक गैलिक अम्ल का लेखाचित्र

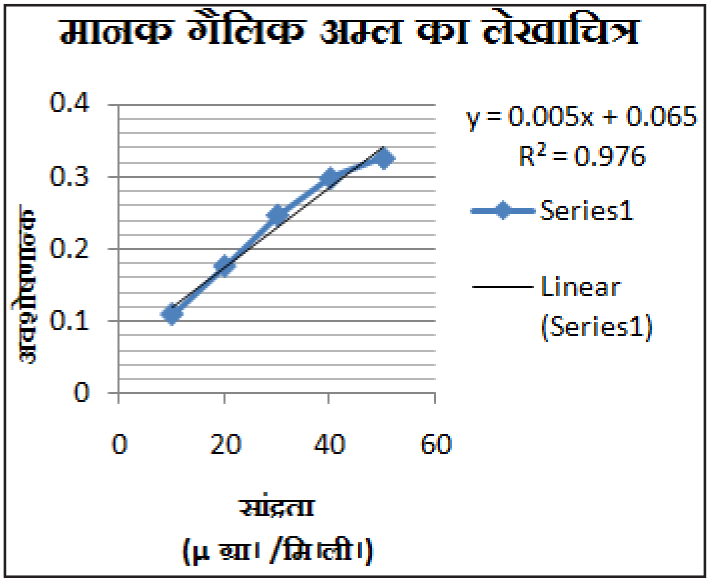

गैलिक अम्ल के मानक लेखाचित्र से निम्नलिखित समाश्रयण रेखा प्राप्त हुई:-

$y = 0.005x+0.065$ and $R^2 =0.976$

समाश्रयण रेखा का उपयोग फिनॉल तत्व की मात्रा का आकलन करने के लिए किया गया। प्राप्त समीकरण में 'y' के स्थान में आंकलित अवषोषणान्क द्वारा प्रतिदर्श की मात्रा का पता लगाया गया।

तालिका 3: *सिम्बोपोगोन सिट्रेटस*

सिम्बोपोगोन सिट्रेटस			
क्र.	अवशोषणान्क	सांद्रता	टी.पी.सी. (मि.ग्राम/ग्राम)
1	0.071	1 मि.ली. ग्राम./मि.ली.	1.2
2	0.072	1 मि.ली. ग्राम./मि.ली.	1.4
3	0.071	1 मि.ली. ग्राम./मि.ली.	1.2
		मध्य मान	**1.266**
		मानक विचलन	**±0.094**

तालिका 4: *ट्राईगोनेला फीनमग्रीकम*

ट्राईगोनेला फीनमग्रीकम			
क्र.	**अवशोषणान्क**	**सांद्रता**	**टी.पी.सी. (मि.ग्राम/ग्राम)**
1	0.162	1 मि.ली. ग्राम./मि.ली.	19.4
2	0.162	1 मि.ली. ग्राम./मि.ली.	19.4
3	0.163	1 मि.ली. ग्राम./मि.ली.	19.6
		मध्य मान	**19.466**
		मानक विचलन	**±0.115**

तालिका 5: *ओसिमम सेंकटम*

ओसिमम सेंकटम			
क्र.	**अवशोषणान्क**	**सांद्रता**	**टी.पी.सी. (मि.ग्राम/ग्राम)**
1	0.226	1 मि.ली. ग्राम./मि.ली.	32.2
2	0.226	1 मि.ली. ग्राम./मि.ली.	32.2
3	0.227	1 मि.ली. ग्राम./मि.ली.	32.4
		मध्य मान	32.266
		मानक विचलन	**±0.115**

अनुमानित कुल **फीनालिक तत्व** की मात्रा मि.ग्राम./ग्राम गैलिक एसिड एक्वीवेलेंट गैलिक अम्ल तुल्यांक, (जी.ए.ई.) में दर्शायी गयी है।

तालिका 6: कुल फीनालिक तत्व

क्र.	**औषधीय पादप**	**संद्रता (मि.ग्राम.जी.ए.ई. ग्राम)**
1	***सिम्बोपोगोन सिट्रेटस***	**1.266 ± 0.094**
2	***ट्राईगोनेला फीनमग्रीकस***	**19.466±0.115**
3	***ओसिमम सेंकटम***	**32.266±0.115**

चर्चा एवं निष्कर्ष – अध्ययन किये गए तीनों औषधीय पौधों के पाद्परासायनिक घटकों को तालिका क्रमांक 1 में संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है। सभी के पेट्रोलियम ईथर निस्सारित अर्क में ट्राईटर्पीनॉइड और स्टीरॉयड की उपस्थिति पाई गयी तथा मेथनाल मे विभिन्न तत्व पाये गए। एक अध्ययन मे यह बात कही गयी है कि तुलसी की दूसरी प्रजातियों में भी बायोएक्टिव यौगिक पाया जाता है, अत: औषधीय रूप उनका भी महत्व है (3)। *ओसिमम सेंकटम* के गैस वर्णलेखिकी – द्रव्यमान स्पेक्ट्रममिति अध्ययन से पत्तियों मे युजिनाल तथा कैरियोफिलीन नामक तत्व के उपस्थित होने का प्रमाण प्राप्त हुआ है (4)। जलीय अर्क की तुलना मे तुलसी के मेथनाल अर्क से ज्यादा मात्रा में पादप रासायनिक तत्व होते है (5)। कुछ अध्ययन से ये भी ज्ञात हुआ है कि तुलसी के तने और पत्तियों मे लगभग समान प्रकार के तत्व मौजूद होते है (6)। दैनिक जीवन में तुलसी का उपयोग रोगों के बचाव कर प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है (7)। *सिम्बोपोगोन सिट्रेटस* की पत्तियों मे कार्डियक ग्लाइकोसाइड, टैनिन, फ्लेबोटैनिन और फ्लेवोनोइड मौजूद होते है, जिसके कारण यह रागों के उपचार मे उपयोग होता है (8)। इसमे मौजूद सुगंधित तेल मानव सेवन के लिए सुरक्षित होते है (9)। मानवजातीय भेषजगुणविज्ञानिय के साक्ष्य दर्शाते है कि इनका उपयोग पीड़कनाषी, सौंदर्य-प्रसाधन सामग्री और प्रति-षोथ मे किया जाता है (10)। एक अध्ययन से यह ज्ञात हुआ है कि लेमन ग्रास के रसायन कम मात्रा मे भी विकर्षण का कार्य करते है (11)। *ट्राईगोनेला फीनमग्रीकम* के अध्ययन से इनमें प्रति ऑक्सीकारक की अधिकता का प्रमाण प्राप्त होते है (12)। इनके प्रति रोगाणुता, प्रति ऑक्सीकारक और प्रति-आबुर्द होने के भी अनेक प्रमाण मिलते है (13)। इस तुलनात्मक अध्ययन में विभिन्न परीक्षण करके यह पाया गया कि गुणात्मक रूप से *ओसिमम सेंकटम* के अर्क मे सबसे अधिक पादप रसायनिक यौगिक मौजूद है तथा कुल फिनालिक तत्व भी ओसिमम सेंकटम में सबसे अधिक मात्रा मे देखा गया। अत: तीनो अध्ययन किये गए पौधों में तुलसी को सबसे ज्यादा गुणों वाला पाया गया।

आभार: लेखक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग भारत सरकार द्वारा अध्ययन हेतु प्रदान की गयी वित्तीय सहायता के लिए आभारी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सी.के.कोकाटे, ए.पी.पुरोहित, एस.बी.गोखले (2006). फर्मेकोग्नोसी,संस्करण-34.
2. एंसवर्थ ई.ए., गिलेप्सी के.एम. (2007), एस्टीमेशन ऑफ टोटल फीनालिक कंटेंट एंड अदर ऑक्सीडिशन सब्स्ट्रेट्स इन प्लांट टिशु युसिंग - फोलिन किओकल्ट्यू रियेजेंट, नेचर प्रोटोकॉल, खण्ड 2, अंक 4, मु पृ 875 - 877.
3. तिवारी डी., शाह ए.एन., पाण्डेय एच.के., मीना एच.एस. (2012) अ रिव्यु ऑन फाईटोकांस्तीतुएंट्स ऑफ ओसिमम सेंकटम (तुलसी) इंटरनेषनल जर्नल ऑफ आयुर्वेदिक मेडिसिन्स खण्ड 3
4. देवेन्द्रन जी., बाल सुब्रमण्यम यु. (2011) कवानटीटेटिव फायटोकेमिकल स्क्रीनिंग एवं जी.सी.-एम.एस. एनालिसिस ऑफ ओसिमम सेंकटम इन लीव्स, पेल्गिया रिसर्च लाइब्रेरी,खण्ड 1, अंक 4, मु.पृ. 44-48.
5. सादुल आर.आर., गीडे एम.आर. एवं विपिनराज एन.के. (2015) कम्पेरेटिव एवं फाईटोकेमिकल स्क्रीनिंग ऑफ एक्र्स एवं एल्कोहोलिक लीफ एक्सट्रेक्ट ऑफ ओसिमम सेंकटम आन ई.कोली. (फिकल इंडिकेटर ऑफ वाटर पोल्यूशन), ज. ऑफ एनवायरमेंटल रिसर्च एंड डेवलपमेंट, खण्ड 7, अंक 1, मु.पु. 312-320.
6. शाफ्तुल्लाह, मोहम्मद के., असादुल्लाह, कलिक्युरेह्मान एवं खान एफ.ऐ. (2013) कम्पेरेटिव एनालिसिस ऑफ ओसिमम सेंकटम स्टेम एंड लीव्स फॉर फाईटोकेमिकल एंड इन आर्गेनिक कांसीटूएंट्स, मिडल ईस्ट ज.ऑफ. साइंटिफिक रिसर्च खण्ड 13, अंक 2, मु.पु. 236-240.
7. जम्शिदी एन. एवं कोहेम एम.एम. (2017) द क्लिनिकल एफिकेसी एंड सेफ्टी ऑफ तुलसी इन हुमंस, ए सिस्टमेटिक रिव्यु ऑफ द लिटरेचर. एविडेंस बेस्ड कॉमप्लीमेन्ट्री एंड अल्टरनेटिव मेडिसिन अंक 2
8. जोशुआ ऐ.ऐ., युसुनोमेना यु., लाव्रे ऐ.बि. एमेंजे ओं. एवं गेब्रिअल ओ.ऐ.(2012) कम्पेरेटिव स्टडीज आन केमिकल कम्पोजीषन एंड एंटी माइक्रोबियल एक्टिविटीज ऑफ द एथनालिक एक्सट्रेक्ट ऑफ लेमन ग्रास लीव्स एंड स्टेम्स, एशियन ज. ऑफ मेडिकल साइंस, खण्ड 4, अंक 4, मु.पु. 145-148
9. क्रिस्टोफर ई.ई., अर्नेस्ट ई., एकपन, न्येबक ई., डेनिअल (2014), फाईटोकेमिकल कांसीटूएंट्शन, थेरापयूटिक एप्लीकेशन एंड टोक्सीकोलॉजिकल प्रोफाइल ऑफ सिम्बोपोगोन सिट्रेटस स्ताप्फ (डी.सी.) लीफ एक्सट्रेक्ट, ज. ऑफ फारमेक्ग्नोनोसी एंड फायतोकेमिस्ट्री, खण्ड 3, अंक 1, मु.पु.133-141.

10. एवोसेह ओपेयेमि, ओयेदिजी ओपेलुवा, रून्ग्क्यु रमेला, क्नेह चुन्धा, बेनेदिक्टा एवं ओयेदिजी एदेबेला (2015) सिम्बोपोगोन स्पीशीज, एथनो फार्माकोलॉजी, फायटोकेमिस्ट्री एंड द फर्मकोलोजिकल इम्पोर्टेंस, मोलेकुल्स खण्ड 20 मु.पु. 7438-7453.
11. किमुते अए., न्गेइय्वम एम., मुला.एम., न्जगी पी.जी.एन., इन्गोंगा जे., न्याम्वामं एल.बी., ओमबती क्यिप्रयन,. न्गुम्बी प., (2017) रीपेलेंट इफेक्ट्स ऑफ द एसेंशियल आयल ऑफ सिम्बोपोगोन सिट्रेटस एंड तागेतेस माएनुता ऑन द सैंडफ्लाई, फ्लेबोतोमस डुबोस्की, बी.एम.सी. रिसर्च नोट्स 10:98
12. सोनी ऐ. एवं सोसा एस. (2013) फायटोकेमिकल एनालिसिस एंड फ्री रेडिकल स्केवेंजिंग पोटेंशियल ऑफ हर्बल एंड मेडिसिनल प्लांट एक्सट्रेक्ट, ज.आफ फार्ममिक्गोनोसी एंड फायटोकेमिस्ट्री, खण्ड 2, अंक 4, मु.पु. 22-29
13. अल्लूरी एल. एवं मजुमदार एम. (2012) फायटोकेमिकल एनालिसिस एंड इन विट्रो एंटी माइक्रोबियल एक्टिविटी ऑफ केलोट्रोपिस जिजेनतियन, लाव्सोनिया इनेर्मिस एंड ट्राईगोनेला फीनमग्रीकस, इंटरनेशनल ज. ऑफ फार्मेसी एंड फर्माक्यूटिकल्स साइंसेस, खण्ड 6, अंक 4 मु.पु. 524-527

****

उच्च तथा निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. गुरमीत सिंह कचूरा * मिथुन भट्ट**

शोध सारांश – प्रस्तुत अनुसंधान कार्य का मुख्य लक्ष्य कार्यरत उच्च एवं निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन करना था। शोधार्थी ने शोधकार्य हेतु शोध में न्यादर्श के रूप में शोधार्थी ने कुल 600 विद्यार्थियों का चयन किया जिसमें से 300 विद्यार्थी उच्च उपलब्धि वाले व 300 निम्न उपलब्धि वाले चयन किये गये है। शोधार्थी ने दत्त संकलन के लिए डॉ. आर मुखोपध्याय द्वारा निर्मित मानकीकृत अध्ययन आदतों की प्रमापनी का प्रयोग किया। दत्त संकलन के पश्चात् उनको सारणीयन करते हुए आँकड़ो का विश्लेषण टी परीक्षण एवं आरेख प्रदर्शन के आधार पर किया गया। निष्कर्ष स्वरूप पाया गया कि उच्च एवं निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों में सार्थक अन्तर पाया गया।
शब्द कुंजी – उच्च उपलब्धि , निम्न उपलब्धि एवं अध्ययन आदत।

उपलब्धि – उपलब्धि से तात्पर्य किसी भी क्षेत्र में अर्जित ज्ञान से है। सामान्यत: हम उपलब्धि को शैक्षिक क्षेत्र में ही देखते हे। लेकिन उपलब्धि जीवन के सभी क्षेत्रों में होती है। मानव के स्नायु एवं मासपेशियों की परिपक्वता भी गति कौशल को सिखने में सहायक होती है गत्यात्मक कौशल में जब भी परिवर्तन आता है तो ऐसा लगता है कि बालक ने कोई नई क्रिया सिखी है। और हम नई उपलब्धियों के रूप में देखते है। यह उपलब्धियाँ अलग अलग आयु के अनुसार अलग अलग होती है उपलब्धि परीक्षा से तात्पर्य कक्षा में विभिन्न विषयों में प्राप्त अंकों से है उपलब्धि परीक्षा विषयों में अर्जित ज्ञान से है।

उच्च उपलब्धि – 60 प्रतिशत से अधिक प्राप्तांक वाले विद्यार्थी

निम्न उपलब्धि – 40 –50 प्रतिशत प्राप्तांक वाले विद्यार्थी

अध्ययन आदतें – आदत से तात्पर्य उन क्रियाओं से है जिन्हें व्यक्ति अत्यन्त सरलता से एवं पूर्ण कुशलता से पुन: पुन: संपन्न करता है। जिनकों परिस्थितियाँ प्रभावित नहीं करती है। आदत सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रकार की होती है। आदत का आधार अर्जित क्रिया है जो वातावरण में विकसित होती है।

डॉ. आर मुखोपाध्याय के अनुसार अध्ययन आदते एकाग्रता , समझने की योग्यता , कार्य अभिविन्यास, नोटस तैयार करना , भाषा एवं अभ्यास करना आदि है।

समस्या की सम्प्रत्यात्मक पृष्ठभूमि – वर्तमान समय की यह प्रमुख आवश्यकता है कि देश का प्रत्येक बालक व युवा अपनी संपूर्ण शिक्षा ऊर्जा व चेतना का उपयोग सकारात्मक कार्यो में लगाए।

विद्यालय में एक ही शिक्षक व एक ही वातावरण में अध्ययनरत विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि असमान होती है इसके पीछे कई कारण हो सकते है जैसे :– विद्यार्थियों का स्वास्थ्य , अभिभावक सहभागिता , अधिगम क्षमता एवं अध्ययन आदते आदि। इनमें से अध्ययनआदते महत्वपूर्ण है जो विद्यार्थी की उपलब्धि को निर्धारित करती है। इन्हीं परिस्थितियों को देखकर शोधार्थी ने यह आलेख प्रस्तुत किया है।

उद्देश्य :

1. उच्च एवं निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थियों का पता लगाना।
2. उच्च उपलब्धि वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का पता लगाना।
3. निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का पता लगाना।
4. उच्च एवं निम्न वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना :

1. उच्च एवं निम्न वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

अनुसंधान का विधिशास्त्र :

1. प्रस्तुत शोध में शोध की प्रकृति को देखते हुए शोधार्थी ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया।
2. दत्त संकलन हेतु मानकीकृत अध्ययन आदत प्रमापनी का प्रयोग किया गया।
3. अनुसंधान कार्य के लिए न्यादर्श स्वरूप कुल 600 विद्यार्थियों का चयन याद्दच्छिक विधि से किया गया है जिसमें 300 विद्यार्थी उच्च उपलब्धि एवं 300 विद्यार्थी निम्न उपलब्धि के चयन किए गए है।

सारणीयन एवं विश्लेषण :

सारणी संख्या –1 **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

व्याख्या – टी मान के आधार पर प्राप्त आँकड़ो से यह कहा जा सकता है किउच्च एवं निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों में सार्थक अन्तर पाया गया अर्थात् उच्च उपलब्धि वाले विद्यार्थियों की अध्ययन करने की आदतों में एकाग्रता, अभ्यास एवं भाषा शैली निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक उच्च पाई गई है।

वर्तमान में प्रासंगिकता – प्रस्तुत आलेख के द्वारा विद्यार्थी अपनी अध्ययन आदतों के बारे में जानकर अपनी शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि करते हुए अपने समाज व राष्ट्र के विकास में अपना योगदान प्रदान कर सकते है।

*मार्गदर्शक (शिक्षा) ओ.पी.जे.एस. यूनिवर्सिटी, चुरू (राजस्थान) भारत
** शोधार्थी (शिक्षा) ओ.पी.जे.एस. यूनिवर्सिटी, चुरू (राजस्थान) भारत

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भटनागर, सुरेश (2005) अधिगम एवं विकास के मनोसामाजिक आधार, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस मेरठ।
2. डॉ. सिंह, अरूण कुमार मनोविज्ञान समाज शास्त्र तथा शिक्षा में साख्यिकी।
3. माथुर डॉ. एस. एस. शिक्षा मनोविज्ञान, श्री विनाद पुस्तक मन्दिर आगरा -2, 2010
4. मिश्रा, डॉ. महेन्द्र कुमार, अधिगम का मनो-सामाजिक आधार एवं शिक्षण्सा नीलकंठ पुस्तक मन्दिर खातीपुरा जयपुर - 12, 2008
5. ओबराय डॉ. एस. पी. (1993-1997-1994) शिक्षण अधिगम के मूल तत्व सुखपाल गुप्ता आर्य बुक डीपों 30 नाईवाला करौल बाग नई दिल्ली।
6. त्रिपाठी मधुसुदन (2007) शिक्षा अनुसंधान और साख्यिकी अमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली

सारणी संख्या -1 : उच्च तथा निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों मध्यमानवार तुलनात्मक विश्लेषण

क्र.	क्षेत्र	छात्र	मध्यमान	मानक	विचलन टी-मान	सार्थकता -05/.01
1.	समझने की योग्यता	उच्च उपलब्धि वाले विद्यार्थी	38.63	2.52	17.79	.01 पर सार्थकअन्तर है।
		निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थी	30	2.79		
2.	एकाग्रता	निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थी	26.53	2.74	8.68	.01 पर सार्थकअन्तर है।
		निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थी	19.93	5.27		
3.	कार्य अभिविन्यास	उच्च उपलब्धि वाले विद्यार्थी	24.91	3.61	6.74	.01 पर सार्थकअन्तर है।
		निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थी	20.73	3.22		
4.	अध्ययन सैट्स	उच्च उपलब्धि वाले विद्यार्थी	18.91	1.81	0.67	.05 पर सार्थकअन्तर नहीं है।
		निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थी	18.7	1.61		
5.	अन्तक्रिया	उच्च उपलब्धि वाले विद्यार्थी	7.8	1.13	1.88	.05 पर सार्थकअन्तर नहीं है।
		निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थी	7.31	1.25		
6.	अभ्यास	उच्च उपलब्धि वाले विद्यार्थी	8.73	1.50	8.86	.01 पर सार्थकअन्तर है।
		निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थी	6.16	1.72		
7.	सहारा देना	उच्च उपलब्धि वाले विद्यार्थी	10.95	1.61	10.48	.01 पर सार्थकअन्तर है।
		निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थी	8.33	1.20		
8.	अभिलेखन करना	उच्च उपलब्धि वाले विद्यार्थी	6.35	1.10	2.13	.01 पर सार्थकअन्तर नहीं है।
		निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थी	5.86	1.41		
9.	भाषा	उच्च उपलब्धि वाले विद्यार्थी	2.85	0.73	6.66	.01 पर सार्थकअन्तर है।
		निम्न उपलब्धि वाले विद्यार्थी	2.25	0.08		

वर्ष = 598 के सारणीमान

0.05 स्तर पर सारणीमान - 1.98

0.01 स्तर पर सारणीमान - 2.62

****

विद्यार्थियों के गृह वातावरण का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन

डॉ. गुरमीत सिंह कचूरा * मिथुन भट्ट**

शोध सारांश – प्रस्तुत अनुसंधान कार्य का मुख्य लक्ष्य विद्यार्थियों के गृह वातावरण का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन करना था। शोधार्थी ने शोधकार्य हेतु शोध में न्यादर्श के रूप में शोधार्थी ने कुल 400 विद्यार्थियों का चयन किया जिसमें से 200 विद्यार्थी राजकीय विद्यालय वाले व 200 विद्यार्थी निजी विद्यालय वाले चयन किये गये है। शोधार्थी ने दत्त संकलन के लिए डॉ. के.एस.मिश्रा द्वारा निर्मित मानकीकृत गृह वातावरण प्रमापनी तथा शैक्षिक उपलब्धि से संबंधित दत्तों के संकलन हेतु विद्यार्थियों के पिछली कक्षाओं के वार्षिक परिणाम का प्रयोग किया। दत्त संकलन के पश्चात् उनको सारणीयन करते हुए आँकड़ो का विश्लेषण । निष्कर्ष स्वरूप पाया गया कि विद्यार्थियों के गृह वातावरण का शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव होता है।
शब्द कुंजी – गृह वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धि ।

वातावरण – 'वातावरण वह शब्द है जो समस्त बाह्य शक्तियों और प्रभावों का सामूहिक रूप से वर्णन करता है जो जीवधारी के जीवन, स्वभाव, व्यवहार, अभिवृत्ति, विकास तथा प्रौढ़ता पर प्रभाव डालता है।'

– डगलस एवं हालैण्ड

गृह वातावरण – 'परिवार के सदस्यों के सर्वागीण विकास हेतु परिवार के सदस्यों द्वारा दिया गया वातावरण ही गृह वातावरण कहा जाता है।'

– डगलस एवं हौण्ड

शैक्षिक उपलब्धि – 'उपलब्धि परीक्षा में किसी एक विषय या विषयों में व्यक्ति के द्वारा अर्जित ज्ञान, सूझ–बूझ, तथा कौशल का मापन करते है।'

– फ्रीमैन

प्रस्तावना – शिक्षा अनादि काल में चली आ रही मानव व्यवहार को परिमार्जित करने वाली प्रक्रिया है। शिक्षा व्यक्ति को उसकी मान्यताओं के अनुसार विकसित करने पर केन्द्रित है। चुंकि मानव व्यवहार का परिमार्जन मानव की मन: स्थिति एवं शारीरिक स्थिति को ध्यान में रखकर ही होना चाहिए। शिक्षा का अभिप्राय: बालकों की जन्मजात शक्तियों की स्वाभाविकता एवं सामन्जस्यपूर्ण उन्नति तथा व्यैक्तिकता के पूर्ण विकास से है। ताकि वे अपने वातावरण में सामजन्स्य स्थापित करके अपने विचारों व दृष्टिकोणों में इस प्रकार से परिवर्तन कर सके कि समाज, राष्ट्र व विश्व का हित हो सके।

प्रो. श्रीवास्तव के अनुसार मनुष्य परिस्थितियों का दास है। बालक में भले ही सभी प्रकार की शक्तियां विद्यमाान हो परन्तु बिना उचित वातावरण के उसकी उन शक्तियों का पूर्ण रूपेण विकास नहीं किया जा सकता। गर्भावस्था से ही बालक पर वातावरणका प्रभाव पड़ने लगता है।

बालक जन्म से ही कुछ सहज योग्यताएं लेकर जन्म से ही कुछ सहज योग्यताएं लेकर जन्म लेता है। यदि उसे अनुकूल वातावरण द्वारा कोई उपयुक्त उद्दीपन नहीं प्रदान किया जाता है तो वे योग्यताएं अपने प्राकृत स्वरूप में विकसित होती है। साधारण बोलचाल की भाषा में हम वातावरण का अर्थ अपने चारों तरफ की परिस्थितियों से लगाते है। घर एक ऐसी संस्था है जिसका बालक पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। **कालमेन** ने यह बिल्कुल सही कहा है कि 'परिवार की अपने सदस्यों की जिम्मेदारी पालने से लेकर मृत्युशय्या तक रहती है।' परिवार बालक के व्यक्तित्व के विकास में बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान करता है। **शेरक** के अनुसार, 'घर एवं स्कूल ये दो ऐसी संस्थाएं है। जिनका हमारे जीवन पर बहुत दूरगामी प्रभाव पड़ता है।' ये सभी तथ्य इस ओर संकेत करते है कि पारिवारिक वातावरण एक ऐसा घटक है जिसका विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि पर प्रभाव पड़ता है।

उद्देश्य :

1. समग्र न्यादर्श विद्यार्थियों के गृह वातावरण का अध्ययन करना।
2. राजकीय विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के गृह वातावरण का अध्ययन करना।
3. निजी विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के गृह वातावरण का अध्ययन करना।
4. राजकीय व निजी विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के गृह वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन करना।
5. समग्र न्यादर्श विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
6. राजकीय विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
7. निजी विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
8. राजकीय व निजी विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।
9. विद्यार्थियों के गृह वातावरण का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन करना ।

परिकल्पना :

1. विद्यार्थियों के गृह वातावरण का शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं होता है।
2. राजकीय व निजी विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के गृह वातावरण

*मार्गदर्शक (शिक्षा) ओ.पी.जे.एस. यूनिवर्सिटी, चुरू (राजस्थान) भारत
** शोधार्थी (शिक्षा) ओ.पी.जे.एस. यूनिवर्सिटी, चुरू (राजस्थान) भारत

में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

3. राजकीय व निजी विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

अनुसंधान में प्रयुक्त विधि – प्रस्तुत शोधकार्य मे शोधार्थी को विद्यार्थियों के गृह वातावरण का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन करना जिसके लिए सर्वे आवश्यक है तथा यह वर्तमान परिस्थितियों से संबंधित है अत: सर्वेक्षण का चयन किया गया है।

अनुसंधान हेतु उपकरण – शोधार्थी द्वारा दत्त संकलन हेतु स्वनिर्मित एवं मानकीकृत उपकरण का प्रयोग किया गया है। गृहवातावरण के दत्त संकलन हेतु के.एस. मिश्रा द्वारा निर्मित मानकीकृत उपकरण एवं शैक्षिक उपलब्धि हेतु पिछली कक्षा के वार्षिक परिणामों को लिया गया।

अनुसंधान हेतु न्यादर्श – अनुसंधान कार्य के लिए न्यादर्श स्वरूप कुल 600 विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया है जिसमें 300 विद्यार्थी राजकीय विद्यालय एवं 300 निजी विद्यालय के चयन किए जायेगे।

सारणीयन एवं विश्लेषण :

सारणी संख्या – 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

व्याख्या – टी मान के आधार पर प्राप्त आँकड़ो से यह कहा जा सकता है राजकीय व निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के गृह वातावरण में सार्थक अन्तर पाया गया है।

सारणी संख्या – 2 : न्यादर्श विद्यार्थियों के घर के वातावरण व शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सह सम्बन्ध का अध्ययन

समूह	चर	सह संबंध गुणांक का मान	.01/.05 पर सार्थकता
विद्यार्थी	घर का वातावरण (X चर)	0.498	सार्थक अन्तरं पाया गया
	शैक्षिक उपलब्धि (Y चर)		

स्वतन्त्रता के अंश (df=598)पर

0.05 स्तर पर मान – 0.361

0.01 स्तर पर मान – 0.463

व्याख्या – गृह वातावरण तथा शैक्षिक उपलब्धि दोनो चरो पर विद्यार्थियों के प्राप्तांकों के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक मान r=0.498 प्राप्त हुआ जो कि उच्च धनात्मक है अर्थात् विद्यार्थियों के गृह वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक सहसंबंध पाया गया है।

वर्तमान में प्रासंगिकता – प्रस्तुत आलेख के द्वारा विद्यार्थी अपनी अध्ययन आदतों के बारे में जानकर अपनी शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि करते हुए अपने समाज व राष्ट्र के विकास में अपना योगदान प्रदान कर सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Travers John W. (1974) :"A Introducation research" MacMillan Company, New York.
2. हेनरी ई. गेरिट (1979) : 'शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग' (अनुवादित संस्करण) कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
3. ढ़ोढ़ियाल, एस.एन. एवं फाटक, ए.बी.(1982) : 'शैक्षिक अनुसंधान का विधि शास्त्र' राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
4. सुखिया, एस.पी. मेहरोत्रा, पी.बी. (1984) : 'शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व' विनोद पुस्तक मन्दिर ,आगरा।
5. भार्गव, महेश चन्द्र (1984) : 'आधुनिक मनोविज्ञान परीक्षण एवं मापन' हर प्रसाद भार्गव, आगरा।
6. राय, पार्श्वनाथ (1985) : 'अनुसंधान परिचय' लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
7. शर्मा, आर, ए.(2006) : 'शिक्षा अनुसंधान' आर लाल बुक डिपो, मेरठ।
8. सरीन एवं सरीन (2008) : 'शैक्षिक अनुसंधान विधियाँ' विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

सारणी संख्या – 1 : राजकीय व निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के गृह वातावरण का मध्यमान के आधार पर क्षेत्रवार तुलनात्मक विश्लेषण

क्र.	क्षेत्र	मध्यमान		मानक विचलन		टी–मान	0.01 व 0.05 स्तर पर सार्थकता
		राजकीय विद्यार्थी	निजी विद्यार्थी	राजकीय विद्यार्थी	निजी विद्यार्थी		
1.	नियंत्रण	19.92	23.86	1.456	1.922	2.225	0.05 स्तर पर सार्थक अन्तरपाया गया
2.	सुरक्षित	30.15	32.02	2.180	2.211	1.875	0.05 स्तर पर सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
3.	दण्ड	21.54	24.36	1.093	2.158	1.771	0.05 स्तर पर सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
4.	अभिभावकों की आकांक्षा	28.86	23.20	2.699	2.123	1.566	0.05 स्तर पर सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
5.	सामाजिक अलगाव	15.58	20.04	1.069	1.32	3.125	0.01 स्तर पर सार्थक अन्तरपाया गया
6.	पुरस्कार	28.02	28.34	2.457	1.015	1.333	0.05 स्तर पर सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
7.	पृथक्करण संबंधी अधिकार	18.02	19.20	0.987	1.014	1.584	0.05 स्तर पर सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
8	बच्चो के प्रति अभिभावकों का विशेष लगाव	24.40	24.10	2.221	1.641	1.014	0.05 स्तर पर सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
9	निरस्तीकरण	21.04	24.20	0.811	1.112	2.351	0.05 स्तर पर सार्थक अन्तरपाया गया
10	आज्ञाकारिता	19.42	24.88	1.161	1.191	3.145	0.01 स्तर पर सार्थक अन्तरपाया गया

स्वतन्त्रता के अंश (df)=598 के सारणीमान

0.05 स्तर पर सारणीमान – 1.96

0.01 स्तर पर सारणीमान – 2.53

पर्यावरण संरक्षण पर आधारित मानव मूल्यों का भौगोलिक अध्ययन

डॉ. हीरालाल चौधरी * डॉ. के.पी. आजाद**

प्रस्तावना – मानव मूल्यों के क्षरण को इस आधुनिक समय में पर्यावरण ही रोक सकता है। ऐसी अनेक विसंगतियों के परिणाम स्वरूप यदि हम प्राचीन काल के सैन्धव सभ्यता का आकलन करते हैं। उस मानव स्वयं पर्यावरण के सरंक्षण और वातावरण को स्वच्छ रखता था। विकासकाल की आधुनिक धारा ने मानव को इन मूल्यों से वंचित कर दिया है। जिसके प्रति आज सजगता की आवश्यकता महत्वपूर्ण लगती है। जब हम सैन्धव सभ्यता काल की बात करते हैं वहाँ कुएं, तालाब, पक्की नालियाँ कचरा को निकालने के लिए रहती थी। कूड़ेदानों का प्रयोग प्रत्येक व्यक्ति करता था। इन वृक्षों की पूजा की जाती थी। क्योंकि इन पौधों ने हमें साँस प्रदान किया है। इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वृक्षों में देवता का वास होने से कोई व्यक्ति उन पौधों को नुकसान नहीं पहुँचाता था। इसलिए उस समय का वातावरण स्वच्छ था।

वृक्षों में अनेक प्रकार के देवताओं को मानने की प्रथा विद्यमान थी। उसके बाद इन सभ्यताओं में पर्यावरण की सुद्धता को देखकर ऋषि-मुनि साधना के केन्द्र बनाया। वहाँ पठन-पाठन की प्रक्रिया शुरू हुई जिससें भौगोलिक वातावरण अधिक स्वच्छ और मानव के अनुकूल था। ऐसे में पर्यावरण की शुद्धता का परिणाम ही मानव की सभ्यताओं के लिए अधिक उपयुक्त सिद्ध होता है।

पर्यावरण की शुद्धता के लिए आचार्य ऋषिगण आदि ने मानव संरक्षण का कार्य किया है। जीवन के अनेक पहलूओं में मूल्यों को संरक्षित करने के साथ मानव के जीवन और दिशाओं का परिणाम बनाये जा रहे हैं। ऐसी अनेक विसंगतियों का परिणाम ही मानव के लिए उपयुक्त होता जा रहा है। इन्हीं तथ्यों के साथ मानव की विचारधारा का परिणाम ही समाज और राष्ट्र के लिए अधिक औचित्य पूर्ण होने लगता है। जिसकी हम कल्पना नहीं कर सकते है। मानव का मूल्य ही पर्यावरण की स्वच्छता का सारर्थी है। जिसके कारण मानव की अनेक विसंगतियों का परिणाम ही मानव पर निर्भर करता है। जहाँ विचार और विहार दोनों की जिज्ञासा का परिणाम मानव की विचार धारा पर निर्भर करता है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में **पर्यावरण संरक्षण पर आधारित मानव मूल्यों का भौगोलिक अध्ययन** प्राथमिक और द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार पर शोध पत्र का निर्माण किया गया है। इसके साथ-साथ विद्वानों का मार्गदर्शन लिया गया है। शोध पुष्टि के लिए यथा उचित स्थान पर सन्दर्भित किया गया है। सन्दर्भ हेतु पत्र-पत्रिकाओं और जर्नल का भी प्रयोग किया गया है।

समस्या :

1. पर्यावरण संरक्षण ही मानवीय मूल्यों ही पौधों और मानव जीवन को बचा सकता है।
2. पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रत्येक व्यक्ति को कार्य करना चाहिए।
3. पौधों के सुरक्षित होने से ही मानव का जीवन सुरक्षित है।
4. हानिकारक गैसों के बनने का सबसे बड़ा कारण पर्यावरण का संतुलन विगड़ना है।
5. व्यक्ति भौतिक वादी होने के कारण वह अर्थ को प्राप्त करना चाहता है। उससे यह कोई मतलब नहीं की कितना नुकशान राष्ट्र और समाज का होगा। ऐसी अनेक विसंगतियाँ है।

उद्देश्य :

1. पर्यावरण संरक्षण की अधिक अवश्यकता है। जिससे मानव जीवन का मूल्य अधिक अपेक्षित है।
2. पर्यावरण के संरक्षण के लिए सभी व्यक्तियों को कार्य करना चाहिए।
3. पर्यावरण की जागरूकता से मानवीय मूल्यों में वृद्धि होती है। यहाँ तक मानव का जीवन भी पर्यावरण के संतुलन पर ही निर्भर करता है।
4. पौधों की अनियंत्रित कटाई पर रोक लगाना।
5. पौधों की अच्छी किस्मों को विकसित करने का अध्ययन करना।
6. पर्यावरण संरक्षण ही मानव जीवन की सबसे बड़ी सुरक्षा है।

पर्यावरण के मूल्यों को ऋग्वेद में देवताओं के रूपों में किया गया है। इससे अनेक पेड़ पौधों को भी संरक्षण मिला है। जिन पौधों को देवता माना जाता है। उन पौधों को लोग कम नुकसान पहुँचाते है। ऐसी अनेक विसंगतियों के परिणाम स्वरूप मानव का एक औचित्यपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करता है। जबकि इन देवनाओं की स्तुति तीन रूपों में की जाती है। वायु, जल, भूमि एवं अन्तरिक्ष देवता। इन सभी देवताओं का अत्यधिक महत्व है। जिनकी परम्परा और संवर्धन की शैली ने मानव जीवन का उपकार किया है। इन मूल्यों को संरक्षण और सवंर्धन हेतु मानव को पर्यावरण संरक्षण करना चाहिए। इसके अतिरिक्त अन्य देवताओं की स्तुति की जाती है – अग्नि, इन्द्र मरुत, वायु, सूर्य, सोम और वृहस्पति को।1

मानव पर्यावरण के इतिहास ने भौगोलिक वातावरण को औचित्यपूर्ण बनाया है। जहाँ जीवन और जगत् की अनेक समस्याओं का उत्पन्न होना भी स्वभाविक होता है। जिनके परिणामस्वरूप मानव और पर्यावरण का घनिष्ठ सम्बन्ध है। जबकि वर्तमान में व्यक्ति पूर्णत: रूपों में भौतिकवादी है। इन्हीं तथ्यों के परिणाम स्वरूप मानव और समाज की अनेक विसंगतियों को मानव समाज के लिए कार्य करना चाहिए। वहाँ पर्यावरण ही मानव को जीवन

* (भूगोल) ग्राम सुआ पोस्ट मढ़ी, तहसील अमरपाटन, जिला सतना (म.प्र.) भारत
**सह प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, रामपुर नैकिन, जिला सीधी (म.प्र.) भारत

की अनेक औचित्य पूर्ण तथ्यों को विचार दिया जाना चाहता है। वहाँ अनेक प्रकार की विसंगतियों का परिणाम ही समाज के सामने आते है।

इस प्रकार इन देवी और देवताओं से स्तुति की जाती थी। इसमें वर्षा के लिए भी देवताओं की पूजा-प्रार्थना करना पड़ता था। जिससे इस जगत् में वर्षा अधिक होने से अच्छी फसल होगी। जहाँ मानव का जीवन और जीव-जन्तुओं का भी जीवन सुखमय होगा। वातावरण को सुखद् रखने के लिए भी देवतों की स्तुति की जाती थी। यहाँ मानव मूल्यों को कृषि के उत्पादन पर निर्भर माना गया है। यहाँ तक जीवन की अनेक समस्याओं का योग कृषि कार्य व्यवस्था रही है। जहाँ मानव सुरक्षा और अन्यमय कोष तक की व्यवस्था पर निर्भर रहता है।[3] यहाँ मानव समाज का एक औचित्यपूर्ण योगदान भी मानव के सुखी जीवन की राह में कार्य करता हैं। यहाँ समय और समाज की कठिनाईयों का परिणाम ही समाज के सामने ही परीक्षण योग्य बना दिया है। वृक्षों की हरी-भरी शाखाऐं भी मानव जीवन के लिए उपयोगी सिद्ध हो रही है। इन वृक्षों में फल के भी स्वाद् पंक्षी और मानव दोनों को मिलता है। वैदिक काल से ही यह अवधारणा बनी रही है। जहाँ प्राकृतिक के अनेक स्रोतों का अधिक उपयोग करता रहा। जिसके कारण आज मिट्टी का क्षरण हो रहा है। खाद्यान्न और अन्य सामग्री भी प्रदूषित होती जा रही है। क्या यही मूल्य हैं। मानव का जिसके जीवन में सिर्फ नुकसान ही लिखा है। अनके विसंगतियों के परिणाम स्वरूप मानव की संवेदन शीलता का औचित्य भी भरा हुआ है।[4]

प्रकृति से हम उतना ही लेना चाहिए। जितनें में हमारा कार्य हो सके। प्रकृति असंतुलित न हो। यहाँ मानव जीवन का मूल स्वयं के जीवन से भरा पड़ा हुआ है। ऐसी अनेक विसंगतियों के परिणाम स्वरूप मानव का जीवन ही आज के विश्व जगत् का कारण बन गया है। ऐसी अनेक विसंगतियों के परिणाम स्वरूप उन्हें ही जीवन और जगत् के परिणाम का आनन्द मानव जीवन में ही मिलता है। जिसका उपयोग मानव ने जीवन जीने के लिए भी किया है।[5] वहाँ सम्पूर्ण समाज के औचित्य पर ही सबाल खड़े होते हैं। जहाँ समाज और विसंगतियों के लिए पृथ्वी ने मानव को बहुत कुछ दिया। किन्तु मानव ने क्या दिया यह अधिक विचारणीय विषय है। वहाँ समाज और संशय का विषय बन गया है। वहाँ विचारों और ऐतिहासिक परिदृश्य का परिणाम ही मानव की जिज्ञासा का परिणाम ही आरोपित करती है। जिसे हम पृथ्वी को माँ कहते है और मनुष्य उसके पुत्र हैं।[2] पर्यावरण का सम्बन्ध पेड़ पौधों और मनुष्य से है। वैदिक काल से ही अरण्य संस्कृति को ही स्वर्ण युग कहा जाता है। उन दिनों पर्यावरण की स्वच्छता का प्रमाण माना जाता था। इन्हीं वन देवी अर्थात् अरण्यानी भी कहा जाता था। इन देवियों की पूजा अर्चना भी की जाती थी। जिन्हें वन देवी के नाम से भी विभूषित किया जाता है। वन देवी प्रकृति के परिणाम को बताती है। जहाँ मानव की विसंगतियों के परिणाम स्वरूप मानव ने अध्यात्मिक जीवन जीना अधिक औचित्यपूर्ण मानने लगता है। सभ्यताओं के विकास ने नदियों के किनारे पौधों का निर्माण करते रहे हैं। वहाँ वृक्षों की छाया में मानव और पंक्षी को छाव के साथ पर्यावरण शुद्धता के प्रमाण मिलते है। अरण्य, तपोवन तथा कुंज क्रमशः ज्ञानास्थली, तपोस्थली के साथ कर्मस्थली के रूप में माना जाता है। भारतीय परम्पराओं में पीपल के वृक्ष की पूजा होती है। क्योंकि सबसे अधिक आक्सीजन पाई जाती है। जिसकी पूजा किया जाना मानव मूल्य के लिए अकिक मूल्यवान साबित हो रहा है। पीपल के वृक्षों के जडों मे ब्रह्म, तने में विष्णु और टहनियों के स्वरूप में शिव का वास होता है।[6]

निष्कर्ष – भारतीय परम्पराओं में वृक्ष को श्रेष्ठ पुत्र के रूप में माना गया है। जिसका मानना है कि यह सदैव कल्याणकारी होता है। महाभारत के अनुशासन पर्व में वृक्षों को मानव जीवन के सद्‌कर्मों के रूप में तारने वाला माना गया है। जिसका मूल रूप ही मानव की विचार शीलता का प्रमाण दिखाई देता है। ऐसी अनेक विसंगतियों के लिए यश प्राप्त होता है।[7] वैदिक काल और पौराणिक काल दोनों मे लोग प्रकृति पूजा पर विश्वास करते थे। क्योंकि सभी वस्तुओं का स्त्रोत प्रकृति ही है। यही प्रकृति की पूजा का परिणाम ही मानव जीवन के लिए अधिक श्रेष्ठ समझा जाता था। जहाँ पर्यावरण अधिक संरक्षित और प्रदूषण मुक्त था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ताज रावत, *प्राकृतिक पर्यटन विकास एवं बदलाव,* आकाशदीप पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ 37
2. के.एस. दोरियाल, *पर्यटन विकास एवं प्रभाव*, आशा बुक्स, सोनिया विहार, दिल्ली, 2010, पृष्ठ 65
3. मनुस्मृति 1/3/22
4. आर. ए. शर्मा, पर्यावरण शिक्षा, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, 2007, पृष्ठ 47-48
5. एस.एस. माथुर, शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा 1991, पृष्ठ 48
6. डॉ. अरूण रघुवंशी एवं डॉ. चन्द्रलेखा रघुवंशी, पर्यावरण प्रदूषण, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1993, पृष्ठ 20
7. पर्यावरण शिक्षा-डॉ. उषा मिश्रा, पृ. 77

****

मध्यप्रदेश में राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन का योगदान (मण्डला जिले के संदर्भ में)

डॉ. श्रीमति शुभांगी धगट* श्रीमति अनामिका तिवारी **

प्रस्तावना – राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन भारत देश में ग्रामीण स्वास्थव सुधार के लिए चलाया जा रहा एक स्वास्थ्य योजना है यह योजना 12 अप्रैल 2005 से शुरू की गई है। यह कार्यक्रम स्वास्थ्य मंत्रायल द्वारा एक मिशन के रूप में देश के लगभग सभी राज्यों में चलाया जा रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्व सुरक्षा हेतू केन्द्र सरकार की यह प्रमुख योजना है। इस योजना का उद्देश्य ऐसी प्रणाली विकसित करना है। जो सामूहिक स्वास्थ्य की होकर स्वास्थ्य लाभों का विकेन्द्रीकरण कर सकें। यह ग्रामीण क्षेत्रों में सुगमतासे वांछनीय और जवाबदेही वाली गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सुविधायें मुहैया करवाने से संबंधित है। मध्यप्रदेश राज्य में यह योजना सन् 2005 से निरंतर कार्यशील है एवं जनता को स्वास्थ्य सुविधाऐं पहुंचाने के प्रति निरंतर व गतिशील भी है। इस योजना के अंतर्गत जननी सुरक्षा कार्यक्रम, जननी एक्सप्रेस योजना, राष्ट्रीय बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम, राष्ट्रीय किशोर स्वास्थ्य कार्यक्रम, मिशन इंद्रधनुष, प्रधानमंत्री मातृत्व सुरक्षा योजना, आयुषमान भारत योजना आदि चलाई जा रही है। जिनका उद्देश्य मातृ मृत्युदर, शिशु मृत्यु दर, प्रजनन दर, में कमी लाना है। इस हेतु मिशन के अंतर्गत प्रत्येक ग्राम स्तर पर 1000 की जनसंख्या में एक आशा कार्यकर्ता की नियुक्ति की गई है एवं प्रत्येक ग्रामों में ग्राम आरोग्य केन्द्रों की स्थापना की गई है। जिसमें आशा कार्यकर्ता के माध्यम से ग्राम स्तर पर स्वास्थ्य सुविधायें सुनिश्चित की जाती है एवं 4 या 5 ग्रामों को मिलाकर उपस्वास्थ्य केन्द्र गठित किये गये हैं एवं विकासखण्ड स्तर पर सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र स्थापित किये गये हैं। प्रस्तुत अध्ययन हेतु मण्डला जिला जो कि एक आदिवासी (ग्रामीण) बाहुल्य जिला है को अध्ययन हेतु चुना गया है।

अध्ययन का क्षेत्र – प्रस्तुत अध्ययन हेतु मध्यप्रदेश के मंडला जिले को चुना गया है। इसमें राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन सन् 2005 से शुरू हुआ है। यहां जिले की कुल जनसंख्या में 57 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति निवास करती है। ग्रामीण बाहुल्य जिले में स्वास्थ्य सुविधायें कितनी फलीभूत हो रही है इसलिये इस क्षेत्र में यह अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन द्वारा मण्डला जिले में चलाई जा रही योजनाओं का अध्ययन करना।
2. स्वास्थ्य सुविधाओं को अपनाने हेतु ग्रामीणों की जागरूकता ज्ञात करना।
3. स्वास्थ्य सुविधाओं को बेहतर बनाने हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

समंक संकलन एवं शोध विधि :

1. प्रस्तुत अध्ययन में प्राथमिक समंकों के अंतर्गत व्यक्तिगत मौखिक, सक्षातकार जो कि विभिन्न चयनित ग्रामों में ग्रामीण एवं आदिवासी महिलाओं एवं परिवारों से लिया गया है। द्वितीय समंकों हेतु विभागीय बेवसाईड पत्रिका, समाचार पत्र, विभागीय आंकडे प्राप्त कर विश्लेषण कार्य किया गया है।
2. शोध विधि हेतु साक्षात्कार एवं प्रश्नावली का उपयोग किया गया है एवं इसमें ही विश्लेषण कार्य किया गया है।

निष्कर्ष

तालिका – 1

क्र.	वर्ष	योजना का नाम	कुल प्रसव प्रसव	संस्थागत	प्रतिशत
1	2011-2012	जननी सुरक्षा योजना	17643	12758	72
2	2012-2013		18624	16140	87
3	2013-2014		17768	14982	84
4	2014-2015		16364	13541	82
5	2015-2016		12157	10044	83

तालिका 2,3,4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट होता है कि, मंडला जिले में परिवार कल्याण कार्यक्रम के अंतर्गत विगत 5 वर्षो में नसबंदी, लूप, निवेशन, ओरलपिल्स यूजर्स की संख्या मे वृद्धि हुई है। समग्र रूप से इस कार्यक्रम मे प्रगती हुई है। परिवार नियोजन की दिशा मे लोगो के नजरिये में बदलाव आया है। सर्वेक्षण के दौरान 66 प्रतिशत आदिवासी परिवारो इसे उचित ठहराया है।

तालिका में स्वास्थ्य सुविधाऐं उपलब्ध कराने हेतु सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, उपस्वास्थ्य केन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं ग्राम स्तर पर ग्राम आरोग्य केन्द्र स्थापित किये गये हैं एवं उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि पिछले पांच वर्षो में मण्डला जिले में स्वास्थ्य सुविधाओं की स्थिति में अपेक्षाकृत बहुत सुधार आया है। नये उपस्वास्थ्य केन्द्रों का निर्माण हुआ है

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाकौशल कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

पोषण पुनर्वास केन्द्रों का निर्माण हुआ है एवं संस्थागत प्रसवों की संख्या में बढोत्तरी हुई है। जिससे गृह प्रसव कम हुआ है। इस कारण जननी एक्सप्रेस योजना जो ग्राम स्तर पर पहुंच कर गर्भवती महिलाओं को गर्भावस्था के समय जांच एवं प्रसव हेतु शासकीय अस्पताल में आशा कार्यकर्ता के माध्यम से ले जाती है। टीकाकरण कार्यक्रम के अंतर्गत 0 से 5 वर्ष तक के बच्चों के टीकाकरण हेतु प्रत्येक ग्राम एवं के मजरे टोले में आरोग्य केन्द्र के माध्यम से मिशन इंद्रधनुष कार्यक्रम चलाया जा रहा है जिसमें निरंतर चलित टीकाकरण कार्यक्रम मे छुटे हुये बच्चो को एक अभियान के तहत टीके लगाये जाते है। इससे जिले का टीकाकरण का स्तर 89 प्रतिशत पहुंच गया है। राष्ट्रीय किशोर कार्यक्रम के अंतर्गत किशोर एवं किशोरियों के साथ-साथ सभी प्रजनन आयु की महिलाओं का पोषण संबधी सलाह दी जाती है। जिससे आगे चलकर एनीमिया एवं बड़ी बिमारियो का सामना न करना पड़ें। जिले में पिछले 05 वर्षो परिवार नियोजन कार्यक्रम में सुधार आया है। इसमें सभी प्रकार के परिवार नियोजन साधनों को अपनाया है। इसी तरह राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के द्वारा विभिन्न राष्ट्रीय कार्यक्रमों जैसे राष्ट्रीय छय नियंत्रण कार्यक्रम ,राष्ट्रीय अंधत्व निवारण कार्यक्रम, मलेरिया उन्नमूलन कार्यक्रम, आदि कार्यक्रमो की उपलब्धियो में सुधार हुया हैं।राष्ट्रीय स्वास्थ मिशन एवं यूनिसेफ के द्वारा WASH IN HEALTH कार्यक्रम चलाया जा रहा है। जिसके द्वारा सभी 9 विकासखण्डो में स्थापित सामुदायिक स्वास्थ्या केन्द्र एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में साफ - सफाई, पेयजल, भवनो की स्थितियों में सुधार हुया है। यूनिसेफ से सहयोग प्राप्त कायाकल्प योजना के अंतर्गत भी नये भवन निर्माण एवं मरम्मत कार्य एवं स्वास्थ्य सुविधायो को बेहतर स्थिति प्रदान की जा रही है।

निष्कर्ष

तालिका - 5

क्रं.	विकासखंड का नाम	सर्वेक्षित परिवारो की संख्या	स्वास्थ्य सुविधायो को अपनाने हेतु जागरूकता का प्रतिशत
1	मंडला	174	75
2	मोहगांव	194	50
3	बिछिया	165	67
4	मवई	151	45
5	घुघरी	130	48
6	बीजाडांडी	165	71
7	नैनपुर	103	69
8	नारायणगंज	167	65
9	निवास	153	70

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि, परिवारो में स्वास्थ्य सुविधाये अपनाने हेतु जागरूकता में कमी आई है। स्वास्थ्य सुविधायों को अपनाने हेतु जागरूकता का अध्ययन करने के लिये प्रश्नावली एवं व्यक्तिगत साक्षत्कार विधि का प्रयोग किया गया है। जिसमें सभी 9 विकासखंडो के चयनित ग्रामो मे सें कुछ परिवारों का अध्ययन किया गया है। जिसमें सभी वर्ग के परिवार आते है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अभी-भी स्वास्थ्य सुविधायो को अपनाने हेतु जागरूकता मे कमी है। ग्रामीणो मे व्याप्त अंधविश्वासो एवं कुरीतियो के कारण वे अच्छे स्वास्थ्य को बेहतर तरीके से प्राप्त नही कर पा रहे है। एवं जिले कुछ विकासखंडो में ज्यादातर बैगा जनजाती भी निवास करती है। जो किसी भी प्रकार की स्वास्थ्य या अन्य शासकीय सुविधायो को अपनाने हेतु तैयार नही रहती है। ये जनजाति घर पर प्रसव करवाना ही सुरक्षित मानती है। ग्रामीण क्षेत्रो की आवासीय दशा निम्न स्तर पर होने के साफ-सफाई आदि की पर्याप्त व्यवस्था नही होती। ग्रामीण परिवार में भोजन संबधि अंधविश्वास देखा गया है। अध्ययन के दौरान यह देखा गया है कि ग्रामीण क्षेत्रो मे रहने वाले गर्भवती महिला अपने चारो और के सामाजिक वातावरण के प्रति जागरूक नही है तथा शासन द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं के लाभ से वंचित है। अनुसुचित जाती व जनजाति दोनो वर्गो का खानपान रहन-सहन सोचविचार लगभग समान देखा गया परन्तु स्वास्थ्य सुरक्षा के नजरिये से अनुसुचित जनजाति वर्ग ज्यादा पिछड़ा हुआ है। इस वर्ग को स्वास्थ्य के प्रति परामर्श की आवश्यकता है।

सुझाव - स्वास्थ्य एक ऐसा पहलु है जो देश एवं व्यक्ति के आर्थिक विकास में भागीदार होता है । राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के अतंर्गत चलाई जाने वाली योजनाये बेहतर तरीके से प्रदान की जानी चाहिऐ। समुदाय में व्याप्त कुरीतियो को दुर करने के लिए एवं और बेहतर तरीको ं से सुविधाओं को उपलब्ध कराने के लिए लोगो को शिक्षित करने की आवश्कता है। साथ ही उनके दैनिक क्रियाकलापो के बारे में स्वास्थ्यवर्धक जानकारी दी जानी चाहियें। इस अध्ययन के संदर्भ में सुझाव प्रेशित किये जा रहे है ।

1. प्रत्येक ग्राम स्तर पर स्वास्थ्य शिक्षा का सक्रिय ढंग से प्रचार प्रसार किया जाना चाहिये जैसे नारे लेखन माईकिंग आदि।
2. परिवार में वृद्धि होने पर होने वाले दुष्प्रभावों को बताये एवं परिवार नियोजन के बारे समझाना चाहियें।
3. आशा कार्यकर्ता का सक्रिय होना एवं उसे नविन योजनाओं के बारे में लगातार प्रशिक्षण प्राप्त हों।
4. किसी भी कार्यक्रम को एक अभियान की तरह लागू करें एवं प्रत्येक वर्ग को इसमें संलग्न करें।
5. हितग्राही मूलक योजनाओं का प्रचार प्रसार कर उसकी उपादेयता सुनिश्चित करना चाहिये।
6. कार्यक्रमों एवं उपलब्धियों की निरंतर समीक्षा एवं सुधार करते रहना चाहियें।
7. विभाग के उच्च अधिकारियों एवं जिला स्तर पर सतह सक्रिय निरीक्षण करना चाहियें।

इसके साथ-साथ ग्रामीण जनता को साफ-सफाई,पूरक पोषण आहार एवं नशामुक्ति हेतु प्रेरित करने की आवश्यकता है तभी संपूर्ण स्वास्थ्य का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी कार्यालय जिला मंडला द्वारा प्राप्त रिर्पोट।
2. राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन की विभागीय बेबसाईट।
3. भारतीय जनांकिकी।
4. एनएफएचएस सर्वे से प्राप्त आंकड़े।

तालिका - 2

क्र.	वर्ष	योजना का नाम	कुल जीवित जन्म	बी.सी.जी.	हेपे.0डोज	प्रतिशत
1	2011-2012	नवजात शिशु का टीकाकरण कार्यक्रम	17866	17269	17269	96
2	2012-2013		18760	18264	18264	97
3	2013-2014		17424	17326	17326	99
4	2014-2015		16030	15579	15579	97
5	2015-2016		11988	11896	11896	98

तालिका - 3

क्र.	वर्ष	योजना का नाम	कुल जीवितजन्म	पूर्ण टीकाकरण	प्रतिशत
1	2011-2012	पूर्ण टीकाकरण कार्यक्रम	18663	13556	72
2	2012-2013		17813	14343	80
3	2013-2014		16423	12140	73
4	2014-2015		18311	14315	78
5	2015-2016		19083	17121	89

तालिका - 4

क्र.	वर्ष	योजना का नाम	लक्ष्य	उपलब्धि	प्रतिशत
1	2011-2012	परिवार नियोजन कार्यक्रम	4100	2299	56
2	2012-2013		5000	3889	78
3	2013-2014		5200	3994	76
4	2014-2015		5700	4631	81
5	2015-2016		6500	5347	83

****

A Study on Relationship between Psychological Stress and Infertility in Female Population undergoing Infertility Treatments

Sumita Mathur * Prof. Usha Kothari **

Abstract - Infertility leads to significant levels of psychological distress. The study highlights the relationship between psychological stress and infertility in female population undergoing infertility treatment at various fertility centres. Data from 300 females was collected by using the questionnaire including general information and the Perceived Stress Scale (PSS). The results showed that stress was seen in all female who were undergoing infertility treatments. It can be concluded that stress not only plays major role in causing infertility but also with the rise in level of stress in an individual the complexity in the infertility treatment required also increases.
Key Words - Infertility, Stress, In Vitro Fertilisation (IVF), Intrauterine insemination (IUI).

Introduction - According to World Health Organisation (WHO), "Infertility is a disease of the reproductive system defined by the failure to achieve a clinical pregnancy after 12 months or more of regular unprotected sexual intercourse. A WHO evaluation of Demographic and Health Surveys (DHS) data (2004), estimated that more than 186 million ever-married women of reproductive age in developing countries were maintaining a "child wish", translating into one in every four couples. As per Segen's Medical Dictionary Lifestyle is defined as "the constellation of habitual activities unique to a person, which lend consistency to activities, behaviour, manners of coping, motivation and thought process, and define the way in which person lives; lifestyle activities include diet, level of physical activity, substance abuse, social and personal interactions" In a medical or biological context stress is a physical, mental, or emotional factor that causes bodily or mental tension. There are several other factors such as psychological stress, caffeine consumption, alcohol consumption and exposure to environmental pollutants that have been implicated but the evidence is equivocal (1). Studies indicate that female ovulation and sperm production may be affected by mental stress. If at least one partner is stressed it is possible that the frequency of sexual intercourse is less, resulting in a lower chance of conception. Infertility can have deeply underlying psychological causes, which are associated with motivation of parenthood and the success of medical treatment (2). It is said that certain lifestyle conditions such as diet imbalance, addiction to smoking or alcoholism, sedentary existence, or mental and emotional stress, all contribute to poor sperm count. Studies have shown lot of relation of infertility with the stress levels of females. Women who have experienced infertility report higher psychological distress. Infertility combined with involuntary childlessness (including biological and social) is associated with significantly greater distress. For women in this category, the risk of distress is substantial (3).

Methodology - A descriptive research was conducted on a total of 300 married women undergoing infertility treatments at the selected infertility centres. The study was conducted in the selected infertility centres and hospitals lying within the municipal limits of city of Jodhpur, Rajasthan. Permission was sought from the Directors of selected infertility centres of Jodhpur. Consent for the conducting the study was granted by three infertility centres. The patients were explained the purpose of the study and consent for the participation in the study was obtained from the subjects. Subjects were assured that anonymity and confidentiality would be maintained and that they can refuse to participate or withdraw from the study at any time. An Informed consent form was signed by the investigator and the subjects willing for participation in the study individually. The subjects were interviewed and information was filled by researcher in the form. The Perceived Stress Scale (PSS, Cohen, Kamarack & Mermelstein, 1983) is a classic stress assessment instrument with total of 10 questions. In each question, it's asked how often one felt or thought a certain way. Although some of the questions are similar, there are small differences between them and all treated each one as a separate question. For each statement, the answers were on 5 point scale as never, almost never, sometimes, fairly often, or very often. For scoring, each item was rated on a 5-point scale ranging from never (0) to

* Research Scholar, Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA
** Head of Department (Home Science) Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA

almost always (4). Positively worded items were reverse scored, and the rating was summed, with higher scores indicating more perceived stress. Individual scores on the PSS can range from 0 to 40 with higher scores indicating higher perceived stress. Scores ranging from 0-13 were considered low stress, from 14-26 would as moderate stress and scores ranging from 27-40 were considered high perceived stress. To analyze the data, the collected information was scored; coded, categorized and statistical analyses were performed with the statistical package for Social Science (SPSS, 19.0).

Result - The study covered information of 300 female undergoing infertility treatments. Regarding their age it was seen that 51% of female where lying in the age group of 25-30 years of age, 17% were in the age between 31 years and 35 years. It was also seen that infertility was also seen in female below 25 years and above 26 years of age as 25% and 7% respectively. On the contrary seeing the age of subject's husband it was noticed that 14% were above 36 years and only 4% were below 25 years. Maximum husbands (50%) were of age group 25-30 years. Looking at the number of years the couple has been married, 30% were married from less than 5 years and 25% were married from more than 10 years and were experiencing infertility. It was also seen that around half of the subjects (54%) got married even before they turned 20 years of age. The results also focus that around 60% of couples were trying for baby from more than last 3 years. Out of 300 subjects, 210 female were having primary infertility and rest had been pregnant before also. 73% of the subjects were non working home maker and the rest were in job having fixed (14%) and flexible (13%) working hours.

Table 1: Distribution of the sample according to demographic characteristics and fertility

		Frequency	Percentage (%)
Age of Subject	below 25 years	74	24.7
	25-30	154	51.3
	31-35	51	17.0
	36 and above	21	7.0
Age of Subject's Husband	below 25 years	12	4.0
	25-30	151	50.3
	31-35	94	31.3
	36 and above	43	14.3
Number of Years The Couple Has Been Married	Less than 5 years	89	29.7
	5-10 years	136	45.3
	More than10 years	75	25.0
Number of years since trying for baby	Last 2 yrs	74	24.7
	3-5 yrs	104	34.7
	More than 5 yrs	122	40.7
Type of Infertility	Primary	211	70.3
	Secondary	89	29.7
Work Status	Fixed Working Hours	41	13.7
	Flexible Working Hours	40	13.3
	Non Working (Home Maker)	219	73.0

The results of the present study showed that stress was seen in all female covered in the present study who were undergoing infertility treatments. The perceived stress scale categories stress in three levels: low, moderate and high. From the total population of 300 females undergoing treatment, 259 (86%) had moderate to high stress level and only 41 (14%) had no or low stress levels. Broadly it was observed that 102 (34%) of the sample had high stress levels.

Figure 1.1: Percentage of Level of Stress in Female Undergoing Infertility Treatments

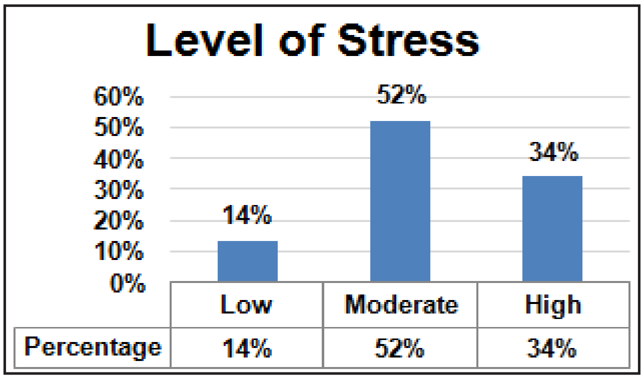

The samples were further categorized as per the treatments they were undergoing: Medication, Intrauterine insemination (IUI), Intra vitro fertilisation (IVF) and the level of stress were calculated for each treatment.

The study concluded that none of the samples undergoing medication had high levels of stress and moreover 42% had low levels of stress. Moderate stress level was observed in 61% of the samples with IUI treatment and 38% of these had high stress levels. Samples with IVF treatment had the highest level of stress, with 76% of samples having high stress levels and none of them had low stress levels. As per The Perceived Stress Scale (PSS) it was observed that females undergoing IVF treatment were having highest level of stress.

Figure1.2: Percentage of Stress Level as per the Type of Treatment

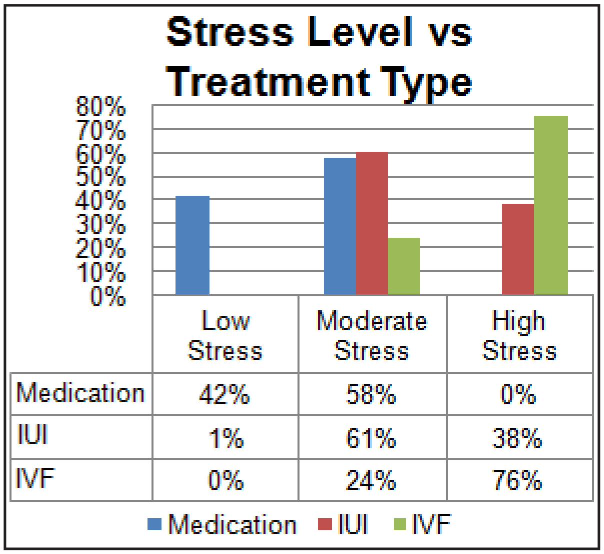

Discussion - The purpose of this study was to study the relationship between psychological stress and infertility in females undergoing infertility treatment. The present study attempted to examine psychological stress in females with infertility as a whole and also the level of stress depending on the type of treatment undertaken by them for infertility. The level of stress in the present study was examined using the Perceived Stress Scale (PSS). The levels were categorized as low stress, moderate stress and high stress depending on the answers of the questions.

The present study finding concludes that psychological stress and infertility has a positive relationship. One of the key findings of this study was that with the increase in stress levels the subjects had to undergo further levels of infertility treatments. Specifically it can be said that those with higher stress levels were undergoing more complex and advanced treatments like intrauterine insemination (IUI) and in vitro fertilisation (IVF). Females taking only medication were having least stress. Although many studies (4–6) over the past decades have focused on stress and infertility, the present study helps shed light on the effect of infertility on the level of stress experienced by females undergoing infertility treatments. A couple that is trying to conceive will certainly experience feelings of frustration, stress and disappointment if a pregnancy is not easily achieved. However, if the difficulties progress and the man and or woman are labelled as having fertility problems, then this may result in a severe insult to self-esteem, body image, and self-assessed masculinity or femininity (7) and this as a result causes stress in both. Similarly (8) studied that there is modest evidence for an association between distress during treatment and the outcome of the treatment itself. A study on psychological research within the context of in vitro fertilization (IVF) resulted that psychosocial factors, like stress, ineffective coping strategies, anxiety and/or depression are associated with a lower pregnancy rate following IVF-procedures (9)

The results from the present study were also in line with various past studies stating that psychological stress is one of the major factors causing infertility in female population.

Conclusion - Based on the study results it can be deduced that stress not only plays major role in causing infertility but also with the rise in level of stress in an individual the complexity in the infertility treatment required also increases. The present findings do not capture the whole population with infertility, and the conclusions of the study cannot be assumed to apply to all individuals dealing with infertility. Even though, it can be concluded that there is a positive relationship between psychological stress and infertility in female population undergoing infertility treatments.

References :-

1. Homan GF, Davies M, Norman R. The impact of lifestyle factors on reproductive performance in the general population and those undergoing infertility treatment: a review. Hum Reprod Update [Internet]. 2007 Jan 5 [cited 2015 Mar 10];13(3):209–23. Available from: http://humupd.oxfordjournals.org/cgi/content/long/13/3/209
2. Yakupova VA, Zakharova EI. Psychological Conditions of Parenthood Formation in IVF. Procedia - Soc Behav Sci [Internet]. 2014 Aug [cited 2015 Apr 16];146:112–7. Available from: http://www.sciencedirect.com/science/article/pii/S1877042814047508
3. McQuillan J, Greil AL, White L, Jacob MC. Frustrated Fertility: Infertility and Psychological Distress among Women. J Marriage Fam. 2003;65(4):1007–18.
4. Cooper BC, Gerber JR, McGettrick AL, Johnson J V. Perceived infertility-related stress correlates with in vitro fertilization outcome. Fertil Steril [Internet]. Elsevier; 2007 Sep 9 [cited 2015 Apr 11];88(3):714–7. Available from:http://www.fertstert.org/article/S001502820604708X/fulltext
5. Peterson BD, Newton CR, Feingold T. Anxiety and sexual stress in men and women undergoing infertility treatment. Fertil Steril. 2007;88(4):911–4.
6. Wasser SK, Sewall G, Soules MR. Psychosocial stress as a cause of infertility. Fertil Steril. 1993;59(3):685–9.
7. Cwikel J, Gidron Y, Sheiner E. Psychological interactions with infertility among women. European Journal of Obstetrics Gynecology and Reproductive Biology. 2004.
8. Wilson JF, Kopitzke EJ. Stress and infertility. Curr Womens Health Rep. 2002;2(3):194–9.
9. Eugster A, Vingerhoets AJJM. Psychological aspects of in vitro fertilization: A review. Social Science and Medicine. 1999.

****

बांसवाड़ा शहर के एक विकास खण्ड गढ़ी का चयन कर उसमें चल रही आनन्ददायी शिक्षा के अन्तर्गत पाठ्य सहगामी क्रियाओं का एवं इससे सम्बन्धित समस्याओं का अध्ययन करना

डॉ. दीपा त्रिवेदी *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में अध्ययन बांसवाड़ा शहर के एक विकास खण्ड गढ़ी का चयन कर उसमें चल रही आनन्ददायी शिक्षा के अन्तर्गत पाठ्य सहगामी क्रियाओं का एवं इससे सम्बन्धित समस्याओं के संदर्भ में अध्ययन किया गया है। शोध के लिये प्रस्तुत शोध अध्ययन में उपकरण के रूप में स्व-निर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है तथा न्यादर्श के रूप में बाँसवाड़ा जिले के आठ विकास खण्डों में से 5 विद्यालयों का चयन किया गया। प्रत्येक विद्यालय में से एक महिला एवं एक पुरूष शिक्षकों (कुल 10 शिक्षक) का चयन किया गया तथा 5 संस्थाप्रधानों का चयन किया गया। शोध परिणामों से प्राप्त हुआ कि आनन्ददायी शिक्षा प्रत्येक कक्षा के लिये अति महत्वपूर्ण एवं उपयोगी है। इस शिक्षा के द्वारा विद्यार्थियों में शैक्षिक प्रगति हो सकती है।

प्रस्तावना – शिक्षा प्राप्त करना प्रत्येक बालक का अधिकार है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षा के सार्वजनीकरण हेतु अनेक प्रयास किये गये, जिसमें आधिकारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा देने के विभिन्न आयाम यथा- प्रौढ़ शिक्षा, रात्रि पाठशालाएं, प्रहरी पाठशालाएँ, सर्व शिक्षा अभियान, सरस्वती बहन योजना, गुरू-मित्र योजना, लोक-जुम्बिश, बालश्रमिक योजना, शिक्षाकर्मी योजना, शिक्षा लहर योजना, डी.पी.ई. पी. योजना, नन्हीं कली योजना, आनन्ददायी शिक्षा योजना आदि हैं।[2]

भारतीय संविधान के 45वें अनुच्छेद में प्रारंभिक स्तर की शिक्षा नि:शुल्क और अनिवार्य रूप से देने का प्रावधान है। इसकी अनुपालना करने के सन्दर्भ में केन्द्र द्वारा राज्य सरकारों को निर्देश प्रदान किये गये कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 (संशोधित स्वरूप 1992) के अनुसार सभी शिक्षक पढ़ाये एवं विद्यार्थी पढ़े। 28 नवम्बर 2002 को 86वां संविधान संशोधक विधेयक पारित कर 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को उनके मौलिक अधिकार के रूप में धारा 21 ए के तहत् घोषित कर दिया गया। यह सब सामाजिक जागरूकता का परिचय माना जा सकता है और वर्तमान में शिक्षा का अधिकार कानून भी लागू कर दिया गया।

सीखना मानव का प्रकृति प्रदत्त अधिकार है। संसार की किसी वस्तु या परिस्थिति के सम्पर्क संसर्ग में आते ही वह स्वत: सीखता है। जन्म लेने वाले शिशु की स्तन चूसने की प्रक्रिया हमें यह बतलाती है कि सीखना व्यक्ति की जैविक आवश्यकता है। शिशु को प्रकृति ने इन्द्रियों का अद्‌भुत वरदान दिया है, जिससे वह स्वत: सीखता है।

पूर्व शोध का अध्ययन

श्रीवास्तव, प्रतिभा, मुंशी रघुनन्दन प्रसाद (2007): *'प्राथमिक शिक्षा में गुणात्मक सुधार'*, एक समीक्षा, सरदार पटेल महिला पी.जी. कॉलेज, बाराबंकी। प्राथमिक शिक्षा संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था की आधारशिला है। जिसका प्रभाव शिक्षा के सभी स्तरों पर परिलक्षित होता है। यह जीवन की बुनियाद है। जिस पर प्रगति की ईमारत खड़ी की जा सकती है। सारांशत: प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में जो निष्कर्ष उभरकर सामने आए वे इस प्रकार है- **1** प्राथमिक शिक्षा के अन्तर्गत बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि विद्यालयी वातावरण के विभिन्न घटकों पर निर्भर करती है। **2** प्राथमिक शिक्षा के विद्यार्थी अध्यापकों पर निर्भर रहते हैं। 3 वर्तमान पाठ्यक्रम 6 से 14 वर्ष के बच्चों के लिए बोझ है। **4** इस उम्र के बच्चे परीक्षा रूपी भूत से डरते है। **5** प्राथमिक विद्यालयों में शैक्षिक नवाचारों की जरूरत है। **6** पोषाहार, सहायक सामग्री की उपलब्धता, ढञ्च, बजट आदि प्राथमिक शिक्षा की लक्ष्य प्राप्ति के गुणात्मक मार्ग है। **7** 6 से 14 वर्ष के बच्चों को आनंददायी शिक्षा के अवसर प्रदान करके विकास संभव हो सकता है।

नागदा, बी.एल. (2008): *'नन्हीं कली कार्यक्रम की प्रभावशीलता एक अध्ययन'*, जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, उदयपुर। इस अध्ययन जो निष्कर्ष प्राप्त किए वे इस प्रकार है- धरियावाद क्षेत्र के 75 प्रतिशत विद्यालयों में तथा कोटड़ा एवं झाड़ोल क्षेत्र के शत प्रतिशत विद्यालयों में छात्राओं को किट उपलब्ध करवा दिए गए तथा गुणवत्ता की दृष्टि से सामग्री का स्तर अच्छा था। शत प्रतिशत छात्राओं ने पढ़ते समय किट की सामग्री का उपयोग नियमित करना बताया। सभी छात्राओं ने स्वीकार किया कि हमारे माता-पिता इस प्रायोजन से प्रसन्न एवं संतुष्ट है तथा बैग में किट की सामग्री भी सुरक्षित रहती है। अध्यापक जी शिक्षण के दौरान किट सामग्री का अधिकतम उपयोग करवाते हुए क्रिया आधारित शिक्षण करवाते हैं जो हमें अच्छा लगता है। शत प्रतिशत छात्राओं ने बताया कि इस परियोजना को चालू रखना चाहती है हमें परीक्षा में गुणात्मक एवं संख्यात्मक सुधार हुआ है। जिससे माता-पिता प्रसन्न है।

प्रेमा, पी. (2009): *'क्रिया आधारित अधिगम का अनुदेशनात्मक एवं विकासात्मक प्रभाव'*, पीएच.डी., अलगप्पा विश्वविद्यालय, तमिलनाडू। इस अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष इस प्रकार थे- (i) विद्यार्थियों के प्रवेश एवं अध्यापकों तक पहुँच में बढ़ोतरी दर्ज की गई। (ii) बालकों में समाजीकरण की प्रवृत्ति में बढ़ोतरी पाई गई। (iii) सहपाठियों की सहायता करने की प्रवृत्ति। (iv) स्व-सहायता कुशलता। (v) मानसिक-विराम। (vi) जिज्ञासु

* प्राचार्य, श्री गुरूहरिकिशन कालेज ऑफ एजुकेशन, रतलाम (म.प्र.) भारत

प्रवृत्ति। (vii) विद्यार्थियों का संपूर्ण अकादमिक प्रदर्शन।

समस्या का औचित्य – अनुसंधान कार्य की दृष्टि से इस समस्या पर भारत में कम शोध कार्य हुआ है। अत: यदि इस संदर्भ में शोध कार्य किया जाये तो अन्य अनुसंधानकर्ता इस ओर अपनी रुचि प्रदर्शित कर सकेंगे। यदि इस संदर्भ में शोध किया जाये तो सर्वाधिक लाभ विद्यालय को होगा। अध्ययन के पश्चात् यह स्पष्ट हो गया कि आनन्ददायी शिक्षा किस हद तक कारगर सिद्ध होती है।

समस्या कथन

बांसवाड़ा शहर के एक विकास खण्ड गढ़ी का चयन कर उसमें चल रही आनन्ददायी शिक्षा के अन्तर्गत पाठ्य सहगामी क्रियाओं का एवं इससे सम्बन्धित समस्याओं का अध्ययन करना।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत अध्ययन हेतु शोधार्थी द्वारा कुछ उद्देश्य निर्धारित किये गये, जिनका अनुसरण करते हुये सम्पूर्ण शोध कार्य किया गया–

1. आनन्ददायी शिक्षा में 'भविष्य हेतु सुझाव' क्षेत्र के सम्बन्ध में अध्यापकों, संस्थाप्रधानों, पर्यवेक्षकों तथा अभिभावकों का अभिमत ज्ञात करना।
2. आनन्ददायी शिक्षण के अन्तर्गत पाठ्य सहगामी क्रियाओं का अध्ययन करना।
3. आनन्ददायी शिक्षा के सम्बन्ध में भावी संभावनाओं का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पनाएँ :

1. पर्यवेक्षकों, संस्थाप्रधानों एवं शिक्षकों का आनन्ददायी शिक्षा में 'भविष्य हेतु सुझाव' के प्रति अभिमत में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
2. आनन्ददायी शिक्षण के अन्तर्गत पाठ्य सहगामी क्रियाओं के प्रति अभिमत में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
3. पर्यवेक्षकों, संस्थाप्रधानों एवं शिक्षकों का आनन्ददायी शिक्षा में 'भविष्य हेतु संभावनाएँ' क्षेत्र के प्रति अभिमत में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

समस्या का परिसीमन :

1. प्रस्तुत शोध बांसवाड़ा जिले के आठ विकास खण्डों में से गढ़ी विकास खण्ड के 14 संकुलों के 5 विद्यालयों में किया गया।
2. प्रस्तुत शोध में कक्षा 1–3 तक के विद्यार्थियों को ही शामिल किया गया।
3. प्रस्तुत शोध में आनन्ददायी शिक्षा के अन्तर्गत कक्षा 1 से 3 तक संचालित पाठ्यक्रम को समीक्षा तक सीमित रखा गया।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु न्यादर्श निम्न प्रकार से निर्धारित किया गया–

बाँसवाड़ा जिले के आठ विकास खण्ड़ों की सूची बनाकर यादृच्छिक विधि द्वारा एक विकास खण्ड का चयन किया गया। जिसमें से 5 विद्यालयों का चयन किया गया। प्रत्येक विद्यालय में से एक महिला एवं एक पुरूष शिक्षकों (कुल 10 शिक्षक) का चयन किया गया तथा 5 संस्थाप्रधानों का चयन किया गया। पर्यवेक्षकों के अभिमत जानने हेतु 5 पर्यवेक्षकों का चयन किया गया। अभिभावकों के अभिमत जानने हेतु कुल 10 अभिभावकों का चयन किया गया, जिसमें महिला व पुरुष अनुपात अनिश्चित किया गया।

शोध विधि – प्रस्तुत शोध में **'सर्वेक्षण विधि'** का प्रयोग किया गया।

उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में स्वनिर्मित साक्षात्कार प्रश्नावली का प्रयोग किया गया।

शोध प्रयुक्त तकनीकि (सांख्यिकी) – प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधार्थी द्वारा 'प्रतिशत' सांख्यिकी का प्रयोग किया गया।

निष्कर्ष – यहाँ उद्देश्यों के अनुसार दत्त विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष प्रस्तुत किये जा रहे हैं–

आनन्ददायी शिक्षा में 'भविष्य हेतु सुझाव' क्षेत्र के सम्बन्ध में अध्यापकों, संस्थाप्रधानों, पर्यवेक्षकों तथा अभिभावकों का अभिमत ज्ञात करना :

1. शत प्रतिशत पर्यवेक्षकों व संस्थाप्रधानों, 45 प्रतिशत शिक्षकों तथा 60 प्रतिशत अभिभावकों का अभिमत है कि भविष्य में आनन्ददायी शिक्षा अनवरत चलती रहेगी। 20 प्रतिशत अभिभावकों व 30 प्रतिशत शिक्षकों का मत है कि भविष्य में आनन्ददायी शिक्षा 10 वर्ष और चलेगी। 10 प्रतिशत अभिभावकों व 20 प्रतिशत शिक्षकों का मत है कि भविष्य में 5 वर्ष और चल सकेगी, परन्तु 10 प्रतिशत अभिभावकों व 5 प्रतिशत शिक्षकों का मानना है कि 5 वर्ष के भीतर आनन्ददायी शिक्षा बिल्कुल बंद हो जायेगी।
2. शत प्रतिशत संस्थाप्रधानों, पर्यवेक्षकों, शिक्षकों तथा 90 प्रतिशत अभिभावकों का अभिमत है कि भविष्य में आनन्ददायी शिक्षा का स्वरूप विकासात्मक होगा, परन्तु इसके विपरीत 10 प्रतिशत अभिभावकों का मत है कि शिक्षकों की कर्त्तव्यनिष्ठा की कमी के चलते आनन्ददायी शिक्षा का सम्प्रत्यय ही समाप्त हो जायेगा।
3. शत प्रतिशत शिक्षकों, पर्यवेक्षकों, संस्थाप्रधानों तथा अभिभावकों का अभिमत है कि आनन्ददायी शिक्षा का पाठ्यक्रम का स्तर उच्च हो पाएगा।
4. 40 प्रतिशत संस्थाप्रधानों, 60 प्रतिशत पर्यवेक्षकों, 98 प्रतिशत शिक्षकों तथा 84 प्रतिशत अभिभावकों का अभिमत है कि भविष्य में अध्यापकों का प्रशिक्षण सतत् हो जाएगा, परन्तु इसके विपरीत 2 प्रतिशत शिक्षक व 16 प्रतिशत अभिभावक इससे सहमत नहीं है।
5. 60 प्रतिशत संस्थाप्रधानों, 80 प्रतिशत पर्यवेक्षकों, 84 प्रतिशत शिक्षकों तथा शत प्रतिशत अभिभावकों का अभिमत है कि प्रशिक्षण में नवीनतम शिक्षा तकनीकि का प्रयोग होगा, परन्तु इसके विपरीत 40 प्रतिशत संस्थाप्रधान, 20 प्रतिशत पर्यवेक्षक तथा 10 प्रतिशत शिक्षक इससे असहमत है।
6. शत प्रतिशत संस्थाप्रधानों, पर्यवेक्षकों, शिक्षकों तथा अभिभावकों का अभिमत है कि भविष्य में बालक–बालिकाओं का नामांकन शत् प्रतिशत हो गया।
7. शत प्रतिशत संस्थाप्रधानों, पर्यवेक्षकों, शिक्षकों तथा 80 प्रतिशत अभिभावकों का अभिमत है कि भविष्य में विद्यार्थियों की शिक्षा व्यवस्था में बालक दण्ड के भय से मुक्त हो गया, परन्तु इसके विपरीत 20 प्रतिशत अभिभावक इससे असहमत है।
8. 40 प्रतिशत संस्थाप्रधानों, 60 प्रतिशत पर्यवेक्षकों, 58 प्रतिशत शिक्षकों तथा 82 प्रतिशत अभिभावकों का अभिमत है कि भविष्य में विद्यार्थियों पर से बस्ते का बोझ कम हो पायेगा, परन्तु 60 प्रतिशत प्रधानाध्यापक, 40 प्रतिशत पर्यवेक्षक, 32 प्रतिशत शिक्षक व 18 प्रतिशत अभिभावक इससे असहमत है।
9. 40 प्रतिशत संस्थाप्रधानों, 60 प्रतिशत पर्यवेक्षकों, शत प्रतिशत शिक्षकों तथा शत प्रतिशत अभिभावकों का यह मानना है कि भविष्य

ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

में आनन्ददायी शिक्षा हेतु सहायक सामग्री आधुनिक तथा पर्याप्त मात्रा में प्रदान की जाएगी, परन्तु इसके विपरीत 60 प्रतिशत प्रधानाध्यापक, 40 प्रतिशत पर्यविक्षक इससे असहमत है।

10. शत प्रतिशत संस्थाप्रधानों, पर्यवक्षकों, शिक्षकों तथा 84 प्रतिशत अभिभावकों का अभिमत है कि भविष्य में आनन्ददायी शिक्षा माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक कक्षाओं के लिए अपनी उपयोगिता सिद्ध कर पाएगी, परन्तु इसके विपरीत 16 प्रतिशत अभिभावक इससे असहमत है।
11. शत प्रतिशत संस्थाप्रधानों, पर्यविक्षकों, शिक्षकों तथा 84 प्रतिशत अभिभावकों का अभिमत है कि भविष्य में पर्यविक्षकों व अधिकारियों द्धारा पर्यविक्षण और अधिक सुझावात्मक, सुधारात्मक एवं नियमित हो गया, परन्तु इसके विपरीत 16 प्रतिशत अभिभावक इससे असहमत है।
12. 40 प्रतिशत संस्थाप्रधानों, 60 प्रतिशत पर्यविक्षकों, 58 प्रतिशत शिक्षकों तथा 68 प्रतिशत अभिभावकों का अभिमत है कि भविष्य में आनन्ददायी शिक्षा योजना के अन्तर्गत कार्यरत शिक्षकों पर शिक्षण कार्य के अलावा अन्य कार्यो का बोझ नहीं रहेगा, परन्तु इसके विपरीत 60 प्रतिशत प्रधानाध्यापक, 40 पर्यविक्षक, 42 प्रतिशत शिक्षक तथा 32 प्रतिशत अभिभावक इससे असहमत है।

आनन्ददायी शिक्षण के अन्तर्गत पाठ्य सहगामी क्रियाओं का अध्ययन करना – बच्चों को समय-समय पर मनोरंजन हेतु बाल-गीत, छोटी कविताएं आदि का सस्वर गायन कराया जाता है। साथ ही खेलों का आयोजन होता है, जिसमें विभिन्न प्रकार की दौड़, खो-खो, कबड्डी, वॉलिबॉल, गोलाफैंक, अत्याक्षरी आदि खेल खिलाये जाते हैं। गाँवों में रैली निकाली जाती है।

आनन्ददायी शिक्षा के सम्बन्ध में भावी संभावनाओं के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष

1. भविष्य में आनन्ददायी शिक्षा और अच्छी तरह से चल पायेगी।
2. शिक्षण हेतु अत्याधुनिक तकनीकों का प्रयोग किया गया।
3. बच्चों का नामांकन व ठहराव शत् प्रतिशत हो पायेगा।
4. सहायक सामग्री का स्तर उच्च हो पायेगा।
5. अध्यापकों को सतत् प्रशिक्षण दिया गया।
6. प्रशिक्षित अध्यापकों की ही नियुक्ति शिक्षक के रूप में की जायेगी।
7. आनन्ददायी शिक्षण के प्रति अभिभावक भी जागरूक हो सकेंगे।
8. उच्च माध्यमिक स्तर तक यह योजना लागू की जायेगी।
9. पोषाहार का स्तर सुधारने हेत विभिन्न प्रयास किये जायेंगे।

आनन्ददायी शिक्षा को प्रभावी बनाने हेतु सुझाव

1. अध्यापकों को शिक्षण कार्य के अतिरिक्त अन्य कार्य में संलग्न न किया जाए जैसे- पल्स पोलियो, टीकाकरण, राशन कार्ड बनाना, जनगणना करना, पशुगणना करना ताकि यह समय विद्यार्थियों को गुणवत्ता युक्त शिक्षा प्रदान करने में दिया जा सके।
2. अभिभावकों में शिक्षा के प्रति जागरूकता लाने के लिए समय-समय पर स्लोगन, पोस्टर, चिकित्सा, स्वास्थ्य, पर्यावरण सम्बन्धी जागरूकता पैदा की जाए।
3. विद्यार्थियों को खेलकूद, साहित्यिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय कार्यक्रमों तथा विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए प्रेरित कर प्रोत्साहन हेतु पुरस्कृत किया जाए।
4. पोषाहार कार्यक्रम की गुणवत्ता एवं विविधता को बेहतर बनाया जाए।
5. विद्यार्थियों पर से बस्ते का बोझ कम किया जाए तथा खेल-खेल में शिक्षण की व्यवस्था की जाए।
6. विद्यालयों की गाँव से दूरी कम की जाय।
7. विद्यालय को भयमुक्त वातावरण में तब्दील किया जाए।

शैक्षिक निहितार्थ

संस्थाप्रधान, पर्यविक्षक एवं अध्यापकों की दृष्टि से – सरकार ने आनन्ददायी शिक्षा की संकल्पना को ध्यान में रखकर जिन उद्देश्यों का निर्माण किया है, यदि उसके अनुसार क्रियान्विति की जाए और सभी अपने कर्तव्यों व दायित्वों का पालन ईमानदारी एवं कर्तव्यनिष्ठा से करें तो नि:सन्देह इसके परिणाम आवश्यकतानुरूप प्राप्त हो सकते हैं।

राज्य सरकार की दृष्टि से – राज्य सरकार के प्रयास शिक्षा को आनन्ददायी, प्रभावी तथा गुणवत्ता युक्त बनाने हेतु होने चाहिए। इस हेतु सरकार विभिन्न योजनाएं बनाने के साथ-साथ क्रियान्विति भी करें तभी गिजूभाई की सुझायी आनन्ददायी शिक्षा राजस्थान में ही नहीं अपितु पूरे देश में अपनी अमिट छाप बना सकती है, किन्तु इसके लिए सरकार को उदारता से व्यय करना होगा और समय-समय पर क्रियान्विति की समीक्षा कर तद्धरूप परिवर्तन एवं परिवर्द्धन करना होगा।

भावी अनुसंधान हेतु सुझाव

1. राजस्थान एवं गुजरात में चल रही आनन्ददायी शिक्षा की क्रियान्विति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. राजस्थान एवं मध्यप्रदेश में चल रही आनन्ददायी शिक्षा की क्रियान्विति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. 'नन्हीं-कली योजना' की क्रियान्विति का समीक्षात्मक अध्ययन करना।
4. 'शिक्षा-लहर योजना' की क्रियान्विति का समीक्षात्मक अध्ययन करना।
5. डी.पी.ई.पी. एवं आनन्ददायी शिक्षा योजना की क्रियान्विति का समीक्षात्मक अध्ययन करना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आनंद, कु. अरूणा, (1982), 'प्रायोगिक योग शिक्षा' आनंद प्रकाशक, नई-दिल्ली, प्रथम संस्करण।
2. ओड., लक्ष्मीलाल के (1990), 'शिक्षा के नूतन आयाम' जयपूर राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
3. राय, पारसनाथ (1993), 'अनुसंधान परिचय', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
4. राय, पारसनाथ (1999): अनुसंधान परिचय, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा -3।,
5. त्रिपाठी, लालवचन (2002); 'मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतियाँ', एच. पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा।
6. सारस्वत, मालती (2003), शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा, लखनऊ, आलोक प्रकाशन।
7. कुलश्रेष्ठ, एम.पी. (2005), शिक्षा मनोविज्ञान आर.लाल बुक डिपो मेरठ
8. भटनागर, ए. बी. एवं भटनागर, मीनाक्षी (2005); 'मापन में सांख्यिकी'; विनय रखेजा, मेरठ,।
9. शर्मा, आर.ए (2006), शिक्षा अनुसंधान आर.लाल बुक डिपो मेरठ।
10. शर्मा, जी., और भार्गव (2006), शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा, एच.पी. भार्गव बुक हाउस

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Women's Political Participation in India : Global to National

Dr. Kaniya Meda*

Introduction - From the local to the global level, women's leadership and political participation are restricted. Women are underrepresented as voters, as well as in leading positions, whether in elected office, the civil service, the private sector or academia. This occurs despite their proven abilities as leaders and agents of change, and their right to participate equally in democratic governance. Women face several obstacles to participating in political life. Structural barriers through discriminatory laws and institutions still limit women's options to run for office. Capacity gaps mean women are less likely than men to have the education, contacts and resources needed to become effective leaders. As the 2011 UN General Assembly resolution on women's political participation notes, "Women in every part of the world continue to be largely marginalised from the political sphere, often as a result of discriminatory laws, practices, attitudes and gender stereotypes, low levels of education, lack of access to health care and the disproportionate effect of poverty on women." Individual women have overcome these obstacles with great acclaim, and often to the benefit of society at large. But for women as a whole, the playing field needs to be level, opening opportunities for all.[1]

No doubt today, there is considerable increase in the percentage of women as voters. The participation of women as voters is almost equal to men. But the political participation (as a whole) of the women is not equal to men and so they are still not able to get a share equivalent to men in organisation that require decision making. Still politics is dominated by men at every level of participation and women have not been regarded as significant part of the political arena. The representation of women as policy formulators and decision makers in the legislative bodies is very low. In legislative bodies women have been demanding more space but most nations in the world have failed in providing due space as well as representation to women in their political system.

Thus, from local level to global level, leadership and participation of the women in the political fields are always compromised. Women are always underrepresented in leading positions, whether in civil services, academia, elected offices or private sector. Such kind of situation prevails despite their abilities and capabilities which has been proved as leaders and their right of participating at par with men in democratic governance. Women are moving equally with men only in a handful of countries, like Germany, Sweden, Norway, Denmark and Finland. In these countries, substantial inroads are being made by the women into decision making process. Female presence in legislature remains small and relatively insignificant in the advanced countries like Western Europe and North America. It is indicated by the statistics (2010) that the world average of representation of women in legislature is 19.1%, in both the houses combined. It is 19.3% in lower house and 18.2% in upper house. As of 1 October, 2013, only 21.4 percent of national parliamentarians were women, a slow increase from percentage in 2010.[2]

Chart No. 1 (see in last page)

According to the data released by the Inter-Parliamentary Union (IPU), an international group that works for promoting democracy, peace and co-operation in the world. India lags behind many countries, including its neighbours Pakistan and Nepal, when it comes to women's participation in politics. This being the dismal scenario, we were curious to see how India held up against the rest of the world in women's representation. Women in national parliaments (directly elected lower Houses) across the world from the Inter Parliamentary Union, an international organisation of Parliaments, to situate India's position on this yardstick. So where does India figure in the world rankings? Way down at 103 among the 141 ranks listed for 190 countries that we have data for. That is hardly a position to be proud of![3]

Worldwide, the highest percentage of women in the parliament is in Rwanda. Women there in the lower house, have won 56.3 percent of the seats. As of October 1, 2013, there are: Nordic countries at 42%, followed by America at 24.8%, Europe (excluding the Nordic Countries) at 22.8%, Sub-Saharan Africa at 21.1%, Asia at 19.1%, Arab States at 17.8% and the lowest in the Pacific at 13.1%. For representation of women in political arena, 30% is extensively considered the "critical mass" mark. This benchmark had been obtained by 37 countries including 11 in Africa as of 1 October 2013. Some form of quotas had been applied by 29 countries out of the 37 countries opening space for the political participation of women. 24.6

* Lecturer, SOS in Political Science and Public Administration, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

percent of the seats are held by women in countries with proportional electoral systems. Using the plurality majority electoral system and a missed system, this compares with 18.5% and 21.5% respectively. Among the individual countries, the first rank was of Rwanda with 56.3% of women in the parliament, followed by Andora at 50%, Cuba at 48.9% and Sweden with 44.7.0%.

Comparatively, our neighbouring countries such as China and Pakistan are in much better position regarding representation of women in various legislatures with 23.4% and 20.7% respectively. However, at parliamentary floor, the representation of Indian women is still far from satisfactory. India ranks 110th in the world according to the data released by the Inter-Parliamentary Union, an international group that works for the promotion of democracy, peace and co-operation in the world. The above-stated statistics reveal that India lags behind many countries including its neighbouring countries Pakistan, China and Nepal, when it comes to women's participation in the politics.[4]

Chart No. 2 (see in last page)

Disappointed by the grimness, if we look closer home in the South Asia region. Surely, India stands tall here, given it's leadership and usually better record of democracy in the SAARC region? Turns out, no. Just one glance at the graph no. 2 above, know how far down India is in where women parliamentarians are concerned. Of the 8 SAARC countries, India's position is a ignominious 5th. Nepal with 29.5% women leads the SAARC group, followed by Afghanistan with 27.7% MPs. Pakistan and Bangladesh at 20% each, ensure much better representation for women in their parliament. There is some catching up to do for India within the region to ensure gender equity in the highest elected body of the country.

Chart No. 3 (see in last page)

When SAARC offered no solace, look at the BRICS countries and India's position therein. BRICS, the emerging power pack of Brazil, Russia, India, China, and South Africa. India, here, stands 4th among these countries, with only Brazil with a mere 9% women, that fares worse than us. South Africa, which is among the top ten countries in the world in terms of the number of women MPs could perhaps offer some valuable lessons to the rest in the group.[5]

Women have, however, not found adequate representation in the Lok Sabha. The percentage of elected women Lok Sabha members has never exceeded 12 per cent. Table 1 shows representation of women in Lok Sabha since 1952. Average number of women representation in Lok Sabha works out to only 36.87 and average percentage of women representation in Lok Sabha is not more than 6.91 per cent.

Table 1 : Women Presence in the Lok Sabha

Year	Seats	Women MPs	% of Women MPs
1952	499	22	4.41
1957	500	27	5.40
1962	503	34	6.76
1967	523	31	5.93
1971	521	22	4.22
1977	544	19	3.29
1980	544	28	5.15
1984	544	44	8.9
1989	517	27	5.22
1991	544	39	7.17
1996	543	39	7.18
1998	543	43	7.92
1999	543	49	9.02
2004	543	45	8.03
2009	543	59	10.86
2014	543	61	11.23
Average	**531.6**	**36.87**	**6.91**

Source: Election Commission of India

Table 2 : Women Presence in the Rajya Sabha

Year	Seats	No. of Women	% of Women
1952	219	16	7.3
1957	237	18	7.6
1962	238	18	7.6
1967	240	20	8.3
1971	243	17	7.0
1977	244	25	10.2
1980	244	24	9.8
1985	244	28	11.4
1990	245	38	15.5
1996	223	20	9.0
1998	223	19	8.6
2004	245	27	11.1
2009	245	22	8.97
2014	245	29	11.83
Average	**238.21**	**22.92**	**9.62**

Source: Election Commission of India

The presence of women in the Upper House has been only slightly higher overall, probably due to indirect elections and nomination of some women members. It was highest in 1990 at 15.5 per cent and shows a declining trend thereafter. Nonetheless, this representation does not even come close to the 33 per cent marks (Table 2). It is significant to note that the Deputy Chairperson of the Rajya Sabha at least for more than 25 years has been a woman, yet women face increasing competition from male politicians for nomination.

Table 3 : Women Contestants

Year	Male	Female	Total	% of Male Winning	% of Female Winning
1952	1831	43	1874	26.05	51.16
1957	1473	45	1518	31.7	60.00
1962	1915	70	1985	24.0	50.00
1967	2302	67	2369	21.3	44.80
1971	2698	86	2784	18.5	24.40
1977	2369	70	2439	22.1	27.10
1980	4478	142	4620	11.5	19.7
1984	5406	164	5574	9.2	25.60
1989	5962	198	6160	8.5	13.60
1991	8374	325	8699	5.9	12.00
1996	13353	599	13952	3.8	6.70

1998	4476	274	4750	11.2	15.70
1999	3976	278	4254	12.3	17.30
2004	5080	355	5435	9.8	12.30
2009	2514	556	8070	6.44	10.61
2014	7527	636	8163	6.39	9.74

Source: Election Commission of India

The number of women contesting election has always been low, as may be seen from Table 3. The highest number of women contestants has been merely 636 in 2014, while the number of male contestants has always been in thousand, the highest being 13,353 in 1996. Yet it is encouraging to note that the percentage of winners among women has consistently been more than that of the men, notwithstanding the fact that more often than not, the losing seats are offered to women candidates by the respective political parties. For example, in 1996, only 3.8 per cent of male candidates won, in comparison to 6.7 per cent of female candidates. Likewise, the percentage of winners was 11.2 per cent for men and 15.7 per cent for women in 1998, 12.3 per cent and 17.3 per cent in 1999, 6.44 per cent and 10.61 per cent in 2009 and 6.39 per cent and 9.74 per cent, respectively in 2014 (16th Lok Sabha).

This scenario is also typically at the state level. There are only a few instances of women holding portfolios of finance, industry, etc., and are mainly relegated to what are considered 'women specific' departments. The source reveals that the highest percentage of women in the State Legislative Assemblies has been 10.8 per cent in 1957 in Madhya Pradesh. Haryana has had the highest average of women in the Assembly at 6.1 per cent and Manipur, the lowest at 0.3 per cent. The period average varies between a mere two per cent and six per cent. Significantly, there seems to be slight or no correlation between literacy and female representation. Kerala, with its high literacy rate, has a low state average of 3.6 per cent. Even Rajasthan and Bihar has higher averages at 4.7 per cent and 4.5 per cent respectively.

The representation of women in the Union Council of Ministers between 1985 and 2014 is shown in the table 4. The data show that women have remained poorly represented in Council of Ministers.[6]

Table 4 (see in last page)

India as a welfare State is committed to the welfare and development of its people in general and of vulnerable sections in particular. Though Indian Constitution and various other legislative enactments and different Commissions established for women from time to time have made a number of efforts for the achievement of the objective of gender equality, yet in actual practice, due rights are denied to women and they continue to be the victims of male domination. Violations of the rights of the women continue in practice. The women are lacking in position and power and are over represented amongst the poor.[7]

As a result, women lack in political participation, educational achievements thereby showing under-representation in employment spheres. It means that the planned efforts to emancipate women educationally, economically and particularly politically did not yield the desired results over the decades after independence. For this sorry state of affairs, many other factors are also responsible. History of freedom movement indicates very clearly that there was participation of a large number of women in that freedom movement. However, after that it went on decreasing due to the disappearance of the ideology of the Nehru-Gandhian era. The sharp decline in juvenile sex ratio; continuing high maternal mortality rate and infant mortality rate; high gender gap in literacy at all levels; high rate of dropouts of girl students; and increasing incidence of crime against women; inadequate access of women to the property rights and employment opportunities; and their less political participation and undernourishment raises many questions about the role of institutional machinery to implement the law.

References :-

1. http://www.unwomen.org/en/what-we-do/leadership-and-political-participation#sthash.TeXfahN1.dpuf.
2. Anita Chadha, "Political Participation of Women: A case study in India", OIDA International Journal of Sustainable Development, 07: 02, 2014, p.104.
3. https://factly.in/women-in-parliament-where-does-india-figure-among-the-rest-world/
4. Inter-Parliamentary Union, "Women in National Parliaments: World Average", http//:www.ipu.org/wmn-e/world.html
5. https://factly.in/women-in-parliament-where-does-india-figure-among-the-rest-world/
6. Kuldeep Fadia, "Women's Empowerment through Political Participation in India" Indian Institute of Public Administration, Vol. LX, No. 3, July-September, 2014, pp.543-546.
7. Anita Chadha, "Political Participation of Women: A case study in India", op.cit. p.105.

Chart No. 1 : Women Representation in India- Global Scale

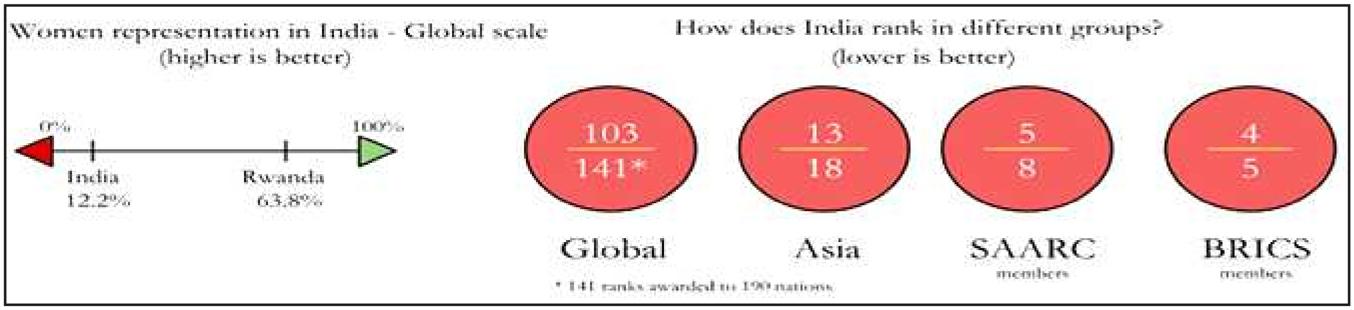

Source: www.faclity.in

Chart No. 2 : SAARC: Indian Women Representation in %

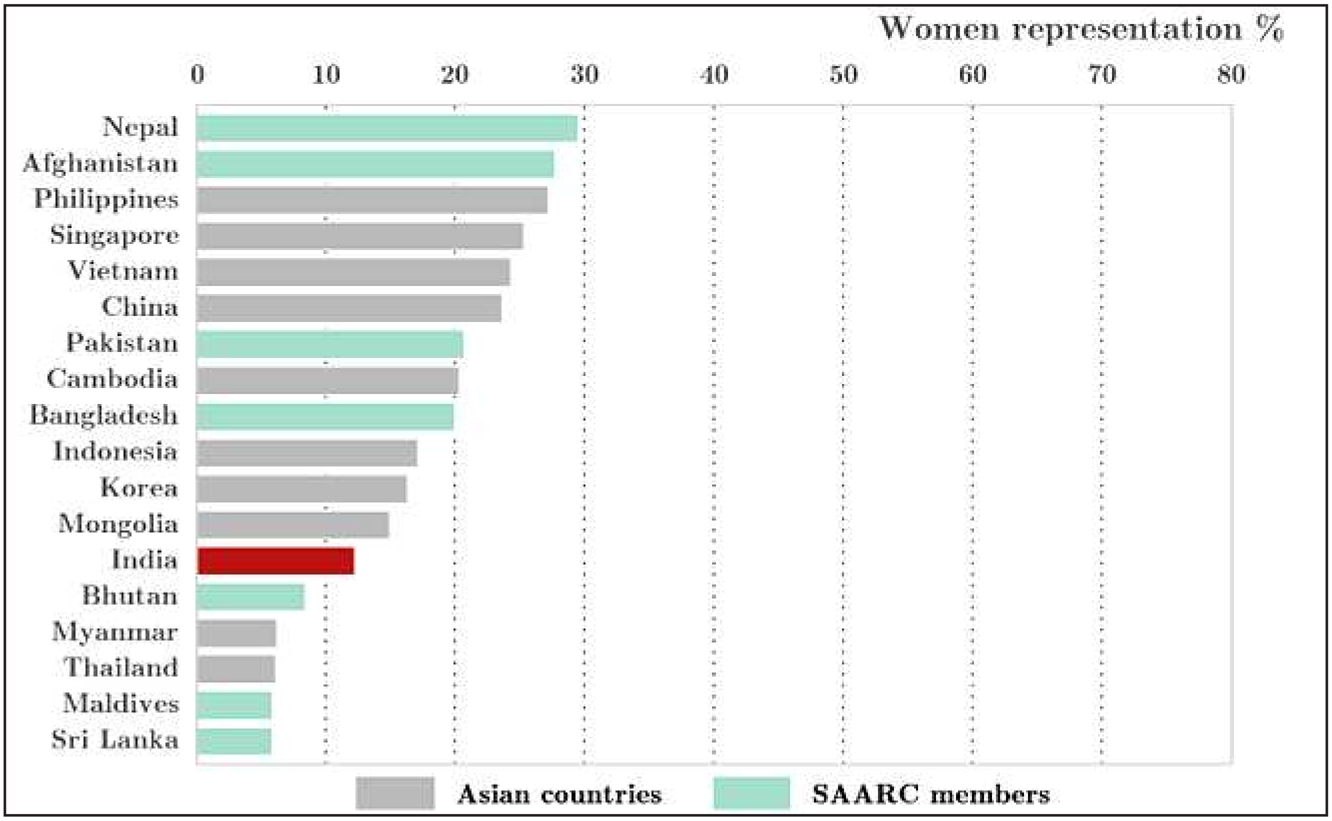

Source: www.faclity.in

Chart No. 3 : BRICS: Indian Women Representation in %

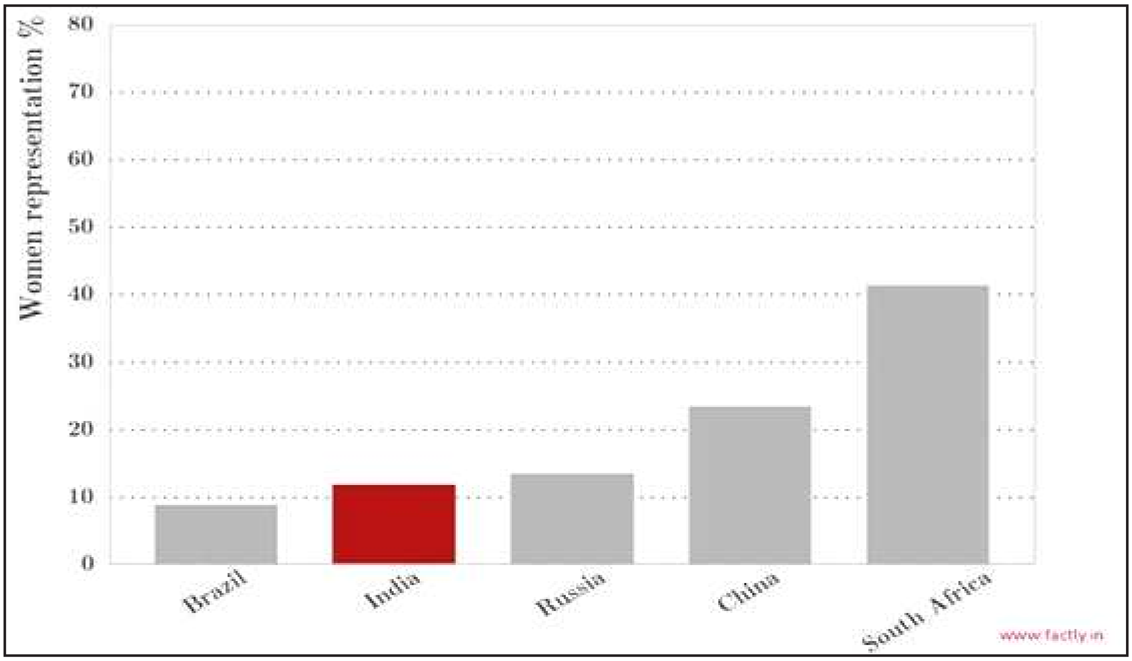

Source: www.faclity.in

Table 4 : Representation of Women in the Union Council of Minister (1985-2014)

Year	Number of Ministers			Number of Women Ministers		
	Cabinet Minister	Minister of State	Deputy Minister	Cabinet Minister	Minister of State	Deputy Minister
1985	15	25	0	1	3	0
1990	17	17	5	0	1	1
1995	12	37	3	1	4	1
1996	18	21	0	0	1	0
1997	20	24	0	0	5	0
1998	21	21	0	0	3	0
2001	30	7	35	3	2	4
2002	31	45	0	2	5	0
2004	28	38	0	1	6	0
2009	34	45	0	3	5	0
2014*	23	23	0	6	1	0

*** First phase of Narendra Modi's Council of Ministers, which took oath on May 26, 2014.**

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

संगीत जगत के नवसृजीत कलाकार - संस्थाओं की देन

डॉ. स्वाती तेलंग *

प्रस्तावना - 'एकै साधे सब सधै ' — कविवर रहीम की यह उक्ति संगीत के संदर्भ में सटीक है। संगीत साधना का असर जीवन के हर पहलू पर पड़ता है और व्यक्तिव को पूरी तरह बदल देता है। हमारा भारत सांस्कृतिक एकता व अखण्डता का प्रतीक है। यहाँ समय समय पर विभिन्न गतिविधियाँ होती है। जिसमें संगीत का महत्वपूर्ण स्थान है। यहाँ हम संगीत की तीनों विधाओं (गायन, वादन, व नृत्य) की बात कर रहे है। इस संगीत परम्पराओं को आगे बढ़ाने में यहाँ की सरकारी, गैर सरकारी और व्यक्तिगत संस्थाओं का विशेष योगदान रहा है। सम्पूर्ण भारत वर्ष में प्रतिवर्ष कला जगत के अनेक नवीन कलाकार चर्चा में आते है। उन सभी कलाकारों के उदय होने के पीछे किसी न किसी संस्था का आधार तथा संस्था गुरूओं की मेहनत है, क्योकि गुरू के बिना कोई भी शिक्षा अधूरी है।

आरम्भ में घरानेदार कलाकारों द्वारा संगीत शिक्षा 'गुरू - शिक्षा परम्परा' के तहत ग्रहण करना ही संभव था, परन्तु व इतना आसन नही था। वर्षो गुरूजी के साथ रहकर उनकी आज्ञा पालन करके लम्बी समयावधी में शिष्य अपने गुरू से शिक्षा प्राप्त कर पाता था। परन्तु वर्तमान समय में ऐसे शिष्य मिलना असंभव है। आधुनिक युग में शिक्षण के क्षैत्र में संस्थागत प्रणाली का विकास हुआ जिसके फलस्वरूप संगीत शिक्षा प्राप्त करना संगीत रसिकों के लिये सुगम हो गया। संगीत में रूची रखने वाला विद्यार्थी असानी से इच्छित संस्था में प्रवेश लेकर अपना शिक्षण पूर्ण करने में समर्थ हो गया संगीत की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। इस परम्परा को आगे बढ़ानें में यहाँ की सरकारी, गैर सरकारी व व्यक्तिगत संस्थाओं का विशेष योगदान रहा है। इन संस्थाओं से प्रतिवर्ष कई छात्र-छात्राएँ संगीत (गायन, वादन, नृत्य) की उपाधि लेकर उत्तीर्ण हो रहे है। इन सस्थाओं के माध्यम से छात्र डिप्लोमा कोर्स, डिग्री कोर्स, करके रोजगार के अवसर का लाभ ले रहे है और साथ ही संगीत के प्रति लोगो के मन में रूचि भी उत्पन्न हो रही है। संस्थाओं के माध्यम से जो संगीत कही गुम होता जा रहा था, उसे पुन: नया जीवन मिला है और आज उसका एक उच्च स्थान है।

संस्थाओं में संगीत की सभी विधाओं की शिक्षा दी जाती है। इस तरह एक ही स्थान पर समस्त विधाओं को सीखा जा सकता है। इन संस्थाओं में संगीत से संबंधित पुस्तके भी उपलब्ध रहती है। सम्पूर्ण भारत वर्ष में ऐसी अनेक संस्थाऐं है, जो संगीत के प्रचार-प्रसार में अपना योगदान दे रही है।

पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर, पंडित विष्णु नारायण भातखण्डे, गुरूदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर, कवी वल्लथोल नारायण मेनन, रूक्मिणीदेवी अरूण्डेल, मेडम मेनका, उदयशंकर आदि अनेक विभूतियों ने अपना सम्पूर्ण जीवन भारतीय संगीत के उत्थान के लिये समर्पित कर दिया। उन्हीं के सतत् प्रयासों का परिणाम है कि भातखण्डे हिन्दुस्तानी संगीत महाविद्यालय, गांधर्व महाविद्यालय, प्रयाग संगीत समिति, शान्ति निकेतन, कलाक्षैत्रम, केरल कला मण्डपम जैसी आदर्श संस्थाऐं अस्तित्व में आई।

शिक्षण, सृजन व प्रदर्शन का एक नया दौर चला जिससे सम्पूर्ण विश्व हमारी महान सांगीतिक परम्परों से परिचित हो सका।

हमारी राष्ट्रीय सरकार में कला, साहित्य संस्कृति की महत्ता को स्वीकारा तथा उसकी उन्नती के लिये केन्द्र तथा प्रदेशों में पृथक से सांस्कृतिक विभागों की स्थापना की, जो विभन्न प्रकार की सांस्कृतिक गतिविधियों तथा संस्थाओं का संचालन करता है।

सन् 1953 में भारत सरकार द्वारा संगीत नाटक अकादमी की स्थापना की गई जो राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न प्रकार की गतिविधियों को प्रोत्साहित करती है। इसी आधार पर राज्य सरकार द्वारा भी प्रान्तीय स्तर की संगीत नाटक अकादमी की स्थापनाएँ की गई। दिल्ली कथक केन्द्र के समान ही कथन नृत्य के दो प्रमुख घराने जिन नगरों के नाम से जाने जाते है, यानि लखनऊ व जयपुर में वहाँ की सरकार ने कथक केन्द्रों की स्थपना की। मध्यप्रदेश सरकार ने भी रायगढ़ की कथक परम्परा को प्रोत्साहित करने हेतु भोपाल में चक्रधर नृत्य केन्द्र स्थापित किया। इसी प्रकार संगीत संबंधी अकादमियाँ और संस्थान जैसे-उस्ताद अलाउद्दीन खाँ संगीत अकादमी (भोपाल), राजस्थान संगीत संस्थान, भारत भवन (भोपाल) जवाहर केन्द्र (जयपुर) इन्दिरा गाँधी सेंटर फार, आर्टस आदि ललित कलाओं को समर्पित देश के प्रथम विश्वविद्यालय इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय की स्थापना सन् 1956 में खैरागढ़ में हुई। रविन्द्र भारती विश्वविद्यालय कलकत्ता में स्थापित हुआ। इसी प्रकार देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में क्रमश: संगीत विभाग स्थापित हुए। संगीत व नृत्य शिक्षा के क्षेत्र में अनेक निजी संगीत व नृत्य विद्यालय चल रहे हैं जिनमें से कुछ संस्थाओं ने तो अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति भी अर्जित की है तथा अनेक उच्च कोटि के कलाकार दिये हैं, जो देश ही नहीं बल्कि विदेशों में भी अपनी कला का प्रदर्शन कर अपने गुरूजनों का व भारत का नाम रोशन कर रहे हैं। यहाँ कुछ कलाकारों के नाम व उनकी संस्थाओं के नाम से अवगत कराने का मैंने प्रयास किया है जिन्होंने वर्तमान में गायन, वादन व नृत्य कला से भारत वर्ष को पूरे विश्व में पहचान दी है।

1. इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़- डॉ विभा दाधिच, डॉ. लता मुंशी, श्री सुरेश धर्माधिकारी, आरती सिंह, अपूर्वा सोहोनी, सविता गोडबोले,
2. उस्ताद अलाउद्दीन खाँ अकादमी (भोपाल)

- ध्रुपद केन्द्र-श्री रमाकान्त गुन्देचा, श्री उमाकान्त गुन्देचा, श्री अखिलेश गुन्देचा, श्री उदय भवालकर, श्री मनोज सर्राफ।
- चक्रधर नृत्य केन्द्र- डॉ. विजया शर्मा, डॉ. सुचित्रा हरमलकर, आरती

* 87, महावीर बाग कालोनी, परमेश्वरी गार्डन के पीछे, इन्दौर रोड़, उज्जैन (म.प्र.) भारत

सिंह, यारस्मिन सिंह।

3. प्रयाग संगीत समिति, इलाहाबाद–सविता गोडबोले, श्री नटराज मधुकर जगताप
4. गांधर्व महाविद्यालय– जयश्री शशीकांत तांबे।
5. रविन्द्र भारती विश्वविद्यालय कलकत्ता – श्रीमती डालिया दत्ता,
6. कथक केन्द्र नई दिल्ली–पं. प्रताप पंवार, शाश्वती सेन, मालती श्याम
7. बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल–डॉ. रश्मि राठौर।
8. श्रीकृष्ण संगीत महाविद्यालय, इन्दौर– श्रीमती सुवर्णा तावसे, श्री रामजी बडौदिया, श्रीमती वंदना जमींदार, श्री अरविन्द अग्निहोत्री, सुश्री विजया खड़ीकर, उर्मिला कश्यप, श्री प्रकाश चौहान।
9. शिशु नटराज नृत्यकला मंदिर इन्दौर–नौशाद अब्दुल (राष्ट्रपति अवार्ड– क्लारनेट)
10. माधव संगीत महाविद्यालय उज्जैन–श्री सुधाकर देवले, श्री हीरासिंह बोरलिया, श्री महेश मोयल, श्री रविन्द्र परचुरे, श्री बंडू पित्रे, श्री रमाकान्त दुबे, श्री गोपाल आपटे, श्रीमती अर्चना तिवारी, श्रीमती सुचित्रा पंडित।

ये सभी कलकार गायन से संबंधित है।

पंडित श्री नृसिंहदास महन्त, श्री नानूराम जी आर्य, श्री रामदास शेंडे, श्री बालकृष्ण मंहत, श्री राजेन्द्र आर्य । ये सभी कलकार तबला वादन से संबंधित है।

श्री पुरू दाधीच, श्री राजकुमुद ठोलिया, श्रीधर व्यास, श्री हीरालाल जौहरी, श्रीमती रंजना अष्टपुत्रे। ये सभी कलकार कथक नृत्य से संबंधित है। कला जगत में और भी अनेक उच्च कोटी के कलाकार हुऐ परन्तु सभी का विवरण देना संभव नही है।

आज हम विज्ञान और औद्योगिकी के मामले में संसार के अन्य उन्नत देशो से चाहे बराबरी नही कर पा रहे है, किन्तु जिन दो विषयों में सारा संसार भारत के आगे नत–मस्तक है, उनमें से एक हमारी आध्यात्मिक परम्परा और दूसरी हमारी सांगीतिक परम्परा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

जनजाति क्षेत्र के छात्र-छात्राओं की संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. वनिता त्रिवेदी *

शोध सारांश – प्रस्तुत अनुसंधान कार्य का मुख्य लक्ष्य जनजाति क्षेत्र के छात्र-छात्राओं की संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों का तुलनात्मक अध्ययन करना था। शोधार्थी ने शोधकार्य हेतु शोध में न्यादर्श के रूप में शोधार्थी ने उदयपुर शहर के चार माध्यमिक विद्यालयों का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से किया तथा इन चारों विद्यालय में कक्षा 9वीं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप में लिया गया। शोधार्थी ने दत्त संकलन के लिए ओटमैन, रस्किन व विटकीन का मानकीकृत उपकरण का प्रयोग किया।

दत्त संकलन के पश्चात् उनको सारणीयन करते हुए आँकड़ो का विश्लेषण आवृत्ति एवं एवं आरेख प्रदर्शन के आधार पर किया गया। निष्कर्षत: जनजाति क्षेत्र के छात्र एवं छात्राओं की संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों में सार्थक अन्तर पाया गया है।

शब्द कुंजी – जनजाति , संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तर

समस्या का उद्‌भव :

पुष्पा, वधमा (1980) ने प्राथमिक विद्यालयों के बच्चों की संज्ञानात्मक शैली पर सामाजिक वचन के प्रभाव का अध्ययन ,**पाण्डे (1970)** ने अधिस्नातक वर्ग के 70 लड़के व 70 लड़कियों के प्रतिदर्श पर एम्बेडिड फिगर प्रशिक्षण का प्रशासन किया,

गुमैन (1977) ने 11-12 वर्ष के मध्यम वर्ग (Middle Class) तथा श्रमिक वर्ग (Working Class) के प्रयोज्यों के प्रतिदर्श पर तुलनात्मक अध्ययन, **सिन्हा (1979)** ने ग्रामीण एवं शहरी तथा विद्यालय एवं अविद्यालयी (School and Non-School) बच्चों के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन ,**दानी (1984)** ने अपना शोध अध्ययन शहरी कस्बों एवं ग्रामीण क्षेत्र में स्थित विद्यालयों में से 505 विद्यार्थियों का यादृच्छिक (Random) विधि के आधार पर चयनित प्रतिदर्श पर किया,**कुमार (1984)** ने विभिन्न विषयों (Streams) में स्नातकोत्तर विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक शैली के सम्बन्ध का अध्ययन,**पटेल दीपक (2005)** ने अपना शोध गैर सरकारी उच्च माध्यमिक विद्यालय के कक्षा 11वीं के विद्यार्थियों का यादृच्छिक विधि के आधार पर चयनित प्रतिदर्श पर किया। अध्ययन के निष्कर्ष में कक्षा 11वीं के गणित के विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक शैली में क्षेत्रीय परतंत्रता वाले विद्यार्थियों की संख्या क्षेत्रीय स्वतंत्रता वाले विद्यार्थियों से ज्यादा है तथा छात्राएँ छात्रों की तुलना में अधिक क्षेत्रीय स्वतंत्र है। **मलिक, प्रज्ञा (2006)** ने प्रभावी PPP का विद्यार्थियों (जीव विज्ञान कक्षा 9) की धारण क्षमता पर प्रभाव का अध्ययन किया,**हेलाईया, शीतल (2004)** ने छात्राध्यापकों के सांख्यिकी शिक्षण में CAI पैकेज की प्रभावशीलता पर अध्ययन किया।

अन बीसालेय, डन, क्यूइन, बुचानन (1997) विशिष्ट शिक्षा तथा सामान्य शिक्षा दोनों तरह के छात्रों की पठन उपलब्धि का अध्ययन **कोर्बोनारो, वर्दन (2001)** ने आगमन प्रक्रिया से सूचनाओं की धारणा शक्ति बढ़ाने संबंधी अध्ययन आदि से शोधार्थी ने पाया कि अभी तक जनजाति छात्र छात्राओं के संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों से संबंधित शोध कार्य नहीं हुआ अत: यह एक नवीन व प्रासंगिक शोधकार्य है।

उद्देश्य :-

1. संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों का पता लगाना।
2. जनजाति क्षेत्र के छात्रों की संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों का पता लगाना।
3. जनजाति क्षेत्र के छात्राओं की संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों का पता लगाना।
4. जनजाति क्षेत्र के छात्र-छात्राओं की संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना :-

1. जनजाति क्षेत्र के छात्र-छात्राओं की संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

अनुसंधान का विधिशास्त्र

1. प्रस्तुत शोध में शोध की प्रकृति को देखते हुए शोधार्थी ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया।
2. दत्त संकलन हेतु ओटमैन, रस्किन व विटकीन का मानकीकृत उपकरण का प्रयोग किया गया।
3. अनुसंधान कार्य के लिए न्यादर्श स्वरूप उदयपुर शहर के चार माध्यमिक विद्यालयों की कक्षा 9वीं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप में लिया गया।

सारणीयन एवं विश्लेषण :-

सारणी संख्या 1 :GEFT के अंक का वर्ग अन्तराल व संज्ञानात्मक शैली के स्तर

क्र.	वर्ग अन्तराल	संज्ञानात्मक शैली के स्तर
1.	0-3	अति उच्च क्षेत्रीय परतंत्रता (VHFD)
2.	4-7	उच्च क्षेत्रीय परतंत्रता (HFD)
3.	8-11	क्षेत्रीय केन्द्रित समूह (Field Central Peer)
4.	12-15	उच्च क्षेत्रीय समूह (HFI)
5.	16-18	अति उच्च क्षेत्रीय स्वतंत्रता (VHFI)

* अम्बिका कॉलोनी, नक्षत्र मॉल के पीछे, बांसवाडा (राजस्थान) भारत

शोधार्थी द्धारा विश्लेषण का कार्य **सारणी संख्या 1** के आधार पर किया गया।

सारणी संख्या 2 : जनजाति क्षेत्र के छात्र एवं छात्राओं की संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों का पता लगाना

क्र.	वर्ग अन्तराल	संज्ञानात्मक शैली के स्तर	आवृत्ति	आवृत्ति प्रतिशत
1.	0-3	VHFD	21	20.0
2.	4-7	HFD	28	26.66
3.	8-11	FCP	26	24.76
4.	12-15	HFI	22	20.95
5.	16-18	VHFI	08	7.61
			105	**99.98**

व्याख्या – सारणी संख्या 2 को अवलोकन करने से पता चलता है 20.0 प्रतिशत विद्यार्थी अति उच्च क्षेत्रीय परतत्रंता, 26.66 प्रतिशत विद्यार्थी उच्च क्षेत्रीय परतंत्रता, 24.76 प्रतिशत विद्यार्थी क्षेत्रीय केन्द्रित समूह, 20.15 प्रतिशत उच्च क्षेत्रीय स्वतंत्रता व 7.61 प्रतिशत विद्यार्थी अति उच्च क्षेत्रीय स्वतंत्रता वाले हैं।

सारणी संख्या 3 : जनजाति क्षेत्र के छात्र एवं छात्राओं की संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

क्र.	वर्ग अन्तराल	संज्ञानात्मक शैली के स्तर	छात्र		छात्राएँ	
			आवृत्ति	आवृत्ति प्रतिशत	आवृत्ति	आवृत्ति प्रतिशत
1.	0-3	VHFD	10	15.62	11	26.82
2.	4-7	HFD	16	25.0	12	29.26
3.	8-11	FCP	18	28.12	8	19.51
4.	12-15	HFI	14	21.87	8	19.51
5.	16-18	VHFI	6	9.37	2	4.87
			64	**99.98**	**41**	**99.97**

व्याख्या – 15.62 प्रतिशत छात्र व 26.82 प्रतिशत छात्राएँ VHFD, 25 प्रतिशत छात्र व 29.26 प्रतिशत छात्राएँ HFD, 28.12 छात्र व 19.51 प्रतिशत छात्राएँ FCP, 21.87 प्रतिशत छात्र व 19.51 प्रतिशत छात्राएँ HFI व 9.37 प्रतिशत छात्र व 4.87 प्रतिशत छात्राएँ VHFI स्तर के है।

सारणी से छात्र और छात्राओं की संज्ञानात्मक शैली के स्तर व आवृत्ति प्रतिशत को आरेख में दर्शाया गया है। अत: आलेख से स्पष्ट है कि छात्राएँ छात्रों की तुलना में अधिक क्षेत्रीय स्वतंत्र है।

वर्तमान में प्रासंगिकता – प्रस्तुत आलेख के द्धारा जनजाति क्षेत्र के छात्र एवं छात्रा दोनो संज्ञानात्मक शैली के विभिन्न स्तरों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। साथ ही जनजाति क्षेत्र के छात्र एवं छात्रा इसकी सहायता अपना मानसिक विकास बहुत सरलता से कर सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Best, J.W. (1963). Research in Education. New Delhi: Prentice Hall of India.
2. Carter, H.; Loo, R. (1980). Group Embedded Figures Test : Psychometric Data . Perceptual and motor skills, Vol. 50 pp. 32-34
3. Good, C.V.(1959). Introduction of Educational Research. Second Edition, New York : Appleton Century Crafts Ins.
4. Panek, Paul (1982). Relationship between field dependence-independence and personality in order adult females. Perceptual and motor skills, Vol. 54 pp. 811-814.
5. Vockel, E.L. (1983). Educational Research. New York : McMillan Pub. Co. Inc.
6. भटनागर, सुरेश (1995) 'शिक्षा मनोविज्ञान' मेरठ : आर.लाल बुक डिपो।
7. भटनागर, आर.पी.; भटनागर, ए.बी. (1995) 'शिक्षा अनुसंधान' मेरठ : लॉयल बुक डिपो।
8. ढौंढियाल, एस.एन.; फाटक, ए.बी. (1972) 'शैक्षिक अनुसंधान का विधिशास्त्र' जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
9. कपिल, एच.के. (2001) 'अनुसंधान विधि' आगरा : एच.पी. भार्गव हाउस।
10. माथुर, एस.एस. : 'शिक्षा मनोविज्ञान' आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
11. गुप्ता, एस.पी. (2003) 'सांख्यिकीय विधियाँ' इलाहाबाद : शारदा पुस्तक भवन।
12. पाण्डेय, के.पी. (2005) 'शैक्षिक अनुसंधान' आगरा : विश्वविद्यालय प्रकाशन।

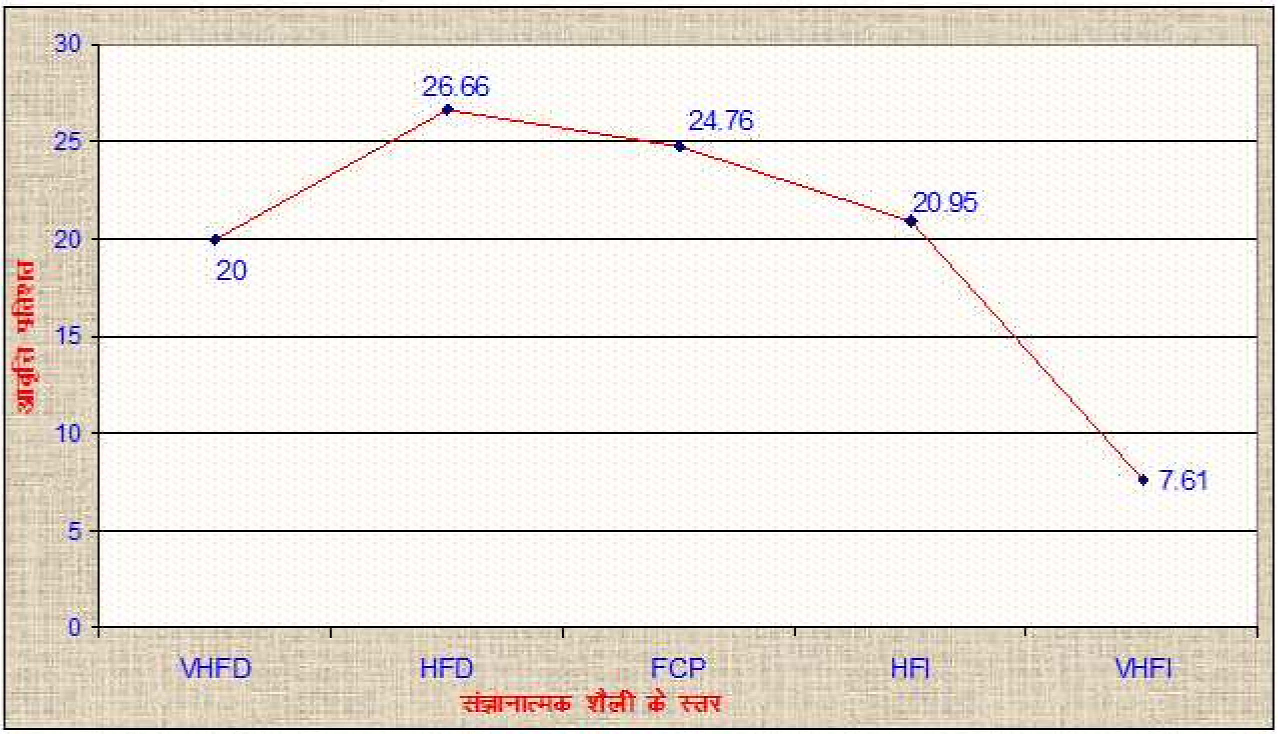
30
25
20
15
10
5
0
26.66
24.76
20.95
20
7.61
आवृत्ति प्रतिशत
VHFD
HFD
FCP
HFI
VHFI
संज्ञानात्मक शैली के स्तर

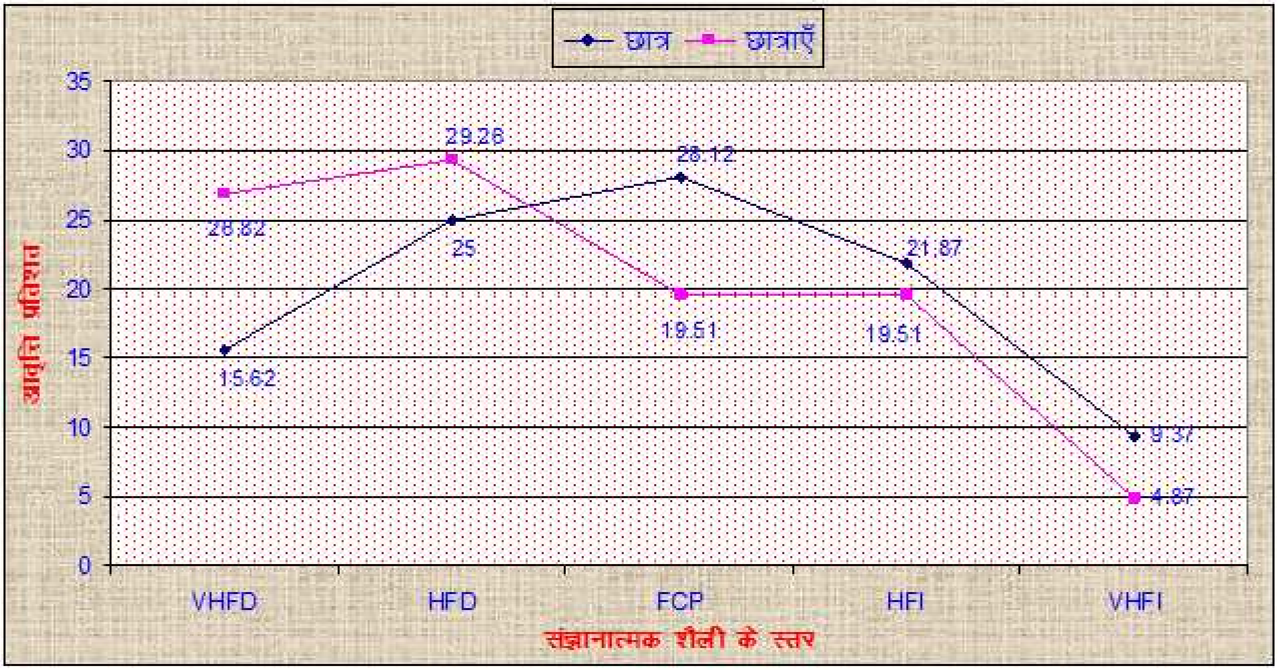
छात्र
छात्राएँ
35
30
25
20
15
10
5
0
29.28
28.12
26.82
25
21.87
19.51
19.51
15.62
9.37
4.87
आवृत्ति प्रतिशत
VHFD
HFD
FCP
HFI
VHFI
संज्ञानात्मक शैली के स्तर

****

Peace Education - Concept

Dr. Premlata Gandhi*

Introduction - Peace education may be defined as the process of acquiring the values, the knowledge and developing the attitudes, skills, and behaviors to live in harmony with oneself, with others, and with the natural environment.

Global peace has become a major concern these days. There is a general restlessness in the entire world which is leading to widespread violence. Empathy for others, democratic living, secular values have been relegated to the background. In their place fundamentalism and terrorism have taken control of the world. Educatinoal process seems to have lost track of the original purpose of bringing out the best in each individual. In stead, even schooling is seen as a part of the rat race for which we are preparing the posterity. Under these circumstances, there is a great need to reconsider our own objectives of education and ensure that the principles of right living and non-violence are incorporated into the process of Education. One such effort is reflected in the efforts to think of Peace Education as a part of the school curriculum.

Peace Education is relatively a new subject though earlier through value education we indirectly worked on peace education too. The NCF-2005 has proposed Peace Education as a conscious process to be incorporated in the school curriculum.

There is thus no shortage of official statements on the importance of peace education. There are numerous declarations or instruments which confirm the importance of peace education .Peace education as a right is something which is now increasingly emphasized by peace researchers. Nonviolent alternatives for managing conflict, and skills for critical analysis of structural arrangements that produce and legitimate injustice and inequality, are of great importance in today's scenario.

Researchers suggests peace education be thought of as "encouraging a commitment to peace as a settled disposition and enhancing the confidence of the individual as an individual agent of peace; as informing the student on the consequences of war and social injustice; as informing the student on the value of peaceful and just social structures and working to uphold or develop such social structures; as encouraging the student to leave the world and to imagine a peaceful future; and as caring for the student and encouraging the student to care for others"

IN THE 1950s the field of peace research was emerging in the universities and, while this has had little direct impact on teachers. The initial emphasis in peace research was on direct (personal) violence, that is violence directed by one person on to another as in the case of assault, torture, terrorism, or war, looking more at conflict than at peace, with the result that peace was defined negatively as merely the absence of war (negative peace). By the late 1960s and early 1970s researchers' attention was shifting from direct to indirect (structural) violence, that is the ways in which people may also suffer as a result of social, political, and economic systems. Instead of just being the absence of war, peace is now seen as involving co-operation and non-violent social change, aimed at creating more equitable and just.

Three Dimensions of the approach to Peace Education

The three formative dimensions of the approach to peace education arise from this rationale of social need and educational responsibility. The three dimensions are the substantive problematic from which content is derived, a philosophy of education grounded in the role of education in social change, and a pedagogy that is consistent with the philosophy and most relevant to the problematic.

1. The Central Problematic is violence as it has been conceptualized and studied by peace research , outlining its systemic nature and it multiple manifestations. The substantive purposes of peace education are to provide a knowledge base drawn largely from peace research and based in a grounding of the relevant issues of peace, development, education and other academic disciplines. So, the knowledge is comprehensive and interdisciplinary in scope.

2. The Philosophy of peace education is seeking to prepare learners for active and responsible citizenship in the process of addressing the problematic. It is based on an inquiry into the normative principles (non-violence, human rights, social, economic, political and ecological justice, etc.) that inform peace education and asserts the need for an intentional interrelationship between pedagogy and content. One of its primary purposes is the development of agency, in the sense of the concept as articulated by most of the researchers, to capacitate learners to take action in the larger society.

3. The Pedagogy , which is the most unique and special

*Assistant Prof., LMTT (C.T.E.) BEd. College, Dabok, Udaipur (Raj.) INDIA

quality of the approach, is an adaptation of critical pedagogy and elements of forms of inquiry practiced in various academic disciplines and some sub fields of peace research, such as the problem inquiry developed by world order studies. This pedagogy is primarily directed toward developing student capacities for critical thinking, inquiry, and reflective skills that enable students not only to understand the relevant issues and obstacles to peace, but more importantly to develop skills and abilities to confront these issues, envision realistic alternatives and devise and implement strategies for the realization of the alternatives

Over the past couple of decades our schools, like our governments have focused on global economic restructuring and concerned themselves with promoting an economically and technologically competitive citizenry. But global developments, intensified by the events of 9-11, have highlighted the need for global citizens who are educated for peace, not just economic competitiveness. The ideal global citizen is one who understands the importance of respecting human rights, and who is prepared to work cooperatively to end poverty, to improve the health and well-being of the world's children, to reclaim and protect the environment, and to effect peaceful co-existence among individuals, peoples and states. We have the opportunity to work toward developing such global citizens through the systematic inclusion of children's rights education – in form of peace education – in our schools.

The United Nations Convention on the Rights of the Child is the most widely ratified international treaty in world history. Its ratification commits states parties to respect and implement the rights of children to protection from all forms of harm, and to the provision of basic needs for healthy physical, psychological and intellectual development. The Convention also requires states parties to educate children as well as adults about children's rights. And here is our opportunity.

Empirical data show that when children are taught about their Convention rights within a rights-based pedagogy, they demonstrate a deeper understanding of rights, more respect for the rights of others, a sense of social responsibility and the participation skills appropriate for effective democratic citizenship. Similarly, those who teach children about their rights come to believe more strongly in the need for ensuring the rights of all children are respected. In essence, children's rights education can promote a culture of peace. It is one means of preparing children for a world characterized by mutual respect based on the belief in rights for all, and thus characterized by peace.

Finally, in clarifying the educational rationale for studying peace and conflict we must look at the role of educational ideologies.

All educational documents, from the school prospectus to the 'official' publication, embody particular assumptions about education and that, broadly, four broad traditions can be identified.

In essence these are:

1. The liberal humanitarian tradition which is primarily concerned with passing on the basic cultural heritage from one generation to another.
2. The child-centred tradition which values self-development, self-reliance, and social harmony for the individual student.
3. The utilitarian tradition which sees the main job of education as equipping students to go well prepared into an already-defined situation.
4. The reconstructionist tradition which sees education as a potential instrument for changing society.

Education for peace, by definition, has to be child-centred (valuing the person) and reconstructionist (valuing positive peace), both of which seem particularly appropriate to the turmoil of the late twentieth century. Studying peace and conflict can therefore be justified by reference to the broad agreed aims of education, to work on childhood socialisation, to the need for effective political education in a democratic society and to recognised longstanding traditions in education. It offers both a radical critique of much current educational practice but also clear indicators of how to change that practice.

References :-

1. The United Nations and Peace Education'. In: Monisha Bajaj (ed.)*Encyclopedia of Peace Education*. (75-83). Charlotte: Information Age Publishing.

a) Constitution of UNESCO, adopted 16 November, 1945.
b) Universal Declaration of Human Rights,
c) Recommendation Concerning Education for International Understanding, Co-operation and Peace, and Education Relating to Human Rights and Fundamental Freedoms, Convention on the Rights of the Child, Article 29.1(d).
d) Vienna Declaration and Programme of Action - World Conference on Human Rights, Part 2, Paragraphs 78-82, which identify peace education as part of human rights education, and which identifies this education as vital for world peace

2. Matsuura, Koichiro. (2008) 'Foreword'. In: J.S.Page *Peace Education: Exploring Ethical and Philosophical Foundations.* Charlotte: Information Age Publishing. p.xix.
3. Reardon, Betty. (1997). 'Human Rights as Education for Peace'. In: G.J. Andrepoulos and R.P. Claude (eds.) *Human Rights Education for the Twenty-First Century.* (255-261). Philadelphia: University of Pennsylvania Press.
4. Roche, Douglas. (1993). *The Human Right to Peace*. Toronto: Novalis.
5. United Nations General Assembly. (1993) *Vienna Declaration and Programme of Action (World Conference on Human Rights).* New York: United Nations. (A/CONF. 157/23 on June 25, 1993). Part 2, Paragraphs 78-82.
6. Harris, Ian and Synott, John. (2002) 'Peace Education for a New Century' *Social Alternatives* 21(1):3-6

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

नारी सशक्तिकरण एवं आधुनिक समाज

डॉ. प्रेमलता गाँधी *

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति में नारी को देवी के रूप में निरूपित करके उसके सम्मान, श्रेष्ठता एवं महत्ता को प्रतिपादित किया गया है। पाँच हजार वर्ष पूर्व ऋग्वेदकालीन सभ्य सुसंस्कृत समाज में स्त्री एवं पुरूष को समानता का दर्जा प्राप्त था। उस समाज में स्त्री को पुरूषों की तरह ही समानता का अधिकार था, इसलिए वह स्वत्रंत थी। उस समाज में पति–पत्नी को प्रथम बार 'दम्पति' कहा गया है। दंपती शब्द एकत्व की अवधारणा से युक्त है।

हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी आठ मार्च महिला दिवस के रूप में वायदों और भाषणों के बीच गुजर गया। कहीं मार्च हो कहीं जनसभाओं में लम्बें श्लोगन से महफिल गूंजती रहीं। नहीं गूंज सकी तो मूक बधिर महिलाओं के हक की लड़ाई की आवाज, क्योंकि उनके पास शब्द नहीं हैं। सभी तरह के हकों की लड़ाई लड़ने और शासन सत्ता तंत्र में कुछ वर्ग की प्रतिनिधि नियुक्त कर देने की पहल की तरह इस बार भी प्रधानमंत्री ने महिला आरक्षण विधेयक बिल पारित करने की बात की और सहमति–असहमति के बीच बिल राज्यसभा में पारित भी हो गया है। उम्मीद की जाती है कि लोकसभा में भी पारित हो ही जाएगा। बहुत अच्छी पहल है महिला सशक्तिकरण की दिशा में।

एक सवाल जो बार–बार उठता है कि क्या मौजूदा महिला आरक्षण बिल में सभी वर्ग की महिलाओं के प्रतिनिधित्व की नियुक्ति की बात निश्चित है। वर्त्तमान कानून मंत्री के अनुसार पिछड़ों की संख्या के बारे में वर्ष 1935 के बाद से कोई नई जानकारी नहीं होने से उनके लिए कोटा रखे जाने पर विचार नहीं किया जा सका। इस स्थिति में क्या दलित बहुजन वर्ग की महिलाओं की भागीदारी हो पाऐगी।

महिला सशक्तिकरण महिलाओं की अस्मिता, अस्तित्व और अधिकार का आंदोलन है। यह किसी भी समाज, देश की उन्नति और विकास का आधार है। मातृत्व के आंगण में ही सभी का विकास होता है। किसी भी परिवार, समाज, देश की तरक्की का अंदाजा लगाना हो तो पहचान की जा सकती है कि उस परिवार, समाज और देश की स्त्रियां कितनी स्वाधीन हे और आत्मनिर्णायक की भूमिका में है। उसकी पहचान कितनी है क्या वह अस्तित्व के संकट से तो नहीं गुजर रही है?

देश की आजादी की पूर्व स्थिति पर न भी जाए तो स्वाधीनता के लगभग छः दशक का समय क्यों लगा इस बिल को लाने में यह विचारणीय प्रश्न है। जबकि देश की आजादी के बाद संविधान निर्माण के साथ ही उसके समानान्तर एक ऐसा बिल तैयार किया जा रहा था जो कि आज की मौजूदा आरक्षण बिल और 33 प्रतिशत की पुष्टिकरण की नीति से कहीं सशक्त और मजबूत आधार स्तंभ बिल था 'हिन्दू कोड बिल'।

'हिन्दू कोड बिल' महिला सशक्तिकरण का ब्लू प्रिंट था। जिन व्यवस्था तंत्र और मानसिकता के कारण महिलाओं को कमाजोर किया जाता रहा है। उसे अधिकारविहिन और पंगु बनाया गया। संपत्ति के अधिकार से वंचित किया गया। उन्हें शिक्षा से दूर रख कर चाहरडिवारी के भीतर छुट–छुट कर जिंदगी पर मजबूर किया गया। उन सभी मानसिकताओं, धार्मिक कुरीतियों और उनके तंत्र के साथ–साथ उस व्यवस्था को बनाये रखने वाली मानसिकता और उस मानसिकता की संस्कृतिकरण उससे उपजा 'माइंड सेट' आदि का विरोध हिन्दू कोड बिल में था।

'हिन्दू कोड बिल' एक सामाजिक विधि विधान है। इस विधान से स्त्रियों की अस्मिता, उसके अस्तित्व और उनके अधिकारों को संरक्षण प्रदान करता है। यह कोड बिल जिन अधिकारों की महत्ता को रेखांकित करता है उसे विस्तार से यहां प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है लेकिन संक्षेप में यह बिल हिन्दू विवाह अधिनियम, विशेष विवाह अधिनियम, गोद लेना, अल्पआयु संरक्षता अधिनियम, हिन्दू उत्तराधिारी अधिनियम, निर्बल तथा साधनहीन परिवार के सदस्यों का भरण पोषण अधिनियम, अप्राप्तवयी संरक्षण संबाी अधिनियम, हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, सम्पत्ति का अधिकार अधिनियम, बाल विवाह निरोध अधिनियम आदि सभी अधिनियमों सविस्तार तर्कसंगत और वैज्ञानिक विश्लेषण करता है। लेकिन मनु महाराज के वंशजों ने इस बिल को संविधान में पारित नहीं होने दिया, क्योंकि इस बिल के पारित हो जाने से मनुवादी व्यवस्था, पितृसत्तात्मक व्यवस्था का अंत होना तय था। पितृसत्तात्मक व्यवस्था और मानसिकता महिलाओं को न केवल मानवाधिकार से वंचित करती बल्कि उसे सम्पत्ति के अधिकार से बेदखल कर गुलाम बनाने की कोशिश करती है। यही वजह थी कि गुलामी की प्रथा और प्रक्रिया का अंत करने वाले विधान यहिन्दू कोड बिल को मनुवादी पितृसत्तात्मक मानसिकताओं ने पारित नहीं होने दिया।

आज समाज में समानता और हक की लड़ाई के साथ–साथ सभी वर्ग की पहचान का आंदोलन जारी है। इस आंदोलन को और तेज करने की जरूरत है। तीसरी दुनिया में शुमार भारत के विकास की राह में तरक्की करने के लिए देश की सत्तर फीसदी आबदी दलित बहुजन के साथ–साथ कुल आबादी की पचास फीसदी महिलाओं की अस्मिता, अस्तित्व, अधिकार और सम्मान के चौतरफा विकास के लिए जारी आंदोलन पर, उनकी बातों पर ध्यान देने की जरूरत महसूस की जानी चाहिए न कि देश में चंद वर्ग समुदाय के लोगों की तरक्की और चंद महिलाओं को सभी क्षेत्रों में तरक्की कर लेने की भूल भूलैया पर। यह समय 33 फीसदी महिला आरक्षण की तुष्टिकराण की नीति से संतुष्ट हो जाने का नहीं है। महिलाओं के पूरे हक और सम्मान की बात होनी चाहिए। उस में सभी वग्र की महिलाओं को समान अधिकार की बात को सुनिश्चित करना चाहिए। वरन् वह दिन दूर नहीं कि जिस ब्राह्मणवादी पुरूषवादी मानसिकता और व्यवस्था की शिकार महिलाएं आज असम्मान

* वरिष्ठ सहायक आचार्य, लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय (सी.टी.ई.), डबोक, उदयपुर (राज.) भारत

और असुरक्षा का जीवन जी रही है एवं देश में जिस रफ्तार से लिंगानुपात बढ़ रहा है। वह एक भारी अराजकता, भयानक त्रासदी और बहुत बड़े संकट की ओर संकेत है।

महिला सशक्तिकरण को ऊर्जा प्रदान करने वाले मान और उसके सहयोगी की भूमिका निभा रहे मानव दोनों को महिला सशक्तिकरण के तमाम पहलुओं पर विचार करते हुए 'हिन्दू कोड बिल' को पहल में लाने की बात करनी चाहिए। आखिर क्या चीज 'हिन्दू कोड बिल' में थी जिसके कारण तत्कालीन समान सुधारक, शंकराचार्य, तथाकथित धार्मिक पुरोहितों और उनके सांसदों के साथ-साथ देश के प्रथम राष्ट्रपति माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद को 'हिन्दू कोड बिल' के विरोध में त्यागपत्र देने की धमकी देनी पड़ी और तत्कालीन प्रधानमंत्री को मजबूर हो कर बिल को ठंडे बस्ते में डालना पड़ा।

दुर्गा शक्ति का रूप हैं। इतनी शक्तिमान कि भगवान राम ने भी लंका पर आक्रमण के समय दुर्गा की आराधना की। उनकी कथा कुछ ऐसी है कि जब देवता महिषासुर से संग्राम में हार गये ओर उनका ऐश्वर्य श्री और स्वर्ग सब छिन गया तब वे दीन-हीन दशा में वे भगवान के पास पहुँचे। भगवान के सुझाव पर सबने अपनी सभी शक्तियाँ शस्त्र एक स्थान पर रखीं। शक्ति के सामूहिक एकीकरण से दुर्गा उत्पन्न हुई। पुराणों में उसका वर्णन है। उसके अपने सिर है। अनेक हाथ है। प्रत्येक हाथ में वह अस्त्र-शस्त्र धारण किए है। सिंह जो साहस का प्रतीक है, उसका वाहन हैं। ऐसी शक्ति की देवी ने महिषासुर का वध किया। वे महिषासुर मर्दनी कहलायीं।

मेरे विचार से यह कथा संघटन की एकता का महत्व बताने के लिये बतायी गयी है। शक्ति संघटन की एकता में ही है। हमारी कथाओं में देवी दुर्गा का वर्णन है कि उनके सहस्त्र सिर और असंख्य हाथ है। यह वास्तव में संघटक के सहस्त्रों सिर और असंख्य हाथ है। साथ चलोगे तो हमेशा जीत का सेहरा बंधेगा। देवताओं को जीत कभी मिली जब उन्होंने अपनी ताकत एकजुट की।

दुर्गा शक्तिमयी है उनका सशक्तिकरण हो चुका है। लेकिन आज की महिला क्या शक्तिमयी है क्या उसका सशक्तिकरण हो चुका है क्या वह आज दुर्गा बन चुकी है शायद नहीं पर उसके पास कुछ अधिकार तो हैं वह कुछ तो शक्तिमान हुई। यह अधिकार यह शक्तियां उसे किसी ने दिये नहीं है। यह उसने खुद लड़ कर प्राप्त किये हैं।

इस संदर्भ में एक और बात ध्यान रखने की है कि महिला सशक्तिकरण में सिर्फ मीरा की मुक्ति की आकांक्षा की पहल भी होनी चाहिए क्योंकि संस्कृतिकरण की प्रक्रिया में पुरूषवादी मानसिकता का भी संस्कृतिकरण हो गया है। जिससे घर, समाज में मीरा अपनी सास-ननद से उतनी ही प्रताड़ित हो रही है, जितनी की पुरूषों से। हमें इस संस्कृतिकरण की प्रक्रिया से बचना चाहिए।

सन् 1987 से जबसे सामुदायिक कार्य से जुड़ी हूँ तब से रैली, नुक्कड़, नाटक, मानव श्रृखलाओं में भाषण एवं घर-घर जाकर जागरूकता में महिला सशक्तिकरण का सघन अभियान द्वारा कार्य भी मैंने विशेष रूप से किया है। लोकमान्य तिलक शिक्षक महाविद्यालय के 15 किमी. की परिधि से प्रायोगिक कार्य हेतु जाते रहे है तथा सामुदायिक शिविर क्षेत्रीय भ्रमण एवं शिक्षण में बावनवाडजी पिण्डवाड़ा सिरोही सावरियाजी, केशरियाजी, फतहनगर, कपासन, भीण्डर, सलुम्बर, राजसमन्द, चारभुजा, झाड़ोल, नाई, पई, साक्रोदा, बेदला के लोगों का मत है कि आपके आने से एवं जागरूकता के कार्य करने से गांव में विशेष जागरूकता आयी है।

अब इन कस्बों एवं गांवों में महिलाएं एवं महिला संरपक्ष गांव के आर्थिक सामाजिक राजनैतिक एवं भौतिक क्षेत्रों को सुदृढ़ करने में जुड़ी हुई है जैसे – अचार, पापड़, खाखरे, ढाले (5 से 10 क्वि.) मात्रा में एक साथे ही सामुदायिक केन्द्र पर तैयार किर विपणन की जा रही है जिससे महिलाओं आर्थिक स्वावलम्बन भी प्राप्त हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर पर आहारीय परामर्श के प्रभाव का अध्ययन

डॉ. प्रगति देसाई * श्रीमती मेघा परमार **

शोध सारांश – आहारीय परामर्श का लक्ष्य खाद्य व्यवहार में उपयुक्त परिवर्तन करके व्यक्ति या रोगी को लाभ पहुँचाना है। यह प्रक्रिया आहारीय सिद्धांत एवं पोषण विज्ञान पर आधारित है। प्रत्येक व्यक्ति या रोगी के अनुसार आहारीय परामर्श भी अलग अलग होते है। विभिन्न बीमारियों जैसे- मधुमेह, मोटापा, एनीमिया, उच्चरक्तचाप आदि के उपचार में भी आहारीय परामर्श की महत्वपूर्ण भूमिका है। इस अध्ययन के द्वारा मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं में मोटापे के स्तर एवं मानवमीति परीक्षण पर आहारीय परामर्श के प्रभाव को जानने हेतु सर्वेक्षण किया गया। सर्वेक्षण के आधार पर आहारीय परामर्श का प्रत्यक्ष प्रभाव मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं के वजन के स्तर एवं मानवमीति परीक्षण पर देखा गया।

शब्द कुंजी – मोटापा, आहारीय परामर्श, मोटापे के स्तर, मानवमीति परीक्षण।

प्रस्तावना – वर्तमान में विज्ञान ने जीवन को सरल, सुरुचिपूर्ण और सम्पन्न बनाने के लिए नये नये साधन ईजाद किये। इसी तेजी से बढ़ते मशीनीकरण, आधुनिक भौतिक सुख सुविधा, एवं साधनों की भरमार से समाज में जीवन शैली, आहार विहार व्यवहार आदि में भी काफी तेजी से परिवर्तन हो रहा है। इन्हीं परिवर्तनों का परिणाम या इसकी एक बीमारी मोटापा है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की ग्लोबल सेट की रिपोर्ट के अनुसार 2016 में पूरे विश्व में 650 मिलियन वयस्क मोटापे से ग्रसित थे, जिन में 39 प्रतिशत पुरुष एवं 40 प्रतिशत महिलाएँ मोटापे से पीड़ित थे।

जून 2014 की इण्डिया टूडे में नीतूचन्द शर्मा क लेख में प्रकाशित हुआ की Lancent रिसर्च जर्नल में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार 2013 में मोटापे से ग्रसित मुख्य 10 देशों में भारत का तीसरा स्थान है एवं सन् 2013 में भारत में 46 मिलियन लोग मोटापे से पीड़ित थे।

घर से बाहर घण्टों कार्य में व्यस्त रहने की वजह से कार्यशील महिलाओं में मोटापे अधिक देखा जाता है क्योंकि इस दौरान वह अपने खान पान का ध्यान नहीं रख पाती। जिससे वह मोटापे का शिकार हो जाती है।

मोटापे चयापचय सम्बन्धित रोगों का एक समूह है, जिसे विशेष रुप से शरीर में संग्रहित उच्च वसा के रुप में देखा जाता है।

'सामान्यता शरीर में जमा होने वाली अतिरिक्त वसा मोटापा है।' – मोटापा वह स्थिति है जिसमें वसामय ऊतकों में वसा एकत्र हो जाने के कारण, व्यक्ति का भार अधिक हो जाता है। जब आवश्यकता से अधिक पचा लिया जाता है परन्तु शरीरिक क्रियाशील के द्वारा खर्च नहीं किया जाता, वह वसा में परिवर्तित होकर वसामय ऊतकों में संग्रहित कर लिया जाता है, यही स्थिति धीरे धीरे मोटापे को जन्म देता है।

बी.एम.आई. एवं वेस्ट टू हिप अनुपात के अनुसार मोटापे का वर्गीकरण निम्न प्रकार से है–

वर्गीकरण	नाप (Kg/M2)
सामान्य से कम वजन	< 18.50
सामान्य वजन	18.50 – 24.90
अधिक वजन	>25.00
मोटापा	>30.00
ग्रेड-1	30 – 34.99
ग्रेड-2	35 – 39.99
ग्रेड-3	>40

वेस्ट-टू-हिप अनुपात चार्ट –

स्वास्थ्य स्तर	महिलाएँ	पुरूष
सामान्य से कम	< .80	< .95
सामान्य	0.81 – 0.85	0.95 – 1.00
सामान्य से अधिक	>0.86	>1.00

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO), 2000 के अनुसार

आहारीय परामर्श – आहारीय परामर्श एक ऐसी प्रक्रिया है, जिससे व्यक्ति अपने भोजन एवं पोषण से सम्बन्धित समस्या के उपचार के लिए आहार विशेषज्ञ की सलाह लेता है।

अनियमित भोजन सम्बन्धी आदतों, आवश्यकता से अधिक भोजन, आहार ज्ञान में कभी आदि कारणों की वजह से मोटापे की स्थिति उत्पन्न होती है, अत: इस स्थिति को सामान्य करने के लिए आहारीय परामर्श की आवष्यकता पड़ती है। आहार विशेषज्ञ के द्वार रोग व्यक्ति ये सारी जानकारी लेने के बाद व्यक्ति की खान पान की आदतों, आवश्यकता व उसकी बीमारी को ध्यान में रखते हुए उसके आहार का आयोजन तालिका तैयार करता है ताकि रोगी व्यक्ति के रोग कर स्थिति को सामान्य करने में मदद कर सकें। अत: वर्तमान समय में मोटापा नहीं, कई अन्य रोगों के उपचार के लिए भी आहारीय परामर्श का प्रयोग किया जा सकता है। आहारीय परामर्श द्वारा व्यक्ति स्वस्थ्य होकर रोग मुक्त जीवन जी सकता है।

उद्देश्य – मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं में मोटापे के स्तर एवं मानवमीति परीक्षण पर आहारीय परामर्श के प्रभाव का अध्ययन करना।

उपकल्पना H_1 - मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं में मोटापे के स्तर एवं मानवमीति परीक्षण पर आहारीय परामर्श का सार्थक प्रभाव पाया जाएगा।

* सह प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय किला भवन, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय किला भवन, इन्दौर (म.प्र.) भारत

विधि – शोध कार्य हेतु इन्दौर के विभिन्न क्षेत्रों से आजीविका के लिए कार्यरत 40–60 वर्ष की मोटापे से ग्रसित 80 कार्यशील महिलाओं का चयन उद्देश्यपूर्ण दैव निदर्शन विधि द्धारा किया गया। जिनको 40–40 महिलाओं के नियन्त्रित एवं प्रयोगात्मक दो समूहों में विभाजित किया। संमको के संकलन हेतु अनुसूची, साक्षात्कार, अवलोकन एवं प्रयोगात्मक विधि का प्रयोग कर सर्वेक्षण किया गया। तथ्यों के सांख्यिकीय विश्लेषण एवं परिणाम हेतु प्रतिशत विधि, काई वर्ग विधि एवं 'टी टेस्ट' परीक्षण विधि का प्रयोग किया गया।

1. नियन्त्रित समूह की मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं को कोई आहारीय परामर्श नहीं दिया गया।
2. प्रयोगात्मक समूहों की मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं को आहारीय परामर्श दिया गया तथा प्रत्येक 15 दिनों के अन्तराल में उनके फोलोअप भी लिए गए।
3. सभी निदर्श के विभिन्न नाप जैसे वजन, बी.एम.आई., वेस्ट टू हिप अनुपात आदि को अध्ययन प्रारम्भ करने में पूर्व तथा अध्ययन समाप्त होने पर लिया।
4. प्रयोगात्मक समूह के सभी निदर्श को 120 दिनों तक आहारीय परामर्श दिया गया।

परिणाम एवं विश्लेषण

1.1 आहारीय परामर्श का मोटापे के स्तर एवं मानवमीति परीक्षण पर प्रभाव – आहारीय परामर्श एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति के भोजन एवं पोषण से सम्बन्धित समस्याओं के उपचार के लिए आहार विशेषज्ञों की सहायता से उपयुक्त परिवर्तन करके व्यक्ति को लाभ पहुँचाया जाता है। अनियमित भोजन सम्बन्धित आदतों, आवश्यकता से अधिक भोजन, आहार ज्ञान की कमी आदि कारणों की वजह से मोटापे की स्थिति उत्पन्न होती है। इस स्थिति को सामान्य करने के लिए आहारीय परामर्श की सहायता ली जाती है। प्रस्तुत अध्ययन के द्धारा मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं में मोटापे के स्तर एवं मानवमीति परीक्षण पर आहारीय परामर्श प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। जिसकी विवेचना तालिका क्रमांक 1.1 (अ) से 1.1 (स) में की गई है –

तालिका क्रमांक 1.1 (अ) (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 1.1 (अ) से स्पष्ट है कि मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं के प्रयोगात्मक समूह को 120 दिनों तक आहारीय परामर्श देने तथा प्रत्येक 15 दिनों में फोलोअप लेने के पश्चात् .05 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर स्वतंत्रयाश 3 तथा 4 के सार्थ सार्थक पाया गया। प्रयोगात्मक समूह को आहारीय परामर्श देने के पश्चात् हरी पत्तेदार सब्जी प्रतिदिन एक बार लेने वाली महिलाओं का प्रतिशत 10 था, जो पयोग के पश्चात् बढ़कर 35 प्रतिशत हो गया। फल प्रतिदिन एक बार लेने वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत भी 10 था, जो प्रयोग के पश्चात् 35 प्रतिशत हो गया। सलाद प्रतिदिन दो बार लेने वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत 5 था, जो प्रयोग के पश्चात् बढ़कर 30 प्रतिशत हो गया। फास्ड फूड प्रतिदिन एक बार लेने वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत 30 था, जो प्रयोग के पश्चात् घटकर 30 हो गया। तले हुए भोज्य पदार्थ प्रतिदिन एक बार लेने वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत 45 था, जो प्रयोग के पश्चात् घटकर 25 प्रतिशत हो गया। मिठाई प्रतिदिन एक बार लेने वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत 40 था, जो प्रयोग के पश्चात् 10 प्रतिशत हो गया। सूखे मेवे नहीं लेने वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत 30 था, जो प्रयोग के पश्चात् घटकर 5 हो गया। दूध नहीं लेने वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत 55 था, जो प्रयोग के पश्चात् घटकर 30 हो गया। चाय 4 कप प्रतिदिन एवं 2 कप प्रतिदिन पीने वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत क्रमश: 10 एवं 45 था, जो प्रयोग के पश्चात् घटकर क्रमश: 5 एवं 20 प्रतिशत रह गया। शक्कर 4 चम्मच प्रतिदिन एवं 2 चम्मच प्रतिदिन लेने वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत क्रमश: 15 एवं 35 था, जो प्रयोग के पश्चात् घटकर क्रमश: 5 एवं 25 प्रतिशत हो गया। मूंगफली के तेल का उपयोग करने वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत 35 था, जो प्रयोग के पश्चात् घटकर 20 प्रतिशत हो गया। वहीं सरसों एवं सनफ्लावर के तेल का उपयोग करने वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत क्रमश: 10 एवं 15 था, जो प्रयोग के पश्चात् घटकर क्रमश: 25 एवं 25 प्रतिशत हो गया। जबकि नियन्त्रित समूह की महिलाओं में कोई सकारात्मक परिवर्तन नहीं देखे गए। अत: हमारी उपकल्पना .05 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर स्वीकृत हुई। इसलिए यह कहा जा सकता है कि मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं में आहारीय परामर्श के द्धारा उनकी भोजन सम्बन्धित आदतों में सुधार करके उनके अधिक वनज एवं अधिक वेस्ट टू हिप अनुपात को सामान्य किया जा सकता है।

तालिका क्रमांक – 1.1 (ब) (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 1.1 (ब) से स्पष्ट है कि प्रयोगात्मक समूह की 40 महिलाओं को 120 दिनों मक आहारीय परामर्श की सहायता से परिवर्तित एवं सन्तुलित आहार देने के पश्चात् अधिक वजन, ग्रेड–ख एवं ग्रेड–खख मोटापे से ग्रसित महिलाओं का प्रतिशत पूर्व क्रमश: 65, 25 एवं 10 था, जो प्रयोग के पश्चात् घटकर क्रमश: 50, 20 एवं 5 प्रतिशत हो गया। पूर्व में सामान्य वजन की महिलाओं का प्रतिशत शून्य था, प्रयोग के पश्चात् 20 प्रतिशत महिलाएँ सामान्य वजन की श्रेणी गई। प्रयोगात्मक समूह की सामान्य वेस्ट टू हिप अनुपात वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत 5 था, जो प्रयोग के पश्चात् बढ़कर 25 प्रतिशत हो गया। इसी प्रकार सामान्य से अधिक वेस्ट टू हिप अनुपात वाली महिलाओं का पूर्व प्रतिशत 95 था, जो प्रयोग के पश्चात् घटकर 75 हो गया। जबकि नियन्त्रित समूह की महिलाओं में कोई सकारात्मक परिवर्तन नहीं देखे गए। अत: यह कहा जा सकता है कि अधिक वजन एवं उसके स्तरो को तथा मानवनीति परीक्षण के विभिन्न नापों को कम करने में आहारीय परामर्श मददगार एवं उपयोगी है।

तालिका क्रमांक – 1.1 (स) (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 1.1 (स) के अनुसार प्रयोगात्मक समूह की महिलाओं को 120 दिनों मक आहारीय परामर्श द्धारा सन्तुलित एवं व्यक्ति विशेष की आवष्यतानुसार भोजन देने के पश्चात् उनके वजन एवं वेस्ट टू हिप अनुपात में सार्थक कमी देखी गई। प्रयोगात्मक समूह में वजन का पूर्व माध्य 84.55 कि.ग्रा. पश्चात् माध्य 80.5 कि.ग्रा. एवं वेस्ट टू हिप अनुपात का पूर्व माध्य .92 से.मी., पश्चात् .90 से.मी. पाया गया। अर्थात् वजन के माध्य में 4.05 कि.ग्रा. एवं वेस्ट टू हिप अनुपात के माध्य में .02 से.मी. की कमी देखी गई। जबकि नियन्त्रित समूह में वजन का पूर्व माध्य 83.7 कि.ग्रा., पश्चात् माध्य 84.9 कि.ग्रा. एवं वेस्ट टू हिप अनुपात का पूर्व माध्य .95 से.मी., पश्चात् माध्य .97 से.मी. पाया गया। अर्थात् वजन माध्य में 102 कि.ग्रा. एवं वेस्ट टू हिप अनुपात के माध्य में .02 से.मी. की अधिकता देखी गई। इसी प्रकार प्रयोगात्मक समूह में वजन का 'टीमान' 2.28 एवं वेस्ट टू हिप अनुपात का 'टीमान' 2.93 पाया गया। वही नियन्त्रित समूह में वजन का 'टीमान' .64 एवं वेस्ट टू हिप अनुपात का 'टीमान' .72 पाया गया। अत: हमारी उपकल्पना H_1 .05 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर स्वीकृत हुई। प्रयोगात्मक समूह को 120 दिनों तक आहारीय परामर्श दिया गया, जिससे उनके मोटापे के स्तर में सकारात्मक परिवर्तन आये। इस विषय पर सम्बन्धित साहित्य का

पुनरावलोकन पूर्व में किए जा चुके है।

पी.एम.बालाजी तथा उनके साथियों ने (2011) भारत के बैंगलोर शहर की 50 - 60 वर्ष की 40 मोटी महिलाओं को 2 समूह में लिया तथा उन पर 'मोटापे पर आहारीय परामर्श के प्रभाव का अध्ययन' किया। पहले समूह की सभी महिलाओं को 3 माह तक कम वसा युक्त भोजन एवं निश्चित अन्तराल पर आहारीय परामर्श दिया। जबकि दूसरे समूह को ऐसे ही रहने दिया। 3 माह बाद प्राप्त परिणामों के अनुसार पहले समूह की महिलाओं में, जिन्हें कम वसा युक्त भोजन तथा आहारीय परामर्श दिया गया था के वजन में सार्थक कमी ($P < 0.001$) देखी गई। साथ ही उनके वेस्ट टू हिप अनुपात, बी.एम.आई. उच्चरक्तचाप आदि में भी कमी देखी गई। जबकि नियन्त्रित समूह की महिलाओं में कोई परिवर्तन नहीं देखे गए। अतः पी.एम.बालाजी तथा उनके साथियों ने यह निष्कर्ष निकाला कि आहारीय परामर्श अधिक वजन को कम करने का लाभकारी एवं उपयोगी तरीका है।

निष्कर्ष – उपरोक्त अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि आजीविका के लिए कार्यरत् महिलाएँ आहारीय परामर्श द्वारा स्वयं की भोजन सम्बन्धित आदतों में उचित परिवर्तन एवं उचित आहार ज्ञान में वृद्धि के माध्यम से मोटापे को नियन्त्रित रखते हुए मोटापे से सम्बन्धित अन्य बीमारियों को दूर कर स्वस्थ्य जीवन जी सकती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ. शुक्ल एस. एम. तथा डॉ. सहाय एस. पी., 'सांख्यिकीय विश्लेषण' साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा (2002)
2.. डॉ. जैन कामिनी, 'डायटेटिक्स', प्रथम संस्करण, शिवा प्रकाशन, इन्दौर (2008)
3. स्वामीनाथन एम. 'आहार एवं पोषण', एन. आर. प्रकाशन, इन्दौर (2008)
4. डॉ. कुलकर्णी ज्योति 'आहार एवं उपचारत्मक पोषण', शिवा प्रकाशन, इन्दौर (2008)
5. Joshi Sabhangini A., "Nutrition and Dietetics". Third Edition, Tata Mc. Grow Hill Education, Private Limited, New Delhi (2010)
6. Manay S.N. and Shadaksharaswamy M., "Foods Facts and Principles". Second Edition, new age International (P) Limited Publishers. (2005)
7. Srilakshmi B., "Food Science", Third Edition. New Age International Publishers. (2005)
8. Dr. Balaji P.A., Dr. Smitha R. Verne, Dr. Syed Sadat Ali, "Effect of Dietary Counseling on On=verweight and Obesity", International Multidisciplinary Research Journal (2011) 1 (10) : 01-04.

तालिका क्रमांक - 1.1 (ब) : मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं में मोटापे के स्तर एवं मानवमीति परीक्षण पर आहारीय परामर्श के प्रभाव का तुलनात्मक परिणाम

चर	अवस्थाएँ	समूह							
		नियन्त्रित (N – 40)				प्रयोगात्मक (N = 40)			
		पूर्व	प्रति. %	बाद	प्रति. %	पूर्व	प्रति. %	बाद	प्रति. %
मोटापे के स्तर	सामान्य	-	-	-	-	-	-	8	20
	अधिक वजन	28	70	20	50	26	65	22	55
	ग्रेड-1	8	20	12	30	10	25	8	20
	ग्रेड-2	2	5	6	15	4	10	2	5
	ग्रेड-3	2	5	2	5	-	-	-	-
वेस्ट-टू-हिप अनुपात	सामान्य	8	20	2	5	2	5	10	25
	सामान्य से अधिक	32	80	38	95	38	95	30	75

तालिका क्रमांक - 1.1 (स) : मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं में मोटापे पर वजन एवं वेस्ट टू हिप अनुपात के अनुसार आहारीय परामर्श के प्रभाव का अध्ययन

चर	नियन्त्रित समूह (N=40)	माध्य	प्रमाप विचलन	टी वेल्यू	प्रयोगात्मक समूह (N=40)	माध्य	प्रमाप विचलन	टी वेल्यू
वजन	पूर्व	83.7	8.28	.64	पूर्व	84.55	7.94	2.28
	पश्चात्	84.9	8.41		पश्चात्	80.5	7.82	
वेस्ट-टू-हिप अनुपात	पूर्व	.95	.048	.72	पूर्व	.92	.040	2.92
	पश्चात्	.97	.050		पश्चात्	.90	.037	

तालिका क्रमांक – 1.1 (अ) : मोटापे से ग्रसित कार्यशील महिलाओं में भोज्य पदार्थों की उपयोगिता के तरीकों के आधार पर आहारीय परामर्श के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन

चर	अवस्थाएँ	समूह									
		नियन्त्रित (N – 40)					प्रयोगात्मक (N = 40)				
		पूर्व	प्रति. %	बाद	प्रति. %	काई	पूर्व	प्रति. % काई	बाद	प्रति. %	काई वर्ग
हरी पत्तेदार सब्जी	नहीं	18	45	22	55	2.44	18	45	8	20	12.72
	1 बार/ प्रतिदिन	2	5	2	5	4	10	14	35		
	2 बार/ प्रतिदिन	2	5	2	5	2	5	4	10		
	2 दिन में	2	5	4	10	6	15	8	20		
	कभी-कभी	16	40	10	25		10	25	4	10	
फल	नहीं	18	45	20	50	3.48	16	40	6	15	12.02
	1 बार/ प्रतिदिन	2	5	20	5		4	10	14	35	
	2 बार/ प्रतिदिन	2	5	2	5		4	10	18	20	
	2 दिन में	2	5	6	15		6	15	4	10	
	कभी-कभी	16	40	10	25		10	25	8	20	
सलाद	नहीं	16	40	18	45	1.2	14	35	6	15	14.6
	1 बार/प्रतिदिन	2	5	4	10		4	10	10	25	
	2 बार/प्रतिदिन	2	5	2	5		2	5	12	30	
	कभी-कभी	20	50	16	40		20	50	12	30	
फास्ट फूड	नहीं	4	10	2	5	1.14	18	45	28	70	10.1
	1 बार/प्रतिदिन	10	25	12	30		12	30	2	5	
	1 बार/ प्रतिसप्ताह	16	40	14	35		6	15	8	20	
	1 बार/15 दिन	10	25	12	30		4	10	2	5	
तले हुए भोज्य पदार्थ	नहीं	16	15	2	5	2.96	12	30	24	60	10.54
	1 बार/प्रतिदिन	12	30	16	40		18	45	10	25	
	1 बार/प्रति सप्ताह	16	40	14	35		8	20	2	5	
	1 बार/ 15 दिन	6	15	8	20		2	5	4	10	
मिठाई	नहीं	4	10	2	5	2.42	8	20	18	45	12.54
	1 बार/ प्रतिदिन	16	40	18	45		16	40	4	10	
	1 बार/प्रति सप्ताह	14	35	10	25		12	30	10	25	
	1 बार/15 दिन	6	15	10	25		4	10	8	20	
सूखे मेवे	नहीं	2	5	6	15	5.04	12	30	2	5	12.12
	1 बार/ प्रतिदिन	2	5	4	10		10	25	20	50	
	4 दिन में	18	45	10	25		8	20	12	30	
	7 दिन में	18	45	20	50		10	25	6	15	
दूध	नहीं	20	50	22	55	1.14	22	55	12	30	8.44
	50-150 मिली	14	35	10	25		8	20	6	15	
	150-250मिली	4	10	6	15		8	20	14	35	
	250 मिली	2	5	2	5		2	5	8	20	
चाय	नहीं	2	5	4	10	1.3	4	10	10	25	8.1
	1 कप/ प्रतिदिन	2	5	2	5		14	35	20	50	
	2 कप/ प्रतिदिन	16	40	12	30		18	45	8	20	
	4 कप/ प्रतिदिन	20	50	22	55		4	10	2	5	

शक्कर	नहीं	4	10	2	5	0.74	4	10	16	40	10.42
	1 चम्मच/ प्रतिदिन	2	5	2	5		16	40	12	30	
	2 चम्मच / प्रतिदिन	10	25	10	25		14	35	10	25	
	4 चम्मच / प्रतिदिन	24	60	26	65		6	15	2	5	
तेल	सोयाबीन	6	15	10	25	3.74	10	25	4	10	13.38
	मूंगफली	22	55	20	50		14	35	8	20	
	सरसों	4	10	4	10		4	10	10	25	
	सफोला	6	15	2	5		6	15	8	20	
	सनफ्लावर	2	5	4	10		6	15	10	25	

****

Study of Component Based Software Development Protyping Models

Priyanka Bhatewara Jain * Dr. Akhil Khare ** Sonia Bhargava***

Abstract - With the need to produce ever larger and more complex software systems, the use of reusable components has become increasingly imperative. Attempts to rationalize component-based development must recognize that the construction of a software system is a multifaceted, complex activity involving domain engineering, framework work, assembly, archiving, and the design of software components. Traditional cascade models and the iterative life cycle are not enough for CBS. Many researchers proposed several life-cycle models of component-based software development for years. These activities, among others, are encompassed in a software life cycle, called model Y, model V, model X, model CBSD of dual life cycle and model W, knot model, presented in this study. These models provide a guide for the main phases to follow under their umbrella.

Key words - Software Life Cycle Model, Software Process, Software Reusability, Component Based Software Development.

Introduction - As the other software process of engineering activities also goes through the series of development phases. The series of phases (progresses) through which software passes from the exploration of requirements to maintenance is called the software life cycle. During the development of the software, the software goes through a series of phases, that is, requirements, specification design, selection, recovery, testing and maintenance, etc. You can choose a software life cycle model according to the nature of the application and the environment. Sequential models define a sequence of activities in which an activity occurs after an end of the previous one. The evolutionary models allow the realization of several activities in parallel without requirements on the rigorous completion of one activity so that they cannot start with another.

Motivation - A software life cycle is generally defined as a vague concept. The phase of the life cycle of each software is different. Some processes will spend a lot of time and cost compared to other phases. The software development process is a costly activity. The development process or life cycles usually begin with the collection of requirements from system users. All traditional software life cycle models are sequential, which means that each phase must be completed before the next phase begins. The well-known example of sequential models is the cascade model, or model V, and evolutionary models, iterative and incremental development, or spiral model. Component-based software engineering is an integration-focused approach, which emphasizes the selection, acquisition and integration of components from external or internal sources. There is a lot of difference between the life cycle of component-based software compared to the traditional software development lifecycle. Most component-based applications are developed by a third-party component. Its means is that the life cycle of component-based software begins with recovery, not from construction. In component-based systems, only binary object component provided by a third party without source code. Therefore, the need arises for a verified specification given by a third party.

Related work:

Waterfall model - The waterfall model was first introduced by Royce in 1970. Its linear model where various phase is interconnected so that output of one phase become subsequently input for next phase. The Waterfall model has been long used by software engineers and has become the most prevalent software life cycle model. This model initially attempts to identify phases within software development as a linear series of actions, each of which must be completed before the next is commenced.

Challenges :

1. Major drawback of Waterfall Model is inflexible division of phase.Today requirement is changing very fast all phase are overlap.
2. In the waterfall model output are verified in last stage. Therefore, waterfall model is good for such situation where requirement is well defined.

Incremental Model - To overcome drawback of waterfall model a cycle model known as incremental models. In the incremental model we combine the property of sequential model and iterative charterstic of prototype life cycle model. In the incremental model

*Research Scholar, Jayoti Vidhyapeeth Women's University, Jaipur (Raj.) INDIA
**HOD, MVSREC, Hydrabad (Telangana) INDIA
***M.Tech. (S.E.) Suresh Gyan Vihar University, Jaipur (Raj.) INDIA

partial implementation of systems is construct after refinement this implementation require functionality and challenges. It is time consuming process and user of the system involved whole process.

Evolutionary Model - Evolutionary prototypes provide incremental software development, so that software systems may be gradually developed and tested, allowing major errors to be exposed and corrected early, which means that they are often cheaper to fix, but without effective management to control iterations, this process can degenerate into uncontrollable hacking.

Prototyping Model - Generally, customer of the software system initially defines broader requirement of the systems. In this case a quick prototype can be construct. Prototyping provides constructive feedback to designers and potential users so that the system requirements can be clarified and refined early during software development. The prototype is evaluated by the customer and refine his requirement.

Spiral Model - The spiral model was first developed by Boehm, is an evolutionary software life cycle model. In the spiral life cycle model different phase are represented as a spiral rather than sequence of activates. The Spiral model makes software development more flexible and has been proposed mainly to speed up software development through prototyping. In the spiral model, software is developed in a series of incremental release. The spiral model is divided into a number of regions, typically these are between three to six.

Component Based Software Development Life Cycle Models - As mentioned earlier, CBSE is a method of developing complex software applications that combine reusable components from a variety of sources in a well-defined architecture. For CBS, the traditional waterfall model and iterative life cycle are not enough. Many researchers have proposed several lifecycle models for component-based software development over the years. This section briefly summarizes some of these models.

The Y Model - It was proposed by Luiz Fernando Capretz in 2005 [10]. Considering the concept of model reuse, Model Y separates the development of components. This model allows for iterative and overlapping phases. The model is similar to the English letter Y, and the Y-type name appears in the letter. The model has three branches that show the main stages of development. Several stages are shown in the figure. The intersection at the three branches is the assembly phase. Assembly of reusable components can be completed after domain engineering

The framework works in which reusable components and their interrelationships are identified according to the application's vocabulary. Parallel to the domain engineering, perform the analysis and design phase of the system. The results of the system analysis and design phase are useful for adapting selected components to the design requirements of the system. The next step is to assemble and implement a system consisting of several reusable components that are stuck in the frame. Component testing and system testing are also important steps to ensure the quality of the final product.

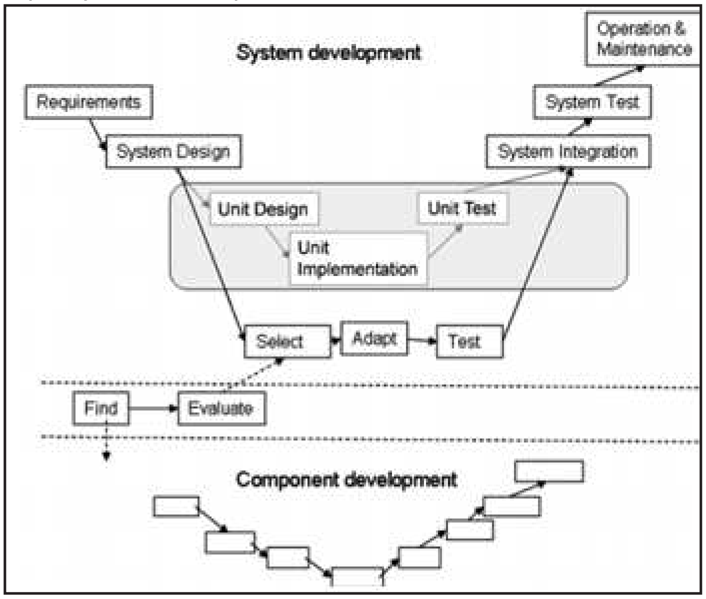

Figure: 1 V development process for CBD

The X Model - The figure shows the model X [12] [13] proposed in 2008. The model contains four arms arranged in alphabets of letter X, each representing a different perspective. At the intersection of these four arms is the repository (TCR) of the Testa table component. The upper left arm specifies the stage in which the component is developed for reuse. The components here are developed from scratch and stored in the component library. The left lower arm and the lower arm respectively specify the development phase after modification and development, and no modification is required. The two arms select components from the component library and finally assemble them for component-based software development, which is represented by the upper right arm of the X model. The X model provides a range of system development by modifying the components, and without modifying the components, it is shown in the left and lower right arms of the X-shape in the figure.

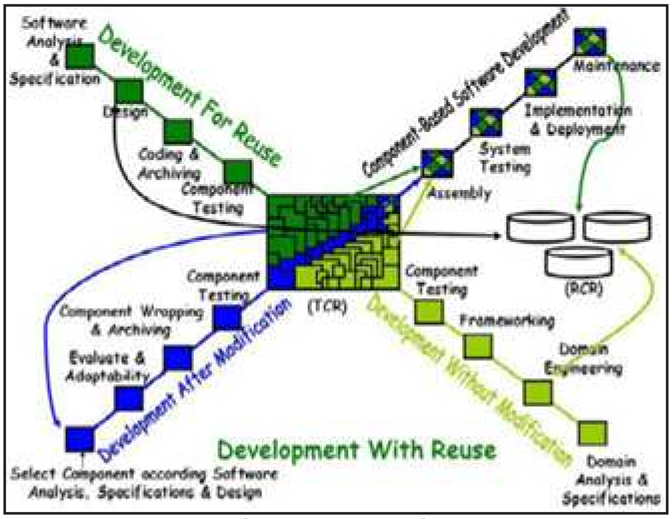

Figure 2: X Model

In this technological era, the complexity of software is increasing. Fast and sensitive systems depend on their underlying software, which in turn depends on the strength of the development phase. Then, SDLC is the backbone of system performance and efficiency. With the development of component-based software development paradigms, several SDLC models have been proposed over time. This paper summarizes some important CBS development models, such as V model, Y model, X model, dual model, knot model and W model. Discussed their main areas of concern. A common aspect derived from this study is that each model separates the development of system development components. In addition, selecting the right component from all components remains an open issue in all models.

CBSD Dual Life Cycle Model - Jason et al. Alabama. He proposed the dual life cycle model of CBD in [14]. The model divides the whole process into two parts, namely component development and system development. The various stages of each section are shown in the figure. They also provide design science principles to follow in subsequent development stages. The development of components is typically performed by third-party commercial developers and is developed in such a way that their architecture is well defined in terms of the inputs and outputs required for proper functionality of other components. The manufacture of components involves testing the components in an external environment to verify their reuse. The development of the system is divided into sub-phases, namely: requirements analysis, system architecture and subsystems, component selection, cataloging and recovery, and finally implementation of component assembly in the defined architecture. The component selection phase of system development is directly related to the component development component. The model promises to separate the two types of development, but it lacks the focus on component modifications and system validation and general validation.

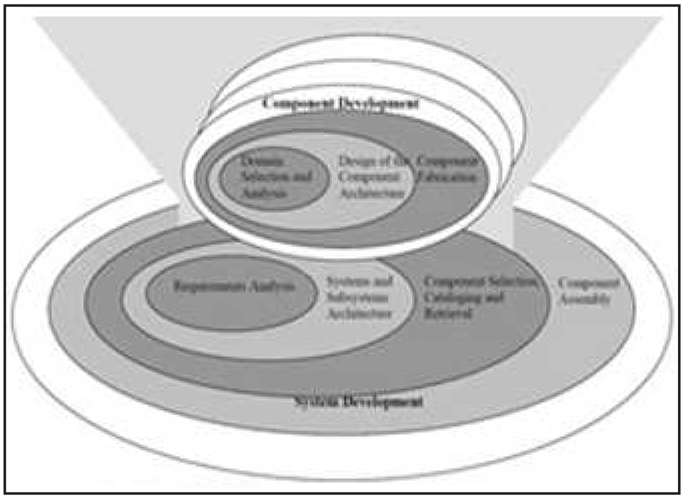

Fique 3: CBSD Dual Life Cycle Model

The Knot Model - In 2011, the Knot model [15] was born with a focus on reuse, modularity and risk analysis. The figure shows the main stages and sub-phases of the node model. The main phases are: development of new components, modification of existing components, and development of component-based software. Outside of these phases, the modification of an existing component is an iterative phase that attempts to select the components of the component group, tweak it, and test and receive comments based on the system's architecture. This phase is repeated unless the selected component is suitable for assembly in a defined component frame. The efficiency of this model depends on the powerful implementation of the reusable component set, which is the backbone of all phases. The model is easy to understand, but choosing the right components in the reusable component group is the most important task on which the overall quality of the final product depends.

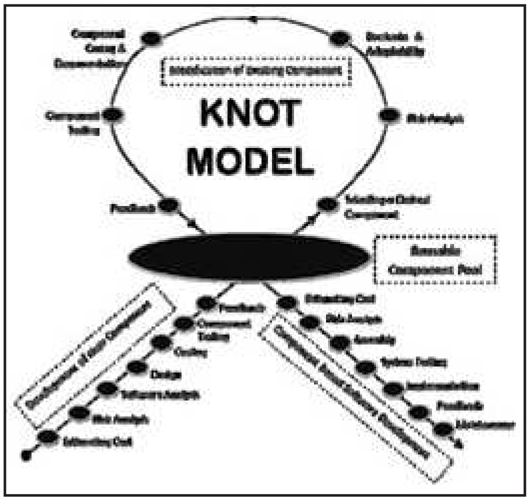

Figure 4: Knot Model

W Model - The W model is a combination of two V models, as shown in Figure [16]. The left side represents the life cycle of the component and the right side represents the life cycle of the system. It was proposed in 2011 with a primary focus on verification and verification (V&V). The author follows the standard CBD process and separates the lifecycle from the development of system development components. The selection and adjustment phase of the component is the link between the two models in V. In this model, V and V consider three levels, component level, composition level, and final system level, respectively.

Summary of Various CBD Models - This section summarizes all proposed models of the CBD based on the focus areas given in the table. The table clearly shows that reuse is critical, as shown by the Y and knot models. The second aspect that requires more attention is to separate the development process from the components of the final system development. The choice of components is also concentrated on many development models.

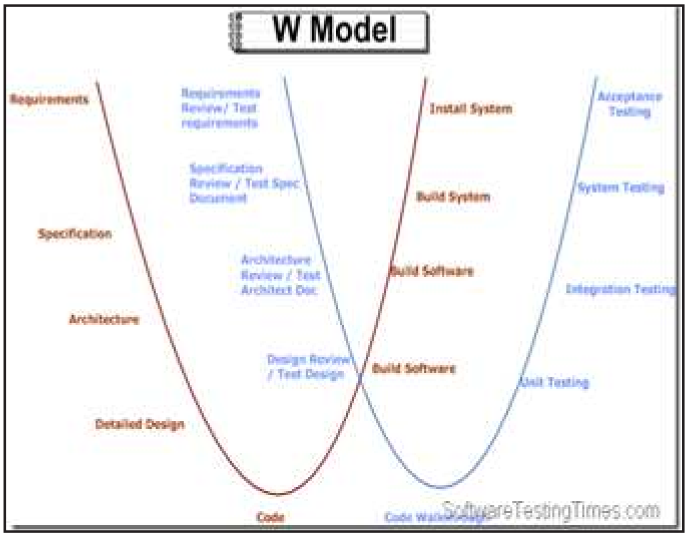

Figure 5: W Model

Table: Various CBS Development Models and Their Focus Area

CBD Model	Year	Focus Area
Y Model [10]	2005	Reusability and Parallel Development
V Model [11]	2005	Component Development and Component Selection
X Model [12]	2008	Component Development, System Development with And Without Component Modification
CBSD Dual Life Cycle Model [14]	2009	Separation Between Component Development and System Development
Knot Model [15]	2011	Reusability, Modularity, Risk Analysis
W Model [16]	2011	Verification and Validation, Separate Component and System Development

Conclusion - In this technological era, the complexity of software is increasing. Fast and sensitive systems depend on their underlying software, which in turn depends on the strength of the development phase. Then, SDLC is the backbone of system performance and efficiency. With the development of component-based software development paradigms, several SDLC models have been proposed over time. This paper summarizes some important CBS development models, such as V model, Y model, X model, dual model, knot model and W model. Discussed their main areas of concern. A common aspect derived from this study is that each model separates the development of system development components. In addition, selecting the right component from all components remains an open issue in all models.

References :-

1. Boehm, B.W., 1988. A spiral model of software development and enhancement. IEEE Computer, 21: 61-72.
2. Luiz Fernando Capretz , Y: A New Component-Based Software Life Cycle Model , Journal of Computer Science 1 (1): 76-82, 2005
3. Csaba Szabó, LadislavSamuelis , The A-Shaped Model of Software Life Cycle , 5th Slovakian-Hungarian Joint Symposium on Applied Machine Intelligence and Informatics January 25-26, 2007 pp129-135
4. D'Souza D and A.C. Wills, Objects, Components, and Frameworks with UML: The Catalysis Approach, Addison Wesley Longman, Reading, Mass., 1998.
5. Szyperski C, Component Software: Beyond Object-Oriented Programming, Addison Wesley Longman, Reading, Mass., 1998. [6] G.T. Heineman and W.T. Councill, Component-Based Software Engineering, Addison-Wesley, Boston, 2001.
6. Crnkovic Ivica, and Magnus Larsson. “Component-Based Software Engineering-New Paradigm of Software Development.” Invited talk and report, MIPRO, pp- 523-524, 2001.
7. Prasenjit Banerjee, Anirban Sarkar, “Quality Evaluation Framework for Component Based Software” In *Proceedings of the Second International Conference on Information and Communication Technology for Competitive Strategies* (ICTCS '16). ACM, New York, NY, USA, Article 17, 6 pages. 2016. DOI: http://dx.doi.org/10.1145/2905055.2905223 CrossRef
8. Gaurav Kumar and Pradeep Kumar Bhatia, “Neuro-Fuzzy Model to Estimate & Optimize Quality and Performance of Component Based Software Engineering” SIGSOFT Software Eng. Notes 40, 2 (April 2015), pp. 1-6.CrossRef
9. Tassio Vale, Ivica Crnkovic, Eduardo Santanade Almeida, Paulo Anselmo da Mota Silveira Neto, YguaratãCerqueiraCavalcantic, Silvio Romero de LemosMeira, “Twenty-Eight Years of Component Based Software Engineering”, The Journal of Systems and Software, 111, pp. 128–148, 2016.CrossRef
10. Ivica Crnkovic, “Component-Based Software Engineering — New Challenges in Software Development”, Journal of Computing and Information Technology – CIT 11, 3, pp. 151–161, 2003.
11. Deepti Negi, Yashwant Singh Chauhan, PritiDimri, Aditya Harbola. “An Analytical Study of Component-Based Life Cycle Models: A Survey”, In Proceedings of International Conference on Computational Intelligence and Communication Networks (CICN), 2015.CrossRef
12. Vinay, M. K., Johri, P., “W-Shaped Framework for Component Selection and Product Development Process”, World Applied Sciences Journal, 31(4), pp. 606-614, 2014.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

भीमल रेशों द्वारा धागों का निर्माण कर उत्तराखण्ड के घरेलू उद्योगों के लिए एक योगदान

गुँजा सोनी *

शोध सारांश – भारत देश प्राकृतिक सुंदरता एवं प्रकृति से प्राप्त संसाधनों वस्तुओं के लिए प्राचीनकाल से ही ख्याति प्राप्त है इसकी जानकारी हमें वेदों और ग्रंथों से प्राप्त होती है। वस्त्र अवलोकन के क्षेत्र में भी प्राचीनकाल से लेकर आधुनीक काल तक भारत प्राकृतिक रेशों के लिए विश्व में अपना एक स्थान प्राप्त कर चुका है जैसे – कपास ओर जूट।

हमारे देश में उत्तराखण्ड प्रकृति संपदाओं से धनी राज्य माना जाता है चाहे वो जीव जन्तु हो या वनस्पति यहां वनस्पतियों की कई प्रजातियां पाई जाती है जिन से हमें प्राकृतिक रेशे प्राप्त होते है इन में एक वृक्ष भीमल का भी है। जो कि यहां के लोगों के परिवार का वृक्ष कहलाता है। यह वृक्ष यहां के हर परिवार के पास होते है इस वृक्ष से प्राप्त रेशों का प्रयोग काफी समय से किया जाता रहा है। रेशों के अलावा इस वृक्ष का महत्व आयुर्वेद में भी होता रहा है। पर बदलते समय के साथ लोग इन सब लाभों को भूल गए है। मेरे शोध का मुख्य उद्देश्य यह है कि यहां के निवासी फिर से प्रकृति के तरफ आकर्षित होकर प्रकृति से प्राप्त वस्तुओं का उपयोग करे एवं अपनी जीविका के लिए पारंपरिक रुप से चले आ रहे कुटीर उद्योगों के तरफ अग्रसर होए।

प्रस्तावना – आज के समय में मानवनिर्मित रेशों ओर धागों का प्रयोग अधिकाधिक होने के बाद भी प्रकृति रेशों का अपना एक अलग ही महत्व है। भारत से प्रकृति रेशों का निर्यात दूसरे देशों में किया जा रहा है जिसमें मुख्य जूट है। इसी प्रकार कई प्रकृति रेशों का उत्पादन हमारे देश में होता रहा है। पर कुछ रेशें ऐसे भी है जिनका उपयोग समय के साथ कम होता जा रहा है और कुछ तो समाप्त हो गया है जिसका स्थान मानवनिर्मित रेशों ने ले लिया है इनमें भीमल वृक्ष से प्राप्त रेशे भी है समय के साथ बहुउपयोगी होने के पश्चात् भी विलुप्त होने के कगार पर है। इन्हीं में एक है भीमल। जो कि बहुउपयोगी होने के बाद भी आज इसकी उपयोगिता नहीं रह गई है। जबकि इस वृक्ष से प्राप्त रेशों से जूट के व अन्य रेशें के समान ही उपयोग किया जा सकता है। उत्तराखण्ड में भीमल के रेशों का उपयोग अपनी घरेलू कार्य के लिए किया जाता रहा है। यह हिमालय में 800 मीटर से 2000 मीटर की ऊँचाई तक में पाये जाते है। इस वृक्ष का सबसे अच्छा विकास 1000 मीटर से 1500 मीटर तक की ऊँचाई तक माना जाता है। ये उत्तराखण्ड में घास के मैदानों में पाए जाते है कृषि क्षेत्र के चारों तरफ पाए जाते है।

उत्तराखण्ड का ये बहुउद्देशीय वृक्ष है और ये अच्छे गुण वाला चारा और ईधन प्रदान करता है और अच्छी गुणवत्ता वाले फाईबर भी प्रदान करता है। और इस वृक्ष आयुर्वेदिक औषधियां एवं प्राकृतिक रंग भी प्राप्त होते है।

भीमल रेशे प्राप्त करने की प्रक्रिया – भीमल के टहनियों की शीत रितु के अंतर्गत काटा जाता है दिसम्बर से फरवरी के महीने में और पेड के पत्तियों को दुधारु जानवरों को चारों के रुप में प्रयोग किया जाता हइसके बाद शाखाओं को एकत्रित करके उन्हें मध्य अप्रैल तक छाया में सुखाया जाता है। इस समय तक तापमान में बढोतरी हो जाती है जिससे ये अच्छे से सूख जाते है और ये तन्तुवेचन प्रक्रिया के लिए अनुकूल होते है। इसके बाद टहनियों को एक साथ समूह में बांधकर बहते हुए पानी में डूबा दिया जाता है और उस पर भारी पत्थर रख दिया जाता है बहते हुए पानी में रेशों का रंग साफ दिखाई देता है ठहरे हुए पानी की अपेक्षा।

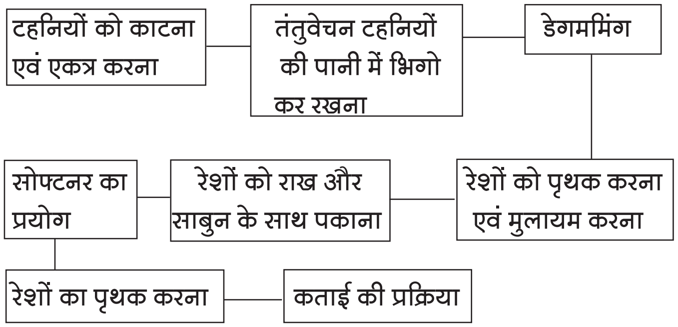

तन्तुवेचन – इस प्रणाली के अंतर्गत भीमल के टहनियों को पानी फैला कर डुबाया जाता है इन्हें 30–45 दिनों (मध्य अप्रैल से मई महीने के अंत तक) जल टहनियों के मध्य में प्रवेश करते है। और आंतरिक कोशिकाओं को पृथक–2 करते हुए बाहरी सतह के कोशिकाओं को अलग करते हुए बढते है। इससे नमी और क्षय पैदा करने वाले जीवाणुओं के अवशोषण में वृद्धि होती है। इस प्रक्रिया में समय का ध्यान सावधानीपूर्वक रखना चाहिकम समय में इस प्रक्रिया को करने पर रेशों को पृथक करने में कठिनाई होती है और अधिक समय होने पर रेशों को कमजोर करती है। डबल रेटिंग से, उत्कृषक रेशे प्राप्त होते है इसमें समय से पहले ही रेशों कापानी से निकाल देते है फिर महिनों तक सुखा कर और फिर पानी में डूबा दिया जाता है। चाहे वो तालाब या नदी में, भाडी पत्थर या मोटी लकडी से दबा दिया जाता है। 8 से 14 दिनों में हो जाता है पर ये पानी के तापमान और उसमें पाए जाने वाले मिनरल के ऊपर आधारित होता है।

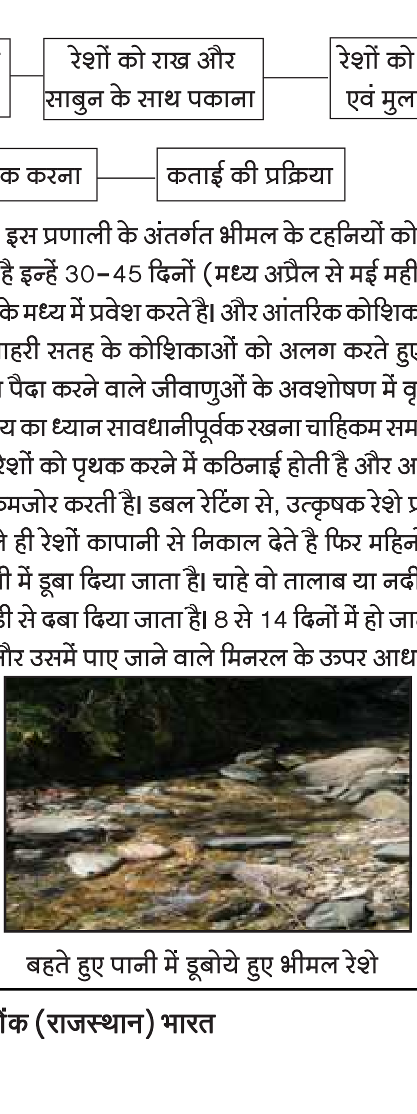

बहते हुए पानी में डूबोये हुए भीमल रेशे

* पी.एच.डी. शोधार्थी, वनस्थली विश्वविद्यालय, टोंक (राजस्थान) भारत

डेगमर्मिंग (फाइबर के अलग करने और मुलायम करने के लिए)

1. यह सबसे अधिक श्रम गहन प्रक्रिया है और इसके लिए रेटिंग किये हुए टहनियों को कुचलने और पटकने की प्रक्रिया करते है। रेशे टहनियों से पटकने के बाद अलग होते है कठोर सतह या पत्थर पर अच्छी तरह से रेशों को धोया जाता है ताकि उसमें कोई भी छाल न रह सके। फिर रेशों (फाईबर) की छाया में सूखा दिया जाता है पर इस प्रक्रिया से रेशे पूरी तरह से छाल से मुक्त नहीं हो पाते है।

रेशों को पृथक करना

2. **दूसरी प्रणाली–** टहनियों को पानी से निकाल कर उन से रेशों को निकाल कर एक बडे बर्तन में पानी गर्म करते है। 1 किलों रेशों के लिए 15 से 16 लीटर पानी उबालते है। फिर इसमें राख डाल कर इसे मिलाया जाता है। राख के अच्छे से मिलने पर इसमें रेशों की डाल देते है और 2 घण्टे तक पकाते है दो घण्टे के बाद इसे राख वाले पानी से निकाल कर पटक–पटक कर धोया जाता है दुबारा से उसी अनुपात में पानी गर्म कर के साबुन डाल देते है। 1 किग्रा.रेशे के लिए 200 ग्राम साबुन का प्रयोग किया जाता है और जब साबुन अच्छे से गर्म पानी के साथ धुल जाता है तब इसमें रेशों को डाल देते है जिससे रेशे साफ हो जाते है और मुलायम भी हो जाते है।

सामग्री का अनुपात – 1 किलो रेशा, पानी 15–1श लीटर

राख – 500 ग्राम 1 किलो

रेशों को उबालना

सोफ्टनर का प्रयोग (रेशों को मुलायम करना) – इसके लिए 1 किलो रेशों के लिए 80 से 90 ग्राम सोफ्टनर का प्रयोग किया जाता है और पानी अनुमानित तौर पर लिया जाता है इतना पानी हो कि रेशे उसमें बस अच्छे से डूब जाये और थोडा पानी ही शेष बचे। 30 मिनट तक सोफ्टनर में रखने के बाद रेशों को निकाल कर सुखा देते है। 50प्रतिशत से 60 प्रतिशत रेशों के सूखने के बाद उनके मुलायम होने का पता चलने लगता है।

रेशों को खोलना एवं पृथक करना – इस प्रक्रिया के अंतर्गत रेशों को छाल से अलग–2 किया जाता है जिससे कतई आसानी से हो सके।

सोफ्टिनिंग का प्रयोग

कार्डिंग प्रक्रिया – यह प्रक्रिया हाथ के द्वारा किया जाता है इसमें समय ज्यादा लगता है इसमें रेशों का 5 इंच में काटा जाता है फिर हेन्ड कार्डिंग का प्रयोग करते है पर हाथ के द्वारा कार्डिंग में भीमल के रेशों से कार्डिंग करके चरखे एवं तकली के द्वारा कताई करना संभव नहीं हो पाया सिर्फ बढ कर रस्सीयों का निर्माण किया जा सका इस कारण दूसरी प्रणाली का प्रयोग किया गया।

हाथ द्वारा कार्डिंग की प्रक्रिया

अटोली द्वारा भीमल रेशों से रस्सी का निर्माण

इस पारंपरिक प्रक्रिया के द्वारा सिर्फ रस्सीयों का निर्माण किया जाता रहा है भीमल के अन्य अध्ययन में इससे सिर्फ रस्सी के बनने का ही वर्णन किया गया है। पर भीमल के रेशों से धागों का निर्माण करने के लिए इसे उस

प्रक्रिया का प्रयोग करना पडता है जो कि जूट पर की जाती है इसके लिए जूट के रेशों के लिए प्रयोग में लेने वाले मशीनों का प्रयोग किया जाता है जिससे इनकी चरखे के द्वारा एवं मशीन के द्वारा आसानी से धागों कनिर्माण किया जा सकता है क्योकिं दोनों जूट और भीमल के रासायनिक संयोजन में काफी समानता है।

जूट और भीमल की रासायनिक संरचना –

	जूट	भीमल
सेल्युलोज	65.2 प्रतिशत	48.06
हेमि सेल्यूलोज	22.2 प्रतिशत	19.02
लिग्निन	12.3 प्रतिशत	16.63
फेट एण्ड वेक्स	0.3–1.0 प्रतिशत	1.04
ऐस कॉटेन्ट	0.6–0.8 प्रतिशत	1.07

इनकी रासायनिक संरचना में लगभग समानता होने के कारण इसे जूट कार्डिंग मशीन का प्रयोग भीमल के रेशों पर किया गया।

एक बैंच के लिए भिमल का चयन

↓

टुकड़ा करना

↓

नरम या स्नेहन

↓

कंडीशनिंग या पिलिंग

↓

ब्रेकर कार्ड

↓

फिनिशर कार्ड

↓

पहला ड्राइंग फ्रेम

↓

दूसरा ड्राइंग फ्रेम

↓

तीसरा या फिनिशर ड्राइंग फ्रेम

↓

भिमल कताई

कताई की प्रक्रिया – कताई की प्रक्रिया हाथ के द्वारा की गई है इस प्रक्रिया के अंतर्गत दो प्रकार से किया गया है।

तकली द्वारा – इस प्रक्रिया में तकली का प्रयोग करते है। यह एक धातु से निर्मित 7 इंच लम्बी छडी के नीचे के सिरे पर एक गोलाकार प्लेट लगी रहती है। छड के उपरी भाग में एक हुक रहता है। यही हुक रेशों को पकडता है। इसी हुक के द्वारा रेशों को थोडी लम्बाई तक खींचा जाता है। जब कुछ रेशें आपस में सटते हुए कुछ लम्बाई तक खिंच जाते है तब तकली को हाथ से ही घुमा दिया जाता है। पूर्णरुप से बट जाने के बाद प्लेट के पास ही बटे हुए धागे को लपेट दिया जाता है तथा पुन: इसी क्रिया को दुहराया जाता है। इस प्रकार धागे की लम्बाई बढती जाती है। उत्तराखण्ड में अभी भी भोटिया जनजातियों में कुछ लोग तकली का प्रयोग करते है ।

बागेश्वरी चरखे के द्वारा कताई

चरखे द्वारा कताई – उत्तराखण्ड में कताई के लिए बागेश्वरी चरखे का प्रयोग किया जाता है ये चरखा टेबल के समान बना हुआ है इसे नीचे पैरों द्वारा चलाया जाता है इसकी बनावट एक टेबल के समान है नीचे एक बडा चक्का होता है वो रस्सी के द्वारा उपर एक छोटे चक्के से गोलाई में जुडा होता है। छोटे चक्के के बीच से एक छडी बीचों–बीच एक तरफ से दूसरे तरफ निकलते हुए दो स्टेन्ट के सहारे स्थापित होती है। नीचे वाले चक्के पैरों से चलाये जाने वाले पैडिल से जुडे होते है जब पैडल को चलाते है पैरों से तो बडा चक्का घुमता है ओर फिर छोटा चक्का और बाकि के हिस्से अपना–अपना काम प्रारंभ करते है।उत्तराखण्ड के रोम्पा भाषा में इन भागों को अलग–अलग नामों से बोला जाता है जो कि चित्र के माध्यम से दर्शाया गया है।

निष्कर्ष – भीमल के पेडों का प्रयोग चारे, आयुर्वेद ओर जलाने के अलावा इससे रेशे अधिक से अधिक मात्रा में प्राप्त करके उस से धागों का निर्माण किया जा सकता है जो कि कारपेट और अन्य होमफनिशिंग उत्पादों को घरेलू उपयोग में लाये जा सकते है। हैण्डीक्राफ्ट में भी प्रयोग में लिया जा सकता है ये उत्तराखण्ड के लघु उद्योग और घरेलू उद्योगों को भी आगे बढा सकती है अगर भीमल के रेशो पर और अध्ययन हो तो जूके समान ही इसको और भी कई प्रयोगों में लाया जा सकता है जिस प्रकार आज जूट कई क्षेत्रों में प्रयोग में आ रहा है उसी प्रकार भीमल का भी प्रयोग हो सकता है क्योंकि भीमल भी एक बहुउपयोगी पेड है और इससे प्राप्त रेशे बहुउपयोगी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Murphy, W.S., Volume -2, Practical Guide to Spinning, Abhishek Publications, Chandigard -17, First Indian Edition – 2004
2. Pangtey, Dr. S.S., Munsyari A Gem in the India Himalaya, Munsyari A Gem in the India Himalaya, Tribal Heritage Museum Mansyari, Pithoragarh, uttranchal
3. Rastogi, Meenakshi, Fibres And Yarn, Sonali Publications, New Delhi – 110002 First Published – 2009
4. Sanjay Bahti, Anuj Kumar, S.T.S. Lepccha, Common Fiber Yielding Plants Of N.W. Himalayas, प्रथम संस्करण, 2009

****

Career Lattice Model - A Meaningful link between pre-service, in-service, and continuing education

Dr. Premlata Gandhi*

Abstract - This paper a meaningful link between pre-service, in-service and continuing education the initiative is required to be taken to support a cooperative mission of reform in both pre-service (university) and in-service (school) educators. This vision has three central goals: diversity, quality, and collaboration. One has to recognize the value of diversity in individual cultures, instructional styles, and unique needs as life-long learners.
Keywords— IN-SERVICE, PRE-SERVICE, TEACHER EDUCATION, CLASSROOM.

Introduction - This paper presents on the meaningful link between pre-service, in-service and continuing education. Restructuring the role of the classroom teacher as a teacher educator to facilitate the expansion of professional skills, is reflective of the dynamic nature of adult development. There is diversity among experienced classroom teachers in their career stages and in the personal and professional characteristics they bring to the classroom. What is appropriate for one teacher as an incentive for professional growth may not be appropriate for another teacher. Therefore, options and alternatives for staff development that are consistent with the realities of teacher career stages will lead to the greater professionalization of the teacher. Opening an avenue of teacher growth through school-based teacher education, the classroom teacher is provided the opportunities to promote and support peer teacher growth, to experience empowerment by facilitating local change, to assume a leadership role without relinquishing the classroom, and to develop teaching behaviors which blend clinical skills with practitioner-translated research and theory. This revitalization of the teaching role with new responsibilities benefits the schooling process and its participants, and is achievable when the classroom teacher becomes a teacher educator.

Initiative

A. Review Stage - In order to create a meaningful link between pre-service, in-service and continuing education the initiative is required to be taken to support a cooperative mission of reform in both pre-service (university) and in-service (school) educators. This vision has three central goals: diversity, quality, and collaboration. One has to recognize the value of diversity in individual cultures, instructional styles, and unique needs as life-long learners.

***B. Career of a teacher* -** The culture of schools historically isolates the teacher in the classroom. The desire for increased and varied responsibility within the teaching field has traditionally been accomplished by leaving the classroom and advancing into an administrative role. That, however, is not always the desire of the career teacher. Opportunities to expand the teaching role while remaining a classroom teacher are achievable through a staff development program that recognizes adult learning and development stages and capitalizes upon the classroom teacher as a teacher educator. This concept is recognized and supported through career stage development activities advocated in various reform reports.

The classroom teacher who is a school-based teacher educator can be responsible for pre-service, in-service, or continuing education at a school or district level, while maintaining a primary work location in the elementary or secondary classroom. Teachers in this role have the potential for enhancing faculty morale by responding to both the professional and personal development needs of the faculty and by utilizing other teachers as resources within the designed program. Teacher needs have been addressed most recently through the career lattice model, which has been proved as successful link between pre-service, in-service, and continuing education.

***C. District Institutes of Education and Training* -** It is envisaged that selected institutions should be developed as District Institutes of Education and Training (DIET) [2], both for pre-service and in service courses of elementary school teachers and for continued education of the personnel working in non-formal and adult education programmme. Reorganization of secondary teacher education system may also be implied in the policy.

REORGANISATION OF ELEMENTARY TEACHER EDUCATION - An important change in the educational system may be brought about by the radical transformation of the present system of Elementary Teacher Education. The functions of an Elementary Teacher Education institution should include:

1. Pre-Service and inservice education of teachers for the formal school system.

***Assistant Prof., LMTT (C.T.E.) BEd. College, Dabok, Udaipur (Raj.) INDIA**

2. Induction level and continuing education of Non-Formal and Adult Education Instructors and Supervisors.
3. Training and orientation of heads of institutions in institutional planning and management and micro-level planning.
4. Orientation of community leaders, functionaries of Voluntary organizations and others influencing school level education.
5. Academic support to school complexes and District Boards of Education.
6. Action research and experimentation work.
7. Serving as evaluation center for primary and upper primary schools as well as Non-Formal and Adult Education Programme.
8. Provision of services of a resource and learning center for teachers and instructors.
9. Consultancy & advice

Facilities of latest technology such as computer-based learning, TV, etc. may be provided at DIETs. The teachers receiving training at DIETs should be encouraged to develop their own programmes using the facilities available at DIETs and to use these materials as instructional resources. Capability for making copies of video lectures, etc. should also be provided in these Institutes. Besides, imaginative use of traditional teaching aids may be emphasized and teachers encourage to Improvise their own instructional materials.

Secondary Teacher Education - The responsibility for secondary teacher education may continue to rest with Colleges of Teacher Education affiliated to Universities. The university in co-operation with NCTE may exercise responsibility for academic aspects including conduct of examinations, award of degrees and ensuring quality of secondary teacher education institutions. These institutions should also be responsible for continuing education programmes for secondary teachers. Some Colleges of Teacher Education may be developed as comprehensive institutions organizing programmes for primary teacher education and possibly also, 4 years' integrated courses after higher secondary stage, in addition to the usual B.Ed./ M.Ed. courses. These comprehensive institutions should also be provided with facilities-and staff for undertaking research and to supplement the efforts of State Councils of Educational Research and Training (SCERT).

In-Service education for teachers - The needs for in-service education of teachers [1] arise from several sources, such as, changing national goals, revision of school curricula, additional inputs in teaching- learning system, inadequate background of teachers, etc. The state level agency should take cognizance of all the needs before preparing a programme of in-service education for a given period of time.

The District Institutes of Education and Training for the primary level should be the major agency to conduct the programmes of in- service education for primary teachers; assistance may be sought from school complexes in the district. In case of secondary school teachers, the programmes should be extended through teacher training institutions and the Centers for Continuing Education. The District level education officer may help in effective conduct of the programmes.

All in-service education programmes cannot be organized in face- to-face modality, especially in view of the numbers involved. Distance in-service education may be prepared and extended with the help of broadcasting agencies. The comprehensive college of education as well as DIETs may also be provided production facilities in a phased manner. The production facilities at such colleges may not be of professional quality which would produce material which can be used in its own training programmes only but can also be shared by other sister organizations Experiences especially those of voluntary organizations should be drawn upon in designing courses, development of material and strategies for in-service education.

National Council for teacher education (NCTE) - NCTE has been in existence since 1973 but it has not been able to guide the system of teacher education to meet emerging challenges. Some of the difficulties are inherent in its constitution. It should perform the following functions:

(a) Accreditation/disaccreditation of institutions of teacher education
(b) Laying down of standards and norms for institutions of teacher education
(c) Development of guidelines for curricula and methods of teacher education
(d) Other functions like earning of credits for in- service education, duration of various courses, emphasis to be laid in training programs for NFE/AE instructors, place of correspondence education in teacher education etc. Some other functions like preparation of learning material, orientation of senior teacher educators etc. may continue to be performed by NCERT, SCERTs, in co-operation with NCTE.

The curriculum for teachers' training needs to be revised in the light of the new policy thrusts. In particular, there should be an emphasis on integration of education and culture, work experience, physical education and sports, the study of Indian culture and the problems of the unity and integration of India. Planning and Management are emerging areas and curriculum should bring out the importance of these areas. Educational technology will influence not only methodologies of teaching learning process but also the contents and their design. These aspects should also be taken into account while framing the curriculum.

There is too much emphasis in textbooks on Western ideas, and teachers under training do not get exposed adequately to Indian philosophical and psychological concepts of education. Therefore, NCERT and UGC should undertake the task of preparing new learning materials, which would include textbooks, reference books,

anthologies, slides, films, etc., and which will reflect the Indian experience in National Council for teacher education(NCTE).

References :-

1. L.A. Bell, The Organization of In Service Education Journal of In-Service Education.
2. Grover. S.K. (1999). Teacher Education for Universal, Elementary Education in India. Education of Teachers, Saarc
3. Experience. IJNESCO. NCTE Document. New Delhi: pp. 53-60.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण में प्रयुक्त शिक्षण विधियों की प्रभावशीलता का अध्ययन

रेखा दाधीच * डॉ. अनिता कोठारी **

शोध सारांश – प्रस्तुत अनुसंधान कार्य का मुख्य लक्ष्य पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण में प्रयुक्त शिक्षण विधियों की प्रभावशीलता का अध्ययन करना था। शोध में नवीन शिक्षण विधियों की प्रभावशीलता का अध्ययन करने हेतु प्रयोगात्मक विधि का अध्ययन किया गया। शोध के न्यादर्श का चयन याद्दच्छिक न्यादर्श विधि द्धारा 30-30 छात्राओं के दो समूह प्रायोगिक समूह एवं नियंत्रित समूहका चयन किया गया।स्वनिर्मित पूर्व एवं पश्च परीक्षण के माध्यम सेदत्त संकलन किया गया।

शब्द कुंजी – प्रयुक्तशिक्षण विधियाँ, प्रभावशीलता।

समस्या का उद्गम – Karijani and Yeshodhara (2008) ने 'भारत और ईरान के उच्च प्राथमिक विद्यालय के अध्यापकों में विभिन्न घटकों में पर्यावरणीय रवैया का अध्ययन',आयजक शलिनी (1987) ने *'विद्यार्थियों के विभिन्न समूहों में पर्यावरणीय जागरूकता का अध्ययन'*,सोंलकी, कल्पना (1988) ने *'पर्यावरण शिक्षा के प्रति विद्यार्थियों एवं शिक्षकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन'*,प्रधान (2002) ने *'माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों के बीच पर्यावरण के प्रति जागरूकता का विश्लेषण'*,शैला (2003) ने *'माध्यमिक स्कूलों के शिक्षकों के पर्यावरणीय द्दष्टिकोण पर पृष्ठभूमि चरों के प्रभावों का अध्ययन'*,मोदी, किरन (2005) ने 'राजस्थान और गुजरात में प्राथमिक स्तर पर पर्यावरण शिक्षा के प्रयुक्त आव्यूह का तुलनात्मक अध्ययन', ढल्लन एण्ड संधु (2005) ने *'माध्यमिक स्कूल के शिक्षकों के बीच पर्यावरण शिक्षा जागरूकता का अध्ययन'* खीमाणी, बेला (2008) ने शोधकार्य 'पर्यावरण शिक्षण हेतु विचार विमर्श कार्टुन भूमिका निर्वहन कार्टुन एवं परम्परागत व्याख्यान का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव' तथा देवी (2008) ने 'निरन्तर शिक्षा प्रीरिक्स के बीच पर्यावरणीय मुद्दों के ज्ञान से संबन्धित कारक का अध्ययन' आदि संबंधित साहित्य से उक्त विषय पर अनुसंधान कार्य करने की प्रेरणा मिली है।'

विशिष्ट उद्देश्य :

1. पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण पर गतिविधि की प्रभावशीलता का अध्ययन करना।
2. पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण पर खेल विधि की प्रभावशीलता का अध्ययन करना।
3. पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण पर प्रयोग विधि की प्रभावशीलता का अध्ययन करना।

प्राकल्पनाएँ :

1. पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण पर गतिविधि की कोई प्रभावशीलता नहीं होती है।
2. पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण पर खेल विधि की कोई प्रभावशीलता नहीं होती है।
3. पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण पर प्रयोग विधि की कोई प्रभावशीलता नहीं होती है।

विधिशास्त्र :

1. प्रस्तुत शोध में शोध की प्रकृति को देखते हुए शोधार्थी ने प्रयोगात्मक विधि का प्रयोग किया।
2. दत्त संकलन हेतु स्वनिर्मित पूर्व व पश्च परीक्षण काप्रयोग किया गया।
3. अनुसंधान कार्य के लिए न्यादर्श स्वरूप कुल 60 छात्राओं का चयन किया गया है।जिसमें 30 छात्रा नियंत्रित समूह व 30 छात्रा प्रयोगात्मक समूह के लिये गये है।

सारणीयन व विश्लेषण :-

सारणी संख्या 1 : पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण पर गतिविधि की प्रभावशीलता का टी-मान के आधार पर विश्लेषण

समूह	विधि	परीक्षण	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मान	0.01 एवं 0.05 स्तर पर सार्थकता
प्रयोगा-त्मक	गति विधि	पूर्व	13.1	1.7	31.42	सार्थक अन्तर पाया गया
		पश्च	23.9	1.7		

स्वतंत्रता के अंश (df = 28) पर सारणीमान

0.01 स्तर का मान = 2.76, 0.05 स्तर का मान = 2.05

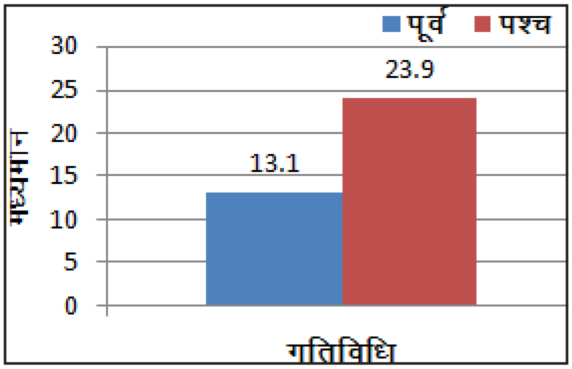

*पी.एच.डी. शोधार्थी, जर्नादनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड-टू-बी विश्वविद्यालय), उदयपुर (राज.) भारत
**पी.एच.डी. पर्यवेक्षक, जर्नादनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड-टू-बी विश्वविद्यालय), उदयपुर (राज.) भारत

व्याख्या – प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों को पर्यावरण अध्ययन विषय को गतिविधि द्वारा शिक्षण कराते हुए पूर्व व पश्च परीक्षण के प्राप्त प्राप्तांकों का मध्यमान व मानक विचलन क्रमश: 13.1, 23.9 व 1.7, 1.7 प्राप्त हुए। दोनों परीक्षणों के मध्यमानों के मध्य सार्थक अन्तर ज्ञात करने के लिए टी–परीक्षण का प्रयोग किया गया तथा प्राप्त टी–मान के आधार पर पाया गया कि दोनों परीक्षणों के मध्यमानों के बीच सार्थक अन्तर है। निष्कर्षत: प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों को पर्यावरण अध्ययन विषय को गतिविधि द्वारा शिक्षण कराने पर सार्थक प्रभाव पाया गया।

सारणी संख्या 2 : पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण पर खेल विधि की प्रभावशीलता का टी–मान के आधार पर विश्लेषण

समूह	विधि	परीक्षण	मध्यमान	मानक विचलन	टी–मान	0.01 एवं 0.05 स्तर पर सार्थकता
प्रयोगा–त्मक	खेल	पूर्व	13.9	2.0	22.01	सार्थक अन्तर पाया गया
		पश्च	23.6	1.7		

स्वतंत्रता के अंश (df = 28) पर सारणीमान
0.01 स्तर का मान = 2.76
0.05 स्तर का मान = 2.05

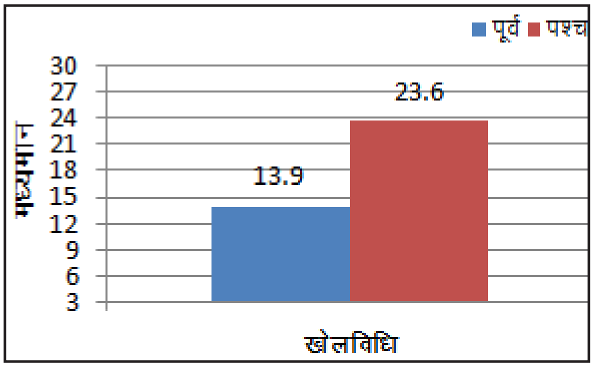

व्याख्या – प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों को पर्यावरण अध्ययन विषय को खेल विधि द्वारा शिक्षण कराते हुए पूर्व व पश्च परीक्षण के प्राप्त प्राप्तांकों का मध्यमान व मानक विचलन क्रमश: 13.9, 23.6 व 2.0, 1.7 प्राप्त हुए। दोनों परीक्षणों के मध्यमानों के मध्य सार्थक अन्तर ज्ञात करने के लिए टी–परीक्षण का प्रयोग किया गया तथा प्राप्त टी–मान के आधार पर पाया गया कि दोनों परीक्षणों के मध्यमानों के बीच सार्थक अन्तर है। निष्कर्षत: प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों को पर्यावरण अध्ययन विषय को खेल विधि द्वारा शिक्षण कराने पर सार्थक प्रभाव पाया गया।

सारणी संख्या 3 : पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण पर प्रयोग विधि की प्रभावशीलता का टी–मान के आधार पर विश्लेषण

समूह	विधि	परीक्षण	मध्यमान	मानक विचलन	टी–मान	0.01 एवं 0.05 स्तर पर सार्थकता
प्रयोगा–त्मक	प्रयोग	पूर्व	15.9	2.1	21.72	सार्थक अन्तर पाया गया
		पश्च	25.2	1.6		

स्वतंत्रता के अंश (df = 28) पर सारणीमान
0.01 स्तर का मान = 2.76
0.05 स्तर का मान = 2.05

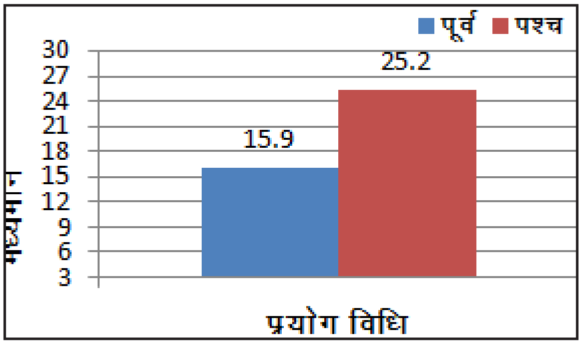

व्याख्या – प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों को पर्यावरण अध्ययन विषय को प्रयोग विधि द्वारा शिक्षण कराते हुए पूर्व व पश्च परीक्षण के प्राप्त प्राप्तांकों का मध्यमान व मानक विचलन क्रमश: 15.9, 25.2 व 2.1, 1.6 प्राप्त हुए। दोनों परीक्षणों के मध्यमानों के मध्य सार्थक अन्तर ज्ञात करने के लिए टी–परीक्षण का प्रयोग किया गया तथा प्राप्त टी–मान के आधार पर पाया गया कि दोनों परीक्षणों के मध्यमानों के बीच सार्थक अन्तर है। निष्कर्षत: प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों को पर्यावरण अध्ययन विषय को प्रयोग विधि द्वारा शिक्षण कराने पर सार्थक प्रभाव पाया गया।

वर्तमान में प्रासंगिकता – शोधार्थी ने प्राथमिक स्तर की कक्षा पांचवी के विद्यार्थियों के पर्यावरण अध्ययन विषय के शिक्षण हेतु खेल, भूमिका निर्वाह ,कठपुतली विधि तथा क्रियात्मक या गतिविधि विधि आदि को उपयोग किया जिसकी प्रभावशीलता देखी जा सकती है अर्थात् परम्परागत विधि की अपेक्षा उपर्युक्त विधियाँ अधिक प्रभावशाली रही है जिससे विद्यार्थी अधिक अधिगम कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Agarwal Subhash (1987) : “Learning Styles”, Among Creative Publishing house.
2. Anastasi, Anne, : Psychological Testing”, New York : MacMailan Publishing Co., Inc., 1976.
3. Good, C.V. (1959) “Introduction to Educational Research”, New York.
4. Goods, Bar and Scates (1947) : “Methodology of Education Research”, New York.
5. Guild, Pat (1990) : “On Learning Style A Conversation with Pat Guild Educational Leadership”, 48,2, pp.10-13.
6. Gupta S.C. (1981) : “Fundamentals of Statistics”, Bombay Himalaya Publishing Home.
7. James, M. Lee : “Principles and Method of Secondary Education”.

Robo Tutor- A Research on Future of Teaching

Dr. Premlata Gandhi*

Abstract - This paper is based on research on the Robots in teaching, it also is a finding on possibility of teacherless classrooms and feedback and of learners.The research also checks if a robot is mainly a teaching assisting tool and not to replace the teacher.It also shows various studies in different areas where robots teach the pre school students, autistic students, high school maths,corporate tranings.Areas where improvement can be done is also emphasized in the conclusion.
Keywords—ROBO TUTOR, PRE-SCHOOL, AUTISTIC STUDENTS, CORPORATE TRAINING, REPLACEMENT.

Introduction - This paper presents a research on a robot teacher which can perform all the tasks of a physical teacher and to check the possibility of the same. There are also many benefits of the Robo Tutor in Corporate Trainings, in schools, kindergartens, and schools for specially abled children.The major benefits relating to the repetitive action ,storing the actions performed in last classes, utilizing regression algorithms to predict the student's behavior like a recommender system ,organizing the class as per levels ,as per interests of different students, personalized teaching for all, more availability of the teacher and more frequency of the classes.

Initiative

A. Stages - There are many MOOCs in the market , but the question of replacement of physical teachers is not very realistic in today's date .There are some preschools where teachers are using Robo-tutors like an aid in teaching and the results are very different from conventional teaching methods.

B. Preschools - Example from a Singapore preschool:In a recent morning at Sparkletots preschool in Singapore, Natalie, Bryan and Mikayle, all four years old, knelt on the floor around a machine called Kibo and "programmed" it with a set of instructions printed on wooden blocks. Each of the blocks was printed with a command — "forward", "backward", "shake" — written in English and as a barcode that the robot could understand. The children started the sequence. Natalie clapped and the others shrieked with delight as the machine wriggled. It had done just what it was programmed to do; hearing the child's clap triggered its movement. "Again, again," Natalie and her classmates squealed. In Singapore, admired globally for its education system, authorities are trialling the use of robotic aides to teachers in kindergartens. Two humanoid robots, Pepper and Nao, assisted teachers in a seven-month trial at two Singapore preschools last year, while technology-enabled toys such as Kibo were deployed at 160 nurseries, including Sparkletots. The city-state's policy makers regard the androids as an adjunct to teaching, while the goal of the tech toys is to encourage children to be more creative with technology. Foo Hui Hui, an official with a Singapore government agency given the task of exploring the possibilities of digital technology, said last year: "We imagine a future not too far off, where interactive robots with the ability to perform multiple human tasks and provide visualisation of complex ideas can help children to learn and collaborate better." After decades in which robots have become commonplace on the factory floor, they are entering our society as comforters, playmates and, perhaps, teachers. Paro, the robotic baby seal first rolled out in Japan in 2003, has been adopted in care homes around the world. Gasparzinho, a stubby robot with a T-shaped head, plays games of tag with sick children in the paediatric wing of a Lisbon cancer hospital. Pepper the robot in a Singapore classroom

C. Relationship of Today's Child and Computer - It is education, and, in particular, teaching very young children, where some researchers and policy makers are focusing their energy. The early years are a period of intense learning and rapid brain development. Skills that will matter throughout life are developed at this point — from the acquisition of confidence and self-esteem to social skills such as learning to play well, sharing, taking turns and dealing with conflict. Advocates of the trials raise hopes that the robots will, ironically, make us more human. In a statement, the Singapore government agency behind the pilots said that these robots "encourage collaboration and social interaction among young children", citing research from the US and Israel. But in a world in which people increasingly fret about the amount of time that we, and our children, spend swiping at screens, the trials also raise questions about the changing dynamics of our society. Some fear that "pretend relationships" with automata may come to be an acceptable substitute for human interaction.

*Assistant Prof., LMTT (C.T.E.) BEd. College, Dabok, Udaipur (Raj.) INDIA

The pioneer of efforts to combine robotics with education was Seymour Papert, a mathematician and computer scientist who worked with Swiss philosopher and child psychologist Jean Piaget at Geneva University before moving to the Massachusetts Institute of Technology in 1963. There, he developed a programming language for children and helped set up the MIT Media Lab. Papert drew a distinction between the use of computers in education to simply instruct a child, and their potential to be an empowering, creative tool. “In many schools today, the phrase ‘computer-aided instruction’ means making the computer teach the child,” he wrote in his influential 1980 book Mindstorms: Children, Computers and Powerful Ideas. “One might say the computer is being used to programme the child. In my vision, the child programmes the computer and, in doing so, both acquires a sense of mastery over a piece of the most modern and powerful technology and establishes an intimate contact with some of the deepest ideas from science, from mathematics, and from the art of intellectual model building.”

Outcome of this approach - When Singapore first introduced the androids Pepper and Nao to the classroom last year, teachers noted that the machines often had gratifying results with normally timid children. Shyer boys and girls were more willing to put their hands up or volunteer to come to the front of the class if it meant they were able to interact with Pepper. In the seven-month pilot study, in which the robots were loaned for free by their Japanese maker SoftBank Robotics, Pepper questioned children after they were told stories. Following a reading of the Aesop fable The Tortoise and the Hare, the robot asked them: “How did the tortoise feel about winning? How do you think the hare is feeling?” The questions, which had multiple choice answers, were aimed at building comprehension but, curiously for an artificial teacher, were also supposed to help the children learn about emotion. The robots assisted in maths lessons too — setting up a shop in class, scanning purchases and then checking whether the children had paid the right money. The children, already exposed to the idea of intelligent machines through television and films, were thrilled by meeting humanoid robots, according to Melissa Bea, a teacher at MY World Preschool. “None of the children were afraid of it,” she tells me by email. “In fact, they had many questions for Nao like ‘How old are you?’, ‘Why are you so short?’, ‘Will you stay at the same height when you reach a hundred years old?’”

Human Skills - Like any new educational gadget, the robot grabbed children’s attention, Bea says, but she questioned its ability to direct a child’s education with human skill. “The robot, not being a thinking individual, is unable to pose questions, elicit responses, prod for discovery learning and point a child towards engaging in a new train of thought or develop new ideas. It is also unable to meet the emotional needs of children.”

To Help children with AUTISM - The children are encountering robots as objects to be manipulated rather than mechanical teaching assistants. Singapore is not the only country to explore the potential of robots in the classroom. Nao has been deployed at a primary school in Birmingham in the UK, where it was used to help children with autism. The trial at Topcliffe Primary School in 2014 was aimed at helping children to pick up social cues. The idea was that, by simplifying interactions, robots could make social exchanges such as playing games easier for autistic children to follow. Researchers in Israel have also used Nao to tell stories to kindergarten children. In autumn 2002, American researcher Javier Movellan brought Robovie, a lanky bipedal Japanese-made android, to his son’s childcare centre in Kyoto. Movellan had become aware of the powerful and positive feelings of emotional connection that social robots could arouse in humans, but later confessed that he was shocked at how intensely the children reacted — they were terrified of the machine. Back at the University of California, San Diego, where he worked, Movellan launched a project to study the potential use of robots to assist teachers in early childhood education. Perhaps mindful of how fearful the children in the Kyoto centre had been, the machine that his team developed, called Rubi, was cute and a little klutzy. A boxy, bug-eyed contraption with a touchscreen on its front, Rubi performed songs and interactive games aimed at improving the children’s vocabulary. While the children were watching the robot, it was also watching them, learning to recognise whether they were smiling or looking blank. Rubi could also display emotion. After an early episode in which the children pulled off a robotic arm, it was programmed to “cry” when it came under physical pressure — signalling that it was getting hurt. Benefits seen in the study:

1. student-to-student confrontations were eliminated
2. self-regulation was demonstrated by all participating students
3. All students showed improvement in social interactions
4. academic gains immediately followed self-regulation
5. students effectively used calm down tools
6. IEP goals are now being regularly achieved.

High school teacher - Maths Teacher: [3] Amy—an AI-driven, robotic math tutor…She’s friendly. She’s a hard worker. She’s helpful and always available.

While she doesn’t walk or drive around a classroom, Amy takes after human tutors, and teaches in an interactive way. Osnova, the tutoring company that created Amy, recently added her first version of dynamic teaching, which allows her to understand why students make mistakes, and then enables her to automatically teach them what they need to learn to fill the gaps.

So far, Amy prototype has been trialled in 10 different high schools across New Zealand. Raphael Nolden, co-founder and CEO of Osnova, says his team has not yet done full analysis of the data from the first trials. When they do, they’ll gain the “most interesting and insightful learning then.”

“If you make a mistake, while doing an integration

exercise. Amy will know why you made the mistake, which is probably some error in your algebra," Nolden explains. "Then she'll teach you this specific thing before she goes back and checks that you can now solve this sort of problem."

Corporate Trainer - In Corporates ,there are big Learning and Development Cells and big budgets ae passed to impart skills and knowledge of specific technologies to the employees.When the employee leaves the Organization the knowledge is also in certain way gone with him until the next person gain sufficient experience. Robo Tutors can be uploaded with the data and lessons to be taught with levels and specifications.This will be beneficial for:

1. More Availability of the tutor
2. More frequency of the course
3. Less input or One time input
4. Reduced Cost
5. Personalized Mentor
6. Recommender System

When can be a replacement -]Robots could replace teachers as soon as 2027.That's the bold claim that Anthony Seldon, a British education expert, made at the British Science Festival in September.

Seldon may be the first to set such a specific deadline for the automation of education, but he's not the first to note technology's potential to replace human workers. Whether the "robots" take the form of artificially intelligent (AI) software programs or humanoid machines, research suggests that technology is poised to automate a huge proportion of jobs worldwide, disrupting the global economy and leaving millions unemployed.

But just which jobs are on the chopping block is still a subject of debate.

Some experts have suggested that autonomous systems will replace us in jobs for which humans are unsuited anyway — those that are dull, dirty, and dangerous. That's already happening. Robots clean nuclear disaster sites and work construction jobs. Desk jobs aren't immune to the robot takeover, however — machines are replacing finance experts, outperforming doctors, and competing with advertising masterminds.

The unique demands placed on primary and secondary school teachers make this position different from many other jobs at risk of automation. Students all learn differently, and a good teacher must attempt to deliver lessons in a way that resonates with every child in the classroom. Some students may have behavioral or psychological problems that inhibit or complicate that process. Others may have parents who are too involved, or not involved enough, in their education. Effective teachers must be able to navigate these many hurdles while satisfying often-changing curriculum requirements.

In short, the job demands that teachers have nearly superhuman levels of empathy, grit, and organization. Creating robotic teachers that can meet all these demands might be challenging, but in the end, could these AI-enhanced entities solve our most pervasive and systemic issues in education.

In Corporates ,there are big Learning and Development Cells and big budgets ae passed to impart skills and knowledge of specific technologies to the employees.When the employee leaves the Organization the knowledge is also in certain way gone with him until the next person gain sufficient experience. Robo Tutors can be uploaded with the data and lessons to be taught with levels and specifications

Room for improvement - In 2015, the United Nations Educational, Scientific, and Cultural Organization (UNESCO) adopted the 2030 Agenda for Sustainable Development, a plan for eliminating poverty through sustainable development. One goal listed on the agenda is to ensure everyone in the world has equal access to a quality education. Specific targets include completely free primary and secondary education, access to updated education facilities, and instruction from qualified teachers. Some nations will have a tougher time meeting these goals than others. As of 2014, roughly nine percent of primary school-aged children (ages 5 to 11) weren't in school, according to the same UNESCO report. For lower secondary school-aged children (ages 12 to 14), that percentage jumps to 16 percent. More than 70 percent of out-of-school children live in Southern Asia and Sub-Saharan Africa. In the latter region, a majority of the schools aren't equipped with electricity or potable water, and depending on the grade level, between 26 and 56 percent of teachers aren't properly trained.

To meet UNESCO's target of equal access to quality education, the world needs a lot more qualified teachers. The organization reports that we must add 20.1 millionprimary and secondary school teachers to the workforce, while also finding replacements for the 48.6 million expected to leave in the next 13 years due to retirement, the end of a temporary contract, or the desire to pursue a different profession with better pay or better working conditions.

That's a lot of teachers. So it's easy to see the appeal of using a robotic teacher to fill these gaps. Sure, it takes a lot of time and money to automate an entire profession. But after the initial development costs, administrators wouldn't need to worry about paying digital teachers. This saved money could then be used to pay for the needed updates to education facilities or other costs associated with providing all youth with a free education.

Digital teachers wouldn't need days off and would never be late for work. Administrators could upload any changes to curricula across an entire fleet of AI instructors, and the systems would never make mistakes. If programmed correctly, they also wouldn't show any biases toward students based on gender, race, socio-economic status, personality preference, or other consideration.

But we still have some ways to go before such instructors enter our classrooms.

Education systems are "only as good as the teachers who provide the hands-on schooling," UNESCO claims, and today's robots simply can't match human teachers in the quality of education they provide to students. In fact, they won't be able to for at least the next decade, Rose Luckin, a professor at the University College London Knowledge Lab, a research center focused on how digital media can transform education, told Futurism. Teachers rely heavily on social interaction to support their students and figure out what they need, Luckin continued, and so far no digital system can compete with a human in this realm.

However, it is possible that no robot will ever be good enough to replace teachers completely. "I do not believe that any robot can fulfill the wide range of tasks that a human teacher completes on a daily basis, nor do I believe that any robot will develop the vast repertoire of skills and abilities that a human teacher possesses," Luckin said.

There is some weight to Luckin's assertions. While machines can handle a variety of specific tasks, we haven't yet come close to creating artificial general intelligence (AGI) — the kind of machine that could answer the tough questionsoutside the purview of the immediate lesson that good teachers should be prepared to tackle. Today's robots also lack the empathy and ability to inspire that teachers bring to the classroom.

That doesn't mean robots won't replace teachers, though. Very few studiesdirectly compare human and robot teachers, so it's not clear how much better the human performs than the robot.

In any case, Luckin suggests a compromise: AI and automated systems could have collaborative roles in the education system. That would enable teachers and students to take advantage of the tech in ways that will benefit them both, and we wouldn't need to worry about lack of oversight for when our AI systems do encounter problems.

References :-

1. https://www.ft.com/content/f3cbfada-668e-11e7-8526-7b38dcaef614
2. https://newsroom.cisco.com/feature-content?articleId=1873531
3. https://newsroom.cisco.com/feature-content?articleId=1873531
4. https://www.weforum.org/agenda/2017/12/why-robots-could-replace-teachers-as-soon-as-2027

****

A Study on Financial Performance of Stock Exchange in India

Chanda Parmar *

Abstract - Stock Market is one of the most vibrant sectors, in the financial system, marking an important contribution to economic development. Stock Market is a place where buyers and sellers of securities can enter into transactions to purchase and sell shares, bonds, debentures etc. In other words Stock Market is a plate form for trading various securities and derivatives. Further, it performs an important role of enabling corporate, entrepreneurs to raise resources for their companies and business ventures through public issues. Today long term investors are interested to invest in the Stock market rather than invest anywhere. The Bombay Stock Exchange (BSE), the National Stock Exchange (NSE) and the Calcutta Stock Exchange (CSE) are the three large stock exchanges of Indian Stock Market. The main objective of present study is to present financial performance of Indian Stock Market to study the Indian Stock Market in depth from 1991 to 2017. The study would facilitate the reader to know the past, current and future trend or prospects of Indian Stock market, this study was provided guidelines to investor to maximize profit with minimize risks. High degree of volatility in the recent times in the market has led to more development in the future.
Keywords - Stock Market, Financial performance, Average return, Investment, Investors.

Introduction - As a part of the process of economic liberalization, the stock market has been assigned an important place in financing the Indian corporate sector. Besides enabling mobilizing resources for investment, directly from the investors, providing liquidity for the investors and monitoring and disciplining company managements are the principal functions of the stock markets. The main attraction of the stock markets is that they provide for entrepreneurs and governments a means of mobilizing resources directly from the investors, and to the investors they offer liquidity. It has also been suggested that liquid markets improve the allocation of resources and enhance prospects of long term economic growth The concept of stock markets came to India in 1875, when Bombay Stock Exchange (BSE) was established as "The Native Share and Stockbrokers Association", a voluntary non-profit making association. We all know it, the Bhaji market in your neighborhood is a place where vegetables are bought and sold. Like Bhaji market, a stock market as a place where stocks are bought and sold. The stock market determines the day's price for a stock through a process of bid and offer. You bid to buy a stock and offer to sell the stock at a price. Buyers compete with each other for the best bid, i.e. The highest price quoted to purchase a particular stock. Similarly, sellers compete with each other for the lowest price quoted to sell the stock. When a match is made between the best bid and the best offer a trade is executed. In automated exchanges high-speed computers do this entire job.

Stocks of various companies are listed on stock exchanges. Presently there are 23 stock markets In India. The Bombay Stock Exchange (BSE), the National Stock Exchange (NSE) and the Calcutta Stock Exchange (CSE) are the three large stock exchanges. There are many small regional exchanges located in state capitals and other major cities. Presently Nifty and Sensex are moving around to 5900 and 19600 (July 2013). All activities of Indian stock market are regulated and controlled by SEBI.

The stock market determines the day's price for a stock through a process of bid and offer. You bid to buy a stock and offer to sell the stock at a price. Buyers compete with each other for the best bid, i.e. the highest price quoted to purchase a particular stock. Similarly, sellers compete with each other for the lowest price quoted to sell the stock. When a match is made between the best bid and the best offer a trade is executed. In automated exchanges high-speed computers do this entire job.

In India the secondary market represented by the stock exchange network is more than 125 year old. When in 1875, the first stock exchange stated operation in Mumbai when the native shares and stock brokers association known as Bombay Stock Exchange (BSE) was formed by the brokers in the Mumbai. As already stated, the Indian Stock markets have played a significant role in the early attempts at industrialization in India in the late nineteenth and early twentieth century's. The early textile mills and the first steel plants were funded in the stock market. Some of these capital raising exercises were large in relation to the size of the financial sector in those days.

Gradually Stock Exchange at other place share also

* Research Scholar (Commerce) Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA

been established and it present there are 24 stock exchange in India. The secondary market in India got a boost when the over the counter exchange of India (OTCEI) and were stabilized.

The M.P. stock exchange an unincorporated association of persons having its place of business at Indore, since the year 1957- 1958, These MPSEs has become recognized by the Central Government under the securities contract (Regulation) Act 1956 vide notification no 1/101FSE188 dated December 22/1988.

The exchange was demutualised in the year 2006 by forming a separate legal entity in the name of MP stock exchange Ltd. And all the business and activities of MP Stock exchange was transferred to mp Stock exchange Ltd. The company incorporated under companies Act 1956 on 04/09/06 and having its registered office at 201, Palika Plaza, 2nd phase, MTH Compound, Indore as a profit making, Tax Paying entity, under MPSE scheme, 2005 approved by these securities and exchange Board of India (SEBI) under section 4B(2)of the securities.

M.P Stock Exchange is the only permanently SEBI recognized stock exchange in India. Setup as an association of persons in 1919. MPSE was corporatized and demutualised into a limited company 2007. MPSE enjoys the association of 260 members and 296 MPSE Governing board is represented by the strategic investors, trading members and SEBI nominated Directors post.

With the help of above description we can understand the stock market easily. We know about them, stock market easily and to find the final conclusion which is needed in my research work. The stock market is the most important sources of company's flies to raise money. This allows business to be publicity traded or raise additional capital for expansion by selling shares of ownership of the company in public market. MPSE was activated u/s 13 with national stock limited on 26th Oct. 2011 & Bombay Stock Exchange Limited on 23rd Feb. 2012. MPSE is fully operational with more than 105 members as one 31-12-2012.

Review Of Literature

Gupta (1992) in his book has studied the working of stock exchanges in India and has given a number of suggestions to improve its working. The study highlights the need to regulate the volume of speculation so as to serve the needs of liquidity and price continuity. It suggests the enlistment of corporate securities in more than one stock exchange at the same time to improve liquidity. The study also wishes the cost of issues to be low, in order to protect small investors.

Panda (2001) has studied the role of stock exchanges in India before and after independence. The study reveals that listed stocks covered four-fifths of the joint stock sector companies. Investment in securities was no longer the monopoly of any particular class or of a small group of people. It attracted the attention of a large number of small and middle class individuals. It was observed that a large proportion of savings went in the first instance into purchase of securities already issued.

Gupta (2009) in an extensive study titled 'Return on New Equity Issues' states that the investment performance of new issues of equity shares, especially those of new companies, deserves separate analysis. The factor significantly influencing the rate of return on new issues to the original buyers is the 'fixed price' at which they are issued. The return on equities includes dividends and capital appreciation. This study presents sound estimates of rates of return on equities, and examines the variability of such returns over time.

JawaharLal (2013) presents a profile of Indian investors and evaluates their investment decisions, He made an effort to study their familiarity with, and comprehension of financial information, and the extent to which this is put to use. The information that the companies provide generally fails to meet the needs of a variety of individual investors and there is a general impression that the company's Annual Report and other statements are not well received by them.

L.C.Gupta (2014) revealed the findings of his study that there is existence of v. tic the Indian stock market. The over speculative character of the Indian stock market extremely high concentration of the market activity in a handful of shares to the neglect of the remaining shares and absolutely high trading velocities of the speculative counters. He opined that short- term speculation, if excessive, could lead to "artificial price". An artificial price is one which is not justified by prospective earnings, dividends, financial strength and assets or which is brought about by speculators through rumours, manipulations, etc. He concluded that such artifices prices are bound to crash sometime or other as history has repeated and proved.

Nabhi Kumar Jain (2015) specified certain tips for buying shares for holding and also for selling shares. He advised the investors to buy shares of a growing company of a growing industry. Buy shares by diversifying in a number of growth companies operating in a different but equally fast growing sector of the economy. He suggested selling the shares the moment company has or almost reached the peak of its growth. Also, sell the shares the moment you realise you have made a mistake in the initial selection of the shares. The only option to decide when to buy and sell high priced shares is to identify the individual merit or demerit of each of the shares in the portfolio and arrive at a decision.

Juhi Abuja (2016) presents a review of Indian Capital Market & its structure. In last decade or so, it has been observed that there has been a paradigm shift in Indian capital market. The application of many reforms & developments in Indian capital market has made the Indian capital market comparable with the international capital markets. Now, the market features a developed regulatory mechanism and a modern market infrastructure with growing market liquidity, and mobilization of resources. The emergence of Private Corporate Debt market is also a good innovation replacing the banking mode of corporate

finance. However, the market has witnessed its worst time with the recent global financial crisis that originated from the US sub-prime mortgage market and spread over to the entire world as a contagion. The capital market of India delivered a sluggish performance.

Objectives of the Study

(i) To analysis the financial performance in stock exchange.

(ii) To analyze the growth & development of Stock Exchange.

Research Methodology

Research Design: Descriptive study.

Sampling units- Sample consists of financial performance in Stock Exchange.

Study Period: Theperiod from 1991 to 2017 was studied.

Sampling technique-Average mean was found.

Statistical Tools: Independent T-Test was applied.

Table 1: Average Returns

Year	Average Returns Value	Percentage of Increase/ Decrease
1991	1599	0.32
1992	2974	0.46
1993	2556	0.16
1994	4069.59	0.37
1995	3360.56	-0.21
1996	3381.28	0.006
1997	3803.77	0.111
1998	3342.55	-0.14
1999	4149.27	0.19
2000	4614.73	0.100
2001	3482.77	-0.32
2002	3261.25	-0.06
2003	3857.94	0.15
2004	5568.98	0.30
2005	7386.55	0.25
2006	11445.13	0.35
2007	15551.55	0.26
2008	14418.65	-0.08
2009	13605.19	-0.06
2010	18187.67	0.25
2011	17786.04	-0.022
2012	17641.97	-0.008
2013	19706.78	0.104
2014	24662.41	0.20
2015	27348.65	0.098
2016	26370.69	-0.03
2017	28297.55	0.068

Source: moneycontrol.com

The average returns of stock exchange has been given in above table from 1991 to 2017 (March). It is evident that in 1991 the value of percentage was 0.32 increased to 0.46 in 1992. But in 1995, it was decreased to -0.21 to -0.14 in 1998. In 2000 it was 0.19 and in 2004 it was 0.30. For the last 17 years, the percentage in increase and decrease depicted the fluctuations on the trend. In 2016 the value of percentage was in minus but in 2017 it was 0.068. In all it is said that the market of stock exchange was volatile and unpredicted depending on the changing conditions so in stock exchange there is high risk and high returns.

Figure 1: (See in next page)

H_{01}: There is no significant difference in the average returns of stock exchange between 1991-to 2017.

Table 2: Group Statistics on Avg. Returns

	Group	N	Mean	Std. Deviation	Std. Error Mean
SE	1991-2003	156	3500.2081	873.10476	69.90433
	2004-2017	156	17331.1653	6685.05957	535.23312

From the mean, it has been depicted that the mean of period from 1991-2003 was 3500.28 is lesser than the mean of the period from 2004 to 2017 which has 17331. I means that the average returns in stock exchange is better after the year of 2003.

Table 3 (See in next page)

On the average returns, the T-Test was applied and found that the value of F is 202.187 is significant at .000 less than .05 means that there is a significant difference in the average returns of stock exchange between 1991-2003 and 2004-2017. Hence, the null hypothesis namely; “There is no significant difference in the average returns of stock exchange between 1991-2003 and 2004-2017” is rejected and alternate hypothesis namely; “There is a significant difference in the average returns of stock exchange between 1991-2003 and 2004-2017” is not rejected.

Figure 2 (See in next page)

Conclusion - Usually, for the economic growth of any country is depends on investment. People invest their hard earn money with a big expectation of best return by investing. People were move to fast and safe investment, some people taking risk and invest their hard money in stock market, such as shares, debentures, bonds etc. More risk is to join with investment in stock market of investors, a regulatory authority officially formed by Government of India, named as Securities Exchange Board of India. (SEBI). Securities Exchange Board of India is the barometer of economic growth of stock exchange. SEBI is the governing and regulatory part system of India. SEBI makes rules and regulations for stock markets and all were follow it. It must to say that Discipline is the key to success. There are strict rules for maintaining and practicing it. For the development and expansion of market some rules and regulations are needed and SEBI is expressive regulator for investors and stock exchanges too. Actually SEBI pushing the systematic reforms successfully SEBI has lots of powers to regulate, control and investigate the stock exchange. It has right to stop fraudulent activities. SEBI is beneficial for investors, because it protect the investors’ interest.

References :-

1. Baruwa and Verma (2003) The determinants of SEBI performance: A cross-country study. *Review of Finance*, vol. 3, issue no. 2, pp. 56-64.
2. Chandra (1991) Market timing, selectivity and SEBI performance: an empirical investigation of Stock Exchange in India. *IUP Journal of Financial Economics*, 10(1), 62.
3. Dubey (2017) A Study on Attitude of Brokers towards

the Stock Exchange. International Journal of Innovative Research & Development. Vol 3, Issue 11, pp. 87-95.

4. Ghosh, et al., (2015) Performance Evaluation of SEBI in India. *The Indian Journal of Commerce*, 67(3), 66.

5. Ommen A. Ninan (2017) A Study on Performance Evaluation of SEBI and its role on Stock Exchange in India. *International Journal for Innovative Research in Science & Technology*. Vol.2, Issue 11, pp. 812-816.

6. Pandya (2002) Understanding Individual Investor's Behaviour: A Review of Empirical Evidences. Pacific Business Review International, 5 (6), 10-18.

7. Shah (2016)Measuring performance of SEBI in the context of Stock Exchange. Finance India, June 2011.

8. Verma&Raghunath (2006) Investors Attitude TowardsStock Exchange (Special Reference to Chikkamagalore District, Karnataka State, India). International Journal of Management & Business Studies (IJMBS Vol. 3, Issue 1) pp. 98-107.

Table 3: Independent Samples Test on Avg. Returns

		Levene's Test for Equality of Variances		t-test for Equality of Means						
		F	Sig.	t	df	Sig. (2-tailed)	Mean Difference	Std. Error Difference	95% Confidence Interval of the Difference	
									Lower	Upper
SE	Equal variances assumed	202.187	.000	-25.623	310	.000	-13830.95712	539.77876	-14893.05060	-12768.86363
	Equal variances not assumed			-25.623	160.286	.000	-13830.95712	539.77876	-14896.95252	-12764.96171

Figure 1: Average Returns

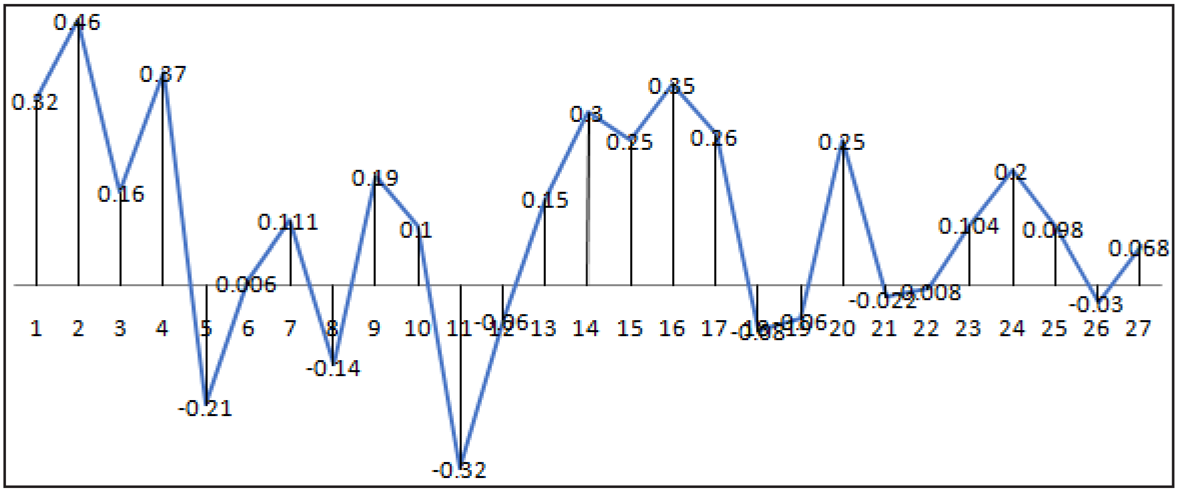

Figure 2 : Bars on Average Returns

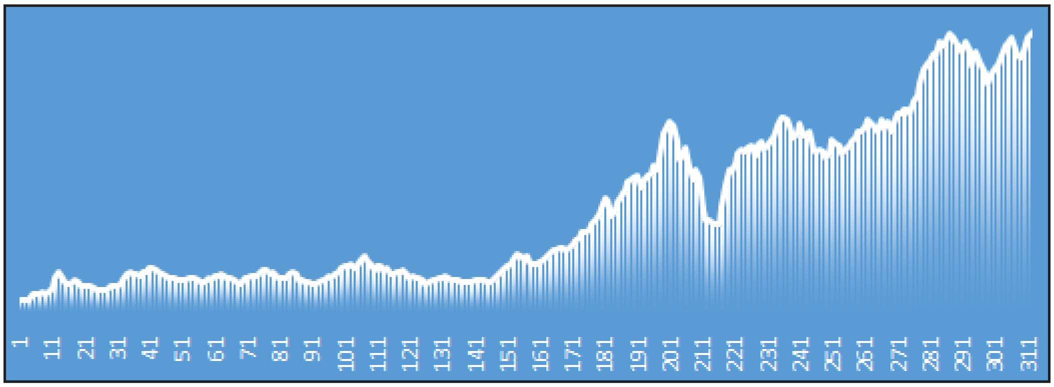

Analyzing Impact Of Online Social Platform On Internet Buying Behavior

Dr. Ganpat Joshi *

Abstract - Today, most of the organizations are seeking to utilize this new way of reaching to the existing consumers and making the prospects aware about their offerings all over the world. Internet is one of the fastest modes of communication and information sharing around the world. The intention of this research was to obtain customer responses of their experiences purchasing a product that they bought based on the recommendation of social media contacts and friends. Results confirm the impact of social media on online buying. Consumer often compares product specification online and compare product price on various websites prior to purchase. They prefer to buy products from the websites offering discounts.
Keywords - Social Media, Internet, Buying.

Introduction - Online social media marketing is emerging as a very powerful tool for marketing the products & services and convincing the customers over the internet. It is like paving new avenues for existing and upcoming organizations. Today, most of the organizations are seeking to utilize this new way of reaching to the existing consumers and making the prospects aware about their offerings all over the world. Internet is one of the fastest modes of communication and information sharing around the world.

This study was set out to evaluate social media as the new medium to reach the consumers and its impact on internet buying behaviour of the consumers. Hence the study is majorly based on the responses of the consumers who are active on internet and do shopping online frequently or have knowledge in the field. This presents the analysis and the interpretation if the responses filled by the sample population on a tested and well structured questionnaire.

The intention of this research was to obtain customer responses of their experiences purchasing a product that they bought based on the recommendation of social media contacts and friends. During the course of the research interview process, respondents were asked to respond to a series of questions geared at understanding the role and influence that various types of social media might have on the purchase behavior of a consumer. In short, our primary research objective was to understand the role that social media plays in product recommendations, product purchases, and dimensions of both of those activities.

Literature Review - Building customer engagement in both business and consumer markets requires adaptation of the marketing mix to take advantage of new technologies and tools to better understand and serve customers. Social media provide the opportunity to connect with customers using richer media with greater reach (see, e.g. Thackeray et al., 2008). The interactive nature of these digital media not only allows sellers to share and exchange information with their customers but also allows customers to share and exchange information with one another as well. Using social media, organizations can forge relationships with existing as well as new customers and form communities that interactively collaborate to identify and understand problems and develop solutions for them. These interactions change the traditional roles of both seller and customer in exchange relationships. Indeed customers often add value by generating content and even become ardent advocates for the seller's products and can influence purchase decisions of others in peer-to-peer interactions.

Research Objectives :

1. To determine the usage of social media among the internet users of Rajasthan.
2. To identify the internet shopping pattern of internet users of Rajasthan.

On the basis of above review of the work already done on the proposed area it is found that it is required to carry out a research in the area of social media and consumer internet buying behavior in Rajasthan. There are very less evidences are available regarding the study on proposed topic in this geographical area.

1. There are very few studies on social media in India, especially in Rajasthan which is the biggest state of India.
2. There is lack of associative studies on social media and consumer internet buying behaviour.
3. Rajasthan has geographical proximity with the national capital, so it has great potential for online business.

Methodology -This research study is a structured research restricted to the social media users and internet shoppers of Rajasthan State. The proposed research is exploratory

*Assistant Professor, Deptt. of CSE, Madhav Univeristy, Abu Raod, Sirohi (Raj.) INDIA

and descriptive in nature. The data is collected from primary and secondary sources. Primary data is collected using structured questionnaires & survey from social media users and internet shoppers of Rajasthan. Secondary data is gathered from prior studies and various online academic resources. The sample universe for this study is active social media users and internet shoppers. The study of statistics can be categorized into two main branches. These branches are descriptive statistics and inferential statistics. Descriptive and inferential statistics each gives different insights into the nature of the data gathered.

Result

Table1: Sample Demographics - Summary

Gender	Count	Percentage (%)
Male	267	65%
Female	145	35%
Age		
20 Years or Under	40	10%
21 Years – 30 Years	263	63%
31 Years – 40 Years	97	24%
41 Years – 50 Years	10	2%
51 Years & Above	2	1%
Occupation		
Student	112	27%
Service	152	37%
Business /	69	17%
Self – Employed Professional	79	19%
Education		
Graduation	145	35%
Post Graduation	231	56%
Doctorate	36	9%

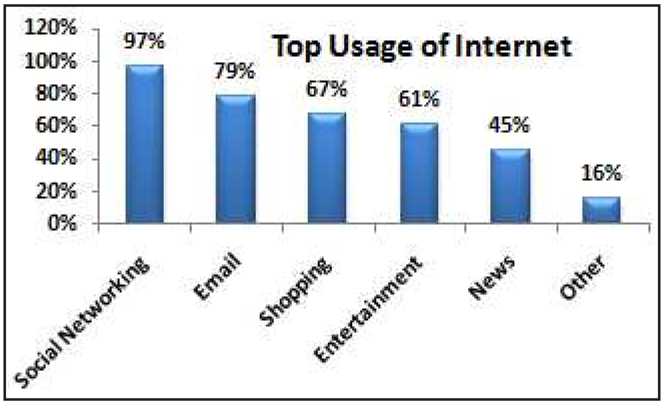

Figure 1: Top Usage of Internet

From the above table and graph it can be concluded that majority of respondents (97 percent of respondents) surf internet for social sites, 79 percent for accessing e-mails, 67 percent for online Shopping and 61 percent for entertainment. Only 16 percent of respondents uses internet for job search, office work and education. This classification was important since and shows that a good percent of respondent connected to internet for entertainment and shopping.

Table 2: Scale Items to Measure Online Consumer Behavior

Scale Items	Variable Name
I prefer internet shopping over offline (physical store) shopping.	Pref_online
I visit retail stores to see the actual product before online purchase.	Visit_offline
I compare product specification on various websites prior to purchasing.	Comp_ specification
I compare product price on various websites prior to purchasing.	Com_price
I prefer to buy products from the websites offering discounts.	Pref_discount
I prefer to buy products from the websites offering loyalty bonus/ discounts/cash back for next purchases.	Pref_loyalty
I take advantage of "Flash Sale (heavy discount on products for a very short span of time e.g. 1-3 hours)" on internet.	Pref_sale

Table 3 **(see in next page)**

Table 3 for 't' test result presented with the observed *t*-value ("t" column), the degrees of freedom ("df"), and the statistical significance (p-value) ("Sig. (2-tailed)") of the one-sample t-test. The P for t-value is <0.05 which confirm that the mean is significantly different from hypothesized mean. From the above descriptive table and statistical test, it can be concluded that consumer seems to prefer internet shopping over offline (physical store).

Conclusion - While the field of social media has become an emerging area of research within the business discipline, there still exists uncertainty regarding the extent of the role that various forms of social media has on consumer purchase, and what items the consumers are purchasing. The purpose of this research, therefore, was to investigate the different types of purchase behavior being found from individuals buying items based on social media. Consumer often compares product specification online and compare product price on various websites prior to purchase. They prefer to buy products from the websites offering discounts. Consumers also prefer to buy products from the websites offering discounts and also get attracted towards websites offering loyalty bonus/discounts/cash back for next purchase.

For some dimensions have p>0.05, which indicates a no difference in means. Hence customer of retail stores not frequently see the actual product before online purchase and they are not very much interested in Flash sales, as many retailer are proving the sales these days.

Our results indicate that consumers are buying either very inexpensive, or very expensive items, and are doing so based on recommendations from people they would not consider "opinion influencers or leaders". This surprising result indicates that firms can influence future purchases, perhaps, by encouraging their users to post on various forms of social media. For instance, firms could use discounts or incentives to have consumers recommend their

product via social media if that recommendation led to future purchases by their connected friends.

In addition, results indicate a slow shift from more traditional forms of social media like Facebook to quicker types of social media like Twitter. Numerous respondents indicated their desire for information now, not even a day or two old, and this research indicates a shift towards that form of social media which is consistent with general themes of today's social media. For businesses, this could indicate that funding allocation might be better served on this type of social media format as opposed to advertisements on a more stagnant media like Facebook.

References :-

1. Ertell, K. (2010), "The missing links in the customer engagement cycle", available at: www.retailshakennotstirred.com/retail-shaken-not-stirred/2010/01/the-missing-link-in-thecustomer engagement-cycle.html (accessed 9 March 2011).
2. Fýrat, A. F., & Dholakia, N. (2006). Theoretical and philosophical implications of postmodern debates: some challenges to modern marketing. *Marketing theory*, *6*(2), 123-162.
3. Goswami, S. (2014). Understanding adoption of electronic G2C service: An extension to Technology Adoption Model. *Pacific Business Review*, *8*(6), 36-44.
4. Goswami, S. (2015). A Study on the Online Branding Strategies of Indian Fashion Retail Stores. *IUP Journal of Brand Management*, *12*(1), 45.
5. Goswami, S. (2016). Investigating impact of Electronic Word of Mouth on Consumer Purchase Intention. In *Capturing, Analyzing, and Managing Word-of-Mouth in the Digital Marketplace* (pp. 213-229). IGI Global.
6. Goswami, S., & Chandra, B. (2013). Convergence Dynamics of Consumer Innovativeness Vis-à-Vis Technology Acceptance Propensity: An Empirical Study on Adoption of Mobile Devices. *IUP Journal of Marketing Management*, *12*(3), 63.
7. Goswami, S., & Khan, S. (2015). Impact of consumer decision-making styles on online apparel consumption in India. *Vision*, *19*(4), 303-311.
8. Mathur, M., & Goswami, S. (2014). Store atmospheric factors driving customer purchase intention-an exploratory study. *Journal of Management Research* , *6*(2), 111-117.
9. Sawhney, M., Verona, G., & Prandelli, E. (2005). Collaborating to create: The Internet as a platform for customer engagement in product innovation. *Journal of interactive marketing*, *19*(4), 4-17.
10. Shevlin, R. (2007), Customer engagement is measurable, available at: http://marketingroi.wordpress.com/2007/10/02/customer-engagement-is-measurable/ (accessed 9 March 2011).
11. Thackeray, R., Neiger, B. L., Hanson, C. L., & McKenzie, J. F. (2008). Enhancing promotional strategies within social marketing programs: use of Web 2.0 social media. *Health promotion practice*, *9*(4), 338-343.

Table 3: Descriptive and One Sample 't' test – Internet Behavior

One-Sample Statistics

	N	Mean	Std. Deviation	Std. Error Mean
Pref_online	200	3.4830	.98761	.04866
Visit_offline	200	3.0947	1.15608	.05696
Comp_specification	200	3.8738	1.09571	.05398
Com_price	200	3.9029	1.18601	.05843
Pref_discount	200	3.7282	1.15212	.05676
Pref_loyalty	200	3.5316	1.19467	.05886
Pref_sale	200	3.0024	1.17661	.05797

One-Sample Test

	Test Value = 3					
	t	df	Sig. (2-tailed)	Mean Difference	95% Confidence Interval of the Difference	
					Lower	Upper
Pref_online	9.927	199	.000	.48301	.3874	.5787
Visit_offline	1.662	199	.097	.09466	-.0173	.2066
Comp_specification	16.187	199	.000	.87379	.7677	.9799
Com_price	15.453	199	.000	.90291	.7881	1.0178
Pref_discount	12.828	199	.000	.72816	.6166	.8397
Pref_loyalty	9.031	199	.000	.53155	.4159	.6473
Pref_sale	.042	199	.967	.00243	-.1115	.1164

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Practises for Building Quality Software with Automation: A Practical Approach

Vikas Kumar Choudhary * Dr. Sanjay Chaudhary **

Abstract - In order to establish consistent standards and procedures for the operations, development, modification, and acceptance of products and services, any organization need to follow some best practises and approach. This paper provide some guidelines to practice Quality Standards and checkpoints during product and service development cycle to build both functional and operational quality from the start. Details discussed herewith are independent of the type of Software Development Lifecycle (SDLC), Waterfall or Agile or any other software Life Cycle Methodologies.
Keywords - Automation, Quality, Planning, Models, Quality Gates, Testing, Deployment, Production.

Introduction - A Software Development Organization has several test phases and environments in which monthly and/or quarterly release testing is executed. In the lower level of development and test environments, the focus is on **unit**, **functional product owner acceptance,** and **performanc**e testing. Once code has passed these test phases, it is bundled and promoted to an internal integration test environment for **integration, regression**, and **end-to-end performance** testing. Code deployments are also a planned/coordinated event which follow a consolidated implementation plan. Once the internal integration test environment testing has been completed, the code is promoted to another Layer of Quality check to support **external customer** testing with real segregated/locked-down environment. After the partner testing cycle completes in, the **code is then promoted to production** for general use.

At each level/phase of development and testing there should be **Quality gates** in place *prior* to code promotion to the next environment. Defects should be formally tracked, and metrics should be routinely produced to ensure consistent quality.

Operating Model - Operating models should include Quality Engineering principles, tools, and practices should be designed to help plan and build quality from the start hence stakeholders must focus on the following key principles:

1. Execute automation in all environments for speed and quality
2. Drive customer feedback to development by proactively monitoring production and incidents.
3. Enable performance and scale from the start.
4. Promote common tools and standard development-test practices with a focus on audit compliance.
5. Evangelize quality culture by fostering engineering communities.

Quality improvements are only possible when there's role clarity, a clear focus, and capacity allocation to build enablers. Professionals should come together to contribute to common tools and practices by embracing open source culture to build enterprise-wide assets and enable re-use across organization.

Maturity Assessment Model - The quest for holistic quality should starts with understanding and benchmarking current practices, use of enterprise standard tools, and maturity includes Code Quality for assessment related to code, security checks, and Continuous Integration and then automation does assessment related to automation layers, reporting, environment, and metrics and then Performance looks at performance strategy, tools, types of testing, reporting, and metrics and at last but not the least quality Checks gating, checks throughout Software Development Life Cycle and environments

Quality Gating - Quality gates provide key technology checkpoints that must be leveraged as exit criteria to advance an initiative and/or a feature from Planning to Development, Integration, Customer Acceptance, and Production. These gates, in addition to the gates set by Business Operations, will provide a holistic framework to

*Ph.D. Scholar (Computer Science) Pacific Academy of Higher Education and Research University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Professor, Deptt. of CSE, Madhav University, Abu Road, Sirohi (Raj.) INDIA

ensure operational and functional quality.

Product Planning: All stakeholders, must engage early in the planning cycle to understand requirements, prioritization, acceptance criteria, estimations, and integration points to deliver end-to-end test and performance strategies.

1. **Performance Targets -** Stakeholders should have product owner document, then build the performance strategy covering testing and tuning strategies including load, breakpoint, stress, endurance, spike, front end benchmarking, and other forms of performance tests.
2. **Test Strategy and Environments -** Stakeholders, must build an end-to-end test strategy detailing requirements such as test data, testing types (even covering disaster recovery, field testing, migration testing, etc.), environments, connectivity, tools, simulators, lab setups, test suites, defect lifecycle, acceptance criteria, and such.
3. **Testing Approaches -** It should ensure that proper estimation of stories and definition of Story READY and DONE. Definition of Done must include in-sprint automation (unit, functional, customer journey, and performance), monitoring, logging, and other aspects required for Development exit gating.

Development Phase

1. **Code Check-in with Automated Nightly Build Process:** Each code check-in initiates an incremental build of the code that was changed (i.e. not a clean build of the entire codebase). Build results (indicating success of the build, including unit test results, of the changed code) should be automatically emailed to each member of the team after each check-in. Then each night CI (Continuous Integration system) performs a clean build of entire codebase. It should runs all unit, functional and performance tests (except long running end to end tests). Then Build results (indicating success of the build, including test results) should automatically emailed to each member of the team after each nightly build.
2. **Unit Testing:** Unit tests are created by the developers during the iteration. Unit tests should run automatically as part of the **code check in process** and as part of the **automated nightly build process.** Unit performance testing to be performed as part of the CI build process.
3. **Peer Reviews: -** A story should be peer reviewed within the team to be considered complete. Code must be checked into the main branch only after peer review, pull requests are used for peer code reviews. Code cannot be checked-in to a remote branch without an approved pull request.

Functional Testing - Functional test automation programs should be developed by the Stakeholders where feature development velocity exceeds test development velocity for each API and UI component**.** In some cases these tests will require a virtualized API (mock) of external systems or environments with production-like data. The respective Stakeholder should work with the developer to implement the mock and write automated scripts for data seeding. Once Story is marked Completed, it is reviewed by the Product Owner/delegate for acceptance.

Development Acceptance - Acceptance of developed stories should be done in a dedicated Staging environment. Types of testing in this environment includes:

1. **Deployment Validation Testing: -** Do preliminary automated testing to reveal simple failures severe enough to reject a prospective software release. Then cover the most important functionality of a component or system to ascertain if crucial functions of the software work correctly.
2. **Critical Regression Testing:-**Subset of regression test set that can be run on a daily basis to ensure critical functionality is not broken. This is also used for quick regression testing while promoting production hot fixes.
3. User Acceptance Testing should be performed by the product owner.

Integration - Performance Engineering, Testing, and Tuning: A dedicated, but scaled environment (in terms of capacity), with production hardware and configuration should be prepared. Unit Performance tests should be there for each API and UI component. A subset of the performance tests (including some load tests) should be run as part of the automated nightly build process. Do automated data setup, execution and analysis of the end-to-end performance tests with the goal of automating this process incrementally using the Continuous Integration (CI) tool stack. Longer running end-to-end performance tests should be executed in a dedicated end-to-end performance environment on a regular cadence. Performance Quality Gatesto be met before promoting the code to customer test environment. This includes no blocker performance issues and sign off on performance.

Types of Performance Testing - Each type of performance tests (API, UI and mobile) capabilities must capture end-to-end response times, including last mile, under real user and real device conditions. These includes:

Performance Smoke Test*:** Test early in development using self-service tools, ***Stress Testing *done* beyond normal or peak load, ***Load Testing*** is done for normal or peak loads for SLAs, ***Capacity Testing*** done for scaling systems future needs, ***Soak Testing*** done for normal or peak load for an extended duration, ***Spike Testing*** is done to check for sudden spike loads and impact on systems. And ***Break Point*** *Testing* is done to determine system break points.

Integration – Functional Testing:- Integration testing of applications and services are done in a dedicated and controlled environment. This is the first end-to-end integrated environment containing all systems to perform various tests and exercise implementation plans for production like deployment rhythm. Preliminary automated testing to reveal simple failures severe enough to reject a prospective software release.

Exploratory Testing:-An informal design technique where the stakeholders actively controls the design of the tests and uses information gained to design new and better scenarios. As part of exploratory testing, consumer touchpoints can be used to validate customer experience from different geographies and devices using Crowd

sourced testing.

Full Regression Testing:-Full validation of an application, following modification, to ensure defects have not been introduced in unchanged areas of the software. Performed when the software or the environment has changed. Must cover key customer journeys for a given product(s) or service(s)

Customer Issue Testing: -A set of test cases that have been generated based on prior customer reported or impacted defects, problems, and incidents.

New Functionality Testing: -Test cases that are based on new features or functionality of product.

Crowd Sourced Testing (Consumer Solutions) - Allows to identify specific market/regional testing scenarios in specific geographical locations using real devices on real networks in real user conditions by targets specific demographics/scenarios testing by selecting testers from a pool of testers from different domains. It needs desired mix of device, OS, carrier and browser coverage for both mobile and web.

Customer Acceptance - Customer testing of applications and services are done in a dedicated and controlled environment (i.e. sandbox). Customer testing environment must have data set ups and network topology that closely mirror production set ups and network connectivity to customer test environments and labs.

Deployment Validation Testing - Preliminary automated testing to reveal simple failures severe enough to reject a prospective software release.

Critical Regression and Customer Journeys validation (Including Customer Journeys and Persona) This testing to be conducted by Organization, if required in partnership with customers, to validate end customer journeys and personas using production like customer data and accounts set ups. Automating these customer tests and reporting enables speed to market and instils confidence in our customers by enabling them focus on new feature testing rather than regression.

Usability and exploratory testing*:* Crowd sourced testing to validate flows (regional functionality, regression, localization) before launching to wider customer base.

Production Launch - During this phase, software is deployed into Production and will follow with below steps.

1. Deployment Validation Testing should be done: Preliminary automated testing to reveal simple failures severe enough to reject a prospective software release.

2. Field Validation: -Some applications go through Field validation by crowd source testers during launches by whitelisting accounts. This helps to capture customer experience, validate localization (e.g., terms and conditions), accessibility, etc. before the broader release.

3. User Experience/Synthetic monitoring: - Leverage critical regression scripts covering key customer functionality to execute synthetic tests in production at a regular frequency (say every 5 to 10 minutes). This will help to confirm our systems are not only reported available within our internal monitors but are always working for our customers.

Monitoring/Alerting - If the product has operational diagnostic tools then those should be installed and tested. Logging standards are documented for developers to aid in system and business event discovery. The product has a business transactions and system health dashboard validated by Business and Platform operations. Synthetic monitoring should be set up to capture end user experience.

Capacity planning - Business pipeline and system performance metrics are combined to arrive at capacity planning (compute, network, and storage) for short-term, medium term, and long term.

Security compliance - Compliance strategy and validation plans to meet as per standards. Other data privacy needs must be explicitly captured (e.g. on-soil needs for a specific country, etc.)

Documentation - Technical Architecture Design (TAD) should be in place with necessary updates to articulate system architecture including connectivity with other internal and/or 3rd party systems with detailed server/network information. Release notes covering new functionality and defect fixes, customer communications, and product training document for customer facing staff.

Conclusion - As part of pre-production checks, Operations and Business Operations need documentation to effectively monitor and support the service. Validations must adhere to Quality Engineering Integration gating requirements and sign-offs. Business operations should monitor program health, periodic validations and monitoring, availability metrics, customer impacting incidents. Customer support teams to capture business and availability metrics for external reporting and driving customer feedback. Hence end to end release of software is achieved includes automation at each level.

References :-

1. Clean code: by Robert C. Martin.
2. Code Complete: A Handbook of Agile Software Craftsmanship (Robert C. Martin).
3. Software Engineering: A Practitioner's Approach Paperback – 1, July, 2017,Publisher: McGraw Hill Education.
4. The Pragmatic Programmer by Andrew Hunt, Pearson Education.

****

बदलते परिदृश्य में अभिजात महिलाओं की स्थिति की भूमिका

डॉ. रोमा श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – साहित्य, समाज, राजनीति, संस्कृति, कला, ज्ञान–विज्ञान के समस्त क्षेत्रों में आज आर्थिक वर्चस्व वाले वर्ग का ही प्रभुत्व दिखाई देता है। आज का युग अर्थ प्रधान युग है। यह बाजारवाद और उदारीकरण का दौर है, यह भूमण्डलीकरण का वह दौर है जो वैश्वीकरण के सुन्दर नामों के पीछे एक भयावह यर्थाथ समेटे हुए है। यह उपभोक्ता पूंजी का दौर है। जिसमें एक ऐसी उपभोक्ता संस्कृति विकसित हो रही है जो व्यक्ति और वस्तु दोंनो कोही बाजारू जीन्स या बाजार का प्रोडेक्ट बनाए दे रही है। इस विषय व्यापारिक प्रतिस्पर्द्धा में 'स्त्रीदेह को भी बाजार की वस्तु बना दिया गया है।'

आज टी0वी0 के अनुरूप और फिल्मों में विज्ञापनों की बाढ़ आयी हुई हैं जिसमें स्त्रीदेह का असली प्रदर्शन एक अनिवार्य आवश्यकता जैसा प्रतीत होने लगा है। बदलते परिदृश्य में जहां यह आवश्यकता अनुभव की जा रही थी कि अभिजात वर्गीय व मध्यम वर्गीय महिलाएं कम से कम जागरूक होकर स्त्री अधिकारों की पैरवी करेंगी परन्तु नारी मुक्ति आंदोलन एक सुनियोजित षड़यंत्र के तहत स्त्री मुक्ति की बजाय केवल देह मुक्ति तक ही सीमित कर दिया गया। स्त्री मुक्ति के सवाल युनिक स्वतंत्रता व देहिक स्वच्छंदता से जोड़कर देखा जाने लगा है। बिना यह विचारे कि इसमें भला सिर्फ पुरूष व पूंजीपति वर्ग का ही है। स्त्री बड़ी शान से विश्व सुंदरी का ताज पहन रही है। फिल्मों और विज्ञापनों में देह प्रदर्शन कर रही है और इसी को अपनी सफलता समझ रही है। सुचमुच क्या यह मामला स्त्री मुक्ति का है, या स्त्री देह की मुक्ति का है? या स्त्री के देहिक शोषण का है। विज्ञापन सुंदरिया भविष्य में कालगर्ल बनने को मजबूर होगी। सभी ऐश्वर्य राय, प्रियंका चौपड़ा या सुष्मिता सेन तो नहीं बन पाती। लड़कियों की एक लम्बी कतार जो विश्व सुन्दरी बनने के प्रयासों में लगी हुई हैं। उनका क्या भविष्य होता है? इस सत्य से हम आंखें नहीं मूंद सकते हैं?

प्रस्तुत शोध–पत्र में 300 सूचनादाताओं का चयन दैव निदर्शन पद्धति के कानपुर नगर के विभिन्न क्षेत्रों से लाटरी विधि द्वारा चयन कियागया है। साक्षात्कार–अनुसूची तैयार कर सूचनादाताओं से महत्वपूर्ण तथ्य एकत्रित किये गये है जिससे शोध–पत्र का निष्कर्ष सही दिशा प्रदान करें।

आज के बदलते परिदृश्य की गला काट परिस्पर्द्धा में स्त्री भी नहीं पीछे रहना चाहती। विशेषकर अभिजात स्त्री। इस वर्ग की स्त्री की मजबूरी नहीं है कि वह देह– को सीढ़ी बनाकर आगे बढ़े यह उसका शौक बन रहा है कि हर कदम को सीढ़ी बनाया जाए। उपभोक्ता सांस्कृतिक के सब्जबाग में फंसकर वह देह सजग हो रही हैं, हेल्थ सेन्टर पर जा रही हैं फिटनेस अर्जित कर रही है। आज वह सौन्दर्य की प्रतिमा बन कर प्रतियोगिता में भाग ले रही हैं। पर वह क्या वह नहीं समझती कि यह उपभोक्तावादी संस्कृति का दौर है जो उसकी देह को भी बाजार का उत्पाद बना देगा। अपने प्रोडक्ट बेचने के लिए बाजार उसकी देह को विज्ञापित कर रहा है। जिस दिन बाजार को उसकी जरूरत नहीं होगी वह उसकी ओर देखोगा भी नहीं। और वह एड्स जैसी तमाम जानलेवा बीमारियों के शिकार होकर पल–पल जीने के नाम पर मरती रही। फिल्मों विज्ञापनों औ विश्व सुंदरियों की वह दुनियाँ जहाँ तन की सुंदरता मंदबुद्धि और विचार से अधिक महत्व रखती है। स्त्री के लिए उन्नत कैरियर प्रदान कर रही है। यह स्त्री देह को एक बाजारू उत्पाद बना रही है यह एक विचारणीय प्रश्न है।

मॉडलिंग व्यवसाय – उपभोक्ता संस्कृति की यह विशेषता होती है कि वह हर व्यक्ति वह वस्तु को ही बाजार का ही उत्पाद समझती है। बाजार के अनुसार उसकी योग्यता को निर्धारित करती है। वह स्त्री को व्यक्ति के रूप में सम्मान न देकर वस्तु के रूप में उसकी देह की उपयोगता समझता है, और उसे विज्ञापन की वस्तु बना देता है। इधर जब से बहुराष्ट्रीय कंपनियों का आगमन हुआ तब से हमारे देश की सभी वर्ग की महिलाओं को विशेषकर युवा पीढी में दैहिक सजगता आवश्यकता से अधिक आ चुकी है। यह अपनी गाढ़ी कमाई का एक आवश्यक हिस्सा अपने को सुन्दर दिखाने में खर्च करती है। फिर अभिजात वर्गीय महिलाओं का कहना ही क्या ? उनके पास तो बाजार को नियंत्रण में तक की शक्ति होती है।

अभिजात महिलाओं का बड़ा हिस्सा फैशन परस्त सुविधा भोगी और सौन्दर्य प्रतियोगिता में व्यस्त हैं किन्तु इन महिलाओं का एक तब का ऐसा है जो अपने पति/पिता/घर परिवार से अलग रहकर अपनी निजी अस्मिता के लिए संघर्षरत है। आज महिलाएं भी नहीं चाहती कि वे अपने पति/पिता की पहचान लेकर समाज में जानी जाए। इसलिए वह समाज में बेहतर स्थान बनाने के लिए संघर्षरत व कार्यरत है। कहीं वे समाज सेविकाएं हैं, कहीं गरीबों के हित की लड़ाई में पे 'एक्टिविस्ट' की भूमिका का निर्वाह कर रही है। जैसे मेघा पाटेकर अरूंधती राय जैसी महिलांए नर्मदा बचाव आंदोलन के लिए विस्थापितों के लिए संघर्षरत है। बंगाल की प्रसिद्ध लेखिका मां श्वेता देवी आजीवन आदिवासियों के बीच रहकर कार्य करती रहीं। इसी प्रकार अनेक क्षेत्रों में महिलाएं राजसत्ता की गलत नीतियों या आम जन विरोधी नीतियों के विरूद्ध विश्व स्तर पर संघर्ष कर रही है। इन महिलाओं में शिक्षित व जागरूक अभिजात महिलाए आती है जो अपना वर्ग बदलकर स्वयं को डी क्लास की आम जनता के दु:ख दर्द से स्वयं को जोड़ती हैं। जो अपने लिए नहीं विश्व के लिए संघर्ष करती हैं। समाज के लिए संघर्ष करती हैं, महिलाओं की मुक्ति के लिए प्रयास करती है। जो सुख–सुविधाएं जीवन का त्यागकर आम जन की मुक्ति का प्रयास करती हैं। उनकी भौतिक मानसिक परिस्थितियों से स्वयं को जोड़ती हैं।

* भागवन्ती एजूकेशन सेन्टर डिग्री कॉलेज मन्धना, कानपुर (उ.प्र.) भारत

तालिका संख्या– 1 : आप मनमाने ढंग से अपना जीवन व्यतीत करती है

क्र.	मनमाने ढंग से जीवन	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	90	30
2	नहीं	210	70
	कुल योग	300	100

उपर्युक्त तालिका को देखने से पता चलता है कि 62.33 प्रतिशत अभिजात वर्ग की महिलाए अपना जीवन से नहीं जीती है बल्कि वे समाज, परिवार आदि को ध्यान में रखते हुए आना जीवन व्यतीत करती हैं। इन अभिजात वर्गीय महिलाओं का एक तबका या एक वर्ग ऐसा भी होता है जो 'कैरियरिस्ट' होता है। जो व्यक्तिगत रूप से अपनी उन्नति के प्रति जागरूक होता है। ये महिलाएं अच्छी मनचाही उच्च शिक्षा प्राप्त करती हैं और अपना एक कैरियर निर्धारित करती है। ये उच्च कोटि की प्रशासनिक सेवाओं, डाक्टरी, इंजीनियरिंग, लेक्चरार, वैज्ञानिक आदि के पदों पर पहुँचना अपना लक्ष्य समझती हैं। इन पदों पर पहुँचकर ये देश समाज व राष्ट्र का जितना भला हो सकता है, करती हैं। इन महिलाओं को भी अपने–अपने क्षेत्रों में विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। अपने लक्ष्य पहुंचने के लिए इन्हें पितृसत्तात्मक समाज के विविध दबाओं को भी सहन करना पड़ता है। यदि ये अपने लक्ष्य पर अडिंग करती रहती है तो उसे प्राप्त ही कर लेती है। इस सन्दर्भ में उन्हें प्राय: अपने घर परिवार का भी विरोध सहना पड़ता है। कई–कई बार उन्हें परिवार और करियर में से एक को चुनने के लिए विवष होना पड़ता है।

राजनीति और समाज में उच्च स्थान प्राप्त करने के लिए भी उन्हें घर से लेकर बाहर तक संघर्ष करना पड़ता है। फिर भी समाज व राष्ट्र के अभ्युत्थान में इन महिलाओं के कार्यो व योगदान को नकारा नहीं जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. सिंह, विनीता, वूमैन डोमैस्टिक: वर्कर्स् विद इन हाउसहोल्ड (2006)
2. झा, के0एन0, मॉर्डनीजिंग वूमैन: सर्चिंग देयर आइडेन्टिज (2005)
3. मोजम्मिल हसन, आरजू भारतीय महिला एवं आधुनिकीकरण (2002)
4. ग्रीफीन, डुईंग वूमेन स्टटीज (2004)
5. आर0एन0मुखर्जी, भारतीय समाज एवं संस्कृति, (1992) विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. सहाय एस0, वूमेन एण्ड इमर्पोवरमेन्ट (1998) डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस
7. हिवर्ड, सी0, जेन्डर, एजुकेशन एण्ड डिवैलपमेंट रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

महेश्वर हथ करघा उद्यमियों में योगासन के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना

प्रतिष्ठा दारसौंधी * डॉ. मंजु शर्मा **

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध पत्र महेश्वर हथ करघा उद्यमियों में योगासन के प्रति जागरूकता के अध्ययन पर है। योगासन से स्वास्थ्य लाभ व योगासन के प्रति उद्यमियों की रूचि व जागरूकता ज्ञात करना है।

वे अपने व्यवसायिक जीवन की व्यस्तता में इतने व्यस्त रहते है कि उनके पास स्वयं के कार्य के लिए वक्त नहीं होता है। वे अपने उपर ध्यान नही नहीं दे पाते है। योगासन ही एक ऐसा व्यायाम है जिससे मन, शरीर व स्वास्थ्य को सुरक्षित रखा जा सकता है। जिससे व्यावायिक कार्य करने में अधिक ऊर्जा का उपयोग किया जा सकता है इसी कारण हमें योगासन के प्रति जागरूकता को ज्ञात करने के उद्देश्य से प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिये महेश्वर हथ करघा उद्यमियों में योगासन के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना विषय का चुनाव कियाहै।

महेश्वर हथ करघा उद्योग का परिचय – महेश्वर, महेश्वर साडियों के उद्योग के लिए विश्व में प्रसिद्ध है।महेश्वर हथ करघा क्षेत्र की नींव होल्कर राज्य की रानी देवी अहिल्याबाई होल्कर के द्वारा सन् 1767 में रखी गई थी।हथ करघा उद्यमियों के द्वारा वस्त्रों पर अनेकों प्रकार से अभिकल्पना (कारीगरी) की जाने लगी जिससे वस्त्रों की सुन्दरता दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी। यहा पर नर्मदा नदी प्रवाहित होती है जिनके तटीयक्षेत्र घाटों पर कई प्रकार की कृतिया बनी हुई है। उद्यमियों ने उन कलाकृतियो को वस्त्रों पर उकेरा ।जिससे वस्त्रों की सुन्दरता व आकर्षण में वृद्धि हुई। जिससे महेश्वर के वस्त्रों की विश्व स्तर पर ख्याति बढ़ी। देश विदेश में महेश्वर के नाम को जाना जाने लगा। यहाँ पर लगभग 1900 हथ करघे कार्यशील अवस्था में है।इन हथ करघा पर 4000-5000 लोग कार्य करते है आज महेश्वर की लोकप्रियता धार्मिक नगरी व पर्यटन स्थल के नाम के साथ-साथ महेश्वरी साड़ी के लिये भी प्रसिद्ध है।

हथ करघा उद्यमियों में योगासन के प्रति जागरूकता की स्थिति – हथ करघा उद्यमियों में योगासन की स्थिति को जानना अत्यन्त आवश्यक है। उनके जीवन में योग आवश्यक है। उनके स्वास्थ्य के प्रति सजगता लाना अत्यन्त आवश्यक है। उम्र के साथ-साथ शरीर शिथिल होता जाता है। उसे सामान्य अवस्था में बनाये रखने के लिए हमें प्रतिदिन योगासन करना चाहिए जिससे थकान व कमजोरी का अनुभव कम होताहै।

साथ ही शरीर में स्फुति/तेज व रोग प्रतिरोधक क्षमताओं का विकास बढने लगता है जिससे वे अपने व्यवसाय पर ज्यादा ध्यान दे पायेगे व परिवार में भी समय दे पायेगे। हथ करघा कार्य में शारीरिक कार्य ज्यादा होंता है। हाथ पैर एक साथ चलते है। कमर सीधी कर के बैठे रहते है यह अवस्था लगातार चलती रहती है व ऐसे में योगासन का सहारा लिया जाना चाहिए इसमें किसी भी प्रकार का आर्थिक खर्च नहीं लगता है।स्वास्थ्य को बनाया जा सकता है। इस शोध में इन्हीं स्थितियों का अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य :

1. महेश्वर हथ करघा उद्यमियों में योगासन के प्रति जागरूकता को ज्ञात करना।
2. उद्यमियों में योगासन व ध्यान के प्रति रूचि को जानना और योगासन के बारे में जानकारी देना।

शोध पद्धति – शोध अध्ययन में हमारे द्वारा खरगोन जिले के महेश्वर स्थान का चयन किया गया है जो उद्देशानुसार है। शोध अध्ययन में हमारे द्वारा महेश्वर हथ करघा उद्यमियों को लिया गया है। उनमें योगासन के प्रति जागरूकता करना साथ ही उनमें योग की रूचि को जानना व उन्हें योग से सम्बन्धित जानकारिया प्रदान करने से संबंधित शोध है।

महेश्वर हथ करघा उद्यमियों का चयन देव निर्देशन विधि से किया गया है जिसमें हमारे द्वारा 100 उद्यमियों का चयन किया गया।जिसमें 50 पुरूष व 50 महिलाओं का चयन किया गया। योग के प्रति क्या दृष्टिकोण रखते तथा वे अपने जीवन में इसे महत्व देते है या नहीं यही हमारे शोध अध्ययन के द्वारा जाना गया।

शोध पत्र में हमने साक्षात्कार अनुसूची का चयन किया व हमारे समग्र भी यही है।

तथ्यों का सारणीयन एवं वर्गीकरण – शोध पत्र में एकत्रित तथ्यों को मुख्य सारणियों में प्रस्तुत किया गया है। इसी के अनुसार उनके प्रतिशत को ग्राफ आलेख के द्वारा प्रदर्शित किया गया है ।

तालिका क्रमांक-1 : उद्यमियों में योगासन के प्रति रूचि संबंधी विवरण

योगासन के प्रति रूचि रखतेहै	पुरूष	प्रतिशत	महिला	प्रतिशत	कुळ प्रतिशत
हाँ	35	70	31	62	66
नहीं	15	30	19	38	34
योग	**50**	**100**	**50**	**100**	**100**

* शोधार्थी (गृहविज्ञान) माताजीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (गृह विज्ञान) माताजीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.) भारत

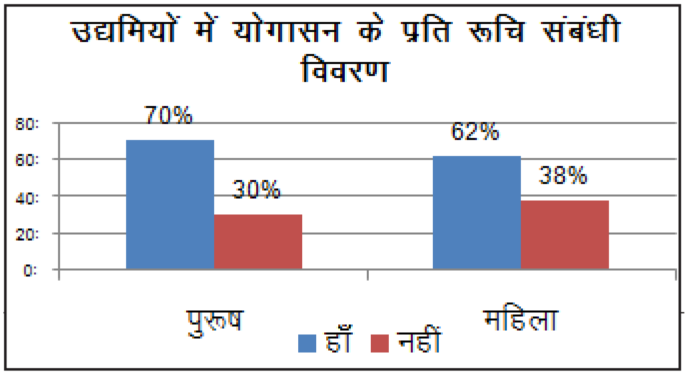

तालिका क्रमांक–2 : योगासन के प्रकार के सम्बधित विवरण

किस प्रकार का योगासन पसंद करते है	पुरूष	प्रतिशत	महिला	प्रतिशत	कुळ प्रतिशत
आसन(विभिन्न)	15	30	14	28	29
ध्यान	10	20	15	30	25
ऊँ उच्चारण (भ्रामरी)	11	22	6	12	17
किसी प्रकार का नहीं	14	28	15	30	29
योग	**50**	**100**	**50**	**100**	**100**

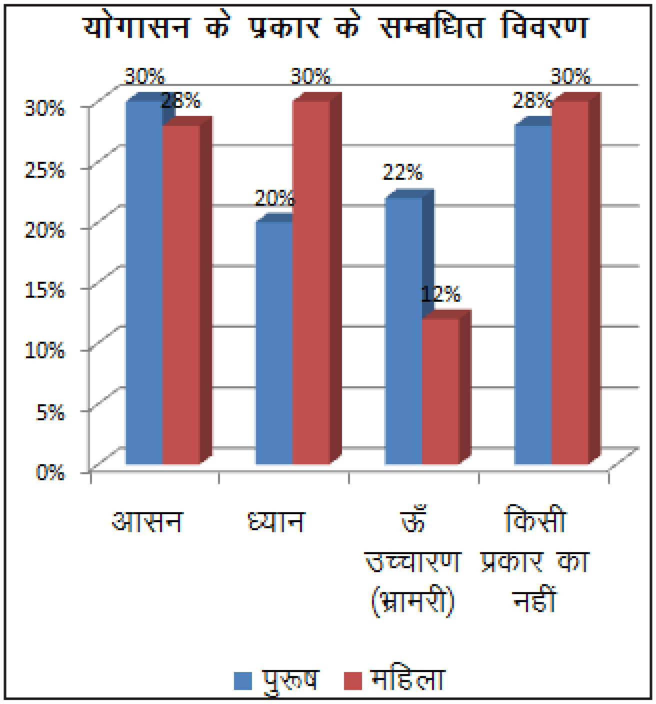

तालिका क्रमांक–3 : योगासन के बारे में जानकारियाँ देने संबंधी विवरण

योग पसंद करते है	पुरूष	प्रतिशत	महिला	प्रतिशत	कुळ प्रतिशत
सहमत	30	60	34	68	64
असहमत	10	20	9	18	19
आंशिक	5	10	4	8	9
अज्ञान	5	10	3	6	8
योग	**50**	**100**	**50**	**100**	**100**

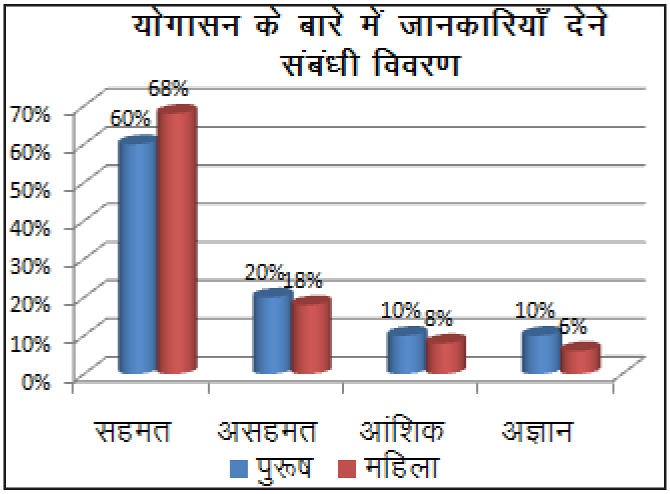

निष्कर्ष एवं सुझाव – प्रस्तुत तालिका व ग्राफ चार्ट के आंकड़ों से ज्ञात होता है कि, महेश्वर हथ करघा उद्यमियों में योगासन के प्रति रूचि 66 प्रतिशत तक है लेकिन उनको योगासन करने के फायदे व योगासन के विभिन्न आसनों का ज्ञान नहीं पाया गया। 8 प्रतिशत उद्यमी योगासन से पूर्णत: अनभिज्ञ पाये गये।34 प्रतिशत उद्यमी योगासन करना पसंद नहीं करते है। वे योगासन में समय बर्बाद नहीं करना चाहते है। योगासन की रूचि के संबंध में 70 प्रतिशत पुरूष व 62 प्रतिशत महिलाएँ योग करना पसंद करते है। 30 प्रतिशत पुरूष व 38 प्रतिशत महिलाओं को योगासन के प्रति रुचि नहीं है।

योगासन के प्रकारों की चर्चा करे तो विभिन्न आसन 30 प्रतिशत पुरूष व 28 प्रतिशत महिलाएँ पसंद करती है। ध्यान 20 प्रतिशत पुरूष, व 30 प्रतिशत महिलाएं पसंद करती है।भ्रामरी 22 प्रतिशत पुरूष व 12 प्रतिशत महिलाएँ पसंद करती है। 28 प्रतिशत पुरूष व 30 प्रतिशत महिलाएँ योग नहीं करते है।

योगासन की जानकारी प्राप्त करने के बाद 60 प्रतिशत पुरुष उद्यमी व 68 प्रतिशत महिला उद्यमियों ने योगासन करने की सहमति दी गई। 20 प्रतिशत पुरुष उद्यमी व 18 प्रतिशत महिला उद्यमी ने योगासन के प्रति असहमति दी गई व 10 प्रतिशत पुरुष उद्यमी व 08 प्रतिशत महिला ने योगासन के प्रति आंशिक सहमति दी। 10 प्रतिशत पुरुष उद्यमी व 6 प्रतिशत महिला उद्यमी ने योगासन के प्रति अज्ञानता को दर्शाया गया।

सुझाव – प्रस्तुत अध्ययन में निष्कर्ष रुप से देखा गया कि 60 प्रतिशत उद्यमियों को योग विद्या पसंद है, लेकिन 40 प्रतिशत उद्यमियों का रूझान योग न करना है। उनको योग में समय की बर्बादी लगता है।उनमें स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता में भी कमी पाई गई है। हमें उन्हें योग के प्रति और अधिक जागरूकता को बढ़ाना होगा ताकि वे स्वास्थ्यवर्धक बने रहें।

संदर्भ ग्रंथ सूची : –

1. हथ करघा प्रशिक्षण केन्द्र – टी.एम.अंसारी
2. व्यवसायिक प्रबंध के सिद्धांत – आर.सी.अग्रवाल
3. सांख्यिकी के मूल तत्व –डॉ.एच.के.कपील
4. शैक्षिक शोध – डॉ. हंसराजपाल
5. संसाधन प्रबंध का परिचय – डॉ. मंजु शर्मा
6. अनुसंधान सांख्यिकी – डॉ. मंजु पाटनी
7. इंटरनेट सुविधा के द्वारा – वेबसाइट के द्वारा

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

मध्यप्रदेश में आदिवासी जनजातियों द्वारा वनोषधियों का संग्रहण के आर्थिक महत्त्व तथा संभावनाओं का भौगोलिक अध्ययन

डॉ. सुमनलता पुरोहित * मिताली पॉल **

प्रस्तावना - आदिकाल से ही मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वनोपजो एवंऔषधिय पादपों का संग्रहण करते आ रहा है। वन औषधियों का संग्रहण वर्तमान में भी महत्वपूर्ण आर्थिक क्रिया है। औषधियों का अधिकांश उत्पादन वनों से होता है, जिसे Wildcrafting कहा जाता है, जबकि कृषि द्वारा उत्पादन की मात्रा बहुत ही कम है।मध्यप्रदेश देश का प्रमुख वन क्षेत्र है प्रदेश की राजकीय आय में वनोपजों का महत्वपूर्ण योगदान है। वन क्षेत्रों में निवास करने वाली आदिवासी जनजातियों द्वारा वनोपजों एवं औषधियों के संग्रहण द्वारा जीवन यापन किया जाता है। वर्तमान समय में एलोपैथिक के दुष्परिणामों ने लोगों का ध्यान प्राकृतिक चिकित्सा एवं आयुर्वेद की ओर आकर्षित किया है जिसके परिणाम स्वरूप औषधिय पादपों का उत्पादन एवं महत्व दोनों में वृद्धि हुई है। औषधिय पादपों के संग्रहण एवं उनसे दवाओं का निर्माण वर्तमान में प्रमुख उद्योग का रूप लेते जा रहा है, इसलिए प्रदेश में पायी जाने वाली वनोषधियों का अध्ययन करना आवश्यक है।

अध्ययन क्षेत्र - मध्यप्रदेश भारत के मध्य में स्थित होने के कारण अपने नाम को चरितार्थ करता है, जो विंध्यांचल एवं सतपुड़ा पर्वत श्रृंखला से घिरा हुआ है। प्रदेश का भौगोलिक विस्तार 21^0 6' उत्तर से 26^0 54' उत्तरी अक्षांश तथा 74^0 पूर्वी देशांतर से 82^0 47' पूर्वी देशांतर तक है। यहाँ नर्मदा व ताप्ती (पूर्व से पश्चिम), चंबल, सोन, बेतवा, महानदी और इन्द्रावती (पश्चिम से पूर्व) प्रवाहित होती हैं। प्रदेश का कुल क्षेत्रफल 3,08,245 वर्ग कि.मी. है। वर्ष 2011 की प्रदेश वन रिपोर्ट के अनुसार प्रदेश का 94,689 वर्ग कि.मी. क्षेत्र वन क्षेत्र है, जो कि प्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 30.72 प्रतिशत है।, तथा वर्ष 2003 में प्रस्तुत 8वीं वन रिपोर्ट के अनुसार वनों के क्षेत्रफल दृष्टि से मध्यप्रदेश का देश में प्रथम स्थान है। इन वनों में साल, सागौन, तेन्दू, महुआ, बांस, बबूल, हर्रा आदि के अतिरिक्त अनेक प्रकार के औषधिय पौधे पाये जाते की इन्हीं सघन वनाच्छादित क्षेत्रों में ये जनजातियाँ निवास करती हैं, जिनमें कोल, भील, बैगा, गौंड़, कोरकू, सहरिया, हलवा एवं भारिया प्रमुख है। तथा वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या 7,26,26,809 जिसमें जनजातिय जनसंख्या 1,53,99,034 है।

अध्ययन का उद्देश्य -प्रस्तुत अध्ययन के निम्न उद्देश्य हैं :-

1. औषधिय पौधों के आर्थिक महत्व का अध्ययन करना।
2. मध्यप्रदेश में मुख्य रूप से उत्पादित होने वाली वन औषधियों का अध्ययन करना।
3. प्रदेश में औषधिय पादपों में आर्थिक संभावनाओं का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि - प्रस्तुत शोध प्रपत्र प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है। द्वितीयक आंकड़ों का संकलन पत्र-पत्रिकाओं, शासकीय कार्यालयों के प्रतिवेदन, शोध प्रपत्र एवं इंटरनेट के माध्यम से किया गया है। प्राथमिक आंकड़ों का संकलन औषधिय पादपों के संग्रहणकर्ता एवं विक्रेताओं से अनुसूची एवं साक्षात्कार के द्वारा किया गया। वन औषधियों से निर्मित दवाओं के विक्रेताओं, राज्य वनअनुसंधान केन्द्र व उष्ण कटिबन्धीय वनअनुसंधान केन्द केवन अधिकारिओं एवं अनुसंधानकर्ताओं से भी सूचनायें प्राप्त की गई हैं।

तालिका - 1 : मध्यप्रदेश में प्रमुख वन औषधियों का उत्पादन (2003-04)

क्रं.	औषधिय	उत्पादन मेट्रिक टन	क्रं.	औषधिय	उत्पादन मेट्रिक टन
1	होली फ्रुट टी	3000	16	शंखपुष्पी	100
2	नीम	5000	17	चिरामता/कालमेघ	20
3	सिंदूरिया	10	18	गोखुरा	500
4	पलाश	10000	19	अश्वगंधा	500
5	शतावर	500	20	वन तुलसी	10
6	अचार	1800	21	सरपगंधा	50
7	वच	40	22	आँवला	5000
8	चरोंटा	10 लाख	23	करंज	1500
9	काली मूसली	50	24	बहेड़ा	5000
10	सफेद मूसली	50	25	इमली	30000
11	अपराजिता	10	26	मुलेरी	50
12	हल्दी	40	27	कुर्वा	100
13	बगविदांग	1000	28	हर्रा	1000
14	आम	2000	29	दाल हर्रा	3000
15	अमलताश	500	30	कचरिया	2000

स्त्रोत - मध्यप्रदेश लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि प्रदेश में इमली (30000), हर्रा (1000), बहेड़ा (5000), आंवला (5000), पलाश (10000), नीम (5000) तथा चरोंटा (10लाख) आदि का सर्वाधिक उत्पादन होता है। शतावर, मूसली, वनतुलसी, शंखपुष्पी, कालमेघ, अश्वगंधा, आंवला आदि भी महत्वपूर्ण औषधियां हैं।

* प्रोफेसर, शासकीय महाकोशल महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

तालिका - 2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका 2 से स्पष्ट होता है कि शतावर का मूल्य वर्ष 2008 में 50 रूपये प्रति किलो से बढ़कर 2013 में 130 रू. हो गया। गुड़बच, शंखपुष्पी, चिरायता, अश्वगंधा, आंवला एवं मुलेटी आदि के मूल्य में निरंतर वृद्धि देखी गई है। मूसली एवं तुलसी बीज के मूल्य में स्थिरता देखी गई तथा आंवला, नेपाली चिरायता एवं शतावर के मूल्य में 6 वर्षो में दो गुनी वृद्धि देखी गयी।

आदिवासी जनजातियों द्वारा वनोषधियों का संग्रहण -प्रदेश केविभिन्नक्षेत्रो के 88आदिवासी जनजातियऔषधिय संग्रहणकर्ताओएवं विक्रेताओं केसाक्षात्कार वअनुसूची केमाध्यम सेप्राप्तप्रमुख सूचनायें-

तालिका - 3

औषधीय संग्रहणकर्ताओं की व्यवसायिक संरचना	कृषि	फुटकर व्यवसाय एवं औषिधालय	अन्य
प्रतिशत	18%	82%	0
औषधियों का ज्ञान प्राप्त किया	स्वयं	शिक्षा प्राप्त की	पुर्वजों
प्रतिशत	9%	9%	82%
औषधियों का संग्रहण एवं उत्पादन का माध्यम	वन	केवल कृषि से	वन एवं कृषि
प्रतिशत	91%	0	9%

स्त्रोत :- प्राथमिक आंकड़ों पर आधारित ।

औषधी संग्रहण से जुड़े 82% व्यक्ति फुटकर विक्रेता या औषिधालय में वैद्य के रूप में कार्य कर रहे हैं तथा 18% कृषि कार्य में संलग्न हैं, तथा उनके द्वारा अन्य कोई व्यवसाय नहीं किया जा रहा है।सूचनादाताओं में 82% को औषधियों का ज्ञान पूर्वजों से प्राप्त हुआ है, तथा पूर्वजों के मार्गदर्शन में ही उन्होंने, औषधियों की पहचान एवं उपयोग सीखा है। 9% ने शिक्षा प्राप्त की तथा 9% ने स्वयं पुस्तकों से ज्ञान प्राप्त किया है।उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 91 प्रतिशत संग्रहणकर्ता औषधियों का संग्रहण वनों से करते हैं, तथा 9 प्रतिशत वनों कृषि एवं वन दोनों माध्यम से औषधियों का संग्रहण करते हैं।

साक्षात्कारो सेयह भी स्पष्ट होता है कि औषधियों का संग्रहण स्वयं या परिवार की सहायता से करते हैं अर्थात् औषधीय संग्रहण एवं विक्रय उनकी पारिवारिक आर्थिक क्रिया है।

औषधिएं पौधों का उत्पादन, संग्रहण एवं विक्रय

परिणाम :

1. वन अधिकारियों एवं औषधी संग्रहणकताओं द्वारा उत्पादन एवं औषधियों के विक्रय से होने वाली सही आय नहीं बतायी गयी।
2. औषधियों के संग्रहणकर्ताओं में अधिकांश स्वयं वैद्य हैं तथा उन्हें औषधियों का ज्ञान पूर्वजों से प्राप्त हुआ है।
3. अधिकांश सूचनादाता 20 या उससे अधिक वर्षो से औषधियों का संग्रहण एवं विक्रय कर रहे हैं तथा जो इस कार्य में नये हैं उनके परिवार द्वारा यह कार्य पहले से किया जा रहा है।
4. सूचनादाताओं एवं उनका परिवार आर्थिक रूप से औषधियों के संग्रहण एवं विक्रय पर निर्भर है, तथा उनके द्वारा अन्य कोई आर्थिक क्रिया नहीं की जा रही है।
5. प्रदेश में औषधीय पादपों की बहुलता है तथा उनके मूल्य में भी विभिन्न वर्षों में वृद्धि देखी गई है जो कि उनकी मांग स्पष्ट करती है।
6. प्रदेश में औषधीय पादपों के उत्पादन में आर्थिक संभावनायें स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं।
7. संग्रहणकर्ताओं द्वारा मुख्य रूप से शतावर, मूसली, शिलाजीत, बहेड़ा, हर्रा, कालमेघ, अश्वगंधा, करंज आदि का संग्रहण किया जाता है।
8. अमरकंटक, छिंदवाड़ा जिले में पातालकोट एवं पचमढ़ी आदि क्षेत्रों से मुख्य रूप से औषधियों का संग्रहण किया जाता है।
9. औषधियों का उत्पादन मुख्य रूप से वनों से संग्रहण के माध्यम से किया जाता है कृषि द्वारा उत्पादन की मात्रा बहुत ही कम है।

औषधियो के संग्रहण में आर्थिक संभावनाएं :

1. वर्तमान समय में एलोपेथिक के दुष्परिणामों ने प्राकृतिक चिकित्सा, होम्योपेथिक, यूनानी एवं आयुर्वेदिक औषधियो के महत्व को बढ़ा दिया है।
2. औषधीय पौधों के बागवानी, नर्सरी एवं कृषि द्वारा उत्पादन से अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।
3. एलोवेरा औषधी के साथ ही सौंदर्य प्रसाधन के रूप में भी महत्वपूर्ण हैं। अतः इसकी खेती लाभदायक सिद्ध होगी।
4. तुलसी, शतावर, एलोवेरा, भृंगराज, पथरचिटा, हड्डी जोड़, कालमेघ, गुलहड़ आदि का उत्पादन घरों में कर आर्थिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।
5. आंवला, नीम एवं मूसली का उत्पादन बागवानी के माध्यम से करके अत्याधिक आर्थिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।
6. वनौषधियों से दवाओं का निर्माण वर्तमान में प्रमुख वनोद्यम का रूप लेते जा रहे हैं उदाहरण- विंध्यहर्बल।

सुझाव :

1. शासन द्वारा औषधियों के संग्रहण विक्रय हेतु उचित योजनाओं निर्माण किया जाना आवश्यक है तथा शासन द्वारा पहले से चलायी जा रही योजनाओं का उचित क्रियान्वयन एवं रखरखाव किया जाना चाहिए।
2. आदिवासियों के औषधीय ज्ञान एवं उपचार पद्धतियों का विकास किया जाना चाहिए ताकि उनकी प्राकृतिक उपचार पद्धतियों का लाभ सभी को प्राप्त हो सके।
3. औषधियों का मुख्य रूप से वनों से संग्रहण किया जा रहा, औषधियों के उत्पादन के अन्य विकल्पों जैसे कृषि, बागवानी एवं शासकीय व प्राइवेट नर्सरियों का विकास किया जाना आवश्यक है।
4. नर्सरी एवं कृषि द्वारा उत्पादन न केवल वनों पर दबाव कम करेगा

अपितु आर्थिक रूप से भी लाभदायक होगा।

5. औषधियों के संग्रहण से जैव विविधता पर कोई प्रभाव न पड़े इस ओर शासन को ध्यान देना आवश्यक है क्योंकि किन्हीं प्रमुख औषधियों का अप्राकृतिक रूप से अधिक दोहन करने पर उनकी उपलब्धता प्रभावित हो सकती है।
6. शासन द्वारा सामान्य जन हेतु वनोषधियों के क्रय-विक्रय हेतु सुविधाएं उपलब्ध करायी जानी चाहिए।

निष्कर्ष - प्रदेश के वन क्षेत्रों में औषधिएं पादपों की विविधिता ने औषधिएं पादपों के संग्रहण को महत्वपूर्ण आर्थिक क्रिया बनाया है। प्रदेश में औषधिएं पौधों का संग्रहणकर्ता प्रदेश के प्रमुख वन क्षेत्रों अनुपपुर, शहडोल, बालाघाट, देवास, छिंदवाड़ा व होशंगाबाद जिलों से है। प्रदेश में सर्वाधिक मात्रा में चरोटा, पलाश, (10000 मे.टन), बहेड़ा (5000), नीम (5000), आंवला आदि का उत्पादन होता है। वन क्षेत्रों में आदिवासियों द्वारा मुख्यत: शतावर, शिलाजीत, मूसली, कालमेघ, वनतुलसी, आंवला आदि का संग्रहण किया जाता है। शतावर (पीली), मूसली, नेपाली, चिरायता, तुलसी बीज आदि अत्याधिक मूल्यवान एवं महत्वपूर्ण औषधि हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ब्रेन्डन, फिशर, मांइक कृरिस्टी, रूडोल्फ डी गरोट, 'इन्टीग्रेटिग दी इकोलोजीकल एण्ड इकोनोमिक डाइमेन्सनस इन वायोडाईवर्सिटी एण्ड इकोसिस्टम सर्विस बेल्युशन'।
2. श्रीवास्तव, पी.एन., नेहा नारवे, मसोदकर एवं पी.मित्री (2013), 'सर्वे आफ सम मेडिकल प्लान्ट ऑफ बेतुल डिस्ट्रीकट ऑफ मध्यप्रदेश विथ स्पेशल रिफ्रेन्स टु एन्टीमिकोविस एक्टीविटी' इन्टर नेशनल जनरल ऑफ फार्मेसी एण्ड लाइफ साइन्स।
3. टॉक्सो डेवलेट, माहुल बापरायोगल एवं सेजिंग हासिसालिहोगलू (2010), 'यूज एण्ड दी इकोनोमिक पोटेन्सियल ऑफ मेडिसन्ल प्लांट इन इर्स्ट ब्लेक सी रीजन ऑफ तुर्की' जनरल ऑफ इन्वॉयरमेंटल बायोलॉजी, लखनऊ।
4. 'वनधन व्यापार' राज्य वन अनुसंधान संस्थान, पोलीपाथर, जबलपुर (2008-2013)

तालिका - 2 : वन औषधियों के मूल्यो में वृद्धि

औसत मूल्य रू./कि. में

क्रं.	वन औषधियां	वर्ष					
		2008	2009	2010	2011	2012	2013
1	शतावर सफेद पीली	50 230-240	-	70-85 250-450	100-105 300-450	140-160 250-400	120-130 180-450
2	गुड़वच	-	-	33-35	7-5	80-85	90-100
3	काली मूसली (सुडान)	450	-	250-500	300-400	300-400	300-400
4	शंखपुष्पी	16-18	15-20	25-35	22-35	20-22	35-40
5	चिरायता हराचिरायता नेपाली	32-50 250-300	-	-	25-35 300	300	550-600
6	अश्वगंधा	100-120	-	100-120	150-170	190-230	-
7	आंवला	-	22-30	40-50	60-62	60-65	60-75
8	मुलेटी	42-50		55-100	95-135	125-150	170-180
9	तुलसी पत्र	20-30	22-35	30-60	50	95	65-70
10	तुलसी बीज	120	150	110-150	170-175	175-180	165-170
11	भृंगराज	18-20	-	20-25	-	-	-

स्रोत - वन धन व्यापार राज्य वन अनुसंधान संस्थान।

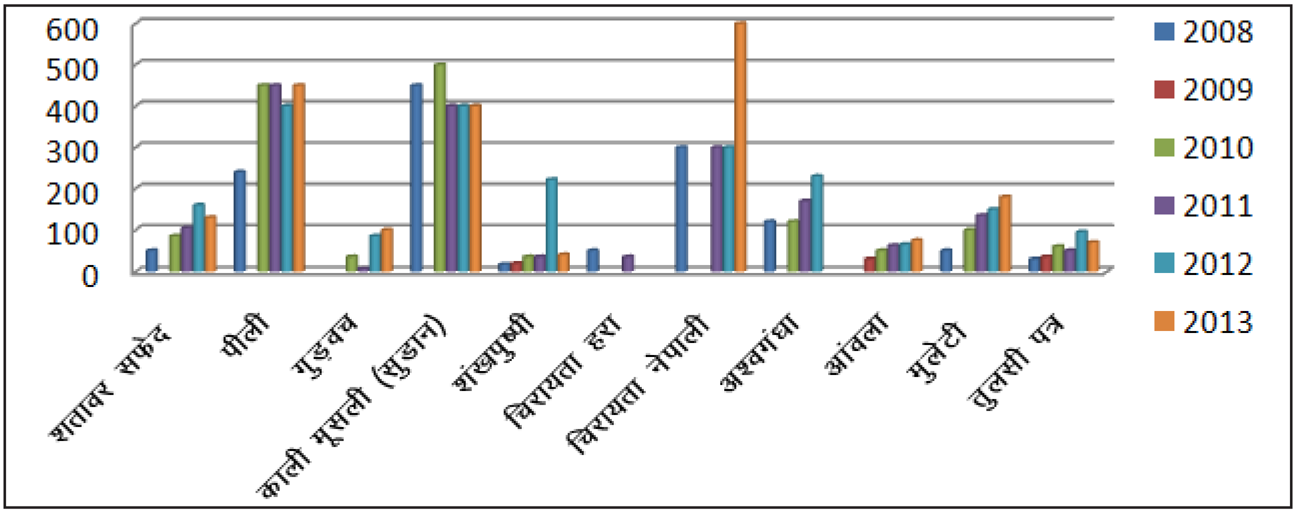

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

मध्यप्रदेश में सूचना का अधिकार का क्रियान्वयन : एक समीक्षा

डॉ. ओम प्रकाश परमार *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश भारत के उन राज्यों में से एक है, जहां सूचना के अधिकार की मांग सबसे पहले उठी थी परन्तु इस आवाज को दबा देने वाली शक्तियाँ भी सक्रिय हुई और उनका असर भी हुआ। इस कारण मध्यप्रदेश सूचना के अधिकार कानून बनाने वाला प्रथम राज्य तो नहीं बन सका परन्तु ये विरोधी शक्तियाँ मध्यप्रदेश में सूचना के अधिकार की अवधारणा के प्रवाह को रोक नहीं पाई। थोड़ी देर से ही सही मई 1998 में विधानसभा ने सूचना का अधिकार विधेयक पारित किया।

तमिलनाडु ऐसा पहला राज्य है जिसने सर्वप्रथम सूचना का अधिकार जनता को दिया परन्तु वहां न तो कोई वाद–विवाद हुआ न ही कोई आन्दोलन हुआ। एम. करूणानिधि सरकार ने एक दिन अचानक ही यह अधिकार 17 अप्रैल 1997 देकर देश के अन्य राज्यों को चौका दिया। ये तमिलनाडु की जनता के लिए सुखद आश्चर्य भी था। इस कारण एक तो करूणानिधि अनुभवी व जिम्मेदार नागरिक है वही वी.पी. सिंह जैसे व्यक्तित्व जिन्हें भारत में सूचना के अधिकार आन्दोलन का अलख जागने वाला राजनीतिज्ञ माना जाता है से मित्रता का लाभ मिला और भारत विशाल लोकतान्त्रिक राज्य में सूचना का अधिकार देने वाला प्रथम राज्य होने को श्रेय मिला।

गोवा भारत का ऐसा दूसरा राज्य है जिसने नवम्बर 1997 को यह अधिकार प्रदेश की जनता को दिया। गोवा में महाराष्ट्र राज्य में चल रहे आन्दोलन का भी प्रभाव था पर इस दिशा में महाराष्ट्र रहा है।

तमिलनाडु की तरह मध्यप्रदेश में भी सूचना के अधिकार की मुहिम का नायक कोई संगठन नहीं बल्कि ऐसा व्यक्ति था जिसके इर्द गिर्द प्रदेश की पूरी सत्ताा घुमती रही ये वे मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह थे।

जिन दिनों स्थायी सरकारों का देश में अकाल पड़ा था उन्हीं दिनों में न सिर्फ पाँच साल मुख्यमंत्री रहे बल्कि अगली बार फिर सरकार बनाई।

दिग्विजय सिंह के अलावा एक अन्य व्यक्ति जिसका नाम बहुत कम लोग जानते है को भी इस मुहिम का नायक कहा जा सकता है परन्तु इनकी पृष्ठभूमि अलग थी ये कोई नेता नहीं बल्कि एक आई.ए.एस. अफसर थे जिनका नाम था हर्षमंदर। 1980 के बैच के आई.ए.एस. अफसर हर्षबंदर की गिनती प्रदेश के ही नहीं बल्कि देश के प्रमुख ईमानदार अफसरों में होती है और इसलिए भ्रष्ट नेता व अफसर उन्हें पंसद नहीं करते और शायद यही वजह है कि उनकी 16 की नौकरी में 18 बार तबादले हो चुके।

मजदूर किसान शक्ति संगठन एवं सोशल वर्क एवं रिचर्स सेंटर दो ऐसे संगठन रहे है। जो सूचना के अधिकार आन्दोलन के जन्मदाता संगठन कहे जा सकते है।

बंकर रॉय जो राजीव गाँधी के मित्र थे। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा इन पब्लिक स्कूल में हुई। बंकर रॉय ऐसे प्रतिभाशाली व्यक्ति थे जो राजीव गाँधी के समय योजना आयोग के सदस्य भी रहे और राजीव गाँधी के साथ भ्रष्ट्राचार की समस्या से चिंतित भी थे। जयपुर से 100 किमी दूर गाँवों में 1972 में एक स्वयं सेवी संगठन की स्थापना की जिसका नाम सोशल वर्क एवं रिचर्स सेंटर दिया गया।

बंकर राय का संगठन सोशल वर्क एवं रिचर्स सेंटर भारत का प्रसिद्ध एन.जी.ओ. जिनकी गिनती ईमानदार संगठनों में होती है। इस एन.जी.ओ. का बजट दो करोड़ रूपये सालाना है और इससे सैकड़ों कार्यकर्ता जुड़े हुए है। एन.जी.ओ. का बजट 40 प्रतिशत विदेशों से 40 प्रतिशत सरकारी अनुदान से व 20 प्रतिशत स्वयं इंतजाम करने है। करीब 1500 एकड़ में बना राजस्थानी पत्थरों से निर्मित इसका मुख्यालय है जो सौर ऊर्जा से जलता है। बंकर रॉय मात्र 1363 रूपये मासिक मानदेय लेते है।

अब राज खुलने लगे अधिकारी नेता ठेकेदार व दंबग लोग संरपच मुखिया इत्यादि गरीबों से रातदिन मेहनत करवाते व भुगतान या कम करते या नहीं करते। कई फर्जी कम्पनी फर्जी कागज पर चलने वाली योजनाओं का भंडाफोड हुआ। फर्जी बिल बाउचर की घटनाएँ सामने आई। सार्वजनिक वितरण प्रणाली में राशन की जमाखोरी का मामला सामने आया।

'रोजी रोटी नहीं सूचना का अधिकार चाहिए'

इस नारे की गुंज न केवल राजस्थान की राजधानी में मुख्यमंत्री भैरोसिंह शैखावत तक पहुँची बल्कि दिल्ली तक सुनाई दी।
अब ये नारे आम थे।

'हमारा पैसा हमारा हिसाब दो, रोजी रोटी नहीं जानने का अधिकार दो'

संगठन की आवाज को मुख्यमंत्री ने दबाव में ही सही सुना व घोषणा की जानने का अधिकार हम जल्दी ही जनता को देगें। अब देश के नामी गिरामी पत्रकार लेखक वकील नौकरशाह व नेता इनकी बात सुनने की बाध्य हुए।

वर्ष 1996–97 में जब मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह बिलासपुर आए तो उन्हें सूचना के अधिकार की अवधारणा समझाई और सार्वजनिक वितरण प्रणाली निर्माण एवं विकास कार्य सम्बन्धी समस्त सूचनाओं को जनता को उपलब्ध करवाने सम्बन्धी अपने अनुभव एवं सफलताओं के बारे में बताया।

17 मार्च 1997 को विधेयक बनाकर मंत्रिमंडल में विचार विमर्श के लिए रखा गया तो इसका जबरजस्त विरोध हुआ और विरोधी थे सुभाष यादव (उप मुख्यमंत्री) राजेन्द्र प्रसाद शुल्क (सामान्य प्रशासन मंत्री) और मानव संसाधन

* शोधार्थी (राजनीति एवं लोकप्रशासन विज्ञान विभाग) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

एवं नियोजन मंत्री नरेन्द्र नाहटा। नाहटा ने कई तर्क दिये कि इसे सिर्फ जनप्रतिनिधियों तक ही सीमित रखा जाए क्योंकि यह अधिकार देने से प्रार्थना पत्रों की बाड आ आऐगी हम विधानसभा में ही जवाब देते-देते परेशान है जनता के कई सवालों का जवाब हम कैसे देगें। कई मंत्री तो भयभीत हो गए और कुछ ने नए कानून से अनावश्यक कार्य बोझ का तर्क दिया।

मुख्यमंत्री ने प्रबल विरोध के कारण इसे वापस तो ले लिया परन्तु वे पीछे नहीं हटे उनका अभियान जारी रहा उन्होंने इस पर सहमति बनाने की बीड़ा उठाया। साथ ही उन्होंने मंत्रियों को बेवजह डरने की सलाह दी। न केवल सरकार व मंत्री बल्कि कई नौकरशाहों ने भी इसका विरोध किया।

मुख्यमंत्री ने मंत्रिमंडल के विरोध के बावजूद विधेयक पारित करवाया। इस प्रकार मध्यप्रदेश सूचना का अधिकार देने वाला देश का तीसरा राज्य बना परन्तु यदि मंत्रीमंडल पूर्व में विरोध नहीं करता तो शायद ऐसा करने वाला देश का प्रथम राज्य होता।

जिस तरह मध्यप्रदेश में सूचना के अधिकार के लिए आन्दोलन चला ऐसा ही अन्य राज्यों में भी देखा जा सकता है। जैसे राजस्थान में बंकर रॉय, ररूणा रॉय ने इसे राजस्थान ही नहीं बल्कि देशव्यापी आन्दोजन बनाया। वही महाराष्ट्र जैसे राज्य में मुम्बई व बड़े शहरों में भूखण्ड व मकान औद्योगिक संस्कृति की देन है। मंगल प्रभात लोड़ा जो 1994 में निर्वाचित विधायक थे को जब एक बार मुम्बई नगरपालिका द्वारा अचानकर बंद कर दिए एक स्कूल को बंद करने की जानकारी नहीं दी। विधायक महोदय को लगा कि एक विधायक को जब जानकारी मिलना मुश्किल है तो आम जनता का क्या होगा।

सूचना की स्वतन्त्रता सम्बन्धित विधेयक उन्होंने महाराष्ट्र विधान सभा में निजी विधेयक रखा। यद्धपि वह पारित नहीं पाया परन्तु महाराष्ट्र में इस आन्दोलन की प्रभावी शुरूआत कही जा सकती है।

छत्तीसगढ़ में मुक्ति मोर्चा के अध्यक्ष शंकर गुहा के प्रयास महाराष्ट्र के प्रसिद्ध समाजसेवी अन्ना हजारे के प्रयास उत्तर प्रदेश के चेतना आन्दोलन भी इसी श्रेणी के आन्दोलन कहे जा सकते है। टिहरी गहडवाल क्षेत्र राजस्थान की तर्ज पर चेतना आन्दोलन चला साथ ही उत्तर प्रदेश के मुख्य सचिव योगेन्द्रनारायण को भी इस आन्दोलन को हवा देने में मुख्य व्यक्ति माना जाता है। सुंदरलाल बहुगुणा जैसे पर्यावरणविद भी इस क्षेत्र में अग्रणी रहे है।

केन्द्र में सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 पारित होने के बाद मध्यप्रदेश सरकार द्वारा सूचना का अधिकार अपील एवं फीस नियम बनाए गए। यद्यपि मध्यप्रदेश में वर्ष 2002 से जानकारी की स्वतन्त्रता अधिनियम 2002 सफलतापूर्वक कार्य कर रहा था तथापि केन्द्र के अधिनियम पारित होने के बाद सम्पूर्ण भारत में सूचना एवं सूचना प्रक्रिया में एकरूपता देखने को मिलती है।

मध्यप्रदेश में अजय दुबे सूचना के अधिकार कार्यकर्ता के पर्यावरण सम्बन्धित प्रयास विशेषकर राष्ट्रीय उद्यानों में टाईगर की गिनती को लेकर सार्थक रहे। सूचना का हक नाम से इन्दौर का एक अखबार भी इस दिशा में क्रान्तिकारी रहा। उज्जैन के सरदार आजाद पटेल जैसे सिरफिरे कार्यकर्ताओं ने भी उज्जैन में प्रशासन को चौकना बनाए रखा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. बेल रॉबिन एण्ड केलन वार्चिस, सूचना की स्तवन्त्रता : राष्ट्र मण्डल का अनुभव (आस्ट्रेलियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन संस्करण 37 नं. 4 दिस. 1988)
2. धमेजा, अलका, लोक प्रशासन में पारदर्शिता (डिबेट प्रंटिस हॉल, न्यू देहली नवम्बर 2004)
3. फेनबर्ग लॉट्टे, सूचना की स्वतन्त्रता का प्रबन्धन अधिनियम और संघीय सूचना नीति, (पब्लिक एडनिमिस्ट्रेशन रिकार्म नव.-दिस. 1986)
4. फ्रेंक कम्यूनिटी रिपोर्ट ऑन सेक्सन 2 ऑफ द आफिशियल सिक्रेट एक्ट - 1911, एच.एम.एस.ओ. लंदन, 1972
5. गुहा रॉय जयतिलक, ओपन गर्वमेन्ट एण्ड एडमिनिस्ट्रेटिव कलचर इन इंडिया - (इण्डियन जनरल ऑफ पब्लिक संस्करण 36, नवम्बर 3, जुलाई-सितम्बर 1990)
6. ईयर, वी.आर. कृष्णा - सूचना की स्वतन्त्रता और मूल अधिकार, (नवम्बर-दिसम्बर 1985)
7. रॉबट डोनाल्ड सी, कार्यालयीन दस्तावेजों से सम्बन्धित कानून - टी.एन. चतुर्वेदी (जनवरी 1980)
8. इंटरनेट
9. केन्द्रीय एवं राज्य सूचना आयोग की वेबसाईट

****

A Study on Green Initiative Product of FMCG Companies

Mrs. Usha Sharma* Dr. Deepak Singh**

Abstract - This study is based on the Green Marketing but specially focused on green initiative products of FMCG Companies. It has been serious problem that how we will protect our environment from the pollution. Customer, companies and government take social responsibility to save our earth with the adoption of green product policy. They all understood the importance and vital role of green marketing and Green FMCG too. This research paper is based on review of literature and on Secondary data. The objectives of the study is to find out main green impact products of FMCG companies and explain top 10 FMCG companies of India with three main segments. Our findings showing that there are so many goods which having green impact and customer purchase these products every day.
Keywords - Green Product, Fast moving consumer goods, green impact etc.

Introduction - The objective of this introduction is to give basic information about green FMCG products. FMCG products represent every aspects of human life. These products are consumed by all sections of society and spent higher amount of income. FMCG Products means which are having quick turnover and generally at low cost and those which for the most part get replaced within a year. For example of FMCG territories cleansers, cosmetic, personal care, oral care item shaving products, packaged food products and digestive as well as other non durable for example bulbs, batteries, paper product, glassware and plastic goods.

The Green development has been growing on the earth. With respect to consumers taking responsibilities and making the best things. As compared with developed countries consumers, the Indian buyer has less aware about global warming .The growth of the global economy, over consumption and utilization of natural resources has deteriorated the environment. This research paper carried out to identify the initiative green impact products of FMCG companies and also explain top 10 FMCG companies of india.

The FMCG industry is highly competitive sector on all over the world. The top Indian FMCG companies are HUL, ITC, Dabur, Godrej, Patanjali, Britannia, Nestle etc. There are three main segments of FMCG sector i.e. food & beverages, Dairy products, cosmetic & personal care. The top FMCG companies are characterized by their ability to produce the items that are in highest demand by consumers and, at the same time.

Importance of the study - The intention of this research is to establish the purposes for identify the initiative green Impact products of FMCG Companies all over the world. Apart of that this study also explains Top 10 FMCG companies of India.

Objectives of the study

1. The main objective of the study is to identify the initiative green Impact products of FMCG companies.
2. The secondary objective is to explain the top 10 FMCG Companies of India and also explain various segments of FMCG sector.

Review of Literature - Straughan and Roberts, (1999) argued that these environmental concerns have evolved through many different phases. It started in the 1960s with the greening concept, concentrating on pollution and energy conservation. Afterward, due to increased social and political pressure, organizations have moved beyond these concepts to recycling, alternative packaging, redesigning of product, and alternative products. Since 1990s, environmental concern has become one of the most important issues

FMCGs may contain niche brands but as a whole, are directed at the mainstream consumer market. For sustainability to have maximum impact on the business, environment and society, it must be incorporated into the mainstream offering of FMCG firms. FMCG companies tend to fit into the Defensive Green or Shaded Green category:

Research Methodology - This study is based on secondary data which is collected from super markets, various websites, online journals and research papers of various authors.

Findings

Top 10 FMCG Companies in India

1. Hindustan Unilever - It is one of the biggest fast moving consumer goods company in India. HUL Company is truly outstanding of this kind in the India as well as abroad too. HUL is the market Pioneer in Indian consumers products with nearness in more than 20 customer classes,

* Research Scholar, School of Commerce and Business Studies, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Principal, S.R.D. College, Morena (M.P.) INDIA

for example, cleaners, cleanser and shampoos among other with more than 70 crore Indian Consumer utilizing its products.

2. ITC - ITC reach to its customer in many sections of business instead of FMCG, set up in 1910 as the Imperial Tobacco Company of India Limited, the company was renamed as the Indian Tobacco Company Limited in 1970 and further to ITC restricted in 1974.

3. Dabur - Dabur India Limited is one of the India's developing FMCG companies with revenues of over approximately Rs.7806 crore. Dabur was established in 1884 by a doctor named SK Burman in West Bengal, to deliver and administer Ayurvedic solutions. Dabur Amla hair oil, Hajmola and Chyawanprash. Presently a day, Real fruit juice is more popular than PepsiCo's juice from Tropicana.

4. Britannia - The Company builds up 1891, with a venture of Rs.265 initially, biscuits were produced in a little house in focal Kolkata. Later, the company was gained by the Gupta siblings essentially Nalin Chandra Gupta. Today, Britannia is a main food company in India with over the Rs. 7858 crore in income, delivering products in more than 5 categories. Its main focused on to keeping the quality and freshness of the food items. Britannia is recognized as a stand out amongst the most trusted, significant and well known brands among Indian Consumer is different reputed surveys.

5. Godrej - Godrej consumer products are India's biggest designing and customer items organization. It was founded in the year 1897 by Ardeshir Godrej and today its products are utilized by more than 1.1 billion buyers internationally

6. Parle - Parle was established in 1929 in British year by the chauhan group of vile Parle, Mumbai, Later on it divided into three companies Parle Agro, Parle Products and Parle bisleri in 1984. Presently Company is among the main FMCG companies in India. Company has some pioneer products in the section like biscuits (Parle-G), natural food juice (frooti).

7. Amul - Amul formed at Anand in Gujarat in 1946. A Co-operative body, Gujarat Co-operative milk marketing Federation, offers Amul brand of drain and Dairy items the nation over. Because of every day offer 120 liters of milk across the country. Amul's turnover has been developing more than 20% the most recent 6 years.

8. Pidilite -The industry was established in 1959 and has its head office in Mumbai. It is available in the world wide market too, for example, the Middle East and Brazil. There are different manufacturing units of this everywhere throughout the world. The most famous brands are Fevicol, M Seal, Dr Fixit, Harbour Idea and different or others.

9. Patanjali Ayurveda - It launched in 2015, Patanjali Ayurved took the market giving major FMCG and customer products. Patanjali has extensive variety of items in food and personal care category. Patanjali has brought and the business to go into variety of segment for example food product, Dental Care, cosmetics, toiletries Hair Care etc.

10. Haldiram's - This Company had begun as a little shop at Bikaner in 1937. Throughout the years, they had enormous informal attention for its great tasty and hygienic food. Over all outlets in India. Haldiram entered into top 10 biggest FMCG organisations because of its dissolved turnover of Rs.4000 Cr. which is much more than American fast food McDonalds and Domino's. Specialists feel that the brand could have more than Rs.5000 Cr. in retail deals after Parle in India. Haldiram's serve it's item in snacks, dessert, drinks and Frozen Food segments.

Table 1 (see in next page)

Conclusion - On the basis of this study, we concluded that there are large number of products which having green impact. This refers that if these types of FMCG products continuously used by customer this will not harm for the environment. Basically green impact product made by recycled, reusable and refillable ingredients. Most the customers are used green FMCG Products. There are three main sectors i.e. food & beverages, Dairy products, cosmetic & personal care, which flow a large amount of money. This study will help to consumers for easily understands the green initiative FMCG product.

References :-

1. Nema R. (2011). Green buying behaviour in Indian customers study. http://994-Green *buying behaviour-in Indian-consumers-study.html.*
2. Nagaraju B. & H. Thejswani (2014). Consumer's perception analysis- Market awareness towards eco-friendly FMCG products- A case study of Mysore district. *IOSR Journal of Business and management (IOSR-JBM).* Vol. 16, Issue 4, e- ISSN: 2278-487X, p-ISSN: 2319-7668. Pp. 64-71.
3. Jain Aditi (2016). A study of the impact of green marketing on consumer purchasing and decision making in Telangana, India. National college of Ireland. August 2016.
4. Chitra B. A study on evaluation of green products and green marketing. *Quest journals of research in business and management.* ISSN: 2347-3002. Vol-3, Issue-5, Pp.35-38.
5. Hasan Zuhairah & Azman Noor Ali (2014). The impact of the Green Marketing strategies on the firm's performance in Malaysia. *Global conference on business and social science-2014*, *GCBSS-2014*. Kualalumpur. Pp. 463-470.
6. Purohit H.C. Consumer awareness, motivation and buying intention of Eco-friendly fast moving consumer Goods: An empirical study.
7. Sharma Dr. Meghna & Trivedi Prachi (2016). Various Green Marketing variables and their effects on consumers buying behaviour for Green products. Vol.5, issue-1, Jan.2016, ISSN-2278-2540.

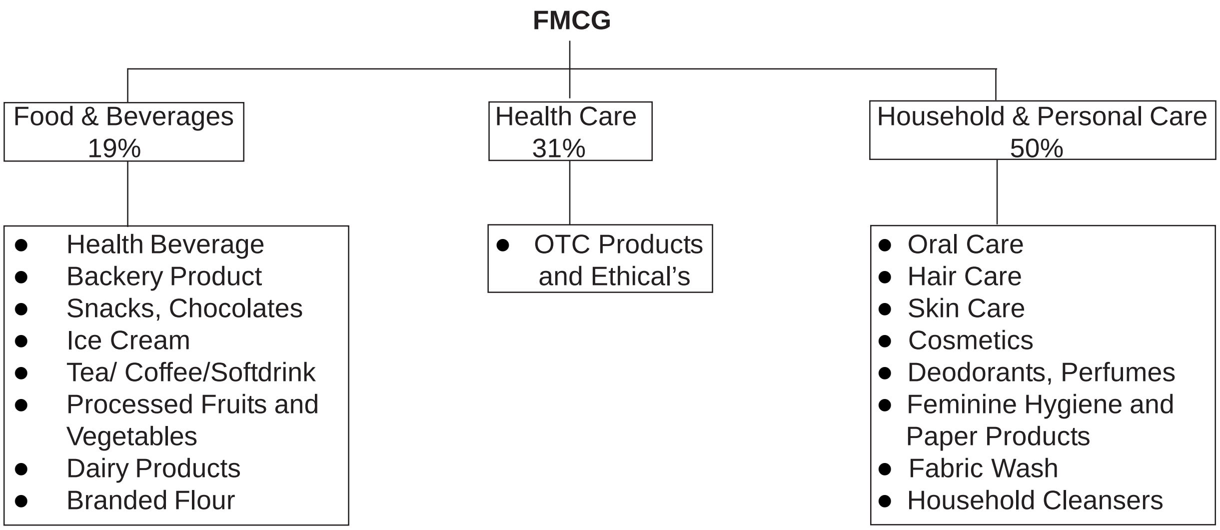

Table 1: FMCG Products with Green Impact

Name of Company	Products	Green Impact
ITC	Note Book Juice Soap	Recycled Paper which used for new note book. Recycled Packing Green Product Logo
Patanjali	Cosmetic, hair and care Food and Beverages	Natural Ingredients Herbal Products
Dabur	Cosmetic Real Juice Honey	Not tested on animal Tetra pack with recycle material Natural Ingredients
Lipton	Tea	100% natural ingredients with herbal supplements
Johnson & Johnson	Baby care products	Clean Energy Eco-friendly packaging
Phillips	Electric Bulbs CFL	Up to 80% energy efficient bulbs Light weight packaging
Amul	Dairy Products	Recycled and Reusable packing
Mother Dairy	Dairy Products	Recycled and Reusable packing
Himalaya	Baby care products Personal care products Oral care products	Herbal activity based products
Hindustan Unilever	Personal care Cosmetic Hair and Care products Food and Beverages	Green Product Logo
Godrej	Personal Care item	Herbal Ingredients Green Product Logo
Pepsi	Food and Beverages	Reusable, Refillable and Recycled
Cinthol	Personal Care item	Recycled and Reflamable
Rexona	Personal Care item Cosmetic Products	Recycled Green Product Logo
Ponds	Personal Care item Cosmetic Products	Recycled Green Product Logo
Nestle	Dairy Products Nescafe	Recycled Green Product Logo
Haldiram	Food and Beverages	Sustainable for Vegetarian Eco mark
Joy	Cosmetic & Beauty Care Products	Recycled Green Product Logo

मध्यप्रदेश पंचायत निर्वाचन (2004-2005) एक विश्लेषणात्मक विवेचन

डॉ. अमृतलाल परमार *

शोध सारांश – हमारे देश में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली को शासन प्रणाली के रुप में अपनाया ही नही गया है, बल्कि आत्मसातें किया गया है । न केवल राष्ट्रीय स्तर, अपितु राष्ट्रीय से ग्राम स्तर तक शासन प्रणाली को लोकतांत्रिक बनाने और लोगो की ज्यादा से ज्यादा सहभागिता और पारदर्शिता लाने का प्रयास किया गया है संविधान की भावना के अनुरुप लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के लिए पंचायती राज की स्थापना के माध्यम से सत्ता का विकेन्द्रीकरण ग्राम स्तर तक किया गया है। सत्ता के इस विकेन्द्रीकरण और सत्ता में आम जन की भागीदारी के लिये राज्यो में भी एक राज्य निर्वाचन आयोग की स्थापना की गई है ताकि पंचायतो के निर्वाचन सुचारु, निष्पक्ष, और पारदर्शिता से सम्पन्न किये जा सकें।संविधान के अनुच्छेद 243(2)(2)के तहत मध्यप्रदेश राज्य निर्वाचन के गठन का प्रावधान किया गया है। आयोग 5 बार पंचायतो के आम और कई उपनिर्वाचन सम्मन्न करा चुका है।[1]

प्रस्तावना – हमारे देश में लोकतांत्रिक शासन पद्धत्ति की स्थापना की गई है। जिसमें एक निश्चित समयान्तराल पर अपनी सरकार को चुनने का अधिकार दिया गया है। एक ऐसी सरकार जिसके नुमाइदे सत्ता कें उच्च पदो पर आसीन होने और नीति निर्माता तथा नीति के निर्धारक होने के पश्चात भी जनता के सेवक कहलाते है। सत्ता का चरम सुख भोगने के बाद अंतिम रुप से दोबारा सत्तासीन होने के जनता के दरबार में जनता की शरण में जाना पडता है।यही लोकतांत्रिक शासन प्रणाली को संविधान विभिन्न प्रावधानो द्धारा लोकतांत्रिक परम्परा बनाने का प्रयास किया गया है। इसी क्रम में हमारी लोकतांत्रिक परम्पराओ को बढाते हुए 73 वें संविधान संशोधन के माध्यम से ग्राम पंचायतो की स्थापना की गई है। ग्राम पंचायतो कें निर्वाचन समय पर हो और निष्पक्ष तरीके से हो इसके लिए राज्य निर्वाचन आयोग की स्थापना की गई है।यह आयोग पंचायत निर्वाचन से सम्बंधित समस्त प्रकार कें दाइत्वो कें निर्वहन की जिम्मेदारी निभाता है।प्रस्तुत शोध पत्र कें माध्यम सें पंचायत निर्वाचन 2004 को शोध विषय कें रुप में चयनित किया गया था किन्तु पंचायत निर्वाचन की घोषणा 2004 में हुई और प्रक्रिया पूर्ण सन 2005 में हुई अत: प्रस्तुत शोध पत्र में पंचायत निर्वाचन 2004-05 का विश्लेषणात्मक विवेचन किया गया है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य पंचायत निर्वाचन 2004-05 का विश्लेषणात्मक विवेचन प्रस्तुत करना है।

अध्ययन पद्धत्ति – प्रस्तुत शोध पत्र को विश्लेषणात्मक अध्ययन पद्धति से तैयार किया गया है।

पंचायत निर्वाचन 2004-05 – मध्यप्रदेश पंचायत निर्वाचन की अधिसूचना दिनांक 16/12/2004 को की गई लेकिन पंचायत चुनावो की अधिसूचना जारी होने से लेकर अंतिम निर्वाचन परिणाम की घोषणा 2005 में की गई । अत: यह अध्ययन पंचायत निर्वाचन 2004-05 होगा।

परिसीमन – किसी भी निर्वाचन की अधिसूचना जारी हो जाने के बाद सबसे महत्वपूर्ण कार्य या कहे कि निर्वाचन कार्य प्रक्रिया का श्रीगणेश परिसीमन के साथ होता है। पंचायत निर्वाचन 2004-05 के परीसीमन के पश्चात ही प्रदेश की ग्राम पंचायतो की संख्या 22029 से बढकर 22958 हो गई अर्थात 929 नई पंचायतो का गठन इस निर्वाचन में किया गया। नई ग्राम पंचायतो के गठन से ग्राम पंचायत के वार्डो की संख्या में व्रद्धी हुई और ग्राम पंचायत के वार्डो की संख्या 338847 से बढकर 363400 हो गई अर्थात 49000 नई पंचायत वार्डो का निर्माण हुआ । जनपद पंचायतो की संख्या में कोई परिवर्तन नही हुआ किन्तु जनपद पंचायतो के वार्डो की संख्या में इजाफा हुआ और इनमें परिसीमन के पश्चात 397 नये वार्डो का निर्माण हुआ। अब वार्डो की संख्या 6454 से बढकर 6851 हो गई गई है। जिला पंचायतो की संख्या 46 से बढकर 48 हो गई।2 अशोकनगर तथा बुरहानपुर 2 नई जिला पंचायतो का गठन किया गया।

आरक्षण – संविधान के 73वें संशोधन के प्रावधानानुसार प्रत्येक स्तर की पंचायतो में अनुसुचित जाति,जनजाति तथा पिछडे वर्गो के लिए स्थानो के आरक्षण की व्यवस्था की गई।अत: पंचायत निर्वाचन 2004-05 में विभिन्न वर्गो के आरक्षण को निम्न सारणी में प्रदर्शित किया गया है:-

तालिका 1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

मतदाता – पंचायत निर्वाचन 2004-05 में कुल 2 करोड 80 लाख 28319 व्यक्तियो के नाम निर्वाचन मतदाता सुची में दर्ज हुए। इनमें 1 करोड 46 लाख 63 हजार 729 पुरुष तथा 1 करोड 33 लाख 64 हजार 527 महिलाए थी।

निर्वाचन प्रक्रिया – पंचायत निर्वाचन की घोषणा 16/12/2004 को की गई जिसमे पंचायत निर्वाचन सें सम्बंधित निम्नांकित बाते शामिल थी -

पंचायत निर्वाचन तीन चरणो में सम्पन्न करवाने की घोषणा की गई। प्रथम चरण 16 जनवरी, द्धितीय 19 जनवरी तथा तृतीय चरण 23 जनवरी 2005 को सम्पन्न हुआ।

रिक्त पद – पंचायत निर्वाचन 2004-05 में विभिन्न कारणो व पदो की संख्या रिक्त रह गई। कई पदो पर प्रस्तुत किए गए समस्त आवेदन पत्र निरस्त हो गए तो दुसरी और कई पदो पर आवेदन प्रस्तुत ही नही किए गए। रिक्त पदो की जानकारी निम्न सारणी में प्रस्तुत की गई है।

तालिका 2 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 2 से स्पष्ट है कि त्रिस्तरीय पंचायत चुनाव में कुल 12524 (बारह हजार पॉच सौ चौबीस) आवेदन पत्र प्रस्तुत नही करने तथा 4600 पद आवेदन पत्र निरस्त होने के कारण रिक्त रह गये। इस प्रकार कुल सत्रह हजार एक सौ चौबीस पद (17124) पद रिक्त रह गये।

* अतिथि विद्ववान(राजनीति विज्ञान) शासकीय महावीर महाविद्यालय, पेटलावद, जिला झाबुआ (म.प्र.) भारत

निर्विरोध निर्वाचन – पंचायत निर्वाचन में निर्विराध निर्वाचन भी देखने में आया। वैसे निर्विरोध निर्वाचन निर्वाचन को निर्वाचन प्रक्रिया नही है बल्कि कई बार ऐसा देखने में आया किसी पद के लिए एक से अधिक आवेदन तो आते है किन्तु निरस्त होने के कारण केवल एक ही वैद्य प्रत्याशी रह जाता है अथवा एक पद के लिये एक ही आवेदन आता है। इसी स्थिति को निर्विरोध निर्वाचन कहा जाता है। पंचायत निर्वाचन 2004-05 में निर्विरोध निर्वाचन प्रदर्शित किया गया है।

तालिका 3 – निर्विरोध निर्वाचन

क्र.	पंचायत	निर्विरोध
1.	ग्राम पंचायत (पंच)	206557
2.	ग्राम पंचायत (सरपंच)	614
3.	जनपद पंचायत (सदस्य)	133
4.	जिला पंचायत (सदस्य)	5
5.	योग	207509

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि ग्राम पंचायत के पंच पद पर सर्वाधिक 206557 पंच निर्विरोध, ग्राम पंचायत सरपंच के 814, जनपद सदस्य 133 तथा जिला पंचायत सदस्य के 5 पदो पर निर्विरोध निर्वाचन हुआ।

मतदान प्रतिशत – मध्यप्रदेश पंचायत निर्वाचन 2004-05 के मतदान प्रतिशत का अध्ययन किया जाये तो औसत मतदान 76.61% रहा। इसमें महिला का 74.58% रहा जबकि पुरुषो का मतदान प्रतिशत 78.64% रहा। कुल जिले (48) जिसमें से 46 जिलो में पुरुष मतदान महिलाओ से ज्यादा रहा जबकि दो जिले (जबलपुर और बालाघाट)में महिला मतदान पुरुषो से अधिक रहा।

जिला स्तर पर यदि मतदान प्रतिशत का विश्लेषण किया जाये तो प्रदेश में सर्वाधिक मतदान वाले जिलो में अग्रणी क्रमशः मुरैना (88.10%) दतिया (86.27%) शाजापुर(86%) नीमच(85.54%) मंदसौर (84.74%) तथा रतलाम(84.74%) सबसे कम मतदान क्रमशः भोपाल (39.66%) बडवानी(50%) पन्ना (65%) उमरिया(67.73%) तथा सीधी (69.50%)[8] रहे। पंचायत निर्वाचन प्रणाली की कमिया – पंचायत निर्वाचन 2004-05 के संदर्भ में

1. मध्यप्रदेश पंचायत निर्वाचन पूरी तरह से जाति पर आधारित होते है। अर्थात सम्पुर्ण प्रक्रिया में जाति एक महत्वपूर्ण तत्व होती है लेकिन मतदाता सूची जातिय आधार पर नही बनाई जाती है। जबकि पदो को रोस्टर के आधार पर विभिन्न जाति समुहो के लिये आरक्षित किये जाते है। इसका सबसे बडा नुकसान यह होता है कि कई पद ऐसी जाति विशेष के लिये आरक्षित हो जाते है जो जाति के लोग उस पंचायत क्षेत्र में निवास ही नही करते है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण इस निर्वाचन में रतलाम जिले के नगरा ग्राम पंचायत में देखने को मिला जो अनुसुचित जनजाति के लिये आरक्षित कर दी गई जबकि उक्त जाति का कोई व्यक्ति सम्बंधित पंचायत क्षेत्र में था ही नही।[9]
2. यद्यपि पंचायत निर्वाचन में आचार संहिता लगायी जाती है और राज्य निर्वाचन आयोग उम्मीदवार और मतदाता दोनो से अपेक्षा रखते है कि आदर्श आचार आचरण संहिता का पालन किया जाये,किन्तु क्या मतदाता और क्या उम्मीदवार दोनो आदर्श आचार आचरण संहिता का खुला उल्लंघन करते है।
3. पंचायत निर्वाचन में राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा धन खर्च की कोई सीमा निर्धारित नही की गई। 73 वे संविधान संशोधन के पहले पंचायतो को कोई विशेष वित्तीय एवं प्रशासनिक अधिकार नही किन्तु इस संशोधन के पश्चात पंचायतो को कई प्रशासनिक व वित्तीय अधिकार प्रदान किये गये। जिसके कारण लोग पंचायत चुनाव में बढ-चढ कर भाग लेने लगे। आज निर्वाचन के समय देखने मे आता है कि प्रत्याशी किसी भी कीमत पर जीतना चाहता है। इसके लिये लाखो रुपये चुनाव प्रचार पर खर्च किये जाते है।[10]
4. पंचायत चुनाव में स्थानीय व्यक्ति उम्मीदवार होते है जिसके कारण मतदाताओ में मतदान के प्रति काफी उत्साह होता है। साथ ही पंचायत निर्वाचन में एक मतदाता एक साथ चार मतपत्रो का प्रयोग करता है या एक साथ चार मत देता है। वही मतदाताओ की शिक्षा का स्तर भी कम होता है जिससे मतदान का समय काफी लम्बा हो जाता है जबकि राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा मतदान का समय सुबह 7-3 तक ही रखा गया है।11
5. पंचायत निर्वाचन में मतदाता ग्रामीण क्षेत्रो के होते है। इनमें एक बडी संख्या निरक्षरो की होती है। ये मतदाता सिर्फ चुनाव चिन्ह देखकर ही मतदान करते है।साथ ही प्रत्येक चुनाव में एक बडी संख्या ऐसे मतदाताओ की भी रहती है जो कि अपने मताधिकार का पहली बार प्रयोग करते है।इनमें मतदाताओ का यह पता भी नही रहता की मुहर किस स्थान पर लगाना है और एक ही मतपत्र पर कई मुहर लगा देता है। इसके अतिरिक्त एक बात और भी है कि मतपत्र को जिस प्रकार सें मतदान दल कें कर्मचारीयो द्वारा मोडा जाता है,उसी प्रकार से मतदाता नही मोड पाते है। इस वजह से भी मतपत्रो के निरस्त होने की सम्भावना रहती है। इस पंचायत निर्वाचन में 30% मत इसी कारण निरस्त हुए है।

सुझाव

1. सबसे प्रथम एवं सबसे महत्वपुर्ण मतदान प्रतिशत 100% हो इसके लिये प्रयास किये जाये क्योकि विभिन्न कारणो से हमारा प्रथम आम चुनाव में 45% से बढकर लगभग 76% ही हो पाया हे। आज भी मतदाता का एक बडा प्रतिशत मतदान के समय अपने मताधिकार का प्रयोग नही करता है। अतः इस दिशा में सच्चे मन से प्रयास की आवश्यकता है।
2. कहने को आदर्श आचार आचरण संहिता लगाई जाती है,लेकिन सच्चे अर्थो में आदर्श आचरण संहिता का पालन नही किया जाता है निर्वाचन के दौरान प्रत्याशी और उनकें समर्थक निर्वाचन क्षेत्रो में आदर्श आचरण संहिता का उल्लंघन करते दिख ही जाते है बल्कि मतदान केन्द्रो पर मतदान के लिये लगी कतार और कई बार उम्मीदवारो के मतदान अभिकर्ता तक मतदान प्रभावित करने का प्रयाश करते है।
3. हिंसा,धमकी,प्रलोभन से साधनो से भी मतदान को प्रभावित कर परिणाम अपने पक्ष में करने के प्रयास किये जाते है। इस प्रकार की गतिविधियो पर नजर रखने की आवश्यकता है ताकि कोई भी प्रत्याशी मतदान परिणाम को प्रभावित न कर सके।
4. मतदाताओ को मतदान के समय तथा मतदान के पश्चात भयमुक्त वातावरण तथा सुरक्षा के व्यापक प्रबंध किये जाने चाहिये क्योकि कई बार हिंसा व धमकी द्वारा निर्वाचन परिणाम प्रभावित करने के प्रयास किये जाते है। उदाहरणार्थ सर्वेक्षण के दौरान मतदाताओ में जो उत्तरदाता के रुप में अनुसुची के प्रश्नो के उत्तर देने वक्त दबी जुबान से यह स्वीकार किया कि धमकी,हिंसा,व प्रलोभन के माध्यम से मतदान प्रभावित करने का प्रयास किया जाता है।इसके अलावा कई बार

अखबारो की सुर्खियो में यह खबर छपती है कि अमुंक गॉव में चुनाव लडनें पर हत्या कर दी गई या मतदान किसी उम्मीदवार के पक्ष में नही करने पर मकान या खेत में आग लगा दी जाती है। उदाहरणार्थ पंचायत चुनाव 2004-05 के दौरान गुना जिलें के मालपुर गॉव में अनुसुचित जाति के एक परिवार के मकान में गॉव के उच्च जाति के लोगो ने यह कहकर आग लगा दी कि तुमने हमें वोट नही दिया।

5. पंचायत निर्वाचन में मतदान का समय प्रात: 7 से 3 बजे तक ही रखा जाता है जबकि विधानसभा व लोकसभा में 7 से 5 बजे तक मतदान होता है।इस समयावधी की लोकसभा व विधानसभा जितना रखना चाहिये,क्योकि एक तो उम्मीदवार स्थानीय होने के कारण और दुसरा एक साथ चार पदो के लिये मतदान में समय लगता है।अत: हमें बढाया जाना चाहियें।

उपसंहार – यद्यपि राज्य निर्वाचन आयोग अपनी सम्पूर्ण क्षमता से निष्पक्ष,पारदर्शिता एवं ईमानदारी के साथ पंचायत निर्वाचन को सम्पन्न कराना है।लेकिन अभी सुधास अपेक्षित है। उपरोक्त दिये सुझावो को क्रियान्वित कर पंचायत निर्वाचनो को और निष्पक्ष एवं पारदर्शी बनाया जा सकेगा साथ ही इन निर्वाचनो में मतदाताओ की सहभागिता बढाने में भी मदद मिल सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पंचायत राज्य एवं ग्राम स्वराज्य अधिनियम 1993.
2. नव भारत दैनिक समाचार पत्र 24/12/2004, पृष्ठ 09
3. मध्यप्रदेश तृतीय पंचायत आम चुनाव (2004-2005),राज्य निर्वाचन आयोग, भोपाल 2006 पृष्ठ 57-60
4. रोजगार और निर्माण,दिनांक 04/11/2004 पृष्ठ 1
5. मध्यप्रदेश पंचायिका नवम्बर 2004 पृष्ठ 13
6. मध्यप्रदेश तृतीय पंचायत आम निर्वाचन प्रतिवेदन 2004-2005, राज्य निर्वाचन आयोग 2006 पृष्ठ 98,99
7. वही पृष्ठ 120,121
8. वही पृष्ठ 112,118,120,121,135,136
9. दैनिक भास्कर 4 समाचार पत्र दिनांक 31/12/2004 पृष्ठ 03
10. दैनिक भास्कर समाचार पत्र दिनांक 30/01/2005 पृष्ठ 02
11. नई दुनिया दैनिक समाचार पत्र दिनांक 17/01/2005, पृष्ठ 05

तालिका 1 – त्रिस्तरीय पंचायत निर्वाचन में आरक्षण

क्र.	पंचायत का प्रकार	पद	अजा	अजजा	अ.पि.वर्ग	सामान्य	योग
1	ग्राम पंचायत	पंच	55407	108152	64765	138930	360954
		सरपंच	3210	7739	4217	7565	22731
2	जनपद पंचायत	सदस्य [3]	1041	1846	1333	2591	6811
		अध्यक्ष [4]	39	113	60	101	313
3	जिला पंचायत	सदस्य	130	211	179	316	836
		अध्यक्ष	7	12	12	17	48

स्त्रोत
- मध्यप्रदेश ततीय पंचायत निर्वाचन प्रतिवेदन।
- रोजगार निर्माण दिनांक 04/11/2004 प.1।
- मध्यप्रदेश पंचायिका नवम्बर 2004 प.13 अ

तालिका 2 – त्रिस्तरीय पंचायत निर्वाचन में रिक्त पद

क्र.	पंचायत का प्रकार	आवेदन पत्र प्रस्तुत नही किये गए	निरस्त	योग
1	ग्राम पंचायत (पंच)	12438	4558	
	(सरपंच)	86	40	126
2.	जनपद पंचायत (सदस्य)	0	2	2
3	जिला पंचायत (सदस्य)	0	0	0
4.	योग	12524	4600	17124

****

Influence of Period of Investment on the Investment Decision Factors

Mradul Panthi *

Abstract - This study purpose to advance knowledge about key factors that influence investment behavior and ways these factors impact investment risk tolerance and decision making process among people and among different period. The individuals may be equivalent in all aspects, may even be living next door, but their financial planning needs are very various. It is by using various period along with objective, source of information that synergism between investors can be generated. In this context, demographics alone no high suffice as the basis of segmentation of personal investors. Hence keeping this in mind, the current study is a try to find out factors which affects individual investment decision and differences in the perception of investors in the decision of investing on basis of period. The study concludes that investors' duration predominantly decides the risk taking capacity of investors.

Introduction - Many individuals find investments to be fascinating because they can compete in the decision making process and see the results of their choices. Not all investments will be profitable, as investor wills not always make the correct investment decisions over the period of tenure~ However, you should gain a positive return on a diversified portfolio. Investing is not a game but a sincere subject that can have a big impact on investor's future wellbeing. Basically everyone makes investments. Even if the individual does not choose specific assets such as stock, investments are still made through participation in sukanya yojna, pension plan, kisan vikas patra, public provident fund, bond, I.P.O and employee saving programmed or through purchase of life insurance or a home or by some other mode of investment like investing in gold (Jewelry) or in Banks or in saving schemes of post offices like R D account or Fixed deposit. Each of this investment has common characteristics such as potential return and the risk you must bear. The future is uncertain, and you must determine how much risk you are willing to bear since higher return is associated with accepting more risk.

The individual should start by specifying investment target. Once these targets are established, the individual should be aware of the mechanics of investing and the environment in which investment decisions are made. These include the process by which securities are issued and subsequently purchase and sell, the regulations and income tax laws that have been enacted by various levels of government, and the sources of information concerning investment that are available to the individual.

Today the field of investment is even more dynamic than it was only a decade ago. World event fast events that alter the values of specific assets the individual has so many assets to select from, and the fund of information available to the investors is staggering and continuously growing. The key to a successful financial plan is to keep apart a bigger amount of savings and invest it intelligently, by using a longer period of time. The turnover rate in investments should exceed the inflation rate and cover taxes as well as allow you to earn an amount that compensates the risks taken. Savings accounts, fund at low interest rates and market accounts do not contribute significantly to future rate accumulation. While the highest rate come from stocks, bonds and other types of investments in assets such as gold. Nevertheless, these investments are not absolutely safe from risks, so one should try to understand what kind of risks are related to them before taking action. The lack of understanding as how stocks work makes the myopic point of view of investing in the stock market (buying when the tendency to increase or selling when it tends to decrease) perpetuate. To understand the characteristics of each one of the various types of investment you must have enough financial knowledge.

Furthermore, inflation has served to increased awareness of the value of financial planning and wise investing. More Inflation is a worry for each and every individual. Due to Inflation value of your fund in future will decrease. To Cope up this, Investors wants to invest their fund and gain certain rate of return which is more than rate of Inflation. Having clear reasons or purposes for investing is critical to investing successfully. Like training in a fitness club, investing can become difficult, tedious and even serious if you are not working toward a goal and monitoring your improvement.

Table No. 1 (see in last page)

Research Hypothesis - There is a significant difference between period of investment of the respondents and their

* **Research Scholar (Managment) JNIBM, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA**

overall influencing factors of investment decision.

Findings - The table 1 reveals that there is a significant difference between period of investment of the respondents and their overall influencing factors of investment decision. Hence, the calculated value is less than table value. So the research hypothesis is accepted. So period of investment influences on overall influencing factors of investment decisions.

References : -

1. "The ET Retail Equity Investor Survey" (2004), *the Economic Times*, January 16. pp 5
2. Barnewall M (1987), "Psychological Characteristics of the Individual Investor", in William Droms, ed., *Asset Allocation for the Individual Investor,* Charlottesville, Va: The Institute of Chartered Financial Analysts.
3. Daniel Dorn and Huberman Gur (2003), "Talk and Action: What Individual Investors
4. Say and What They Do", European Finance Association Meetings in Glasgow, December 16.
5. Dash Manoj Kumar(2010),"Comparative Empirical Analysis of Occupational and Motivational Differences of Different Generation in Indian Work Force ", International Journal of Business Research , IABE Journal, pp 17-23.

Influence of Period of Investment on the Investment Decision Factors

Table No. 1 : Difference between period of investment of the respondents and their overall influencing factors of investment decision

S.	Period of investment	Mean	S.D	SS	Df	MS	Statistical inference
1	**Objective**						
	Between Groups			854.26	4	213.56	
	Below 5yrs (n=150)	17.79	3.22				F = 18.94
	6 to 10yrs (n=72)	18.43	2.83				P < 0.05Significant
	11 to 15yrs (n=36)	17.42	4.87				
	16 to 20yrs (n=21)	18.57	3.89				
	21yrs & above (n=21)	22.43	1.94				
	Within Groups			6706.70	297	11.27	
2	**Source of information**						
	Between Groups			445.89	4	111.47	
	Below 5yrs (n=150)	21.21	3.49				F = 7.06
	6 to 10yrs (n=72)	22.31	3.21				P < 0.05Significant
	11 to 15yrs (n=36)	20.42	4.32				
	16 to 20yrs (n=21)	22.14	4.70				
	21yrs & above (n=21)	23.86	7.08				
	Within Groups			9401.96	297	15.80	
3	**Economic/ Market**						
	Between Groups			354.51	4	88.62	
	Below 5yrs (n=150)	24.95	4.39				F = 5.16
	6 to 10yrs (n=72)	23.62	4.04				P < 0.05Significant
	11 to 15yrs (n=36)	22.92	3.99				
	16 to 20yrs (n=21)	25.00	2.86				
	21yrs & above (n=21)	24.71	4.15				
	Within Groups			10237.35	297	17.21	
4	**Industry**						
	Between Groups			427.43	4	106.86	
	Below 5yrs (n=150)	11.96	3.90				F = 14.96
	6 to 10yrs (n=72)	12.58	2.14				P < 0.05Significant
	11 to 15yrs (n=36)	10.67	2.98				
	16 to 20yrs (n=21)	13.14	1.26				
	21yrs & above (n=21)	14.29	1.17				
	Within Groups			4252.57	297	7.15	
5	**Company qualitative**						
	Between Groups			1683.04	4	420.76	
	Below 5yrs (n=150)	25.90	5.09				F = 17.58
	6 to 10yrs (n=72)	29.19	4.12				P < 0.05Significant
	11 to 15yrs (n=36)	25.33	6.13				
	16 to 20yrs (n=21)	28.71	4.18				
	21yrs & above (n=21)	29.71	4.15				
	Within Groups			14242.11	297	23.94	

6	**Company quantitative**						
	Between Groups			1255.92	4	313.98	
	Below 5yrs (n=150)	32.46	5.18				F = 12.36
	6 to 10yrs (n=72)	32.25	5.71				P < 0.05Significan
	11 to 15yrs (n=36)	30.83	4.29				
	16 to 20yrs (n=21)	33.43	4.71				
	21yrs & above (n=21)	37.43	2.35				
	Within Groups			15119.94	297	25.41	
7	**Overall influencing investment decision**						
	Between Groups			19175.73	4	4793.93	
	Below 5yrs (n=150)	134.27	18.85				
	6 to 10yrs (n=72)	138.37	15.24				F = 14.82
	11 to 15yrs (n=36)	127.58	23.18				P < 0.05Significant
	16 to 20yrs (n=21)	141.00	15.39				
	21yrs & above (n=21)	152.43	11.24				
	Within Groups			192348.27	297	323.27	

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Customer Satisfaction In Online Banking Services - An Over View

Suman Gunjetia* **Dr. Payal Sachdev ****

Abstract - A physically dominant banking industry is a fundamental in every nation and Technology has introduced innovative path of servicing banking to the customer, such as online banking. This particular paper endeavors to explore the online customer services provided by the banking industry. The paper based on review of the literature that showed access to online, ease of use, concern and security and privacy are found to be critical factors influencing acceptance of online banking. The customer is looking for better quality and services with satisfaction but they concerned about security and privacy in online banking.
Key words - On line banking, customer satisfaction, acceptance of online banking.

Introduction - In today's competitive banking world improvement day by day in customer services is the most important tool for their growth and development. Banks needs developing creative solutions to understand complete use of the latest technology and how to give their customers with high online service quality. When lack of face to face interaction banks must increase the experienced online service quality among customers in order to achieve and maintain competitive advantages and customer relationships. Online banking reduces the cost for transactions and also limited business done via internet for which bank has invested. These online banking provides protective measures to satisfy increasingly sophisticated and more demanding customers.

Review Of Literature - The present study identifies an ample number of research works at global level in general but at domestic level very few studies have been reviewed and found most appropriate on measuring customer satisfaction in online Banking in India. The contribution of various researchers, policy-makers and writers to this area has focused on explaining the process of the online banking and satisfaction of the customer with the service, their concern, advantages, disadvantages and the study, in brief summary and present some of them as year of publication.

Ramesh J (2013) in his article entitled "Growth of E-banking in 21st century" stated that Indian economy is witnessing stellar growth over the last few years, internet adoption among Indians has been increasing over the last one decade keeping this in minds Indian banks have also risen to the occasion of offering new channels to meet the customer's needs and wants through online banking.

Sharma (2013) explored that On comparing the e-banking adoption frequency by customers on persuasion of bankers or on their own between public and private sector banks, it has been found that there is not sufficient of awareness among the customers concerning the use of e-banking services and the guidance and opinion by bankers facilitate promote the use of such services among the customers. Mostly private sector banks are working towards it compared to that of public sector bank.

Mishra (2011) gives helpful instruction to make sure safety of internet based transactions (IBT). IBT users are suggestion not to reply to phone call or letter, any mail asking for the IB information like login id or password, and not to click on any link give in any mail, claiming to be the link for the bank's website are the significant instructions, among others. Online banking has emerged from such an inventive development.

Kumbhar (2011) found that convenience, responsiveness, security/assurance, brand perception, cost effectiveness, perceived value, easy to use and problem handling are important factors in customer satisfaction in online banking . Their study has shown that there is positive relationship between customer satisfaction and service quality in online banking. It has various benefits so that many customers are increasingly using this service.

Safeena et al (2010) determines the costumer's point of view on online banking acceptance. She examine that perceived convenience, perceived user-friendliness, customer awareness and perceived risk are the important determinants of online banking acceptance and have strong and positive result on customers to accept online banking system.

Alsajjan and Dennis (2010) online banking facilities are much cheaper for the banks; as a result, bankers are very willing to open and provide online banking facilities to their

*Research Scholar, Pacific Academy Of Higher Education And Research University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Associate Professor, Advent Institute Of Management Studies, Udaipur (Raj.) INDIA

customers. However, the adoption and the achievement of online banking facilities rest with the potential customers. This lately developed online banking system, if used decently, has the potential to enlarge customer satisfaction as well as the performance of the banks.

Vázquez-Casielles, (2009) found that an increase in customer satisfaction produces a stronger effect on loyalty among customers who are at the high end of the satisfaction scale. But the complexity has always been how to describe the level of satisfaction. Even so, the relationship between faithfulness and customer satisfaction is feeble when customer satisfaction is moderate when customer satisfaction is average and solid when customer satisfaction is high. Thus, since different issue seem to influence the tendency to be faithful under the situation of moderate, average and solid satisfaction; it may be assumed that the type of the relationship between customer satisfaction and faithfulness is different at different levels of satisfaction.

Hua (2009) conducted a study to investigate how user's perception about online banking is affected by the perceived ease of website and the privacy policy provided by the online banking website. In addition, it also looks into the comparative importance of perceived ease of use, privacy, and security. Security is the most important issue of influencing customer's adoption. Perceived ease of use is less importance issue than privacy and security.

Hao Chen and Jean-Pierre Corriveau (2009) explored that there are two potential security problems in the current online banking systems. First, online banking systems form a kind of customer/server application. Most research on online banking systems is concentrate on security on the server's side and on network security that is the formation of a secure channel between the user's computers and the bank's servers. Solutions to make sure authenticity and privacy over online are widely available. Still, little exists to address security on the user side. Second, there are many security technologies, execution and service that can be chosen and applied to online banking systems. However, it is hard to get a testing system that can be used by the customers themselves to verify if those security services are organization correctly. Clearly, there is no actual security protection without accurate installation and configuration of such services.

Oghenerukevbe (2008) suggested that online banking provides conventional for faster delivery of banking services to open range of customers. The growing popularity of online banking, have involved the attention of both legitimate and illegitimate online banking practices. Criminals focus on stealing users online banking credentials because the username and password combination is relatively easy to acquire and then relatively easy to use to fraudulently access an online banking account and commit fraud. To alert customers, several banking sites are now including security indicators (SI) to their sites.

Wai-Ching Poon (2008) identified ten significant factors related to the users' adoption of online banking services. Security and Privacy were the major sources of dissatisfaction, play an important role in determining the users' acceptance of online banking services with respect to different segmentation of age group, education level and income level. The other component as accessibility, convenience, design and content were informant of satisfaction.

Amato-McCoy, D. (2005) observed that achieving customers trust regarding transaction is the key to expand online banking. Customers are more concerned about the protection of their password and ID. Customers not much give importance to service and are more worried about transactions.

Singh and malhotra (2004) examined the impact of online banking. The objective of the study was to find who uses online, why and where. It also examined the respondent's reasons for not using banking online. The researcher analyzed that males use more online banking than females. Main services used through websites were inter-account transfer, paying account, checking balance, bank account statement; interaction with the banks etc. security was the major issue for not using banking online. They suggested that to make online banking more adaptive, web sites should be more attractive and colorful. Training should be given to customers. Charges of online facilities should also be less. Banks should advertise and publicize their new products and services offered on the websites so as to make online banking more popular among customers.

Lin (2003) explained to understand satisfaction in the e-commerce context, need to have a clear understanding of what is intended by customer satisfaction. Customer satisfaction is definite as a consequence of a cognitive and moving valuation, where some comparison standard is compared to the really alleged performance. If the alleged performance is less than expected, customers will be dissatisfied. On the other hand, if the alleged performance exceeds expectations, customer will be satisfied.

Wolfinbarger and Gilly (2002) have explored that four online retailing service quality dimensions through focus group interviews and an online survey. These are reliability, security and web site design and customer services. They found that reliability is the strongest forecaster of customer satisfaction.

References :-

1. **Abbasi, M.S., Chandio, F.H., Soomro, A.F., & Shah, F. (2011),** "Social influence, voluntariness, experience and the internet acceptance: An extension of technology acceptance model within a south-Asian country context", *Journal of Enterprise Information Management*, Vol. 24, No.1, pp.30-52.
2. **Alsajjan, B. & Dennis, C. (2010)**, "Internet banking acceptance model: Cross-market examination", *Journal of Business Research,* Vol. 63, No. 9-10, pp. 957-963.
3. **Amato-McCoy, D. (2005),** "Creating virtual value, Bank Systems and Technology", Vol.1, pp 22-27.

4. **Hua, Guangying (2009)**, "An Experimental Investigation of Online Banking Adoption in China", *Journal of Internet Banking and Commerce*, April, Vol. 14.
5. **Hao Chen and Jean-Pierre Corriveau (2009), "**Security Testing and Compliance for Online Banking in Real-World", Proceedings of the International MultiConference of Engineers and Computer Scientists, Vol. 1, IMECS 2009, March 18 - 20, 2009, Hong Kong.
6. **Jun, M., Yang, Z. & Kim, D. (2004),** "Customers' perceptions of online retailing service quality and their satisfaction", *International Journal of Quality and Reliability Management*, Vol. 21, No.8, pp. 817-840.
7. **Jayawardhena, C. & Foley, P. (2000),** "Changes in the banking sector- the case of Internet banking in the UK", Internet Research: Electronic Networking Applications and Policy, Vol. 10, No. 1, pp. 13-30.
8. **Lin, T., T. (2006),** "An Internet banking system establishment with transaction rate uncertainty: a real options approach", Journal of Information & optimization Sciences, Vol. 27, No. 1, pp.1-15.
9. **Mishra A. (2011), "**Internet Banking: Knowledge is prevention", Retrieved from http://www. ccaoi.inll 11/ links/ few newsletter 15th%20lan%2() ll%20Sivurity%2 0Neu'sletter.pdf.
10. **Musiime Andrew and Malinga Ramadhan (2011), "**Internet banking, consumer adoption and customer satisfaction",*African Journal of Marketing Management,* Vol.3,No.10, pp. 261-269.
11. **Ramesh J. (2013),** "Growth of E-banking in 21ast century", Business Vision January-March 2013. Vol.9, No.1 pp 17-20...
12. **Rashmi Sharma(2013),** "A comparative study of e-banking in public and private sector banks",
13. **Robinson, G. (2000)**, "Bank to the future", Internet Magazine. (Online) available at: www. Find articles. Com.
14. **Safeena. et al (2010),** "Customer Perspectives on E-business Value: Case Study on Internet Banking", JIBC, Vol. 15, No.1, April 2010
15. **Singh, A. (2004),** "Trends in South African Internet Banking", Aslib Proceeding: New Information Perspectives. Vol.15, pp.187-196.
16. **Oghenerukevbe, E.A. (2008),** "Customers Perception of Security Indicators in Online Banking Sites in Nigeria", *Journal of Internet Banking and Commerce*, December 2008, Vol. 13, No. 3.
17. **Van Riel, A., Liljander, V., & Jurriens, P. (2001**), "Exploring consumer evaluations of e-services: a portal site". International Journal of Service Industry Management, Vol. 12, No. 4, pp. 359-377.
18. **Wai-Ching Poon (2008), "**Users' adoption of e-banking services", *Journal of Business & Industrial Marketing*, Vol.23, No.1, pp.59-69. Doi: 10.1108/ 08858620810841498, http://dx.doi.org/ 10.1108/ 08858620810841498.
19. **Wang, Y.S., Wang, Y.M., Lin, H.H. & Tang, T.I. (2003),** "Determinants of user acceptance of Internet banking: an empirical study", *International Journal of Service Industry Management,* Vol. 14, No. 5, pp. 501-519.

****

Issues And Challenges Related To Pedagogical Strategies For Inclusive Education

Dr. Monisha Mishra * Alka Asati **

Abstract - The education system throughout the world is faced by the challenge of providing effective education system for children and the youth. Countries that are economically poor still have a large number of children out of school. Those countries that are economically stable have young people who leave the school without any worth whole qualification, some go to experiences and there are others who simply dropout since the lessons seem irrelevant to their lives. you can expect the school to provide a plan to support teachers and students good inclusive practices- like collaboration, team work, innovative instructional practices, peer-strategies, and more. In the paper we will discuss to facing challenges and issue related to inclusive education. The discussion focuses on a range of initiates to help overcome some of the challenges faced to implementing effective inclusive education. Consideration is given to reforming education system to become inclusion. In this research paper, the researcher also focused about the purpose of inclusive education can achieve when an all out effort is made to provide equal opportunities, enjoyment of human rights and fundamental freedom to all persons with disabilities and also to promote respect for their inherent dignity. Also there is need to restricting school for inclusive education.
Keywords– Inclusive education, Equal opportunities, implement integration, special need.

Introduction - An inclusive group or organization tries to include many different type of people and treat them all fairly and equally and the inclusive education involves the processes of increasing their exclusion from cultures, curricula and communities. It involves the restructuring of policies and practices in school so that they can respond to the diversity of learners in their local community. That learners with barriers should not be vulnerable be exclusion due to the serious behavioral issues, impairments of various types, disabilities, and other learners from diverse. They should be accepted in to a school as any ordinary Lerner. Inclusion is also concerned with improving school for staff as well as for learners and that all learners have access to participation in school activities and culture. According to Stephen and Blackhurt, "Mainstreaming is the education of mildly handicapped children in the regular classroom. It is based on the philosophy of 'equal opportunity' that implemented through individual planning to promote appropriate learning achievement and social normalization".

What is Inclusive Education - Inclusive education means that all students attend and are welcomed by their neighborhood schools in age-appropriate, regular classes and are supported to learn, contribute and participate in all aspects of the life of the school. Inclusive education is about how we develop and design our schools, classrooms, programs and activities so that all students learn and participate together. According to UNESCO, means that the school can provide a good education to all pupil irrespective of their varying abilities. All children will be treated with respect and ensured equal opportunities to learn together. Inclusive education is an ongoing process. Teachers must work actively and deliberately to reach its goals". In the 1990, inclusion captured that field after the World Conference on Special Needs Education in Salamanca in 1994, with the adoption of the Salamanca Statement and Framework for Action on Special Needs Education. Ninety percent of children with disabilities in developing countries do not attend school, says UNESCO. Through, in India, there is no formal or official definition of inclusion; it does not only mean the placement of the students with SEN in regular classrooms. The Draft Scheme on Inclusive Education prepared by the MHRD (2003) uses the following definition. Inclusive Education means all learners, young people with or without disabilities being able to learn together in ordinary preschool provisions, schools, and community educational settings with appropriate network of support services. Inclusive Education means including the children with disabilities in the regular classroom that have been designed for children without disabilities (Kugelmass 2004) Inclusive education refers to an education system that accommodates all children regardless of their physical, intellectual, social, emotional, linguistic or other conditions. For the development of social skills and better social interaction of the student's inclusive

*Principal (Education) B.T. Institute of Excellence, Sagar (M.P.) INDIA
** Asst. Professor (Education) B.T. Institute of Excellence, Sagar (M.P.) INDIA

education is the need of education system. UNICEF's Report on the status of Disability in India 2000 states that there are around 30 million children in India suffering from some form of disability. The Sixth All-India Educational Survey (NCERT, 1998) reports that of India's 200 million school aged children (6-14 years), 20 million required special needs education. While the national average for gross enrollment in school is over 90 percent, less than five percent of children with disabilities are in school. The majority of these children remain outside mainstream education. Thus it is necessary to explore current status of inclusive education in India as well as problems, prospects, challenges related to its expansion in the country

Benefits of Inclusive Education

1. Develop individual strengths and gifts, with high and appropriate expectations for each child.
2. Work on individual goals while participating in the life of the classroom with other students their own age.
3. Involve their parents in their education and in the activities of their local schools.
4. Foster a school culture of respect and belonging. Inclusive education provides opportunities to learn about and accept individual differences, lessening the impact of harassment and bullying.
5. Develop friendships with a wide variety of other children, each with their own individual needs and abilities.
6. Positively affect both their school and community to appreciate diversity and inclusion on a broader level.

It's important because as Canadians, we value our diverse communities. These communities start at school, where all students learn to live alongside peers. They learn together; they play together; they grow and are nurtured together.

Government projects for inclusive education in India - The government of india created Kothari Commission in 1964 that strongly recommended the education of the handicapped to enable them to largely overcome their handicap and they become useful citizens.

Some government projects are-

1. Integrated child development scheme (ICDS).
2. Project for Integrated Education Development (PIED).
3. Integrated Education for the Disabled Children (IEDC).
4. District Primary Education Project (DPEP).
5. District Rehabilitation Centre and National Programme for Rehabilitation for Persons with Disability (NPRPD).
6. UN Support to primary education : Community School Programme.
7. Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) (Movement to Educate All).
8. Inclusive Education of the Disabled at Secondary Stage (IEDSS).

Non government organizations working for the children's with physically disabilities in Madhya Pradesh

1. Aksat Health, help & Research Society, for physically challenged childrens Bhopal.
2. Amit smrity for physically challenged childrens Bhopal.
3. Barli development institute for Rural Women for physically challenged women Indore.
4. Meena singh smrity seva samiti for physically challenged childrens Rewa.
5. Sarva jan kalian sansthan for physically challenged childrens sagar
6. The sunfoundation, for physically challenged childrens sagar
7. Dadda ji kalian avam sahyog samiti for physically challenged childrens sagar

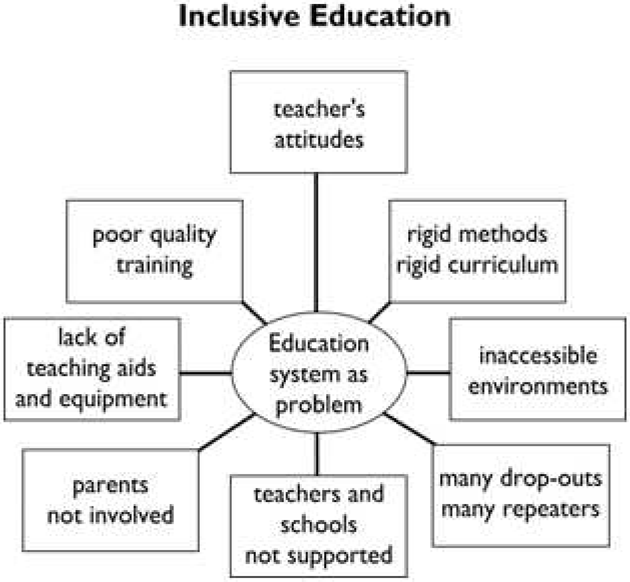

Obstacles and challenges in Inclusive Education - Some of the obstacles related to inclusive education with special reference to teacher preparation are:

1. Lack of Teacher preparation Institution
2. Lack of Competent Teacher Educator
3. Lack of Infrastructure and Resources
4. Lack of Proper Curriculum with special reference to Inclusive education during teacher preparation.
5. Lack of proper strategies to improve practical skill and competency development on the part of student teachers.
6. Lack of time for preparing teachers for inclusion in general classes.
7. Lack of continuous workshop, seminar, projects, and internship for special children education.
8. Lack of adequate pedagogy and strategy to educate children with special need.

Pedagogical Strategies for Special Students - *"Dr. William Glaser Stated with the majority of today's special education student we are not dealing with children who do not learn what we teach or do not like the way we teach it, So we have to improve what we teach and make it usable to students and we have to improve how we teach it."*

Various studies have shown that inclusive education results in improved social development and academic outcomes for all learners. It leads to the development of social skills and batter social interactions because the learners are exposed to a real environment in which they have to interact with other learners each one having unique characteristics, interests and abilities. The non disabled peers adopt positive attitudes and approach towards learners with abilities as a result of studying together in an inclusive classroom. Thus the inclusive education lays the foundation for an inclusive society accepting respecting and celebrating diversity.

This Inclusive approach of including teaching of children with special needs in regular classroom challenges teachers, schools and districts to re examine traditional beliefs and practices to determine which are consistent for every individual.

The teachers use various techniques to help build classroom communities-

1. Use games designed to build community.
2. Involves student in solving problems.
3. Share songs and books that teach community livind.
4. Open discussion to deal with individual difference.
5. Assign classroom jobs that build community.
6. Teach students different ways to help each other.
7. Utilize physical therapy equipments quite often.
8. Can even encourage student to take the role of a teacher and deliver instructions.
9. Fox us on the strength and interest of students with special needs.

Strategies for teaching

1. Team teaching
2. Peer Tutoring
3. Cooperative learning
4. Multisensory Instruction

E-Learning And Inclusive Education - E-learning is a part of the new dynamic that characterizes educational system at the start of the 21st century. In recants decades, the use of information and communication technology (ICT) for educational purposes has increased. The spread of network technologies has caused e-learning practices to evolve significantly.

Challenges The Inclusive Teacher is a professional in education with a strong commitment to his/her community. The Teacher Preparation Programme should include subjects with high social and community content because they need to be sensitive to the needs of students and the environment.

The Inclusive Teacher recognizes individual differences and implements learning strategies for all. The educational intervention is oriented to diversity and promotes learning strategies for all (equality) for quite a few and for only one (equity). These are other essential aspects in the teacher preparation Programmes. Quality, equality and equity concepts should be translated into specific actions of educative interventions.

The collaborative work among educators, facilitates inclusion and needs to be promoted in the Teacher Preparation programme, Inclusion is funded on a collectiveness of teachers, a team sharing knowledge, making decisions, solving problems together and generating actions in order to improve the school and to increase the learning for all.

All pre service teachers should know and develop skills in this way because.

1. The teacher learns when teaching and the students teach when they learn.
2. Everyone assumes tasks of leadership because we assume as protagonists.
3. Outcomes increase when we make synergy and identity is strengthened when we make joint decisions, shaping teams in the resolution of problems, allowing everyone to learn or re-learn social skills.
4. The results begin when we work together because nobody, will do it for us whatever we must to do, let's do!
5. The economic resources are a result of collaborative work and not a condition.
6. Heterogeneity provides a great richness.
7. Collaboration boosts accountability and recognition processes in all communities.

The process to create inclusive Education

1. Building a common vision. Who are we? What do we want to be? What are our goals, expectations and interests?
2. Recognizing our reality. How are we? Why are we like this? We need to analyze our beliefs and precise data information.
3. Decision making. What are our proposals to improve

our present? We need to build and establish agreement about participation.

4. Developing proposals. What are we doing to change the situation? Who? Everyone needs to know all the actions.
5. Evaluating our actions. How and how much have we advanced? Are our agreements functioning? What needs to necessary adjustments.
6. Beginning a new. Which areas do we need to improve? What do we do? New actions for improvement.
7. Mentoring is very important, New teachers must participate with experienced teachers at reviews of situations, decision making arrangements and work plans, among others to provide the following to the new teacher intervention (guidance), facilitation (advice) and cooperation (co responsibility).

Conclusion - Though there lie several obstacles and challenges related to teacher preparation to promote inclusive education it is not impossible to attain success in inclusive education in country through effective teacher preparation strategies. To make inclusion appropriate teacher preparation for inclusive education must be made compulsory in all teacher education programmes irrespective of elementary or secondary level. Further quality resources, faculties and facilities must be supplied to each teacher education institution to make inclusive education programme successful.

References :-

1. Govt. of India.,"Draft of Inclusive Education Scheme", MHRD, 2003.
2. Govt. of India., "Annual Report", MHRD, 2009-10.
3. NCERT., "Position Paper National Focus Group on Educational of Children with Special Needs", New Delhi,2006.
4. Rao, I. (2003)., "Inclusive Education in the Indian Context", NCERT, 16-17 September, New Delhi.
5. SSA., "Education of Children with Special Needs in SSA Delhi, (2006)
6. Tyagi, K.Ed., "Elementary Education", APH Publishing Corporation, New Delhi, (2013).
7. UNESCO., "Policy Guidelines on Inclusion in Education Paris", UNESCO, (2009).
8. UNICEF., "Examples of Inclusive Education India, United UNICEF, (2003).
9. World Bank., "People with Disabilities in India. From Commitment to Outcomes", New Delhi: Human Development.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

मध्यप्रदेश के निमाड़ में पर्यटन उद्योग की समस्याऐं और समाधान

डॉ. सुनील मोरे *

प्रस्तावना – पर्यटन उद्योग का समूचे विश्व में विकसित करने हेतु निरन्तर प्रयास किए जा रहे हैं। शरत में पर्यटन उद्योग में उत्तरोतर विकास हो रहा है। अमरनाथ यात्रा के श्रद्धालु, वैष्णोदेवी दर्शन के लाभार्थी, लद्दाख के सैलानी, तिरुपति बालाजी व शिर्डी के दर्शनार्थियों के साथ–साथ ताजमहल के भी पर्यटकों की संख्या में भारी वृद्धि हो रही हैं। देश में जम्मू कश्मीर, राजस्थान, गोवा, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, केरल व गुजरात राज्यों में अन्य राज्यों की तुलना में अधिक पर्यटक, पर्यटन करते हैं।

मध्यप्रदेश में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए शासन ने **मुख्यमंत्री तीर्थदर्शन योजना** क्रियान्वत की है। इस योजना में वृद्धजनों एवं उनके सहायकों को मुफ्त में धार्मिक स्थलों की यात्रा कराई जा रही हैं। मध्यप्रदेश में पर्यटन स्थलों में खजुराहों के मंदिर, साँची के स्तूप, भेड़ाघाट जलप्रपात, माण्डू के महल, महेश्वर का किला व घाट, महाकाल मंदिर उज्जैन, ओंकारेश्वर मंदिर, बावनगजा (बड़वानी), बाग की गुफाएं, पंचमढ़ी, ग्वालियर का किला, पशुपतिनाथ मंदिर मंदसौर, नर्मदा नदी पर निर्मित बड़े बांध, अभ्यारण्य और उद्यान प्रमुख है। इन पर्यटक स्थलों पर वर्ष भर पर्यटक यात्रा करते हैं।

निमाड़ के चार जिलों बड़वानी, खरगोन, खण्डवा व बुरहानपुर में पर्यटन स्थलों की पर्याप्त उपलब्धता है। यहाँ के प्रसिद्ध पर्यटन स्थलों में ओंकारेश्वर मंदिर, महेश्वर, बावनगजा, ऊँन, नागलवाड़ी, सेंधवा, बुरहानपुर, खण्ड़वा, खरगोन, तोरणमाल और हनुमन्तीया है। इसके अतिरिक्त सैकड़ों छोटे–बड़े पर्यटन स्थल निमाड़ के इन चार जिलों में स्थित है।

निमाड़ में पर्यटन के विकास की प्रमुख समस्याऐं एवं सुझाव – निमाड़ के चार जिलों बड़वानी, खरगोन, खण्ड़वा व बुरहानपुर में पर्यटन के क्षेत्र में निम्न समस्याऐं है। इन समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव भी प्रस्तुत किए गए है–

1. **सरकार की दोषपूर्ण नीति –** मध्यप्रदेश सरकार के द्वारा पर्यटन के विकास हेतु अनेक कदम उठाए गए हैं, लेकिन पर्यटन के क्षेत्र में कई समस्याऐं विद्यमान है। पर्यटन संबंधी प्रमुख समस्याओं को निराकृत करने के लिए आवश्यक बजट उपलब्ध नहीं है। पर्यटन के विकास के लिए पर्यटन निगम (विभाग) में प्रशिक्षित कर्मचारी एवं अधिकारियों की कमी है। सरकार के द्वारा गत वर्षो में पर्यटन विकास के लिए पर्यटन बजट का प्रावधान भी नहीं रखा है। मध्यप्रदेश की तुलना में पड़ोसी राज्य राजस्थान व गुजरात राज्यों में सरकारों के द्वारा पर्यटन क्षेत्र में अनेक कदम उठाए है, और इस कारण वहाँ पर्यटन का विकास हुआ है। पर्यटन विकास की सुदृढ़ नीति नहीं तैयार की गई हैं। सरकार की उपेक्षापूर्ण नीति के कारण निमाड़ के कई प्रसिद्ध व ऐतिहासिक धरोहर खण्डहर के रुप में बदलती जा रही हैं।

सुझाव – मध्यप्रदेश सरकार के द्वारा निमाड़ में पर्यटन के विकास के लिए पर्यटन नीति में विशेष प्रावधान कर बजट आवंटित करना चाहिए। पर्यटन संवर्धन नीति पांच वर्षो के लिए बनाई जानी चाहिए। इस नीति की प्रतिवर्ष समीक्षा भी की जानी चाहिए। पर्यटन विभाग में रिक्त पदों पर भर्ती कर पर्यटन विभाग की कार्यप्रणाली में सुधार किया जा सकता है।

2. **पर्यटन के क्षेत्र में संरचनात्मक विकास का अभाव –** निमाड़ के लगभग सभी पर्यटन स्थलों पर संरचनात्मक विकास का अभाव है। कई पर्यटन स्थलों का गंतव्य मार्ग तो लगभग अच्छी स्थिति में है लेकिन मार्ग की कुछ दूरी पर सड़के अत्यधिक खराब है। पर्यटन स्थलों पर बिजली, पानी व आवास जैसी मूलभूत सुविधाऐं उपलब्ध नहीं है। मार्ग में दूरी व आवागमन के संकेतांक (सूचना बोर्ड) नहीं लगे हैं। पर्यटकों के लिए स्नानघर व महिला पर्यटकों के लिए घाटों पर वस्त्रादि बदलने के लिए लघु कक्ष नहीं है।

सुझाव – निमाड़ में पर्यटन स्थलों का प्रशासनिक स्तर पर सर्वेक्षण कर सड़कों की मरम्मत एवं नवीकरण किया जाना चाहिए। यद्यपि गत दशक में जिले की सड़कों का तेजी से विकास एवं विस्तार हुआ है, लेकिन मार्ग में कुछ किलोमीटर की दूरी की सड़के अत्यधिक खराब है। यातायात विभाग द्वारा सक्रियता से पर्यटन स्थलों पर संकेतांक लगाए जाने चाहिए। साथ ही महिला पर्यटकों के लिए घाटों एवं झरनों पर स्नान हेतु वस्त्र आदि बदलने के लिए शीघ्र लघु कक्ष तैयार किए जाने चाहिए। पर्यटन स्थलों पर शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराने हेतु सरकार एवं क्षेत्रीय जनभागीदारी से प्रयास किए जा सकते हैं। पर्यटन स्थलों पर सतत् विद्युत आपूर्ति हेतु सोलर ऊर्जा उपकरण लगाए जाए। पर्यटकों के रात्रि विश्राम हेतु निजी क्षेत्र की वित्तीय सहायता व सुविधा उपलब्ध कर प्रोत्साहन दिया जा सकता है और पर्यटन स्थलों पर होटल व्यवसाय विकसित हो सकता है।

3. **पर्यटन स्थलों पर प्रदूषण की समस्या –** निमाड़ के लगभग सभी पर्यटन स्थलों पर गंदगी पसरी हुई हैं। यहाँ के पर्यटन स्थलों में प्लास्टिक कचरा व मल–मूत्रों निष्पादन स्थलों में गंदगी फैली हुई हैं। पर्यटन स्थलों पर स्वच्छ पेयजल व स्नान जल उपलब्ध नहीं है। गर्मी के दिनों में पर्यटन स्थलों के मार्ग धुल से भरे होते हैं। पर्यटकों के लिए दूर–दूर तक मार्ग में विश्राम स्थल या छायादार वृक्षों का अभाव है। तेज धूप व निमाड़ की भीषण गर्मी से पर्यटक प्रभावित होते हैं।

नर्मदा व इसकी सहायक नदियों के घाट पर पर्यटकों के द्वारा स्नान के पश्चात् साबुन इत्यादि से कपड़े धोकर व मलमूत्र का त्याग कर घाटों पर गंदगी फैलाई जाती हैं। पर्यटक अपने साथ खाने पीने की सामग्री लेकर पर्यटन स्थल पर आते हैं और शेष बची झूठन को वहीं आस–पास ही फेक देते हैं। यद्यपि मध्यप्रदेश सरकार ने प्लास्टिक की थैलियों पर प्रतिबंध लगा दिया है, लेकिन पर्यटन स्थलों पर प्लास्टिक कचरे की भरमार है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, अंजड़, जिला–बड़वानी (म.प्र.) भारत

धार्मिक कर्मकाण्ड, पूजा-पाठ के नाम पर भी निमाड़ में पूजन सामग्री की नदियों में प्रवाहित करने की परम्परा है। इस कारण भी यहाँ की सभी नदियाँ प्रदूषित हो रही हैं। इन नदियों के तट पर बसे नगरों का गंदा पानी इनमें मिल रहा है। इससे भी नदियों का जल प्रदूषित हो रहा है।

सुझाव - पर्यटन स्थलों पर पर्यावरण को प्रदूषित करने वाले पर्यटकों पर जुर्माना वसूला जाना चाहिए। इस हेतु सतत् निगरानी के लिए सभी पर्यटन स्थलों पर सी. सी. टी. वी. कैमरे लगाए जाने चाहिए। नदियों के तट पर बसे नगरों में स्थानीय प्रशासन के द्वारा मल-मूत्र व गंदे पानी का उचित प्रबंधन किया जाना चाहिए। पर्यटन स्थलों के लगभग 20 किमी की दूरी में मार्ग के दोनों ओर छायादार वृक्ष लगाए जाने चाहिए।

4. **पुजारियों, पण्ड़ितों एवं संतों द्वारा लूटपाट -** निमाड़ के अधिकांश धार्मिक पर्यटन स्थलों पर पुजारियों, पण्ड़ितों एवं धर्म गुरुओं द्वारा पर्यटको की धार्मिक भावनाओं का अनुचित लाभ लेकर लूटपाट की जा रही हैं। मुख्य रुप से ओंकारेश्वर के प्रसिद्ध मंदिर व बावनगजा के जैन मंदिरों में यह कार्य बड़े पैमाने पर हो रहा है। श्रद्धालू पर्यटक अपनी धार्मिक मान्यताओं में उलझकर इनका शिकार हो जाते हैं।

जैन धर्म का उद्‌भव हिन्दू धर्म के कर्मकाण्ड के प्रतिरोध स्वरुप हुआ था। शोधार्थी ने यह पाया कि बावनगजाजी में सांयकाल की आरती के समय भक्तजनों (पर्यटकों) से आरती कराते हुए उनसे घी दान करने का संकल्प दिया जाता है। ओंकारेश्वर मंदिर में पुजारी विविध प्रकार के पूजा, अनुष्ठान के नाम पर वसूली कर रहे है।

सुझाव - धार्मिक पर्यटन स्थलों पर इस प्रकार की धार्मिक लूट पर कठोर प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए। सभी धार्मिक पर्यटन स्थलों पर बड़े-बड़े सूचना पटल लगाए जाए कि यहाँ किसी भी प्रकार की भेंट या पूजा-पाठ के नाम पर रुपयों व वस्तुओं का लेन-देन प्रतिबन्धित है।

इस कार्य को गैर कानूनी घोषित कर पर्यटकों को आर्थिक क्षति से बचाया जा सकता है।

5. **प्रशिक्षित व ईमानदार गाइड का अभाव -** निमाड़ के पर्यटन स्थलों पर प्रशिक्षित व ईमानदार गाईड की उपलब्धता नही है। निमाड़ के पर्यटन स्थलों में महेश्वर, ओंकारेश्वर व बुरहानपुर में गाईड की सेवाऐं उपलब्ध है, जबकि निमाड़ के ऊन, बावनगजा, सेंधवा, दवाना (खजूरी), नागलवाडी, कसरावद (नावदाटोली), बीजासन तथा अन्य पर्यटन स्थलों पर पर्यटकों को मार्गदर्शन एवं ज्ञानवर्धन हेतु क्षेत्रीय गाइड की सेवाऐं उपलब्ध नहीं है। किसी भी क्षेत्र में पर्यटन के विकास में गाईड की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। गाईड स्थानीय व्यक्ति होना चाहिए। स्थानीय व्यक्ति क्षेत्र विशेष के संबंध में विस्तृत ज्ञान रखता है। गाईड के अभाव में पर्यटकों को संबंधित पर्यटन स्थल की जानकारी नही मिल पाती हैं और उन्हे भरपूर आनन्द नहीं मिलता है।

सुझाव - निमाड़ में पर्यटन स्थलों पर गाईड की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए बड़वानी और खण्ड़वा महाविद्यालय में स्नातक स्तर पर पर्यटन प्रबंधन एवं गाइड के लिए विशेष पाठ्यक्रम स्ववित्त योजनान्तर्गत संचालित किए जाने चाहिए। इस प्रकार की योग्यताधारी विद्यार्थियों को निमाड़ के पर्यटन स्थल पर गाईड की सेवा उपलब्ध करने हेतु अधिकृत किया जाना चाहिए। इससे विद्यार्थियों के लिए नवीन रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे।

6. **निमाड़ के पर्यटन स्थलों पर लगने वाले मेलों के प्रचार-प्रसार का अभाव -** देश में लगने वाले मेलों में निमाड़ अग्रणी स्थान पर है। यहाँ धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, ऐतिहासिक कारणों से विभिन्न स्थलों पर मेलों का आयोजन किया जाता है। इन मेलों का शासकीय स्तर पर पर्यटन प्रचार-प्रसार नहीं किया जाता है। निमाड़ के प्रमुख मेलों में नवग्रह मेला (खरगोन), धुनीवाले दादाजी स्मृति मेला एवं नवचण्ड़ी माता मेला (खण्ड़वा), कसरावद का मेला (कसरावद), बावनगजा मेला व आनन्द मेला (बड़वानी) शिवरात्री मेला देवझिरी (सेंधवा) तथा ओमसाईराम मेला, अंजड़ आदि प्रसिद्ध है।

समुचित प्रचार-प्रसार नहीं होने से मेलों में व्यवसाय कर रहे, व्यसायियों को घाटा होता है। मेलों में लगने वाले मनोरंजन के साधनों जादू-शो, मौत का कुऑ, सर्कस आदि पारंपरिक कलाऐं धीरे-धीरे विलुप्त हो रही हैं। अतः सरकार के द्वारा इन्हें संरक्षित किया जाना चाहिए।

सुझाव - निमाड़ के विभिन्न पर्यटन स्थलों पर लगने वाले मेलों का सरकारी व नीजि स्तर पर प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिए। सूचना-प्रसारण विभाग द्वारा प्रदेश के सभी प्रमुख समाचार पत्रों के मुखपृष्ठ पर विस्तृत विज्ञापन प्रसारित किया चाहिए। इन्टरनेट व टेलीविजन के माध्यम से प्रचार-प्रसार किया जा सकता है। इन मेलों के लिए सोशल मिडिया प्लेटफार्म (फेसबुक, व्हाट्सएप, इन्स्ट्राग्राम) का भी उपयोग किया जा सकता है। निमाड़ क्षेत्र से अन्य नगरों की ओर जाने वाली रेल व यात्री बसों पर प्रचार-प्रसार सामग्री चस्पा की जा सकती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

जनजातीय विकास का भौगोलिक अध्ययन

सन्दीप कुमार सिंह * डॉ. सुमन सिंह **

प्रस्तावना – जनजातीय विकास का ढ़ाचा दुनिया के बहुतों को विकास मार्ग का माध्यम रहा है। मानव विकास की दिशा में तथाकथित मानव विकास की दिशा उसके एक लक्ष्य की ओर ले जाती है। यहीं भ्रान्ति मानव विकास का आधार रहा है। जिनके हितों के सम्बर्न्धन में ऐतिहासिक विकास को योगदान दिया है। जनजातीय समुदाय मानव समाज के अविरल धारा से कटा हुआ है। एक जातीय समुदाय है। जहाँ उनकी स्वयं संस्कृति, भाषा और समाज है। जहाँ तक मानवीय प्रवृत्तियाँ न्याय संगत नहीं होगी। उसका कोई औचित्य नहीं होगा। इनके विकास वा मार्ग ही मानव जीवन की एक दिशा का कार्य करता है। यह समाज अपनी विकास का मार्ग प्रकृति के नजदीक होकर करता है। पानी, भूमि के उयोग को वह परिवर्तित कर उपजाऊ बनाता है। इसके विकास के परिवर्तन को बस्तियों में स्थापित करना भी आवश्यक होता है। इसके सम्बन्ध में माईकिल करनिया ने आबादी हमेशा उनके विरूद्ध कोई भी स्थान परिवर्तित करने का कार्य नहीं करती है। जहाँ तक सम्भव हो वहाँ तक ऐसी व्यवस्थाओं को टालना चाहिए। यदि इनके विकास के मार्ग को विस्थापित करने से इनका जीवन और पीछे चला जाता है। विस्थापना की स्थिति वाले समाज में जीविका को साधनों की पूरा करना भी मानव का दायित्व हैं। इन दायित्वों में बधा यह जनजातीय समुदाय विकास के मार्ग में बाधक नहीं बल्कि साधक बनना चाहिए।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र के विषय **जनजातीय विकास का भौगोलिक अध्ययन** प्राथमिक एवं द्वितीय स्त्रोतों के माध्यम से जानकारी संकलित कर अध्ययन किया गया है। इसके विश्लेषणात्मक अध्ययन हेतु विद्धानों का मार्गदर्शन भी लिया गया है। इसके साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं के द्वारा भी अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य – जनजातीय विकास बहुत बड़ा कार्य है। जिसे व्यक्ति और सरकार की पहल का परिणाम माना जाता है। यहाँ तक दोनों की विचारधाराओं पर निर्भर होते हैं। किसी भी व्यवस्था के विकास को अन्जान दिया जा सकता है।

जनजातीय समुदाय की विचारधारा को हमेशा से दबाने की कोशिश की गई है। यही उनके विकास का अवरोधक मार्ग रहा है। किसके नाम पर इन्हें सदियों से विस्थापित किया जाता रहा है। इनमें से अधिकत्तर ग्रामीणों को ही विकास के नाम पर विस्थापित किया गया है क्योंकि मानव समाज का एक विचारशीलता के माध्यम होने के बावजूद भी इन्हें वह सुविधाएँ प्राप्त नहीं होती है। जनजातीय समुदाय को विस्थापित करने का वास्तविक साधन माना गया है। जहाँ से मानवीय विकास का प्रारम्भ चालू होता है। सीमांत सदियों के रूप में मानवीय विकास का साधन भी यहाँ की मानवीय संचालन की व्यवस्था रही है। प्राकृतिक संसाधनों के माध्यम से आश्रित थें। उन्हीं के प्रति होने वाली विचारधारा के परिवर्तन के परिणाम होने के संसाधनों के विचारधाराओं के परिवर्तन के परिणाम होने के संसाधनों की विचारधाराओं का माध्यम भी उन्हीं पर जीवन की अनेक घटनाओं को देखने का प्रयास करते हैं।

1. जब हम विस्थापन की बात करते हैं। उनके पारम्परिक पहलूओं को विशेष ध्यान रखते हैं
2. वे मानवीय जीवन के आधार स्वरूप रहे हैं। जहाँ मानव विकास के लिए माकान, भूमि, खेती और आय की प्राप्ति सम्पत्ति को दूबारा सरकार को देना पड़ता है।
3. जनजातीय समुदाय में शैक्षिक रूप से यह बहुत ही कमजोर है। जिनमें से उन्हें शिक्षा के क्षेत्र में आज भी कोशो दूर है।
4. जनजातीय विकास के दौर में सबसे महत्वपूर्ण साधन उनके जीविकोपार्जन हेतु लघु एवं कुटीर उद्योगों की प्राप्त सामाग्री को प्रादान करने से उनका जीवन उन्नति की ओर बढ़ सकता है।
5. जनजातीय विकास के माध्यम से उन्हें सामाजिक न्याय, समुचित रूप से मिलने चाहिए।
6. उन्हें मानवीय विकास के पर्याप्त अवसर सरकार को प्रदान करना चाहिए।

समस्याएँ – जनजातीय विकास की निम्न समस्याऐं है-

1. यदि उन्हें प्रातिस्थापित किया जाता है। उन्हें माकान, भूमि और बसाहट हेतु उन्हें पर्याप्त साधनों की समस्या प्रारम्भिक होती है। इससे इनके विकास का मार्ग अवरूद्ध होता है। क्योंकि उस तरह की उपजाऊ भूमि नहीं मिल पाती है। उन्हें अपनी परिसम्पत्तियों को छोड़ना पड़ता है।
2. वे लोग हैं जिनमें उत्पादित सम्पत्तियों को भी खोना पड़ता है। जिससे दूसरा उन्हें अपने जीवन के विकास के अवसर पर दूबारा वहीं वस्तुओं को निर्मित करना पड़ता है।
3. इनमें सबसे ज्यादा तकलीफ देही ग्रामीण जनजातीय परिवार को उठानी पड़ती है। क्योंकि ग्रामीण वन भूमि में वसे जनजातीय लोगों को उस प्रकृति के आनन्द से भी वंचित कर दिया जाता है।
4. वहीं लोग इस वन भूमि को छोड़कर चले जाते है। जिसका लाभ पूँजीपति या सरकार उठाती है। इससे लोगों में मानवीय संवेदना का अस्तित्व ही खत्म हो जाता है।
5. जनजातीय समुदाय का वह दस्तकारी आधार को जानने की

* शोधार्थी (भूगोल) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** सेवानिवृत्त प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

आवश्यकता है। क्योंकि उनकी उत्पति सम्पत्ति की वस्तुओं और उन्हें कार्य दक्षताओं को भी छोड़ना पड़ता है। जिससे ग्रामीण जीवन की अनेक उपजाऊ वसाहट की भूमि से हाथ धोना पड़ता है। इन्हीं कार्यो के आधार पर जनजातीय समुदाय का कार्य हुआ करता है। इन्हीं विशेषताओं के परिणाम स्वरूप जीवन की भावी सम्भावनाओं को नष्ट करना पड़ता था।

6. जनजातीय समुदाय जिसका जीवन यापन जंगलों के चलता रहा है। उन वस्तुओं की उपयोगिता को केन्द्रबिन्दु में रखकर। अपना जीवन यापन करते थें। उन्हें सरकार कैसे सम्पन्न बनायेगी। यह विचार मानव समाज को विश्व और विचार के आधार पर उनका विकास करने से उनकी समस्या का समाधान हो सकता है।
7. जनजातीय समुदाय अपने अपने कार्य को छोड़ कर अपना दिहाड़ी की मजदूरी के लिए बाध्य हो रहे हैं। उन्हें उन ज्ञान वर्धक वस्तुओं का लाभ नहीं मिल पा रहा है। इससे सामाजिक व्यवस्था चरमरा रही हैं।

वह प्रतिस्थापन की व्यवस्था जनजातीय समुदाय के मूल्य कार्यो के व्यपार आदि स्त्रोतों से वंचित कर देती है। यही मानव जीवन का व्यक्तिगत आधार रहा है।

समाधान – जनजातीय समुदाय के विकास का माध्यम कुछ स्त्रोंतों के माध्यम से किया जा सकता है। यहीं उनके जीवन में आधिकार और सामंजस्यता को आधार प्रदान कर सकता है। यही मानवीय जीवन के साधनों का मूल आधार होगा।

आर्थिक उन्नति के प्रयाय – जनजातीय समुदाय का जीवन अधिक सरल और सादा है। क्योंकि उनके पास कोई आर्थिक साधन नहीं है। उन्हें सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था को मजबूत कर पाये। जनजातीय समुदाय अपनी आर्थिक उन्नति को वन से प्राप्त जड़ीबूटियों को आर्थिक स्त्रोत को माध्यम मानता है। यही कारण रहा है कि सामाजिक व्यवस्था आज वन मुक्त आदिवासी समाज के कारण आर्थिक संकट आ गया है। वास्तव में उन्हें जिन जड़ी बूटियों को ज्ञान है। उनके आधार पर आज उद्योगपति अरब पति है। उनके परम्परिक ज्ञान का स्त्रोत का शोषण सरकार और उद्योगपतियों ने किया है।

सामाजिक व्यवस्था का आधार – सामाजिक व्यवस्था का आधार ही उनके विकास का माध्यम है। इन्हीं अर्थो में उनको परिवर्तित करना औचित्यपूर्ण नहीं हो सकता है। परिवार और समाज के समूह को एक पारिवारिक माहौल में ढ़ाल कर जीवन की विशेषताओं का परिणाम ही मानवीय आधार रहा है। इस प्रकार से सामाजिक विचार का आधार पर ही समस्याओं का परिणाम ही मानव का आधार है। इस परिवर्तन की दिशाओं को कैसे परिवर्तित किया जाये जिससे सामाजिक व्यवस्था कायम रहें है। इनकी शिक्षा और अर्थ के माध्यम से सामाजिक व्यवस्था को सधारा जा सकता है। अपने परिवारिक जीवन को सहजता के साथ निभाते हैं।

राजनैतिक परिदृश्य – आज भी जनजातीय समुदायों में राजनैतिक हिस्सेदारी नहीं प्राप्त हो रही है। जिसका मूल कारण उनकी मनोवृत्तियों के माध्यम से सामाजिक व्यवस्था का आधार ही उन विकासात्मक आधार वास्तव में संविधान है। उन्हें इन संवैधानिक प्रावधान के बावजूद आज पूँजीपति उनके आधिकारों को छीन लेता है। राजनीतिक अवसर पर पहुँचने के लिए सामाजिक व्यवस्था को आधार बनाया गया है।

भौगोलिक वातावरणा – जनजातीय समुदाय का निवास स्थल पर्वत और वन क्षेत्र में रहा है। इन्हें जीवन के अनेक समस्याओं का हल वन से प्राप्त होने वाली औषधियों से हो जाती थी। उन्हीं प्रतिस्थापित होने के कारण उनका जीवन उदासीनता की दृष्टि से उनकी सारी व्यवस्था का अस्तित्व ही खत्म हो गया है। भौगोलिक वातावरण मानव जीवन का सबसे बड़ा आधार है। इन्हीं भौगोलिक वातारण में मानव अस्तित्व का सम्बन्ध भी दिखाई देता है। अन्य स्थानों पर यह संसाधन उपलब्ध नही है। इस दृष्टि से भी संसाधन एक गत्यात्मक रूप रखते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **नादीम हसनैन,** जनजातीय भारत, 2002 जवाहर पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली।
2. **कामेश्वर नाथ सिंह,** ग्रामीण विकास पर सिंचाई का प्रभाव–बैरैबोझ गाँव का प्रतीक अध्ययन, उत्तार भारत भूगोल पत्रिका, 1985, गोरखरपुर,
3. **जगदीश सिंह,** वातावरण नियोजन एवं संविकास, ज्ञानोदय प्रकाशन, 1988, गोरखपुर,
4. **मालती सारस्वत व एस. एल– गौतम,** भारतीय शिक्षा का विकास एवं सामायिक समस्यायें, आलोक प्रकाशन, 2006, लखनऊ
5. **प्रमोद सिंह, एवं अमिताभ तिवारी,** ग्रामीण विकास संकल्पना, उपागम एवं मूल्यांकन, पर्यावरण विज्ञान अध्ययन केन्द्र, 1989, इलाहाबाद।
6. **हीराला,** जनसंख्या भूगोल, राधा पब्लिकेशन, 2000, नई दिल्ली।
7. **सैय्यर कामिल हुसैन,** जनजातीय विकास के कुछ पहलू, मानव,1983,
8. **आर.एस.त्रिपाठी,** आदिवासी क्षेत्रों के विकास की रणनीति : मध्यप्रदेश के विशेष संदर्भ में, मानव, 1986

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Planning and Control System in Banks in India : Some Aspects

Dr. Sushma Maheshwari*

Abstract - The control system is a “closed-loop system” which ties planning, control and reporting into one process, each providing a smooth flow of trended information to gain the most beneficial usage of all resources. Banking and financial sector controlling is a dynamically growing area of the controlling methods used in organization. The difference between bank controlling and standard controlling methodology is defined by the specific task, banking transactions (i.e. credit control, cash control, control of fees based services, control of efficiency of operation in banks). This integration can only be achieved by linking planning, plan fact analysis and information service functions together.

Introduction - Control is the back end of management process. Control has very broad application both in the personal as well as industrial world. It is there to ensure that events turnout the way that are intended to, It is a powerful force if applied properly. It is most important both in organized living and “living” organization. Its usefulness is depending upon our skill to controlling it. It is concerned with securing good individual performance and organizational performance. It is a never-ending activity. It has characteristics of unity, continuity, flexibility and pervasiveness.

It is mechanism installed to guide, manage, direct or regulate the activities or operation or behavior of an appartus, machine, person or system. In management chain it is a unique and important managerial function because it helps to check the errors and to take the corrective action so that deviations from standards are minimized and started goals of the organization are achieved in desired manner. According to modern concepts, control is foreseeing action whereas earlier concept of control was used only when errors were detected. In the context of machine, man and an organization of men and machines, control has four elements:-

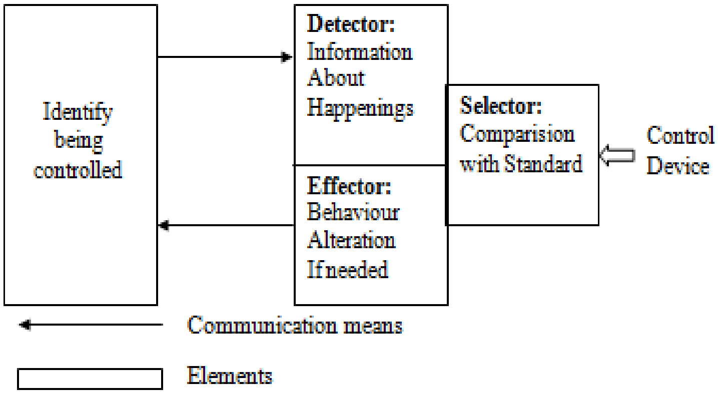

Fig :— Elements of a Control System

(A) Detector or sensor:-A measuring device which detects the actual state of variable under control, called detector.

(B) Selector or Assessor:-An accessing device which usually by comparing, show the difference or gap between the actual state and the desired state of variable under control, called selector.

(C) Effector or Feedback:-An altering or correcting device which carries out the necessary alteration or correction in the actual state of variable to achieve the desired state, called effector.

(D) Communication network or Means for communicating information:- Beside above three elements the control system includes the means for communicating information such as directives, guidelines, feedback, etc. among these elements.

Organizational Control- It should not, however be difficult to appreciate that the control process in an organization is much more complicated than the control process in simple situation, such as thermostat control of a furnace or control of body temperature in most mammas or control of an automobile by its driver. In an organization, control involves a variety of functions such as:-

a. Planning: What the organization should do;
b. Coordinating: The activities of several parts of the organization:
c. Generating: Performance Evaluation;
d. Evaluating: Information and deciding what action, if any, should be taken;
e. Influencing: People to change their behavior;
f. Processing and communicating: Information that is used in the other functions.

Anthony and Dearden(1977) state that there are many types of control functions in an organization, and they types differs in important ways. Also there are several types of

*Asst. Prof., Department of Accounting,Shri Mahalaxmi Girls College, J.N.V.U., Jodhpur (Raj.) INDIA

planning some of which are closely related to control and others are not so closely related. These planning and control activities could be classified into three categories viz. strategic planning, management control and operational control. Based on their assertion, that planning and control are "two sides of the same coin".

Lorange, Morton and Ghosal (1986) define the spectrum of organization planning and control as a three-tier construction comprising strategic planning and control, tactical planning and control and operational planning and control as depicted in following exhibit:

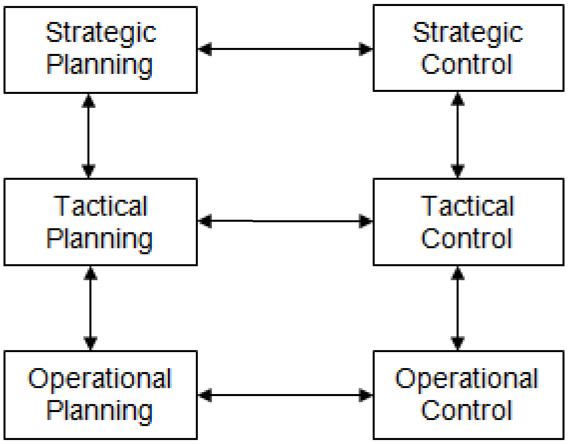

Fig: Planning and Control Spectrum
(Source: Lorange, Scott and Ghoshal- Strategic Management 1986)

In a way the three tiers of organizational planning and control depicted in above exhibit correspond to three levels of management popularly known as top management, Middle management and labour management in the context of a private sector organization. It is pertinent to note that in the case of public enterprises the spectrum of management decisions must go beyond the traditional enterprise control and incorporate one more managerial hierarchy, namely, government decision makers

Strategic Control - Strategic planning has been defined as the process of identifying the goals of organization and formulating broad strategies to attain these goals. Strategic planning is thus a process concerned with the formulation of long range strategic, policy type plans that determine (and might change) the character or director of the organization. Obviously, it means evolving the physical, financial, and organizational framework within which operations are carried on.

Lorange et. Al.(1986) defined strategic planning and control as the processes by which managers ensure firm's (long-term adaptation) to its environment and deal primarily with setting basic strategic directions within the environmental contexts. Strategic control, specifically, has been defined as the process by which management verifies and evaluates the correctness of the underlying assumptions of its strategic plan.

Operational Control - Operational control is a category of control which operates in organization. In simple words operational control ensures that the specific operations or tasks are carried out efficiently and effectively.

Credit Planning and Control System in Banks - Credit planning implies the estimating of available resources in a given period and their allocation among different sectors in conformity with national policy, goals and targets. At the level of an individual bank, the credit allocation is influenced by the overall Monetary policy pursued by the RBI, including credit restraint directions issued by it from time to time for controlling credit expansion and its channeli-zation into desired sectors. The allocation of bank credit is normal accordance with certain sectoral and regional pro ties.

After providing for statutory obligations like CRR and SLR, and also making provision for financing of public sector food stocks the remaining funds are allocated to industry, trade and other sectors. Moreover the credit policy, adopted by the R.B. from time to time may change the direction and overall thrust in the economy and every bank is supposed to follow it.

To make the credit plan exercise successful in achieving the above stated objectives, each divisional regional manager formulates a detailed credit plan for his division/ region. The procedure involves the following steps:-

(i) The regional manager has to determine the likely total increase in resources. For this purpose, he estimates (a) the incremental deposits, branch wise, for the plan period and (b) the expected increases in the refinances and rediscounts from various refinancing institutions. The aggregate of both these items constitutes the incremental resources for the plan period.

(ii) Updating the regional profiles for (a) assessing the scope for agricultural, small. scale industry, and priority sector advances for commitment under national policies; (b) quantifying the anticipatory recovery or return flows are determined after consulting the concerned borrowers, (c) finding out the scope for increasing exports, (d) preparing detailed lists of potential demand and anticipated return flows from the above assessments; (e) exploring the scope for getting new connections and assessing their requirements (f) calculating the details of refinance entitlements from the foregoing, and (g) fixing targets for the recovery of funds and including them as a source of funds.

(iii) Allocating the aggregate lendable resources to vari-ous sectors branch-wise in a district and district wise in a region /zone. These allocations are then submit-ted to the planning department at the head office along with the potential demand and seasonalities.

(iv) The head office planning division approves the divisional/ regional plans in consultation with different credit department at the head office, keeping in view the overall targets for the bank as a whole. The finalized and approved regional plans are then communicated to the divisional/ regional managers, who in turn pass on this information to the respective branch managers

operating in their jurisdiction.

(v) Monitoring the actual credit deployment. For this, each region evaluates its incremental deposits, advances and sectoral flow and undertakes imme-diate corrective measures. If the increase in the resources has been lower than envisaged, the release of credit may have to be correspondingly pruned. Similarly, if the availing of refinancing has • at kept pace with the expectations, efforts have to be made to make full use of this facility.

Planning and Control of Cash in Banks - An efficient utilization of cash is a precondition for the successful survival of a bank. A bank receives money from customers on various deposit accounts, and pays cash to depositors and borrowers ad also to those who have transferred their funds by way of mail or by way of telegraphic communication. There would have been little or no need for cash in the vaults if the cash inflow and outflow had been properly synchronized. However, in a banking concern where the quantum and character of cash flows is essentially conditioned by a myriad of external factors and the banker has little say in governing the cash position, a synchronization of cash inflows and outflows cannot be effectively done. A banker does not know when money will be deposited, nor is he informed of this, except in the case of fixed deposits, in case of the requirements of individual customers. Hence there is an element of uncertainty. It is, therefore, necessary for a bank to carry a reasonable amount of cash at all times so that it may promptly satisfy the class of the customers. If it fails to do so, it will lose public confidence, which may subsequently become the root cause of bank liquidation. However, if the bank keeps excess cash, there is a loss of opportunity earnings which it would have obtained by investing mainly in alternative uses. In actual practice, bankers have been found to keep excess cash to avoid the risk of running out o fit because of the uncertain behaviour of the customers. On the basis of their past experience, they decide the proportion of deposit liabilities to be held in cash without examining whether such a cash level is really the optimal level. They do not realize that by holding more than necessary cash for the safety and liquidity of the bank, they are cutting into the margin of the bank's profitability. The basic issues involved in cash management in a bank, therefore, are:

1. The management has to keep the cash balance at the lowest possible level in order to avoid the loss of opportunity income;
2. At the same time, a low cash level will mean a greater risk of running out of cash and a higher cost of replenishment; when the advantages of the former increase, the risk on account of the latter decreases and vice versa.

Prudence in the management of cash lies in striking a satisfactory balance between the two factors. A banker has to determine the minimum cash level which is just sufficient to meet the needs of day-to-day transactions.

In the planning and management of cash, the bank management should involve branch managers who are in a better position to determine the optimum level of cash than anybody making a decision for them from a far-off place. Branch managers are well acquainted with the specific problems arising out of the banking habits of their clients. The district level managers should be asked to transmit periodically information relating to cash receipts, cash payments and similar other information branch-wise to the head office. The district level managers compile the daily information received from different branches of the district and prepare a consolidated weekly statement for transmission to the head office for necessary action. The head office would analyze the date and determine the optimal cash levels for cash branch monthly or yearly in the following manner:

1. Cash receipts used for making every day payments would be subtracted from the cash payments to determine the amount of excess cash payments;
2. The resulting figure would optimum level of cash in a branch.
3. The amount of maturing fixed deposits and prominent cash payments known in advances should be added to the excess cash payments.

The cash balance with branch office is not only the idle resource of a branch. Some of the branch offices have current accounts with other banks. These balances are held primarily to replenish the cash balances in case of shortage. Besides, the branch concerned may be responsible for the clearance of cheques in that particular town and the deposits in the current account are, therefore, used to meet the cash requirements in case of an adverse clearing.

Control of Fee Based Services in Banks - The bank branches sell fee- based services in addition to those of deposits and advances (fund based activities). These fee-based services include,

(i) Remittances through drafts, Mail transfers (METS) and Telegraphic transfers,
(ii) Rupee travelers' cheque (RTCs)
(iii) Demand Draft purchase (DDP)
(iv) Outward collections
(v) Business done on behalf of other branches like letters of credit, Bills amount, Mutual funds etc.

These fee- based operations of bank-branches are described as under:–

(i) Remittances –Drafts, Mail transfers (MTS) and telegraphic transfers (TTS) constitute remittance business in the banks under study. Since high level of this business means float funds for the banks, which can be used for credit deployment and income generation, besides, of course, improving their C.D. Ratio, but branches of the banks under study do not have any motivation to improve this business as no credit is given to them for raising the business of this activity. Thus, if a part of the income accruing to the bank due to deployment of float funds is passed on to the branches, the branches would be motivated to contribute more to the overall goal congruence

of the bank as a whole. This can be done by working out statistically the average time during which a draft normally floats-i.e., the average time elapsed between issuance of a draft and its payment, suppose it is 2 days. Let us also presume that bank fetches a rate of return of 9% on deployment of the floated funds. Now branches can calculate, in their general ledger Drafts Account, interest for 2days 0 9% on the daily credit entry (not the balance there in). This income accumulated for the bank as a whole, as is the current practice in the banks understudy, for the whole month, may be added to branch net result as an incentive.

(ii) Rupee travelers' cheques (RTC) issued – Similar treatment as mentioned in the case of remittances above, may be given to RTC account in general ledger, and income generated there from be added to concerned branch net result.

(iii) DD Purchase – If DDP instruments are not paid expe-ditiously at drawee branch- which is mainly due to delay in dispatch at originating branch- then the bank loses on the logic of being out- of funds for the intervening time. Hence, it may be stipulated that a given percentage of the aggregate amount, outstanding in DDP books (i,e, those where acknowledgements are not received and marked of), for more than 15 days, will be deducted from net result of the branch as a disincentive.

(iv) Outward collections – Collections not realized expeditiously mean not only income outgo by way of interest payment, but also poor customer service. This is the state of affairs in both the banks understudy. It may, therefore, be stipulated that cheques/drafts sent on collection (SCS) but not realized within a given time, say 3 weeks will be isolated and a given percentage of the.aggregate value of such SCS will be deducted from the net result of the branch as a disin-centive.

(v) Collection by small branches – In the banks under study it has been found, that many large corporations have their main account in a big branch, and collection accounts spread over many small branches. These small branches have to handle large number of debit and credit transactions in collection accounts, and then at the end of the day, they are required to transfer the balance amount of main account by TT at par. Obviously, these small branches do not get a share in the income generated for the big branch which maintains the main corporate account. Treating the final balance trans-ferred by TT as implied branch deposit (only for purposes of calculating interest). Some interest income should be transferred by the big branch to small branches, at least at the prescribed central office transfer price rate for current account.

(vi) Letter of credit (LC) Business –In the banks understudy, many branches, which are not authorized to handle forex business, get accounts opened on behalf of their clients through forex-active branches. These forex branches should share 50% of LC's commission income with non--forex branches on the premise that business had originated at non-forex branches in such cases.

(vii) Bills Business –In the banks understudy, when bills purchased are sent on collection, then drawer branch is entitled only to its out of pocket expenses (i,e postal charges) where as substantial labour cost is involved in handling these bills. The originating branch should share some % of the income generated from this business with the drawer branch to compensate the latter for the work handled on its behalf. The % should be determined by the central office as a part of the policy of the transfer price mechanism. In addition to these operations, the routine activities of the branch include updating pass books, issuing cheque books, making statement of accounts, opening of new accounts and so on. To exercise control on all aforementioned operations, it is desirable that a standard may be fixed for each operation in terms of time required for each operation. Once time standard is set for providing each service, the customer satisfac-tion could be ensured. This will lead to better time management for the branches' business operations and help in ensuring improved profitability and better productivity. To facilitate the standard setting at the individual bank level, the Indian Banks Association (IBA) has recommended a time catalogue for performing different bank functions/operations. These norms were set only after conducting a feasibility study in varied branch settings and in all modules. These norms are given in table **(See in last page)** :-

"When these norms were prescribed, it was believed that the banks would compulsory follow them, as the estimates committee of parliament 1988 strongly recommended for the display of time norms in all branches which is a sufficient proof to highlight the importance of time management in banking operations". (Chockalingan 1993).

Control of Efficiency of Operations in Banks - Branches can contribute to total bank profits by operating efficiently that is, by reducing their expenses and increasing their incomes. In other words, the branch managers have to control the .costs and work for propelling the revenues to achieve the desired level of profits. Thus to improve profitability the spread i,e, interest income (interest received-interest paid) has to be increased and the burden Le, non-interest expenditure (Non-interest expanses-Non-interest income) has to be checked. The management of spread and burden may be done the light of factors as depicted in the figure **(See in last page)** :-

An inspection of the above figure indicates that the spread is dependent on interest earned on advances and interest paid on deposits. The interest earned in turn depends upon (a) the total earnings assets, (b) composition of earnings assist, and (c) yield in each type of assets, which subsequently are influenced by Government and RBI policies, competition and cooperation among banks and quality of assets management decisions. Similarly interest paid on deposits depends upon (a) total interest payment liabilities (b) composition of interest paying liabilities, and

(c) interest rates on each components which subsequently are influenced by Government and R.B.I. policies, competition and corporation among Banks and quality of liability management decision.

Spread management - Since the interest payable on deposits and interest receivable on advances are not fully de-regulated (as only in a limited way the banks can fix up the interest rates within prescribed limits), the following strategy can be adopted to improve the spread.

A. Changing the mix of Branch Advance Portfolio.

(i) By going in for high yielding advances to the extent possible, our efforts should be directed to book more and more accounts following under C and I and SSI units, as interest on advances on accounts following under these two categories is remunerative.

(ii) By keeping the advance to priority sector just above the minimum limits fixed by the government.

B. Ensuring Quality of Loan Portfolio

(i) Using the principles and techniques of efficient credit management.

(ii) Managing the sticky accounts and NPA is the way as discussed in the first section of this chapter.

C. Changing the Mix of Branch Deposits

(i) Efforts should be made to attract more and more low cost deposits, viz, current Account and sav-ings Bank Deposits.

(ii) By booking more and more corporate deposits or big business men who generally prefer to keep funds in current accounts.

D. Interest

(i) Since the deregulation of interest has been started in a small way, it is expected that over the years banks would be free to fix up their interest rates, In this way, "the customers would become much more rate conscious and the bank liabilities would become more interest elastic, so that small rate changes can produce large fluctuations -in outstanding balances. In this way banks will have to monitor the composition and the cost of their funding sources as changes in composition alter borrowing costs and may reduce available liquidity. Changes in financing costs require corresponding changes in asset yields to maintain profit margins" (Koch 1988). With further deregulation, both the frequency and magnitude of these changes will be increased significantly. Thus, there is a dire need to compute the costs of bank funds to use them for taking various products and pricing decisions.

In addition to the above, the income leakages in a branch can be plugged through the following measures.

(i) Accounts calculation of products and interest,

(ii) Application of the interest on the due date, delay results in loss of compounding effects.

(iii) Claiming refinance with out any delay

(iv) Correct calculation of periodical payment of interest of TDR.

(v) Round of the product to nearest ten, instead of completed ten and no payment of interest below rupee one.

A further analysis of the above table exhibits that burden is, dependent on non-interest income and non-interest expanses like manpower expenses and other operating expenses. The Non-interest income is intern, based upon the (a) range and volume of services and (b) service charges. Which subsequently are influenced by competition among banks, Discretionary powers to managers and cost of services? Similarly the Manpower expanses depend upon (a) Number, seniority and mix of employees; and (b) salary structure which subsequently is influenced by Recruitment, promotion and placement policies and wage agreements and policies. On the same analog, other expenses depend upon (a) Nature and volume of business; and (b) Systems and procedures, which subsequently are influenced by the quality of expenditure decisions and Budgeting and cost control practices. Thus from the above discussion it follows that to reduce the burden there should be proper management of burden.

Burden Management - The major share of non-interest expenditure is accounted for by the payment of salaries, allowances perquisites popularly known as establishment expenses. The other significant factor is overhead expenditure which is further divided into two categories- (i) costs which can be controlled like stationary, printing, electricity charges, postage, telephones, traveling and halting allowances, etc. and (ii) costs which cannot be controlled like rent, taxes, insurances etc.

The first group of expenses can be controlled by prudent decisions, careful planning and conscious efforts at each level, as these decisions have direct bearing on branch profits. The other group consists of committed costs; that is, they reflect decisions taken in prior periods and can not be currently varied by the management discretion, at least not in the short run.

Another aspect of Burden Management is the Non-interest incomes. The income is derived from the fee-based activities like letters of credits, Bank guarantees. Deferred payment guarantees, Foreign exchange, Bills Remittances etc., this is vital for the profitability of the branch. Therefore due care should be taken for their control so that the burden of the branch is reduced.

From the above spread and Burden analysis are reaches to a conclusion that to offer various products / services in the branch there should be proper pricing of these services and the proper pricing depends upon the current cost computations of these products services. This suggests that cost computation is the basic factor as the profitability of a branch depends upon its costs (interest and non-interest) and revenues (interest and non-interest). Thus whether the prices charged from different products/ services offered by the branch and whether the costs incurred by the branch in offering these products/ services are reasonable poses a big question mark. This necessitates that in every bank there should be a well developed costing system which may help the banks to

control their costs by fixing certain costing parameters visa-viz to different activities. "Suppose the cost could be computed per voucher, per Rs 100, per account etc." (Ghosh 1979). The other parameters of cost as mentioned in costing Manual issued by RBI (1987) include computation of ratios like interest to working funds, expenditure to working funds, salaries to working funds and so on. Further the measures of profitability productivity and efficiency e also been suggested in the manual for a bank branch.;

So far as the banks understudies are concerned, that is, A-Bank and B-Bank, the A-Bank made some conscious efforts to improve its profitability. It conducting various costing studies and introduced profit budgeting exercise for the gross root level. As convenor of the costing forum of North-based banks, the A-Bank organized four meetings during 1988-89 to review the progress made by member banks in conducting costing studies. As a member of the committee in of pricing and costing constituted by IBA, the bank undertook studies on 'impact of revision in service charges on the volume of business and income' and 'time study for issue of a draft / payment of a cheque' on the basis of another study on the cost of providing locker services, the bank has decided on upward revision of locker services.

Findings& Suggestions - The banking sector of India has realized the significance of the strategic planning and control. It is implied that banks adopted formalized planning and control system and tapped some new opportunities in a more aggressive way. Due to formalized strategic planning and control system banks scanned the environmental opportunities through SWOT analysis & by opening large no. of branches, expand and explored in new lucrative areas of business like merchant banking, portfolio management, mutual funds, leasing and factoring services. They introduced new range of products like consumer credit cards, travelers' cheques, bid bonds, home loans, personal loans, auto loans, telebanking, e-banking, ATM's, Export and import finance, specialized branches for different segments.

If the Indian commercial banks have to survive and grow in the new millieue, they will have to be pro-active and formulate necessary strategic and perspective plans so as to face the challenges of the time. For this they will have to formalize their strategic planning and control system by the professionals and specialized manpower with the latest technology and other facilities available, so that they can act as a think-tank for the organization and would recommend internal changes from time to time, to maximize its strengths and minimize weaknesses, to utilize the environmental opportunities and threats for its gains and be able to attain and maintain sustainable competitive advantage.

The aspect of tactical planning and control systems is followed by the commercial banks by adopting the Performance Budgeting System. This system has been in practice in the banks under study since late 1970's and it is expected that with the march of time the system might be mature and deeply percolated down to the grass root level.

1. Fix-up the competitive interest rates as then when they are fully deregulated. In this direction, the competition of the cost of banks funds may help to take on efficient price and production decisions.
2. To increase returns on advances, efforts should be made to book more and more accounts falling under C&I and SSI units as interest in these two categories of advances is remunerative.
3. To reduce the cost of stationary, electricity charges, telephone, traveling allowances, etc. careful planning and conscious efforts are to be made.
4. For charging the price of the fee based products the competition of the costs in offering these services may be used as main criteria. A well developed costing department manned by the qualified costing professional show that cost per voucher, per rupees hundred, per account, per employee, etc. may be obtained to take various operational decisions in the banks.
5. Attempts should be made to bring positive improvement in the administration of the planning and control systems with the result the attitude of the branch manager gets favorable for the system. A feeling should be created among the branch and middle manager that they not only should be worried for the figures in the budget but through mutual thrust and confidence can contribute to the overall Goal Congruence in many other ways in the long run.
6. Reserves and funds are increased in all years that indicate the sound financial position of bank. Bank should prevent unnecessary amount from transferring in reserve and funds so real profit will be displayed in annual reports.
7. In changing economic landscape it is the productivity and profitability of banks that will decide their future success and survival. Bank should adopt strategic planning and control system with focus on customers' service.

References : -

1. Adarkar B.N., V.C. Patel, Commercial Banking, (Vora& Co., Publishers Pvt. M.G. Parikh, Ltd. – Bombay)
2. C. Eknath Kamath
3. Andersen : Accounting for Control
4. Anthony R.N. and V. Management Control System. (Tata McGraw Hill, Govindrajan : Delhi.)
5. Anthony R.N. : Planning & Control System.
6. Anthony R.N. : Management Accounting – Text and Cases. (Homewood, IIlinois : Richard D. Irwin Incorporated), 1976
7. Anthony R.N. : Planning and Control System, A Framework for Analysis. (Boston : Division of ResearchGraduateSchool of Business Administration), 1965.

8. Anthony, Robert N. Management Control System. Vancil, 1965
9. Krishnamoorthy, D. G."Internal Control and Supervision of Banks" (Volume of The Chartered Accountants), 1996
10. Khan M. Basheer Ahmed, Efficiency and Effectiveness of Bank Management
11. Bhattacharya S.K. : Management Planning and Control System, (New Delhi : IE Learning System Pvt. Ltd.), 1977.
12. Bhattacharya and J.C.Implementation Problem of Management Control
13. Camilus:Systems, (Ahmedabad : Indian Institute of Management), 1978
14. Mahanty Brij Raj : "Implementation and Administration of a management control system", (An unpublished doctoral thesis submitted at IIM, Ahmedabad), 1976.

TABLE 5.2

Time Norms for Important Services at the Branch in Normal Circumstances

S. No.	*Nature of transactions*	*Time to be observed in minutes*
1.	Encashment of cheque	
	(i) through teller system	5 to 8
	(ii) through cashier	8 to 15
2.	Receipt of cash (depending upon the denomination of notes).	10 to 25
3.	Issuance of demand draft (travellers cheque/term deposit receipt).	15 to 25
4.	Payment of demand draft	10 to 20
5.	Payment of term-deposit receipt	15 to 25
6.	Opening of Account	20 to 25
7.	Retirement of Bill	20 to 30
8.	Updating passbook (for a few entries)	05 to 15
9.	Collection of cheques;	
	(i) Local cheques days	2 to 3
	(ii) Outstation cheques	14 to 21.
10.	Statement of Account within 5 to 7 days from the date.	

Source: IBA Bulletin, October, 1989, Vol xi, No. 10.

Variables to be Controlled	*Primary Factors*	*Secondary Factors*	*Tertiary Factors*	*Fourth Associate Factors*
Profit Before Tax		Interest Earned Spread	(a) Total Earning Assets (b) Composition of Earning Assets (c) Yield on each Type of Assets	(a) Government and RBI Policies (b) Competition and Corporation among Banks (c) Quality of Assets
		Interest Paid	(a) Total Interest Paying Liabilities (b) Composition of Interest Paying Liabilities (c) Interest Rates on each Component	(a) Government and RBI Policies (b) Competition and Cooperation among Banks (c) Quality of Liability Management Decision
		Non-Interest Income Burden	(a) Range and Volume of Services (b) Service Charges	(a) Competition among banks (b) Discretionary Powers of Managers (c) Cost of Services
		Manpower Expenses	(a) Number, Seniority and composition of employees (b) Salary Structure	(a) Recruitment, Promotion and Placement Policies (b) Wage agreements and policies
		Other Expenses	(a) Nature and Volume of Business (b) Systems and Procedures	(a) Quality of Expenditure Decisions (b) Budgeting and cost control

Figure:Profit Analysis Framework for Commercial Banks
(Source: Varde, Varsha and Singh, Sampat, P. (1983). Profitability of Commercial Banks, NIBM, Bombay, Page No. 7)

****

भारिया जनजाति पर वैश्वीकरण का प्रभाव

डॉ. पूजा तिवारी *

प्रस्तावना – वैश्वीकरण से तात्पर्य विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्था को सक्रिय रूप से आपस में जोड़ना होता है। वर्तमान युग वैश्वीकरण का युग है, इस युग में 'निजीकरण' तथा 'उदारीकरण' को बढ़ावा दिया जा रहा है। संचार क्रांति के कारण विश्व के सभी देश समीप आते जा रहे हैं। वैश्वीकरण एक ऐसा मंच है जहाँ जिसके द्वारा पूरे विश्व के लोग मिलकर एक समाज का निर्माण कर एक साथ कार्य करते हैं। आज वैश्वीकरण का प्रभाव मनुष्य के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा प्रौद्योगिक जीवन पर पड़ रहा है। विगत दशकों में प्रत्येक क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए है, जिन्हें हम वैश्वीकरण के रूप में देखते है। भारत में भी वैश्वीकरण का प्रभाव तीव्रता से देखने को मिलता है। भारत में अधिकांश राज्यों में जनजातियाँ निवासरत् है अत: वैश्वीकरण का प्रभाव जनजातियों पर भी पड़ा है। वैश्वीकरण एक बहु-आयामी एवं बहुलवादी प्रक्रिया है, जो विश्व को सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक रूप से समायोजित करती है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक विषय सामाग्री के आधार पर शोध पत्र को तैयार किया गया है जिसके हेतु पत्र-पत्रिकाओं को भी अध्ययन का आधार बनाया गया है। इसके साथ-साथ जनजातीय परम्पराओं और विद्वानों का भी मार्गदर्शन प्राप्त किया गया है।

समस्या – भारत में वैश्वीकरण से जुड़े अर्थिक सुधारों यानि उदारीकरण तथा निजीकरण की शुरूवात सन् 1991 से हुई है। वैश्वीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें विभिन्न समाजों के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक क्षेत्र से लेकर संगीत, वेशभूषा एवं मीडिया के क्षेत्र तक अत्यंत द्रुत गति से प्रभावित हुए है।

उद्देश्य – 80 के दशक में उभर कर आया एवं 90 के दशक में लोकप्रियता हासिल करने वाला वैश्वीकरण या भूमंण्डलीकरण शब्द आधुनिक विश्व की ऐसी प्रघटना है, जिसने विश्व के सभी विकसित एवं विकासशील देश एवं उनकी आर्थिक राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व्यवस्था को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। सूचना प्रौद्योगिक क्रांति ने वैश्वीकरण की प्रक्रिया को तीव्रगति एवं नये आयाम प्रदान किए है।

संवैधानिक प्रावधानों द्वारा नामांकित विशेष पिछड़ी जनजातियों में 'भारिया जनजाति' प्रमुख है, जिन्हें पूर्व में 'आदिम जनजाति' भी कहा गया।

समाधान – भारिया जनजाति मुख्य रूप से छिन्दवाड़ा जिले के 'तामिया' तहसील के 'पाताल कोट' नामक स्थान पर पायी जाती है। पाताल कोट अर्थात् बहुत गहराई पर रहने का स्थान पाताल कोट छिन्दवाड़ा मुख्यालय से लगभग 70 किलोमीटर दूर है जो लगभग 2750 से 3250 फीट गहराई पर स्थित है। भारिया जनजाति यहाँ पर लगभग 500 वर्षो से अधिक समय से निवासरत् है। 'भारिया' स्वयं को गोंड के 'छोटा भाई' कहते हैं तथा द्रविड़ समूह से है।

भारिया जनजाति के लोगों का रंग काला, औसत कद पतला काली आंखे, चौड़ी नाक आदि शारीरिक विशेषताएं रखते है। भारिया स्त्रियाँ सुंदर होती है, यहाँ पर जनजाति के मुखियां को 'पटेल' कहा जाता है, इनमें भूमका पड़हाट कोटयार भी होते है। पाताल कोट में कुल 24 गांव तथा 15 हेमलेट है। इनमें मुख्य गांव 'रातेड', चिमटीपुर, गैलडुब्बा, डोगरी, सहारा, गुज्जा आदि है।

भारिया जनजाति की कुल 51 गोत्र है जिनमें से 16 गोत्र अभी भी अस्मिन्व में मुख्यरूप से पायी जाती है।

भारिया जनजाति के पुरूषों का मुख्य परिधान धोती, कुर्ता, बंडी साफा जबकि महिलाओं में सेंदरी साड़ी एवं पोलका का प्रचलन मूल रूप से है। भारिया महिलाए 'टैटू' गुदवाने की दिवानी होती है, औझा औरत इसे बनाती है, महिलाएं भौंहों के उपर धनुष कार लाइन एवं बिडियों द्वारा सजती है। गहनों में मुख्य रूप से चुल्की, मुंदरी, तोड़ा, हंसली, बिनोरिया आदि पहनती है। यहां पर मुख्य रूप से कर्मा, साटय, भाटम एवं सैला नृत्य होते है।

भारिया जनजाति हिंदु धर्म एवं देवी देवताओं की पूजा करते है, प्रमुख देवताओं में 'बूढ़ादेव, दुल्हादेव, नागदेव, बड़ा महादेव, बरूआ, भीमसेन' आदि है। मुख्य त्यौहार होली, नागपंचमी, दशहरा, दीवाली, ज्वारे, शिवरात्रि आदि है।

भारिया जनजाति के प्रमुख वाद्ययंत्र नगाड़ा, शहनाई, बासुंरी चकुली, तंबुरा, चिकारा, घुंघरू, खड़ताल, मदार एवं ढ़ोल आदि है। यहाँ पर मुख्य मेलों के रूप में 'मेधनाद' तथा 'मढ़ई' है। जो चैत्र पूर्णिमा में लगता है।

इस क्षेत्र में आर्थिक आधार के रूप में लघुवनोपज, जड़ी-बूटी संग्रहण, वांस कलाकृति, झाडू बनाना, दरवाजे बनाने का काम आदि है।

पाताल कोट में भारिया जनजातिय क्षेत्रों में मकान कच्चे होते है, घर के सामने चार खंभो से दालान बनाया जाता है। जो महुआ, गुल्ली एवं जाम की गुठली सुखाने के काम आता है। यहाँ पर मुख्य रूप से पेज, ज्वार, कुदकी, कोडो, चावल, माढ़ मटुरा की रोती, आम की गुठली आदि खाद्य पदार्थ होते है। ज्वार के आटे एवं महुए से मीटी, रोटी बनायी जाती है।

जनजाति के लोगो, औषधीय पौधों की पहचान एवं उनके उपयोग की जनकारी एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांरित होती है। मुख्य रूप से यहाँ पर अधजीरा, अडूसा, कालमेछ, सफेद मुसली, कालीहल्दी, चितवार, सिताप, हर्रा, बहेड़ा मिलवा अर्जुन, ग्लॅाय चिरौजी रूपेगंधा आदि अनेक औषधीय दुकंत पौधों से दवाईयां बनाने का कार्य किया जाता है।

भारिया जनजाति आधुनिकता एवं सभ्यता से परे है, इसलिए उनके विकास के विषय में वे अनभिज्ञ है, किन्तु वैश्वीकरण के प्रभाव से भारिया जनजाति समाज अछूता नही है।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

भारिया जनजाति की संस्कृति रंग बिरंगी एवं अनोखी है। आधुनिकता के कारण उनकी वेशभूषा में परिवर्तन आया है। अब ये लोग पैंट-शर्ट एवं महिलाएं साड़ी अच्छे तरीके से पहनती है।

वर्तमान समय में वैश्वीकरण का प्रभाव भारिया जनजाति पर भी देखने को मिल रहा है। अब भारिया लोग अपने मूल गृह ग्राम से निकल कर दूसरी संस्कृति के लोगों के सम्पर्क में सहजता पूर्वक आ रहे हैं। ये लोग पाताल कोट की अपनी दुनिया से बाहरी दुनिया में सम्पर्क बनाने जा रहे है, अब वहां पर प्राथमिक शाला, पेय जल व्यवस्था, आंगनवाड़ी केन्द्र शासन द्वारा व्यवस्था की गई है। अब ये लोग मुख्य बाजार से भी सामान खरीदते है, तथा अपने उत्पादों को बाजार में बेचते है एवं कृषि कार्य में भी रूचि रखते है। अब ये लोग संचार क्रांति से संबंधित उत्पादों का उपयोग करना भी सीख रहे हैं। वर्तमान समय में ये लोग निकटतम शहरों के निजी एवं शासकीय शिक्षण संस्थाओं तथा स्वास्थ्य सुविधाओं का लाभ लेने में रूचिकर हैं। भारिया जनजाति में सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक जीवन में नये परिवर्तन वैश्वीकरण की देन है।

निष्कर्ष - भारिया लोग स्वभाव से ईमानदार सीधे सादे एवं निडर होते है, किन्तु वर्तमान में उनका सम्पर्क नगरीय क्षेत्रों से होने लगा है। शिक्षा एवं आधुनिकीकरण संस्कृतिकरण आदि के प्रभाव से साक्षरता दर बढ़ने के नावजूदभी आज भी ये लोग सामाजिक, आर्थिक स्थिति में तुलनात्मक रूप से पिछड़े सावित हो रहे है। पिछड़ने का मुख्य कारण निर्धनता एवं जागरूकता की कमी है। आवश्यकता इस बात की है कि अब वैश्वीकरण के समस्त उपयोगी पक्षों का भारिया जनजाति पर पूर्णत: प्रभाव पड़े इस हेतु निजी संस्थाओं एवं शासकीय तौर पर प्रयास पूर्णत: ईमानदारी से किया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पटेल/बघेल: वैश्वीकरण: औचित्य एवं विकास दिल्ली पब्लिकेशन्स।
2. हसनैन नदीय :- जनजातीय भारत-दिल्ली पब्लिकेशन्स
3. म0 प्र0 की जनजातीय :- इन्टरनेट
4. भारिया जनजाति :- इन्टरनेट
5. पाताल कोट में भारिया :- इन्टरनेट

****

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का राजनैतिक चिन्तन

डॉ. नवीन कुमार * पुष्पा साकेत **

प्रस्तावना – मानव सभ्यता के इतिहास में एक बहुत बड़े हस्ताक्षर डॉ. भीमराव अम्बेडकर न्याय और अन्याय की खाई को संवैधानिक रूप से मजबूत करने का सबसे बड़ा कदम उठाने वाले महापुरूष है। इतिहास गवाह है कि न्याय और अन्याय का मापदण्ड पूर्ण कालिक नहीं है। आधुनिक विकास के साथ-साथ मानव विकास का परिश्रम होता है। इतिहास गवाह है कि इस पृथ्वी पर न्याय और अन्याय का व्यवहार झेलने वाला बहुत बड़ा हिस्सा हैं। जहाँ प्राचीन काल से लेकर आज तक गुलामी झेल रहा है। सदियों से मानव-मानव में भेद रहा है। किन्तु इस भारत में महापुरूष डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने संविधान के द्वारा हक प्रदान कर इस खाई को नियम बद्ध कर दिये। जिसकी विशालता का परिणाम आज मानव में दिखाई दे रहा है।

भारत रत्न डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने भारत में दलितों की सामाजिक स्थित का आकलन करने के लिए उन्होंने देखने का प्रयास किया है। उसी आधार पर समाज की स्थिति को सुधारने के लिए संवैधानिक प्रावधान किया है। जिस आधार पर परिवर्तन की राह मिलने लगती है। वहाँ समाज की स्थिति का परिणाम भी मानवीय आधार पर होने चाहिए। यहाँ तक उन पर होने वाले अत्याचार और अन्याय के लिए कड़े कानून व्यवस्था का निर्माण किया है। यहीं पर मानव जीवन का स्वरूप भी नर्क पूर्ण दिखने लगता है। उस स्थिति का अध्ययन डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय सामाजिक व्यवस्था का परिणाम ही दिखाई देता है।

शोध प्रविधि – इस शोधपत्र डॉ. अम्बेडकर का राजनैतिक चिन्तन में द्वितीय शोध सामाग्री के आधार पर शोध पत्र को तैयार किया गया है। इसके हेतु यथाउचित स्थान पर सन्दर्भ को समाहित किया गया है। इस शोध पत्र में पत्र-पत्रिकाओं के साथ-साथ पुस्तकालय द्वारा प्राप्त सामाग्री का भी अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य :

1. शोषित वंचित व्यक्ति के विचारों में शक्ति का संचार होना।
2. उनकी आवाज विचारों में सांस्कृतिक एकता का प्रवाह होना चाहिए।
3. उनकी बातों में तथ्य होना चाहिए।
4. इसके साथ मानव में समझने की शक्ति के साथ स्वाभिमान को बनाये रखने का प्रयास करना चाहिए।
5. शिक्षा महत्वपूर्ण अवदान है। जिसके बिना मानव समाज का कोई भी औचित्यपूर्ण कदम उठसकने में सक्षम बनाता है।
6. स्वयं के ज्ञान की पहचानने की शक्ति होनी चाहिए।

समस्या :

1. शिक्षा ग्रहण करने की लिए अर्थ की समस्या।
2. सामाजिक जीवन में छूआ-छूत की समस्या।
3. राजनीतिक क्षेत्र में शोषित वंचित वर्ग का संवैधानिक योगदान।

समाधान – डॉ. भीमराव अम्बेडकर का योगदान व्यक्ति के साथ कोई और किसी भी प्रकार का भेदभाव न हो। ऐसी स्थिति समझने के बाद डॉ. अम्बेडकर ने सभी तर्को और मागों को एक साथ गोलमेज सम्मेलन में रखा। जिससे अछूत समाज को अधिकार प्राप्त हो सके। गरीबों दलितों के साथ न्याय करने के पक्षकार डॉ. अम्बेडकर ने 4 अक्टूबर 1930 को लंदन गये। उसी समय भारत में असहयोग अन्दोलन की आग तेजी से बढ़ रही थी। जिसका सामना डॉ. अम्बेडकर कर रहे थें। इसी सम्मेलन में डॉ. अम्बेडकर ने दलितों को संविधान के द्वारा अधिकार प्रदान करने के लिए ज्ञापन देते हैं। हिन्दू वर्ग में होने वाली असमानता को समझकर डॉ. अम्बेडकर ने विशेषाधिकारों और अधिकार विहीन यह दलित समाज के लिए एक प्रस्ताव रखते है। जिससे इन अधिकारों के कारण शोषक और शोषित के विभाजन की खाई को खत्म किया जा सके। इन्हें प्रकृति के निरूपण के आधार पर अधिकार मिलने चाहिए। ताकि मानवता सर्मशार न हो। इससे भावी पीढ़ी अपने अधिकार को समझने में सक्षम होगी। राजसत्ता में दबी कुचली मानवता को कलंकित करने वाली नीतियों से मानव मुक्त रहकर अपना जीवन सुख पूर्वक जी सकें।

डॉ. अम्बेडकर ने अनेक सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक समस्याओं को ब्रिटिश सरकार के सामने रखते हैं। जिसका निदान संविधान में प्रावधान के द्वारा ही किया जा सकता है। इन्हीं निम्न शर्तो को चिन्हाकित करने का अथक प्रयास डॉ. अम्बेडकर करते हैं।

समान नागरिकता – डॉ. अम्बेडकर का चिन्तन था कि अछूत प्रथा का अंत होना चाहिए। इस अछूत परम्परा को बहुमत के आधार पर नहीं छोड़ जाना चाहिए। इसके लिए कड़े कानून बनाने की आवश्यकता है। इस बहुमत को शासन के पूर्व कार्यकलापों से यह साबित होता है। यह व्यवस्था मुक्त नहीं हो सकती है। इसका अन्त सिर्फ संवैधानिक व्यवस्था के द्वारा ही सम्भव है। यह अधिकार सामाजिक हित में लोकतांत्रिक आधार पर व्यवस्था होनी चाहिए।

उसके पहले यह जाति अछूत और न छूने योग्य मानी जाती थी। इससे घृणित हिन्दू समाज में इनका स्तर दिनों-दिन बढ़ता जा रहा था। इसके आधार अन्य लोगों को जीवन जीना भी मुस्किल होने लगा था। इनसे दूसरी जाति के लोग एक निश्चित दूरी पर खड़े होकर बात करते है। उनके गले में पुराने जूतों की माला पहना दी जाती थी।

मौलिक अधिकार – अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिए व्यक्ति को समान अधिकार प्रदान किये गये हैं। इनमें से निम्न मूल अधिकारों को संविधान का

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (राजनीतिशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

एक अंग घोषित किया जाना चाहिए। क्योंकि भारतीय संविधान ने इन नागरिकों को मौलिक अधिकार प्रदान कर उनके जीवन की गरिमा को प्रदान किया है। भारत में राज्य के सभी व्यक्ति कानून की दृष्टि से एक बराबर है। उसी प्रकार सभी समान नागरिक अधिकार का प्रयोग करते हैं।

उसी प्रकार के ऐसे नियम जो विधान आदेश और परम्पराओं के आधार पर कानून के द्वारा न्याय की प्रणाली बन जाती है। उसी न्याय प्रणाली के आधार पर दण्ड सिद्धान्त की स्थापना होती है। संविधान में यह कानून व्यवस्था लागू होता है कि किसी व्यक्ति से कोई भी व्यक्ति उसके सम्मान का हनन नहीं करेगा। न उसे अस्पृश्यता जैसे कार्यों और नाम का उल्लेख भी नहीं करेगा। छूआछूत से हमेशा बचेगा। ऐसी सामाजिक व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए संविधान में मानव को मौलिक अधिकार प्रदान किये गये हैं।

समान अधिकार – इस राष्ट्र में निवास करने वाले प्रत्येक नागरिक को समान अधिकार प्राप्त होने चाहिए। निसन्देह उन पर यह कानून व्यवस्था को लागू किया जा सकता है। ऐसी दशा में दलित वर्ग को रूढ़वादी समाज के द्वारा किये जाने वाले विरोधों का सामान स्पष्ट रूप से करना पडेगा। ऐसे दशा में कोई भी कार्य उनके लिए घृणित की दृष्टि देखा जाना कानून की दृष्टि से अपराध होगा। ऐसी विसंगतियों के परिणाम स्वरूप उसके विरूद्ध दण्ड की व्यवस्था संविधान में की गई हैं। जैसे होटलों, सम्मेलनों आदि जगहों पर दलितों के साथ भोजन, पानी में प्रतिबन्ध नहीं किया जा सकता हैं।

सरकारी सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व – दलित वर्ग को उच्च वर्ग के द्वारा शोषण और प्रताणित किया जाता है। उन्होंने कानून तथा अपनी निर्णयक शक्ति के स्वरूप को समझने में इन लोगों ने धोखा दिया। जिससे उनके बीच पनपने वाला पूर्वग्रह स्वतः समाप्त हो जाये। इस प्रकार की व्यवस्था इन दलितों को कार्य के लिए मजबूर करती हैं। जहाँ पर दलित का दुरपयोग किया जाता है। यहाँ तक कहा जाता हैं कि कोई भी व्यक्ति सेवानृवित्ता के बाद क्राउन के अधीन किसी कार्यालय में कार्य नहीं कर सकता है।

निष्कर्ष – सामाजिक व्यवस्था में होने वाले अनेक जुल्म को दलित वर्ग ने सहा है। इसको सहने के लिए सदियाँ बीत गई। इसके साथ–साथ उनके साथ अनेकों जुल्म हुए है। इसका शिकार व्यक्ति कदम–कदम पर छुआछूत वाली व्यवस्था द्वारा अपमानित किया गया है। जीवन के प्रत्येक क्षण में इन्हें प्रतिबंध का सामना करना पड़ा है। मानवीय अधिकारों से इन्हें वंचित रखा गया है। जिसका निदान आज संविधान के नियमों के आधार पर किये जा रहें है। उसके बाद भी पूँजीपति और मजदूर दोनों में सामंजस्य नहीं हो पा रहा है। पूँजीपति उनका शोषण करता जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विजय कुमारी पुजारी, डॉ. अम्बेडकर: जीवन और दर्शन, 2008, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 8
2. डॉ. विवेक पाण्डेय, एवं डॉ. डी.एस. बघेल, सामाजिक अनुसंधान के तथ्य, पुष्पराज प्रकाशन, रीवा
3. नानक चन्द, रत्तू, डॉ. अम्बेडकर: कुछ अनछुए प्रसंग, 2003, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 10
4. ाद्रशील रावत, राष्ट्र निर्माण में बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर का योगदान, 2002, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 25
5. राजेन्द्र राही, बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर की जीवन कथा, 2003, आनन्द प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ 35
6. डॉ. लोकेश कुमार पाण्डेय, अम्बेडकर और लोहिया का लोकतंत्र, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2013, पृष्ठ 66–67

****

महिला सशक्तिकरण एक विधिक अध्ययन

राकेश कुमार चौरासे *

प्रस्तावना – प्राचीन काल से ही हमारे समाज में नारी का एक विशेष स्थान रहा है। एवं हमारे पौराणिक ग्रन्थों में भी नारी को पूज्यनीय एवं देवीतुल्य माना गया है।

अर्थात् जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवता वास करते हैं। यह कहा जाता है।

प्राचीन ग्रन्थों का उक्त कथन आज भी उतना ही महत्व रखता है जितना की इसकी महत्व प्राचीन काल में थी। कोई भी परिवार, समाज अथवा राष्ट्र, तब तक सच्चे अर्थों में प्रगति की ओर अग्रसर नहीं हो सकता। जब तक वह नारी के प्रति भेदभाव, निरादर अथवा हीन भाव का त्याग नहीं करता है।

आज का युग परिवर्तन का युग है भारतीय नारी की दशा में भी भूतपूर्व परिवर्तन देखा जा सकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् अनेक समाज सुधारकों समाजसेवियों तथा हमारी सरकारों ने नारी उत्थान की ओर विशेष ध्यान दिया है तथा समाज और राष्ट्र के सभी वर्गों में इसकी महत्व को प्रकट करने का प्रयास किया है।

फलत: आज की नारी पुरूषों के साथ कन्धें से कन्धा मिलाकर चल रही है। विज्ञान और तकनीकी सहित लगभग सभी क्षेत्रों में अपनी उपयोगिता सिद्ध कर रही है। उसने समाज व राष्ट्र को यह सिद्ध कर दिखाया है कि शक्ति अथवा क्षमता की दृष्टि से वह पुरूषों से किसी भी भाँति कम नहीं है।

निसंदेह नारी की वर्तमान दशा में निरन्तर सुधार राष्ट्र की प्रगति का मापदण्ड है। वह दिन दूर नहीं है। जब नर-नारी सभी के सम्मिलित प्रयास फलीभूत होगें और हमारा देश विश्व के अन्य अग्रणी देशों में से एक होगा। अनुच्छेद 40 में 73 और 74 संविधान संशोधन में आरक्षण का प्रावधान है। संविधान में नया अध्याय 'क' जोड़ा गया 24 अप्रैल, 1993 से 73 वाँ संविधान संशोधन अधिनियम 1993 लागू किया गया है। ग्रामीणों मजदूरों के सामाजिक जीवन और घटनाओं को उद्घाटित करना ही मूल आत्मा है। यहाँ मूल सवाल यह है अनेक जिज्ञासु यह प्रश्न करते है। इतना अधिक पैसा, श्रम और समाज का उपत्यय क्यों किया जाता है। इसमें सामान जनता को क्या लाभ है। इसी प्रकार के अन्य अनेकों प्रश्न हैं? आज भी विचरणीय है?

भारतीय कानूनों का महिलाओं के सन्दर्भ में अध्ययन – महिलाओं की सुरक्षा हेतु एवं उनकों सशक्त बनाये रखने के उद्देश्य से भारतीय विधियों में कुछ प्रमुख प्रावधान किये गये है। जिनका वर्णन निम्नलिखित है-

1. भारतीय संविधान में महिलाओं की सुरक्षा हेतु प्रावधान :

अनुच्छेद 14 : भारत राज्य क्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता अथवा विधि के समान संरक्षण से राज्य द्वारा वंचित नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद 15 (3) : कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबन्ध करने से निवारित नहीं करेगी।

अनुच्छेद 16 : राज्य के आधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से संबंधित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता होती है।

अनुच्छेद 19 :इस अनुच्छेद में महिलाओं को किसी भी राज्य में भ्रमण करने की पूर्ण स्वतंत्रता है एवं यह उनका मौलिक अधिकार है।

अनुच्छेद 21 : किसी व्यक्ति को उसके प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जायेगा अन्यथा नहीं। चाहे वह महिला हो या पुरूष

अनुच्छेद 23 : मानव का दुर्व्यापार एवं बलातश्रम को प्रतिबंधित किया गया है।

अनुच्छेद 25-28 :इन अनुच्छेदों में धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान किया गया है।

अनुच्छेद 29-30 : इन अनुच्छेदों के अन्तर्गत शिक्षा एवं सांस्कृतिक अधिकारों को उपबंधित किया गया है।

अनुच्छेद 32 :यह अनुच्छेद संवैधानिक उपचारों का अधिकार प्रदान करता है एवं डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्वारा इस अनुच्छेद को संविधान की आत्मा कहा गया है।

अनुच्छेद 34: समान कार्य के लिए समान वेतन।

अनुच्छेद 39 : (क) राज्य अपनी नीति का इस प्रकार संचालन करेगा कि पुरूष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 40:पंचायती राज व्यवस्थाओं में 73 वे 74 वे संशोधन के माध्यम से आरक्षण की व्यवस्था।

अनुच्छेद 41: असमान्य आवश्यकताओं (बीमारी, बेकारी, बुढ़ापा) में सहायता।

अनुच्छेद 42: प्रसूती सहायता (135 दिनों की छुट्टी का) प्रावधान है।

अनुच्छेद 43: पोषाहार एवं जीवन स्तर में सुधार हेतु सहायता का प्रावधान।

अनुच्छेद 44: एक समान सिविल संहिता का प्रावधान।

अनुच्छेद 51 (क) (ड.): स्त्रियों के समान के प्रति मूल कर्त्तव्य प्रावधान।

भारतीय दण्ड संहिता 1860 : भारतीय दण्ड संहिता ने महिलाओं की सुरक्षा हेतु महत्वपूर्ण प्रावधान किये गये है जो कि निम्नलिखित है।

धारा 292 अश्लील पुस्तकों आदि का विक्रय, 293 तरूण व्यक्ति को अश्लील पुस्तकों का विक्रय, 294 अश्लील कार्य और गाने, 304 बी-दैव मृत्यु, धारा 354 स्त्री की लज्जा भंग करने के आशय से उस पर हमला या अपराधिक बल का प्रयोग, धारा 366 विवाह आदि करने को विवस करने के लिए किसी स्त्री को व्यापहृत करना, अपहृत करना या उत्प्रेरित करना,

*शोधार्थी (विधि) शासकीय विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

376 बलात्संघ के लिए दण्ड, 493 से 498 तक विवाह संबंधी अपराधों के विषय में प्रावधान किया गया है। 498 (क) किसी स्त्री के पति या पति के रिस्तेदार द्वारा उस महिला के प्रति क्रूरता करना एवं धारा 511 अपराधों को करने के लिए महिलाओं के विरूद्ध अपराधों को करने के लिए प्रयत्न करना। 493 विधि पूर्ण विवाह प्रवंचना से विश्वास उत्प्रेरित करने वाले पुरूष द्वारा कारित सहास, 494 पति या पत्नी के जीवन काल में पुन: विवाह करना। 495 वही अपराध पूर्ववर्ती विवाह को उस व्यक्ति को छिपाकर जिसके साथ पश्चात् व्यक्ति विवाह किया जाता है, 496 विधि पूर्ण विवाह के बिना कपट पूर्वक विवाह आदि।

महिलाओं की सुरक्षा हेतु महत्वपूर्ण अधिनियम – महिला की सुरक्षा हेतु एवं सशक्त रखने के लिए हमारी सरकार द्वारा कुछ प्रमुख अधिनियम बनाये गये है। जो कि निम्नलिखित है–

ऐसी प्रथाओं का त्याग जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध हो। सम्मान को धक्का देने वाले हो। इसके लिए अनुच्छेद 51 (क) (ड.) में संवैधानिक अधिकार प्राप्त है।

समान मजदूरी और समान वेतन का अधिकार अनुच्छेद 39 में वर्णित है। न ही लिंग के आधार पर भेदभाव का अधिकार। शिक्षा और संस्कृति का अधिकार अनुच्छेद–29 एवं 30 में प्रावधान किये गये है।

अन्य संवैधानिक अधिकार – काम पर हुए उत्पीड़न के खिलाफ अधिकार, नाम न छापने का अधिकार, घरेलू हिंसा के खिलाफ अधिकार, मातृत्व सम्बन्धी लाभ के अधिकार, कन्या भ्रूण हत्या के खिलाफ अधिकार, मुफ्त कानूनी मदद के लिए अधिकार, रात में गिरफ्तार न होने का अधिकार, गरिमा और शालीनता के लिए अधिकार, संपत्ति पर अधिकार हिन्दू उत्तराधिकार अधिनिम में पिता की सम्पत्ति में महिला को अधिकार प्राप्त है। लैंगिक समानता को प्राथमिकता देने से पूरे इस देश में महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा मिला है। जिससे महिलाओं के बौद्धिक क्षमता, और मानसिक रूप से मजबूती प्राप्त हुई। वर्तमान में इन्हीं बातों को लेकर बेहतर शिक्षा की दिशा की ओर महिलाएँ बढ़ रहीं है।

घरेलू हिंसा से पीड़ित महिला को अदादल जज के सक्षम स्वयं का वकील और सेवा प्रदान का संरक्षण के साथ अधिकार प्राप्त है। न्यायिक मजिस्ट्रेट की कोर्ट में शिकायत दर्ज कराकर जो अपनी मदद के आधार पर वचाव कारी आदेश ले सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. श्रीमती मंजू शर्मा, नारी प्रति अत्याचार एवं मानवअधिकार, मार्क पब्लिशर्स जयपुर, 2009
2. संजय गोड़ आधुनिक महिलाएँ और समाज उत्पीड़न, अत्याचार एवं अधिकार, बुक एनक्लेव, जयपुर, 2006
3. संगीता शर्मा, राजेश कुमार शर्मा, महिला विकास एवं राजकीय योजनाएँ, रीतू पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2005
4. डॉ. बसंती लाल बावेल, भारतीय दण्ड संहिता, 1860, सेन्ट्रल एजेन्सी, इलाहाबाद, 2007
5. कपूर, प्रो. प्रोमिला–स्त्री शिक्षा एक मूल्यांकन, हरि प्रकाशन दिल्ली, 2012

****

महिलाओं के उत्थान हेतु राष्ट्रीय कानूनों का एक विधिक अध्ययन

कमलेश मौर्य *

प्रस्तावना - प्राचीन काल से ही नारी की पूजा होती रही है तथा उसे बहुत ही आदर की दृष्टि से देखा जाता था तथा उनका समाज में सम्मान जनक स्थान था। उन्हें 'ग्रहलक्ष्मी' तथा 'ग्रह मंत्री' जैसे सम्मान जनक शब्दों से सम्बोधित किया जाता रहा है।

'यत्र नार्यास्तु पूज्यन्ते,
रमन्ते तत्र देवता:।'

अर्थात् जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं।

भारत एक प्रसिद्ध देश है जो प्राचीन समय से ही अपनी सभ्यता, संस्कृति, सांस्कृतिक विरासत, परम्परा, धर्म और भौगोलिक विशेषताओं के लिये जाना जाता है। लेकिन महिलाओं के सन्दर्भ में भारतीय समाज में दो प्रकार के दृष्टिकोण विद्यमान है। क्योंकि सामाजिक रूप में भारत एक पितृसत्तात्मक प्रधान देश है अर्थात समाज में पुरूष की प्रधानता सर्वोपरि मानी गयी है। इस कारण महिलाओं को पुरूष के समकक्ष या समानता से परे देखा जा सकता है। इस कारण प्रारम्भ से ही महिलाएँ उत्पीड़न, शोषण और उपेक्षा की शिकार होती रही हैं एवंउन्हें घर की चार दीवारी तक सीमित रखा गया है। परन्तु जैसे-जैसे समय बदलता गया महिलाओं में जागरूकता (शिक्षा) बढ़ती गई। वैसे-वैसे उनके अधिकारों में भी परिवर्तन की लहर चल पड़ी एवं पुरूषों के साथ कांधे-से-कांधा मिलाकर देश के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

मूलर बनाम ओरेगन - इस मामले में अमेरिकी न्यायलय द्धारा यह कहा गया है कि 'अस्तित्व के संघर्ष में स्त्रियों की शारीरिक बनावट तथा उनके स्त्रीजन्यकार्य उन्हें दु:खद् स्थिति में कर देते है।'

भारत के उच्चत्तम एवं उच्च न्यायालय ने महिलाओं के उत्थान हेतु कई महत्वपूर्ण निर्णय दिये है एवं महिलाओं को सुरक्षित रखने हेतु समय-समय पर मार्गदर्शक के रूप में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

किसी भी राष्ट्र के विकास के लिए यह अतिआवश्यक है कि महिलाओं का सम्मान करें। एवं उन्हें राष्ट्र निर्माण हेतु प्रोत्साहित करें।

महिला उत्थान हेतु राष्ट्रीय कानून । विभिन्न राष्ट्रों में नारी उत्थान हेतु लम्बे समय से प्रयास किया जा रहा है। लेकिन वास्तव में महिलाओं को न तो उनके संवैधानिक अधिकारों की जानकारी है और न ही अन्य विभिन्न कानूनों की इसी लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए विभिन्न राष्ट्रीय कानूनों का एक विधिक अध्ययन शोध लेख मेरे द्धारा प्रस्तुत किया गया है।

भारतीय संविधान के अन्तर्गत - भारत एक कल्याणकारी राज्य है, भारतीय संविधान न केवल नागरिकों के मूल अधिकारों का सुरक्षा प्रहरी है, अपितु समाज के कमजोर वर्गो के सामाजिक एवं आर्थिक समानता को सुनिश्चित करना है, महिलाओं की दैयनीय स्थिति को देखते हुए भारतीय संविधान में कुछ प्रमुख उपबन्ध किये गये है जो निम्नलिखित हैं :-

अनुच्छेद 14 : यह उपबंधित करता है कि भारत राज्य क्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता अथवा विधि के समान संरक्षण से राज्य द्धारा वंचित नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद 15 (3) : यह उपबंधित करता है कि कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबन्ध करने से निवारित नहीं करेगी।

अनुच्छेद 16 :यह उपबंधित करता है कि राज्य के आधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से संबंधित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता होती है।

अनुच्छेद 19 :इस अनुच्छेद के अन्तर्गत यह उपबंधित किया गया है कि महिलाओं को देश के किसी भी भाग में भ्रमण करने की पूर्ण स्वतंत्रता है एवं यह उनका मौलिक अधिकार है।

अनुच्छेद 21 : यह उपबंधित करता है कि किसी व्यक्ति को उसके प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्धारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जायेगा अन्यथा नहीं।

अनुच्छेद 23 :मानव का दुर्व्यापार एवं बलातश्रम को प्रतिबंधित किया गया है।

अनुच्छेद 25-28 :इन अनुच्छेदों में धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान किया गया है।

अनुच्छेद 29-30 : इन अनुच्छेदों के अन्तर्गत शिक्षा एवं सांस्कृतिक अधिकारों को उपबंधित किया गया है।

अनुच्छेद 32 :यह अनुच्छेद संवैधानिक उपचारों का अधिकार प्रदान करता है एवं डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्धारा इस अनुच्छेद को संविधान की आत्मा कहा गया है।

अनुच्छेद 34: समान कार्य के लिए समान वेतन।

अनुच्छेद 39 : (क) राज्य अपनी नीति का इस प्रकार संचालन करेगा कि पुरूष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 40:पंचायती राज व्यवस्थाओं में 73 वे 74 वे संशोधन के माध्यम से आरक्षण की व्यवस्था।

अनुच्छेद 41: असमान्य आवश्यकताओं (बीमारी, बेकारी, बुढ़ापा) में सहायता।

अनुच्छेद 42: प्रसूती सहायता (135 दिनों का अवकाश) हेतु उपबंधित है।

अनुच्छेद 43: पोषाहार एवं जीवन स्तर में सुधार हेतु सहायता

अनुच्छेद 44: एक समान सिविल संहिता

* शोधार्थी (विधि विभाग) शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

अनुच्छेद 51 (क) (ड.): स्त्रियों के समान के प्रति मूल कर्त्तव्य

भारतीय दण्ड संहिता 1860 – भारतीय दण्ड संहिता 1860 में महिलाओं की सुरक्षा के संबंध में प्रावधान। 304–बी देहज मृत्यु अपराधों के लिए कठोर दण्ड की व्यवस्थाएँ की गयी है। धारा 354 में स्त्री की लज्जा भंग, धारा 366 में अपहरण धारा 376 में बलात्कार, धारा 498 क में निर्दयता पूर्ण व्यवहार करना तथा धारा 292 से 294 तक में विशिष्टता और सदाचार को प्रभावित करने वालों में पर रोग लगा दी गयी है। धारा 493 से 498 में विवाह संबंधी अपराधों के बात में सजा के प्रावधानों की व्यवस्था है।

अपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम–2013 – इस अधिनियम में बलात्कार के मामले में अभियुक्त को आजीवन कारावास की सजा का प्रावधान दिया गया है। इस के लिए आजीवन कारावास की सजा दी जा सकती है। एवं अधिनियम में यह प्रावधान दिया गया है कि ऐसे अपराधों को रोकने के लिए पहले भी दोषी ठहराये गये या अपराध की पुनरावृत्ति करने पर दोषी ठहराये हुए अपराधी को मृत्यु दण्ड से दण्डित किये जाने का प्रावधान भी किया गया है।

दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 125 में उपेक्षित महिलाओं के कारण–पोषण का प्रावधान किया गया है।

पुलिस एक्ट 1965 – किसी भी महिला की गिरफ्तारी की दशा में पुलिस को यह बताना होगा कि उसे क्यों गिरफ्तार किया जा रहा है। पुलिस थाना ले जाते समय किसी भी महिला को हथकड़ी नहीं लगाई जायेगी एवं उसे अपने पसंद के किसी भी वकील से परामर्श करने का अधिकार है। एवं गिरफ्तार महिला की तलासी सिर्फ एक महिला अफसर ही ले सकेगी।

निष्कर्ष – भारतीय संविधान में लिंग समानता के स्त्रियों के अधिकार की आधारशिला माना गया है। इस आधार पर उनकों, न केवल पुरूषों के समान मतदान का अधिकार दिया गया बल्कि अन्य क्षेत्रों जैसे शिक्षा, व्यवसाय, उत्तराधिकार, व्यापार, घरेलू खानपान यहाँ तक की वैवाहिक जीवन में भी समान अधिकारों का प्रावधान किया गया है। किन्तु संस्कृति में पत्नि को अर्धागिनी कहा जाता है। अर्धागिनी शब्द इस बात का द्योतक है कि अपने पति के जीवन के सभी क्षेत्रों में समान रूप से अधिकारी है। सैद्धान्तिक रूप से तो इस विचार को स्वीकार किया जाता है किन्तु व्यवहारिक रूप से परिवारों में भारतीय नारी की प्रास्थिति अभी भी पर्याप्त रूप से गिरी हुई है।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि महिलाओं के उत्थान हेतु राष्ट्रीय कानूनों का उचित कार्यान्वयन किया जाना अति आवश्यक है, एवं ऐसी प्रथाओं का त्याग किया जाना चाहिए जो महिलाओं के सम्मान के विरूद्ध हो, साथ ही महिलाओं से उनके अधिकारों के विषय में जागरूकता दी जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बदलता सामाजीक परिवेश – मानचंद खंडेला, 2008, अविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, (राजस्थान)
2. महिला अधिकार एवं कानून जागरूकता, प्रावधान एवं उपयोगिता– डॉ. रीता सक्सेना, 2010, रितु पब्लिकेशन्स, जयपुर
3. भारत का संविधान–डॉ. जय नारायण पाण्डेय, 2008, सेन्ट्रल लॉ ऐजेन्सी, इलाहाबाद
4. भारतीय दण्ड संहिता 1860–डॉ. बसन्तीलाल बावेल, 2007 सेन्ट्रल लॉ ऐजेन्सी, इलाहाबाद
5. दण्ड प्रक्रिया संहिता 1873 डॉ. बसन्तीलाल बावेल, 2007 सेन्ट्रल लॉ ऐजेन्सी, इलाहाबाद

****

GREEN AUDIT: A Case Study of Saifee Golden Jubilee Quaderia College, Burhanpur, M.P. India

Prof. Iftekhar A.Siddiqui * Dr. Suchi Modi **

Abstract - Green Audit is a requirement of "NAAC" committee to the college. The concept of Green audit, industries are using it as a management tool to evaluate the environmental standards, industries can perform better and better for the sustainable development of the organization. The Experiments on the nature by avoiding natural rules, this can be one major reason behind that is green Audit. The term 'Green' means eco- friendly or not damaging the environment. Green Accounting can be defined as systematic identification, quantification, recording, reporting & analysis of components of ecological diversity & expressing the same in financial or social terms drivers of green audit, future scope, benefits and advantages are necessary to understand, A total of 267 species (Angiosperms-256, Gymnosperms-11) and 56 families (Dicot-48, Monocot-08), have been reported from the study area. As part of green audit of study area, we carried out the environmental monitoring of campus includes waste management. (Vermicomposting, Bio-waste management), green house effect, aquarium, mushroom culture water conservation, tree plantation, paperless work, vegetative propagation, butterfly garden, ventilation paperless work system and mapping of Biodiversity. Noise level in the campus is well within the limit i.e. below 50 dB at day time. This may lead to the prosper future in context of Green Campus & thus sustainable environment and committee development. Further we hope, this will boost the new generation to take care of environment and propagate these views for many generations to come.
Keyword: NAAC, Eco-friendly, sustainable Development, Ecological diversity.

Introduction - The green audit is conducted to improve the environmental conditions of the college as protection of environment is a prime necessity in the present era. It is meant for ensuring ecological balance and bio-proliferation. The objective of carrying out green audit in the college is to create awareness among the students as to real concerns of environment. It helps as an indicator of the diterio ration in environmental conditions and provides a fillip to the programs and policies of the institute. The college is established in the year 1962 and is affiliated to the DAVV Indore, MP, India. It is situated in the salubrious bank of river Tapti and covers an area of 6 $^{1/2}$ % acres of which 60% area is fully under green umbrella and 40 % is partially covered with green trees and plants.

In scenario people are not caring of nature, they are directly or indirectly damaging the environment and it causes problems like: global warning, difficulties in maintaining ozone layers, air pollution, water pollution etc. Green Audit in the most efficient and ecological war to solve such a environment problem. For protecting the nature as a human being we have to show our sense of humor towards the mother earth. The Green Audit of is requirement of NAAC committee to the college. A report on green audit has been prepared by department of Botany, S.G.J. Quaderia College, Burhanpur, MP, India. This college was established in 22 July, 1962 and accredited with Grade 'B' by NAAC, Bangalore.

Review of Literature: In 2008, Adeniji is the first who primarily concerned with environment audit of the companies to the growing importance of green issues. **In 2008, Porter, Simon and Hatchery** is the first who clearly mention exactly what is the green audit? And after his explanation about the green audit this concept "Green audit" as "Environment" management system (EMS) that is continuous increase in environment and communication of the result of the EMS activity with organizations directors.

Materials and Methodology: In order to perform green audit, the methodology included different tools such as preparation of questionnaire, physical inspection of the campus, observation and review of documentation, interviewing key persons and data analysis, measurement and recommendations. So this study is conceptual study. The methodology is adopted for this paper by collecting the information from secondary sources, personal views and opinion also included in this study. Qualitative and quantitative analysis of flora and fauna was done by biostatical central tendencies and survey methodology recorded species were identified with the help of expert,

*Principal, S. G. J . Quadariya College, Burhanpur (M. P.) INDIA
** Guide, Department Of Botany, Rabindra Nath Tagore University, Bhopal (M.P.) INDIA

local floras and using standard literature & other sources.

Observation: Actual Case study:

Name of College- S.G.J. Quaderia College, Burhanpur, MP, India (Near the historical Shahi Qila)

S.	Name and area of the unit	Total area (in Sq. Ft.)
1.	Total Campus area	25981
2.	Built up area of the building	3418
3.	Built up area of administrative Block (Office)	360
4.	Room E Class	400
5.	Botany Lab area	1600
6.	Computer Dept. + Lecture theater + chemistry Dept.	4500
7.	Microbiology + Biotechnology	2400
8.	Zoology lab	3125
9.	Physics Lab	560
10.	Library (Varandah front back)	2125
11.	Class Room (with Varandah)	2240
12.	Staff Room	360
13.	Girls Common Room	400
14.	NAAC office	360
15.	Secretary office	450
16.	Principal office	450
17.	Toilet Block 1	105
	Toilet Block 2	110
	Toilet Block 3	126
18.	Principal	450
19.	NSS room	400
20.	Hall	2625
21.	Old Building	2100
22.	Home Science Dept.	3000

Water Consumption

S.	Water used for	April 2017 to March 2018
1.	Domestic Purpose	5000 Lit / day
2.	Gardening	15000 Lit / day
3.	Laboratory Purpose	5000 Lit / day

Electricity consumption

Electricity consumption	Uses
Per day	680 Unit kwH
Per Month	2147 Unit kwH
Per Year	25764 Unit kwH

Solid Wastes

S.	Source of Waste	Total Quality	Method of Disposal
1	Solid waste from trees dropping & Lawn	10 kg/ day	Vermi composting +
2.	Solid waste from Chemistry Botany and Zoology lab	04 kg/ day	Organic Manure
3.	Plastic waste	0.2 kg/ day	

E- Waste Management

The total No. of Computers in the institute – 52

Printers-06

Xerox machine-02

Plantation Awareness Program - The institute has organized "Tree Plantation program" at college campus and surrounding village (Chandni) through student Red Cross & NSS unit. The plantation program includes Plantation of various types of family (family- 56, Species angiosperms - 256 and species Gymnosperm-11 total 267) and also maintaining green house, Botanical garden including butterfly garden. This program helps in maintaining "eco-friendly" environment as well as provides pure oxygen within the institute.

Table (see in lat page)

Statistical analysis of Biodiversity

S.	Groups	Families	Species
1.	Angiosperms -Dicot	48	256
	Angiosperms -Monocot	08	
2.	Gymnosprm	-	11
	Grand Total	**56**	**267**

Summary (Biodiversity of plants)

Small size trees	-	24	Medium size trees	-	55
Large size trees	-	24	Bushes	-	05
Undergrowth	-	20	Small Bushes	-	58
Parasites	-	01	Herbs	-	04
Climber	-	06	Bamboos	-	01
Grass	-	11	Medicinal	-	27
Ornamental	-	20	Gymnosperms	-	11
Total	**:**	**106**		**:**	**161**

Grand total: 106+161= 267

Elevation of Main College Building

INFRASTRUCTURE AND GREENBELT AREA

TYPES OF ETHNOMEDICINAL PLANTS

TYPES OF DIVERGENT PLANTS

TYPES OF ETHNOTAXONOMICAL PLANTS

BUTTERFLY GARDEN (INDICATOR OF ENVIRONMENT)

Vermiculture composting Culture - The institute is has started vermiculture composting culture in campus during 2017-18 on 3×8 sq. meter land. The main purpose of this is to reduce disposable waste in the college campus and after complete process of vermicomposting it is used as manure and awareness in students & farmers. The main benefits of the process are to reduce the waste in the environment and also it is cost savings process.

Bio waste management

Vermicomposting

Aquarium - A aquarium is a transparent container in which aquatic animals are kept along with aquatic plants, rocks, gravels, artificial decorative etc. Simulating natural environment. It enables the students to have a close view of the fishes of different varieties. Which caters to our objective of providing practical knowledge along with theoretical knowledge to the students and brings students closes to natural environment.

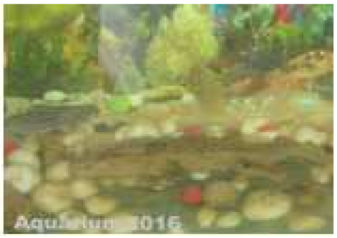

Mushroom culture - We are also cultivating mushroom of oyster variety.

Noise level limits in the campus - As a part of green audit of campus, through one day seminar & workshop on "NOISE POLLUTION and IT'S EFFECT ON HUMAN HEALTH ", the students were asked to check the noise level in the campus by using sound level meter and they observed that the noise level in the campus is well within the limit i.e. below 50 dB at day time.

Environment awareness program - While maintain the environment awareness program in the campus it is compulsory subject to all second year student which is irrespective to particular branches (In foundation course)

Awareness of carbon consumption - In the college campus almost 90% of students are using bicycle. Due to awareness program in the campus air quality within it is non polluted.

Result and Discussion - The environmental awareness initiatives are substantial. Paperless work system and vermicomposting practices are noteworthy. Besides, environmental awareness programs initiated by the administration shows how the campus is giving green. As part of green audit of campus, we carried out the environmental monitoring of campus includes noise level, ventilation and indoor air quality of the class room. It was observed that illumination and ventilation is adequate considering natural light and air velocity present.

Conclusion - Green audit is the most efficient & ecological way to solve such a environmental problem. It is necessary to conduct a green audit in college campus because student aware of the green audit, its advantages to save the planet & they become good citizen of our country. Further we hope this will boost the new generation to take care of environment and propagate these views for many generations to come.

Acknowledgement - I am grateful to the worthy members of the S.G. J. Quaderia College, Burhanpur, M.P., India. (Quaderia Educational and Culture Society) for permitting me to carry out this study. I am also thankful to respected Secretary Mulla Ali Asgar Bhai Takliwala, Director Prof. M.H. Saleem, Principal Prof. Dr. M.I.R. Khan, Coordinator (IQAC), Prof. Dr. (Smt.) Rajkumari George, Prof. Lokesh Pooniwala and staff members of Botany Deptt; for encouraging & support during this prestigious project.

I tack this as a golden chance to express my deep depth of regards to Dr. (Smt.) Sakun Mishra, Member Secretary, MP pollution Control Board, Bhopal, Divisional Forest Officer Burhanpur, MP, for giving all the encouragement and guidance, support and keen attention during the study.

References :-

1. Adeniji, A.A. (2008) Audit and Assurance services, Lagos: Value Analyst concept of Green Audit.
2. Anandraj, Sahu (2012), "Green Audit: How Practically facing of changing business perspective towards nature."

S.	BiodiversityLocal Name	Total No of Plants			Popular Name Famous Name	Botanical Name	Family
		2015 -16	2016 -17	2017 -18			
Small Size Trees							
1	Amaltas	01	02	02	Amaltas	Cassia fistula	Caesalpinoideae
2	Arandi	01	01	01	Arandi	Ricinus communis	Euphorbiaceae
Medium Size Tress							
3	Babool	01	02	02	Babool	Acacia arobica	Mimosoideae
Large Size Tress							
4	Imli	01	01	02	Imli	Tamarindus Indica	Caesalpinoideae
5	Casurina	19	20	21	Casurina	Casurina equisitifolia	Casurinaceae
6	Jamun	01	01	01	Jamun	Syzygium Cuminii	Myrtaceae
Bushes							
7	Aak	01	02	02	Aak	Calotropis Procera	Aselepiadaceae
8	Karonda(Kakronda)	01	01	03	Karonda	Carissa Spinarum	Apocynaeeae
Undergrowth							
9	Ashwgandha	03	05	06	Ashwgandha	Withania Somnifera	Solanaeae
10	Lazni	04	10	12	Lazwanti	Mimosa Pudica	Mimosoidae
11	satawari	01	01	01	Satawar	Asparagus recemosus	Liliaceae
12	Gudhal	01	01	01	Gudhal	Hibiscus rosa, Synansis L.sp.pl.	Malvaceae
Small Bushes							
13	Kala Datura	01	04	06	Datura	Motel	Solanaceae
14	Madaar Parasite	02	04	07	Aak	Calotropis Procera	Aselepiadaeeae
15	Amarbel Herbs	01	01	02	Amarbel	Cuseuta reflexa	Convolvulaceae
16	Gokru	05	10	15	Gokru	Tribulus terresteris terresteris	Zygophyllaceae
17	Tulsi	03	10	19	Tulsi	Ocimum Sanctum	Labiatae
18	Bhata (Brinjal)	01	05	08	Began	Solanum Melongena	Solanaceae
19	Safed Musli	00	05	01	Safed Musli	Chlorophytum tuberosum	Orchidaceae
Climbers							
20	Kankarwa	01	04	05	Kankarwa	Ditoria turnata	Papilionaeeae
Bamboo							
21	Bamboo	00	01	01	Bamboo	Dendrocalamus strictus	Poaceae
Grass							
21	Duba	00	00	08	Doob	Cynodon daetylon	Graminae (poaceae)
22	Common Ghass	00	00	03	Ghass	Pennicum Indicum	Poaceae
Small Size Tress							
23	Gul Mohar	02	07	09	Gul Mohar	Delonix indicum	Caesalpinoideae
24	Nimbu (citrno)	01	03	04	Neebu	Citrus Lemonia	Rutaceae
25	Nagfani	01	04	05	Nagfani	Opuntia Dillenii	Cactaceae
26	Baer (Zizipus)	01	01	01	Ber	Zizyphus moureitiana	Rhanaceae
27	Mithi Neem	01	05	07	Mithi neem	Murraya Koenigii	Miliaceae
28	Willayati Babool	01	01	01	Willayati Babool	Parkinsonia Aculeota	Caesalpinoideae
29	Willayati Imli	01	01	02	Willayati Imli	Pithecolobium dulce	Papilionaceae
30	Shehtoot	01	01	01	Shehtoot	Morus alba	Moraceae
31	Sejha	01	01	02	Munga	Moringa elleffera	Moringaaceae
32	Sitafal	03	10	16	Sitafal	Annona squamosa	Annonaceae
33	Selfund	01	01	05	Nivarang	Euphorbia nivulia	Euphorbiaeeae
Medium Size Trees							
34	Sheeshum	07	08	10	Sheeshum	Dalbegia Latifolia	Papilionateae
35	Deshi Badam	03	06	08	Deshi Badam	Terminala catappa	Combretaceae
36	Neem	10	20	25	Neem	Azadirachta indica	Meliaeeae

37	Neelgiri	01	01	02	Neelgiri	Eucalyptus teretecornis	Myrtaeeae
38	Peepal	15	20	25	Peepal	Ficus religiosa	Moraceae
39	Badh	01	01	02	Bargad	Ficus bengalensis	Moraceae
40	Saggon	01	01	01	Sagoon	Teetona Grandis	Verbenaceae
Medicinal Plants							
41	Safed Musli	04	05	01	Safed Musli	Chlorophytum tuberosum	Amonillidaeeae
42	Jangli Tulsi	05	10	15	Jangli Tulsi	Ocimum basilicum	Labiateae
43	Bhat Kattiya	03	04	05	Bhat Kattiya	Solanum zanthoearpum	Solanaeeae
44	Aadha Sisi	03	04	10	Gokhru	Tribulus terrestris	zygophyllaceae
45	Bhindi	04	10	11	Okra	Abelmosecus eseulentus	Malvaceae
46	Pudina	09	10	25	Mentha	Mentha sp.	Lamiaceae
47	Rose	04	05	45	Gulab	Rosa damascena	Rosaceae
48	Pyaz	01	10	15	Onion	Allium Sepa	Liliaeeae
49	Pili Sarsoo	03	05	10	Yellow mustard	Brassica campestris	Cruciferae
50	Kewra	01	01	01	Kewra	Pandanus odoratissimus	Pandanaceae
51	Ajwain	01	02	05	Ajwain	Prachyspermum ammi	Apiaceae
52	Pan	19	20	25	Betel	Piper betle	Piperaceae
53	Euphorbia	02	03	15	Euphorbia	Euphorbia hirta	Euphorbiaceae
54	Hatjod	04	06	02	Hatjod	Cissus quadrangularis	Vitaceae
55	American chili	19	20	10	American Mirch	Capsicum annuum	Solanaceae
56	Patthar chatta	03	04	05	Patthar chatta	Bryophyllum pinnatum	Crassulaceae
57	Insulin	01	02	02	Insulin	Chamauostus cuspidatus	Costaceae
58	American aloe	08	09	10	American aloe	Agave Americana	Agavaceae
59	Safed siris	01	01	01	Safed siris	Albizia procera	Mimosaceae
60	Boogan bel	08	10	11	Boogan bel	Bougainvillea glabra	Nyctaginaceae
61	Ber	01	01	01	Ber	Ziziphus mauritiana	Rhamnaceae
62	Lahsun	08	20	25	Lahsun	Allium sativum	Alliaceae
63	Chiku	01	01	01	Chiku	Manilkara zapota	Sapotaceae
64	Railway creeper	01	01	02	Railway creeper	Ipomea cairica	Convolvulaceae
65	Coat buttons	08	20	22	Coat buttons	Tridex procumbens	Asteraceae
66	Giloy	03	05	06	Giloy	Tinospora cordifolia	Menispermaceae
67	Salvadora	01	01	01	Salvadora	Salvadora persica	Salvadoraceae
68	Ashoka	04	05	08	Ashoka	Saraca asoca	caesalpiniaceae
Ornamental Plants							
69	Bottle Brush	01	01	01	Bottle brush	Callistemon sp.	Myrtaeeae
70	Firebush	02	03	04	Firebush	Hamelia Plants Jacqenum pl.	Rubiaceae
71	Sadabahar	05	10	11	Sadasuhagan	Vinka rosea	Apoeynaeeae
72	Euphorbia	02	03	05	Euphorbia	Euphorbia pulchrryma	Euphorbiaeeae
73	Kaner	08	13	13	Kaner	Thevelia peruviana (pers)schum	Apocynaeeae
74	Kamal	02	04	06	Lotus	Nymphia sp.	Nymphiceae
75	Genda	08	10	12	Genda	Tagetes ereetal	Asteraceae
76	Petunia	08	10	15	Petunia	Petunia sp.	Solanaeeae
77	Kagaz ke phool	09	10	18	Kagaz ke phool	Polygonum sp.	Polygoniaceae
78	Mehndi	03	04	04	Mehndi Heena	Lewsonia inermus(L.)	Lythraceae
Family							
79	Satyanashi	07	10	10	Pilicatai	Arqimone mexsikiana	Papaveraceae
80	Makoli	06	10	10	Makoli	Solanum nigram	Solanaceae
81	Dhaniya	01	02	03	Dhaniya	Coriandrumsp.	Umbelliferae
82	Peeli Kaner	09	13	14	Peeli Kaner	Casebella thevetia (L.)	Lippid
83	Palm	02	03	03	Palm	Chamaerops humilis L.	Areceaceae
84	Euphorbia	02	03	05	Euphorbia	Euphorbia hirta	Euphorbiaceae
85	Papita	04	06	07	Papaya	Carica Papaya	Caricaceae

86	Touch me not Chuimui	03	05	06	Lajwanti	Mimosa pudica Linn.	Mimosoideae
87	Khatti Buttti	04	05	06	Khatti Butti	Oxalis Achalypha indica	Euphorbiaceae
88	Chaullai	06	10	11	Chaulai	Amaranthus	
Amaranthaeeae							
89	Sitab	03	04	15	Sitab	Ruta graviens	Rutaeeae
90	Andosa	04	05	06	Aadusa	Adhatoda vasica	Aconthaeeae
91	Champa	00	01	01	Champa	Michelia champaea Linn	Magnoliaceae
92	Mango	01	01	02	Aam	Mangifera indica L.	Myrtaeeae
96	Amrood	01	02	02	Jaam	Psidium gujava L.	Anacardiaceae
97	Amla	01	02	02	Amla	Phyllanthus fraternas	Enphorbiaeeae
98	Beel	01	01	02	Beel	Aegle marmelos (L.)	Rutaeeae
99	Agave	23	04	06	Agave	Agave amiricana	Agavaceae
100	Bottlepalm	19	20	21	Bottlepalm	Hyophorbe lagenicaulis	Arecaceae
101	Gwarpatha	04	10	10	Gwarpatha	Aloe vera L. Burm L.	Liliaceae
102	Gulmohar	04	07	08	Gulmohar	Delonix regia	
Caesalpinoideae							
103	Nirgundi	00	01	01	Nirgundi	Vitex- migundol	Verbenaeeae
104	Croton	02	03	03	Croton	Codicum Varigatum(L.) BLBijp.	Euphorbiaeeae
105	Kaner	02	03	04	Kanher	Nerium indicum Nill	Apocynaeeae
106	Vidhya	10	20	22	Thuja(Morpankh)	Platy eladus orientalis(L.)	Cupressaceae
107	Gulab	02	02	03	Gulab	Rosa indica L.sp.	Rosaceaae
108	Gulab	00	01	02	Gulab	Rosa domoscena Mill.	Rosaceae
109	Gulab	00	01	03	Gulab	Rosa multiflora thunb.	Rosaceae
110	Yellow rain lily	09	20	23	Zephyranthes	citring baker.bot.	Amaryllidaceae
111	Madhumati	03	04	06	Gelphimia	Gracilis (Bart c)	Malphigaceae
112	Giant	02	02	02	False agave	Furcraea gracilis(Barti)	Malphigaceae
113	Kelly	01	02	04	Kardal	Canna indica L.sp.pl.	Cannaceae
114	Sultan	04	05	06	Sultan	Aealypha hispida Jpg.	Euphorbiaceae
115	Kamal	02	04	06	Kamal ka phool	Nymphaea nouchali burm	Nympheae
116	Hydrilla	08	10	11	Hydrilla	Hydrilla Verticillata (L.f.)Royle	Hydrocharitaceae
117	Hydrilla	01	02	03	Hydrilla	Ipomoea pes-tigridis L.	Convolvulaceae
118	Hydrilla	00	02	04	Hydrilla	Ageratum Conyzoides L	Compositae
119	Hydrilla	00	02	06	Hydrilla	Boerhavia repens L.var.diffusa(L.)	Moorthy
120	Dawal	01	02	04	Anjan Lokariya	Tephrosia purpurea(L.) Pres.	Liguminosae
Gymnosperm							
121	Cycus	01	02	05	Cycus	Cycus revolute	Cycadaceae
122	Cycus	01	02	06	Cycus	Cycus circinalis	Cycadaceae

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Introduction to the Theory of Mimesis

Dr. Uttam.B. Parekar *

Introduction - Every theorist puts forth a new perspective for better understanding and presentation of contemporary life in a work of art. Every new theory provides a new vision to the contemporary creative writers and helps them present the contemporary reality in different style. Because of restless energies of man Life is never the same in all ages. Every new age brings along new challenges, and the traditional theory fails the contemporary writer in catching the spirit of his age in his work of art. However, new theories are formulated.

Plato defined work of art as 'Imitation of life as it is reflection of the prototypes.' But Aristotle differed with Plato on this definition of art. Aristotle defined 'Art as idealized imitation of life.' Objective of this research paper is to present Aristotle's classical theory of Mimesis with all essential elements.

Aristotle's Theory of Mimesis - Aristotle's 'Poetics', written in 330 B.C., is a systematic, though incomplete, inquiry into the nature of art and poetry. It devotes more space to the discussion of dramatic theory rather than to the enumeration of the process of poetic creation. Aristotle's 'Poetics' runs into twenty six chapters. First three chapters have been devoted to the discussion of his theory of imitation. Chapter IV discusses the origin of poetry and its development into the forms of tragedy and comedy. Chapter V gives a brief definition of comedy. In chapter VI he gives a formal definition of tragedy and comments on its qualitative parts namely: plot, character, thought, diction, song, and spectacle. From chapter VII to XIV he discusses the nature of plot, process of its construction, essential features of plot such as hamartia, reversal, and recognition. From chapter XVI to XVIII he discusses various kinds of recognition, and rules for sketching of the events. The language of the drama has been analysed and its suitability considered in chapters from XIX to XXII. In chapter XXIII he explains what epic poetry is and in chapters XXIV and XXVI he makes a comparison between tragedy and epic poetry.

Aristotle's concept of art is an antithesis of Plato's concept of art which rejects the world as a mere shadow of reality. According to Aristotle art to human society is what Nature is Life. Nature makes life ever progressive by exercising the methods of 1- Natural Selection, 2- Obedience of Natural Law, and 3- Struggle for Existence. As in life those unfit to struggle extinct, similarly in 'Tragedy' the tragic hero violates moral law and ultimately meets tragic death.

Aristotle was the first theorist who laid down the theoretic distinction between useful art and fine art. Epic literature of Homer, tragedies of Sophocles, his predecessor and contemporary Greek poets and dramatists formed a basis for Aristotle to develop his theory of Mimesis. Sophocles' 'Oedipus Rex Complex' is the illustrious work of art very often quoted by Aristotle in propounding his Theory of Mimetic the 'Poetics'.Aristotle's Theory of Mimetic as figured in 'Poetics' could be discussed under following heads:

Poetry (Drama) as a Fine Art - In 'Poetics' Aristotle contradicts philosophical foundation of Plato's theory of Art and propounds his new 'Theory of Poetry and Fine Art' on the basis of scientific reasoning. In respect of origin (of perception) the two schools of thought are distinguished - The first is convinced that such perception is 'derived from experience', while the second holds that 'perception does not depend on experience, but on reason'. Aristotle says that Fine Poetry is an idealized imitation of Nature. Fine Art is the manifestation of a higher truth, expression of the universal which is not outside and apart from the particular, but presupposed in each particular.

Fine Art forms differ from one another in respect of medium of mimesis, object of mimesis, and manner of mimesis. In a work of art, the intuition of the artist which is a higher faculty of the soul, establishes a direct rapport with the highest truth and reality, and that is the ultimate end of art.

Drama Defined - Aristotle gives a historical perspective of the origin of drama and defines tragedy: "Tragedy, then, is an imitation of an action that is serious, complete and of a certain magnitude; in language embellished with each kind of artistic ornament."[1]

He writes about the origin of comedy in following words - Comedy had no history, because it was not at first treated seriously. Comedy had already taken definite shape when comic poets, distinctively so called, are heard of, who

* Yeshwant Mahavidyalaya, Wardha (Maharashtra) INDIA

furnished it with masks, or prologues, or increased the number of actors - these and other similar details remain unknown.[2]

Aristotle says that the terms 'Serious' and 'Trivial' differentiate Tragedy from Comedy. He says that Tragedy and Comedy are differentiated on the basis of their objects of imitation. In tragedy 'men in action' are obviously serious, while those in comedy are trivial. The function of tragedy is suggested by the term 'Catharsis' and the function of comedy, by 'Ludicrous'.

Aristotle classified tragedy into four types namely: Complex Tragedy, Pathetic Tragedy, Ethical Tragedy, and Simple Tragedy or Tragedy of Spectacle.

He analyses tragedy into six constituent elements. The first three elements are:

1. Plot or the arrangement of incidents concerning human actions or experiences.
2. Character of different personae.
3. Thought which gives an impression about the intellectual qualities of different characters related with the objects of imitation.

The other two elements - *Diction* and *Melody* - are the means of imitation employed by the dramatist in order to enhance the beauty and effectiveness of expression in the drama. The last element i.e. *Spectacle* - is the manner of imitation. It is concerned with the way the tragedy is to be presented on the stage before the audience.

Plot - In chapter VI of Poetics Aristotle defines plot as 'the arrangement of the incidents'. Aristotle considers 'plot to be the soul of tragedy'. In this analogy Aristotle means to convince that as 'soul' comes prior to the 'body', 'plot' comes to the drama in exactly the same manner. The drama is a living organism and plot is its animating principle. Just as the soul gives life to the body, so does plot to drama. According to Aristotle plot is the most significant ordering principle in a work of art. Plot of a play signifies the course of action of the play that ranges from the Complication to Climax to the Denouement or Resolution and ultimately to the Conclusion. He has divided the plot into the five stages - (1) Initial incident, (2) Rising action, (3) Climax, (4) Resolution, (5)Conclusion.

Aristotle classifies Plot into two types - (1) Simple Plot, and (2) Complex Plot. Aristotle prefers the Complex Plot because it is capable of arousing the tragic emotions more effectively. In the tragic plot the outcome is unexpected but logical and convincing. Defining it he says, "A Complex Action is one in which the change is accompanied by such Reversal or Recognition or by both. These last should arise from the internal structure of the plot, so that what follows should be the necessary or probable result of the preceding action."[3]

Aristotle's term 'Mythos' has been rendered by translators as - plot, fable, or story. The dramatist, who is a maker of mythos, makes his work a unity and a whole. This unity constitutes the beauty of the work. P. S. Shastri explains Aristotle's term 'Action' in the following words.

When Aristotle was thus led to make action central or basic to an epic or tragedy, he meant by action that which arises from an inward process. What we witness is a caused action. The uncaused is the improbable which has no rational place, except under certain conditions, in a work of art. The development of action has to agree with the logic of human experience.[4]

I - Dramatic Unities - So far as the three Dramatic Unities are concerned Aristotle is emphatic only about the Unity of Action. The dramatic unities are the techniques of dramatic representation which help the dramatist in maintaining coherence and harmony in a work of art. Unities refer to a sense of oneness in many. Unity of the tragic action is, again, an organic unity, an inward principle which reveals itself in the form of an outward whole. Unity is manifested mainly in two ways - (1) In the causal connection unity binds together the several parts of a play - the thoughts, the emotions, the decisions of the will, the external events, being inextricably interwoven. (2) Unity directs the whole series of events with all the moral forces that are brought into collision, to a single end.

He says that a drama must begin at a definite point. The 'Beginning' of a drama is the natural sequel of something. 'Middle' must follow the 'Beginning' with a strict sequence of cause and effect. And the 'End' is causally connected wit the 'Middle'. The end is linked to the beginning with the inevitable certainty, and in the end we discern the meaning of the whole. In this powerful and concentrated impression lies the supreme test of Unity of Action.

Unity of Action is the most fundamental and controlling force in drama whereas the other two Unities - Unity of Time and Unity of Place, are of secondary and derivative importance only. Aristotle carries the discussion forward from the interpretation of the unity of plot to the discussion of the sources of Poetic Unity, that is, the principle of Probability and Necessity. This principle is normally considered as the 'Unifying Principle' brought out by the arrangement of incidents in a drama. Probability and Necessity are thus the principles of causality. Aristotle points out that the plots which are lacking in Probability or Necessity are known as 'Episodic'. Aristotle is convinced that the principle of Probability and Necessity cannot in itself evoke the intensity of pity and fear. A second condition required for this purpose is 'Surprise'.

II - Peripety (Reversal of Situation) and Anagnorisis (Recognition) - "Reversal of Situation is a change by which action veers round to its opposite.'[5] Bywater suggests, "A Peripety is said to take place when something done by a man with a certain end in view has consequences of a direct opposite kind."[6] Aristotle says that the most forceful tragedy is that where people are not struck down by their Destiny or Chance. It becomes most effective only when they become the cause of their own destruction.

Aristotle defines the second term 'Anagnorisis' or 'Recognition' in following words, "Recognition, as the name indicates, is a change from ignorance to knowledge,

producing love or hate between the persons destined by the poet for good or bad fortune."[7] Greek playwrights used Anagnorisis as an artificial device to show the tragic characters gaining recognition through their sufferings. From these sufferings emerge a new 'perception, insight, understanding perhaps even wisdom. In the opinion of Aristotle there are six kinds of Recognition - (1) Recognition by signs or marks, (2) The second kind of Recognition is invented by the poet's mind and manipulated by the poet himself e.g. Orestes' exclamation in Euipides' play 'Iphigenia in Tauris'. (3) The third kind of Recognition 'depends on memory when the sight of some object awakens a feeling'.[8] (4) The fourth kind of Recognition is related to the process of logical speculation. (5) The fifth kind of Recognition refers to the recognition by false reasoning. It may be considered as the recognition by bluff which is often used by detectives. (6) The sixth kind of Recognition "arises from the incidents themselves where the startling discovery is made by natural means."[9]

III - Catharsis or Pathos (Scene of Suffering) - Aristotle employs Catharsis as a device in his theory of tragedy with a hope that by using it in his tragic play a dramatist can expel excessive painful and fearful emotions from the minds of the audience and restore in them a healthy equilibrium of emotions. Aristotle defines Fear to be 'a species of pain or disturbance arising from an impression of impending evil which is destructive or painful in nature."[10] According to Aristotle pity turns into fear where the object is so nearly related to us that the suffering seems to be our own, thus pity and fear are strictly correlated feelings. F.L.Lucas says that Aristotle uses Catharsis as a medical metaphor, "Catharsis here is a medical metaphor - 'Purgation' denotes a pathological effect on the soul analogous to the effect of medicine on body…Tragedy excites the emotions of pity and fear - kindred emotions that are in the breasts of all men - and by the act of excitation affords a pleasurable relief."[11]

Catharsis, in Aristotle's Mimetic Theory, is concerned with the technique of tragedy and not with the psychological reaction of the audience.

1. The purification in a tragedy is not the purification of pity and fear but the purification of the fatal or painful act which is the main ingredient of tragedy.
2. Purification is not brought about through pity and fear but through a sequence of pathetic and fearful incidents, as is evident from 13th chapter of the Poetics.
3. Purification does not occur through the text or the presentation of the text in the theatre but through the process of imitation which is the fundamental contribution of the dramatist.

We can pity the tragic hero only when it is established beyond doubt that he committed the fatal crime on account of some Hamartia in his character, though his intention was not bad.[12]

The Tragic Hero - According to Aristotle if drama is a living organism, the plot is its living principle and the hero is a chosen one to enhance improvement in the species of men. He discusses the concept of tragic hero in chapter XV. Tragic hero is an agent through whom the Catharsis is aroused. In chapter II Aristotle says that a tragic hero should be noble and of better sort. The goodness of the hero may be defined as 'the quality that provides moral elevation in the tragic character.' The tragic hero should be good but not a perfect character. He should be a man with an inbuilt flaw.

The second requirement of the hero of the tragedy is that he should not be a bad man passing from adversity to prosperity. The third requirement of the hero of the tragedy is that he should not be an utter villain as his downfall would neither arouse pity nor fear for "pity is aroused by unmerited misfortune, fear by the misfortune of a man like ourselves."[13] The fourth requirement of a tragic hero is that he should not be a perfectly virtuous man, as then there would be no 'necessary and probable' connection between his original tragic deed and his catastrophe.

Hamartia (Flaw) - Aristotle uses the term Hamartia in connection with the character of the hero to underscore the cause of his downfall. "Hamartia covers any human frailty or moral weakness, a flaw of character that is not tainted by a vicious purpose."[14] Aristotle uses the Hamartia in the context of Sophocles' ideal tragedy 'Oedipus the King'. The most important thing about Hamartia is that it should always be 'unintentional'.

Ethos (Moral Element) And Dianoia (Thought) - In Poetics Aristotle dwells upon the 'Thought' in 19th chapter. He writes about Thought at length in his 'Art of Rhetoric'. He says that Character and Thought are two distinct factors which unite to constitute the concrete and the living person. Dianoia is the Thought, the intellectual element, which is implied in all rational conduct, through which alone ethos (moral element represented by the permanent disposition and tendencies) can find outward expression, and which is separable from ethos only by a process of abstraction. Pointing out the distinction between the Ethos and Dianoia Aristotle says that the former finds expression through the manifestation of the character's moral choice or determination of the will, and the latter, through character's statements, the disproof of those of his opponents, his general maxims, his train of reasoning.

Diction and Melody - Aristotle says that Diction and Melody give linguistic adornments to the drama; They are not only tools of embellishment but an essential elements of drama. He defines Diction as 'the expression of the meaning in words'. By the term 'language embellished' he means the language that assimilates rhythm, harmony and song together. Melody refers to the sound impact of a word and utterance in the context of situation and the subject of dialogue

Spectacle - Aristotle admits that of all the elements of tragedy Spectacle is the "the least artistic and connected least with the art of poetry…Spectacle is one of the most significant factors that differentiates tragedy from the epic.

For the power of tragedy, we may be sure, is felt even apart from representation and actors."[15] Spectacle which refers to the costume, stage scenery, and paintings is not so much the concern of a playwright as that of a stage mechanist.

Conclusion - The *Poetics* is a monumental works in the field of dramatic theory in the West. This theory holds that drama provides instruction with delight and that it is an imitation of life with regard to recreation or representation of human life with all its varieties and manifestations. Aristotle's 'Catharsis' has remained a landmark in the history of Western aesthetics.

With regard to the structure of drama Aristotle says that the theme of drama may be derived either from history or tradition or the writer's own creative imagination. He is clearly in favour of the unity of action. Aristotle says that plot is the soul and the animating principle of the drama and all the scenes and episodes are to be causally inter-related and must contribute to the central plot. In his theory Aristotle recognizes the dominant status of the hero in the drama.

Regarding the types of drama Aristotle mentions only comedy and tragedy. Aristotle considers tragedy as the superior form of literature even to 'Epic' for it is a composite art form and that it bewares the audience against the evils and human lapses and helps them improve and make their life joyful. Tragedy is a tale of suffering, resulting from the protagonist's firm determination to fight against the forces which are hostile to him. Aristotle regards the inscrutable role of Fate in drama.

Aristotle's dramatic theory provides ideal form for the dramatists to manifest their own cultural values. Thus, Aristotelian drama emerged heroic in spirit. Aristotle's dramatic theory deals in dialectics as it portrays tragic hero as an existential character. Aristotelian drama is intellectual in content for it follows the laws of 'Necessity' and law of 'Probability'. The objective of the drama, according to Aristotle, is to generate in the audience Catharsis- a psychological state in which 'fear' is transformed into 'pity', a condition congenial for improvement in man.

Aristotle's Poetics is a critical commentary on the literary works of his contemporary writers and predecessors. Poetics abounds in formulations based on the aesthetic values cherished in the contemporary literary works. Aristotle's Mimetic theory is deducted from the works of many literary men.

References :-

1. Butcher, S.H.: Aristotle's Theory of Poetry and Fine Art, New Delhi, Ludhiana: Kalyan Publishers, 2002. P. 23
2. Ibid P. 21
3. Ibid P. 31
4. Sastri P. S.: Aristotle on the Art of Poetry, Agra- 3: Educational Publishers. P. 22
5. Rai, R. N. : Theory of Drama - A Comparative Study of Aristotle and Bharata, New Delhi: Classical Publishing Company, 1992. P. 210
6. Butcher, S.H.: Aristotle's Theory of Poetry and Fine Art, New Delhi, Ludhiana: Kalyan Publishers, 2002. P. 4
7. Bywater, I.: Aristotle on the Art of Poetry, Oxford: At the Clarenden Press, 1909. P. 201
8. Butcher, S.H.: Aristotle's Theory of Poetry and Fine Art, New Delhi, Ludhiana: Kalyan Publishers, 2002. P. 52
9. Rai, R. N. :Theory of Drama - A Comparative Study of Aristotle and Bharata, New Delhi: Classical Publishing Company, 1992. P. 37
10. Ibid P. 57
11. Butcher, S.H.: Aristotle's Theory of Poetry and Fine Art, New Delhi-Ludhiana: Kalyani Publishers, 2002. P. 256
12. Ibid P. 245
13. Ibid P. 255
14. Rai, R. N. :Theory of Drama - A Comparative Study of Aristotle and Bharata, New Delhi: Classical Publishing Company, 1992. P. 58
15. Ibid P. 185

****

आवर्ती विपणन केन्द्र का भौगोलिक अध्ययन

सत्यनारायण मालवीय *

प्रस्तावना – विपणन शब्द का प्रारंभ संस्कृत भाषा के **'विपण'** शब्द से हुआ है। क्रय–विक्रय के केन्द्र को 'बाजार' अथवा छोटे स्तर को व्यापारिक केन्द्र के रूप में व्याख्या मिलती है। क्रय–विक्रय का केन्द्र ही बाजार का केन्द्र है। जहाँ लोक अपनी अवश्यकता की वस्तुओं को खरीद बेचते हैं। दुकानों में वस्तुओं एवं सेवाओं की लगातार मांग बनी रहती है। गाँवों से आने वाली जनसंख्या रोज नगरों को आ सकती और अपनी अवश्यकता की सामाग्री को क्रय कर सकती है। अत: अपनी आवश्यकताओं के अनुरूदैनिक एवं आवर्ती विपणन केन्द्रों से पूर्ण करती है। इस तरह से विपणन केन्द्र स्थल के कार्य का सम्पादन करते रहे है। ऐसे क्षेत्रों में जहाँ अधिवास बिखरे हुए रूप में पाये जाते है। आवर्ती विपणन क्षेत्रों की आवश्यकता होती है। इसके आधार पर विपणन केन्द्रों की संख्या अधिक होती है। विपणन केन्द्रों के द्वारा ही प्रकिर्ण आधिवासी आवासीय सुविधा प्रदान किया करते हैं। आवर्ती केन्द्रों के आधार पर परिवहन अधिक महत्वपूर्ण होते हैं। जहाँ परिवहन सुविधा नहीं होती है। वहाँ बाजार आने जाने तक अनेक समस्याओं का समाना करना पड़ता है। इससे बाजारीकरण की विकास सम्भावनाएँ भी प्रभावित होती है। ऐसे क्षेत्रों हेतु सड़क और परिवहन की आवश्यकता अधिक होती है। विनिमय एक प्रक्रिया है। जिसकी अभिव्यक्ति विपणन में होती है। विपणन विनिमय का फलिभूत रूप है, तथा विपणन भूगोल विपणन का भूगोल है।

शोध प्रविधि– इस **आवर्ती विपणन केन्द्र का भौगोलिक अध्ययन** नामक शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीय शोध सामाग्री के द्वारा अध्ययन किया गया है। इसके साथ–साथ यथा उचित स्थान पर सन्दर्भ भी दिये गये हैं। यहाँ तक पुस्तकालय द्वारा प्राप्त सामाग्री के आधार पर और शोध पत्रिकाओं का भी अध्ययन समाहित है। इसके अतिरिक्त विद्वानों और जनसमुदाय के द्वारा भी साक्षात्कार के माध्याम से सुझाव प्राप्त किये गये हैं। इन्हीं तथ्यों की पुष्टि भी इस शोध पत्र में की गई है। आज विपणन केन्द्रों में सुविधाओं की समस्या और वहाँ परिवहन आदि की समस्या भी दिखाई दे रही है। कुछ जगहों में सभी सुविधाऐं होने के साथ भी नागरिक सुविधाओं का अभाव पाया गया है।

उद्देश्य :

1. इस शोध पत्र का उद्देश्य आम नागरिक को विपणन केन्द्रों की स्थापना होने से समय और परिवहन की समस्या का समाधान हो सकता है।
2. इसके साथ–साथ क्रय–विक्रय की गई वस्तु का हिसाब–किताब भी सुरक्षित होने से व्यापारी पर उपभोक्ताओं का विश्वास बना रहता है। अन्यथा दूसरी बार वह विक्रय की गई सामाग्री का नगद ही भुगतान पसन्द करता है।
3. विपणन केन्द्रों में परिवहन की सुविधा होने से अधिक से अधिक लाभ उपभोगता और व्यापारी दोनों को होता है।
4. आर्थिक क्रियाकलापों का रूप क्रमश: रूप सरल हो जा रहा है। क्योंकि नजदीकी केन्द्रों के पास बैंक और एटीएम.मशीन होने से व्यापारी और उपभोक्ता को नगद भुगतान प्राप्त हो जाता है।
5. आर्थिक क्रिया–कलापों की अभिव्यक्ति उत्पादन एवं उपभोग पर निर्भर होती है।

समस्याऐं :

1. विपणन केन्द्रों के नजदीक परिवहन सुविधा नहीं होने से क्रेताओं और विक्रेताओं को समस्याऐं आती है।
2. आर्थिक सुलभता हेतु विपणन केन्द्रों के नजदीक बैंक सुविधाओं के अभाव से क्रेता और विक्रेताओं दोनों को नुकसान होता है।
3. क्रय विक्रय की गई वस्तुओं को उपभोक्ता को नगद पैसा नहीं मिलने से दुकानदार की शाखा को नुकसान होता है।
4. भारतीय व्यापारिक केन्द्रों की विसंगतियों के परिणाम स्वरूप आने वाले समय में अधिक कठिनाईयों का समाना करना पड़ रहा है।
5. कच्चे माल की बढ़त कम होने से माँग बढ़ने से दाम भी बढ़ रहे हैं। इससे विपणन केन्द्रों को भी कम वस्तुओं के आने से हानि हो रही हैं।
6. क्रेताओं और विक्रेताओं के व्यवहार पर निर्भर करता है। उनका लेनदेन। यही उनकी शाख है। जिसकी सुरक्षा से मानव में व्यवहारिक वातावरण बना रहता है।
7. मानव विकास के लिए विपणन केन्द्रों की अत्यधिक आवश्यकता होती है। इसके बिना सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक विसंगतियाँ ये सभी को नुकसान का सामना करना पड़ता है।

समाधान – मनुष्य की आवश्यकताएँ अनंत होती है। उन अवश्यकताओं का निदान भी बाजार हो गई है। क्योंकि आज व्यक्ति में अहंकार के बीज तेजी से उत्पन्न हो रहे हैं। इन अहंकारों की बजह से व्यक्ति दूसरों की मदत और सामाग्री लेना नहीं चाहता है। उससे सभी सुविधाओं और वस्तुओं के लिए व्यक्ति बाजार पर निर्भर हो जाता है। यहीं मानव विकास का अवसर है। यहाँ तक मानव जीवन की अनन्त सुविधाओं के केन्द्र भी विपणन केन्द्र ही होते जा रहे हैं। पहले पडोसी के यहाँ ये नमक, माचिस, नात–रिश्तेदाओं के आने पर दूध आदि का मूल्य नहीं चुकाना पड़ता था। यह सभी वस्तुऐं आसानी से मिल जाती थी। किन्तु आज यह वस्तुऐं पैसा देने पर भी पड़ोसी नहीं देना चाहता है। इसके साथ वह व्यक्ति भी मागना भी नहीं चाहता है। ऐसी

* शोधार्थी (भूगोल) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

विसंगतियाँ भारतीय समाज में उत्पन्न हो रही है। इसी कारण भौगोलिक वातावरण भी गड़बड़ा गया है।

आज कि विपणन क्रिया मनुष्य की सहज या आसान प्रक्रिया नहीं है। योंकि मानव विकास का आज दौर चल रहा है। यहाँ तक सामाजिक विसंगतियों को खत्म करने में भाईचारे की व्यवस्था ही महत्वपूर्ण मानी जाती हैं। आदिसे मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति व्यवहार के आधार पर करता आया है। किन्तु पूजीवादी व्यवस्था ने इन सब अबगुणों को आत्मसात कर उनके पहरेदार बन गई है। यहीं मानवीय सामाजिकता के लिए विपणन केन्द्रों की अधिक आवश्यकता महसूस हो रही है।

मनुष्य अपने अस्तित्व के लिए प्रकृति पर निर्भर है। वह प्रकृति की पूजा को पहले लोग महत्व देते थें। किन्तु अब आधुनिकता की दौड़ में सभी अन्धें होकर पैसे के पीछे दौड़ रहें है। यहाँ तक विपणन केन्द्रों में चोरी से लेकर फिरौती तक की आड़ में लोग उतर आये है।

प्रकृति से समायोजन या सन्तुलन स्थापित करने कि प्रक्रिया में मनुष्य कुछ कार्य करता है। नैतिकता और उदरता पूर्ण पोषण की आवश्यकता होती है। इसी कारण मानव का विकास भी प्रकृति के संतुलन पर निर्भर करता है। मानवीय जीवन का आधार भूत तत्व है। जहाँ प्रत्यक्ष ही परोक्ष रूप से कार्य करने में लगा रहा है। वहाँ वैचारिक संघर्ष के आधार पर दुकानों पर चोरी टैक्स चोरी आदि का कारण असमाजिकता का परिणाम है। लोगों में ईमानदारी नाम की कोई भी चीज नहीं है। पैसे के लिए कुछ भी कर सकता है। प्रकृति प्रदत्त पदार्थों का संकलन उसका प्रमुख कार्य रहा हैं उसे इन वस्तुओं के भण्डारण अथवा स्थानन्तरण कि आवश्यकता नहीं पड़ती।

जनसंख्या कम और प्रकृति सम्पन्न थी। जनसंख्या बढ़ने पर मनुष्य में क्षेत्रिय प्रसार के प्रति संवेदना उत्पन्न हुई। जिससे मानव में विकास के साथ-साथ बाजार की आवश्यकता पड़ने लगी। जनसंख्या का कुछ प्रतिशत भाग ही कृकार्यो में लिप्त रहकर अपने जीवन को काट रहा है। कुछ मजदूरी कुछ नौकरी आदि के द्वारा जीवन निर्वहन कर रहे हैं। यहीं मानवीय जीवन का सबसे बड़ा उदाहरण आज सामने आ पाया है। वहीं पर उल्लेखित समस्याओं का परिणाम भी सामाजिकता पर आधारित है। यही कारण है कि विपणन केन्द्रों के विकास की दिशा में अग्रसर है। इससे लाभ भी हो रहे हैं। मानव समाज का एक दायरा भी इससे विकसित होता जा रहा है। यहीं मानवीय विकास का महत्वपूर्ण योगदान है।

निष्कर्ष – समाज या कबीला अपने ही क्षेत्र की परिधी में ही आज छोटी-छोटी दुकानों को डालकर आम जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति कर रहा है। यही मारवीय जीवन का सारभूत तत्व है। वह प्राकृतिक संसाधनों का अधिक उपयोग करहा है। इसी कारण उनमें अनेक समस्याऐं उत्पन्न हो रही है। जहाँ मानव विकास का दायरा तय होने में लगा हुआ है। यही मानवीय विकास एक सफल उदाहरण हमारे सामाने हैं कि विपणन केन्द्रों के द्वारा छोटी-छोटी वस्तुऐं नजदीकी केन्द्रों में प्राप्त होने लगी है। इससे व्यक्ति अवश्यकताऐं पूर्ण हो रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीवास्तव, डॉ.वीरेन्द्र कुमार एवं रामस्वरूप दीक्षित, विपणन भूगोल : पृष्ठ 11
2. करन एमपी, नगरीय भूगोल, किताब घर आचार्य नगर कानपुर, चतुर्थ संस्करण 1987, पृष्ठ 25-45
3. दुबे, वेचन एवं सिंह मंगला, समन्वित ग्रामीण विकास, जीवन धारा प्रका8ान दिल्ली, 1985, पृष्ठ 55
4. द्विवेदी, इन्द्रेश कुमार, औद्योगिक विकास एवं पर्यावरण, आशा पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ 25
5. दुबे, राजेश्वरी, नगरीय वातावरण की झुग्गी बस्ती में रहने वाली महिलाओं का स्तर, भोपाल नगर की भीमनगर बस्ती का प्रतीक अध्ययन, उत्तर भारत भूगोल पत्रिका अंक 34, 1998, पृ.109-111
6. बंशल, सुरेशचन्द्र : नगरीय भूगोल, मीनाक्षी प्रकाशन, वेगम ब्रिज मेरठ एवं आंसारी रोड़ दरियागंज, नई दिल्ली, पाँचवा संस्करण, 1987, पृष्ठ 360
7. राजपूत, डॉ.वी.एस.एवं तिवारी, डॉ आर.पी, संसाधन मूल्यांकन एवं, ग्रामीण विकास, ए.पी.एच.पब्लि8ांग नई दिल्ली, 2011-12, पृष्ठ 11

****

जैव विविधता संरक्षण एवं उपाय

डॉ. कल्पना कोठारी *

प्रस्तावना – 'जब रखोगे जीवो का ध्यान तभी बनेगा शरत महान,
जीवो का न करो संहार, धरती माँ की यही पुकार'

धरती माँ की गोद में विभिन्न प्रकार की विशिष्ट प्रजातियाँ पलती है, खेलती है। इन्ही विभिन्न प्रजातियों को जैव विविधता कहते है। जैव मंडल में प्रकृति के समस्त जिवित और निर्जीव, भौतिक और अभौतिक वस्तुओं के मध्य जो संतुलन है उसका कारण ही जैव विविधता है। जैव विविधता संरक्षण का आशय जैविक संसाधनों के प्रबंधन से है, जिससे उनके विस्तृत इस्तेमाल के साथ–साथ गुणवत्ता भी बनी रहे यह जरुरी है। संरक्षण की जिम्मेदारी हम सभी की है किन्तु हम अभी उतने जागरुक नही हुए जितने जैव संरक्षण के प्रति होना चाहिए। शासन और समाज दोनों को संगठित रुप से इस दिशा में कदम उठाने होगें। जो प्रजातियां विलुप्त की कगार पर है उनका संरक्षण सर्वप्रथम करना होगा। अगर जैव प्रजातियां संकट में है तो उसका निराकरण शीघ्र करवाने का प्रयास करना चाहिए। जैसे–जैसे जनसंख्या का घनत्व बढ रहा है वैसे–वैसे जीव जगत और पेड़–पौधों की प्रजातियाँ विलुप्त एवं संकटग्रस्त होती नजर आ रही है। वैज्ञानिको के अनुसार जीव जगत एवं पेड़–पौधों की प्रजातियों के सामुहिक विलुप्तीकरण के लिए उष्णकटीबंध बहुत कुछ जिम्मेदार है।

'जीव जन्तु पेड़ पौधों के लिए प्यार जगाओं,
जंगलों में न आग लगाओ।'

प्राय: देखा जाता है कि जंगलों को आग लगाकर या कटवा कर सपाट मैदान बनाया जाता है वहां बड़े–बड़े कारखानों का निर्माण किया जाता है जिससे जैव संरक्षण नही हो पाता वह खतरे से उभर ही नही पाता। जैव विलुप्तीकरण के दो कारण दिखते है पहला प्राकृतिक और दूसरा मानव द्वारा निर्मित। विश्व में जैव विविधता का निरन्तर ह्रास हो रहा है। अनेक प्रजातियाँ विलुप्त हो चुकी है और अनेक संकटग्रस्त है। जैव विविधता का बने रहना पारिस्थितिक तंत्रो की क्रियाशीलता एवं पर्यावरण की सुरक्षा के लिए आवष्यक है। आज सम्पूर्ण विश्व जैव विविधता के प्रति सचेत है तथा अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर इसे संरक्षित करने का प्रयत्न हो रहा है।

जैव विविधता को संरक्षित करने की दो पद्धतियां है–
(अ) स्वस्थाने या स्व आवासीय संरक्षण,
(ब) बहिस्थाने संरक्षण,

(अ) स्वस्थाने या स्व आवासीय संरक्ष

स्वस्थाने के अंतर्गत संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम में स्वस्थाने संरक्षण को परिभाषित करते हुए स्पष्ट किया है कि परिस्थिति तंत्र एवं प्राकृतिक आवासीय स्थलों का इस संरक्षण करना है, जिससे विभिन्न प्रजातियां प्राकृतिक पर्यावरण में विकसित हो सके। यह संरक्षण का उचित माध्यम है क्योंकि इसमे चारो ओर के प्राकृतिक वातावरण को संरक्षित किया जाता है जो जीवो को विकसित होने तथा उनके आस्तित्व को बनाए रखने में सहायक होता है। यह संरक्षण जैव विविधता प्रधान स्थलों में ही किया जाता है।

सर्वप्रथम इस प्रकार के विशिष्ट स्थलों का चयन किया जाता है तथा उसमें विशिष्ट प्रजातियों का संरक्षण प्राकृतिक रुप से किया जाता है। इसके लिए जीव मंडल रिजर्व अभ्यारण राष्ट्रीय पार्क आदि की स्थापना की जाती है। जीव मंडल रिजर्व की स्थापना का कार्यक्रम यूनस्को द्वारा (1971) मानव एवं जीव मंडल कार्यक्रम के अंतर्गत प्रारंभ किया गया। शरत में नीलगिरी, नंदादेवी, नोकरेक(मेघालय), मानस सुंदर वन(पं.बगाल), डिब्रु साईखोवा(असम), देहंग देवांग(अरुणाचल प्रदेश), पचमढी(मध्यप्रदेश), कंचन जंघा(सिक्कम) में स्थापित किए गए। राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्यों की स्थापना देश के विभिन्न क्षेत्रों में की गई है। बाघ परियोजना, सिंह परियोजना, हाथी परियोजना, पक्षी विहार, सैतखी संरक्षण गृह भी स्वस्थानिक जैव विविधता संरक्षण के अंतर्गत किया जा रहा है।

(ब) बहिस्थाने संरक्षण – जैव विविधता को उनके प्राकृतिक आवास स्थलों से बाहर संरक्षण करना भी आवश्यक है जो बहिस्थाने संरक्षण द्वारा किया जाता है। यह जीव विज्ञान पार्क, पादपीय उद्यान, वन संस्थान एवं कृषि शोध केन्द्रों द्वारा किया जाता है। इसमें अनुवांशिक संसाधन केन्द्रों की स्थापना कर जैव तकनीक से जीवों की संख्या को बनाये रखा जाता है। प्राकृतिक आवास स्थलों के नष्ट होने से कृत्रिम आवासीय क्षेत्रों को विकसित कर जैव विविधता को संरक्षित किया जाता हैं।

जैव विविधता संरक्षण हेतू चार प्रमुख सिद्धांत स्वीकार किए गए–

1 अक्रामक प्रजातियों के विरुद्ध युद्धस्तर पर कार्यवाही करना,
2. अंतर्राष्ट्रीय कम्पनियों को एक निर्देशिका देना जिससे वे जैव विविधता को बनाए रखे और इस दिशा में वित्तीय सहायता दें।
3. वनोन्मुलन को रोकने के उपाय करना तथा वन प्रबंधन को सतत विकासोन्मुख बनाना और
4. जैव विविधता संरक्षण की योजना तैयार करना और 2010 से उसे पूर्ण प्रभावशाली बनाना – शारत में जैव विविधता के संरक्षण पर पर्याप्त ध्यान दिया जा रहा है। यहां जीव मंडल, रिजर्व राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्यों की पूर्ण श्रृंखला विकसित की गई है, जिससे विभिन्न परिस्थितिक तंत्रो में जैव विविधता संरक्षण सरकारी स्तर पर किया जा रहा है। राज्य स्तर पर भी इसके लिए विभागीय स्तर पर कार्य किया जाता है। अनेक स्वयंसेवी संगठन भी इस दिशा में कार्यशील है। इनके लिए अनेक कानून भी बनाए गए है, जिन्हे समय–समय पर जैव संरक्षण के हित में संशोधित किया जाता है।

दैनिक जीवन की आवश्यकता भोजन, ईंधन, औषधि, चारा और वस्त्र

* प्राध्यापक विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत

आदि के कारण भी जैव संरक्षण सुरक्षित नही है। अत्यधिक दोहन के कारण भी वनस्पतियों के विलुप्त होने का खतरा मंडरा रहा है। धरती पर जैव विविधता के संरक्षण की कमी के लिए काफी हद तक सम्पूर्ण मानव जाति ही जिम्मेदार दिखती है, क्योंकि जो जिम्मेदारी उसने जैव संरक्षण संबंधी ईमानदारी से निभाना चाहिए वह अपने स्वार्थ, लापरवाही एवं गैर जिम्मेदारी युक्त व्यवहार के कारण नहीं निभा पाती।

जैव विविधता के संरक्षण से संबंधित सरकार ने भी विभिन्न क्षेत्रों में कानून लागू किए एवं जनता कानून का निर्वाह कर जैव विविधता संरक्षण का महत्व समझ उसका पालन करे यही कानून की जनता से अपेक्षा है।

'वन्य प्राणियों को बचाओ,
धरती को स्वर्ग बनाओ।'

मात्र ऐसे नारो का प्रचार करने दिवारो या पुस्तकों में लिखिने मात्र से ही जैव संरक्षण संभव नही। इन नारो की भावनाओं को महसूस कर व्यवहारिक तरीके से समस्त जनता ने आगे आकर जैव संरक्षण जैसे पुनित कार्य में योगदान देकर अन्य को भी प्रेरित करना चाहिए। तभी जैव संरक्षण के प्रति न्याय संगत माने जायेंगे।

'हर दिल में प्यार जगाओ,
जीवो को मरने से बचाओ,
धरती पर स्वर्ग लाओ,
वन्य प्राणियों को बचाओं।'

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नेट के माध्यम से
2. मौलिक

****

बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्वारा बौद्ध धर्म की दीक्षा: ग्रहण सामाजिक परिवर्तन का सार्थक प्रयास

डॉ. हितेन्द्र यादव *

शोध सारांश – डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्वारा बौद्ध धर्म की दीक्षा ग्रहण करना सिर्फ हिन्दू धर्म की कुरीतियों के खिलाफ एक क्रांति मात्र नहीं थी बल्कि यह समाज में फैली कुप्रथाओं के खिलाफ भी एक आन्दोलन था। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने यह दीक्षा लेकर ना केवल अन्ध विश्वास और रूढिवादिता के खिलाफ आवाज उठाई बल्कि दीक्षा के दौरान ली जाने वाली 22 प्रतिज्ञाओं के जरिये उस समय समाज में फैली अन्य बुराईयों को भी दूर करने का प्रयास किया।

शब्द कुंजी –दीक्षा:, कुरीतियाँ, पाखण्डवाद, प्रतिज्ञा, धर्मान्तरण, आडम्बर, सामाजिक न्याय, छुआछूत।

प्रस्तावना – बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म ही क्यों अपनाया? दरअसल बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर जहां एक और दलित पिछडे समाज को राजनीतिक अधिकार दिलाने के लिए और उनकी आर्थिक स्थिति सुधारने का लिए चिंतित थे वही हिन्दू धर्म के अंधविश्वासों और कलिष्ट कर्मकाण्डों में फसें हुए पिछडे समाज को सम्मानजनक जीवन जीने के लिए ऐसे धर्म की तलाश में भी थे जहां छुआछूत, जाति पाति जैसे घृणा पर आधारित भेदभाव ना हो। बाबा साहब का मन धार्मिक क्षेत्र में सुधार करने की सोच रहा था। उन्होने ईसाई, इस्लाम और सिक्ख धर्मो का गहन अध्ययन किया और महसूस किया कि जाति-पाति, छुआछूत कि बदबू बौद्ध धर्म में नही है। हालाकि उन्होने 1935 में हिन्दू धर्म की संकीर्णताओं से ऊबकर उसे त्यागने की घोषणा कर दी थी परन्तु 1956 में बौद्ध धर्म को अपनाने से पहले उन्होने 21 साल तक विभिन्न धर्मो को अध्ययन किया था। 1950 ई0 तक डॉ. भीमराव अम्बेडकर बौद्ध धर्म अपनाने का निश्चय कर चुके थे।

धर्म के नाम पर पाखण्डवाद के बाबा साहब अम्बेडकर विरोधी थे, किन्तु वे नास्तिक नहीं थे और धर्म को समाज के लिए आवश्यक मानते थे। उनका कहना था कि धर्म व्यक्ति के लिए होता है न की व्यक्ति धर्म के लिए। धर्म वह है जो लोगों को एकता के सुत्र में बांधे। बाबा साहिब ने उस दौर में धर्म और विज्ञान दोनों का एक साथ चिंतन किया और अन्धविश्वास और आडम्बरों से हटकर धर्म को समाज के विकास के लिए जोडा 13 अक्टूबर 1935 को बेबला में उन्होने घोषणा की मै हिन्दू धर्म में पैदा हुआ यह मेरे वश की बात नही थी, लेकिन मै हिन्दू धर्म में रहकर मरूंगा नही यह मेरे वश की बात है। उनके अनुसार मजहब वैयक्तिक होता है और धर्म सामाजिक होता है। 'सभी धर्म, धर्म नहीं है। केवल वही धर्म वास्तविक धर्म है जो तर्क एवं विवेकसंगत हो, सामाजिक नैतिकता पर आधारित हो, सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक हो और सभी काल में सभी मानव जाति की सेवा कर सकता हो।' वर्ण, वर्ग और जाति विहीन तथा उंच-नीच और छुआछूत की अमानवीय भावनाओं से मुक्त तथा आत्मा परमात्मा के दर्शन से दूर बौद्ध धर्म की और यद्यपि उनकी अभिरूचि पहले से थी परन्तु वे धर्म जैसी चीज को आंख बन्द करके त्यागना या अपनाना नहीं चाहते थे।

बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म ही क्यों अपनाया? दरअसल डॉ. अम्बेडकर जहां एक और दलित पिछडे समाज को राजनीतिक अधिकार दिलाने के लिए और उनकी आर्थिक स्थिति सुधारने का लिए चिंतित थे वही हिन्दू धर्म के अंधविश्वासों और कलिष्ट कर्मकाण्डों में फसें हुए पिछडे समाज को सम्मानजनक जीवन जीने के लिए ऐसे धर्म की तलाश में भी थे जहां छुआछूत, जाति पाति जैसे घृणा पर आधारित भेदभाव ना हो। डॉ. अम्बेडकर का मन धार्मिक क्षेत्र में सुधार करने की सोच रहा था। उन्होने ईसाई, इस्लाम और सिक्ख धर्मो का गहन अध्ययन किया और महसूस किया कि जाति-पाति, छुआछूत कि बदबू बौद्ध धर्म में नही है। हालाकि उन्होने 1935 में हिन्दू धर्म की संकीर्णताओं से ऊबकर उसे त्यागने की घोषणा कर दी थी परन्तु 1956 में बौद्ध धर्म को अपनाने से पहले उन्होने 21 साल तक विभिन्न धर्मो को अध्ययन किया था। 1950 ई0 तक डॉ. भीमराव अम्बेडकर बौद्ध धर्म अपनाने का निश्चय कर चुके थे। वे इस निश्चय पर पहुंच चुके थे कि 'अछुतो का शूद्र जातियों के पिछडेपन, गरीबी, अज्ञानता, निरक्षरता और गुलामी का मूल कारण हिन्दू धर्म ही है। हिन्दू धर्म जाति व्यवस्था के सहारे जीवित है और जाति व्यवस्था मानवीय संगठन की दुश्मन है। भारत में सब कुछ होने पर भी जाति व्यवस्था के कारण देष अपनी स्वतंत्रता कायम नही रख सका।' डॉ. अम्बेडकर द्वारा बौद्ध धर्म अपनाने के कुछ और कारण निम्न प्रकार से है-

1. बौद्ध धर्म की उत्पत्ति भारत में ही हुई और यह कोई विदेशी धर्म नही है।
2. बौद्ध धर्म सामाजिक समानता, वैचारिक स्वतंत्रता, करूणा, मैत्री, त्याग और दया की शिक्षा देता है।
3. बौद्ध धर्म की जाति-पाति, छुआछुत, अन्धविश्वास और रूढिवाद के लिए कोई स्थान नही है।
4. बौद्ध धर्म अन्य धर्मो की तरह ईश्वर, आत्मा, परमात्मा, चमत्कार, आत्मा के पुन: जन्म पर विश्वास नहीं करता है वह मनुष्य को स्वावलम्बी बनाता है, सामाजिक जिम्मेदारी सिखाता है और सम्मान के साथ जीवन जीने की शिक्षा देता है।
5. बौद्ध धर्म विज्ञान सम्मत है।
6. बौद्ध धर्म अपनाने से व्यक्ति उच्च संस्कृति और स्वस्थ परम्पराओं का उत्तराधिकारी बन जाता है।

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर (इतिहास) लाजपतराय महाविद्यालय, साहिबाबाद (उ.प्र.) भारत

7. हिन्दू धर्म अन्धविश्वासों, अन्धपरम्पराओं और कर्मकाण्डों से जकडा हुआ पराभाव की और जा रहा है और इस अवस्था में बौद्ध धर्म ही सर्वोत्तम विकल्प है।

डॉ. अम्बेडकर ने तमाम हिन्दू धर्म ग्रन्थों का बारीकी से अध्ययन किया था शयद ही उनके जमाने में किसी भी हिन्दू ने उनके जितना हिन्दू धर्मग्रन्थों का अध्ययन किया हो। उन्हे हिन्दू धर्म का पूर्ण रूप से ज्ञान हो चुका था। इस धर्म का अध्ययन करने के बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुचें थे कि हिन्दू धर्म केवल ब्राहमण वर्ग की ही हिमायत करता है। बाकि के सभी वर्णो का किसी न किसी तरह से धर्म के नाम पर ब्राहमण लोग शोषण करते है। डॉ. अम्बेडकर का मानना था कि धर्म ऐसा हो जिसमें सभी लोगों को समानता का व्यवहार मिले।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्वारा बौद्ध धर्म अपनाने के कारण तार्किक और व्यवहारिक है और वे बौद्ध है और वे बौद्ध धर्म को जनमानस के जीवन यापन का पथ प्रदर्शक बनाना चाहते थे इसलिए वे अनेक देशों में प्रचलित बौद्ध संस्कारों को देखने और समझने के लिए स्वयं गये। उन्होंने अनेक बौद्ध केन्द्रों की भी यात्रा की जिनमें लुम्बिनी, बौद्ध गया, सारनाथ, कुशीनगर, सांची, नालंदा, अंजन्ता, एलौरा इत्यादि स्थान उल्लेखनीय है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्वारा बौद्ध धर्म को अपनाने के पीछे जो महत्वपूर्ण कारण नजर आता है वो है बौद्ध धर्म का समय अनुसार प्रासंगिक और व्यावहारिक होना। बौद्ध धर्म ही उस दौर में एक ऐसा धर्म नजर आ रहा था जो हिन्दू धर्म की कुरीतियो और अन्धविश्वासों से दूर उस दौर के आम आदमी के लिए कलिष्ट नही था। राहुल सांकृत्यायन ने कहा था कि भारत में डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म का एक ऐसा खम्बा गाड दिया है जो कभी हिलने वाला नही है। 28 अक्टूबर 1954 को बम्बई के पुरंदर स्टेडियम में बाबा साहिब ने अपने जीवन का स्वचिंतन प्रस्तुत किया और अपने तीन गुरूओं के बारे में विस्तार से बताया। मई 1955 में उन्होने बम्बई में बुद्धिस्ट सोसायटी ऑफ इण्डिया नामक संस्था का गठन किया। 25 दिसम्बर 1955 को उनके कर कमलों से भारत के प्रथम बुद्ध विहार का उद्घाटन तथा बुद्ध प्रतिमा की प्रतिस्थापना की गई। वो 1951 से ही बौद्ध धर्म पर एक ग्रंथ लिखने का भी काम कर रहे थे।

1950 के बाद से ही डॉ. भीमराव अम्बेडकर यह तय कर चुके थे कि बौद्ध धर्म ही वह धर्म है जो आधुनिक समाज की जरूरतों ज्ञान, दया औरसामाजिक न्याय को पूरा करस कता है। बुद्ध से पहली सामाजिक समानता, स्वतंत्रता, न्याय जैसी बातों का किसी भी समर्थन नही किया था। बुद्ध एक ऐसे क्रांतिकारी दार्शनिक थे, जिन्होंने स्थापित समाज व्यवस्था के विरूद्ध समता के धर्म का प्रतिपादन किया था। इसलिए डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने यह स्वीकार किया था कि समानता स्वतंत्रता तथा बंधुता आदि तत्वों को मैने बुद्ध से लिया हैं।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर हिन्दू धर्म के आडम्बरों और अंधविश्वासों से दुखी थे और उन्होने कई सालों तक दुनिया के अलग-अलग धर्मो का अध्ययन किया। उन्होने ईश्वर और आत्मा को मिथ्या बताया और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि बौद्ध धर्म एक सामाजिक सिद्धांत है और इसे ग्रहण कर लेना चाहिए। डॉ. अम्बेडकर भगवान बुद्ध के विचारों से सहमत थे। भगवान बुद्ध के विचार समानता के प्रतीक है। 23 सितम्बर 1956 को एक पत्रक निकालकर उन्होने घोषित किया कि वे नागपुर में विजयदशमी के अवसर पर 14 अक्टूबर 1956 को महास्थीवर चन्द्रमणि ने उन्हे बौद्ध धर्म की दीक्षा दी। इस अवसर पर बाबा साहिब के लाखों अनुयायीयों ने भी बौद्ध धर्म ग्रहण किया डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने लोगों से इस मौके पर 22 प्रतिज्ञाएं भी करवाई जिनमें एक से आठ तक अन्धविश्वास और आडम्बर दूर करने के लिए नौ से बाईस तक परिवारजनों के पालन पोषण की निष्ठा, मानवीय एकता तथा विश्वबन्धुत्व की भावना और वृद्धि के लिए थी जिनमें से कुछ प्रतिज्ञाएं निम्न प्रकार थी-

1. मै ब्रम्हा, विष्णु और महेश को कभी ईश्वर मानूंगा और ना ही उनकी पूजा कंरूगा।
2. मै श्राद्ध कभी नहीं करूंगा और ना ही कभी पिण्डदान करवाउंगा।
3. मै कोई भी क्रिया कर्म ब्राहमणों के हाथों नहीं करवाउंगा।
4. मै प्राणी मात्र पर दया रखूंगा और उनका लालन पालन करूंगा।

मै झूठ नहीं बोलूगा।
मै व्याभिचार नहीं करूंगा।
मै शराब नहीं पिउंगा।

निष्कर्ष – इस प्रकार ये सभी प्रतिज्ञाएं इन्सान को अन्धविश्वास, झूठे कर्मकाण्ड से दूर करके एक अच्छे नागरिक के रूप में बदलने का डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्वारा बौद्ध धर्म के माध्यम से किया गया प्रयास प्राणी मात्र के भलाई के लिए सराहनीय है। उन्होने पिछडे वर्ग को तर्क पर चलने की राह दिखाई। कई अर्थो में 1956 में आम धर्मान्तरण डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्वारा ऐतिहासिक सामाजिक विश्लेषण का परिणाम था। डॉ. भीमराव अम्बेडकर के प्रयासों से बौद्ध धर्म को गति मिली और उन्होने भारत से अन्धविश्वास को दूर करने का जो प्रयास किया उसमें उन्हें काफी हद तक सफलता भी मिली।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. ओमवेट गेल, अनु, नरेश भार्गव, दलित और प्रजातान्त्रिक क्रांति, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2009, पृष्ठ-240
2. शहारे डॉ. म0ला0 और अनिल डॉ. नलिनी, बाबा साहेब डॉ. आंबेडकर की संघर्ष यात्रा एवं संदेश, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009 पृष्ठ-429
3. भारती रामविलास, बीसवीं सदी में दलित समाज, अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ-96
4. कुरील भीम राव, डॉ. अम्बेडकर का शिक्षा में योगदान, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ-67
5. भारती रामविलास, बीसवीं सदी में दलित समाज, अनामिका पब्लिशर्ष नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ-95
6. आगलावें डॉ. प्रदीप अनु मीना काम्बले, महान समाजशास्त्री बाब साहेब डॉ. अम्बेडकर सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ-48
7. शहारे डॉ. म.ला. और नलिनी डॉ. नलिनी, बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर की संघर्ष यात्रा एवं संदेश, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ-406
8. शहारे डॉ. म.ला. और नलिनी डॉ. नलिनी, बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर की संघर्ष यात्रा एवं संदेश, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ-409
9. शहारे डॉ. म.ला. और नलिनी डॉ. नलिनी, बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर की संघर्ष यात्रा एवं संदेश, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ-400
10. लाल डॉ. ॲगने, बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर की सांस्कृतिक देन, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ-61
11. गजभिए डॉ. संजय, अन्य पिछडा वर्ग और डॉ. भीमराव अम्बेडकर,

सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ-126

12. लाल डॉ. संजय, अन्य पिछडा वर्ग और डॉ. अम्बेडकर, की सांस्कृतिक देन, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ-65-66

13. लाल डॉ. संजय, अन्य पिछडा वर्ग और डॉ. अम्बेडकर, की सांस्कृतिक देन, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ-64-65

14. लाल डॉ. संजय, अन्य पिछडा वर्ग और डॉ. अम्बेडकर, की सांस्कृतिक देन, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ-64

****

Environmental Awareness Among Students Of Undergraduate Level

Dr. Bhavna Singh*

Introduction - Man is an integral part of the environment. He is an inseparable component of environment and ecosystem (Reddy 1998). Today the conservation of environment and prevention of environment degradation are the crucial challenges before the humankind. To control the acts of human beings performed knowingly and unknowingly that are leading to environmental deterioration and ecological imbalances. There is an urgent need to develop sensibility and eco-environmental awareness among people.

Environment is a global concept today and the first in environmental education is environmental awareness. Environmental awareness means help social group and individuals to acquire an awareness and sensitivity to the total environment and its allied problems. The importance of environmental awareness cannot be over emphasized. We must understand that to improve the environment is to improve the quality of life. It is not only a question of air and water pollution. It Includes elimination of disease, hunger, malnutrition, and poverty, destruction of forests, extermination of wildlife, erosion of soil and accumulation of waste, Hence there is an urgent need for proper management of the environment. The need to spread environmental awareness is enormous in the context of successfully addressing environmental problems. It is linked to environmental education.

The principle of environmental education is that it makes the pupil's education problem related to understanding the environment and hazards of its pollution. The environmental education is socially relevant as it help us how unchecked and unplanned development pollutes air, water and soil and thereby threatening our subsistence and existence. Therefore environmental education means the educational process dealing with's relationship with his natural and man-made surroundings and includes the relations of population, pollution resources allocation and depletion, conservation, transportation technology energy urban and rural planning to the total biosphere.

Rajput and Gupta (1988) conducted a study of the environmental awareness among children of rural and urban schools and non-formal education centres. The study revealed that the difference between non-formal rural and formal rural students on environmental awareness was not significant.

P.N. Mishra & Gunjan Ayaran (1991) prepared a model to create environmental awareness among students in which they emphasised on inclusion of some important Indian values in environmental education curriculum. According to them, the environmental education should be imported by means of prayer, religion, folk songs and stories.

Vipinder Nagra(2010) The study identifies the environmental education awareness among school teachers in relation to level of school, residential background, gender and subject specialization The study revealed that the no significant variation was observed in relation to the gender of school teachers.

Fernande manzand et. al. (2007) in his study found that female students have higher scores than male student on the attitude scale.

Kalpana Thakur (2012) conducted a study on environment awareness among senior secondary school students of Chandîgarh. The major findings of her study were that student of both government and private schools showed comparable environment awareness, science students exhibited very high degree of environment awareness to compare with the students of arts. Moreover, male science students exhibited very high degree of environment awareness than female science students but overall no significant difference was found between male and female students in this context.

Kalimuthhu (1991) found that the higher secondary student taught through the video programme learnt more of the concept on environmental pollution than those who were taught by the lecture method. The higher secondary student improved their achievement on environmental pollution after viewing the video programme.

Patel (1995) conducted a study to investigate the environmental awareness of secondary students in the context of intelligence quotient and sex. They found that the students with high intelligence quotient had increased environmental awareness and girl student were more sensitive to environmental awareness than boys. This study has been conducted to compare environmental awareness among various group of collage level students.

Gupta (1997) carried out a study on Adolescent's Environmental awareness in connection with religious and

*Assistant Professor (B.Ed) S.M.P. Govt. G.P.G. College, Meerut (U.P.) INDIA

scientific attitude and scholastic achievement over the environmental awareness as a whole. The study observed that while religious and scientific attitudes, gender, habitation and scholastic achievement of adolescents possesses significant effect over the environmental awareness, religious attitude and managerial background does not pose any significant impact over such awareness.

Tensor et. al. (2005) found girls being more aware of environmental problems and individual responsibility as well as having more positive attitudes than boys.

Kumud Ghosh (2014) conducted a study on environment awareness among secondary school students of Golaghat district of Assam and their attitude towards environmental education. He found that environmental awareness and attitude towards environmental education among the secondary school students (both male and female) was not significant, but in case of rural and urban student the attitude towards environmental education was found significant. The in depth and positive relationship between environmental awareness and attitude towards environmental education found among

M. Sivamoorthy, R. Nalini and C. Satheesh Kumar conducted a study on Environmental Awareness and practices among college students and found that the level of awareness is high among the students irrespective of gender differences but in practice level there is difference between genders i.e. made practicing more than females.

In a study entitled "The role of attitude in Environmental Awareness of undergraduate student" **Mukesh Kumar Panth, Preetam Verma and Mansi Gupta (2015)** summed up saying that undergraduate student had positive attitudes towards the environment as regard to their gender and faculty types. The study laid emphasis on the fact that female students were more sensitive toward environment than male students

Rastogi (1999) made an attempt to investigate the effectiveness of audiotape and transparencies on the environmental awareness of undergraduate student. The research revealed that the use of audiotape and transparencies was highly effective in raising the level of awareness of students.

Das (2002) studies the development of environmental awareness through the study of life science in the secondary schools of West Bengal, with the help of three sets of questionnaires (especially meant for student, teacher and parent) Apart from survey, curriculum analysis was also made. The study finds heterogeneity among, the group in terms of their perception of environmental awareness; it was also observed that several approaches related to life science helps in enhancing environmental awareness among the student.

A number of environmental problems have just a local dimension both in rural and urban areas, people should be made aware of these, they relate to the use of water, electricity detergents, chemicals, plastic, steel, wood etc. Above this level come the localities village and their common properties and small towns, people should be encouraged in tree plantation and maintenance, social forestry, environment education extension programs etc. In Industrial towns the problems of industrial wastes and effluents on the one hand and growth of slums and related urbanization problems on the other assume importance.

Objective of the study:

1. To compare environment awareness among urban and rural students of undergraduate level.
2. To compare environmental awareness among urban male and urban female of undergraduate level students.
3. To compare environmental awareness among rural male and rural female of undergraduate level students.

Hypotheses:

1. There is no significant difference between urban and rural students of undergraduate level.
2. There is no significant difference between urban male and urban female of undergraduate level student.
3. There is no significant difference between rural male and rural female of undergraduate level students.

Methods - In the present study survey method has been used.

Sample - The sample of the study comprised of 200 undergraduate students purposive sampling technique has been used for selecting students (50 urban male, 50 rural male, 50 urban female and 50 rural female) in the age group of 18-20 years. The sample has been drawn from the degree college affiliated to Allahabad University and Sardar Patel Degree College, Karchana Allahabad affiliated to Kanpur University.

Tools and Techniques - Environmental awareness questionnaire prepared by Praveen Kumar Jha has been used for the collection of data and administered on student. For statistical analysis of the data't' test has been used.

Analysis and Interpretation of Data - The obtained data were statistically analyzed by using t-ratio. And the results over in table 1 to 3.

Table- 1 - Mean standard deviation and t-ratio showing difference in environmental awareness of urban and rural undergraduate level students.

Group	N	Mean	S.D	Mean difference	t-ratio
Rural	100	37.05	5.75	4.01	5.207**
Urban	100	41.06	5.11		

*/**Significant at .05 level/.01 level.

Observation of table 1 reveals that the t-ration is 5.207 is significant at 0.01 level. It means students of Rural areas exhibit more environmental awareness than the students of Urban areas of undergraduate level.

Table- 2 - Means, standard deviations and t-ratio showing difference in environmental awareness among urban male and urban female of undergraduate level students.

Group	N	Mean	S.D.	Mean difference	t-ratio
Urban male	50	42.42	4.63	2.72	2.74
Urban female	50	39.70	5.25		

Observation of table 2 reveals that the t-ration is 2.74. Which is not significant at 0.05 level. It means that urban male and urban female of undergraduate level do not differ from one another in their environmental awareness.

Table- 3 - Means, standard deviations and t-ration showing the difference in environmental awareness of rural male and rural female of undergraduate level student.

Group	N	Mean	S.D.	Mean difference	t-ratio
Rural male	50	38.26	4.73	2.42	2.14
Rural female	50	35.84	6.44		

Table- 3 shows that the value of t-ratio (2.14) is not significant at .05 level. It means that rural male and rural female student of undergraduate level do not differ from one another in their environmental awareness.

From these studies it can be concluded that a separate course of environmental education is essential for general awareness among rural students. Schools and universities play an enormously significant role in generating environmental awareness among children and the youth. Textbooks reveal an increasing concern with environmental problems and solutions and numerous courses are available at the postgraduate level that provide environmental education relating to management and conservation of environment, environmental health, social ecology and so on.

References:-

1. Rajput and Gupta (1988), “Environmental awareness among children of non-formal education, centres of Madhya Pradesh and Maharastra”, Indian Educational Review. P.119-125.
2. Patel, D. Nanubhai (1995), “An Investigation into the environmental awareness of science student and effect of environmental studies multimedia package on environmental awareness”, Progress in Education, 72 (2), 26-29.
3. Rao, V.K. (1997), “Environmental Education”, Common wealth Publisher, New Delhi.
4. Sinha, Sarika (2006), “A study of environmental awareness among undergraduate student of Allahabad University”, Unpublished Research Work, Allahabad University, Allahabad.
5. Kumari, Chandra, Kumar, Sujeet, Gauraha, Manu and Tripathi Babita, (2006), “Environmental Awareness, Environmental Attitude and International Ecological Behaviour among Adolescents”, University News, 44 (12) March, 20-26.
6. Bhosle, Smriti, (2006), “Environmental Educational in school”, University News, 44 (12), March 20-26.
7. Nagra Vipinder(2010) Environmental education awareness among school teachers The Environment-alist, 2010, Volume 30, Number 2, Page 153

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

शिक्षण प्रभावशीलता एवं परीक्षण

खुशबू कुमावत *

प्रस्तावना - ग्रीनवुड शिक्षा शब्दकोष के अनुसार, 'किसी विषयवस्तु का प्रशिक्षण, शिक्षण शिक्षित करने में प्रस्तुतीकरण, प्रसार तथा मूल्यांकन करना या ज्ञान का प्रसार करना ही शिक्षण प्रभावशीलता है।'

शिक्षण वह प्रक्रिया है, जिसके अन्तर्गत एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह से कुछ ना कुछ सीखता रहता है, शिक्षा कार्यों की सफलता निर्धारित किये गये शैक्षिक लक्ष्यों एवं उचित निर्धारण पर निर्भर करता है। शिक्षा का केन्द्र बालक है तथापि शैक्षिक प्रक्रिया के समस्त बिन्दु शिक्षक पर अवलंबित होते है शिक्षा की गुणवत्ता शिक्षक की गुणवत्ता से प्रत्यक्ष जुड़ी हुई है। वर्ष 1950 तक शिक्षा की गुणवत्ता को लेकर कोई गम्भीर प्रयास एवं वाद-विवाद नहीं हुए थे, किन्तु वर्तमान में यह विश्वास किया जा रहा है कि शिक्षक अपने व्यवसाय को महत्व देते है और शिक्षण व्यवसाय में समर्पण की भावना निहित होती है। यह भी एक अनुभव है कि एक सीमित कार्यवाही के द्वारा एक व्यक्ति के दूसरे व्यक्ति समूहों अथवा संगठन से भावात्मक एवं बौद्धिक रूप से सीमित सम्बन्ध का निर्माण किया जाए। शिक्षक एक मूर्तिकार है जो विद्यार्थियों को वैयक्तिक रूप से सामर्थ्यवान एवं विलक्षण अभिलक्षणों युक्त आकार में ढालता है।

शैक्षणिक प्रक्रिया में एक कुशल व प्रभावी शिक्षक को अद्दभूत महत्व का स्थान प्राप्त होता है। वर्तमान समय उच्च विशेषता एवं विशिष्टीकरण का युग है, जिसके अन्तर्गत प्रभावी शिक्षण हेतु कुशल शिक्षकों की अभूतपूर्व मांग है।

शिक्षण के अंतर्गत वर्तमान में शिक्षक के कार्य को अत्यधिक चुनौतीपूर्ण और दु:साध्य बना दिया है। आधुनिक शिक्षक के उत्तारदायित्वों में प्रमुख है - उसे विषयवस्तु का प्रभावी प्रदर्शन कक्षा-कक्ष में करना चाहिए, साथ ही उसे यह भी देखना चाहिए कि कक्षा-कक्ष में घटित हो रही प्रत्येक घटना इस तरह की हो जिससे बालक का सम्पूर्ण विकास हो। वर्तमान में सार्वत्रिक रूप से शिक्षक की राष्ट्र निर्माता की भूमिका को स्वीकृत किया गया है।

शिक्षण प्रक्रिया की सफलता का आधार शिक्षण एवं शिक्षार्थी की है। इन दोनों की सम्मिलित योग्यताओं तथा क्षमताओं आदि का प्रभाव इस प्रक्रिया की सफलता निर्धारित करने पर पड़ता है। बालक जो कुछ सीखता है उसका प्रभाव जहां एक ओर उसकी अमूर्त शक्तियों पर पड़ता है वहीं उसका व्यवहार भी परिवर्तित होने लगता है। शैक्षिक प्रक्रिया में शिक्षक द्वारा शिक्षार्थी में पाठ्यवस्तु ही स्थानान्तरित नहीं की जाती है, अपितु शिक्षक अपने व्यक्तित्व की छाप भी छोड़ता है एक अच्छा शिक्षक छात्रों का प्रभावी मार्गदर्शन कर उन्हें अच्छा मानव बनाने का प्रयास करता है। उसमें अच्छे गुण अधिरोपित करने का यथाशक्ति प्रयास करता है और वहीं शिक्षक प्रभावी शिक्षक कहलाने योग्य है जो शिक्षण प्रक्रिया के दौरान निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये विषय वस्तु का शिक्षार्थी को अधिगम कराकर वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति के साथ उनमें अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन करने की क्षमता रखें। विगत कुछ वर्षो में शिक्षक की मदद हेतु परम्परागत कर्तव्यों के स्थान पर नवीन कर्तव्यों के विकास हेतु अनगिनत कदम उठाये गये है, जैसे - वे स्वयं को विकसित करे, तीव्रता से परिवर्तित हो रहे पर्यावरण से सीखें और नवीन शिक्षा में नवीन शिक्षण प्रभावशीलता का अनुकरण करना आदि। **चांग (1995,ए.) तथा मेडले (1982)** के अनुसार, 'कक्षा-कक्ष में शिक्षण प्रभावशीलता की संरचना एक विस्तृत संरचना है; जिसके अंतर्गत शिक्षक के विशिष्ट दृष्टिकोण, शिक्षक के व्यवहार दृष्टिकोण, शिक्षण दृष्टिकोण की उत्पाद प्रक्रिया की व्याख्या शिक्षक सामर्थ्य के सम्बन्ध में शिक्षक उपलब्धि विद्यार्थी के अधिगम अनुभव, शिक्षकों के विकास तथा शैक्षिक शिक्षण प्रभावशीलता समाहित होती है।'

कक्षा-कक्ष में शिक्षण प्रभावशीलता की संरचना (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

शिक्षण प्रभावशीलता का सम्बन्ध कक्षा-कक्ष में शिक्षक के वैयक्तिक अभिलक्षण मात्र से ही न होकर, शिक्षक के द्वारा विभिन्न परिस्थितियों में प्रदर्शित कुछ अभिलक्षणों तथ अन्य कारकों के मध्य अंत:क्रिया का परिणाम होती है। हमारे देश के सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक विकास के लिये शिक्षा एक शक्तिशाली साधन है। शिक्षा की गुणात्मकता अध्यापकों की गुणात्मकता पर निर्भर करती है इसलिए विद्यालयों में प्रभावशाली अध्यापकों की नियुक्ति ही की जानी चाहिए एवं शिक्षण कार्य की वस्तुनिष्ठता का मूल्यांकन किया जाना चाहिये तथा उन कारकों का अध्ययन किया जाना चाहिये जो शिक्षण प्रभावशीलता को प्रभावित करते हैं। इसी संदर्भ में शोध करने की आवश्यकता महसूस की गई। जिसमें शिक्षक प्रभावशीलता के मनोवैज्ञानिक, सामाजिक एवं भौतिक कारकों जैसे :- व्यक्तित्व लक्षणों को आधार बनाया गया।

गुड एवं ब्रोफी (1973) पृ.168 के अनुसार, 'अध्यापक के कक्षागत संज्ञानात्मक व्यवहार जो अनुदेश से सम्बन्धित है, जिसके कारण अध्यापक के अध्यापन में निखार आता है तथा छात्रों की निष्पत्ति पर सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव पड़ता है जैसे - विषय का ज्ञाता, ज्ञान का व्यवहारिक उपयोग करने योग्य होना, अध्यापन विधि अच्छी होना, विषयवस्तु के स्तर के चयन की योग्यता होना, कक्षा में पढ़ाने से पहले सावधानी से योजना बनाना, विषयवस्तु को बिंदुवार बनाना, छात्रों की सक्रिय तथा रूचिशील बनाये रखना, ठीक से प्रदर्शन करना, आदि संज्ञानात्मक व्यवहारों को ही शिक्षण प्रभावशीलता माना गया है।'

डी.जी. रयेन्स (1960) पृ.1 के अनुसार :- 'शिक्षण प्रभावशीलता के

* व्याख्याता, स्कोलर्स एरीना टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, उदयपुर (राज.) भारत

अन्तर्गत शिक्षक की योग्यताएँ, कौशल, अभिवृत्तियाँ, व्यवहार, अन्तर्दृष्टि तथा मूल्य आदि का समावेश होता है जो सीखने की प्रक्रिया को प्रभावित करता है।'

एक शिक्षक द्वारा शिक्षण क्षमता आधारित प्रभावी शिक्षण हेतु निम्न बिन्दुओ पर ध्यान रखना आवश्यक है :-

1. प्रत्येक विद्यार्थी को क्रियाशील रहने हेतु प्रोत्साहित करना।
2. करके सीखने हेतु प्रोत्साहित करना।
3. विद्यार्थियों की अनुभूतियों का सम्मान करना।
4. विद्यार्थियों में समायोजन के गुणों का विकास करना।

स्पष्ट है कि शिक्षक की शिक्षण-प्रभावशीलता का प्रभाव स्वयं शिक्षक एवं विद्यार्थियों के व्यक्तित्व पर निश्चित रूप से पड़ता है। शिक्षा के क्षेत्र में मनोवैज्ञानिक सम्प्रत्यय 'व्यक्तित्व लक्षण' का जितना महत्व है, उतना अन्य किसी सम्प्रत्यय का नहीं है। शिक्षा का लक्ष्य ही बालक के व्यक्तित्व का विकास करना होता है। फिर भी व्यक्तित्व के सम्प्रत्यय को पूर्णत: स्पष्ट कर पाना अभी तक सम्भव नहीं हो पाया है। यद्यपि व्यक्तित्व शब्द बहुत व्यापक है और व्यक्तित्व शब्द का प्रयोग हम विभिन्न अर्थो में किया करते हैं।

अत: भारत के भाग्य के निर्माण के क्रम में यह अध्ययन करना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि शिक्षक की शिक्षण प्रभावशीलता और व्यक्तित्व लक्षण की स्थिति कैसी है। अत: बालक के उचित व्यवहार परिवर्तन व परिवर्धन का आधार अध्यापक है। अध्यापक का प्राथमिक कर्तव्य छात्रों में स्वस्थ संवेग रूचियों, आदर्शों एवं उच्च नैतिक एवं उत्तारदायित्वों को तभी पूरा किया जा सकता है जबकि अध्यापक स्वयं अपने कार्य में दक्ष हो तथा उसकी रूचि अध्यापन व्यवसाय के प्रति हो। अच्छा अध्यापक उसी को माना जा सकता है जो मनोविज्ञान का ज्ञाता हो, आत्मविश्वासी हो, संदर्भित शिक्षण में प्रभावशील हो, जिसकी अध्यापन कार्य केप्रति सोच अच्छी तथा अध्यापन कार्य के प्रति सुझाव रखते हो। शिक्षक अपने उद्देश्यों को तभी सफलतापूर्वक प्राप्त कर सकता है जब वह अपने संवेगों को नियंत्रण में रख सके उसमें अपने कार्य के प्रति संतुष्ट हो और शिक्षण कार्य प्रभावशीलता अथवा प्रभावी ढंग से करता है।

2. शिक्षण प्रभावशीलता का परीक्षण - शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता जानने हेतु **डॉ. प्रमोद कुमार एवं डॉ. डी.एन. मुथा** द्वारा निर्मित 'शिक्षण प्रभावशीलता प्रमापनी' का प्रयोग किया है।

अध्यापक प्रभावशीलता मापनी (टी. ई. एस.) का विवरण :- यह परीक्षण **डॉ. प्रमोद कुमार एवं डॉ. डी. एन. मूथा द्वारा** निर्मित है। यह माध्यमिक स्तर के अध्यापकों की प्रभावशीलता ज्ञात करने के लिए उपयोगी है। इस लिंकर्ट टाइप मापनी का विकास करने के लिए सर्वप्रथम 93 पदों का निर्माण किया गया है जिनकों 25 विषय विशेषज्ञों को दिया गया है, जिनमें 30 माध्यमिक स्तर के अध्यापक, 23 माध्यमिक विद्यालय के प्रधानाचार्य तथा 15 शिक्षक प्रशिक्षक व समाज शास्त्र के प्राध्यापक थे। 22 पदों को निरस्त करते हुए 71 पदों का चयन किया गया है। चयनित 71 पदों का अंकन 5,4,3,2एवं 1 किया गया है। कुल मान 71 से 355 तक प्राप्त किया गया है। प्राप्तांको में से 27 प्रतिशत उच्च मान में से तथा 27 प्रतिशत निम्न मान में लेकर सभी पद के लिए सी आर मान निकाला गया है। दो कथनों का मान सार्थक नहीं आया है इस प्रकार अंतिम रूप से कुल 69 कथनों का चयन किया गया है।

पदों का क्षेत्रवार विवरण

क्र.	क्षेत्र का नाम	पदों की संख्या	कुल पदों की संख्या
1.	अकादमिक	2,3,24,5741,42,43,44,45,47, 50,51,57,68	4
2.	व्यावसायिक	1,5,6,16,29से 34,40,52 से 55	24
3.	सामाजिक	7,911,12,15,21,22,23,25,26,28	11
4.	भावनात्मक	4,8,19,27,46,48,49,56	08
5.	नैतिक	10,13,17,20,60,61,62,64,65,69	10
6.	व्यक्तित्व	14,18,35से 39,53,59,63,66,67	12
		योग	**69**

(अ) प्रशासन -इस अध्यापक प्रभावशीलता मापनी को भरवाने से पूर्व शिक्षकों से संबंधित पूर्ण जानकारी जैसे नाम, आयु, जाति, कक्षा, विद्यालय का नाम, शैक्षणिक योग्यता, शिक्षण अनुभव आदि को भरना होता है। इस प्रमापनी में कुल 69 कथन है। अध्यापक के हर कथन पर पूर्ण सहमत, समहत, अनिश्चित, असमहत और पूर्णतया असहमत में से एक पर निर्धारित करना होता है। कथन शिक्षण विषय ज्ञाता के रूप में, अपने साथी के संबंध, शिक्षण कौशल, सह-शैक्षिक क्रियाओं में रूचि, शिक्षण व्यवसाय का ज्ञान कक्षा प्रबन्धन तथा व्यक्तित्व की विभिन्न विशेषताओं से संबंधित है। परीक्षण के लिए कोई समय सीमा का निर्धारण नहीं है। इस प्रमापनी में अपनी पसन्द की वरीयता के आधार पर विकल्प चुनकर लिखने को कहा गया।

(ब) अंकन -अंकन के लिए फलांकन कुंजी की सहायता ली गई। सभी कथन सकारात्मक है इन कथनों का फलांकन इस प्रकार है - पूर्ण सहमत के लिए 5 अंक, सहमत के लिए 4 अंक, अनिश्चित के लिए 3 अंक, असमहत के लिए 2 अंक, तथा पूर्णतया असहमत के लिए 1 अंक प्रदान किया गया।

(स) विश्वसनीयता -अर्द्ध विच्छेद विधि द्वारा यह अभिसूची प्रशासित करने पर इसकी विश्वसनीयता .67 आयी। पुन: परीक्षण विधि द्वारा 2 माह पश्चात् यह .75 पायी गई, दोनों ही विश्वसनीयता .01 पर सार्थक पायी गई।

(द) परीक्षण की वैधता - मापनी की वैधता में उच्च विभेद कार्यता वाले पदों को शामिल किया। प्रिंसीपल रेटिंग द्वारा इस मापनी की वैधता .77 पाई गई।

(य) अध्यापक प्रभावशीलता **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Anastasi, A., Psychological Testing, New York : McMillan Co. 1976.
2. Beallack, Arno (Ed.), Theory and Research in Teaching, New York : Teachers College Press, 1963.
3. Best, J.W. Research in Education, New Delhi: Prentice Hall of India Pvt. Ltd., 1977.
4 Best, J.W. Research in Education, U.S.A. : Prentice Hall of Inc. Engle Wood Cliff, 1959.
5. Biddle, B.J. & Ellena, W.J. (Eds.), Contemporary Research on Teacher Effectiveness, New York : Halt, Rinehart & Winston, 1964.
6. Brog, W.R. Educational Research – An Introduction, New York : Longman's Green & Co. Ltd., 1963.
7. Boring, E.C. & Others, Foundation of Psychology, New York : The McMillan Co. 1963.
8. Coacher, W.G., Sampling Technique, Bombay : Publishing House Asian Students Edition, 1959, P.213.
9. Fox, D.J. The Research Process in Education, Holt,

Rinehart & Co., P.576.

10. Gage, N.L. Teacher Effectiveness and Teacher Eduction, The Search for a Scientific Basis, Palto Alto (Cal.), Pacific Books Publishers, 1972.
11. Garett, Honery E. & Woodworth, R.S., Statistic, in Psychology and Education, Bombay : Vikas Feffer & Simens Ltd., 1959.
12. Good. Carter V.An Introduction to Educational Research, New York : Applied Century Craft No.1., 1959.
13. Good, W.J. & Hatt, P.K., Methods in Social Research, New York : McGraw Hill Book & co., 1941.
14. Goods, Bar and Scates, Methodology of Education Research, New York, 1947.
15. Gupta, S.C. & Kapoor, V.K. Fundamentals of Applied Statistics, Delhi : Sultan Chand & Sons, 1997.
16. Hillway, T.H., Introduction to Researh Boston, Houghton Riffin Co., 1966.
17. Jangira, N.K., Teacher Training and Teacher Effectiveness : An Experiment in Teacher Behavior, New Delhi : National Publishing House, 1979.
18. Ryans, D.G., Characteristics of Teachers, Washington : American Council of Education, D.C., 1960.
19. Sukhla, S.P., Elements of Educational Research, Bombay : Allied Publication Pvt. Ltd., 1972

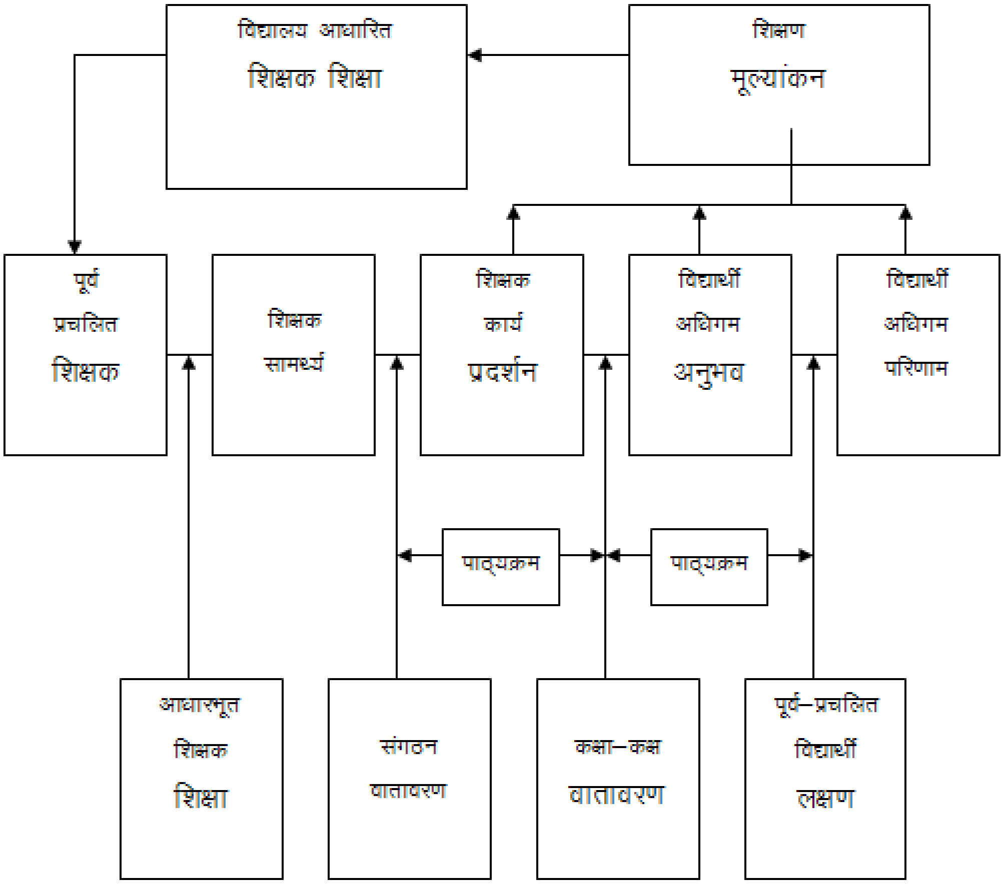

कक्षा–कक्ष में शिक्षण प्रभावशीलता की संरचना

अध्यापक प्रभावशीलता

क्र.	प्राप्तांक की परास	जेड– प्राप्तांक	श्रेणी	अध्यापक प्रभावशीलता का स्तर
1	275या इससे अधिक	+2.01 या इससे अधिक	ए	अत्यधिक उच्च स्तर की प्रभावशीलता
2	254–274	+1.26 से +2.00	बी	उच्च स्तर की प्रभावशीलता
3	238–253	+0.5 से +1.25	सी	औसत से ऊपर की प्रभावशीलता
4	212–237	–0.50 से 0.50 तक	डी	औसत स्तर की प्रभावशीलता
5	194–211	–1.25 से –0.51	ई	औसत स्तर से कम की प्रभावशीलता
6	175–193	–2.00 से –1.26	एफ	निम्न स्तर से कम की प्रभावशीलता
7	174 या इससे कम	–2.01 या इससे कम	जी	सबसे कम स्तर की प्रभावशीलता

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

अध्ययन आदतें एवं मापन

रंजीता माटा *

प्रस्तावना – दीवर्ल्ड बुक ऑफ एन साइक्लोपिडिया में अध्ययन के बारे में कहा गया है कि *'अध्ययन सीखने का ही भाग है, विद्यार्थी अध्ययन से कुछ तथ्य तथा कौशल प्राप्त करते हैं जिससे वह अपने विचारों एवं प्रतिभा को संगठित कर सकता है कमजोर छात्रों में साधारणतया यह योग्यता नहीं होती है।'*

'आदत कार्य का वह रूप है जो आरम्भ में स्वेच्छा से और जानबुझकर किया जाता है, पर बार बार किये जाने के कारण स्वत: हो जाता है।'

– लैडले

आज मानव प्रगति में शिक्षा का योगदान जितना महत्वपूर्ण है उतना कदाचित इतिहास के किसी युग में नहीं था। वर्तमान शिक्षा प्रक्रिया में बालक को अपने अधिकतम विकास करने के अवसर दिये जाते हैं, क्योंकि वह समाज का एक अंग है एवं समाज की प्रत्येक बालक से कुछ अपेक्षाएँ है। केवल वैयक्तिक विकास ही शिक्षा का लक्ष्य नहीं, वरन् सामाजिक विकास करना भी इसका लक्ष्य है।

भारत जैसे प्रजातांत्रिक देश में जहाँ सभी को समानता एवं स्वतंत्रता का अधिकार हैं वहाँ ऐसी स्थिति में प्रत्येक व्यक्ति को अपनी रूचियों, आवश्यकताओं और आदतों के अनुरूप जीवन व्यतीत करने, शिक्षा ग्रहण करने एवं उनके अनुरूप व्यवसाय चयन करने की स्वतन्त्रता है। विशेषकर माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को जो अपने भविष्य के सुनहरे सपने संजो रहे हैं तथा अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हो रहे हैं। वर्तमान में शिक्षक यह जानने का प्रयास करे कि बालक अपनी अध्ययन आदतों के अनुरूप शिक्षा ग्रहण कर रहा है या नहीं? शिक्षक की आदतें बालकों के अनुकूल है या नहीं? वह सही लक्ष्य की ओर बालक को अग्रसर कर रहा है या नहीं? उसकी अध्ययन आदतें उन्मुखी है या नहीं? इन प्रश्नों का उतर प्राप्त कर बालक की अध्ययन आदतों के अनुरूप शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए तथा शिक्षकों में बालकों की उत्तम आदतें विकसित करने के लिये प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए ताकि बालकों के जीवन को सफल व सुन्दर बनाया जा सके।

अध्ययन ज्ञान प्राप्ति की ही एक प्रक्रिया है। इसके द्वारा विद्यार्थी तथ्यों एवं कौशल की प्राप्ति एकाग्रचित होकर करता है। अध्ययन आदतें सभी व्यक्तियों में बहुत ही महत्वपूर्ण विशेषकर उनमें जो शिक्षित है, जो शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। अध्ययन आदतें व्यक्ति की अकादमिक उपलब्धि के लिए जितनी महत्वपूर्ण है उतनी ही खाली समय का लाभ उठाने के लिए है। अध्ययन आदतें उसके व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव डालती है तथा उसके व्यक्तित्व को समाज या विद्यालय समुदाय में हटकर बताते हैं और सामुदायिकता की भावना जागृत करती है। एक व्यक्ति साधारण अपने व्यक्तिगत जीवन में अध्ययन आदतों को अपना कर पारदर्शी व्यक्तित्व को धारण कर सकता है।

अध्ययनआदतों को प्रभावित करने वाले कारक :

1. **समझने की योग्यता :**–समझने की योग्यता से अभिप्राय विद्यार्थी के पढ़ने से पूर्व मानसिक रूप से स्वयं को तैयार करना है। विद्यार्थी पाठ पढ़ने से उत्सुकतावश यह जानने का प्रयत्न करता है कि पाठ किस सम्बन्ध में है, इस प्रकार वह वास्तविक रूप से अध्ययन हेतु एक मानसिक स्थापना करता है। साथ ही पूर्व ज्ञान को नवीन ज्ञान से जोड़ने का प्रयास करता है। ताकि वह पूरी विषय सामग्री को सही ढंग से कंठस्थ कर सके।

2. **एकाग्रता :**–एकाग्रता प्रभावी अध्ययन आदतों की एक महत्वपूर्ण विधेय है। अध्ययन में सफलता हेतु एकाग्रता बहुत आवश्यक है। प्रत्येक छात्र को एकाग्रता स्थापित करने में भिन्न–भिन्न समय लगता है। कुछ विद्यार्थी एक बार एकाग्र हो जाने पर लम्बे समय तक बने रहते है। पर कुछ के साथ ऐसा नहीं है। उन्हें एकाग्रता स्थापित करने में अधिक समय लगता है। कुछ विद्यार्थी केवल तब पढ़ते हैं जब ऐसा करने की उनकी मस्तिष्क दशा होती है। अन्य को एकाग्रता के लिए उद्दीपकों की आवश्यकता होती है।

3. **कार्य प्रतिस्थापन :**–कार्य प्रतिस्थापन अध्ययन आदतों का एक महत्वपूर्ण आयाम है। छात्रों को अध्ययन के विभिन्न स्तरों पर ज्ञान बनाने की आवश्यकता होती है, अर्थात् प्रत्येक छात्र का पूर्व निर्धारित कार्य प्रतिस्थापन होता है। जिसके द्वारा वह अध्ययन करता है। प्रत्येक छात्र अपने हिसाब से अपने विषयों के लिए समय विभाजन करके और उसमें तादात्म्य स्थापित करके अध्ययन करता है।

4. **सैट्स :**–यहाँ सैट्स से तात्पर्य अध्ययन आदतों सम्बन्धी उन भौतिक एवं परिस्थिति जन्म विशेषताओं से है, जो एक छात्र अपने अध्ययन हेतु विकसित करता है जैसे कुछ विद्यार्थी केवल रात्री में ही अध्ययन करते हैं, किसी विद्यार्थी का पढ़ने में मन तब लगता है जब वह कुर्सी मेज पर बैठकर पढ़ता है और कोई बिस्तर पर लेटकर भली–भांति पढ़ाई कर सकता है। सभी का अपना एक पृथक् ढंग होता है।

5. **अन्त:क्रिया :**–किसी विषय के उत्ताम अध्ययन हेतु विद्यार्थी व्यक्तिगत रूप से अध्यापकों, अभिभावकों, मित्रों इत्यादि के साथ अन्त:क्रिया करता है। इस प्रकार अन्त:क्रिया अध्ययन आदतों का महत्वपूर्ण घटक है। उदाहरणार्थ – जब विद्यार्थी किसी प्रकरण को समुचित रूप से नहीं समझ पाता तो वह अपने मित्रों के साथ परस्पर चर्चा करके उस प्रकरण पर सफलतापूर्वक स्वामित्व स्थापित कर लेता है।

6. **अभ्यास :**–अभ्यास से तात्पर्य पुन: पुन: विषय के अध्ययन करने से है। अभ्यास करने से विषय–वस्तु कण्ठस्थ हो जाती है। हिन्दी में कहावत है

* व्याख्याता, प्रेम शान्ति निकेतन टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, उदयपुर (राज.) भारत

– 'करत–करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान'

7. सहारा देना :–एक छात्र विभिन्न लेखकों की पुस्तकों से अध्ययन करता है। कुछ छात्र पाठ्यपुस्तक, मैग्जीन, अखबार इत्यादि का सहारा लेते हैं, जो कि विषय को समझने में सहायक होते हैं। जब छात्र अपनी पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों इत्यादि से सहायता लेता है तो इसे 'सहारा देना' कहते हैं। विभिन्न पुस्तकों से अध्ययन करने से विद्यार्थी विषय का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर सकता है।

8. नोट करना :–अध्यापक उच्च स्तर पर एक पुस्तक के आधार पर कठिनतापूर्वक ही पढ़ा सकता है। विद्यार्थियों की उत्तम प्रगति हेतु यह अत्यन्त आवश्यक है कि विद्यार्थी कक्षा में पढ़ाये गए व्याख्यान के आधार पर अपने नोट्स तैयार करें, इसमें उनके स्वयं के स्वतन्त्र नोट्स भी समावेशित होने चाहिए।

9. भाषा :–भाषा ऐसा पक्ष है जो कि प्रभावी अध्ययन हेतु महत्वपूर्ण कारक है। यह विद्यार्थी की अध्ययन के अन्तर्गत एकाग्रता और समझने की योग्यता को प्रभावित करता है। यदि भाषा प्रभावशाली होगी तो छात्र अपने विचारों को सशक्त ढंग से शिक्षकों के समक्ष प्रस्तुत कर पायेगा। भाषा पर अधिकार छात्र को अध्ययन में सरलता व सुगमता प्रदान करता है। इस प्रकार उसके लेखन व सम्प्रेषण का स्वरूप भी सुदृढ़ बनता है।

अध्ययन आदतों का मापन – अध्ययन आदतों के मापन हेतु **डॉ एम मुखोपध्याय, डॉ. एन. सनसनवाल** द्वारा निर्मित मानकीकृत उपकरण का प्रयोग किया जाता है।

परीक्षण का निर्माण – प्रस्तुत सूची में अध्ययन आदतों का निम्न नौ प्रकार के अध्ययन व्यवहारों में निर्मित माना गया है :–

1. समझने की योग्यता
2. एकाग्रता
3. कार्य प्रतिस्थापन
4. सैट्स
5. अन्त:क्रिया
6. अभ्यास
7. सहारा देना
8. नोट करना
9. भाषा

भारांकन और पदों की संख्या – अध्ययन आदतों के इन नौ उपकारकों की वैधता को विभिन्न विशेषज्ञों ने निकाला। विशेषज्ञों के द्वारा प्रदान किये गये भारांकन को प्रत्येक उपकारक में पदों की संख्या के द्वारा सूचित किया गया है और प्रत्येक पद के बराबर नम्बर है, जो निम्न है:–

अध्ययन आदतों के उपकरणों के भारांकन तथा पदों की संख्या

उपकारक	भारांकन (प्रतिशत)	पदों की संख्या
समझने की योग्यता	28	12
एकाग्रता	23	10
कार्य प्रतिस्थापन	18	8
अन्त:क्रिया	7	3
अभ्यास	7	3
सहारा देना	7	3
नोट करना	5	2
भाषा	5	2

नोट – सैट्स का वांछनीयता एवं अवांछनीयता के रूप में वर्गीकरण नहीं किया जा सकता है। अत: भारांकन में इन्हें सम्मिलित नहीं किया जाता है।

विश्वसनीयता – अर्द्ध विच्छेदन विधि द्वारा सम्पूर्ण तालिका की विश्वसनीयता ज्ञात की गई। विश्वसनीयता गुणांक 0.91 है जो कि उच्च है तथा बताता है कि तालिका विश्वसनीय है।

अंकन विधि – इस परीक्षण में सकारात्मक तथा नकारात्मक प्रकार के प्रश्न दिये जा रहे हैं। सकारात्मक तथा नकारात्मक प्रश्नों के सामने पाँच खाने, जो कि क्रमश: सदैव, बहुधा, कभी–कभी तथा कभी नहीं वाले प्रत्युत्तरों को इंगित करते है। इनमें से किसी एक खाने में सही का चिन्ह लगाना पड़ता है।

धनात्मक पदों के लिये 4, 3, 2, 1, 0 अंक
ऋणात्मक पदों के लिये 0, 1, 2, 3, 4अंक

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Gray, B.S. (1950) : "Groth in Understanding of Reading& Its Development in Youth", Chicago University.
2. Courter V. Good (1959) : "An Introduction to Education Research",New York, Century No.1, P.-45
3. Chari, A.G. (1966) : "Teaching, Reading, A Challenge",New Delhi, NCERT, P.-3.
4. Deboar Jahan (1960) : "Children Learn to Read", New York, Ginn & Co., P.-106.

****

कार्य सन्तुष्टि की अवधारणा एवं परीक्षण

डॉ. अनुपा शर्मा *

प्रस्तावना – किसी व्यवसाय की सफलता के लिए कार्य की अनुरूपता और संतुष्टि एक मनोवैज्ञानिक आयाम है। जो व्यवसाय में कार्यरत व्यक्ति को उसके कार्य संतुष्टि प्रदान करता हैं किसी भी व्यवसाय में कार्यरत व्यक्ति को सीमातक अच्छा कार्य करेगा। जिस सीमातक वह अपने व्यवसाय से संतुष्ट होगा। अगर कोई भी व्यक्ति अपने व्यवसाय या कार्य से पूर्ण रूपेण संतुष्ट है तो उसके कार्य करने की क्षमता और रूचियाँ भी बढ़ेगी। **सुपरडोनाल्ड (1990)** ने कार्य की संतुष्टि की महता को स्वीकारते हुए अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये। 'मनुष्य अपने जीवन का अधिकतम भाग व्यवसाय में ही व्यतीत करता है एवं व्यवसाय की प्रगति की तैयारी में रहता है।'

कार्य सन्तुष्टि एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है जो प्रत्येक व्यवसाय के लिए स्वीकार्य है इसका श्रेय होपेक महोदय को जाता है। कार्य सन्तुष्टि हेतु विभिन्न शिक्षा विदों ने अपने अपने सिद्धान्त बताये जिनसे कार्य सन्तुष्टि को देखा जा सकता है उसमें से महत्वपूर्ण इस प्रकार से है:–

1. **मेस्लो आवश्यकता सिद्धान्त (1954) –** इस सिद्धान्त के अनुसार एक व्यक्ति के कार्य सन्तुष्टि के लिए मूलभूत आवश्यकता, सुरक्षा, सामाजिक, जीवन–शैली एवं आत्म– वास्तवीकरण की आवश्यकता की पूर्ति होना आवश्यक है।

2. **व्रूमर्स संयोजक–साधन उम्मीद सिद्धान्त (1964) –** इस सिद्धान्त के अनुसार एक व्यक्ति के कार्य सन्तुष्टि के लिए उसकों संगठन के पर्यावरण के अनुसार अपनी योग्यता को बढाना एवं साधनों का प्रयोग करना चाहिए।

3. **अदम् की समानता सिद्धान्त (1964) –** इस सिद्धान्त के अनुसार सन्तुष्टि का आधार स्वयं की उपलब्धियों की दूसरे के साथ सामाजिक संदर्भ में तुलना करने से है। इसमें दूसरे से तात्पर्य, व्यक्ति, समूह एवं संगठन हो सकता है। साथ ही कभी कभी संबंधों में अलगाव होने से भी व्यक्ति असन्तुष्ट होकर ऐसे कार्यो में उलझ जाता है जो कि उसके लिए उचित नहीं होते है।

4. **प्रदर्शन सिद्धान्त (1964) –** इस सिद्धान्त के अनुसार कार्य सन्तुष्टि का सीधा संबंध कार्य प्रदर्शन है। इसका तात्पर्य है कि यदि कार्य प्रदर्शन अच्छा है तो व्यक्ति अपने कार्य से सन्तुष्ट है तथा इसके विपरीत यदि कार्य का प्रदर्शन अच्छा नहीं है तो वह कर्मचारी अपने कार्य से सन्तुष्ट नहीं है।

5. **आपूर्ति सिद्धान्त (1970) –** स्केफर के इस सिद्धान्त के अनुसार कार्य सन्तुष्टि का सीधा संबंध व्यक्ति की आवश्यकताओं से जुड़ा है। इसमें व्यक्ति की आवश्यकताओं की आपूर्ति करके ही उसको सन्तुष्ट किया जा सकता है।

6. **विसंगति सिद्धान्त (1969) –** केटजेल एवं लोके के इस सिद्धान्त के अनुसार सोच में विसंगति होना , कार्य में विसंगति होना आदि के द्वारा कार्य सन्तुष्टि को माना जाता है।

7. **एक्स और वाई का सिद्धान्त (1957) –** इस सिद्धान्त का प्रतिपादन एम सी ग्रेगोर ने किया है। इसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का व्यवहार अलग अलग होता है। अत: कार्य सन्तुष्टि के लिए व्यक्ति के व्यवहार को समझना जरूरी है।

8. **कर्मचारी केन्द्रित सिद्धान्त (1967) –** इस सिद्धान्त का प्रतिपादन लिंकर्ट महोदय ने किया है। इसके अनुसार प्रत्येक कार्य सन्तुष्टि का मापन कर्मचारी व बोस के बीच संबंध से किया जाता है इसमें यदि बोस व कर्मचारी के मध्य संबंध अच्छा है तो उत्पाद में वृद्धि होती है अर्थात् कर्मचारी अपने कार्य से सन्तुष्ट है। इसके विपरीत यदि बोस व कर्मचारी के मध्य संबंध अच्छा नहीं है तो उत्पाद में वृद्धि नहीं होती है अर्थात् कर्मचारी अपने कार्य से सन्तुष्ट नहीं है।

कार्य सन्तुष्टि को प्रभावित करने वाले कारक :–

1. कार्य की प्रकृति
2. कार्य की सुरक्षा
3. कार्य की उर्ध्वाधर एवं क्षैतिजगति
4. किराया एवं धनप्राप्ति
5. प्रोत्साहनराशि
6. व्यावसायिक एवं सामजिक स्थिति
7. जिम्मेदारी
8. पहचान
9. रचनात्मक सुझाव के लिए भागीदारी एवं
10. सुरक्षा व मेडिकल परवाह
11. वार्तालाप का नेटवर्क
12. कार्य के लिए प्रशिक्षण एवंअनुभव
13. सहकर्मी व बॉस का व्यवहार
14. निर्देशन, सलाह
15. संगठन का वातावरण और संरचना
16. संगठन की आकृति
17. कार्य करने की शर्ते
18. कार्य के प्रति अभिवृत्ति एवंमूल्य
19. व्यक्तिगत कारक :– आकांक्षा स्तर, लिंग, आयु, बुद्धि, शैक्षिक स्तर
20. आधुनिकीकरण
21. सांस्कृतिक लिंक

* सहायक आचार्य, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

22. समुदाय व राष्ट्रीय विकास
23. जीवन सन्तुष्टि
24. मूल्य

कार्य सन्तुष्टि के परीक्षण हेतु मानकीकृत उपकरण

1. डॉ. मीरा दीक्षित द्वारा निर्मित मान की कृत उपकरण – कार्य संतुष्टि की इस प्रश्नावली को भीभरनेसेपूर्व अध्यापकों को अपने से सम्बन्धित पूर्ण विवरण जैसे–नाम, आयु, अनुभव, संस्था का नाम, वैवाहिक स्तर, माध्यम, आय, शैक्षिक योग्यता आदि को भरना होता है। इस प्रश्नावली में कुल 52 प्रश्न है। प्रत्येक कथन के पाँच विकल्प है :– पूर्णतः **सहमत, सहमत, अनिश्चित, असहमत, पूर्णतः असहमत।**

2. डॉ. अमर सिंह एंड डॉ. टी. आर. शर्मा द्वारा निर्मित मानकीकृत उपकरण – यह उपकरण इंजीनियर, डॉक्टर, एडवोकेट एवं कॉलेज शिक्षक के लिए उपयोगी है। इस मापनी में अंतिम रूप से कुल 30 कथन रखे गये है। प्रमापनी में सकारात्मक व नकारात्मक कथन है। कथन संख्या 4, 13, 20, 21 ,27, और 28 के अलावा सारे कथन नकारात्मक है। अंकन इस प्रकार से है। प्रमापनी में पाँच विकल्प कथनानुसार है –जैसे अत्युत्तम, उत्तम, सामान्य, हीन, अतिहीन। इन पांच में से जिस विकल्प पर सर्वाधिक संतुष्ट हो, उस विकल्प के सामने सही (✓) का निशान लगाना है।

मापक या सन्तुष्टि की श्रेणी की तालिका

स्कोर	सन्तुष्टि की श्रेणी
74 या इससे अधिक	सबसे अधिक सन्तुष्ट
63–73	अधिक सन्तुष्ट
56–62	औसत सन्तुष्ट
48–55	असन्तुष्ट
47 या इससे कम	सबसे कम सन्तुष्ट

References :-

1. Anastasi, Anne (1976) : Psychological Testing, New York, Mac Millan Publishing Co. Inc.
2. A. E. Wool Folk :“Educational Psychology ; Ally and Baco”, Vith E.d Bost on London.
3. Best, J.W. :“Research in Education”, New Delhi, Prentice Hall of India (Pvt.) Ltd.
4. Borg W.R. :“Education Researches on Introduction”, New York, Longman Green & Co. Ltd.
5. Chopra, Deepak (2004) : Seven spiritual laws of success, thurmson Press, Delhi
6. Crow and Crow (1968) : Child development and adjustment, New York, The Mc Million Co.
7. Cocher, W.G. : “Sampling Technique”, Bobay, Publishing House.
8. C. V. Good : “The Methodology of Education Research A Appleton centaury crofts”, Inc. New york.
9. Carter V. Good, Bar and Douglas E. Scats : “Method of Research : Educational psychological Sociological”, New York: Appleton Century. Inc.
10. Garett, Hanery E. & Woodworth, R.S : “Statistics in Psychology & Education” Bombay, Vikas Feffer & Simons Ltd.
11. Good, Carter V., Bar and Scates Douglas E.: “Method of Research : Educational Psychological Sociological”, New York : Appleton Century, Inc.
12. Good, W. J. &Hatt, P.K. : “Methods in social Research”, McGraw Hill Book & Co., New York

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

शिक्षकों की व्यावसायिक प्रतिबद्धता एवं परीक्षण

डॉ. मोनिका बाबेल *

प्रस्तावना – व्यावसायिक प्रतिबद्धता से तात्पर्य अध्यापन व्यवसाय के प्रति समर्पित रहना, अध्यापन व्यवसाय के प्रति अपने दायित्वों को समझना और उनको निभाने के लिए प्रयत्न शील रहना। जिन छात्रों को शिक्षित करने का दायित्व सौंपा गया है उनको शिक्षा के उद्देश्यों से अवगत करवाने तथा शैक्षिक स्तर ऊँचा उठाने के प्रति कटिबद्ध रहना ही अध्यापन व्यवसाय के प्रति प्रतिबद्धता है।

प्रो. एम. रेड के अनुसार – जिस प्रकार एक बगीचे में माली का महत्व होता हैं उसी प्रकार का महत्व विद्यालय में शिक्षक का होता है। जिस प्रकार माली वृक्षों को अंत तक फल देने वाला बना देता है, उसी प्रकार एक शिक्षक बच्चो को जीने की कला सीखा देता है। वह उन बच्चों को पौधों की भांति सींचकर भविष्य के ऐसे नागरिक तैयार कर सकता है जो उस विद्यालय, परिवार, एवं राष्ट्र का नाम रोशन कर सकते हैं। आज कई संस्थान तुलनात्मक रूप से बेहतर परिणाम देते हैं। उसका कारण वहां के शिक्षकों की शिक्षण कार्य के प्रति प्रतिबद्धता हैं। **डॉं. राधाकृष्णन** जैसे शिक्षक भारत में हुए हैं जिनका नाम आज भी आदर के साथ लिया जाता हैं। उनके जन्मदिन पर शिक्षक दिवस मनाया जाता हैं क्योंकि वे अपने अध्यापन कार्य के प्रति प्रतिबद्ध थे। शिक्षक का स्मरण होते ही हमारी कल्पना में एक ऐसे साधारण सच्चरित्र व्यक्ति का चित्र सजीव हो उठता है जो अपने आदर्श चरित्र एवं प्रभावी व्यक्तित्व के कारण न केवल बालकों के लिए ही नही बल्कि संरक्षकों के लिए भी प्रेरणा का स्त्रोत बनता है। फैशन, शान–शौकत, तड़क–भड़क और दिखावे से दूर साधारण स्वच्छ लिबास, आदर्श चरित्र, दूर्व्यसनों से दूर, जलता हुआ एक ऐसा दीप जो खुद जलकर दूसरों को प्रकाश देता है, ज्ञान रूपी प्रकाश, जिससे मानवता का पथ अवलोकित होता है, अज्ञान का अंधकार मिटता है।

शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक शोधों से भी यह स्पष्ट हो चुका है कि शिक्षक का शाला में प्रमुख स्थान है क्योकि वह बालक के मानसिक विकास के अलावा शारीरिक, नैतिक, सांवेगिक, आध्यात्मिक एवं रागात्मक विकास में भी योगदान देता है। शिक्षण प्रतिबद्धता कोशिक्षक की शिक्षण और विद्यालय के प्रति वचनबद्धता के रूप में माना गया हैं। वह अपने कार्य के प्रति तो जागरूक है ही साथ ही विद्यालय के संगठन और प्रशासन में भी अपेक्षित सहयोग प्रदान करता हैं। यह शिक्षक की अन्तरात्मा का मामला है इससे शिक्षक में आत्मविश्वास बढ़ता है एवं अपने कार्यो से उसे समाज में सम्मान एवं स्वयं को आत्म–संतोष मिलता हैं।

शिक्षक को अपने शिक्षण कार्य के प्रति पूर्णवचनबद्धता या प्रतिबद्धता दिखानी होती हैं एक शिक्षक को अपने विद्यालय के प्रति सुधारात्मक उपाय अपनाने एवं सकारात्मक सोच रखने की आवश्यकता रहती है। वह शिक्षक उस विद्यालय में न केवल शिक्षण के प्रति पूर्ण समर्पित होता हैं अपितु विद्यालय के प्रशासन एवं संगठन को सुदृढ़ बनाए रखने में अपनापूर्ण योगदान समर्पणभाव से करता है। विद्यालय में सम्पूर्ण वातावरण को स्वच्छ बनाए रखने एवं विद्यालय में सुधार लाने के लिए शिक्षक की प्रतिबद्धता जरूरी हैं जो कि विशेष रूप से विद्यार्थियों के महत्व की हैं। शिक्षण गतिविधियों को सुचारू रूप से संचालित करने एवं विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास में वृद्धि करने के लिए शिक्षक प्रतिबद्धता जरूरी हैं।

विद्यालय के सम्पूर्ण शैक्षणिक वातावरण को अनुशासित एवं व्यवस्थित रूप प्रदान करने तथा विद्यार्थियों में अनुशासन, व्यक्तित्व विकास एवं श्रेष्ठ जीवन–कौशल का निर्माण करने के लिए उस विद्यालय के शैक्षिक वातावरण को स्वच्छ एवं अनुशासित बनाए रखने की आवश्यकता हैं। अत: छात्रों में अध्न के प्रति रूचि विकसित करने, उनके भविष्य की सुदृढ़ नीवं रखने, समाज में शिक्षकों की छवि को स्वच्छ रखने एवं परिवार, राष्ट्र एवं समाज को विकसित करने के लिए शिक्षक प्रतिबद्धता की आवश्यकत हैं।

व्यावसायिक प्रतिबद्धता को निम्नलिखित आयाम द्वारा मापा जाता है:–

1. सीखनेवाले (विद्यार्थी) के प्रति प्रतिबद्धता
2. समाज के प्रति प्रतिबद्धता
3. व्यवसाय के प्रति प्रतिबद्धता
4. उत्कृष्टता प्राप्त करने के प्रति प्रतिबद्धता
5. मूलभूत मानवीय मूल्यों के प्रतिप्रतिबद्धता

व्यावसायिक प्रतिबद्धता के मापन हेतु परीक्षण – प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा व्यावसायिक प्रतिबद्धता के लिए **डॉ. रवीन्द्रकौर** द्वारा निर्मित मापनी का प्रयोग किया गया है। जिसका विवरण इस प्रकार से है:–

इस मापनी का निर्माण शिक्षकों की व्यावसायिक प्रतिबद्धता मापने के लिए किया गया है इसके लिए शिक्षक की प्रतिबद्धता को उसके सीखने वालों, समाज, व्यवसाय, उच्च लक्ष्य एवं मूलभूत मानवीय मूल्यों के संदर्भ में मापी गई है।

सर्वप्रथम 82 कथनों का निर्माण इस मापनी के लिए किया गया है। बाद में विशेषज्ञों की राय के आधार पर 65 कथन रखे गये हैं। इस मापनी में अंकन व्यवस्था इस प्रकार से रखी गई है:–

क्र.	कथन	पूर्ण सहमत	सहमत	अनिश्चित	असहमत	पूर्ण असहमत
1	सकारात्मक	5	4	3	2	1
2	नकारात्मक	1	2	3	4	5

पद विश्लेषण – पद विश्लेषण प्रक्रिया के लिए स्केल मान व क्यू मान निकाला गया है जिस कथन का मान 0.5 से कम तथा 2.0 से अधिक पाया

* सहायक आचार्य, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

गया उसको निरस्त किया गया है। इस तरह से 20 कथन को निरस्त करते हुए अंतिम रूप से 45 कथनों का चयन किया गया जो तालिका में प्रस्तुत है:-

क्र.	प्रतिबद्धता के आयाम	पदों के क्रम	कुल पदों की संख्या
1.	सीखने वाले (विद्यार्थी) के प्रति	1-9	9
2.	समाज के प्रति	10-18	9
3.	व्यवसाय के प्रति	19-27	9
4.	उत्कृष्टता प्राप्त करने के प्रति	28-36	9
5.	मूलभूत मानवीय मूल्यों के प्रति	37-45	9
		योग	**45**

विश्वसनीयता – इस मापनी की विश्वसनीयता परीक्षण पुन: परीक्षण के माध्यम से मापी गई जो कि 0.76 प्राप्त हुई है।

वैधता – अकित वैधता के लिए इस मापनी को अध्यापक शिक्षा एवं विद्यालयी शिक्षा के विशेषज्ञों से जाँच करायी गई उनके अनुसार यह एक वैध उपकरणहै जिससे व्यावसायिक प्रतिबद्धता मापी जा सकती है।

व्यावसायिक प्रतिबद्धता को व्यक्त करने हेतु मानक इस प्रकार से है:-

क्र.	प्राप्तांको की परास	जेड स्कोर की परास	व्यावसायिक प्रतिबद्धता का स्तर
1.	202 या इससे अधिक	+2.01 और इससे अधिक	अधिकतम स्तर
2.	189-201	+1.26 से 2.00	उच्च स्तर
3.	175-188	+.51 से +1.25	औसत से ऊपर
4.	158-174	-0.50 से 0.50	औसत
5.	144-157	-.51 से -1.25	ओसत से नीचे
6.	131-143	-1.26 से - 2.00	निम्न
7.	130 या इससे कम	-2.01 और इससे कम	निम्नतम

References :-

1. Anastasi, Anne, : Psychological Testing", New York : MacMailan Publishing Co., Inc., 1976.
2. Best J.W. (1983). "Research in Education", New Delhi : Prentice Hall of India.
3. Chauhan, S.S. (2003). "Methodology of Educational Research", Second Edition, New York : Appleton Century Crafts Ins.
4. Divan, Rashimi (2002). "Educational Research", New Delhi : Atlantic Publishers and Distributors.
5. Good, C.V. Inc (1959). "Intrduction of Education Research", Appleton Century Crafts, New York.
6. Goods, Bar and Scates (1947) : "Methodology of Education Research", New York.
7. Gupta S.C. (1981) : "Fundamentals of Statistics", Bombay Himalaya Publishing Home.
8. James, M. Lee : "Principles and Method of Secondary Education".
9. Koul, Lokesh (1984) : "Methodology of Educational Research" Vikas Publishing House Pvt. Ltd.

****

द्वि वर्षीय बी. एड. प्रशिक्षण कार्यक्रम में आंकलन संबंधी चुनौतियां

मधु वसीटा *

प्रस्तावना – 'निर्धारण या आकलन का आशय उन सभी नितियों, सिद्धांतों एवं विधियों की समीक्षा करने से है जो कि छात्रों के शैक्षिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं के ज्ञान एवं उनकी पूर्ति के लिये प्रयुक्त होती है।'

– प्रो. एस.के. दुबे

मानव जीवन में शिक्षा की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है। शिक्षा एक साधन के रूप में पशुवत व्यवहार से मानवीय व्यवहार की ओर व्यक्तियों को अग्रसर करती है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति उसके अध्यापकों की गुणवत्ता पर निर्भर करती है।

शिक्षक शिक्षा शिक्षा शास्त्रीय प्रक्रम में उन युवाओं हेतु व्यावसायिक तैयारी है जो शिक्षण व्यवसाय में प्रवेश करना चाहते हैं। भावी अध्यापकों को व्यावसायिक ज्ञान प्राप्त करने, व्यावसायिक कौशल का विकास करने, व्यवसाय के प्रति अभिवृति उत्पन्न करने और शिक्षण व्यवसाय के लिये उनमें अभिरूचि उत्पन्न करने, उन्हें शिक्षा की नवीन विधियों का ज्ञान कराने के लिये शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम की व्यवस्था की जाती है।

शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम से संबंधित समय-समय पर अनेक आयोगों ने अपने सुझाव एवं रिपोर्ट प्रस्तुत की है। वर्तमान में भी राष्ट्रीय पाठ्यक्रम संरचना 2005 एवं राष्ट्रीय पाठ्यक्रम संरचना शिक्षक शिक्षा 2009 के प्रस्तुतीकरण का मुख्य उद्देश्य शिक्षक शिक्षा के विषय को नवीन परिस्थिति अनुसार बदलना तथा उसमें नवीन विचारों का समावेश वर्तमान आवश्यकता को ध्यान में रखकर करना है। सत्र 2014-15 तक माध्यमिक स्तर पर शिक्षक प्रशिक्षण का एक वर्षीय प्रशिक्षण पाठ्यक्रम चलाया जाता था परन्तु छउढए एवं छउएठढ ने 2015-16 में पिछले कई वर्षो से चले आ रहे शिक्षकों एवं प्रशिक्षणार्थियों के विकास एवं शिक्षा के क्षेत्र को व्यापक बनाने के शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम की अवधि दो वर्ष कर दी है।

दो वर्षीय प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत शिक्षण कार्य में प्रशिक्षणार्थियों की रूचि बढाना, पाठ्यक्रम का ज्ञान कराना कि पाठ्यक्रम क्या है? विद्यालय स्तर पर वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उसका नवीनीकरण कैसे किया जाये, उन्हें पुस्तकालय का महत्व, शान्ति के लिये शिक्षा, मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों से अवगत कराना, खउढ का शिक्षण कार्य में उपयोग बताना, एक अच्छे शिक्षक के रूप में बच्चों के सहायक, मार्गदर्शक, निर्देशक के रूप में प्रशिक्षणार्थियों को तैयार कर उनमें सृजनात्मक, समीक्षात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करना ही इस पाठ्यक्रम का मुख्य उद्धेश्य है।

शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत छात्राध्यापकों के मूल्यांकन, आकलन के कार्यो का भी समावेश किया गया है। आकलन शब्द अंग्रेजी के Assessment का हिन्दी अनुवाद है। जिसका अर्थ निर्धारण करना, राय बनाना आदि से लिया जाता है। 'निर्धारण' शब्द में मूल्यांकन एवं परामर्श शब्द का भी समावेश होता है। जब तक मूल्यांकन प्रक्रिया सम्पन्न नहीं होगी तब तक राय नहीं दी जा सकती है। अत: निर्धारण या आकलन की प्रक्रिया मूल्यांकन के बाद ही सम्भव होती है। शैक्षणिक प्रक्रियाओं में आकलन का अर्थ- ज्ञान, समझ, क्षमता, प्रदर्शन को किसी विधी से आँकना है।

श्रीमती आर. के. शर्मा :- 'आकलन का आशय उन सभी नितियों, सिद्धान्तों एवं विधियों की समीक्षा से है जो सभी प्रकार के छात्रों की शैक्षिक एवं अशैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर छात्रों का सम्यक मार्गदर्शन करती है।'

द्विवर्षीय बी.एड. कार्यक्रम में भी आकलन का उद्येश्य प्रशिक्षणार्थियों के समग्र विकास जिसमें वर्तमान शैक्षिक आवश्कताओं का ज्ञान, अधिगम के स्त्रोंतो, सूचनाओं का ज्ञान, समावेश को प्रोत्साहन, बहिष्करण को हतोत्साहन, व्यक्तिगत शिक्षण प्रक्रिया का विकास अधिगम प्रक्रिया का विकास आदि से है। द्वि वर्षीय B.ED.के प्रशिक्षण पाठ्यक्रम को निम्नलिखित खण्डों में विभक्त है:-

शिक्षा के सैद्धान्तिक आधार 1. बालकों का अध्ययन 2. समकालीन समाज का अध्ययन 3. शिक्षा सम्बन्धी अध्ययन	पाठ्यक्रम एवं शिक्षा शास्त्रीय सिद्धान्त 1. पाठ्यक्रम का अध्ययन 2. शिक्षा शास्त्र का अध्ययन	प्रायोगिक कार्य एवं शिक्षण अभ्यास

उपरोक्त पाठ्यक्रम के अध्ययन के साथ-साथ प्रशिक्षणार्थी महाविद्यालय की अनेक पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भी भाग लेते है। इन सभी के आधार पर उनके मूल्यांकन एवं आंकलन का कार्य किया जाता है। शिक्षक प्रशिक्षकों वर्षीय पाठयक्रम में प्रशिक्षणार्थियों का आंकलन करते समय अनेक समस्याओं एवं चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। सामान्यत: निम्नलिखित चुनौतियां, प्रशिक्षक व मार्गदर्शक के सामने आती हैं :-

- **पाठ्यक्रम का आंकलन –** द्विवर्षीय बी.एड. पाठ्यक्रम राष्ट्रीय पाठ्यक्रम सरंचना शिक्षक शिक्षा 2009 के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए एवं वर्तमान शैक्षिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए बनाया गया है चूंकि इस पाठ्यक्रम में नवीन तथ्यों का समावेश किया गया है और इसे अभी कुछ समय पूर्व है। लागू किया गया है। इसे लागू करने में भी अनेक चुनौतियां प्रशिक्षकों एवं प्रशिक्षणार्थियों 1दोनों के समक्ष है। यह पाठ्यक्रम

* शोधार्थी, मोहनलाल सुखाड्या विश्वविद्यालय,उदयपुर (राज.) भारत

छात्राध्यापकों के जीवन को ध्यान में रखकर बनाया गया है परन्तु यह उनके शैक्षिक उन्नयन में कितना सफल होना, इसे किस स्तर तक लागू किया जा रहा है। इसका आंकलन भी एक चुनौतिपूर्ण कार्य है।

- **शिक्षा शास्त्रीय सिद्धान्तों का आंकलन –** प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रशिक्षणार्थियों को शिक्षण के विभिन्न विधियों एवं स्वरूपों का ज्ञान कराया जा सकता है जिससे वे अपनी शिक्षण कला में उसका उपयोग कर अपने शिक्षण कार्य को प्रभावी बना सकें। परन्तु वर्तमान में भी अनेक प्रशिक्षकों के द्वारा पुरानी शिक्षण विधियों का ही प्रयोग किया जाता है। साथ ही सभी प्रशिक्षणर्थी भी शिक्षण कला में पूर्ण रूप से निपूर्ण नहीं हो पाते है। छात्राध्यापकों के शिक्षण के तीन चरों (शिक्षक, छात्र, पाठ्यक्रम) के आत्मसात करने, विभिन्न शैक्षिक कौशलों, अधिगम सामग्री, विभिन्न शिक्षण तकनीक, शिक्षण कलाओं के ज्ञान, व्यावहारिक जीवन में ज्ञान का उपयोग, विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं जैसे–आदर्शवाद, प्रवृत्तिवाद, प्रयोजनवाद, बाल केन्द्रिय शिक्षा, मनोविज्ञान के सिद्धान्तों, शैक्षणिक ढांचे को समझने सम्बन्धी आकलंन कैसे करें और आंकलन की कौन्सी विधियों का उपयोग करें जिससे स्पष्ट एवं निष्पक्ष निर्धारण किया जा सकें यह भी एक विचारणीय विषय है।
- **पाठ्य सहगामी क्रियाओं का संकलन –** बी.एड़ प्रशिक्षणार्थी महाविद्यालय एवं विद्यालय की जिन पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेते है उनके माध्यम से उनमें आये बदलाव का आंकलन, द्विवर्षीय पाठ्यक्रम में इन्टर्नशिप, आंकलन तथा स्तरानुकूल एवं सामाजिक आकांक्षाओं की पूर्ति उनके माध्यम से पूरी हो रही है या नहीं। इसका आंकलन करना भी एक चुनौतिपूर्ण कार्य है।
- **प्रायोगिक कार्य एवं शिक्षण अभ्यास सम्बन्धी आंकलन –** क्षेत्रीय अध्ययन, जिसमें सर्वे, प्रथम वर्ष में दैनिक पाठ योजना अभ्यास कार्यक्रम के दौरान एक पर्यवेक्षक के निर्देशन मात्र एवं द्वितीय वर्ष में इन्टर्नशिप में बिना किसी निर्देशक के छात्राध्यापकों को भेजना। वहां वह किस तरह का कार्य कर रहा है। कैसे अपनी शिक्षण कला का प्रदर्शन कर रहा। महाविद्यालय की ओर से कोई निर्देशक का कार्य नहीं होता है। ऐसे में उसकी क्षमताओं, उसके द्वारा दिये गये कार्यों का आंकलन असंभव सा प्रतीत होता है।
- **आंकलन में नवाचारों के प्रयोग की चुनौति –** प्रशिक्षकों द्वारा आंकलन में नवाचार के प्रयोग, कम्प्यूटर, इन्टरनेट, मानकीकृत, उपकरणों के प्रयोग, वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग, सजृनात्मक गतिविधियों, का निर्माण, आई.सी.टी. आदि नवीन तकनीकों के माध्यम से एवं प्रशिक्षणर्थियों का आंकलन करना चुनौतिपूर्ण कार्य है क्योंकि अभी भी कई प्रशिक्षक ऐसे है जिन्हें नवीन टेक्नोलॉजी का पूर्णत: ज्ञान प्राप्त नहीं है यदि ज्ञान है भी तो उनका उपयोग अनेक कारणों के कारण वह नहीं कर पाते है।
- **आंकलन सम्बन्धी अन्य चुनौतियां**

1. संस्थागत उद्देश्यों की पूर्ति का आंकलन,
2. आंकलन समिति के निर्माण की चुनौती,
3. आंकलन में अभिभावकों की सहभागिता का अभाव,
4. मंद बुद्धि, प्रतिभाशाली, सामान्य बालकों का पहचान कर उनका सर्वांगीण विकास के लिए दायित्व निर्वाह करने सम्बन्धी आंकलन,
5. प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण सम्बन्धी कार्यो का आंकलन संबंधी चुनौतियाँ,
6. सामाजिक परम्पराओं को समझकर समाज की आकांक्षाओं के अनुरुप अपने उत्तरदायित्वों के निर्वाह सम्बन्धी प्रशिक्षणार्थियों के कार्यो के मूल्यांकन, उनमें एवं उनके माध्यम से विद्यार्थी में होने वाले व्यवहारग परिवर्तन, उनके द्वारा सामुदायिक सहयोग प्राप्त करने की कला, अधिगम सामग्री के उपयोग व नवाचारों का प्रयोग, अपने विषय पर पकड़ एवं नवीन शिक्षण विधियों का उचित प्रयोग सम्बन्धी आंकलन करना आदि अनेक समस्या शिक्षकों के सामने आती है।

उपसंहार – बी.एड़ के द्विवर्षीय पाठ्यक्रम के अन्तर्गत प्रशिक्षणर्थियों के प्रशिक्षण कार्यो के आंकलन सम्बन्धी अनेक चुनौतियां हमारे समक्ष उत्पन्न होती है इनका समाधान भी हमें ही ढुंढना होगा। मूल्यांकन कार्यों में नवीन तकनीकों का प्रयोग करके आंकलन सम्बन्धी चुनौतियों को दूर किया जा सकता है। यद्यपि आन्तरिक एवं बाह्य मूल्यांकन, पृष्ठ पोषण के माध्यम से प्रशिक्षणार्थियों का मूल्यांकन कार्य किया जाता है परन्तु फिर भी उनके समग्र विकास को ध्यान में रखकर उनका आंकलन करना एक चुनौतिपूर्ण कार्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

पुस्तक :

1. प्रो. शर्मा बैजनाथ, श्री मती आर. के. शर्मा, प्रो. एस. के. दुबे, श्री मती अनिता बरौलिया, राधा प्रकाशन मंदिर, आगरा (अधिगम हेतु आंकलन निर्धारण/मूल्यांकन)

दस्तावेज :

2. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम संरचना 2005
3. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम संरचना शिक्षक शिक्षा 2009
4. द्वि वर्षीय बी.एड. पाठ्यक्रम 2017–18 MLSU, Udaipur

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

कृषि विकास संरचना एवं उन्मूलन - समस्या निदान एवं सुझाव

निशा विश्वकर्मा *

शोध सारांश – अक्सर कृषि लेखो की शुरूआत भारत एक कृषि प्रधान देश है से होती है ग्रंथो मे कहा गया है, अन्नम वे प्राणिनां प्राण: (अन्न प्राणीयो का जीवन है अर्थात प्राण है) प्राण ही जीवन है एवं जीवन ही प्राण है प्राण नही तो जीवन नही अन्न उगाने की कला का नाम कृषि है कृषि एक विज्ञान है जिसमे फसल को उगाने से लेकर उसके बाजारीकरण तक का सूक्ष्म ज्ञान निहित है। यूँ कहें की हमारे जीवन की प्राण वायु शक्ति को चलायमान रखने के लिए एक महत्वपूर्ण कारक को निष्ठापूर्वक पालन करने वाले ये किसान है ।

शब्द कुंजी – कृषि अर्थव्यवस्था, पहल, तकनीक, बहुफसलीय योजना, प्राकृतिक संसाधन, उधोग, सामाजिक परिवर्तन, गरीबी, पिछड़ा क्षेत्र, उत्पादन ।

प्रस्तावना – कृषि से सम्बन्धित सरकारी केन्द्रों की निष्क्रियता – भारत मे सरकार का काफी पैसा कृषि से सम्बंधित सरकारी केन्द्रो के संचालन मे लगाती है इन केन्द्रो के अफसर किसानो की समस्या का कोई समाधान नही देते है ऐसे अफसर उल्टे उन किसानो से फर्जी तरीके से धन प्राप्त करने की कोशिश करते है ये सरकारी अफसर हम और आप में से ही होते है। हमे इतना सोचना चाहिए की कोई किसान हमारे एक गलत निर्णय से आत्महत्या कर सकता है इसके लिए सरकार को जागरूक करने के साथ-साथ हमे खुद को भी जागरूक होना पड़ेगा।

भूमिका – मध्यप्रदेश की अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। और आज भी हैं। वास्तव में कृषि हमारे देश में केवल जीविकापार्जन का साधन या उद्योग धंधा ही नही है बल्कि अर्थव्यवस्था की रीढ़ है देश में उद्योग धन्धे विदेशी व्यापर, विदेशी मुद्रा अर्जन विभिन्न योजनाओं की सफलता एवं राजनीतिक, स्थायित्व भी कृषि पर ही निर्भर हैं। कृषि को सर्वाधिक प्राथमिकता देने की आवष्यकता हैं यदि कृषि असफल रहती है तो सरकार एवं राष्ट्र दोनों असफल रहते है। कृषि के महत्व को जानना इसलिए भी आवष्यक है कि वास्तव में कृषि विकास का एक जरिया है।

वास्तव में अर्थव्यवस्था की रीढ़ कृषि है – इसकें विकास में अर्थव्यवस्था में दृढ़ता आती है। राष्ट्रीय आय में इसका योगदान 18 प्रतिशत कें आसपास है। गत वर्षो में खाधान्न तथा व्यावसायिक, फसलो में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। कृषि उत्पाद को प्रभावित करने वाले तत्वों में प्रावधिक और आर्थिक दोनों महत्वपूर्ण है बारहवीं योजना की उपलब्धियों में 4.5 प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य रखा गया है। इसरें कृषि 48.9 प्रतिशत जनसख्यां को रोजगार प्रत्यक्ष रूप सें प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त कृषि व्यवसाय में करोड़ों लोग लगे है जों कृषि सबंधी क्रियाओं में योगदान देते है। कृषि का राष्ट्रीय आय में भी बहुत अधिक महत्व है। इसकें साथ ही शोध पत्र का विषय म.प्र. में कृषि जो मध्यप्रदेश का मुख्य व्यवसाय कृषि है। विकास कार्यक्रम में कृषि कों प्राथमिकता दी गई हैं। कृषि का योगदान घरेलू उत्पाद में 23.44 प्रतिशत है। हरित क्रान्ति कें फलस्वरूप कृषि उत्पाद में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। विपणन तथा वित्त सुसंगठित है। किन्तु सिंचाई अभी अपर्याप्त है। कृषि अभी भी पिछड़ी हुई है। इसमें सुधार की पुरी गुजांइश है। इसके कृषि प्रधान होने के साथ-साथ इसकी प्राकृतिक स्थिति सम शितोष्ण – कटिबंध हैं विन्ध्याचल और सतपुड़ा का वरदान है। गरीबी की रेखा के नीचें 27 प्रतिशत लोग है। मध्यप्रदेश कृषि कें साथ खजिन ससांधनों, वन ससांधनों, उपजाउ भूमि, पर्याप्त जल ससांधन सें परिपूरित है। इन सब के कारण इसका आर्थिक भविष्य उन्नत है। किन्तु इसे हत- भाग्य कहा जाएगा, कि मध्यप्रदेश की गिनती देश के उन्नत प्रदेशों के साथ नही की जाती है। प्रयास किये जा रहे है। कि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को देखते हुए आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन प्रदेश कों अग्रिम श्रेणी में ला सकते है।

उद्देश्य :

1. कृषि विकास का पता लगाना
2. कृषि क्षेत्र की समस्या को जानना
3. विकास का सम्बन्ध कृषि सें पहचानना
4. संसाधनों के उपयोग के बारे में जानना
5. तकनीकि का पता लगाना
6. कृषि के महत्व को जानना

शोध -पत्र – वस्तुत: शोध पत्र जानने की एक विधि है। लेकिन इसकें माध्यम सें हम केवल उन्ही लक्ष्यों को जान सकतें है। जों इन्द्रि गम्य और अनुगम्य है अर्थात शोध कें माध्यम सें हम केवल वही जानकारी प्राप्त कर सकते है जों इन्द्रियों कें माध्यम सें जानी जा सकती है। अधिक स्पष्ट शब्दों में हम कह सकतें हैं

(1) शोध एक प्रयास है
1. नए ज्ञान की प्राप्ति
2. पुराने लक्ष्यों का सत्यापन
3. पद्धतियों का विकास

(2) शोध लक्ष्यो की प्राप्ति के लिये किया गया हर प्रयास नही अपितु केवल व्यवस्थित प्रयास है।

(3) यह एक निरन्तर प्रयास है।

प्रविधि – शोधार्थी द्वारा शोंध पत्र प्रस्तुत करतें समय प्रविधि में प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है।

* शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

तालिका 1 – कृषि सम्बन्धी प्रमुख संगठन एवं योजनाऍं :-

संगठन/योजनाऍं	स्थापना वर्ष
मध्य प्रदेश बीज तथा फार्म विकास निगम	1980
मध्य प्रदेश कृषि उद्योग विकास निगम	1969-70
मध्य प्रदेश राज्य भण्डार गृह निगम	1958
लघु कृषक विकास प्राधिकरण	1971
भूमि विकास निगम	1977-78
राज्य पशुपालन एवं कुक्कुट विकास निगम	1982
सहकारी डेयरी विकास निगम	1975
मध्य प्रदेश राज्य बीज प्रमाणीकरण संस्था	1980
मध्य प्रदेश कृषि विपणन बोर्ड	1972
बलराम ताल योजना	2007
थ्रस्ट परियोजना	1989
राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना	1999-2000
उद्यानिकी मिशन	2006-07
अन्नपूर्णा-सूरजधारा योजना	2000-01

स्त्रोत मध्य प्रदेश सामान्य ज्ञान

वर्ष 2010 के अनुसार, मध्य प्रदेश की 71.6 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्य में लगी है। राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्र का अंष वर्ष 2010-11 के त्वरित अनुमानों के अनुसार 20.53 प्रतिशत हैं। वर्ष 2010-11 के अनुसार, राज्य में खाद्यान्न का उत्पादन 165,496 हजार मीट्रिक टन है।

भूमि सुधार एवं उपयोग – कृषि विकास और भूमि सुधार का सीधा, सम्बन्ध हैं । इससें भु-स्वामित्व का सवाल तय होता है। भूमि सें किसान का लगाव होता है। भू-सुधार के माध्यम सें कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है। भारत में 1950 सें जमीदारी तथा जागीरदारी प्रथा कें उन्मूलन कें साथ भू-सुधार - कार्यक्रम आरंभ हुए। फिर भी अनेंक, स्थानों पर बड़े किसानों कें माध्यम सें कुछ जमीदारी देखी जा सकती है। भूमि-सुधार एक अत्यन्त व्यापक शब्द है। इसकें अन्तर्गत वें समस्त परिवर्तन आतें है। जों भू धारण - प्रणाली में भूमि का अधिकतम उपयोग करने हेतू किये जाते है।

भूमि सुधारों का आशय व्यक्ति और भूमि कें सम्बन्ध और संस्थागत पुर्नसंगठन सें हैं। – **प्रो. गुन्नार मिर्डल**

वैज्ञानिक कृषि या सहकारिता कों हम कितना ही अपना लें किन्तु इसमें पूर्ण सफलता तब तक प्राप्त नही होगी जब तक कि हम भूमि व्यवस्था का सुधार नही करलें । – **डॉ. राधाकमल मुखर्जी**

तालिका 2

मध्य प्रदेश : भूमि उपयोगभूमि उपयोग	क्षेत्रफल (हजार हेक्टेयर में)
ग्रामीण पत्रकों में प्रतिवेदित क्षेत्रफल	23,135
काश्त उपयोगी पड़ती भूमि	1,160
कुल पड़ती भूमि	1,202
शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	14,790
कुल बोया गया क्षेत्रफल	20,519
द्वि-फसली क्षेत्रफल	5,716
शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल	6,506
कुल सिंचित क्षेत्रफल	6,704
कृषि गहनता	139%
शुद्ध सिंचित क्षेत्र का शुद्ध बोये गए क्षेत्र से प्रतिशत	43.4%

मध्यप्रदेश में कृषि – मध्यप्रदेश कें सकल राज्य घरेलू उत्पाद में (GSDP) कृषि का योगदान 2005-06 में था जों 2013-14 में बढकर - 33.22 प्रतिशत हो गया। प्रदेश में अभी भी कृषि परम्परागत है तथा कृषि की मानसून पर निर्भरता है प्रदेश में जिन जिलों में सिचाई की सुविधाएं उपलब्ध है। वे कृषि की दृष्टि सें विकसित जिले रहे - वैसे तों कृषि की विभिन्न योजनाओं के द्वारा कृषि की उत्पादकता बढानें के प्रयास किये जा रहे हैं। मध्यप्रदेश में कृषि की स्थिती कों निम्न लक्ष्यों की सहायता सें समझा जा सकता हैं ।

कृषि वृद्धि दर – कृषि प्रधान राज्य होने के कारण हमेषा सें ही मध्यप्रदेश में कृषि की वृद्धि दर सर्वाधिक रही है कुछ अपवादों कों छोड़कर कृषि सदैव सें बढ़नें वाला क्षेत्र बना रहा।

तालिका 3- (देखे अगले पृष्ठ पर)

मध्यप्रदेश में कृषि वृद्धि दर 2004-05 की समीक्षा कें आधार पर 2000-01 को छोड़कर (26.27) लगातार बढ़ती रही है। 2010-11 में यह 0.24 कें निम्न स्तर पर रही अधिक 2011-12 में पुन: बढ़ना प्रारंभ होकर 2013-14 में 23.28 प्रतिशत पहुच गई जों भारत में सर्वाधिक रही।

मध्यप्रदेश खाधान्न उत्पादन क्षेत्र – मध्यप्रदेश में खाधान्न उत्पादन क्षेत्र में वृद्धि हुई है। परंतु मक्का का उत्पादन क्षेत्र घटा है। 2009-10 में चावल 1603.23 हजार हेक्टेयर में बढ़कर 2013-14 में 1.891.75 हजार हेक्टेयर हो गया -

तालिका 4- (देखे अगले पृष्ठ पर)

मध्यप्रदेश में जमीदारी उन्मूलन – मध्यप्रदेश जमीदारी उन्मूलन अधिनियम 1951 में लागू किया गया था। जिसके अनुसार जमीदारों कों उनकी शुद्ध आय का 8 सें 20 गुना तक क्षतिपूर्ति के रूप में दिया गया लेकिन छोटे जमीदारों कों क्षतिपूर्ति पुनर्वास अनुदान भी दिया गया तथा जिसकें लागू होने सें जमीदारी मालगुजार जागीरदार सभी के अधिकार समाप्त कर दिए गए लेकिन खुद काश्तकार को छोड़ दिया गया। 1956 में मध्यप्रदेश का पुनर्गठन होने पर राज्य में समान भूमि व्यवस्था स्थापित कर दी गयी है। जमीदारी उन्मूलन कृषकों एवं ग्रामीण क्षेत्रों कें लिए निम्न प्रकार सें लाभकारी रही।

1. कृषकों का शोषण समाप्त हुआ
2. मन लगार काम करने सें उत्पादन में वृद्धि हुई
3. सरकारी सहायता मिलनें लगी
4. आय में वृद्धि होने लगी
5. भूमि सुधार कार्यक्रमों का क्रियान्वयन आसान हो गया
6. पैदावार बढ़ाकर उन्नति के लिए स्वतंत्र हैं ।

भारतीय कृषि की समस्या एवं निदान – हम यही कर सकते है की कृषि विकास एवं ग्राम मे समस्याओं को क्षणिक मानवीय लिप्सा की भट्टी में झोकने वाले हाथो को मजबूती से रोका जाए अन्यथा भारत मॉ ग्राम्यवासिनी का भावना का तो नाम मिटेगा ही साथ-साथ मानव अस्तित्व भी धूएं मे उड़ जाएगा इसमे हम सभी की परोक्ष एवं प्रत्यक्ष भूमिका अपेक्षित है बहुराष्ट्रीय संगठनों की सम्बध्दता से जहा हम अनायास विदेशी पूजी के हाथो गिरफ्तार होते जा रहे है वही कृषि की उपेक्षा कर पुन: उन्ही देशो का मुह ताकना पड़ रहा है अपने खेतो का श्रम व पूंजी दोनो का हस्तातरण सम्भवत: कृषि की उपेक्षा का ही दुष्परिणाम है इसके निम्न कारण हो सकते है।

1. असन्तुलित समाज व्यवस्था 2. निरक्षरता 3. औधोगिकरण 4. शहरी संस्कृति का प्रभाव

1. कृषि की वर्षा पर निर्भरता 2. जोतो का आकार छोटा 3. उत्पादन कम 4. मिट्टी में कम उत्पादन 5. जनसंख्या का अधिक दबाव 6. रूढ़िवादी किसान 7. सिचाई सुविधाओं का आभाव 8. उन्नत बीज एवं उर्वरको का अभाव 8. सड़क, बिजली, पानी, आदि का अभाव।

निदान :- 1. जमीदारी प्रथा का उन्मूलन 2. भूमि की अधिकतम सीमा का निर्धारण 3. चकबंदी कार्यक्रम को लागू करना 4. किसानो का प्रशिक्षण 5. ग्रामीण क्षेत्रो मे कृषि शिक्षा का प्रचार प्रसार 6. कम ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराना 7. मानसून की अनिष्चिता 8. कृषि अनुसंधान केन्द्रो की स्थापना।

निष्कर्ष एवं सुझाव - कृषि मानव सभ्यता की सबसे प्राचीन उद्योगों में से एक है। म.प्र. में कृषि प्राचीन समय सें की जा रही है जों अपनी परिवक्व अवस्था में पहुंच चुकी है। अठारवी शताब्दी में कृषि उन्नत अवस्था में थी। औपनिवेशक व्यवस्था नें कृषि यंत्र में विभिन्न परिवर्तन कियें ताकि वे अपनी औघोगिक क्रान्ति के लिए कच्चा माल उत्पादित कर सकें। यह कहा जा सकता है कि वर्तमान में कृषि विकास निरन्तर हो रहा है। जिसके कारण किसानों की आय में वृद्धि के साथ-साथ उनका आर्थिक विकास भी हो रहा है। वर्तमान में अधिकांश किसान आधुनिक खेती के माध्यम सें कृषि उत्पादन कर रहें है। तथा बहूफसलीय खेती के माध्यम सें उत्पादन कों बढ़ावा दिया जा रहा है।

सुझाव :

1. कृषि विकास कार्यक्रम का आयोजन
2. तकनीकि का प्रयोग
3. उन्नत किस्म के बीजों का उपयोग
4. उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि
5. संसाधनों का उपयोग आदि

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था ऋतु तिवारी 2018 म.प्र. हिन्दी ग्रन्थावली, भोपाल
2. सामाझिक अनुसंधान की विधिया डॉ रामगोपाल सिंह 2018 म.प्र. हिन्दी ग्रन्थावली, भोपाल
3. भारतीय अर्थव्यवस्था, डॉ. विष्णु दल नागर, वल्लभदास मेहता 2010 म.प्र. हिन्दी ग्रन्थावली, भोपाल
4. मध्यप्रदेश अलील और आम शिव अनुराग परेरिया - 2017 म.प्र. हिन्दी ग्रन्थावली, भोपाल
5. ग्रामीण एवं नगरीय समाज, डॉ. अशोक डी. पाटिल 2016 म.प्र. हिन्दी ग्रन्थावली भोपाल
6. स्वयं के विचार
7. पत्र एवं पत्रिकाएं

तालिका 3 : मध्यप्रदेश की वृद्धि दर (1996-97-2013-14) प्रतिशत में

1996-97	2001-01	2005-06	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14
5.63	26.37	7.04	0.24	18.17	18.63	23.28

स्त्रोत:- आर्थिक समीक्षा मध्यप्रदेश आर्थिक एक साख्यिकी सचांनालय

तालिका 4 : प्रमुख खाधान्न फसलों का क्षेत्र (हजार हेक्टेयर में)

फसले	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	पिछलें वर्ष में वृद्धि की कमी
चावल	1603.28	1583.74	1703.44	1801.36	1891.75	5.02
मक्का	823.36	848.77	859.80	865.43	862.55	-0.33
गेंहू	4471.08	4645.21	5266.57	5013.11	6135.13	9.30
धान	12723.45	13274.87	13511.80	137.8600	14367.55	4.22

स्त्रोत:- आर्थिक समीक्षा मध्यप्रदेश आर्थिक एक साख्यिकी सचांनालय

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जाने वाली त्रुटियों का अध्ययन

पूनम रावल *

शोध सारांश – प्रस्तुत अनुसंधान कार्य का मुख्य लक्ष्य छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जाने वाली त्रुटियों का अध्ययन करना था। शोधार्थी द्वारा न्यादर्श चयन हेतु शोधार्थी ने यादच्छिक विधि द्वारा मेवाड़, मारवाड़ व हाड़ौती क्षेत्र के शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों का चयन किया गया है। सोद्देश्य विधि द्वारा इन महाविद्यालयों से 120 छात्राध्यापकों का चयन किया गया है जिसमें 40 मेवाड़, 40 मारवाड़ व 40 हाड़ौती क्षेत्र से लिये गये है। शोधार्थी ने दत्त संकलन के लिए स्वनिर्मित प्रमापनी का प्रयोग किया। दत्त संकलन के पश्चात् उनको सारणीयन करते हुए आँकड़ो का विश्लेषण टी परीक्षण एवं आरेख प्रदर्शन के आधार पर किया गया। निष्कर्ष स्वरूप पाया गया कि मेवाड़, मारवाड़ एवं हाड़ौती क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जाने वाली त्रुटियों अलग अलग होती है।
शब्द कुंजी – ध्वनि, उच्चारण, त्रुटियाँ ।

प्रस्तावना – महाभाष्यकार विष्णुमित्र ने भाषा के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखा है – 'प्रयुक्तांवत्ति वर्णा मेघां ते इमव्यक्त वाच:।

अर्थात् भाषा के अभाव में इस संसार की कल्पना नहीं की जा सकती है, भाषा विचारों और भावों की संवाहक तो है ही साथ ही अभिव्यंजना शक्ति का विकास भी करती है। महर्षि पंतजलि के अनुसार, 'भाषा वह व्यापार है जिससे हम वर्णनात्मक या व्यक्त शब्दों द्वारा अपने विचारों को प्रकट करते है।'

'एक: शब्द: सम्यक् ज्ञान: प्रयुक्त: स स्वर्ग लोके काधुन भवति।'

ऋग्वेद में एक शब्द को ठीक तरह से जान लेना उसका उपयुक्त अभिष्ट फल देने वाला होता है।

भाषा के दो रूप होते है – 1. मौखिक 2. लिखित ।

हिन्दी भाषा उन्नति के पथ पर अग्रसर हो रही है। इसके राष्ट्रभाषा पद पर आसीन होने के पश्चात् इसका महत्व और भी बढ़ गया है, इस कारण इसे शुद्ध, समृद्ध, सर्वप्रिय तथा सर्वग्रह्य परमावश्यक है क्योंकि आज छात्र व अध्यापक स्वयं भी शुद्ध बोलने व लिखने में निपुण नहीं है, इससे शिक्षा स्तर निरन्तर गिर रहा है।

हमारी सरकार निरन्तर हिन्दी भाषा को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न सम्मेलन, समारोह, कार्यशाला आदि आयोजित करती है ताकि उसका प्रयोग हम शुद्ध रूप में शैक्षिक, प्रशासनिक व कार्यालयी क्षेत्र में अधिकाअधिक कर सके। हिन्दी भाषा में छात्र से लेकर उच्च पद पर आसीन अधिकारी उच्चारण में त्रुटियाँ करते हैं और इस पर बहुत ही कम शोधकार्य हुए है। इन्ही परिस्थितियों को देखते हुए शोधार्थी ने उक्त शोध आलेख प्रस्तुत किया है।

उद्देश्य –

- समग्र छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों का पता लगाना।
- मेवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों का पता लगाना।
- मारवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों का पता लगाना।
- हाड़ौती क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों का पता लगाना।
- मेवाड़ एवं मारवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- मारवाड़ एवं हाड़ौती क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- हाड़ौती एवं मेवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना –

- मेवाड़ एवं मारवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
- मारवाड़ एवं हाड़ौती क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
- हाड़ौती एवं मेवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

अनुसंधान का विधिशास्त्र –

- प्रस्तुत शोध में शोध की प्रकृति को देखते हुए शोधार्थी ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया।
- दत्त संकलन के लिए स्वनिर्मित प्रमापनी का प्रयोग किया ।
- अनुसंधान कार्य के चयनित न्यादर्श का स्वरूप इस प्रकार से है:–

अध्ययन में प्रयुक्त न्यादर्श

120

40 मेवाड़ | 40 हाड़ौती | 40 मारवाड़

* शोधार्थी, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

सारणीयन एवं विश्लेषण –

सारणी संख्या – 1(देखे)

विश्लेषण एवं व्याख्या – मेवाड़ एवं मारवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जाने वाली त्रुटियों के तुलनात्मक अध्ययन हेतु व्यंजन प्रश्नावली के सभी क्षेत्रों पर दोनों समूहों के मध्यमानों के बीच अन्तर की सार्थकता के लिए टी–परीक्षण का प्रयोग किया गया। क्षेत्र दन्तोष्ठ, तालू, मूर्द्धा अनुनासिक एवं कण्ठ के लिए सार्थक अन्तर पाया गया तथा क्षेत्र ओष्ठ एवं दन्त्य के लिए सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

सारणी संख्या – 2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

विश्लेषण एवं व्याख्या – मारवाड़ एवं हाड़ौती क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जाने वाली त्रुटियों के तुलनात्मक अध्ययन हेतु व्यंजन प्रश्नावली के सभी क्षेत्रों पर दोनों समूहों के मध्यमानों के बीच अन्तर की सार्थकता के लिए टी–परीक्षण का प्रयोग किया गया। क्षेत्र दन्तोष्ठ, तालू, मूर्द्धा एवं अनुनासिक के लिए सार्थक अन्तर पाया गया तथा क्षेत्र कण्ठ एवं दन्त्य के लिए सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

सारणी संख्या – 3 (देखे आगे पृष्ठ पर)

विश्लेषण एवं व्याख्या – हाड़ौती एवं मेवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जाने वाली त्रुटियों के तुलनात्मक अध्ययन हेतु व्यंजन प्रश्नावली के सभी क्षेत्रों पर दोनों समूहों के मध्यमानों के बीच अन्तर की सार्थकता के लिए टी–परीक्षण का प्रयोग किया गया। क्षेत्र दन्तोष्ठ,कण्ठ, दन्त्य एवं अनुनासिक के लिए सार्थक अन्तर पाया गया तथा क्षेत्र ओष्ठ , मूर्द्धा एवं तालू के लिए सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

वर्तमान में प्रासंगिकता – प्रस्तुत आलेख द्वारा मेवाड़ ,मारवाड़ एवं हाड़ौती क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण. में की जाने वाली त्रुटियों का पता लगाते हुए शिक्षण कार्य करते समय त्रुटियों में कमी की जा सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आचार्य रामचन्द्र वर्मा :'पदम्श्री' मानक हिन्दी व्याकरण'।
2. जैन पी.सी. –'भाषा की त्रुटियों की प्रकृति का निर्धारण एवं संस्कृत अध्यापन कार्यक्रम'
3. भारद्वाज, दिनेश चन्द्र –'हिन्दी भाषा शिक्षण', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
4. शुक्ल रमापति (1975) –'हिन्दी शिक्षण की प्रविधि' दिल्ली दोआबा हाउस।
5. जोशी श्रीमती ओड़ – 'हिन्दी शिक्षण', राजस्थान शिक्षा संस्थान उदयपुर, (1971)
6. सिंह श्री निरंजन कुमार (1982)–'माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ।
7. खन्ना, इन्द्रजीत –'राजस्थान में शिक्षा अनुसंधान' शिक्षा विभाग राजस्थान, बीकानेर (1976)
8. रमन बिहारी लाल –'हिन्दी शिक्षण' रस्तोगी पब्लिकेशन्स।
9. कपूर, श्यामचन्द्र –'व्यावहारिक हिन्दी व्याकरण' प्रभात प्रकाशन, दिल्ली (1976)
10. सावित्री सिंह (1983) –'हिन्दी शिक्षण' लायल बुक डिपो, मेरठ।
11. लावटिया, स्वर्णलता – 'हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि', किताब महल, इलाहाबाद (1959)

सारणी संख्या – 1

मेवाड़ एवं मारवाड़ क्षेत्र के छात्राध्याक्षकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों का मध्यमानवार तुलनात्मक विश्लेषण

क्र. सं.	क्षेत्र	मध्यमान		मानक विचलन		टी–मान	0.01 व 0.05 स्तर पर सार्थकता
		मेवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापक	मारवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापक	मेवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापक	मारवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापक		
1.	कण्ठ	14.35	14.15	1.23	1.04	2.11	सार्थक अन्तर पाया गया
2.	तालू	17.37	16.30	2.13	1.93	1.99	सार्थक अन्तर पाया गया
3.	मूर्द्धा	17.25	17.0	2.04	1.98	2.33	सार्थक अन्तर पाया गया
4.	दन्त्य	17.96	17.58	2.64	2.21	1.86	सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
5.	ओष्ठ	11.28	11.7	0.53	0.61	1.90	सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
6.	अनुनासिक	14.08	14.4	0.99	1.09	2.04	सार्थक अन्तर पाया गया
7.	दन्तोष्ठ	11.68	11.48	33.24	32.68	2.71	सार्थक अन्तर पाया गया
	योग	103.97	102.61	42.8	41.54	14.94	सार्थक अन्तर पाया गया

स्वतन्त्रता के अंश (df) =118 के सारणीमान

0.05 स्तर पर सारणीमान – 1.98

0.01स्तर पर सारणीमान – 2.64

सारणी संख्या – 2

मारवाड़ एवं हाड़ौती क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों का मध्यमानवार तुलनात्मक विश्लेषण

क्र. सं.	क्षेत्र	मध्यमान		मानक विचलन		टी–मान	0.01 व 0.05 स्तर पर सार्थकता
		मारवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापक	हाड़ौती क्षेत्र के छात्राध्यापक	मारवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापक	हाड़ौती क्षेत्र के छात्राध्यापक		
1.	कण्ठ	14.15	15.05	1.04	1.35	2.88	सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
2.	तालू	16.30	18.33	1.93	2.39	2.55	सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
3.	मूर्द्धा	17.0	17.45	1.98	2.05	2.17	सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
4.	दन्त्य	17.58	18.23	2.10	2.21	1.75	सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
5.	ओष्ठ	11.7	12.05	0.61	1.02	2.25	सार्थक अन्तर पाया गया
6.	अनुनासिक	14.4	14.28	1.09	1.14	2.00	सार्थक अन्तर पाया गया
7.	दन्तोष्ठ	11.48	11.98	0.38	0.89	2.71	सार्थक अन्तर पाया गया
	योग	102.61	107.37	9.13	11.05	15.31	सार्थक अन्तर पाया गया

स्वतन्त्रता के अंश (df) = 118 के सारणीमान

0.05 स्तर पर सारणीमान – 1.98

0.01स्तर पर सारणीमान – 2.64

सारणी संख्या – 3

हाड़ौती एवं मेवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापकों द्वारा हिन्दी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में की जानी वाली त्रुटियों का मध्यमानवार तुलनात्मक विश्लेषण

क्र. सं.	क्षेत्र	मध्यमान		मानक विचलन		टी–मान	0.01 व 0.05 स्तर पर सार्थकता
		हाड़ौती क्षेत्र के छात्राध्यापक	मेवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापक	हाड़ौती क्षेत्र के छात्राध्यापक	मेवाड़ क्षेत्र के छात्राध्यापक		
1.	कण्ठ	15.05	14.35	1.35	1.23	2.11	सार्थक अन्तर पाया गया
2.	तालू	18.33	17.37	2.39	2.13	1.55	सार्थक अन्त पाया गया
3.	मूर्द्धा	17.45	17.25	2.05	2.04	1.66	सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
4.	दन्त्य	18.23	17.96	2.64	2.21	2.63	सार्थक अन्तर पाया गया
5.	ओष्ठ	12.05	11.28	1.02	0.53	1.25	सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
6.	अनुनासिक	14.28	14.08	1.14	0.99	2.00	सार्थक अन्तर पाया गया
7.	दन्तोष्ठ	11.98	11.68	0.93	0.54	2.41	सार्थक अन्तर पाया गया
	योग	107.37	103.97	11.52	9.67	13.61	सार्थक अन्तर पाया गया

स्वतन्त्रता के अंश (df) = 118 के सारणीमान

0.05 स्तर पर सारणीमान – 1.98

0.01 स्तर पर सारणीमान – 2.64

****

राजस्थान राज्य पथ परिवहन निगम लाभालाभ स्थिति -एक दृष्टिकोण

डॉ. कपिल व्यास *

प्रस्तावना - मानव समाज की आवश्यकता, जनसंख्या में भयावहवृद्धि, बाजार का विश्वव्यापी होना, श्रम की गतिशीलता, शहरीकरण की भावना का उदय इन सभी घटकों ने मिलकर परिवहन सेवाओं का तेजी से विस्तार किया। जल, थल व नभ परिवहन का तेजी से विकास हुआ और इन सब में एक होड़ सी लग गयी। पथ परिवहन में रेल परिवहन व मोटर परिवहन का जाल बिछ गया। रेल परिवहन का विस्तार केंद्र सरकार से संबंधित हैं, वहीं मोटर परिवहन राज्य सरकारों के अधिकार क्षेत्र में आता है। प्रत्येक राज्य सरकार ने सुगम, सुलभ मितव्ययी और द्रुतगामी परिवहन सेवा जनसाधारण को मिले इसके लिये अपने-अपने राज्यों में राज्य पथ परिवहन निगम स्थापित किये। परविहन सेवा चाहे थल, जन व नभ कोई भी हो आगम व लागत में साम्य बहुत आवश्यक है। इसके अभाव में परिवहन सेवाओं को प्रदान करने वाली संस्थाऐं अपना अस्तित्व खो देतीं हैं। गत वर्षों में हवाई यातायात से जुड़ी कंपनी (किंगफिशर एयरलाईस) घाटे के कारण बंद हो गयी और कई बैंकों का हजारों करोड़ का ऋण बकाया रख उसका मालिक विदेश पलायन कर गया। यही स्थिति राज्य पथ परिवहन निगमों की भी बनी हुई है। मध्यप्रदेश सरकार ने ऋण के बोझ तले दबे परिवहन निगम को बंद कर दिया, वहीं देश के कई निगम बंद होने के कगार पर हैं और राज्य सरकारों की ऑक्सीजन (वित्तीय सहायता) से अस्तित्व बनाये हुए हैं। कुछ ऐसी ही स्थिति राजस्थान राज्य पथ परिवहन निगम की भी हैं।

4672.64 करोड़ रुपये के घाटे से जूझ रही रोडवेज़ की किसी को फिक्र नहीं है। वर्ष 1997-98 से वर्ष 2016-17 तक लगातार इतने बड़े घाटे का कारण निगम अपनी संचालन लागत पर लगाम नहीं लगा पा रहा है। वहीं दुसरी ओर आगम का विदोहन भी पूर्णता के साथ नहीं कर रहे हैं।

पथ परिवहन निगम में लागत के घटक - परिवहन सेवाओं के संचालन हेतु निगम को अनेकों लागतें लगाना पड़ती हैं। परिवर्तनशीलता के आधार पर इन्हें स्थायी व परिवर्तनशील लागतों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

1. स्थायी लागतें - ये लागतें प्राय: समय आधारित होतीं हैं। परिवहन सेवा की गतिशीलता में वृद्धि, कमी या स्थिरता से ये लागतें प्रभावित नहीं होती हैं। इनका भुगतान सुनिश्चित होता है इन लागतों में निगम में कार्यरत् समस्त कर्मचारियों की श्रम लागत जैसे वेतन एवं भत्तो, बोनस व कर्मचारी भविष्यनिधि में अंशदान प्रमुख होतीं हैं साथ ही स्थायी उपरिव्यय जैसे ब्याज, बीमा प्रीमियम, मोटर वाहन कर व मूल्यह्रास को भी इसके अंतर्गत सम्मिलित किया जाता है।

2. परिवर्तनशील लागतें- इन लागतों में वे लागतें सम्मिलित हैं जो परिवहन सेवा के विस्तार अथवा कमी से प्रभावित होतीं हैं। इन लागतों में मुख्य रुप से सामग्री लागत आती है। सामग्री लागत घटकों में ईंधन, लुब्रीकेंट, ऑटोस्पेयर पार्ट्स, टायर-ट्यूब, बैट्री, पुर्ननिर्माण सामग्री एवं अन्य स्टोर्स सामग्री की लागतों को शामिल किया जाता है साथ ही परिवर्तनशील श्रम लागतें एवं परिवर्तनशील उपरिव्यय जैसे यात्री कर, अंर्तराज्यीय कर व अन्य विविध करों का भुगतान आदि इसके अंतर्गत सम्मिलित होते हैं।

3. पथ परिवहन निगम में आगम के स्त्रोत - सभी वाणिज्यिक एवं सेवा सृजन संस्थाऐं अपने उद्देश्यों और लक्ष्यों की पूर्ति बिना पर्याप्त आगम के नहीं कर सकती हैं। राजस्थान पथ परिवहन निगम एक यात्री जन सेवा निगम है। निगम को अपनी सेवाओं के माध्यम से आगम प्राप्त होती है। निगम की आगम को मुख्यत: दो भागों- यातायात आगम व गैर -यातायात आगम में विभक्त किया जा सकता है।

यातायात आगम - इसके अंतर्गत निम्नलिखित आगमों को सम्मिलित किया जाता है:

1. यात्री टिकिट बिक्री से प्राप्त आगम
2. माल ढुलाई एवं लगेज़ से आय
3. उड़नदस्तों द्वारा बिना टिकिट यात्रियों से प्राप्त आय
4. जनप्रतिनिधियों की यात्रा के बदले सरकार से प्राप्त अनुदान राशि
5. पुलिस व कैदियों की यात्रा के प्रतिफल में पुलिस विभाग से प्राप्तराशि
6. डाक ढुलाई के बदले डाक विभाग से प्राप्त प्रतिफल
7. सरकार को समय-समय पर उपलब्ध करवायी गयी सेवा के बदले प्राप्त भाड़ा
8. मेलों, धार्मिक आयोजनों के अवसर पर विशेष वाहन संचालन से आय
9. आरक्षण प्रभार से आय
10. अनुबंधित वाहनों से प्राप्त आगम

गैर-यातायात आगम:- इसके अंतर्गत निम्नलिखित आगमों को सम्मिलित किया जाता है:

1. बस स्टेंड, वाहन व यात्री टिकिट पर विज्ञापन से आय
2. बस स्टेंड पर बनीं दुकानों, यात्रीगृहों व सुलभ कॉम्प्लेक्स से आय
3. निगम की पुरानी स्क्रेप व संपत्तियों के विक्रय से आय
4. कर्मचारियों को आवंटित आवास से प्राप्त किराया

सार्वजनिक उपक्रमों में लाभ की अवधारणा - सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा लाभार्जन करना एक विवाद का विषय रहा है। एक पक्ष इनके द्वारा अर्जित लाभ को राष्ट्रीय और आर्थिक दृष्टि से सही मानता है तो दुसरा पक्ष इनका लक्ष्य लोक कल्याण मानता है जो प्रजातांत्रिक व्यवस्था का मूल उद्देश्य है। अर्थशास्त्रियों की इस अंतहीन बहस के बाद यह स्वीकार किया जाने लगा है कि सार्वजनिक उपक्रमों के लिए न्यायोचित लाभ अर्जित करना आवश्क है। सार्वजनिक उपक्रमों के अस्तित्व को बनाये रखने और आर्थिक विकास के लिये इनका लाभार्जन करना आवश्यक है अन्यथा इन उपक्रमों का अस्तित्व लंबे समय तक नहीं रह पावेगा।

* सहायक प्राध्यापक, आर.डी.आर.के. जटिया महाविद्यालय, रामगंजमंडी (कोटा) भारत

राजस्थान राज्य पथ परिवहन निगम लागत-आगम एवं लाभालाभ विश्लेषण – निगम की लाभालाभ स्थिति का मंथन करने पर हम पाते हैं कि निगम अपने स्थापना वर्ष 1964-65 से वर्ष 1996-97 तक घाटे में नहीं रहा। वर्ष 1997-98 से इसके घाटे में जाने की शुरुआत हुई और लगभग 24 करोड़ का घाटा रोडवेज़ को इस वर्ष में हुआ। 20 वर्षों बाद अब रोडवेज़ 4672.64 करोड़ रुपये के घाटे में है। विशेष बात यह है कि रोडवेज़ ने वर्ष 1997-98 से वर्ष 2012-13 तक 16 वर्षों में 1683.93 करोड़ रुपये, वहीं पिछले 4 वर्षो (2013-14 से 2016-17 तक) में 2988.71 करोड़ रुपये का घाटा उठाया है, अर्थात् 16 वर्षों में जितने डुबे, 4 वर्षों में उससे अधिक का फटका रोडवेज़ को लगा है। 1169.76 करोड़ रुपये का सर्वाधिक घाटा वर्ष 2016-17 में हुआ। कहीं से कहीं तक निगम के लाभ में आने की संभावनाऐं दिखाई नहीं दे रही है। केवल एक दुसरे पर आरोपों की झड़ी ही लगी दिखाई देती है। रोडवेज़ प्रबंधन व सरकार इस दुर्दशा के लिये पूर्णरुपेण कर्मचारियों पर दोष मढ़ रही है वहीं कर्मचारी संगठन प्रबंधन व सरकार पर दोष लगाते हैं जबकि सत्य यह है कि दोनों समान रुप से दोषी हैं। सरकार के द्वारा जहाँ लोक परिवहन सेवा शुरु करने, राष्ट्रीयकृत मार्गो पर निजी बसों को परमिट देने से रोडवेज़ का यात्री भार गिरा है। नई बसों की खरीदी नहीं होने से पुरानी बसों के चलते उनका रख-रखाव व डीज़ल खर्च बढ़ा, वहीं दुसरी ओर कर्मचारियों की लापरवाही, विगत वर्षों में बार-बार कर्मचारी हड़तालें रोडवेज़ के ताबूत में अपनी कीलें ठोंक रहीं हैं।

निम्नलिखित तालिका निगम के साल दर साल घाटे के कलंक को उजागर करती है:-

Table 1 (See in below)

निष्कर्ष एवं सुझाव– उपर्युक्त विवेचन में निगम की लाभालाभ स्थिति का दर्दनाक चित्र सामने आया जो निगम के कार्यकलाप पर एक काला धब्बा है। निगम का वर्तमान अस्तित्व सरकार की उदारता पर ही टिका हुआ है। रोडवेज प्रबंधन, सरकार एवं कार्मिकों को एक समयबद्ध कार्यक्रम बनाकर भीमकाय प्रयत्न करने की आवश्यकता है। निम्न सुझाव इस हेतु प्रभावकारी हो सकते हैं।

1. समग्री के क्रय भंडारण, निर्गमन एवं उपयोग की प्रणाली में पूर्ण पारदर्शिता अपनायी जाये। सामग्री क्रय पर निर्माता की गारंटी स्कीम का पूरा-पूरा लाभ निगम उठावे अर्थात् खराब होने पर इनका कम्पनी से प्रतिस्थापन हो जावे।
2. कार्मिकों की कार्यक्षमता, निष्ठा एवं श्रम उत्पादकता को बढाने के लिए समय-समय पर आवश्यक प्रशिक्षण दिया जावे। कार्मिकों के संघों के सम्मेलन में इनके कर्त्तव्यों की ओर भी ध्यान दिलाया जाये। यूनियन आए दिन की जाने वाली हड़तालों को शपथपूर्वक छोडें और ऐसे अवसरों पर निगम की चिन्ताजनक वित्तीय स्थिति पर भी खुलकर चर्चा निगम के अधिकारियों को करनी चाहिए।
3. उच्च प्रौद्योगिकी के यंत्रों जैसे Android online Ticket Machine] High Resolution Digital कैमरे का प्रयोग वाहनों में किया जाये जिससे परिचालकों पर नैतिक दबाव रह सकेगा।
4. उडनदस्तें निगम तथा वाहनों के बीच की कड़ी होते हैं किन्तु उडनदस्तों की कार्य उपलब्धि देखने पर काफी निराशा हाथ लगती हैं। इस दृष्टि से यह सुझाव है कि उडनदस्तों को मासिक लक्ष्य दिये जायें। निगम के उडनदस्ते में केवल रोडवेज कार्मिक ही नहीं बल्कि परिवहन विभाग व पुलिस सेवा का कार्मिक भी साथ होना चाहिए।
5. निगमको एक विशेष कार्यक्रम चलाकर आगारों एवं कार्यशालाओं में जो अपार अवशिष्ट सामग्री, वाहनों के पुराने टूटे ढांचे, पुराने टायर, पार्टस्, बैट्रियाँ, लोहे की भंगार आदि पड़े हुए हैं, उनका निस्तारण सुनिश्चित किया जाये।
6. विशेष रूप से नगरों व महानगरो में निगम स्वामित्व की काफी भूमि अनुपयोगी स्थितिमें हैं। प्रत्येक आगार का भौतिक निरीक्षण कर रिक्त भूमि के वैकल्पिक उपयोग पर विचार की आवश्यकता है।

उपसंहार– राजस्थान राज्य पथ परिवहन निगम लाभालाभ विश्लेषण चिन्ताजनक स्थिति में है। निगम अपनी लागतों पर लगाम नहीं लगा पा रहा है। वहीं यातायात आगम का दोहन भी पूर्णरूप से नहीं कर रहा है। उडनदस्तों की कार्य उपलब्धि हास्यास्पद है। इस दृष्टि से केवल कुशल प्रबंधन ही नहीं बल्कि कड़ा कुशल प्रबंधन आवश्यक है। वाहनों से जुड़े कार्मिकों को निष्ठावान बनना होगा या बनाना होगा। उच्च पदों पर प्रशासनिक अधिकारियों के स्थान पर परिवहन क्षेत्र व प्रबंध शिक्षा से जुड़े व्यक्तियों को लाना आवश्यक है, तभी निगम अपने अस्तित्व को बनाये रख सकता है अन्यथा वह दिन दूर नहीं कि मध्यप्रदेश पथ परिवहन निगम की तरह इसको बंद कर कड़वा घुँट पीना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. परिवहन सिद्धांत, इतिहास एवं समस्याऐं- डॉ. यशपाल (लक्ष्मी-नारायण अग्रवाल उच्चशिक्षा साहित्य के प्रकाशक आगरा, 1964)
2. भारतीय परिवहन की समस्याऐं और सिद्धांत- डॉ. विष्णुदत्त नागर (कैलाश पुस्तक सदन ग्वालियर, 1964)
3. स्वयं का शोध प्रबंध -राजस्थान राज्य पथ परिवहन निगम लागत आगम विश्लेषण
4. Statistical Compendium of RSRTC.
5. राजस्थान राज्य पथ परिवहन निगम के प्रकाशित भौतिक एवं वित्तीय सांख्यिकीय प्रतिवेदन
6. WebSite- www.rsrtc.rajasthan .gov.in

Table 1 : Profile of Profit/Loss after adjustment of RSRTC (1995-96 to 2016-17)

YEAR	PROFIT/ LOSS (in crore)	YEAR	PROFIT/ LOSS (in crore)	YEAR	PROFIT/LOSS (in crore)	YEAR	PROFIT/ LOSS (in crore)
1995-96	+7.74	2002-03	-42.29	2009-10	-78.95	2016-17	-1169.76
1996-97	+4.02	2003-04	-37.62	2010-11	-185		
1997-98	-23.99	2004-05	-4.63	2011-12	-130.60		
1998-99	-44.01	2005-06	-30.08	2012-13	-648.41		
1999-00	-77.79	2006-07	-19.14	2013-14	-487.86		
2000-01	-85.61	2007-08	-23.57	2014-15	-628.48		
2001-02	-62.91	2008-09	-189.33	2015-16	-702.61		

स्त्रोत- राजस्थान राज्यपथ परिवहन निगम के प्रकाशित भौतिक एवं वित्तीय सांख्यिकीय प्रतिवेदन।

निजी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के बालक एवं बालिकाओं की व्यावसायिक आकांक्षाओं के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन (रतलाम जिलें के संदर्भ में)

किरण पाटिल* डॉ. भवरलाल नागर **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में रतलाम जिले के उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के बालक एवं बालिकाओं में व्यावसायिक आकांक्षाओं के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है । शोध के लिये रतलाम जिले के निजी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के पॉच विद्यालय से 30-30 बालक एवं बालिकाओं (जिसमें 15 बालिकायें एवं 15 बालक) को न्यादर्श के रूप में चयनित किया गया है। प्रदत्तों के संकलन के लिये शोधार्थी द्वारा व्यावसायिक आकांक्षा स्तर की स्वनिर्मित मापनी का उपयोग किया गया। इस परीक्षण के अंतर्गत 40 कथन दिये गये है। जिनके बहुविकल्वीय उत्तर थे इनमें से किसी एक पर छात्र एवं छात्राओं को सही का निशान लगाना है। शोध परिणामों से प्राप्त हुआ की रतलाम जिले के उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालय के छात्र एवं छात्राओं द्वारा व्यावसायिक आकांक्षाओं का विभिन्न स्तर पर अपने अपने क्षेत्र मे अपनी अपनी आकांक्षाओं का प्रदर्शन किया गया।

प्रस्तावना – आज का युग प्रतिस्पर्धा का युग है। आज प्रत्येक क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा हो गई है, चाहे व्यापार हो या नौकरी अथवा व्यवसाय। जहाँ एक ओर बेरोज़गारी बढ़ रही हैं, वहीं दूसरी ओर औद्योगिक एवम् व्यावसायिक प्रतिष्ठानों (कंपनियों) को दक्ष एवम् कुशल कर्मचारी उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। प्रतिस्पर्धा के इस युग में बेरोज़गारी से ग्रसित युवा वर्ग को अपनी आजीविका के साधन तलाशने में विकट परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा हैं। आज की युवा पीढ़ी शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात उस चौराहे पर खड़ा दिग्भ्रमित हो रहा है और चिंता में डूब जाता है कि भावी जीवन के लिए कौन सा व्यवसाय चुनें ? युवा वर्ग केवल चिंता करता है किंतु चिंतन के लिए अभिप्रेरित नहीं होता है।

औचित्य – व्यावसायीकृत शिक्षा द्वारा व्यक्ति में जीविकोपार्जन की क्षमता आ जाती है और उसे बेराज़गारी का नहीं होना पड़ता है। आज हमारे सामने शिक्षित बेरोज़गारी की समस्या है, इससे निजात मिलेगी। व्यावसायीकृत शिक्षा व्यक्ति को अर्थोपार्जन की क्षमता देकर उसका सर्वांगीण विकास भी करती है। इससे व्यक्ति के जीवन में पूर्णता आ जाती है। व्यावसायीकृत शिक्षा में यह संभावना है कि विद्यार्थी व्यावसायिक शिक्षा के प्रति आस्थावान बनेगा और अपने व्यवसाय को आगे बढ़ा सकेगा। विद्यार्थी में स्वावलंबन की प्रवृत्ति का विकास होगा, वह स्वावलंबी बनेगा। वह समाज पर भार नहीं बल्कि समाज का उपयोगी सदस्य माना जायेगा।

समस्या कथन – निजी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के बालक एवं बालिकाओं की व्यावसायिक आकांक्षाओं के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन (रतलाम जिलें के संदर्भ में)

उद्देश्य – अध्ययन के निम्न उद्देश्य थे :

1. उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्रों की व्यावसायिक आकांक्षाओं का पता लगाना।
2. उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्राओं की व्यावसायिक आकांक्षाओं का पता लगाना।
3. उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्र एवं छात्राओं की व्यावसायिक आकांक्षाओं की तुलना करना।

परिकल्पनाएँ – अध्ययन की निम्न परिकल्पनाएँ थी :

1. उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्रों एवं छात्राओं की व्यावसायिक आकांक्षाओं में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।

शोध प्रविधि

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए शोधार्थी द्वारा न्यादर्श के रूप में रतलाम जिले के पॉच निजी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के कुल 250 बालक एवं बालिकाओं का सोद्देश्य न्यादर्श विधि से चयन किया गया।

उपकरण – प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत निजी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के लिये स्वनिर्मित व्यावसायिक आकांक्षा मापनी का उपयोग किया गया।

प्रदत्तो का संकलन – शोधार्थी द्वारा प्रदत्तों के संकलन हेतु प्राचार्यो से अनुमति प्राप्त कर निजी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय रतलाम के 11 वीं एवं 12 वीं कक्षा के बालक एवं बालिकाओं से सोहार्द्रपूर्ण वातावरण में व्यावसायिक आकांक्षा मापनी भरवायी गई।

प्रदत्तो का विश्लेषण – प्रस्तुत अध्ययन में परिकल्पनाओं के परीक्षण हेतु संकलित प्रदत्तो का विश्लेषण **स्वतंत्र t टेस्ट** द्वारा किया गया।

परिणाम एवं विवेचना:

सारणी सं. 1 : माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्रों एवं छात्राओं की व्यावसायिक आकांक्षाओं की प्रश्न/समूहवार तुलना:

क्र.	प्रश्न/समूह-1	छात्र :	छात्रा :
1.	मुख्यमंत्री	13	20
2.	बैंक के प्रोबेशनरी ऑफिसर	20	13
3.	वास्तुकार	7	–
4.	जनप्रतिनिधि	7	–

* शोधार्थी, पेसिफिक एकडेमी ऑफ हायर एज्यूकेशन एण्ड रिसर्च यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, पेसिफिक एकडेमी ऑफ हायर एज्यूकेशन एण्ड रिसर्च यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत

5.	भारतीय प्रशासनिक अधिकारी	33	33
6.	टूरिस्ट गाइड	-	7
7.	वकील	13	7
8.	केमिस्ट	-	7
9.	काउंसलर	7	-
10.	ब्यूटीशियन	-	13
	योग	100:	100:

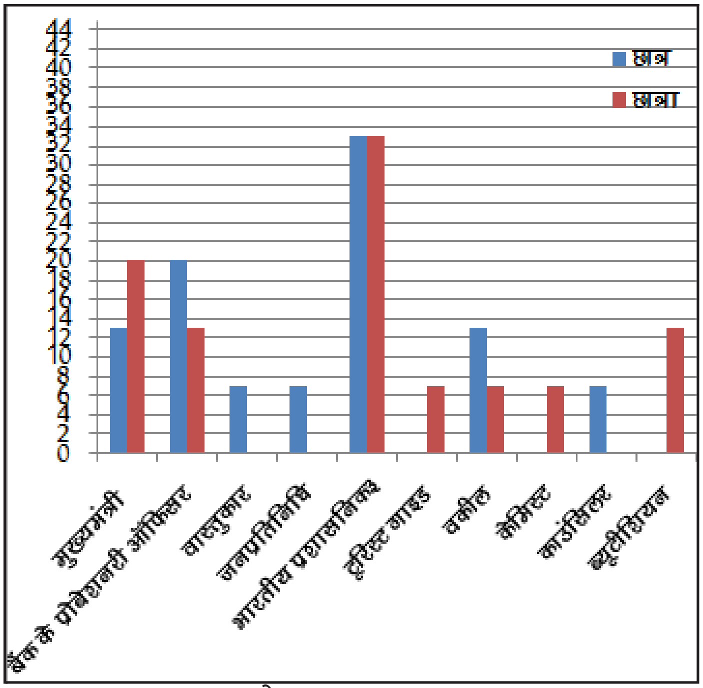

समूह- 1का स्तम्भाकार आलेख

व्याख्या –उपर्युक्त सारणी सं. 1 एवं स्तम्भाकार आरेख को देखने से ज्ञात होता है कि उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाएं मुख्यमंत्री बनने की क्रमशः 13 प्रतिशत व 20 प्रतिशत ने, बैंक के प्रोबेशनरी ऑफिसर बनने की क्रमशः 20 प्रतिशत व 13 प्रतिशत ने, वास्तुकार बनने की केवल 7 प्रतिशत छात्रों ने, तथा इतने ही प्रतिशत छात्रों ने जनप्रतिनिधि बनने की, भारतीय प्रशासनिक अधिकारी बनने की 33 प्रतिशत छात्रों तथा इतने ही प्रतिशत छात्राओं ने टूरिस्ट गाइड में 7 प्रतिशत छात्राओं ने, वकील बनने की 13 प्रतिशत छात्रों तथा 7 प्रतिशत छात्राओं ने, केमिस्ट बनने की 7 प्रतिशत छात्राओं ने, काउंसिलर बनने की 7 प्रतिशत छात्रों ने, तो ब्यूटीशियन बनने की 13 प्रतिशत छात्राओं ने अपनी व्यावसायिक आकांक्षाएं व्यक्त की हैं।

सारणी सं. 2 : उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्रों एवं छात्राओं की व्यावसायिक आकांक्षाओं की प्रश्न/समूहवार तुलना:

क्र.	प्रश्न/समूह-2	छात्र :	छात्रा :
1	बैंक मैनेजर	27	26
2	टेक्स ऑफिसर	7	13
3	अंतरिक्ष वैज्ञानिक	20	7
4	इलेक्ट्रीशियन	-	-
5	न्यायाधीश	27	20
6	गार्डनर	6	7
7	केमिकल इंजिनियर	6	7
8	लिपिक	-	-
9	संपादक	7	13
10	स्टोर कीपर	-	7
	योग	100:	100:

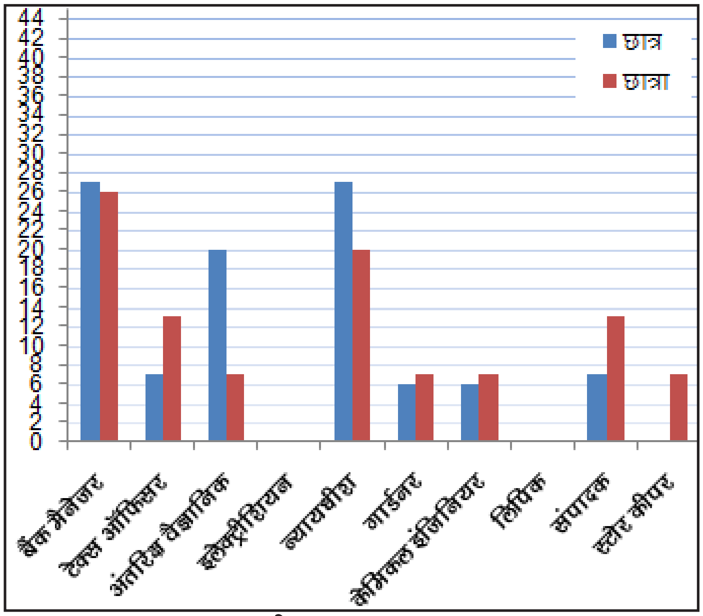

समूह-2 का स्तम्भाकार आलेख

व्याख्या – उपर्युक्त सारणी सं. 2 एवं स्तम्भाकार आरेख को देखने से ज्ञात होता है कि उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाएं बैंक मैनेजर बनने की क्रमशः 27 प्रतिशत व 26 प्रतिशत ने, टेक्स ऑफिसर बनने की क्रमश 7 प्रतिशत व 13 प्रतिशत ने, अंतरिक्ष वैज्ञानिक बनने की क्रमशः 20 प्रतिशत व 7 प्रतिशत ने, न्यायधीश बनने की क्रमशः 27 प्रतिशत व 20 प्रतिशत ने, गार्डनर बनने की क्रमशः 6 प्रतिशत एवं 7 प्रतिशत ने, केमिकल इंजीनियर बनने की क्रमशः 6 प्रतिशत व 7 प्रतिशत ने, सम्पादक बनने की क्रमशः 7 प्रतिशत एवं 13 प्रतिशत ने तथा स्टोर कीपर बनने की केवल 7 प्रतिशत छात्राओं ने अपनी व्यावसायिक आकांक्षाएं व्यक्त की हैं।

सारणी सं.3 :उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्रों एवं छात्राओं की व्यावसायिक आकांक्षाओं की प्रश्न/समूहवार तुलना:

क्र.	प्रश्न/समूह-3	छात्र :	छात्रा :
1	राज्य सेवा में प्रशासनिक अधिकारी	33	6
2	पशु चिकित्सक	7	-
3	वायु सेना में अधिकारी	-	7
4	नर्स/कम्पाउण्डर	-	7
5	राज्यपाल	-	13
6	पेट्रोल पंप कर्मचारी	-	-
7	विश्वविद्यालय प्रोफेसर	26	47
8	विश्वविद्यालय अध्यापक	27	13
9	दन्त चिकित्सक	-	7
10	होमगार्ड	7	-
	योग	100:	100:

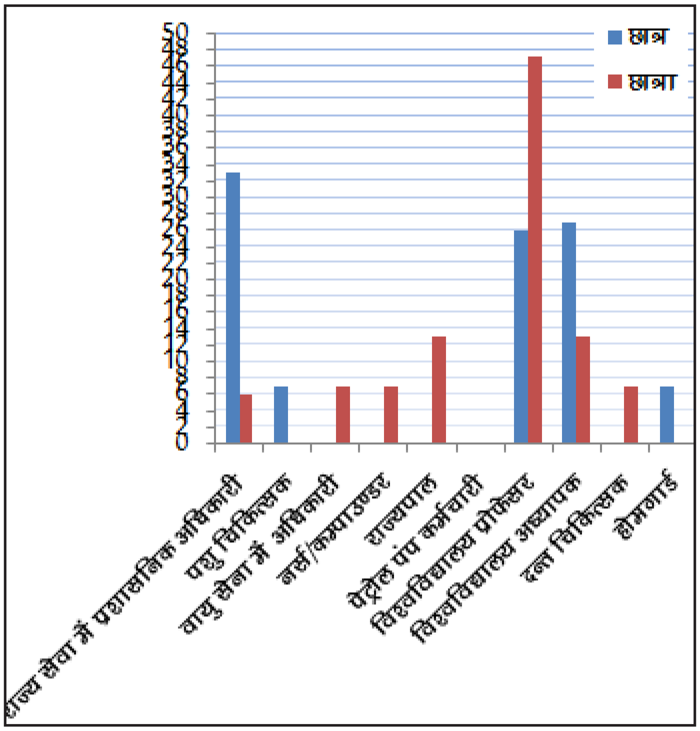

समूह–3 का स्तम्भाकार आलेख

व्याख्या – उपर्युक्त सारणी सं. 3 एवं स्तम्भाकार आरेख को देखने से ज्ञात होता है कि उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाएं राज्य सेवा में प्रशासनिक अधिकारी बनने की क्रमश: 33 प्रतिशत व 6 प्रतिशत ने, पशु चिकित्सक बनने की केवल 7 प्रतिशत छात्रों ने, इसी प्रकार वायुसेना में अधिकारी 7 प्रतिशत छात्राओं ने तथा इतने ही प्रतिशत छात्राओं ने नर्स/कम्पाउण्डर बनने तथा 13 प्रतिशत छात्राओं ने राज्यपाल बनने की, विश्वविद्यालय प्रोफेसर बनने की क्रमश: 26 प्रतिशत व 47 प्रतिशत ने, विद्यालय अध्यापक बनने की क्रमश: 27 प्रतिशत व 13 प्रतिशत ने तो 7 प्रतिशत छात्राओं ने दन्तचिकित्सक बनने की, तो होमगार्ड बनने की 7 प्रतिशत छात्राओं ने अपनी व्यावसायिक आकांक्षाए व्यक्त की है।

सारणी सं. 4 : उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्रों एवं छात्राओं की व्यावसायिक आकांक्षाओं की प्रश्न/समूहवार तुलना:

क्र.	प्रश्न/समूह–4	छात्र :	छात्रा :
1	जलसेना में ऑफिसर	13	7
2	संवाददाता	13	7
3	अभिनेता	–	13
4	कृषि पर्यवेक्षक	7	7
5	सी.बी.आई. ऑफिसर	20	13
6	रात्रिकालीन चौकीदार	–	–
7	कॉलेज व्याख्याता	40	40
8	होटल में कुल	7	–
9	बीमा अधिकारी	–	13
10	बुक बाइण्डर	–	–
	योग	100:	100:

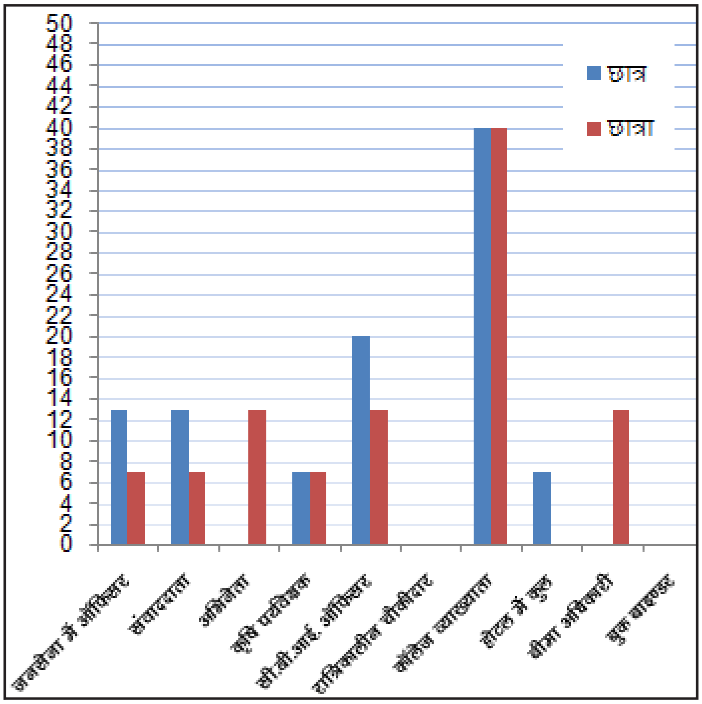

समूह–4 का स्तम्भाकार आलेख

व्याख्या – उपर्युक्त सारणी सं. 4 एवं स्तम्भाकार आरेख को देखने से ज्ञात होता है कि उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाएं जलसेना में ऑफिसर बनने की क्रमश: 13 प्रतिशत व 7 प्रतिशत ने, संवाददाता बनने की क्रमश: 13 प्रतिशत व 7 प्रतिशत ने, तो अभिनेता बनने की केवल 13 प्रतिशत छात्राओं ने, कृषि पर्यविक्षक बनने की 7 प्रतिशत छात्रों ने तो इतने ही प्रतिशत छात्राओं ने, सी.बी.आई ऑफिसर बनने की क्रमश: 20 प्रतिशत व 13 प्रतिशत ने, कॉलेज व्याख्याता बनने की क्रमश: 40 प्रतिशत छात्रों ने तो इतने ही प्रतिशत छात्राओं ने, होटल में कुक बनने की केवल 7 प्रतिशत छात्रो ने तो बीमा अधिकारी बनने की 13 प्रतिशत छात्राओं ने ही अपने व्यावसायिक आकांक्षाएं व्यक्त की है।

शैक्षिक निहितार्थ :

राष्ट्रीय दृष्टि से – यदि भारत को आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ बनाना है और विकसित एवं विकासशील देशों की श्रेणी में लाना है तो देश में गुणवत्तायुक्त रोजगारोन्मुखी, जीवीकोपार्जन की शिक्षा प्रदान करनी होगी। अधिकांश विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाओं के अनुरूप विषयों की शिक्षा प्रदान करनी होगी तथा उन्हें आवश्यक साधन सुविधाएं जुटानी होगी। तभी हमारी संकल्पनाएं साकार हो सकेगी।

राज्य स्तरीय दृष्टि से – भारत के सभी प्रान्तों में समान शिक्षा नीति बनाकर शिक्षा प्रदान की जा रही है। ऐसी स्थिति में राज्य का प्रत्येक व्यक्ति रोजगार से जुड जायेगा। बेरोजगारी एवं गरीबी से मुक्ति मिलेगी और आर्थिक स्थिति सृदृढ़ होगी। व्यक्ति साधन सम्पन्न बनेगा। जीवनस्तर में सुधार होगा। तभी तो राज्य की आर्थिक स्थिति में भी सुधार हो पाएगा। प्रत्येक राज्य में विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाओं के अनुरूप विषयों की शिक्षा पर ध्यान दिया जाना नितान्त जरूरी है।

सामाजिक दृष्टि से – यदि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को रोजगारोमुन्खी शिक्षा प्रदान की जाती है तो वह अपना मन रोजगार में लगाकर

जीवीकोपार्जन करेगा और उसका ध्यान अनैतिक कार्यो से हटाकर अपने-अपने व्यवसाय में ध्यान केन्द्रित करेगा। समान की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बनेगी समाज प्रगति की ओर अग्रसर होगा, श्रमनिष्ठ बनेगा तथा समाज में प्रतिष्ठा बनाना चाहेगा।

विद्यार्थियों की दृष्टि से - यदि विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाओं को ध्यान में रखकर सरकार शिक्षा प्रदान करती है तो जो आज विद्यार्थियों की दयनीय स्थिति हो रही है उससे निजात मिलेगी। विद्यार्थियों को रोजगारोन्मुखी पाठ्यक्रमों में स्वयं की रूचि के अनुसार अध्ययन करेंगे एवं विद्यार्थी आज जो रोजगार एवं नौकरी के लिए भटक रहे है उन्हें सही व्यवसाय मिल जायेगा और वे दूसरों पर आश्रित न होकर स्वावलम्बी बनेंगे। आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बनाकर साधन-सम्पन्न होकर उच्च स्तर का जीवन यापन कर सकेंगे।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. राजस्थान एवं मध्यप्रदेश में विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाओं का अध्ययन करना।
2. सामान्य एवं जनजाति विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाओं का अध्ययन करना।
3. कला एवं विज्ञान वर्ग के विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाओं का अध्ययन करना।
4. सरकारी एवं निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाओं का अध्ययन करना।
5. केन्द्रीय विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाओं का अध्ययन करना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ओसवाल (2006), जी,:प्रगत शिक्षा मनोविज्ञान, प्रथम संस्करण, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
2. अस्थाना, बी0 एस0 एवं अग्रवाल (1994), आर,: मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन, विनोद पुस्तक मंदिर,आगरा।
3. त्यागी (2006) , गुरूसरनदास एवं नंद: उदीयमान भारत में शिक्षा, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
4. कुलश्रेष्ठ (2005), एम.पी. शिक्षा मनोविज्ञान आर.लाल बुक डिपो मेरठ।
5. Chouhan, Manu and Singh, "A study of parental aspiration ansiety and of senior secondary school students of Navodaya Vidhyalaya and public school Meerut Mandal." R.P. (2014)"
6. Sharma, Kavita (2014) "The effict of sex difference is career maturing of adolenscents studnets of Jabalpur city."
7. Bhandari, Rohit (2014) "Vocational maturity of senior secondary scholl students in relation to their family environment."

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

A Study of Regional Rural Banks in Uttar-Pradesh

Vijay Kumar Gupta*

Abstract - The Regional Rural Banks were established with a view for developing the rural economy by providing, for the purpose of development of agriculture, trade, commerce, industry and other productive activities in the rural areas, credit and other facilities, particularly to Small and Marginal Farmers, Agricultural, Laborers, Artisans, and Small entrepreneurs and for matters connected there with and incidental thereto. The necessity of rural finance was felt to provide protection & reliance to rural people who rely highly on informal source of finance like Moneylenders, Landlords & Traders etc. but they exploit farmers and small entrepreneurs by charging exorbitant rate of interest & force farmers to sell their product at low price to them. Rural people also face the risk of unpredictable production of crops due to high dependency on Monsoon. The problems of finance suffer from lack of seeds. Fertilizers, water supply and other facilities which lead to rural indebtedness. Rural banks are providing finance to the weaker sections of society like small farmers, rural artisans, small producers, rural labourers etc, to provide finance to cooperative societies, primary credit societies, Agricultural marketing societies, Enhance & improve banking facilities to semi urban, rural& other untapped market. The regional rural banks help the rural people to come out from the financial problems and secured the financial assistance to agriculture in India.

Introduction - The development process of RRBs started with the promulgation of an ordinance promulgated on 26th September 1975 (with later on was replaced with regional rural bank Act, 1976) with an objective to ensure sufficient institutional credit for agriculture and other rural sectors. It was on 2nd October 1975, that the first RRB, named the Prathama Bank came into existence.

RRBs were set up under the recommendations of the Narasimham Working Group as at that that time about 70% of the Indian population was of rural orientation- It was in order to provide access to low-cost banking facilities to the poor , that the Narasimham Working Group (1975) proposed the establishment of a new set of banks as institutions which ''combine the local feel and the familiarity with rural problem which the cooperatives possess and the degree of business organization, ability to mobilize deposits, access to central inure markets and modernized outlook which the commercial banks have.

Some of the features of this type of banking were:-

1. RRBs were mainly established to meet the credit requirement of small and marginal farmers, landless labors , and artisans of rural Indian with a focus on agro sector
2. In few years RRBs penetrated every corner of the country and extended a helping hand in the growth process of the country.
3. These were envisaged as a low cost financial intermediation structure in the rural areas to ensure sufficient flow of institutional credit for agriculture and other rural sectors.
4. RRBs were expected to have the local feel and familiarity of the cooperative banks with the managerial expertise of the commercial banks.

The importance of the rural banking in the economic development of a country cannot be overlooked. As Gandhi ji said ''Real India lies in villages and village economy is the backbone of Indian economy- without the upliftment of the rural economy as well as the people of our country". The objectives of economic planning cannot be achieved. In fact, the real growth of Indian economy lied in the freeing of rural masses from acute poverty, unemployment, and socio-economic backwardness .

Regional rural banks (RRBs) were established to meet the needs of the weaker sections of rural population consisting of :

1. Small and marginal farmers,
2. Agricultural laborers ,
3. Artisans,
4. Small entrepreneurs,
5. Mobilize deposits from rural household,

RRBs are expected to make credit available to rural households besides inspiring carefulness. Put it simple to ensure sufficient institutional credit for agriculture and other rural sectors.

The Credit Delivery System of RRBs are in the form of -

(a) Grant of credit at cheap or concessional rates
(b) Lending to individuals belonging to weaker sections without checking the viability of the activity proposed to be undertaken.

The Operational Area of RRBs are:

*Head of Department (Commerce) Govt. P.G. College, Jalaun (U.P.) INDIA

Under old norms before merger area of operation of RRBs was covering one or more districts in the state. It has many weaknesses. The financial performance of RRBs was poor. So RBI decided the amalgamation of RRBs in September 2005 of few nearby districts. Now 7 RRB are working in u.p.

In RRBs there are three share holder namely government of India (50% share). Sponsor bank (35%share), and state government (15% share) thus we can say RRBS are jointly owned by Govt. of India, Sponsor Bank and respective State Government.

The role of RRBs can not be ignored in present day Banking as these Gramin Banks have played a major role in implementation of Central and State Government sponsored various program of poverty alleviation like PMRGP, old age pension, mid day meal , scholarship to student, Indira Avas Yojana, labor payment to NAREGA beneficiary has effectively been carried by these RRBs.

Regional Rural Banks Lost Their Focus due to following reasons-

(a) The village politics also affected the RRBs. Soon the lending in rural areas was politicized and poor and need farmers and other sections of rural India were ignored;

(b) The originally envisaged low cost structure for RRBs was also washed away after the Obul Reddy report which brought parity of pay scales with Commercial Banks.

(c) With the expansion of RRBs by starting new RRBs not on considerations of business needs but political reasons, the number of RRBs went upto 196 at one time and with expansion of branch network, they started incurring huge losses.

So GOI was forced to start the reform process as several RRBs suffered humongous losses and had become unviable. During a review carried out by GOI in the year 2009 it was found that the Capital Risk Weighted Assets Ratio (CRAR) of the RRBs were too low. Therefore, Dr. K.C Chakrabarty Committee suggested bringing the CRAR of RRBs to at least 9 percent in a sustainable manner. The committee inter-alia recommended recapitalization support to the extent of 2200 crore, to 40 RRBs.

As several committees suggested for creation of viable RRBs by amalgamation of unviable RRBs, finally it was decided to amalgamate some of them on grounds of contiguity in a particular region. The process of amalgamation has continued till June, 2014 and out of the originally 196 RRBs, now we have only 56 RRBs in july 2014

Regional Rural Banks in India dates back to the years 1975. It's the Narasimham Committee that conceptualized the foundation of Regional Rural Banks in India. The Committee felt the need of regionally oriented rural banks that would address the problems and requirements of the rural people in India. Regional Rural Banks were established under the provisions of an ordinance promulgated on 26--th september 1975 and the RRB Act, 1975 with an objective to ensure sufficient institutional credit for agriculture and other rural sectors. The RRBs mobilize financial resources from rural/semi urban areas and grant loans and advances mostly to small and marginal farmers, agricultural labourers and rural artisans. The objectives of RRB are summarized as to provide cheap and liberal credit facilities to small and marginal farmers, agriculture, to save the rural poor from the money lenders, to act as a catalyst element and there by accelerate the economic growth in the particular region. To cater to the needs of the backward areas which are not covered by the other efforts of the Governments.

Figure Structure of Agricultural Credit System In India

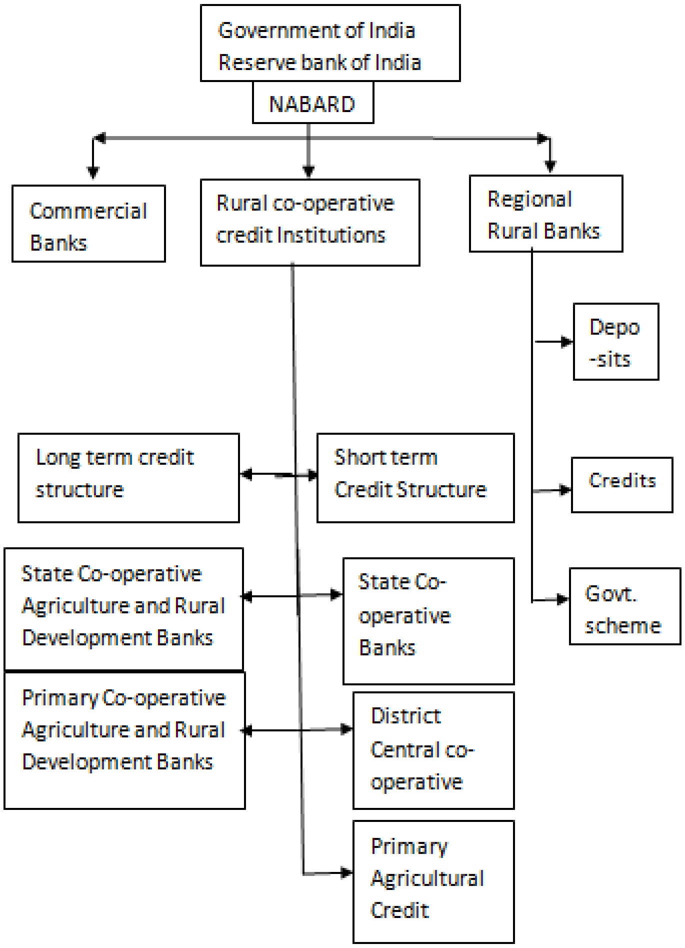

RRBs are in operation Since 1975 to till today. During this long period no. of changes have occurred in its performance. RRBs were limited to one or two District in Pre-merger Era. But they were in big losses and not performing in many respect. Therefore, post merger Era of rural banking started from September 2005. In this era RRBs were giving a bigger coverage of few district.

The process of amalgamation initiated in 2005, is now nearing completion. As a result of amalgamation process, the number of RRBs in the country declined from 196 to 56 at the end of July 2014. In Uttar Pradesh the number of RRBs before amalgamation was 36 (Year 2005 As per NABARD Website). Now it has reduced to 7 RRBs in U.P..

Seven RRBs namely1. Allahabad u.p. Grameen Bank

sponsor by Allahabad Bank, 2.Baroda UP Gramin Bank sponsor by Bank of Baroda,3.Gramin Bank of Aryavart sponsor by Bank of India 4.Kashi Gomti Samyut Gramin Bank sponsor by Union Bank of India 5. Prathama Bank sponsor by Syndicate Bank 6. Purvanchal Bank sponsor by State Bank of India 7. Sarva UP Gramin Bank sponsor by Punjab National Bank are working in Uttar-Pradesh.

Banking is the back bone of financial inclusion in rural areas. The schemes implemented by the union of India, has to reach rural mass. This is possible through effective banking and financial services awareness among the rural mass. It is necessary to study the level of awareness on the banking habits and the degree of usage of financial services in the rural areas. RRBs has also for amalgation in September 2005 so it is also necessary to find out the role played by the RRBs in this initiative.

References :-

1. Ahmed. K.M. (1992) : *"Banking in India ",* Anmol Publications Pvt. Ltd, New Delhi.
2. Ahmed. R. (1998) : *"Rural Banking* and *Economic Development",* Mittal Publications, New Delhi.
3. Gulsan, S.S. and Kapoor, G.K. (1984) : *"Banking Law* and *Practice ",* S. Chand and Co. New Delhi.
4. Kothari, C. R. (1996) : *"Research Methodology - Methods and Techniques",* Vishwa Prakashan, New Delhi.
5. Pati, A P (2005) : *"Regional Rural Banks in Liberalized EnvironmenC,* Mittal Publications, New Delhi
6. Srivastava, R.M. (2002) ; *"Financial Management",* Pragati Prakashan, Merrut, Uttar Pradesh.
7. Uddin, N (2003) : *"'Regional Rural Banks and Development",* Mittal Publications, New Delhi.
8. Yadav, B.S and Singhal. A (2005) : *''Role of Regional Rural Banks in Rural Dev*

Articles :

9- Ambastha (1997) : "Customer Orientation - A Pre-requisite for Banks' Success", *The Journal of Indian Institute of Bankers,* Vol-68, No. 1 Jan- Mar.

10. Bhattacharjee. D and Adhikari. K (2006) : " Urbanisation Trend in Assam: An Analysis",
11. Deshpande.D.V and Shrivastava.R.K (1999) "Regional Rural Banks Improve Performance in 1997-98", *The Journal of Indian Institute of Bankers,* Jan-Mar, p 29-32
12. Deshpande.D.V and Shrivastava R.K(1999) : "Regional Rural Banks Improve Performance In 1997-98", *The Journal of The Indian Institute Of Bankers,* Jan.-Mar.
13. Yeole. D. (2004) : The Problem of NPAs", *Yojana,* Nov. vol 48.

Reports, Thesis etc :

14. Chaurasiya, A.D. (2006): Krashi and Gramin Vikas Karkram me Kshetraya Gramen Bankon kee Bhumika, Doctoral Thesis of Commerce, Jhansi : Bundelkhand University.
15. Jain, A.K. (2009): A Study of Trends in Nationalised Commercial Banking in the District Economy of Banda (U.P.) in the post Economic Reform Period (with special reference to Allahabad Lead Bank). Doctoral Thesis of Commerce, Jhansi : Bundelkhand University.
16. NABARD : *"Regional Rural Banks - Key Statistics ",* (various issues),
17. NABARD (2004) : *"Review of the Performance of RRBs as on 31March 2004", M*umbai: National Bank for Agriculture and Rural Development.
18. Prashanth (2015): Financial performance Evalution of Regional Rurl Banks (RRBs) in Karnataka with reference to Prgathi Gramin Bank Post Amalgamations, Doctoral Thesis of Commerce, Gulbarga : Gulbarga University.
19. Reserve Bank of India : *"Report on Trends and Progress of Banking in India " (various Issues), Reserve Bank of India,* Mumbai.
20. Srivastava, M.K. (2007): Bundelkhand sabhag ke grameen vikas me maharani Laxmi bai Kshetriya Grameen Bank ka yogdan, Doctoral Thesis of Economics, Jhansi : Bundelkhand University.

Website:

21. www.rbi.org.in
22. www.nabard.org
23. www.wikipedia.org

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

A comparative study of attitude of secondary school students towards mathematics

Sant Lal Ravat *

Abstract - "Mathematics should be taught on a compulsory basis to all pupils as a part of general education during the first ten years of schooling" - Indian education commission (1964-66)

The attitude of mathematics is one of factors for learning mathematics. The present study intended to find the attitude of secondary school student's attitude towards mathematics in Gautam Budh Nagar, Educational District of Uttar Pradesh, India. The study was conducted on a sample 100 ninth standard students. The sample divided into two types of institute which are Government {Government, Government –Aided} and Self-finance secondary schools. A tool used was attitude scale towards mathematics (ASTM) for secondary school students, in order to carry out the present investigation. The investigator had adopted the normative survey method and random sampling technique was used. **The results showed that self – finance secondary school students have a better attitude towards mathematics than that of Government secondary school students.**

A multidimensional survey, including motivation, usefulness, self-confidence, and enjoyment subscales was developed and administered in four Noida's secondary schools.

Introduction - The world of today, which leans more and more heavily on science and technology, demands more and more mathematical knowledge on the part of more and more people. And the world of tomorrow will make still greater demands on a person to be "well educated" in the technological society of today, and as such he or she should have some degree of mathematical literacy. The pace of mathematical discovery and intervention has accelerated amazingly during the last few decades. It has been said that mathematics is the only branch of learning in which theories of two years old are still valid. Mathematics lays the foundation for the study of all other subjects and it is too early for a child to decide about the profession. Mathematics as an optional subject would make the choice of profession very narrow. The knowledge of mathematics is a vital role for the society. In particular, mathematics knowledge is necessary for secondary school students, it is very useful for higher education. At secondary level, attitude of mathematics is very important role for the learning mathematical concept with interest.

Purpose Of The Study - The purpose of this study is to investigate Noida's secondary school student's attitudes towards mathematics by the use of the proposed new multidimensional attitudinal scale and to identify statistically significant differences in student's attitudes by sex, age, and number of mathematics courses taken.

Need For The Study - Mathematics is a tool that can be used for solve the problems in daily life. Due to this mathematics has been considered as one of the most important allied subject in a secondary school curriculum. The Mathematics curriculum is a vast curriculum because it is the basis of all sciences, arts and much related to daily life. The number of failures in mathematics in secondary school level examination is more comparable to that of other subjects because mathematics is a highly abstract subject. If secondary students have a positive attitude towards mathematics, their achievement in mathematics is very well otherwise very low. So their attitude is the main role of learning mathematics.

Statement Of The Problem - With reference to the need of the study purposed by the investigator, it has been presented in the following words:-

"**A comparative study of attitude of secondary school student's towards mathematics."**

Definitions of the terms used:

Comparative study - A study in which a participant is randomly assigned to one of two or more different treatment groups for purposes of comparing the effects of the treatments.

Attitude - It is referred as the tendency to react favourable/ positive or unfavourable/negative towards a mathematics subject.

Secondary School - The secondary school consists of IX and X standard students in the up & CBSE Educational system. It was followed by NCERT syllabus. The present study only selected IX standard students.

Mathematics -Mathematics has the four fundamental operations of addition, subtraction, multiplication and division. Mathematics subject covers the topics such as real number system, algebra, logarithms, geometry,

*Asst. Professor, Department of Education, N.A.S. College, Meerut (U.P.) INDIA

mensuration, probability, graphs and statistics at secondary level.

Objectives Of The Study - To develop the attitude scale towards mathematics for secondary school students. The following objectives have been formulated related to the study:

1. To find out the difference between Government (Government/ Government – aided) and Self-finance secondary school student's attitude towards mathematics.
2. To find out the difference between C.B.S.E. and U.P. Board secondary student's attitude towards mathematics.

Hypotheses - The following null hypotheses were formulated by the above objectives:

1. There is no significant difference between Government (Government and Government aided) and Self-finance secondary school student's attitude towards mathematics.
2. There is no significant difference between C.B.S.E. and U.P. Board secondary student's attitude towards mathematics.

Limitations Of The Study - The present study has the following limitations.

1. The investigator selected one hundred IXth standard students in Gautam BudhNagar Educational District, India, for the present study.
2. The investigator selected only 4 schools in Gautam BudhNagar Educational District.

Sample - The random sampling technique was adopted the present study. The investigator selected only 9th standard students for the sample 100 in Gautam Budh Nagar Educational District, India.

The descriptions of the sample has been illustrated below;

Type of school	Name of school	Board	No. of student
Government school	B.S. Intercollege, Noida	U.P.	30
	N.H. Higher Secondary School, Noida	C.B.S.E.	20
Self-finance school	K.C.S. Public school, Noida	U.P.	20
	Froebel Public high school, Noida	C.B.S.E.	30

Variables Of The Study:

A. Dependent variable :- "Attitude scale towards mathematics"

B. Independent Variable:

a. Type of school {Government and Self-finance}

b. Board {C.B.S.E. and U.P.}

Method of the study - Considering the objectives and hypotheses of the study, the investigator had selected the normative survey method for the present study.

Tool used - A self made questionnaire is used to assess the attitude of secondary school student's towards Mathematics.

- Attitude scale towards mathematics was prepared and validated by the investigator and **Dr. Sant Lal Ravat.**

Statistical used - The mean, standard deviation and t- test were used for analyzing the date.

Tables arranged according to research questions:

Table 2 : Table showing Mean and S.D. of variables {Government and Self-finance Secondary School}

Variables / Type of school	N	Mean	S.D.
Government school	50	134.74	23.55
Self-finance school	50	149.96	16.54

Graph 1. Graph showing Mean of variables {Government and Self-finance Secondary School}

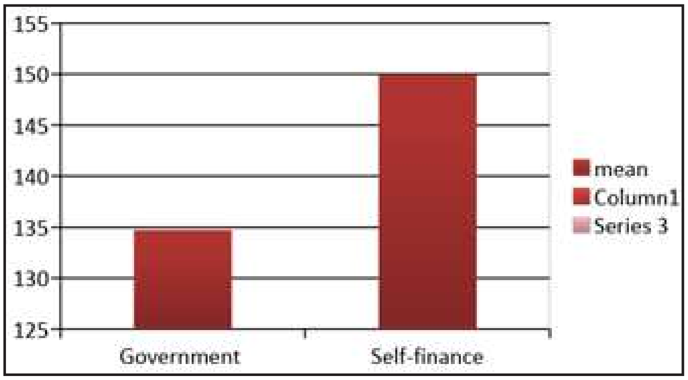

Table 3 : Table showing Mean and S.D. of variables {C.B.S.E. and U.P. board}

Variables / Board	N	Mean	S.D.
C.B.S.E.	50	153.06	9.48
U.P.	50	131.64	24.99

Graph 2: Graph showing Mean of variables {C.B.S.E. and U.P. board}

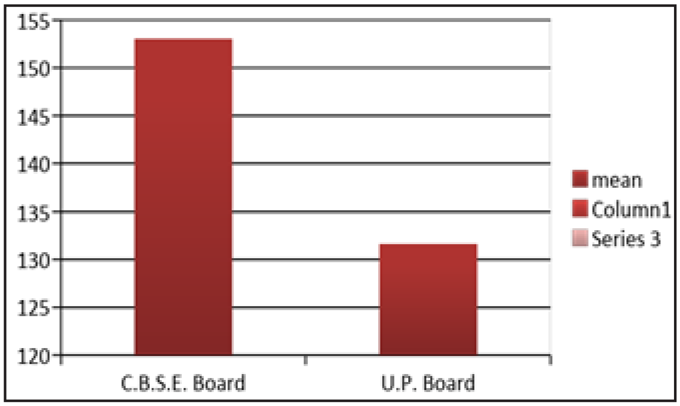

Testing of Hypotheses:

- **Hypothesis: 1**

There is no significant difference between Government and Self-finance secondary school students attitude towards mathematics.

Table: 4

Variables / Type of school	N	Mean	S.D.	t-value	Level of Signfi-cance
Government school	50	134.74	23.55	3.74	Significant at 0.05 level
Self-finance school	50	149.96	16.54		

It is inferred from the above table: 6 that the calculated t- value (3.74) is greater than the table value (1.98). Hence the hypothesis is rejected. Thus, there is a significant difference between Government and Self-finance secondary school student's attitude towards mathematics.

- **Hypothesis: 3**

There is no significant difference between C.B.S.E. and U.P. board secondary student's attitude towards mathematics.

Table: 5

Variables / Board	N	Mean	S.D.	t-value	Level of Signfi-cance
C.B.S.E.	50	153.06	9.48	5.67	Significant at 0.05 level
U.P.	50	131.64	24.99		

It is inferred from the above table: 8 that the calculated t-value (5.67) is greater than the table value (1.98). Hence the hypothesis is rejected. Thus, there is significant difference between C.B.S.E. and U.P. board secondary student's attitude towards mathematics.

Findings - The following are the important findings of the present study:

1. Self – finance secondary school students have a better attitude towards mathematics than that of Government secondary school students.
2. There is significant difference between C.B.S.E. and U.P. board secondary students attitude towards mathematics. The secondary school C.B.S.E. students have a better attitude towards mathematics than that of U.P. Board students.

Conclusion And Suggestions - As a conclusion to this research it can be said that, since the students positive attitude towards mathematics is at medium level, it shows that there are still possible room for improvement. However, it is interesting to know that despite the lower performance of secondary school students in mathematics, the attitude of the respondents of this study is fairly positive. The research also shows that the students attitude towards mathematics do not have significant difference between male and female students. Hence there is no gender gap in attitudes. It is highly recommended that the maximum effort should be given to improve the student's attitude towards mathematics and conduct further studies to find factors influencing students attitude towards mathematics. Moreover studies could be conducted to find if there is a relationship between student's attitude and performance of students in the schools of secondary at Noida.

Concerted effort by all stake holders is necessary if student's attitude towards mathematics is to be enhanced. In particular, girl child needs to be equally encouraged as much as the boy child. The girl child needs to be sensitised on the value and importance of mathematics.

References :-

1. Anice James, "Teaching of mathematics" ,Neelkamal Publications Pvt Ltd.2009.
2. Senthamarai Kannan B and Sivapragasam C, " Effect of multimedia in teaching mathematics at secondary level in Dindigul district". International Journal of Multidisciplinary Research and Development 2.2 (2015), pp. 371-374.
3. Senthamarai Kannan B and Sivapragasam C, "Secondary school teacher's attitude towards ICT teaching process". International journal of Multidisciplinary Educational Research, 4.3 (1) (2015), pp. 162-172.
4. B. Moore, "Predictors of high school students' attitudes towards involvement with mathematics", Mathematics teacher, 42 (1993), pp. 46-90.
5. D. Swetman, "Rural elementary students attitudes toward mathematics", Rural Educator, 16 (3) 31 Spring (1995) pp. 20-22.
6. D. Stipek and H. Granlinski, "Gender differences in children s achievementRelated beliefs and emotional responses to success and failure in mathematics", Journal of Educational Psychology, 83(3) (1991) pp. 361-371.
7. E. Fennema and J. Sherman, "Fennema Sherman Mathematics attitude scale instruments", Jour. Of Research in Math. Teach., 9(3) (1995), pp.16-22.
8. F. Khatoon, "A study of mathematical aptitude among boys and girls and its relationship with interests and vocational preferences at the secondary school level", Ph.D., Edu. Osmania Univ. (1988).
9. J. Gill, "Shedding some new light on old truths: Student attitudes to school in terms of year level and Gender",Annual meeting of the American Educational Research association, New Orleans, LA. (April 1994) pp.4-9.
10. N. R. Patel, "An investigation into the Mathematical ability of pupils of classes IX and X in the context of sole cognitive and affective variables",Ph. D. thesis, S.P.U. Fourth survey of Research in education, Buch, M.B.(1984) pp.704.
11. S. Saha, "A study on gender attitude to Mathematics, cognitive style and achievement in mathematics",Experiments in Education, 35,6 (2007).
12. V. Deshmukh, "Some temperamental correlates of mathematics learning",Ph.D., Edu.Nagpur Univ. (1988).
13. Kothary, C.R.: "Research MethodologyMethods & Techniques.", Second Edition; New Age International Publishers.
14. E. Fennema and J. Sherman, "Fennema Sherman

Mathematics attitude scales instruments", Jour. of Research in Math.Teach., 9(3) (1995), pp.16-22.

15. Cheung, K. C. (1998). Outcomes of Schooling: Mathematics achievement and attitudes towards mathematics learning in Hong Kong. Educational Studies in Mathematics, 19(2), 209 - 219.
16. Watson, A. (2002). Instances of mathematical thinking among low attaining students in an ordinary secondary classroom. Journal of Mathematical Behavior, 20, 461–475.
17. Kloosterman, P. & Stage, F. (1992). Measuuring beliefs about mathematical problem solving. School Science and Mathematics, 92(3), 109 -115.
18. Kögce, D., Yildiz, C., Aydýn, M. & Altindag, R., (2009). Examining Elementary School Students Attitudes towards Mathematics in Terms of Some Variables, Procedia Social and Behavioral Sciences, 1(1), 291-295.
19. Ma, X. & Kishor, N. (1997). Assessing the relationship between attitude toward mathematics and achievement in mathematics: A meta-analysis. Journal for Research in Mathematics Education, 28(1), 27-47.
20. Mensah, J. K., Okyere M. and Kuranchie, A. (2013)." Examining secondary School Students "Student attitude towards Mathematics and performance: Does the teacher attitude matter?"
21. Journal of Education and Practice Vol.4, No.3,2013.

****

Empowering Women the Real Architects of Society

Dr. Rachna Mathur*

Introduction - Indian Patriarchal society is still confused about the role of women in society. Though many social activists and reformers carried their crusade against social odds to restore honour and dignity to Women, attitudinal disparities still haunt our rural masses. Despite pronounced social development, women in our society still continue to be victims of *exploitation, superstitions,* illiteracy and social atrocities.

The social stigma that women are housekeepers and should be confined to the four walls of the house is perhaps a viable cause of gender disparity. They should not raise their voice regarding their fortune for the sake of the prestige of the family. In patriarchal society a lot of weight age is given to men. In the health and nutritional field, male members of family are supposed to take fresh and nutritious food in comparison of women because either they are earning members or head of the family or they are supposed to be more important than female members. This type of social attitude is conductive to create the problem of gender discrimination.

Discrimination against women begins even before her birth. The gruesome evils of female feticide and infanticide prove how brutal the world could be to women. Though the Indian Constitution provides equal rights and privileges for men and women and make equal provision to improve the status of women in society, majority of women are still unable to enjoy the rights and opportunities guaranteed to them.

Traditional value system, low level of literacy, more house hold responsibility, lack of awareness, non availability of proper guidance, low mobility, lack of self confidence, family discouragement and advanced science and technology are some of the factors responsible to create gender disparity in our society. The paper tries to explore the most important causes of gender disparity such as social customs, belief and anti female attitude. However there still exits a wide gap between the goals enunciated in the constitution, legislation, policies, plans, programs and related mechanisms on the one hand and the situational reality of the status of Women in India on the other. This has been analyzed extensively in the Report of the Committee on the Status of Women in India "Towards Equality" 1974 and highlighted in the National Perspective Plan for Women, 1988- 2000, The Shram Shakti report 1988 and the Platform of Action five years after- An assessment (National policy for Empowerment of Women 2001).

Although women have made large strides in achieving equality with men, women living in rural areas are still vulnerable helpless and dejected. They lack the confidence to take initiative have little or no decision making power in the household and have virtually no voice. They are economically dependent, mostly illiterate; due to lack of vision; due to lessexposure and even when she gets exposure through T.V. she is trained to see only T.V. serials like 'SAAS BHI KABHI BAHOO THI'; they themselves want to live in a '*Doll*`s House'.

Our intervention ennobles women to become self-reliant, develop, inter-personal skills and recognize the importance of the role. Across all development issues, education is seen as a key way to help women cross barriers and as a source of empowerment. In the areas of sustainability and environment, education is the transformative tool that allows women to be the change agents who can meet the key challenges and that ensures their participation in the development process. Major constraints to involving levels of the women effectively at various levels of the energy sector are the lack of education and lack of participation and consultation of women in energy projects and other projects. Therefore a comprehensive educational platform where the business community (i.e. Market enablers) plays a pivotal role should be adopted in four essential areas; research and development; capacity building and technical expertise, leadership and advancement; and household and child development.

By forming Self Help Groups (SHG), women become much more independent and are excited to have an alternative way of earning their live hood. These women undergo skill enhancement training and pick up various trades such as tailoring embroidery, dairy forming papad/ picble/ vada making, broom making among others so they can sell their produce in the market, aiming to earn profit. They are also made aware of how they access markets and negotiate the price of goods they have painstakingly made. At the same time they can give their contribution to the nation by becoming part of GDP.

*Lecturer (English) M. S. Govt. Girls College, Bikaner (Raj.) INDIA

They enthusiastically participate in literacy classes so they can easily pick up alphabet & numbers and gain practice by learning how to read the newspaper. They are also given exposure to banks and learn how to handle financial transactions. These women are also familiarized with micro-enterprises and taught how entrepreneurship can change their lives for the better.

In addition women are imparted much-needed skills education; so that they have sufficient knowledge and awareness about common health and hygiene issues. They also learn what health problems their young children are prone to and how they can best prevent them. By organizing special health camps for women and children SEED ensures that the mast neglected segments of society are taken care of; and can become *pillars* of society.

Even in the most primitive societies, Women though dominated by men by virtue of latter‘s physical strength; women showed great versatility and adaptability. They also developed tact and diplomacy as testified in literature of all cultures. Right from “Satyug“ to Tretayug to this ‘‘kalyug“ literature, history and even “Bollywood“ is full of Women characters, who changed the direction of the history. They played both character; of heroine and of vamp. Most popular vamp of all literature is probably ‘kakai‘. Like politics Women empowerment also needs direction. Right direction can give her potential of nature; of tigress who protects her cubs. It is very necessary to identify her potential and give it right direction because she can possess the potential equivalent to:

$$E=mc^2$$

Therefore she needs constant watch by herself Nature has given tigress extra potential to protect her cubs every female possesses it.

My paper tries to explore the vital role of Women in development of India; and other related issues. The pivotal role they play as home makers plays a very vital role in the development of society also; in turn the development of India and the universe.

In ancient days it was a saying; it is the attitude of the house makers; which can make a home or shatter a home. She possesses a life giving force. According to Global Agenda Council on Women‘s empowerment 2011-2012 Women empowerment is the single solution to many challenges of the world. (Economic forum 2013). From unprecedented population ageing, to increasing unemployment from global leadership, imbalances to persisting conflicts, from resource scarcity to volatile global food supplies the world faces a series of interconnected challenges. The global agenda council on women empowerment is a part of the solutions to these challenges.

Inter role conflicts: Inside the House and outside it.

She also faces ‘‘inter-role conflicts“ (pg 149 Jha pujari 1996). Though she is very versatile neither the society nor the female world itself is prepared to give it right direction. She can play the role of wife, affectionate mother, dedicated wife, daughter in law; at the same time she can prove to be a successful professional. In that case she needs support from her home, in that case men and Women may agree to undertake new tasks and change the traditional division of labour, but relatively often they refuse to work which is not considered appropriate to their sex. (pg 261 Jha pujari Indian Women today).

Even if husband is willing society still doesn‘t supports it which shatters the female *soul*. This shattered soul affects her work. This becomes one of the reasons of harassment at work. The male world at work, tries to exploit her at workplace.

Thus the work place would be viewed as a new Combat zone in the running battle of sexes (V, Sibri. Women and sexual Exploitation).

According to ‘Times of India’ 9th Nov. 2016 *Vidhya Balan* called for gender neutrality in cinema. Vidhya Balan has a special admiration for directors, who do not carry the baggage of gender stereotype in their films . It is a reality that even in 21st C. in Indian films female characters are just showpieces. In very few films like `*Kahani’.*

‘ Meri Com’ ’page 3’ ‘Aittor’ female characters are in reality ‘*Heroine*’. In real life *heroines* in Olympics were ‘P.V. Sindhu and ‘Sakshi Malik’ and J.Jayalalita , N.C.C cadets & army officers.

Throughout the presentation the attempt has been to profile the distinctive, yet alarming dimensions of the gender confrontation and the sociological significance of this vital area and her vital role. She can play many faced role in

development but there are many problems and prospects. The emphasis of this research is on the change of attitudes as a precondition for the development of society. (pg 43 Shamim Aleem 1996 Women development). In contemporary society these issues have attained significance. The modern age and its development paradigm consider gender justice as one of the prominent pillars on which any society can build on further (pg 3 Fatima Siddiqi Women and Human rights part 2).

The three pillars of sustainable development Economic, Environment and social aspects are also relevant to discussion of gender equality. (The Fredereck S. Parde center for the study of the longer range future). These dimensions have equal and inter related importance as illustrated in some simple equations.

In May this year, the Union Minister unveiled the *National Policy for women* 2016. Several things have changed since the *last*. Policy of 2001, speciaslly women's attitude towards themselves and their expectations from life. According to a statement in Parliament Minister of women and *Child Development Maneka Gandhi* said 'The new draft policy shifts the focus from entitlement to right and from empowerment to creating an enabling environment.

All these aspects and problems sometimes lead to the revolution of Women empowerment in wrong direction Sometimes some unsocial and antinational elements provoke female world to revolt against men. The revolution takes a wrong direction and the results may be disastrous for the society.

Conclusion - According to the paper the solution to gender biases; and other related problems lies in regular monitoring. Women empowerment should be done in right direction.

It should be done by some government agencies like Trai. Development in right direction is very necessary otherwise the basic cultural heritage of India will be shattered. Symbolical result of clash between male & female.Need: Poise between men & Women.

It will be transformed into fight between male and female. Men and Women are the wheels of the same vehicle Clash between them may lead to dismantling of the vehicle; which will lead to national instability; instability of society and cultural instability which will ruin the country.

Most of the women are unaware of their fundamental rights and duties. They even do not have the understanding as how the socio economic and political forces affect them. They either accept all types of discriminatory practices that persist in our family and society or *revolt* against them. According to the paper it is the duty of female world and every female to develop team spirit. Lack of team spirit is a major hindrance in her development. It is the duty of govt. to *introspect* the direction of the movement and the female world; using their potential in right direction; to become the real architects of society and in turn of *India*.

Solution

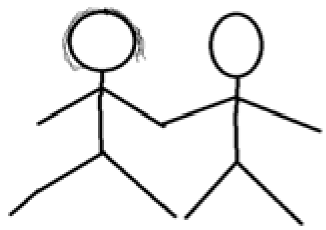

GENDER EQUALITY AND TEAM SPIRIT

Refrences :-

1. Aleen. Women's Development Problems & Prospects (Pg 39, Chapter 34, 221). APH Publishing Corporations N.D. 1996.
2. Dainik Bhaskar 25 Nov. 2015.
3. Dr (Mrs.) D. Johar Image of Women (In the Novels of Charlotte & Emily Bronte) Pg 7.Shiva Publishers Distributors Udaipur 1995.
4. India Today March 2015.
5. Jha, Pujari Pg 83. *Indian Women Today,* Tradition, Modernity & Challenge, vol 1, 2, 3. Kanishka publishers, Distributors. N.D. 110-002. 1996.
6. MLA Handbook for Writers of Research Papers. Pg 229. *Seventh Edition East West Publication*. New Delhi 2009.
7. Postmodernism and Gender Relations in Feminist Theory. Flex Cited by 1770.
8. Siddiqi Rangnathan. Handbook on Women and Human Rights, A Guide for Social Activates. Part 1 Pg 3. Part 2. Kanishka Publishers, Distributors N. D 2001.
9. Sikri. Women and Sexual Exploitation. Harassment at work. Pg 23. Kanishka Publishers Distributors N. D 1999.
10. Times of India 8th March 2015.
11. U.G.C. Refresher Course in Gender Studies on Gender & Development ASC, Jaipur 2010.
12. World Economic Forum.
13. Sanyal P 'From Credit to collective Action. The Role of Microfinance in promoting Women's Social Capital and Normative Influence'. American Sociological Review. 74-529-550. August 2009.
14. 21 Nov. Times Business 'Cos engage men Ibsen "Doll's" House for gender equality.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Study of Secondary School Teachers Classroom Verbal Behaviour in Relation to Their Emotional Intelligence

Amit Kumar Tyagi * Sangita Sirohi **

Abstract - The explosion of knowledge at very fast pace is bringing about economic, social, political and technological upheaval in the country. These in turn is reflected in the classroom teaching and necessitate the requirement in the classroom teaching of a competent and effective teacher. Goleman (1995) emphasized "Emotional Intelligence, the skill that helps people harmonize, should become increasingly valued as a work place asset in the year to come." On the other hand Mental health describes either a level of cognitive or emotional well-being or an absence of a mental disorder. From perspectives of the discipline of positive psychology or holism mental health may include an individual's ability to enjoy life and procure a balance between life activities and efforts to achieve psychological resilience. On the other hand Self esteem refers to an individual's overall evaluation of one's self worth or self image. An adequate level of self esteem would elevate students beliefs in their ability, which in turn, would elevate their performance, both academically and non academically. This study finds that High Emotionally Intelligent Teachers of secondary schools are better in their verbal behavior, clarity, interaction, organization, pacing, disclosure, speech, and rapport dimensions and equal in enthusiasm dimensions of their verbal behavior in comparison with Low Emotionally Intelligent Teachers.
Key Words - Secondary School Teacher, Verbal Behaviour, Emotional Intelligence.

Introduction - The behaviour of the teacher not only as a person but also as a teacher is predominantly controlled by his emotional behaviour, which in turn depends upon the degree of emotional intelligence possessed by him. In the modern world we need not just competent teachers, but teachers, who can question own actions and who are able to envisage new forms of professionalism.

Emotional intelligence is considered more important than intelligence in the success of a person. Emotional intelligence is the ability to use your emotions to help you solve problems and live a more effective life Emotional intelligence without intelligence is only part of a solution. It is the head working with the heart. Historically speaking the term emotional intelligence was introduced in 1990 by two American university professors Dr. John Mayer and Dr. Peter Salovey. However the credit for popularizing the concept of emotional intelligence goes to another American psychologist Daniel Goleman (1998) According to Goleman, I.Q. accounts for only 20% of a person's success in life. The balance can be attributed to emotional Intelligence.

Verbal Behavior Of Teacher - Teachers' sense of self is particularly important, because of the way in which it influences their perspectives of, strategies with and actions towards children. Bruner argues that the teacher is a model, that he or she is a personal symbol of the educational process, a figure with which students can identify and compare themselves. Through language, teachers and students express themselves, but although language provides the key set of symbols, not all symbols take the form of spoken or written words. It was suggested that the impact of non verbal communication is potentially much greater than that of verbal communication; these subtle cues can be transmitted through many different channels and the ability to understand them is critical to interpersonal relationships.

Emotional Intelligence - Emotions have been largely viewed as disorganizing forces that disrupt one's ability to reason and think. They are held as interfering with attempts to function rationally in the world. Recent research work, however, refutes this perspective. Now, it is held that emotions facilitate the attainment of goals if emotionally laden relevant information is processed perspicaciously keeping the goal of adaptation constantly in mind and not be swayed away by the caprice of the emotions (Salovey and Mayer, 1990). Emotions guide one's overall assessment and experience of the world and persons who ignore their own affective feedback are not well suited to behave adaptively (Greenberg and Safran, 1989).

Emotional Intelligence (EI) was defined by Peter Salovey and John Mayer (1990) as a mental ability that consists of "ability to monitor one's own and others feelings and emotions, to discriminate among them and to use this information to guide one's thinking and actions. It was however modified by New York Times behavioural science journalist, Daniel Goleman (1995).

Daniel Goleman model of EI includes 1.Knowing one's

*Research Scholar (Education) Mewar University, Gangrar, Chittorgarh (Raj.) INDIA
** Associate Professor, C.S.S.S. PG College, Machhra, Meerut (U.P.) INDIA

emotions, 2.Managing emotions, 3.Motivating oneself, 4.Recognizing emotions in other and 5.Handling relationship.

Later Mayer and Salovey (1997) revised their theory a bit to emphasize the cognitive component and talked about a hierarchy of mental abilities. Raeven Bar-on (1997) defined EI as on "array of non-cognitive capabilities, competences and skills that influence one's ability to succeed in coping with environmental demands and pressures."

According to Cooper and Cartwright (1996) emotional intelligence can be divided into five attributes which are as follows:

1. Current environment: It includes life pressures and life situations.
2. Emotional literacy: It includes emotional self awareness, emotional expression and emotional awareness of others.
3. EQ competencies: It includes intentionally, creativity, resilience, interpersonal connections and constructive discontent.
4. EQ values and attitudes: It includes outlook, compassion, intuition, trust radius, personal power and integrated self.
5. EQ outcomes: It includes general health, quality of life, relationship quotient and optional performance.

Daniel Goleman (1998) defined the emotional intelligence is the capacity for recognizing on own feelings and those of others, for motivating ourselves and for managing emotions well in ourselves and in our relationships. His frame work included 25 emotional competencies which can be grouped into five clusters. These are as follows:

1. Self awareness cluster: Emotional self awareness, accurate self assessment, self confidence.
2. Self regulation cluster: Self control, trust worthiness, conscientiousness, adaptability, innovation.
3. Self motivation cluster: Achievement orientation, commitment, initiative, optimism.
4. Empathy cluster: Empathy, organizational awareness, service orientation, developing others, leveraging diversity.
5. Social skills: Leadership, communication, influence, change catalyst, conflict management, building bonds, team capabilities, collaboration and co-operation.

Operational Meaning of the Variable Used - Operational meanings of the key terms used in the problem have been given below:

Verbal Behaviour of Teacher - In the present study following eight dimensions (Murray Teacher Behaviour Inventory, 1983) was used to study the teachers' behaviour: 1.Clarity, 2. Enthusiasm, 3. Interaction, 4.Organization, 5.Pacing, 6.Disclosure, 7.Speech and 8.Rapport.

Emotional Intelligence - "Emotional intelligence may be defined as the capacity to reason with emotion in four areas to perceive emotion, to integrate it in thought to understand it and to manage it".

In the present study emotional intelligence refers to the scores obtained by the secondary school teachers, on the basis of Anukool Hyde et al. Emotional intelligence scale. Every individual got ten different scores for ten different dimensions of emotional intelligence, i.e. 1.Self-awareness, 2.Empathy, 3.Self-motivation, 4.Emotional stability, 5.Managing relations, 6.Integrity, 7.Self-development value orientation, 8.Commitment and altruistic behaviour.

Objectives Of The Study - The present study aimed at realizing the following objectives:

1. To identify secondary school teachers with high emotional intelligence and low emotional intelligence.
2. To study the verbal behavior of secondary school teachers in relation to their Emotional Intelligence.

Analysis And Interpretation Of Data - Data collected through the administration of the tools on selected sample are raw in nature. These data need was organized, analyzed and interpreted for drawing sound conclusions and valid generalizations. The organization of data includes editing, classifying and tabulating quantitative information. Editing implies checking of the gathered raw data for accuracy, usefulness and completeness. Here classification refers to dividing of the data into different categories, classes and groups. Thus in brief analysis data refers to the study of the organized material in order to discover inherent facts. Further the data were studied from various angles for accessing the new facts.

Classification Of Teachers In Terms Of Their Emotional Intelligence Scores - To achieve the objectives, the classification of the secondary school teachers on the basis of their emotional intelligence was needed. The classification of teachers as high, average and low emotionally intelligent teachers has been taken as per the norms given in the manual of Emotional Intelligent Scale (E.I.S.). The teachers who attained scores above 85 were considered as high emotionally intelligent teachers. They were found 112 out of 425. The score obtained by the teachers below 53 were considered as low emotionally intelligent teachers. They were found 89 out of 425, and the score obtained by the teachers in between 85-53 were considered as average emotionally intelligent teachers. They were found 224 out of 425.

Status of the High, Moderate and Low Emotionally Intelligent Teachers In Relation To Their Verbal Behaviour Scores - After the classification of teachers as high, average and low emotionally intelligent teachers, the status of the high, moderate and low emotional intelligent teachers in relation to their verbal behavior of teachers was studied.

The variation exiting between two groups and dispersion within the groups is of greater importance. Hence as regard the present study, the mean, and S.D. were computed. The derived results are presented in the Table 1.

Table-1 : Status of the high, moderate and low emotionally intelligent teachers in relation to their verbal behaviour scores

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.
1.	High Emotionally Intelligent teachers	112	254.46	18.65
2.	Moderate Emotionally Intelligent Teachers	224	247.19	18.76
3	Low Emotionally Intelligent teachers	89	232.54	30.32
	TOTAL	**425**		

Table-2 : Significance of the difference between mean scores on verbal behaviour of teachers for high and low emotionally intelligent teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	High Emotionally Intelligent Teachers	112	254.46	18.65	199	5.98**
2.	Low Emotionally Intelligent Teachers	89	232.54	30.32		

****Significant at 0.01 level**

Table-2 shows that High Emotionally Intelligent Teachers have significantly high verbal behavior in comparison to Low Emotionally Intelligent Teachers.

Table-3 : Significance of the difference between mean scores on 'clarity' dimension of verbal behaviour for high and low emotionally intelligent teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	High Emotionally Intelligent Teachers	112	42.21	5.39	199	4.02**
2.	Low Emotionally Intelligent Teachers	89	39.45	4.35		

****Significant at 0.01 level**

Table-3 shows that High Emotionally Intelligent Teachers have significantly high *clarity* in verbal behavior in comparison to Low Emotionally Intelligent Teachers.

Table-4 : Significance of The Difference Between Mean Scores On 'Enthusiasm' Dimension Of Verbal Behaviour For High And Low Emotionally Intelligent Teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	High Emotionally Intelligent Teachers	112	41.36	6.35	199	1.15*
2.	Low Emotionally Intelligent Teachers	89	40.41	5.36		

***Not Significant at 0.05 level**

Table-4 shows that High and Low Emotionally Intelligent Teachers are equal on '*Enthusiasm'* dimension of their verbal behavior.

Table-5 : Significance of the difference between mean scores on 'interaction' dimension of verbal behaviour for high and low emotionally intelligent teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	High Emotionally Intelligent Teachers	112	35.55	6.59	199	3.21**
2.	Low Emotionally Intelligent Teachers	89	33.39	2.39		

****Significant at 0.01 level**

Table-5 shows that High Emotionally Intelligent Teachers have significantly high interaction in verbal behaviour in comparison to Low Emotionally Intelligent Teachers.

Table-6 : Significance of the difference between mean scores on 'organization' dimension of verbal behaviour for high and low emotionally intelligent teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	High Emotionally Intelligent Teachers	112	34.32	2.89	199	4.14**
2.	Low Emotionally Intelligent Teachers	89	32.36	3.65		

****Significant at 0.01 level**

Table-6 shows that High Emotionally Intelligent Teachers have significantly high *organization* in verbal behavior in comparison to Low Emotionally Intelligent Teachers.

Table-7 : Significance of the difference between mean scores on 'pacing' dimension of verbal behaviour for high and low emotionally intelligent teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	High Emotionally Intelligent Teachers	112	24.41	2.36	199	6.36**
2.	Low Emotionally Intelligent Teachers	89	22.31	2.30		

****Significant at 0.01 level**

Table-7 shows that High Emotionally Intelligent Teachers have significantly high *pacing* in verbal behavior in comparison to Low Emotionally Intelligent Teachers.

Table-8 : Significance of the difference between mean scores on 'disclosure' dimension of verbal behaviour for high and low emotionally intelligent teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	High Emotionally Intelligent Teachers	112	27.45	3.10	199	5.21**
2.	Low Emotionally Intelligent Teachers	89	25.36	2.59		

****Significant at 0.01 level**

Table-8 shows that High Emotionally Intelligent Teachers have significantly high *disclosure* in verbal behavior in comparison to Low Emotionally Intelligent Teachers.

Table-9 : Significance of the difference between mean scores on 'speech' dimension of verbal behaviour for high and low emotionally intelligent teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	High Emotionally Intelligent Teachers	112	23.36	2.95	199	5.76**
2.	Low Emotionally Intelligent Teachers	89	21.35	1.98		

****Significant at 0.01 level**

Table-9 shows that High Emotionally Intelligent Teachers have significantly high *speech* in verbal behavior in comparison to Low Emotionally Intelligent Teachers.

Table-10 : Showing significance of the difference between mean scores on 'rapport' dimension of verbal behaviour for high and low emotionally intelligent teachers

S.	NAME OF GROUP	N	MEAN	S.D.	df	't'
1.	High Emotionally Intelligent Teachers	112	24.56	2.98	199	5.77**
2.	Low Emotionally Intelligent Teachers	89	22.35	2.45		

Significant at 0.01 level

Table-10 shows that High Emotionally Intelligent Teachers have significantly high rapport in verbal behaviur in comparison to Low Emotionally Intelligent Teachers.

Conclusions Of The Study - On the basis of above findings following conclusions have been made:

1. High Emotionally Intelligent Teachers of secondary schools are better in their verbal behavior in comparison with Low Emotionally Intelligent Teachers.
2. High Emotionally Intelligent Teachers of secondary schools are better in clarity, interaction, organization, pacing, disclosure, speech, and rapport dimensions of their verbal behavior in comparison with Low Emotionally Intelligent Teachers. and
3. High Emotionally Intelligent Teachers of secondary schools are equal in enthusiasm dimensions of their verbal behavior in comparison with Low Emotionally Intelligent Teachers.

Educational Implication Of The Study - The results of this study show that teachers with high emotional intelligence are better in verbal behaviour in the classroom. In this way education policy planners may develop such type of programme which provide such curriculum and activities that may increase the teachers' Emotional Intelligence

The finding of this study may be useful for administrators in manipulating teachers and other resources for realizing the educational goals. By proper Understanding of Verbal behaviour of teachers and Emotional Intelligence they may put their best efforts for the betterment of teaching-learning process.

'Teacher' is the important part of the teaching-learning process. If the teacher himself aware about the effect of Emotional Intelligence on Verbal Behaviour, then they can develop these qualities in themselves.

References :-

1. Golman D. (1995). Emotional intelligence : Why it can matter more than I.Q. ?New York: Bantam Books.
2. Goleman, Daniel (1998). Working with emotional intelligence, New York :Bantam Books.
3. Solovey Peter and Mayer John (1990). Emotional intelligence. Imagination, Cognition and Personality, 9, pp. 185-211.
4. Greenberg L.S. & Safran J.D. (1989). Emotion in psychotherapy. *American Psychologist,* 44, 19-29.
5. Bar-on R. (1997). Bar-on emotional quotient inventory (EQ-i): Technical manual. Toronto : Multi-health systems.
6. Cooper C.L. and Cartwright S. (1996). Stress management interventions in the work place : Stress counselling and stress adults. *British Journal of Guidance and Counselling*, 22(1), pp. 65-73.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Impact Of Tourism In Improving Local Economy

Deepak Agarwal* Dr. S.S. Chaudhary**

Abstract - The objective of the present research is to find impact of tourism in improving local economy. For the purpose 50 local tourists and 50 foreign tourists were contacted. They were given a self made questionnaire. The data was analysed through Chi square test. It was found that both local tourists and foreign tourists opine that Local Residents Earn Greater Income through tourism. They were of the view that Local People Earn Money from Selling Local Products through tourism. They also confirmed that Local Residents Gain Employment Opportunities through tourism.

Introduction - Tourism is travel for recreation, leisure, religious, family or business purposes, usually for a limited duration. Tourism is commonly associated with international travel, but may also refer to travel to another place within the same country. The World Tourism Organization defines tourists as people "traveling to and staying in places outside their usual environment for not more than one consecutive year for leisure, business and other purposes".

"Tourism is not only an economic activity of importance to national development, but also an important medium of cultural change among nations of the world. A lot of emphasis has been laid on the economic role of tourism, its contribution to the foreign exchange earnings of the nation and its potential for greater employment.

Generally speaking tourism travel industry or tourist industry may be considered to be one and the same thing. In the word of Easeskey, "Travel industry essentially includes transportation, hotel, entertainment and materials having local specialty particularly curious artistic material, textile, handicraft etc."

Ishwar Kumar, Ruchi Garg, and Zillur Rahman (2010) examined the cognitive influences of atmospherics on customer value, store image, and patronage intentions in an emerging market condition. Retail store visuals have the capacity to transcend the boundary between external worlds (Alan, 2002) and what is happening inside us.

Anne Marchand, Stuart Walker and Tim Cooper (2010) examined the perceptions and preferences of identified responsible, sustainable consumers with respect to functional products. The study is part of a larger research program that looks at material cultures and product design in relation to sustainable production and consumption.

Marof Redzuan and Fariborz Aref (2011) studied to identify the constraints and potentials faced by handicraft industry in a peripheral and underdeveloped region of Malaysia. The study was carried out in the Districts of Kota Bharu and Tumpat in the State of Kelantan, Malaysia, and targeted the entrepreneurs and workers in the silverware and batik handicraft enterprises, and also villagers who were not directly involved in these industries. It seeks to place handicrafts production in Kelantan within the broader theoretical context of rural industrialization and the development of traditional and peripheral rural areas.

Methodology - For data collection the locale of the present study is confined to Rajasthan State. And from Rajasthan State Five places were selected purposively seeing the importance of cultural and medical aspects of tourism avenues. The name of selected areas for data collection are: Jaipur, Udaipur, Mount Abu, Ajmer, and Chittor.

The total sample for the present research work was 100 respondents. Out of these 100 respondents 50 each belongs from local tourists and foreign tourists.

A self-made questionnaire was distributed and data was collected. The percentage and Chi Square was calculated at checked at 0.05 level of significance. The data was analysed with the help of SPSS (Social Science Package for Social Sciences, Version 21.0).

Results and Discussion - Table 1 presents the opinion of local and foreign tourist regarding impact of tourism on handicraft industry is local residents earn greater income.

Table 1 (see in next page)

The table 1 shows that overall 2.0% of tourists are highly dissatisfied, 23.0% are dissatisfied, 16.0% are neutral, 28.0% are satisfied and 31.0% are highly satisfied regarding the impact of tourism on handicraft industry is local residents earn greater income.

The table also presents that among the local tourists 4.0% of tourists are highly dissatisfied, 36.0% are dissatisfied, 20.0% are neutral, 24.0% are satisfied and 16.0% are highly satisfied regarding the impact of tourism

*Research Scholar, Janardan Rai Nagar Vidyapeeth (Deemed to be) University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Professor, Janardan Rai Nagar Vidyapeeth (Deemed to be) University, Udaipur (Raj.) INDIA

on handicraft industry is local residents earn greater income. Whereas among the foreign tourists 10.0% of tourists are dissatisfied, 12.0% are neutral, 32.0% are satisfied and 46.0% are highly satisfied regarding the impact of tourism on handicraft industry is local residents earn greater income. Furthermore the chi-square was found to be 19.728 which is significant at 0.01 level. It infers that there is a significant difference in the opinion of local and foreign tourists regarding impact of tourism on handicraft industry is local residents earn greater income.

Table 2 presents the opinion of local and foreign tourist regarding impact of tourism on handicraft industry is local people earn money from selling local products.

Table 2 (see in next page)

The table 2 shows that overall 1.0% of tourists are highly dissatisfied, 18.0% are dissatisfied, 8.0% are neutral, 28.0% are satisfied and 45.0% are highly satisfied regarding the impact of tourism on handicraft industry is local people earn money from selling local products.

The table also presents that among the local tourists 2.0 of tourists are highly dissatisfied, 28.0% are dissatisfied, 10.0% are neutral, 32.0% are satisfied and 28.0% are highly satisfied regarding the impact of tourism on handicraft industry is local people earn money from selling local products. Whereas among the foreign tourists 8.0% of tourists are dissatisfied, 6.0% are neutral, 24.0% are satisfied and 62.0% are highly satisfied regarding the impact of tourism on handicraft industry is local people earn money from selling local products. Furthermore the chi-square was found to be 14.933 which is significant at 0.01 level. It infers that there is a significant difference in the opinion of local and foreign tourists regarding impact of tourism on handicraft industry is local people earn money from selling local products.

Table 3 presents the opinion of local and foreign tourist regarding impact of tourism on handicraft industry is local residents gain employment opportunities.

Table 3 (see in next page)

The table 3 shows that overall 1.0% of tourists are highly dissatisfied, 16.0% are dissatisfied, 13.0% are neutral, 27.0% are satisfied and 43.0% are highly satisfied regarding the impact of tourism on handicraft industry is local residents gain employment opportunities.

T he table also presents that among the local tourists 2.0% of tourists are highly dissatisfied, 22.0% are dissatisfied, 16.0% are neutral, 34.0% are satisfied and 26.0% are highly satisfied regarding the impact of tourism on handicraft industry is local residents gain employment opportunities. Whereas among the foreign tourists 10.0% of tourists are dissatisfied, 10.0% are neutral, 20.0% are satisfied and 60.0% are highly satisfied regarding the impact of tourism on handicraft industry is local residents gain employment opportunities. Furthermore the chi-square was found to be 13.135 which is significant at 0.05 level. It infers that there is a significant difference in the opinion of local and foreign tourists regarding impact of tourism on handicraft industry is local residents gain employment opportunities.

Conclusion :

1. Both local tourists and foreign tourists opine that Local Residents Earn Greater Income through tourism.
2. Both local tourists and foreign tourists were of the view that Local People Earn Money from Selling Local Products through tourism.
3. Both local tourists and foreign tourists confirmed that Local Residents Gain Employment Opportunities through tourism.

References :-

1. Anne Marchand ,Stuart Walker and Tim Cooper, (Beyond Abundance: Self-Interest Motives for Sustainable Consumption in Relation to Product Perception and Preferences), Sustainability 2010, 2, 1431-1447
2. Ishwar Kumar, Ruchi Garg, and Zillur Rahman (Influence of Retail Atmospherics on Customer Value in an Emerging Market Condition) Great Lakes Herald Vol 4, No 1, March 2010
3. Marof Redzuan and Fariborz Aref , (Constraints and potentials of handicraft industry in underdeveloped region of Malaysia), African Journal of Business Management Vol. 5(2), pp. 256-260, 18 January, 2011, Available online at http://www.academicjournals.org

Table 1 : Local Residents Earn Greater Income

		Highly Dissatisfied	Dissatisfied	Neutral	Satisfied	Highly Satisfied	Total	Chi-Square(df) Significance
Local Tourists	F	2	18	10	12	8	50	19.728(4)0.01
	%	4.0	36.0	20.0	24.0	16.0	100.0	
Foreigner Tourists	F	0	5	6	16	23	50	
	%	0.0	10.0	12.0	32.0	46.0	100.0	
Total	F	2	23	16	28	31	100	
	%	2.0	23.0	16.0	28.0	31.0	100.0	

Table 2 : Local People Earn Money from Selling Local Products

		Highly Dissatisfied	Dissatisfied	Neutral	Satisfied	Highly Satisfied	Total	Chi-Square(df) Significance
Local Tourists	F	1	14	5	16	14	50	14.933(4)0.01
	%	2.0	28.0	10.0	32.0	28.0	100.0	
Foreigner Tourists	F	0	4	3	12	31	50	
	%	0.0	8.0	6.0	24.0	62.0	100.0	
Total	F	1	18	8	28	45	100	
	%	1.0	18.0	8.0	28.0	45.0	100.0	

Table 3 : Local Residents Gain Employment Opportunities

		Highly Dissatisfied	Dissatisfied	Neutral	Satisfied	Highly Satisfied	Total	Chi-Square(df) Significance
Local Tourists	F	1	11	8	17	13	50	13.135(4)0.05
	%	2.0	22.0	16.0	34.0	26.0	100.0	
Foreigner Tourists	F	0	5	5	10	30	50	
	%	0.0	10.0	10.0	20.0	60.0	100.0	
Total	F	1	16	13	27	43	100	
	%	1.0	16.0	13.0	27.0	43.0	100.0	

****

Innovations In Teacher Education

Dr. Rakesh Kumar Sharma *

Abstract - The modern teacher training in India was first started to train the students in teaching different subjects but later on they also started to develop in the trainees some basic concepts, skills regarding education and teaching. Teacher education must create necessary awareness among teachers about their new roles and responsibilities. Education of teachers needs to strengthen and stress upon the main attributes of a profession, such as, the systematic theory, rigorous training over a specified duration, authority, community sanction, ethical code, culture and generating knowledge through research and specialization.*Successful innovation in teacher education depends upon resolving issues regarding four interrelated themes: identity, non-passivity, control, and curriculum. There are continuing demands on education and training to explore ways of improving learning and widening access to learning opportunities.* There are some resisting factors in our education system which prevents the teacher education institution from being innovative such as lack of physical facilities and funds, lack of diffusion of innovations among teacher educators, rigid framework, lack of research orientation etc. Teachers have to be innovative and their grooming has to start from their training institutions. Innovations in teacher education include IT literacy, interactive teleconferencing etc. The effective teaching-learning environment can be achieved through Audio-visual supplements, Flip methodology, Role playing, Play way teaching and Collaborative Teaching.

key words - Innovation, Teacher Education, Audio-visual supplements, Flip methodology, Role playing, Play way teaching, Collaborative Teaching.

Introduction - Innovation, to me, means finding any way you can to reach all of your students. This means being willing and flexible to adjust what you teach and how you teach. We have to keep our students engaged and excited to learn. We have to create a safe place for them to make mistakes, take risks, and ask questions." – *Ashley* Challenges in Indian educational system have no permanent answers because of the variable nature and continuous demands of human society.The success of educational reforms cannot be achieved without teacher's efforts. Teacher education has enjoyed an increasingly important status in the strategic planning and development of our country. Teacher education, which is in it a kind of vocational education, should satisfy the needs of teacher's professional progress and career development, and help establish a new system for teacher training and development. The superiority of any educational process mainly depends upon the excellence of teaching process and teacher. Though teaching is considered as a science and an art, basically it is a transcendent art based on certain teaching skills. It is the teacher, who intuitively designs the emergent plastic mind of the child entrusted to him. Thus, teaching is not a motorized process. Rather, it is a sophisticated, rigorous and a very challenging one.

The teachers in the modern era specifically in twenty first century will have to transact with a world different from past in respect of pedagogical and technological advancement. So, no teacher education program can make teachers fit for all situations that they will encounter in their profession. With good leadership and correct teaching methodologies, the teacher's efficacy can be enhanced Teachers will have to make final selections from many alternatives in the course of teaching. Therefore, it is vital for teachers to constantly reassess their alternatives. This can be done by presenting innovative ideas and practices in teacher education program. Teachers themselves will make the final decisions from among many alternatives. Therefore, it is important for teachers to constantly reevaluate their decisions. Teachers have to be innovative and their grooming has to start from their training institutions. The effective teaching-learning environment can be achieved throughAudio-visual supplements, Flip methodology, Role playing, Peer teaching, Play way teaching and Collaborative Teaching.

Audio-visual supplements: In the current digital world, audiovisual aids have grown exponentially with several multimedia such as educational DVDs, PowerPoint, television educational series, YouTube, and other online materials. The goal of audio-visual aids is to enhance teacher's ability to present the lesson in simple, effective and easy to understand for the students. Audio-visual aids are used to enhance the quality of presentation. They can

*Associate Professor, C.S.S.S. P.G. College, Machhra, Meerut (U.P.) INDIA

be handouts, photos, whiteboard, flip chart, OHP, power point presentation, microphone, music. Many educational institutions in India have audio-visual equipped classrooms or venues to boost students' learning and understanding.

For language learning, the audio-visual equipment is an indispensable tool. Teachers can play films, plays both in vernacular or the target language to facilitate the skills of reading, listening and speaking. Teachers explain difficult subject like Science and Mathematics through graphical representations with the help of smart-boards Subject teachers can use audio-visual facilities in interesting ways to trigger the class's curiosity through graphics, images, and puzzles.

Research has shown that oral presentation that use visuals are more persuasive, more interesting, more credible, and more professional—i.e., more effective, than presentations without such aids. Particularly if the presentation is twenty minutes long or more, visual aids can help the audience in follows the ideas easily and with fewer lapses in attention. Studies have shown that the use of audio-visual aids in the classroom is greatly helpful for the students in developing an understanding of complex concepts. The use of these devices enables the students to grasp these concepts quickly and easily. Latest technological advancements present many options before the teachers to make their jobs easier. It is for this reason that teachers all over the world have started incorporating the use of audio-visual aids in their lesson plans.

Flip methodology:A flipped classroom is an instructional strategy and a type of blended learning that reverses the traditional learning environment by delivering instructional content, often online, outside of the classroom. It moves activities, including those that may have traditionally been considered homework, into the classroom. In a flipped classroom, students watch online lectures, collaborate in online discussions, or carry out research at home while engaging in concepts in the classroom with the guidance of a mentor. The development of technology is gradually entering into school reality. The desire to convert this trend into tangible benefits is a key determinant of many experiments and innovations in education today. One such project is the flipped classroom – a method well recognized around the world. Its main characteristic is the fact that students learn before class from materials prepared and shared by a teacher. The creation and distribution of these educational materials is aided by new technologies.

This technique, to put simply, is to roll the responsibility of learning towards the students and make them active participants of the learning process. In the school having flip methodology technique, teachers relegate to the role of resource or material providers via email or intranet, whereas students take the centre stage of gathering concepts, constructing knowledge, and drawing inferences. However, the other significant aspect is that teachers follow it up with a discussion session on the given topic on a stipulated day to ensure students' participation, seriousness, and overall learning. Besides discussions, there are group presentations, debates, and essay writing competitions. Teachers are implementing effective and interesting measures to evaluate students' learning outcomes and the efficacy of the flip method. Surprisingly, when given responsibility, students take more interest, immerse themselves in the project, and deliver much better. Flip methodology promotes greater student involvement in the learning process and lays down the foundation of independent learning.

Role playing:Role play brings in the element of entertainment into the classroom. As much as it is loved by students, this technique facilitates their understanding and appreciation of the characters that they read about. In role-play students immediately apply content in a relevant, real world context. Students take on a decision making persona that might let them diverge from the confines of their normal self-imposed limitations or boundaries. Students see the relevance of the content for handling real world situations. The instructor and students receive immediate feedback with regard to student understanding of the content. Students engage in higher order thinking and learn content in a deeper way. Instructors can create useful scenarios when setting the parameters of the role play when real scenarios or contexts might not be readily available.

From pre-schools to Senior Secondary level, schools are implementing this method as it's a great source to instill in children values and ideals as they play the roles of historical stalwarts like Mahatma Gandhi, PanditJawaharLal Nehru, BhimRaoAmbedkar, RabindraNath Tagore, Nelson Mandela, and Martin Luther King, or legendary characters like Caesar, Mark Anthony, and Charlie Chaplin, to name a few. Students are encouraged to have their own version of the characters they are portraying, and enact them with the context of the present times. Through role play, students also get to learn about various aspects of stage performance – from acting to voice projection – and discover their acting talent. This technique also helps teachers explore creativity and critical thinking in students. Role play is an impactful method to enhance learning that also lends learners opportunity to live the experience through empathy and internalizing values. Following are the steps of role playing method:

1. Offer a relevant scenario to students. This scenario should include the role the student must play, the informational details relevant for decision making in this role, and a task to complete based on the information. This information might be provided on the screen through power point or by using a handout. It is highly recommended that the instructions be provided in writing so it is clear to students what they must do and how?
2. Give students five to ten minutes to complete the task. The instructor might have students do this alone or in small groups or follow the think-pair-share format in which students work individual and then discuss their

results with their partner.

3. Find a way to process student deliberations. The instructor might ask students to write their replies to submit or this might be a very good lead in to a larger class discussion where students can justify their differing outcomes or opposing views.

Play way teaching:A play-way method is a stimulant which consists of pleasure and satisfaction. Children enjoy and actively get involved in playing, which is natural to them. Play-way method goes by the principle that all work and learning should be done in the essence of 'play'. Play-way is a means of the subjective and emotional development of the child, that is, development in terms of intellect, skills and feelings. Play-way method is structured on activity-based learning. It encourages creative skills and self-expression. Playing is the predominant factor in this method. It reinvigorates children while also enhancing their learning abilities. The play-way lessons are quite popular among students of all grades, and a successful strategy to keep them engaged. If the sessions are carefully designed and smoothly executed by teachers, this method reinforces cognitive knowledge, especially of mathematical and scientific concepts, and vocabulary.

Teachers are experimenting with various kinds and levels of word and mind games like quiz, puzzle-solving, Scrabble, Sudoku, etc. Games help to seamlessly incorporate subject knowledge with application, and are an answer to productive and smart learning. The game increased parents' awareness about their children's need, and that reflected in students' improved class performance and attendance. The play-way method is a flexible one based on a child's interest and aptitude. It is unplanned and thus encourages complete freedom of expression. This method rules out grading or marking kids based on parameters, say, for example, home assignments. Instead, the teachers assess the skills and aptitude of the child, and communicate their assessments to the parents from time to time.

Collaborative Teaching: Collaboration is an essential life skill in a globalised environment, the driving force of all enterprises. In an educational institution, this skill can best be fostered in the classroom by allowing students to work in groups. Educators are planting the seed of a collaborative mind as early as primary school, where young children are motivated to create, plan, and organize group presentations of stories, skits, or poems. Throughout, teachers help students chalk out their plans, provide them key points, supervise their work, and build team spirit. Cooperative or collaborative Learning: Cooperative or collaborative learning is a team process where members support and rely on each other to achieve an agreed upon goal. The classroom is an excellent place to develop team building skills you will need later in life. Cooperative learning is a successful teaching strategy in which small teams, each with students of different levels of ability, use a variety of learning activities to improve their understanding of a subject. Each member of a team is responsible not only for learning what is taught but also for helping teammates learn, thus creating an atmosphere of achievement. Students work through the assignment until all group members successfully understand and complete it.

Conclusion - All these can be possible through practice of innovative teaching in Teacher Education. If the innovative teaching practices being in vogue as well as promoted by different institutions working in the arena of teacher education, there is every possibility that these practices would certainly attract the attention from the academic fraternity. The challenge for teacher educators is to assist both pre and in-service teachers by providing a deeper understanding of how to implement innovative teaching in Teacher Education. Because the approaches of innovative teaching in Teacher Education have different methodologies they defy a uniform teaching model. Teachers also need to know how seemingly disparate approaches of innovative teaching in Teacher Education can be integrated into lessons, and how they can be incorporated into evolving models of constructivist learning and teaching. The two innovations in Teacher Education would serve to make teacher education in keeping with the needs of the present society.

References :-

1. Bloom, B.S (Ed), 1964. Taxonomy of Educational Objectives: The classification of educational goals/ by a committee of college and university examiners, London: Longman.
2. Cheng, Y. C. 2005. A new paradigm for re-engineering education: Globalization, localization and individualization. Dordrecht, The Netherlands: Springer.
3. Digumarti B. 2004. Methods of Teacher Training.Discovery Publishing House, New Delhi.
4. Goel D.R. and ChhayaGoel, 2010. Innovations in teacher education, Journal of Engineering, Science and Management Education, Vol. 1, pp.24-28.
5. Hall, B. (1973) Values Clarification as a Learning Process: a guidebook. New York: PaulistPress.
6. Rahi, P. 2012. Innovations in Teaching-Learning, Edutracks, Vol.11, No.11.Rao, Ravi Ranga&Rao,
7. Yadav, S.K. (2006).Teacher of education in India: issues and concerns, University news, Vol. 44 (38).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण अभिक्षमता का अध्ययन

लीला चतुर्वेदी * डॉ. पूजा गुप्ता** डॉ. एम.के. तिवारी ***

प्रस्तावना – शिक्षा मनुष्य की विशेष अभिव्यक्ति है। शिक्षा वह धन है जिसे हानि के भय के बिना सुरक्षित रखा जा सकता है। शिक्षा से भौतिक आनंद, सुख और ख्याति प्राप्त होती है। शिक्षा गुरूओं की गुरू है तथा परमात्मा का अवतार है। जब व्यक्ति विदेश जाता है, तब वहाँ शिक्षा ही उसकी मित्र है। वहाँ सम्मान की प्राप्ति शिक्षा से होती है न कि धन से। शिक्षा के अभाव में मनुष्य पशु तुल्य है।

गुरूर्गुरूतमों धाम, सत्यं सत्य पराक्रम:

उक्त श्लोक के अनुसार गुरू ही गुरूतम: अर्थात ईश्वर है जो सर्वोत्तम सत्य एवं श्रेष्ठतम धाम है। गुरू का अर्थ Teacher, शिक्षक किसी शिक्षा संस्थान में विद्यार्थियों को पढ़ाने का कार्य करने वाला वह व्यक्ति होता है, जिसने अध्यापन करने के लिये स्वयं उपयुक्त शिक्षा तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त किया हो।

अध्यापक का मूल अर्थ 'ले जाने वाला' होता है। 'अधि'– का अर्थ है किसी विशेष जगह ले जाने वाला तथा लक्ष्यानुसार प्रतिष्ठित करने वाला। अध्यापक का काम है– सम्यक ज्ञान, उसका सम्यक मनन्, सम्यक प्रवचन तथा प्रयोग। अध्यापन उसका धर्म है, स्वभाव है, प्रसन्नता है, जीवन है।

विद्या मानव को समर्पण और सम्पूर्णता का मार्ग दिखाती है। वसुधैव कुटुम्बकम और विश्व शांति, भारतीय शिक्षा का उद्देश्य है। सच्चा शिक्षक न केवल शिष्य को उचित मार्ग बताता है, वरन् स्वयं भी उस राह पर चल कर शिष्य के लिए निष्ठा व सेवा के मूल्य और आदर्श स्थापित करता है। शिक्षक द्वारा उद्धृत किये गये उदाहरण एवं उसके अन्यास शिष्य के समक्ष सत्य, चरित्र व परित्याग की प्रतिमूर्ति प्रस्तुत करते हैं। भारतीय शिक्षा का विश्व को सबसे बड़ा योगदान आत्मानुभूति व शांति है।

विद्यालय शिक्षा की गुणवत्ता व सक्षमता का उच्च स्तर सुनिश्चित करने के लिए 'शिक्षक शिक्षा' एक अनिवार्य आवश्यकता है, क्योंकि शिक्षक, विद्यार्थियों के जीवन में सुधार करने वाले महत्वपूर्ण काकर होते हैं और विकासोन्मुख शिक्षा की प्रक्रिया में उल्लेखनीय भूमिका निभा सकते हैं। शिक्षक यदि अपने काम में दक्ष व प्रतिबद्ध हैं और यदि वे कक्षा, विद्यालय व समुदाय में अपने सही भूमिका के निर्वाह में पेशेवर ढंग से सक्षम है, तो वे सकारात्मक प्रभाव की एक श्रृंखला–प्रतिक्रिया की शुरूआत कर सकते हैं। शिक्षक की गुणवत्ता का सीधा प्रभाव शिक्षा की गुणवत्ता पर पड़ता है। इसलिए विश्व के सभी देश अपने अध्यापकों को उचित महत्व तथा सम्मान देने के साथ ही गुणवान अध्यापकों को तैयार करने के लिए अध्यापक शिक्षा की व्यवस्था का उचित प्रबन्ध कर रहे हैं। अध्यापक शिक्षा में गुणात्मक परिवर्तन लाना एक चुनौती भरा कार्य है। विकास के लिए गुणात्मक शिक्षा सभी विद्यालयों में उपलब्ध कराना आवश्यक है। गुणवान शिक्षक तैयार करने के लिए अध्यापक शिक्षा व्यवस्था में, इसके पाठ्यक्रम में तथा व्यावसायिक शिक्षा में एक आमूलचूल परिवर्तन आवश्यक है। शिक्षकों में दक्षता विकास के साथ–साथ उनमें प्रतिबद्धता व काम करने का उत्साह होना अत्यावश्यक है। एक युवा शिक्षक न केवल शिष्यों के लिये वरन् पूरे समाज, देश व राष्ट्र के लिए एक प्रतिबद्ध व समर्पित व्यक्ति के रूप में कार्य करते हुए, जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि करते हुए, विकास की ओर अग्रेषित होता है।

शिक्षक एक व्यावसायिक कार्य करने वाला व्यक्ति होता है, उसे गहन एवं प्रभावी प्रशिक्षण प्राप्त होता है जिसके आधार पर उसका प्रदर्शन निर्धारित होता है। शिक्षक के लिए व्यावसायिक दक्षताओं को अर्जित करना अति आवश्यक है। ये व्यावसायिक दक्षताएँ व सेवापूर्व प्रशिक्षण के समय प्राप्त करता है तथा उसका उपयोग सेवाकाल में करता है। प्राय: यह देखा गया है कि सिर्फ दक्षताओं से ही उनके प्रदर्शन में अपेक्षित सुधार नहीं हो पाता। सिर्फ व्यावसायिक दक्षता और व्यावहारिक कार्य कौशल से ही यह सुनिश्चित नहीं हो जाता है कि शिक्षक का प्रदर्शन प्रभावी होगा। प्रशिक्षित अध्यापकों का कक्षा या विद्यालय में प्रदर्शन उनकी प्रतिबद्धता पर भी उतना ही निर्भर करता है जितना उनकी योग्यता पर। परिणामस्वरूप बेहतर ढंग से प्रशिक्षित व प्रभावशील शिक्षक उन्हें ही माना जा सकता है। जो दक्ष होने के साथ ही प्रतिबद्ध हों तथा उनका प्रदर्शन व्यावसायिक हो। संक्षेप में कहें, तो अध्यापक की दक्षता प्रतिबद्धता तथा प्रदर्शन ऐसे पहलू हैं जो आपस में संबंधित होते हैं तथा एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं।

यदि उक्त उद्देश्यों की पूर्ति पूर्णत: होती है तो निसंदेह इसकी परिणति उच्च कोटि की व्यवसायिकता में होगी और यदि उसकी मूल भावना के अनुरूप क्रियान्वयन होता है तो इससे वांछित कौशल, प्रकृति और मूल्यों का विकास होगा।

अभिक्षमता से तात्पर्य व्यक्ति के उस रूझान, रूचि योग्यता से है जो किसी विशिष्ट कार्य पाठ्यक्रम या व्यवसाय में सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक व महत्वपूर्ण होती है। यहाँ अभिक्षमता तथा कुशलता (दक्षता) के बीच में अन्तर समझ लेना जरूरी है। कुशलता से तात्पर्य किसी दिये कार्य को सुगमता तथा परिशुद्धता से करने की योग्यता से होता है। दक्षता शब्द का अर्थ भी बहुत कुछ यह है, परन्तु यह कुशलता से अधिक व्यापक है। दक्षता में न केवल कुछ गायक व हस्त क्रियाओं में कुशलता सम्मिलित रहती है, वरन अन्य क्रियाओं में कुशलता, जैसे–भाषा, इतिहास, अर्थशास्त्र, गणित, विज्ञान आदि में व्यक्ति की योग्यताएँ सन्निहित रहती है। अभिक्षमता से अभिप्राय उपयुक्त परिस्थितियाँ में किसी क्षेत्र विशेष में दक्षता अर्जित

* शोधार्थी, मेवाड विश्वविद्यालय, गंगरार, चित्तौड्गढ (राज.) भारत
** एसोसिएट प्राध्यापक (शिक्षा) मेवाड विश्वविद्यालय, गंगरार, चित्तौड्गढ (राज.) भारत
*** प्राचार्य, मेवाड महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, चित्तौड्गढ(राज.) भारत

करने की क्षमता से होता है। दूसरे शब्दों में अभिक्षमता किसी क्षेत्र विशेष में सफलता प्राप्त करने का पूर्व कथन करने वाली मूलभूत योग्यता को इंगित करती है। सामान्यत: इसका उपयोग दो तरह से होता है-

1. जब हम यह कहें कि अमुक व्यक्ति के अन्दर कला के प्रति महान क्षमता है, तो इसका अर्थ यह होता है, कि उस व्यक्ति के अन्दर कई मायनों में ज्यादा योग्यता है जो उसे कलात्मक क्रिया कलापों में सफल बना सकती है।

2. जब हम यह कहें कि एक व्यक्ति में अभिक्षमता की कमी है, तो इसका तात्पर्य यह है कि उसमें इस विशिष्ट योग्यता की कमी है, जो कि विभिन्न पेशों के लिए महत्वपूर्ण है। पहले के सन्दर्भ में अभिक्षमता शब्द का प्रयोग इकाई सम्बन्धी विशेष लक्षण की ओर निर्दिष्ट नहीं करता है, न ही किसी प्रकार के अस्तित्व का, लेकिन वस्तुत: यह लक्षण और योग्यता/क्षमता का संसर्ग है, जिसका परिणाम बतलाता है, कि व्यक्ति कुछ विशिष्ट प्राकर के पेशा और क्रिया-कलापों हेतु योग्य है। बाद में प्रकरण में शब्द अभिक्षमता का अभिप्राय पृथक विशेष लक्षण के विचारों को प्रेषित करना, जो कि विभिन्न प्रकार के पेशा, क्रिया-कलापों में महत्वपूर्ण हैं। अभिक्षमता की दोनों धारणाओं का व्यवसाय में महत्व है। यद्यपि अर्थ स्पष्ट होना चाहिए। सामान्य रूप से उपदेशक व्यक्गित पेशा और व्यवसाय में महत्व है। यद्यपि अर्थ स्पष्ट होना चाहिए। सामान्य रूप से उपदेशक व्यक्तिगत पेश और व्यवसाय के सम्बन्ध में विचार करते हैं इसीलिए इस शब्द का प्रयोग संकीर्ण वैज्ञानिक अर्थों में उपयोग करते हैं।

यहाँ अभिक्षमता का प्रयोग संकीर्ण अर्थों में किया गया है। यहाँ अभिक्षमता को योग्यता सम्बन्धों के रूप में विचार किया गया है न कि योग्यता, क्षमता, पेशा सम्बन्धी विद्धता आदि धारणाओं के रूप में।

कोई भी व्यक्ति जो शिक्षक बनना चाहता है, उसे अपने विषय एवं उसकी पाठ्यक्रम में स्थिति के अलावा शिक्षा के उद्देश्य एवं शिक्षा की प्रक्रिया की जानकारी होना आवश्यक है। मान लिया जाये कि कोई व्यक्ति, जो अध्ययन करता है तो उसे पढ़ता है और ग्रहण करता है, लेकिन प्रश्न यह उठता है कि क्या वह अन्य कोई अच्छी तरीके से पढ़ा भी सकता है? यह अभिक्षमता तब प्रदर्शित होती है जब उसका सहपाठी मदद के लिए आता है तब यदिवह उन कठिन बिन्दुओं को स्पष्ट करने में आनन्द महसूस करता है और अपने सहपाठी को अच्छे तरीके से समझता है और साथी को अच्छी तरह समझ में आ भी जाता है तब ही यह कहा जा सकता है कि उसमें सम्भवत शिक्षण अभिक्षमता है।

'अभिक्षमता' शब्द का विभिन्न क्षेत्रों एवं विषयों में उपयोग किया जाता है। शिक्षा जगत में शिक्षकों की अभिक्षमता का अनुमान शिक्षक-प्रशिक्षण प्राप्त करने से पूर्व एवं प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात् शिक्षकों की क्षमता में आए परिवर्तन से लगाया जाता है।

भारत देश के साथ-साथ विश्व के अन्य देशों के शिक्षाविदों ने यह माना है और प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हुआ है कि प्रशिक्षण द्वारा शिक्षकों की अभिक्षमता में वृद्धि होती है।

अध्यापक शिक्षा के विभिन्न पाठ्यक्रमों एवं प्रशिक्षणों के द्वारा शिक्षकों की व्यावसायिक तैयारी का स्तर इस तथ्य से माजा जा सकता है कि प्रशिक्षित अध्यापक कितने योग्य व्यावसायिक व्यक्ति हैं तथा वे शिक्षण कार्य को कितनी दक्षता एवं संतुष्टि के साथ करते हैं।

समस्या कथन - 'माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण अभिक्षमता का अध्ययन'

शोध उद्देश्य - प्रस्तुत शोध विषय के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये हैं :

- राजकीय माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओं के शिक्षण अभिक्षमता का अध्ययन करना।

परिकल्पना :

- राजकीय माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओं के शिक्षण अभिक्षमता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

अध्ययन विधि - प्रस्तुत अध्ययन में शोधार्थी द्वारा 'सर्वेक्षण विधि' का प्रयोग किया हैं।

प्रतिदर्श - प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श हेतु राजस्थान राज्य के प्रातापगढ़ जिले से राजकीय माध्यमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षक तथा शिक्षिकाओं को सम्मिलित किया गया है। इस हेतु सम्पूर्ण जनसंख्या मेंसे स्तरीकृत याद्दछिक न्यादर्श विधि से 100-100 शिक्षक-शिक्षकाओं का चयन किया गया है।

उपकरण - प्रस्तुतशोध अध्ययन में शोधकर्ताद्धारा स्वनिर्मित उपकरण प्रयुक्त किया गया है।

- अध्यापन अभिक्षमता - डॉ. आर.पी. सिंह एवं डॉ. एस.एन शर्मा

शोध की परिसीमन - प्रस्तुत शोध में निम्न प्रकार से शोध का परिसीमन किया गया है-

1. शोध को केवल राजस्थान राज्य के प्रातापगढ़ जिले तक ही सीमित किया गया है।
2. प्रस्तुत शोध केवल माध्यमिक विद्यालयों तक ही सीमित किया गया है।

विश्लेषण एवं व्याख्या :

- राजकीय माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओं के शिक्षण अभिक्षमता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तलिका 1 : राजकीय विद्यालयों के शिक्षिकाएँ तथा शिक्षकों की मानसिक योग्यता अध्यापन अभिक्षमता सम्बन्धी प्रदत्तों के मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-मूल्य

लिंग	संख्या (N)	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य df=198
शिक्षिका	100	27.82	2.13	0.23^{NS}

NS = सार्थक नहीं है

उपर्युक्त तालिका 1 के अवलोकन से स्पष्ट है कि शिक्षिकाएँ एवं शिक्षकों के अध्यापन अभिक्षमता के प्रथम खण्ड की मानसिक योग्यता से सम्बन्धित प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 27.82 एवं 27.75 प्राप्त हुआ है एवं प्राप्त सम्बन्धित मानक विचलन क्रमश: 2.13 एवं 2.15 है। मध्यमानों से यह विदित होता है कि शिक्षिकाओं की तुलना में शिक्षकों की मानसिक योग्यता अभिक्षमता अधिक है। स्वतंत्रता स्तर 198 पर 'टी' मूल्य का द्वि पक्षीय (two tailed) गणितीय मान 0.23 है जो 'टी' तालिका के 0.05 सार्थकता स्तर के मान 1.97 से कम है, अत: शिक्षिकाओं एवं शिक्षकों की मानसिक योग्यता से सम्बन्धित अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।

तालिका 2 : राजकीय विद्यालयों के शिक्षिकाएँ तथा शिक्षकों की बच्चों के प्रति अभिवृत्ति अध्यापन अभिक्षमता सम्बन्धी प्रदत्तों के मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-मूल्य

लिंग	संख्या (N)	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य df=198
शिक्षिका	100	85.59	2.97	0.36^{NS}
शिक्षक	100	85.74	2.91	

NS= सार्थक नहीं है

उपर्युक्त तालिका 2 के अवलोकन से स्पष्ट है कि शिक्षिकाएँ एवं शिक्षकों के अध्यापन अभिक्षमता के द्वितीय खण्ड की बच्चों के प्रति अभिवृत्ति से सम्बन्धित प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 85.59 एवं 85.74 प्राप्त हुआ है एवं प्राप्त सम्बन्धित मानक विचलन क्रमश: 2.97 एवं 2.91 है। मध्यमानों से यह विदित होता है कि शिक्षिकाओं की तुलना में शिक्षकों की बच्चों के प्रति अभिवृत्ति अभिक्षमता अधिक है। स्वतंत्रता स्तर 198 पर 'टी' मूल्य का द्वि पक्षीय (two tailed) गणितीय मान 0.36 है जो 'टी' तालिका के 0.05 सार्थकता स्तर के मान 1.97 से कम है, अत: शिक्षिकाओं एवं शिक्षकों की बच्चों के प्रति अभिवृत्ति से सम्बन्धित अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।

तालिका 3 : राजकीय विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं की अनुकूलता अध्यापन अभिक्षमता सम्बन्धी प्रदत्तों के मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-मूल्य

लिंग	संख्या (N)	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य df=198
शिक्षिका	100	23.81	2.12	1.13^{NS}
शिक्षक	100	24.15	2.11	

NS = सार्थक नहीं है

उपर्युक्त तालिका 3 के अवलोकन से स्पष्ट है कि शिक्षक एवं शिक्षिकाओं के अध्यापन अभिक्षमता के तृतीय खण्ड की बच्चों के प्रति अभिवृत्ति से सम्बन्धित प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 24.15 एवं 23.81 प्राप्त हुआ है एवं प्राप्त सम्बन्धित मानक विचलन क्रमश: 2.11 एवं 2.12 है। मध्यमानों से यह विदित होता है कि शिक्षिकाओं की तुलना में शिक्षकों की अनुकूलता अभिक्षमता अधिक है। स्वतंत्रता स्तर 198 पर 'टी' मूल्य का द्वि पक्षीय (two tailed) गणितीय मान 1.13 है जो 'टी' तालिका के 0.05 सार्थकता स्तर के मान 1.97 से कम है, अत: शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की अनुकूलता से सम्बन्धित अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।

तालिका 4 : राजकीय विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं की व्यावसायिक सूचनाओं के अध्यापन अभिक्षमता सम्बन्धी प्रदत्तों के मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-मूल्य

लिंग	संख्या (N)	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य df=198
शिक्षिका	100	24.19	1.84	0.61^{NS}
शिक्षक	100	24.02	2.08	

NS= सार्थक नहीं है

उपर्युक्त तालिका 4 के अवलोकन से स्पष्ट है कि शिक्षक एवं शिक्षिकाओं के अध्यापन अभिक्षमता के चतुर्थ खण्ड की व्यावसायिक सूचनाओं से सम्बन्धित प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 24.02 एवं 24.19 प्राप्त हुआ है एवं प्राप्त सम्बन्धित मानक विचलन क्रमश: 2.06 एवं 2.06 है। मध्यमानों से यह विदित होता है कि शिक्षकों की तुलना में शिक्षिकाओं की व्यावसायिक सूचना अभिक्षमता अधिक है। स्वतंत्रता स्तर 198 पर 'टी' मूल्य का द्वि पक्षीय (two tailed) गणितीय मान 0.61 है जो 'टी' तालिका के 0.05 सार्थकता स्तर के मान 1.97 से कम है, अत: शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की व्यावसायिक सूचनाओं से सम्बन्धित अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।

तालिका 5 : राजकीय विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं की व्यावसायिक रूचियोंके अध्यापन अभिक्षमता सम्बन्धी प्रदत्तों के मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-मूल्य

लिंग	संख्या (N)	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य df=198
शिक्षिका	100	9.81	1.19	3.76**
शिक्षक	100	9.18	1.16	

0.01 = सार्थक है

उपर्युक्त तालिका 5 के अवलोकन से स्पष्ट है कि शिक्षक एवं शिक्षिकाओं के अध्यापन अभिक्षमता के पंचम खण्ड की व्यावसायिक रूचियों से सम्बन्धित प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 9.18 एवं 9.81 प्राप्त हुआ है एवं प्राप्त सम्बन्धित मानक विचलन क्रमश: 1.16 एवं 1.19 है। मध्यमानों से यह विदित होता है कि शिक्षकों की तुलना में शिक्षिकाओं की व्यावसायिक रूचियों अभिक्षमता अधिक है। स्वतंत्रता स्तर 198 पर 'टी' मूल्य का द्वि पक्षीय (two tailed) गणितीय मान 3.76 है जो 'टी' तालिका के 0.01 सार्थकता स्तर के मान 2.60 से अधिक है, अत: शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की व्यावसायिक रूचियों से सम्बन्धित अभिक्षमता में सार्थक अन्तर पाया गया है।

अत: आंकडों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शिक्षकों तथा शिक्षिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता में अन्तर आंशिक रूप से पाया जाता है।

निष्कर्ष

1. राजकीय विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता के क्षेत्र मानसिक योग्यता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. राजकीय विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता के क्षेत्र बच्चों के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. राजकीय विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता के क्षेत्र अनुकूलता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. राजकीय विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता के क्षेत्र व्यावसायिक सूचनाओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
5. राजकीय विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता के क्षेत्र व्यावसायिक रूचियों में राजकीय विद्यालयों के शिक्षक तथा शिक्षिकाओं में सार्थक अन्तर है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अगालिटिस, प. औ. (2008), शिक्षकों की अध्यापन अभिक्षमता व कार्यस्थल पर तनाव का अध्ययन
2. एसएस, ट. औ. (2011), अध्यापकों के सेवाकाल के अन्तरगत व सेवा के उपरांत अनुभवों का अध्ययन
3. कुमारी, उ. (2002), उच्च शिक्षण अभिक्षमता के भावी अध्यापकों की पहचान तथा व्यवहार प्रतिमानों का अध्ययन, वनस्थली विद्यापीठ, डीम्ड विश्वविद्यालय (1)
4. कोराकेंट, ह. औ. (2011), विद्यार्थी व अध्यापक के शिक्षण क्षमता और पढ़ाने लिखने के संबंधों का अध्ययन
5. पाई, प. (1995), छात्राध्यापकों की आकांक्षा, अभिक्षमता एवं अभिवृत्ति पर सूक्ष्म शिक्षण एवं परंपरागत अध्यापक प्रशिक्षण प्रविधि के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन, बेंगलौर

6. पाटिल, ज. ज. (1996), शिक्षक प्रशिक्षण प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभियोग्यता एवं शिक्षण अभिक्षमता के संबंधों का महाराष्ट्र स्नातक कौंसिल शिक्षक अनुसन्धान और प्रशिक्षण,इंडियन एजुकेशन रिसर्च, 1996 जुलाई 1. 23, 182
7. माथुर, इ. (1997), शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में अध्ययनरत सामान्य व अनुसूचित जाती के छात्राध्यापकों की अध्ययन व्यसाय के प्रति अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन, जयपुर: राजस्थान युनिवर्सिटी, जयपुर
8. मीरा, ए. (1988), अध्यापन अभिक्षमता व अध्यापन व्यवहार के बीच संबंधों का अध्ययन, बेंगलौर: अविनाश सिंग्हम संस्थान एच एस उच्च शिक्षण
9. विट रूमयेत व अन्य, (2010). शिक्षकों की स्वाकार्य कुशलता व शिक्षण अभिक्षमता का अध्ययन
10. लिविन्ग्या, (19994), विद्यालयी अध्यापकों पर कार्यक्षमता व कार्य संतुष्टि का अध्ययन
11. विक्टोरिया, न. अ. (2002), सामान्य शैक्षिक विकास प्रमाण पत्र का सामाजिक मूल्य शिक्षक व शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों की अभिक्षमतओं के विकास का अध्ययन

****

नवीकरणीयसंसाधन और धारणीत विकास

डॉ. मनीष जैन *

शोध सारांश – प्रस्तुत अध्ययन ऊर्जा के नवीकरणीय संसाधनों के अधिकतम विवेकशील उपयोग और जल संरक्षणके महत्व पर प्रकाश डालता हैं। इस शोध पत्र में तुलनात्मक रूप से नवीकरणीय संसाधनों और गैर नवीकरणीय संसाधनों का अध्ययन किया गया हैं। तथा नवीकरणीय संसाधनों के लाभों को जानने का प्रयास किया गया हैं। अध्ययन में बारह ऐसे भवनों को शामिल किया गया हैं जहाँ जल पुनर्भरण और सौर ऊर्जा का उपयोग न केवल भविष्य की आवश्यकाता की पूर्ति के लिए किया जा रहा हैं वरन् पर्यावरण संरक्षण पर भी ध्यान दिया जा रहा हैं। वहीं बारह और ऐसे भवनों को शामिल किया गया हैं जहाँ न तो नवीकरणीय संसाधनों और ना ही जल संरक्षण के लिए कोई प्रयास किये गये हैं। दोनों तरह के भवनों अध्ययन में यह पाया गया कि गर्मी के दिनों में गैर जल संरक्षण करने वाले भवनों में जल संकट होता हैं तथा गैर सौर ऊर्जा का उपयोग करने वाले भवनों में विघुत बिल अधिक आता हैं जबकि सौर ऊर्जा का उपयोग करने वाले भवनों में विघुत बिल कम आता हैं। साथ ही साथ नवीकरणीय संसाधनों और जल संरक्षण को अपना कर पर्यावरण को भी संरक्षित किया जा रहा हैं।

कुंजी शब्द – नवीकरणीय, संसाधन, जल पुनर्भरण, सौर ऊर्जा धारणीत विकास, पर्यावरण।

प्रस्तावना – प्रकृति जीवन स्त्रोत है, जो अनादिकाल से पृथ्वी पर मानव एवं सम्पूर्ण जीवजगत को न केवल प्रश्रय देती रही है अपितु उसके विकास के प्रारम्भिक काल से वर्तमान तक अस्तित्व में बनाए रखने का आधार रही है। भविष्य का जीवन भी इसी पर निर्भर करता है।

मानव अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रकृति पर निर्भर रहा है। जब तक प्रकृति के सहयोग से मानव अपनी आवश्यकताओं की आपूर्ति करता रहा, तब तक पर्यावरण और पारिस्थितिकी सन्तुलित रहे, किन्तु मानव एवं पारिस्थितिकीय अन्तर्सम्बन्धों की असंगत प्रक्रिया ने पर्यावरण असन्तुलन को जन्म दिया है। वर्तमान तथा गत शताब्दियों में आर्थिक विकास का एक ऐसा चित्र उभरकर सामने आया है, जिसने मानव समाज के सम्मुख भोजन, शुद्ध जल एवं वायु तथा समुतिच आवास आदि अनेक समस्याएँ उत्पन्न कर दी है। गत वर्षो में प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास ही चरम सीमा पर नहीं पहुँचा, बल्कि अनेक प्राकृतिक संसाधन एवं जैव सम्पदा समाप्ति की अन्तिम सीमा पर पहुँच गई है। आज विकास का अन्तिम उम्पाद प्रकृति के विनाश के रूप में प्रकट हो रहा है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र प्राथमिक समंक एवं द्वितीय समंक पर आधारीत हैं तथा समंकों का संकलन प्रश्नावली भरवाकर किया गया हैं। शोध में प्रतिशत विधि, विश्लेषण एवं निष्कर्ष निकाने हेतू प्रयोग की गई हैं।

उद्देश्य :

1. धारणित विकास की अवधारणा से समाज को परिचित कराना।
2. जल पुनर्भरण के लाभों को अध्ययन करना।
3. सौर उर्जा के लाभों का अध्ययन करना।
4. जनसाधारण को नवीकरणीय स्त्रोंतों के लाभों से अवगत कराना।

शोध परिकल्पना :

H_0 : जल पुनर्भरण एवं सौर ऊर्जा की उपयोगीता के प्रति जनसाधारण जागरूक नहीं हैं।

साहित्य समीक्षा – 1960 ई. के दशक के अन्त तक सामान्यत: यह माना जाता था कि वातावरणीय संरक्षण तथा विकास एक–दूसरे के विलोम है। दूसरे शब्दों में, वातावरण को क्षति पहुँचाए बिना विकास असम्भव है। यदि विकास करना है तो वातावरण की गुणवत्ता के रूप में उसकी कीमत चुकानी होगी, परन्तु अब यह अनुभव किया जाने लगा है, दोनों एक दूसरे के विलोम या विरोधी नहीं, वरन् अनुगामी है।

संयुक्त राष्ट्र संघीय पर्यावरण कार्यक्रम (U.N.E.P) पूर्व महासचिव मुस्तफा कमाल तोल्वा का मत है कि 'वातावरण संरक्षण के बिना विकास नहीं हो सकता और विकास के बिना वातावरण संरक्षण नहीं हो सकता।'

अस्थिर से असन्तुलित या असंपोषित विकास के बजाय सुस्थिर विकास के बारे में पर्यावरण तथा विकास के विश्व आयोग ने अपने विचारक निम्न प्रकार स्पष्ट किए है–

'स्थायी विकास वह विकास है जो वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति हेतू भविष्य की पीढी. की आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ समझौता नहीं करता है।'

डब्ल्यू.सी.ई.डी प्रतिवेदन के अनुसार, 'स्थायी विकास से आषय ऐसे विकास से है जिसमें वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति भविष्य की पीढ़ीयों की आवश्यकताओं की पूर्ति की क्षमताओं के साथ समझौता किए बिना की जाती है।'

विस्तृत व्याख्या : विश्लेषण

जल संकट कारण / पुनर्भरण	गर्मीयों में	कम वर्षा वाले वर्ष में	अन्य	नहीं	योग
हां	0	0	1	11	12
नहीं	9	3	0	0	12
योग	**9**	**3**	**1**	**11**	**24**

* उप-प्राचार्य, एक्रोपॉलिस इंस्टीट्युट ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज एण्ड रिसर्च, इन्दौर (म.प्र.) भारत

24 में से 13 भवनों में जल संकट की समस्या है और 11 में नहीं। कारण की जहाँ जल पुनर्भरण की व्यवस्था की गई थी ऐसे 12 भवनों में से केवल एक भवन में अन्य कारणों से जल संकट उत्पन्न होता हैं बाकी 11 भवनों में जल संकट उत्पन्न नहीं होता हैं। अत: यह कहा जा सकता हैं की जल पुनर्भरण अपनाने सेजल संकट से लगभग 92 प्रतिशत तक जल संकट उत्पन्न नहीं होता हैं।

गर्मीयों में जिन 12 भवनों में जल पुनर्भरण की व्यवस्था नहीं है, उनमें से 75 प्रतिशत भवनों में जल समस्या उत्पन्न होती है तथा कम वर्षा वाले वर्ष में 25 प्रतिशत भवनों में जल समस्या उत्पन्न होती है। ऐसे 12 भवन जिनमें जल पुनर्भरण की व्यवस्था है उनमें से केवल 8 प्रतिशत भवनों में अन्य कारणों से जल संकट उत्पन्न होता है। कारण जानने पर ज्ञात हुआ कि जल समस्या तब उत्पन्न होती है जब परिवार में मेहमानों के आगमन से सदस्य संख्या अधिक हो जाती है।

निवास अवधि वर्ष / पुनर्भरण	0-5	5-10	10-15	15 से अधिक	योग
हां	5	4	2	1	12
नहीं	0	0	2	10	12
योग	**5**	**4**	**4**	**11**	**24**

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता हैं कि पिछले दस वर्षो में तैयार हुए भवनों में जल पुनर्भरण की दिशा में विशेष जोर दिया गया है तथा जल संग्रहण के महत्व को समझा जा रहा हैं। जल पुनर्भरण अपनाने वाले 12 भवनों में 42 प्रतिशत भवन पाँच वर्ष से अधिक पुराने नहीं हैं, वहीं 75 प्रतिषत भवन दस वर्ष से अधिक पुराने नहीं हैं तथा 92 प्रतिशत भवन पंद्रह वर्ष से पुराने नहीं हैं। केवल 8 प्रतिशत भवन ही 15 वर्ष से अधिक पुराने है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि जिन 12 भवनों में जल पुनर्भरण की व्यवस्था नहीं हैं, उनमें से 83 प्रतिशत भवन 15 वर्ष से अधिक पुराने है तथा 13 प्रतिशत भवनों को भी बने हुए दस से पंद्रह वर्ष हो चुके हैं। उपरोक्त विशलेषण से हम यह कह सकते हैं कि जल पुनर्भरण का महत्व पिछले दस वर्षों में अधिक बड़ गया हैं तथा लोगों ने इस अपना हैं।

सौर ऊर्जा से लाभ / सौर ऊर्जा	गर्म पानी	विघुत सुविधा	नहीं	योग
हां	8	3	1	12
नहीं	0	0	12	12
योग	**8**	**3**	**13**	**24**

24 भवनों में से लगभग 46 प्रतिशत भवनों में सौर उर्जा का प्रयोग किया जाता है।

इन46 प्रतिशत भवनों में 33 प्रतिशत भवनों में गर्म पानी की सुविधा का लाभ लिया जाता है तथा13 प्रतिशत भवनों में विधुत उर्जा का लाभ भी लिया जाता है।

इन 11 भवनों में सौर उर्जा के उपयोग से न केवल धन और कर की बचत होती है अपितू पर्यावरण भी सुरक्षित होता है।

केवल एक समस्या इन 11 भवनों में होती है कि वर्षा ऋतु में सूर्य का पर्याप्त प्रकाश उपलब्ध न होने के कारण गर्म पानी नहीं मिल पाता है।

निवास अवधि एवं जल पुनर्भरण व्यवस्था

निवास अवधि वर्ष / पुनर्भरण	0-5	5-10	10-15	15 से अधिक	योग
हां	5	4	2	1	12
नहीं	0	0	2	10	12
योग	**5**	**4**	**4**	**11**	**24**

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता हैं कि पिछले दस वर्षो में तैयार हुए भवनों में जल पुनर्भरण की दिशा में विशेष जोर दिया गया है तथा जल संग्रहण के महत्व को समझा जा रहा हैं। जल पुनर्भरण अपनाने वाले 12 भवनों में 42 प्रतिशत भवन पाँच वर्ष से अधिक पुराने नहीं हैं, वहीं 75 प्रतिषत भवन दस वर्ष से अधिक पुराने नहीं हैं तथा 92 प्रतिशत भवन पंद्रह वर्ष से पुराने नहीं हैं। केवल 8 प्रतिशत भवन ही 15 वर्ष से अधिक पुराने है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि जिन 12 भवनों में जल पुनर्भरण की व्यवस्था नहीं हैं, उनमें से 83 प्रतिशत भवन 15 वर्ष से अधिक पुराने है तथा 13 प्रतिशत भवनों को भी बने हुए दस से पंद्रह वर्ष हो चुके हैं। उपरोक्त विशलेषण से हम यह कह सकते हैं कि जल पुनर्भरण का महत्व पिछले दस वर्षों में अधिक बड़ गया हैं तथा लोगों ने इस अपना हैं।

समस्या :

- जल पुनर्भरण तथा सौर ऊर्जा हेतू प्रारंभ में अधिक पूंजी निवेश करना होता हैं, इस कारण नया मकान बनवाते समय लोग इस से बचते हैं।
- लोगों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता की कमी हैं।
- इस दिशा में सरकारी तथा गैर सरकारी प्रयास विफल होना भी एक समस्या है।

सुझाव :

- लोग को पर्यावरण के प्रति जागरूकता किया जाना चाहिए।
- जल पुनर्भरण तथा सौर ऊर्जा के लाभों एवं महत्व को जन साधारण तकसरकारी तथा गैर सरकारी प्रयासों के माध्यम से शीध्रता से पहुँचाना चाहिए।
- ठोस कानून बनाने की आवश्यकता है, ताकि नये भवनों के निर्माण के वक्त ही जल पुनर्भरण व्यवस्था तथा सौर ऊर्जा व्यवस्था अनिवार्य रूप से अपनाई जा सके।
- पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धी कानूनों को सख्ती के साथ अमल में लाना चाहिए।
- जल पुनर्भरण एवं सौर ऊर्जा की उपयोगीता सरकार द्वारा कर में भी रियायत दी जाती हैं, इस का भी व्यापक प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष - उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि पिछले दस वर्षों में लोगों में जल पुनर्भरण एवं सौर ऊर्जा की उपयोगीता के प्रति जागरूक बड़ी हैं। कुल अध्ययन की 24 इकाईयों में से 37.5 प्रतिशत भवनों में जल पुनर्भरण को अपनाया हैं और 46 प्रतिशत इकाईयों में सौर ऊर्जा के उपकरण लगवाकर गैर नवीकरणीय ऊर्जा की बचत की हैं साथ ही धन एवं कर में भी बचत की हैं। अतएव हमारी शून्य परिकल्पना 'जल पुनर्भरण एवं सौर ऊर्जा की उपयोगीता के प्रति जनसाधारण जागरूक नहीं हैं।' स्वत: ही अस्वीकार हो जाती है। जनसाधारण में जल पुनर्भरण एवं सौर ऊर्जा की उपयोगीता के

प्रति जागरूक बड़ी हैं। धारणीत विकास के लिये यह आवश्यक हैं कि वर्तमान पीढ़ी भविष्य की पीढ़ी के लिए आज स्वयं जागरूक हो। तभी पर्यावरण को नुकसान पहुँचाये बिना विकास के लक्ष्य को हासिल किया जा सकता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. मिलिन्द कोठारी, पर्यावरण अध्ययन,2016, आर.बी.डी. पब्लिशिंग हाऊस (यूनिट ऑफ रमेश बुक डिपो) जयपुर, नई दिल्ली।
2. डॉ. राजीव शर्मा, डॉ. अनीस सिद्दकी एवं पंकज शर्मा, पर्यावरण अध्ययन, देवी अहिल्या प्रकाशन, इन्दौर।
3. डॉ. वसीम अहमद खान, पर्यावरण प्रदूषण और संरक्षण।
4. डॉ. दीनानाथ शुक्ल, डॉ. वंदना श्रीवास्तव, डॉ. नारायण, पर्यावरण अध्ययन समस्यायें एवं निदान।
5. दामोदर शर्मा, हरिश्चंद्र व्यास, आधुनिक जीवन और पर्यावरण।
6. के.एल. तिवारी, एस.के.जाधव, पर्यावरण विज्ञान।

****

आकाशवाणी राँची से प्रसारित नागपुरी नाटक का संक्षिप्त परिचय

कोरनेलियुस मिंज *

प्रस्तावना – झारखंड में नाटक खेलने और देखने की एक सुदीर्घ परम्परा रही है, परंतु पोशक तत्वों के अभाव में यह परम्परा मरणासन्न तक चली गई थी। आकाशवाणी राँची केन्द्र की स्थापना से इस क्षेत्र की नाट्य प्रतिभाओं को दुर्लभ अवसर प्राप्त हो सका। रेडियो नाटक के क्षेत्र में यहाँ के कलाकारों को अपनी लेखकीय तथा अभिनय क्षमता को प्रदर्शित करने के लिए स्वर्णिम अवसर प्राप्त हुआ। आकाशवाणी के द्धारा सभी कार्यक्रमों के लिए पारिश्रमिक का भुगतान किया जाता है। जिससे उनकी आर्थिक स्थिति भी मजबूत हुई। आकाशवाणी राँची की स्थापना 27 जुलाई 1957 ई. को हुई। आकाशवाणी केंद्र की स्थापना से छोटानागपुर के जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा-साहित्य के विकास को गति मिली। नागपुरी साहित्य की बात करें तो इसके योगदान को नकारा नहीं जा सकता है। साहित्य के नाटक विधा को आगे बढ़ाने में आकाशवाणी राँची की बड़ी भूमिका रही है। इसके पहले नागपुरी साहित्य जगत में नाटक लेखन और मंचन का बहुत ही सीमित दायरा था। नागपुरी का पहला गीति नाट्य नारद मोह लीला 1956 ई. में प्रकाशित हुई। जिसे सहनी उपेंद्र पाल नहन ने लिखा है। इसके पूर्व तीन कौड़ी साहू ने 1950 ई. से नागपुरी नाटकों को मंचित कराना प्रारंभ किया था, इसके बावजूद छिटपुट नागपुरी नाटक ही लिखे गये थे। वहीं मंचित नाटकों की संख्या भी कम ही रही। आकाशवाणी राँची से 'तेतइर कर छांहेय धारावाहिक नाटक को छोटानागपुर में प्रसारण के क्षेत्र में सीरियल के रूप में प्रथम प्रसारण माना जाता है। जब सीरियल नाम की परिकल्पना टेलीविजन में नहीं थी, उसी समय आकाशवाणी राँची ने धारावाहिक को प्रारंभ किया।'[1]

शोध प्रविधि – शोध पत्र विषय आकाशवाणी राँची से प्रसारित नागपुरी नाटक का संक्षिप्त परिचय, में प्राथमिक एवं द्वितीयक तथ्यों के द्धारा शोध पत्र तैयार किया गया है। इस हेतु विद्धानों, पत्र-पत्रिकाओं को भी समाहित किया गया है।

उद्देश्य – आकाशवाणी राँची केंद्र की स्थापना नागपुरी के लिए एक वरदान है। आकाशवाणी राँची ने नागपुरी में कई नई साहित्यिक विधाओं को जन्म दिया है। इस केंद्र की स्थापना होते ही नागपुरी साहित्य का अवरूद्ध विकास पुन: प्रारंभ हो गया। नागपुरी साहित्य की सीमाएं विस्तृत होने लगी। नयी साहित्यिक विधाओं के साथ साहित्यकारों का जन्म होने लगा। आकाशवाणी के प्रांगण में पद्य के साथ गद्य कूकने लगी। आकाशवाणी राँची के खुलने से कई रेडियो नाटक भी लिखे जाने लगे। नागपुरी नाटकों के अभाव को कुछ हद तक दूर करने का सार्थक पहल किया। कठिन शिल्प-विधान होते हुए भी नागपुरी में अत्याधिक सफल रेडियो नाटक लिखे गए हैं।

समस्या – आकाशवाणी नहीं होने झारखण्ड के ग्रामीण जनता को यह दूरदर्शन, मनोरंजन का साधन नहीं उपलब्ध होता। इससे समाज में होने वाली विसंगतियों को पता नहीं चल पता और साथ-साथ विकास के प्रेणात्मक मार्ग अवरूद्ध हो जाता है।

समाधान – इन सभी नाटकों को नागपुरी भाषियों ने उत्साहपूर्वक स्वागत किया। जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार इस प्रकार है:- आकाशवाणी राँची केंद्र से सबसे पहले सुशील कुमार की लिखित नाटक 'चोका बोका कोका' प्रसारित हुई थी। इसके बाद नागपुरी धारावाहिक नाटक की शुरुआत विष्णु दत्त की कलम से हुई बाद में श्रवण कुमार गोस्वामी ने इसे आगे बढ़ाया। जनवरी 1958 ई. से जून 1958 ई. तक 'तेतर कर छांहे' नागपुरी धारावाहिक नाटक का प्रसारण हुआ। हमारी दुनिया यानि पहले देहाती दुनिया कार्यक्रम का नागपुरी नाटक सबसे लोकप्रिय कार्यक्रम साबित हुआ। आकाशवाणी राँची से प्रसारित सत्य हरीषचंद्र नागपुरी नाटक को हरीश कुमार अखौरी ने लिखा है। वे नागपुरी और हिंदी में नाटक लिखते थे। उन्हें रामू काका कहा जाता था। इस नाटक में उन्होंने राजा हरिशचंद्र का रोल किया है। नाटक को आधा घंटा का नागपुरी में उल्था किया गया था। कमल आउर केतकी नाटक का लेखन भी किया है। दसमी ग्रामीण कार्यक्रम की आकस्मिक कंपीयर थीं। उन्होंने कमल आउर केतकी में काम किया था। लीटा, इचा चेंगड़े फूल नाटक को आदित्य मित्र संताली ने लिखा है। श्रीकांत राय रातू के रहने वाले थे। उन्होंने भी नागपुरी नाटक लेखन किया है। सुगिया बहिन वीवर्त, सुल्तान बहादुर शाह जफर नाटक हिंदी में भी भाग लिया है। नागपुरी नाटक का प्रसारण ने समाज को जागरुक तो किया ही, नागपुरी नाटक विधा में रचना समृद्ध करने की भूमिका निभायी।

'वर्ष 1958 ई. में नागपुरी में 'तेतर कर छांहे' धारावाहिक नाटक प्रसारित की गयी। जिसमें बात चीत करने के लिए जगदीश नारायण सिंह पवन, राधाकृष्ण, सुशील कुमार, महेश्वर दास गुप्ता, श्रीकांत राय, तीन कौड़ी साहू, भरत साहू , जगतमणि महतो, प्रफुल्ल कुमार राय आदि आते थे।'[2]

आकाशवाणी राँची से प्रसारित नागपुरी नाटक

तेतर केर छांहें – तेतर कर छांहें धारावाहिक नाटक का लेखन प्रारंभ में विष्णु दत्त ने किया, बाद में श्रवण कुमार गोस्वामी ने लेखन की कमान संभाली। जनवरी 1958 से जून 1958 तक विष्णु दत साहू के 'तेतर केर छांहें' नामक धारावाहिक रेडियो नाटक का प्रसारण आकाशवाणी राँची से किया गया। बाद के भागों का लेखन श्रवण कुमार गोस्वामी ने किया। इसके अंतर्गत 16 नाटकों का प्रसारण किया गया। 'तेतर केर छांहें' यानी इमली वृक्ष के नीचे मंदरा नामक गाँव के लोग की बैठक हुआ करती है। इसमें सुखराम भगत घिस्सू भगताइन, टूटल सिंह, हरखू भगत, मास्टर साहब और तिवारी इन सालों पात्रों के बीच विशेष विषयों को लेकर चर्चा होती है। विष्णु

* सहायक प्राध्यापक (जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग) राँची महिला महाविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

दत्त के द्वारा लिखे गये नाटकों को पुस्तक का रूप दिया गया है, जिसका नाम तेतर केर छांहें रखा गया है। जिसमें कुल आठ नाटक हैं । धारावाहिक नाटक में पहले भाग में सहयोग समिति, दूसरे भाग में अधिक अन्न उपजाने, तीसरे भाग में पंचवर्षीय समिति, चौथे भाग में 1ली पंचवर्षीय योजना, फिर कृषि विकास, सामुदायिक विकास योजना, द्वितीय पंचवर्षीय योजना और वन रक्षा पर प्रकाश डाला गया है।

चोका-बोका, कोका – आकाशवाणी राँची से सुशील कुमार के द्वारा लिखित धारावाहिक रेडियो नाटक ' चोका-बोका, कोका' सन 1957 ई. के दिसंबर के अंत तक 13 कड़ियों में प्रसारित किया गया। इस नाटक में तीन पात्र हैं जिनके माध्यम से देश में चल रही पंचवर्षीय योजनाओं का परिचय लोगों को कराता गया। इसके बाद 'लोधो सिंह' छह कड़ियों में प्रयसारित किया गया। सुशील कुमार मूलत: नाटककार हैं। इसलिए नाट्य विधा की बारीकियों को खूब अच्छी तरह समझते हैं। इन्हें नागपुरी भाषा की भी पकड़ रही है। सुशील कुमार की 'आम, कोईल आउर राजकुमारी' नाटक काफी लोकप्रिय हुआ। यह नाटक लोककथा पर आधारित है। सुगिया बहिन इस नाटक से नागपुरी जगत में छा गयीं। पहले नाटक जीवंत प्रसारण होता था। 1965 ई. के बाद से नाटकों की रिकॉर्डिंग होने लगा। कलाकार इतने आत्मविश्वास से भरे होते थे कि नाटक सफलतापूर्वक प्रसारित होता था।

आम, कोयल और राजकुमारी – आकाशवाणी राँची से प्रसारित नागपुरी रेडियो नाटकों में आम, कोयल आउर राजकुमारी ने बहुत लोकप्रियता हासिल की। रेडियो द्वारा प्रसारित नाटकों में यह मील का पत्थर साबित हुआ। इसकी प्रसिद्धि आज भी बरकरार है। रोजलिन लकड़ा (सुगिया बहिन) इस नाटक के जरिये आवाज की दुनिया में छा गयी। फिर तो सुगिया बहिन हमारी दुनिया-खेती-बारी कार्यक्रम की मल्लिका बन गयीं। इस नाटक के रचयिता सुशील कुमार हैं। रामेश्वर नाथ मांझी ने इससे प्रस्तुत किया एवं शिवशंकर राम का ध्वनि संयोजन है। इसके द्वारा ध्वनि संयोजन बहुत ही अच्छा है। इस नाटक का प्रथम प्रसारण 22 नवंबर 1968 ई. का हुआ। इस नाटक के श्रोताओं को रेडियो नाटक सुनने का आदी बना दिया। 28 मिनट के नाटक में मुख्य भूमिका में हैं रोजलिन लकड़ा। इसमें पतिव्रता को दर्शया गया है। वचन पर अडिग रहने का संदेश समाज को देता है। इस नाटक में महेश्वर दास गुप्ता, शिवशंकर राम, प्रमोद कुमार राय,रामेश्वर नाथ मांझी, पांडेय दुर्गानाथ राम, तिनका तिग्गा, जवाना मिंज,रोजलिन लकड़ा में भाग लिया था। इन कलाकारों ने जीवंत संवाद अपनापन लिए आवाज श्रोताओं को बरबस ही अपनी ओर आकर्शित कर लेता है। इस नाटक से रोजलिन लकड़ा इतनी लोकप्रिय हुईं, कि श्रोताओं की पहली पसंद बन गयीं। उनकी आवाज को लोग दीवाने हो गये थे। उनकी शादी की खबर पाकर श्रोता उन्हें देखने और आशीर्वाद देने आकाशवाणी राँची पहुंचे थे। नाटककार तीन कौड़ी साहू तो उन्हें सुगा तइर सुंदर उकर नाक कहकर संबोधित करते थे।

समय कर फेर – इस नाटक का ध्वन्यंकन 27 मई 1972 ई. को किया गया। रेडियो से 27 मई 1972 ई. को ही पहली बार प्रसारित किया गया। नाटक को अरूण कुमार पांडेय ने लिखा तथा इससे शिवशंकर राम ने प्रस्तुत किया। इस नाटक में भाग लेने वाले कलाकार महेश्वर दास गुप्ता, श्रीकांत राय, प्रमोद कुमार राय, शीला तिर्की और रोजलिन लकड़ा शामिल हैं। इस नाटक में खेत के लिए भाई-भाई के बीच होने वाले झगड़े को दिखाने का प्रयास किया गया है। यह नाटक खेत बंटवारे पर आधारित है। नाटक में तेजु और महेश दो भाई हैं। तेजु अपनी बीबी के साथ गांव में रहता है। महेश पढ़ा-लिखा है, शहर में नौकरी करता है। महेश अपनी बीवी बच्चों के साथ शहर में रहता है। उसकी बीवी हमेशा महेश को ताना मारती है कि तुम्हारा भाई अकेले पूरे का मालिक बन बैठा है। कुछ भी नहीं देता है। एक दिन महेश शहर से परिवार को लेकर गांव लौट गया। उसका भाई-भाभी भी खुश हो गए। कुछ दिनों के बाद लोगों के बहकावे में आकर महेश खेत बंटवारे की जिद्द करता है। इस तरह दोनों भाईयों के बीच खटास पैदा हो गयी। तेजु समझदार है। वह जानता है खेत के बंटवारे से परिवार टूट जाएगा। इसलिए छोटे भाई महेश से बातचीत करता है लेकिन महेश नहीं मानता है। इस नाटक के मार्थक कहा गया है कि खेत के बंटवारे से रिस्ते में दरार आ जाती है। अपसी फूट-कलह से परिवार बिखर जाता है। शांति भंग हो जाती है। खेत का टुकड़ा दो भाईयों को लड़ने-झगड़ने के लिए मजबूर कर देता है। इसमें गांव वालों का भी सहयोग रहता है। अच्छे घर को तोड़ने की कोशिश में लगे रहते हैं, बहकाते हैं। नाटक से यही सीख दी गयी है कि खेत का टुकड़ा भाई-भाई में दुश्मनी पैदा करता है। इसलिए अपने विवेक का प्रयोग करना चाहिए। समय के हिसाब से काम करना चाहिए। समय को पहचान कर काम करने की जरूरत है ताकि कोई अनहोनी न हो।

गाँव कर हाकिम – इस नाटक के रचयिता हैं- जगदीश नारायण सिंह 'पवन'। इसके प्रस्तुतकर्ता शिवशंकर राम हैं। इस नाटक में ध्वनि संयोजन का काम भी शिवशंकर राम ने किया है। इसका प्रथम प्रसारण 27 जनवरी 1973 को हुआ। यह नाटक 'परिवार नियोजन' पर आधारित है। इस नाटक में कंदरू सरपंच हैं। महंगू बात को बढ़ा -चढ़ाकर बताने का किरदार निभाया है। रतिया किरदार महंगू की पत्नी है। नाटक में बताया गया है कि सरपंच के आठ बच्चे हैं। सुबह शाम बच्चों की उन्हें गिनती करनी पड़ती है। सरपंच पूरे परिवार के साथ पेरबाघांघ पिकनिक मनाने गया। जाने के क्रम में ही उनका बेटा चेंठा रास्ते में गाड़ी से गिर गया। सरपंच को पता ही नहीं चला। पिकनिक मना कर लौटने के बाद भी उन्हें मालूम नहीं कि उनके सभी बच्चे हैं या नहीं। फिर थाना से पुलिस वाला आकर खबर करता है कि चेंठा नाम का लड़का रास्ता भटक गया था। उसे पुलिस थाना में रखा गया है क्या वह आपका लड़का है। तब बच्चों की गिनती की गयी तो चेंठा गायब पाया गया। इस नाटक से कम संतान रखने का संदेश दिया गया। इसमें इन कलाकारों ने काम किया, जिनमें तीन कौड़ी साहू, जनक कुमार, शिवशंकर राम, प्रमोद कुमार राम, इभा लकड़ा शामिल थे। 'गांव कर हाकिम' नाटक बताता है कि अधिक बच्चे रहने से अपने ख्वाबों को पूरा करने में बहुत परेशानी होती है। यह रेडियो नाटक लोककथा पर आधारित है। इसे सुशील कुमार ने लिखा है तथा इससे अरूण कुमार पांडेय ने प्रस्तुत किया। इसका प्रथम प्रसारण 26 फरवरी 1974 को किया गया।

इस नाटक में भाग लेने वाले कलाकार इस प्रकार हैं- शिवशंकर राम, अरूण कुमार पांडेय, प्रमोद कुमार राम, शीला तिर्की, सुरेखा तिग्गा, करूणा वात्स्यायन, रोजलिन लकड़ा। यह नाटक गरीबी पर आधारित है।

श्रीकृष्ण जनम – इस नाटक में श्रीकृष्ण भगवान के जन्म को बताया गया है। जगदीश नारायण सिंह 'पवन' द्वारा लिखित इस नाटक की प्रस्तुति रोजलिन लकड़ा एवं अरूण कुमार पांडेय ने की। छह सितंबर 1977 ई. को प्रथम प्रसारण हुआ। 22 अगस्त 1981 ई. 12 अगस्त 1982 ई. और 21 अगस्त 2003 ई. को पुन: प्रसारण किया गया। इस नाटक में कई कलाकारों ने भाग लिया। जिनमें महेश्वर दास गुप्ता ,अशोक कुमार पागल, प्रमोद कुमार राय, अरूण कुमार पांडे, रामेश्वर पाठक, रोजलिन लकड़ा, शीला तिर्की शामिल हैं। इन नाटकों के अलावे इंजोत डहर, पीपर गच्छक चूरिन, मीत, जतरा, फिर मुड़मा बेल तेरे, फौजी, कउवा कर सीख, तेयाग, गांव कर चौराहा,

जीवक जंजाल, जुगुत, सपना आउर शर्त, काइल आउर आइज, करम – बिहान, सहिया आयो, ठाकुर कर ठकुरई, जब जागू तबे सबेरा, बवंडर, करजा कर अदायगी, चट मंगनी पट बियाह, आइठ कर भाइग, जीत कर हार, अकडू ओहदार, शांति, धाँगर, बहना, शहनाई, कुटुंब, बदरी छंटत हे, पायल, रितनी, नावां डहर, बलिदान आदि नाटकों का प्रसारण किया गया है।

निष्कर्ष – आकाशवाणी राँची ने नागपुरी नाटक लिखने की परंपरा को आगे बढ़ाया है। बेशक यह छोटी नाटक होती है लेकिन नाटक विधा को जीवित रखा और साहित्य की नाटक विधा को समृद्ध करने का काम किया है। 1957 ई. से लेकर अब तक सैंकड़ों नाटकों का प्रसारण रेडियो से हो चुका है,लेकिन नाटक की पूर्ण विधाओं में अभी बहुत कम नाटक लिखे गये हैं। नागपुरी नाटकों का अभी पूर्णतया अभाव पाया जाता है, जबकि आकाशवाणी राँची से 250 से अधिक नाटकों का प्रसारण किया जा चुका है। आकाशवाणी राँची के पूर्व कार्यक्रम अधिशासी अरूण कुमार पांडेय अब तक 50 से अधिक रेडियो नाटक लिखे और उसे प्रसारित किया गया। आकाशवाणी राँची से नागपुरी नाटकों के प्रसारण से नये–नये रेडियो नाटक लेखक पैदा हुए। वहीं नाटक अभिनय क्षमता भी उभर कर सामने आयी। 50 नागपुरी रेडियो नाटककार और 110 कलाकारों की सूची आकाशवाणी से प्राप्त होती है। कुल मिलाकर आकाशवाणी राँची ने नागपुरी रेडियो नाटक लेखन को बढ़ावा दिया और लोगों में लिखने के लिए प्रेरित किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–साक्षात्कार एवं सहायक ग्रंथ :–

1. साहित्यकार डॉ श्रवण कुमार गोस्वामी से मिली जानकारी के अनुसार
2. आकाशवाणी राँची की पहली महिला कंपीयर एसेंसिया खेस्स से प्राप्त सूचना के आधार पर।
3. आकाशवाणी राँची की पूर्व निदेशक और नागपुरी नाटक कलाकार रोजलिन लकड़ा से प्राप्त सूचना के आधार पर।
4. आकाशवाणी राँची के पूर्व कार्यक्रम अधिशासी अरूण कुमार पांडेय से मिली जानकारी के अनुसार।
5. आकाशवाणी राँची के पूर्व कंपीयर प्रमोद कुमार राय से प्राप्त सूचना के अनुसार।
6. आकाशवाणी राँची के पूर्व कार्यक्रम अधिशासी जॉन खाखा से मिली जानकारी प्राप्त जानकारी के अनुसार।
7. आकाशवाणी राँची की नागपुरी कंपीयर शकुंतला मिश्र से मिली जानकारी के अनुसार।
8. अंधविश्वास नाटक, लेखक –तीन कौड़ी साहू, प्रकाशक –वर्माज प्रेस रातू चट्टी, 1999,
9. तेतर केर छांहें, नागपुरी नाटक संग्रह, लेखक – विष्णु दत्त साहू, प्रकाश जनसंपर्क विभाग बिहार, पटना, 1958,
10. स्वर्ण तरंग, आकाशवाणी पत्रिका, 2007, पृ–32

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

A Study of Various Factors Affecting the Science Subject to School Students Studying in Nagpur Region

Sarika Manthanwar*

Abstract - Science is universal and has boundless approach. At schools, its enormity in practical sphere demands its learners to comprehend its complexities and subsequently its realistic implementation. Undoubtedly, science teaching has always been a challenging task to seed young scientists of tomorrow.Regional, linguistic diversity and other significant factors upshots their score deviation inspite of same input resource.The present paper is based on a study which aims to appraise assorted factors ensuing in score deviation in Science subject at elementary and middle level of Nagpur Region school students.Instigated by analysing the education system of India, the research focused on the influence of Science subject in students' life by analyzing the role of pied persuading aspects adapting two dimensional analyses.Conclusion derived after application of t-test, z-test and correlation analysis after verifying formulated hypotheses. The research also provided top influencing factors and factors which need due attention of teachers and parents to improve performance of the student in science subject at school level.
Keywords - Science, variation, student-teacher-parent, influencing factors, questionnaire.

Introduction - Education is one of the thrust areas to cultivate human society. Amongst its various levels, one cannot refute the significance of school education, which feeds vital inputs in the mind of young generations in respective areas. Subject knowledge in all the spheres cannot be disregarded, though subjects like mathematics and science have astonishing vigour to turn them into great scientists and mathematicians. However, teaching such subjects has always been a challenging task for the teachers. School teaching can directly be connoted with classroom teaching, which has certain constraints as well. It encompasses students from various educational backgrounds, grasping power, intellect capacities, regions and languages etc. Thus, science teaching has always been a dynamic and challenging profession for teachers. These disparities should incontestably affect the academic scores and if not, the same may be controlled and improved by innovative teachings.

The present paper concentrates on various factors influencing the academic performance of the elementary and middle level school students in science subject. The research was undertaken in schools of various boards and mediums located at Nagpur Region. Attempt has been made to cover all the elements involved in ensuing deviations. It also analyzed the role of all the dimensions concerned i.e. Student-Teacher-Parent. A teacher has always been a respectful dignity since primeval teaching system to its contemporary form undesirably conferred by Lord T.B. Macaulay. On the other side, parents do contribute to provide backup support alongwith psychological comforts. Student obviously needs the core attention to perform with the support of teachers and parents.

Analysis of Influencing Factors - The research has undertaken a comprehensive study of various factors resulting in variation in their academic performance on the subject. It has utilized Survey method and constructed separate questionnaires for 1000 students and 200 teachers. The main aim was to capture both the cognitive and non-cognitive factors. Cognitive are the extent to which a person's individual capabilities can influence their academic or learning performance. Non-cognitive factors or skills are a set of attitudes, behaviours, and strategies that promotes academic and professional success, such as academic self-efficacy, self-control, motivation, expectancy and goal setting theories, emotional intelligence, and determination. Categories were congregated into five groups to perform scientific study.

Family related factors comprises parent's education, family atmosphere, separate study room, attitude, responsiveness to queries, regular check on homework and assignments, interaction with science teacher, providing inputs, family income etc.Teaching related factors comprises play & learn method, organizing science quizzes, talks, motivation, correlation with practical exposure, regular work, teaching methodologies, strategies, styles periodical tests, classroom discipline etc.School related factors include school environment, teacher's level of education, library resources, laboratory resources, conduct of competitive examinations, science fairs, parent-teacher meet etc. Students related factors include evaluation of study material,

*Assistant Professor, Umrer Shikshan Mahavidyalaya, Umrer, Distt. Nagpur (Maharashtra) INDIA

friend circle, participations in Science fairs & exhibitions, competitive examinations, homework and assignment completion rate, preparation of Science models etc. Developmental factors include subject interest, confidence to attempt exams, past school experiences, home experiences, physical and mental health, regular Yoga & meditation, Intelligence level etc.

Research Methodology - Research was undertaken with the basic aim to examine the assorted aspects resulting in variation in academic performance in science subject at Elementary and Middle Level. It also aimed to analyze various barriers being faced by science teachers and students. It also intended to analyze the views and opinions of science teachers. Consequently, it was intended to find out the differences in quality of student's achievement in relation to their gender. It has been carried out for the school management in order to create their interest on the specific subject and perhaps to analyze various factors associated with family, parents and school environment also. Formulated hypotheses facilitated the research to move ahead to verify the following:

1. There is no significant role of considered factors in variations in marks in science subject of school students of Nagpur region at elementary and middle level.
2. There is no significant difference in quality of students' achievement in relation to their gender.

Identical sample units of both the genders were taken from various boards & mediums to appraise about parents' education, attitude and responsiveness, sensitivity & role of subject, affable ambience at home, separate study room, interaction with teacher, supplementary inputs, family income, social class, participation in science quizzes and science, motivation, regular homework, assignment and periodical tests, teaching resources, course contents etc.

Application of Statistical Tests - To analyze whether the academic performance is influenced by factors influencing, the research analyzed the factors evaluated through responses and academic performance of reference period by using t-test deriving the following mean scores in various categories:

S.	Category Group	Total
1	Family related factors	3.79
2	Teaching related factors	3.81
3	School related factors	3.45
4	Student related factors	3.63
5	Developmental factors	3.77

It was well confirmed by year-wise analysis, which yielded the mean score of 3.71. Application of test inferred that the mean academic performance of students influenced through considered factors may be taken as mean academic scores achieved by them during the reference period. The research confirmed through teachers' responses by applying Z test on relevant factors taking Ho : p = ½. Observed sample proportion of success provided p = 0.871 and test statistic of 33.14. The study utilized correlation analysis to correlate the responses of boys and girls. It helped to associate between the various attributes and can reliably infer dominance of one set of replies on another and yielded value for coefficient of correlation (r) = 0.99. Factor analysis provided value of r as 0.942 enabling the research to consider it true that there is no significant difference in quality of students' achievement in relation to their gender.

The research depicted the most influencing factors affecting the variation in score of Science subject for students of elementary and middle level schools based on present study. The top twenty five influencing factors may be analysed as follows:

S.	Particulars
1	Intelligence Level
2	Friendly family atmosphere
3	Parent education
4	Mental health
5	Content sufficiency and resource
6	Importance of studies
7	Correlation with practical exposure
8	Motivation and individual attention
9	Subject interest in Science
10	Play and Learn Method
11	Teacher attitude
12	Language of Science Content Books
13	Science Quizzes and talks
14	Interaction with science teacher
15	Periodical class tests
16	Regular yoga and exercise
17	Regular assignment and homework
18	Providing science journals, magazines etc.
19	Parent attitude towards Science
20	Psychological fear about Science subject
21	Teaching Methodologies and Strategies
22	Positive responsiveness to queries
23	Classroom Discipline
24	Separate study room / space for study
25	Curiosity to know science

Conclusion And Suggestions - All the framed hypotheses lead to the conclusion that the factors contributes in academic performance of Science subject and surely affect the variations in score in Science subject of elementary and middle level schools of Nagpur Region. Most of these factors can be controlled in order to improve the performance of students in Science subjects. The research inferred that the academic performance of the science students at elementary and middle level schooling can be improved by controlling the affecting factors. However, all the factors cannot be controlled as some like family income, parent's education are beyond reach to improve easily to accelerate score in academic subject.

On the basis of analysis and interpretation, the research recommended forming an association comprising of science teachers, parents, school management to give valuable suggestions and advice to improve the performance of students in Science subject. Operating such

associations at respective school levels, it may also contribute through creative and innovative ideas to create interest in learning scientific experiments and science for daily life. Extra coaching or guidance to meritorious and poor students may be provided beyond school hours. Science teachers may act as Guardian - Parent to solve their hurdles to improve their performance by controlling and improving associated factors. School management may update their library resource by including good books on Science subject to improve their academic knowledge as well as in order to enable them to learn 'Science for everyday life'. Library should kept open and rather invite students from classes to read such books. Forum of students who have keen interest in Science may be formed in various schools. School management may organize Science quizzes, fairs, exhibitions and science circus to motivate the students to learn this subject well. Financial support /aid may be provided by school management for innovative work. Social support may be encouraged from teachers, parents, friends for spiritual encouragement, emotional comforts, and spiritual aspects.

References :-

1. allindiaeducationblog.blogspot.in
2. *American Journal of Educational Research*, 2013 1 (8), pp 283-289. DOI: 10.12691/education-1-8-3
3. Annie Ward; Howard W. Stoker; Mildred Murray-Ward (1996), "Achievement and Ability Tests - Definition of the Domain", *Educational Measurement*, 2, University Press of America, pp. 2–5, ISBN 978-0-7618-0385-0
4. Bossaert, G; S. Doumen; E. Buyse; K. Verschueren (2011). "Predicting Students' Academic Achievement After the Transition to First Grade: A Two-Year Longitudinal Study". Journal of Applied Developmental Psychology. 32: 47–57
5. brijchaudhary.blogspot.in/2016/11/education-system-in-india.html
6. Eccles, Jacquelynne S.; Templeton, Janice (2002). "Extracurricular and Other After-School Activities for Youth". Review of Research in Education. 26
7. en.wikipedia.org/
8. Garrett Henery, Statistics in Psychology and Education, New Delhi, Paragon International Publishers, 2011, Page 324
9. Gutman, Leslie; Schoon, Ingrid (2013). "The Impact of non-cognitive skills on outcomes for young people" (PDF). Education Endowment Foundation: 59.
10. http://www.recentscientific.com/sites/default/files/2746. pdf
11. http://www.sciencemadesimple.com/science-definition.html
12. http://www.vbtutor.net/research/research_chp7.htm
13. https://es.scribd.com/document/88284190/What-is-Research-Methodology
14. https://explorable.com/definition-of-science
15. Journal of Quality and Technology Management Volume VII, Issue II, December, 2011
16. Kothari CR & Garg Gaurav, Research Methodology – Methods & Techniques, New Delhi, New Age International Publishers, 2014
17. Matt Ridley, 1999, *Genome: the autobiography of a species in 23 chapters*, p. 271.
18. P Saravanavel, Research Methodology
19. Research Methodology in Commerce, S. Mohan & R. Elangovan, Deep & Deep Publications
20. Presentation on Descriptive Research Methodologies By Connie McNabb
21. Research Methodology, Dr. C. Rajesh Kumar, APH Publishing Corporation, New Delhi
22. Sawlikar, R.K., Statistics and Quantitative Techniques, Nagpur, Rajani Publishers, 2010, Page 21
23. Sinha S & Dhiman AK, Research Methodology Vol I & II
24. Trivedi Kishor, Probability and Statistics with Reliability, Queuing and Computer Science Applications, New Delhi, Prentice Hall of India Private Limited, 1997.

****

An Analytical Study of Various Mutual Fund Schemes

Dr. Hitesh A. Kalyani *

Abstract - The main object of investment is to get good returns. The various affecting factors include risk, returns and liquidity. More risk, more return is the basic principle of investment market.While a conservative investors looks for safe return, invest money in banks and post office. The risk taking investor may deal in shares and securities. However the recent experiences with share market have compelled to consider a risky business. Today, investment is a wide business. There are a number of options for the investors. Investors always desire to have an option which provides security to their investments with better returns. Mutual fund business is one of such remedial business solution for the investors.

A Mutual Fund is a pool in which a company invests the public money in a number of companies. The benefit of such diversification is the risk get diversified which minimizes the risks and increases the chances of returns.There are a number of mutual fund companies offering their services for the investors. Each company again offer a number of mutual fund schemes depending upon the needs of the investors. The various mutual fund schemes comprise growth plans, income plans, liquidity plans etc. The present paper is analytical in nature which analyzes various mutual fund schemes and its significance for investors to get better returns.

Keywords - Investment, Returns, Risk Diversification, Growth plans, income plans.

Introduction - A mutual fund is a pool of money from numerous investors who wish to save or make money just like you. Investing in a mutual fund can be a lot easier than buying and selling individual stocks and bonds on your own. Investors can sell their shares when they want.

Quite simply, a mutual fund is a mediator that brings together a group of people and invests their money in stocks, bonds and other securities. Each investor owns shares, which represent a portion of the holdings of the fund. Thus, a mutual fund is one of the most viable investment options for the common man as it offers an opportunity to invest in a diversified, professionally managed basket of securities at a relatively low cost.

If you have even as little as a few hundred rupees to spare, you can start your investment journey with mutual funds. Depending on your investment objectives and future needs, you can choose to buy a particular number of units of a fund. A mutual fund invests the pool of money collected from the investors in a range of securities comprising equities, debts, money market instruments etc., with a nominal AMC fees. In proportion to the number of units you hold, the income earned and the capital appreciation realised by the scheme will be shared with you accordingly.

In mutual funds, your money along with many others is pooled to form a common investible corpus. Any profit/ loss made during a given period will be the same for all investors. However, if you choose a portfolio management scheme, your individual investment remains identifiable to you. Here, even the profit/loss of all the investors will be different from each other.

Mutual Funds, besides equities, can also invest in debt instruments such as bonds, debentures, commercial paper and government securities. Every mutual fund scheme is governed by the investment objectives that specify the class of securities it can invest in. SEBI and/or the RBI (in case the AMC is promoted by a bank) regulates all Asset Management Companies (AMCs). In addition, every mutual fund has a board of directors that represents the unit holders' interests in the mutual fund.

Classification of Mutual Funds - Every investor has a different investment objective. Some go for stability and opt for safer securities such as bonds or government securities. Those who have a higher risk appetite and yearn for higher returns may want to choose risk-bearing securities such as equities. Hence, mutual funds come with different schemes, each with a different investment objective.

There are hundreds of mutual fund schemes to choose from. Hence, they have been categorized as mentioned below.

- **By Structure:**
1. Closed-Ended
2. Open-Ended Funds
3. Interval funds.
- **By Nature:**
1. Equity
2. Debt
3. Balance or Hybrid.
- **By Investment Objective:**

*Assistant Professor (Commerce) S.N. Mor College, Tumsar, Distt. Bhandara (Maharashtra) INDIA

1. Growth Schemes
2. Income Schemes
3. Balanced Schemes
4. Index Funds

Types Of Mutual Funds - There are hundreds of mutual fund schemes to choose from. Hence, they have been categorized by structure, nature and investment objective.

Types Of Mutual Funds By Structure

Close ended fund/scheme - A close ended fund or scheme has a predetermined maturity period (eg. 5-7 years). The fund is open for subscription during the launch of the scheme for a specified period of time. Investors can invest in the scheme at the time of the initial public issue and thereafter they can buy or sell the units on the stock exchanges where they are listed. In order to provide an exit route to the investors, some close ended funds give an option of selling back the units to the mutual fund through periodic repurchase at NAV related prices or they are listed in secondary market.

Open ended fund/scheme - The most common type of mutual fund available for investment is an open-ended mutual fund. Investors can choose to invest or transact in these schemes as per their convenience. In an open-ended mutual fund, there is no limit to the number of investors, shares, or overall size of the fund, unless the fund manager decides to close the fund to new investors in order to keep it manageable. The value or share price of an open-ended mutual fund is determined at the market close every day and is called the Net Asset Value (NAV).

Interval schemes - Interval schemes combine the features of open-ended and close-ended schemes. The units may be traded on the stock exchange or may be open for sale or redemption during pre-determined intervals at NAV related prices. FMPs or Fixed maturity plans are examples of these types of schemes.

Types Of Mutual Funds By Nature

Equity mutual funds - These funds invest maximum part of their corpus into equity holdings. The structure of the fund may vary for different schemes and the fund manager's outlook on different stocks. The Equity shares are sub-classified depending upon their investment objective, as follows:

1. Diversified equity funds
2. Mid-cap funds
3. Small cap funds
4. Sector specific funds
5. Tax savings funds (ELSS)

Equity investments rank high on the risk-return grid and hence, are ideal for a longer time frame.

Debt mutual funds - These funds invest in debt instruments to ensure low risk and provide a stable income to the investors. Government authorities, private companies, banks and financial institutions are some of the major issuers of debt papers. Debt funds can be further classified as:

1. Gilt funds
2. Income funds
3. MIPs
4. Short term plans
5. Liquid funds

Balanced funds - They invest in both equities and fixed income securities which are in line with pre-defined investment objective of the scheme. The equity portion provides growth while debt provides stability in returns. This way, investors get to taste the best of both worlds.

Types Of Mutual Funds By Investment Objective

Growth schemes - Also known as equity schemes, these schemes aim at providing capital appreciation over medium to long term. These schemes normally invest a major portion of their fund in equities and are willing to withstand short-term decline in value for possible future appreciation.

Income schemes - Also known as debt schemes, they generally invest in fixed income securities such as bonds and corporate debentures. These schemes aim at providing regular and steady income to investors. However, capital appreciation in such schemes may be limited.

Index schemes - These schemes attempt to reproduce the performance of a particular index such as the BSE Sensex or the NSE 50. Their portfolios will consist of only those stocks that constitute the index. The percentage of each stock to the total holding will be identical to the stocks index weight age. And hence, the returns from such schemes would be more or less equivalent to those of the Index.

Benefits of investing mutual Funds - Investing in a mutual fund offers you a gamut of benefits, some of them are as below:

1. **Small investments:** With mutual fund investments, your money can be spread in small bits across varied companies. This way you reap the benefits of a diversified portfolio with small investments.
2. **Professionally managed:** The pool of money collected by a mutual fund is managed by professionals who possess considerable expertise, resources and experience. Through analysis of markets and economy, they help pick favorable investment opportunities.
3. **Spreading risk:** A mutual fund usually spreads the money in companies across a wide spectrum of industries. This not only diversifies the risk, but also helps take advantage of the position it holds.
4. **Transparency and interactivity:** Mutual funds clearly present their investment strategy to their investors and regularly provide them with information on the value of their investments. Also, a complete portfolio disclosure of the investments made by various schemes along with the proportion invested in each asset type is provided.
5. **Liquidity:** Closed ended funds can be bought and sold at their market value as they have their units listed at the stock exchange. In addition to this, units can be directly redeemed to the mutual fund as and when they announce the repurchase.
6. **Choice:** A wide variety of schemes allow investors to

pick up those which suit their risk / return profile.

7. **Regulations:** All the mutual funds are registered with SEBI. They function within the provisions of strict regulation created to protect the interests of the investor.

Asset Management Company (AMC) - An AMC is a company that manages a mutual fund. For all practical purposes, it is an organized form of a money portfolio manager which has several mutual fund schemes with similar or varied investment objectives. The AMC hires a professional money manager, who buys and sells securities in line with the fund's stated objective

Systematic Withdrawal Plan (SWP) - The unit holder may set up a Systematic Withdrawal Plan on a monthly, quarterly or semi-annual or annual basis to redeem a fixed number of units. The systematic withdrawal plan, besides being popular among investors looking for consistent cash flows from their investments, is helpful for retirees to support their expenses.

Systematic Transfer Plan (STP) - With an STP, you choose a particular amount to be transferred from one mutual fund scheme to another of your choice. You can go for a weekly, monthly or a quarterly transfer plan, depending on your needs.

Selection of Mutual Fund - Before looking at the mutual funds available to you, it may be best to decide the mix of stock, bond, and money market funds you prefer. Some experts believe this is the most important decision in investing. Here are some general points to keep in mind when deciding what your investment strategy should be.

Diversify - It is a good idea to spread your investment among mutual funds that invest in different types of securities. Stocks, bonds, and money market securities work differently. Each offers different advantages and disadvantages. You may also want to diversify within the same class of securities. Diversifying can keep you from putting all your eggs in one basket and therefore, may increase your returns over a long period of time.

Consider the effects of inflation - Since the money you set aside today may be intended to be used several years down the road, you need to look at inflation. Inflation measures the increase of general prices over time.

Conservative investments like money market funds often may be popular because they are managed to keep a steady value. But their return after accounting for the inflation rate can be very low, perhaps even negative.

For example, a 4% inflation rate over a period of many years could erase a money market fund's 3% yield over the same period of time. So even though such an investment may give some safety of principal, it may not be able to grow enough in value over the years or even keep up with the rate of inflation.

Patience is a virtue - It's no secret—the prices of common stocks can change quite a bit from day to day. Therefore, the part of your account invested in stock funds would likely fluctuate in value much the same way.

If you don't need your money right away (for at least 5 years), you probably don't need to panic if the stock market declines or you find that your quarterly statement shows the value of your investment has fallen. In the past, the stock market has regained lost value over time. Although you are not assured it will do so in the future, try to be patient and allow your stock funds time to recover.

Remember the saying, "buy low, sell high." Switching out of a stock mutual fund when prices are low is usually not the way to make the most of your investment. Of course, if a fund continues to under-perform over time as well as your other fund choices, you may want to consider changing funds.

Look at your age - Younger investors may be more at ease with stock funds, because they have time to wait out the short-term ups and downs of stock prices. By investing in a stock fund, they might be able to receive high returns over the long-term.

On the other hand, people who are closer to retirement may be more interested in protecting their money from possible drops in prices, since they'll need to use it soon. In this case, it may be wise to place a greater percentage of money in bond and/ or money market funds, which may not have such large changes in value.

How can you determine an investment mix appropriate for your age? - One way is to subtract your age from 100. The answer you come up with may be a good number to start with in deciding what portion of your total investments to put into stock mutual funds.

Risk - When you are choosing funds, be sure to consider how much risk you are comfortable with and how close you are to retirement. If retirement is around the corner, you may want a portfolio with very little risk. On the other hand, if you are younger, and have the time to weather the market's ups and downs, you may want to choose a more aggressive investment strategy.

Importance of Mutual Funds - These days between work, family, and friends, most of us do not have the time to make or monitor personal investment decisions on a regular basis. Mutual funds have qualified professionals who do all this for you. This is the reason why, the world over, they have become the most popular means of investing.

Mutual funds minimise risk by creating a diversified portfolio while providing the necessary liquidity. Additionally, you benefit from the convenience of not having to bother with too much paperwork or repeat transactions. It is our belief that investors differ in their investment needs based on their personal financial goals.

It is recommended that you should, at the very beginning, identify your own financial goals, be it planning for a comfortable retired life or children's education. After defining the financial goals, you need to plan for them in an organized manner and look at investments that help achieve these goals.

Mutual funds vary in their investment objectives, thus providing you with the flexibility to create an investment plan based on individual financial goals. Investment experts

recommend growth investments such as equity funds and stocks as a good choice for funding needs that are five years or more away, income funds to meet medium-term needs and liquid funds for short-term requirements.

References :-

1. Mutual Funds, S. Sharma, ABC publications, Raipur.
2. Indian Mutual Funds, Sundar Sankaran
3. Bogle on Mutual Funds, John C. Bogle
4. Common sense Investing, John C. Bogle
5. Mutual Funds for dummies, Fric Tyson
6. Mutual Funds the money multiplier, Lalitha Tharmaraiandy
7. www.mutualfunds.co.in
8. www.investment.co.in
9. www.funds.co.in
10. www.indianmoney.com

****

Retail Banking : Challenges And Opportunities

Dr. Pankaj Kukkar *

Introduction - The issue of retail banking is extremely important and topical. Across the globe, retail lending has been a spectacular innovation in the commercial banking sector in recent years. The growth of retail lending, especially, in emerging economies, is attributable to the rapid advances in information technology, the evolving macroeconomic environment, financial market reform, and several micro-level demand and supply side factors.

India too experienced a surge in retail banking. There are various pointers towards this. Retail loan is estimated to have accounted for nearly one-fifth of all bank credit. Housing sector is experiencing a boom in its credit. The retail loan market has decisively got transformed from a sellers' market to a buyers' market. Gone are the days where getting a retail loan was somewhat cumbersome. All these emphasise the momentum that retail banking is experiencing in the Indian economy in recent years.

What is Retail Banking? - Retail banking is, however, quite broad in nature - it refers to the dealing of commercial banks with individual customers, both on liabilities and assets sides of the balance sheet. Fixed, current / savings accounts on the liabilities side; and mortgages, loans (e.g., personal, housing, auto, and educational) on the assets side, are the more important of the products offered by banks. Related ancillary services include credit cards, or depository services. Today's retail banking sector is characterized by three basic characteristics:

1. multiple products (deposits, credit cards, insurance, investments and securities);
2. multiple channels of distribution (call centre, branch, Internet and kiosk); and
3. multiple customer groups (consumer, small business, and corporate).

What is the nature of retail banking? In a recent book, retail banking has been described as "hotter than *vindaloo*". Considering the fact that *vindaloo*, the Indian-English innovative curry available in umpteen numbers of restaurants of London, is indeed very hot and spicy, it seems that retail banking is perceived to be the in-thing in today's world of banking.

Retail banking in India - Retail banking in India is not a new phenomenon. It has always been prevalent in India in various forms. For the last few years it has become synonymous with mainstream banking for many banks.

The typical products offered in the Indian retail banking segment are housing loans, consumption loans for purchase of durables, auto loans, credit cards and educational loans. The loans are marketed under attractive brand names to differentiate the products offered by different banks. As the *Report on Trend and Progress of India, 2003-04* has shown that the loan values of these retail lending typically range between Rs.20,000 to Rs.100 lakh. The loans are generally for duration of five to seven years with housing loans granted for a longer duration of 15 years. Credit card is another rapidly growing sub-segment of this product group.

In recent past retail lending has turned out to be a key profit driver for banks with retail portfolio constituting 21.5 per cent of total outstanding advances as on March 2004. The overall impairment of the retail loan portfolio worked out much less then the Gross NPA ratio for the entire loan portfolio. Within the retail segment, the housing loans had the least gross asset impairment. In fact, retailing make ample business sense in the banking sector.

While new generation private sector banks have been able to create a niche in this regard, the public sector banks have not lagged behind. Leveraging their vast branch network and outreach, public sector banks have aggressively forayed to garner a larger slice of the retail pie. By international standards, however, there is still much scope for retail banking in India. After all, retail loans constitute less than seven per cent of GDP in India *vis-à-vis* about 35 per cent for other Asian economies — South Korea (55 per cent), Taiwan (52 per cent), Malaysia (33 per cent) and Thailand (18 per cent). As retail banking in India is still growing from modest base, there is a likelihood that the growth numbers seem to get somewhat exaggerated. One, thus, has to exercise caution is interpreting the growth of retail banking in India.

Reference :-

1. Personal research

* **Lecturer (ABST) Shri Aatm Vallabh Jain Girls PG College, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA**

किशोर विद्यार्थियों के आत्म-प्रत्यय व परीक्षा दुश्चिन्ता का अध्ययन

डॉ. रितू बाला* नेकराम**

शोध सारांश – अध्ययन का उद्देश्य किशोर विद्यार्थियों के मध्य आत्म-प्रत्यय व परीक्षा दुश्चिन्ता का प्रभाव जानना है। किशोर विद्यार्थियों (आयु वर्ग 13 से 17 वर्ष) के आत्म-प्रत्यय एवं परीक्षा दुश्चिन्ता में सह-सम्बन्ध का अध्ययन करने के लिए डॉ. आर.एस. सारस्वत द्वारा निर्मित आत्म-प्रत्यय मापनी एवं डॉ. मधु अग्रवाल व श्रीमती वर्षा कौशल द्वारा परीक्षा दुश्चिन्ता मापनी का उपयोग किया गया है। परिणामों की गणना करने के लिए माध्य, माध्यिका, मानक विचलन, सह-सम्बन्ध एवं क्रान्तिक अनुपात का प्रयोग किया गया है।

शब्द कुंजी – किशोर विद्यार्थी, आत्म-प्रत्यय एवं परीक्षा दुश्चिन्ता।

प्रस्तावना – सृष्टि के प्रत्येक प्राणी का विकास प्रगतिशील परिवर्तनों का एक नियत, क्रमिक तथा सुसम्बद्ध कम है जो कि परिपक्वता की प्राप्ति की ओर निर्देशित करता है।

हैडो कमेटी रिपोर्ट इंग्लैण्ड के अनुसार – 'ग्यारह या बारह वर्ष की आयु में बालकों की नसों में ज्वार उठना आरम्भ होता है। इसे किशोरावस्था के नाम से जाना जाता है। यदि इस ज्वार का चढ़ाव के समय ही उपयोग कर लिया जाये एवं इसकी शक्ति और धरा के साथ-साथ नयी यात्रा आरम्भ कर दी जाये तो सफलता प्राप्त की जा सकती है।'

इस प्रकार किशोरावस्था को अत्यधिक वृद्धि और विकास की अवस्था जाना और समझा जाता है। वृद्धि और विकास के सभी आयामों को लेकर इस अवस्था में बालक और बालिकाओं में आश्चर्यजनक वृद्धि, विकास और परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं।

आत्म-प्रत्यय आवश्यक रूप से विभिन्न व्यक्तियों, अभिभावकों, सहोदरों, सम्बंधियों, मित्रों, सामान्य समुदाय एवं सामाजिक, सांस्कृतिक वातावरण में अनुभवों से उत्पन्न अर्जित सामाजिक उत्पाद है।

एनसाइक्लोपीडिया ऑफ साइकॉलोजी के अनुसार – 'आत्म-प्रत्यय से तात्पर्य व्यक्ति के अपने व्यवहार, योग्यताओं एवं विशेषताओं का मूल्य आंकलन व अभिवृत्तियों की समग्रता से है।'

इस प्रकार 'आत्म' वह सब कुछ है, जो एक व्यक्ति अपने सम्बंध में देखता, समझता व जानता है। आत्म व्यक्ति का एक अमूर्त रूप है। इस अमूर्त रूप में उन सब गुणों का समावेश हो जाता है, जिनके सम्बंध में व्यक्ति स्वंय सचेत है, अर्थात् आत्म व्यक्ति की स्वयं अपने सम्बन्ध में चेतना है।

परीक्षा उत्तीर्ण करने तथा उसमें अधिक से अधिक अंक प्राप्त करने की होड़ विद्यार्थियों में स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है, परन्तु कुछ विद्यार्थी परीक्षा को एक बड़ी चुनौती के रूप में लेते हैं जिसके कारण उनमें कभी-कभी तनाव परिलक्षित होने लगता है। तनाव की तीव्रता इस सीमा तक बढ़ जाती है कि कुछ विद्यार्थी आत्महत्या करने जैसा घातक निर्णय ले बैठते है।

शोध की आवश्यकता एवं महत्व :-

एल.के. फ्रैंक व एम.एच. फ्रैंक के अनुसार – 'बालक अपने चारों ओर के वातावरण में जैसा अपने आपको देखता है और जैसे उसके परिवार के लोग और परिचित उसे देखते हैं, उसी आधार पर वह अपने आत्म-प्रत्यय का निर्माण करते हैं। यही कारण है कि आत्म-प्रत्यय को दर्पण प्रतिमा (Mirror Image) कहा गया है।'

शोधकर्त्ता ने प्रस्तुत शोध कार्य में वर्तमान शिक्षा व्यवस्था एवं परीक्षा प्रणाली में व्याप्त दोषों के कारण किशोर विद्यार्थियों में व्याप्त दुश्चिन्ता के कारणों को जानने का प्रयास किया है, तथा आत्म-प्रत्यय का दुश्चिन्ता से घनिष्ठ संबंध का अध्ययन करने का भी प्रयास किया है।

प्रस्तुत शोध कार्य वर्तमान समय की महत्वपूर्ण आवश्यकता है तथा शोधकर्त्ता की दृष्टिनुसार इस विषय में किशोर मन पर पड़ने वाले प्रभाव, किशोर विद्यार्थियों के सभी आयामों (शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, नैतिक, यौन तथा भाषागत विकास के क्षेत्रों), पूर्ण विकास के लिए उनमें सही आत्मसम्प्रत्यय का विकास अति आवश्यक है।

समस्या कथन – प्रस्तुत शोध का समस्या कथन निम्न प्रकार से है – **'किशोर विद्यार्थियों के आत्म-प्रत्यय व परीक्षा दुश्चिन्ता का अध्ययन।'**

प्रस्तुत शोध के उद्देश्य – शोधकर्त्ता ने अपने शोध में निम्नलिखित उद्देश्य सम्मिलित निर्धारित किए हैं :

1. ग्रामीण व शहरी किशोर छात्रों एवं ग्रामीण व शहरी किशोर छात्राओं के आत्म-प्रत्यय का तुलनात्मक अध्ययन।
2. ग्रामीण किशोर छात्रों एवं शहरी किशोर छात्रों के आत्म-प्रत्यय का तुलनात्मक अध्ययन।
3. ग्रामीण किशोर छात्रों एवं ग्रामीण किशोर छात्राओं की परीक्षा दुश्चिन्ता का तुलनात्मक अध्ययन।
4. ग्रामीण किशोर छात्रों एवं शहरी किशोर छात्रों की परीक्षा दुश्चिन्ता का तुलनात्मक अध्ययन।

प्रस्तुत शोध की परिकल्पनाएँ – शोधकर्त्ता ने अपने शोध में निम्नलिखित परिकल्पनाएँ निर्धारित की हैं :

1. ग्रामीण व शहरी किशोर छात्रों एवं ग्रामीण व शहरी किशोर छात्राओं के आत्म-प्रत्यय में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

*प्रोफेसर - श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

2. ग्रामीण किशोर छात्रों एवं शहरी किशोर छात्रों के आत्म-प्रत्यय में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. ग्रामीण किशोर छात्रों एवं ग्रामीण किशोर छात्राओं की परीक्षा दुश्चिन्ता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. ग्रामीण किशोर छात्रों एवं शहरी किशोर छात्रों की परीक्षा दुश्चिन्ता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध में प्रयुक्त विधि – प्रस्तुत शोध में शोधकर्त्ता द्वारा किशोर विद्यार्थियों के आत्म-प्रत्यय एवं परीक्षा दुश्चिन्ता में सह-सम्बन्ध का अध्ययन करने हेतु **सर्वेक्षण विधि** का प्रयोग किया गया है।

शोध में प्रयुक्त न्यादर्श :

1. प्रस्तुत शोध में श्रीगंगानगर जिले के उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के 800 विद्यार्थियों को चयनित किया गया है।
2. प्रस्तुत शोध में 400 ग्रामीण विद्यार्थियों एवं 400 शहरी विद्यार्थियों को चयनित किया गया है। इन 400 ग्रामीण विद्यार्थियों में से 200 छात्रों एवं 200 छात्राओं को चयनित किया गया है। इसी प्रकार शहरी विद्यार्थियों में से 200 छात्रों एवं 200 छात्राओं को चयनित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोध में शोधकर्त्ता ने तथ्यों के संकलन हेतु निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग किया है :

1. **डॉ. राजकुमार सारस्वत द्वारा निर्मित आत्म-प्रत्यय प्रश्नावली।**
2. **डॉ. मधु अग्रवाल व वर्षा कौशल द्वारा निर्मित परीक्षा दुश्चिन्ता परीक्षण।**

1 आत्म-सम्प्रत्यय प्रश्नावली – यह प्रश्नावली 1984 में डॉ. राजकुमार सारस्वत द्वारा निर्मित की गई थी। इस प्रश्नावली में कुल 48 कथन है तथा इस प्रश्नावली में आत्म-सम्प्रत्यय के 6 अलग-अलग आयाम से सम्बन्धित कथन हैं।

2 परीक्षा दुश्चिन्ता परीक्षण – प्रस्तुत मापनी में सही-सही अंक देने के लिए किसी भी कुंजी की आवश्यकता नहीं है, यदि प्रपत्र भरने वाले ने प्रश्न का उत्तर 'हाँ' में दिया है तो उसे 1 अंक दिया जाना चाहिये तथा नहीं में उत्तर देने वाले को 0 दिया जाना चाहिए। 'हाँ' में प्राप्त उत्तरों का योग ही उस व्यक्ति की कुल दुश्चिन्ता के प्राप्तांक होंगे।

प्रत्येक व्यक्ति को उसके प्राप्तांकों के आधार पर 5 स्तरों को बाँटा जा सकता है। एक व्यक्ति, जिसने 75 प्रतिशत अंक प्राप्त किए हैं, वह अत्यधिक दुश्चिन्ता से ग्रसित माना जायेगा। उसका व्यक्तित्व जटिल माना जायेगा तथा मनोवैज्ञानिक से सलाह लेने की आवश्यकता होगी। 25 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने वाला यह प्रदर्शित करता है कि उसके जीवन में प्रेरणा का अभाव है तथा वह सुस्त व आलसी है। बीच का समूह व्यक्ति की सामान्य दुश्चिन्ता को प्रकट करता है।

शोध में प्रयुक्त साँख्यिकी :

1. मध्यमान
2. मानक विचलन
3. क्रान्तिक अनुपात

तथ्यों का विश्लेषण :

सारणी संख्या 1

ग्रामीण व शहरी किशोर छात्रों एवं ग्रामीण व शहरी किशोर छात्राओं के आत्म-प्रत्यय को दर्शाती हुई सारणी

क्रं. सं.	विद्यार्थी	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	परिणाम
1.	ग्रामीण व शहरी किशोर छात्र	400	183.00	13.90	0.491	0.01 स्तर स्वीकृत
2.	ग्रामीण व शहरी किशोर छात्राएँ	400	183.49	14.13		0.05 स्तर स्वीकृत

df = $n_1 + n_2$ = 400 + 400 = 800 - 2 = 798

व्याख्या – ग्रामीण व शहरी किशोर छात्रों एवं छात्राओं के मध्यमान क्रमशः 183.00 एवं 183.49 प्राप्त हुए हैं तथा इनके प्रमाप विचलन क्रमशः 13.90 एवं 14.13 प्राप्त हुए हैं। इनके आधार पर दत्तों का क्रान्तिक अनुपात ज्ञात करने पर 0.491 प्राप्त हुआ। स्वतन्त्रता के अंश 798 का विश्वास के स्तर 0.01 तथा 0.05 पर क्रान्तिक अनुपात का सारणी मान क्रमशः 1.96 एवं 2.58 दिया हुआ है जो क्रान्तिक अनुपात के ज्ञात मान से कम है। अतः शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना स्वीकृत हो जाती है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि ग्रामीण व शहरी किशोर छात्रों एवं ग्रामीण व शहरी किशोर छात्राओं के आत्म-प्रत्यय में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

सारणी संख्या 2 : ग्रामीण किशोर छात्रों एवं शहरी किशोर छात्रों के आत्म-प्रत्यय को दर्शाती हुई सारणी

क्रं. सं.	विद्यार्थी	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	परिणाम
1.	ग्रामीण किशोर छात्र	200	181.76	14.94	1.794	0.01 स्तर स्वीकृत
2.	शहरी किशोर छात्र	200	184.24	12.66		0.05 स्तर स्वीकृत

df = $n_1 + n_2$ = 200 + 200 = 400 - 2 = 398

व्याख्या – ग्रामीण किशोर छात्र व छात्राओं के मध्यमान क्रमशः 181.76 व 184.24 प्राप्त हुए तथा इनके प्रमाप विचलन क्रमशः 14.94 एवं 12.66 प्राप्त हुए। इनके आधार पर दत्तों का क्रान्तिक अनुपात ज्ञात करने पर 1.794 प्राप्त हुआ। स्वतन्त्रता के अंश 398 का विश्वास के स्तर 0.01 स्तर तथा 0.05 स्तर पर क्रान्तिक अनुपात 1.97 दिया हुआ है जो कि क्रान्तिक अनुपात के ज्ञात मान से अधिक है, परन्तु क्रान्तिक अनुपात धनात्मक होने के कारण कहा जा सकता है कि शहरी किशोर छात्रों एवं शहरी किशोर छात्राओं के मध्य आत्म-प्रत्यय में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

सारणी संख्या 3 : ग्रामीण किशोर छात्रों एवं ग्रामीण किशोर छात्राओं की परीक्षा दुश्चिन्ता को दर्शाती हुई सारणी

क्रं. सं.	विद्यार्थी	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	परिणाम
1.	ग्रामीण किशोर छात्र	200	14.87	6.53	3.022	0.01 स्तर स्वीकृत
2.	ग्रामीण किशोर छात्राएँ	200	16.93	7.11		0.05 स्तर स्वीकृत

df = $n_1 + n_2$ = 200 + 200 = 400 - 2 = 398

व्याख्या – ग्रामीण किशोर छात्रों एवं ग्रामीण किशोर छात्राओं के मध्यमान क्रमशः 14.87 एवं 16.93 प्राप्त हुए हैं तथा इनके प्रमाप विचलन क्रमशः 6.53 एवं 7.11 प्राप्त हुए हैं। इनके आधार पर दत्तों का क्रान्तिक अनुपात

ज्ञात करने पर 3.022 प्राप्त हुआ। स्वतन्त्रता के अंश 398 का विश्वास के स्तर 0.01 तथा 0.05 पर क्रान्तिक अनुपात का सारणी मान क्रमश: 1.97 एवं 2.59 दिया हुआ है जो क्रान्तिक अनुपात के ज्ञात मान से कम है। अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना स्वीकृत हो जाती है, जो ग्रामीण किशोर छात्रों एवं ग्रामीण किशोर छात्राओं के मध्य समान परीक्षा दुश्चिन्ता को प्रकट करती है।

सारणी संख्या 4 : ग्रामीण किशोर छात्रों एवं शहरी किशोर छात्रों की परीक्षा दुश्चिन्ता को दर्शाती हुई सारणी

क्रं. सं.	विद्यार्थी	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	परिणाम
1.	ग्रामीण किशोर छात्र	200	14.87	6.53	0.49	0.01 स्तर स्वीकृत
2.	शहरी किशोर छात्र	200	15.22	7.81		0.05 स्तर स्वीकृत

df = $n_1 + n_2$ = 200 + 200 = 400 - 2 = 398

व्याख्या – ग्रामीण किशोर छात्रों एवं शहरी किशोर छात्रों के मध्यमान क्रमश: 14.87 एवं 15.22 प्राप्त हुए हैं तथा इनके प्रमाप विचलन क्रमश: 6.539 एवं 7.815 प्राप्त हुए हैं। इनके आधार पर दत्तों का क्रान्तिक अनुपात ज्ञात करने पर 0.49 प्राप्त हुआ। स्वतन्त्रता के अंश 398 का विश्वास के स्तर 0.01 तथा 0.05 पर क्रान्तिक अनुपात का सारणी मान क्रमश: 1.97 एवं 2.59 दिया हुआ है जो क्रान्तिक अनुपात के ज्ञात मान से कम है। अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना स्वीकृत हो जाती है।

शोध निष्कर्ष – किशोर विद्यार्थियों के आत्म-प्रत्यय एवं परीक्षा दुश्चिन्ता सम्बन्धी दुश्चिन्ता में सह-सम्बन्ध सम्बन्धी आँकड़ों का गणितीय विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि किशोर विद्यार्थियों (ग्रामीण किशोर विद्यार्थी व शहरी किशोर विद्यार्थी) के आत्म-प्रत्यय एवं परीक्षा दुश्चिन्ता में धनात्मक सह-सम्बन्ध पाया जाता है परन्तु यह सह-सम्बन्ध बहुत ही निम्न स्तर का सह-सम्बन्ध है अर्थात् किशोर विद्यार्थियों के आत्म-प्रत्यय एवं परीक्षा दुश्चिन्ता में सह-सम्बन्ध तो पाया जाता है लेकिन बहुत कम मात्रा में।

आत्म-प्रत्यय के अतिरिक्त अन्य कारक यथा – आर्थिक, पर्यावरणीय, सामाजिक आदि भी परीक्षा दुश्चिन्ता में अहम भूमिका निभाते हैं। इसलिए किशोर विद्यार्थियों के आत्म-प्रत्यय एवं परीक्षा दुश्चिन्ता में कोई सार्थक सह-सम्बन्ध नहीं पाया जाता।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. वालिया, जे.एस. (2009) : 'शिक्षा मनोविज्ञान की बुनियादें', जालन्धर पब्लिकेशन, जालन्धर, पृ. सं. 77-94, 326
2. मेहता आकृति (2016), 'माध्यमिक विद्यालयी किशोर विद्यार्थियों में आत्पप्रत्यय, भावात्मक बुद्धि-लिंग भेद का अध्ययन', DOI : 10, 15680/IJIRSET, Vol 3(2) PP. 45.49
3. अहमद, et.al (2012), 'आत्म-प्रत्यय एवं गणित दुश्चिन्ता के मध्य पारस्परिक सम्बंध', अधिगम एवं व्यक्तिगत विभिन्नताएँ, Vol. 22(3) PP. 385-389
4. नई शिक्षा, 'राष्ट्रीय शैक्षिक मासिक पत्रिका', 30 सितम्बर, 2014, बनी पार्क, जयपुर – 3, पृ. सं. 28-29

****

Corporate Social Responsibility : Significance, Challenges And Impact

Dr. Pankaj Kukkar *

Introduction - Corporate social responsibility (CSR) refers to business practices involving initiatives that benefit society. A business's CSR can encompass a wide variety of tactics, from giving away a portion of a company's proceeds to charity, to implementing "greener" business operations.

There are a few broad categories of social responsibility that many of today's businesses are practicing:

1. Environmental efforts: One primary focus of corporate social responsibility is the environment. Businesses regardless of size have a large carbon footprint. Any steps they can take to reduce those footprints are considered both good for the company and society as a whole.

2. Philanthropy: Businesses also practice social responsibility by donating to national and local charities. Businesses have a lot of resources that can benefit charities and local community programs.

3. Ethical labor practices: By treating employees fairly and ethically, companies can also demonstrate their corporate social responsibility. This is especially true of businesses that operate in international locations with labor laws that differ from those in the United States.

4. Volunteering: Attending volunteer events says a lot about a company's sincerity. By doing good deeds without expecting anything in return, companies are able to express their concern for specific issues and support for certain organizations.

Why CSR matters - Liz Maw, CEO of nonprofit organization Net Impact, noted that CSR is becoming more mainstream as forward-thinking companies embed sustainability into the core of their business operations to create shared value for business and society.

Advertisement "Sustainability isn't just important for people and the planet, but also is vital for business success," said Maw, whose company connects students and professionals who want to use business skills to do social good. "Communities are grappling with problems that are global in scope and structurally multifaceted — Ebola, persistent poverty, climate change. The business case for engaging in corporate social responsibility is clear and unmistakable."

"More practically, [CSR] often represents the policies, practices and initiatives a company commits to in order to govern themselves with honesty and transparency and have a positive impact on social and environmental wellbeing," added Susan Hunt Stevens, founder and CEO of employee engagement platform WeSpire.

As consumers' awareness about global social issues continues to grow, so does the importance these customers place on CSR when choosing where to shop. But consumers aren't the only ones who are drawn to businesses that give back. Susan Cooney, founder of crowdfunding philanthropy platform Givelocity, said that a company's CSR strategy is a big factor in where today's top talent chooses to work.

"The next generation of employees is seeking out employers that are focused on the triple bottom line: people, planet and revenue," Cooney told Business News Daily. "Coming out of the recession, corporate revenue has been getting stronger. Companies are encouraged to put that increased profit into programs that give back.

Corporate social initiatives - Corporate social responsibility includes six types of corporate social initiatives:

1. Corporate philanthropy: company donations to charity, including cash, goods, and services, sometimes via a corporate foundation
2. Community volunteering: company-organized volunteer activities, sometimes while an employee receives pay for pro-bono work on behalf of a non-profit organization
3. Socially-responsible business practices: ethically produced products which appeal to a customer segment
4. Cause promotions: company-funded advocacy campaigns
5. Cause-related marketing: donations to charity based on product sales
6. Corporate social marketing: company-funded behavior-change campaigns

All six of the corporate initiatives are forms of corporate citizenship. However, only some of these CSR activities

* Lecturer (ABST) Shri Aatm Vallabh Jain Girls PG College, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

rise to the level of cause marketing, defined as "a type of corporate social responsibility (CSR) in which a company's promotional campaign has the dual purpose of increasing profitability while bettering society."

Companies generally do not have a profit motive when participating in corporate philanthropy and community volunteering. On the other hand, the remaining corporate social initiatives can be examples of cause marketing, in which there is both a societal interest and profit motive.

Reference :-

1. Personal research

****

बाल मजदूरी पर एक सामाजिक विधिक अध्ययन उदयपुर जिले के विशिष्ट संदर्भ

राहुल आगाल * डॉ. सतीश के. नागर **

शोध सारांश – बालश्रम से संबंधित सभी विधिक अधिनियमों एवं संवैधानिक प्रयासों के बावजूद भी इससे संबंधित अत्याचार व समस्याएँ दिनों दिन विकराल रूप लेती जा रही है। और व्यावहारिक रूप से बाल श्रमिकों की समस्याओं का वास्तविक हल नहीं निकल पा रहा है। कृषि तथा घरेलू रोजगार के कार्य करने वाले बाल श्रमिकों की स्थिति कॉफी असंतोषजनक है। सरकार द्वारा अनेक कानून बनाये गए है परन्तु उनकों न तो ठिक से लागू किया गया है न ही पालन अत: सरकार द्वारा निरीक्षण की व्यवस्था को सही करना आवश्यक है। बालश्रमिकों को कानून द्वारा उद्योगों में रोजगार को निविरोध करना मात्र ही इस मसला का हल नहीं है यह तो अस्थायी व्यवस्था मात्र है।

इस समस्या को हम स्थायी तौर पर तभी हल कर सकते है जबकि बालकों के विकास, शिक्षा आदि के बारे में ठोस कदम उठाए जाए। जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण हेतु कठोर कदम उठाए जाए राज्य सरकारें व स्थानीय प्रशासन भी सजगतापूर्वक काम करे व स्थानीय स्तर पर भी कानून कठोर हो जिससे कि लोग बाल मजदूर को कार्य पर रखने से ही घबराए। बालकों कि शिक्षा व रोजगारोन्मूख शिक्षा पर बल दिया जाए। शिक्षा के बाद नौकरी की पूर्ण गारण्टी दी जानी चाहिए।

बालश्रम के संरक्षण सम्बन्धी विधि एवं संवैधानिक प्रावधान कागजी बनकर रह गए है अत: सुझाव है कि राज्य सरकार व स्थानीय प्रशासन भी बालश्रम के संरक्षण संबंधित नीतियाँ बनाते समय बालश्रम क्षेत्रों के माध्यम से बालश्रम को रोकने हेतु अपने विभागों के द्वारा बालश्रम के विधिक व संवैधानिक प्रावधानों का कठोरतापूर्वक पालन करने पर बल दे। बालश्रमिकों को रोकने के लिए कार्य करने के आवश्यक दिशा निर्देश दिए जाए।
शब्द कुँजी –बालश्रमिक, अधिनियम, कानून, मजदूरी, शोषण, श्रमिक, विकास, प्रावधान, उन्मूलन, जनजाति, शारीरिक, मानसिक, रोजगार, अत्याचार, शिक्षा।

प्रस्तावना – किसी भी देश में बच्चों की स्थिति से उस देश की प्रगति और समाजिक सांस्कृतिक स्तर का पता चलता है बचपन एक ऐसी स्थिति है जब बच्चे को सबसे अधिक सहायता, प्रेम देखभाल और सुरक्षा की जरूरत होती है। ऐसे में बालश्रम किसी भी देश और समाज के लिए घातक और शर्म की बात है।

बालश्रम समस्या वर्तमान में हमारे देश की ज्वलंत समस्याओं में से एक है। 'बालश्रमिक' हमारी व्यवस्था, समाज व संवेदना की उस नकारात्मक शौषणवादी मानसिकता का ही मूर्त रूप है, जो स्वार्थ व दोहरी विचारधारा की तथाकथित परिणति है।बच्चे राष्ट्र का भविष्य होते है। वे कल के नागरिक है। अत: उन्हें सामाजिक गतिविधियों में सम्मिलित करना एवं सामाजिक मूल्यों से अवगत कराना अत्यन्त जरूरी है।हमारे संविधान के अनुच्छेद 23 में चौदह वर्ष से कम आयु के किसी बालक के कारखाने, खान या किसी अन्य परिसंकटमय नियोजन में नियोजन का प्रतिषेध करता है।

बाल मजदूरी – एक अनसुलझी समस्या – भारत का भविष्य बच्चों में निहित है। बच्चें देश के कर्णधार है और अपने परिवार की धरोहर है इसलिए परिवार और सरकार का यह दायित्व बनता है कि वे इन नौनिहालों की रक्षा करें और बाल मजदूरी जैसे घोर अभिशाप से उन्हें 20वीं शताब्दी के उत्ताराई से बाजार की प्रतिस्पर्धा में आगे बढ़ने की प्रवृति ने बाल मजदूरी की संस्कृति को और प्रगाढ़ कर दिया है। विकसित और विकासशील देश दोनों ही इस समस्या से जुझ रहे है, सम्पूर्ण मानव समाज के लिए कलंक बन चुकी यह समस्या अपना विकट रूप धारण कर रही है, अन्या गम्भीर समस्याओं की भाँति इस अन्तर्राष्ट्रीय समस्या का प्रभावपूर्ण निदान करना जाति आवश्यक है।

वैसे वो बालश्रम आज की शताब्दी की देन नहीं है, बल्कि यह प्राचीन काल से ही चला आ रहा है, लेकिन वैश्वीकरण के बाद यह अपने और बदत्तार रूप में सामने आई है, इसे दूर करने के लिए सरकार और गैर–सरकारी संगठन आज भी प्रयासरत् है।

हाल ही में 'यूनिसेफ' द्वारा जारी नवीनतम प्रतिवेदन के मुताबिक आज विश्व–भर के अमीर और गरीब देशों में करोड़ों बच्चे किसी न किसी प्रकार श्रमिक के रूप में कार्य कर रहे हैं।

आज 'बाल–श्रम' समस्या अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर फैल चुकी है जो एक और भारत जैसे जनधिक्य वाले निर्धन और विकासशील राष्ट्रों में पीड़ाजनक दौर से गुजर रही है, वहीं दूसरी और विकसित राष्ट्रों में यह समस्या एक मानवीय अपराध तथा सामाजिक अभिशाप के रूप में अनेक बुराईयों को जन्म दे रही है।

अर्थ एवं परिभाषा – किसी उद्योग में कारखानों–खानों में 14 वर्ष से कम आयु के मानसिक और शारीरिक श्रम करने वाले बच्चे बाल श्रमिक कहलाते है।

'श्रम' शब्द बहुत अर्थवादी है अर्थात् श्रम शब्द का प्रयोग कई अर्थो में किया जाता है। सामान्य अर्थशास्त्र के अन्तर्गत किसी भी शारीरिक व

*शोधकर्ता, विधि विभाग, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** प्राचार्य, राजकीय विधि महाविद्यालय, गोधरा (गुजरात) भारत

मानसिक कार्य को श्रम की संज्ञा दी जाती है। जो मुद्रा की प्राप्ति हेतु किया जाता है।

संयुक्त राष्ट्र संध के अनुसार - 18 वर्ष के कम आयु का श्रमिक बाल श्रमिक है।

भारतीय संविधान के अनुसार - जहाँ 5-14 के वर्ष के बीच के बालक/ बालिका जो वैतनिक श्रम करते है या श्रम द्वारा पारिवारिक कर्ज चुकाते है। बाल श्रमिक कहलाते है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार - बालश्रम की उम्र 15 वर्ष निर्धारित की गयी है।

बाल श्रमिक निषेध एवं नियमन कानून 1986 के अनुसार - बाल श्रमिक से ऐसे व्यक्ति अभिप्रेत है जिसमें अपनी आयु 14 वर्ष पूरी नहीं की हैं। अमेरिकन कानून 12 वर्ष या कम आयु तथा इग्लैण्ड एवं अन्य यूरोपीय में 13 वर्ष या कम आयु के श्रमिक को बाल श्रमिक की श्रेणी में रखता है।

भारत में बालश्रम - बाल श्रमिकों की समस्या विश्व के प्रत्येक कौने में व्याप्त है। भारत में यह समस्या औद्योगिक क्रांति के समय से ही व्याप्त है। बाल श्रमिक को एक बहुत बड़ी सामाजिक बुराई और राष्ट्रीय बर्बादी के रूप में माना जाता है क्योंकि परिवार के निर्वाह के लिए मजदूरी कमाने की आर्थिक जरूरत बालकों की शिक्षा एवं मनोरंजन के मौके नहीं मिलने देती। उसके शारीरिक और मानसिक विकास को रोकती है। उसके व्यक्तित्व के सामान्य विकास में रूकावट डालती है तथा वयस्क जिम्मेदारी के लिये उसके तैयार होने में रोड़े अटकाती है।

बालश्रम के प्रमुख कारण - भारत जैसे विकासोन्मुखी राष्ट्रों में बालश्रम को बढ़ावा देने वाले अनेक सामाजिक और आर्थिक उत्प्रेरक घटक मौजूद है, इनमें मुख्य है-

1. निरक्षरता और अरूचिकर व दूषित शिक्षा पद्धति।
2. वंशानुगत एवं परम्परागत उद्योगों में बच्चों का सक्रिय योगदान।
3. जनसंख्या वृद्धि के कारण बड़े परिवारों के पाल-पोषण में कठिनाई।
4. गरीब और बड़े परिवारों में खर्चों के अनुरूप आय का न होना।
5. बच्चों की समुचित देखभाल न होने के कारण उनमें असंतोष तथा असुरक्षा की भावना का विकसित होना।
6. बढ़ता हुआ शहरीकरण और उसकी चकाचौंध का दुष्प्रभाव।
7. औद्योगिकरण के कारण बढ़ते हुए कल कारखाने।

बालश्रम सम्बन्धी समस्या से निजात पाने के उपाय - वर्तमान में बालश्रम सम्बन्धी समस्या एक वैश्विक समस्या के रूप में (खासकर पिछड़े देशों में) उभरकर सामने आ रही है इस समस्या से निजात पाने के लिए सर्वसाधारण को खुले मन से प्रयत्न करना होगा और पूँजीपतियों पर अंकुश लगाना होगा और सरकार को अपने द्वरा बनाए गए कानूनों का सख्ती से पालन करना होगा सर्वप्रथम तो यह जरूरी है कि मजदूरी समाप्त नहीं होने की धारणा से निजात पाना होगा।

बालश्रमिकों को इस समस्या से मुक्त कराने के लिए उनके पूनर्वास की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए, पारम्परिक व्यवसायों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए व्यवसय में लगे छोटे सदस्यों को प्रशिक्षण एवं स्थानीय ग्रामीण बैंकों से ऋण दिलवा कर उनकी स्थिति मजबूत करनी चाहिए स्कूल के पाठ्यक्रमों में बालश्रम उन्मूलन सम्बन्धी अध्याय को शामिल किया जाना चाहिए बाल श्रमिकों की शिक्षा भी दी जानी चाहिए हमारी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था भी बाल मजदूरों को बढ़ाने के लिए जिम्मेदार है देश में स्कूलों का अभाव है और जहाँ है वे पहूँच के बाहर और शिक्षा व्यवस्था उचित नहीं जो बच्चों किसी तरह पढ़ लिखा भी गए तो उन्हें नौकरी नहीं मिलती है ग्रामवासियों को यह सोचने पर मजबूर होना पड़ता है कि शिक्षा प्राप्त करना उनके लिए पैसे और समय दोनों की बर्बादी है अत: रोजगारपरक शिक्षा ही बालश्रम पर अंकुश लगा सकती है।

बालश्रमिकों के संवैधानिक अधिकार :

1. संविधान के अनुच्छेद 15(3) द्वारा सरकार को बलकों के लिए अलग से कानून बनाने का अधिकार दिया गया है।
2. संविधान के अनुच्छेद 23 बालकों के क्रय-विक्रय एवं उनके द्वारा गैर-कानूनी तथा अवेज्ञानिक कार्य करने पर रोक लगाता है साथ ही बालकों को भय दिखाकर या बिना पारिश्रमिक काम कराने को भी प्रतिबंधित करता है।
3. संविधान का अनुच्छेद 24 जो 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों की कारखाने खदानों तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों में नियोजित करने पर रोक लगाता है।
4. संविधान के अनुच्छेद 39 में बच्चों के स्वास्थ्य एवं उनके शारीरिक विकास हेतु पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध कराने हेतु सरकार को निर्देश देता है।
5. संविधान के अनुच्छेद 38,39,41,42,43,43 (क) श्रम नीति का मार्गदर्शक करते है।
6. संविधान के अनुच्छेद 45 में यह प्रावधान करता है।

बालश्रमिकों के विधिक अधिकार - बालश्रमिकों की समस्याओं के अध्ययन हेतु 1979 में गुरूपादस्वामी समिति गठित की गयी तथा बालश्रम के उन्मूलन हेतु सरकार द्वारा एक महत्वपूर्ण प्रयास एक विस्तृत अधिनियम बनाकर किया गया, जिसे बाल श्रम विरोध एवं विनियमन अधिनियम कहा जाता है।

बालश्रम के विनियम हेतु राज्य सरकार द्वारा बनाये गये कानून/ अधिनियम निम्नांकित है जिमें बाल श्रमिकों की समस्याओं के निवारण एवं बाल श्रमिकों के कल्याण के सम्बन्ध में प्रावधान किए गए है जैसे -

1. बाल नियोजन अधिनियम 1938
2. बागान अधिनियम 1951
3. कारखाना अधिनियम 1948
4. खान अधिनियम 1952
5. मोटर यातायात श्रहिमक अधिनियम 1961
6. बीड़ी तथा सिगार श्रमिक अधिनियम 1986
7. ठेकाश्रम अधिनियम 1970
8. बालश्रम प्रतिषेध एवं विनियमन अधिनियम 1986
9. शिशु अधिनियम 1961 (यथा संशोधिकत 1978)
10. किशोर न्याय अधिनियम 1986

उल्लेखनीय है कि भारत में बाल श्रमिकों की समस्याओं का विस्तार से अध्ययन करने हेतु समय-समय पर अनेक समितियों का गठन से अध्ययन करने हेतु समय-समय पर अनेक समितियों का गठन भी किया गया है और सुझावों पर गम्भीरता से विचार करके क्रियान्वयन भी किया जाता रहा है। भारत मं सर्वोच्य न्यायालय के निर्देश पर बाल श्रमिकों को नियोजित करने वाले कुछ उद्योगों को खतरनाक उद्योग की श्रेणी में चिर्हित किया गया है। वे है माचिस, पटाखा, डायमण्ड पॉलिशिंग, कांच की चुड़ी उद्योग, कालीन, चाकू ताला उद्योग आदि।

बाल मजदूरी पर अध्ययन उदयपुर जिले के विशेष संदर्भ में - सम्पूर्ण

राष्ट्र के साथ–साथ राजस्थान का उदयपुर जिला भी बाल मजदूरी के अभिशाप से ग्रस्त है। कारखानों, मिलों, होटलों, लघु उद्योगों जैसे कई जगहों पर सस्ती दर पर काम करने वाले बाल मजदूर लगाए गए है इतने कानून बनने के बाद भी आए दिन यहाँ वहाँ बाल रमिक दिखाई पड़ रहे है।

जब बाल श्रमिकों को छुड़ाया गया जब उन्होंने बताया कि मम्मी–पापा की बहुत याद आती है और अंकल लात–घूंसे मारकर जबरदस्ती काम करवाते है। कई बाल श्रमिक आज तक स्कूल नहीं गए है। कई ने बताया पिता पर कर्ज है इसलिए काम करते है। बाल श्रमिक विद्यालयों की स्थापना अनिवार्य रूप से होनी चाहिए। शिक्षा व भोजन सरकार की तरफ से मुफ्त करने के बाद भी स्थिति वही है कि बाल श्रमिक हर जगह दिख रहे है आवश्यकता है कि बच्चों का बचपन समाप्त न हो जाए इससे पहले इस दिशा में नागरिकों को और सरकार को कठोर कदम उठाने चाहिए।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि बालश्रम से संबंधित सभी विधिक अधिनियमों एवं संवैधानिक प्रयासों के बावजूद भी इससे संबंधित अत्याचार व समस्याएँ दिनों दिन विकराल रूप लेती जा रही है। और व्यावहारिक रूप से बाल श्रमिकों की समस्याओं का वास्तविक हल नहीं निकल पा रहा है। कृषि तथा घरेलू रोजगार के कार्य करने वाले बाल श्रमिकों की स्थिति कॉफी असंतोषजनक है। सरकार द्वारा अनेक कानून बनाये गए है परन्तु उनकों न तो ठिक से लागू किया गया है न ही पालन अत: सरकार द्वारा निरीक्षण की व्यवस्था को सही करना आवश्यक है। बालश्रमिकों को कानून द्वारा उद्योगों में रोजगार को निविरोध करना मात्र ही इस मसला का हल नहीं है यह तो अस्थायी व्यवस्था मात्र है।

इस समस्या को हम स्थायी तौर पर तभी हल कर सकते है जबकि बालकों के विकास, शिक्षा आदि के बारे में ठोस कदम उठाए जाए। जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण हेतु कठोर कदम उठाए जाए राज्य सरकारें व स्थानीय प्रशासन भी सजगतापूर्वक काम करे व स्थानीय स्तर पर भी कानून कठोर हो जिससे कि लोग बाल मजदूर को कार्य पर रखने से ही घबराए। बालकों कि शिक्षा व रोजगारोन्मूख शिक्षा पर बल दिया जाए। शिक्षा के बाद नौकरी की पूर्ण गारण्टी दी जानी चाहिए।

सुझाव – बालश्रम के संरक्षण सम्बन्धी विधि एवं संवैधानिक प्रावधान कागजी बनकर रह गए है अत: सुझाव है कि राज्य सरकार व स्थानीय प्रशासन भी बालश्रम के संरक्षण संबंधित नीतियाँ बनाते समय बालश्रम क्षेत्रों के माध्यम से बालश्रम को रोकने हेतु अपने विभागों के द्वारा बालश्रम के विधिक व संवैधानिक प्रावधानों का कठोरतापूर्वक पालन करने पर बल दे। बालश्रमिकों को रोकने के लिए कार्य करने के आवश्यक दिशा निर्देश दिए जाए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. मनोज कुमार दशोरा, बाल श्रमिक समस्या एवं समाधान, हिमांशु पब्लिकेशन उदयपुर, नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2006
2. डॉ. गंगा सहाय शर्मा– श्रम एवं औद्योगिक विधि। युनिवरसिटी बुक हाउस प्राइवेट लिमिटेड, जयपुर द्वितीय संस्करण 2002
3. बाल श्रमिक समस्या एवं समाधान लेखक– मनोज कुमार दशोरा, हिमांशु पब्लिकेशंस, उदयपुर, नई दिल्ली, 64, सेक्टर 11 हिरणमगरी, उदयपुर (राज.) 313002
4. खान अधिनियम 1952– बाबेल डॉ. बसली लाल (2000) खान एवं खनिज मैन्यूअल, बाफना पब्लिकेशन्स (प्रा. लिमिटेड)
5. त्रैमासिक पत्रिका 'Tribe' ट्राइब माणिक्यलाल, वर्मा आदिम जाति शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान, अशोकनगर, उदयपुर (राज.)
6. पॉकेट बुक ऑफ लेबर स्टेटिक्स (वार्षिक) नई दिल्ली
7. कारखाना सांख्यिकी (वार्षिक) नई दिल्ली

Websites :-

1. wwww.savetrchechildren in Child Labour.
2. wwww.wikipedia.org.
3. wwww.ilo/orj-Childl labour- International Labour Organization.
4. wwww.planingrajasthan.gov.in
5. wwww.sakshumoprj. children NGO Labour Organization.
6. wwww.ding.raj.org.
7. wwww.Crv.Org. Child Labour

****

भारतीय परिदृश्य में कन्या भ्रूण हत्या पर एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (उदयपुर जिले के विशिष्ट संदर्भ में)

प्रियंका माहेश्वरी * डॉ. सतीश के. नागर **

शोध सारांश - हमारे देश की यह एक अजीब विडम्बना है कि सरकार की लाख कोशिशें के बावजूद समाज में कन्या-भ्रुण हत्या की घटनाएं लगातार बढ़ती जा रही है।

दुर्भाग्य यह है कि सम्पन्न तबके में यह कुरीति ज्यादा है। स्त्री-पुरूष लिंगानुपात में कभी हमारे समाज के लिए कई खतरे पैदा कर सकती है। इससे सामाजिक अपराध तो बढ़ेगे ही, महिलाओं पर होने वाले अत्याचार में भी वृद्धि हो सकती है।

कन्या भ्रुण हत्या एक गम्भीर चर्चा का विषय है। लेकिन आज तक इस चर्चा को लेकर कोई सुपरिणाम निकल कर सामने नहीं आया है। चलिए आज ये ठान ले कि लिंग परीक्षण व गर्भपान के खिलाफ हमेशा खड़े रहेंगे और अपने समाज को इससे फैलती अनियमितता से बचाएगें।

अगर आपको हमारे द्वारा लिखित कन्या भ्रुण हत्या पर लेख पसंद आता है तो इस आर्टिकल को ज्यादा से ज्यादा लोगों को शेर करे ताकि कन्या भ्रुण हत्या पर रोक लगाने कि एक मुहिम चल सके।

शब्द कुँजी - कन्या हत्या, भ्रूण हत्या, समस्या, मानसिकता, बेटी, बेटा, समाज, आर्थिक, स्वास्थ्य, विकास, शिक्षा, रोजगार, महिलायें, लिंग, भेदभाव, रीति-रिवाज, दिखावा, छलावा, जनसंख्या, गिरावट।

प्रस्तावना - ये लेखन कोई आज उत्पन्न हुई समस्या का विवरण नहीं बल्कि एक लम्बे समय से चली आ रही पीड़ा का बखान इस पीड़ा का नाम है 'कन्या भ्रूण हत्या'। कन्याओं तथा महिलाओं का विलाप है ये जो समाज से आखिर क्यों? का जवाब माँगता है।

इस लेखन में कन्या भ्रुण हत्या का परिचय, इसके कारण तथा इनसे होने वाली समस्याओं और सरकार के द्वारा किये गये प्रयासों का विश्लेषण है।

इस लेखन में कन्या भ्रुण हत्या का विवरण ही नहीं बल्कि समाज के दिखाने व उनको समझाने का भी प्रयास किया है कि ये कितना पीड़ा-दायक व जघन्य अपराध है जो समाज में लगातार कहीं-न-कहीं चोरी छुपे हो रहा है।

भारतीय समाज में बच्चियों को सामाजिक और आर्थिक बोझ के रूप में माना जाता है इसलिए वे समझते है कि उन्हे जन्म से पहले ही मार देना बेहतर होगा। कोई भी भविष्य में इसके नकारात्मक पहलू को नहीं समझता है। महिला लिंग अनुपात पुरूषों की तुलना में बड़े स्तर पर गिरा है (8 पुरूषों पर 1 महिला) अगले पाँच वर्षो में अगर हम पूरी तरह से भी कन्या भ्रुण हत्या पर रोक लगा दे तब भी इसकी क्षतिपूर्ति करना आसान नहीं होगा।

केवल इसलिए कि जन्म लेने वाला बच्चा एक लड़की है, माँ के गर्भ से गर्भावस्था के 18 हफ्तों बाद स्वस्थ कन्या के भ्रुण हो हटाना कन्या भ्रुण हत्या है।

अन्तत: इस लेखन के द्वारा समाज को यह समझाने का प्रयत्न किया है कि लड़की भी प्रकृति की इच्छा है और प्रकृति की क्रियाओं मे हस्तक्षेप न करो क्योंकि अगर ऐसा लगातार चलता रहा तो प्रकृति समाज को भयानक परिणामों का सामना करने पर मजबूर कर देगी। यह लेखन मुख्यत: नौजवानों के लिए प्रस्तुत है जिसकों पढ़कर तथा इससे प्रेरित होकर समाज की क्रुरता भरी मानसिकता को जड़ से उखाड़ फेके।

कन्या भ्रुण हत्या एक गंभीर विषय - कहने को तो हम 21वीं सदी के रहने वाले है। जो कि मॉडर्न सांइस की अनमोल आविष्कारों की बड़ी-बड़ी बातें करते हैं। आधुनिक युग के पीढ़ी है जो कि अपने सारे काम व कारोबार इन्टरनेट के माध्यम से देखते हैं। घंटो सोशल मीडिया पर एक्टिव रहते हैं और न जाने अपने आपको कितने ही सफल और ऊँची सोच रखने वाले मानते है। लेकिन आज भी हमारे समाज में कन्या भ्रुण हत्या जैसी दकियानुसी सोच पनपती है जो कि हमारे इन सारे मॉडर्न युग कि बातों को खोखला कर जाती है। हमें पहले से और पिछला युग का बना देता है।

इस देश में कन्या भ्रुण हत्या का सिलसिला करीब 2 या 3 दशक पहले से चल रहा है। ये सिलसिला तब शुरू हुआ जब देश की मेडिकल सांइस ने 'अल्ट्रासांउड' जैसी तकनीक का उपयोग करना शुरू किया। दरअसल इस अल्ट्रासांउड तकनीक का आविष्कार माँ के गर्भ में पलते बच्चे की स्वास्थ्य अवस्था की जाँच के लिए किया गया था, लेकिन समय के चलते और कुविचार के कारण और पुत्र प्राप्ति की चाह ने आज इसी तकनीक का इस्तेमाल माँ के गर्भ में शिशु की हत्या व गर्भपात के लिए किया जा रहा है।

कन्या भ्रुण हत्या हमारे समाज और आगे की पीढ़ियों के लिए क्या अंजाम लाएगा, ये शायद हम और आप अंदाजा भी नहीं लगा सकते।

कन्या भ्रुण हत्या एक गंभीर चर्चा का विषय है। लेकिन आज तक इस चर्चा का कोई सुपरिणाम निकल के नहीं आ रहा है। चलिए आज से ढान ले कि लिंग परिक्षण व गर्भपात के खिलाफ हमेशा खड़े रहेंगे और अपने समाज को इससे फैलती अनियमितता से बचायेंगे।

तो फिर आइए बेटियों को बेटो के समान दर्जा देने की एक मुहीम छेड़े

*शोधकर्ता, विधि विभाग, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** प्राचार्य, राजकीय विधि महाविद्यालय, गोधरा (गुजरात) भारत

और समाज में जन सतुंलन बनाने में एक खास रोल निभाए।

ऐतिहासिक परिदृश्य – कन्याओं की इस तरह घटती हुई जनसंख्या ने समाज के लिए एक अत्यधिक चिंता भरा प्रश्न खड़ा कर दिया है। प्रत्येक समाज में हर वो स्त्री से होने वाला रिश्ता एक लड़की ही पूर्ण करती है। सोचों, अगर लड़की न होती तो क्या संसार चलता।

अरे! इस 'सर्वदाता सर्वशक्तिमान यथाशक्ति' ने भी प्रथम इस संसार में सनातन धर्म के अनुसार प्रथम मनुष्य 'स्वयंभूमनु' और स्त्री का नाम 'शतरूपा' था तथा इस्लाम के अनुसार प्रथम आदमी का नाम आदम और औरत का नाम 'बीवी हव्वा' था। इनको अपनी इच्छानुसार भेजा था इस संसार को आगे बढ़ाने के लिए कदाचित् अगर बिना औरत के संभव होता संसार का चल पाना तो वह इस निर्णय को ही क्यों लेता? अब, हम–तुम और समाज उस निर्णय में रूकावट डालने वाले कौन होते है।

भारत में प्राचीन काल में किसी प्रकार का लिंग भेद नहीं था, लेकिन धीरे–धीरे सांस्कृतिक पतन के कारण लिंग के आधार पर भेद किया जाने लगा। पुरुषों को महिलाओं से उच्च स्थान प्राप्त हो गया तथा महिलाओं का स्थान समाज में गौण हो गया। नारी की प्रस्थिति निर्माण में पितृसतात्मकता को प्रभाव रहा है।

कन्या भ्रुण हत्या अर्थ एवं अवधारणात्मक विवेचन

कन्या भ्रुण हत्या का अर्थ – गर्भ में जी रहे सजीव जान की हत्या कर देना भ्रुण हत्या कहलाता है लेकिन कन्या भ्रुण हत्या में केवल कन्या भ्रुण हत्या ही शामिल है।

कन्या भ्रुण हत्या जन्म से पहले ही लड़कियों को माँ के गर्भ में मार डालने की क्रिया है।

कन्या भ्रुण हत्या क्या है – अल्ट्रासांउड स्कैन जैसी लिंग परीक्षण जाँच के बाद जन्म से पहले माँ के गर्भ से लड़की के भ्रुण को समाप्त करने के लिए गर्भपात की प्रक्रिया को कन्या भ्रुण हत्या कहते है। कन्या भ्रुण या कोई भी लिंग परीक्षण भारत में गैर कानूनी हैं।

कन्या भ्रुण हत्या के कारण एवं समाज पर प्रभाव – समय–समय पर इस विषय पर निबंध तथा लेख लिखे गये और कई विद्वानों तथा शोधकर्त्ताओं ने भिन्न–भिन्न कारण बतलाये है किन्तु सामान्यत: निम्नलिखित कारण प्रस्तुत है:–

1. वंशानुक्रम वाली भावना – हमारे समाज में यह भावना कूट–कूट कर भरी पड़ी कि उनका वंश आगे बढ़ाने व चलाने वाला सिर्फ एक लड़का ही हो सकता है।
2. दहेज का भय – दहेज व्यवस्था की पुरानी प्रथा भारत में अभिभावकों के सामने एक बड़ी चुनौती है।
3. समाज की गलत मानसिकता व पुरूषवादी समाज में महिलाओं की निम्न स्थिति है।
4. पुत्र को आय का प्रमुख स्रोत माना जाना और यह गलत सोच कि लड़कियाँ केवल उपभोक्ता होती है और यह गलतफहमी कि लड़के ही अपने अभिभावक की सेवा करते है जबकि लड़किया पराया धन होती है।
5. अभिभावक मानते है कि पुत्र समाज में उनके नाम को आगे बढ़ायेगे जबकि लड़कियाँ केवल घर संभालने के लिए होती है।
6. तकनीकी उन्नति होना और उसका दुरूपयोग होना।
7. स्त्री–विरोधी नजरिया कि विवाह होने पर लड़का एक पुत्रवधु लाकर घर की लक्ष्मी में वृद्धि करता है जो घरेलू कार्य में अतिरिक्त सहायत देती है एवं दहेज के रूप में आर्थिक लाभ पहुँचाती है जबकि पुत्रियाँ विवाहित होकर चली जाती है और दहेज के रूप में आर्थिक बोझ होती है।
8. स्त्री से हिकारत का एक और कारक है धार्मिक अवसर, जिनमें हिन्दू परम्पराओं के अनुसार केवल पुत्र ही भाग ले सकते है जैसे कि माता–पिता की मृत्यु होने पर आत्मा की शांति के लिए केवल पुत्र ही मुखाग्नि दे सकता है।

समाज पर प्रभाव – कन्या भ्रुण हत्या हमारे समाज को कहीं नहीं लेकिन एक अंधेरे काने में ले जाएगा जहाँ से किसी भी दिशा में जाना मुमकिन नहीं होगा।

संयुक्त राष्ट्र ने हाल ही मे ये जारी किया है कि भारत में बढ़ती कन्या भ्रुण हत्या एक चिंता का विषय है जो कि आगे जाकर देश में कई तरह के जुर्म को जन्म देगा। समाज में कम महिलाओं की बजह से सेक्स से जुड़ी हिंसा के साथ–साथ बाल अत्याचार और बाल विवाह को भी जगह मिल जाऐगी।

कन्याभ्रुण हत्या मानव तस्करी का सबसे बड़ा कारण बन जाएगा जो कई जिंदगियों को नर्क से भी बत्तार कर देगा और फिर जन्म लेगा, हिंसा, अपमान और अपमान के बदले की भावना जो एक खुशहाल समाज को हिंसावादी समाज में बदलने के लिए देर नहीं लगाएगा। वक्त रहते हमें सतर्क हो जाना होगा।

आज के युग में हर क्षेत्र में लड़किया लड़कों को कंधे से कंधा मिलाकर टक्कर दे रही है।

कन्या भ्रुण हत्या रोकने के लिए उपाय – अब समय आ गया है कि कन्या भ्रुण हत्या जैसी समस्या को समाज से पूर्ण रूप से समाप्त कर दिया जाएं इसके लिए सरकार व कानून के साथ देश के प्रत्येक नागरिक को भी मानसिक रूप से अपनी सोच को ऊँचा उठाना होगा।

बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओं – देश की बेटियों की रक्षा और उन्नति के लिए प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओं के नाम से एक योजना का शुभारम्भ किया गया है। सरकार द्वारा सुकन्या समृद्धि योजना की शुरूआत की गई है साथ ही लड़कियों के हित और विकास के लिए केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा अनेक योजनाएं चलाई जा रही है।

नियंत्रण के प्रभावकारी उपाय – भारतीय समाज में होने वाली कन्या भ्रुण हत्याओं के कारणों का हमें ध्यान देना चाहिए व नियमित तौर पर एक–एक करके सभी को सुलझाना चाहिए इसके ऊपर नियंत्रण के लिए कानूनी शिकंजा सख्त होना चाहिए।

भारत के सभी नागरिकों द्वारा इससे संबंधित नियमों का कड़ाई से पालनइस जघन्य अपराध में शामिल अभिभावक परिवार, चिकित्सक सभी पर सख्त कार्यवाही होनी चाहिए।

गैर कानूनी लिंग परीक्षण और गर्भपात के लिए खासतौर से मेडिकल उपकरणों के विपणन को रोकना चाहिए। युवा जोड़ों को जागरूक करने के लिए नियमित अभियान और सेमिनार आयोजित करने चाहिए। महिला सशक्तिकरण होना चाहिए जिससे कि वे अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो सके।

कन्या भ्रुण हत्या को रोकने के लिए हमें सबसे पहले लड़कियों के प्रति हमारी सोच और जनरिया बदलना होगा। हमे लड़कियों की इज्जत कर उन्हें लड़कों के बराबर का दर्जा देना होगा।

कन्या भ्रुण हत्या को पैदा करने वाली 'दहेज प्रथा' को जड़ से उखाड़ फेंकना होगा। हमें लड़कियों के लिए अपने समाज में एक सुरक्षित वातावरण

बनाना होगा जहाँ कोई भेदभाव और कोई दकियानूसी सोच को कोई जगह न मिले। कन्या भ्रुण हत्या को रोकने के लिए सबसे पहले हमें अपने आप की सोच को बदलना होगा।

कन्या भ्रुण हत्या रोकने के लिए सरकार की पहल, कानूनी उपाय – पहली बार कानून का उल्लंघन करने पर 3 साल की कैद और 50,000 रूपये तक का जुर्माना भी हो सकता है तथा कानून का दोबारा उल्लंघन करने पर 1 लाख का जुर्माना व 5 साल की कैद की व्यवस्था है।

अस्पतालों व क्लीनिकों की लिंग की जाँच में दोषी पाये जाने पर उनका मेडिकल लाइसेंस की रद्द करने की व्यवस्था है।

न्यायिक परिदृश्य और गैर सरकारी संगठनों की भूमिका

सरकार के द्वारा उठाये गये कदम – सरकार के द्वारा किये गये प्रयासों में कन्या भ्रुण हत्या के प्रतिबंध के लिए कानून व समाज में कन्या के प्रति जागरूकता लोने के लिए योजनाएँ लागू की गई है।

1. गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम 1971
2. PNDT अधिनियम, 1994 तथा PCPNDT अधिनियम 2003
3. सरकारी योजनाएँ
4. समेकित बाल विकास सेवा
5. कस्तूरबा गाँबी बालिका आवासीय विद्यालय योजना
6. लाडली योजना
7. बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओं योजना
8. सकुन्या योजना
9. जननी सुरक्षा योजना
10. राजश्री योजना

न्यायिक परिदृश्य – प्रसवार्थ निदान तकनीकी अधिनियम 1994लिंग की जाँच और जाँच के बाद गर्भ की हत्या के खिलाफ कानून – भ्रुण का लिंग परीक्षण करने के विरोध में हर अस्पताल के मुख्य द्वार पर इससे संबंधित इश्तेहार देना अनिवार्य है।

निष्कर्ष – हमारे देश की यह एक अजीब विडम्बना है कि सरकार की लाख कोशिशें के बावजूद समाज में कन्या–भ्रुण हत्या की घटनाएं लगातार बढ़ती जा रही है।

दुर्भाग्य यह है कि सम्पन्न तबके में यह कुरीति ज्यादा है। स्त्री–पुरूष लिंगानुपात में कभी हमारे समाज के लिए कई खतरे पैदा कर सकती है। इससे सामाजिक अपराध तो बढ़ेगे ही, महिलाओं पर होने वाले अत्याचार में भी वृद्धि हो सकती है।

सुझाव – कन्या भ्रुण हत्या एक गम्भीर चर्चा का विषय है। लेकिन आज तक इस चर्चा को लेकर कोई सुपरिणाम निकल कर सामने नहीं आया है। चलिए आज ये ठान ले कि लिंग परीक्षण व गर्भपान के खिलाफ हमेशा खड़े रहेंगे औरअपने समाज को इससे फैलती अनियमितता से बचाएगें।

अगर आपको हमारे द्वारा लिखित कन्या भ्रुण हत्या पर लेख पसंद आता है तो इस आर्टिकल को ज्यादा से ज्यादा लोगों को शेर करे ताकि कन्या भ्रुण हत्या पर रोक लगाने कि एक मुहिम चल सके। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी द्वारा चलाए जा रहे अभियानों में बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओं, सुकन्या योजना, राजश्री योजना, जननी सुरक्षा योजना आदि को सफल बनाने में पूर्णरूप से योगदान देने की जरूरत है। और सभी समाजों एवं पूरे देश के सभी नागरिकों को अपनी मानसिकता को बदलने की जरूरत है। जिसमें बेटी को महत्व देना आवश्यक है।

संन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. लैंगिक मुद्दे, **'सिविल सर्विसेज क्रॉनिकल',** जून– 2012, दिल्ली, पृ.सं. 81–82
2. अनिल कुमार, 'वर्तमान सामाजिक परिदृश्य में महिला हिंसा', वींरेन्द्र सिंह यादव (संपादित),**'इक्कीसवीं सदी का महिला सशक्तीकरण : मिथक एवं यथार्थ'** दिल्ली आमेगा पब्लिकेशन्स, 2010, पृ. 268
3. सुधारानी श्रीवास्तव, **'महिला उत्पीड़न और वैधानिक उपचार'**, दिल्ली : अर्जुन पब्लिशिंग हाउऩस, 2009
4. मैत्रेयी चौधरी, **'इण्डियन वीमेन मूवमेन्ट : रिफॉर्म एण्ड रिवाइवल',** दिल्ली, रेडियन्ट, 1993, पृ. 182–183
5. गोपा जोशी, **'भारत में स्त्री असमानता एक विमर्श'**, दिल्ली : हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्व विद्यालय, दिल्ली, 2006, पृ. 248
6. सुभाष शर्मा, **'भारत में महिला सशक्तीकरण : दशा एवं दिशा',** मानव अधिकार पत्रिका 'नई दिशाएँ', वार्षिक अंक 7, 2010, पृ. 30 एवं **हमारा हक** : इंदिरा गाँधी पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास संस्थान, जयपुर, द्वितीय संस्करण, 2012 पृष्ठ 17–27
7. शर्मा, रमा एवं मिश्रा, के. एन. **महिलाओं के कानूनी, धार्मिक एवं सामाजिक अधिकार,** दिल्ली : अर्जुन पब्लिशिंग हाउऩस, 2006, पृ. 226
8. घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005

****

An Overview on Education for All and Delors Report

Prof. Krishna Kant Sharma*

Abstract - In 1990 a world conference was held in Thailand on the topic : Education for All. This conference decided that all countries will provide compulsory and free basic general education for the children of their respective countries, and the countries which are incapable of doing so within their resources, they will be given economic assistance by the developed countries and World Bank. Ever since, India has executed several projects for extension of basic general education, the important of which are District Primary Education Programme (DPEP), Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) and Education Guarantee Schema (EGS). Further In 1993, UNESCO appointed the International Commission on Education for Twenty-first Century under the chairmanship of Jacques Delors of France. In the view of the commission, there will be four bases of education in the twenty-first century : 1. Learning to know, 2. Learning to do, 3. Learning to be, and 4. Learning to live together. In this paper Education For All and Delors Report has been discussed in brief.
Key Words - Education For All, Delors Report, Learning The Treasure Within.

Introduction - In 1990 a world conference was held in Thailand on the topic : Education for All. This conference expressed its concern on the lack of facilities for basic general education in some countries, and it was accepted as a global problem. At the end of the conference, the World Declaration on Education for All was issued, which is as under :

"Every person shall be able to benefit from educational opportunities designed to meet basic learning needs. These needs comprise both essential learning tools (such as literacy, oral expression, numeracy and problem-solving) and the basic learning content (such as knowledge, skills, values and attitudes) required by human beings to be able to serve, to develop their full capacities, to live and work in dignity, to participate fully in development to improve the qualities of their lives, to make informal decisions and to continue learning." —World Declaration on Education for All : Thailand World Conference, 1990

This conference also decided that all countries will provide compulsory and free basic general education for the children of their respective countries, and the countries which are incapable of doing so within their resources, they will be given economic assistance by the developed countries, also the World Bank will render the economic assistance. As a result, special attention was paid to provide basic general education in educationally backward countries. The Education for All was also started in India, its chief aims were as follows

1. Extension of early childhood care and development processes.
2. Universalisation of primary education.
3. Eradication of illiteracy.
4. Provision for taking benefit from educational opportunities.
5. Use of education as a tool of achieving women equality.
6. Improvement in contents of education and its process.

In the meantime, we multiplied our resources and on the other, obtained economic assistance from developed countries and World Bank, and thus the Education for All was run as a movement. Ever since, we have executed several projects for extension of basic general education, the important of which are District Primary Education Programme (DPEP), Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) and Education Guarantee Schema (EGS). It is due to these programmes that despite our rapidly increasing population, the government has succeeded to provide basic general education to about 90% of the children. Public support has also been mobilized in this task. This is another thing that we have not succeeded in eradicating illiteracy as yet.

Delors Commission - The UNESCO (United Nations Educational, Scientific and Cultural Organisation), in 1993, appointed the International Commission on Education for Twenty-ûrst Century under the chairmanship of Jacques Delors of France. The members of this commission comprised of 14 members from different countries, including Dr. Karan Singh from India. The report of this commission was published in 1996 by the name of 'Learning : The Treasure Within'. In this article, Delors has explained how education plays an important role in individual and social development. After this, he expressed regret that we have made much progress in the twentieth century, but everybody could not be benefited by it; therefore, the educational

*Dean (Education) University of Kota and Principal, Bhagwati P.G.T.T.College, Gangapur City (Raj.) INDIA

system in the twenty first century will have to be made such that everybody is benefited by the progress, and the world is emancipated from the evils of ignorance, poverty, cruelty and war. He made out this fact also that globalization will take place in each field in the twenty—first century, which will enhance interdependence of countries. It would present newer problems in different fields of life, and lifelong learning will have to take place in order to understand and solve them. The concept of lifelong learning is different from the concept of continuing education. It includes learning of modem knowledge and skill along with understanding and solving any problems faced in individual, social and any other field. In the view of the commission, there will be four bases of education in the twenty first century : 1. Learning to know, 2. Learning to do, 3. Learning to be, and 4. Learning to live together. The chapter 4 of the commission's report present these as the four pillars of education. These four pillars are given hereby in brief:

Learning to Know - Learning to know is somewhat different from acquisition of knowledge. In general it means to acquire knowledge as well as to know the methods of acquiring knowledge, but its specific meaning tend to know the existence of human being as well as to know the methods of understanding his existence. Now the people will have to understand the whole world, so that they can live in dignity at the least, cultivate professional skills in them and establish communication with other people. Also, they will have to cultivate such learning within them by which they can feel joy. In the view of Delors Commission, the more knowledge we possess, the better can we understand the different aspects of our environment.

In the opinion of Delors commission, to understand the rapid changes occurring due to scientific progress and social processes, and cultivate skill to work accordingly, the following will be necessitated in the twenty first century -

(1) Basic education will have to be expanded. In it general knowledge, mother tongue and other languages should will have to be made compulsory. General knowledge will help children to know the world, while learning other languages will help them to establish communication with others. Also, the children should have be trained in learning methods right from the beginning. In the view of the commission, the children should be trained in learning methods. especially in focusing concentration, memorizing and thinking, and this task should be started right from infancy. In the view of the commission, these are the methods of learning which can help learn lifelong.

(2) Specific education should have to follow basic education. In the commission's view, secondary and university education courses should be constructed on the basis of scientific disciplines, and these levels should impart specific and clear knowledge of some subjects. The commission believes that it will inculcate a desire for lifelong education in the individuals. Also, the learners should be trained in reflection-oriented methods of learning, they should be made proficient in problem-solving, and inductive—deductive thinking. These are the methods which will help them learn lifelong.

Learning to Do - Delors Commission has taken learning to do in a little more wider sense, learning to perform a job as well as gaining competence in understanding the new circumstances in the field, and in changing and modifying his method and style of working: In this connection, Delors report says that, at present, different types of economic systems are being running in the world; two of which are the important. One, in which most people are salaried and employed. This system is present in the industrial communities. Two, in which people establish their own businesses. According to Delors Commission. the first type of industrial communities require learning as well as skill training. Not only this, this type of communities require to learn professional skills as well as social skills and communication skills. Also, the people have to develop common sense. decision-making power and leadership qualities. The commission has explained that in the twenty-first century, most of the countries in the world will have the industrial system; therefore, it is essential that children are trained in these skills right from the beginning. So, it becomes necessary that—

1. The provision for work experience and social service will have to be compulsorily made along with formal education.
2. Peoples should be given opportunities to learn lifelong. For lifelong learning the societies have to be transformed into 'learning societies'. By 'learning societies' the commission means such societies in which are given different opportunities for obtaining knowledge and skill in social, cultural and economic fields, along with imparting of formal education. Taking part in real-time activities in these fields will help develop common sense, decision making power and leadership skill. And the most important thing is that they will inculcate far-sight and insight.

Learning to Be - In 1972, the UNESCO published the 'Edgar Faura Report : Learning to Be'. In which a concern was expressed for the in humanisation taking place in the world, and emphasis was laid upon providing such education which enables an individual to solve his problems himself, take his decisions himself and carry out his responsibilities himself. In the view of Delors Commission, the recommendations of Edgar Faura Report will be as useful for the twenty-first century as they were for the twentieth century. because each individual in the twenty-first century will have to take some independent decision in order to become something and advance at all times, and understand his personal responsibility with a will to carry it out. In the opinion of Delors Commission, such an educational system is needed in the twenty- first century by which -

1. The aptitude and latent talents of children and peoples can be brought out.
2. Children's personality can be fully developed.
3. Physical abilities and mental abilities (memory,

reasoning, imagination) can be developed in children.

4. Social skills and aesthetic sense and communication skills of children can be cultivated together with leadership ability.

In the opinion of the commission, only such people will be able to guard themselves in the twenty-first century.

Learning to Live Together - In the view of Delors commission. interdependence of nations will increase in the twenty-first century. and education will have to prepare people to live together. Living together means people cooperating with one another and live in harmony. In the commission's view, the first thing for this is to cultivate the ability to understand one another. Unless all people are able to understand others, they will not like to live together. Our modern needs have so expanded today that we are no more self-dependent even in our family, social and national matters, leave alone international level. In the view of the commission-

1. Education should train children to understand others.
2. Children should be trained to cooperate with one another for the attainment of goals right from the beginning.
3. The commission has explained that when people come nearer. some conflicts can arise among them. Therefore. education will have to train them in subsidizing conflicts. and they will have to be trained in eradicating conflicts on the bases of human values.
4. The commission has clarified that now all nations of the world will have to resolve their mutual differences, will have to sow the seeds of peace instead of that of wax, and will have to solve one another's problems in mutual cooperation. Therefore. it is essential that children be trained to live together right from the beginning and be taught a lesson of peace and harmony in place of conflict and struggle.

Conclusion - Delors Commission. as appointed by the UNESCO in 1996, has recommended to base education on four pillars, which are learning to know, learning to do, learning to be and learning to live together. If we look carefully, we can find that these functions are being performed by education in all countries; the recommendations in Delors Commission have only extended them and have presented them in a new way. These tasks have to be accomplished by education in the changing international perspective and globalization.

References :-

1. Delors, J. et. al (1996).Learning the Treasure Within. Paris, UNESCO
2. Hallak, J. (1991). Education For All: High Expectations or False Hopes? Paris, IIEP,UNESCO
3. NUEPA (2004). Education For All Towards Quality With Equity. New Delhi
4. https://www.educationforallinindia.com

****

Women and Democracy in India: A Study of their Role in Democratic process

Jan Mohammad Dar* Dr. Ravi Ranjan**

Abstract - Democracy is the most popular form of government in the contemporary world, as it derives its legitimacy from the people. Without democracy, no nation can achieve a goal of national unity. India is the world's largest democratic country and guarantees equal opportunities for both men and women. Women are an integral part of any democratic society and help in deepening of democracy at every level, especially at the grass root level. The present study highlights the struggle of women during and after independence period, and states how their struggle has gone unsung and unrecognized in strengthening democracy at the grass root level. Women's participation is important in the political affairs of state and for the healthy functioning of democracy.

Key words- women, empowerment, democracy, freedom struggle, political participation.

Introduction - "***You can tell the conditions of the nation by looking at the status of its women***"

- Jawaharlal Nehru

India is the largest democracy in the world constitutes almost half of the population. The Indian Constitution facilitates equal political rights to the women by legitimizing participation in public affairs in day to day life. Women empowerment has always been the top agenda of most of the global democracies. Even the developed nations like US, Japan, or the European nations have not yet overcome this curse. Although, the developed nations have equally fought this issue but still the empowered of women have despised in many ways.

According to the constitution of India, all citizens are equal and there should be no discrimination on the base of gender. But, in reality, women are totally segregated in all fields and are marginally represented in the Indian political system. Equality cannot be achieved unless women have adequate representation in the law making bodies. Women are getting representation, but in terms of percentage, it is totally neglected. Women in India have underestimated almost all the sectors including the political sphere. As far as statistical figures of the election commission of India are concerned, women participation has remained considerably low. Women in India constitute almost 50% of the electorate, however, the proportion of women in parliament has not exceeded 10% of the total elected candidates. Therefore, a complete overhauling of the system is the need of the hour.

Women participation - Women are the world's largest excluded group in political arena. 21.9 % of the members of national parliament worldwide are women. Women hold 16.0 % of the seats in Arab state parliaments and 21.8 % of the seats in Sub -Saharan African nation's parliament. In Americas, women hold 26.6 %.On the other hand in the developed nations of USA, France and Japan 18.3 %, 26.2 %, 8.1 % respectively of the House of Representatives of Lower House of parliament are comprised of women. In Palestine 13.0 % of the Legislative Council members are women and in Morocco women make up a mere of 17.0 % of Parliament. In India women comprised 11.4 % of National Parliament

Articles 14,15,16,19,325 and 326 of the constitution of India guarantee political equality and equal right to take part in political activities like right to vote, contest elections etc. While the casting of vote is more or less satisfactory, the right to equal political representation of women is not achieved yet. The Indian women have a lot to do and a long way to complete the goal of participation as an electoral candidate so far as elections are concerned.

In the first Lok Sabha elections (1952-57) out of four hundred sixty-six seats 23 were won by women members with a 4.9 percent, but two among them were appointed as ministers. Raj kumari Amrit kour was first cabinet minister and maragatham Chandrasekhar. The second lok sabha (1957-62) had 24 women members out of total 474 seats with a 5 percent total. In the third lok sabha (1962-67) out of 500 seats 37 were won by women candidates. The percentage of women members increased to 7.4 percent and also the women members increased in decision-making process that is 8. The fourth Lok Sabha (1967-70) had only 31 women members out of 505. The percentage of women was 6.3 percent of total members. During this period the women members in the decision-making process decrease

*Research Scholar, SOS in Political Science and Public Administration, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Assistant Professor (Political Science) Government Post Graduate College, Morena (M.P.) INDIA

as compared to third. In the fifth Lok sabha (1971-77) only 22 women members won seats out of 510, in this election the ratio of women representation decreases i.e. only 4.2 percent. The women ministers were also low, only 4 in council of ministers, including prime minister Indra Gandhi. The sixth Lok Sabha (1977-79) the number of women candidates dropped sharply to only 18 members out of 533, which makes 3.3 percent. It was overall very low in all elections so far. The sixth Lok Sabha had only one cabinet minister. In the seventh Lok Sabha (1980-84) out of 551, there were only 32 women members, the percentage is 5.8 percent Indra Gandhi becomes once again prime minister and six other women become the part of decision makers. In the eighth Lok Sabha (1984-89) 8.5 percent of women elected in the Lok Sabha, 46 out of 538 members, out of these 46 only 10 members were able to take part in the decision making process. During the ninth Lok Sabha (1989-91) once again the number of women members declined considerably to 29 out of 529, which comprises 5.4 percent. There were only two women in decision-making process namely Minaka Gandhi and Usha Singh.

The tenth Lok Sabha elections were held in (1991-96), in this election the representation of women considerably increased 39 out of 509 which comprises 7.1 percent. In elections five women members become ministers. Eleventh Lok Sabha (1996-97) 40 women members won out of 545 with a 7.3 percent of the total. In these elections under 13 days BJP government single women minister Sushma Swaraj, who holds the portfolio of information and broadcasting. In the twelfth Lok Sabha (1998-99), out of 545 seats, 44 were won by women, with 8 percent. Four women members become ministers. In the thirteenth Lok Sabha (1999-2004) 48 women candidates were elected out of 545 seats with an average percentage of 8.8 out of them, 10 were given ministership. In the fourteenth Lok Sabha (2004-2009) 8.2 percent of women elected, which means 44 out of 542 total members. Seven were given ministership. The fifteenth Lok Sabha election (2009-14) out 545 seats only 58 women members elected which comprises 10.68 percent. In this election nine women were given ministry in the council of ministers.

The participation of women in the Lok Sabha has been very low. Although half of population constitute women electorate, their participation in the Lok Sabha has not been satisfactory. Women contesting elections still very low percentage of one or two of the total number of contestants. For instance, in the Lok Sabha, the representation of women gradually grows up (in the 6th lok sabha election) it was 3.4% but if we see towards 8th lok sabha 8.1%. We have seen from first election there are only 4.41 but in 16th election there are 11.4 women members it means, it is gradually increasing but we cannot say it is satisfactory because if we see towards other neighbouring countries like Nepal 40, Afghanistan at 45, China at 71, India ranked 141 in world rankings of women in national parliament. The 16th Lok Sabha in India (2014) comprised 62 women members only 11.41 % of the total Lok Sabha membership. While it has increased from 9.02% in 1999, it is almost half of the world average of 22.2%. The Rajya Sabha does not fare much better, with 29 women members comprising 11.9% of the total membership in 2014. Again, while this is an improvement from the 1999 figure of 7.70% it is far below the world average of 19.6% it comes as no surprise then that India is ranked 141 in the world rankings of women in national parliaments, compiled by the inter - parliamentary union. India's rank is one of the lowest in the region and falls below her neighbors, Nepal ranked at 40, Afghanistan at 45, China at 71 and Pakistan 86.

Table 1 : Position of Women in National Parliament

Year	Seats held by women	%of female members	Year	Seats held by women	%of female members
1952	22	4.41	1989	27	5.22
1957	27	5.50	1991	39	7.17
1962	34	6.76	1996	39	7.18
1967	31	5.93	1998	43	7.92
1971	22	4.22	1999	49	9.02
1977	19	3.49	2004	45	8.28
1980	28	5.15	2009	58	10.68
1984	44	8.09	2014	62	11.41

Source: Election commission of India.

Table 2 : Position of Women in Rajya Sabha

Year	Seats held by women	%of female members	Year	Seats held by women	%of female members
1952	15	6.94	1984	24	10.24
1954	16	7.3	1986	28	11.8
1956	20	8.6	1988	25	10.59
1958	22	9.5	1990	24	10.34
1960	24	10.2	1992	17	7.29
1962	17	7.6	1994	20	8.36
1964	21	8.8	1996	19	7.81
1966	23	9.6	1998	19	7.75
1968	22	9.2	2000	22	9.01
1970	14	5.8	2002	25	10.20
1972	18	7.4	2004	28	11.43
1974	17	7.0	2006	25	10.41
1978	25	10.2	2010	27	11.11
1980	29	11.9	2012	28	11.43
1982	24	9.8	2014	29	11.9

Source: Election commission of India

Women in Panchayat Raj Institution - The constitutional amendments of 73rd and 74th have increased the women representation. With the help of these constitutional amendments, over three million women are directly participating in law making policies and programs of country. Recent decades have increased an international trend towards the decentralization for the development of local governance. The importance of this constitutional amendment is to generate constitution status to women in local self-government, to raise their political participation.

Various state governments are in favour of women

political empowerment, they have increased reservation for women from one-third to 50 percent. This gave the women to exercise their political rights in local governance and is steadily giving new opportunities to more women in the grass root governance. Political participation of Indian women, started from the freedom movement. The constitutional amendment 73rd and 74th Act have witnessed in the development of new federal democratic set-up of the country and make the local self-government constitutionally governed body. Due to the negligence of state and center government these amendments have not been established. Women in India are much better represented in the Panchayat Raj institutions as compared to the parliament. As per the Ministry of Panchayat Raj, in 2008 the Gram Panchayat had 37.8% women members, the Intermediate Panchayats 37 % women members'. The total representation of women in all three tiers of the Panchayat amounted to 36.87 %. This seems to be a result of Article 243 D of the Indian constitution, mandating at least 1/3rd of the seats in all tiers of the Panchayat.

Freedom struggle - Women's first participation in the freedom movement was the swadeshi movement of Bengal during 1905-1908. The most precious jewelers, money etc. donated by nationalist women to the movement. they participate in the boycott of foreign goods and participated in the revolutionary movement as well. In December 1917 Anne Besant, and few other members meet the British viceroy Mr. Montague demands Indian women to right to vote in elections. During this time various all-India women's organizations were founded. In 1926 all India national conference was held, in which women actively participate and took the question of women's suffrage, labour issues relief and nationalist work.

The great women leaders of Indian freedom movement like Sarojini Naidu, Kamala Devi Chattpadhyay, Aruna Asaf Ali a great supporter of women's rights. Saroja Naidu was instrumental in the passage of a resolution to favour women's franchise and she becomes the first women president of Indian national congress at its Kanpur session in 1925. Kamala Devi Chattpadhyay takes part in the Satyagraha movement of the 1930s. The women's participation in freedom movement, beyond any doubt, political struggle for independence consuminated in a constitution based principle equality of all, in all matters especially equal rights to suffrage for women, in the year 1947 itself. Although very few numbers of women members present in the constituent assembly held on December 9, 1946, "only nine members were present, to add color to a score dominated by Gandhi caps and Nehru jackets."After independence, women were ready to participate in the political activities but due to certain barriers like (societal economic and patriarchal factors) such expectations remains incomplete.

Conclusion - History has witnessed that women had not enjoyed the political rights and was not being treated as a Citizen and compared with the aliens and slaves. The human civilization progressed by leaps and bounds but its role in the enlightenment of the rights of women lagged behind. The status of women suppressed and oppressed by the name of patriarchy, sex, gender, irrationality etc. long-term improvements in education and awareness opportunities will play a positive role in the overall development of women. In the short term, significant progress can be achieved by strengthening and expanding essential awareness among masses about gender equality, improving policies, and promoting favorable atmosphere for women. The progress of nation cannot be achieved unless the Women have not treated equally in every walk of life. If India is a world's largest democratic country and asserts all rights are equal to the men and women then why the women faced discrimination? The state actors and non-state actors must jointly come forward to raise the issue of the rights of women and provide them equal opportunity and do not segregate them in any field.

References :-

1. ApamaBasu, "*Role of women in Indian struggle for freedom*, Allied Publishers, New Delhi, 1970.
2. Bipan Chandra, "*India,s Struggle for Independence 1857-1947"*penguin, 1988, pp. 128-29.
3. Brass, paul, ethnicity and nationalism, theory and comparison. Sage, New Delhi, 1991.
4. Devi Lakshmi, women empowerment and societal improvement, Anmol publications, New Delhi 1998.
5. Electoral statistics Pocket Book 2014, Participation of women.
6. International Journal of Behavioral social and movement sciences, vol, 1, Oct. 2012.
7. Inter Parliamentary union (IPU) as of 1 Feb. 2014.
8. KalpanaRoy, women in Indian politics, RajatPublication, Delhi, 1999.
9. Prem Singh Bisht ,women in Indian Politics ,Kunal books ,11,Daryaganj ,New Delhi, 2010 .
10. Ranjana kumara, " introduction," in fredrich ebert stiftung, *women in politics: forms and processes,* New delhi: Har Anand publications, 1993, p. 5.
11. The constitution (seventy-third amendment) Act 1992, covering the panchayati raj institutions and the constitution (seventy-fourth Amendment) Act covering the urban local bodies (nagarapalika Act) were passed by the Indian parliament on 22 December 1992 and came into force in April.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Production Problems of Horticulture Sector in Jammu and Kashmir: A Case Study of District Anantnag

Mushtaq Ahmad Khan* Dr. K.K.Vaidya**

Abstract - Horticulture is a sunrise sector for the growth and upliftment of country's Gross domestic product (GDP) and has been considered as an important and emerging growth sector of agriculture. It offers a wide range of choices to the farmers, cultivators, growers, labourers of crop diversification and provides employment opportunities to horticulture specialists, and involves more and more people in the industry in one way or the other. There has been a significant change in the pattern of cropping structure after independence. This was due to the outcome of growth of irrigation infrastructure, introduction of new technology and commercialization of agriculture. There was huge decline in the area under agricultural crops and spurt in the growth of horticultural activity. The horticulture sector has great potential of improving employment, reducing poverty, decreasing income inequality and supporting the income standard of people of the state especially in rural area. From the last 10 years the area under horticulture increased by around 2% per annum and annual production increased by 6.0%. Among all the horticulture products the annual returns and the compound growth rate of production of apples is more than any other horticulture products.
Key words: Horticulture, GDP, diversification, problems, commercialization.

Introduction - The word horticulture has been derived from the two Latin words "Hourtus" means "Garden" and "Colere" means "Culture". Horticulture is the art and science of growing and handling fruits, nuts, vegetables, herbs, flowers, foliage plants, woody ornamentals and turf by one way or the way most people are engaged with horticultural sector. Horticulture feeds us, improves our environment, and through science, it helps and finds answers to tomorrow's problems. It has also been observed that from various studies that demand for horticultural crops is raising in domestic as well as overseas markets. Therefore, development of better hybrids, rejuvenation of old orchards, pest and nutrient management, post-harvest management and protected cultivation should be accorded high priority for increasing crop yields. Off-season crop production under protected conditions can be taken up as the best alternative to land use systems and also for the use of resources more efficiently. Multi-location evaluation and development of package of practices for different varieties of vegetables and flowers under protected cultivation should be undertaken. Low cost structures for protected cultivation for various locations should also be evaluated. India is the fruit and vegetable basket of the world. India being a home of world wide variety of fruits and vegetables holds a unique position in production figure among other countries. In India area under horticulture corps is increasing at a very rapid rate that is visible from the data available that a total area has increased from 5.51 million hectares in 2005-06 to 24.85 million hectares in 2016-17. In terms of production and productivity horticulture sector has shown a remarkable performance from 58.7 million tons in 2005-06 to 300.6 million tons in 2016-2017.

Jammu & Kashmir is home to some world famous varieties of fresh fruits, dry fruits, honey and saffron. Horticulture is one of the most vibrant sectors for the state economy. Horticulture is the backbone of Jammu and Kashmir economy and its role in states economy is increasing day by day. It provides direct and indirect employment to about 23 lakh people and has potential for further growth. Keeping this in view the state government has declared horticulture a thrust area and is taking a number of steps to boost it. Almost a century ago in the words of Sir Walter Lawrence, the European settlement commissioner of erstwhile Maharaja of Kashmir "Kashmir is the country of fruits, and perhaps no country has greater ambience for horticulture; as indigenous apple, pear, vine, mulberry, walnut, hazel, peach, apricot, raspberry, gooseberry, and strawberry can come into possession without much trouble in most parts of the valley".

Among the various tropical and subtropical fruits, Jammu and Kashmir is the major producer of apple and walnuts in India. As the dominant crops of the valley *"Apple and Walnut"* proudly represents the fruit industry of state. About 70 percent of apple and 90 percent of walnut production in India comes from the state of Jammu and Kashmir and the state has been declared as the "Agri.

*Research Scholar (Economics) Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Professor, Govt. MLB Collage of Excellence, Gwalior (M.P.) INDIA

export zone for apples and walnuts" (Darzi, 2016).

Importance Of The Study - The importance of the study would inform and assist farmers through proper practical trainings to identify a more suitable practice for horticultural production to increase their productivity. Second, the study cost benefit analysis's of horticultural production will help policy makers on the need for highlighting and spreading of information on various horticultural products. Third, this study will bestow to existing literature on the practice of new technology in developing nations. From economic view point, horticultural products are the most widely grown all over the world. Nearly half of the production is consumed as fresh fruits and remaining of the production is used for various purposes like in making medicine, juices, jams and fruit butter.

Research Methodology and Objectives of the Study - The data was collected through primary sources only. The data was collected from 150 respondents in four villages of district Anantnag namely Khiram, Sirhama, Sallar, and Frislan. Random sampling was done as per the study requirement.

The objectives of the research work must be identified by taking the system requirements into account. In the process of identifying the objectives of research, the researcher will finalize the research questions, sets the hypothesis and ultimately will draw out the boundary of the study. For the present study the following objective has been setup:

- To find out the production problems of horticulture sector.

Problems of farmers in Horticulture sector in district Anantnag - Horticulture has emerged as one of the potential agricultural enterprises in accelerating the growth of economy. Its role in the country's nutritional security, poverty alleviation and employment generation programmes are becoming more important day by day. It offers not only a wide range of options to the farmers for crop diversification, but numbers of agro-industries which generate huge employment opportunities are also coming up. In spite of all the efforts, horticulture farmers or growers of the study district are facing lot of constraints in different areas which hamper the working environment of horticulture farming.

To find out the most significant factor which influences the respondents, Garret's ranking technique was used. As per this method respondents have been asked to assign the rank for all factors and the result of such ranking have been converted into score value with the help of following formula.

Present position= *100(Rij-0.5)/Nj*

Rij=rank given for the ith variable by jth respondent

Nj=no. of variable ranked by jth respondent

With the use of Garret's table, the present position estimated is converted into scores. Thus for each factor, the scores of each individual are added and then total value of scores and mean value of scores is calculated. The factors having highest mean value is considered to be the most important problem.

Production Problems faced by horticulture growers in District Anantnag - In order to find out the production problems faced by horticulture growers in district Anantnag Henry Garret's ranking technique is used to analyse the production problems faced by the respondents of district Anantnag. The respondents have been asked to allocate the rank for all the problems and challenges and the result of such rankings have been transformed into score value with the help of following formula.

Production problems faced by horticulture cultivators in district Anantnag:

Table no.1.Present position and Garret value. (Production problem)

100(Rij-0.5)/Nj	Calculated value	Garret value
100(1-0.5)/6	8.33	77
100(2-0.5)/6	25	63
100(3-0.5)/6	41.66	54
100(4-0.5)/6	58.33	46
100(5-0.5)/6	75	37
100(6-0.5)/6	91.66	23

Table 2 & 3 (see in next page)

Fig. No. 1.Production problems in district Anantnag

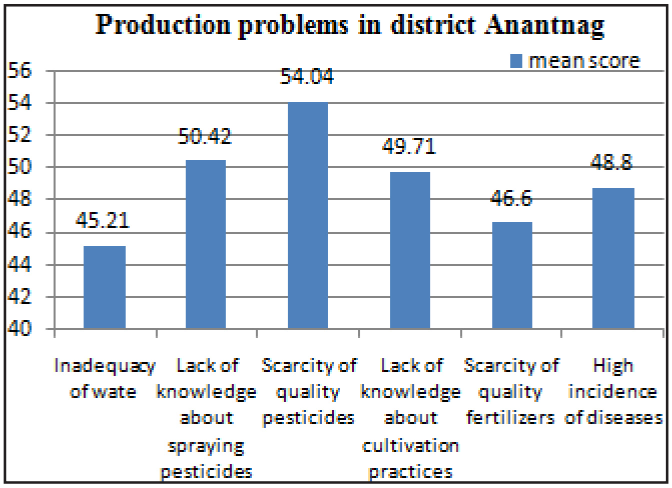

From the above table with the help of Garret ranking technique it is clearly visible that scarcity of quality pesticides with mean score of 54.04, lack of knowledge about spraying pesticides with mean score 50.42 are the major production problems faced by the horticulture growers in district Anantnag. The analysis table also reveals that inadequacy of water with mean score of 45.21 is the least production problem faced by the horticulture cultivators in district Anantnag.

Conclusion - No doubt, horticulture sector is contributing to the J&K economy, but there are certain obstacles for further progress of the sector. Scarcity of quality pesticides, Lack of knowledge about spraying pesticides, Lack of knowledge about cultivation practices, High incidence of diseases, Scarcity of quality fertilizersand Inadequacy of water were the major production problems being faced by the horticulture growers in district Anantnag. In order to

overcome these challenges firstly government should keep proper watch on the quality of pesticides. District administration should provide complete awareness to the growers about the quality and use of pesticides and fertilizers.

Horticulture is an old in India as the people of themselves. The area and production under horticulture in India are rapidly increasing. As the importance of horticulture crop is felt over the world, India is also gradually finding its place on the fruit map of the world. In fruits India is the largest producer of mangoes and bananas and is among the first ten in the production of apples, papayas, oranges and grapes. Horticulture sector is the main component for the development in the state of Himachal Pradesh. It provides job opportunities for more than one lakh masses directly or indirectly. Horticulture is improving the productivity of Land, generating employment, improving economic conditions of the farmers and entrepreneurs, enhancing exports and providing nutritional security to the people is widely acknowledged. The present study is focus on the marketing of apple and analyse the area and production of apple fruit in Himachal Pradesh.

The importance of horticulture in improving the productivity of Land, generating employment, improving

Suggestions :

1. In order to promote horticulture sector government should provide loan at low interest rate.
2. Government should bring all orchard holders under KCC Scheme.
3. Government should increase KCC credit limit.
4. More and more Government subsidies should be given to the Horticulture land holders.
5. Government should take remedial steps in order to remove the obstacles which come in the way of development horticulture sector.
6. There must be cold storage facilities for horticulture products in every District.
7. Local markets should be well organized.
8. There should be horticulture committee at Sub- District level, in order to monitor the quality of fertilizers and pesticides.
9. Horticulture department should organize awareness programme to aware the orchard holders about timely spraying, watering, fertilizers and other related problems.
10. State govt. should fix minimum support prices (per kg or per box) of horticulture products to overcome the problems of frequent price fluctuations so that farmers will not suffer much more in future.

References :-

1. Ahangar, G. S. and Govindasamy, R. (2013): “Production and Export Performanceof Fresh and Dry Fruits in Jammu and Kashmir”, International Journal of Researchin Commerce, Economics and Management, Vol. 3, No. 09, pp. 137-140.
2. Ahmed, N. and Ahmed, T. (2013): “Fruit Related Problems and Their Managementin Rajouri District of Jammu and Kashmir”, IOSR Journal of Humanities andSocial Science, Vol. 12, No. 2, pp. 65-75.
3. Bhardwaj, R. K. et al. (2012): “Distribution Pattern of Apples in Indian Sub-Continent: Constraints and Strategies”, International Journal of Engineering andManagement Science, Vol. 3. No. 2, pp. 196-206.
4. Bhat, A. et al. (2011): “Economic Appraisal of Kinnow Production and itsMarketing under North-Western Himalayan Region of Jammu”, AgriculturalEconomic Research Review, Vol. 24, pp. 283-290.
5. Bhat, J. (2012): “Problem of Apple Marketing in Kashmir”, Abinav, Vol. 1, No. 1,pp. 105-111.

Table no. 2. Ranking given by respondents on production problems in district Anantnag

Production problems	**Ranks given by respondents**						
	1st	**2nd**	**3rd**	**4th**	**5th**	**6th**	**No. of respondents**
Inadequacy of water	13	19	26	28	30	34	150
Lack of knowledge about spraying pesticides	30	22	21	25	27	25	150
Scarcity of quality pesticides	35	34	20	22	20	19	150
Lack of knowledge about cultivation practices	25	20	25	30	28	22	150
Scarcity of quality fertilizers	20	22	18	25	32	33	150
High incidence of diseases	21	24	23	28	30	24	150

Source: field survey

Table no. 3. Calculation of Garret value and ranking of District Anantnag.

Production problems	**1st**	**2nd**	**3rd**	**4th**	**5th**	**6th**	**Total score in Ana -ntnag**	**Totalno. of respo -ndents**	**Mean score/ average score**	**Rank**
Inadequacy of water	1001	1197	1404	1288	1110	782	6782	150	45.21	6
Lack of knowledge about spraying pesticides	2310	1386	1134	1150	999	575	7563	150	50.42	2
Scarcity of quality pesticides	2695	2142	1080	1012	740	437	8106	150	54.04	1
Lack of knowledge about cultivation practices	1925	1260	1350	1380	1036	506	7457	150	49.71	3
Scarcity of quality fertilizers	1540	1386	972	1150	1184	759	6991	150	46.60	5
High incidence of diseases	1617	1512	1242	1288	1110	552	7321	150	48.80	4

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Sports Competition Anxiety of University Level Badminton Players of Haryana and Rajasthan

Dr. Ravi Kumar* Jaswinder Singh**

Abstract - Sports Competition Anxiety is judged a negative emotion, most researchers paid attention on the negative impact it has on performance, where the main point has been on examining the intensity of anxiety a badminton player feels before and during competition. It appears, however, that an athlete's interpretation of anxiety is key in understanding the effects it has on performance. The present paper is conducted to compare the 30 university level badminton players taken from Haryana and Rajasthan. The Sports Competition Anxiety Test by Wren and Martin was used. The student 't' test for independent group was calculated and checked at 0.05 level of significance. It was found that there is no significant difference in sports competition anxiety of University level Badminton players from Haryana and Rajasthan.

Introduction - Competitiveness is inherent in all human activity because there is so much compatibility and proximity between progress and competition. Sports competitions have assumed an extremely important place in the human society these days. With the revival of the Olympic Games in 1896, tremendous changes have taken place in the methods and methodologies of training for athletic competitions at the National as well as International levels. The insatiable quest for pursuit of excellence has given rise to interdisciplinary approach to the understanding of human behavior in the context of sports. Never, in the history of making, were scientific techniques applied to the preparation of athletes for intense competition as being done today.

The craze for winning medals in the Olympics and other international competitions has catalyzed the sport scientists to take "interest in exploring all the aspects and possibilities which can contribute to enhance sports performance to undreamed heights". It has been established beyond doubt that 'much of human psychology is controlled by human physiology and that psychological preparation in sports is inconsequential in the absence of study of human behavior as it relates to competitive sport is the virgin realm of the mind has to be explored without which neither excellence nor perfection could be ensured". It is now being claimed that "regardless of how much ability, skill or fitness a person possesses for a particular task or sport, the success or quality of his performance will, in the final analysis probably depend on his particular make up". Psychological icon, bio-mechanics, sports psychology so and forth has brought sports excellence to such a level where physical fitness, tactics and techniques of performance are considered just not adequate.

The sports scientists have now started looking beyond these horizons. The ideal that athletes must perform under similar conditions of training and competition is getting entrenched firmly because "physical efforts prevail in training and psychic efforts prevail at competitions".

The trouble of anxiousness is an vital element of athletic overall performance. Sports psychologists might also recall how to optimize the level of arousal and the way emotions of strain and tension may additionally affect the performance of the competitor. Both situational and character trait tension are taken into consideration in growing mental practice strategies to beautify performance. Relaxation techniques and mental imagery are classic strategies applied to attain those dreams or goals.

A few sport psychologists have also attempted an assessment of situational anxiety before, during and even after sports competition, and termed it as pre-competition, in-competition and post competition anxiety. In order to have holistic view of anxiety level in an athlete it is but natural and appropriate to assess all the three types of anxiety and note one done. Interestingly, it is still not very clear despite extensive studies as to how trait anxiety interacts with situational and competitive anxiety. Any study on the psychological make-up of an athlete is likely to remain incomplete if the level of anxiety is not given due place in the scheme of psychological parameters related to excellence in sports. It must consequently, be understood that sports competition tension is not something but situational or episodic anxiety very specific to game competition conditions. Once one comes to know as to what works as a "driving force", it becomes easier to guide the

*Asst. Professor, Deptt. of Physical Education, Guru Kashi University, Talwandi Sabo, Bathinda (Punjab) INDIA
** Research Scholar, Guru Kashi University, Talwandi Sabo, Bathinda (Punjab) INDIA

athlete into achieving excellence. When the desire for achievement becomes a dominant concern for the person, it is expressed in restless driving energy aimed at achieving excellence, getting ahead, improving upon past records, beating competitors, doing things better, faster, more efficiently and finding unique solutions to difficult problems. **(Singer, 2014)**

Review of Literature - Filaire et al (2001) conducted a study on psycho-physiological stress in judo athletes during competitions. Twelve male judo competitors at interregional level (mean age 22.2+/-1.6 years) entered the experimentation after informed consent. Judo athletes completed the CSAI-2 prior to both competitions and accumulated saliva for cortisol and testosterone evaluation on three activities: at some stage in a resting day (baseline values) and prior to and after each competition. Trait scales of the STAI (Y-2) were used for the duration of a resting baseline duration and not using a annoying situations which will degree participant's self suggested anxiety. Cognitive and somatic anxiety was higher in interregional championships compared to regional championships whereas self-confidence was significantly lower. Cortisol degrees elevated sharply (about 2.5 fold resting ranges) during both competitions without a changes in testosterone ranges. Positive relationships between tension additives (somatic and cognitive tension) and cortisol were cited in each competition. Salivary cortisol, collectively with anxiety components, may additionally provide a better sensitive index of physiological stress than testosterone concentrations.

Tremayne & Barry (1995) studied an application of psychophysiology in sports psychology: heart rate responses to relevant and irrelevant stimuli as a function of tension and defensiveness in elite gymnasts. One problem in the optimization of athletic performance is that consistency in practice situations is not always carried over to competitive situations. There is an increase in irrelevant stimuli in competition which cannot always be gated out satisfactorily by the anxious athlete. We investigated the physiological responses to relevant and inappropriate stimuli of forty eight elite female gymnasts differing in levels of hysteria and defensiveness. Cardiac responses were recorded to tone shows and analyzed as a function of instructions, anxiety manipulation and organization. The results suggest that phasic responses of high-anxious gymnasts were larger than those of low-anxious gymnasts. High-anxious gymnasts experience more difficulty in completely gating out the occurrence of irrelevant stimuli than do low-anxious gymnasts. Finally, under anxiety-producing conditions, high levels of defensiveness and anxiety in combination appear to have a debilitating effect on the gymnast's ability to discontinue processing of irrelevant stimuli, while clearly low-anxious subjects seems distracted from processing relevant stimuli. Further investigation of the interactions between levels of trait anxiety and anxiety-producing situations in a sport-specific domain appear warranted. The role of defensiveness in these interactions should also be investigated.

Objectives :

1. To study level of sports competition anxiety of university level badminton players of Haryana.
2. To study level of sports competition anxiety of university level badminton players of Rajasthan.
3. To compare the level of sports competition anxiety of university level badminton players of Haryana and Rajasthan.

Hypothesis - ***"There is no significant difference*** **in sports competition anxiety of university level badminton players of Haryana and Rajasthan."**

Sample Selection - A total of 60 university level badminton players were selected through purposive sampling technique. Out of which 30 belongs from Haryana and rest of 30 belongs from Rajasthan. All the 60 university level badminton players had represented their university in university level tournaments.

Tool Description - The Sports Competition Anxiety Test (SCAT) by Wren Martin was used. The sports competition anxiety test is latest and most popular specific anxiety test, whose purpose, as claimed by the author is to assess individual differences in competitive trait anxiety or the tendency to purpose competition situation on threatening and/or to respond to these situations with elevated state anxiety.

The sports competition anxiety test (SCAT) contains fifteen items. Subjects were asked to indicate how they generally feel when they compete in games and sports, and respond to each item using a three point ordinal scale (Hardly ever, some times and often). Ten of the items are included to reduce possible responses bias. Total scores of the SCAT range from 10 (low competitive trait anxiety) to 30 (high competitive trait anxiety).

The ten test items are : 2, 3, 5, 6, 8, 9, 11, 12, 14 & 15. The spurious items : 1, 4, 7, 10 and 13 are not scored. Items 2, 3, 5, 8, 9, 12, 14 and 15 are worked so that they are scored according to following keys :

1. Hardly Ever 1 point
2. Some Times 2 points
3. Often 3 points

Items 6 and 11 are scored according to following key :

1. Often 1 point
2. Some Times 2 points
3. Hardly Ever 3 points

If a person deletes one of the ten test items, Pro-rated full scale scores can be obtained by computing the mean score for the nine items answered multiply this value by ten, and rounding the product to the next whole numbers.

Instructions

Sports Competition Anxiety Test - Below are some statements about how persons feel when they complete in sports and games read each statement and decide if you HARDLY-EVER or SOMETIMES or OFTEN feel this way when you complete in sports and games. If your choice is

HARDLY-EVER blacken the square labelled A, if your choice is SOMETIMES, blacken the square labelled B and if your choice is OFTEN then blacken the square C. There is no right or wrong answers. Do not spend too much time on any one statement. Remember to choose the word that describes how you usually feel when competing in sports and games.

Data Collection - The subjects were contacted personally and their sincere cooperation was solicited. Necessary instructions were given to subjects. Confidentiality of responses was assured. No time limit for filling in the questionnaire was set but the subjects were instructed to respond as quickly as possible. As soon as player completed filling questionnaire they were thanked for their cooperation.

Statistical Technique Used

The **student 't' test for independent group** was computed to check the differences. The level of significance for the study was ascertained at 0.05 level of significance. The 21.0 version of SPSS was used for statistical calculations in the present study.

Results

Table 1 : showing mean, S.D. and category of anxiety scores

University level badminton players	N	Mean	S.D.	Level of Sports Competition Anxiety
Haryana	30	23.50	1.009	High
Rajasthan	30	23.53	1.042	High

The above table indicates that mean and standard deviation scores of university level badminton players of Haryana was found to be 23.50±1.009 and the that mean and standard deviation scores of university level badminton players of Rajasthan was found to be 23.53±1.042. Furthermore the high level of sports competition anxiety was found among university level badminton players of Haryana and Rajasthan.

Table 2 : Comparison of Sports Competition Anxiety of University level badminton players from Haryana and Rajasthan

State	N	Mean	Std. Devia -tion	Std. Error Mean	Mean Differ -ence	't'	p value
Haryana	30	23.50	1.009	0.184	0.033	0.126	0.900
Rajasthan		30	23.53	1.042	0.190		

The above table shows that the mean scores on Sports Competition Anxiety parameter of psychological fitness of University badminton players from Haryana was found to be 23.50 and the mean scores on Sports Competition Anxiety parameter of psychological fitness of University badminton players from Rajasthan was found to be 23.53. The 't' value was found to be 0.126 which is insignificant at 0.05 level. It infers that there is no significant difference between Sports Competition Anxiety of university level badminton players from Haryana and Rajasthan. Furthermore, the mean scores indicate that university level badminton players from Haryana and Rajasthan possess similar psychological fitness in terms of Sports Competition Anxiety.

Discussion - The university level badminton players from Haryana and Rajasthan possess similar psychological fitness in terms of Sports Competition Anxiety.

It may be due to the fact that the level of both state players are same the training given to them are also similar therefore the performance is also similar. University level badminton players from both state Haryana and Rajasthan The university level badminton players of Haryana and Rajasthan participating in any type of competition, be it a formal or informal competition, gives pressure on them. This pressure sometimes improves the performance and sometimes influences the performance negatively. Pressure collected because of the upcoming competition might also consequences in tension which influence the performance in sports in each the approaches which is prevalent in both university level badminton players of Haryana and Rajasthan

Conclusion - The high level of sports competition anxiety was found among university level badminton players of Haryana and Rajasthan. There is no significant difference between Sports Competition Anxiety of university level badminton players from Haryana and Rajasthan.

References :-

1. Singer Robert N., Sustaining Motivation in Sport (Tallahassee: Sport Consultants International Inc., 2014), p.42.
2. Filaire, E., Sagnol, M., Ferrand, C., Maso, F. and Lac, G. (2001b) Psycho-physiological stress in judo athletes during competitions. The Journal of Sports Medicine and Physical Fitness 41, 263-268.
3. Tremayne P & Barry RJ, (1995), An application of psychophysiology in sports psychology: heart rate responses to relevant and irrelevant stimuli as a function of anxiety and defensiveness in elite gymnasts. International Journal of Psychophysiology, 6(1), 1-8.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

हिन्दी कहानी के दलित साहित्य : स्वरूप तथा दशा व दिशा

दशरथ *

प्रस्तावना – दलितों के द्वारा बौद्ध धर्म अपनाकर भी उनकी स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आया। आज के समाज में भी दलितों के साथ अस्पृश्यता व घृणित व्यवहार कायम है। शिक्षित होने के बावजूद भी दलितों को अपमान व अन्याय का सामना करना पड़ता है। दलितों के मानवाधिकार से तात्पर्य मनुष्य को मनुष्य के रूप में मान–आदर पाने का अधिकार है।

हिन्दू धर्म में जाति व्यवस्था स्थापित होने के कारण दलित धर्म परिवर्तन के बावजूद भी समाज में शोषण का शिकार होता है। भगवानदास दलितों के धर्म परिवर्तन की बात को स्पष्ट करते हुए कहते हैं–'हमारे यहां बहुत से दलित और आदिवासी यह सोचकर बौद्ध, मुसलमान, सिख या ईसाई बने कि धर्म बदल लेने पर उन्हें समाज में मान मिलेगा। लेकिन हम देखते हैं कि ऐसा नहीं हुआ। धर्म बदल लेने पर भी जात–पांत बनी रहती है और मनुष्य अपमान का शिकार होता रहता है'।

दलित साहित्य समाज सापेक्ष है। साहित्य की मूल संवेदना के साथ–साथ दलित साहित्य मनुष्य की स्वतंत्रता, समता और बन्धुत्व की भावना को सर्वोपरि मानता है। इस साहित्य का प्रमुख लक्ष्य है शोषक वर्ग के खिलाफ अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते हुए समाज में समता, बन्धुता तथा मैत्री की स्थापना करना। विगत दो दशकों से हिन्दी साहित्य से हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श और नारी विमर्श अत्यंत तीव्रता एवं सशक्तता से उभरे हैं। इस संदर्भ में दलित रचनाकारों ने साहित्य को अपने मुक्ति आंदोलन का एक हिस्सा बनाया है। शब्द की आग से ऊर्जा ग्रहण कर उन्होनें अपने आंदोलन को गंभीर सरोकारों से जोड़ा है। दलित साहित्य की रचना के मूल में सार्त्र का निम्न कथन चरितार्थ होता है–

'लेखन केवल लिखना ही नहीं, एक कार्यवाही है और बुराई के खिलाफ मनुष्य के सतत् संघर्ष में लेखन को सायास एक हथियार की तरह इस्तेमाल करना चाहिए'।

नवें दशक में दलित लेखकों द्वारा हिन्दी साहित्य के परिदृश्य पर तीव्रता से उभरने का विवेचन करने से पहले हमें दलित, दलित चेतना एवं दलित साहित्य की अवधारणा को समझना होगा।

'दलित' शब्द का अर्थ–

'दलित' शब्द का अर्थ है–जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया, उत्पीड़ित, सताया हुआ, गिराया हुआ, घृणित, रौंदा हुआ, मसला हुआ, कुचला हुआ, निविष्ट, मर्दित, पस्त–हिम्मत, हतोत्साहित, वंचित आदि।

डॉ. श्यौराज सिंह 'बेचैन' 'दलित' शब्द की व्याख्या करते हुए कहते हैं–'दलित वह है जिसे भारतीय संविधान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है।'

कंवल भारती का मानना है कि 'दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है। जिसे कठोर और गंदे कार्य करने के लिए बाध्य किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया गया और जिस पर सछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की।'

मोहन दास नौमिशराय के अनुसार 'दलित' शब्द मार्क्स प्रणीत सर्वहारा शब्द के समानार्थी लगता है। दलित की व्याप्ति अधिक है तो सर्वहारा की सीमित। दलित के अन्तर्गत सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक शोषण का अंतर्भाव होता है। दलित विशेष तौर पर सामाजिक विषमता का शिकार होता है।

इन तथ्यों से स्पष्ट होता है कि 'दलित' शब्द उस व्यक्ति के लिए प्रयुक्त होता है जो समाज व्यवस्था के तहत निचली पायदान पर है। वर्ण–व्यवस्था ने जिसे अन्त्यज या अछूत की श्रेणी में रखा गया। अत: वास्तव में 'दलित' वही व्यक्ति हो सकता है जो सामाजिक तथा आर्थिक दोनों दृष्टियों से दीन–हीन है। हिन्दू धर्मग्रंथों में चण्डाल, अस्पृश्य, अंत:वासिन, अंत्यज, पंचम, डोम आदि को मानवीय गरिमा से बाहर रखा गया है। मुख्यधारा से बाधित एवं बहिस्कृत ही दलित है।

दलित चेतना – दलित चेतना का सरोकार इस प्रश्न से बहुत गहरे तक जुड़ा है कि 'मैं कौन हूं,' मेरी 'पहचान क्या है?' इसी सवाल से दजित लेखक की रचनाशीलता को ऊर्जा मिलती है।

दलित की व्यथा, दु:ख, पीड़ा, वेदना, शोषण का विवरण देना या बखान करना ही दलित चेतना नहीं है या दलित पीड़ा का भावुक और अश्रु–विगलित वर्णन जो मौलिक चेतना से विहीन हो। चेतना का सीधा संबंध दृष्टि से होता है जो दलितों की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक भूमिकी की छवि के तिलस्म को तोड़ती है, वह है दलित चेतना'। दलित मतलब मानवीय अधिकारों से वंचित, सामाजिक तौर पर जिसे नकारा गया हो, उसकी चेतना यानी दलित चेतना।

यही दलित चेतना दलित साहित्य की अंत: ऊर्जा है, प्राण शक्ति है उसे पारम्परिक साहित्य से पृथक करती है। भारत की वर्ण–व्यवस्था में हजारों वर्ष की प्रताड़ना, शोषण, दोष, वैमनस्य और भेदभाव से दबा दलित अपनी अस्मिता की खोज (Identity Crisis) के लिए जागरूक दिखाई देता है।

दलित साहित्य की अवधारणा – मुख्यधारा से बाधित, घेरे से बाहर रहने की छटपटाहट ने दलित साहित्य की एक ऊर्जावान धारा को जन्म दिया है। दलित लेखकों ने इस धारा को अपनी अस्मिता की तलाश के लिए चुना है। यह एक लंबी संघर्ष यात्रा है जो बुद्ध, ज्योति बा फूले और अम्बेडकर से होते हुए यहां पहुंची है। गैर बराबरी के दावानल में झुलसते–जूझते, संघर्ष करते लोगों के सांस्कृतिक टकराव से यह धारा सुदृढ हुई है।

* शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

दलित चिंतक कंवल भारती की मान्यता है कि आधुनिक हिन्दी दलित साहित्य वह है जो दलित मुक्ति के सवालों पर पूरी तरह अम्बेडकरवादी है। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी क्षेत्रों में उसके सरोकार वे हैं जो अम्बेडकर के थे। दलित साहित्य में अम्बेडकर का असली महत्व एक पथ-प्रदर्शक और मनौवैज्ञानिक मुक्ति द्धार पर खड़ा कर देने का है।

बाबूराम बागूल की धारणा है कि दलित साहित्य इंसान को केन्द्र बनाता है, इंसान को महानता प्रदान करता है। स्वतंत्रता, समता और बंधुता की मूल भावना दलित साहित्य की मूल गर्भ चेतना है। अत: दलित दलित साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है जिसमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा को भोगा है, दलित साहित्य उन्हीं के द्धारा उसी की अभिव्यक्ति का साहित्य है। यह कला के लिए कला का नहीं, बल्कि जीवन का और जीवन की जिजीविषा का साहित्य है। वास्तव में दलितों द्धारा लिखा गया साहित्य ही दलित साहित्य की कोटि में आता है। दलित लेखक मानते हैं कि सवाल चिंतन और अनुभूतियों का है। जीवन की पीड़ा की जैसी अनुभूति एक भुक्तभोगी दलित की होती है वैसी अनुभूति एक गैर दलित, सवर्ण को नहीं हो सकती। इसलिए वे प्रेमचंद, निराला, गिरिराज किशोर, नागार्जुन, अमृतलाल नागर, डॉ. जगदीश गुप्त के लेखन को सच्चा दलित लेखन स्वीकार नहीं करते।

दलित साहित्य/चेतना के प्रमुख बिन्दु – दलित चेतना एवं दलित साहित्य की प्रेरणा न मार्क्सवाद है, न हिन्दूवाद, न नीग्रो साहित्य है। दलित साहित्य की प्रेरणा व मुख्य ऊर्जा अम्बेडकर का जीवन-दर्शन है। इस तथ्य से सभी दलित एक मत हैं। दलित चेतना के प्रमुख बिन्दु हैं-

1. मुक्ति और स्वतंत्रता के सवालों पर डॉ. अम्बेडकर के दर्शन को स्वीकार करना।
2. बुद्ध का अनीश्वरवाद, अनात्मवाद, वैज्ञानिक दृष्टिबोध, पाखण्ड-कर्मकाण्ड विरोध।
3. वर्ण-व्यवस्था विरोध, जाति भेद-विरोध, साम्प्रदायिकता विरोध।
4. स्वतंत्रता, बंधुत्व, सामाजिक न्याय की पक्षधरता।
5. ब्राह्मणवाद, सामंतवाद, पूंजीवाद, अधिनायकवाद का विरोध।
6. सामाजिक बदलाव/परिवर्तन हेतु प्रतिबद्धता।
7. वर्णविहीन, वर्गविहीन समाज की पक्षधरता।

नवें दशक की हिन्दी दलित कहानी-परिदृश्य – हिन्दी दलित कहानी का समकालीन परिदृश्य आठवें दशक में तेजी से उभरता है जिसमें कई रचनाकार उभरकर अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं और अपनी कहानियों द्धारा दलित साहित्य को एक सशक्त आधार प्रदान करने की चेष्टा करते हैं। हिन्दी कहानी के अनेक उतार-चढावों, तथाकथित आंदोलनों से अलग दलित कहानी बदलते हुए सामाजिक परिदृश्य के यथार्थ चित्रण की एक विशिष्ट धारा के रूप में सामने आती है। जिसकी ओर हिन्दी समीक्षकों का ध्यान बहुत देर से गया है। आठवें दश में दलित लेखकों की उपस्थिति को हिन्दी सम्पादकों और समीक्षकों के उपेक्षापूर्ण रवैये के कारण चर्चा के दायरे से बाहर रहना पड़ा। दलित रचनाकारों और विमर्शकारों ने गांधी जी और प्रेमचंद को उनके समय के संदर्भ में देखने-परखने का प्रयास नहीं किया कि प्रेम चंद, नागार्जुन, निराला, अमृतलाल नागर, विवेकी राय, गिरिराज किशोर आदि लेखकों ने भी इस दिशा में काम किया है। दलित रचनाकार इन्हें अनुभूति की प्रमाणिकता से परे मानते हुए तथाकथित मुख्यधारा के आलोचकों के निष्कर्षों को पूर्वाग्रह से ग्रस्त मानते हैं।

नवें दशक में दलित कहानियों ने अपनी खास पहचान निर्मित की। हिन्दी की कई महत्वपूर्ण पत्रिकाओं-'गरिमा भारती', 'कुरूक्षेत्र', 'स्वतंत्र भारत', 'युद्धरत आम आदमी', 'निर्णायक भीम', तथा समाचार-पत्रों-'नवभारत', 'पंजाब केसरी', 'जनसता', 'निष्कर्ष', आदि में उदीयमान दलित कथाकारों की कहानियां छपकर विशाल पाठक वर्ग तक पहुंची। इन कथाकारों पर ज्योति बा फूले, अम्बेडकर, दया पवार, बाबूराव बागूल, गोर्की आदि का स्पष्टतया प्रभाव देखा जा सकता है। इस दृष्टि से इस युग के प्रमुख दलित कथाकारों में ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, सूरज पाल चौहान, श्यौराज सिंह 'बेचैन' आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं जिनकी कहानियां 'हंस' में प्रकाशित हुई।

नवें दशक में अनेक कथा संकलन प्रकाश में आए। डॉ. महीप सिंह द्धारा चयनित वार्षिक कथा संकलनों में दलित कहानियां शामिल की गई। डॉ. पुष्पपाल सिंह द्धारा संपादित कहानी संकलन 'कहानी चयन' में ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'अम्मा' छपी। दिसम्बर 1992 के हंस' में उनकी कहानी 'बैल की खाल' छपी तो हिन्दी पाठकों व समालोचकों का ध्यान उभरते दलित साहित्य की ओर गया। दलित साहित्य दलित पत्रिकाओं और दलित पाठकों तक ही सीमित न रह कर साहित्य की चर्चा के केन्द्र में आ गया। डॉ.एन.सिंह द्धारा संपादित दलित कहानी संग्रह-'यातना की परछाइयां' डॉ. कुसम वियोगी द्धारा संपादित 'समकालीन दलित कहानियां' मोहनदास नैमिशराय का कहानी संग्रह-'आवाजें', डॉ. दयानंद बटोही का 'सुरंग', 'कफनखोर', यातनाओं के जंगल, डॉ. सुशीला टाकभौरे का 'टूटता वहम' ओमप्रकाश वाल्मीकि का 'सलाम' आदि कहानी संग्रहों ने नवें दशक में दलित कहानी की यात्रा का एक अहम पड़ाव पार किया है।

इस यात्रा में जहां डॉ. श्यौराजसिंह, सूरजपाल चौहान, जयप्रकाश कर्दम, डॉ. दयानंद बटोही ने यथार्थपरक संवेदनशीलता और सामाजिक विमर्श की कहानियां लिखी हैं, वहां डॉ. सुशीला टाकभौरे, रजतरानी मीनू, कावेरी, कुसम मघवाल दलित स्त्री की पीड़ा को उकेरने में सफल हुई है।

दलित कथाकारों में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने इस सामाजिक क्रांति को सशक्त ढंग से अभिव्यक्ति प्रदान की है। उन्होनें नए दलित सौंदर्य शास्त्र के साथ दलित कहानी को स्थापित करने का सफल प्रयास किया है। उनकी कहानी 'गौहत्या' ठाकुर-ब्राह्मण गठजोड़ द्धारा दलित अस्मिता को कुचलने का मार्मिक चित्रण करती है। 'सलाम' कहानी रूढिवादी परंपरा, 'प्रमोशन' मजदूर संगठनों के अंतर्विरोध, 'कुचक्र' सरकारी शोषण, 'कहां जाए सतीश' सामाजिक भेदभाव का चित्रण करती है।

मोहनदास नैमिशराय की कहानियां-'अपना गांव', 'हारे हुए लोग' दलित शोषण की मुंह बोलती तस्वीरें हैं। 'परिवर्तन की बात' सूरजपाल चौहान की सशक्त कहानी है जिसमें दलितों की मुक्ति के दंश को उभारा गया है। जितेन्द्र वर्मा की कहानी 'इज्जत के लिए' जातिवाद को बेपर्दा करती है। अजय यतीश की 'भूत' कहानी में धार्मिक शोषण का वर्णन है। भागीरथ मेघवाल की कहानी 'कब तक जियेंगे' में पुलिसिया आतंक का सजीव चित्रण है। इस प्रकार इन दलित कहानियों में यथार्थ की संघर्षपूर्ण स्थितियों, सामाजिक विषतमाओं, विसंगतियों, विद्रूपताओं, भेदभाव, जातिगत शोषण, अनाचार व अन्तर्विरोधों का सम्यक चित्रण है।

नवें दशक की दलित कहानी में जहां भारतीय गांवों में व्याप्त वर्ण-व्यवस्था में पिसते दलितों की हाहाकार है, वहीं छोटे शहरों-महानगरों में बसे सरकारी नौकरियों में जीवन निर्वाह करते अधिकारियों? क्लर्कों, कर्मचारियों की व्यथा कथाएं हैं, साथ ही दलितों में उभरते आक्रोश, विरोध, संघर्ष की तीव्र चेतना छवि भी है, जो परिवर्तन का संकेत है।

दलित महिला कथाकारों ने एक नई भूमि तैयार की है। सुशीला टाकभौरे

की कहानी 'सिलिया' स्त्री स्वाभिमान, रजतरानी मीनू की कहानी 'सुनीता' गंभीर दलित सरोकारों, कावेरी की कहानी 'द्रोणाचार्य एक नहीं' तथा कुसुम मेघवाल की 'समय के शिलालेख' दलित नारी के अंतर्मन की व्यथा को उकेरने वाली कहानियां हैं। प्रेम कुमार मणि, चंद्रेश्वर कर्ण आदि की कहानियों ने भारतीय समाज के एक ऐसे रोंगटे खड़े कर देने वाले यथार्थ की ओर हिन्दी पाठकों का ध्यान खींचा है जिसे पहले चादर की ओट कर दिया जाता था। ये कहानियां सामाजिक बदलाव लाने का आह्वान करती है। ये मार्मिक हैं, विद्रोही हैं और क्रांति-सृष्टा हैं।

निष्कर्ष - 'दलित कहानी' हिन्दी कथा साहित्य का एक अनिवार्य रचना-कर्म है। हिन्दी साहित्य पर गांधीवाद और मार्क्सवाद का प्रभाव है पर डॉ. अम्बेडकर का प्रभाव नहीं है। दलित कविता और कथा साहित्य ने इस अभाव की पूर्ति की है। अब हिन्दी साहित्य की आलोचना अम्बेडकरवादी सिद्धांतों से भी संभव है। दर्शन की दृष्टि से यह दलित साहित्य की बड़ी उपलब्धि है। हिन्दी दलित कहानी धीरे-धीरे अपना स्वरूप ग्रहण कर विकास के पथ पर अग्रसर है। उल्लेखनीय है कि लम्बी यात्रा पर निकली विकसनशील दलित कहानी हिन्दी कथा साहित्य को अपनी शैली एवं कथ्य से समृद्ध करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रमेश उपाध्याय, संज्ञा उपाध्याय, 'उत्पीड़ितों का मानाधिकार', शब्दसंधान प्रकाशन, नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2011 पृ. 35
2. कंवल भारती, 'दलित विमर्श की भूमिका', साहित्य उपक्रम, इतिहास बोध प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण फरवरी 2002, पृ. 22
3. रमेश उपाध्याय, संज्ञा उपाध्याय, 'उत्पीड़ितों का मानाधिकार', शब्दसंधान प्रकाशन, नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2011 पृ. 36
4. रत्न कुमार सांभरिया, 'खेत व अन्य कहानियां', आधार प्रकाशन, पंचकूला (हरियाणा), प्रथम संस्करण 2010, पृ. 104
5. सूरजपाल चौहान, 'नया ब्राह्मण', वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 2009, पृ. 76
6. कंवल भारती, 'दलित विमर्श की भूमिका', साहित्य उपक्रम, इतिहास बोध प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण फरवरी 2002, पृ. 23
7. रत्न कुमार सांभरिया, 'खेत व अन्य कहानियां', आधार प्रकाशन, पंचकूला (हरियाणा), प्रथम संस्करण 2010, पृ. 74
8. डॉ. सुशीला टाकभौरे, 'संघर्ष', शरद प्रकाशन, नागपुर प्रथम संस्करण, 2006, पृ. 45
9. डॉ. सुशीला टाकभौरे, 'संघर्ष', शरद प्रकाशन, नागपुर प्रथम संस्करण, 2006, पृ. 46
10. डॉ. सुशीला टाकभौरे, 'संघर्ष', शरद प्रकाशन, नागपुर प्रथम संस्करण, 2006, पृ. 46
11. सूरजपाल चौहान, 'नया ब्राह्मण', वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 2009, पृ. 34
12. सूरजपाल चौहान, 'नया ब्राह्मण', वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 2009, पृ. 35
13. सूरजपाल चौहान, 'नया ब्राह्मण', वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 2009, पृ. 35
14. सूरजपाल चौहान, 'कारज', वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 2009, पृ. 67
15. सूरजपाल चौहान, 'कारज', वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 2009, पृ. 105
16. रमेश उपाध्याय, संज्ञा उपाध्याय, 'उत्पीड़ितों का मानाधिकार', शब्दसंधान प्रकाशन, नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2011 पृ. 44
17. राम पुनियानी, 'सामाजिक न्याय एक सचित्र परिचय', वाणी प्रकाशन, दिल्ली प्रथम सं. 2010 पृ. 41
18. कंवल भारती, 'दलित विमर्श की भूमिका', साहित्य उपक्रम, इतिहास बोध प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण फरवरी 2002, पृ. 70

****

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक में आधुनिक बैंकिंग सेवा

गोपाल कुरील* डॉ. सुनील मोरे **

प्रस्तावना – भारत सरकार ने अर्थव्यवस्था को केशलेस बनाने के लिए नोटो का विकेन्द्रीकरण किया है। सरकार जनता को केशलेस अर्थव्यवस्था के लिए प्रोत्साहित कर रही हैं। इस व्यवस्था में सभी प्रकार के बैंकिंग लेन देन इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से संभव हो रहे हैं, इसके अन्तर्गत नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक भी केशलेस इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग संव्यवहार में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसमें क्रेडिट, डेबिट कार्ड, इलेक्ट्रॉनिक क्लिरिंग, आर. टी. जी. एस., नेफ्टी जैसी सुविधाओं का विस्तार तेजी से हो रहा है।

केशलेस व्यवस्था ने ग्राहकों को विभिन्न वस्तुओं एवं सेवाओं को प्राप्त करने के लिए अपने साथ नगद राशि रखने की आवश्यकता नहीं होती हैं। खरीददारी, विभिन्न बिलों के भुगतान और अन्य लेन–देन मोबाईल फोन की सहायता से संभव कर दिया गया है। इसमें वित्तीय लेन–देनों की प्रमाणिकता भी उपलब्ध होती हैं। इससे देश में कालाधन पर अंकुश लग रहा है, साथ ही कर अपवयन भी कम हो रहा है।

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक के ग्राहक, टिकट बुक करने, घरेलु सामग्री, पेट्रोल, डीजल, दवाईयां आदि क्रय करने के लिए केशलेस व्यवस्था का उपयोग कर रहे हैं। इस प्रकार यह व्यवस्था से देश को आर्थिक विकास के मार्ग पर प्रशस्त करने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। ग्रामीण ग्राहकों की अशिक्षा एवं अल्पशिक्षा इस योजना में बाधक है।

Rupay ए टी एम कार्ड – नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक, बैंकिंग क्षेत्र में हो रहे नवाचार का आत्मसाथ कर रहा है। बैंक के द्वारा नगरीय क्षेत्रों में ग्राहकों को रुपये एटीएम कार्ड से बैंकिंग संव्यवहार की सुविधा उपलब्ध की जा रही हैं। बैंक के द्वारा जारी इस कार्ड का उपयोग सभी सरकारी व अनुसूचित बैंकों के एटीएम में किया जा सकता है। बैंक ने ग्रामीण क्षेत्र के ग्राहकों को भी यह सुविधा दी है लेकिन बैंक के एटीएम नगरीय क्षेत्रों में ही स्थापित किए गए है।

इस कार्ड से ग्राहक व्यावसायिक प्रतिष्ठानों से वस्तुओं एवं सेवाओं का क्रय कर सकते हैं। इस कार्ड में ग्राहक व्यक्तिगत पहचान संस्था पिन के आधार पर इसका उपयोग करते हैं। पिन के संस्था को सावधानीपूर्वक उपयोग में लाया जाना चाहिए। ग्राहक पिन संख्या को समय–समय पर गोपनियता के लिए परिवर्तित भी कर सकते हैं। कार्ड गुम होने पर इसकी सूचना बैंक को तत्काल दी जाना चाहिए, अन्यथा इस कार्ड के दुरुपयोग होने पर ग्राहक स्वयं उत्तरदायी माना जाता है।

यह कार्ड चेक अथवा नकद राशि के विकल्प के रुप में उपलब्ध होता है। कार्डधारक के द्वारा पिन नम्बर की जानकारी किसी अन्य व्यक्ति का नही देना चाहिए।

नवीन बैंक ग्राहकों की पहचान KYC – नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक में नवीन ग्राहको को बैंक खाता खोलने के लिए नवीनतम फोटो के साथ पहचान के दस्तावेज भी प्रस्तुत करना होते है। जिन्हे वर्तमान में के.वाय.सी. कहा जाता है। इन दस्तावेजों में आधार कार्ड, ड्रायविंग लाइसेंस, पेन कार्ड, मतदाता पहचान पत्र, पासपोर्ट, मनरेगा कार्ड, बिजली बिल और राशनकार्ड शामिल किए गए है। इन दस्तावेजों में पते की पहचान का प्रमाण भी अनिवार्यत: प्राप्त किया जाता है।

आधार कार्ड को गत वर्षो से के. वाय. सी. के लिए अनिवार्य दस्तावेज के रुप में मान्यता दी गई थी लेकिन उच्चतम न्यायालय के निर्णय के पश्चात किसी भी बैंक ग्राहक को आधार कार्ड अनिवार्य नही किया जा सकता है। एक निश्चित सीमा से अधिक राशि के लेनदेन पर बैंक में पेनकार्ड अनिवार्यत: प्रस्तुत करना होता है।

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक के द्वारा अपने पुराने ग्राहकों से भी के. वाय. सी. प्राप्त किया गया है। रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया के निर्देषों के अनुसार भारत के सभी बैंकों के ग्राहकों के लिए के. वाय. सी. अनिवार्य कर दिया गया है। इससे बैंक के फर्जीखातों, फर्जी लेनदेनों कालाधन व हवाला के लेनदेनों में कमी आई हैं।

आधार कार्ड में देश के हर व्यक्ति को 12 अंकों का अनूठा नम्बर आबंटित किया गया है। इसे ई–के. वाय. सी. के रुप में भी उपयोग किया जा सकता है। आधारकार्ड में व्यक्ति का फोटो, अंगुलियों के निशान, घर का पता, आंखों की पुतलियों की स्केनिंग भी की जाती है। भारत सरकार व राज्य सरकार की विभिन्न योजनाओं की अनुदान राशि सब्सिडी हस्तांतरण में प्रमाणिता होती है।

कियोस्क (माइक्रो एटीएम) संव्यवहार – नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक द्वारा दूरस्थ ग्रामीण अंचलों तथा बैंकिंग विहित क्षेत्रों में बैंकिंग सेवाओं की उपलब्धता एवं विस्तार के लिए कियोस्क स्थापित किए है। ये कियोस्क ग्राहक सुविधा केन्द्र के रुप में बैंकिंग सेवाऐं उपलब्ध कर रहे है। इनके द्वारा ग्राहकों को विभिन्न बैंकिंग सेवाऐं न्यूनतम (नाम मात्र) के शुल्क पर उपलब्ध की जाती हैं।

कियोस्क से बैंकिंग सेवाऐं प्राप्त करने के लिए ग्राहक को दो पासपोर्ट साईज के रंगीन फोटो और के. वाय. सी. के साथ उपस्थित होना पडता है। कियोस्क संचालक द्वारा के. वाय. सी. की जांच से संतुष्टि के पश्चात सेवाऐं उपलब्ध की जाती है।

धन का हस्तांतरण करने के लिए ग्राहकों को बैंक न जाकर कियोस्क सेंटर से 24 बाय 7 यह सुविधा उपलब्ध हो जाती है। कियोस्क से लेनदेन

*शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** प्राचार्य, शासकीस महाविद्यालय, अजंड़ (बड़वानी) (म.प्र.) भारत

करते समय ग्राहकों को अतिरिक्त सावधानी बरतनी चाहिए। कियोस्क सेंटर को संबंधित सेवा के लिए शुल्क दिया जाता है। इस शुल्क की रसीद कियोस्क सेंटर संचालक से ली जानी चाहिए। प्राय: यह देखने में आता है कि कियोस्क सेंटर संचालक ग्राहकों से अतिरिक्त शुल्क लेते है।

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की डिमांड ड्राफ्ट और चेक से आजादी अब इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से पैसों का अंतरण :

- **एनईएफटी** – कुछ ही घंटों में देश में किसी को भी पैसा आंतरिक करें। एनईएफटी कार्य दिवसों और कार्य दिवस वाले शनिवार को पूर्वान्ह 8 बजे से अपरान्ह 7 बजे तक कार्य किया जाता है।
- **आरटीजीएस** – यदि आपको तुरन्त पैसा अंतरित करना है और यदि राशि दो लाख रुपये या उससे अधिक है तो आप **रियल टाइम ग्रॉस सेटलमेंट (आरटीजीएस)** का उपयोग कर सकते हैं। ग्राहकों के लिए आरटीजीएस कार्य दिवसों एवं कार्य दिवस वाले शनिवार को 8 बजे से 4.30 बजे तक यह सुविधा उपलब्ध होती हैं।
- **आईएमपीएस** – पैसा तुरन्त अंतरित करने के लिए तत्काल भुगतान सेवा **Immidiate Payment Services(आईएमपीएस)** का उपयोग कर सकते हैं। बैंक की छुट्टियों एवं रविवार को भी 24x7 पैसों का अंतरण किया जाता है। एनईएफटी, आरटीजीएस और आईएमपीएस सेवाओं का उपयोग शाखा में या आपके बैंक द्वारा उपलब्ध कराए गए इंटरनेट बैंकिंग, मोबाइल बैंकिंग आदि जैसे ऑनलाइन माध्यमों से कर सकते हैं।
- **यूपीआई (यूनिफाइड पेमेंट इंटरफेस)** – यूपीआई लाभार्थी के बैंक खाता की संख्या, आईएफएससी, एटीएम या डेबिट कार्ड नंबर आदि जैसी विस्तृत जानकारी दिए बिना वर्चुअल पेमेंट एड्रेस **(VPA)** का उपयोग करते हुए पैसा भेजने और प्राप्त करने का एक और आसान तरीका है। बैंक की छुट्टियों या रविवार को भी 24x7 पैसे भेजे जा सकते हैं। आप ऐसे व्यापारियों को भुगतान कर सकते हैं जो भुगतान के विकल्प रुप में यूपीआई को स्वीकार करते हैं। इसका उपयोग करने के लिए आपको अपने स्मार्टफोन पर यूपीआई एप्लीकेशन डाउनलोड करना होता है।

स्मिता : तकनीकी युक्त स्मार्ट एसएचजी मॉडल – नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक द्वारा 100 स्वयं सहायता समूहों के लिये विशिष्ट प्रोजेक्ट एसएमआईटीए का क्रियान्वयन एक वर्ष की अवधि हेतु आरंभ किया गया है। प्रोजेक्ट का मुख्य उद्देश्य स्वयं सहायता समूहों एवं उनके सदस्यों को बैंक के एसएचजी के माध्यम से एसएचजी एवं सदस्यों के मध्य नगदी रहित संव्यवहारों हेतु जोड़ना तथा एसएचजी का डाटा साख सूचना कम्पनियों के साथ साझा करना है। प्रोजेक्ट में 100 समूहों एवं उनके 1076 सदस्यों को शामिल किया गया है। वर्तमान में सभी 100 समूहों द्वारा बैंकके एसएचजी से जुड़ कर समूह एवं सदस्यों के मध्य नगदी रहित संव्यवहार किये जा रहे हैं।

स्मिता देश का एक विशिष्ट प्रोजेक्ट है, जो सफलतापूर्वक क्रियान्वित किया जा रहा है। यह प्रोजक्ट नगदी रहित समाज के निर्माण में महती भूमिका का निर्वाह कर रहा है।

तकनीकी नवोन्वेषण – बैंक की शत प्रतिशत शाखाएं कोर बैंकिंग साल्यूशन्स पर कुशलतापूर्वक कार्य करते हुए इस वित्तीय वर्ष में बैंक ने निम्नानुसार तकनीकी नवोन्वेषण किए है–

1. बैंक नेशनल ऑटोमेटेड क्लेयरिंग हाउस के साथ एसीएच डेबिट अथवा नाच क्रेडिट एवं इलेक्ट्रॉनिक बेनिफिट ट्रांसफर के निरन्तर में ई. सी. एस. हेतु ऑनबोर्ड है।
2. बैंक द्वारा इन्दौर, देवास एवं उज्जैन केन्द्र पर सीटीएस समाशोधन में भाग लिया जा रहा है।
3. इन्टरनेट बैंकिंग सुविधा के साथ–साथ इंटरआपरेबल एटीएम रुपे कार्डस ग्राहकों हेतु उपलब्ध है।
4. बैंक में माईक्रो एटीएम और कियोस्क पर एइपीएस संव्यवहार बी. सी. द्वारा सुचारु रुप से संचालित किए जा रहे हैं।
5. व्यावसायिक केन्द्रों पर पॉस के द्वारा बैंक के रुपे कार्डस का उपयोग कर इंटरआपरेबल ट्रांजेक्शन की सुविधा ग्राहकों को उपलब्ध है।
6. बैंक द्वारा बी सी लोकेशन पर कियोस्क अथवा माइक्रो एटीएम पर स्वयं सहायता समुह के खातों में संयुक्त बॉयोमेट्रीक्स का उपयोग कर खाता खोलना व ट्रांजेक्शन किए जाना प्रारंभ किया गया है।
7. वर्ष के दौरान बैंक द्वारा 22 नवीन शाखाऐं सीबीएस अंतर्गत खोली गई हैं।
8. वर्ष 2018 तक की स्थिति में बैंक ने ग्राहकों को निम्नानुसार रुपे एटीएम कार्ड जारी किए जा चुके हैं–

(अ)	रुपे डेबिट कार्ड	141019
(ब)	रुपे किसान कार्ड	173020
(स)	जनधन योजना रुपे कार्ड	910348

आरबीआई द्वारा जनहित में जारी चेतावनी (केवल पंजीकृत संस्थाओं में ही निवेश करें) :

1. आरबीआई, सेबी, आईआरडीए, पीएफआरडीए या राज्य सरकार के साथ पंजीकृत संस्थाओं में ही निवेश या जमा कर आप अपनी मेहनत की कमाई को सुरक्षित रख सकते हैं। ऐसी पंजीकृत संस्थाओं की सूची आरबीआई की वेबसाईट पर अपलोड की गई हैं।
2. कम समय में उच्च या आश्वस्त रिटर्न का वादा करने वाली योजनाओं के लालच में ना आएं। ऐसी योजनाएं धोखाधड़ी हो सकती हैं तथा इनके प्रमोटर्स आपकी मेहनत की कमाई लेने के बाद भाग सकते हैं। इनके झासे में ना आयें।
3. वाणिज्यिक बैंकों में बहुत कम ब्याज दर पर ऋण देने का वादा करने वाली कम्पनियां प्रोसेसिंग फीस लेने के बाद भाग सकती हैं।
4. यदि आपके पास किसी ऐसी संस्था की जानकारी या शिकायत है जिसमें जिसने जमा लौटाने या किसी स्कीम के अन्तर्गत पैसा जुटाने में धोखाधड़ी की है तो आप आरबीआई की वेबसाईट से जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

आधुनिक बैंकिंग के उपयोग में सावधानी – ग्रामीण व छोटे नगरों के बैंक ग्राहकों के द्वारा आधुनिक बैंकिंग की नवीन तकनीकों का उपयोग करने की प्रवृत्ति निरन्तर बढ रही है। सरकार भी केशलेस इकॉनामी के लक्ष्य का लेकर सभी शासकीय लेनदेन एवं विभिन्न योजनाओं का क्रियान्वयन भी बैंक के माध्यम से कर रही है। बैंक के द्वारा सभी आधुनिक सुविधाऐं इन्टरनेट और मोबाईल आधारित है। इन सेवाओं का उपयोग करते समय ग्राहकों को अतिरिक्त सावधानी की आवश्यता होती है। कई बार ग्राहक असावधानी वश धोखेबाजों के शिकार बन जाते है। बैंक के ग्राहकों को नवीनतम सेवाओं के उपयोग में निम्न सावधानी बरतनी चाहिए–

1. बैंक से प्राप्त डेबिट कार्ड व क्रेडिट कार्ड का गोपनीय नम्बर (पिन) किसी को नही बताए और किसी स्थान पर लिखकर नही रखे।
2. यदि ग्राहकों के पास बैंक के अधिकारी के नाम से फोन कर पिन नम्बर व आधार कार्ड, पेनकार्ड की जानकारी मांगी जाती है तो वे फोन कर किसी का इस प्रकार की सूचना नही दे, क्योंकि बैंक किसी भी ग्राहक

से फोन पर कोई सूचना नही मांगता है।

3. ग्राहक बैंक से प्राप्त डेबिट कार्ड व क्रेडिट कार्ड गुम होने की सूचना तत्काल बैंक को दें।
4. यदि किसी ग्राहक के खाते से राशि कम हो जाती है तो भी तत्काल इसकी सूचना बैंक का दी जानी चाहिए।
5. छलपूर्वक लॉटरी जीतने के प्रस्ताव, जीती गई राशि को प्राप्त करने संबंधी प्रस्ताव फर्जी होते है।
6. देश–विदेश में रोजगार के प्रस्ताव व इस संबंध में लिया जाने वाला शुल्क भी फर्जी होता है।
7. ग्राहक ई–मेल, व्हाट्सअप, मोबाईल मैसेज व समाचार पत्र पत्रिकाओं को दिए गए फर्जी विज्ञापनों से सावधान रहें।
8. धोखेबाजों के द्धारा बैंक के नाम से ई–मेल, लेटर हेड भेजे जाते है जो धोखाधडी के प्रकरण होते है। इस प्रकार के अपराधों को साइबर अपराध माना गया है। इसके लिए ग्राहकों को तुरन्त बैंक व पुलिस को इसकी सूचना देनी चाहिए।
9. बैंक के द्धारा इस प्रकार के छल से ग्राहकों को बचाने के लिए वित्तीय साक्षरता जैसे कार्यक्रमों का संचालन कर ग्राहकों को जागरुक बनाना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक वार्षिक प्रतिवेदन, इन्दौर
2. स्वविवेक पर आधारित।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

An Overview On Cyber Space & Security

Dr. Neena Pyasi *

Introduction - "Cyber" is a prefix used to describe a person, thing, or idea as part of the computer and information age. Taken from cybernetics, Greek word for "steersman" or "governor," it was first used in cybernetics, a word coined by Norbert Wiener and his colleagues. The virtual world of internet is known as cyberspace and the laws governing this area are known as Cyber laws and all the netizens of this space come under the ambit of these laws as it carries a kind of universal jurisdiction. Cyber law can also be described as that branch of law that deals with legal issues related to use of inter-networked information technology. In short, cyber law is the law governing computers and the internet.

The growth of Electronic Commerce has propelled the need for vibrant and effective regulatory mechanisms which would further strengthen the legal infrastructure, so crucial to the success of Electronic Commerce. All these regulatory mechanisms and legal infrastructures come within the domain of Cyber law.

The modern world has handled every aspect of its working into the hands of cyber world. Our lives have become so intricately woven into the cyber space that it has become a dangerous place than ever before. In the latest wake of Facebook Data Scandal, we can see how life on the web is not safe anymore. The dark alleys of the cyber world tend to reveal more and more perils.

As the world goes digital, humans have moved ahead of machines as the top target for cyber criminals.**Cyber crime damage costs to hit $6 trillion annually by 2021.**Every 40 seconds a business falls victim to a ransomware attack. Cybersecurity Ventures predicts that will rise to every 14 seconds by 2019.

Data Security Requirements - All network operators must implement baseline security requirements, many of which multinational companies should already have in place, including:

- Developing internal security management policies and protocols;
- Designating a responsible person for cyber security protection within the company.
- Adopting measures to prevent viruses, cyber attacks, network intrusions, and other threats to network security.
- Adopting measures to monitor and keep records of network operations and network security incidents, and retaining those network logs for at least six months.
- Identifying important/sensitive data and adopting measures, such as automatic backup and encryption, to protect it.
- Developing an emergency plan for responding to security incidents.
- Implementing remediation steps after detecting security loopholes or failures.
- Designating an administrative department to be in charge of cyber security, and requiring background checks on personnel that fill key positions in the department.
- Providing cyber security training, technology training, and skill evaluations to relevant personnel.
- Implementing a disaster recovery backup protocol for important systems and databases.
- Developing response plans for cyber security incidents and conducting drills on a regular basis.
- Conducting, or engaging a network security consultant to conduct, regular inspection and assessment of the company's network security and potential risks.
- Ensuring the legitimacy and necessity of personal data collection and use (including storage, transfer, and handling).
- Providing adequate disclosure and obtaining informed consent regarding collection and use of personal information.
- Adopting adequate technical and compliance measures to protect the security of personal information.
- Giving individuals the right to correct or delete their own personal data.

Another challenge is providing better security for data flowing over various routes on the Internet so that the information cannot be diverted, monitored, or altered.

1. Defining new technologies and deterrent strategies to protect the nation's infrastructure.
2. Establishing the front lines of defense capabilities to manage the federal enterprise network.
3. Defending against a full spectrum of cyber threats.
4. Developing tools to enable information assurance.

*Principal, SGTB Khalsa Law College, Jabalpur (M.P.) INDIA

5. Shaping the future environment through research and education.

Crimes committed on social media

1. Online Threats, Stalking, Cyber bullying - The most commonly reported and seen crimes that occur on social media involve people making threats, bullying, harassing, and stalking others online. While much of this type of activity goes unpunished, or isn't taken seriously, victims of these types of crimes . If you feel threatened by a statement made online to you, or believe a direct threat is credible, it's probably a good idea to consider calling the police.

2. Hacking and Fraud - Although logging into a friend's social media account to post an embarrassing status message may be forgivable between friends, Additionally, creating fake accounts, or impersonation accounts, to trick people (as opposed to just remaining anonymous), can also be punished as fraud depending on the actions the fake/ impersonation account holder takes.

3. Buying Illegal Things - Connecting over social media to make business connections, or buy legal goods or services may be perfectly legitimate. However, connecting over social media.

4. Posting Videos of Criminal Activity - As Smartphone and social media technology continue to improve hand in hand, more and more. While this sounds somewhat horrifying, it really is just short-sighted as more and more police departments and prosecutors are able to rely on these videos to arrest and convict these criminals.

5. Vacation Robberies - Sadly, one common practice among burglars is to, If your vacation status updates are publicly viewable, rather than restricted to friend groups, then potential burglars can easily see when you are going to be away for an extended period of time.

The problems are currently more obvious than the potential solutions. It is clear that engineering needs to develop innovations for addressing a long list of cyber security priorities. For one, better approaches are needed to authenticate hardware, software, and data in computer systems and to verify user identities. Biometric technologies, such as fingerprint readers, may be one step in that direction.

A critical challenge is engineering more secure software. One way to do this may be through better programming languages that have security protection built into the ways programs are written. And technology is needed that would be able to detect vulnerable features before software is installed, rather than waiting for an attack after it is put into use.

CYBER CRIME INVESTIGATIONS

Data retrieval

Internet based - If the case is internet based, finding the internet protocol (IP) addresses is your first step in the investigation. An IP address consists of numbers and letter, and that series is attached to any data moving through the internet. In order to retrieve an IP address from some Internet Service Providers (ISP) you will need to subpoena, warrant, or court order the company for information.

What an IP address contains:

1. who owns and operates the network address,
2. associated domain name/ computer name,
3. geolocation,
4. email addresses, and
5. local service provider identifier.

All ISPs are based on subscriptions to the company, these companies have records of everything their subscriber's do while on the internet. The timeframe that ISPs retain data from subscribers varies, therefore the investigation must move quickly. As the investigator, you can make a formal request to the ISP requesting they preserve the data in question while a subpoena, warrant, or court order is made requiring the records. Even with this letter, ISPs are not legally obligated to preserve the data for law enforcement.

Device base - If possible, place the device in a faraday bag prior to turning on and examining the device. If a faraday bag is not accessible, turn the device into airplane mode, this will prevent any reception or remote communication.

A copy of the original data is needed prior to investigating its contents. Having a copy of the original data prevents the contamination of the evidence. Cell phone and other wireless devices should be examined in an isolated environment where it cannot connect to networks, internet, or other systems.

Data Investigation - In order to begin investigating the data you will need to install a lock on the copy made of the data. This lock will allow you to manipulate the data and view it without making permanent changes. Once you have identified the make and model of the device in hand, select an extraction software that will be best suited to analyze the data or permit the investigator to view as much data as possible.

When the data has been removed, the device should be sent to your evidence department, as the device might contain; traces of DNA, fingerprints, and/or other evidence. While the physical device is with the evidence department, the investigator should run the software to see all files on the drive, the software should display any data areas that might have otherwise been hidden or partially deleted. Information on the suspect's participation in internet chat rooms, instant messages, emails, websites, apps and networks will become available. The software system will also assist your investigation in providing information such as:

1. Time stamps,
2. Images,
3. Text documents,
4. GPS locations, and
5. Other encrypted data.

Judicial Responce On Cyber Crime - With the advent of the Internet, cyber law has become an emerging field. Cyber law encompasses cyber crime, electronic commerce, freedom of expression, intellectual property rights,

jurisdiction and choice of law, and privacy rights. Cyber crime involves activities like credit card fraud, unauthorized access to computer systems, child pornography, software piracy and cyber stalking. Electronic commerce includes with encryption and data security. Freedom of expression includes defamation, obscenity issues and censorship. Intellectual property rights cover copyright, software licensing and trademark protection. Jurisdiction focuses on who makes and enforces the rules governing cyberspace. Privacy rights addresses data protection and privacy on the Internet.

There are many issues to be resolved in Cyber law. Two areas of cyber law requiring further clarification are cyber crime and jurisdiction. For example, in cyber law there are only a limited number of cases on point and no major statutory schemes on the books. Policy makers and attorneys dealing with cyber crime are often confined to referring to the imprecisely applicable and scarce existing statutes and cases1 . In cyber jurisdiction, the Court must address the question of which lawmaker has jurisdiction over actions taking place on the Internet. In the few cases the Courts have adjudicated, they have applied long-arms statutes and personal jurisdictional principles in making decision. Due to the paucity of cyber jurisdiction cases, there is a limited amount of law for the legal practitioner for reference.

Conclusion - Cyber security is a complex subject whose understanding requires knowledge and expertise from multiple disciplines, including but not limited to computer science and information technology, psychology, economics, organizational behavior, political science, engineering, sociology, decision sciences, international relations, and law. In practice, although technical measures are an important element, cyber security is not primarily a technical matter, although it is easy for policy analysts and others to get lost in the technical details. Furthermore, what is known about cyber security is often compartmented along disciplinary lines, reducing the insights available from cross-fertilization.

This primer seeks to illuminate some of these connections. Most of all, it attempts to leave the reader with two central ideas. The cyber security problem will never be solved once and for all. Solutions to the problem, limited in scope and longevity though they may be, are at least as much nontechnical as technical in nature.

The cyber crime or cyber issues have been all time in around as well as information systems are around us. In respect of the mention case scenario or the case study, it is clear that the hacking or cyber crime is the offence at where simple bytes are going much faster than the bullet. To prevent the cyber issue or to hack in the world, all countries are wanted to make some important and harsh laws by which the cyber crimes are prevented. Also, want to stop all the illegal websites that are unauthorized by the governments of the countries. It is also important to every government for providing educational program regarding the cyber issue or cyber crime. More care as more study is most import part to prevent the cyber issue or cyber crime in the all over the world.

References :-

1. Duggal,Pawan : Cyber security law, Saakshar law publication, 2015
2. Anirudh Rastogi *:* Bridging the Gaps Between Security Professionals, Law Enforcement, and Prosecutors 1st Edition, LexisNexis publisher, 2014
3. http://www.indiancybersecurity.com
4. http://www.legalservicesindia.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

A Hybrid Inteligent System For Legal Reasoning

Dr. Pooran Singh* Prof. Neeraj Bhargava Parul Baghla*****

Abstract - The intelligent systems differ in the waythat they represent the knowledge, learn things and solve the problem. These systems collectively will have features like learning ability, adaptation to changes, explanation capability features and flexibility in dealing with the imprecise and incomplete information etc. .No single intelligent system has all features. In order to develop the application which requires most of the above features it is necessary to integrate the system. These systems solve problems like human beings . The human combines several knowledge and reasoning methods to solve problems. A hybrid intelligent system is one that combines at least two intelligent technologies. A hybrid system that combines a neural network and a rule-based expert system is called a neural expert system (or a connectionist expert system). The main objective of the study is to develop a legal hybrid framework for legal domain in Indian context. "Legal expert system" is designed to make decision and provide advice as would a human expert. Most legal expert systems attempt to implement complex models of legal reasoning. Yet the utility of a legal expert system lies not in the extent to which it simulates a lawyer's approach to a legal problem, but in the quality of its predictions and of its arguments. A complex model of legal reasoning is not necessary: a successful legal expert system can be based upon a simplified model of legal reasoning Few automated legal reasoning systems have been developed in domains of law in which a judicial decision maker has extensive discretion in the exercise of his or her powers. Discretionary domains challenge existing artificial intelligence paradigms because models of judicial reasoning are difficult, if not impossible to specify. We argue that judicial discretion adds to the characterization of law as open textured in a way which has not been addressed by artificial intelligence and law researchers in depth. We demonstrate that systems for reasoning with this form of open texture can be built by integrating rule sets with neural networks trained with data collected from standard past cases. The obstacles to this approach include difficulties in generating explanations once conclusions have been inferred, difficulties associated with the collection of sufficient data from past cases.
Keywords : Reasoning, hybrid System.

Introduction - The hybrid intelligent system is a combination of more than one technique [Larry Medsker,1995] to overcome the limitation of individual techniques. These system represent not only the combination of different technique but also integration of intelligent technique with conventional system such as database system and spreadsheet. A hybrid expert system is one which combines more than one method of reasoning in order to attempt to answer a legal problem. Hybrid system typically combine the two major forms of reasoning: rule based reasoning (RBR)and case based reasoning(CBR). There are two popular methods combining RBR and CBR. The first is what is known as "blackboard architecture". This method has a number of knowledge modules that collaborate with each other by using a shared database (the "backboard"). There is a control mechanism (sometimes called a "scheduler") that decides which knowledge module is most appropriate at each step of the reasoning process.

Review of Literature - Hart [1994] believes in a rule based approach for development legal expert system. He claims that rules can be extracted from all cases and that these are- as determine as any statutory rule [Hart 1994, page 135]. Wasserstrom claims deduction is the appropriate method of reasoning with the law and aggress with the eliciting of rules from cases. Wahlgren [1992] views the law from the positivist standpoint. That is, rules can be elicited from cases. He supports creating a rule –based legal expert system to operate on the British Nationality Act. Aarnio puts forward a view of legal reasoning in which induction is allowable, but it only provides prediction, not certainty. Callerosbelieves forms of inductive reasoning (both creating rules and as comparison) are appropriate for reasoning with cases; deductive, rule-based, reasoning is appropriate for reasoning with statutes. The rule skeptics see reference to legal rule as an ex post facto justification of the decision in a case rather than the sources upon which to reach the decision. Allen proposes that analogy is the

*Asso. Prof. & H.O.D (Computer Science) Kuchaman College, Kuchaman City (Raj.) INDIA
** Professor & Head Of Department (Computer Science) MDS University, Ajmer (Raj.) INDIA
*** Research Scholar (Computer Science) Maharaja Vinayak Global University, Jaipur (Raj.) INDIA

best method of reasoning with cases.

Llewellyn rejects any uses of a previous case in the process of reaching a decision. However, previous cases may be used to justify the decision. Levi believes that the use of analogy is the method of arguing with cases in law- the finding of similarity or difference is the key step in a legal process. Leith presents the view that more than rule-based reasoning is required to reason in –the legal world.

Wassertrom[1961] characterizes decisions as either begin arrived at by logical or as arbitrary. For wasserstrom the only method of logically arriving at a decision is by deduction. Therefore, as the system claims to be nonarbitrary, deduction is the method of reasoning with the law. Wasserstrom wishes that if the system is not logical, it is to be made on utilitarian grounds. By assuming deduction to be the only method of reasoning in law, Wasserstrom agrees with the eliciting of rules from cases.

The work of the rule skeptics is a criticism of the claim that legal decision are made as a consequence of a system of the rules. The work of the rule skeptics is not necessarily concerned with appropriateness of eliciting rules from cases. However, Llewellyn [1960] does make the claim relevant to the current discussion. According to Llewellyn, the ratio of a prior case is particular to the case and it cannot be used as a general rule in future cases with different facts. Llewellyn thus rejects any use of a previous case in a process of reaching a decision. However, previous cases may be used to justify the decision.

Typically the RBR parts of the hybrid system are used to capture knowledge not only about status, but also the common law. CABARET and GREBE use a RBR to capture both types of knowledge. PROLEXS PERHAPS is a little against the trend and uses a RBR for the capturing of knowledge about the statue, and a CBR for the case-base, however for its other knowledge-other types of (mostly rule based) reasoning were used. The problem with these approaches is that, from a lawyer's perspective, the only information that can be accurately captured and argued by a RBR is that found in status. NO matter how clear a case may seem, it cannot be captured by a rule, because a rule would attempt to define how that case should apply to all possible future legal problems Due to the complexity of human interaction, this is simply not possible.

TECHNIQUE	SYSTEM	DOMAIN	Developed At
RBR	AUDITOR	Audit	Champaign Urbana
	CABARET	income tax law	(US)
	DSCAS	A DSC claim	Colorado
	JUDITH	civil law	Stanford
	LDS	product liability cases	________
	SAL	asbestos exposure	The Rand Corporation
	TAXADVISOR	tax and estate planning	University of Illinois, Champaign-Urbana
CBR	FINDER	law of trover	Australia
	SHYSTER	Copyright Act	Australian National University
SEMANTIC NET	LAS	intentional torts	MIT
	LRS	negotiable instruments law	University of Michigan
	LEX	criminal code - hit-and-run traffic violations	GERMANY
FRAME	SARA	discretionary norms	Norwegian Research Center for Computers and Law
	TAXMAN	corporate tax law	Rutgers University.
	GREBE	workers' compensation law	Texas
CBR+RBR	IKBALS	credit law	________
	PROLEXS	landlord-tenant law	Dutch

Scope Of The Study - This study is to design and develop a legal hybrid intelligent system framework for legal domain in the Indian context. This study aims to shows that a Hybrid Intelligent can be developed in the domain of law and need not be based upon a complex model of legal reasoning in order to produce useful advice. It supports a practical approach to hybrid legal expert system design based on the way in which lawyers deal with the law on a day-to day basis.

It argues that a system based upon a simple model of legal reasoning can still produce good advice, where that advice is evaluated by reference to the accuracy of its predications and to the quality of its arguments. Furthermore, such system, with its knowledge representation structure, makes commensurately simpler the process of knowledge acquisition. These arguments are made theoretically, and then by implementation . A Hybrid legal intelligent system which is based on a practical approach to the law has been developed. The design and development of that system framework, called NIRNAY.

NIRNAY is designed to help common men, lawyers and judges. It is an interactive system which interacts with the user and gives the solution to user to user of the system about the case. NIRNAY framework is designed to show that hybrid expert system can be developed to legal reasoning, in law domain. NIRNAY is a design and framework; it can be operated in different legal; domains. It is designed to provide advice in areas of case law that have been specified by a legal expert using specially developed modules system.

NIRNAY is a design and framework of knowledge based system. It uses two reasoning methods for giving the solution to the user. The methods for reasoning used are Rule Based Reasoning method and Case Base Reasoning method. The RBR reasoning produces the prediction using the rule base in the system. The RBRreasoning produces the prediction using the rule base in the system. The RBR module runs the VIDWAN [VID] an open source inference engine. The output is displayed on the screen and stored in a file as well. The CBR reasoning produces the predication using case based system

Digram

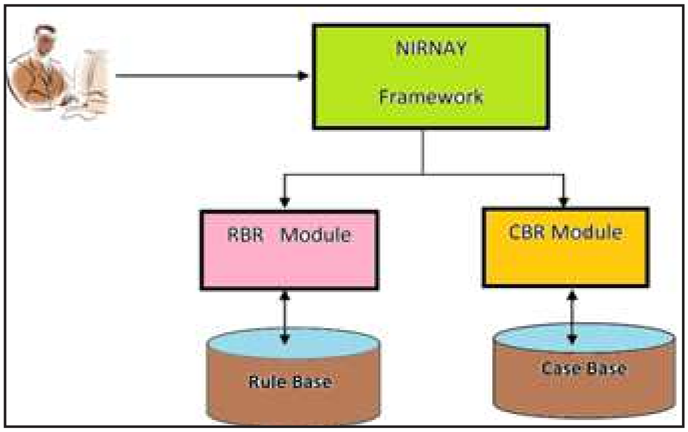

Conclusion - The rule are seem as local, not general, temporal rather than permanent, and subjectively considered correct rather than universally. Given these limitations, it hardly seems appropriate to refer to whatever is extracted from a case as a rule. IT is a guide that is extracted or a principle. The use of the world rule is not designed to convey the same strictness as a rule in mathematics something that cannot be broken. The use of analogy to compare cases seems to fit well with the concept of precedent. Such a method of reasoning has support from some of mentioned jurisprudents. The idea of analogy is show how one thing is like another. The doctrine of precedent purports to treat likes cases a like.

References :-

1. Angi Voss, How to solve complex problems with cases, Engineering Application of Article Intelligence, Volume 9, Issue 4, August 1996,pp.377-384
2. FatemehZahedi,-Intelligent system for Business: Expert System with Neural network, Wadsworth publishing Company, 1993
3. HART , H.L.A. 1994. The Concept of Law (Second ed.) Oxford University press.
4. Janet kolodner,-Maintaining organizations in a dynamic long-term memory, Cognitive science, volume 7,NO.4,Oct 1983, pp. 243-280
5. Ian Watson, - Case –based reasoning is a methodology not a technology, knowledge-Based System, volume 12, Issue 5-6,October 1999,pp.303-308
6. J Boyle,” Anatomy of a Torts Class” (1985) 34 American University Law Review 131; see also M Kelman, “ Trashing” (1984) 36 Stanford Law Review 293.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Image Compression Using Digital Wavelet Transform With Global Hard Thresholding

Brij Mohan Pareek * Dr. Amit Kumar Vyas **

Abstract - Image compression has remained a fundamental problem in the field of image processing. With Wavelet transforms, various algorithms for compression in wavelet domain were introduced. Wavelets gave a superior performance in image compression due to its properties such as multi-resolution. The problem of estimating an image that is corrupted by Additive White Gaussian Noise has been of interest for practical and theoretical reasons. Non-linear methods especially those based on wavelets have become popular due to its advantages over linear methods. Here I applied non-linear thresholding techniques in wavelet domain such as hard and soft thresholding, wavelet shrinkages using Discrete Wavelet Transform (DSWT) for different wavelets, at different levels, to compression an image and determine the best one out of them. Performance of compression algorithm is measured using quantitative performance measures such as Signal-to-Noise Ratio (SNR) and Mean Square Error (MSE) for various thresholding techniques.

Keywords - Wavelet; Discrete Wavelet Transform; Wavelet Packet Transform; Wavelet Transform; Thresholding; Mean Square Error; Peak Signal-to-Noise Ratio.

Introduction - In many applications, image compression is used to produce good estimates of the original image from noisy observations. The restored image should contain less noise than the observations while still keeping sharp transitions (*i.e.*edges) [1]. Wavelet transform, due to its excellent localization property, has rapidly become an indispensable signal and image processing tool for a variety of applications, including compression and de-noising. Wavelet compression attempts to remove the noise present in the signal while preserving the signal characteristics, regardless of its frequency content.

Wavelet thresholding [2-5] (first proposed by Donoho) is a signal estimation technique that exploits the capabilities of wavelet transform for signal compression. In our project, the wavelet thresholding techniques are applied to an image. Image compression coing is to store the image into bit-stream as compact as possible and to display the decoded image in the monitor as exact as possible. It compresses image with the choice of a thresholding parameter and the choice of this threshold determines, to a great extent the efficacy of compression. **Figure 1** shows the block diagram of compression using Wavelet transformation and thresholding techniques.

Figure 1 (See in last page)

Compression Procedure:

The procedure to compression an image is given as follows:

De-noised image = W"1 [T{W (Original Image + Noise)}]

Step 1: Apply forward wavelet transform to a noisy image to get decomposed image.

Step 2: Apply non-linear thresholding to decomposed image to remove noise.

Step 3: Apply inverse wavelet transform to thresholded image to get a compression d image in spatial domain.

Theoretical Aspects of Image Compression Techniques

Discrete Wavelet Transform (DWT) [6-8] - The DWT of an image *x* is calculated by passing it through a series of filters. First the samples are passed through a low pass filter with impulse response *g* resulting in a convolution of the two:

The image is also decomposed simultaneously using a high-pass filter *h*. The outputs give the detail coefficients (from the high-pass filter) and approximation coefficients (from the low-pass filter). It is important that the two filters are related to each other and they are known as a quadrature mirror filter. However, since half the frequencies of the signal have now been removed, half the samples can be discarded according to Nyquist's rule. The filter outputs are then down sampled by 2: [9,10]

$$y[n] = (r * g)[n] = \sum_{k=-\infty}^{\infty} x[k]\, g[n-k]$$

$$y_{low}[n] = \sum_{k=-\infty}^{\infty} x[k]\, g[2n-k]$$

$$y_{high}[n] = \sum_{k=-\infty}^{\infty} x[k]\, h[2n-k]$$

$$(y \downarrow k)[n] = y[kn]$$

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Supervisor, Govt. Engineering College, Bikaner (Raj.) INDIA

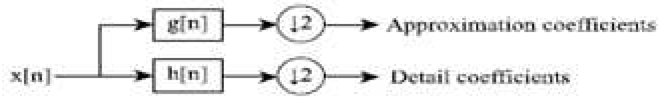

$$y_{low} = (x * g) \downarrow 2$$

$$y_{high} = (x * h) \downarrow 2.$$

This decomposition has halved the time resolution, since only half of each filter output characterizes the signal. However, each output has half the frequency band of the input, so the frequency resolution has been doubled. This is in keeping with the Heisenberg uncertainty principle. With the down sampling operator the above summation can be written more concisely. The Discrete Wavelet Transform provides sufficient information both for analysis and reconstruction of the original signal, with a reduction in the computation time.

Sub-Band Coding - Sub-band coding is a method for calculating the Discrete Wavelet Transform. The whole sub-band process consists of a filter bank, and filters of different cut-off frequencies are used to analyze the signal at different scales.

The procedure starts by passing the signal through a half band high-pass filter and a half band low-pass filter. A half band low-pass filter eliminates exactly half the frequencies from the low end of the frequency scale. For example, if a signal has a maximum of 1000 Hz component, then half band low-pass filter removes all the frequencies above 500 Hz. The filtered signal is then down sampled, meaning some sample of the signal is removed. Then the resultant signal from the down sampled half-band low-pass filter is then processed in the same way again. This process will produce sets of wavelet transform coefficients that can be used to reconstruct the signal. An example of this process is illustrated in **Figure 2**. The resolution of the signal is changed by filtering operations, and the scale is changed by down sampling operations. Down sampling a signal corresponds to reducing the sampling rate, which is equivalent to removing some of the samples of the signal. Where, cA*x* is the approximation coefficients at decomposition level *x*, cD*x* is the detail coefficients at decomposition level *x.* S is the original signal. From **Figure 2**, you can see the original signal is broken down into different levels of decomposition. In the above case, it is a 3-level decomposition. Every time the newly scaled wavelet is applied to the signal, the information captured by the coefficients remains stored at that level. Thus the remaining information contains the higher frequencies of the signal, if the scaling factor decreases.

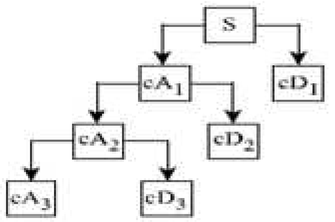

Figure 2. Wavelet decomposition tree

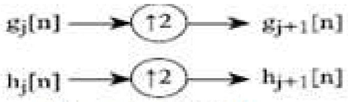

Figure 3. SWT filters.

Stationary Wavelet Transform - In SWT, the signal is sub-sampled and the filters are up sampled at each level of decomposition.

Each level's filters are up-sampled versions of the previous as shown in **Figure 3**. The SWT is an inherent redundant scheme, as each set of coefficients contains the same number of samples as the input. So for a decomposition of N levels, there is a redundancy of 2N.

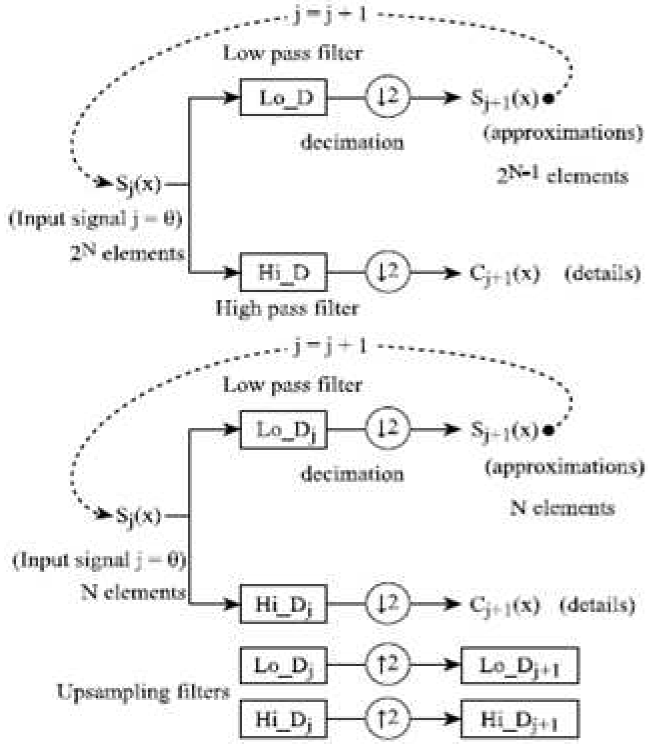

Figure 4. Decomposition of a 1-D signal using DWT (top) and SWT (bottom).

Figure 4 shows the decomposition of Discrete and wavelet transform. The Discrete Wavelet Transform (DWT) [11,12] is the simplest way to implement MRA. It necessitates a decimation by a factor 2N, where N stands for the level of decomposition, of the transformed signal at each stage of the decomposition. As a result, DWT is not translation invariant which leads to block artifacts and aliasing during the fusion process between the wavelet coefficients. For this reason, we use the Wavelet Transform (SWT) (Holschneider, 1988). For the SWT scheme the output signals at each stage are redundant because there is no signal downsampling; insertion of zeros between taps of the filters are used instead of decimation. **Figure 5** shows the decomposition of an image using SWT at level 1.

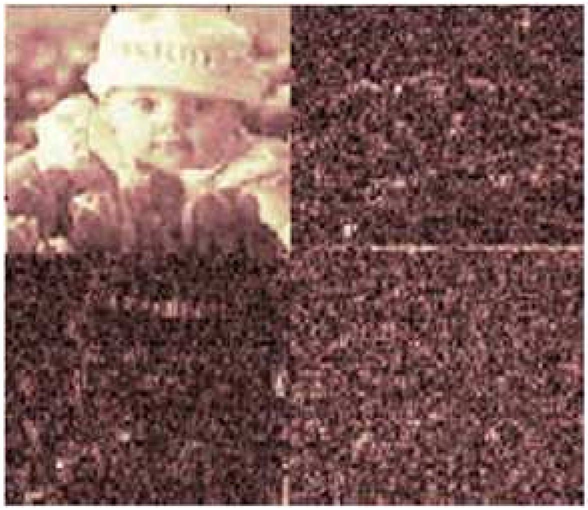

Figure 5. Decomposition using SWT at level 1.

Thresholding Techniques - Thresholding [13,14] is a simple non-linear technique, which operates on one wavelet coefficient at a time. In its most basic form, each coefficient which is smaller than threshold, set to zero, otherwise, it is kept or modified. The small co-efficient are dominated by noise, while coefficient with large absolute value carry more signal information than noise. Replacing noise co-efficient (small coefficients below a certain threshold value) by zero and an inverse wavelet transform may lead to a reconstruction that has lesser noise. This thresholding idea is based on the following:

1) The de-correlating property of wavelet transform creates a sparse signal. Most untouched coefficient is zero or close to zero.
2) Noise is spread out equally along all co-efficient.
3) The noise level is not too high so that one can distinguish the signal wavelet coefficients from binary ones.

This method is an effective and thresholding is simple and efficient method for noise reduction.

Hard Thresholding - One of the most attractive features of wavelet thresholding is that, for the type of random noise frequently encountered, in signal transmission, it is possible to automatically choose a threshold for denosing without any prior knowledge of the signal.

By choosing a threshold that is significantly large, and multiplying with the standard deviation of the random noise, it is possible to remove most of the noise by thresholding the wavelets transform coefficients. This process is known as *hard* thresholding.

$$T_\tau^{\text{Hard}}\left(Y[m,n]\right)=\begin{cases}Y[m,n], & \left|Y[m,n]\right|>\tau\\ 0, & \left|Y[m,n]\right|\le\tau\end{cases}$$

Where *T* is the threshold value.

From **Figure 6**, we can see that hard thresholding can create discontinuities, and thus greatly exaggerates small differences in the transform value whose magnitudes are near the threshold value ô. If the value is only slightly less than *T*, then this value is set equal to zero, while a value whose magnitude is only slightly greater than ô is left unchanged. Therefore, hard thresholding is not suitable for most noise removal. **Figure 7** shows Hard thresholding uing dB5 wavelet.

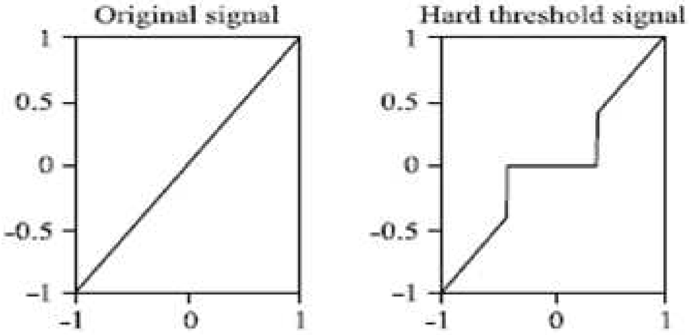

Figure 6. Illustration of hard thresholding, *T* = 0.4.

Soft Thresholding - With a slight modification to the hard thresholding approach - a method known as *soft* thresholding can be created as shown in **Figure 8**.

$$T_\tau^{\text{soft}}\left(Y[m,n]\right)=\begin{cases}\operatorname{sgn}\left(Y[m,n]\right)\left(\left|Y[m,n]\right|-\tau\right), & \left|Y[m,n]\right|>\tau\\ 0, & \left|Y[m,n]\right|\le\tau\end{cases}$$

Where *T* is the threshold value.

From **Figure 9**, the original image had more noise in the bottom half compared to the top half. Since soft thresholding is a global operation, in the sense the entire image is used for the compression process, it cannot concentrate on just the lower half of the image. But, if the compression d image has to be processed again, then the top half of the image would be over processed, and defects, such as blurring, can be introduced. Some original details of the image is removed along with the noise. This is because the noise obscured most of the small magnitude values that result from the original signal. Consequently, when thresholding is applied, it removes many of the transform values of the original signal, which are needed for accurate approximation.

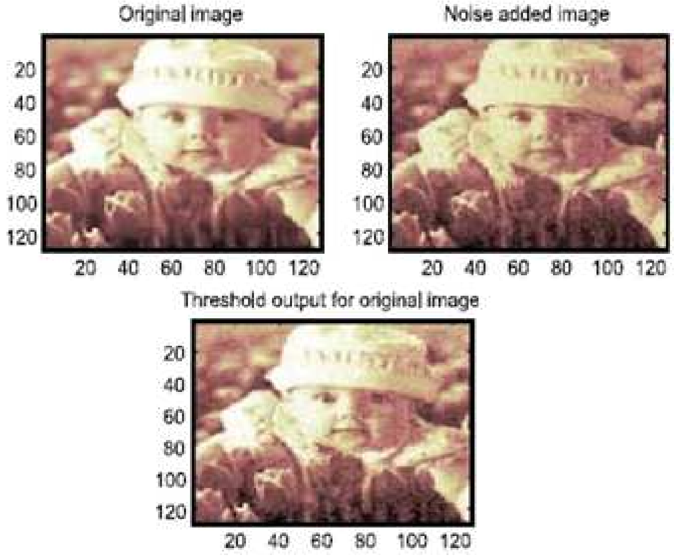

Figure 7. Hard thresholding using dB5 wavelet.

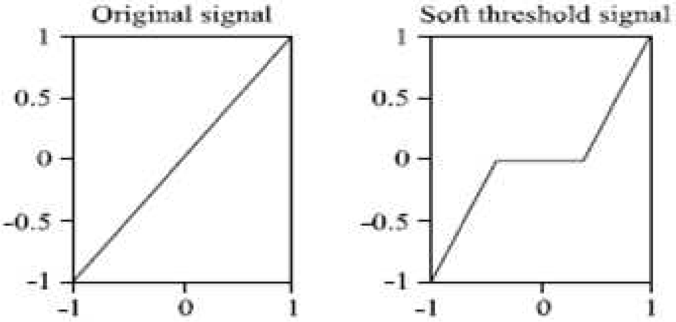

Figure 8. Illustration of Soft thresholding, with threshold *T* = 0.4.

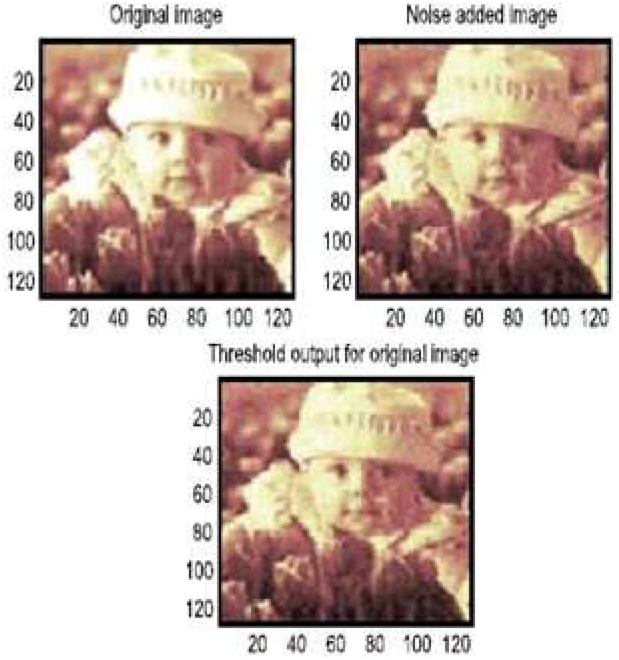

Figure 9. Soft thresholding using db5 wavelet.

Experimental Results - Comparison of SNR before and after thresholding for various wavelets at level 1 is shown in **Figures 10-13**. The **Figure 14** shows image outputs for dB5 at level 1for global soft thresholding.

Figure 10,11,12,13 & 14 (see in last page)

Conclusion - DWT is translation varianopusion process between the wavelet co-efficient, where as DSWT is Translation Invariant. In DSWT artifacts and aliasing are less than compared to DWT. This is the reason, why DSWT is preferred over DWT. We have applied Additive White Gaussian Noise to an original image (kid), then DSWT is applied to get decomposed wavelet co-efficients to which various threshold techniques are applied for different wavelets. Inverse DSWT is applied to get reconstructed compression d image. In this paper, we have compared different wavelets such as Daubachies, Haar, Coiflet, Symlet with various threshold techniques such as default global hard and soft and measured the parameters such as Mean Square Error (MSE) and Signal-to-Noise Ratio (SNR). After comparison, it is found that MSE for HAAR global hard wavelet threshold is the least among all. SNR for HAAR SURE shrink soft level 1 is the maximum and the best among all.

Future Scope - Nonetheless, there is always room for improvement. Multi-wavelets are relatively a new subject of study. Most Compression of an Image Using Discrete Wavelet Transform and Various Thresholding Techniques current filters available have two, three or fourth order of approximation. Future construction methods may add even higher order of approximation, while preserving the desirable features of current methods. It most likely result in multi-filters that perform even better in image compression applications. Moreover the multi-wavelet systems available presently have the multi-scaling and multi-wavelet coefficients which are 2 × 2 matrices.

There is a possibility that in future many more multi-wavelet systems might be developed with matrix coefficients with higher order, which could provide even better results in the field of image compression& compression.

References :-

1. S. Mallat, "A Wavelet Tour of Signal Processing," Cambridge Univiversity Press, New York, 1999.
2. V. Strela and A. T. Walden, "Signal and Image compression via Wavelet Thresholding: Orthogonal and Biorthogonal, Scalar and Multiple Wavelet Transforms," *Statistic Section Technical Report TR*-98-01, Department of Mathematics, Imperial College, London, 1998.
3. D. L. Donoho and I. M. Johnstone, "Compression by Soft Thresholding," *IEEE Transactions on Information Theory*, Vol. 41, No. 3, 1995, pp. 613-627. doi:10.1109/18.382009
4. S. G. Chang, B. Yu and M. Vattereli, "Wavelet Thresholding for Multiple Noisy Image Copies," *IEEE Transactions on Image Processing*, Vol. 9, No. 9, 2000, pp.1631- 1635. doi:10.1109/83.862646
5. D. L. Donoho and I. M. Johnstone, "Ideal Spatial Adaptation by Wavelet Shrinkage," *Biometrika*, Vol. 81, No. 3, 1994, pp. 425-455. doi:10.1093/biomet/81.3.425
6. A. M. L. Lanzolla, G. Andria, F. Attivissimo, G. Cavone, M. Spadavecchia and T. Magli, "Compression Filter to Improve the Quality of CT Images," *Proceedings of IEEE Conference on Instrumentation and Measurement Technology*, Singapore City, 5-7 May 2009, pp. 947-950.
7. S. Ruikar, Andria and D. D. Doye, "Image Compression Using Wavelet Transform," *International Conference on Mechanical and Electrical Technology* (ICMET 2010), Singapore City, 10-12 September 2010, pp. 509-515.
8. I. Daubechies, "The Wavelet Transform, Time-Frequency Localization and Signal Analysis," *IEEE Transaction on Information Theory*, Vol. 36, No. 5, 1990, pp. 961-1005.
9. J. Portilla, V. Strela, M. Wainwright and E. Simoncelli, "Image Compression Using Gaussian Scale Mixtures

in the Wavelet Domain," *IEEE Transactions on Image Processing*, Vol. 12, No. 11, 2003, pp. 1338-1351. doi:10.1109/TIP.2003.818640

10. J. Portilla and E. P. Simoncelli, "Adaptive Wiener compression Using a Gaussian Scale Mixture Model in the Wavelet Domain," *IEEE International Conference on Image Process* (*ICIP*), Vol. 2, 2001, pp. 37-40.
11. S. G. Chang, B. Yu and M. Vetterli, "Adaptive Wavelet Thresholding for Image Compression and Compression," *IEEE Transactions on Image Processing*, Vol. 9, No. 9, 2000, pp. 1532-1546.
12. A. Pizurica, W. Philips, I. Lemahieu and M. Acheroy, "A Versatile Wavelet Domain Noise Filtration Technique for Medical Imaging," *IEEE Transactions on Medical Imaging*, Vol. 22, No. 3, 2003, 323-331.
13. M. K. Mihcak, I. Kozintsev, K. Ramchandran and P. Moulin, "Low-Complexity Image Compression Based on Statistical Modelling of Wavelet Coefficients," *IEEE Signal Processing Letters*, Vol. 6, No. 12, 1999, pp. 300-303.doi:10.1109/97.803428
14. I. M. Johnstone and B. W. Silverman, "Wavelet Threshold Estimators for Data with Correlated Noise," *Journal of the Royal Statistical Society B*, Vol. 59, No.2, 1997, pp. 319-351. doi:10.1111/1467-9868.00071
15. F. Luisier, T. Blu and M. Unser, "A New SURE Approach to Image compression : Interscale Orthonormal Wavelet Thresholding," *IEEE Transactions on Image Processing*, Vol. 16, No. 3, 2007, pp. 593-606.doi:10.1109/TIP.2007.891064

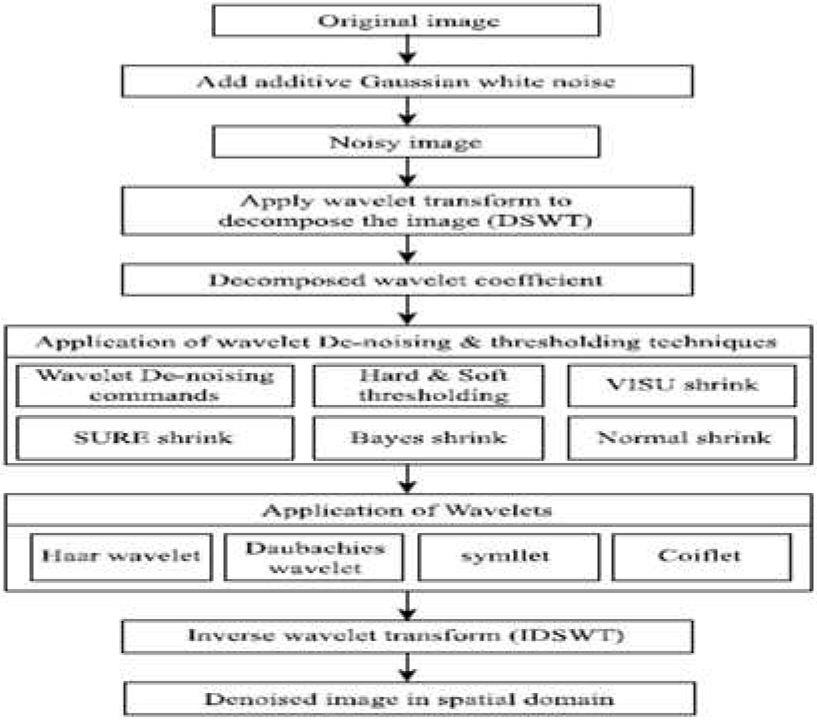

Figure 1. Block diagram of compression using wavelet transformation and thresholding techniques.

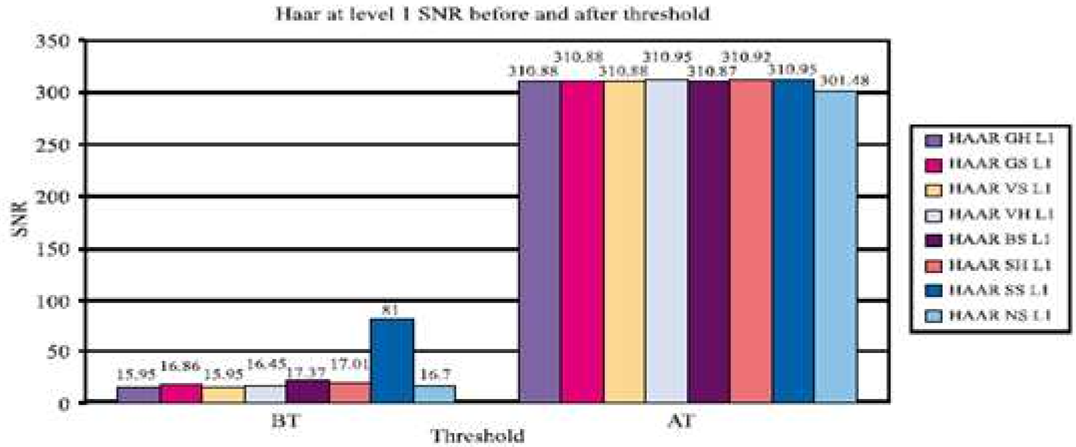

Figure 10. Graph for Haar at level 1 for SNR before & after thresholding.

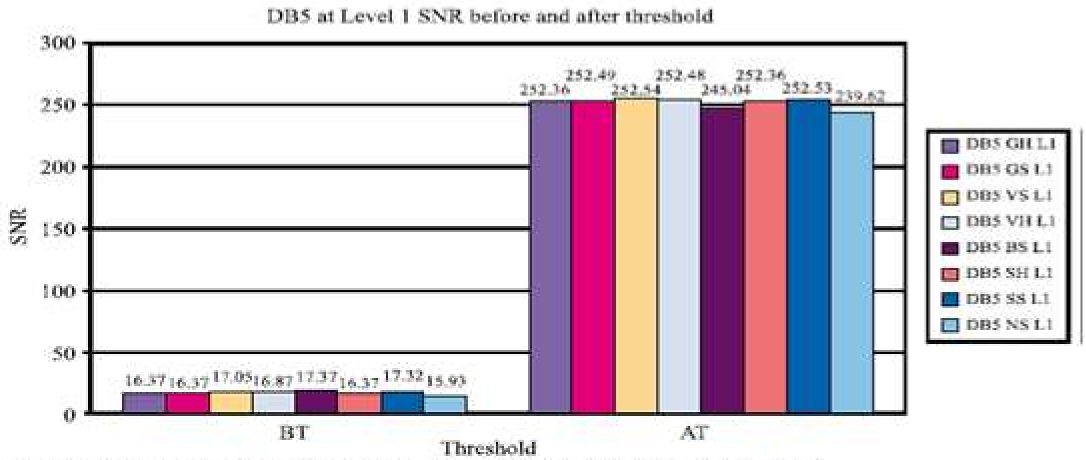

Figure 11. Graph for DB5 at level 1 for SNR before and after thresholding.

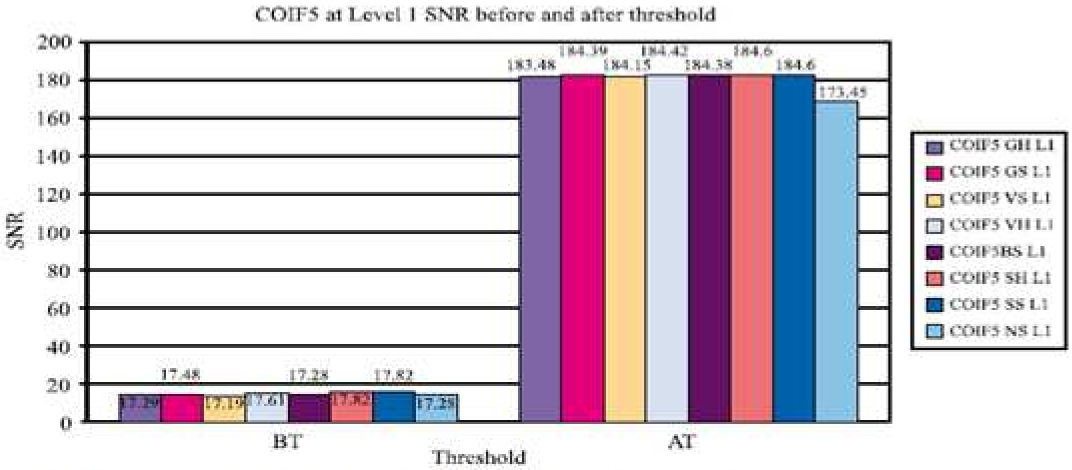

Figure 12. Graph for coiflet 5 at level 1 for SNR before & threshold

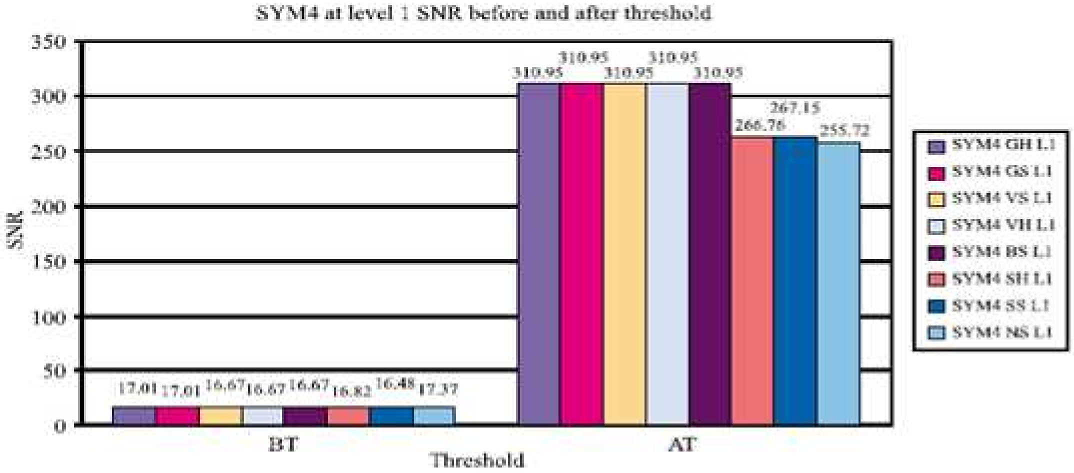

Figure 13. Graph for symlet 4 at level 1 for SNR before & after thresholding.

Figure 13. Graph for symlet 4 at level 1 for SNR before & after thresholding.

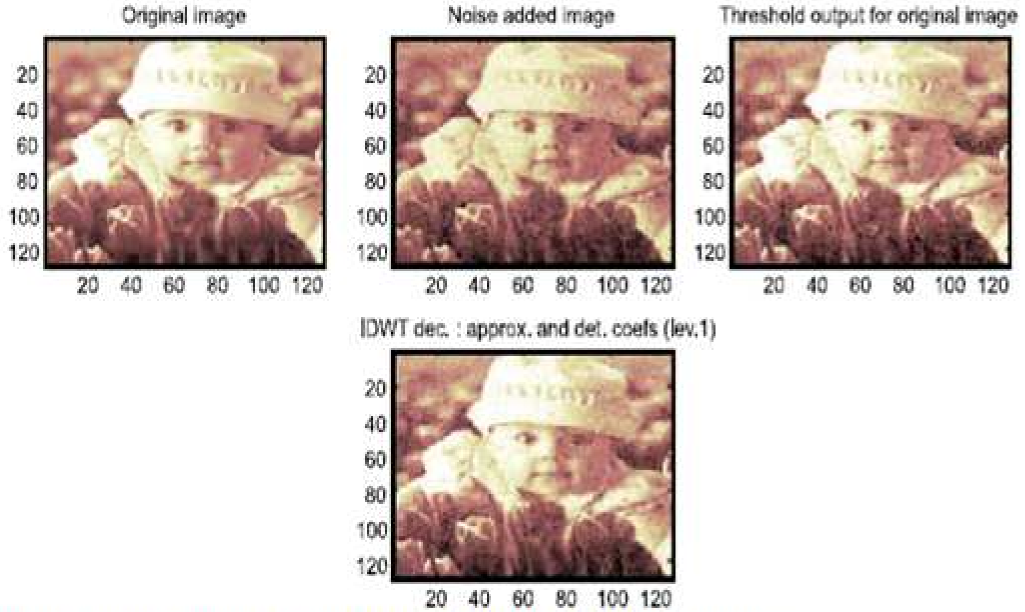

Figure 14. Image outputs for dB5 at level 1 for global soft thresholding.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

पर्यावरण सचेतना और विद्यार्थियों का पर्यावरणीय संज्ञान

किरण पवार * डॉ. साधना देवेश वर्मा **

प्रस्तावना - पर्यावरण शिक्षा तथा पर्यावरण सचेतना समानार्थी प्रतीत होते है- किन्तु इनमें अन्तर है। पर्यावरण-शिक्षा का मुख्य पक्ष है पर्यावरण अध्ययन जो पर्यावरण की जानकारी देने का कार्य करता है। पर्यावरण शिक्षा सर्जनात्मक कौशल का विकास करती है, पर्यावरण अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास करती है साथ ही प्रयोगोत्मक एवं व्यावहारिक कार्यो हेतु प्रशिक्षण भी देने का कार्य करती है ताकि स्वस्थ्य जीवन का आधार बनाया जा सके जो कि पर्यावरण शिक्षा का मूल आधार तथा उद्देश्य है। पर्यावरण के सुधार तथा विकास हेतु विधियों प्रविधियों का ज्ञान असन्तुलन को दूर करके पर्यावरण में गुणवत्ता लाने के लिऐ सचेत करता है पर्यावरण सचेतना का अर्थ है :-

1. प्राकृतिक स्त्रोतों के महत्व को समझना तथा उनके विशिष्ट उपयोग हेतु सामुदायिक प्रयासों में सहायता करना।
2. भौतिक पर्यावरण, वनस्पति वन्य जीवन एवं मनुष्य के पारस्परिक अर्न्तसम्बन्ध व निर्भरता को पहचानना तथा विकास को समझना।
3. सामाजिक साँस्कृतिक तथा आर्थिक विकास हेतु व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप में या सामूहिक रूप में क्रियाओं को आरम्भ करना।
4. पर्यावरण के अन्तर्गत मानवीय सामग्री स्थान तथा समय और स्त्रोतो को पहचानना।
5. पर्यावरण के स्त्रोतों की प्रभावशाली उपयोगिता हेतु आयाम तथा विधियों को पहचानना, जिससे सामाजिक, आर्थिक तथा साँस्कृतिक विकास एवं अभिवृद्धि की जा सके।

आवश्यक है कि पर्यावरण शिक्षा का व्यापक स्तर पर प्रचार और प्रसार हो जिससे समाज के हर वर्ग में पर्यावरण के प्रति समझ एवं जागरूकता पैदा हो। जनसंख्या नियंत्रण, प्रदूषण नियंत्रण संतुलित औद्योगिक विकास सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना का विकास, सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास करते हुए जन जागरूकता उत्पन्न करने के लिए भी पर्यावरण शिक्षा आवश्यक है।

जन-जन में पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति जागरूकता लाने के लिए औपचारिक शिक्षा के सभी स्तरों पर पर्यावरणीय शिक्षा की अनिवार्य विषय के रूप में अध्ययन अध्यापन की व्यवस्था विश्व के सभी देशों में की जाए। पाठ्यचर्चा व शिक्षण विधियॉ पर्यावरण संतुलन के प्रति सचेष्ठ युवा पीढ़ी तैयार करे। विद्यार्थियों को पर्यावरण के प्रति जागरूक बनाने के कारण रेखांकित किए जा सकते है।

i. पर्यावचरण प्रदूषण के स्वरूप, कारणों व प्रभावों का ज्ञान देना।
ii. पर्यावरण प्रदूषण के निवारण में व्यक्ति एवं समाज की भूमिका को उजागर करना।
iii. पर्यावरण एवं स्वास्थ्य के सम्बन्ध को स्पष्ट करना।
iv. पर्यावरण चेनता जगाना एवं पर्यावरण के प्रति अवबोध विकसित करना।
v. पर्यावरण के विभिन्न घटकों से परिचय करवाना।
vi. पर्यावरण के घटक किस प्रकार एक दूसरे से क्रियात्मक सम्बन्ध रखते है इसकी जानकारी देना।
vii. पर्यावरण के विभिन्न घटकों का मानव के क्रिया कलापों पर प्रभाव का ज्ञान प्रदान करना।
viii. पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबन्धन हेतु साहित्य सृजन करना।
ix. पर्यावरण शोध की व्यवस्था करना।
x. क्षेत्रीय पर्यावरणीय समस्याओं का अध्ययन एवं उनके निराकरण के उपाय प्रस्तुत करना।

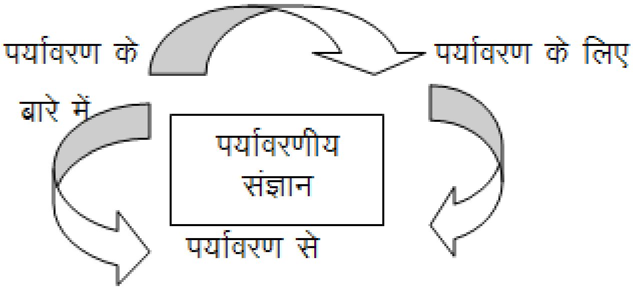

बालक जैसे -जैसे विकास करता है, अपने आस-पास के पर्यावरणीय तत्वों को देखता समझता है, प्रत्यक्षीकरण के कारण संवेदना एवं प्रतिक्रिया करने लगता है। कालान्तर में पर्यावरण के विभिन्न तत्वों के मध्य सम्बन्ध स्थापित कर प्रत्येक तत्व के कार्य व महत्व को समझकर तदनुसार व्यवहार करने लगता है। यह स्थिति संज्ञान विकास की स्थिति कहलाती है।

संज्ञान से हमारा तात्पर्य पर्यावरण में निहित किसी वस्तु, तथ्य या परिस्थितियों के ज्ञान से है। संज्ञान के माध्यम से व्यक्ति किन्हीं वस्तुओं, तथ्यों तथा परिस्थितियों का ज्ञान प्राप्त करता है।

हिलगार्ड शब्दों में - 'किसी - व्यक्ति द्वारा स्वंय के सम्बन्ध में जो विचार, ज्ञान व्याख्या या भाव अर्जित-किया जाता है वही संज्ञान कहलाता है।'

क्रच तथा क्रचफील्ड के अनुसार - एक व्यक्ति की अपने भौतिक तथा सामाजिक पर्यावरण के प्रति समझ ही 'संज्ञान' है। स्टाउट के अनुसार '**समझ तथा प्रभावी कार्य तथा बाहय पर्यावरण के साथ सुविधाजनक रूप से**

* शोधार्थी, मेवाड़ विश्वविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.) भारत
** प्राध्यापक, मेवाड़ विश्वविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.) भारत

व्यवहार करने की क्षमता – ही संज्ञान है।'

संज्ञान वह जटिल एवं उच्चस्तरीय बौद्धिक योग्यता है जो अपने पर्यावरण को भली प्रकार समझने तथा तदनुसार व्यवहार करने की क्षमता प्रदान करती है।'संज्ञान द्वारा बालक अपने पर्यावरण को समझता है और उसके अनुसार व्यवहार करता है। संज्ञान प्रत्यक्षीकरण से कहीं अधिक जटिल एवं उच्चस्तरीय होता है। संज्ञान द्वारा बालक अपने पर्यावरण का एक मानसिक चित्र बनाता है जो बालक के व्यवहार को एक विषेष स्वरूप प्रदान करता है। संज्ञान के विकास में – भौतिक तथा सामजिक पर्यावरण का विषेष महत्व है। अपने भौतिक तथा सामाजिक पर्यावरण से ही बालक विभिन्न वस्तुओं तथा तथ्यों का नामांकरण सीखता है। संज्ञान एक अर्जित योग्यता है। संज्ञानात्मक विकास कुछ कारकों पर निर्भर करता है जैसे — वंशानुक्रम भौतिक पर्यावरण सामाजिक पर्यावरण व्यक्तिगत शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य व्यवसाय सामाजिक प्रजातियाँ आयु शिक्षा तथा परिपक्वता लिंगभेद के कारण भिन्नताएँ व्यक्तित्व मानसिक तत्परता।

संज्ञान की विशेषताएँ :

1. पर्यावरण के उद्दीपक तथा अधिगम सिद्धान्त व्यक्ति के संज्ञान को प्रभावित करते है।
2. संज्ञान के विकास पर व्यक्ति के व्यक्तित्व एवं शीलगुणों का प्रभाव पड़ता है।
3. व्यक्ति को प्राप्त होने वाली सूचनाएँ तथा अनुभव व्यक्ति के संज्ञान में भी तदनुसार परिवर्तन करते है।
4. व्यक्ति की संज्ञान प्रणाली का प्रभाव व्यक्ति के संज्ञान की विशेषताओं पर पड़ता है।
5. संज्ञान सामाजिक तथा भौतिक पर्यावरण से प्रभावित होता है।

पर्यावरणीय संज्ञान के आधार पर ही व्यक्ति अवबोधन करता है कि वह किसी ग्रामीण क्षेत्र में है या औद्योगिक क्षेत्र में पर्यावरणीय संज्ञान के विकास में व्यक्ति की मानसिक योग्यताओं तथा उनकी सरंचनात्मक विशेषताओं का महत्वपूर्ण योगदान रहता है, वह पर्यावरण से प्राप्त सूचनाओं तथा अनुभवों का उपयोग करता है।

पर्यावरणीय परिस्थितियाँ तथा विशेषताएँ मानव व्यवहार को भी प्रभावित करती है। अलग अलग प्रकार के पर्यावरण में व्यक्ति के व्यवहार बदल जाते है।

कोहन ने एक अध्ययन में पाया कि 'ग्रामीण क्षेत्र से जब कोई व्यक्ति औद्योगिक क्षेत्र में– जाता है तब उसके व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है।'

मिलर ने पाया कि 'भीड़ पर्यावरण व्यक्ति के व्यवहार पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।'

क्रेचफील्ड के अध्ययन के अनुसार 'पारिवारिक तथा सामाजिक पर्यावरण व्यक्ति के व्यवहारों पर उल्लेखनीय प्रभाव डालते है।'

कैनन ने अध्ययन किया कि 'पर्यावरणीय संज्ञानात्मक मानचित्र व्यक्ति के छोटे–से–छोटे व्यवहारों को भी प्रभावित करते हैं व्यक्ति के व्यवहार मनन बातचीत जैसे सामान्य व्यवहार भी पर्यावरण द्वारा निर्मित संज्ञानात्मक मानचित्र से निर्धारित होते हैं' –

पर्यावरणीय संज्ञान के क्षेत्र में जॉ–पियाजे, मूर, सकेप्लान, मिलर, स्टाउट्स, व्हाइट, ब्राईटस तथा भीड आदि ने अनुसंधान किए। इन विद्वानों द्वारा पर्यावरणीय संज्ञान के सिद्धान्त निरूपित किए गए –

1. **विकास सिद्धान्त** — व्यक्ति या बालक का ज्यों–ज्यों विकास होता जाता है वह अपने विश्व (पर्यावरण) को समझने लगता है।

2. **सूचना प्रगणक– सिद्धांत** – व्यक्ति प्रतिकूल पर्यावरण में प्रकार्यवाद के सिद्धान्त के आधार पर अपने अस्तित्व व जीवन रक्षा के लिए नए पर्यावरण में सामान्यीकरण नियमों का प्रयोग करता है। पर्यावरण से विभिन्न सूचनाएँ लेकर उनका प्रगणन कर पूर्व पर्यावरण से तुलना करता है। विरोध या अनुकूलन कर पर्यावरण में समायोजित होता है।

3. **स्थानिक ज्ञानार्जन सिद्धांत**– स्थानीय पर्यावरण से ज्ञान अर्जित कर सूचनाओं के आधार पर व्यक्ति का संज्ञानात्मक मानचित्र भी बदलता रहता है।

4. **क्रामिक बन्धन सिद्धान्त**– संग्रहीत सूचनाओं को उनके महत्व के आधार पर व्यक्ति एक क्रम प्रदान करता है कुछ सूचनाएँ अल्पकालिक स्मृति व कुछ दीर्ध कालिक स्मृति में रखता है व उनका पर्यावरणीय संज्ञानात्मक मानचित्र में संचय करता है।

पर्यावरणीय संज्ञान के वर्द्धन में – पर्यावरणीय विषयों के ज्ञानदान का कार्य पर्यावरण शिक्षा का है।

1.	सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक पक्ष को महत्व।	पर्यावरण जागरूकता सैद्धान्तिक पक्ष को प्राथमिकता
2.	सचेतना का व्यावारिक पक्ष	सचेतना को महत्व व्यावहारिकता पर ध्यान नहीं
3.	ज्ञान, बोध, स्वरूप, प्रक्रिया तथा समस्याओं व समाधान की व्यावहारिक जानकारी	पर्यावरणीय ज्ञान बोध, स्वरूप घटक पारस्परिक निर्भरता समस्या व समाधान की सैद्धान्तिक जानकारी।
4.	भावना अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास	पर्यावरण के घटकों का सम्बन्ध पारस्परिक निर्भरता का ज्ञान
5.	कौशल व कार्यक्षमता का प्रशिक्षण	समस्याओं तथा उनके समाधान की जानकारी
6.	कार्यकुशलता की सफलता प्रभावशीलता के मूल्यांकन आकलन हेतु कार्यक्रम	मूल्यांकन तथा आकलन के निष्कर्षो का बोध
7.	ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक पक्षों का विकास	सचेतना ज्ञानात्मक पक्ष का विकास

ग्रेस्टाल्टवादियों के सिद्धान्तों – समीपता, समानता, सान्निध्यता के अनुसार प्रत्यक्षीकरण व सम्प्रत्यय निर्माण स्वतंत्र रूप से करते हुए अपने पर्यावरण के प्रति चेतना या जागरूकता दर्शाने के योग्य हो जाता है। **व्हाइट** के अनुसार बालक प्रारम्भिक अवस्था में पर्यावरण को देखकर सीमा चिन्हों या लेंडमार्क की पहचान करते है। पर्यावरण शिक्षा द्वारा ही पर्यावरणीय चेतना का विकास बालकों व विद्यार्थियों में किया जा सकता है। पर्यावरणीय संज्ञान अवस्था की परिपक्वता ही उन्हें पर्यावरणीय जागरूकता के लिए योग्य व तत्पर बनाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 बैस नरेन्द्रसिंह / सुनीता भार्गव/ संजय दत्ता/पर्यावरण शिक्षा/ जैन प्रकाशन मन्दिर /जयपुर / सन 2006/ ISBN –81–87449–52–7/

2 सिंह भोपाल/ पर्यावरण अध्ययन/ इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस/ मेरठ / सन 2005/

3. सिंह रामपाल सेवानी / अशोक अग्रवाल / वी पी पर्यावरणीय मनोविज्ञान/विनोद पुस्तक मंदिर/ आगरा/ सन 2006/ISBN 81–

7457-344-5

4 शर्मा बी एल / महेश्वरी बी के / मूल्य पर्यावरण और मानव अधिकार की शिक्षा/सूर्या पब्लिकेशन/मेरठ सन 2005

5. बैस, नरेन्द्रसिंह/पर्यावरण शिक्षा जैन प्रकाशन मन्दिर जयपुर/सन् 2006 / ISBN 81 87449-52-7/पृष्ठ 906

6. सिंह रामपाल / पर्यावरणीय मनोविज्ञान/विनोद पुस्तक मंदिर/ आगरा/ सन 2006/ ISBN 7457-344-5 पृष्ठ 170

7. सिंह, रामपाल/ पर्यावरणीय मनोविज्ञान/विनोद पुस्तक मंदिर आगरा सन 2006/ ISBN 81- 7457-344-5 /पृष्ठ 172-173

****

भारत की ग्रामीण शासन व्यवस्था तथा जनप्रतिनिधियों की कार्यप्रणाली एवं राजनीतिक जागरूकता की स्थिति (सर्वेक्षण पर आधारित अध्ययन)

डॉ. हितेन्द्र यादव *

प्रस्तावना – भारत ग्रामों का देश है। ग्रामों की उन्नति एवं प्रगति पर ही भारत की उन्नति एवं प्रगति निर्भर करती है। गांधीजी ने ठीक ही कहा था कि यदि ग्राम नष्ट होते हैं तो भारत नष्ट हो जाएगा। भारत के संविधान निर्माता भी इस तथ्य से भलीभाँति परिचित थे। अत: हमारी स्वाधीनता को साकार करने और उसे स्थायी बनाने के लिए ग्रामीण शासन व्यवस्था की ओर पर्याप्त ध्यान दिया गया। हमारे संविधान के भाग-4 में राज्य के नीति-निर्देशक तत्वों के अंतर्गत अनुच्छेद-40 में यह निर्देश दिया गया है कि राज्य ग्राम पंचायतों के निर्माण के लिए कदम उठाएगा और उन्हें इतनी शक्ति और अधिकार प्रदान करेगा जिससे कि वे (ग्राम पंचायतें) स्वशासन की इकाई के रूप में कार्य कर सकें। वस्तुत: हमारा जनतंत्र इस बुनियादी धारणा पर आधारित है कि शासन के प्रत्येक स्तर पर जनता अधिक से अधिक शासन कार्यों में हाथ बँटाए और अपने पर राज करने की जिम्मेदारी स्वयं झेले।

पंचायती राजव्यवस्था – भारत में पंचायत व्यवस्था अत्यंत प्राचीन संस्था है। प्राचीन पंचायत व्यवस्था का स्वरूप ग्राम में कुछ प्रमुख व्यक्तियों को पंच बनाकर सामाजिक समस्याओं का निदान करने तक सीमित था। अंग्रेजी राज के जमाने में पंचायतें धीरे-धीरे समाप्त होती गई और सभी कार्य प्रांतीय सरकारें करने लगी। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद राज्यों की सरकारों ने पंचायतों की स्थापना की ओर विशेष ध्यान दिया। तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने भारत के ग्रामीण विकास में नागरिकों की सहभागिता के लिए सन् 1952ई0 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम को प्रारम्भ किया, जिसके प्रमुख उद्देष्य निम्न थे:

1. सम्पर्क मार्गों का विकास, 2. स्वास्थ्य कल्याण कार्यक्रम, 3. प्राइमरी षिक्षा का विस्तार, 4. कृषि उपज एवं आय बढ़ाने के लिए किसानों को प्रषिक्षण। तत्पश्चात् बलवन्त राय मेहता समिति की सिफारिशों के आधार पर 2 अक्टूबर, सन् 1959 ई0 को जवाहर लाल नेहरू ने राजस्थान के नागौर जिले में प्रजातांत्रिक विकेंद्रीकरण की योजना का श्री गणेश किया और उसे सम्पूर्ण राजस्थान में लागू कर दिया गया। इस लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को ही 'पंचायती राज' कहा जाने लगा। 24 अप्रैल, सन् 1993ई0 से लागू पंचायत राज अधिनियम (73वाँ संविधान संशोधन) में यह व्यवस्था की गई है कि शहरी निकायों व पंचायतों के चुनाव निश्चित समय पर कराए जाएगें, उनमें अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति को उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण देने की व्यवस्था है। महिलाओं को हर स्तर पर एक तिहाई स्थान देने की व्यवस्था की गई है तथा उन्हें स्थानीय स्तर पर संसाधन जुटाने व नियोजन के अधिकार भी दिए गए हैं। इस अधिनियम में पंचायत समितियों के सदस्यों की आयु 21 वर्ष करने का भी प्रावधान है।

त्रिस्तरीय पंचायती राजव्यवस्था का संगठन – संविधान के भाग-9 में त्रिस्तरीय पंचायतें बनाने की परिकल्पना है। यह त्रिस्तर निम्न प्रकार है: 1. ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, 2. जिला स्तर पर जिला परिषद्, और 3. अंतवर्ती, जो ग्राम और जिला परिषद् के बीच होंगी। पंचायत की त्रिस्तरीय व्यवस्था को निम्न प्रकार समझा जा सकता है:

ग्राम सभा – ग्राम सभा सम्पूर्ण ग्राम के वयस्क नागरिकों को मिलाकर बनाई जाती है। अर्थात् ग्राम या लघु ग्रामों के समूह के सभी वयस्क नागरिक (18 वर्ष से ऊपर की आयु के व्यक्ति) ग्राम सभा के सदस्य होते हैं।

ग्राम पंचायत – यह स्थानीय प्रशासन की निम्नतम स्तर की संस्था है। एक ग्राम अथवा कुछ छोटे-छोटे ग्रामों को मिलाकर ग्राम पंचायत बनाई जाती है। ग्राम सभा नियत समय पर ग्राम पंचायत का चुनाव करती है। ग्राम पंचायत में एक प्रधान अथवा सरपंच होता है। सरपंच या प्रधान के अतिरिक्त कुछ पंच होते हैं। इन पंचों की संख्या विभिन्न राज्यों में 5 से 15 तक होती है। ग्राम पंचायत का कार्यकाल विभिन्न राज्यों में 3 से 5 वर्ष तक होता है।

राज्य सरकारों का राज्यों में बनाए गए पंचायत अधिनियमों द्वारा ग्राम पंचायतों पर नियन्त्रण सुनिश्चित किया गया है। जिलाधिकारी को ग्राम पंचायतों के निरीक्षण एवं भंग करने तथा बजट आदि के निरीक्षण का अधिकार दिया गया है। कुछ राज्यों में इस कार्य के लिए राज्य स्तर पर पृथक विभाग खोले गए हैं तथा अन्य राज्यों में जिला स्तर पर पंचायत राज अधिकारी की नियुक्ति की गई है।

न्याय पंचायत – कुछ ग्रामों की ग्राम सभाओं या ग्राम पंचायतों के लिए एक न्याय पंचायत का गठन किया गया है। न्याय पंचायत के संगठन सम्बन्धी नियम विभिन्न राज्यों में पृथक-पृथक हैं। साधारणतया सम्बन्धित ग्राम पंचायतें न्याय पंचायत का चुनाव करती है। न्याय पंचायत ग्रामीणों के लघु, सिविल तथा क्रिमिनल विवादों को सुनती है तथा निर्णय देती हैं। निर्णय में वह एक निश्चित धनराशि तक जुर्माना भी कर सकती हैं, लेकिन कारावास का दण्ड नहीं दे सकतीं। ग्रामीणों के छोटे-छोटे पारस्परिक विवादों को स्थानीय स्तर पर बिना किसी व्यय तथा परेशानी के हल करना ही न्याय पंचायत का उद्देश्य है। न्याय पंचायत में किसी वकील की आवश्यकता नहीं होती है। न्याय पंचायत के निर्णय के विरूद्ध साधारणतया अपील नहीं होती, लेकिन कुछ राज्यों में विशेष मामलों में मुंसिफ अथवा निम्न अदालतों में

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) लाजपत राय महाविद्यालय, साहिबाबाद, गाजियाबाद (उ.प्र.) भारत

न्याय पंचायत के निर्णय के विरूद्ध अपील की जा सकती है तथा उपर्युक्त अदालतों को उसके निर्णय को निरस्त करने का भी अधिकार है।

पंचायत समिति – ग्राम पंचायत तथा जिला परिषद् के मध्य में स्थानीय निकाय के संगठन को विभिन्न राज्यों में विभिन्न नामों जैसे–पंचायत समिति, आंचलिक परिषद्, क्षेत्र समिति, आंचलिक पंचायत आदि से जाना जाता है। इसके संगठन का प्रारूप भी विभिन्न राज्यों में भिन्न–भिन्न है, लेकिन फिर भी साधारणतया इसके संगठन एवं कार्यों में एकरूपता मिलती है। पंचायत समिति में साधारणतया उससे सम्बन्धित ग्राम पंचायतों के प्रमुख उसके सदस्य होते हैं। कुछ सदस्य महिलाओं, अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजातियों में से मनोनीत भी किए जा सकते हैं। कुछ राज्यों में कुछ सदस्य ग्राम सभाओं द्वारा चुने जाते हैं। यह पंचायत समिति अपना प्रमुख चुनती है, जोकि विभिन्न राज्यों में विभिन्न नामों जैसे– प्रमुख, चेयरमैन, प्रधान आदि के नाम से जाने जाते हैं। यह पंचायत समिति ब्लाक स्तर अथवा विकास खण्ड स्तर पर होती है। खण्ड विकास अधिकारी ब्लाक समिति का मुख्य कार्यपालक अधिकारी होता है तथा उसके अधीन सहायक अधिकारी तथा ग्राम स्तर के कर्मचारी (V.L.W.) होते हैं, जो कि पंचायत समिति द्वारा बनाए गये कार्यों को कार्यान्वित करते हैं।

जिला परिषद् – यह स्थानीय प्रशासन की जिला स्तर की संस्था होती है। यह क्षेत्र समिति और ग्राम पंचायतों तथा राज्य सरकार के मध्य तालमेल बिठाने का कार्य करती है। विभिन्न राज्यों में जिला परिषद् का संगठन कुछ अन्तर के साथ लगभग समान है। साधारणतया इसमें जिले की सभी पंचायत समितियों के प्रधान, निर्वाचित विधान सभा सदस्य, जिले के निर्वाचित संसद सदस्य, जिला विकास अधिकारी, जिसे मत देने का अधिकार नहीं होता, महिलाओं तथा पिछडे़ वर्गों के सहयोजित सदस्य तथा अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के प्रतिनिधि तथा सहकारी बैंक का अध्यक्ष आदि सह–सदस्य होते हैं। कुछ राज्यों में पंचायत समिति अपने प्रमुख के अतिरिक्त जिला परिषद् के लिए प्रतिनिधि या सदस्यों का भी चुनाव करती है। जिला परिषद् अपना एक अध्यक्ष चुनती है जो कि इसके कार्यों को संचालित करता है।

पंचायतों को सुदृढ़ करने के उद्देश्य के लिए उत्तर प्रदेश सरकार के द्वारा 26 मई, 1997ई0 को 15 विभागों को पंचायतों के अधीन कर दिया गया। प्रदेश में सार्वजनिक वितरण प्रणाली, लघु सिंचाई, सहकारिता, कृषि, लघु उद्योग, पेयजल, मत्स्य एवं पशुपालन, बेसिक शिक्षा, ग्रामीण अभियंत्रण सेवा, पंचायती राज, सामान्य स्वास्थ्य, ग्रामीण आवास, युवा कल्याण, इन्दिरा आवास तथा ग्रामीण स्वच्छता आदि अब पंचायतों के अधीन हैं। सम्बंधित विभागों के जिलों के प्रमुख अधिकारी अब पंचायतों के अधीन हैं। प्रदेश शासन द्वारा पंचायतों को अधिकार दिए जाने से गांधी जी की ग्राम स्वराज्य की कल्पना साकार होने की ओर अग्रसर है। पंचायतों को अधिकार दिए जाने से जनप्रतिनिधियों को जन सेवा करने की अपूर्व शक्ति प्रदान की गई है। अब तक उपेक्षित एवं अलग–थलग पडे़ जनप्रतिनिधि जनता की समस्याओं का निराकरण अब अपने स्तर से कर सकेंगे।

संविधान द्वारा सभी नागरिकों को स्वतंत्रता, समानता, बन्धुत्व व न्याय का आश्वासन मिला है। अर्द्ध शताब्दी से अधिक का समय व्यतीत हो गया किन्तु संविधान की आत्मा के अनुरूप भारतीय जनता को विशेष रूप से ग्रामों में निवास करने वाली जनता को वह कुछ नहीं मिला जिसकी कामना उसने की थी। भारतीय नेताओं ने उनकी आशाओं पर तुशारापात कर दिया। तालिका 01 में जनपद एटा के जनप्रतिनिधियों की कार्यप्रणाली को मात्रात्मक रूप से प्रस्तुत किया गया है।

तालिका 01 **(अगले पृष्ठ पर देखे)**

तालिका 01 से स्पष्ट है कि कुल 600 सर्वेक्षितों में से 484 सर्वेक्षितों (80.7%) का यह मत है कि ग्रामों का पूर्ण विकास न होने के लिए सरकार अथवा वहाँ के स्थानीय जनप्रतिनिधियों की जिम्मेदारी होती है। जब स्थानीय ग्रामीण नागरिक अपने जनप्रतिनिधियों के पास अपनी समस्याओं के निराकरण के लिए जाते हैं तो 448 सर्वेक्षितों (74.7%) की समस्याओं का निराकरण नहीं हो पाता है। इतना ही नहीं 347 सर्वेक्षित (57.8%) ऐसे हैं जिनकी अपने जनप्रतिनिधियों से मुलाकात भी सम्भव नहीं है। जनता द्वारा चुने हुए जनप्रतिनिधियों की इस प्रकार की गैर–जिम्मेदारपूर्ण कार्यप्रणाली के द्वारा देश तथा उसके ग्रामों का किस प्रकार एवं कितना विकास हो सकता है इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। लोकतंत्र का आधार लोकमत है और लोकमत की अभिव्यक्ति का माध्यम चुनाव–व्यवस्था है। लोकमत की सही मायने में अभिव्यक्ति तभी संभव है जब चुनाव प्रणाली के अंतर्गत मतदाता अपने मत की अभिव्यक्ति स्वतंत्र एवं निर्भय होकर कर सके। संविधान निर्माताओं ने मतदान को अधिकार बनाया है। मतदान मातृभूमि के प्रति पवित्र जिम्मेदारी भी है। इसके बावजूद तालिका 02 द्वारा सर्वेक्षित आँकड़े बताते हैं कि 222 सर्वेक्षित (37%) चुनाव प्रक्रिया से स्पष्ट रूप से अलग हैं और 162 सर्वेक्षित (27%) ऐसे है जो धनबल, बाहुबल और प्रलोभन द्वारा मतदान केन्द्र तक लाए जाते हैं। इस प्रकार मात्र 216 सर्वेक्षित (36%) ही अपने मत का प्रयोग स्वतंत्र एवं निर्भय होकर कर पा रहे हैं, अर्थात् 64 प्रतिशत सर्वेशित प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से मतदान के अधिकार से वंचित हैं। जनतंत्र अर्थात् जनता का, जनता के लिए, जनता के द्वारा न होकर, नेताओं के लिए, नेताओं का जनतंत्र बन चुका है। आम जन अपने अधिकार एवं भागेदारी से विमुख हैं। उसका वोट अब कीमती नहीं रहा। इस प्रकार के चौकाने वाले तथ्य ग्रामों के सर्वेक्षण के द्वारा प्रकट हुए।

तालिका 02: सर्वेक्षितों द्वारा मत की अभिव्यक्ति एवं उसका प्रकार (2004ई0)

वोट डालते है

हाँ 378 (63%) | नहीं 222 (37%)

किनकी इच्छा से

216 (36%) स्वयं की | 162 (27%) अन्य की अथवा जबरदस्ती

देश में मतदाता प्रशिक्षण का भी कोई कार्य नहीं किया गया है। प्रशिक्षण के अभाव में वह इस बात से अनभिज्ञ हैं कि वोट देने का उचित आधार क्या होना चाहिए। तालिका 03 के अनुसार कुल 600 सर्वेक्षितों को यदि स्वतंत्र रूप से मतदान कराया जाय तो 476 सर्वेक्षित (79.3%) किसी राजनीतिक दल को वोट देंगे। दूसरी ओर कुल सर्वेक्षितों से जब व्यक्ति को प्रतिनिधि चुनने का मापदण्ड जानना चाहा तो 478 सर्वेक्षितों (79.7%) ने जाति एवं धर्म के आधार पर मत करने की इच्छा जताई। ऐसे सर्वेक्षितों की संख्या बहुत सीमित (35, 5.8%) थी, जो प्रत्याशियों के विकास के कार्य एवं उनके शैक्षिक स्तर को देखकर उन्हें मतदान करने के लिए प्रेरित हो सकें। व्यक्तिगत सम्पर्क पर आधारित होकर 87 सर्वेक्षित (14.5%) अपने प्रतिनिधि को

चुनना चाहेंगे।

तालिका 3 (निचे देख)

इस आकलन से स्पष्ट है कि जनपद में जातिवाद के नाम पर राजनीतिक प्रदूषण फैला हुआ है। इसी का दुष्परिणाम है कि अपराधी एवं माफिया लोग राजनीति में वर्चस्व स्थापित करते जा रहे हैं। ऐसे लोग जातिवाद के नाम पर विभिन्न राजनैतिक दलों से टिकट लेकर संसद, विधान सभाओं एवं पंचायतों में पहुँच रहे हैं। इनमें से अनेक लोग मंत्री जैसे जिम्मेदार पदों पर सुशोभित हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त चयनित जनप्रतिनिधि अपने क्षेत्र की समस्याओं के निराकरण की ओर भी गम्भीरता से ध्यान नहीं देते हैं। जनप्रतिनिधि की जनकार्यों में अरूचि के कारण ही जन कल्याणकारी शासकीय योजनाओं का ठीक प्रकार से क्रियान्वयन नहीं हो पाता है एवं अधिकांशतः योजनाएं भ्रष्टाचार की शिकार हो जाती हैं तथा वे अपने जनकल्याणकारी उद्देश्य को खो बैठती हैं। चक्रवर्ती राजगोपालाचारी की राय के अनुसार, दल की उपेक्षा करके प्रत्याशी की समीक्षा और चरित्र का आकलन बहुत जरूरी है। इसी प्रकार से सर्वश्रेष्ठ लोग देश की सेवा को उपलब्ध हो सकेंगे। कोई बुरा प्रत्याशी केवल इसलिए मत पाने का दावा नहीं कर सकता कि वह अच्छे दल से खड़ा है। इसलिए यदि जनता स्वस्थ एवं विकसित समाज चाहती है तो अक्षम, भ्रष्ट एवं अपराधी छवि के व्यक्तियों को चुनाव में हराकर उन्हें अपना प्रतिनिधि बनने से रोक सकती है। यदि गलत लोग लोकतांत्रिक संस्थाओं में पहुँचेगे तो वे न तो अच्छे कानून बनने देंगे और न ही देश का विकास होने देगें। यह तभी सम्भव हो सकेगा जब जनता अपने मदतान का प्रयोग, दल, जाति, धर्म और सम्प्रदाय से ऊपर उठकर योग्य, शिक्षित एवं चरित्रवान उम्मीदवारों के लिए करे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बी.एल. फडिया, डॉ. एवं कुलपति फडिया, डॉ0, लोक प्रशासन, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 1998
2. दुर्गा दास बसु, डॉ., आचार्य, भारत का संविधान-एक परिचय (अुनवाद-ब्रजकिशोर शर्मा), प्रेंटिस-हाल ऑफ इंडिया प्रा0 लि0, नई दिल्ली, 1999
3. जय प्रकाश मिश्र, डॉ., कृषि अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2005
4. मोहम्मद मुजम्मिल डॉ., कृर्षि, अर्थशास्त्र, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ, 1997
5. ऋषि कुमार गोविल, डॉ., कृषि-अर्थशास्त्र, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान (हिन्दी गन्थ अकादमी प्रभाग) लखनऊ, 1983
6. सुभाष कश्यप, हमारा संविधान: भारत का संविधान और संवैधानिक विधि, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली,2004
7. वेद प्रकाश अरोड़ा, कुरूक्षेत्र, प्रकाशन विभाग, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, फरवरी,2004

तालिका 01: सर्वेक्षितों के अनुसार जनप्रतिनिधियों की कार्यप्रणाली(2004ई0)

जनप्रतिनिधियों की कार्यप्रणाली

जनप्रतिनिधियों तक नागरिकों की पहुँच		जनप्रतिनिधियों द्वारा समस्याओं का निराकरण			ग्राम का पूर्ण विकास न होने के लिए जिम्मेदार		
हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	कभी-कभी	स्वयं	प्रशासनिक अधिकारी	सरकार/जनप्रतिनिधि
253 (42.2%)	347 (57.8%)	44 (7.3%)	448 (74.7%)	108 (18%)	50 (8.3%)	66 (11%)	484 (80.7%)
600 (100%)		600 (100%)			600 (100%)		

तालिका 03: सर्वेक्षितों में राजनीतिक जागरूकता का स्तर (2004ई0)

वोट देने का आधार

राजनीतिक दल	व्यक्ति				
	धर्म	जाति	व्यक्तिगत सम्बन्ध	विकास कार्य एवं विकास करने की क्षमता	शैक्षिक स्तर
476 (79.3%)	78 (13%)	400 (66.7%)	87(14.5%)	27(4.5%)	8(1.3%)
	478 (79.7%)			35 (5.8%)	

****

Human Resource Development Policies in Public Sector and Private Sector Banks

Dr. Jaspreet Singh Mujral * Gurpreet Kaur **

Abstract - The importance of human resources to any organization need not be over-emphasised. Human resource is the wealth of a nation and an organisation. The success of any organisation depends on the quality of its human resources. Human resources are the most important and valuable assets, every organisation has in the form of its employees. Dynamic, competent and motivated human resources build dynamic organisation and enable organisation to achieve its goals. An organisation's performance and resulting productivity are directly proportional to quantity and quality of its human resources. The banking sector has been an instrument for the economic development of any nation and its role in a developing nation like ours is of vital importance. Globally, the banking activities are undergoing rapid diversification. In order to maintain their status in the present competitive environment, banks have to concentrate in developing their human resource. In any organization, the quality and amount of productivity mainly depends on the skill and interest of its employees. Therefore, every business organization should take the lead for upgrading the skills and knowledge of its employees for the mutual benefits and progress. In this direction "Human resource development (HRD)" is an essential process for every organisation, for the optimum utilisation of its human resource and in turn to attain the designed objectives.
Keywords - Human resources, banking sector, economic development, Human resource development.

Introduction - In all activities men and resources are involved. For a long time men or workers were taken for granted. Greater accent was given to resources, production machinery and top managers. But at present in the modern large scale production of innumerable products with a wide market, (where sky is the limit) in the last few decades the importance of human resources and their development has come to the fore. The importance of human resources to any organization need not be over-emphasised. Human resource is the wealth of a nation and an organisation. The success of any organisation depends on the quality of its human resources. Human resources are the most important and valuable assets, every organisation has in the form of its employees. Dynamic, competent and motivated human resources build dynamic organisation and enable organisation to achieve its goals. An organisation's performance and resulting productivity are directly proportional to quantity and quality of its human resources. In the management of four "M" s-men, machines, materials and money, the most important is "M" for management of men or human resources. therefore an organisation should continuously ensure that the dynamism, competency, motivation and effectiveness of its human resources remain at high level, which requires sound human resources management.

Human resource development - To bring out the best in a man is the essence of human resource development. Simply speaking, Human Resource Development (HRD) is the process of increasing the capacity of human resources through the development. Human Resource Development (HRD) is the process of increasing the capacity of human resources through the development. Human Resource Development is something that everyone does. Individuals do it as they work to develop themselves; managers do it as they work to support others' development and the Human Resource Development staff does it, as they create the overall development tools for an organization. Thus, it is a process of adding value to individuals, teams and the organization as a human system. In a larger context, Human Resource Development refers to empowering people and enabling them to use their power for development of the organization to which they belong, and society at large. It refers to developing proactivity and capacity to embrace larger issues. Considering the vital importance of human resources, they are now being treated as assets which are most precious for the survival of an organization. New values are being added.

Importance of HRD in Banks - In the last few years, ever since the central government started a ministry called HRD, quite a few organizations have introduced this department in their organizations. Previously, the department was called personnel department, but now it has been renamed as HRD department. The study of HRD is very important for the banking sector. The bank has contributed significantly

*HOD, Department of ABST, Maharshi Dayanand (P.G.) College, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

to the banking trade and industry for the country. Realization of HRD in banking is very important to obtain optimum results. The old banking concepts are outdated. Most of the banks have HRD departments but they are not taken seriously. Hrd in banking sector is a continuous process to ensure the development of employee competencies, dynamism, motivation and effectiveness in systematic and planned manner. HRD is helpful in development of employee's physical capacities, values, knowledge and skills. So the HRD play an important role in banking sector.

Objectives Of The Study - The study has been undertaken with the following objective:

1. To critically investigate and compare the HRD policies and practices between Public Sector Banks and Private Sector Banks.
2. To study the impact of HRD policies and Practices on Employee Productivity in Public and Private Sector Banks.
3. To Suggest policy measures to improve the employee productivity.

Hypotheses:

1. H1: There is a significant difference in HRD practices followed in Private Sector Banks and Public Sector Banks.
2. H2: HRD Policies and Practices have a significant impact on employee productivity

Data Collection :

1. The data was collected from the organization under study from primary as well as secondary sources.
2. The primary data for the purpose was collected through questionnaire, interviews and observations.
3. Questionnaire was prepared with all care, keeping in view the objectives of study.
4. The primary data was supplemented by the secondary data available from the published reports, manuals, circulars, Notifications, publications and the literature related to the topic under study.
5. The relevant information from various research journal books etc. was also referred for the purpose.

Findings of the study :

1. Most of the respondents belong to the 25-35 age slab that constitutes 52% of the total sample.
2. There are number of males working and hence examined, the marital status came out to be equal 44% of the employees find the training programme related to their work and find the bank conducting extensive training program.
3. 44% of the employees strongly agree that the training programs are suitable and attending training programme has helped them to pick up new technical skills and soft skills.
4. Most of the employees find the quality of the training programme to be excellent.
5. 40% of the employees feel that attending training programme leads them to perform better at work giving them bright opportunities for growth.
6. 44% of the employees find the topics relevant to the training programme and 34% find the topics covered during the training programme are easy to understand and the training needs are identified through performance appraisal.
7. 50% of the respondents accept that the topics taken for the training programme are covered within the right time and the objectives of the program are complete in totality.
8. Management feels concerned for HRD activities, but efforts are not made to identify and utilize potentials of employees.
9. As far as the working of HRD is concerned, people are satisfied in both the banks and they find their colleagues helpful at work place, but they feel that work is not recognized in both the banks.
10. It was found that discipline is better in ICICI Bank than OBC.

Conclusion & Suggestions - Human resource Department should work as a philosophy of culture and values of the banks.

1. Practically there should be a shift from blue collar to white collar employees as this gives more dignity for the employees that increases employee engagement.
2. If the employees are engaged the performance levels will be higher, they would sell harder, provide better service, productivity would be higher, they would produce enriched quality, lesser defects and most importantly the safely records too will be improved as the employee engagement is a barometer that determines the association of an employee with his organization.
3. However an associated and engaged employee is always a productive employee.
4. Decentralization of training will make the training convenient for employee.
5. Managers who are at high levels are trained in restricted numbers of training centers which are located in few states of india that makes training inconvenient for employees living far off regions.
6. Employees work should be recognized and appreciated.
7. To update employee's knowledge and skill suitable training must be provided at regular intervals i.e. in a year or as per the requirement to keep the employees updated.
8. training and development should also include more of upgrading their social behavior as they connect to various clients belonging to various social background of society.
9. As they need to intermingle with different colleagues during transfers and delegations.
10. All the banks whether private or public should share their training and learning techniques as a separate body it should provide standardized and uniform training so that young people will not get tangled up in

"different bank different training" strategy.

References :-

1. Daljeet Kaur , Quality Of Work Life In Icici Bank Ltd, Chandigarh, International Research Journal, August 2010 Issn- 0975-3486 Rni: Rajbil 2009/30097 Vol I *Issue 11
2. Dr. Ch.AbdulRehman, SaimaSardar, Usman Yousaf and AsadAijaz(2011), 'Impact of HR Practices on Employee Engagement in Banking Sector of Pakistan', Vol2, No 9, January 2011, Interdisciplinary Journal Of Contemporary Research in Business, 378-386
3. Godwin's Booke and Dickenson, "Needs Assessment", Human Resource Executive, Vol.7, 1996, p.21-27.
4. Huselid, (1995), 'Human Resource Management Practices on Turnover, Productivity, and Corporate Financial Performance,' Academy of Management Journal, 38, 3, 635– 672.
5. Iqbal Adnan (2010), An ampirical assessment of demographic factors, organizational ranks and organizational commitment, International Journal of Business and Management,5(3), 16-27
6. Kaya Nihat (Sep 2010),'An exploratory analysis of the influence of human resource management activities and organizational climate on job satisfaction in Turkish Banks', International Journal of Human Resource Management, vol.21,issue 11,p2031-2051, 21p.
7. Kilam, I.K. (2007). HRD in Public Sector Banks – A study (Part II). PNB Monthly Review vol. 29, No.05, 14-24
8. Kothari.C.R.(1988) – Research Methodology – methods & techniques – WileyEastren Ltd., New Delhi, p-189 & 340.
9. Miles Mary, 1992. The Effective Manager: Semi-Tough, McGraw Hill. Misumi J and MF Peterson, 1985. "The Performance Maintenance Theory of Leadership: Review of a Japanese Research Program," Administrative Science Quarterly, 30,198-223.
10. Porter, L.W., "A Study of Perceived Need Satisfaction in Bottom and Middle ManagementJob", Journal of Applied Psychology, 1961, Vol. 45, Issue No. 1, pp. 1-10.
11. Rao.T.V.,Verma K.K., Khandelwala.A.K., Abraham.S.J., "Alternative approachesand strategies of human resource development", Rawat Publication, New Delhi,1997 , p- 35.
12. Srinivas Lakkoju, March2014, "An Empirical Analysis of Managerial and non-managerial HRD climate perceptions in SBI and KVB through internal and extyernalcomparision: A case study conducted in Andhra Pradesh", Indian Journal of Industrial Relations, Vol 41, issues 1, p51-72, 22p
13. Tiwari.S.K, Chaudhary M.K. and Bhowmick. A., 'An Evaluation of Orientation Programmes of the Academic Staff College (ASC) BHU, with reference to other ASC's in India'. University News, New Delhi, 46 (44) November 03-09, 2008 pp 13-17-21.
14. VijilaKennedy (2007), "Do HRD Practices Differ Among the Categories of Indian Commercial Banks", ICFAI Journal of Management Research, Vol. 6, Issue 12, p33-42.

****

Effect of Cyber Crime on Bank's Finances

Neeta* Pankaj Kumar**

Abstract - The Information Communication Technology (ICT) has revolutionalized different aspects of human life and has made our lives simpler. It has been applied in different industries and has made business processes simpler by sorting, summarizing, coding, and customizing the processes. However, ICT has brought unintended consequences in form of different cybercrimes. Cybercrimes have affected different industries and banking sector is one of them which had witnessed different forms of cybercrimes like ATM frauds, Phishing, identity theft, Denial of Service. The paper discusses the problem of cybercrime in the banking sector and its impact on the banks finances. It assesses the cybercrime scenario and identifies the actors involved in the scenario. It also examines the different types of cybercrimes which plague the banking sector and the motives of the cyber criminals behind such acts. The financial loss in the banking sector is huge across the globe both in terms of combating the cyber-attacks and on development of systems, so that such attacks need to be prevented in the future.
Keywords: Cybercrime; Banking Sector; Financial Loss.

Introduction to Cybercrime in Banking Sector - Until mid-1990s, banking sector in most parts of the world was simple and reliable; however since the advent of technology, the banking sector saw a paradigm shift in the phenomenon (Jaleshgari, 1999). Banks in order to enhance their customer base introduced many platforms through which transactions could be done without much effort (Vrancianu and Popa, 2010). These technologies enabled the customer to access their bank finances 24*7 and year around through, ATMs and Online banking procedures.

However, with the enhancement in technology, banking frauds have also increased likewise (Alaganandam et al, 2007). Cybercriminals are using different means to steal one's bank information and ultimately their money as well (Choo, 2011). The results of empirical study conducted by Anderson et al (2012) revealed that globally, the banks have incurred billions of dollars in losses; and provides details of cybercrimes conducted across the globe in banking sector due to direct and indirect losses, criminal revenue and indirect costs.

It is therefore, a collective consensus of banks and regulators to make policies and adopt measures in order to protect banking platforms from cyber threats (Anderson et al, 2012). A number of technical defence and control measures like increased real time supervision on transactions have been undertaken by the banks, however, even today the problem persists (Premchaiswadi, Williams, and Premchaiswadi, 2009). The reason behind this is that the defence measures currently available with banks are often reactive, time consuming and available in public domain which can be accessed even by the cybercriminal who in turn adopts measures to combat from these defences. The attackers allocate their time in developing new means for cybercrime and also simultaneously work on finding the solutions to bridge these defence measures (Böhme and Moore, 2009).

One of the ways to mitigate the problem of cybercrimes in banking sector is to identify the factors related to banks that are generally targets of such cyber-attacks, and why some banks have never faced such a situation. According to the empirical study conducted by Moore and Clayton (2007), some banks are targeted more frequently than others, generally by a financial malware. Banks which are generally targets of cybercrimes suffer from various malware attacks in form of online phishing, keystroke-loggings malwares, identity theft, etc. Some of key factors which were identified in the study which reflects the pattern why some banks are targeted more than other include their size (market share), the number of clients, their authentication system is weak, their money transfer policies are not safe and the country in which these banks are located is also an important pre-requisite for the cyber criminals. Studies conducted recently concluded that some of the malware used to attack these banks are becoming more specific (Sherstobitoff, 2013; TrendMicro, 2013). However, more such researches will have to be conducted to conclude if indeed cyber criminals are selecting their target specific tools or not.

Problem Statement - Cybercrime is a growing threat in the virtual world because individuals and organizations are relying more on internet at an increasing rate. The use of internet and other technologies have enhanced the risk of

* Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

attack from cyber criminals across the globe. With the number of incidents of theft, phishing, computer viruses, hacking, on the rise, there is a need to explore the cybercrime scenario.

Although, with the advent of technologies, the banking sector has been able to reach more customers however, it has also enhanced the risk for customers who often feel reluctant and insecure in opting for such services. There is a need for the banks to evaluate their current operating practices. In this paper, the researcher makes and attempt to study the cybercrime scenario and its impact on banking sector.

Cybercrime in Banking Sector - Cybercrime according to Douglas and Loader (2000) can be defined computer mediated activities conducted through global electronic networks which are either illegal or considered illicit by certain parties. In the banking sector, the cybercrimes which are committed using online technologies to illegally remove or transfer money to different account are tagged as banking frauds (Wall, 2001). The cybercrimes according to Wall (2001) can be categorized into four major categories i.e. cyber-deceptions, cyber-pornography, cyber-violence and cyber-trespass. The banking frauds are sub-categorized in cyber-deception which can be defines as an immoral activities including stealing, credit card fraud, and intellectual property violations (Anderson et al., 2012).

There are number of frauds or cybercrimes witnessed in the banking sector, like ATM frauds, Cyber Money Laundering and Credit Card Frauds. However, in general all the frauds are executed with the ultimate goal of gaining access to user s bank account, steal funds and transfer it to some other bank account. In some cases the cyber criminals uses the banking credentials like PIN, password, certificates, etc. to access accounts and steal meager amount of money; whereas in other cases they may want to steal all the money and transfer the funds into mule accounts. Sometimes, the intention of cybercriminals is to just harm the image of the bank and therefore, they block the bank servers so that the clients are unable to access their accounts (Claessens et al., 2002; Hutchinson & Warren, 2003).

As a lot of vulnerabilities exist in the defense system of banking sector, thus there is a need to investigate the ways to increase awareness about the measures that can be undertaken to combat cybercrimes in the banking sector. However, not many studies in the past have been conducted in this area which would suggest ways to mitigate the risks and combat such crimes (Florêncio & Herley, 2011; McCullagh & Caelli, 2005).

In order to understand the fraud system in banking sector we will have to understand and describe the attackers and defenders in this environment. The next section therefore describes the different actors which are involved in cybercrimes.

Actors of Banking Fraud - The actors of banking fraud can be categorized into four main categories; malicious exploiters, money mules, victims, and security guardians. Each of these actors and their characteristics has been defined below individually.

Cyber Criminals - As per the OECD report (2007), these malicious exploiters can be categorized into five sub categories. Innovators (who seek to find security holes in the system to overcome protection measures adopted by the banks). Amateur (who are beginners in this area and their expertise is limited to computer skills, which is exploited by the cyber criminal). Insiders (who are working within the bank to leak out important information in order to take some kind of revenge). Copy cats (they are interested in recreating simple tasks). Criminals (highly organized and very knowledgeable who may use all the above mentioned stakeholders for their own profit).

Money Mules - As per the definition given by OECD report (2007), money mules are individuals recruited wittingly and often unwittingly by criminals, to facilitate illegal funds transfers from bank accounts. According to the FBI (Federal Bureau of Investigation), these individuals engage in the money transfer activity in exchange of some percentage of that money. According to Florêncio and Herley (2010) there role is to convert reversible traceable transactions into irreversible untraceable ones.

Victims - Victims, according to OECD (2007), in the banking sector can be categorized into two categories; banks and users of these banks. The users or customers can be individuals, SMEs, or large multinational organizations. The most negative externality among the legitimate actors is created by individual users and SMEs who do so by not employing risky online behavior or by not employing security measures during transactions (Asghari, 2010; Mannan & van Oorschot, 2008).

Security Guardians - They are the most important actor of this system as they improve the existing banking system and help in removing the vulnerabilities and development of systems so that banking frauds can be mitigated. The security guardians in case of banking sector could be the bank itself or the some third party hired by the bank in order to ensure security from such threats.

Impact of Cybercrime on Bank s Finances - The banking industry across the globe is facing a challenging situation which is thought provoking due to the geopolitical and global macro-economic conditions. The banking sector is forced to evaluate its current practices in order to analyze and manage their risks effectively. Technology- driven approaches have been adopted for the management of risk. Due to the growth of IT, penetration of mobile networks in everyday life, the financial services have extended to masses. Technology has made sure that banking services reach masses as it made these services affordable and accessible (KPMG, 2011).

However, this has also increased the risk of becoming targets of cyber attacks. Cybercriminals have developed advanced techniques to not only cause theft of finances and finances information but also to espionage businesses

and access important business information which indirect impacts the bank's finances. Globally, USD 114 Billion is lost nearly every year due to cybercrimes, and the cost spend to combat cybercrimes is double is amount i.e. USD 274 billion (Symantec Cyber Crime Report, 2012). On an average, banking facilities take 10 days to fully recover from a cyber act which further adds to the cost of operation. Comparing the financial losses faced by the Indian Banking Sector, it is nearly 3.5% of the loss in cash in comparison to global loss. USD 4 billion is lost in recovering from the crime and USD 3.6 billion is spent to combat such crimes from happening in future. The average time taken to resolve the crime in Indian banking sector is also higher in comparison to global scenario i.e. 15 days (Muthukumaran B., 2008).

In order to fight these cybercrimes, the banking sector needs to collaborate with global authorities and watchdog organizations so that a model can be developed which can help in controlling and dealing with such threats. The main issue of concern here is that there is absence of effective compilation service in the banking sector which can identify the trends in cyber-crime and compile a model according to it. However, in the last few months, banks all across the globe have perceived cybercrime as among their top five risks (Stafford, 2013). High profile banks in the UK like Barclays and Santander were targeted by hackers who stole personal information of nearly 2.9 million credit card customers by hacking the software maker system of these banks, which led them to incur huge losses. However, the scenario is not restricted to UK, in US as well such attacks have surfaced in the past years and in order to curb the affect, they launched the program Quantum Dawn 2 which test the efficacy of system installed in banks in response to cyber-attacks (Stafford, 2013).

However, the sad truth is that most the systems are one-step behind the tools adopted by cyber criminals which has resulted in demand of development of system which is flexible is meeting and destroying the incoming assaults. A solid defense system to resolve attack is the need of the hour before, during and after the attack.

Conclusion- The paper gives a brief overview of cybercrime scenario in the banking sector and impact of cybercrimes on bank finances. The major cybercrimes which plague the banking sector are ATM frauds, Denial of Service, Credit Card frauds, phishing, etc. The rapid growth to global electronic crime and the complexity of its investigation requires a global presence. Presently, the measures undertaken the banks are not sufficient and therefore it is imperative to increase cooperation among the banks across the world for the development of tools and models which can be applied to counter global banking cybercrimes.

References :-

1. Alaganandam, H., Mittal, P., Singh, A., & Fleizach, C. 2007. Cybercriminal Activity.
2. Anderson, R., Barton, C., Böhme, R., Clayton, R., van Eeten, M. J. G., Levi, M., Moore, T., & Savage, S. 2012. Measuring the cost of cybercrime.
3. Asghari, H. 2010. Botnet mitigation and the role of ISPs: A quantitative study into the role and incentives of Internet Service Providers in combating botnet propagation and activity. Delft University of Technology.
4. Bohme, R., & Moore, T. 2009. The Iterated Weakest Link—A Model of Adaptive Security Investment.
5. Choo, K.K. R. 2011. The cyber threat landscape: Challenges and future research directions. Computers & Security, 308: 719-731.
6. Claessens, J., Dem, V., De Cock, D., Preneel, B., & Vandewalle, J. 2002. On the security of today s online electronic banking systems. Computers & Security, 213: 253-265.
7. Douglas, T., & Loader, B. D. 2000. Cybercrime: Security and surveillance in the information age: Routledge.
8. Florencio, D., & Herley, C. 2010. Phishing and money mules. In Information Forensics and Security WIFS, IEEE International Workshop on pp. 1-5. IEEE.
9. Florencio, D., & Herley, C. 2011. Where Do All The Attacks Go? Economics of Information Security and Privacy III pp. 13-33. Springer New York.
10. KPMG 2012 [Online] Cybercrimes: A Financial Sector Review. Government and Public Sector. Available at: https://www.kpmg.com/in/en/industry/p ublications/ fs_cybercrime_booklet.pdf
11. Mannan, M., & van Oorschot, P. C. 2008. Security and usability: the gap in real- world online banking. Paper presented at the Proceedings of the 2007 Workshop on New Security Paradigms.
12. McCullagh, A., & Caelli, W. 2005. Who goes there? Internet banking: A matter of risk and reward. Paper presented at the Information Security and Privacy.
13. Muthukumaran. B 2008. Cyber Crime Scenario in India, Criminal Investigation Department Review, pp.17-23
14. OECD. 2007. Malicious Software Malware: A Security Threat to the Internet Economy.
15. TrendMicro. 2013. Security Threats to Business, the Digital Lifestyle, and the Cloud.
16. Vrancianu, M., & Popa, L. A. 2010. Considerations Regarding the Security and Protection of E-Banking Services Consumers Interests. The Amfiteatru Economic Journal, 1228: 388-403.
17. Wall, D. 2001. 1 Cybercrimes and the Internet. Crime and the Internet: 1.

****

GST and its Impact

Yogesh Kumar Swami*

Introduction - GST the biggest tax reform in India founded on the notion of "**one nation, one market, one tax**" was introduced in July 2017 in India. The moment that the Indian government was waiting for a decade has finally arrived. The single biggest indirect tax regime has kicked into force, dismantling all the inter-state barriers with respect to trade. The GST rollout, with a single stroke, has converted India into a unified market of 1.3 billion citizens.

Fundamentally, the $2.4-trillion economy is attempting to transform itself by doing away with the internal tariff barriers and subsuming central, state and local taxes into a unified GST.

Historical Background - There are around 160 countries that have implemented GST/VAT in some form or other. In some countries, VAT is the substitute for GST. But, conceptually it is a destination based tax levied on consumption of goods and services.

1. France was the first to introduce GST or Goods and Services tax.
2. Brazil, Canada has a dual GST model (India implemented somewhat similar to the Canadian Dual GST Model).The rate of GST normally ranges in between 0–28% only.

Indian Context :

1. The GST council has fitted over 1300 goods and 500 services under four tax slabs of 5%, 12%, 18% and 28% under GST. This is aside the tax on gold that is kept at 3% and rough precious and semi-precious stones that are placed at a special rate of 0.25% under GST.
2. A total of 81% of all the goods and services fall below or in the 18% tax slab. This means 7 % of the items come under the exempted list, 14% of the items attract a 5% tax, 17% of the items attract a 12% tax, and 43% of the items attract an 18 % tax slab, while only 19% of the items fall under the highest slab of 28% in the new regime.
3. An assessment showed that in the first year of implementation of GST, revenues grew by 11.9% and the buoyancy was 1.20. A buoyancy ratio over 1shows progressiveness in the revenue growth and opens up the prospect of a rising tax-to-GDP ratio.

This is a significant improvement over the pre-GST period when the buoyancy ratios for state value added tax (VAT) and central indirect taxes like central excise and service tax were less than 1. The revenue performance is especially creditable given the transitional difficulties during implementation and teething technical problems with the GST Network (GSTN).

Impact on the Common Man – Being a new law, a new tax that brought with it new challenges to face. Hence, this needs to be tackled with utmost care.

So, GST bill covered the Goods and Services Tax i.e. the biggest indirect tax reform providing a uniform and simplified way of Indirect taxation in India. GST replaced a number of other indirect taxes like VAT, CST, Service tax, CAD, SAD, Excise, Entry tax, purchase tax etc.

So, a bundle of indirect taxes got replaced by a new tax in India known as GST or Goods and Services Tax. Hence, leading to a much simplified tax regime as compared to the earlier complicated tax structure comprising of numerous taxes.

As and when a new reform or bill comes and a new law is imposed, it surely leaves its impact especially on the common man. It is ultimately the common man who is directly or indirectly affected by the implementation of any new tax.

And this time too there's no exception, the common man had to get ready for the implications. Common man here includes not only the final consumer of goods but all the small traders and service providers who are directly affected after the introduction of GST.

Positive Impact Of GST:

1. Increase in Foreign Investment- With GST, India is now a unified market and the foreign investment has increased in India. The goods that are manufactured within India because of their reduced costs have become more competitive in international market leading to growth in export. The implementation of Goods & Services tax puts India in the line of international tax standards, making it easier for Indian businesses to sell in the global market.

2. Fewer Tax- GST has two constituents: The central GST and the State GST. The Central GST will replace - Service Tax, Central Excise Duty, and Custom Duty etc. The State GST will replace - State VAT, Central Sales Tax, Tax on Advertisements, Luxury Tax, Purchase Tax, Entertainment

* **Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA**

Tax etc. Before GST, there were so many taxes and now they have replaced all these taxes and duties with Central GST and State GST.

3. Reduce the cost of doing business- GST has changed VAT all over India. Now we do not need to pay different amounts of taxes in different states. It is one tax system for all states of India and so we have already got rid of various taxes and duties on our businesses.

4. Transparency- The tax administration has started working corruption free. Also enabling sales invoices to show the tax applied has resulted in transparency.

Negative Impact Of GST:

1. Dual Control - GST is being referred to as a single taxation system but in reality it is a dual tax because both the state and centre both will collect separate tax on a single transaction of sale and service.

2. Incumbent increase of the cost of some commodities - The tax rate has been increased for many products, thus increasing their costs.

3. Some sector are at a loss- Sectors like Textile, Media, Pharma, Dairy Products, IT and Telecom are bearing the brunt of a higher tax. Also the price of commodities has increased like jewellery, mobile phones and credit cards.

4. Real Estate Market affected - Economists are of the opinion that GST in India has already had a negative impact on the real estate market. It has added up to 8 percent to the cost of new homes and reduced demand by about 12 percent.

As the coin has two sides, same way implementation of GST impacts a nation both ways, positively and negatively. If we ignore the negative aspects and consider the positive effect, then it is a way to reduce the black money. GST is having a few initial problems, but with time, we will be able to see the bigger picture and it will surely result in an economic integration.

Conclusion - our government works towards making GST a “good and simple tax”. The idea behind implementing GST across the country in 29 states and 7 Union Territories is that it would offer a **win-win** situation for everyone. Manufacturers and traders would benefit from fewer tax filings, transparent rules, and easy bookkeeping; consumers would be paying less for the goods and services, and the government would generate more revenues as revenue leaks would be plugged

The future of GST is bright because it is one of the biggest indirect tax reform.GST has resulted in reduction in prices of goods & services, allowed free input tax credit, reduced compliance. Government is working hard to make it more simpler & in near future there will be more good results from GST.

References :-

1. The Economic Times
2. The Financial Express
3. Wikipedia
4. The Chartered Accountant Journal

****

E-Marketing- its Impact on Indian Society

Dr. Vijay Prakash Mishra*

Abstract - E-Marketing is the process of marketing a brand using the Internet. It includes both direct response marketing and indirect marketing elements and uses a range of technologies to help connect businesses to their customers. E-marketing means using digital technologies to help sell your goods or services. These technologies are a valuable complement to traditional marketing methods whatever the size of your company or your business model. The basics of marketing remain the same – creating a strategy to deliver the right messages to the right people. What has changed is the number of options you have. Though businesses will continue to make use of traditional marketing methods, such as advertising, direct mail, and PR, e-marketing adds a whole new element to the marketing mix. Many businesses are producing great results with e-marketing and its flexible and cost-effective nature makes it particularly suitable for small businesses. Very simply put, e-Marketing or electronic marketing refers to the application of marketing principles and techniques via electronic media and more specifically the Internet. The terms e-Marketing, Internet marketing, and online marketing are frequently interchanged, and can often be considered synonymous.
Keywords - online marketing, e-marketing, online marketing, Internet marketing, global marketing competition.

Introduction - Before the term, e-marketing evolved, the term digitalmarketing was used in the 1990s. It is often referred to as "online marketing", "internet marketing", or "web marketing".Technically speaking, the Internet is a global network ofinterconnected networks. In this context, E-marketing is theuse of information technology in the process of creating,communicating, and delivering value to customers, and formanaging customer relationships in ways that benefit theorganization and its stakeholders. E-marketing is theapplication of a broad range of information technologies for-

1) Transforming marketing strategies to create morecustomer value through more effective segmentation, targeting, differentiation, and positioning strategies.
2) More efficiently planning and executing the conception,distribution, promotion, and pricing of goods, services,and ideas, and
3) Creating exchanges that satisfy individual consumer andorganizational customers' objectives.

The rapid growth of the web, subsequent bursting of the dotcombubble and current mainstreaming of the Internet andrelated technologies created today's climate of marketingconvergence: the comprehensive integration of e-marketingand traditional marketing to create seamless strategies andtactics. Much digital technology receiving devices alsoconverged, such as the mobile phone with a digital camera andpersonal digital assistant (PDA). Convergence is an important theme for e-marketing.

E-marketing involves the following aspects:-

1) Enabled by a website, create virtual shops
2) Create customer data bank
3) Provide for the business-to-business exchange of data
4) Contact customers by e-mail or fax
5) Use business-to-business buying and selling
6) Defies all barriers of time and space

Need Of The Study: -India will likely see the golden period of the Internet sector between 2013 to 2018 with incredible growth opportunities and secular growth adoption for E-Commerce, Internet Advertising, Social Media, Search, Online Content, and Services relating to E-Commerce and Internet Advertising. As we all know, India has a long way to go in the world of Digital Marketing as more and more Indians are spending time on the internet as compared to China and the US.

History Review: -India has an internet user base of about 137 million as of June 2012. The access of e-business is low as compared to markets like the United States and the United Kingdom but is growing at a much faster rate with a large number of new entrants. Cash on delivery is a unique thing to India and is a preferred payment method. India has a vibrant cash economy as a result of which around 80% of Indian e-business tends to be Cash on Delivery. E-business in India is still in the burgeoning stage but it offers extensive opportunity in developing countries like India. Highly intense urban areas with very high literacy rates, huge rural population with fast increasing literacy rate, a rapidly growing internet user base, technology advancement and adoption and such other factors make India a dream destination for e-business players. Moreover, squat cost of personal computers, an emergent installed base for Internet use and a progressively more competitive Internet Service

*Assistant Professor, Department Of Applied Economics, J.N.P.G College Lucknow (U.P.) INDIA

Provider (ISP) market have added fuel to the fire in augmenting e-commerce growth in Asia's second most populous nation. India's e-business industry is on the growth curve and experiencing a surge in growth. The Online Travel Industry is the biggest segment in e-business and is flourishing largely due to the Internet-savvy urban population. The other segments, categorized under online non-travel industry, include e-Tailing (online retail), online classifieds and Digital Downloads (still in a blossoming stage). The online travel industry has some private companies such as Make my trip, Clear trip and Yatra as well as a strong government presence in terms of IRCTC, which is asuccessful Indian Railways initiative. The online classifieds segment is broadly divided into three sectors; Jobs,Matrimonial and Real Estate. A description by the Internet and Mobile Association of India has exposed that India's business market is mounting at an average rate of 70 percent annually and has grown over 500 percent since 2007. The current estimate of US$ 6.79 billion for the year 2010 is way ahead of the market size in the year 2007 at $1.75 billion. Apparently, more online users in India are willing to make purchases through the Internet. The overall e-commerce industry is on the edge to experience high growth in the next couple of years. The e-commerce market in India was largely dominated by the online travel industry with 80% market share while electronic retail (E-Tailing) held second place with 6.48% market share.

Development And Scope Of E-Marketing:- E-marketing has universal application. It penetrates all kinds of business namely, agricultural, industrial, medical tourism,governance, education and so on. Some of the commonly usedapplications of e-marketing are Document automation,payment systems, content management, group buying, onlinebanking, teleconferencing, electronic tickets which havebecome common with large and small businesses alike.

1) 1971 or 1972: The ARPANET is used to arrange a sale between students at the Stanford Artificial Intelligence Laboratory and the MassachusettsInstitute of Technology, the earliest example ofcommerce.
2) 1979: Michael Aldrich demonstrates the first onlineshopping system.
3) 1981: Thomson Holidays UK is the first business-to-businessonline shopping system to be installed.
4) 1996: India MART B2B market place established in India.
5) 2007: Flipkart was established in India

Recent Trends in Indian Market: -Information Technology is the fastest growing segment of Indian industry both in terms of production and exports. In recent times,software development and IT-enabled services have emerged as a niche opportunity for India in the global context. The Government of India is taking all necessary steps to make India, a Global Information Technology Superpower and a front-runner in the age of Information Revolution. The Government of India has announced the promotion of Information Technology as one of the five top priorities of the country and constituted a National Task Force on Information Technology and Software Development.

Information Technology Industry in India has the potential of tremendous growth as a global IT solutions provider. Increasingly, India is being regarded as the hub and the base for worldwide IT solutions development. In addition to the global market that the Indian IT industry is well placed to tap, there is also a huge market within India to transform conventional brick and mortar industry through IT solutions. Likely economic and industrial growth and a large consumer base are the additional and significant growth drivers for the Indian IT industry.

The convergence of Information Technology, Communication, Entertainment, Content and Consumer Electronics and the increasing penetration of internet, PC, desktop sets, mobile phones, cable TV, etc. should result in a massive surge in worldwide demand for IT solutions for internet-based activities and e-commerce. India today is well placed to offer quality and competitive IT products and services.

India's IT industry ranks among the fastest growing sectors within the country's economy. Driven primarily by software exports, the industry has been logging in the extremely impressive year on year growth. The software industry, in fact, has been growing well with a CAGR exceeding 50% over the last five years, and only in the last year, impacted by the worldwide economic downturn, has the momentum reduced marginally. The Government of India projects an export of US $ 50 billion by the year 2008 for the Indian software industry.

India's international-class manpower that creates high-quality software and services solutions is finding favor among overseas customers. The success story being played out by the IT industry at the global level is also being reflected on Indian soil, with more and more organizations embracing IT. The Government too is getting IT enabled and using state-of-the-art technology solutions to bring greater benefits to Indian citizens and improve its internal efficiencies.

(Table and Garaph see in last page)

Importance Of Internet Marketing: -Below is some of the reasons why it is absolutely important for any business to invest in online marketing for their brands.

1. Cost-effective IM (internet marketing) is one of the best cost-effective ways of advertising because marketing products on the internet is less expensive in comparison to physical marketing due to short chain of middlemen in online marketing as well as fewer expenses on the physical outlet of the showrooms and the use of marketing articles or social media in establishing an online presence is minimal and you don't have to incur cost of rental property and its maintenance because you will not have to purchase stocks in bulk for display in a store.

2. Convenient Internet marketing enables to provide 24*7 services without worrying about the opening and closing

hours of a physical store. It's also convenient for your customers because they can browse your online store at any time and from any place worldwide and place their orders at their own convenient time.

3. **Increase website traffic** The use of articles or social media as a marketing strategy will help to increase traffic to a business website. The more people visiting the site the more likely of closing with more sells and generating more interests of people in the products.

4. **One-to-one Marketing** Internet marketing overcomes barriers of distance is overcome by internet marketing because you can sell goods in many parts of the world without setting up a local outlet over there, thus the scope of target market becomes very wide. However, if you want to sell the product or services internationally you will have to use localization services to ensure that your products are suitable for local markets and comply with local business rules and regulations. Localization of services includes translation and product modification which reflects the differences in the local market.

5. **Improves customer-seller relationship** A better platform to build relationships with customers to increase customer retention level is provided by the internet. For example when a customer has purchased a product, the first step to begin the relationship by sending a follow-up e-mail to confirm the transaction and then thank the customer. You can also invite the potential customers to give product reviews on your website regarding the existing product and this will help to build a sense of community.

6. **Personalization** By building a profile of their purchasing history and preferences, internet marketing will help a business to personalize offers for customers. You can do this by tracking the product information and web pages that help to prospect, visit and make targeted offers which reflect their interests.

7. **Increases sales** Internet marketing will increase your sales because it provides the consumer's opportunity to purchase the products online rather than physically going to a place or sending an order form by mail. This will increase the impulse rate of purchasing power resulting in an increase in revenue for business organizations and an excellent return on their investments.

8. **Always available to consumers** Using internet marketing techniques businesses can give their consumers a 24-hour outlet for finding the products they want, in physical outlets shopping is done in only normal working hours which impact the work schedule and lifestyle of the customers.

9. **Better conversion rate** if you have a website of your business organization, then your customers are only a few clicks away from completing a purchase from your website. Unlike other media, e-marketing is seamless, which require people to get up and make a phone call, post a letter or go to a shop.

Unique Challenges Of E-Marketing And The Ways To Overcome Them - Since the late 1990s, there is a boom in the use of internet .hence, so many web-based companies have been starting up every day. What more is available? What are the new opportunities for growth? , is expanding the reach and capabilities of the cyberspace. But for all these same problems are faced by these industries which are unique in itself. A special set of challenges are faced by these web-based industries. In this article, we have taken a look at those and their possible solutions.

a. **Marketing integration** multiple channels are employed by the sales efforts which are online and offline, e.g. email advertising, social networking, outbound call handling and so on. The problem faced with these is that they are supposed to serve a concrete and measurable goal as part of an integrated campaign even though they are often handled as different parts of the work. So to coordinate all marketing efforts must be a priority. Alongside the traditional campaign, e-marketing should be done and should not be tacked at the end of the business plan.

b. **Security and privacy** Most people do not completely trust Web companies and, thus, they hesitate about offering information about themselves on the cyberspace. When companies that collect data are exposed to scammers and spammers, this is especially true. To adopt a sound policy and implement a fool-proof security measure, it becomes imperative for e-businesses. In particular Encryption, systems are a tool that online companies should seriously consider investing in.

c. **Impersonal service** Electronic methods of providing customer service are used by businesses which are operating online, such as posting and emailing info on the website to answer possible user questions. Sometimes customers perceived this to as just too impersonal or uncaring. Merchants must develop efficient checkout procedures for selling goods via the Web, for addressing this problem. Hiring call handling services are also taken into consideration so that customers can talk to real people when they have inquiries about problems that need an instant answer.

1. **Improving brand awareness** A big challenge for companies is that: primarily use the Internet to sell their products and services (tangible and intangible products). This is because, online adverts can be shut off by users unlike traditional advertising, (such as television, radio, billboard, and print) in which the campaign's message can be reinforced and repeatedly introduced to consumers at the marketers' will. So the challenge faced by web companies is to be more innovative in terms of advertisement.

2. **Dealing with the IT Department** There is a circle of IT vs. marketing for a long time. But, it's a time to understand that we need to be a partner with our IT friends to implement our marketing programs more efficiently. In a simple sense, we need them and they need us or we can say that both complement each other.

3. **Continuing Education** Constant learning is needed by the marketers of the 21st Century. It is said that knowl-

edge in marketing comes with an expiration date and continues professional development is a necessity for up gradation. Take a class, get a certification, read a book, attend a seminar or conference whatever works for you, but keep learning.

4. **Bad Marketing** Anyone can call themselves a web designer, marketer, consultant, SEO expert and so on. Poorly created and executed marketing programs degraded our profession and also create mistrust among clients, marketers and other related parties. By doing marketing in the right time or way helps you to tip the scale in favor of our own profession which helps in long run survival.

5. **Lack of Trust** In general, identity theft, Spam, intrusive advertising and technological glitches have left many mistrusting of marketing. You are either part of the problem or part of the solution, you have to decide it.

6. **Know-It-Alls** Nobody is able to fully understand all aspects of marketing. There is simply too much to know, and whatever you do to know is changing at supersonic speed. If you are going to be an expert, you will have to get specialization in one aspect of e-marketing.

7. **Ethical Practices** An unprecedented mass of un-ethical businesses has been spawned by the Internet. There has always been scam regarding bottom feeders and artists, but the Internet seems to have brought them out in epic numbers. Make sure that your own practices are squeaky clean and try to educate your customers about some of the pitfalls of e-commerce.

8. **Corporate Culture** In many companies every department "owns" the website and no department "owns" the website. Websites should belong to marketing, not finance/ operations/ IT or legal. When the committee doesn't have a clue, it is difficult to produce good marketing by committee. Collaboration is important in this situation and your associates should provide 100% input for this, but marketing should make the final decisions.

9. **International Commerce** The Internet has made possible to provide products and services available around the world as close to customers and their living room (or wherever they have their computer). Unprecedented revenue flows in and out of foreign countries is allowed by this new world channel and that impact could eventually have a dramatic effect on our domestic economy. We have a lot in common with people of other countries in term of culture and traditions, but there are some differences as well which is known as Unity In Diversity. Understanding is the key to good international commerce as well as relations.

10. **Intellectual Property** It has never been easier to steal someone else's hard work. Everyday everything from music to software, movie, and images are lifted from the Internet. This is a bad thing.

11. **Customer Expectations** Never before customers had expected too much. Managing your customer expectations is vital to marketers because if you don't know your competitors will, you are not able to survive in the long run in the market. Without customers, you will not have a business because the customer is treated like a king of the market, so take the time to get to know them, treat them with due care and respect, and in the same way you want to be treated as a customer.

References:-

1. Karakaya F., T.E. Charlton., ¯Electronic Commerce: Current and Future Practices, Managerial Finance, Vol. 27 (7), pp. 42-53, 2001.
2. Mohammed R., ¯Internet Marketing, McGraw Hill, New York, Vol. 4, 2001
3. Devi .C.S and Anita.M (2013) : ¯E marketing challenges and opportunitiespg. 96 – 105 retrieved from www.ijsrm.in
4. Krishnamurthy, S. & Singh, N. (2005), The International E-Marketing Framework (IEMF)
5. Various Internet Survey 2004-17
6. www.google.co.in/bussiness
7. Online shopping Flipkart and Amazon
8. E-marketing company side sources

India - Growth of Internet

Date	Internet Connections (in million)	Users (in million)
31-Aug- 97	0.002	0.01
31-Mar-98	0.05	0.25
31–Mar-99	0.09	0.45
31–Mar -00	0.14	0.7
31- Mar-01	0.28	1.4
31- Mar-02	0.9	2.8

31-Aug- 03	1.6	4.8
31-Mar-04	2.5	8
31-Mar-05	4.5	15
31-Mar-06	10	32
31-Dec-06	15	50

(Source: DoT, NASSCOM & Telescope Survey)

Search:

Rank	Country	Internet Users	1 Year Growth %	1 Year User Growth	Total Country Population	1 Yr Population Change (%)	Penetration (% of Pop. with Internet)	Country's share of World Population	Country's share of World Internet Users
1	China	641,601,070	4%	24,021,070	1,393,783,836	0.59%	46.03%	19.24%	21.97%
2	United States	279,834,232	7%	17,754,869	322,583,006	0.79%	86.75%	4.45%	9.58%
3	India	243,198,922	14%	29,859,598	1,267,401,849	1.22%	19.19%	17.50%	8.33%
4	Japan	109,252,912	8%	7,668,535	126,999,808	-0.11%	86.03%	1.75%	3.74%
5	Brazil	107,822,831	7%	6,884,333	202,033,670	0.83%	53.37%	2.79%	3.69%
6	Russia	84,437,793	10%	7,494,536	142,467,651	-0.26%	59.27%	1.97%	2.89%
7	Germany	71,727,551	2%	1,525,829	82,652,256	-0.09%	86.78%	1.14%	2.46%
8	Nigeria	67,101,452	16%	9,365,590	178,516,904	2.82%	37.59%	2.46%	2.30%
9	United Kingdom	57,075,826	3%	1,574,653	63,489,234	0.56%	89.90%	0.88%	1.95%
10	France	55,429,382	3%	1,521,369	64,641,279	0.54%	85.75%	0.89%	1.90%

Growth in Indian Market is 14% YOY

http://www.internetlivestats.com/internet-users-by-country/
http://en.wikipedia.org/wiki/Global_Internet_usage

Internet Users by Country (2016)

#	Country	Internet Users (2016)	Penetration (% of Pop)	Population (2016)	Non-Users (Internetless)	Users 1 Year Change (%)	Internet Users 1 Year Change	Population 1 Y Change
1	China	721,434,547	52.2 %	1,382,323,332	660,888,785	2.2 %	15,520,515	0.46 %
2	India	462,124,989	34.8 %	1,326,801,576	864,676,587	30.5 %	108,010,242	1.2 %
3	U.S.	286,942,362	88.5 %	324,118,787	37,176,425	1.1 %	3,229,955	0.73 %
4	Brazil	139,111,185	66.4 %	209,567,920	70,456,735	5.1 %	6,753,879	0.83 %
5	Japan	115,111,595	91.1 %	126,323,715	11,212,120	0.1 %	117,385	-0.2 %
6	Russia	102,258,256	71.3 %	143,439,832	41,181,576	0.3 %	330,067	-0.01 %
7	Nigeria	86,219,965	46.1 %	186,987,563	100,767,598	5 %	4,124,967	2.63 %
8	Germany	71,016,605	88 %	80,682,351	9,665,746	0.6 %	447,557	-0.01 %
9	U.K.	60,273,385	92.6 %	65,111,143	4,837,758	0.9 %	555,411	0.61 %
10	Mexico	58,016,997	45.1 %	128,632,004	70,615,007	2.1 %	1,182,988	1.27 %
11	France	55,860,330	86.4 %	64,668,129	8,807,799	1.4 %	758,852	0.42 %
12	Indonesia	53,236,719	20.4 %	260,581,100	207,344,381	6.5 %	3,232,544	1.17 %
13	Viet Nam	49,063,762	52 %	94,444,200	45,380,438	3.3 %	1,564,346	1.07 %
14	Turkey	46,196,720	58 %	79,622,062	33,425,342	5.1 %	2,242,750	1.22 %
15	Philippines	44,478,808	43.5 %	102,250,133	57,771,325	4.4 %	1,855,574	1.54 %
16	South Korea	43,274,132	85.7 %	50,503,933	7,229,801	1.2 %	522,375	0.42 %
17	Italy	39,211,518	65.6 %	59,801,004	20,589,486	1.7 %	666,922	0.01 %

TOTAL RETAIL & RETAIL ECOMMERCE SALES IN INDIA
2013 - 2018
Total Retail Sales
Retail eCommerce Sales
% of Total Retail sales
635.25
818.33
941.08
1082.24
1214.58
0.60%
0.70%
0.90%
1.10%
1.40%
3.59
5.3
7.69
10.68
14.18
17.52
2013
2014
2015
2016
2017
2018
Source: eMarketer, Dec 2014, Figures in USD Billions

****

महिला बेरोजगारी उन्मूलन में स्वसहायता समूह की भूमिका का अध्ययन (बिलासपुर जिले के कोटा ब्लाक के ग्राम पंचायतों के विशेष संदर्भ में)

नेहा सिंह * डॉ. ऋचा यादव **

शोध सारांश – इस शोध पत्रिका में महिलाओं की आर्थिक सामाजिक एवं पारिवारिक स्थिति को विकसित करने में स्व-सहायता समूह का योगदान हेतु किया गया है। स्व-सहायता समुह ऐसी अभिनव योजना है, जिससे गरीबों एवं गरीब महिलाओं को उन्नती की ओर अग्रसर करने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस योजना ने इन्हें कुछ नया कर गुजरने की राह दिखाई जहां लघु वित्त का निर्माण होता हैं। सेठ-साहूकारों, जमींदारों के कर्ज एवं शोषण मुक्त करने में स्व-सहायता समूह की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। समूह अपने सदस्यों के सामूहिक एवं व्यक्तिगत कल्याण के लिए अपनी बचत के माध्यम से सक्रिय कार्य कर रहे है। स्व-सहायता समूह मुख्य रूप से महिलाओं के कल्याण एवं विकास हेतु कार्यरत है, जहाँ महिला समूह के सदस्य नियमित रूप से थोड़ी-थोड़ी राशि बचाकर सामूहिक निधि में जमा करते है, तथा वे इस राशि का उपयोग अपनी जरूरतों की पूर्ति के लिये आपसी लेन-देन द्वारा करते है। रोजगार हेतु स्वसहायता समुहों को सरकार द्वारा विभिन्न लघु उद्योगों को बढ़ाने हेतु प्रयासरत् है।

प्रस्तावना – भारत एक ग्रामीण देश है जहां लगभग 70 प्रतिशत लोग कृषिकार्यो से जुड़े है। कृषि कार्यो के अतिरिक्त इनके पास अन्य कोई व्यवसाय नही है और न ही आय के अन्य साधन। खेती का कार्य साल भर मे इनको 3-4 माह ही मिलता है, इसलिये शेष महीनो मे पर्याप्त आय जुटाने के लिये इन्हे कई अन्य प्रयत्न करने पड़ते है और आवश्यकता पड़ने पर इन्हे अपनी जमीन और गहनो को गिरवी रखना पड़ता है, जिन्हे बाद मे छुड़ाना इनके लिये अत्यधिक कठिन होता है। इस स्थिति मे पुरूष वर्ग तो शहर मे मजदूरी करने लगता है किन्तु महिला के लिये यह एक संकट की घड़ी होती है जिसमे न तो उसे खेतो पर काम मिलता है और न ही आजीविका चलाने के अन्य साधन। इस दिशा मे स्वयं सहायता समूह महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया मे महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है, जिसमे बांग्लादेश के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री मुहम्मद यूनुस का प्रयास उल्लेखनीय रहा है। इन्होने 1970 से लघुवित्त आंदोलन की शुरूआत की थी जिसके तहत गरीबो विशेषकर औरतों को बिना किसी शर्त के ऋण देने की व्यवस्था की गई और आज लघु वित्त आंदोलन विश्व के 7 हजार संस्थाओ द्वारा चलाया जा रहा है जिससे लगभग 1 करोड़ 6 लाख लोगो को रोजगार दिया जा चूका है।

महिला सशक्तिकरण से अभिप्राय जीवन के विभिन्न क्षेत्रों मे महिलाओं द्वारा निर्णय प्रर्किया मे साझेदारी से है। इसमे सामाजिक आर्थिक, राजनितिक, सांस्कतिक इत्यादि सभी विषयो मे महिलाओ कि स्थिति मे परिवर्तन होता है। यह महिलाओ के स्वयं पर नियंत्रण, अपने परिवार के बारे मे महत्वपूर्ण निर्णयो मे साझेदारी तथा घर के इतर निर्णयो मे भूमिका निर्धारित करता है। महिला सशक्तिकरण को राजनीति, प्रशासन, अर्थव्यवस्था, व्यापार वाणिज्य इत्यादि मे प्रतिनिधित्व के रूप मे भी आंका जाता है, इसके तहत महिलाओ मे सुरक्षा की भावना, मातृत्व मृत्यु दर मे कमी इत्यादि के रूप मे भी देखा जा सकता है। सशक्तिकृत महिलाओ द्वारा अपनी क्षमता के दायरे मे विश्वास का निर्माण शामिल होता है। महिलाओ को सशक्त करने मे कुछ कारको की अहम भुमिका होती है जैसे:- शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वामित्व ,कौशल प्रशिक्षण ,प्रौद्योगिकी ज्ञान इत्यादि। वास्तव मे स्वयं सहायता समूह गॉव के व्यक्तियों का एक ऐसा संगठन है जो अपनी इच्छा से संगठित होकर नियमित रूप से थोड़ी-थोड़ी बचत कर सामूहिक निधि मे जमा करते है तथा जिसका उपयोग सदस्यो की आकस्मिक आवश्यकता की पूर्ति के लिये किया जाता है। इस प्रकार समूह के सदस्य हफ्ते अथवा महीने मे एक बार बैठक कर विभिन्न विषयो पर चर्चा कर एक दूसरे की समस्याओं का समाधान करते है जिससे ये महिलाये गरीबी बेरोजगारी तथा निरक्षरता के चक्रव्यूह से निकलकर सशक्तिकरण की दिशा मे कदम बढ़ा रही है और न केवल आर्थिक बल्कि सामाजिक एवं राजनैतिक आयामो पर भी सशक्तिकरण की ओर अग्रसर है।

अध्ययन की उपयोगिता – बदलते हुये परिवेश के साथ-साथ स्व सहायता समूह मे भी परिवर्तन आते जा रहे है जहॉ पर राज्य सरकार महिला बेरोजगारी की आर्थिक स्थितियों के सुधार हेतु कार्य तो कर रही है परन्तु उनकी स्थिति मे विशेष सुधार नही आया है। अत: अध्ययन करके इसका समाधान निकालने का प्रयास किया जायेगा। इस विषय का अध्ययन इसलिये आवश्यक है क्योंकि जिस प्रकार एक अकेला व्यक्ति के होने से समस्या का समाधान नहीं हो पात परन्तु कुछ लोग मिलकर अपनी थोड़ी आय से थोड़ी बचत करते-करते एक पूंजी जमा कर सकते है। इस पूंजी से भी एक दूसरे की मदद कर सकते है। समूह को सक्रिय होने के लिये कम से कम छ: माह की आवश्यकता होती है। इस अध्ययन की उपयोगिता न्यूनतम ब्याज दर पर ऋण की उपलब्धता। स्व सहायता समूह वर्तमान समय मे ज्यादातर गांव महिलाओ के उत्थान का कार्य कर रहा है।

उपकल्पना – सामाजिक अनुसंधान को संचालित करने आगे बढ़ाने, तथा सत्यता तक पहुंचने हेतु उपकल्पना का महत्वपूर्ण चलन है। उपकल्पना एक ऐसा विचार या कल्पिक निष्कर्ष है, जिसकी सत्यता प्रमाणित होने भी शेष

* एम.फिल. शोधार्थी (समाजकार्य) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** विभागाध्यक्ष (समाजकार्य) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

है।

प्रस्तुत शोध परियोजना मे महिला बेरोजगारी उन्मूलन मे महिला स्वं सहायता समूह की भूमिका का निम्नानुसार उपकल्पना निर्धारित की है :-

1. महिला बेरोजगारी समाज मे निरंतर विद्यमान हैं।
2. समाज के बदलते हुये स्वरूप बेरोजगारी उन्मूलन में सहायक है।
3. स्व सहायता समूह ने आधुनिकीकरण को भी बढ़ावा दिया जायेगा।
4. समाज मे परिवर्तन होने के कारण स्व सहायता के स्वरूपे में भी परिवर्तन किया जायेगा।
5. मिडिया का प्रभाव भी स्व सहायता समूहो को बढ़ावा देती है।

अध्ययन विषय का चयन एवं उद्देश्य :

1. प्रस्तुत शोध में स्वसहायता समूह में सरकारी व गैर सरकारी प्रयासो का मूल्यांकन का प्रयास करना।
2. महिलाओ को किस प्रकार आत्मनिर्भर बनाया जाए।
3. सभी प्रयासो को महिलाओं तक पहुँचाने मे आम लोगो की किस प्रकार भूमिका रहेगी, इसकी जानकारी प्राप्त व प्रदान करना।

अध्ययन हेतु शोध प्रविधि - किसी भी शोध को पूर्ण करने तथा सत्य तक पहुंचने एवं क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करने हेंतु शोध प्रविधियो को उपयोग किया जाना आवश्यक है, क्योकि विज्ञान प्रविधियो पर जोर देता है, ना कि विषय सामग्री पर।

अ) प्राथमिक स्त्रोत - प्राथमिक स्त्रोत के अंतर्गत अवलोकन पद्धति, निदर्शन पद्धति तथा साक्षात्कार एवं अनूसूची पद्धति का प्रयोग किया जायेगा, जिनके माध्यम से उत्तरदाताओ का चयन कर अध्ययन विषय से संबंधित तथ्यो को संलग्न किया जायेगा।

साक्षात्कार अनूसूची - प्रस्तुत लघुशोध प्रबंध की पूर्णता में विभिन्न पद्धतियो के साथ साक्षात्कार अनूसूची का सर्वाधिक उपयोग किया जायेगा। जिसमे विभिन्न प्रकार के लघुउत्तरीय निबंधात्मक प्रश्नो का समावेश किया जायेगा।

अवलोकन - प्रस्तुत लघुशोध में हम अवलोकन प्रविधि के असहभागी अवलोकन पद्धति का प्रयोग करेंगे, ताकि बिना किसी पक्षपात के वैज्ञानिक अध्ययन किया जा सके।

ब) द्वितीयक स्त्रोत - प्राथमिक स्त्रोत के अतिरिक्त सरकारी दस्तावेज, आकड़े जनगणना, पत्रिकाएँ, समाचार पत्र, महिला स्व सहायता समूह से संबंधी प्रकाशित पुस्तकें, द्वितीयक स्त्रोतो का प्रयोग आवश्यकतानुसार किया जाएगा।

कोटा क्षेत्र का संक्षिप्त परिचय - प्रस्तुत अध्ययन छ.ग. राज्य के बिलासपुर जिले अंतर्गत जनपद पंचायत कोटा क्षेत्र को लिया गया है। जिसकी भौगोलिक स्थिति उत्तर की ओर $22^{0}03'$ जव $22^{0}06'$ पूर्व की ओर $82^{0}02'$ जव $82^{0}03'$ स्थित है। कोटा जनपद पंचायत की स्थापना वर्ष 1997-98 में हुई है। कोटा ब्लॉक की कुल जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 228358 है। कोटा विकासखण्ड के कुल गांवों की संख्या 226 है जिसमें 81 ग्राम पंचायत है। कोटा जनपद पंचायत के अंतर्गत 243 ग्राम पंचायत आते है। कोटा में विभिन्न कार्यालय है जैसे तहसील, विकासखण्ड, थाना, व्यवहार न्यायालय, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द आदि। कोटा विकास-खण्ड में पारिवारिक वातावरण, आर्थिक समस्या, बेरोजगारी, अशिक्षा, जातिवाद, राजनैतिक, सामाजिक एवं रूढ़िवादिता आदि कारणों से बाल अपराध का विकास हुआ है। जबकि कोटा विकास खण्ड एक सम्पन्न एवं रमणीय क्षेत्र है, यहां पर्यटक स्थल, अभ्यारण, ऐतिहासिक एवं धार्मिक स्थल, छोट-बड़े कारखाने, यातायात की पूर्ण सुविधा, तीज-त्योहारों में मेला, आपसी संबंध आदि सभी कुछ देखने को मिलता है। वर्तमान समय यह क्षेत्र बहुत वृहद हो गया है। यहाँ के लोगों की संस्कृति अच्छी है। कोटा क्षेत्र आदिवासी बहुल्य क्षेत्र है, जहाँ जंगलों एवं गांवों में अधिक लोग निवास करते है।

स्व-सहायता समूहों में विकासात्मक गतिविधियां - स्व-सहायता समूह कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य गरीबों निर्धनों की आर्थिक दशा में सुधार लाना है। इस कार्य हेतु ग्रामीण महिलाओं को संगठित कर उन्हें आत्मनिर्भर बनाने हेतु समूह का गठन किया जाता है। इस कार्यक्रम की मुख्य विर्षोषता यह है कि महिलाओं द्वारा स्वयं की कमाई से छोटी-छोटी बचत करना व व्यवसाय का संचालन करना। ये छोटी-छोटी बचतें किस प्रकार के व्यवसाय से संबंधित है, अर्थात् समूहों के द्वारा कौन-कौन से व्यवसाय किये जा रहे है -

स्व-सहायता समुह के उत्तरदाताओं द्वारा दिए गए विचार से 48% समूह रेडी टू ईट फूड का निर्माण कार्य कर रहे है, 12% समूह स्कूलों के लिए गणवेश सिलाई का कार्य कर रहे है, 12% समूह ईंट निर्माण के कार्य में संलग्न है, 28% समूह अन्य कार्य जैसे- मसाला उत्पादन, वनोत्पाद क्रय-विक्रय, किराना की दुकान का संचालन, ईमली प्रोसेसिंग कार्य, कैंटिन का संचालन, स्कूलों में मध्यान्ह् भोजन सप्लाई का कार्य, केले की खेती आदि कार्य कर रहे है।

उपर्युक्त विश्लेषण के निम्नांकित तथ्य स्पष्ट है :-

1. समूह से जुड़ने के पश्चात सदस्यों की आर्थिक गतिविधियों में बदलाव आया है।
2. श्रमिकों एवं कृषि श्रमिकों की संख्या का प्रतिशत निम्न हुआ है। जो कि आर्थिक प्रस्थिति में सुधार का संकेतक है।
3. स्वरोजगारियों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि पायी गयी है। जो कि स्वसहायता समूह के लक्षित तत्व के सकारात्मक प्रभाव की और इंगित करता है।

निष्कर्ष - प्रस्तुत शोध अध्ययन से न केवल महिलाओं के आर्थिक एवं सामाजिक विकास का अपितु सक्रिय आर्थिक सहभागिता के प्रभाव का पता लगेगा। इस अध्ययन का यह भी महत्व है कि इसके माध्यम से महिलाओं का सामाजिक सशक्तिकरण व जागरूकता की भी जानकारी प्राप्त होगी। साथ ही हमे इस अध्ययन के माध्यम से गरीबी उन्मूलन व स्वसहायता समूह के दीर्घ कालिक परिणाम व मानवीय विकास का ज्ञान भी होगा। भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 20 प्रतिशत परिवारों में महिला ही आय कमाने वाली सदस्य होती है अथवा मुखिया होती है। ऐसे परिवारों की आर्थिक परिस्थिति काफी बिगड़ी होती है।

स्वसहायता समूह संबंधी अध्ययन में यह पाया कि समाज में महिलाओं के प्रति जो रवैया है। उसका परिवारों पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। सामाजिक विकास में भारत से आगे श्रीलंका के संदर्भ में यह पाया गया है कि यहां महिला मुखियाओं के परिवार आर्थिक रूप से पिछड़े हुए नहीं है।

महिलाओं के विकास में अचल संपत्ति एक महत्वपूर्ण तत्व होता है किंतु पितृसत्तात्मक संरचना के कारण आज भी विवाह से पूर्व व विवाह के बाद भी जमीन पर अधिकार नहीं होता है। पारंपरिक नियमों के अनुसार संपत्ति पर अधिकार पिता से पुत्र को प्राप्त होता है। वहीं विवाहित पुत्री को सामान्य तौर पर संपत्ति पर अधिकार नहीं होता है। संपत्ति पर अधिकारहीनता, वित्तीय संसाधनों की अनुपलब्धता व औपचारिकता, बचत व ऋणों का अभाव भी महिलाओं के विकास में बाधक बनते हैं।

महिला विकास में स्वसहायता समूह की भूमिका देखने के लिए प्रस्तुत शोधकार्य किया गया है। उनके अध्ययनों व अनुभव से स्पष्ट हुआ है कि उपरोक्त कार्यक्रम में जो मूल्यांकनात्मक अध्ययन अभी तक हुए है। उससे महिला विकास को व्यापक स्तर पर नहीं समझा जा सकता है। स्वसहायता समूह की प्रक्रिया तथा इसके माध्यम से महिलाओं के सामाजिक आर्थिक विकास को जानने के लिए प्रस्तुत शोध को किया गया हैं क्योंकि कोई भी शोधकार्य सरकारी व गैरसरकारी माध्यमों को विकास के लिए एवं नीति निर्माण में एक नए दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता है। साथ ही साथ महिलाओं के विकास में संलग्न सभी व्यक्तियों, संस्थाओं, विशेषकर प्रशासनिक अधिकारी, शिक्षाविदों, एनजीओ व सरकारी संस्थाओं को मदद देने के रूप में अपनाया जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ सिंह सैनी, 'भारत का आर्थिक विकास', विद्या प्रकाशन मंदिर लि. नेशनल अवार्ड विनर
2. डॉ अग्रवाल, अमित 'भारत में ग्रामीण विकास', विवेक प्रकाशन जवाहर नगर दिल्ली-7
3. मदन, जी. आर. समाज कार्य विवेक प्रकाशन जवाहर नगर, दिल्ली - 7
4. डॉ.सिंह, अमिता 'भारत में उद्योग एवं समाज', विवेक प्रकाशन जवाहर नगर, दिल्ली-7
5. डॉ.सिंह, अमिता 'लिंग एवं समाज', विवेक प्रकाशन जवाहर नगर, दिल्ली - 7
6. डॉ.सिंह, अजय, डॉ सिंह, सुरेन्द्र पर्यावरण एवं समाज विवेक प्रकाशन जवाहर नगर, दिल्ली - 7
7. डॉ. बी.एल.फडिया 'शोध प्रविधी', साहित्य भवन पब्लिकेशन, मेरठ
8. सिंह विजय कुमार, चौबे अशोक कुमार, द्विवेदी नीरजा 'भारतीय ग्रामीण विकास एवं समीक्षा' - विकास का समाजशास्त्र विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1988 पृ. सं. 146-148
9. पंत, डी.सी. - 'भारत में ग्रामीण विकास', कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, नई दिल्ली, पृ. 167, में लिखित कामता प्रसाद का कथन। पृ. सं. 18-22
10. प्रसाद अवध - 'गॉवों में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिवर्तन', रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर एवं नई दिल्ली, पृ. 140-141

****

Chakravyuh Challenges of the Indian Economy

Dr. P.K. Sirothia*

Introduction - The word "Chakravyuha" in **Chakravyuha Challenge** is taken from the legend of Mahabharata, which means **"the ability to enter but not exit".**

After independence and till the 1980s, India was a **socialist economy** and suffered "**licence-quota-permit Raj**" with a restricted "**entry**".

Since the early 1980s, the Indian economy has gradually moved to a **market economy** and made a remarkable progress in overcoming its entry barriers but in the process, it has given rise to another major problem i.e. of an **"exit"**.

Since the early 1980's the Indian economy has made remarkable progress in increasing entry.Industrial licensing has been dismantled,public sector monopolies have been diluted. Some public sectors have been privatized, FDI has been considerably liberalized and trade barriers have been reduced. However, market economy not first unrestricted entry of new firms new ideas and new technologies but it also requires exit, so that resources are forced away from inefficient and unsustainable uses. In India there has been less progress in relation to exit. Thus Indian economy is characterized by marketing without exit.This is challenge of the Indian Economy.

Economic survey 2015-16 states that the case studies suggest that the challenge is more a feature of the relatively in traditional sectors of the economy. It is not restricted to Public sector but is increasingly being seen in the private sector. India seems to have a disproportionately large share of inefficient firms with very low productivity and with little exit. This lack of exit generates externalities that hurt economy.

Magnitudes of the problem of Chakravyuha Challenges - The severity of the problem can be measured based on the size of firms in India. In principle, productive and innovative firm should expand and grow, forcing out the unproductive once. So surviving firms should be much larger than new ones. In the US the average 40 years old plant are 8 times larger (in terms of employment), than a new one. Established Mexican firms are twice as large as new firms. But in 2010 India, the average 40 years old plant was only 1.5 times larger than new ones.

1. From socialism with restricted entry to "marketism" without exit
2. In a country as large and diverse as India, exit may not always be desirable, but policy action is needed when the costs clearly outweigh the benefits, when the lack of exit generates externalities that hurt others—such as firms that have to compete with subsidised "sick" firms or taxpayers who have to pay for the corporate subsidies.
3. Chakravyuha challenge is more a feature of the relatively traditional sectors of the economy but is not restricted to the public sector—indeed, impeded exit in the private sector is becoming a major challenge.
4. In a normal economy, old firms would be the ones that were efficient, only then could they survive for that long and hence should be much bigger in size than new firms. Worst part is that a decade back they were 2.5 times larger i.e. inefficient firms are not allowed to exit and they remain small.

Table 1 (see in last page)

Costs of Impeded exit - The lack of exit creates at least three types of costs: **fiscal**, **economic** (or opportunity), and **political**

Fiscal costs:

1. Of course, inefficient firms are supported by explicit (bailouts) or implicit (free power, reduced tariff, interest subvention etc) government subsidies
2. High subsidies # high borrowings # high fiscal deficit # high debt # high interest cost
3. Add to this the tax revenue forgone, if efficient firms were allowed to take their place i.e. **Double whammy(blow) of low tax and high subsidies**
4. Exit is impeded often through government support of incumbent, mostly inefficient, firms.
5. This support—in the form of **explicit subsidies** (e.g. bailouts) or **implicit ones** (e.g. tariffs, loans from state banks) - represents a cost to the economy.

Economic costs:

1. Economic losses result from resources and factors of production not being employed in their most productive uses.
2. In a capital scarce country such as India, misallocation of resources can have significant costs
3. stressed asset

Political costs:

*Professor (Commerce) Vijayaraje Government Girls Post Graduate College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA

1. lack of exit can also have considerable political costs for governments attempting to reform the economy.
2. benefits of impeded exit often flow to the rich and influential in the form of support for "sick" firms.
3. give the impression that governments favour large corporates, which politically limits the ability to undertake measures that will benefit the economy but might be seen as further benefitting business.

Reasons for an 'Exit' Problem in India

1. In India, the exit problem arises because of three types of reasons: **three I's.**

Interests(vested interests) – Power of vested interests which is aggravated by certain imbalances or asymmetry

1. Concentrated producer interests (a few losers stand to lose by lot) v/s diffused consumer interests (individual benefit small but aggregate benefit large)
2. Concentrated interests have more voice, backed by financial power and often democratic political systems tend to give disproportional influence to them (vocal **minority** v/s silent **majority**)
3. In the case of administrative schemes, vested interests often create a market of their own, planning their actions to benefit from it: put differently, this is a case of supply creating its own demand
4. Bureaucratic inertia perpetuates persistence
5. 50 percent of schemes are 25 years old. extra vigilance is necessary to ensure that schemes remain relevant and useful over time. And vigilance should probably increase in proportion to the longevity. (for these reasons only concept of ZERO based budgeting was introduced)

Institutions– Paradoxical situation of both weak and strong institutions delaying exit

- Weak institutions –

1. Inability to punish willful defaulters (legitimacy of institutions itself is questioned)
2. Judiciary- time and cost overrun
3. Debt recovery tribunal- share of settled cases is small and declining (4 lakh crore locked up)

- Strong institutions so called referee or vigilance institutions– **CBI, CVC, CAG, Judiciary** combined with the asymmetric incentives for bureaucrats that favours abundant caution and hence the status quo.

Ideas/ Ideology

1. Very difficult to phase out entitlements especially in a country with sizable poverty and inequality and one that is a democracy
2. The objective is often laudable but once the policies and programs have been set in place, they are very difficult to reverse
3. minimum support prices (MSPs) were envisioned as an insurance mechanism for farmers, but have become price floors instead, favouring some crops in some regions at the expense of other

Addressing the Chakravyuha Challenge - Chakravyuha challenge can be addressed in at least five possible ways:

1. Avoid exit through liberal entry of private sector: Instead of eliminating inefficiency, competition can be promoted via private sector entry. This will not only reduce chances of conflict with the trade unions but also bring structural and functional change in the working of the loss making industry.

a. E.g. Using this method, the exit problem in the civil aviation and telecommunication sectors has been skirted.
b. However, care is to be taken that privatization without sufficient players, should not lead to oligarchy.

2. Direct policy action: The problem of weak institutions can be address through better laws

a. E.g.: Insolvency and bankruptcy code, 2016: To expedite the process of exit of non-successful entities.
b. Amendment to prevention of corruption act 1998: To prevent prosecution for mere administrative errors. This would facilitate risk taking bureaucrats.
c. Creation of independent sector regulator for PPP projects and quick finalization of principles of negotiation and risk sharing between government and private players.

3. Use of Technology & JAM: Technology can help in two ways. First, it can bring down human discretion and the layers of intermediaries. And second, it can break the old shackles and old ways of doing business. In both ways, it can contribute directly to finding solutions to the exit problems. In this case JAM & DBT are best examples for using technology to solve exit problem.

4. Transparency: By communicating with the people and telling them the pros and cons of some of the entitlements, efficiency can be brought in public delivery of goods and services.

a. E.g.: Overproduction due to MSP can be addressed by throwing light on the social and environmental cost of cereal production.

5. Exit as an opportunity: By making employees and managers realize the benefit of exit, confrontation can be avoided and new efficient industries can be developed to replace the same. Existing inefficient firms may unleash a vast pool of resources which may be used for the economy after privatization.

E.g.: Land can be converted into land banks or to develop industries or to develop smart cities. However, interest of workers, employees and reservations for vulnerable classes has to be taken care of before privatization.

References : -

1. GoI, Economic Survey, 2015-16
2. http:/www.prsindia.org
3. Kapur, Devesh, 2003 "Do as I say, not as I do: A critique of G-7 proposals on reforming the multilateral development banks" UNCTAD.
4. Bloom, N & John Van Reenen, 2010 "Why do management practices differ across firms and Countries"? Journal of Economic Prospects.

Table 1: Characterizing the exit problem

Sector	Inefficiency Measure	Solution
Fertilizers (inefficient firms)	Estimated subsidy based on economic cost of production Rs. 23,013 crore in 2013-14	Progress being made with neem-coating which reduces diversion, decanalisation, JAM for farmers
Civil Aviation	In 2013-14, the total loss was about Rs. 2400 crore; 7th straight year of loss	Strategic approach
Public Sector Banks (a few banks)	Capital infusion between 2009-10 and 2015-16 (H1): Rs. 1.02 lakh crore.	Consolidate; Strategically disinvest; 4 R's for the NPA problem: Recognition, Recapitalization, Resolution and Reform
Discoms(major loss -making states)	Accumulated losses over 2008-09 and 2013-14 about Rs. 2.3 lakh crores	Tying structural improvements with debt relief (as in UDAY). Create 'one market' in power
Central Public Sector Enterprises	Accumulated losses of sick units as of 2013-14: Rs 1.04 lakh crore	Allow sick CPSEs to exit. Leverage the land and capital unlocked to promote new investment.
Private Sector		
Agriculture (cereals and sugar)	Over-intensive cultivation of waterintensive crops has led to water tables declining at a rate of 0.3 meters per year.	Incentivize pulses over water-guzzling crops. Facilitate use of drip irrigation
Steel	Cost of production 50-75% higher for few inefficient firms in comparison to global norms	Bankruptcy Code
Infrastructure (few large groups)	As of FY15 the average interest cover is about 0.3	Kelkar (PPP) Committee recommendations, bankruptcy code. Changing PCA
Small Savings	Implicit subsidy to well-off: Rs 11,900 crore	Rationalize schemes to benefit the small savers. Make transparent true beneficiaries
Economy Wide		
Trade Liberalisation	Nearly highest restrictions on imports; gains from liberalisation of goods and services estimated at 1% of GDP4	Safety nets to tackle transitory costs of greater trade liberalization and competition
Labour	Not enough big firms and too many small and inefficient firms	Employee-centric regulations; provision of greater choice to employees

Source: Economic Survey 2015-16

✼✼✼✼✼✼✼✼✼✼✼✼✼

Glitches in the Way of Good Governance of India

Mukhtar Ahmad Lone * Dr. Niraj Kumar Jha **

Introduction - People surrendered themselves before their sovereign on the basis of various threats.They were ensured that their life and property would be secured within the state. The needs and desires of people changed with the passage of time and in a similar manner, the nature of state also changed. In the modern state, state is evaluated on the concept of good governance.The processes of liberation, globalization and privatization have challenged the working styles of governments. The governments have adopted various features of good governance to face the challenging environment.The charter of rights, directive principles of state policy, the theory of separation of powers, the rule of law etc. are advocating features for good governance in India but the nation also faces various big challenges in the way of good governance in the form of corruption, inequality, illiteracy, and gender inequalities etc.

Good Governance - Good Governance is an approach to government that is committed to create a system founded in justice and peace that protects individual's human rights and civil liberties. According to the United Nations, Good Governance is measured by the eight factors of Participation, Rule of Law, Transparency, Responsiveness, Consensus Oriented, Equity and Inclusiveness, Effectiveness and Efficiency, and Accountability.[1]The world leaders at the 2005 World Summit concluded that good governance is integral to economic growth, the eradication of poverty and hunger, and sustainable development. The views of all oppressed groups including women, youth and poor must be heardand considered by governing bodies. Thus good governance means such deeds that are engaged in the welfare process for all. It is considered a citizen- friendly, citizen-caring and responsive administration. Good governance is supposed to exist if three objectives are achieved. The first is there should be the quality of law and effective implementation of laws. Secondly, there should be an opportunity for every individual to realize his full human potential and thirdly, there should be effective productivity and no waste. The classical models of the administrative system extended by Weber and Taylor expanded various principles like rule orientation, division of work, specialization, rationality, neutrality, impersonality to ensure good governance.[2] According to Oxford Dictionary "It is the act or manner ofgoverning or the way of control. According to World Bank report "It defined good governance as a public service that is efficient, a judicial system that is reliable and an administration that is accountable to the public". Good governance is when people feel equally responsible for the countries progress. Good governance is achieved when all sections of the society irrespective of the caste, creed, race, colour, sex, religion and other differences getequal opportunities and access to the facilities available in the country especially education, health, drinking water, proper sanitation etc. Thus the main objective of good governance is 'human welfare and development'. Hence, good governance is not only an end in itself, but also always a means to achieve the welfare goal.

The World Bank has identified three distinct aspects of good governance."First, the form of political regime, second, the process by which authority is exercised in the management of a country's economic and social resources for development and third, the capacity of government to design, formulate and implement policies and discharge functions".[3]

Good Governance In India - A sound and effective political and administrative structure are important for the economic, social and sustainable development of a country.Since independence period the country is committed to achieve the basic features of good governance. But,people areyet to achieve the fruits of good governance. A big difference is found in good prosperity, high literacy, and developed infrastructure in different areas and people.A gap has increased in the different sections of society. So, good governance is prerequisite to support thehigherper capita income at all levels, widespread literacy, adequate health facilitiesand development of infrastructure, etc.

Challenges To Good Governance In India - The challenges in the way of good governance vary from country to country. Many countries have achieved the fruits of good governance and the developingcounties are in progress in puttingthe administrative,political and financial structures in order for maximizing the benefits of the people. The major challenges that India is facing in the way of good governance are:

* Researcher Scholar, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, MLB Govt. College Of Excellence, Gwalior (M.P.) INDIA

Corruption - Corruption is considered amajorobstacle in improving the quality of governance. The most discouraging fact ofIndian society and polity is the rising tide of corruption in almost all walks oflife.The source ofcorruption is mostly found where public officials have wide authority, with little accountability and lowincentives.[5]Misuses of power or authority is found in the nature of individual but mostly depends upon the environment. The environment includes the ways of controlling corruption in terms of tracing corrupt officials, process of cases and relatedpunishment.[4]The government of India has implemented many laws to eradicate corruption.But unfortunately, in spite of its best efforts the government has failed to eradicate corruption in India.

Criminalization Of Politics - Outlawing of politics has become a shocking reality in India.In recent times,there has been an extraordinarytumor of crime and violence in India andhas an adverse influence on public policy formulation and governance. The role of Caste and religion have been increasing in the elections process of variousparts of the country. In addition to it, threatening voters to vote for a particular candidate or physically preventing voters from going to polling booth especially weaker sections of society like Dalit's, tribal and rural women occurs frequently in several parts of the country. All these acts of lawlessness and violence have become possible because of the growing connection between many politicians and criminals.[5]

Coalition Government - A group of political partiesusually form the government in the country that does not give a proper ambient to good governance to flourish due to the multiple interests. The cost spent by these political parties on elections makes them self-interested in the formulation of policies. In this situation, the government is unable to offer good governance to people.

Poverty - A major obstacle in improving the quality of governance in Indiais the Poverty prevailing in the state. Although the economic growth of India Is increasingbut still, a large portion of population is living in poverty. These people are without basic facilities that make them vulnerable to various problems.India has the world's largest number of poor people living in a single country. India with 17.5% of the total world's population had 20.6% share of the world's poorest in 2011.[6]

Gender Inequality - Gender inequality has remained a hurdle in the way of overall development of country and reduced economic growth. It is the best threat to the development process of country where half of the population remains constricted to certain fields or jobs. The country has taken many provisions in the constitutions of Indian to remove any discrimination on the basis of colour, creed, sex and religion, etc. but the still the country is facing the challenge.This becomes a hurdle in the goal of good governance.

Terrorism - Various armed groups in the form of militants and naxal groups are posing a serious threat to the good governance in India. It has created an internal challenge to internal security. Presently the state facing the problem are Jammu and Kashmir,Odisha, Chhattisgarh, Jharkhand, Andhra Pradesh, West Bengal, Bihar, Telangana etc. in recent times, militants in Jammu and Kashmir were able to get the support of local educated youth and on the other side, naxals are also found withwell equippedmodern arms and ammunition.

Illiteracy - Illiteracy is also considered a bigsnagin the achievement of good governance. Literacy enables citizens to participate in elections and exercise their voting right effectively. Education makes an individual aware of their rights and duties and competent to make rational decisions. After seventy years of independence, it continues to a major challenge to good governance in India. Although the level of literacy has increased from 18.33 percent in 1951 to 74.04 percent in 2011, still one fourth of our population remained illiterate.[8]

Regionalism - Good governance has also been struggling with regionalism which is primarily an outcome of regional disparities and imbalances in development. Although development process in the country aims at growth and development of all regions, the regional disparities and imbalances in terms of differences in per capita income, literacy rate, state of health, educational infrastructure and service, population situation and levels of industrial and agricultural development continue to exist. Existence and continuation ofregional inequalities both among states and within states create a feeling of neglect, deprivation and discrimination. This situation has led to regionalism manifested in demands for new states, autonomy or more power to states or even secession from the country. Further continuous regional imbalances have given rise to economic blockades, river water disputes, even some times militant movement in certain parts of the country. Separatist demands in Jammu and Kashmir, Khalistan demand in Punjab or by ULFA in Assam or by different groups in the north-eastern regions are a matter of great concern for the good governance in India.

Conclusion - There are no easy solutions for good governance. But one perspective which clearly stands out is empowerment. When people are*given* the opportunity, an enabling environment for developing their own avenues of livelihoods and a role in the delivery of public services improvements in governance become spontaneous. It further means that there must be transparency, clear accountability and freedom of right to information. Still, we have to cover a long journey to reach the destination of good governance in India.

References :-

1. http://creativelearning.org/blog/2016/11/08/what-is-good-governance/, retrieved 1-2-2018.
2. Peter Blunt, "Cultural Relativism, Good Governance and Sustainable Human Development' - Public Admin-

istration and Development", Vol. 15, 1995, PP.5-7

3. D.Bandyopadhyay,Administration,Decentralisation and Good Governance Economic and Political Weekly, 1996, Vol. 31, No. 48 (Nov.).
4. M. Halayya, "Corruption in India". New Delhi, East-West Press Private Ltd. 1985.
5. Mohit Bhattacharya, "Conceptualizing Good Governance", Indian journal of Public Administration.
6. What is good. governance? -chronicle, September 2010.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Engagement of United Nations on the Kashmir Conflict

Mudasir Ahmad Bhat * Dr. Ravi Ranjan **

Abstract - Kashmir, along with the Israeli-Palestinian conflict and the war in the Korean Peninsula, was among the first crisis that the United Nations had to confront in the post-World War II period. Sixty years have passed by since Kashmir conflict was first debated in the U.N and yet the conflict continues to elude a solution. The U. N involvement in the Kashmir Conflict largely lasted for 17 years (1948-65). After the Indo-Pak war of 1965, the U.N engagement with Kashmir continued at a very nominal level till the 3rd Pakistan-India war of 1971 and completely ended with the signing of the Shimla Agreement in 1972, the U.N passed a number of resolutions, which were aimed at mediation and resolution of the conflict. Between 1948 and 1971, the U.N Security Council passed 23 resolutions on Kashmir Conflict. The U.N resolutions regarding the Kashmir issue are not self-enforceable. In other words, the resolutions are recommendatory in nature and can be enforced only if the parties to the dispute, viz. India and Pakistan.
Keywords - Uno, Conflict, Kashmir, Resolution, Security Council, Unhrc, Peace.

Introduction - The United Nations has played an important role in maintaining peace and order in Jammu and Kashmir soon after the independence of India and Pakistan in1947, when a dispute erupted between the two States on the question of Jammu and Kashmir. India took this matter to the UN Security Council, which passed resolution 39 (1948) and established the United Nations Commission for India and Pakistan (UNCIP) to investigate the issues and mediate between the two countries. Following the cease-fire of hostilities, it also established the United Nations Military Observer Group for India and Pakistan (UNMOGIP) to monitor the cease-fire line.The issue of Kashmir was first taken to the United Nations Security Council on January 1 1948 by India in which they lodged a complaint against Pakistan under Article 35 (Chapter VI) of the UN Charter, in which Pakistan was accused of aiding the tribal infiltration in the areas Kashmir but two weeks later Pakistan denied the charges and accused India of annexing Kashmir and destabilize Pakistan in its infancy.

Un Engagement Stages :

Mc Naughton Proposals - In December 1949 the Canadian President of the UNSC, General McNaughton, was requested by the council to approach the two states to solve the dispute. McNaughton issued both states on 22 December with his proposals and two days before his term as President of the Council was to expire he reported back to the UNSC, on 29 December. But the Council asked him to continue his mediation and he did so, submitting his final report on 3 February 1950.

His proposal enclosed a scheme whereby Pakistan and India would simultaneously withdraw their regular forces (excluding those Indian regular forces needed for security purposes), the Azad Kashmir forces and Kashmir State forces and militia would be demobilized and the administration of Northern Areas would remain with the local authorities, under UN supervision, while the region would also be included in the demilitarization process. Pakistan accepted his suggestions but India rejected them. The proposals treated India and Pakistan as equal partners in the dispute which was not acceptable to India which viewed only its own presence in Kashmir as legally acceptable. India was unhappy that Pakistan was treated as an equal party as in its view Pakistan was present illegally in Kashmir while India was present legally. The United States warned India that it would have no option but to comply with any decision that the Security Council may opt for because by rejecting the Mc Naughton proposals it would be the third successive time India spurned the conclusions of a neutral UN representative, upon which Nehru accused the US of pressurizing his government. India's rejections of the McNaugton proposals were viewed by American policymakers as an example of Indian "intransigence." Cold War historian Robert J. McMahon states that American officials had increasingly felt that India was using questionable legal technicalities to justify its dismissals of the various UNCIP truce proposals, and they believed that these actions were motivated by India's desire to avoid holding a plebiscite. McMahon adds that they were 'right' since the vote was most likely to go in Pakistan's favour due to Kashmir's predominantly Muslim population and delaying the referendum would work in India's favour. In private, some Indian officials confessed to American officials that they would prefer a partition of the State rather than a plebiscite. India later accepted the draft resolution on 14

*Research Scholar (Political Science And Public Administration) Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Associate Professor, Government Postgraduate College, Morena (M.P.) INDIA

March 1950. The Council then appointed Sir Owen Dixon as the next UN representative to the two countries, and he was tasked with administering McNaughton's demilitarization scheme for Jammu and Kashmir.

Dixon Mission - On the Pakistani side of the cease-fire line, Sir Owen Dixon proposed that the areas demilitarized by Pakistan would be governed by the local authorities under supervision by the Commission, according to the "law and custom" of the State before the conflict started. India.Dixon put before the Prime Ministers of the two countries some proposals such as establishing a coalition government between Sheikh Abdullah and Ghulam Abbas or distributing the portfolios between the various parties. Dixon's second suggestion was to establish a neutral government by respectable non-political people for a six-month period prior to a referendum, in which membership would be split between Hindus and Muslims equally, under United Nations supervision. Dixon's third suggestion was to install an administrative body made up completely of representatives from the UN. Nehru disagreed with all these suggestions. Sir Owen Dixon criticized India for its negative reactions to all the demilitarization proposals. Sir Owen Dixon took India to task in very strong language for its negative reactions to the various alternative proposals for demilitarization.

Frank Grahams's Mediation - When Dixon's successor, Dr. Frank Graham, arrived in the subcontinent during a time of tension, he tried to effect demilitarization prior to a plebiscite but India and Pakistan could not agree on the number of troops who were to remain in Kashmir. Dr. Frank Graham was appointed by the Security Council as the UN representative for India and Pakistan on 30 April 1951. Dr. Graham arrived in the subcontinent on 30 June 1951. The Graham mission had to reach an agreement between the two countries concerning the demilitarization of Kashmir. Similar to the experience of previous UN representatives, Graham had first proposed a demilitarization scheme which found acceptance from Pakistan but rejection from India. Thereafter, Graham gave an alternative proposal whereby both countries were to gradually reduce their forces to minimal levels and to the ratio of their presence in the state on 1 January 1949. This proposal was accepted by Pakistan but rejected by India.

The fist U.N debate on the issue of Kashmir started under the title of "Kashmir Question" - United Nations, European Union, OIC and other international institutions adopted a principled position when the Kashmir question first came before the UN Secretary General, voting in support of resolutions of 1948 and 1949, upholding the right of people of Kashmir to decide their future in a free and impartial plebiscite under UN auspices. Despite many resolutions and debates the issue of Kashmir still stands the oldest unsolved dispute in UN.

Between 1948 and 1971, the U.N Security Council passed 23 resolutions on Kashmir Conflict - The UN resolutions on this issue were not self-enforceable but infact they were of recommendatory in nature which had to be implemented by the concerned states which are India and Pakistan respectively but due to the change in stance of the Indian Government on the issue of Kashmir and refusing to give Kashmiris the right of referendum despite promising it in their white paper on Kashmir in 1948 lead to the dead lock and halted the implementation of these resolutions.

Table 1 (See in next page)

Causes Of Failure Of The United Nations In Resolving The Kashmir Issue - Although the United Nations Security Council tried the best in its capacity to solve the issue their attempts at solving the dispute returned no fruit. Despite the fact that Indian and Pakistani governments had accepted Kashmir to be a disputed territory at the United Nations but back at home some groups never considered Kashmir a disputed territory. On both ends Kashmir was being claimed to be a part of India or Pakistan which was being forcefully controlled by the opposition. Both the governments were under immense pressure from their people, so they could not make any bold decision out of the fear that the decision might cost them heavily. However, Pakistan, on some occasions showed flexibility in favor of referendum but due to the widespread feeling in India that Kashmir is its integral part; the Indian government always halted the progress by making different excuses to reject the U.N proposals.

Analysis Position:

1. As required by the UN Security Council, hold a plebiscite to ascertain the wishes of Kashmiris.
2. UN resolution regarding the Kashmir issue is not self –enforceable.
3. Sixty years have passed by since Kashmir Conflict in U.N and yet the conflict continues to elude solution.

Conclusion - Policy Alternatives On The Kashmir Isssue - There are quite a few International and National Policy alternatives on the Kashmir Issue. However, most of the Policy alternatives suggest either the thinking of the Indian Government, the stand of the Government of Pakistan or they stress on the bilateral resolution of the Kashmir Issue.

References :-

01. A.G. Noorani, *the Kashmir Question* (Bombay: Manaktalas, 1964).
02. Hilali, A.Z. (1997). "Kashmir dispute and UN mediation efforts: An historical perspective". *Small Wars & Insurgencies*. 8 (2): 76.
03. Joseph Korbel, *Danger in Kashmir,* Princeton University Press, Prinston,1954, pp.171-173.
04. Jyoti Bhusan Das Gupta (6 December 2012). *Jammu and Kashmir*. Springer. p. 159.
05. Jyoti Bhusan Das Gupta (6 December 2012). *Jammu and Kashmir*. Springer. pp. 160.
06. MR Biju, *India's Foreign Policy towardsa New Millennium*, NationalPublisher, New Delhi,2000, p.80,81.
07. Noorani, A. G. (2014) [first published in 2013 by Tulika Books], *The Kashmir Dispute, 1947-2012*, Oxford University Press, ISBN 978-0-19-940018-8
08. Jyoti Bhusan Das Gupta (6 December 2012). *Jammu and Kashmir*. Springer. pp. 153–155. ISBN 978-94-011-9231-6.
09. Robert J. McMahon (1 June 2010). *The Cold War on*

the Periphery: The United States, India, and Pakistan. Columbia University Press. pp. 34–. ISBN 978-0-231-51467-5.
10. Schofield, Kashmir in Conflict 2003, p. 83-86.
11. Shamshad Shan 'USA and Kashmir-*International response on Kashmir issue'* pp.35.
12. Singh, Mahendra, Indo-US relations, 1982, p.32.
13. https://www.un.org/en/peacekeeping/missions/unmogip/background.shtml
14. Victoria Schofield (30 May 2010). *Kashmir in Conflict: India, Pakistan and the Unending War*. I.B.Tauris. pp. 101–. ISBN 978-0-85773-078-7.
15. Wellens, Karel (1990), *Resolutions and Statements of the United Nations Security Council: (1946 - 1989) ; a Thematic Guide*, BRILL, pp. 322.

Table 1 Shows United Nations Resolution On Kashmir

Resolution	Text And Actions Taken	Outcome
No.38:(1948);2229th Meeting; 17th January 1948.DocNoS-651	Calls upon India and Pakistan to stop aggravation of conflict	Full Compliance
No 39(29th January 1948)20 30th session	3-member UNCIP Selected to investigate	UNCIP Tried to prepare for plebiscite in both pats of Kashmir, Military observers deployed along borders
No 47:21 April 1948,286th session. Doc.s-726 by Belgium,Canada, china,Colombia ,USA & UK Jointly	Satisfaction both India and Pakistan desire the impartial plebiscite. UNCIP Increased to 5 members	Conditions that India will keep some army during
NO.51;3rd June 1948.312th session. Doc.S-819Submitted by syria	Reaffirms resolutions NO,s 38 &47. instructs UNCIP to continue negotiations	India refused the appointment of a plebiscite administrator
UNCIP resolution(5th Jan,1949) Doc.S-1196	Chester.w.Nimitiz appointment as a the plebiscite adminstrator.proposed by the USA.	India refused and pleaded that pakisatan must treated as an invader and not at pair
President AGL, McNaughton: 457th meeting of the sc on 22nd Dec.1949.	Preserve agreements, demilitarize . and conduct plebiscite	Proposal refused by India
NO.80(14th March 1950)proposed by cuba ,Norway,UK,USA, DOC.S-1469	Calls upon India and Pakistan to execute demilitarization within 5 mo -nths inAccordance with Mc Naughton	Karachi agreement 27th July 1949;war stopped after one year's Negotiation.NO Agreement reached on demilitarization
NO 91:30Th March 1951,submitted by UK & USA.Doc Nos-2017-Rev.	Decides to appoint successor to sir owenDixon.calls for arbitration.	India refuses a mediatiators role in the dispute.
NO96: (10 NOV.1951) Doc.S.2392.	Dr.frank Graham's report. Proposal for demilitarization & plebiscite.	stalemate
No 98:(23rd Dec.1952)adopted in the 611th meeting:Doc.S-2883.	Recalling resolution 91& UNCIP Res. of 5th Jan 1949 which was accepted by India and Pakistan.	Pakistan did not parcipatein the voting stalement continued.
No 122(24 Jan 1957)Adopted at the 765th Meeting.	Reaffirms any action taken by Kashmir assembly to align with India would not constitute of the state.	USSR obtained .UN decides to continue its deliberations of the dispute.
No.123 ;(21st feb.1957)adopted at the 774th session.	Requests the president (from Sweden)to visit the sub-continent	USSR abstaining.
NO 126(DEC.1957)808th meeting.	Mr. Gunner Jarring reports on his return from the sub-continent that both recognize and accept Res.38 for a plebiscite	No Further action .stalemate.
Res.18th May 1964(1117th meeting) (French)president concludes.	Debated juridical status of Kashmir and principles of charter applicable	Kashmir Question remains on the Agenda.
No.1172(6th June 1968)adopted at the 3890th meeting	Reaffirming statement of its present of 14th May 1998,S-PRST-98-12&of 29th MAY S-PRST-17 After the nuclear test by both India and Pakistan. Article 4 urges the parties to show restraint. UN recognized that the core of the conflict was the un decided Kashmir Dispute(Art.5)	Urges dialogue between the 2 countries.the article welcome the efforts of the secretary General and Art.15 requests him to report steps taken by India and Pakistan to implement the present resolution.

Source.www.un.org

A Study on Women Entrepreneureship in Ujjain District

Asmita Jain* Dr. Rakesh Dhand**

Abstract - Entrepreneurship can create new economic opportunities for women and contribute to overall growth and exit from poverty. The potential flexibility in time use from entrepreneurship can also facilitate balancing work and family obligations for women. However, entrepreneurs, both male and female, are relatively scarce in India compared to peer countries, and tend to work in small units often outside the formal sector. While many of the barriers to entrepreneurship are common to both genders (access to capital and business networks, adequate training and facilities) female entrepreneurs face gender biases stemming from socio-economic factors or specific biases in laws such as inheritance laws.

Since the turn of the century, the status of women in India has been changing due to growing industrialization, globalization, and social legislation. With the spread of education and awareness, women have shifted from kitchen to higher level of professional activities. Entrepreneurship has been a male-dominated phenomenon from the very early age, but time has changed the situation and brought women as today's most memorable and inspirational entrepreneurs. In almost all the developed countries in the world women and putting their steps at par with the men in field of business. The role of Women entrepreneur in economic development is inevitable. Now-a-days women enter not only in selected professions but also in professions like trade, industry and engineering. Women are also willing to take up business and contribute to the Nation's growth. Their role is also being recognized and steps are being taken to promote women entrepreneurship.

This paper is an attempt to study the status of women entrepreneurs in Ujjain districts agro based and cottage industries. This paper examines the nature and determinants of women entrepreneurship in India based on survey dataIt also reviews existing policies bearing on female entrepreneurship and makes recommendations for further policies in this area.

Introduction - In ancient India women occupied a dignified place. They participated in businesses as circumstances and situations demanded and there were hardly any prescribed positions exclusively earmarked for men. Women continued enjoying the same position more or less until foreign invasions took place. A slow and steady decline in the position of women had begun. With coming of invaders this process accelerated and decline was marked. Now time is again change, Economic transformations appear to be taking place everywhere—as countries convert from command to demand economies, dictatorships move toward democratic system. These changes have created economic opportunities for women who want to start and run enterprise. Although traditions are deep rooted in Indian society where the sociological set up has been a male dominated one Women entrepreneurs face many problems such as lack of finance and marketing, low level of education, lack of family support etc. Despite all the social hurdles, Indian women stand tall from the rest of the crowd and are applauded for their achievements in their respective field.

In present scenario, India is the developing country & in the year 2020 India shall become the developed country. Women prove that they are the best entrepreneur, leader, mentor, guide, teacher & motivator. Women are known for their multitasking ability. They have lot of responsibilities to fulfill such house hold duties and office duties and as a mother it has many more important responsibilities. In spite of all this choice of job will show miracle in market. Starting business at home is great opportunity for any women to start journey towards corporate world. Technology have given chance to start and manage their business and pursue their dreams. They cover every areas of business such as large & short capital, banking & insurance, agricultural, manufacturing, construction, real estate, communication, transport, sports, hotels, institutions & whole sale market. This helps them to juggle the tasks, manage all the chores and strike a fine balance between professional and personal life. They have got a good foresight, patience, negotiating and budgeting skills.

Emotional intelligence - Women are more emotionally intelligent than men and possess good interpersonal skills

*Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
** HOD (Commerce) Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

which are vital for framing strategies and building support.

Multitask orientation - Women have ability of handling many tasks at the same time. They balance their families and career simultaneously effectively.

Self-Branding Attitude - Women are extremely passionate by nature and enthusiastic about their choices, talking about them and sharing their thoughts.

Patience - Women are very patient by nature and have great vision. Vision helps in giving up on their dreams after only some months as a consequence of becoming impatient with process only proves that the vision is not enough.

Motivation - Women have great passion for the work and a commitment to society. If they have to peruse entrepreneurship, it means they are not afraid taking ant risks and will also make monetary gains.

Confidence - Women have great confidence to compete business market. They can do their work with full confidence, enthusiasm and cheerfulness.

Finance - Women get funding like family loans, saving, credit card and can obtain capital from government startup programs and it is less difficult for them to obtain startup capital.

This paper examines the nature and determinants of women entrepreneurship in India based on survey data. The first part assesses basic characteristics of women entrepreneurship in India, while the subsequent sections analyze key determinants of women entrepreneurship based on the literature, and test their importance at the state level in India with the support of regressions on panel-data. It also reviews existing policies bearing on female entrepreneurship and makes recommendations for further policies in this area

Ujjain is a religious and historical place. It is also known for soya, chana (gram), wheat carafe etc. The industrial development is at low level now in this days, the previous scenario of cotton textile industries has been dropped now. There are some new small and tiny sector units are grown up in the field of agriculture, printing textile, dal mills, flour mills, dairy farming, handicrafts etc. new generations of women are interested to be an entrepreneurs. It is a good sign for development. Generally the women entrepreneurs of Ujjain district are engaged in parlors, boutiques, papad making, printing textile, flour mills, handicrafts items, swahashahaytasamuhaprogrammes etc. Although the development of women entrepreneurships at a slow rate but it is showing a good scope for coming generations. There are various government policies which are providing loan and other facilities to attract the women to be entrepreneurs. This study is chosen to analysis the various government policies for women entrepreneurship which are compliance in the district and their impact for the women entrepreneurship development.

Review of Literature - A brief review of the important work done so far on women entrepreneurship development has been given below:

1. Tamil Selvi T. (2014), confined the area of study was Coimbatore district divided into rural & urban areas. 300 women entrepreneurs (150 from rural & 150 from urban areas) are selected for the factors influencing investment behavior of women entrepreneurs, their attitude & problems faced by them while investing their money.
2. By Subhash Chander (2013), the study examines the financial problems faced by women entrepreneurs in Haryana during the startup stage & running up of their enterprises. The data is mainly collected from primary and secondary source. The study survey on 189 enterprises from urban & rural areas of three divisions; Ambala, Rohtak& Gurgaon of Haryana State was conducted.
3. Dave, Vina D (2015), the study has been conducted to know the role & performance of Women entrepreneurs with special reference to city of Ahmedabad in the state of Gujarat. Data used in the study collected from Gujarat chamber of Commerce & Industry Business Women Committee

Objectives :

1. To study the role and involvement of government agencies and financial institutions in developing women entrepreneurship.
2. To explore the problems faced by women entrepreneurs while developing their enterprises.
3. To highlight the factors influencing Women Entrepreneurs.
4. To make an evaluation of women's opinion about women entrepreneurship.

Methedology:- Collection of Data - The data for the study were collected both from primary and secondary sources. Primary data was collected from JilaVyaparEvamUdhyog Kendra, Ujjain (M.P.). Secondary data was collected from books, reports and journal. Data Analysis is done by Tabular method and Data interpretation.

Hypothesis :

1. Ujjain is agriculture and textile based district, therefore agro based textile women entrepreneurs is taking place.
2. The role and involvement of government agencies and financial institutions shows a positive response on women entrepreneurship development.

Women Entrepreneures in India :-

Fact sheet: Women entrepreneurs in India- There are over eight million women entrepreneurs in India, with Tamil Nadu having the highest share. The sixth economic census, released by ministry of statistics and programme implementation, presents a worrisome picture of the status of women entrepreneurs in the country.

1. The survey shows that women constitute only 13.76% of the total entrepreneurs, i.e., 8.05 million out of the 58.5 million entrepreneurs.These establishments in total, owned by females, provide employment to 13.45 million people.
2. Another revelation is that out of these entrepreneurs,

2.76 million women (34.3% of the total entrepreneurs) work in agriculture sector whereas 5.29 million females (65.7% of the total entrepreneurs) work in non-agricultural sectors.

3. In the agriculture, livestock dominates (with a share of 31.6 %) among all other farming activities.Among the non-agricultural activities owned by women entrepreneurs, manufacturing and retail trade are dominant ones with corresponding percentages being 29.8% and 17.8% respectively.
4. Among the states, the largest share in number of establishments under women entrepreneurship is of Tamil Nadu (13.51%) followed by Kerala (11.35%), Andhra Pradesh (10.56%), West Bengal (10.33%) and Maharashtra (8.25%).

Women Entrepreneures in Ujjain:-

TABLE -1 (see in next page)

Data Analysis:-

1. Average employment per establishment for women owned establishments is 1.67.
2. DIC aimed at starting 150 unitsof women enterprises both in manufacturing and service sector between 2012-14 but they could established enterprises were 56 units. In case of Manufacturing sector it was 49
3. In case of service sector established enterprises were 146.
4. Total output was 48.88 units under manufacturing whereas 360 units in case of service sector.

Findings - From last few decades industrial development in Ujjain district is at very slow rate, few new units was established. But last few years women come out from their homes for developing their own enterprises. Women entrepreneurs engaged in business due to push and pull factors which encourage women to have an independent occupation and stands on their own feet. They faced various problems such as lack of skill and knowledge, poor socio-economic status of women, lack of funds to establish their enterprise etc. It was found that women entrepreneurs of Ujjain district are generally engaged in SSI units such as flour mills (Aatachaki's), beauty parlors, boutiques, printing (especially in bherughar printings) etc. It also seen that SSI units are registered by the name of women entrepreneurs are actually managed by their male family members. Apart from these, the subsidiaries and loans from government agencies and financial institutions attract both urban and rural women to be women entrepreneurs.

Governmental Policies and Schemes for Women Entrepreneursin India- The Government of India has run various policies and schemes for the upliftment of women entrepreneurs in India. Some of these are:

1. Integrated Rural Development Programme (IRDP)
2. Khadi And Village Industries Commission (KVIC)
3. Training of Rural Youth for Self-Employment (TRYSEM)
4. Prime Minister„sRojgarYojana (PMRY)
5. Entrepreneurial Development Programme (EDPs)
6. Management Development Progammes
7. Trade Related Entrepreneurship Assistance and Development (TREAD)
8. Indira Mahila Kendra; Mahila Samiti Yojana; Mahila Vikas Nidhi
9. Micro Credit Scheme; Rashtriya Mahila Kosh
10. SIDBIs Mahila Udyam Nidhi ;SBIs Stree Shakti Scheme
11. Micro & Small Enterprises Cluster Development Programmes (MSE-CDP).
12. National Banks for Agriculture and Rural Developments Schemes
13. Rajiv Gandhi MahilaVikasPariyojana (RGMVP)
14. Priyadarshini Project- A programme for Rural Women Empowerment and
15. Livelihood in Mid Genetic Plains.
16. Exhibitions for women, under promotional package for Micro & Small Enterprises approved by CCEA under marketing support.

Apart from these polices and schemes, the Micro, Small & Medium Enterprises development organizations, various State Small Industries Development Corporations, the Nationalized banks and other financial institutions are also conducting various programmes for the development of women entrepreneurs.

Problems Faced By Women Entrepreneures:-

Some of the problems faced by women entrepreneurs are as follows:

1. Problem of Finance:
2. Scarcity of Raw Material:
3. Stiff Competition:
4. Limited Mobility:
5. Family Ties:
6. Lack of Education:
7. Male-Dominated Society:
8. Low Risk-Bearing Ability:

In addition to above problems, inadequate infrastructural facilities, shortage of power, high cost of production, social attitude, low need for achievement and socio- economic constraints also hold the women back from entering into business

Suggestions - Here are some suggestive measures, to solve the problems confronted by them and for running their enterprise smoothly:

1. Awareness programs for women entrepreneurial skills.
2. Proper technical education to the women and opening of women development cells.
3. Improvement of identification mechanism of new enterprise.
4. Assistance in project formulation and follow up of training programmes.
5. Credit facilities, financial incentive and subsidies.
6. Adequate follow-up and support to the women enterprises.
7. Women Enterprises research and application from time to time have to be documented

Conclusion - The most powerful women in business in

2016:- Chitra Ramkrishna, MD & CEO, National Stock Exchange ;She always believe that our women are unique in many ways as they come with stronger social values, ethos, diversity, resilience, etc. Beyond corporates, our own lawmakers - both at Central and several state governments - are also addressing legislative issues related to women, child care, employment conditions, etc.The government agencies and financial institutions play vital role in development of women entrepreneurship. Various new women entrepreneurs are established in Ujjain district with the support of these loans and subsidiaries. In this paper, with the help of secondary data it can be concluded that women show their power in both internal & external environment. The research reveals that they are able to enrich their role & position by their Knowledge, skills, potentialities, Presentation & education. By increase the involvement of women in business they can help her & balance their life financially & socially stress free. Findings also show that women entrepreneurs of Ujjain district are more in agro based and in cottage and textile industries. They got recognition in the society & also economic interdependence in the family. The role of Women entrepreneur in economic development is also being recognized and steps are being taken to promote women entrepreneurship.

References:-

1. Rani D. L. (1996), Women Entrepreneurs, New Delhi, APH Publishing House.
2. Baporikar, N (2007) Entrepreneurship Development & Project Management; Himalaya Publication House.
1. http://www.mospi.gov.in/sites/default/files/economic
4. census/sixth economic census/intro_EC_2012_13.
5. http://www.dcmsme.gov.in
6. http://www.dic.gov.in

TABLE.1 Distribution of firms in Ujjain by status for the years 2012-2013 and 2013-2014 under Manufacturing & Services:-
Target :- 150 women entrepreneurs

	Manufacturing			Services		
Years	**No. of Women Entrepreneurs**	**Capital Investment (In Lacs)**	**Total Output/ Employment**	**No. of Women Entrepreneurs**	**Capital Investment (In Lacs)**	**Total Output/ Employment**
2012-13	**21**	**8.99**	**36.00**	**90**	**163.50**	**284**
2013-14	**28**	**12.66**	**12.66**	**56**	**11.03**	**76**

Source : Jila Vyapar Evam Udhyog Kendra, Ujjain (M.P.)

****

Decomposition Analysis of Horticulture Sector in the State of Jammu and Kashmir

Rather Tajamul Islam* Mudasir Amin**

Abstract - The Northern most state of India, Jammu and Kashmir has different topographical and environmental conditions, possesses comparative advantage in the production of various horticultural products. The state offers good scope for cultivation of horticultural crops; covering a variety of temperate fruits and sub tropical fruits. An attempt has been made in this study to analyse the growth of major horticulture crops in the state over the past two decades i.e. between 1998-99 and 2017-18 and decomposition analysis has been carried out. It is found from the study that during the study period of 20 years, the area under aggregate horticulture recorded growth of 156.15 percent, while as the production and productivity of aggregate horticulture recorded a remarkable growth of 250.15 percent and 160.35 percent respectively. The decomposition analysis shows that the growth in production of aggregate horticulture, area effect accounts for 40.13 percent, yield effect accounts for 37.34 percent and interaction effect is accounts for 22.53 percent. In case of apple, the growth in production is mainly due to yield effect accounting for 70.61 percent and growth in production of walnuts is mainly due effect accounts for 54.91 percent. Almond is the only horticulture crop for which yield and interaction effect was negative, indicating the production increase was solely due to area effect accounting for 777.44 percent.
Keywords - Area, Decomposition Analysis, Growth, Horticulture, Production and Productivity.

Introduction - The Northern most state of India, Jammu and Kashmir state is predominantly an agrarian economy. The agriculture sector is gradually diversifying in favor of high-value commodities especially fruits, vegetables, livestock and fish products. The determinants for high-value commodities are markets, roads and technology absorption (Joshi, et al. (2004)[1]. The state of Jammu and Kashmir has different topographical and environmental conditions, possesses comparative advantage in the production of various horticultural products. The state enjoys monopoly in the production of saffron, black zeera and some fresh fruits and dry fruits (Delicious Apple, Almonds, etc) (Lone and Sen, 2014)[2]. In Kashmir valley, apple is the most commonly planted and commercially the most important fruit crop among all the fruits grown. Apple cultivation is profitable economic activity in the Kashmir valley as compared to other agriculture food crops (Malik, et al., 2014)[3]. The state offers good scope for cultivation of horticultural crops; covering a variety of temperate fruits like apple, cherry, pear, peach, plum, apricot, almond, cherry and sub tropical fruits like mango, guava, citrus litchi, phalsa and berete. Besides; mushroom, plantation crops, medicinal and aromatic plants, floriculture and vegetables are cultivated in the state (Bhat and Bhat, 2014)[4].

The area and production of horticulture crops in the state of Jammu and Kashmir have been increasing and the trend is projected to amplify the demand for fruits in future as evidenced by the high income elasticity of demand (Ahangar and Govindasamy, 2013)[5]. The state of Jammu and Kashmir has witnessed voluminous increase in area and production of horticulture crops over the last few decades. Over the past 20 years the area under aggregate horticulture recorded growth of 156.15 percent, while as the production and productivity of aggregate horticulture recorded a remarkable growth of 250.15 percent and 160.35 percent respectively (Govt. of J&K)[6].

The growth in area, production and yield of major horticulture crops revealed the general pattern of growth and direction of changes in yield and area. But this analysis does not evaluate the contribution of area and yield towards the growth in production. So, it becomes compulsory to examine the sources of output growth. Therefore, to measure the relative contribution of area and yield towards the total output change with respect of individual horticulture crops and aggregate horticulture, decomposition analysis as suggested by minhas and vaidyanathan (1965)[7] has been used. In the literature, several researchers have used this model to study growth performance of the crops {Dharke and Sharma (2010)[8], Rehman, et al. (2011)[9], Rather, (2014)[10], Devi, et al. (2017)[11], Kumar and Shekhar (2017)[12]}.

Objectives Of The Study :

*Research Scholar, Department of Post Graduate Studies and Research in Economics, Rani Durgavati Vishwavidylaya, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Reasearch Scholar, M.P. Institute of Social Science Research, Ujjain (M.P.) INDIA

(i) To study the growth in area, production and yield of major horticulture crops in Jammu and Kashmir

(ii) To carry out the decomposition analysis of major horticulture crops in the state of Jammu and Kashmir.

Research Methodology - Keeping in view the status of the research work, the data has been collected from the secondary sources. The secondary source of data have been collected from various official sources like Horticulture Statistics Division, Economic Survey of Jammu & Kashmir , Economic Review of Jammu and Kashmir, Department of Horticulture Jammu & Kashmir and Digest of Statistics Jammu and Kashmir. Further various published research papers, books, periodicals, reports, magazines, newspapers, and websites have also been used for the study. The present study covers a time period of 20 years i.e. 1998-99 to 2017-18

Statistical Analysis - The statistical techniques used in this study are Growth Rate and Decomposition Analysis.

(a) Growth Rate $= \frac{Y_t - Y_{t-1}}{Y_{t-1}} \times 100$

Where, Y_t = Value of current year

Y_{t-1} = Value of base year

(b) Decomposition Analysis - Decomposition analysis as suggested by Minhas and Vaidyanthan (1965)[13] is used to examine the sources of output growth of horticulture sector in Jammu and Kashmir. In the decomposition analysis, the change in production is taken as the effect of three factors such as yield effect, area effect and interaction effect as follows.

$$\Delta P = AB \times \Delta Y + YB \times \Delta A + \Delta A \times \Delta Y$$

Change in production = Yield effect + Area effect + Interaction effect

Where, $\Delta P = PC - PB$

$\Delta Y = YC - YB$

$\Delta A = AC - AB$

AB, PB and YB are the area, production and yield of horticulture crops for the base year. AC, PC and YC are the area, production and yield of horticulture crops for the current year.

Results and Discussion

Table 1.1: Growth of Major Horticulture Crops in Jammu and Kashmir during the Year 2017-18 over the Year 1998-99

Growth	Apple	Pear	Walnut	Almond	Other	Total
Area	197.29	163.05	146.67	30.29	143.48	156.15
Produ -ction	237.85	338.20	338.57	150.47	267.32	250.15
Produ -ctivity	120.53	207.26	231.65	500.00	186.62	160.35

Source: Computed by Author from the Data Derived from Department of Horticulture, Jammu and Kashmir-Srinagar

The growth of various major horticulture crops in the state of Jammu and Kashmir in terms of area, production and productivity during the year 2017 -18 over the year 1998-99 is presented in table 1.1. It is obvious from the table that, over the past 20 years the area under aggregate horticulture recorded growth of 156.15 percent, while as the production and productivity of aggregate horticulture recorded a remarkable growth of 250.15 percent and 160.35 percent respectively.

Among the various horticulture crops the highest growth in terms of area in the year 2017-18 over 1998-99 was recorded by apple (197.29 percent) followed by Pear (163.05 percent), walnut (146.67 percent) and almond (30.29 percent). In terms of production the highest growth was displayed by walnut (338.57 percent) followed by pear (338.20 percent), apple (237.85 percent) and almond (150.47 percent). In terms of productivity the highest growth was recorded by almond (500.00 percent) followed by walnut (231.65 percent), pear (207.26 percent) and apple (120.53 percent).

Decomposition Analysis - To estimate the percentage contribution of area, yield and the interaction of area and yield in increasing production of major horticulture crops in the state of Jammu and Kashmir, a decomposition analysis was carried out and presented in table 1.2 for a time period of 20 years (1998-99 to 2017-18).

Table 1.2 (see in next page)

The decomposition analysis presented in table 1.2 clearly shows that the growth in production of aggregate horticulture, all the three effects are positive. The table further reveals that the area and yield effects have more or less equal contribution to total change in output growth, area effect accounting for 40.13 percent, yield effect accounting for 37.34 percent and interaction effect is accounting for 22.53 percent.

It is obvious from the table that in case of apple, all the three effects are positive, but the growth in production is mainly due to yield effect accounting for 70.61 percent, area and interaction effects have same contribution to total change in output growth of apples accounting for 14.90 percent and 14.49 percent respectively.

Furthermore, it is clear from the table that the growth in production of walnuts is mainly due to increase in area and area effect accounts for 54.91 percent where as yield and interaction effects accounts for 19.46 percent and 25.61 percent respectively. Almond is the only horticulture crop for which yield and interaction effect was negative, indicating the production increase was solely due to area effect accounting for 777.44 percent. In case of other fruits, area effect accounts for 51.63 percent whereas yield and interaction effects accounts for 25.92 and 22.45 percent.

Conclusion - The state of Jammu and Kashmir has witnessed voluminous increase in area and production of horticulture crops over the last few decades. Over the past 20 years the area under aggregate horticulture recorded growth of 156.15 percent, while as the production and productivity of aggregate horticulture recorded a remarkable growth of 250.15 percent and 160.35 percent respectively. Among the various horticulture crops the highest growth in terms of area was recorded by apple (197.29 percent)

followed by Pear (163.05 percent), in terms of production the highest growth was displayed by walnut (338.57 percent) followed by pear (338.20 percent) and in terms of productivity the highest growth was recorded by almond (500.00 percent) followed by walnut (231.65 percent), pear (207.26 percent) and apple (120.53 percent).

The decomposition analysis shows that the growth in production of aggregate horticulture, area effect accounts for 40.13 percent, yield effect accounts for 37.34 percent and interaction effect is accounts for 22.53 percent. In case of apple, the growth in production is mainly due to yield effect accounting for 70.61 percent and growth in production of walnuts is mainly due effect accounts for 54.91 percent. Almond is the only horticulture crop for which yield and interaction effect was negative, indicating the production increase was solely due to area effect accounting for 777.44 percent.

References :-

1. Joshi, P. K., Gulati, A., Birthal, P. S., and Tewari, L. (2004). Agricultural Diversification in South Asia: Pattern, Determinants and Policy Implications. Markets and Structural Studies Division, *International Food Policy Research Institute*, Washington, D.C., U.S.A., 57, 1.
2. Lone, R. A., and Vinod, S. (2014), Horticulture Sector in Jammu and Kashmir Economy. *European Academic Research*, II (2), 2405-2432.
3. Malik, Z. A., and Choure, T. (2014). Economics of Apple Cultivation, with Special Reference to South Kashmir - India. *Journal of Economics and Sustainable Development*, 5 (9), 125-130.
4. Bhat, A. and Bhat, G. M. (2014). Women Participation in Apple Cultivation in Rural Kashmir- A Study. *International Journal of Research and Development - A Management Review*, 3 (3), 20-24.
5. Ahangar, G., and Govindasamy. (2013). Production and Export Performance of Fresh and Dry Fruits in Jammu and Kashmir. *International Journal of Research in Commerce, Economics & Management*, 3 (9), 137-140.
6. Government of Jammu and Kashmir. (2018). *Digest of Statistics (2017-18).* Directorate of Economics and Statistics, 211.
7. Minhas, B. S., and Vaidyanathan, A. (1965). Growth of Crop Output in India: 1951-54 to 1958-61: An Analysis by Component Elements. *Journal of the Indian Society of Agricultural Statistics*, 17 (2).
8. Dhakre, D. S. and Sharma, A. (2010). Growth Analysis of Area, Production and Productivity of Maize in Nagaland. *Agriculture Science Digest*, 30 (2), 142- 144.
9. Rehman, F., Saeed, I., and Abdul, S., (2011). Estimating Growth Rates and Decomposition Analysis of Agriculture Production in Pakistan: Pre and Post Sap Analysis, *Sarhad Journal. Agriculture*, 27 (1), 125-31.
10. Rather, S. (2014). Production and Productivity Trends of Paddy Cultivation in Jammu & Kashmir, *Paripex - Indian Journal of Research*, 3 (6), 42 - 44.
11. Devi, L. Y., Arivelarasan T., and Kapngaihlian, J. (2017). Pulses Production in India: Trend and Decomposition Analysis. *Economic Affairs*, 62 (3), 435-438.
12. Kumar, P., and Shekhar, H. (2017). Estimation of Growth Rates and Decomposition Analysis of Rice and Wheat Production in India. *International Journal of Multidisciplinary Research and Development*, 4 (6), 127-130.
13. Minhas, B. S., and Vaidyanathan, A. (1965). Op. Cit.

Table 1.2: Decomposition Analysis of Growth in Production of Major Horticulture Crops in Jammu and Kashmir (1998-99 to 2017-18)

Crops	Aspects	Differential Production (ΔP)	Area Effect (ΔA)	YieldEffect (ΔY)	Interaction Effect (ΔAΔY)
Apple	Actual	1090814	162505.2	770212.5	158096.25
	Percentage	100	14.90	70.61	14.49
Pear	Actual	62982.24	28392	16689.24	17901
	Percentage	100	45.08	26.50	28.42
Walnut	Actual	194556	106833.6	37867.77	49854.69
	Percentage	100	54.91	19.46	25.62
Almond	Actual	4461.54	34685.84	-6044.86	-24179.44
	Percentage	100	777.44	-135.49	-541.95
Others	Actual	105828.7	54643.98	27427.3	23757.45
	Percentage	100	51.63	25.92	22.45
Total	Actual	1459215	585614.7	544800	328800
	Percentage	100	40.13	37.34	22.53

Source: Computed by Author from the Data Derived from Department of Horticulture, Jammu and Kashmir-Srinagar

****

Variability in Horticulture Sector of Jammu and Kashmir - India : A Study of Two Decades

Rather Tajamul Islam*

Abstract - The state of Jammu and Kashmir is well known for its horticultural produce both in India and abroad. The state offers good scope for cultivation of horticultural crops; covering a variety of temperate fruits and sub tropical fruits. Horticulture is an old profitable activity in the state of Jammu and Kashmir and traces back to 1000 B. C. In this study an attempt has been to find out the growth variability and percentage share of major horticulture crops to aggregate horticulture area and production. The study covers a time period of 20 years i.e. between 1998-99 and 2017-18. It has been found from the study that the area under aggregate horticulture recorded growth of 156.15 percent with compound annual growth rate of 2.39 percent while as the production of aggregate horticulture recorded a remarkable growth of 250.15 percent with compound annual growth rate of 4.98 percent. Apple and walnut represent an important section of aggregate horticulture in the state of Jammu and Kashmir. Apples and walnut account for nearly about 71 percent of aggregate area but they account for nearly 90 percent of the aggregate horticulture production.
Key Words - Area, Horticulture, Percentage Share, Production, Productivity and Variability.

Introduction - Agriculture occupies an important place in the economy of the state. During the last few years diversification from agriculture towards high value commercial horticulture commodities i.e. fruits, vegetables, livestock products and some world famous spices like saffron is taking place more rapidly in almost all the districts of the state. Jammu and Kashmir have different topographical and environmental conditions, possesses comparative advantage in the production of various horticultural products (Lone, 2014)[1]. The state offers good scope for cultivation of horticultural crops; covering a variety of temperate fruits and sub tropical fruits. Besides; mushroom, plantation crops, medicinal and aromatic plants, floriculture and vegetables are cultivated in the state. (Bhat and Bhat, 2014)[2].

Among the various tropical and subtropical fruits, Jammu and Kashmir is the major producer of apple and walnuts in India. As the dominant crops of the valley *"Apple and Walnut"* proudly represents the fruit industry of state. About 70 percent of apple and 90 percent of walnut production in India comes from the state of Jammu and Kashmir and percentage share of state in India's total production as well as productivity is showing an increasing trend and the state is known as "apple state of India" and has been declared as the "Agri. export zone for apples and walnuts" (Darzi, 2016)[3].

The state government has made tremendous efforts for the growth of horticulture sector in Jammu and Kashmir. The government provides the required inputs viz. chemical fertilizers and pesticides at subsidy rates to the horticulture cultivators have made it possible to increase the production and productivity of horticulture products in the J&K state (Sheikh and Tripathi, 2013)[4]. The state of Jammu and Kashmir has witnessed voluminous increase in area and production of horticulture crops over the last few decades. Over the past two decades, the area under aggregate horticulture recorded growth of 156.15 percent with CAGR of 2.39 percent while as the production of aggregate horticulture recorded a remarkable growth of 250.15 percent with CAGR of 4.98 percent (Govt. of &K)[5].

Objectives Of Study :

1. To study the growth rate in area, production and yield of major horticulture crops in Jammu and Kashmir
2. To find out the percentage share of major horticulture crops to aggregate horticulture area and production.
3. To find out the variability in area, production and yield of major horticulture crops in Jammu and Kashmir.

Research Methodology - Keeping in view the status of the research work, the data has been collected from the secondary sources. The secondary source of data have been collected from various official sources like Horticulture Statistics Division, Economic Survey of Jammu & Kashmir, Department of Horticulture Jammu & Kashmir and Digest of Statistics Jammu and Kashmir. Further various published research papers, books, periodicals, reports, magazines, newspapers, and websites have also been used for the study. The present study covers a time period of 20 years i.e. 1998-99 to 2017-18

Statistical Analysis - The statistical techniques used in this study are Average, Standard Deviation, Co-efficient of

***Research Scholar, Department of Post Graduate Studies and Research in Economics, Rani Durgavati Vishwavidylaya, Jabalpur (M.P.) INDIA**

Variation, Growth Rate, Compound Annual Growth Rate and Decomposition Analysis.

1. **Average** = $\frac{1}{n} \times \sum_{i=0}^{n} x_i$

Where, A = average n = the number of terms

X_i = value of each individual item in the list of numbers being averaged.

2. **Growth Rate** = $\frac{Y_t - Y_{t-1}}{Y_{t-1}}$ 100

Where, Y_t = Value of current year

Y_{t-1} = Value of base year

3. **Standard Deviation -** Standard deviation measures the absolute dispersion or variability of dispersion. Standard deviation is calculated by applying the following method.

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum X^2}{N}}$$

Where, σ = Standard Deviation

$x^2 = (x - \bar{X})$

N = Number of observations

4. **Co - efficient of Variation -** The coefficient of variation represents the ratio of the standard deviation to the mean. It is expressed in the following form

CV = Standard Deviation / Mean x100

5. **Compound Annual Growth Rate (CAGR) -** In order to study the year-wise growth in the variables, the compound annual growth rate has been calculated. It is expressed in the following form.

$$CAGR = \left(\frac{Y_t}{Y_{t-1}}\right)^{\frac{1}{N}} - 1 \times 100$$

Where, Y_t = Value of Current year

Y_{t-1} = Value of Base year

N = Number of Years

Results And Discussion

Table 1.1 (See in last page)

An illustration of variation and fluctuation in area under major horticulture crops in the state of Jammu and Kashmir from 1998-99 to 2017-18 is presented in table 1.1. It is evident from the table that the average area under aggregate horticulture crops is observed as 290724.30 hectares with SD of 52245.29 and CV of 17.97 percent. The area under aggregate horticulture recorded a growth of 156.15 percent in 2017-18 over 1998-99 with CAGR of 2.39 percent.

Apple is the most dominant fruit crop cultivated in the state of J&K, with an average of 127464.40 hectares and share of 43.41 percent to aggregate area, which is highest area occupied by any individual horticulture crop with SD of 30349.26 and CV of 23.64 percent, which is the second highest observed CV among horticulture crops, which means there has been more fluctuations in its area as compared to other fruit crops after almonds. The area under apples has also recorded the highest growth of 197.29 percent and CAGR of 3.78 percent. The area under pear has displayed the growth of 163.05 percent and CAGR of 2.62 percent. The average area under pear cultivation is 12129.75 hectares with percentage share of 4.17 to aggregate area and SD of 2501.89.

Walnut is the most important dry fruit cultivated in the state of Jammu and Kashmir with average area of 76493.85 hectares, percentage share of 27.53 to aggregate area and SD of 14766.17 over the study period. The CV of area under walnut cultivation is observed to be 16.28 percent, which is lowest observed among the horticulture crops, means that there has been lowest variations in area under walnut among horticulture crops. The area under walnut has displayed the growth of 146.67 percent and CAGR of 2.05 percent. Almond is the second major dry fruit grown in the state of J&K with average area of 15350.55 hectares with share of 5.57 percent to aggregate area but unfortunately almond is the only horticulture crop that witnessed lowest growth of 30.29 percent and negative CAGR of -6.13 percent over the study period with SD of 3911.69 and CV of 25.48 percent, which is the highest observed CV among horticulture crops, which depicts larger variations in its area as compared to other horticulture crops.

Table 1.2 (see in last page)

An illustration of variation and fluctuation in production of major horticulture crops in the state of Jammu and Kashmir over the study period of 20 years i.e. between 1998-99 and 2017-18 is presented in table 1.2. It is obvious from the table that the average production of aggregate horticulture during the study period is 1632941.90 Mt's with SD of 491478.43 and CV of 30.10 percent. The production of aggregate horticulture displayed a considerable growth of 250.15 percent and CAGR of 4.98 percent.

The average production of apple is observed to be 1309930.70 Mt's with percentage share of 80.55 to aggregate production. Its production registered a growth of 237.85 percent and CAGR of 4.70 percent with SD of 378493.66. The CV of apple production is 28.89 percent, which is lowest than other fruits except almonds, which means that there has been small variation in apple production as compared to other fruits except almonds. The average production of the pear observed is 52279.25 Mt's with share of 3.15 percent to aggregate production and SD of 21578.02. Its production registered considerable growth of 338.20 percent and CAGR of 6.67 percent.

It is evident from the table that the production of walnuts displayed a remarkable growth of 338.20 percent and CAGR of 6.68 percent, which is highest among the individual crops. The average production of the walnuts is observed to be 153772.05 Mt's with percentage share of 9.12 percent and SD of 67537.17. The CV of production of walnuts is 43.92 percent, which is highest observed CV among individual fruits, which means that there has been larger variation in its production among the individual fruits.

Almond displayed lowest growth of 150.47 percent and also lowest CAGR of 2.19 percent over the study period. The average almond production observed is 11744.70 Mt's with percentage share of 0.78 to aggregate production and SD of 2778.24.

Analysis table 1.1 and 1.2 clearly highlights that apples and walnuts represent an important section of aggregate horticulture in the state of Jammu and Kashmir. Apples and walnut account for nearly about 71 percent of aggregate area but they account for nearly 90 percent of the aggregate horticulture production.

Table 1.3: Variation and fluctuation in Productivity of Major Horticulture Crops in Jammu and Kashmir – 1998-99 to 2017-18

Year	Apple	Pear	Walnut	Almond	Other	Total
%age Change	120.53	207.26	231.65	500.00	186.62	160.35
Average	10.23	4.20	1.86	0.83	1.84	5.53
SD	1.27	1.08	0.61	0.38	0.41	0.91
CV	12.41	25.79	32.77	46.12	22.37	16.44
CAGR	1.00	3.94	4.53	8.87	3.35	2.53

Source: Computed by Author from the Data Derived from Department of Horticulture, Jammu and Kashmir-Srinagar.

The variation and fluctuation in productivity of major horticulture crops in the state of Jammu and Kashmir from 1998-99 to 2017-18 is presented in table 1.3. It is obvious from the table that the productivity of aggregate horticulture crops has registered a growth of 160.35 percent and CAGR of 2.53 percent with average productivity of 5.53 Mt's/ ha and SD of 0.91. The CV of aggregate horticulture productivity is 16.44 percent.

As it is evident from the table that the productivity of apples has registered growth of 120.53 percent and CAGR of 1.00 percent, the lowest observed compound annual growth rate among individual fruits with average productivity of 10.23 Mt's/ ha and SD of 1.27. The coefficient of variation of apple productivity is 12.41 percent, which is smallest observed CV among individual fruits, which means that there has been lowest variation in its productivity as compared to other fruits. The productivity of pear has displayed growth of 207.26 percent and CAGR of 3.94 percent with average productivity of 4.20 Mt's/ ha and SD of 1.08.

It is obvious from the table the productivity of walnuts has registered a growth of 231.65 percent and CAGR of 4.53 percent, with average productivity of 1.86 Mt's/ ha and SD of 0.61. The CV of walnut productivity is 32.77 percent, which is second highest observed CV among horticulture crops, which means that there has been second highest variation in its productivity as compared to other fruits. Furthermore, it is evident from the table that the productivity of almonds has recorded remarkable growth of 500.00 percent and CAGR 8.87 percent, which is highest observed among the horticulture crops with average productivity of 0.83 Mt's/ ha and SD of 0.38.

Conclusion - The state of Jammu and Kashmir is well known for its horticultural produce both in India and abroad. The state offers good scope for cultivation of horticultural crops; covering a variety of temperate fruits and sub tropical fruits. The state government has made tremendous efforts for the growth of horticulture sector in Jammu and Kashmir. It has been found from the study that the area under aggregate horticulture recorded growth of 156.15 percent with CAGR of 2.39 percent while as the production of aggregate horticulture recorded a remarkable growth of 250.15 percent with CAGR of 4.98 percent. Apples and walnut account for nearly about 71 percent of aggregate area but they account for nearly 90 percent of the aggregate horticulture production. The area under apples has recorded the highest growth of 197.29 percent and CAGR of 3.78 percent and its production has registered a growth of 237.85 percent and CAGR of 4.70 percent. The area under walnut has displayed the growth of 146.67 percent and CAGR of 2.05 percent and its production displayed a remarkable growth of 338.20 percent and CAGR of 6.68 percent over the study period of 20 years i.e. between 1998-99 and 2017-18

References :-

1. Lone, R. A. (2014). Horticulture Sector in Jammu and Kashmir Economy. *European Academic Research*, 2 (2), 2408.
2. Bhat, A. and Bhat, G. M. (2014). Women Participation in Apple Cultivation in Rural Kashmir- A Study. *International Journal of Research and Development - A Management Review*, 3 (3), 20-24.
3. Darzi, M. I. (2016). Horticulture Sector towards Economic Development of Jammu and Kashmir. *International Journal of Multidisciplinary Research and development*, 3 (4), 238.
4. Sheikh, S. H., and Tripathi A. K. (2013). Socioeconomic Conditions of Apple Growers of Kashmir Valley: A Case Study of District Anantnag. *International Journal of Educational Research and Technology*, 4 (1), 30-39.
5. Government of Jammu and Kashmir. (2018). Directorate of Horticulture, Jammu and Kashmir – Srinagar.

Table 1.1: Variation and fluctuation of area under Major Horticulture Crops in Jammu and Kashmir – 1998-99 to 2017-18

Year	Apple	Pear	Walnut	Almond	Other	Total
%age Change	197.29	163.05	146.67	30.29	143.48	156.15
%age Share	43.41	4.17	27.53	5.57	19.32	100.00
Average	127464.40	12129.75	79782.10	15350.55	55997.50	290724.30
SD	30126.68	2474.76	12991.10	3911.69	9189.67	52245.29
CV	23.64	20.40	16.28	25.48	16.41	17.97
CAGR	3.67	2.62	2.05	-6.13	1.93	2.39

Source: Computed by Author from the Data Derived from Department of Horticulture, Jammu and Kashmir-Srinagar

Table 1.2: Variation and fluctuation in Production of Major Horticulture Crops in Jammu and Kashmir – 1998-99 to 2017-18

Year	Apple	Pear	Walnut	Almond	Other	Total
%age Change	237.85	338.20	338.57	150.47	267.32	250.15
%age Share	80.55	3.15	9.12	0.78	6.40	100.00
Average	1309930.70	52279.25	153772.05	11744.70	105215.20	1632941.90
SD	378493.66	21578.02	67537.17	2778.24	35667.89	491478.43
CV	28.89	41.27	43.92	23.66	33.90	30.10
CAGR	4.70	6.67	6.68	2.19	5.35	4.98

Source: Computed by Author from the Data Derived from Department of Horticulture, Jammu and Kashmir-Srinagar

****

मुगल बादशाह बहादुर शाह ज़फर का साहित्यक योगदान

डॉ. नीलम सोनी *

प्रस्तावना – प्रस्तुत लेख ईतिहास,साहित्य तथा भाषा के विषयों का एक समन्वय मात्र है। किसी एक श्रेणि में इस लेखन को बाँध देना आसान नहीं है। यह लेख ऐसे साहित्यकार के संदर्भ है जो कि हिन्दूस्तान के बादशाह के साथ-साथ कला में भी रूची रखते थे। बहादुर शाह ज़फर हिन्दूस्तान के अंतिम मुगल सम्राट थे जिनका जन्म सन् 1775 में दिल्ली में हुआ था। जन्म के बाद उनका नाम अबू ज़फर सिराजुद्दीन मुहम्मद बहादुर शाह ज़फर रखा गया था, लेकिन वे बहादुर शाह ज़फर के रूप में अधिक लोकप्रिय थे। उनके पिता अकबर शाह थे और उसकी माँ लालबाई थी। सन् 1837 में अपने पिता की मृत्यु के बाद वे बहुत ही कम उम्र में सिंहासन पर विराजमान हो गए थे। वे उस मुगल राजवंश के अंतिम शासक थे, जिसने लगभग 300 वर्षो तक भारत पर शासन किया था। उन्होंने अंग्रेजों की बढ़ती शक्ति के कारण मजबूती के साथ अपने साम्राज्य पर शासन नहीं किया। बहादुर शाह ज़फर के शासनकाल के दौरान, उर्दू शायरी विकसित हुयी और अपने चरम पर पहुच गयी। अपने दादा और पिता, जो कवि भी थे, से प्रभावित होकर उन्होंने भी खुद में यह रचनात्मक कौशल विकसित किया। उन्होंने साहित्यिक क्षेत्र में भी योगदान दिया। उनकी कविता ज्यादातर प्रेम और रहस्यवाद के इर्दगिर्द रहती थी। उन्होंने ब्रिटिश द्वारा दिए उस दर्द और दुख के बारे में भी लिखा जिसका उन्होंने सामना किया था। वे मिर्जा गालिब, जौक, मोमिन और दाग जैसे अपने समय के प्रतिष्ठित और मशहूर उर्दू कवियों के एक महान कद्रदान थे। उनकी अधिकांश उर्दू गजलें 1857 के युद्ध के दौरान खो गयी थीं। उनमें से जो बची थी, उन्हें संकलित किया और कुल्लियात-ऐ-ज़फर नाम दिया गया।

बहादुर शाह ज़फर का बाल्यकाल एवं शिक्षा – बहादुर शाह ज़फर ने उर्दू,पर्शियन और अरबी भाषा की शिक्षा ली थी। उन्हें घुड़सवारी, तलवारबाजी, ज्वलनशील तीरंदाजी भी सिखाई गयी थी। उन्हें इब्राहीम जोउक़ और असद उल्लाह खान गालिब से कविताओं का शौक लगा,वो बचपन से ही ज्यादा महत्वकांक्षी नहीं थे, और उनका राजनीति से ज्यादा सूफी, संगीत, तथा साहित्य के प्रति रुझान अधिक था।

बहादुर शाह को जीवन के छठे दशक में सत्ता मिली थी,जब वो दिल्ली के बादशाह बने, तब उनके पूर्वजों ने सत्ता लगभग खो दी थी। लाल किले के बाहर उनका कोई शासन नहीं था। 28 सितम्बर सन्1837 को अकबर द्वितीय की मृत्यु के बाद बहादुर शाह ज़फर मुगल शासक बने,और 20 वर्षो तक मुगल शासक के नाम से जाने गए। हालांकि वो अपने पिता की पहली पसंद नहीं थे। अकबर द्वितीय मिर्जा मुमताज बेगम के पुत्र जहांगीर को बादशाह बनाना चाहते थे लेकिन वो ऐसा नहीं कर सके क्योंकि मिर्जा का अंग्रेजों से गम्भीर विवाद हो गया था।

विवाह – बहादुर शाह ज़फर की 4 पत्नियों में से सबसे अजीज पत्नी जीनत महल थी। जीनत के साथ उनकी शादी का प्रमाण पत्र आज भी संग्रहालय में सुरक्षित है। इन दोनों की शादी 18 नवम्बर सन् 1840 को हुयी थी, जिसका काबिन-नामा बना हुआ हैं,उसमें 1,500,000 रूपये का काबिन का जिक्र हैं, जिसके अनुसार इस काबिन के एक तिहाई हिस्से का भुगतान तुरंत किया जाएगा जबकि बाकी के बचे हुए हिस्से को वैवाहिक जीवन में कभी भी चुकाया जा सकेगा,और ये भी लिखा हैं कि ये विवाह 2 ईमानदार वयस्कों की उपस्थिति में हुआ हैं।

धर्मनिरपेक्षता – बहादुर शाह ज़फर महत्वकांक्षी व्यक्ति नहीं थे और उनकी हिन्दूस्तान की सल्तनत में ना उन्हें कोई रूचि थी ना कोई महत्व। अंग्रेज भी उन्हें भी तरह खतरा नहीं मानते थे।एक बादशाह के तौर पर उनकी सफलता ये थी की उन्होंने इस बात का ध्यान रखा कि सभी धर्म के लोगों से समान व्यवहार किया जाए। उनके शासन काल के दौरान उन्होंने बड़े हिन्दू त्योहारों (होली और दिवाली) को भी दरबार में मनाना शुरू किया। वो हिन्दुओं की धार्मिक भावना का बहुत सम्मान करते थे,और कट्टर मुस्लिम शेख को भी नहीं मानते थे।

रंगों की शायराना होली – बहादुरशाह ज़फर एक ऐसे शायर रहे हैं जिन्होंने होली के पारंपरिक रागों में फाग लिखी है। एक बंद उनकी होली के फाग का हाजिर है, 'क्यों मो पे मारी रंग की पिचकारी।' उसी समय के एक अन्य प्रसिद्ध दैनिक सिराज-उल-अखबार ने लिखा है कि होली क्या आती है दिल की कली खिल जाती है। होली के रसिया पर्व से दो सप्ताह पूर्व ही ढाक और टेसू के फूलों को पानी से भरे मटकों में डाल कर चूल्हे पर चढ़ा देते ताकि पानी उबलने पर फूलों का रंग खिंच कर गेरूआ रंग बन जाए। होली के मतवाले, मस्त कलन्दर गली-गली, कूचे-कूचे घूमते फिरते थे। बच्चों का उत्साह तो देखते ही बनता था। बादशाह के उमरा व वजीर भी वही करते जो हाकिमे वक्त किया किया करते थे। वे होली के रोज अपने हिंदू दोस्तों के यहां जाते और उन्हें अपने यहां बुलाते। होली के मौके पर महल की शायरी हुआ करती थी।

मानवता के पहलू और देश-विदेश – ज़फर को पतंग उड़ाने का भी बहुत शौक था,उनका जब भी मन करता वो अपनी बादशाह वाली गरिमा के विपरीत यमुना के किनारे जाकर पतंग उड़ाते थे। बहादुर शाह ज़फर काफी दयालु और दानी भी थे। वो जब खाना खाने बैठते और अपना चम्मच खीर में डालते तो बाहर ये घोषणा की जाती कि उन्होंने खाना शुरू कर दिया हैं। और 300 किलो चावल जरुरतमंदों को बांटे जाते।नई दिल्ली,लाहौर,वाराणसी और अन्य शहरों में उनके नाम की सड़कें हैं। वाराणसी के विजयनगरम पैलेस में बहादुर शाह ज़फर की प्रतिमा लगाई गयी हैं। बंगलादेश में विक्टोरिया

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) राम सहाय राजकीय महाविद्यालय, शिवराजपुर, कानपुर (उ.प्र.) भारत

पार्क का नाम भी बहादुर शाह जाफर पार्क रखा गया हैं।

शायरी और तख़ल्लुस – बहादुरशाह ज़फर बहुत अच्छे कवि थे,और उनकी लिखी गज़ले आज भी मुशायरों में सुनी जा सकती हैं। उनका तख़ल्लुस ज़फर था, जिसका मतलब 'जीतना' होता हैं। कालान्तर में उनकी लिखी कविताओं को कुल्लियत–इ–ज़फर में संग्रहित किया गया। उनकी ज्यादातर गजलें जिन्दगी और मुशायरों पर होती थी। उनकी लिखी कुछ मुख्य शायरीयों में से, लगता नहीं हैं दिल मेरा, ना किसी की आँख का नूर हूँ, यार था गुलजार था, जी नहीं लगता उजड़े दियार, खुलता नहीं है हाल, बात करनी मुझे मुश्किल,जा कहियो उनसे नसीम–ए–शहर।

शेख मुहम्मद इब्राहीम 'जौक' की गिनती उर्दू के महान शायरों में होती है। महज 19 साल की ही उम्र में इन्हें मुगल दरबार के शाही शायर के तौर पर चुना गया था। शायरी में ये मुहावरों और शब्दों के बेहतरीन इस्तेमाल के लिए जाने जाते हैं। अपने वक्त के शायर 'मिर्जा गालिब' और उस्ताद 'जौक' की अदबी दुश्मनी मशहूर है। उस समय 'जौक' की शोहरत 'गालिब' से ज्यादा थी। शायरी में 'जौक' महान शायर और आखिरी मुगल बादशाह बहादुर शाह 'जफर' के उस्ताद भी रहे।

साहित्यकारों को संरक्षण – मुगल बादशाह बहादुर शाह ज़फर द्वितीय ने मिर्जा गालिब को दबिर–उल–मुल्क और नज्म–उद–दौला की उपाधियों से नवाजा। बहादुर शाह ने उन्हें 'मिर्जा नोशा' की उपाधि भी दी थी, जिस कारण गालिब, खुद के नाम के पहले मिर्जा लगाते थे। साथ ही गालिब ने बहादुर शाह के बेटे फक्र–उद दिन मिर्जा को पढ़ाया भी।

मुहम्मद मोमिन खाँ (सन्1800–1851) बहादुर शाह ज़फर के दरबार के उर्दू शायर थे। उन्होने गजलें लिखीं हैं। कश्मीरी थे पर वे दिल्ली में आ बसे थे। उस समय शाह आलम बादशाह थे और इनके पितामह शाही हकीमों में नियत हो गए। अँग्रेजी राज्य में पेंशन मिलने लगा, जो मोमिन को भी मिलती थी। इनकी गजलें भी लोकप्रिय हुई। इन्होंने बहुत से अच्छे वासोख्त भी लिखे हैं। वासोख्त लंबी कविता होती है जिसमें प्रेमी अपने प्रेमिका की निन्दा और शिकायत बड़े कठोर शब्दों में करता है। फारसी गद्य एवं पद्य दोनों में उनकी रचनाएँ उपलब्ध हैं। उनकी काव्य रचनाओं में गजल मसनवी तथा कसीदे सभी रूपसम्मिलित हैं। गजल और मसनवी में श्रृंगार एवं प्रेम रस की भरमार है। कहा जाता है कि वे जवानी में प्रेम तरंगों में खूब झूले थे। यदा कदा भावों में अश्लीलता भी दिखाई देती है लेकिन भावों में गहराई एवं दूर तक ले जाने वाली कल्पना मोमिन की ही शायरी में उपलब्ध है।

उन्होंने न केवल गालिब, दाग, मोमिन और जौक जैसे उर्दू के बड़े शायरों को तमाम तरह से प्रोत्साहन दिया, बल्कि वह स्वयं एक अच्छे शायर थे। साहित्यिक समीक्षकों के अनुसार ज़फर के समय में जहां मुगलकालीन सत्ता चरमरा रही थी वहीं उर्दू साहित्य खासकर उर्दू शायरी अपनी बुलंदियों पर थी। बहादुर शाह ज़फर ने अंग्रेजों की कैद में रहते हुए भी गजलें लिखना नहीं रोका। वह जली हुई तिल्लियों से जेल की दीवारों पर गजलें लिखते थे। ज़फर की मौत के बाद उनकी शायरी कुल्लियात ए ज़फर के नाम से संकलित की गयी।

साहित्यक रचनाएँ – अंग्रेजों के खिलाफ सन्1857 के विद्रोह का नेतृत्व करने वाले आखरी मुगल बादशाह बहादुर शाह ज़फर की शायरी में एक अजीब तरह का दर्द छिपा हुआ है। विद्रोह और फिर उनके रंगून में निर्वासित होने के बाद ये गम और भी स्पष्ट तौर पर उनकी शायरी में नजर आता है। मुगल सल्तनत के आखिरी ताजदार बहादुर शाह ज़फर ने अपनी एक गजल में कहा था :–

या मुझे अफसरे–शाहाना बनाया होता,
या मेरा ताज गदायाना बनाया होता।

उक्त पंक्ति का अर्थ है कि मुझे बहुत बड़ा हाकिम बनाया होता या फिर मुझे सूफी बनाया होता, अपना दीवाना बनाया होता लेकिन बुद्धिजीवी न बनाया होता।

भारत के पहले स्वतंत्रता आंदोलन के 150 साल पूरे होने पर जहाँ बगावत के नारे और शहीदों के लहू की बात होती है वहीं दिल्ली के उजड़ने और एक तहजीब के खत्म होने की आहट भी सुनाई देती है। ऐसे में एक शायराना मिजाज रखने वाले शायर के दिल पर क्या गुजरी होगी जिस का सब कुछ खत्म हो गया हो। बहादुर शाह ज़फर ने अपने मरने को जीते जी देखा और किसी ने उन्हीं की शैली में उनके लिए यह शेर लिखा :–

न दबाया जेरे–जमीं उन्हें, न दिया किसी ने कफन उन्हें,
न हुआ नसीब वतन उन्हें, न कहीं निशाने–मजार है।

अपनी बर्बादी के साथ–साथ बहादुर शाह ज़फर ने दिल्ली के उजड़ने को भी बयान किया है। पहले उनकी एक गजल देखें जिसमें उन्होंने उर्दू शायरी के मिजाज में ढली हुई अपनी बर्बादी की दास्तान लिखी है :–

न किसी की आँख का नूर हूँ, न किसी के दिल का करार हूँ,
जो किसी के काम न आ सके, मैं वो एक मुश्ते गुबार हूं,
मेरा रंग–रूप बिगड़ गया, मेरा यार मुझसे बिछड़ गया,
जो चमन खिजां से उजड़ गया, मैं उसी की फस्ले–बहार हूं।

बहादुर शाह ज़फर ने अपनी एक और गजल में अपने हालात को इस तरह पेश किया है :–

पसे–मर्ग मेरे मजार पर जो दिया किसी ने जला दिया,
उसे आह दामने–बाद ने सरे–शाम ही से बुझा दिया।

सुफियाना और देसी रंग में डूबी हुई उनकी मनोस्थिति और हालात को दिखलाती हुई एक गजल है:–

कौन नगर में आए हम कौन नगर में बसे हैं,
जाएंगे अब कौन नगर को मन में अब हरासे हैं।

दिल्ली से अपने विदा होने को बहादुर शाह ज़फर ने इन शब्दों में बांधा है :–

जलाया यार ने ऐसा कि हम वतन से चले,
बतौर शमा के रोते इस अंजुमन से चले।

रंगून में अंग्रेजों की कैद में रहते हुए उन्होंने ढेरों गजलें लिखीं। बतौर कैदी अंग्रेजों ने उन्हें कागज–कलम तक मुहैया नहीं की थी। तब यह क्रांतिकारी शासक कोयले और जली हुई तीलियों से जेल की दीवारों पर गजलें लिखने लगा। दीवार पर लिखी गई उनकी यह मशहूर गजल आज भी खूब याद की जाती है और जिंदगी की हकीकत के करीब है। निर्वासन के दौरान बहादुर शाह ज़फर के हालात को दर्शाती उनकी इस मशहूर गजल के बिना कोई बात पूरी नहीं होगी :–

कितना है बदनसीब ज़फर दफ्न के लिए,
दो गज जमीं भी मिल न सकी कू–ए–यार में

बहादुर शाह ज़फर का साहित्य में योगदान अतुलनीय हैं, आप पर लेखन करने वाले लेखकों ने भी खूब ख्याती बटोरी है। एक विद्वान और धर्मनिरपेक्ष बादशाह के रूप में उन्हे आज भी स्मरित और लिखित किया जाता हैं। आपने अपने शासनकाल में साहित्य की कद्र की और साहित्यकारों से हरदम अपनी महफिल को सजाए रखा। मात्र कुछ पन्नों में आपके योगदान

को पूरा नहीं किया जा सकता।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Gopal Das Khosla (1969). The last Mughal. Hind Pocket Books.
2. H L O Garrett (2007). The Trial of Bahadur Shah Zafar. Roli Books.
3. K. C. Kanda (2007). Bahadur Shah Zafar and His Contemporaries: Zauq, Ghalib, Momin, Shefta : Selected Poetry. Sterling Publishers Pvt. Ltd. Portrait of Bahadur Shah in 1840s The Delhi Book of Thomas Metcalfe
4. Pramod K. Nayar (2007). The Trial Of Bahadur Shah Zafar. Orient Longman.
5. S. Mahdi Husain (2006). Bahadur Shah Zafar; And the War of 1857 in Delhi. Aakar Books.
6. Shyam Singh Shashi. Encyclopaedia Indica: Bahadur Shah II, The last Mughal Emperor. Anmol Publications.
7. William Dalrymple (2009). The Last Mughal: The Fall of Delhi, 1857. Bloomsbury Publishing.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Role of Regional Rural Banks in the Development of India

Vijay Kumar Gupta*

Abstract - Regional Rural Banks are the banking organizations which operated in different states of India. They have been created to provide the service in the rural areas with banking and financial activities. However, RRB's may have branches set up for urban operations and their area of operation may include urban areas too. This research aim is that to analyze the financial performance of RRBs before amalgamations and after amalgamations .This study is gathered from secondary sources that are from the published annual reports of RBI.

Introduction - Regional Rural Banks are the banking organizations being operated in different states of India. They have been created to serve the rural areas with banking and financial services. However, RRB's may have branches set up for urban operations and their area of operation may include urban areas too. Regional Rural Banks were established under the provisions of an Ordinance passed on 26 September 1975 and the RRB Act.1976 to provide sufficient banking and credit facility for agriculture and other rural sectors. These were set up on the recommendations of The Narasimham Working Group during the tenure of Indira Gandhi's government with a view to include rural areas into economic mainstream since that time about 70% of the Indian Population was of Rural Orientation.

The development process of RRBs started with the promulgation of an ordinance promulgated on 26th September 1975 (with later on was replaced with regional rural bank Act, 1976) with an objective to ensure sufficient institutional credit for agriculture and other rural sectors. It was on 2nd October 1975, that the first RRB, named the Prathama Bank came into existence.

RRBs were set up under the recommendations of. The Narasimham Working Group as at that that time about 70% of the Indian population was of rural orientation- It was in order to provide access to low-cost banking facilities to the poor , that the Narasimham Working Group (1975) proposed the establishment of a new set of banks as institutions which ''combine the local feel and the familiarity with rural problem which the cooperatives possess and the degree of business organization, ability to mobilize deposits, access to central inure markets and modernized outlook which the commercial banks have.

Some of the features of this type of banking were:-

RRBs were mainly established to meet the credit requirement of small and marginal farmers, landless labors, and artisans of rural Indian with a focus on agro sector In few years RRBs penetrated every corner of the country and extended a helping hand in the growth process of the country.

These were envisaged as a low cost financial intermediation structure in the rural areas to ensure sufficient flow of institutional credit for agriculture and other rural sectors.

Literature Review

Robson William B. P., Bergevin Philippe (2012): This study argues that Canada's federal government, which began issuing real-return bonds (RRBs) in 1991, should issue more RRBs of more types than it currently plans to do. Issuing more RRBs would not only better satisfy existing demand from investors; it has the potential to spur the development of other price-indexed instruments. Experience elsewhere suggests that more federal RRBs could encourage other entities to issue price-indexed debt, and would let intermediaries provide such products as inflation-linked annuities, thus providing more Canadian savers with protection against intentional or accidental inflation. **Kanika Krishna and Nancy Sahni (2012)** published **"Financial performance evaluation of RRB'S in India"** The main objective was to study the growth-pattern and financial performance of Regional Rural Banks in India. The study conducted was descriptive in nature and data was collected from published annual reports of RBI and NABARD for the period 2006-2012. The study has witnessed positive impact on the financial performance of RRB's due to amalgamation and various other factors.

Jasvir S. Sura (2008): The study shows that the overall position of RRBs in India is not quite encouraging. The poor credit- deposit ratio is still making dent on the improvable functioning of RRBs. Since the RRB is supposed to be a bank for poor people, its presence in all the states of country especially in underdeveloped States can make things better. The government should spread the branches of RRBs at grass root level to provide such banking service to the needy

*Assistant Professor, Govt. P.G. College, Jalaun (U.P.) INDIA

rural people. Moreover, it is the responsibility of the bank management and the sponsored bank to take corrective measures to raise the credit-deposit ratio of the bank that would make RRBs relevant in the rural India.

Wahab, A (2001) has analyzed the performance of the commercial banks under reforms. He also highlighted the major issues need to be considered for further improvement. He concluded that reforms have produced favorable effects on performance of commercial banks in general but still there are some distortions like low priority sector advances, low profitability etc., that needs to be reformed again.

Selvaraj 1998:Institutional finance is the lifeblood of modern economic system without which no system can survive. In agricultural development also its role is crucial. Adequate institutional credit is considered to be the most important factor, which if suitably provided, will go a long way to put the economy of the farmers especially the small and marginal farmers on a sound footing .

Joshi 1997, Tyagi and Singh 1998:.So agriculture and rural development has been on the priority agenda of our policy makers since independence and considerable efforts have been made to develop the rural credit system as means of rural development

The Committee on Financial Systems, (1991) (Narasimham Committee): The study has shown stress on the poor financial health of the RRBs to the exclusion of every other performance indicator. 172 of the 196 RRBs were recorded unprofitable with an aggregate loan recovery performance of 40.8 percent. (June 1993). The low equity base of these banks (paid up capital of Rs. 25 lakhs) did not cover for the loan losses of most RRBs. In the case of a few RRBs, there had also been an erosion of public deposits, besides capital. In order to impart viability to the operations of RRBs, the Narasimham Committee suggested that the RRBs should be permitted to engage in all types of banking business and should not be forced to restrict their operations to the target groups, a proposal which was readily accepted. This recommendation marked a major turning point in the functioning of RRBs.

NABARD (1986) published "A study on RRBs viability" which was conducted by **Agriculture Finance Corporation in 1986** on behalf of NABARD: The study revealed that viability of RRBs was essentially dependent upon the fund management strategy, margin between resources mobility and their deployment and on the control exercised on current and future costs with advances. The proportion of the establishment costs to total cost and expansion of branches were the critical factors, which affected their viability. The study further concluded that RRBs incurred losses due to defects in their systems as such, there was need to rectify these and make them viable. The main suggestions of the study included improvement in the infrastructure facilities and opening of branches by commercial banks in such areas where RRBs were already in function.

Research Objectives - This paper focuses on highlighting the unbeatable role of the Regional Rural Banks in the upliftment of the rural India. Our proposed study will focus on following objectives-

1. To study the working, growth- pattern and progress of RRBs.
2. To compare the amalgamation of RRBs before and after its merger.
3. To analyze the financial performance of RRBs
4. To study the problems of RRBs and give suggestions for its better functioning.

Research Methodology - RRBs are in operation Since 1975 to till today. During this long period no. of changes have occurred in its performance. RRBs were limited to one or two District in Pre-merger Era. But they were in big losses and not performing in many respect. Therefore, post merger Era of rural banking started from September 2005. In this era RRBs were giving a bigger coverage of few district. The study is based on secondary data which is collected from secondary sources via- journal, magazine, newspapers, annual report and website of RRBs, RBI, NABARD, ministry of finance etc. These research study used descriptive researches design. This study is gathered from secondary sources that is from the published annual reports of RBI. The aim of the study is to analysis the financial performance Evaluation of Regional Rural banks in India

The process of amalgamation initiated in 2005, is now nearing completion. As a result of amalgamation process, the number of RRBs in the country declined from 196 to 56 at the end of July 2014.

How People Live In Villages - According to Indian Rural Development Report 2012-13 that the growth rate of rural per capita consumption rose exponentially in the last seven years. However, Rural India still battles with poverty and lack of basic infrastructure.

1. 30% population of the country lives Below Poverty Line (BPL)
2. 80% of BPL population lives in rural areas
3. In 1993-94, nearly 50% of the rural poor lived in seven states – Jharkhand, Bihar, Assam, Orissa , Chhattisgarh, MP and UP
4. This rose to 65% in 2011-12, though states like Bihar, Chhattisgarh and Uttar- Pradesh have reduced poverty significantly since2009-10
5. 44% of the rural poor in 2009-10 come under scheduled castes and scheduled tribes.
6. 18% of rural households have access to all three basic services – drinking water within premises, sanitation and electricity
7. 45% of rural households lack electricity connections
8. 70% of rural households lack sanitation facilities
9. 20% have none of the three basic services
10. 18% of rural families rely on non-farm employment as major source of their livelihood
11. Income from farm livelihood not sufficient for house-

holds.

Regional Rural Banks were established in the year 1975 as a low cost financial intermediation structure in the rural areas to ensure sufficient flow of institutional credit for agriculture and other rural sectors. RRBs were expected to have the local feel and familiarity of the cooperative banks with the managerial expertise of the commercial Banks. The global financial crisis and the current Euro zone crisis have affected the Banks in the advanced economies; The spillover is reflecting on banks in emerging economies including India. Issues of financial stability, economic growth and managing inflation are the major challenges confronting regulators in advanced economies and are equally important for emerging economies like ours. Global economic growth has slowed from 3.9% in 2011 to 3.2% in 2012. We are not unaffected by what happens in the rest of the world. Our economy too has slowed after 2010-11.

Research Analysis - In India, 69% of population lives in rural area. This population contributes significantly both as consumer and labor. Our Country aims at developing all sectors and its aims at inclusive growth. Rural India is full of potential there is a very need for development of this area and proper banking support from the Regional Rural Banks can help much. If the basic hurdles are overcome then definitely we can have a balanced growth of rural and urban India.

Rural financial system is a powerful instrument and a prerequisite in accelerating the developmental activities in rural areas. It operates through two sets of institutions in the organized and unorganized sectors. The unorganized sector consists of local money lenders, landlords, traders, merchants etc; in which case no effective control can be exercised by the government. They largely function in an autonomous fashion with its own norms and discipline.

Role Of RRB's - Mahatma Gandhi said- "Real India lies in villages," and village economy is the backbone of Indian economy. Without the development of the rural economy, the objectives of economic planning cannot be achieved. Reserve Bank of India in association with the other commercial banks has taken various initiatives to establish the equipped financial system in the rural India by offering various loans facilities for Crops (Short-term Loans) and Agriculture and Allied Activities (Term- Loans). In order to smoothen the system, RRBs plays the key role by providing the following services:

1. RRBs open no-frill account facility to our customer and to provide overdraft facility in such account.
2. RRBs provides Relaxation on Know Your Customer(KYC) norms.
3. RRBs issued General Credit Card facility to our customer at their rural and semi urban branches up to Rs.15000.

Challenges For The RRB's :

1. Limited scope of investment.
2. Delay in decision making
3. Lack of co-ordination
4. Difficulties in Deposit mobilization.
5. Lack of training facilities
6. Poor recovery rate

Steps For Improvement - The Regional rural Banks in order to provide regular services and to ensure the development of the rural India must take the below steps:

1. These banks must try to reach out to the needy through micro-credit and Self-Help Groups.
2. Expand its reach in the rural areas through alternate channels.
3. Attention should be given to the financial inclusion of unbanked rural area.
4. Improvement in service levels in rural areas.

Conclusion - Development of the rural economy is essential in order to ensure a balanced economic growth. The various problems faced by the rural sector such as: illiteracy, lack of access to basic services of electricity, sanitation, drinking water etc. can be overcome if adequate credit facilities are provided. The initiative taken by the RBI to set-up the Regional Rural Banks and other such banks to promote banking in the rural India has come as a boom for these areas

References :-

1. Agarwal. R.K. (1991) : "Evaluation of the Working of Regional Rural Banks ", Mittal Publications, New Delhi.
2. Desai,V.(1991) . "Indian Banking - Nature and Problems ", Himalaya Publishing House, Mumbai.
3. Desai,V. (1995) : "Banking and Financial System ", Himalaya Publishing House, New Delhi.
4. Gulsan, S.S. and Kapoor, G.K. (1984) : "Banking Law and Practice ", S. Chand and Co. New Delhi.
5. Karmakar, K.G. (1999) : "Rural Credit and Self Help Groups (Micro Finance - Needs and Concepts in India) ", Sage Publications, New Delhi.
6. Kothari, C. R. (1996) : "Research Methodology - Methods and Techniques", Vishwa Prakashan, New Delhi.
7. Uddin, N (2003) : "'Regional Rural Banks and Development", Mittal Publications, New Delhi.
8. Yadav, B.S and Singhal. A (2005) : ''Role of Regional Rural Banks in Rural Dev
9. elopmenr Shree Publication, New Delhi

Website :-

1. www.rbi.org.in
2. www.nabard.org
3. www.wikipedia.org
4. articles.economictimes.indiatimes.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Effect of Food Habits, Gender and their interaction on Academic Performance of College going students of Indore division of Madhya Pradesh

Dr. Sushama Sharma* Priyanka Gehlot**

Abstract - Present Study entitled was a Survey type of research in nature and it is attempted to find out which types of food habits are significantly related to the personality and Academic performance of College going Students. The objective of the present study was to study the effect of Food Habits, Gender and their interaction on Academic Performance of College going students. The hypothesis of the present study was-There will be no significant influence of Food Habits, Gender and their interaction on Academic Performance of College going students. Sample was selected through the use of purposive sampling technique. For conducting the research sample of 370 college going students was taken from the government and the private institutions, affiliated to Devi Ahilya University, Indore. Criterion Variable of the study was Academic Performance of college going students. Prediction Variables of the study were Food Habits and Gender. Two way Analysis of Variance (ANOVA) was used for studying the effect of Food Habits, Gender and their interaction on Academic Performance of College going students. Two way Analysis of Variance (ANOVA) was used for Data Analysis. Following were the finding of the present study- 1. High Food Habits was found to be significantly superior to the Low Food Habits group students in terms of Academic Performance., 2. Female students were found to be significantly superior to the Male students in terms of Academic Performance., 3. A significant influence of resultant of interaction of Food Habits and Gender was found to be on Academic Performance. Female gender and High Food Habits group students found to be significantly higher in terms of Academic Performance that of their other counterparts i.e. Male and Low Food Habits group students.

Introduction - Present Study entitled “Effect of Food Habits, Gender and their interaction on Academic Performance of College going students of Indore division of Madhya Pradesh”was a Survey type of research in nature. It was related with effect of food habits on personality and Academic performance of College going Students. More precisely it is a study which is attempted to find out which types of food habits are significantly related to the personality and Academic performance of College going Students.

During late adolescent, changes in lifestyle are common. Adolescent are easily influenced by movements and changes in the society. Mass media and advertisement in the press, and television are powerful factors behind changes in food habits. Today’s adolescent are growing up with more advertisement and commercials in the mass media, particularly television, than any other generation, which has a great impact on their food habits and physical activity (Fogelholm 1998). Peer groups certainly also greatly influence their individual food habits, i.e. what kinds of food they like to eat, their daily meal pattern and the composition of the meal. In a modern urban family, both the parents are usually working, which gives them little time to pay the required amount of attention to their children. This is one of the biggest reasons for the shift in the eating habits of kids. Fast food has become the fastest ways for parents as well as children to satisfy their bon-appetite.Healthy eating is vital for teen’s health and well being. The nutritional needs of teen vary tremendously, but generally increase due to the rapid growth and changes in body composition that occur during puberty. Adequate nutrition is vital for ensuring teens overall emotional and physical health. Good eating habits help prevent chronic illness in the future, including obesity, heart disease, cancer and diabetes. Many teens in fact receive the majority of their calories from processed and high fat foods. A low intake of essential nutrients including vitamin A, folic acid, fiber, iron and calcium is prevalent among adolescent. A low intake of iron and calcium in particular is common among female adolescent, which can impair cognitive function and physical performance, as well as increase a females risk for osteoporosis later in life.

Among the more common teen eating habits include skipping meals, routing fast food consumption, frequent

*Assistant Professor, Mata Jijabai Girls P.G. College, Indore (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, Vidyodaya Mahavidyalaya, Manawar (M.P.) INDIA

snacking and dieting. It is therefore important to encourage children, teenagers, and adults to adopt a physically active lifestyle a healthful eating habits, and to try to motivate young people to become healthier individuals. In addition public policy to limit junk food in school and to encourage families to make healthful food choice for their children can also play a role.

Large number of researches has been carried out related to the aspect of present research. The available researches have been reviewed. Researches related to Food Habits of Children were conducted by Ligaya P. Paguio et al (1987), Stunkard (1987), Norma et al (1990), Steven L., Gortmker , William H. Dietz and Lilian Cheung (1990), Pahwa, N. and Khanna, P. (1991), Robert C. Klesges et al (1991), Mehta and Pandya et al (1992), Wendy Wolf and Cathy C. Campbell (1993), Wolfe and other (1993), Sweeting and other (1994), Engle Patrice L et al (1996), Engle Patrice L et al (1996), Nowak and other (1996), Bhattacharya, Biswas and Saha (1997), J-Sch Health (1997), Monneuse, Bellisle and Koppert (1997), Goel and Kumar (1998), Hoglund and other (1998), Hoglund, Sameulson and Mark (1998), Deborah and Dasha (1999), Claude, C. (2000), Kumar et al (2000), Renuka Pawar and Vandana Bambawale (2000), Bharti V. and Husain M. M. (2001), Sumana and Jhansi Rani (2001), Young, E.M. and other (2001), Lien, N. and Other (2002), Madeleine (2002), Yannakoulia and Other (2004), Patrick, H. and other (2005), Rao and other (2007), Ritchie (2007), Bhargava, Bouis and Scrimshaw (2011) and Lopez et al (2013). These researches attempted to study different factors, which influence the food habits of individuals. Researches related to Academic/ Educational Performance in different subjects were conducted by Clements and McKee (1968), Martin et al (1968), Meichenbaum, Bowers and Ross (1968), Bailey, Wolf and Phillips (1970), Bednar et al (1970), Kirigin et al (1973), Chiristopher (2005), Gregory (2005), Lane and other (2006), Lippert (2006), Vodounon (2006) and Turner et al (2009). These researches attempted to study what are the variables, who influence the Academic Performance of Children. After going through the related literature it is clearly evident that there is no research work has been conducted related to the present aspect. No study is conducted related to the effect of food habits on academic performance of college going students. So keeping this in mind and fulfillment the gap in the present research area, the present study is undertaken.

Statement of Problem

The Problem is worded as given below –

1. Effect of Food Habits, Gender and their interaction on Academic Performance of College going students of Indore division of Madhya Pradesh

Objective

1. The objective of the present study was as follows-
2. To study the effect of Food Habits, Gender and their interaction on Academic Performance of College going students.

Hypothesis - The hypothesis of the present study was as follows-

1. There will be no significant influence of Food Habits, Gender and their interaction on Academic Performance of College going students.

Type of Research - The present study was Survey type of research, in which 370 college going students of Indore division will be surveyed for the Food Habits and Academic Performance in respect to gender. In the present study there was two types of variable, which are classified as below-

1. Criterion Variable- In this study Criterion Variables was Academic Performance of college going students.

2. Prediction Variable (Independent Variables)- In the present study the Prediction Variables were Food Habits and Gender.

Tools - In the present study data were collected in respect Food Habits andAcademic Performance.

For the data collection of Food Habits,a mixed (Open and Close) type questionnaire was useddeveloped by the researcher.. In this questionnaire there were 48 questions. Each questions carried 1 mark. These questions are related to different types of food habits. Thus, the Maximum Marks were 48; students were given 1 hour to solve the criterion test. For the data collection of Academic Performance of college going students, their annual academic record was taken into account. On the basis of their performance a Median was calculated and on the basis of this median all the students were divided into two groups, namely, High and Low performance group students.

Procedure of Data Collection - Permission for data collection was taken from the principals of the concerned institutions. After that rapport was established with all the students of sample and they were made aware about objectives of the study. Then study habits questionnaire developed by the investigator was administered on the students. After that for the data collection of Academic Performance of college going students, their annual academic record was taken into account. On the basis of their performance a Median was calculated and on the basis of this median all the students were divided into two groups, namely, High and Low performance group students. In this manner the data related to these entire variables were collected. After that each test was scored. The procedure for scoring was adopted as decided by the investigator for food habits variable. The collected data were analyzed with the help of appropriate statistical techniques.

Data Analysis - Two way Analysis of Variance (ANOVA) was used for studying the effect of Food Habits, Gender and their interaction on Academic Performance of College going students.

Result and Interpretation - The objective was to study the influence of Food Habits, Gender and their interaction on Academic Performance of College going students. Hypothesis for this objective was to there will be no significant influence of Food Habits, Gender and their interaction on Academic Performance of College going

students. In this objective the criterion variable was Academic Performance. The prediction variables were Food Habits and Basic Educational Discipline. There were two levels of food habits, namely, High & Low food habits. The students were categorized into two levels with respect to their Gender, namely, Male and Female. Criterion variable was on Interval Scale of measurement & the prediction variables were on Nominal Scale of Measurement. Therefore, the data were analyzed with the help of 2 x 2 Factorial Design Analysis of Variance. The results are given in Table 1.

Table 1: Summary of 2x2 Factorial Design of Analysis of Variance (ANOVA) of Academic Performance of College going students

Source of Variance	df	SS	MSS	F	Level of Significance
Food Habits	1	1489.55	1489.55	39.20	0.00 **
Gender	1	3611.58	3611.58	95.06	0.00 **
Food Habits xGender	1	1029.41	1029.41	27.09	0.00 **
Error	366	13905.99	37.99		
Total	369				

****- Significant at 0.01 Level of Significance**

From the Table 1 it is evident that the 'F' value for Food Habits is 39.20, whose level of significance is 0.000 with df = 1,366; which is less than 0.01 level of significance, hence the value of 'F' for Food Habits is significant at 0.01 level of significance with df = 1,366. It means there is a significant difference between mean scores of Academic Performance of College going students of High Food Habits and Low Food Habits group. In the light of this the null hypothesis that "There will be no significant influence of Food Habits on Academic Performance of College going students" is rejected. Further, the mean score of Academic Performance of High Food Habits group students is 68.94, which is significantly higher than that of Low Food Habits group students, whose mean score of Academic Performance is 63.63. It reflects that the High Food Habits was found to be significantly superior to the Low Food Habits group students in terms of Academic Performance.

From the Table 1 it is evident that the 'F' value for Gender is 95.06, whose level of significance is 0.000 with df = 2,366; which is less than 0.01 level of significance, hence the value of 'F' for Gender is significant at 0.01 level of significance with df = 2,366. It means there is a significant difference between mean scores of Academic Performance of College going students of Male and Female groups. In the light of this the null hypothesis that "There will be no significant influence of Gender on Academic Performance of College going students" is rejected. Further, it is clear that the mean score of Academic Performance of Female students is 70.41, which is significantly higher than that of Male students whose mean score of Academic Performance in is 62.15. It may therefore be concluded that the Female students were found to be significantly superior to the Male students in terms of Academic Performance.

From the Table 1 it is evident that the 'F' value for interaction of Food Habits and Gender is 27.09, whose level of significance is 0.000 with df = 2,366; which is less than 0.01 level of significance, hence the value of 'F' is significant at 0.01 level of significance with df = 2,366. It means there is a significant influence of resultant of interaction of Food Habits and Gender on Academic Performance. In the light of this the null hypothesis that "There will be no significant influence of interaction of Food Habits and Gender on Academic Performance" is rejected. It may therefore be concluded thata significant influence of resultant of interaction of Food Habits and Genderwas found to beon Academic Performance. Further it can also be concluded that, Female gender and High Food Habits group students found to be significantly higher in terms of Academic Performance that of their other counterparts i.e. Male and Low Food Habits group students.

Conclusions - Following were the finding of the present study-

1. High Food Habits was found to be significantly superior to the Low Food Habits group students in terms of Academic Performance.
2. Female students were found to be significantly superior to the Male students in terms of Academic Performance.
3. A significant influence of resultant of interaction of Food Habits and Gender was found to be on Academic Performance. Further it can also be concluded that, Female gender and High Food Habits group students found to be significantly higher in terms of Academic Performance that of their other counterparts i.e. Male and Low Food Habits group students.

Delimitations - The following were the delimitations of the present study-

1. The study was conducted in the Indore division only.
2. The population comprised of college going students only.
3. The sample comprised of only 370 students.
4. The data related to the Academic Performance were collected in terms of Gender only.
5. Among the different biological variables only Food Habits of college going students was taken into the research.

References :-

1. M. Swaminathan (1974), "food and Nutrition," Vol.1.The Bangalore Printing and Publishing Co. Mysore Road, Banglore. Pg. 557.
2. Carol Jean, West Suitor, Merry Forbs and Crowley, "Nutrition, Principles and Application in Health Promotion", 1984, II edition, J. B. Lippincot Co. Philadelphia, London, Maxico City, 146.
3. Ezell, J.M., Skinner and M.P. penfield, "Appalachina adolescent's snack patterns: Morning, afternoon, and evening snacks", Journal of American Dietetic Asso-

ciation 85:1450-54, 1985.

4. Burton,B.T., “Human Nutrition”, 1986, Tata MC Garw-Hill publishing Co.Ltd.,New Delhi. PP206-217
5. Bull N.L., “Dietary habits, food consumption and nutrient intake during adolescence” J. Adolesc.,1992,Health 13:384-388.
6. Zwiauer K.F. (1992), “Effect of day time on resting energy expenditure and thermic effect of food in obese adolescents. 5 Am Call. Nutr. Sun, 119(3), Pg.267-71,
7. Wolf-S Wendy (1993), Food Pattern, diet quality and related characteristics of school children in New York State. J.Am Diet. Associa. Vol – 93, N-11, Pg 1280-84.
8. Mehta Pallavi and Pandya Gargi (1996),”Eating behaviour and its impact on nutrient intake of privileged and under privileged school children (10-15 Years) of Baroda City with special reference to foods” Ind.J. Nutr. Dietet, 29 Pg. 108-14.
9. Bulletin of the Nutrition Foundation of India, “Nutritional Status of Children and Women in India: Recent Trends”, 1997, Vol.18, No.3
10. Haley, AuCoin, and J Rae, “A comparative study of food habits: Influence of age, sex, and selected family characteristics-II, Canadian Journal of Public Health 68:301-1977.
11. Bull N.L., “Dietary habits, food consumption and nutrient intake during adolescence and young adults”1988, Wld. Rev. Butr. Diet., 524-74.
12. D Hog Lund, G Sameulson and A Mark, “Food habits in Swedish adolescents in relation to socio economic conditions”, Eur.J. Clin. Nutr., 1998,52,784-789.
13. Deborah Christie and Dasha Nicholls. “Adolescent eating habits: do they impact on later eating habits? Quoted by sue Southon, International Journal of Foods Science and Nutrition, 1999, 50, 149-153.
14. Bharti Vandana and Minira M Husain “A Comparative study of food habits and food preferences of the blind boys and girls”, J. Disabilities and Impairments, 2001,16 (2),35-40
15. George R S and Krondl M., “perceptions and food use in adolescent’s boys and girls”, Nutrition and Behavior, 1,115-125.
16. Sumati R. Mudambi, MV Rajgopal, “Fundamentals of food and nutrition”, III Edition, Pub. New Age International Pvt. Lmt.Formerly Wiley Eastern Lmt.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

समसामयिक भारत में दलित उत्पीड़न एवं सामाजिक न्याय प्रस्थिति

महेश कुमार रचियता * डॉ. सुनील महावर **

प्रस्तावना - समकालीन चिंतन में सामाजिक न्याय बहुत प्रचलित अवधारणा है। लोकतंत्र के आधारभूत सिद्धान्तों (समानता, स्वतंत्रता एवं न्याय) में एक सिद्धान्त के रूप में विवेचित होने वाली 'न्याय' की अवधारण एक विस्तृत अवधारणा बन गई है, जिसमें मानवाधिकार, महिला अधिकार, बाल अधिकार, वृद्ध अधिकार और दलित अधिकार इत्यादि समस्त महत्वपूर्ण सामाजिक-राजनीतिक मुद्दे सम्मिलित है। मामला चाहे मानव अधिकारों के हनन का हो या महिला उत्पीड़न का या बाल-शोषण या वृद्धजन पर अत्याचार या दलित वर्ग के दमन को हो, यदि इन्हें एक संदर्भ में देखने का प्रयास किया जाये तो वह संदर्भ सामाजिक न्याय ही होगा। इस प्रकार 'सामाजिक न्याय' एक व्यापक अवधारणा है, यदि इसे बहुआयामी अवधारणा कहा जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी, क्योंकि अन्याय, उत्पीड़न शोषण और दमन का कोई भी रूप तथा कोई भी मामला एक स्वर में सामाजिक न्याय की ही मांग करता है। जिस प्रकार घाव हाथ पर हो या पैर पर या सिर पर लगा हो, उसका उपचार मरहम लगाने पर ही होता है। वैसे ही समाज में घटित होने वाला प्रत्येक अन्यायपूर्ण व्यवहार अथवा घटना का निदान सामाजिक न्याय है।

यद्यपि सामाजिक न्याय एक विस्तृत अवधारणा है, लेकिन इसका अध्ययन हम मुख्यत: सामाजिक संरचना के भीतर घटित होने वाली ऐसी घटनाओं अथवा व्यवहार के संदर्भ अधिक करते हैं, जिनका उत्तरदायी प्रमुख कारण असामनता होता है। पश्चिमी देशों मे रंग भेद के मामले हो या भारत में जातीय कटुता की घटनाएं, सामाजिक अन्याय के ही मामले हैं, इनका प्रमुख कारण 'असमानता' ही है, जो वर्ग, जाति, नस्ल, समुदाय अथवा लिंग श्रेष्ठता-हीनता के भाव के कारण उत्पन्न होती है। जातीय श्रेष्ठता के मिथ्या भाव के कारण समाज का तथाकथित उच्च वर्ग अन्य वर्ग पर अत्याचार करने में अपने आपको गौरवान्वित महसूस करता है।

समाज की रचना यदि असमानता पर आधारित है तो स्वतंत्रता के अधिकार का कोई महत्व नहीं रहता है। न्यायपूर्ण व्यवस्था वही होती है, जिसमें सभी समान हों तथा समाज के संसाधनों का वितरण समानता पर आधारित हो। पूरणमल के अनुसार, 'किसी भी सामाजिक व्यवस्था में जितनी अधिक असमानता और विषमता होगी उस समाज में अन्याय तथा शोषण की उतनी ही अधिकर सम्भावना होती है।'[1] इस दृष्टि से भारतीय समाज की स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। भारतीय समाज में विभेद का अधार जाति व्यवस्था है। चातुर्वर्ण्य सिद्धान्त पर आधारित जाति व्यवस्था का वर्गीकरण श्रेष्ठता-निकृष्टता के आधार पर चार वर्गों/वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) में किया गया है। समाज के इस वर्गीकरण में ही असमानता-विषमता के बीज निहित है, जिसके कारण वर्गों में परस्पर सहयोग के स्थान पर विरोध, वैमनस्य एवं कटुता स्थापित हो गई है। जातीय वैमनस्यता एवं कटुता की भावना के कारण समाज का तथाकथित उच्च वर्ग निम्न वर्ग को हीनता की दृष्टि से देखता है। उच्च वर्ग के लोगों द्वारा निम्न वर्ग के लोगों के साथ पशुवत व्यवहार किया जाता है।

सामाजिक असमानता समाज द्वारा उत्पन्न होती है। यह सामान्यतया लोगों की सहमति पर आधारित होती है और बहुत कुछ परम्परागत होती है। इसे व्यक्तियों एवं समूहों की सुविधाओं अथवा परिस्थितियों में भिन्नता के रूप में देखा जा सकता है। जिसमें कुछ लोग दूसरों की तुलना में धनी, सम्माननीय एवं शक्ति सम्पन्न होते हैं, जिसकी वजह से वे अपनी बातों को दूसरों से यहाँ तक कि उनके न चाहने पर भी मनवा लेते हैं। सामाजिक न्याय का सम्बन्ध असमानता के इसी रूप से होता है।[2]

जातीय विभेद के कारण समाज के पिछड़े एवं कमजोर वर्ग के साथ अन्याय, अत्याचार एवं अनाचार किया जाता है। अनेक अवसरों पर उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है। जातीय/नस्लीय विभेद के आधार पर मानवाधिकारों के हनन की घटनाएं सार्वभौमिक है। भारत ही नहीं विश्व के अन्य देशों में सामाजिक अन्याय एवं सामाजिक विषमता की घटनाएं दृष्टिगत होती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद आज भी एक सामाजिक यथार्थ है। एक श्वेत व्यक्ति अपने समकक्ष एक अश्वेत व्यक्ति को वह सम्मान नहीं देता जिसका वह जायज रूप से हकदार है। भारत में स्वतंत्रता एवं समानता सम्बन्धी विविध प्रावधानों के बावजूद एक अनुसूचित जाति के व्यक्ति को समाज में एक सवर्ण के समकक्ष स्थान प्राप्त नहीं है, भले ही वह सवर्ण व्यक्ति के समान शिक्षित एवं समपन्न हो।[3]

सदियों से दलितों को समाज का एक उपेक्षित भाग माना गया है। समाज की इस मानसिकता के पीछे हिन्दू धर्मग्रन्थों में प्रतिपादित यह मान्यता उत्तरदायी है कि समाज के प्रमुख चार वर्णो, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र की रचना ईश्वर के चार अंगों मुख, भुजा, पेट और पैर से हुई। तदनुरूप समाज में उनके कर्म और स्थान सुनिश्चित हुए हैं, जो अपरिवर्तनीय है।[4] सामाजिक संरचना में ब्राह्मण को श्रेष्ठ तथा शूद्र को निम्नतम स्थान दिया गया। ब्राह्मण का कार्य अध्ययन-अध्यापन, क्षत्रिय का कार्य शासन-सुरक्षा, वैश्य का कार्य व्यापार-वाणिज्य तथा शूद्र का कार्य उक्त तीनों वर्णो की सेवा माना गया। सेवा कार्यो का कमतर आंकलन करने के कारण शूद्र वर्ग को हेय माना गया। जाति की रचना श्रेणी-कृत असमानता के सिद्धान्त पर आधारित होने के कारण ब्राह्मण को श्रेष्ठ तथा शूद्र को निकृष्ट माना गया। सामाजिक ढाँचे में जाति की एक निर्दिष्ट एवं बहुत कुछ अपरिवर्तनीय स्थिति

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन विभाग) वनस्थली विद्यापीठ, निवाई, टौंक (राज.) भारत
** शोध निदेशक, एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन विभाग) वनस्थली विद्यापीठ, निवाई, टौंक (राज.) भारत

थी। व्यक्ति जिस जाति में जन्म लेता था आजीवन उसका सदस्य होता था और उसके अरनुरूप समाज में उसकी स्थिति होती थी। परम्परागत समाज में भौतिक समृद्धि बहुत कुछ जातियों की सामाजिक स्थिति के अनुरूप थी। जो जाति सामाजिक रचनाक्रम में ऊपर थी, उसके पास सामान्यतया शक्ति भी अधिक थी और भौतिक संसाधन भी अधिक थे। शिक्षक, पुरोहित, विधान-निर्माता तथा राजा के सलाकार के रूप में ब्राह्मणों के पास धन वैभव की स्थिति थी। क्षत्रियों के पास राजनैतिक शक्ति तो थी ही साथ ही भूमि, वन-सम्पदा व सम्पत्ति के अन्य स्त्रोतों पर भी उनका स्वामित्व था। कृषक एवं व्यापारी के रूप में वैश्य भी सम्पन्न थे। शूद्रों एवं अन्त्यज्यों को सम्पत्ति पर स्वामित्व का अधिकार नहीं होने के कारण जीविकोपार्जन के लिये शारीरिक श्रम या सवर्ण वर्गो की सेवा कार्य पर ही निर्भर रहना पड़ता था।[5]

समाज में शूद्रों की स्थिति के बारे में विश्व प्रकाश गुप्ता एवं मोहिनी गुप्ता ने अपनी पुस्तक 'भीमराव अम्बेडकर: व्यक्ति और विचार' में लिखा है कि भारत में अछूतों की स्थिति दयनीय रही है। उनकी मुख्य रूप से तीन श्रेणियां रही हैं, पहली श्रेणी अस्पृश्यों की है अर्थात जिन्हें छुआ नहीं न जा सके, दूसरी श्रेणी में वे लोग हैं जिनके नजदीक भी न जाया जाए और तीसरी श्रेणी में वे लोग हैं जिन्हें देखा भी न जाए। भारत में विभिन्न भागों में उन्हें अलग-अलग नामों से पुकारा जाता था। उन्हें अंत्यज, पेरिया, अतिशूद्र, अवर्ण, नामशूद्र आदि कहा जाता था। उनके ऊपर कड़े सामाजिक प्रतिबंध थे। उनके स्पर्श, उनकी छाया, उनकी बोली तक से पहरेज था। वे कुछ घरेलू पशुओं को नहीं पाल सकते थे। आभूषण बनाने के लिए कुछ विशेष प्रकार की धातुओं का प्रयोग उनके लिए वर्जित था। उन्हें विशेष प्रकार की पोशाक पहननी पड़ती थी और बस्ती के बाहर गन्दे स्थानों पर रहना पड़ता था।[6]

अम्बेडकर गाँव को अन्धविश्वास, पिछड़ापन, अशिक्षा, सामाजिक संकीर्णता, जातिवाद तथा अस्पृश्यता का दुर्ग मानते थे। उनका कहना था कि गाँव का सामाजिक ढाँचा जाति पर आधारित है जिसमें ऊँची जाति के लोग अपनी उच्च सामाजिक स्थिति का लाभ उठाकर निम्न माने जाने वाली जाति के लोगों का अनेक प्रकार से शोषण करते हैं। उनके अपने अतिरिक्त सामाजिक विधान है, जो अस्पृश्य जातियों पर अनेक निर्योग्यतायें थोपते हैं। कानून एवं प्रशासन की पकड़ ढीली होने के कारण गाँवों में ऊँची जाति के लोगों को दलितों पर मनमानी करने की पूरी छूट मिल जाती है। गरीबी के कारण निम्न जाति के लोगों को बेगार व बंधुआ मजदूरी करने के लिये बाध्य होना पड़ता है।[7] भारतीय संविधान में अनेक प्रावधान करने के बावजूद आज भी आदिवासी और दलितों की सामाजिक स्थिति खराब बनी हुई है। आज भी उनमें इतनी ताकत नहीं है कि वे अपने पर हो रहे शोषण का विरोध कर सकें। भारत में सदियों से इन अस्पृश्य दलित जातियों पर अनेक सामाजिक-धार्मिक निर्योग्यताएं थोपी गईं तथा उन्हें पशुओं से भी बद्तर जीवन जीने को मजबूर किया गया। इन निर्योग्यताओं के परिणामस्वरूप ही इन जातियों को शिक्षा, धन, सम्पत्ति, मान-सम्मान, राजनीतिक वर्चस्व से दूर रखा गया।[8]

21वीं शताब्दी जिसे संचार, प्रौद्योगिकी एवं विकास की सदी कहा जाता है, में भी दलितों की स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं आया है। भारत में दलित कुल आबादी का 16.48 प्रतिशत है, जो देश की कुल आबादी के छठे भाग से भी ज्यादा है, परन्तु बिडम्बना यह है कि वे भारत के कुल भू-भाग के छठे भाग के भी मालिक नहीं है। जो जमीन उनके पास है वह भी सिंचाई एवं उपजाऊ भूमि के आधार पर निम्न स्तर की है। भूमि पर अधिकार नहीं होने के कारण अधिकांश दलित मजदूरी एवं सफाई से जुड़े निम्न स्तर के कार्यों यथा झाडू लगाना, मैला ढ़ोना, मरे जानवरों को उठाना एवं उनका चमड़ा उतारना, उसे साफ कर तैयार करना आदि में संलग्न है। आज भी देश के अधिकांश ग्रामीण क्षेत्रों में दलितों को सार्वजनिक कुओं से पानी नहीं भरने दिया जाता है और ना ही मंदिरों में प्रवेश करने दिया जाता है। कई गाँवों में आज भी नाई दलितों के बाल नहीं काटते तथा दलित दूल्हों को घोड़ी पर नहीं बैठने दिया जाता है, यहाँ तक कि शिक्षा के मंदिर विद्यालयों में भी दलित छात्र-छात्राओं के साथ दोयम दर्जे का व्यवहार किया जाता है। उनके बैठने के लिए अंतिम पंक्ति निर्धारित होती है तथा बैठने के लिए उन्हें दरी या टाट्-पट्टी नहीं दी जाती है।[9]

परम्परावादी समाज की रूढ़िवादिता एवं मिथ्या अहम् भाव के कारण समाज के एक वर्ग को सदियों से अमानुशिक जीवन जीने को मजबूर होना पड़ा। समाज के कमजोर पिछड़े वर्ग पर अत्याचार/अनाचार करना तथाकथित उच्च वर्ग ने अपना गौरव समझा तथा समाज की समस्त सुविधाओं और साधनों से दलितों को वंचित कर इन सब पर अपना एकाधिकार माना। खेत-खलिहान, धन-सम्पदा, शक्ति-सत्ता पर अपने एकाधिकार के कारण तथाकथित उच्चवर्ग सदैव समर्थ एवं शक्ति सम्पन्न रहा और इस शक्ति के बल पर इस वर्ग ने सदैव कमजोर-पिछड़े वर्गों पर अत्याचार किया।

राजतंत्र अथवा सामंती व्यवस्था के दौरान जब शासन शक्ति विशिष्ट व्यक्तियों तक ही सीमित थी, तब कमजोर-पिछड़े लोगों के साथ अन्याय/अत्याचार होना स्वाभाविक था, लेकिन जब स्वतंत्रता के बाद भारत में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की स्थापना हुई, जिसका आधार लोक अथवा जन है तो इस अत्याचारपूर्ण व्यवस्था को समाप्त हो जाना चाहिए था। इस लोकतांत्रिक व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वो शिक्षित हो अथवा अशिक्षित, चाहे वो शहरी हो अथवा ग्रामीण, चाहे वो धनवान हो या निर्धन, चाहे वो सवर्ण हो अथवा दलित, चाहे वो महिला हो या पुरूष, को शासन में सहभागिता का अधिकार प्राप्त है। संविधान एवं विधि के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति समान है, कोई उच्च अथवा निम्न नहीं है। संविधान प्रदत्त समान स्थिति के बावजूद समाज में जातीय विभेद एवं असमानता के आधार पर दलित वर्ग के साथ अमानुषिक व्यवहार किया जाता है। उनके साथ अनाचार एवं दुर्व्यवहार किया जाता है जिसका आभास भारत की नेशनल क्राइम रिकोर्ड ब्यूरो द्वारा प्रदत्त आंकड़ों से होता है।

भारतीय समाज की संरचना में निहित वर्ग वैमनस्य एवं कटुता की भावना के कारण जातीय/सम्प्रदाय आधारित हिंसा आम है, लेकिन समाज के कमजोर एवं हाशिये पर स्थित वर्गों अर्थात दलित वर्ग के विरूद्ध अपराध/अत्याचार की घटनाएं लगातार बढ़ती जा रही है। सम्पूर्ण संवैधानिक एवं कानूनी व्यवस्था के बावजूद दलित वर्ग के विरूद्ध अपराध का ग्राफ लगातार बढ़ता जा रहा है, जो समाज की विकृत मानसिकता की ओर संकेत करता है। नेशनल क्राइम रिकोर्ड ब्यूरो के आंकड़े इस विकृत मानसिकता जनित अपराधों की सत्यता को उजागर करते हैं।

राष्ट्रीय क्राइम रिकोर्ड ब्यूरो के आंकडों पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि दलित वर्ग के विरूद्ध मामलों की संख्या में यद्यपि बहुत अधिक वृद्धि नहीं हुई है तथापि कमी भी नहीं आई है। वर्ष दर वर्ष निरन्तर अत्याचार बढ़ रहे हैं यद्यपि गति धीमी है किन्तु वर्ष 2007 से 2016 के मध्य देखा जाये इन मामलों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई है। इन मामलों की संख्या 2007 में 35,563 थी जो वर्ष 2016 में बढ़कर 47,369 हो गई। देखा जाये 10 वर्षों में कुल मामलों में 11,806 की वृद्धि हुई है जो कि अत्यन्त

निराशाजनक है। इसी प्रकार यदि अनुसूचित जाति के मामलों को देखा जाए तो वर्ष 2007 में इन मामलों की संख्या 30,031 थी जो वर्ष 2016 में बढ़कर 40,801 हो गयी, अनुसूचति जाति के विरूद्ध मामलों की संख्या में 10,770 की वृद्धि दर्ज की गई। यदि अनुसूचित जनजाति के विरूद्ध इन मामलों को देखा जाए तो वर्ष 2007 में इनकी संख्या 5,532 थी जो वर्ष 2016 में बढ़कर 6,568 हो गई, इनके विरूद्ध कुल 1036 की वृद्धि दर्ज की गई। यह तथ्य दृष्टव्य है कि ये वे मामले हैं जो कि पुलिस के समक्ष दर्ज किये गये किन्तु ऐसे असंख्य मामले होते हैं जो वास्तव में दर्ज ही नहीं किये जाते या जिनका कोई रिकॉर्ड ही नहीं होता। वस्तुतः भारत में ये सामाजिक न्याय की एक विपरीत स्थिति को प्रस्तुत करते हैं। यहाँ एक बात ओर ध्यान देने योग्य है कि नेशनल क्राइम रिकोर्ड ब्यूरो द्वारा 2016 के बाद से अपराधों के आंकड़े जारी नहीं किये गये है जबकि तीन वर्षों का समय व्यतीत हो गया है।

इस प्रकार भारतीय समाज में अनुसूचित जाति-जनजाति के विरूद्ध अपराधों की संख्या में निरन्तर वृद्धि इस बात को इंगित करती है कि समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा आज भी उपेक्षा का शिकार हो रहा है। उपेक्षा एवं वैमनस्य की भावना अपराध के रूप में घटित हो रही है दलितों के प्रति बढ़ते अपराध इस बात को भी इंगित करते हैं कि भारतीय समाज में जातीय सद्भावना एवं सहयोग के स्थान पर घृणा एवं वैमनस्य का जहर निरन्तर बढ़ता जा रहा है। शिक्षित एवं सभ्य कहे जाने वाले समाज में इस प्रकार की घटनाएं दुर्भाग्यपूर्ण है। जब तक समाज में सहयोग, सद्भावना एवं भ्रातृत्व की भावना का विकास नहीं होता, सामाजिक न्याय की स्थापना कोरी कल्पना है। अम्बेडकर ने सामाजिक न्याय की स्थापना के लिये त्रयी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था। यह त्रयी सिद्धान्त है: स्वतंत्रता, समानता एवं भ्रातृत्व भाव। सहयोग एवं भ्रातृत्व के भाव के आधार पर ही समाज में समानता आएगी तथा समतावादी समाज में ही सभी व्यक्ति स्वतंत्रता का वास्तविक भोग कर पाएंगे।

उपर्युक्त घटनाए एवं आंकडे भारत में दलित वर्ग पर हो रहे अत्याचार के कुछ उदाहरण मात्र हैं जो भारत में सामाजिक न्याय की वास्तविक स्थिति को समझने में सहायता कर सकते हैं। सामान्यतः वर्तमान में एक आम धारणा यह विकसित हो गई है अब भारत में सामाजिक न्याय कायम हो चुका है और जाति पर आधारित अत्याचार समाप्ती की ओर है, वास्तविक स्थिति इसके विपरीत ही नजर आती है। यद्यपि यह कहना गलत होगा कि स्थिति में कुछ भी सुधार ही नहीं हुआ है, संवैधानिक एवं वैधानिक प्रावधानों के कारण स्थिति में सुधार अवश्य हुआ है। दलितों की आर्थिक स्थिति भी मजबूत हुई है और कुछ सवर्ण वर्ग के लोग भी उनके साथ हैं जो जातिगत भेदभाव को उचित न मानकर इन वर्गों के साथ समान व्यवहार भी करते हैं। इसके बावजूद स्थिति में अभी आशाजनक परिवर्तन आना शेष है, वस्तुतः भारतीय समाज की स्तरीकृत जाति व्यवस्था में परिवर्तन, निम्न वर्गों के प्रति समान व्यवहार एवं उनकी संसाधनों तक पहुँच से ही भारत में सामाजिक न्याय की स्थापना संभव है। किन्तु भारत में दलित वर्ग की उपर्युक्त स्थिति इसके विपरीत प्रस्थापना प्रदान करती है और यही बात दलितों के विरूद्ध होने वाले अपराधों से भी सिद्ध होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पूरणमल, मानवाधिकार, सामाजिक न्याय और भारत का संविधान पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2003, पृ. 107
2. रामगोपाल सिंह, सामाजिक न्याय एवं दलित संघर्ष, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2010, पृ.9
3. रामागोपाल सिंह, वही, पृ. 12
4. आर.जी. सिंह, सामाजिक न्याय, लोकतंत्र और जाति व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृ. 178
5. रामगोपाल सिंह, वही, पृ. 35-36
6. विश्व प्रकाश गुप्ता एवं मोहिनी गुप्ता, भीमराव अम्बेडकरः व्यक्ति और विचार, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृ. 120
7. रामगोपाल सिंह, वही, पृ. 112
8. धर्मवीर चंदेल, मानवाधिकार में अम्बेडकर का योगदान, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2019, पृ. 34
9. सुनील महावर, भारत में दलित मानवाधिकार एवं सामाजिक न्याय, राज्यशास्त्र समीक्षा, राजनीति विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, अंक-33, नं. 1-2, जनवरी-दिसम्बर-2003 (जुलाई 2012 में प्रकाशित), पृ. 176

****

सरकारी एवं निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरत युवाओं का शैक्षणिक प्रदर्शन

डॉ. बी. के. गुप्ता*

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध लेख सरकारी एवं निजी महाविद्यालयों में अध्ययन कर रहे विद्यार्थियों के शैक्षणिक प्रदर्शन से जुड़ा हैं। शिक्षा प्रदाता दो प्रकार के होते हैं, सरकारी और निजी। निजी महाविद्यालय सरकार के आंशिक वित्त पोषण से चलाए जा सकते हैं (जिन्हें एडेड कहा जाता है) और पूर्ण रूप से स्व वित्त पोषित भी हो सकते हैं (जिन्हें अन-एडेड कहा जाता है)। सरकारी महाविद्यालयों की स्थापना और प्रबंधन सरकार करती है। वही इन महाविद्यालयों को अनुदान भी देती है। जब सरकार के पास शिक्षा की सार्वभौमिक सुविधा प्रदान करने के लिए संसाधन सीमित होते हैं तो निजी क्षेत्र की मदद ली जाती है। अधिकतर अर्थव्यवस्थाओं में निजी क्षेत्र लाभ के उद्देश्य से काम करता है। लेकिन जब शिक्षा की बात आती है, तो निजी क्षेत्र से यह अपेक्षा की जाती है कि वह गैर लाभकारी उद्देश्य से कार्य करेगा। भारत का उच्च शिक्षा तंत्र अमेरिका, चीन के बाद विश्व का तीसरा सबसे बड़ा उच्च शिक्षा तंत्र है। विगत 50 वर्षों में देश के विश्वविद्यालयों की संख्या में 11.6 गुना, महाविद्यालयों में 12.5 गुना, विद्यार्थियों की संख्या में 60 गुना और शिक्षकों की संख्या में 25 गुना वृद्धि हुई है। सभी को उच्च शिक्षा के समान अवसर सुलभ कराने की नीति के अन्तर्गत सम्पूर्ण देश में महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है और साथ ही उच्च शिक्षा की अवस्थापना सुविधाओं पर विनियोग भी तदनुरुप बढा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) और अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (एआईसीटीई) उच्च शिक्षा के मुख्य विनियामक हैं। इसके अतिरिक्त विभिन्न व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को विनियमित करने के लिए 15 व्यावसायिक परिषदें हैं। संसद के अधिनियमों द्वारा स्थापित सांविधिक निकायों में भारतीय मेडिकल परिषद, भारतीय बार परिषद, वास्तुकला परिषद इत्यादि शामिल हैं।

भारत में युवा और शिक्षा – भारतवर्ष में 13 से 35 वर्ष की आयु वाले लगभग 42 करोड़ यूवाओं की मानवीय पूँजी है जो कि दुनिया के किसी भी अन्य देश की तुलना में बहुत अधिक है अर्थात हमारा देश इन दिनो सर्वाधिक युवा देश है जिसमें से 70 प्रतिशत (लगभग 29 करोड़) ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते हैं। गॉव में रहने वाले युवाओं तथा शहरों में निवास करने वाले लगभग 13 करोड़ युवा दोनो के रहन-सहन, क्षमता, रूचि, परिवेश, शिक्षा आदि एकदम अलग है। गॉवो की शिक्षा व्यवस्था और शहरों की सुविधाए, दोनो में जमीन-आसमान का फर्क है। इसलिए ग्रामीण युवाओं को आज शिक्षा एवं रोजगार के पर्याप्त अवसर प्राप्त नही हो पा रहे हैं और वे विकास की दौड़ में पीछे छूट रहे हैं। जबकि किसी भी राष्ट्र की युवा शक्ति उसके रचनात्मक कार्यो का आधार होती है परन्तु जब युवाओं को अपनी योग्यता व शक्ति का सदुपयोग करने का अवसर नही मिलता तो वह अपने वास्तविक मार्ग से भटक जाते हैं। ऐसी परिस्थितियों में युवा शक्ति रचनात्मक कार्यो में व्यस्त न रहकर विध्वंसक कार्यो की ओर अग्रसर होती है।

भारत में उच्च शिक्षा का परिदृश्य – वर्तमान में देश में 47 केन्द्रीय विश्वविद्यालय, 123 डीम्ड विश्वविद्यालय, 288 निजी विश्वविद्यालय एवं 370 राज्य विश्वविद्यालय कार्य कर रहे हैं। राज्य विश्वविद्यालयों को छोड़कर अन्य विश्वविद्यालय महाविद्यालयों की सम्बद्धता के कार्य से मुक्त हैं। केन्द्रीय, डीम्ड एवं निजी विश्वविद्यालयों का स्वरूप लगभग एक जैसा ही है। इन विश्वविद्यालयों के शिक्षकों को सिर्फ शिक्षण एवं शोध कार्य करना होता है, जिसके कारण इनके कार्यो में राज्य विश्वविद्यालयों के शिक्षकों की तुलना में गुणवत्ता बहाल होने की अधिक संभावना रहती है। यूजीसी द्वारा शिक्षकों की नियुक्तियों एवं प्रमोशन के लिये जो अर्हतायें रखी गई हैं वे सभी विश्वविद्यालय के शिक्षकों के लिये एक जैसी हैं, जबकि राज्य विश्वविद्यालयों के शिक्षकों को सम्बद्ध महाविद्यालयों का निरीक्षण, नियुक्तियां, परीक्षा, उड़नदस्ता एवं परीक्षा परिणाम सहित लगभग सभी दायित्वों का निर्वहन करना पड़ता है। सम्बद्धता के इस अतिरिक्त कार्य का खामियाजा राज्य विश्वविद्यालयों के शिक्षण विभागों को भुगतना पड़ रहा है तथा ये विश्वविद्यालय अपने शिक्षण एवं शोध में वह गुणवत्ता नहीं रख पा रहे हैं, जिनके लिये इनकी स्थापना की गई है। केन्द्रीय विश्वविद्यालयों एवं केन्द्रीय संस्थानों की तुलना में राज्य विश्वविद्यालयों को बहुत कम अनुदान मिलता है। अनुदान कम मिलने के कारण पैसे की जरूरत पूरा करने के लिए राज्य विश्वविद्यालय कई तरह के स्ववित्तीय पाठ्यक्रम प्रारंभ करते जा रहे हैं। चूंकि सालों से इन स्ववित्तीय पाठ्यक्रमों में स्थायी शिक्षकों की नियुक्तियां नहीं हुई हैं इसलिए सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि बिना स्थायी शिक्षकों के ये विश्वविद्यालय इन पाठ्यक्रमों में कितनी गुणवत्ता रख पा रहे होंगे।

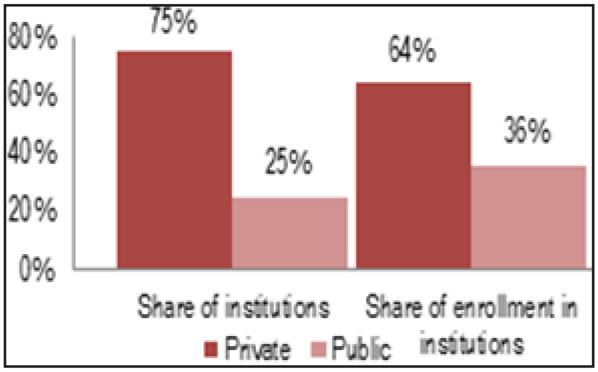

Sources: AISHE 2014; PRS.

आंकड़े प्रदर्शित करते हैं कि वर्तमान में निजी क्षेत्र उच्च शिक्षा की

* एसोसिएट प्रोफेसर (शिक्षा) जे. एन. एम. पी. जी. कॉलेज, बाराबंकी (उ.प्र.) भारत

उपलब्धता में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। वर्ष 2014 तक देश में कुल 36,812 कॉलेज थे। इनमें से 20,390 निजी और 6,768 सरकारी कॉलेज थे।11उल्लेखनीय है कि इन आंकड़ों से यह प्रदर्शित नहीं होता कि सरकारी या निजी संस्थानों में कितनी सीटें उपलब्ध थीं और उनमें से कितनी सीटें भरी गईं या खाली रहीं। इसके अतिरिक्त विभिन्न राज्यों में विश्वविद्यालय की स्थापना से जुड़ी विनियामक शर्तें भिन्न-भिन्न हो सकती हैं। यह भी एक कारण हो सकता है कि कुछ राज्यों में अन्य राज्यों की तुलना में सरकारी/ निजी संस्थानों में दाखिले की दर अधिक है।

भारत की शिक्षा प्रणाली – भारत की शिक्षा प्रणाली खासकर स्कूली शिक्षा पर बातें करते समय हमें बहुत ही कठिन सवालों से गुजरना होगा। मुश्किल यह है कि शिक्षा के कठिन सवालों पर देश में हमने लंबे समय से व्यापक स्तर पर कोई बहस ही नहीं चलायी है, समय-समय पर जब कोई नीति घोषित होती है तो उत्सवधर्मी भाव से कुछ सेमीनार,कन्वेंशन,संगोष्ठियां हो जाती हैं, कुछ प्रस्ताव संसद या विधानसभा में पास हो जाते हैं लेकिन गंभीर विस्तृत चर्चा नहीं होती,जनांदोलन नहीं होता।

हमने आजादी के बाद शिक्षा का जो ढांचा चुना और नीतिगत रास्ता चुना उस समय भी निचले स्तर पर कोई बड़ी बहस नहीं हुई। बाद में 1990-91 में भूमंडलीकरण की प्रक्रिया के साथ नत्थी होकर हमारे शासकों ने जो शिक्षा का मार्ग चुना उस समय भी जनबहस नहीं हुई,इस बात को कहने का मकसद यह है कि हमारा समाज जानता ही नहीं है कि हमारे यहां शिक्षा का क्या हाल है और उसके सामने किस तरह की चुनौतियाँ हैं।

लोकतांत्रिक शिक्षा – लोकतांत्रिक शिक्षा का लक्ष्य है आलोचनात्मक विवेक पैदा करना। जबकि उपभोक्ता केन्द्रित मौजूदा शिक्षा का लक्ष्य है सर्वसत्तावादी विवेक पैदा करना। इसलिए मौजूदा मॉडल को अंदर और बाहर हर स्तर पर आलोचना के केन्द्र में रखने की जरुरत है। लोकतांत्रिक शिक्षा का परिवेश सामाजिक बहस के नए मुद्दों को जन्म दे सकता है,लोकतंत्र में पॉजिटिव भूमिका निभाने का माहौल बना सकता है। शिक्षकों की पॉजिटिव इमेज बना सकता है और छात्र को नागरिक बना सकता है।

उच्च शिक्षा से जुड़े अध्ययन – भारत में बेरोजगारी की दर लगातार बढ़ रही है। एक रिपोर्ट के अनुसार, कई सालों तक बेरोजगारी दर दो या तीन प्रतिशत के आसपास रहने के बाद साल 2015 में पांच प्रतिशत पर पहुंच गई। इतना ही नहीं युवाओं में बेरोजगारी की दर 16 प्रतिशत है। अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के सतत रोजगार केंद्र से इस अध्ययन से जुड़ी रिपार्ट जारी की गई है। इस अध्ययन का नाम स्टेट ऑफ वर्किंग इंडिया, 2018 (एसडब्ल्यूआई) है।

हफिंग्टन पोस्ट की रिपोर्ट के अनुसार, रिपोर्ट में कहा गया है कि 2015 में पांच प्रतिशत की बेरोजगारी दर थी, जो पिछले 20 वर्षों में सबसे ज्यादा देखी गई है। इस रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि नौकरियों की कमी निराशाजनक वेतनमान से बढ़ी है। 82 प्रतिशत पुरुष और 92 प्रतिशत महिलाएं प्रति माह 10,000 रुपये से भी कम कमा पा रहे हैं।

रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में वृद्धि के परिणामस्वरूप रोजगार में वृद्धि नहीं हुई है। अध्ययन में कहा गया है कि जीडीपी में 10 प्रतिशत की वृद्धि के परिणामस्वरूप रोजगार में 1 प्रतिशत से भी कम वृद्धि हुई है।

शोधकर्ताओं, नीति निर्माताओं, पत्रकारों और नागरिक समाज कार्यकर्ताओं के एक समूह द्वारा लिखी गई यह रिपोर्ट, मुख्य रूप से राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (एनएसएसओ) और श्रम विभाग के रोजगार-बेरोजगारी सर्वेक्षण (ईयूएस) से डेटा पर तैयार किया है। ये सर्वे आखिरी बार 2015-16 में हुआ था।

स्टेट ऑफ वर्किंग इंडिया की रिपोर्ट में बताया गया है, पारंपरिक रूप से भारत में बेरोजगारी नहीं बल्कि अंडर एंप्लॉयमेंट और कम मजदूरी समस्या थी। उच्च शिक्षा प्राप्त और युवाओं में बेरोजगारी 16 प्रतिशत तक पहुंच गई है। बेरोजगारी पूरे देश में हैं, लेकिन ज्यादा प्रभावित उत्तरी राज्य हैं।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. युवाओं के शैक्षणिक विकल्प के तौर पर निजी और सरकारी महाविद्यालयों के चयन के मापदण्डों को जानना।
2. निजी और सरकारी महाविद्यालयों के युवाओं के शैक्षणिक प्रदर्शन को जानना।

प्राक्कल्पनाएँ :

1. युवा, शिक्षा में बेहतर प्रदर्शन और अंक पाने हेतु निजी महाविद्यालयों का चयन करते हैं।
2. निजी महाविद्यालयों के युवाओं का सरकारी महाविद्यालयों के युवाओं के तुलना में शैक्षणिक प्रदर्शन का स्तर बेहतर रहता है।

न्यादर्श – न्यादर्श हेतु उद्धेश्यपूर्ण निदर्शन की विधि को प्रयोग में लाया गया हैं जिसमें उत्तार प्रदेश के लखनऊ जिले के 2 निजी और 2 सरकारी महाविद्यालयों का चयन किया गया है जिसमें 2018 से 19 शैक्षणिक सत्र के प्रथम वर्ष के एक ही विषय वर्ग के 25 युवा और 25 युवतियों का निजी महाविद्यालय से चयन किया गया इसी प्रकार 2018 से 19 शैक्षणिक सत्र के प्रथम वर्ष के 25 युवा और 25 युवतियों का सरकारी महाविद्यालयों से चयन कर कुल 100 युवाओं के शैक्षणिक प्रदर्शन का अध्ययन किया गया है।

तथ्य संकलन – प्राथमिक तथ्य संकलन हेतु 5 बिन्दू थ्रस्टर्न स्केल का प्रयोग कर प्रश्नावली-प्रदर्शन मापनी का प्रयोग करते हुए महाविद्यालयों की घर से दूरी,कक्षा-कक्ष की स्थिति, विद्यार्थियों की उपस्थिति, अध्यापकों की उपलब्ध्ता, सत्र लेने का तरीका, आंतरिक मूल्यांकन जैसे बिन्दूओं को सम्मिलित कर वार्षिक परिणाम की श्रेणी के स्तर को आधार बनाया गया है। थ्रस्टर्न स्केल में अंकों को दस प्रकार भार दिया गया है। अंक 1 बहुत अच्छा नहीं, अंक 2 अच्छा नहीं, 3 अंक सामान्य, 4 अंक अच्छा, 5 उत्कृष्ट प्रदर्शन का स्तर है।

सारणी 01 – सरकारी एवं निजी महाविद्यालय आधारभूत तुलना

आधारभूत तुलना	प्रदर्शन	
	सरकारी महाविद्यालय अंक	निजी महाविद्यालय अंक
महाविद्यालयों की घर से दूरी	2	4
कक्षा-कक्ष की स्थिति	3	3
विद्यार्थियों की उपस्थिति	2	4
अध्यापकों की उपलब्ध्ता	1	5
सत्र संचालन	2	4
कुल	10	20

आधारभूत तुलना – सारणी संख्या 01 के अनुसार अवलोकन के आधार पर सरकारी एवं निजी महाविद्यालयों की आधारभूत सेवाओं की तुलना की गई जिसके अनुसार यह पाया गया कि सरकारी महाविद्यालयों की दूरी निजी महाविद्यालयों से अधिक पायी गई। कक्षा-कक्ष की स्थिति, निजी और

सरकारी महाविद्यालयों में समान पाई गई। अध्यापकों की तुलना में निजी महाविद्यालयों का प्रदर्शन बहुत अच्छे स्तर का रहा जबकि सरकारी महाविद्यालयों की स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी। सरकारी महाविद्यालयों में सत्र संचालन का स्तर अच्छा नहीं पाया गया और निजी महाविद्यालयों का प्रदर्शन अच्छे स्तर का पाया गया। अत: सारणी 01 से यह प्रदर्शित होता है कि आधारभूत सेवाओं में निजी महाविद्यालय सरकारी महाविद्यालयों से आगे हैं।

शैक्षणिक प्रदर्शन – सारणी संख्या 02 में जिन महाविद्यालयों की आधारभूत सेवाओं की तुलना की गई उन्हीं सरकारी और निजी महाविद्यालयों के युवक-युवतियों के वार्षिक परीक्षा के परिणाम के शैक्षणिक प्रदर्शन की तुलना की गई हैं।

सारणी 02 – प्रथम वर्ष वर्षिक परिक्षा के आधार पर शैक्षणिक प्रदर्शन

शैक्षणिक प्रदर्शन	सरकारी महाविद्यालय		निजी महाविद्यालय	
	युवक 25	युवतियाँ 25	युवक 25	युवतियाँ 25
प्रथम श्रेणी	5	6	13	16
द्वितीय श्रेणी	10	7	8	7
तृतीय श्रेणी	5	9	2	2
कम्पारमेंट	3	2	2	0
अनुत्तीर्ण	2	1	0	0
कुल	25	25	25	25

सारणी संख्या 02 के अनुसार सरकारी महाविद्यालय से 25 युवकों में से 5 युवक और 25 युवतियों में से 6 युवतियाँ प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए है जबकि निजी महाविद्यालय से 25 युवकों में से 13 युवक और 25 युवतियों में से 16 युवतियाँ प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए है। सरकारी महाविद्यालय से 25 युवकों में से 10 युवक और 25 युवतियों में से 7 युवतियाँ द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुए है जबकि निजी महाविद्यालय से 25 युवकों में से 8 युवक और 25 युवतियों में से 7 युवतियाँ द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुए है। सरकारी महाविद्यालय से 25 युवकों में से 5 युवक और 25 युवतियों में से 9 युवतियाँ तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुए है जबकि निजी महाविद्यालय से 25 युवकों में से 2 युवक और 25 युवतियों में से 2 युवतियाँ तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुए है। सरकारी महाविद्यालय से 25 युवकों में से 3 युवक और 25 युवतियों में से 2 युवतियों को कम्पारमेंट मिला है जबकि निजी महाविद्यालय से 25 युवकों में से 2 युवकों को कम्पारमेंट मिला है। सरकारी महाविद्यालय से 25 युवकों में से 2 युवक और 25 युवतियों में से 1 युवतियाँ अनुत्तीर्ण घोषित किया गया हैं। अत: उक्त सारणी से यह ज्ञात होता है कि निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरत युवाओं का शैक्षणिक प्रदर्शन सरकारी महाविद्यालयों में अध्ययनरत युवाओं से बेहतर है।

निष्कर्ष :

1. विद्यार्थियों के लिए सरकारी महाविद्यालयों की दूरी निजी महाविद्यालयों से अधिक पायी गई।
2. कक्षा-कक्ष की स्थिति, निजी और सरकारी महाविद्यालयों में समान पाई गई। निजी महाविद्यालयों के अध्यापकों का प्रदर्शन बहुत अच्छे स्तर का रहा।
3. आधारभूत सेवाओं में निजी महाविद्यालय सरकारी महाविद्यालयों से आगे हैं।
4. अत: उपरोक्त कारणों से निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरत युवाओं का शैक्षणिक प्रदर्शन सरकारी महाविद्यालयों में अध्ययनरत युवाओं से बेहतर है।

सुझाव :

1. विद्यार्थियों के लिए सरकारी महाविद्यालयों की उपलब्धता उच्च माद्यमिक विद्यालयों के पास की जा सकती है।
2. सरकारी महाविद्यालयों में अध्यापकों की नियुक्ति समय-समय पर हो।
3. आधारभूत सेवाओं में सरकारी महाविद्यालयों को सक्षम करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Single year age data, Population Enumeration Data (Final Population), 2011 Census of India.
2. "265th Report: Demands for Grants 2015-16 (Demand No. 60) of the Department of Higher Education", Standing Committee on Human Resource Development, April 23, 2015, http://164.100.47.5/ newcommittee/reports/EnglishCommittees/Committee%20on%20HRD/265.pdf.
3. Demands for Grants of Department of Higher Education, Expenditure Budget, http://indiabudget.nic.in/index.asp.
4. "Education at a Glance 2010", Organisation for Economic Cooperation and Development Indicators, 2010http:// www.oecd.org/ education/skills-beyond-school/ 45926093.pdf.
5. "All India Survey on Higher Education 2012-13 (Provisional)", Ministry of Human Resource Development, 2015

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

सरदार पटेल की बारदोली सत्याग्रह आन्दोलन में भूमिका

डॉ. मनोज दाधीच* जयश्रीबेन डी. मेवाड़ा **

प्रस्तावना – सरदार वल्लभ भाई पटेल प्रसिद्ध भारतीय स्वतंत्रता सेनानी एवं स्वतंत्र भारत के प्रथम गृहमंत्री थे। इनका जन्म 31 अक्टूबर, 1875 को गुजरात के एक छोटे से गांव नाड़ियाद में हुआ था। उनके पिता झावेर भाई एक किसान और माँ लाड़ बाई एक साधरण महिला थी। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा करमसद में सम्पन्न हुई। 1896 में आपने हाई स्कुल की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपके द्वारा वकालत की शिक्षा भी प्राप्त की गई। सन् 1917 में सरदार पटेल मोहनदास करमचन्द गाँधी से अत्यधिक प्रभावित हुए, जिससे उनके जीवन की दिशा परिवर्तित हो गई और उन्होंने सार्वजनिक जीवन में प्रवेश करते हुए कई महत्वपूर्ण जन एवं किसान आन्दोलनों को नेतृत्व प्रदान किया। राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में बारदोली सत्याग्रह का विशिष्ट स्थान है जिसके कुशल सचालन एव सफलता के लिए वल्लबभाई पटेल को सरदार की उपाधि से सुशोभित किया गया। बारदोली के किसान आदोलन के उपरान्त पटेल एक राष्ट्रीय नेता के रूप में उभर कर सामने आये। विनोबा भावे के अनुसार, 'पटेल के दो महत्वपूर्ण कार्यो ने उन्हे भारतीय इतिहास में अमर बन दिया। प्रथम था बारदोली की आदोलन और द्वितीय देशी रियासतो का एकीकरण।'[1] पट्टाभिसीतारमैया ने इसकी तुलना 'इजराइलियो का मिस्त्र से कैनान को बर्हिगमन तथा तार्तारो का जार की निरकुशता के विरुद्ध विद्रोह से किया।'[2]

बारदोली की जनता के स्वभाव एवं चरित्र के कारण 1921 ई. के असहयोग आन्दोलन के समय ही उसे मुख्य केन्द्र बनाने का निर्णय लिया था। लेकिन चौरी-चौरा के हिंसक कांड के कारण उन्होने अपना निर्णय स्थगित कर दिया। तभी से बारदोली ताल्लुका सरकार की नाराजगी का शिकार बन गया। 19 जुलाई, 1927 को बारदोली ताल्लुके का रिवीजनल सेटेलमेण्ट करके भूतकाल का बदला लेने के लिए लगान में 21-97 प्रतिशत की वृद्धि कर दी गयी।[2] लगान में की गयी इस भारी वृद्धि से ताल्लुके में खलबली मच गयी। इस अन्याय के विरुद्ध जनता ने सरकार से शिकायत की परन्तु सरकार ने कोई धयान नहीं दिया। 'गवर्नर जनरल ने कहा कि माल विभाग के निर्णयो में कोई हस्तक्षेप नही कर सकता उसका निर्णय अतिम है।'[3]

सरकार की नीतियो और नीयत से लोग तंग आ गये थे अंत उन्होने लगान वृद्धि के विरोध के लिए एक बार फिर वल्लभभाई के सहयोग की माँग की। वल्लभ भाई यद्यपि अभी बाढ सकट निवारण के कार्यों में लगे हुए थे, किन्तु किसानो की कठिनाइयों में निष्क्रिय बने रहना अथवा उन पर विपत्ति के समय कोई सहायता न देना, न केवल उनके स्वभाव के विपरीत था, अपितु वे इसे उपेक्षा का पाप समझते थे। एक स्थान पर अपनी अत:वेदना व्यक्त करते हुए अपने भाषण में जो शब्द कहे, उनको उनकी कृषक हित परायण प्रवृति का पूरा परिचय मिल जाता है। उनका कथन था कि, 'किसान डरकर दुख उठाए और जालिमो की लात खाये, उससे मुझे शर्म आती है। मेंरे जी में आता है कि किसानो को कगाल न रहने देकर खडा कर दू और स्वाभिमान से सिर ऊँचा करके चलने वाला बना दूं। इतना करके मरू तो अपना जीवन सफल समझूगा।'[4] सरदार पटेल ने किसानो का नेतृत्व ग्रहण करने के पूर्व कांग्रेस के वरिष्ठ कार्यकर्ताओ-कल्याण जी मेहता, कुनबेर जी मेहता तथा खुशहाल भाई मेहता से स्पष्ट कहा कि पहले वे बारदोली जाकर यह जाँच करे कि किसान सत्याग्रह करने के लिए तथा कष्ट उठाने के लिए तैयार है या नहीं। बारदोली कांग्रेस के जाँच रिपोर्ट मिलने पर वल्लभ भाई स्वयं बारदोली गये। वहाँ उन्होने एक सार्वजनिक सभा में जनता से सीधा प्रश्न किया कि वे प्रतिरोध के लिए कहाँ तक तैयार है। उन्होने इस सभा में सत्याग्रह की सफलता का आश्वासन न देकर किसानो के चरित्र, उनकी निष्ठा और लगन को चुनौती देते हुए स्पष्ट शब्दो में कहा कि, 'मेंरे साथ खेल न किया जाय। मैं ऐसे काम में हाथ नही डालता जिसमें जोखिम न हो। जो लोग जोखिम उठाने के लिए तैयार हो, मेंरे साथ आये मैं उनका साथ दूंगा।।[5]

इस प्रकार बहुत स्पष्ट शब्दो में अपनी बात कहकर तथा उन्हे सात दिनो की मोहलत देकर वल्लभभाई अहमदाबाद लौट आये। इसके बाद उन्होने गर्वनर जनरल को एक विस्तृत, विनम्र एवं मार्मिक पत्र लिखकर लगान वसूली स्थगित करने की मांग की पत्र में स्पष्ट रूप से उल्लेख कर दिया कि सम्भव है यह लडाई तीव्र रूप धारण कर ले जिसे रोकना आपके हाथ में है। इस पत्र के जवाब में गवर्नर के सेक्रेटरी ने कहा कि आपका पत्र निर्णय के लिए माल विभाग के पास भेज दिया गया है? किसानो की दी हुई सात दिन की अवधि पूरी होने के पश्चात् पटेल पुन: बारदोली पहुचे। वहाँ उन्होने लोगो से अलग-अलग बात कर, काफी राय मालूम कर, लोगो से घुमा-फिरा कर, तर्क-वितर्क ,कर उनके चेहरो, आँखो और दिलो में गहराई रो झॉककर देखा तो उन्हे विश्वास और निश्चय दिखाई दिया।।। लोगो के संयम, उत्साह, निश्चय और दृढता से प्रभावित हुए। फिर भी उन्होने लोगो को एक बार फिर सत्याग्रह में आने वाले संकटो के प्रति आगाह करते हुए कहा कि-'यह लडाई जबरदस्त खतरो से भरी पड़ी है। जोखिम भरा कार्य किया जाना तो अच्छा है किन्तु किया जाय तो किसी भी कीमत पर उसे पूरा करना चाहिये। हारोगे तो देश की लाज जायेगी और जीतोगे तो आपका भविष्य बनेगा। देश की इज्जत बढेगी। इसलिए सोच विचार कर जो करना चाहो सो करो।'[6]

इस प्रकार भली भॉति जॉच परखकर जब उन्हे लगा कि किसान आन्दोलन के लिए तैयार है तब सरदार साहब गाँधी जी का आर्शीवाद लेने

* सहायक आचार्य (इतिहास) पेसिफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी (इतिहास) पेसिफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

के लिए अहमदाबाद गये। गाँधी जी परिस्थितियो और वल्लभ भाई के निश्चय दोनो से परिचित थे अत: उन्होने तत्काल कहा 'अब तो मेरे लिए सिर्फ इतनी इच्छा करना बाकी रह गया है कि विजयी गुजरात की जय हो।'[7]

गाँधी जी का आशीर्वाद मिलने के बाद आन्दोलन का समस्त भार सरदार पटेल के कन्धो पर था। अत व्यक्तिगत जानकारी हेतु 4 फरवरी, 1928 ई. को बारदोली ताल्लुके के समस्त किसानो की एक सभा बुलायी गयी। 'सभा में 80 गॉवो के प्रतिनिधि उपस्थित थे।'[8] इसके अतिरिक्त सभा में बम्बई धारा सभा के तीन सदस्य भीमभाई नाईक, दादूभाई देसाई तथा डॉ. दीक्षित भी थे। सभा की अधयक्षता करते हुए सरदार पटेल ने किसानो को सत्याग्रह का अर्थ, उसकी गम्भीरता तथा होने वाले कष्टो से अवगत कराया।

सरदार पटेल ने सत्याग्रह की शुरूआत 12 फरवरी, 1928 ई. को बारदोली ताल्लुके के समस्त प्रतिनिधियो की सभा के साथ की। सभा को सम्बोधित करते हुए पटेल ने प्रतिनिधियो को लगान न देने की सलाह दी। पटेल ने कहा 'याद रखिये इस लडाई को छोडकर आप कही हार गये तो सारे देश की नाक नीची हो जायेगी और यदि जीत गये तो सारे ससार में तुम्हारे देश का मस्तक ऊँचा होगा।'[9] सरकार के विरुद्ध एक होकर मुकाबला करने की सलाह देते हुए पटेल ने कहा कि 'सरकार के पास तो तोपे है, बन्दूके है, और हुकुमत है पर आपके पास सत्य का बल है, दुख सहने की शक्ति है। अब इन दो शक्तियो का सामना है। यदि आपको यह निश्चय हो कि आपके साथ अन्याय हो रहा है तो उसका सामना करना हमारा धर्म है। जालिम से जालिम सत्ता भी उस प्रजा के सामने नहीं टिक सकती जिसमें एकता है।'[10] सरदार सहिप ने प्रतिनिधियों को स्वयं के बल पर विश्वास करने की सलाह दी। सभा में सर्वसम्मतिको लगान न देने का प्रस्ताव पास किया गया।

प्रस्ताव पास होने के उपरान्त आन्दोलन की सफलता या असफलता का समस्त भार सरदार पटेल के ऊपर था। किसानो को जाग्रत करने के लिए सरदार पटेल ने बाकानेर, बराड, बडे कुऑ, बालोड आदि अनेक स्थानो का भ्रमण किया तथा जोशपूर्ण भाषण दिये। अपने भाषणो में पटेल ने विशेष रूप से दो बातो पर बल दिया। प्रथम सरकार जनता में मतभेद करके उन्हे विभाजित करने का प्रयास करेगी जिससे जनता को सतर्क रहना होगा। और द्वितीय सरकार नेताओ को गिरफ्तार करेगी तथा भूमि कुर्क करेगी। सरदार साहब ने कहा, हमारा अनुशासन ही जीत की कुजी है। सरकार के हर गाँव में केवल दो ही आदमी एक पटेल और दूसरा तलाही होते है जबकि हमारे पक्ष में सम्पूर्ण गाँव है।'

सरदार पटेल ने आन्दोलन की सफलता के लिए एक सुदृढ सगठन का निर्माण किया। जिसके तहत सम्पूर्ण ताल्लुके को पॉच मुख्य भागो में बॉटा गया और उन पर एक-एक मुख्य विभागापति रखा गया। इसके अतिरिक्त सत्याग्रह छावनियो की स्थापना की गयी। प्रत्येक छावनी एक या दो मुख्य कार्यकर्ताओ के अधीन रखी गयी।

नोट- कुछ प्रमुख छावनियो तथा उनके प्रमुखो का विवरण इस प्रकार है।

बराड गोहन लाल पाडया 2 बालदा-अम्बा लाल देसाई 3 बाकानेर-लाल भाई अमीन, शाह व अब्बास तैयब जी 4 स्यादला—फूलचन्द बाबू जी 5 बारदोली-डॉ. घिया व चीनाई 6 मोटा-बलवन्त राय 7 बाजीपुरा—नर्मदा शकर पाडया 8 सीकर-कल्याण जी बाल जी 9 आफबा-रतन जी भगाभाई पटेल 10 बुहारी-नारायण भाई पटेल 11 सरभण-रविशकर व्यास व डॉ. समन मेंहता 12 बापजी-दरबार गोपाल दास भाई 13 बालोत-चन्दुलाल देसाई।

सरदार द्वारा निर्मित यह संगठन कठोर अनुशासन में बंधा था। प्रत्येक स्वयं सेवक अपने नायक या विभागापति के आदेशो का पालन करता था। जो स्वयं सेवक आचरण में शिथिल पाया जाता था उसे तत्काल हटा दिया जाता था। अनुशासन की यह कठोरता मात्र स्वय सेवको तक ही सीमित न होकर वल्लभ भाई तथा विभागापति को भी अपने अधीन रखती थी।

सत्याग्रह की घोषणा के साथ ही बारदोली में एक प्रकाशन विभाग की स्थापना के साथ सत्याग्रह कार्यालय की भी स्थापना की गयी। सत्याग्रह कार्यालय द्वारा अधीन गाँवो के समाचार विभागापति द्वारा जाने लगे। प्रधान कार्यालय से प्रतिदिन साधनाये भेजी जाती जिसे विभागाधयक्ष के कार्यालयो द्वारा प्रतिदिन गॉव-गॉव में पहुँचा दी जाती। प्रकाशन विभाग प्रतिदिन 'सत्याग्रह खबर तथा सत्याग्रह पत्रिका' प्रकाशित करता था जो नि:शुल्क वितरित की जाती थी। प्रकाशन विभाग आन्दोलन को तीव्र गति देने का महत्वपूर्ण साधन था। सरदार पटेल तथा विभागापति गॉव-गॉव जाकर स्फूर्तिजनक भाषणो द्वारा जनता को उत्साहित करते थे।

वल्लभभाई की इस व्यूह रचना को तोड़ने के लिए सरकार ने किसानो को झुकाने हेतु कुर्की की नीतियॉ जारी किये और सर्वप्रथम यह नोटिस बनियो को दिये गये। यह चुनाव शायद इसलिए किया गया कि बनिया कमजोर और डरपोक होते है। जब्ती की नोटिस पाते ही वे घुटने टेक देंगे। परन्तु उन्होने भी अन्य जातियो की भॉति साहस का परिचय देते हुए घुटने टेकने से साफ इन्कार कर दिया। मात्र तीन व्यक्तियो ने लगान जमा किया जो बाद में पछताये भी। 17 फरवरी 1928 को रेवन्यू विभाग के सेक्रेटरी जे.डब्लू. स्मिथ ने सरदार पटेल को पत्र लिखा। उसने सरदार के सुझावो को अस्वीकार करते हुए कहा कि सरकार अब बढे हुए लगान को स्थगित नहीं कर सकती और न ही वह नये बन्दोबस्त पर किसी तरह की रियासत देने के लिए तैयार है। पत्र में पटेल तथा अन्य सत्याग्रहियो पर बाहरी व्यक्ति होने का आरोप भी लगाया गया। गाँधी जी ने इस आरोप को अपमान की सज्ञा दी। सरदार साहब ने सरकार को उनके गलत होने को सिद्ध करने की चुनौती दी।

जब सरकार द्वारा जारी कुर्की के आदेश की तामील नहीं हुई तो उसने सगठित रूप से भैसे या चल सम्पत्ति जब्त करना प्रारम्भ किया। जनता को आतंकित करने के लिए पठानो को बाहर से बुलाया गया। बारदोली जैसे हिन्दू बाहुल इलाके में मुसलमान अफसरो तथा पठानो को बुलाकर जनता में फूट डालने का कुचक्र रचा गया। लोगो को झूठे मुकदमें में फसाये गये तथा सजाये दी गयी। इस प्रकार सरकार का दमनचक्र कठोर होता जा रहा था तो जनता में दिन प्रतिदिन नवीन उत्साह पैदा हो रहा था। सरदार पटेल के भाषण ही मुर्दो में भी जान डाल देते थे। पुरुष और स्त्रिया उन्हे अपना इष्ट देव समझने लगे थे। महादेव जोशी ने अपनी 'बारदोली की कहानी' में इन अविस्मरणीय सभाओ तथा भाषणो का वर्णन किया है। उस समय पटेल के भाषणो में सिह जैसी गर्जना थी। एक भाषण में उन्होने कहा कि 'आज सरकार तो जगल में घूमने वाली हाथी जैसे मदमस्त हो गयी है जो अपनी चपेट में आने वाले हर किसी को कुचल देना चाहती है। पागल हाथी मद में यह मानता है कि उसने शेर-चीते को मार डाला है तो उसके सामने मच्छर की क्या गिनती। परन्तु शक्तिशाली हाथी भी मच्छर के कान में घुस जाने पर तडप-तडप कर सूढ पछाड़ते हुए जमीन पर लोटने लगता है।' मैं आपकी प्रकृति का नियम बताता हूँ आप सब किसान होने के कारण जानते है कि जब थोडे से बिनौले जमीन में गडकर व सडकर नष्ट हो जाते है तब खेत में कपास पैदा होती है। बालोड में एक सभा को सम्बोधित करते हुए उन्होने कहा कि 'सरकार

यदि 15 रुपये के वेतन पर भाडे के सिपाही भरती करके फौज खडी करती है और वे ही सिपाही किसी समय और स्वार्थ के बिना लडाई के मैदान में जाकर टपाटप मरते है तो आप लोग तो हजारो रुपयो के खातेदार है और आपको अपने वतन के खातिर, अपने बाल बच्चो की रोटी की खातिर लडना है। कौन अभागा होगा, जो यह लडाई नहीं लडेगा? मैं तो चाहता हूँ कि यह लडाई लम्बी चले। यहाँ बैठे-बैठे हम सारे गुजरात को सत्याग्रह का पाठ पढाये।' इस प्रकार वल्लभ भाई बारदोली की जनता को सत्याग्रह की भट्ठी में तपाया।

प्रारम्भ में वल्लभ भाई नहीं चाहते थे कि बारदोली सत्याग्रह को अखिल भारतीय स्वरूप प्रदान किया जाय। इसलिए उन्होने किसी भी राष्ट्रीय नेता को बारदोली आने का निमन्त्रण नही दिया। 8 मई 1928 ई. को उन्होने देशवासियो से धन के लिए अपील की। महात्मा गाँधी ने सरदार की अपील का समर्थन किया। परिणामस्वरूप देश, विदेश से चन्दा आने लगा। 12 जून 1928 ई. को पूरे देश में बारदोली दिवस मनाने का निर्णय किया गया। महात्मा गाधी ने लोगो से आग्रह किया कि '12 जून को आत्मशुद्धि यज्ञ करे। स्वेच्छा से अपना सामान्य काम-काज और धन्धा बन्द रखे और बारदोली की लडाई में सहायता देने के लिए धन का सग्रह करे।' कांग्रेस अध्यक्ष डॉ. एम.ए. अन्सारी ने समस्त प्रान्तीय कांग्रेस समितियो को अपने-अपने क्षेत्र में सार्वजनिक सभाये करने तथा चन्दा जमा करके बारदोली दिवस मनाने का परामर्श दिया।' 12 जून को पूरे देश में बारदोली दिवस मनाया गया। बम्बई के समस्त बाजार बन्द रहे। सरदार पटेल के साहसिक कदम की सर्वत्र प्रशसा की गयी और धन एकत्रित करके भेजा गया। वल्लभ भाई पटेल के आग्रह पर 11 जून तक 60 पटेलो तथा 8 तलाटियो ने अपने त्याग पत्र देकर सरकार को गम्भीर स्थिति का आभास कराया।

बम्बई धारा सभा के सदस्य के.एम. मुशी ने गवर्नर से बारदोली समस्या पर पत्र व्यवहार किया। गवर्नर के उत्तर से निराश होकर उन्होने 17 जून को धारा सभा की सदस्यता से त्याग पत्र दे दिया तथा वास्तविक स्थिति की जांच के लिए बारदोली का भ्रमण किया। बम्बई इडियन चैम्बर्स ऑफ कामर्स का एक शिष्ट मंडल एच.पी. मोदी की अधयक्षता में गवर्नर जनरल से मिलकर समस्या के समाधान हेतु गोलमेज सम्मेलन बुलाने का प्रस्ताव रखा। साथ में यह भी कहा ऐसे सम्मेलन में गाँधी और पटेल को अवश्य बुलाया जाय। गवर्नर ने सम्मेलन बुलाने के लिए शर्त के रूप में कहा कि पहले बढी हुई लगान किसी तीसरे पक्ष के पास जमा कर दिया जाय तो सम्मेलन बुलाया जा सकता है। पटेल ने गवर्नर की शर्त को अस्वीकार कर दिया। 'पटेल ने बाम्बे क्रानिकल के सम्वाददाता को बताया कि निकट भविष्य में समझौते की कोई आशा नहीं है। वह बारदोली की जनता के लिए न्याय चाहते है और जब तक सरकार जनता के आन्दोलन को कठोरता से दबाती रहेगी कोई समझौता सम्भव नहीं हो सकता।'[11]

बारदोली में जैसे-जैसे लोकमत शक्तिशाली होता गया वैसे-वैसे सरकार की स्थिति नाजुक होती गयी। सरकार यदि आन्दोलन का दमन करे तो उसकी बदनामी होती क्योकि आन्दोलनकारी अहिसक थे। यदि वह मॉग को स्वीकार कर लेती तो उसकी सार्वभौमिकता पर प्रश्न चिन्ह लग जाता। तथा उसका सारा आतंक, प्रभाव एव प्रतिष्ठा खत्म हो जाती जाता दि टॉइम्स ऑफ इडिया के सम्वाददाता कुछ समय के लिए बारदोली में रहे। उन्होने सधना भेजी की बारदोली के बोलशेलिज्म का प्रयोग प्रारम्भ हो गया है। पटेल वहाँ के लेनिन है।' सत्याग्रहियो के सरकारी प्रशासन को पूर्णतया पंगु बना दिया है। जुलाई के मधय तक स्थिति अत्यन्त विस्फोटक हो गयी।

18 जुलाई, 1928 ई. में सूरत को गवर्नर जनरल तथा उनके सलाहकारो और पटेल व उनके सहयोगियो के मध्य वार्ता हुई। वार्ता में सरकार की ओर से गवर्नर लेस्ली विल्सन कमिश्नर डब्लू डब्लू स्मार्ट तथा सूरत जिले के कलेक्टर हार्ट शोन उपस्थित थे। सत्याग्रहियो की ओर से सरदार पटेल के अलावा, अब्बास तैयब, शारदा बेन मेहता, भक्ति लक्ष्मी, गोपाल दास देसाई, मीठू बेन पेटिट और कल्याण जी मेहता थे।सरकार की ओर से शर्त रखी गयी कि 'पुराना लगान जमा कर दिया जाय और बढा हुआ लगान तीसरे पक्ष द्वारा सरकारी खजाने में जमा करवा दिया जाय और वर्तमान आन्दोलन बन्द कर दिया जाय तो सरकार जॉच समिति नियुक्त करने का आश्वासन देगी।'[12] 'जबकि वल्लभ भाई की ओर से शर्त रखी गयी कि बन्दी सत्याग्रहियो को बिना शर्त छोड दिया जाय, जिन लोगो के मवेशी बेचे गये है उन्हे मुआवजा दिया जाय, जो जमीने कुर्क की गयी है उन्हे मालिको को वापस दी जाये, जो पटेल व तलाटी नौकरी से निकाले गये है उन्हे नौकरी में रखा जाय तथा सरकार लगान वृद्धि के सबध में एक निष्पक्ष जॉच समिति नियुक्त करे।।[13] सरदार द्वारा प्रस्तुत शर्ते गवर्नर ने अस्वीकार कर दी अत: वार्ता असफल हो गयी। सरदार पटेल अपनी ओर से वार्ता तोडने के पक्ष में नहीं थे अत उन्होने विनम्र भाषा का पत्र लिखकर अपनी शर्ते को दोहराया साथ ही आग्रह किया। जब उन्हे उनसे मिलने से कुछ लाभ प्रतीत हो तो मुझे सूचित करे। परन्तु पटेल को कोई सफलता नहीं मिली।

सूरत वार्ता की असफलता के लिए समाचार पत्रो ने सरकारी नीति की आलोचना की। पायनियर ने लिखा कि 'किसानो द्वारा बढा हुआ लगान जमा करना तथा पुन वापस मॉगना अन्यायपूर्ण है।'[14] स्वराज्य के अनुसार 'गवर्नर समझौते की मनोदशा में नही है।' हिन्दू के शब्दो में,'गवर्नर ने समझौते का एक अवसर खो दिया।'[15]

इसी बीच 23 जुलाई, 1928 ई. को गवर्नर जनरल ने धारा सभा में भाषण करते हुए अपनी पुरानी शर्तो को पुन: दोहराया और जनता को 14 दिनो का समय देते हुए स्पष्ट किया कि यदि ये शर्ते न मानी गयी और समझौता न हो सका तो अपने कानून का पालन करवाने के लिए सरकार को जो उचित प्रतीत होगा। वह कदम उठाने से नहीं हिचकिचायेगी। अपने अधिकारो की रक्षा के लिए वह समस्त शक्ति का प्रयोग करेगी।'[16] गवर्नर के भाषण का जनता तथा प्रेस में तीव्र प्रतिक्रिया हुई। दूसरी ओर इग्लैण्ड में सहायक सचिव भारत मत्री अर्थ विटरटन ने कामन सभा में कहा कि 'लेस्ली ने जो शर्तो रखी है यदि वे पूरी न हुई तो बम्बई सरकार को पूर्ण अधिकार होगा कि वह आन्दोलन को कुचल दे और जनता को कानून का पालन करने के लिए बाधय करे।'[17]

गवर्नर की धमकी का सत्याग्रहियो पर कोई प्रभाव नहीं पडा बल्कि सम्पूर्ण देश की सहानुभूति सत्याग्रहियो के प्रति बढ रही थी। गाँधी जी के शब्दो में 'गवर्नर की धमकी और विटरटन द्वारा उसका पूर्ण अनुमोदन भी बारदोली के लोगो पर कोई असर नहीं छोड सकेगा। इतना ही नही, सुनता तो यह हूँ, कि धमकी से लोग और दृढ हो गये है।' इसी बीच बम्बई के एक व्यापारी राम चन्द्र भट्ट ने बढी हुई लगान की सारी रकम अपने खजाने से जमा करने की इच्छा प्रकट की जिस पर गाँधी जी ने कहा कि यदि ऐसी भेट से सरकार के मन का समाधान हो जाय तो हमें कोई शिकायत नही है। देश में गरम दल के लोगो ने गवर्नर के इस धमकी भरे भाषण का हर्षपूर्वक स्वागत किया। गरम पंथी लोगो में इस बात का हर्ष और उत्साह था कि अब उन्हे स्वराज्य की बडी लडाई लडने का अवसर मिलेगा। 'सरदार शार्दूल सिंह कवीश्वर ने पत्र लिखकर गाँधी जी से आग्रह किया कि वल्लभ भाई ने बारदोली सत्याग्रह को मर्यादित रखा है जो अव्यावहारिक जान पडता है अत: अब

सारे देश में सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू कर देना चाहिये।'[18] गाँधी जी ने इस आग्रह को ठुकरा दिया। इसके बाद वे 2 अगस्त 1928 ई. को बारदोली गये जहाँ उन्होने अफवाहो एव आशंकाओ के बावजूद बारदोली निवासियो द्वारा वल्लभ भाई के आदेश का पालन करने को उत्सुक देखकर उनके मन में आत्मसन्तोष हुआ।

सरकार ने सारे प्रयत्न कर लिये, सभी प्रकार के हथकंडो का सहारा लिया लेकिन सत्याग्रही झुकने को तैयार नहीं हुए तो ऐसी स्थिति में सरकार को सदबुद्धि आयी। गवर्नर जनरल ने बातचीत के लिए सरदार साहब को आमन्त्रित किया। इस बातचीत में गवर्नर ने इस आश्वासन के साथ, कि सरकार योग्य मामलो की जॉच करके बढे हुए लगान को माफ कर देगी, यह मॉग की कि सत्याग्रह बन्द कर दिया जाय और लोग पहले के समान कर देना आरम्भ कर दे। वल्लभ भाई ने गवर्नर की इस मांग को स्वीकार कर लिया किन्तु साथ ही उन्होने आन्दोलन के दौरान बन्दी बनाये गये लोगो को रिहा करने, सरकारी कर्मचारियो को पुन: काम पर लेने, कुर्क किये गये माल और जमीन वापस करने की मांग की। सरकार ने वल्लभ भाई की सारी बाते मान ली। इस प्रकार सरकार और वल्लभ भाई के मध्य समझौता हो गया। समझौते का स्वागत करते हुए सरदार पटेल ने 11 अगस्त, को बारदोली की जनता के लिए एक वक्तव्य प्रकाशित किया जिसमें उन्होने कहा कि, 'ईश्वर की कृपा से हमने जो प्रतिज्ञा की थी उसका पूर्ण रूप से पालन हो चुका है। हम लोगो पर बढाये गये लगान के संबंध में हम जैसी जॉच चाहते थे, सरकार ने उसी प्रकार की जॉच समिति नियुक्त करना स्वीकार कर लिया है। जब्त की हुई जमीने किसानो को वापस मिलेगी। जेल में बन्द सत्याग्रही छोड दिये जायेगे। पटेल और तलातियो को पुन नौकरी पर रखा जायेगा और जो छोटी-मोटी मॉगे हमने रखी थी, उनकी भी स्वीकृति हो गयी है।[19] इस प्रकार वल्लभभाई ने बारदोली आन्दोलन में सफलता प्राप्त की।

देश के राष्ट्रीय नेताओ ने इसे अभूतपूर्व सफलता माना। गाँधी जी ने सफलता का श्रेय वल्लभभाई, गर्वनर, सरकारी अधिकारियो तथा विधानसभा के सदस्यो को दिया। उन्होने कहा कि 'जिन्होने शुद्ध मन से चाहा कि समझौता हो जाय वे सब इस विजय में हिस्सेदार है।' गाँधी के अनुसार वल्लभ भाई जैसे नेता के अथक प्रयत्नो से यह विजय मिली है। सरदार पटेल को मान पत्र देते हुए गाँधी जी ने कहा 'ऐसा स्वार्थ त्यागी सरदार तुम्हे दूसरा नही मिलेगा। वे मेंरे सगे भाई जैसे है किन्तु उन्हे यह प्रमाण पत्र देते हुए मुझे सकोच नही राष्ट्रीय नेताओ में लाला लाजपतराय, मोतीलाल नेहरू, सुभाष चन्द्र बोस, सरोजनी नायडू, एम. बी कोठारी, मौलाना शौकत अली, विश्वनाथन, राजाराम पाडया, सत्यमूर्ति आदि ने पटेल को अभिनन्दन पत्र भेजे ! के.एम. मुशी ने बारदोली की घटना को भारतीय सार्वजनिक जीवन के इतिहास में महत्वपूर्ण विजय बतलाया।' बारदोली, सूरत एव गुजरात के अन्य हिस्सो में विजयोत्सव मनाया गया।

सरदार पटेल ने आभार प्रकट करते हुए कहा कि 'बारदोली के लिए आप लोग मुझे श्रेय देते है लेकिन मैं उसका पात्र नही हूँ। कोई असाधय रोग से पीडित बीमार पलंग पर पडा हो, और उसे कोई सन्यासी मिल जाये, जडी-बूटी दे दे और उसकी मात्रा घिसकर पिलाने से रोगी स्वस्थ हो जाये ऐसी दशा हिन्दुस्तान के किसान की है। मैं तो सिर्फ जडी-बूटी घिसकर पिलाने वाला हूँ जो एक सन्यासी ने मुझे दी। श्रेय अगर किसी को है तो उस जडी-बूटी देने वाले को है। दूसरे अगर कोई सम्मान के पात्र है तो वे मेंरे साथी है। जिन्होने चकित करने वाले अनुशासन का परिचय दिया।[20]

समझौते के तहत 18 अक्टूबर 1928 ई. को जॉच समिति की नियुक्ति सरकार ने कर दी। समिति ने 12 अप्रैल, 1929 ई. को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। समिति ने किसानो की शिकायतो को सही माना और लगान वृद्धि की स्तुति के आधारो को दोषपूर्ण माना। समिति ने पुराने लगान पर 6.03 प्रतिशत वृद्धि की सिफारिश की।

इस प्रकार सरदार पटेल के कुशल सगठन, दृढ निश्चय और जबदस्त प्रशासकीय क्षमता के सामने शक्तिशाली ब्रिटिश सरकार बौनी साबित हुई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नन्दूरकर, जी.एम., दिस बाज सरदार-दि-कमोमेंरेटिव वाल्यूम, अहमदाबाद, 1974, पृ. 104
2. पूर्वोक्त, पृ. 131
3. बन्दोबस्त अधिकारी की टिप्पणी, होमफाइल, 178-1928 एन.ए.आई.
4. पटेल, राजीव भाई, हिन्द के सरदार, अहमदाबाद, 1994, पृ. 68
5. दास, सेठ गोविन्द, सरदार पटेल, दिल्ली, 1969, पृ. 72
6. पूर्वोक्त, पृ. 72
7. पूर्वोक्त, पृ0 73
8. पूर्वोक्त, पृ. 74
9. पटेल, राजीव भाई, पूर्वो, पृ. 70
10. मेंहरोत्रा, एन.सी., कपूर, रजना, सरदार भाई पटेल व्यक्ति एक विचार, दिल्ली, 1997, पृ0 41
11. पूर्वोक्त, पृ. 41
12. पारीख, नरहरि सरदार पटेल के भाषण, अहमदाबाद, 1950, पृ. 145
13. पूर्वोक्त, पृ. 145
14. पटेल, राजीव भाई, पूर्वोक्त, पृ. 76
15. बाम्बे क्रानिकल, 29 मई, 1928
16. शिष्ट मंडल की गर्वनर से वार्ता, 22 जून 1928 विस्तृत जानकारी हेतु बाम्बे क्रॉनिकल 23 जून, 1928
17. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 3 जुलाई, 1928
18. बाम्बे क्रानिकल, 20 जुलाई, 1928
19. पूर्वोक्त, 21 जुलाई, 1928
20. पूर्वोक्त, 25 जुलाई, 1928
21. पूर्वोक्त, 25 जुलाई, 1928
22. पूर्वोक्त, 25 जुलाई, 1928
23. पारीख, नरहरि, सरदार पटेल के भाषण, अहमदाबाद, 1950, पृ. 160
24. मेहरोत्रा, एन.सी., कपूर, रंजना, पूर्वो, पृ. 74

****

योग - समुत्कर्ष एवं नि:श्रेयस का अद्भुत रहस्य

डॉ. दिनेश कुमार कौशल *

प्रस्तावना - अलौकिक घटनाओं की व्याख्या प्रकृति को नियंत्रित कर उससे परे जाने की कला, आनन्दमय कोष तक पहुँचने की विकास यात्रा, आत्म-साक्षात्कार, आत्मा की अमरता की अनुभूति, अन्तर्दृष्टि, अन्तर्ज्ञान, हृदय की पवित्रता की पराकाष्ठा, मस्तिष्क का संपूर्ण विकास, मानव से महामानव बनने का उद्यम, समुत्कर्ष एवं नि:श्रेयस की प्राप्ति तथा आत्मा की तुरीयावस्था को प्राप्त करने का हल यदि किसी के पास है, तो वह है, योगी। योगी जिस क्रिया द्वारा उपरोक्त क्षमतायें प्राप्त करता है, वह है योग।

प्रकृति में दो प्रकार की अभिव्यक्तियाँ हैं:- 1. स्थूल 2. सूक्ष्म। सूक्ष्म कारण है और स्थूल कार्य। योग के अभ्यास से सूक्ष्मतम अनुभूति प्राप्त होती है। दर्शनशास्त्र का लक्ष्य है, पूर्णता प्राप्त करके आत्मा को मुक्त कर लेना। इसका उपाय है योग। योग बहुभावव्यापी शब्द है। संसार में जितने भी महापुरूष हुये हैं, वे किसी न किसी दृष्टि से योगी थे, क्योंकि योग के द्वारा ही सामान्य सीमा को पार किया जा सकता है। प्रत्येक आत्मा अत्यक्त ब्रम्हा है। बाह्य एवं अन्त:प्रकृति को वशीभूत करके आत्मा को इस ब्रम्हभाव में व्यक्त करना ही जीवन का चरम लक्ष्य है, किन्तु यह लक्ष्य बिना योग के संभव नहीं है, क्योंकि हम जहाँ से रास्ता तय करना प्रारंभ करेंगे, वह योग की परिधि में ही आयेगा। समस्त ज्ञान स्वयं की अनुभूति पर टिकें हैं। जिस ज्ञान को हम अनुमान से प्राप्त करते हैं और जिसमें हम सामान्य से विशेष तक पहुँचते हैं। उसकी जड़ स्वानुभूति है।

शोध प्रविधि - इस शोध पत्र में योग:- समुत्कर्ष एवं नि:श्रेयस का अद्भुत रहस्य नामक शोध पत्र में द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार पर आचार मीमांसीय अध्ययन किया गया है। जहाँ तक मानव के आचरण को समुन्नत करने का साधन योग की क्रिया विधि है। इसी के आधार पर द्वितीय स्त्रोंतों को खोजने का प्रयास किया गया है।

उद्देश्य - विज्ञान पर सरलता से सत्यता में विश्वास किया जाता है, क्योंकि यह प्रयोग पर आधारित है। वैज्ञानिकों ने स्वयं कुछ प्रयोगाधारित तथ्य एकत्र किये हैं। ये तथ्य प्रत्यक्ष अनुभूति पर निर्भर हैं। जब वैज्ञानिक अपने उन सिद्धांतों पर विश्वास करने के लिए कहते हैं, तब वे जन सामान्य की अनुभूति पर उनकी सत्यासत्य के निर्णय का दायितव छोड़ देते हैं। प्रत्येक विज्ञान का एक आधार है और उससे जो सिद्धांत निकलते हैं, उनकी सच्चाई कोई भी इच्छानुसार जान सकता है। किन्तु प्रश्न उठता है कि बाह्य क्षेत्रों से परे अन्तर्क्षेत्रों (यथा- मन, बुद्धि, चित्त, आत्मा, धर्म, आध्यात्म, अन्तर्दृष्टि आदि) में भी कोई उभय निष्ठ तत्व हैं या नहीं। यदि धर्म के संबंध में विचार करें तो संसार के समस्त धर्मो के बारे में हमें यह शिक्षा मिलती है कि धर्म केवल श्रद्धा और विश्वास पर स्थापित है और अधिकांश स्थलों में तो वह भिन्न-भिन्न मतों की समष्टि मात्र है। यही कारण है कि धर्मो के बीच सकारात्मक तत्वों के साथ नकारात्मक तत्व भी आ जाते हैं। कुछ का कथन है कि बादलों के उपर एक महान पुरूष है, वही सारे संसार पर शासन करता है। व्यक्तिगत रूप से मेरे भी ऐसे अनेक भाव हो सकते हैं, जिन पर विश्वास करने के लिए मैं दूसरों से कहता हूँ। किन्तु कोई इस विश्वास का कारण पूछे तो मैं उसे युक्ति देने में असमर्थ हो जाता हूँ। इसीलिए धर्म और दर्शनशास्त्र की निन्दा सुनी जाती है। किन्तु वास्तव में धर्म विश्वास की एक सार्वभौमिक भित्ति है वही विभिन्न देशों के विभिन्न सम्प्रदायों के भिन्न-भिन्न मतवादों और सब प्रकार की विभिन्न धारणाओं को नियमित करती है। उन सबके मूल में जाने पर हम पाते हैं कि वे भी स्वानुभूति पर प्रतिष्ठित हैं। यह अनुभूति केवल योग द्वारा ही अर्जित की जा सकती है।

समस्या - यदि संसार में किसी प्रकार के विज्ञान के किसी विषय की किसी ने कभी प्रत्यक्ष उपलब्धि की है तो इससे इस सार्वभौमिक सिद्धांत पर पहुँचा जा सकता है कि पहले भी कोटि-कोटि बार उसकी उपलब्धि की संभावना थी और भविष्य में भी अनन्त काल तक उसकी उपलब्धि की संभावना बनी रहेंगी। एकरूपता ही प्रकृति का बड़ा नियम है। एक बार जो घटित हुआ, वह पुन: घटित हो सकता है। इसलिए योग विद्या के आचार्यगण कहते हैं कि धर्म पूर्वकालीन अनुभवों पर केवल स्थापित ही नहीं, वरन् इन अनुभवों से स्वयं संपन्न हुये बिना कोई भी धार्मिक नहीं हो सकता। जिस विद्या के द्वारा ये अनुभव प्राप्त होते हैं, उसका नाम है- 'योग'।

समाधान - मनुष्य चाहता है कि सत्य, वह सत्य का स्वयं अनुभव करना चाहता है और जब वह सत्य की धारणा कर लेता है। हृदय के अंतरतम प्रदेश में उसका अनुभव कर लेता है, वेद कहते है, तभी उसके सारे संदेह दूर हो जाते हैं, सारा तमोजाल छिन्न-भिन्न हो जाता है और सारी वक्रता सीधी हो जाती है।

'भिद्यते हृदय ग्रन्थि छिद्यन्ते सर्वसंशया:।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे।।'

- मुण्डकोपनिषद-।।2/2/8।।

'हे अमृत के पुत्रों, हे दिव्यधाम निवासियों, सुनो-मैंने अज्ञानान्धकार से आलोक में जाने का रास्ता पा लिया है, जो समस्त तम के पार हैं, उसको जानने पर ही वहाँ जाया जा सकता है- मुक्ति का और कोई दूसरा उपाय नहीं।'

'शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्रा आ ये धामानि दिव्यानि तस्थ:।
वेदाध्यते पुरूषं महान्तमादिव्य वर्ण तमस: पुरस्तात्।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्य: पन्था विद्यतेऽयनाय।।'

- ।। श्वेताश्वतर-2/53/8।।

निष्कर्ष - इस सत्य को प्राप्त करने के लिए योग विद्या मानव के समक्ष

* शिवाजी नगर,बी. डी. ए. कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) भारत

यथार्थ, व्यावहारिक और साधनोपयोगी वैज्ञानिक प्रणाली रखने का प्रस्ताव करती है। योग विद्या मनुष्य को उसकी अपनी आन्तरिक अवस्थाओं के पर्यवेक्षण का इस प्रकार उपाय दिखा देती है। मन ही उस पर्यविक्षण का यंत्र है। मनोयोग की शक्ति का सही–सही नियमन कर जब उसे अन्तर्जगत की ओर परिचालित किया जाता है, तभी वह मन का विश्लेषण कर सकती है और तब उसके प्रकाश से हम समझ सकते हैं कि हमारे भीतर क्या घट रहा है और हम मन के परे जाकर उस खजाने का पता लगा सकते हैं जिसे भारतीय चिन्तन परम्परा में उद्घोष किया गया है– 'आमात्नं विद्धि।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विवेकानंद साहित्य, भाग प्रथम, अद्वैत आश्रम, मायावती अल्मोरा।
2. मुण्डकोपनिषद्।
3. श्वेताश्वतरोपनिषद्।
4. वर्मा, प्रो. सवालिया बिहारी: पतंजलि योग तर्क नहीं विज्ञान है, युनिवर्सिटी पब्लिकेशन, दिल्ली, संस्करण (1999)

****

वाल्मीकि रामायण में पत्नी का स्वरुप

डॉ. पंकज कुमार सिंह *

प्रस्तावना – नारी पितृकुल में जन्म लेती है तथा अपने गुणो से परिवार के समस्त जनों के प्रेम पात्र बन जाती है। परंतु उसके जीवन की पूर्ण सार्थकता तब सिद्ध होती है, जब वस्त्राभूषणों से अलंकृत एवं सुसज्जित कर उसे वर के हाथों में सौंप दिया जाता है। नारी का यह पत्नी रुप ही नारी जीपन का द्वितीय चरण है। इसे ही नारी का प्रेयसी रुप भी कहा जा सकता है। क्योंकि भारतीय संस्कृति के अनुसार नारी विवाह के पूर्व किसी पुरुष के साथ प्रेम नहीं कर सकती। विवाहोपरांत वह अपना संपूर्ण प्रेम पति को प्रदान कर देती है और उसकी प्रेयसी बन जाती है। नारी के पत्नी जीवन का शुभारम्भ विवाह के उपरांत ही होता है। कन्या अपने माता पिता को छोड़कर एक अपरिचित पुरुष के साथ हो जाती है। साथ ही उसके कन्या जीवन का सीमित दायित्व अब बहुत विस्तृत हो जाता है। वह एक प्रेयसी के साथ साथ वधू, गृहस्वामिनी और क्रमश: जननी भी बन जाती है। नारी जीवन का पूर्ण विकास इसी अवस्था में होता है। नारी जीवन के पत्नी रुप पर विचार करने के लिये हमें कई तथ्यों पर ध्यान देना आवष्यक होगा यथा तत्कालीन युग में पत्नी का महत्व, दाम्पत्य प्रेम, पत्नी के रुप में नारी का योगदान, कुलवधू के रुप में सास–ससुर के साथ उसका संबंध, सपत्नियों के साथ संबंध, गृहस्वामिनी के रुप में उसके अधिकार और कर्त्तव्य, अनुजीवियों के साथ उसका व्यवहार, धार्मिक अधिकार इत्यादि।

पत्नी का महत्व – भारतीय समाज में प्राचीनकाल से ही पत्नी का विषिष्ट स्थान रहा है। मनु ने मानव जीवन में पत्नी को विशेष महत्व दिया है। उन्होंने कहा है कि स्त्रियाँ सन्तानोत्पति के द्वारा महान् उपकार करने वाली, पूजनीया और गृह की शोभा हैं क्योंकि स्त्री और लक्ष्मी में कोई अंतर नहीं है। प्रसव, शिशुपाल और दैनिक गृहकार्य इन सबका प्रत्यक्ष कारण नारी ही है। अपत्य, धर्मकार्य, सेवा, श्रेष्ठरति पितरो की और अपनी स्वर्ग साधना यह सभी भार्या के ही अधीन है। महाभारत में भी इस भाव को व्यक्त करते हुए कहा गया है कि यदि घर पुत्र पुत्रियों से भरा हुआ है, लेकिन पत्नी नहीं है तो पुरुष के लिये वह जंगल से भी अधिक भयावाह होता है क्योकि पत्नी पुरुष के लिये वह परम मित्र है जो घोर विपत्ति में भी साथ नहीं छोड़ती। कालिदास ने भी पत्नी को गृहिणी, सचिव, एकांतसखी तथा ललितकलाओं में षिष्या कहा है। आदिकवि वाल्मिकी ने भी पत्नी को इन्ही रुपों में निरुपित किया है। रामायण में चित्रित सीता श्रीराम की धर्मपत्नी, भक्त, पतिव्रता तथा दुख–सुख में उनके साथ रहने वाली है।

दाम्पत्य-प्रेम – प्राचीन काल से ही हिन्दु समाज में पति–पत्नी का संबंध अत्यंत सुखद, पावन और पवित्र माना जाता रहा है। उनका दाम्पत्य जीवन अत्यधिक प्रगाढ़ और सम्मान युक्त था। उनमें एक–दूसरे के प्रति अगाध प्रेम और उत्कृष्ट आकर्षण था। भारतीय इतिहास में ऐसी पत्नियों के अनके दृष्टांत है जो पति के प्रति एक निष्ठता और सात्विकता का भाव रखती है। प्राचीन युग में ऐसी में ऐसी अनेक भार्यायें हुई जो यावज्जीवन अपने पति में ही मनोनिवेशपूर्वक अनुरक्तथी। सुवर्चला सूर्य में, शची इंद्र में, अरुन्धती वषिष्ठ में, लोपामुद्रा अगस्त्य में, सावित्री सत्यवान में, दमयन्ती सोदास में, कोषिनी सगर में और दमयंती नल में। सुकन्या अपने पति च्यवन के लिये कहती है मेरे पिता ने मुझे अर्पित करदिया है, उसका जीवनपर्यन्त त्याग नहीं करुँगी। पति भी पत्नी को तदवत् स्नेह देते थे। द्रोपदी के विषय में युधिष्ठिर की उक्ति है कि हमारी प्रिय पत्नी प्राणों से बढ़कर है। यह माता तथा बड़ी बहिन की भांति परिपालनीय एवं पूज्य है। पत्नी के लिये पति सर्वस्व तथा शरणदाता था। पत्नी – 'सहधर्मचरी' कही जाती थी।

चारो भाईयों ने अपनी नवविवाहिता पत्नियों के साथ मोदपूर्वक रमण किया। इससे प्रतीत होता है कि नवविवाहिता पति:पत्नी परस्पर मिलकर अत्यधिक आनंद का अनुभव करते थे। जो अत्यन्त आवश्यक एवं स्वाभाविक ही था। प्रेमाधिक्य के कारण पति पत्नी के हृदय रुपी मंदिर में सदैव विराजमान रहता था तथा मनस्वी पति का मन भी हमेशा पत्नी में ही लगा रहता था। इस प्रकार परस्पर अनुरक्त वे अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक दीर्घकाल तक विहार करते थे। पत्नी के पातिव्रत्य एवं उसके सौंदर्य से भी पति का प्रेम दिनोंदिन बढ़ता ही जाता था तथा पत्नी का प्रेम भी पति के प्रति उसी प्रकार द्विगुणित होता जाता था।

स्त्री को अपने पति पर अखण्ड विश्वास होता था। उसका एकमात्र बल सौभाग्य (सुहाग) ही होता था। पत्नी अपने सौभाग्य में सदा गर्वित रहती थी। आदिकवि ने कैकैयी को सौभाग्यमदगर्विता कहा है। यदि पति वृद्ध और उसकी पत्नी तरुणी होती थी तो पति उसे सामान्य से अधिक प्यार करता था। दशरथ तरुणी कैकेयर से कौशल्या और सुमित्रा की अपेक्षा अधिक प्रेम करते थे। रुठी हुई पत्नी को खुश करने के लिये पति हर संभव प्रयास करता था। इसके लिये वह एक उसे सुवर्णादि लाकर देता था। परंतु स्त्री यदि दुष्ट स्वभाव वाली एवं हठी होती थी तो अपने पति से मणि, मोती, सुवर्णादि बहुमूल्य द्रव्यों का लेकर भी प्रसन्न नही होती थी। पत्नी को प्रसन्न करने के लिये पति अपने प्राणों तक का भी न्यौछावर करने को उद्यत हो जाते थे परंतु हठी एवं दुष्ट प्रकृतिवाली स्त्री उतने से भी प्रसन्न नहीं होती थी। उसके जिद कोई महान अनिष्ट करके ही समाप्त होती थी।

पत्नी अपने पति के लिये स्वाभाविक प्रसन्नता का कारण नहीं, अपितु साक्षात् प्रसन्नता की मूर्ति मानी जाती थी। वन जाने की स्वीकृति देते हुए श्रीराम सीता से कहते है कि जिस तरह आत्मज्ञानी पुरुष स्वाभाविक प्रसन्नता नहीं छोडते उसी तरह मैं तुझे नही छोडूंगा। सीता को आत्मप्रीति के तुल्य कहना उसके अत्यधिक दाम्पत्य प्रेम का परिचायक है। पत्नी प्रेमवश भी

* पीएच.डी. (संस्कृत विभाग) जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार) भारत

पति पर क्रुद्ध हो जाती थी। उसका वह क्रोध मात्र बाह्य एवं क्षणिक होता था। इसे ही 'प्रणयकोप' की संज्ञा दी गयी है। पति का पत्नी के साथ अपार प्रेम होता था। वे परस्पर मिलते हुए अत्यन्त मुदित होते थे। उनका सामान्य मिलन भी एकांत में ही होता था। अन्य स्त्रियों के बीच बैठी पत्नी के साथ मिलने में पति संकोच का अनुभव करता था। प्रसन्नचित मनुष्यों से भरे हुए अंम:पुर में सीता से मिलने में श्रीराम संकोच का अनुभव करते है। पत्नी के साथ पन में रहकर त्रिकाल स्नानकर, फल-मूल खाकर सन्यासीवत् जीवन व्यतीत करता हुआ भी पति अधिक सुख एवं आनन्द का अनुभव करता था, जिसकी तुलना में राजप्रसादों का सुख भी उसे तुच्छ प्रतीत होता था। चित्रकूट में मन्दाकिनी की शोभा का दर्शन करते हुए श्रीराम ने सीता से स्पष्ट शब्दों में कहा है कि यह चित्रकूट नित्य निरंतर तुम्हारे मुख मण्डन का दर्शन होते रहने से अयोध्या से भी अधिक सुखद प्रतीत होता है। यह दाम्पत्य प्रेम का सुन्दरतम उदाहरण है। अकम्पन राक्षसराज रावण को सीताहरण की सलाह देते हुए कहता है कि सीमा का अपहरण कर लेने से श्रीराम कदापि जीवित नहीं रह सकेंगे। इससे अनुमान होता है कि आदर्श पति-पत्नी में प्रगाढ़ प्रेम स्वाभाविक था। दोनो एक दूसरे के बिना जीवित नहीं रह सकते थे। पति सुदर पत्नी को अधिक प्यार करते थे। आदिकवि ने एक उपमा के माध्यम से इस भाव को अभिव्यक्त किया है। पत्नी से वियुक्त पुरुष मात्र पुनर्मिलन की आशा से जीवित रहता था। यदि प्रिया का कोई पता नही चले तो वह प्राणों को धारण करने में भी असमर्थ हो जाता था। रावण के राजप्रसाद में सीता को न पाकर हनुमान दु:खी होते है। वे सोचते हैं कि यदि श्रीराम को सीता का पता नही मिला तो वे अपने प्राणों का परित्याग कर देंगे। श्रीराम से सीता उसी प्रकार अभिन्न है जैसे सूर्य से उनकी प्रभा। राम-सीता का यह दाम्पत्य प्रेम तत्कालीन जन सामान्य के दाम्पत्य प्रेम का सुन्दर उदाहरण है।

श्री राम के विलाप में आलिंगन के ढंग से संकेत प्राप्त होता है। प्रसन्नचित पति-पत्नी आपसे मिलते हुए परम पुलिकत हो उठते थे। आलिड्.गन में अधिकाधिक अंगो का स्पर्श ही सुखद माना जाता था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रजनार्थ महाभागा: पूजार्हा गृहदीप्तय:।
   स्त्रिय: श्रियश्च गेहेशु न विशेषोऽस्ति कश्चत।।
   उत्पादनमपत्यस्य जातस्य परिपालपम्।
   प्रत्यहं लोकयात्राया: प्रत्यक्षं स्त्रीनिबंधनम्।।
   अपत्यं धर्मकार्याणि शुश्रुषा रतिरुत्तमा।
   दाराधीनस्तथा स्वर्ग: पितृणामात्मनष्च हि।। मनु. 9/26-28
2. महा. 12/4/4, 12/144/16, विराट.।
3. गृहिणी सचिव: सखी मिथ: प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ। रघु द 1/8/67
4. भक्तां पतिव्रतां दीनां मां समां सुखदु:खयो। नेतुमर्हसि काकुत्स्थ समानसुखदु:खिनीम्।। वा.रा. 2/29/20
5. दीर्घायुरथवाल्पायु: सगुणो निर्गुणोऽपि वा। सकृद्दतो मया भर्ता न द्वितीयं वृणोम्यहम्।। महा. विराट. 294/27
6. इयं तु न : प्रिया भायां प्राणेभ्योऽपि गरीयसी। मातेव परिपाल्या च पूज्या ज्येष्ठेव च स्वसा।। वही, 3/12
7. कुमार. 4/29
8. रामस्य दयिता भायां नित्यप्राणासमाहिता। जनकस्य कुल जाता देवमायेव निर्मिता। सर्वलक्षणसम्पन्ना नारीणामुत्तमा वधू :। वा.रा. 1/1/26-27
9. रेमिरे मुदिता: सर्वाभर्तभिर्मुदितारह:। वही, 1/77/14
10. रामश्च सीतया सार्थ विजहार बहुनृतून।। मनस्वी तद्गतमनास्तस्या हृदि समर्पित:। प्रिया तु सीता रामस्य दारा: पितृवृता इति।। गुणाद्रूपगुणाच्चापि प्रीतिभूयोऽभिवर्धते। तस्याष्च भर्ता द्विगुणं हृदये पविर्तते।। वही, 1/77/25-27
11. मन्दस्वभावे बुध्यस्व सौभाग्यबलमात्मन:।। वही, 2/9/26
12. वही, 2/9/55
13. स वृद्धस्तरुणी भार्या प्राणोभ्योऽपि गरीयसीम्।। वही, 2/10/23
14. मणिमुक्ता सुवर्णानि रत्नानि विविधानि च। दद्याद् दशरथो राजा मा स्म तेशुमन: कृथा:।। वही, 2/9/27
15. न त्वां क्रोधयितुं शक्तो न क्रुद्धं प्रत्युदिक्षतुं। तव प्रियार्थ राजा तु प्राणानपि परित्यजेत्।। वही, 2/9/25
16. यत् सृष्टासि मया सार्थ वनवासाय मैथिलि। न विहातुं मया शक्या प्रीतिरात्मवता यथा।। वही, 2/30/29
17. एवमुक्ता तु वैदैही प्रियार्हा प्रियवादिनह। प्रणयादेव संक्रुद्धा भतारिमिदमब्रवीत्।। वही, 2/27/1
18. प्रविवेशाथ रामस्तु स्ववेश्म सुविभूशितम्। प्रहृष्टजनसम्पूर्ण ह्रिया किंचिद्वाड.मुख:।। वही, 2/26/5
19. उपस्पृषस्त्रिशवणं मधुमूलफलाशन:।। नायोध्याये न राज्याय स्पृहते च त्वया सह।। वही, 2/95/17
20. दर्शनं चित्रकूटस्य मन्दाकिन्यास्य शोभने। अधिकं पुरवासच्च मन्ये तव च दर्शनात्।। वही, 2/95/12
21. तस्यापहर भायर्ङ्ग त्वं तं प्रमथ्य महावने। सीतया रहितो रामो च चैव हि भविष्यति।। वही, 3/31/31
22. रावणस्य महाकान्तां मान्तामिव वरस्त्रियम्। वही, 5/9/22
23. गत्वा तु यदि काकुत्स्थं वक्ष्यामि पुरुषं वच:। न दृष्येति मया सीता ततस्त्यक्ष्यति जीवितम्।। पुरुष दारुणं तीक्ष्णं क्रूरमिन्द्रियतापनम्। सीतानिमित्तां दुर्वाचं श्रुत्वा स न भविष्यति।। वही, 5/13/23-24
24. अनन्या हिमया सीता भास्करस्य प्रभा यथा। वही, 6/118/19
25. तौ तस्या: सहितो पीनौ स्तनौ तरल फलोपमौ। कदा नु खलु सोत्कम्पौ शिलष्यन्त्या मां भजिष्यत:।। वही, 6/5/14

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

आदिकवि वाल्मीकि द्वारा नारी वर्णन

डॉ. पंकज कुमार सिंह *

प्रस्तावना – आदिकवि वाल्मीकि प्रणीत रामायण आदिकाव्य ही नहीं भारतीय संस्कृति का महान् पोशक भी है। एक और तो यह भाषा की दृष्टि से वैदिक एवं लौकिक संस्कृत के बीच कड़ी का कार्य करता है तो दूसरी ओर वैदिक एवं वैदिकोत्तर सभ्यता संस्कृति में भी सामंजस्य स्थापित करता है। रामायण के अध्ययन से अतीतकालीन सभ्यता का ज्ञान और वर्तमान सभ्यता का प्रत्यक्ष दर्शन होता है। रामायण में भारतीय सभ्यता संस्कृति के समस्त अंग परिपुष्ट रुप में दिखलायी देते है। रामायण की मूलकथा के अन्तस् में नारी ही सन्निविष्ट है अर्थात् रामायण की समस्त घटनाओं के मूल में नारी ही कारण रुप में दृष्टिगोचर होती है। राम के वनवास में कारण है कैकेयी, राम-रावण युद्ध में कारण है सीता एवं शर्पणखा । यही नहीं प्रासंगिक इतिवृत्त, यथा वाली-सुग्रीव वृत्तान्त में भी नारी-सुग्रीव की पत्नी ही कारण है। इस कारण रामकथा को गतिशीलता प्रदान करने वाली नारी है। इसीलिये रामायण में नारी जीवन के विविध आरोह अवरोहों का सजीव चित्र दिखलायी देता है।

रामायण कथा के आलोक में वाल्मीकि की नारी विषयक धारणाओं का निर्धारण करना यद्यपि अत्यन्त दुरुह व्यापार है, तथापि इस शोध प्रबंध में इस विषय पर यथासाध्य विचार करने का प्रयास किया गया है वाल्मीकि के नारी संबंधी विचारों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम सतीसाध्वी पतिव्रता के संबंध में तथा दूसरा असती एवं दुष्टा नारियों के संदर्भ में। आदिकवि सती नारियों के प्रशंसक है। इन्होंने आदर्श चरित्रावली पतिव्रता नारियों की काफी प्रशंसा की है तथा उनके लिये एक भी निन्दापरक शब्द का व्यवहार नहीं किया है। वे नारी को आदर्श भारतीय मर्यादाओकं से मण्डित देखना चाहते है। अनके स्थलों पर इन्होंने पति को देवता रुप में माने का उपदेश स्त्रियों को दिया है। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि आदिकवि की दृष्टि में नारी का पतिव्रता होना अत्यावश्यक है। पतिव्रता नारी ही तेजस्विनी हो सकती है तथा संसार में सम्मान प्राप्त कर सकती है।

आदिकवि की दृष्टि में पति के विपरीत आचरण करने वाली नारी कभी भी सामाजिक गौरव को प्राप्त नहीं कर सकती। असती एवं दुष्टा नारी निन्द्य होती है। इसीलिये इन्होने क्रूरकर्म कैकेयी की निन्दा की है। इतना ही नहीं कामभावना से उन्मत्त हुई दुष्टा शूर्पणखा को विरुप बनवाना इस बात का प्रतीक है कि आदिकवि दुष्टा नारी को दण्डनीय मानते हैं। इनके विचार में नारी अबला होने से अवध्या है। परंतु वैसी नारी जो ताटका जैसी अत्याचारिणी हो, प्रथमत:अ अंग-भंगादि दण्डों से नियंत्रित की जाये और यदि उससे भी वह न माने तो अंत में उसका वध कर दिया जाये।

इस प्रकार आदिकवि की नारी विषयश्क भावना निंदा प्रशंसापरक अर्थात द्वन्द्वात्मक है। रामायण में उपलब्ध नारी निन्दा को देखकर यह नहीं समझा जा सकता है कि कवि नारी के घोर विरोधी और निन्दक है। नारी के आदर्श चारित्रिक गुणों के कारण इन्होने पतिव्रता, सती साध्वी नारी को पूज्या माना है। इसके विपरीत नारी के अवगुणों के कारण दुष्टा नारी को निन्द्य माना है। इस प्रकार कवि की दृष्टि में सती नारी पूज्य तथा असती निन्द्य है। कवि ने नारी के आदर्श रुप को प्रश्रय दिया है। इन्होंने नारी हृदय को प्रेम, दया, सहिष्णुता, सेवा, सदाचार, वात्सल्य, ममत्व आदि गुणों का पुंजीभूत रुप माना है। आदिकवि के अनुसार मनुष्य के दाम्पत्य जीवन की सफलता नारी पर ही आधारित होती है। नारी त्याग एवं तपस्या की प्रतिमूर्ति होती है। नारी की अवध्यता विषयक वाल्मीकि की धारणा परम्परा से अनुमोदित है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि वाल्मीकि की नारी भावना उदार एवं व्यापक है।

रामायण के अध्ययन से प्रतीत होता है कि तत्कालीन कन्यी जीपन सुखमय था। कन्या के संबंध में जनसामान्य की धारणा परम्परा से अनुप्राणित थी। जिस प्रकार वैदिक काल में कन्या की न तो निन्दा की गयी है और न पुत्र की तरह उसे अधिक सम्मान ही दिया गया है, उसी प्रकार रामायणकाल में भी कन्या की स्थिति थी। रामायण में कहीं भी कन्या की निंदा नही की गयी है। परम्परागत मनोवृत्ति के कारण जनसामान्य पुत्र को अधिक स्नेह करता था, परंतु पुत्रहीन जन पुत्री को पुत्र से भी बढ़कर मानता था। पुत्र के अभाव में पुत्री ही माता के समस्त वात्सल्य का केंद्र थी। लोग उसे अत्यन्त प्रेमपूर्वक 'वत्से' – जैसे शब्द से सम्बोधित करते थे। रामायण में जहाँ कही भी कन्या जीवन के संबंघ में उल्लेख है, वहाँ चरित्रमयी एवं आदर्श गुणों से मण्डित रुप से ही चित्रित किया गया है। इससे अनुमान होता है कि कन्या के संबंध में जनसाधारण की भावना उदार एवं व्यापक थी। ऐसी बात नही थी कि लोग कन्या को मात्र आपत्तियों की केंद्रस्थली मानते थे । पुत्र की अपेक्षा कन्या को कम स्नेह पाने के मुख्यत: दो ही कारण था उसमें एक था विवाह के समय होने वाली कठिनाइयों तथा दूसरा कारण था वर के पिता द्वारा कन्या के पिता का होने वाला संभावित अपमान । वर का पिता स्वयं को बड़ा समझता था और वह कन्या के पिता को निम्न दृष्टि से देखता था। फलस्वरुप कन्या के पिता को हार्दिक कष्ट होता था। इसीलिये लोग कन्या के जन्म से थोड़ा दु:खी हो जाते थे।

कन्या की पारिवारिक अवस्था भी अच्छी थी। कन्या का माता पिता, भाई इत्यादि से मधुर संबंध होता था। सभी आपस में मिलजुलकर स्नेहपूर्वक रहते थे। भाई बहन परस्पर काफी स्नेह करते थे। माता-पिता भी उन्हें बहुत प्यार करते थे।

घर से बाहर भी कन्या की काफी प्रतिष्ठा थी। उसे घर से बाहर भी घूमने फिरने की पूर्ण स्वतंत्रता एवं अधिकार प्राप्त था। प्रशंसा की ओर से कल्या की सुरक्षा की समुचित व्यवस्था थी। जिस राष्ट्र का राजा कमजोर या

* पीएच.डी. (संस्कृत विभाग) जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार) भारत

आलसी होता था, वहाँ कुछ दुष्टजन, कन्या के अपहरण की चेष्टा करते थे। परंजु पकड़े जाने पर उन्हें कठोर दण्ड भोगना पड़ता था। कन्या या तो स्वयं अपहर्ता को अपने तपोबल से नष्ट कर देती थी अथवा प्रशासन की आरे से उसे दण्डित किया जाता था।

तत्कालीन समाज में कन्या की शिक्षा–दीक्षा की समुचित व्यवस्था नहीं थी। आज की तरह उस समय शिक्षण संस्थानो की अस्तित्व नहीं था। लड़के गुरुकुल में जाकर पढते थे, परंतु कन्या के गुरुकुल में जाकर अध्ययन करने के प्रमाण प्राप्त नही होते। तथापि पिता के घर में गुरुजनों द्वारा कन्या को शिष्टाचार एवं लोक व्यवहार की शिक्षा दी जाती थी। विवाह के समय में कन्या के पिता उसे जीवनोपयोगी शिक्षा देकर विदा करते थे। राजघराने में कन्या के अध्ययन हेंतु अध्यापक रखे जाते थे। सामान्य परिवार की कन्याओं की अपेक्षा राजदरबार की कन्याओं को विशेष रुप से राजनीति और युद्धकला, वेदादि शास्त्रों एवं तपस्या के विविध विधानों के संबंध में भी शिक्षा दी जाती थी। यह कहा जा सकता है कि प्रषासन की ओर कन्या–शिक्षण की विधिवत् व्यवस्था नही होने पर भी तत्कालीन परिवार में उनकी आवश्यक शिक्षा की व्यवस्था की जाती थी। रामायण में पैतृक सम्पत्ति में कन्या के अधिकार के अधिकार का कोई संकेत प्राप्त नहीं होता। इससे सम्पत्ति संबंधी उसके अधिकार के विषय में निश्चित रुप से कुछ कहा नहीं जा सकता। रामायणकला में भी विवाह को संस्कार रुप में महतव प्राप्त था। नारी जीवन में तो इसकी महत्ता और अधिक थी, क्योंकि यहीं से उसके जीवन में परिवर्तन आरम्भ होता है। विवाह की अनेक पद्धतियों में ब्राहस विवाह पद्धति ही विशेष मान्य थी। राक्षस संस्कृति में कन्या अपहरण करके विवाह करने का भी प्रचलन था, परंतु सुसंस्कृत समाज में ऐसा नही था। कन्या के यौवप को प्राप्त कर लेने पर अर्थात् प्रायः सोलह वर्ष की आयु हो जाने पर ही कन्या का विवाह किया जाता था। कन्या के विवाह योग्य हो जाने पर भी जो पिता उसका विवाह नहीं करता था, शास्त्र की दृष्टि से उसे ब्रहम हत्या के दोष का भागी माना जाता था। राजकन्याओं का विवाह प्रायः स्वयंवर विधि से होता था। लेकिन उसमें भी कन्या एवं वरपक्ष के अभिभावकों की सहमति आवश्यक थी। कन्या का विवाह वैदिक कर्मकाण्डों पूर्वक विधिवत् सम्पन्न किया जाता था। विवाह के अवसर पर कन्या के पिता दहेज के रुप में उसे यथाशक्ति धन देते थे जिसे स्त्रीधन कहा जाता था। सुसराल जाने पर उसके पतिकुल के सदस्यों द्वारा भी उपहार रुप से उसे धन दिया जाता था। उसकी गणना भी स्त्रीधन के हरी अंतर्गत की जाती थी। उस धन पर कन्या (नवोढ़ा) का पूर्ण अधिकार होता था। आजकल की तरह उस समय दहेज प्रथा प्रचलित नहीं थी। वर के पिता की ओर से शर्तपूर्वक दहेज की मांग नहीं की जाती थी। तत्कालीन समाज में सवर्ण विवाह का ही विशेष प्रचलन था, परंतु कोई कोई अंतर्जातीय विवाह भी कर लेता था। एक पत्नी विवाह का ही विशेष प्रचलन था, परंतु कोई पुरुष चाहे तो एकाधिक स्त्रियों से विवाह कर सकता था, उस पर कोई सामाजिक या प्रशासनिक बन्धन नहीं था। रामायणकाल में विधवा विवाह की प्रथा नही थ। विधवा–विवाह घृणित माना जाता था, जैसा मनुस्मृति काल में। इस प्रकार हम देखते हैं कि रामायणकाल की विवाह पद्धति भी प्राचीन परम्परा से ही प्रभावित है।

विवाह के साथ ही नारी का पत्नी जीवन आरंभ होता है। रामायण काल में नारी का पत्नी–जीवन सुखमय दिखलायी देता है। दाम्पत्य जीवन में पत्नी का विशेष महत्व था। यह गृहशोभा एवं गृहलक्ष्मी के रुप में मानी जाती थी। पति–पत्नी में प्रगाढ़ प्रेम था। पति अपनी पत्नी को प्राणों के समान प्रिय मानता था। पत्नी को भी अपने पति के प्रति अखण्ड विश्वास होता था। पति ही पत्नी का सर्वस्व एवं उसके स्वाभिमान का एकमात्र कारण होता था। रामायणकाल की पत्नी का विशेष महत्व उनके पातिव्रत्य के कारण था। अधिकांशतः स्त्रियाँ सती–साध्वी एवं पतिव्रता होती थी। वे पति को देवतातुल्य मानती थी। पति की सेवा में ही पत्नी अपना सर्वस्व समर्पित कर देती थी। पति–पत्नी का संबंध इतना प्रगाढ़ होता था कि दोनो अभिन्न माने जाते थे। इसीलिये यह धारणा प्रचलित थी कि पत्नी पति के भाग्य का अनुसरण करती है। उस युग में पातिव्रत्य का निर्वाह नहीं करने वाली अथवा पति का परित्याग करने वाली स्त्री अपराधिनी समझी जाती थी।

श्वसुर कुल में पत्नी की काफी प्रतिष्ठा थी। परिवार के सभी सदस्यों से पत्नी को प्रेम और आदर प्राप्त था। उनमें पारिवारिक संबंध बड़ा ही मधुर था। सास वधू को बहुत प्यार करती थी। वधू अपनी सौतेलरी सास को भी अपनी ही सास के समान आदर देती थी। पत्नी अपने देवर को अपने भाई समान और विशेष परिस्थितियों में पुत्र से भी बढ़कर मानती थी। फलस्वरुप परिवार के सभी सदस्य पत्नी रुप में नारी को काफी स्नेह करते थं। हाँ, सपत्नी का जीवन कष्टमय था। जिस पत्नी को पति विशेष मानता था वह अपनी सपत्नियों का सामान्यतः तिरस्कार करती थी। अतः स्वयं सौभाग्यमद में चूर रहती थी। सपत्नी का जीवन कलहपूर्ण कहा जा सकता हैं।

यद्यपि पत्नी का कार्यक्षेत्र घर पर ही होतरी था, परंतु घर के बाहर आनें जाने का पूर्ण अधिकार उसे प्राप्त था। रामायाणकाल में स्त्री घर से बाहर जाकर अपने पति के कार्यो में सहायता करती पाई गई है। वीरयोद्धा या राजा की पत्नी पति के साथ युद्धभूमि में भी जाकर उसे सहयोग करती थी। लेकिन घर से बाहर जाकर काय करने में उसे अपने पति की आज्ञा की अपेक्षा होती थी। रामायण में पर्दा प्रथा का कोई संकेत नहीं मिलता। धार्मिक दृष्टि से पत्नी को विशेष महत्व प्राप्त था। कोई भी याज्ञिक कर्म पत्नी के बिना सम्पादित नहीं किया जा सकता था। यदि कोइ अकेले याज्ञिक अनुष्ठान करता भी था तो उसे अपूर्ण माना जाता था। धार्मिक दृष्टि से पत्नी को पति का पूरक माना जाता था। पत्नी को सम्पत्ति संबंधी अधिकार भी प्राप्त था। पति के धन में पत्नी का भी अधिकार होता था। पति के मर जाने पर या तो उसका पुत्र या पत्नी ही उसका अधिकारी होती थी।

तत्कालीन समाज में ताता को विशेष गौरव प्राप्त थां। वह सम्मान की दृष्टि से देखी जाती थी। मातृचरण मंगलकारक एवं वंदनीय माना जाता था। माता की आदरणीयता का कारण उसका पुत्र वात्सल्य था। माता अपने पुत्रो से बहुत स्नेह करती थी। पुत्र भी माता का सम्मान एवं उसकी सेवा करता था। पुत्र ने केवल अपनी जननी का अपितु विमाता का भी काफी आदर करता था चाहे माता सपत्नी पुत्र का अनिष्ट ही क्यों न करे। माता पुत्र के लिये हमेषा मंगलकामना करती थी। वह कभी भी अपने पुत्र का अनिष्ट नहीं देखना चाहती थी। पति के बाद पुत्र ही माता का जीवनाधार था। माता की जो मनोकामना अपने पति से पूरी नहीं होती थी उसे पुत्र पूरा करता था।

माता को आर्थिक अधिकार भी प्राप्त था, अपने माता पिता एवं भाईयों द्वारा प्राप्त धन पर तो उसका अधिकार था ही, पति के धन पर भी उसका समान अधिकार था। माता के धन को उसका पति या पुत्र भी नहीं ले सकता था किंतु माता स्वेच्छापूर्वक अपना धन किसी को भी दे सकता थी।

परिवार एवं समाज में माता का बहुत आदर था। वह गृहस्वामिनी होती थी। पिता के तुल्य ही माता को अधिकार प्राप्त था। यदि पिता की कोई आज्ञा लोक विरुद्ध होती थी तो माता उसकी उस आज्ञा को रद्द कर अपनी ओर से यथोचित आज्ञा दे सकती थी। पिता की मृत्यु के बाद माता ही पुत्र की संरक्षिका होती थी। इस प्रकार तत्कालीन समाज में माता का स्थान बहुत ही सम्मानपूर्ण

तथा जीवन सुखमय था।

तत्कालीन विधवा जीवन न तो सुखमय था और न बहुत दुखमय था। अर्थात उसका जीवन सामान्य स्तर का था। उसके प्रति सामाजिक दृष्टिकोण परम्परा से प्रभावित था। उसे मांगलिक कृत्य करने का आधिकार नही था। उस समय सती प्रथा का प्रचलन था। परंतु सामाजिको के द्वारा विधवा को सती होने के लिये बाध्य नहीं किया जाता था। सती होने के लिये उद्यत विधवा को पुत्र पालन के नाम पर रोक लिया जाता था। पुत्र की उसका सरंक्षक होता था। सपत्नी से विधवा को विशेष कष्ट था। रामायणकाल में विधवा विवाह या नियोग का प्रचलन नहीं था। विधवा को पति की सम्पत्ति पर पूर्ण अधिकार होता था। उसके प्रति परिवार सा समाज की कुदृष्टि या कुत्सित भावना नहीं थी। हाँ, पति के अभाव में नारी असहाय तो स्वभावत: हो जाती थी।

रामायणकाल में वियोगिनी का जीवन अत्यन्त कष्टपूर्ण था। विरहकाल में स्त्री का कोई सहारा नही होने से वह दु:खी रहती थी। उसका प्रत्येक क्षण पति के चिंतन और उसकी प्रतीक्षा में ही व्यतीत होता था। सती-साध्वी स्त्री के लिये विरहकाल मरण से भी दु:खदायी था। यद्यपि समाज की आरे से उसप पर किसी प्रकार का अत्याचार नहीं किया जाता था फिर भी अन्तव्यर्थथा उसके लिये असहनीय हो जाती थी। वियोगिनी की दु:खद अवस्था में सुधार लाना भी संभव नहीं था क्योंकि उसके दु:ख का कारण बाहय नहीं, आन्तरिक था।

तत्कालीन समाज में एक ओर सती साध्वी स्त्रियाँ था,तो दूसरी ओर पुश्चली और वेश्याओं का भी अभाव नहीं था। तत्कालीन आदर्श समाज में इनके निवास का मूल कारण मानव मन की चंचलता एवं कुछ सामाजिक परिस्थितियाँ ही थी। कुछ स्त्रियाँ अपनी प्रकृतिगत चंचलता के कारण परपुरुष गमन या वेष्यावृति की ओर प्रवृत्त थीं तो कुछ निर्धनता आदि विशेष परिस्थितियों के कारण वेश्यावृति को अपनाई हुयी है। कुलटा को अनैतिक कर्म के परिणामस्वरुप कठोर शाप रुपी दण्ड भी भोगना पड़ता था। तत्कालीन वेष्या का मुख्य कर्म नृत्य-गीत के द्वारा धनार्जन करना था। अपनी कलात्मकता एवं रुप सौंदर्य के द्वारा परपुरुष को वशीभूत करने में वह पूर्ण सक्षम होती थी। इनका जीवन सुखमय था। समाज में उसे अनादर की दृष्टि से नहीं देखा जाता था क्योकि वह मनोरंजन का साधन होती थी। आगे चलकरि तो वेश्या को राजकीय सेवाकार्य में भी नियुक्त किया जाने लगा था।

रामायणकाल में मानव सभ्यता के साथ साथ कुठ अन्य सभ्यतासयें भी विकसित हो गयी थी। वानर, राक्षस, किन्नर, विधाधर आदि की पृथक पृथक अपनी सभ्यता एवं संस्कृति थी। इन जातियों की नारी की अवस्था बड़ी ही सुखमय थी। किन्नरी एव विद्याघरी संगीता विद्या में निपुण होती थी। सर्वत्र इन्हें आदरपूर्ण दृष्टि से देखा जाता था। वानरकुल की स्त्रियाँ भी बहुत सम्पन्न एवं सुखी थी। वानरराज कुल की स्त्रियों का जीवन तो ओर आनंदपूर्ण था। वानरराज की पत्नी को राजनीतिक अधिकार भी प्राप्त थे। पुत्र के प्रति इनका विशेष प्रेम होता था। अप्सरा जाति की स्त्रियाँ अपने सौन्दर्य के लिये लोकविभुत थी। धरती पर किसी तपस्वी का तपभंग करने के लिये देवगण उनका विशेष साधन के रुप में प्रयोग करते थे। राक्षस जाति की स्त्रियाँ स्वरुपत: विरुप होती थी। उनका आचरण भी बड़ा अभद्र होता था। उपद्रवकारिणी तथा अधार्मिक प्रवृत्तिवाली होती थी। लेकिन कुछ स्त्रियाँ आदर्श गुणोवाली भी होती थी। त्रिजटा जैसी राक्षसी राक्षसी प्रवृत्ति का विरोध करती देखी गयी है। राक्षसियों का जीवन भी सुखमय ही कहा जा सकता है।

नारी सौंदर्य की केंद्रस्थली मानी जाती थी। नारी का प्राकृतिक सौंदर्य ही विशेष प्रशंसनीय था। तत्कालीन नारी अपने बाहय सौंदर्य में वृद्धि के लिये कृत्रिम साधनों यथा सुंदर वस्त्र, लाक्षारस, आभरण, शीतलपेयपादि का प्रयोग करती थी। रुपवती भार्या पुरुष के हृदय को सद्य: वशीभूत कर लेती थी। समाज में उन नारियों की विशेष प्रतिष्ठा थी, जो बाहय रुप सौंदर्य के साथ साथ आदर्श गुणों से मण्डित होती थी। दया, प्रेम, सौहार्द्र वात्सल्यादि गुणों के कारण नारी समाज में गौरवपूर्ण एंवं उच्च स्थान प्राप्त कर लेती थी।

अंत में यह कहा जा सकता है कि रामायणकालीन नारी जीवन तत्कालीन समाज के लिये आदर्श तथा भविष्य में नारी जीवन का मार्गदर्शक था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अथर्ववेद संहिता, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
2. अष्टाध्यायी (पाणिनी) चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
3. आपस्तम्ब गृह्यसूत्र, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
4. आपस्तम्ब धर्मसूत्र, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
5. आष्वलायन गृह्यसूत्र, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
6. इनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलिजन एंड एथिक्स, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशित
7. ऋग्वेद संहिता, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
8. ऐतरेय ब्राहमण, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
9. ओसेन ऑफ स्टोरीज, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशित
10. कथासरित्सागर (सोमदेव), मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशित
11. कथासरित्सागर: एक सांस्कृतिक अध्ययन, डॉ. वाचस्पति द्विवेदी
12. कवि कालिदास के गंथों पर आधारित तत्कालीन भारतीय संस्कृति, डॉ. गायत्री वर्मा
13. कालिदासकालीन भारत, डॉ. भगवतशरण उपाध्याय
14. कालिदास ग्रंथावली, संपादक : सीताराम चतुर्वेदी
15. क्राइम एण्ड पनिशमेण्ट इन मनु , डॉ. चमनलाल गौतम
16. दी पोजिशन ऑफ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन , डॉ. ए.एस. अल्तेकर
17. धर्मशास्त्र का इतिहास: अुर्जन चौबे काश्यप
18. नीतिशतकम् (भृर्तहरि), मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशित
19. नैशधीसचरितम् (श्रीहर्ष), मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशित
20. गौतम धर्मसूत्र
21. चाणक्य नीतिदर्पणम्, संपाक, डॉ. चमनलाल गौतम
22. पाणिनीकालीन भारतवर्ष, डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल
23. पोजीशन ऑफ वीमेन इन मनु एण्ड हिज सेवेन कमेंटैटर्स, डॉ. आर.एम.दास
24. प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, डॉ. जयशंकर मिश्र
25. प्राचीन भारत के प्रसाधन, अत्रिदेव विद्यालंकार
26. प्राचीन भारतीय वेशभूषा, डॉ. मोतीचंद्र
27. प्राचनी भारतीय शिक्षण पद्धति, डॉ. ए.एस. अल्तेकर
28. भक्तिकालीन काव्यों में नारी, डॉ. गजानन शर्मा
29. भारत की संस्कृति साधना, डॉ. रामजी उपाध्याय
30. भारतीय वाड्.मय में सीता का स्वरुप, डॉ. कृष्णदत्त अवस्थी
31. भारतीय संस्कृति, डॉ. रामजी उपाध्याय
32. भारद्धाज गृह्यसूत्र, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित

33. मत्स्य पुराण, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
34. मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में नारी भावना, डॉ. उषा पाण्डेय
35. मनुस्मृति, संपा. चमनलाल गौतम
36. महाभारत, गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित
37. महाभारत में धर्म, डॉ. शकुंतला तिवारी
38. महाभारत में नारी, वनमाला भवालकर
39. महाभाष्य (पंतजलि), गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित
40. मृच्छकटिक, शास्त्रीय, सामाजिक एवं राजनीतिक अध्ययन, डॉ. शालिग्राम द्विवेदी
41. मेघदूतम् (कालिदास), मोतीलाल बनारसीदास द्वारा प्रकाशित
42. यजुर्वेद संहिता, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
43. याज्ञवल्क्य स्मृति, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
44. रामकाव्यों में नारी, डॉ. विद्या
45. रामचरित मानस (तुलसीदास), गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित
46. रामायणकालीन संस्कृति, डॉ0 शांतिकुमार नानुराम व्यास
47. वसिष्ठ धर्मसूत्र, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
48. वायुपुराण, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
49. वाल्मीकिय रामयण (महर्षि वाल्मीकि), गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित
50. विष्णुपुराण, गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित
51. वीमन इन दी वैदिक एज, डॉ. एस. राव शास्त्री
52. वीमेन इन संस्कृत ड्रामाज, रत्नमयी दीक्षित
53. वेदान्तसार (सदानन्द), गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित
54. वेदों में नारी (अप्रकाशित शोध प्रबंध), विद्या वियाहुत
55. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, आचार्य बलदेव चट्टोपाध्याय
56. शतपथ ब्राहमण, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
57. सोशल एंड रिलिजस लाइफ इन दी गृह्यसूत्राज, डॉ. वी.एम. आप्टे
58. सोशल लाइफ इन एंशिएण्ट इण्डिया, सुधाकर चट्टोपाध्याय
59. सौन्दरनन्द में नारी (अप्रकाशित शोध प्रबंध), अरुणा
60. सौन्दर्य का तात्पर्य, डॉ. रामकीर्ति शुक्ल
61. सौन्दर्य तत्व, डॉ. सुरेंद्र नाथ दास गुप्ता
62. सौन्दर्य शास्त्र, डॉ. रामाश्रय शुक्ल 'करुणेन्द्र'
63. संस्कृत कविदर्शन, डॉ. भोलाशंकर व्यास
64. संस्कृत नाटकों में सामाजिक चित्रण, चित्रा शर्मा
65. संस्कृत नाट्य साहित्य एवं गोस्वामी तुलसीदास, डॉ. कृष्णदेव प्रसाद
66. संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डॉ. रामजी उपाध्याय
67. संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डॉ. सूर्यकांत
68. संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, बाबूराम त्रिपाठी
69. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय
70. संस्कृत का नवीन इतिहास, डॉ. विनय कुमार राय
71. स्मृति चन्द्रिका, चौखम्बा विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
72. हिन्दू परिवार मीमांसा, डॉ. हरदत्त शास्त्री
73. हिन्दू संस्कार, डॉ. राजबली पाण्डेय
74. हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, डॉ. पी.वी. काणे

****

Effects Of Various Teaching Methodology On Schools Students

Lokesh Jain*

Abstract - The purpose of the present research work is to determine the effect of selected teaching methodology on academic achievement of students therefore the scope of present study is limited to three types of teaching methodology namely lecture method, simulationbmethod and brain storming.

Introduction - Learning is a complex concept. There is no law of learning. The classroom is a dynamic environment, bringing together students from different backgrounds with various abilities and personalities. Being an effective teacher therefore requires the implementation of creative and innovative teaching strategies in order to meet students' individual needs. There was probably a time when academic staff simply followed the teaching methods that they had experienced as students. Nowadays there is increasing discussion about teaching methods. The search for any universally best teaching method is bound to be fruitless and should give way to the search for better ways of achieving particular learning outcomes. The widening of the repertoire of teaching methods available to academic staff as a means of diminishing the severity of the trade-off between teaching effectiveness and teaching efficiency as the unit of teaching resource continues to fall become more compelling and so too will the issue of teaching methods. No discussion of teaching methods makes much sense without prior consideration of what we are trying to achieve with the teaching methods. "Teaching methods" are not an end in themselves; they are a means to an end. They are the vehicle(s) we use to lead our students towards particular learning outcomes. The principle that I want to establish as practice is that we evaluate our teaching methods against the learning outcomes that we are seeking for our students.

I suspect that there is unlikely to be much dissent from this principle in theory. However, the principle has limited value unless it can be operationalized. The first stage in operationalizing it is to clarify the learning outcomes at which we are aiming. The second stage involves developing a contingency approach to the choice of teaching methods whereby "fitness for purpose" replaces naïve judgments of "better" and "worse". Our fear is that the falling unit of resource in higher education is causing us to become less ambitious in terms of the range of learning aims that we seek toachieve, with the educational experience of our students consequently and institutionally, is the range of learning outcomes that we can achieve with our students. Our greatest fear is that we will be driven back towards one learning outcomes: 'information dissemination' and then IT renders universities unnecessary in archiving that outcome. Our task is to find a set of teaching methods that will be more successful than the 'doomsday vision' in terms of achievement and that is the target for the present research work.

Objectives Of The Study - Without a clear formulation of the aims of research the investigator is likely to wonder aimlessly in his field and achieve nothing worthwhile. The following objectives are undertaken for the present research work:

1. To study the impact of lecture method on academic achievement of class X students.
2. To study the impact of simulation method on academic achievement of class X students.
3. To study the impact of Brain storming method on academic achievement of class X students.
4. To compare the impact of teaching methodologies (Lecture, simulation and brain storming) on academic achievement of class X students.
5. To suggest some training module for adopting teaching methodologies in private schools.

Hypothesis Of The Study - The following hypothesis are framed and will be tested.

1. There is no significant impact of lecture method on academic achievement of class X students.
2. There is no significant impact of simulation method on academic achievement of class X students.
3. There is no significant impact of brain storming method on academic achievement of class X students.
4. There is no significant difference between impact of teaching methodologies (Lecture, simulation and brain storming) on academic achievement of class X students.

Methodology - Considering the nature of the study the researcher has selected Experimental Method which is more appropriate method for the type of the study.

Analysis & Discussions- The educational and pedagogical

*Research Scholar (Education) Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

implications of the present study are as follows:

1. The findings reveal that there could be a shared experience between students and the teacher.
2. The study indicated that these teaching methodologies may help in imparting information and critical thinking skills to others.
3. Facilitation of the learning process – The findings reveal that these teaching methodologies are effective in enhancing learning among students in terms of their academic achievement. Hence, the teachers may include these teaching methodologies as a part of the teaching learning process in order to improve academic achievement level of students.
4. The study reveals that these teaching methodologies could guide students to be critical thinkers and enable them to evaluate their world.
5. The findings implied that these teaching methodologies could motivate students to use their full potential.
6. All agencies in the field of curriculum development such as National Council of Educational Research and training (NCERT), State Institute of Educational Research and Training (SIERT) and National Council for Teacher Education (NCTE) may prepare curriculum according to the teaching methodologies.

Main Findings Of The Study – The main finding of this investigation are summarized under
heading as follow -

Objective - To study the impact of lecture method on academic achievement of class X students.

Conclusion - on the basis of analysis we found that academic achievement of class X students is effected by the lecture method.

Objective - To study the impact of simulation method on academic achievement of class X students.

Conclusion - on the basis of analysis we found that academic achievement of class X students is effected by the simulation method.

Objective - To study the impact of Brain storming method on academic achievement of class X students.

Conclusion - On the basis of analysis we found that academic achievement of class X students is effected by the Brain storming
method.

Objective - To compare the impact of teaching methodologies (Lecture, and simulation) on academic achievement of class Xth students.

Conclusion :

1. On the basis of analysis we found that academic achievement of class X students is effected by both the Lecture and simulation method.
2. Academic achievement of class X students is more effected by simulation than Lecture method.

Objective - To compare the impact of teaching methodologies (simulation and brain storming) on academic achievement of class Xth students.

Conclusion :

1. on the basis of analysis we found that academic achievement of class X students is effected by both the simulation & brain storming method.
2. Academic achievement of class X students is more effected by & brain storming than simulation method.

Objective - To compare the impact of teaching methodologies (Lecturer and brain storming) on academic achievement of class Xth students.

Conclusion :

1. On the basis of analysis we found that academic achievement of class X students is effected by both the lecturer & brain storming method

References :-

1. Anderson, L.W. and Krathwohl, D. (2001).A taxonomy for learning, teaching, and assessing: A revision of Bloom's taxonomy of educational objectives. New York: Longman.
2. Angelo, T.A., and Cross, K.P. (1993). Classroom assessment techniques: A handbook for college teachers (2nd ed.). San Francisco: Jossey-Bass.
3. Alclrich, C. (2004). Simulation and the future of learning. An innovative (and perhaps revolutionary) approach to e-learning San Francisco, CA: Pfeiffer publishing.
4. Ali, A (2001). Science, technology and mathematics education as tools for poverty alleviation. Keynote address presented at the 2nd National conference of school of sciences, Federal College of Education EhaAmufu.
5. Busari (2004).Traditional lecture method and chemistry teachers. (Online) Available http://www.ehow.co.Uk/into-8607068-effectiveness-traditonalmethod-teaching March16, 2013. Chen, C. and Howard, B. (2010). Effect of live simulation on middle school students attitudes and learning toward science. Journal of Educational Technology and society 13(1) 133-139
6. Al gorashi,I (2008). The Effect of Brainstorming Strategy in Teaching History in The Development of Creative Thinking and Achievement and Retention of Second grade Secondary School Female Students in AL-MadinahALMunawarah.Master Thesis, Taibah University.
7. Alsalamat, M (2010). he Effectiveness of Using Brainstorming on the Seventh Grade Students' Achievement in Geography and Developing Their Attitudes towards it.Educational Journal ,Egypt ,27 (3)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Preferred Payment Options after Demonetization in India

Dr. Yadu Rao*

Abstract - Introduction of coins and then paper currency after the elimination of barter system was the revolutionary and deemed to be the giant leap. However, with the advent of internet and smart phones the whole system of payment and settlement has now been changed completely. All the payment systems discussed used by many people in the country, however, after the demonetization of notes of Rs. 500 and Rs.1000 the whole economy felt the supply side pressure of new currency which last for months. During that time from the end of 2016 to the first half of the year of 2017 people faced cash out situation. In post demonetization era Paytm brought a paradigm shift in the day to day payment and settlement system.
Key words - Digital Payment Options, Paytm, UPI, Google Pay.

Introduction - Technological advancement in the medium of exchange has influenced the perception of people significantly. Now you need not to have wallet in your pocket if you have it in your mobile. By and large payment options can be categorized in the three parts

1. Paper currency (cash)
2. Online payment system (NEFT, RTGS, IMPS etc.)
3. Plastic currency (debit, credit or cash cards)
4. Electronic currency (e-wallets, mobile apps)

Introduction of coins and then paper currency after the elimination of barter system was the revolutionary and deemed to be the giant leap. However, with the advent of internet and smart phones the whole system of payment and settlement has now been changed completely. In case of countries like India shifting towards the system of electronic modes of payments from conventional physical or paper mode of currency is a bit difficult task. Acknowledging the fact the Government of India in the year 2015 launched an ambitious campaign of Digital India Mission to promote electronic payment system for governmental products and services.

In order to make electronic payment system user friendly numerous modes of payment were introduced during the past decade viz. Cards like debit/ credit/ cash, USSD and SMS banking, AADHAAR Enabled Payment System, Immediate Payment Service, Mobile or E-Wallets, Banks Cash or Pre-Paid Cards, Point of Sale Machines, Internet Banking, Unified Payments Interface (UPI), Mobile Banking with Android Applications and so on. On the basis of the data from the RBI, importance of digital payment can be realized by looking at fact in the year 2014 only 2.38 digital payments per capita in India were there while the count has increased to 13.15 in the March 2018.

All the payment systems discussed used by many people in the country, however, after the demonetization of notes of Rs. 500 and Rs.1000 the whole economy felt the supply side pressure of new currency which last for months. During that time from the end of 2016 to the first half of the year of 2017 people faced cash out situation. In post demonetization era Paytm brought a paradigm shift in the day to day payment and settlement system. Although several alternatives were already introduced and used by the people, which are already discussed in paragraph above but the Paytm hits the bull's eye and provided a free of cost platform to transfer money from one to another person's wallet in seconds. People were struggling with the cash crisis and paytm gave them an better option in the form of Paytm wallet and that is with attractive cash back offers and this is how people started to shifting from ATM to PAYTM.

Review of Literature - (NC, 2016) the author emphasized that the India is a cash based economy. An effort of demonetization has been made by the government to curb the corruption but at the same time online transactions and credit card transactions are seemed to be expensive for small merchants. The author also talks about the mobile wallets and e-wallets.

(Suri, 2016) the author here established an association between black money, counterfeit currencies, crime and terrorism. The author considered demonetization as a significant and the first step towards cashless economy.

(Singh, Ajit;, 2017) the author in this article talks about various mode of payments available and emphasized that mobile may play a significant role in case of transition towards cashless economy. However, the author pin points the challenges for mobile cashless transaction regarding security and other related issues.

(Bhattacharyya & Noria, 2017) In this article an effort has been made by the authors to discuss how Indian economy is becoming digital and cashless. In the article e-

*Assistant Professor, Government Meera (Girls) College, Udaipur (Raj.) INDIA

wallets are also discussed and are deemed to be the alternatives to ATMs.

(CH. B. V. L. Sudheer & Ashrefunnisa, 2017) talks about how electronic payment system affects cashless economy of India. Electronic payment system is the key in the regime of Cashless India.

Singh, S., & Rana, R. (2017) in the study an effort has been made to analyze the perception of users towards the digital payment system. Author further infer that other factors other than education do not have a significant effect on preferring the digital payment modes.

Mohanta, G., Debasish, S. S., & Nanda, S. K. (2017) the present study was based on secondary data. Authors discussed various efforts taken by the government under Digital India Campaign and provide WiFi , high speed internet and more employments seem to be created.

Shah, Z. A. (2017) in the present study assesses the availability of infrastructure for digital payments, analyses the different modes of digital payments. In addition problems and prospects of cashless economy are investigated. The study is based on secondary data collated from various sources viz. Reserve Bank of India, National Payment Corporation of India.

Objective - To study which payment option after demonetization users prefer over other options and why.

Hypotheses :

H_0: There is no significant difference in the opinions of male and female users regarding modes of digital payments and thus they do not have any preferred payment option

H_0: There is no significant difference in the opinions of users (male & female) of most preferred mode of digital payments.

Research Methodology - Study is based on the primary data collected from the group of salaried people in Udaipur city. Questionnaire submitted to respondents who belong to salaried group. Hundred people respond and on the basis of that analysis has been done. Kruskal Wallis test is applied to identify the significant difference in the preferences of user on the basis of services offered by various payment options available.

Significance of study - On the basis of the data from the RBI, importance of digital payment can be realized by looking at fact in the year 2014 only 2.38 digital payments per capita in India were there while the count has increased to 13.58 in the year 2018 where as the digital payments as a percentage of GDP were 561 in 2014-15 and increased to 579%, 644% during the years year 2015,-16, 2016-17 respectively. Further based on RBI and NCPI data, Unified Payment Interface (UPI) which was introduced on April 11, 2016 is an mobile based application facilitates transfer of money from bank to bank, showed tremendous growth from Rs.69.5 billion in 2016-17 to Rs.1095 billion (growth of 1481%) in the year 2017-18 while during the same period volume of UPI showed increase of 5024.5% from 17.9 million to 915.2million. There is an undoubted growth of digital payment system in India; however, for the sake of retail payments how the users belong to salaried group respond would be an important area to be touched because there we find the people who pay the taxes, belong mostly to the middle class, use the services available, encounter the ground realities and can give the unbiased feedback.

Limitation of study - Respondents do not represent the whole user group of digital payment users as (i) they are salaried (ii) Study is based on the primary data received from the respondents of Udaipur city. (iii) Digital payment options in questionnaire selected randomly and there are number of other options available.

Analysis and Interpretation- Kruskal-Wallis Test was conducted to examine the difference in opinion on preferred payment options. Kruskal-Wallis H test showed CV<H-Value as 7.815 < 32.814 that there was a statistically significant difference in the options available on the basis of services they offer. In other words users do have their preferred payment options. In the present study questionnaire was prepared to gauge the information regarding the preferred mode of payment by the user and for what purposes they choose specific channel or mobile app for the payment. 60% of respondents are active paytm users, whereas 9% choose UPI as their preferred mode of payment.

To test the second hypothesis that there is no significant difference in the opinions of male and female users of most preferred mode of digital payments t test is used. In the present case the most preferred mode of digital payment came out as Paytm. In order to infer if there are any differences in male and female users of Paytm the t-test was performed and no significant difference in the score was found.

Table 1 (see in next page)

Thus, Paytm users reckon the application on the same scale and do not differ in opinion for opting it as a preferred payment option.

Findings - After preparing the ranking table based on the responses it was observed that the majority of people use Paytm because of its circulation and operability in market. Respondents also revealed that they find paytm registration process quite easy. Another reason of using Paytm is the variety of options available on the bill payment page of the application. Mostly, people are using it for buying and selling of commodities of daily use, also the cash back motivates people to use it as their default payment application. Surprisingly, respondents appreciate the transaction details maintain by the Paytm which accordingly facilitate developing budget discipline.

Graph 1 (see in last page)

Few respondents find Paytm useful as the Paytm wallet accepts credit card and then can be used at any retails store as heavy charges are levied by the credit card companies for providing ATM withdrawal facility on credit card.

In case of Google Pay respondents mostly used for the purpose of money transfer and utility bill payments. Users are not rating it cash back offers but various payment

options facilitates easy payment platform.

Graph 2,3,4 & 5 (see in last page)

Unified Payment Interface has gained huge popularity in such a short span of time and is expected to be the biggest competitor of Paytm and other Mobile payment services. With the easy registration process, convenient options of money transfer, on the move availability, cash back offers, wallet limit and user friendly interface forcing people now to shift towards it.

Online banking and NEFT are not the FMCG and Retail segment players under the regime of digital payment system and thus mostly if is used for money transfer and still taken as one of the safest methods of money transfer.

Conclusion - Diversified digital payment options are available in India. Due to this diversity and interoperability users find many payment choices. In the present article people seem to be opting Paytm as a digital payment option but it is long way to go and the most important competition the Paytm has to face with UPI. The present study incorporates opinions of salaried respondents and thus there is a sufficient scope for future research by incorporating more categories of respondents and payment options as well.

References :-

1. Bhattacharyya, A., & Noria, Y. (2017, July 14). India paves its way to a cashless economy. *PwC India*, pp. 1-4.
2. Mohanta, G., Debasish, S. S., & Nanda, S. K. (2017). A study on growth and prospects of Digital India Campaign. *Journal of Internet Banking and Commerce*, *2*(7), 727–731.
3. NC. (2016, November 16). *'Cashless Indian economy' – Money demonetization to mobile digitization*. Retrieved from www.rctom.hbs.org:https://rctom.hbs.org/submission/cashless-indian-economy-money-demonetization-to-mobile-digitization/
4. Singh, A. (2017). *Cashless India: Leveraging Possibilities and Facing Security Challenges in the Mobile Space.* Retrieved from www.globallogic.com: https://www.globallogic.com/gl_news/cashless-india-leveraging-possibilities-and-facing-security-challenges-in-the-mobile-space/
5. Singh, S., & Rana, R. (2017). Study of consumer perception of digital payment mode. *Journal of Internet Banking and Commerce*, *22*(3), 1–14.
6. Sudheer, C. B., & Ashrefunnisa, M. (2017, February). Electronic Payment in Cashless Economy of India: Problems and Prospect. International Journal of Scientific Engineering and Technology Research, 6(7), 1398-1402.
7. Suri, Y. (2016). *Demonetization – An Opportunity to Curtail Black Money.* Retrieved July 18, 2017, from niti.gov.in: http://niti.gov.in/content/demonetization-%E2%80%93-opportunity-curtail-black-money-and-promote-digital-payments
8. Shah, Z. A. (2017). Digital payment system: problems and prospects. *EPRA International Journal of Economic and Business Review*, *5*(8), 194–201.
9. "STATISTICS." *NPCI*, www.npci.org.in/statistics
10. *Reserve Bank of India - RBI Bulletin*, 17 Mar. 2017, www.rbi.org.in/Scripts/BS_ViewBulletin.aspx?Id=16820.

Table 1

	Female	Male	Conditions
Registration process	(M=8.51, SD=0.43)	(M=8.64, SD=0..57)	t(47)=2.01, p= .50
Convenience as varied options are available	(M=8.25, SD=0.49)	(M=8.52, SD=0.59)	t(49)=2.00, p=.18
Money transfer	(M=8.4, SD=0.54)	(M=8.28, SD=0.62)	t(49)=2.00, p=.55
Availability: On the move payment	(M=8.6, SD=0.30)	(M=8.68, SD=0.39)	t(48)=2.01, p=.61
Cash back offers	(M=8.08, SD=0.96)	(M=8.28, SD=0.79)	t(55)=2.00, p=.42
Weekly and Monthly offers	(M=7.8, SD=0.81)	M=8.08, SD=0.66)	t(55)=2.00, p=.21
Utility and Bill Payment	(M=8.11, SD=0.39)	(M=8.32, SD=0.56)	t(46)=2.01, p=.26
Wallet Limit	(M=7.88, SD=0.69)	(M=7.72, SD=0.71)	t(51)=2.00, p=.45
Track what you spend to develop budget discipline	(M=8.54, SD=0.54)	(M=8.16, SD=0.2.47)	t(32)=2.03, p=.26
Money to wallet can be added via Credit Card	(M=7.62, SD=6.82)	(M=8.16, SD=0.4.64)	t(57)=2.00, p=.39

Graph 1

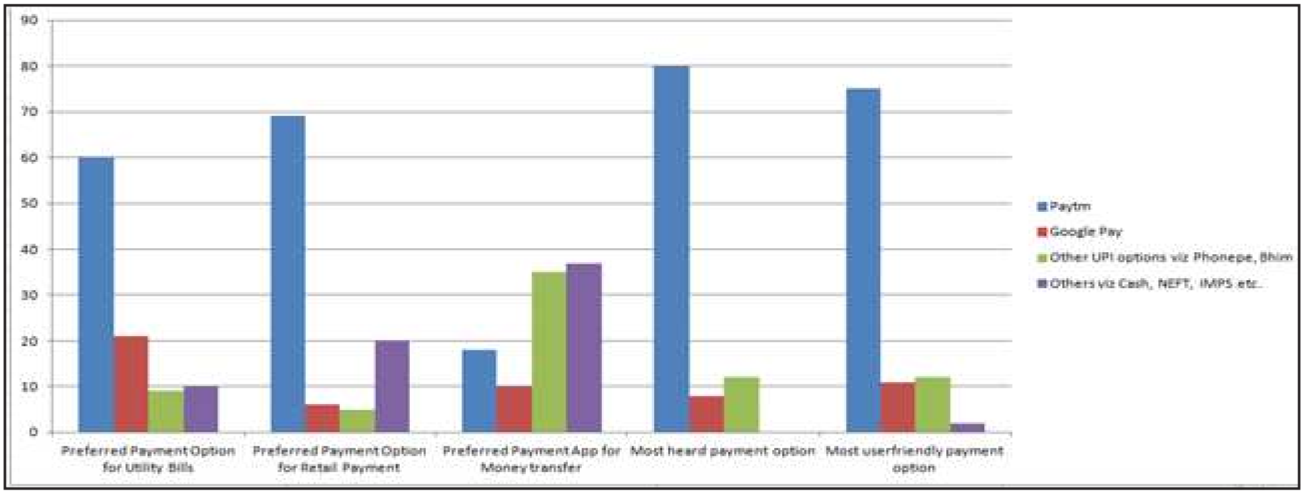

Graph 2

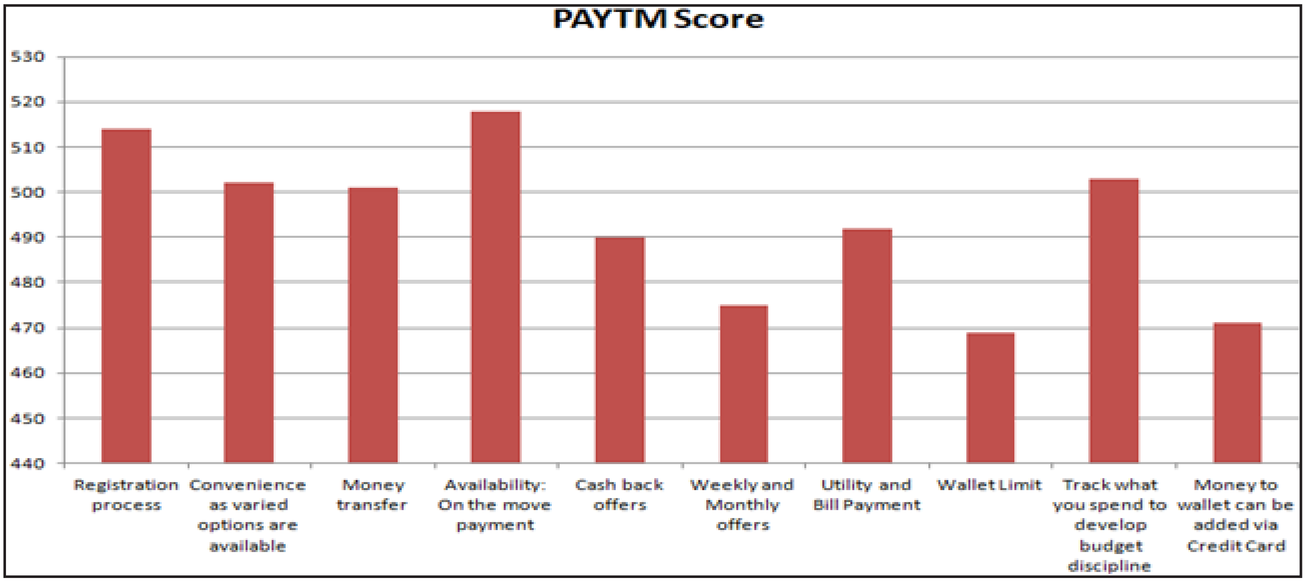

Graph 3

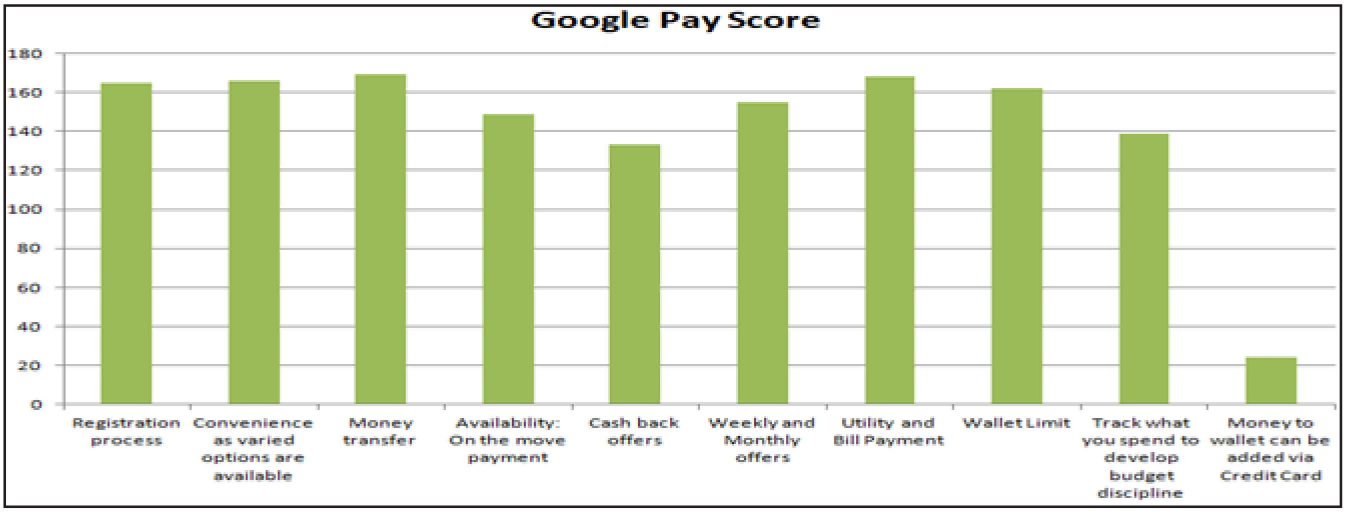

Graph 4

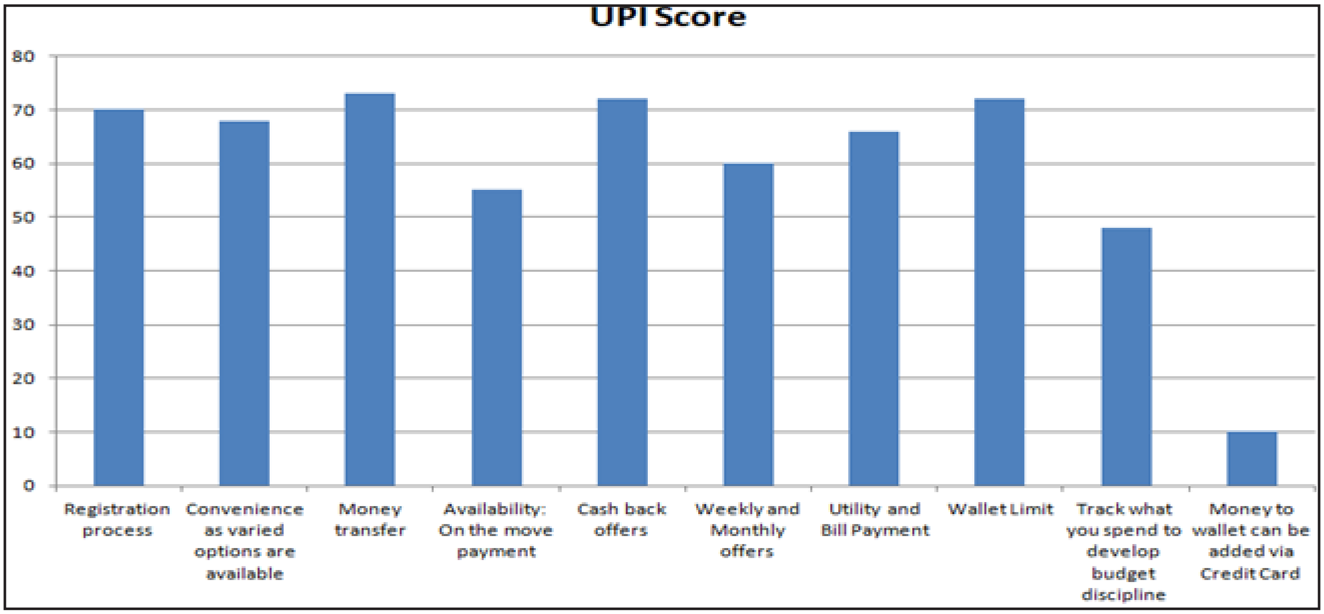

Graph 5

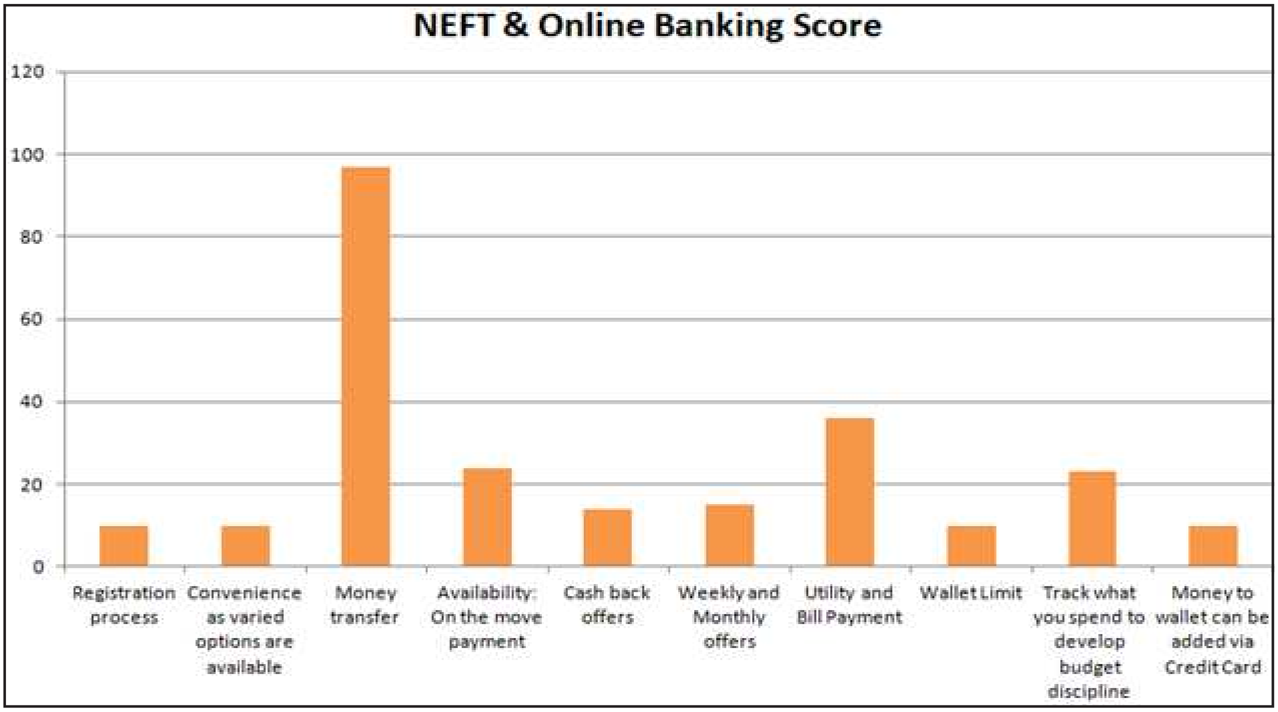

****

पर्यावरण संरक्षण एवं हमारा दायित्व

डॉ. शुभ्रा तिवारी *

शोध सारांश – विज्ञान के क्षेत्र में असीमित प्रगति और नये आविष्कारों की स्पर्धा के कारण आज का मानव प्रकृति पर पूर्णतया विजय प्राप्त करना चाहता है। आज मानव ने अपनी जिज्ञासा और नई नई खोज की अभिलाषा में पर्यावरण के सहज कार्यो में हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया है जिसके कारण हमारा पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है। हम इन दिनों पर्यावरण की सुरक्षा के प्रति लापरवाह होते जा रहे है जिसके परिणाम भविष्य में घातक हो सकते है। वृक्ष – वनस्पति मनुष्य के लिए अत्यन्त उपयोगी है, परन्तु मानव इनके महत्व व उपयोग को न समझते हुए इनकी उपेक्षा कर रहा है। वनस्पति ही प्राणियों को पोषण प्रदान करती है, इसलिए पर्यावरण संरक्षण अत्यन्त–आवश्यक है।
शब्द कुंजी – पर्यावरण संरक्षण, प्रकृति, वनस्पति, सहचर्य, समन्वय।

प्रस्तावना – मानव जीवन प्रकृति पर आश्रित हैं। जीव जंतु, वृक्ष–वनस्पति, नदी पहाड़ आदि इनके अंग प्रत्यंग हैं। इनके परस्पर सहयोग से ही प्रकृति संतुलित है।

पर्यावरण शब्द परि + आवरण के संयोग से बना है। 'परि' का आशय चारों तथा आवरण का आशय परिवेश हैं। पर्यावरण अर्थात् वनस्पतियों, प्राणियों और मानव जाति सहित सभी सजीवों और उनके साथ सम्बन्धित भौतिक परिसर को पर्यावरण कहते है वास्तव में वायु, जल, भूमि पेड़–पौधे, जीव–जन्तु, मानव और उसकी विविध गतिविधियों के परिणाम आदि सभी का समावेश होता है।

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण के संरक्षण को बहुत महत्व दिया गया हैं। यहाँ मानव जीवन को हमेशा मूर्त्ता या अमूर्त्त रूप में पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, सूर्य, नदी, वृक्ष या पशु–पक्षी आदि के साहचर्य में ही देखा गया है।

पर्यावरण का अर्थ है चारों तरफ का वातावरण तथा पर्यावरण संरक्षण का तात्पर्य है कि हम अपने चारों ओर के वातावरण का संरक्षित करे तथा उसे जीवन के अनुकूल बनाए रखें। पर्यावरण और प्राणी एक दूसरे पर आश्रित है। यही कारण है कि भारतीय चिन्तन में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा उतनी ही प्राचीन है, जितना यहाँ मानव जाति का ज्ञात इतिहास हैं।

भारतीय संस्कृति का अवलोकन करने से ज्ञात होता है यहाँ पर्यावरण संरक्षण का भाव अति पुरातनकाल में भी मौजूद था पर उसका स्वरूप भिन्न था, पर्यावरण का संरक्षण हमारे नियमित क्रियाकलापों से ही जुड़ा हुआ था। प्राचीनकाल से ही सूर्य, पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, वनस्पतियों, नदियों आदि को पूजनीय मानने की परम्परा रही है, जिसके मूल में पर्यावरण संरक्षण का ही भाव निहित है। पर्यावरण संरक्षण के साथ–साथ जैव–विविधता के संरक्षण का भी प्राचीनकाल में गौरवमयी इतिहास रहा है। पर्यावरण एवं परिस्थितिकी संकट मौजूदा दौर के ऐसे विषय है जिन पर दुनिया भर में सर्वाधिक बहस हो रही है क्योंकि मानव का प्राकृतिक परिवेश अर्थात् पर्यावरण खतरे में है।

पर्यावरण संरक्षण की परिभाषा – हमारे देश में संविधान 1950 में लागू हुआ था परन्तु वह पर्यावरण संरक्षण से नहीं जुड़ा था। सरकार ने 1976 में संविधान में संशोधन कर नये अनुच्छेद जोडे 48 अतथा 51 A (G) अनुच्छेद 48 सरकार को निर्देश देता है कि वह पर्यावरण की सुरक्षा करे और अनुच्छेद 51 A (G) नागरिकों के लिए है कि वह हमारे पर्यावरण की रक्षा करें।

सन् 1992 में ब्राजील में विश्व के 174 देशों का पृथ्वी सम्मेलन आयोजित किया गया तथा उसके पश्चात् सन् 2002 में जोहान्सबर्ग में पृथ्वी सम्मेलन आयोजित कर विश्व के सभी देशों को पर्यावरण संरक्षण पर ध्यान देने के अनेक उपाय सुझाव गये।

पर्यावरण संरक्षण की विधियाँ – पर्यावरण प्रदूषण के कुछ दूरगामी दुष्प्रभाव है, जो अतिघातक है जैसे आणविक विस्फोटों से रेडियोधर्मिता का आनुवांशिक प्रभाव, वायुमंडल का तापमान बढना, ओजोन परत की हानि, भूक्षरण ऐसे घातक दुष्प्रभाव है। प्रत्यक्ष दुष्प्रभाव के रूप में जल, वायु तथा वातावरण का दूषित होना तथा वनस्पतियों का विनष्ट होना। बड़े कारखानों से विषैला अपशिष्ट बाहर निकलने से तथा प्लास्टिक आदि के कचरे से प्रदूषण की मात्रा उत्तरोत्तर बढ रही है।

बढ़ते वायु प्रदूषण के कारण न केवल महानगरों में ही बल्कि छोटे–छोटे कस्बों और गांवों में भी शुद्ध प्राणवायु मिलना दूभर हो गया है क्योकि धरती पर वन समाप्त होते जा रहे है। वृक्षों के अभाव में प्राणवायु की शुद्धता और गुणवत्ता दोनों ही घटती जा रही है।

वायु प्रदूषण के लिये वाहन भी कम उत्तरदायी नहीं है। बसों, कारों, ट्रकों, मोटर–साइकिलों, स्कूटर, रेलों आदि में प्रयुक्त ईंधन से निकलने वाला धुआँ, वायु को प्रदूषित करता है।

अपने पर्यावरण को बेहतर बनाने के लिए हमें जल को भी प्रदूषण से बचाना चाहिए। कारखानों का गंदा पानी, घरेलु गंदा पानी आदि को समीपस्थ नदियों और समुद्र में गिरने से रोकना चाहिये। कारखानों के पानी में हानिकारक रासायनिक तत्व घुले रहते है, जो नदियों के जल को विषाक्त कर देते है, परिणामस्वरूप जलचरों के जीवन को संकट का सामना करना पड़ता है। दूसरी तरफ उसी प्रदूषित पानी को सिंचाई के काम में लेते है, जिसमें उपजाऊ भूमि भी विशैली हो जाती है। उसमें उगने वाली फसल व सब्जियाँ भी पौष्टिक तत्वों से रहित हो जाती है जिसके सेवन से अवशिष्ट रसायन मानव शरीर में पहुँचकर उसको भी नुकसान पहुंचाते है।

पर्यावरण पर ही हमारा भविष्य आधारित है, जिसकी बेहतरी के लिए ध्वनि प्रदूषण की तरफ भी ध्यान देना चाहिये। आज महानगरों में ही नहीं

* सहायक आचार्य (भौतिक शास्त्र) सेठ मथुरादास बिनानी राजकीय महाविद्यालय, नाथद्वारा (राज.) भारत

बल्कि गांवों में भी ध्वनि विस्तारकों का प्रयोग होने लगा हैं। औद्योगिक संस्थानों की मशीनों के कोलाहल तथा वाहनों की चिल्ल-पों ने ध्वनि प्रदूषण को जन्म दिया है। इससे मानव की श्रवण शक्ति का ह्रास होता है। ध्वनि प्रदूषण का मस्तिष्क पर भी घातक प्रभाव पडता है।

अगर पर्यावरण इसी तरह प्रदूषित होता रहा तो पूरी पृथ्वी, प्राणी और वनस्पति इस प्रदूषण में विलीन हो जाएगी इसलिए समय रहते हमें इन प्रदूषण से हमारी पृथ्वी को बचाना है इसलिए इसके संरक्षण का उपाय हर व्यक्ति को करना आवश्यक है।

निष्कर्ष - पर्यावरण सुरक्षा और उनमें संतुलन हमेशा बना रहे इसके लिए हमें जागरूक और सचेत रहना होगा। प्रत्येक प्रकार के हानिकारक प्रदूषण जैसे जल, वायु, ध्वनि, इन सब प्रदूषण से बचने के लिए अगर हम उपाय करें तो हमारी पृथ्वी की सुंदरता जो कि पर्यावरण है, उसे बचा सकते है और अपने जीवन को स्वस्थ बना सकते है। विकास चाहे जितनी ऊंचाई प्राप्त कर ले मानव जीवन का विकल्प नहीं हो सकता है। अत: समावेशी और सतत् विकास के लिए पर्यावरण संरक्षण के प्रति हमारा दायित्व अपरिहार्य है। पर्यावरण संरक्षण विश्व में प्रत्येक मनुष्य के लिए अनिवार्य रूप से घोषित करना चाहिए, क्योंकि पर्यावरण है तो जीवन है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रसाद गायत्री - (2011) 'पर्यावरण भूगोल' कैलाश पुस्तक सदन- भोपाल
2. तोमर शैलेन्द्र सिंह - (2012 एवं 2013) 'जल संरक्षण एवं प्रबंधन' राधा पब्लिकेशन्स् नई दिल्ली।
3. डॉ. अर्चना मिश्रा (2001) - 'वाटरशेड मैनेजमेन्ट' ऑयर प्रेस, दिल्ली
4. रमेश चन्द्रप्पा और रवि. डी. आर, (2009) - 'पर्यावरणीय समस्याएं, विधि और प्रौद्योगिकी- एक भारतीय परिप्रेक्ष्य', रिसर्च इंडिया प्रकाशन, दिल्ली।
5. मिलिन्द कान्दलिकर, गुरुमूर्ति रामाचन्द्रन (2000) - '2000 : इंडिया : द कॉजेज एंड कन्सिक्वेन्सेस् ऑफ पर्टिकुलेट एयर पॉल्युशन इन अरबन इंडिया: अ सिन्थेसिस ऑफ द सांइस' इन्युअल रिव्यु ऑफ सांइस एंड द एन्वायरनमेन्ट 25 : 629-684

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

भवन निर्माण में कार्यरत श्रमिकों के बच्चों के लिए संचालित की सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का मूल्यांकन

उषा राजे * डॉ. महेश गुप्ता **

प्रस्तावना - निर्माण क्षेत्र में कार्यरत श्रमिक असंगठित क्षेत्र में आते हैं व इसमें अधिकतर अशिक्षित व कम पढ़े-लिखे व्यक्ति कार्य करते हैं। इस क्षेत्र में रोजगार निरंतर प्राप्त नहीं होता है इस कारण निर्माण श्रमिकों की आर्थिक स्थिति कमजोर होती है। आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण श्रमिक अपने बच्चों की शिक्षा प्रति भी जागरूक नहीं होते हैं और उनके परिवार का भविष्य असुरक्षित रहता है।

देश का भविष्य बच्चों की वर्तमान स्थिति पर निर्भर करता है। यदि बच्चों को अच्छी शिक्षा व संस्कार प्राप्त होगें तो परिवार के साथ-साथ देश भी विकास करेगा व देश का भविष्य सुधरेगा। प्रदेश सरकार ने उपरोक्त स्थिति को ध्यान में रखते हुए निर्माण क्षेत्र में कार्यरत श्रमिकों के बच्चों के लिए कई सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ प्रारंभ की हैं जिससे बच्चों को उचित शिक्षा प्राप्त हो सके, उच्च शिक्षा हेतु आर्थिक सहायता के साथ-साथ उचित मार्गदर्शन प्राप्त हो सके और निर्माण श्रमिक व परिवार का भविष्य सुरक्षित हो सके व परिवार आर्थिक व सामाजिक तरक्की कर सके।

श्रमिकों के बच्चों के लिये संचालित योजनाएँ

1. शिक्षा हेतु प्रोत्साहन राशि योजना - श्रमिक अपनी कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण बच्चों की शिक्षा पर उचित ध्यान नहीं दे पाते हैं तथा पिढ़ि दर पिढ़ि इसी हाल में रहते हैं। श्रमिकों के बच्चों की शिक्षा के स्तर को सुधारने व शिक्षा के प्रति उत्साह को बढ़ाने हेतु शिक्षा प्रोत्साहन योजना प्रारंभ की गई है। उक्त योजना दिनांक 13.12.2004 से प्रभावशील है। दिनांक 10.07.2008 की अधिसूचना द्वारा इसका नाम 'शिक्षा हेतु प्रोत्साहन राशि योजना' कर दिया गया है। योजना के प्रावधानानुसार छात्र/छात्राएँ जो कि कक्षा 1 से 5वी तक, कक्षा 6 से 8वीं, कक्षा 9 से 12वीं तक, स्नातक स्तर बी.ए., बी.काम, बी.एस.सी, बी.ई, एम.बी.बी.एस तथा अन्य सभी स्नातक स्तर की व्यवसायिक पाठ्यक्रम तथा स्नातकोत्तर कक्षाओं मे जैसे एम.ए, एम.काम, एम.एस.सी, एम.सी.ए., एम.ई, एम.डी, एम.एस. स्नातकोत्तर स्तर व्यवसायिक परीक्षा उच्च अध्ययन तथा अन्य डिप्लोमा जैसे आई.टी.आई, पॉलीटेक्निक, डी.सी.ए. आदि की शिक्षा शासकीय अथवा केन्द्र/राज्य शासन द्वारा मान्यता प्राप्त शिक्षण संस्था मे प्राप्त कर रहे हों को शिक्षा हेतु प्रोत्साहन राशि प्रदान की जाती है। प्रोत्साहन राशि का कक्षावार विवरण निम्नानुसार है :-

तालिका क्र. 1 - प्रोत्साहन राशि का विवरण

क्र.	प्रोत्साहन हेतु कक्षावार पात्रता	वार्षिक प्रोत्साहन राशि	
		छात्र	छात्रा
1	कक्षा 1, से 5 तक	500	800
2	कक्षा 6वीं, से 8वीं	1000	1,200
3	9वीं एवं 12वीं	1,200	1,700
4	स्नातक कक्षा जैसे बी.ए./बी.एस.सी./ बी.कॉम./डिप्लोमा स्तर के पाठ्यक्रम आदि	3,000	4,000
5	स्नातकोत्तर कक्षा जैसे एम.ए./एम.एस.सी. /एम.कॉम/ स्नातकोत्तर डिप्लोमा आदि	5,000	6,000
6	स्नातक स्तर की व्यावसायिक पाठ्यक्रम मे अध्ययनरत होने पर	6,000	8,000
7	स्नातकोत्तर स्तर की व्यावसायिक परीक्षा में अध्ययन, पीएच.डी. या शोध कार्य करनें पर	8,000	10,000

शिक्षा प्रोत्साहन हेतु उपरोक्त योजना बहुत महत्वपूर्ण योजना है। योजना से निर्माण श्रमिकों के बच्चों का शिक्षा के स्तर बढेगा एवं उनका भविष्य सुधरेगा।

तालिका क्र. 2

क्र.	वर्ष	हितग्राही संख्या	वितरित राशि
1.	प्रारंभ से 2011 तक	937	752300
2.	2011-2012	8234	6447850
3.	2012-13	21910	18321393
4.	2013-14	589	515750
5.	2014-15	13462	11670970
	कुल	**45132**	**37708263**

स्त्रोत :- श्रमायुक्त कार्यालय, जिला इन्दौर से प्राप्त आंकड़े।

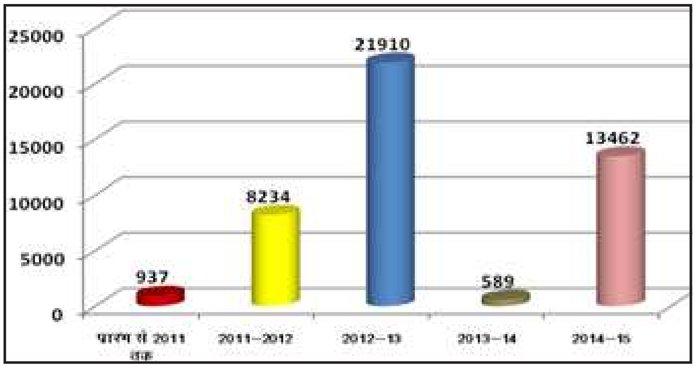

तालिका के अनुसार ज्ञात होता है कि वर्ष 2012-13 में सर्वाधिक 3130 श्रमिकों के बच्चों को योजना का लाभ प्राप्त हुआ है। इस वर्ष कुल

* शोधार्थी (वाणिज्य) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्याल, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (वाणिज्य) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्याल, इन्दौर (म.प्र.) भारत

राशि रू. 18321393/- शिक्षा सहायता के रूप में श्रमिकों के बच्चों को प्रदान की गई है। सबसे कम शिक्षा सहायता राशि वर्ष 2013-14 में रू. 515750/- कुल 589 श्रमिकों के बच्चों को प्रदान की गई है एवं वर्ष 2014-15 में 13462 श्रमिकों के बच्चों को रू. 11670970/- शिक्षा के सहायता हेतु प्रदान की गई है। शिक्षा से श्रमिक परिवार के भविष्य को सुधार कर, आर्थिक व सामाजिक स्तर में वृद्धि की जा सकती है। इस हेतु शिक्षा के प्रति श्रमिकों एवं बच्चों में जागरूकता को बढ़ाये जाने की आवश्यकता है।

शिक्षा हेतु प्रोत्साहन राशि योजना में यह प्रावधान है कि अन्य समकक्ष योजनाओं में लाभ प्राप्त होने पर भी इस योजना में अतिरिक्त लाभ हिताधिकारी को प्रदान किया जाता है।

2. मेधावी छात्र/छात्राओं को नगद पुरस्कार योजना - शिक्षा के प्रति जागरूकता बढ़े व श्रमिक की कमजोर आर्थिक स्थिति बच्चों की शिक्षा प्राप्ति में बाधक न बने इस हेतु यह योजना प्रारंभ की गई है। उक्त योजना दिनांक 13.12.2004 से प्रभावशील है। मेधावी छात्र/छात्राओं को नगद पुरूस्कार योजना के अंतर्गत परिवार की दो संतानों की सीमा के अध्याधीन रहते हुए पंजीकृत निर्माण कर्मकारों की ऐसी समस्त संतानें जिन्होंने निम्न लिखित परीक्षाओं में से कोई भी परीक्षा **प्रथम श्रेणी** के अंक प्राप्त कर उत्तीर्ण की हों अथवा व्यवसायिक परीक्षा मण्डल द्वारा आयोजित प्रवेश परीक्षा मे अहर्ता प्राप्त कर सम्बन्धित व्यवसायिक पाठ्यक्रम में प्रवेश प्राप्त कर लिया हो योजना से लाभ प्राप्त करने हेतु पात्र होते हैं। प्रत्येक कक्षा व पाठ्यक्रम के समक्ष उल्लेखित नगद पुरस्कार राशि एक मुश्त देय होती है।

तालिका क्र. 3 - नगद पुरस्कार राशि का विवरण

क्र.	कक्षा	पुरस्कार राशि	
		छात्र	छात्रा
1	5वीं, 6वीं एवं 7वीं में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने पर	2,000	3,000
2	8वीं एवं 9 वीं में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने पर	3,000	4,000
3	10 वीं एवं 11 वीं प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने पर	4,000	6,000
4	12 वीं प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने पर	6,000	8,000
5	स्नातक कक्षाओं जैसे-बी.ए./बीएससी/ बी.कॉम आदि प्रत्येक वर्ष के लिये प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने पर	8,000	10,000
6	स्नातकोत्तर कक्षाओं जैसे एम.ए/ एम.एस.सी./एम.कॉम आदि प्रत्येक वर्ष के लिए प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने पर	10,000	12,000
7	स्नातक स्तर की व्यावसायिक परीक्षा में चयन होने पर	4,000	4,000
8	स्नातकोत्तर स्तर की व्यावसायिक परीक्षा में चयन होने पर	6,000	6,000

तालिका क्र. 4

क्र.	वर्ष	हितग्राही संख्या	वितरित राशि
1.	प्रारंभ से 2011 तक	203	188500
2.	2011-2012	209	238950
3.	2012-13	3130	2734750
4.	2013-14	77	57500
5.	2014-15	2691	2282250
	कुल	**6310**	**5501950**

स्त्रोत :- श्रमायुक्त कार्यालय, जिला इन्दौर से प्राप्त आंकड़े।

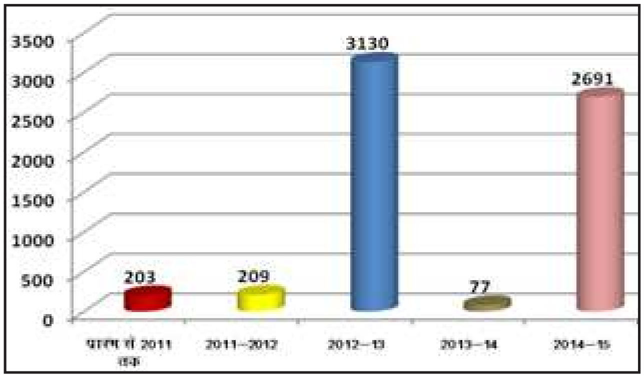

तालिका के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि वर्ष 2012-13 में सर्वाधिक 3130 मेधावी बच्चों को राशि रू. 2734750/- शिक्षा प्रोत्साहन हेतु प्रदान की गई है। वर्ष 2013-14 में सबसे कम 77 श्रमिकों के बच्चों को प्रोत्साहन राशि रू. 57500/- प्रदान की गई है एवं वर्ष 2014-15 में 2691 श्रमिकों के बच्चों को कुल राशि रू. 2282250/- प्रदान की गई है। मेधावी पुरस्कार योजना से श्रमिकों के अच्छे पढ़ने वाले बच्चों को शिक्षा के प्रति प्रोत्साहन बढ़ रहा है एवं आगे पढ़ायी जारी रखने में आर्थिक सहायता प्राप्त हो रही है।

3. राज्य लोक सेवा आयोग, संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षा में सफलता पर पुरस्कार - यह योजना दिनांक 16.08.2013 से प्रभावशील है। यह योजना उन भवन और अन्य निर्माण कर्मकारों पर प्रभावशील है, जो अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत महिला अथवा पुरूष हिताधिकारी हो, तथा वैध परिचय पत्रधारी हों।

वैध परिचय पत्र धारी निर्माण श्रमिक के 18 से 45 वर्ष की आयु के पुत्र-पुत्रियों को राज्य लोक सेवा आयोग अथवा संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में विभिन्न स्तर पर

चयनित होने पर योजनातंर्गत प्रोत्साहन राशि प्रदान की जाती है :-

देय लाभ निम्नानुसार है :-

तालिका क्र. 5

आयोग का नाम	परीक्षा जिसे उत्तीर्ण किया है	देय हितलाभ
मध्यप्रदेश लोक	प्रारंभिक परीक्षा	रूपये 15 हजार
सेवा आयोग	मुख्य परीक्षा	रूपये 25 हजार
संघ लोक सेवा	प्रारंभिक परीक्षा	रूपये 25 हजार
अयोग	मुख्य परीक्षा	रूपये 50 हजार

उपरोक्त लाभ परीक्षा के एक स्तर पर चयनित होने पर जीवनकाल में एक बार प्रदान किया जाता है।

यदि आवेदक द्वारा राज्य लोकसेवा आयोग के विभिन्न स्तरों हेतु योजनांतर्गत लाभ प्राप्त किया गया हो, तथा संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षा में भी चयन हुआ हो तो संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षा में चयन हेतु भी लाभ प्राप्त करने हेतु पात्र होता है।

विभागीय स्वीकृति उपरांत एक मुश्त प्रोत्साहन राशि का एकाऊण्ट पेयी चेक पंजीबद्ध हिताधिकारी के नाम से जारी किया जाता है।

म.प्र.भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल द्वारा वर्ष 2015-16 में **राज्य लोक सेवा आयोग अथवा संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में सफलता पर पुरूस्कार योजनांतर्गत** 03 प्रशिक्षणार्थियों को 45,000 रूपये की राशि हितलाभ के रूप में वितरित की गयी।

4. सुपर 5000 (कक्षा-10) एवं सुपर 5000 (कक्षा-12) योजना

यह योजना दिनांक 16.08.2013 से प्रभावशील है। पंजीकृत निर्माण श्रमिक के पुत्र एवं पुत्रियो जो म.प्र. माध्यमिक शिक्षा मण्डल द्वारा आयोजित कक्षा 10वीं एवं 12वीं की परीक्षा में किसी शासकीय विद्यालय में अथवा स्वाध्यायी विधार्थी के रूप में अध्ययन करते हुये कक्षा 10वीं में संपूर्ण राज्य की मेरिट में सर्वोच्च 5000 बच्चों में सम्मिलित हैं, अथवा कक्षा 12वीं में संपूर्ण राज्य के मेरिट में अपने संकाय के सर्वोच्च 5000 बच्चो में सम्मिलित हैं, उन्हे आगे अध्ययन जारी रखने के लिये एकमुश्त सहायता राशि रूपये 25,000/- एक बार प्रदान की जाती है।

म.प्र.भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल द्वारा प्रत्येक वर्ष म.प्र. माध्यमिक शिक्षा मण्डल से 5000 छात्र/छात्राओं की मेरिट सूची प्राप्त कर पोर्टल पर अपलोड की जाती है।

हितलाभ स्वीकृति उपरांत हितलाभ की राशि का एकाउंट पेयी चैक पंजीबद्ध हिताधिकारी के नाम से जारी किया जाता है।

तालिका क्र. 6 - कक्षा 10 वी सुपर 5000 पुरस्कार योजना

क्र.	वर्ष	हितग्राही संख्या	वितरित राशि
1.	2013-14	0	0
2.	2014-15	0	0
3.	2015-16	2	60000
4.	2016-17	0	0
	कुल	**2**	**60000**

स्त्रोत :- श्रमायुक्त कार्यालय, जिला इन्दौर से प्राप्त आंकड़े।

तालिका से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2015-16 में श्रमिकों के केवल 2 बच्चे इन्दौर जिले से सुपर 5000 (कक्षा 10 वी) की सूची में आए थे एवं उन्हें प्रोत्साहन राशि कुल रू. 60000/- प्रदान की गई थी। श्रमिकों के बच्चों का शिक्षा का स्तर जागरूकता बढ़ाने की आवश्यकता है।

तालिका क्र. 7 - कक्षा 12 वी सुपर 5000 पुरस्कार योजना

क्र.	वर्ष	हितग्राही संख्या	वितरित राशि
1.	2013-14	0	0
2.	2014-15	0	0
3.	2015-16	2	50000
4.	2016-17	3	75000
	कुल	**5**	**125000**

स्त्रोत :- श्रमायुक्त कार्यालय, जिला इन्दौर से प्राप्त आंकड़े।

तालिका से स्पष्ट होता है कि श्रमिकों के कक्षा 12 वी में अध्ययनरत बच्चों में 2015-16 में केवल 2 बच्चें एवं वर्ष 2016-17 में 3 बच्चों को क्रमश: कुल राशि रू. 50000/- एवं 75000/- प्रोत्साहन स्वरूप प्रदान की गई है।

सुपर 5000 (10 वी) एवं सुपर 5000 (12 वी) सूची में इन्दौर जिले से बहुत कम संख्या में बच्चें आ पाए हैं। श्रमिकों के बच्चों में शिक्षा के प्रति जागरूकता एवं उन्हें उचित शिक्षा मार्गदर्शन व सहयोग मिले इस हेतु प्रयास किये जाने की आवश्यकता है।

5. व्यावसायिक पाठ्यक्रमों हेतु अध्ययन अनुदान योजना - व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में, निर्माण श्रमिक के बच्चों को शिक्षा-प्रशिक्षण में कमजोर आर्थिक स्थिति बाधा न बने इस हेतु यह योजना प्रारंभ की गई है। यह योजना दिनांक 16.08.2013 से प्रभावशील है। यह योजना उन भवन और अन्य निर्माण कर्मकारों पर प्रभावशील है, जो अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत महिला अथवा पुरूष हिताधिकारी हों, तथा वैध परिचय पत्र धारी हों।

वैध परिचय पत्र धारी निर्माण श्रमिक की ऐसी संतानों को जिन्हें मान्यता प्राप्त व्यावसायिक पाठ्यक्रम में प्रवेश प्राप्त हुआ हो अथवा व्यावसायिक पाठ्यक्रम के प्रथम वर्ष की परीक्षा उर्त्तीण की हो अध्ययन हेतु अनुदान के रूप निम्नानुसार एकमुश्त अनुदान राशि प्रदान की जाती है :-

निम्नानुसार अनुदान राशि एकमुश्त प्रदान की जाती है :-

1. मेडिकल कॉलेज में प्रथम वर्ष में प्रवेश लेने पर राशि रूपये 20,000/-
2. डेण्टल कॉलेज/फिजियोथेरेपी डिग्री कोर्स में प्रवेश लेने पर राशि रूपये 15,000/-
3. नर्सिंग कॉलेज/पेरामेडिकल कोर्स में प्रवेश लेने पर राशि रूपये 10,000/-
4. इंजीनियरिंग की प्रथम वर्ष की परीक्षा उर्त्तीण करने पर राशि रूपये 15,000/-
5. इंजीनियरिंग डिप्लोमा में प्रथम वर्ष उर्त्तीण करने पर राशि रूपये 10,000/-
6. आय.टी.आय. में प्रथम वर्ष उर्त्तीण करने पर राशि रूपये 5,000/-

म.प्र.भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल द्वारा वर्ष 2015-16 में **व्यावसायिक पाठ्यक्रमों हेतु अध्ययन अनुदान योजनांतर्गत** 14 विधार्थियों को 1,42,000 रूपये की राशि हितलाभ के रूप में वितरित की गयी है।

6. व्यावसायिक (यूजी/पीजी) पाठ्यक्रमों की प्रवेश परीक्षाओं की कोचिंग हेतु अनुदान योजना 2014 - निर्माण श्रमिक के बच्चों को व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में प्रवेश लेने हेतु प्रवेश परीक्षाओं की कोचिंग लेने में आर्थिक स्थिति बाधा न बने व वे भी उचित मार्गदर्शन कोचिंग संस्थानों से प्राप्त कर अपना भविष्य बना सकें इस हेतु उपरोक्त अनुदान योजना प्रारंभ की गई है। यह योजना दिनांक 05.12.2014 से प्रभावशील है। यह योजना निर्माण श्रमिक के परिवार के आश्रित सदस्यों के लिये व्यावसायिक (यूजी/पीजी) पाठ्यक्रमों की प्रवेश परीक्षाओं की कोचिंग हेतु प्रारंभ की गई है।

परीक्षार्थी द्वारा चयनित देश की किसी भी कोचिंग संस्थान (जो कम से कम 3 वर्ष से कार्यरत हो, संस्थान द्वारा न्यूनतम 300 विधाथियों को कोचिंग प्रदान की गई हो, कम से कम 3 वर्षो से सेवा शुल्क प्रदायकर्ता हो) में कोचिंग लेने पर योजना के अंतर्गत रू. 20,000 अथवा कोचिंग शुल्क का 75 प्रतिशत (दोनो में से जो भी कम हो) अनुदान के रूप में सम्बंधित कोचिंग संस्थान को, उसी स्थान के स्थानीय निकाय (जनपद पंचायत/नगरीय निकाय) द्वारा संस्थान के बैंक खाते में इलेक्ट्रॉनिक कैश ट्रांसफर पद्धति से किया जाता है। यह अनुदान एक स्तर की प्रवेष परीक्षा के लिये अधिकतम दो बार तक प्रदान किया जाता है।

निष्कर्ष - प्रदेश सरकार द्वारा म.प्र.भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल के माध्यम से संचालित उपरोक्त योजनाओं से एक ओर तो निर्माण श्रमिकों की निम्न आर्थिक व सामाजिक स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन आयेगा। वहीं दूसरी तरफ उनमें शिक्षा, अपने कार्य में कुशल होने हेतु प्रशिक्षण प्राप्त करने के प्रति जागरूकता भी आयेगी।

प्रदेश सरकार द्वारा निर्माण श्रमिकों के लिये उपरोक्त योजनाओं के माध्यम से किये जा रहे कार्य अत्यंत सराहनीय एवं उनकी निम्न स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिये प्रशंसनिय हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'योजना दर्पण निर्माण श्रमिकों के कल्याण की छह योजनाएँ',

मध्यप्रदेश भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल द्वारा वर्ष 2005 में प्रकाशित।

2. 'निर्माण श्रमिकों के लिये पंजीयन एवं योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु मार्गदर्शिका', मध्यप्रदेश भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल द्वारा वर्ष 2008 में प्रकाशित एवं निर्माण श्रमिकों के राज्य स्तरीय सम्मेलन में 19 अगस्त 2008 को विमोचित।
3. 'प्रदेश के लाखों निर्माण मजदूरों के लिये सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ प्रचार पुस्तिका',मध्यप्रदेश भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल द्वारा प्रकाशित।
4. म.प्र. भवन एवं अन्य सनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल की 2014-15 की वार्षिक रिर्पोर्ट।
5. Website : www.google.com, mp.labour.mp.gov.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

भारत की गरीबी निवारण योजनाओं का मूल्यांकन

डॉ. आराधना शुक्ला* निधी श्री **

शोध सारांश – भारत देश में गरीबी आर्थिक विकास में सबसे बडी बाधा बनती जा रही है अत: विकास संबंधी योजनाओं के क्रियान्वयन एवं संचालन के पूर्व सरकार के द्वारा गरीबी निवारण अनेक योजनायें संचालित की जा रही है। ताकि जनता के पास क्रय शक्ति सृजित हो और उनके द्वारा देश के आर्थिक विकास के आवश्यक पहलू बचत व निवेश पर योगदान दिया जा सके।

शब्द कुंजी – गरीबी, आर्थिक विकास एवं गरीबी निवारण योजनायें।

प्रस्तावना – कोई भी देश आर्थिक गति तभी पाप्त कर सकता है जब उस देश की जनता के पास पर्याप्त आय प्राप्ति के साधन हो कि वह अपनी अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। किन्तु भारत जैसे विकासशील देश के आर्थिक विकास में प्रमुख बाधक तत्व गरीबी अथवा निर्धनता है अत: देश की सरकार का सर्व प्रथम दायित्व जनता की गरीबी हटाना होता है। गरीबी निवारण हेत सरकार अनेक योजनायें संचालित कर रही है जो मुख्य रुप से जनका को न केवल आय क साधन प्रदान कर रही है बल्कि उन्हे स्वरोजगार के अवसर भी दे रही है। जैसे :– मनरेगा, प्रधानमंत्री ग्राम सडक योजना, इंदिरा आवास योजना, जनश्री बीमा योजना, अंत्योदय अन्य योजना आदि।

गरीबी निवारण संचालित योजनाओं से गरीब जनता को आय एवं रोजगार प्राप्ति के अनेक स्त्रोत प्राप्त होते हैं तथा तथा कौशल विकास योजनाओं से जनता को आय व रोजगार की प्राप्ति होगी परिणाम स्वरुप बचत व निवेश भी प्रोत्साहित होंगे और देश का आर्थिक विकास संभव हो जायेगा।

अध्ययन का उद्देश्य – शोध पत्र अध्ययन के उद्देशय अग्रांकित है–

1. देश में गरीबी का अध्ययन करना।
2. संचालित विभिन्न गरीबी निवारण कार्यक्रमों की उपलब्धि का अध्ययन करना।
3. विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से जनता के गरीबी पर प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पना :

1. विभिन्न गरीबी निवारण योजनाओं से गरीबी का स्तर कम हो रहा है।
2. गरीबी निवारण योजनायें देश की गरीबी हटाने में प्रभावकारी है।

शोध प्रविधि – भारत देश की सरकार के द्वारा संचालित गरीबी निवारण योजनायें वास्तव में गरीबी निवारण में प्रभावकारी है अपव्यय नहीं इस तथ्य के विश्लेषण हेतु भारतीय आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्ट के द्वारा संचालित द्वितीयक आंकडो का अध्ययन किया गया है।

शोध साहित्य का पुनरावलोकन :

1. बालकृष्ण बी. 1943 इन्होने अनेक शासकीय योजनायें विशेषकर विपणन संबंधी योजनाओं पर अध्ययन कर यह निष्कर्ष प्रकट किया कि सरकार ग्रामीण क्षेत्रों की संरचना के आधार पर विपणन संबंधी योजनायें संचालित करती है।
2. ग्रामीण विकास मंत्रालय पोर्टल से प्रकाशन कॉलम के वार्षिक रिपोर्ट एवं पहल व उपलब्धियों के द्वारा हमे वर्तमान में चल रही सरकार की ग्रामीण विकास हेतु संचालित विभिन्न योजनाओं एवं उनकी उपलब्धियों के बारे में जानकारी प्राप्त हुई एवं इन गतिविधियों के ग्रामीण निर्धनो के उपर प्रभाव तथा उनके फायदे के बारे में जाना। यह जानकारी हमें हमारे रिर्सच पेपर हेतु बहुत ही सहयोगी रही है।

शोध अध्ययन – भारत में देश की राष्ट्रीय आय तथा प्रति व्यक्ति आय कम होना ही यहां कि निर्धनता का प्रमुख कारण है। साथ साथ ही यह कहा जा सकता हैकि देश में गरीबी के प्रमुख कारण मुख्यत: रोजगार अवसरो में धीमी वृद्धि, निम्न आय अर्जन, जनसंख्या में भारी वृद्धि, दोषपूर्ण आर्थिक निति आदि रहा है।

तृतीय पंचवर्षीय योजनाओं से ही देश में गरीबी निवारण कार्यक्रम संचालित किये जा रहे है उनका प्रभाव गरीबी निवारण पर प्रभाव दिखाई देने लगा है तथा गरीबी के आंकडों में दिन प्रतिदिन आंशिक सुधार हो रहा है जो अग्रांकित आंकडो से स्पष्ट हो रहा है:–

भारत में निर्धनता अनुपात एवं निर्धनो की संख्या

वर्ष	निर्धनता अनुपात (प्रतिशत में)	निर्धनों की संख्या (करोड में)
2004-05	37.2	40.71
2009-10	29.8	35.47
2011-12	21.9	26.93
2014-15	24.5	36.93

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भारत देश में निर्धनता की अनुपात 2004-05 में 37.2 प्रतिशत तथा वह घटकर 2011-12 में 26.93 करोड रह गया किंतु 2014-15 में निर्धन अनुपात एवं निर्धनों की संख्या में वृद्धि हुई है। इसका मुख्य कारण दोषपूर्ण आर्थिक निती, मुद्रा प्रसार एवं मूल्य वृद्धि रही है।

सुझाव एवं निष्कर्ष – शोधकर्ता ने गरीबी निवारण संबंधी योजनाओं के सफल संचालन एवं परिणाम प्राप्त करने के लिए निम्न सुझाव दिया है :–

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) आर. आई. टी. महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) प्रगति महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

1. भारत जैसे कृषि प्रधान देश हेतु बहुफसली कार्यक्रम चलायं जाने चाहिए।
2. ग्रामीण क्षेत्रों में सार्वजनिक निर्माण से संबंधित योजनाओं जैसे सडक निर्माण, कुऑ, नहर, आवास, विद्युत संबंधित संचालित किया जाना चाहिए।
3. कौशल विकास योजनाओं का उचित तरीके से संचालन किया जाना चाहिए।
4. योजनाओं से संबंधित जानकारी जन समान्य तक सुलभ तरीके से पहुंचाने के लिए प्रयास किये जाने चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ जे.पी. मिश्रा, 'व्यावसायिक पर्यावरण', साहित्य पब्लिकेशन, पेज क्रमांक 88-89
2. डॉ वी.सी. सिन्हा, 'व्यावसायिक पर्यावरण', संजय साहित्य पब्लिकेशन, पेज क्रमांक 208
3. 'भारतीय आर्थिक सर्वेक्षण रिर्पोट'
4. सिन्हा वी.सी.,'राजस्व एवं रोजगार के सिद्यांत', पेज क्रमांक 108-110
5. पुरी एवं मिश्रा,'भारतीय अर्थशास्त्र', पेज क्रमांक 69
6. WWW.FING.GOV.IN, INDIA

****

NSS Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728) 730
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

रामायण और आधुनिक काल में दाम्पत्य की अवधारणा व स्वरूप

डॉ. अभयवीर *

शोध सारांश – रामायण और आधुनिक काल में दाम्पत्य सम्बन्धों में काफी उतार-चढ़ाव देखने को मिलते हैं रामायण काल हमारी सांस्कृतिक परम्पराओं एवं रीति-रिवाजों का बँधा हुआ काल था लेकिन आधुनिक समय में पुरातन सांस्कृतिक परम्पराओं एवं रीति रिवाजों का रूप बदल चुका है। इसका मूलभूत कारण भारतीय संस्कृति व वैदिक संस्कृति का शिकार होना साथ ही शिक्षा तकनीकी का प्रभाव भी देखने को मिलता है। जिसके कारण आधुनिक दाम्पत्य सम्बन्धों की अवधारणा का स्वरूप, परिवेश पूरी तरह से बदल चुका है। रामायण भारत वर्ष का एक सर्वोत्कृष्ट, धार्मिक, नैतिक एवं ऐतिहासिक गृन्थ रहा है। यह आदि कवि महर्षि वाल्मीकि द्वारा विकसित भारतीय साहित्य का आदिमहाकाव्य है। इसमें हिन्दू धर्म एवं संस्कृति के आदर्श मर्यादा पुरूषोतम भगवान श्रीराम के समग्र जीवन का काव्यमय वर्णन हुआ है, इस गृन्थ में भारतीय संस्कृति का जितना भव्य रूप उपलब्ध होता है उतना अन्यत्र दुर्लभ है। रामायण काल में दाम्पत्य सम्बन्धों का जो आदर्शमय रूप था वो आज लोप होता हुआ जा रहा है। वाल्मीकि रामायण भारत का राष्ट्रीय आदिकाव्य है। धार्मिक एवं नैतिक आदर्शो का भण्डार होने के साथ-साथ रामायण एक महत्वपूर्ण मानव समाजशास्त्री भी है, जो हजारों वर्षो पूर्व के भारतीयों के जीवन-यापन का रोचक वृतान्त उपस्थित करता है। एक पुरातन युग की जीवन परम्पराओं, धारणाओं, भावनाओं का चित्रण करने के कारण वह प्राचीन भरतीय सभ्यता और संस्कृति की एक बहुमूल्य निधि है। उनकी उपमा एक ऐसे पर्वत से दी जा सकती है जिसकी चोटी से हम आर्यो के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक क्रियाकलापों का सम्यक दर्शन कर सकते हैं उत्तर वैदिक भारत के सामाजिक इतिहास के शोध में रामायण का योग और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। क्योंकि करोड़ों भरतीयों के धार्मिक विश्वासों के साथ भावनाओं अविछिन्न रूप से गुंथी हुयी हैं। यह ग्रन्थ सामाजिक दृष्टि से पति-पत्नी के सम्बन्ध, पिता-पुत्र के कर्तव्य, गुरू-शिष्य का पारस्परिक व्यवहार, भाई का भाई के प्रति कर्तव्य व आदर्श ग्रहस्थ जीवन की अभिव्यक्ति कराता है इससे पितृभक्ति, पुत्रप्रेम, मातृस्नेह एवं जनसाधारण में सोहार्द का सुन्दर चित्रण है। बाल्मीकि ने पारिवारिक जीवन के प्राचीन आदर्शो को भावी पीड़ियों के लिए सुरक्षित कर दिया है। रामायण में भी राजा दशरथ के परिवार का प्रमुख उदाहरण हैं उस समय परिवार में मुखिया सर्वोपरि था मुखिया के बाद उसकी पत्नी का अधिकार होता था सभी पुत्र-पुत्रियों एवं अन्य सदस्यों को मुखिया की आज्ञा का पालन करना होता था। यह परिवार की महत्ता का प्रतिपादन करता है।

शब्द कुंजी – रामायण और दाम्पत्य सम्बन्ध, भारतीय पुरातन नारी, आधुनिक दाम्पत्य सम्बन्ध, आधुनिक नारी, पुरातन और आधुनिक नारी का तुलनात्मक अध्ययन।

अध्ययन का उद्देश्य :

1. रामायण काल की नारी एवं दाम्पत्य सम्बन्धों का उल्लेख करना।
2. आधुनिक काल की नारी और दाम्पत्य की बदलती स्थिति से परिचित कराना।
3. नारी के आदर्शमयी चरित्र का उल्लेख करना।
4. वर्तमान अर्थात आधुनिक नारी के गिरते मूल्यों को व्याख्यायित करना।
5. दाम्पत्य सम्बन्धों में नये मूल्यों को स्थापित करके रामायण कालीन आदर्श समाज बनाना।
6. आधुनिक काल की दाम्पत्य सम्बन्धी अवधारणा एवं स्वरूप को स्पष्ट करना।

प्रस्तावना – रामायण कालीन समाज में आठ प्रकार के विवाह प्रचिलित थे। अन्तर्जातीय विवाह का भी प्रचलन था अनुलोम विवाह का भी रामायण में उल्लेख मिलता है जिसमें उच्च जाति का पुरूष निम्न जाति की कन्या से विवाह करता है। मुनि कुमार श्रवण कुमार को राजा दशरथ ने भ्रमवश मार डाला था उसके पिता वैश्य और माता शूद्र थी। इससे पता चलता है कि रामायण काल में दाम्पत्य सम्बन्धों में जातिवाद का रूप हावी न था, सभी को सम्मान दिया जाता था, ऐसे अनेक उदाहरणों से क्षत्रिय जाति और देवयानी का विवाह भी प्रतिलोम विवाह का उदाहरण है। रामायण काल में आज की तरह विवाह सम्बन्धों का प्रचलन न होकर के पुत्र-पुत्रियों का विवाह माता-पिता की इच्छानुसार होता था उस समय स्वयंवर प्रथा भी थी सीता का विवाह इसी स्वयंवर प्रथा का उदाहरण है उस समय बाल-विवाह की प्रथा नहीं थी।

रामायण कालीन समाज के दाम्पत्य सम्बन्धों में प्रेम का रूप अत्यधिक गहरा था प्रेमी जनों के आकर्षण एवं अनुराग के अनेक मन्जुल चित्र रामायण में उपलब्ध होते हैं, वयोवृद्ध महाराज दशरथ की अपनी सबसे छोटी रानी कैकेयी के वरदानों के अनुसार अपने प्रिय पुत्र को वनवास एवं भरत को राजगद्दी पर आसीन होने का वरदान दिया था रामायण काल में प्रेम अपनी चरम सीमा पर था चन्द्रमा की चमकीली किरणों के सम्पर्क से हर्षितवन तारों को प्रभावित करने वाली और रागवश छोड़ने वाली सन्ध्या रानी उस तरूणा का रूप है प्रिय के प्रथम स्पर्श से रोमांचित होकर जिसकी आँखों की पुतलियां आनन्द की चमक के कारण अपने आप उठती हैं और वह अपने वस्त्र अपने आप खिसकने देती हैं ऐसे ही अनेक उदाहरण रामायण काल में मिलते हैं।

रामायण काल के दाम्पत्य सम्बन्धों में किसी नारी को बंधने से पूर्व स्त्री पात्रों की समीक्षा से यह स्पष्ट होता है, उन्हें समुचित शिक्षा मिल चुकी

* असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी) कमला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धौलपुर (राज.) भारत

थी कन्याओं को व्यावहारिक और नैतिक शिक्षा दी जाती थी तथा उन्हें पत्नी विषयक कर्तव्यों का सुचारू रूप से बोध कराया जाता था सीता ने राम के साथ बन जाने के लिए कहा था इससे पता चलता है कि उन्हें पत्नी धर्म की शिक्षा घर पर मिल चुकी थी, देवासुर संग्राम में कैकेयी का अपने पति के साथ जाना यह सिद्ध कर देता है कि उस समय कन्याओं को भी युद्ध की शिक्षा दी जाती थी उस समय नारी पुरूष का घर में समान स्थान था नारी को अर्द्धांगिनी का दर्जा पूर्व प्राप्त वे पति कृत्य धर्म का उच्चतम आदर्श प्रतिष्ठित करती थी, सीता जैसी नारियां अपनी आदर्श नारी के रूप में भारतीय स्त्रियों के लिए उदाहरण स्वरूप है। साथ ही आदर्श पति का उदाहरण श्री राम में देखा जा सकता है।

रामायण कालीन नारी घर के बाहर समाज में सम्मान की पात्र थी उसे धार्मिक क्रियाकलापों तथा सामाजिक उत्सवों में भाग लेने का अवसर प्राप्त था पुरूष वर्ग में भी वह भाग लेती थी सेना दलों में भी वह सम्मिलित होती थी स्त्रियों के अकेले या सखियों के साथ आमोद-प्रमोद करने के साथ और अवसर प्राप्त थे। महिलाओं के प्रति सामाजिक व्यवहार एवं उच्च शिष्टाचार का पालन किया जाता था। उदाहरण के लिए वन को जाते समय सीता ने सर्वप्रथम आसन ग्रहण किया था इससे स्पष्ट होता है कि उस समय की स्त्रियों की स्थिति सामान्य एवं सुखद थी उन्हें अधिक सुविधाऐं एवं अधिकार प्राप्त थे।

रामायण काल के दाम्पत्य सम्बन्धों का मूल रूप सादा जीवन उच्च विचार बाला सिद्धान्त ही दृष्टगोचर होता है, शिक्षा का प्रचार स्त्री-पुरूष दोनों में ही बरकरार रूप से दिखाई देता है।

रामायण कालीन समाज में सभी को सुख-सुविधाऐं प्राप्त थी। आज भी नि:संदेह यह कहा जा सकता है कि रामायण कालीन दाम्पत्य सम्बन्धों में सभी को पूर्ण अधिकार प्राप्त थे किसी पर कोई प्रतिबन्ध न था अत: कह सकते हैं इस काल में समाज की स्थिति सुगठित थी।

भारतीय संस्कृति का जैसा समुज्वल, सुन्दर एवं स्वाभाविक चित्रण इस काल में देखने को मिलता है वैसा रूप अन्यत्र दुर्लभ प्रतीत होता है वास्तविक रूप से रामायणकालीन दाम्पत्य सम्बन्ध भारतीय संस्कृति के ही नहीं विश्व संस्कृति के आदर्शमय रूप को दर्शाता है।

रामायण काल में दाम्पत्य सम्बन्धों का आदर्शमय चित्रण देखने को मिलता है, सीता का चरित्र एक आदर्श स्त्री के रूप में चित्रित हुआ है वह एक पति परायण कर्तव्यनिष्ठ तथा विकट परिस्थितयों में भी अपने पतिवृत धर्म का पालन करने वाली नारी है। लक्ष्मणजी की पत्नी उर्मिला भी पति की के अभाव की पूर्ति पूरी ईमानदारी के साथ कठिन तपस्यामयी जिन्दगी जीकर 14 वर्ष के समय को निकालती है यह एक अनूठे दाम्पत्य का उदाहरण है। सीता के बारे में हम देखते हैं जब राम को वनगमन का आदेश होता है, तव वह राजवैभव और अपने सुख ऐश्वर्य को तिलांजलि देकर अपने पति के साथ वनगमन करती है। तथा वन में असीम कष्टों को सहकर भी अपने पति की सेवा में संलग्न रहती है। वन में अपने पति के भाई अथवा देवर लक्ष्मण को पुत्रवत् मानकर स्नेह देती है, अनुचरों के प्रति उसमें दयालुता झलकती है। जब रावण पंचवटी से सीता का अपहरण कर ले जाता है और वहाँ नाना प्रकार की धमकियाँ देकर और भय दिखाकर उसे अपनी पत्नी बनने को कहता है तब भी वह अपने सतीत्व और अस्तित्व की रक्षा करती है। राम-रावण युद्ध में रावण को मारकर जब राम विजयी होते हैं तब सीता अपने सतीत्व को सिद्ध करने के लिए अग्नि परीक्षा देने को सहर्षतत्पर हो जाती है। एक साधारण धोबी के कहने पर जब राम, सीता का त्याग कर देते हैं तब भी वह अपने पति के प्रति किसी प्रकार का दुर्भाव मन में न लाकर वाल्मिकि के आश्रम में अपना निर्वासित जीवन व्यतीत करती है और अपने पुत्रों लव व कुश का समुचित पालन-पोषण करके मातृत्व के कर्तव्य का निर्वाह करती है, अन्त में अपने पति की मर्यादा की रक्षा करने के लिए ताकि भविष्य में भी उनके पति पर कोई उँगली न उठा सके भूमि में प्रवेश करती है। इस प्रकार सीता की पवित्रता और उसका पतिव्रत धर्म आज भी एक आदर्श तथा उसका चरित्र प्रत्येक युग में प्रत्येक समाज की स्त्रियों के लिए अनुकरणीय बन गया है।

आधुनिक काल में दाम्पत्य की अवधारणा व स्वरूप – आधुनिक समय में दाम्पत्य की अवधारणा का स्वरूप तेजी से बदलता नजर आ रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पिछले करीब पचास वर्षो में स्त्रियों की स्थिति काफी परिवर्तित हुई है। शिक्षा के बड़ते स्तर के कारण नारी आज स्वयं अपने पैरों पर खड़ी होने में सक्षम होती हुई जा रही है। पुरातन परम्परा वाला रूप कि नारी पूरी तरह से पुरूष पर आश्रित रहती थी आज वह प्रत्येक क्षेत्र में स्वतंत्र है शिक्षा के बढ़ते स्तर के कारण दाम्पत्य सम्बन्धों में भी तेजी से बदलाव आया है, प्रेम विवाह का बढ़ता स्तर आज साफ तौर से देखा जा सकता है। नारी आज पूरी तरह से स्वतंत्र होने के कारण किसी भी प्रकार की घुटन भरी जिंदगी जीने से ऊब चुकी है, शिक्षा के बड़ते स्तर ने नारी गरिमा को बतला दिया है कि आज समाज में नारी का क्या बजूद है, दाम्पत्य सम्बन्धों में किसी भी प्रकार का टकराव आने पर तलाक जैसी स्थिति का रूप भी बढ़ती शिक्षा के स्तर का परिणाम है। संयुक्त परिवार की परम्परा का स्तर तो वर्तमान समय में पूरी तरह से टूट चुका है, उच्च पद पर पति के रहते हुए निम्न पद पर कार्यरत पत्नी के साथ विभेद भी बढ़ने लगा है, जिससे की आज समाज में टकराव की स्थिति पैदा होती रहती है। आधुनिक समय में दाम्पत्य का रामायण कालीन नारी-पुरूष का एक सूत्री रूप आज बदल गया है, शिक्षा ने नारी की पूर्ण गरिमा को उजागर करके रख दिया है, जिसके कारण आज नारी पूरी तरह से दाम्पत्य की बागडोर को पूरी होशियारी से चलाने लगी है।

प्राचीन समय के अनुसार अल्पावस्था में आज दाम्पत्य सम्बन्धों की बागडोर थामने में कमी आयी है जिसमें भी स्त्री-पुरूष पूर्ण परिपक्वस्था में दाम्पत्य सम्बन्धों में जुड़ने से अपने जीवन के बारे में निर्णय लेने में सक्षम होने लगे हैं।

आधुनिक काल में आकर स्त्रियों को समान अधिकार आसानी से प्राप्त होने लगे हैं। भारत सरकार की नीति भी नारी आन्दोलन के अनुकूल रहीं है, 1935 ई. में केन्द्रीय व प्रान्तीय व्यवस्थाओं में स्त्रियों के लिए स्थान सुरक्षित रखे गये हैं। भारत सरकार ने स्त्रियों को ऊँचे पद देकर नारियों को ऊच्चतम प्रतिष्ठा देने के प्राचीन भारतीय आदर्शों का पालन किया है, स्वतंत्र भारत में न केवल अपने संविधान में स्त्री-पुरूषों के समान अधिकार माने गये हैं। वल्कि 1948 ई. में केन्द्रीय सरकार ने भारतीय प्रशासनिक सेवा की प्रतियोगी परीक्षाओं में नारियों को भी बैठने का अधिकार देकर संविधान की उक्त धारा को क्रियात्मक रूप प्रदान किया हैं। जिससे नारी ने अपनी गरिमा को पहचानकर उच्च पद प्राप्त करके दाम्पत्य सम्बन्धों में आयी हीनता के मन्तव्य को काफी हद तक समाप्त किया हैं। पहले विवादित स्त्री पूरी तरह पति की कृपा और दया पर आश्रित थी किन्तु आज भारतीय नारी को कानून का इतना संरक्षण प्राप्त हैं कि उसके स्वतंत्र विचारों में तथा उसकी गतिविधियों में पति का कोई हस्तक्षेप नहीं हो सकता यदि पति उस पर अत्याचार करता है तो उसे तलाक देकर उससे निर्वाह भत्ता प्राप्त करने का अधिकार है। उसे अपने पिता की सम्पत्ति में भी अधिकार प्राप्त हो गया है।स्त्री-पुरूष के कानूनी अधिकारों में समानता स्थापित हो गयी है। जिससे कि आज प्राचीन समय

जैसे दाम्पत्य सम्बन्ध न होकर परिवर्तित रूप दिखाई देता है।

आधुनिक समय में शिक्षा के बढ़ते स्तर के कारण अन्तर्जातीय विवाह भी खूब प्रचलित होने लगे हैं तथा समाज उन्हें मान्यता प्रदान करने लगा हैं। वर्तमान समय में तो प्रगतिशील विचारक तो अन्तर्जातीय विवाह को राष्ट्रीय एकता का प्रतीक मानते हैं फिर भी भारतीय समाज में आज भी कुछ ऐसे परिवार हैं जो अन्तर्जातीय विवाह को अच्छा नहीं समझते। प्रगतिशील विचारक ऐसे परिवारों को रूढ़िवादी अथवा दकियानूसी परिवार नाम से सम्बोधित करते हैं।

आजादी के बाद भारतीय परिवेश में आए परिवर्तनों का केन्द्र बिन्दु परिवार रहा है। आर्थिक, सामाजिक, वैज्ञानिक और औद्यौगिक परिस्थितियों का व्यापक प्रभाव परिवार की इकाई पर पड़ा है। इस प्रभाव ने जहाँ पारिवारिक ढ़ांचे में बाह्य परिवर्तन उपस्थित किया है वहीं भीतरी स्तर पर पारिवारिक सम्बन्धों में बहुआयामी परिवर्तन हुए। यह भी कहा जा सकता है कि बहुत कुछ बदला है, टूटा है और नये की तलाश में बहुत कुछ उलझा है, क्योंकि विगत तीस वर्षों के परिवारों की स्थिति और उसके सदस्यों की भूमिका पर विचार करें तो प्रतीत होता है कि यह तीन दशक का काल टूटते-बदलते सम्बन्धों का काल रहा है, यदपि परिस्थितियों के बदलते स्वरूप का ऐसा होना आश्चर्य तो पैदा नहीं करता लेकिन इस बदलते मानव सम्बन्धों की पीड़ा या संकट ने अवश्य ही संस्कारगत चेतना को झकझोरा है। परिणामस्वरूप जो भी स्थितियां सामने आयीं हैं, वे अप्रत्याशित भी महसूस होती हैं। क्योंकि स्म्बन्धों का गहरापन या गाढ़ापन उनके प्रमाण का सूचक है। लेकिन सामाजिक एवं आर्थिक दबावों के कारण न केवल रक्त सम्बन्धों में ही बदलाव आया है अपितु मधुर सम्बनधों में भी कटुता, अकेलापन का रूप, उदासी, पीड़ा, घुटन और तनाव पैदा हो गया है एक तरफ जहाँ संयुक्त परिवार चरमराकर विघटित हो रहा है वहीं पारिवारिक सम्बन्धों में असामंजस्य शंका-संदेह, रिक्तता, नीरसता, बेगानापन और जटिलता दिखाई देती है। बिडम्बना की स्थिति है कि भारतीय परिवार न तो पूर्णत: टूट पाया है और न अपने नये स्वरूप को स्थिर कर पाया है। इसे दूसरे शब्दों में इस तरह भी कह सकते हैं कि भारतीय जीवन में फिलहाल मानवीय सम्बन्धों की स्थिति टूटते-बिखरते मूल्यों की है, नयें मूल्यों की तलाश भी जारी है लेकिन मौजूदा स्थितियों में नये मूल्य स्थिर नहीं हो पाए हैं।

आधुनिक समय में आर्थिक मजबूरियों के कारण परिवार की संख्या और जरूरतें बढ़ने के कारण व्यक्ति परिवार से हटकर रोजगार की तलाश में शहरों में जा बसे हैं बढ़ती मंहगाई और बीबी-बच्चों के खर्च ने उसे इतना तंग कर दिया है कि आत्मनिर्भरता की ललक में वह परिवार से अलग हो गया है। इसलिए पारिवारिक खर्चे के प्रति संयुक्त दायित्व का भाव समाप्त हो गया है क्योंकि परिवार का ऐसा कोई संयुक्त आमदनी स्रोत नहीं रह गया है लेकिन परिवार के बाह्य ढ़ाचे के टूटने के बावजूद परिवार के सदस्यों के सम्बन्धों में तो बदलाव आया है वह वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अपनी प्रभावक भूमिका रखता है।

आज परिवार की इकाई पति-पत्नी और बच्चों तक सीमित हो गयी है। आश्चर्य तो इस बात का है, कि इस इकाई के सम्बन्ध भी टूट रहे हैं या बिगड़ रहे हैं अनेक कहानीकारों ने व्यक्ति मन की ऐसी अनुभूतियों को सूक्ष्मता के साथ अभिव्यक्त किया है, जो सम्बन्धों के अस्वीकारात्मक स्वभाव से उत्पन्न संकट के अन्तर्द्वन्द से परिपूर्ण स्थितियों को समेटे हुए हैं। ऐसी स्थितियाँ पारिवारिक सदस्यों के आपसी सम्बन्धों में दिखाई देती है तो स्त्री-पुरूष के सम्बन्धों में भी।

निष्कर्ष – दाम्पत्य अवधारणा को रामायण काल एवं आधुनिक काल को ध्यान में रखकर जब हम तुलनात्मक रूप से देखते हैं तो पता चलता है, रामायण काल का दाम्पत्य सम्बन्ध हमारी संस्कृति को सुगठित एवं नियोजित रूप से संचालित करने वाला था लेकिन आधुनिक सभ्यता में ढलकर रामायण काल की संस्कृति बदल चुकी है। वर्तमान दौर में सम्बन्धों में दिन पर दिन गिरावट आयी है लेकिन शिक्षा तकनीकी जैसे क्षेत्रों में नारियों ने काफी प्रगति की है जिससे स्त्री आज आत्मनिर्भर होकर पुरूष से कंधे से कंधा मिलाकर प्रगति क्षेत्रों में अपना योगदान देकर नवीन जीवन जीने का तरीका अपना रहीं हैं लेकिन बढ़ते आर्थिक दौर ने सम्बन्धों में टकराव की दीवार भी खड़ी कर दी है रामायण काल के सीता-राम, उर्मिला-लक्ष्मण, दशरथ-कैकेयी, जैसे उदाहरण मिलना आधुनिक समय में असंभव जान पड़ता है। आज ऐसे समाज की आवश्यकता जान पड़ती है जिसमें मानवीय सम्बन्धों में मधुरता का रस बहे, इसके लिए हमें रामायणकालीन समाज में व्याप्त दाम्पत्य सम्बन्धों को आधुनिक संस्कृति में उतारना होगा तभी एक नये समाज का निर्माण करके दाम्पत्य सम्बन्धों को सुदृढ़ एवं मजबूत बनाया जा सकता है। रामायण काल के दाम्पत्य सम्बन्ध हमारी संस्कृति की गौरवमयी गाथा का बखान करने वाले हैं, सीता, उर्मिला, जैसी श्रेष्ठ नारियाँ दाम्पत्य सम्बन्धों की शिरोमणि नारियां नजर आती हैं जबकि आधुनिक नारियों की तुलना यदि की जाए तो पता चलता है कि रामायण काल का आदर्शमयी रूप पूरी तरह से विलुप्त हो चुका हैं। आधुनिक नारी में आर्थिक सुदृढ़ता आने से अपने अहम् को उजागर करने लगी हैं, जिसके कारण पति-पत्नी में समय-असमय टकराव की स्थिति उत्पन्न होती रहती है। जिससे तलाक जैसी स्थितियाँ उत्पन्न हो रहीं हैं और सम्बन्धों में दिन प्रतिदिन गिरावट आ रही है, आज हमें रामायण कालीन संस्कृति के अनुसार जीवन-जीने वाले दम्पतियों। की संस्कृति का प्रचलन आधुनिक समय में हो सके इसकी नितान्त आवश्यकता जान पड़ती है, जिससे भारतीय संस्कृति के मूल्यों को विघटित होने से बचाया जा सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1 वाल्मीकि रामायण

2 रामचरित मानस-तुलसीदास-बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, लंकाकाण्ड, उत्तरकांण्ड

3 भारतीय संस्कृति के मूल आधार – शर्मा व्यास पृ0 321

4 इन्द्रदेव,भारतीय समाज,आगरा,आगरा विश्वविद्यालय 1969

5 सीताराम, भारतीय समाज का स्वरूप, पटना बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी 1974

6 त्रिपाठी, शम्भूरत्न भारतीय सामाजिक संरचना और संस्कृति, इलाहाबाद किताब महल, 1962

7 पाण्डेय मदन मोहन, समाजशास्त्र की विवेचना, कानपुर कितावघर 1959

8 स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य और ग्राम्य जीवन विवेकी राय

9 विवाह और नैतिकता :- बट्रेण्डरसल : अनुवाद : धर्मपाल राजकमल प्रकाशन देहली

10 नारी : जैनेन्द्र कुमार, पूर्वोदय प्रकाशन, देहली, 1980

11 स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में सामाजिक परिवर्तन, डॉ. भैरूलाल गर्ग चित्रलेखा प्रकाशन इलाहवाद प्रथम संस्करण 1979

12 स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में सामाजिक परिवर्तन, डॉ. गंगा प्रसाद, विमल देवेन्द्र कुमार, सुषमा पुस्तकालय दिल्ली प्रथम संस्करण, 1967

People Management Recent Trends In Training And Developments In India

Dr. Prabhat Chopra *

Abstract - Training and Development is a continuous process for improving the caliber and competence of the employees to meet the current and future performances. Training in addition to imparting requisite skills to all levels of employees, executives and managers also aims at changing the behavioural patterns of the employees in a direction which is congenial to achieve the organizational effectiveness, sustainability and growth. In this era of fast changing economic scenario and throat- cutting competitions, it is not enough for any organization just to have solid financial foundations, state of the art technology, automated systems, since the cutting edge of competitive survival is now the quality of the human resources which decides that which organization would ultimately survive in the long run. Training and Development, On the Job Training, Training Design and Delivery style are four of the most important aspects in organizational studies. The focus of the study is to understand the effect of Training and Development on Organizational performance. The back bone of this study is the secondary data comprised of comprehensive literature review. Hypothesis is developed to see the Impact of all the independent variables on the overall Organizational Performance. The hypothesis shows that all these have significant effect on Organizational Performance. On the Job Training, Training Design and Delivery style have significant affect on organizational Performance and all these have positively effect the Organizational Performance. It means it increases the overall organizational performance.

Keywords - Training and Development, On the Job Training, Training Design, Delivery style, Organizational Performance.

Introduction - Training and Development is an integrated sub-system of any modern organization destined to survive the throat–cutting global competitions having the inherent potentials to grow faster and faster in almost all services sectors. To keep pace with the changing needs of the highly talented and sophisticated human resources, training and development strategies have also changed dynamically from its traditional models to the latest ultra-modern and contemporary models having its focus on the overall and al round developments of all ranks and files, shifting from the fundamental concepts of various skill acquirements to that of competency building with added importance of behavioural and attitudinal modifications in the multi–cultural environments of team building and leaderships. To be frank, the routine functions like recruitments, selections, trainings, developments and compensations of the Human Resources Departments have been long taken over by modern functions of talent acquisitions, talent and knowledge managements, competency profiling and mapping gradually re-designating the Human Resources Manager as the Chief People Manager, whose main responsibility becomes enhancing the real and net worth of the human assets to provide the company its competitive edge over its thousands of competitors spread all over the world.

Now a day's training is the most important factor in the business world because training increases the efficiency and the effectiveness of both employees and the organization. The employee performance depends on various factors. But the most important factor of employee performance is training. Training is important to enhance the capabilities of employees. The employees who have more on the job experience have better performance because there is an increase in the both skills & competencies because of more on the job experience. The organizational performance depends on the employee performance because human resource of organization plays an important role in the growth and the organizational performance. So to improve the organizational performance and the employee performance, training is given to the employee of the organization. Training & development increase the employee performance which is an important activity to increase the performance of organization. On the other hand Employee performance is the important factor and the building block which increases the performance of overall organization. Employee performance depends on many factors like job satisfaction, knowledge and management but there is relationship between training and performance. This shows that employee performance is important for the performance of the organization and the training and development is beneficial for the employee to improve its performance.

Objective of the Study - The main objective of this study

*Associate Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

is to make a comparative study of the changing needs of the Training and Developments of the organizations in general and services sector in particular in view of the post economic liberalization of the country specially with the advent of MNC's Sectors in India.

Review of Literature - With increasing importance of the human resources and mounting demands of the well educated, trained, knowledgeable and talented employees all over the world as a competitive advantage for the corporate houses and industries to face the global challenges and competitions, management scientists and researchers went on exploring the various ways and means to improve the quality of human resources and trying to integrate the training and developments systems into the organizational systems for its survival, sustainability, growth and prosperity. The first set of research findings in this direction came from Cooper et. al. who stated that - there is a always a direct positive correlation between the training programmes and employees enhanced job involvement and performance. He further suggested that - there should be some recognition and financial benefits for the high performers at the training programmes which is likely to reflect in the form of employee’s high performance and enhanced level of motivations to learn and acquire new skills, knowledge and competencies essential for organizational growth and prosperity.

Differences between Training and Development - Employee training is different from management development or executive development. While the former refers to training given to employees in the operational, technical and allied areas, the latter refers to developing an employee in the areas of principles, and techniques of management, administration, organization and allied ones.

Table 1

Area	Training	Development
Content	Technical skills and knowledge	Managerial Behavioural skills and knowledge
Purpose	Specific and Job related	Conceptual and General Knowledge
Duration	Short term	Long term
For Whom	Technical and non-managerial personnel	Managerial personnel

Who Is Responsible For Employee Training And Development?

Employee training is the responsibility of the organization. Employee development is a shared responsibility of management and the individual employee. The responsibility of management is to provide the right resources and an environment that supports the growth and development needs of the individual employee. For employee training and development to be successful, management should:

1. Provide a well-crafted job description.
2. Provide training required by employees to meet the basic competencies for the job. This is usually the supervisor’s responsibility.
3. Develop a good understanding of the knowledge, skills and abilities that the organization will need in the future.
4. Look for learning opportunities in every-day activity.
5. Explain the employee development process and encourage staff to develop individual development plans.
6. Support staff when they identify learning activities that make them an asset to your organization both now and in the future.

Emerging Trends In Training & Development

Active Learning - Learning is better experientially and mostly by doing. Gives teams or work groups an actual problem, give them time on solving it and committing to as action plan, and then holds them accountable for carrying out the plan.

Influence of e-Learning - Almost all major companies are using some form of online learning to train their employees. Unlike past where they used to focus more on mandatory trainings or highly focused trainings that address their pressing business problems /challenges, organizations are now investing more and more in personal development programs to increase employee productivity.

Adaptive Learning - Companies may want to consider breaking traditional learning methods by introducing aspects of adaptive learning, it is a methodology that breaks traditional models and allows employees to learn at their own pace.

Integrating learning and development into organizational strategy - Most organizations aspire to make the best use of their people (their ‘human resources’, ‘human capital’ or any other term they use to describe the flesh and blood that drives their enterprise). Without learning, organizations and individuals simply repeat old practices, change is cosmetic and improvements are either fortuitous or short-lived

Behavioral Changes - More companies are focusing on building ‘how to’ skills that are highly relevant and immediately applicable to the jobs people do. Research shows that more people act themselves into a new way of thinking rather than think themselves into new ways of acting. Therefore it is the training that produces measurable results in terms of behavioral change that is more likely to make a real difference in the long term.

Real use of training experts - Training specialists are those in the organization who can provide a performance consulting service whereby all training interventions are geared towards the real needs of managers, staff and the business. To do this well, those working in the training area need to understand the business strategy of the organization.

Research Methodology - Present research paper is of descriptive type and based on primary data collected through questionnaire filled by the bank employees. The secondary data includes reference books, journal, research papers and internet. Random sampling of 40 respondents

from employees from different banks like SBI, Oriental Bank of Commerce and Punjab National Bank located in urban area of Indore.

Analysis And Findings

Statements	% Response of employees
Induction training is given adequate importance.	86% Very Good
Training programmes are well planned	89% Very Good
Norms and values of the organization are clearly explained to new employees during induction training.	71% Very Good
Training programmes are periodically reviewed and improved.	90% Very Good
Employees acquired technical knowledge and skill through training.	80% Good
Training and development is based on genuine needs.	79% Good
Employees participate in determining the training needs.	65% Good
Training and development (T&D) increase the skill of employees.	89% Very Good
T&D enhance the quality of services being performed by employees.	76% Very Good
T&D enhance the quality of services being performed by employees.	76% Very Good
T&D satisfy the ego of employees.	79% Very Good
T&D enhance the efficiency and effectiveness of the work being performed by employees.	78% Very Good
T&D minimize the faults in operations.	81% Very Good
T&D improve the leadership and managerial skills.	79% Very Good
T&D reduce the stress level of employees.	73% Very Good
Training and development stabilize the organization.	78% Very Good
T&D help employees in promotion and other monetary benefits.	72% Very Good

Conclusion - There is enough evidence to show that employees who were trained on a regular basis are the ones who provide a higher quality services to the customers. To develop an integrated and proactive training and development strategy there is requirement of coherent corporate culture rather than ad-hoc programs. In a service oriented industry, people are among the most important assets and must efficiently manage its employees during every phase of employment in this competitive arena. It is concluded that public sector organizations undertake training and development programmes for their employees to increase their efficiency. Organization provide training programmes to enhance their knowledge and skills to satisfy the customers. Growth of Corporate sector in India is the result of skilled manpower which is the outcome of training and development.

The evolution of training trends throughout the years has continued help organizations reduce costs, motivate its workers increase productivity and ultimately increasing profits. There are a variety of training trends. No one training trend is best for every situation or company's mission. Often mixes of training trends are most effective such as using YouTube videos in a traditional lecture or as part of an online learning class. Technology is transforming training much like other areas of our society. In general they are cheap and as or more effective than traditional training methods. Moreover, the younger generations embraces them and are motivated to learn via these techniques, in particular, those that involve social interaction.

Suggestions And Recommendations :

1. On review of the available literature and various research findings, based on the field survey, pilot studies, results of the structured interview and opinion poll of the experts in the field, the following suggestions are recommendations are made :
2. Training and development of all human resources is a continuous process and it should be into the imbedded in to the organizational systems.
3. Human assets are the most vital and important amongst all assets and hence it should be controlled and groomed by the top experts and professional in the field and never by less competent persons.
4. Training and development activities should not be treated as none - productive activities and should not be therefore ignored any further.

References :-

Books :

1. Kunjukunju Benson (2008), "Commercial Banks in India" New Century Publication, New Delhi.
2. Jankiraman B. (2009),"Training and Development" Biztantra.
3. Sangwan D. S. (2009),"Human Resource Management in Banks" National Publishing House.
4. Jyothi P. and Venkatesh D.N. (2006),"Human Resource Management" Oxford University Press.
5. Pande Sharon and Basak Swapalekha (2012), "Human Resource Management" Pearson.

Journals :

1. Jadhav Ajit (2013),"A Study on Training and Development in Indian Banks", *ABHINAV National Monthly Refereed Journal of Research in Commerce & Management,* Vol.1, No.1, pp34-39.
2. Ramakrishna G., Kamleshwari, Kumar, M. Girdhar, Krishnudu CH. (2012),"Effectiveness of Training and Development Programmes- A Case Study of Canara Bank Employees in Kurnool District", International Journal of Multidisciplinary Research, Vol.2 No 4. Pp 150-162.
3. Purohit Manisha (2012), "An Evaluation of HRD Practices Followed in Co-operative Banks in Pune Region", ACADEMICIA: An International Multi-disciplinary Research Journal, Volume 2, Issue 8, pp 186-195.

4. Srimannarayana M. (2011), "Measuring Training and Development", *The Indian Journal of Industrial Relations*, Vol.47, No.1, pp. 117-125.
5. Sthapit Arhan (2012), "Strategic factors in evaluation of Induction Training Effectiveness an exploratory study of Nepali bank managers" EXCEL International Journal of Multidisciplinary Management Studies, Vol.2. Issue 8, pp.16-32.

Websites :-

1. www.iba.org
2. www.rbi.org
3. www.bis.org

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उच्चशिक्षा पर निजीकरण व उदारीकरण का प्रभाव

डॉ. वीनस शाह * डॉ. मोनिका बापट** डॉ. सविता अग्रवाल ***

प्रस्तावना – शिक्षा हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। यह मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास करने में, उसे नए आयाम प्राप्त करने में सहायता करती है परन्तु यह आवश्यक है कि वह संपूर्ण ईमानदारी तथा शुद्धता के साथ ग्रहण की गयी हो। निजीकरण तथा उदारीकरण का शिक्षा प्रणाली पर बहुआयामी प्रभाव होता है। शैक्षणिक स्तर, तकनीक व आर्थिक महत्व की दृष्टि से निजीकरण तथा उदारीकरण ने शिक्षा प्रणाली की विशेषताओं को पुन: परिभाषित किया है। वैश्विक परिदृश्य में शिक्षा अब व्यावसायिक क्षेत्र में परिवर्तित हो रही है तथा भारतीय अर्थव्यवस्था का एक अत्यंत महत्वपूर्ण हिस्से के रूप में विकसित होती जा रही है। निजीकरण से आशय उन संस्थानों से है जिनका स्वामित्व तथा प्रबंधन निजी हाथो में होता है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में निजीकरण से आशय, सरकार के द्वारा चलाये जा रहे शैक्षणिक संस्थानों का नियंत्रण निजी हाथों में स्थानांतरित हो जाने से है।

अब प्रश्न ये आता है कि उच्चशिक्षा क्या है ?

यह एक व्यक्ति के नैतिक तथा बौद्धिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया है। यह एक अंतहीन प्रक्रिया है तथा किसी भी समाज या संस्कृति या यूँ कहे की सभी मनुष्यों के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। हैनरी न्यूमेन के अनुसार 'शिक्षा का उद्देश्य एक छात्र को जीवन जीने की कला को सीखने के लिए तैयार करना है जिसके बदले में वह एक बौद्धिक समाज के निर्माण में अपना योगदान दे सके।'

उच्च शिक्षा का उद्देश्य केवल आधारभूत ज्ञान प्रदान करना ही नहीं है अपितु एक ऐसी संस्कृति को तैयार करना है जिससे इस ज्ञान के प्राप्तकर्ता बेहतर मनुष्य बन सके।

अध्ययन का उद्देश्य – इस शोध पत्र के द्वारा किये गए अध्ययन का मुख्य उद्देश्य भारतीय उच्च शिक्षा प्रणाली के समक्ष उपस्थित समस्याओं तथा चुनौतियों का विश्लेषण कर उनके समाधान ढूंढने का प्रयास करना है।

अध्ययन की कार्यविधि – इस शोध पत्र को तैयार करने के लिए विषय से सम्बंधित विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त द्वितीयक समंको का प्रयोग किया गया है।

भारत में उच्च शिक्षा – वर्तमान में भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा शिक्षा तंत्र है एवं यहाँ उच्च शिक्षा की विकास दर भी तेजी से बाद रही है। सन 1947 में जब भारत ने स्वतंत्रता प्राप्त की थी तब के 20 विश्वविद्यालय एवं 500 महाविद्यालयों की तुलना में आज भारत में निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र के लगभग 649 से अधिक विश्वविद्यालय एवं 46430 से अधिक महाविद्यालयों का तंत्र उपलब्ध है। आज हमारे देश में विश्व की सबसे अधिक युवा जनसँख्या निवास करती है जिसे उच्च शिक्षा प्रदान करने के लिए यह तंत्र कार्य कर रहा है जिसमें विज्ञान, कला, वाणिज्य आदि सभी प्रकार के पाठ्यक्रम का अध्ययन कराया जाता है। वर्तमान में विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों में निजी क्षेत्र की भूमिका अधिक तेजी से बढ़ रही है तथा बड़े बड़े उद्योग घराने उच्च शिक्षा के क्षेत्र में प्रवेश कर रहे है। शिक्षा के क्षेत्र में यह प्रगति प्रसन्नता का विषय है किन्तु इसका दुखद पक्ष यह है कि शिक्षा व्यापार बन गयी है तथा विद्यार्थी ग्राहक बन गया है। उच्च शिक्षा के नाम पर आज युवा वर्ग को ठगा जा रहा है। शिक्षा के व्यवसायीकरण ने उच्च शिक्षा के पतन में महती भूमिका निभाई है पर हमारे निति निर्धारक हर समस्या का समाधान उदारीकरण को मान रहे है।

महत्व : उच्च शिक्षा में निजीकरण तथा उदारीकरण का महत्व अग्रांकित है :

1. शिक्षा के स्तर में सुधार होगा यदि उसका अंतर्राष्ट्रीयकरण किया जाये तथा स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को लाया जाए।
2. इससे वैश्विक अवसरों का सृजन होगा तथा अंतर्राष्ट्रीय साख बढ़ेगी।
3. योग्यतम छात्रों का आदान प्रदान की संभावनाओं का विस्तार होगा।
4. शिक्षा के क्षेत्र में निजी निवेशकर्ताओं को प्रोत्साहन मिलेगा।
5. इससे युवाओं को शोध के बेहतर अवसर प्राप्त होंगे जिससे वे अपने भविष्य का निर्माण करने के साथ साथ देश की प्रगति में भी भागीदार बन पायेंगे।

समस्याएं : उच्च शिक्षा में निजीकरण तथा उदारीकरण से उत्पन्न होने वाली समस्याएं इस प्रकार है :

1. इससे शिक्षा प्रणाली व्यावसायिक उद्यम में परिवर्तित हो जायेगी।
2. इससे देश में असमानता का निर्माण होगा।
3. इससे छात्रों में प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा मिलेगा जो कि आगे जाकर असमान प्रतिस्पर्धा में बदल जाएगी तथा सुविधासंपन्न छात्र, योग्य किन्तु कम सुविधासंपन्न छात्रों को पछाड़ देंगे।
4. अनैतिक तथा गलत आदतों एवं तरीकों को बढ़ावा मिलेगा।
5. इससे निवेश की समस्याएं भी उत्पन्न हो सकती है ।
6. वर्तमान शैक्षणिक संस्थानों की अपनी ढाँचागत कमियाँ तथा ज्ञान व तकनीकी सीमाएँ है, जिसके कारण वे नए व अधिक निवेश वाले संस्थानों के सामने टिक नहीं पायेंगे।

सुझाव : उच्च शिक्षा में निजीकरण तथा उदारीकरण से उत्पन्न होने वाली समस्याओं के समाधान के लिए कुछ सुझाव इस प्रकार है :

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) एम. के. एच. एस. गुजराती कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) एम. के. एच. एस. गुजराती कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
*** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) एम. के. एच. एस. गुजराती कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

1. सरकार को प्रशिक्षण कार्यक्रमों/गतिविधियों को बढ़ाना चाहिए।
2. गैर सरकारी संगठनो द्धारा भी जागरूकता कार्यक्रमों को चलाया जाना चाहिए।
3. नए निर्माणों की योजना इस प्रकार बनानी चाहिए जिससे की भविष्य में विस्तार की संभावना बनी रहे।
4. उच्च शिक्षा प्रणाली के विकास के लिए केंद्र तथा राज्य सरकारों को मिलकर प्रयास करने चाहिए।
5. छात्रों में जागरूकता लाने के लिए सरकार को प्रशिक्षण कार्यक्रम, सेमीनार, प्रदर्शनी, शोध कार्यक्रम आदि आयोजित करना चाहिए।
6. शैक्षणिक संस्थाओं के लिए सरकार को आधारभूत संरचनागत सुविधाएँ तथा भूमि कम मूल्य पर उपलब्ध करानी चाहिए।
7. विभिन्न विश्वविद्यालयों के मध्य असमानता को नियंत्रित करने के लिए सरकार को विशेष प्रयास करने चाहिए।

निष्कर्ष – उच्च शिक्षा व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र के सांस्कृतिक, सामाजिक व आर्थिक विकास में एक महत्वपूर्ण अवयव के रूप में कार्य करती है। स्वस्थ, कुशल तथा दक्ष बौद्धिक मानव संसाधन को तैयार करने में विश्वविद्यालयीन शिक्षा अत्यंत महत्वपूर्ण हो गयी है। स्तरीय उच्च शिक्षा तथा अन्य सेवाएँ प्रदान में निजीकरण तथा उदारीकरण द्धारा प्रस्तुत की जा रही चुनौतियों को स्वीकार करने के लिए भारतीय विश्वविद्यालयों को विभिन्न नवाचार करने होंगे, केवल तभी वे प्रतिस्पर्धा में प्रवेश कर सकेंगे। यह सरकार का कार्य है कि वह शिक्षा व ज्ञान प्राप्त करने के सभी स्तरों पर समानता तथा श्रेष्ठता प्राप्त करने में मदद करे। सरकार द्धारा बनाई गई योजनाओं के उचित कार्यान्वयन के द्धारा यह सुनिश्चित किया जा सकता है। उच्च शिक्षा प्रणाली की कमियों को दूर कर इसे पुन: सरंचित एवं संगठित किया जाये जिससे कि भारतीय उच्चशिक्षा विश्व पटल पर सर्वश्रेष्ठ में से एक मानी जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय आर्थिक समस्या, ए. एन. अग्रवाल
2. रिसर्च एवं मेथोडोलॉजी, सी. आर. कोठारी
3. निर्यात प्रबंध, पी.के. खुराना
4. व्यवसायिक पर्यावरण, फ्रेंचिस चेरुनिला
5. व्यवसायिक सांखियकी, शुक्ला एवं सहाय
6. इंडिया टुडे मंथली मैग्जीन
7. टाईम्स आफ इंडिया

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

The Impact of Knowledge Management on Organizational Performance

Dr. Sanjay Patni *

Abstract - Throughout history, knowledge has always been viewed from multiple perspectives - abstract, Philosophical, religious and practical. Knowledge management is the process of capturing, developing, sharing, and effectively using organizational knowledge. It refers to a multi-disciplined approach to achieving organizational objectives by making the best use of knowledge. Many large companies, public institutions and non-profit organizations have resources dedicated to internal Knowledge Management efforts, often as a part of their business strategy, information technology, or human resource management departments. Knowledge management is a process that transforms individual knowledge into organizational knowledge. The aim of this paper is to show that through creating, accumulating, organizing and utilizing knowledge, organizations can enhance organizational performance. The impact of knowledge management practices on performance was empirically tested through structural equation modeling. Successful managers focus their attention on factors that are critical in establishing and maintaining an organization's competitive edge. The knowledge and skill of employees is one of those factors and it requires proactive management attention. Conceptually, this is achieved through Knowledge Management, a term that has existed in the mainstream of business lexicon for quite some time. Despite this, there is the conspicuous absence of a common understanding of the term that frustrates many managers.

Introduction - Knowledge management efforts have a long history, to include on-the-job discussions, formal apprenticeship, discussion forums, corporate libraries, professional training and mentoring programs. With increased use of computers in the second half of the 20th century, specific adaptations of technologies such as knowledge bases, expert systems, knowledge repositories, group decision support systems, intranets, and computer-supported cooperative work have been introduced to further enhance such efforts.

In 1999, the term personal knowledge management was introduced; it refers to the management of knowledge at the individual level. In the enterprise, early collections of case studies recognized the importance of knowledge management dimensions of strategy, process, and measurement. Key lessons learned include people and the cultural norms which influence their behaviors are the most critical resources for successful knowledge creation, dissemination, and application; cognitive, social, and organizational learning processes are essential to the success of a knowledge management strategy; and measurement, benchmarking, and incentives are essential to accelerate the learning process and to drive cultural change. In short, knowledge management programs can yield impressive benefits to individuals and organizations if they are purposeful, concrete, and action-oriented.

For many companies, the time of rapid technological change is also the time of incessant Struggle for maintaining a competitive advantage. It is obvious that knowledge is slowly becoming the most important factor of production, next to labour, land and capital. Even though some forms of intellectual capital are transferable, internal knowledge is not easily copied. This means that the knowledge anchored in employees' minds can get lost if they decide to leave the organization. Therefore, the key objective of management is to improve the processes of acquisition, integration and usage of knowledge, which is exactly what knowledge management, is all about. It is a process that through creating, accumulating, organizing and utilizing knowledge helps achieve objectives and enhance organizational performance. KM also consists of strategy, cultural values and workflow. In order to maximize its value a change in strategies, processes, organizational structures and technologies needs to be made.

Studies have clearly established that there are three interdependent and complementary pillars that support the concept of Knowledge Management. These are Organizational Learning Management (OLM), Organizational Knowledge Management (OKM) and Intellectual Capital Management (ICM). OLM, which has so far dominated both academic and practitioner debate, concerns itself with the problem of capturing, organizing and retrieving explicit knowledge, or information, and has led to the simplistic misconception that Knowledge Management only involves the capture, or downloading, of the content of employees' minds. ICM is dominated by those particularly

*Assistant Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

interested in defining key performance indicators that will measure the impact and the benefits of applying knowledge management practices. If management requires measurement this is an essential task but it can only be undertaken once an organization has clearly established the strategy-structure-process parameters to ensure it accesses, creates and embeds the knowledge that it needs...the OKM pillar of knowledge management.

* **Knowledge Management Strategies**

The understanding of these knowledge management factors, acts as a basis in determining
the type of knowledge management strategies and initiatives for an organization.

1. **Information Technology -** The value that knowledge management adds, lies in increasing individual, team and organizational efficiency through the use of knowledge management tools (information technology).

- **Capturing knowledge -** the higher the level of capturing knowledge explicit or tacit with information technology tools, the better the KM result.
- **Usage of IT tools -** the higher the quality of tools, quality of information, user satisfaction, usage and accessibility, the greater the KM effect on organizational performance.

2. **Organization -** Organizational culture has a great contribution to knowledge management due to the fact that culture determines the basic beliefs, values, and norms regarding the why and how of knowledge generation, sharing, and utilization in an organization. An organization can achieve a competitive edge by creating and using knowledge about its' processes and by integrating its' knowledge into business processes.

- **People & Organizational climate -** the KM success relies heavily upon the trust, creativity, team work and collaboration among employees.
- **Processes -** the integration of the KM activities into organizational processes has a positive effect on KM results.

3. **Knowledge -** Successful knowledge management applies a set of approaches to organizational knowledge including its accumulation, utilization, sharing and ownership.

- **Accumulation** - the higher the effectiveness of knowledge accumulation internal, external; through internalization or externalization in an organization, the greater the KM effect.
- **Utilization** - the higher the effectiveness of utilizing the (existing) knowledge in an organization, the better the KM result.
- **Sharing -** the improvement of sharing of knowledge formal or informal effects the KM positively.

* **Elements of Organizational Performance -** When assessing the relationship between knowledge management and organizational performance, it is important to know that the results depend on the used research methodology. Organizational performance alone could be gauged in many different ways, with financial or non-financial indicators.

There are several approaches to organizational performance measurement which include different stakeholders' perspectives. The Balanced Scorecard (BSC) is a performance management tool for measuring whether small-scale operational activities of a company are aligned with its large-scale objectives in terms of vision and strategy and includes four perspectives: financial, customer, internal process and innovation and learning perspective.

The financial perspective examines if company's implementation and execution of its strategy contributes to bottom-line improvement. Some of the commonly used financial measures are economic value added, revenue growth, costs, profit margins, cash flow, net operating income etc. The customer perspective defines the value proposition that an organization will apply to satisfy customers and generate more sales to the most desired customer groups. The measures should cover both the value that is delivered to the customer which may involve time, quality, performance and service, and the outcomes that arise as a result of this value proposition, such as customer satisfaction and market share. The internal process perspective focuses on all the activities and key processes required in order for the company to excel at providing the value expected by the customers. The clusters for the internal process perspective are operations management by improving asset utilization, supply chain management, customer management by expanding and deepening relations, innovation (by new products and services and regulatory & social by establishing good relations with external stakeholders. The innovation and learning perspective focuses on the intangible assets of an organization, mainly on the internal skills and capabilities that are required to support the value creating internal processes.

* **Interdependent and Complimentary Pillars of Knowledge Management -** Studies have clearly established that there are three interdependent and complementary pillars that support the concept of Knowledge Management. These are Organizational Learning Management (OLM), Organizational Knowledge Management (OKM) and Intellectual Capital Management (ICM). OLM, which has so far dominated both academic and practitioner debate, concerns itself with the problem of capturing, organizing and retrieving explicit knowledge, or information, and has led to the simplistic misconception that Knowledge Management only involves the capture, or downloading, of the content of employees' minds. ICM is dominated by those particularly interested in defining key performance indicators that will measure the impact and the benefits of applying knowledge management practices. If management requires measurement this is an essential task but it can only be undertaken once an organization has clearly established the strategy-structure-process parameters to ensure it accesses, creates and embeds the knowledge that it needs...the OKM pillar of knowledge management. This

paper looks more deeply at this pillar and in particular the lack of a general *integrative* approach to enhancing organizational performance in this key strategic area. It considers to what extent such an approach may help an organization more effectively manage its most relevant source of competitive advantage. With a greater awareness of the various factors allied to the managing and leveraging of human oriented and system oriented knowledge assets, some proposals are put forward to assist in developing or redefining an organization's intellectual capital reporting models in search of a planning, control and performance measurement system that accounts for the management of an organization's intellectual assets.

* **Interrelationship between OLM, ICM, and OKM -** The respective scholarly and practitioner contributions in the broadly related fields of KM offer various theoretical perspectives from which to regard the management of knowledge related assets as the central role. Raub and Rüling (2001, p. 114) maintain that, while research on business strategy has been occupied with outlining a comprehensive knowledge-based theory of the firm, each of the management disciplines has contributed their own, quite often different, views on how to analyze and manage knowledge as an organizational resource. Even though it may be described in many different ways, KM is generally concerned with how organizations create (learning processes), disseminate (knowledge sharing), and measure (intellectual capital measurement) knowledge related assets (Argote 1999, Edvinsson and Malone 1997, Huber 1991, Sveiby 1997, Sveiby and Risling 1986). In terms of creation, knowledge is considered endogenous (Romer 1986, 1990) driving increasing returns on investments in new knowledge. This perception encouraged extensive study of 'knowledge sharing', which emerged from the field of organizational learning. Successful knowledge sharing involves extended learning processes as new knowledge is integrated into products, services, or business processes both old and new (Nelson and Rosenberg 1993). Practically every writer on management argues that measurement is critical to the success of organizations (Fitz-Enz, 1995). Without measurement managers are unable to focus on the attainment of sustainable objectives because their attention is not focused on the appropriate facts.

Four forms of KM integration

1. Corporate Strategy
2. Contextual Knowledge management Targets
3. Knowledge management Challenges
4. Knowledge management Performance Measurement

Methodical integration attempts to integrate human and system oriented KM practices into knowledge intensive work processes in such a way as to positively influence the organizational performance in terms of quality, productivity, and innovation gains. Some common practices in this field are:

1. **Human oriented practices**, including such methods as communities of practice, job rotation, coaching, mentoring, after action review and storytelling.
2. **Technology oriented practices**, including the likes of collaboration platforms, document management, yellow pages, skills inventories, expert systems, blogs and wikis.
3. **Procedural integration** aims to integrate KM into the business processes throughout the organizations value chain so that it becomes an integral part of the intra- and inter-organizational work-flows. The aim of such practices typically lies in the implementation of continuous business processes, in the reduction of processing time, and the avoidance of work redundancy.
4. **Organizational integration** endeavors to integrate KM into the organizational structure and facilitate dedicated management of the organizational knowledge base. Some common approaches applied in this field are the centralization, decentralization, and responsibility.

* **Practical Aspects of Knowledge Management**

● **Knowing what knowledge is -** Much of the energy and debate seems focused on defining Knowledge Management, on what ''knowing'' and ''knowledge'' are, and how to build a case with senior management for launching a KM initiative in a large company. Interesting topics, but most of the concerns seem awfully academic. Some participants are so consumed with the issue itself that they're missing the fact that many companies already accept that effective KM is crucial to their success - they just want to figure out what to do and how to do it, and fast. Here I offer not a general answer or one suitable for any particular organization.

● **Conditions required for the success of KM -** For medium to large companies that have been in existence for years, changing the mindset and habits of hundreds or thousands of employees to create this environment may well be the toughest hurdle. Any company that can start fresh, writing new rules and building a culture that supports KM, has a distinct advantage in this area. Either way, for a KM initiative to be successful, employees must have the motivation to participate, access to adequate training when necessary, feel a sense of security in sharing their knowledge, and get some form of reward for doing so. When the goals of individuals are aligned with those of the company, people adopt behaviors that are consistent with those required for the success of KM.

● **Where to begin? -** To launch a KM initiative in your organization, start by considering the four primary cultural factors: motivation, security, reward, and training. What can you do to promote these? Stating the explicit goals for your KM initiative and some success metrics to measure per-

formance against those goals is important for management buy-in. No matter what the goals might be, success will require that some individuals put something into the initiative to get it going, without receiving any direct immediate benefit. This calls for the dedication of ''true believers,'' or maybe someone willing to make that their job responsibility for a while - it takes time to define and put in place the processes. Once you figure out a plan to capture and categorize explicit knowledge, or facilitate the creation of communities to share tacit knowledge, you can pilot a program with a minimal amount of funding and technology infrastructure. You may even have spare capacity on some systems where you can embark on your efforts without much expense. To recap: when developing a KM program, consider cultural factors, define goals for success, lead with process, and let technology follow once you know what you really want.

- **Define goals and success metrics -** Goals can take many forms. For some companies, the primary goal of a KM initiative might be to make more of the tacit, or ''unspoken,'' knowledge in the organization explicit, and then create mechanisms to share it. Others may choose to ignore recording and categorizing explicit knowledge, preferring to create opportunities for direct collaboration where knowledge seekers locate experts to interact directly, even if those interactions go unrecorded and not made explicit.
- **Put processes in place -** Once goals and metrics to gauge them are defined, carefully consider the processes that will work in your organization. You'll want to help create and advance a culture that supports KM (or a sub-culture if you're starting at the departmental level). Not all KM practices require a lot of technology to support them, and many begin with little more than file sharing, list servers, and email capabilities. After all, the goal is get people to record and share knowledge, or to find each other and interact directly.
- **Add supporting technology -** Finally, it's time to think about the technology you will need to support the goals you've specified, the stakeholders you've chosen to support, and the way your organization works (or is willing to work). For example, if your goal is to capture and categorize explicit knowledge, you'll need a document store, a database, an index & search engine, and a web server. Workflow support for document authoring and publishing may also be important. You'll require a process to define a categorization hierarchy or nomenclature for documents, identify the best ones to capture, clean them up or convert their formats for publication if necessary, and categorize them. Ongoing processes will also be required to identify new documents that belong in the document store and categorize those. Note that this is somewhat process heavy, and may be seen as intrusive in some organizations.

* **Measurement of Activity Associated with KM System**

1. Total number of Core Knowledge and Community Workspaces, and the number of newly created ones.
2. Number of accesses to KM Directory Assets.
3. Total number of documents classified as Core Knowledge, and the number of newly created ones.
4. Number of unique user accesses of Core Knowledge documents.
5. Total number of established, active communities (leader/moderator + collaboration space + activity).
6. Total number of collaborative Community Workspace sessions/threads conducted.
7. Total number of viant experts accessed from other project teams via KM channels.
8. Total number of Project Catalyst interactions with project teams and communities.

* **KM Problems -** The problems identified cover the four KM processes of creation, storage/retrieval, transfer and application. As junior knowledge workers, most respondents expressed the importance of KM and KM problems in their organizations from a knowledge receiver perspective. As knowledge receivers, they desire standardized procedures and specific guidance from supervisors or the organization. In general, explicit knowledge is helpful but usually missing in their work, so the KM problems identified through this viewpoint are more related to explicit knowledge creation, storage, transfer and application.

- **Knowledge creation -** "Work procedures of work are not standardized"; "Staff seldom share knowledge"; "The information in the system is not enough"; "The skill of selling various products can only be learned by new employees when they face the clients".
- **Knowledge transfer -** "Mentees can't get enough information from mentors in coaching"; "There is a wide communication gap between the senior and junior staff. They (senior staff) do not provide us (junior staff) sufficient knowledge"; "There is no training provided in the work, which leads a long time for new employees to catch up the job"; "Employees in different divisions have different work practices, so there is a lack of inter-division communication"; "Most of our colleagues are very dependent on me. I always spend a lot of time to communicate with them or answer their questions several times.. They feel convenient and have developed the habit of asking me questions by phone again and again"; "The company lacks a well organized computer system for checking or updating information".
- **Knowledge application -** "There are different departments in my law firm. Staff cannot identify the major activities performed by each lawyer. For example, in a commercial department, there are different cases like trademark & patent, mortgage, listing, etc. Different lawyers are responsible for different practices although all these practices are classified into commercial cases. It is difficult for us (legal secretaries) to locate experts and apply different kinds of expertise in different contexts". "Each officer possesses unique and specialist knowledge, but it is difficult for junior employees to understand and apply them to their work".

* **Causes of KM Problems -** Though most organiza-

tions have recognized the existence of KM problems, the causes of problems need careful analysis if organizations are to conduct corrective actions. Our findings indicate that the causes attributed to the KM problems identified can be classified into three dimensions as below.

- **Structural (organizational) related causes -** Many respondents mentioned that "lack of training", "limited resources" and "lack of dedicated time for discussion" contribute to knowledge creation, storage and transfer problems. The lack of organizational incentive to create and transfer knowledge appears to be the major explanation for KM problems. One respondent pointed out that "The management does not apply the encouragement/punishment system properly"
- **Human related causes -** The respondents recognize that, in KM systems (KMS), the facilitator plays an important role. When this role is missing, the KMS is doomed to fail: "no specific person is responsible for the knowledge updating work. The information in the system is outdated and no longer applicable to current work practice". According to the survey findings, individuals may not be willing to contribute documents to the KMS because they are "afraid to share their knowledge given the possibility of losing their power and position". Similarly, "each staff would like to keep their knowledge in their own place", which leads to a lack of standardized practice in knowledge storage and transfer.
- **Technical related causes -** The respondents agree that IT is useful in managing knowledge and consider it as an enabler for KM. However, it appears that from the junior knowledge workers' perspective, IT-based KMS have not yet been adopted in Hong Kong organizations, at least for low-level or operational-level work, as illustrated by the following quotations.

* **Potential Solutions of the KM Problems Identified -** According to the various corrective actions that can be taken to resolve the identified KM problems, encompassing both IT and non-IT solutions. We discuss these solutions below. With regard to IT solutions, for instance "organizational fragmentation", which is related to the problem of knowledge storage/retrieval and transfer, respondents suggest "systems to allow coordination/cooperation". The establishment of a knowledge expert list and corporate libraries is a starting point to solve the KM problems: "set up the expert system or knowledge database as so the junior employees can find a way to look for knowledge". Regarding the difficulties in knowledge creation and codification, they recommended "the use of multimedia to briefly describe what is the basic background knowledge". With respect to the lack of standardized work procedures, most junior knowledge workers suggested "uploading the memo in the e-portal systems, so everyone can retrieve and follow the guidelines", as well as "set up an electronic library to store the training materials or such training manuals". A customized KMS would also be appreciated: "the IT department can provide a user manual and appropriate systems fit for departmental requirements so that the company can better manage their knowledge". The identification shown in the KMS is also a critical concern in the IT solution as several respondents pointed out that "the company should provide a platform for staff to submit knowledge anonymously" and "the knowledge contributors should have the right to choose a real name or a pseudonym". With regard to non-IT solutions, the encouragement of communication and involvement from the organization is most frequently mentioned by respondents. For example, they suggest "reward staff who are willing to share knowledge", "set up a compensation scheme for the time involved in contributing knowledge", "arrange more seminars and upload all these seminar materials online", and "schedule a time to share/contribute/read knowledge in the KMS". Some respondents also suggest ways to standardize work practices such as "all staff need to write a guideline of their work on paper and then file it", "the company should tell staff to put their knowledge and information in the same place before they start work", "managers can assign suitable staff to write down knowledge such as good working examples and store it properly".

Conclusion - This paper, in particular, investigated the lack of a general integrative approach for measuring the effects of KM practices as a foundation for effective management decision making. We discussed the extent to which such an approach helps an organisation more effectively manage its knowledge assets. Despite an emphasis on one particular form of integration by many of the study's respondents, we recommend that each of the four forms of integration are considered in parallel if organizations want to implement KM practices in an integrative way. However, the challenge is to comprehend the optimum proportion of each that is best suited to the particular organization.

Motivation, expertise and systems form the tripod of successful KM. These three components will vary in their relative importance from organization to organization, but our preliminary analysis indicates that they are equally important for KM, since as soon as one leg of the tripod is shorter than the others, it will become unbalanced. From the technical perspective, a knowledge-driven organization should ensure that a KMS is designed with junior knowledge workers in mind, so that they can learn about the basic business processes. Such a KMS must be easy to use and its knowledge must be explicit and easily locatable. From the non-IT perspective, junior knowledge workers' communication and involvement in the KM processes deserves more organizational investment.

Finally, "Best practices" are a good starting point, but organizations should be conscious of the pitfalls of using them. These practices should not be used in isolation. They should be integrated with other endeavors such as CoPs. Award winning state organizations such as the CTG, which act as enablers and catalysts for innovative application of technology in government agencies should be transformed into Government Knowledge Centers. This will give them

the opportunity to be more involved in KM while still performing their current activities. This means they would not be confined to producing "Best Practices" that might soon become outdated or not used at all as they are doing now, but they would effectively help government agencies to implement KM, which is an imperative for governments in the 21st century and the new economy.

References :-

1. Alavi, M., and Leidner, D.E. "Review: Knowledge Management and Knowledge Management Systems: Conceptual Foundations and Research Issues," MIS Quarterly (25:1) 2001, pp. 107-136.
2. Bock, G.W., Zmud, R.W., Kim, Y., and Lee, J.N. "Behavioral Intention Formation in Knowledge Sharing: Examining The Roles of Extrinsic Motivators, Social-Psychological Forces, and Organizational Climate," MIS Quarterly (29:1) 2005, pp. 87-111.
3. Fu, P.P., Tsui, A.S., and Dess, G.G. "The Dynamics of Guanxi in Chinese High-tech Firms: Implications for Knowledge Management and Decision Making," Management International Review (46:3) 2006, pp. 277-305.
4. Gold, A.H., Malhotra, A., and Segars, A.H. "Knowledge Management: An Organizational Capabilities Perspective," Journal of Management Information Systems (18:1) 2001, pp. 185-214
5. Drucker, P.F., "The Age of Social Transformation", The Atlantic Monthly, November, 1994.
6. Macintosh, A, "Adaptive Workflow to Support Knowledge Intensive Tasks" 1998,

a. http://www.aiai.ed.ac.uk/

7. Skyrme, D.J., Knowledge Networking: Creating the Collaborative Enterprise, Oxford, 2000

****

नवीन भारत के समुचित विकास हेतु सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा अनुसूचित जाति एवं अन्य वर्ग हेतु किये जाने वाले सार्थक प्रयास

डॉ. सोनिया चंदानी *

शोध सारांश – भारत के छोटे उद्यमियों की सहायता करना भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास की ओर समृद्धि में सहायक बनने का सबसे बड़ा माध्यम है। बड़े उद्योगो द्वारा रोजगार के ज्यादा अवसर सर्जित किये जाने संबंधी दृष्टिकोण की वास्तविकता पर नजर डालने से पता चलता है कि बड़े उद्योगो में सिर्फ 1 करोड़ 25 लाख लोगों को रोजगार मिलता है, जबक देश के 12 करोड़ लोग छोटे उद्यमो में काम करत है। भारत में जहां बड़े उद्योगो को कई सुविधाएं उपलब्ध कराई जा रही है, वही स्वरोजगार में जुटे 5 करोड 75 लाख लोगो पर ध्यान की जरुरत है, जो मात्र 17000 रुपये प्रति ईकाई कर्ज के साथ 11 लाख करोड़ की राशि का इस्तेमाल करते है और 12 करोड़ भारतीयों को रोजगार उपलब्ध कराते है।

शब्द कुंजी – नवीन भारत, आर्थिक विकास, अनुसुचित जाति, मध्यप्रदेश सरकार, गैर सरकारी संस्थाएं, कौशल विकास, प्रशिक्षण आदि।

प्रस्तावना – आर्थिक विकास के मार्ग पर चलकर किसी भी देश पर व्यक्त निर्माण से समाज निर्माण और समाज निर्माण से राष्ट्र निर्माण का सिद्धांत लागू होता है, उसी तरह देश का विकास भी उसमें रहने वाले व्यक्तियों के विकास पर निर्भर करता है। जितना अधिक व्यक्तियों का आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षणिक एवं औद्योगिक विकास होगा, उतना ही अधिक उस देश का विकास भी होगा।

पिछले कुछ वर्षो में कमजोर वर्ग के स्थायी आर्थिक विकास के लये इनकी आधारभूत समस्याओं जैसे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षणिक और औद्योगिक स्थिति कमजोर होना, को दूर करने के लिये उनका आधार मजबूत करने की आवश्यकता है, जिससे इनकी स्थित व स्तर में परिवर्तन हो और ये विकास की ओर अग्रसर हो सके।

अनुसूचित जाति के लोगों में शिक्षा, अनुभव एवं पूंजी की कमी के कारण उनका आर्थिक क्षेत्र में पिछड़ना देखा गया है। वित्तीय संस्थाएँ आर्थिक क्षेत्र को मजबूत बनाने हेतु न केवल ऋण के रुप में सहायता प्रदान करती है बल्कि ऋण को कहाँ, किस प्रकार विनयोग कर उपयोगी बनाना है, यह मार्गदर्शन और संबंधित प्रशिक्षण भी देती है।

पिछले 55 वर्षो के अनुसूचित जाति वर्ग उत्थान के अनेक प्रयासों के बावजूद वे अभी देश के साढे पांच लाख गांवों के बाहर झोपड़ियों में अशिक्षा, दरिद्रता, अस्पृष्यता और निरादर का जीवन व्यतीत कर रहे है, वे इतने ऊपर नही उठे, जितने सवर्ण वर्गो द्वारा बनाई गई वस्तुओ या उनके द्वारा की गई सेवाओं के बढ़े। पिछडे वर्गो का आर्थिक आधार भी शनै: शनै: पिछड़ता गया। सामाजिक उपेक्षा ने आर्थिक अनर्थ भी किया।

म.प्र. शासन द्वारा रोजगार हेतु विभिन्न योजनाओं के अलावा अन्य सुविधाएं भी उपलब्ध कराई जा रही है, जिससे आरक्षण नीति, बैंकलॉग के अंतर्गत रिक्त स्थानों पर नौकरी की व्यवस्थाएँ, आर्थिक उत्थान कार्यक्रम, युवा वर्ग के लिये कौशल उन्नयन के कार्यक्रम, विशेष कार्य योजना, कम्प्यूटर प्रशिक्षण आदि शामिल है। शासन का उद्देश्य मात्र यह है कि नवीन भारत के समुचित विकास के लिये अनुसूचित जाति का आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक और राजनैतिक विकास हो सकें।

म.प्र. शासन द्वारा स्थापित डॉ. बी. आर. अम्बेडकर विश्वविद्यालय महू इन्दौर द्वारा एससी-एसटी के युवाओं के विभिन्न व्यापार में प्रशिक्षण प्रदान किया जायेगा। यह प्रशिक्षण पूर्णत: नि:शुल्क रहेंगे। विश्वविद्यालय म.प्र. शासन मुख्यमंत्री विकास कौशल प्रशिक्षण योजना के अंतर्गत अनुसूचित जाति के प्रशिक्षार्थियों के लिये विभिन्न विधाओं में प्रशिक्षण प्रदान करेगा निकट भविष्य में अनुसूचित जाति वर्ग के युवाओं और युवतियों को भी प्रशिक्षण दिया जायेगा। यह प्रशिक्षण 60 से 90 दिवस के होगे तथा पूरी तरह से नि:शुल्क होगे। अनुसूचित जाति के युवक तथा युवतियां अपने आवेदन प्रेशित कर सकते है। न्यूनतम योग्यता 8वीं पास है तथा कम्प्यूटर ऑपरेटर के लिये 10वीं पास है। आयु सीमा 18 से 35 वर्ष के बीच होना चाहिए।

उपसंहार – भारत में अभी भी सभी क्षेत्रों में विकास की आवश्यकता महसूस की जा रही है। अत: सभी को अपनी अपनी तरह से तथा सहकारिता के साथ सही मार्ग पर प्रयत्नशील होना होगा जिससे उन्हें विकास की एक नई दिशा प्रदान की जा सके और यह प्रयास और प्रयत्न बिना किसी भेदभाव और उपेक्षित व्यवहार के होने चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) एम.के.एच.एस. गुजराती कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था में के.पी.ओ. के बढते कदम

डॉ. कविता चंदानी *

प्रस्तावना – आज विश्व की अर्थव्यवस्था बदल रही है। ज्यादातर देश आर्थिक उदारीकरण के दौर से गुजर रहे है, इसलिए रोजगार का स्वरुप भी तेजी से बदल रहा है। वित्तीय क्षेत्र में जबर्दस्त बदलाव आया है। वित्तीय सेवाएँ प्रदान करने वाली कंपनियों, बैंकों, कंपनियों में बेहतर सेवाएं देने के लिए होड मची हुई है। इसलिए इस दौर में ज्ञान आधारित आउटसोर्सिंग (के.पी.ओ.) भी तेजी से बढ रही है।

ज्ञान आधारित क्षेत्रों में इन दिनों बौद्धिक संपदा के क्षेत्र में शोध एवं विश्लेषण फार्मास्युटिकल और जेव तकनीकी क्षेत्र में शोध इक्विटी रिसर्च और वित्तीय मॉडलिंग में विश्लेषण सेवाएँ जैसे काम भी है। अमेरिका और कुछ पश्चिमी देशों में तो विधि संबंधी सेवाओं की भी आउटसोर्सिंग की जा रही है अर्थात एल.पी.ओ. साथ ही ई.पी.ओ. (इंजीनियरिंग प्रोसेस आउटसोर्सिंग) भी तेजी से उभर रहा हैं।

के.पी.ओ. का मतलब हैं–नॉलेज प्रोसेस आउटसोर्सिंग। इसे अपनी भाषा में ज्ञान आधारित उद्योग कह सकते हैं। इसलिए अगर आप उच्च शिक्षित है तो के.पी.ओ. में आपका भविष्य उज्जवल है। अपने क्षेत्र में विशेषज्ञ व्यक्ति निश्चित ही ऑनलाईन कक्षाएँ चला सकते हैं।

नॉलेज प्रोसेस आउटसोर्सिंग – के.पी.ओ. को सरल शब्दों में ज्ञान आधारित उद्योग कह सकते हैं। के.पी.ओ. एक ऐसा क्षेत्र हैं, जहाँ सेवा प्रदात डोमेन विशेषज्ञता के जरिये सूचना को उपयोगी रुप में क्लायंट तक पहुंचाता है, जिसके क्लायंट कंपनी विषम परिस्थितियों में निर्णय ले सकती है। दूसरो शब्दो में, यह कोर गतिविधियों का आउटसोर्सिंग है। जैसे शोध एवं विकास, विश्लेषण एवं महत्वपूर्ण निर्णयों पर आधारित कार्य। अर्थात शिक्षा के क्षेत्र में के.पी.ओ. की अहम भूमिका है। नैस्कॉम के एक अनुमान के मुताबिक सन 2025 तक के.पी.ओ. से होने वाला कारोबार 16 अरब डॉलर तक पहुंच जायेगा।

के.पी.ओ. का कारोबार हर क्षेत्र में तेजी से फैलता जा रहा है। आने वाले समय में इंजीनियरिंग डिजाइन, बेसिक डाटा सर्च, इंटीग्रेशन एण्ड मैनेजमेंट जैसे क्षेत्रों में के.पी.ओ. का दबदबा होगा। भारत अब एक नई नॉलेज इकॉनोमी में प्रवेश कर चुका है। इसे हम ज्ञान आधारित नई अर्थव्यवस्था का क्षेत्र भी कह सकते है।

कार्य प्रणाली

के.पी.ओ. की कार्यप्रणाली कुछ इस प्रकार होती है –बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ भारत में अनेक केन्द्र स्थापित करती हैं। ये केन्द्र इन कंपनियों के दूसरे देशों में स्थिति दफ्तरों की शोध संबंधी जरुरतों को पूरा करते हैं जबकि थर्ड पार्टी सेवा प्रदाता का दफ तर भारत में होता है और उसके क्लायंट पूरी दुनिया में होते हैं और इस सेवा प्रदाता की कोई पैरेंट कंपनी भी नही होती। इवेल्यूसर्व पाइपल रिसर्च, थॉमसन रिसर्च ऐसी ही प्रमुख कंपनियों में हैं।

के.पी.ओ.प्रकृति

1.) रोजगार की प्रकृति – के.पी.ओ. एवं उच्च कोर (Core) व्यापारिक पद्धति की एक प्रक्रिया है तथा के.पी.ओ. इंडस्ट्रीज के द्वारा पेशेवर ज्ञान एवं कौशल वाले व्यक्तियों (PH.D.;C.A.; M.B.A.,L.L.B. etc) की मांग अधिक होनी है। इन्हीं प्रोफेशनल्स की विशेषज्ञता के.पी.ओ. इंडस्ट्रीज की सबसे बडी सम्पत्ति हैं।

2.) कार्यशील समय – बी.पी.ओ. इंडस्ट्रीज कार्य की पद्धति 24 घंटे कार्यशील समय पर आधारित होती है, जबकि के.पी.ओ. इंडस्ट्रीज में सामान्य कार्यशील समय सामान्य दिन में 8 घंटे के अनुसार होता है।

3.) प्रोफेशनल अप्रोच – के.पी.ओ. डोमेन विशेषज्ञता के आधार पर कार्य करता है। के.पी.ओ. इकाईयों द्वारा प्रोफेशनल्स के विशिष्ट क्षेत्र के ज्ञान को सूचनाओं व डाटा के द्वारा क्यालंट को विशिष्ट निर्णय लेने में मदद करता है।

4.) कर्मचारी टर्नओवर – के.पी.ओ. इंडस्ट्रीज में उच्च शिक्षा प्राप्त प्रोफेशनल्स होते हैं तथा वे सामान्य एक ही कंपनी में रहकर प्रगति करना चाहते है। साथ ही कंपनी भी इनकी विशेषताओं व कौशल का आकलन कर इन्हें अच्छा वेतन तथा अन्य बेहतर सुविधाएँ प्रदान करती है।

5.) संचयी वार्षिक वृद्धि दर – विश्व व्यापी के.पी.ओ. इंडस्ट्रीज की वार्षिक वृद्धि दर वर्ष 2006 में 46 प्रतिशत रही हैं जो के.पी.ओ. के अच्छे भविष्य की ओर संकेत करती हैं।

6.) इंजीनियरिंग प्रोसेस आउटसोर्सिंग – ई.पी.ओ. यानी इंजीनियरिंग प्रोसेस आउटसोर्सिंग। ई.पी.ओ. का सिंपल फंडा कि जिस तरह बिजनेस से जुडी बातें आउटसोर्स की जाती है, उसी तरह इसमें इंजीनियरिंग से जुडी सेवाएँ ग्राहक को ऑफर की जाती है। दरअसल, आउटसोर्सिंग का कंस्पेट डाटा प्रोसेसिंग इंडस्ट्रीज के साथ शुरु हुआ था और अब यह टेली–मेसगिं से होता हुआ कॉल सेंटर्स के रुप में बहुत बढ चुका है। इसके बाद हॉट हुआ बी.पी.ओ. सेक्टर और फिलहाल वक्त की मांग ई.पी.ओ. है, जिसने इंजीनियरिंग पास आउटस के लिए तमाम नई संभावनाएँ खोली है। अभी यह सेक्टर उस लेवलपर हैं, जहाँ से इसे काफी उन्नति करनी हैं। इंजीनियरिंग एक्सपोर्ट प्रमोशन काउंसिल (ई.ई.पी.सी.) के एक अनुमान के मुताबिक इंडियन ई.पी.ओ. मार्केट 2019 तक 300 अरब डॉलर्स का छू लेगा। इसमें आर्किटेक्चरल डिजाइन एंड ड्रॉफ्टिंग मल्टी–डिसिपल इंजीनियरिंग डिजाइन

* एम.के.एच.एस. गुजराती कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

एंड ड्राफ्टिंग, पब्लिक वर्क स्ट्रक्चरल डिजाइन और जी.आई.एस. (ज्योग्राफिकल इंफॉर्मेशन सिस्टम) व टेक्नीलकल सपोर्ट शामिल है।

इस वक्त भारत में क्वालिफाइड व टैलंटेड इंजीनियर्स का प्रतिशत बेहद ज्यादा है। ऐसे में छोटे–बडे लेवल की कई इंजीनियरिंग कंपनियॉं उचित रेट और निश्चित समय में अपने प्रोजेक्ट्स पूरे करवाने के लिए इधर का रुख कर रही हैं। अच्छी बात यह है कि यह सेक्टर डिग्री होल्डर्स के साथ डिप्लोमा स्टूडेंट्स के लिए भी है। ऐसे में सिविल या मकेनिकल जैसी इंजीनियरिंग ब्रांचेज के स्टूडेंट्स बतौर जूनियर इंजीनियर काम शुरु कर सकते है, वहीं डिप्लोमा होल्डर को बतौर ट्रेनी काम शुरु करना पडेगा। हालांकि यह सिर्फ शुरुआती दौर की कहानी है और इसके बाद हिसाब से पैकेज व डेजिग्नेशन बढते जाते है। अमेरिका एवं यूरोप की कंपनियों को यहां कम दामों पर प्रशिक्षित इंजीनियर,वकील उपलब्ध रहते हैं। यही वजह है कि हमारा देश ई.पी.ओ. व एल.पी.ओ प्रमुख केन्द्र बनता जा रहा है।

लीगल प्रोसेस आउटसोर्सिंग – संचार के विकसित साधनों की वजह से अब भारतीय वकीलों को विदेश जाने की जरुरत नहीं है बल्कि वे यहीं से अपना काम कर सकते हैं, जिसे नाम दिया गया है लीगल प्रोसेस आउटसोर्सिंग। भारत ने एल.पी.ओ. के क्षेत्र में भी अपनी उपस्थिति दर्ज कराई हैं, जिसकी एक बडी वजह यहाँ मिलने वाली सस्ती व उच्च गुणवत्ता की सेवा है। अमेरिका में जहाँ एक घंटे के काम के लिए 250 डॉलर तक देने पड़ते हैं, वहीं भारतीय लीगल एडवायजर 25 से 35 डॉलर में ही ये काम कर देते हैं। भारतीय वकीलों की विश्वसनीयता इतनी बढ़ गई है कि विदेश के वकील और कंपनियाँ सिविल कोर्ट के अलावा हाईकोर्ट और एपेक्स कोर्ट मामलों में भी सलाह लेते है। इसके लिए वहाँ के लीगल एडवाइजर अपना डाक्यूमेन्टस यहाँ भेजते हैं, उसे अच्छी तरह समझने के बाद यहाँ के वकील अपनी राय देते हैं। लीगल प्रोसेस आउटसोर्सिंग से जुड़ने के लिए किसी मान्यता प्राप्त संस्थान से लॉ की डिग्री के साथ लंबा अनुभव भी जरुरी है।

के.पी.ओ. एवं भारत

1. के.पी.ओ. भारत में सामाजिक रुप से स्वीकृत होगा।
2. के.पी.ओ. भारतीय कार्य पद्धति के अनुसार उपयुक्त होगा।
3. के.पी.ओ. के माध्यम से भारत की बड़ी मात्रा में विदेश मुद्रा प्राप्त होगी।
4. के.पी.ओ. से भारत में शिक्षित बेरोजगारी को कॉफी हद तक कम किया जा सकता है।
5. के.पी.ओ. से भारत से अमेरिका एवं ब्रिट्रेन जैसे विकसित देशों को होने वाले ब्रेन ड्रेन को रोका जा सकता है।

निष्कर्ष – विश्व में ज्ञान ही सर्वोच्च शक्ति है। और यही शक्ति सभी गतिवधियों की संचालक है। ज्ञान एक सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक समझ है। ये सर्वसिद्ध है कि सूचना से ही ज्ञान का प्रसार होता है। वर्तमान में तकनीकी विकास से ज्ञान अब किसी सीमा में बंधकर नहीं रहा है और इसी के परिणाम स्वरुप के.पी.ओ. प्रचलन में आया है और भविष्य में भी इसका बोलबाला रहेगा।

के.पी.ओ. को बी.पी.ओ. का उन्नत रुप कह सकत हैं। हालांकि यह बी.पी.ओ. से काफी अलग है, क्योंकि के.पी.ओ. में उच्च शिक्षित लोगों की भारी मांग है और इन्हीं पर यह बुनियाद रुप से आधारित भी है। सी.आई.आई. (कन्फेडरेशन ऑफ इंडियन इंडस्ट्रीज) के मुताबिक भारत अब एक नई नॉलेज आधारित अर्थव्यवस्था में प्रवेश कर चुका है सी.आई.आई. का कहना है कि के.पी.ओ. के क्षेत्र में भारत विस्फोटक वृद्धि मुकाम कर पहुंच चुका है। अर्थात भारत अब वैश्विक के.पी.ओ. हब बनने की पूरी तैयारी कर चुका है।

अतः हम यह कह सकते है कि वैश्विकरण के दौर में आउटसोर्सिंग उद्योग के बदलते स्वरुप के रुप में के.पी.ओ. भारत के लिए नया आयाम साबित हो सकता है तथा अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में अपने स्थान को और अधिक मजबूत बनाने में सफलता दिला सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Milk mother ; An outline of Women as a productive body and means of livelihood

Papiha Amin* Dr. Meenakshi Choubey**

Abstract - An Indian unremitting author who was born on January 14, 1926 at Dhaka in a privileged, middle-class Bengali family, writing about the life and struggles faced by the tribal and marginalised communities in the states like Bihar, West Bengal, Madhya Pradesh and Chhattisgarh was none other than Mahasweta Devi. Her novel about Breast stories is reflected that the Breast is far more than a symbol in her stories, originally written in Bengali. This story was translated by Gayatri Chakravorty Spivak. Fictions contravene from peers to younger generations under the monarchy of diverse cultures. Hence their understanding through translation possibly takes numerous forms. It focuses on the hard-hearted as a serious crime of an unfair social system.
Key words - Breast Giver, Milk Mother,Wet nurse, Women.

Introduction - The poise that control the social order of understanding about women are the role of a spouse and mother. In Indian culture, the daughters of a family marry and move into their husbands' houses, which include their entire families. Women are gifted with exceptional supremacy to give birth and bring a new life into this world. Pregnancy, childbirth and motherhood are some of the sex-specific roles are some of the important milestone which every female goes through her life.[1]

In the current era the motherhood is not only restricted biologically but also related with the "surrogate mother", "legal mother" and "Nurturing mother".Mahasweta Devi has addressed social-political-cultural issues through her short fiction on "Jashoda" which focussed on the experience of motherhood and also exploitation of women.

Breast stories, this short fiction is also written in Bengali translated by. As Gayatri points out in her introduction, the breast is far more than a symbol in these stories In 'Breast-giver' a woman who convertsas a proficient wet nurse (a woman employed to breastfeed another woman's child) to support her family, perishes of sore breast cancer. This woman suckled oodles of 'sons'. She had 20 offspring of her own and 30 boys at the master's house. She had to feed a total of 50 children.The condition of cancer is highlighted by Mahahshweta Devi describing the subaltern female body as thought-in-decolonization.[2]

Jashaoda is a gendered subaltern. As a woman fitting to the lowermost of the low monetary class, she was subjected to double subalternization. Her subaltern status was further synergised by the ridiculousmachineries of her caste. Her high caste (Brahman) did not provide her a comfortable living. She being a female had the benefit of entering into many professions. Hence, she provided the service to Haldars by getting into the profession of breast giver/ wet nurse. Even her caste also made convinced the mistress of Haldar to get her into the house hold work.[3]

'Breast-Giver' presents a principal text where Mahasweta strikes which is no longer interested, simplified idea of the typical characteristics of a person present in a sentimental way forwarded by the nationalist imaginings of mother as she highlights the exploitative potential essential quality in the very concept of 'motherhood': Jashoda was an 'eternal mother' , she does not remember at all when there was no child in her womb. Mother-land was always her way of living and keeping alive her world of countless beings. By extending her suckling-services to the Haldar house, she becomes a 'pofessional mother' taking up motherhood as her profession. Her subaltern status gets her into the structures of commercial exchange.[4]

Mahasweta Devi, thus writes the narrative of exploitation implant in the story of Jashoda that draw parallel with the tale of Yashoda, the mythical foster-mother (the mother who take care of a little Krishna). Mother suckling the Holy child, the world child.[5]

Jashoda, in Breast-Giver, is seen and is made to turn into the 'the mythical cow of fulfilment, look after of the children of her master's household. Everyone's devotion to Jashoda became so strong that at weddings, namings and every important functions, they invited her and gave her the position of chief fruitful woman. But her usefulness and utility is about the painful end that Jashoda meets. Jashoda dies with painful breast cancer. The mother-goddess, the milk filled faithful wife who was the object of the devotion of the local houses devoted to the Holy mother

*Research Scholar, J.H. Govt. P.G College, Betul (M.P.) INDIA
**Prof. & Head, J.H. Govt. P.G College, Betul (M.P.) INDIA

becomes unwanted.As she is not useful to serve their purpose, everybody, her own sons,her milk-sons, as well as her husband(Kangalicharan) avoid her.[6] The story reveals the figure of 'mother' as Jashoda mournful realizes towards the end: 'If you suckle you are a mother all lies! Nepal and Gopal do not lookat me and the master's boys do not want to look and even to ask how I am' (67). Mahasweta Devi calls the so-called holiness of motherhood into question. Her ridicule committed becomes very much clear when talking about Jashoda's repeated pregnancies she reproduces the song:

Is a Mother so cheaply made ?
Not just by dropping a babe. (52)

This shows that, for more suckiling she will have milk in her breasts only if she have to child in her belly(stomach). 'Breast-Giver' aims at to draw attention to the subaltern woman as subject within the culture materialist project.

Jashoda is fully an indian woman whose unreasonable, unreasoning and unintelligent devotion to her husband and love for her children, whose forgiveness, have been kept alive in the popular consciousness by all Indian women from sati-savitri-sita through Nirupa Roy and Chand Osmani(Actresses who have stereotyped the role of the self-sacrificing, long suffering Indian wife and mother in commercial Hindi Cinema). The progress slowly of the world understand by seeing such women that the old Indian tradition is still flowing free, they understand that it was with such women in mind that the following aphorism have been composed. ' A Female's life hangs on like a turtle's – 'her heart breaks but no word is uttered' – 'the woman will burn her ashes with fly only then will we sing her/praise on high. Frankly, Jashoda never once wants to blame her husband for the present misfortune. Her mother – love wells up for Kangali as much as for the children. She wants to become the earth feed her handicapped husband and helpless children with a fulsome harvest. Sages did not write of this motherly feeling of Jashoda's for her husband. They explained female and male as Nature and the Human principle. But this they did in the days of yore (of former times) – When they entered this peninsula from another land. Such is the power of the Indian soil that all women turn into mothers here and all men remain immersed in the spirit of holy childhood. Each man the Holy child and each woman the Divine Mother.

'Breast – Giver' is the story that builds itself on the cruel ironies of caste, class, a society in which men hold most. Mahasweta keeps Jashoda's name unchanged from the Sanskrit scriptural form. Although the orthodox Hindu middle class nominally respect the brahman, a right belonging to a particular person or group of economic class are in fact much more real for it. The underclass ' Hindu Female' (Breast – Giver), as long as she believes Hindu maternalism and family values, is unable to save herself. Even in her lonely death, she remains 'Jashoda Devi' – literally the goddess Jashoda, honorary goddess by caste.[7]

References:-

1. Manju, M. "Re-defined by Mahasweta Devi In "Breast–Giver"."
2. Vinutha, M. S. "CONCERN FOR SUBALTERNS IN THE WORKS OF MAHASWETA DEVI AND ARUNDHATI ROY." Research Journal of English Language and Literature 4 (2016): 2016.
3. Ghosh, Debarati. "Marginalization of women knows no boundary: A reading of Mahasweta Devi's Breast Stories ('Breast Giver','Draupadi'and 'Behind the Bodice')."
4. Spivak, Gayatri Chakravorty. "Introduction" to Mahasweta Devi, Breast Stories, tr." *Gayatri Chakravorty Spivak (Calcutta: Seagull, 1998): vii–xvi*.
5. Sheeba, M. K. "Exploring the Female Psyche in Mahasweta Devi's Stories." *Language in India* 19.7 (2019).
6. Parameswaran, Uma. "Five Plays/Mother of 1084/ Breast Stories." *World Literature Today* 72.2 (1998): 457.
7. Talukdar, Shashwati, Henry Schwarz, and Nandini Sikand. "Mahasweta Devi: Witness, Advocate, Writer." (2001).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

काव्य प्रभेद और अंधा युग

डॉ. विनय शर्मा *

प्रस्तावना – शास्त्र और काव्य वाडमय के दो प्रमुख रुप माने जाते है। शास्त्र ज्ञान के बिना काय का मर्म समझना असंभव है। संस्कृत व्याकरण में काव्य शब्द की उत्पत्ति 'कवि कर्म' के रुप में व्याख्यायित है। छंदबद्ध रचना को काव्य कहने की परम्परा प्राचीनकाल से ही ही है, परंतु बाद में 'काव्य' का अर्थ आह्ादक रचना हो गया। अत: काव्य का अर्थ ऐसी छंदबद्ध रचना है जो हमारी भावना को अभिव्यक्ति प्रदान करें। इस संदर्भ में आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी ने कहा है कि जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार ह्रदय की मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। ह्रदय की इसी मुक्ति की साधना के लिये मनुष्य की वाणी जो शब्द विधन करती आई है, उसे कविता कहते है।

प्राचीन सरंस्कृत आचार्यो ने काव्य को दो भागों में बाँटा है – द्दष्य कावय और श्रव्य काव्य। स्थूल रुप से इसके दो भेद और किये है – गद्य और पद्य। प़द्य के पुन: दो विभाग हुए हैं – मुक्तक व प्रबंध। निबद्ध रचना को प्रबंध तथा अनिबद्ध रचना को मुक्तक कहते है।

'अंधा-युग' डॉ. धर्मवीर भारती का एक सफल काव्य नाटक है। इसमें महाभारत के 18वें दिने की संध्या के बाद की कथा को रुपायित किया है। डॉ. भारती ने इस कथानक को आधुनिक युगबोध के संदर्भ मे प्रस्तुत किया है। उनका कहना है कि अधिकतर कथा 'प्रख्यात' है, केवल कुछ ही तत्व 'उत्पाद्य' है। कुछ स्वकल्पित पात्र और घटनाएँ है। अंधा-युग की कथा पाँच अंकों में विभाजित है। इसकी मूल चेतना रागात्मक न होक बौद्धिक है। यह हमारे ह्रदय को प्रभावित कने की अपेक्षा हमारी चिंतन शक्ति को उद्बुद्ध करती है। इसकी योजना भारतीय सुखान्त नाटकों की परम्परा में न होकर पश्चिमी दुखांत नाटकों की शैली में हुई है।

अंधा-युग का कथानक महाभारत की समाप्ति से लेकर कृष्ण की मृत्यु तक प्रसारित है। कृति का प्रथम अंक धृतराष्ट्र, गांधारी की प्रतीक्षाजन्य आकुलता तथा अनेक संदेहों के तानेबाने से बुना है। दूसरे अंक में अश्वत्थामा की मनौवैज्ञानिक ग्रंथियों का विश्लेषण करते हुये उसकी हिंसक मनोवृत्ति के मूल की खोज की गई है। तीसरे अंक में युद्ध से आहत सेना लौटती है और अश्वत्थामा को सेनापति नियुक्त करती है। चौथे अंक में अष्वत्थामा पांडवो के शिविर में जाकर द्रोपद्री के पुत्रों की हत्या करता है और ब्रहमास्त्र के लिये सन्नद्ध होता है। यहाँ पर कृष्ण अश्वत्थामा को झूठी हत्या का शाप देते है और स्वयं गांधारी के शाप को स्वीकारते है। समापन में कृष्ण की मृत्यु का वर्णन किया गया है। इस तरह अंधे पात्रों के माध्यम से लेखक ने ज्योति की कथा कहने का प्रयास किया है।

अंधा-युग को लेकर इस प्रश्न ने सबको झकझोरा है कि यह काव्य है या नाटक। डॉ. भारती के अनुसार यह काव्य रंगमंच को द्दष्टि में रखकर रचा गया है। तात्पर्य यह है कि यह मूलत: कावय है, किंतु यदि नात्व्य शास्त्रीय तत्वों की द्दष्टि से इनका विश्लेषण किया जाये तो ह प्रतीत होता है कि यह एक नाटक है जो काव्य शैली में लिखा गया है। अत: हमें विश्लेषण करना पड़ेगा कि यह काव्य है या नाटक ?

अंधा-युग काव्य है – अंधा-युग में गीतात्मकता का पुट अधिक होने के कारण काव्य की विशेषता के आधार पर इसका विश्लेषण पहले कर सकते है।

1. **मार्मिकता –** जो भाव सामाजिक के मर्म को छू लें उसे मार्मिकता कहते है। मार्मिकता के अनेक प्रसंग अंधा युग में समाहित है। एक द्दष्य में गांधारी संयज के साथ मरणासन्न दुर्योधन से मिलने आई है, लेकिन अपनी आँखों से पट्टी उतारकर पुत्र को देखने की हिम्मत नही जुटा पाती है और बिना देखे ही उसे चली जाती है।

2. **भावातिरेक –** गीति काव्य में सुकोमल भावनाओं और अनुभूति का प्रचण्ड वेग रहता है। अंधा-युग में ऐसी भाव विभोरता अनेक स्थलों पर देखने को मिलती है। संजय का कहना है – कैसे बताऊँगा !, वह जो सम्राटों का अधिपति था, खाली हाथ, नंगे पाँव, रक्त-सने, फटे हुए वस्त्रों में, टूटे रथ के समीप, खड़ा था निहत्था ही।

3. **रसात्मकता –** अंधा-युग में मुख्यत: अंगी रस शांत है क्योंकि समस्त संहार के बाद वैराग्य की भावना ही उदित होती है। एक स्थान पर करुण रस की अभिव्यंजना गांधारी के कथन से कुछ इस तरह से हुई है – सत्रह दिन के अंदर ,मेरे सब पुत्र एक-एक कर मर गए, अपने इन हाथो से, मैने उन फूलसें सी वधुओं की कलाईयों से, चूड़ियाँ उतारी है।

4. **प्रतीक विधान –** जब ह्रदय की कोमलवृत्तियों को प्रतीकों के माध्यम से रीति नात्यकार अभिव्यक्त करता है, तब उसकी प्रेषणीयता बहुत अधिक बढ़ जाती है। ये प्रतीक ह्रदय पर सहज ही स्थायी प्रभाव डालते है। अंधा-युग में युधिष्ठिा, अश्वत्थामा, युयुत्सु, धृतराष्ट्र, गांधी तथा संजय आकद पात्र विभिन्न जीवन मूल्यों अथवा पक्षों के प्रतीक है।

5. **चित्रात्मकता –** अंधा-युग में चित्रात्मकता अनेक स्थलों पर दिखाई देती है –

धृतराष्ट्र :- कौन है विदुर ?
विदुर :- एक प्यासा सैनिक है महाराज !
धृतराष्ट्र :- क्या कह रहा है यह ?
विदुर :- कहता है 'जय हो धृतराष्ट्र की' ?, जिव्हा कटी है महाराज, गूंगा है।
धृतराष्ट्र :- गूँगो के सिवाय आज, और कौन बोलेगा मेरी जय ?

6. **संगीतात्मकता –** संगती में जीवनदायिनी शक्ति होती है। डॉ. भारती कहते है कि अंधा-युग में वॉल्यूम, अंडरटोन, ओवरटोन, ओवरलेपिंग टोन्स,

* प्राध्यापक, प.म.ब. गुजराती वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

स्वरो के कंपन आदि का उपयोग किया गया है। लेखक ने कृति के प्रांरभ मे ही तूर्यनाद (तूरही) करवाया है इसमें गीत भी है।

7. **बिम्ब विधान –** बिम्ब किसी वस्तु के कल्पना चित्र का नाम है। बिना बिम्बों की सहायता के काव्यकार हृदय की सूक्ष्म वृत्तियों को प्रस्तुत नहीं कर सकता है। अंधा-युग में इसका सफल प्रयोग हुआ है। संयज कह रहे है गांधारी से – घुटनो से दाब दिया उसको, पंजो से गला दबोच दिया, आँखों के कोटर से दोनों साबुत गोले, कच्चे आमों की गुठलियों जैस उछल गए।

8. **भाषा शिल्प –** काव्य में कोमल तथा लालित्यपूर्ण शब्दो का चयन किया जाता है, किंतु अंधा-युग में परिस्थितिवश कठोर शब्दो का प्रयोग भर नि:संकोच किया गया है फिर भी भाषा बोधगम्य तथा प्रांजल है। पाठक को कविता का आनंद प्राप्त होता है।

अंधा-युग नाटक है – अंधा-युग एक ऐसी कृति है जो हृष्य और श्रव्य दोनों है। इसका अनेक बाद सफल मंचन किया जा चुका है। अत: नाटक की विशेषता की आधार पर भी अंधा-युग का अनुशीलन करना आवश्यक है।

1. **कथावस्तु –** इस कृति की कथा रचना का विधान नाट्य संदर्भो के अनुकुल ही है। पूरी कथावस्तु अलग अलग हृष्यो में इस प्रका विभाजित की गई है कि अपनी नाटकीयता के संदर्भ में वह दर्शकों के मध्य पकड़ बनाए रखे।

2. **चरित्र –** चरित्र नाटक का प्रमुख अंग है। चत्रि के माध्यम से ही कथावस्तु बनती है। अंधा-युग में अश्वत्थसामा एक असामान्य चरित्र है। उसके मन में प्रतिशोध की भावना है। इसी प्रकार इसमें सबसे दयनीय चरित्र युयुत्सु का है।

3. **संवाद –** गीति नाट्य के संवाद नाटक से भिन्न्न होते है। इनमें अंत:वृत्ति निरुपणि के माध्यम से वार्तालाप में गीत दी जाती है। अंधा युग के संवादों में लयात्मकता है।

विदुर – यह जो पीड़ा ने, पराजय नले, दिया है ज्ञान, दृढ़ता ही देगा वह। धृतराष्ट्र-किंतु इस ज्ञान ने, भय ही दिया है विदुर।

4. **रंगमंच –** अंधा युग का मंच विधान जटिल नही है। अत: इसे आसानी से खुले मंच पर खेला जा सकता है।

5. **देशकाल और वातावरण –** अंधा-युग में वस्त्र सज्जा, मंच विधान महाभारत कालीनयुग के अनुरुप जरुर है, लेकिन सारी कथावस्तु आधुनिकता के संदर्भ में है।

इस संपूर्ण विवचेन के बाद यह कहा जा सकता है कि अंधा युग में जहाँ एक और काव्य की अधिकाधिक विशेषताएँ सन्निहित है वही उसमें एक अच्छी नाट्क कृति के भी लक्षण है। अत: रचना विधान की हृष्टि से वह इन दोनो विधाओं की संभावनाओं से परिपूर्ण है। इसे काव्य नाट्य कहना उचित होग। एक ऐसा काव्य जो नाट्य विशेषताओं को सन्निहित करते हुए प्रस्तुत हुआ है और एक ऐसा नाटक जो काव्यगत विशेषताओं से सम्पन्न है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अंधा युग – डॉ. धर्मवीर भारती
2. गीति नाट्य : शिल्प व विवेचन – डॉ. शिवशंकर कटारे
3. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धांत – डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत
4. रंगमंच और नाटक की भूमिका – लक्ष्मीनारायण लाल
5. आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का शिल्प विधान – डॉ. श्यामनंदन किशोर
6. चिंतामणि (भाग 1) – आचार्य रामचंद्र शुक्ल
7. हिन्दी कविता : आधुनिक समाज – डॉ. रामदरश मिश्र

****

गुजरात के आदिवासियों की अर्थव्यवस्था

डॉ. अजातशत्रु सिंह राणावत * नरेन्द्रकुमार केशवभाई राठौड़ **

प्रस्तावना – गुजरात के आदिवासियों की बस्ती राज्य के समग्र पूर्व सरहद पर आये पर्वतीय प्रदेश में फैली हुई है, इसलिए ही इन प्रदेश को आदिवासी पट्टी के रूप में पहचाना जाता है। उसके पूर्व सरहद के आस-पास के तीन राज्यों राजस्थान, मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र के सीमाओं से जुड़ा हुआ है। इन कारणों से ये तीन राज्यों की सीमाओं पर बसे हुए लोगों की आर्थिक, सांस्कृतिक जीवन का असर गुजरात के आदिवासियों पर देखने को मिलता है। गुजरात में आदिवासियों की जो बस्ती है वह 24 बोली बोलने वाली ऐसी 28 जातियों में विभाजित है। ये सभी जातियों के बीच सांस्कृतिक वैविध्य इतना ज्यादा है कि ये प्रत्येक जाति अपनी सांस्कृतिक विशेषता के कारण दुसरी जाति से अलग हो जाती है।

आदिवासियों की बस्ती जिस में विशेष रूप से ऐसी आठ आदिवासी जिले की भौगोलिक रूप से तीन भाग में विभाजित कर सकते हैं। उत्तर विभाग में बनासकांठा और साबरकांठा जिले में बसे हुए आदिवासी, मध्य गुजरात में पंचमहाल, बड़ौदा और भरूच जिले के आदिवासी, दक्षिण विभाग में सूरत, बलसाड़ और डांग जिले में बसने वाले आदिवासियों का समावेश किया जाता है। ये तीन विस्तार में अलग-अलग आदिवासी जाति की बस्ती आती है।

गुजरात के आदिवासियों की अर्थव्यवस्था के लक्षण :

कुदरत पर आधारित – आदिवासी मुख्य रूप से पर्वतीय, जंगल विस्तार में अथवा मैदानों में बसते हैं। वे लोग कुछ भी आर्थिक प्रवृत्ति करते हैं। उनका आधार उनके विस्तार के कुदरती वातावरण के ऊपर भी होता है। आदिवासी मुख्यत: कुदरत की गोद में जीते हैं इसलिए कुदरती संपत्ति में से मिलने वाला और घर बनाने की सामग्री पाने के लिए वे लोग स्थानीय प्रयास करते हैं। जंगल में बसने वाले आदिवासियों की वन पैदाईश जैसे मध, गुंदर, महुड़ा के फूल और बीज, फल-फूल, करंजिया आदि बीन कर लाते हैं। पानी और घास की सुविधा है उस प्रदेश में वे लोग पशु पालन करते हैं। भारत की कितनी आदिवासी जाति कंदमूल और मध इकट्ठा करके एवं शिकार करके अपना गुज़ारा चलाते हैं, लेकिन उनकी बस्ती बहुत कम हैं। भारत में अधिक से अधिक आदिवासी कृषि के ऊपर अपना गुज़ारा चलाते हैं।

गुजरात के आदिवासियों का मुख्य व्यवसाय कृषि भी है। कृषि के सिवा वे मज़दूरी, पशुपालन और वन्य पैदाईश इकट्ठा करके गुज़ारा चलाते हैं। गुजरात के आदिवासी जाति केवल एक ही काम पर आधारित नहीं है, लेकिन वे अपना गुज़ारा चलाने के लिए अनेक प्रकार की आर्थिक प्रवृत्तियाँ करते हैं।

गुजरात के आदिवासी का मुख्य व्यवसाय खेत और मज़दूरी है। उनके पास ज़मीन है। खेत मज़दूरी और अन्य कोई भी प्रकार की मज़दूरी वे लोग कर सकते हैं। मज़दूरी के लिए वह अपने गाँव में मज़दूरी न मिलने पर गुजरात के अन्य क्षेत्रों में जाते हैं।

कोई-कोई जातियों में तो अलग-अलग प्रकार के काम को करने की क्षमता और कौशल भी देखने को मिलते हैं। जैसे कोटवालिया जाति बांस का काम करते हैं। बांस की सुन्दर टोकरियाँ, करंडिया, चटाइयाँ आदि बनाते हैं। काथोड़ी जाति खेर के पेड़ में से काथा निकालने में निपुण हैं, लेकिन खेर के पेड़ काट देने से और काथा के उद्योग होने के कारण उनका पारम्परिक व्यवसाय छीन लिया गया था। गुजरात के लगभग आदिवासी जाति नदी और तालाबों में से मछली पकड़ते हैं। इन मछलियों का उपयोग वे लोग अपने स्वयं के लिए करते हैं।

गुजरात के आदिवासी पशुपालन भी करते हैं और मुर्गी उछेर भी करते हैं। पर यह सारे काम व्यवस्थित रूप से नहीं होने से उनमें से मिलन वाली उपज कम होती है।

गुजरात के आदिवासी उनकी भौगोलिक परिस्थिति के अनुकूल आर्थिक प्रवृत्ति करते हैं। डांग में बसने वाले आदिवासी मुख्य रूप से खेत, जंगल पैदाईश इकट्ठा करना, जंगल के कूपमे मज़दूरी एवं बैलगाड़ी से माल वहन का काम करके रोज़गारी प्राप्त करते हैं।

उत्तर गुजरात में बसने वाले आदिवासी मुख्य रूप से खेत और मज़दूरी के काम में लगे रहते हैं। दक्षिण गुजरात में बसने वाले धोडिया, चौधरी आदिवासियों के पास ज़मीनों के थोड़े प्रमाण मिले हैं इसलिए वे लोग खेतों में काम करते हैं। इन क्षेत्रों में नये-नये उद्योग जैसे अतुल का रंग रसायन उद्योग और वापी के औद्योगिक संकुल के कारण इन क्षेत्रों के आदिवासी उद्योगों में काम करने वाले आदिवासी मुख्य रूप से हेल्पर, फिटर, चपरासी जैसे छोटे मज़दूर के रूप में काम करते हैं। गिने-चुने आदिवासी अच्छी जगह पर पहुँचे हैं। नदी के किनारे बसने वाले थोड़े आदिवासी जैसे की उकाई बांध के आस-पास के क्षेत्र में आदिवासी मत्स्य उद्योग व्यवसाय करते हैं।

गुजरात के आदिवासी में कितनी जाति अन्य जाति से शिक्षा में आगे हैं। जैसे धोड़िया, चौधरी, धानका, गामीत, गरासिया आदि जाति के लोग सबसे ज्यादा शिक्षक की नौकरी में जुड़े हुए हैं। इसके अलावा उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को भी अलग-अलग सरकारी खाते में अच्छी नौकरी मिली है, लेकिन इस प्रकार की नौकरी करने वाले आदिवासियों का प्रमाण बहुत ही कम है।

धार्मिक मान्यताओं का प्रभाव – आदिवासी अर्थव्यवस्था सामान्य रूप से प्राथमिक कक्षा में होते हैं और उनको कृषि का ज्ञान भी बहुत कम होता है। उनके जीवन में प्रत्येक क्षेत्र की तरह आर्थिक क्षेत्र पर धर्म का प्रभाव देखने को मिलता है। खेत में ज्यादा फसल प्राप्त करने की इच्छा, फसल का निष्फल जाना, शिकार पर जाने पर सफलता मिलना, पशुओं की मृत्यु होने पर उनको बचाने के लिए धार्मिक क्रिया करते हैं, उन लोगों में ऐसा विश्वास देखने को

*पर्यवेक्षक, पेसिफिक यूनीवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, पेसिफिक यूनीवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत

मिलता है कि कोई भी आर्थिक प्रगति धार्मिक क्रिया बिना सफल नहीं होती। गुजरात के सभी आदिवासी जाति में बीज बोने के समय और कटाई के समय देवी-देवता की पूजा करते हैं और बलि चढ़ाते हैं। नागली की कटाई के समय पर कंसरी देवी की पूजा होती है। खेत निष्फल जाते हैं तब राठवा लोग पिठोराबापा की पूजा करते हैं। ऐसी हर आर्थिक प्रवृत्ति के साथ धार्मिक क्रिया भी मिलती हुई देखने को मिलती है।

उत्पादन और उपभोग – आदिवासी की आर्थिक व्यवस्था खाद्य पूरक होती है। उनकी उत्पादन करने की पद्धति पूरी तरह से प्राथमिक प्रकार की होती है। जैसे की खेत करने के लिए गरीब आदिवासी कूपात्री का उपयोग करते हैं। उनके खेत का उत्पादन कम होता है। किसी रूप से फल और फूल इकट्ठा करने में भी उनको कुछ परिश्रम करना पड़ता है। वे लोग जितना उत्पादन करते हैं इतना खाते हैं। उनके खेत केवल जीवन निर्वाह के लिए होते हैं इसलिये उन में से बचत नहीं होती और उनको कर्ज़ लेना पड़ता है।

सहकार – सामूहिक भावना – ज्यादातर अविकसित अर्थव्यवस्था होने के बाद हजारों वर्षों से आदिवासी टिक गए हैं। उसका कारण उनमें सहकार और संगठन की भावना है, ऐसा कह सकते हैं। आदिवासी आपस में मिलकर हर काम में एक दूसरे की मदद करते हैं जैसे कंदमूल एकत्र करना, मछली पकड़ना या खेती करना आदि ऐसा कोई भी आर्थिक प्रवृत्ति का कार्य हो वे लोग एक दूसरे को मदद करते हैं। पकड़ी हुई मछलियाँ एक दूसरे के साथ बाँट लेते हैं। शिकार भी परम्परा के मुताबिक सही भाग में बाँट लेते हैं। खेत में जब बीज बोने या काटने के समय अलग-अलग कुटुम्ब एक-दूसरे को मदद करते हैं। किसी के पास खेत के साधन न हो तो एक दूसरे को मदद करते हैं। घर बांधने में भी एक-दसूरे की मदद करते हैं। मतलब मदद करने वाले का अदला देना पड़ता है उसके बदले में भोजन या धान देते हैं।

विनिमय प्रथा का महत्व, चलणी नोटो का अभाव – आदिवासी की अर्थव्यवस्था स्वयं पर्याप्त होने के बाद भी आदिवासी जाति में भी प्रत्येक कुटुम्ब अपनी जरूरियातों की सभी वस्तु बना लेना या प्राप्त नहीं कर सकते इसलिए एक ही जाति में और अंतर जाति कक्षा में जरूरी चीज वस्तुऐं प्राप्त करने के लिए वस्तु बदल सकते हैं। उनको विनिमय प्रथा कहते हैं। जैसे की अनाज के बदले मिर्च, नमक लेते हैं। मज़दूरी के बदले अनाज़ देते हैं। इस प्रकार उनका आर्थिक व्यवहार पैसे से नहीं लेकिन वस्तु विनिमय से चलता है, लेकिन बिन आदिवासियों का सम्पर्क पैसा का चलन व्यापक होने के कारण वे लोग पैसे का उपयोग करने लगे हैं। विनिमय का उपयोग आज नाम शेष रह गया है।

पहले उनका सब व्यवहार विनिमय के द्वारा होता था, लेकिन अब पैसे का उपयोग उनमें बढ़ रहा है। बिन आदिवासी समाज में पैसा का उपयोग बचत के लिए, वस्तु की कीमत तय करने के लिए विनिमय का माध्यम के रूप में आते हैं। इतने प्रमाण में आदिवासी समाज में नहीं किया जाता।

व्यवस्थित बाजारों का अभाव – आदिवासी में बिन आदिवासी समाज जैसे स्थायी नियमित बाजार नहीं थे। उनकी जीवन जरूरियात की चीजें, वस्तुऐं खरीदने के लिए भी वे लोग सप्ताह की हाट में जाते हैं। ये बाजार से वे लोग अपनी बेचने की वस्तुऐं जैसे की मध, गुंदर, पशु आदि ले के जाते हैं और नमक, पापड़ और बर्तन आदि प्राप्त करते हैं, लेकिन आज परिस्थितियाँ बदल गई हैं। आदिवासी आज अपने गाँव में व्यापारी के साथ सीधा व्यवहार करते हैं। सब्जी या अनाज ज्यादा बिकता है तो खरीदने-बेचने के लिए संघ से माल लाते हैं। गुजरात के आदिवासी बहुत प्रमाण में अपनी चीज वस्तुओं की खरीदी स्थानीय व्यापारी के पास से करते हैं। गुजरात के आदिवासी अंदर-अंदर अपना व्यवहार वस्तु के रूप में रखते हैं। जैसे की बीज के लिए उधार लिया हुआ बीज देने वाले को फसल होने के बाद दोगुना या डेढ़ गुना वापस लेते हैं। वन्य पैदाइश भी गाँव के व्यापारी को बेच देते हैं। व्यवस्थित बाजार के अभाव में उनका शोषण होता रहता है। कोई-कोई जगह पर वन्य विकास निगमें तय किये एजन्टों को भी बेचते हैं। अब उनके कारण उनको अब अच्छे भाव मिलने लगे हैं।

विशेषीकरण – विशेषीकरण यानि कोई एक आर्थिक कार्य में कुशलता प्राप्त करना। ये एक आर्थिक विकास के साथ संकलित बाबत् है। आधुनिक समाज में व्यक्ति खास तालीम लेकर विशेषज्ञ बनते हैं। उनका कारण ये है कि विकसित अर्थव्यवस्था में सूक्ष्म श्रम विभाजन और विशेषीकरण अनिवार्य होता है। जैसे तबिबविद्या में विविध प्रकार की कुशलता धराने वाले डॉक्टर हैं। जैसे हृदय के निष्णांत, स्त्री रोग निष्णांत, बाल रोग निष्णांत, आदिवासी समाज में ऐसा विशेषीकरण देखने को नहीं मिलता। अपने निर्वाह के लिए वे खेत जोतते हैं। अलग-अलग कार्यों के लिए अलग-अलग व्यक्ति को रोककर वेतन देना जरूरी नहीं है और आर्थिक रूप से पोषण भी शक्य नहीं है। तदुपरांत विशेषीकरण के बिना उनमें श्रम विभाजन देखने को मिलता है। आदिवासी समाज में श्रम विभाजन शारीरिक शक्ति और आयु पर आधारित है। तदुपरांत प्राथमिक समाज में ऐसी मान्यताऐं प्रवर्तमान है कि स्त्री की शारीरिक शक्ति पुरूषों से कम है। उसका अर्थ होता है कि जिसमें ज्यादा शारीरिक बल की जरूरत न हो वैसी अनेकविध आर्थिक प्रवृत्तियाँ स्त्रियाँ करती हैं। स्त्रियाँ मध, गुंदर, कंदमूल, फलफूल आदि जंगल में से बिनकर लाते हैं। खेत में साफ सफाई और फसल की कटाई में मदद करते हैं एवं पेड़ काटना, हल चलाना, बैलगाड़ी चलाना आदि पुरूषों के कार्य हैं। फिर आदिवासी स्त्री पुरूष के श्रम विभाजन पर औद्योगिकरण का असर दिखाई पड़ता है। आदिवासी पुरूष फिटर, हेल्पर, फोरमैन आदि की नौकरी करते हैं।

आधुनिकता के प्रति अरूचि – आर्थिक क्षेत्र में आदिवासी उनके परदादाओं की पुरानी पद्धति का अनुकरण करते हैं। इतना ही नहीं उन पर लगे रहते हैं। लोग कंदमूल एकत्र कर अपना गुज़ारा करते हैं। अपने आप कुछ नया ढूंढ़ना या सीखना उनकी परवाह नहीं करते हैं। दूसरे लोग उनको कुछ नया सीखाने का प्रयत्न करें तो उनके ऊपर शंका की नज़र से देखते हैं।

गुजरात में कितने आदिवासी कृषक आज भी रासायनिक खाद की ओर शंका से देखते हैं और उनका लाभ नहीं लेते। सुधारे गये बीज के लिए वे लोग ऐसा विचार रखते हैं। हाईब्रीड उत्पादन बढ़ते हैं लेकिन वे लोग मानते हैं कि उनसे सत्व (Nutritive Value) कम हो जाती है। अंत में कितने वर्षो से वे अपने परदादा करते थे ऐसी नागली या डांगर की धरू के लिए आदर करते हैं। ये आदर में वे लोग पान या वन्य डाली आदि काटकर उनको जलाते हैं और फिर बारिश होने के बाद उन में धरू करते हैं। आदर तो मात्र धरू के लिए करते हैं। दक्षिण गुजरात में वैज्ञानिक तरीके की पद्धति से खेत की उनके ऊपर कोई खास असर दिखाई नहीं देती। लगभग उनकी आर्थिक परिस्थिति ये सब करने के लिए अंतराय रूप है। उनमें नवीनता के प्रति अरूचि है। ये शोध का विषय है उनके लिए व्यवस्थित रूप से संशोधन होता तो जानकारी मिल सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मुस्ताली मसवी, 'गुजरातना आदिवासिनी अर्थव्यवस्था', गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद।
2. शान्तिभाई पटेल, 'भारतना आदिवासियों', रचना प्रकाशन, अहमदाबाद।
3. श्री हकु शाह एवं डॉ. सिद्धराज सोलंकी, 'आदिवासी गुजरात', आदिवासी संशोधन अने तालिम केन्द्र, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद।

A comparative Study Of Wordsworth and Pant as a poet of nature

Hridesh Srivastava* Dr. Kranti Vats**

Introduction - Wordsworth is variously called the" harbinder of nature "the "priest of nature "and the "worshipper of nature" for he was the poet of nature par excellence and his chief originality is to be found in his poetry of nature.

There are so many poets in Hindi who have written about nature. But on the top of all, there is Sumitranandan Pant. He is known as "Prakritikasukumarkavi" which translates to "mild poet of the nature". I may consider him equivalent to William Wordsworth who wrote poems on nature using a fictitious character Lucy and known as Poet of nature.

Wordsworth is a mile-stone in the romantic age of poetry as nature poet. The subject matter of his poetry maybe or may not be nature but he imports some theme from nature definitely. Human being and nature are co-related and coordinated together in his poems. According to Wordsworth nature is a great universal resort for peace and solitude. Wordsworth finds nature to be a temple. As De Quincey observes, "Wordsworth had passion for Nature fixed in his blood".

In Tintern Abbey his philosophy of nature is summarized:
'…..Well pleased to recognize
In Nature and the language of the sense
The anchor of my purest thoughts, the nurse
The guide, the guardian of my heart, and soul
Of all my moral being.

Like William Wordsworth, Pant evaluated Nature as part of his life and art. It is rightly described as 'prakritikasukumarkavi' (a tender poet of nature). His attitudinal worship of nature was that of a devotee and he perceived nature as a perpetual giver:

A scholar of literature praises Pant as a poet who has written more on nature than other hindi poets. Manoj Kr Nanda said

"If Jaishankar Prasad had a deep influence of the culture of Kashi, if SuryakantTripathiNirala had an intravenous influence of the values of Bengal, Sumitranandan Pant was taught by the Himalayas and had a direct communion with nature."

While Wordsworth was so devoted to nature that he went to the extent of saying that he was ready to be called a crazy follower of nature. He always found in his poetry worshiping nature. Pant admitted that he always fulfilled the void of his individual relationship with nature. Thus, it is observed that both the poets had direct communion with nature. Both of them saw the mother element in nature and worshiped her as a deity. Thus *Nature to them was not just an organic entity; it was more a living force which fostered their being.*

Embracing form of Nature - Nature as embracing form has been used in the poetry of Pant. He adopted Synthetic, analytic, real and pictorial method to display his feeling in frame of nature. Pant indicated object and also natural surroundings of selected object was given place in poems. Pant also depicted nature in different methodology where he displayed original facts with real name and rustic language what easy to understand by common man. Pant has depicted nature in embracing form in many poems by using synthetic and analytic approach.

Evocative form of Poets' nature poems - Nature stimulates and awakes the feelings of humanity and human emotions with spontaneous overflow of feelings. Nature stimulates ecstasy of a man and fills him with love, affection and happiness. Inspite of happiness, nature also gives pain, sarrow and lament. Pant displayed the both-happiness and sarrow to frame nature in his poetry. A critic Neeraj explains that two aspects- happiness and sarrow which beautifully and artistically Pant fused in his literature.

Ornamental form of nature in poetry - As for as the question of linguistic and artistic beauty is concerned, Pant's literature can never discourage us. He used decorative and ornamental language in his literature when he depicted nature. Lotus is for Pant face of his beloved. Pisces is compared by him with eye of beloved. Honey bee is compared with darling and beautiful weird alcove.

Wordsworth depicted nature also in very decorative form. The forms and colours of nature were always a passion with him and the mighty world of eye and ear never lost its fascination for him. Innumerable passages of nature-description scattered al up and down his poetry are eloquent witnesses to his sensuous delight in nature. Here is the graphic picture of an early morning in spring :

*Research Scholar (English) Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor (English) Govt. MVM, Bhopal (M.P.) INDIA

It was an April morning , fresh and clear.
The rivulet, delighting in its strength,
Ran with a young man 's speed.

His heart leaps up when he sees a rainbow in the sky and it dances with the daffodils growing by a river's bank. Equally deep is his appreciation of the beautiful scene when the Moon shines brightly in the sky :

The Moon doth with delight
Looks around her when the heavens are bare,
Waters on a starry night
Are beautiful and fair.

Directive form of nature, depicted by Pant and Wordsworth - "Nature is a teacher. Man respects nature since the beginning of human civilization. The great literature of Rigveda identifies nature as god and goddess. In Rigveda of Sanskrit, Usha, Sandhya, Agni, Varun, Vayu and all aspects of nature are treated as god." Pant has admitted nature as directive means of life. Pant symbolized drop of water as mortal as life of a man.

Mysterious form of nature is key note - Chayavad represents a way of mysterious presentation of nature. Pant has accepted nature as the part of mysterious power of god. Neeraj describes about mysterious form of nature presented in the poetry of Pant.

"Khadyot" ("Firefly") is a late Chayavad poem and excellent example of mystrical form of nature. It treats a similar topic to "AjSisukekavi's." However here the subject of poetic inspiration has evolved into a concern with illumination. Here also the firefly is used to represent a gift of awakening; but the term atma is used here for 'soul,' and the firefly is equated with the soul in the two stanzas. An image from the natural world is again used to describe the human essence. But the use of the word âtmâ indicates Pant's movement out of the insular depictions of the individual that are characteristic of his Chayavad poems and into a period of personal spiritual questing, which culminated in his attachment to Sri Aurobindo during the 1940s.

Wordsworth has a keen view on philosophy and mysterious form of nature. He describes in Tintern "Abbey" Nature has life and this life is moral :

To every natural form, rock fruit and flower
Even the lose stones that cover the highway,
I gave a moral life.

Wordsworth's best and most inspired poetry belongs to this Spiritual stage of his love of nature. It was during this stage that nature seemed to take the pen from his hands and write for him. It is very mysterious presentation of nature.

Poets used "humanization" of nature and microcosm - Pant also humanized nature in his poetry. Pant's collections of poetry from 1926 (Pallav, "New Leaves") and 1932 (Gunjan, "Humming") exemplify the intensity of identification with nature that defines Pant as a Chayavad poet. "Maun Nimantra" ("Silent Invitation"), written in 1923 and published in Pallav, positions the individual without any reference to human society and depicts numerous forces and creatures—all imbued with consciousness—crowded together in a natural world that overflows with life and energy. The individual human consciousness emerges highlighted from this tapestry of living things and variegated consciousnesses but is nonetheless only another element in the greater whole of nature. The poem queries, who impels life? That is, what is the hidden personality or force that constitutes consciousness? The Indian traditional concept of the microcosm of the self which echoes the macrocosm of brahman, the unperceivable cosmic self, is also evident with humanization of nature. MounNimantran was written by Pant in November 1932. MounNImantran is excellent example of humanization of nature with macrocosm.. Allegory taken from nature by Poets

When Pant could not say in words, he used symbols, metaphor and allegory to depict his emotion. Neeraj describes about Pant art of allegory and metaphor.

"AjSisukekavi" ("Today the Child's Poet") was written in 1932 and first published in Gunjan (The Hum) in the same year. Like "Chaya Kal" it locates and discusses the source of poetic inspiration. Here, however, Pant uses nature as a metaphor and allegory for the source.

Imagination in their portrayal - It needs to be written here that while in English Literature there are two expressions for the Hindi kalpana viz. 'fancy' and 'imagination'. The early western thinkers like Hobbs, Locke, Hume and Hartley were of the opinion that the expressions 'fancy' and 'imagination' were just two different words denoting the power of the human mind and the only difference between both the expressions consisted in their respective origins. Though the men of literature and critics of the late eighteenth century came to be of the opinion that while 'fancy' was an important element of the creative process, 'imagination' occupied a lower stratum. It was Wordsworth and Coleridge who explored more and added new dimensions and took 'fancy' and 'imagination' to the ends we now know.

The point of this small discussion on 'fancy' and 'imagination' is to make it clear that Wordsworth, as an English literary craftsman, had two different expressions viz. 'fancy' and 'imagination' for the creative power of mind, and Pant being an avid and voracious reader of the English romantic poetry was deeply influenced by what the romantic had earlier said and the echo of romantics like Wordsworth, Shelley and Tennyson could easily be heard throughout his works. Pant's explanations on 'unmuktkalpana', Pant also symbolically decorated the world of imagination like Wordsworth. Same,we find in poem of Pant

Portrait of a Lady - *Wordsworth explained a lady in the following words:*

"She gives me eyes, She gives me ears.
And humble cares and delicate fears
A heart, the fountain of sweet tears
And love, and thought and joy."

Pant also gave portrait of a lady in a very respective

manner and beautifully painted his words to draw picture of a lady.

Conclusion - Ultimately, the journey of my research concludes with note of satisfaction. Wordsworth was a poet of nature. He gave us his vision of nature: He renders natures in calm and in repose as he found it, and in this lies the chief value of his poetry –it's healing power. Nature is to us what we are to her: she is a reflection of our own souls :

O Lady! We receive but what: we give
"And in our life alone does Nature live.

"Byron, being Byron says Hudson, "saw nature in the tumult of revolt, Wordsworth, being Wordsworth, found in nature what he sought, the peace which was in his own soul : It was for this reason that he could find.

"The silence that is in the starry sky
The sleep that is among the lovely hill".

Pant read and appreciated literature of Wordsworth. His purpose was not imitation or making photo copy of Wordsworth's artistic literature. Pant was very original in his thoughts and action. He took nature as the part of his literature and made nature as part of his ultimate soul. That's why, the same spotaneous overflow of powerful feelings ran in his literature, that brought him close to Wordsworth. Pant is known as "prakritikesukumarkavi".

The pupose of poetry is to give pleasure and with this end in view, the poet should use a language purified of all that is disgusting and painful.

Wordsworth and Pant give his conception of poetic pleasure. Poetic pleasure is not a mere idle amusement. It is much higher and nobler.

Poetic truth is much higher than the truth of philosophy or history. Poetry is the most philosophical of all writing.

Philosophy deals with abstract truths, and history with particular illustrations of that truth, Poetry both gives us universal truths and illustrates them through particular examples.

Poetry aims at truth to nature, and this truth to nature is modified by only one consideration, that is giving pleasure.The parameter is highly accepted by Pant and Wordsworth to claim the title of the poet of nature.

The poet generally live in a world of charm, magic and fantasy but nature is the chief and real source of all charm and magic. That's why, William Wordsworth in England and Sumitra Nandan Pant in India were highly influenced by the beauty of nature. The beauty and eternal ecstasy are the spontaneous out-come of nature.

That's why, the two mother-less boys from different periods and different countries took nature as their guide of life and made colourful not only their life but also they left a lesson in their poetry how human beings can find colors of joy, eternality and knowledge through nature.

The both poets proved themselves as mile-stone in melodious journey of love, poetry and spiritual knowledge. Nature is matter of deep observation in the poetry of both poets. If a person goes through the literature of the nature poets, an indelible impression will be left on the mind of a reader.

Reference :-

1. Personal Research.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Working of National Conference- Congress Coalition Government in Jammu & Kashmir 2008- 2014

Nisar Ahmad Sheergogry* Dr. Chetna Shrivastava**

Abstract - The Jammu and Kashmir has a long historical importance. Its existence had crossed so many phases. The modern phase came into being in 1846 with the treaty of Amritsar. However, it has been observed the developmental transformation and the cognitive outlook of the people has emerged in 20th Century which has been created rejuvenation as well as the reconstruction in the minds and thoughts of the people to create a new socio-economic and political affluence of the state. Besides in its political landscape, the geostrategic importance has had its impact from times immemorial whether in terms of colonialism, imperialism, later on by the cold war politics and now by the new emerging trends of globalization. National Conference emerged as the single largest party in 2008 elections but did not win sufficient number of seats to form government in the state on its own. Thus the result of the 2008 state assembly elections led to a hung assembly with the result another coalition government became a must. Once bitten twice shy, Congress was quick to support National Conference to a visible dismay and displeasure of other competitors. The Congress became the ally of National Conference in the formation of new coalition government. This paper will focus how NC and INC working within Five Years of Coalition.
Keywords- Indian National Congress, National Conference, Political Parties, Political Awakening.

Introduction - National Conference again emerged one of the single largest party in 2008 elections but did not win sufficient number of seats to form government in the state on its own. The 2008 Assemble elections resulted in a hung assembly and another coalition government became a must. Congress was quick to support National Conference, thus became the ally of National conference in the formation of new coalition government. The leaders of both the political parties discussed the modalities of new coalition government and it was agreed to give full term Chief Ministership to Omar Abdullah. Thus a new era of coalition government again began to work with a good beginning between the political partners. The Modern State of Jammu and Kashmir came into being in 1846 consisting of three regions- Kashmir, Jammu and Ladakh. It had seen many vicissitudes and subjugations for centuries together. Nonetheless, the political awakening and the developments during the last decades of 20 century did provide rejuvenation, galvanization in the thoughts and minds of the populace who-wrote a new socio, economic and political fortunes of the state. Besides in its political landscape, the geo-strategic importance has had its impact from times immemorial whether in terms of colonialism, imperialism, later on by the cold war politics and now by the new emerging trends of globalization.

Assembly Elections in Jammu and Kashmir held in 2008 - National Conference appeared as the largest single party in elections of 2008 but did not succeed to make an adequate number of seats to establish government in the state on its own. Therefore the result another coalition government becomes visible in the state. The Congress became the collaborator of National Conference in the establishment of new alliance government. The astringent experience of Congress party of holding the hands of People's Democratic Party (PDP) in previous government gives out a benefitting cause for National Conference. National Conference and Congress top leaders talked about the patterns of new coalition government and it was come to an agreement to offer full term Chief Minister ship to Omar Abdullah and it was a victory for the National Conference because in their earlier coalition collaboration with PDP, Congress powerfully demanded Chief-Minister ship for half of the term. The 2008 Assembly elections of Jammu and Kashmir that finished on 30 of Dec, 2008 created a history in many fields, making it historically imperative elections of the state of J&K. All the earlier records were conked out when greater than before candidates- 1353 contested this election for the 87 Assembly seats. Even in case of women and independents, new records were created with 67 women and 468 independents contested the 2008 polls. Amazingly, the number of candidates who contested Independent elections this time was far higher than total number of contestants in tussle for the 1972 and 1977 Assembly elections. The

*Research Scholar (Political Science) Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Professor, Govt. S.L.P College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA

election commission of India read out the poll schedule for J&K state form 19 of Oct, 2008. All misgivings about conducting elections in winter season were sweeping aside with people participating in good numbers to vote and stamp their belief in democracy. In 2002 elections the percentage of the poll was 43.69 and the number of voters who cast their votes was 26.56 lakh. As in opposition to this, the voter turnout was an enormous 61.23% in 2008 and a total of 39.67 lakh voters this time cast their votes. The election for the State Assembly was planned to be in seven phases and the contestants campaigned strongly right from the declaration of election schedule. As many as 4346 public meetings and rallies, encompassing 700 mega-rallies were held from corner to corner in the state. Numerous national level influential leaders of various political parties and star campaigners lectured to a large number of public gatherings during the period of campaigns. Of the total rallies2047 in Jammu division and, 2299 rallies were held in Kashmir division. The highest voter turnout of 68.87% was recorded in the very first phase when four districts of Bandipora, Leh, Kargil and Poonch went to poll on Nov. 17, 2008. The Ganderbal and Rajouri district went to polls on November 23 in second phase; there the voter turnout was 68.28%. correspondingly, in the third phase of polling on November 31, 2008 the Kupwara district recorded voter turnout of 67.99% and during a fourth phase voter turnout of 59.31% was recorded in which Baramulla, Budgam, Reasi and Udhampur districts went to polls on December 7, 2008. Likewise, in the fifth phase of polling on December 13, polling percentage of 57.61% was registered when Pulwama, Shopian and Kathua districts went to polls while as 65.90% voter turnout was recorded in the sixth phase when polling was held on December 17,in the districts of Anantnag, Kulgam, Doda and Ramban. In the seventh and last phase of polling held on 24 December 2008, when Srinagar, Samba and Jammu districts went to polls and the poll percentage recorded was 55.12%.

Programes & Achievements of National Conference-Congress Coalition in Jammu & Kashmir (2008-2014)

Development of Agriculture Sector - The state has an agricultural economy and efforts were made for overall development of the agriculture and allied sectors by the NC- Congress coalition during their tenure and it included:

1. Rashtriya Krishi Vikas Yogana (RKVY) was initiated in the state of Jammu and Kashmir for the first time which will envelop all key elements and re-energize agrarian economy. Rs.46.97 crore work plan planned by State Level Sanctioning Committee (SLSC) is put forwarded to the central level sanctioning committee of Union Agriculture Ministry for approval.
2. MOU was signed by Jammu and Kashmir State- Agro Industry Development Corporation Limited under the Joint Venture Modalities, for manufacturing of bio-degradable packaging material.
3. First time in nontraditional areas Saffron Cultivation was introduced, in Budgam 1300 canals area was bought under saffron cultivation.
4. Under the NC- Congress coalition, four new major/ medium irrigation projects and 625 minor irrigation schemes costing Rs. 210.34 and Rs. 1., 020 crore respectively were taken for execution under Accelerated Irrigation Benefit Programme (AIBP522) and National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD-33).
5. Growing of honey, Mushroom, Zeera, cocoon, in the far flung and remote area of Gurez being discovered.

Livestock - The Government also pays attention on enhancing livestock in the state which produced opportunities for income generation. The state has a valuable wealth of livestock in the form of sheep, cattle, goat, poultry, buffalo etc. The poultry and cattle amongst all the livestock believed the most significant tool for the progression of the rural economy. From the Canada based agency 900 sheep embryos being imported on pilot bases. 420 sheep embryos of Rambouilet, Dorper and Corriedale breed were already imported and entrenched in Surrogate eves at sheep breeding farm Panthol by the expert Veterinarian of Canadian Sheep Genetics International.

Education Sector in Jammu and Kashmir - The J&K's national educational scenario is considers as educationally backward with reference to the established indices namely teacher-people ratio, literacy rate, drop-out rate and the amalgamation pattern of the educated personnel. In this respect, the government from time to time has taken various initiatives in the form of state/centre support scheme particularly for under privileged/backward sections of the society to make better education in the state. It has larger impact and effects in the society and it is a key element to stimulate the common people in the state. Broadly speaking the Education has the following commitments on the part of the state:

1. To work for overall educational development of the state.
2. To eradicate illiteracy.
3. To administer and monitor schools.
4. To implement various educational policies, programmes and schemes.
5. To work for behavioral modifications.
6. To provide teachers training.
7. The following steps had been taken by the present coalition headed by Omar Abdullah to boost the education sector in the state:
8. Two central universities, 2 campuses in north and south of Srinagar came up, 23 colleges, 5000 schools, 50 polytechnics and I.T.Is were setup in the state.
9. 16475 educational buildings were constructed.
10. 2521 schools were upgraded.
11. 3856 masters were promoted.
12. 45386 schools covered under mid-day meals on yearly bases and 16.50 lakh students provided mid-day meals.
13. 6 polytechnics upgraded and 396 posts were created.

14. 16 polytechnics opened and made functional.
15. 6 modern I.T.Is at Hajan, Bani, Banihal, Gurez Khori and Nowshera were established. Ÿ 39 ITIs taken up for up-gradation.
16. 9 women I.T.Is, 12 Women Wings in I.T.Is and 89 new trade units were introduced in Industrial Training Institutes, (I.T.Is).
17. 26633 educated unemployed youth were provided employment in educational departments. Ÿ 5480 new primary schools have been opened and 2521 were upgraded.
18. 526 Middle Schools were upgraded to the level of high schools.
19. 12000 youth provided training in different skills outside the state.
20. Construction of about 50 KGBs was completed, 105 Block Recourse Centers were completed, and 564 Clusters Recourse Centers were completed besides establishing 540 call centers.
21. 16475 buildings were constructed which include about 2300 primary school buildings, 367 middle schools and 3231 additional class rooms and 9932 kitchen sheds.
22. 7000 additional posts were created for upgraded Schools.
23. 168 High and Higher Secondary Schools were repaired and renovated, 246 sanitation blocks were constructed in schools.
24. Establishment of Polytechnic Institutes in uncovered districts in Jammu and Kashmir and creation of post of different categories.
25. Establishment of new Polytechnic Institute in the campus of Baba Ghulam Shah Badshah University.

Udaan and Himayat Schemes - 40, 000 youths were being trained over a period of five years to get them absorbed in private job market.

The commitments of 36 Corporate/Private Organizations and 7 Public Sector undertaking to up skill and employ over 61, 000 graduate youth from Jammu and Kashmir.

So far 1070 candidates completed training and another 200 are undertaking training with various corporate.

Around 550 candidates were offered the job in the corporate sector.

Udaan is being implemented in partnership with top private organizations like Tata, Consultancy Services, HCL, Cognizant, Accenture, Religare, Yes Bank etc.

In public sector undertaking category the state government assured that Canara Bank, Indian Overseas Bank, ONGC, NTPC and other avenues are with the government. Similarly under the Himayat the Himayat scheme youth were provided training and employment in private sectors.

Under SKEWPY about 300 industrial units were set up for [providing employment to 13, 000 youth.

Under the newly initiated Youth Startup Loan Scheme: 15,479 entrepreneurs were registered and financial help worth Rs. 141.93 crores provided by the state government, this resulted in creation of jobs for 63, 462 persons.

Another milestone was measured by the coalition government of Jammu and Kashmir had been in terms of approval given to the sixth pay commission in favor of employees. The historic Jammu and Kashmir Public Service Guarantee Act (PGSA) also got the approval of the cabinet. To ensure proper implementation of Public Service Guarantee Act (PGSA), Omar Abdullah had constituted a top level Monitoring Cell in the General Administration Department and had regularly monitoring the status of implementation and benefits of the Act in the state. State Cabinet also approved creation of posts in newly created districts.

Rural Development Various Programmes and Schemes were implemented by the Coalition Government to reduce the rate of poverty among the ruler masses like National Rural Employment Guarantee Act (NREGA), Indra Awas Yojna (IAY) and Model Villages. Some other steps taken by the Coalition government are as:

1. Under NREGA 5.58 Lakh job cards have been issued and 208 Lakh mandays generated ending September 2009;
2. Under IAY, up to ending September 2009, out of 28473 houses taken up, 22425 houses were completed at an expenditure of Rs 69.45 crores; 119 Model Villages were taken up under Prime Minister's Reconstruction Plan at the Cost of Rs 142.80 crore.

Health Sector - The state had been making continuous endeavor to provide preventive, promotive and curative health care services through a network of Government Health Care Institutions, which were accessible, affordable and acceptable to all the citizens in the state. Health is the most important social service sector having direct correlation with the welfare of the society. Because of this reason, it finds predominant place in Millennium Development Goals of the United Nations. The Department of Health which had priority sector for the government made remarkable progress in last few years but there had still lot be done to reach the pinnacle. Although state had its specific constraints like low density of population, difficult terrain problem of accessibility, poor road connectivity, and limited presence of private sector, NGOs and the existing private sector largely owned and operated by in-service doctors. Still the health indicators of the state had improved over the last decade. This had been possible only because of the constant efforts and the commitment of the government to improve this sector. A substantial network of health institutions has been developed over the years. For providing better health care to its people Chief Minister Omar Abdullah was given an award in the state's conclave in 2012. Plan investment in the health sector for 2012-13 was allotted Rs. 232.65 crore in addition Rs. 270.76 crore had been earmarked under the National Rural Health Mission (NRHM).

Draws Backs - In 2010 of summer season, there were

demonstrations and protests in Kashmir Valley in opposition to the security forces and the atmosphere of suppression and fear. This led to happen an aggressive clashes between demonstrators and security forces in which more than 500 civilians were injured and 100 civilians were killed. In this conflict which lingering for three months, were also 4000 security persons injured. Following this, the Central Government sent a committee which was formed of three interlocutors to find out the cause of conflict and to put forward measures for re-establishing normalcy and faith in state. The interlocutors — academician Radha Kumar, former civil servant MM Ansari and journalist Dileep Padgoankar – be in favor of more autonomy for State within Indian Constitution and have also recommended the withdrawal of the Disturbed Areas Act and the AFSPA (Armed Forces Special Powers Act) from the State. Chief Minister Omar Abdullah in October 2010 declared in Legislative Assembly that Kashmir was an outstanding issue between Pakistan and India with recognition of international forums and that Kashmir has acceded to India under certain agreements and unlike Junagarh and Hyderabad Kashmir has not merged with India. In this way, it is factual that National Conference has extensive mass following in the State and though there has been question on impartiality of elections in State since 1947, no one can deny that National Conference was and will remain voice of an extensive section of society in the State. Like every political organization and a party, the National Conference support may decrease or increase base may increase or decrease depending upon its adherence and performance to Kashmiriyat, but it will continuously remain a focal point to Kashmir politics and in Kashmir issue.

Conclusion - The 2008 elections took place immediately after the Amarnath agitation. The unprecedented regional and communal polarization that afflicted the state during this agitation, therefore, was bound to have repercussions on this election. In Kashmir, separatist politics was the highlight of the agitation. The separatist leadership had developed a renewed confidence that people who had participated in massive demonstrations against the Indian state during the agitation would not come forward to participate in elections, and the electoral exercise would once again be reduced to a farce. However, the boycott call was defied and there was massive participation of people in the Assembly election. Against 29.64% voter turnout in the 2002 Assembly election, the 2008 election recorded 51.64%. In almost all the districts and all the constituencies of the Valley, the percentage of the voter-turnout was much higher than the 2002 Assembly elections. The coming up politically to form a coalition between National Congress- Congress that began after 2008 elections was third experience in coalition politics of the state. It was National Conference that joined their hands with state Congress to start a new coalition experience in the state. National Conference did not find it difficult to evolve a framework for power sharing with the Congress party as both parties had an ancestral partnership. Their relationship and like mindedness goes back to Nehru-Sheikh Abdullah era as both the stalwarts had a healthy relationship and shared the same ideological orientation.

References :-

1. Ghulam Hassan Khan, Freedom movement in Kashmir (1931-1940), Gulshan Books, Srinagar, 2009.
2. Walter R.Lawrence, The valley of Kashmir, Gulshan Books, Srinagar, 2005.
3. P.N.K Bamzai, Kashmir and power politics: from Lake success to Tashkent, Gulshan Books Srinagar, 2011 277International
4. Santosh Kaul, Freedom Struggle in Jammu and Kashmir, Anmol Publications, New Delhi, 1990.
5. Dr. Mohd. Amin Malik, The Role of National Conference in politics of Jammu and Kashmir, Tahze Publishers, Srinagar, 2010
6. Talveen Singh, Kashmir: A Tragedy of Errors, Viking, New Delhi, 1995,
7. Suresh K. Sharma,& S.R.Bakshi, Economic life of Kashmir, Anmol Publications, New Delhi, 1995,
8. Government of Jammu and Kashmir, Vision for governance, Jammu Kashmir National Conference 2008,
9. Abdul, Jabbar Ganai Kashmir and National Conference and Politics 1975-1980, Gulshan Publishers, Srinagar, 1984.
10. Ajit Battacharjee, Kashmir the wounded valley, UBS publishers Distributors Ltd. New Delhi. Alaster, Lamb Kashmir A Disputed Legacy, Oxford University Press, Lahore, 1991.
11. Alaster, Lamb Crisis in Kashmir, 1947-66. Rout ledge and Kegan Paul, U.K, 1996.
12. Alaster, Lamb Incomplete partition, U.K. Oxford books Herting Fordbury, 1997.
13. Andrew, Mukherjee Rise land Growth of Congress in India, Delhi, 1967.
14. B.N. Mullick My years with Nehru, Allied publishers, 1971.
15. B.P. Dr. Gajenderkar Kashmir Retrospect and Prospect, Bombay University, 1967.
16. Balraj, Puri Trumph and Tragedy of Indian Federalism, sterling Publishers Pvt. Ltd., New Delhi, 1981.
17. Balraj Madhok Kashmir the Storm Centre of the World, A. Gosh Publishers, U.S., 1992.
18. Bhagwan, Singh Political conspiracies of Kashmir, light and life Publishers, Delhi, 1973.
19. Government of Jammu and Kashmir, Address by N.N.Vohra, Governor of Jammu and Kashmir to the joint Session Legislature, 2012,
20. Government of Jammu and Kashmir, Address by N.N.Vohra, Governor of Jammu and Kashmir to the Joint Session Legislature, 2010,
21. Government of Jammu and Kashmir, Economic Survey, 2012,

22. Kashmir Today, Directorate of Information and Public Relations, Government of Jammu and Kashmir, Jan-Feb 2010,
23. Greater Kashmir, march 2014,
24. Kashmir Times June 2014,
25. Hind June 2013,
26. Greater Kashmir 23,March 2014
27. The Economic Times, March 4, 2014.
28. Government of Jammu and Kashmir, Five-Glorious Years of Government- Omar Abdullah leads the way, J&K National Conference,
29. Government of Jammu and Kashmir, Economic Survey, 2011-12,
30. Directorate of Economic and Statistics, J&K, Economic Survey 2008-09,
31. Government of Jammu and Kashmir, 5-Glorious years of Government –Omar Abdullah leads the way, J&K National Conference, 2014.

****

ग्लोबल वार्मिगं से कृषि उत्पादकता पर प्रभाव

रामरतन *

प्रस्तावना – पृथ्वी लगातार गर्म हो रही है 1880 से अभी तक हमारी पृथ्वी पर जमीन हिस्से और महासागर गर्म होते जा रहे हैं और इसकी गति भी बढ़ती जा रही है। ग्लोबल वार्मिगं का अर्थ है पृथ्वी का तापमान बढ़ जाना दरसल पृथ्वी सतह औसत तापमान में यह बढ़ोत्तरी ग्रीन हाउस गैसों के प्रभाव में होने की बजह से होता है इसे सामान्य शब्दों में हम यदि कहे कि ग्लोबल वार्मिगं का मतलब है कि पृथ्वी लगातार गर्म होती जा रही है जलवायु परिवर्तन से सूखा, बाढ़ और मौसम मिजाज बुरी तरह से बिगड़ा हुआ दिखाई देगा दुनियां भर मौसम में उथल – पुथल कहीं सुनामी, तो कहीं तूफानों का कहर, कहीं बर्फ बारी है ये निष्कर्ष अमेरिका के टेक्सास और इंग्लेड ड्यूक विश्वविद्यालय में चल रहे विभिन्न शोधों के निष्कर्ष के आधार पर पर्यावरण विदों और जीव विज्ञानियों निकाले हैं। दिनांक 07.12.2009 के कोपेन हेगनं में जलवायु परिवर्तन पर आरम्भ हुए संयुक्त राष्ट्र 15 वीं कांफ्रेंस के नतीजे विकासशील देशों की उम्मीदों पर खरे नहीं उतरे हैं। भारत, चीन, ब्राजील, दक्षिणी एशिया ने अमेरिका से राजनैतिक समझौता किया। जिससे गर्म हो रही धरती के तापमान से दो डिग्री की कमी लाने के लिए कार्बन उत्सर्जन में कटौती का इरादा जताया गया है।

कांफ्रेंस में कई चिन्तनीय सच सामने आए है वर्ष 2009 इतिहास का 5 वां सबसे गर्म साल रहा गर्म हो रही धरती का सबसे अधिक प्रभाव कृषि क्षेत्र पर पड़ रहा है। भारत के सन्दर्भ में यह चेतावनी अत्यधिक महत्वपूर्ण इसलिए भी है क्योंकि भारतीय अर्थव्यवस्था की आधारशिला कृषि है।

कोपेन हेगन में आयोजित कांफ्रेंस में कृषि वैज्ञानिक डॉ0 एम0एस0 स्वामी नाथन ने जलवायु परिवर्तन के भारतीय कृषि पर पड़ने वाले प्रभावों के बारे में कहा कि इससे 64 प्रतिशत लोगों पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ेगा जिसके जीवन यापन का साधन कृषि है और सबसे बड़ा डर खाद सुरक्षा से सम्बन्धित है ऐसा अनुमान है कि सूखे के कारण खरीफ की फसल में 7.5 प्रतिशत तक तथा मुख्य फसल चावल एवं अन्य आनाज दलहन, तिलहन में लगभग 19.7 प्रतिशत तक की कमी सम्भावना हो सकती है। भारत खाद उत्पादन में 5 प्रतिशत कमी की सम्भावना जी0डी0पी0 एक प्रतिशत तक प्रभावित करेगी।

ग्लोबल वार्मिगं से कृषि फसलों उत्पादन पर प्रभाव – एक अध्ययन के अनुसार यदि तापमान में 1 से 4 डिग्री सेल्सियस तक बृद्धि होती है तो भोज्य पदार्थो के उत्पादन में 30 प्रतिशत तक कमी आ सकती है जैसे भारत में चावल का वार्षिक औसत उत्पादन 90 मिलियन टन है। तापमान के बढ़ने से इसमें 2020 तक 6.7 प्रतिशत 2050 तक 15.1 प्रतिशन 2080 तक 28.2 प्रतिशत तक कमी आ सकती है। गैहूं के उत्पादन में 2020 तक 5.2 प्रतिशत, 2050 तक 15.6 प्रतिशत, 2080 तक 31.1 प्रतिशत, तथा आलू के उत्पादन में 2020 तक 3 प्रतिशत, 2050 तक 14 प्रतिशत तक कमी होने की सम्भावना है। सोयाबीन का उत्पादन 2070 तक 5.10 प्रतिशत, कम होने की सम्भावना है। जब की सभी खाद्यय पदार्थों की माँग में बृद्धि हो रही है इनके अलावा जलवायु परिवर्तन के कुछ और भी प्रभाव खाद्य पदार्थों होने हैं।

हिमालय के ग्लेशियर प्रतिवर्ष 30 मीटर की दर से घटने लगे हैं जिससे उत्तर भारत के राज्यों में खेती के लिए पानी का संकट पैदा हो जायेगा। आने वाले वर्षों में जलवायु में एवक इन दो बदलावों करीब 5 करोड़ भारतीय प्रभावित होगें इससे अधिकांश पर्यावरण शरणार्थी के रूप में स्थानान्तरण करेगें।

ग्लोबल वार्मिगं के स्रोत – भूमण्डलीय तापन से हरित गृह प्रभाव के लिए विभिन्न गैसों को उत्तरदायी माना जाता है इनमें पांच गैसों का योगदान होता है। जो निम्नलिखित है। इन्हें हरित गृह गैसे भी कहते हैं।

गैसें	भूमण्डलीय तापन में बृद्धि
कार्बनडाई आक्साइड	50 प्रतिशत
क्लोरोफ्लोरो कार्बन	14 प्रतिशत
मीथेन	18 प्रतिशत
ओजोन	12 प्रतिशत
नाइट्रस आक्साइड	6 प्रतिशत

मिट्टी पर प्रभाव – दुनिया भर के लोगों के जीवन का आधार मिट्टी है जिसके बलबूते कृषि भूमि पर खेती होती है और उसी पैदावार से सबका भरण पोषण होता है। विडम्बना यह है कि मानव इसी मृदा का दुश्मन बना हुआ है अपने ही हाथों से भविष्य के लिए मुश्किल खड़ी कर रहा है। संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट के अनुसार मृदा क्षरण को समय रहते नहीं रोका गया तो पूरी दूनियां में खाद्य संकट गहरा जायेगा। नतीजन 2050 तक दुनिया भर के 70 करोड़ से अधिक लोगों के अपनी जमीन से विस्थापन का खतरा होगा।

ग्लोबल वार्मिगं पर नियंत्रण एवं कृषि पर इसके प्रभाव को कम करने के उपाय – जलवायु परिवर्तन के समस्या का सामना करने के लिए युद्ध – स्तरीय तैयारी की जरूरत है। जलवायु परिवर्तन के कारण सूखा, बाढ़, महामारी, और कृषि उपज में कमी से जिस बड़े पैमाने पर मौत होने का अंदेशा है उतनी मौतें तो पृथ्वी पर अब तक हुए किसी भी युद्ध में में नहीं हुई। जलवायु परिवर्तन के बुरे प्रभावों से फसलों के बचाने के लिये हमें जल्दी ही विभिन्न उपायों को अपनाना होगा। ऐसी स्थिति में पानी की एक बूंद को भी व्यर्थ नहीं जाने देना है जल संरक्षण को रचनात्माक, जन–आन्दोलन का रूप देकर आम लोगों का योगदान प्राप्त करना सबसे बड़ी जरूरत है। इसके लिए हमें वाटर हार्वेस्टिगं के अलावा पानी को संग्रह करने के लिए विभिन्न

*शोधार्थी, विवेकानंद ग्रामोद्योग महाविद्यालय,दिव्यापुर, ओरैया (उ.प्र.) भारत

व्यवस्थाएं करनी होंगी। अत: प्रो0 स्वामीनाथन के अनुसार जिस प्रकार दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में स्व–सहायता समूह एवं सहकारी संगठन कार्य कर रहे हैं उसे प्रकार छोटे किसानों के लिए स्व–सहायता समूह आधारित कृषि जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप उत्पन्न फसलों की घटती उत्पदकता एवं खाद्यान्न संकट से बचने का उपाय है। तथा वृक्षारोपण करके ग्लोबल वार्मिंग की समस्या को रोका जा सकता है। जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप भारत पुन: खाद्यान्न पदार्थों की कमी के दौर में प्रवेश कर रहा है जबकि खाद्यान्न पदार्थों की कीमत विश्वस्तर पर बढ़ रही है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. रूहेलखण्ड भौगोलिक शोध पत्रिका अंक जुलाई 2015 आई0एस0एस0एन0 09768556
2. डॉ0 यूवी सिंह पर्यावरणीय भूगोर राजीव प्रकाशन मेरठ।
3. डॉ0 शिवानन्द गौतम डॉ0 औकार प्रसाद सताधन और पर्यावरण, रामप्रसाद एण्ड सन्स अन्यताल रोड़ आगरा।
4. डॉ0 अरूण रघुवंशी चन्द्र लेखा पर्यावरण प्रदुषण मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल।
5. गोपीनाथ श्रीवास्तव पर्यावरण प्रदुषण।
6. हमीदिया महाविद्यालय अर्थशास्त्र विभाग भोपाल मध्य प्रदेश।
7. टीम अमर उजाला।
8. होम इकोनॉमी इडस्ट्री ऑटो टेक।

****

हरिवंश राय बच्चन की मधुशाला में राष्ट्रभक्ति परक विविध आयाम

कमलसिंह भूरिया * डॉ. शहजाद कुरैशी **

प्रस्तावना - बच्चन जी ने राष्ट्रीय आन्दोलनों के दौरान उनका घर क्रांतिकारियों की शरण स्थली थी। भगवती चरण वर्मा की विधवा क्रांतिकारी दुर्गा भाभी अपने पुत्र सुशील के साथ हरिवंश राय बच्चन के घर तीन दिन ठहरी थी। बच्चन स्वं भी राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़े रहे। गांधी जी की डांडी यात्रा के दौरान बच्चन जी ने गांधी जी की प्रेरणा से खद्दर प्रचारक टीम बनाई थी।

'भारत' ही पावन मधुशाला है। हिमालय की उत्तुंग हिमाच्छादित पर्वत श्रेणियाँ ही अंगूर लता के समान फैली है। हिमजल ही हाला है। चंचल नदियाँ साकी है। जल से भरी नदियाँ प्याला है और लहलहाते खेत ही भारत भूमि की मधुशाला है।

इस प्रकार कवि बच्चन ने हाला, साक़ी, प्याला और मधुशाला के रूपक के द्वारा विराट् भारतभूमि की कल्पना की है। इन प्रतीकों के यमाध्यम से भी बच्चन ने राष्ट्रीय भक्ति का परिचय दिया है।

स्वतंत्रता के लिए बलिदान देने वाले वीर सपूतों के ह्रदय की रक्तियां ही हाला है। वीर सेनानियों के शीश ही प्याले है। भारत माता ही साक़ी हैं और स्वतंत्रता की बलिदेवी पर समर्पित करने वाली परी कलिका ही मधुशाला है।

इस प्रकार बच्चन जी ने स्वतंत्रता की बलिवेदी पर अपने शीश चलाने के लिए आतुर स्वाधीन सेनानी के रूप में मधुशाला के हाला, प्याला और साक़ी का रूपक व्यक्त किया है।

वस्तुत: परमात्मा तो एक ही है। उसे ईश्वर कहो या अल्ला कहों। केवल नाम भिन्न-भिन्न होने से वह अलग-अलग नहीं होता है। एक ही ईश्वर या अल्ला ने सारा संसार बनाया है। सारी सृष्टि का यह एक ही निर्माता है। वही पाप-पुण्य का निर्णय करता है।

मुसलमान और हिंदू दो है लेकिन उनका प्याला एक ही है। दोनों की साधना तो एक ही है। लेकिन बाह्य उपकरण होने से उन्हें भेद करना गलत है। मंदिर, मस्जिद दोनों उपासना करने जाते है पर वास्तविक भक्ति तो वे कर ही नहीं पाते।

मधुशाला ही सच्ची ईश्वर साधना है। उसी में मंदिर और मस्जिद की भेंट जब तक नहीं मिलती जब तक वह सही ईश्वर भक्ति का मार्ग नहीं अपनाता।

पूर्व में जातियों में छुआछूत की भावना विद्यमान थी। अभी भी कुछ लोग जाति के आधार पर छुआछूत का पालन करते हैं। लेकिन यह भावना दूषित आधार पर बनी है। बच्चन जी ने 'मधुशाला' में छुआछूत की भावना रखना हेय माना है।

कवि बच्चन 'मधुशाला' में इसी छुआछूत में कहते है-

'कभी नहीं सुन पड़ता, 'इससे हा, छू दी मेरी हाला,
कभी न कोई कहता, 'उसने जूठा कर डाला प्याला,
सभी जाति के लोग हाँ पर साथ बैठ कर पीते यहां
सौ सुधारकों का करती है काम अकेली मधुशाला।।'[1]

इस यमुक्तक में कवि बच्चन ने छुआछूत जैसी भावना को अस्वीकार किया है। जैसे सभी पीने वाले लोग बिना किसी भेदभाव के एक साथ बैठ कर पीते हैं। मानों मधुशाला सौ सुधारकों का काम अकेली करती है।

'व्यर्थ बन जाते हो हरिजन, तुम तो मधुशाला ही अच्छे,
ठुकराते हरि मंदिर वाले, पलक बिछाती मधुशाला।।'[2]

गांधी ने अछूतों के लिए 'हरिजन' शब्द का प्रोग किया था जिसका अर्थ था 'हरि के लोग', (भगवान् के लोग) लेकिन हरि मंदिर वाले लोग उन हरिजनों को ठुकराते हैं।

उमर ख़ैयाम ने भी काल के इस अनिश्चित प्रसंगों का वर्णन किया है-

'भविष्त के भय जाएँ भाग
भूत के दारुण दुख हो दूर
अरे, कल दूर, एक क्षण बाद
काल का मैं हो सकता ग्रास
क्रूर-कटु काल-कर्म के, हाथ,
हो गए कितने शीघ्र शिकार।
न वे पी पाए प्याले चार,
गया उनका जीवन- मधु सूखा।'[3]

मधुशाला व्यर्थ ही कभी उसे मृग जल बनकर मरु में दौड़ाती है। याने व्यक्ति को प्राप्त होना था वह उसे नहीं मिलता। इसलिए वह आशा का रूप दिखाती है, लेकिन दूसरे ही क्षण उसे निराशा में बदल देती है। इस प्रकार जीवन में जो पाने की अभिलाषा थी वह दुर्लभ हो जाती है।

जीवन में चलते जाना ही एक मात्र व्यक्ति का लक्ष्य होता है। किसी को भी यह पता नहीं चल पाता कि व्यक्ति को इस राह पर चलना है, जिससे वह अपने लक्ष्य तक ठीक-ठीक पहुँच सकेगा, क्योंकि जीवन का पथ निश्चित नहीं है।

चलते-चलते यह तय नहीं किया जा सकता है कि वह और कितने दूर उसे चलना है। और चलने-चलने में ही जीवन का बहुत कुछ हिस्सा व्यतीत हो जाता है ओर वह नहीं समझ पाता है कि उसे कहाँ तक चलना है? कहाँ है उसके जीवन को पाने का सही लक्ष्य क्या है? इसलिए व्यक्ति किंकर्तव्य विमूढ़ हो कर अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँच पाता। इसलिए कवि कहता है-

'चलने ही चलने कितना, जीवन हा बिता डाला

*शोधार्थी (हिन्दी साहित्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
**प्राध्यापक,शासकीय महाविद्यालय, मुंदी, खण्डवा (म.प्र.) भारत

दूर अभी है पर कहता है हर पथ बता लाने वाला[4]

इसलिए हर व्यक्ति कहता है कि-

किंकर्तव्य विमूढ़ मुझे कर, दूर खड़ी है मधुशाला।'

देश में अनेक सम्प्रदाय है। अनेक यमतमतान्तर है, किन्तु इन विविधताओं के बावजूद देश में वैचारिक दृष्टि से व भावनात्मक दृष्टि से एकात्मता की बात होना आवश्क है।

'धर्म ग्रंथ सब जला चुकी है, जिसके अंतर की ज्वाला।
मंदिर, मस्जिद, गिरजे-सबको, तोड़ चुका जो मत वाला
पंडित, मोमिन, पादरियों के यदों को जो काट चुका
कर सकती है आज उसी का स्वागत मेरी मधुशाला।।'[5]

सारे धर्म ग्रंथ ईश्वर के स्वरूप की चर्चा करने के बावजूद धर्म ग्रंथ के आधार पर आम लोगों को साम्प्रदायिक स्वरूप देने का धार्मिक लोग प्रास करते रहते हैं। इसलिए कवि ने मंदिर, मस्जिद और गिरजाघर सम्प्रदाय विभेद की चर्चा करते हैं। इसलिए जो विभेदात्मक धर्म स्वरूप को सच्चा ईश्वर भक्त इन सबके विवादों को विराम कर देता है।

इसलिए कवि ने जीवन को क्षण भंगुर माना है। यह संसार ही ऐसा है जहाँ जो जन्म लेता है वही मृत्यु को भी पाता है।

'पले-सा गढ़ हमें किसी ने, भर दी जीवन की हाला
नशा न भाया, ढाला हमने, ले, लेकर मधु का प्याला
जब जीवन का दर्द उभरता उसे दबाते प्याले से
जगती के पहले साकी से जूझ रही है मधुशाला।'[6]

सृष्टि ने, या परमात्मा ने देह रूपी पले के रूप में मनुष्य का निर्माण किया। और जीवन के रूप में विधाता वे उस देह रूपी प्याले में हाला उड़ेल दी है।

लेकिन विधाता के दिये हुए जन्म को उसे संभवत: रुचिकर प्रतीत नहीं हुआ, इसलिए उसने सांसारिक भावनाओं का मधु जीवन रूपी हाला में डाल दिया।

आगे भी कवि बच्चन भी 'मधुशाला' के प्रतीकों का संकेत देते हुए कहते है कि-'बादल अपना अपनापन अगणित बूंदों में, बूंदे अपना अपना पन जलधाराओं में और नदियाँ अपना अपनापन समुद्र में खोने को आतुर है और वह समुद्र भी हर सम' विक्षुब्ध रह कर किसी ऐसे की खोज कर रहा है, जिसके चरणों में वह अपनी सम्पूर्ण जल राशि अर्ध्य रूप में अर्पित करके रिक्त से हो जाए। पृथ्वी अपना अपनापन अगणित वृक्षों-बेलि-पौधों में, वृक्ष, बेली-पौधे अपना अपनापन पुष्प और कलियों में, पुष्प और कलियाँ अपना अपनापन सौरभ-समीर में मिश्रित करने को आकुल है- और वह समीर भी तो निरन्तर चंचल रह कर किसी ऐसे को ढूंढ रहा है, जिसके अंचल को एक बार केवल एक बार लहरा कर वह उसी में विलुप्त हो गये थे।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बच्चन- मधुशाला।
2. बच्चन-मधुशाला।
3. बच्चन- ख़ैयाम की मधुशाला।
4. बच्चन- मधुशाला।
5. बच्चन- मधुशाला।
6. बच्चन-'मधुशाला।

****

मध्यप्रदेश में आदिवासी विकास परियोजनाओं का क्रियान्वयन एवं उपलब्धियों का मूल्यांकन (संदर्भ: प्रधाान मंत्री आवास योजना झाबुआ जिले में विगत पांच वर्षों की उपलब्धियां)

डॉ. सुनील कुमार शर्मा * शशि सिसौदिया **

प्रस्तावना - भारतीय संविधान में सदियों से पीड़ित, शोषित व पिछड़े हुए लोगों, विशेष रूप से आदिवासी जनजातियों के विकास व उत्थान की समुचित व्यवस्था की गई है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात इस वर्ग को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने व वर्गहीन, शोषणरहित- व भयमुक्त समाज की स्थापना के उद्देश्य से देश में अनेकानेक योजनाएँ चलाई गई हैं। मूलरूप से योजना बेघर और जीर्णशीर्ण एवं कच्चे मकानों में रह रहे गरीब परिवारों के लिए सार्वजनिक आवास योजना है, जिसमें भूमिहीन गरीबों को मकानों के लिए जमीन उपलब्ध कराने वाला घटक भी शामिल है। यह योजना गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले (बी.पी.एल.) परिवारों को सरकार से कुछ वित्तीय और तकनिकी सहायता उपलब्ध करके उन्हें अपने मकान बनाने के कार्य में मदद करने के लिए बनाई गई है। बी.पी.एल. परिवारों के निर्धारण के लिए समय - समय पर सुझाए जाने वाले मानदंडों का अनुपालन करते हुए, इन परिवारों का निर्धारण ग्राम सभाओं के माध्यम से समदाय दवारा किया जाता है। मैदानी क्षेत्रों, पर्वतीय राज्यों तथा समेकित कार्य योजना जिलों सहित दुर्गम क्षेत्रों में आई.ए.वाई. मकान की लागत संलंग्न अनुसूची के अनुसार होगी। दुर्गमता और प्रतिकूल भौगोलिक, मौसमी एवं भूवैज्ञानिक परिस्थितियों जैसे कारणों से निर्माण कार्य की लागत काफी बढ़ जाती है।

सामान्य परिचय - प्रधान मंत्री आवास योजना ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा से नीचे जीवन - यापन करने वाले आवासहीन परिवारों को आवास सुविधा दिलवाना इस योजना का मुख्या उद्देश्य है।

योजना का स्वरुप - योजना केंद्र प्रवर्तित है जिसमें 75 प्रतिशत राशि भारत सरकार द्वारा तथा 25 प्रतिशत राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराई जाती है। जिलेवार राशि का निर्धारण भारत सरकार द्वारा किया जाता है। आवासों का निर्माण स्वयं हितग्राही ग्राम पंचायत द्वारा उपलब्ध कराई गई राशि से किया जाता है। आवास का कुर्सी क्षेत्र (कारपेट क्षेत्र) 20 वर्गमीटर होना आवश्यक है। योजना के संसाधानों का 60 प्रतिशत अनुसूचित जाती और अनुसूचित जनजाति, 40 प्रतिशत सामान्य के लिये है। इसमें से 3 प्रतिशत नि:शक्तजनों के आवासों के लिए एवं 15 प्रतिशत अल्पसंख्यकों के लिए उपयोग करने का प्रावधान है। इस योजना मैं प्राथमिकता महिला तथा विकल्प के तौर पर संयुक्त पति-पत्नी के नाम आवास के साथ स्वच्छ शौचालयऔर धुंआ रहित चूल्हे का निर्माण भी अनिवार्य है।

पात्र हितग्राही - ग्रामीण क्षेत्रों के गरीबी रेखा से नीचे जीवन - यापन करने वाले आवासहीन परिवार।

हितग्राही चयन प्रक्रिया - योजना के तहत हितग्राहियों का चयन ग्राम सभा द्वारा किया जाएगा मुक्त बंधुआ मजदूर, अजा/अजजा परिवार, युदधा में मारे गए सैनिक बालों की विधावाओं, विकलांग एवं मंदबुद्धि व्यक्ति, एक्स सर्विस मैन एवं अर्धा सैनिक बालों के सेवानिवृत सदस्य, विकास परियोजना के विस्थापित परिवार, प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ, भूकंप आग आदि से पीड़ित परिवार को प्राथमिकता दी जायेगी। संपर्क- स्थानीय स्तर पर ग्राम पंचायत के सरपंच और जिला स्तर पर मुख्य कार्यपालन अधिकारी जिला पंचायत।

तालिका क्र. 1,2,3,4,5 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

उपलब्धियाँ: झाबुआ ब्लाक में आवासहीन परिवारों को आवास सुविधा दिलवाना इस योजना का मुख्य उद्देश्य है जिसने झाबुआ ब्लाक में सत्र 2014-15 में कुल 1657 हितग्राहियों हेतु कुल आवंटित 1657 के लक्ष्य में से 785 आवासों को पर्ण कर लिया गया था तथा सत्र 2015-16 हेतु 1454 हितग्राहियो के आवासों को पूर्ण करने का लक्ष्य प्राप्त हआ था जिसमें से 724 आवासों को पूर्ण किया गया वित्तीय वर्ष 2016-17 में 1729 हितग्राहियों हेतु झाबुआ ब्लाक में प्रधानमंत्री आवासों का लक्ष्य निर्धारित किया गया था जिसमें से 1532 आवास पूर्ण हुए एवं सत्र 2017-18 हेत् 1657 आवास पूर्ण करने का लक्ष्य था जिसमें से 1414 हितग्राहियो हेतु आवास कार्य पूर्ण किया गया वहीं सत्र 2018-19 हेतु 2661 हितग्राहियों हेतु आवास पूर्ण करने का लक्ष्य रखा गया था इस सत्र में सर्वाधिक 1572 हितग्राहियों हेत् आवास कार्य पूर्ण कर झाबुआ ब्लाक में अधिकतम आदिवासी हितग्राहियों को इस योजना का लाभ पहुंचाया गया।

ग्राफ क्र1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

मेघनगर ब्लाक में सत्र 2014-15 में कुल 843 हितग्राहियों हेतु कुल आवंटित 843 के लक्ष्य में से 234 आवासों को पूर्ण कर लिया गया था तथा सत्र 2015-16 हेतु 1426 हितग्राहियों के आवासों को पूर्ण करने का लक्ष्य प्राप्त हुआ था जिसमें से 667 आवासों को पूर्ण किया गया वित्तीय वर्ष 2016-17 में 2377 हितग्राहियों हेतु मेघनगर ब्लाक में प्रधानमंत्री आवासों का लक्ष्य निर्धारित किया गया था जिसमें से 2132 आवास पूर्ण हुए एवं सत्र 2017-18 हेतु 629 आवास पूर्ण करने का लक्ष्य था जिसमें से 534 हितग्राहियों हेतु आवास कार्य पूर्ण किया गया वहीं सत्र 2018-19 हेतु

*प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह, खरगोन (म.प्र.) भारत
**शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

2036 हितग्राहियों हेतु आवास पूर्ण करने का लक्ष्य रखा गया था इस सत्र में सर्वाधिक 1428 हितग्राहियों हेतु आवास कार्य पूर्ण कर मेघनगर ब्लाक में अधिकतम आदिवासी हितग्राहियों को इस योजना का लाभ पहुँचाया गया

ग्राफ क्र 2, 3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

पेटलावद ब्लाक में सत्र 2014-15 में कुल 650 हितग्राहियों हेतु कुल आवंटित 650 के लक्ष्य में से 635 आवासों को पूर्ण कर लिया गया था तथा सत्र 2015-16 हेतु 1791 हितग्राहियों के आवासों को पूर्ण करने का लक्ष्य प्राप्त हुआ था जिसमें से 908 आवासों को पूर्ण किया गया वित्तीय वर्ष 2016-17 में 1826 हितग्राहियों हेतु पेटलावद ब्लाक में प्रधानमंत्री आवासों का लक्ष्य निर्धारित किया गया था जिसमें से 1537 आवास पूर्ण हए एवं सत्र 2017-18 हेतु 562 आवास पूर्ण करने का लक्ष्य था जिसमें से 435 हितग्राहियों हेतु आवास कार्य पूर्ण किया गया वहीं सत्र 2018-19 हेतु 650 हितग्राहियों हेत आवास पर्ण करने का लक्ष्य रखा गया था इस सत्र में 211 हितग्राहियों हेतु ही आवास कार्य पूर्ण कर पेटलावद ब्लाक में अधिकतम आदिवासी हितग्राहियों को इस योजना का लाभ पहुँचाया गया

ग्राफ क्र 4 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आवासहीन परिवारों को आवास सुविधा दिलवाना इस योजना का मुख्य उद्देश्य है जिसने रामा ब्लाक में सत्र 2014-15 में कुल 1187 हितग्राहियों हेतु कुल आवंटित 1187 के लक्ष्य में से 716 आवासों को पूर्ण कर लिया गया था तथा सत्र 2015-16 हेत् 1193 हितग्राहियों के आवासों को पूर्ण करने का लक्ष्य प्राप्त हुआ था जिसमें से 601 आवासों को पूर्ण किया गया वित्तीय वर्ष 2016-17 में 2693 हितग्राहियों हेतु रामा ब्लाक में प्रधानमंत्री आवासों का लक्ष्य निर्धारित किया गया था जिसमें से 2430 आवास पूर्ण हुए एवं सत्र 2017-18 हेतु 1033 आवास पूर्ण करने का लक्ष्य था जिसमें से 891 हितग्राहियों हेत् आवास कार्य पूर्ण किया गया वहीं सत्र 2018-19 हेतु 1563 हितग्राहियों हेतु आवास पूर्ण करने का लक्ष्य रखा गया था इस सत्र में 926 हितग्राहियों हेतु ही आवास कार्य पूर्ण कर रामा ब्लाक में अधिकतम आदिवासी हितग्राहियों को इस योजना का लाभ पहुंचाया गया।

ग्राफ क्र 5 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आवासहीन परिवारों को आवास सुविधा दिलवाना इस योजना का मुख्य उद्देश्य है जिसने राणापुर ब्लाक में सत्र 2014-15 में कुल 1267 हितग्राहियों हेतु कुल आवंटित 1267 के लक्ष्य में से 710 आवासों को पूर्ण कर लिया गया था तथा सत्र 2015-16 हेतु 936 हितग्राहियों के आवासों को पूर्ण करने का लक्ष्य प्राप्त हआ था जिसमें से 462 आवासों को पूर्ण किया गया वित्तीय वर्ष 2016-17 में 1263 हितग्राहियों हेतु राणापुर ब्लाक में प्रधानमंत्री आवासों का लक्ष्य निर्धारित किया गया था जिसमें से 940 आवास पूर्ण हुए एवं सत्र 2017-18 हेतु 1175 आवास पूर्ण करने का लक्ष्य था जिसमें से 910 हितग्राहियों हेत आवास कार्य पूर्ण किया गया वहीं सत्र 2018-19 हेत् 1169 हितग्राहियों हेतु आवास पूर्ण करने का लक्ष्य रखा गया था इस सत्र में 300 हितग्राहियों हेत् ही आवास कार्य पूर्ण कर राणापुर ब्लाक में अधिकतम आदिवासी हितग्राहियों को इस योजना का लाभ पहुँचाया गया।

ग्राफ क्र 6 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

उपलब्धियाँ: झाबुआ जिले आवासहीन परिवारों को आवास सुविधा दिलवाना इस योजना का मुख्य उद्देश्य है जिसने झाबुआ जिले में सत्र 2014-15 में कुल 7882 हितग्राहियों हेतु कुल आवंटित 7882 के लक्ष्य में से 3767 आवासों को पूर्ण कर लिया गया था व 4115 हितग्राहियों के आवास का कार्य अपूर्ण था तथा सत्र 2015-16 हेतु 8273 हितग्राहियों के आवासों को पूर्ण करने का लक्ष्य प्राप्त हुआ था जिसमें से 4106 आवासों को पूर्ण किया गया व 4111 हितग्राहियों के आवास का कार्य अपूर्ण था वित्तीय वर्ष 2016-17 में सर्वाधिक 12086 हितग्राहियों हेतु झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री आवासों का लक्ष्य निर्धारित किया गया था जिसमें से 10376 आवास पूर्ण हए व 1708 हितग्राहियों के आवास का कार्य अपूर्ण था एवं सत्र 2017-18 हेतु 5762 आवास पूर्ण करने का लक्ष्य था जिसमें से 4771 हितग्राहियों हेतु आवास कार्य पूर्ण किया गया व 991 हितग्राहियों के आवास का कार्य अपूर्ण था वहीं सत्र 2018-19 हेतु 10210 हितग्राहियों हेत् आवास पूर्ण करने का लक्ष्य रखा गया था इस सत्र में 6023 हितग्राहियों हेतु आवास कार्य पूर्ण किया गया व 6886 हितग्राहियों के आवास का कार्य अपूर्ण था इस तरह प्रधानमंत्री आवास योजना द्वारा झाबुआ जिले में अधिकतम आदिवासी हितग्राहियों को इस योजना का लाभ पहुँचाया गया

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सूचना एवं प्रकाशन मंत्रालय, नई दिल्ली
2. कुरूक्षेत्र
3. रिसर्च लिंक, सेन्ट्रल लाईब्रेरी, दे.अ.वि.वि., इंदौर
4. रिसर्च रिवॉल्यूशन, सेन्ट्रल लाईब्रेरी, दे.अ.वि.वि., इंदौर
5. म.प्र. पंचायीका, सेन्ट्रल लाईब्रेरी, दे.अ.वि.वि., इंदौर

तालिका क्र. 1: प्रधान मंत्री आवास योजना की झाबुआ जिले की वित्तीय वर्ष 2014-15 की वर्षवार जानकारी

क्र.	ब्लॉक	लक्ष्य	राशि (किशत)				लक्ष्य पूर्ण	लक्ष्य अपूर्ण	प्रतिशत	हितग्राही
			प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ				
1	झाबुआ	1657	427	582	602	785	785	872	52.62	1657
2	मेघनगर	843	101	142	204	234	234	609	72.24	843
3	पेटलावद	1022	350	416	515	635	635	387	37.86	1022
4	रामा	1187	536	685	714	716	716	471	39.67	1187
5	रानापुर	1267	416	509	656	710	710	557	43.96	1267
6	थांदला	1906	495	548	639	687	687	1219	63.95	1906
	कुल	**7882**	**2325**	**2882**	**3330**	**3767**	**3767**	**4115**	**52.20**	**7882**

तालिका क्र. 2 : प्रधान मंत्री आवास योजना की झाबुआ जिले की वित्तीय वर्ष 2015-16 की वर्षवार जानकारी।

क्र.	ब्लॉक	लक्ष्य	राशि (किशत)				लक्ष्य पूर्ण	क्र.प्रथम	ब्लॉक द्वितीय	लक्ष्य
			प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ				
1	झाबुआ	1454	524	589	673	724	724	730	49.79	1454
2	मेघनगर	1426	485	567	619	667	667	713	46.77	1426
3	पेटलावद	1791	647	593	715	908	908	883	50.69	1791
4	रामा	1193	391	482	573	601	601	592	50.37	1193
5	रानापुर	937	216	321	396	462	462	465	49.30	937
6	थांदला	1472	584	695	716	744	744	728	50.54	1472
	कुल	**8273**	**2847**	**3247**	**3692**	**4106**	**4106**	**4111**	**49.57**	**8273**

तालिका क्र. 3: प्रधान मंत्री आवास योजना की झाबुआ जिले की वित्तीय वर्ष 2016-17 की वर्षवार जानकारी।

क्र.	ब्लॉक	लक्ष्य	राशि (किशत)				लक्ष्य पूर्ण	लक्ष्य अपूर्ण	प्रतिशत	हितग्राही
			प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ				
1	झाबुआ	1729	1683	1644	377	1532	1532	197	88.61	1729
2	मेघनगर	2377	2314	2248	979	2132	2132	245	89.69	2377
3	पेटलावद	1826	1804	1743	500	1537	1537	289	84.17	1826
4	रामा	2693	2592	2492	913	2430	2430	263	90.23	2693
5	रानापुर	1263	1173	1064	365	940	940	323	74.43	1263
6	थांदला	2196	2155	2024	751	1805	1805	391	82.19	2196
	कुल	**11721**	**11215**	**3885**	**10376**	**10376**	**1708**	**85.87**	**12084**	

तालिका क्र. 4: प्रधान मंत्री आवास योजना की झाबुआ जिले की वित्तीय वर्ष 2017-18 की वर्षवार जानकारी।

क्र.	ब्लॉक	लक्ष्य	राशि (किशत)				लक्ष्य पूर्ण	लक्ष्य अपूर्ण	प्रतिशत	हितग्राही
			प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ				
1	झाबुआ	1657	1627	1577	745	1414	1414	243	85.33	1657
2	मेघनगर	629	610	582	404	534	534	95	84.90	629
3	पेटलावद	562	550	516	315	435	435	127	77.40	562
4	रामा	1033	1001	936	672	891	891	142	86.25	1033
5	रानापुर	1175	1081	1009	716	910	910	265	77.45	1175
6	थांदला	706	695	648	439	587	587	119	83.14	706
	कुल	**5564**	**5265**	**3291**	**4771**	**4771**	**991**	**82.80**	**5762**	

तालिका क्र. 5 : प्रधान मंत्री आवास योजना की झाबुआ जिले की वित्तीय वर्ष 2018-19 की वर्षवार जानकारी।

क्र.	ब्लॉक	लक्ष्य	राशि (किशत)				लक्ष्य पूर्ण	लक्ष्य अपूर्ण	प्रतिशत	हितग्राही
			प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ				
1	झाबुआ	2661	2281	2011	1235	1572	1572	1089	59.08	2661
2	मेघनगर	2036	1860	1693	1381	1428	1428	608	70.14	2036
3	पेटलावद	650	450	348	209	211	211	439	32.46	650
4	रामा	1563	1255	1091	859	926	926	835	59.37	1563
5	रानापुर	1169	811	670	496	300	300	809	47.90	1169
6	थांदला	2131	1993	1681	1263	1324	1324	1187	62.13	2451
	कुल	8648	7494	3443	6023	6023	6886	38.99	10210	

ग्राफ क्र 1

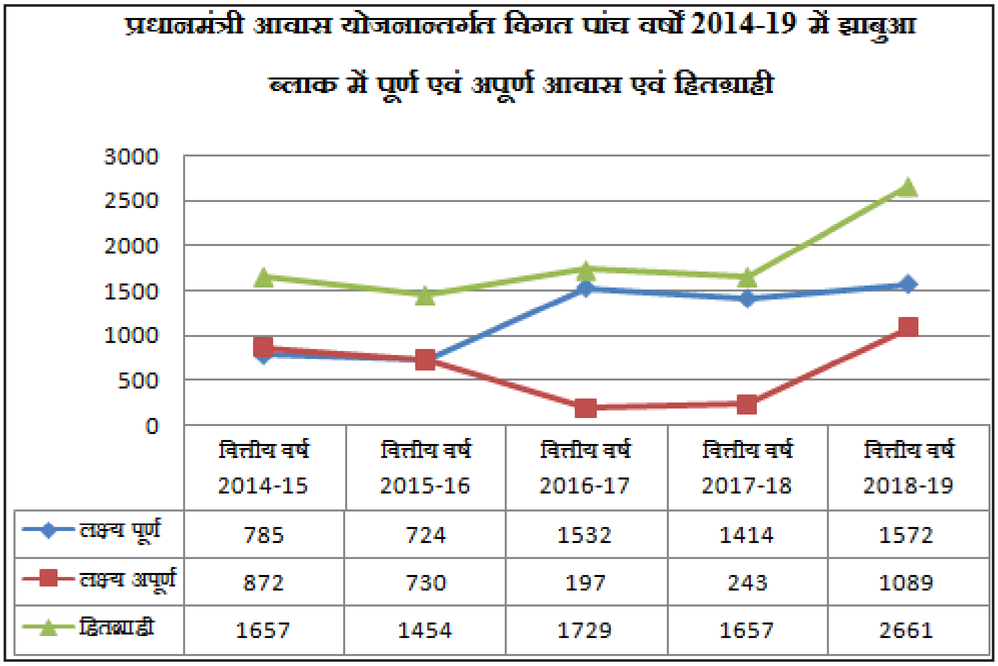

ग्राफ क्र 2

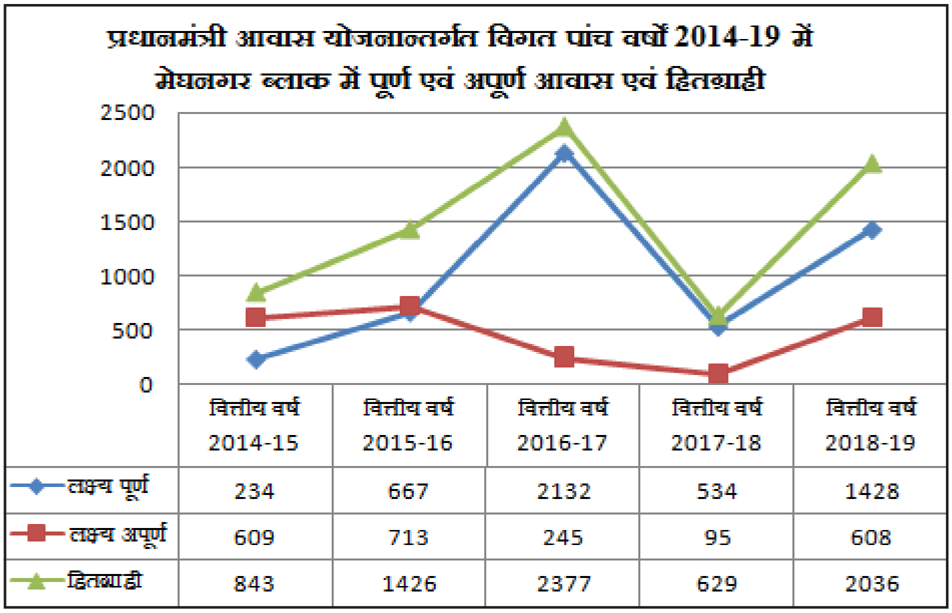

ग्राफ क्र 3

प्रधानमंत्री आवास योजनान्तर्गत विगत पांच वर्षो 2014-19 में पेटलावद ब्लाक में पूर्ण एवं अपूर्ण आवास एवं हितग्राही

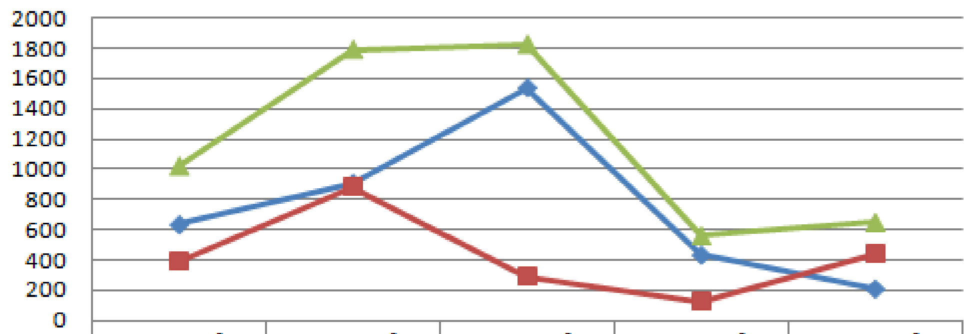

	वित्तीय वर्ष 2014-15	वित्तीय वर्ष 2015-16	वित्तीय वर्ष 2016-17	वित्तीय वर्ष 2017-18	वित्तीय वर्ष 2018-19
लक्ष्य पूर्ण	635	908	1537	435	211
लक्ष्य अपूर्ण	387	883	289	127	439
हितग्राही	1022	1791	1826	562	650

ग्राफ क्र 4

प्रधानमंत्री आवास योजनान्तर्गत विगत पांच वर्षो 2014-19 में रामा ब्लाक में पूर्ण एवं अपूर्ण आवास एवं हितग्राही

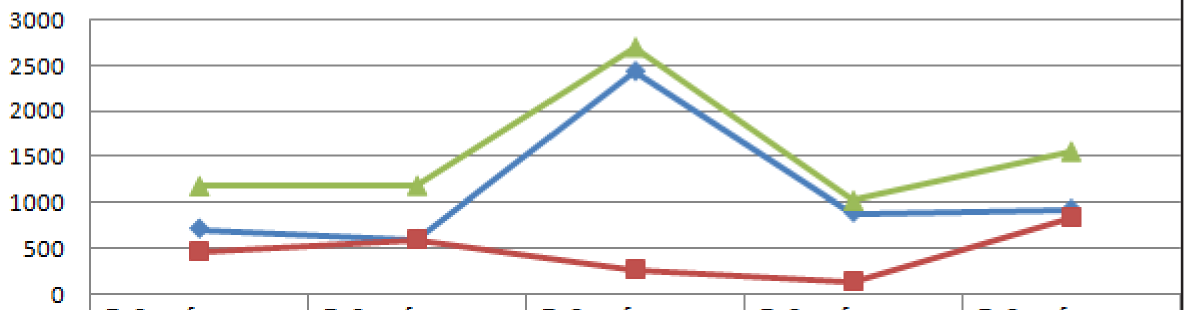

	वित्तीय वर्ष 2104-15	वित्तीय वर्ष 2105-16	वित्तीय वर्ष 2106-17	वित्तीय वर्ष 2107-18	वित्तीय वर्ष 2108-19
लक्ष्य पूर्ण	716	601	2430	891	926
लक्ष्य अपूर्ण	471	592	263	142	835
हितग्राही	1187	1193	2693	1033	1563

ग्राफ क्र 5

प्रधानमंत्री आवास योजनान्तर्गत विगत पांच वर्षों 2014-19 में राणापुर ब्लाक में पूर्ण एवं अपूर्ण आवास एवं हितग्राही

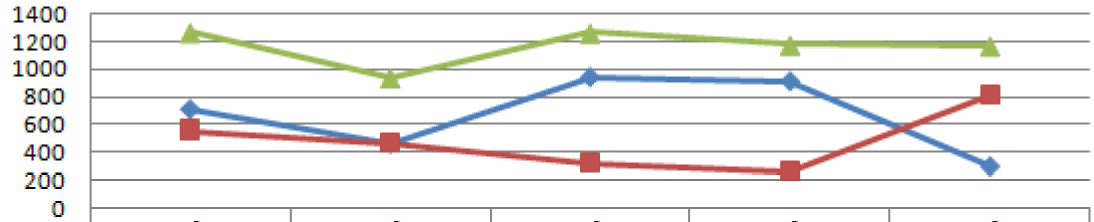

	वित्तीय वर्ष 2014-15	वित्तीय वर्ष 2015-16	वित्तीय वर्ष 2016-17	वित्तीय वर्ष 2017-18	वित्तीय वर्ष 2018-19
लक्ष्य पूर्ण	710	462	940	910	300
लक्ष्य अपूर्ण	557	465	323	265	809
हितग्राही	1267	937	1263	1175	1169

ग्राफ क्र 6

प्रधानमंत्री आवास योजनान्तर्गत विगत पांच वर्षों 2014-19 में झाबुआ जिले में पूर्ण एवं अपूर्ण आवास एवं हितग्राही

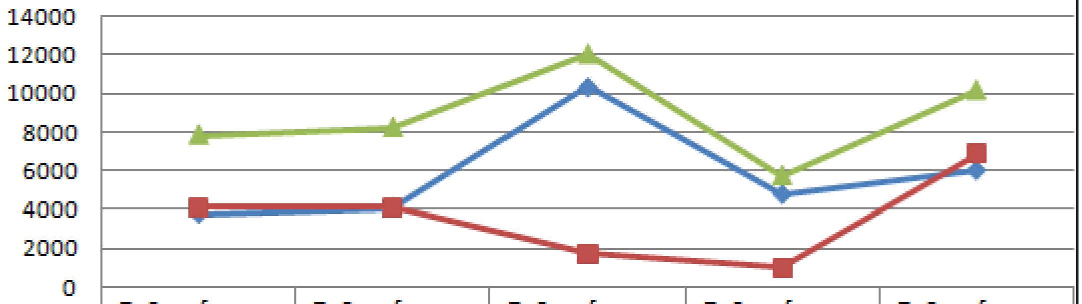

	वित्तीय वर्ष 2014-15	वित्तीय वर्ष 2015-16	वित्तीय वर्ष 2016-17	वित्तीय वर्ष 2017-18	वित्तीय वर्ष 2018-19
लक्ष्य पूर्ण	3767	4106	10376	4771	6023
लक्ष्य अपूर्ण	4115	4111	1708	991	6886
हितग्राही	7882	8273	12084	5762	10210

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Pollution status of Water Quality Parameters in selected Stretch of Narmada River, Madhya Pradesh

Sunil kumar Kakodiya* Dr. Sudhir Mehra**

Abstract - Drinking water needs to be protected from pollution and biological contamination. Suitability of water for drinking and irrigation purposes can be determined by various physico-chemical parameters. Narmada river water samples were collected from different area in Hoshangabad region and analysed for 10 water quality parameters viz. pH, Electrical Conductivity, Alkalinity, Total dissolved solid, Chlorides, Total hardness, Calcium hardness, Magnesium hardness and nitrates. On comparing results it was found that most of the parameters analyzed have shown that they are within the permissible limits for drinking water as prescribed by Bureau of Indian Standards (BIS). The pH values ranges from 7.3 to 9.6 which is within the limit prescribed by BIS. The low pH does not cause any harmful effect. EC values varied between 123 to 415 µ mho/cm. The alkalinity values ranges from 22 to 62 mg/l. Calcium and magnesium content in the water present 22.4 to 64.0 mg/l and 12.2 to 38.0 mg/l respectively. The nitrate concentration in ground water ranged between 0.123 to 0.896 mg/l. The TDS values ranges from 108 to 275 ppm which is within the permissible limit of BIS.
Keywords: Narmada River, water quality, Turbidity, Total alkalinity, Total hardness, TDS, Electrical Conductivity, Chloride.

Introduction - Water is one of the precious natural resource of our planet. Groundwater is an important natural source of water supply all over the world. Its use in irrigation, industries and domestic usage continues to increase where perennial surface water source are absent. All living organisms on the earth need water for their survival and growth [1]. The quality of groundwater may depend on geology of particular area and also vary with depth of water table and seasonal changes and is governed by the extent and composition of dissolved salts depending upon source of the salt and soil subsurface environment. The quality of water usually described by its physical, chemical and biological characteristics [2-4] Various physico-chemical parameters like pH, turbidity, alkalinity, total hardness, total dissolved solid, calcium, magnesium, nitrate have a important role in determining the portability of drinking water. The main purpose of analyzing physical, chemical and microbiological characteristics of water is to determine its nutrient status. Since, the water contains dissolved and suspended materials in various proportions, its physical and chemical characteristics differ along with its biological characteristics. Any change in the natural water quality may disturb the equilibrium system and would become unfit for various uses [5].The aim of the present study is an attempt to investigate the physico- chemical parameters of groundwater in Narmada River of Hoshangabad region.

MATERIALS AND METHODS - The Narmada river is the largest west flowing river of the country which originates from an elevation of 1051 m in Maikal highlands near Amarkantak under Anuppur district (M.P) at 22^0 40'N latitude and 81^0 45'E longitude. The Narmada river flows through the main districts of Shahdol, Mandla, Jabalpur, Narsinghpur, Hoshangabad, Khandwa and Khargone and covers 1077 km in M.P. Subsequently, it forms common boundary between states of Maharashtra and M.P. and Maharashtra and Gujarat for the following 35 and 39 km respectively. The last leg of 161 km is exclusively in the state of Gujarat. The river loses its altitude by 996.5 m and enters Gujarat State at an elevation of 54.5 m. During the study sampling was conducted at five locations between Sakatpur and Anvalighat (Sakatpur, Bandrabhan, Sethani-ghat, Dongarwada and Anvalighat) covering an approximate 50 kms central stretch of River Narmada. It lies on Ground water samples were collected from 5 different sampling point. The samples for the analysis were collected in 500ml polyethylene bottles. pH were determined at the site. The samples were analyzed using standard method, APHA 1995[6]

Table 1: Bureau of Indian standard (IS- 10500:2012)

S.	PARAMETERS	LIMITS
1.	pH	6.5 – 8.5
2.	Electrical conductivity (µ S/cm)	700 – 3000
3.	Turbidity (NTU)	10 –25
4.	Total Alkalinity (Mg/L)	200 – 600
5.	Total dissolved solids (ppm)	500 – 2000
6.	Chloride (Mg/L)	250 – 1000
7.	Total hardness (Mg/L)	200 – 600

*Research Scholar, Department of Zoology, Saifi Science College, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor, Department of Zoology, Saifi Science College, Bhopal (M.P.) INDIA

8.	Calcium hardness (Mg/L)	75 – 200
9.	Magnesium hardness (Mg/L)	30 – 100
10.	Nitrates (Mg/L)	45 – 100

Table 2: - Water quality parameters of Narmada River, Hoshangabad Region, M.P.

Parameters	Station 1	Station 1	Station 1	Station 1	Station 1
pH	7.5	7.6	7.2	8.1	8.2
Electrical conduct -ivity (µ S/cm)	362	250	285	276	310
Total Alkalinity (Mg/L)	45	42	36	50	62
Total dissolved solids (Mg/L)	175	210	235	315	225
Chloride (Mg/L)	16.3	25.3	28.0	26.1	35.2
Total hardness (Mg/L)	75	78	85	73	98
Calcium hardness (Mg/L)	45	50.0	64.0	50	64
Magnesium hardness (Mg/L)	33.7	38	28.0	22.0	37
Nitrates (Mg/L)	0.623	0.564	0.812	0.745	0.896

RESULTS AND DISCUSSION - PH of solution is the negative logarithm of hydrogen ion concentration in moles per liter. The pH values ranges from 7.3 to 8.2 which is within the limit prescribed by BIS. The low pH does not cause any harmful effect [7]. The salt concentration is generally measured by determining the electrical conductivity of water. Most of the salts in water are present in their ionic form and capable of conducting current and conductivity is a good indicator to assess groundwater quality [8]. EC is an useful parameter of water quality for indicating salinity hazards. EC values varied between 123 to 415 µs /cm which is within the prescribed limit of BIS. Alkalinity is the measure of the capacity of the water to neutralize a strong acid. The alkalinity in the water is generally imported by the salts of carbonates, silicates together with the hydroxyl ions in Free State. [9]. The alkalinity values ranges from 22 to 62 mg/l. A total dissolved solid (TDS) is the concentration of all the dissolved minerals in water. The higher total dissolved solids causes gastro-intestinal diseases to the human beings, but the using water containing higher dissolved solids for a long period of time can cause kidney stones and heart diseases [10]. The TDS values ranges from 108 to 275 ppm which is within the permissible limit of BIS. Total hardness is a measure of the capacity of water to the concentration of calcium and magnesium in water and is usually expressed as the equivalent of the CaCO3 concentration. [11]. The total hardness values ranges from 291 to 702mg/l. Calcium and magnesium content in the water present 22.4 to 64.0 mg/l and 12.2 to 38.0 mg/l respectively. Chlorides occur in all natural waters in widely varying concentrations. The chloride contents normally increases as the mineral contents increases [12]. Chloride values ranged in between 42 to 225 mg/l which is well within the BIS limit. The nitrate concentration in ground water ranged between 0.123 to 0.896 mg/l. Hence, all the ground water samples are well within the permissible limit.

References :-

1. N. Sharma and Y. K. Walia, Current World Environ. 2017, 12(1), 174-180.
2. V. Sharma, Y. K. Walia, Biological Forum, 2016, 8(1), 559-564.
3. S. Sharma. And Y. K. Walia, Curr. World Environ, 2016, 11(1), 194-203
4. R. K. Sharma, D. K. Soni and N. Agrawal , Journal of Applied and Natural Science, 2012, 4(2), 237-240.
5. K. G. Chaudhari, Journal of Chemical, Biological and Physical Sciences, 2015, 5(1), 901-905.
6. American public health association, American water works association, water environment federation 1995.
7. K.M. Anwar and V. Agarwal, Curr. World Environ, 2014, 9(3), 851-857.
8. K.M. Anwar and V. Agarwal, International Journal of Technical Research and Applications, 2014, 2(5), 100-106.
9. C. Sarala and B.P. Ravi, International Journal of Scientific and Research Publications, 2012, (10), 1-26.
10. Bureau of Indian Standards Published by BIS New Delhi, 2012.
11. N.A. Dubey, Ph.D Thesis, Barkatullah University, Bhopal, 2003.
12. R. Bominathan and S.M. Khan, Environmental Ecology, 1994, 12, 850-853.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

An Evaluation Of The Different Factors For Construction Projects

Tophique Qureshi*

Abstract - The present work attempts to develop a theoretical framework of the performance evaluation of construction projects based on six key performance indicators (KPIs) namely time, cost, quality, safety, minimum site disputes and environmental impact. These KPIs were identified through literature review and discussions with project management professionals. For evaluating the performance on the above KPIs, several characteristic features pertaining to the project, project environment and the stakeholders associated with the project have been identified through an extensive literature review. These characteristic features, termed as critical success factors (CSFs), have been suitably classified under six broad heads based on their commonalities and unique features.

The six CSFs are named as project-related, client-related, consultant-related, contractor-related, supply chain-related and external environment-related factors. We have demonstrated the relationship between CSFs and overall project performance with the help of a conceptual diagram. The diagram reveals how the factors influence the performance of a construction project and also how the factors themselves are related to each other. In addition, it also shows how the overall performance leads to community satisfaction. This has been discussed through a set of nine propositions. We have concluded by highlighting the contributions of the paper to the existing body of project management literature.
Key words - project evaluation, project control, monitoring, criteria of evaluation, service innovation, service projects, new service development.

Introduction - The project evaluation process has been emphasized by both researchers and practitioners as crucial for the success of projects. Gramham argues that it is impossible to set meaningful targets for profitable project outcomes, without appropriate measurement and evaluation systems in place. Reliable evaluation techniques and criteria are becoming more and more important to stakeholders who are interested either in a specific project or overall activity of the company. In addition, the projects success is not only determined on the basis of the three traditional perspectives which are time, cost and quality, but it should also consider the long term benefits, the continuous improvement and the sustainability of the projects' outcomes. It happens that many projects fail to appeal to intended customers or fail to add value to the organisations' business. Others have been considered as not efficient enough because they are not well evaluated before, during and after the project implementation. The project evaluation process is therefore, carefully undertaken during the project life cycle by organisations in order to ensure that the project is profitable, that it is on the right track with expected parameters, and that the goals of organisations would be achieved once the project is completed. Despite the huge effort on establishing suitable framework for projects evaluation, most of the work gives few hints on the evaluation criteria for service development projects. Therefore, a higher contribution from researchers is needed on the service industry. This is especially critical due to the increasing contribution of services to the global economy.

As reported by Grönroosthe service sector has for a long time counted for over 50% of gross national product or total employment in developed countries. According to the US industry statistics, 'the non-good production industry accounts for approximately 70% of the total economic activity in United State'. Besides, at the meeting of the OECD Council at Ministerial level, the OECD (2005) reports that service industry gives an important contribution to the growth, productivity and innovation of OECD countries. Other developing countries are also moving towards the service industry instead of the manufacturing one, because of the demand from other countries as well as from their own citizen.

The importance of service sector is further emphasized by researchers pointing out that it is the service elements that make the difference on the marketplace and not because of the product components in the manufacturing's offering.Within the service sector, demanding customers and growing competition compels organisations to innovate and keep distinguishing themselves from others by providing clients with more value-added services. The development of new service is therefore becoming more

*Shri JJT University, Jhunjhunu (Raj.) INDIA

and more significant to companies. However, the success of NSD projects is challenged by specific traits of service product (intangibility, heterogeneity and nonstorability), as well as by the novel ideas and the high risk of failure.

This makes the evaluation process of NSD projects much more complex and requires special attention. In an extensive review of literature on NSD project, Johne and Storey suggest that 'further research is required into procedure for choosing between NSD projects and for evaluating individual NSD project throughout their development period'. Surprisingly, academic research in this area, until recently, is still rather limited. The above discussion on project evaluation and NSD projects, together with the recommendation of Johne and Storey, trigger an interest to investigate the key evaluation criteria that service companies should take into consideration in order to enhance the success of their innovation projects.

Construction project performance evaluation continues to be one of the primary competitive issues of the new millennium. Performance measurement (PM) is an integral part of management and defined as a process of quantifying both the efficiency and effectiveness of an action. Some of the major concerns of performance measurement include "What to measure?", "Which measures are used?", "How to measure?" and "How to interpret results?. Traditionally performance has mainly been measured from the financial perspective. Therefore traditional management accounting systems were highly criticized due to their dysfunctional behaviour. This dissatisfaction led to the development of "balanced" or "multi-dimensional" PM frameworks in the late 1970s. Kagioglou et al. stated organizations that rely on financial measures alone, can identify their past performance but not what contributed to achieve that performance. Further, Kagioglou et al. emphasized "in addition to measuring „what the performance of an organization was, „how that performance was achieved should also be identified on an on-going basis". This made aligning the leading indicators for PM concurrently with the lagging indicators.

Methodology: - The tool used to achieve the relationship between the critical success factor and project performance in this study is by developing a conceptual framework. Critical success factor is a variable that can have a significant impact that delivers measurable improvements to the project success. Organisations/companies look to forecasting tool to help them speed their progress toward performance improvement, and to guide them around pitfalls that might otherwise slow or even halt their initiatives of project performance. Therefore, in order to improve the project performance, it is essential to determine the critical success factors in the current project management practices. In order to achieve this, the variables for project success are essentially important to be identified and established towards achieving the objective of thisstudy.

The target population of the questionnaire survey will be the project manager, architect, engineer, builder and who have experienced in the construction industry in Malaysia. This research is limited to Peninsular Malaysia only since this country running many construction projects. Sets of the questionnaire will be distributed to identify the critical success factors project management practice in Malaysia. A questionnaire will be designed with the objective of ranking the important factors for achieving successful building projects. The analysis of data from the questionnaires responses can provide precise data from which tables can be produced.

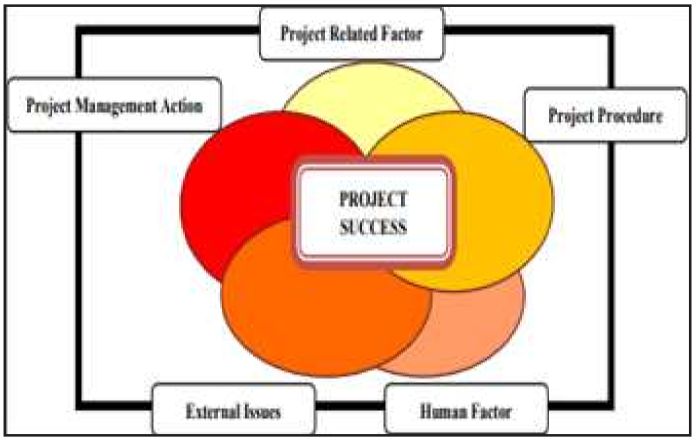

Figure 1 Variables for Project Success

Pilot survey will be also being conducted to view the current scenario of construction industry and feedback on the process and procedure in the respective organization. A pilot study will be carried out to test the relevance and comprehensiveness of the questionnaire before it will send to the respondents in the industry. Interview will be conducted to the target group of main players in the design and construction stages of building projects in organizations such as the project manager, architect, engineer and builder. A workshop of discussion and debate will be conducted at the end of year two of the research. This will involve project managers and attempt to get more inputs on the critical success factor of each different organization.

Data Collection: - The data sources were categorized to prime sources, and secondary sources. Prime sources provide original data for this research. The purposive and convenience sampling method was used in choosing the respondents. Participants in the study were managers in different levels, areas, and specialists within the construction companies. Totally, the 37 usable questionnaires were collected, and used in the statistical analysis. The secondary sources were from journals, books, articles, and journals published, to identify data about the research topic, and likewise to conduct study for further details in the research.

Questionnaire survey: - The questionnaire was used as the primary tool for collecting data. Using the questionnaire can help the researcher/s to collect data faster and cheaper than any other instrument. In this study, the survey questionnaire was divided into two main parts: Part I is related to the general information (demographic characteristics) of the respondents. Part II is focused on

the evaluation of the effectiveness of QMS implementation on vital factors of construction projects, this part including the four sections, and each section regarding the effectiveness of QMS implementation on one of the critical element in the construction project (time, cost, quality/ scope, and customer's satisfaction). The questions asked were closed-ended questions with a five point Likert rating scale.

Furthermore, the questionnaires were personally distributed and retrieved by the researcher to target respondents. The completed questionnaires were collected from them. Also, the confidentiality and anonymity of the participants were protected, for this matter their names were not required on the questionnaires.

Background of Respondents: - The findings of this study were based on 37 respondents in top, medium and lower level management working in different construction companies, which classified as AAA or large-scale in Metro Manila. Table are presented concerning the results of the respondents' profile. In general, the majority of the managers in construction projects are Male (84%), the only 16% of the respondents were Female, as shown in Table.

Table 1 Distribution of the respondents according to gender

Gender group	Frequency	%
Male	31	84
Female	6	16

Table shows the profile of the respondents classified according to age. As shown, the grouping consists of fiveage brackets distribution. There is no any respondent under 20 years, nine (9) or 24% of the respondents, within age bracket from 20 – 29, sixteen (16) or 43% within age bracket from 30 – 39, eight (8) or 22% within age bracket from 40 – 49, and also five (4) or 11% within age bracket from 50 or above.

Table 2 Distribution of the respondents according to group age

Year	Frequency	%
Below 20	0	0
20-29	9	24
30-39	16	43
40-49	8	22
50 and above	4	11

Regarding time length of QMS implementation in the construction companies, the most of the respondents (about thirty three (33) or 89%) were belonged to the organizations, which have been implemented QMS for 3 years or between 3 years and above. The rest is belonged to those companies have been performed QMS for 1 year or between 1 and 3 years in their firms, as reported in Table.

Table 3 Distribution of the respondents according to time length of QMS implementation in the construction company of respondent

Year	Frequency	%
Below 1 year 0	0	0
Between 1 and 3 years	4	11
Between 5and 8 years	13	35
Between 8 and 10 years	6	16
10 and above 6 16	6	16

In terms of the level of the respondent's knowledge regarding QMS implementation, seventeen (17) or 46%, and eleven (11) or 30% of the respondents had moderate and high level of knowledge about QMS respectively. The only, nine (9) or 24% of them possessed knowledge at low level, as indicated in Table.

Conclusion:- In this study, literature review unearthed that the implementation of QMS can be an effective technique to achieve the objectives of projects successfully through process approach, which is based on "PDCA" methodology towards the optimization of project performance, and problem solving. From literature review, it was revealed that project success is the most efficient key to assess projects in construction industry, and the customer's satisfaction as business objectives, and iron triangle (cost, time, quality) are the most significant elements in success of construction projects according to scholars. Furthermore, the results of the study from the responses of 37 managers, have been identified that QMS can be affected mostly on customer's satisfaction.

It may be justified that the impact of QMS on customer's satisfaction is more than other vital criteria in construction projects, because process approach of QMS is considered and prioritized the customer's requirements and satisfaction, as its input and output in the organizations. Likewise, QMS can affect directly and indirectly on cost and time in the projects, while the lowest impact of QMS is onquality/scope. Unfortunately, the results reported that the most of the managers emphasized on implementing QMS certification (ISO 9001 certification) only, and often neglect to use other standards of QMS. While the implementation of all standards of QMS can even improve incrementally quality/scope, reduce the cost and time length of the construction projects, and promote customer's satisfaction. However, the study concluded that QMS is an appropriate quality management and marketing tools for developing and improving organization performance. In this context it is suggested to implement QMS standard in the projects to improve organization performance. For future research, the study suggests to identify the best ways for the sustainable development of construction projects from the perspective of implementation of a QMS.

References :-

1. Chan, A.P.C., Ho, D.C.K. and Tam, C.M. (2001). "Design and Build project success factors; Multivariate analysis." Journal of Construction Engineering Management, 127(2), 93-100.
2. Chan, A.P.C., Scott, D. and Chan, A.P.L. (2004). "Factors affecting the success of a construction project." Journal of Construction Engineering Management, 130(1), 153-155.
3. Chan, D.W.M., and Kumaraswamy, M.M. (2002).

“Compressing construction durations: Lessons learned from Hong Kong building projects.” Int.J. Proj. Manage. 20(1), 23-35.

4. Lapinski, A., Horman, M. and Riley, D. (2006). “Lean processes for sustainable project delivery.” Journal of Construction Engineering Management, 132(10), 1083-1091.
5. Forcada, N. et al. (2008). “Experiences of Success in Industrial Plant Projects. RevistaIngeniera de Construction, 23(1), 82- 89.
6. Jha, K. N. and Iyer, K. C. (2006). “Critical Factors Affecting Quality Performance in Construction Projects.” Total Quality Management. 17(9), 1155-1170.
7. Munns, A. K., and Bjeirmi, B. F. (1996). “ The role of project management in achieving project success.” International Journal of Project Management. 14(2), 81-87.
8. Ofori, G., Britffett, C., Gu, G., and Ranasinghe, M. (2000). “Impact of ISO 14000 on construction enterprises in Singapore.” Construction Management Economy, 18(8), 935-947.
9. Pinto, J. K. and Slevin D. P. (1989). “Critical success factors in R&D projects”. Research Technology Management, 32(1), 31-35.
10. Pinto, J. K. and Slevin D. P. (1988). “Critical success factors in effective project implementation.” Project management handbook, D.I. Cleland and W. R. King, eds, Van Nostrand Reinhold, New York, 479-512.

****

The Regional Impacts of India-Us Nuclear Deal

Javeed Ahmed Tali* Dr. Ratan Senha**

Abstract - The Indo-US nuclear agreement was a direct consequence of the US' recognition of India as a major power and an acknowledgement of India's strong nonproliferation record. The deal faced severe criticism in both countries. Critics in the US felt that the Bush Administration has given away too much and made "an India exception" to the NPT and that such an exception will be taken as a precedent by several other countries who may want to work out a similar deal for their allies/friends. Indian opposition parties talked about India's right to test, the impact on India's strategic arsenal and the strategic partnership with Washington. The agreement has implications for the Asian strategic framework because it will bring the US and India closer, but its effects on the non-proliferation regime are likely to be minimal.
Keywords - Pakistan; India; US, Nuclear deal; Non-proliferation;

Introduction - US President George W. Bush signed the legislation on the Indo-US nuclear deal into law on 8 October 2008. The law, now titled, "United States-India Nuclear Cooperation Approval and Nonproliferation Enhancement Act," is a product of the March 2006 agreement between India and the US on civil nuclear cooperation based on the joint statement between President Bush and Prime Minister Singh on 18 July 2005. The agreement was a direct consequence of the US' recognition of India as a major pole of power in the coming century - "an anchor of stability in Asia and an engine of global economic growth."[1] More importantly, the agreement is a result of India's strong nonproliferation record despite not being a party to the Nuclear Non-proliferation Treaty (NPT).[2] Additionally, the deal undoubtedly recognises India's "de-facto" status as a nuclear weapons state.[3]

Impact on Non-Proliferation Regime - The U.S.-Indo nuclear deal undermines the regulations set under the NPT, thereby setting ignominious precedent for the non-weapon states. It allows India to tap its entire indigenous production of uranium and a stockpile of plutonium for weapon manufactures. Moreover, the US-Indo nuclear deal weakens the NPT by degrading the commitment made by the non-weapon state to receive peaceful nuclear technology and by weakening weapon states commitment under article one of the NPT.[4]

It is an utter violation of the US obligation under article one of the NPT, which aims "not to assist in any way" a non-weapon state (including India according to NPT). The nuclear deal is seemed even more preposterous for the other parties of the NPT as India under the deal is not bound to have applied IAEA full scope safeguard on their civilian facility. While the other nonweapon states are obligated to bring their peaceful nuclear activities under tight IAEA surveillance. India even opposed to placing safeguards on their breeder R&D program and the reactor needed to produce plutonium for the breeder. It envisages the large-scale future increase in Indian weapon production capacity. India is in desperate need of nuclear deal owing to the fact that India currently lacks the uranium fuel production capacity to fulfil the weapon and civilian nuclear power goals simultaneously. Despite that India backtracked on their pledge not to make nuclear weapon after importing nuclear technology from Canada and made nuclear weapon, US while oblivious to the India vicious past, still persistently give free hand to India over nuclear material used. This blatant double standard that allows India to get away with the full scope of IAEA safeguard and still receive healthy nuclear assistance while the countries like Brazil, Japan and Germany are under the tougher standard is festering the international norms of NPT regimes.

Implications on Iran - Case of Iran is highly significant. Though Iran, in this case forms a part of the peripheral zone, yet it has a direct connection with this deal for a couple of reasons. First of all, many in India, the US and in other parts of the world believe that Iran is one of the important factors behind US offer of this deal to India. The evidence is there not only in the Hyde Act but a number of statements issued by some highly influential politicians within the US congress. For instance, on the issue of passing a resolution against Iran at the IAEA, the US ambassador to India David Mulford was reported saying that the landmark Indo-US deal would die, if India does not back the resolution against Iran. He said, "I think Congress will stop considering the

* Research Scholar (Political Science) Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Professor (Political Science) V. R. G. Girls PG College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA

matter. I think the initiative will die in the Congress…"[5]

US State Department Spokesman Sean McCormack, though, put the thrust of this stance on Mulford's shoulders, he asserted that the US was willing to have India's vote against a state that is pursuing nuclear weapons proliferation. He further admitted that the deal and the vote on Iranian issue are linked. He said, "Well, we deal with the Indian government on these two issues as separate issues…Certainly, they come up in the same conversation".[6]

The reason is quite obvious. At a time when the US is weary of a consistent resistance in Iraq and tired of Iran for a number of factors e.g. the current regime, its support to Hamas and HizbAllah, its suspected support to fighting guerillas in Iraq and those in Afghanistan, the US is strongly willing to isolate Iran. The biggest problem that the US faces in this whole scenario is the failure of economic sanctions. The US does not share trade relations with Iran. The major contributors to Iran's oil income are Russia, China, India and few European states. China, Russia and India lie in the same region as is Iran.

It is therefore important to delineate these trade partners to isolate Iran. China and Russia sharing strategic interests with Iran are not prepared to play the willing partners for the US. India leaning closely towards the US for her own stature is seen as a plausible candidate by the US. Iran nonetheless appears prominently in the US strategic calculations; her position in the present Indian strategic milieu is quite ambiguous. It is India's level of willingness to respond to the US expectations that is going to determine the implications of this deal for Iran.

Iran and India have enjoyed cordial relations in the past. They share a huge volume of trade. Previously India has been involved in assisting Iran in its nuclear program and finally they also shared common interests in some significant areas. These things brought India and Iran quite closer but the analysis about the present situation needs to be carried out in context of new realities that are either on ground or brewing up.

It is an accepted fact that many in India value Iran very high. There are political parties like BJP and Left Parties that strongly oppose any foreign policy shifts on Iran. And there are men on streets that support Indo-Iran ties strongly.[7] However the present regime has its own way of weighing realities. Though the government publicly maintains that it is not going to make any shifts in its foreign policy under the US pressure and whatever decision the government shall take will be its own.[8] The prudent decision making on Iran has been kept quite ambiguous so far.

There were two occasions on September 24, 2005 and February 05, 2006, when India was to decide on vote, either in favor of Iran or against it, on nuclear issue. Both times the Indian vote went against Iran. This caused huge hue and cry in India. Masses protested on streets and the political parties also showed intense resentment.[9] It was commonly asserted that the government did so under US command despite the fact that the government strongly denied this charge and proposed that it was basically in line with India's goal of disarmament.

The possibility of such a diversion remains there for future. India may provide support to the US, simply on the pretext of pursuing higher goal of non-proliferation. Situation is not so simple. The US is serious about Iran. It has high hopes from India. Many analysts believe that the condition "of co-operation in joint military operations" laid in the Hyde Act may also mount the pressure against India in case of US decision to use force against Iran.[10]

As a matter of fact the government of India would not like to displease the US at one hand but it is not in a position to lose the vote bank either. In case of a policy shift the opposition parties would play on public's pulse. Surrendering sovereignty is not easily acceptable for the Indian nationals however; there is an equal chance of molding public opinion. In case the government itself desires, it may mould the common public's opinion. Since the Indian public has a high level of liking for the US,[11] given the two choices, they might possibly prefer the US. Some critics of the Indo-US deal spell out the fear of a backlash from the Muslims in India. Possibility of such a situation is also unclear.

However, it is important to calculate why and what could convince the government to shift its policy. First of all, in a given scenario of "either with the US or against US", conveyed covertly by the US, India might prefer to side with the US having high faith in its towering clout, power potentials and material and technological benefits. Given the Kautaliyan dictums of foreign policy, it does not seem to be an impossible task.

Secondly, there is some divergence of interests between India and Iran. This is more clearly pronounced in an area where the convergence sounded too loud previously. It is about the interest game in Afghanistan. Previously both India and Iran were supportive of the Northern Alliance against the Taliban regime. Given the fact that Taliban had close association with Pakistan, India perceived them as a threat. Where as, Iran had an ideological clash which was more or less based on the ethnic distinction between the Sunni Taliban and the Shiite Iran.

In the present scenario Iran that opposes the US presence in Afghanistan is believed to be supportive of Gulbadeen Hikmatyar's forces. It is no more a friend of the Northern Alliance. Evidently, Iran, a participant in the "great game" along with the US, UK, Pakistan, Turkey, China, Russia and India has her own interests in Afghanistan and Central Asian Republics.

India is playing safe with the Northern Alliance and is considerably increasing her influence in Afghanistan as well as Central Asia. A convergence of interest between the US and India and a divergence between Iran and India is therefore clearly visible in this equation. Finally, India might prefer to register its hyped commitment to non-proliferation and disarmament. In case, a pretext of alleging Iran over nuclear proliferation establishes, India might find it sound

enough to legitimize her policy shift towards Iran on high moral principles.

Given the record of previous developments and the calculations of the possibilities discussed above, the prospects of India's diversion from its policy over Iran cannot be entirely ruled out. Therefore it is significant to calculate the implications of any such development. This may cause domestic unrest of a lower magnitude. The government may face severe criticism at home. Also the Muslim community of India in general and the Shiite community in particular may not support any such policy shift. At a broad level, the implications will be shaped by Iran's reaction.

Any such developments undoubtedly shall not be welcomed by Iran. Iran that is striving hard to diversify its relations with states across the globe to prevent any kind of isolation attempt/chances of use of force by the US, would not find it easy to digest the loss of a big and friendly country so close to Iran. Iran would definitely show some reaction. To top the possibilities, lays the likely cut off of oil supplies to energy-hungry India. IPI gas pipeline project may be one of the most likely targets. Any progress on that account may come to halt. This will have serious repercussions for India engaged in quick efforts to diversify her energy resources-base.

There might also arise a possibility of Iran's involvement in covert intimidation of India, though not an easy task. However there are soft zones and loopholes where Iran may get a chance to play its cards and strike. One possible area could be to undermine Indian interests in Afghanistan, which is relatively easier for Iran to access due to its shared borders. Moreover, prevailing instability, fragmented society and the on-going insurgency creates the space for Iran to maneuver. Also the already growing Pak-Iran relations might get a further boost and develop into a nexus. This also will not be easily endorsed by India.

These things and others like the impact of Indo-US deal on China and Pakistan shall collectively contribute to shape unsettled strategic scenario. These developments have a potential to alter strategic alliances and shift balance of power.

Nuclear deterrence in Asia - The nuclear deterrence in Asia is strictly set among the four nuclear power states. In south Asia, the strategic stability is determined by the power equilibrium between India and Pakistan. There is nuclear power parity between the arch rival India and Pakistan, but the in the lieu of other power indicators, for instance economy, population, military power, geography and material acquisition, India dramatically outsmarts Pakistan. Nevertheless, still there is a balance of power in South Asia if the state's defense capacity solely defines it.

It has been four times until now, India and Pakistan approached each other in the battlefield since 1948. The threshold of nuclear war between these two countries is quite understandable owing to the disproportionate geographical and military power of India vis-à-via Pakistan, for the latter would likely trigger off a nuclear attack if they see their country vulnerable to the enemy. This fact has been demonstrated by the then military dictator of Pakistan general Pervaiz Musharraf in 2001-2002, amid the military standoff between India and Pakistan, that there is a thin layer laying in a nuclear war between India and Pakistan. He further added that Pakistan could launch a nuclear attack on India within eight seconds. The general asked the then communications director of tony Blair's government to remind India of Pakistan's nuclear capability. Britain was so concerned that the tony Blair's foreign policy advisor, sir David manning, categorically described in his paper that Pakistan was prepared to go to nuclear war. Indian also perceived if they cordoned off Pakistan territorially, they would never stop a nuclear war in South Asia.[12]

India is sandwiched between the two rivals; Pakistan and China. Against china, India shares the same territorial problems as with Pakistan. However, these two countries also remained Horne in lock in multi-level economics engagements. The recent visit of chines PM brought home billion of dollar deals with India, but strangely enough, both countries did not reach to settlement on their conflicting issues which may breed trouble in offing. China's assertion in Asia is perceived as an apparent threat to the offshore world power America and by applying realist policies; the latter leave not a single stone unturned to tame the supremacy of the chine in Asia pacific region. China currently, sustained multiple territorial problems over the ownership of South China Sea with Vietnam, Philippines, Cambodia and Laos, and over the sankako island with Japan. Ever since the rise of chines territorial issues, America has drifted herself in the cohort of Southeast Asian countries by giving them economic and military support at length.

The Indo-U.S nuclear deal, is conceived by many analysts, as an overt step to countervail the assertiveness of china in the region. But it gives an impetus to the unrestrained arms competition between India and Pakistan. Obama visit to India was synchronized by the Pakistan chief of army staff general Raheel Sharif to china, giving and an apparent message about the regressive implications of US-Indo nuclear deal. This deal sets the lethal norms of arms aggrandizement particularly in south Asia and generally in Asia.

Conclusion - It is not too far away that the world will see many new international actors enrolling into a nuclear power state if the international standards of the nuclear non-proliferation treaty are the same manner ruthlessly trespassing by the actors for narrow political and economic ends. The US-Indo nuclear deal has set a devastating precedent for the non-weapon state, for they can also feel it their right to ensure their self-defense in ramping up nuclear weapons in case of a threat. Moreover, US-Indo nuclear deal goes in contrast to the principles of the comprehensive test ban treaty (CTBT), though America has not yet ratified it, despite Obama efforts in the same direction. It is in the interest of each country to pay its due

political, legal, and moral obligation to stop using nuclear stockpile for criminal use. United nations should play its literal role in implementing the binding principles of NPT across the board indiscriminatel

References :-

1. Merle D. Kellerhals Jr., "Congress approves USIndia Civil Nuclear Accord," 02 October 2008, available athttp://www.america.gov/st/peacesecenglish/2008/October/20081002094758dmslahrelle k0.391 6284.html
2. While the Indo-US nuclear deal has been in clear recognition of India's non-proliferation record, the lawmakers in the US against the deal, have questioned India's track record. Senator Barbara Boxer, California Democrat, for instance, was quick to cite the September 18 The Washington Post story that highlighted leakage of sensitive nuclear blueprints by the Indian Department of Atomic Energy. A report by the Institute of Science and International Security (ISIS), authored by David Albright and Susan Basu questioned India's illicit procurement activities with regard to its nuclear programmes. See, Aziz Haniffa, "Lawmakers Question India's Non-proliferation Track Record," Rediff News, 19 September 2008, available at http://www.rediff.com/news/2008/sep/19ndeal2.html
3. There are critics who stress that the deal does not recognize India as a Nuclear Weapons State.
4. Weiss, L. (2006). The Impact of the U.S.-India Deal on the Nonproliferation Regime. Washington, D.C.: Arms Control Association Press Briefing
5. "US may pull out of N-Deal if India backs Iran", The News, (January 26, 2006).
6. "Envoy gave personal view on N-deal: US", The Nation, (January 27, 2006).
7. See P.R.Kumaraswamy, "India's interests collide over Iran", PINR, (October 28, 2005), see at http://www.pinr.com/report.php?ac=view_report&report_id=389&language_id=1
8. See "Briefing by MEA Official Spokesperson on Draft Resolution on Iran in IAEA", Press Releases Embassy of India, (New Delhi, September 24, 2005). See at http://www.indianembassy.org/press_release/2005/Sept/16.htm. Also see, "We will not buckle under pressure: Manmohan", The Hindu, (February 02, 2006). Also see Text of "PM's Suo Motu Statement on Iran", (New Delhi: February 17, 2006) at http://pmindia.nic.in/lspeech.asp?id=279.
9. See "India voted against Iran under pressure", (September 29, 2005), at http://www.aljazeera.com/me.asp?service_ID=9610.
10. See text of "Henry J. Hyde United States-India Peaceful Atomic Energy Cooperation Act of 2006", passed under the title of United States and India Nuclear Cooperation, One Hundred Ninth Congress of the United States of America, H. R. 5682. See at http://frwebgate.access.gpo.gov/cgi-in/getdoc.cgi?dbname =109_ cong_bills&docid=f:h5682enr.txt.pdf.
11. Opinion poll conducted by Pew Research Centre, quoted in Praful Bidwai, "India, US in a martial tango", The News, (July 02, 2005).
12. Watt, N. (2012, June 15). Pakistan boasted of nuclear strike on India within eight seconds. Retrieved March 4, 2015, from The Guardian: http://www.theguardian.com/world/2012/jun/15/pakistan-boasted-nuclear-strikepakistan

****

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शिशुओं के मानव अधिकारों का संरक्षण - एक विवेचना

डॉ. जैनेन्द्र कुमार पटेल *

शोध सारांश –एक रोता हुआ नवजात शिशु पृथ्वी पर किसी भी मानव (प्राणी) की सबसे पहली अवस्था है। जन्म में एक मास तक की आयु का शिशु नवजात (नया जन्मा) कहलाता है जबकि एक महिने से तीन वर्ष तक के बच्चे को सिर्फ शिशु कहते हैं। आम बोलचाल कि भाषा में नवजात और शिशु दोनों को बच्चा कहते हैं। एक दूसरी परिभाषा के अनुसार जब तक बालक या बालिका आठ वर्ष के नहीं हो जाते तब तक वे शिशु कहलाते हैं। शिशुओं के अधिकार पर अभिसमय 1989 के अनुच्छेद 1 में शिशु को परिभाषित करते हुए कहा है 'शिशु ऐसे प्रत्येक मानव को कहा जायेगा जिसकी आयु 18 वर्ष कम हो यदि शिशुओं पर लागु किसी विधि के अन्तर्गत वयस्कता इससे पूर्व नहीं प्राप्त हो जाती।'

प्रत्येक राष्ट्र में बच्चे या शिशु उसके अमूल्य धरोहर होते हैं और उनका प्रभावी संरक्षण प्रत्येक राष्ट्र का प्रमुख कर्तव्य है भारत में भी विभिन्न विधियों के माध्यम से शिशुओं के अधिकारों का संरक्षण किया जा रहा है। इस शोध पत्र में शिशुओं के अधिकारों के संरक्षण हेतु किये गये प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय प्रावधानों का विवेचनात्मक अध्ययन किया गया है। जैसा कि ज्ञात है आज शिशुओं के अधिकारों का संरक्षण मात्र किसी देश का नहीं है अपितु विश्व समुदाय भी अपनी पुरजोर शक्ति से शिशुओं के अधिकारों को लेकर सदैव चिंतित रहता आया है।

इस शोध पत्र में विभिन्न अभिसमयों और प्राटोकॉल, घोषणा पत्रों में दिये गये विभिन्न प्रावधानों का अध्ययन प्रस्तुत है।

शब्द कुंजी – शिशु, मानव अधिकार, अभिसमय, घोषणा, अन्तर्राष्ट्रीय, नयाचार।

शोध प्रविधि – यह शोध पत्र सैद्धांतिक विधि पर आधारित है जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय दस्तावेजों तथा आलेखों में व्यक्त विचारों का समावेश करते हुए विवेचना किया गया है।

विवेचना – शिशुओं के मानव अधिकारों के संरक्षण हेतु विश्व समुदाय ने जिनेवा अभिसमय 1949 से ही प्रारंभ कर दिया था परन्तु संयुक्त राष्ट्र संघ के स्थापना के उपरांत शिशुओं के अधिकारों के संरक्षण में गति आई। मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा 1948 में शिशुओं के मानव अधिकारों के संरक्षण हेतु अनुच्छेद 25 के परिच्छेद 2 के अन्तर्गत यह प्रावधान किया गया है कि शैसवावस्था विशेष देखभाल एवं सहायता के हकदार हैं। शिशु के संबंध में सार्वभौमिक घोषणा के अन्य सिद्धांतों के साथ उपर्युक्त सिद्धांत महासभा द्वारा दिनांक 20 नवम्बर 1959 को अंगीकार किये बाल अधिकारों की घोषणा में शामिल किये गये थे।

सिविल एवं राजनैतिक अधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा में भी शिशुओं के मानव अधिकारों समाहित किया गया है। इस अभिसमय के अनुच्छेद 23 एवं 24 तथा आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा के अनुच्छेद 10 के अन्तर्गत शिशुओं की देखभाल के लिए प्रावधान किय गये हैं। कई अन्त अन्तर्राष्ट्रीय दस्तावेजों में भी यह कहा गया है कि किसी शिशु की देखभाल पारिवारिक स्नेह और प्रसन्नता के वातावरण एवं प्यार एवं समझ में होना चाहिए। यद्यपि शिशुओं की देखभाल एवं विकास के लिए सिद्धान्तों की उद्घोषा की गई किन्तु ये सिद्धान्त राज्यों पर बाध्यकारी नहीं थे। अत: यह महसूस किया गया कि एक ऐसा अभिसमय तैयार किया जाये जो राज्यों पर विधिक रूप से बाध्यकारी हो। परिणामस्वरूप शिशुओं के अधिकार पर अभिसमय महासभा द्वारा 20 नवम्बर 1989 को अंगीकार किया गया जो 2 सितम्बर 1990 को लागु हुआ।

शिशुओं के अधिकार पर अभिसमय, 1989 – इस अभिसमय में कुल 54 अनुच्छेद हैं और यह तीन खण्डों में विभाजित है। इस अभसमय के वर्तमान में 193 राज्य पक्षकार बन चुके हैं। इस अभिसमय में दिये गये प्रमुख शिशुओं के अधिकार अग्रलिखित हैं –

1. अनुच्छेद 6(1) – प्राण का अधिकार,
2. अनुच्छेद 7 – राष्ट्रीयता अर्जित करने का अधिकार,
3. अनुच्छेद 28(1) – शिक्षा का अधिकार,
4. अनुच्छेद 26(1) – सामाजिक सुरक्षा से लाभ का अधिकार,
5. अनुच्छेद 27(1) – शिशु के शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक विकास हेतु पर्याप्त जीवन स्तर का अधिकार,
6. अनुच्छेद 24(1) – स्वास्थ्य के उच्चतम प्राप्य स्तर के उपभोग तथा बिमारी के उपचार एवं स्वास्थ्य की पुनर्स्थापना हेतु सुविधाओं का अधिकार,
7. अनुच्छेद 16(1) – शिशु की एकांतता परिवार गृह या पत्राचार में मनमाना एवं विधि विरूद्ध हस्तक्षेप के विरूद्ध विधिक संरक्षण का अधिकार।

शिशुओं के अधिकारों पर अभिसमय के ऐच्छिक नयाचार – न्यूयार्क में शिशु के अधिकारों पर अभिसमय के दो ऐच्छिक नयाचारों को 25 मई 2000 को अंगीकार किया गया जो निम्नलिखित हैं–

1. सशस्त्र संघर्ष में शिशुओं की अन्तग्रस्तता पर ऐच्छिक नयाचार – 1877 में अंगीकृत जिनेवा अभिसमय पर 1949 पर अतिरिक्त प्रथम नयाचार में यह प्रावधान किया गया था कि संघर्ष करने वाले राज्य इस बात को देखेंगे कि 15 वर्ष से कम आयु वाले शिशु संघर्ष में प्रत्यक्ष रूप से भाग नहीं लेंगे। राज्य ऐसे शिशुओं को सेना में भर्ती नहीं करेंगे जिनकी आयु 18

* सहा. प्राध्यापक, डॉ. सी. वी रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

वर्ष से कम हो। इस नयाचार में गैर राज्यीय पक्षकारों द्वारा 18 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों की भर्ती को प्रतिषिद्ध किया गया है। यह नयाचार 12 फरवरी 2002 को लागु हुआ और इस नयाचार के 141 राज्य पक्षकार थे।

2. शिशुओं के विक्रय, बाल वेश्यावृत्ति, बाल अश्लिल साहित्य पर ऐच्छिक नयाचार – यह नया चार 18 जनवरी 2002 को लागु हुआ और 18 नवम्बर 2009 तक नयाचार के 135 राज्य पक्षकार बन चुके थे। इस ऐच्छिक नयाचार में निम्नलिखित प्रावधान किये गये हैं –

(i) बच्चों के विक्रय, बाल वेश्यावृत्ति तथा बाल अश्लिल साहित्य के संबंध में शिशुओं के अधिकारों के उल्लंघनों के अपराधिकरण की विस्तृत अपेक्षाओं को प्रदान करके शिशु के अधिकारों पर अभिसमय के प्रावधानों की पुर्ति करता है।

(ii) नयाचार में शिशुओं के विक्रय, बाला वेश्यावृत्ति तथा बाल अश्लिल साहित्य के अपराधों की परिभाषा दिया गया है।

(iii) इस नयाचार में पीड़ितों के संरक्षण तथा निवारक उपायों समेत राष्ट्रीय विधि के अधिन उल्लंघनों में उपचार के मानकों को निर्धारित किया गया है।

(iv) नयाचार में इन क्षेत्रों में विशेष कर अपराधियों के अभियोजन के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करने के लिए भी प्रावधान किये गये हैं।

शिशुओं के अधिकारों पर जो अभिसमय और ऐच्छिक नयाचारों को अनुसमर्थित करने वाले राज्यों द्वारा अनुसमर्थन के पश्चात् शिशुओं के मानव अधिकारों के संरक्षण हेतु अपने राज्यों में विभिन्न विधियों के माध्यम से सुरक्षोपाय किये हैं। वियतनाम में किशोर न्याय प्रणाली में सुधार बारबाडोस में अल्पवयों के फॉसी देने का प्रतिषेध तथा नामीबिया के संविधान में अभिसमय के एक भाग को शामिल किया गया है।

भारत ने दिसंबर 2002 में शिशु अधिकार अभिसमय द्वारा निर्धारित न्यूनतम मामलों को प्रभावी बनाने के लिए किशोर न्याय (शिशुओं की देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम 2000 पारित किया गया है। इस अधिनियम द्वारा दोनों लिंगों के किशोरों की आयु 18 वर्ष निर्धारित की गई है। भारतीय विधि को अभिसमय से अभिपुष्टी प्रदान करने के लिए अधिनियम में विभिन्न प्रकार के अनुकल्पों का प्रावधान किया गया है। जो किसी शिशु को पुनर्वास एवं पुनर्एकीकरण के लिए उपलब्ध करवाए गए हैं तथा दत्ताक ग्रहण पालन संबंधी देखभाल का प्रावधान किया गया है। इसके अतिरिक्त अनाथ, परित्यक्त, उपेक्षित एवं शोषित बच्चों के पुनर्वास के लिए पद्धतियों में से किसी एक के प्रायोजित किये जाने का भी प्रावधान किया गया है।

उपसंहार – अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शिशुओं के मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए किये गये प्रयासों के अध्ययन उपरांत यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा शिशुओं के मानव अधिकारों के संरक्षण हेतु किये गये कार्य सराहनीय हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के गठन के पूर्व से ही शिशुओं के अधिकारों को संरक्षित किये जाने का प्रयास होता रहा है गठन के पश्चात् मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, मानव अधिकारों के दोनो अभिसमयों के अतिरिक्त शिशुओं के अधिकारों पर अभिसमय तथा ऐच्छिक नयाचारों में जो अधिकार प्रतिपादित किये गये हैं उन अधिकारों के द्वारा शिशुओं के मानव अधिकारों का बेहतर संरक्षण होता दिखाई देता है तथा सभी राज्य पक्षकार अभिसमयों के दिशानिर्देशों का पालन करते हुए दिखाई देते है किन्तु अभी भी इनमें कुछ कमियां दृष्टिगोचर हो रहे हैं। इस हेतु वैश्विक स्तर पर पर्यवेक्षण तंत्र को और विकसित करने की आवशकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. एस. के. कपूर अन्तर्राष्ट्रीय विधि एवं मानव अधिकार
2. डॉ. टी. पी. त्रिपाठी अन्तर्राष्ट्रीय विधि एवं मानव अधिकार
3. डॉ. एच. ओ. अग्रवाल अन्तर्राष्ट्रीय विधि एवं मानव अधिकार
4. डॉ. जाखड़ मानव अधिकार

****

छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों के व्यापार का एक अध्ययन (कुसुम एवं पलाश लाख के विशेष संदर्भ में)

राकेश कुमार गुप्ता* डॉ. के.के.शर्मा **

शोध सारांश – छत्तीसगढ राज्य में कुसुम एवं पलाश लाख का वार्षिक उत्पादन 35.25 हजार क्विंटल है। कुसुम लाख की मांग अधिक होने के कारण राज्य के व्यापारी अच्छी दरों पर इसका क्रय कर प्रसंस्करण करते है। कुसुम लाख का वार्षिक व्यापार रू. 100/– प्रति किलो न्यूनतम की दर से रू. 13.20 करोड़ होता है। कुसुम लाख की कुछ मात्रा देश के अन्य बाज़ारों में विक्रय कर दी जाती हैं। छत्तीसगढ राज्य में लाख की मुख्य प्रसंस्करण इकाइयों का आवश्यकतानुसार निर्माण किया जा रहा है। पलाश लाख की दर कम होने के बावजूद भी इसका उत्पादन किया जा रहा है एवं इसका वार्षिक व्यापार रू. 35/– प्रति किलो की दर से रू. 7.72 करोड़ का होता है। कुसुम एवं पलाश लाख के मुख्य उत्पादन वन मंडल क्षेत्रों का चिन्हांकन कर लाख उत्पादन हेतु भविष्य की रणनीति तय की जा सकती हैं, ताकि लाख का अधिक से अधिक उत्पादन कर कृषकों को अच्छा मूल्य दिलाया जा सके। कुसुम लाख के मुख्य उत्पादन क्षेत्रों में कांकेर पूर्व, भानुप्रतापपुर, बस्तर कोरबा, उत्तर सरगुजा, कटघोरा एवं जांजगीर चांपा वनमंडल आदि शामिल हैं।

शब्द कुँजी –धारणयोग्य कृषि–उत्पादन, अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज, एग्रोक्लाइमेटिक जोन, अकाष्ठीय वनोपज।

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत मुख्य लघु वनोपज प्रजातियों के उत्पादन क्षेत्रों का चिन्हांकन कर मुख्य उत्पादन क्षेत्र जिला एवं वृत्त वार इनका वार्षिक उत्पादन ज्ञात किया गया हैं उक्त विवरण से ज्ञात होता हैं कि जगदलपुर, कांकेर एवं सरगुजा वृत्त में लघुवनोपज प्रजातियों का वार्षिक उत्पादन आधिक हैं इस लिए इन वन वृत्तों में लघुवनोपज प्रजातियों का वार्षिक उत्पादन अधिक हैं इस लिए इन वनवृत्तों में लाख, इमली, माहुल पत्ता, तैलीय बीज, चिरौंजी एवं शहद आदि लघुवनोपजों मे संबंधित बड़ी प्रसंस्कण इकाईयाँ स्थापित किए जाने की अपार संभावनाएं हैं तथा इसके अतिरिक्त विभिन्न छोटी इकाईयों की स्थापना भी की जानी चाहिए।

उद्देश्य – राज्यों के पुनर्गठन के परिणामस्वरूप 1 नवम्बर 2000 देश के 26वें राज्य के रूप में छत्तीसगढ़ की स्थापना की गई। मूलत: यह राज्य विपुल वन संसाधनों एवं खनिज संपदा से परिपूर्ण होने के बावजूद मध्यप्रदेश राज्य के अंतर्गत सदैव उपेक्षित रहा। दूसरों को भोजन तथा जीवन की सुविधाऐं प्रदान करने वाला 'धान का कटोरा' क्षेत्र स्वयं अर्धसंतृप्त एवं जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तरसता रहा है। नए राज्य के गठन से क्षेत्रीय जनमानस की आशायें बढ़ी है। नवगठित राज्य में प्रशासनिक सुविधाओं की उत्कृष्टता के लिए जिलों का पुनर्गठन करते हुए 27 जिलों में विभाजित किया है। प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

1. छत्तीसगढ़ राज्य में वन स्थिति एवं लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन करना।
2. छत्तीसगढ़ राज्य में अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों में कुसुम एवं पलाश लाख के व्यापार एवं विपणन का अध्ययन करना।
3. अराष्ट्रीयकृत वनोपज में कुसुम एवं पलाश लाख के व्यापार का छत्तीसगढ़ राज्य की आर्थिक स्थिति में सशक्त संभावनाओं का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पनाएँ :

1. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत वनोपज के में कुसुम एवं पलाश लाख के व्यापार एवं विपणन की पद्धति असंतोषजनक है।
2. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत वनोपज में कुसुम एवं पलाश लाख के व्यापार एवं विपणन की महत्वपूर्ण संभावनाएँ हैं।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र :

1. अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का सहारा लिया जा रहा हैं।
2. यह अध्ययन छत्तीसगढ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित शंकर नगर रायपुर से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित हैं। इनसे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है और निष्कर्ष प्राप्त किये गए है।
3. अध्ययन का क्षेत्र छत्तीसगढ राज्य की अराष्ट्रीयकृत वनोपज में कुसुम एवं पलाश लाख के व्यापार एवं विपणन पर आधारित हैं।
4. अध्ययन की समय सीमा पिछले पाँच वर्षो के उत्पादन एवं विपणन पर आधारित हैं।

शोध उपकरण – अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का सहारा लिया जा रहा हैं।

सांख्यिकी उपकरण – यह अध्ययन छत्तीसगढ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित शंकर नगर रायपुर से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित हैं। इनसे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है और निष्कर्ष प्राप्त किये गए है।

शोध व्याख्या – छत्तीसगढ राज्य में कुसुम एवं पलाश लाख का वार्षिक उत्पादन 35.25 हजार क्विंटल है। कुसुम लाख की मांग अधिक होने के कारण राज्य के व्यापारी अच्छी दरों पर इसका क्रय कर प्रसंस्करण करते है। कुसुम लाख का वार्षिक व्यापार रू. 100/– प्रति किलो की दर से रू. 13.20 करोड़ होता है। कुसुम लाख की कुछ मात्रा देश के अन्य बाज़ारों में विक्रय कर दी जाती हैं। छत्तीसगढ राज्य में लाख की मुख्य प्रसंस्करण इकाइयों का

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डी. पी. विप्र महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

उल्लेख परिशिष्ट के तालिका क्र. 1 में किया गया है। पलाश लाख की दर कम होने के बावजूद भी इसका उत्पादन किया जा रहा है एवं इसका वार्षिक व्यापार रू. 35/- प्रति किलो की दर से रू. 7.72 करोड़ का होता है। दर्शायी तालिका क्रमांक 1 के अनुसार कुसुम एवं पलाश लाख के मुख्य उत्पादन वनमंडल क्षेत्रों का चिन्हांकन कर लाख उत्पादन हेतु भविष्य की रणनीति तय की जा सकती हैं, ताकि लाख का अधिक से अधिक उत्पादन कर कृषकों को अच्छा मूल्य दिलाया जा सके। कुसुम लाख के मुख्य उत्पादन क्षेत्रों में कांकेर पूर्व, भानुप्रतापपुर, बस्तर कोरबा, उत्तर सरगुजा, कटघोरा एवं जांजगीर चांपा वनमंडल सम्मिलित हैं।

तालिका 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

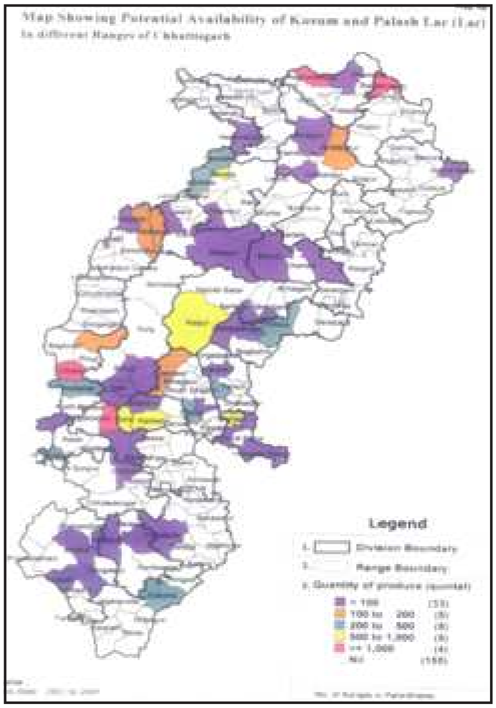

कुसुम एवं पलाश लाख के राज्य एवं देश में मुख्य बाजार – लाख के प्रसंस्करण केन्द्र स्थापित होने के कारण छत्तीसगढ राज्य में उत्पादित लाख की खपत राज्य में ही हो जाती हैं। इस कारण लाख के बाज़ार एवं दरों में ज्यादा उतार-चढ़ाव एवं सही मूल्य न मिलने की समस्या नहीं आती है। छत्तीसगढ राज्य में उत्पादित लाख की एक बड़ी मात्रा पश्चिम बंगाल के बलरामपुर में विक्रय की जाती है। कुसुम एवं पलाश लाख के देश में मुख्य बाज़ारों का विवरण तालिका क्र. 2 में दिया गया हैं।

तालिका 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

राज्य में स्थापित कुसुम एवं पलाश की लाख की प्रसंस्करण इकाईयाँ – कुसुम एवं पलाश की राज्य में 18 प्रसंस्करण इकाईयाँ स्थापित है जिसका विवरण तालिका क्रमांक 3 में दिया गया है। ये मुख्यत: धमतरी, कांकेर, बिलासपुर, कटघोरा, जांजगीर चांपा, मे स्थापित है, इनकी कुल उत्पादन क्षमता 35,000 क्विंटल प्रति वर्ष हैं।

तालिका 3. कुसुम एवं पलाश लाख तैयार करने वाली प्रसंस्करण इकाइयों का विवरण

क्र.	जिला यूनियन	प्रसंस्करण इकाई संख्या	कुल वार्षिक उत्पादन (क्विं में)
1	धमतरी	7	65000
2	कांकेर	2	6000
3	बिलासपुर	3	2000
4	कटघोरा	5	16000
5	जांजगीर चांपा	1	5000
	योग	**18**	**35,500**

निष्कर्ष – प्रत्येक वर्ष छत्तीसगढ़ राज्य में संग्रहित किये जाने वाले लघु वनोपज की अधिकांश मात्रा अन्य राज्यों की मंडियों या उद्योगो को भेज दी जाती है। अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि छत्तीसगढ़ राज्य में लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों का विकास अपर्याप्त है साथ ही औषधीय व गैर औषधीय लघु वनोपज की वार्षिक उत्पादन क्षमता को देखते हुए यह बात स्पष्ट होती है कि छत्तीसगढ़ राज्य में इनका सम्पोष्य विकास करते हुए संबंधित उद्योगों के विकास की महत्वपूर्ण संभावनाएँ है।

सुझाव – प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध के अंतर्गत यह पाया गया कि अराष्ट्रीयकृत वनोपज पर कोई रायल्टी नहीं होने के कारण वनवासी आदिवासी इसका संग्रहण करके स्थानीय हाट बाज़ारों में छोटे व्यापारियों को विक्रय कर देते है। अनुसंधान के द्वारा यह पाया गया कि ये छोटे व्यापारी राज्य की इन लघु वनोपज को मांग के अनुरूप अपना कमीशन या अधिक मूल्य पर बाजारो पर विक्रय करते है। बड़े व्यापारियों द्वारा संग्रहित वनोपज को ग्रेडिंग करते हुए देश की विभिन्न मंडियों में या लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों को विक्रय कर देते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दुबे, डॉ. श्यामाचरण – आदिवासी लोक कला परिषद, 1987
2. 11वीं पंचवर्षीय योजना 2007-2012, छ.ग. रायपुर
3. 12वीं पंचवर्षीय योजना 2012-2017, छ.ग. रायपुर
4. तिवारी डॉ वी.के.- छत्तीसगढ़ की जनजातियाँ, 2001
5. मामोरिया डॉ. चतुर्भुज, भूगोल, साहित्यभवन पब्लिकेशन्स 2013.
6. भारत वन स्थिति रिपोर्ट 2011
7. आर्थिक सर्वेक्षण – 2010-11, 2011-12, 2012-13.
8. Impact of Forestry Project on Tribal Economy Tribal & Harijan WelfarePlanning – Commission
9. Tiwari D.N. Primitiv eTribes of M.P.
10. Mahapatro, P.C. – Economic Development of Tribal India 1987 , New Delhi
11. Social History of Chhattisgarh, Agam kala Prakasham Delhi 1985
12. Chhattisgardh Redis Coverd, Aryan Book International Delhi 1995
13. Census of India 2001 &2011

तालिका 1. कुसुम लाख एवं पलाश लाख के मुख्य उत्पादन क्षेत्र

क्र.	उत्पादन हेतु उपयुक्त जिला यूनियन	स्थानीय बाजार	कुसुम लाख वार्षिक उत्पादन मात्रा (क्विं में)	पलाश लाख वार्षिक उत्पादन मात्रा (क्विं में)
1	जगदलपुर	जगदलपुर, तोकापाल, बस्तर	1000	
2	दंतेवाड़ा	नेसलनार, गीदम	500	100
3	सुकमा	सुकमा, दोरनापाल		300
4	बीजापुर	बीजापुर	200	300
5	कांकेर	कोरर, पहरपुर, ताडोकी	2000	500
6	पूर्व भानुप्रतापपुर	भानुप्रतापपुर, अंतागढ़	3200	500
7	पश्चिम भानुप्रतापपुर	परलकोट संबलपुर	200	2500
8	उत्तर कोण्डागांव	केशकाल, लंजोड़ा, बड़ेराजपुर	1000	
9	दक्षिण कोण्डागांव	हीरापुर, मर्दापाल, कोण्डागांव, माकड़ी	500	
10	नारायणपुर	नारायणपुर, धोड़ई, बेनूर, छोटेडोंगर	500	
11	धमतरी	धमतरी, गट्टासिल्ली, नगरी	250	700
12	रायपुर	चिकली, रायपुर		200
13	पूर्व रायपुर	गरियाबंद	100	400
14	उदंती	मैनपुर, इंदागांव	1000	650
15	महासमुन्द	पिथौरा	350	1000
16	दुर्ग	बालोद, होडी, लोहारा		200
17	राजनांदगांव	श्राजनांदगांव	700	3000
18	मरवाही	कोटा, गौरेला	500	3000
19	कवर्धा	चिल्फी, बोडला	300	200
20	कोरबा	मदनपुर, हल्दीबाजार, भैसमा		1000
21	कटघोरा	पसान, पाली, कोरवी	500	1500
22	धरमजयगढ़	लैलुंगा, धरमजयगढ़	200	500
23	जांजगीर चांपा	बलोदा, शक्ति		2000
24	उत्तर सरगुजा	रघुनाथनगर, प्रतापपुर, वाड्रफनगर		2000
25	दक्षिण सरगुजा	मैनपाट, भईयाथान, प्रेमनगर		600
26	पूर्व सरगुजा	रघुनाथनगर, रामानुजगंज		700
27	जशपुर	जशपुरनगर	200	200
	योग		**13,200**	**22,050**

तालिका 2. कुसुम एवं पलाश लाख के क्षेत्र एवं विक्रय बाजार एवं विक्रिता मात्रा

छत्तीसगढ़ राज्य के मुख्य बाजार	कुसुम लाख			
	अन्य राज्य	वार्षिक विक्रित मात्रा (क्विं में)	अन्य राज्यों के मुख्य बाजार	वार्षिक विक्रित मात्रा (क्विं में)
धमतरी, कांकेर, रायपुर	महाराष्ट्र	90	मुंबई	90
	पश्चिम बंगाल	1350	बलरामपुर	1350
	योग	3014		3014
			पलाश लाख	
	पश्चिम बंगाल	3851	बलरामपुर	2831
		650	वाराभौम	665
	झारखण्ड	1079	बुन्डु	650
	महाराष्ट्र		गोंदिया	190
			नागपुर	513
	योग	**5580**		**4849**

विधानसभा क्षेत्र में विधायकों कि भूमिका कि स्थिति का अध्ययन

साधना खराडी *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र जनप्रतिनिधियों की विधानसभा क्षेत्र में स्थिति के विषय में है। जनप्रतिनिधियों की अपने विधानसभा क्षेत्र में महत्वपुर्ण भूमिका होती है। उनकों जनता निर्वाचन के द्धारा विधानसभा में भेजती है प्रतिनिधि का जनता के प्रति कर्तव्य होता है, कि वह जनता के हित में कार्यो को करें। विधायक जनता से जुडे होते है और जनता के मुददो को समय– समय पर विधानसभा में उठाते है, जिससे कि आम जनता की समस्याओं का समाधान समय पर हो सके। यदि विधायक जनता की समस्याओं का निराकरण समय पर करते है,तो जनता उनके कार्यो से संतुष्ट रहती है। और उनका शासन में प्रवेश पून सम्भंव हो होता है।

शब्द कुंजी – विधानसभा, जनप्रतिनिधि, जनता, निर्वाचन, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, मतदाता, जनसंख्या, विधानमण्डल।

प्रस्तावना – विधानसभा के प्रतिनिधि निर्वाचन के द्धारा शासन व्यवसथा मे प्रवेश करते है,उनका चुनाव मतदाता प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रक्रिया द्धारा करते है,विधायको का निर्वाचन राज्य निर्वाचन आयोग द्धारा संचालित किया जाता है निर्वाचन क्षेत्रों को जनसंख्या के अनुपात के आधार पर बांटा जाता है। विधानसभा का एक प्रतिनिधि क्षेत्र कि जनसंख्या के अनुपात में होता है। अनुच्छेद 170(3) मे यह प्रावधान है,कि विधानसभा के स्थानों तथा क्षेत्रों की संख्या संसद निर्धारित करेगा। 2001 के संविधान संशोधन में कहाँ गया है,कि 2026 की जनगणना के पहले विधानमण्डल के स्थानों व क्षेत्रों मे परिवर्तन नही किया जाएगा।

विधायक जनता के प्रतिनिधि होते हैं उनकी अपने क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका होती है वे जनता के लिये बहुत से कार्यो को करते हैं जैसे आम जनता की समस्याओं का समाधान करना, उनके लिए जन उपयोगी कार्यो को करना। जनता को आधारभुत सुविधाए उपलब्ध कराना।

विधायक बनने के लिए उम्मीद्धार को कई योग्यताओं को पुरा करना पडता है, अनुच्छेद 173 मे प्रावधान है,कि वह भारत का नागरिक हो तथा 25 वर्ष की आयु पूर्ण कर ली हो। अनुच्छेद 332 मे अनुसुचित जातियों एवं अनुसुचित जनजातियों के लिए सीट आरक्षित की है। विधानसभा सदस्यो का चुनाव राज्य की आम जनता द्धारा किया जाता है, इसमे मतदाता की आयू 18 वर्ष से अधिक होनी चाहिए। इसमे जनता अपने प्रतिनिधि का चुनाव प्रत्यक्ष रुप से करती है।

मतदाता का कार्य केवल मतदान करने के अधिकार तक सीमित नही है, उसका कर्तव्य है,कि वह यह देखे और समझे कि उनका प्रतिनिधि अपने कार्यो को उचित ढंग से करे। केवल 5 वर्ष के बाद अपने प्रतिनिधि का चयन करना ही पर्याप्त नही है मतदाता को यह भी देखना होगा कि प्रतिनिधि जनता के हित मे कार्यो को करे। विधायक या एमएलए विधानमण्डल का एक प्रतिनिधि है जिसे निर्वाचन द्धारा आम जनता चुनती है उनका चुनाव विधानसभा सदस्य के रुप में किया जाता है।

उद्देश्य :

1. जनप्रतिनिधि कि विधानसभा क्षेत्र में भूमिका का अध्ययन।
2. जनप्रतिनिधि द्धारा अपने विधानसभा क्षेत्रो मे किये जाने वाले कार्यो का अध्ययन।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र के आकडों का संकलन द्धितीय पद्धति के द्धारा किया गया है,जिसमें उपयोग किये गये कुछ दस्तावेज, पुस्तक,सरकारी रिर्पोट,इन्टरनेट आदि सम्मिलित है।

विधानसभा क्षेत्र में जनप्रतिनिधि कि भूमिका – विधायक का कर्तव्य है,कि वे अपने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करे। विधायक को अपने क्षेत्र की जनता के द्दष्टिकोण का पता होना चाहिए, कि वे क्या सोचते है उनकी क्या आवश्यकताए हैं और उनके क्षेत्र की जनता क्या चाहती है। विधायक को अपने क्षेत्र की समस्या को पहचान कर उसका समाधान करना चाहिए। विधायक पार्टी का सदस्य भी होता है,विधायक साथ मे अपनी पार्टी की योजनाओं को बनाने मे सम्मिलित होता है। विधायक को विधानसभा के लिए तथा अपने क्षेत्र के लिए समय का बराबर बटवारा करना चाहिए। विधायक का यह कर्तव्य बनता है,कि वह विधानसभा मे अपने क्षेत्र के मुद्दो व प्रश्नों की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित करे। जो विधायक केबिनेट सदस्य होते है,वे विभागों के कार्यो को करने मे ज्यादातर समय बिताते है,वे विपक्ष के प्रष्नों के उत्तर देते है। विधायक सरकार के बिलो विभागों तथा वार्षिक रिर्पोटो के लिए हमेशा तैयार रहे यहि उनका कार्य होता है विधायक कई समितियो से जुड कर कार्य करते है।

कई बार विधायको को संविधान सम्बन्धित समस्याओं का सामना करना पडता है ,इसलिए शासकीय विभाग एवं एजेंसिया कई बार समस्याआं से निपटने मे सहयोग करते है । अधिकतर विधायक अपने विधानसभा क्षेत्र मे समय व्यतीत करते है,वे अपने क्षेत्र की समस्याओ को समझते है,आम जनता के प्रश्नो का उत्तर देते है ,क्षेत्र की जनता की राय को जानने का प्रयास करते है। विधायक जनता से व्यक्तिगत रुप से जुडे रहने की कोशिश करते है ,परन्तु क्षेत्र की जनसंख्या अधिक होने से वह सम्पूर्ण जनता से सम्पर्क नही रख पातें है,इसलिए वे फोन, लिखित रुप मे ,बैठको के द्धारा, दुरसंचार माध्यमों से सम्पर्क बनाये रखते है।

विधायक द्धारा क्षेत्र मे किये जाने वाले कार्य – विधायक अपने क्षेत्र के विकास के लिए बहुत से कार्यो को करवा सकते है, शैक्षिक भवनों, विश्वविद्यालयों मे निर्माण कार्य बाउण्ड्रीवाल तथा शौचालय की व्यवस्था

* शोधार्थी, राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

कर सकते है ,शिक्षण सस्थाओं में फर्नीचर ,स्कूलों में टाट–पटटी ,अलमारी जैसी सुविधाओं की व्यवस्था की जा सकती है। ग्रामीण क्षेत्रो मे और नगरीय क्षेत्रो में बोरिगं, नल , तालाबों तथा कुआँ खोदकर पानी की व्यवस्था कराई जाती है नगर में पानी के लिए टंकी की व्यवस्था,शासकीय छात्रावास , हास्पिटल, आश्रम जैसी संस्थाओं के लिए पेयजल उपलब्ध कराया जाता है। शहर और ग्रामीण क्षेत्रो कों जोडने वाली सडकों का निर्माण तथा पैदल पथ भी बनाये जाते है। बस स्टाप, तालाब, डेम, शिक्षण कार्य और अस्पताल के लिए भवन की रिपयरिगं विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र के अन्तर्गत किया जाता हैं।

विधानसभा क्षेत्र में शासकीय भूमि पर बागवानी करना, बिजली कनेक्शन की व्यवस्था तथा उघोगो को बढावा देना विधानसभा क्षेत्र के प्रतिनिधि के कार्य होते है। सामुहिक भवन बनाना, वृद्ध और विकलांग लोगो के लिये आश्रम की व्यवस्था करना तथा स्वच्छता सम्बन्धि कार्य विधायक करते है। क्षेत्र का प्रतिनिधि सांस्कृतिक खेल गतिविधियों के लिए भवन तथा स्टेडियम का निर्माण करता है। अपने क्षेत्र में कृषि के लिये पानी के संसाधन उपलब्ध कराना, ऐतिहासिक जगहो पर पर्यटनों को बढावा देना जिससे कि क्षेत्र में आर्थिक वृद्धि हो।

निष्कर्ष – सामान्यतः यह कहा जा सकता है, कि विधायक जनता का प्रतिनिधि होता है जिसका कार्य जनता के मुद्दो पर सरकार का ध्यान आकर्षित करना है, वो मुददें किसी भी प्रकार के हो सकते है जैसे राजनीतिक, शिक्षा, खेल, सामाजिक, आर्थिक या विकास सम्बन्धित मुददें हो सकते है। विधायकों का यह कर्तव्य है कि वह आम जनता के समस्याओं कों समझे और उनका समाधान करते है।

सुझाव – एक विधायक जो अपने विधानसभा क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है, उसे यह ज्ञात होता है,कि उसके विधानसभा क्षेत्र की क्या स्थिति है इसलिए उसे अपनी जनता को ध्यान में रखना चाहिए। और विधानसभा क्षेत्र के कार्यो को करना चाहिए। विधायक की कई भूमिकाए होती है। अपने विधानसभा क्षेत्र में उन्हे जनता के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और संरचनात्मक आदि मुद्दो पर विचार करना चाहिए, जो कि विधानसभा क्षेत्र के विकास के लिए आवश्यक हैं। अपने क्षेत्र कि शिक्षा,खेल जैसे गतिविधियों के लिए समय पर उचित कदम उठाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ओझा, एस.के. एंव ओझा, अर्चना, 2017, भारतीय संविधान एवं राजव्यवस्था ,बौद्धिक प्रकाशन इलाहाबाद,पृ0, 180–181
2. विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र विकास योजना दिशा निर्देश, 2013 मार्गदर्शिका, पृ0 9–11
3. https://hi.wikipedia.org/wiki
4. https://www.gkexams.com/ask/

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

The Changing Nature of Employee and Labour - Management Relationship

Dr. Niket Shukla*

Abstract - Industrialization is an indispensable demand of the modern era. Today the world is dominated by industrialization. As a social and economic process, the progress of the historic industrial revolution started. Industrialization is very important for economic development. Labour's important place in developed industries Industry and labour are interconnected the industry of labour cannot be imagined. Industrial labour is part of a large mass group, it is a labour worker. Industrial labour has become a work-force. These modern workshops of work, unprotected condition, increased work hours create confrontation condition between workers and management.

Values of labour cannot be ignored if the life of a worker is not happy and protective, then both industry and nation are impossible to develop. The study presented has analytical study of labour management - relation and mobility in the private industry, which is in reference to Bharat Aluminum Company Limited, BALCO Korba, and its efforts have been sought to know their mutual cooperation and their difficulties regarding labour-management.

Key Words - Labour, Management, Industries, Relation, Mobility.

Introduction - Industrialization is an indispensable demand of the modern era. Today, without any industrial development, a nation cannot provide enough means of life to its citizens, nor can such a nation be able to fulfill its role on the international stage. Thus industrial development has now become an era of religion. Industrialization is a symbol of prosperity, and then there will be no exaggeration in it. It is natural in such a scenario that in this race of industrialization, many nations of the world will also join the race. Many of these nations are rich in abundant natural resources. If there is any deficiency, then he has made proper use of these abundant resources without which he is also in possession of prosperity in life to lead a life of misery as a social and economic process, the historical industrial revolution refers to the use of many labour cumulative measures and machines in the production methods. After the Industrial Revolution, the use of machines in the activities of production started to develop in the industry. There was a change in relation to capital and labour. The bourgeoisie began to control the industry and the workers started working under their responses. There have been many changes in life through the Industrial Revolution, and life and work distribution and production of many aspects, politics and economic outlook influence population dynamics and distribution system etc. After this, the involvement of the workers in the management of industrial relations started to feel and started to focus on the labour management relationship. Long-term human relations have been neglected. Humans were deemed to be wise they were forced to live in an environment of torture. Recognizing problems in the reformist teachers and behaviorist managers in the long run and the combined efforts of the Enlightenment Administration and Labour Union all started to give importance. Industrial labour is a part of a vicious community, it is a labour worker, a consumer, a society, and an active means of production. Labour cannot be isolated from labour. Therefore, management should make a proper environment to generate interest in the work of workers for the fulfillment of their objectives. Labour-management relationship is meant to reduce the distance between workers and managers. Develop healthy relationships in workers and management. Based on a strong, well-organized, democratic system and responsive labour-management relationship in the labour union and industry make melodious. Worker-management relationship awakens the spirit of mutual goodwill, cooperation and self-respect in the service workers and employees. This makes sense of participation, democracy and positive decisions in the workers.

Management & Labour - Managing is a scientific and qualitative act that aims at organizing, coordinating, coordinating, and controlling the efforts of the working people in the organization to achieve the goals set by the organization. Any organization supports four things for its development. Man, currency, money, and goods. The success of behavior depends on the collective work of these four elements. But in today's passage industrial labour has become a working tool. Together with the men in capital, the workers have extended hours of work and have created a crisis for the sources of his life. These unfair work conditions of work, insecure state, increased work hours create confrontation

***Assistant Professor (Management) Dr. C. V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**

between labour and management. The study presented in the private industry has carried out analytical study of labour-management relation and mobility, which is in reference to the Bharat Aluminium Company Limited (BALCO), Korba and tried to know the labour-management relationship, their mutual cooperation and their difficulties.

Industrial Relation - Industrial relations have been given more importance under the Industrial Disputes Act 1947. In the modern industrial society, the labour apparel wants good education and motivation by increasing the wage rates and increasing the living conditions. Workers have become part of the working-machine, working with the latest machines. Therefore, they have lost their sense of self-respect and dissatisfaction and they are living a life among struggles. Between the capitalists and the workers, there is a need for better industrial relations to overcome the existing problem. Industrial relations are made up of two words, industry and relations. The meaning of the industry is from any productive work in which many people work and relationship means the productive action is from the human relations of people engaged in the work. Industrial labour is a part of a vicious community, it is a labour worker, a consumer, a society, and an active means of production. Labour cannot be isolated from labour. Therefore, management should make an appropriate environment to generate interest in the work of workers for fulfillment of its objectives.

Participation Of Labour In Management - Labour-management relationship is meant to reduce the distance between workers and managers. Develop healthy relationships in workers and management. Industry and labour is related to each other. The subject of employee participation is to participate in the right to make decisions in the activities of the entire management sector at different levels of management through an appropriate representative by the staff of an industrial organization. The system of the principles of democracy can be called industrial democracy in the field of labour and employers in the field of interpersonal relations.

Interests, Values, And Expectations - The interests, values, and expectations that workers bring to the workplace provide a useful point of departure for understanding how employees respond to managerial policies. While these psychological features vary among individuals, over time as workers move through different stages of their family and career cycle, and across nationalities, they do reveal certain similarities.

Assessing workers' interests - There is a long-standing debate between psychologists and economists over how best to ascertain worker interests and expectations. Psychologists have traditionally used survey questionnaires and interviews to measure worker attitudes, values, and beliefs. Survey findings are applied to observable workplace behaviours such as job search, turnover, absenteeism, union organizing, and withdrawal from the labour force as a means of determining how an individual worker's expressed attitudes and beliefs correspond to his actions at the workplace. Economists favour direct observation and measurement of these observable behaviours. This provides evidence of what economists call "revealed preferences"—preferences that are revealed by actions taken. Both approaches are helpful in painting a complete picture of workers' views and the workplace outcomes that result from these views.

Individual and collective action - There are wide variations in the means workers prefer to use to assert their interests at the workplace. Generally, workers with good educations and high occupational status are more likely to assert their interests individually rather than through collective bargaining. When organized, higher-level professionals such as doctors, lawyers, engineers, scientists, and middle managers tend to act through occupational associations rather than in broad-based unions with blue-collar workers.

This occupational or professional approach helps to create and reinforce the professional ties and status of these groups as well as to bring their special needs to the attention of employers. Moreover, these groups tend to rely on the power they derive from their labour market and geographic mobility along with professional norms, licensing or certification procedures, and government-passed standards as much as, if not more than, they rely on collective bargaining. Teachers and other white-collar government employees represent a significant exception to this tendency. In the United States and many European countries, some of the fastest growing and most powerful unions represent government employees (such as the American Federation of State, County and Municipal Employees). Moreover, in some European countries an increasing number of white-collar and professional employees in the private sector have organized into unions and now negotiate collectively with their employers.

It should be noted that blue-collar workers who have highly marketable skills derive individual bargaining power from their potential mobility. In general, however, blue-collar workers around the world are more likely to form unions and bargain collectively to promote and protect their interests.

Participative decision making - How strongly do workers wish to take part in decisions that affect them? Do they want to be coequals with management on issues, or are their interests more limited? Such questions have been at the centre of historic debates among industrial relations scholars, practicing managers, union leaders, and public policymakers. The evidence is surprisingly robust over time and across national boundaries: workers reveal the greatest interest in participating in decisions that affect their immediate economic concerns and those that directly affect their specific job.

Survey data collected from workers across 12 European and North American countries show that the majority of employees want a say in workplace decisions

such as how they are to perform their jobs, how jobs are organized, and how problems related to their immediate environment are solved. An equally strong majority want a say on bread-and-butter economic issues such as wages, benefits, and safety and health conditions. Only a minority favour direct participation or indirect representation in the broad strategic business decisions normally made by high-level executives or a firm's board of directors. The one strategic issue that workers demonstrate real interest in influencing, however, is the role of new technologies at the workplace. When they can see a link between strategic managerial decisions and their own long-term economic and career interests, workers want to have a voice in those decisions.

Conclusions - Bharat Aluminum Company Limited, being a company established in the private sector, has been persistent in achieving the maximum benefit with maximum production, which is a clear proof of being soft about the labour-management relationship of the company itself. The company has always been in the forefront of achieving its goals. With good industrial relations, the efficiency of its workers is increasingly growing. For this work, employees of the company have been provided attractive salaries, houses, vehicle facility, medical facility, canteen facility, etc. All these facilities have a good effect in the excellence of employees in the excitement. It is easy for this company to achieve the company's production target as a result of the excellence and excitement of the employees of the company .Efforts are made to establish smooth relations between the workers and the officials, and they do not accept labour, management differences in any way, to make the labour management relationship and industrial relations safer. The labour organizations established in the company also look forward to maintaining a labour-management relationship and encourage the workers to increase the high production quality and efficiency. The company has also been arranged for participation in management in the company. Several committees have been set up for the participation of workers in the management, where there are representatives of managers and workers and decide disputes through mutual negotiations and make efforts to establish good relations.

References :-

1. Khare P.C. And V.C. Sinha: Industrial Psychology: Rastogi Publication, Meerut, 1988-89
2. Dr. Saxena SP: Theory of Management, Rastogi Publication Meerut 1988-89
3. Dr. Baghel DS: Social Research, Vivek Prakashan, Delhi 2003
4. Prof. Gupta M.L. And Prof. D.D. Sharma: Sankasastra Literature Bhawan Prakashan Agra 1998
5. Singh Indrajit Labour Commissioner Vidyalaya Central Law Agency Allahabad 1992
6. True P.C. And V.C. Sinha: Industrial Social Science, National Publishing House, New Delhi 1986
7. Dr. Saxena RC: Nath & Company of Kalyan, Meerut 1987-88
8. Dr. Mahajan Dharmaveer and Dr. Mrs. Kamlesh Mahajan: The method of social research: Vivek Prakashan, Delhi 2004
9. Dr. Mukherjee Ravindranath: Social research and statistical, Vivek Prakashan, Delhi 2006
10. Dr. Kulashree RS: Industrial Economy, Sahitya Bhavan Prakashan Agra 1998

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

चन्द्रकान्त देवताले के काव्य में संस्कृति और मानव मूल्य

प्रो. मुकेश भार्गव*

प्रस्तावना – चन्द्रकान्त देवताले निम्न मध्यवर्गीय परिवार में पले बढ़े है। उन्होंने जीवन में काफी अभावों का सामना किया। ग्रामीण जीवन के प्रति उनके अन्त:करण में भारी आत्मीयता के दर्शन होते है। रचनाओं में ग्रामीण जीवन के भोगे हुए यथार्थ के चित्रण मिलते है।

माता पिता से उन्हेंजो संस्कार मिले है उनके जीवन को उन्होंने काफी प्रभावित किया है। उनकी माता यद्यपि अनपढ़ थी फिर भी वे अत्यंत संस्कारशील नारी थी। संगी और अभावों में जीते हुए भी उन्होंने कभी शिकायत नहीं की। उनमें असीम वात्सल्य त्याग की भावना, स्वयं भूखे रखकर अपने बच्चों को कभी भूखा नहीं सोने दिया। इतना ही उनकी ममता मात्र अपने बच्चों तक ही सीमित नहीं थी बल्कि अपने सगे संबंधियों के प्रति उनका गहरा प्रेम था।

कवि ने 'मैं कौन खास' मेंअपनी पारिवारिक स्थिति के संबंध में लिखते हैं कि–

'माँ घट्टी पीसती थी
झाडू लगाती और बर्तन मांजती थी
मुझे याद है गेहूँ फटकने, चूल्हा फूंकने
और कपड़े पछीटने की आवाज।'

कवि देवताले जी गाँव में जन्मे है, बहुत करीब से उन्होंने गाँव की जिंदगी का अनुभव पाया था। इसलिए गाँव के प्रति बेहद आकर्षण, परिवार के प्रति असीम आसक्ति नम्रता, सादगीपूर्ण रहन–सहन, जातिपाँति या ऊँचनीच के व्यवहार से दूर, मानवतावादी दृष्टि, वात्सल्यमयी पिता, कृतज्ञ बेटा, संवेदनशील पति और यथार्थवादी निडर काव्य व्यक्तित्व उनके अंतरंग व्यक्तिव के लक्षण रहे है।

वे सदा आडम्बरों से दूर और साधारण आम व्यक्ति जैसी सामान्य शैली उनके व्यक्तित्व के गुण है इसलिए 'मैं कौन खास' में लिखते हैं कि–

'मैं कौन खास
गर्वोक्ति करने जैसा कुछ भी तो नहीं है मेरे पास
संस्कृति और परम्परा के गरिमा वाले
गर्भस्थ संस्कारों की झूठ से बरी है मेरी आत्मा।'

उनकी आंतरिक चिन्तन धारा में मानवीय मूल्य की पक्षधरता ही उनकी रचनाओं में प्रस्फुटित होती है। केवल मानव के लिए उनकी आत्मीयता नहीं थी अपितु मूक पशुओं, पहाड़ों, नदियों, पेड़ पौधों तक में उनकी आत्मीयता झलकती थी।

वे अत्यंत संवेदनशील और विचारों से मानवतावादी होने से उनकी कविताओं मेंनिरीह, गरीबी बच्चों के प्रति बेहद आत्मीयता मिलती है। 'थोड़े से बच्चे और बाकी बच्चे' कविता मेंआर्थिक विषमता यथार्थ चित्रण दिखाई देता है– कुछ बच्चों के लिए धूल, गंदगी और अभाव ग्रस्थ जीवन की पीड़ा दिखाई देती है–

'थोड़े बच्चों के लिए
एक बगीचा है
उनके पाँव दूब पर पर दौड़े रहे है
असंख्य बच्चों के लिए
कीचड़–धूल और गंदगी से पटी
गलियाँ है जिनमवे
अपना भविष्य बीन रहे हैं।'

गरीब आदिवासी जो जीतोड़ मेहनत कर रहे है जिनके शोषण पर बनी है आलीशान भ्रष्ट बनिये, अधिकारियों तथा अन्याय शोषणकर्ताओं इमारतऔर उनके ऐशोआराम के साजो–सामान आज भी वैसा ही है जैसा पहले कभी था– ऐसे शोषणकर्ताओं के अत्याचार का हिसाब चुकता करने के लिए सजग करने के लिए तत्पर है शोषितों के लिए–

'कब तक देखते रह सकेंगे वे
उनकी हड्डियों पर खड़े किये है
आलीशान महल डंड़ीराम बनियों ने
करोड़ों का हिसाब चुकता करना है उन्हें
शताब्दियों का, पेड़ों का असंख्य
पीठ पर बड़े चाबुक के निशानों का
गोश्त का हिसाब, खून का
साँवली वन कन्याओं की चीख़ और सिसकियों का
नंग धडंग बच्चों के फूले हुए पेट
और बूढ़ी नंगी देहों की
आत्मा की झुर्रियों का हिसाब।'

डॉ. चन्द्रकान्त बांदिवड़ेकर, चन्द्रकान्त देवताले की कविता– 'स्वभाव' में लेखक कहते हैं कि– 'देवताले शोषितों, उपेक्षितों और पीड़ितों के पक्षधर है और उनकी काव्यात्मक भाव प्रेरित प्रतिक्रियाओं उत्स वह विशाल समूह है जिसमें अपंग, दलित और वंचितों के साथ स्त्रियाँ और बच्चे भी है। श्रमिकों के साथ मध्यवर्गीय जीवन की यातना भी देवताले का केन्द्रीय संवेदन है।'

आजादी के बाद भी आम इन्सान के भरपेट भोजन नहीं मिलता पेट भरने के लिए दर–दर की ठोकर खाना पड़ रही है और कृषि अधिकारी गोदामों मेंसड़ते अनाज की कोई फिक्र नहीं है।

'सचमुच कहीं फुटपाथ पर
लोग भूखे मरते है
यहाँ गोदामों में

* संविदा सहायक प्राध्यापक, तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अनाज सड़ता है

और ईश्वर के चन्दन की तरह
घिर/ माथे पर लगा
वे दर्पण मेंअपना
निष्कलंक चेहरा देखते है।'

'इस पठार पर' कविता मेंदेह का धंधा करने वाली बांछड़ा औरतों की मजबूरी यह है कि घर के जिम्मेदार लोग अपनी स्त्रियों को देह के धंधे में ढकेलते है और इनकी कमाई पर ही मर्द लोग पेट भरते है–

'अफीम के खतों के इलाके में बांछड़ा औरत
अपने बोदे पतियों की मौजूदगी में
देह का धन्धा करती है
और बीड़ी के लिए माचिस मांगने के बहाने
मर्द धुन्धलके मेंडूब सड़कों पर
अपनी औरतों के लिए पानी के भाव
ग्राहक ढूंढते है।'

'जहर की गाँठ' कविता मेंसामाजिक विसंगति का चित्रण किया गया है।

'नंगे पैर बटोरती लड़कियाँ गोबर
सूद पर सूद नोंचते महाजन
कटकर गिरते मांस लोथड़ों के पेड़
औरत निपट नहीं पाती उन से
खून खच्चर की अन्तहीन कथाएँ।'

'माँ' पर लिखी कविता मेंकवि ने भावुकता भरे अति संवेदनशील पंक्तियाँ प्रस्तुत की है। यह स्वाभाविक है कि 'माँ' के साथ रिश्ते मेंकवि ने बड़ी गहराई से जुड़ा होता अनुभव व्यक्त किया है।

'माँ ने हर चीज़ के छिलके उतारे मेरे लिए
देह, आत्मा, आग और पानी तक के
छिलके उतारे
और मुझे कभी मैंने भूखा नहीं सोने दिया।

मैंने धरती पर कविता लिखी है

चन्द्रमा को गिटार मेंबदला है
पिंजर मेंखड़ा कर दिया
सूरज पर कभी भी कविता लिख दूंगा।
माँ पर नहीं लिख सकता।'

चन्द्रकान्त देवताले– आग हर चीज़ में बतायी गयी थी, पृ.13

माँ अपने बच्चे के लिए कितना त्याग करती है। आज भी कवि अपनी माँ की पुरानी यादों के लिए कवि कहता है–

'वे दिन बहुत दूर से हो गये है
जब माँ के बिना परसे
पेट भरता ही नहीं था
वे दिन अथाह कुएँ मे छूट कर गिरी
पीतल की चमकदार बाल्टी की तरह
अभी भी दबे है शायद कहीं गहरे
वह मेरी भूख और प्यास को रत्ती रत्ती पहचानती थी
और मेरे अक्सर अधपेट खाए उठने पर
बाद में जूठे बर्तन अबेरते
चौके मेंअकेले बड़बड़ाती रहती थी।'

भारतीय समाज में स्त्री को अपार कष्ट झेलती है। हर घड़ी अपने काम में व्यस्त रहती है। लेकिन बदले मेंउसे उपेक्षा ही झेलना पड़ती है।

'वह औरत
आकाश और पृथ्वी के बीच
कब से कपड़े पछीट रही है
पछीट रही है शताब्दियों से
धूप के तार पर सुखा रही है
वह औरत आकाश और धूर और हवा से
वंचित घुप्प गुफा से
कितना आटा गूंथ रही है
असंख्य रोटियाँ
सूरज की पीठ पर पका रही है।
एक औरत
दिशाओं के सूप में खेलों को
फटक रही है
एक औरत
वक्त की नदी में
दोपहर के पत्थर से
शताब्दियाँ हो गई
एड़ी घिस रही है।
एक औरत अपने सिर पर
घास के गट्ठर रखे
कब से नापती जा रही है
एक औरत अनन्त पृथ्वी को
अपने स्तनों मेंसमेटे
दूध के झरने बहा रही है
एक औरत अंधेरें में
खरटि भरते हुए आदमी के पास
निर्वसन जागती
शताब्दियों से सोई है।'

लेकिन जो स्त्री पुरुष के लिए दिन रात खपती है अतीव कष्ट झेलती है इसके बावजूद उसका अपना कोई निजी व्यक्तित्व था पहचान भी नहीं रहती है–

'एक औरत का धड़
भीड़ मेंभटक रहा है
उसके हाथ अपना चेहरा ढूंढ रहे है
उसके पाँव
जाने कब से
अपना पता पूछ रहे हैं।'

कुल मिलाकर कवि चन्द्रकान्त देवताले ने मध्यवर्ग की विषमताओं का यथार्थ चित्रण किया है। उन्होंने अपनी कविताओं मेंमानवीय सरोकार प्रस्तुत किये है। इसी के संघर्षशील जीवन की करुणा गाथा प्रस्तुत की है। कवि देवताले ने स्त्री और बच्चों को विशिष्ट स्नान के रूप म प्रतिपादित किया है। सांत्रिकता ने मनुष्य की संवेदना पक्ष को अधिक यांत्रिक बना दिया है। जिससे व्यक्ति संवेदना शून्य होता चला जा रहा है। जीवन के प्रति रागात्मकता क्षीण होती जा रही है। पारिवारिक विघटन के कारण व्यक्ति निरर्थकता बोध, अकेलेपन का शिकार हो रहा है। राजनैतिक सत्ता,

साम्प्रदायिकता आदी शब्द निरर्थक प्रतीत हो रहे थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चन्द्रकान्त देवताले– आग हर चीज़ में बतायी गयी थी, पृ.23
2. चन्द्रकान्त देवताले– आग हर चीज़ में बतायी गयी थी, पृ.23
3. चन्द्रकान्त देवताले– लकड़बग्घा हँस रहा है, पृ.78
4. चन्द्रकान्त देवताले– आग हर चीज़ मेंबतायी गयी, पृ.111
5. डॉ. चन्द्रकान्त वांदिवड़ेकर– चन्द्रकान्त देवताले का कविता स्वभाव, पृ.12
6. चन्द्रकान्त देवताले– दीवारों पर खून से, पृ.45
7. चन्द्रकान्त देवताले– लकड़बग्घा हँस रहा है, पृ.28
8. चन्द्रकान्त देवताले–भूखण्ड तप रहा है, पृ.42
9. आग हर चीज़ में बतायी गयी थी, पृ.15
9. चन्द्रकान्त देवताले– लकड़बग्घा हँस रहा है, पृ.9
10. चन्द्रकान्त देवताले– लकड़बग्घा हँस रहा है, पृ.10

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

A Study of Consumer Behaviour and Preferences towards E- tailing

Dr. Suresh Shrawan Patil*

Abstract - Online shopping different from traditional shopping behavior, is characterized with uncertainty, anonymity and lack of control and potential opportunism whereas trust is a key factor to fester traditional shopping. Hence, the objective of this paper is to look into the various aspects and dimensions of online shopping and to identify those factors that affect and help the development of attitude of common people towards online shopping. The proliferation of online shopping and marketers craving for a large share of internet market necessitates an understanding of the impact of demographic characteristics on purchasing behaviour of the customer over the internet. Such knowledge will help the managers understanding and segmenting their market to implement appropriate market strategies. This study is descriptive in nature and is based on review of literature. Meta analysis is used as a tool to reach some conclusion. This study is primarily based on the secondary data and the current status of online shopping attitude and behaviour is investigated through 24 empirical articles found in journals and conference proceedings. This study explores in depth the range of beliefs held by consumer about online shopping in general and e-retailing in particular. From the Meta Analysis it has been found that relationship between attitude, intention, decision making and online purchasing are based on the theory of reasoned action which explains the relationship between beliefs, attitudes intentions and action behaviour. Customer satisfaction is considered to be separate and most important factor. One other factor website quality have been found to have direct impact on consumer satisfaction.
Key words - Online shopping, e- tailing, retailing, attitude, belief.

Introduction - In today's dynamic global scenario, both manufacturing and service organizations strive for understanding the attitude of customer so that they can orient their business strategy accordingly. With the broadening of the horizons, shortening of product lifecycles and conversion of the services to e-services, it has become very important for the organizations to understand the drivers of e-business and how it is delivered. The E-commerce transactions have shown tremendous amount of growth in the past few years. Indian e-commerce space percentage is getting higher as more and more online retailers enter the market. Internet use has grown exponentially reshaping people's informational and social needs. India has one of the fastest growing internet populations among 37 Countries. According to a recent report by internet research firm Juxt Consult, Indian market has seen 19% increase in the regular internet users this year over 2015, and boasts of an active 8-million online buyers. While mobile and computer products were the most searched last year, books, clothes and CDs/DVDs are the most bought products (Economic Times). The size of e-commerce market in India is worth around Rs 9,500 crore, out of which the pure play online shopping market is worth Rs 1,300 crore. While online shopping globally is growing at around 8-10%, in India the growth rate is upwards of 30% *(Economic Times*). The number of consumers who purchase online is expected to cross 100 million by 2017 (*Economic Times* Jan 9,2017) The report also added that demonetisation and a reduction in cash transaction, along with improvement of net banking facilities, can be opportunities for the Indian e-commerce sector The study suggested that in 2016, about 69 million consumers purchased online which is expected to cross 100 million by 2017 with the rise of digital natives, better infrastructure in terms of logistics, broadband and Internet-ready devices to fuel the demand in e-commerce. (*Economic Times* Jan 9,2017)

Since internet retailing has become an alternative channel for shoppers as well as retailers in the changing trend of environment, understanding internet consumer behaviour has assumed significance and emerged as a focal research area for academicians and marketers. Although nothing is certain in today's economy, ecommerce remains a beacon of possibility and profit. While the overall retail pie shrinks as consumers cut back their overall spend, consumers will still continue to shift their wallet share to the web channel. (Forrester 2009). Forrester also found that online retail could reach $156B in 2009. Despite the overall growth in ecommerce revenue, online shoppers now have many more options to choose from then they did just

*Associate Proffesor (Economics) KKHA Arts SMGL Commerce and SPHJ Science College, Neminagar Chandwad, Distt. Nashik (Maharastra) INDIA

a few years ago. As a result, the competition is tougher, the market more fragmented, and even small differences between shopping sites can substantially impact purchase decisions. The e-commerce businesses that will thrive going forward are those that analyze their current strategy and position, and take every step possible to stand above the crowd and improve their customers' experience.

Online shopping is a type of electronic commerce used for business-to-business (B2B) and business-to-consumer (B2C) transactions. Over the last ten years the history of online shopping has been shaped. While online shopping is commonplace now, it hasn't been around forever. The World Wide Web became popular around 1989 and 1990 and has since seen an e-commerce explosion. The number of internet users worldwide is expected to touch 2.2 billion by 2013. Simultaneously, India also got an access to internet. India is projected to have the third largest online population. In 2000 just 0.5 % of the population (or 5,500,000) appeared to be Internet users. In the year 2006 the number was 40,000,000 (or 3.6%). According to the Internet Service Providers Association of India (ISPAI) in 2006 broadband usage in India was growing 20% per month! Hence, in 2008 the number doubled and the amount of people got an Internet access reached 81,000,000 that means that 7.1% of Indians are the users of the Web. Totally the number of users in India makes up 12.5% of the whole Asia. Online shoppers and buyers starting with a base age of 18 are becoming more involved with ecommerce in their early teens.

Since the percentage of Internet users and online shoppers has increased in India with passage of time. But the share is still low. Hence, e- retailers still have a huge scope to grasp the market share. Our paper would help the e-retailers to look into the expectations of customers.

Online shopping is growing in popularity, as consumers realize the convenience and ease of shopping online. Online retail sales are estimated to grow from $172 billion in 2005 to $ 329 billion in 2010. It has been predicted that US online shoppers will double to 132 million in the next five years. Interestingly, among all the markets surveyed, India is the only one where the 18-29 year age group has the highest average spending on online shopping. In recent years, online shopping has become popular; however, it still caters to the middle and upper class and trap the oligopolistic market returns, before the e market turns out to be monopolistic. This rationale is further justified in the following section.

In order to shop online, one must be able to have access to a computer, a bank account and a debit card. Shopping has evolved with the growth of technology. According to research found in the Journal of Electronic Commerce, if we focus on the demographic characteristics of the in-home shopper, in general, the higher the level of education, income, and occupation of the head of the household, the more favorable the perception of non-store shopping. An influential factor in consumer attitude towards non-store shopping is exposure to technology, since it has been demonstrated that increased exposure to technology increases the probability of developing favorable attitudes towards new shopping channels. Hence, it is necessary to understand the most important variable (consumer attitude) with in context of online shopping. The number of profitable e-commerce companies continue to grow but not quite reached the point at which profitable dot.com is a major news story. Thus this paper may help the dot com to reach the unbeatable level.

Rationale of the study - Shopping in the normal sense includes all the tasks right from going to the shop, selecting for the product, visiting other shop for other brands, comparing brands and deciding the best and then confirming it to be brought and then buy the product. Here there is lot of work for a person to do shopping. To overcome all the tedious tasks and many of the disadvantages in the traditional shopping customers are now adapting new methods of shopping which includes shopping at their own place sitting. According to Associated Chambers of Commerce & Industry of India E-commerce is seeing a steep rise in India. A recent study by AC Nielsen, covering 38 markets and over 21,100 respondents across the globe has revealed that India's online population may be a small proportion of its population but it represents a set of consumers that offer marketers an attractive combination-greater affluence and the willingness to adopt technology faster. Online shopping in India relies upon several drives like access to information and communication, proliferation of cyber cafes and above all attitude of Indians. It seems that the subject of understanding customer attitude in India is not exhaustively explored in terms of online transactions. This paper is an attempt to understand consumer attitude of Indians towards online shopping and in turn converting the e-markets into profitable platforms. It will also help in understanding the paradigm shift in consumer attitude i.e. paradigm shift from physical market to e-market.

Research Objectives - The study tries to fulfill the following objectives:

1. To find objective review of consumer attitude towards online shopping.
2. To understand the factors influencing consumer attitude towards online shopping,
3. To identify interdependency among the identified factors.
4. To classify the factors into dependent and independent factors on the basis of dependency.

Hypotheses - To fulfill the above mentioned objectives following hypotheses are generated which are justified or tested through review of literature.

H_{01}- External Environment factors like trust, web store environment etc. have significant positive impact on online shopping attitude.

H_{02} – Demographic variables like income, age, gender etc have positive impact on online shopping intention.

H_{03} –Personal characteristics have significant positive

influence on online shopping behaviour.

H_{04} - Website quality which is also known as perceived ease to use, significantly affect the attitude and intention for shopping online.

H_{05} – Shopping motivation as a psychological factor has a significant impact on online shopping intention.

H_{06} – Intention to shop online is dependent on antecedents of consumer attitude.

H_{07} –Shopping motives i.e. goal oriented or task oriented have significant impact on online purchasing decision.

H_{08} – Consumer expectation is closely associated to consumer's satisfaction which is turn influences online shopping.

Research Methodology

Nature of Study - This study is descriptive in nature

Tool for Analysis - Meta analysis is used to review the twenty four studies and classify them to reach a conclusion. The research studies are collected, coded and interpreted. Meta analysis combines the results of several studies that address a set of related research hypothesis. Meta analysis refers to the analysis of analyses. It is used to refer to the statistical analysis of a large collection of results from individual studies for the purpose of integrating the findings. It connotes a rigorous alternative to the casual, narrative discussions of research studies which typify attempts to make sense of the rapidly expanding research literature. (Glass 1980).

In a Meta analysis research studies are collected, coded and interpreted using statistical methods similar to those used in primary data analysis. The result is an integrated review of findings that is more objective and exact than a narrative review. The human mind is not equipped to consider simultaneously a large number of alternatives. Confronted with the results of 20 similar studies, the mind copes only with great difficulty. Confronted with 200, the mind reels. Yet that is exactly the scope of the problem faced by a researcher attempting to integrate the results from a large number of studies. Meta analysis can thus help to investigate the relationship between study features and study outcomes. Meta analysis leads to a shift of emphasis from single studies to multiple studies. It emphasizes the practical importance of the effect size instead of the statistical significance of Individual studies.

About the Variables - For this paper we have analyzed twenty four empirical studies. Each of the studies under review addresses some aspect of online shopping attitude and behavior. Our goal is to develop a taxonomy representing various aspects related to online shopping attitude and behavior. We identified a total of nine interrelated factors for which empirical evidences show significant relationship. These nine factors are External Environment, Demographics, Personal Characteristics, Consumer Attitude, Website Quality, and Intention to Shop Online, Online Shopping Decision Making, Shopping Motives and Consumer Satisfaction. Four are found to be independent (Environment, Demographics, Personal Characteristics, Website Quality) and five(Consumer Attitude, Intention to Shop Online, Online Shopping Decision Making, Shopping Motives and Consumer Satisfaction) are dependent in the literature.

External Environment - Only seven out of 24 studies discuss the influence of external environment on online shopping. External environment refers to those contextual factors that impact consumer online shopping and behaviour. Trust in the internet trust plays vital role in consumer willingness to purchase online.(Jeffri A., et al 2009).Web store environment and customer service have significant impact on the willingness to buy from online retail store.(Prasad & Aryasri,2009). Rao (2006) also states that security, trust, internet speed, responsiveness significantly affect online purchaser's behaviour. Therefore, various dimensions of External Environment mentioned above have positive impact on attitude development.

Demographics - Bellman and colleagues (1999) report that the online population is relatively younger, more educated, wealthier, although the gaps are gradually closing. They argue that demographics appear to play an important role in determining whether people use the internet, however once people are online, demographics do not seem to be key factors affecting purchase decision or shopping behaviour. Mishra, S.(2009) also suggested that age and income shows a significant association with purchasing attitude. Thus various demographic variables like age, income, have preliminary positive impact i.e the impact is only till bringing the individuals in front of computers and motivating them to access internet. The demographic variables do not have significant impact on developing towards online purchasing. Hence the hypothesis that income, age, gender are positively related with online shopping intention holds untrue.

Personal Characteristics - Personal Characteristics have drawn the attention of eleven studies. Personal characteristics include internet knowledge, need specificity, cultural environment, product involvement, disposition to trust, the extent to which they would like to share values and information with others.(Bellman et al 1999, Lee et al 2000).Lion and Lin 2008 also suggested that personal innovativeness of information technology, personal privacy concern and product involvement can influence consumer acceptance of online shopping but their influence varies according to product types. Prasad and Aryasri (2009) have identified that customer service and online shopping enjoyment have significant impact on the willingness to buy from online retail stores than the perceived trust. Thus, there is a bunch of personal characteristics which influence the belief, perception and attitude of persons towards online shopping.

Website Quality - Website quality and consumers online shopping attitudes and behaviour have been closely related with each other. Website quality comprises website design,website reliability/fulfillment, website customer service and website security/privacy and these are the four

dominant factors which influence consumer perception of online purchasing (Shergill & Chen 2005). Davis (1989) defined Perceived ease of use (PEOU) as "the degree to which a person believes that using a particular system would be free of effort."Gefen and Straub (2000) investigate the impact of perceived ease of use(PEOU) and perceived usefulness(PU)on e-commerce adoption. They report that while PU affects intended use when a web site is used for purchasing tasks, PU has an indirect influence on online shopping behavior. PEOU and PU affect have a significant impact on trust in e commerce (Tang and Chi 2006). They have found that trust is the consequence of PEOU and PU and trust is also the antecedent of attitude and intention. Thus, we can say that trust which is a personal characteristic has a positive correlation with perceived ease to use which indirectly but significantly influences the attitude and intention for online shopping.

Consumer Attitude towards Online Shopping - Consumer attitude has always gained attention of researchers. Eighteen studies out of 24 studies focused on consumer attitude. Taylor and Todd (1995) describe attitude as the attitudinal belief that a behaviour will lead to a particular outcome, weighed by an evaluation of the desirability of that. A consumer's online shopping behaviour is influenced by psychological factors like motivation, perception, learning and beliefs and attitude.The present lifestyle of consumers has shown a shift from traditional store based retailing to an increased use of an internet.(Sahney et al 2008).Age and gender also play significant role in forming attitude towards online shopping. It has been found that women generally show positive attitude towards shopping online for apparel (Hirst & Omar 2007). In spite of some discouraging factors of online buying they prefer to buy online. Hence, the hypothesis that shopping motivation and other psychological factors significantly influence the shopping intention stands accepted.

Intention to Shop Online - Consumer intention to shop online is studied by four out of 24 papers. Consumer intentions to shop online refer to their willingness to make purchases in an internet store. May and Sculli(2005) have investigated that there are certain factors like web promotional offers, web search behaviour and web shopping adoption decisions influence consumer intention to purchase online. Chin A. (2009) identified that trust in the internet structure and susceptibility to social influence are significantly related to consumer willingness to purchase online. Thus, the intention to shop online is purely dependent on antecedents of consumer attitude.

Online Shopping Decision Making - Online shopping decision making includes five stages: need recognition, information search, alternatives evaluation, decision making and post purchase behaviour. Wu,S. (2003) identified that consumer characteristics are important factors which influence consumer online shopping decisions. Source P. et al (2005) also found that older online shoppers search for significantly fewer products than their younger counterparts, they actually purchase as much as younger consumers. (Rice 1997) shows that web site and its design features, such as content, layout, ease of finding, information navigability and emotional experience such as enjoyable visits are important variables which influence online consumers in their purchases. Ease of use is prominent factor in determining customer's decision to adopt a new information technology (Davis 1989).

Shopping Motives Motivational factors play a key role in determining time spent on product searching and online shopping. Motivation of consumers to engage in online shopping include both utilitarian dimensions and hedonic dimensions (Schlosser et al 1999; Venkatesh 2000; Xu and Paulins 2005). Utilitarian consumers also called goal oriented shoppers are concerned with purchasing products in an excellent manner to achieve their goals with minimum irritation; while hedonic consumers(also called experiential shoppers) are equivalent to brick and mortar window shopper for whom the shopping experience is for entertainment and enjoyment(Childers et al 2001). Hedonic shoppers were found to exist in the online environment for information gathering purpose such as ongoing hobby type searches, involvement with a product category, positive sociality and surprise and bargain hunting.(Wolfinbarger and Gilly 2001).They were more attracted to well designed online shopping that were easy to navigate and visually appealing. Thus, overall internet experience has an impact on online shopping motivation. The impact may be that novice internet users are more likely to go online for experiential attitudes while experienced internet users are more likely to use an online channel for task oriented activities. In short online experience during a shopping event is an important determinant of whether the online navigation will lead to a successful purchase transaction.

Consumer Satisfaction - The concept of customer satisfaction occupies a central position in marketing theory and practice (Churchill and Supernant 1982). Most consumers form expectations of the product, vendor, service and quality of the website that they patronize before engaging in online shopping activities. Satisfaction is important to the individual customer because it reflects a positive outcome from the outlay of scarce resources and / or the fulfillment of previously unmet needs. (Bearden and Teel 1983).Satisfaction significantly affected consumer's attitudes and their intention to purchase. Many researchers have found that quality of web retailing site is a dominant antecedent of consumer purchase. Consumer's have their own expectations from websites and vendors. When these expectations are positively met out it leads to positive development of attitude towards online shopping, leading to final decision for online purchase and landing into utter satisfaction. Hence, consumer's confirmation of expectation is positively associated with their satisfaction with online shopping.

Results and Discussion - The results of meta analysis

are summarized in table 1.The relationship between attitude, intention, decision making and online purchasing are based on the theory of reasoned action which explain the relationship between beliefs, attitudes, intentions and action behavior. Consumer satisfaction is considered to be a separate factor in this study. In addition to it, another factor, website quality have been found to have direct impact on consumer satisfaction.

Table 1 (see in next page)

After examining 24 studies on the basis of factors identified, we can integrate these factors into a relationship model. The four independent variables directly determine the attitude towards online shopping. Attitude decides the intention to shop online. The intention directs towards decision to buy or not, which finally destines to online purchasing. The end result of online purchasing is either consumer satisfaction or dissatisfaction. Consumer satisfaction can occur at all possible stages depending on consumer's involvement during the online shopping process.

Figure 1 (see in last page)

Therefore, five factors are dependent variables. The relationship among attitude, intention, decision making, online purchasing and consumer satisfaction are based on the theory of reasoned action. (Fishbein & Ajzen 1975)

Limitations and Future Research - While we have mainly focused on consumer factors in online shopping research, there are other system product/ service and vendor related factors that could be important predictors of consumer acceptance of online shopping. The limitation of this research provides the foundation for continued research to improve the understanding of the factors leading to consumer behavior and use of interactive retail shopping. One of the limitations of this study is the selection of existing studies. Owing to time limitation, we only searched a number of journals and conference proceedings. This may leave some prominent IS empirical studies out.

Our study does not show how to reduce online shopping risks, also does not meet the demand of increasing awareness of risks. Thus, possibilities of a third party service that improves reliability on a website to help instill consumer confidence can be further explored.

Conclusion - This study shed light on some future research issues. There is a need for better understanding of how to improve consumer loyalty**.** Learning about the influential factors for retaining consumers might be one of the best long term strategies for online retailers. There is much more to be learned about consumer online shopping acceptance through rigorous empirical studies. Future research may examine alternative actionable strategies to improve online shopping experience.

References :-

1. Bellman, S.,Lohse, G., and Johnson, E.(1999), Predictors of Online Buying Behaviour, Communications of the ACM Vol.42 No.12, pp32-38.
2. Bearden, W. O. & Teel, J.E.(1983), Selected Determinants of Consumer Satisfaction and Complaint Reports, Journal of Marketing Research, Vol.20, No.1, pp 21-28.
3. Childers,T., Carr, C., Peck, J. and Carson, S.(2001), Hedonic and Utilitarian Motivations for Online Retail Shopping Behaviour, Journal of Retailing, Vol. 77, pp 511-535.
4. Chin, J.A., Wafa, K.S.W.A.S., Ooi, Y.A. (2009), The Effect of Internet Trust and Social Influence Towards Willingness to Purchase Online in Labuan, Malaysia. International Business Research, Vol. 2, No. 2, pp 72-81.
5. Churchill, GA, Surprenant, C. (1982), An Investigation into The Determinants of Customer Satisfaction. Journal of Marketing Research, Vol. 19, No. 49 pp 1-504.
6. Davis, F.D. (1989), Perceived Usefulness, Perceived Ease of Use and User Acceptance of Information Techonology, MIS Vol. 13, No.3, pp 319-340.
7. Fishbein & Ajzen, I., (1975), Belief, Attitude, Intention & Behaviour: An Introduction to Theory and Research,Reading, Mass;DON MILLS, Contario; Addison-Wesley Pup.Co.
8. Gefen, D., and Straub, D.(2000), The Relative Importance of Perceived Ease of Use in ISs Adoption: A study of E-Commerce Adoption, Journal of the Association for Information Systems Vol.1 No.8, pp 1-28.
9. Glass, G. V., McGraw B., Smith, M.L.(1981), Meta Analysis of Research: Methods of Interactive Analysis, Final Report, Boulder: University of Bolorado, pp 340.
10. Glass, G. V., et al(1980), Integration of Research Studies: Meta Analysis in Social Research, Beverly Hills(CA): Sage Publications, pp 279.
11. Gupta A., et al,(2004), An Empirical Study of Consumer Switching from Traditional to Electronics Channel: A Purchase Decision Process Perspective, International Journal of Electronic Commerce, Vol. 8, No.3,pp 131-161.
12. Hirst, A. and Omar, O.(2006), Assessing Women's Apparel Shopping Behaviour on the Internet, Journal of Retail Marketing Management Research, Vol. 1, No. 1, pp 32-40
13. Lee, J., Kim, J., and Moon, J.,Y.(2000), What Makes Internet Users Visit Cyber Stores Again? Key Design Factors for Customer Loyalty.CHI Letters Vol.No.1, pp 305-312.
14. Lian W., J. and Lin, M., T(2008).,Effects of Consumer Characteristics on their Acceptance of Online Shopping: Comparison Among Different Products Types,

a. **Computers in Human Behavior,** Vol. 24, No.1, pp 48-65.

15. Mishra, S. (2007), Consumer Attitude Towards Online Shopping For Clothing, The ICFAI Journal of Marketing Management, Vol VI, No.1, pp 32-40,
16. Prasad, J.S., and Aryasri, A. R. (2009), Determinants of Shopper Behavior in E Tailing: An Empirical Analysis, Paradigm, Vol. XIII, No.1, pp73-83.
17. Rao, V., D. (2006), Determinants of Purchase

Behaviour of Online Consumer, Osmania Journal of Management, Vol. II, No.2, pp 1-6,.

18. Ray B.(2009), Changing Attitude of Indian Consumer towards Online Shopping, Research Report by Mohd. Mohsin Islam to Prof. B. Ray (Amity Business School).
19. Rice, M., (1997), What Makes Users Revisit a Website, Marketing News, Vol.31, No.6, pp 6-23.
20. Rishi, J., B.(2008), An Empirical Study of Online Shopping Behavior: A Factor Analysis Approach, Journal of Marketing & Communication, Vol.3, No. 3,pp 40-49.
21. Rose, M.G. and Straub, W.D.(2001), The Effect of Downloaded Time on Consumer Attitude Toward the E -Service Retailer, E-Service Journal,Vol.1,No.1,pp 55-75.
22. Sahney, S., Shrivastav, A.,& Bhimalingam, R. (2008), Consumer Attitude towards Online Retail Shopping in Indian Context, The ICFAI Journal of Consumer Behaviour, Vol 3, No.4, pp 34-68.
23. Schlosser, A., Shavitt, S.,Kanfer, A.,(1999), Survey of Internet Users Attitude towards Internet Advertising, Journal of Interactive Marketing, Vol.13, No.3,pp 33-54.
24. Seock, Y.K., Norton, M. (2007), Attitude towards Internet Web Sites, Online Information Search, and Channel Choices for Purchasing, Journal of Fashion Marketing and Management , Vol.11, pp 571 – 586.
25. Shergill, S.G., and Chen, Z.,(2005), Web- Based Shopping: Consumers Attitudes towards Online Shopping in New Zealand, Journal of Electronic Commerce Research, Vol.6, No.2, pp 79-94.
26. So,May C.W., Wong D.N.T., and Sculli D.,(2005), Factors Affecting Intentions to Purchase via the Internet, Journal of Industrial Management and Data Systems, Vol. 105, No. 9, pp 1225-1244,
27. Source,P., Perotti, V. and Widrick, S. (2005), Attitude and Age Differences in Online Buying ,International Journal of Retail & Distribution Management, Vol.33, pp 122 – 132.
28. Suki, M.B.N.(2004), Consumer Innovative Online Shopping Behaviour: A Review, Univesitiy Tenaga, National, International Business Management Conference .
29. Tang, W. T. and Chi, H., W.,(2006)The Role of Trust in Consumer Online Shopping Behavior: Perspective of Technology Acceptance Model, Ph.D. Dessertation, National Dong Huwa University, Taiwan.
30. Tanwar, S.(2009), Online Shopping: A New Generation of Shopping: A Study in Indian Perspective, Amity Business School, Amity University, Rajasthan, Jaipur.
31. Taylor ,S.,& Todd, P.A.(1995), Understanding Information Techonology Usages:A Test of Competing Models, Information Systems Research, Vol.6, No.2, pp 144-176.
32. Venkatesh, V., and Morris, M.G.(2000), Why Don't Man Ever Stop to Ask for Directions? Gender, Social Influence and their Role in Technology Acceptance and Usage Behavior, MIS Quaterly, Vol. 24, No.1, pp 115-139.
33. Wolfinbarger, M., and Gilly,M.(2001), Shopping Online for Freedom, Control And Fun, California Management Review, Vol. 43, No. 2, pp 34-55.
34. Wu, S. (2003), The Relationship between Consumer Characteristics and Attitude toward Online Shopping, Journal of Marketing Intelligence & Planning, Vol 21, pp 37 – 44,.
35. Xu,Y. and Paulins,V.A.(2005),College Students Attitude towards Shopping Online for Apparel Products: Exploring a Rural versus Urban Campus, Journal of Fashion Marketing and Management, Vol. 9, No.4, pp 420-433.
36. Zhou, L., Dai, L.,Zhang, D.,(2007), Online Shopping Acceptance Model- A Critical Survey of Consumer Factors in Online Shopping, Journal of Electronic Commerce Research, Vol. 8, No.1,pp 41-62.
37. Zhang, P., and Li, N.,(2002), Consumer Online Shopping Attitudes and Behavior: An Assessment of Research, Eight Americas Conference on Information Systems, pp 508-517.
38. "Online retail consumers to cross 100 million by 2017: ASSOCHAM-Resurgent India study " Economic Times, January 9,2017

Table 1: Analysis of Factors in Review of Studies

Nature of Variable	Factor	Count	Number	% of 24
Independent	External Environment	xxxxxxx	7	29%
Independent	Demographics	xxxxxxxx	8	33%
Independent	Personal Characteristics	xxxxxxxxxxx	11	46%
Independent	Website Quality	xxx	3	13%
Dependent	Consumer Attitude towards Online Shopping	xxxxxxxxxxxxxxxxxx	18	75%
Dependent	Intention to online shopping	xxxx	4	17%
Dependent	Online shopping decision making	xxxxx	5	21%
Dependent	Shopping Motives	xxxxxx	6	25%
Dependent	Consumer satisfaction	xx	2	8%

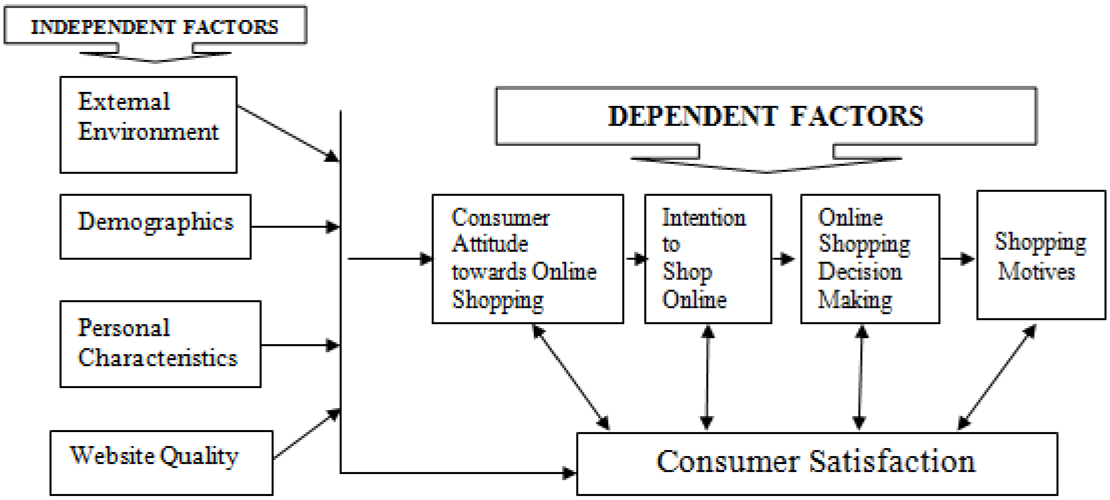

Figure 1: Relationship between Independent and Dependent Variables

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

A Study of Customer Satisfaction in Public Sector Banks

Arti Padiyar* Dr. C.M. Mehta**

Abstract - Satisfaction is a main concern of both customer and the bank. In today's scenario every public sector bank wants to satisfy its customer. On the basis of customer satisfaction the goodwill of the bank is maintained. Once the customer is satisfied with the services provided by bank than the ongoing of a bank is very easy. The reputation of bank is mainly affected by the customer. As in this research a sample of customer in 10 Public sector banks in Ratlam district with 6 tehsil is included. The method of testing the hypothesis is the ANOVA test using Likert's 5 scale.
Keywords- Customer, goodwill, satisfaction, public sector bank, services etc.

Introduction - In today's modern scenario customer satisfaction is a main element in any type of bank. As once the customer is satisfied with the banking services which are provided by the bank, creates the positive impression. In public sector banks also the first and foremost need is the customer satisfaction. To satisfy the customer a bank can play an important role. As when the customer firstly enters into a bank they thought a lot of questions in their mind. If the work that a customer wants to do with the help of bank is easily achieved then the customer is satisfied. If bank provides an easy and ongoing way to the customer that they can easily perform their task.

When an account is opened to a person and a bank passbook is issued by bank to that person they become called a customer. Once a person becomes a customer of a public sector bank or any bank they feel safe for their future and money. The bank provides a better facility to the customer as and when they required. The customer thinks that if any problem arises regarding money lending or advancing or depositing, the bank will manage all his money related problems. So, the customer feels a safety that somebody is here for take care of him. Then that customer feels a sense of satisfaction with the bank.

Meaning of customer satisfaction- Customer satisfaction is a feedback of a customer to bank regarding the services that are provided by the bank. Using this feedback a bank manages all its activities related to the customer. A bank learns how satisfied its customers are with its services. So, the feedback of a customer is necessary for the improvement or innovative work in bank. A bank's wealth is maintain with the feedback of a customer that they are satisfied or not with the services provided by the bank.

Measure of customer satisfaction allows a business to:

a) Compare the performance of the bank relative to its competitors.
b) Trends of determining changes actually results an improvement.
c) Discover areas for improvement in bank.
d) Discover customer satisfaction of how well the bank is performing in meeting the customer needs.

Factors affecting customer satisfaction - As we know that customer satisfaction is a primary work or function of any bank. Some factors that affect the customer satisfaction are:

a) Friendly and comforting atmosphere in bank.
b) Polite and humble behavior of employees in the bank.
c) An employee must have depth knowledge of services provided by bank.
d) Customers are served timely.
e) Bank gives good return on funds and better interest on deposits.
f) Implementation of human resource department and human resource management to satisfy its customers.
g) Bank employees must be helpful.
h) Bank keeps complete safety of funds.
i) Good infrastructure facility.

Importance of customer satisfaction - For the success of any organization, business or bank, customer satisfaction is needed. Customer satisfaction is important to satisfy the needs and wants of the customer. Customer satisfaction is basically depends on loyalty and retention that is to be emphasized by many researchers. The impact of customer satisfaction provides a positive effect on bank's profitability. There should be a connection between the customer satisfaction, loyalty and retention. So, for an ongoing running of a bank or institutions the customer satisfaction is more important.

Need and scope of the study - Customer satisfaction is

*Research Scholar (Commerce) Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
**HOD & Prof. (Commerce) Govt. Arts Commerce & Science College, Nagda, Ujjain (M.P.) INDIA

needed for better performance performing in bank. For the success of an institution or bank customer satisfaction is needed. With relation to this the scope of study is determined for this research. The scope of study is limited to Ratlam district using 10 public sector banks.

Research methodology - Research methodology is a basic idea of solving a problem. The methodology which is used to solve the problem in research is called research methodology. It is a process by which the right hypothesis and different tests are applicable to that research. It is a way to know why a particular test is applicable to the particular research.

The object of the research is clear as it is stated earlier. According to the research we find the customer satisfaction in public sector banks. For this purpose questionnaires are prepared. There are 457 customers and 15 questions are asked to each customer. So, overall 6855 views of customers are obtained in Ratlam district. These are fulfilled by the customer of the bank. Methods of data collection include both the primary data and secondary data. The primary data is collected through questionnaire which is filled by the customer. It is the view of customer that they are satisfied with the banking services or not. The questionnaires are prepared using Likert's 5 scale with 5 terms named excellent, good, moderate, bad and worst. The secondary data is from published or unpublished source. Using these types of data collection the research is easy.

There are some problems occur in this research study. The research is wide as it covers the Ratlam district using 10 public sector banks. So, the place where the bank is situated is far and not much facility is available for conveyance. Sometimes it is difficult to convince the customer to fill the questionnaire. At that time we try our level best to convince the customer. Sometimes they don't understand for which work we are coming etc. like all these problems are happened in data collection. The limit of the study limits the jurisdiction of the research. The limit assigns the area mainly the district where the research is done.

Sample design - The sample design of the research work is 10 public sector banks. These 10 banks covered the tehsils of the Ratlam district. A sample of 45 to 47 customers is taken in each bank. So, approximately 10 banks cover 457 customers. The design of the sample is about 457 customers in Ratlam district. But this sample design is evaluated using Likert's 5 scales. Likert's 5 scale includes the 5 basic terms named excellent, good, moderate, bad and worst.

Tools of analysis - After the sample design is prepared tools are used for analysis of research. In this research we use the ANOVA test. The ANOVA test refers to the analysis of variance. This test is used where the samples are more than two. The research samples are more than two that is why ANOVA test is applied. This test include between sample variance and within sample variance. To test the samples using ANOVA test the formula is-

$$Fc = \frac{\text{between sample variance}}{\text{within sample variance}}$$

According to Likert's 5 scale the above three terms named excellent, good & moderate indicates positive nature and below two terms indicates the negative approach or nature. This tool is applied on the table given below of 10 public sector banks in Ratlam District. It is an analysis of whether there is a customer satisfaction in Ratlam district or not. The hypothesis is

Ho: There is no significant customer satisfaction in bank (Null Hypothesis)

Against,

H1: There is a significant customer satisfaction in bank (Alternate Hypothesis)

The analysis table shows whether customer is satisfied with the banking services.

Table 1 (see in next page)

In Ratlam District

$$Fc = \frac{\text{between sample variance}}{\text{within sample variance}}$$

$$= \frac{6855}{5}$$

$$= 1371$$

Here in Ratlam District the table value is more than the calculated value. So, the null hypothesis Ho is rejected and the alternate hypothesis H1 is accepted.

According to % in Ratlam district 99% customer are satisfied with the banking services in public sector banks and only 1% customer are unsatisfied. So, it indicates the positive nature.

Results and discussion - From the above analysis using Likert's 5 scale and tool ANOVA test with 5 terms excellent, good, moderate, bad and worst. The result of the above research is that there is a significant customer satisfaction in Public sector banks. Hence our alternate hypothesis is accepted.

Suggestions - There are some suggestions for the bank. The staff should be increased. There is a proper channel of communication between bank and the customer. Efficient facilities are provided by bank to customers.

Conclusion - According to the above research it is concluded that the customer's are satisfied with banking services provided by bank. From the above table it is clear that 99% customer's are satisfied with the banking services and only 1% customer are not satisfied. Thus we say that the customer satisfaction level of customer is high and it indicates the positive result. For the 1% customer which are not satisfied the above suggestions are taken into consideration.

References : -

1. Kothari C.R. & Garg Gaurav : **'Research Methodology methods & techniques'** 2014, New Age International (P) Limited Publishers
2. Ojha Shiv Kumar & Ojha Archna **: 'Indian Economy'** Bodhik Prakashan ki Abhinav Prakarti

3. Sudha Dr. G.S., Sharma Dr. R.S., Sharma Dr. V.K. : **'Functional Management'** 2009 Ramesh Book Depo, Jaipur, New Delhi
4. Jain Dr. S.C. : **'Commercial Bank Management'** 2010 Kailash Pustak Sadan, Bhopal

Websites: -

1. www.google.com
2. www.Researchgate.net
3. www.wekepedia.com

Table 1 : Analysis table of customer for satisfaction in public sector banks in Ratlam District

Tehsil/ Particular	**Ratlam(02)**	**Jaora(02)**	**Alot(02)**	**Sailana(02)**	**Piploda(01)**	**Bajana(01)**	**Total of Ratlam District(10)**	**% of Distt. (10)**
Excellent	479	209	296	226	121	230	1561	23
Good	391	541	547	728	252	279	2738	40
Moderate	510	571	460	426	301	194	2462	36
Bad	-	40	25	-	01	02	68	1
Worst	-	04	22	-	-	-	26	-
Total	1380	1365	1350	1380	675	705	6855	100

(Study based on survey)

****

Physio Chemical Study of Water in Ganga at Kanpur

Dr. Shikha Yadav*

Abstract - Water is both an essential and the most abundent substance in protoplasm, it might be said that all life is aquatic (odum-1971). The water resources on earth are restricted and there is ever growing demand for water with explosion of population growth, rapid urbanization, in detribalization etc. Discharge of municipal and industrial effluents agrochemicals and domestic waste in ganga at jajmau Kanpur brings about the undesirable change in physical, chemical or biological characteristics of water study of water quality at jajmau, bithoor and Ranighat includes Temperature, electric conductivity, hydrogen ion concentration free CO2, Dissolved oxygen, Totel coliforon colonies E. Coli etc. The value of electricalconductivity range from 625 to 2670ìs/cm 1555 to 3840 ìs/cm and 45 to 1020 ìs/cm at jajmau, Bithoor and Ranighat respectively.

Introduction - Water is the most key resource required to sustain the life on this planet. The river ganga is most important river in India. The quality of river at any point reflects several major influences including atmospheric inputs, climate conditions and anthropogenic inputs.Ganga river has been facing the curse of pollution for a long time because of unplanned development, urbanization, industrialization, population density and agriculture activities. In Kanpur ganga is always considered to be a holy river but on the other side it is also true that now a days getting very polluted by the people of its own city. The tannery industry has converted the ganga river into a dumping ground. It discharges different type of waste in the form of liquid effluents.

The major causes for water quality degradation are:

1. Increase in population of towns located on the river bank, resulting in increased domestic pollution loads;
2. Rapid industrialization in the river catchment area, discharge of treated and untreated industrial effluents;
3. Decrease in flow of river due to intensive abstractive use of surface and ground water in the catchment area.

Many studies have been conducted on river ganga for water quality assessment by analyzingvarious physico-chemical parameters. According to recent reports of state pollution control board delayed monsoon had increased the pollution in ganga and the situation would be worse in winter, water at Bithoor the pain where the ganga enters Kanpur city is quit clean but the river get polluted to downstream. A report states that at jajmau the stretch of the ganga in the city is the most polluted. The dissolved oxygen (DO) level at Bithoor is 8.6 mg/L which decrease to 6.8mg/L at jajmau. The acceptable level of DO for drinking water reservoir is 4 mg/L. Govt of India launched the Ganga action plan, an environmental project to improve the river water quality. It was the largest single attempt to clean up a polluted river anywhere in the world and has not achieved any success in terms of preventing pollution load and improvement in water quality of the river.

Experimental - Water sample were collected from different sites namely as Bithoor, ganga barraj, paramath ghat, Rani ghat and jajmau .In present investigation, physio chemical parameters of water samples of river ganga at Kanpur was carried out. The physical parameters like pH, Temperature, DO and other chemical parameters likeTDS, BOD, COD, Chlorides, and turbidity are recorded.

The observed values of different physio chemical parameters like pH, Temperature, Turbidity, Chloride, TDS, BOD, COD,of samples were compared with standard values recommended by world health organization.

Temperature: Temperature has been observed as one of the most important parameter that effluence all the physical and chemical properties of water. It never remains constant in river due to changing environmental conditions. The temperature varied from 16°C to 33°Cto ganga at dif ferent sites.

pH Value: One of the most important factor for water quality at pH indicates the intensity of acidic or basic character at a given temperature.

Chlorides: Chloride is one of the major inorganic anion in water. It is stored in most fresh water algal cells. Contamination of water from domestic sewage can be monitored by chloride of concerned water bodies.

Dissolved Oxygen(DO): Dissolved oxygen value is remarkable in determining the water quality criteria of an aquatic system. D.O. concentration decrease in water during summer season due to decreased rate of oxygen diffusion from atmosphere to water.

Biological Oxygen Demand (BOD): Biological oxygen

*Asst. Professor (Chemistry) Govt. Degree College, Shivrajpur, Kanpur (U.P.) INDIA

demand is a measure of oxygen in the water that is required by the aerobic organisms. The water quality monitoring found almost all rivers with high levels of BOD. For context, a water sample with a five days BOD between 1 and 2 mg/L indicates a very clean water. 3 to 8 mg/L indicates a moderately clean water, 8 to 20 indicates borderline water and greater than 20 mg/Lt indicates ecological unsafe polluted water.

Dissolved Oxygen (DO): Dissolved oxygen indicates the oxygen content available in the water. DO is essential for the major part of the biota in ecosystem and for the aerobic degradation of organic pollution. High value of DO were observed in the upstream stretch of river. D.O. ranged between 6.8 mg/L to 8.8 mg/L for different sites of water in ganga river.

Chemical Oxygen Demand (COD): Chemical oxygen demand is a valuable water quality parameter. COD values convey the amount of dissolved oxidisable organic matter including the non biodegradablematters present in it. COD is a measure of the oxygen equivalent of the organic matter in a water sample that is susceptible to oxidation by a strong chemical oxidant such as dichromate.

Total Dissolved Solids(TDS): A TDS meter indicates the total dissolved solids (TDS) of a solution (the concentration of dissolved solid particles). Dissolved ionized solids such as salts and minerals increases the electrical conductivity (EC) of asolution. According to world Health Organization, TDS level less then 300 mg/L is considered as excellent, between 300 and 600 mg/L is good, 600to 900 mg/L is fair, 900-1200 mg/Lt is poor and TDS level more than 1200 mg/L is unacceptable.

Conclusion- All the above observation reveals that all these water bodies are polluted but varied in magnitude of pollution. The state of Bithoor appears to be extremely sad since the colour and odor are undesirable and Ph, TDS, hardness and bacterial load for exceed the permissible level. Hence not fit for any purpose and required a through bottom cleaning. In jajmau the bacterial load exceeded the acceptable limits of swimming water (1000 bacteria/100 ml) other parameter were also not withinthe limits of WHO guidelines and indian standards. The study of highlights the need for awareness on the part of local residents and environmental health authorities to curb dangers in heart in poor sanitary and contaminated water.

References :-

1. Kumar, A. and Bahadur Y. Physicochemical studies on the pollution potential of river kosi at Rampur (india) world J. Agric. Sci. 5(1): 01-04.(2009).
2. Singh R.P. and Mathur p. investigation of variations of physico chemical characteristics of freshwater reservoir of Ajmer city,Rajasthan. Ind. J. Env. 9: 57-61 (2005).
3. Beg, K. R. , Ali S. (2008), Chemical Contaminants and Toxicity of Ganga river sediment from UP and Down stream area at Kanpur. American Journal of Environmental Sciences 4(4): 362-366.
4. Sharma H.R. Chettry D., Kaushik A. and Trivedi R.C. Variability of organic Pollution of River Yamuna in Delhi, Jr. of Env. and Pollu. 7(3), 185-188 (2000).
5. Central Pollution Control Board, Biomapping of rivers, Parivesh Newsletter, IISN: 0971-6025, 5(4), March (1999).
6. Chang, H, Water research, 42 (13) : 3285-3304 (2008).
7. Khwaja A. R., Singh, R. and Tondon S.N. Environment Monitoring assessment, 68(1): 19-35 (2001).
8. Mamais, D., Jenkins, D and Prrr, P. Water research, 27(1): 195-197 (1993).
9. APHA, AWWA, WPCF, Standard methods of chemical analysis of water and waste water, 21th ed. Washington DC (2005).
10. Usha N.M., Jayaram, K.C. and Lakhmi Kantha, H., Proceedings of Tall 2007: The 12th world lake Conference: 1737-1741 (2008).

Table 1 : Physiochemical characteristics of polluted Ganga water sample

Physico-chemical properties	Bithoor	Ganga Barraj	Paramath ghat	Rani ghat	Jajmau
pH value	8.00	7.81	8.28	8.66	7.70
Temp. °C	23.6	25.40	27.65	26.78	23.70
D.O (mg/L)	8.8	7.42	6.81	5.69	6.80
B.O.D (mg/L)	13.0	12.92	10.00	11.25	12.23
Chloride (mg/L)	120.1	100.34	117.2	129.25	180.43
T.D.S (mg/L)	640.25	750.28	911.00	930.39	1009.32
COD	130	134.62	147.12	143.2	164.28

****

महिदपुर युद्ध की वीरांगना 'भीमाराजे होलकर'

संध्या गर्ग *

प्रस्तावना - नारी शौर्य की गाथाओं और परम्पराओं में मालवा-होलकर राजवंश की भामा राजे होलकर का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। अंग्रेजों से अपने राज्य की रक्षा के लिए भीमा राजे होलकर ने फिरंगियों से महिदपुर का युद्ध लड़ा था। होलकर राजवंश के प्राप्त अभिलेखों के आधार पर ज्ञात होता है कि भीमा राजे सुप्रसिद्ध योद्धा एवं महाराज-मालव केसरी यशवंतराव होलकर (प्रथम ई.1799-1811) की राजकन्या थी। भीम राजे की माता का लाड़ाबाई होलकर था, जो महाराजा यशवंतराव होलकर की ब्याहता पत्नी थी।[1]

भीमा राजे का सर्वप्रथम उल्लेख उस समय प्राप्त होता है, जब दौलतराव सिन्धिया ने होलकर के अंतपुर की राजप्रमुख महिलाओं को कैद कर लिया था। भीमा राजे भी उन्हीं बन्दी महिलाओं में सम्मिलित थी। जोधपुर से लिखा हुआ अपने पिता महाराज यशवंतराव होलकर के नाम एक पत्र भी भीमा राजे का उपलब्ध होता है।[2]

भीमा राजे का दुर्भाग्य ही था कि राजवंशीय वैभव की गोद में जन्म लेने के बावजूद भी वह माता-पिता के लाड़-प्यार और दुलार से वंचित रही। भीमा राजे की प्रारम्भिक शिक्षा के विषय में भी इतिहास मौन है। माता की असामयिक मृत्यु और पिता के निरन्तर सैन्य अभियानों, सैनिक गतिविधियों में संलग्न रहने के कारण भीमा राजे शिक्षा-दीक्षा से वंचित रही होगी।

होलकर राज्य में व्याप्त उस समय के संक्रमणकाल में तथा साथ ही अन्त:पुर की राजमहिलाओं के निरन्तर चलने वाले जानलेवा षड़यंत्रों और सैन्य वातावरण के युग में नारी शिक्षा की समुचित व्यवस्था की कल्पना करना ही व्यर्थ है।

महाराजा यशवंतराव होलकर अपने जीवन काल में ही अपनी लाड़ली पुत्री भीमा राजे को दाम्पत्य सूत्र में बांध देना चाहते थे। होलकर राज्य के संस्थापक सूबेदार मल्हारराव होलकर (प्रथम ई.1728-1766) के शासन काल से ही होलकर और बुले (बोलिया) परिवार के बड़े मधुर और घनिष्ठ संबंध थे।[3] लगभग 18 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में बुले परिवार के मुखिया विठोजी बुले, होलकर राज्य में सूबा बनकर आये थे। पूर्व काल में वे पेशवा बाजीराव (प्रथम) के विश्वासपात्र सैन्य अधिकारी थे और उनकी सेवाओं से अभिभूत होकर पेशवा ने उन्हें 'सरदार' की उपाधि से विभूषित किया था।[4]

12 फरवरी, 1809 ई. के फागुन माह में इसी बोलिया परिवार के सरदार गोविन्दराव बोलिया (द्वितीय) के साथ भीमा राजे का विवाह सम्पन्न हुआ था।[5] महाराजा यशवंतराव होलकर के जीवन का यह प्रथम मांगलिक कार्य था, अत: विवाह के उक्त अवसर पर महाराजा होलकर ने बड़े उमंग और उत्साह के साथ पिता का दायित्व निभाया था। कन्या के विवाह के अवसर पर रियासतों के गणमान्य ठिकानेदारों और अतिथियों को निमंत्रित किया गया था।[6]

महाराजा यशवंतराव होलकर ने अपनी राजपुत्री के विवाह के अवसर पर की जाने वाली आतिसबाजी के लिए 2000/- रूपये के फटाके मंगवाये थे। लगभग 14 हजार रूपये के मेवे, मिष्ठान और मिठाइयां क्रय की गई थी। कन्यादान के अवसर पर पुत्री को दी जाने वाली भेंटों में रत्नों के साथ 200 तोला सोना, 07 सेर चांदी के बहुमूल्य आभूषण भेंट किये गये थे।[7] इसके अतिरिक्त बुन्देलखण्ड स्थित 'कूंच' (कोंच) की दो लाख रूपये की जागीरी भी भीमा राजे को प्रदान की गई थी।[8] वर्तमान में कूंच (कोंच) का यह परगना जिला-जालौन (उत्तरप्रदेश) के अन्तर्गत आता है।[9]

होलकर राजवंश की महिलाओं पर दुर्देव की कु-दृष्टि सदैव ही बनी रही और राजवंश की महिलाएं वैवाहिक जीवन का सुखोपभोग लम्बे समय तक नहीं कर सकीं, फिर भला भीमा राजे का वैवाहिक जीवन नियति को कैसे रास आता? दिसम्बर 14, 1815 ई. को भीमा राजे के पति सरदार गोविन्दराव बोलिया का निधन हो गया और भीमा राजे सौभाग्य अलंकरण से विहीन हो गई।[10] आज भी इन्दौर में श्रीकृष्ण टॉकीज के निकट सरदार बोलिया की अति सुन्दर और प्रभावशाली छत्री उसकी स्मृति को अपने अंक में संजोये हुए खड़ी है।

दुर्भाग्य की मारी भीमा राजे सन्तान सुख से भी वंचित रही थी और कालान्तर में भीमा ने एक पुत्र को गोद लिया था, जो होलकर इतिहास में अप्पा साहेब बोलिया के नाम से विख्यात हुआ।

भीमा राजे के चरित्र का सबसे उज्जवल पक्ष तो यह था कि वैघव्य की स्थिति में रहते हुए भी उसने होलकर राज्य की रक्षा के लिए महिदपुर के युद्ध (21 दिसम्बर, ई.1817) में फिरंगियों के विरूद्ध तलवार उठाई थी।

उस समय सम्पूर्ण होलकर राजवंश संक्रमणकाल से गुजर रहा था। अल्पवय शासक मल्हारराव होलकर (द्वितीय) की 20 वर्षीया बहन भीमा राजे महिदपुर युद्ध के मैदान में एक घोड़े पर आरूढ़ थी और अंग्रेजों का युद्ध के लिए ललकार रही थी। उसकी वाणी में सिंहनी की गर्जना थी। महिदपुर के युद्ध में तलवार हाथ में लिए फिरंगी सेना पर बिजली की तरह कौंध पड़ी। जिधर उसका खड़ग चल जाता, उधर फिरंगी सेना काई की तरह फट जाती थी। महिदपुर के युद्ध में वीर पिता की वीर सन्तान ने असाधारण वीरता का परिचय दिया था।[11]

ई. 1818 मन्दसौर सन्धि के पश्चात् भी वह अपने बन्धक होलकर राजवंश की स्वतंत्रता के लिए शक्ति जुटाती रही और अंग्रेजों से संघर्ष लेने के लिए तत्पर बनी रही। धार के पड़ोसी शासक की मदद से उसने पुन: अंग्रेजों से युद्ध के प्रयास किये किन्तु बाहुबली फिरंगी शक्ति के आगे उसे

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

घुटने टेकने के लिए विवश होना पड़ा। 10 फरवरी, सन् 1818 को अंग्रेज अधिकारी विलियम कैर के सम्मुख भीमा राजे ने अपना आत्म-समर्पण कर दिया।[12]

ई.1857 को स्वाधीनता संग्राम के चलते हुए नवम्बर, ई.1858 में 'महिदपुर युद्ध की इस वीरांगना' की जीवन लीला समाप्त हो गई और भीमा राजे की जागीर कूंच को अंग्रेजी साम्राज्य में मिला लिया।[13]

वीरांगना भीमा राजे सदगुणों का निचोड़ थीं, राजवंशीय राजकुमारियों में उसका अपना पृथक से विशेष स्थान है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. नरहर रघुनाथ फाटक : महाराजा यशवंतराव थोरले, पृ. 147
2. - वही -, पृ. 128
3. एम.डब्ल्यू. बर्वे : हिज हायनेस महाराजा तुकोजीराव (द्वितीय), रूलर ऑफ इन्दौर, पृ. 253
4. - वही -, पृ. 249 - महाराज कुमार डॉ. रघुबीरसिंह के संग्रह में 'बोलियांची बखर' संग्रहित है, जिसमें बोलिया परिवार के इतिहास पर पृथक से प्रकाश डाला गया है।
5. एम.डब्ल्यू. बर्वे, - वही -, पृ. 249
6. बोलजर पेपर्स - पेपर्स फ्राम दि इण्ड़िया ऑफिस रेकाड्‌र्स, जिल्द 4, पृ. 1607-08
7. - वही -
8. सर देसाई : मराठी रियासत, उत्तर विभाग, भाग 3, पृ. 444
9. इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्ड़िया, जि. 16, पृ. 24 - कूंच का यह परगना भीमा राजे की मृत्यु पर्यन्त बोलिया परिवार के अधिकार में बना रहा, किन्तु ई.1857-58 में परगने को ब्रिटिश सरकार ने हस्तगत कर लिया था और बदले में भीमा राजे के उत्तराधिकारी को 20 हजार रूपये की पेंशन स्वीकृत की गई थी। सी.बी.वरोज : रिप्रेजेन्टेटिव्ह मेन ऑफ सेन्ट्रल इण्ड़िया, पृ. 6
10. एम.डब्ल्यू.बर्वे : - वही -, पृ. 255
11. डॉ. मथुरालाल शर्मा : मराठों का संक्षिप्त इतिहास, पृ. 462
12. इन्दौर स्टेट गजेटियर, पृ. 79
13. पी.जे.व्हाइट : फायनल रिपोर्ट ऑफ सेटलमेंट ऑफ परगना कालपी इन व्हिच इज कॉरपोरेटेड मेमायर ऑफ जालौन - 1874, पृ. 41

****

Financial Analysis History Of Pharmaceutical Industry In India

Dr. Vinay Kumar*

Abstract - With the rapid growth of the trade commerce and industries, the numbers of publicly traded companies are considerably increasing in India. Pharmaceutical is an important adjunct of industrialization in the country but the net profit of this industry has decreased for the last few year. This paper attempted to the review the financial performance of this industry to test its strengths and weakness. This study is based on both primary and secondary data. The collected data have been tabulated, analyzed and interpreted with the help of different financial ratios, multivariate discriminate analysis (MDA as developed by prof. altman and statiscal tools like mean, standard deviation (SD), confficient of variance (CV and tests, etc. It was observed from the study of the financial statement of the pharmaceutical industry that the profit earning capacity, liquidity position, financial position and the performance of the most of the pharmaceuticals are not in sound position and it was also observed that the most of the pharmaceuticals has a lower level position of bankruptcy. The reasons behind this position of the industry are inefficiency of financial management absence of realistic goals, strict government regulation and increased cost of raw-materials, labour and overhead. The financial performance should be improved immediately. Therefore, the appropriate authority should take measures for the removal of the above problems.
Keywords - Financial performance, Ratio analysis, Pharmaceuticals industry, Multivariate Discriminate analysis (HDA) T-test.

Introduction - Pharmaceutical is one of the most intense knowledge driven industries, which is continually in a state of dynamic transition human, animal and environmental health's are priority concerns of society. Diversities in life forms and diseases pose stiff challenge to the design of specific and targeted solutions. The process of "drug discovery" is elaborate requiring on an average 8-10 years at a cost of US $300 million to reach a new drug to the market. There exists a long gestation period between learning knowledge generation and its transformation to "value added knowledge". Nucleation and growth of modern pharmacology can be traced to the knowledge base of ethno medical practices. Empirical relationships between identified plant and animal derived products and their physiological effects formed the basis for treatment of diseases or enhancement of health. Through generations within indigenous cultures such know how has been transmitted as package of practices which formed the major component of their training on the job. This was largely unstructured and most often incomplete in documentation. Drug companies are criticized for giving hospitality and recruiting 'key opinion leaders', but the prescribes must be equally to blame for accepting the hospitality and some 'key opinion leaders' for lending their names to work they did not produce, often for very considerable sums. The Government like the MHRA, has tended to assume that all is far the best. It states that there is no better alternative system. We agree: pharmaceutical companies will inevitably continue to be the dominant influence in deciding what research is undertaken and conducting the research, publishing it and providing information to prescribe. This does not, however, mean that no changes are required. There is a recommendation to cover several areas of concern, in particular the licensing process. The key to improvement is greater transparency so that medical practitioners, experts and the public can make an indendent assessment of the evidence. We welcome the industry's decision to establish a clinical register but it is important that it should be independent. We make recommendation to this effect. Greater transparency is also fundamental to the medicines regulatory system. There has to be better public access to materials considered by the MHRA prior to licensing. The aim of new drugs should be real therapeutic benefit for patients clinical trials should focus on using health and outcomes that are relevant to patients. To achieve this we recommended better communication between the MHRA and companies early in the early stages of the development of a drug. Improvements in the post licensing surveillance of medicines are also badly needed. This will require systematic appraisals of medicines.

Importance of the study - The prevalence of diseases is high in India because of low level of literacy, poor awareness of hygiene and poor sanitation conditions. At the same time, rising income levels have dramatically modified lifestyles.

*MBA, M.Com (ABST), Ph.D.(Commerce) Maharaja Ganga Singh University, Bikaner (Raj.) INDIA

Today more and more Indians are suffering from lifestyle related ailments like cardiovascular problems and diabetes. All this has translated into great growth for the pharmaceutical industry which has been growing healthily over the last few years. This performance is expected to continue with exports as the main driver of growth. As process patients give way to product patents innovative drugs will determine the profitability of pharmaceutical companies.

The different categories or groups interested in the financial information found in the financial statements include, inter-alia, the management, the Government, trade associations, stock exchanges and banks, investors, employees, trade unions and last but the least, the general public including researchers and students.

Objectives of the study - The basic objective of the present study is to evaluate financial performance of some selected pharmaceutical companies on the basis of following criteria:

1. To analyze the profitability, financial position and prospectus of pharmaceutical companies.
2. To find out the factors which are responsible for higher or lower profitability in the context of social responsibility.
3. To find out weather the plans and policies contemplated by the management are properly executed or not.
4. To assess the extent of volatility in profitability of various companies.

Hypothesis of the study - The same hold true when comparison are made between three or four pharmaceutical companies. Difficulties arise as result of it on account of various accounting practices and bases for valuation of assets which by and large are important. The present study entitled "FINANCIAL ANALYSIS HISTORTY OF PHARMACEUTICAL INDUSTRY IN INDIA'' is an attempt to evaluate the accounting and profitability position of pharmaceutical companies.

The study will be based on literature, published financial statements, annual reports and information available with the management of pharmaceutical companies.

Scope of the study - This study includes the financial performance appraisal of some selected pharmaceutical companies. The study deals with the analysis of financial statements and profitability of these companies for the last five years.

For the same purpose of the following pharmaceutical companies have been chosen:

1. Ranbaxy laboratories limited.
2. Glaxosmith kline pharmaceuticals limited.
3. Cipla limited.
4. Dr. Reddys laboratories limited.
5. Aurobindo pharma limited.

Review Literature - After the collection of information data is tabulated, analyzed and interpreted to bring out the meaningful results from the present study finding one parameter to compare the various companies is indeed a difficult task. Therefore, a set of static and dynamic parameters have used to analysis the financial performance. For the purpose of analysis various accounting and statistical techniques are used. The accounting techniques include ratio analysis, trend analysis, cash flow analysis etc. the statistical techniques include tables, graph etc.

Theoretical analysis of ratio - Analysis of relevant ratios is one of the reliable commonly used tools of analysis due to their conciseness, comparability and direct relevance of relationship established to the various responsibilities of companies. A set of various ratios has been employed for assessing the performance of pharmaceutical companies. Some important ratios are as under:

1. Current ratio.
2. Quick ratio.
3. Times interest earned ratio.
4. Debt to equity ratio.
5. Proprietary ratio.
6. Fixed assests turnover ratio.
7. Inventory turnover ratio.
8. Export as a percent of total sales ratio.
9. Gross profit margin (%)
10. Net profit margin (%)
11. Earning per share ratio.
12. Dividend per share ratio.
13. Book value per share ratio.
14. Operating profit ratio.
15. Return of investment ratio.

Current status of pharmaceutical industries in India - India US $ 9.4 billion pharmaceutical industry is growing at the rate of 14 percent per year. It is one of the largest and most advanced among the developing countries. The Indian pharmaceutical industry can reach a market size of us $ 11.6 billion by 2009. A beginning has been made with the signing of General Agreement on Tariffs and Trade in January 2005 with which India began recognizing global patents. Soon after the Indian pharmacy market become a sought after destination for foreign players. Foreign direct investment into the country's pharmacy industry touched US $ 172 million during 2005-06 having grown at a CAGR of 62.6 percent during the period beginning 2002-06. The sector recorded strong growth in the second quarter ended September 2006, driven by launch of new generic drugs with 180 days exclusivily period in the US market. The top ten pharmacy companies reported an impressive 57 percent growth in consolidated net profit at US $ 314.3 million, as against US $ 200.7 million in the some quarter of the previous year, while consolidated net sales were up 51 percent at US $ 1.7 billion.

Findings - No company has maintained the standard current ratio, except Dr. Reddy's Cipla and Torrent while Lupin shows the highest current ratio in 2016, 2015 and 2014. The quick ratio is shown by Lupin in 2016 and 2014. All the company has maintained a standard debt equity, Glennmark, Aurobindo, Cadila, Lupin has shown consistent growth in the last 3 years, while the highest is shown by

Lupin 2016 and 2015 and lowest is of Piramal in 2013. The assets turnover ratio is quite satisfactory by all companies in which Lupin is the highest in 2013 and 2014, followed by GSK and second highest in 2015 and 2016. The lowest is Piramal in 2013. The highest performer in total assets is the Torrent followed by Cadila at second and at third is the Lupin. The poor performers are Cipla in 2014 and Sun Pharma in 2014 and 2016. All the companies show satisfactory ROE in which the highest is Torrent in 2015 and the lowest is Piramal in 2014 and 2013.

The highest DPS in shown by GSK, followed by Piramal and Sun Pharma is highest in all the 3 years. GSK has a higher dividend payent ratio in 2016 and 2015 and the Sun pharma is the lowest performer. According to the Ranking of the companies based on various variables Torrent in on the tap most rank followed by Piramal Health Care having 2nd position. Sun Pharma has the lowest rank among all the ten companies followed by Cipla.

Conclusion - The economic growth of India is growing rapidly and has shown remarkable growth in the pharmaceutical industry. The production of new drugs and various methods and techniques in vaccines are the key strengths of pharma industry in India. Fundamental analysis suggests and insists, which steps should be undertaken in terms of purchasing, and selling of shares, on the basis of market? The fundamental analysis strengthens the investor to make the right decision for the company.

References :-

1. Batty J., Management Accounting (Macdonald & Evans Ltd., London) Second ed.
2. Chambers R.J., financial Management, Sydney: The Law Book Company Ltd.
3. Fisher L and Lorie. J. H., Rates of Return on Investments, Journal of Business.
4. Gupta S.C., Modern Management Accounting, Jaipur. Shree Publisher: 1997.
5. Guptal L.C., Financial Ratios for Monitoring Corporate Sickness, Oxford University Press
6. Kuchhal H.C., Corporation Finance Principal and Problems, Allahabad, Chaitanya Publishing House.
7. L.J. Githman, Principal of Managerial Finance, (New York : Harper and Row).
8. Sprouse, Robert T. and Robert J. Swieringa, Essentials of Financial Statement Analysis Addition, Wesley, Reading.
9. William, Henry r. & Haynes W., Wareen, Managerial Economics, Analysis and Cases (Business Publications, Dalles Texas).
10. Welsch and Anthony, Fundamental of financial accounting Richard D. Irwin Inc., Homewood, Illinois.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

जेंडर बजटिंग : वर्तमान परिदृश्य में महिला सशक्तिकरण का आधार

प्रो. रेणु जटाना* कन्हैया लाल**

प्रस्तावना – सृष्टि के प्रारंभ से लगाकर सभ्यता के निर्माण में नारी की भूमिका अति महत्वपूर्ण रही है। नारी परिवार का केंद्र बिंदु व धूरी होती है। अत: किसी भी राष्ट्र के निर्माण व विकास यात्रा में नारी का योगदान सदैव प्रशंसनीय एवं सर्वोच्च रहा है। महिला द्वारा मां, पत्नी एवं पुत्री के रूप में अपनी जिम्मेदारियां श्रेष्ठ तरीके से निर्वाह की जाती रही है। अत: किसी भी समाज में महिलाओं की स्थिति देखकर उस समाज की प्रगति का आकलन आसानी से किया जा सकता है। इस दृष्टिकोण से वर्तमान परिवेश में महिलाओं की स्थिति अधिक बेहतर नहीं कही जा सकती। महिलाएं आधी आबादी का प्रतिनिधित्व होने के बावजूद समाज में कई तरह की लैंगिक असमानता का सामना कर रही है। यह शोध पत्र इसी दिशा में किया गया प्रयास है। जेंडर बजट समाज में लैंगिक समानता स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इस पत्र में जेंडर बजट की मूलभूत अवधारणा तथा महिला सशक्तिकरण के उपकरण के रूप में इसकी भूमिका का अध्ययन किया गया है।

शब्द कुंजी – लैंगिक असमानता, जेंडर बजट, महिला सशक्तिकरण, बजट।

परिचय – 'महिलाओं की स्थिति में सुधार लाए बिना दुनिया का कल्याण संभव नहीं है। एक पंख से चिड़िया उड़ान नहीं भर सकती।'[1] स्वामी विवेकानंद जी का यह कथन महिला सशक्तिकरण को स्वयं रेखांकित कर रहा है। आधी आबादी का प्रतीक महिलाएं किसी भी परिवार या समाज की आधार धूरी होती है। जिन्हें नजर अंदाज कर के विकास की कल्पना संभव नहीं है। 'स्त्रियों की स्थिति ही मूल रूप में किसी मानव समाज के भविष्य की निर्धारक होती है। विश्व उत्पादिका, पोषिका, शक्ति संपन्न महिलाए ही किसी समाज का स्वरूप निर्धारित करती है।'[2] लेकिन इसके बावजूद वर्तमान में महिलाओं को कई तरह की लैंगिक बाधाओं का सामना करना पड़ रहा है। जिसके समाधान में लैंगिक बजट एक उम्मीद की किरण बनकर उभरा है।

शोध पत्र का उद्देश्य :

1. बजट की आधारभूत अवधारणा से परिचित कराना।
2. जेंडर बजट की अवधारणा से अवगत कराना।
3. जेंडर बजट के विभिन्न पहलुओं यथा: उद्देश्य, क्षेत्र, प्रकृति, उपकरण, विधियॉ आदि को रेखांकित करना।
4. जेंडर बजट व महिला सशक्तिकरण के मध्य संबंध को रेखांकित करना।

अध्ययन प्रविधि – शोध प्रविधियों का चुनाव शोध की प्रकृति एवं प्रकार पर निर्भर करता है। चूंकि प्रस्तुत शोध की प्रकृति वर्णनात्मक है, अत: शोध हेतु द्वितीयक तथ्यों का उपयोग किया गया है। द्वितीयक तथ्यों के संकलन हेतु पुस्तकों, शोध-पत्रिकाओं, सम्पादित ग्रन्थों एवं इन्टरनेट का प्रयोग किया गया है। शोध की पद्धति मूलत: वर्णनात्मक है जिसमें सहायक पद्धतियों के रूप में ऐतिहासिक पद्धति, सामग्री विश्लेषण, पुस्तकालयी अध्ययन पद्धति इत्यादि का उपयोग किया गया है।

बजट की अवधारणा – बजट वह साधन है, जिसके द्वारा सरकार जनता के विकास की योजनाएं बनाती है एवं उन्हें क्रियान्वित करती है। अर्थात यह सरकार के वित्तीय प्रबंध हेतु एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा राज्य में वित्तीय गतिविधियों को संचालित किया जाता है। बजट के माध्यम से सरकार आगामी वित्तीय वर्ष के लिए आय व्यय का अनुमान तथा गत वित्तीय वर्ष के सरकार को प्राप्त हुई आय एवं किए गए व्यय का ब्यौरा प्रस्तुत करती है।[3] सरकारी बजट एक वार्षिक वित्तीय विवरण है, जिसके द्वारा सरकार प्रत्येक वर्ष निर्धारित तिथि को संसद (केंद्र) अथवा विधानसभा (राज्य) में प्रस्तुत किया जाता है। पेश किए जाने वाले बजट में तीन वर्षो की आय-व्यय का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया जाता है अर्थात गत वित्तीय वर्ष की वास्तविक आय-व्यय का लेखा-जोखा चालू वित्त वर्ष के दौरान संशोधित आय-व्यय अनुमान तथा आगामी वित्तीय वर्ष हेतु आय-व्यय के बजट अनुमान।[4] बजट बनाने का प्रमुख उद्देश्य सरकार के पास उपलब्ध संसाधनों का सर्वोत्तम वितरण व उपयोग करना, संसाधनों का वितरण समाज के सभी वर्गों में समान रूप से सुनिश्चित करना तथा जनता के अधिकतम कल्याण हेतु कार्य करना।[5]

भारतीय संविधान में बजट[6] – बजट को भारतीय संविधान में वार्षिक वित्तीय विवरण के नाम से परिभाषित किया गया है। भारतीय संविधान के भाग 5 में अनुच्छेद 112 में केंद्रीय बजट का उल्लेख है, जबकि राज्य सरकार के बजट का उल्लेख संविधान के भाग 6 में अनुच्छेद 202 के अंतर्गत वार्षिक वित्तीय विवरण के नाम से परिभाषित करते हुए बताया गया है।

जेंडर बजट का प्रस्तावना – भारत का संविधान महिलाओं व पुरुषों दोनों के लिए समानता की गारंटी प्रदान करता है। हालांकि जमीनी स्तर पर वास्तविकता कुछ और ही है। संकेतो की श्रृंखला इस बात की पुष्टि करती है कि, महिलाएं आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक रूप से पुरुषों के साथ समानता का आनंद नहीं ले रही है।[7] महिलाओं व लड़कियों को अपने जीवन चक्र में विभिन्न रूपों में भेदयता का सामना करना पड़ता है। उन्हें जन्म से पहले या जन्म के बाद भेदभाव का सामना करना पड़ सकता है: हिंसा; उत्पीड़न या दुर्व्यवहार; निर्भरता और संसाधनों तक पहुंच की कमी के कारण उपेक्षा; सामाजिक पूर्वाग्रह और शोषण-चाहे आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक या धार्मिक। वे आर्थिक व सामाजिक स्पेक्ट्रम पर होने के बावजूद शोषण व भेदभाव की चपेट में है।[8] जेंडर बजटिंग एक उपकरण है, जिसका प्रयोग

* विभागाध्यक्ष (बैंकिंग एवं व्यावसायिक अर्थशास्त्र विभाग) यू सी सी एम एस, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी (बैंकिंग एवं व्यावसायिक अर्थशास्त्र विभाग) यू सी सी एम एस, उदयपुर (राज.) भारत

करके इन कमजोरियों को दूर किया जा सकता है।[9] राष्ट्रीय बजट महिलाओं पर कई तरह से प्रभाव डालते हैं। उदाहरण स्वरुप जब महिलाओं को आर्थिक सामाजिक व अन्य नामों से संबोधित करने वाले कार्यक्रमों के लिए धन आवंटित किया जाता है तो वे सीधा महिला विकास को बढ़ावा देते हैं। यह मुख्यधारा के कार्यक्रमों में दोनों तरफ से वित्त पोषण किया जा सकता है यथा जो महिला की स्थिति के प्रति संवेदनशील है और महिलाओं द्वारा लक्षित योजना के वित्त पोषण के माध्यम से। अगर बजट में कटौती होती है तो बजट महिलाओं के सशक्तिकरण के अवसर को भी कम कर सकता है।[10] अत: समाज में महिला पुरुष की भूमिका अलग अलग होने के कारण बजट में उनके प्रावधान भी उनकी आवश्यकता अनुसार अलग-अलग होने चाहिए। जेंडर बजटिंग की प्रासंगिकता को संक्षेप में कहा जा सकता है कि 'यदि समान लोगों के लिए अलग अलग उपचार करना अनुचित है तो अलग-अलग लोगों के लिए एक ही इलाज करना भी अनुचित है।'[11]

जेंडर बजट का अर्थ एवं परिभाषा – जेंडर बजटिंग लैंगिक मुख्यधारा के लिए एक उपकरण है। यह संपूर्ण नीति प्रक्रिया में लैंगिक दृष्टिकोण हेतु बजट को प्रवेश बिंदु के रूप में प्रयोग करता है।[12] सरकार को लैंगिक परिवेश में एकीकृत करने के लिए सरकार के सार्वजनिक व्यय के लिए प्रमुख राष्ट्रीय योजना के रूप में सहायता देने हेतु जेंडर बजट एक पद्धति है।[13] जेंडर बजट का संबंध, लैंगिक संवेदनशील आधारित कानून, नीतियों, योजनाओं, कार्यक्रमों और योजनाओं का निर्माण; संसाधनों का आवंटन व संग्रहण; कार्यान्वयन व निष्पादन; कार्यक्रमों व योजनाओं की निगरानी; समीक्षा; अंकेक्षण और प्रभाव का आकलन और लैंगिक असमानता को दूर करने के लिए अनुवृत्ति सुधारात्मक कार्रवाई है।[14]

जेंडर बजटिंग[15] :

1. उस प्रक्रिया को संदर्भित करता है जो लैंगिक संवेदनशीलता तरीके से बजट पर विचार करना, योजना बनाना, अनुमोदन करना, क्रियान्वित करना, निगरानी करना, विश्लेषण करना तथा अंकेक्षण करता है।
2. इसमें पुरुषों और लड़कों की तुलना में महिलाओं और लड़कियों पर सरकार के वास्तविक व्यय व राजस्व के प्रभाव का विश्लेषण शामिल है।
3. इससे सरकार को यह तय करने में मदद करता है कि नीतियां कैसे बनाई समायोजित व पुनरावत्ति की जानी चाहिए।
4. यह प्रभावी नीति कार्यान्वयन के लिए एक उपकरण है जिसमें यह जाना जा सके कि आवंटन नीति प्रतिबद्धताओं के अनुरूप है या नहीं तथा वांछित प्रभाव डाल रहा है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि जेंडर बजटिंग केवल बजट के बारे में नहीं है और यह केवल एक बार की गतिविधि नहीं है। यह एक सतत प्रक्रिया है जिसे नीति प्रक्रिया के सभी स्तरों और चरणों पर लागू किया जाना चाहिए। जेंडर बजट एक शक्तिशाली उपकरण है जो महिलाओं की स्थिति में बदलाव कर सकता है।[16] लैंगिक बजट यह भी स्वीकार करता है कि, यदि लैंगिक असमानताओं को संबोधित किया जाना है तो, लैंगिक संवेदनशीलता विधानो, कार्यक्रमों और योजनाओं को बनाना पर्याप्त नहीं है वांछित परिणामों की उपलब्धि के लिए पर्याप्त मोद्रिक आवंटन समान रूप से महत्वपूर्ण है।[17]

लिंग आधारित बजट को कई अन्य नामों से भी जाना जाता है जैसे जेंडर बजट, महिला उन्मुखी बजट, लिंग संवेदनशील बजट, जेंडर संवेदनशील बजट, लिंग उत्तरदायी बजट इत्यादि।

जेंडर बजट की परिभाषा :

1. लैंगिक बजट सरकारी बजट का विच्छेदन है। जो लिंग विभेद प्रभावों और लैंगिक प्रतिबद्धताओं को बजटीय प्रतिबद्धताओं के अनुवादित करने हेतु स्थापित किया जाता है। लैंगिक बजट सरकारी बजट को लैंगिक दृष्टिकोण से देखता है, यह आकलन करने के लिए कि यह स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार आदि जैसे क्षेत्रों में महिलाओं की जरूरतों को कैसे पूरा करता है।[18]
2. लैंगिक बजट लैंगिक मुख्यधारा का बजट की प्रक्रिया में अनुप्रयोग है। इसका तात्पर्य बजटो के लिंग आधारित मूल्यांकन से है। जिसमें बजट प्रक्रिया के सभी स्तरों पर लैंगिक परिपेक्ष्य को शामिल करना और लिंग समानता को बढ़ावा देने के लिए राजस्व और व्यय का पुनर्गठन करना शामिल है।[19]

लिंग बजट में निम्नलिखित शामिल है :[20]

1. यह लैंगिक समानता नीति को व्यापक आर्थिक नीति से जोड़ने का एक तरीका है।
2. यह इस आधार पर है कि बजट लिंक तटस्थ नहीं होते हैं।
3. यह राजस्व जुटाने के साथ-साथ बजट के व्यय पक्ष पर भी लागू होता है।
4. यह महिलाओं और पुरुषों पर बजट के प्रभाव के विश्लेषण से शुरू होता है और बजट योजना में लिंग को एकीकृत करने के लिए आगे बढ़ाता है।
5. इसका मतलब महिलाओं के लिए अलग बजट नहीं है।
6. इसका अर्थ है कि बजट के परिणामों की बारीकी से जांच।
7. इसे विशिष्ट बजट लाइनओं या बजटीय कार्यक्रमों पर लागू किया जा सकता है।
8. इसका अंतिम लक्ष्य यह है कि लिंग संवेदनशील दृष्टिकोण को सभी बजटीय प्रक्रियाओं के सभी पहलुओं पर लागू किया जाए ताकि लिंग को मुख्यधारा में लाया जा सके।

जेंडर बजट क्या नहीं है :[21]

1. जेंडर बजट महिला और पुरुषों के लिए अलग-अलग बजट नहीं है।
2. जेंडर बजटिंग महिलाओं के लिए 50% और पुरुषों के लिए 50% बजट को विभाजित करने के बारे में नहीं है।
3. जेंडर बजटिंग का मतलब हमेशा महिलाओं के लिए आवंटन में वृद्धि नहीं है यह उन्हें प्राथमिकता देने के बारे में है।
4. जेंडर बजट न केवल सरकारी बल्कि सिविल सोसायटी संगठन गैर-सरकारी संगठन और निजी क्षेत्र की इकाइयों के बजट को भी लिंग के प्रति संवेदनशील बनाया जा सकता है।
5. यह केवल बजट तक सीमित नहीं है इसके अंतर्गत महिलाओं के परिपेक्ष से सरकार की विभिन्न आर्थिक नीतियों का विश्लेषण करना भी शामिल है।

जेंडर बजट के प्रयोजन उद्देश्य – महिला एवं बाल कल्याण विभाग के अनुसार जेंडर बजटिंग के विभिन्न प्रयोजन निम्न प्रकार हैं :[22]

1. महिलाओं की जरूरतों की पहचान करना और उन जरूरतों को पूरा करने के लिए प्राथमिकताओं का पुन: निर्धारण और या व्यय में वृद्धि करना।
2. वृहद आर्थिक नीतियों के निर्माण में महिलाओं को मुख्यधारा में लाना।
3. आर्थिक नीतियों के निर्माण में सिविल सोसाइटी की भागीदारी को सुदृढ़ करना।

4. आर्थिक और सामाजिक नीतियों के परिणामों के बीच लिंग को बढ़ावा देना।
5. महिलाओं के लिए किए जाने वाले सार्वजनिक व्यय और विकास संबंधी नीतिगत प्रतिबद्धताओं पर निगरानी रखना।
6. स्त्री पुरुष समानता का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए योगदान देना इत्यादि।

जेंडर बजट के क्षेत्र[23] – लिंग बजटन को पूरे राष्ट्रीय बजट या किसी राज्य या स्थानीय बजट पर लागू किया जा सकता है। यह एक चयनित विभाग या सिर्फ एक कार्यक्रम पर लागू किया जा सकता है, जो एक मौजूदा कार्यक्रम हो सकता है या एक नया कार्यक्रम। इसे व्यय पक्ष या राजस्व पक्ष पर लागू किया जा सकता है। यह नए या मौजूदा विधान पर लागू हो सकता है। भारत में शोधकर्ताओं ने जेंडर बजटिंग को इन प्रत्येक पहलुओं लागू किया है। चूंकि जेंडर एक क्रॉस कटिंग मुद्दा है, इसलिए लिंग बजट को 'सामाजिक' क्षेत्रों तक सीमित नहीं किया जाना चाहिए जैसे कि शिक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण को किया जाता है।

जेंडर बजट की प्रकृति[24] – जेंडर बजटिंग का संबंध न केवल सार्वजनिक व्यय से है, बल्कि सरकार द्वारा राजस्व जुटाने के लिंग–विभेदित प्रभाव से भी है। वास्तव में, जेंडर बजटिंग, एक दृष्टिकोण के रूप में, केवल सरकारी बजट तक ही सीमित नहीं है, इसमें लैंगिक परिप्रेक्ष्य से विभिन्न सामाजिक–आर्थिक नीतियों का विश्लेषण भी शामिल है

लैगिंक असमानता में कमी लाने हेतु भारत में अपनाये गए वैधानिक उपाय (संवैधानिक व अन्य भारतीय कानून) – महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए भारत सरकार द्वारा कई उपाय किए गए हैं। भारतीय संदर्भ में कुछ लिंग प्रतिबद्धताएं इस प्रकार हैं:[25]

1. संवैधानिक प्रावधान।
2. कानूनी प्रावधान– महिला विशिष्ट कानून और महिलाओं को प्रभावित करने वाले कानून।
3. महिलाओं के समर्थन करने वाली नीतियां।
4. महिला विशिष्ट कार्यक्रम।

अन्य उपाय :

5. महिलाओं के उत्थान के लिए संस्थागत तंत्र और सांविधिक और स्वायत्ता संगठन।
6. पंचवर्षीय योजनाएँ और महिलाओं का विकास।
7. जेंडर बजटिंग।

महिलाओ हेतु नीतिगत प्रतिबद्धताएं[26]

संवैधानिक उपबंध – महिला पुरुष समानता की प्रतिबद्धता नीति निर्माण के सर्वोच्च स्तर पर अर्थात भारत के संविधान में भली–भांति स्थापित है। महिलाओं के लिए बनाए गए कुछ महत्वपूर्ण संवैधानिक उपबंध निम्न प्रकार है :

अनुच्छेद 14 राजनीतिक आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में समान अधिकार एवं अवसर।

अनुच्छेद 15 लिंग के आधार पर भेदभाव निषिद्ध।

अनुच्छेद 15 (3) महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक भेदभाव का अधिकार।

अनुच्छेद 39 आजीविका के समान साधन तथा समान कार्य के लिए समान वेतन।

अनुच्छेद 42 कार्य की न्यायोचित एवं मानवीय दशाएं तथा प्रसूति सुविधाएं।

अनुच्छेद 51 (क) (ड) महिलाओं के प्रति अपमानजनक प्रथाओं के त्याग का मौलिक दायित्व।

राष्ट्रीय महिला शक्ति संपन्नता नीति 2001 में यह परिकल्पित है कि महिला उन्मुख परिपेक्ष को बजट प्रक्रिया में एक प्रचालनात्मक कार्यनीति के रूप में शामिल किया जाएगा।

इन उपबंधो को कानूनी ढांचे के द्वारा लागू एवं पूरित किया जाता है ऐसे कुछ कानून निम्न प्रकार है

महिला विशिष्ट कानून

1. अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम 1956
2. प्रसूति सुविधा अधिनियम 1961
3. दहेज निषेध अधिनियम 1961
4. स्त्री अशिष्ट रूपण (निषेध) अधिनियम 1986
5. सती प्रथा (निवारण) अधिनियम 1987
6. घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005

आर्थिक कानून

1. कारखाना अधिनियम 1958
2. न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948
3. समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976
4. कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948
5. बागन श्रम अधिनियम 1951
6. बंधित श्रम पद्धति (उत्पादन) अधिनियम 1976

संरक्षण कानून

1. दंड प्रक्रिया संहिता 1973 के संगत उपबंध
2. भारतीय दंड संहिता के विशेष उपबंध
3. विधि व्यवसायी (महिला) अधिनियम 1923
4. प्रसवपूर्व निदान तकनीक (विनियमन एवं दुरुपयोग निवारण) अधिनियम 1994

सामाजिक कानून

1. कुटुंब न्यायालय अधिनियम 1984
2. भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम 1925
3. गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम 1971
4. बाल विवाह अवरोध अधिनियम 1929
5. हिंदू विवाह अधिनियम 1955
6. हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 (वर्ष 2005 में यथा संशोधित)
7. भारतीय विवाह विच्छेद अधिनियम 1969

भारत में जेंडर बजट की उत्पति[27] – भारत में लिंग के नजरिए से सार्वजनिक व्यय का विश्लेषण करने पर प्रचलन आमतौर पर 1974 में भारत सरकार द्वारा लाई गई महिलाओं की स्थिति पर समिति की रिपोर्ट ('टुवर्ड्स इक्वलिटी' शीर्षक) से लिया गया है। इस रिपोर्ट में कहा गया है कि देश के विकास प्रक्षेपवक्र ने महिलाओं के एक बड़े हिस्से पर प्रतिकूल प्रभाव डाला और नए असंतुलन और असमानताएं पैदा कीं। इस रिपोर्ट से उत्पन्न चेतना के कारण पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में महिलाओं के विकास के प्रति नीतियों में बदलाव आया। हालांकि, यह सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985–90) में केवल उन कार्यक्रमों/ योजनाओं की रूपरेखा पर विशेष ध्यान दिया गया था, जिनसे महिलाओं को सीधे लाभ मिलता था।

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002–07) ने एक और महत्वपूर्ण कदम आगे बढ़ाते महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए राष्ट्रीय नीति, 2001 में जेंडर बजटिंग की आवश्यकता को भी मान्यता दी गई थी, इस परिदृश्य में, केंद्र सरकार में महिला और बाल विकास विभाग (DWCD) ने संयुक्त राष्ट्र

विकास कोष फॉर वूमेन (UNIFEM) के सहयोग से केंद्र सरकार के स्तर पर जेंडर बजटिंग के लिए पहल का नेतृत्व किया, जिसका महत्वपूर्ण तत्व नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक फाइनेंस एंड पॉलिसी (NIPFP), नई दिल्ली के लिए एक जेंडर बजटिंग अध्ययन का कमीशन था। 2000-01 के राष्ट्रीय आर्थिक सर्वेक्षण में, पहली बार जेंडर असमानता पर एक अलग खंड सामाजिक क्षेत्र के अध्याय में शामिल किया गया था। इसके बाद, एनआईपीएफपी द्वारा किए गए यूनियन बजट के जेंडर बजट विश्लेषण को डीडब्ल्यूसीडी की वार्षिक रिपोर्ट में शामिल किया गया। बाद में, 2005-06 के केंद्रीय बजट में, पहली बार जेंडर बजटिंग पर एक अलग बयान शामिल किया गया, जिसने अनुदानों की 10 मांगों के तहत बजट आवंटन को कवर किया।

जेंडर बजट के उपकरण - डायने एलसन के सुझाये विभिन्न उपकरण जिनका उपयोग लिंग-संवेदनशील बजट का विश्लेषण के लिए किया जा सकता है:[28]

1. लिंग-जागरूक नीति मूल्यांकन (gender-aware policy appraisal)
2. लिंग-असंतुष्ट लाभार्थी आंकलन (gender-disaggregated beneficiary assessments)
3. लिंग-विच्छेदित सार्वजनिक व्यय घटना विश्लेषण (gender-disaggregated public expenditure incidence analysis)
4. लिंग-असंतुष्ट कर घटना विश्लेषण (gender-disaggregated tax incidence analysis)
5. समय के उपयोग पर बजट के प्रभाव का लिंग-विच्छेदित विश्लेषण (gender-disaggregated analysis of the impact of the budget on time use)
6. लिंग-जागरूक मध्यम अवधि की आर्थिक नीति की रूपरेखा (gender-aware medium term economic policy framework)
7. लिंग-जागरूक बजट विवरण (gender-aware budget statement)

जेंडर बजट की विधियाँ :

लिंग बजट आरंभ करने की विधियाँ निम्नलिखित हैं। ये हैं:

(A) ऑस्ट्रेलियाई दृष्टिकोण या दक्षिण ऑस्ट्रेलियाई महिलाओं के बजट ने व्यय को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है:[29]

1. महिला-विशिष्ट व्यय: उन कार्यक्रमों के लिए आवंटन जो विशेष रूप से महिलाओं और लड़कियों के समूहों को लक्षित करते हैं।
2. सार्वजनिक सेवा में समान अवसर: समान रोजगार के अवसरों का आवंटन, जैसे कार्यक्रम जो प्रबंधन और निर्णय लेने में महिलाओं के समान प्रतिनिधित्व को बढ़ावा देते हैं, और समान वेतन और सेवा की शर्तें।
3. सामान्य या मुख्य धारा के व्यय: शेष सभी आवंटन जो ऊपर दो श्रेणियों में शामिल नहीं हैं. ।

(B) दक्षिण अफ्रीकी 'पांच कदम दृष्टिकोण': दक्षिण अफ्रीकी दृष्टिकोण के पांच चरण हैं:[30]

1. किसी दिए गए क्षेत्र में महिलाओं, पुरुषों, लड़कियों और लड़कों की स्थिति का विश्लेषण;
2. पहले चरण में वर्णित क्षेत्र नीति (लिंग) को किस हद तक संबोधित करती है इसका आकलन;
3. लिंग-उत्तरदायी नीति को लागू करने के लिए बजट आवंटन पर्याप्त हैं या नहीं, इसका आकलन;
4. इस बात की निगरानी कि क्या योजना के अनुसार पैसा खर्च किया गया था, क्या दिया गया और किसके लिए ;
5. इस बात का आकलन है कि लागू की गई नीति ने पहले चरण में वर्णित स्थिति को अधिक से अधिक लैंगिक समानता की दिशा में बदल दिया।

अन्य विधियॉ [31]

(C) भागीदारी योजना और बजट

(D) स्थानिक मानचित्रण

(E) सभी नए कार्यक्रम और योजनाएँ का लैंगिक मूल्यांकन

(F) सार्वजनिक नीति एवम व्यय के लैंगिक संवेदनशील समीक्षा हेतु मार्गदर्शन

(G) सार्वजनिक व्यय का लैंगिक आधारित रूपरेखा

(H) प्रभाव विश्लेषण

(I) राजस्व घटना विश्लेषण

जेंडर संवेदी बजट विवरण पत्र [32] - केंद्रीय बजट 2005-06 में एक जेंडर बजट विवरण पत्र पेश किया गया था। यह एक रिपोर्टिंग तंत्र है जिसका उपयोग मंत्रालयों / विभागों द्वारा एक लिंग लेंस से अपने कार्यक्रमों की समीक्षा के लिए किया जा सकता है और यह महिलाओं के लिए आवंटन पर जानकारी प्रस्तुत करने के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण है। लिंग बजटीय आवंटन दो भागों में परिलक्षित होते हैं। स्टेटमेंट के पहले भाग, पार्ट ए में वह स्कीम्स शामिल हैं जिसमे महिलाओं के लिए 100% आवंटन जबकि स्टेटमेंट के भाग ब में वह स्कीम्स शामिल है जिसमे महिलाओं के लिए 30% से 99% आवंटन योजनाएँ / कार्यक्रम शामिल हैं। हालाँकि, अगर जेंडर बजट स्टेटमेंट में रिपोर्टिंग सटीकता की जाँच के बिना और अवास्तविक मान्यताओं पर आधारित की जाती है, तो यह लिंग बजट के लिए अभ्यास को कमजोर हो सकती है।

जेंडर बजट : महिला शक्तिकरण का एक साधन - एक अवधारणा के रूप में सशक्तिकरण उस प्रक्रिया का परिणाम है। जो किसी व्यक्ति को खुद के बारे में जानने के लिए सक्षम बनाता है / वह खुद क्या चाहती है, उसे व्यक्त करें, उसे पाने की कोशिश करें और वह प्राप्त करें जो वह / वह चाहती है, आत्मविश्वास, जागरूकता, गतिशीलता पसंद है, संसाधनों और निर्णय लेने की शक्ति पर नियंत्रण। उपरोक्त गुणों को प्राप्त करने के लिए किसी व्यक्ति को सक्षम करने वाली प्रक्रिया को सशक्तिकरण कहा जाता है।[33] एक व्यक्ति या समूह सशक्तीकरण प्रक्रिया के माध्यम से सापेक्ष शक्तिहीनता से सापेक्ष शक्ति की स्थिति की ओर चलता है।[34] महिला सशक्तिकरण एक बहुआयामी अवधारणा है, जो महिलाओं के जीवन के मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और संस्थागत क्षेत्रों तक फैली हुई है। यह इन पहलुओं में से कई में बदलाव का संयोजन है जो घरेलू स्तर पर महिलाओं को सशक्त बनाता है, न कि किसी एक पहलू पर केंद्रित परिवर्तन। महिला सशक्तीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा महिलाएं भौतिक और बौद्धिक संसाधनों पर नियंत्रण प्राप्त करती हैं और सभी संस्थानों और सत्ता की संरचनाओं में महिलाओं के खिलाफ लिंग आधारित भेदभाव के विचारों को चुनौती देती हैं।[35]

लैंगिक समानता का मामला, जिसे अक्सर मानवाधिकार या सामाजिक

न्याय तर्क के रूप में देखा जाता है, अच्छा अर्थशास्त्र भी है। लैंगिक समानता समाजों की समृद्धि और कल्याण को बढ़ावा देने में मदद करती है।[36] यहां एक बढ़ती जागरूकता है कि लैंगिक असमानता न केवल आर्थिक रूप से अक्षम है, बल्कि सामाजिक असहमति भी है, जो एक राष्ट्र की विकास प्रक्रिया के लिए हानिकारक है। इस प्रकार, अर्थव्यवस्था के समग्र विकास के लिए जीवन के सभी क्षेत्रों में महिलाओं की उन्नति सुनिश्चित करना आवश्यक है। वादा और प्रदर्शन के अंतर को पाटने से ही लैंगिक समानता हासिल करना संभव है। इसलिए, महिलाओं के सशक्तीकरण को किसी भी राष्ट्रीय नियोजन प्रक्रिया में अत्यधिक प्राथमिकता प्राप्त करने की आवश्यकता है। यह समझना महत्वपूर्ण है कि सभी क्षेत्रों (सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक) में महिला सशक्तीकरण एक शून्य योग खेल नहीं है।[37] जब एक महिला सशक्त होती है तो इसका मतलब यह नहीं है कि एक और व्यक्ति (पुरुष या महिला हो सकता है), शक्तिहीन या कम शक्तिशाली हो जाता है। इसके विपरीत, अगर किसी महिला को निर्णय लेने के प्रति उसकी क्षमताओं को सशक्त किया जाता है, तो निश्चित रूप से उसके परिवार / पड़ोसी के व्यवहार को प्रभावित करेगा। इन प्लवन प्रभाव(स्पिलओवर इफेक्ट) प्रभावों की उपस्थिति इस प्रकार एक 'सामाजिक गुणक' बनाएगी, जहां कुल शक्ति व्यक्तिगत शक्ति से अधिक होगी। अत: जेंडर बजटिंग, महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है जिससे महिलाओं का सर्वागीण विकास संभव है।[38]

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. सम्पादकीय, (अगस्त 2001 वॉल्यूम 45 अंक 5)'आमुख' योजना , पृष्ट 2
2. प्रिया तिवारी, (जनवरी-जून 2017), वैश्विक परिदृश्य पर स्त्री अधिकारों की ऐतिहासिक एवम अवधारणात्मक क्रांति, जर्नल ऑफ आचार्य नरेंद देव रिसर्च इंस्टीट्यूट, पृष्ट 80 .
3. मुकेश कुमार बंसल, (अगस्त 2010), बजट अधय्यन :एक परिचय, जयपुर: बजट अधय्यन राजस्थान केंद्र, पृष्ट 1.
4. पूर्वोक्त, नोट-3, पृ. 2
5. पूर्वोक्त, नोट-3, पृ. 2
6. पूर्वोक्त, नोट-3, पृ. 3
7. महिला एवम बाल विकास मंत्रालय, (2007), जेंडर बजटिंग हैंडबुक, नई दिल्ली : भारत सरकार, पृष्ट 1 .
8. महिला एवं बाल विकास मंत्रालय, (अक्टूबर 2015), जेंडर बजटिंग हैंडबुक, नई दिल्ली : भारत सरकार , पृष्ट 1.
9. पूर्वोक्त, नोट-8, पृ. 1
10. पूर्वोक्त, नोट-7, पृ. 1
11. सुब्रत दास, देबदुलाल ठाकुर, - सताद्रू सिकदार, (नवम्बर 2006), रिपोर्ट ऑफ द जेंडर बजटिंग स्टडी फॉर वेस्ट बंगाल, नई दिल्ली : सेंटर फॉर बजट एंड गवर्नेस एकाउंटेबिलिटी, पृष्ट 1 .
12. पूर्वोक्त, नोट-8, पृ. 1
13. पूर्वोक्त, नोट-7, पृ. 1
14. पूर्वोक्त, नोट-8, पृ. 2
15. पूर्वोक्त, नोट-7, पृ. 60
16. पूर्वोक्त, नोट-8, पृ. 2
17. पूर्वोक्त, नोट-8, पृ. 2
18. भारत सरकार, महिला एवम बाल कल्याण मंत्रालय, एनुअल रिपोर्ट 2007-08, चैप्टर 6, जेंडर बजटिंग, पृष्ट.103.
19. कुइन्न शेईला, जेंडर बजटिंग: प्रैक्टिकल इम्प्लीमेंटेशन, डायरेक्टरेट ऑफ ह्यूमन राईट एंड लीगल अफेयर्स, कौंसिल ऑफ यूरोप, अप्रैल 2009, पृष्ट.5.
20. पूर्वोक्त, नोट-19, पृ. 4
21. पूर्वोक्त, नोट-7, पृ. 60
22. शोध व सुचना प्रभाग, (मार्च 2016), भारत में जेंडर बजटिंग : महिला सशक्तिकरण का उपाय. सूचना बुलेट लोक सभा सचिवालय , पृष्ट 2.
23. पूर्वोक्त, नोट-8, पृ. 6
24. पूर्वोक्त, नोट-11, पृ. 1
25. अंजली गोयल, (दि.न.), वीमेन एम्पोवेर्मेंट थ्रू जेंडर बजटिंग-द इंडियन कॉन्टेक्स्ट- www.wcd.nic%www.wcd.nic/gb/unifem.ppt से, 23 दिसम्बर 2017 को पुनर्प्राप्त
26. सम्पादकीय टीम, (अक्टूबर 2006 वर्ष 50 अंक 07), स्त्री-पुरुष समानता की ओर उठे कदम, योजना , पृष्ट 19 .
27. पूर्वोक्त, नोट-11, पृ. 1-3
28. एडाप्ट फ्रॉम डायने एलसन(1997ल), टूल्स फॉर जेंडर इंटीग्रेशन इनटू मैक्रो इकोनोमिक पालिसी, इन लिंक इनटू जेंडर एंड डेवलपमेंट, 2, समर, पेज13.
29. डेब्बी बुद्लेंदर, - गुय हेविट. (2003), एनजेंडेरिंग बजट, लन्दन : द कॉमनवेल्थ सेक्रेटेरिएट, पेज11 .
30. पूर्वोक्त, नोट-29, पृ. 12-13
31. पूर्वोक्त, नोट-7, पृ. 62-63
32. पूर्वोक्त, नोट-8, पृ. 9
33. एच एम हेमलता, - रामेश्वरी वर्मा, (2005), एम्पोवेर्मेंट ऑफ रूरल वीमेन इन इंडिया, मैसूर: हेमा प्रकाशन, पृष्ट 59.
34. सुषमा सहाय, (1998), वीमेन एंड एम्पोवेर्मेंट अप्प्रोअचेस एंड स्ट्रेटेजिक. नई दिल्ली : डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, पृष्ट 24 .
35. सयद अफजल पीरजादे, - परांदे प्रेमा, (2007), इकोनोमिक एम्पोवेर्मेंट प्रोग्राम फॉर वीमेन: अ केस स्टडी इन शाहिदा एंड ललिथा सामी, नई दिल्ली: अनमोल पब्लिकेशन प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ट 122.
36. यूनाइटेड नेशनस डेवलपमेंट प्रोग्राम, (2010), एशिया पसिफिक ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट 2010, दिल्ली : मैकमिलन पब्लिशर इंडिया लिमिटेड पब्लिश्ड फॉर युनडीपी, पृष्ट 19.
37. अरुंधती चट्टोपाध्याय, (अक्टूबर 2006),एम्पोवेरिंग वीमेन, योजना, पृष्ट 30 .
38. पूर्वोक्त, नोट-37, पृ. 30

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Chromosomal Abnormalities in Children with Poor Scholastic Performance

Kavita Singh* Shadma Siddiqui CBS Dangi*****

Abstract - This paper presents genetic variations at chromosome level in children with poor scholastic performance,sampled in Bhopal, India. Poor scholastic performancemay be the result of intellectual disability or mental retardation usually manifestedin childhood. This demonstrated significantly higher 44.64% subjects with intellectual disability showing varied chromosomal abnormalities as compared to control group which showed 15.15%. Frequency was 29.49% higher in subjects with mental sub-level. In control group, 84.84% subjects showed normal karyotype being significantly higher as compared to subjects with mental sub-level which showed these to be 55.35% revealing strong genetic component in mental deficiency coupled with scholastic performance of children.

Introduction - Poor scholastic performance is a symptom, where the child scores poor marks which remain below the class average or backwardness in relation to the average attainment for that age and grade. The underlying cause may be intellectual disability due to genetic reasons in many cases showing variability in symptoms and genetic defects (Jayaprakash, 2005).Intellectual disability is characterized by significant limitations in both intellectual functioning and adaptive behavior that begin before the age of 18 years, affects neatly 1.5 to 2% of the population in the world. A diagnosis of intellectual disability is usually made when IQ testing reveals an IQ of less than 70, which means that often the diagnosis is not made until late childhood or early adulthood. However, most persons with intellectual disability (ID) are identified early in childhood on the basis of concern about developmental delays, which may include motor, cognitive, and speech delays (Mefford. 2012).

Many human genetic disorders are caused by missing or duplicated pieces of genetic material or chromosome. Karyotyping still has a role in identifying large scale copy number variant disorders and in identifying balanced translocations.A genetic groundwork of mental deficiency disorders has long been recognized in a subset of cases, with trisomy 21 known as Down's syndrome detectable by chromosomal studies since 1959 (Lejeune, *et al*., 1959). Trisomy 21 remains the most important chromosomal cause of intellectual disability. Single-gene causes have also been identified for a number of intellectual disability syndromes and include both autosomal and X-linked genes.

Academic underachievement of children is a big concern among parents and teachers in present day competitive society. The underlying cause of scholastic backwardness should be identified and the appropriate remedy given soon so that the academic performance of such children can be made better. Furthermore, there is paucity of epidemiological studies in India to determine the exact prevalence of scholastic backwardness. Moreover, studies are required to better understand genetic basis if any, in different cases of poor scholastic performance among children thus present study was an attempt to determine magnitude of chromosomal abnormalities in children with poor scholastic performance.

Material & Methods

Subjects - This cytogenetic study was carried out in Bhopal, India with the selective sampling of a total of 122 subjects of the age group of 6 to 18 years, comprised of 56 persons (34 male and 22 female) who had mental sublevel hence exhibited poor scholastic performance and 52 persons (32 male and 20 females) who were normal, taken as control in the present study. The target group was chosen selectively from two hospitals where hospital population involved school going children as per the selection criteria. The control group was matched by age and sex. IQ assessment was carried out using Stanford-Binet intelligence scale.

Sample Collection - 2 ml of peripheral blood was drawn in a heparinized disposable plastic syringe from each subject after taking informed consent of the subject/parents.

Methods - Chromosomal preparations were obtained from cultured PHA stimulated peripheral blood lymphocytes employing laboratory standardized technique (Moorhead *et al.,* 1960) and were Giemsa banded according to Seabright (1971). The slides were screened under X10 objective. Nearly 50 well spread metaphases were recorded

*Department of Biotechnology, RKDF University,Bhopal (M.P.) INDIA
** Department of Microbiology, Sant Hirdaram Girls College, Bhopal (M.P.) INDIA
*** Department of Biotechnology, RKDF University,Bhopal (M.P.) INDIA

per sample. Each metaphase was viewed again under X100 oil immersion objective. Counting of chromosome number and microscopic analysis of individual chromosome was done. Chromosomal aberrations were recorded in a standard format and classified according to the International Nomenclature (ISCN, 1995). Selective families were studied in order to record history of incidence of poor scholastic performance.

Statistical analysis - General rules for forming percentile frequency distributions were followed. Relative and cumulative frequency distributions of various parameters were presented with a standard error and standard deviation measurements and applying test of significant difference. Useful statistical analysis for different categories/ groups of selective population and control was also done by applying standard procedures.

Results And Discussion - In present study, recruited children belonged to both urban as well as rural areas. Children from urban areas were 83.61% and rest 16.39% were from rural areas. Majority of subjects (92.86%) with mental sub-level were from urban settings and rest 7.14% were from rural areas. Furthermore, 75.76% normal subjects who were taken as controls were from urban areas and rest 24.24% were from rural areas. Parents of recruited children showed varied socio-economic status. Majority of them were from middle class. The frequency of intellectual disability is influenced by a great number of environmental factors such as community, age, racial and ethnic background, geographic region, and sex (Hernandez and Blazer, 2006).Almost all studies dealing with mental sub-normality in children report a higher incidence in males than in females as noted in the present study. Moreover, in addition to the data collected from population and institution surveys, recent studies of family pedigrees more specifically demonstrate that X-linked recessive disorders represent a substantial proportion of mentally retarded males (Raymond, 2006).

Table 1 depicts mean values of aberrant metaphases in subjects with varied levels of intellectual disability. A total of 6 subjects out of 56 had profound intellectual disability and showed mean value of aberrant metaphases at 41.22+ 3.66. Subjects having severe intellectual disability were 13 in the series and showed mean value at 41.64+ 4.70. Subjects with moderate intellectual disability were 21 in the series and showed mean value at 38.03+ 3.34. There were 16 subjects who had only mild intellectual disability showing mean value at 33.45+ 1.07. Differences were not statistically significant. Overall mean value in 56 subjects worked out to be at 38.26 + 2.62. Graph a: Aberrant metaphases (%) in subjects with varied levels of intellectual disability

Table 1. Aberrant metaphases in subjects with varied levels of intellectual disability

Intellectual disability	Aberrant metaphases	
Level	**n**	**Mean + S.E**
Mild	16	33.45+ 1.07
Moderate	21	38.03+ 3.34
Severe	13	41.64+ 4.70
Profound	6	41.22+ 3.66
All	**56**	**38.26 + 2.62**

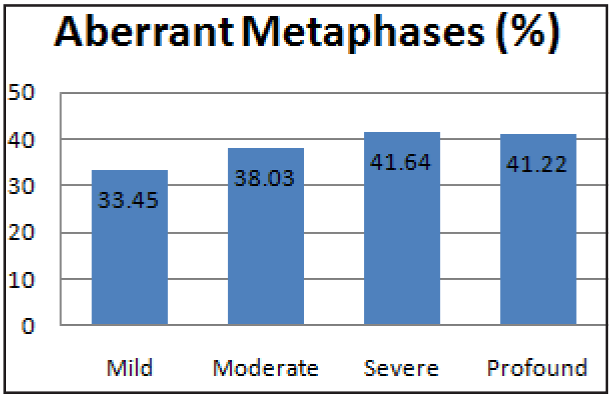

Graph a: Aberrant metaphases (%) in subjects with varied levels of intellectual disability

Table 2 demonstrates frequency of chromosomal abnormalities in subjects with intellectual disability and control. In this study, significantly higher 44.64% subjects with intellectual disability showed varied chromosomal abnormalities as compared to Control group which showed 15.15%. Frequency was 29.49% higher in subjects with mental sub-level. In control group, 84.84% subjects showed normal karyotype being significantly higher as compared to subjects with mental sub-level which showed these to be 55.35%.

Table 2. Frequency of Chromosomal abnormalities in subjects with intellectual disability and control

Group	Subjects			
	Chromosomal abnormalities		**Normal Karyotype**	
	n	**%**	**n**	**%**
Subjects with intellectual disability	25(56)	44.64	31(56)	55.35
Control	10(66)	15.15	56(66)	84.84

Figures in parentheses are total samples in the group

Table 3presents chromosome type and chromatid- type aberrations in subjects with intellectual disability and in control. Chromatid- type aberrations were more frequent in both the groups involving subjects with intellectual disability and in control and observed to be 13 (52%) out of 25 and 6 (60%) out of 10 respectively. Chromosome-type aberrations were observed in 9 (36%) whereas, multiple-type aberrations were noted in 3 (12%) samples belonging to the subjects with intellectual disability. Chromosome-typeaberrations were also observed in control group, though in a low frequency, detected in 3 (30%) subjects whereas, multiple- type aberrations was noted in only 1 (10%) samples. Graph b: Chromatid- type aberrations through graphical representation.

Table3. Chromosome type and chromatid- type aberrations in subjects with intellectual disability and in control

Type	Subjects	
	Subjects with intellectual disability	Control
Chromosome- type*	9(36.0)	3(30.0)
Chromatid- type*	13(52. 0)	6(60.0)
Multiple- type	3(12.0)	1(10.0)
All	25	10

Figures in parentheses are percentage of the total in the column
*Statistically significant difference (p<0.05).

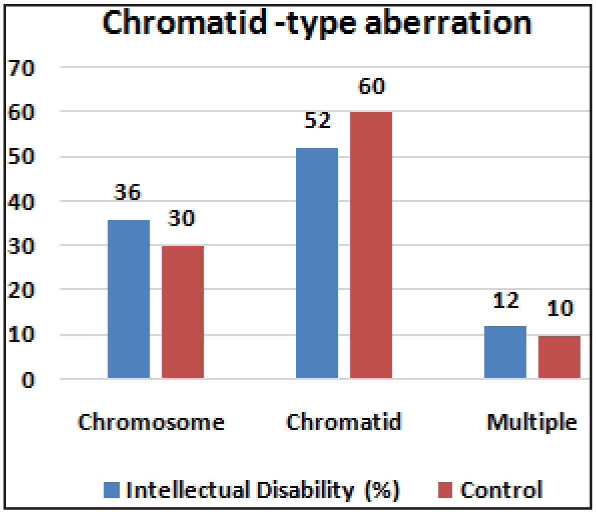

Graph b: Chromatid- type aberrations- graphical representation

Table 4 depicts chromosome-type aberrations in subjects with intellectual disability and in control. In subjects with intellectual disability, ring chromosomes (RC) were observed in 4 subjects (44.4% in the series) whereas, Dicentric chromosomes (DC) were observed in 2 (22.2% in the series). Acrocentric associations (ACA) were also observed in 2 (22.2% in the series). There was only 1 sample (11.1% in the series) where Acentric fragments (ACF) were observed.Frequencies of varied chromosome-type aberrations were lower in control group comprised of normal children as compared to the group of subjects with intellectual disability. Ring chromosomes (RC) and Dicentric chromosomes (DC) were observed in separate single samples (25.0% each in the series) whereas, 2 samples (50% in the series) exhibited Acrocentric associations (ACA) of which 1 belonged to the sample that showed multiple aberrations involving chromosome-type abnormality. Acrocentric associations, in conjunction with other prominent heteropycnotic secondary constrictions, play a role in the organization of nucleoli (Hungerford, 1964). Participation of the acrocentric chromosomes in such associations has been postulated to increase the risk of non-disjunction with subsequent trisomic conditions (Harnden, 1961; Ferguson-Smith and Handmaker, 1963).Graph c: Chromosome-type aberrations in subjects with intellectual disability (%)

Table 4. Chromosome-type aberrations in subjects with intellectual disabilityand in control

Type	Subjects			
	Subjects with intellectual disability		Control Group	
	n	%*	n^	%*
Ring chromo -somes(RC)	4	44.4	1	25.0
Dicentric chrom -osomes (DC)	2	22.2	1	25.0
Acentric frag -ments(ACF)	1	11.1	-	-
Acrocentric associations (ACA)	2	22.2	2	50.0
All	9	100	4^	100

*Figures are percentage of the total in the column
^1 sample with multiple type aberrations involved chromosome-type abnormality

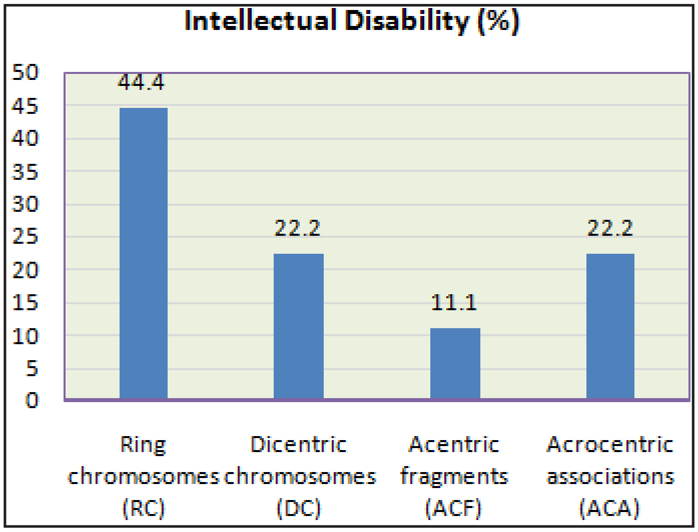

Graph c: Chromosome-type aberrations in subjects with intellectual disability (%)

Table 5 depicts chromatid-type aberrations in subjects with intellectual disabilityand in control. In subjects with intellectual disability, Chromatid breaks(CB) were observed in 8 subjects (53.3% in the series) whereas, Gaps(G) were observed in 4 (26.6% in the series). Terminal deletions(TD) were observed in 3 subjects (20.0% in the series). In this series two sample with multiple-type aberrations involved chromatid-type abnormality.

Table 5Chromatid- type aberrationsin subjects with intellectual disability and in control

Type	Subjects			
	Subjects with intellectual disability		Control Group	
	n^	%*	n	%*
Chromatid breaks(CB)	8	53.3	2	33.3

Gaps(G)	4	26.6	3	50.0
Terminal	3	20.0	1	16.7
deletions(TD)				
All	15^	100	6	100

*Figures are percentage of the total in the column
^2sample with multiple type aberrations involved chromatid-type abnormality

As noted in case of chromosome-type aberrations, frequencies of varied chromatid-type aberrations were lower in control group comprised of normal children as compared to the group of subjects with intellectual disability.In this series, Chromatid breaks(CB) were observed in 2 subjects (33.3% in the series) whereas, Gaps(G) were observed in 3 subjects (50.0% in the series).Terminal deletions (TD) were observed in the sample of a single subject.

High frequency of chromosomal aberrations is predictive of an increased risk for wide range of adverse health effects (Gripenberg, 1980; Raymond, 2006).Present study demonstrated significantly higher 44.64% subjects with intellectual disability showing varied chromosomal abnormalities as compared to control group which showed 15.15%. Frequency was 29.49% higher in subjects with mental sub-level. In control group, 84.84% subjects showed normal karyotype being significantly higher as compared to subjects with mental sub-level which showed these to be 55.35%. Several other studies have also reported the frequency and types of chromosomal abnormalities in subjects with intellectual disability. The frequency of chromosomal aberrations in these studies varied widely from nearly 6% to 20% (Gostason et al. 1991; Simonoff et al. 1996; Yasseen and Al-Musawi, 2001).The data on cytogenetic status of children with intellectual disability will certainly be useful in counseling and preventing genetic risks and its clinical consequences.Future studies on larger sample size in more varied heterogeneous social groups with focus on the role of genetics as well as environmental factors are necessary.

Acknowledgement - The authors are grateful to authorities of RKDF University for their support. Thanks are also due to technical staff for their assistance, children and parents for their consent, samples and support.

References :-

1. Ferguson-Smith, M. A. (1964). The sites of nucleolus formation in human pachytenechromosomes.Cytogenetics, 3: 124-127.
2. Ferguson-Smith, M. A. and Handmaker, S. D. (1961): Observations on the satellite human chromosomes. Lancet, i: 638-639.
3. Gostason, R;Wahlstrom, J; Johannisson, T; Holmqvist, D. (1991): Chromosomal aberrations in the mildly mentally retarded. J MentDefic Res; 35: 240–246.
4. Gripenberg, U; Hongell, K; Knuutila, S; Kahkonen, M; Leisti, J. (1980): A chromosome survey of 1602 mentally retarded patients. Evaluation of a long-term study at the Rinnekoti Institution, Finland. - Hereditas 92: 223-228.
5. Hagerman, R.J. and Hagerman, P.J., editors. (2002): FXS: diagnosis, treatment, and research. Baltimore (MD): Johns Hopkins University Press.
6. Harnden, D. S. (1961).The chromosomes.In Recent Advances in Human Genetics, Ed. L. S. Penrose. Boston, Massachuset,ts. Little, Brown.
7. Hernandez, L.M. and Blazer, D.G., editors(2006):Genes, Behavior, and the Social Environment: Moving Beyond the Nature/Nurture Debate. Washington (DC): National Academies Press (US).
8. Hungerford, D. A. (1964): Observations on the morphology and behaviour of normal human chromosomes. In: Mammalian Cytogenetics and Related Problems in Radiobiology. Eds. C. Pavan, 0. Frota-Pessoa, and C. R. Caldas. New York :Pergamon Press.
9. ISCN (1995): Recommendations of the International Standing Committee on Human Cytogenetic Nomenclature, Memphis, Tenn., October 1994;Published in collaboration with 'Cytogenetics and Cell Genetics'
10. Jayaprakash, R (2005): Diagnostic Profile In Children Presenting With Poor Scholastic Performance—A Clinic Based Study. IACAM national conference, Lucknow.
11. Lejeune, J; Gautier, M; Turpin, R. (1959): Etudes dcs chromosomes somatique dc neufcnfants mongoliens. CR HebdSeancesAcadSci; 248:1721-1722.
12. Mefford,H.C;Batshaw, M.L; Hoffman, E.P. (2012): Genomics, Intellectual Disability, and Autism. N Engl J Med; 366(8):733-743.
13. Moorhead,P.S:Nowell,P.C;Mellman,W.J;Battips, D.N; Hungerford, A. (1960): Chromosome preparation of leukocytes cultured from human peripheral blood. Experimental Cell Research, 20: 613-616.
14. Raymond, F. L. (2006): X linked mental retardation: a clinical guide. Journal of Medical Genetics, 43(3), 193–200.
15. Seabright M.A. (1971): Rapid banding technique for human chromosomes. Lancet, 2: 971-972.
16. Simonoff. E; Bolton, P; Rutter, M. (1996): Mental retardation: Genetic findings, clinical implications and research agenda. J Child PsycholPsychiat; 37: 259-280.
17. Yasseen, A.K. and Al-Musawi, T.A. (2001): Cytogenetics study in severely mentally retarded patients. Neurosciences 6 (3): 156-161.

****

Robust and Real Time Data Delivery Mechanism (RRTD)

Dr. Kalpna Middha* Meenu Bajaj**

Abstract - WSNs can be dimensioned, deployed and operated such that both reliable and timely data delivery is ensured while scarce energy is preserved. A number of Wireless Sensor Network applications demand timely data delivery. WSNs can be considered a distributed control system designed to react a sensor information with an effective and timely action. In this paper a new communication protocol RRRT to support robust real time and reliable event data delivery with minimum energy consumption and with congestion avoidance in WSNs is proposed. The proposed protocol uses the fault tolerant optimal path for data delivery. The proposed solution dynamically adjust their protocol configurations to adapt to the heterogeneous characterstics of WSNs.
Keywords - Node mobility, real time, Roubust, Capacity allocations, Request Status, Procedure, High Priority Traffic, Wireless Routing Protocol, Data Chunks, Discover, Utilization, Syncronous, Network bandwidth, Energy consumption, Congestion.

Introduction - In the past few years, sensor networks are being extensively used in numerous smart applications, including military applications and earthquake response systems. While these applications remain multiple, one main point they all share is the need of an efficient and reliable real-time communication mechanism. Real time communication is classified into two categories : Soft real time communication and hard real time communication. Soft real time communication provides QoS guarantee to the applications and is accountable for encounters the message delivery deadlines. Hard real communication dealt with proper network utilization.

We appraise a sensor network with a set of mobile nodes $N = \{n_1, n_2, n_3, ...\}$ Nodes can join, leave, move or fail at any moment, resulting in unanticipated packet losses. Real-time data delivery is usually triggered by the execution of a real time task. A real-time task accomplishes on an individual node, with a given termination time T_{tmt}. A task starts at time T_{st}. After a given execution time T_{et}, it finishes at time T_{fn} and has some data which is needed to be delivered to some another node before T_{tmt}. The time for real time data delivery is the task's slack time T_{slt}, $T_{slt} = T_{tmt} – T_{fn}$. Before task execution starts, T_{et} and the size of delivered data can be estimated through application profiling techniques.

System Architecture - With the timed token protocol, a synchronous bandwidth allocation (SBA) scheme must be used to allocate synchronous bandwidth to the stations accurately for assuring the deadlines of real-time messages. In this proposed control plane, Enhanced Minimum Capacity Allocation (EMCA) is used as the SBA scheme because of its good performance and simplicity [1].

To attain hard real-time communication, three main functions are implemented in the control plane, the Request Status procedure, the Priority management procedure and a traffic differentiation mechanism. The Request Status procedure determines when a connection request should be received and as a consequence the requesting station could be acknowledged into the ring network. This selection is actually established on the current network state, such as the current load, the number of connections established and the class of traffic carried over these connections. When a real-time task accomplished and data is ready for delivery, it promptly transmit the data with desired sending rate. RRTD uses a wireless routing protocol (DSDV) to provide immediate data delivery path. RRTD's basic strategy is represented in the following figure :

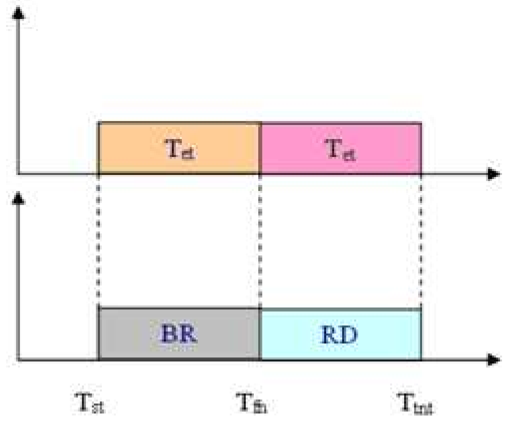

Figure 1 : RRTD Strategy

*Research Supervisor (Computer Science) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

RRTD requires to reserve sufficient bandwidth before data is delivered ; it attains bandwidth reservation by controlling its own and its neighbours packet sending and receiving rates. Moreover, it delivers data through multiple paths, according to robustly transmit data, or separately transmit large data chunks [2].

The Network and the Message Model for the Control Plane - In the proposed architecture the timed token protocol is tailord into the MAC layer and EMCA SBA scheme implemented for synchronous bandwidth allocation. Message transmission is governed by the timed token protocol.

Target Token Rotation Time - The messages generated in the network are categorised as synchronous and asynchronous messages. These are n streams of synchronous messages at a certain moment.

$Sm = \{Sm_1, Sm_2, ..., Sm_n\}$

When stream Sm_1 originates at node ^{i}. Each synchronous message stream Sm_1 streams Sm_1 can be distinguished as :

$Sm_i = \{T_i, I_i, D_i, P_i\}$

Where :

T_1 is the maximum amount of the time needed to dispatch a message in the stream.

T_1 is the interval period betwist message in the stream.

D_1 is the relative deadline of message in the stream, that is the highest amount of time that can transpire between a message arrival and termination of its transmission.

P_1 is the priority of the stream.

Packet Priority Management - RRTD orders packet delivery sequence stated by to their priorities.

The packet with the top priority will be delivered first. Priorities in RRTD are shown in Table 1 :

Table 1 : Priority in RRTD

Priority Level	Priority	Packet Type
P 1	10	Real – time
P 2	20	RRTD Control (Reservation)
P 2	21	RRTD Control (Multi-path)
P 3	22	DSDV Routing

Here, RRTD control message (reservation) is transmitted by sender nodes (the source or intermediate nodes) to tell receiver nodes (the destination or intermediate nodes) the bandwidth to be reserved. RRTD control message (multi-path) is utilized by the source node to find multiple paths to the destination node[3].

Delivery Bandwidth Computation - In order to know that how much bandwidth is stainable for a node to use, we must take into consideration all the transmissions that directly affect its opportunities to transmit [4]. To avoid the "hidden terminal" problem, before data transmission, the source node sends "Request to Send" (or RTS), and the destination node respond "Clear to Send" (or CTS). Each node receiving RTS / CTS could remain in silence during the transmission period. With RTS / CTS, a node is not allowed to transmit when :

(1) It is receiving data ;

(2) One of its neighbouring node is receiving data (due to the receiption of CTS) ;

(3) One of neighbouring node is transmitting data to the node that is not the neighbour and the node itself (due to the receiption of a RTS).

The available bandwidth for a node x to transmit $^{B}{}_{avl}{}^{X}$ is calculated as follows :

$$B_{avl}x \; - B_{eft}x \; - \left(B_{rec}x + \sum_{y \in N_x} B_{rec}y + \sum_{y \in N_x, k \in N_x^+} B_{yk} \right)$$

Here $^{B}{}_{rec}{}^{x}$ and $^{B}{}_{rec}{}^{y}$ are the receiving bandwidths used by node x and node y, B_{yk} is the traffic from node y to k, and N_x / N_x^+ is the set of neighbours of node x excluding / including itself. In real time systems, poor link quality and the interference between nodes creates only a portion of the total bandwidth is upsable.

Table 2 : Delivery Table

Hop-Count	A	B	C	D	E
Hop 1	S	R	CTS	-	-
Hop 2	RTS	S	R	CTS	-
Hop 3	-	RTS	S	R	CTS
Hop 4	-	-	RTS	S	R

Algorithm 1 is used to calculate the required bandwidth. The required bandwidth for real-time data delivery indicated by B_{rq}. In delivery processes, nodes not only required to reserve B^{rq} bandwidth, but also required to consider the extra bandwidth which they use to endure in silence due to the getting of RTS / CTS.

if x = source / destination then

if destination / source in neighbors then

$B_{rq} \le B_{avl}x$;

else

$B_{rq} \le B_{avl}x / 2$;

else if $x \in N_{source / destination}$ *then*

$B_{rq} \le B_{avl}x / 3$;

else

$B_{rq} \le B_{avl}x / 4$;

Algorithm 1 Required Bandwidth

The Proposed Control Plane - The control plane is used in a distinct management station in the network and also consists in the logical link control sub layer. This assumption appears viable when we look over system from the upper layers. The requirements for upper layers real-time communication are provided by the algortithms running on the logical link control sub layer and the management station. Source station ... that is not currently in the ring

seeks to create a connection to destination station d and transmit a synchronous stream Sm_a where $Sm_a \notin Sm$. TM is the set of synchronous bandwidths of stations which are calculated by the EMCA algorithm [5]. Algorithm 2 describes dynamic ring management. As a consequence, management station should update TTRT if the deadline in the connection request is minimum than 2.TTRT.

Procedure DRM (Connection_Request(Sm_a))

a: source, d: destination, T_i : Traffic class of Sm_i

satisfied = EMCA ($Sm + Sm_a$, TTRT, τ, TM);

if satisfied then

broadcast (TM, TTRT)

return ACCEPT;

end if

stat To Remove = Null;

for $\forall sm_i \in Sm$

if d != i AND $T_i < T_a$ then

satisfied = EMCA ($Sm + Sm_a - Sm_i$, TTRT, τ, TM);

if satisfied then

if stat To Remove = NULL

or T_{stat} To Remove> Ti then

end for

if stat To Remove != Null then

broadcast (stat To Remove, TM, TTRT);

return ACCEPT;

end if

return REJECT;

Algorithm 2 Dynamic Ring Management Algorithm

If the management station unaccept the connection request due to the fact that accepting it will obstruct other station's real-time guarantees, it process the priority management procedure. This procedure is used to eliminate the best possible station from the ring such that the new connection can be undertaken. Here, the traffic class parameter in the connection request brings into play.

RRTD Bandwidth Reservation - In order to reserve enough bandwidth, a node (the source, destination or intermediate) should associate with its neighbours. Excluding currently available bandwidth B_{avlx}, the extra required bandwidth for real-time data delivery, $B_{ex}x$, is given by :

$$B_{ex}x \; - B_{rq} - B_{avl}x$$

If $B_{ex} < 0$, then there is no need to reserve extra bandwidth. But the node should receiprocate messages with its adjacent, telling them to control their bandwidth usage. For example, node Y can only use B_{exxy} more bandwidth for its own transmission ($B_{ex}xy \leq B_{ex}x$). If $B_{ex}x > 0$, than RRTD mechanism needs to reserve B_{exx} more bandswidth for transmitting the data. For both adjacents and the node itself, if a data receiving process does not start, they can adjourn this process by delaying to send CTS messages. In this manner, they could reduce B_{recx} or B_{recy} in order to attain B_{exx} more bandwidth.

Packet Blocking Control - RRTD provides a packet blocking control mechanism to dealt with conditions where SRO is sizeable and the sending rate does not decrease rapidly. When initiating to receive real-time data, a receiver node (an intermediate node or the destination node) calculates the error ESR between the real-time receiving rate RD and the required bandwidth reservation B_{rq}, by extracting necessary information from the MAC layer.

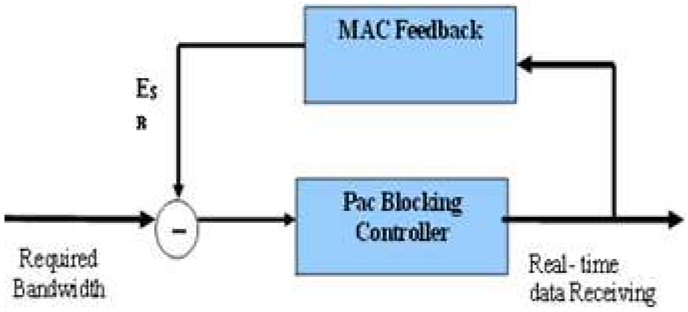

Figure 2 : Packet Blocking Control

$$ESR = \frac{RD - B_{rq}}{B_{rq}}$$

If $E_{SR} < 0$ then the receiver randomly drops E_{SR} ratio.

Multi-Path Data Delivery - Message dropping and node failures repeated in some sensor networks. To attain reliable real-time data delivery, RRTD supports multi-path delivery mechanism as shown in figure 3 (a) (the number of paths is application – specific). Figure 3 (b) shows if the required bandwidth overreach a node x total effective bandwidth B_{eff}, multi-path delivery can help to distribute the delivery work load to different paths.

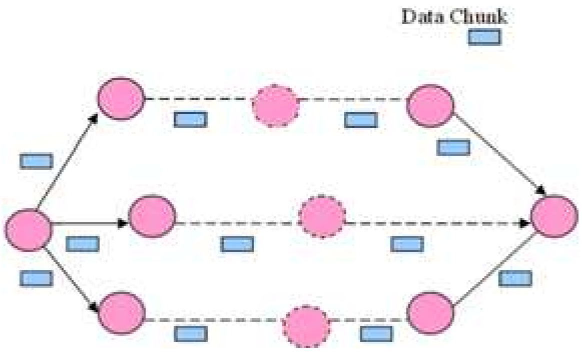

Figure 3 (a) : Multi – path for Reliable Delivery

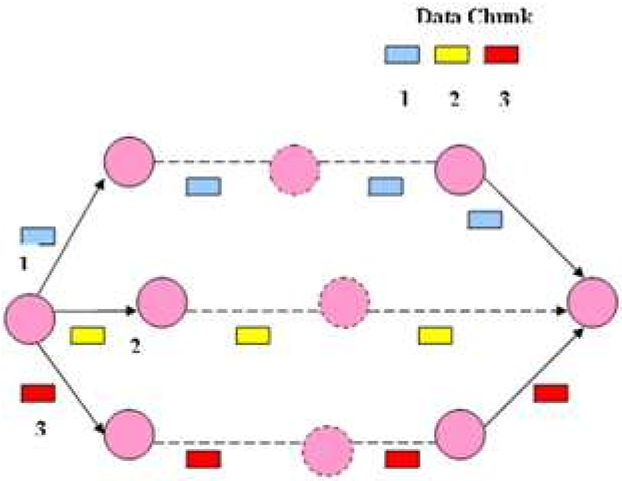

Figure 3 (b) : Multi-path for Large Data Delivery

Conclusions - We proposed a Reliable and Real Time Data Delivery in Wireless Sensor Networks (RRTD) mechanism to provide reliable real time data delivery. This mechanism utilizes centralized control plane including the timed token protocol in the MAC layer for wireless token ring architectures, for providing hard real time guarantee, and in beforehand bandwidth reservation method to dispense soft real time guarantee. For soft real time communication, RRTD executes bandwidth reservation before the real data delivery. Thereby, when the data is ready for delivery, it may be instantly transmitted with desired sending rate. By adapting the proposed mechanism in the real time routing layer of wireless sensor network robust, reliable and real time communication could be attained.

References :-

1. M. Elaoud and P. Ramanathan. Adaptive Use of Error-Correcting Codes for Real-Time Communication in Wireless Networks. In Proceedings of the INFOCOM 1998, San Francisco, March 1998.
2. J. Elson and D. Estrin. Random, Ephemeral Transaction Identifiers in Dynamic Sensor Networks, In Proceedings of the 21st International Conference on Distributed Computing Systems (ICDCS-21), Phoenix, AZ, April 2001.
3. M. Elaoud and P. Ramanathan. Adaptive Use of Error-Correcting Codes for Real-Time Communication in Wireless Networks. In Proceedings of the INFOCOM 1998, San Francisco, March 1998.
4. F. Cumo and C. Martello, MAC Principles for an Utra Wide Band Wireless Access. In Proceedings of the Global Telecommunications Conference (GLOBE COM), Volume 6, Pages 3548-3552. San Antonia, TX, 2001.
5. K. Dantu and G.S. Sukhatme, Poster Abstract : Contour Detection sing Actuated Sensor Networks, In Proceedings of the ACM Sen Sys. 03, Los Angles, CA, November 2003, Poster Abstract.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

A Study on Shopping Malls in Indore District

Dr. Vijay Grewal* Jaya Kameriya**

Abstract - Apart from the shopping experience, malls have redefined the concept of family outing in Indore. With accent on quality ambience and entertainment and value add-ons like food courts and car parking, shopping has now become more of a leisure activity. But not everybody is cheering. The old and established stores are steadily losing customers, and when more malls come up, they may well struggle to stay afloat. Indore is the biggest and most populous city in Madhya Pradesh. While people may remember the Sarafa Bazaar in Indore for the fantastic street food or monuments like Kanch Mandir and the Lal Baag Palace in the city, no one said that they could not enjoy some excellent shopping in the city. Shopping malls in Indore are needed in retail segment. This paper is an endeavor to study modern retail concepts "Shopping Mall". The paper describes that Indore district has potential and scope for modern retail players as it is in the run of metro cities of developing India.
Key Words- Shopping Mall, Retail, Merchandise, Market, Service, entertainment.

Introduction - Indore is an under-served market for quality retail and entertainment experiences while the population has a high propensity to spend. Given that Indore does not have large format retail centres and has limited options to socialise. The impact of mall culture on departmental stores and super bazaars is clearly visible in the locations close to the malls, but traditional shopping districts like Cloth Market and Rajwada remain by and large unaffected, mainly because they cater to different needs of consumers. Shopping malls with their classy ambience seem to have captured the imagination of shopping-crazy Indoreans, as these are one-stop shops where they can also indulge their love for food with entertainment. People are hoping to see bigger malls than Treasure Island popping up in our beautiful city.

Objective - Due to revolutionary change in retail sector with introduction of advance technology and smart phones along with paradigm shift in culture, this paper is prepared to study malls of Indore district as the sole objective.

Research Methodology - This paper is prepared using descriptive method of research and the data collected from secondary sources. The scope of the study is restricted to Indore District.

A shopping mall - shopping centre/shopping precinct/ simply mall is one or more buildings forming a complex of shops which represent merchandisers with interconnecting walkways, enabling visitors to easily walk from unit to unit, along with a parking area, a modern, indoor version of the traditional marketplace.

Shopping malls in Indore - Indore is rapidly developing into a 21st century city. The city might yet not rank high on the list of the most popular tourist destinations in India, but it certainly offers a lot to visitors. Things to do in Indore range from shopping at Sarafa Bazaar and binging at Chhappan Dukan to chilling at amusement parks and taking a tour of the insightful museums. Now, talking specifically of shopping, the city is not just home to traditional markets, but also contemporary malls that are beginning to crop up in its various corners.

Among various malls in Indore district, Treasure island and C21 Mall are in the list of the Famous malls of Indore. Here is a list of malls in Indore:

1. Treasure island
2. C21
3. Malhar Mega Mall
4. Central Mall

Specialty malls-

1. Orbit Mall- Mall of Smart Phones
2. Silver Mall- Mall of technical solution, Software and Hardware

- **Treasure Island Mall**

*Assistant Professor, Shri Vaishnav College of Commerce, Indore (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Commerce) Devi Ahilya Vishwavidhyalaya, Indore (M.P.) INDIA

US-based private equity giant Blackstone has bought two malls in Indore. The malls — Treasure Island and Treasure Island Next. Treasure Island Mall, is located at M G Road in Indore. Treasure island often name as **TI** is very first mall of Indore. Treassure Island Mall is a top-rated, and one of the most popular malls in Indore which occupies an area of 1,00,000 square feet. This mall in Indore has both, retail and service outlets, a food court, a cinema hall, and much more. It houses top clothing and accessories brands like Global Desi, Levi's, Allen Solly, Lavie, Reebok, and also offers pocket-friendly options, in the form of stores like Reliance Trends, Max, etc. So one can now shop till heart's pleased.

For weekend movie plans, Treasure Island Mall has PVR Cinemas, that offers an excellent movie-watching experience. For entertainment purposes, it also has a 7D movie theatre, and a Scary house - guaranteeing a rush of adrenaline and then, visiters can always grab a snack, or eat to their stomach's fulfilment, at the food court. This famous mall is loved by all, and is a must-visit.

There will be no dearth of shopping options in TI. Bags, shoes, accessories, fashionwear, electronic gadgets, supermarkets, books, gifts, cosmetics, jewellery, kids' wear and travel accessories, can be picked all here. On the dining front, the mall has a restaurant-studded food court as well as standalone eating joints including McDonald's.

It is one of the most famous mall of Indore and had received an award when it had started. It is at a walkable distance from 56 dukaan. This mall is one of the premium malls in Indore. Perhaps the oldest and first mall of the city . The mall is beautiful and everything is exorbitant here. The McDonald's is good. Best mall for shopping in Indore. One can find all the popular brands in the mall with excellent food court. A good place to hangout alone or without friends for some time pass and fun. It is well designed and well maintained mall. Good location, right in the centre of the city.

- **Treasure Island Next Mall**

Originally or previously known as Central Mall or Indore Central, Treasure Island Next Mall is among the relatively new shopping malls in Indore. The shopping options here might be a little less, but these are certainly growing in number, and quickly. Renowned brands, including Puma, Nike, Wildcraft, Westside, Biba, H&M, Reliance Trends, Mac, Forest Essentials, Caratlane and Helios, already have their stores here. On the dining front, it has Cafe Coffee Day and Domino's among others. However, the biggest highlight of the mall is Smaaash, a vibrant destination offering a range of drinks and an even wider range of arcade games.

Earlier called Central Mall, this mall underwent renovations and is now called Treasure Island Next Mall. It occupies an area of 75,000 square feet and provides multi-level parking. It offers all the luxury amenities when it comes to shopping, dining, or entertainment. It has all the top apparel brands like Biba, ONLY, Wrangler, etc. It has retail outlets of brands like Lenskart, Skechers, and so on. Thus, giving visiters a luxury shopping experience and when people need to dine in, they have a wide variety of cuisines to choose. From desserts to fast food, one can grab a snack and resume shopping at TI Next Mall.

Along with these when visiters need entertainment, in the form of movies or games, they have the INOX theatre for a great movie watching experience, and it has 'SMAAASH' - a virtual reality led gaming experience, that is guaranteed to give a great gaming experience.

- **C21 Mall**

Citizens of Indore looking for a place to hang out with your friends, then they consider C21 Mall, where they can walk hand-in-hand, shop to your hearts' gratified and gulp down dishes from around the country. For almost a decade now, the mall has been treating locals as well as visitors to a memorable shopping experience. The stores at C21 Mall offer everything, including kids' wear, fashionwear, electronics, apparel and accessories, home decor, cosmetics and everything else one can think of. Not to forget the array of restaurants it houses.

C21 Mall, also called the Century 21 Mall, is another famous mall in Indore. It satisfies every need of the customer, whether it is for shopping, dining, or entertainment. It has a Hypermarket, that consists of all the top fashion brands like Globus, Adidas, Levi's etc. It also offers different stores for groceries, electronic items, toys, and so on. One can shop for anything and everything over here.

C21 Mall has an INOX movie theatre for the best movie viewing experience. Apart from that, the mall also has a video game section, and a bowling alley - so visiters and their friends can entertain themselves. It is the largest play zone in the city. Like all popular mall prerequisites, C21 also has a food court with various dining options - from snacks to fast food, to speciality restaurants, so visiters don't have to worry about going hungry while shopping or watching a movie. The real highlight of this mall, is, however, the discotheque and a pub. So one can go on and organise parties, or enjoy and unwind by dancing away their weekly stress. A mall having so many amenities has to be visited.

- **Malhar Mega Mall**

Another great place to indulge in retail therapy, Malhar Mega Mall is right across C21 Mall. So, if shoppers don't find what they want at one mall, they can just cross over to the other. At Malhar Mega Mall, visiters can shop for their everyday supplies at the hypermarket, let the kids have fun at their dedicated play zone, pig out at the numerous restaurants, pick up trendy men's or women's clothing, or splurge on jewellery. One can even have fun at the 7D theatre within the mall.

For the sole shoppers and diners, Malhar Mega Mall in Indore is the perfect destination. This mall offers a wide range of fashion brands to shop from - like Fida, Globus, Trends, etc. It also has hypermarkets like Big Bazaar for all the groceries and general shopping.

This mall might be a hub for all the food enthusiasts out there because it has a wide variety of cuisines, like fast food to desserts and even restaurants. So all food cravings are satisfied.

And when people feel like catching up on a movie, Carnival Cinemas, in Malhar Mega Mall, has got their back. As far as other modes of entertainment are concerned, the mall also has an ice skating rink and a play zone. It is a place where shopping, eating, and entertainment come together, it results in so much fun.

Apart from above, there are specialty malls in indore which are not exactly defined as malls but are famous for specialty with ambience like other shopping mall. These malls are not having family entertainment and food sections like above mentioned malls although famous, these malls are-

- **Orbit Mall -** Orbit Mall is located at Vijay Nagar, Indore. The mall is one of its kind in Indore and draws huge crowd for shopping and entertainment. The mall timings are 10.00 MA to 10.00 PM. The mall is a favourite place for shopping with many anchor stores as well as retail stores. The mall houses some renowned brands making the mall a favourite choice for shopaholics. There are many shops of all categories be it clothing, foot wears, or jewellery. Few brands to name are Westside, Wills Lifestyle, Woodland etc.

The mall houses one of the best food court of the town providing wide variety of food options. There is also a spa and beauty centre where one can relax. The mall is a great place to hang out with friends and families. Various events are organised at festival times in the mall. **Orbit mall** is famous for Lounge and bars. It has also a famous Disc known as Blue Ice. It is also known as mobile mall in Indore as it has many stores of mobile phones.

- **Silver Mall -** If shoppers are not a massive fan of typical malls, and if they are someone who needs to get specific work done, then a commercial complex like Silver Mall is the perfect place for them. Silver Mall in Indore has the best market for purchasing and repairing laptops, computers, and any other gadgets and gizmos. So if visiters travelling to Indore, and need urgent assistance for their devices, they know where to go. Since it is a commercial centre, it has some coaching institutes apart from the plethora of Laptop and Computer service shops.

Upcoming mall in Indore

- **Phoenix MarketCity -** In June 2018 Mumbai-based retail developer Phoenix Mills Ltd declared that it has acquired an under-construction mall. Phoenix Market City Indore, which would be operational by the end of fiscal 2021. Similar to other malls, it would also have brand stores, restaurant chain, accessories stores along with game zone and cinema halls which is awaited shopping destination for shoppers of Indore district.
- **Trinity -** Trinity is the buzz of delight, spread in an area of 1,20,000 sq.ft. This iconic shopping mall of Mhow is a host to brands such as Zudio, Jockey, Spykar, Parx, Adda, FirstCry by Mahindra, Action Shoes, Spa & Fortune Cinemas. It is at under developing stage though cinema hall commenced operation and few brand stores too. This mall would be attracting Rau, Mhow and nearby localists small town shoppers who are eager to experience modern retail shopping.

Which is Best Mall in Indore - According to peoples review comments on different websites visitors stated-

1. C21 in terms of area and Treasure Island in terms of footfall. But the irony Treasure Island is the first mall of India started in 2006, when India did not have any mall other than a historical shopping complex in Chennai started in British era by the Britishers.
2. In Indore there are many malls and the biggest is C 21 Mall. Malhar Mega mall is also near C21 and C21 is Crowded mall in Indore. Before C21 There was mall TI (Treasure Island) but after renovation and C21 Lunch Some Crowd got down and finally C21 Won Battle in Crowd and Biggest mall race.

3. The newly renovated mall is Treasure Island. The mall is befitting to Indore growing as a major city in India. It may not be comparable to some of the ones that Pune and Mumbai have but it's a step towards bringing in capital investment to make Indore a major city in India. Indore over the last 5 years has grown, the money has flowed in despite lack of tourism.
4. Treasure Island is drawing huge crowds, footfalls are not all that impressive at Indore's other mall - Mangal City. The mall is located on the outskirts of the City at Vijay Nagar Square and is half the size of Treasure Island. But unlike Treasure Island, which is designed on ground circular grid pattern wherein one can get a good view of almost the whole mall from the inside, Mangal City is designed more like a shopping complex.

Conclusion - People go to malls to enjoy the ambience and not to shop. At present, the retail activity in shopping malls is less than one per cent of the total organised retail shopping market in Indore. The City is spreading at a fast pace and there is definitely space for malls as well as old stores. Stores like Globus and Pakiza will have to spend more on marketing and advertisement to take the malls head on. Retailers need to change their marketing strategy. Shoppers like to visit new malls, but after an initial visit or two, they go back to the stores they've been shopping at for years.

Small retailers have no cause for worry because most of them are situated in the neighbourhood and people will continue to visit them for their daily needs. Shop owners are on friendly terms with their customers and also take back goods and provide home delivery. Even small retailers would have to work on their salesmanship. The business of small retailers would reduce by about 5-10% every year and most of them would end up working in these malls. The business of small retailers has already been affected to certain extent, and when more malls come up the wholesalers are also going to be hit. With hypermarkets like Big Bazaar wooing customers with innovative schemes and wider choices, kirana merchants and small-time traders also seem to be feeling the pinch.

References :-

1. https://www.livemint.com/Companies/M24FHGDNIIwjtIvn9w2PxO/Phoenix-buys-mall-in-Indore-for-Rs234-crore.html
2. https://www.business-standard.com/article/companies/blackstone-a-deal-away-from-becoming-no-2-mall-operator-117070501417_1.html
3. https://www.tripadvisor.in/ShowUserReviews-g494941-d6496387-r256142564-Treasure_Island_Mall-Indore_Indore_District_Madhya_Pradesh.html
4. https://www.fabhotels.com/blog/shopping-malls-in-indore/
5. https://www.holidify.com/pages/malls-in-indore-2021.html
6. https://www.hindustantimes.com/india/mall-magic/story-0pXNFvqgkrRIG4cSJqzqXL.html

****

In Vitro and in Vivo Antidiabetic Activity of Momordica Dioica Roots Extracts in Streptozotocin Induced Diabetic Albino Wistar Rats

Manoj Kumar Gajbhiye* Arun Kakkar** Hemant Ganweer***

Abstract - Objective: The principle goal of this work is to assess the in vitro and in vivo antidiabetic activity of ethanolic extract of Momordica Dioica in the streptozotocin actuated diabetic rats.
Methods: Single intra peritoneal injection (i.p.) of streptozotocin (60 mg/kg body weight) was used for induction of diabetes in albino rats. The induction of diabetes of confirmed after 4th days of streptozotocin injection and rats with fasting blood glucose levels were greater than 200 mg/kg and were considered to be diabetic used in the experiments. Momordica Dioica at a once daily dose of 200 mg/kg and 400 mg/kg with Glibenclamide 600 µg/kg was also given for 28 days. On the last day, the blood was collected from all groups of rats which have fasted overnight by puncturing the retro-orbit of the eye under mild ether anesthetic condition.
Result: The statistical data indicated that the different doses of Momordica Dioica decrease the level of blood glucose in streptozotocin induced rats. This result indicated that Momordica Dioica can protect pancreatic β-cells from streptozotocin induced damage which is confirmed by the result of histopathological examination of pancreas.
Conclusion: Our investigation has clearly indicated that ethanolic extract of Momordica Dioica showed antihyperglycemic activity due to its possible systemic effect involving in pancreatic mechanism.
Keywords - Momordica Dioica, Glibenclamide, alpha Glucosidase, Diabetes, Pancreas, Albino rats.

Introduction - Diabetes is one of the most debilitating diseases in the world. It is a condition in which body is unable to metabolize glucose, which can in turn be due to lack of production of insulin or insensitivity towards it [1]. Many of the drugs have been used in the management of this disease. These drugs have many side effects and a search for new class of compound is essential to overcome diabetic problems [2]. Various therapies are available such as hypoglycemic drugs, insulin and recently cellular therapy, but these therapies have their own limitation [3]. Type II diabetes usually occur in obese individuals and is associated with hypertension and dyslipidemia. The capacity of nutrients to stimulate insulin release from the pancreatic β cells reflects their capacity to augment oxidative oxidative fluxes in the islet cells [4]. Medicinal plants used to treat hypoglycemic and hyperglycemic conditions are of considerable interest to ethno botanical community as they are recognized to contain valuable medicinal properties in the different parts of the plants [5]. At present, thousands of plant metabolites are being successfully used for the treatment of variety of diseases. According to an estimate, 80% of the world's population replied upon plants for their medication [6]. The use of the medicinal plants is increasing in many countries where 35% of the drugs contain natural product [7].Momordica Dioica Roxb. Ex. Wild (Cucurbitaceae) is a perennial dioiceous climber with tuberous roots found throughout India from Himalayas to Ceylon, up to an attitude of 1,500 m. the plants is sometimes found growing wild and is common in hedges. It is often cultivated for its fruits, which are used as vegetables [8].The whole plant is used for the treatment of eye diseases, poisoning and fever. Fruits leaves and tuberous roots used in India as a folk remedy for diabetes [9]. Traditionally, a number of plants have been used in various herbal preparations in the management of diabetes and only few of them have been proven scientifically [10]. Due to lack of sufficient literature on the role of MD in diabetes, we, in our current study have checked various parameters to ascertain the antidiabetic activity of this plant. Here, we investigated the anti-hyperglycemic effect of ethanol extract of MD roots in streptozotocin induced diabetic rats.

Materials and methods

Plant material - Carefully inspected healthy plants parts of MD roots was collected from tribal areas of Lanji and Kirnapur, district Balaghat (M.P.) India. Shade dried roots (2kg) was milled and extracted using ethanol (2lit.) in Soxhlet apparatus for 72 h. Then, the extract was evaporated to dryness and the final dry chocolate colour

*Natural product lab, Department of Chemistry, Govt. Science College Jabalpur (M.P.) INDIA
** Natural product lab, Department of Chemistry, Govt. Science College Jabalpur (M.P.) INDIA
*** Department of Botany, Govt. S.S.P College, Waraseoni, Balaghat (M.P.) INDIA

crude extract was stored in dark at -20 °C until used for the experiments.

Chemicals - All Chemical were of analytical grade. Streptozotocin was procured from sigma Aldrich (Germany).

1. 0.1 M citrate buffer
2. Streptozotocin (STZ)
3. Citric acid
4. Sod citrate
5. Sod hydroxide

Instruments

1. Glucometer
2. Glucometer strip

Experimental animals - Healthy adults Wistar male albino rats weighing 175 ± 25 gm were used for all experiments in present study. Animal were collected at random from Animal house of PBRI, Bhopal. All animal experiments were approved by Institutional Animal Ethics Committee (IAEC) of PBRI, Bhopal (Reg No. – 1824/PO/Ere/S/15/CPCSEA). Animal were housed in a group of four in separate cage under controlled condition of temperature (22±2°C). All animal were given standard diet (golden feed, New Delhi) and water ad libitum. Animal were kept at 12:12, light: dark cycle. Animal were further divided in eight groups with six animal in each group.

In vitro Antidiabetic activity - In vitro α -amylase Inhibition study: The assay was carried out following the standard protocol with slight modifications. Starch azure (2 mg) was suspended in 0.2 mL of 0.5M Tris–HCl buffer (pH 6.9) containing 0.01 M $CaCl_2$ (substrate solution). The tubes containing substrate solution were boiled for 5 min and then pre-incubated at 37°C for 5 min. All sample extracts were dissolved in DMSO in order to obtain concentrations of 10, 20, 40, 60, 80, and 100 ìg/mL. Then, 0.2 mL of sample of particular concentration was added to the tube containing the substrate solution. In addition, 0.1 mL of porcine pancreatic amylase in Tris–HCl buffer (2 units/mL) was added to the tube containing the plant extract and substrate solution. The reaction was carried out at 37°C for 10 min. The reaction was stopped by adding 0.5 mL of 50% acetic acid in each tube. The reaction mixture was centrifuged at 3000 rpm for 5 min at 4°C. The absorbance of resulting supernatant was measured at 595 nm using spectrophotometer (Systronic India 2202 UV–VIS spectrophotometer). Acarbose, a known α -amylase inhibitor was used as a standard drug. The concentration of acarbose and plant extracts required to inhibit 50% of α -amylase activity under the conditions was defined as the IC50 value. The α -amylase inhibitory activities of plant extracts and acarbose were calculated, and its IC50 values were determined [11].

Induction of Diabetes

1. Diabetes was induced in rats by intra peritoneal injection (i.p.) of STZ at a dose of 60 mg/kg body weight. STZ dissolved in ice cold 0.1M citrate buffer.
2. The animals were allowed to drink 5% glucose solution overnight to overcome STZ induced hyperglycemia.
3. The animals were considered as diabetic. If their blood glucose value about above 200 mg/dl on 3 rd day of STZ injection.
4. The treatment was started on 4th day after the STZ injection, considering it as 1st day of treatment, the treatment was continuing till 28 days.
5. Blood glucose level and body weight was observed on 0, 7, 14, 21, and 28 day of post treatment.

Experimental design - Rats were divided into five groups with six animals in each group. Group I, received normal saline p.o. only and vehicle control, Group II, received diabetic control only STZ, Group III, received glibenclamide, 600 µg/kg per day p.o, Group IV and V received ethanol extract (200 and 400 mg/kg) per day p.o.,

Group I Normal rats + Vehicle (Saline) 5ml/kg
Group II Vehicle + STZ (60 mg/kg)
Group III STZ + Glibenclamide (600 µg/kg)
Group IV STZ + MD ethanol extract (200 mg/kg)
Group V STZ + MD ethanol extract (400 mg/kg)

On day 28, all animals were sacrificed by under mild ether anesthesia. The whole pancreas from animal was removed after sacrificing the animal was collected in 10% formalin solution. And immediately processed by the paraffin technique. Sections of 5 micron thickness were cute and stained by haematoxylin and eosin (H & E) for.

Results and Discussion - In vitro α -amylase Inhibition activity: Momordica Dioica showed a significant inhibitory action on α -amylase enzyme. The percentage Inhibition at 10-50 µg/ml concentration of Momordica Dioica roots extracts showed a concentration dependent increase in the percentage Inhibition Momordica Dioica showed 61.58% inhibition at 50 µg/ml and Acarbose showed 69.71% Inhibition. The value of tabulated in Table - 1 and Table – 2. The Inhibition of α -amylase enzyme by the Momordica Dioica plant in the present study provides a strong biochemical basis for the management of diabetes.

Table 1: α -amylase inhibitory effects of Acarbose (standard α -amylase inhibitor)

Concentration (µg/ml)	% Inhibition	IC50 (µg/ml)
10	46.99	
20	52.00	
30	59.13	15.5±41.21
40	63.25	
50	69.71	

Graph 1: α -amylase inhibitory effects of Acarbose (standard α -amylase inhibitor)

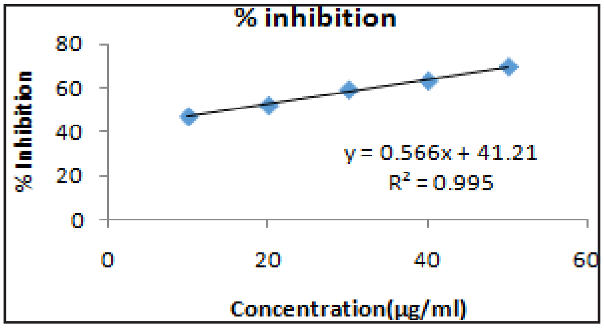

Table 2:α -amylase inhibitory effects of Ethanol extract of Momordica Dioica.

Concentration (µg/ml)	% Inhibition	IC50 (µg/ml)
10	39.42	29.30 ±33.59
20	44.10	
30	51.11	
40	55.79	
50	61.58	

Graph 2:α -amylase inhibitory effects of Ethanol extract of Momordica Dioica.

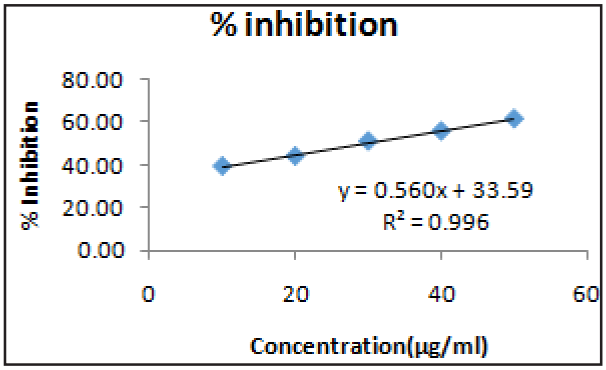

A marked rice in fasting blood glucose levels were observed in diabetic group when compared with normal control rats. Ethanolic extract of Momordica Dioica at (200,400 mg/kg) exhibited a dose dependent significant antidiabetic activity. All the values shown in the table 3. It was found that ethanolic extract at 400 mg/kg showed highly significant decrease in the blood glucose levels when compared to the control STZ induced diabetic animals which was compared with the standard drug glibenclamide (600 µg/kg). The standard drug glibenclamide stimulate insulin secretion from of islets of Langerhans.

Table: 2 (See in next page)

From this study it is suggested that the possible mechanism by which the plant extracts decrease the blood glucose levels may be potentiation of insulin effects either by increase in pancreatic secretion of insulin from beta cell of islets of Langerhans. The pancreas of Albino rats shown Figure 1 shows normal architecture of the pancreatic lobe disrupted fibrous tissue between the lobes when treated with 400 mg/kg of Momordica Dioica extract. The figure 2 shows the necrosis the islet cells. Pancreatic lobes are elongated and figure 3 shows the standard drug Glibenclamide. and Figure 4 shows the streptozotocin induced diabetic rats.

Figure: 1 Treated with 400 mg/kg of ethanolic

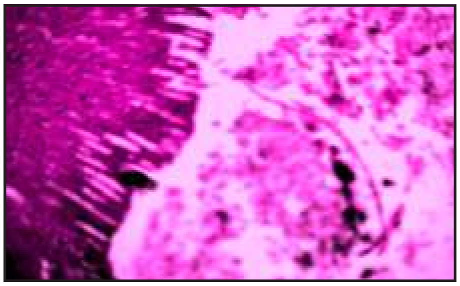

Extracts of Momordica Dioica.

Figure: 2 Treated with 200mg/kg of ethanolic

Extracts of Momordica Dioica.

Figure: 3 Treated with 600 µg/kg Glibenclamide

Figure: 4 Streptozotocin induced

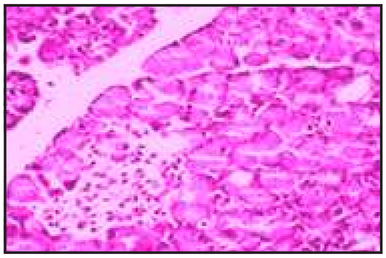

Histopathological Examination: The antidiabetic activity was confirmed through the histopathological pancreas of albino rats. For histopathological study the pancreas was removed after dissection of rats and they were preserved in 10% Formalin. They were given for histopathological studies.

Acknowledgement - First author are thankful to Govt. of Madhya Pradesh India, for providing financial support during the research work under State Research Fellowship, Dr. Anjali Bajpai, Head of The Department, Department of Chemistry, Govt. Science College, Jabalpur (MP) for giving laboratory facilities in the Department, Dr. A. L. Mahobiya principal (Govt. Science College Jabalpur) and Dr. R. C. Mourya, UTD, Rani Durgavati Vishwavidhylaya, Jabalpur (MP) for valuable support and guidance in the present work.

References :-

1. American Diabetes Association Diagnosis and classification of diabetes mellitus. (2007), Diabetes care:30:42-46
2. Noor A, Gunasekrams, Manikkam AS, Vijyalakshmi MA (2008), Antidiabetic activity of Aloevera and histology or organs in streptozotocin induced diabetic rats. Curr. Sci. 94:1070-1076
3. Pandit R,Phadke A, Jagtap A. (2010) Antidiabetic effect of ficusreligiosa extract in streptozotocin induced

diabetic rats.J Ethnopharmacol:128(2):462-466
4. Malaisse WJ (1983), Insulin release:The fuel concept , Diabmetab,9,313.
5. Manisha Moddak, Priyanjali dixit, Jayant londhe, Saroj ghaskadbi (2007), Indian Herbs and Herbal Drugs used for the treatment of Diabetes. Journal of clinical Biochem, Nutor ,40(3):163-173
6. Akerele Natures (1993), Medicinal Bounty: Don't Throw It Away. World Health forum :390-95
7. Sofowara A. (1982), Medicinal plants and Traditional Medicine .In:Africa,John Willey sons Ltd.NY,:6
8. Sastri BN (1962), The wealth of India –raw Materials. New Delhi : CSIR;P.408
9. G.Thirupathi Reddy,B.Ravi kumar ,G.krishnamohan (2006), Antihyperglycemic activity of Momordica fruits in alloxan induced diabetic rats,Asian Journal of pharmaco dynamics and pharmacokinetics .,6(4):327-329
10. Jia Q,LIUX ,Wux ,Wang R,HUX,et al (2009), Hypoglycemic activity of a polyphenolic Oligomer-rich extract of cinnamomum parthenoxy lon bark in normal and streptozotocin induced diabetic rats . Phytomedicine 16:744-750
11. Iniyan G ,Tamil.B, Dineshkumar M, Nandhakumar M,Senthikumar and A mitra (2010), In vitro study on α-amylase inhibitory activity of an Indian Medicinal plants phyllanthus amarus, Indian J pharmacol. Oct ;un(s):280-282

Table: 2 Effects of root extracts of Momordica Dioica on Blood glucose level of streptozotocin – induced diabetic rats during prolonged treatment.

S.	TREATMENT	BLOOD GLUCOSE LEVEL (mg/dl)				
		0 Day	7 Day	14 Day	21 Day	28 Day
1.	Vehicle (Saline) 5 ml/kg	89.1±6.015	91.3±5.546	92.0±5.289	93.1±5.293	93.1±6.067
2.	Vehicle + STZ (60 mg/kg)	288.0±7.065	294.1±7.699	298.1±7.669	300.4±8.346	307.0±9.280
3.	STZ + Glibenclamide (600 µg/kg)	290.8±7.602 NS	184.9± 12.107*	136.6± 12.145*	125.5±5.708*	111.4± 8.844*
4.	STZ + EtOH (Momordica Dioica) extracts (200 mg/kg)	286.9±6.708 NS	263.6± 6.359*	232.2± 7.434*	224.2±6.648*	205.9± 7.806*
5.	STZ + EtOH (Momordica Dioica) extracts (400 mg/kg)	286.1±6.397 NS	251.7± 9.938*	214.1± 9.795*	199.4± 10.006*	174.4± 9.084*

****

A Study of Socio Economic Status in Relation to Emotional Intelligence and Personality of Secondary School Students

Vinaysheel Narang* Dr. Parshotam Dass Swami**

Abstract - The present study aims to determine the Emotional Intelligence and Personality of Secondary School students in relation to their Socio Economics Status. The research was carried out on random sample of 200 students of rural and urban secondary school from Abohar Tehlis. The research use standardized tools for the study. Statistical techniques of percentage, t-test and correlation was used to analysed the emotional intelligence and personality of secondary school students the results indicate that there was secondary school students have high socio economics status and average level of emotional intelligence. There is no significant difference between boys and girls in there emotional intelligence and personality. There is low positive correlation in all the variables.

Introduction - Education is both a process, a social function carried on by & in society for its sake. Its meaning like the meaning of life, culture & religion. The process of education is not an easy task. It requires lot of labour. First of all it is necessary for a teacher to understand the psychological factors that affect the learning of children. There are so many psychological factors like socio economic stales, emotional maturity, emotional intelligence, personality, self concept etc. that influence the students in their learning process. Aim of educational psychology is to help the students & the teacher in understanding human nature so that he may be able to motivate & direct the learning & growth & conduct.

Education is both a private & social investment that is shared by individual. Students, their families, employers, government & other group including international agencies. Education is modification of behavior of the individual in a social desirable contact of its environment for adequate adjustment in the society to personify the personality to influence person on the basis of his / her socio-economical status.

Socio Economic Status - The term socio economic status is the combination of social status & economic status of an individual or family an the basis of income, education, profession & material possessed etc. in relation to others in a society. Broadly, socio economic status comprised of socio cultural aspects, economic, education & possession of goods and services which are avails in a family.

Everyone knows about the various stereotypes & social stigmas that come with socio economic states whether they will choose to admit it or not society has come to assume that a child who comes from a family of low socio economic status, that they will not do as well as a child who comes from a family of a greater socio economic status. Unfortunately these assumption are so ingrained in our brains that we start to follow the self fulfilling prophecy. When a child from a noticeably low socio economic status walks into a classroom, it is not uncommon for the teacher to automatically assume that the child will not perform well in class, & in turn either grades the child more harshly or does not give the child as much attention as the child requires.

Emotional Intelligence - Emotional intelligence is the ability to understand accept & recognize our own emotions & feelings, including their impact on ourselves & other people & to use this knowledge to improve our own behaviors as well as to manage & improve our relationship with others. It is basically the capacity for recognizing our own feelings & those in others, for motivating ourselves, for managing emotions, well in us & in our relationships. The term emotional in emotional intelligence is used broadly to refer to moods as well as emotions. Emotional intelligence essentially describes the ability to effectively join emotions & reasoning, using emotions to facilitate reasoning & reasoning intelligently about emotions.

According to Mayer & Salovey - "Emotional intelligence is the ability to perceive emotions, to access & generate emotions so as to assist thought, to understand emotions & emotional knowledge & to reflectively regulate emotions so as to promote emotional & intellectual growth."

Personality - It refers to individual differences in characteristic patterns of thinking, feeling & behaving. Most distinguish between three different components or layers in personality, the self & the unconscious processes.

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Supervisor, INDIA

The term personality encompasses all aspects of human behavior. It is a hypothetical construct used to both describe & explain one's consistent behavioral tendencies. It encompasses all of a person's traits, attributes & motives as well as his temperament, attitudes, emotional response, cognitive styles & morals. Allport (1955) lists numerous definitions of which the most comprehensive emphasizes the unique qualities of the individual & the integration of physical, mental, moral, emotional & social qualities as manifested by individuals to other people. Personality is the total organization of the person's behavior.

The term personality is derived from the Latin word 'persona' – It means mask wean by actors to portray a character. On stage for a layman, personality on other people. Allport extracted all most fifty different definitions & classified them into seven broad categories. Biosocial, biophysical, amnibus, integrative, adjustment, unique & differential essential.

Statements of Problems - "A study of Socio Economic Status in Relation to Emotional Intelligence and Personality of Secondary School Student"

Objectives of the Study :

1. To study the socio-economic status of secondary school students.
2. To study the emotional intelligence of secondary school students.
3. To study and compare personality of girls and boys of secondary schools.

Hypothesis of the Study - In the present study, the researcher has formed the following hypothesis :-

1. Secondary school students have high socio-economic status.
2. Secondary school students have high emotional intelligence.
3. Boys of secondary schools have extrovert personality while girls have introvert personality.

Research Method - In the study survey method is used and information will be obtained from students.

Tools :

1. Social Economic Status inventory by Mr. R.P. Verma, Mr. P.C. Saxena & Dr. Usha Mishra.
2. Emotional Intelligence inventory by Dr. J.K. Manga & Mrs. Subhra Mangal.
3. Introversion Extroversion Inventory by Dr. P.F. Aziz & Dr. Rekha Gupta.

Sampling in the present study :-

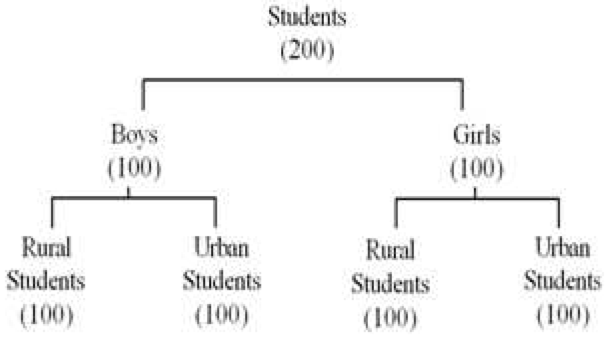

Statistics to be used in the study :-

1. Percentage
2. Mean
3. S.D.
4. T - Test
5. Graphical representation of Data.

Analysis & Interpretation :-

1. Hypothesis – 1 - "Secondary school students have high socio-economic status."

Table – 1 : This table shows the high socio-economic status of secondary school students.

Level	Number of Student	Percentage	Result
High SES	110	55	Accepted
Average SES	25	12.5	
Low SES	65	32.5	

Hypothesis -2 - "Secondary school students have high emotional intelligence."

Table – 2 : This table shows the high emotional intelligence of secondary school students.

Level	Number of Student	Percentage Percentage	Result Result
High Emotional Intelligence	75	37.5	Rejected
Average Emotional Intelligence	90	45	
Low Emotional Intelligence	35	17.5	

Hypothesis -3- "Secondary school students have extrovert personality."

Table – 3 : This table shows the extrovert personality of secondary school students.

Level	Boys	Girls	Result
Introvert	5	4	Rejected
Ambivert	75	66	
Extrovert	20	30	

Hypothesis -4- "The percentage of secondary school boys who have extrovert personality is more than girls."

Table – 4 : This table shows the percentage of secondary school boys who have extrovert personality is more than girls

Gender	Total Student	Students with Extrovert Personality	Percentage	Result
Boys	100	20	20	Rejected
Girls	100	30	30	

Hypothesis -5- "The percentage of secondary school girls has more introvert personality than boys."

Table – 5 : This table shows the percentage of secondary school girls has more introvert personality than boys

Gender	Total Student	Students with Introvert Personality	Percentage	Result
Boys	100	05	5	Rejected
Girls	100	04	4	

Conclusion :

1. It is concluded that secondary school students have high socio economic status.
2. It is concluded that most of the students have average level of emotional intelligence.
3. It is concluded that most of the secondary school boys & girls have ambivert personality, girls who have extrovert personality is more than boys and boys have more introvert personality than girls.

Educational Significance :

1. It is beneficial for policy makers to formulate policies according to the emotional intelligence and socio economic status of students.
2. It is beneficial for teachers and management.
3. Parents should create such type of atmosphere in their homes, so their child developed high emotional intelligence and personality irrespective of their socio economics status.

References :-

1. American Psychological Association (2001) : Task force on socio economic status report of the APA task force on socio economic status. Washington D.C.
2. Amutabi, M.N. (2003) : The 8-4-4 system of education, International Journal of educational development 23(2003) PP. 127-144
3. Erick, Nyahundi Onsongo et al. (2012) : The role of business ethics in the performance of small scale business. A case study of small scale traders in Kisi Town Elixir Human Resource management.
4. Gachathi, P. (1976) : Report of the national committee on educational objectives republic of Kenya, Nairobi Government printer.
5. Marmot, Michael (2004) : The status syndrome : How social standing affects our health & longervy New York : Owl books.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

A Study of Personality of Secondary School Teachers in Relation to their Scientific Attitude, Self Concept and Mental Health

Divya Gagneja* Dr. Parshotam Dass Swami**

Abstract - The present study aims to determine the Scientific Attitude, Self Concept and Mental Health of Secondary School teachers in relation to their Personality. The research was carried out on random sample of 200 teachers of rural and urban secondary school from Abohar Tehsil. The research use standardized tools for the study. Statistical techniques of percentage, t-test and correlation was used to analysed the Scientific Attitude, Self Concept and Mental Health and personality of secondary school teachers. The results shows that Introvert personality teachers have more scientific attitude than the extrovert personality teachers. Introvert personality teachers have more self concept than the extrovert personality teachers. Extrovert personality teachers have more sound mental health than the introvert personality teachers.

Introduction - "Education is nothing but a cumulative effect of the external impact of environment. This impact brings about change and betterment in the conduct, habit, and behavior of the subject. In other works, it is through education that good habits develop in an individual."

- G.S. Thompson

Life is a long continuous process of learning & adjustment, of interaction between the individual & his environment & education may be defined as the changes brought about in the individual as a result of that interaction. In a very broad sense all life is education & the individual continues to learn through out his life. Education is to facilitate to ease & to further this process. Education is growth & development. "it is a process in which & by which the knowledge, character & behavior of the young are shaped & moulded".

Teacher is meant to help in learning. Every person learns by his own efforts & experiences. The teacher can motivate students to take interest in learning, can guide to have those experiences by which he can learn facts, attitudes or skills but the teacher cannot learn anything an behalf of the student. He only influence the students by his personality, mental health etc. teacher should also possess the scientific attitude towards learning. Self concept of the teacher about himself/ herself should be strong enough to influence the behavior & learning of students.

Personality - Personality means individual difference among people in behaviour patterns, cognition and emotion. Different personality theorists present their own definitions of the personality. Most psychologists endorse a simple set of assumptions about the way personality is put together in humans. Most distinguish between three different components or layers in personality : the persona, the self, and the unconscious processes.

The first level of personality is a mask or external layer people use for different occasions. This is the personality an individual shows the world. The word 'persona' is used to describe this layer. Persona is also the name used in ancient Greece for theatrical masks worn by actors to indicate emotion. People are usually aware that the appearance they put on is distinct from the underlying true self. The second level of personality, behind the mask, is the private self or ego. This can also be called the personal identity. To most people, this s the personality. This part of personality dominates conscious experience. The third component, distinct from both the persona and the conscious self, is the realm of unconscious processes in the mind. Unconscious processes include everything not normally accessible to conscious awareness. Personality traits can explain individual differences and predict behaviour. Teacher's personality is an aspect of characteristics of teacher and it greatly influence the teaching learning process.

Scientific Attitude - Scientific attitude is the curiosity, the careful judgment the open mindedness, the critical mindedness, the objectively, the rationality & the intellectual honesty. These attitudes should be considered by any aspiring scientist. Curiosity by is an attitude to be curious about the different things around.

Teachers with scientific attitude instruct students in subject specific classrooms. They create lesson plans, evaluate student performances & teach using lectures,

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Supervisor, INDIA

technology & hands on learning experiences. They also model expected behavior to establish & maintain an orderly, disciplined classroom.

Self-Concept - Self concept is the keystone of individuals personality. It is his way of thinking, feeling & behaving in a good manner. It is the person's Idea regarding the whole of his self. There are several terms that are used synonymous with self concept most of them are self image, ego, self understanding, self perception etc.

Self concept is one of the most dominating factor in human life as everyone is continuously striving for self actualization, realization & self enhancement & is constantly wishing to avoid self condemnations & self lowering experience. In general self refers to the conscious, reflective personality of an individual as an object separate from other & amid the environment. Self concept is the concept of self which personifies in individual as a whole. It means how he individual perceives himself how he perceives his environment in relation to himself. The individual self concept is his picture or image of himself, his views of himself different from other persons and thinks. This self images incorporates his perception of what he is really like & of his worth as a person (self evaluation) as will as his aspiration for growth & accomplishment (self ideal). Once the self concept develops, the individual comes to perceive himself as an active agent in determining his own behavior. An individual is said to have a good self concept if he is popular & influential.

Mental Health - Mental Health is a term used to describe how will the individual is adjusted to the demands & opportunities of life. The idea of mental health is complex & comprehensive. Mental health may the better understood by its comparison with physical health. A person is said to be physically health when his body is functioning will & he is free from pains & troubles. Similarly, a person is in good health when his mind or personality functioning effectively & he is free from emotional disturbances. He enjoys life & any unhappiness can be understandly explained. He is self confident, hopeful about himself. He has a few intimate & close friends, maintains cordial relations with a number of people whom he meets & generally gets along with all those with whom comes in contact in life & work. He is able to meet his problems without much disturbance & his fears & anxieties are normal. He keeps an equable temper & when aroused expresses his anger in a socially acceptable way. He has emotional maturity, balance & equilibrium. He understands himself, his merits & abilities he also knows his handicaps and disabilities but he accept them & makes the most of what mental & physical capacity he has. Mental health is on the continuance & one can attain optimum mental health by following the golden means, a self healthy attitude & realizing one's creative potential etc. A mentally healthy person is poised and serene which points to an inner world of self assurance & securely & sense of self fulfillment.

Statements of Problems - "A study of personality of secondary school teachers in relation to their scientific attitude, self concept and mental health".

Objectives of the Study :

1. To study the relationship between personality and scientific attitude among teachers of senior secondary schools.
2. To study the relationship between personality and self-concept among teachers of senior secondary schools.
3. To study the relationship between personality and mental-health among teachers of senior secondary schools.

Hypothesis of the Study :

1. Those teachers, who have extrovert personality, have more positive scientific attitude than the teachers having introvert personality.
2. Those teachers, who have extrovert personality, have more positive self concept than the teachers having introvert personality.
3. Those teachers, who have extrovert personality, have more sound mental health than the teachers having introvert personality.

Research Method - In the study survey method is used and information will be obtained from students.

Tools :

1. Introversion Extroversion Inventory by Dr. P.F. Aziz & Dr. Rekha Gupta.
2. Scientific Attitude Scale by Dr. Shailaja Bhagwat.
3. Self concept Inventory by Dr. Beena Shah.
4. Mental Health Inventory by Dr. Srivastava & Dr. Jagdish

Sampling in the Present Study :-

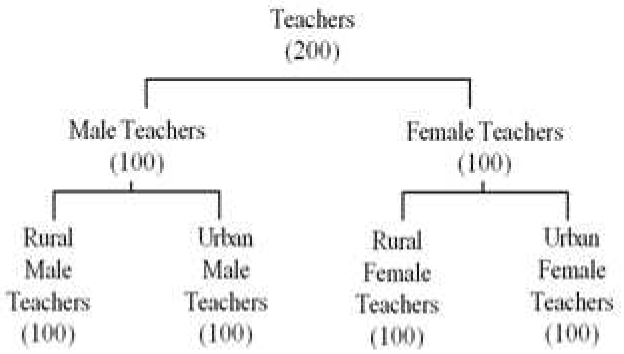

Statistics to be used in the study :-

1. Mean
2. S.D.
3. T - Test
4. Graphical representation of Data.

Analysis & Interpretation :-

Hypothesis - 1 :-

Those teachers, who have extrovert personality, have more positive scientific attitude than the teachers introvert personality.

Table – 1 : This table shows the comparison of positive scientific attitude of teachers of extrovert personality & introvert personality.

Personality	No. of Teachers	Scientific Attitude	Percentage	Result
Extrovert	76	30	39.47	Rejected
Introvert	26	14	53.84	

Hypothesis – 2 :- Those teachers who have extrovert personality have more positive self concept than the teachers having introvert personality.

Table – 2 : This table shows the comparison of self concept of teachers of extrovert & introvert personality.

Personality	No. of Teachers	Positive self concept	Percentage	Result
Extrovert	76	35	46%	Rejected
Introvert	26	15	57.69	

Hypothesis – 3 - Those teachers who have extrovert personality have more sound mental health than the teachers having introvert personality.

Table – 3 : This table shows the comparison of sound mental health of teachers of extrovert & introvert person.

Personality	No. of Teachers	Sound Mental Health	Percentage	Result
Extrovert	76	49	64.47	Rejected
Introvert	26	16	61.53	

Conclusion :

1. Introvert personality teachers have more scientific attitude than the extrovert personality teachers.
2. Introvert personality teachers have more self concept than the extrovert personality teachers.
3. Extrovert personality teachers have more sound mental health than the introvert personality teachers.

Educational Significance :

1. It is beneficial for policy makers to formulate policies according to the scientific attitude, self concept and mental health of the teachers.
2. It is beneficial for students and management.

References :-

1. Devi, L.U. & Mayuri, K. (1999) : "Personality development of rural elementary school children", Indian psychological abstracts & reviews Vol. 8, No. 1, Jan-June 2001, PP. 125-126.
2. Dhila, B.D. & Yagnik, L.R. (1999) : "A study of personality difference between pupils of Sanik & Non Sanik schools", Indian psychological abstracts & review, Vol. 8, No. 1, Jan-June 2001, P. 126
3. Goirala, L. & Sebastion, C.M. (2002) : "Renal failure & personality type", Indian psychological abstracts & reviews, Vol. 11, No. 1, Jan-June 2004, PP. 93-94
4. Kasinath, H.M. (2000) : "Interaction effect of institutional climate, personality & home climate on burnout among teacher educators", Indian educational review, Vol. 36, No. 1, Jan, PP. 51-61

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

जन-धन हितग्राहियों की स्थिति का अध्ययन (मध्यप्रदेश के सतना जिले के विशेष सन्दर्भ में)

रामभजन साकेत* डॉ. विजय सिंह परिहार** डॉ. अखिलेश मिश्रा ***

शोध सारांश – मध्यप्रेदश के जिला सतना में गरीबी रेखा के नीचे निवासरत जनसंख्या पर जन-धन योजना की प्रभावशीलता के अध्ययन के उद्देश्य के तहत शोध पत्र के माध्यम से अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा हैं। जिला सतना की गरीब आबादी आर्थिक और विकास की दृष्टि से पिछडी थी परंतु प्रधानमंत्री की जन-धन योजना उनके लिए वरदान साबित हो रही हैं। क्योकि योजना के माध्यम से उन खाताधारको को शासकीय योजना का लाभ सीधे बैंक के खाता के माध्यम से मिल पा रहा हैं। जिला सतना की गरीब जनसंख्या की जीवनशैली पर जन-धन योजना की प्रभावशीलता का मापन प्रस्तुत शोध पत्र में किया जायेगा। किसी भी व्यक्ति के जीवन पर उसकी शिक्षा, आय के स्त्रोत, और धन की पूर्ति प्रत्यक्ष प्रभाव डालती हैं। अत: शिक्षा के स्तर और धन की स्थिति के अध्ययन के आधार पर शोध के माध्यम से जन-धन खाताधारको की जीवनशैली का मापन किया जायेगा।

प्रस्तावना – प्रधान मंत्री जन-धन योजना केन्द्र सरकार का महत्वपूर्ण निर्णय था जो ढो के गरीब बेबस लाचार एवं कमजोर वर्गो के व्यक्तियो को सशक्त बनाने के लिये वित्तिय समावेशन का राष्ट्रीय लक्ष्य रखा गया जिसे देश के गरीब परिवारो को बैंकिंग सुविधा उपलब्ध कराने के साथ शून्य शेष खाता खोलना तथा उनको डेविड कार्ड व ए.टी.एम. कार्ड के द्वारा ग्रामीण एवं शहरी व्यक्तियों को डिजिटल भुगतान का प्रशिक्षण देना साथ ही बैंको की लम्बी लाइनों से छुटकारा दिलाना है। जन-धन योजना का शुभारम्भ 28 अगस्त 2014 को भारत के प्रधानमंत्री नारेन्द्र मोदी द्वारा किया गया।यह योजना गरीब व्यक्तियो को ध्यान मे रख कर प्रारम्भ की गई है । जिससे गरीब व्यक्तियों में भी बचत की भावना का विकास हो सके साथ ही उनमे भविष्य की सुरक्षा का एक अहम भाव जागृत हो जन-धन योजना केन्द्र सरकार का अहम फैसला है। जो देश के गरीब व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनायेगी साथ ही जरुरत पडने पर ओवरड्राफ्ट जैसी सुविधा से जन-धन हितग्राहियो के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने में मदद़गार साबित होगा क्योकि जरुरत के समय अपने पास पैसे हो तो सारी चिन्ताये दूर हो जाती है। क्योंकि दैनिक जीवन मे आपात की स्थिति कभी न कभी आ ही जाती है। ऐसी स्थिति मे यदि पास में रुपये हो तो किसी भी व्यक्ति के पास रुपये उधार लेने कि जरुरत नहीं पडेग़ी, आज की पीढी भौतिकवाद मे ज्यादा विश्वास रखती है। उनके जीवन जीने का मूलमंत्र कमाओ खाओ एवं मौज मस्ती मे जीवन व्यतित करते हुये दूरगामी प्रभावो को नहीं समझ पाते ना ही भविष्य की चिन्ता करते। अर्जित धन को भोग विलासिता मे खर्च देते है जबकि समझ इस बात पे है की थोडा बहुत रुपये बचा कर अपने पास एवं बैंको में रखना चाहिये जिससे आपात कि स्थिति मे व्यक्ति अपनी जिन्दगी आंनदमय जीवन व्यतीत कर सके इसीलिए प्रधानमंत्री जन-धन योजना गरीब व्यक्तियों को बनाने के लिए प्रारम्भ की गई जिससे उनके भी बैंक खाते खुल सके एवं विभिन्न प्रकार की शासन की योजनाओं का लाभ प्राप्त कर सके 28 अगस्त 2014 को पहले दिन 1.50 लाख खाते जन-धन योजना के खुले जिसे गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड द्वारा मान्यता प्रदान की गई वही जन-धन योजना के हितग्राहियो को योजना के तहत निम्न प्रकार के लाभो का प्रावधान है ।

1. शून्य शेष से खाता खोलना ।
2. 1 लाख रुपये से बढा कर 2लाख का दुर्घटना बीमा का प्रावधान ।
3. पांच हजार रुपये से बढाकर 10000रुपये ओवरड्राफ्ट की सुविधा ।
4. हितग्राहियो को खाता खोलने के साथ रुपये डेविड कार्ड प्रदान करना ।
5. जन-धन खाता को आधार से लिंक कराना जिससे समस्त योजनाओ का लाभ उनके बैंक खाते मे हो सके ।

सतना जिले का परिचय – जन-धन योजना के हितग्राहियो के अध्ययन के लिए सतना जिले का परिचय एवं अन्य जानकारी जिसका क्षेत्रफल 7502 वर्ग कि.मी है। जिले मे 8विकास खण्ड एवं 10तहसीले है 2011 के जनगणना के अनुसार जिले की कुल जनसख्या 2228935है जिसमे 474418 शहरी जनसख्या एवं 1754517 ग्रामीण जनसंख्या है। जिले मे 2125 ग्राम तथा 703 ग्राम पंचायते कार्यशील है। जिले मे जन-धन योजना के तहत 5.5लाख जन-धन खाते खुले है जिनमे 175000 खाते सक्रिय है जब कि 3.75 लाख खातो में लेन देन नहीं हो रहा हैं। जन-धन योजना के तहत खुले ग्रामीण एवं शहरी खातो मे शासन द्वारा विभिन्न योजनाओ का लाभ हितग्राहियो के बैंक खातो मे प्राप्त हो रहा है जिससे वे अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर अपना जीवन यापन कर रहे है।

उद्देश्य :

1. जन-धन योजना के हितग्राहियों की स्थिति का अध्ययन ।
2. जन-धन योजना के हितग्राहियों की जीवन शैली का अध्ययन।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध मे अनुसंधानकर्ता द्वारा जन-धन योजना के हितग्राहियों स्थिति का अध्ययन प्रश्नावली एवं उद्देश्य पूर्ण पद्धति से किया

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना (म.प्र.) भारत
** एसोसिएट प्रोफेसर (व्यवसाय प्रबन्ध) महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना (म.प्र.) भारत
*** शासकीय शिक्षा विभाग, जबलपुर (म.प्र.) भारत

गया।

50% तहसीलो का चयन	कुल जन संख्या ज.ग 2011	जन-धन खुले खाते	सक्रिय जन - धन खाते	शोध पत्र हेतु चयनित जन-खातो धारक
रघुराज नगर	504183	80310	20500	20
विरसिंहपुर	132640	50310	16000	20
रामपुर बाघेलान	168127	53640	19000	20
कोटर	107550	38840	15500	20
मझगवॉ	50362	51820	16000	20
योग	1062862	27500	87000	100

स्त्रोत: जिला सांख्यकीय कार्यलय सतना एवं लीड बैंक सतना

शोध हेतु चयनित सक्रिय जन-धन खातो को शोध की शुद्धता को बनाये रखने के लिये एवं वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिये प्रत्येक चयनित तहसीलो से 20-20 हितग्राहियो से सर्म्पक कर शोध पत्र को आगे बढ़ाया गया है।

1. जन-धन हितग्राहियो कि शैक्षिक स्थिति

विवरण	हितग्राही	प्रतिशत
शिक्षित	55	55
अशिक्षित	45	45
योग	100	100

जन-धन हितग्राहियो की स्थिति मे 55 प्रतिशत शिक्षित हितग्राहियों से जानकारी प्रदान की गई जब की 45 प्रतिशत अशिक्षित हितग्राहियों से जानकारी एकत्र की गई।

2. हितग्राहियों कि मासिक आय कि स्थिति

विवरण	हितग्राही	प्रतिशत
1100 से 1200	41	41
1300 से1500	30	30
2000 से 4000	19	19
6000 से 8000	10	10
योग	100	100

उपयुक्त विवरण से स्पष्ट है कि हितग्राहियों की मासिक आय 1200 रूपये प्राप्त करने वाले 41 प्रतिशत, 1500 रुपये प्राप्त करने वालो का 30 प्रतिशत, 4000 रूपये प्राप्त करने वालो 19 प्रतिशत, वही 8000 रुपये मासिक आय प्राप्त करने वाले हितग्राहियों का 10 प्रतिशत है।

3. हितग्राहियो द्वारा आवश्यकताओ की पूर्ति हेतु पैसो का आदान प्रदान की स्थिति

विवरण	हितग्राही	प्रतिशत
सेठ- महाजन	45	45
विभिन्न बैंको से ऋण	30	30
रक्त सम्बन्धी से	25	25
योग	100	100

हितग्राहियो द्वारा विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओ की पूर्ति पैसे के आदान प्रदान मे 45 प्रतिशत सेठ महाजन से पैसे उधार तथा 25 प्रतिशत अपने रक्त संम्बन्धियो से जबकि 30 प्रतिशत हितग्राही विभिन्न बैंको से ऋण लेकर आवश्यकताओ की पूर्ति करते है।

4. हितग्राहियों के बैक खाते खुलने की स्थिति

विवरण	हितग्राही	प्रतिशत
शून्य शेष से	68	68
500 रुपये से	32	32
योग	100	100

उपयुक्त विवरण से स्पष्ट है कि जन-धन हितग्राहियों के 68 प्रतिशत खाते शून्य शेष से खुले है कि जब कि 32 प्रतिशत हितग्राहियों के 500 रुपये से जन-धन खाते खुले है।

5. हितग्राहियो द्वारा जन-धन खाते मे पैसे का आदान प्रदान की स्थिति

विवरण	हितग्राही	प्रतिशत
नियमित रुप से	61	61
कभी-कभी	26	26
6 माह से आदान प्रदान नहीं किया	13	13
योग	100	100

उपयुक्त विवरण से स्पष्ट है कि चयनित 100 हितग्राहियो में से 61 प्रतिशत जन-धन खाते नियमित रुप से संचालित है, 26 प्रतिशत हितग्राही कभी-कभी पैसे का आदान प्रदान करते है जब कि 13 प्रतिशत खातो मे हितग्राहियो द्वारा कोई पैसा का आदान प्रदान नहीं किया गया है।

6. हितग्राहियो द्वारा राज्य एवं केन्द्रो की विभिन्न योजनाओ के लाभ कि स्थिति

विवरण	हितग्राही	प्रतिशत
सामाजिक सुरक्षा पेंशन	25	25
उज्ज्वला योजना का लाभ	27	27
पी.एम. आवास का लाभ	13	13
वृद्धा पेंशन का लाभ	35	35
योग	100	100

उपयुक्त सारणी से स्पष्ट है कि हितग्राहियो द्वारा विभिन्न राज्य एवं केंन्द्र सरकार के लाभो मे सामाजिक सुरक्षा पेंशन 25 प्रतिशत हितग्राही प्राप्त कर रहें, उज्ज्वला योजना का लाभ 27 प्रतिशत महिलाये प्राप्त कर रही, पी.एम. आवास 13 प्रतिशत हितग्राहियो को प्राप्त हो रहा जबकि वृद्धा पेंशन सबसे अधिक हितग्राही 35 प्रतिशत प्राप्त कर रहे है।

प्राथमिक समकों का विश्लेषण

1. उद्देश्य - जन-धन हितग्राहियों की स्थिती के अध्ययन से ज्ञात हुआ हैं कि 55 प्रतिशत हितग्राही शिक्षित है जो शासन की विभिन्न योजनाओ की जानकारी प्राप्त करने में जिज्ञासा रखते है वही 45 प्रतिशत हितग्राही अशिक्षित है जो केवल विभिन्न योजनाओ में से कुछ ही योजनाओ की जानकारी रखते है। हितग्राहियों के मासिक आय मे भी क्रमश:वृद्धि हो रही है जिसमे 41 प्रतिशत 1200 रू प्राप्त कर रहे, 30 प्रतिशत हितग्राही 1500 रूपये प्राप्त कर रहे है, 19 प्रतिशत 4000 रूपये, 10 प्रतिशत 8000 रूपये प्राप्त कर रहे है वही अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति करने के लिये सेठ महाजन से एवं अपने रिश्तेदारो पर 70 प्रतिशत निर्भर रहते है जबकि 30 प्रतिशत हितग्राही बैंको से ऋण लेकर अपनी आवश्यकताओ को पूरा करते है वही हितग्राहियो द्वारा 68 प्रतिशत खाते शून्य शेष के साथ खुले है, 32 प्रतिशत खाते 500 रूपये से खुले है। अत: जन-धन हितग्राहियो की खाते खोलने की स्थिति सन्तोष जनक हैं जिससे उनकोशासन की विभिन्न योजनाओ का लाभ उनके बैक खाते के माध्यम से प्राप्त होगा। हितग्राही आवश्यकता पड़ने पर उन पैसो का उपयोग अपने दैनिक जीवन मे कर

सकते है।

2. जन-धन योजना प्रारम्भ होने से हितग्राहियो की जीवन शैली का अध्ययन प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से यह जानने का प्रायस किया गया की जन-धन खाताधारको की जीवन शैली मे काफी सुधार हुआ हैं। पहले व्यक्ति अपनी आवश्यकताओ को पूरा करने के लिये अपने इधर उधर से पैसे उधार या अधिक ब्याज दर पर लेता था जबकि जन- धन योजना से हितग्राही अब बैको से ऋण लेकर अपनी आवश्यकताओ को पूरा कर रहे हैं, जिसका परिणाम यह हैं कि 61 प्रतिशत हितग्राही नियमित रूप से धन का आदान प्रदान कर रहे है वही 26 प्रतिशत हितग्राही कभी कभार ही बैंका से पैसे प्राप्त करते है जबकि 13 प्रतिशत हितग्राही 6 माह से कोई बैको से कोई आदान प्रदान नहीं कर पा रहे है। वही सामाजिक सुरक्षा पेंशन 25 प्रतिशत हितग्राही प्राप्त कर रहे है, उज्ज्वला योजना का लाभ 27 प्रतिशत महिलायो को मिल रहा, 13 प्रतिशत हितग्राहियो को पी. एम. आवास योजना का लाभ हुआ हैं वही 35 प्रतिशत हितग्राही वृद्धा पेंशन का लाभ लेकर अपने जीवन को सुखमय व्यतीत कर रहे है। अत: स्पष्ट है कि जन-धन योजना से हितग्राहियो में रहन सहन एवं उनके जीवन शैली मे काफी सुधार देखने को मिला है।

निष्कर्ष – जन-धन योजना के हितग्राहियो की स्थिति का अध्ययन सतना जिले की चयनित तहसीलो में निवासरत जन-धन खाताधारको में से 20-20 खाताधारको का चयन किया गया हैं। अध्ययन से स्पष्ट हैं कि 55 प्रतिशत शिक्षित हितग्राहियो मे केन्द्र एवं राज्य सरकार की महत्वाकांक्षी योजनाओ का लाभ अधिक अर्जित करने के लिये सदैव तत्पर्य रहते है वही 41 प्रतिशत हितग्राही न्यूनतम आय अर्जित कर अपने खातो को पूर्ण रूप से संचालित कर रहे है। धीरे -धीरे हितग्राहियो की मासिक आय मे परिर्वतन भी देखने को मिला जिसका श्रेय प्रधानमंत्री जन-धन योजना के तहत सभी हितग्राहियो के बैक खाते खुले जिससे योजना का लाभ उनके बैक खाते मे प्राप्त हुआ जिससे उनके जीवन शैली मे काफी सुधार देखने को मिला हैं। जबकि जिले में 61 प्रतिशत जन-धन खातो मे नियमित लेन देन की प्रक्रिया संचालित है। जिले के जिलाध्यक्ष एवं बैक अधिकारियो के प्रयास से 5.50 लाख खाते खुले एवं हितग्राहियो को इसका लाभ भी प्राप्त हो रहा है। अत: कह सकते है सतना जिले के जन-धन हितग्राहियो की स्थिति काफी सन्तोशजनक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गौतक राकेश ,सिंह भदौरिया जीतेन्द्र मध्य प्रदेश का परिचय
2. वित्त विभाग भारत सरकार प्रधानमंत्री जन-धन योजना से कुछ अंश
3. सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारतसरकार कुरूक्षेत्र 2014
4. जिला एवं साख्यांकीय कार्यालय सतना जनगणना 2011
5. तहसीलकार्यालय रघुराज नगर सतना
6. तहसील कार्यालय विरसिंहपुर सतना
7. तहसील कार्यालय रामपुर बाघेलान
8. तहयील कार्यालय कोटर
9. तहसील कार्यालय मझगवां
10. लीड बैक सतना

****

A Critical Study Of E-Marketing In India

Akbar Ali*

Abstract - E-Marketing refers to the use of the Internet and digital media capabilities to help sell products or services. E-Marketing carries the potentials to become a game changer in Indian market. With these dynamics, a need to understand the factors which facilitate the decision of customer to shop online is felt. Internet is becoming a hotbed of advertising, shopping and commercial activity. E-marketing is creating a strategy that helps businesses deliver the right messages and products/services to the right customers. It consists of all activities and processes with the purpose of finding, attracting, winning and retaining customers. This critical study attempts to explore the evolution of e-marketing in India and identifies various challenges to as well the factors responsible for the future growth and development of e-marketing. For this research, the data were collected through questionnaires by conducting surveys in Madhya Pradesh. From the findings, it was discovered that the trend of purchasing through e-marketing is increasing rapidly. Although the satisfaction level of customers is increasing day by day towards e-marketing. Since there are some challenges in front of e-marketing which affect the customer purchasing behavior. Some suggestions have been offered for E-Marketing Companies for winning and retaining customers.

Introduction - E-Marketing is a fast growing phenomenon and is definitely going to be the future of shopping in the world. E-Marketing plays a great role in the modern business environment. E-Marketing has opened the doors of opportunities and advantages to the firms. Most of the companies are running their on-line portals to sell their products/services on-line.

Changes in the economy are very rapid and complex. It becomes difficult to understand and ascertain the customer behavior and competiveness of the organizations. This study will cover the factors that are meaningful to customer motivation to shop online and their possible effects on customers and help to develop appropriate online marketing strategies for E-Marketing decision to new customers and to retain existing ones.

E-marketing is also known as web marketing and online marketing. E- Marketing helps to find out the right audience to whom goods and services are to be provided by the business organizations. It consists of all processes and activities with the purposes of attracting, finding, winning and retaining customers.

Problem statement - Much Research on E-Marketing has been carried out for the last few years. Since the frequency of purchasing through E-Marketing is increasing, but how frequent is it? Customer's purchasing behavior is needed to be studied. Though web users are increasing frequently, online buyers are not increasing in the same proportion. There might have some reasons. Thus it needs investigation whether Lack of privacy & financial insecurity affects customer's willingness to purchase through E-Marketing?

Research Objectives - The present study seeks to achieve the following objectives:

1. To measure the frequency level of purchasing through E-Marketing of online customers.
2. To investigate whether Lack of privacy & financial insecurity affects customer's willingness to purchase through E-Marketing?
3. To offer some suggestions to the E-Marketing Companies in order to improve their business strategy.

Literature Review:

Manav Aggarwal, (2012) stated that the exclusive benefit of E-marketing customers, it provides the 24 hours a day shopping facility and it also provides anywhere shopping facility like home, office, etc. The discovery of their favorite brands and products is also easy on web compare to any store, shopping mall and exclusive showrooms. Now days, the more involvement of companies in E-marketing mode provides the various benefits to the customers like less cost, more discounts, fast delivery, better quality, combo offers, replacement facility, guarantee and warrantee of products, discount coupons on next purchase and many more. The main factor of increasing E-marketing in India is the increasing cyber café facility, increasing number of computer operators and easy availability of internet and wifi facility to the population of India.

Hsieh et al., (2013) stated that internet is influencing people's daily life more so as compared to past. People's daily activities have gradually shifted from physical conditions to virtual environment .The shopping and payment surroundings have also changed from physical store into online stores.

Baty and Lee, (1995) stated that in order to respond to

*Ph.D., Research Scholar, Department of Management, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

the customer's desire for control and convenience, web stores have to design an efficient system to enable consumers to easily find what they need, learn more about it and quickly make a purchase decision.

Sanjeev and savita, (2014) stated that Privacy and security risk emerges frequently as a reason for being wary about internet shopping. Shopping convenience, immediate possession, information seeking, social interaction, and variety affects the consumer attitude towards E-marketing. The impossibility of product testing, problems with complaints, product return and misuse of personal data are the main uncertainties regarding on-line shopping. Internet is changing the way consumers shop for goods and services and has rapidly evolved into a global event. Therefore, in the context of critical study of E-Marketing, the research question is:

"Whether Lack of privacy & financial insecurity affects customer's willingness to purchase through E-Marketing?"

Research Methodology - The study was conducted in the Bhopal District, capital of Madhya Pradesh (India). Data for this study was gathered in 2017 by primary data collection method through questionnaire. The primary data were collected with the help of a questionnaire framed keeping in view the objectives of the study. Simple statistical tool were used to analyze the collected data. A total of 500 questionnaires were distributed. Majority of the respondents were between the age group of 18 to 25. Male respondents were 55% and female respondents were 45%. The percentage ratio of rural respondents and urban respondents were 37:63. Apart from this, mostly respondents i.e. 70% belong to middle class family.

Data Analysis - To measure the frequency level of purchasing though E-Marketing of customers and their concerns about privacy and financial security towards online purchasing, following questions were asked to them though questionnaire.

S.	Questions	Results
1	Do you purchase goods through E-marketing?	The means of answers for Question 1 is 3.46 on a 5-point scale. This shows that the respondents have willingness to purchase frequently through E-Marketing.
2	Are the Lack of privacy & financial insecurity the main concerns while purchasing through E-marketing?	The means of answers for Question 2 is 3.28 on a 5-point scale. This shows that the respondents have high concern about privacy and financial security towards online purchasing.

Fig-1: Purchase frequency & concerns about privacy and financial security towards E-marketing

Likert Scale

[Always -5 Mostly -4 Sometimes -3 Often -2 Never -1]

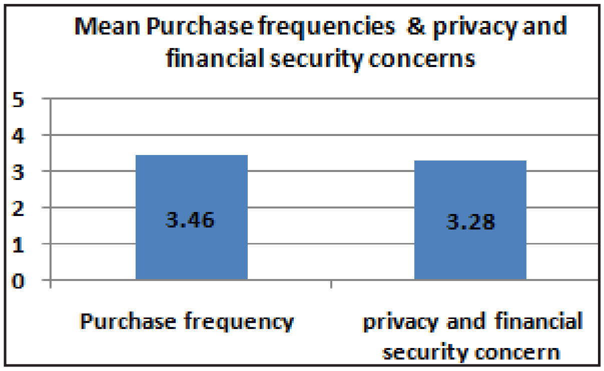

Conclusion & Suggestions - E-Marketing is being popular at fast rate because of its different positive qualities such as "time saving", "information availability", "open 24/7", "huge range of products/ brands", "reasonable prices", "various offers for online products", "easy ordering system" and "shopping fun". Customer's frequency level of purchasing through E-Marketing is increasing rapidly day by day. This trend indicates the bright future of E-marketing in India. In contrast, Privacy and security concerns are the main barriers while purchasing through E-Marketing.

The passwords used by individuals to gain access to systems can be stolen while stored or while in transit, either within a system or a local network or across a global network such as the Internet. Even many of the encrypted passwords now in use are not safe enough to prevent theft. In particular, the issue of payment security must be addressed to allay fear of the consumers and to encourage online purchase. People still avoid making online transactions or purchases on the Internet due to the fear of losing their personal and private information as a result of prevailing unethical practices in the new electronic environment. It is crucial for online merchants to attract potential customers to make purchases by increasing their trust. There is also a need for marketers to frame a comprehensive privacy policy for their customers on the disclosure of personal information in order to lessen their concerns for privacy. The policy should clearly state that the information collected would be kept confidential and not shared or passed on to another party without their consent. Privacy policies fill the information gap between the consumer and the vendor by providing a complete picture of the vendor's information practices.

References :-

1. Aggarwal, M. (2012). A Study on Growth of Online Shopping in India. *International Journal of in Multidisciplinary and Academic Research*, 3(8), 66-72.
2. Hsieh, T. C., Yang, K. C., Yang, C. and Yang, C. (2013). Urban and Rural Differences: Multilevel Latent Class Analysis of Online Activities and E-payment Behavior Patterns. *Internet research*, 23(2), 204-228.
3. Baty, J. B., II, & Lee, R. M. (1995). Intershop: Enhancing the Vendor/Customer Dialectic in Electronic Shopping. *Journal of Management Information Systems*,*11*(4), 9-31.

हाशिये का विमर्श और आज की कविता में लोकतंत्र

उमेश कुमार विश्वकर्मा *

प्रस्तावना – कविता और जीवन का गहरा संबंध है एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं कर सकते। कविता ही जीवन को एक नई सोच देने का प्रयास करती है। आज का मानव जीवन अनेक परिस्थितियों से जूझता हुआ नजर आ रहा जिसमे कई प्रकार के परिवर्तन नजर दे रहे हैं। उन्हीं के कारण ही वह अपनी जीवनशैली में परिवर्तन करना तो चाहता है लेकिन हो नहीं पाता। जैसे-जैसे हम विकास की ओर आगे होते जाते हैं। वैसे ही हमारे जीवन में कहीं ना कहीं कविता अपना प्रभाव डालती है। एक रचनाकारों ने कई विमर्श को चुनने का प्रयास करता है जो समाज के लिए हितकर होता है, समाज के लिए प्रतिबंध होता है और एक नई राह की ओर प्रेरित करता है। आज के कवियों में दिनेश कुशवाह, मलय, कुंदन, नीलोत्पल आपकी कविताओं को जब हम पढ़ते हैं तो इनकी कविताओं में गांव की, जीवन की मिठास, प्रकृति चित्रण, मानव मूल्यों का क्रियान्वयन और परिस्थितियों का भली-भांति चित्र दिखाई देता है हमें ऐसा लगता है कि यह जीवन ही एक कविता है इसी जीवन को अगर हम सच्चे मन से जिए तो कविता का बोध होता है ओर प्रेरित करता है। मानवता सामाजिकता की एक पकड़ है और उसी पकड़ को लेकर कविता और जीवन का संबंध होता है। जिन आंखों से एक साहित्यकार जिन परिस्थितियों को देखता है, समझता है और अनुकरण करता है उसे ही अपनी लेखनी से जन जन तक ले जाने का प्रयास करता है।

आस्था का सवाल उठाकर अयोध्या के विवाद को एक न्यायालय के कटघरे में लाकर खड़ा कर दिया हैं।कात्यायनी ने एक कविता में आस्था का प्रश्न इस तरह उठाया है – 'आंखें नहीं होती आस्था की कुछ भी कर सकती है सड़कों पर नाच सकती है। डाइनो सी खप्पर में पीती हुई बच्चों का खून विकट रूप धर बस्तियों को राख करती दिल्ली तक जा सकती है। मच्छर बन मतपेटियों में शमा कहती है, भीम रूप धर संसद में प्रवेश पा सकती है।'[1]

21वीं सदी का भारत आस्था और विश्वास के साथ हमें एक दिशा की पर ले जाने का प्रयास कर रहा है। जिस तरह से आस्थाओं को एक नई सोच के साथ एक नई दिशा मिल रही है। उससे यह कहा जा रहा है कि आस्था के नाम पर कहीं ना कहीं सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन हो रहा है और इन मूल्यों के खत्म होने से हमारी सामाजिक स्थितियां परिवर्तित होगी जंगलग और मठों को हजारों साल से जीवित रखा गया था उन्हें इस रूप में दिखाया जाता था। आस्था विश्वास को एक नई दिशा दी गई थी। आज हम उन आस्था विश्वास और उन मठों को गिराकर नई धारा के साथ नए गढ़ और मठ की स्थापना करने के लिए मद होते जा रहे हैं। हमारे समाज के लोग शिक्षित होते चले जा रहे हैं। हमें एक नई मिसाल पैदा हो रही है कारण यह है कि जिन लोगों को सदियों से एक चारदीवारी के भीतर रखा गया था। उनको अपने अधिकारों, कर्तव्यों के प्रति सजग नहीं किया गया था ।आज भी अपने कर्तव्यों को जानने लगे हैं। अपने विचारों को प्रकट करने के करते है और अपने जीविका के लिए जिम्मेदार हैं ऐसे में हम देखते हैं कि जो परंपराएं सदियों से आ रही है परंपराओं को हम जीवित रखे थे। आज उन परंपराओं में कहीं ना कहीं से लगते हुए हम देख रहे हैं। भारत में परिवार के आर्थिक सहयोग अथवा जीवन यापन के लिए स्त्रियों के काम करने की अवधारणा कोई नई बात नहीं है। पहले राजाओं के यहां स्त्रियां दासी सेविका या सखी बनकर जीविका पालन करती थी। इसलिए मंदिरों में देवदासी बनकर अपनी पेट की ज्वाला शांत करने है। दूसरों की वासना का शिकार बनने की मजबूरी झेलती थी खेतों में निराई गुड़ाई फसल कटाई का काम वे पहले भी किया करती थी और आज भी करती हैं। चाहे खेत पिता सिसोदिया जमीदार का हो या किसी अन्य का। हमारा समाज जैसे-जैसे बदलता चला जा रहा है वैसे ही हमारे जीवन में भी परिवर्तन आता चला जा रहा है। बीसवीं शताब्दी में जिन परिस्थितियों में हमारे समाज के लोग जी रहे थे। उनसे कहीं ना कहीं आज के जीवन में एक नई दिशा और दशा मिली है। मध्यम वर्गीय समाज आर्थिक समृद्धि के लिए अपनी औरतों को घर से बाहर जाने और काम करने की इजाजत नहीं देता था। इस समाज में बेटियों और बहुओं की कमाई खाना बहुत बुरा समझा जाता था। बेटियों के घर खाना तो क्या उसके गांव का पानी तक नहीं पीना चाहते थे ऐसा करना उनकी मर्यादा एवं सम्मान के खिलाफ था। आज भी देश के कई भागों में ऐसा ही समझा जाता है जब आज हम 21वीं सदी पर खड़े हैं और यह 21वीं सदी हमारे जीवन के सभी द्धार खोल दिए हैं ऐसे में इन मान्यताओं को हम क्यों मानते हैं और इन मान्यताओं में हम क्यों जीते हैं जिस तरह से हम आगे बढ़ते जाते हैं। आभिजात्यवादी समाज में कतिपय स्त्रियों ने शासन रानी या सामग्री के रूप में काम किया उच्च जाति वर्ग एवं तथाकथित निम्न वर्ग में स्त्रियों ने कला जैसे कशीदाकारी बुनाई चित्रकारी संगीत और नृत्य को अपनाया यह सब कलाएं उच्च जाति वर्ग की औरतों के लिए आनंद प्राप्ति अथवा रीजन एरियाने के साधन मात्र थी तो निम्न वर्ग या निम्न मध्य वर्ग की स्त्रियों के लिए यह धन उपार्जन जीविकोपार्जन अथवा गुजर बसर का साधन था। आज भी अभिशाप या उच्च कुल या पुरुष अपनी स्त्रियों को जीवन संगिनी या अर्धांगिनी से अधिक एक सजावटी गुड़िया यह संपत्ति समझता है। ठीक इसके विपरीत निम्न जाति पुरुष वर्ग अपनी स्त्रियों को काम में जोड़ीदार या सहायक तो जरूर समझता है लेकिन वह भी उसे संपत्ति ही मानता है। संभवत: इसलिए भी किश्ती पाने के लिए उसे उसका दाम चुकाना पड़ता है। आज हमारे सामाजिक मूल्यों का हनन हो रहा है। सामाजिक रूप रे जो परिवर्तन दिखाई देता है। निश्चित तौर पर यह इसलिए दिखाई देता है क्योंकि हम दूसरे दशक में जी रहे हैं और आज हम ऐसे संसाधनों का प्रयोग करते हैं। जो हमारे लिए उपयोगी

* शोधार्थी (हिन्दी) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

भी हैं और विनाशकारी भी। आज सामाजिक मूल्यों में जिस तरह से संकीर्णता के रहते यह लूट और हत्या कभी खत्म नहीं हो सकती कविता यह समझती है। संकीर्णता और नफरत के खिलाफ अपनी तमाम शक्तियों के साथ खड़ी होती है स्मृति कविता कि ऐसे ही एक शक्ति है। इतिहास को तोड़ दे मरोड़ ते हुए सांप्रदायिक शक्तियां इस शक्ति को भी बनाने की साजिशें किया करती हैं। इसके मुकाबले कविताएं शक्ति का और अधिक इस्तेमाल करती है यह शक्ति कुंवर नारायण की एक अजीब सी मुश्किल में इस तरह उजागर होती है– 'एक अजीब सी मुश्किल के दिनों में मेरी भरपूर नफरत कर सकने की ताकत दिनों दिन बढ़ती जा रही अंग्रेजों से नफरत करना चाहता तो शेक्सपियर आड़े आ जाते जिनके मुझ पर न जाने कितने एहसान हैं। मुसलमानों से नफरत करने चलता तो सामने गालिब आकर खड़े हो जाते अब आप ही बताइए किसी की कुछ चलती है उनके सामने? सिखों से नफरत करना चाहता तो गुरु नानक आंखों में छा जाते और सिर अपने आप झुक जाता हर समय पागलों की तरह भटकता रहता कि कहीं कोई ऐसा मिल जाए जिससे भरपूर नफरत करके अपना ही जी हल्का कर लूं पर होता इसका ठीक उलटा कोई ना कोई कहीं ना कहीं कभी ना कभी ऐसा मिल जाता जिससे प्यार किए बिना रह नहीं पाता। दिनों दिन मेरा यह प्रेम रोग बढ़ता ही जा रहा और इस वहां नेटवर्क की जड़ पकड़ ली है कि यह प्रेम किसी दिन मुझे स्वर्ग दिखाकर ही रहेगा।'[2] 21वीं सदी का भारत हमें एक ऐसे दिशा की ओर ले जा रहा है। जहां से हम अपने सपनों को साकार करने के लिए हैं। हमारे जो सपने थे जिन सपनों को हम हजारों साल से सजा कर रखे थे और सपनों को पूरा करते हुए आज हम देख रहे हैं कारण यह है कि हम जिस परिधि की कल्पना कर रहे थे। उस पर इसको आज हमला कर आगे की ओर जा रहे हैं। चांद–सूरज पर आज हमारा कब्जा है। हम चांद को आज मामा नहीं कहते आज हम चांद पर रहने की बात करते हैं जिस चांद को सदियों से कहानियों में सुनते थे चंदा मामा आज उस मामा को हम पृथ्वी का उपग्रह मानते हैं और उस पर जीवन जीने की परिकल्पना करते हैं। इन्हें कारणों से आज का यदि हमें ऐसे मुकाम पर लाकर खड़ा कर दिया है। जहां से विश्व एक परिधि में दिख रहा है और उसी पर ईद में अपने सपनों को पूरा करने के लिए प्रतिबद्ध है।

उत्तर आधुनिकता में जब हम लोकतंत्र की बात करते हैं। तो निश्चित तौर पर लोकतंत्र एक न्याय के कटघरे पर खड़ा दिखाई देता है। हम लोकतंत्र को जनता का हितैषी मानते हैं और जनता इसका सब कुछ है। आज वैसा नहीं है कारण है कि मीडिया लोग खुद को इतना प्रभावित करती है कि उससे हमारा जीवन स्तर भीतर दिखाई देता है। आज सिसकती हुई आवाज उन्हीं की दिखाई देती है जो गरीब असहाय दलित बेरोजगार है। सबसे बड़ी बात यह है कि यह गरीब असहाय दलित बेरोजगार क्यों है जब लोकतंत्र हमारा और हम लोकतंत्र के और उसी कल्पना के साथ में अनेक मौलिक अधिकार कर्तव्य दिए गए उन्हीं कर्तव्य और अधिकारों के तहत हमारे जीवन में एक नया आयाम आता है लेकिन ऐसा हो नहीं पाता कारण यह है कि जो गरीब अमीर की खाई बनाई गई उसे समाज में अनेक प्रकार की परिस्थितियां बनती गई और उन्हीं परिस्थितियों के कारण हमारे जीवन में अनेक कठिनाइयां आई जिसके कारण सामाजिक रूपों में देखा जाए तो समाज कितना अंधविश्वास में गिरता हुआ चला जा रहा है। जैसे हीहम सभी की ओर बढ़ते चले जाते हैं नए विचारों का क्रियान्वयन करते हैं कहीं ना कहीं हमारे जीवन में एक ऐसी स्थिति आती है कि हम उसको अपनाना तो चाहते हैं लेकिन अपना नहीं पाते हैं जो चीजें हमें विरासत में मिली है उस विरासत को अपनाकर रहना चाहते हैं परिकल्पना की स्थापना तो करना चाहते हैं लेकिन बताएं उसको अपनाना नहीं चाहते हैं। जिसके कारण समाज में दो तरह के कारण बनते हैं। एक तो यह कि हम अपनी जिंदगी को अच्छे से जी नहीं पाते और एक दूसरा यह कि यदि जीते भी हैं। घुटन के साथ जब हम नई चीजों को अपनाना चाहते हैं। पुराने चीजों को त्यागना चाहते हैं तो कहीं ना कहीं उसमें एक ऐसी विचारधारा उभर कर आती है। उस विचारधारा को हम विचारधारा भी कह सकते हैं कारण यह है कि जब हम सामाजिक क्रियाकलापों को एक नये विचारों के साथ जोड़ते हैं तो समाज में लोगों और काम करने वाले लोगों और वहां की जो आन –बान –शान है उस पर कहीं प्रभाव पड़ता है और वही प्रभाव समाज को एक नई दिशा देने में अवरोध पैदा करता है। खामोशी को कविता ने पहले बेजुबान दी है लेकिन आवाजों के बाजार में खामोशी को पहचानने और उसे जुबान देने का मतलब अलग है पहले से ज्यादा मुश्किल है ज्यादा खतरनाक है ज्यादा निष्ठा और कौशल की मांग करने वाला है ज्यादा चुनौतीपूर्ण ज्यादा जरूरी कविता एक तरफ खामोशी को सुनने लायक बनाती है और दूसरी तरफ चाहती है कि उसके शब्द नगाड़े की तरह बजे 'निर्मला पुतुल' की यह पंक्तियां हैं।

'.. मैं चाहती हूं
मेरे शब्दों की जमीन से
उगे कई कई बिरसा मुंडा ...
मैं चाहती हूं आप रहते अंधे आदमी की
आंखें बने मेरे शब्द
उनकी जुबान बने जो जवान रहते गूंगे बने देख रहे हैं
तमाशा चाहती हूं मैं
नगाड़े के जैसे बजे मेरे शब्द और
निकल पड़े लोग अपने–अपने घरों से सड़क पर ।'[3]

21वीं शताब्दी में हमारे जीवन में नए परिवर्तन लाए हैं। जिसके कारण हम एक नई सदी की कल्पना करते हैं। आज पूरा विश्व मानव की हथेली पर है जैसा चाहता है वैसे जीवन यापन करना चाहता है। भोग विलास से लेकर भौतिकवादी सुख सुविधा जीवन यापन कर रहा है संसार की ऐसी कोई चीज नहीं है जिसे वह अपने पास नहीं पाता है आज हमारे पास वह यंत्र है जिससे हम संपूर्ण को अपने हथेली पर रखकर देखते हैं हमारे देश में समाज में क्या परिवर्तन हो रहा है किसकी कमी है किन चीजों से उसकी पूर्ति की जा सकती है। इन चीजों का पूरा लेखा–जोखा हमें अपनी मुट्ठी पर मिलता है या कि जैसे–जैसे हम समाज और संस्कृत ,सभ्यता और भाईचारे मानवीय मूल्यों को एक नये धागे में समाहित करने का प्रयास करते हैं कहीं ना कहीं वह धागा टूट जाता है। मानवीयता के मूल्यों को उग आए थे। एक बनकर तैयार हो गए थे और मानवीय मूल्यों में दरार आ गई है और इसीलिए आज हमारी शक्ति हुई। आवाज निकलती है हर एक अपनी लेखनी को इतनी प्रकार बनाना चाहता है कि उसमें जो भी विचार भाव डाले जाए वे एक ऐसे भाव हो जो सामाजिक हित में और राष्ट्र हित में हो और जागरण की बात उसमें कहीं गई हो इससे यह स्पष्ट है कि समाज में रहने वाले लोग कहीं न कहीं इस विचारधारा से प्रभावित होंगे और एक परिकल्पना के लिए जागृत होंगे। बीसवीं शताब्दी के अंतिम में जो कविताओं का मानवीकरण हुआ है या कविताओं में मानव जीवन को समाहित करने का प्रयास किया गया है उन कविताओं में मानव के विचारों में को एक नयापन देने का काम किया। जिन मुद्दों को समाज से दूर रखा गया था। यह सामाजिक मुद्दा नहीं बनाया गया था। उन सामाजिक मुद्दों को एक लेखक देखता है और अपने लिखने से उसको पिरोने का सफल प्रयास करता है। जिसके कारण यह एक नई

परिकल्पना होती है और उसी परिकल्पना के साथ ही साथ हमें एक नई आशा और विश्वास के साथ दिशा भी मिलती है दलित आदिवासी स्त्री यह ऐसे विवश हैं। जिनको सदियों से दूर रखा गया था इनके बारे में कोई सोच ही नहीं सका था। दलितों की स्थिति कैसी होती है उनका रहन-सहन, रीति-रिवाजऔर जीवन में जो प्रभाव पड़ता है वह किसी से दूर नहीं है एक स्त्री जो बिस्तर से लेकर रसोई तक सीमित रखी गई थी। भोग विलासिता की वस्तु थी। उसको कहा जाता था। आज वह ऐसे मुकाम पर आकर खड़ी हो गई है कि वह अपने अधिकारों को जानने लगे तो लोग उसे अपनाते नहीं सदियों से जिस स्त्री को लोग पैरों की जूती समझते थे। अपनी भोग विलासिता की वस्तु समझते थे यूज एंड थ्रो मानते थे। आज वह ऐसी नहीं है वह अपनी जिज्ञासाओं को अपने भावनाओं को इतनी बखूबी से प्रकट करती है कि उसे एक नया आयाम मिलता है। उसे और वह जीवन में एक नई रोशनी की आशा के साथ समाज को दिशा देने का काम कर रही है। बीसवीं शताब्दी से जाते हुए। 21वीं शताब्दी में प्रवेश जिस विचारधारा के साथ किया गया है उसे यह स्पष्ट होता है कि उन विचारधाराओं को किस तरह से रूपायित किया जाए। उन विचारधाराओं को किस तरह से हर एक जन जन में पिरोया जाए उन विचारधाराओं को आगे बढ़ाने का प्रयास किया जाए। मानवीय आधारों मानवीय गुणों को एक धागे में पिरो कर आगे बढ़ते हैं तो सामाजिक मूल्यों में एक नयापन आएगा यदि शताब्दी और 21वीं शताब्दी दोनों को लेकर चलते हैं। कहीं न कहीं हमारे मन में दंडात्मक जीवन आता है। इसका कारण यह है कि जो पुरानी परंपरा है। वह परंपरा नैतिक मूल्य से जुडी हुई है। नैतिक मूल्य से लगी होने का मतलब यह है कि उसमें अपनापन अपने गांव शहर लोगों के प्रति सहानुभूति मिठास लगाव यह सब बरकरार दिखाई देता है। लेकिन जब हम 21वीं शताब्दी में जाते हैं तो मानवीय मूल्यों में कमी देखने को मिलता है करण यह होता है कि इस सदी में जो टेक्नोलोजी है। वह हमारे जीवन को चकाचौंध में रखना चाहती है हम टेलीविजन में अश्लीलता को देखते हैं और देखने के बाद अपने जीवन में उतारते हैं एक छोटा दस साल का लड़का जब टेलीविजन देखता है उस टेलीविजन पर दिखाया अधिकार देखता है। अपने पापा से कहां किपा बेटे एक मानवीय गुणों का विचार चलता था। वह अंतर्द्वंद्व में चलने लगता है कारण यह होता है कि पिता बेटे से बता नहीं पाते। पिता की एक लालसा होती है इसको बेटा ना जाने और बेटा जाने के लिए जिद करता है। भौतिक वादी विचार चलते रहते हैं।

आज 21 वीं सदी का समय चल रहा है उत्तर आधुनिकता इससे जीवन ज्यादा प्रभावित होता है। इन्हीं सबको ध्यान देकर अगर हम बात करें कि जो जन तंत्र की स्वतंत्रता जनतंत्र की स्वतंत्रता में आज भी कहीं ना कहीं रुकावट है और उसी रुकावट के कारण ही हमारे जीवन पर भी अनेक प्रभाव पड़ते हैं। उत्तर आधुनिक समय के इस दौर में हम बहुत आगे बढ़ चुके हैं और आगे बढ़ते ही जा रहे हैं। लेकिन कहीं ना कहीं हम किसी ना किसी चीज को अपने से दूर भी छोड़कर चले जा रहे हैं। इस जनतंत्र में जो आवाज होनी चाहिए वह बुलंद होनी चाहिए लेकिन यह आवाज जो बार-बार हमारे सामने आती है। हमसे अपनी आबरू को बिकते देखते हैं अपनी आवाज को बुलंद नहीं कर पाते हैं। जब एक दलित घोड़े पर सवार होकर बारात में जाना चाहता है। द्वारा उसे गोली मार दी जाती है उसे घोड़े से उतार दिया जाता है एक दलित की बेटी अच्छे कपड़े पहन कर अपने ससुराल जाती है। उसके कपड़े उतार दिए जाते हैं। उसको पहले राजा के यहाँ जाया जाता है और राजा पहले अपनी हवस पूरी करता है उसके बाद वह अपने पति के पास जाती है। जब लोकतंत्र से ऐसी आवाज आती है तो निश्चित रूप से हमारे मन में हमारे जीवन में एक पीड़ा उभर कर आती है और वह पीड़ा होती है शक करने की। जीवन एक ऐसा होता है जिसमें सभी प्रकार के चलते हैं और उन विचारों को हम कहीं ना कहीं अमिट करते हैं तो कहीं उन्हें आत्मसात करते हैं। जब हमारे मन के अंदर जो विचार होते हैं वह विचार जो हम सैकड़ों वर्षो से अपने मन में संजोकर रखे हैं उन विचारों को जब हम पूर्ण नहीं कर पाते हैं। उन विचारों को जब हम पूरा करने का लिए प्रयास करते हैं तो हमें गोली मार दी जाती है। हमारे जीवन में कई प्रकार के यातनाएं आती हैं। तो हम यह समझते हैं कि कहीं ना कहीं इनसे हमको दूर रहना चाहिए। उत्तर आधुनिकता जीवन कोस्वतंत्र किया हम स्वतंत्र हैं अपनी जीव का किसी तरह से चला सकते हैं खाने,रहने,सोने पहनने सभी की हमें स्वतंत्रता है लेकिन उसमें में भी हम जब देखते हैं कि हमें कहीं ना कहीं घुटन महसूस होता है तो निश्चित इससे हमें लगता है कि जो जनतंत्र की आवाज होनी चाहिए वह आवाज भी आज बड़ी जोरों शोरों से नहीं निकल रही है वह भी निकलती है तो आहट पाने के बाद निकलती है और उस आवाज में कहीं ना कहीं सिकन होती है। जब कोई अपनी आवाज को उठाना चाहता है तो उसे देशद्रोही बताया जाता है नक्सलवादी बताया जाता है आतंकवादी बताया जाता है और उसे फासी पर चढ़ाने का प्रयास किया जाता है दिल्ली की सड़कों पर दिल्ली यूनिवर्सिटी के छात्र उतरते हैं अपने अधिकारों को खत्म करने के लिए एवं अपने कर्तव्य को पालन करने के लिए उनके साथ बर्बरता पूर्वक शासन-प्रशासन आता है जिसके कारण उन पर लाठी बरसाई जाती है लेकिन उनकी आवाज नहीं है वह पहुंचती है और सत्ता के रूप में परिवर्तित हो जाती है जिसके कारण या एक मुहिम धीरे-धीरे ऐसा रूप ले लेता है कि उस मुहिम को छोटा नहीं किया जा सकता वह मुहिम आगे बढ़ता ही जाता है और एक ऐसे सामाजिक हिस्सों में संगठित होता है कि गांव से लेकर समाज से लेकर दिल्ली तक लोग एक हो जाते हैं और अपने अधिकार की चाहत में लग जाते हैं। फिर भी शासन-प्रशासन उनकी आवाज नहीं सुनता है कि आवाज बहुत तेजी से आती है और वह आवाज होती है कि मेरे अधिकार मुझे दे दो मेरे अधिकार मुझे लौटा दो हम उस भारत में जीना चाहते हैं। अपने स्वतंत्रता के अधिकारों के साथ अपने क्षमता के अधिकारों के साथ और इन्हीं आशाओं के साथ और शासन से गुहार लगाते हैं प्रशासन आवाजों को नहीं सुनना चाहता उनके विचारों को नहीं अपनाना चाहता क्योंकि वह दलित है आदिवासी है औरतें हैं। जिनको सदियों से गुलाम बनाकर रखा गया था और आज इस 21वीं शताब्दी में भी उन्हें रखने का सफल प्रयास किया जाता है। लेकिन वह इस प्रयास को इस मुहिम को ठुकराना चाहते हैं और एक स्वतंत्रता पूर्व जिंदगी जीना चाहते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. इस पौरुषपूर्ण समय में — कात्यायनी, प्रकाशक, परिकल्पना प्रकाशन , 2008, पृष्ठ 112
2. दस बरस: हिंदी कविताएं अयोध्या के बाद— पहली जिल्द, संपादक – असद जैदी,प्रकाशक, नई दिल्ली, सफदर हाशमी मेमोरियल ट्रस्ट , 2008, पृष्ठ 84
3. नगाड़े की तरह बजते शब्द, निर्मला पुतुल, भारतीय ज्ञानपीठ,18 इंस्टिट्यूशनल एरिया, लोदी रोड नई दिल्ली- 110003, पृष्ठ 29

****

अहिंसा : एक महाशक्ति

डॉ. सन्ध्या श्रीवास्तव*

प्रस्तावना – सत्य शोधक, आध्यात्मिक साधक, युग पुरुष गाँधी जी भारतीय आत्मा का पश्चिमी ढंग से नवीनीकरण न करके स्वराज्य, स्वदेशी, सत्याग्रह, सर्वोदय की सहायता से भारतीय आत्मा का फिर से आविष्कार करना चाहते थे। उनके अनुसार जगत का स्थायी परिवर्तन तभी सम्भव है, जब स्वयं मनुष्य का परिवर्तन किया जाय। 'हिन्द स्वराज' में उन्होंने आध्यात्मिक नैतिकता को मूल में रखकर सैनिक कमजोरी को सत्याग्रह के अस्त्र से पोषित और सुरक्षित अंहिसा की शक्ति में बदल दिया। आत्मा की शक्ति, प्रेम की शक्ति, अहिंसा की शक्ति–आत्म बल–सशक्त दिखने वाली अहिंसा से अधिक प्रचण्ड है, अविनाशी है। अहिंसा कमजोरों का नहीं बलवानों का अस्त्र है। अहिंसा सत्य है और सत्य ही अहिंसा है। अहिंसा सत्य और सत्याग्रह दोनों को अर्थ प्रदान करती है। अहिंसा सबसे बड़ा धर्म है, परम सत्य है। इस प्रसंग में किशोर मशरूवाला कहते हैं –'अहिंसा कोई निष्क्रिय अभावात्मक मनोवृत्ति नहीं है वरन् वह प्रवाह के विरूद्ध चलने की एक क्रियात्मक प्रवृत्ति है।'

सत्य शोधक[1], आध्यात्मिक साधक, युग पुरुष, विनष्ट–प्राय अतीत के एकमात्र प्रतीक[2] गाँधी जी ने हिंसात्मक–क्रान्ति के पक्षधरों के विरोध में, लंदन से दक्षिणी अफ्रीका लौटते समय नवम्बर 1909 में गुजराती में, संवाद शैली में, बीज रूप में अपने समस्त उपदेशों को, बुनियादी विचारों को झलकाने वाली छोटी सी पुस्तिका 'हिन्द स्वराज' (जहाज पर) लिखी थी। वस्तुत: यह पाश्चात्य आधुनिक सभ्यता की समीक्षा है। (नेहरू के समान) भारतीय आत्मा का पश्चिमी ढंग से नवीनीकरण न करके, गाँधी जी स्वराज्य, स्वदेशी, अहिंसा, सत्याग्रह, सर्वोदय की सहायता से भारतीय आत्मा का फिर से आविष्कार करना चाहते थे। (वे जो बोलते थे, जीवन और आचरण में उसे व्यक्त भी करते थे इसीलिए वे अपने कार्यों और जीवन को सत्य के प्रयोग कहते थे। उनके अनुसार रत्ती भर का आचरण मनों के ज्ञान से बड़ा है।)

आज आधुनिकता की अंधी दौड़ में भौतिक और आर्थिक प्रतिस्पर्धा ने प्रकृति पर अधिकार जमाकर, पर्यावरण को चुनौती देकर हमारे अस्तित्व को संकट में डाल दिया है। उनकी दूर दृष्टि ने इतने (सौ) वर्षों पूर्व हमारी स्थिति के प्रति सचेत कर दिया था। व्यवस्थायें तो यंत्र मात्र हैं, जगत् का स्थायी परिवर्तन तभी सम्भव है जब मनुष्य का आंतरिक परिवर्तन किया जाय, हृदय परिवर्तन किया जाये।

'हिन्द स्वराज' में उन्होंने आध्यात्मिक नैतिकता को मूल में रखकर सैनिक कमजोरी को सत्याग्रह के अस्त्र से पोषित और सुरक्षित अहिंसा की शक्ति में बदल दिया। सहनशीलता सक्रियता बन गई तो शक्तिहीन को शक्तिशाली बनाकर, पाश्चात्य आधुनिकता का विरोध कर, यथार्थ को पहचानने का मार्ग–दर्शन किया, द्वेष के बदले प्रेम, हिंसा के स्थान पर आत्मबलि और पशु बल के स्थान पर आत्म बल को प्रतिष्ठित किया।

हिन्दुस्तान धर्म के मूल से दूर जाकर, आधुनिक भौतिकवादी सुखप्रधान सभ्यता से बोझिल हो, शक्तिहीन हुआ, आलस्य की दैन्य दशा को प्राप्त हो, अन्दर से खोखला हो रहा था। वस्तुत: सभ्यता आचार की वह रीति है जिससे मनुष्य अपना कर्तव्य–पालन, नीति पालन करे। इसके विपरीत सब कुधार या असभ्यता है।[3]

हिन्द स्वराज में वे कहते हैं कि जब सभ्यता असभ्यता बन जाए तो राष्ट्र की अवनति अवश्यंभावी है। आधुनिक भौतिकवादी सभ्यता का मानव गुलाम बन गया है। शरीर को सुख कैसे मिले, इसी के साधन जुटाने में श्रमशील है। नशे के बल पर झूठी शक्ति और शारीरिक बल प्राप्त करने वाली सभ्यता असाध्य रोग नहीं है। (बुद्धिमान प्राणी को माया जाल में फंसे देखकर तरस आता है।) इसी सम्बन्ध में आइंस्टीन भी कहते हैं कि मैंने केवल सुख भोग को कभी जीवन का साध्य नहीं माना। जीवन के आधार के रूप में ऐसी कल्पना केवल सुअरों के झुंड के लिए ही उपयुक्त हो सकती है। जिन आदर्शों ने मुझे जीवन का सामना करने की शक्ति प्रदान की, वे सत्य, सौन्दर्य और शिवम् रहे हैं।

बापू के अनुसार (आधुनिक सभ्यता के दृढ़ विरोधी हैं) आधुनिक संस्कृति जो यांत्रिक सभ्यता के रूप में मूर्त हुई है, हिंसा पर आधारित है, वे जगत् के सांस्कृतिक आधार को बदलना चाहते हैं। हिन्दु–सभ्यता को वे श्रेष्ठ मानते हैं, जिसका मुकाबला अन्य कोई सभ्यता नहीं कर सकती। हमारे पूर्वजों ने जो बीज संस्कारित किए उनकी जड़ें मजबूत हैं। हम पर असभ्यता, आलस्य और अज्ञानी का आरोपण एक तरह से हमारा गुण प्रकट करता है कि हमारी सभ्यता में कोई हेर–फेर नहीं कराया जा सकता।

एक संस्कारवान् कुटुम्ब में जन्में गाँधी जी बाल्यकाल से ही सत्यनिष्ठ थे। वे परमेश्वर को ही सत्य कहते हैं क्योंकि वही (सत्) है और कुछ नहीं है। सत्य ही ईश्वर है[5] यदि सत्य पर चलना है तो यह बिना अहिंसा के सम्भव नहीं है। शास्त्रों ने हमें दो बहुमूल्य वचन दिए हैं – 'अहिंसा परमोधर्मः' और 'सत्यान्नास्ति परोधर्मः' सत्य के समान कोई धर्म नहीं। अहिंसा सत्य का प्राण है, इस ज्योति द्वारा ही मुझे सत्य का दर्शन होता है। अहिंसा साध्य नहीं, साध्य सत्य है लेकिन सत्य का दर्शन केवल अहिंसा का पालन करते हुए कर सकते हैं।[6]

वे कहते हैं, 'मैं तो ईश्वर का प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहता हूँ ....'

ईश्वर को पहचानने का मेरे पास एक ही अचूक साधन अहिंसा है।[7] मनुष्य की पूर्णता विराट से तादाम्य की सिद्धि में है, जब वह विश्व के कण–कण में किसी एक ही वास्तविक सत्ता के प्रतिबिम्ब का दर्शन करने लगता है

* एसोसिएट प्रोफेसर (दर्शन शास्त्र) आर्य कन्या डिग्री कालेज, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

। वे व्यवहार और परमार्थ में अद्धैत को स्वीकार करते हैं। यथार्थ में द्धैत है और आदर्श में अद्धैत, तो सत्य में विरोध हो जायेगा।

सब में वही ईश्वर है किन्तु मात्रा भेद से। जब सब एक ही के अंश हैं तो द्धेष कैसा? हिंसा कैसी? (विकृति से प्रकृति और प्रकृति से संस्कृति का विकास-अविकसित प्राणियों, हिंसक एवं स्वार्थ लिप्त प्राणियों के प्रति सहज उदारता, करुणा एवं दया ही अहिंसा है) जिस प्रकार पशुओं के लिए शक्ति का विधान है, मानव की प्रतिष्ठा के लिए जरूरी है कि वह किसी ऊँचे विधान आत्मा की शक्ति में अपने को समर्पित कर दें।

गाँधी जी मुख्यत: आध्यात्मिक थे। उनका बड़प्पन उनकी बहादुरी के संग्रामों की अपेक्षा उनके पवित्र जीवन तथा आत्म-शक्ति के प्रदर्शन में अधिक है (विशेषत: उस युग में जबकि उनका मूल्य घट रहा था।[8]) उन्होंने देखा राजाओं और उनकी तलवारों से नीति धर्म अधिक बलवान् है। अच्छा फल प्राप्त करने के लिए अच्छे साधन भी होने चाहिए। साधन बीज है तो साध्य वृक्ष। यह कहना कि मुझे तो भगवान को भजना है, साधन भले ही शैतान का हो, उचित नहीं है। अधिकांश अवस्थाओं में दया और प्रेम का बल शस्त्रबल से अधिक शक्तिशाली होता है। हथियार उठाने में तो हानि होती है पर दया करने में कभी हानि नहीं होती।[9]

आत्मा की शक्ति, प्रेम और दया की शक्ति अहिंसा की शक्ति, सशक्त दिखने वाली हिंसा से अधिक प्रचण्ड, अविनाशी है। मानव की मूल प्रकृति अहिंसा व्यापक है। किसी को न मारना ही नहीं, कुविचार, उतावली, मिथ्या-भाषण, द्धेष, किसी का बुरा चाहना, तिरस्कार करना, जगत् के लिए जो कुछ भी आवश्यक है, उस पर अधिकार जमाना, यंत्र पर आश्रित होकर श्रम की प्रतिष्ठा न करना भी हिंसा है। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रहमचर्य, अपरिग्रह, शरीरश्रम, अस्वाद, अभय, सर्व धर्म समभाव, स्वदेशी, अस्पृश्यता-निवारण - इन एकादश व्रतों का प्राण अहिंसा ही है, ये सब अहिंसा के ही विविध रूप हैं।

गाँधी जी गीता को अपनी माता कहते थे। गीता में श्रीकृष्ण ने अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शांति, किसी की निन्दा न करना, प्राणि मात्र के प्रति दया, अलोलुपता लज्जा, स्थिरता, तेजस्विता, क्षमा, धैर्य, बाह्यम्यंतर शुद्धि, अद्रोह, अनावश्यक दंभ का अभाव आदि को दैवी प्रवृत्तियाँ बताया है।[10]

ईसा ने भी कहा था अपने शत्रुओं से भी प्रेम करो, यदि कोई तुम्हारे गाल पर एक थप्पड़ मारे तो दूसरा गाल भी उसके सामने कर दो। अहिंसा सर्वव्यापी प्रेम है।[11] (दया से बढ़कर कोई धर्म नहीं है और अहिंसा सबसे बड़ा धर्म है, इन दोनों वाक्यों में धर्म शब्द का एक ही अर्थ है अर्थात् दया और अहिंसा पर्यायवाची है।)

प्राचीन ऋषियों ने अहिंसा को व्यक्तिगत मोक्ष का साधन माना था। गाँधी जी ने बड़े पैमाने पर इसका प्रयोग करते हुए इसे व्यक्तिगत नहीं सामाजिक माना। मानव केवल व्यक्ति नहीं, वह पिण्ड भी है ब्रहमाण्ड भी। ....मेरा यह दावा है कि सारा समाज अहिंसा का आचरण कर सकता है।[12] जगत् की समस्या को यदि हल करना है तो उसकी इच्छा और क्रिया को वह दिशा प्रदान करनी होगी जहाँ प्रेम और विधान एक हों।

अहिंसा कोई स्थूलवस्तु नहीं (जो आज हमारे सामने है) यह अनुभव निरपेक्ष न होकर अनुभव सापेक्ष है, इसका सम्बन्ध वस्तु जगत् से है। विभिन्न परिस्थितियों में उन्होंने इसका विभिन्न अर्थ लगाया। यह कोई अहैतुक आदेश नहीं है जिसे बिना परिस्थितियों पर विचार किए स्वीकार कर लिया जाय। व्यावहारिक व्यक्तियों के लिए यह सहैतुक आदेश है। यही कारण है कि कई अवसरों पर उन्होंने हिंसा की स्तुति की थी।

अहिंसा राम बाण है, ब्रहमास्त्र है, अचूक है वह नाकाम नहीं जाती। हिंसा आत्मघातक है वह बिना अहिंसा के नहीं रह सकती। गुरु रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा है, 'यह कहना कि कुछ वर्गो के अधिकार और प्रभाव आरम्भ में हिंसा से प्राप्त किए गए थे और अब भी हिंसा से सुरक्षित किए जा रहे हैं इसलिए वे हिंसा से ही नष्ट किए जा सकते हैं' - एक अनन्त कुचक्र पैदा करता है, अनवस्था दोष पैदा करता है। गाँधी जी चाहते थे इस दूषित चक्र को भंग करने का प्रथम सौभाग्य भारत को मिले।[13]

किशोर लाल मशरूवाला कहते हैं, 'अहिंसा कोई निष्क्रिय अभावात्मक मनोवृत्ति नहीं है, वरन् वह प्रवाह के विरूद्ध चलने की एक क्रियात्मक और भावना प्रधान प्रवृत्ति है।'[14] पूर्ण अहिंसक के सान्निध्य में हिंसा टिक नहीं सकती, यदि हमारे सहयोगियों में हिंसा है तो वह हमारे अंदर पड़ी हिंसा के कारण हैं।[15]

हिन्द स्वराज में वे कहते हैं, 'सभी हिन्दुओं से हथियार बंधवाने का अर्थ ....जो दशा योरोप की है वही हिन्दुस्तान की भी होगी ....हत्याएँ करके हिन्दुस्तान को आजाद करने की बात ....खून तो हमें अपना करना चाहिए। हम नामर्द हो गए हैं ....खून खराबी से प्राप्त स्वराज्य राष्ट्र को सुखी नहीं कर सकता।[16]

यदि हिन्दुस्तान जगत् को अहिंसा का उपदेश न दे सका तो यह तबाही जो आज या कल आने वाली है और कल के बदले आज इसके आने की सम्भावना अधिक है। जगत् युद्ध के शाप से बचना चाहता है परन्तु कैसे बचे? इसका उसे पता नहीं चलता। यह चाबी हिन्दुस्तान के हाथ में है।[17]

मेरा तो धर्म है प्रत्येक दशा में अहिंसा का व्यवहार करना। मेरा तरीका बलात् कोई काम कराना नहीं है यह परिवर्तन कराना है यह स्वयं कष्ट सहना है न कि अत्याचारी को दु:ख देना। मैं जानता हूँ यह शस्त्र अमोघ है - विफल नहीं जाता। सम्पूर्ण देश इसे अपना ध्येय बनाये बिना, इसका रहस्य समझे बिना भी इसे काम में ला सकता है।[18] कार्य सिद्ध हो या न हो हमें अहिंसक ही रहना है अहिंसा का फल शुभ है।[19]

अपने दोषों को स्वीकृति में, पिता द्धारा प्रदर्शित प्रेम में अहिंसा का पाठ वह पहले ही पढ़ चुके थे। दक्षिणी अफ्रीका में प्रथम श्रेणी के डिब्बे से उतार दिए जाने के कारण रंग द्धेष फैलाने वाले कानून का अहिंसात्मक ढंग से विरोध करते हुए सत्याग्रह को जन्म दिया (सक्रिय अहिंसा का आरम्भ यहीं से हुआ)। (हर प्रकार के अन्याय और अत्याचार से लड़ने का अस्त्र था यह।) सत्य के प्रति आग्रह में, सत्य पर डटे रहना। सत्य आत्म से सम्बन्धित है अत: आत्म बल भी कहा जाता है। सत्याग्रह में अहिंसा की प्रधानता है यह आत्म शुद्धि की लड़ाई है। 'होना चाहिए' का भाव है।

हिन्द स्वराज में गाँधी जी कहते हैं कि आत्म बल की सफलता का सबसे बड़ा ऐतिहासिक प्रमाण तो यही है कि इतने युद्ध हंगामों के होते हुए भी दुनिया अब तक कायम है, इस बात से सिद्ध है कि युद्ध बल के बजाए कोई और बल उसका आधार है। (अंग्रेजी में) कहावत है कि तलवार पकड़ने वाले की मौत तलवार से ही होती है।[20]

(सत्याग्रह मानव जीवन का शाश्वत धर्म है और वह हिंसा का, जो पशु धर्म है स्थान लेने वाला है।[21]) सत्याग्रह का व्यावहारिक रूप है, असहयोग और सविनय अवज्ञा। जिसके विरूद्ध सत्याग्रह करते हैं, अनैतिक कार्यों में उसका सहयोग न करना, असहयोग है। इसके मूल में बदलने की भावना नहीं है - यह सामाजिक बहिष्कार, धरना आदि कई रूप ले सकता है। 'अहिंसात्मक असहयोग, स्वतंत्र लोकमत तैयार करने और उसे कार्य रूप में परिणत करने का उपाय है।[22]

सविनय अवज्ञा[23] का अर्थ है, अनैतिक कार्यों का उल्लंघन करना, इसमें घृणा और शत्रुता नहीं होनी चाहिए। (केवल सविनय अवज्ञा ही सच्ची एवं वीरतापूर्ण आज्ञाकारिता को प्रेरित कर सकती है।) गाँधी जी के आन्दोलन को निष्क्रिय प्रतिरोध के रूप में समझना उचित नहीं है। उनके मन में निष्क्रियता के लिए जितनी घृणा थी, संसार के किसी दूसरे व्यक्ति में नहीं होगी। हिन्द स्वराज में वे कहते हैं यदि मैं सरकार पर हमला करके उसका बनाया कानून रद्द करने को मजबूर करूँ और उसे न मानने की जो सजा मिले उसे खुशी से भुगत लूँ तो मैंने सत्याग्रह किया, आत्म-बल से काम लिया। सत्याग्रह में अपनी बलि देनी होती है। आत्म-बलि पर-बलि से श्रेष्ठ है जो कानून अन्याय-कर है उसे मानना नामर्दी है, यह समझ लेना ही स्वराज्य की कुंजी है।[24]

सत्याग्रह का अर्थ है 'शठे प्रत्यपि सत्यम्' - हिंसा के सामने अहिंसा क्रोध के सामने अक्रोध, अप्रेम के सामने प्रेम।[25] (अहिंसा कमजोरों का नहीं बलवानों का अस्त्र है।) सत्याग्रह की राह पर चलना, तलवार की धार पर चलना है। सत्याग्रही को जिस हिम्मत और मर्दानगी की जरूरत होती है, वह तोप बन्दूक का बल रखने वालों के पास हो ही नहीं सकती। सत्याग्रह सत्य का बल है, जो सत्य का पालन नहीं करता, वह सत्य के बल को कैसे प्राप्त करेगा ....चाहे मुझे कितना ही नुकसान हो जाये, सत्य को छोड़ा नहीं जा सकता। सत्य किसी को सताना नहीं है। सत्याग्रही के पास छिपाने योग्य कुछ नहीं है इसलिए सत्याग्रही को गुप्त सेना की आवश्यकता नहीं हो सकती।[24] (हम पूर्ण सत्य को नहीं जानते इसलिए सत्य को जानने का आग्रह करते हैं।) अहिंसा सत्य और सत्याग्रह दोनों को अर्थ प्रदान करती है।

(सत्याग्रह के मूल में सत्ता का त्याग है। सत्ता का अर्थ है, हिंसा)। सत्याग्रह की जड़ मनुष्य स्वभाव पर विश्वास रखने में है, दुष्ट से दुष्ट आदमी को पिघला सकने की श्रद्धा में है।[25] सत्याग्रह मन की अवस्था है, जिसे प्राप्त हो चुकी है वह सब अवस्थाओं में विजयी है चाहे उसका प्रतिपक्षी राजा, प्रजा, परिचित, अपरिचित, पराया या अपना कोई हो। थोरो, मार्टिन लूथर, गैलीलियो, कोलम्बस आदि सभी ने सत्याग्रह करके अपने महान् कार्य किए।[26] (खेल तो बहुत हैं, किसी में हम जीतते हैं, किसी में हारते हैं लेकिन एक खेल ऐसा है जिसमें हमेशा जीत होती है, वह है सत्याग्रह का खेल।[27]) वड्सर्वर्थ ने जो सच्चे योद्धा का रूप बताया है उसके अनुसार सत्याग्रही के सामने एक ही लक्ष्य है कि वह अपने कर्तव्य का पालन करता रहे चाहे इसकी कुछ भी कीमत चुकानी पड़े।[28]

अकेला मनुष्य, देह से दुबला-पतला मनुष्य भी सत्याग्रही हो सकता है। इसके लिए फौज खड़ी करने की जरूरत नहीं है। अभय सहज रूप से सत्यधर्मी होता है जिसका किसी से वैर नहीं उसे तलवार की जरूरत नहीं है। सत्याग्रह ऐसी तलवार है जिसके सभी ओर धार है। उससे काम लेने वाला और जिस पर वह काम लाई जाए दोनों सुखी होते हैं, वह खून नहीं बहाती, पर उसका वार गहरा होता है।[29] (अभय के बिना सत्याग्रही की गाड़ी एक कदम भी आगे नहीं जा सकती। धन-सम्पत्ति, झूठा मान, सगे सम्बन्धियों, राज-दरबार, शारीरिक आघात और मरण सभी विषयों में अभय हो तभी सत्याग्रह का पालन हो सकता है। सत्याग्रही को ब्रहमचर्य का पालन करते हुए, पैसे का लोभ छोड़कर, संतान की कामना से रहित होना चाहिए। सत्याग्रह की भावना को अच्छी तरह से समझ लेने पर ईश्वर के सिवा किसी और से डरने की बात नहीं रह जाती।[30])

वे खादी को मुक्ति दाता और चरखे को स्वराज का हथियार मानते हैं चरखा शरीर श्रम, प्रगति और आध्यात्मिक अनुभव का प्रतीक है। कुमारप्पा का कथन ठीक है कि गाँधी के लिए यह आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, शैक्षणिक और सांस्कृतिक कामनाओं को पूर्ण करने वाला है।[31]

हिन्द स्वराज में गाँधी जी लिखते हैं - माँगा नहीं मिलता, जो लेना है उसे लेना होगा। स्वराज्य हर व्यक्ति को अपने लिए खुद प्राप्त कराना है। कोई भी राष्ट्र बिना कष्ट सहे ऊपर नहीं उठ सकता। दूसरे करेंगें तो हम भी करेंगें, यह कहना न करने का बहाना है। विवश होकर करना और कष्ट सहना बेकार है। सच्चा स्वराज्य अपने मन पर राज्य है।[32]

सन् 1921 में गाँधी जी ने हिन्द स्वराज के बारे में लिखा था, ...आज मेरा लक्ष्य वह स्वराज्य नहीं है जिसका स्वरूप इस पुस्तक में बताया गया है। मैं जानता हूँ भारतवर्ष अभी इसके लिए पूरी तरह तैयार नहीं है..........मैं खुद तो उसी स्वराज्य के लिए प्रयत्न कर रहा हूँ पर हमारे सामुदायिक प्रयास का लक्ष्य पार्लमेंटरी स्वराज्य पाना है।[33] यह प्रयोग कठिन है पर असम्भव नहीं। 1921 में यह अशक्य समझ कर छोड़ दिया गया था, 1930 में यह प्रयत्न साध्य हो गया। आत्मशुद्धि, सत्य के लिए दु:ख उठाना, सत्य को पवित्र बनाता है। पश्चिमी विचारक यह भूल जाते हैं कि अहिंसा की शर्त प्रेम है, तन-मन की ऐसी शुद्धि के बिना जिसमें मल का लेश न हो, शुद्ध नि:स्वार्थ प्रेम नहीं हो सकता। इस शब्द का अर्थ और भाव सारी दुनिया के लिए एक हो जाए। इसके लिए लम्बे समय तक अहिंसा पर अमल करना जरूरी है। आज गाँधी जी का सत्य के प्रति आग्रह सिर्फ इतिहास की वस्तु रह गया है उनके एकादश व्रत अपना अर्थ खो बैठे हैं। लोकतंत्र की रक्षा के लिए सचेत होना जरूरी है।

यदि मानव समाज की प्रतिष्ठा अहिंसा के आधार पर करनी है तो विकेन्द्रीकरण के सिवा अन्य कोई उपाय नहीं है। (केन्द्रीकरण और लोकतंत्र एक दूसरे के विरूद्ध हैं।) केन्द्रीकरण से हिंसा और सर्वाधिकारवाद को प्रोत्साहन मिलता है।

पूर्ण हिंसा और पूर्ण अहिंसा दोनों अमूर्त है (मध्यम मार्ग उचित है।) हिंसा और अहिंसा का निर्णय बाहय प्रयत्नों में निहित भावनाओं से निर्धारित होता है। खुद अपने लिए वे कहते हैं - मेरे अन्दर अभी क्रोध है, मुझमें द्वैतभावना है.........सार्वभौम सिद्धान्त के लिए मुझे वासनाओं से पूर्ण मुक्त रहना चाहिए। अप्राप्यता भी आदर्श का सूचक है।

गाँधी जी कहते हैं, 'मैं हिन्दुस्तान को बड़े अभिमान से अपनी जन्मभूमि कहता हूँ, पर मेरा अभिमान पता नहीं कहाँ चला जायेगा। यदि हिन्दुस्तान हिंसा मार्ग को स्वीकार कर लेता है। हिन्दुस्तान का अर्थ है, सदियों से अहिंसा का उच्च घोष और उपदेश करने वाला देश इसलिए अहिंसा के बिना उद्धार की कल्पना मुझे हो ही नहीं सकती।'[34]

गाँधी समानता का राज्य चाहते थे वे कहते हैं,'मैं ईश्वर से प्रार्थना करूँगा कि भारत की दुर्दशा इंग्लैंड जैसी न हो (प्रजा प्रजा के बीच भेद न हो) अद्धैत वाद को उनकी यह महान देन थी।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यंग इंडिया 6/8/25, यंइं, हि.न.जी. 6/10/27
2. 'आत्म कथा' पृ-5, डा0 राधाकृष्णन्
3. हिन्द स्वराज, पृ-53
4. कमलापति शास्त्री, बापू और मानवता, पृ-224
5. आत्मकथा पृ-622
6. हरिजन सेवक 26.6.46

7. हिन्दी नव जीवन 6.4.24
8. महात्मा गाँधी, सं. राधाकृष्णन् पृ- 13
9. गोस्वामी तुलसीदास ने कहा है – दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान तुलसी दया न छोड़िये, जब तक घट में प्रान
10. अहिंसा सत्यम क्रोधस्त्याग: शांतिरपैशुनम्
दयामू तेष्वलोलुप्त्वं मार्दवम् हरिचापलम्।
तेजः क्षमाधृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति सम्पदम् दैवीमाभिजातस्य भारत ।। 'गीता'
11. धर्म-नीति, पृष्ठ 23, ।। 1न धर्मो दया परः, ।।
।। 2अहिंसा परमो धर्मः तथा हिंसापरन्तपः
अहिंसा परमं सत्यं यतो धर्मः प्रवर्तते।
पंचतंत्र 1/409
12. वर्धा 22/6/90
13. विश्व भारती, क्वाटर्ली पृ. 13
14. गाँधी, समाजवाद, पृष्ठ-1
15. हिन्दी स्वराज, पृ. 62
16. अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सनिधौवैरत्याग: – पातंजल योग दर्शनः साधनपाद, 35।
17. सेवा ग्राम 25/6/40
पृ. सं. 29/6/40
18. इंडिपेंडेंस बनाम स्वाराज लेख से – यंइं. 12/1/1928
19. घनश्यामदास बिड़ला को लिखे गये पत्र से 20/6/24
20. हिन्द स्वराज पृ. 70
21. यंग इण्डिया, हिन्दी नवजीवन 3/12/1931
22. यं. इं. 24/11/1921
23. भगवत्गीता को मैं पहले से जानता था............लेकिन शान्तिपूर्ण प्रतिरोध की नीति का मूल्य कितना हो सकता है यह मैं 'न्यू टैस्टामेंट' पढ़ने के बाद जान सका। यह धारणा और भी सुदृढ़ हो गई जब मैंने फिर गीता पढ़ी। टालस्टॉय की पुस्तक 'ईश्वर का राज्य तुम्हारे भीतर है' पढ़ने के बाद धारणा दृढ़ हो गई।
.................महात्मा गाँधी
रोम्यां रोला : म.गा, जीवन और दर्शन पृ. 23
24. हि. स्व. अध्याय 17
25. म.मा.डा0 खख झ/8/6/9/1932 महादेव भाई की डायरी, नव जीवन प्रकाशन।
26. इण्डियन ओपीनियन 1916
27. अंग्रेजी, स्टार 415/1911
28. ई.ओ. 18/6/10
29. हि. स्व. पृ. 74
30. अंग्रेजी इण्डियन ओपीनियन
31. हि. स्व. पृ. 94
32. विश्वभारती, क्वार्टली, शान्ति निकेतन पृ. 35
33. भूमिका, हि.स्व. महादेव देसाई
34. नवम्बर 1924 के कलकत्ता प्रवास में एवं अंग्रेज से बात करते हुए नव जीवन हि.न. जी. 23/11/24
24[2] हि. स्व. पृ. 76
25[1] बापू के पत्र : कु. प्रेमा बहन कंटक के नाम पृ. 56, न.जी. पृ. अं. 1961 (जनवरी) अन्य सहायक ग्रंथ -अहिंसा और सत्य (गाँधी जी) प्रधान सम्पादक डी रामनाथ सुमन सत्याग्रह प्र. सं. श्री राम नाथ सुमन गाँधी का दर्शन : प्रो. संगम लाल पाण्डे

****

राजस्थान में प्राथमिक विद्यालयी विद्यार्थियों की स्वच्छता आदत एवं सामाजिक आर्थिक स्तर में सहसम्बन्ध का अध्ययन

डॉ. डी.पी. सिंह* डॉ. शालिनी बिस्सू**

प्रस्तावना – व्यक्तिगत स्वास्थ्य और स्वच्छता मोटे तौर पर पेयजल की उपलब्धता तथा समुचित स्वच्छता पर निर्भर करती है। अत: जल, स्वच्छता और स्वास्थ्य के बीच सीधा सम्बन्ध है। विकासशील देशों में अशुद्ध पेयजल का सेवन, मल-मूल का काम चलाऊ ढंग से निपटान, पर्यावरण की अपर्याप्त स्वच्छता तथा व्यक्तिगत और खाद्य स्वच्छता का अभाव कई रोगों के प्रमुख कारण है। इसमें भारत भी कोई अपवाद नहीं है। स्वच्छता की स्थिति ठीक न होने से मृत्यु दर अधिक है। इसी संदर्भ में 1986 में केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम बुनियादी तौर पर चलाया गया था, जिसका प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण जनता के जीवन स्तर को सुधारना तथा महिलाओं को गोपनीयता और आदर प्रदान करना था।

पहले स्वच्छता से आशय तालाबों, गढ्डों, पोखरों, संडासों और टोकरियों में मल-मूल को विसर्जित कर देने का ही लिया जाता था। आज यह एक व्यापक अवधारणा बन चुकी है, जिसमें तरल और ठोस अपशिष्ट का निपटान निकास, खाद्य सम्बन्धी साफ-सफाई, व्यक्तिगत और अपने घर-बार सहित आसपास के वातावरण की सफाई शामिल है। समुचित स्वच्छता न केवल सेहत के मामले में जरूरी है बल्कि हमारे व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में भी इसका महत्वपूर्ण स्थान है। स्वच्छता अच्छे जीवन स्तर और मानव विकास के आधारों में से एक है। ठीक ढंग से स्वच्छता रखने से जल और मिट्टी आदि का प्रदूषण नही फैलता तथा इनसे रोगों की रोकथाम होती है। इस प्रकार स्वच्छता की अभिकल्पना का साफ-सफाई, घर की साफ-सफाई, साफ पेयजल, कूड़े-करकट का निपटान, मल-मूत्र और गंदे पानी के निकास को शामिल करने के लिए विस्तार किया गया।

1996-97 में भारतीय जन संचार संस्थान के तत्वावधान में ग्रामीण जल आपूर्ति ओर स्वच्छता क्षेत्र में जानकारी, प्रवृति तथा आचरणके मामले में एक व्यापक आधारभूत सर्वेक्षण आयोजित किया गया था जिसमे पता चला कि 55 %लोगो ने स्व-प्रेरणा से निजी शौचालय बना रखे है। केवल 2 % लोगो ने कहा कि ऐसा करने में सब्सिडी एक प्रमुख प्रेरणा स्त्रोत था जबकि 54 % ने कह कि सुविधा और गोपनीयता के कारण उन्होंने स्वच्छ शौचालय बनाए। अध्ययन से यह भी पता चला कि 51 %लोग स्वच्छ शौचालय बनवाने के लिए 1000/- रूपये तक की राशि खर्च करने के लिए तैयार थे।

उक्त तथ्यों को ध्यान में रखकर, केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम में सुधर किया गया था। नए स्वरूप में इस कार्यक्रम को मांग संचालित दृष्टिकोण के रूप में बनाया गया। 'सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान' नामक कार्यक्रम में संशोधित दृष्टिकोण के अन्तर्गत सूचना, शिक्षा एवं संचार, मानव संसाधन विकास, स्वच्छता सुविधाओं के लिए मांग सृजन और ग्रामीण लोगों के बीच जन-जागरूकता की क्षमता विकास गतिविधियां करने पर अधिक बल दिया गया है। इससे लोगों को अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार वैकल्पिक प्रेषण-प्रणालियों के माध्यम से उपयुक्त विकल्पों को चुनने में क्षमता बढ़ाने में भी मदद मिलेगी। इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन में समुदाय प्रधान और जनकेन्द्रित गतिविधियों पर अधिक ध्यान दिया गया है। नए विचारों और संकल्पनाओं को समझाने ओर उन्हें जनप्रिय बनाने में बच्चे प्रमुख भूमिका निभाते है।ग्रामीण क्षेत्रों में शुष्क शौचालयों को फलश वाले शौचालयों में बदलना और जहां कहीं हो, मनुष्य द्वारा मैला ढोने की प्रथा समाप्त करना। अत: इस कार्यक्रम का आशय उनके अपने मकानों और स्कूलों में सफाई की अच्छी आदतों के अत्यधिक आकर्षक समर्थन के रूप में उनकी क्षमता का उपयोग करने से है। इसका उद्देश्य देश के ग्रामीण इलाकों के सभी स्कूलों/आंगनबाड़ियों में बालकों और बालिकाओं के लिए अलग-अलग मूत्रालय/शौचालय उपलब्ध कराना भी है।

सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान के उद्देश्य :

1. ग्रामीण जनता का जीवन स्तर सुधारना।
2. ग्रामवासियों को स्वच्छता के फायदे व अस्वच्छ रहने से होने वाले नुकसान के बारे में बताना, जिससे वे स्वच्छ आदतों को अपने दैनिक जीवन का एक हिस्सा बना सकें।
3. जागरूकता और स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से स्वच्छतागत सुविधाओं के लिए मांग पैदा करना।

समस्या का कथन – देश के सबसे बड़े राज्य राजस्थान, जिसका क्षेत्रफल देश का 10.4 %है, में देश की 5.50 %आबादी निवास करती है, परन्तु जल की उपलब्धता केवल 1% है। जो जीवन है तथा स्वच्छता जीवन जीने का तरीका। स्वस्थ एवं स्वच्छ जीवन जीने के लिए आधारभूत स्वच्छता सुविधाओं का होना आवश्यक है। विकासशील देशों में लगभग 100 करोड़ बच्चे स्वच्छता सुविधाओं के अभाव से सक्रंमण कुपोषण व मंद मानसिक व शारीरिक विकास से ग्रस्त है, जिनका सीधा प्रभाव उनकी शैक्षिक उपलब्धि व सामाजिक-आर्थिक स्तर पर पड़ता है।

शोध औचित्य

(अ) छात्र वर्ग के लिए – इस अध्ययन के माध्यम से प्राथमिक विद्यालीय विद्यार्थियों के लिए उन तथ्यों का अध्ययन किया जाएगा, जिनसे विद्यार्थियों में व्यक्तिगत तथा सामुदायिक स्वच्छता की आदत व भावना का विकास किया जा सके। इसके अतिरिक्त अध्ययन का उद्देश्य उन तथ्यों की पहचान

* एसोसिएट प्रोफेसर (रीडर) ग्रामोत्थान विद्यापीठ शिक्षा महाविद्यालय, संगारिया, हनुमानगंढ (राज.) भारत
** अध्यापक, राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, लधुवाला (राज.) भारत

करना है, जो बच्चों में अच्छी स्वच्छता सम्बधिंत आदतों के निर्माण को बाधित कर रहे हैं ताकि उन्हें दूर किया जा सके। जीवन का उच्च स्तर व अधिक खुशहाल बनाने के क्रम में पूर्ण रूप से आवश्यक है कि बच्चों में प्रारम्भ से ही अच्छी स्वच्छता सम्बंधित आदतों का बीजारोपण किया जाए।

(ब) अध्यापक वर्ग के लिए – इस अध्ययन में अध्यापक वर्ग को बालकों व स्वयं में भी स्वचछता सम्बंधी आदतों के निर्माण की उपयोगिता व आवश्यकता की जानकारी हो सकेगी और स्वच्छता कार्यक्रम के प्रति अध्यापको का दृष्टिकोण व्यापक हो सकेगा। विद्यार्थियों में प्रारम्भ से ही अच्छी आदतों के निर्माण से संकीर्ण विचारधारा का अन्त हो सकेगा और अध्यापकों को यह ज्ञात होगा कि औपचारिक शिक्षा के साथ-साथ अच्छी स्वच्छता सम्बंधी आदतें भी व्यक्तित्व निर्माण का एक हिस्सा है।

शोध उद्देश्य :

1. अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों के प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की स्वच्छता सम्बन्धी आदतों का अध्ययन करना।
2. प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययन विद्यार्थियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर का स्वच्छता आदत से सहसम्बन्ध ज्ञात करना।
3. प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के स्वच्छता स्तर का उपलब्धि स्तर से सहसम्बन्ध ज्ञात करना।
4. ग्रामीण व शहरी प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के स्वच्छता स्तर का उपलब्धि स्तर से सहसम्बन्ध ज्ञात करना।

परिकल्पना :

1. प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की सामान्य स्वच्छता जागरूकता स्तर में कोई सार्थक अन्तर नही है।
2. प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत बालक व वालिकाओं की स्वच्छता सम्बन्धी आदतों मे ग्रामीण एवं शहरी आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनत विद्यार्थियों के सामाजिक व आर्थिक स्तर तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी आदतों में सकारात्मक सहसम्बन्ध है।

शोध विधि – प्रस्तुत शोध कार्य में शोध उद्देश्यों की प्रकृति के अनुरूप सर्वेक्षण विधि द्वारा पूरा किया है। ग्रामीण व शहरी क्षेत्र में प्राथमिक विद्यालयी विद्यार्थियों के स्वच्छता आदत, सामाजिक आर्थिक स्तर, पारिवारिक वातावरण, शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करने के लिए सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया है।

शोध उपकरण – शोधकर्त्री ने शोधकार्य की विशिष्टता एवं नवीनता को ध्यान में रखते हुए स्वनिर्मित एवं मानकीकृत उपकरण प्रयुक्त किए है। जो इस प्रकार है-

1. सामाजिक-आर्थिक स्तर मापनी (मानकीकृत) – (विद्यार्थी वर्ग के लिए) यह मापनी डॉ. बीना शाह द्वारा निर्मित है, (शिक्षा संकाय गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर, गढ़वाल)।

2. स्वच्छता मापनी विद्यार्थियों के लिए (स्वनिर्मित) – न्यादर्श से दत्त संग्रहित करने के लिए स्वच्छता मापनी को प्रयुक्त किया गया है। इस मापनी को प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियो द्वारा भरवाया गया है। इस मापनी में छात्र-छात्राओं की स्वच्छता सम्बंधी आदत, सुविधाएं, स्वास्थ्य, पास-पडौस, विद्यालय व खेल मैदान तथा परिवार में स्वच्छता सम्बंधी आदतो आदि मुख्य बिन्दुओं के आधार पर प्रश्नावली का निर्माण किया गया है।

3. स्वच्छता मापनी अभिभवकों के लिए (स्वनिर्मित) – इस मापनी में वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का निर्माण किया गया है। यह मापनी विद्यार्थियों के स्वच्छता सम्बंधी आदतों के बारे में अध्ययन करने के लिए उनके माता-पिता, अभिभावकों से भरवाई गई है।

शोध परिसीमन – शोध कार्य को अधिक वैध और विश्वसनीय बनाने के लिए क्षेत्र तथा न्यादर्श सम्बंधी परिसीमतन इस प्रकार किया गया है-

(अ) क्षेत्र सम्बंधी :

1. शोध अध्ययन हेतु राजस्थान के बीकानेर सम्भाग के दो जिले- हनुमानगढ़, श्रीगंगानगर के ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के प्राथमिक स्तर के विद्यालयों को लिया गया है।
2. अध्ययन हेतु उन्हीं विद्यालयों का चयन किया गया है। जहा से प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के बारे मे दत्त संग्रहित किया जाना सम्भव हो पाया है।
3. शोध अध्ययन हेतु बीकानेर सम्भाग के दो जिले- हनुमानगढ़, श्रीगंगानगर के स्वास्थ्य विभाग के कर्मचारियों को लिया गया है जिनसे विद्यालयी विद्यार्थियों के बारे मे दत्त संग्रहित किया जाना सम्भव था।

(ब) न्यादर्श सम्बंधी :

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु न्यादर्श का चुनाव 'यादृच्छिक प्रतिचयन विधि' द्धारा किया गया है।
2. न्यादर्श का चुनाव बीकानेर संभाग के दो जिलों- हनुमानगढ़, श्रीगंगानगर के ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के प्राथमिक स्तर के विद्यालयाों से किया गया है।
3. न्यादर्श का चुनाव चार स्तरों पर किया गया है-

(अ) विद्यार्थी वर्ग- सर्वप्रथम सामाजिक- आर्थिक स्थिति मापनी को श्रीगंगानगर व हनुमानगढ़ जिले के प्राथमिक विद्यालयी विद्यार्थियों पर लागू किया गया। प्राप्त दत्तों के विश्लेषण के आधार पर श्रीगंगानगर व हनुमानगढ़ जिले के 300 ग्रामीण व 300 शहरी विद्यार्थियों को चयनित किया गया, जिसमें से 100 विद्यार्थी उच्च सामाजिक-आर्थिक स्थिति, 100 मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्थिति व 100 विद्यार्थी निम्न सामाजिक- आर्थिक स्थिति से सम्बन्धित थे। तद्दोपरान्त इस चयनित 600 विद्यार्थियों से स्वच्छता मापनी प्रश्नावली से दत्त संकलित किये गये अर्थात् विद्यार्थी वर्ग से दत्त संकलन का कार्य दो चरणों मे पूरा किया गया।

शोध निष्कर्ष – शोध परिकल्पना के अनुसार, प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत बालक व बालिकाओं की स्वच्छता सम्बंधी आदतों में ग्रामीण व शहरी आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं जब कि अध्ययन के दौरान श्रीगंगानगर व हनुमानगढ़ जिले के शहरी व ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की स्वच्छता सम्बंधी आदतों में मध्यमान अंतर सार्थक पाया गया। अध्ययन क्षेत्र के शहरी विद्यालयों मे स्वच्छता सम्बन्धी आदतें, ग्रामीण क्षेत्र के विद्यालयों के विद्यार्थियों की अपेक्षाकृत अधिक प्राप्त हुई। अतः इस परिकल्पना को निरस्त किया जाता है। इस शोध के निष्कर्ष की पुष्टि शोधकर्त्री के अध्ययन क्षेत्र के भ्रमण के दौरान किए गए अवलोकन से होती है कि शहरी क्षेत्र के विद्याार्थी स्वच्छता आदतों को अपनाने में अग्रणी पाए गए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. B. Kuppuswamy (1999) Advenced Educational Psychology, Ne Delhi: Sterlins Publishers Pvt. Ltd.
2. Best, John W.B. Kahn James V. (1996) Research in

education new Delhi: Prentice Hall of India Private Limited.
3. Dev, Madhu & Grewal (1990) "Relationship between Study Habits and Academic Achievement of Undergraduates Home Science, Fine Arte Students". Ph.D. Thesis.
4. Diener. E and Crandall. R. (1978) Ethics in social and behavioural research, Chicago University of Chicago press.
5. Helmstadter, G.C (1970) Research concepts in Human behavior. New Yourk, Applcton-century Crafts.
6. Johada, M. (1975) research methods in social relations. New Yourk Halt Rinahart & Winston.
7. व्हाइट, के.आर.(1982)- 'सामाजिक आर्थिक स्तर व शौक्षिक उपलब्धि में सम्बन्ध का अध्ययन', पीएचडी शोध कार्य।
8. भट्टाचार्य, एस (1991),'छात्रों की उपलब्धि तथा समुदाय के सदस्यों का पोषण, स्वास्थय तथ वातावरणीय स्वच्छता के प्रति बढ़ती जागरुकत: एक अध्ययन', पीएच.डी. शोधकार्य
9. कैसेट जी (1990) 'स्कूल स्तर पर शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम: एक मूल्यांकन', पीएच,डी, शोधकार्य, विदर्भ, महाराष्ट्र।
10. ईशा भट्टाचार्य (1990),'सैकेंडरी स्कूलों में विभिन्न आयु वर्गो तथा सामाजिक-आर्थिक स्तर के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन', पीएच.डी. शोधकार्य, कल्याणी विश्वविद्यालय।
11. नबी अहमद, मोहम्मद आबिद सिद्की (2006),'सामाजिक-आर्थिक रूप से कमजोर वर्गो का सशक्तिकरण', पीएच.डी. शोधकार्य,अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़।
12. प्रो.डॉ. मेनीपाइटर वान डीजक, डॉ. मार्को स्कोस्टियन (2003), 'सामाजिक-आर्थिक स्तर का स्वच्छता आदतों के सुधार पर प्रभाव' का अध्ययन, पीएच, डी.शोधकार्य।
13. सत्यनारायण (1969),'माता-पिता के शैक्षिक व आर्थिक स्तर का बच्चों पर प्रभाव: एक अध्ययन', पीएच.डी. शोधकार्य।
14. सुषमा गुप्ता (1990),'विभिन्न सामाजिक-आर्थिक स्तरों की किशोर लड़कियों के सामाजिक समायोजन से सम्बन्धित कारत: एक अध्ययन', पीएच.डी. शोधकर्या, पंजाब विश्वविद्यालय

विभिन्न पत्र-पत्रिकाएँ व प्रकाशित लेख :

1. तकनीकी सेवा श्रृंखला (1997) 'विद्यालय जल आपूर्ति स्वच्छतता एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा', रैना (प.बंगााल)
2. सैन्ट्रल ब्यूरो ऑफ हैल्थ इंटेलिजेन्स (1998-99),'स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय' भरत सरकार।
3. के.एन. पानीकर (2009),'टुवार्ड्स ए पेराडिम इन एज्युकेशन द हिन्दू' 19 मई 2009
4. शिक्षक प्रशिक्षण माड्यूल, हाथ धुलाई दिवस, 2009, राष्ट्रीय स्वच्छता एवं स्वास्थ्य प्रोत्साहन अभियान (यूनीसेफ)
5. Cochran. W.: Sampling Techniques John Wiley, 1963.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

श्रीगंगानगर जिले में सर्व शिक्षा अभियान द्वारा उच्च प्राथमिक विद्यालयों में छात्रों के नामांकन, ठहराव का अध्ययन

डॉ. राजेन्द्र गोदारा* डॉ. मीनाक्षी मिश्रा **

प्रस्तावना – भारत सरकार की शिक्षा की सर्वजन सुलभता के लिये सक्रियता समय-समय पर चलाये गये तमाम कार्यक्रमों और कई अग्रगामी योजनाओं में स्पष्ट रूप से दिखती है। राजस्थान में भी पंचायती राज अधिनियम 1994 के माध्यम से प्राथमिक शिक्षा को सशक्त किया गयौ सर्व शिक्षा अभियान, मध्याह्न भोजन योजना, शिक्षा गारण्टी योजना तथा वैकल्पिक एवम् अनूठी शिक्षा और ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड कुछ ऐसी ही प्रमुख परियोजनाएँ है जो धीमे-धीमे ही सही, शिक्षा के प्रचार-प्रसार में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। शिक्षा के प्रति गंभीरता व्यक्त करते हुए सरकार ने वर्ष 2006-07 के हालिया बजट में डेढ़ लाख नये अध्यापक और 5 लाख नये क्लास रूम बनाने पर जोर दिया है। कई कार्यक्रमो के वर्तमान ढाँचे मं सुधार हेतु इन्हें सर्व शिक्षा अभियान में शामिल करके इन्हे सुव्यवस्थित व प्रभावी बनाने के प्रयास जारी है।

लेकिन यह तमाम कार्यक्रम ही स्थिति का पूर्ण और समग्र चित्र नहीं है। भारत एक तीसरी दुनिया का राष्ट्र है जहाँ पर आबादी अधिक हैं, शिक्षा और साक्षरता का स्तर विकसित राष्ट्रों की तुलना में कम है। योजनाएँ बनाने के बाद यहाँ तात्विक रूप से लागू नहीं की जाती है। न्यूपा (N.E.U.P.A.) ने देश के 29 राज्यों और केन्द्रशासित क्षेत्रों के 581 जिलों में शुरूआती शिक्षा की मौजूदा स्थिति पर एक सर्वेक्षण किया है। इस सरकारी सर्वेक्षण में उपरोक्त बातों के साथ-साथ कई ऐसे तथ्य सामने आए है जो स्पष्ट करते है कि शिक्षा की दिशा में हमें अभी काफी दूरी तय करनी है।

राजस्थान में प्रारम्भिक शिक्षा पृष्ठभूमि – राजस्थान के सर्वांगीण विकास में शिक्षा की महत्ता को सर्वेपरि समझते हुए राजस्थान सरकार ने पिछले वर्षो में कई प्रयास एवम् नवाचार किये ।इन प्रयासों के परिणाम स्वरूप राज्य की साक्षरता दर में उत्साहजनक वृद्धि हुई है। राजस्थान की जनगणना 2001 में राज्य की साक्षरता 1991 की साक्षरता दर से 22.48 प्रतिशत अधिक है। प्राथमिक शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति के विकास के लिये आवश्यक है। यह मानकर राज्य सरकार ने इस पर काफी व्यय किया है तथा अनेक परियोजनाओ को लागू किया है। इतने प्रयास होते हुए भी 6-14 आयु वर्ग के शिक्षा दर्पण 2002 सर्वे के आधार पर 3.61 लाख बच्चे विद्यालयों मे नही आ रहे है। यह शिक्षा से वंचित बालक-बालिकाएँ सब हार्डकोर है जिनको शिक्षा से जोड़ने में बहुत कठिनाई आ रही है। राज्य सरकार ने इस चुनौती को स्वीकार करते हुए एक नई महत्वाकांक्षी योजना **'शिक्षा आपके द्वार'** कार्यक्रम का शुभारंभ 19 नवम्बर 2001 को किया।

डी.पी.ई.पी –जिला प्राथमिक कार्यक्रम राज्यों में 6-11 आयु वर्ग के समस्त बालक-बालिकाओं को विद्यालय से जोड़ने, ठहराव सुनिश्चित करने तथा गुणात्मक शिक्षा प्रदान करने हेतु राज्य सरकार द्वारा चलाई गई योजना।

सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए) – भारतवर्ष को शिक्षा के सार्वजनीकरण हेतु नई सहस्त्रावदी के प्रारम्भ में चलाई महत्वाकांक्षी योजना है जो प्रक्रियाओं में चलाई महत्वाकांक्षी योजना है जो प्रक्रियाओं में लचीलापन, विकेन्द्रीकृत प्रबन्ध व्यवस्था, सामाजिक क्षमता, सामुदायिक सहभागिता पर आधारित है।

सर्व शिक्षा अभियान एक निश्चित समयावधि में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण का कार्यक्रम है तथा पूरे देश में एक स्तरीय मूल शिक्षा देने का विचार है यह प्राथमिक शिक्षा द्वारा सामाजिक न्याय को प्रोत्साहित करने का अवसर है। यह प्राथमिक शिक्षा के सभी अभिकरणों को जोड़ने का प्रभावी एवं समन्वित प्रयास है। ये केन्द्र, राज्य तथा स्थानीय सरकार की साझेदारी में प्राथमिक शिक्षा को बढ़ावा देने का प्रयास है।

राजस्थान यह योजना वर्ष 2001-02 में प्राथमिक शिक्षा के सुदृढ़ीकरण व संपूर्ण साक्षरता के लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु भारत सरकार व राज्य सरकार की 85:15 की भागीदारी से शुरू की गई है। इसकी नोडल एजेन्सी राजकयी प्राथमिक शिक्षा परिषद् है। इस योजना में बालिकाओं एवं वंचित वर्ग के लिये विशेष सैनिक योजना का प्रावधान भी है। भारत सरकार ने राजीव गांधी स्वर्ण जयंती पाठशालाओं को सर्वशिक्षा अभियान के तहत् शिक्षा गारन्टी केन्द्रो के रूप में संचालित की स्वीकृति भी प्रदान की है।

राजस्थान में सर्व शिक्षा अभियान के उद्देश्य:

1. सभी बच्चों के लिये वर्ष 2003 तक स्कूल शिक्षा गारंटी केन्द्र, वैकल्पिक स्कूल, पुन: विद्यालय प्रवेश शिविर उपलब्ध कराना।
2. सभी बालक-बालिकाएं वर्ष 2007 तक पांच वर्ष की प्राथमिक शिक्षा पूरी कर ले।
3. सभी बालक-बालिकाएं वर्ष 2010 तक 8 वर्ष की प्रारम्भिक शिक्षा पूरी कर ले।
4. संतोषजनक गुणवत्तापूर्ण एवं संस्कारयुक्त शिक्षा पर बल, जिसमें जीवन उपयोगी शिक्षा को विशेष महत्त्व दिया गया हो।
5. वर्ष 2010 तक सभी बच्चों का ठहराव सुनिश्चित करना।
6. शिक्षा में स्त्री-पुरूष असमानता तथा सामाजिक वर्ग भेद को 2007 तक प्राथमिक स्तर पर तथा 2010 तक प्रारम्भिक स्तर पर समाप्त करना।

* प्राचार्य, श्रीगंगानगर स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** प्राचार्य, भारती शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

प्राथमिक विद्यालयों में शैक्षिक वातावरण कुछ ऐसा ही है कि वह बच्चों को आकर्षित कर सकने में असमर्थ है। इसका एक कारण यह भी रहा है कि देश में आर्थिक संसाधनों के अभाव में विद्यालयों की न्यूनतम अनिवार्य भौतिक सुविधाएँ उपलब्ध नहीं है।

अध्ययन का औचित्य – अध्ययन से पता लगा है कि प्राथमिक स्तर पर 100 विद्यार्थियों के प्रवेश लेने पर 40 विद्यार्थी 5 वीं कक्षा तथा 20 विद्यार्थी 8वीं कक्षा उत्तीर्ण कर पाते हैं और महाविद्यालय में केवल 2 विद्यार्थी ही पहुंच पाते हैं। प्राप्त आंकड़ो के अनुसार भारत में लगभग 90 प्रतिशत बच्चे प्राथमिक शिक्षा स्तर पर नांमाकित हो जाते हैं लेकिन वास्तविक नामांकन 60 प्रतिशत के लगभग रहा है। बरलकरे कर नामांकन 60 प्रतिशत के लगभाग रहा है। बालकों का नामांकन बालिकाओं की अपेक्षा अधिक है। बालकों का नामांकन 98 प्रतिशत से अधिक है जो वास्तविक नामांकन से घटकर 71 प्रतिशत रह जाता है। अर्थात् 27 प्रतिशत विद्यार्थी बीच में विद्यालय छोड़ देते हैं। बालिकाओं की स्थिति बालकों की अपेक्षा खराब है। बालिकाओं का सकल नामोंकन 81 प्रतिशत है जबकि वास्तविक नामांकन 48 प्रतिशत रह जाता है। अर्थात् 33 प्रतिशत बालिकाएँ बीच में ही विद्यालय छोड़ देती है। आजादी के इतने वर्षो बाद शिक्षा की स्थिति यह है कि 60 वर्षो की अवधि में हम 63 प्रतिशत लक्ष्य तक पहुंच पाये है।

विद्यालयों के अनाकर्षक वातावरण, अरूचिकर पाठ्यक्रम अपर्याप्त भवनों तथा पाठ्य सामग्री, खेल सामग्री आदि की न्यूनता में सुधार लाने की दृष्टि से राज्य सरकार एवं शिक्षा विभाग द्वारा अनेक प्रयास किये जा रहे है, इसी उद्देश्य से राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 प्रोग्राम ऑफ एक्शन में 'ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड' अभियान चलाने की संकल्पना की गई है।

प्रदेश में प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर बीच में ही स्कूल छोड़कर चले जाने वाले विद्यार्थी 60 प्रतिशत से अधिक है। वर्ष 2001 में राज्य की 35 प्रतिशत आबादी निरक्षर थी। नये सर्वे के अनुसार 2011 में यह साक्षरता दर 74.50 प्रतिशत है। देश में साक्षरता की दृष्टि से राजस्थान 21 वें स्थान से 14.18 प्रतिशत की बढ़त के साथ 20 वे स्थान पर आ गया है। यह प्रगति विभिन्न शैक्षिक प्रयासों को देखते हुए सन्तोषजनक नहीं की जा सकती।

अब सवाल जनता का है, देश की 35 प्रतिशत निरक्षर आबादी का है। 31.36 प्रतिशत उन बच्चों का है जो प्राथमिक शिक्षा के दौरान ही स्कूल छोड़ देते है। सन् 2001 में सर्व शिक्षा अभियान का प्रारम्भ इस लक्ष्य के साथ हुआ था कि वर्ष 2012 तक 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को न्यूनतम प्राथमिक शिक्षा प्रदान की जायेगी, पर निर्धारित समय अवधि को पूरा होने में मात्र दो वर्ष शेष है और लक्ष्य से हम कोसों दूर खडे है।

लेकिन समस्या नामांकन की नहीं बल्कि इससे भी गंभीर चुनौती है जो शिक्षा व्यवस्था से जुडे प्रत्येक व्यक्ति को विचलित करती है, वह समस्या है बालक के ठहराव की। किसी भी शैक्षिक सत्र का जुलाई व अप्रैल के नामांकन से सह-सम्बन्ध स्थापित करें तो बहुत बड़ा अन्तर पैदा होता है। सत्रारम्भ से सत्रान्त तक पहुंचते-पहुंचते बहुत बड़ी संख्या में बच्चे पलायन कर जाते है। प्रत्येक नामांकित बालक-बालिका का ठहराव हम सुनिश्चित नहीं कर पाये है । परिणामस्वरूप वे बच्चे शिक्षा से वंचित रह जाते है और एक बार फिर हम अभियान में असफल होकर लक्ष्य से दूर रह जाते है।

प्रस्तुत शोध के निम्नांकित उद्देश्य हैं:-

1. सर्व शिक्षा अभियान के द्वारा प्रशिक्षित शिक्षको की शिक्षण दक्षताओं का अध्ययन।
2. सर्व शिक्षा अभियान के अन्तगर्त उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थीयों के नामांकन व ठहराव का अध्ययन।
3. सर्व शिक्षा अभियान के अर्न्तत शहरी उच्च प्राथमिक विद्यालयों मं विद्यार्थियों के नामांकन व ठहराव का अध्ययन।
4. सर्व शिक्षा अभियान के अन्तगर्त ग्रामीण उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के नामांकन व ठहराव का अध्ययन।
5. सर्व शिक्षा अभियान के अन्तगर्त शहरी उच्च प्राथमिक विद्यालयों में छात्रों के नामांकन व ठहराव का अध्ययन।
6. सर्व शिक्षा अभियान के अन्तगर्त शहरी उच्च प्राथमिक विद्यालयों में छात्राओं के नामांकन व ठहराव का अध्ययन।
7. सर्व शिक्षा अभियान के अन्तगर्त ग्रामीण उच्च प्राथमिक विद्यालयों में छात्रो के नामांकन व ठहराव का अध्ययन।
8. सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत ग्रामीण उच्च प्राथमिक विद्यालयों में छात्राओं के नामांकन व ठहराव का अध्ययन।

शोध की परिकल्पनाएँ :-

1. सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के नामांकन पर लिंगभेद का कोई प्रभाव नही है।
2. सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों मं विद्यार्थियों के नामांकन पर क्षेत्रीय भिन्नता का कोई प्रभाव नही है।
3. सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों का ठहराव औसत स्तर का है।

(अ) सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में छात्रों का ठहराव और स्तर का है।

(ब) सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में छात्राओं का ठहराव और स्तर का है।

4. सर्व सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के ठहराव पर लिंगभेद का कोई प्रभाव नहीं है।
5. सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के ठहराव पर क्षेत्रीय भिन्नता का कोई प्रभाव नहीं है।

न्यादर्ष – छात्रों के नामांकन, ठहराव व छात्र उपलब्धि के अध्ययन के लिये सर्व शिक्षा अभियान से जुडे श्रीगंगानगर जिले के 9 ब्लाकों (खण्डों) के ग्रामीण व शहरी राजकीय विद्यालयों के छात्रों को चयनित किया गया।

उपकरण – नामांकन एवं ठहराव के आंकडे सर्व शिक्षा अभियान द्वारा संग्रहित DISE(2010-2011) तथा CTS (2010) से प्राप्त किये गए है।

विश्लेषण – 'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के नामांकन पर लिंगभेद का कोई प्रभाव नहीं है।'

क्रं.	समूह	कुल जंनसंख्या	कुल नामांकन	नामांकन प्रतिशत
1.	6 से 14 आयुवर्ग के बालक	58884	52392	88.97
2.	6 से 14 आयुवर्ग की बालिकाएँ	51397	44500	86.58

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सर्व शिक्षा अभियान के अन्तगर्त उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के नामांकन पर लिंगभेद का प्रभाव पड़ता है अर्थात् बालकों का नामांकन, बालिकाओं की तुलना में अधिक पाया गया। अत: परिकल्पना 'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तगर्त उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के नामांकन पर लिंगभेद का कोई प्रभाव नहीं है।' अस्वीकृत की जाती है।

परिकल्पना संख्या 2 – 'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के नामांकन पर क्षेत्रीय भिन्नता का कोई प्रभाव नहीं है।'

क्रं.	ब्लॉक	कुल जंनसख्या (11 से 14 वर्ष)	कुल नामांकन (कक्षा 6 से 8)	नामाकन प्रतिशत
1.	अनूपगढ़	9389	7663	81.62
2.	घड़साना	11386	9763	85.75
3.	श्रीकरणपुर	8925	7649	85.70
4.	पदमपुर	10039	9056	90.21
5.	रायसिंहनगर	11688	10540	90.18
6.	सादुलशहर	10273	8897	86.61
7.	श्रीगंगानगर	20947	18843	89.96
8.	सूरतगढ़	19229	17186	89.38
9.	श्रीविजयनगर	8405	7295	86.79

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सर्व शिक्षा अभियान के अन्तगर्त उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के नामांकन में क्षेत्रीय भिन्नता का प्रभाव पड़ता है। अत: 'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के नामाकंन पर क्षेत्रीय भिन्नता का कोई प्रभाव नही है' अस्वीकृत की जाती है।

परिकल्पना संख्या 3 – 'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तगर्त उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों का ठहराव औसत स्तर का है।'

क्रं.	ठहराव स्तर	ब्लॉक की संख्या
1.	निम्न (85–90 प्रतिशत)	2
2.	औसत (90–95 प्रतिशत)	4
3.	उच्च (95–100 प्रतिशत)	3

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि श्रीगंगानगर जिले में सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में छात्राओं का ठहराव औसत स्तर का है। अत: शून्य परिकल्पना 'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में छात्राओं का ठहराव औसत स्तर का है।' स्वीकृत की जाती है।

परिकल्पना संख्या 4 – 'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के ठहराव पर लिंगभेद का कोई प्रभाव नहीं है।'

क्रं.	समूह	कुल नामांकन	कुल ठहराया	ठहराव प्रतिशत
1.	श्रीगंगानगर जिले में कक्षा 6 से 8 के छात्र	52392	49737	94.93
2.	श्रीगंगानगर जिले में कक्षा 6 से 8 के छात्राएँ	44500	41937	94.24

श्रीगंगानगर जिले में सर्व शिक्षा अभियान के अन्तगर्त कक्षा 6 से 8 के छात्राओं का कुल ठहराव 49737 है, जो कि बालकों के कुल नामांकन का 94.93 प्रतिशत है, जबकि सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत कक्षा 6 से 8 की छात्राओं का कुल ठहराव 41937 है। जो कि बालिकाओं के कुल नामांकन का 94.24 प्रतिशत है, अर्थात् छात्रों का ठहराव, छात्राओं की तुलना में 0.69 प्रतिशत अधिक है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के ठहराव पर लिंगभेद का प्रभाव पड़ता है अर्थात् छात्रों का ठहराव, छात्राओं की तुलना में अधिक पाया गया। अत: शून्य परिकल्पना **'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के ठहराव पर लिंगभेद का कोई प्रभाव नहीं है'** अस्वीकृत होती हैं

परिकल्पना संख्या 5– 'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तगर्त उच्च प्राथमिक विद्यालयों मं विद्यार्थियों के ठहराव पर क्षेत्रीय भिन्नता का कोई प्रभाव नहीं है।'

क्रं.	ब्लॉक	कुल जंनसख्या (11 से 14 वर्ष)	कुल नामांकन (कक्षा 6 से 8)	नामाकन प्रतिशत
1.	अनूपगढ़	8897	8332	93.64
2.	घड़साना	7295	6550	89.79
3.	श्रीकरणपुर	7649	7159	93.59
4.	पदमपुर	18843	18469	98.02
5.	रायसिंहनगर	17186	16738	97.39
6.	सादुलशहर	7663	7178	93.67
7.	श्रीगंगानगर	9763	9030	92.49
8.	सूरतगढ़	9056	8135	89.83
9.	श्रीविजयनगर	10540	10085	95.68

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि श्रीगंगानगर जिले में कक्षा 6 से 8 (उच्च प्राथमिक विद्यालयों) में विद्यार्थियों का सबसे अधिक ठहराव पदमपुर में 98.02 प्रतिशत, जबकि सबसे कम ठहराव घड़साना में 89.79 प्रतिशत पाया गया। इसके अतिरिक्त अधिक ठहराव से कम की ओर क्रमश: रायसिंहनगर में 97.39 प्रतिशत, विजयनगर में 95.68 प्रतिशत, सादुलशहर में 93.67 प्रतिशत, अनूपगढ़ में 93.64 प्रतिशत, करणपुर मे 93.59 प्रतिशत, श्रीगंगानगर में 92.49 प्रतिशत तथा सूरतगढ़ हमं 89.83 प्रतिशत पाया गया।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के ठहराव में क्षेत्रीय भिन्नता का प्रभाव पड़ता है। अत: परिकल्पना **'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के ठहराव पर क्षेत्रीय भिन्नता का कोई प्रभाव नहीं है' अस्वीकृत की जाती है।**

परिकल्पना संख्या 6 – 'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि औसत स्तर की है।'

क्रं.	शैक्षिक उपलब्धि का स्तर	विद्यार्थियों की संख्या	विद्यार्थियों का प्रतिशत
1.	निम्न	52392	49737
2.	औसत	44500	41937

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि औसत स्तर की पाई गई है अर्थात् परिकल्पना **'सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उच्च प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि औसत स्तर की है' स्वीकृत की जाती है।**

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. ओड़. एल. के : शिक्षा के दार्शनिक पृष्ठभूमि :(1990) शिक्षा के नूतन आयाम राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
2. बुच.एम.बी : फिफ्थ सर्वे इन एज्यूकेशन राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान

और प्रशिक्षण

3. शिक्षा निदेशालय : राजस्थान में शिक्षा अनुसंधान
4. आबिद हुसैन : प्राइमरी एज्यूकेशन इन इण्डिया एन अनफिसनिश्ड एजेण्डा
5. पारसनाथ राय : अनुसंधान परिचय लक्ष्मीनारायण आगरा रोड़ आगरा पृ.सं 64
6. गर्वनमेंट ऑफ इणडिया : नेशनल पॉलिसी ऑफ एजूकेशन (1986) मिनिस्ट्री ऑफ ह्यूमन रिसोर्स डवलपमैंट, न्यू दिल्ली
7. शिक्षा आयोग की रिपोर्ट : शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, 1964-66

जर्नल्स एवं प्रत्र-पत्रिकाएँ :

1. जर्नल ऑफ एज्यूकेशन : राष्ट्रीय शैक्षिक नियोजन और प्रशासन विश्वविद्यालय (NEUPA) नई दिल्ली, खण्ड-7 अंक-2

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

न्यायाधीशों की नियुक्ति और उनका स्थानान्तरण : एक विश्लेषण

महेन्द्र कुमार पटेल *

शोध सारांश – वर्तमान में भारतीय लोकतंत्र के समक्ष अनेक चुनौतियां विद्यमान है उनमे से एक प्रमुख है, न्यायपालिका में न्यायाधीशों की नियुक्ति और उनका स्थानान्तरण पर विवाद होना, जिससे न्यायपालिका की गरिमा एवं स्वतंत्रता प्रभावित होती है। प्रस्तुत शोध – पत्र में सैद्धांन्तिक पद्धति को अपनाकर न्यायपालिका में न्यायाधीशों की नियुक्ति और उनके स्थानान्तरण पर उच्चतम न्यायालय ने कई महत्वपूर्ण सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया है, उनका विश्लेषण किया जाएगा। इस विषय पर शासन के विभिन्न अंगो की भूमिका का अध्ययन किया जाएगा, विशेषकर संसद की। 99वॉ संविधान संशोधन के द्वारा राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग के गठन का प्रावधान था जिसे उच्चतम न्यायालय ने न्यायपालिका की स्वतंत्रता का अतिक्रमण के आधार पर असंवैधानिक घोषित कर दिया। 1956 से 2017 तक के नियुक्ति एवं स्थानान्तरण की व्यवस्था एवं कालेजियम व्यवस्था का विभिन्न मार्गदर्शक सिद्धान्तो के आधार पर विश्लेषण किया जाएगा। अमेरिका, इग्लैण्ड एवं अन्य देशो में इस सम्बन्ध में क्या प्रावधान है उसका तुलनात्मक अध्ययन किया जाएगा। राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग की आवश्यकता एवं महत्व का मुल्यांकन किया जाएगा। इस संबंध में न्यायिक नियुक्ति आयोग के गठन के पक्ष में विपक्ष में विभिन्न स्तर पर हुई चर्चाओ को शामिल किया जाकर उनका विश्लेषण किया जाकर यह पता लगाया जाएगा कि कौन सी प्रक्रिया द्वारा न्यायपालिका अपनी स्वतंत्रता कायम रख पाएगी। समय – समय पर विधि आयोग द्वारा न्यायिक सुधार के संदर्भ में की गई अनुसंशाओ का भी अध्ययन कर विश्लेषण किया जाएगा। इस शोध – पत्र से यह अपेक्षित परिणाम निकाला जा सकता है कि भारतीय न्यायपालिका में न्यायाधीशों की नियुक्ति एवं स्थानान्तरण में एक पारदर्शी एवं भेदभाव से मुक्त प्रक्रिया का निर्माण हो। जिससे लोकतंत्र के इस महत्वपूर्ण स्तंभ न्यायपालिका एक पवित्र संस्था बनी रहे एवं सवैधानिक मूल्यो की रक्षा की जाकर न्यायपालिका की स्वतंत्रता बरकरार रहे। ऐसी संवैधानिक परम्परा का विकास किया जाएगा जिससे शासन के अंगो न्यायपालिका, कार्यपालिका एवं विधायिका द्वारा एक दूसरे में टकराव की स्थिति उत्पन्न न हो। भारतीय लोकतंत्र के समक्ष इस संबंध में आई चुनौतियो का हल संवैधानिक आदर्शो के परिपेक्ष्य में खोजा जा सकेगा, जिससे न्यायपालिका अपने न्याय दान के निष्पादन में महती भूमिका निभा सके।

प्रस्तावना – न्यायाधीशों की नियुक्ति एवं स्थानांतरण की प्रक्रिया एक स्वस्थ्य एवं निष्पक्ष होना न्यायपालिका का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है, जितने इस श्रेष्ठ प्रक्रिया द्वारा चयनित किये जायेगे या चुने जायेगे उतना ही न्यायपालिका का स्तर बेहतर होगा। संविधान के निर्माण के समक्ष से ही इस विषय पर व्यापक विचार विमर्श हुआ, जो अभी अभी जारी है। न्यायाधीशों की निष्पक्षता न सिर्फ न्यायपालिका पर प्रभाव डालती है बल्कि यह संविधान का निर्वचन कर कार्यपालिका एवं विधायिका पर भी व्यापक असर रखती है क्योकि न्यायिक अधिकारी की नियुक्ति उसकी संपूर्ण सेवा अवधि के लिये होती है। अत: वह कार्यपालिका एवं विधायिका के सदस्यो से अधिक समय तक सरकार का अंग रहता है।

न्यायाधीश ही न्यायालय में बैठकर न्यायपालिका के हैसियत से व्यक्तियो के मूल अधिकारो का निर्वचन करते है, इस प्रकार न्यायपालिका सामान्य व्यक्ति के अधिकारो की प्रहरी या रक्षक है। यदि न्यायपालिका को हम एक किला माने तो न्यायिक अधिकारी उस द्वारपाल की भाति है जिनका सजग, ईमानदार, और कर्तव्यनिष्ठ होना आवश्यक है ताकि जिले कि सुरक्षा बनी रहे।

नियुक्ति प्रक्रिया की पृष्ठ भूमि – प्रसिद्ध विधिशास्त्री मानटेस्क्यू ने सरकार का विभाजन तीन अंगो में किया है, कार्यपालिका, विधायिका एवं न्यायपालिका। सरकार का तीसरा अंग न्यायपालिका का प्रमुख कार्य विधि की व्याख्या करना तथा उसे लागू करना और राज्यो व उसके नागरिको के मध्य उत्पन्न विवादो का निपटारा करना है। न्यायपालिका का कार्य है कि वह देश में विधि का शासन बनाये रखे तथा सुनिश्चित करे कि शासन संविधान के अनुरूप संचालित हो। एक स्वतंत्र एवं निष्पक्ष न्यायपालिका ही नागरिको के अधिकारो की सरंक्षिका हो सकती है तथा बिना भय तथा पक्षपात के सबको समान न्याय प्रदान कर सकती है। इसके लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि उच्चतम न्यायालय अपने कर्तव्यो के पालन के लिये पूर्ण रूप से स्वतंत्र और सभी प्रकार के राजनीतिक दबावो से मुक्त हो।

जब भारत का संविधान तैयार किया जा रहा था तो संविधान निर्माताओ के समक्ष दो प्रकार की न्यायपालिका के उदाहरण उपस्थित थे :–

1. ब्रिटेन में न्यायाधीशो की नियुक्ति क्राउन द्वारा होती थी। इसका आशय यह था कि कार्यपालिका पर कोई निर्बन्धन नही था। उच्च न्यायालय में न्यायाधीशो की नियुक्ति लार्ड चान्सलर की सलाह पर की जाती थी इसके अलावा कोर्ट ऑफ अपील, हाउस ऑफ लार्ड और किग्स बेंच में नियुक्तियॉ एटार्नी जनरल की सलाह पर प्रधानमंत्री द्वारा की जाती थी। अत: ब्रिटेन में उच्च न्यायिक पदो पर नियुक्ति करने की शक्ति पूर्णतया कार्यपालिका में निहित थी।
2. अमेरिका में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति सीनेट की सहमति प्राप्त हो जाने पर राष्ट्रपति द्वारा की जाती थी। राष्ट्रपति विशेषत: एटार्नी जनरल द्वारा सुझाए गये व्यक्तियो के न्यायाधीश के पद के लिये नामित करता था। ऐसे व्यक्ति मुख्यत: राजनीतिक, शैक्षणिक या विधिक

*शोधार्थी (विधि) बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

पृष्ठभूमि से संबंधित होते थे तथा सीनेट सहमति देकर उन नामित व्यक्तियो की नियुक्ति की पुष्टि करती थी किन्तु राष्ट्रपति द्वारा नामित कुछ व्यक्ति सीनेट द्वारा पुष्टि प्राप्त करने में असफल रहे। 1930 में न्यायाधीश जॉन पार्कर को सीनेट ने अनुमोदित नही किया। इसके अलावा 1968 में न्यायाधीश फोर्ट जो कि राष्ट्रपति निक्सन के निकट मित्र एवं विधिक सलाहकार थे को भी मुख्य न्यायाधीश के पद पर नियुक्ति हेतु अनुमोदन प्राप्त नही हो पाया।

भारतीय संविधान में न्यायाधीशो की नियुक्ति की प्रक्रिया – भारतीय संविधान के निर्माताओ ने ब्रिटेन व अमेरिका की न्यायपालिका के संबंध में अनेक कठिनाईया पायी। अत: उन्होने भारतीय न्यायपालिका हेतु एक बीच का मार्ग अपनाया। ब्रिटेन में न्यायपालिका के संदर्भ में कार्यपालिका को अनन्य शक्ति प्राप्त थी, जबकि अमेरिकी न्यायिक प्रणाली में राजनीतिक हस्तक्षेप था। जब भारतीय संविधान का निर्माण किया जा रहा था तो राष्ट्रमण्डल देशो जैसे कनाड़ा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड व यू.के.मे न्यायाधीशों की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा की जाती थी। अत: उन सभी देशो से अनुभव प्राप्त करने के पश्चात भारतीय संविधान निर्माताओ ने भारतीय न्यायपालिका के संदर्भ इन अनुभव से लेकर एक अलग रास्ता अपनाया उन्होने एक ऐसी रीति अपनाई जो कि न तो कार्यपालिका का पूर्ण शक्ति प्रदान करती थी और न ही संसद को न्यायाधीशों की नियुक्ति को प्रभावित करने की अनुमति देती थी। संविधान सभा में न्यायपालिका के संबंध में विचार विमर्श की प्रक्रिया के दौरान उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में महत्वपूर्ण चर्चायें हुई।

भारत में न्यायाधीशो की नियुक्ति राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर और मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा करता है। राष्ट्रपति को इस मामले में कोई विवेकीय शक्ति प्राप्त नही है। संविधान के अनुच्छेद 124 (2) के अनुसार राष्ट्रपति न्यायाधीशों की नियुक्ति उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के ऐसे न्यायाधीशों से परामर्श करने के पश्चात जिसे वह इस प्रयोजन के लिये आवश्यक समझे, ही करेगा। तथा अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति हमेशा मुख्य न्यायाधीशों के परामर्श से ही करेगा।

न्यायाधीशों को नियुक्त करने की राष्ट्रपति की शक्ति एक औपचारिक शक्ति है क्योकि वह उस मामलो में मंत्रीमण्डल की सलाह से कार्य करता है। राष्ट्रपति उच्चतम न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में भारत के मुख्य न्यायाधीश से परामर्श करने के लिये बाध्य है। जहॉ तक मुख्य न्यायमूर्ति की नियुक्ति का प्रश्न है ,अनुच्छेद 124 के अंतर्गत राष्ट्रपति को संविधान द्वारा विहित आर्हता रखने वाले किसी भी व्यक्ति को मुख्य न्यायमूर्ति नियुक्त करने की शक्ति प्राप्त है तथा वह इस मामले में किसी से परामर्श हेतु बाध्य नही है। भारत में न्यायाधीशों की नियुक्ति के उदभव को निम्न चरणो में विभाजित किया जा सकता है :-

प्रथम चरण (1950 से 1981) – इस चरण के अंतर्गत उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठतम सदस्य को मुख्य न्यायमूर्ति तथा अन्य न्यायाधीशों को मुख्य न्यायाधीश के परामर्श पर नियुक्ति की प्रक्रिया अपनाई जाती रही। धीरे – धीरे यह प्रक्रिया एक परम्परा के रूप में परिवर्तित होती गयी। केवल एक न्यायमूर्ति जो मानसिक एवं शारीरिक अस्वस्थता के कारण वरिष्ठ होने के बावजूद मुख्य न्यायमूर्ति नही चुने गये तथा बाद में उन्होने अपने पद से त्याग पत्र दे दिया।

1973 में इस मामले में एक महत्वपूर्ण विवाद खडा हुआ। जब 25 अप्रैल 1973 को केशवानंद भारती के मामले में दिये गये निर्णय के कुछ घंटो के पश्चात ही सरकार ने अप्रत्याशित ढंग से 22 वर्षो की उर्पयुक्त परम्परा को तोड दिया सरकार ने वरिष्ठतम की उपेक्षा करके न्यायमूर्ति श्री अजित रे को भारत का मुख्य न्यायमूर्ति नियुक्त किया। सरकार ने न्यायालय के तीन वरिष्ठतम न्यायाधीशों श्री जे.एम.शेलट, श्री. के.एस. हेंगेडे तथा श्री ए.एन. ग्रोवर की वरिष्ठता की उपेक्षा करके श्री ए.एन.रे को मुख्य न्यायमूर्ति नियुक्त किया। इनके शपथ ग्रहण करने के आधे घण्टे पश्चात इन तीनो न्यायाधीशों ने त्याग पत्र दे दिया। सरकार के इस रवैया की बडी तीव्र आलोचना हुई। उच्चतम न्यायालय के अधिवक्ता संघ ने इस कदम की आलोचना करते हुए कहा कि यह नियुक्ति विशुद्ध राजनैतिक आधार पर की गई थी और इसका योग्यता और वरिष्ठता से कोई संबंध नही था।

सरकार की ओर से इस फेसले की पक्ष में निम्नलिखित तर्क दिये कि अनुच्छेद 124 में राष्ट्रपति को मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति के संबंध में पूर्ण विवेकीय शक्ति प्रदान की गई है। अत: किसी भी न्यायाधीश को जिसे वह उचित समझता हो, मुख्य न्यायाधीश नियुक्त कर सकता है, चाहे व वरिष्ठ हो या कनिष्ठ। यह तर्क बहुत कमजोर था क्योकि 1973 तक सरकार द्वारा वरिष्ठता क्रम के अनुसार ही वरिष्ठतम न्यायाधीश को मुख्य न्यायमूर्ति चयनित किया जाता रहा था। सरकार ने यह तर्क भी दिया कि सरकार ने प्रधान न्यायाधीश की नियुक्ति में विधि आयोग की सिफारिश को लागू किया था। विधि आयोग 1956 में यह सिफारिश की थी कि मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति केवल वरिष्ठतम के आधार पर ही नही की जानी चाहिए बल्कि उसमें गुण, उपयुक्तता एवं प्रशासनिक, सक्षमता की भी समीक्षा की जानी चाहिये। यह तर्क लचर एवं गोलमोल था क्योकि विधि आयोग की रिपोर्ट 1956 में आयी थी तथा सरकार ने 17 वर्षो तक उस रिपोर्ट को लागू नही किया, इस रिपोर्ट को लागू करने के बहाने उर्पयुक्त तीन न्यायाधीशों की उपेक्षा की गयी, क्योकि इन तीन न्यायाधीशो ने सरकार के खिलाफ निर्णय दिया था।

सरकार की ओर से यह तर्क भी दिया गया कि मुख्य न्यायाधीशों के पद पर जिस व्यक्ति की नियुक्ति की जाये उसका कार्यकाल अधिक दिनो तक होना चाहिये। इससे मुख्य न्यायाधीश न्यायालय को एक निश्चित दिशा देने का अवसर प्राप्त होगा, किन्तु यहा भी सरकार असफल रही। लखनपाल बनाम ए.एन.राय (1975) के मामले में मुख्य न्यायमूर्ति ए.एन.रे की नियुक्ति का दिल्ली उच्च न्यायालय में अनुच्छेद 226 के अधीन 'अधिकार पृच्छा की याचिका' द्वारा निम्नलिखित आधारों पर चुनोती दी गई :-

1. कार्यपालिका यह कृत्य दुर्भावना युक्त है।
2. यह नियुक्ति अनुच्छेद 124 (2) में वर्णित वरिष्ठता के नियम विपरीत या विरूद्ध है।
3. इस नियुक्ति में आवश्यक परामर्श प्रक्रिया का पालन नही किया गया।

उच्च न्यायालय ने याचिका को अस्वीकार करते हुए कहा कि नियुक्त करने वाले अधिकारी का आशय अधिकार पृच्छा रिट याचिका के संदर्भ में विसंगत है।

1976 में सरकार ने पुन: न्यायमूर्ति एम.एन.बेग को न्यायमूर्ति एच.आर.खन्ना पर वरियता देते हुये मुख्य न्यायमूर्ति नियुक्ति किया जिसके परिणाम स्वरूप न्यायमूर्ति खन्ना ने त्याग पत्र दे दिया। न्यायमूर्ति खन्ना द्वारा बन्दी प्रत्यक्षीकरण मामले (ए.डी.एम जबलपुर बनाम शिवकांत शुक्ला) में दिये गये विसम्मति निर्णय के कारण हुआ, जिसमें उन्होने आपातकाल के दौरान जीवन के अधिकार का समर्थन किया था जिसे सरकार ने अपने विरूद्ध माना।

भारत संघ बनाम साकल चन्द सेठ (1977 एस.सी) के मामले में उच्चतम न्यायालय के समक्ष 'परामर्श ' शब्द प्रथम बार विचार हेतु आया यह मामला अनुच्छेद 222 (1) में प्रयुक्त 'परामर्श' शब्द के अर्थ एवं विस्तार से संबंधित था। न्यायमूर्ति चन्द्रचूड़ ने निर्णय देते हुए कहा कि 'परामर्श' शब्द से तात्पर्य दो या अधिक व्यक्तियो के ऐसे सम्मिलन से है जो उन्हे किसी एक विषय पर सही एवं सन्तोषजनक हल प्रदान करने के लिये सक्षम बनाता है, इस निर्णय में उन्होने यह निर्धारित किया कि परामर्श का तात्पर्य सहमति नही बल्कि पूर्ण एवं प्रभावी परामर्श है।

पुन: एस.पी. गुप्ता बनाम भारत संघ (1982 एस.सी) के मामले में मार्च 1981 में भारत सरकार के विधि मंत्री द्वारा राज्यो के मुख्यमंत्रियो और उच्चतम न्यायालय को भेजे गये एक परिपत्र की जिसके द्वारा न्यायाधीशों को एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय में स्थानांतरण एवं प्रस्तावित नियुक्ति के संबंध में अपनी सहमति देने को कहा गया था, की वैधता को चूनौती दी गई थी। परिपत्र की विधि मान्यता के अलावा इस मामले में न्यायपालिका की स्वतंत्रता एवं न्यायाधीशों की नियुक्तियो में मुख्य न्यायाधीशो के परामर्श की प्राथमिकता भी प्रश्नगत थी।

इस मामले में साकल चन्द्र सेठ वाले मामले के निर्णय को स्पष्ठ करते हुये कहा कि परामर्श हेतु संबंधित न्यायाधीश के समक्ष संपूर्ण तथ्य रखे जाने चाहिये, जिसके आधार पर किसी व्यक्ति को न्यायाधीश नियुक्त करने के लिये वह राष्ट्रपति को अपनी सिफारिश भेजेंगा।

बहुमत के निर्णय के अनुसार न्यायाधीश की नियुक्ति के मामले में कार्यपालिका को पूर्ण शक्ति प्राप्त है, सरकार द्वारा किया गया कृत्य केवल इस आधार पर प्रश्नगत किया जा सकता है कि वह दुर्भाग्य पूर्ण है, इस मामले में विसम्मत निर्णय के अनुसार प्रधान न्यायाधीश के परामर्श को प्राथमिकता दी जानी चाहिये।

द्वितीय चरण (1982से 1998) – न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रक्रिया के द्वितीय चरण सुभाष शर्मा बनाम भारत संघ 1991 एस.सी के मामले में उच्चतम न्यायालय ने तीन न्यायाधीशों की पीठ में यह मत अभिव्यक्त किया कि संविधान के अनुसार उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में प्रधान न्यायाधीश के पद का अत्याधिक महत्व है। न्यायालय ने नियुक्ति के संबंध में उच्चतर पीठ द्वारा विचार किये जाने का सुझाव दिया।

सुप्रीम कोर्ट अधिवक्ता अभिलेख संघ बनाम भारत संघ (1993) एस.सी के मामले में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश ने एक लोकहित वाद के माध्यम से उच्चतम न्यायालय में रिक्त पदो पर नियुक्ति के संदंर्भ में प्रश्न उठाया था। इसके अलावा यह मामला उच्चतम न्यायालय व उच्च न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में अनेक महत्वपूर्ण प्रश्न उठाता है।

इस याचिका पर 9 न्यायाधीशों की पीठ द्वारा विचार किया गया, तथा बहुमत का निर्णय न्यायमूर्ति जे.एस.वर्मा द्वारा सुनाया गया। इस पीठ में 7:2 के बहुमत से यह अभिनिर्धारित किया कि न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति न्यायाधिपति के मत को सर्वोच्च महत्व देना चाहिये। जो वह अपने सहयोगियो से परामर्श करके व्यक्त करता है, उच्चतम न्यायालय व उच्च न्यायालय के किसी भी न्यायाधीश की नियुक्ति तब तक नही की जा सकती जब तक कि वह उच्चतम न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश के मत के अनुरूप न हो।

न्यायालय ने इस मामले में उच्चतम न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में निम्नलिखित दिशा निर्देश दिये :–

1. उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में प्रस्ताव का प्रारंभ मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा किया जाना चाहिए।
2. राष्ट्रपति किसी भी व्यक्ति की नियुक्ति उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में तब तक नही करेगा जब तक की प्रधान न्यायाधीश उच्चतम न्यायालय के दो वरिष्ठतम न्यायाधीशों से परामर्श करके अपनी सिफारिश राष्ट्रपति को न भेजे।
3. मुख्य न्यायाधीश दो वरिष्ठतम न्यायाधीशों से परामर्श प्रक्रिया लिखित में होनी चाहिये।
4. भारत के मुख्य न्यायाधीश के पद पर नियुक्ति उच्चतम न्यायालय के किसी वरिष्ठ न्यायाधीश की ही होनी चाहिये, जो कि उस पद को ग्रहण करने के लिये उपयुक्त हो।
5. केवल अपवादात्मक परिस्थितियो में ऐसा हो सकता है कि प्रधान न्यायाधीश तथा दो वरिष्ठ न्यायाधीशों द्वारा सिफंारिश किये गये नामो पर विचार ही न किया जाये।

तृतीय चरण (1999 से अब तक) – न्यायाधीशों की नियुक्ति के तृतीय चरण में इन री प्रेसिडेंसियल नं. 1 (1993) के मामले में यह परामर्श दिया गया कि उच्चतम न्यायालय ने न्यायाधीशो की नियुक्ति में मुख्य न्यायाधीश की जो अन्य न्यायाधीशो से परामर्श करने के पश्चात दी जाए, सरकार को भेजी जायेगी। इस निर्णय के पश्चात यह आरोप लगाये जाने लगा कि मुख्य न्यायाधीश अपनी सिफारिशो से मनमाने ढंग से अन्य न्यायाधीशो के परामर्श के बिना भेज रहे है।

यह प्रश्न उस समय और गंभीर रूप से आया जब तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश एम.एम.पूंछी ने परामर्श प्रक्रिया का पालन किये बिना मनमाने ढंग से नियुक्ति की सिफारिश राष्ट्रपति को भेजी थी। अत: राष्ट्रपति महोदय ने परामर्श प्रक्रिया को स्पष्ट करने के लिये अनुच्छेद 143 के अधीन सलाह देने हेतु इस मामले को पुन: उच्चतम न्यायालय को सौप दिया। इस मामले में 9 सदस्यीय संविधान पीठ का निर्णय सुनाते हुए न्यायाधीश श्री एस.पी.भरूचा ने परामर्श प्रक्रिया को निम्नलिखित प्रकार से स्पष्ट किया :–

1. उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति के मामले में मुख्य न्यायाधीश को उच्चतम न्यायालय के चार वरिष्ठतम न्यायमूर्तियो के समूह से परामर्श करके ही राष्ट्रपति को अपनी सिफारिश भेजनी चाहिये। अत: नियुक्ति के लिए सिफारिश हेतु समूह मुख्य न्यायाधीश व उच्चतम न्यायालय के चार वरिष्ठतम न्यायमूर्तियो से मिलकर निर्मित होना चाहिये।
2. न्यायाधीशों के समूह को अपना परामर्श आम राय से देना चाहिये तथा परामर्श प्रक्रिया में सम्मिलित प्रत्येक न्यायाधीश की सिफारिश चाहे वह सम्मत हो या विसम्मत, लिखित रूप में होनी चाहिये।
3. यदि परामर्श प्रक्रिया में सम्मिलित न्यायाधीशों के समूह में बहुमत किसी व्यक्ति के विरूद्ध हो तो उस व्यक्ति की न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति नही की जायेगी।
4. उच्चतम न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति केवल इसी आधार पर प्रश्नगत की जा सकेगी कि 1993 में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय का उचित रूप से अनुपालन नही हुआ है।

तीनो चरणो की समीक्षा – उपर्यक्त तीनो चरणो की समीक्षा से यह बात सामने आती है कि 1982 में प्रथम न्यायाधीश नियुक्ति मामले के समय न्यायाधीशो की नियुक्ति की शक्ति कार्यपालिका में निहित थी, जबकि न्यायाधीशों की नियुक्ति संबंधी दूसरे मामले में नियुक्त करने की शक्ति न्यायपालिका के हाथो में चली गयी। इस संबंध में तीसरे मामले में इसके

क्षेत्र और अधिक विस्तार हुआ तथा नियुक्ति मुख्य न्यायाधीश तथा उच्चतम न्यायालय के चार वरिष्ठतम न्यायाधीशों के समूह की सिफारिश पर की जाने लगी। यह प्रक्रिया कॉलेजियम व्यवस्था कहलायी। इस प्रकार वर्तमान में अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया अधिक लोकतांत्रिक, पारदर्शी और निष्पक्ष होगी तथा इसके दुरूपयोग की जाने की संभावना कम होगी।

राष्ट्रीय न्यायिक समिति की आवश्यकता – उच्चतम न्यायालय के 9 सदस्यीय पीठ के निर्णय के पश्चात उच्च न्यायालय में न्यायाधीशो की नियुक्ति की प्रक्रिया अधिक लोकतांत्रिक, पारदर्शी एवं निष्पक्ष हो गयी। मुख्य न्यायाधीश के पद हेतु वरिष्ठता का नियम तथा अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए प्रधान न्यायाधीश सहित 4 वरिष्ठ न्यायाधीशों के समूह द्वारा परामर्श प्रक्रिया के अनुसरण होने से इस मामले में कार्य पालिका का हस्तक्षेप अब पूर्णतया समाप्त हो गया है। नियुक्ति की वर्तमान प्रक्रिया पूर्ण दबाव से एवं राजनैतिक हस्तक्षेप से मुक्त हो गयी तथा प्रक्रिया पर न्यायपालिका का प्रभावी नियंत्रण है, किन्तु जैसा कि विधिक सुक्ति में कहा गया है कि 'शक्ति से भ्रष्टाचार आता है और परम शक्ति से परम भ्रष्टाचार आता है' अत: न्यायाधीशोंकी नियुक्ति के संबंध में न्यायपालिका पर कुछ नियंत्रण भी अवश्य होना चाहिये। इसी को ध्यान में रखते हुये 1982 में आस्ट्रेलिया की भाति एक न्यायिक समिति की स्थापना का सुझाव दिया गया, तत्पश्चात 1987 में विधि आयोग ने पुन: राष्ट्रीय न्यायिक समिति की आवश्यकता पर बल दिया। इसी दृष्टि से 1990 में नेशनल फ्रन्ट सरकार ने संसद में न्यायिक समिति की स्थापना हेतु एक विधेयक प्रस्तुत किया किंतु लोकसभा भंग होने के कारण यह विधेयक व्यपगत हो गया।

वर्तमान राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकार ने संविधान (99 वॉ संशोधन) अधिनियम, 2014 के द्वारा भारतीय संविधान में अनुच्छेद 124 (2) एवं 127, 128 का संशोधन कर दिया एवं 124क, 124ख तथा 124ग अन्त: स्थापित किये गये है। राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति का आयोग इस अधिनियम में किया गया जिसमें निम्नलिखित प्रावधान किया गया :-

1. राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग नाम से एक आयोग होगा जिसमें निम्नलिखित से मिलकर बनेगा :-

क. भारत का मुख्य न्यायमूर्ति पदेन अध्यक्ष,

ख. भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से ज्येष्ठता से ठीक नीचे के उच्चतम न्यायालय के दो अन्य ज्येष्ठ न्यायाधीश पदेन सदस्य।

ग. विधि और न्याय का प्रभारी संघ का मंत्री पदेन सदस्य।

घ. प्रधानमंत्री, भारत के मुख्य न्यायमूर्ति और लोकसभा में विरोधी दल के नेता या जहा ऐसा कोई विरोधी दल का नेता नही है वहा लोकसभा में एकल सबसे बडे विरोधी दल के नेता से मिलकर बनने वाली समिति द्वारा नाम निर्दिष्ट किया जाने वालो से विख्यात व्यक्ति सदस्य

परनतु कोई विख्यात व्यक्ति अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछडे वर्गो, अल्पसंख्यको के व्यक्तियो या महिलाओ में से नाम निर्दिष्ट किया जायेगा और वह पुन: नाम निर्देशन के पात्र नही होगा।

2. राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग द्वारा किये गये किसी कार्य या कार्यवाही को मात्र इस आधार पर प्रश्नगत या अविधिमान्य नही किया जावेगा कि आयोग में कोई रिक्ति या उसके गठन में कोई कमी थी।

राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग के कार्य :

1. भारत के मुख्य न्यायमूर्ति और उच्चतम न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों, उच्च न्यायालयो की मुख्य न्यायमूर्तियो और उच्च न्यायालयो के अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिये सिफारिश करना।
2. एक उच्च न्यायालय से किसी अन्य उच्च न्यायालय में उच्च न्यायालयो के मुख्य न्यायमूर्तियो तथा अन्य न्यायाधीशो के स्थानांतरण की सिफारिश करना।
3. यह सुनिश्चित करना कि जिसकी सिफारिश की गई है, वह योग्य तथा निष्ठावान व्यक्ति है।

इस प्रकार 1990 में एवं 2014 में राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग की आवश्यकता जो वर्षो से महसूस की जाती रही है, को संसद ने कानून बनाने का प्रयास किया तथा वर्ष 2014 में कानून बनाकर ऐसा प्रावधान किया था जिसमें एक राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग का प्रावधान एवं उससे जुडे हुये अन्य विषयो का प्रावधान किया गया था जिसे उच्चतम न्यायालय अभिलेख अधिवक्ता संघ बनाम भारत संघ (2015) के मामले में उच्चतम न्यायालय ने संविधान के 99 वा संशोधन अधिनियम 2014 को तथा न्यायिक नियुक्ति आयोग अधिनियम 2014 को असंवैधानिक और शून्य घोषित किया। इस कारण से न्यायाधीशों की नियुक्ति और स्थानांतरण में कॉलेजियम पद्धति कार्यप्रणाली पुर्नजीवित हो गयी।

सुझाव एवं निष्कर्ष – न्यायाधीशों की नियुक्ति की वर्तमान प्रक्रिया कोई बेहतर विकल्प नही है, यह केवल मात्र समस्या से भागने की प्रवृत्ति है, वरिष्ठतम न्यायाधीश की नियुक्ति केवल मात्र समस्या हेतु एक प्राथमिक उपचार है, किन्तु पूर्ण उपचार नही है। इस विषय पर कई महत्वपूर्ण सुझाव समय - समय पर दिये गये है।

1956 में तत्कालीन महान्यायवादी एम.सी. शीतलवाड ने ऐसी प्रक्रिया की आलोचना की और यह स्पष्ट किया कि मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति के समय उस व्यक्ति के न्यायाधीश के रूप में अनुभव उसकी प्रशासनिक सक्षमता और गुणो पर भी विचार विमर्श किया जाना चाहिये। केवल वरिष्ठ्ता के आधार पर नियुक्ति करना उचित नही है।

उच्चतम न्यायालय ने न्यायाधीशो के स्थानांतरण के मामले में 1982 में न्यायिक समिति की आवश्यकता का सुझाव दिया था और कहा कि नियुक्ति और स्थानांतरण की शक्ति सरकार के किसी एक अंग में अनन्य रूप से निहित नही होनी चाहिये।

भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा व्यक्त राय जिसे भारत का विधि आयोग रिपोर्ट संख्या 230, 2009 में संदर्भित किया है जो इस प्रकार है 'उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशो की नियुक्ति की प्रक्रिया मूलत: कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच संयुक्त या भागीदार प्रयोग है, जिसमें दोनो की भूमिका रहती है।' व्यापक रूप से दो विभिन्न क्षेत्र है। न्यायपालिका द्वारा उपयुक्तता की परख के लिये उनके विधिक कुशाग्रता का क्षेत्र है और कार्यपालिका न्यायाधीशो के पूर्ववृत जानने में उसकी राय महत्वपूर्ण रहती है। न्यायपालिका और कार्यपालिका दोनो को नियुक्ति के सर्वाधिक उपयुक्त अभ्यर्थियो का पता लगाने के लिये साथ - साथ कार्य करना चाहिये।

उपयुक्त शोध - पत्र से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि न्यायाधीशों के स्थानांतरण और नियुक्ति के संबंध में एक ऐसी पारदर्शी प्रक्रिया की आवश्यकता है जो भेदभाव से दूर हो एवं राजनैतिक दखलअंदाजी से परे हो। कॉलेजियम पद्धति में कुछ सुधार की आवश्यकता है तो उसे सुधारकर दूर किया जाना चाहिये, लोकतंत्र में अनेक चुनोतियॉ विद्यमान होने के कारण संसद की कार्यप्रणाली पर प्रश्न चिन्ह लगाना सही नही है। उच्चतम न्यायालय अभिलेख अधिवक्ता संघ बनाम भारत संघ 2015 के मामले में उच्चतम न्यायालय के चार न्यायाधीशो ने 99 वॉ संविधान संशोधन

को असंवैघनिक घोषित किया जिसमें से न्यायमूर्ति मदन बी. लोकुर ने मत दिया कि राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग अधिनियम संविधि के अधीन विभिन्न प्राधिकारियो पर निरंकुश और अनधिकृत शक्ति प्रदत्त करता है और यह संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है। न्यायमूर्ति कुरियन जोजेफ ने यह मत व्यक्त किया कि यह अधिनियम सरंचनात्मक शक्ति विभाजन की क्षति करता है, इसलिये यह अननुज्ञेय है। विश्वास के आभाव ने कॉलेजियम पद्धति को प्रभावित किया है, वर्तमान कॉलेजियम पद्धति में पारदर्शिता, जवाबदेही और उद्देश्यपरकता का आभाव है। न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल ने मत व्यक्त किया कि इस नयी योजना से न्यायाधीशो की नियुक्ति में न्यायपालिका के पास होने वाली प्राथमिकता के संविधान के आधारित लक्षण को क्षति पहुचाती है। इसलिये यह संशोधन धारित नही किया जा सकता। इस महत्वपूर्ण निर्णय में यह भी व्यक्त किया गया कि यदि कॉलेजियम पद्धति की कार्यप्रणाली में किसी सुधार का आवश्यकता हो तो उसे समुचित उपायो के लाये जाने पर विचार करने के लिये मामले को सूची में लाया जाये। इस निर्णय में पद धारण के लिये उपयुक्तता तथा वरिष्ठता आदि पदो को स्पष्ट किया गया।

वर्तमान में कॉलेजियम पद्धति द्धारा न्यायाधीशो को नियुक्ति और स्थानांतरण किया जाता है, इसमे अनेक दोष है, इन दोषो का दूर किया जाना चाहिये जिससे न्यायाधीश जो कि न्यायमूर्ति है, उनसे न केवल न्याय अपितु संपूर्ण और पारदर्शी न्याय की अपेक्षाये है। न्यायाधीशगण विधि के शासन की नींव है यदि वे अपनी निष्पक्षता, न्याय में पारदर्शिता और कर्तव्य व आचरण में कुछ अलग उदाहरण प्रस्तुत करते है तो निश्चय ही हम भारत के लोग भी उनमे अपनी अटूट निष्ठा, विश्वास एवं समर्थन व्यक्त करेंगे अन्यथा विपरीत धारणा बनाने में कोई संकोच या विलम्ब नही होगा। नियुक्ति एवं स्थानांतरण की प्रक्रिया में योग्य एवं सार्वजनिक जीवन में अच्छे व्यक्ति चुनकर आये तो यह न्यायपालिका के लिये न्यायदान के महत्वपूर्ण कार्य में सफल होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पाण्डेय, जयनारायण भारत का संविधान, पचासवा संस्करण 2017, सेंट्रल ला एजेन्सी इलाहबाद।
2. Dr. Mahesh k.Thakar : Indian Judiciary, In Search of A ``Precise'' Formula to Achieve ``Perfection'' in Selection of Judges. Indian Bar Review Vol. XL III (4) 2016, Bar Council of Indian Trust New Delhi.
3. अग्रवाल बालमुकुंद: हमारी न्यायपालिका (2011) नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
4. विधि आयोग की 230 वी रिपोर्ट, 2009।
5. विधि आयोग की 214 वी रिपोर्ट।
6. परीक्षा मंथन मासिक पत्रिका।
7. पालिटिकिल लॉ टाइम्स में प्रकाशित सम्पादकीय।
8. दैनिक भास्कर, दैनिक जागरण, हिन्दुस्तान टाईम्स में प्रकाशित संपादकीय।
9. Jain m.p. : Indian Constitutional law 7th edition 2014 Lexis Nexis Gurgaon - Haryana.
10. उच्चतम न्यायालय अभिलेख अधिवक्ता संघ बनाम भारत संघ ए.आई.आर 2016 एस.सी 117.
11. इन री प्रेसीडेन्सियल रिफरेन्स ए.आई.आर 1999 एस.सी 1
12. एस.पी गुप्ता बनाम भारत संघ ए.आई.आर 1982 एस.सी 149।
13. उच्चतम न्यायालय अभिलेख अधिवक्ता संघ (1993) 4 एस.सी.सी 44।
14. केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य ए.आई.आर 1973 एस.सी 1461।
15. द्धितीय न्यायाधीश मामले ए.आई.आर 1994, एस.सी 268।

****

गीता का दिव्य ज्ञान

डॉ. सन्ध्या श्रीवास्तव*

प्रस्तावना - जगत् गतिशील है गति ही जीवन का पर्याय है। जीवन का एकमात्र साध्य संतोष, आनन्द या आत्मिक शान्ति ही है। जीवन आध्यात्मिक पूर्णता की प्राप्ति में अनन्त की ओर प्रस्थान करने की दिशा में एक कदम है। ब्रह्म पूर्णता का प्रतीक है।

ओऽम् पूर्णमद: पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।[1]

ब्रह्म वह तत्व है (तत्) जिससे सारा विश्व उत्पन्न होता है (ज-जायते), उसी में अन्त में विलीन होता है (ल-लीयते) और जिसमें वह जीवित रहता है (अन्)। उस परम के साथ एकता प्राप्त करना ही मानव का आदर्श है।[2] अनन्त आनन्दमय है।[3] आत्मा और परमात्मा के मिलन की आनन्दमय अवस्था मोक्ष या आत्म साक्षात्कार की अवस्था है। आत्मा के तीन पक्ष हैं - ज्ञानात्मक, क्रियात्मक और भावात्मक। मनुष्य बुद्धि, क्रिया और भावना तीनों का मिश्रण है इसलिए यथार्थ सत्ताा का साक्षात्कार भी वह इन तीनों के माध्यम से ही कर सकता है। गीता इन तीनों के अनुरूप कर्म, ज्ञान और भक्ति - तीनों विधानों पर प्रकाश डालती है और इनमें समन्वय स्थापित करती है। संन्यास और कर्मयोग दोनों श्रेयस्कर है परन्तु इन दोनों में कर्म संन्यास की अपेक्षा कर्मयोग ही अधिक श्रेष्ठ है।

संन्यास: कर्मयोगश्च नि:श्रेयसकरावुभौ।
तयोस्तु कर्मसंन्यासातु कर्मयोगो विशिष्यते॥

भगवद् गीता 5/2

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दन:
पार्थो वत्स: सुधी मोक्ता दुग्धगीतामृतं महत्॥[4]

अर्थात् जितने उपनिषद् हैं मानो वे गौए हैं, श्रीकृष्ण स्वयं दुग्ध दुहने वाले हैं और अर्जुन बछड़ा है, दूध मधुर गीतामृत है।

गीता महाभारत के भीष्म पर्व का एक अंश है। सात सौ श्लोकों की गीता में सब उपनिषदों का सार है। इसका पूरा नाम श्रीमद्भगवद्गीता उपनिषद है। कहा जाता है केवल गीता का अध्ययन करना ही पर्याप्त है अन्य शास्त्रों के अध्ययन से क्या लाभ? उनके विस्तार से क्या करना?[5] जब कुरुक्षेत्र में दोनों पक्षों की सेनाएँ युद्ध के लिए खड़ी थी। गुरुजनों की, स्वजनों की हत्या के भय से अर्जुन युद्ध से पराङ्मुख हो रहा था। किंकर्त्ताव्यविमूढ़ हो अर्जुन श्रीकृष्ण की शरण में गया। श्रीकृष्ण ने उसे क्षात्रधर्म में प्रवृत्ता करने के लिए गीता का उपदेश देकर उसके चित्ता को शांत और स्थिर कर दिया।[5.1] अर्जुन अपना कर्त्ताव्य समझ कर अपनी इच्छा से युद्ध के लिए तत्पर हो गया। स्वकर्त्ताव्य सम्बन्धी उसका मोह और संदेह नष्ट हो गया। भगवान् ने अर्जुन से पूछा - हे अर्जुन ! तेरा अज्ञान, मोह अभी तक नष्ट हुआ या नही इस पर अर्जुन ने संतोषजनक उत्तर दिया :

नष्टो मोह: स्मृतिर्लब्ध्वा त्वत्प्रसादान्मयाऽच्युत।
स्थितोऽस्मि गतसंदेह: करिष्ये वचनं तव॥[6]

गीता के समय में सदाचार के सम्बन्ध में अनेकमत प्रचलित थे जैसे कर्मकाण्ड से सम्बन्ध रखने वाली वैदिक कल्पना, सत्यांन्वेषण का उपनिषदों का सिद्धान्त, बौद्ध धर्म की विचार अर्थात् समस्त कर्मो का त्याग और ईश्वर पूजा का आस्तिक विचार - गीता सबको एक संगतिपूर्ण एकत्व प्रदान करती है।

गीता धर्म से आरम्भ करके कर्म करने की प्रेरणा देते हुए परम लक्ष्य तक पहुँचा देती है। कुरुक्षेत्र धर्मक्षेत्र है धर्म का कर्म के साथ गहन सम्बन्ध है शरीर ही कुरुक्षेत्र और धर्मक्षेत्र है। 'इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रामित्यभिधीयते कौन्तेय' शरीर भोग के लिए नहीं, योग के लिए है उत्तम कर्म द्वारा परमात्मा तक पहुँचने के लिए है।

विचित्र है - मानव मन। भला जान लेने पर भी सत्कर्म की ओर प्रवृत्त नहीं होता और बुरा जानने पर भी असत्कर्म से निवृत्ति नहीं होती -

'जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्ति: जानामि अधर्मं न च मे निवृत्ति:'[7]

ऐसा कोरा ज्ञान व्यर्थ है। इस ज्ञान की समस्या का हल कर्म का सिद्धान्त और आचरण की समस्या का हल आत्मसंयम है - दोनों विरोधी हैं क्योंकि कर्म करने से सम्पर्क बढ़ता है और आत्म संयम में विषयों से सम्पर्क हटाना पड़ता है। प्रथम प्रवृत्ति मार्ग कर्म मार्ग है भोग मार्ग है तो दूसरा निवृत्ति मार्ग संन्यास मार्ग है, वैराग्यवाद है। प्रवृत्ति और निवृत्ति में संतुलन बनाना ही न्याय है।

प्रकृति से उत्पन्न तीनों गुणों से परवश होकर व्यक्ति कर्म करता ही रहता है। एक क्षण भी कर्म किए बिना नहीं रहा। कर्म सृष्टि का नियम है बिना कर्म किए वह व्यर्थ ही जीता है।[8] बिना कर्म किए स्वातंत्र्य लाभ भी नहीं मिल सकता कर्म संन्यास से संन्यास की सिद्धि भी नहीं मिलती।[9] हर व्यक्ति का मानसिक स्तर अलग है। प्रत्येक व्यक्ति एक ही स्तर के कर्म में प्रवृत्त नहीं हो सकता। गीता व्यक्ति के स्वधर्म की बात कहती है। स्वधर्म वर्णाश्रम धर्म द्वारा नियत वह धर्म है जो व्यक्ति का स्वभाव है। स्वभाव से उत्पन्न कर्म में प्रवृत्त होने की क्षमता स्वधर्म है। गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुण कर्म विभागश: (4/13) चारो वर्ण गुणकर्म विभाग के आधार बाँटे गये हैं। स्वधर्माचरण में मरना भी परम कल्याण कारक है अपनी क्षमता के प्रतिकूल नकल करके कर्म करना ठीक नहीं है। इससे वह भय को प्राप्त होगा।

स्वधर्मे निधनं श्रेय: परधर्मो भयावह:[10]

स्वधर्म पालन से गीता की मूल शिक्षा निष्काम कर्म को बल मिलता है। प्रवृत्ति और निवृत्ति की कठिनाई को भी निष्काम कर्म दूर करता है। आसक्ति

* एसोसिएट प्रोफेसर (दर्शन शास्त्र) आर्य कन्या डिग्री कालेज, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

से रहित होकर कर्म करना चाहिए यह कर्म मोक्ष कारक होता है। जबकि आसक्ति भाव से किया गया कर्म बंधनकारी होता है। कर्मों से संन्यास सम्भव नहीं है फलों से संन्यास लेना चाहिए। मानव का अधिकार कर्म करने में है फल पर उसका अधिकार नहीं है। कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।[11] गीता 2/47। कर्मवाद की फल की इच्छा और अकर्मवाद की अकर्मण्यतादूर करने में निष्काम भाव सहायक है।

कर्म बुरा नहीं होता। जड़ सृष्टि के अचेतन कर्म स्वयं दु:ख के मूल कारण नहीं हैं। उनके प्रति हमारी भावनाएँ बुरी होती हैं मनुष्य फल की आशा लगाए रहता है यही वास्तव में दु:ख का कारण है। (फलाशा आसक्ति आदि को मन के निग्रह द्वारा छोड़ देना चाहिए।[12])

बुद्धि को व्यग्र स्थिर और शांत रख कर, 'आसक्ति को छोड़ दें पर कर्मो को छोड़ने के आग्रह में न पड़' योगस्थ होकर कर्मो का आचरण कर[13] सिद्धि और असिद्धि दोनों में समत्व बुद्धि रखने को योग कहते हैं। फल की आशा से काम करने की अपेक्षा समत्व बुद्धि से योग ही श्रेष्ठ है।[14]

बुद्धि की समता हो जाने पर कर्त्ता को कर्म सम्बन्धी पाप-पुण्य की बाधा नहीं होती (संसार में अनेक कर्म ऐसे हैं जिन्हें दु:ख सहकर भी करना पड़ता है।) गीता में स्थित प्रज्ञ का यह लक्षण बताया गया है कि शुभ या अशुभ, सुख या दु:ख में जो सदा स्थिर बुद्धि रहता है, न सुख में अधिक सुखी न दु:ख में अधिक दु:खी वही स्थितप्रज्ञ है।[15]

महाभारत में भी व्यास जी ने युधिष्ठिर को यही उपदेश दिया है कि

सुखं वा यदि दु:खं प्रियं वा यदि वाऽप्रियम्।
प्राप्तं प्राप्तमुपासीत हृदयेनापराजित: ।।

चाहे सुख हो या दु:ख हो प्रिय हो या अप्रिय हो जिस समय जैसे प्राप्त हों वह उस समय वैसे ही मन को निराश न करते हुए सेवन करो।

मनुष्य निष्काम भाव से कर्म सदा करते रहे यही एक मार्ग मानव के अधिकार में है और यही उत्ताम भी है। प्रकृति तो सदैव कार्य करती ही रहती है परन्तु उसमें कर्तव्य के अभिमान की बुद्धि छोड़ देने से मनुष्य मुक्त ही है।[16] मनुष्य व्यर्थ ही अपने आपको महत्व देकर उसमें आसक्त हो जाता है इसलिए वह सुख दु:ख का भागी बनता है। कर्तव्य भाव से मुक्त होकर कर्म करना ही निष्काम भाव है। कर्म का त्याग करने के बदले अपने को कर्ता समझने की भावना का त्याग कर देना चाहिए।

यदि वह अपने व्यवहार इस भावना से करें कि 'गुणा गुणेषुवर्तन्ते'[17] प्रकृति के गुण धर्मानुसार सब कार्य कर रहे हैं तो असंतोषजनक परिणाम, या दु:ख हो ही नहीं सकता। श्रीकृष्ण इसीलिए अर्जुन को योगी बनने की शिक्षा देते हैं तस्माद्योगी भव अर्जुन: (6:46) योगस्थकुरुकर्माणि। तस्माद्योगाय युज्यत्व योग: कर्मसु कौशलम् (2:50)

कर्मो में कुशलता ही योग है। कुशं लाति इति कुशल: (प्राचीनकाल में ऋषि कुमार यज्ञ के लिए कुश बटोरने जाते थे कुश उखाड़ते समय उनका हाथ कट जाता था इस समम से कुछ कुमार दूसरों से माँगकर काम चला लेते थे लेकिन कुछ कुमार कुश उखाड़ते भी थे और उनका हाथ भी नहीं कटता था अर्थात् संसार के सब काम भी करते हैं और उसकी माया से बद्ध भी नहीं होते। इस भाव को ही योग कहते हैं।) जागरुक होकर, एकाग्र होकर, सब ओर से मन को हटा कर कर्म करो। भीड़ में या शोर में एकाग्रता पाना ही उद्देश्य है। अष्टावक्र गीता में भी कहा गया है – The enlightened one neither avoids the crowd nor seeks the forest under all conditions in any place, he remains perfectly balanced. Ch. 18:100

कर्म योग के समर्थन के लिए श्रीकृष्ण अर्जुन को अंतिम और महत्वपूर्ण उपदेश देते हैं कि 'लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन् कर्तुमर्हसि'[18] लोक संग्रह की दृष्टि से भी तुझे कर्म करना ही उचित है। भगवत्गीता के तीसरे अध्याय में तथा महाभारत के नारायणीयोपाख्यान में जिस यज्ञ चित्र का वर्णन है उसमें भी कहा गया है कि देवलोक और मनुष्यलोक दोनों के ही धारण पोषण के लिए ब्रहमदेव ने यज्ञ उत्पन्न किया।[19] इससे स्पष्ट होता है कि गीता में 'लोकसंग्रह' पद से इतना अर्थ विवक्षित है कि अकेले मनुष्य लोक का ही नहीं, देवलोक आदि सब लोकों का भी उचित धारण पोषण होवे और वे परस्पर एक दूसरे का श्रेय सम्पादन करे।[19(1)]

यह संसार चक्र एक विराट यज्ञ है जिसमें सूर्य, चन्द्र, तारे, अग्नि, वरुण, पृथ्वी, औषधियाँ अपनी-अपनी आहुति दे रहे हैं। मनुष्य का भी कर्तव्य है वह इस विराट यज्ञ में अपनी आहुति दे। परमार्थ भावना ही यज्ञ को संसार का केन्द्र बनाती है। यज्ञार्थ कर्म निष्काम कर्म अनासक्त भाव से किया जाता है। यज्ञ भावना के अतिरिक्त यन्य भाव से किया गया कर्म बंधन कारक होता है।

स्वयं भगवान भी धर्म संस्थापन के लिए साधुओं के संरक्षण और दुष्टों के नाश के लिए समय-समय पर अवतार लेते हैं।[20] (गीता 4-8)

गीता में चातुर्वण्य की व्यवस्था थी और यह लोकसंग्रह करने के लिए बनाई गई थी। राजा जनक ने भी संन्यास न लेकर जीवनपर्यन्त राज्य किया। मनु ने भी पहला राजा बनना स्वीकार किया इसलिए स्वधर्ममणि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि[21] (गीता 2.31) स्वधर्म के अनुसार जो कर्म प्राप्त है उनके लिए रोना उचित नहीं। स्वभाव नियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्विषम्[22] (गीता 18.47) स्वभाव और गुण के अनुरूप निश्चित चातुर्वण्यवस्था के अनुसार नियमित कर्म करने से तुझे पाप नहीं लगेगा। इत्यादि प्रकार से अर्जुन को युद्ध करने का बार-बार उपदेश दिया है।

यहाँ शंका होती है कि बिना प्रेरक के कर्म कैसे होगा ? वस्तुत: निष्काम कर्म का प्रेरक ईश्वरार्पण बुद्धि को कहा गया है। समर्पणभाव से आत्म-लाभ की दृष्टि से किया गया कर्म ही कर्म है। ईश्वरार्पण भाव समग्रता का समष्टि का भाव है। आत्मस्थ होकर, अभेद दृष्टि से यहाँ कर्म करने का विधान है। श्री कृष्ण कहते हैं –

मयि सर्वाणि कर्माणि संयस्य अध्यात्मचेतसा।
विरागी निर्ममोभूत्वा युध्यस्व विगतज्वर: ।।[23]

जिस प्रकार कमल-पत्र पानी में रहकर भी पानी से अलिप्त रहता है उसी तरह ज्ञानी पुरूष को अर्थात् ब्रह्मार्पण करके आसक्ति छोड़ के कर्म करने वाले को कर्म का लेप नहीं होता।[24]

गीता के निष्काम कर्म के सिद्धान्त से मानव के सामने कर्म करने का एक नया संकल्प जागृत हुआ है। यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।[25]

कृष्ण भगवान् का यह कथन कर्म का संदेश देता है कृष्ण स्वयं आप्तकाम होते हुए सदाचार की स्थापना के लिए कर्म करते हैं। गीता का आशावादी कर्मवाद उत्तरदायित्व और श्रेष्ठता के भाव जगाकर हमारे उज्जवल भविष्य के लिए हमें अनैतिक कर्मो के नितांत स्वार्थी कर्मो के गड्ढे में गिरने से बचाकर मानव जीवन के सार्थक बनाता है। लोक कल्याण की भावना से प्रेरित आसक्तिरहित कर्त्तव्य कर्म ही सत्कर्म है, स्वधर्म है, युगधर्म है।

गीता देवी प्रज्ञा में स्थित एक योगमय जीवन जीना, एक मात्र परम में शरण लेना अन्य सब आकर्षणों को छोड़ देना सिखाती है।

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामोकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्व पापेभ्यो मोक्षमिष्यामिमा शुच: ।।[26]

गीता का दिव्य ज्ञान मनन, चिन्तन का विषय है। कहा गया है – इस दिव्य ज्ञान को लोग आश्चर्य की तरह देखते हैं, जो देख पाता है आश्चर्य की तरह देखता ही रह जाता है और जानने वाला आश्चर्य युक्त होकर व्याख्या ही करता रह जाता है सुनने वाला यदि द्वेषभाव से मुक्त न हो तो वह समझ नहीं पाता।

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनमाश्चर्य वद्वदति तथैव चान्य:।
आश्चर्यवच्चैनमन्य:, श्रृणोति श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित्॥

गीता–2/29

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बृहदारण्यक उपनिषद 5:1, 1:1
2. 'तज्जलान', छांदोग्य उपनिषद, 3–14
3. यो वै भूमातद्सुखं नाल्पे सुखमस्ति। भूमैव सुखं भूमात्वेव विजिज्ञासितव्य इति। छांदोग्य उपनिषद 7/13/1।
4. गीताध्यान
5. गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यै शास्त्राविस्तरै:

5[1]. 'तस्माद् युध्यस्व भारत'; इसलिए अर्जुन तू युद्ध कर (गीता 2:18) 'तस्मादुत्तिष्ठं कौन्तेय युद्धाय कृत निश्चय:' इसलिए हे कौन्तेय अर्जुन! तू युद्ध का निश्चय करके उठ (गीता 2:37) 'तस्मादसक्त: सततं कार्यं कर्म समाचर' इसलिए तू मोह छोड़कर अपना कर्तव्य कर्म कर (गीता 3:19) 'कुरुकर्मेव तस्मात् त्वं' इसलिए तू कर्म ही कर (गीता 4:15) 'मामनुस्मर युद्ध च' इसलिए मेरा स्मरण कर और लड़ (गीता 8:7) करने कराने वाला सब कुछ मैं ही हूँ, तू केवल निमित्त है, इसलिए युद्ध करके शत्रुओं को जीत (गीता 11:33)

6. गीता 18:73
7. गीता 3/5–33
8. 3/16
9. 3/4
10. 3/35
11. गीता 2/47
12. गाँधी जी कहते हैं कि फलत्यागी का अर्थ यह नहीं है कि फल त्यागी को फल मिलता नहीं उसे तो हजार गुना फल मिलता है परिणाम का ध्यान करने पर बार–बार मानव कर्तव्य भ्रष्ट हो जाता है, अधीर होकर वह क्रोध के वश में हो सकता है न करने योग्य करने लगता है, इस प्रकार परिणाम की इच्छा लिए वह विषयी की तरह सार–असार का, नीति–अनीति का विवेक छोड़कर हर किसी साधन से काम लेता है और उसे धर्म मानता है। फल तो अवश्य मिलेगा पर प्रेरक फल न होकर कर्तव्य के लिए कर्म का नियम होना चाहिए।
13. गीता 2:48
14. गीता 2:49
15. गीता 2:57
16. गीता 3:27, 13:29, 14:19, 18:16
17. गीता 3:28
18. गीता 3:20
19. गीता 3:10–12

19[1]. तिलक: श्रीमद्भगवतगीता रहस्य अथवा कर्मयोग शास्त्र पृष्ठ 334

20. गीता 4:8
21. गीता 2:31
22. गीता 18:47
23. गीता 3:30
24. छांदोपनिषद 4.1.43 गीता 5:10
25. गीता 4:7
26. गीता 18:66

****

मालती जोशी की कहानियों में नारी संवेदना

अनीता भदौरिया* प्रो. विजयलक्ष्मी राय**

शोध सारांश – युगपुरूष महात्मा गाँधी ने कहा है कि –'स्त्री ही त्याग और प्रेम को जानती है उसी त्याग और प्रेम की प्रतिमूर्ति नारी के ह्दय की पीड़ा, थिरकन, धड़कन और सिहरन ने उसके उल्लास के क्षणों में उसे जीवन विन्यास के विविध पक्षों में गहराई तक उतार दिया है।' शील, लज्जा, करूणा, ममता और सच्चा निर्मल प्रेम की 'सरसता' नारी का श्रृंगार है। गार्गी, इंद्रलेखा, मीराबाई, सहजोबाई, सुभद्रा कुमारी चौहान और महादेवी वर्मा के रूप में नारी की एक विषद् श्रृंखला इतिहास तक मनुष्य के उत्थान या पतन का कारण बन जाती है वह परिवार की ऐसी ईकाई है, जो विविध रूपों में अपनी भूमिका का निर्वाह करते हुए तिल–तिल कर जीवन उत्सर्ग कर देती है। नारी चरित्र अपने जीवन की कठोर अग्निपरीक्षा परिवार की विषमता, ईर्ष्या, द्वेष और प्रतिहिंसा की ज्वाला में ही देती है। मालती जोशी हिन्दी साहित्य की ऐसी महान कहानीकार है जिन्होंने विभिन्न प्रकार के सैकडों परिवारों में जीवन आहत करने वाली नारी पात्र के सुख दुख की व्यथाकथा अपने नारी पात्रों द्वारा अभिव्यक्त की है। नारी पीड़ा, करूणा, संवेदना ओर घुटन को करूण शब्दों में सार्थक स्वरूप किसी ने दिया है तो वह मालती जी ही हैं।

शब्द कुंजी – नारी पीड़ा, करूणा, संवेदना, सार्थक, विषमता, ईर्ष्या, द्वेष और प्रतिहिंसा।

प्रस्तावना – आधुनिक कथा साहित्य में मालती जोशी एक सशक्त हस्ताक्षर है जिनकी कहानियों का दूरदर्शन पर नाट्य रूपान्तरण और कुछ कहानियों पर जया बच्चन के द्वारा तैयार किये गये धारावाहिक नाटक भी प्रदर्शित किये जा चुके हैं, आप पारिवारिक परिस्थितियों की सशक्त चित्रकार रूपी लेखिका है। परिवार इनके लेखन का केन्द्र बिन्दु है आमतौर पर कहानीकार यथार्थ के साथ कल्पना और सामाजिक परिस्थितियों का आंकलन करते हुए कथानक का निर्माण करता है। विगत पचास वर्षो में भारत के समाज में मूल्यगंत संस्कारों राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों का बहुत अधिक प्रभाव भारतीय नारी पर देखने को मिलता है, इन परिवर्तनों के प्रकाश में नारी की गति–प्रगति और उसके उत्थान और पतन की क्रमबद्ध श्रृंखला समय के साथ बढ़ती जाती है, जिसके हर बिन्दु पर हमें मालती जी के एक नारी पात्र का चेहरा दिखने लगता है। उनकी अपनी जो अनुभूतियां समाज की क्रिया प्रक्रिया से निर्मित और हुई उन्हें शब्द देकर मालती जी ने अपनी कहानी का ताना–बाना बुना है। राष्ट्रीय परिवेश में हो रहे परिवर्तन के प्रकाश में पीढ़ीगत मान्यताओं और विचारों का संघर्ष पारिवारिक विघटन व्यक्तिगत ईर्ष्या और द्वेष पति–पत्नी के बीच वैचारिक मतभेद शारीरिक अतृप्ती प्रेम और यौन संबंधों में समरसता के बजाय विरूपता आत्मघुटन अथवा विद्रोह नारी के स्वभाव व जीवन में जो कुछ परिलक्षित होता रहा वह सब इनके कहानी के पात्रों में जीवंत हो उठा है।

मालती जोशी की कहानियों में नारी संवेदना – मालती जी नई कहानियों की स्थापित हस्ताक्षर है उनकी कहानी साठ के दशक के बाद की है यह दौर सामाजिक आर्थिक राजनीतिक परिवर्तन के दौर के रूप में देखा जाता है। सामाजिक आर्थिक परिवर्तन का यह दौर सिर्फ भारत तक ही सीमित नहीं था बल्कि पूरी दुनिया ही परिवर्तन के दौर से गुजर रही थी। पूंजीवाद दम तोड़ता हुआ प्रतीत हो रहा था समाजवाद रूपी नए बीज का प्रस्फुटन होने को तैयार था। उपनिवेशवाद का अंत हो रहा था नए देशों का नवीन नक्शा नित्य नए वर्षो में उभर रहे थे। ऐसे दौर में साहित्य का विकास भी देशकाल के अनुसार ही होना तय था। अत: मालती जी का साहित्य भी इससे अछूता नहीं था।

मालती जी एक भारतीय मध्यम वर्ग की अग्रणी प्रणेता के रूप में जानी जाती हैं। उनकी कहानियों में नारी संवेदना को खोजना अथाह महासागर में डुबकी लगाने जैसा ही है। मालतीजी की अधिकांश कहानी नारी पात्रों के चरित्र चित्रण तथा नारी समस्याओं के मुख्य कथानक के रूप में ही विकसित होती हैं।

उन्होंने अपनी लेखनी का सर्वोत्तम प्रदर्शन नारी संवेदना की अभिव्यक्ति में ही लगाया है। नारी के चरित्र में सर्वाधिक विविधता दिखाई देती है, कहीं मां के रूप अपने अलावा दूसरे के बच्चे पर भी ममता लुटाती नजर आती है तो कहीं बड़ी बहन की भूमिका अदा करते हुए छोटे भाई बहनों के लिए अपनी खुशियों का बलिदान देती हुई दिखाई देती है, कहीं अच्छी पड़ोसन की भूमिका में पड़ोसी के दुख दर्द में साथ खड़ी दिखाई देती है, कहीं अच्छी प्रेमिका के रूप में अपना सर्वस्व न्यौछावर करती है, तो कहीं बेटी बनकर अपनी मां की पीड़ा को हरने का काम करती है। नारी का वह रूप जहां नारी ममता, त्याग, प्रेम की मूर्ति के रूप में दिखाई देती है, तो दूसरी तरफ उस नारी की भावना या संवेदना भी मालती जी से नहीं छुपी जो अपने जीवन की गाड़ी अकेले खींचते हुए भी खुशी का आवरण ओढ़े रहती है। कहानी आनंदी की पात्र आनंदी तथा दुसरी और वह नारी भी है जो सब कुछ होते हुए भी अनजाने दुख से दुखी रहती है।

मालती जी की लेखनी नारी के किसी भी भाव से अछूती नहीं है। अगर मैं यह कहूं कि मालतीजी ने नारी मन के सभी भावों की परतो को अलग–अलग करके शिष्टगत कर लिया है तो बिल्कुल भी अतिश्योक्ति नहीं होगी मेरे द्वारा शोध यात्रा में उनके 100 से ज्यादा कहानी तथा अन्य विधाओं का अध्ययन किया गया जिसमें मुझे नारी संवेदना की परत दर परत अलग–

* शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** प्रोफेसर एवं कन्ट्रोलर ऑटोनोमस, शा.म.ल.ब.क़न्या स्वशासी महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

अलग दिखाई देती हुई प्रतीत हुई। ऐसा नहीं है कि उन्होंने नारी के सिर्फ सकारात्मक भूमिका को ही लेखनी का हिस्सा बनाया है नारी का हर रूप उनकी लेखनी से छुपा नहीं है। कहानी सूत भर का अंतर मे दीपक की भाभी की नकारात्मक भूमिका तथा वही मकान मालकिन चाची सकारात्मक भूमिका में दिखाई देती है।

समाज में नारी की स्थिति पर गहरा मंथन भी मालती जी ने किया है। शादी के लिए लड़की के रूप रंग गुण ज्यादा पिता की औकात मायने रखती है।नारी आधे विश्व का निर्माण करती है। सृष्टि के बनने और उसके संचालन में नारी की भूमिका और योगदान को किसी भी स्तर पर पुरुष से कमतर करके नहीं आंका जा सकता। अनादिकाल से नारी पुरुष के साथ विश्व की लगभगसारी आवश्यक गतिविधियों में न केवल हाथ बंटाती आई है, वरन वह पुरुष के लिए प्रेरणा स्रोत भी बनी है। भारत और इस उपमहाद्वीप की संस्ंति ने नारी के महत्व और उसकी भूमिका को काफी पहले से पहचान लिया था। ऐसे वक्त में जब शेष विश्व में मानवीय सभ्यता के प्रारम्भिक चिन्ह तक दिखलाई नहीं पड़े थे, भारतीय संस्कृति में महिलाओं की भरी–पूरी हिस्सेदारी थी और समाज में उसके लिए बराबरी का स्थान मौजूद था। हमारी सभ्यता ने पिछली कुछ सदियों में जो ऐतिहासिक करवटें लीं, उसके फलस्वरूप आज चाहे नारियां अनेक तरह की सामाजिक और आर्थिक असुरक्षा के घेरों में जकड़ी जा चुकी हैं, लेकिन इस बात के अनेक प्रमाण हैं कि हमारे यहां शारीरिक गतिविधियों के अलावा धार्मिक अनुष्ठानों में तक उनकी भागीदारी बनी हुई थी। कुछ क्षेत्रों को छोड़ दें, तो हमारे समाज में आज महिलाएं भीतरी–बाहरी चुनौतियों से जुझती हुई अपना स्थान बनाने में प्रयासरत हैं।

निष्कर्ष – मालतीजी ने कम शब्दों में सब कुछ बयां कर दिया पुरुष प्रधान संस्कृति में पात्रों के उच्चता बोध से उत्पन्न पत्नी की दयनीय अवस्था का चित्रण के अलावा सुशिक्षित और हर प्रकार से आत्मनिर्भर नारी आज भी पूर्णतया स्वतंत्र नहीं है। उसकी मानसिकता को मालती ने बड़ी बारीकी से अपनी कहानियों में महत्वपूर्ण ढंग से चित्रित किया है वर्तमान पीढ़ी में रिश्तो की मूल्यहीनता, वैचारिक भिन्नता ,नैतिक मूल्यों का पतन आदि को भी चित्रित किया है। हम कह सकते हैं कि मालती जी ने अपनी कहानियों के माध्यम से नारी संवेदना के समस्त पहलू के अलावा पारंपरिक रूढ़ियां, संस्कृति, नैतिक मूल्य ,अनैतिकता, महानगर की विभिन्न समस्याए, शिक्षित तथा आत्मनिर्भर नारी की मानसिकता आदि को भी चित्रित किया है उन्होंने अपने मनोभावों को शिल्प के माध्यम से कलात्मक रूप प्रदान किया है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि मालतीजी ने नारी संवेदना के सभी पहलू को अपनी लेखनी में स्थान दिया हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. चितले रंजना साक्षात्कार मार्च 2005 पृष्ठ 5
2. जोशी मालती – मन न भये दस बीस 1981 साक्षी प्रकाशन।
3. जोशी मालती – बोल री कठपुतली 1985 किताब घर प्रकाशन।
4. जोशी मालती – बाबुल का घर 1992 साक्षी प्रकाशन।
5. जोशी मालती – मोरी रंग दी चुनरिया 1992 साक्षी प्रकाशन।
६. जोशी मालती – रहिमन धागा प्रेम का2002 परमेश्वरी प्रकाशन।
7. www.hindisamy.com
8. www.prabhatbooks.com
9. gadyakosh.org

****

संगीत और नाद

डॉ. इभा सिरोठिया *

प्रस्तावना – संगीत का आधार नाद है। सम्पूर्ण विश्व को नादात्मक कहा गया है – 'तस्मात् नादात्मकं जगत्।' नाद संस्कृत – व्याकरण के 'नद' धातु से निष्पन्न हुआ है, जिसका मूल रूप से अर्थ है 'अव्यक्त शब्द।' ध्वनि के मूल रूप से तीन प्रकार हैं व्यक्त, अव्यक्त तथा व्यक्तात्यक। व्यक्त ध्वनि, कष्ठ नि:सृत 'अव्यक्त' ध्वनि, वाद्य ध्वनि या अवर्ण परिग्रह तथा 'व्यक्ताव्यक्त' उभय के योग से मिश्रित ध्वनि को माना जा सकता है।[1]

जैन साहित्य के अनतर्गग्त नाद (ध्वनि) पर विशद् चर्चा की गयी है, जिसमें नाद कला को अर्धचन्द्र जैसा माना गया है, नाद सफेद रंग की ओर बिन्दु काले रंग का है। ओंकार को नाद बहम स्वीकार किया गया है। जो परमात्मा वाचक है। 'तस्य वाचक: प्रणव: ओमत्येकाक्षरं ब्रह्म।' अत: ओम् शब्द परमात्मा का द्योतक है जो हमारा रक्षा करता है। नाद स्फोट जन्मा है। स्फोट नादोत्पत्ति का आधार है। समस्त संसार में नाद व्याप्त है, व्याप्त येन चराचरम्। व्यष्टि नाद से ऊपर उठकर समष्टि नाद को सुनने का यत्न करते हैं, उन्हें विराट आत्मसत्ता में गुंजित अपार्थिव अनाहद नाद सुनने का सौभाग्य प्राप्त होता है। कबीर ने संसार में नाद व बिन्दु को 'नाव' कहा है। राम नाम है इस नौका का खेवनहार है।

जो नाद स्वयं रंजक हो, वह स्वर है। पद स्वर का अधिकरण है और अर्थ का प्रतिपादक है।

स्वयं यो राजते नाद: स्वर स परिकीर्तित:।
पदं स्वरादिक रणमर्थस्य प्रतिपादकम्।।[2]

नाद परम दायक है, विशुद्ध नाद शुद्धसत्व सज्जनों के पवित्र शरीर से उत्पन्न होता है। जैनाचाय्र पार्श्व देव को संगीत शास्त्र के गूढ़ एवं सूक्ष्म सिद्धान्तों के साथ-साथ उनके प्रयोग का भी गहन ज्ञान था। ठाणांगसुत्त, राथापसेणीय सुत्त, अनुयोगद्धार सुत्त, संगीत समया सार आदि ग्रन्थों में संगीत सम्बन्धी अनेका नेक सामग्री मिलती है। 20वीं शताब्दी मतें ध्वनि की प्रबल शक्ति को वैज्ञानिकों ने भी स्वीकार किया है। सभी गीत नादात्मक अर्थात् नाद पर आधारित है। वाद्य नाद उत्पन्नकर्ता होने से प्रशस्त है। नृत्य गीत तथा वाद्य के आधार पर सम्पादित होता है अत: यह तीनों कलाएँ नादाधीन मानी गयी हैं :-

गीतं नादात्मकं वाद्यं नाद व्यक्ता प्रशस्यते
तद्ध्यानुगतं नृत्तां नादाधीनम तस्त्रयम्।[3]

भारतीय चिन्तन के अनुशर 'शब्द' की महत्ता सदा से ही स्वीकृत है शब्द सदा ही आकाश में विद्यमानरहते हैं, वैज्ञानिकों का यह मानना है कि द्रव्य (मैटर) तथा शक्ति (एनर्जी) दोनों एक ही वस्तु है और द्रव्य को शक्ति में परिवर्तित किया जा सकता है, अर्थात् परम तत्व एक ही है। इस प्रयोग के आधार पर वे किसी वैज्ञानिक उपकरण (Apperatus) की सहायता से वे प्राचीन सांगीतिक ध्वनि को पुन: प्राप्त करने में सफल हो जायेगें ऐसा उनका अनुमान है। अनुसंधान का यह चरण अभी प्राथमिक अवस्था में है।

वस्तुत: संगीत एक ऐसी स्फूर्त कला है जो स्वर के माध्यम से किसी न किसी रूप में हमारे सामने आता है। योगियों-मुनियों ने सम्पूर्ण जगत को नाद (सांगीतिक ध्वनि) के अधीन स्वीकार किया 'तस्मात् नादाधीनं जगत।'

नाट्यशास्त्र के अनुसार नाभि के ऊपर हृदय स्थानप से ब्रह्मरन्ध स्थित प्राणवायु में एक शब्द रहता है उसी को नाद कहते हैं :-

नामरुर्ध्वहृदि स्थानान्मारुत: प्राण संज्ञक:।
नदति ब्रह्मरंरुध्रान्ते तेन नाद: प्रकीर्तित।

तो वही संगीत को चतुर्वर्ग अर्थात् धर्म-अर्थ काम मोख की प्राप्ति का साधन माना गया जो नाद् संगीत की सार्वभौमिकता का प्रिय उदाहरण है।

जीवन एक हर पथ पर संगीत ने अपना प्रभाव छोड़ा है । नादमयी संगीत के रूप में, भारतीय ऋषियों, सन्तों, संगीतज्ञो ने परखा और स्वीकार किया। संगीत के दीवाने बनकर कितनों ने तो समाज का त्याग किया नारायण के श्री मुख से संगीत का एक आध्यात्मिक भावना से परिपूर्ण एक श्लोक प्रस्तुत है।

नाहं बसामि बैकुंठे योगिनां हृदये न च ।
मदभक्ता: यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद: ।।

अर्थात मैं बैकुंठ में निवास नहीं करता, योगियों के हृदय में भी नहीं, हे नारद, जहाँ मेरे भक्त गाते हैं मैं वहीं स्थित हूँ।

नाद ध्वनि करतल से ये जग, गुजिंत है नित् सप्त स्वर से
वास है जिसमें उस ईश्वर का, रहता भक्त-मन-घर में।

संगीत को विश्व की भाषा Universal Language कहा गया है। नाद के अनेक पर्यावाची है - शुद्ध, स्वर, ध्वनि, आवाज प्राण आदि। नाद का न ही तो आदि है और न ही अन्त।

'शब्दस्य परिणामो यमित्यानस्यविदो विदू:'

अर्थात् वेद के ज्ञाता जानते हैं कि यह जगत शुद्ध या नाद का ही परिणाम है। नाद शब्द की उत्पत्ति 'नद' धातु से हुई है जिसका अर्थ है अव्यक्त ध्वनि। अव्यक्त नाद हमारे अन्तर में ध्वनित होता रहता है जिसे हम अपने कानों से नहीं सुन पाते।

नाद के दो भेद हैं –

1. आहत
2. अनाहत

आहताऽनाहत रचैति द्विध नादोभिगचते
तथा नादस्तु सद्विध: प्रोक्त: पूर्वनास्त्वनाहत:।
आहतस्तु द्वितीयोऽसौ वायेष्वाद्यातकर्म्मण:।[6]

* एसोसिएट प्रोफेसर (गायन) आर्य कन्या डिग्री कॉलेज, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

अनाहत नाद – प्राचीन आचार्यो के अनुसार मुनिजन अनाहत नाद की उपासना करते हैं। यह नाद रंजक नहीं –

तत्राऽनाहतनादं तु नुनयः समुपासते।
गुरुपदिष्टमार्गेण मुक्तिदं न तु रंजकम्।।[7]

आहत नाद – आघात, स्पर्श, संघर्ष अथवा दो वस्तुओं की रगड़ एवं टकराने से जो शब्द निर्गत होता है उसे आहत नाद कहते हैं :–

आहस्तु द्वितीयोऽसो वाद्यं एवाद्यकर्म्मणा
तेन गीत स्वरोत्पत्तिः स नादौ जयते मुनि।[8]

हम आँख खुलने के साथ जिन ध्वनियों को सुनते रहते हैं वही ध्वनि हमारे लिए वास्तविक सत्य बन जाती है, क्योंकि उन्हीं से हमारे सांसारिक कार्यो की प्रतिपूर्ति होती है फलतः हम अव्यक्त अर्थात अनाहद नाद से दूर हटते जाते हैं जो हमारे अन्दर की विद्यमान होता है। अनहद नाद हमारे कानों से सुनाई नहीं देता किन्तु हमारे अन्दर चिरत्तय ज्योर्तिमय बना रहता है। आध्यात्मिक जगत में आहत और अनाहत नाद दोनों का महत्व रहा है। आहत नाद के अन्तर्गत भक्ति, मुक्ति समर्पण आदि है जब इन भावों को परिपूर्ण शब्दों में पिरोकर लययुक्त वाणी प्रस्तुत किया जाता है तो भक्ति संगीत के रूप में ये हमारे मन को शान्त करता है। मन से एकाग्रचित मनुष्य आहत से अनहद नाद की ओर ले जाती है जहाँ सांसारिक गति के विपरीत आन्तरिक नाद अर्थात अनहर नाद की परिधि में प्रवेश कर जाता है। मन जैसे जैसे भीतर की ओर जाने लगता है तो आहत नाद सूक्ष्म और अनाहद नाद हमारे अन्तः हृदय में गुंजित होने लगता है। यह अनहद नाद ही मनुष्य को अध्यात्मिकता से जोड़ भक्ति भाव से पोषित कर प्रभु प्राप्ति का मार्ग सुलभ बनाती है जिस पर चलकर जाने कितने भक्त, सन्त, साधु भगवत् प्राप्ति के मार्ग पर चलकर उस असीम परम तत्व की प्राप्ति कर सके।

अतः नाद और उसका प्रभाव हम बाहर से अन्दर की ओर ले जाकर, हृदय को प्रकाशित करना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. तन तंत्री मन किन्नरी: इन्द्राणी चक्रवर्ती पृ0सं0 3, 4
2. संगीत समय सार – 5/16/17
3. नाट्य शास्त्र – 4 – 262 – 269
4. नाट्यशास्त्र – 1/17
5. संगीत दर्पण – 170–71
6. भारतीय संगीत वाद्य – पृ0सं0 5
7. संगीत रत्नाकर – पृ0सं0 7 श्लोक 29
8. संगीत दर्पण – प्रथम अध्याय – श्लोक सं0 16 पृ0 सं0 9

****

क्रांतिज्योती सावित्रीबाई फुले यांचे शैक्षणिक - स्त्री शिक्षण विषयक विचार व कार्य

डॉ. रविंद्रनाथ महादेवराव केवट*

प्रस्तावना - महाराष्ट्रातील श्रेष्ठ समाजसुधारक आणि दलित - श्रमिक वर्गाच्या दास्याची परखड मीमांसा करणारे थोर क्रांतिकारक म्हणून महात्मा जोतीराव फुले आणि त्यांच्या पत्नी सावित्रीबाई यांचा उल्लेख गौरवाने केला जातो.

'विद्येविना मती गेली............
इतके अनर्थ एका अविद्येने केले!'

महात्मा ज्योतिबा फुल्यांनी शिक्षणाचे महत्तव जाणले. अविद्येमुळे आपले कसे खच्चीकरण होत आहे. तेव्हा इथल्या दलित-अस्पृश्य किंवा शोषितांच्या जगण्याचा नेमकेपणाने वेध घेऊन वेळप्रसंगी इथल्या समाजव्यवस्थेवर अत्यंत कठोर प्रहार करून, इथल्या शूद्रातिशूद्रांना हजारो वर्षे बंद असलेली शिक्षणाची कवाडे म. फुले आणि सावित्रीबाईनी उघडली.

महात्मा जोतीबांसोबत सावित्रीबाईनी केलेले कार्य एखाद्या पर्वतासारखे आहे. जोतीबांना सावित्रीबाईनी समाजकार्यात दिलेली साथ म्हणजे स्त्री मुक्तीच्या संघर्षमय जीवनाचा उदय होतात. सावित्रीबाईंनी समाज जवळून अभ्यास केला. समाजातील समस्यांचा अभ्यास केला, आणि या पाशवीपणातून आपण कसे मुक्त होऊ? या विचारांनी प्रेरित होवून सावित्रीबाईंनी सामाजिक लढ्यात क्रांतिकारी उडी घेवून सामाजिक उत्थानाची पायाभरणी केली. स्वत: शिक्षक बनून तमाम अस्पृशांसाठी त्यांनी शिक्षणाची दारे उघडी करून दिली. स्त्रियांनी सुद्धा शिक्षण घेवून शिक्षित व्हावे या जाणिवेतून सावित्रीबाईनी मुलींसाठी शाळा उघडून अध्यापनाचे कार्य केले.

संशोधन :

संशोधन म्हणजे नवीन ज्ञान प्राप्त करून घेण्यासाठी पद्धतशीर केलेले प्रयत्न होय. ; रेडमन आणि मेरी

क्रांतिज्योती सावित्रीबाई फुले यांच्या शिक्षणविषयक उदात्ता दृष्टिकोन समाजासमोर यावा यासाठी विविध स्तरावर सावित्रीबाईच्या शैक्षणिक व स्त्री शिक्षण विषयक कार्याचे संशोधन सुरू आहे. या शोधनिबंधाच्या माध्यमातून सावित्रीबाईचे व स्त्रीशिक्षण विषयक विचार समाजासमोर यावा यासाठीचा हा शोधक अल्पसा प्रयत्न.

सावित्रीबाईंचे व्यक्तिमत्तव :

सावित्रीबाईचे जन्म 1831 साली 3 जानेवारीला झाला. त्याचे आई-वडिल शेतकरी होते. सावित्रीबाई सुद्धा आई-वडीलासाबेत शेतात काम करायच्या, सावित्रीबाईची बुद्धी तिक्ष्ण होती. सावित्रीबाई 9 वर्षाच्या असतांना महात्मा जोतीबा फुल्यांसोबत त्यांचा विवाह झाला.

सावित्रीबाईंना महात्मा फुल्यांनी घरी शिकविले. बहुजनांविषयी महात्मा फुल्यांच्या मनामध्ये कळवळा होता. त्यांना शिकावं आणि आपण माणूस म्हणून स्वाभिमानानं जगावं ही जोतीरावांची आंतरीक इच्छा होती. तळागाळातील स्त्रिया शिकल्या पाहिजे असे सावित्रीबाईना वाटत होते. या जाणिवेतूनच महात्मा फुल्यांनी 1जानेवारी 1848 मध्ये पुण्यात मुलींची पहिली शाळा सुरू केली. जगाच्या इतिहासात ही फार मोठी शैक्षणिक क्रांती आहे. सावित्रीबाईनी सुद्धा जोतीरावांच्या कार्याचा वसा घेऊन स्त्रियांना शिकविण्यासाठी त्यांनी आपलं संपूर्ण आयुष्य व्यतित केलं. जोतीबांनी सुरू केलेल्या शाळेत सावित्रीबाई शिक्षिका होत्या, सावित्रीबाई पहिली भारतीय शिक्षिका आणि मुख्याध्यापिका बनली.

ज्या काळात सावित्रीबाईनी अध्यापनाचे कार्य सुरू केले होते. त्या वेळच्या सामाजिक व्यवस्थेने, समाजकंटकानी सावित्रीबाईंचा अतिशय छळ केला. अशा स्थितीतहीसावित्रीबाई आपल्या कर्तव्यापासून हटली नाही. ती खंबीर होती. म्हणूनच सावित्रीबाई संपूर्ण देशाची क्रांतीज्योत होऊ शकली. या क्रांतीज्योतीच्या उजेडात आजची स्त्री आपलं शिक्षित स्वाभिमानी जीवन जगत आहे. हाच खरा सावित्रीबाईच्या व्यक्तिमत्तवाचा आणि कार्याचा गौरव आहे.

सावित्रीबाईनी 1849 मध्ये पुण्यातील उस्मानशेख यांच्या वाडयात प्रौढांसाठी शाळा उघडली. 1855 मध्ये शेतकरी व मजूर स्त्री-पुरूषांसाठी रात्रीची शाळा काढली. सावित्रीबाई अन् महात्मा जोतीबा यांच्या शैक्षणिक कार्याचा मेजर कॅंडी यांनी गौरव केला, आदर्श शिक्षिका म्हणून सावित्रीबाईच नांव इतिहासानं आपल्या हृदयावर कोरलं आहे.

सावित्रीबाईंच केवळ शैक्षणिक कार्य केले नाही. तर समाजातल्या प्रत्येक स्तराची सावित्रीबाईना जाणीव होती. त्यानी अनाथ बालकाश्रम उघडला. काशीबाई या ब्राम्हण बालविधवेच्या मुलास दत्ताक घेतले त्याला डॉक्टर बनविले. घरचा हौद अस्पृश्यांसाठी खुला केला. पुणे क्षेत्रात 52 अन्नछत्रे उघडली. व दुष्काळ निवारण कार्याचे नेतृत्व केले. सावित्रीबाईंनी साहित्यलेखन सद्धा केले. महात्मा जोतीबांच्या मृत्यूनंतर सावित्री खचली नाही. तर अधिक खंबीर बनून महात्मा जोतीबांचे कार्य पूर्ण करण्यास ती सतत झटत राहिली.

1897 मध्ये पुण्यात प्लेगची साथ आली. या साथीत प्लेग्रस्तांची ती सेवा करीत होती आपला मुलगा डॉ यशवंत यांच्याकडून ती रूग्णांवर उपचार करवून घेत होती. यातच सावित्रीबाईंना प्लेगची लागण झाली. अन 10 मार्च 1897 रोजी क्रांतीची ज्योत चिरकाल शांत झाली.

सावित्रीबाईच्या शिक्षणाचा आरंभ :

महात्मा जोतीबा फुल्यांसोबत सावित्रीबाईचा विवाह झाला. सावित्री आणि

* महिला महाविद्यालय, बल्लारपूर, जि. चंद्रपूर (महा.) भारत

जोतीबा काळ्या मातीत घाम गाळून अमाप धान्यरूपी सोने पिकवत होते. दुपारच्यावेळी जेवणासाठी सुट्टी करत. आंब्याच्या सावलीत बसून जेवणे झाले की, विश्रांतीच्या वेळी हिरव्यागार आंब्याच्या थंडगार सावलीत काळया आईची पार्टी करून, आंब्याच्या वाळक्या काडीची पेन्सील करून जोतीराव सावित्रीबाईना शिक्षणाचे धडे देत होते.

तळागाळातील माणसाच्या उत्थानासाठी शिक्षण आवश्यक आहे. हया जाणिवेतून सावित्रीबाईंना शिकवून महात्मा जोतीबांनी सावित्रीबाईंना शिक्षित करून शिक्षिका केले.

शिक्षणाचे महत्तव :

विद्येविना मती गेली असे सांगणाऱ्या महात्मा जोतीबा फुलेनी शिक्षणाचे महत्तव जाणले. शिक्षणामुळेच माणसाला माणूस पण प्राप्त होऊ शकते हे फुल्यांनी आपल्या सम्यक दृष्टितून न्याहाळलं अविद्येमुळे शूद्रातीशूद्रांची होणारी पिळवणूक होत असलेले खच्चीकरण हे महात्मा जोतीबांना विचार करायला लावणारे फार मोठ दु:ख होतं.

सावित्रीईनी महात्मा फुल्यांकडून समाजसुधारणेचा घेतलेला वसा त्यांनी अतिशय खंबीरपणे पुर्णत्वास नेला. सावित्रीबाईनी शिक्षणाचे महत्तव जाणले आणि त्यातूनच त्यांनी शैक्षणिक कार्याची पायाभरणी केली, स्त्री शिक्षणात क्रांती केली.

शिक्षणातून निर्माण झालेली सामाजिक शैक्षणिक जाणीव :

सावित्रीबाईंच जीवन सामान्य स्त्रियासारखं निश्चितच ' रात्रदिवस आम्हा युद्धाचा प्रसंग अशा प्रकारच जगणंसावित्रीबाईच्या वाटयाला आलेलं होत, लग्न करून चारचौधीसारखा प्रपंच करावा. एक कुटुंबवत्सल स्त्री म्हणून जगांव असे सावित्रीबाईना कधी वाटलंच नाही. समाजच माझा प्रपंच आहे असे त्यांनी मानले आणि समाज सेवेसाठी आपलं संपूर्ण जीवन अर्पित केलं. अनेक अनाथ आणि अनौरस अर्भकांच मातृत्व स्वीकारलं स्वत: दु:ख, कष्ट, मानहानी सोसून इतरांना सुखी केलं, त्यांना सन्मान आणि मानवी प्रतिष्ठा मिळवून दिली. समाजातील हीन-दीन, गोर-गरीब, अडले-नडले आणि जे उपेक्षित स्त्री-पुरूष आहेत, त्यांचा विकास झाला पाहिजे. या सामाजिक जाणीवेतून सावित्रीबाईनी आपले कार्य केले आहे.

तळहाताने सूर्य कधी झाकता येत नसतो. कोसळणाऱ्या पावसाला थांबविता येत नाही. त्याचप्रमाणे सावित्रीबाईचा आणि जोतीरावांच्या कार्याला झाकता येत नाही. सावित्रीबाई कोकलणाऱ्या कोल्हेकुईला कधीच जुमानल्या नाहीत. धैर्याने तथा अविरतपणे आपले कार्य करीत होत्या. शिक्षणातूनच सावित्रीबाईना सामाजिक उत्कर्षाची जाणीव झालीहोती.

मुलीच्या पहिल्या शाळेची स्थापना :

स्त्रियांचा आणि शूद्राचा विकास करावयाचा असेल तर त्यांना शिक्षण देणे आवश्यक आहे. शिक्षणाशिवाय कोणाचीही प्रगती अशक्य आहे. म्हणून त्यांना शिक्षण दिले पाहिजे. शिक्षण घ्यायचे तर शाळा पाहिजेत. म्हणून जोतीराव फुले यांनी 1 जानेवारी 1848 रोजी पुण्यात बुधवार पेठेतील भिडे वाडयात मुलींची पहिली शाळा काढून स्त्री शिक्षणाची मुहुर्तमेढ रोवली. हा नवा संकल्प तात्या भिडे यांना फारचआवडला. त्यांनी जागा भाडे न घेता शाळेकरीता जागा दिली. शिवाय दरमहा 5 रूपये देण्याची इच्छा प्रकट केली. आणि 501 रूपये देणगी म्हणून सुरूवातीला दिले. सावित्रीबाई समाजाचा विरोध न जुमानता स्त्री उध्दारास सज्ज झाल्या.

सावित्रीबाईच्या शाळेतील पहिल्या विद्यार्थिनी (1) अन्नपूर्णा जोशी (2) सुमती मोकाशी (3) दुर्गा देशमुख (4) माधवी थत्तो (5) सोनू पवार (6) जानी करडिले यामध्ये चार ब्राम्हण एक धनगर आणि एक मराठा अशा एकूण सहा विद्यार्थिनी होत्या.

देशातील पहिली शिक्षिका व हेडमिस्ट्रेस :

महात्मा फुल्यांनी स्थापन केलेल्या मुलीच्या पहिल्या शाळेत स्त्री शिक्षिका हवी होती. त्यासाठी महात्मा फुल्यांनी सावित्रीबाईना शिकविले. सावित्रीबाईंनी पुण्यात मिचेलबाईच्या नार्मल स्कूलमध्ये अध्यापनाचे प्रशिक्षणही घेतले होते. सावित्रीबाई शिकल्या महात्मा फुल्यांनी सावित्रबाईनी होते. त्यांनी या कार्याची इत्यंभूत माहिती मिळवून तत्सबंधी हेडमिस्ट्रेस म्हणून नेमणूक केली. जगाच्या इतिहासातील ही फार मोठी क्रांती होय.

सदर शाळा स्थापन करतांना संस्थापकांना जितके कष्ट पडले त्यापेक्षा अधिक त्रास शाळा चालवितांना सावित्रीबाईना झाला. शाळा चालविण्यासाठी प्रतिकूल परिस्थिती होती. लोकं सावित्रीबाईची टिंगल करीत होते. वर्तमानपत्रातून प्रसिद्ध झालेली आहे. शाळा खात्याच्या प्रसंगी शेण, दगड गोटे, यांचा मारही त्यांना सहन करावा लागला. परंतु सावित्रीबाईंनी त्याकडे यत्किंचितही लक्ष न देता आपले शिक्षणाचे कार्य शांतपणे अविरत सुरूच ठेवले. देशातील आद्य शिक्षिका आणि हेडमिस्ट्रेस हा सन्मान सावित्रीबाईना मिळाला.

आदर्श शिक्षिका म्हणून सन्मान :

सावित्रीबाई सलग 50 वर्षे लोकांसाठी राबल्या होत्या. समाजसेवेचा सम्यक कारूण्यमय आदर्श सावित्रीबाइंनी समाजासमोर निर्माण केला. सावित्रीबाईंना हा वसा समाजातील सर्व स्त्रियांनी अंगिकारवा ही अपेक्षा आहे.

सावित्रीबाईनी दिलेले शिक्षण कार्यातील योगदान हे जगाच्या इतिहासात सुवर्णाक्षरानी नोंदवून ठेवावी. अशी ऐतिहासिक घटना आहे. 1852 मध्ये शाळांच्या तपासीत सावित्रीबाईंचा आदर्श शिक्षिका म्हणून सन्मान करण्यात आला. अस्पृश्यता कलंक धुऊन सामाजिक समता प्रस्थापित करण्याठी महात्मा फुल्यांनी शाळा काढल्या. याबाबत लेखक डॉ. मंगूडकर म. फुले आणि संशोधन चळवळ या पुस्तकात लिहितात की, हिन्दुस्थानच्या संबंध इतिहासात अलिकडच्या काळात हिन्दुनी अस्पृश्यांसाठी प्रयत्न केल्याचे हे पहिलेच उदाहरण आहे. जोतीरांवाच्या या कार्याचा उल्लेख त्या काळाच्या 5 डिसेंबर 1853 च्या ज्ञानप्रकाशच्या अंकात मोठया गौरवाने केला आहे.

यावेळी शिक्षण खात्याचे अध्यक्ष आरस्किम पेरी हे रिपोर्ट केला, मुंबई सरकारने महात्मा जोतीराव फुले यांना प्रोत्साहन देण्याचे ठरविले व त्यासाठी वैभवशाली दरबार भरविला. अध्यक्षस्थानी मेजर कॅडी गर्व्हनर होते. या दरबारात महात्मा फुले यांनी एक भरजरी शाल अर्पण करून त्यांचा गौरव करण्यात आला. ही बातमी त्या वेळच्या इंग्रजी वर्तमानपत्रातून प्रसिद्ध झालेली आहे. षाळा खात्याच्या डायरेक्टरांनी एक सर्क्युलर काढून जोतीरावांच्या कार्याची स्तुती केली. पुन्हा ऑबझर्व्हर च्या 20 नोव्हेंबर 1852 च्या अंकात एक छोटी बातमी प्रसिद्धी झाली. ती अशी पुण्यात मुलाची शाळा व अस्पृश्यांचा शाळा स्थापन केल्या. या कामगीरीचा गौरव करण्यासाठी जोती गोविद फुले यांना बोर्ड ऑफ एज्युकेशन यांनी शाळा नजर केली आहे.

हा समारंभ झाल्यानंतर सावित्रीबाईनी जोतीरावांचे सकौतुक अभिनंदन केले. त्यावेळी जोतीराव सावित्रीबाईस म्हणाले, 'खरे पाहू गेल्यास तुझेच अभिनंदन करावयास पाहिजे. कारण मी निरनिराळ्या शाळा स्थापण्यास कारणमात्र आहे. पण त्या शाळा तू अनेक संकटाशी झुंजून व अनेक प्रकारची

दु:खे सोसून नावारूपास आणल्या याचा मला अभिमान वाटतो.'महात्मा जोतीरावांनी काढलेले हे उद्गार सावित्रीबाईच्या एकूणच कार्याची पावती आहे.

शेतकरी व मजूर स्त्री पुरूषांसाठी रात्रीची शाळा :

समाजाच्या सर्व स्तराच्या विकास व्हावा यासाठी सावित्रीबाईना शेतकरी, मजूर आणि स्त्री–पुरूषांसाठी सुद्धा शिक्षण देण्याचे ठरविले. ज्यांना दिवसभर बसून शिक्षण घेता येत नाही त्यांच्यासाठी सोयीस्कर अशी शिक्षण पद्धती सावित्रीबाईन त्याकाळी अवलंबिली. शेतकरी व मजूर स्त्री– पुरूष दिवसभर कामाच्या तणावाने शिकू शकत नाही. मात्र त्यांनाही शिक्षित केले पाहिजे. यासाठी सावित्रीबाईनी 1855 मध्ये शेतकरी व मजूर स्त्री पुरूषांसाठी रात्रीची शाळा काढली.

सावित्रीबाईंनी रात्रीची शाळा सुरू करून अंधारलेल्या जीवनात उजेडाची बीज रोवली. त्यांनाही स्वाभिमानाने जगता यावे यासाठी सावित्रीबाईंनी रात्रदिवस शिक्षकीपणाचं कार्य केलं.

सारांश:

सावित्रीबाईंनी तळागाळातल्या तमाम समाजासाठी केलेले कार्य अतुलनीय आणि प्रेरणादायी आहे. सावित्रीबाईनी शैक्षणिक कार्यासोबतच समाजातल्या प्रत्येक समस्यांचे निराकरणार्थ कार्य केले आहे.

सावित्रीबाई बालहत्या प्रतिबंधक गृहातील मुलांची अविरत वात्सल्याने सेवा करीत त्याचे पालन करत त्यांना स्वत:ला अपत्य नव्हते. तथापि त्या माय–माऊलीने आपल्या दयाळू व उदार स्वभावाला अनुसरून या मुलांचे अत्यंत प्रेमाने आणि वात्सल्याने संगोपन केले.सावित्रीबाईने काही साहित्यनिर्मिती सुद्धा केली आहे. त्यांच्या काव्यरचना काव्यफुले नावाच्या पुस्तकातून प्रकाषित आहेत.

'सावित्रीबाई समाज कार्याने झपाटलेलं एक तुफान वादळ होतं. विधवा विवाह, बालहत्या प्रतिबंधगृह, स्त्रिया व अभिमान वाटतो.' महात्मा जोतीरावांनी काढलेले हे उद्गार शूद्रासाठी शाळा, रात्र शाळा, अनाथ बालिकाश्रम इत्यादी अनेक चांगले कार्य सावित्रीबाईनी केले आहे.

शिक्षण हे सुधारणचे मूळ असे सावित्रीबाई म्हणत. मानवाच्या जीवनातील अज्ञान–अंधकार नाहीसा करून नवीन जीवनाची दृष्टी देणारी ती एक ज्ञानाची प्रकाशज्योती होती.

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. महात्मा फुले संग्रह – संपादक य. वि. फडके
2. विद्येची स्फुती नायिका सरस्वती की सावित्री ? प्रा. नूतन माळवी
3. सावित्रीबाई फुले संग्रह वाडमय – प्रा. मा. गो. माळी
4. राष्ट्रमाता सावित्रीबाई फुले व आजचे स्त्री वास्तव– विजय गवारे
5. सावित्रीबाई फुले – प्रा. रघुनाथ कडवे
6. मी सावित्री– यशवंत मनोहर
7. सावित्रीबाई फुले जीवनकार्य– इंदिरा सुरेश उके

****

Evalution of Health Insurance Schemes by LIC to the People of Chandrapur District

B. K. Dhongde* Dr. Pradip Ghorpade**

Abstract - A largesection of the working class in Chandrapur district is a customer of Life Insurance corporation of India. LIC is popular and trusted brand of guarantee.Chandrapur district is known as industrial district so people from different states migrated to Chandrapur district and settled here. Considering the industrial development and due to that high industrial pollution environment people are suffering from numerous diseases. Industrial pollution affected the lives of the people , they suffer from many diseases such as high blood pressure, cancer and asthma and number of critical illness. The people so suffer that they can not afford to meet the medical expenses. Most of the people are from low income group and medical cost and treatment is very costly so people of Chandrapur district losing their lives due to lack of proper treatment. In such a situation many life Insurance companies emerged in Chandrapur district. LIC introduced health Insurance plan as well as many private companies also introduced many health Insurance plans. Now the people have alternative to choose better company for health insurance which can help in meeting the health related medical problems. In the beginning People purchased plans of different companies but people latter came to know that private companies charging much more premium for their product and the claim settlement also is very low. LIC of India introduced health plan which is cheaper than private companies and guarantee of reimbursement. Health problem is the major drawback of the people of Chandrapur district because major portion of the income of the person goes in the many type of diseases and nothing remains to him for other expenses one after another disease to any family member continues. So health insurance of LIC is more beneficial for the people. LIC providing such plans which is a remedy on health problems.

Keywords - Health, Disease, Risk, Death, Insurance, plan, reimbursement, Premium, illness, critical illness.

Introduction - LIC is the brand in Insurance business and performing a major role in the economy of the country.LIC collects money from the policy holders in the form of premium . Functioning of LIC is remarkable and this is a single company which is collecting huge amount than other private companies. It has big customer base and people also trust on the LIC. LIC much contributed to nation also most of the projects in India are run by the help of LIC in the form of loan given by LIC to government of India. LIC launched many plans such as money back, endowment and whole life and term plans that all are for particular needs in future. But the health concern it will not be in the planning of anyone it will be sudden and unfortunate and no one knows when illness or disease in human body enter so, health insurance now a days became first priority. Income of poor and working class is very low and they can not afford expenses on medical treatment. Many people have to loss their lives due to lack of medical treatment. As a result many families have been devastated to get rid of these problems .

LIC has introduced a new plan for the customers called “Health insurance plan”. This plan covers many diseases and major critical diseases such as heart related problems blood pressure, diabetes, kidney failure , cancer, Asthma and many more problems are covered . Those who have purchased this plan are protected from all type of diseases and he has not to worry about illness and diseases .They have to think of only their routine plans and not of health related problems.LIC collect sum from the customers every year and in return LIC guarantees the reimbursement for the cost of treatment of diseases. This scheme has saved lives of many people and hence this scheme like other plans has became very popular among the people. This scheme is a lifeline for low income people. The only draw back in this health insurance plan is that the premium paid by the customers is not refunded at the end but the benfits received from this scheme may be more than that of return at the end because lacs of money are spent on the medical treatment that can be reimbursed from this scheme.

Health insurance launched by other private companies also. But those plans can not become so popular like plan of LIC the reason behind is private companies charge more premium and have their hidden charges that can not understand the common people.so , people can be

*Research Scholar, Gondwana University, Gadchiroli (Mh.) INDIA
** Research Guide and Associate Professor, Shree Shivaji College, Gadchiroli (Mh.) INDIA

deceived and they can not get the benefit of which they wanted to be received. LIC is trusted company a government undertaking and which has earn a name and fame in the minds of the people.

Conclusion - Most of the Chandrapurdistrict people belonging to labour working class poor community. The income of these people is very low that's why even if there are more benefits in taking Health insurance plans. But they can notafford the premium for these plans. Those who have sound economical condtion are taking the benefits which are covered in the plan but these people can not avail the benfits .Most of the people they can not maintain their daily needs then how it will be possible for them to take the benefits of the health plans. Rich and high income group people taking the all benefits and low income and poor people very far from these benefits. So, government should take initiative that all walks of people should take the benefits and they should come out from their misery condition. If some steps by the government if not taken then then the condition of poor and low working class become more miserable and it will have affect on their health and efficiency to work.

In brief , it can be said that LIC plan health insurance is better and beneficial for all but the benefits are taken by a very few and majority of people are very far from these benefits.

Suggestions :

1. LIC should take initiative for improving in plans offered to their Customers.
2. LIC should provide quick services to the customers of Chandrapur district.
3. Government should take initiative to provide all benefits of health insurance
4. to Poor and working class people and government should pay the premium of low income and poor people.

References :-

1. Banking & Insurance Act.
2. Indian Economics- Rudradutta
3. Health Insurance.com.
4. www.licindia.com.
5. Self research work.

****

म.प्र. ग्रामीण विकास की समस्या एवं सुझाव

राजेश कुमार कुशवाहा*

प्रस्तावना – भारतीय ग्राम – कहा जाता है कि भारत गाँवो का देश है, और सही भी यही है क्योकि यहाँ की अधित्तर जनसंख्या गाँवो में निवास करती है। भारतवासी अपने विकास के लिए भारतीय कृषि पर ही निर्भर करते है। सादा जीवन उच्च विचार यही भारतीय ग्रामों की पहचान है। जब भी मन में भारतीय ग्राम का विचार आता है, तो खेतों में दूर–दूर तक लहलहाती हुई हरी फसले, कड़ी धूप और खुले आसमान के नीचे काम करता किसान, घरो की बागदौड़ संभालती घर की स्त्रियों की छवि आखों के सामने आ जाती है।

पेड़ों की ताजी हवा, ताजा और शुद्ध दूध, रसायनो से मुक्त ताजी–ताजी सब्जियाँ, गाँवो के चौपालों की रौनक आदि चिजें आज भी भारत वासियों को गाँव की ओर खीच ले जाती है। सभी ग्राम वासियों का एक दूसरे के लिए लगाव, उनका एक दूसरे की मदद के लिए सदैव तत्पर रहना गावों की विशेषता है।

ग्रामीण जीवन की विशेषताएँ :

1. कृषि पर आधारित – भारतीय ग्रामीण जीवन कृषि पर आधारित है, कृषि ही लोगों का प्रमुख व्यवसाय है। गाँव में मौजूद जो लोग कुछ अन्य व्यवसाय भी करते है, तो उनका व्यवसाय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर भी निर्भर करता है।
2. संयुक्त परिवार – जहाँ शहरों में संयुक्त परिवार विरले ही दिखाई पढ़ते है, वही गाँवो में इसका महत्व आज भी कायम है।
3. जाति भेद – जहाँ शहरों में जाति, समाज आदि को छोड़कर लोग आगे बड़ चुके है, वही गाँवो में आज भी इन सब चीजों को महत्व दिया जाता है। जो की बहुत गलत है।
4. पंचांग का उपयोग – जहाँ शहरी लोग तीज त्योहारों को भी भूल चुके है, वही ग्रामीण लोग आज भी भारतीय पंचांग को फॉलो करते है।
5. सादा जीवन – ब्रांड, फैशन ये सभी चिजे अब तक गाँवो की दहलीज को छू नही पाई है। गाँवो के लोग आज भी सादा जीवन उच्च विचार में विश्वास रखते है।
6. मंद गति से विकास – आज जहाँ शहरों में विकास की रफ्तार तेज होती जा रही है, वही गाँव के लोग मूलभूत सुविधाओ के लिये भी संघर्ष करने के लिये मजबूर है।
7. गरीबी – जिस किसान की बदोलत हमें भोजन मिलता है, वह खुद ही ढंग से दो वक्त की रोटी नही जुटा पाता। दुख तो तब होता है, जब किसानों द्वारा पैदा किए गए अन्न को दुसरे लोग बेचकर ज्यादा मुनाफा कमाते है और किसान की दयनीय स्थिति वैसी ही बनी रहती है।
8. अशिक्षा – गाँवो की इस स्तिथि का एक बहुत बढ़ा कारण अशिक्षा भी है. गाँव के लोग आज भी शिक्षा को जरूरी नहीं समझते। अगर लोग शिक्षा को जरूरी समझे भी तो उन्हे सुविधा उपलब्ध नहीं होती।

आजकल समय के साथ–साथ लोगों की धारणा बदल रही है। लोग गावों से शहरों की ओर पलायन कर रहे है। गाँव के लोग ग्रामीण असुविधा से तंग आकर शहरी सुविधा से आकर्षित हो रहे है, और शहरों में अपना निवास बनाकर सुविधा तलाश रहे है। ग्रामीण जीवन में कई सारी समस्याए है, जिसका सामना ग्राम वासियों को करना पढ़ता है। आइये कुछ बिन्दुओ के द्वारा हम ग्रामीण जीवन की समस्याओ को समझने का प्रयत्न करते है।

ग्रामीण जीवन की समस्याएँ :

1. ग्रामीण असुविधाएँ – आज के समय में हर इंसान सुविधा चाहता है, और यह सत्य है की गाँवो में शहरों की अपेक्षा सुविधाएँ नाम मात्र की भी नहीं है। गाँवो में रहने वाले लोग अपनी हर एक जरूरत चाहे वह खेती के संसाधन हो या घरों का सामान आदि के लिए शहरों पर निर्भर करते है। उन्हे अपनी हर छोटी से छोटी जरूरत के लिये शहर आना पड़ता है, जिसमें उनका समय और पैसा दोनों व्यर्थ जाते है।
2. शिक्षा का अभाव – शिक्षा विकास का एकमात्र साधन है, जो की गाँवो में मौजूद नहीं है। आज भी कई गाँवो में स्कूल नहीं है और अगर स्कूल है भी तो उनमें शिक्षा का स्तर और व्यवस्थाए सही नहीं है। गाँवो में रहने वाले बच्चों को स्कूल के लिये शहर की ओर आना पड़ता है और अगर वे गाँव के स्कूल में शिक्षा ले भी लेते है, तो उच्च शिक्षा के लिये शहर ही एकमात्र स्थान बचता है।
3. विकास की धीमी रफ्तार – जो गाँव, शहरों के किनारे या मुख्य राजमार्गो पर बसे है, उनका तो विकास हो गया है, परंतु जो गाँव शहरी सीमा से दूर है वे अभी भी विकास की राह देख रहे है। कई गाँवो को तो अब तक मुख्य सड़को से जोड़ा भी नहीं गया है। नेता और राजनीतिक पार्टियाँ केवल चुनाव के समय इन गाँवो की ओर रुख करती है, और ग्राम वासियों के मन में नयी आस दे जाते है।
4. स्वास्थ्य की सम्पूर्ण सुविधा उपलब्ध न होना – गाँवो में न अस्पताल है, न ही कोई अन्य सुविधा। और अगर किसी गाँव में अस्पताल है भी तो वहाँ कोई डॉक्टर अपनी सेवाए देना नहीं चाहते। अगर किसी जगह अस्पताल और डॉक्टर दोनों मौजूद है, तब भी वहाँ सम्पूर्ण संसाधन के अभाव में हर ग्रामवासी को अपनी छोटी सी परेशानी में शहरों की ओर रुख करना पड़ता है।
5. मौसम की मार – हम सभी जानते है कि भारतीय किसान पूरी तरह से कृषि पर निर्भर करते है। वर्षा की बढ़ती अनियमित्ता और पर्यावरण प्रदूषण का सबसे गहरा असर कृषि पर ही पढ़ता है। लगातार कई वर्षो से वर्षा का स्तर कम होता जा रहा है और इसका असर कृषि और

* शोधार्थी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

किसानों पर पढ़ता है।

6. अवैधानिक तत्वो की मौजूदगी – आपको जानकर आश्चर्य होगा, कि गाँवो में आज भी जुआ सट्टा और मादक पदार्थो की बिक्री खुलेआम जारी है। यहाँ तक की गाँवो में रहने वाले बच्चे भी इनकी ओर आकर्षित होते है और गलत आदतों का शिकार होते चले जाते है।
7. परिवहन के साधनों का अभाव – गाँव के लोगों को परिवहन के लिये भी समस्याओ से जुंझना पड़ता है। बड़ी और फास्ट ट्रेनों के तो गाँवो में स्टाप ही नहीं होते, नाही गाँवो में अच्छी सर्वसुविधायुक्त बसें जाती हैं। कुछ ग्राम वासियों को तो एक बस का इंतजार दिनभर करना होता है और इनमें सफर करते वक्त असुविधा की भी कमी नही होती।
8. भौतिक सुख सुविधाओ का अभाव – गाँवो में शहरों की अपेक्षा सुखसुविधा के सामान मौजूद नही होते। जैसे अगर ग्रामवासी खर्चा करके फ्रीज, कूलर आदि खरीद भी ले, तो उन्हे बिजली सही समय पर उपलब्ध नही होती।
9. मनोरंजन के साधनों का अभाव – गाँवो में शहरों की तरह मनोरंजन के साधन जैसे सिनेमाघर, गार्डन, चौपाटी उपलब्ध नही होते। गाँव में रहने वाले बच्चों को तो समोसे कचोड़ी या कुल्फी के लिये भी कई दिनों का इंतजार करना पड़ता है।

ऐसा नही है, कि ग्राम में कोई लोग नही रहते या वहाँ जनजीवन संभव ही नही है। जहाँ गाँव में रहने वाले लोगों को कई समस्याओ का सामना करना पड़ता है, वही ग्रामीण जीवन के कई फायदे भी है, जिसके कारण पुराने ग्रामीण लोग अपना गाँव छोड़ना नही चाहते।

ग्रामीण जीवन के लाभ-फायदे :

1. शुद्ध प्रकृतिक वातावरण – शहरों की अपेक्षा गाँवो का वातावरण शुद्ध है, यहाँ आज भी शहरी प्रदूषण से मुक्त शुद्ध हवा पानी उपलब्ध है। यहाँ ना वाहनों से निकलने वाला धुआ है, ना ही डीजे का शोर। यहाँ के लोग कूलर पंखे के बिना ताजी हवा का आनंद लेना पसंद करते है और विदेशी पेय से दूर शुद्ध पेय जैसे दही, लस्सी, शिकंजी आदि को पसंद करते है।

कार्यक्रमों का विश्लेषण

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम :

1. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम अर्थात् मनरेगा को भारत सरकार द्धारा वर्ष 2005 में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 (NREGA नरेगा) के रूप में प्रस्तुत किया गया था। वर्ष 2010 में नरेगा (NREGA) का नाम बदलकर मनरेगा (MGNREGA) कर दिया गया।
2. मनरेगा कार्यक्रम के तहत प्रत्येक परिवार के अकुशल श्रम करने के इच्छुक वयस्क सदस्यों के लिये 100 दिन का गारंटीयुक्त रोजगार, दैनिक बेरोजगारी भत्ता और परिवहन भत्ता (5 किमी. से अधिक दूरी की दशा में) का प्रावधान किया गया है।
3. रिपोर्ट के अंतर्गत वर्ष 2014-15 से 2018-19 के मध्य मनरेगा को ग्रामीण गरीबों के लिये एक सफल कार्यक्रम के रूप में प्रस्तुत किया गया है।
4. रिपोर्ट के मुताबिक सरकार के प्रयासों के कारण ही मनरेगा के तहत वर्ष 2018-19 में 69,809 करोड़ रुपए का रिकॉर्ड खर्च किया गया, जो कि इस कार्यक्रम के शुरू होने के बाद सबसे अधिक है।
5. हालाँकि स्वतंत्र विश्लेषकों द्धारा किये गए अध्ययन के अनुसार, वर्ष 2018-19 में मनरेगा देश के सूखाग्रस्त जिलों में किसी भी तरह की मदद करने में विफल रहा। ध्यातव्य है कि सरकार ने वर्ष 2020-21 में मनरेगा के बजट को भी घटा दिया है।

प्रधानमंत्री आवास योजना (ग्रामीण) :

1. प्रधानमंत्री आवास योजना-ग्रामीण (PMAY&G) को केंद्र सरकार द्धारा वर्ष 2015 में लॉन्च किया गया था। इस योजना का उद्देश्य पूर्ण अनुदान के रूप में सहायता प्रदान करके आवास इकाइयों के निर्माण और मौजूदा गैर-लाभकारी कच्चे घरों के उन्नयन में गरीबी रेखा (BPL) से नीचे के ग्रामीण लोगों की मदद करना है।
2. रिपोर्ट के अनुसार, PMAY&G के तहत लक्षित एक करोड़ घरों में से करीब 7.47 लाख घरों का निर्माण पूरा होना अभी शेष है। इसमें से अधिकतर घर बिहार (26 प्रतिशत), ओडिशा (15.2 प्रतिशत), तमिलनाडु (8.7 प्रतिशत) और मध्य प्रदेश (आठ प्रतिशत) में हैं।
3. रिपोर्ट के अंतर्गत राज्यों को समय-सीमा में सभी घरों को पूरा करने हेतु आवश्यक कदम उठाने के लिये कहा गया है।

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना :

1. प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना एक केंद्र प्रायोजित योजना है, जिसे लागू करने की जिम्मेदारी ग्रामीण विकास मंत्रालय एवं राज्य सरकारों को दी गई है। इसे वर्ष दिसंबर 2000 में लॉन्च किया गया था।
2. इसका उद्देश्य निर्धारित आकार (2001 की जनगणना के अनुसार, 500मैदानी क्षेत्र तथा 250 पूर्वोत्तर, पर्वतीय, जनजातीय और रेगिस्तानी क्षेत्र) को सभी मौसमों के अनुकूल एकल सड़क कनेक्टिविटी प्रदान करना है ताकि क्षेत्र का समग्र सामाजिक-आर्थिक विकास हो सके।
3. रिपोर्ट के अनुसार, PMGSY ने अपना 85 प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त कर लिया है। अब तक, 668,455 किमी. सड़क की लंबाई स्वीकृत की गई है, जिसमें से 581,417 किमी. पूरी हो चुकी थी।

दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल्य योजना :

1. दीन दयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल्य योजना (DDU&GKY) गरीब ग्रामीण युवाओं को नौकरियों में नियमित रूप से न्यूनतम मजदूरी के बराबर या उससे अधिक मासिक मजदूरी प्रदान करने का लक्ष्य रखता है। यह ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार के द्धारा ग्रामीण आजीविका को बढ़ावा देने के लिये की गई पहलों में से एक है।
2. रिपोर्ट के अनुसार, योजना के तहत 1.87 लाख ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षित किया गया है अर्थात् केवल 59 प्रतिशत लक्ष्य ही प्राप्त किया जा सका है।
3. रिपोर्ट में राज्यों को ग्रामीण युवाओं के प्रशिक्षण को प्राथमिकता देने तथा लाभकारी रोजगार तक पहुँच की सुविधा प्रदान करने की सलाह दी गई है।

- शुद्ध रसायन मुक्त भोजन – गाँव के लोग खुद खेती करते है, गाय भैस पालते है, तो वे अपने लिये बिना रसायन का उपयोग किए अनाज, सब्जी आदि का प्रबंध कर सकते है। जहाँ हम लोग शहरों में पैकेट का दूध इस्तेमाल करते है, वहीं गाँवो में लोग गाय भैसों का शुद्ध और ताजा दूध पिते है तथा घर पर ही दूध के अन्य पदार्थ बनाते है।
- त्योहारों का सही आनंद – जहाँ शहरों में लोग दिनभर की दौड़ धूप से तंग आकर त्योहारों का आनंद नही ले पाते। वही गाँव के लोग हर त्योहार को पूरे उत्साह से मनाते है। सच तो यह है कि भारत में अब

त्योहारों का अस्तित्व केवल गाँवो में शेष रह गया है।

- एक दूसरे की मदद के लिये सदैव तत्पर रू- गाँवो में अब भी भाईचारे की भावना मौजूद है। यहाँ लोग एक–दूसरे के साथ परिवार की तरह रहते है, और एक–दूसरे की सहायता के लिये तत्पर रहते है।
- शहरी भागदौड़ से दूर सुकून की जिंदगी – जहाँ बड़े–बड़े शहरों में लोग भाग दौड़ से तंग आ चुके है, वही ग्रामीण जीवन अब भी सुकून से भरा हुआ है। यहाँ लोग दिनभर की मेंहनत के बाद शाम में जल्दी खाना खाकर अपने आंगनों में आराम करते है, अपने दिनभर की बाते एक दूसरे को बताते है। वही शहरी लोग इन सब बातों से दूर दूर तक अंजान है।

इन सब बिन्दुओ के पढ़कर यह निष्कर्ष निकाल पाना मुश्किल है कि गाँव का जीवन बहुत अच्छा है या बहुत बुरा। मेरा मानना तो यह है कि शिक्षा ही हर समस्या का समाधान है इसलिए अपने बच्चों को जितना हो सके उच्च शिक्षित करे और अपने देश के विकास में योगदान दें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

छत्तीसगढ़ राज्य की खाद्य सुरक्षा योजना के अन्तर्गत लाभार्थी प्राथमिकतामूलक परिवार का एक अध्ययन (कोटा विकासखण्ड के विशेष सन्दर्भ में)

राकेश कुमार गुप्ता* डॉ. के.के.शर्मा **

शोध सारांश – संयुक्त राष्ट्र सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्यों में से पहला लक्ष्य वर्ष 2015 तक दुनिया से गरीबी और भूख को खत्म करना रहा। आज पूरी दुनिया में एक अरब से अधिक लोग गरीबी, भूख और कुपोषण से जूझ रहे हैं। विश्व खाद्य और कृषि संगठन (एफ.ए.ओ.) के अनुसार दुनिया के दो क्षेत्रों उप-सहारा अफ्रीका और एशिया-प्रशान्त क्षेत्र में क्रमश: 265 मिलियन और 642 मिलियन लोग गरीबी और कुपोषण में अभिशप्त हैं। इसी तरह विश्व बैंक की एक रिपोर्ट (2011) के अनुसार दक्षिण एशिया में 500 मिलियन लोग क्रयशक्ति के आधार पर 1.25 डॉलर प्रतिदिन से कम पर गुजारा करते हैं, जहाँ दुनिया के आधे से अधिक गरीब बसते हैं। जहां तक भारत में गरीबी का प्रश्न है, विश्व बैंक की उल्लिखित रिपोर्ट (2011) के अनुसार भारत की एक तिहाई आबादी (32.7 प्रतिशत) अन्तर्राष्ट्रीय गरीबी रेखा से नीचे है, अर्थात् इनकी प्रतिव्यक्ति आय क्रयशक्ति के आधार पर 1.25 डॉलर प्रतिदिन से कम हैं। यह रिपोर्ट यह भी बताती है कि देश में 51.7 प्रतिशत लोगों की प्रतिदिन की आय प्रति व्यक्ति मात्र 2 डॉलर या इससे कम है, परन्तु भारत के योजना आयोग द्वारा प्रस्तुत गए ताजा आँकड़े दर्शाते हैं कि भारत में गरीबी की दर तेजी से घटी है। योजना आयोग के अनुसार 2011-12 में देश में 21.9 प्रतिशत लोग ही गरीबी की रेखा के नीचे जीवनयापन कर रहे हैं।

शब्द कुँजी – अन्तर्राष्ट्रीय गरीबी रेखा, प्राथमिकतामूलक परिवार, खाद्य असुरक्षा, गरीबी, भूख और कुपोषण।

प्रस्तावना – भारतीय सन्दर्भ में खाद्य सुरक्षा के विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण करते हुए यह जानने का प्रयास करना कि क्या भारत विश्व सहस्त्राब्दि लक्ष्यों में से प्रथम गरीबी और भूख को 2015 तक खत्म कर पाएगा? विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार सभी व्यक्तियों को किसी भी समय शारीरिक, सामाजिक एवं आर्थिक रूप से सुरक्षित और पौष्टिक भोजन उपलब्ध होना आवश्यक है जो उनके सक्रिय एवं स्वस्थ जीवन व्यतीत करने में सहायक हो। एफ.ए.ओ. की यह परिभाषा बताती है कि खाद्य उत्पादन और प्रति व्यक्ति भोजन की उपलब्धता को कैसे बढ़ाया जाए, परन्तु यह रेखांकित करने में असमर्थ है कि कृषिगत उत्पादन, जो खाद्य सुरक्षा का प्रमुख स्तम्भ है, को कैसे, कहां और किसके द्वारा किया जाए? इस संदर्भ में यह विवेचित किया जाना जरूरी है कि वह कौन से कारण है जो देश से गरीबी और भूख को समाप्त कर पाने में लगातार असफल रहे हैं?

भारत के संविधान की प्रस्तावना में देश को एक सम्प्रभु राष्ट्र माना गया है और इसी संविधान के अनुच्छेद 19 में प्रत्येक नागरिक को स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान किया गया है। सवाल यह है कि क्या सम्प्रभुता और स्वतन्त्रता की पहली शर्त खाद्य सुरक्षा नहीं होनी चाहिए और सिर्फ खाद्य सुरक्षा ही क्यों? आज जरूरत है कि इसे और विस्तार देते हुए खाद्य सम्प्रभुता पर ध्यान केन्द्रित किया जाए। खाद्य सम्प्रभुता से आशय किसी भी देश और वहाँ रहने वाले लोगों का अपने भोजन के तरीकों पर स्वयं का अधिकार और साथ बाजार, उत्पादन के माध्यमों, फूड कल्चर और उससे जुड़े हुए वातावरण पर भी अधिकार है।

गरीबी और खाद्य असुरक्षा सही अर्थों में एक-दूसरे के पूरक हैं परन्तु हम यहाँ खाद्य असुरक्षा को एक व्यापक अर्थ में प्रयोग कर रहे हैं। किसी भी देश में केवल गरीब व्यक्ति ही खाद्य असुरक्षा का शिकार नहीं होता बल्कि वे लोग भी खाद्य असुरक्षित हो सकते है जो गरीबी की रेखा से ऊपर हो, मसलन एक खराब कृषि वर्ष में जब सूखा या बाढ़ आ जाए, अकाल या अन्य प्राकृतिक आपदा, या मानव निर्मित समस्याएँ जैसे-खाद्य बाजार में सट्टा बाज़ारी के दुष्प्रभाव से कीमतें बढ़ने लगे अथवा खाद्य वस्तुओं की जमाख़ोरी के कारण पूर्ति की कृत्रिम समस्या पैदा कर दी जाए जिसके दबाव में कीमतें बढ़ने लगे अथवा खाद्य वस्तुओं का जरूरत से अधिक निर्यात कर दिया जाए और भौतिक रूप से इनकी कमी हो जाए, ये सभी खाद्य वस्तुओं की पूर्ति से जुड़ी समस्याएँ है जिसके कारण खाद्य असुरक्षा का खतरा हो सकता है। इसी तरह खाद्य वस्तुओं की माँग के सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि अर्थव्यवस्था में रोज़गार का सृजन नहीं होने से लोगों की वास्तविक आय का न बढ़ना और यदि वास्तविक आय बढ़ भी रही हो लेकिन खाद्य वस्तुओं की कीमतों में अधिक तेजी से वृद्धि हो रही हो तब भी खाद्य असुरक्षा की स्थिति पैदा हो सकती है।

अध्ययन के उद्देश्य एवं परिकल्पनाएँ – प्रत्येक शोध कार्य किसी विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किया जाता है। प्रस्तावित शोध छत्तीसगढ़ राज्य की खाद्य सुरक्षा योजना के अन्तर्गत लाभार्थी प्राथमिकतामूलक परिवार का एक अध्ययन (कोटा विकासखण्ड के विशेष सन्दर्भ में) के अग्रांकित उद्देश्य निर्धारित किये गये है-

अध्ययन के उद्देश्य :

1. खाद्य सुरक्षा योजना का प्राथमिकतामूलक परिवार के परिवारों पर प्राप्त

*शोधार्थी (अर्थशास्त्र) डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय कोटा, जिला- बिलासपुर (छत्तीसगढ़) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डी. पी. विप्र महाविद्यालय, बिलासपुर (छत्तीसगढ़) भारत

उपलब्धियों की विवेचना करना।

2. प्राथमिकतामूलक परिवार की भूख एवं कुपोषण उन्मूलन में खाद्य सुरक्षा योजना को प्रभावी बनाने में छत्तीसगढ़ सरकार की व्यवस्था के क्रियान्वयन का मूल्यांकन करना।
3. अध्ययन क्षेत्र के प्राथमिकतामूलक परिवार के लिए खाद्य सुरक्षा योजना की संभावनाओं का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ – शोधार्थी द्वारा सत्यान्वेषण एवं किसी तथ्य के निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए अवधारणाओं का होना आवश्यक है, ताकि अध्ययनकर्ता इस बात की जानकारी प्राप्त कर ले कि उसकी परिकल्पना कहाँ तक उचित थी। परिकल्पनाओं का होना इसलिए भी आवश्यक है कि वह अपने अध्ययन की दिशा निर्धारित कर सके और जिसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील हो सके। इस संदर्भ में निम्न परिकल्पनाएँ की गई है–

1. छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा योजना का अध्ययन क्षेत्र में विशेषकर प्राथमिकतामूलक परिवार के लिए भोजन उपलब्धता में वृद्धि हुई है।
2. छत्तीसगढ़ राज्य में खाद्य सुरक्षा योजना के कारण प्राथमिकतामूलक परिवार की आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है।

छत्तीसगढ़ भूख से लड़ने वाला भारत का सबसे बड़ा कार्यक्रम बनाकर ने यह बता दिया है कि उसके नागरिकों को भोजन के अधिकार की कानूनी गारंटी मिल गई है। राज्यपाल ने भी इसे मंजूरी दे दी है। संसद के मानसून सत्र में छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा विधेयक को मंजूरी मिल गई है। यह उन गिने–चुने विधेयकों में से एक है जिसे संसद के हर राजनीतिक दल का समर्थन मिला। विधेयक के कानून बनने के बाद छत्तीसगढ़ को एक वर्ष के भीतर खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम को लागू करना होगा। यह उन गिने–चुने विधेयकों में से एक है जिसे संसद के हर राजनीतिक दल का समर्थन मिला। जिन सदस्यों ने विरोध किया, वे विधेयक की भावनाओं के खिलाफ नहीं थे बल्कि कुछ मुद्दों को लेकर उनका विरोध था।

छत्तीसगढ़ राज्य की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा – छत्तीसगढ़ राज्य में 22 दिसम्बर 2012 को छत्तीसगढ़ राज्य राज्य खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2012 विधान सभा द्वारा पारित किया गया। 9 जनवरी 2013 को राज्यपाल द्वारा अनुमति मिलने के बाद 18 जनवरी 2013 को राजपत्र प्रकाशित किया गया। छत्तीसगढ़ राज्य भारत का पहला राज्य है जिसने खाद्य सुरक्षा कानून लागू किया। भारत सरकार ने 5 जुलाई 2013 को राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अध्यादेश जारी किया गया था 10 सितंबर को राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम की अधिसूची जारी की गई। छत्तीसगढ़ द्वारा गरीब एवं जरूरत मंदो को भोजन का अधिकार करने हेतु खाद्य सुरक्षा अधिनियम लाया गया था। इस अधिनियम के धारा 15 के अतंर्गत राशन कार्ड हेतु पत्र परिवारों की श्रेणियां बनाई गई है जो निम्न है –

1. अन्त्योदय परिवार
2. प्राथमिक मूलक परिवार
3. सामान्य

छत्तीसगढ़ शासन द्वारा सामान्य परिवार की राशन सामग्री की पात्रता अप्रैल 2015 से समाप्त कर दी गई थी जिसे वर्ष 2019 –2020 से पुन: आरंभ किया गया है।

छत्तीसगढ़ राज्य एवं पोषण अधिनियम के अन्तर्गत छत्तीसगढ़ राज्य में खाद्य नागरिक अपूर्ति एवं उपभोक्ता विभाग के माध्यम से खाद्यान्न का वितरण किया जा रहा है वर्तमान में छत्तीसगढ़ के विभिन्न जिलों के माध्यम से 12526 कुल उचित मूल्य की दुकाने है जिसमें कोर पीडीएस की दुकानों की संख्या 11941 है। इन उचित मूल्य के दुकानों के माध्यम से 6715026 राशन कार्ड जारी किये गये है। अगस्त 2020 में 5629241 राशन कार्डधारीयों को खाद्यान्न का वितरण किया गया। अध्यायन कर्ता द्वारा चयनित बिलासपुर जिले में कुल उचित मूल्य दुकानों की संख्या 788 है और इन उचित मूल्य की दुकानों में 761 कोर पीडीएस दुकानें है। बिलासपुर जिले में कुल राशन कार्ड की संख्या कोर पीडीएस के साथ 527847 है।

तालिका 1 – (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

अध्ययनकर्ता ने अध्ययन के दौरान पाया कि छत्तीसगढ़ राज्य में छ्त्त्हअ अन्त्योदय राशन कार्डो की संख्या 4490 है, जिसमें बिलासपुर जिलें में इनकी संख्या 513 है। इसी प्रकार NFSA प्राथमिकतामूलक राशन कार्डो की संख्या छत्तीसगढ़ में 25801 है, एवं बिलासपुर जिले में इसकी संख्या 2539 है।

तालिका 2 – जिलेवार NFSA कार्डो के लिए POS से किये गए सौदों की जानकारी

क्र.	जिले	NFSA (अन्त्योदय) राशनकार्डो की कुल संख्या	NFSA(प्राथमिकता) राशकार्डो की कुल संख्या
1	बस्तर	95	286
2	बीजापुर	1	1
3	दन्तेवाड़ा	0	4
4	कांकेर	88	282
5	कोंडागांव	33	81
6	नारायणपुर	2	3
7	सुकमा	10	20
8	बिलासपुर	513	2593
9	गौरेला–पेन्ड्रा –मरवाही	94	321
10	जांजगीर चाम्पा	449	3195
11	कोरबा	315	2074
12	मुंगेली	426	2436
13	रायगढ़	714	4120
14	बालोद	239	1583
15	बेमेतरा	131	1271
16	दुर्ग	50	251
17	कवर्धा	141	951
18	राजनांदगांव	241	1168
19	बलौदाबाजार	28	150
20	धमतरी	363	1417
21	गरियाबंद	62	224
22	महासमुंद	31	252
23	रायपुर	61	521
24	बलरामपुर	36	222
25	जशपुर	58	300
26	कोरिया	75	457
27	सरगुजा	109	786
28	सूरजपुर	125	886
	कुल	**4490**	**25801**

अध्ययनकर्ता ने खाद्य नागरिक आपूर्ति एवं उपभोक्ता संरक्षण विभाग द्वारा जारी अगस्त 2020 समंकों आधार पर पाया कि बिलासपुर जिले में विकासखण्डवार/नगरीयनिकायवार छन्हअ अन्त्योदय सौदो की कुल संख्या।

तालिका 3 – (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 4 – विकासखण्डवार/नगरीयनिकायवार NFSA कार्डो के लिए POS से किये सौदों की जानकारी

क्र.	विकासखण्ड/ नगरीय निकाय	NFSA (अन्त्योदय) सौदों की कुल संख्या	NFSA (प्राथमिकता) सौदों की कुल संख्या
1	बिल्हा ग्रामीण	52	283
2	मस्तूरी ग्रामीण	41	127
3	कोटा ग्रामीण	20	10
4	तखतपुर ग्रामीण	57	457
5	बिलासपुर शहरी	242	1090
6	कोटा शहरी	1	15
7	तखतपुर शहरी	14	56
8	बेदरी शहरी	12	31
9	बिल्हा शहरी	13	77
10	रतनपुर शहरी	8	47
11	मल्हार शहरी	6	31
12	सिरगिट्टी शहरी	38	192
13	तिफरा शहरी	23	162
14	सकरी शहरी	5	35
	कुल	**532**	**2613**

अवलोकन एवं विश्लेषण– ग्रामीण इलाकों की 75 प्रतिशत आबादी को इस कानून का लाभ पहुंचेगा जिसमें न्यूनतम 46 प्रतिशत प्राथमिकता वाले परिवार होंगे तथा बाकि सामान्य परिवार वाले होंगे। शहरी क्षेत्रों को भी दूसरे दायरे में रखा गया है जहां करीब 50 प्रतिशत आबादी इससे लाभान्वित होगी। इनमें 26 प्रतिशत गरीबी–रेखा के नीचे आने वाले परिवार तथा बाकी सामान्य परिवार होंगे। अध्ययनकर्ता ने अध्ययन के दौरान पाया कि यहां खाद्य सुरक्षा योजना का व्यापक प्रभाव पड़ा है। खाद्य सुरक्षा योजना का अध्ययन हेतु चुने गये हितग्राहियों से भरायी गई अनुसूची के आधार पर ली गई परिकल्पना के मूल्यांकन हेतु सहायक सिद्ध हुई। अनुसूची के प्रश्नों का हितग्राहियों द्वारा दिये गये उत्तर को प्रतिशत विधि के माध्यम से निराकरण किया गया है जिसका उल्लेख क्रमश: निम्नवत् है–

1. ग्राम से राशन दुकान की दूरी पर 50 उत्तरदाताओं ने बताया कि उचित मूल्य की दुकान 1 कि.मी. के अंदर व्यवस्था है जबकि दो उत्तरदाताओं ने इसे 2 कि.मी. के अंदर होना पाया।

राशन दुकान की दूरी	1 कि.मी.	2 कि.मी.	3 कि.मी.
उत्तरदाताओं की संख्या प्रतिशत में	81%	14%	5%

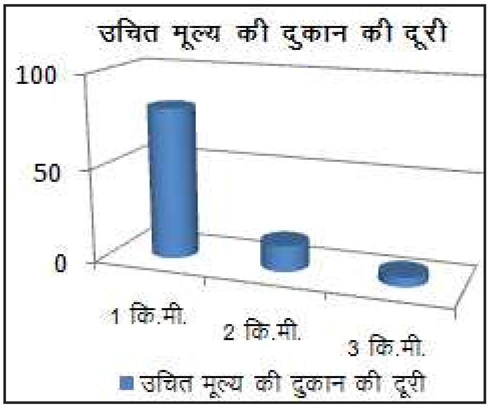

2. क्या आपके पास राशनकार्ड है? इसके उत्तर में अध्ययनकर्ता ने पाया कि 40 हितग्राहियों के पास राशनकार्ड पाये गये जबकि 10 हितग्राही ऐसे थे जिनके पास राशनकार्ड नहीं थे या उन्होंने नहीं बनवाया।

राशनकार्ड की उपलब्धता	हाँ	ना
उत्तरदाताओं की संख्या प्रतिशत में	80%	20%

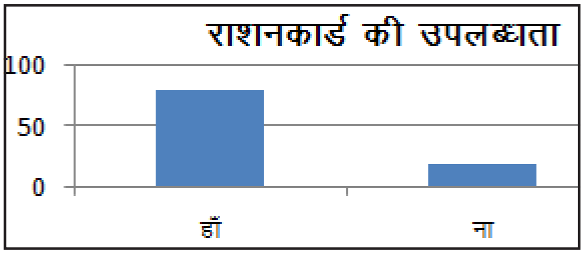

3. आपके परिवार में राशन की खपत कितनी है राशन की दुकान से कितनी सामग्री प्राप्त होती है और उसकी गुणवत्ता कैसी है ? इस प्रश्न में हितग्राहियों ने अपने राशनकार्ड के रंग के मुताबिक राशन प्राप्ति की बात स्वीकार की। अनुसंधानकर्ता ने यह पाया कि निर्धनता रेखा के नीचे रहने वाले परिवारों को अपने खपत के अनुसार राशन सामग्री हो जाती है और वे राशन सामग्री की गुणवत्ता से संतुष्ट पाये गये।

राशन सामग्री की गुणवत्ता के संकेत	खराब	सामान्य	अच्छा	बहुत अच्छा	अन्य
उत्तरदाताओं की संख्या प्रतिशत में	4%	14%	70%	8%	4%

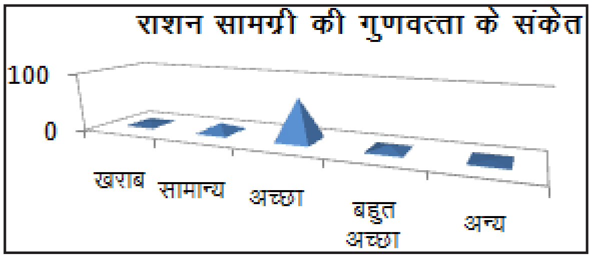

4 क्या आप राशन सामग्री लेने राशन की दुकान पर नियमित रूप से जाते है इस प्रश्न पर 100 प्रतिशत हितग्राहियों ने हाँ में उत्तर दिया और

अनुसूची में पूछे गये इस प्रश्न पर की वे प्रतिमाह,त्रैमासिक या अन्य समयावधि में राशन प्राप्त करते है इसके उत्तर में 100 प्रतिशत हितग्राही प्रतिमाह राशन प्राप्त करने के बात पर सहमत पाये गये। आपको नियमित रूप से राशन सामग्री प्राप्त हो रही है ? के उत्तर में 100 प्रतिशत हितग्राहियों ने हाँ में उत्तर दिया।

5. क्या आप राशन की दुकान से प्राप्त गेहूँ, चाँवल, चीनी, नमक, चना, मटरदाल एवं मिट्टी तेल की मात्रा से संतुष्ट है ? इस प्रश्न के उत्तर में अनुसंधानकर्ता ने निम्नवत आँकड़े प्राप्त किये –

राशन सामग्री की गुणवत्ता के संकेत	खराब	सामान्य	अच्छा	बहुत अच्छा	अन्य
गेहूँ	3%	10%	80%	5%	2%
चांवल	2%	15%	70%	10%	3%
चीनी	1%	8%	85%	5%	1%
नमक	3%	10%	80%	5%	2%
चना	10%	20%	60%	2%	8%
मटरदाल	5%	5%	80%	5%	5%
मिट्टी तेल	4%	9%	85%	1%	1%

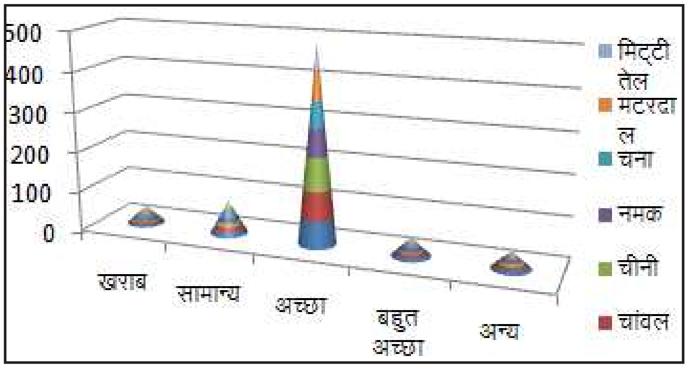

निष्कर्ष एवं सुझाव

परिकल्पनाओं का मूल्यांकन– अध्ययनकर्ता द्वारा ली गई दो परिकल्पनाओं में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये–

1. प्रथम परिकल्पना– छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा योजना का अध्ययन क्षेत्र में विशेषकर अन्त्योदय परिवार, प्राथमिकतामूलक परिवार, नि:शक्तजन, अन्नपूर्णा योजना एवं एकल निराश्रित परिवार के लिए भोजन उपलब्धता में वृद्धि हुई है। अध्ययनकर्ता ने अनुसूची एवं प्रत्यक्ष साक्षात्कार के आधार पर स्तरीत निदर्शन के आधार पर प्रतिशत विधि का अनुप्रयोग करते हुये यह पाया कि वास्तव में अध्ययन क्षेत्र कोनचरा में छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा योजना का विभिन्न रंगों के कार्डधारी परिवारों के लिए भोजन की उपलब्धता में नि:संदेह वृद्धि हुई है।

2. द्वितीय परिकल्पना– छत्तीसगढ़ राज्य में खाद्य सुरक्षा योजना के कारण अन्त्योदय परिवार, प्राथमिकतामूलक परिवार, नि:शक्तजन, अन्नपूर्णा योजना एवं एकल निराश्रित परिवार की आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है। अध्ययनकर्ता ने अपने अध्ययन के दौरान स्तरीत निदर्शन के माध्यम से चुने गये 250 परिवारों की आर्थिक स्थिति का आंकलन करने के पश्चात् पाया कि छत्तीसगढ़ राज्य की खाद्य सुरक्षा योजना का अध्ययन क्षेत्र के इन परिवारों की आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण एवं सार्थक सुधार हुआ है जिससे वे अपने आर्थिक क्रियाकलापों में चयन की समस्या का निदान सरलता से कर रहे है।

शोध–अध्ययन के कुछ तथ्य

1. कृषि में पूंजी निवेश का हिस्सा 2001–02 में 6.7 प्रतिशत की तुलना में 2007–08 में 8.4 प्रतिशत रहा। वर्तमान में इसमें 30 प्रतिशत की वृद्धि की गई है।
2. सकल पूंजी निर्माण में कृषि की हिस्सेदारी 2004–05 में 7.7 प्रतिशत थी जो 2005–06 में 7.2 प्रतिशत तथा वर्तमान में 4.8 प्रतिशत है।
3. 1 अप्रैल, 2000 को अन्नपूर्णा योजना प्रारंभ की गई जिसके तहत वरिष्ठ नागरिकों को प्रतिमाह 10 किलोग्राम अनाज नि:शुल्क दिया जाता है।
4. मजदूर वर्ग को खाद्य सुरक्षा प्रदान करने के लिए वर्ष 2004 में काम करने के बदले अनाज योजना का प्रारंभ किया गया।
5. ग्राम पंचायत स्तर पर वर्ष 2001 से 'खाद्यान्न संघ' स्थापित किए गए। देश में हरित क्रांति के बाद अनाज व दालों की उपलब्धता न्यूनतम स्तर पर पहुँच गई हैं। वर्ष 1991–92 में खाद्यन्न उपलब्धता औसतन 207 किग्रा प्रतिव्यक्ति थी जो 2004–07 में घटकर 186 किग्रा प्रतिव्यक्ति रह गई हैं। पिछले 5 वर्षो में खाद्यान्नों के उत्पादन में औसतन 8 प्रतिशत की कमी हुई हैं।

समस्याएँ :

1. दूसरें को भोजन/अन्न देने वाला किसान स्वयं ऋणग्रस्तता तथा ब्याज के बोझ के कारण आत्महत्या के दलदल में फँसता जा रहा हैं।
2. खेती योग्य जमीन का क्षेत्रफल कम होता जा रहा हैं इसका कारण बढ़ता शहरीकरण और मशीन आधारित औद्योगिकीकरण हैं।
3. कहीं सूखा तो कहीं बाढ़ जैसी प्राकृति आपदाएं उत्पादकता को प्रभावित करता हैं जलवायु परिवर्तन खाद्य संकट पैदा कर रहा हैं।
4. थोक व खुदरा बाजारों में कृषि जिंसों की कीमतों पिछले चार वर्षों में उंची रही हैं पर किसानों को खुदरा कीमतों का आधें से भी कम मिला हैं।
5. कृषि उपजों के सुरक्षित भंडारण की पर्याप्त व्यवस्था नहीं हैं जिससे बाहर रखा अनाज खराब हो जाता हैं।
6. बढ़ते कृषि रसायनों के प्रयोग से भूमि के उपजाउपन और उत्पादों की गुणवत्ता में कमी आ रही है।
7. खाद्य–प्रसंस्करण के तकनीकी ज्ञान और दक्षता की कमी है। दुनिया के प्रसंस्करण खाद्य बाजार में भारत की हिस्सेदारी मात्र 1 से 1.5 प्रतिशत है।

सुझाव :

1. किसानों को आसान शर्तो पर कब ब्याज पर ऋण उपलब्ध कराना एवं फसल बीमा अनिवार्य कराना होगा।
2. बंजर भूमि सुधार कार्यक्रमों द्वारा कृषि क्षेत्र को बढ़ाना होगा।
3. अधिक उपज देने वाली किस्मों में सुधार एवं उपलब्धता सुनिश्चित करनी होगी।
4. वर्षा आधारित क्षेत्रों में संकर किस्मों को विकसित करना होगा।
5. गेंहूँ धान दलहन व तिलहन की उत्पादकता बढ़ाने के लिए जैव प्रौद्योगिकी को बढ़ाया जाना चाहिए।
6. औद्योगिक इकाइयां लगाने के लिए बेधार व परती पड़ी भूमि का उपयोग किया जाना चाहिए।
7. कृषि भूमि की रक्षा व बचाव के लिए पर्याप्त कानूनी उपाय किए जाने चाहिए।

8. भूख मिटाने की जिम्मेदारी जिनकी हो उन्हें जिम्मेदारी न निभाने के लिए दंडित जाने की प्रभावी व्यवस्था हो।
9. सार्वजनिक वितरण प्रणाली में खाद्यान्न का आबंटन घर में उपभोक्ताओं की संख्या पर आधारित हो।
10. स्नेह-भोज शादी समारोहों में प्रीति भोज के बाद बचे भोजन की बरबादी पर प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए।

तमाम चुनौतियों के बीच सभी नागरिकों के लिए खाद्य सुरक्षा का लक्ष्य आसान नहीं हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ की एक रिपोर्ट के अनुसार दुनिया की 85 करोड़ से अधिक आबादी भुखमरी व कुपोषण से ग्रस्त है। यह हम सब के लिए शर्म की बात है कि जनसंख्या का बड़ा हिस्सा भूख से तड़प रहा हैं जबकि हम पहले से अधिक अनाज पैदा कर रहे हैं खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के साथ ही सरकार निवेशकर्ताओं व धनी वर्ग के लोगों को फिर से विचार करना होगा सार्थक प्रयास करने होंगे अपनी भूमिका को विस्तार देना होगा पूरी संवेदनशीलता से तभी हम सभी को खाद्य सुरक्षा दे पाएंगे और 'भूख से मौत' से हर किसी को बचा पाएगें।

अवसर और संभावनाएँ- खाद्य सुरक्षा पर मंडराते खतरों को भाँपते हुए राष्ट्रीय स्तर पर विशेष कार्य योजनाएं बनाई गई है जो खाद्य सुरक्षा को सतत बनाने में सहायक होगी। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के नेतृत्व में देश में क्लाइमेट स्मार्ट एग्रीकल्चर विकसित करने की ठोस पहल की गई है। इसके लिए राष्ट्रीय स्तर की परियोजना लागू की गई है, जिसके अंतर्गत किसानों को जलवायु अनुकूल कृषि तकनीकें अपनाने के लिए जागरूक एवं सक्षम बनाया जा रहा हैं। उल्लेखनीय है कि कृषि अनुसंधान एवं विकास के माध्यम से प्रमुख फसलों की जलवायु अनुकूल किस्में विकसित की जा रही है जिनमें प्राकृतिक आपदाओं जैसे- सूखा, बाढ़, अत्यधिक गर्मी या सर्दी को सहने की क्षमता मौजूद होती हैं । इसी प्रकार जलवायु अनुकूल कृषि विधियों का विकास किया गया हैं। सिंचाई के पानी की कुशलता बढ़ाने के लिए टपक सिंचाई,फव्वारा सिंचाई जैसी सुक्ष्म और कुशल तकनीकें विकसित की गई है,जिनका किसानों के खेंतो तक प्रसार किया जा रहा है। इस कार्य में तेजी लाने के लिए 'पर ड्रॉप मोर क्रॉप' जैसा राष्ट्रीय कार्यक्रम लागू किया जा रहा है। भूमि की उर्वरता को सतत बनाए रखने के लिए 'स्वस्थ धरा, खेत हरा' जैसे कार्यक्रम शुरू किये गये है, जिसके अंतर्गत किसानों को बड़े पैमाने पर 'सॉयल हेल्थ कार्ड' जारी किए जा रहे है । फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए जीन परिवर्तन या जेनेटिक इंजीनियरी की बेहद क्षमतावान विद्या तकनीकी रूप से हमारे पास उपलब्ध है जिसका उपयोग करके कृषि क्षेत्र में चमत्कारी बदलाव लाए जा सकते है। परंतु इसके उपयोग के लिए सरकारी नीति और संस्तुति की आवश्यकता है जो अभी न्यायालय के हस्तक्षेप के कारण लंबित है। परंतु यह बात तय है कि भविष्य में यह तकनीक खाद्य सुरक्षा को सतत बनाए रखने में अहम भूमिका निभाने वाली है।

हाल के वर्षो में सतत कृषि की अवधारणा भी विकसित हुई है जिसके अंतर्गत प्राकृतिक संसाधनों के कुशल और सतत उपयोग द्वारा कृषि प्रक्रियाएँ सम्पन्न की जाती है। उर्वरकों और कीटनाशकों के संदर्भ में नैनो टेक्नोलॉजी का उपयोग नई संभावनाएँ उत्पन्न कर रहा है। इसी प्रकार यंत्रीकरण और कृषि में ऊर्जा के उपयोग के क्षेत्र में भी नवोन्मेषों द्वारा कृषि उत्पादन को अधिक कुशल और सक्षम बनाने की अनेक संभावनाएँ मौजूद है। साथ ही बदलते परिवेश के अनुसार नई नीतियों और योजनाओं की आवश्यकता भी होगी। उदाहरण के तौर पर फसल कटाई प्रसंस्करण, भंडारण और वितरण के दौरान होने वाले नुकसान को कम करने के लिए हमें एक स्पष्ट और कारगर नीति बनानी होगी। इसी तरह भोजन की बर्बादी पर भी प्रभावी अंकुश लगाना जरूरी हो गया है। सरकार द्वारा लागू की जा रही समाज कल्याण योजनाओं को अधिक मजबूत और पारदर्शी बनाने की आवश्यकता है,ताकि समाज के आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग को लगातार खाद्य सुरक्षा का लाभ मिलता रहे। खाद्य सुरक्षा के भविष्य को लेकर सरकार, योजनाकार और अन्य संबंधित लगातार गहन विचार विमर्श करते हुए नई पहल कर रहे है। इसलिए आशा के साथ विश्वास भी है कि भारत में खाद्य सुरक्षा निरंतर और सतत् बनी रहेगी।

चुनौतियाँ- देश की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को लंबे समय तक सतत् बनाए रखना एक कठिन चुनौती है,क्योंकि आबादी में लगातार विस्तार हो रहा है, शहरीकरण बढ़ता जा रहा है और नागरिकों की आमदनी बढ़ने से भोजन की मांग और विविधता में भी वृद्धि दर्ज की जा रही है । यदि इस भावी परिदृश्य को वर्ष 2005 के नजरिए से देखा जाए तो भारत की आबादी लगभग 1.65 अरब तक और प्रति व्यक्ति आमदनी 4,01,839 रूपये तक पहुंचने की संभावना है। उस समय देश में 50 प्रतिशत से अधिक आबादी शहरी क्षेत्रों में बसी होगी जिससे कृषि के आधार को चोट पहुंचने की आशंका जताई जा रही है । अध्ययनों से पता चला है कि यदि देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में सात प्रतिशत की वृद्धि दर मानी जाए तो वर्ष 2005 में अनाज की मांग 50 प्रतिशत तक बढ़सकती है, जबकि फलों,सब्जियों और पशु उत्पादों में 100 से 300 प्रतिशत तक की वृद्धि हो सकती है। इसका एक अर्थ यह भी है कि प्रति व्यक्ति कैलोरी मांग 3000 किलो कैलोरी से अधिक हो सकती है। इसके लिए खाद्यान्नों की उत्पादकता वर्तमान 25,000 किलो कैलोरी प्रति हेक्टेयर प्रतिदिन से बढ़ाकर 46,000 किलो कैलोरी प्रति हेक्टेयर प्रतिदिन के स्तर पर ले जानी होगी। इस हिसाब से अनुमान लगाया गया है कि देश में खाद्यान्नों की मांग 45 करोड़ टन तक पहुंच सकती हैं । इसी तरह दालों, खाद्य तेलों, दूध, माँस, अंडा, फलों, सब्जियों,चीनी तथा अन्य कृषि जिंसों की मांग भी इसी अनुपात में या इससे अधिक बढ़ सकती हैं । उत्पादकता के इस स्तर तक पहुंचने की संभावनाओं से पहले कुछ कठिन बाधाओं पर ध्यान देना और उनका आंकलन करना आवश्यक है। गर्माती धरती या 'ग्लोबल वार्मिंग' की वैश्विक विपदा को खाद्य सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा माना जा रहा हैं। वैज्ञानिक अनुमान बताते है कि यदि हम औसत तापमान की बढ़ोत्तरी पर कोई सार्थक रोक लगा नही पाते तो सन 2050 तक औसत तापमान में 2.2 से 2.9 डिग्री सेल्सियस तक की वृद्धि हो सकती हैं। इससे रबी और खरीफ फसलों के साथ फलो,सब्जियों,दूध उत्पादन तथा मछली उत्पादन पर भी चोट पड़ने की संभावना जताई जा रही है। अनुमान है कि तापमान बढ़ोत्तरी के वर्तमान रूख के अनुसार वर्ष 2050 तक गेहूँ के कुल उत्पादन में 01 करोड़ 17 लाख टन तक की कमी आ सकती है। आंध्र प्रदेश, तमिलनाडू और कर्नाटक में बारानी चांवल का उत्पादन 10-15 प्रतिशत तक बढ़ सकता है, परंतु पंजाब और हरियाणा में इसमें 15-17 प्रतिशत की गिरावट आ सकती है । देश के अन्य क्षेत्रों में भी चांवल का उत्पादन 6-18 प्रतिशत तक गिर सकता है। सन 2050 तक दूध के उत्पादन में लगभग डेढ़ करोड़ की गिरावट की आशंका जताई गई है। तापमान बढ़ने से हमारे देश के शीतोष्ण क्षेत्रों में उगने वाले फलों के क्षेत्र और उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता हैं। इसी तरह सागरों और नदियों का औसत तापमान बढ़ने से मछली उत्पादन पर भी बुरा असर पड़ेगा।

खाद्य सुरक्षा को सतत् बनाए रखने के लिए आवश्यक भूमि की

उपलब्धता भी लगातार कम होती जा रही है। वर्ष 2050 में प्रति व्यक्ति भूमि उपलब्धता 2010-11 के 0.13 हेक्टेयर से घटकर मात्र 0.09 हेक्टेयर रह जाएगी जो एक चिंता का विषय हैं। इसके साथ कृषि भूमि का लगातार अन्य विकास कार्यो तथा आवास के लिए उपयोग होना भी खाद्य सुरक्षा के लिए एक संकट हैं। इसी तरह सिंचाई के पानी की लगातार कमी होना भी एक गंभीर संकट की ओर इशारा करता हैं। अनुमान है कि तमाम प्रयासों के बावजूद देश की 50 प्रतिशत से अधिक कृषि फसलें बारानी दशाओं में उगाई जाएँगी,यानी वर्षा पर निर्भर रहेगी। इस देश में प्रति हेक्टेयर उत्पादकता को बढ़ाना अधिक कठिन हो जाएगा। कृषि के लिए ऊर्जा की कमी,भूमि का क्षरण और जैव विविधता का ह्रास भी खाद्य सुरक्षा के लिए एक प्रमुख खतरा माना जा रहा है जिसमें पोल्ट्री और मछली पालन भी शामिल हैं। खाद्य सुरक्षा जनता तक पहुँचाना एक बहुत चुनौती हैं। प्राथमिकता वाले परिवारों की पहचान में सावधानी बरतनी होगी इसका पूरा दारोमदार सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर हैं। उचित भंडार न होने के कारण भारत में हर साल हजारों टन अनाज बर्बाद हो जाता है। आज भी लाखों मैट्रिक टन अनाज खुले में पड़ा हैं। देश में 415 लाख टन अनाज केवल पन्नियों में ढका रहता है। अनाज का एक- एक दाना महत्वपूर्ण हैं अत: खाद्य सुरक्षा के लिए हर दाने की महत्ता समझने की जरूरत हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अहलूवालिया डी (1993):- पब्लिक डिस्ट्रीब्युशन ऑफ इंडिया कवरेज टारगेंटिग लिडेजेस (फूड पॉलेसी 18 फरवरी 1993 पेज नं. 60)
2. भगवती व श्रीनिवास(1993) :- ओपी.सीआईटी, पेज नं. 6
3. पारिख के.एस. व वी.एस.व्यास (1994) :- हू गैट्स हाउ मच फ्राम पीडीएस हाउ इफैटिवली डस इट रीच टू पूवर ? सेवकसना जनवरी मार्च
4. शर्मा रंजना (2000) :- बिलासपुर जिले में कृषि एवं पोषण
5. लेखराज (2000) :- दुर्ग जिले में कृषि एवं पोषण : एक भगौलिक अध्ययन (पेज नं. 152)
6. नायर के. थलासीधरण (2008) :- टारगेटेड पब्लिक डिट्रीब्युशन इन फूड गैन्स स्टैन्ड ऑफ युटिलाजेशन बाई द ट्राईबल पापुलेशन इन केरला
7. गवकरे राजेश बिमरो (2010) :- ज्योग्राफिक परसपेक्टिवस आन पापुलेशन एंड फूड सिस्टम सोलापुर डिस्ट्रीक्ट
8. चन्द्रभान (2012):- अनाज का एक-एक दाना महत्वपूर्ण (कुरूक्षेत्र मार्च 2012 पेज नं. 8-12)
9. प्रो. मोदी के.एम. (2012) :- खाद्य सुरक्षा: चुनौतिया और समाधान (कुरूक्षेत्र मार्च 2012 पेज नं. 13-17)
10. अनन्दा डी (2012):- स्टेट रिस्पाँस टू फूड सिक्यूरिटी : अ स्टडी ऑफ पब्लिक डिस्ट्रीब्युशन
11. अरूण ए.के. (2012):- बाजार की गिरफ्त में पोषाहार और स्वस्थ (योजना 2012 पेज-19-22)
12. डॉ. कोचर नवीन व झारिया मणिकांत (2012) :- भविष्य के लिए अत्यंत आवश्यक खाद्य सुरक्षा(कुरूक्षेत्र मार्च 2012 पेज नं. 23-28)
13. बैनर्जी नंदु (2013):- गरीबों के पेट पर वोटों की राजनीति (नई दुनिया समाचार पत्र 25 जुलाई 2013 पेज नं. 8)
14. भास्कर सुरेन्द्र (2013) :- आधारभूत सुविधाओं का आधार प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (योजना फरवरी 2013 पेज नं. 38-39)
15. हिंमांशु एवं सेन अभिजीत (2013) :- नगदी बनाम सामग्री(योजना फरवरी 2013 पेज नं.16-18)
16. अनन्दा डी (2012):- स्टेट रिस्पाँस टू फूड स्क्यूरटी : अ स्टडी ऑफ पब्लिक डिस्ट्रीब्युशन
17. चन्द्रभान (2012):- अनाज का एक-एक दाना महत्वपूर्ण (कुरूक्षेत्र मार्च 2012 पेज नं. 8-12)
18. अरूण ए.के. (2012):- बाजार की गिरफ्त में पोषाहार और स्वस्थ (योजना 2012 पेज-19-22)
19. बैनर्जी नंदु (2013):- गरीबों के पेट पर वाटों की राजनीति (नई दुनिया समाचार पत्र 25 जुलाई 2013 पेज नं. 8)
20. भास्कर सुरेन्द्र (2013) :- आधार भूत सुविधाओं का आधार प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (योजना फरवरी 2013 पेज नं. 38-39)
21. हिंमांशु एवं सेन अभिजीत (2013):- नगदी बनाम सामग्री(योजना फरवरी 2013 पेज नं.16-18)
22. डॉ. कोचर नवीन व झारिया मणिकांत (2012) :- भविष्य के लिए अत्यंत आवश्यक खाद्य सुरक्षा(कुरूक्षेत्र मार्च 2012 पेज नं. 23-28)
23. लेखराज (2000) :- दुर्ग जिले में कृषि एवं पोषण : एक भगौलिक अध्ययन (पेज नं. 152)
24. प्रो. मोदी के.एम. (2012) :- खाद्य सुरक्षा: चुनौतिया और समाधान (कुरूक्षेत्र मार्च 2012 पेज नं. 13-17)
25. नायर के. थलासीधरण (2008) :- टारगेटेड पब्लिक डिट्रीब्युशन इन फूड गैन्स स्टैन्ड ऑफ युटिलाजेशन बाई द ट्राईबल पापुलेशन इन केरला
26. पारिख के.एस. व वी.एस.व्यास (1994) :- हू गैट्स हाउ मच फ्राम पीडीएस हाउ इफैटिवली डस इट रीच टू पूवर ? सेवकसना जनवरी मार्च
27. पाणि नरेन्द्र (2013) :- खाद्य हेतु नगर सब्सिडी संरचना की भ्रांतियां (योजना फरवरी 2013 पेज नं. 19-21)
28. डॉ. रावत गजेन्द्र (2012) :- खाद्य सुरक्षा एवं सरकारी प्रयास (कुरूक्षेत्र मार्च 2012 पेज 18-22)
29. रावत यशवंत (2012) :- खाद्यान्न सुरक्षा के लिए जैविक खेती जरूरी (कुरूक्षेत्र मार्च 2012 पेज 29-34)
30. स्टैडिंग गार्ड (2013) :- नगद सुधार की राजनीति (योजना फरवरी 2013 पेज नं. 16-18)
31. डॉ. सावंत अनिता (2013) :- भोजन की बर्बादी से पहले सोचे (नवभारत रविवार अवकाश 2 जून 2013 पेज 1-4)

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

तालिका 1 – जिलेवार कोर पीडीएस की जानकारी

क्र.	जिले	कुल उ.मु.की संख्या	वुल उ.मु.दु. (कोर पीडीएस)	कुल राशनकार्ड(कोर पीडीएस) की संख्या	वर्तमान माह में सौदो की संख्या
1	बस्तर	421	412	195946	222324
2	बीजापुर	189	69	61160	19315
3	दन्तेवाड़ा	153	144	75070	26736
4	कांकेर	448	442	177742	147891
5	कोंडागांव	321	319	134283	132287
6	नारायणपुर	104	32	34165	7807
7	सुकमा	165	44	68302	13482
8	बिलासपुर	788	761	527847	395745
9	गौरेला-पेन्ड्रा-मरवाही				
10	जांजगीर चाम्पा	682	682	484496	410743
11	कोरबा	455	451	284384	210528
12	मुंगेली	372	368	221795	241328
13	रायगढ़	845	838	417003	363756
14	बालोद	442	442	191642	226335
15	बेमेतरा	414	412	216300	268315
16	दुर्ग	616	547	426364	336545
17	कवर्धा	487	483	238851	234585
18	राजनांदगांव	876	869	385123	377382
19	बलौदाबाजार	643	639	361425	210537
20	धमतरी	404	393	197113	221407
21	गरियाबंद	342	342	174849	118202
22	महासमुंद	582	577	315610	252534
23	रायपुर	670	582	490990	317473
24	बलरामपुर	421	491	188048	119593
25	जशपुर	446	444	216334	146301
26	कोरिया	349	648	171291	159221
27	सरगुजा	447	445	243489	255242
28	सूरजपुर	444	437	215403	193627
	कुल	**12526**	**11941**	**6715026**	**5629241**

तालिका 3 – विकासखण्डवार कोर पीडीएस की जानकारी

क्र.	विकासखण्ड	कुल उ.मु.द्ु.की संख्या	कुल उ.मु.द्ु. (कोर पीडीएस) की संख्या	कुल राशनकार्ड (कोर पीडीएस) की संख्या	वर्तमान माह में कुल सौदों की संख्या
1	बिल्हा ग्रामीण	145	145	110106	99119
2	मस्तूरी ग्रामीण	127	126	93862	80552
3	कोटा ग्रामीण	103	103	55151	56464
4	तखतपुर ग्रामीण	119	119	76141	49508
5	मरवाही ग्रामीण	77	76	38889	23579
6	पेण्ड्रा ग्रामीण	40	40	22241	7035
7	गौरेला ग्रामीण	1	1	93	0
8	गौरेला शहरी	5	5	4902	1578
9	पेण्ड्रा शहरी	4	4	3838	916
10	मल्हार शहरी	5	5	2564	0
11	सिरगिट्टी शहरी	8	7	5135	4906
12	तिफरा शहरी	7	7	6885	4250
13	सकरी शहरी	1	1	3263	1023
14	तखतपुर शहरी	5	5	5225	2657
15	बोदरी शहरी	3	3	5048	2553
16	बिल्हा शहरी	4	4	2961	2615
17	रतनपुर शहरी	9	9	6799	2269
18	कोटा शहरी	8	8	4995	3864
19	बिलासपुर शहरी	117	93	79749	52857
	कुल	**788**	**761**	**527847**	**395745**

****

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के योगदान का बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड के सर्वेक्षित ग्रामों में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के उपभोग की मदें और उपभोग क्रिया को प्रभावित करने वाले कारकों में एक अध्ययन

डॉ. के.के.शर्मा *

शोध सारांश –अध्ययन क्षेत्र बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड में इस योजना के अंतर्गत अनुसूचित जनजाति के कुल 175 परिवार एवं अनुसूचित जाति के 45 परिवार लाभान्वित हुए योजना का इस वर्ग के उत्थान में वास्तविक योगदान ज्ञात करने के लिए योजना से लाभान्वित न होने वाले (गैर हितग्राही) अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के कमश: 175 एवं 45 गैर हितग्राही परिवारों को भी अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। जिसमें स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजागर योजना का अनुसूचित जाति एवं जनजाति के आर्थिक उत्थान में योगदान ठीक-ठीक ज्ञात किया जा सके। प्रस्तुत शोध पत्र में बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड के अन्तर्गत कुल 81 ग्राम पंचायतों में से 25 ग्राम पंचायतों का चयन दैव निर्दशन पद्धति से किया गया तथा चयनित ग्राम पंचायतों के स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना द्वारा लाभान्वित अनुसूचित जाति एवं जनजाति के समस्त हितग्राहियों (स्वरोजगारियों) को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। इस प्रकार अनुसूचित जाति के 45 एवं अनुसूचित जनजाति के 175 परिवारों का अध्ययन किया गया है। जिनसे प्रश्नावली, अनुसूची साक्षात्कार एवं अवलोकन द्वारा जानकारियाँ प्राप्त कर उनका बिन्दुवार विश्लेषण किया गया है।

शब्द कुँजी – ट्राइसेम- ग्रामीण युवा रोज़गार प्रशिक्षण कार्यक्रम, डवाकरा- ग्रामीण महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम, एम.डब्लू.एस.- दस लाख कुओं की योजना, अजजा- अनुसूचित जनजाति, अजा- अनुसूचित जाति, S.G.S.Y- स्वर्ण जयन्ती ग्राम श्रोज़गार योजना, आई.आर.डी.पी.- समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, जे.के.एल.- गंगा कल्याण योजना, एस.एच.जी.- स्व-सहायता समूह, डी.आर.डी.ए- जिला ग्रामीण विकास अभिकरण, J.R.Y.। जवाहर रोजगार योजना।

प्रस्तावना – अर्थशास्त्र साधारण जीवन व्यवसाय के मनुष्य की क्रियाओं का अध्ययन है। यह इस बात का पता लगाता है कि वह किस प्रकार आय प्राप्त करता है और किस प्रकार उपभोग करता है। इस प्रकार एक ओर तो धन का अध्ययन है और दूसरी ओर, अधिक महत्वपूर्ण दिशा में मनुष्य के अध्ययन का भाग है। सर्वेक्षित क्षेत्र के आर्थिक अध्ययन में आय के साथ-साथ उपभोग व्यय का अध्ययन आवश्यक है। अत: अनुसुचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के हितग्राही एवं गैर हितग्राहियों की वार्षिक उपभोग क्रिया में विभिन्न मदों पर व्यय किस क्रम में है तथा प्रत्येक मद पर व्यय में योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् क्या अंतर आया है? इसका विश्लेषण किया गया है। उपभोग व्यय में प्रमुख रूप से अनाज, अन्य खाद्यान, वस्त्र आवास, ईंधन एवं प्रकाश, शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन, मादक पदार्थ, सांस्कृति परम्पराए, यात्रा एवं परिवहन शामिल किया गया है, कुछ मदों पर दैनिक, मासिक एवं वार्षिक व्यय किया जाता है। परन्तु ग्रामीण परिवार के उपभोग व्यय का वैज्ञानिक मौद्रिक मूल्यांकन संभव नहीं है। अत: उपभोग वस्तुओं एवं सेवाओं के प्रचलित बाजार मूल्यों के आधार पर इसका आँकलन किया गया है, कुल आय, कुल व्यय एवं कुल बचत का योग होता है। कुल बचत ऋणात्मक एवं धनात्मक दोनों हो सकते हैं, यदि आय की तुलना में व्यय अधिक है तो ऋणात्मक बचत होती है तथा आय की तुलना में व्यय कम है, तो धनात्मक बचत होती है। कृषि पुन: निवेश को व्यय में शामिल नहीं किया गया है, क्योंकि आय आँकलन के समय शुद्ध प्राप्तियों को लिया गया है।

अध्ययन अवधि में सर्वेक्षित क्षेत्र अनुसूचित जनजाति के हितग्राही एवं गैर हितग्राही परिवारों के उपभोग की मदों में परिवर्तन:- सारणी क्रमांक-1 से स्पष्ट है कि क्षेत्र के अनुसूचित जनजाति के 175 हितग्राही के औसत प्रति परिवार का कुल वार्षिक उपभोग पर व्यय 2006-07 में 185800 रूपया था। जिसमें से अनाज पर 18.84 प्रतिशत, अन्य खाद्यान्न 20.45 प्रतिशत, वस्त्र 04.31 प्रतिशत, आवास 04.84 प्रतिशत, ईधन प्रकाश 01.94 प्रतिशत, शिक्षा 0.38 प्रतिशत, स्वास्थ्य 16.15 प्रतिशत, मनोरंजन 01.35 प्रतिशत, मादक पदार्थ 09.69 प्रतिशत, सांस्कृतिक परम्पराएँ 03.23 प्रतिशत, यात्रा एवं परिवहन 13.46 प्रतिशत एवं अन्य सेवाओं पर 05.38 प्रतिशत राशि व्यय की गयी। अगर कुल उपभोग को खाद्यान्न एवं अखाद्यान दो मदों में अलग कर के देखें तो खाद्यान्न मद में 39.29 प्रतिशत एवं अखाद्यान मद में 60.71 प्रतिशत व्यय किया गया।

सारणी क्रमांक 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आरेख क्र. - 1

*प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डी. पी. विप्र महाविद्यालय, बिलासपुर (छत्तीसगढ़) भारत

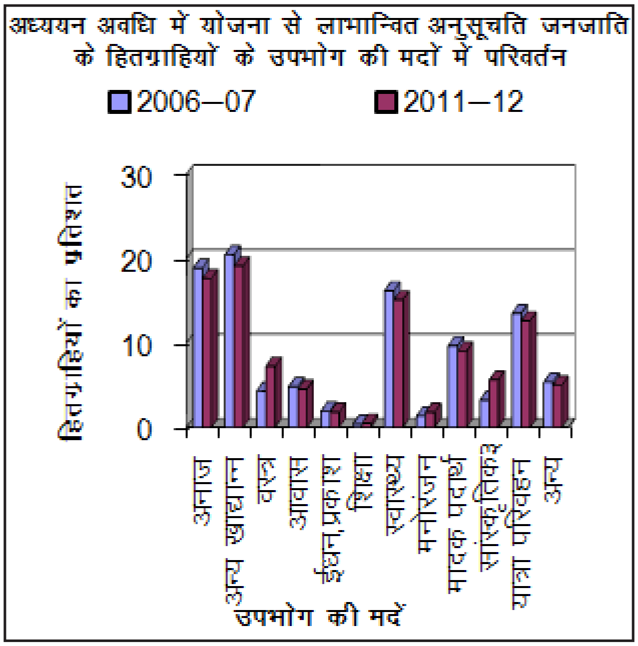

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना से सहायता के पश्चात् वर्ष 2011-12 में प्रति परिवार कुल वार्षिक उपभोग व्यय बढ़कर 248450 रूपया हो गया, जिसमें से 17.61 प्रतिशत, अन्य खाद्यान्न 19.12 प्रतिशत, वस्त्र 07.24 प्रतिशत, आवास 04.53 प्रतिशत, ईंधन प्रकाश 01.81 प्रतिशत, शिक्षा 0.48 प्रतिशत, स्वास्थ्य 15.09 प्रतिशत, मनोरंजन 01.81 प्रतिशत, मादक पदार्थ 09.06 प्रतिशत, सांस्कृतिक परम्पराएँ 05.63 प्रतिशत, यात्रा एवं परिवहन 12.58 प्रतिशत एवं अन्य सेवाओं पर 05.03 प्रतिशत राशि व्यय की गयी। अगर कुल उपभोग को खाद्यान एवं अखाद्यान दो मदों में अलग कर के देखें तो खाद्यान्न मद में 36.73 प्रतिशत एवं अखाद्यान मद में 63.27 प्रतिशत व्यय किया गया।

आरेख क्र. - 2

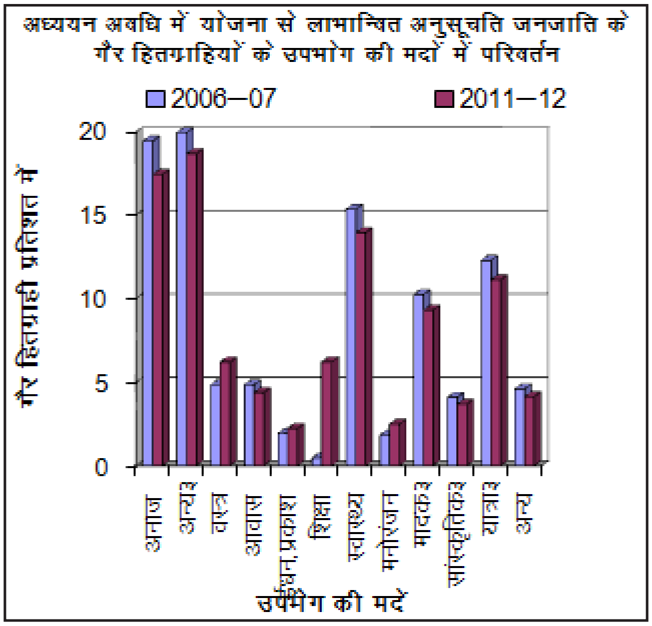

विश्लेषण से स्पष्ट है कि अनुसूचित जनजाति के हितग्राही योजना का लाभ लेने के पश्चात् अनाज, अन्य खाद्यान्न, आवास, इंधन, स्वाथ्य, मादक पदार्थ, परिवहन एवं अन्य मदों में व्यय प्रतिशत में ऋणात्मक परिवर्तन दर्ज किया गया। वहीं वस्त्र, शिक्षा, मनोरंजन एवं सांस्कृतिक परम्पराएँ मदों में व्यय प्रतिशत में धनात्मक परिवर्तन दर्ज किया गया। सारणी से यह भी स्पष्ट है कि क्षेत्र के अनुसूचित जनजाति के 175 गैर हितग्राही परिवारों के औसत प्रति परिवार कुल वार्षिक उपभोग पर व्यय 2006-07 में 195300 रू. था। जिसमें से अनाज पर 19.46 प्रतिशत, अन्य खाद्यान 19.97 प्रतिशत, वस्त्र 04.86 प्रतिशत, आवास 04.86 प्रतिशत, ईधन प्रकाश 01.95 प्रतिशत, शिक्षा 0.46 प्रतिशत, स्वास्थ्य 15.36 प्रतिशत, मनोरंजन 01.84 प्रतिशत, मादक पदार्थ 10.24 प्रतिशत, सांस्कृतिक परम्पराएँ 04.10 प्रतिशत, यात्रा एवं परिवहन 12.29 प्रतिशत एवं अन्य सेवाओं पर 04.61 प्रतिशत राशि व्यय किया गया। अगर कुल उपभोग को खाद्यान एवं अखाद्यान दो मदों में अलग कर के देखें तो खाद्यान्न मद में 39.43 प्रतिशत एवं अखाद्यान मद में 60.57 प्रतिशत व्यय किया गया। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना से सहायता के पश्चात् वर्ष 2011-12 में प्रति परिवार कुल वार्षिक उपभोग व्यय बढ़कर 240700 रूपया हो गया, जिसमें से 17.45 प्रतिशत, अन्य खाद्यान्न 18.17 प्रतिशत, वस्त्र 06.23 प्रतिशत, आवास 04.40 प्रतिशत, ईधन प्रकाश 02.24 प्रतिशत, शिक्षा 06.23 प्रतिशत, स्वास्थ्य 13.96 प्रतिशत, मनोरंजन 02.49 प्रतिशत, मादक पदार्थ 09.31 प्रतिशत, सांस्कृतिक परम्पराएँ 03.70 प्रतिशत, यात्रा एवं परिवहन 11.13 प्रतिशत एवं अन्य सेवाओं पर 04.15 प्रतिशत राशि व्यय किया गया। अगर कुल उपभोग को खाद्यान एवं अखाद्यान दो मदों में अलग कर के देखें तो खाद्यान मद में 36.14 प्रतिशत एवं अखाद्यान मद में 63.86 प्रतिशत व्यय किया गया। विश्लेषण से स्पष्ट है कि अनुसूचित जनजाति के हितग्राही योजना का लाभ लेने के पश्चात् अनाज, अन्य खाद्यान, आवास, स्वाथ्य, मादक पदार्थ, परिवहन सांस्कृतिक परम्पराएँ एवं अन्य मदों में व्यय प्रतिशत में ऋणात्मक परिवर्तन दर्ज की गई है। वहीं वस्त्र, शिक्षा, मनोरंजन एवं इंधन मदों में व्यय प्रतिशत में धनात्मक परिवर्तन दर्ज की गई है। इससे स्पष्ट होता है कि अनुसूचित जनजाति के हितग्राही एवं गैर हितग्राहियों ने आय में वृद्धि के साथ-साथ भोज्य पदार्थो पर व्यय कम करके अभोज्य पदार्थो पर व्यय को बढ़ाया है।

अध्ययन अवधि में सर्वेक्षित क्षेत्र अनुसूचित जाति के हितग्राही एवं गैर हितग्राही परिवारों के उपभोग की मदों में परिवर्तन:- सारणी क्रमांक-2 से स्पष्ट है कि क्षेत्र के अनुसूचित जाति के 45 हितग्राही के औसत प्रति परिवार का कुल वार्षिक उपभोग पर व्यय 2006-07 में 198500 रूपया था। जिसमें से अनाज पर 19..40 प्रतिशत, अन्य खाद्यान 19.85 प्रतिशत, वस्त्र 04.43 प्रतिशत, आवास 04.63 प्रतिशत, ईधन प्रकाश 01.96 प्रतिशत, शिक्षा 0.46 प्रतिशत, स्वास्थ्य 16.12 प्रतिशत, मनोरंजन 01.31 प्रतिशत, मादक पदार्थ 09.57 प्रतिशत, सांस्कृतिक परम्पराएँ 03.12 प्रतिशत, यात्रा एवं परिवहन 13.10 प्रतिशत एवं अन्य सेवाओं पर 06.05 प्रतिशत राशि व्यय की गयी। अगर कुल उपभोग को खाद्यान्न एवं अखाद्यान दो मदों में अलग कर के देखें तो खाद्यान मद में 39.24 प्रतिशत एवं अखाद्यान मद में 60.76 प्रतिशत व्यय किया गया। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना से सहायता के पश्चात् वर्ष 2011-12 में प्रति परिवार कुल वार्षिक उपभोग व्यय बढ़कर 250500 रूपया हो गया, जिसमें से 19.20 प्रतिशत, अन्य खाद्यान्न 19.24 प्रतिशत, वस्त्र 07.19 प्रतिशत, आवास 04.59 प्रतिशत, ईधन प्रकाश 01.92 प्रतिशत, शिक्षा 0.48 प्रतिशत, स्वास्थ्य 15.57 प्रतिशत, मनोरंजन 01.80 प्रतिशत, मादक

पदार्थ 05.07 प्रतिशत, सांस्कृतिक परम्पराएँ 05.59 प्रतिशत, यात्रा एवं परिवहन 12.97 प्रतिशत एवं अन्य सेवाओं पर 05.99 प्रतिशत राशि व्यय की गयी। अगर कुल उपभोग को खाद्यान एवं अखाद्यान दो मदों में अलग कर के देखें तो खाद्यान मद में 38.44 प्रतिशत एवं अखाद्यान मद में 61.56 प्रतिशत व्यय किया गया।

सारणी क्रमांक 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आरेख क्र. - 3

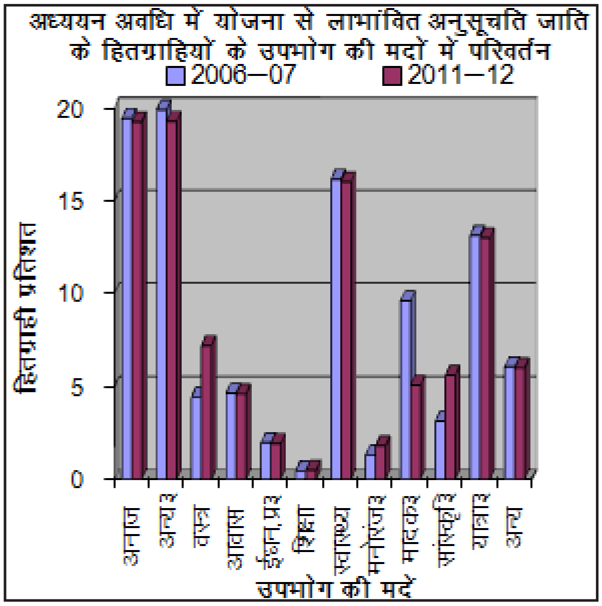

विश्लेषण से स्पष्ट है कि अनुसूचित जनजाति के हितग्राही योजना का लाभ लेने के पश्चात् अनाज, अन्य खाद्यान, इंधन, स्वाथ्य, मादक पदार्थ, परिवहन एवं अन्य मदों में व्यय प्रतिशत में ऋणात्मक परिवर्तन दर्ज किया गया। वहीं वस्त्र, शिक्षा, मनोरंजन एवं सांस्कृतिक परम्पराएँ मदों में व्यय प्रतिशत में धनात्मक परिवर्तन दर्ज किया गया।

आरेख क्र. - 4

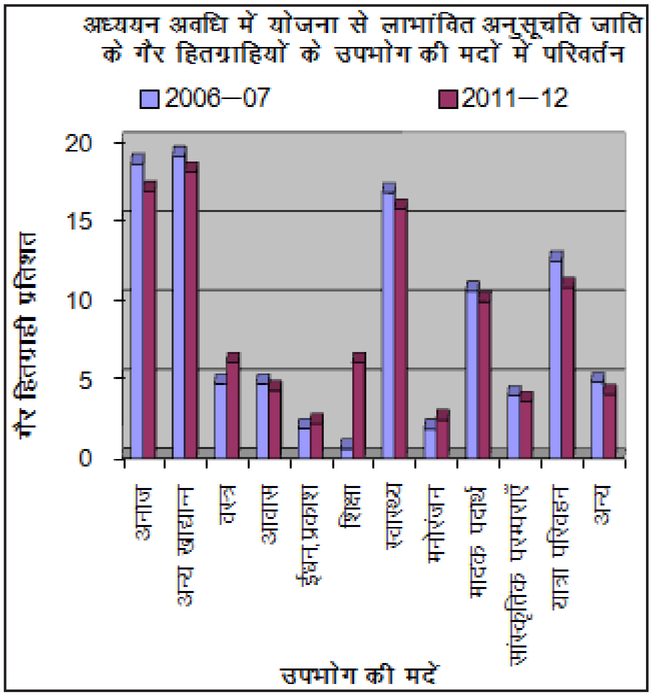

सारणी क्रमांक-1.2 से यह भी स्पष्ट है कि क्षेत्र के अनुसूचित जनजाति के 45 गैर हितग्राही परिवारों के औसत प्रति परिवार कुल वार्षिक उपभोग पर व्यय 2006-07 में 208300 रूपया था। जिसमें से अनाज पर 18.63 प्रतिशत, अन्य खाद्यान्न 19.11 प्रतिशत, वस्त्र 04.70 प्रतिशत, आवास 04.70 प्रतिशत, ईधन प्रकाश 01.87 प्रतिशत, शिक्षा 0.58 प्रतिशत, स्वास्थ्य 16.80 प्रतिशत, मनोरंजन 01.82 प्रतिशत, मादक पदार्थ 10.56 प्रतिशत, सांस्कृतिक परम्पराएँ 03.94 प्रतिशत, यात्रा एवं परिवहन 12.48 प्रतिशत एवं अन्य सेवाओं पर 04.80 प्रतिशत राशि व्यय की गयी। अगर कुल उपभोग को खाद्यान एवं अखाद्यान दो मदों में अलग कर के देखें तो खाद्यान्न मद में 37.73 प्रतिशत एवं अखाद्यान मद में 62.27 प्रतिशत व्यय किया गया।

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना से सहायता के पश्चात् वर्ष 2011-12 में प्रति परिवार कुल वार्षिक उपभोग व्यय बढ़कर 248500 रूपया हो गया, जिसमें से 16.90 प्रतिशत, अन्य खाद्यान्न 18.11 प्रतिशत, वस्त्र 06.04 प्रतिशत, आवास 04.27 प्रतिशत, ईधन प्रकाश 02.17 प्रतिशत, शिक्षा 06.04 प्रतिशत, स्वास्थ्य 15.77 प्रतिशत, मनोरंजन 02.41 प्रतिशत, मादक पदार्थ 09.90 प्रतिशत, सांस्कृतिक परम्पराएँ 03.58 प्रतिशत, यात्रा एवं परिवहन 10.78 प्रतिशत एवं अन्य सेवाओं पर 04.02 प्रतिशत राशि व्यय की गयी। अगर कुल उपभोग को खाद्यान एवं अखाद्यान दो मदों में अलग कर के देखें तो खाद्यान्न मद में 35.01 प्रतिशत एवं अखाद्यान्न मद में 64.99 प्रतिशत व्यय किया गया। विश्लेषण से स्पष्ट है कि अनुसूचित जनजाति के हितग्राही योजना का लाभ लेने के पश्चात् अनाज, अन्य खाद्यान्न, आवास, स्वाथ्य, मादक पदार्थ, परिवहन सांस्कृतिक परम्पराएँ एवं अन्य मदों में व्यय प्रतिशत में ऋणात्मक परिवर्तन दर्ज की गई है। वहीं वस्त्र, शिक्षा, मनोरंजन एवं इंधन मदों में व्यय प्रतिशत में धनात्मक परिवर्तन दर्ज किया गया। इससे स्पष्ट होता है कि अनुसूचित जनजाति के हितग्राही एवं गैर हितग्राहियों ने भोज्य पदार्थो पर व्यय कम करके अभोज्य पदार्थों पर व्यय को बढ़ाया है।

उपभोग किया को प्रभावित करने वाले कारक:-सर्वेक्षित क्षेत्र में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के हितग्राही - गैर हितग्राही परिवारों के उपभोग व्यय में वृद्धि हुई है। अनुसूचित जनजाति के हितग्राही परिवारों प्रति परिवार कुल वार्षिक उपभोग व्यय 2006-07 में 185800 रूपया था जो बढ़कर 2011-12 में 248450 रूपया हो गया। इस दौरान 62650 रूपया की वृद्धि हुई। वहीं गैर हितग्राही परिवारों प्रति परिवार कुल वार्षिक उपभोग व्यय 2006-07 एवं 2011-12 में कमश: 195300 एवं 240700 हो गया। इस दौरान 45100 रूपया की वृद्धि पायी गयी है। अनुसूचित जाति के हितग्राही परिवारों प्रति परिवार कुल वार्षिक उपभोग व्यय 2006-07 में 198500 रूपया था जो बढ़कर 2011-12 में 250500 रूपया हो गया। इस दौरान 52000 रूपया की वृद्धि हुई। वहीं गैर हितग्राही परिवारों प्रति परिवार कुल वार्षिक उपभोग व्यय 2006-07 एवं 2011-12 में कमश: 208300 एवं 248500 हो गया। इस दौरान 40200 रूपया की वृद्धि पायी गयी है। आय स्तर पर उपभोग क्रिया से धनात्मक संबंध होता है। जैसे-जैसे आय बढ़ती है उपभोग व्यय भी बढ़ने लगता है। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना से आय स्तर में सुधार हुआ लेकिन उपभोग किया के प्रतिकूल होने से आर्थिक विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। उपभोग किया में सर्वाधिक वस्त्र, आवास ईधन/प्रकाश, शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन, सांस्कृतिक परम्पराएँ आदि पर प्रभाव पड़ा, उच्च

आय वर्ग से प्रभावित होकर निम्न आय वर्ग के लोगों में फैशन की प्रतियोगिता सी आ गयी है। उच्च आय वर्ग के लोगों की गलत आदतों की तो नकल कर लेते है लेकिन उनकी अच्छाईयों का अनुसरण नहीं करते जिससे उपभोग किया पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। सर्वेक्षित क्षेत्र में उपभोक्ताओं का शिक्षा स्तर काफी पिछड़ा हुआ पाया गया। जिससे उपभोक्ताओं में जागरूकता का अभाव है, इसलिए आय बढ़ने के बावजूद भी उपभोग किया में सुधार नहीं कर पाये जिससे बढ़ी हुई आय को संतुलित आहार पर व्यय करने के बजाय अन्य मदों पर अनावश्यक व्यय करते है। जिससे अनिवार्य आवश्यकता की वस्तुओं पर व्यय घटने लगता है सर्वेक्षित क्षेत्र की अनुसूचित जनजाति के हितग्राही परिवारों में अधिकतर यही स्थिति है। भोज्य पदार्थ मद में कटौती से भोजन (खान-पान) का स्तर निम्न होने लगा है। जिससे कार्यक्षमता में कमी आने लगी है। उपभोग किया को सही दिशा देने में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान है। जिन परिवारों में शिक्षा स्तर अच्छा है उनकी उपभोग किया अच्छी स्थिति में है। आदत एवं रूचि भी उपभोग क्रिया को प्रभावित करती है, उपभोक्ता आदत एवं रूचि के अनुसार ही उपभोग क्रिया को परिवर्तित कर लेता है, यदि उपभोक्ता की आदत सृजनात्मक हो तो विकास करेगा। उपभोग किया को जनांकिकीय तत्व भी प्रभावित करता है। आय की तुलना में परिवार का आकार बड़ा एवं अधिक भारित होने से प्रति व्यक्ति की उपभोग क्रिया कम होने लगती है जबकि कम आय पर भी छोटे परिवारों की उपभोग किया का स्तर उच्च हो जाता है। रोजगार का स्तर एवं व्यवसायिक ढांचा भी उपभोग किया में परिवर्तन लाता है, क्षेत्र के अधिकांश परिवार कृषि से जुडे हुए है, जिनकी आय प्रकृति पर निर्भर है, यदि प्रकृति अनुकूल हो गयी तो आय उपभोग एवं बचत बढ़ेगी अन्यथा इनमें गिरावट होने लगती है, ऋण या सम्पत्ति विक्रय कर जीवकोपार्जन करना पड़ता है, साथ ही इन परिस्थितियों में ऋण ग्रस्तता बढ़ जाती है। लोगों का कृषि के प्रति मोह से व्यवसायिक परिवर्तन क्षेत्र में कम है। सर्वेक्षित क्षेत्र में अनुसूचित जनजाति के लोगों की मनोवृत्ति संतोषी है। जिसके कारण आय एवं उपभोग क्रिया में सुधार नहीं हो पाया। वे अपनी यथा स्थिति में बने रहना चाहते हैं, जो कि आर्थिक विकास में बाधक है।उपभोग क्रिया को प्रभावित करने वाले कारक आपस में एक दूसरे को भी प्रभावित करते है उपभोग क्रिया की विभिन्न मदों में व्यय कम का भी प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है कुछ मदें उपभोग क्रिया को सही दिशा प्रदान करती है तथा कुछ मदें उपभोग क्रिया को गलत दिशा में मोड़ देती हैं, जिससे आर्थिक विकास प्रभावित होता है।

सर्वेक्षित क्षेत्र की जनजाति की परिवारिक आय, उपभोग व्यय, बचत की प्रवृत्ति:-सर्वेक्षित ग्राम पंचायतों की अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के न्यायदर्श परिवारों की कुल आय, कुल व्यय तथा कुल बचत को वर्ष 2006-07 और 2011-12 के आधार पर परिवर्तन का अध्ययन किया गया है, साथ में प्रति परिवार औसत आय, व्यय एवं बचत को भी प्रदर्शित किया गया है क्षेत्र की अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों एवं गैर हितग्राहियों की परिवारिक आय, उपभोग, व्यय की प्रवृत्ति को सारणी क्रमांक-3 में प्रदर्शित किया गया है।

सारणी क्रमांक-3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

सारणी क्रमांक 3 से स्पष्ट है कि अनुसूचित जनजाति के हितग्राही परिवारों की प्रति परिवार वार्षिक आय 2006-07 में 122000 रूपया थी जो 2011-12 में बढ़कर 297000 रूपया हो गयी इस दौरान प्रति परिवार औसत आय में 175000 रूपया की वृद्धि हो गयी। इन परिवारों में औसत उपभोग व्यय प्रति वर्ष प्रति परिवार 2006-07 में 185800 रूपया था जो 2011-12 में बढ़कर 248550 रूपया हो गया। प्रति परिवार औसत व्यय अध्ययन के दौरान 62750 रूपया की वृद्धि हुई। इन्हीं परिवारों की प्रति परिवार औसात वार्षिक बचत 2006-07 में -63800 रूपया थी जो 2011-12 में 48450 रूपया हो गयी। अर्थात अध्ययन के प्रारंभिक वर्षो में प्रति परिवार प्रतिवर्ष 63800 रूपया उधार लेकर अपना भरण पोषण करते थे। योजना से लाभान्वित होकर अध्ययन के अंतिम वर्ष 2011-12 में 48450 रूपये प्रति परिवार औसत रूप से बचत करने लगे। वहीं अनुसूचित जनजाति के गैर हितग्राही परिवारों की प्रति परिवार वार्षिक आय 2006-07 में 95000 रूपया थी जो 2011-12 में बढ़कर 162000 रूपया हो गयी इस दौरान प्रति परिवार औसत आय में 67000 रूपया की वृद्धि हो गयी। इन परिवारों में औसत उपभोग व्यय प्रति वर्ष प्रति परिवार 2006-07 में 195300 रूपया था जो 2011-12 में बढ़कर 240700 रूपया हो गया। प्रति परिवार औसत व्यय अध्ययन के दौरान 45400 रूपया की वृद्धि हुई। इन्हीं परिवारों की प्रति परिवार औसत वार्षिक बचत 2006-07 में -100300 रूपया थी जो 2011-12 में -78700 रूपया हो गयी। अर्थात अध्ययन के अध्ययन अवधि में 21600 की धनात्मक परिवतन आया किन्तु योजना के लाभान्वित परिवारों की 112250 रू. की तुलना में बहुत कम है। इससे योजना का आर्थिक उत्थान में योगदान स्पष्ट होता है। सारणी क्रमांक 1.3 से यह भी स्पष्ट है कि अनुसूचित जाति के हितग्राही परिवारों की प्रति परिवार वार्षिक आय 2006-07 में 86000 रूपया थी जो 2011-12 में बढ़कर 256000 रूपया हो गयी इस दौरान प्रति परिवार औसत आय में 170000 रूपया की वृद्धि हो गयी। इन परिवारों में औसत उपभोग व्यय प्रति वर्ष प्रति परिवार 2006-07 में 198500 रूपया था जो 2011-12 में बढ़कर 250500 रूपया हो गया। प्रति परिवार औसत व्यय अध्ययन के दौरान 52000 रूपया की वृद्धि हुई। इन्हीं परिवारों की प्रति परिवार औसत वार्षिक बचत 2006-07 में -112500 रूपया थी जो 2011-12 में 5500 रूपया हो गयी। अर्थात् अध्ययन के प्रारंभिक वर्षों में प्रति परिवार प्रतिवर्ष 112500 रूपया उधार लेकर अपना भरण पोषण करते थे। योजना से लाभान्वित होकर अध्ययन के अंतिम वर्ष 2011-12 में 5500 रूपये प्रति परिवार औसत रूप से बचत करने लगे। वहीं अनुसूचित जाति के गैर हितग्राही परिवारों की प्रति परिवार वार्षिक आय 2006-07 में 77000 रूपया थी जो 2011-12 में बढ़कर 160000 रूपया हो गयी इस दौरान प्रति परिवार औसत आय में 83000 रूपया की वृद्धि हो गयी। इन परिवारों में औसत उपभोग व्यय प्रति वर्ष प्रति परिवार 2006-07 में 208300 रूपया था जो 2011-12 में बढ़कर 248500 रूपया हो गया। प्रति परिवार औसत व्यय अध्ययन के दौरान 42200 रूपया की वृद्धि हुई। इन्हीं परिवारों की प्रति परिवार औसात वार्षिक बचत 2006-07 में -131300 रूपया थी जो 2011-12 में -88500 रूपया हो गयी अर्थात अध्ययन के अध्ययन अवधि में 42800 की धनात्मक परिवर्तन दर्ज किया गया, किन्तु योजना के लाभान्वित परिवारों की 118000 रू. की तुलना में बहुत कम है। इससे योजना का आर्थिक उत्थान में योगदान स्पष्ट होता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. पुस्तक :

1. Mishra, S.N. (2003). Rural Employment & Traysem : A Case study From Rajasthan, B.R. Pub., New Delhi.
2. Mishra, S.N. & Madan, G.R (1984) Rural Employment

& Trysem India's Developing Village, & Print House, Laucknow.
3. Murthy, K.L.N. (2003), Planning for Integrated Area Development : A Case Strudy from Andhra Pradesh, Atlantic Pub., New-Delhi.
4. Narayan, S. (2003), Dimensions of Development in Trabal: Bihar, B.R.Pub., Nwe Delhi.
5. Rajagopal, (2003), Indian Agriculture: An Analysis of Backword & Fore word linkages, B.R. Pub., New Delhi.
6. पन्त, जे.सी. (1984), *अर्थशास्त्र के सिद्धांत*, द्वितीय पूर्णत: संशोधित संस्करण, साहित्य भवन, आगरा
7. पन्त, जे.सी.(1989-90), *जनांकिकी*, 5वाँ संशोधित संस्करण, गोयल पब्लिशिंग हाऊस सुभाष, मेरठ - 2।
8. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम, के.पी.एम. (1990), *भारतीय अर्थव्यवस्था*, 20वाँ संस्करण।, एस.चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।
9. सुन्दरम, के.पी. एम. (1995), भारतीय अर्थव्यवस्था, 25वाँ संस्करण, श्रीचंद कंपनी लि. नई दिल्ली।
10. सिन्हा, वी.सी. एवं सिन्हा, पुष्पा (1989), *श्रम अर्थशास्त्र*, नेशनल पब्लिशिंग हाउस दरियागंज, नई दिल्ली।
11. श्रीवास्तव, एस.बी.(1985), *जनांकिकीय सिद्धांत*, तकनीकी एवं अध्ययन, चतुर्थ संस्करण, शिक्षा साहित्य प्रकाशन, मेरठ।

2. पत्रिका :

1. Devi, R.Uma, A Study on Swarnajayanti Gram Swarozgar Yojana Scheme in Generating Self – Employment opportunities, IJSST Vol.1 No.9
2. Karamvir. Appraisal of SGSY. Indian Streems Research Journal, July 2013, ISSN 2230-7850, Vol.-3.Issue-6.

3. शासकीय प्रकाशन एवं प्रतिवेदन:

1. Evaluation of SGSY in Selected Blocks of M.P., 2007, Planning Commission, New Delhi.
2. Report of the Committee on Credit Related Issued Under SGSY, February 2009, DoRD MoRD GOI.
3. वार्षिक रिपोर्ट 2010-11, योजना आयोग, भारत सरकार।
4. वार्षिक रिपोर्ट 2010-11, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।
5. वार्षिक रिपोर्ट 2011-12, योजना आयोग, भारत सरकार।
6. वार्षिक रिपोर्ट 2011-12, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।
7. विशेष रिपोर्ट, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं अनूसूचित जनजाति आयोग, भारत सरकार।

4. वेबसाइट :

1. www.rural.nic.in
2. www.planningcommission.gov.in
3. www.woridbank.org
4. www.cag.gov.in
5. www.indiastat.com

सारणी क्रमांक 1 : अध्ययन अवधि में योजना से लाभान्वित अनुसूचति जनजाति के हितग्राहियों एवं गैर हितग्राहियों के उपभोग की मदों में परिवर्तन

(राशि रूपये में)

क्र.	मद	अनुसूचित जनजाति हितग्राही परिवार					अनुसूचित जनजाति गैर हितग्राही परिवार				
		2006-07		2011-12		परिवर्तन	2006-07		2011-12		परिवर्तन
		राशि	प्रतिशत	राशि	प्रतिशत	प्रतिशत में	राशि	प्रतिशत	राशि	प्रतिशत	प्रतिशत में
1	अनाज	35000	18.84	43750	17.61	-1.23	38000	19.46	42000	17.45	-2.01
2	अन्य खाद्यान्न	38000	20.45	47500	19.12	-1.33	39000	19.97	45000	18.70	-1.27
योग खाद्यान्न		73000	39.29	91250	36.73	-2.56	77000	39.43	87000	36.14	-3.28
3	वस्त्र	8000	4.31	18000	7.24	2.94	9500	4.86	15000	6.23	1.37
4	आवास	9000	4.84	11250	4.53	-0.32	9500	4.86	10600	4.40	-0.46
5	ईधन,प्रकाश	3600	1.94	4500	1.81	-0.13	3800	1.95	5400	2.24	0.30
6	शिक्षा	700	0.38	1200	0.48	0.11	900	0.46	15000	6.23	5.77
7	स्वास्थ्य	30000	16.15	37500	15.09	-1.05	30000	15.36	33600	13.96	-1.40
8	मनोरंजन	2500	1.35	4500	1.81	0.47	3600	1.84	6000	2.49	0.65
9	मादक पदार्थ	18000	9.69	22500	9.06	-0.63	20000	10.24	22400	9.31	-0.93
10	सांस्कृतिक परम्पराएँ	6000	3.23	14000	5.63	2.41	8000	4.10	8900	3.70	-0.40
11	यात्रा परिवहन	25000	13.46	31250	12.58	-0.88	24000	12.29	26800	11.13	-1.15
12	अन्य	10000	5.38	12500	5.03	-0.35	9000	4.61	10000	4.15	-0.45
योग अभोज्य मद		**112800**	**60.71**	**157200**	**63.27**	**2.56**	**118300**	**60.57**	**153700**	**63.86**	**3.28**
कुल उपभोग व्यय		**185800**	**100**	**248450**	**100**	**0.00**	**195300**	**100**	**240700**	**100**	**0.00**

स्रोत:- सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त प्राथमिक आंकड़े

सारणी क्रमांक 2 : अध्ययन अवधि में योजना से लाभान्वित अनुसूचति जाति के हितग्राहियों एवं गैर हितग्राहियों के उपभोग की मदों में परिवर्तन

क्र.	मद	अनुसूचित जाति हितग्राही परिवार					अनुसूचित जाति गैर हितग्राही परिवार				
		2006-07		2011-12		परिवर्तन	2006-07		2011-12		परिवर्तन
		राशि	प्रतिशत	राशि	प्रतिशत	प्रतिशत में	राशि	प्रतिशत	राशि	प्रतिशत	प्रतिशत में
1	टनाज	38500	19.40	48100	19.20	-0.19	38800	18.63	42000	16.90	-1.73
2	अन्य खाद्यान्न	39400	19.85	48200	19.24	-0.61	39800	19.11	45000	18.11	-1.00
योग खाद्यान्न		77900	39.24	96300	38.44	-0.80	78600	37.73	87000	35.01	-2.72
3	वस्त्र	8800	4.43	18000	7.19	2.75	9800	4.70	15000	6.04	1.33
4	टावास	9200	4.63	11500	4.59	-0.04	9800	4.70	10600	4.27	-0.44
5	ईधन,प्रकाश	3900	1.96	4800	1.92	-0.05	3900	1.87	5400	2.17	0.30
6	शिक्षा	900	0.45	1200	0.48	0.03	1200	0.58	15000	6.04	5.46
7	स्वास्थ्य	32000	16.12	40000	15.97	-0.15	35000	16.80	39200	15.77	-1.03
8	म्नोरंजन	2600	1.31	4500	1.80	0.49	3800	1.82	6000	2.41	0.59
9	मादक पदार्थ	19000	9.57	12700	5.07	-4.50	22000	10.56	24600	9.90	-0.66
10	सांस्कृतिक परम्पराएँ	6200	3.12	14000	5.59	2.47	8200	3.94	8900	3.58	-0.36
11	यात्रा परिवहन	26000	13.10	32500	12.97	-0.12	26000	12.48	26800	10.78	-1.70
12	अन्य	12000	6.05	15000	5.99	-0.06	10000	4.80	10000	4.02	-0.78
योग अभोज्य मद		**120600**	**60.76**	**154200**	**61.56**	**0.80**	**129700**	**62.27**	**161500**	**64.99**	**2.72**
कुल उपभोग व्यय		**198500**	**100**	**250500**	**100**	**0.00**	**208300**	**100**	**248500**	**100**	**0.00**

स्रोतः- सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त प्राथमिक आंकड़े

सारणी क्रमांक-3अध्ययन अवधि में योजना से लाभान्वित अनुसूचति जनजाति एवं अनुसूचित जाति के हितग्राहियों एवं गैर हितग्राहियों के पारिवारिक आय, उपभोग व्यय एवं बचत की प्रवृत्ति

क्र.	जाति	न्यादर्श संख्या	कुल आय			कुल उपभोग व्यय			कुल बचत		
			2006 -07	2011 -12	परिवर्तन	2006 -07	2011 -12	परिवर्तन	2006 -07	2011 -12	परिवर्तन
1	अजजा	हितग्राही	122000	297000	175000	185800	248550	62750	-63800	48450	112250
		गैर हितग्राही	95000	162000	67000	195300	240700	45400	-100300	-78700	21600
2	अजा	हितग्राही	86000	256000	170000	198500	250500	52000	-112500	5500	118000
		गैर हितग्राही	77000	160000	83000	208300	248500	40200	-131300	-88500	42800

स्रोतः- सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त प्राथमिक आंकड़े

****

म्यांमार सीमा पर भारत की सुरक्षा चुनौतियां

संजय तिलकवार*

प्रस्तावना -

(जून 2015, म्यांमार सीमा में भारतीय सेना की सर्जिकल स्ट्राइक)

दक्षिणी एवं दक्षिण पूर्व एशिया के त्रि-संगम पर स्थित 'म्यांमार गणराज्य संघ' (बर्मा) भौगोलिक संरचना एवं सामरिक दृष्टिकोण से भारत की अपेक्षा छोटा किन्तु महत्वपूर्ण राष्ट्र है। भौगोलिक दृष्टिकोण से म्यांमार, तीन बड़े भू-खंडों अर्थात चीन, भारत और इंडोनेशिया के मध्य स्थित होकर 54 मिलियन की जनसंख्या वाला यह देश लगभग 6,76,578 वर्ग किलोमीटर सहित उत्तर में भारत-चीन की सीमा बिन्दु से दक्षिण में मलेशिया के तट तक फैला हुआ है। इस देश का अधिकतम भाग भूमध्य और कर्क रेखा के मध्य स्थित है एवं उत्तर से दक्षिण की ओर विस्तृत पर्वत श्रृंखलाएं तथा दक्षिण दिशा में हिंद महासागर, विशिष्ट भौगोलिक स्थलाकृतियों का निर्माण करने के साथ पड़ोसी देशों की सीमाओं को भी निश्चित् करती है। म्यांमार की अंतर्राष्ट्रीय भू-सीमाएं 5 देशों, भारत (1643 कि.मी.), चीन (2171 कि.मी.), बांग्लादेश (90 कि.मी.), थाईलैंड (1770 कि.मी.) एवं लाओस (235 कि.मी.) के साथ साझा करने के अतिरिक्त बंगाल की खाड़ी के माध्यम से 2,276 कि.मी. लंबी समुद्री सीमाओं से भी परस्पर जुड़ा हुआ है। म्यांमार के उत्तर-पूर्व में चीन, उत्तर-पश्चिम् में भारत और बांग्लादेश, पूर्व तथा दक्षिण पूर्व में लाओस और थाईलैंड एवं अंडमान सागर तथा बंगाल की खाड़ी दक्षिण और दक्षिण पश्चिम् में है। म्यांमार की तट रेखा 1930 किलोमीटर तथा स्थल सीमाओं की लम्बाई 5,876 किलोमीटर है, जो देश की कुल सीमा का एक तिहाई है। म्यांमार पूर्ण रूप से उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित होकर 10 से 28 डिग्री उत्तरी अक्षांश और 93 से 103 डिग्री पूर्वी देशान्तर रेखाओं के मध्य स्थित है। म्यांमार के दक्षिण-पश्चिम और दक्षिण में बंगाल की खाड़ी और अंडमान सागर तथा उत्तर में हेंगडुआन शान पर्वत चीन के साथ सीमा बनाते है। पटकोई पर्वत श्रृंखला, घने जंगल तथा बंगाल की खाड़ी, भारत और म्यांमार के मध्य प्राकृतिक सीमाओं को रेखांकित करती है तथा अपनी एक प्राकृतिक भौगोलिकता के कारण दोनों देश स्थलीय सीमाओं के अलावा समुद्री सीमाओं से भी परस्पर जुड़े हुए है। आसियान देशों के समूहों में से एकमात्र म्यांमार देश की सीमाएं पूर्वोत्तर राज्यों की सीमाओं से साझा करने से यह देश भारत के लिए दक्षिण-पूर्व एशिया का प्रवेश द्वार है, जो 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' के क्रियान्वयन में बेहतर आर्थिक एकीकरण का माध्यम होने के अतिरिक्त पूर्वोत्तर क्षेत्रों में सुरक्षा, शांति, स्थिरता, विकास एवं भौगोलिक रूप से म्यांमार की अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं पर चीन के सैन्य प्रभाव को संतुलित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है।

भौगोलिक दृष्टि से पूर्वोत्तर क्षेत्र भारत के मानचित्र पर एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्त्रातजिक स्थिति धारण किए हुए है, जो तीन तरफ से जटिल पहाड़ी, दुर्गम रास्ते और घने जंगलों से घिरा हुआ है। भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्रों का लगभग 90% भाग अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं से संलग्न हुआ है, जो जटिल भौगोलिक स्थिति के कारण सदैव संवेदनशील रहा है। भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्रों के 8 राज्यों में से 4 राज्य, अरूणाचल (520 कि.मी.), नागालैंड (215 कि.मी.), मणिपुर (398 कि.मी.) एवं मिजोरम (510 कि.मी.) संवेदनशील सहित रणनीतिक रूप से बेहद महत्वपूर्ण होकर म्यांमार की भू-सीमाओं से संलग्न है। भारत-म्यांमार के बीच मार्च, 1967 में हुए समझौते के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय भू-सीमाओं का निर्धारण व सीमांकन किया गया था, जिसके लिए दोनों देश वर्तमान में भी प्रतिबद्ध है एवं 1643 कि.मी. की लंबी स्थलीय सीमाओं में से 1472 कि.मी. के सीमांकन का कार्य पूर्ण हो चुका है, जिसमें से अरूणाचल का लोहित उपक्षेत्र- 136 कि.मी. और मणिपुर राज्य का कबाऊ घाटी-35 कि.मी. दो असीमांकित भाग है। दोनों देशों के संबंधों में सौहार्दता को इस तथ्य से देखा जा सकता है कि इतनी लंबी स्थल एवं समुद्री सीमा होने के बावजूद दोनों देशों के बीच आज तक सीमा संबंधी कोई विवाद नहीं हुआ है। इस प्रकार दोनों देशों की भौगोलिकता के आधार पर सुरक्षात्मक व सामरिक दृष्टिकोण से परस्पर द्विपक्षीय संबंधों का घनिष्ठ एवं सामंजस्यपूर्ण होना अत्यंत आवश्यक है।

चुनौतियां - भारत-म्यांमार की अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं की प्रकृति में एकरूपता न होने से दोनों देशों में विभिन्न खतरों की संभावनाओं के साथ विभिन्न भौतिक स्वरूप, स्थलाकृति तथा जलवायु संबंधी स्थितियां विद्यमान हैं। भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र में 200 से अधिक जनजातियों के नृजातीय समूह स्थानीय नागरिकों की अपेक्षा विशेष रूप से म्यांमार की सीमाओं से संलग्न क्षेत्रों में अर्थात सीमापार निवासरत् जनसमूहों के साथ अधिक जुड़ाव होने से इन नृजातीय समूहों और विभिन्न आतंकवादी संगठनों की अलग-अलग प्रकार की मांगों के कारण दशकों से सीमा सुरक्षा की चुनौतियां अत्यधिक चुनौतीपूर्ण हो गई है एवं राज्यों के विभिन्न बहुनस्ली और बहुसांस्कृतिक समूहों ने देश में विलय को पूरी तरह स्वीकार नहीं किया है तथा राजनीतिक रूप से विद्रोह और सशस्त्र हिंसा करने को तत्पर रहते हैं एवं इनके संघर्ष के

* शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

मूल कारक प्रत्येक राज्य में पृथ्क-पृथ्क होकर कुछ विशेषताएं एकसमान हैं। दोनों ही देश लगभग एक समय अंग्रजों की गुलामी से स्वतंत्र हुए और स्वतंत्रता के बाद से ही म्यांमार और भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्रों में जातीय विद्रोह, नस्ली-राजनीतिक, सशस्त्र हिंसा और अलगाववादी आंदोलन का उद्‌भव भारत की आंतरिक सुरक्षा, शांति और क्षेत्र में स्थिरता के लिए चुनौती बना हुआ है। दोनों देशों की सीमावर्ती सीमाएं अत्यंत दुर्गम व जटिल हैं।

इन क्षेत्रों में पहाड़ी इलाके, समतल मैदान, ऊंचे पर्वत, गहरी नदी धाराएं तथा घने जंगलों का फायदा उठाकर उग्रवादी संगठनों द्वारा अस्थायी शिविर बनाकर हथियारों व मादक पदार्थों की तस्करी, लूटपाट, जबरन वसूली, अपहरण, हत्याएं, सशस्त्र काडर की भर्ती व प्रशिक्षण, अवसंरचनात्मक संस्थापनाओं पर विस्फोट और हमलों जैसी अवैध गैर कानूनी घटनाओं को अंजाम देते हैं। पूर्वोत्तर क्षेत्रों में लगभग 40 उग्रवादी संगठन सक्रिय हैं, जिसमें से मुख्यत:, नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैंड-खापलांग (NSCN-K), नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैंड-इशाक मुइवा (NSCN-IM), यूनाईटेड लिबरेशन फ्रंट ऑफ असम (उल्फा), नेशनल डेमोक्रैटिक फ्रंट ऑफ बोडोलैंड (NDFB), पीपुल्स लिबरेशन आर्मी (PLA), कंग्लीपाक कम्युनिस्ट पार्टी (KCP), इस्लामिक नेशनल फ्रंट (INF) एवं मणिपुर पीपुल्स लिबरेशन फ्रंट (MPLF) आदि विद्रोही समूह म्यांमार के सीमावर्ती क्षेत्रों-दुर्गम पहाड़ी इलाकों और घने जंगलों में सुरक्षित ठिकानों से अपनी गतिविधियों को संचालित करते हैं, जिन्हें म्यांमार के सक्रिय विद्रोही संगठनों विशेषकर-काचिन इंडिपेंडेंस आर्मी (KIA) और अराकान आर्मी (AA) से सहायता प्राप्त होती रही है। भारत सरकार द्वारा समय समय पर म्यांमार के साथ इन संगठनों के नेताओं की मौजूदगी का मुद्दा उठाया जाता रहा है अपितु म्यांमार के साथ प्रत्यर्पण संधि के अभाव में इस दिशा में अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं हुए हैं। इसके अतिरिक्त भारत-म्यांमार दोनों देशों की सीमाओं के अंदर 16 कि.मी. तक स्वतंत्र रूप से प्रदान की गई मुक्त आवागमन व्यवस्था (Free Movement Regime:FMR) तथा सीमावर्ती व्यापार व हॉट बाजार और म्यांमार सीमा से अवैध प्रवासियों का गुप्त तरीके से चोरी-छिपे अथवा असंवैधानिक रूप से भारतीय सीमा में प्रवेश करना भी सुरक्षात्मक दृष्टिकोण से क्रियाकलापों का नियंत्रण अत्यधिक चुनौतीपूर्ण बना हुआ है जिसे म्यांमार की रोहिंग्या समस्या से समझा जा सकता है। दोनों में से कोई भी देश एक दूसरे की सुरक्षा स्थिति के प्रतिकूल प्रभाव से अप्रभावित नहीं रह सकता है।

भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्रों के उग्रवादी संगठनों को म्यांमार की पश्चिमी सीमाओं से प्राप्त होने वाला सुरक्षित आश्रय, सुगम आसूचना नेटवर्क की उपलब्धता और आर्थिक सहयोग आतंकवाद के सबसे महत्वपूर्ण कारकों में से एक है जिससे दोनों देशों के कई उग्रवादी संगठन समग्र रूप से समृद्ध हुए हैं, जो आतंकी गतिविधियों को जारी रखने में सहायता प्रदान करते हैं। मणिपुर राज्य के सीमावर्ती क्षेत्र के समीप भौगोलिक रूप से स्वर्णिम त्रिभुजाकार की स्थिति निर्मित होने से म्यांमार, लाओस एवं थाईलैंड देश की सीमाओं की संलग्नता और आर्थिक सहायता से इन संगठनों को स्थिर रखने में मजबूती प्राप्त हो रही है। आर्थिक सहायता के अतिरिक्त इन संगठनों को अवैध हथियारों की आपूर्ति, दक्षिण पूर्व एशियाई देशों द्वारा म्यांमार के सीमावर्ती क्षेत्र तामू और मांडले शहरों के माध्यम से की जाती है।

कार्यवाहियां – भारत द्वारा इन चुनौतियों से निपटने के लिए बड़े पैमाने पर राजनीतिक एवं कूटनीतिक प्रयास के साथ-साथ आवश्यकतानुसार सैन्य कार्यवाहियों का भी सहारा लिया जा रहा है। 4 जून 2015 को मणिपुर राज्य के चंदेल जिले में आतंकियों द्वारा भारतीय सेना के 6 डोगरा रेजीमेंट दल पर गश्त दौरान किए गए घातक हमले में 18 जवान शहीद हो गए थे। यह हमला विगत दस वर्षों में भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्रों में हुए आतंकी हमलों में सबसे खतरनाक था। भारतीय सेना को सटीक गुप्तचर प्रणाली सूचना-तंत्र के आधार पर ज्ञात हुआ कि सबसे बड़े उग्रवादी संगठन नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैंड-खापलांग (NSCN-K) मणिपुर-म्यांमार सीमा की नागा हिल्स के समीप पोन्यू इलाके के उखरूल क्षेत्र में अस्थायी शिविर बनाकर सक्रिय है। हमले की जबावी सामरिक कार्यवाही को अंजाम देने के लिए गृहमंत्री राजनाथ सिंह की अध्यक्षता वाली बैठक में रक्षा मंत्री मनोहर पर्रिकर, राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल, सेना प्रमुख दलबीर सिंह और अन्य अधिकारियों द्वारा योजना को अंतिम रूप दिया जाकर 7 जून को प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी की स्वीकृति प्राप्त होने पर 10 जून 2015 को भारतीय वायुसेना और थलसेना के 21 पैरा-एस.एफ. दल के 70 कमांडों ने मुख्य रूप से ध्रुव हेलीकॉप्टर, राकेट लांचर, ग्रेनेड और नाईट-विजन चश्मे के उपयोग से मात्र 8 घंटे में इस सामरिक कार्यवाही को पूर्ण कर उग्रवादी संगठन के लगभग 158 आतंकियों को हताहत कर सभी शिविरों को नष्ट कर दिया एवं कोई भी भारतीय सैनिक घायल नही हुआ और न ही किसी नागरिक को कोई नुकसान पहुंचा था। भारतीय सेना ने निर्धारित योजना अनुरूप बिना पूर्वसूचना के म्यांमार की सीमाओं को पार करते हुए इस सामरिक कार्यवाही को सफलतापूर्वक पूर्ण किया था।

भारत सरकार द्वारा वर्ष 1997 में नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैंड-इशाक मुइवा (NSCN-IM) के साथ शांति वार्ता शुरू की थी और 3 अगस्त 2015 को सरकार ने इस संगठन के साथ ऐतिहासिक शांति समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं।

निष्कर्ष – भारत ने 'पूर्व की ओर देखो' नीति के अंतर्गत सीमापार आतंकवाद और राष्ट्रीय सुरक्षा संबंधी चुनौतियों के विद्यमान रहने के बावजूद म्यांमार के साथ संबंधों में कटुता नहीं आने दी है, परिणामस्वरूप वर्तमान स्थिति में दोनों देशों द्वारा आतंकवादी संगठनों तथा राष्ट्र विरोधी समूहों पर अंकुश लगाने के लिए संयुक्त रूप से संसाधनों का उपयोग करना प्रारंभ कर दिया है जिसके परिणाम भी सकरात्मक प्राप्त हुए हैं, जो स्वागत योग्य है तथापि क्षेत्र में अपेक्षा अनुरूप पूर्ण रूप से सफलता प्राप्त होना शेष है। भारत के पूर्वोत्तर राज्यों की सुरक्षा के अतिरिक्त, चीन के बढ़ते प्रभावों को संतुलित करने हेतु, म्यांमार की पूर्व, दक्षिण-पूर्व एशिया और दक्षिण एशिया के त्रिकोणीय संगम पर भू-रणनीतिक अवस्थिति, भारत की 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' के क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

सुझाव – भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्रों का भौगोलिक महत्व, औद्योगिक एवं पर्यटन विकास क्षेत्रों में वृद्धि के अतिरिक्त दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों सहित म्यांमार में चीन के बढ़ते सामरिक और आर्थिक प्रभाव को नियंत्रित करने एवं भारत-म्यांमार सीमावर्ती क्षेत्रों में विद्यमान आतंकवादी गतिविधियों को निष्क्रिय किए जाने के कारक हो सकते है, जो दोनों देशों के लिए दीर्घकालीन लाभप्रद होंगे। बिम्सटेक और आसियान जैसे क्षेत्रीय संगठन आर्थिक विकास एवं सामरिक सुरक्षा बढ़ाने में सहयोग कर सकते है, जिससे पूर्वोत्तर क्षेत्रों में शांति व स्थिरता स्थापित करने में सहायता प्राप्त होगी एवं क्षेत्रीय जनता भी लाभान्वित होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'बर्मा का इतिहास-1962' श्री श्यामाचरण मिश्र, प्राध्यापक, टैगोर कॉलेज, रंगून (बर्मा) प्रकाशक-ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, उत्तर प्रदेश.
2. Strategic Analysis, July 2004.
3. Mr. Wasbir Hussain, "Insurgency in India's Northeast : Cross-border Links and Strategic Alliances" Faultlines, Volume 17, Feb- 2006.
4. श्री प्रदीप कुमार राय तथा श्री निशांत चौबे 'उत्तर पूर्व भारत: विप्लव एवं पड़ोसी राष्ट्रों की भूमिका', अध्ययन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2009.
5. डॉ. प्रशांत अग्रवाल, 'भारतीय सुरक्षा परिवेश: पड़ोसी राष्ट्रों के विशेष संदर्भ में',ए.बी. पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2010.
6. डॉ. अरविन्द कुमार चतुर्वेदी, 'भारत के पड़ोसी राष्ट्र और सुरक्षा चुनौतियाँ', ए.बी. पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2010.
7. डॉ. आर.एस. पाण्डेय तथा डॉ. ए.के. दीक्षित, 'भारत-विरोधी चीन के रणनीतिक दुष्चक्र के निहितार्थ एक मूल्यांकन' राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2012.
8. डॉ. अशोक कुमार द्विवेदीब, 'भारत-चीन संबंधों की गति चुनौतियाँ एवं अवसर', राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2012.
9. www.Visionias.in, समसामयिकी नबंवर-2015.
10. Amrita Dey, Myanmar Democratisation, Foreign Policy and Elections, 2016, New Delhi.
11. www.Visionias.in, समसामयिकी जून-2017

****

ग्रामीण विकास मे शासकीय योजनाओं का योगदान राजगढ जिले के संदर्भ में

वनिता अहिरवार* डॉ. सरोज श्रीवस्तव**

प्रस्तावना – ग्रामीण विकास का सीधा न सही में संबंध उसके मूल आधारभूत ढाँचे से है। जिसे हम अधोसंरचानात्मक विकास के नाम से जान रहे है। वर्तमान में लघु व कुटीर उद्योग, सिंचाई, ग्रामीण परिवहन, निर्माण कार्य, शुष्क खेती विद्युतीकरण, पेयजल, भूमि विकास, ईंधन व्यवस्था, आवास व्यवस्था, विकास आदि से संबंधित समस्याओं ने हमारे नियोजन व आयोजन को एक सीमा तक सोचने पर मजबूर कर दिया है। हम व शासन ने अपने बजट का आधा भाग ग्रामीण अंग की ओर प्रवाहीत करने को बाध्य कर दिया है, तथा सम्भवत: शहरीकरण के साथ-साथ ग्रामीण विकास की सरकार की ही जिम्मेदारी बनती है। किसानों एवं गरीब वर्ग के मजदूरों, काश्तकारों, निवासहीन परिवारों, बंधुओं व निशक्तजन: के निम्न जीवन स्तर की दशाओं को देखते हुये सरकार द्धारा ऋण राहत व साथ-साथ योजनाओं का लाभ लेने हेतु आरक्षण एवं कल्याणकारी कदमों की एक प्रमुख पहल है। ग्रामीण अधोसंरचनात्मक विकास ग्रामीणों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार के साथ ग्रामीण क्षेत्र के समय विकास को प्रदर्शित करता है। इसमें सामाजिक-आर्थिक अधोसंरचना, सामुदायिक सेवाएँ एवं सुविधाएँ महत्वपूर्ण है। अधोसंरचनात्मक विकास से हमारा तात्पर्य मानवीय विकास से हमारा तात्पर्य मानवीय विकास के लिए उन सभी मूलभूत आवश्यकताओं से है जिनके द्धारा संसाधनों तक पहुंच एवं जीवन की बेहतर गुणवत्ता सुनिश्चित होती है। अधोसंरचनात्मक तंत्र निजी और सार्वजनिक, भौतिक और सेवाओं संबंधी और सामाजिक एसवं आर्थिक किसी भी तरह का हो सकता है। आर्थिक अधोसंरचनात्मक तंत्र के अंतर्गत परिवहन के साधन एवं सड़क, संचार, अबाध विद्युत आपूर्ति, विपणन की सुविधाएँ, दैनन्दिनी आवश्यकताओं की आपूर्ति, सिंचाई और इसी तरह की सुविधाएँ शामिल है जबकि सामाजिक अवसंरचना के अंतर्गत शिक्षा तक पहुँच, स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता, स्वच्छता, पक्का आवास आदि आते हैं।

जहाँ तक आधारभूत अधोसंरचना की स्थिति जैसे सड़क, पेयजल विद्युत, विद्यालय, स्वास्थ्य केन्द्र, सुरक्षा एवं आवागमन तथा संचार का प्रश्न है। ग्रामीण क्षेत्र शहरी क्षेत्रों की 'अपेक्षा अभाव, की' स्थिति में रहते आये हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में न केवल ये लोक सुविधाएँ एवं आपूर्ति व्यवस्थाएँ अपर्याप्त हैं। अपितु वे कई सन्दर्भो में अव्यवस्थित एवं निर्भर करने योग्य भी नहीं है। परिणामत: ग्रामीण गरीब पीढ़ी-दर-पीढ़ी कमजोर शिक्षा, कमजोर स्वास्थ्य, बेरोजगारी और क्रमिक गरीबी की समस्याओं से जूझते आए हैं।

ग्रामीण विकास के लिए भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में पर्याप्त, विश्वसनीय और अच्छे स्तर की अधोसंरचना को लक्ष्य निर्धारित करते हुए समय सीमा में प्राप्त करना ग्रामीण विकास की पूर्वपिक्षा है। इसी के दृष्टिगत सरकार ने देश के ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत अधोसंरचना की आवश्यकता को स्वीकार करते हुए समय-समय पर इस हेतु अनेक कार्यक्रम प्रारम्भ किए हैं।

नब्बे का दशक आर्थिक सुधार एवं विकेन्द्रीकृत अभिशासन के कारण ग्रामीण विकास के क्षेत्र में परिवर्तन की दृष्टि से विशेष महत्व रखता हैं। वैश्विक एवं स्थानीय स्तर के इन सुधारों ने ग्रामीण विकास की नीतियों, कार्यक्रमों एवं रणनीतियों में बहुत परिवर्तन किए जिसके प्रत्यक्ष परिणाम ग्रामीण क्षेत्रों में देखें जा सकते हैं। सतत् आजीविका से जुड़े मुद्दे कुपोषण, बीमारी, अभाव, निरक्षरता, मूलभूत सुविधाओं एवं सेवाओं की कमी इत्यादि को इन नीतियों में सम्बोधित करने का प्रयास किया गया है। इस नीति में द्धिआयामी रणनीति पर अमल किया गया जिसमें निर्धनता के विरूद्ध सीधी कार्यवाही एवं सामाजिक क्षेत्रों में प्रभावी निवेश सम्मिलित है। ग्रामीण क्षेत्रों में अधोसंरचनात्मक विकास जैसे सड़क, साफ-सफाई, पेयजल, आवश्यक भवनों, विद्युत आदि उपलब्ध कराने के प्रयास भी अग्रणी रहे हैं।

ग्रामीण विकास विभाग ने कई प्रकार की योजनाए संचलित की है जो कि ग्रामीण क्षेत्रो के अर्थिक एव सामजिक विकास मे अहम भूमिका निभा रहे है शोध अध्ययन मे इस प्रकार की योजनाओ का मूल्यांकन करने के लिए द्धितीय आंकडे संकलित किये गये है।

उद्देश्य :

1. महिलाओं, व अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति वर्गो को अधिकारों को सशक्त बनाने वाली योजनाओ का अध्ययन करना।
2. राजगढ जिले मे विगत 5 वर्षो में योजनओ की उपलब्धियों का अध्ययन करना।
3. यह जनना योजनाओं से लाभन्वित हितग्राहीयों की संख्या में वृद्धि हो रही हैं।

अध्ययन क्षेत्र

राजगढ़ जिले का परिचय-राजगढ़ जिला म.प्र. का एक महत्वपूर्ण प्रशासनिक जिला है यह भोपाल संभाग में आता है जिले का कुल क्षेत्रफल 6154 वर्ग कि.मी. तथा कुल जनसंख्या 1545814 है जिले की 6 तहसील राजगढ़, नरसिंगढ़, खिलचीपुर, सारंगपुर, व्यावरा, जीरापुर, है। मई 1948 के मध्य भारत में गठन के बाद किया गया है वह 6 तहसीलों में बॅाटा गया है। नरसिंगढ़, खिलचीपुर, सारंगपुर, राजगढ़, जीरापुर, कुल 1728, ग्राम हैं। 627 ग्राम पंचायतें है राजस्थान, सीहोर, भोपाल, शाजापुर, एवं आगर मालवा से घिरा हुआ है जिले की जनसंख्या 251 व्यक्ति प्रतिवर्ग कि.मी. तथा 61.21

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) शासकीय सरोजनी नायडू कन्या महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय सरोजनी नायडू कन्या महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

प्रतिशत है जिले से 2 प्रमुख राष्ट्रीय राजमार्ग होकर गुजरते है जिनमें क्रं. 3 एवं 12 एवं मक्सी-गुना रेल्वे लाइन निकलती है जिले में मुख्यत: कृषि कार्य से ही प्रमुख आय स्त्रोत है जिले में व्यावरा में मोहनीपुर, सारंगपुर में तारागंज, जीरापुर में बंलापुर, पंचोर, नरसिंहगढ़ में कचनारिया व पीलूखेड़ी प्रमुख औद्योगिक, नेवज, पावर्ती नदी मुख्य नदी है किसी भी क्षेत्र की आर्थिक व सामाजिक प्रगति मुख्य रूप से दो पहलुओं पर निर्भर करती है पहले उसकी जनसंख्या व दूसरी उसकी प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता पर मानवीय व प्राकृतिक संसाधनों के उचित दोहन की सुविधा की बहुतायत होने पर उस क्षेत्र की विकास गति का पता चलता है यदि किसी भी कारणवश उन के दोहन हेतु जनसंख्या पर्याप्त यात्रा में विद्यमान नहीं हो तो दोहन के कमी में उस क्षेत्र को समृद्ध होना संभव नहीं दोनों का उचित व सही समन्वय आर्थिक प्रगति का मुख्य आधार माना जाता है राजगढ जिला एक ग्रामीण व पिछड़े क्षेत्रों में से एक जिला है यहॉ कि जनसंख्या का आधार कृषि व ग्रामीण संशाधनों के अंतर्गत ही जीवन यापन कर रही है जिले की भौगोलिक क्षेत्रफल 6154 वर्ग किमी है जिले में 6 तहसीलें व 6 विकास खण्ड में बांटा है 1728 ग्राम तथा 627 ग्राम पंचायतें है जिले सबसे अत्यधिक कार्यशील जनसंख्या में श्रमिक, खेतीहर कृषक मजदूर विद्यमान है।

राजगढ जिले मे 6 तहसीलो के अनुसार उनका विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक अध्ययन किया गया है इस शोध अध्ययन मे मनरेगा एंव इंदिरा आवास योजनाओ के अतर्गत जो लाभांवित हितग्राहीयो का जातिवार स्थिति, लिंगनुपातवार, विकंलाग श्रेणी, महिला वर्ग, कुल 5 वर्षो मे लाभांवित हितग्राहीया की सख्या एकत्रित कर उनका सख्यिकीय विधियो जिनमे प्रतिशत, लगा कर निष्कर्ष निकले गये।राजगढ़ जिले में संचालित इंदिरा आवास योजना में कुल लाभार्थी (हितग्राहियों का द्वितीयक आंकडों को 4 वर्गो अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अल्पसंख्यक वर्ग व अन्य वर्गो के अनुसार पूर्ण आवासों की स्थिति का विवरण प्रस्तुत कर शोध अध्ययन के उद्देश्य पूर्ति हेतु लाभांवित हितग्राहियों की वार्षिक प्रगति देखी गई है

प्रधनमंत्री आवास योजना-आवास के क्षेत्र में प्रधनमंत्री आवास योजना जिसे पूर्व में इंदिरा आवास योजना के नाम से जाना जाता था। देश के ग्रामीण गरीबों को आवास मुहैया कराने का महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। सड़क एवं परिवहन के क्षेत्र में प्रधनमंत्री ग्राम सड़क योजना के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों को सड़कों के विस्तृत नेटवर्क के माध्यचम से जोड़ा जा रहा है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के माध्यम से अवसंरचना को विकसित किया जा रहा है। हर गांव में बिजली पहुँचाने हेतु सौभाग्य योजना का क्रियान्वयन किया गया है। पेयजल के क्षेत्र में 'राष्ट्रीय ग्रामीण पेयजल कार्यक्रम' के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति को पर्याप्त स्वच्छ पेयजल प्रदान करने की आवश्यक बुनियादी जरूरत को पूरा करने का लक्ष्य रखा गया।

तलिका 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तलिका 1 के अनुसार इंदिरा आवास योजना के अतर्गत विगत 5 वर्षो का श्रेणीवार पूर्ण आवास का अध्ययन किया गया है जिसमे 6 तहसीलो मे वर्ष 2012-13 से 2016-17 तक कुल 1546 अनुसूचित जन जति के, कुल 8051 अनुसूचित जति के, कुल 1150 अल्पसंख्यक वर्ग के सबसे कम, कुल 10331 अन्य वर्ग के सबसे अधिक लाभांवित हितग्राही देखे गये है जिन्हे आवास आवर्टित हुऐ विगत 5 वर्षो मे वर्ष सबसे कम के 1150 लाभांवित हितग्राही है विगत 5 वर्षो मे 2012-13 से 2016-17 तक इंदिरा आवास दजति के, कुल 8051 अनुसूचित जति के, कुल 1150 अल्पसंख्यक वर्ग के सबसे कम, कुल 10331 अन्य वर्ग है अनुसूचित जनजति मे इंदिरा आवस मे लाभविंत हितग्राही परिवारों की वृद्धि दर 2012-13 से 2013-14 मे ऋणात्मक -56.15 है इस प्रकार 14-15 तक की वृद्धि दर ऋणात्मक रही है फिर 2015 मे इंदिरा आवस योजना को प्रधनमंत्री आवास योजना के रूप पुर्नगाठित किया गया उसके बाद से 1028 मे वृद्धि दर धनात्मक हुई है।

विगत 5 वर्षो मे इस योजना मे सबसे अधिक लाभ लेने वाले अन्य वर्ग व अनुसूचित जति समूह के लाभविंत हितग्राही परिवार है इसका प्रमुख करण सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली सहायता राशि है जिससे मकान का निर्माण कराया जाता है 2012-2015 तक राशि कम प्रदान की जाती थी लेकिन 2015-16 से जब सहायता राशि मे वृद्धि हुई व शौचलय की राशि 18000 भी दी जाने लगी तो जनता का रूझान बडा व लोगो को आवास निर्माण मे राशि प्रर्याप्त होने लगी एंव ग्राम पंचयातो द्वारा निगरानी समिति बनई और निरीक्षण करे तकि जिन लोगो को योजना के अंतर्गत राशि प्राप्त हुई है वह उस राशि का उपयोग आवास निर्माण मे करे अत: इसलिए हितग्राहीयो व पूर्ण आवासो मे वृद्धि हुई 2016-17 में।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना – यह योजना भारत सरकार द्वारा 'महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 2005' के तहत संचालित है। ग्रामीण अधोसंरचना के विकास में महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का महत्वपूर्ण योगदान है। इस योजना के अंतर्गत किये गये कार्य बुनियादी तौर पर ग्रामीण अधोसंरचना तंत्र के विकास के कार्य है जिसमें तालाब, सम्पर्क सड़क, जलग्रहण, नाली निर्माण सहित अनेक कार्य किये गये हैं। कुल मिलाकर ग्रामीण अधोसंरचनात्मक तंत्र के विकास की दिषा में ये कदम ग्रामीणों के भोजन, आवास, रोजगार सहित सामाजिक एवं स्वास्थ्य सुरक्षा संबंधी सभी पहलुओं को सम्बोधित करते हैं।

प्रमुख प्रावधन :

1. ग्रामीण क्षेत्र में निवास करने वाले परिवारों के अकुशल श्रम (मजदूरी) करने के इच्छुक वयस्क सदस्यों को 100 दिवस का श्रम मूलक रोजगार उपलब्ध कराकर आजीविका सुरक्षा बढ़ाना।
2. वनाधिकार अधिनियम 2006 के तहत वन भूमि पर हक प्रमाण पत्र धारक परिवारों को 150 दिवस का श्रम मूलक रोजगार उपलब्ध कराये जाने का प्रावधन।
3. ग्रामीण क्षेत्रों में स्थायी परिसंपत्तियों का सृजन।

तालिका 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

1. तालिका 2 से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2012-13 में राजगढ़ जिले में कुल जॉब कार्ड धारी परिवारों की संख्या 31564 है। जिसमें से अनुसूचित जाति के 122 प्रतिशत थे, अनुसूचित जनजाति के 32, अन्य पिछड़े वर्ग के 7303 जॉबकार्ड परिवार एवं सबसे अधिक कुल 91.41 जॉबकार्ड धारी परिवार थे। उसमें से कुल 4866प्रतिशत परिवार को रोजगार प्राप्त हुआ है। रोजगार प्राप्त करने वाले परिवारों में सबसे अधिक अनुसूचित जाति को 49.13 प्रतिशत था।
2. इसी प्रकार वर्ष 2013 में कुल जॉबकार्ड धारी परिवारों की संख्या 273370 थी। जिसका प्रतिशत 79.16 था जिसमें से कुल अनुसूचित जाति के 1369 प्रतिशत परिवार, अनुसूचित जनजाति के 298 प्रतिशत परिवार अन्य (सामान्य) जाति सबसे अधिक 6249 प्रतिशत जॉबकार्ड धारी परिवार थे, उसमें से कुल अनुसूचित जाति ने 37.12

प्रतिशत रोजगार प्राप्त करने वाले परिवार थे, अनुसूचित जनजाति के 3242 प्रतिशत व अन्य जाति के 3732 प्रतिशत परिवार मिले। सबसे अधिक अन्य जाति में रोजगार प्राप्त करने वाले परिवार रहे।

3. इसी प्रकार वर्ष 2014-2015 में कुल 2श8751 (7783) प्रतिशत परिवार जॉबकार्डधारी परिवार थे। जिनमें अनुसूचित 1338 प्रतिशत, अनुसूचित जनजाति के 498 सबसे अधिक अन्य जाति के श152 प्रतिशत परिवार जॉबकार्ड धारी है उसमें से 42श7 प्रतिशत अनुसूचित जल जाति के 3667 प्रतिशत रोजगार प्राप्त करने वाले परिवार थे। अन्य जाति में 4505 प्रतिशत रोजगार प्राप्त करने वाले परिवार, कुल 4434 प्रतिशत परिवारों ने रोजगार प्राप्त किया सबसे अधिक अन्य वर्ग के जाति वाले परिवार ने रोजगार प्राप्त किया।
4. इसी प्रकार वर्ष 2015-1श मे कुल 248850 व 720श प्रतिशत परिवार जॉबकार्ड धारी परिवार थे। जिसमें अनुसूचित जाति के 1273 प्रतिशत परिवार, अनुसूचित जनजाति के 433 प्रतिशत परिवार, अन्य जाति के 5श99 प्रतिशत परिवार थे। उसमें कुल 2955 प्रतिशत परिवार रोजगार प्राप्त करने वाले थे। 2687 प्रतिशत अनुसूचित जाति के 2443 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति के परिवार 3036 अन्य जाति के परिवारों ने रोजगार प्राप्त किया सबसे अधिक अन्य वर्ग के परिवारों ने रोजगार प्राप्त किया।
5. इसी प्रकार वर्ष 2016-17 में कुल 21893 जॉबकार्ड धारी परिवार थे। उसमें 1125 प्रतिशत अनुसूचित जाति के, 192 सबसे कम अनुसूचित जनजाति के प्रतिशत परिवार थे। अन्य जाति के 5020 प्रतिशत परिवार थे। जिसमें कुल 3586 प्रतिशत परिवारों ने रोजगार प्राप्त किया। उसमें भी अनुसूचित जाति के 3419 प्रतिशत, अनुसूचित जनजाति के 4284 सबसे अधिक, परिवारो ने रोजगार प्राप्त किया व अन्य जाति ने 3597 प्रतिशत रोजगार प्राप्त करने वाले परिवार थे।
6. इस प्रकार संपूर्ण तालिका के द्वारा विश्लेषण से स्पष्ट हुआ कि जिले में विगत 5 वर्षो में अन्य वर्ग जाति के कुल जॉब कार्डधारी परिवारों का प्रतिशत, वर्ष 2012-13 में विगत 3 वर्षो के तुलना में अधिकतम रहा एवं रोजगार प्राप्त करने वाले परिवारों ने भी अन्य जाति का प्रतिशत अधिकतम रहा है, एवं सबसे कम वर्ष 2012-13 में प्रतिशत जॉब कार्डधारी में अनुसूचित जनजाति रहा है। उसमें कम रोजगार प्राप्त करने वाले परिवार में भी अनुसूचित जनजाति समूह ही है एंव हितग्राहीयों की अधिक से संख्या कार्य मिल रहा है।

समस्याएं-

न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता की कमी - ग्राम पचायतो मे सरपंच , सचिव की न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता की कमी होने करण डिजिटल ग्रामीण यत्रिक सेवा का सचांलन सही तरीके से नही हो पा रहा है।

राजनैतिक दल का हस्तक्षेप -ग्राम पंचायते भी राजनैतिक व्यवस्था का हिस्सा जिसके वजह से सरपंच व अन्य ग्राम पंचायतो के अधिकारीदवाव मे रहते है एंव गुटबंदी की भावनाए विकसित होने लगी है और इन सब मे ग्रामीण जन जीवन व ग्रामीण विकास पर नकरात्मक प्राभाव पड़ रहा है।

योजनाओ के प्रचार प्रसार मे कमी-जिले मे कई ग्रामो की दूरी नगरीय क्षेत्रौ से बहुत अधिक है एंव राजगढ जिले के उन ग्रामो मे योजनाओ का प्रचार प्रसार नही हो पाता है।

जागरूकता की कमी -चूकि जिले के 6 जनपद मे रहने वाली जनसख्ंया ग्रामीण वासी है जिनमे रूढीवदिता के करण उदासीनता व अशिक्षित होने के करण योजनाओ की जानकारी नही मिल पाती है। इसलिए जागरूकता की कमी देखी गई है।

कार्यस्थल पर सुविधाओं का अभाव -मनरेगा योजनाओ के अंतर्गत जो श्रमिक कार्य करते है उन्है प्रथमिक उपचार की कोई विशेष सुविधा नही है। महिलाओ के बच्चो के लिए हर लहसील मे इन्तजाम नही है।

मजदूरी की भुगतान व आवास राशि मे विलम्ब -राजगढ जिले मे सर्वेक्षण के दौरन यह समस्या भी सामने आई की मनरेगा मे मजदूरी की भुगतान देर से होता है जिससे उनको घर चालने मे सुविधा होती है उसी प्रकार जनगणना के चयन के बाद भी आवास राशि हितग्राहीयो को नही मिल पाती जिससे आवास निर्माण मे देरी होती है।

कार्यो के निर्माण मे देरी- मजदूरो व कृषको मे अशिक्षा मुख्य बाधक।

सुझाव- शोध से सबंधित उपयुक्त समस्याओं को सामने रखते हुए निराकरण के उपाय सुझाव इस प्रकार से है।

1. सर्वेक्षण के दौरन ग्रामीणो ने योजनाओ मे कुछ उदासीन व्यवहार है क्योकि इन मनरेगा मे मजदूरी कि राशि कम है उसके कारण ग्रामीणवासी दूसरी जगह पलायन करने मे मजबूर हो जाते है उसी प्रकार इंदिरा आवास मे भी आवास निर्माण के लिए राशि बहुत कम है एक आदर्श आवास का निर्माण नही हो सकता है।
2. समय पर बेरोजगारी भत्ता का भुगतान नही किया जाता है इसलिए जनपद व जिला पंचायतो को ग्राम पंचयातो पर निगरानी रखनी चाहिए।
3. ग्राम पंचयातो के स्तर पर सरपंच , ग्राम सहायको को सुविधा व अधिकार देने चाहिए कि वह आपने स्तर पर आपने ग्राम कि जनता कि समस्यो को हल कर सके।
4. उतरदातो का से सम्पर्क करने पर पाया गया कि ग्राम पंचयातो के स्तर पर पर पूर्णकालीन रोजगार ग्राम सहायको प्रावधन करना चाहिए।
5. उतरदातो के सर्वेक्षण के दौरन पाया गया कि उनका कार्य स्थल पर यदि कोई दुर्घटना हो जाए तो उनके उपचार हेतु खर्च व बीमा सुविधा देना चाहिए।
6. नि:शक्त वर्ग को आवास सहायता राशि ,मनरेगा मे मिलने वाली मजदूरी मे अलग से वृद्धि का जानी चाहिए उसी तरह जिन पारिवारो मे विधावा ,तालाक शुदा महिलाए मुखिया उन्है भी विशेष सुविधाए एवं सहायता राशि , मजदूरी मे अलग से वृद्धि का जानी चहिए।
7. ग्राम वासियो की शिक्षा एवं ज्ञान प्रचार - प्रसार करना ग्रामीण विकास की विभिनन योजनाओ शासकीय विभागो के अधिकारीयो द्वारा ग्राम पंचायतो को समय पर नही दी जाती है अत: अधिकारियों द्वारा ग्रामीण विकाश के विभिन्न योजनाओ की जानकारी समय पर दी जानी चाहिए।
8. सरकार के द्वारा ग्राम पंचायतो को बजट प्रदान करना।
9. पंचायतों की जनसंख्या के आधार पर ग्रामीण विकास के लिए सआवटंन होना चाहिए ग्रामीण नागरिकों में अशिक्षा एवं उदासीनता के कारण अपने अधिकारो के प्रयोग।
10. हितग्राहीयो के निर्वहन के प्रति जागरूकता का आभाव है अत: सरकार को ग्रामीण नागरिको को पंचायती राज व्यवस्था के प्रति जागरूक करना चाहिए।
11. आवास रोजगार इत्यादि विकास हेतु चल रहे कार्यक्रमों एवं योजनाओं की सतत् जॉच एवं निगरानी की जानी चाहिए।

12. आवास निर्माण मे निगरानी समितियो बानई गई है उनकी लिए भी जनपद पंचायतो को समितियो का मानटारिंग करने का प्रयास करने की कोशिश की जाऐ तकि गडबडी ना हो।
13. ग्रामीण विकास की शासकीय योजनाओं की समय समय पर समीक्षा की जानी चाहिए।
14. कार्य दिवसो की संख्या मे वृद्धि।
15. तहसीलो मे अधिक जागरूकता फैलाने का प्रायास करना चाहिए व विशेष प्रायोजन करने चाहिए ।
16. प्राकृतिक सम्पदा का प्रबंधन।
17. ग्राम पंचायातो के स्तर पर लगे पदाधिकारी का द्धारा द्दढ संकल्प।
18. ग्राम पंचायातो के स्थानीय स्तर पर ही संसधनो जुटाने का प्रयास।
19. ग्रामीण व्यक्तियो की आवश्यकतानुसार योजनाओ का निर्माण।
20. सधना के अधिकार के स्तर को प्राभावी बनाया जाए ।
21. सरकारी खर्च मे कटौती।
22. योजनाओ का समय- समय पर पुर्नर्मूल्याकंन।
23. ग्रामो का उघोगिक विकास वर्तमान की आवश्कता है।

निष्कर्ष- उपरोक्त शोध अध्ययन से स्पष्ट है मनरेगा योजनाआ व इंदिरा आवास योजनाए जो ग्राम पंचायतो के स्तर पर संचलित कि जा रही है परंतु इसमे निगरानी ठीक तरीके नही हो पा रही है सरकार कि कमजोर वर्गो के सहायता हेतू जो भी कार्यक्रमो व योजनाओ चलाई जाए वह तभी सफल हो सकती है जब उनका क्रियान्वयन ग्रामपंचायतो के स्तर परं सही तरीके से हो यह कहा जा सकता है कि पंचायती राज व्यवस्था के क्रियान्वयन में विविध प्रकार के प्रशासनि,सामाजिक आथिक समस्याएँ विद्यामान हैं जो ग्रामीण विकास मे वाधाए बन रही है जिनका शीध्र निवारण आवश्यक है ताकि ग्रामीण विकास के मूल उद्देष्यो प्राप्त किया जा सके।

संदर्भ ग्रथं सूची :-

1 विभागीय प्रशासकीय प्रतिवेदन 2011से2015 तक
2 पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग मप्र
3 मनरेगा योजनाअधिनियम मप्र पुस्तिका
4 राजगढ जिले की जिला पुस्तिका 2011
5. मप्र जनगणाना 2011
6 मनरेगा मासिक प्रगति रिपोर्ट,मनरेगा
7. विभिन्न सरकारी, गैर सरकारी पत्र पत्रिकाओं,
8. www.panchayatraj.nic.in
9. www.narega.nic.in
10. विभिन्न शोध पत्र

तलिका 1 : इंदिरा आवस योजना के अतर्गत विगत 5 वर्षो का श्रेणीवार पूर्ण आवास का अध्ययन

वर्ष	अनुसूचितजन जति	वृद्धि दर	अनुसूचितजति	वृद्धि दर	अल्पसंख्यक वर्ग	वृद्धि दर	अन्य वर्ग	वृद्धि दर
2012-13	374	0.56	1764	0. 60	749	0.98	1990	0.76
2013-14	164		694		14		473	
2014-15	64	1.56	647	0.06	21	0.5	605	0.27
2015-16	77	0.20	542	0.16	52	1.47	612	0.01
2016-17	869	10.28	4404	7.12	314	5.09	6651	9.86
कुल	**1546**		**8051**		**1150**		**10331**	

स्त्रोत - www.narega.nic.in द्धतीयक संमक के अनुसार

तालिका 2 : राजगढ जिले के अतर्गत मनरेगा के लाभन्वित हितग्राहीयो का अध्ययन

			जॉब कार्ड धारी परिवार				रोजगार प्राप्त करने वाले परिवार			
			SC	ST	Other	Total	SC	ST	Other	Total
1	2012-13	345297	52219 (15.12)	11249 (3.2)	252173 (73.03)	315641 (91.41)	25658 (49.13)	4955 (44.04)	123005 (48.77)	153618 (48.66)
2	2013-14	345297	47273 (13.69)	10307 (2.98)	215790 (62.49)	273370 (79.16)	17551 (37.12)	33142 (32.42)	80553 (37.32)	101446 (37.10)
3	2014-15	345297	46214 (13.38)	10080 (4.98)	212457 (61.52)	268751 (77.83)	19724 (42.67)	3697 (36.67)	95754 (45.05)	119175 (44.34)
4	2015-16	345297	43958 (12.73)	8058 (4.33)	196814 (56.99)	248850 (72.06)	11815 (26.87)	1973 (24.43)	59754 (30.36)	73542 (29.55)
5	2016-17	345297	38909 (11.25)	6664 (1.92)	173357 (50.20)	218930 (63.40)	13305 (34.19)	2855 (42.84)	62357 (35.97)	78517 (35.86)

स्त्रोत- राजगढ जिले प्रशासकीय प्रतिवेदन 2012-2017

****

Effect of Supplementation of wheat straw with dried leaves of some trees on the growth and production of *Pleurotus sajor-caju*

Dr. Abhai Deep Mishra*

Abstract - The supplementation of dried leaves of some trees viz.,*Tectona grandis,Shorea robusta,Madhuca indicia* was done.These are important high lignin containing timber yielding trees of tropical forest of our country. The dried leaves of these trees were applied to the mother substrate (wheat) in three different (5%,10% and 15%) proportions. Among these the dried leaves of *Tectona grandis* was found most effective in respect of speedy mycelial running, high production and biological efficiency of *Pleurotus sajor-caju*.These dried leaves were most effective in their lower proportions than the higher ones.It was found that the lower proportion of these supplements except *Madhuca indica* were most effective than the control.The entire observation was done in Babhnan, Gonda during October 2016 to March2017

Key words - Lignin, tropical forests, biological efficiency and supplements.

Introduction - Oyster mushroom occupy first rank among cultivated mushrooms because of their wide range of preferability for exploitation of lignocelluloses as their substrate to grow them.These mushrooms have comparatively rich enzyme profile and a wide range of temperature for their growth and frutification.These are known for high protein contents in them with low calories and excellent aroma.Thus the increase the production of such potential food is main objective before the people who are interested in raising of their regular crop.The approaches are continuously being made for high yield and biological efficiency of these mushroom species by supplementing the mother substrate (wheat straw) with different agro-wastes[1-8] inorganic nitrogenous chemicals[9-12],organic nitrogenous sources different promoters and vitamins[13] in different concentrations.In present communication dried leaves of three different trees were supplemented to mother substrate in different proportions for their screening for good production of *Pleurotus sajor-caju*.

Material and methods:

1. Collection of germplasm : The culture of *Pleurotus sajor-caju* was obtained from mushroom section from department of plant pathology, Acharya Narendra Dev University of Agriculture and Technology,Kumar ganj, Faizabad (UP).

2. Preparation of Pure Culture : Pureculture was maintained by sub-culturing the above mentioned culture, every fortnight on potato dextrose agar(PDA) and Malt extract and Yeast extract agar (MEYEA) medium at 22^{0}c$\pm$in culture tubes.

3. Preparation of Culture Medium : The culture medium (PDA and MEYEA) was autoclaved at 126^{0}c temperature and 20 Ibs/inch square for 45 minutes inside cotton plugged flasks, transferred into petridishes and inoculated with a bit of hyphae at laminar flow work station. Now these inoculated petridishes were incubated at 25^{0}c($\pm$1^{0}c) in BOD incubator to obtain pure culture.

4. Spawn preparation : Overnight water-soaked wheat grains were boiled and after drying mixed thoroughly with 2%(w/w) Gypsum and 4%(w/w)lime.Boiling was done to split the grains, gypsum was to prevent sticking and lime was used to maintain pH.Now 200-250 gram of complete mixture was filled in glass bottles, plugged with non-absorbent cotton and allowed to autoclave at 126^{0}c temperature at 20Ibs/inch square pressure for 60 minutes.After sterilization the bottles were cooled overnight and on the next day inoculated by hyphae of *Pleurotus sajor-caju,* obtained from pure culture.These inoculated bottles were incubated for one week at 13-14^{0}c in BOD incubator. During this period bottles were shaken daily to insure uniform mycelial growth.

5. Collection and sterilization of mother substrates : During this study, wheat straw was used as mother substrate supplemented with dried leaves of selected trees. Dried leaves were chopped to form 2-3 " sized particles and mixed with mother substrate of conventional size in different proportions. These werewater soaked overnight in 2% formaldehyde solution (to sterilize) and 0.05% Bavistin (to prevent arthopodal infection).On the next day the mixture ofsubstrates were filtered and partially dried to make them ready for spawning.

*Department of Botany, A.N.D.K.P.G.College, Babhnan, Gonda (U.P.) INDIA

6. Spawning: The bed was prepared by layer spawning (adopted by Bano,1971)[14] in perforated and small sized reusable buckets which were guarded by lids. The perforation in buckets was necessary for proper ventilation and their small size was for compact packaging of spawned substrate.During spawning 2kg mother substrates including supplemented leaves was inoculated by 5% of spawn.Now the spawned substrate in plastic buckets were incubated in cultivation room at 25-30^{0}c for 21-22 days till the mushroom mycelium completely cover the substrate. After 24-25 days the pinheads began to appear which can be seen through the perforation of buckets. After that the spawned substrate were carefully removed from the bucket by gently opening of their lids. Now the empty buckets were put apart safely for their further use.The beds were irrigated regularly 3-4 times in day with water sprayer to keep them wet and to maintain 80-85% humidity. Usually the fruiting bodies were evident within 3-4 days after removal from buckets. The beds were maintained up to the harvest of fourth flush. A small layer of substrate was scrapped off from all the sides of the beds just after second flush to rejuvenate the mycelium and to remove unwanted microbial flora.The fruiting bodies were harvested by twisting them and taken out manually so that the broken remains left out.

Biological yield and Biological efficiency: Total weight of all the fruiting bodies harvested from all the four flushes were measured as total biological yield of mushroom. The biological efficiency (yield of mushroom per kg substrate on dry weight basis)was calculated by the following formula[15].

B.E.(%)= Fresh weight of mushroom/ Dry weight of substrate×100

Observation :

Table 1 (see in next page)

Result and discussion : The data in observation table show that the supplementation of dried fresh leaves to wheat straw enhanced, the growth and production of mushroom in their lower proportions. The dried leaves in their high proportions took more time in colonisation and development of mycelial.

The supplementation with 5% dried leaves of *Tectona grandis* showed good result both in the respect of the yield and biological efficiency.The 10% supplementation with dried leaves of *Tectona* and 5% of *Madhuca* occupied second rank in this respect. However rest of the experimental sets showed comparatively lesser yield and biological efficiency in mushroom crop.

These leaves are found in huge amount on the floor of the forest which are left as such without any use. These accumulate on the ground to decompose in form of compost. Thus enormous amount of simple organic and inorganic compounds are produced in ty forest which flow down to the ponds or lakes,resulting in eutrophication and leading to increase in BOD of water reservoir. By the use of these leaves as supplements this problem can be solved up to some extent.The tribal people who lives in forest villages near the forests or those who are related with Taungya system may cultivate mushroom by supplementing these dried leaves to mother substrate to fulfill protein deficiency of their diet.

Conclusion : The cultivation of mushroom is an eco-friendly trend of production of proteinaceous diet. This cultivation also follow the rules of sustainable development. As we know that the wheat straw is not available everywhere in fair amount specially in or near forest areas, therefore we can minimise the need of wheat straw by supplementing it with dried leaves of forest trees.The production of this valuable proteinaceous diet in form of mushroom by supplementing the mother substrate may be proved as a boon for malnutrition facing tribes of forest areas.This cultivation also raised their economic status by selling them in surrounding areas at better price.

Acknowledgement : I am very thankful to Dr.V.K.Pandey, Principal of Acharya Narendra Deo Kisan P.G. College, Babhnan, Gonda who allowed to provide laboratory facilities of Botany department. My best regards to my supervisor Dr. C.S.Singh, who always ready to tell me about all the ways of better production of mushroom.

References:-

1. Gupta,M.Sarkar,C.R. and Gupta,S.(1999). Mushroom Res.8(2):39-41.
2. Jandaik,C.L. and J.N.Kapoor(1974). Mushroom Science IX:667-672.
3. Kumar,P.,Pal,J. and Sharma,B.M.(2004). Indian J.Mycol.Pl.Pathol.34(2):322-324.
4. ModaE.M.,Boroi,J. and Spota M.H.F.(2005).Scientia Agricola (Piracicaba,Braz.) 62(2):127-132.
5. Pal,J. and Paul,Y.S.(1985). Indian J.Mycol.Pl.Pathol. 15:18-21.
6. Patrabansh,S. and M.Madan(1997).Acta Biotechnol-ogica,17(2):107-122.
7. Rai,B.K.(1997). Vasundhara, International Journal of Environment Biology,2:83-84.
8. Sturion,G.L and Oetterer,M.(1995).Ciencia e Technologia de Alimentos,15:194-200.
9. Anayakorah,C.I.,Okafor,N. and Olatunji,O.(2004). Nigerian Food Journal,22:127-132.
10. Jandaik,C.L. and Kapoor,J.N.(1976). Indian Phytopath.,29:326-327.
11. Rai,B. and Mohtarma (2003). Environmental Biology and Conservation,8:65-66.
12. Vijay,B. and Upadhyaya,R.C.(1989). Indian J.Mycol.Pl.Pathol.,19:297-298.
13. Chauhan,S. and Pant,D.C.(1988). Indian J.Mycol.Pl. Pathol.18(3):231-234.
14. Bamo,Z.(1971). Second Int.Symp.Pl.Pathol.
15. Chang,S.T.,Lau,O.W. and Cho,K.Y.(1981).“The cultivation and nutritive value of *P sajor-caju.*” European J.Appl.Micro.Biotech.12:58-62.

Table 1:Cultivation of Pleurotus sajor-caju on dried leaves of selected plants

Supplements	% of supplements	Time required in spawn run (Days)	Time required in pin head initiation (Days)	Total No. of flushes	Total Yeild (gm.)	Biological efficiency (%age)
1. Tectona grandis	5%	22	24	4	1230	61.50%
	10%	22	24	4	1220	61.00%
	15%	23	25	4	1200	60.00%
	Control	23	25	4	1210	60.50%
2. Shorea robusta	5%	23	25	4	1200	60.00%
	10%	24	26	4	1150	55.25%
	15%	24	26	4	1150	55.25%
	Control	23	25	4	1210	60.50%
3. Madhuca indica	5%	24	26	4	1220	61.00%
	10%	24	26	4	1150	55.25%
	15%	15	27	4	1100	55.00%
	Control	23	25	4	1210	60.50%

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के योगदान का एक अध्ययन (बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड के विशेष सन्दर्भ में)

राकेश कुमार गिरि *

शोध सारांश – स्वतंत्रता के बाद भारतीय आर्थिक नियोजन के लक्ष्यों में आर्थिक समानता का लक्ष्य प्रमुख रहा है, परन्तु छ: दशक उपरान्त भी इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो पाई है। भारत में अभी भी करोड़ों व्यक्ति निर्धनता रेखा से नीचे जीवन यापन करते हैं। योजना आयोग के अनुसार वर्ष 1909-2010 में 37.2 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता रेखा के नीचे रह रही थी। वर्ष 2011-12 में यह अनुपात घटकर 29.8 प्रतिशत हो गया, फिर भी ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वालों की संख्या 22.09 करोड़ थी। इसमें अधिकांशत: कृषि मजदूर, लघु एवं सीमांत कृषक तथा गैर कृषि गतिविधियों में कार्यरत दिहाड़ी कामगार हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की 68.84 प्रतिशत छत्तीसगढ की 76.76 प्रतिशत आबादी गांवों में निवास करती है। भारतीय अर्थव्यवस्था में तेजी से सुधार होने के बाद भी हम गरीबी को दूर करने में सफल नहीं हो पाये हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड के अन्तर्गत कुल 81 ग्राम पंचायतों में से 25 ग्राम पंचायतों का चयन दैव निर्दशन पद्धति से किया गया तथा चयनित ग्राम पंचायतों के स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना द्धारा लाभान्वित अनुसूचित जाति एवं जनजाति के समस्त हितग्राहियों (स्वरोजगारियों) को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है।

शब्द कुँजी – एम.डब्लू.एस.- दस लाख कुओं की योजना, जे.के.एल.- गंगा कल्याण योजना, एस.एच.जी.- स्व-सहायता समूह, डी.आर.डी.ए - जिला ग्रामीण विकास अभिकरण, J.R.Y.- जवाहर रोजगार योजना। अजजा- अनुसूचित जनजाति, अजा- अनुसूचित जाति,S.G.S.Y.- स्वर्ण जयन्ती ग्राम श्रोज़गार योजना, आई.आर.डी.पी.- समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ट्राइसेम- ग्रामीण युवा रोज़गार प्रशिक्षण कार्यक्रम, डवाकरा- ग्रामीण महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम।

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध पत्र में बिलासपुर जिले के कोटा विकास खण्ड के अन्तर्गत कुल 81 ग्राम पंचायतों में से 25 ग्राम पंचायतों का चयन दैव निर्दशन पद्धति से किया गया तथा चयनित ग्राम पंचायतों के स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना द्धारा लाभान्वित अनुसूचित जाति एवं जनजाति के समस्त हितग्राहियों (स्वरोजगारियों) को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। अध्ययन क्षेत्र में इस योजना के अंतर्गत अनुसूचित जनजाति के कुल 75 परिवार एवं अनुसूचित जाति के 25 परिवार लाभान्वित हुए योजना का इस वर्ग के उत्थान में वास्तविक योगदान ज्ञात करने के लिए योजना से लाभान्वित न होने वाले (गैर हितग्राही) अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के कमश: 75 एवं 25 गैर हितग्राही परिवारों को भी अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। जिसमें स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजागर योजना का अनुसूचित जाति एवं जनजाति के आर्थिक उत्थान में योगदान ठीक-ठीक ज्ञात किया जा सके। इस प्रकार अनुसूचित जाति के 25 एवं अनुसूचित जनजाति के 75 परिवारों का अध्ययन किया गया है। जिनसे प्रश्नावली, अनुसूची साक्षात्कार एवं अवलोकन द्धारा जानकारियाँ प्राप्त कर उनका बिन्दुवार विश्लेषण किया गया है। किसी भी स्थान या क्षेत्र की आर्थिक उन्नति मुख्यतया वहां के निवासियों पर निर्भर करती है। आर्थिक विकास कोई यांत्रिक प्रक्रिया नहीं बल्कि मानवीय उपकम है और समस्त मानवीय उपकमों की भांति इसकी सफलता भी अंतत: इसे क्रियान्वित करने वाले मनुष्यों की कुशलता गुणों या प्रवृत्तियों पर निर्भर करेगी। अत: जनसंख्या का अध्ययन किये बिना आर्थिक विकास की कोई योजना नहीं बनाई जा सकती। बिलासपुर जिले के कोटा विकास खण्ड के चयनित ग्राम पंचायतों की जनसंख्या को सारणी कमांक 2 में प्रदर्शित किया गया है। सर्वेक्षित ग्राम पंचायतों की कुल जन संख्या 59656 है। जिसमें अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 27462 (46.03 प्रतिशत), अनुसूचित जाति की जनसंख्या 7433 (12.46 प्रतिशत) एवं अन्य जातियों की जनसख्या 24761(41.51 प्रतिशित) है। स्पष्ट है कि कोटा विकास खण्ड अनुसूचित जनजाति बाहुल्य क्षेत्र है। अनुसूचित जनजाति की सर्वाधिक जनसंख्या 2208 (77.25 प्रतिशत) ग्राम पंचायत लूफा एवं अनुसूचित जाति की 1272(31.52 प्रतिशत) ग्राम पंचायत धूमा में पायी गयी। वहीं सबसे कम अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 337 (11.46 प्रतिशत) ग्राम पंचायत करगीखुर्द एवं अनुसूचित जाति की जनसंख्या 10 (0.50 प्रतिशत) ग्राम पंचायत छतौना की पाई गई।

सर्वेक्षित ग्राम पंचायतों की आधारभूत संरचना – किसी क्षेत्र के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में आधारभूत संरचना परिवहन, संचार, ऊर्जा, शिक्षा स्वास्थ्य एवं आवास आदि की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जिस क्षेत्र के विकास की आधारभूत संरचना जितनी सुदृढ़ होगी, वह क्षेत्र उतना ही अधिक विकसित होगा। विकसित क्षेत्रों का आर्थिक इतिहास इस बात को प्रमाणित करता है कि वहां औद्योगिक क्रांति या कृषि क्रांति का प्रार्दुभाव परिवहन सुविधाओं, ऊर्जा के संसाधनों में उन्नति के कारण ही आया।

सारणी 1,2,3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

सारणी कमांक 3 के अनुसार चयनित ग्राम पंचायतों में 02 राजस्व निरीक्षक मंडल एवं 02 पुलिस थाना और एक पुलिस चौकी है। सारणी से स्पष्ट है कि चयनित सभी ग्राम पंचायतों में प्राथमिक एवं पूर्व माध्यमिक शाला स्थापित

* शोधार्थी एवं अतिथि व्याख्याता (अर्थशास्त्र) किरोड़ीमल शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायगढ़ (छ.ग.) भारत

है। सर्वेक्षित क्षेत्र में 07 हाईस्कूल एवं 05 हायर सेकेण्डरी स्कूल संचालित है। चयनित 25 ग्राम पंचायतों में 10 ग्राम पंचायतों में स्वास्थ्य सुविधा का अभाव पाया गया। 04 ग्राम पंचायतों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं 11 ग्राम पंचायतों में उप स्वास्थ्य केन्द्र की सुविधा उपलब्ध है। इसके अलावा आर.एम.पी., ए.एन.एम, स्वास्थ्य रक्षक एवं मितानिन द्वारा स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध करायी जा रही है। शुद्ध पेय जल जीवन की बुनियादी आवश्यकता है। सभी ग्राम पंचायतों में हैन्डपम्प एवं 13 (52 प्रतिशत) ग्राम पंचायतों में नलकूप की सुविधा उपलब्ध है। सभी ग्राम पंचायतों में डाकघर एवं दूर संचार और विद्युत की सुविधा उपलब्ध है। सर्वेक्षित ग्राम पंचायतों में साप्ताहिक बाजार के लिए 03 से 23 कि0मी0तक की दूरी तय करना होती है। चयतिन 25 ग्राम पंचायतों में से 04 ग्राम पंचायत डब्लू.बी.एम. एवं शेष 21 ग्राम पंचायत पक्की सड़क से जुडे हैं।

भूमि उपयोग, सिंचाई एवं फसल– किसी क्षेत्र में उपलब्ध होने वाली भूमि, सिंचाई के साधन एवं फसलों का प्रारूप उस क्षेत्र के विकास का द्योतक होता है। भारत के संदर्भ में प्राय: यह कहा जाता है कि भारत निर्धन निवासियों का समृद्ध देश है।

प्रो.एम.एल.डार्लिंग के अनुसार – 'भारत की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसकी भूमि अत्यंत उपजाऊ है, परन्तु इसके अधिकांश निवासी निर्धन है।' समाज का सारा अस्तित्व और विकास भूमि पर आश्रित है, उपलब्ध भूमि क्षेत्र एवं उनका उपयोग क्षेत्र के लोगों के लिए बहुत ही महत्व रखता है। चयनित ग्राम पंचायतों के भूमि उपयोग, सिंचाई सुविधा एवं फसल प्रारूप को सारणी कमांक 4 में प्रदर्शित किया गया है। सारणी से स्पष्ट है कि क्षेत्र में कुल भौगोलिक क्षेत्र 13542.31 हेक्टेयर में से 10563.00 हेक्टेयर भूमि पर कृषि कार्य किया जाता है, जिसमें 2113.33 हेक्टेयर भूमि पर दो फसल उत्पादन किया जाता है। क्षेत्र में कुल सिंचित क्षेत्र 2287.00 हेक्टेयर है जिसमें से सरकारी सिंचाई के साधन (नहरों) से 1560.00 हेक्टेयर एवं निजी सिंचाई के साधन (नलकूप, कुआं तालाब) से 727.00 हेक्टेयर सिंचाई की जाती है। खरीफ फसल 10532.00 हेक्टेयर व रवी फसल 256.33 हेक्टेयर में उत्पादन किया जाता है।

सारणी –4 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

2009–10 में योजना आयोग के अनुसार 35.46 करोड़ से अधिक लोग झुग्गी झोपड़ियों में नारकीय जीवन जी रहे हैं। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण की 66 वीं रिपोर्ट के अनुसार भारत के ग्रामीण जनसंख्या का 60 प्रतिशत लोगों की दैनिक आय 35 रूपये से भी कम है। देश की एक–चौथाई से भी अधिक आबादी को पौष्टिक भोजन की बात तो दूर इनके पास न तो बच्चों को शिक्षित करने की क्षमता है, न स्वास्थ्य सुविधायें उपलब्ध हैं। संयुक्त बालकोष की मानव विकास स्वास्थ्य चुनौती 2004 की रिपोर्ट में बताया गया है कि विश्व के 3 कुपोषित बच्चों में से एक भारत में है। यूनेस्को की रिपोर्ट के अनुसार विश्व के 33 प्रतिशत निरक्षर भारत में है जो मानव विकास की राह में सबसे बड़ा बाधक तत्व बना हुआ है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के 61 वे दौरे के अनुसार गरीबी रेखा के नीचे जीवन–यापन करने वालों की संख्या देश के पांच राज्यों में सर्वाधिक उड़ीसा 46.4 प्रतिशत, बिहार 41.1 प्रतिशत कमश: छत्तीसगढ़ 40.9 प्रतिशत, झारखण्ड 4.3 प्रतिशत एवं उत्तराखण्ड में 39.6 प्रतिशत है। जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा विशेषकर भूमिहीन कृषि श्रमिक, सीमान्त किसान, अनुसूचित जाति एवं जनजाति और अन्य पिछडे वर्ग जैसे घटक सामाजिक और वित्तीय बहिष्करण से पीड़ित हैं। तदानुसार सरकार की नीतियाँ इन वर्गों के आर्थिक और सामाजिक उत्थान की ओर लगाई गई हैं ताकि प्रत्येक को उत्थान के लाभ लेने में समर्थ बनाया जा सके और समाज के हासिए पर बैठे वर्गों को मुख्यधारा में लाया जा सके। गरीबी उन्मूलन के सन्दर्भ में एम.एस. अहलूवालिया का कथन है कि आर्थिक वृद्धि की युक्ति के पूरक के रूप में ऐसे कार्यकमों को अपनाएँ जाने की आवश्यकता है जो गरीबी पर सीधा प्रहार करें, केवल रिसाव पर आश्रित रहने से गरीबी निवारण में बहुत ज्यादा समय लगेगा। भारत में गरीबी रेखा के नीचे जी रहे लोगों की सामाजिक आर्थिक सक्षमता हेतु पूर्व कार्यकमों समन्वित ग्रामीण विकास कार्यकम (IRDP), ग्रामीण युवा श्रोज़गार प्रशिक्षण कार्यकम (ट्राइसेम), ग्रामीण महिला एवं बाल विकास कार्यकम (ड्वाकरा), गंगा कल्याण योजना (JKL) तथा दस लाख कुओं की योजना (MWS) की समीक्षा तथा पुनर्गठन के परिणामस्वरूप 01.04.1999 से स्वर्ण जयंती ग्राम रोज़गार योजना का नये रोज़गार कार्यकम के रूप में प्रारंभ किया गया है जिसमें रोज़गार के सभी पहलू शामिल है, जैसे – ग्रामीण गरीबों के स्वसहायता समूहों को संगठित करना, प्रशिक्षण तथा क्षमता निर्माण, समूह गतिविधियों का आयोजन, ऋण, प्रौद्योगिकी, आधारभूत सुविधाएँ और विपणन सहायता आदि। योजना को केन्द्र व राज्यों के बीच 75:25 अनुपात में वित्त पोषित किया जाता है। योजना को छत्तीसगढ़ राज्य के सभी जिलों में लागू किया गया है। गरीबी उन्मूलन योजनाओं की श्रृंखला में 'नाबार्ड' द्वारा चलायी जा रही स्वर्ण जयंती ग्राम श्रोज़गार योजना, बैंक लिंकेज कार्यक्रम देश का सबसे बड़ा और सबसे तेजी से बढ़ने वाला लघु वित्त पोषण कार्यक्रम है। गरीबी रेखा से नीचे के जीवन–यापन करने वाले परिवारों की जनगणना द्वारा अभिज्ञात तथा ग्राम सभा द्वारा विधिवत् अनुमोदित सूची, योजना के अन्तर्गत परिवारों को दी जाने वाली सहायता का आधार होता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. पन्त, जे.सी. (1984), अर्थशास्त्र के सिद्धांत, द्वितीय पूर्णत: संशोधित संस्करण, साहित्य भवन, आगरा
2. पन्त, जे.सी.(1989–90), जनांकिकी, 5वाँ संशोधित संस्करण, गोयल पब्लिशिंग हाऊस सुभाष, मेरठ – 2।
3. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम, के.पी.एम. (1990), भारतीय अर्थव्यवस्था, 20वाँ संस्करण।, एस.चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।
4. वार्षिक रिपोर्ट 2011–12, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।
5. वार्षिक रिपोर्ट 2010–11, योजना आयोग, भारत सरकार।
6. www.rural.nic.in
7. www.planningcommission.gov.in

सारणी क्रमांक–1 : कोटा विकास ख.ड के सर्वेक्षित ग्राम पंचायतों की सूची

क.	ग्राम पंचायतस	म्मिलित गांवों की संख्या	ग्राम पंचायत में सम्मिलित गावों का नाम
1	आमागोहन	01	आमागोहन
2	बनाबेल	03	बानाबेल, आमामुड़ा, खैरझिटी
3	भैसाझार	02	भैसाझार, बछालीखुर्द
4	बिल्लीबंद	01	बिल्लीबंद
5	च्पोरा	02	चपोरा, बांसाझाल
6	छतौना	02	छतौना, सोढाखुर्द
7.	डाडबछाली	02	ड़ाडबछाली, पहाड़बछाली
8	धनरास	02	धनरास, करपिहा
9	धूमा	02	धूमा, डीडोल
10	जोगीपुर	02	जोगीपुर, उमरमरा
11	कलारतराई	03	कलारतराई, बांकीघाट, रानीसागर
12	कलमीटार	03	कलमीटार, भरैयाड़ीह, जहांगीराड़ीह
13	करगीकला	02	करगीकला, लमकेना
14	करगीखुर्द	02	करगीखुर्द, लोकबंद
15	करहीकछा	02	करहीकछार, केकराड़ीह
16	क्रका	04	करका, मोहतरा, केवरापारा, जोगीपुर
17	केन्दा	02	केन्दा, बरपाली
18	खोंगसरा	02	खोंगसरा, जरगा
19	लिटिया	03	लिटिया, मोहदी, बेड़ापाट
20	लूफा	01	लूफा
21	नगचुंआ	02	नागचुंआ, बांसाझाल
22	पंटैता	03	पंटैता, गोबरीपाट, नेवसा
23	शिवतराई	02	शिवतराई, सरईपाली
24	तेन्दुआ	01	तेन्दुआ
25	डपका	03	उपका, अटड्डा, सोढाकला

सारणी क्रमांक–2 : सर्वेक्षित ग्राम पंचायतों की वर्गवार जनसंख्या

क.	ग्राम पंचायत	सम्मिलित गांवों की संख्या	कुल जनसंख्या	अनुसूचित जाति		अनुसूचित जन जाति		अन्य	
				संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	आमागोहन	1	2073	203	9.79	283	13.65	1587	76.56
2	बनाबेल	3	2357	93	3.95	2025	86.76	219	9.29
3	भैसाझार	2	2211	178	8.05	1291	58.39	742	33.56
4	बिल्लीबंद	1	1561	294	18.83	582	37.28	685	43.88
5	च्पोरा	2	2248	256	11.39	869	38.66	1123	49.96
6	छतौना	2	2004	10	0.50	1225	61.13	769	38.37
7	ड़ाडबछाली	2	1543	97	6.29	709	25.95	737	47.76
8	धनरास	2	2167	44	2.03	1466	67.65	657	30.32
9	धूमा	2	4035	1272	31.52	1525	37.79	1238	30.68
10	जेगीपुर	2	708	105	14.83	488	68.93	115	16.24
11	कलारतराई	3	2674	667	24.94	1118	41.81	889	33.25
12	कलमीटार	3	2706	164	6.06	1105	40.84	1437	53.10
13	करगीकला	2	4344	530	12.20	1154	26.57	2660	61.23
14	करगीखुर्द	2	2940	902	30.68	337	11.46	1701	57.86

15	करहीकछार	2	3004	237	7.89	1091	36.32	1676	55.79
16	करका	4	1739	75	4.31	1255	72.17	409	23.52
17	केन्द्रा	2	3623	95	2.62	1181	32.60	2347	64.78
18	खोंगसरा	2	1594	0	0.00	817	51.25	777	48.75
19	लिटिया	3	2408	557	23.13	977	40.57	874	36.30
20	लूफा	1	2851	34	1.19	2208	77.25	609	21.36
21	नगचुंआ	2	1262	65	5.15	893	70.76	304	24.09
22	पटैता	3	3700	432	11.68	1434	38.76	1834	49.57
23	शिवतराई	2	1835	87	4.74	1522	82.94	226	12.32
24	तेन्दुआ	1	2002	805	40.21	661	33.02	536	26.77
25	डपका	3	2067	231	11.18	1226	59.31	610	29.51
योग		**54**	**59656**	**7433**	**12.46**	**27462**	**46.03**	**24761**	**41.51**

सारणी क्रमांक– 3 : सर्वेक्षित ग्राम पंचायतों में आधारभूत संरचना की स्थिति

क.	ग्राम पंचायत	कुल जनसंख्या	आधार भूत संरचना							
			शिक्षा	स्वास्थ्य	पेय जल	डाकघर	बाजार की दूरी (कि.मी.)	संचार	विद्युत	पहुंच मार्ग
1	आमागोहन	2073	1	4	8	10	5	10	10	6
2	बनाबेल	2357	2	0	8	10	3	10	10	6
3	भैसाझार	2211	1	5	9	10	6	10	10	6
4	बिल्लीबंद	1561	1	0	8	10	5	10	10	6
5	च्पोरा	2248	3	4	9	10	9	10	10	6
6	छतौना	2004	2	5	9	10	12	10	10	6
7	ढ़ाडबछाली	1543	1	0	8	10	15	10	10	7
8	धनरास	2167	2	5	8	10	10	10	10	6
9	धूमा	4035	2	0	9	10	20	10	10	6
10	जेगीपुर	708	1	0	8	10	5	10	10	6
11	कलारतराई	2674	1	0	9	10	3	10	10	7
12	कलमीटार	2706	2	5	9	10	8	10	10	6
13	करगीकला	4344	3	4	9	10	10	10	10	6
14	करगीखुर्द	2940	2	5	9	10	7	10	10	6
15	करहीकछार	3004	1	0	8	10	12	10	10	7
16	करका	1739	1	0	8	10	11	10	10	7
17	केन्द्रा	3623	3	4	9	10	15	10	10	6
18	खोंगसरा	1594	3	5	9	10	10	10	10	6
19	लिटिया	2408	1	0	8	10	5	10	10	6
20	लूफा	2851	1	5	8	10	12	10	10	6
21	नागचुंआ	1262	1	5	8	10	10	10	10	6
22	पटैता	3700	1	5	9	10	3	10	10	6
23	शिवतराई	1835	3	5	9	10	8	10	10	6
24	तेन्दुआ	2002	2	5	9	10	23	10	10	6
25	डपका	2067	1	0	8	10	15	10	10	6

0= निरंक, 1= पूर्व माध्यमिक शाला, 2= हाईस्कूल, 3= हायर सेकेण्डरी, 4= प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 5= उप स्वास्थ्य केन्द्र, 6= पक्की सड़क, 7= डब्लू बी एम सड़क, 8= हेन्डपम्प, 9= टेपनल 10= सुविधा उपलब्ध

सारणी क्रमांक–4 : सर्वेक्षित ग्राम पंचायतों में भूमि उपयोग, सिंचाई एवं फसल

क्र.	विवरण	कुल क्षेत्र (हेक्टेयर में)	प्रतिशत
1	कुल भौगोलिक क्षेत्र	13542.31	
2	कृषि भूमि	10563.00	78.00
3	दो फसली भूमि	2113.33	15.61
4	एक फसली भूमि	8449.67	62.39
5	सकल सिंचित क्षेत्र	2287.00	16.89
6	शासकीय स्रोतों से कुल सिंचित क्षेत्र	1560.00	11.52
7	निजी स्रोतों से सिंचित क्षेत्र	727.00	5.37
8	असिंचित क्षेत्र	8276.00	61.11
9	कुल रबी फसल	256.33	3.37
10	कुल खरीफ फसल	10532.00	77.77

स्रोतः– जिला सांख्यिकीय कार्यालय बिलासपुर

****

स्वतंत्रता के अधिकार के विशेष संदर्भ में भारतीय न्यायपालिका की भूमिका

डॉ. तहसीलदार तमोली *

प्रस्तावना – स्वतंत्रता का अधिकार जनतंत्र की आधारशिला है। व्यक्ति के व्यक्तित्व के संपूर्ण विकास के लिए अधिकारों का अस्तित्व नितांत आवश्यक है , एक नागरिक के विविध अधिकारों में स्वतंत्रता का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। ब्रिटिश विचारक जे. एस. मिल ने स्वतंत्रता के अधिकार को मानव जीवन का मूल आधार घोषित किया है।

जॉन लॉक आदि विचारकों ने स्वतंत्रता के अधिकार को प्राकृतिक अधिकारों की श्रेणी में रखा है। राज्य सरकार की स्थापना स्वतंत्रता आदि अपने अधिकारों की रक्षा करने हेतु किया गया।

अधिकारों के महत्व को समझते हुए विभिन्न देशों ने अपने संविधान के अंतर्गत स्थान दिया है। भारतीय संविधान के भाग 3 के अंतर्गत अनुच्छेद 19–22 तक में व्यक्तियों के लिए स्वतंत्रता संबंधी विविध अधिकारों का वर्णन किया गया है। संविधान में वर्णित स्वतंत्रता का अधिकार मूल अधिकारों के आधार स्तंभ घोषित है।व्यक्तित्व के विकास में व्यक्ति की स्वतंत्रता ही आधारभूत होती है इसकी समाप्ति मानव व्यक्तित्व को कुंठित करती है। [1]

न्यायपालिका राजनीतिक प्रक्रिया का एक ऐसा अंग है जो सरकार के हाथों में राजनीतिक शक्ति के अत्यधिक केंद्रीकरण की रोकथाम और लोकतंत्र की धांधली हो या बहुमत के निरंकुश शासन में जनता को बचाने की व्यवस्था प्रदान करती है। इसी कारण न्यायाधीश और न्यायालय समग्र राजनीतिक प्रक्रिया में महत्वपूर्ण पहलू माने जाते हैं। न्यायपालिका सरकार का तीसरा प्रमुख अंग है।

लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था तो स्वतंत्र और निष्पक्ष न्यायपालिका के मजबूत स्तंभ पर ही स्थिर रहती है। नागरिकों की स्वतंत्रता की रक्षा न्यायपालिका के अलावा अन्य संस्थागत संरक्षण के द्वारा नहीं हो सकने के कारण इसका महत्व कम से कम जनसाधारण के लिए तो अत्यधिक ही रहता है। [2]

भारतीय संविधान में वर्णित स्वतंत्रता से राज्य का स्वरूप तानाशाही से अलग होकर के जनतांत्रिक मूल्यों पर आधारित राज्य का हो जाता है। संविधान के अनुच्छेद 19 (1) की स्वतंत्रता राज्य द्वारा किए जाने वाले अतिक्रमण के विरुद्ध नागरिकों को प्रदत्ता किए गए हैं। इन स्वतंत्रताओं का स्वरूप अनियंत्रित तथा अमर्यादित होकर के सकारात्मक अधिक है।

राज्य को इन स्वतंत्रता के संदर्भ में खंड 2 से 6 के अधीन निर्बंध लगाने का पूर्ण अधिकार प्राप्त है, इसी तरह राज्य के स्वतंत्रता संबंधी कार्यवाही की शक्तियों पर कृतियों को संविधानिकता के आधार पर जांच या परीक्षण का अधिकार न्यायपालिका को भी संविधान के अंतर्गत उपलब्ध है।

भारतीय न्यायपालिका संविधान का एवं नागरिकों के मौलिक अधिकारों का संरक्षक है। पिछले कुछ दशकों से नागरिकों के मूल अधिकारों को न्यायपालिका न केवल व्यापक महत्व देकर ही बल्कि उसके द्वारा मौलिक अधिकारों को लगातार विस्तृत भी किया जा रहा है। विभिन्न मुकदमों की सुनवाई के दौरान कई मूल अधिकार को अपने निर्णय के माध्यम से जोड़ा है। संविधान के अनुच्छेद 21 में दिए गए जीवन के मूल अधिकार यदि न्यायपालिका ने विस्तृत व्याख्या की है, और यह अधिकारों को प्रतिपादित किया है ताकि जीवन के अधिकार केवल मौलिक अस्तित्व का अधिकार ही है यह अधिकार मानव गरिमा के साथ जीने का है, और जो कुछ इसके लिए आवश्यक है वह सब इस अधिकार में शामिल है। जहां पर्याप्त आहार, कपड़े, रहने का स्थान, लिखने–पढ़ने की स्वतंत्रता से लेकर घूमने आदि की सुविधाएं मूल अधिकार है। कुछ अन्य मामलों में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि स्वास्थ्य और चिकित्सा सुविधा पर्यावरण की रक्षा तथा सर्व भौमिक न्याय अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्ता जीवन के अधिकार के अंतर्गत सम्मिलित है। इस प्रकार न्यायपालिका को मूल अधिकारों की विस्तृत व्याख्या करने मैं नीति निर्देशक सिद्धांतों को मूल अधिकारों के रूप में मान्यता प्रदान की गई है। [3]

हाल के वर्षों में न्यायपालिका ने कुछ नीति निर्देशक सिद्धांतों को मूल अधिकारों का अंग मानकर एक तरह से उन्हें बाध्यकारी बना दिया है। उदाहरण उन्न कृष्णन बनाम आंध्र प्रदेश राज्य के मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय ने इस दृष्टिकोण की पुष्टि तथा पुनरावृति की गई कि मूल अधिकारों तथा नीति निर्देशक सिद्धांत एक दूसरे के पूरक तथा अनुपूरक हैं।इस मामले में न्यायपालिका ने कहा है कि अनुच्छेद 45 मेंदिया गया है कि 14 वर्षो तक की आयु के बच्चों को निशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का निर्देश अनुच्छेद 22 द्वारा दिए गए मूल अधिकारों का अंग है, क्योंकि मर्यादा पूर्ण जीवन के लिए शिक्षा आवश्यक है। इसीलिए अनुच्छेद 48 में दिया गया निर्देश भी अनुच्छेद 21 में दी गई दैहिक स्वतंत्रता का आवश्यक अंग है। इसी प्रकार अनुच्छेद 39 के निर्देशक तत्व को भी अनुच्छेद 21 में उल्लिखित विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया का अंग मानकर ही निशुल्क विधिक सेवा को मूल अधिकारों के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। अशोक कुमार गुप्ता बनाम उत्तार प्रदेश के मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय ने यह कहा कि अनुच्छेद 21 को अनुच्छेद 38 और उद्देशिका के साथ पढ़ने से स्पष्ट है कि सामाजिक न्याय अनुच्छेद 21 के अंतर्गत एक मूल अधिकार है। इसी प्रकार सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी घोषित किया है कि अनुच्छेद 31 (घ) का निर्देशक समान कार्य के लिए समान वेतन अनुच्छेद 14 व 16 में निहित मूल अधिकारों के अभिन्न अंग है। एक अन्य मुकदमे में सुभाष कुमार बनाम भारत संघ में पर्यावरण के संरक्षण व संवैधानिक तथा वन और अन्य जीवो के रक्षा के निर्देशक सिद्धांत

* असिस्टेंट प्रोफेसर (राजनीति शास्त्र विभाग) एस. बी. एस. पी.जी.कॉलेज, बाराबंकी (उ.प्र.) भारत

(अनुच्छेद 48 (क) को भी अनुच्छेद 21 में प्रदत्ता जीवन के अधिकार का भाग मान लिया गया है।[4]

नागरिकों के सशक्तिकरण के लिए सर्वोच्च न्यायालय ने समय-समय पर अपने निर्णयों के माध्यम से नए अधिकारों को बदलाव पूरे परिवेश के अनुसार सम्मिलित किया गया है। मूल अधिकारों को पूर्ण करने के लिए अनेक उपाधिकरों को मान्यता प्रदान किया है। सूचना के अधिकार शासन प्रशासन का कुशलता में वृद्धि लाने के कारण पारदर्शी भी बनाता है। इससे नागरिकों को सक्रिय सहभागिता में भी वृद्धि होती है। दिन प्रतिदिन के कार्यो में जन सहभागिता का स्तर उच्च होता है।

उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि जनता जब तक जानेगी नहीं तब तक अभिव्यक्त नहीं कर सकती है। 2005 में देश की संसद ने एक कानून पारित किया जिससे सूचना का अधिकार के नाम से जाना जाता है।

24 अगस्त 2017 को मुख्य न्यायाधीश के एस केहर की अध्यक्षता में 9 सदस्यीय संविधान पीठ ने निर्णय दिया कि निजता का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत जीवन के अधिकार और निजी स्वतंत्रता का अधिकार का मूलभूत हिस्सा है। यह संविधान के भाग-3 के तहत प्रदत्त आजादी का एक भाग है।

2012 में दिल्ली के रामलीला मैदान में बाबा रामदेव द्वारा धरना प्रदर्शन करने में उन्हें गिरफ्तार करने के लिए 12:00 रात दिल्ली पुलिस गई थी। पुलिस के जाने के बाद धरना स्थल पर सो रहे हजारों व्यक्तियों के बीच भगदड़ मच गई थी। भारत के सुप्रीम कोर्ट ने मामले के बारे में स्वत: संज्ञान लिया। 24 फरवरी को 2:00 बजे जस्टिस बीएस चौहान तथा स्वतंत्र कुमार की एक पीठ ने योग गुरु बाबा रामदेव तथा उनके समर्थकों पर पुलिस द्वारा मध्य रात्रि में मेक अ टाउन से संबंधित मामलों की सुनवाई करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने यह निर्णय दिया कि संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत शांतिपूर्वक सोने के अधिकार को मौलिक अधिकार की सूची में शामिल किया । इस प्रकार सोना एक मौलिक अधिकार है।

भारत के शीर्ष पांच महानगरों में कुल बेघर आबादी का लगभग 26 प्रतिशत बेघर लोग रहते हैं। भारत की शहरी आबादी का लगभग 0.37% आबादी बेघर है। बेघर व्यक्तियों के लिए अच्छी नींद लेना मुश्किल है। वे विभिन्न कारणों से अपने आश्रय स्थल के लिए चिंतित होते हैं और शांतिपूर्ण माहौल से वंचित होते हैं। ऐसे कई मामलों में माननीय न्यायालय ने बेघर लोगों के लिए प्राधिकरण से रेन बसेरा बनाने तथा बेघरों के सोने के संविधानिक अधिकार सुनिश्चित करने का निर्देश दिया है। चमेली सिंह बनाम उत्तार प्रदेश 1996 के केस में उच्चतम न्यायालय ने बेघरों को आश्रय स्थल उपलब्ध करवाने को संवैधानिक अधिकार माना है।[7]

संविधान का अनुच्छेद 19 भारत के नागरिक को विशिष्ट रूप से कुछ बुनियादी स्वतंत्रताओं अर्थात भाषण और अभिव्यक्ति , बिना हथियार के शांतिपूर्वक सम्मेलन ,संगत बनाने, भारत के राज्य क्षेत्र में सर्वत्र आने-जाने, भारत के किसी भी भाग में निवास करने और बस जाने और अपनी आजीविका, व्यापार या कारोबार करने की स्वतंत्रता की गारंटी देता है। यह स्वतंत्रताएं नागरिक के पक्ष में अंतर्निहित नैसर्गिक अधिकार मानी गई है। लेकिन न्यायपालिका ने एक स्वतंत्र नागरिक के लोकतांत्रिक मूल्यों का पूरा पूरा लाभ उठाने के लिए इन स्वतंत्रता को सर्वागीण नहीं माना है।न्यायपालिका ने अपने निर्णय में कहा है कि लोकतंत्रात्मक राज्य व्यवस्था के लिए इनके साथ-साथ अन्य अनेक स्वतंत्रताओं का होना भी आवश्यक है। भले ही अनुच्छेद 19 में विशिष्ट रूप से वर्णन नहीं किया है।[8]

न्यायपालिका जनतंत्र के मूल्यों की रक्षा के लिए एवं आवश्यकता के अनुसार अपने विभिन्न निर्णयों में नागरिक को स्वतंत्रता के अधिकार के अंतर्गत अनेक सामाजिक, आर्थिक, नैतिक मानसिक शैक्षणिक, पर्यावरण आदि क्षेत्रों को सम्मिलित किया है । न्यायपालिका ने अपने निर्णय में व्यक्ति के संपूर्ण जीवन उसकी आवश्यकता एवं अनिवार्य दशाओं के आधार पर अनेकों अधिकार को मौलिक अधिकार माना है। न्यायपालिका ने ऊपर बताए मूल्यों को स्वीकार करते हुए व्यक्तियों को विभिन्न प्रकार से स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान किया है। संविधान में वर्णित इन अधिकारों का इससे महत्व बढ़ा है एवं उसकी प्रासंगिकता में वृद्धि हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएं पेज 745, सोना सी बी विकास पब्लिक सिंह हाउस प्राइवेट लिमिटेड
2. वही पेज 746
3. एस. एम. शईद, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, प्रकाशक -भारत बुक सेंटर, लखनऊ , पृष्ठ 55
4. वही
5. सिविल सर्विसेज क्रॉनिकल फरवरी 2019
6. वही पेज- 148
7. वही पेज - 148,149
8. सिविल सर्विसेज टाइम सिर्फ मार्च 2020, पेज -50
9. सिंह महावीर, भारत का संविधान
10. पांडेय, जे एन, भारत का संविधान
11. बसु, डी. डी.,भारत का संविधान
12. नारंग ए. एस., भारत शासन और राजनीति
13. डॉक्टर - शिवाच जे.आर., भारतीय राजनीतिक व्यवस्था
14. पी. शरण, भारत का संविधान
15. कश्यप, सुभाष, हमारा संविधान

****

भारतीय संसदीय व्यवस्था में राज्यपाल की स्थिति

डॉ. विनोद कुमार सिंह*

प्रस्तावना – भारतीय संविधान द्वारा दोहरी शासन प्रणाली की स्थापना की गई है : एक केन्द्र में तो दूसरी राज्यों में। केन्द्र के समान राज्यों में भी संसदीय शासन प्रणाली को अपनाया गया है। जिसमें एक ही स्तर पर नाममात्र की एवं वास्तविक दो प्रकार की कार्यपालिकाओं का अस्तित्व होता है। राज्य की कार्यपालिका का संवैधानिक प्रमुख राज्यपाल होता है। राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। संवैधानिक रूप से राज्य की समस्त कार्यपालिका शक्ति राज्यपाल में निहित होती है, किन्तु इन शक्तियों का वास्तविक रूप में प्रयोग मंत्रिपरिषद द्वारा किया जाता है। राज्यपाल मंत्रिपरिषद की सलाह के अनुसार कार्य करता है और मंत्रिपरिषद सामूहिक रूप से विधान सभा के प्रति उत्तरदायी होती है। इसका अपवाद केवल वे क्षेत्र हैं जिन पर राज्यपाल अपनी विवेकाधीन शक्तियों का प्रयोग कर सकता है। राज्यपाल का कार्य व व्यवहार राज्य की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। सामान्यत: जब राज्य में स्थायी व बहुमत प्राप्त दल की सरकार होती है तो राज्यपाल केवल नाममात्र का संवैधानिक प्रमुख के दायित्व का ही निवर्हन करता है। परन्तु अस्थिर राजनीतिक स्थिति उसके प्रभाव में वृद्धि लाती है और उसे अपने स्वविवेकीय शक्ति के प्रयोग का अवसर प्रदान करती है।

राज्यपाल की स्थिति के सम्बन्ध में यदि संविधान के विभिन्न उपबंधों का अवलोकन करें तो ऐसा प्रतीत होता है कि संविधान निर्माताओं ने राज्य प्रशासन सम्बन्धी समस्त महत्वपूर्ण शक्तियाँ राज्यपाल को ही सौंपी हैं। राज्य का प्रशासन राज्यपाल के नाम से ही चलाया जाता है। राज्य के सभी महत्वपूर्ण अधिकारियों की नियुक्ति भी राज्यपाल के द्वारा की जाती है। वह राज्य विधानमण्डल का अधिवेशन बुलाता है और उसका सत्रावसान भी करता है। राज्य विधानमण्डल द्वारा पारित किया गया कोई भी विधेयक राज्यपाल की स्वीकृति के बिना कानून का रूप धारण नहीं कर सकता है। राज्यपाल विधानसभा को कुछ विशेष परिस्थितियों में निश्चित अवधि से पूर्व भंग भी कर सकता है।

जब राज्य विधानमण्डल का अधिवेशन न हो रहा हो और राज्यपाल को यह विश्वास हो जाए कि ऐसी परिस्थितियाँ विद्यमान हैं जिनके कारण शीघ्र कार्यवाही आवश्यक है, तब राज्यपाल अध्यादेश भी जारी कर सकता है। राज्यपाल द्वारा जारी अध्यादेश का वही बल एवं प्रभाव होता है जो राज्य विधानमण्डल द्वारा निर्मित विधि का। राज्यपाल मुख्यमंत्री की नियुक्ति करता है तथा मुख्यमंत्री की सलाह पर अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति करता है। उन्हें पद एवं गोपनीयता की शपथ दिलाता है। राज्य का प्रत्येक मंत्री राज्यपाल के प्रसाद पर्यन्त अपना पद धारण करता है। राज्यपाल को राज्यसूची एवं समवर्ती सूची के विषयों से सम्बन्धित विधि के विरूद्ध किए गए अपराधों के लिए क्षमादान तथा निलम्बन आदि की शक्तियाँ प्राप्त हैं।

इस प्रकार कुल मिलाकर संविधान के उपबंधों के अनुसार राज्यपाल को राज्य के प्रशासन से सम्बन्धित कार्यकारी, विधायी, न्यायिक और वित्तीय क्षेत्रों में समस्त महत्वपूर्ण शक्तियाँ प्राप्त हैं। राज्य के प्रशासन में राज्यपाल की वही स्थिति है जो केन्द्र में राष्ट्रपति की है। दोनों की शक्तियों में कुछ क्षेत्रों को छोड़कर पर्याप्त समानता है। डी0डी0 बसु के अनुसार, 'राज्यपाल की शक्तियाँ राष्ट्रपति के समान हैं सिर्फ कूटनीतिक, सैनिक तथा आपातकालीन शक्तियों को छोड़कर।'[1] परन्तु केन्द्र की भाँति राज्य में भी संसदीय शासन प्रणाली होने के कारण राज्यपाल को उन समस्त परम्पराओं का निवर्हन करना होता है जो परम्पराएं केन्द्र में प्रचलित हैं। अत: राज्यपाल केवल नाममात्र का शासक बनकर रह जाता है और वास्तविक रूप में इन शक्तियों का प्रयोग मुख्यमंत्री एवं मंत्रिपरिषद द्वारा किया जाता है। डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने राज्यपाल की स्थिति का वर्णन करते हुए संविधान सभा में कहा था कि– 'राज्यपाल की शक्तियाँ बहुत सीमित एवं नाममात्र की हैं तथा उसकी स्थिति बहुत दिखावे वाली होगी। वह कोई भी कार्य अपनी इच्छा या व्यक्तिगत विवेक से नहीं कर सकेगा।'[2] इन्हीं कारणों से संविधान निर्माताओं ने राज्यपाल की नियुक्ति जनता के चुनाव द्वारा या विधान सभा द्वारा कराने के सुझावों को रद्द कर कनाडा के संविधान का अनुसरण किया ताकि राज्यपाल केवल संवैधानिक मुख्यिा या नाममात्र के शासक के रूप में कार्य कर सके। इस प्रसंग में अल्लादि कृष्णास्वामी अय्यर ने संविधान सभा में कहा था कि – 'समरूपता की प्राप्ति के लिए, अच्छे कार्य संचालन के लिए, राज्यपाल तथा मंत्रिपरिषद के सदस्यों के बीच सम्बन्धों की स्थापना के लिए यही अच्छा है कि हम कनाडा के संविधान के अनुरूप ही व्यवस्था करें।'[3]

परन्तु राज्यपाल के संवैधानिक मुखिया होने का अर्थ यह नहीं है कि यह पद सर्वथा महत्वहीन है। राज्यपाल को कुछ विशेष परिस्थितियों में अपनी शक्तियों का प्रयोग मंत्रिमण्डल के परामर्श के बिना स्वेच्छा से करने का अधिकार भी दिया गया है। ऐसी शक्तियों को विवेकाधीन शक्तियां कहते हैं। यह शक्तियां राज्यपाल की वास्तविक स्थिति को बहुत अधिक शक्तिशाली बना देती हैं। जबकि संविधान द्वारा राष्ट्रपति को कोई भी विवेकाधीन शक्ति नहीं प्रदान की गई है। इन विवेकाधीन शक्तियों ने राज्यपाल के पद को काफी विवादास्पद भी बना दिया है। संविधान निर्माताओं द्वारा इस पद के सम्बन्ध में मूल रूप में की गई कल्पना और पिछले लगभग 65 वर्षों में इसके कार्यान्वयन में भारी अन्तर आया है।

ऐसा माना जाता है कि भारतीय संविधान का वास्तविक स्वरूप 1967 के पश्चात ही सामने आया। जब देश के कुछ राज्यों में गैर कांग्रेसी सरकारों का निर्माण हुआ और विभिन्न राजनीतिक संस्थाओं एवं राजनैतिक पदों के

* असिस्टेंट प्रोफेसर (राजनीति शास्त्र विभाग) जवाहरलाल नेहरू मेमोरियल पी0जी0 कालेज, बाराबंकी (उ.प्र.) भारत

पारस्परिक सम्बन्धों तथा शक्तियों के विषय में अनेक प्रश्न उठाए गये जो इससे पहले शायद ही कभी सामने आये हों। ऐसे संविधानिक प्रश्नों में सबसे गंभीर विवाद राज्यपाल की शक्तियों तथा स्थिति के सम्बन्ध में उठे। विरोधी दलों की ओर से यह आरोप लगाए गये कि केन्द्र सरकार राज्यपाल से गैर कांग्रेसी सरकारों को अपदस्त कराने का कार्य कर रही है।[4] एक जैसी राजनीतिक परिस्थितियों में ही भिन्न-भिन्न राज्य के राज्यपालों द्वारा अलग-अलग निर्णय लिए जाने के कारण केन्द्र तथा राज्यों के मध्य तनाव शुरू हुआ। गैर कांग्रेसी सरकारों द्वारा यह आरोप लगाए गये कि केन्द्र सरकार अपने राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए राज्यपाल के पद का दुरूपयोग कर रही है।

राज्यपाल पर पक्षपात व दलीय हितों को बढ़ावा देने का आरोप उन सभी राज्यों में लगाया गया, जहां गैर कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों की स्थापना हुई। विशेषकर पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, पंजाब तथा हरियाणा में राज्यपाल के पक्षपात पूर्ण रवैये के खिलाफ घोर असंतोष व्यक्त करते हुए कहा गया कि केन्द्र सरकार का प्रतिनिधि होने के नाते राज्यपाल गैर कांग्रेसी सरकारों को गिराने व असफल करने के अभियान में सक्रिय है। कुछ राज्यों में राज्यपालों को हटाने की भी मांग की गई।[5] बाद के कुछ वर्षों में ही यह पद इतना ज्यादा विवादित हो गया कि कुछ राजनीतिक दलों ने इस पद को पूरी तरह समाप्त करने की ही मांग कर डाली। इन घटनाओं ने इस पद की गरिमा एवं सम्मान को बहुत अधिक ठेस पहुंचाई।

वास्तव में भारतीय संविधान द्वारा राज्यपाल को दोहरी भूमिका सौंपी गई है। एक ओर वह संसदीय परम्परा के अनुरूप राज्य का संवैधानिक प्रधान है तो दूसरी ओर केन्द्र व राज्य के बीच की कड़ी के रूप में वह अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका का निवर्हन करता है। वह यह देखता है कि राज्य सरकारें संकीर्ण प्रान्तवाद की भावना को न अपनाकर समस्त संघ के हितों को ध्यान में रखकर कार्य करें। 1976 में आयोजित राज्यपाल सम्मेलन में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने भी कहा था- 'संकीर्ण प्रान्तीयतावाद पर विजय प्राप्त करने में राज्यपाल की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है।'[6] संविधान निर्माताओं द्वारा संभवतः यह सोंचा गया था कि राज्यपाल की प्रथम भूमिका राज्य के संवैधानिक अध्यक्ष की होगी तथा दूसरी भूमिका के रूप में वह राज्य में केन्द्रीय शासन के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करेगा। लेकिन व्यवहार के धरातल पर राज्यपाल की यह द्वितीय भूमिका अर्थात् राज्य में केन्द्र के एजेन्ट के रूप में अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। विशेष रूप से उस समय जबकि केन्द्र में एक राजनीतिक दल की सरकार होती है तथा राज्य में किसी दूसरे राजनीतिक दल की या कुछ विरोधी दलों की मिली जुली सरकार। व्यावहारिक रूप से जब कभी भी राज्यपाल की इन दोनों भूमिकाओं में परस्पर विरोध की स्थिति उत्पन्न हुई है तब राज्यपाल ने केन्द्रीय शासन के प्रतिनिधि के रूप में अपनी भूमिका को ही अधिक महत्व दिया है। इस सम्बन्ध में के0वी0 राव जी लिखते हैं कि 'आज जैसी उसकी स्थिति है उसे केन्द्र द्वारा नियुक्त किया व हटाया जाता है। राज्यपाल वही है जो केन्द्र उसे बनाना चाहता है, वास्तव में ऐसा कुछ नहीं है जो राज्यपाल अपने आप कर सके। उसकी भूमिका उस पर निर्भर है जो पीछे बैठा व्यक्ति अपनी डोरियों से कर रहा है।'[7]

राज्यपाल की इस प्रकार की गतिविधियों के कारण ही विरोधी दल सामान्यतः यह शिकायत करते रहे हैं कि केन्द्र में सत्तारूढ़ दल राज्यपाल पद का उपयोग अपने राजनीतिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए करता है। डॉ0 इकबाल नारायण के अनुसार 'उसे राज्यों में गैर कांग्रेसी सरकारों को गिराने के लिए केन्द्र के कथित षड्यन्त्र के रूप में देखा गया है।'[8] समय-समय पर घटने वाले विविध घटनाक्रमों ने इस बात की पुष्टि भी की है कि राज्यपाल को संदेह और अविश्वास की देखना अकारण नहीं हैं। वह चाहे 1967 के बाद गैर कांग्रेसी सरकारों के साथ निभाई जाने वाली राज्यपाल की कार्यप्रणाली हो या 1984 में सिक्किम के राज्यपाल द्वारा नर बहादुर भण्डारी को मुख्यमंत्री पद से हटाकर बी0बी0 गरूंग को मुख्यमंत्री बनाना हो जो मात्र 13 दिन कार्य कर सके या जम्मू काश्मीर के राज्यपाल द्वारा अब्दुल्ला सरकार को बर्खास्त कर जी0एम0शाह को मुख्यमंत्री बनाना हो या आन्ध्र के राज्यपाल द्वारा एन0टी0आर सरकार को पदच्युत कर भास्कर राव को मुख्यमंत्री बनाना हो। इन सभी मामलों में राज्य के राज्यपालों ने अपनी स्वविवेक की शक्तियों का प्रयोग विवेकपूर्ण ढंग से नहीं किया। इसके साथ ही विभिन्न राज्यों में राज्यपाल द्वारा की जाने वाली राष्ट्रपति शासन की सिफारिश हो या किसी राज्य के आम चुनाव में यदि कोई राजनीतिक दल बहुमत प्राप्त न कर सके तो सरकार के गठन के लिए किसी दल को आमंत्रित करना हो राज्यपाल सदैव केन्द्र में सत्तारूढ दल की मंशा के अनुरूप ही अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करता रहा है। ऐसी स्थितियां न तो भारतीय संवैधानिक व्यवस्था के अनुरूप हैं और न ही राज्यपाल पद के हित में एवं न ही इस पद की गरिमा के अनुरूप ही है। इन्दर मल्होत्रा के शब्दों में, 'जनसाधारण की बात को छोड़ दिया जाये स्वयं राज्यपाल पदधारी भी अपने इस पद को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखते हैं।'[9] श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित ने कहा था कि, 'यदि कोई व्यक्ति इस पद को स्वीकार करता है तो उसको पद नहीं वरन् वेतन का आकर्षण है।'

राज्यपाल पद के इस भारी अवमूल्यन के लिए कोई एक पक्ष या राजनीतिक दल नहीं वरन् सभी पक्ष दोषी हैं। केन्द्र में कांग्रेस, जनता पार्टी, राष्ट्रीय मोर्चा या भाजपा किसी की भी सरकार रही हो या विभिन्न राजनीतिक दलों की मिली जुली सरकारें रही हैं। उन्होंने न केवल दलीय हितों के आधार पर राज्यपालों की नियुक्तियां की हैं वरन् राज्यपालों के स्थानान्तरण और बर्खास्तगी का अत्यन्त अशोभनीय मार्ग भी अपनाया है। इस पृष्ठभूमि में इस मांग को बल मिला कि राज्यपाल पद को समाप्त कर दिया जाना चाहिए। परन्तु संसदीय शासन व्यवस्था होने के नाते इस पद को समाप्त करना संभव नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि राज्यपाल की केन्द्र सरकार के प्रतिनिधि के रूप में और राज्य के संवैधानिक अध्यक्ष के रूप में भूमिकाओं में सामंजस्य स्थापित किया जाये और राज्यपाल पदधारी को केन्द्र सरकार और राज्य सरकार दोनों का विश्वास प्राप्त हो। संसदीय व्यवस्था के सुचारू रूप से संचालन तथा केन्द्र राज्य सम्बन्धों की एक स्वस्थ स्थिति बनाये रखने हेतु राज्यपाल पद पर नियुक्ति के सम्बन्ध में और पदधारी के आचरण के सम्बन्ध में कुछ निश्चित एवं स्वस्थ परम्पराओं का अपनाया जाना नितान्त आवश्यक है। यदि समय रहते ऐसा नहीं किया गया तो समस्त राजनीतिक व्यवस्था को भारी आघात पहुंचने की आशंका है।

केन्द्र राज्य सम्बन्धों को मधुर एवं स्वस्थ बनाने तथा इन विवादों को कम करने के लिए समय-समय पर गठित विभिन्न समितियों ने राज्यपाल की नियुक्ति एवं बर्खास्तगी तथा कामकाज में परिवर्तन के सम्बन्ध में कई महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं। जिनमें से तमिलनाडु सरकार द्वारा गठित राजमन्नार समिति, प्रशासनिक सुधार आयोग, केन्द्र-राज्य सम्बन्धों की समीक्षा हेतु गठित सरकारिया आयोग तथा भगवान सहाय समिति आदि के सुझाव काफी महत्वपूर्ण है।

राजमन्नार समिति ने सुझाव दिया कि राज्यपाल की नियुक्ति उस राज्य

की सरकार का परामर्श लेकर ही किया जाना चाहिए तथा राष्ट्रपति द्वारा राज्यपालों को यह दिशा-निर्देश दिया जाना चाहिए कि एक जैसी राजनैतिक परिस्थितियों में समान निर्णय लें जिससे विवेकाधिकार का प्रयोग कम से कम किया जा सके।[10] प्रशासनिक सुधार आयोग (1969) ने भी यह सुझाव दिया कि राष्ट्रपति राज्यपालों को सही दिशा निर्देश जारी करे। केन्द्र-राज्य सम्बन्धों की समीक्षा हेतु गठित सरकारिया आयोग का भी सुझाव है कि राष्ट्रपति सम्बन्धित राज्य में राज्यपाल की नियुक्ति से पूर्व राज्य के मुख्यमन्त्री से परामर्श अवश्य करे तथा किन्हीं राजनैतिक कारणों से उन्हें 5 वर्ष से पूर्व न हटाया जाए। राज्यपाल के पद पर किसी विशिष्ट एवं ख्याति प्राप्त व्यक्ति को ही नियुक्त किया जाये जो स्थानीय दलीय राजनीति से सम्बन्धित न हो और राज्यपाल के द्वारा अनुच्छेद 356 का प्रयोग विभिन्न विकल्पों की तलाश के बाद अन्तिम विकल्प के रूप में किया जाना चाहिए। यदि किसी मंत्रिमण्डल के बहुमत में न होने का संदेह हो तो बहुमत को सिद्ध करने का सही स्थान विधानसभा का पटल ही है। लेकिन यदि राज्य का मुख्यमंत्री जानबूझकर इसे टाल रहा हो तो राज्यपाल स्वयं पहल करके इस मामले को हल कर सकता है।[11]

इन विविध सुझावों को ध्यान में रखते हुए राज्यपाल पद के सम्मान को स्थायी एवं गरिमामयी बनाये रखने हेतु कुछ तर्क संगत बातों का क्रियान्वयन किया जाना नितान्त आवश्यक है। राज्यपाल की नियुक्ति करते समय सम्बन्धित राज्य के मुख्यमंत्री को अनिवार्यत: विश्वास में लिया जाना चाहिए। केवल ऐसे ही व्यक्तियों को राज्यपाल के पद पर नियुक्त किया जाना चाहिए जिन्हें संसदीय लोकतन्त्र से सम्बन्धित विषयों का व्यापक ज्ञान हो और जिन्होंने राजनीति, प्रशासन, शिक्षा, समाजसेवा या अन्य किसी क्षेत्र में कार्य करते हुए सभी पक्षों से सम्मान प्राप्त किया हो और दलीय राजनीति से ऊपर उठकर परिस्थितियों का आंकलन करने तथा स्वतन्त्र निर्णय लेने की क्षमता रखता हो। किसी दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त न होने की दशा में विधानसभा में सबसे बड़े राजनीतिक दल को सरकार बनाने हेतु आमन्त्रित करने की परम्परा का निर्वहन राज्यपालों द्वारा किया जाना चाहिए। किसी मंत्रिमण्डल को बहुमत प्राप्त है या नहीं इस बात का निर्णय राजभवन में नहीं वरन् विधान सभा में ही किया जाना चाहिए। जिससे यह स्वत: स्पष्ट हो जायेगा कि मंत्रिमण्डल को बहुमत प्राप्त है या नहीं, इससे विवाद स्वयं समाप्त हो जायेगा। केन्द्र सरकार द्वारा भी राज्यपाल के पद के सम्बन्ध में मर्यादित आचरण को अपनाया जाना चाहिए और यथासंभव सभी राजनीतिक विवादों से इसे दूर रखने की चेष्टा करनी चाहिए।

इस प्रकार एक स्वस्थ परम्परा को अपनाकर व इस पद का अराजनीतिकरण करके राज्यपाल पद की मर्यादा व सम्मान को बनाये रखा जा सकता है। स्वयं राज्यपाल का आचरण ही उन्हें सभी पक्षों से सम्मान दिला सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बसु, डी0डी0, कमेन्ट्री ऑन द कान्स्टीट्यूशन आफ इण्डिया, वाल्यूम 2, एस0सी0 सरकार पब्लिकेशन्स, कलकत्ता, 1965
2. कान्स्टीट्यूशनल एसेम्बली डिबेट्स, खण्ड-4
3. कान्स्टीट्यूशनल एसेम्बली डिबेट्स (सी0ए0डी0) वाल्यूम-7, पृ0 432
4. सईद, एस0एम0, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, सुलभ प्रकाशन, अशोक मार्ग, लखनऊ, 2002, पृ0-213
5. उपरोक्त, पृ0-213-214
6. द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 23 मार्च-1976
7. रॉव, के0वी0, पेपर ऑन द रोल ऑफ स्टेट गवर्नमेन्ट इन इण्डिया, इण्डियन पॉलिटिकल साइंस रिव्यू, डेलही, नं0 3-4, 1968, पृ0-175
8. नरायन, इकबाल, ट्यूलाइट ऑर डाउन, पोलिटिकल चेंज इन इण्डिया, 1967-71, पृ0-94
9. मल्होत्रा, इन्दर,Stooges or Satraps-द टाइम्स ऑफ इण्डिया, संडे रिव्यु, 8 नवंबर, 1981, पृ0-01
10. रिपोर्ट ऑफ राजमन्नार कमेटी, गवर्नमेन्ट ऑफ तमिलनाडु, मद्रास, 1971
11. सईद, एस0एम0, उपरोक्त, पृ0-227-228

****

हाथ करघा उद्योग एवं ग्रामीण विकास

डॉ. के.एल.टाण्डेकर* डॉ. ई.व्ही.रेवती**

प्रस्तावना – भारत में 19वी. सदी के वैश्वीकरण और औद्यौगिकरण ने हाथ करघा सहित भारत के पारंपरिक उद्योगो को बर्बाद कर लिया था, इसी वजह से हस्तशिल्प और हस्त निर्मित वस्त्र के क्षेत्र में बड़ी तादात में रोजगार समाप्त हो गए। स्वतंत्रता आदोलन के दौरान महात्मा गांधी ने भारतीय गावों को मजबूत और आत्म निर्भर बनाने पर जोर दिया, उन्होने ग्रामीण दस्तकारी और वस्त्र उद्योग को पुर्नजीवित करने का आव्हान किया जिसके परिणाम स्वरूप आजाद भारत में हस्त शिल्प और बुनाई उद्योग को आर्थिक विकास में एक महत्तवपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ।

हाथकरघा उद्योग का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास के अवसर उपलब्ध कराने तथा विदेशी मुद्रा दर्जन करने में विशेष सहयोग रहा है, जिसकी वजह से विगत दिनों मे हाथकरघा उद्योग की तरफ नीति निर्धारत एवं विकासात्मक कार्य हुए है, भारत का हाथकरघा उद्योग विष्व का सबसे बड़ा हाथकरघा उद्योग है, यह मुख्यत: संगठित क्षेत्र में स्थित है। 1995 की हाथकरघा गणना के अनुसार संभावना एवं ग्रामीणों अंचलो में रोजगार उपलब्ध कराने में असमर्थता के लिहाज से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में कृषि के बाद हाथकरथा क्षेत्र को दूसरा स्थान प्राप्त है। अनसुचित जाति, अनसुचित जन-जाति, अन्य पिछडा वर्ग, अल्प संख्यक वर्ग के लोग शामिल है जिन्हे इस उद्योग से रोजगार मिलता है।

देश के विभिन्न हिस्सो में 95 लाख से 1 करोड़ व्यक्ति शिल्पकार के रूप में हाथकरघा उद्योग में लगें है, देश के कुल उत्पादन में हाथकरघा उद्योग में लगे है। देश के कुल उत्पादन में हाथकरघा क्षेत्र का योगदान लगभग 13 प्रतिशत है। सन 2002-03 के दौरान भारत के निर्यात आय में 54.4 करोड अमरिकी डालर का योगदान रहा है, भारत में 1950 में अखिल भारतीय हाथकरघा मंडल गनाया गया, वर्तमान में 06 भारतीय हाथकरघा प्राद्योगिकी संस्थान देश में तकनीक प्रशिक्षण, मानव प्रबंधन, नई तकनीक, बुनाई प्रक्रिया में सुधार तथा दक्षता उन्नयन कर इस क्षेत्र में शुद्धीकरण लाने का प्रयास किये जा रहे है। देश के ग्रामीण अंचलों में रोजगार के अधिकारिक अवसर उपलब्ध कराने के उद्देश्यों से हाथकरघा को राजीव गांधी ग्रामोद्योग मिषन के घटक के रूप में भी सम्मिलित किया गया है।

हाथकरघा उद्योग का क्षेत्र विशाल है तथा ये असंगठित भी है, यह परंपरागत रूप से प्राचीनकाल से चला आ रहा है, विश्व में विभिन्न क्षेत्रों में अधिक लोकप्रिय होने के साथ इन उद्योगो के उत्पाद 120 से अधिक देशों को निर्यात किये जाते है, जिनमें मुख्यत: जर्मनी, आस्ट्रेलिया , संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाड़ा, बिटेन, साउदी अरब, स्वीजर लैण्ड प्रमुख है। मशीनीकरण के बढते चलन के बावजूद इसका महत्त्व बढा है, भारत के निर्यात होने वाले कपडों निर्मित वस्तुओं तौलिए, चादर, रूमाल आदि करीब 15 प्रतिशत हिस्सा हाथकरघा उत्पाद का ऐसा ही होता है, देश के प्रमुख निर्यातोन्मुखी उत्पादन केन्द्र तमिलनाडु, केरल, हरियाणा, प. बंगाल, मध्यप्रदेश, पंजाब में हाथकरघा उद्योग का विशाल समुदाय अर्थात हाथकरघा शिल्पी अधिक संख्या में विद्यमान है।

भारत सरकार ने ग्रामीण भारत की तस्वीर बदलने की दिशा में हाथकरघा को बढावा देने का बीढ़ा उठाया है, इसके तहत् वाराणसी में हाथकरघा व्यापार सुविधा केन्द्र और शिल्प संग्राहलय स्थापित करने के लिए बजट में 50 करोड रू. का प्रावधान किया गया है। वित मंत्री ने यू.पी. के वाराणसी, बरेली, लखनऊ और गुजरात के सुरत, कच्छ बिहार के भागलपुर वस्त्र मैसूर व तमिलनाडु में 200 करोड रू. की लागत से आठ वस्त्र उत्पादनो समूह स्थापित करने की घोषणा की, वित्त मंत्री ने हाथकरघा -हस्तकला के संरक्षण पुनर्उत्थान और प्रलेखन के लिये 30 करोड की लागत से नई दिल्ली में पी.पी.पी. आधार पर हस्तकला अकादमी की स्थापना का प्रस्ताव किया, उन्होने पश्मीना प्रोत्साहन कार्यक्रम और जम्मू कश्मीर के लिए भी 50 करोड रूपये प्रस्तावित किये।

ग्राामीण इलाके में अभी भी बेरोजगारी एक बडी समस्या है। ऐसे में सरकार ने ग्रामीण युवाओं को स्वावलम्बी बनाने की दिशा में भी पहल की है, ग्रामीण युवाओं में उद्यमिता को बढावा देने के लिये सरकार ने 100 करोड रू. का बजट अलग से आबंटित किया है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों के युवा स्थानीय स्तर पर कोई रोजगार शुरू कर सके, सरकार ने इसे नाबार्ड के जरिए भी जोडा है।

तालिका 1 – **(अन्तिम पृष्ठ पर देखे)**

कुल वस्त्र उत्पादन में होजरी, खादी, उन और रेशम वस्त्रों को छोडकर हाथकरघा, विद्युतकरघा और मिल क्षेत्र का कुल वस्त्र उत्पादन समिलित है।

हाथकरघा उद्योग अति प्राचीन काल से ही भारतीय अर्थव्यवस्था का अभिन्न अंग रहा है, 65 लाख लोगो को रोजगार देने वाले हाथकरघा उद्योग कृषि के बाद देश में दूसरा स्थान है, यह परम्परागत शिल्प इसकी उच्चतम करीगारी और प्रवीणता कुशल भारतीय बुनकर की एक छाप है, अनंतकाल से भारत के हाथ से बने कपडे जग प्रसिद्ध है, सदियो से हाथकरघा का संबंध कपडों से जुडी उत्कृष्ट भारतीय कारीगरो को रोजगार का स्त्रोत उपलब्ध कराने से जोडा जाता रहा है। हाथकरघा क्षेत्र ग्रामीण भारत में कृषि के बाद दूसरा सबसे बडा रोजगार प्रदाता क्षेत्र है, यह विभिन्न समुदायों के 4.33 मिलियन लोगो को रोजगार उपलब्ध कराता है जो देश भर में 2.38 मिलियन करघो से जुडे हुए है, यह देश में कपडा उत्पादन में लगभग 15

* प्राचार्य, शासकीय डॉ. बाबा साहब भीमराव आम्बेडकर स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगांव, जिला - राजनांदगांव (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगढ (छ.ग.) भारत

प्रतिशत का योगदान देता है और निर्मित आय में भी सहायता करता है, विश्व में हाथ से बुने हुए 95 प्रतिशत कपड़े भारत के ही होते है।

प्रधानमंत्री ने 1905 में आरम्भ स्वदेशी आंदोलन की याद में 07 अगस्त 2015 को राष्ट्रीय हाथकरघा दिवस घोषित किया तथा ग्राहको का विश्वास जीतने के लिए सामाजिक एवं पर्यावरण अनुकुलता के अतिरिक्त कच्चामाल, प्रसंसकरण, बुनावट एवं अन्य मानदंडो के लिहाज से उत्पादों की गुणवत्ता के समर्थन के लिए 07 अगस्त 2015 को 'भारत हथकरथा ब्राण्ड' (IHB) भी लांच किया। आईएचबी ने उच्च गुणवत्ता हथकरघा उत्पादों को बढावा देने के लिए ग्राहाको के बीच जागरूकता निर्माण करने एवं इसके लिए एक विशिष्ट पहचान बनाने में सहायता देने के लिए शीघ्र ही सोशल मिडिया पर ग्राहकों, विशेष रूप से युवाओं के बीच अपनी उपस्थिति दर्ज करा दी।

ब्लाक स्तरीय क्लस्टर एप्रोच – राष्ट्रीय हथकरथा विकास कार्यक्रम (एन.एच.डी.पी.) के एक घटक क्लस्टर विकास कार्यक्रम के स्थान पर जून 2015 में ब्लाक राष्ट्रीय क्लसटर एप्रोच आरंभ किया गया और इसके दिशा-निर्देश राज्य सरकारों, बुनकर सेवा केन्द्रो आदि को भेज दिए गये है। ब्लाक स्तरीय क्लसटर एप्रोच की जरूरतों के अनुकुल अधिक सुकर है और इसमें भारत सरकार से अधिक वित्त पोषण राज्य के वित्तीय अंशदान की समाप्ति, कार्यान्वयन एजेंसियो को सीधे धनराशि जारी करना, लाभार्थियों को ईसीएस के माध्यम से बैंक खाते मे धनराशि अंतरित करना है। इसके अलावा ब्लाक में एक कलस्टर, सामान्य सुविधा केन्द्र की स्थापना (सामान्य सेवा केन्द्र सहित) वस्त्र डिजाईनर एवं विपणन कार्यकारी की नियुक्ति,वर्क शेड का निर्माण , क्लस्टर विकास कार्यकारी की नियुक्ति, प्रोद्योगिकी उन्नयन, कौशल उन्नयन इत्यादि जैसे विभिन्न हस्तक्षेपो के लिए 200 करोड रू. तक की वित्तीय सहायता प्राप्त करने के लिए है। इसके साथ ही जिला स्तर पर डाई हाउस की स्थापना के लिए 50 लाख रू. तक की वित्तीय सहायता उपलब्ध है। वर्ष 2017-18 के दौरान (31 दिसम्बर 2017 तक) निम्नलिखित राज्यों के लिए 43 ब्लाक स्तरीय क्लस्टर स्वीकृत किए गये है। जिसका विवरण निम्नांकित है।

तालिका 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

आधुनिक युग में निर्मित वस्त्रों की अपेक्षा हाथ द्वारा उत्पादित हाथकरघा वस्त्र पूर्णत: प्रदूषित रहित होते है, इस उद्योग की पर्याप्त संभावनाएॅ बनी हुई है, देश के विभिन्न भागो से हजारों लोगहाथकरघा उद्योग को अपनी जीविका का साधन मानकर कार्य कर रहें है। यह पीढ़ी दर पीढी सदियों से चही आ रही कलात्मक कुशलता को जीवंत बनाये रखने एवं इसके उत्तरोत्तर विकास के लिए देश के कई राज्यों मे हस्तशिल्प एवं हाथकरघा विकास निगम/संचालनालय का गठन कर इसे चुनौतियो का सामना करना पड रहा है। इतना ही नही बल्कि उत्भोक्ता की पसंद प्राथमिकता में भी बदलाव आया है जिसके चलते हाथकरघा क्षेत्र का अस्तित्व खतरे में पडता नजर आ रहा है, पुरानी बेकार प्राद्योगिकी, असंगठित उत्पादन प्रणाली, निम्न उत्पादकता, अपर्याप्त कार्यशील पूंजी, उत्पादों की पारंपरिक श्रृंखला, कमजोर विपणन व्यवस्था, स्थिर उत्पादन और बिक्री तथा नई उत्पादन प्रणाली से प्रतिस्पर्धा सहित लोगो के स्वास्थ्य, आय, स्वच्छ वातावरण, की अनूपलब्धता जैसे गंभीर समस्याएॅ विद्यमन है। ज्यादा खराब स्थिति महिला एवं बच्चों की है।

यह सर्वविदित है कि हथकरघा उद्योग पूर्णरूपेण परंपरागत कौशल है, जिसे बनकरों द्वारा पीढ़ी-दर-पीढ़ी अर्जित कर विकसित किया गया है, जो वस्तुत: हमारे कला-कौशल, कला सौष्ठव तथा प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर के रूप मे विद्यमान है। ऐतिहासिक दृष्टि से देखें, तो पाश्चात्य देशों की औद्योगिक क्रांति के पश्चात मशीन युग के प्रारंभ तथा ब्रिटिश-काल के बुनकरों के हथकरघा संकट जैसे झंझावातों से निकल कर भी इस उद्योग ने न केवल अपने अस्तित्व को बचाए रखा है, अपितु समय-समय पर आधुनिक तकनीक का सूत्रपात करते हुए उद्योग के प्राय: सभी क्षेत्रों में आशातीत प्रगति की है। इसका ज्वलंत उदाहरण है कि आज हमारे देश में निर्यात की जाने वाली सभी वस्तुओं में हथकरघा उत्पादित वस्त्र प्रमुख स्थान पर है। हथकरघा वस्त्र वर्तमान समय में पश्चिमी देशों के अलावा मध्या-पूर्व, दक्षिण-पूर्व तथा जापान आदि देशों को निर्यात हो रहें है और इनकी लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन वृद्धि की ओर है। यही नही भविष्य में भी हथकरघा वस्त्रों के निर्यात की संभावनाएॅ अत्यंत उज्जवल है। अत: इस परिप्रेक्ष्य में यह नितांत आवष्यक होगा कि वैश्वीकरण नीति का अनुसरण करते हुए हथकरघा उद्योग को यथोचित संरक्षण तथा प्रोत्साहन प्रदान किया जाए, ताकि इस उद्योग के माध्यम से दुर्लभ विदेशी मुद्रा निरंतर प्राप्त होती रहे और इस उद्योग में कार्यरत बुनकरों, दलितों, अल्पसंख्यकों का जीवन स्तर तथा आर्थिक स्तर सुधर सकें।

भारत में हाथकरघा उद्योग के विकास हेतु नई तकनीक मानको के अनुरूप प्रशिक्षत बुनकर सहकारी समिति का विकास हाथकरघा निर्यात का गठन, संसाधनो की पर्याप्त उपलब्धता बाजार सृजन के साथ बुनकर को करघों की नई डिजाइनों, तकनीकियों से परिचय कराना जैसे कदम उठाने होगें ताकि ग्रामीण को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकारिक हाथों को कार्य उपलब्ध कराया जा सके एवं सहकारिता के माध्यम से यदि इस उद्योग का पूर्ण विकास किया जावें तो गांव में ही एक व्यक्ति को पूर्ण रोजगार के अवसर उपलब्ध हो सकेगे तथा रोजगार की तालाश में गांव से शहरो की ओर होने वाले पलायन को भी रोका जा सकेगा तभी गांधी जी के ग्रामीण विकास की परिकल्पना साकार होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुरूक्षेत्र अगस्त 2014 -0020 ग्रामीण विकास बजट 2014-15 ग्रामीण विकास मंत्रालय, दिल्ली।
2. शोध उपक्रम - छत्तीसगढ़ शोध संस्थान रायपुर (अप्रेल - 2012)।
3. दक्षिण कौशल मासिक पत्रिका अंक दिनांक 2014.
4. Dr. M.Sundarapandian Growth and Prospectus of handloom sector in india occasional paper 22 NAMARD Mumbai.
5. हाथकरथा उद्योग की प्रगति - पंकज कुमार राय।
6. वार्षिक रिपोर्ट (2013-14) वस्त्र मंत्रालय, भारत सरकार।

तालिका 1 – हाथकरघा क्षेत्र द्वारा वस्त्र का उत्पादन (मिलियन वर्ग मीटर)

वर्ष	कारखाना	हाथकरघा	पावरलूम	कुल कपडा उत्पादन (स्क्वेयर मीटर में)
2010-11	61761	6907	11.18	1:5.5
2011-12	59605	6901	11.57	1:5.42
2012-13	61949	6952	11.22	1:5.47
2013-14	62624	7104	11.34	1:5.18
2014-15	64332	7203	11.19	1:5.24
2015-16	64584	7638	11.82	1:4.82
2016-17	63480	8007	12.61	1:4:45
2017-18	43520	5134	11.8	1:4.92
नवंबर 2017 तक	अनंतिम	अनंतिम		

तालिका 2

क्रं.	राज्य	स्वीकृत क्लस्टरों की संख्या	जारी राशि (लाख रू. में) 31.12.2017 तक	शामिल किये गए लाभार्थियों की संख्या
1	आंधप्रदेश	3	141.27	665
2	बिहार	2	100.91	701
3	छत्तीसगढ़	2	52.40	529
4	हिमाचल प्रदेश	1	31.20	200
5	केरल	1	35.20	450
6	मध्यप्रदेश	1	156.44	9603
7	जम्मू व कश्मीर	1	39.10	205
8	कर्नाटक	1	28.13	386
9	तमिलनाडु	4	128.86	1473
10	उत्तर प्रदेश	4	133.49	952
	कुल (समान्य)	20	847.00	15164
पूर्वोत्तर				
11	अरूणाचल प्रदेश	2	69.50	1154
12	असम	21	1370.95	19022
	कुल	23	1440.45	20176
	कुल योग	43	2287.45	35300

****

चर्म उद्योग मे मानव प्रबंधन स्थिति एवं सम्भावनाएं (मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ में)

डॉ. ई.व्ही.रेवती* डॉ. के.एल.टाण्डेकर**

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था में चमड़ा क्षेत्र का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। पर्याप्त निर्यात, रोजगार की अनुकूलतम संभावनाओं के साथ निर्यात वृद्धि के लिए भी वर्तमान स्थितियां अनुकूल रही है। सभी स्तरो पर उचित रूप से प्रशिक्षित और कुशल मानव प्रबंधन की आवश्यकता भी महसुस की जाती रही है।

आधुनिक व्यावसायिक जगत मे दो प्रमुख तत्वो ने विकास को प्रभावित करने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है –

1. मानव प्रबंधन
2. तकनीकी समस्या

जिसमे तकनीकी विकास को जिस गति से प्राप्त किया गया है उस गति से मानव प्रबंधन का विकास संभव नही हो सका है, जिन राष्ट्रो में तकनीकी विकास के साथ–साथ मानव प्रबंधन को विकसित कर लिया, वे आज आर्थिक मामलो में विश्व का नेतृत्व कर रहे है। जापान इसका स्पष्ट उदाहरण है किंतु जहाँ दोनो में से किसी भी एक तत्व की स्थिति कमजोर जनक रही, वहां विकास को पूर्णतया प्राप्त करना सम्भव नही हो पाया। इन दोनों तत्वों में यदि प्रमुखता के रूप मे देखा जाए तो मानव प्रबंधन बेहतर स्थिति में माना जाता है क्योंकि यदि मानव प्रबंधन उचित है तो तकनीकी विकास स्वमेव आसानी से हो सकता है।

बदलते आर्थिक परिवेश के संदर्भ में देखे तो यह बात मुख्यता स्पष्ट होती है कि भारत मे चर्म उद्योग की स्थिति आशाजनक है, क्योंकि इस क्षेत्र मे नई खुली आर्थिक नीति के लागू होने से चमड़ा उद्योग मे कई बहुराष्ट्रीय कंपनियां आगे आ रही है, जिससे चमडा उद्योग के विकास की सम्भावनाएं बढी है। इसी सम्भावनाओ को देखते हुऐं अंतर्राष्ट्रीय बाजार मे भारत कि 3.5 प्रतिशत की वर्तमान स्थिति को यदि पर्याप्त तकनीकी एवं संरचनात्मक परिवर्तनो के साथ इस क्षेत्र में कुशल मानव प्रबंधन की सहायता ली गई तो मूर्ति समिति उद्योग मंत्रालय भारत सरकार के रिपोर्ट के अनुसार सन् 2013 तक अंतराष्ट्रीय बाजार में चर्म उद्योग की भागीदारी 16 प्रतिशत तक हो जावेगी किंतु इस 16 प्रतिशत के सह–भागिता के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए यह जरूरी है कि प्रतियोगी देशों की क्षमता को पहचानकर सही रणनीति अपनाई जाये।

भारत वर्ष के लिए सही रणनीति यह होगी की भारत जहां कच्चे चमडे के उत्पादन में विश्व में प्रमुख स्थान रखता है वही निर्मित चर्म सामग्री में यह चौथे क्रम पर हे जो स्पष्ट करता है कि यदि भारत को चर्म निर्मित सामग्री में प्रथम स्थान प्राप्त करता है तो चर्म उद्योग की वर्तमान तकनीकी क्षमता के विकास के साथ साथ इस क्षेत्र में मानव प्रबंधन को प्रमुखता प्रदान करनी होगी। विशेषकर छत्तीसगढ़ क्षेत्र जहां इस क्षेत्र में लगा हुआ मानव श्रम पूर्णयता असंगठित, अशिक्षित एवं जातिगत तथा विरादरी पंचायतों के घोर विरोध के साथ–साथ घृणित एवं अपमानित व्यवसाय का कर्मी माना जा रहा है। परिणामत: इस क्षेत्र के चर्म शिल्पि व्यवसायिक परिवर्तन की ओर अग्रसर हो रहे है, ऐसी स्थिति में यदि रोजगार, उत्पादन, निर्यात में वृद्धि करने का लक्ष्य प्राप्त करना है तो छत्तीसगढ़ में ही नहीं वरन् प्रदेश एवं भारत वर्ष में चर्म उद्योग के क्षेत्र में मानव प्रबंधन को विकसित एवं सुव्यवस्थित करना अनिवार्य होगा क्योंकि यह क्षेत्र वर्तमान में जहां देश के कुल 11.4 लाख लोगों को रोजगार प्रदान कर रहा है उसमें सन् 2013 तक 9.2 लाख लोगों को अधिक रोगजार मुहैय्या कराने की संभावना है जिसमें ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं को भी अधिकाधिक मात्रा में रोजगार मुहैय्या हो सकेगा। यद्यपि समय परिवर्तन के साथ–साथ इस उद्योग में नई तकनीकी की व्यवस्था की जा रही है किन्तु तकनीकी को व्यवहारिक रूप देने वाला प्रमुख साधन मानव संसाधन आज भी अपनी परम्परागत स्थिति में बना हुआ है, जिससे उसके लिए वह व्यवसाय पर्याप्त विकास की क्षमता रखने के बावजूद भी (जैसा कि सातवी पंचवर्षीय योजना में इसकी विकास दर 25 प्रतिशत रही) छत्तीसगढ़ क्षेत्र में विशेष कर यह उद्योग उतना अधिक विकास नहीं कर पाया क्योंकि इस क्षेत्र में मानव प्रबंधन पर जोर नहीं दिया गया। मानव प्रबंधन का मूल उद्देश्य तभी पूर्ण हो पाता है जबकि मानव संसाधन का विकास किया जाए, यहां देश की तुलना में मानव संसाधन निम्न कोटि का है, क्योंकि उसकी पौष्टिक आहार प्राप्त करने की क्षमता शिक्षा की स्थिति, स्वास्थ्य पर व्यय आदि मानक तुलनात्मक दृष्टिकोण से छत्तीसगढ़ में न्यूनतम बिन्दु पर है अत: छत्तीसगढ़ में इन मापदण्डों के विकास के साथ–साथ जहां मानव संसाधन का विकास होगा वही दूसरी ओर इस उद्योग में असंगठित रूप से फैले हुऐ मानव संसाधन को सुव्यवस्थित व संगठित कर पर्याप्त प्रशिक्षण, रोजगार, उत्पादन प्राप्त कर कृषि पर हो रहे दबाव को कम किया जा सकता है और छत्तीसगढ़ में प्रतिवर्ष होने वाले कुल जनसंख्या के 30 प्रतिशत भाग के पलायन को रोका जा सकेगा और स्थानीय विकास में इसका भरपूर उपयोग किया जा सकेगा।

छत्तीसगढ़ क्षेत्र में चर्म उद्योग में लगे कामगार की संख्या विभिन्न प्रदेश की तुलना में बहुत कम है, इससे भी स्पष्ट होता है कि इस क्षेत्र में मानव संसाधन का विकास नहीं हो पाया है।

छत्तीसगढ में चर्म उद्योग में सबसे कम मानव श्रम का निवेश किया गया है

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगढ (छ.ग.) भारत
** प्राचार्य, शासकीय डॉ. बाबा साहब भीमराव आम्बेडकर स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगांव, जिला – राजनांदगांव (छ.ग.) भारत

जो यहाँ के अकुशल मानवीय प्रयोग और प्रबंधन को स्पष्ट करता है। इस क्षेत्र में जो भी मानव का श्रम निवेश किया गया है वह अधिकांशत: कच्चे चमडे के उत्पादन मे ही निवेशित है। स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ में कच्चे चमडे का उत्पादन कर बाहर भेज दिया जाता है, जिसका वास्तविक लाभ अन्य क्षेत्र उठाते है।

बदलते हुए आर्थिक परिवेश में यह बात महत्वपूर्ण हो गई है कि चर्म उद्योग को आधुनिक प्रतियोगिता के साथ समायोजित किया जाये और कृषि के पूरक उद्योग के रूप में इसका विकास कर कृषि पर जनसंख्या के भार को कम किया जाये तथा साथ ही स्थानीय मानव संसाधन को पलायन से रोककर उसका स्थानीय विकास में उपयोग किया जाए। इसके लिए आवश्यक होगा कि स्थानीय मानव संसाधन का विकास करने के साथ - साथ चर्म उद्योग के क्षेत्र में इसका उचित प्रबंधन किया जाये अर्थात् कच्चे चमडे के स्थान पर लाभदायक चर्म निर्मित सामग्री तथा प्रतियोगी फैशन रूपी वस्तुओ के उत्पादन में निवेशित कर अंतराष्ट्रीय बाजार में प्रतियोगी के रूप मे खड़ा किया जाये, इसके लिए आवश्यक होगा कि उचित तकनीकी पंजी के विकास के साथ मानव संसाधन विकास तथा उसका उचित क्षेत्र में प्रबंधन किया जाये और संगठित समूह क्षेत्र के रूप में विकास कर एक सूत्र मे पिरोया जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. योजना 1994-सितम्बर, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, पटिलाला हाउस नई दिल्ली।
2. उद्यमिता जनवरी- 1995, म.प्र. लेदर डेव्हलपमेंट कार्पोरेशन लिमिटेड भोपाल।
3. भारतीय चमड़ा की मानव संसाधन विकास उप योजना के लिए दिशा निर्देश विकास कार्यक्रम-रिपोर्ट।

तालिका 1 : म.प्र. एवं छत्तीसगढ़ में चर्म उद्योग में कामगारों की संख्या

क्र.	क्षेत्र में प्राप्त रोजगार	म.प्र. में संख्या	छत्तीसगढ़ में संख्या	म.प्र. से छत्तीसगढ़ में प्राप्त कामगारो का प्रतिशत
1	ग्रामो की संख्या	6331	1744	22.55
2	श्वोच्छेदन	27816	3035	10.91
3	चर्मशोधन	10815	3450	31.90
4	श्वोच्छेदन चर्म शोधन	9210	2979	32.31
5	जूता निर्माण	11485	3007	26.18
6	श्वोच्छेदन चर्म शोधन जूता निर्माण	21590	3910	18.11

****

प्रगतिशील काव्य चेतना और नागार्जुन

डॉ. त्रिभुवन कुमार साही *

प्रस्तावना – जब छायाबाद व्यक्ति और मैं के अस्तित्व से आकांत हो कर कल्पना और भावुकता से चरम पर पहुंचकर अपनी चमक खोने लगा था और जिसका स्थान समाज और उसकी वास्तविकता यथार्थ को मूल्य मान कर ले रही थी, मूलत वहीं से प्रगतिवादी काव्य स्वाद सामने आता है। इस समूची प्रगतिशीलता के समर्थ अभिव्यक्ति के रूप नागार्जुन हमसे रू-ब-रू होते हैं। इस प्रगतिशील काव्य की विशेषता बतलाते हुए आलोचक पवर डॉ. नामवर सिंह ने लिखा है 'जिस तरह कल्पना प्रवण अंतर्दष्टि छायावाद की विशेषता है और अंतर्मुखी बौद्धिक दृष्टि प्रयोगवाद की, उसी तरह सामाजिक यथार्थ दृष्टि प्रगतिवाद की विशेषता है।'

इस सामाजिक यथार्थ दृष्टि का काव्ययी अनुपालन नागार्जुन की प्रतिशील काव्य चेतना की अनुगूँज बनती है प्रतिबद्धता के साथ इस रूप में कि

'अंध-बधिर' व्यक्तियों को ही राह बतलाने के ली.... अपने आप को भी ब्योमोह से बारम्बार उबारने के खातिर.....प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ शतघा प्रतिबद्ध हूँ'।

यह प्रतिबद्धता कवि की है तो प्रगतिशील काव्य की वह अनिवार्य जरूरत भी जिससे जनकविता की पगडंडियाँ प्रशस्त होती हैं इस आलंबन से कि

'झुकी पीठ को मिला,
किसी हथेली का स्पर्श
तन गयी रीढ़'

नागार्जुन अपनी पूरी काव्य यात्रा में इसी स्पर्शका निमित बनते है और जनपक्षधरता की कविताई ठीक यही से संवाद रचने में लग जाती है। जनपक्षधरता प्रगतिशीलता का घोषित शपथपत्र है अपनी पुस्तक काव्य परिदृश्य कल और आज में डॉ. परमानद श्रीवास्तव ने कहा भी कि 'जनता के बीच कविता को सीधे ले जाने के लिए प्रखर लोक संवेदना और जन संस्कृति के इस सबसे बड़े कवि ने जनभाषा और साहित्यिक भाषा का भेद मिटा कर जो दुर्लभ काव्यबोध प्रमाणित किया, उसका मूल्यांकन करते समय निस्संदेह तुलसी की याद आएंगे और कबीर भी'।

तुलसी अपनी लोकप्रियता जहां बिनथी होकर रामकथा की मर्यादावादी लोकरक्षक समत्व भाव के कारण साध पाते हैं तो कबीर बेबाक दो टूक और साहसिकता के पैनेपन के कारण जन प्रियता की डोर सँभालते हैं। बाबा में ये दोनों तत्व मौजूद है इसलिए उनको पढ़ने समझते समय हिन्दी की जातीय गौरव आस्पदों के दो बड़े कवि हमेशा याद आते हैं। 'खुरदरे पैर' पर कविता लिखना कविता और मनुष्यता दोनों के हक में हैं, नागार्जुन के जद में तो वह प्रण की हद तक है।

खुभ गए
दूधिया निगाहों में
फटी बिवाइयों वाले खुरदरें पैर

निगाहें दूधिया और दृश्य फटी बिवाइयों वाले खुरदरें पैर का अब तो तय था कि वे खुबेंगे ही, आगे भी कवि इसके प्रभाव की ध्वनियों को दूर तक सुनता गुनता चला जाता है-

'देर तक टकराए
उस दिन आखों से वे पैर
भूल नहीं पाऊंगा फटी बिवाइयां
खुब गई दूधिया निगाहों में
धंस गयीं कुसुम-कोमल मन में'

खुरदरे पैर और ककुसुम-कोमल मन के बिम्ब प्रतीकों में कविता प्रगतिशीलता का सुन्दर उद्धरण बन जाती है। जीवन से जो पैदा हो वह इतना सुन्दर होगा उतना कुछ भी नहीं वैदिक ऋचाएँ अन्न ही जीवन कहकर जहाँ अन्न को महत्वपूर्ण मानती है तो प्रगतिवादी कवि नागार्जुन पकी सुनहरी फसलों को देख कर यूँ ही मुग्ध नहीं हो पाते हैं। प्रगतिशील काव्य जमीनी और बुनियादी काव्य हैं। जहाँ नागार्जुन सहजता और सरलता के साथ समाज और आदमी की साझेदारी को समझते-परखते हैं चूँकि मार्क्सवाद की वैचारिकी प्रगतिशील काव्य की सैधान्तिकी है इसलिए बाबा नागार्जुन के पक्ष में खड़े हो कर पक्षधरता की रचना चुनौती को स्वीकार करते हैं। पहली पर आम आदमी का चेहता, उसका श्रम, उसके पसीने काव्य-विषय बन पाते हैं, विश्वास करें इन पंक्तियों पर कि-

कुली मजबूर है
बोझा ढोते हैं खींचते हैं ठेला
धूल-धुआं भाफ से पड़ता है सबका,
..... सच-सच बतलाओ, नागवार तो नहीं लगती है?
जी तो नहीं कुढ़ता है?
घिन तो नहीं आती है?

डॉ. नामवर सिंह प्रतिनिधि कविताएँ की भूमिका में लिखते हैं कि, 'उनकी काव्य भूमि विपुल है और विषय भी, विषय इतनी कि इस उँची-नीची भूमि में समतल की अभ्यस्त आँखें अक्सर धोखा खा जाती है। ऊपर-ऊपर से देखने पर जो अत्यंत सपाट वर्णन है। वह भी अपने समूचे असर मैं इतना कवित्वपूर्ण होगा कि काव्यत्व की किसी एक जगह पर उँगली रखना कठिन है'।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी विभाग) सूरज सिंह मेमोरियल कॉलेज, कँांकेर रोड, राँची (झारखण्ड) भारत

यह आलोचकीय व्याख्या घिन तो नहीं आती है, जैसे तमाम कविताओं को लेकर सागर्भित तो है ही न्यायोचित भी है। उनकी कविताएँ हिमशृगों से उतर कर वह मैदान और किसानी जीवन संस्कृति का काव्य सौन्दर्य रचती है, कविता फसल तो अद्भुत है, ऐसा लग रहा है मानो अपने होने के हेतुओं की वह स्तुति कर रही हो।

और तो कुछ नहीं है
वह
नदियों के पानी का जादू है वह
हाथों के स्पर्श की महिमा है
भूरी-काली-संदली मिट्टी का गुण धर्म है
रूपान्तर है सूरज की किरणों का
सिमटा हुआ संकोच हवा कि थिरकन का

प्रकृति की प्रगतिवादी शक्ल कितनी प्राणदायी है, फसल कविता में अप्रस्तुत विधान के सहारे कवि ने इतनी उर्जा भर दी है। चांदनी का पसरा चीड़ या बर्फानी सैलानी ठिकानों के अलावा भी कही हो सकती है इसे नागार्जुन ही बता पाते है जरा देखें।

पीपल के पता पर फिसल रही चांदनी
नालियों में भीगे हुए पेट पर, पास ही
जम रही, धुल रही पिघल रही चांदनी
पिछवारे बोतल के टुकड़ों पर
चमक रही, दमक रही मचल रही चांदनी

चांदनी का यह रूप दरअसल जनभावना के विस्तार का मानवीय रूप है जो छायावाद में मयस्सर न था। वास्तविकता के मूल्य को कल्पना से ज्यादा मूल्यावान बताते हुए आलोचक नामवर सिंह ने लिखा भी कि - 'मन पर कल्पना से छटांक भर वास्तविकता ज्यादा और समर्थ और मूल्यवान है' पूरी प्रगतिशील कविता में नागार्जुन और उनकी कविताओं की उपस्थिति साहित्य के सर्वप्रिय संकल्प को पूरा करती है राजनीतिक शब्द को अगर किसी ने साहित्यिक जनता में रूपान्तर किया है। तो वह बाबा नागार्जुन ने जनता ही प्रगतिशील काव्य का स्थाई मूल्य है। इस तरह प्रगतिशील काव्य नागर्जुन को और नागार्जुन प्रगतिशील काव्य को हम सफर की तरह रख कर साहित्य और मनुष्य की वृत संकल्पी यात्रा को रवाना होते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. काव्य परिदृश्य कल और आज डॉ. परमानंद श्रीवास्तव, पृ. 84, लोकभारती 2001
2. नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएं-भूमिका पृष्ठ-5, राजकमल पेपर बैक्स, 1984

****

पंचायती राज और संवैधानिक प्रावधान

डॉ. हनुमान प्रसाद मीना *

प्रस्तावना - महात्मा गाँधी चाहते थे कि स्वतंत्र भारत का संविधान लोकतांत्रिक ढांचे में ढले हुए सुसंगठित ग्राम समुदायों को आधार मानकर लिखा जाये। स्वतंत्रता के पश्चात् जब उन्हें पता चला कि स्वतंत्र भारत के संविधान में ग्राम पंचायतों का कोई उल्लेख नहीं है तो उन्हें मानसिक आघात पहुँचा। उन्होंने कहा - 'शायद कहीं कोई भूल हुई है और इसमें अविलम्ब सुधार की आवश्यकता है। ग्राम पंचायतों को जितना सशक्त बनाया जाये, उतना ही अच्छा है।'[1] उन्होंने पंचायतीराज व्यवस्था को संविधान के अन्तर्गत सम्मिलित नहीं किये जाने पर खिन्नता व्यक्त करते हुए इसे संवैधानिक प्रावधानों के अन्तर्गत रखने का विचार व्यक्त किया। 'मुझे बताया गया है कि संविधान के मसविदे में ग्राम पंचायतों एवं विकेन्द्रीकरण के लिए कोई नीति निर्देश नहीं है। यह निश्चित ही एक बड़ी भूल है जिसमें अविलम्ब सुधार होना चाहिए। तभी स्वतंत्र भारत में जन-साधारण की आवाज को बल मिलेगा। ग्राम पंचायतें जितनी सशक्त होंगी जनसाधारण का उतना ही अधिक हित होगा।'[2] गाँधी जी के इस सुझाव के पश्चात् ही नीति निर्देशक तत्वों में वांछित प्रावधान किया गया।

गाँधीजी कहा करते थे कि भारत की स्वतंत्रता, धरातल से प्रारम्भ होनी चाहिए। उनका विचार था कि राजनैतिक एवं आर्थिक शक्तियों का इस प्रकार विकेन्द्रीकरण किया जाये कि भारतीय ग्राम प्राचीन एवं वैदिक काल की तरह एक स्वावलम्बी इकाई बन सके। ग्राम पंचायतों की भूमिका स्वशासी स्थानीय सरकार की हो। उनका मानना था कि समयानुकूल आवश्यक संशोधन कर इन संस्थाओं को वास्तव में उपयोगी एवं महत्वपूर्ण बनाया जा सकता है।

नीति निर्देशक तत्व - अनुच्छेद 40 - गाँधीजी की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए संविधान के प्रारूप में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में पंचायती राज का समावेश जिस रूप में किया गया, उस पर दृष्टिपात करना प्रासंगिक है।

ग्राम पंचायतों के बारे में अनुच्छेद 40 में प्रावधान है जिसके अनुसार 'राज्य, ग्राम पंचायतों का गठन करने के लिए कदम उठाएगा और उनको ऐसी शक्तियाँ और अधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाईयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हो।'[3] पंचायत राज सम्बन्धी यह प्रावधान संविधान के प्रारूप में थोड़ा विलम्ब से 22 नवम्बर 1948 को शामिल किया गया। प्रारम्भ में यह अनुच्छेद 31 (3) के रूप में था बाद में संख्याओं में संशोधन के कारण संविधान के भाग IV में अनुच्छेद 40 के रूप में माना गया।[4] इस सम्बन्ध में एक आश्चर्यजनक तथ्य है कि एक बार यह नौबत भी आई कि संविधान में पंचायतों के बिन्दु को शामिल न किये जाने को उचित ठहराने का प्रयास किया गया। इस पर संविधान निर्मात्री सभा के सदस्यों में पर्याप्त विवाद भी हुआ। तत्पश्चात श्री संथानम का संशोधन स्वीकार कर अनुच्छेद 40 का रूप दिया गया। यह सब अनापेक्षित शांति से किया गया। इस बिन्दु पर ज्यादा विवाद को हतोत्साहित किया गया। इस बिन्दु की बहस भी मात्र आठ पृष्ठों में ही समाहित है। वस्तुत: डॉ. राजेन्द्र प्रसाद चाहते थे कि 'ग्राम स्वराज' की व्यवस्था को ही संविधान का आधार बनाया जाये। इस पर संविधान सलाहकार वेंगन नरसिंह राव की टिप्पणी थी कि चूँकि संविधान का प्रारूप अब लगभग तैयार है अत: इस स्थिति में इसमें परिवर्तन करना श्रेयकर न होगा। श्री टी. प्रकाशम व अन्य कई सदस्यों ने भी इस बात पर जोर दिया था कि संविधान गाँधी जी के स्वशासी ग्राम स्वराज्य के सिद्धान्त पर आधारित हो। कुल मिलकार स्थिति ऐसी बनी कि ग्राम पंचायत के प्रश्न को नीति निर्देशक तत्वों में एक वैचारिक दृष्टिकोण से अधिक स्वरूप न मिल सका।

यह उल्लेखनीय है कि अनुच्छेद 40 में अंकित प्रावधानों को भी अगर उचित ढंग से विश्लेषित कर क्रियान्वित किया जाये तो वह भी पंचायती राज की सुदृढ़ता के लिए पर्याप्त ठोस आधार है। उसमें यह स्पष्टत: अंकित है कि पंचायतों को इतनी शक्तियाँ प्रदान की जाये कि वे स्थानीय सरकार की सक्षम इकाईयों के रूप में कार्य कर सकें।

संवैधानिक प्रावधानों के अभाव में असमर्थ पंचायती राज व्यवस्था - संविधान के संस्थापकों द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को भाग IV के अनुच्छेद 40 में अधीन राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों की संक्षिप्त भूमिका सौंपी गई थी जिसने पंचायती राज के मार्ग को अवरूद्ध कर दिया। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की आशा पूरी नहीं हुई। इस ह्रास का मुख्य कारण व्यवस्था में विसंगतियाँ थी। पंचायतों को नाममात्र की शक्तियाँ मिली। सत्ता राज्य के हाथों या प्रशासन के हाथों में रहीं, जिससे पचायतें निष्क्रिय हो गईं। ग्रामीण आवश्यकताओं के कार्यक्रमों का निर्णय संसद या विधानमण्डलों में होता गया। इसके अतिरिक्त प्रशिक्षण की कमी के कारण इसका स्तर गिरता गया। इसका एक कारण यह भी रहा कि यह व्यवस्था सम्पन्न वर्ग के लोगों तक सीमित रही। राज्य सरकार ने मनमानें ढंग से चुनाव कराना तथा उन्हें भंग करना आदि का अधिकार सुरक्षित रखा। कुछ राज्यों में 15 वर्षो तक पंचायतों के चुनाव नहीं करवाये गये।[5]

वित्तीय संसाधनों की कमी भी एक मुख्य कारण रहा। कम धनराशि एकत्र करने पर भी वह राज्य सरकारों के भेंट चढ़ जाती, जिससे पंचायतें कमजोर तथा निष्क्रिय होती गई। आर्थिक स्थिति दयनीय होने के कारण विकास कार्यो से गाँवों में प्रगति नहीं हुई। निहित स्वार्थो के कारण कुछ गाँवों में विकास कार्यक्रम नहीं पहुंच पाये।

भारत में पंचायती राज क्षेत्र में जातिवाद, गुटबन्दी व भाई भतीजेवाद

* सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान) शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

की जडें गहराई से फैल गई, इस से समान जाति में भी वैमनस्य स्थापित हुआ।

उपरोक्त विसंगतियों का परिणाम यह हुआ कि पंचायतें इस सीमा तक प्रभावहीन हो गईं कि ग्रामीण जनसामान्य लाभार्थ सृजित परिसम्पत्ति का रख रखाव करने में भी उनकी कोई भूमिका नहीं रही। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के जिस आधार पर पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना करने का प्रयास किया गया उससे धीरे-धीरे राज्यों का भाव उदासीन बनता गया। ग्राम सभा, ग्राम पंचायत, पंचायत समिति तथा जिला परिषद् को शासन का अंग बनाया गया। जिससे राज्य इनके प्रति उदासीन होता गया। परिणाम यह हुआ कि निर्णय शक्ति या तो प्रशासन के हाथ में रही या राज्यों के हाथ जो पंचायतों तक पहुँची ही नहीं।

कुछ राज्यों में कई वर्षों तक चुनाव नहीं करवाये गये, इसका मुख्य कारण वित्तीय संसाधनों की कमी थी। जिससे पंचायती राज व्यवस्था निष्क्रीय हो गई। इन संस्थाओं में समाज के आर्थिक व सामाजिक दबदबे वाले व्यक्ति ही हावी रहे जिनके कारण कमजोर वर्ग के लोगों तक लाभ पहुँच ही नहीं पाया। समाज के पिछड़े वर्ग तथा महिलाओं के अधिकार सुरक्षित नहीं हो पाए। वे ग्रामीण विकास तथा सामाजिक सम्मेलनों की प्रक्रिया से लगातार दूर रहे। लोगों के मूलभूत अधिकारों की कई बार उपेक्षा होती थी तथा कई बार केन्द्र विरोधी प्रक्रिया का उपयोग होता था।

पंचायती राज को संवैधानिक प्रावधानों के अभाव में निम्नलिखित समस्याओं का सामना करना पड़ा।

1. **जन आकांक्षाओं की पूर्ति करने में असमर्थ** – पंचायती राज संस्थाएँ न तो लोकप्रियता अर्जित कर पाई और न ही जनता में अपना स्थान बना पाई। पंचायती चुनावों ने गाँवों में दलबन्दी व गुटबन्दी को ही प्रश्रय दिया। ग्रामीण जनता न तो अपने गाँव के विकास के प्रति सजग हुई और न ही अपने अधिकारों के प्रति जागरूक, ग्रामीणों को पंचायतीराज के प्रति निराशा ही हाथ लगी। वर्षो तक पंचायतों के चुनाव बन्द रहे जिसके कारण पंचायती राज व्यवस्था विस्मृत प्राय: हो गई।

2. **जनप्रतिनिधियों तथा अधिकारियों के मध्य मतभेद** – पंचायतीराज संस्थाओं के जिला परिषद तथा पंचायत समिति स्तर पर जन प्रतिनिधियों तथा अधिकारियों के बीच परस्पर मतभेदों से यह संस्था दूषित हुई। इसका मुख्य कारण दोनों का पारस्परिक हस्तक्षेप है। जनप्रतिनिधि प्रशासनिक कार्यों में अपनी मनमानी करते हैं तो अधिकारीगण विकास के कार्यो का श्रेय लेना चाहते हैं। अधिकारियों को जनप्रतिनिधियों का नियंत्रण बर्दाश्त नहीं तो वहीं जनप्रतिनिधि विकास कार्यो सम्बन्धी सभी निर्णयों में अपनी दृष्टि बनाऐ रखना चाहते हैं उनकी यह भी आकांक्षा होती है कि सभी कार्य उनके प्रभाव के विस्तार हेतु हो। यह स्थिति उन्हें अधिकारियों से दूर ले जाती है।

3. **संवैधानिक मान्यता का अभाव** – पंचायतीराज संस्थाओं की संवैधानिक मान्यता को लेकर सर्वाधिक बहस होती रही है। संविधान के संस्थापकों द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को भाग प्ट के अनुच्छेद 40 के अधीन राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों की संक्षिप्त भूमिका सौंपी गई थी, जिसने पंचायती राज के मार्ग को अवरूद्ध कर दिया। राज्य सरकार अपने अधिकारों को कम करना नहीं चाहती थी। सत्ता में पंचायतों को भागीदार बनाना राज्य सरकार को मंजूर न था। राज्य सरकार स्वेच्छा से अपने अधिकारों में कमी नहीं चाहती थी। सरकार की यही सबसे बड़ी भूल थी। गाँधीजी को जहाँ राष्ट्रपिता का दर्जा दिया गया वहीं उनके पंचायतीराज और ग्राम स्वराज सम्बन्धी विचारों का इस प्रकार अनादर आश्चर्य जनक है।

भारत जैसे देश में जहाँ 80 प्रतिशत जनसंख्या निरक्षर है, राज्य स्तर पर क्या नीतियाँ बनाई जा रहीं हैं। इससे जनसाधारण को कोई मतलब नहीं होता। उनका तो सीधा सम्बन्ध व्यावहारिक नीतियों तथा उसे क्रियान्वित करने से है। इस दायित्व को निभाने में राज्य सरकार ने बहुत समय लगाया जिससे ये संस्थाएँ जागरूक नहीं हो पाई।

यह कहना गलत नहीं होगा कि जिन राज्य सरकारों ने पंचायतीराज संस्थाओं को गठित करने में तत्परता दिखाई थी। वह राज्य सरकारें पंचायती राज के प्रति उदासीन हो गई तथा कोई विशेष प्रयास नहीं कर पाई। इस कारण उत्तरप्रदेश, उड़ीसा, बिहार तथा कई राज्यों में पंचायत राज अस्तित्व में होते हुए भी प्रभावहीन ही रहा। संक्षिप्त रूप में एक सरकार ने पंचायती राज संस्थाओं को अपने प्रभाव का विस्तार करने तथा उनके प्रभाव को सीमित करने का साधन बनाया।

संविधान सभा में पंचायती राज पर बहस करते हुए एक संविधान सभा सदस्य श्री सुरेन्द्र घोष ने कहा कि 'पंचायतीराज के बिना सम्पूर्ण संविधान निरर्थक हो जाता है।' अनन्त शयनम ने कहा कि 'ग्राम पंचायतों को आर्थिक सत्ता भी दी जाय, इसके बिना राजनैतिक सत्ता बेकार है।'[6]

संविधान में तीसरी सरकार के रूप में मान्यता नहीं होने से तथा राज्यों पर इसकी व्यवस्था छोड़ने से हुई भूल के कारण ग्राम पंचायत लोकतांत्रिक गणराज्य की आधारभूत इकाई नहीं बन पाई। केन्द्र तथा राज्य सरकार के समान जिला, खण्ड तथा ग्राम सरकार का स्वरूप उभर कर सामने नहीं आ सका। संविधान निर्माता ग्राम शासन व्यवस्था को संविधान में वही वैधानिक स्थान प्रदान करते जो लोकसभा तथा विधानसभाओं को दिया गया है तो ग्राम स्वराज की स्थिति आज बहुत सुदृढ़ होती।

पंचायत राज व्यवस्था के विकास क्रम को ध्यान पूर्वक देखा जाऐ तो एक बात स्पष्ट रूप से उभर कर आती है कि लम्बे समय तक ये अव्यवस्थाएँ राज्यों की अपनी राजनीतिक आवश्यकताओं से प्रभावित रही हैं। राज्य सरकारों की अनिवार्यता ने इनके कार्यो शक्तियों के उचित निर्णय पर लगातार बाधाएँ उत्पन्न की है। विभिन्न राज्यों में राजनैतिक संतुलन ने इसके स्वरूप को गहरा प्रभावित किया है। जिसका परिणाम यह हुआ कि यह महत्वपूर्ण प्रयोग प्रभावी स्वरूप ग्रहण नहीं कर पाया।

4. **चुनावी प्रक्रिया** – संवैधानिक संशोधनों से पूर्व पंचायती राज की विफलता का मुख्य कारण चुनावों का समय पर न होना, उन्हें बार बार भंग करना अथवा स्थगित करना रहा। चुनाव प्रक्रिया में राज्य सरकारों ने कहीं तो बड़े वार्ड बना दिये तो कहीं उम्मीद से भी छोटे, कई गाँवो में मतदाताओं को दूसरे गाँवो के साथ मिलाकर वार्ड में विभाजित कर दिया। इसके अतिरिक्त पिछड़े वर्ग तथा महिलाओं के वार्ड को लॉटरी सिस्टम से किया गया। चुनाव के समय पंचायत समिति तथा जिला परिषद के उम्मीदवारों के वोटों को एक साथ दे दिये जाने के कारण अशिक्षित लोगों को यह कठिनाई हुई कि कौन सा वोट किस पेटी में डाला जाए। प्रधानों तथा प्रमुखों के चुनाव स्थानीय कलेक्टरों द्वारा करवाये गये।

इन समस्याओं के कारण यह व्यवस्था निर्जीव अवस्था में पहुँच गई। अत: राजीव गाँधी के शासन काल में 64 वें संविधान संशोधन विधेयक द्वारा इन समस्याओं का समाधान करने का प्रयास किया गया।

64 वाँ संविधान संशोधन विधेयक – सन् 1984 में चुनावों के पश्चात् प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने दूर-दराज के क्षेत्रों के दौरे किये तथा स्वयं इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जनता की पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए

पंचायतीराज संस्थाओं की आवश्यकता है। जब तक ग्रामवासी विकास कार्यों में सीधे सम्मिलित नहीं होंगे तब तक निर्धनता उन्मूलन असम्भव है तथा विकास के लिए खर्च की जा रही राशि का 15 से 20 प्रतिशत ही ग्रामीण जनता तक पहुँच पाती है। राजीव गाँधी ने यह नारा दिया **'जन की सत्ता सौंपो जन को'** ।

संविधान के 64 वें संशोधन की प्रक्रिया इस ओर उठाया गया एक कदम था। ग्राम पंचायतों को वित्तीय व्यवस्था सुधारने और ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार परक योजनाएँ चलाने तथा पंचायतों के नियमित चुनाव कराने, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा महिलाओं को उचित प्रतिनिधित्व प्रदान करने, पंचायतों के खोए हुए अस्तित्व को पुन: स्थापित करने, आर्थिक संसाधनों के विभाजन की निश्चित व्यवस्था के लिए वित्तीय आयोग के गठन जैसे अनेक क्रान्तिकारी प्रस्ताव इस संशोधन में रखे गये।[8]

राजीव गाँधी ने उक्त अवसर पर कहा था कि 'भारत में लोकतंत्र के विकास के इतिहास में जो एक घटना सबसे महत्वपूर्ण है वह है संविधान का निर्माण, संविधान ने संसद और राज्य विधान सभाओं में लोकतंत्र को प्रतिष्ठित किया है। यह ऐतिहासिक और क्रान्तिकारी विधेयक (पंचायतीराज विधेयक) भी उतना ही महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके जरिये समाज के निम्नतम स्तर पर लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था को संविधान में स्थान दिलाया गया है।'

15 मई, 1989 को तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गाँधी द्वारा पंचायतों के सन्दर्भ में 64वाँ संविधान संशोधन विधेयक लोकसभा के पटल पर रखा गया। अनुच्छेद 243 के अन्तर्गत नवें हिस्से के रूप में जोड़े जाने के लिए प्रस्तावित इस विधेयक में स्थानीय स्वशासन की इकाईयों के रूप में पंचायतीराज संस्थाओं को ज्यादा उपयोगी, क्रियाशील एवं विचारोन्मुखी बनाने हेतु, संगठन, निर्वाचन प्रक्रिया, वित्त व्यवस्था एवं कार्यक्षेत्र सम्बन्धी प्रस्ताव रखे गये थे। विधेयक राज्य सभा में पारित नहीं हो सका। परन्तु पंचायती राज के विकास क्रम में इस विधेयक का अपना एक स्थान है।[9]

इस विधेयक को प्रस्तुत करते हुए राजीव गाँधी ने कहा था कि 'यह विधेयक अस्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि देश के बहुत से भागों में हम उम्मीदों को पूरा करने में असफल रहे हैं, जो 30 वर्ष पहले पंचायतीराज व्यवस्था से जुड़ी थीं।'[10]

पिछले दो-तीन दशकों में पंचायती राज को संवैधानिक मान्यता दिये जाने के लिए अनेक स्तरों पर आवाज उठाई गई थी परन्तु यह कार्य सम्भव नहीं हुआ। 64वें संविधान संशोधन विधेयक के रूप में इस दिशा में यह प्रयास ऐसा था जिसने आगामी वर्षों में दिक सूचक का कार्य किया। कई राजनीतिविदों का विचार है कि 64 वाँ संशोधन विधेयक चूँकि लोकसभा के चुनावों से कुछ समय पूर्व प्रस्तुत किया गया था और जैसा कि अपेक्षित था, वह राजनैतिक श्रेय - विवाद में फंसकर रह गया।

संविधान के अनुच्छेद 40 नीति निर्देशक तत्वों में निहित भावना को मूर्त रूप प्रदान करने हेतु प्रस्तुत इस विधेयक के प्रमुख प्रस्ताव इस प्रकार थे।

1. **संरचना 243 (ए) तथा (बी)**

- प्रत्येक राज्य में त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था होगी जिसके अनुसार ग्राम स्तर, मध्य स्तर तथा जिला स्तर पर निर्वाचित प्रतिनिधियों से इन संस्थाओं का गठन किया जायेगा। जिन राज्यों की जनसंख्या 20 लाख से कम है वहाँ मध्य स्तर का गठन आवश्यक नहीं होगा।
- ग्राम पंचायत के सभी पदों को प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरा जायेगा। सदस्यों के निर्वाचन हेतु ग्राम पंचायत क्षेत्र को उपयुक्त संख्या में वार्डों में विभाजित किया जा सकता है।
- राज्य की विधानसभा उपयुक्त कानूनी व्यवस्था बनायेगी ताकि ग्राम पंचायतों के अध्यक्ष, मध्यस्तरीय पंचायत (पंचायत समिति) में एवं मध्यस्त पंचायत के अध्यक्ष, जिला स्तरीय पंचायत में प्रतिनिधित्व कर सकें।
- ग्राम पंचायत के अतिरिक्त अन्य स्तरों पर (ब्लॉक पंचायत एवं जिला परिषद में) सम्बन्धित विधायक एवं सांसद सदस्य हो सकेंगे परन्तु उन्हें मत देने का अधिकार नहीं होगा।
- पंचायत की बैठक में प्रत्यक्ष विधि से निर्वाचित सदस्यों एवं अध्यक्ष को ही मतदान का अधिकार होगा।
- ग्राम पंचायत के अध्यक्ष की चुनाव विधि (प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष) राज्य सरकार तय करेगी मध्यस्तरीय पंचायत के अध्यक्ष का चुनाव, उनके सदस्य अपने आप में से करेंगे।
- जहाँ पंचायत के अध्यक्ष का निर्वाचन सदस्यों द्वारा अपने आप में से किया गया है उस अध्यक्ष को अविश्वास प्रस्ताव द्वारा हटाने के लिए आवश्यक होगा कि कुल सदस्य संख्या के आधे से अधिक एवं मतदान के समय उपस्थित दो तिहाई सदस्य मत का समर्थन करें।

2. **आरक्षण 243 (सी)**

- अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए पंचायतों में उनकी कुल जनसंख्या के अनुपात में ही पद आरक्षित होंगे। अगर इन वर्गों की संख्या अपर्याप्त है तो भी एक-एक पद अवश्य आरक्षित होगा।
- अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए आरक्षित कुल स्थानों का 30 प्रतिशत भाग इन्हीं वर्गों की महिलाओं के लिए आरक्षित होगा। अगर आरक्षित पद दो हैं तो उनमें से एक पद महिलाओं के लिए होगा।
- राज्य सरकार चाहे तो अनुसूचित जाति, जनजाति एवं महिलाओं के लिए पंचायतों के अध्यक्षों के कुछ प्रतिशत पद आरक्षित कर सकती हैं।
- सभी पंचायतों में प्रत्यक्ष निर्वाचन विधि से भरने वाले पदों के 30 प्रतिशत पद महिलाओं (अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं के लिए आरक्षित पदों को शामिल करते हुए) के लिए आरक्षित होंगे।

3. **अवधि 243(डी)**

- प्रत्येक पंचायत अगर वह कानून के अन्तर्गत भंग नहीं है तो पाँच वर्ष की अवधि पूरी करेगी।
- अगर किसी कारण कोई पंचायत मध्यावधि में भंग की जाती है तो 6 माह के भीतर उसका पुनर्गठन करना आवश्यक होगा।
- अगर किसी पंचायत का गठन मध्यावधि में भंग होने के फलस्वरूप हुआ है तो उसकी अवधि केवल शेष समय के लिए होगी।

4. **कार्यशक्तियाँ एवं दायित्व 243 (ई)**

- राज्य विधानसभा पंचायतों को शक्तियाँ, सत्ता एवं दायित्व सौंपते हुए ऐसे विधेयक पारित करेगी जो इन संस्थाओं को स्थानीय शासन की इकाई बनने हेतु सक्षम होने के लिए आधार प्रस्तुत करें।
- आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय सम्बन्धी योजनाओं के क्रियान्वयन में पंचायतीराज संस्थाओं को सक्षम बनाया जाये।

5. **पंचायतों के वित्त स्त्रोत 243 (एफ)**

- राज्य सरकार पंचायतों को निर्धारित मदों पर करारोपण एवं वसूली की शक्तियाँ प्रदान करेगी।

- अगर इन करों, शुल्कों तथा अधिभार की वसूली, राज्य सरकार द्वारा की जाती है तो उसे पंचायतों को दे दिया जायेगा।
- राज्य सरकार पंचायतों को तदर्थ अनुदान की व्यवस्था करेगी।

6. वित्त आयोग का गठन 243 (जी)

- इस विधेयक के पारित होने के दो वर्ष की अवधि में राज्य सरकार यथा सम्भव शीघ्र एक वित्त आयोग का गठन करेगी। प्रति पाँच वर्ष बाद आयोग का नवीनिकरण किया जायेगा।
- वित्त आयोग राज्यपाल को पंचायतों के करारोपण मदों, राज्य तथा पंचायतों (जिलों) के बीच राशि आवंटन के मानदंडों तथा राज्य सरकार द्वारा पंचायतों को दिये जाने वाले तदर्थ अनुदान के बारे में सुझाव देगा।
- वित्त आयोग की सिफारिशों को राज्यपाल विधानसभा में पारित करने हेतु, रखने की व्यवस्था करेगा।

7. पंचायतों का लेखा व अंकेक्षण 243 (एच)

- भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक से सलाह कर राज्यपाल पंचायतों के लिए लेखा एवं अंकेक्षण की विधि निर्धारित करेगा। तद्नुसार इन संस्थाओं में लेखा एवं अंकेक्षण की प्रक्रिया रहेगी।[11]

8. निर्वाचन 243 (आई) एवं (जे)

- पंचायती राज संस्थाओं के चुनावों एवं मतदाता सूचियों की देखरेख, मार्गदर्शन एवं नियंत्रण सम्बन्धी सभी शक्तियाँ भारत के चुनाव आयोग में निहित होंगी। निसंदेह, निवार्चन के बारे में सभी प्रकार के कानून एवं नियम राज्य स्तर पर बनाये जायेंगे।

9. क्षेत्राधिकारी 243 (एल)

- यह अधिनियम नागालैण्ड, मेघालय एवं मिजोरम राज्य, अनुच्छेद 244 के भाग दो में अंकित जनजाति क्षेत्रों, मणिपुर के पहाड़ी भागों एवं पश्चिमी बंगाल के दार्जलिंग क्षेत्र जहां डिस्ट्रिक्ट काउंसिलें पहले से ही कार्यरत है, पर लागू नहीं होगा।

72 वाँ संविधान संशोधन विधेयक - 1991 - 16 सितम्बर, 1991 को पी.वी. नरसिम्हा राव सरकार द्वारा 72 वाँ संविधान संशोधन विधेयक लोकसभा में प्रस्तुत किया गया। पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता प्रदान किये जाने हेतु प्रस्तुत यह विधेयक वस्तुत: 64 वें विधेयक की ही संशोधित प्रति थी। इसमें वे सभी बिन्दु सम्मिलित किये गये जो 64 वें विधेयक में थे। मुख्य अंतर ढांचागत संरचना का था। 64 वें विधेयक में तीनों स्तरों पर पंचायती राज संस्थाओं का गठन आवश्यक था। जबकि 72 वें संशोधन विधेयक में केवल ग्राम स्तर की ही बाध्यता थी। मध्य स्तर एवं जिला स्तर पर पंचायतीराज संस्थाओं के गठन के बिन्दु को राज्य सरकारों की इच्छा पर छोड़ दिया गया। 64 वें विधेयक की तरह 72 वें विधेयक को भी अनुच्छेद 243 के अन्तर्गत नवें हिस्से के रूप में जोड़े जाने के लिए प्रस्तुत किया गया। इस विधेयक के मुख्य प्रावधान इस प्रकार थे।

- अनुच्छेद 243(ए) में प्रावधान है कि ग्राम पंचायत, ग्राम सभा के प्रति उसी प्रकार उत्तरदायी होगी जैसे कि राज्य सरकार विधानसभा के प्रति होती है। ग्राम के सभी मतदाता ग्राम सभा के सदस्य होंगे।
- अनुच्छेद 243 (बी) के अनुसार ग्राम पंचायत का गठन आवश्यक है। मध्य स्तर पर पंचायत समिति एवं जिला स्तर पर जिला परिषद हो, दोनों में से एक हो या दोनों यह राज्य की विधानसभा के निर्णय पर निर्भर करेगा।
- अनुच्छेद 243 (सी) में ग्राम पंचायत एवं मध्यस्तरीय संस्था (अगर गठित होती है) की सदस्यता हेतु प्रत्यक्ष निर्वाचन का प्रावधान है जबकि जिला परिषद के गठन की विधि राज्य सरकारों पर छोड़ी गई है। इसी तरह ग्राम पंचायत एवं पंचायत समिति के अध्यक्षों के चुनाव का प्रावधान प्रत्यक्ष निर्वाचन विधि से रखा गया है। जबकि जिला परिषद के अध्यक्ष की निर्वाचन विधि तय करने का कार्य राज्य सरकारों पर छोड़ा गया है।
- अनुच्छेद 243(डी) में अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात में पंचायतों (सभी स्तरों पर) के कुछ वार्ड् आरक्षित करने का प्रावधान है जो क्रमश: बदलते रहेंगे। इन आरक्षित स्थानों में से एक तिहाई स्थानों पर अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाऐं ही चुनी जा सकेंगी। प्रत्येक पंचायत के एक तिहाई वार्ड महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे। इनमें अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं के लिए आरक्षित स्थान भी शामिल हैं।
- यह भी उल्लेखनीय है कि राज्य की समस्त पंचायतों के एक तिहाई पदों पर महिलाऐं ही आसीन होंगी।
- कुछ अध्यक्ष पद अनुसूचित जाति एवं जनजाति के सदस्यों के लिए भी आरक्षित करने का प्रावधान है।
- जहाँ तक पिछड़ी जातियों के लिए ग्राम पंचायतों की सदस्यता या अध्यक्षता हेतु आरक्षण का प्रश्न है, इसका निर्णय 243 (डी) (6) में राज्य सरकारों पर छोड़ा गया है।
- अनुच्छेद (ई) में पंचायती राज संस्थाओं की अवधि 5 वर्ष की रखी गई है। किसी कारण से अगर कोई ग्राम पंचायत मध्यावधि में भंग की जाती है तो अगले 6 माह की अवधि के भीतर उसका पुनर्गठन वांछनीय है। पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव नियमित एवं निष्पक्ष हों यह दायित्व राज्य के मुख्य चुनाव अधिकारी का होगा।
- अनुच्छेद 243 (एफ) में पंचायती राज संस्थाओं की सदस्यता हेतु अयोग्यताऐं दी गई हैं।
- अनुच्छेद 243 (जी) में राज्य की विधानसभाओं को यह अधिकार दिया गया है कि वे पंचायतों के अधिकार कर्त्तव्य तथा प्रशासनिक एवं वित्तीय व्यवस्था सम्बन्धी ऐसे नियम बनायें कि ये संस्थायें लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को यथार्थ रूप में चरितार्थ करते हुए जन आकांक्षाओं के अनुरूप प्रभावी ढंग से कार्य कर सकें। अनुच्छेद 243 (जी) के अन्तर्गत जोड़े गये 11 वें शेड्यूल में स्थानीय महत्व के 29 विषय कृषि, सिचाई, पशुपालन, मत्स्य विकास, वन, ग्रामीण सड़के, विद्युत, शिक्षा, परिवार कल्याण आदि रखे गये हैं जो वस्तुत: 64 वें विधेयक की पुनरावृत्ति ही है। इन विषयों से सम्बन्धित समस्त विकास कार्य योजना से लेकर क्रियान्वयन तक पंचायती राज संस्थाओं के अधिकार क्षेत्र में होंगे।
- अनुच्छेद 243 (एच) में राज्य की विधानसभा को यह अधिकार दिया गया कि वह पंचायती राज संस्थाओं को करारोपण एवं वसूली के लिए अधिकृत करें। इसी अनुच्छेद में राज्य सरकार के कोष से पंचायतों को दिये जाने वाले अनुदानों की व्यवस्था का भी प्रावधान है।
- अनुच्छेद 243(आई) में प्रावधान है कि 73 वें संविधान संशोधन अधिनियम के पारित होने से एक वर्ष की अवधि के भीतर राज्यपाल राज्य वित्त आयोग का गठन करेगा। बाद में हर पांचवे साल नये वित्त आयोग का गठन किया जायेगा।
- अनुच्छेद 243(जे) में पंचायती राज संस्थाओं के लेखा एवं अंकेक्षण

की व्यवस्था है।

- अनुच्छेद 243 (के) में राज्य निर्वाचन आयोग के गठन का प्रावधान है जो मतदाता सूची तैयार कराने से लेकर निर्धारित अवधि में पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव कराने के लिए उत्तरदायी होगा।
- अनुच्छेद 243 (एल) में अंकित है कि ये प्रावधान संघीय क्षेत्रों पर भी उसी तरह लागू होंगे। इस संदर्भ में राज्यपाल के दायित्वों का निर्वाह संघीय क्षेत्र के प्रशासक करेंगे।
- अनुच्छेद 243 (एम) में दिया गया है कि 73 वें संविधान संशोधन अधिनियम के प्रावधान नागालैंड, मिजोरम मेघालय मणिपुर के पहाड़ी जिलों तथा पश्चिम बंगाल के दार्जीलिंग जिले पर लागू नहीं होंगे।
- अनुच्छेद 243 (एन) में प्रावधान किया गया है कि इस अधिनियम के लागू होने तक राज्यों में पूर्व से गठित चली आ रही पंचायतें वैध होंगी।
- अनुच्छेद 243 (ओ) में यह व्यवस्था दी गई है कि राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा परिसीमित चुनाव क्षेत्रों की वैधता को किसी भी न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकेगी।

73 वाँ संविधान संशोधन – 1992 –लोकसभा ने 72 वें संविधान संशोधन विधेयक की समीक्षा हेतु संसद सदस्यों की एक संयुक्त प्रवर समिति का गठन किया। सांसद नाथूराम मिर्धा की अध्यक्षता में गठित इस समिति में राज्यों एवं दलों के प्रतिनिधि संसद सदस्य थे। समिति ने उपयोगिता एवं व्यवहारिकता की पृष्ठभूमि में विधेयक के विविध प्रावधानों का अध्ययन कर संसद के समक्ष अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसे 22 दिसम्बर, 1992 को लोकसभा एवं अगले दिन राज्य सभा में 73 वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 के रूप में पारित कर दिया गया। 17 राज्यों से अनुमोदन होने के पश्चात् 24 अप्रैल, 1993 से अधिनियम को सारे देश में लागू कर दिया गया।12 समिति के सुझावों के आधार पर विधेयक को पारित करते समय प्रारूप में कुछ संशोधन किये गये जिनके मुख्य बिन्दु निम्न लिखित हैं :–

- अनुच्छेद 243 (बी) के अन्तर्गत तीनों स्तरों ग्राम, पंचायत समिति एवं जिला स्तर पर पंचायतों के गठन का प्रावधान रखा गया है जिन राज्यों की जनसंख्या 20 लाख से कम है वहाँ पंचायत समिति आवश्यक नहीं है।
- ग्राम पंचायत की तरह मध्य स्तर एवं जिला स्तर पर भी सदस्यता हेतु सीधे निर्वाचन का भी प्रावधान किया गया।
- अनुच्छेद 243 (सी) के अनुसार ग्राम पंचायत के अध्यक्ष मध्य स्तरीय पंचायत (ब्लॉक एवं पंचायत समिति) में अपनी पंचायत का प्रतिनिधित्व करेंगे। जिन राज्यों में मध्य स्तर का प्रावधान नहीं होगा, यह प्रतिनिधित्व जिला स्तर पर होगा। इसी तरह मध्य स्तरीय पंचायत के अध्यक्ष जिला परिषदों के सदस्य होंगे। लोकसभा, राज्यसभा, विधानसभा एवं विधान परिषद के सदस्य जिला परिषद एवं ब्लॉक पंचायत के सदस्य होंगे बशर्ते कि वे उस क्षेत्र का पूर्णत: या आंशिक रूप से प्रतिनिधित्व करते हों।
- ग्राम पंचायत के अध्यक्ष के निर्वाचन की विधि राज्य सरकार तय करेगी जबकि ब्लॉक, पंचायत समिति एवं जिला परिषद के अध्यक्ष का चयन निर्वाचित सदस्यगण अपने आप में से करेंगे।
- ग्राम पंचायत एवं अन्य स्तरों पर भी अध्यक्ष के कुछ पद अनुसूचित जाति एवं जनजाति तथा महिलाओं के लिए आरक्षित किये जा सकते हैं। आरक्षण की विधि राज्य सरकार द्वारा तय की जायेगी। ग्राम पंचायतों के अध्यक्षों के एक तिहाई पद महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे।
- अनुच्छेद 243 (जी) में ग्राम पंचायतों को नियमान्तर्गत इतना सक्षम बनाने की व्यवस्था की गई है कि वे आर्थिक विकास तथा सामाजिक न्याय के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु योजना बना सकें। तभी ये संस्थायें एक प्रभावी स्थानीय स्वशासन की इकाई बन पायेंगी।
- अनुच्छेद 243 (जी) में ग्राम पंचायतों के कार्यक्षेत्र को सुस्पष्ट करने हेतु संविधान में एक नई अनुसूची जोड़ी गई जिसमें पंचायती राज संस्थाओं द्वारा विकास योजनायें बनाने तथा उन्हें क्रियान्वित करने हेतु 29 विषय दिये गए।कृषि एवं कृषि विस्तार, भूमि सुधार, चकबंदी एवं भू – संरक्षण, लघु सिचाई, जल व्यवस्था, जल नियंत्रण पशुपालन, दुग्ध व्यवसाय एवं मुर्गी पालन मत्स्य व्यवसाय, सामाजिक वानिकी लघु वन उपज लघु उद्योगखादी ग्रामद्योग एवं कुटीर उद्योग ग्रामीण आवास योजनाऐं, पीने का पानी ईधन एवं चारागाह स्थानीय सड़कें, पुलिया, नदियों के पुल, स्थानीय जलमार्ग एवं अन्य संदेश वाहन के साधन, स्थानीय सड़कें, पुलिया, नदियों के पुल, स्थानीय जलमार्ग एवं अन्य संदेश वाहन स्थानीय सड़कें।

11 वीं अनुसूची – अनुच्छेद 243 (जी) – 73 वाँ संशोधन पंचायती राज की स्थापना और सत्ता के विकेन्द्रीकरण का अचूक समाधान है। इस विधेयक के अनन्य अनुच्छेदों पर दृष्टि डालने पर यह प्रतीत होता है कि यह भारत के प्रजातांत्रिक इतिहास में क्रान्तिकारी कदम है। इस विधेयक को लाने में पहल करने वाले पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने कहा था कि 'हमारा जन समुदाय की क्षमता में विश्वास है। देश की जनता को अपना भाग्य निर्धारित करने का अधिकार होना चाहिए। इनमें अधिक से अधिक जनतंत्र और सत्ता का अधिकाधिक विकेन्द्रीकरण होना चाहिए।'[13]

इस अधिनियम के प्रभाव में आते ही भारत विश्व का एकमात्र ऐसा लोकतांत्रिक देश बन गया जहाँ स्थानीय सरकार को संवैधानिक दर्जा दिया गया है। इस व्यवस्था से हमें बहुत दूरगामी परिणाम देखने को मिले और भविष्य में मिलेंगे। 'पंचायतीराज संस्थाओं के परिणाम इतने दूरगामी हैं कि जिन्होंने इसके कानून बनाये हैं उन्होंने भी इसकी आशा नहीं की होगी।'[14]

इस संशोधन ने पंचायतीराज व्यवस्था की संरचना में निम्न से निम्न व्यक्ति को भी ग्राम सभा के माध्यम से सम्मिलित तथा सक्रिय करने का प्रयास किया है। 11वीं अनुसूची में दिये गये विषय पंचायतों के अधिकार क्षेत्र के विषयों को स्पष्ट करते हैं। अनुसूचित जाति, जनजाति तथा महिलाओं के लिए आरक्षण का प्रावधान भी ग्रामों के वंचित तबके को नीति निर्माण में सक्रिय करने का प्रसंशनीय प्रयास हैं। पंचायतीराज में महिला आरक्षण के औचित्य तथा महिला सशक्तिकरण में पंचायतीराज की भूमिका पर हम आगे के अध्यायों में विस्तार से चर्चा करेंगे।

विगत 50 वर्षों में पंचायतीराज को प्रभावी रूप से केवल 73 वें संशोधन के माध्यम से ही संरक्षण मिला यह निर्विवादित तथ्य है। परन्तु यह संरक्षण केवल एक पहलू संरचनात्मक ढांचे के स्थायित्व को ही सुनिश्चित करता है। या 11 वीं अनुसूची में वे कार्य क्षेत्र दिये गये हैं जिनमें से जिला योजना के लिए प्रस्ताव बनने हैं। किन्तु मुख्य मुद्दा, जिला योजनाओं के लिए आवश्यक वित्तीय संसाधनों का है। इसके लिए अभी भी राज्य सरकार पर निर्भरता बनी हुई है। पंचायतीराज संस्थाओं की शक्तियों, अधिकारों एवं दायित्वों के सन्दर्भ में 73 वें संविधान संशोधन अधिनियम के अनुच्छेद 243 (जी) में पूरे अधिकार राज्यों की विधानसभाओं को दिये गये हैं। यह अपेक्षा की गई है कि विधानसभा इन संस्थाओं को नियम बना कर इतनी शक्तियाँ और

अधिकार प्रदान करेगी कि वे प्रभावी ढंग से स्वशासी निकाय के रूप में कार्य कर सके। यह बात आसानी से समझी जा सकती है कि क्षेत्रीय प्रतिद्वंदिता के कारण वैसे ही विधायकों का पंचायती राज के सुदृढ़ीकरण के प्रश्न पर ठण्डा रूख रहता है। अत: उनसे ऐसी अपेक्षा करना कुछ ज्यादा ही होगा। प्रश्न व्यक्तियों का नहीं स्थितियों का है। यह तो मात्र भूमिका निर्वाह है। आज का जिला पंचायत प्रमुख कल जब विधायक और मंत्री बन जाता है तो उसका भी वैसा ही रूख हो जाता है जैसा कि विधान सभा के अन्य सदस्यों का। इसके विपरीत कल का विधायक आज जब पंचायत समिति प्रधान या जिला प्रमुख बन जाता है तो वह इन संस्थाओं के सुदृढ़ीकरण की बात करने लगता है। इस स्थिति से उबरने का केवल एक ही उपाय है कि इन बिन्दुओं पेर जो कि पंचायतीराज संस्थाओं की शक्तियों, अधिकारों और दायित्वों से सम्बन्धित हैं, पर संविधान में स्पष्ट निर्देश हों। निस्संदेह इसके लिए संविधान में एक और संशोधन करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. निरंजन मिश्र : भारत में पंचायती राज पृष्ठ-15 परिबोध, जयपुर - 2006
2. महात्मा गाँधी द्वारा 'हरिजन' समाचार पत्र में प्रकाशित लेख दिनांक 21.02.1947
3. राजस्थान पंचायतीराज क्षमता विकास अभियान - 2010 पंचायतीराज प्रशिक्षण संदर्भ सामग्री पृष्ठ - 10
4. दुर्गा दास बसु : इन्ट्रोडक्शन टू द कॉन्सटीट्यूशन ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली-1976
5. राजकुमारी सुराणा : भारत में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और नव पंचायतीराज पृ. 72 राज पब्लिशिंग हाऊस-2000
6. लक्खी प्रसाद भूषण : पंचायती राज प्रणाली सत्ता का विकेन्द्रीकरण योजना मई 1995 पृ. 27 नई दिल्ली
7. रामेश्वर ठाकुर : 'राजीव, गांधी और पंचायतीराज' कुरूक्षेत्र मई 1993, पृष्ठ 6
8. राजकुमारी सुराणा : 'भारत में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और नव पंचायतीराज', पृष्ठ 77
9. निरंजन मिश्र : भारत में पंचायतीराज, पृष्ठ 45
10. बद्री विशाल त्रिपाठी : पंचायती राज अतीत वर्तमान अप्रैल, 1995 पृष्ठ 25 कुरूक्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र व रोजगार मंत्रालय, प्रकाशन विभाग पटियाला हाऊस, दिल्ली
11. सुभाष सत्य : ग्राम स्वराज, दिवान पब्लिकेशन, कुरूक्षेत्र मार्च 1993 पृष्ठ 7 - नई दिल्ली
12. निरंजन मिश्र : परिदृश्य चार दशकों के उतार चढ़ाव का 'राजस्थान पत्रिका', 7 अप्रैल, 1996 पृष्ठ 3 जयपुर
13. एल.सी. जैन: 'पंचायती राज व्यवस्था : पांच लाख गाँवों में नई व्यवस्था कुरुक्षेत्र' - 1993 पृष्ठ संख्या 20
14. रजनी रंजन झा: पंचायतीराज रूरल डवलपमेंट 1998 पृ. 70 दिल्ली

****

सिन्धु कला का अनुपम प्रतीक- मोहरें एवं मुद्राएं

डॉ. सुनीता मीना *

शोध सारांश – सिन्धु कला का सर्वोत्तम प्रतीक उनकी सुन्दर कटावदार मोहरें हैं जिन पर बलिष्ठ पशुओं की आकृतियां एवं चित्रलिपि के अक्षर हैं– इनका सौंदर्य किसी प्रतिभाशाली जाति की मौलिक रचना-शक्ति के प्रकाश से आलोकित है। अब तक बारह सौ से अधिक मोहरें सिंधु सभ्यता के नगरों के उत्खनन से प्राप्त हुई हैं।सिंधु सभ्यता की ये मुहरें समकालीन कला के सुरक्षित अवशेषों का सबसे प्रभावशाली अंश हैं। यद्यपि इन मुहरों के निर्माण में एक जैसी सावधानी और कलात्मकता नहीं दिखती तथापि मुहरों के कुछ सुन्दर उदाहरण विश्व की महान कलाकृतियों में अपना स्थान रखते हैं। कनिंघम ने सर्वप्रथम हड़प्पा से प्राप्त एक मोहर 1885 में प्रकाशित की थी किन्तु मुद्राओं की लिपि अभी तक पढ़ी नहीं गई है। यह ज्ञातव्य है कि सिंधुघाटी सभ्यता से प्राप्त मुद्राओं का लिपि साम्य उन मुहरों से नहीं है जो सुमेर एवं पश्चिमी एशिया में मिली है। मुद्राओं के काटने और उन पर श्वेत रंग का घोटा चढ़ाने की प्रक्रिया का आविष्कार केवल सिन्धुघाटी में हुआ।

शब्द कुंजी – दुर्ग-विधान, महापथ,बिथिकाएँ, मृद भांड,स्वर्णकारी, मणिकारी, शैलखड़ी,एकश्रृंग, रूद्र शिव, महावृषभ, मेषाकृति।

प्रस्तावना – भारतीय कला, भारतीय धर्म दर्शन, विचारधारा एवं संस्कृति का दर्पण है। यहाँ के निवासियों की विचारधारा, रहन-सहन, वेश-भूषा, धार्मिक आस्था और भी अनगिनत दैनिक क्रियाकलाप व घटनाएं पीढ़ी दर पीढ़ी कला के रूप में सुरक्षित व संरक्षित होती रही है। भारतीय कला देश और काल की सीमाओं से स्वतंत्र निर्बाध गति से पुष्पित और पल्लवित होती रही है। इसका प्रारम्भ सही मायने मे सर्वप्रथम सिन्धु सरस्वती नदी घाटी में, तृतीय सहस्राब्दि ई.पू. से होता है। कला के पुष्प दल एक समय जन्म लेकर फूलते फलते और वृद्धि को प्राप्त होते है। जल-तरंगों की भाँति वे अपना वेग दूसरे युग की प्रेरणाओं को सौप कर विलीन हो जाते है। ऐसी ही प्रेरणा सिन्धु घाटी की कला ने भारत की परवर्ती कला को प्रदान की। सिन्धुघाटी कला के अवशेष हमें इस सभ्यता के महत्त्वपूर्ण नगरों यथा हड़प्पा, मोहनजोदड़ों, लोथल और कालीबंगा इत्यादि से प्राप्त हुए हैं। यहॉ के निवासी नगर-नियोजन, दुर्ग-विधान, महापथ, पथ एवं बिथिकाएँ तथा गृह निर्माण की कला में प्रवीण थे। उनके घरों में स्नान गृह, पाठशाला कुएँ तथा जल निकासी की सुविहित नालियॉ निर्मित थी ये सब जनता के उच्च बुद्धी कौशल एवं स्वच्छ रहन-सहन को प्रकट करती है। आग में पकाई गई मिट्टी की लाखों, करोड़ों ईटें सिन्धुघाटी की निजी विशेषता है जो आज भी वहाँ के घरों, महलों, जल-कुण्ड और कुओं में लगी हैं। वहॉ के जीवन कला और धार्मिक विश्वास में गहरी एकता है जो एक सहस्त्र मील के विस्तार में और लगभग एक सहस्त्र वर्षो की अवधि में बहुत कुछ एक सी है। वहॉ का लोक जीवन मानों रूप और सौन्दर्य का दीर्घकालीन सत्र ही था। जिसके साथ शारीरिक स्वच्छता, वस्त्र और अंलकारों की सुरूचि और धार्मिक विश्वासों की स्पष्टता का घनिष्ट सम्बन्ध था। सोने-चांदी के आभूषण, सुन्दर मनके जो अकीक, तामड़ा गोमेद आदि कीमती मणियों के बने हैं, मिट्टी के आभूषण, सुक्ष्म खिलौने मृद भांड, उन पर काली रेखाओं से लिखे हुए अलंकरण और रेखाचित्र, एवं अन्य सुन्दर आकृतियां मन को सम्मोहित करने वाली है। यहां के नागरिक अनेक उद्योग और शिल्पों से परिचित थे, उदाहरण के लिए कृषि, वस्त्रशिल्प, मूर्तिशिल्प, स्वर्णकारी, मणिकारी, धातु प्रतिमा, लिपि तथा नापतौल के बटखेर इत्यादि।

इन सब के अतिरिक्त सिन्धु कला का सर्वोत्तम उदाहरण उनकी सुन्दर कटावदार मोहरें हैं जिन पर बलिष्ठ पशुओं की आकृतियां एवं चित्रलिपि के अक्षर हैं- इनका सौंदर्य किसी प्रतिभाशाली जाति की मौलिक रचना-शक्ति के प्रकाश से आलोकित है। अब तक बारह सौ से अधिक मोहरें सिंधु सभ्यता के नगरों के उत्खनन से प्राप्त हुई हैं। इनमें से अधिकांश मुहरें शैलखड़ी (Steatite) से निर्मित हैं। काँच-ली मिट्टी (Faience) की मुहरें भी पर्याप्त संख्या में मिली हैं। कुछ मुहरें गोमेद चर्ट और मिट्टी की भी है। कुछ स्थानों से धातु से बनी मोहरे भी मिली हैं परन्तु अपने आकर्षक विशुद्ध आकार और हल्की चमकदार सतह के कारण शैलखड़ी या घीया पत्थर से निर्मित सिन्धु सभ्यता की ये मोहरें कला और लेखों की दृष्टि से भी अत्यन्त उत्कट और अद्वितीय जान पड़ती हैं। सिंधु सभ्यता की ये मुहरें समकालीन कला के सुरक्षित अवशेषों का सबसे प्रभावशाली अंश हैं। यद्यपि इन मुहरों के निर्माण में एक जैसी सावधानी और कलात्मकता नहीं दिखती तथापि मुहरों के कुछ सुन्दर उदाहरण विश्व की महान कलाकृतियों में अपना स्थान रखते हैं।

मुहरों का आकार-प्रकार - आकार-प्रकार की दृष्टि से मुहरों में विभिन्नता है। यहां से प्राप्त मुहरों का आकार 1.27 x 1.27 सेमी और 6.86 x 6.86 सेमी तक है। और इनका सबसे अधिक प्रचलित आकार 2.8 x 2.8 सेमी है। सिन्धु घाटी से प्राप्त मुद्राएँ कई प्रकार की हैं। जैसे- चोकोर जिनके पृष्ठ भाग पर छेद युक्त बुलबुला या बटन है जबकि कुछ चौकोर मोहरे बिना छिद्र युक्त हैं। चौकोर मुहरों के कुछ नमूनों में दोनों और चित्रलिपि के अक्षर अंकित हैं, आयताकार मुद्राएँ जिनका पृष्ठभाग उत्रतोदर या कूबडवाला है, आयताकार मुहरें जिनमें छेद नहीं है बटन की आकृति की चकलेनुमा मुद्रा घनाकार मुद्रा, गोल मुद्रा जिसको पीठ पर छिद्र युक्त बटन है।

इन्हें बनाने के लिए सर्वप्रथम खड़िया पत्थर को चीर कर तेज धार युक्त चाकू से चिकना किया जाता था। फिर औजारों की सहायता से इन पर भाँति-भाँति की आकृतियाँ उकेरी जाती थी। ये मुद्राएं समूह में बनाई जाती थीं। इनके चीरने, कुतरने और छेदने के काम में बहुत सावधानी बरती जाती थी। इनकी मूर्तियां छोटी हैं पर परिमाण के अनुपात से उनकी आकृतियों का

* सहायक आचार्य (इतिहास) शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

प्रभाव बहुत दबंग है। कनिंघम ने सर्वप्रथम हड़प्पा से प्राप्त एक मोहर 1885 में प्रकाशित की थी किन्तु मुद्राओं की लिपि अभी तक पढ़ी नहीं गई है। यह ज्ञातव्य है कि सिंधुघाटी सभ्यता से प्राप्त मुद्राओं का लिपि साम्य उन मुहरों से नहीं है जो सुमेर एवं पष्चिमी एशिया में मिली है। मुद्राओं के काटने और उन पर श्वेत रंग का घोटा चढ़ाने की प्रक्रिया का आविष्कार केवल सिन्धुघाटी में हुआ। अन्य देशों के शिल्पी उससे परिचित न थे। उनकी स्वतंत्र प्रतिभा का प्रमाण और उदाहरणों से भी देखा जा सकता है। जैसे- चित्र-लिपि के अक्षरों में उसके 400 से अधिक अक्षरों से मिलता-जुलता एक भी अक्षर अन्यत्र किसी देश में नहीं पाया गया। इन्हें बनाने के लिए सर्वप्रथम खड़िया पत्थर को चीर कर तेज धार युक्त चाकू से चिकना किया जाता था। फिर औजारों की सहायता से इन पर भाँति-भाँति की आकृतियाँ उकेरी जाती थी। ये मुद्राएं समूह में बनाई जाती थीं। इनके चीरने, कुतरने और छेदने के काम में बहुत सावधानी बरती जाती थी। इनकी मूर्तियां छोटी हैं पर परिमाण के अनुपात से उनकी आकृतियों का प्रभाव बहुत दबंग है। कनिंघम ने सर्वप्रथम हड़प्पा से प्राप्त एक मोहर 1885 में प्रकाशित की थी किन्तु मुद्राओं की लिपि अभी तक पढ़ी नहीं गई है। यह ज्ञातव्य है कि सिंधुघाटी सभ्यता से प्राप्त मुद्राओं का लिपि साम्य उन मुहरों से नहीं है जो सुमेर एवं पश्चिमी एशिया में मिली है। मुद्राओं के काटने और उन पर श्वेत रंग का घोटा चढ़ाने की प्रक्रिया का आविष्कार केवल सिन्धुघाटी में हुआ। अन्य देशों के शिल्पी उससे परिचित न थे। उनकी स्वतंत्र प्रतिभा का प्रमाण और उदाहरणों से भी देखा जा सकता है। जैसे- चित्र-लिपि के अक्षरों में उसके 400 से अधिक अक्षरों से मिलता-जुलता एक भी अक्षर अन्यत्र किसी देष में नहीं पाया गया।

मुहरो पर अंकित पशु आकृतियां - सिन्धु सभ्यता के उत्खनन से प्राप्त इन मुहरों पर मुख्यत: पशुओं के चित्र अंकित है उनके ऊपर चित्रलिपि के कुछ अक्षर उभरे हुए हैं। अधिकांश मुहरों पर एकश्रृंग पशु अंकित है। पशु के सामने एक कुण्ड है। यह पशु एक सींग वाला बैल है। इस प्रकार का चिन्ह सिन्धु सभ्यता से बाहर अन्यत्र नहीं पाया गया और न अन्य सभ्यताओं में इनके अर्थ की कुछ संगति ही थी। अन्य पशुओं में महावृषभ अत्यन्त उत्कृष्ट है। उसके पतले, लम्बे, तीखे, श्रृंग, झूलता हुआ गलकम्बल, फूले हुए नथूने और शरीर पर चढे हुए मांसपेशियों के लेवड़े आश्चर्यजनक है। इसके अतिरिक्त छोटे सींगो वाला नटुआ बैल, महिश गैंडा, व्याघ्र, हाथी, खरगोश, हिरन, गरूड़ और मगर के चित्र भी अंकित है।

1. **एक श्रृंग वाला बैल-** इस वृषभ की सबसे बड़ी विषेषता उसका श्रृंग है। यह रूद्र शिव का पवित्र पशु था। मुद्रा पर अंकित एक अन्य पशु में वृषभ और हिरण का संयुक्त रूप है। दोनों का सम्बन्ध रूद्र शिव से था। एक श्रृंग पशु के कंधे पर एक विचित्र त्रिसंस्थ चिन्ह बना मिलता है। तीन की संख्या का सम्बन्ध सबसे अधिक त्रिशूलधारी शिव से ही था।

2. **छोटे सींगों वाला नटुआ बैल-** दूसरा लोकप्रिय पशु छोटे सींगों वाला नटुआ बैल था जो मोहरों और बर्तनों पर बनाया गया है। इसका क्रोध से तना हुआ, नीचे की ओर झुका हुआ दूसा मारने की मुद्रा में मस्तक उत्कृष्ट कलां का प्रमाण है। प्रत्येक मुद्रा पर उसके सामने एक चारा खाने की नांद है। नांद का यह रूप भी केवल सिन्धुघाटी में ही मिला है।

3. **महिष का चित्र-** यह पशु बहुत ही कम मिला है। इसे गर्दन ऊपर उठाए हवा में सूँ-सूँ करता हुआ दिखाया गया है।

4. **शिव का नादिया वृषभ -** यह ककुदमान या लोटती टॉट वाला और भरे हुए कन्धों वाला महाकाय वृषभ है जो गायों को गाभिन करने वाली अपनी वृषशक्ति के लिए प्रसिद्ध है। मुहर पर इसका अंकन अत्यन्त प्रभावशाली है और भारत से बाहर अन्यत्र नहीं मिलता। इसके उद्दाम बलिष्ठ रूप को चित्रित करने में शिल्पी ने अपनी बढ़ी-चढ़ी कला निपुणता का परिचय दिया है।

5. **गैंडा-** यह महाकाय भारतीय पशु है जो किसी समय सिंधु के सघन जंगलों में स्वच्छन्द घूमता था इसका अंकन बड़ी यथार्थता से किया गया है जिसमें त्वचा की तहदार ढालें, बुन्दीकार जिल्द और सिकुड़न स्पष्ट दिखाई गई है।

कुछ अन्य मुद्राओं पर धारीदार त्वचा से युक्त व्याघ्र लम्बे शुंडदंड से युक्त मस्त हाथी, पेचदार लम्बे सींगों वाले हिरन और नदियों में पाए जाने वाले मगरमच्छ एक मुद्रा पर फैलती शाखाओं वाला पत्रों से भरा हुआ अश्वत्थ वृक्ष या पीपल है।

धर्म सम्बन्धी काल्पनिक पशु- एक मुद्रा पर ऐसा पुरूष पशु अंकित है जिसके पैरों में खुर, सिर पर सींग और पीछे पूँछ है जो एक काल्पनिक पशु से जिसके शरीर का अधिकांश भाग व्याघ्र जैसा है कुष्ती कर रहा है। यह भारत से बाहर सुमेर की गाथाओं का एक दृष्य है। एक दूसरी मुद्रा पर संयोगात्मक शरीर वाला एक पशु है। वह मेषाकृति है उसके मस्तक पर बैल के सींग है, उसका मुख मनुष्य का है जिसमें एक हाथी की सूंड और दांत जुडे हुए है। एक अन्य मुद्रा पर तीन मस्तकों वाला एक पशु है जिसमें एक सिर हिरन का, मुख्य शरीर एक श्रृंग का और अन्य सिर मेंढे का हैं। एक अन्य मुद्रा पर किसी पशु की उकेरी हुई आकृति है जिसमें तीन व्याघ्रो के शरीर संयुक्त हैं। मुद्राओं पर वृक्ष वनस्पतियों का अंकन बहुत कम है। एक मुद्रा पर पीपल या अश्वत्थ का चित्रण है जो भारतीय परम्परा में विश्व का प्रतीक माना जाता है। सिन्धुघाटी की किसी मोहर पर सिंह नहीं पाया जाता, किन्तु एलम, सुमेर, किष और बावेरू की मुद्राओं पर वह लोकप्रिय पशु है। हिरन भी सिंधुघाटी की मुद्राओं पर कम मिलता है।

कुछ मुहरों पर चलती हुई पशु पंक्तियां अंकित हैं। जिनमें एकश्रृंग, गैंडा, मगरमच्छ, ठिगने सींगों वाला नटुआ बैल, हाथी और बाघ प्रमुख है। मैसोपोटामियां और शूषा की पुरानी मोहरों पर पशुपंक्ति का यह अभिप्राय बहुत व्यापी था। वहाँ की जंगम पशुपंक्ति में चलते हुए सिंह और हिरन दिखाए गए हैं।

मानव आकृतियों का अंकन- मुहरों पर धनुष-वाण लिये मानवआकृतियों का अंकन भी मिलता है लेकिन उनका उत्कीर्णन पशु आकृतियों की भांति सजीव नहीं है। एक दृष्य जिसे मुहरों पर कई बार प्रदर्शित किया गया है, उसमें एक व्यक्ति को अपनी फैलाई गई भुजाओं द्वारा दो दहाड़तें हुए व्याघ्रों को पकडते हुए दिखाया गया है। मोहनजोदडो की एक वर्गाकार मुहर पर देवता, पशु और सात नारी आकृतियों का अंकन मिलता है। चन्हुदड़ो की एक वर्गाकार मुहर पर दो स्त्रियों का अंकन है, जो हाथ से ध्वज पकडे खड़ी हैं। कुछ मुहरों पर मानव एवं विभिन्न पशुओं के अंगों से मिश्रित आकृतियाँ भी अंकित है। मानव आकृति से युक्त मुहरों में सर्वाधिक उल्लेखनीय प्रभावशाली एवं प्रसिद्ध मुहर पशुपति की मुहर है जिसमें एक चौकी या पीठ पर आसीन मानव (शिव) एक हाथी, चीता, गैंडा और भैंस से घिरे हुए है। चौकी के नीचे दो हिरणों की आकृतियां बनी हैं। मानव आकृतियों का अंकन- मुहरों पर धनुष-वाण लिये मानवआकृतियों का अंकन भी मिलता है लेकिन उनका उत्कीर्णन पशु आकृतियों की भांति सजीव नहीं है। एक दृष्य जिसे मुहरों पर कई बार प्रदर्शित किया गया है, उसमें एक व्यक्ति को अपनी फैलाई गई भुजाओं द्वारा दो दहाड़तें हुए व्याघ्रों को पकड़ते हुए दिखाया गया है।

मोहनजोदड़ो की एक वर्गाकार मुहर पर देवता, पशु और सात नारी आकृतियों का अंकन मिलता है। चन्हुदड़ो की एक वर्गाकार मुहर पर दो स्त्रियों का अंकन है, जो हाथ से ध्वज पकड़े खड़ी हैं। कुछ मुहरों पर मानव एवं विभिन्न पशुओं के अंगों से मिश्रित आकृतियाँ भी अंकित है। मानव आकृति से युक्त मुहरों में सर्वाधिक उल्लेखनीय प्रभावशाली एवं प्रसिद्ध मुहर पशुपति की मुहर है जिसमें एक चौकी या पीठ पर आसीन मानव (शिव) एक हाथी, चीता, गैंडा और भैंस से घिरे हुए है। चौकी के नीचे दो हिरणों की आकृतियां बनी हैं। विद्वान इस मुहर पर बनी आकृति को शिव का पशुपति रूप मानते हैं।

ताम्र मुद्राएं – तांबे की बनी हुई मुहरें कम संख्या में प्राप्त हुई है। इन पर भी अन्य मुद्राओं के समान पशुओं की आकृतियां और लेख उत्त्कीर्ण है। इनको पहले ढाल और फिर हथौडे से पीटकर ठीक रूप में लाई जाती थीं। कुछ मुहरें एक सिरे पर ऊबड़–खाबड़ हैं। इससे ज्ञात होता है कि वे किसी लम्बी पट्टी में से काटकर बनाई गई थीं। सिन्धु उपत्यका में इन ताम्र मुद्राओं के अतिरिक्त किसी भी सिक्के का अस्तित्व नहीं पाया गया। इससे इन ताम्रमुद्राओं के सिक्के होने की संभावना को बल मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हीलर मॉर्टीमर – द इण्डस सिविलाइजेशन, 1960
2. राबिनसन, एन्ड्र्यू – द इण्डस लॉस्ट सिविलाइजेशन
3. शर्मा, देव प्रकाश – आर्ट एण्ड क्राफ्ट ऑफ हड़प्पा
4. पाँशेल, ग्रेगरी एल – द इण्डस सिविलाइजेशन
5. वत्स, माधोस्वरूप – एक्सकेवेशन एट हड़प्पा
6. थापर, रोमिला – प्राचीन भारत का इतिहास
7. अग्रवाल, वासुदेव शरण – भारतीय कला
8. त्रिपाठी, रमाशंकर – हिस्टी ऑफ एनशियंट इण्डिया

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

समेकित बाल विकास सेवा कार्यक्रम का लेखकीय अध्ययन (खमनोर परियोजना के संदर्भ में)

प्रो. अनिता शुक्ला* मनीष श्रीमाली**

प्रस्तावना – समेकित बाल विकास सेवायें एक मात्र राष्ट्रीय कार्यक्रम है जो 6 वर्ष से कम उम्र के बच्चों की जरूरतें पूरी करता है। यह छोटे बच्चों को पूरक पोशाहार, स्वास्थ्य सुविधा और स्कूल पूर्व शिक्षा जैसी सुविधायें एकीकृत रूप से पहुंचाता है। बच्चों की स्वास्थ्य और पोषण की जरूरतें अपनी माँ से अलग पूरी नहीं हो सकती, इसी लिए कार्यक्रम में किशोरी बालिकाओं, गर्भवती महिलाओं और धात्री माताओं को भी सम्मिलित किया गया है।

समेकित बाल विकास सेवायें आँगनवाड़ी केन्द्रों के माध्यम से एक विशाल नेटवर्क द्वारा अपनी सेवायें उपलब्ध कराता है। आँगनवाड़ी वास्तव में एक आंगनयुक्त केन्द्र है जो सामान्य मानदेय प्राप्त आँगनवाड़ी कार्यकर्ता द्वारा चलाई जाती है और एक अंश कालीन सहायिका उसकी मदद करती है। प्रत्येक आँगनवाड़ी को करीब 1000 की जनसंख्या (लगभग 200 परिवार) तक पहुंचना होता है। स्थानीय आँगनवाड़ी समेकित बाल विकास सेवाओं के ढ़ांचे में नीव का पत्थर है।

प्रस्तुत लेख में समेकित बाल विकास सेवा के अन्तर्गत राजसमन्द जिले की खमनोर पंचायत समिति में क्रियान्वित परियोजना से जुड़े 20 केन्द्रों के लाभार्थियों और मानदेय कर्मियों पर सरकार द्वारा किए गए व्ययों का पाँच वित्तीय वर्ष 2014 से 2018 के संदर्भ में अध्ययन किया गया हैं।

आँगनवाड़ी केन्द्र द्वारा दी जाने वाली सेवाएँ

प्रतिरक्षण (टीकाकरण) – इस सेवा के लिये विभाग द्वारा वित्तीय प्रावधान एवं भौतिक लक्ष्य नही रखे जाते हैं। टीकाकार्य आंगनबाडी केन्द्रों पर चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग के कार्मिकों द्वारा किया जाता है। वैक्सीन बहुत महंगी होती हैं तथा सरकार को इन्हें खरीदने, इनके रख रखाव तथा परिवहन आदि में बहुत धन खर्च करना पडता है। लेकिन सभी टीकाकरण सेवायें बच्चों एवं गर्भवती महिलाओं को सरकारी स्वास्थ्य केन्द्रों व अस्पतालों में नि:शुल्क दी जाती है।

स्वास्थ्य जाँच – इस सेवा के लिए भी विभाग द्वारा वित्तीय प्रावधान एवं भौतिक लक्ष्य नही रखे जाते हैं। इस दिन अति कुपोषित एवं कुपोषित बच्चों का वजन लेकर वृद्धि निगरानी तालिका संधारित की जाती है। बच्चों के स्वास्थ्य की जाँच स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं द्वारा की जाती है। प्रसव पूर्व एवं प्रसव उपरान्त महिलाओं की देखभाल एवं बच्चों की स्वास्थ्य जांच स्वास्थ्य कार्यकर्ता द्वारा की जाकर बीमारी के उपचार हेतु दवाओं का वितरण भी केन्द्र पर किया जाता है। लाभान्वितों को आयरन/फोलिक एसिड की गोलियों, विटामिन-ए की खुराक तथा ओ.आर.एस. के पैकेट का वितरण भी किया जाता है। बीमार बच्चों एवं माताओं को आंगनबाडी केन्द्रों पर उपलब्ध मेडिकल किट से तथा स्वास्थ्य विभाग के माध्यम से जरूरी दवाओं का वितरण भी किया गया है।

स्वास्थ्य एवं पोशण शिक्षा – इस सेवा के लिए भी विभाग द्वारा वित्तीय प्रावधान एवं भौतिक लक्ष्य नही रखे जाते हैं।

शालापूर्ण शिक्षा – इस सेवा के लिए भी विभाग द्वारा वित्तीय प्रावधान नहीं रखे जाते हैं। समेकित बाल विकास सेवाऐं की 6 सेवाओं में से शालापूर्ण शिक्षा एक महत्वकपूर्ण सेवा है, जो 3 से 6 वर्ष तक के बच्चोंय को आंगनाबाडी केन्द्रों पर दी जाती है। इसके अंतर्गत बच्चों के शारीरिक, मानसिक, सृजनात्मकक, भावनात्मक, भाषिक तथा सामाजिक विकास संबंधी गतिविधियॉं करवाई जाती है। बच्चों को पढने के लिये तैयार किया जाता है। 4 घण्टे तक बच्चे को केन्द्रो पर रहना पडता है, जिसमें उसे गर्म पोशाहार ढाई-तीन घण्टे के अंतराल से खिलाया जाता है।

सन्दर्भ (रेफर) सेवाएँ – इस सेवा के लिए भी विभाग द्वारा वित्तीय प्रावधान नहीं रखे जाते हैं। गर्भवती महिलाओं, धात्री माताओं तथा 6 साल से छोटे बच्चे जो बीमार हों या अतिकुपोषित हों, उन्हें आंगनबाड़ी कार्यकर्ता एक रेफरल स्लिप के साथ आवश्यकतानुसार निकटतम प्राथमिक स्वांस्थ्री केन्द्र/सामुदायिक केन्द्र पर भेजती है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. आँगनवाड़ी केन्द्र की अवधारणा को जानना व इससे संबंधित सरकार की नींतियों का अध्ययन करना।
2. आँगनवाड़ी केन्द्र की विभिन्न्ना सेवाओं से संबंधित केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा दी गई राशि के आय-व्यय का अध्ययन करना।

प्राक्कल्पनाएँ :

1 निर्धारित वित्तीय वर्ष में पूरक पोशाहार की मद में 3 से 6 वर्ष के बच्चों पर 6 माह से 3 वर्ष के बच्चों से अधिक व्यय आता है।

2 निर्धारित वित्तीय वर्ष पूरक पोशाहार की मद में धात्री माताओं पर गर्भवती महिलाओं की तुलना में कम व्यय किया जाता है।

निदर्शन तथा अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत अध्ययन हेतु राजसमन्द जिले की खमनोर पंचायत समिति का चयन किया गया है जिसके कुल 191 आँगनवाड़ी केन्द्रों में से सभी सेक्टर से 20 आँगनवाड़ी केन्द्रों का चयन किया गया हैं।

शोध पद्धति – इस अध्ययन की प्रकृति लेखकीय है। पाठीय दृष्टि से पुस्तकालय वर्णनात्मक प्रकृति को स्पष्ट करती है शोध प्रविधि में अनुसंधान पद्धति एक महत्वपूर्ण पक्ष है जिसे स्पष्ट किए बिना कोई भी अनुसंधान पूरा

* विभागाध्यक्ष, लेखान्कन विभाग, जनार्दन राय नागर, राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, लेखान्कन विभाग, जनार्दन राय नागर, राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

नहीं हो सकता है। तथ्य संकलन में विभागीय बजट का का निरीक्षण एवं संबंधित व्यय, अधिकारियों, आँगनवाड़ी कार्यकर्ता एवं पंचायतीराज के प्रतिनिधियों के साक्षात्कार किए जावेंगे और आय-व्यय के ब्यौरे का संकलन कर विभिन्ना मदों का अध्ययन किया जावेगा।

पूरक पोशाहार सेवा से सम्बन्धित अध्ययन - आँगनवाड़ी केन्द्र से सम्बन्धित महिलाओं की स्वास्थ्य जाँच से उनके गर्भवती होने का पता चलता है और आँगनवाड़ी केन्द्र में उनका नाम पंजिकृत किया जाता है। इसके पश्चात समेकित बाल विकास सेवाएं (आईसीडीएस) कार्यक्रम के अन्तर्गत आंगनबाडी केन्द्र के माध्यम गर्भवती महिलाओं को पूरक पोशाहार से लाभान्वित किया जाता है। गर्भवती माताओं को 7 दिवस के पोशाहार देने का यह उद्देश्य है कि गर्भवती महिलाओं को पुन: 7 दिवस बाद उनकी स्वास्थ्य जाँच की जा सके। उक्त पूरक पोशाहार के 7 दिनों तक अलग-अलग व्यंजन बनाकर गर्भवती महिला उसका सेवन करती हैं।

प्रसव के बाद गर्भवती महिला का नाम धात्री महिला के कॉलम में दर्ज कर उसे छ: माह तक साप्ताहिक पोशाहार दिया जाता है जिससे शिशु को बेहतर स्तानपान करा सके। 6 माह से 3 वर्ष के बच्चों के लिए भी साप्ताहिक पोशाहार आंगनबाडी केन्द्र द्वारा वितरित किया जाता हैं।

3 से 6 वर्ष तक के बच्चों को आंगनबाडी केन्द्र पर गर्म पूरक पोशाहार प्रदान किया जाता है और अन्य सेवाएँ भी प्रदान की जाती हैं। आंगनबाडी केन्द्र से सम्बन्धित क्षेत्र में विद्यालय नहीं जाने वाली 2 किशोरियों को चिन्हित कर उन्हें भी साप्ताहिक पोशाहार प्रदान किया जाता है। खमनोर परियोजना के 20 आँगनवाड़ी केन्द्रों पर अप्रेल 2014 से मार्च 2018 तक गर्भवती महिलाओं, धात्री माताओं, 6 माह से 3 वर्ष तक के बच्चे, 3वर्ष से से 6वर्ष तक के बच्चे और किशोरी बालिकाओं के पूरक पोशाहार के व्यय के विवरण का अध्ययन किया गया है।

चित्र संख्या 01 : खमनोर परियोजना में पूरक पोशाहार की मद में व्यय

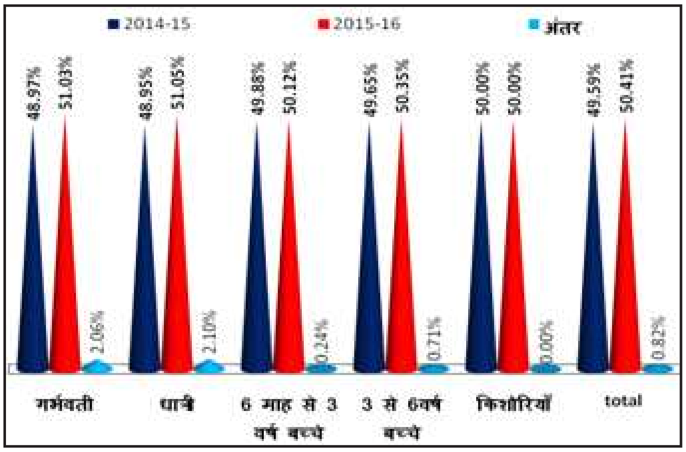

उपरोक्त चित्र 01 में वित्तीय वर्ष 2014-15 और 2015-16 का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है जिसमें पाया गया कि 2014-15 की तुलना में गर्भवती महिलाओं पर 2015-16 में 2.06 प्रतिशत अधिक व्यय हुआ इसी प्रकार धात्री माताओं पर 2.06 प्रतिशत अधिक व्यय हुआ और 6 माह से 3वर्ष के बच्चों पर 0.24 प्रतिशत अधिक व्यय हुआ एवं 3वर्ष से 6 वर्ष के बच्चों पर 0.71 प्रतिशत अधिक व्यय हुआ तथा किशोरी बालिकाओं के व्यय में दोनों वर्षों में समान व्यय हुआ। कुल सभी लाभार्थियों पर 2014-15 की तुलना में 2015-16 में 2.06 प्रतिशत अधिक व्यय हुआ।

चित्र संख्या 02 : खमनोर परियोजना में पूरक पोशाहार की मद में व्यय

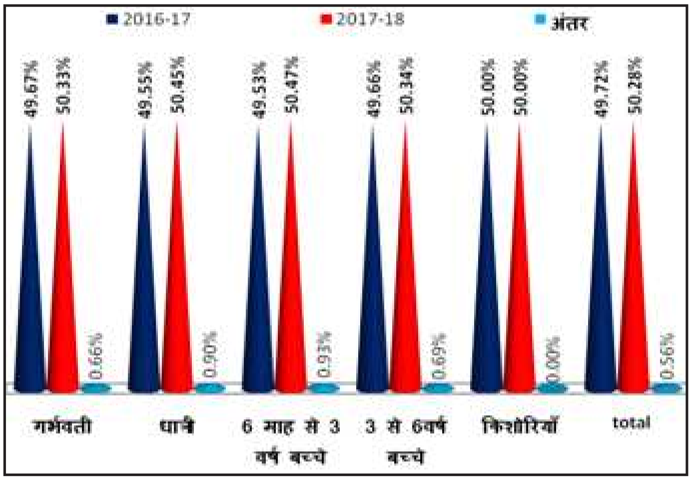

उपरोक्त चित्र 02 में वित्तीय वर्ष 2016-17 और 2017-18 का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है जिसमें पाया गया कि 2016-17 की तुलना में गर्भवती महिलाओं पर 2017-18 में 0.66 प्रतिशत अधिक व्यय हुआ इसी प्रकार धात्री माताओं पर 0.90 प्रतिशत अधिक व्यय हुआ और 6 माह से 3वर्ष के बच्चों पर 0.93 प्रतिशत अधिक व्यय हुआ एवं 3वर्ष से 6 वर्ष के बच्चों पर 0.63 प्रतिशत अधिक व्यय हुआ तथा किशोरी बालिकाओं के व्यय में दोनों वर्षों में समान व्यय हुआ। कुल सभी लाभार्थियों पर 2016-17 की तुलना में 2017-18 में 0.56 प्रतिशत अधिक व्यय हुआ।

सारणी 01 (अगले पृष्ठ पर देखे)

सारणी 01 में वित्तीय वर्ष 01 अप्रेल 2014 से 31 मार्च 2018 तक खमनोर परियोजना में पंजीकृत लाभार्थियों पर पूरक पोशाहार की मद में व्यय का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया हैं। जिसमें पाया गया कि वित्तीय वर्ष 2014-15 में राशि 1911280 रूपये का व्यय हुआ।जो वर्ष 2015-16 में बढ़कर राशि 1942699 रूपये का व्यय हुआ और वर्ष 2016-17 में राशि 1955243 रूपये का व्यय हुआ तथा वर्ष 2017-18 में राशि 1977460 का व्यय हुआ।

निष्कर्ष - खमनोर परियोजना में वित्तीय वर्ष 2014-15 में राशि 1911280 रूपये का व्यय हुआ जो वर्ष 2015-16 में बढ़कर राशि 1942699 रूपये का व्यय हुआ और वर्ष 2016-17 में राशि 1955243 रूपये का व्यय हुआ तथा वर्ष 2017-18 में राशि 1977460 का व्यय हुआ। कुल 01 अप्रेल 2014 से 31 मार्च 2018 तक 4 वर्षों में राशि 7786641 रूपये का व्यय हुआ। खमनोर परियोजना में पंजीकृत लाभार्थियों पर पूरक पोशाहार की मद में वित्तीय वर्ष 2014-15 में 18.11 प्रतिशत का व्यय हुआ जो वर्ष 2015-16 में बढ़कर 18.41 प्रतिशत हो गया। वर्ष 2016-17 में यह व्यय 18.53 प्रतिशत का हुआ तथा वर्ष 2017-18 में 18.74 प्रतिशत का व्यय हुआ।

सुझाव :

1. आँगनवाड़ी से संबंधित सभी सूचनायें प्रशासन द्वारा स्वयं के पहल से जारी की जाये। प्रत्येक केन्द्र पर जरूरी सूचनाओं का एक पटल प्रदर्शित किया जाए।
2. ग्राम पंचायतों की निजी आय द्वारा आँगनवाड़ी केन्द्र के समस्त व्ययों

का समायोजन किया जा सकता हैं। जिससे राज्य एवं केन्द्र सरकार के दायित्यों को पंचायतों तक हस्तांतरित किया जा सकता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कार्यालय,महिला एवं बाल विकास विभाग, राजसमन्द,राजस्थान सरकार

सारणी 1 : खमनोर परियोजना में पूरक पोशाहार की मद में व्यय

क्र.	लाभार्थी	वित्तीय वर्ष 2014-15	वित्तीय वर्ष 2015-16	वित्तीय वर्ष 2016-17	वित्तीय वर्ष 2017-18	कुल व्यय
1.	गर्भवती	322412	335972	340492	345011	1343887
2.	धात्री	210924	219964	220968	224986	876842
3.	6 माह से 3 वर्ष बच्चे	341820	343440	345060	351540	1381820
4.	3 से 6व वर्ष बच्चे	505800	513000	518400	525600	2062800
5.	किशोरियाँ	530323	530323	530323	530323	2121292
	योग	1911280/-	1942699/-	1955243/-	1977460/-	7786641/-

****

पत्रकारिता : प्रारंभ विकास एवं भारतेन्दु

संजीव मिश्र *

प्रस्तावना – पत्रकारिता के लिए अँगरेजी में 'जर्नलिज्म' शब्द व्यवहृत होता है, जो 'जर्नल' शब्द से बना है, इसका शाब्दिक अर्थ है 'दैनिक'। दिन-प्रतिदिन के क्रिया-कलापों, सरकारी बैठकों का विवरण 'जर्नल' में रहता है। 'जर्नल' से बना 'जर्नलिज्म' अपेक्षाकृत ज्यादा व्यापक शब्द है। सामाचार पत्रों एवं विविध कालिक पत्रिकाओं के संपादन एवं लेखन तत्संबंधी कार्यो को पत्रकारिता के अंतर्गत रखा गया। इस प्रकार समाचारों के संकलन-प्रसारण, विज्ञापन की कला एवं पत्र का व्यवसायिक संगठन यपत्रकारिता है। समसामयिक गतिविधियों के संचार से संबद्ध सभी साधन चाहे वो रेडियों हो या टेलीविजन, इसी के अंतर्गत समाहित है।

'भारत में पत्रकारिता का प्रारंभ सन् 1780 ई0 में प्रकाशित 'जेम्स हीकी' का अखबार 'बंगाल गजट' से माना जाता है। सन् 1790 के बाद भारत में अँग्रेजी भाषा के कुछ और अखबार प्रकाशित हुए जो अधिकतर शासन के मुखपत्र थे। सन् 1819 ई0 में भारतीय भाषा'बंगाली' में पहला समाचार पत्र 'संवाद कौमुदी' राजा राममोहन राय ने निकाला। फिर 1822 ई में 'गुजराती भाषा' में साप्ताहिक 'मुंबईना समाचार' प्रकाशित होने लगा, जो 10 वर्ष बाद दैनिक हो गया और गुजराती के प्रमुख अखबार के रूप में आज तक विद्यमान है। यह भारतीय भाषा में सबसे पुराना दैनिक समाचार पत्र है।'[(1)] उसके बाद 'सन् 1826 ई0 में 'कलकत्ता' से 'उदंत मार्तन्ड' नाम से हिन्दी के प्रथम समाचार पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इसके संपादक पं. जुगल किशोर शुक्ल थे, जो कानपुर के रहने वाले थे, पर कलकत्ता निवासी थे। यह 'साप्ताहिक' पत्र था, जिसका प्रकाशन सन् 1827 तक चला और बाद में यह पैसे की कमी के कारण बंद हो गया। सन् 1830 में राजा राम मोहन राय ने एक बड़ा हिन्दी साप्ताहिक 'बंगदूत' का प्रकाशन शुरू किया। सन् 1833 में भारत में 20 समाचार पत्र थे, जो सन् 1850 में 28 हो गए और सन् 1953 में बढ़कर 35 हो गए।'[(2)] इस तरह अखबारों की संख्या तो बढ़ी, पर नाम मात्र की, क्योंकि इसमें बहुत से पत्र बहुत जल्द ही बंद हो गए।

'सन् 1846 में राजा शिव प्रसाद सिंह ने हिन्दी पत्र यबनारस समाचार अखबार' का प्रकाशन शुरू किया। सन् 1868 में भारतेन्दु ने साहित्यिक पत्रिका 'कविवचन सुधा' निकालना प्रारंभ किया। और सन् 1854 ई0 में हिन्दी का पहला दैनिक 'समाचार सुधा वर्षण' निकला। ये भी कलकत्ता से ही निकलता था, इसके संपादक श्याम सुंदर सेन थे।'[(3)] हिन्दी पत्रकारिता का विद्वानों द्वारा सर्वाधिक मान्य नामकरण व काल-विभाजन इस प्रकार है जो पाँच चरणों में विभाजित है –

1. हिन्दी पत्रकारिता का उद्‌भव काल –(सन् 1826 से 1867 तक)
2. भारतेन्दु कालीन हिन्दी पत्रकारिता – (सन् 1867 से 1900 तक)
3. द्विवेदी कालीन पत्रकारिता– (सन् 1900 से 1920 तक)
4. स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी पत्रकारिता – (सन् 1920 से 1947 तक)
5. स्वातंत्र्योत्तार हिन्दी पत्रकारिता – (सन् 1947 से अब तक)।[(4)]

'हिन्दी पत्रकारिता का दूसरा युग यभारतेन्दु युग के नाम से जाना जाता है जो कि सन् 1867 से लेकर सन् 1900 तक चलता है। इस युग के एक छोर पर भारतेन्दु जी का 'हरिश्चंद्र मैगजीन' था तो दूसरे छोर पर 'नागरी प्रचारिणी सभा' द्वारा अनुमोदन प्राप्त 'सरस्वती'। इन 33 वर्षो में प्रकाशित पत्रों की संख्या लगभग 300 से 350 के उपर थे और ये नागपुर तक फैले हुए थे।'[(5)] अधिकांश पत्र मासिक या साप्ताहिक थे। मासिक पत्रों में निबंध, उपन्यास, वार्ता आदि के रूप में कुछ अधिक स्थायी संपति रहती थी, परन्तु अधिकांश पत्र 10-15 पृष्ठों से अधिक नहीं जाते थे और उन्हें हम आज के शब्दों में 'विचार पत्र' ही कह सकते हैं वास्तव में दैनिक समाचार के प्रति उस समय विशेष आग्रह नहीं था और कदाचित् उन दिनों साप्ताहिक और मासिक पत्र कहीं अधिक महत्वपूर्ण थे। इन पत्रों का जनजागरण में अंत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका थी।

19वीं शताब्दी के इन 33 वर्षो का आदर्श भारतेन्दुजी की पत्रकारिता थी। 'कविवचन सुधा' (सन् 1867), 'हरिश्चंद्र मैगजीन' (सन् 1874), 'श्री हरिश्चंद्र चंद्रिका' (सन् 1874), 'बालबोधनी' (स्त्री जन की पत्रिका, सन् 1874 ई0) के रूप में भारतेन्दु ने इस दिशा में पथ-प्रदर्शन किया था। उनकी टीका-टिप्पणियों से अधिकारी तक घबराते थे और 'कविवचन सुधा' के 'पंच' पर रूष्ट होकर काशी के मजिस्ट्रेट ने भारतेन्दु के पत्रों को शिक्षा विभाग में लेना तक बंद करा दिया था।'[(6)] इसमें संदेह नहीं कि पत्रकारिता के क्षेत्र में भारतेन्दु पूर्णतया निर्भीक थे और उन्होंने अन्य लोगों को नए-नए पत्रों के लिए प्रोत्साहन दिया। यहिन्दी प्रदीपय, 'भारत जीवन' आदि अनेक पत्रों का नामकरण भी उन्होंने ही किया था। उनके युग के सभी पत्रकार उन्हें अपना अग्रणी और आदर्श मानते थे।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र का पदार्पण हिन्दी पत्रकारिता की एक युगांतकारी घटना थी। उनके आगमन से हिन्दी पत्रकारिता को विकसित होने का अवसर प्राप्त हुआ। उनके असाधारण योगदान को देखते हुए हिन्दी पत्रकारिता के 1867 ई0 से 1900 ई0 तक के कालखंड को भारतेन्दु युग के नाम से जाना जाता है। इस काल में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका आधुनिक हिन्दी साहित्य व पत्रकारिता के पुरोधा भारतेन्दु हरिश्चंद्र की ही रही है। उन्होंने न केवल स्वयं समाचार पत्रों व पत्रिकाओं का संपादन किया, बल्कि लेखकों व संपादकों का ऐसा समूह भी तैयार किया जिसने हिन्दी पत्रकारिता और साहित्य के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान के साथ-साथ राष्ट्रीय चेतना जगाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस समूह को भारतेन्दु मंडल के नाम से जाना जाता है।

* सहायक प्रोफेसर (हिन्दी विभाग) सूरत पाण्डेय डिग्री कॉलेज, गढ़वा, नी.पी.विश्वविद्यालय, मेदिनीनगर (झारखण्ड) भारत

'भारतीयों की समस्याओं के प्रति ब्रिटीश अधिकारियों का ध्यान आकृष्ट करने और भारतीयों में राष्ट्रीयता जागृत करने के लिए सन् 1885 में अंग्रेजी त्रैमासिक पत्र - 'हिन्दोस्थान' का प्रकाशन आरंभ किया गया। बाद में हिन्दी और उर्दू में भी समाचार प्रकाशित होने लगे। जब यह हिन्दी भाषी क्षेत्र का प्रथम दैनिक हिन्दी पत्र बना, तो पंडित मदन मोहन मालवीय इसके संपादक बने। अपने 27 वर्षो के प्रकाशन काल में इस पत्र का संपादन बालमुकुन्द गुप्त, प्रताप नारायण मिश्र जैसे यशस्वी पत्रकारों ने भी किया। इसमें राष्ट्रीय विचार-धारा, देश की राजनीतिक गतिविधियों, सामाजिक समस्याओं, भारतीय संस्कृति, हिन्दी भाषा और साहित्य सहित भिन्न-भिन्न विषयों पर आलेख प्रकाशित होते थे। इसने कांग्रेस की विचार-धारा का समर्थन किया और जनता को भी स्वतंत्रता संग्राम के प्रति जागरूक करने और काँग्रेस की नीतियों का जनता में प्रचार-प्रसार में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही।'[7]

पहले के समाचार-पत्रों का उद्देश्य पाठकों की चेतना का उन्नयन था, भले ही पत्र का रूप सुरूचिपूर्ण हो या न हो। आज के पाठकों के नेत्रों को आकर्षक लगने के लिए पत्रों को सजाना-सँवारना पड़ता है। पहले हैन्ड प्रेस, पुन: ट्रेडील मशीन, फिर सिलिन्डर और रोटरी मशीन आई अब तो फोटो ग्रेन्योर, रोटो ग्रेन्योर, फोटो कंपोजिंग एवं ऑफसेट भी पुराने पड़ चुके हैं, तथा उपग्रह कम्प्यूटर के कारण पत्रों के मुद्रण शैली बदल चुकी है। संप्रेषण, मुद्रण, प्रसारण के क्षेत्र क्षण-प्रतिक्षण हो रहे अविष्कारों, उपग्रहों, कम्प्यूटर बैंकों, लेजर किरणों एवं अंतरमहाद्वीपीय प्रतिकृति ने वस्तुत: पत्रकारिता जगत में अद्भुत क्रांति मचा दी है।

'पहले पत्रकारिता का अर्थ-समाचारों का संकलन तथा प्रसारण था, लेकिन जैसे-जैसे समाचार पत्रों में समाचार प्रेषण, मुद्रण और वितरण के साधनों में वैज्ञानिक, प्राविधिक और शिल्पगत उन्नति होती गयी, पत्रकारिता का क्षेत्र विकसित होता गया और विस्तृत होता गया। अब छपने वाला लेख-समाचार तैयार करना ही पत्रकारिता नहीं रह गयी थी, बल्कि आकर्षक शीर्षक देना, पृष्ठों का आकर्षक सजावट-बुनावट, जल्दी से जल्दी समाचार देने की होड़ देश-विदेश के प्रमुख प्रतिष्ठित उद्योग धंधों, व्यापार घरानों से विज्ञापन प्राप्त करने की चतुराई, सुंदर छपाई और सबसे पहले पाठक के हाथ में अपना समाचार-पत्र पहुँचा देने की तत्परता। ये सब पत्रकार कला के अंतर्गत आ गए।'[8]

'भारतीयों की सामाजिक व राजनीतिक दशा का यर्थाथ चित्रण और ब्रिटीश सरकार की दमनकारी नीतियों का साहसपूर्वक विरोध करना तत्कालीन परिस्थितियों में एक असाधारण कार्य था। इसके अलावा पाठकों की अनभिज्ञता और अरूचि के बावजूद अपने आदर्शो के कारण इस युग की पत्रकारिता ने विपरीत परिस्थितियों में भी अनुकरणीय कार्य कर के पत्रकारिता के क्षेत्र में नवीन आयाम स्थापित किए। तत्कालीन पत्रकारों ने कर्मठता, निर्भिकता और स्पष्टवादिता जैसे गुणों द्वारा विपरीत परिस्थितियों में भी राष्ट्रीय चेतना के दिशा में निरंतर उल्लेखनीय कार्य किया, जो आज भी हमारे लिए प्रेरणा-स्तोत है। इस युग की पत्रकारिता को राष्ट्रीय चेतना के विकास की नीवं कहा जा सकता है, जिस पर सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक व राजनीतिक पुर्नजागरण तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए उपयुक्त वातावरण निर्मित करने का माहौल बना।'[9]

निष्कर्ष - भारतेन्दु युगीन पत्रकारिता में राष्ट्रीय चेतना का स्वर ही सर्वोपरि था। साहित्य और पत्रकारिता के माध्यम से जनमानस को एक नवीन दृष्टि प्रदान करने और नवजागरण लाने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही। इस युग में राष्ट्रीयता की भावना के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार किया गया है जिसे परवर्ती पत्रकारों ने आगे बढ़ाया। सामाजिक व राजनीतिक सुधार के साथ-साथ सांस्कृतिक पुर्नजागरण में भी इन पत्रकारों की सराहनीय भूमिका रही। राष्ट्रीय चेतना के इस युग में पत्रकारों का उद्देश्य किसी भी प्रकार की व्यवसायिक पत्रकारिता को प्रश्रय देना नहीं था, बल्कि पत्रकारिता की यही दिशा में सदुपयोग करते हुए जनमानस में वह जोश एवं उमंग भरना था, जिसके द्वारा ब्रिटीश शासन के खिलाफ वह स्वयं खड़े होने का साहस कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचंद्र शुक्ल
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ0 नागेन्द
3. भारतेन्दु की गद्य भाषा - डॉ0 ब्रज किशोर पाठक
4. हिन्दी पत्रकारिता : इतिहास एवं स्वरूप - शिव कुमार दुबे
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचंद्र शुक्ल
6. साहित्यिक निबंध - डॉ0 गणपति चंद्र गुप्त
7. भारतेन्दु युगीन पत्रकारिता और राष्ट्रीय चेतना - डॉ0 आर.पी.वर्मा
8. हिन्दी पत्रकारिता : विविध आयाम - डॉ0 वेद प्रताप वैदिक
9. भारतेन्दु युगीन पत्रकारिता और राष्ट्रीय चेतना - डॉ0 आर.पी.वर्मा

****

अण्णा भाऊ साठे : एक दलित साहित्यिक

प्रा. डॉ. हेमचंद सोमाजी दुधगवळी *

प्रस्तावना - तुकाराम भाऊराव साठे हे अण्णा भाऊ साठे म्हणून ओळखले जाणारे अण्णा भाऊ एक मराठी समाजसुधारक, लोककवी आणि लेखक होते. साठेंचा जन्म 1 ऑगस्ट 1920 रोजी सांगली जिल्ह्यातील वाळवा तालुक्यातील वाटेगाव या गावी झाला. त्यांच्या वडीलांचे नाव भाऊराव साठे व आईचे नाव वालुबाई साठे होते. साठे हे शाळेत शिकलेले नाही, केवळ दीड दिवस ते शाळेत गेले नंतर तेथील सवर्णाद्धारे होणाऱ्या भेदभावामुळे त्यांनी शाळा सोडून दिली. त्यांनी दोन लग्न केलीत, त्यांची पहिली पत्नी कोंडाबाई साठे तर दुसरी जयवंता साठे ह्या होत. त्यांना एकूण तीन अपत्ये होती- मधुकर, शांता आणि शकुंतला.

साठे एका मांग (दलित) समाजामध्ये जन्मलेले व्यक्ती होते. त्यांचे लेखन सामाजिक आणि राजकीयदृष्ट्या कृतिशीलतेवर आधारलेले होते. साठे हे मार्क्सवादी-आंबेडकरवादी प्रवृत्तीचे होते, सुरुवातीला त्यांच्यावर साम्यवादाचा प्रभाव होता पण नंतर ते आंबेडकरवादी झाले. अण्णाभाऊ साठे यांचे साहित्य हे परिवर्तनाला दिशा व चालना देणारे ठरले. महाराष्ट्राच्या एकूणच जडणघडणीत आणि परिवर्तनात या साहित्यिकाचे योगदान हे महत्त्वपूर्ण ठरलेले आहे. अजरामर अशा या साहित्यिकाने उपेक्षितांच्या अंतरंगाचा वेध घेण्याचा प्रयत्न केला. उपजत बुद्धिवादी म्हणून त्यांच्या साहित्याचा धांडोळा घेता येतो. आजही मोठ्या संख्येने विद्यार्थी व अभ्यासक त्यांच्या या साहित्याचा संशोधनात्मक अभ्यास करताना दिसतात.

साठे पहिल्यांदा कॉ. श्रीपाद अमृत डांगे यांच्या कम्युनिस्ट विचारसरणीने प्रभावित झाले. 1944 मध्ये दत्ता गवाणकर आणि अमर शेख या शाहिरांच्या सोबत त्यांनी लालबावटा कला पथक स्थापन केले. याद्धारे त्यांनी अनेक सरकारी निर्णयांना आव्हान दिले होते. ते 1940 च्या दशकामध्ये कार्यरत राहिले आणि तेविया अब्राम्स यांच्यानुसार, भारतातील साम्यवादाच्या आधी स्वातंत्र्याच्या नंतरची 1950 च्या दशकातील सर्वात रोमांचक नाटकीय घटना होती. भारतीय स्वातंत्र्यानंतर उच्चवर्णीयांचे भारतावरील शासन त्यांना मान्य नव्हते म्हणून त्यांनी 16 ऑगस्ट 1947 रोजी मुंबई येथे वीस हजार लोकांचा मोर्चा काढला आणि त्या मोर्च्यातील घोषणा होती, ये आझादी झूठी है, देश की जनता भूखी है! इंडियन पीपल्स थिएटर असोसिएशनमध्येही ते एक महत्त्वपूर्ण व्यक्तिमत्त्व होते, जी भारतीय कम्युनिस्ट पक्षाची एक सांस्कृतिक शाखा होती. आणि संयुक्त महाराष्ट्र चळवळीमध्ये, ज्याने भाषिक विभागातून वेगळे मराठीभाषी राज्य (बॉम्बे राज्य) निर्माण करण्याची मागणी केली होती.

साठे नंतर डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या शिकवणुकींना अनुसरत दलित कार्याकडे वळले आणि दलित व कामगारांच्या जीवनातील अनुभवांना प्रकट करण्यासाठी त्यांच्या कथांचा वापर केला. इ.स. 1958 मध्ये, बॉम्बेमध्ये स्थापन केलेल्या पहिल्या दलित साहित्य संमेलनात आपल्या उद्घाटन भाषणात त्यांनी म्हटले की, पृथ्वी ही शेषनागाच्या मस्तकावर तरलेली नसून दलित व कामगार लोकांच्या तळहातावर तरलेली आहे. यातून त्यांनी जागतिक संरचनांमध्ये दलित आणि कामगार वर्गाचे महत्त्व स्पष्ट केले. या काळातील बहुतांश दलित लेखकांच्या विपरित, साठेंचे कार्य बौद्ध धमएिवजी मार्क्सवादाच्या प्रभावाखाली होते.

लेखन प्रवास : अण्णाभाऊ साठेंनी तीस कादंब-या तसेच जवळ जवळ अडीचशे ते तीनशे कथा लिहिल्या. त्यांचे साहित्य केवळ मराठी भाषेपुरतेच मर्यादित न राहता चौदा भारतीय भाषात तसेच जर्मन, इंग्रजी, झेक, पोलीश, रशियन इत्यादी परकीय भाषात भाषांतरीत झाले आहे. त्यांचे साहित्य जात, धर्म, देश, भाषा इ. बंधनांच्या पलीकडे पोहोचले आहे असे म्हटल्यास वावगे ठरणार नाही.

त्यांच्या साहित्यात संघर्ष विद्रोह प्रकर्षाने जागोजागी जाणवतो. त्यांची पात्रे शोषित दलित जनतेची दु:खे वाचकांपर्यंत वास्तवपणे पोहोचवतात. त्यांच्या निळू मांग, मकुल मुलाणी, भोमक्या, फुला, नसरू, दादा न्हावी या पात्रांनी साऱ्या महाराष्ट्राला वेड लावले झपाटून टाकले.

समाजातील दलित शोषित जनतेने जात-पात, धर्म, मान-पान यांचा त्याग करावा व एक समतेवर आधारीत समाज निर्माण करण्यात पुढाकार घ्यावा असे अण्णाभाऊंना प्रकर्षाने वाटत होते.

अण्णाभाऊंनी विविध साहित्य प्रकार हाताळले. कथा, कादंबऱ्या, पोवाडे, लावण्या, लोकनाटये, पदे, गीते अशी विविध क्षेत्रे त्यांनी सहजगत्या पादाक्रांत केली. आपल्या साहित्यातून शोषण, अन्याय, अत्याचाराला विरोध करणे हेच त्यांनी ध्येय मानले व मानवी वृत्ती, प्रवृत्तीचे वास्तव दर्शन वाचकांना घडविले. शब्दांना अंगाराचे रूप देऊन दलितांच्या निर्जीव मनाला चेतवत अण्णाभाऊ मराठी साहित्यातील अढळ पदावर विराजमान झाले आहेत.

समीक्षा : अनेक नामवंत साहित्यिकांच्या वाट्याला त्यांच्या हयातीत उपेक्षाच आली. जशी महात्मा जोतीराव फुले यांच्या वाङ्मयाची त्यांच्या काळात उपेक्षा झाली, तशीच उपेक्षा अण्णाभाऊ साठे यांचीही झाली. अण्णाभाऊंचे साहित्य रूपवादी, रंजनपर, परधार्जिणे आणि भडक आहे, ते साहित्यबाह्य प्रेरणेवर आधारलेले आहे अशी टीका झाली. मराठी कादंबरीचे शतक लिहिणाऱ्या कुसुमावती देशपांडे यांनी तर कोण हे अण्णाभाऊ साठे? असा प्रश्न केला होता. होय अण्णाभाऊ सामाजिक बांधिलकी मानणारे, समाजपरिवर्तनाचे शस्त्र हाती घेऊन लेखन करणारे साहित्यिक होते. कम्युनिस्ट चळवळीशी त्यांचा जवळून संबंध होता. पण सर्वसामान्य कष्टकरी, दलित, उपेक्षित आणि धर्मव्यवस्थेने हक्क नाकारलेले स्त्री-पुरुष हे त्यांच्या साहित्याच्या

* सहयोगी प्राध्यापक, शरदराव पवार कला व वाणिज्य महाविद्यालय, गडचांदूर, ता. कोरपना, जि. चंद्रपूर (महा.) भारत

केंद्रस्थानी होते. समीक्षकांना त्यांचे साहित्य प्रचारकी, रंजनपर वाटले असेल, पण हजारो वाचकांनी त्यांच्या कथा-कादंबऱ्यांची अक्षरशः पुनःपुन्हा पारायणे केली. त्यांच्या साहित्यातून प्रगट झालेली त्यांची सर्वसामान्य माणसांविषयीची आंतरिक तळमळ व त्यांच्या सुखदु:खाचे चित्रण करण्याची ओढ वाचकांच्या मनाला भुरळ घालत असेल.

अण्णाभाऊ साठे यांच्य लेखनात अद्भुतता, अतिशयोक्ती, अतार्किकता आहे, पण त्यात तेवढेच नाही त्यातून जीवनातील विदारक वास्तवही प्रगट झाले आहे. लोककथेतील अद्भुतता, अतिशयोक्ती मानवी मनाला भुरळ घालते. पण त्यातून प्रगट झालेले जीवनातील तत्तवज्ञान व वास्तवाचे दर्शन त्या मनाला अंतर्मुख करून विचार करायला लावते. रंजन करता करता व्यापक जीवनदर्शन घडविण्याचे सामर्थ्य लोककथेत असते. लोकपरंपरेतील मौखिक साहित्याचे वैशिष्ट्य अण्णाभाऊ साठे यांच्या कथा-कादंबऱ्यांमधून कलात्मक रूप घेऊन आविष्कृत झालेले आहे. या संदर्भात त्यांची स्मशानातील सोनं ही कथा लक्षात घेता येईल. गाव सोडून मुंबईला पोट भरण्यासाठी गेलेला भीमा दगडाच्या खाणीत काम करीत असतो. पण ती खाण अचानक बंद होते. उपाशी असलेला भीमा स्मशानातून-प्रेतातून सोने शोधण्याचे काम सुरू करतो आणि एका रात्री भीमा पुरलेले प्रेत उकरत असताना कोल्ही-लांडग्यांचा प्रेतावर हल्ला होतो. भीमा आणि त्या हिंस्र प्राण्यात झुंज सुरू होते, त्या झुंजीचे अद्भुत चित्रण अण्णाभाऊ करतात. त्या झटापटीत प्रेताच्या जबड्यात भीमाचा हात अडकून त्यांच्या हाताची बोटे तुटतात. आता बंद पडलेल्या खाणीचे काम सुरू होते, पण काम करणाऱ्या भीमाच्या हाताला बोटे नसतात. पोट जाळण्यासाठी भीमाने केलेल्या घनघोर लढाईचे वर्णन अण्णाभाऊंनी समर्थपणे केले आहे. भुकेच्या तीव्रतेचे भयानक दारिद्याचे वास्तव कथेत आहे. अशा प्रकारच्या अनेक कथांमध्ये अद्भुत आणि वास्तव एकाचवेळी अवतरते. हे अण्णाभाऊंनी मौखिक साहित्याच्या परिचयातून आत्मसात केले आहे.

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अण्णाभाऊंचा संदेश (विनिमय पब्लिकेशन्स)
2. अण्णा भाऊ सांगून गेले (विलास रणसुभे)
3. अण्णा भाऊ साठे (मराठी कवी) - लेखक: बजरंग कोरडे, अनुवाद : विलास गिते, प्रकाशन : साहित्य अकादमी
4. अण्णा भाऊ साठे (बालवाङ्मय, लेखक - बाबुराव गुरव)
5. अण्णा भाऊ साठे (हिंदी, प्रा. रतनलाल सोनग्रा)
6. अण्णा भाऊ साठे (डॉ. संजीवनी सुनील पाटील)
7. अण्णा भाऊ साठे - चरित्र आणि कार्य - विजयकुमार जोखे, नालंदा प्रकाशन
8. अण्णा भाऊ साठे विचारधन (विठ्ठल साठे)
9. अण्णाभाऊ साठे व्यक्ती आणि वाङ्मय (प्रा.डॉ. अंबादास सगट)
10. अण्णा भाऊ साठेलिखित फकीरा ची समीक्षा (डॉ. श्रीपाल सबनीस)
11. क्रांतिकारी अण्णाभाऊ साठे (प्रा. गौतम निकम)
12. समाज सुधारक लोकशाहीर अण्णा भाऊ साठे (संपादित, संपादक - ॲड. महेंद्र साठे)

****

The Right of Liberty & Equality and Challenges

Mr. Bijay Kumar Yadav* Dr. Gurpreet Singh**

Introduction - Each school of thought defined rights and recognition in it's own way. The *Universal Declaration of Human Rights* in 1948 cemented the legitimacy of rights forever in a way.

The main theories of rights have been:

1. Theory of Natural Rights
2. Theory of Legal Rights
3. Historical Theory of Rights
4. Idealist/Moral Theory of Rights
5. Social Welfare Theory of Rights
6. Recent Liberal Theory of Rights
7. Marxist Theory of Rights.

The *Theory of Natural Rights* was the first plea for rights in the western world on the basis that naturally by birth man is entitled to some rights and there are no requirement of birth, family position, social position, wealth etc that can be imposed. John Locke, the classic liberal had declared all men are born with some inherent rights and 'God gives them to his children just as he gave them arms, legs, eyes, and ears'.

The social contract theorists like Hobbes, Locke, and Rousseau argued that man had these basic rights before the origin of the State and he surrendered some of them to a superior authority, i.e., civil society to safeguard his other rights from encroachment to obtain the benefits of community living. Hobbes called the right to life a natural right, Locke the rights to life, liberty and property whereas Rousseau said that liberty and equality are gifts of nature. They argued the individual cannot surrender these rights to the state.

The theory of natural rights came under attack and disapproval of later thinkers. The great utilitarians did not find the idea that man had rights before the advent of and prior to the relationship with the state. They argued rights can only be conferred by the law. English political and legal thinker Edmund Burke argued rights can only be on the basis of customs and sentiments of the society in which an individual lives.

The *Theory of Legal Rights* was propounded by the legal philosophers like Bentham, who argued all rights of man are derived from law and law itself is based upon utility. Law and rights he said are simply two aspects of something, which is essentially one: law the objective aspect and right the subjective. The state draws up and lays down a bill of rights and so the rights are not prior to the state but from the existence of the state itself. It is also the legal framework of the state that guarantees rights. It is again the state which changes the content of rights whenever it wants. But they accepted that rights may not necessarily be the creation of the state but they become rights only when they are enforced by the state.

The *Historical Theory of Rights* has its origin in the writings of Savigny and Puchta in Germany, Sir Henry Maine and Edmund Burke in England and James Carter in the USA. The position taken by these thinkers was that all rights are derived from the character of the state and the law, which are in turn basically entirely historical in nature. They are all a product of history. Burke argued for instance that the French Revolution gave rights to the French people.

The *Idealist/Moral Theory of Rights* holds that the basis of all rights is morals and neither nature's actions, nor law, nor customs etc. Every individual has a moral self and the need to develop his personality and rights provide the environment to help man in his journey of moral upliftment. Since everybody in society has the same aim of developing his personality it implies that rights arise only in the context of a society and the rights of the individual are to be in harmony with those of others. So the individual's rights are a part of serving the common good as well. Rights are recognised by the society and enforced by the state and so there is no question of rights without the state.

The *Social Welfare Theory of Rights* was a combination of the various theories of rights that came before it like those that were based on natural rights, legal, ideal or historical. This theory was developed by the positive liberals and to support their prescription of a welfare state. The major contributors were T.H. Green, G.D.H. Cole, L.T. Hobhouse, Harold Laski, Ernest Barker etc. Their central proposition was that a law, custom, natural right etc should all yield to what is socially useful or socially desirable.

In the last quarter of the twentieth century there has been a new wave of *Liberal Theories of Rights* dominated

*Research Scholar (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Supervisor (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

by thinkers like John Rawls and Robert Nozic who in turn have inspired other writers in the same tradition. While Rawl was clearly a positive liberal in the Keynesian tradition. Robert Nozic was a in the neo-liberal tradition that is really a reincarnation of the early classic liberals in many ways. So while Nozic argued for unbridled free markets and free trade capitalism, and a minimal state, Rawls argued for the welfare state concept while preserving the capitalist system.

The *Marxist Theory of Rights* would be a bit of a misnomer because the Marxists never really attempted to propagate a separate theory of rights but offered a great critique of the liberal 'bourgeois' concept of rights. Liberty, equality and justice are the prominent value in normative political theory. The relationship between liberty, equality and justice can be understood only with reference to a particular school of thought. Different school of thought not only disagree on their relationship, they also disagree on the meaning of these concepts. Liberty can be understood in terms of empowerment and equality can be understood in terms of development.

LIBERTY Liberals support the idea of **equality** before law and **equality** of opportunity. ... Attempts to establish social and economic **equality** by the state reduces **liberty**. According to Nozick in his entitlement theory of **justice**, it could be injustice if state interfere in the life of a person for the sake of social **justice**.

The word liberty is derived from the word *liber* which means 'free'. We all want to be free and have as much freedom as possible. But what exactly to be free means or should mean. Should there be restrictions on freedom and what and how much? . What if the freedoms enjoyed by two people leads them to come into conflict. Such questions have been attracting thinkers from the earliest times. Almost all liberal thinkers commented on liberty but they all brought their own flavour to it and one can't assert that there is an exact uniform view. Also this is one concept on which the views have been more philosophical and ethical than either political or political-economic. Liberties are of following types.

1. Freedom of association.
2. Freedom of belief.
3. Freedom of speech.
4. Freedom to express oneself.
5. Freedom of the press.
6. Freedom to choose one's state in life.
7. Freedom of religion.
8. Freedom of bondage and slaver

EQUALITY is a polity in which there is the same law for all, a polity administered with regard to **equal** rights and **equal** freedom of speech, and the idea of a kingly government which respects most of all the freedom of the governed. Along with the **right** to life, the **right** to **liberty** is one of the most fundamental human **rights**. The **right** to **liberty** is the **right** of all persons to freedom of their person – freedom of movement and freedom from arbitrary detention by others. No-one shall be subjected to arbitrary arrest or detention.

Equality is a somewhat modern concept. Everybody else was there to serve the king and the church. In our country the *brahmin* was at the top of the heap and had the sole right to lay down the ultimate wisdom on all matters, the *kshatriya* had the sole right to armed military might and the *vaishya* enjoyed a monopoly of making money and accumulating wealth through trade and money lending. The *dalit* or the shudra had no superior rights, only a monopoly similarly, on all the inferior rights and jobs of society. Equality has mainly four dimensions – *legal, political, economic and social*.

Indian constitution reflects the approach of liberals. Rights of part 3 are automatically enforceable. In part 3, we have enforceable fundamental rights. In part 4, social and economic rights are present. Indian constitution recognises the relationship between political and economic democracy.It is a big challenge for the the Nation to protect these rights.

Reference:-

1. Personal Research.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

संस्कृत साहित्य में काव्य बोध का चिन्तन

राम प्रसाद वर्मा *

प्रस्तावना – एक दृष्टि से यह काव्य का पूर्ण और व्यापक स्वरूप कहा जा सकता है। साहित्य अभिव्यक्ति के लिए कभी गद्य का माध्यम ग्रहण किया जाता है, कभी पद्य की प्रणाली और कभी गद्य-पद्य के सम्मिश्रण द्वारा यह कार्य किया जाता है। इसके अतिरिक्त नाटकीय कथोपकथन को चौथी शैली भी माना जा सकता है परंतु उसे गद्य या पद्य के विभागों में सम्मिलित किया जा सकता है। इनके अतिरिक्त साहित्य की और कोई शैली नहीं है। इसलिए यदि काव्य को गद्य-काव्य और चंपू-काव्य के तीन विभेदों में विभक्त किया जाय तो यह स्थूल रूप से अनुचित नहीं है। प्राचीन साहित्यों में ही नहीं, (पाश्चात्य) नवीन साहित्यों में भी काव्य का स्वरूप संकुचित करने की प्रवृत्तियाँ दिखाई देती है। इतिहास अथवा जीवन-चरित्र को काव्य की सीमा के बाहर रखने की चेष्टा कतिपय साहित्य-शास्त्रियों ने की है। उनके कथन ध्यान देने योग्य हैं। उनके मत के अनुसार इतिहास को काव्य की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता क्योंकि उसमें कुछ निश्चित घटनाओं का संयोग कर देने के अतिरिक्त और कुछ नहीं रहता। न तो उसमें कल्पना का पुट देकर भावनाओं को उच्छ्वसित करने की चेष्टा की जा सकती है और न अलंकारों का विधान कर प्रसंगों को रसमय बनाया जा सकता है। इतिहास के भिन्न-भिन्न पात्रों में व्यक्तित्व की वह स्पष्टता नहीं रह सकती जो काव्य में सुन्दर प्रतिभा का काम कर सके।

समस्या – इस शोध पत्र में काव्य के पठन-पाठन की समस्या विद्यमान है। इससे समाज में काव्य के प्रति जनजागरूकता का अभाव दिखाई दे रहा है। व्यक्ति में असीम परिवर्तन की लहर है।

उद्देश्य – संस्कृत के साहित्यशास्त्री इसे ही इस प्रकार कहते हैं कि जिस सामग्री से रमणीय अर्थ का प्रतिपादन हो सकता है उसका इतिहास में आभाव रहता है। इसी प्रकार'कल्पना', 'भावना', 'अलंकार', 'रस', 'व्यक्तित्व', 'सुन्दर', 'रमणीय' अर्थ आदि काव्यविवेचन के लिए अत्यंत अनिवार्य शब्दों का प्रयोग करते हुए भी- ये ही वे शब्द हैं जिनसे काव्य का वास्तविक रहस्य प्रकट हो सकता है-वे साहित्यशास्त्री तथा समीक्षक उन शब्दों वास्तविक अर्थ तक नहीं पहुँचते और उनका विचारपूर्ण शास्त्रीय प्रयोग नहीं कर पाते। शब्दों की इस अस्पष्ट और भ्रामक धारणा के कारण वे जब कभी कुछ तथ्यपूर्ण बात भी कहते हैं तब भी विचार-विभ्रम ही उत्पन्न होता है और जब कभी वे काव्य के अत्यंत मार्मिक उद्घाटन की सीढ़ी तक पहुँच जाते हैं तब वहाँ से उनका फिसलकर गिरना वास्तव में दु:खजनक होता है।

रस गंगाधर में कहा गया है कि रमणीय अर्थ का प्रतिपादक शब्द काव्य है। अर्थ की रमणीयता के अन्तर्गत कुछ विद्वान् शब्द की रमणीयता भी स्वीकार करते हैं। प्रश्न यह है कि रमणीयता से किस विशेष तत्व का बोध होता है जिसकी हम एक निश्चित परिभाषा कर सकें। पाश्चात्य काव्य की व्याख्या करनेवालों ने कहा- 'काव्य के अन्तर्गत वे ही पुस्तकें आनी चाहिए जो विषय तथा उसके प्रतिपादन की रीति की विशेषता के कारण मानव हृदय को स्पर्श करनेवाली हों और जिनमें रूप-सौष्ठव का मूल तत्व तथा उसके कारण आनन्द का जो उद्रेक होता है उसकी सामग्री विशेष प्रकार से वर्तमान हो।' व्याख्याकारों का आशय अर्थ की रमणीयता से स्पष्ट ही है। रमणीयार्थ से रस-गंगाधरकार का तात्पर्य भावात्मक और रसात्मक काव्य से है। उत्तम रसात्मक काव्य में रस होता है, वाच्य लक्ष्य नहीं। इसलिए काव्य की रसात्मकता के साथ उसका व्यंजनाप्रधान अथवा ध्वन्यात्मक होना भी स्वीकार किया गया है। रस के साथ ध्वनि संप्रदाय भी आ मिला। क्रमश: नीति, गुण, वक्रोक्ति और अलंकार आदि के संप्रदाय भी उठ खड़े हुए। सभी अपनी व्याख्या मे काव्य के रमणीयार्थत्व का प्रतिपादन करते हैं। किंतु संप्रदाय-भेद और दृष्टिभेद से रमणीयार्थत्व के स्वरूप में भी बहुत से भेद हो गये, जिन्हें सूक्ष्म दृष्टि से देखना और जिनका ऐतिहासिक अध्ययन करना साहित्य के प्रेमियों और अन्वेषकों के लिए आवश्यक हो जाता है। 'रमणीयार्थ' को हम काव्य का एक अनिवार्य उपकरण तो मान सकते हैं किन्तु 'रमणीयार्थ' शब्द से जो अनेक आशय अनेक आचार्यो ने उद्‌भवित किये हैं उनका भी हमें परिचय होना चाहिए। इसी रमणीयता के मोह में पड़कर कुछ कवि या ग्रंथकार ऐसे भी हो गये हैं, जिन्होंने वैद्यक और ज्योतिष के ग्रन्थों को भी रमणीय बनाने का बीड़ा उठाया था। उन्होंने इस प्रकार की रचना इस उद्देश्य से की थी कि लोग उनके ग्रन्थों को चाव से पढ़ें। लोलिंबराजकृत वैद्य-जीवन और वैद्यावतंस पुस्तकें ऐसी ही हैं। ये दोनों ही संस्कृत भाषा में हैं। ज्योतिष शास्त्र की भी दो-एक पुस्तकें इसी ढंग की हैं। परन्तु प्रश्न यह है कि उनमें कितनी वास्तविक रमणीयता मिलती है और मिलती है और क्या उन ग्रन्थकारों की वह चेष्टा अनुचित नहीं थी ? न तो ज्ञान का प्रत्येक क्षेत्र रमणीयता का क्षेत्र बनाया जा सकता है और न वैद्यक के ग्रन्थ में कविता पुस्तक-सी रमणीयता लायी ही जा सकती है। जो विषय शास्त्रीय बुद्धि की अपेक्षा रखते हैं और जिनसे मनुष्य के शारीरिक स्वास्थ्य और रोगोपचार सा सम्बन्ध है उन्हें रमणीय बनाने का प्रयास विशेष रूप से कृत्रिम कहा जाना चाहिए। सारांश यह कि विविध विषयों में रमणीय अर्थ का प्रतिपादन विविध मात्रा में योग्य अथवा अयोग्य होता है और 'रमणीय अर्थ' स्वयं ही एक सापेक्षिक शब्द है। तथापि इतना तो अवश्य ही प्रकट है कि वह काव्य का एक आवश्यक उपकरण है।

समाधान – रमणीय अर्थ के प्रतिपादन के लिए संस्कृत में अलंकारों की विशेष रूप से योजना की गयी है और रस तो काव्य की आत्मा ही माना गया है। अलंकारों की प्रयोजन उस अंगविशेष को अधिक आकर्षक बना देना है जिसपर वह धारण किया जाय। देखनेवालों की आँखें उस अंग-

*संस्कृत विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्याल, रीवा (म.प्र.) भारत

विशेष में गड़ जायँ, इसी प्रयोजन से अलंकारों की सार्थकता है। काव्य में अनेक-अनेक अर्थालंकार और शब्दालंकार बनाये गये हैं। जिसमें वे पाठकों का ध्यान उस वर्णन विशेष की ओर आकर्षित कर दें और उनकी मानस-आँखों को उसमें गड़ा दें। इसका परिणाम यह होना चाहिए कि इससे चित्त किसी प्रबल मनोवेग से चमत्कृत हो जाय और काव्य रसमय होकर उसके लिए आस्वाद्य बन जाय। इस प्रकार अलंकार रस के सहायक ही ठहरते हैं किन्तु धीर-धीरे उक्त काव्यालंकारों की तालिका बना दी गयी और रस की एक पद्धति तैयार कर ली गयी। फलत: अलंकार और रस के अलग-अलग सम्प्रदाय बन गये। यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो अलंकारों की कोई गणना नहीं की जा सकती और न सीमा बाँधी जा सकती है। कभी-कभी तो अलंकार काव्य -कामिनी के लिए भारस्वरूप बन जाते हैं जिससे उसकी स्वच्छ नैसर्गिक सुन्दरता तिरोहित हो जाती है। यह भी देखा जाता है कि युगविशेष के ग्रन्थकार जिन अलंकारों को सुरूचि के साथ सजाते हैं, दूसरे युग के लेखक उन्हें हेय समझते हैं। परिपाटी के अनुसार जिस प्रसंग में जो अलंकार शोभा के आगार और काव्यरस के सहायक थे, समय और रूचिभेद से रस में बाधक बन गये। इसलिए अलंकारों की इयत्ता क्या है यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। यही बात रसों के लिए भी कही जा सकती है। कथन की कोई शैली, भावों की कोई उड़ान जब हृदय की घुंडी खोल देती है और किसी प्रबल मनोवेग से चित्त चमत्कृत हो उठता है तब रस की निष्पत्ति होती है। किन्तु देखा जाता है कि जो भाव-योजना एक देश के लिए बड़ी ही प्रबल और रसमयी है वह दूसरे देश के लिए बहुत ही निर्बल और नीरस होती है। इस प्रकार जो सिद्ध कवि देश, युग तथा पात्रादि का ध्यान रखकर अलंकार तथा रस की योजना करते हैं उनकी काव्य-रचनाएँ बड़ी मोहक और सफल होती हैं। तथापि रस और अलंकार सम्बन्धी धारणाओं और प्रयोग में देश और काल के भेद से बहुत से भेद हो गये हैं।

मालविकाग्निमित्र निर्विवाद रूप से कालिदास की प्रथम नाटकीय रचना इसकी प्रस्तावना में उन्होंने भास, सौमिल्ल और कविपुत्रों के रहते हुए एक नया रूपक प्रस्तुत करने को घृष्ठता के विषय में क्षमा-याचना की है। विकमोर्वशी में भी उन्होंने कुछ आशंका व्यक्त की है, जो शकुन्तला में दृष्टिगोचर नहीं होती। अन्य दो रूपकों की अपेक्षा इस रूपक में कवि के गुणों की स्पष्टतया बहुत कम अभिव्यक्ति हुई है, परंतु कर्तृत्व की अभिन्नता निर्विवाद है। विल्सन की शंकाओं के विरूद्ध वेबर ने इसे बहुत पहले सिद्ध कर दिया था।

निष्कर्ष - यह रूपक पाँच अंकों का नाटक है, जो संभवत: उज्जयिनी में वसंतोत्सव के समय खेला गया था। इसमें उसी प्रकार का श्रृंगारिक चित्रण है जैसा हम भास के उदयन-विषयक रूपकों में देख चुके हैं। इसकी नायिका मालविका विदर्भ की राजकुमारी है, जिसके भाग्य में अग्निमित्र की पत्नी होना बदा था। मालविका के भाई माघवसेन को उसका चचेरा भाई यज्ञसेन बंदी बना लेता है। मालविका निकल भागती है और अग्निमित्र की शरण में जाना चाहती है। परंतु उसकी राजधानी विदिशा की ओर जाते समय मार्ग में उसके अनुरक्षकों पर वनचर आक्रमण करते हैं, जो कदाचित् प्रतिद्वंद्वी विदर्भ-राजकुमार के आदेश से हुआ है। परंतु वह फिर बच निकलती है, और विदिशा पहुँच जाती है। वहाँ पर वह रानी धारिणी के महल में शरण लेती है। रानी उसे नृत्यकला में शिक्षित कराती है। संयोग से राजा मालविका का चित्र देखकर उस पर अनुरक्त हो जाता है। उससे साक्षात्कार की व्यवस्था करना सरल नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. इतिहास के लिए देखिए -CHI.i.519f.
2. शकुन्तला के पद्यों में शौरसेनी के लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं, मिलाकर द्रष्टव्य Hillebrandt मुद्राराक्षस p.iii GN 1905, p. 440
3. मालविकाग्निमित्रम् महाकवि कालिदास-चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी, पृष्ठ 5
4. कालिदास ग्रन्थावली-रामतेज पाण्डेय, वृत्त हिन्दी टीका साहित्य चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, 2006, पृष्ठ 40
5. विक्रमोर्वशीयम्-चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 35
6. रघुवंश महाकाव्य, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 51
7. मेघदूतम्, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 55
8. अभिज्ञानशाकुन्तलम् एवं अध्ययन-वंशीनाथ द्विवेदी, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 71
9. संस्कृत साहित्य का इतिहास-बलदेव उपाध्याय, शारदा संस्थान, वाराणसी 1978, पृष्ठ 52

****

Impact of GST on Indian Banking Sector

Pravinkumar M. Lonare*

Abstract - The introduction of GST would be a significant step in the reform of indirect taxation in India. Amalgamating several central and state taxes into a single tax would mitigate cascading or double taxation, facilitating common national market. It is expected that service sector will have major impact of GST than other sector. The banking sector is one of the largest services sector in India. Banking Sector plays a very important role in monetary policies of country overall frame work and the business dynamics of this sector will largely differs from other sectors. In this paper attempt has been made to know what are issues and challenges faced by Indian banking sector after implementation of GST.

Keywords - Taxation, Goods and Service Tax (GST), Indirect tax, Banking Sector, Government Policy.

Introduction - Goods and Services Tax (GST) is an indirect tax (or consumption tax) used in India on the supply of goods and services. It is a comprehensive, multistage, destination-based tax: comprehensive because it has subsumed almost all the indirect taxes except a few state taxes. Multi-staged as it is, the GST is imposed at every step in the production process, but is meant to be refunded to all parties in the various stages of production other than the final consumer and as a destination-based tax, it is collected from point of consumption and not point of origin like previous taxes.

Goods and services are divided into five different tax slabs for collection of tax - 0%, 5%, 12%, 18% and 28%. However, petroleum products, alcoholic drinks, and electricity are not taxed under GST and instead are taxed separately by the individual state governments, as per the previous tax system. There is a special rate of 0.25% on rough precious and semi-precious stones and 3% on gold.[1] In addition a cess of 22% or other rates on top of 28% GST applies on few items like aerated drinks, luxury cars and tobacco products. Pre-GST, the statutory tax rate for most goods was about 26.5%, Post-GST, most goods are expected to be in the 18% tax range.

The tax came into effect from 1 July 2017 through the implementation of the One Hundred and First Amendment of the Constitution of India by the Indian government. The GST replaced existing multiple taxes levied by the central and state governments.

Tax rates, rules and regulations are governed by the GST Council which consists of the finance ministers of the central government and all the states. The GST is meant to replace a slew of indirect taxes with a federated tax and is therefore expected to reshape the country's 2.4 trillion dollar economy, but its implementation has received criticism. Positive outcomes of the GST includes the travel time in interstate movement, which dropped by 20%, because of disbanding of interstate check posts

Impact of banking sector:

1. **Widespread number of branches; registration a hassle -** Currently, an NBFC, Banks with pan-India operations can discharge its service tax compliances through a single 'centralized' registration. However, under GST, such Banks/ NBFCs would need to obtain a separate registration for each state where they operate.

In addition to registration, compliance burden about filing of returns has also increased substantially -in terms of the periodicity of returns, number of return formats and level of details required in these returns.

2. **Input Tax Credit leveraged and de-leveraged -** Currently, Banks and NBFCs majorly opt for the option of reversal of 50% of the CENVAT credit availed against inputs and input services whereas CENVAT credit on capital goods could be availed with no reversal conditions.

Under GST, 50% of the CENVAT credit availed against inputs, input services, and capital goods is to be reversed which leaves them with a position of reduced credit of 50% on capital goods thereby increasing cost of capital.

3. **Assessment and Adjudication made bothersome -** The assessment would be done by the respective state regulators under which the respective branch is registered. Now, every registered branch of banks and NBFCs must justify its position on chargeability in the respective state and reason for utilizing input tax credit in different states. As under GST, more than one adjudicating authority will be involved, each authority may hold a different opinion on the same underlying issue. This contradiction in opinion will prolong the adjudication process. Currently, a taxpayer is adjudged by a single adjudicating authority on an issue involved. Under GST different adjudicating authority may take a different view on the same issue. Clearing up and

*Assistant Professor (Economics) Bhawabhuti Mahavidyalaya, Amgaon, Distt. Gondia (Maharashtra) INDIA

dealing with the difference of opinion provided by the different adjudicating authority would be difficult.

4. Increase in Compliance - Almost every bank and NBFC has a multi-state presence and under the GST tax regime, they have to pay taxes at the states as well as at the centre level. Hence, banks and NBFC need to obtain registration for every state where they are operating. To maintain all these, they need separate books for each separate branch to create effective control over their usage and unused input tax credit. Performing intra-state and inter-state transactions can also become a problem for the bank. This will substantially lead to an increase in compliance levels due to the rise of registration under service tax.

5. Problems related to revenue recognition under GST - Banks and NBFCs will have to face many problems related to revenue recognition as most of their services are related to different sectors and segments, some of which are mentioned below.

6. Financial Services Related to Account - In the era of digitalization and centralization, anyone such as professionals, manufacturers, businessmen and others can get different services anywhere in India, and there can be a high probability that they will shift to a new location. This will cause problems due to a different address. On the other hand, branches provide many services related to payment and other goods, within states and outside the states, to determine the location where these services are provided will not be an easy task.

7. Financial Services not related to Account - Providing financial services to those who are running a business from a remote area and managing a bank account from another location. Also, will cause some problems because the location of the service provider is different from the operator location.

8. Other

1. Under GST, banks are expected to obtain individually separate registrations for every branch set up across the country. This is mainly pushing the banking employees from their comfort zones as there was single centralized registration concept for all the banks till now. This problem becomes even more complex being directly proportional to the enormous number of banks and their respective branches that exist in India.
2. With the advent of GST, the internal, as well as the external monetary transactions between two separate banks, is no longer free. This now comes with a small amount we are expected to pay at the time of a financial transaction.
3. In the name of GST, we now have two types of taxes – Central GST controlled by the central government and the State GST which is controlled by the state itself. With such types of GST, the entire protocols of the banking sector are changed in terms of the service they provide to their customers.
4. Point of supply identification offered to each customer holding an account in a bank, now have the luxury of transferring any cost to almost any part of India irrespective of the location of the bank the person has the account in.
5. Previously input tax credit was not allowed according to the CENVAT protocols. But with GST in its full charge, this input tax credit is granted to the banks, reducing the tax evasion during an external supply of funds.
6. In the course of GST, we now have the access for ensuring smooth business across India and its neighboring countries. With such exponential growth in business, a sudden increase in the demands of funds led to the growth in the number of transactions benefiting the banks. This lead to the overall advantage for the baking sector.
7. A bank provides a diversity of services to its customers: debit card, credit card, net banking etc. With the new rules and regulation for banking under GST, the IT department demanded the upgradation of every system, along with the ATM machines and transaction systems.

Conclusion - With the expectation of further details to emerge, financial sectors face a can of worms in terms of the manner of transacting business, customer profiles, services matrix, IT systems and operation to capture the data at both front and back end. IT systems will need to be more vigilant in terms of serving the purpose of solving the complexity related to GST compliance and procedures at a higher volume.

The impact of GST on Banks and NBFCs will be such that operations, transactions, accounting and compliance will need to be reconsidered in its entirety.

Referring to all the banks and the banking sector of India, there has been a drastic change in the basic functioning of every organization. On one side we can go on criticizing about the amount of complexity GST has introduced in the Banking offices which demands upgradation of the software system flooding in, we must also throw some light at the exponential business expansion and the amount of profit is filling the Indian pockets. With the introduction of this uniform tax has been a blessing in disgrace on the poor society and painful for the business tycoons of the country.

References :-

1. Mujalde, S., Vani, A. (2017). Goods and Service Tax (GST) and its outcome in India. Journal of Madhya Pradesh Economic Association, 27(1), 1-4.
2. Bedi, Balwinder.,Kavish, Sharma (2017). Moving to goods and service tax in India: Impact on India's growth. International Journal of Engineering Research & Management Technology, 4(3), 120-128.
3. Article on "For banks, it was a smooth ride to new tax era." published in The Economics Times on 03-07-2017:
4. Article on "The impact of GST on banking transactions, Insurance and Investments." published in www.equitymaster.com dated on 11- 07-2017
5. Article on "Cooperative Banks prepare for GST" published in The Business world on 12-08-2017:
6. Article on "Impact Of GST On The Banking Sector In India" published in gsthelplineindia.com on 09-10-2017.

पूर्व विद्यालयीन शिक्षा व्यवस्था शिक्षा के आयाम के रूप में अध्ययन

श्रीमती धर्मिष्ठा शेरवाल शर्मा *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध कार्य शोधकर्ता द्वारा शिशु शिक्षा संस्थाओं को लेकर किये गये कार्यो की श्रृंखला का भाग है। इसके अन्तर्गत पूर्व विद्यालयीन शिक्षा व्यवस्था शिक्षा के आयाम के रूप में अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन में पूर्व प्राथमिक संस्थाओं की मौजूदा स्थिति के अंतर्गत भौतिक संरचना व शिशुओं को दी जा रही सुविधाएँ, उपकरण और सामग्री, संस्था स्टाफ, आयु व प्रवेश प्रक्रिया, प्री प्रायमरी स्कूल कार्यप्रणाली का अध्ययन किया गया है। अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर पूर्व प्राथमिक संस्थाओं कीं मौजूदा स्थिति के अंतर्गत भौतिक संरचना व शिशुओं को दी जा रही सुविधाएँ, उपकरण और सामग्री, संस्था स्टाफ, आयु व प्रवेश प्रक्रिया, प्री प्रायमरी स्कूल कार्यप्रणाली में गुणवत्ता वृद्धि के लिए प्रयास किए जाएँ तो शिशु शिक्षा हेतु अपेक्षित वातावरण तैयार करने में सहायता प्राप्त होगी। इस हेतु प्रस्तुत अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो की उपयोगिता को सभी स्तरों पर पृथक–पृथक समझा जा सकता है।

प्रस्तावना – शिशु अवस्था को जीवन की नींव का काल कहा जाता है। इन पाँच से छ: वर्षो में व्यक्ति का प्रारंभिक व्यवहार विकसित होता है। यहीं से व्यक्ति में विभिन्न आदतों, संस्कारों, कौशलों तथा ज्ञान लेने की क्षमता के संवर्धन की शुरुआत होती है। परंतु आज इस अवस्था के बच्चों की शिक्षा और देखभाल के संबंध में हमारे देश में तमाम चुनौतियाँ तथा सरोकार सामने आ रहे हैं। बड़ी बात यह भी है कि हममें से बहुत-से लोग इन सरोकारों के विषय में जानकारी नहीं रखते हैं और इसलिए एक शिक्षक, एक अभिभावक के रूप में इस अवस्था के बच्चों की विकास संबंधी आवश्यकताएँ समझे बिना ही देखभाल और शिक्षा अन्य अवस्था के बच्चों की तरह ही करना आरंभ कर देते हैं। इस काल को शिशु का पूर्व प्राथमिक शिक्षा का काल भी कहा जाता है। इन तीन से छ: वर्षो के मध्य दी गई पूर्व प्राथमिक शिक्षा शिशु के लिये अत्यधिक महत्वपूर्ण व जीवनोपयोगी होती है। पूर्व प्राथमिक शिक्षा हेतु चलाई गई प्रशासन द्वारा योजनाओं जैसे ECE द्वारा चलित पंचवर्षीय योजनाए, इंटीग्रेटेड़ चाईल्ड डेवलपमेंट सर्विसेस, राजीव गाँधी नेशनल Creche Scheme फॉर चिल्ड्रन ऑफ वर्कीग मदर्स, ECE द्वारा चलित प्रारम्भिक शिक्षा कार्यक्रम, सर्व शिक्षा अभियान द्वारा शिक्षा में पूर्व प्राथमिक शिक्षा का महत्व व आवश्यकता को शिशु अवस्था हेतु समझा जा सकता है।

उद्देश्य – उज्जैन जिले में स्थित पूर्व प्राथमिक संस्थाओं की मौजूदा स्थिति के अंतर्गत भौतिक संरचना व शिशुओं को दी जा रही सुविधाएँ, उपकरण और सामग्री, संस्था स्टाफ, आयु व प्रवेश प्रक्रिया, प्री प्रायमरी स्कूल कार्यप्रणाली का अध्ययन करना।

कार्यप्रणाली – वर्तमान अध्ययन में शोधकर्ता द्वारा उज्जैन जिले में स्थित 30 पूर्व प्राथमिक संस्थाओं को न्यादर्श रूप में चयनित किया गया। अवलोकन हेतु सह–साक्षात्कार सूची व एनसीईआरटी द्वारा निर्दिष्ट मानदंडों के अनुरूप मापनी तैयार कर संस्थागत भौतिक संरचना व शिशुओं को दी जा रही सुविधाएँ, उपकरण और सामग्री, संस्था स्टाफ, आयु व प्रवेश प्रक्रिया, प्री प्रायमरी स्कूल कार्यक्रम और कार्यप्रणाली को मापा गया। मापन के पश्चात् प्राप्त विभिन्न जानकारी को आंकडों के रूप में प्रासंगिक रूप से प्रस्तुत कर गणना कर निष्कर्षो को प्रतिशत रूप में प्राप्त किया गया।

परिणाम – शोधकार्य के उद्देश्य के अनुसार उज्जैन जिले में स्थित पूर्व प्राथमिक संस्थाओं की मौजूदा स्थिति के अंतर्गत भौतिक संरचना व शिशुओं को दी जा रही सुविधाएँ, उपकरण और सामग्री, संस्था स्टाफ, आयु व प्रवेश प्रक्रिया, प्री प्रायमरी स्कूल कार्यक्रम और कार्यप्रणाली का अध्ययन (एनसीईआरटी द्वारा निर्दिष्ट मानदंडों के अनुरूप) करने पर प्राप्त निष्कर्ष:-

भौतिक संरचना व शिशुओं को दी जा रही सुविधाएँ : (1) स्थान : जिले में स्थित पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में अधिकतम 83.22% सुरक्षित हैं। (2) माता–पिता के अनुसार शिशु हेतु आगमन सुलभ 95.65% है। (3) पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में अधिकतम 68.02% माध्यमिक स्तर विद्यालयों से जुड़ी हुई हैं। (4) अधिकतम पूर्व प्राथमिक संस्थाओं 56.05% में प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग शिक्षाप्रद सामग्री के रूप में किया जाता है। (5) अधिकतम पूर्व प्राथमिक संस्थाओं 98.05% में भूतल स्थित संस्थाएँ हैं।

प्ले एरिया : आउटडोर – (1) जिले में स्थित पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में लगभग सभी में सुरक्षित व उपलब्ध है। (2) अधिकांश में केवल कूदने व दौड़ने की 92.05% उपलब्धता है। (3) लगभग सभी पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में विभिन्न गतिविधियाँ जैसे साइकिल चलाना,रेत व पानी के खेल, बागवानी, मिट्टी की आकृति बनाना करवाई जाती हैं। (4) अधिकतम पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में शिशुओं के खेल हेतु छायांकित क्षेत्र उपलब्ध नहीं है। (5) सभी पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में शिशु सामग्री के लिये पर्याप्त स्टोरेज व्यवस्था उपलब्ध नहीं हैं।

इंडोर – (1) जिले में स्थित पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में लगभग सभी में शौचालय व बरामदा अलग से उपलब्ध नहीं है। (2) अधिकांश 92.05% में खेलकक्ष, कक्षाकक्ष के साथ ही उपलब्ध है। (3) लगभग सभी पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में सुसज्ज आकृतिक कक्षाकक्ष व र्प्याप्त रौशनी की व्यवस्था है। (4) केवल 18.05% पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में शिशुओं के आवश्यकता अनुरूप फर्नीचर उपलब्ध है। (5) पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में पृथक रूप से शिशु के लिये विज्ञानकक्ष, गुड़ियाकक्ष व पुस्तकों की व्यवस्था उपलब्ध नहीं हैं।

पेयजल सुविधा – लगभग सभी पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में फिल्टर पानी

* शोधार्थी (शिक्षा) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

की सुविधा है।

स्वच्छता सुविधा – लगभग 85.15% पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में शौच के पश्चात् टॉवेल, साबुन आदि प्रदान नहीं किये गये। 82.12% पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में शौचालय में पंखे नहीं हैं। 95% पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में कचरा डिब्बे रखे गये थे। 36% पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में निम्न स्तर की सिंक सुविधाएँ प्रदान की गई हैं।

आराम कक्ष सुविधा – लगभग सभी पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में शिशुओं के विश्राम के लिये दैनिक दिनचर्या में समय रखा गया है किन्तु साफ मैट, चारपाई, स्वच्छ चादर व तकिये की व्यवस्था में एनसीईआरटी द्वारा निर्दिष्ट मानदंडों का ध्यान नहीं रखा गया है।

स्टोरेज स्पेस – 91.12% पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में कॉमन स्टोरेज स्पेस रखे गये हैं। 61.83% पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में खाद्य सामग्री के लिये पृथक भंड़ारणकक्ष की सुविधाएँ प्रदान की गई हैं।

प्राथमिक चिकित्सा किट – 71.02% पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में प्राथमिक चिकित्सा किट रखी गई है किन्तु आवश्यक सामग्री में गुणवत्ता की कमी है।

पूर्व प्राथमिक स्टाफ – सभी संस्थाओं में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के लिये विशेष शिक्षकों की न्यूनता देखी गयी। 97.22% पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में औसतन दो शिक्षक व एक सहायक हैं। 80% पूर्व प्राथमिक संस्थाओं में अधिकांश महिला शिक्षक है।

पूर्व प्राथमिक शिक्षक योग्यता – अधिकांश शिक्षक केवल बारहवीं कक्षा उत्तीर्ण हैं।

शिशु आयु सीमा – 90 प्रतिशत संस्थाओं में प्रवेश की आयु 3 वर्ष से रखी गई है। अन्य 10 प्रतिशत संस्थाओं में पहले आओ पहले पाओ की पद्धति को अपनाया गया है।

सुझाव – प्रस्तुत शोध के परिणाम द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि पूर्व प्राथमिक सस्ंथाओ में शिशु शिक्षा को लेकर ही ध्यान केन्द्रण किया गया है। जबकि शिशु के विकास हेतु उसके व्यवहार व देखभाल के लिये प्रस्तुत शोध में दर्शाये गये सभी पहलुओं पर ध्यान दिया जाना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नर्सरी शिक्षा पद्धतियां तथा सामग्री, (1991),ढोआबा हाउस, नई दिल्ली–
2. Colvin RW, Zaffiro EM 1974. Pre-school Education. New York: Spring Publishing Company.
3. DISE 2010. Elementary Education in India: Progress towards UEE, Analytical Report 2007-08. New Delhi:
4. Kerlinger FN 2007.Foundations of Behavioural Research.Delhi: Surjeet Publications.
5. NCERT 1996. Minimum Specification for Pre-schools. New Delhi: NCERT.
6. Narayan OP 2005.Harnessing Child Development: Children and the Culture of Human Rights. Volume 1. Delhi: Isha Books.
7. Narayan OP 2005. Harnessing Child Development: Children and the Right to Education. Volume 2. Delhi: Isha Books.
8. Narayan OP 2005. Harnessing Child Development: Children and the Access to Information. Volume 3. Delhi: Isha Books.
9. Pathak RK 2003. Early Childhood Education. New Delhi: Rajat Publications.
10. A STUDY OF PRE-PRIMARY EDUCATION 187

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Improvement of Productivity in Small Scale Industries

Dr. Sanjeev Kumar Bansal* Dr. Praveen Kukkar**

Abstract - Small scale industries play an important role in Indian economy. It has emerged as powerful tool in providing relatively larger employment next to agriculture. It contributes more than 50% of the industrial production in value addition terms and generate one third of the export revenue. Global markets are continuously changing and demanding product of high quality and low cost. In this paper, the needs of TPM implementation in Indian SMEs and its effects on productivity, quality of product, culture of the organization, maintenance activity etc are discussed. The outcomes of literature of some case studies were kept in mind that all these show that the implementation of TPM in SMEs is still very low or negligible in India. Therefore, more effort should be given in developing a better model or there is a need to develop a proposed model for TPM implementation in SMEs. Finally, a TPM implementation methodology is proposed. The objective of this paper is to study the roll of OEE in Indian manufacturing industries either from small scale to large scale industries. Through a case study of implementing TPM in a small-scale Industry for enhancing OEE of the company, assessment of performance losses in the production facilities, contributions of TPM initiatives in improving the organizational performance are discussed and analysed. Moreover, the results of implementing TPM are also compared with previous one and find the importance of TPM implementation in Indian organizations.
Key words - Small and Medium Enterprises, Total Productivity Management, Overall Equipment Effectiveness (OEE)

Introduction - Small Scale Medium Enterprises (SSIs) have an important role Indian economic. A small enterprise in which investment in plant & machinery ranges between Rs. 25 lakhs to Rs. 5 cores are a small-scale industry. India is one of the world's fastest growing economies in the world. Consequently, its production output is massive. It is pertinent to note that SSIs contribute almost 40% of India's gross industrial value. Small scale industries gave us an increase in employment and the exports. The best part of these industries is that you do not a massive amount of capital investment. The SSIs in India employs 31.25 million people and produces over 8,000 industrial items. At present, the (SSI) sector accounts for over 90% of industrial products in the country, 8 % in the GDP and approximately 40 % of India's exports Directorate of Industries (2005). To run a small-scale industry is quite challenging because we do not have decent amount of capital to fulfil our requirements. There are lots of failures related to engineering and management happens some time like Equipment failure loss, Setup and adjustment loss, Start-up loss, Minor stoppage and idling loss, Ergonomics or Human Oriented Losses we will briefly study these kinds of situations and find some methods to overcome them. The production in small scale industries is increased by some ergonomics study like method study (motion study) and time study (work measurement). By the help of these methods we can efficiently manage Manpower, machinery and equipment requirements. Daily, weekly or monthly requirement of materials, Production cost per unit as an input to better make or buy decision, Labor budgets, and Worker's efficiency and make incentive wage payments. These study gives lot information about existing method and this information helps to find out drawback and possible improvement in existing method. By eliminating drawback and improvements are found and adopted into a new method. The Central Government has the authority to determine capital investment requirements for small-scale industries. These requirements are listed under the Industries (Development and Regulation) Act, 1951. Small-scale industries offer several advantages and opportunities for investments. For example, they receive many tax benefits and rebates from the government. The opportunity to earn profits from SSIs is big due to many reasons. Firstly, SSIs are less capital intensive. They even receive financial support and funding easily. Secondly, procuring manpower and raw materials is also relatively easier for them. Even the government's export policies favour them heavily. Apart from providing profitable opportunities, Small Scale Industries play a large role in advancing welfare measures in the Indian economy as well. A large number of poor and marginalized sections of the population depend on them for their sustenance. These industries not only reduce

*Sr. Lecturer, Department of A.B.S.T., S.N.D.B. Govt. P.G. College, Nohar (Raj.) INDIA
** Lecturer, Department of A.B.S.T., Sri Aatam Vallabh Jain Girls P.G. College, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

poverty and income inequality but they also raise standards of living of poor people. Furthermore, they enable people to make a living with dignity.

Study Objective - Mainly in following objective of work study is given increase efficiency of productivity, better product quality, to choose the fastest method to do job, to improve the working process, less fatigue to operators and workers, efficiency labour control, effective utilisation of resources, to decide equipment requirement, to pay fair wages, to aid in calculating exact delivery, to decide the required manpower to do a job. The main thing here is study the roll of OEE in Indian manufacturing industries either from small scale to large scale industries and to analyse about implementing TPM in a small-scale Industry for enhancing OEE of the company, assessment of performance losses in the production facilities, contributions of TPM initiatives in improving the organizational performance. Primarily it is the awareness of SSI units about the importance of productivity, its measurement and improvement and to study the role of incentives, in general, and of financial incentives, in particular, in productivity improvement. Secondarily it is to study the common practices of SSI units regarding payment of wages and incentives to the workers and to study the trends of labour productivity in SSI units and to propose suggestions for productivity enhancement in SSI units.

Review Literature

The tools and techniques employed in steel foundry industry vary in literature. In addition, literature provides little information regarding the implementation of end solutions in industry. This study also provides details regarding the methods to implement those tools in research work, while providing particulars about related research in literature. “To Improve Productivity by Using Work Study & Design a Fixture in Small Scale Industry”. Furthermore, he uses the Pro-E model software for model testing and developing a new model. Reducing Manufacturing Cycle Time of Milk Tanks by Work Study Technique in Small Scale Fabrication Industry.” Work study techniques are expensive to implement in small-scale industries. However, this method gives better results than any other technique. These techniques not only help reduce the cycle time, but also have proved useful in numerous other departments in industry such as inventory control, productivity, quality, labour work, and at various machines in a machine shop to develop process variation.

S. Krishna Kumari, modified the cellular layout .after this implementation Industry is increased with less inventory, Less Space in Material Movement, Reduction in total number of Machines, Less Number of Operators to meet the varying demand.

Dewi Kurniawati. They introduced DEMATEL in Indonesian market it helps in identify complex relationships and build a network structure among the factors.

Shantideo Gujar1, Dr. Achal S. Shahare, the objective of their research is to Reduced machine idle time. Increase productivity. Reduce worker’s fatigue, Eliminate wasteful efforts, as well as useless handling material.

Sai Nishanth Reddy, P. Srinath Rao and Rajyalakshmi G, they determine on the basis of time and study analysis they did the calculation of assembly line to get the full potential of workers

Ms.Vanipriya.R , Dr.D.Venkatramaraju emphasis on Establishment of such industries in rural areas and small towns helps to check the influx of population into bigger towns. A rewarding feature of economic development in India has been the impressive growth of modern small scale industries.

Methodology - The nature of the present research work suggests a hybrid design of research. Exploratory approach is found appropriate for studying the first objective, descriptive for the next two objectives, and causal type of research for the fourth objective. The last objective is studied on the basis of findings, as well as the researcher’s own judgement and observations. In view of the need and objectives of the study the questionnaire contained 43 questions designed to gather information regarding the concept and practices of SSIs related to productivity management. As a part of pilot study, the questionnaires were distributed personally in Aligarh to the owners of few SSI units. After completing the pilot study, questionnaires were distributed to various units through either the friends or relatives identified for the purpose or personality where direct approach was possible. In all, 150 units were contacted out of which 93 responded to the questionnaire. The analysis in this study combines Decision Making Trial and Laboratory and Analytic Network (ANP) as a hybrid MCDM model for evaluating and improving problems related to SMEs performance. A hybrid MCDM is not only dealing with problems of interdependence factors and feedback but also improves the normalized Super matrix to suit the real world. The correspondences employed for answering the questionnaire are experts in a related field. The ANP method was used to determine the factors relative weights. The ANP includes all relevant factors and Decision-making alternatives to form a network that incorporates feedback and interdependent relationships. Because of the interdependency, the factors that are less important individually might turn out to be more important when evaluated collectively.

Case Study - Small scale industries (SSI) are those industries in which manufacture providing service production are done on small scale or micro scale. For example. These are ideas of small industries napkins, tissue toothpick, water bottle, small toy paper, pen.Case study through reports of past to create more employment opportunities to help develop the rural end less developed regions of economy to reduce optimum utilisation of unexploited resources of the country To improve the standard of living of people.

Result - It improves the growth of the country by increasing urban and rural growth. The industry sector in which the

production of goods is a segment of the economy. Potential for large employment small scale industries have potential to create employment opportunities on a massive scale. Requirement of less capital. Contribution to industrial output. Earning forging exchange. Equitable distribution.

Conclusion - Work study gives lot information about existing method and this information helps to find out drawback and possible improvement in existing method. Effective management requires leadership plus administrative skills in Planning organizing, directing and controlling the entire business Operations. Because of limited financial resources and inability to hire Professional managerial personnel, small-scale units lack specialization in the execution of various functions of management. The majority of small-scale units are sole proprietorship organizations and as such these units are highly personal in nature, i.e., the single man's show. It is very difficult to take quick decisions in all respects and implementing these decisions promptly since the sole proprietor is neither a production-oriented engineer nor sales-oriented merchant. He has no time to look after other functions. Moreover, the majority of sole proprietors is illiterate or has low level of education and lack managerial skills. They also do not possess the qualities like motivation, sense of commitment and business morality. Consequently, the small-scale units suffer from dearth of efficient management and poor managerial skill resulting in sickness of units. Thus, it is evident that SSI sector faces difficulties at every stage of their activities, whether it is buying materials for production, organizing production, selling products in the market, they are put to a number of Difficulties. No wonder than that their products are small in quantity and shoddy in quality. Therefore, more concerted efforts, particularly in the area of marketing, are required on the part of the Government, Entrepreneurs, Promotional agencies and Financial agencies, so that the growth rate of SSI sector can be accelerated further.

References:-

1. S. Krishna Kumari, A.N.Balaji, R.Sundar , Productivity Improvement of an Industry by Implementing Lean Manufacturing Principles, IJIRSET, Volume 3, Special Issue 3, March 2014
2. Dewi Kurniawati, Henry Yuliando, Productivity Improvement of Small Scale Medium Enterprises (SMEs) on Food Products: Case at Yogyakarta Province, Indonesia, Agriculture and Agricultural Science Procedia 3 (2015) 189 – 194
3. Shantideo Gujar1, Dr. Achal S. Shahare2, Increasing in Productivity by Using Work Study in a Manufacturing Industry, IRJET, Volume: 05 Issue: 05 | May-2017
4. A. Sai Nishanth Reddy, P. Srinath Rao and Rajyalakshmi G., PRODUCTIVITY IMPROVEMENT USING TIME STUDY ANALYSIS IN A SMALL SCALE SOLAR APPLIANCES INDUSTRY- A CASE STUDY, VOL. 11, NO. 1, JANUARY 2016
5. Sangita G.Patil 1, Dr. P.T.Chaudhari2, Problems of Small Scale Industries in India, Volume-4, Issue-2, April-2014, ISSN No.: 2250-0758
6. Dr Ravi Govt First Grade College Ranebennur, Development Of Small Scale Industries In Industrial Estates Of Karnataka State Small Industries Development Corporation Ltd – A Study Of Karnataka State, 2018 Ijcrt | Volume 6, Issue 2 April 2017 | ISSN: 2320-2882
7. Dr. Sarita Satpathy1, P. SailajaRani2, M.L.Nagajyothi2, A Study of Micro, Small and Medium Enterprises; the Backbone for Economic Development of Indian Economy, International Journal of Research and Scientific Innovation (IJRSI) | Volume IV, Issue VI, June 2017 | ISSN 2321–2705
8. Ms.Vanipriya.R , Dr.D.Venkatramaraju, Growth of Small Enterprises in India, International Journal of Scientific & Engineering Research Volume 2, Issue 9, September-2011, ISSN 2229-5518
9. Dr. Reetu Sharma, Problems And Prospects Of Small Scale Industrial Units (A Case Study Of Exporting And Non – Exporting Units In Haryana), Irjc Asia Pacific Journal Of Marketing & Management Review Vol.1 No. 2, October 2012, Issn 2319-2836.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

A Study on Domestic Violence Against Women

Dr. Anita Dani*

Abstract - Domestic violence is the highest crime against women in India. Indian women suffers domestic violence from ancient times in India. From ancient time's women face Domestic violence within the four walls of the house.Women is harassed physically and sexually. The male dominant societynever understand the domestic violence. Women tortured by their parents, husband and by their relatives and even though the women are not safe in the home. Government pass Domestic violence act 2005 in India to protect the women from domestic violence even though the act doesn't stop the domestic violence. This paper focus on domestic violence against women and to find out the reasons behind the domestic violence against women in India and to suggest the measures to stop the domestic violence against women in India.
Keywords - Domestic violence act 2005, NCW, Sexual abuse, Dowry, Extra Marital Affairs.

Introduction - Domestic violence may physically, emotionally, verbally and sexually. Women face violence in the four walls and she is unable to understand where she tell her problem. Sometimes parents are responsible for domestic violence, sometimes her husband torcher her and sometimes women torcher by their relatives and thus she is always in dilemma where she will get justice. Even Government pass act for women to protect mentally and physically from domestic violence. Seventy percent of women face domestic violence.Any act consists of domestic violence when it harms the physical, mental, health, safety, life, limb, of the victim, and includes causing: physical abuse, sexual abuse, verbal abuse, emotional abuse, and economic abuse. Even educated women face the domestic violence and if women should know the act, she can fight the situation.Any application under the domestic violence is filed before the Judicial Magistrate within whose jurisdiction is civil in nature. The National Commission for Women (NCW) help and guide women against domestic violence. The National commission for women (NCW) solve the problems of domestic violence and always play a role of bridge between members of family. National commission for women (NCW) role is significant in India to solve the domestic violence in India.

Types of Domestic Violence:

1. **Verbal Abuse:** Verbal abuse threats, coercionand blame made via relations in domestic violence.
2. **Physical Abuse:** Physical abuse is physically harm the health of the women and the women hit by kicking, burning, stabbing slapping and downing.
3. **Sexual Abuse:** Sexual abuse means using force to fulfil desire of sex. It involves sex with other person, involves women in prostitution, making contact with non-consensual way, having affair with other people.
4. **Economic Abuse:** Economic abuse is to threats the women for economic resources. When the husband or partner limiting the funds from women, keeping financial secrets from women.

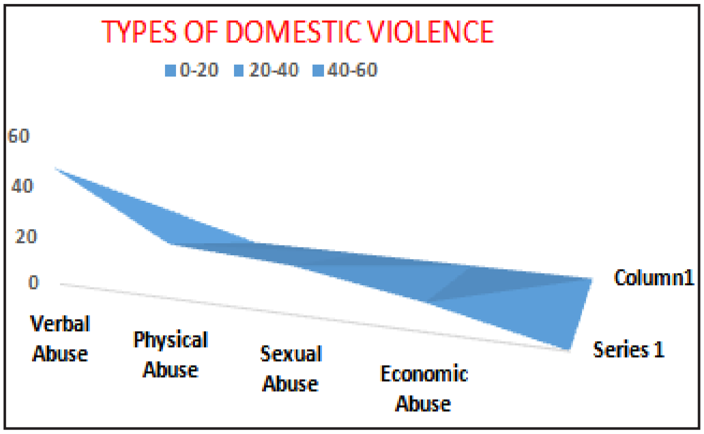

Causes Of Domestic Violence In India - There are many causes of domestic violence in India and the reasons are different in urban and rural areas are different but even though there are some reasons which are common in both areas i.e. in urban and rural areas. The reasons of causes of domestic violence in India as follows:

1. **Dowry:** Illegal demand of dowry cause of domestic violence in India as dowry is a socio- cultural factor. Dowry system affects not in the four walls of house but it affects the outside and it is the main cause of domestic violence.
2. **Behavioral Factors:** The behavioural factors like aggressive attitude, dominating nature is the another cause of domestic violence in India.
3. **Historical Factors:** From ancient times it is thought

*H.O.D. &Assistant Professor, Department of Home Economics Samarth Mahavidyalaya, Lakhani,Distt. Bhandara (Maharashtra) INDIA

man is superior to women and due to superior complex there is domestic violence in India.

4. **Religious Factors:** Religious sanctifications reflects domination on women and it is the other cause of domestic violence in India.

5. **Cultural Factors:** Cultural Factors like demand of boy child is the cause of domestic violence in India.

6. **Extra Marital Affairs:** Extra Marital Affairs also the main cause of domestic violence in modern society and due to this cause many families were destroyed.

7. **Lack of Attention and Respect:** Lack of attention and respect to each other sentiments is the cause of domestic violence in India.

8. **Alcohol and drugs:** Use of alcohol and drugs is the most common cause in many homes and due to the habit of alcohol and drugs is the main cause of the domestic violence in India.

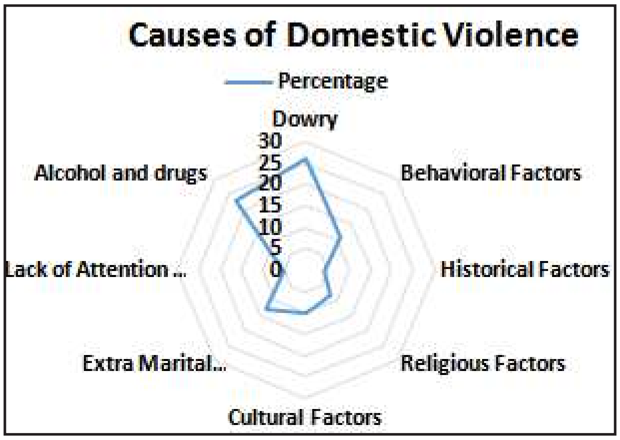

Suggestion To Stop Domestic Violence:

1. **Avoid to use drugs and alcohol:** If any family of member unable to understand and consumes drugs and alcohol. Consult with elder member of family and create good atmosphere in the family.

2. **Respect Each Other:** Every member of family respect each other and it solves the domestic violence in India.

3. **Dowry Problem:** The dowry problem solve with the help of elder members of the family and if it not solved consult with NGO's.

4. **File Report to Police Station:** If the domestic violence not solved then report file to police station for the safety of the women.

5. **Attention to every member:** Attention to every member and take care of every member.

6. **Love to every one:** Each member of family love to everyone and thus the domestic violence stop due to spread of magic of love in family.

7. **Organize Birthday and Anniversary:** Organize birthday and anniversary of partner so that the domestic violence stop in the family.

8. **Celebrate Festival jointly:**Each member of celebrate to everyone and thus the domestic violence stop due to spread of magic of love in family.

Conclusion: There are many reasons which affects the domestic violence in India and man are responsible for the domestic violence in India and there are many factor which are responsible for the domestic violence in India. First of all every parent taught a lesson to child that they respect to each member of family, love to everyone, solve problem by mutual understanding. Government should start more Ngo's to solve the problems of the partners and for that government must open various courts to settle the problems and organize camps and awareness programme to solve the problems of domestic violence in India. Government should change the domestic violence act.

References :-

1. Daga, A S., S. Jejeebhoy and S. Rajgopal (1999). Domestic Violence against Women: An Investigationof Hospital Causality Records, Mumbai. Journal of Family Welfare.
2. Mishra, Jyotsana, ed. (2000). Women and Human Rights, Kalpaz Publications, New Delhi.
3. Murthy, M S R; P. Ganesh; J. Srivirajarani and R. Madhusudan(2004). Proximate Determinants ofDomestic Violence: An Exploratory Study on Role of Menstrual Problems and Life Style of Men.Demography India.
4. Heise, L., Ellsberg, M and Gottemoeller, M. (1999). Ending Violence Against Women. Population Reports.
5. Sahoo, Harihar& Pradhan ,ManasRanjan(2007), Domestic Violence in India: An Empirical Analysis,Paper presented in National Seminar on Gender Issue and Empowerment of Women, Indian SocialInstitute, Kolkata, February.
6. www.domesticviolence.co.in
7. National Crime Records Bureau Crime in India
8. UNICEF Domestic Violence against Women and Girls.
9. www.indianwomendomesticviolence.co.in
10 www.NationalCommissionforWomen.com
11. www.familycourts.co.in
12. www.womenofindia.co.in
13. www.ngosofindia.co.in
14. www.violenceinindia.co.in
15 www.genderisssue.com
16 www.cultureofindia.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

मुक्तिबोध का यथार्थ बोध

डॉ. विनीता कौशिक *

प्रस्तावना – मुक्तिबोध की कविताई को तब तक नहीं समझा जा सकता जब तक कि मुक्तिबोध की समीक्षाई को न समझा जाए। और मुक्तिबोध की समीक्षाई को तब तक नहीं समझा जा सकता जब तक रचना-प्रक्रिया और अर्थ प्रक्रिया विषयक उनकी अवधारणाओं को उनके पूर्व वर्तियों और उनके समकालीनों की मान्यताओं के संदर्भ में अलग कर न समझा जाए।[1], मुक्तिबोध के काव्य के प्रमुख लक्ष्य स्वयं के जिये गए बाहरी संघर्ष तथा आत्म संघर्ष से ऊर्जा प्राप्त कर, संवेदना की गहराईयों में बैठकर अपने शिल्पअश्व फँटेसी पर सवार होकर वह सब कुछ देख-दिखा देना जो घनीभूत कुहरे के अन्दर संघर्ष करने वाले वर्ग के प्रतीक हैं, जो शोषक-व्यवस्था को नष्ट करने के लिए संकल्पित है।

'राष्ट्रवाणी में हरिशंकर परसाई द्धारा लिखा गया कथन मुक्तिबोध के व्यक्तित्व को बड़ी पारदर्शिता से प्रकट करता है ''मुक्तिबोध का मित्र होना आसान नहीं था, हालांकि उनमें मित्र भाव बहुत था उनकी आत्मा संगी साथी के लिए तड़पती थी, आत्मा का सहचर खोजती थी, पर आत्मा का सहचर बनने के लिए उस विद्युत का कुछ अंश अपने में जरूर होता था जो उनकी आत्मा में निरन्तर प्रवाहित होती थी। मित्र से उनकी मांग बहुत होती थी। वह मांग साधारण नहीं थी, जैसा कि आम तौर पर हमारी होती है। यह मांग इनसे कुछ ऊपर की होती थी – वह ईमान की मांग करते थे। रचना के प्रति ईमानदारी, जीवन मूल्यों के प्रति ईमानदारी, जिन्हें वे मित्र मानते थे, उनकी कड़ी परीक्षा होती थी। उनके सामने बनावट खुल पड़ती थी।'[2] यही कारण है कि मुक्तिबोध का यथार्थ बोध पूरी सच्चाई के साथ व्यक्त हुआ है। ब्रब्र राक्षस स्वयं मुक्तिबोध के व्यक्तित्व का प्रतीक है, उसकी व्यथा मुक्तिबोध की कथा है, जिसमें असफलताओं की भव्यता है –

गहन किंचित सफलता
अति भव्य असफलता।
............अतिरेकवादी पूर्णता
कि ये व्यथाएँ बहुत प्यारी हैं...........

इसी में आगे –

पिस गया वह भीतरी
ओ बाहरी दो कठिन पाटों बीच[3]
ऐसी ट्रेजेडी है नीच

मुक्तिबोध के काव्य विकास को दो रूपो में देखा जा सकता है 'तारसप्तक' एवं 'चांद का मुंह टेढ़ा है।' उनका रचनाकाल 1935 से 1964 रहा। 1935 के आरंभिक लेखन के लिए स्वयं मुक्तिबोध लिखते हैं – ''मालवे की विस्तीर्ण मनोहर मैदानों से घूमती हुई क्षिप्रा की रक्त भव्य सांझे और विविध रूप वृक्षों की छायाएँ मेरे किशोर कवि की आद्य सौन्दर्य प्रेरणाएं थीं।.........
इन्दौर में मित्रों के सहयोग से मैं अपने आन्तरिक क्षेत्र में प्रविष्ट हुआ .... यह मेरी प्रथम आत्म चेतना थी।''[4]

मुक्तिबोध के काव्य-विचार-भावों का आलिंगन उन्हीं पात्रों को मिला जिन्हें साधारणत: त्याज्य समझा गया। आधुनिक रचनाकार के रूप में मुक्तिबोध का श्रम उनके निजी अनुभव के साथ ही यथार्थ और संवेदना को सहचर बनाता है। नयी कविता का आत्म संघर्ष तथा अन्य निबन्ध में मुक्तिबोध की कही बात ''हमारी आत्मा में जो कुछ है वह समाज प्रदत्ता है, हमारा सामाजिक व्यक्तित्व ही हमारी आत्मा है।''[5]

उन चिर उपेक्षित, चिर तिरस्कृत अबोध सर्वहारा का उचित बोध है मुक्तिबोध। ऐसा आत्मबोध जो सबका हो, सबके भीतर हो, सब कुछ पाने की हैसियत में हो। जहाँ सबको सब कुछ मिले, जहाँ दुर्भाव से अभाव न हो उन्हीं के लिए पुरूषार्थी है मुक्तिबोध। उन्हें ही समर्पित है मुक्तिबोध। अभाव और दुर्दिन की बेचैनी है मुक्तिबोध, गोदान के होरी के साथ खड़े हैं मुक्तिबोध, निराला के संघर्ष के साथ है मुक्तिबोध अर्थात् तमाम् विषमताओं से भरी वैतरणी पार करने का प्रयास है मुक्तिबोध। वे चाहते हैं संसार, माया सबकी उत्ताम सहचरी हो। 'नया खून' में वे लिखते हैं जो समाज और राज्य नौजवानों को सतत् उन्नतिशील पेशा नहीं दे सकता, वह राज्य और वह समाज टिक नहीं सकता। इतिहास के विशाल हाथ उसकी कब्र खोदने के लिए बड़ा भारी गड्ढ़ा तैयार कर रहे हैं।[6]

यथार्थ हर युग की कहानी रही है, लेकिन मुक्तिबोध वह भगतसिंह हैं कि दहकते दस्तावेजों को चौराहों पर दिखाने की हिम्मत कर पाते हैं। स्वतंत्रता से पूर्व और स्वतंत्रता के बाद के सभी लक्षण उनके अन्वेषण में सम्मिलित दिखाई पड़ते है।

शोषण की सभ्यता के अनुसार
बनी हुई संस्कृति के तिलस्मी
सियाह चक्रव्यूहों में
फंसे हुए प्राण सब मुझे याद आते हैं।
मर्माहत कातर पुकार सुन पड़ती है
मेरी ही पुकार जैसी चिन्तातुर सभुद्धिग्न।[7]

यथार्थ ऐसा कि मन के आस-पास पिंघलता हुआ लावा धधक रहा हो –

आज के अभाव के, कल के उपवास के
व परसों की मृत्यु के ....
दैन्य के, महान – अपमान के, व क्षोभपूर्ण
भयंकर चिन्ता के उस पागल यथार्थ का
दीखता पहाड़ –
स्याह[8]

* सह आचार्य (हिंदी) राजकीय महाविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

साहित्य का अनुशीलन, वर्ग आधारित सामाजिक स्तर के साथ होता रहा है लेकिन मुक्तिबोध के काव्य में उनका मानसिक स्तर कहीं अधिक गहराई के साथ सतत् प्रवाहित है। मानसिक चिन्ता उनके तनाव को बढ़ाती है और तनाव नि:सृत हो जाना ही उनकी कविता की 'बानी' बन जाता है।

मुझे पुकारती हुई पुकार खो गयी कहीं ......
प्रलम्बिता अंगार रेखा सा खिंचा
अपार चर्म
वक्ष प्राण का
पुकार खो गयी कहीं बिखेर अस्थि के समूह
जीवानुभूति की गम्भीर भूमि में।[9]

प्रत्येक युग में बाह्य यथार्थ के भीतरी तह तक जाने वाले कुछ असाधारण व्यक्तित्व ही हैं जिन्हें भीतर के अंतिम छोर की थाह और दबा हुआ स्पंदन सुनाई देता है। मुक्तिबोध का यथार्थ बोध सभी गहराईयाँ नाप आया है, सारे मार्ग की दूरी तय कर चुका है, प्रतीक और बिम्ब को सहचर बनाकर और फैंटेसी के अश्व पर आरूढ़ होकर।

एक भूतपूर्व विद्रोही का आत्म-कथन कविता के अंतिम छोर की कुछ पंक्तियों में मुक्तिबोध की संतुष्टि व्यक्त होती है - परिवर्तन की आशा में ....

लेकिन, दबी धुकधुकियों,
सोचो तो कि
अपने ही आँखों के सामने
खूब हम खेल रहे।
खूब काम आये हम।।
आँखो के भीतर की आँखों में डूब-डूब
फैल गये हम लोग !!
आत्म-विस्तार यह
बेकार नहीं जाएगा
जमीन में गड़े हुए देहों की खाक से
शरीर की मिट्टी से, धूल से।
खिलेंगे गुलाबी फूल।
सही है कि हम पहचाने नहीं जाएँगे।[10]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अशोक चक्रधर - मुक्तिबोध की समीक्षाई - प्राक्कथन - पृ.सं. 12
2. मुक्तिबोध विशेषांक - राष्ट्र वाणी - जनवरी - फरवरी-1965 पृ. 297
3. मुक्तिबोध विशेषांक - ब्रह्मराक्षस (कविता) चांद का मुंह टेढ़ा से
4. मुक्तिबोध विशेषांक - तारसप्तक में वक्तव्य - पृ. 42
5. मुक्तिबोध विशेषांक - नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबन्ध पृ. 157
6. मुक्तिबोध विशेषांक - नया खून (मासिक) नौ जवान अंक 1952, पृ. 7
7. मुक्तिबोध विशेषांक - चांद का मुंह टेढ़ा है - कविता (मुझे याद आते हैं) पृष्ठ सं. 97
8. मुक्तिबोध विशेषांक - चांद का मुंह टेढ़ा है - कविता (मुझे याद आते हैं) पृष्ठ सं. 95
9. मुक्तिबोध विशेषांक - चांद का मुंह टेढ़ा है - कविता (मुझे पुकारती हुई पुकार) पृष्ठ सं. 87
10. मुक्तिबोध विशेषांक - चांद का मुंह टेढ़ा है - (कविता) एक भूतपूर्व विद्रोही का आत्म-कथन, पृ.सं. 85

****

आदिवासियों के सामाजिक एवं शैक्षणिक विकास में मामा बालेश्वर दयाल का योगदान

कान्तिलाल कटारा*

प्रस्तावना – आदिवासियों के मसीहा एवं देवता के रूप में पूजे जाने वाले मामा बालेश्वर दयाल जीवन के प्रारम्भिक काल से ही समाचार पत्रों में इनकी दुदर्शा, गरीबी, अंधकारमय जीवन के प्रति प्रकाशित होने वाली खबरों के प्रति अत्यन्त संवेदनशील एवं भावपूर्ण थे। वे आदिवासी समुदाय की करूणा गाथा की हर संभव सूचना प्राप्त करने को प्रयत्नशील रहते थे। वृहत्तर भारत के मध्यभाग के पूर्वी किनारे से प्रारम्भ होकर ठीक पश्चिमी किनारे पर स्थित काठियावाड़ तक विस्तृत एवं सुरक्षित विध्यांचल पर्वत अपनी कई छोटी-छोटी श्रृंखलाओं के साथ राजस्थान, मध्यप्रदेश और गुजारात के कुछ एक क्षेत्र में फैला हुआ है। यह विश्व की सबसे प्राचीनतम रत्न भंडार, खनिज सम्पदा से परिपूर्ण पर्वतमाला है जो देश के सम्पूर्ण विकास में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इसके सम्बन्ध में मामाजी का उक्त कथन सही प्रतीत होता है कि

भावी भारत का प्राकृत स्वरूप एवं भौतिक रूप जो भी बनने वाला है, उसमें विध्य भूभाग का योगदान ही सवोत्कृष्ट होगा यही देश के विशाल भूभाग की जन्मस्थली रहा है और भविष्य भी इसी पर निर्भर होगा।[1]

किन्तु यही भूभाग देश के उन मानवीय समुदायों द्वारा आबाद है जिन्हें हम स्थानीय भाषा में आदिवासी कहते है। जिनके लिए भारतीय संस्कृति में प्राय: गिरिजन, भूमिजन, आदिम जाति के लोग रानी पुरज जैसे अनेक शब्दों का प्रयोग किया जाता रहा है।[2] ये आदिवासी समुदाय चाहे बस्तर के जाति समुदाय हो कोरवा के हो अथवा मांडला के जोड़ के निवासी हो, मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात के भील समुदाय से संबंधित रहे हो। इसी विध्यांचल पर्वत के पास पूर्व से पश्चिम तक फैली पथरीली भूमि पर निवासरत है। रामायणकाल से ही सदा संकटो का सामना करते हुए ये समुदाय साहस व धैर्य का यथोचित्त परिचय देते हुए अपनी इस जन्म और कर्म भूमि से जुड़े हुए है। युग बीतते रहे कई शासक राजवंश और सरकारें बनी बिगड़ी किन्तु इनके भाग्य का फैसला सदा सर्वदा दीनता, अज्ञानता, दासता और निर्वासन से जुड़ा रहा। बालेश्वर दयाल का सामाजिक चिन्तन इन्हीं असहाय लोगों की भूख और रोग के उन्मुलन से संबंधित था।[3]

इन समुदायों में फिर भी परम्परागत मनोवांछित गुण सदैव विद्यमान रहे जो विकासशील और शिक्षित कहे जाने वाले समुदायों में प्राय: देखने को नहीं मिलते है। इन आदिवासियों के गुणों में अदम्य साहस उत्साह कर्मठ अपनी बात के पक्के धनी, ईमानदार, सरल, सहज, स्वभावब अपराजेय वृत्ति, अपार सहन शक्ति के मनस्वी, जंगली जानवरों के मध्य अपने शस्त्रों तीर कमान से आजीवकोपार्जन करने की वृत्ति आदि उल्लेखनीय है। इनकी सामाजिक दशा की बात करे तो भूखे पेट सोने को मजबूर भोले-भाले जन मानस जिन की कोई आशंका नहीं है। पश्चिम के अवतार जैसे नर पशुओं जिन्हें हम आदिम मानव कहते है। जैसे दिखाई देते है ऐसे आदिवासी समुदाय के सामाजिक जीवन में सुधार ही हमारे भी मानवीय संवेदना हमारे हृदय में शेष है तो इस तथ्य की सच्चाई भारतीय मनीषा का प्रथम चिन्तन निर्धारित होनी चाहिए। इसी कारूणिक संदेश की प्रथम किरण ने एक भारतीय युवा श्री मामा बालेश्वर दयाल के हृदय को झंकझौर डाला। यही समाजसेवी हृदय आदिवासियों का मामा बनकर राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश में फैले इस समुदाय में व्याप्त वर्णव्यवस्था, रूढ़िवादिता, अस्पृश्यता, अशिक्षा जैसे कुरितियों और विसंगतियों के विरूद्ध जागृति और उन्मुलन के लिए दृढ़ संकल्पित हो उठा।[4]

आदिवासी समुदाय में व्याप्त कुरीतियों के विरूद्ध संघर्ष – प्रत्येक व्यक्ति अपने समाज में बंधा रहकर रीति-रिवाजों की पालना करता है। हमारा देश अनेक जातियों और उपजातियों में विभक्त है। प्रत्येक समाज का अपना अलग-अलग अस्तित्व एवं रीति-रिवाज है। इसी प्रकार प्रत्येक समाज में अपनी समस्याएँ और उनके अपने कारण भी है जो समाज विकसित नहीं है वो सदैव संघर्षरत रहता है। मध्यप्रदेश, गुजरात, राजस्थान के आदिवासियों समाज को पूज्य मामा बालेश्वर दयाल, मोटी माता कमला बेना, वीराजी रकमाजी वाल्मीकि ऋषि जैसे सुधारक इस समाज के लिए सदैव संघर्षरत हुए और नि:स्वार्थ भावना से पूरा जीवन इस समुदाय के सामाजिक कल्याण हेतु समर्पित कर देवलोक गमन कर गये। त्याग, तपस्या की भावना के साथ इन्होनें आदिवासी वनवासी समाज को अपना परिवार बनाया और इस समुदाय में कई सामाजिक कुरीतियाँ देखी और उन्हें दूर करने का पूनीत कार्य किया।[5]

मामा बालेश्वर दयाल ने जीवन के प्रारम्भिक काल में ही निर्धारित किया कि वे आदिवासी भील समुदाय के मध्य रहकर उनके सामाजिक कल्याण के लिए प्रयास करेंगे। इसी उद्देश्य से उन्होनें राजस्थान, मध्यप्रदेश और गुजरात की सीमा पर स्थित बामनिया ग्राम को अपनी कर्मभूमि बनाया। उनके अधिकांश सामाजिक सुधार के क्रिया कलाप बामनिया आश्रम से ही संचालित किये जाते थे। आदिवासी भील समाज की विभिन्न कुरितियों जैसे जाति प्रथा, शराब खोरी नशाखोरी दहेज प्रथा, दापा प्रथा, पर्दा प्रथा आदि के विरूद्ध जोरदार अभियान चलाया और समाज को इन कुरितियों से मुक्ति दिलाई।

जाति प्रथा के विरूद्ध कार्य – मामा बालेश्वर दयाल अपने सामाजिक चिन्तन के संदर्भ में स्वामी विवेकानन्द जय प्रकाश नारायण, राम मनोहर लोहिया के विचारों से अत्यनन्त प्रभावित थे। उनका मानना था कि 'गुलामी

* शोधार्थी, इतिहास विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

का मुल कारण पौराणिक जाति व्यवस्था है, ना कि एक जुट पुरूषार्थ का अभाव।' अपनी युवावस्था से ही उनका हृदय निम्नजाति वर्ग की आरे स्वत: ही आकर्षित होने लगा था। उस समय की काल परिस्थितियों में एक उच्च जाति वर्ग के ब्राह्मण का निचले तबके जिनमें सबसे गरीब, आदिवासी, भील, हरिजन शामिल थे। उनके साथ उन्होनें मामा का सम्बन्ध कायम किया, उनके जीवन का इससे बड़ा आदर्श और क्या हो सकता था। स्वयं ब्राह्मण होकर निचले तबके से प्रेम संबंध का उच्च वर्गीय समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ा। जाति प्रथा के खिलाफ उनका प्रथम प्रभावशाली कदम खाचरोद में सत्यनारायण की कथा में हरिजनों के हाथों प्रसाद वितरण करवाना था।

यह उन दिनों की बात है जब मामा बालेश्वर दयाल ने खांचरौद (मध्यप्रदेश) मे अपने मामा श्रीमाधोप्रसाद दुबे के यहाँ अपना आश्रय स्थल बनाया। इस समय मामाजी नित्य प्रति सामाजिक क्रिया कलापों में व्यस्त रहने लगे थे। यही की एक बस्ती में स्थित एक पुस्तकालय में वे रोज कई सामाजिक कार्यकर्ताओं जिनमें कन्हैयालाल मास्टर, सागरमल भारती, नवलजी, महताब सिंह, बख्तावर सिंह, रमा बापू के नाम उल्लेखनीय है। उनके साथ विचार-विमर्श किया करते थे। इन्हीं दिनों महात्मा गांधी द्वारा सामाजिक समस्याओं पर प्रारम्भ किया गया। हरिजन उद्धार आन्दोलन सम्पूर्ण भारत में उत्साह में फैलने लगा। इसी से प्रेरणा लेकर बालेश्वर दयाल ने खांचरौद में फैली जाति प्रथा के विरूद्ध सत्यनारायण की कथा का अनुष्ठान करवाया। इस समय मध्यप्रदेश में सत्यनारायण भगवान की विशेष प्रतिष्ठा थी उनके प्रसाद का सभी सम्मान भी करते थे। अत: मामाजी ने प्रसाद वितरण का कार्य हरिजन बालकों से करानी की ठान ली।

यह कार्यक्रम एक सार्वजनिक स्थल पर रखा गया। जिसमें अधिकाधिक लोग इसमें सम्मिलित हो सके। इस कार्य में दाऊदयाल जी उनके मुख्य सहयोगी बनें। उन्होनें सामाजिक पृष्ठभूमि की व्याख्या करते हुए कथा वाचन किया। कथा समाप्ती के उपरान्त प्रसाद वितरण भी बड़ा नियोजित ढंग से किया गया। कुछ लोगों ने इसका विरोध किया जिससे विवाद बढ़ गया। ग्वालियर राज्य प्रशासन सेठ साहुकारों को नाराज नहीं करना चाहती थी। अत: बस्ती में कुछ पंचों ने कुछ युवकों को जाति बहीष्कृत कर दिया किन्तु वह चला नहीं कुछ व्यक्तिगत लोगों को जिनमें रमा बाबु, बालेश्वर दयाल प्रमुख थे। उनको कुछ हानियाँ अवश्य उठानी पड़ी। उन्हें हैरान परेशान किया गया लेकिन युवा वर्ग तो अदम्य उत्साह से परिपूर्ण था। उस समय के समाचार पत्रों ने इस आयोजन की खबरों को प्रमुखता से प्रकाशित किया। जिनमें ग्वालियर 'जयाजी प्रताप' ने छापा कि मुट्ठीभर युवाओं ने जनता की शांति भंग की है, जबकि देशी अखबारों ने इसे क्रान्ति का बिगुल करके छापा। इस प्रकार मामाजी ने सहभोज के धतिंग से सामाजिक बदलाव का अनुठा उदाहरण प्रस्तुत किया। घटना के चार दिन पश्चात् गांधी जी के आग्रह पर मंदिरों के ट्रस्टियों ने हरिजनों को मन्दिर में प्रवेश दिया। फलत: दिल्ली भोपाल बम्बई के सामाजिक नेता बिन बुलाए खाचरौद आने लगे। सम्पूर्ण खाचरौद में युवाओं द्वारा आयोजित सत्यनारायण कथा की भूरी भूरी प्रशंसा होने लगी।[6]

धर्मदास जैन विद्यालय में आदिवासी भीलों का प्रवेश - यद्यपि सत्यनारायण कथा प्रसंग के कारण मामजी की खाचरौद की नौकरी चली गई। तथापि स्वतंत्र चेतना और मननशील बालेश्वर दयाल का मनस्वी मन सामाजिक कार्यों से विमुख नहीं हुआ। संयोग वंश उन्हें झाबुआ रियासत के अन्दर ही थांदला गाँव में धर्मदास जैन विद्यालय में अध्यापक पद पर नियुक्ती मिल गई। इस विद्यालय के हैडमास्टर श्री पृथ्वीचंद शर्मा जो राष्ट्रीय विचार धारा के पोषक थे प्राय: रियासती प्रशासन द्वारा परेशान किये जाते थे अत: मामाजी को इस पद पर नियुक्त किया गया। इस विद्यालय में केवल जैन छात्र ही पढ़ते थे क्योंकि प्रधानता यह उन्हीं का विद्यालय था। परन्तु झाबुआ रियासत की अधिकांश जनसंख्या भील आदिवासियों की थी जो रियासत के असली निवासी थे। जैन समाज तो कस्बों और नगरों में शोषक तत्व के रूप में विद्यमान था। यही बात मामाजी के हृदय में घर कर गई। मामाजी ने भील आदिवासी छात्रों को विद्यालय में प्रवेश के कई बार असफल प्रयास किये। अन्तत: जैन संत एवं मुनि श्री नानचन्द्र जी की सहायता और सहयोग से भील आदिवासी बालकों का जैन विद्यालय में प्रवेश सम्भव हो सका। क्योंकि विद्यालय के प्रबंधकों के मन में जैन मुनि के प्रति पर्याप्त श्रद्धा थी अतएव समस्त विरोध खत्म हो गया। बड़े प्रयासों के बाद लगभग 20 आदिवासी और 7-8 हरिजन छात्र विद्यालय में प्रविष्ट हो सके।[7]

छात्रों के विद्यालय में प्रवेश के पश्चात् मामाजी उनमें सामाजिक कार्यो यथा - सफाई, सामाजिक उत्सवों आदि की शिक्षा प्रदान करने लगे। दिनो दिन विद्यालय में छात्रों की संख्या और क्रियाकलाप बढ़ते गये। रियासती क्षेत्रों के मध्य यह केन्द्र (शिक्षा) पर्याप्त प्रसिद्धि को प्राप्त करने लगा। यहाँ से शिक्षा प्राप्त छात्रों ने रियासती जनता के मध्य सार्वजनिक कार्यो को सम्पादित करने में भी पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त की। थांदला का यह विद्यालय अब जन सेवा का उत्ताम माध्यम बन गया। जिसका सुत्र पाती बीज श्री मामा बालेश्वर दयाल की कार्य प्रणाली तथा शैक्षिक दृष्टिकोण में अर्न्तनिहित था।[8]

अन्तर्जातीय विवाह आयोजन और बालेश्वर दयाल - मामाजी जाति प्रथा के विरूद्ध सबसे बड़ा कार्य अनेक प्रेम प्रसंग जोड़ों का अन्तर्जातीय विवाह सम्बन्ध स्थापित करवाना था। उनकी शिष्या मालती बेन बताती है कि वह स्वयं महाराष्ट्रीयन निम्न जाति वर्ग की महिला थी और उनके प्रति श्री केशवचंद्र जैन समाज से संबंधित थे। इनका विवाह भी मामाजी के सहयोग से ही सम्पन्न हुआ था। इस विवाह के उपरान्त मामाजी को आर्य समाज सहित अनेकों धार्मिक संस्थाओं का आघात सहना पड़ा था। मामाजी द्वारा कई अन्तर जातीय धर्म विवाह भी सम्पन्न करवाये गये थे। अन्तत: मामाजी के इन पुनित कार्यों को हिन्दू धर्मरमाणी महासभा का सहयोग प्राप्त हुआ। इस सभा द्वारा ऐसे कार्यो को संरक्षण एवं आर्थिक व्यय भार वहन किया गया। जिनके सहयोग से 1933-34 में कई अन्तर्जातीय विवाह सम्पन्न हुए।[9]

लंगोटी त्याग की शपथ - मामा बालेश्वर दयाल जब अमर बलिदानी चन्द्रशेखर आजाद के गाँव में उनकी माता जी से मिलने गये हुए थे। तब उन्होनें देखा (भांभरा) की यहाँ के अधिकांश आदिवासी लंगोटी बांध कर रहते थे। इस सम्बन्ध में उन्होनें अपनी आत्मकथा में भी विस्तार से लिखा है। मामाजी की समाज सेवी प्रवृत्ति से प्रभावित होकर भावना प्रधानसेठ जुगल किशोर बिरला ने बामनिया स्टेशन के सामने पहाड़ी पर श्री राम मन्दिर का निर्माण 1936 ई. में करवाया। यह मन्दिर भीलांचल के मध्य में स्थित हुआ करता था। मन्दिर निर्माण पूर्ण होने के उपरान्त राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात के वनवासी आदिवासियों ने मामाजी के आह्वान पर लंगोटी त्याग की शपथ ली। आज अपवाद स्वरूप भी इन क्षेत्रों में लंगोटी कही दिखाई नहीं देती है। पेटलावद का प्राचीन 'लंगोटी स्वर' नामक समाचार पत्र आज भी प्रकाशित हो रहा है। क्षेत्र विशेष से लंगोटी पूर्णत: गायब हो आदिवासी नवीन परिवेश में दिखाई देते है। मंदिर पुजारी वृद्ध मांगीलाल महाराज आज भी यहाँ सपरिवार पूजा पाठ क दायित्व निभा रहे है। इस प्रकार मामाजी ने

जहाँ श्रीराम मन्दिर को आदिवासी भीलों का तीर्थ बनाया वही लंगोटी त्याग की शपथ के माध्यम से उन्हें सामाजिक जीवन के आधुनिक परिवेश के जोड़कर सम्मानित जीवन स्तर की ओर अग्रसर करने में सफलता प्राप्त की।[10]

अस्पृश्यता एवं छुआछुत का विरोध – तात्कालीन हिन्दु समाज में व्याप्त अस्पृश्यता जैसी सामाजिक कुरीति के प्रति बालेश्वर दयाल सदैव चिंतित रहा करते थे। इस कुप्रथा के विरूध उनके लगभग सभी कार्यक्रम महात्मा गांधी से प्रमाणित थे। गांधी जी द्वारा हरिजनों के धार्मिक स्थलों में प्रवेश के लिए जा रहे आमरण अनशन से प्रभावित होकर बालेश्वर दयाल ने खाचरौद में 'भंगभोज' का आयोजन किया। इस आयोजन में हरिजन समुदाय द्वारा सवर्ण वर्ग को प्रसाद वितरण करवाया गया। वो भी उस काल परिस्थिति में जब हरिजन की छाया मात्र के स्पर्श से उस समय कपड़ों के स्नान की परम्परा प्रचलित थी।[11]

आदिवासियों का शैक्षणिक विकास एवं मामा बालेश्वर दयाल – मानव जाति के अनन्य सेवक मामा बालेश्वर दयाल ने सदियों से पीड़ित शोषित एवम् उपेक्षित आदिवासी समाज के उत्थान और कल्याण को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। इतिहास में प्राय: कहा जाता है कि परिस्थितियाँ ही नेतृत्व का निर्माण करती है यह पंक्ति राजस्थान, गुजरात और मध्यप्रदेश की आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र की परिस्थितियों के संदर्भ में पूर्णत: चरितार्थ होती है। जिसने इस क्षैत्र के आदिवासियों के नेतृत्वकर्ता के रूप में मामा बोलश्वर दयाल को प्रतिष्ठित स्थान प्रदान करवाया। आदिवासी समुदाय के सामाजिक राजनैतिक आर्थिक और शैक्षणिक कल्याण की भावना बालेश्वर दयाल के हृदय में युवाअवस्था से ही प्रस्फूटित हो चुकी थी। वे आदिवासी समाज की पिछड़ी दशा का मुख्य कारण उनकी अज्ञनता को मानते थे। शिक्षा के अभाव में यह लोग तात्कालीन रियासतों और अंग्रेजी शोषण का शिकार हो रहे थे। यद्यपि इन क्षेत्रों में गांधी जी के रचनात्मक कार्यक्रमों के तहत् आदिवासी वनवासी गिरिजन उद्धार कार्यक्रम चलाया जाता था। जिसका नेतृत्व ठक्कर बापा को सौंपा गया था, जो एक मनस्वी देशभक्त, सार्वजनिक कार्यकर्ता थे। इनके द्वारा आदिवासी क्षेत्रों में अंग्रेजी शिक्षा पद्धति के कुछ केन्द्र संचालित थे। गुजरात में आयोजित एक शिक्षा सम्मेलन में जब ठक्कर बापा की आदिवासी शैक्षणिक उपलब्धियों का बखान हो रहा था। तब सामान्य श्रोताओं ने इसे एक बड़ी उपलब्धि के रूप में स्वीकार किया किन्तु मामा बालेश्वर दयाल का एक मौलिक मतभेद आदिवासियों के शिक्षा क्रम पर प्रगट हुआ।[12]

मामा बालेश्वर दयाल ने अंग्रेजी शिक्षा पद्धति से आदिवासियों को शिक्षित करने की आलोचना करते हुए कहाँ कि, 'आदिवासियों की शिक्षा अंग्रेजी पद्धति पर न केवल अहितकर है अपितु भयावह भी सिद्ध होगी। हाई स्कूल, इन्टर और बी. ए. उत्तीर्ण करके आदिवासी भील बालक सरकारी अथवा गैर सरकारी नौकरी तो पा जाता है। किन्तु इसे उत्तम उपलब्धि नहीं कहना चाहिए। क्योंकि वह विदेशी शिक्षा का संस्कार प्राप्त करके अन्य जातीय शोषण वर्ग में घूलमिल जायेगा तथा अपने मूल समाज का उसी तरह शोषण करेगा जैसे अन्य नौकरशाही वर्ग के लोग किया करते हैं। ऐसा शिक्षित आदिवासी भील जो स्वयं के घर परिवार से कट कर विदेशी बन जाए, शोषक बन जाए, यह कैसी उपलब्धि होगी ? उपलब्धि तो तब होगी जब शिक्षित आदिवासी अपने वर्गद्ध समाज और समुदाय का ही सार्वजनिक कार्यकर्ता बने। अपने समाज का शोषक नहीं वरन् पोषक बने। इस अवसर पर मामाजी ने कहा कि हमें वह संख्या बताई जावे कि शिक्षा प्राप्त करके कितने भील आदिवासी बालकों ने भीलों के बीच रहने, सुधार कार्य करने और आदिवासी सेवा कल्याण का संकल्प लिया हो और कहाँ कहाँ उक्त कार्य में संलग्न है।[13] शिक्षा का मामाजी का यह दृष्टिकोण मौलिक एवं सराहनीय था जिसे स्वयं गांधीजी ने सराहा था।

मामा बालेश्वर दयाल स्वराज्य की लड़ाई के लिए संकल्पबध देश को शिक्षा जैसे सबल माध्यम का प्रयोग कर शिक्षित शिक्षकों और विद्यार्थियों के सहयोग से पुरातनवादी समाज को सुधार के मार्ग पर लाने का विचार रखते थे। उनका मानना था कि विद्यार्थी और शिक्षक लोक सेवी बनकर अग्रिम समाज का निर्माण करे। साम्राज्यवादी शोषक मण्डली के प्रशासक बनने से बचे जिससे गुलामी का जड़ से निराकरण हो और शिक्षा द्वारा ज्ञान प्राप्त नव समाज का निर्माण हो सके। अपने इन्हीं शैक्षणिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अपने बम्बई प्रवास से लौटने के उपरान्त मामाजी ने मुनिश्री नानचन्द्र स्वामी से बम्बई में प्राप्त आशीवार्द और मार्गदर्शन के अनुसार दाहोद में डूंगर विद्यापीठ स्थापित करने की परिकल्पना को मूर्त रूप प्रदान करना प्रारम्भ किया। इस परिकल्पना का मूर्त रूप 7 मार्च 1937 को दाहोद में डूंगर विद्यापीठ की स्थापना में दिखाई दिया।[14]

मामा बालेश्वर दयाल ने अपनी जमानत राशि (जो घोड़ावत जी ने दी थी) आश्रम की व्यवस्था आदि के लिए अपनी पत्नी के गहने स्वयं की हाथ घड़ी आदि को बेच दिया। तब जाकर दाहोद की गौशाला में विद्यापीठ का संचालन संभव हो सका। यही की परिस्थितियों ने बालेश्वर दयाल को अहसास दिलाया की शहर में बैठकर आदिवासी समस्याओं पर विचार करना व्यर्थ है। अत: मामाजी ने डूंगर विद्यापीठ को अन्यत्र स्थानान्तरित करने की सोची। पूरी छानबीन के उपरान्त बामनिया जो उस समय इन्दौर राज्य का 'काला-पानी' कहलाता था जो अत्यन्त दुर्गम एवं टापू जैसी भौगोलिक स्थिति लिए था का चयन किया। क्योंकि यह मध्य भारत, गुजरात और राजस्थान रियासतों के लगभग मध्य में स्थित था। झाबुआ, जोबट, अलीराजपुर, सैलाना रतलाम धार ग्वालियर, बाँसवाड़ा, डूँगरपुर, पंचमहल, दाहोद कुशलगढ़ आदि कई क्षैत्र इसके काफी निकट स्थित थे। यह स्थान राजनैतिक और सामाजिक दृष्टि से भी सुरक्षात्मक था। कुल मिलाकर यह आदिवासी बाहुल्य क्षैत्र था। जहाँ से अन्य स्थानों के कार्य अच्छी तरह से सम्पन्न किये जा सकते थे। इस प्रकार आदिवासी पिछड़े समुदाय को शिक्षा से जोड़ने के लक्ष्य के साथ 5 अप्रैल 1937 को डूंगर विद्यापीठ का प्रधान कार्यालय दाहोद से बामनिया स्थानान्तरित कर दिया गया।[15]

डुगर विद्यापीठ संस्था बामनिया में स्थापित करने के साथ ही इसके लक्ष्य, उद्देश्य और कार्यो पर गहराई से विचार-विमर्श प्रारम्भ हुआ। अन्तत: संस्था के कुछ उद्देश्य निर्धारित हुए जो इस प्रकार है-

1. आदिवासी भीलों को किसान के रूप में विकसित और संगठित करना।
2. आदिवासियों को वनाचलों से बाहर लाना, वर्तमान समाज के निकट लाना उसके यथार्थ को समझने और उसके अनुकूल व्यवहार करने की क्षमता उत्पन्न करना।
3. आदिवासियों के अज्ञान को समाप्त कर उन्हें अपने अधिकारों और हितों की रक्षा के लिए तैयार करना।
4. आदिवासियों को परम्परागत सामाजिक रूढ़ियों से मुक्त करा उन्हें सामाजिक सम्मान दिलवाना।
5. आदिवासियों को शोषण से मुक्ति दिलवाना।
6. समाज की स्वस्थ रीतियों के अनुसार विकास के अच्छे अवसर दिलवाना, जिससे उनमें अच्छी आदतों का निर्माण हो सके।
7. आदिवासी समाज में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करवाना।

8. आदिवासी संस्कृति को अक्षुण्ण बनाते हुए उन्हें राष्ट्रीय आन्दोलन की मुख्य धारा से जोड़ना ताकि भावी समाज में उनका गौरवपूर्ण स्थान बना रह सके।
9. कर्मठ और साहसी कार्यकर्ताओं के माध्यम से आदिवासी समुदाय के हर संभव विकास जैसे- सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, मानवीय, शैक्षणिक आदि के लिए प्रयत्न करना।
10. आदिवासी समुदाय के लिए दुष्काल और बीमारियों में यथोचित सहायता की व्यवस्था करना।[16]

उक्त उद्देश्यों के साथ बामनिया स्थित श्री बाफनाजी के मकान के दो कमरों में जिनका किराया लगभग पन्द्रह रूपये था में डुगर विद्यापीठ का कार्यालय प्रारम्भ हुआ। थांदला में मामाजी के शिष्य रहे श्री केशव चन्द्र जैन, श्री वरदीचन्द्र जैन, श्री बद्रीनारायण पाठक श्री सतीश चन्द्र जैन, श्री रमाकान्त पाठक, श्री रामनारायण माथुर, श्री मंगलियाजी, उर्फ मंगलसेन, श्री भीमाजी आदि डुगर विद्यापीठ के कार्यो में मामाजी के सहयोगी बन गए। मात्र सात माह में डूंगर विद्यापीठ की 8 शाखाऐं बामनिया के निकटवर्ती क्षेत्रों में प्रारम्भ की गई। आदिवासी छात्राओं के लिए भी शिक्षा की व्यवस्था की गई। सुश्री यशोदा बहन चतुर्वेदी और मामाजी की धर्मपत्नी श्रीमती सावित्री देवी ने बालिकाओं के पालन-पोषण एवं शिक्षण का दायित्व सम्भाला।[17]

संस्था द्वारा बालकों की शिक्षा के साथ भावी कार्यकर्ता तैयार करने का कार्य भी किया गया। इसमें श्री औंकार सिंह जी (कुशलगढ़) बद्री जी त्रिवेदी (रतलाम) लूनाजी बाँसवाड़ा, प्रतापजी (थांदला) मामाजी के विशेष सहयोगी बने।

डुगर विद्यापीठ की बामणिया में शुरुआत होने के कुछ समय पश्चात् इस क्षेत्र में अकाल की भयंकर स्थिति बनी। अन्न और जल की तलाश एवम् उदरपूर्ति के लिए आदिवासी दर-दर भटकने लगे। मध्य भारत राजस्थान गुजरात के आदिवासियों की सहायता कैसे की जाये इस व्यथा ने मामाजी के हृदय को झकझौर दिया। उन्होंने अपने सभी साथियों को सहायता हेतु पत्र लिख भेजे। श्री जयनारायण व्यास स्थिति का जायजा लेने और सहायता करने के उद्देश्य से उक्त क्षेत्रों में आये, उन्होंने अकाल की विषम परिस्थिति में ईश्वर शासकीय रियासतों और अंग्रेजी सरकारों द्वारा आदिवासियों के शोषण का चित्रण एक अत्यन्त मार्मिक कविता के माध्यम से प्रस्तुत किया।

बाकी मत रखना, खूब सता ले,
खूब दिखा ले पशुबल !
निर्बल का बल देख रहा है,
तेरे सब कुकृत्य प्रतिपल !
अन्नत विहीन उदर की आहे,
दावानल की बनकर भीषण।
भस्मीभूत करेंगी उनको
जो दीनो का करते शोषण।[18]

जयनारायण व्यास और बालेश्वर दयाल ने सम्पूर्ण क्षेत्र के गांव-गांव, घर-घर, झोपड़ी-झोपड़ी जाकर स्थिति का जायजा लिया। लेखा जोखा बनाया की कहाँ-कहाँ पर किस प्रकार की मदद की आवश्यकता है। इस भीषण अकाल की दारूण गाथा जैन मुनि नानचन्द्र जी ने जगह-जगह अपने व्याख्यानों में सुनाई जैन लोगों से दया और करुणा के आधार पर कई स्थानों से सहायता भिजवाई। इस कार्य में उज्जैन के श्री दामोदर त्र्यम्बक, ईश्वर भाई वैद्य (खाचरौद) सागरमलजी, मेहताबसिंह जी ने बहुत सहयोग दिया। सहायता के लिए प्राप्त अन्न, वस्त्र धन और अन्य वस्तुऐं कार्यकर्ताओं के द्वारा खाचरौद महीदपुर, बड़नगर, दोहद आदि स्थानों पर भिजवाई गई। जे. सी. मिल्स ने 160 बालकों को वस्त्र एवम् दस रुपये की नगद सहायता दी। इसी प्रकार आगरा की शुद्धि सभा द्वारा अठावन रुपये सात आने की राशि, आर्य सार्वदेशिक सभा ने चंदा एकत्रित करने में विशेष सहयोग दिया। मामाजी के आग्रह पर रतला के डॉक्टर प्रेमसिंह, डॉ. देवीसिंह ने चिकित्सा एवम् स्वास्थ्य संबंधी सेवाऐं प्रदान की। इस प्रकार अकाल के समय मामाजी ने आदिवासी समुदाय की पूर्ण सहायता की जिससे ये समुदाय उन्हें देवता मानने लगा।

अकाल के दौर में सेवा कार्यों के उपरान्त केवल सात माह में डूंगर विद्यापीठ की आठ शाखाऐं विभिन्न गांवां में प्रारम्भ की गई। कुछ ही समय में यह संख्या बढ़कर 20 हो गई। एक कार्यकर्ता द्वारा दो-दो स्थानों का संचालन भी किया गया। बाद में आर्थिक समस्याओं के चलते कुछ शाखाऐं पुन: बंद कर दी गई।[19]

डूंगर विद्यापीठ के शैक्षिक संचालन में मामाजी के शिष्य श्री केशव चन्द्र मुख्य सहयोगी बने। इस विद्यापीठ के पाठ्यक्रम की एक मुख्य विशेषता इसका आदिवासी भील बालकों के अनुरूप निर्धारण थी। उस समय प्रचलित विद्यालयों के पाठ्यक्रम की जगह इसमें प्रारम्भिक स्तर की कक्षाओं में भीलोड़ी (भीलों की भाषा) में मामाजी द्वारा रचित एवं प्रकाशित पुस्तकों को सम्मिलित किया गया। मामाजी द्वारा रचित कुछ पुस्तकें निम्नानुसार है-

1. **पहली पोथी, दूजी पोथी-** यह छोटे बालकों के लिए अक्षर और शब्द ज्ञान कराने वाली पुस्तक थी। इसकी पाठ योजना इस प्रकार तैयार की गई थी कि बालकों को अपनी सभ्यता और संस्कृति का ज्ञान मिल सके। इस पुस्तक की रचना में बालकों के कृमिक विकास को विशेष रूप से ध्यान में रखा गया।
2. **भीलनी खाडनी-** यह प्रौढ़ भीलों की शिक्षा के लिए मामाजी द्वारा तैयार पुस्तक थी। इसमें एक भील की करुण कथा द्वारा प्रचलित अंधविश्वास पर प्रहार किया गया था। साथ ही भीलों के सहिष्णु जीवन साहस, सहनशीलता और दृढ़ संकल्प का वर्णन किया गया था।
3. **पाप नो घुटको बनाम गरीबी की आग-** इसमें थावरिया नामक डाकू के जीवन सजीव चित्रण प्रस्तुत किया गया। जिसने क्षणिक आवेश में आकर जीवन में कई भूलें की जो उसके भावी कष्टों का कारण बनी। इसका उद्देश्य यह दर्शाना था कि आवेश में आकर अकरणीय (गलत) कार्य नहीं करने चाहिये।
4. **पंचतंतर वारतां-** इसमें नैतिक शिक्षा प्रदान करने वाली कई छोटी-छोटी कहानियों को सम्मिलित किया गया था।[20]

डूंगर विद्यापीठ के विभिन्न विभागों का विभाजन गांधीजी की वर्धा योजना के आधार पर किया गया। जिससे शिक्षा प्राप्त आदिवासी समुदाय को रोजगारोन्मुखी प्रशिक्षण भी प्रदान कराया जा सके। इस योजना के अन्तर्गत संस्था द्वारा कुछ अन्य संस्थाऐं प्रारम्भ की गई। जिनमें-

(अ) महावीर विद्याशाला
(ब) प्रताप विद्या मंदिर
(स) अहिल्यामाता वाचनालय एवम् विकास शाला
(द) समर्थ शिवाजी उद्योग शाला

(अ) महावीर विद्याशाला – डुगर विद्यापीठ के अन्तर्गत यह कार्यकर्ताओं को तैयार करने वाला विभाग था। जिसमें नियमित रूप से हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा संचालित परीक्षाओं की तैयारी करवाई जाती थी। इसके लिए एक पृथक पुस्तकालय था जिसमें लगभग 300 पुस्तकें थी।

इसके विद्यार्थियों के लिए आवासीय व्यवस्था के साथ भोजन और वस्त्र की सुविधा भी थी। यहाँ विद्यार्थियों को कृषि, संस्कृत, संस्कृति, राजनीति, समाज सम्बन्धी जानकारी भी दी जाती थी। यहाँ के छात्रों को संस्था द्वारा संचालित कार्यों के लिए कुछ समय देना अनिवार्य था। इसके पिछे मामाजी का उद्देश्य यह था कि इससे छात्रों का संस्था से लगाव तो रहता ही है उन्हें व्यावहारिक ज्ञान और संस्था की कठिनाईयों का भी अनुभव रहता है।

(ब) प्रताप विद्या मंदिर – प्रताप विद्या मंदिर डुगर विद्यापीठ का वह विभाग था जिसमें भील आदिवासी बालकों को विभिन्न स्थानों पर शिक्षा दी जाती थी। इसमें कहीं-कहीं शिक्षा का माध्यम भीली बोली रखा गया था। इसका कारण यह था कि इससे शिक्षक शिक्षार्थी और शिक्षा में भेद ना रहे। बालक शीघ्र ज्ञान ग्रहण कर सके और अपनी भूमि भाषा, और समाज के प्रति अपना कर्तव्य समझ सके।

(स) अहिल्या माता वाचनालय एवम् विकासशाला – इसका उद्देश्य संस्था के कार्यकर्ताओं को देश के तात्कालीन सही समाचारों से अवगत कराना था। जिससे वे समाज को सही और पूर्ण जानकारी प्रदान कर सके। यहाँ समाचार पत्रों के सम्बन्ध में सरकारी नीति और नियंत्रण सम्बन्धी जानकारी भी समय-समय पर कार्यकर्ताओं को प्रदान की जाती थी। इसमें महिला शिक्षा की भी व्यवस्था थी। यहाँ बाद में कोविद परीक्षाओं का भी संचालन किया जाता था।

(द) समर्थ शिवाजी उद्योगशाला – इसका उद्देश्य आदिवासी बालकों को स्वावलम्बी बनाना था। यहाँ इन्हें चरखा कातना, निवार बुनना, साबुन बनाना और सुथारी का कार्य सिखाया जाता था। सम्पूर्ण संस्था की सफाई और स्वच्छता संबंधी व्यवस्था इसी विभाग का दायित्व था। कार्यकर्ताओं और बालकों की स्वास्थ्य संबंधी जानकारी रखना और जरूरी सहायता देना इस विभाग का प्रधान दायित्व था।[21]

इस प्रकार संस्था के विभिन्न विभागों के नामों का चयन भी मामाजी ने एकता और ऐतिहासिकता एकजुटता को ध्यान में रखकर किया था।

डुगर विद्यापीठ के बालकों द्वारा प्रथम कक्षा में भीलोड़ी भाषा में ज्ञान अर्जित करने के उपरान्त आगे की कक्षाओं में उन्हें हिंदी भाषा में अध्ययन कराया जाता था। संस्था द्वारा मुख्य रूप से प्रथमा, विशारद और रत्न की उपाधियाँ दी जाती थी। वस्तुतः डुंगर विद्यापीठ ने न केवल आदिवासी समुदाय ने जन-जागृति उत्पन्न की वरन् उनमें राष्ट्रीय चेतना भी जागृत की। जिससे विदेशी शासन और राजशाही के स्थान पर लोकशाही की स्थापना करने की आदिवासी समाज में समझ विकसित हुई। इस राजनैतिक जागरण के कारण इनमें सामाजिक विकास की चेतना जागृत हुई। शिक्षा प्राप्त कर आदिवासी समुदाय ने समाज में व्याप्त बुराईयों, अंधविश्वासों, रूढ़ियों, शराबखोरी को दूर करने के प्रयत्न प्रारम्भ किये। संस्था द्वारा समय-समय पर औषधि वितरण का कार्य भी किया जाता था। उस समय बामनियाँ आश्रम और उसके द्वारा संचालित बारह शालाओं में 42 गाँवों के छात्र और लोग लाभ उठाते थे। छात्रों की संख्या उस समय 309 के लगभग थी जो उस युग की दृष्टि से कम नहीं मानी जाती थी।[22]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दीक्षित ब्रह्मदत्त : विन्ध्वाटनी के राजनीतिक संत, पृ. 2-3, साभार दर्शन दिनांक 24/12/1992
2. पटेल भरत कुमार नागीन भाई : दक्षिण गुजरात के आदिवासी क्षेत्र में धोडिया जनजाति का एक ऐतिहासिक अध्ययन (सूरत नवसारी वलसाड़ जिलों के संदर्भ में) अ.प्र. शोध प्रबन्ध पेसिफिक वि.वि. उदयपुर 2014, पृ.53-55
3. हिन्दुस्तान - 15 अगस्त 1997
4. मामा बालेश्वर दयालु : जवानी में जीवन के सपने, समता प्रकाशन उदयपुर 1997, पृ.10-11
5. चरपोटा दौलतराम (संकलनकर्ता) : मामा बालेश्वर दयाल की रामायण आदिवासी एकता समाज, भील आश्रम बामनिया मध्यप्रदेश 2006, पृ.3
6. दीक्षित ब्रह्मदत्त एवं कृष्णा : मध्य भारत के प्रकाश पुंज मामा बालेश्वर दयाल, भील आश्रम बामनिया (म.प्र.) 1982, पृ.28-29
7. मेहता मंगल : संघर्ष सपूत मामा बालेश्वर दयाल, प्रकाश मानव जनोदय मुद्रणायल नीमच (म.प्र.) पृ.33
8. तपन भट्टाचार्य एवं सुशीला : सामाजिक महर्षि मामा बालेश्वर दयाल, मामा बालेश्वर दयाल साामजिक विकास केन्द्र एवं शोध संस्थान (ट्रस्ट) झाबुआ (मध्यप्रदेश) 2004, पृ.23-24
9. हिन्दुस्तान 15 अगस्त 1997, पृ.13, नई दुनिया- 25/2/1998 भीलांचल के मानव देवता मामाजी
10. मामा बोलश्वर दयालु : जवानी में जीवन के सपने, समता प्रकाशन संस्थान, उदयपुर, 1997, पृ.19
11. मूर्ति भाई : बामनिया आश्रम व्यवस्थापक साक्षात्कार दिनांक 10/12/2016
12. वडेरा रमेश चन्द्र : मामा बालेश्वर दयाल (मामाजी) इण्डो ग्लोबल सोशियल सर्विस सोसायटी, 2008, पृ. 20
13. तपन भट्टाचार्य / सुशीला बेन : सामाजिक महर्षि मामा बालेश्वर दयाल, मामा बालेश्वर दयाल सामाजिक विकास केन्द्र एवं शोध संस्थान झाबुआ मध्यप्रदेश, 2007, पृ. 25-26
14. ब्रह्मदत्त दीक्षित / कृष्णा दीक्षित : मध्य भारत के प्रकाश पुँज मामा बालेश्वर दयाल, लोक सेवक मण्डल बामनिया रतलाम मध्य प्रदेश 31 अगस्त, 1992, पृ. 31-33
15. मंगल मेहता : सांर्ष सूपत मामा बालेश्वर दयाल जीवन प्रकाशन मन्दसौर (म. प्र.), पृ. 50
16. पूर्वोक्त, पृ. 50-51
17. दीक्षित ब्रह्मदत्त/दीक्षित कृष्णा : पूर्वोक्त, पृ. 58-59
18. मंगल मेहता : सांर्ष सूपत मामा बालेश्वर दयाल जीवन प्रकाशन मन्दसौर (म. प्र.), पृ. 50
19. मंगल मेहता : पूर्वोक्त, पृ. 52
20. वडेरा रमेश चन्द्र : मामा बालेश्वर दयाल (मामाजी), इण्डो ग्लोबल सोशियल सर्विस सोसायटी, 2008, पृ. 22
21. मंगल मेहता : पूर्वोक्त, पृ. 53-54
22. मंगल मेहता : पूर्वोक्त, पृ. 55

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

फणीश्वर नाथ रेणु कृत मैला आंचल की पृष्ठभूमि : एक अध्ययन

डॉ. सूर्यप्रकाश नापित *

प्रस्तावना – उपन्यास का महत्वपूर्ण तत्व उद्देश्य है। अरस्तू ने काव्य का उद्देश्य आनन्द माना है जबकि उपन्यास के क्षेत्र में मनोरंजन, उपदेशवादिता या समाज सुधार उसके प्रारंभिक उद्देश्य रहे हैं। विश्व की सभी भाषाओं के प्रारंभिक उद्देश्य रहे हैं। विश्व की सभी भाषाओं के प्रारंभिक उपन्यासों में मनोरंजन का तत्व प्रमुख रहा है, किन्तु धीरे-धीरे यह तत्व जीवन के यथार्थ चित्रण की ओर उन्मुख होता आया है। 'क्लोरार ने बताया है कि उपन्यास यथार्थ जीवन और व्यवहार का तथा उसक काल का जिसमें वह लिखा गया है, एक चित्र है'[1] 'हिन्दी- उपन्यास में प्रारंभिक युग का उद्देश्य विशुद्ध मनोरंजन या समाज सुधार रहा है।'[2]उद्देश्य रचना में कोई पृथक तत्व नहीं होता उसकी चेतना आत्मा है, उसके सारभूत अंतिम प्रभाव का नियामक तत्व है। कृतिकार का दृष्टिकोण, जीवन-दर्शन अथवा अभीष्ट साध्य ही उद्देश्य होता है। उसके शब्दों में बांधना या खोजना कठिन है। क्योंकि वह प्राण बन संपूर्ण रचना में समाया रहता है। 'आंचलिक उपन्यास नाम में लगा विशेषण ही उसके उद्देश्य को स्पष्ट कर देता है। अंचल-विशेष का समग्र जीवन जो उसकी विशिष्ट अद्धितीय अनन्य आंचलिकता को व्यंजित कर सकें। - इस उपन्यास विधा का लक्ष्य होता है।'[3]

आंचलिकता की सिद्धि यथार्थता पर निर्भर है, अत: वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण अनिवार्य हो जाता है। अंचल विशेष को पूर्ण रूप से केन्द्र- बिन्दु बनाने के लिए सबसे आवश्यक है कि लेखक स्वयं को यथासंभव दूर रखें। परिणामत: उसकी दृष्टि वस्तुपरक होती है। इसके अतिरिक्त आंतरिक वैभिन्नय से अधिक बाह्य वस्तुगत भिन्नता आंचलिकता के विकास में योगदान देती है।

मैला आंचल का उद्देश्य – फणीश्वरनाथ रेणु कृत मेला आंचल (1954) एक विशिष्ट कृति है क्योंकि आंचलिक होते हुए भी उसमें स्वातंत्र्योत्तर भारत के ग्रामों में होने वाले परिवर्तन के सूत्रों का व्यापक धरातल पर अत्यन्त सूक्ष्मता से अंकन हुआ है।यद्यपि लेखक के अनुसार इसमें पूर्णिया जिले के एक पिछडे हुए गांव मेरीगंज की जिन्दगी का चित्रण हुआ है और इसमें फूल भी है, शूल भी है, धूल भी है, गुलाल भी है, कीचड भी है। चन्दन भी। सुन्दरता है, कुरूपता भी- लेखक किसी से भी दामन बचाकर निकल नहीं पाया है। तथापि यह मेरीगंज सिर्फ पूर्णिया का नहीं है, वह हरियाणा में भी हो सकता है, महाराष्ट्र में भी। उत्तरप्रदेश में भी हो सकता है और तमिलनाडु में भी।[4]

यह लेखक की वर्णन शैली की सशक्तता ही है कि मेरीगंज पूरी भारत के गांवों का प्रतीक बन जाता है। जमींदारों का शोषण, आर्थिक वैषम्य ,पुराने नए मूल्यों की टकराहट और असमानता, जमींदारी- उन्मूलन तथा भूमि संबंधी समस्या, राजनीति, धर्म तथा समाज सबके निर्माण और विध्वंस की टकराहट आदि इस उपन्यास में मेरीगंज के माध्यम से इतने विशाल चित्रफलक पर अभिव्यक्त हुयी है कि वह एक काल-विशेष का सजीव एवं प्रभावशाली चित्र उपस्थित करने में सफल हो जाता है।

'मेला आंचल' की एक विशिष्टता यह भी है कि इसमें ग्रामीण जीवन को लेकर केवल ग्रामीण समस्याओं में ही लेखक नहीं उलझ गया है। उसने गांव की अन्तरात्मा को भी स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है।[5]

प्रेमचंद के उपन्यासों की एक बहुत बडी सीमा यह थी कि उन्होंने व्यक्तियों की ओर उतना ध्यान नहीं दिया, जितना समस्याओं की ओर रेणु ने समस्याओं के साथ-साथ व्यक्ति का भी अद्भुत समन्वय करने की चेष्टा की है और यही कारण है कि इस उपन्या समें स्थूलता नहीं सूक्ष्मता की अभिव्यक्ति कलात्मक ढंग से हुई है। जो इसे प्रेमचंद के गांव चित्रण से अलग करती है।

डॉ. प्रशांत ममता को एक पत्र में लिखता है, 'तुम जो भाषा बोलती हो, उसे ये नहीं समझ सकते। तुम इनकी भाषा नहीं समझ सकती। तुम जो खाती हो, ये नहीं खा सकते। तुम जो पहनती हो, ये नहीं पहन सकते। तुम जैसे सोती हो, बैठती हो, हंसती हो, बोलती हो, ये वैसा कुछ नही कर सकते। फिर तुम उन्हें आदमी कैसे कह सकती हो। वह आदमी का डॉक्टर है, जानवर का नहीं- भूख और बेबसी से............तिल-तिल कर घुल मिलकर मरने के लिए उन्हें जिलाना बहुत बडी क्रूरता होगी। ...... यही इंसान है कहां?......अभी पहला काम है। जानवर को इंसान बनाना।'[6]

यह प्रकारान्तर से रेणु के दृष्टिकोण को भी स्पष्ट करता है। ग्रामीण पात्रों की इतनी मानवीयता, सहृदयता तथा काव्यमयता के साथ प्रेमचंद के बाद पहली बार नए संदर्भो में प्रस्तुत की गई है, जो आधुनिकता से भी पूरित है।

ग्रामीण संस्कृति का चित्रण – भारतीय-संस्कृति का मूल एवं उसका सच्चा स्वरूप हमें ग्राम-जीवन में ही प्राप्त है। ग्राम जीवन की बुनियादी गहराइयों के आधार को जाने बिना इस विशाल भारत के बहुविध रूप और उसकी आन्तरिकता एकाता को नहीं समझा जा सकता। हमारी संस्कृति का मूल स्त्रोत कृषि है। हमारा समाज सांस्कृतिक प्रसार कृषि और ग्राम जीवन में ही परिव्याप्त है।

'मनुष्य के रूप में एक सामाजिक सदस्य के नाते जो वह करता है, सोचता है, वह सब जटिल सांस्कृतिक-चक्र से बंधा है।' 'संस्कृति ही वह आधार है जिसके माध्यम से व्यक्ति ज्ञान, कला, नैतिकता, प्रथाएं एवं परम्पराएं सीखता है। संस्कृति एक सामाजिक विरासत है।'[7]

भारतीय कृषक का समस्त जीवन ग्रामीण-संस्कृति से अनुप्राणित है। ग्रामीण कलाएं, पर्व, त्यौहार, संस्कार, रूढियां, प्रथायें, रीति रिवाज, खेलकूद आदि विभिन्न अवयवों के योग से संस्कृति बनती है। ये अवयव ग्राम-जीवन

* व्याख्याता (हिन्दी) राजकीय महाविद्यालय, झालावाड (राज.) भारत

में व्यवस्था एवं अनुषासन के आवष्यक तत्व है तथा ग्रामीणों में घुले मिले हैं। 'कृषकों की संस्कृति की भौतिक वस्तुएं कला और उपयोग दोनों की दृष्टि से उपयोगी है। जैसे ग्रामीण कलाएं, बांस व मूंज की टोकरी बनाना, साडियां काढना आदि।'[8]

कृषक एवं मजदूर वर्ग में चेतना – 'मेला आंचल' के मेरीगंज में खेती–हर–मजदूर अब अपनी मजदूरी के प्रति जागरूक होने लगे है। रामकिरपाल सिंह को उसका हलवाहा स्पष्ट शब्दों में कह देता है कि बगैर मजदूरी लिये काम पर नहीं आयेगा। बात भी ठीक है अन्तत: ये लोग भी परिवार वाले हैं आखिर कहां से मजदूरी छोडी जाती है। कांग्रेसी बालदेव को जब गोनाय ततमा की शिकायत की जाती है तो वह भी कुछ नहीं बोलता। अन्त में जब बोलता है तो मजदूरों का ही पक्ष लेता है, 'गरीब लोगों का दरमाहा नहीं रोकना चाहिए, भाई साहब।' [9]

भूमिधर किसानों की स्मृतियों में आज भी जमींदारी युग की यातनाएं शेष है अत: वे लोग भी विभिन्न कष्ट देकर अपने अहम की परितुष्टि करना चाहते हैं। धनुकधारी टोली के तनुकलाल ने एक सवाल पैदा कर दिया, 'लेकिन हल–फाल काम–काज बन्द करने से मालिक लोग मंजूरी तो नहीं देंगे। एक–दो दिन की बात रहे तो किसी तरह खेपा जा सकता है। सात दिन तक बिना मजूरी के? यह जरा मुश्किल मालूम होता है।' [10]

बलदेव ने निराश होकर पूछा, अब क्या किया जायें

तनुकलाल के पास समस्या का समाधान पहले से ही मौजूद था। बोला 'एक उपाय है, यदि मालिक लोग आधे दिन की मजूरी दे दे तो काम चल जायें।' [11]

तात्कालिक सामाजिक परिस्थितियों का अंकन – उपन्यास को गतिशीलता प्रदान करने में देश, काल और वातावरण का महत्वपूर्ण स्थान होता है। विभिन्न परिस्थितियों का सृजन एवं परिस्थितिजन्य वातावरण का निर्माण उपन्यास को गति ही प्रदान करता है। बल्कि उपन्यास में रोचकता एवं प्रवाह मानता का भी सृजन करता है। 'मेला आंचल' की कहानी में भी इस प्रकार की संस्तुति यत्र–तत्र बिखरी पडी हुई है। 'मेरीगंज की कहानी में वहां के सभी वर्गो एवं जातियों के लोगों का समावेष कर लिया गया है एक ओर वहां की बडी किसान जातियां है तथा दूसरी ओर गरीब, शोषित मजदूर–किसानों का समूह। मध्यमवर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, डॉ0 प्रशान्त जो बाहर से वहांच पहुंचा है। इसके अलावा वहां मठ है, महंत है और राजनीतिक दलों के लोग है। यही सारा समाज है जो कथा को गति और विकास देता है।'[12]

विभिन्न वर्गो में व्याप्त बेकारी – 'मेला आंचल' का गांव मेरीगंज अनन्य जडताओं का शिकार एवं अभावों का विपुल भण्डार है। डॉक्टर प्रशान्त इस गांव में आकर बडा आश्चर्यचकित होता है, जब वस्त्रों के अभाव में निमोनिया के रोगी को पुआल में सिर छिपाते हुए देखता है। डॉ0 प्रशांत के मन में अनेकों प्रष्न उठाते है और वह उन अनुत्तरित प्रश्नों की यातनायें सहता रहा है। इसी प्रकार का प्रसंग उसके समक्ष उपस्थित होता है। 'आम से लदे हुए पेडों को देखने के पहले उसकी आंखें इन्सान के उन टिकोलों पर पडती है, आम की गुठलियों के सूखे गूदे की रोटी पर जिन्दा रहना है.....।'[13] गांव में गरीबी यह स्थिति बेकारी जन्य है। बेकारी ने लोगो को सिसकने के लिए बाध्य कर दिया है, काम के अभाव में रोना ही उनके भाग्य में लिखा है।

यथार्थ चित्रण – रेणु के आंचलिक उपन्यास में बोध प्रवाह शैली में ग्रामीण सामाजिक जीवन का जो यथार्थ एवं निरपेक्ष चित्रण मिलता है, वह हिन्दी उपन्यास साहित्य में अतुलनीय है। ग्राम विशेष के माध्यम से भारतीय ग्रामों का उनके निवासियों की शत और अषत प्रवृतियों का ऐसा सूक्ष्म अंकन अन्य उपन्या समें अदेखने का नहीं लिता। 'यथार्थवादी ढंग से चित्रण होने पर भी इस उपन्यास के आलोचक की कटुता का का अभाव है। इस रूप में रेणु अन्य समाजवादी यथार्थवादी उपन्यासकारों से अलग प्रतीत होते हैं।'[14]

फणीश्वरनाथ 'रेणु' के उपन्यास 'मेला–आंचल' को खूब ख्याति मिली है। कुछ लोगो ने तो इसे गोदान से भी श्रेष्ठ माना है। इस तथ्य को हिन्दी के बहुत कम पाठक जानते होंगे कि रेणु ने मेला आंचल की रचना में सतीनाथ भादुडी की बंग कृति 'ढोढाय चरित मानस' का बडे कौषल से उपयोग किया है।'[15]

रेणु पर ताराशंकर की कथा –सरिता का भी पर्याप्त प्रभाव रहा है जिससे मेला आंचल की औपन्यासिकता पुष्ट हुई है। इसके उपन्यास की विशिष्टता स्थानीय बोलियों के सफल प्रयोग में है। इसके अतिरिक्त कायस्थ, राजपूत , यादव आदि विभिन्न जातियों और वर्गो के पात्रों को आधार बनाकर रेणु ने ऐसे शब्दचित्र खींचे है कि सन् 1942 से लेकर तक उस गांव की सामाजिक और आर्थिक स्थिति, लोगों का बोलचाल, रहन–सहन, रीति–रिवाज, धार्मिक विश्वास नई राजनीतिक चेतना मूर्त हो उठती है।

इसमें देशव्यापी सामाजिक हलचलों औश्र राजनीतिक आंदोलनों के प्रभाव से गांव की रीति–नीति में निरंतर होत रहने वाले परिवर्तनों का विषद चित्रण हो हुआ है, और पूरी ईमानदारी से हुआ है, पर ऐसा कही नहीं लगता कि लेखक ने किसी दल–विशेष सिद्धांत या विचार को पाठक पर थोपने की कोषिष की है। इस दृष्टि से उपन्यास का संतुलन अन्त तक बना रहा है। पर आंचलिकता की इति इतने से ही नहीं हो जाती। ऐतिहासिक संदर्भ में उस गांव का चित्रण वैज्ञानिक कम और कलात्मक अधिक है।

सामाजिक एवं राजनीतिक भावभूमि – रेणु ने मेला आंचल में मिथिला के इस अंचल का बिहारी ग्राम्य जीवन का अल्प शिक्षित निम्न वर्ग की भावनाओं, समस्याओं और कुण्ठाओं का एक व्यापक चित्र अंकित किया है।

मेला आंचल की समस्त घटनाएं मेरीगंज की जनता से संबंधित है और पूर्णिया जिले की सीमाओं में आबद्ध रहती है। उपन्यास के आरंभिक पृष्ठों में इस जिले के ग्रामों का संकेतात्मक वर्णन करने के पश्चात रेणु की तूलिका मेरीगंज पर आकर केन्द्रित हो गई। मेरीगंज का वर्णन इन शब्दों में अंकित हुआ है– 'ऐसा ही एक ग्राम मेरीगंज है।'[16]

उपन्यास की कथा दो भागों में विभाजित है।प्रथम खंड में हमें कोई व्यवस्थित, संतुलित, श्रृंखलाबद्ध कथा नहीं मिलती। किसी भी उत्कृष्ट कलाकृति में समाज–चित्रण प्रस्तुत करते समय एक विशेष सीमा तक संतुलन की आवश्यकता रहा करती है। दूसरे खंड में कथा अपेक्षाकृत संतुलित एवं संयत हो गई है। इसी खंड में कमला डॉक्टर प्रशांत रोमांस अपने चरम सोपान पर पहुंचता है। कमला के गर्भ रह जाता है और सामाजिक मर्यादा का पालन करने के लिए डॉक्टर कमला के साथ विवाह कर लेता है।

गर्भ का समाचार सुनकर कमला के पिता तहसीलदार की मनोदशा का वर्णन भी यथार्थ, मर्मस्पर्शी और पाठक के हृदय में सहानुभूति उत्पन्न कर देने वाला है। मद्य कथा में पुजार तथा संतुलन दृष्टिगोचर होता है। पूंजीपतियों के प्रति पुलिस का पक्षपात और कालीचरण जैसे साहसी देशभक्त को कारावास आदि प्रसंगों का वर्णन सामाजिक यथार्थ का उद्घाटक तो है।

'अब गांव में तीन प्रमुख दल है– कायस्थ, राजपूत और यादव। ब्राहाम्ण अभी तृतीय शक्ति है। गांव के अन्य जाति के लोग भी सुविधानुसार इन्हीं तीन दलों में बंटे हुए हैं।'[17]

सारे मेरीगंज में दस आदमी पढे लिखे है– पढे–लिखे का मतलब हुआ अपना दस्तखत करने से लेकर तहसीलदारी करने तक पढाई। नये पढने

वालों की संख्या है पन्द्रह। गांव की दूसरी छोटी-छोटी जातियां अलग-अलग टोलियों के नाम से जानी जाती है। जैसे- तंत्रियां टोली, पोलियां टोली, गहलोत टोली, यदुवंशी छत्रीटोली, कुर्म छत्रीटोली, अमात्य ब्राहाम्ण टोली धनुकधारी छत्री टोली, कुशवाह छत्रीटोली और रैदास टोली आदि। राजपूतों और कायस्थों में पुश्तैनी मन-मुटाव और झगडें होते आयें है। ब्राहाम्णों की संख्या कम है। इसलिये वे हमेशा तीसरी शक्ति का कर्तव्य पूरा करते रहे हैं।अभी कुछ दिनों से यादवों के दल ने भी जोर पकडा है। जनेऊ लेने के बाद भी राजपूतों ने यदुवंशी क्षत्रिय को मान्यता नहीं दी।

इसके विपरीत समय-समय पर यदुवंशियों के क्षत्रियतत्व को वे व्यंगविद्रूप के बाणों से उभारते रहे। एक बार युदवंशियों ने खुली चुनौती दे दी। बात तूल पकडने लगी थी। दोनों ओर से लोग लगे हुए थे। जमींदारी कचहरी के वकील बसन्तों बाबू कह रहे थे,'यादवों को सरकार ने राजपूत मान लिया है। इसका मुकदमा तो धूमधाम से चलेगा। खुद वकील साहब कह रहे थे।'[18]

'गांव के ग्रह अच्छे नहीं है। जहां छोटी-छोटी बातों लेकर इस तरह झगडे होते हैं, जहां आपस में मेल मिलाप नहीं, वहां तो कुछ न हो वह थोडा है। गांव के मुखिया लोग ही इसके लिए दोषी है। सतगुरू साहेब कहिन है- जहां मेल तहां सरंग है। मानुस जन्म बार-बार नहीं मिलता है। मानुष जन्म पाकर परमारथ में जो विधिन डालते हैं। वे मानुस नहीं। आप लोग तो सास्तर-पुराने पढे हैं: जग्ग भंग करने वालों को पुरान में क्या कहते हैं, सो तो जानते ही है। हमारे कहने का मतलब यह है कि सब कोई भेद-भाव त्यागकर एक होकर परमारथ कारज मे सहयोग दीजिए। आप लोग तो जानते है- परमारथ कारज देह घरो यह मानुष जन्म अकारथ जाय। बस हाथ जोडकर पंच परमेश्वर से बिने है, झगडा त्यागकर मेल बढाइए। सतगुरू साहेब गांव का मंगल करेंगे।आगे आप लोगों की मर्जी।'[19]

'मेला आंचल में जमींदारी-उन्मूलन और तत्संबंधित आक्रोष के स्वर विद्यमान है। मानव की कुत्सि प्रवृत्तियों का चित्रण भी उतनी ही तटस्थता से किया है, जितनी तटस्थता से उसके सौन्दर्य पक्ष का उद्घाटना।'[20]

'समूचा अंचल परम्परावादी संस्कारों एवं अशिक्षा की छाया में सांस ले रहा है। ऐसी स्थिति में दोनो वर्गो का संघर्ष अनिवार्य हो जाता है।'[21]

जाति बहुत बडी चीज होती है। जात-पात नहीं मानने वालों की भी जाति होती है। सिर्फ हिन्दू कहने से ही पिण्ड नहीं छूट सकता है। ब्राहाम्ण है?.... कौन ब्राहम्ण। गौत्र क्या है? मूल कौन है?...... शहर में कोई किसी से जात नहीं पूछता। शहर के लोगों की जाति का क्या ठिकाना ! लेकिन गांव में तो बिना जाति के आपका पानी नहीं चल सकता। प्रशांत अपनी जाति छिपाता है। सच्ची बात यह है कि वह अपनी जाति के बारे में खुद नहीं जानता।

'तन्त्रिमाटोले में पंचायत हुई! बन्दिश हुई है- तन्त्रिमाटोले की कोई औरत अब बाबूटोला के किसी आंगन में काम करने नहीं जायेगी। बाबू-बबुआन लोग शाम को गांव में आवे, कोई हर्ज नहीं किसी की अंदर हवेली में नहीं जा सकते। मजदूरी में जो एक-आध सेर मिले, उसी में सबों को संतोष रखना होगा। बलाई आमदनी में कोई बरकत नहीं। अनोखे और उचितदास छडीदार हुआ है। जिसे चाल से बेचाल देखेगा, बांस की छडी से पीठ की चमडी उधेड लेगा।'[22]

'आधुनिक युगबोध के साथ ग्राम्य जीवन की जितनी समस्यायें लगी हुई है, उन सबका ताना-बाना मेला आंचल में चुना गया है। चूंकि आंचल मैला है और तार-तार हो गया है, इसलिए बिखराव तो उसमें है किन्तु उसके साथ ही वह आंतरिक समन्वय तो है ही यह ताना-भरनी, जिसके बिना आंचल को ओढा नहीं जा सकता। इस रूप में रेणु अन्य समाजवादी यथार्थवादी उपन्यासकारों से अलग प्रतीत होते हैं।'[23]

'भारत की राजनीतिक जिन्दगी की यह एक सच्चाई है कि उनका हर दल जातीयता के प्रति सतर्क है। चाहे कांग्रेस हो या जनसंघ, कम्यूनिस्ट हो या सोशललिस्ट सभी के निर्णय जाति पर होते हैं। प्रतिक्रियावादी और प्रगतिशील दोनो गुटों में इस बिन्दु पर साम्य है, मेला आंचल का प्रसंग साक्षी है।'[24]

रेणु की विशेषता यह है कि मेला आंचल में उन्होने सभी राजनीतिक विचारधाराओं का बडा संतुलित चित्रण किया है। न किसी को ऊपर उठाने की कोशिश की है, न किसी को सायास नीचे गिराने की। वस्तुत: जिस घुटनभरी जिन्दगी की कशमकश उन्होने की चित्रित की है, उसमें यह राजनीतिक चित्रण इतना घुल मिल गया है कि वह अलग से देखा ही नहीं जा सकता। रेणु की निर्वेयक्तिकता एवं तटस्थता ने उसे और भी गहरा रंग दिया है। वे कहीं भी मताग्रही नहीं प्रतीत होते हैं। उन्होने वास्तव में एक व्यापक मानवतावाद की स्थापना करने की चेष्टा की है।

कोई भी राजनीतिक विचारधारा मनुष्य की अवहेलना करके, मानव-मूल्यों की उपेक्षा करके तथा मानवीयता का तिरस्कार करके न तो जीवित रह सकती है और मानव न मानव-मन को स्पर्श ही कर सकती है। रेणु ने मेला आंचल में यही सिद्ध करने की चेष्टा की है और इसे अस्वीकार रेणु ने मेला आंचल में यही सिद्ध करने की चेष्टा की है और इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। आज सामाजिक एवं राजनीतिक विघटन केवल इसलिए बढ रहा है क्योंकि सभी राजनीतिक दल जनता से दूर जा पडे है और अपने अपने व्यक्तिगत स्वार्थ एवं क्षुद्रता के संकीर्ण दायरों में पनप रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अजित कुमार - उपन्यास की विकास-यात्रा 'आलोचना' पृ.13
2. अजित कुमार - वहीं पृ. 13
3. सुषमा प्रियदर्शिनी - हिन्दी उपन्यास पृ. 80
4. रेणु - मेला आंचल भूमिका
5. सुषमा प्रियदर्शिनी - हिन्दी उपन्यास पृ. 278
6. रेणु - मेला आंचल पृ. 18
7. डॉ0 ज्ञानचंद गुप्ता - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी- उपन्यास और ग्राम चेतना। पृ. 208
8. डॉ0 ज्ञानचंद गुप्ता - वहीं पृ. 178
9. रेणु - मैला आंचल पृ. 16
10. रेणु - मैला आंचल पृ. 16
11. रेणु - वहीं पृ. 16
12. डॉ. बंसीधर - हिन्दी के आंचलिक उपन्यास: सिद्धान्त और समीक्षा पृ. 84
13. डॉ. ज्ञानचंद गुप्ता - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी-उपन्यास और ग्राम चेतना पृ. 164
14. डॉ0 लाल साहब सिंह - हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना पृ. 179
15. सुषमा प्रियदर्शिनी - हिन्दी उपन्यास पृ. 192
16. डॉ0 प्रेम भटनागर - हिन्दी उपन्यास शिल्प: बदलते परिप्रेक्ष्य पृ. 156
17. रेणु - मैला आंचल पृ 14

18. रेणु – वहीं पृ 15
19. रेणु – वहीं पृ 25
20. सुषमा प्रियदर्शिनी – हिन्दी उपन्यास पृ 279
21. अतुल वीर अरोडा – आधुनिकता के संदर्भ में आज का हिन्दी उपन्यास पृ. 126
22. रेणु – मैला आंचल पृ. 156
23. डॉ0 लाल साहब सिंह – हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना पृ. 161
24. डॉ. ज्ञानचंद गुप्ता – स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और ग्राम चेतना पृ. 70

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

नवम् राजस्थान विधानसभा के प्रसंग में राजनीतिक संस्कृति

डॉ. गोपाल सिंह*

प्रस्तावना – राजनीतिक विश्लेषण राज वैज्ञानिकों का प्रायोगिक क्षेत्र है। राजनीतिक अभिजन, प्रशासक, सामान्य नागरिक आदि भी स्वयं के लिए समय-समय पर कार्य करते हैं।किन्तु उसे हम वैज्ञानिक राजनीतिक विश्लेषण नहीं कहते क्योंकि वह विशेष मूल्यों एवं पूर्वाग्रहां के दृष्टिकोण से किया जाता है। राजनीतिक मूल्य निरपेक्ष या ब्रैश्ट के शब्दों में, वैज्ञानिक-मूल्य सापेक्ष होकर वैज्ञानिक पद्धति से राजनैतिक विश्लेषण करता है किन्तु इसके पूर्व उसे राजनीतिक संस्कृति तथा उसके प्रभाव, प्रक्रिया आदि से सुविज्ञ होना जाना चाहिए ताकि वह सम्बद्ध राजनीतिक व्यवहार का, उसमें निहित मूल्य परिधि के परिप्रेक्ष्य में मूल्य निरपेक्ष राजनीतिक विश्लेषण प्रस्तुत कर सके तथा अपनको निजी सांस्कृतिक मूल्यों में पृथक रख सकें। राजनीतिक संरचनाओं, प्रक्रियाओं एवं प्रकार्यो को मूल्यें को सेटिंग या पर्यावरण में ही समझा जा सकता है। मूल्य ही औचित्यपूर्णता एवं सत्ता के मध्य पुल का कार्य करतहै। उन्हें ही शक्ति, प्रभाव एवं सत्ता आदि का महत्वपूर्ण स्त्रोत माना जाता है। राजनीतिक संस्कृति विचारवादी, अभिवृक्तियों तथा विश्वासों जैसी राजनीतिक प्रक्रियाओं तथाउनकी अभिव्यक्तियों में स्थिति निर्धारणों कसेट होती है। उसका संबंध राज व्यवस्था के मानकों तथा सदस्यों के साथ होता है ये किसी समाज के ऐतिहासिक अनुभव है जिन्हें समाजीकरण की प्रक्रियाओं द्वारा जीवंत बनाये रखा जाता है अनेक कारकों के प्रभाव से उनकस्वरूप में परिवर्तन भी होता रहता है।

प्रत्येक राजव्यवस्था को उत्तार जीवित तथासतत बनाये रखने एवं दबावों, द्वन्द्वों, संकटों आदि का सामना करने के लिये एक मात्रा में मूल्यात्मक मतैक्य का होना तथा उसके सदस्यों का प्रति निष्ठावान होना आवश्यक है इनसेही राजनीतिक संस्कृति का संबंध होता है। वह राज व्यवस्थाका महत्वपूर्ण उपसंरचना होती है वह उसको सहारा देती है और सभी स्तरों पर उसे प्रभावित एवं प्रति सम्भारित करती है यही राजनीति के कार्यक्षेत्र अर्थात राजनीति की राजनीति की मर्याद्राओं तथा जीवन के सार्वजनिक एवं व्यक्तिगत क्षेत्रों की औचित्यपूर्ण सीमाओं को परिभाषित करती है। यह संपूर्ण राजनीतिक प्रक्रिया, व्यक्ति कार्यो, समस्याओं एवं सहभागियों को निर्धारित करती हैलुसियन डब्ल्यू, पाई राजनीतिक संस्कृति राजनीति के आत्म प्रेरक क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करती है इसका कार्य नीति एवं सामूहिक व्यवहार का अर्थ तथा मार्ग निर्देशन देना है।[1]इरिक रोवे ने अपने ग्रन्थ मॉडर्न पालिटीज 1968) में लिखा है कि राजनीतिक निर्दिष्ट समय एवं स्थान पर मानवीय पर्यावरण में संचालित होती है। यह पर्यावरण तीन प्रकार का होता है- (1) भौतक (2) आर्थिक एवं सामाजिक (3) सांस्कृतिका। सांस्कृतिक पर्यावरण में मूल्य, विश्वास, संवेगात्मक अभिवृक्तियां आदि आते हैं राजनीतिक व्यवहार का राजनीतिक संस्कृति में आधार होता है। मैक्स वेबर, पारानन्नस, मैनहीम पाई वर्षा आदि सभी ने राजनीतिक संस्कृति को राजनीतिक व्यवहार का विश्लेषण करने के लिये महत्वपूर्ण माना है।राजनीतिक सांस्कृतिक के क्षेत्र में पाई, आमण्ड तथा वर्षा [2] के अलावा डेनियल लर्नर मार्टन गॉर्डन एलेस इलीज, रॉबर्ट हैस, लॉयड फ्री सिन्वर्ट रजनी कोठारी, एमपी.राणा आदि ने आनुभाविक अध्ययन किये हैं।

राजसंस्कृति के विश्लेषण में विभिन्न वर्गो, दबावों समूहों, संघों साम्प्रदायिक दलों आदि से संबंधित अराजसंस्कृति की अवहेलना नहीं की जा सकती है। पाई के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्वयं के ऐतिहासिक प्रसंग में अपने समाज और उसके लोगों की राजनीति के बारें में ज्ञान तथा भावनाओं को जानना एवं अपने व्यक्तित्व में संयुक्त करना चाहिए। [3] प्रत्येक पीढी सामाजीकरण के माध्यम से राजसंस्कृति को प्राप्त करके, उसे आत्मसात् करने के पश्चात् उसमें संशोधन परिवर्तन आदि करती रहती है। इस प्रकार नये-पुराने की परंपरा एवं आधुनिकता का संघर्ष चलता रहता है। यह द्वन्द विकासशील देशों को अत्याधिक प्रभावित करता है।

राजनीतिक संस्कृति किसी समाज की सामान्य संस्कृति का ही अंग है जिस प्रकार सामान्य संस्कृति मनुष्य का सामाजिक जीवन के प्रति दृष्टिकोण है उसी प्रकार राजनीतिक संस्कृति लोगों की राजनीति के प्रति मनोवृति है। आमदण्ड ने अपने एक लेख 'कम्पेरेटिव पॉलिटिकल सिस्टम' में राजनीतिक संस्कृति शब्द का जिस अर्थ में इसे आजकल समझा जाता है पहली बैर 1966 में प्रयोग किया था।

आमन्ड और पावेल- 'राजनीतिक संस्कृति राजनीतिक व्यवस्थाओं के लोगों की राजनीति के प्रति मनोवृक्तिा व रवैया है।'

ऐलनबाल के अनुसार-'राजनीति संस्कृति, लोगों की राजनीतिक व्यवस्था व राजनीतिक मुद्दों से संबंधित भावनाएं मूल्य और धारणाएं है।' ल्यूशियन डब्ल्यू पाई ने लिखा है कि कोई भी राजनीतिक संस्कृति दो बातों पर आधारित होती है, ये हैं-

1. राजनीति व्यवस्था के सामूहिक इतिहासों की उपज
2. उन व्यक्तियों के जीवन इतिहासों की उपज है जो उस राजनीतिक व्यवस्था को जन्म देते हैं,

सारांश राजनीतिक संस्कृति राजनीति के क्षेत्र को उसी प्रकार संरचना को अर्थ प्रदान करती है जिस प्रकार सामान्य संस्कृति सामाजिकरण जीवन को संगति और एकीकरण प्रदान करती है।

राजनीतिक संस्कृति : व्याख्या एवं विकास – पाई के अनुसार- राजनीतिक संस्कृति अभिवृतियों, विश्वास तथा मनोभाव का समुच्य है जो राजनीतिक प्रक्रियायाओं को अर्थ एवं सुव्यवस्था आर्डर प्रदान करता है। वह राजव्यवस्था में व्यवहार को नियंत्रित करने वाली अन्तनिर्हिपूर्व धारणाओं

* व्याख्याता (राजनीति विज्ञान) राजकीय महाविद्यालय, शिवगंज, सिरोही (राज.) भारत

तथा नियमों बताता है इसमें राजव्यवस्था के राजनीतिक आदर्श तथा संक्रियाशील मानक दोनो ही सम्मिलित रहते हैं। आमण्ड एवं वर्बा ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मन, इटली और मैक्सिकों की राजनीतिक संस्कृति का अध्ययन करने के पश्चात इस परिणाम पर पहुंचे है कि राजनीतिक संस्कृति राजव्यवस्था उसको अवयवों एवं व्यवस्था में व्यक्ति के व्यक्तिगत कार्यो के प्रति विशिष्ट राजनीतिक अभिमुखीकरणों तथा अभिवृत्त्यिों का संयुक्त रूप है। [8]

राजव्यवस्था के प्रति अभिमुखन को राजनीतिक संस्कृति कहा जाता है। इस धारणा को सबसे पहले ग्रेबियल आमण्ड [9] ने तुलनात्मक राजनीतिक अध्ययन के लिए रखा था। राजनीतिक संस्कृति की अवधारणा सर्वथा नवीन या मौलिक नहीं है यह प्राचीन समय में हीरोडोट्स, प्लेटो, अरस्तु आदि ने तथा आधुनिक काल में डिकाकबिल, ब्राइस एमरसन, मीड, फ्रोम आदि ने इस दिशा में अपने-अपने ढंग से चिंतन दिया है।

राजनीतिक संस्कृति की प्रकृति – राजनीतिक संस्कृति की प्रकृति के विषय में राजविज्ञानियों के अलग-अलग दृष्टिकोण है। आमण्ड उसे कार्य के प्रति अभिमुखीकरण बियर 'राजनीतिक संस्कृति' ईस्टन पर्यावरण तथा स्पिरो 'राजनैतिक शैली' कहलाता है विशुद्ध आनुभाविक दृष्टि से इसका प्रयोग सर्वप्रथम आमण्ड एवं कोलमैन द्वारा विकासशील क्षेत्रों का अध्ययन करते समय किया। राजनीतिक संस्कृति राजनीति के व्यक्तिनिष्ठ एवं मनोवैज्ञानिक आयामों के सामूहिक अभिव्यक्तिकरण के रूप में प्रकट होती है। उसे राजव्यवस्था के सामूहिक इतिहास तथा व्यवस्ता के जीवन इतिहास की संयुक्त उपज कहा जा सकता है। दूसरे शब्दों में वह राजनीतिक एवं व्यक्तिगत दोनो प्रकार की घटनाओं से प्रस्तुत होती है। राजनीतिक संस्कृति प्रत्येक समाज की विशिष्ट थाती होती है।

स्वयं व्यक्तियों का अभिमुखन या उन्मुखन अनेक परस्पर संबंधित कारकों का आधारों पर निर्भर होता है। इनमें ऐतिहासिक, भौगोलिक वैचारिक तथा सामाजिक आर्थिक कारक अधिक महत्वपूर्ण होते हैं। प्रत्येक देश की भूतकालीन जय पराजय की गाथाएं उसका ऐतिहासिक आधार बन जाती है। इतिहास वर्तमान एवं भविष्य का प्रेरक, साक्षी एवं मार्गदर्शक बन जाता है। प्रत्येक व्यक्ति उसी की मानवीय गोद में पलता है। उसके वर्ग, वर्ण, जातियां, भाषा परंपराएं रीतिरिवाज आदि सभी प्रत्येक नागरिक के जीवन का अंग बन जाती है। यह व्यवस्था आर्थिक व्यवस्था के साथ मिलकर और अधिक दृढ एवं कठोर बन जाती है। प्रचलित विचारधाराएं जिसमें शिक्षा प्रणाली, समाचार-पत्र तथा अन्य संचार साधनों का बडा महत्व होता है। राजनीतिक संस्कृति के स्वरूप को अत्याधिक प्रभावित करती है। विश्व के अनेक देशों में क्रांतियों का सृजन इसी प्रकार से हुआ है। स्वयं राजव्यवस्था तथा उसका बाहरी एवं भीतरपरिवेश अभिमुखन अभिमुखन का एक बडा स्त्रोत होता है। महत्वपूर्ण घटनाएं भी यथा विश्वयुद्ध वैज्ञानिक एवं तकनीकी आविष्कार आदि अभिमुखन का स्त्रोत बन जाते हैं।

(क) आनुभाविक विश्वास

(ख) मूल्य अभिरूचियां

(ग) प्रभावी अनुक्रियाए – आनुभाविक विश्वास इसका संबंध व्यक्ति की राजनीतिक विश्व के बारे में समझते हैं इससे राजनीतिक व्यवस्था में लोगों की दिलचस्पी या उसके प्रति रूखेपन का ज्ञान होता है जैसे – अगर कोई व्यक्ति स्वयं यह विश्वास रखने लग जाता है कि आम चुनाव में उसके मत देने या नहीं देने सो कई फर्क नहीं पडेगा तो वह सामान्यतया संस्कृति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण लक्षण राजनीतिक समाज के व्यक्तियों की आस्थाओं और सर्वाधिक महत्वपूर्ण लक्षण राजनीतिक समाज के व्यक्तियों की आस्थाओं और विश्वासों का है इसी आधार पर शासकों और शासितों के पारस्परिक संबंधों का नियमन होता है व्यक्ति यह विश्वास राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया में स्वही के अनुभव से प्राप्त करता है। यह विश्वास चाहे गलत हो या सही किन्तु राजनीतिक संस्कृति के प्रमुख लक्षण के रूप में हर समाज में पाए जाते हैं।

प्रभावी अनुक्रियाएं ज्ञान राजनीतिक संस्थाओं और प्रक्रियाओं के प्रति अनुकूल मनोभावों को कहा जाता है उदाहरण के लिए एक राजनीतिक समाज के व्यक्तियों को अपने राष्ट्र देश या व्यवस्था पर गर्व हो सकता है किसी देश में हित समूहों और दबाव समूहों को अच्छी दृष्टि से देखा जाता है तो कहीं इन्हें हेय दृष्टि से देखा जाने लगता है राजनीति पर लोगों की धारणायें राजनीतिक संस्कृति को नया रंग देने में समर्थ होती है।

राजनीतिक संस्कृति इन तीनों विशेषताओं से मिलकर बनती है किन्तु ये तीनों लक्षण भी परस्पर कई प्रकार से संबंधित रह सकते हैं।

1. ये लक्षण एक दूसरे से पृथक या अनन्य नहीं होकर परस्पर संबंधित रहते हैं।
2. यह एक दूसरे के अनुकूल रहे यह आवश्यक नहीं है।
3. यह समाज के विभिन्न भागों में समान रूप से विसरित होते हैं।
4. राजनीतिक समाज की जनसंख्या के विभिन्न भागों में यह अलग-अलग तीव्रता में पाए जा सकते हैं।

राजनीतिक संस्कृति के निर्णायक तत्वों व लक्षणों के विवेचन से स्पष्ट है कि यह किसी देश की सामान्य संस्कृति से संबंधित होने के कारण भी मात्रात्मक अंतरों वाले हो सकते हैं इससे राजनीतिक संस्कृति के भिन्न-भिन्न रूपों का संकेत मिलता है।

राजनीतिक संस्कृति के नियामक – ग्रेबियल आमण्ड [10] की मान्यता है कि संस्कृतियों की विविधता के लिए कई कारण उत्तरदायी होते हैं टालकोट पारसन्स [11] के अनुसार हर समाज की संस्कृति के प्रमुख तीन नियामक होते हैं। इनमें व्यक्ति की राजनीतिक सक्रियता घटती या बढती है जो अन्तत: राजनीतिक संस्कृति को भिन्न-भिन्न प्रकार की बनाते हैं-

1. व्यक्तिपरक हित
2. सहभागिता
3. राजनीतिक विश्वास

राजनीतिक समाज में व्यक्ति की राजनीतिक सक्रियता के यही तीन आधार है इन्हीं से राजनीतिक अभिमुखीकरण बनते हैं और राजनीतिक संस्कृति तो विशिष्टपन मिलता है यह हर देश की राजनीतिक संस्कृति के नियामक होते हैं इन्हीं में हेर-फेर व अंतर के कारण एक देश की राजनीतिक दूसरे देश की संस्कृति से भिन्न बन जाती है या उसी के समान हो जाती है। व्यक्तिपरक हित व्यक्ति के राजनीतिक के बारे में विचार, राजनीतिक व्यवस्था द्वारा उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति या उनको पूरा करने में असमर्थता के आधार पर बनते हैं अत: राजनीतिक संस्कृति का एक महत्वपूर्ण नियामक व्यक्ति के व्यक्तिपरक हित होते हैं अगर कोई राजनीतिक व्यवस्था व्यक्ति के हितों की साधक है तो उसका राजनीतिक संस्कृति में सकारात्मक रूख होगा और अगर व्यवस्था उनमें बाधक है तो उसका नकारात्मक रवैया हो जायेगा राजनीतिक संस्कृति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण नियामक यही कहा जा सकता है।

सहभागिता राजनीतिक व्यवस्था में व्यक्ति किसी उद्देश्य विशेष व्यक्तिगत सार्वजनिक या मानवीय को प्राप्त करने में सक्रिय भूमिका निभाने

के लिए या केवल दिखावे या अपने साथियों के साथ रहने के लिए सहभागी हो सकता है। सहभागिता चाहे किसी उद्देश्य से प्रेरित हो किसी उद्देश्य को प्राप्त करने के प्रयत्न से संचालित हो हर अवस्था में व्यक्ति की राजनीति संबंधी मान्यताओं व विचारों का निरूपण करती है व्यक्ति किस प्रकार के विचार रखेगा या किसी राजनीतिक घटना पर किस प्रकार की प्रतिक्रिया करेगा यह बहुत कुछ उसकी राजनीति में भाग लेने की इच्छा पर निर्भर करता है। अत: व्यक्ति की सहभागिता राजनीतिक संस्कृति का आधारभूत नियामक है।

राजनीतिक संस्कृति के आधार – आमण्ड और पावेल [12] ने लिखा है कि राजनीतिक संस्कृति के नियामकों के प्रभाव को कम अधिक करने वाले अनेक तथ्य होते हैं इन्हे राजनीतिक संस्कृति के आधार कहा जाता है वैसे तो आधारों की संख्या अनगिनत हो सकती है किन्तु इनमें तीन को आधारभूत माना जा सकता है। इन आधारों से व्यक्ति अपने हितों ,सहभागिता या मूल्य अबिमुखीकरणों के निश्चय की स्थिति में आता है–

क. ज्ञानात्मक अभिमुखीकरण
ख. भावात्मक अभिमुखीकरण
ग. मूल्यांकनात्मक अभिमुखीकरण

राजनीतिक संस्कृति की प्रकृति उसकी पृथकता और समाज विशेष में विचित्रपन इन परिवतत्रयों से ही निर्धारित होता है।

ज्ञानात्मक अभिमुखीकरण व्यक्ति को अपने व्यक्तिपरक हितों के माध्यम से राजनीतिक संस्कृति में भाग लेने के लिए तैयार करने का काम करते हैं। इसका आशय यही है कि व्यक्ति राजनीतिक वस्तुओं, घटनाओं क्रियाओं और विभिन्न राजनीतिक मुद्दों पर कितना औश्र किस प्रकार का ज्ञान रखता है यह ज्ञान सही और गलत भी हो सकता है ढोनो ही अवस्थाओं में यह ज्ञान व्यक्ति के राजनीतिक व्यवहार को प्रमाणित करता है इसका संबंध व्यक्ति के मस्तिष्क में राजनीतिक व्यवस्था के ज्ञानात्मक नक्शे का चित्र से है जैसे– लोगों के मस्तिष्क में राजनीति के बारे में यह चित्र सही और निष्पक्ष रूप से बन सकता है तो किसी का ऐसा चित्र अपने मनोभाव स्वार्थो से विकृत रूप में हो सकता है कई बार लोगो का ऐसा ज्ञानात्मक मनोभावों से ही व्यक्ति अपने व्यक्तिपरक हितों को राजनीतिक व्यवस्था से पूरा होना या नहीं होना आंकता है अत: राजनीतिक संस्कृति के परिवत्रय के रूप में व्यक्ति के ज्ञानात्मक अभिमुखीकरणों का प्रमुख स्थान होता है इसी से उसका राजनीतिक व्यवहार नियमित होता है। भावात्मक अभिमुखीकरण का संबंध व्यक्ति की उन भावनाओं से है जिनके कारण यह राजनीतिक गतिविधियों से लगाव या अलगाव या नापसंदगियां रखने लग जाता है जिससे वह राजनीतिक प्रक्रियाओं में सहभागी बनता है या उससे अलग–थल रहता है इससे राजनीति में उसकी अभिरूचि का निश्चय होता है इसी से वह किसी व्यवस्था, संस्था या प्रक्रिया को अस्वीकार करता है राजनीतिक मुद्दों के साथ व्यक्ति अपनी भावनाओं को जोडकर उनका महत्व या उनकी निरर्थकता का आधार बनता है इसी के आधार पर व्यक्तियों की सहभागिता, राजनीति में सक्रियाता या उदासीनता का ज्ञान किया जा सकता है यह व्यक्ति को राजनीति में सम्मिलित होने या न होने को ठोस आधार प्रदान करता है।

मूल्यांकनात्मक अभिमुखीकरण से व्यक्ति राजनीतिक को अर्थ प्रदान करता है राजनीतिक प्रश्नों, समस्याओं और मुद्दों पर अपना मत या निर्णय करते समय व्यक्ति मूल्यों के मानदण्ड प्रयुक्त करता है व्यक्ति राजनीतिक क्रिया के संदर्भ में अपना संगठन पसंद मूल्य और बांध इत्यादि का चयन जिस विधि में करता है उसी का मूल्यांकनात्मक अभिमुखीकरण कहा जाता है व्यक्ति को हर राजनीतिक गतिविधियों का अर्थ करना होता है यह अर्थ मूल्यों के आधार पर होता है और यह मूल्य उसके हितों से निर्धारित हो सकते हैं। अत: कई बार व्यक्ति राजनीतक क्रिया को अर्थ प्रदान करते समय मूल्यों से अधिक अपने हितों का ध्यान रखने लग जाता है। मूल्यांकन में यह भी सम्मिलित है कि व्यक्ति किसी स्थिति को किस प्रकार परिभाषित करता है और सक्रियता के लिए कौन से साधन चुनता है और चुने हुए साधन उपकरणों का प्रयोग किस शैली से करता है। जैसे व्यक्ति किसी राजनीतक गतिविधियों का विरोध करने का निश्चय कर लेता है तो इस विशेष उपकरणों का चयन, इनके प्रयोग की शैली और उस स्थिति या गतिविधि का उसके द्वारा किया गया अर्थ और व्याख्या उसके मूल्यों के आधार पर ही होगा। अहिंसा का मूल्य धारण किया रहने पर व्यक्ति घटना विशेष की अनुपयुक्तता और सुनिश्चितता विरोध के निश्चय व्यक्ति के मूल्यांकनात्मक अभिमुखीकरण से ही होता है। व्यक्ति इसके माध्यम से राजनीतिक विश्वासों को व्यावहारिक रूप देता है।

राजनीतिक संस्कृति को कई तथ्यों द्वारा प्रभावित होते देखा जा सकता है इन नियामकों के कारण राज्यों में राजनीतिक संस्कृतियां भिन्नता वाली बन जाती हैं। अगर विकासशील राज्यों की राजनीतिक संस्कृतियों को देखा जाये तो यह जानकर हैरानी होती है कि इन देशों में कई कारणों से लोगो के ज्ञानात्मक भावात्मक और मूल्यांकनात्मक अभिमुखीकरण ऐसी अस्थिर भ्रांतिपूर्ण बातों पर आधारित है कि उनको ठीक कर पाना करिश्में वाले राष्ट्रवादी नेताओं के लिए कठिन ही लगता है।

राजनीतिक संस्कृति के आयाम

क. राष्ट्रीय अभिज्ञान
ख. साथी नागरिको के साथ अभिज्ञान
ग. शासन निर्गतों के बारें में विश्वास।
घ. निर्णयकारिता के बारे में आस्ताएं।

राष्ट्रीय अभिज्ञान, राजनीतिक संस्कृति का महत्वपूर्ण आयाम होता है। इसी से राजनीतिक व्यवस्था में व्यक्ति का राजनीतिक व्यवहार विशेष प्रकार का बनता है यह राष्ट्रीय बुद्धिजीवियों और विशिष्ट वर्गो की गतिविधियों का औचित्य प्रदान करता है अभिजन इस आधार पर कि वे संपूर्ण राष्ट्र के लिए है अपने अनुयायियों व आम जनता का समर्थन प्राप्त करते हैं राष्ट्रीय अभिज्ञान या व्यक्ति की राष्ट्र के साथ तादात्मय या एकात्मय की भावना का विकास राष्ट्र के निर्माण की दिशा में महत्वपूर्ण तथ्य है जो नये राष्ट्र के प्रसंग में राजनीतिक संस्कृति सजीव बनती है और व्यक्तियों के राजनीतिक दृष्टि से सक्रिय बनाती है जिन समाजों में संचार साधन बहुत ही अपर्याप्होते हैं बुद्धिजीवियों और अभिजनों में समाज को बदलने और आगे बढने की प्रेरणाएं अथवां आकाक्षाएं बहुत कम होती है और जनसाधारण भी अपने राष्ट्र के निर्माण की दिशा में कोई भूमिका निभाने की ओर से उदासीन होते हैं, वहां राष्ट्रीय एकात्म्य का अभाव कोई समस्या पैदा नहीं करता है ऐसे देश में इस बात की पर्याप्त संभावना बनी रहती है कि राष्ट्र इस स्थिति के बावजूद जीवित रहेगा कि उसके बहुसंख्यक लोग किन्हीं संकीर्ण प्रतिकों से अधिक बंधे हैं विकासशील राज्यों में प्रारंभ के कुछ वर्षो में ऐसी ही स्थिति थी जिस कारण अनेक राजनीतिक विचारक यह मानने लगे थे कि इन राज्यों में पश्चिमी संरचनाओं का अपनाना इन्हें उसी प्रकार की राजनीतिक संस्कृति के सांचे में ढाल देगा। किन्तु इन देशों में संचार साधनों के विकास से जहां राष्ट्रीय अभिज्ञान बढना चाहिए था वहां संकीर्ण व क्षेत्रीय अभिज्ञान प्रबल होकर अस्थिरता का जनक बनता रहा है।

सिडनी वर्बा [13] की मान्यता है कि राष्ट्रीय एकात्म्य का अर्थ कदापि नहीं है कि संपूर्ण जनता राष्ट्र के साथ एकात्म्य रखे यह न आवश्यक है और न ही व्यवहार में ऐसा संभव है। हर समाज में व्यक्तियों के विचारों, मतों और हितों में भिन्नता रहना स्वाभाविक है। राजनीतिक विश्वास भी अनेक रूप ग्रहण कर सकते हैं किन्तु राष्ट्रीय एकात्म्य में यह उपेक्षा रहती है कि राजनीतिक व्यवस्था के अधिकांश सदस्य जातीयता, क्षेत्रीयता और वर्गीय हितों से ऊपर उठकर संपूर्ण राष्ट्र के व्यापक संदर्भ में सोचे,समस्याओं को इसी व्यापक संदर्भ में समझे और इसे ध्यान में रखते हुए राजनीतिक दृष्टि से सक्रिय बने। यह स्थिति राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक संस्कृति की एक रूपता का आधार होती है। किसी राष्ट्र में सुपरिभाषित और संस्थापित राष्ट्रीय एकात्म्य का अस्तित्व है या नहीं इस बात के राजनीतिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिणाम निकलते हैं। इसी से यह निर्णय होता है कि व्यक्ति राजनीतिक व्यवस्था को अपनी मानते हैं या पराई समझते है। राष्ट्रीय अभिज्ञान से यह भी स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय या केन्द्रीय शासन व्यवस्था का व्यक्तियों के जीवन पर आधारभूत प्रभाव पडता है तथा उसका उन्हें बोध रहता है।

सिडनी वर्बा [14] 'जिन राजनीतिक विश्वासों की विवेचना की है वे बहुत कुछ राष्ट्रीय राज्य में इर्द-गिर्द घूमते हैं।'

क. राष्ट्रीय राज्य आज भी व्यक्तियों की आस्थाओं को ढालने वाली सर्वाधिक महत्वपूर्ण शक्ति है।

ख. अधिकांशत: सभी प्रकार की समस्याएं राष्ट्रीय राज्य से ही संबंधित होती है।

ग. राष्ट्रीय राज्यों में होने वाला परिवर्तन ही राजनीतिक विकास कहा जाता है।

घ. राष्ट्रीय राज्यों में संबंधित नागरिकों की अभिवृत्तियों में परिवर्तन, जिसे राजनीतिक आधुनिकीकरण माना जाता है वह भी राष्ट्रीय राज्य से ही परिभाषित किया जाता है।

राजनीतिक संस्कृति के आधार – राजनीतिक संस्कृति की विशेष प्रकृति किस प्रकार बनती है इसे हमको ध्यान में रखना है राजनीतिक संस्कृति का कहीं एक रूप देखने को मिलता है तो कहीं यह विविध रूप वाली होती है। इससे यह प्रश्न महत्वपूर्ण बन जाता है कि राजनीतिक संस्कृतियों के ऐसे कौन से आधार है जिससे उनकी प्रकृति का निर्धारण होता है चाहे राजनीतिक संस्कृति विविध रूप वाली या एक रूप वाली हो, जो परस्पर कई संबंधित कारकों को जन्म देती है।

क. ऐतिहासिक आधार।

ख. भौगोलिक आधार।

ग. सामाजिक-आर्थिक संरचना का आधार।

घ. समाज की सामान्य संस्कृति का आधार।

ड. विचार धाराओं का आधार।

उन्होने राजनीतिक संस्कृति की अवधारणा से बहुत अधिक अपेक्षाएं रखने के प्रति सचेत करते हुए लिखा है कि [15] राजनीतिक जीवन के एक विशिष्ट और महत्वपूर्ण पहलू पर ध्यान देना लाभदायक है। किन्तु यह राजनीतिक घटना केक विश्लेषण और व्याख्या को केवल समारम्य ही है। वास्तव में महत्वपूर्ण बात यह नहीं है कि हम राजनीतिक संस्कृति का अध्ययन करें बल्कि यह है कि हम इसका अध्ययन कैसे करते हैं तथा राजनीति के ज्ञान में वृद्धि के लिए इसका प्रयोग कैसे करते हैं ? वर्षा ने इस संबंध में आगे लिखा है कि 'जब हम सका प्रयोग करते हो तोयह राजनीतिक अन्त: क्रिया और राजनीतिक संस्थाओं के प्रतिरूपों के बारे में विश्वासों की व्यवस्था कओर संकेत करती है कि और यह बतलाती है कि राजनीतिक जगत में होने वाली घटनाओं के बारे में लोगो के विश्वास या है? इस प्रकार यह राजनीतिक घटनाओं की प्रक्रिया और लोगों के व्यवहाकर के मध्य एक महत्वर्पा बडी का निर्माण करती है। यह इसबात का संकेत भी देती है कि लोग राजनीति में जो कुछ देखते हैं उसकी विरूद्ध क्या मत प्रकट करते हैं और जो कुछ देखा है उसकी वे क्या व्याख्या करते हैं ? वर्बा ने राजनीतिक संस्कृति की उपयोगिता के बारे में यह प्रस्थापित किया है कि राजनीतिक संस्कृति और राजनीतिक विश्वासों का घनिष्ठता का संबंध है।हम वर्बा के इस निष्कर्ष को स्वीकार करते हुए इसको इस प्रार संशोधित करना अधिक उपयुक्त मानेंगे कि 'राजनीतिक व्यवस्था की सक्रियता की विशिष्टता और राजनीतिक संस्कृति का अत्याधिक घनिष्ठता का संबंध है।[16] राजनीतिक संस्कृति की अवधारणा के विकास से ही राजनीतिक व्यवस्थाओं की वास्तविक प्रकृति उनके अंदर होने वाले विकासोऔर इन विकासों की संभावित दिशाओं को समझने में सहायता मिलने लगी है। किन्तु राजनीतिक संस्कृति के भी इतने आयाम और नियामक है कि इसके आधार पर अध्ययन व तुलनाओं में विशेष सतर्कता और सावधानी बरतने की आवश्यकता है। अन्यथा यह अवधारणा भी राजनीति की वास्तविकताओं को समझने में विशेष सहायक नहीं होगी। राजनीतिक व्यवहार इतना जटिल होता है और इतने अधिक प्रभावों से नियमित होता है कि इसको सामान्य ढंग से ही समझा जा सकता है। अत: राजनीतिक संस्कृति दृष्टिकोण से यह अपेक्षा रखना कि यह राजनीति को कोई सामान्य सिद्धांत बनाने की अवस्था में पहुंच देगा एक जंचने वाला निष्कर्ष होगा ऐसा निष्कर्ष सही हो सकता। राजनीतिक संस्कृति की अवधारणा ने राजनीतिक व्यवस्थाओं के अंशो एवं संपूर्णता ढोनो पर ध्यान केन्द्रित करने के उपकरण प्रदान करके राजनीतिक समझ व राजनीतिक विकासों को समझने में पर्याप्त सहायता की है इससे न कोई अपेक्षा रखनी है और न ही इससे अधिक इसका योग हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लुसियन डब्ल्यू पाई 'पॉलिटिकल कल्चर' इन्टरनेशनल एनसाइक्लोपीडिया ऑव सोशल साइन्सेज 1968
2. देखिए-ग्रेबियल आमन्ड एण्ड जी.बी. सिडनी वर्बा, दि सिविक कल्चर: पॉलिटिकल एटीट्यूड्स एण्ड डिमॉक्रेस इन फाइव नेशन्स, प्रिस्टन न्यू जकसी, प्रिस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1963
3. लुसियन डब्ल्यू पाई एण्ड सिडनी वर्बा, पॉलिटिकल कल्चर एण्ड पॉलिटिकल डवलपमेंट, प्रिस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1965
4. ग्रेबियल आमण्ड एण्ड जी.बी. कम्पेरेटिव पॉलिटिक्स ए डवलपमेंट, एप्रोच ब्रोस्टन, लिटिल ब्राउन 1966, पृष्ठ 89
5. ग्रेबियल आमण्ड एण्ड सिडनी वर्बा, दि सिविक कल्चर पॉलिटिकल एटीट्यूडूस एण्ड डिमॉक्रेसी इन फाइव नेहान्स, पूर्वोक्त
6. लुसियन डब्ल्यू पाई, पॉलिटिकल कल्चर, इन्टरनेशनल एन साइकिलोपीडिया ऑव सोसल साइन्सेज, 1968
7. ए.आर.बाल मॉडर्न रासिटिक्स एण्ड गवर्मेन्ट लंदन मैकमिलन, 1971 पृष्ठ 56
8. सिडन वर्बा, कम्पेरेटिव पॉलिटिकल कल्चर, पाई एण्ड क्री (सं) पॉलिटिकल कल्चर एण्ड पॉलिटिकल डवलपमेंट, प्रिस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1965 पृष्ठ 513
9. ग्रेबियल आमण्ड एण्ड जीबी पावेल, कम्पेरेटिव पॉलिटिक्स, डवलपमेंट

अपोंच बोस्टन, लिटिल, ब्राउन, 1966।

10. ग्रेबियल आमण्ड एण्ड जीब्रर्निघम पावेल, कम्पेरेटिव, पॉलिटिक्स–ए–डवलपमेंट एप्रोच, बोस्टन लिटिल ब्राउन, 1966 पृष्ठ 50
11. टालकाट पारसन्स, दि सोशल सिस्टम, न्यूयार्क दि फ्री प्रैस आवे ग्लूकोन, 1951
12. ग्रेबियल आमण्ड एण्ड जी0बी0 पावेल, कम्पेरेटिव पॉलिटिक्स ए डवलपमेंट एप्रोच, तत्रैव, पृष्ठ 56
13. सिडनी वर्बा 'कम्पेरेटिव कल्चर' लुसियन 'पाई एण्ड वर्बा' पॉलिटिकल कल्चर एण्ड पॉलिटिकल डवलपमेंट।
14. सिडनी वर्बा, कम्पेरेटिव पॉलिटिकल कल्चर, तत्रैक पृष्ठ 516
15. सिडनी वर्बा, कम्पेरेटिव पॉलिटिकल कल्चर, तत्रैक पृष्ठ 516
16. सिडनी वर्बा, कम्पेरेटिव पॉलिटिकल कल्चर, तत्रैक पृष्ठ 517

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Awareness of Cyber Law : Special Reference of Ahmedabad City

Geetaben Ramjibhai Makwana*

Abstract - The internet in India is growing rapidly. It has given rise to new opportunity in every field like – entertainment, business, sports, education etc. It is universally true that every coin has 2 sides, same for the internet, it uses has both advantage and disadvantage, and one of the most disadvantage is Cyber-crime. We can say cyber-crime is any illegal activity which is committed using a computer network (especially the internet). Also, cyber-crime involves the breakdown of privacy, or damage to the computer system properties such as files, website pages or software. In India most of cyber-crime cases are committed by educated person (some cyber – crime requires skills). So, it is required the deep knowledge about the cyber –crime and it prevention. Also, in India most of the cases found where, crimes are committed due to lack of knowledge or by mistake. In this paper, I have discussed various categories and cases of cyber-crime which is committed due to lack of knowledge or sometimes due to intention behind. I also, suggested various preventive measures against these unlawful acts in day to day life.
Keywords - cyber laws, cybercrimes, e-Crime.

Introduction - In the today's era of rapid growth, Information technology is encompassing all walks of life all over the world. These technological developments have made the transition from paper to paperless transactions possible. We are now creating new standards of speed, efficiency, and accuracy in communication, which has become key tools for boosting innovations, creativity and increasing overall productivity. Computers are extensively used to store confidential data of political, social, economic or personal nature bringing immense benefit to the society. The rapid development of Internet and Computer technology globally has led to the growth of new forms of transnational crime especially Internet related. These crimes have virtually no boundaries and may affect any country across the globe. Thus, there is a need for awareness and enactment of necessary legislation in all countries for the prevention of computer related crime. Globally Internet and Computer based commerce and communications cut across territorial boundaries, thereby creating a new realm of human activity and undermining the feasibility and legitimacy of applying laws based on geographic boundaries. This new boundary, which is made up of the screens and passwords, separate the "Cyber world" from the "real world" of atoms. Territorially based law-making and law-enforcing authorities find this new environment deeply threatening.

Meaning

Cyber crime - In simple term we can describe "Cyber Crime" are the offences or crimes that takes place over electronic communications or information systems. These types of crimes are basically the illegal activities in which a computer and a network are involved. Due of the development of the internet, the volumes of the cybercrime activities are also increasing because when committing a crime there is no longer a need for the physical present of the criminal

Cyber Crimes - Three categories:

Against Property – Financial crimes, cheating on-line, illegal funds transfer

Against Persons – On-line harassment, Cyber Stalking, Obscenity.

Against Nations – Cyber Terrorism, Damaging critical information infrastructures.

Cyber law - Cyber law is any law that applies to the internet and internet associated technologies. Cyber law is one of the most recent areas of the criminal system. That is because internet technology develops at any such rapid tempo. The cyber law offers legal protections to people involved with the use of the internet. This consists of both agencies and normal residents. An expertise cyber regulation is of the utmost significance to every person who uses the net. Cyber regulation has also been known as the "regulation of the net."

Cyber Law in India - In India, cyber laws are contained in the Information Technology Act, 2000 ("IT Act") which came into force on October 17, 2000. The main purpose of the Act is to provide legal recognition to electronic commerce and to facilitate filing of electronic records with the Government. The following Act, Rules and Regulations are covered under cyber laws:

1. Information Technology Act, 2000

***Assistant Professor, Samarpan School of Law, Kh-7 Circle, Sector- 28, Gandhinagar (Gujarat) INDIA**

2. Information Technology (Certifying Authorities) Rules, 2000
3. Information Technology (Security Procedure) Rules, 2004
4. Information Technology (Certifying Authority) Regulations, 2001

Objectives Of The Study

1. Knowing the status of the awareness for Indian cyber law based on gender.
2. Knowing the status of the awareness for Indian cyber law based on occupation.

Literature Review - This section reports a brief review of research literature wherein the researchers have dealt with the related topics of cyber security, cybervictimization etc.

Bhushan (2012) has revealed that awareness of cybernetics in India is abysmally low and thus has gained a reputation as a country where foreign investors can do business in cyber security and have been investing heavily in cyber security.

Pandey (2012) concluded that lack of awareness about internet and low level of internet security is fast making Indore[1] a heaven for cybercriminals. There has been a steady increase in the number of cybercrimes as people are not aware about the rapid developments in the cyber world. Increasing dependence of common citizens on cybernetics without proper security has made the job easy for cybercriminals. In the absence of experts and cyber sleuths, Indore has become more vulnerable to cybercriminals, the researcher concluded.

Jamil and Khan (2011) while comparing the data protection act in India with that of European countries have concluded that the Indian cyber laws are very poor and it is very necessary to actually bring in the appropriate cyber law and awareness about them. There is not much of awareness regarding protecting the data. There is a continuous rise in cybercrime as there is huge population but lesser resources to manage the population and the cyber-crimes that take place.

According to Dalal (2010) one area that requires special attention is the cyber law awareness in India. Very few users, practitioners and organizations are aware about disputes arising out of IT Act, 2000 and its various amendments.

Nappinai (2010) found that cyber-crime prosecution is not resorted in many instances due to lack of awareness amongst both the victims and the enforcement authorities about the applicability of general laws to cybercrimes.

Research Methodology - Research is any such activity which helps to gain fresh insight in to something. It is an investigation to find answer to questions. It is way to acquire knowledge. The proposed research work is carried out by following different research methods such as, Historical,Survey, Observationmethods.

Present study was done with help survey Method plays significant role in research as can seefrom the statement. Community surveys are conducted together recorded or unrecorded data about different aspectsof the awareness Cyber-crime and their law in Ahmedabad City

Data Analysis - The study aimed to collect responses with regards to the knowledge and awareness of respondents towards cyber laws in Ahmedabad City. A three point structured questionnaire was designed to find the results. Such data were collected from the students/teachers and employee .An individual participant constituted the sampling unit whereas probability sampling (random sampling) techniques were used to select the sample Table 1 shows the break-up of the sample:

Table 1 : Break-up of sample

Gender / Category	Male	Female	Total
Unemployed	150	100	250
Employed	80	70	150
Total	230	170	400

Test items were written to cover the entire content. The test so prepared was given to the students/teachers and employees and arranged in descending order subjected to Kelley's items analysis techniques as per their achievement scores. Upper 27% which formed the upper group and the lower 27% that formed the lower group were taken up for computing the internal consistency discrimination index and the difficulty value of the test. For this, the number of correct responses to an item in each of the two groups was identified and tabulated. For the selection of items the criteria recommended by Ebel (1979) were given due consideration. Table 2 shows the criteria for selecting items on the basic of discriminating power (DP).

Table 2: Selection criteria of items

Sr.	Discriminating Power	Item Evaluation
1	0.40 and above	Very Good
2	0.20 to 0.39	Marginal items usually subject to improvement
3	Below 0.19	Poor items

After calculating the discriminating power of the items, criteria given in table 2 was applied to select the items for the final test items. The variables were categorized as independent and dependent variable. The dependent variables for the present study were some of the general questions to be answered by which the awareness to combat cybercrime could be measured. Independent variables for the present study were employees and students/teachers.

The main objective of the present work consisted of assessment of awareness of respondents by means of studying the difference in awareness on the basis of gender and occupation. Accordingly, following hypotheses were formulated:

H1: There is no significantdifference in the awareness for Indian cyber law on the basis of gender.

H2: There is no significant difference in the awareness for Indian cyber law on the basis of occupation.

Self-tested questionnaire has contained some of the questions which has been answered in the form of do not

know, yes, no. It has been designed with the objective to assess the awareness for Indian cyber law for cybercrime of the respondents. It was having maximum score of 69 and minimum score of 23.

Table 3 Mean, SD and CR ratio (male vs. female)

Variables	N	Means	SD	DF	CR	Level of Significance
Male	230	49.32	9.14	398	12.44	Significant at .05 and .01 level of significance
Female	170	36.50	2.42			

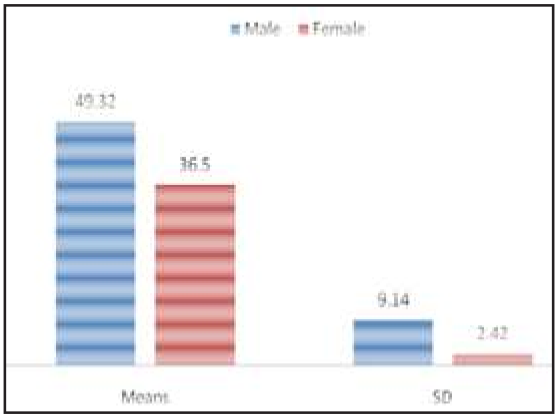

Figure 1 Awareness about Indian Cyber laws (male vs. female)

Table 3 indicates that the mean scores of male for the awareness for Indian cyber law and role of the police for cybercrime and related legal provision is 49.32 and the mean score of female for the awareness for Indian cyber law is 36.50 and their SD values are 9.14 and 2.42 respectively.

The CR value comes out to be 12.44 which is significant at .05 and .01 level of significance at DF value = 398. This further reveals that the two groups differ significantly because the table value at DF =398 are 1.97 at .05 level of significance and 2.60 at 0.01 level of significance are lower than the calculated value (figure 1). It is concluded that male and female differ significantly and the mean value of male is greater than female. Therefore it is analyzed that the male has more awareness for Indian cyber law than female. The corresponding hypothesis (H1) has been rejected.

Table 4 Mean, SD and CR Ratio (student vs. employee)

Variables	N	Means	SD	DF	CR	Level of Significance
Students	250	40.87	6.31	398	13.75	Significant at .05 and .01 level of significance
Employees	150	52.12	8.76			

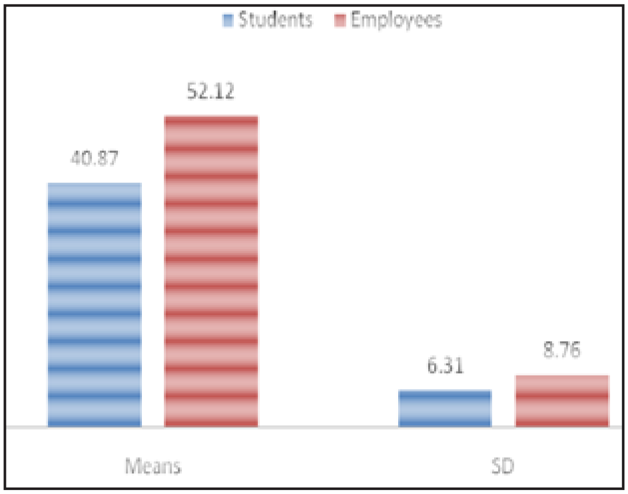

Figure 2 Awareness for Indian cyber law (student vs. employee)

Table 4 indicates that the mean scores of the students for the awareness for Indian cyber law is 40.87 and the mean score of employees in the awareness for Indian cyber law is 52.12 and their SD values are 6.31 and 8.76 respectively. The CR value comes out to be13.75 which is significant at .05 and .01 level of significance at DF value = 398. This further reveals that the two groups differ significantly because the table value at DF =398 are 1.97 at .05 level of significant and 2.63 at 0.01 level of significance are lower than the calculated value (figure 2). It is concluded that students and employees differ significantly, and the mean value of employees are greater than students therefore it is analyzed that the employees have more awareness for Indian cyber law than the students. Accordingly, the corresponding hypothesis (H2) has been rejected.

Conclusion - On the bases of findings of present work it could be concluded that there is a significant difference between the awareness level of male and female users of internet services and it was established that the male netizens are more aware for Indian cyber laws in comparison to their female counterparts. On the similar lines there exists a significant difference between the awareness level of employee-users and non-employee-users of internet services and it was found that the employee users are more aware for Indian cyber laws in comparison to non-employees.

References:-

1. Cyber Crime (2003) by R.K. Suri and T.N. Chhabra, Pentagon Press, New Delhi, India.
2. Jamil D. and Khan M.N.A. (2011), Data Protection Act in India with Compared To the European Union Countries, International Journal of Electrical & Computer Sciences, Vol: 11 No: 06.
3. Muthukumaran, B. (2008) ‘Cybercrime scenario in India’, criminal investigation department review, Chief Consultant, Gemini Communication Ltd., p. 17.

4. Nagpal, R. (2008) Evolutions of Cybercrimes, Asian School of Cyber laws.
5. Nappinai N.S. (2010), Cyber Crime Law in India: Has Law Kept Pace with Emerging Trends? An Empirical Study, N. S. Journal of International Commercial Law and Technology Volume. 5, Issue 1.
6. Pandey K. (2012), Low security makes netizens vulnerable to cyber-crimes, retrieved from http://articles.timesofindia.indiatimes.com/indore/31863717_1_cyber-crimes-cyber-cell-cyber-criminals on May 26, 2012.
7. Saxena P. et al. (2012), A Cyber Era Approach for Building Awareness in Cyber Security for Educational System in India, IACSIT International Journal of Information and Education Technology, Vol. 2, No. 2.
8. Seth K. (2007), India – Cyber-crimes and the arm of Law – An Indian Perspective, retrieved from http://www.sethassociates.com/%E2%80%9Ccyber-crimes-and-the-arm-of-law-an-indian-perspective.html on August 22, 2012.
9. SheakhTaraq Hussain (2012), “Cyber Law: Provisions and Anticipation”, Vol. 53, Sep, pp. 10-12. Singh Talwant, (2011) Cyber Law & Information Technology, New Delhi, India.
10. Singh Yatinder (Justice), Cyber Law, Delhi Book House, New Delhi.
11. Suri and Chhabra, (2003) Cyber Crime Pentagon Press, New Delhi, India.
12. Sylvester Gerard (2007), “Cyber Crime”, The SAMACHAR, pp. 40, 43.
13. Tanwar Ashwani (2012), “Legal Perspective of Cyber Crimes in India,” Vol. 3, Feb, pp. 35-36.

****

Performance of Business Finance in Entrepreneurship

Dr. Suresh Shrawan Patil*

Abstract - The effects of financial openness on changes in entrepreneurship rates in the economy are estimated for emerging and developed markets. Controlling for the effects of political risk in conjunction with capital controls, capital controls have a negative effect on entrepreneurialism in emerging market countries, but can have a positive effect on entrepreneurialism in developed markets. The imposition of financial controls have a greater effect in magnitude in developed markets than in emerging markets, indicating that development of the internal financial system plays a role in extenuating the effects of capital controls. The effect of the imposition of financial controls is not uniform across the various financial instruments. In particular, the imposition of capital controls on derivatives and real estate in developed markets is associated with a negative effect on entrepreneurialism, unlike for other financial instruments in developed markets. However, in emerging markets, the effects on entrepreneurialism of financial controls seem to be more uniform when controlling for the interaction of political risk and financial controls. In controlling for the effects of political risk on financial liberalization, the effects of financial controls between emerging markets and developed markets are not the same. In general, the imposition of financial controls in emerging markets is associated with a decline in entrepreneurialism, while the imposition of such controls in developed markets is associated with an increase in entrepreneurial activity.

Key words - Entrepreneurship, Financial Regulation, Business Finance Scope and Requirement.

Introduction - The development of research in entrepreneurial finance is apparent in the proliferation of work focusing on the financial aspects of entrepreneurship: a field of management science which is beginning to organize itself along the same lines as other existing fields such as strategy, marketing or finance. Business finance refers to money and credit employed in business. It involves procurement and utilization of funds so that business firms may be able to carry out their operations effectively and efficiently. The following characteristics of business finance will make its meaning clearer:-

1. Business finance includes all types of funds used in business.
2. Business finance is needed in all types of organizations large or small, manufacturing or trading.
3. The amount of business finance differs from one business firm to another depending upon its nature and size. It also varies from time to time.
4. Business finance involves estimation of funds. It is concerned with raising funds from different sources as well as investment of funds for different purposes.

Business finance refers to money invested in business. Finance is the basic of business. It is required to purchase assets, goods, raw materials and for the other flow of economic activities. **Business finance** can be defined as "The provision of money at the time when it is needed by a business".

Need and Importance - Business finance is required for the establishment of every business organization. With the growth in activities, financial needs also grow. Funds are required for the purchase of land and building, machinery and other fixed assets. Besides this, money is also needed to meet day-today expenses e.g. purchase of raw material, payment of wages and salaries, electricity bills, telephone bills etc. You are aware that production continues in anticipation of demand. Expenses continue to be incurred until the goods are sold and money is recovered. Money is required to bridge the time gap between production and sales. Besides producers, Business Studies may be necessary to change the office set up in order to install computers. Renovation of facilities can be taken up only when adequate funds are available.

1. To meet contingencies Funds are always required to meet the ups and downs of business and unforeseen problems. Suppose, some manufacturer anticipates shortage of raw materials after a period. Obviously he would like to stock raw materials. But he will be able to do so only when money would be available
2. To promote sales in this era of competition, lot of money is required to be spent on activities for promoting sales like advertisement, personal selling, home delivery of goods etc.
3. To avail of business opportunities Funds are also required to avail of business opportunities. Suppose a

***Associate Proffesor (Economics) KKHA Arts SMGL Commerce and SPHJ Science College, Neminagar Chandwad, Distt. Nashik (Maharastra) INDIA**

company wants to submit a tender but some minimum amount is required to be deposited along with the application. In the case of non-availability of funds it would not be possible for the company to apply.

Business is related to production and distribution of goods and services for the fulfillment and requirements of society. For effectively carrying out various activities, business requires finance which is called business finance. Hence, business finance is called the lifeblood of any business a business would get stranded unless there are sufficient funds available for utilization. The capital invested by the entrepreneur to set up a business is not sufficient to meet the financial requirements of a business.

Scope of Business Finance - Scope means the research or study that is covered by a subject. The scope of Business Finance is hence the broad concept. Business finance studies, analyses and examines wide aspects related to the acquisition of funds for business and allocates those funds. There are various fields covered by business finance and some of them are:

1. Financial planning and control - A business firm must manage and make their financial analysis and planning. To make these planning's and management, the financial manager should have the knowledge about the financial situation of the firm. On this basis of information, he/she regulates the plans and managing strategies for a future financial situation of the firm within a different economic scenario.

The financial budget serves as the basis of control over financial plans. The firms on the basis of budget find out the deviation between the plan and the performance and try to correct them. Hence, business finance consists of financial planning and control.

2. Financial Statement Analysis - One of the scopes of business finance is to analyze the financial statements. It also analyses the financial situations and problems that arise in the promotion of the business firm. This statement consists of the financial aspect related to the promotion of new business, administrative difficulties in the way of expansion, and necessary adjustments for the rehabilitation of the firm in difficulties.

3. Working capital Budget - The financial decision making that relates to current assets or short-term assets is known as working capital management. Short-term survival is a requirement for long-term success and this is the important factor in a business. Therefore, the current assets should be efficiently managed so that the business won't suffer any inadequate or unnecessary funds locked up in the future. This aspect implies that the individual current assets such as cash, receivables, and inventory should be very efficiently managed.

Financial Needs of Business - Every Business needs capital. Capital is required at the time of beginning of the business. It is also needed when the business is in operation. As an enterprise grows in size and expands, it's needed finance to establish. The capital requirements for business are divided into two classes which are discussed as under:-

1. Fixed Capital
2. Working Capital

1. Fixed Capital - Every business required a sufficient amount of fixed capital for beginning its operational activities. As the name indicated, the amount of capital invested in various fixed or permanent assets, which are necessary for conducting the operation of a business is known as fixed capital. These fixed assets might be land, building, machinery, equipment etc. The fixed assets normally do not change their form and cannot be withdrawn from the business at a short notice. They can, however be disposed off. Fixed capitals thus are the funds required for the purchase of those assets that are to be used over and over for a long period of time in business.

Investments in non-current assets such as goodwill, patent, rights, copyrights, long term receivables etc also from a part of fixed assets. The amount of capital required for investment in fixed assets varies with size, nature and method of production of business. Large scale industries, like railways, oil drilling operations, hydro and thermal electricity project etc required more fixed capital. Summing up fixed capital comprises of fixed assets and other non-current assets.

Importance of Fixed Capital - The importance of fixed capital can be judged from the fact that a business cannot be made operative without it. Right from the very beginning i.e. conceiving an idea of business, purchase of land, construction of building, purchase of machinery etc capital is needed. Further, for the expansion and modernization of machinery also fixed capital is required. So it is essential to have an adequate amount of fixed capital in an enterprise.

2. Working Capital - In balance sheet terms, working capital is the difference between current assets and current liabilities of a business. Current assets refer to those assets, which is easily changed into cash within a short period of time in the business, in accounting year. It consists of cash in hand and bank balances, bills receivable, short term investments, and inventories of stocks. While on the other hand, current liabilities are those which are intended to be paid within a short period of one accounting year out of the current assets. It consists of bills payable, short term loans, bank overdraft, dividends payable, taxes payable etc.

Working capital also called circulating capital, which is the life blood and nerve center of a business. Working capital is mostly used for the purchased of raw material, payment of wages, seasonal urgent demands of the Business, purchase of more goods for sale, meeting the expenses of advertising, providing credit facilities to the customers etc.

Examples; Current assets – Current liabilities= Working Capital

$.5 Million – 3 Million = 2 Million

The difference between the current assets and current liabilities is surplus; the business has a positive working capital. In case the difference is negative, then the business

has a negative or deficient working capital.

Importance of working capital

The importance of **working capital** is discus as under:-

1. Solvency of business: It helps in solvency of the business. The flow of production remains uninterrupted.

2. Good will: The entrepreneur is able to pay wages to the workers and other bills in time. This helps in creating goodwill of business.

3. Loans on favorable terms: A business with high solvency and greater goodwill can easily obtain loans from banks.

4. Cash Discounts: A business with adequate working capital can obtain cash discounts on the purchases. This helps in reducing cost.

5. Enables to face crisis: An adequate working capital enables an enterprise to face business crisis.

6. Regular payment of dividend: A sufficient amount of working capital enables a business to earn profit and pay dividend to investors in time.

Money required for carrying out business activities is called business finance. Almost all business activities require some finance. Finance is needed to establish a business, to run it to modernize it to expand or diversify it. It is required for buying a variety of assets, which may be tangible like machinery, furniture, factories, buildings, offices or intangible such as trademarks, patents, technical expertise etc.Also, finance is central to run a day to day operations of business like buying materials, paying bills, salaries, collecting cash from customers etc needed at every stage in the life of a business entity. Availability of adequate finance is very crucial for survival and growth of a business.

Future Lines of Research - This analysis of research in entrepreneurial finance highlights several lines of research which deserve to be developed further given their contribution to the understanding of the entrepreneurial phenomena.

1. Financing needs of new firms: lack of knowledge about new firms financing requirements, according to the type of business, the degree of risk, the stage of development, the financing alternatives, the development potential (export, expansion, innovation), etc. These lines of research could be linked to other researches on the merger of personal and professional assets, belonging to company creators, and CEO entrenchment.
2. Sources of alternative financing Denis (2011) estimates that up until now the bulk of research in entrepreneurial finance related to companies financed by venture capital. Studies on the role of sources of alternative financing, such as Business Angels, corporate venture or from individual operators (such as the business incubators) would make it possible to improve our overall knowledge of the funding of new ventures. This research will allow us to look into the optimal balance between the sources of funding for early stage companies and to better understand how corporate venture or business incubators can be integrated in this balance.
3. Contracts between creator(s) and financier(s) although many studies have already been devoted to it, the question of the optimal contract between creator(s) and financier(s) (in particular venture capital) still needs to be looked into more deeply. Information asymmetries which can occur between the different parties could cause conflicts of interests (Denis, 2011). This issue encompasses the nature of contracts, restrictive clauses, the costs of financing, monitoring the investment, etc (Rassoul, 2012).
4. The role of the legal and institutional environment The role of legal and institutional environments deserves to be looked into more closely, in particular the establishing of optimal financing contracts (Denis, 2013), but also the intervention of the State in high-risk firms despite their strong potential (innovation, startup,…), or about the existence of a stock market for SMEs with strong growth (Saint-Pierre and Mathieu, 2013).
5. Innovating firms : Another line of research is to make an in-depth analysis of the characteristics of innovation projects and firms with a high level of intangible assets: their development Phases, risk, contract, rate of success, etc.(Saint-Pierre and Mathieu, 2003).

At the end of this presentation, several conclusions can be drawn. Entrepreneurial finance is developing as a field of research with two main focuses for researchers in entrepreneurship, it means taking the financial element more into account as it is indissociable from entrepreneurial fact. For financiers', the specific requirement of entrepreneurial situations have been better recognized and an increasing amount of work is being dedicated to this area.

However, the analysis of studies on entrepreneurial finance reveals a double tropism orientation,on the one hand, a focusing of publications on topics related to financing by venture capital, on the other hand a concentration of works on the early stages of the entrepreneurial adventure entrance of investors, IPO).

However, this type of questioning only concerns a very small portion of new venture. The new lines of research which we suggested would enable a better understanding of the indissociable links between finance and entrepreneurship. This issue aims to explore these lines of research in entrepreneurial finance. It include the four following contributions:

1. The Impact of Business Model Characteristics on IT Firms Performance
2. International Comparison of Entrepreneurial Sub-Cultures within Cultures: Effect of Territory on Entrepreneurial Strategies for Fund raising
3. Active Financial Intermediation and Market Efficiency: The Case of Growing Firms Financed by Venture Capitalist

4. The Impact of Corporate Governance on the Performance of US Small-Cap Firms

References :-

1. Brophy, D.J., and J.M. Shulman, 2012, "A Finance Perspective on Entrepreneurship
2. Research", Entrepreneurship: Theory and Practice16 (3):61–71.
3. Denis, D.J.2014, "Entrepreneurial Finance: An Overview of the Issues an Evidence", Journal of Corporate Finance10 (2):30-326.
4. Lantz, J. and Sahut,J.,2014,"Active Financial Intermediation and Market Efficiency: The Case of Fast-Growing Firms Financed by Venture Capitalist ,"International Journal of Business 14(4):321-339.
5. Rantanen, K. ,and Bernasconi M., 2015, International Comparison of Entrepreneurial Sub Cultures within Cultures: Effect of Territory Entrepreneurial Strategies for Fundraising International Journal of Business, 14(4):309-320.
6. Rassoul Y.,2015, "Behavioral Finance and Entrepreneurial Finance", The Journal of Finance and Business Ventures11(1):1-3.Rédis, J., 2015,"The Impact of Business Model Characteristics on IT Firms 'Performance," International Journal of Business,14(4):291-307.
7. S.A. Zahra, andA.Sillanpaa,2016, "Scholarly Communities in Entrepreneurship Research: A Co-Citation Analysis", Entrepreneurship: Theory & Practice30 (3):399-416.
8. Shane S., 2017, A General Theory of Entrepreneurship: The Individual Opportunity Nexus, New Horizons in Entrepreneurship series, Edward Elgar Publishing. Shane, S. and S. Venkataraman, 2017, "The Promise of Entrepreneurship as a Field ofResearch",Academy of Management Review25(1):217-226
9. Stevenson, HH , and J.C.Jarillo,2017, "A Paradigm of Entrepreneurship: Entrepreneurial Management " Strategic Management Journal11:17-27Switze, L.and Tang,M.2017 The Impact of Corporate Governance on the Performance of US Small-Cap Firms, "International Journal of Business, 14(4):341-357.
10. Schlichter, BR., & Kraemmergaard, P. (2017). "A comprehensive literature review of the ERP research field over a decade". Journal of Enterprise Information Management. Vol 23(4): 486-520.
11. Shehab, E.M., Sharp, M.W., Supramaniam, L. & Spedding, T.A. (2017). "Enterprise Resource Planning An Integrative Review" Businees Process Management Journal, Vol. 10 (4): 359-386.
12. Yeunyong W. (2017). "Causes And Consequences Of AIS Effectiveness In Manufacturing Firms: Evidence From Thailand", International Journal of Business Research.

****

Strategic Human Resource Management of Indian Armed Forces

Saurabh Dubey*

Abstract - Strategic Human Resource Management has received a great deal of attention in recent years, most notably in the fields of Humana resource management of Indian armed forces , Organizational Behavior, and Industrial Relations. An area that demands greater understanding is that of Strategic Human Resource Management. SHRM is concerned with affecting firm performance; which is the objective of this stickle. Strategic human resource management enhances productivity and the effectiveness of Indian armed forces their implementation in organizations has proven that when organizations employ such personnel practices (mentioned in this paper) they are more able to achieve their goals and objectives. This article first describes what the word strategy means and shifts its focus on HRM at a strategic level highlighting its importance in the present decay organizations. The paper then highlights what best practices (as a result of strategic planning) the organizations can adopt that would ensure them of success.
Key Words - Strategic Human Resource Management, Indian Armed Forces.

Introduction - Strategic human resource management is a complex process which is constantly evolving and being studied and discussed by academics and commentators. Strategic Human Resource Management (SHRM) is an area that continues to evoke a lot of debate as to what it actually embraces. Strategic human resource management (SHRM) is a concept that integrates traditional human resource management activities within a fir‘s overall strategic planning and implementation, SHRM integrates human resource considerations with other physical, financial, and technological resources in the setting of goals and solving complex organizational problems SHRM also emphasizes the implementation of a set of policies and practices that will build employee pool of skill, knowledge, and abilities that solutions for solving organizational problems are provided and the likelihood that business goals of the organization will be attained is increased Strategic Human Resource Management strategic of indian armed forces is an area that continues to evoke a lot of debate as to what it actually embraces. Definitions range from a human resource system that is tailored to the demands of the business strategy‘to the pattern of planned human resource activities intended to enable an organization to achieve its goals. Difference are considerable. Where in the first deference between these two seems subtle, the implications of the difference are considerable. Where in the first definition human resource management is a reactive management field in which human resource management becomes a tol to implement strategy, in the latter definition it has a proactive function in which human resource activities actually create and shape the business strategy (Snaz-VBalle et al. 1999) Strategic HRM can be regarded as a general approach to the strategic management of human resources in accordance with the intentions of the organizational the future direction it wants to take. It is concerned with longer-term people issues and macro-concerns about structure, quality, culture, values, commitment and matching resources to future need, it has been defined as: All those activities affecting the behavior of individuals in their efforts to formulate and implement the strategic needs of business. the pattern of planned human resource deployments and activities intended to enable the forms to achieve its goals ,Approaches of the strategic human resource management of indian armed forces attempts to link Human Resource activities with competency based performance measures.

Attempts to link Human Resource activities with business surpluses or profit. These two approaches indicate two factors in an organizational setting. The first one is the human factor, their performance and competency and the later is the business surplus An approach of people concerns based on the belief that human resources are uniquely important in sustained business success An organization gains competitive advantage by using its people effectively, drawing on their expertise and ingenuity to meet clearly defined objectives. Integration of the business surplus to the human competency and performance required adequate strategies. Here the role of strategy comes into picture. The way in which people are managed, mot5ivatede and deployed, and the availability of skills and knowledge will all shape the business strategy? The strategic orientation of the business

*Research Scholar, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA

then requires the effective orientation of human resource to competency and performance excellence.

Advantages of SHRM

1. Identifying and examining outside circumstances and dangers and dangers that might be urgent to the organization's prosperity.
2. Provides an unmistakable business procedure and vision for what's to come.
3. To supply focused insight that might be valuable in the key arranging process..
4. To enroll, hold and inspire individuals.
5. To create and hold of very able individuals.
6. To guarantee that individuals advancement issues are tended to methodicallly.
7. To supply data with respect to the organization's inside qualities and shortcomings.
8. To meet the desires for the clients adequately.
9. To guarantee high efficiency.
10. To guarantee business surplus through competency.

Conclusion - Obstructions of SHRM Obstructions to effective SHRM execution are mind boggling. The principle reason is an absence of development procedure or inability to actualize one. Other significant obstructions are outlined as pursues Inducing the vision and mission of the change exertion. • High obstruction because of resistance from the primary concern. • Interdepartmental strife.

The duty of the whole senior supervisory crew of Indian armed forces. • Plans that incorporate inside asset with outer necessities. • Limited time, cash and the assets. • The statuesque methodology of workers. • Fear of incomopotency of senior dimension administrators to make up vital strides. • Diverse work-force with focused ranges of abilities. • Fear towards exploitation in the wake of disappointments. • Improper vital assignments and administration strife over power. • Ramifications for power relations. • Valnerability to authoritative changers. • Resistance that gets through the authentic work foundations.

Presence of an activity worker's organization. Rapid auxiliary changes. Economic and market weights affected the selection of vital HRM. More various, outward looking methodology.

References :-

1. http://www.scribd.com/doc/39382840/HRM-in-Indian-Defence#scribd MohitKabra on Oct15, 2010
2. https://en.wikipedia.org/wiki/Indian_Armed_Forces
3. http://www.globalsecurity.org/military/library/report/2003/htar-chapter13.
4. http://www.globalsecurity.org/military/library/report/2003/htar-chapter13.pdf
5. Principals and practices of management SCDL,pune
6. www.itsa.org
7. www.iteris.com
8. www.emotionalintelligence.com
9. www.tc.gc.ca
10. http://www.shrm.org
11. http://www.chforum.org

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

राजस्थान की मीणा जनजाति के देवी देवता एवं उनके प्रतीक

डॉ. हरिचरण मीना*

शोध सारांश – राजस्थान में मीणा समूदाय जनजाति का बहुतसंख्यक समुदाय है जिसका विस्तार उत्तर से दक्षिण एवं पूर्व से पश्चिम सम्पूर्ण राजस्थान में है। मुख्य रूप से मीणा समुदाय उदयपुर, प्रतापगढ़, चितौड़गढ़, जयपुर, दौसा, सवाईमाधोपुर, करौली, कोटा, बून्दी, टोंक इत्यादि जिले में अधिकांश संख्या में निवास करता है मीणा जनजाति के अपने-अपने कुछ सामान्य एवं कुछ विशेष देवी देवता पाये जाते है। प्रत्येक देवी देवता का अपना एक प्रतीक होता है जिसके आगे सम्पूर्ण समुदाय आस्था के रूप मे नतमस्तक होता है। प्रमुख रूप से कैला देवी, कालीषण, विजासनी माता, सौनार माता, अम्बे माता, भवानी माता, जगदम्बे माता इत्यादि है तो देवताओं के रूप में भैरव, बालाजी, परीत, भगड़ा, अउतडा, गणेश इत्यादि प्रमुख है। मीणा जनजाति अपने देवी-देवताओं को इष्ट के रूप में पूजा अर्चना करते है। मीना जनजाति देवी देवताओं व उनके प्रतीको पर अटुट विश्वास करने वाली धार्मिक जनजाति है जो कि पुरातन काल से इन देवी देवताओ की अनेक अवसरो पर भोग लगाकर पूजा अर्चना करती है तथा अपने घर परिवार, समाज, प्रदेश व देश मे खुशहाली की कामना करते है। बिना देवी देवताओं की पूजा के कोई भी कार्य का शुभारम्भ नही किया जाता है। देवी देवताओ के यहाँ मन्नते मांगी जाती है। जब मन्नत पूरी हो जाती है तो उस खुशी मे उस देवी के यहाँ जात, परिक्रमा, कलकडण्डवत किया जाता है। धर्म एवं सवामणी की जाती है। प्रत्येक देवी देवता का अपना एक प्रतीक भी होता है।

शब्द कुंजी – समुदाय, बहुसंख्यक, अधिकांश, प्रतीक नतमस्तक, अउतड़ा, इष्ट,ध्वज,देहड़ी, बैठाना, लक्खी, गोत्र।

प्रस्तावना – राजस्थान में मीणा जनजाति कुल जनजाति जनसंख्या की आधी से अधिक है। मीणा जनजाति राजस्थान में पूर्व से पश्चिम एवं उत्तर से दक्षिण तक फैला हुआ समूदाय है। राजस्थान के उदयपुर, प्रतापगढ़, चितौड़गढ़, जयपुर, दौसा, अलवर, सवाईमाधोपुर, करौली जिले के मीणा जनजाति समुदाय बहुतायात में निवास करता है। मीणा जनजाति भी अन्य आदिवासियों की भांति पुरातन धर्मावलम्बी है। जिसमें अपने अपने देवी देवता है। तथा प्रत्येक देवी देवता का अपना प्रतीक होता है। मीणा समुदाय में सामान्य तथा अपने गांव में विष्णु मन्दिर होता है, इसके अलावा भैरव का स्थान, माता का स्थान, बालाजी का मन्दिर व अन्य देवी-देवताओं के मन्दिर होते है। प्रत्येक मन्दिर का अपना स्थान निर्धारित होता है। प्रत्येक मन्दिर का अपना एक ध्वज व प्रतीक निर्धारित होता है। अधिकांश गांवों में विष्णु का मन्दिर गाँव के बीच में होता है। मन्दिर की बनावट इस प्रकार की होती है कि ऊपर एक छतरी नुमा गुम्बज होता है मन्दिर के परिक्रमा के लिए उसके चारो और जगह या गली होती है। जिससे भक्त जन परिक्रमा करते है। मन्दिर में ब्रह्म, विष्णु महेश की मुर्ति होती है। मन्दिर में शिव, गणेश, पार्वती, नादिया इत्यादि की मुर्तिया भी होती है। मन्दिर के शिखर पर सतरंगी झण्डा लहरता रहता है यह झण्डा मन्दिर का प्रतीक है जिसको देखकर दूर से ही अन्दाजा लगाया जा सकता है कि यहाँ कोई मन्दिर होगा।

भैरव का मन्दिर –मीणा समुदाय के अधिकांश गाँवों में भैरव का स्थान पाया जाता है। यह मीणा समुदाय का इष्ट देव माना जाता है। मीणा समूदाय भैरव की पूजा पुरातन काल से करते आये है। भैरव दो प्रकार के माने जाते है। (1) जल भैरव (2) थल भैरव, जल भैरव उसे कहते है जब कोई कुआ खोदा जाता था तथा खुदाई के समय जब कोई मुर्ति जल में पायी जाती थी तो उसकी स्थापना जल भैरव के रूप में की जाती थी। तथा जब कोई मुर्ति जमीन में पायी जाती थी तो उसकी स्थापना की जाती थी तो उसे थल भैरव कहा जाता था।

अन्य मन्दिरो में सीता-राम, महादेव बालाजी के मन्दिर पाये जाते है। मीणा मत्स्यावतार में अपनी उत्पति के कारण विष्णु की पूजा मीनावतार होने के कारण करते है। अधिकांश देवी देवताओं में मन्दिरो को देवरे कहा जाता है।

मीणा समुदाय में प्रत्येक गाँव में माता जी का स्थान या देवरा भी पाया जाता है। जहाँ पर मीणा समुदाय की औरते शीतलामाता की पूजा करती है। मीणा समुदाय में गाँव में एक बालाजी अर्थात हनुमान जी का स्थान होता है। जहाँ पर मीणा जनजाति के केवल पुरूष ही प्रवेश करते है।

मीणा समुदाय में घर से बाहर के समस्त देवताओं के यहाँ पूजा पुरूषो द्वारा ही जाती है। जबकि माताजी के स्थान पर अधिकांश जगहों व अवसरों पर महिलाओं द्वारा पूजा की जाती है। मीणा जनजाति में अऊत पूजा भी की जाती है जब किसी व्यक्ति के बेटा नहीं होता है तो उसे मरने के बाद अऊत माना जा कर उसका उतराधिकार ग्रहण करने वाला व्यक्ति उसकी देवता के रूप पूजा करता है। यह मान्यता भी है कि जब कभी अऊत नाराज हो जाता है तो उस घर से सदस्यों को परेशान करने लग जाता है। इसलिए हर त्यौहार व विशेष मौके पर अऊत की भी पूजा की जाती है।

मीना जनजाति में भंगड़ा की पूजा की जाती है। जिस के लिए हर अमावस्या को घर से औठाना अर्थात बर्तन साफ करने का स्थान पर उसको भोग लगाया जाता है। इसी प्रकार हर अमावस्या को देहड़ी पर भी भोग लगाकर पूजा की जाती है। देहड़ी उस स्थान को कहते है जहाँ पर दही को परम्परागत तरीके से मथा जाता है। देहड़ी को देवता के प्रतीक रूप में पूजा जाता है। देवताओं के स्थान पर मन्दिर के छत पर सतरंगी झण्डा भी रहता है। मीना जनजाति के अधिकांश देवी-देवताओं का स्थान बरगद या पीपल के पेड़ के नीचे होता है। जहाँ सामान्यत पुराने समय में कच्चे मिट्टी के चबुतरे

* एसोसिएट प्रोफेसर (समाज शास्त्र) राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

हुआ करते थे फिर पक्के चबुतरे बनने लग गये तथा वर्तमान में सुसज्जित मन्दिर भी बनने लग गये है।

वर्तमान में मीना जनजाति के बड़े गाँवों में मत्स्य अवतार के आधार पर मीन भगवान के मन्दिर भी बन रहे है जिसमें मछली एवं शिव की मिश्रित मूर्ति होती है।

मीना जनजाति पुरातन काल से देवी उपासक भी रहे है। मीना जनजाति का मानना है कि सात बहनो को सात माताओं के रूप में पुरातन काल से पूजा जाता रहा है। कैला देवी, बीजासणी, चौथ माता, सोनार माता, इडाणा माता, इत्यादि के रूप में माताओ को विशेष मान्यता रही है। मीना जनजाति की अटुट मान्यता है कि माता की विशेष कृपा से ही नवजात बच्चा फलता फूलता है। इसलिए प्रतिवर्ष इन माताओं के मन्दिर पर अलग अलग तिथियों को मैलो का आयोजन होता आ रहा है।

मीना जनजाति गणेश पूजा भी पुरातन काल से करती रही है। कोई भी कार्य का शुभारम्भ गणेश पूजा से ही किया जाता है। शादी–विवाह, अन्य समारोह का पहला निमन्त्रण पत्र गणेश जी को ही भेजा जाता है। विशेष रूप से सवाईमाधोपुर में त्रिनेत्र गणेश जी एवं जयपुर के मोती डूंगरी के गणेशजी की मीना जनजाति में पुरातन काल से मान्यता रही है। विवाह के शुभारम्भ में घर पर भी सबसे पहले घर में दीवार पर गणेश जी बनाया जाता है। जिसे गणेश जी बैठाना कहा जाता है। तथा गणेशजीकी स्थापना मीना लोकगीतों के साथ की जाती है। विवाह समारोह के शुभारम्भ से लेकर विवाह कार्यक्रम सम्पूर्ण होने तक प्रतिदिन महिलाए गणेश, बालाजी, भैरव जी, हीरामन इत्यादि के नाम के गीत गाती है।

मीना जनजाति में प्रत्येक शुभ कार्य में देवी देवताओं की पूजा अर्चना की जाती है। देवी देवताओं से उस कार्य के सफलतापूर्वक सम्पन्न होने की प्रार्थना की जाती है। मीना जनजाति का यथासम्पन प्रयास रहता है कि उनके सभी देवी देवता प्रसन्न रहे, नाराज न हो जाये इसलिए आज भी मीना जनजाति विज्ञान से ज्यादा देवी–देवताओं पर ज्यादा विश्वास करती है। जब कभी कोई व्यक्ति बीमार हो जाता है तो उसे देवी–देवताओं का प्रकोप मानते हुए देवी देवताओं के नाम के झाड़े लगाये जाते है। तथा उसे ठीक होने की कामना की जाती है यहाँ तक कि बड़ी बीमारी से ठीक होने पर देवी देवताओं के यहाँ सवामणी भी चढ़ाई जाती है।

कैला देवी– कैलादेवी का मन्दिर करौली जिले में करौली से लगभग 25 किमी की दूरी पर कैला देवी नामक स्थान पर स्थित है। कैला देवी को मीना जनजाति की कुल देवी माना जाता है। इसका प्रमुख पुजारी मीना समुदाय से ही है। विशेष रूप से करौली, सवाईमाधोपुर, धोलपुर, भरतपुर, कोटा, बून्दी, दौसा, जयपुर के मीना समुदाय के लोग इसे अपनी कुल देवी मानते है तथा प्रतिवर्ष इसे ढोकने के लिए जाते है, प्रतिवर्ष कैलादेवी पर चैत्र माह में विशाल लक्खी मेला भरता है। जिसमें राजस्थान के अलावा मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश इत्यादि प्रदेशों से भी लोग आते है। इस मेले में मीना समुदाय के लोग भी भारी तादात में आते है।

पपलाज माता– पपलाज माता का मन्दिर दौसा जिले के लालसोट तहसील में स्थित है। पपलाज माता भी मीना समुदाय की कुलदेवी मानी जाती है। इस माता के दौसा, सवाईमाधोपुर, जयपुर इत्यादि जिले के मीना समुदाय के लोग ढोक लगाने आते है। तथा मन्नते मागते है मन्नत पूरी होने पर यहाँ सवामणी भी चढाई जाती है। दौसा जिले के लालसोट के आसपास के मीना समुदाय के लोग अपने बच्चों का का पहली बार मुडंन संस्कार भी इसी स्थान पर करवाते है।

घटवासन माता– घटवासन माता जी का धाम राजस्थान के करौली जिले में करौली से लगभग 65 किमी उत्तर पूर्व में टोड़ाभीम तहसील में गुढाचन्द्र जी के पास स्थित है। यह धाम अत्यंत रमणीय है। सिन्दूर में स्थित माँ घटवासन की प्रतिमा के दर्शन पाकर भक्त एतार्थ होते है। यह मीना समुदाय की कुल देवी के रूप में पूजी जाती है। डॉ. रधुनाथ प्रसाद तिवारी ने अपनी पुस्तक 'मीणा समाज की कुल देवियां' में घटवासन माता के बारे में लिखा है कि धार्मिक साधनाओ में 'घट' का कई प्रकार से उपयोग होता है। सुबह कृत्यों में वरूण (जन तथा नीति के देवता) के अधिष्ठान के रूप में घट की स्थापना होती है। नवरात्रा में दर्गा पूजनारम्भ में घट की स्थापना कर उसमें देवी को विराजमान किया जाता है। इसी कारण इसे घटवासन के नाम से सम्बोधित किया गया है। इसी कारण इसे घटवासन के नाम से सम्बोधित किया गया है। अत: घटवासन माता दुर्गा का रूप है जिसने असूरो का नाश किया था। यहाँ चार भुजा धारी माता का स्वरूप है तथा माता सिंहारूढ है। मूर्ति स्थापना के सम्बन्ध में कोई निश्चित साल संवत नही है इसे सदियो पुराना मन्दिर माता जाता है। माता के मन्दिर के चारों ओर जलाशय है तथा जाल व धोक के पेड़ बहुताया तमे पाए जाते है। मन्दिर हजारो वर्ग फिट में निर्मित है। मन्दिर का निर्माण मीना समाज के महर गोजीप मीणाओ द्वारा कराया गया है तथा इसी गोज के मीणा माता जी की पुजा अर्चना करते है।आदिम काल से चली आ रही प्रथानुसार प्राचीन कबीलो गोत्रानुसार कुल देविया है।

पाली माता– पाली माता का स्थान दौसा जिले के लालसोट तहसील के मालवास नांगल में स्थित है। यह मीना समाज के बैफलावत गोत्र की कुल देवी मानी जाती है।

बरवासन माता– बरवासन माता का मन्दिर करौली जिले के सपोटरा तहसील में स्थित है जिसे मीना समाज के टाटू गोत्र की कुल देवी माना जाता है। जो व्यक्ति कैला देवी के जाते है वह बरवासन के भी ढोक लगाते है।

बाण माता (आसावरी)– बाण माता का मन्दिर खोहगंग (खो नागोरियन झालाना पहाड़ी) जयपुर में स्थित है। यह मीणा समाज में चांदा गोत्र की कुल देवी मानी जाती है।

जीण माता– जीण माता का स्थान सीकर जिले में रेवासा गौरेया में स्थित है इसे मीणा समाज के माणतवाल बागड़ी गोत्र की कुल देवी माना जाता है।

चौथ माता–चौथ माता का भव्य मन्दिर सवाईमाधोपुर जिले में चौथ का बरवाड़ा कस्बे में स्थित है। इसे मीणा समाज के बारवाड गोत्र की कुल देवी माना जाता है। यहाँ प्रतिवर्ष विशाल लक्खी मेले का आयोजन होता है। मेला मुख्य रूप से तीन दिन का होता है जिसमें से एक दिन मीणा समाज के लिए होता है जिसमें सवाईमाधोपुर, कोटा, बून्दी, टोंक, बांरा, झालावाड़, जयपुर इत्यादि जिलो से मीणा समाज के लोग माता के दर्शन के लिए आते है।

बांकी माता– बांकी माता का स्थान जयपुर जिले के जमुवारामगढ़ तहसील में माता शुला रायसर में स्थित है। इसे मीणा समाज के गोमलाडू व ब्याडवाल गोत्र की कुल देवी माना जाता है।

नारायणी माता– नारायणी माता का मन्दिर अलवर जिले के राजगढ़ तहसील में बरवा की पहाडी नारायणी धाम पर स्थित है। यह बहुत ही रमणीय स्थान है इसे मीणा समाज के नायी व ककरोड़ा गोत्र की कुल देवी माना जाता है। यहाँ प्रतिवर्ष मेले का आयोजन होता है जिसमें मीणा समाज के लोग बहुत अधिक संख्या में माता के दर्शन करने जाते है।

अम्बा माता– अम्बा माता का मन्दिर जयपुर के आमेर पहाड़ी पर स्थित है इसे मीणा समाज के सुसावत गोत्र की कुल देवी माना जाता है।

बीजासण माता–बीजासण माता का मन्दिर दौसा जिले के लालसोट तहसील

में खुर्रा व बून्दी जिले के इन्द्रगढ कस्बे में स्थित है। यह भी मीणा समाज की कुल देवी मानी जाती है।

निष्कर्ष – राजस्थान की मीना जनजाति के देवी देवता और उनके प्रतीको के आधार पर कहा जा सकता है कि मीना जनजाति देवी देवताओं व उनके प्रतीको पर अटुट विश्वास करने वाली धार्मिक जनजाति है जो कि पुरातन काल से इन देवी देवताओ की अनेक अवसरो पर भोग लगाकर पूजा अर्चना करती है तथा अपने घर परिवार, समाज, प्रदेश व देश में खुशहाली की कामना करते है। बिना देवी देवताओं की पूजा के कोई भी कार्य का शुभारम्भ नही किया जाता है। देवी देवताओ के यहाँ मन्नते मांगी जाती है। जब मन्नत पूरी हो जाती है तो उस खुशी में उस देवी के यहाँ जात, परिक्रमा, कलकडण्डवत किया जाता है। धर्म एवं सवामणी की जाती है। प्रत्येक देवी देवता का अपना एक प्रतीक भी होता है। उस प्रतीक को भी मीना जनजाति अपने टोटम के रूप में मानते हुए उसके प्रति गहरी आस्था व्यक्त करते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. मेहता, प्रकाशचन्द, 'भारत के आदिवासी', शिवा पब्लिशर्स, जयपुर 1993 पृ. सं. 134
2. मीणा इतिहास (संवत 2025) रावत सारस्वर, झंथालाल नांढला बस्सी, जयपुर
3. वीर विनोद, श्यामलदास, प्रथम मुद्रण, राजमंत्रालय, उदयपुर, 1886 मुद्रण दिल्ली 1986 पृ. सं. 42
4. डिस्ट्रीक्ट गजेटियर्स, बून्दी (1964) सवाई माधोपुर एवं उदयपुर जिला गजेटियर्म विभाग, राजस्थान जयपुर पृ.सं. 56
5. नोरावत,डॉ. रामसिंह, 'क्षेत्रिय मीणा गोत्र संगठन' शशि प्रकाशकन, जयपुर 2002 पृ.सं.46
6. इथोनोग्राफिक स्टेडी ऑफ मीणा, आदिम जाति शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान, उदयपुर
7. उत्प्रेती,डॉ.हरिशचन्द, 'भारतीय जनजातियाँ: संरचना एवं विकास' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर 2007 पृ.सं. 428
8. शर्मा,राजीवलोचन, 'जनजातीय जीवन और संस्कृति' सहचारी प्रकाशन प्रसारण, कानपुर 1967 पृ.सं.183

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Estimation of Heritability of Different Economic Trails in While Leghorn Strain 'B' Flock

Bhagat Singh*

Introduction - Large variability has been observed in the production and reproduction efficiency of different breeds of poultry .The purpose of this study was to estimate the heritability of different economic traits *viz.,* Body weight at 20 weeks of age (g),Body weight at 34 Weeks of age(g),Age at first egg(days), Egg weight(g), at 40 week of age , egg production (no.), egg no. (upto 250 days of age), Egg mass (kg) (upto 250 days of age) and rate of lay (%) in white leghorn strain B flock.

Materials and Methods - The data used in the present study was collected for two generation (1998-1999) hatched in three to four hatches at weekly interval, in month of march-april every year on B strain of white leghorn maintained at the poulty farm, college of veterinary and animal science RAU Bikaner.

Estimates of heritability were obtained from sire and residual variance components by paternal correlation method.

$$h^2{}_S = \frac{4\sigma^2{}_s}{\sigma^2{}_{s+}\ \sigma^2{}_e}$$

The standard error of heritability estimates was calculated by the approximate method proposed by Dickerson (1959) and modified by Becker (1984) as follows:

$$SE=(h^2{}_s) = \frac{4\sqrt{var(\sigma^2{}_s)}}{\sigma^2{}_s + \sigma^2{}_e}$$

Results and Discussion - The pooled and generation wise estimates of heritability along with their respective standard errors for various economic traits studied are presented in table 1. These were computed in order to find out the breeding values of sires and type of genetic variability affecting these traits by sire component of variance.

Body weights - The heritability estimates obtained from sire component of variance for 20 week body weight were found to be moderate to high, ranging from 0.48 ±0.167 in generation II to 0.88 ± 0.293 in generation I. While the pooled estimates over two generation was observed to be 0.69 ±0.198. The present findings are in close agreement with those reported by Tewari (2003). Contrarily, Sharma *et al.(2002),* reported low heritability estimates for the same trait.

The heritability estimates for 34 week body weight was found to be high, it ranged from 0.67 ±0.172 in generation II to 0.84 ±0.209 in generation I. While the pooled estimates was observed to be 0.73 ± 0.131. These results are akin to the findings of Brah*et al.(*1997) and Ahmad and Singh (2001). Contrarily, Dhankhar (2002) reported low estimates of heritability for body weight at 20/34 weeks of age.

Table 1. Heritability estimates with standard error by paternal half sib component for different traits.

Traits	Generation	h^2s	SE
BW20	I	0.887	0.293
	II	0.481	0.167
	Pooled	0.691	0.198
BW34	I	0.844	0.209
	II	0.670	0.172
	Pooled	0.734	0.131
AFE	I	0.313	0.108
	II	0.249	0.088
	Pooled	0.265	0.066
EP	I	0.186	0.078
	II	0.256	0.088
	Pooled	0.221	0.059
EW	I	0.526	0.153
	II	0.267	0.092
	Pooled	0.377	0.083
EM	I	0.216	0.086
	II	0.230	0.083
	Pooled	0.241	0.062
RL	I	0.014	0.034
	II	0.041	0.037
	Pooled	0.040	0.027

Age at first egg - The heritability estimates of age at first egg was found to be moderate. ranging from 0.249 ± 0.088 in generation II to 0.313 ±0.108 in generation 1. Whereas, the pooled estimate for this trait was observed to be 0.26 ±0.066. Similar findings have been cited by Dhankhar (2002). Contrarily, lower values were reported by Singh et al. (1986), and Banger et al. (2003). However,Brah et al. (1997) in G_{1-2} and G_{3-4} reported higher estimates of

*Associate Professor Ag. (Animal Husbandary and Dairy Science) S.C.R.S. Govt. College, Sawai Madhopur (Raj.) INDIA

heritability for the same trait. These varying findings authenticate the fact that heritability estimate for a particular trait is temporal as well as spatial.

Egg production - In present investigation low estimates of heritability for egg production upto 250 days of age, obtained by sire component of variance, ranged from 0.18 ±0.078 in generation-I to 0.25 ±0.088 in generation-II. The estimate pooled over 2 generations was found to 0.22 ±0.059. The low estimate of heritability for this trait suggests alternative selection criteria, either sib-selection or progeny testing, to bring in genetic improvement. The present findings are in agreement with those reported by Ahmad et al. (2005) for egg production upto 280 days/40 weeks of age. However, higher estimates reported by Banger et al. (2003) reported very low estimates of heritability for egg production upto 280 days/ 40 weeks of age. This may have been due to continuous selection for egg number, over generations, resulting in depletion of additive genetic variance.

Egg weight - The heritability estimates for egg weight at 40 weeks of age were 0.267 ±0.092 and 0.526 ± 0.153 for generation II and generation I respectively. This indicates moderate to high heritability for the trait. However, the pooled heritability for this trait was estimated to be 0.37 ±0.083. The results were in agreement with the reports of Khatkar et al. (1994). Repugnant to these, heritability estimates were reported by Kumar et al. (2001) and Ahmad et al. (2005).Dhankhar et al. (2002) reported high heritability estimates for the same trait.

Egg mass - Table 1 depicts heritability estimates for egg mass upto 250 days of age. The estimates of heritability ranged from 0.216 ±0.086 in generation I to 0.230 ±0.083 in generation II. Though, the pooled estimate was 0.24 ±0.062. The estimates showed trend on lower side and it is in concurrence to reports in literature by Kumararaj et al. (1991) for forsgate strain of WLH and Joshi et al. (2005) for IWN strain.

Conversely, higher estimates of heritability for egg mass were reported by Thangaraju and Ulaganathan (1990) for forsgate and meyer strain in WLH and Kumararaj et al. (1991) for meyerforsgate strain. These estimate of heritability were almost similar to that of egg number and the same selection strategies are to be adopted as that for part egg production.

Rate of lay - Low estimates of heritability obtained in present investigation for rate of lay, ranged from 0.014 ±0.034 in generation I to 0.41 ±0.037 in generation 11. The pooled estimate was recorded to be 0.04 ±0.027. Scanty literature was available on rate of lay io support/contradict the estimates obtained in present study. Ledur et al. (1993) reported 0.16(line-1) and 0.28 inline-2 and 0.06 (line-1) and 0.41 inline-2 from damand surplus dam component of variance respectively, and El-Gendy et al. (1997) reported low heritability estimates for the same trait. Since this trait is derived from egg production and egg production is lowly heritable, hence the estimate of this trait is also on lower side.

References :-

1. Ahmad, M; Singh, H. and Sharma, R.K.2005. Index selection for genetic improvemen t of some economic traitn Layerchicken. XXIII Annual Conference and National Symposium of Indian Poultry Science Association (IPSACON 2005). Acharya N. G. Ranga Agricultural University, Rajendra Nagar, Hyderabad. 24Feb. 2005:
2. Ahmad, Maroof; Singh. Harpal. 2001. selection indices for improving Commercial strains of White Leghorn. IndianJ. Poult Sci.36(1):9-11.
3. Banger, N.P. Mallik, B.K. and Ahmad, M.2003. Genetic architecture of White Leghorn population.XXI Conference of Indian Poultry Science Association & National Symposium.March2003,CARI,U.P.Abst.No.AGBI.20.
4. Becker. W.A.1984. Manual of procedures in Quantitative Genetics: 4th Edition,WashingtonStateUniversity. Washington.
5. Brah, G.S ;Chaudhary. M. L.and Sandhu, G. S. 1997. Evaluation of random bred control population of layer chickens. Indian J. Poult. Sci., 32 :23-27
6. Dhankhar. K. 2002. Evaluation of multi-trait selection indices for improving egg production in White Leghorn.Thesis M.Sc., G.B. Pant Unitversity of Agriculture and Technology,Pantnagar.
7. Dickerson, G. E. 1959. T echniques and procedures in Animal Production Research. American Society of Animal ProductionPublication.
8. El-Gendy. E.A; Arram. G.A: El-Full, E.A; Abdou, A.M. 1997. Characteristics of egg production populations. I. Genetic varaiation in related traits in group off owls differing in genetic background. Egyptian Poultry Sci. J.17(2).:193-213.
9. Joshi, R.S; Barat, V.N;P atel,A .B: Savaliya, F.P; Mishra, R.K; Pateja, H.I. and Kuldeep Khanna. 2005. A genetic study on egg production traits is two strains of White Leghorn. XXIII Annual Conference and National Symposium of Indian Poultry Sciences Association. Acharya N.G. Ranga Agri.Univ. Rajendranagar Hyderabad.A.P.India.2-4Feb.2005.P. 13.
10. Khatkar,M.S;Sandhu,J.S; Brah,G.S.andChaudhary, M.L.1994.Geneticanalysisofeggshellqualitycharactersin layer chicken. Indian J. Anim. Sci., 64:1248-1253.
11. Kumar,D;Singh,C.V.andSingh,R.V.2001. Estimation of genetic parameters and construction of multi-trait selection indicesus ingvarious economic traits in broilers. IndianJ.Poult.Sci.,36:178-182.
12. Kumararaj,R.0;Kathandaraman,P.andUlaganathan,V. 1991.Comparison heritability between purebred and crossbred layers. Indian J. Poult. of Sci. 26(1):1-5.
13. Sharma,P.K:Verma,S.K.andSingh,B.2002. Genetic parameters of production and egg quality characters in White Leghorn. Indian J. Poult. Sci. 37(2):181-182.
14. Singh,D.P;Kumar,J;Singh,R.P.andBalaine,D.S.1986. Multitraits election for improving production efficiency of egg type chickens. Indian J.Poult. Sci., 21:223-226.
15. Tewari.R.2003.Genetic studies on economic traits of a commercial strain of White Leghorn. Thesis M.Sc., G.B.Pant University of Agriculture and Technology, Pantnagar.

Ageing in India: Some Social Challenges to Elderly Care

Mohd Ashraf* Ajaz Ahmad Dar**

Abstract - In the forthcoming decades, there will be a tremendous increase in the number of elderly in India, with their rate of increase being faster than that of the total population. How is the country going to manage this huge elderly population, given its poor resources and standard of living? What are the issues involved in this challenge? This paper briefly discusses some of these issues with regard to work status, dependency ratio, living arrangements, gender ageing, health and disability status, family and kinships and availability of social security provisions for the elderly. Policy that would cover all sections of the population, the nonexistence, as yet, of any concrete steps on the part of the state to tackle the complicated problems of the elderly, the increasing stress and strains on the primary caregiver, the fast pace of social change that is affecting traditional care giving mechanisms for the elderly, as well as the need for a dynamic action plan to utilize the resources of the elderly and to enhance their social status are discussed.
Key words - Standard of living, Elderly, Gender ageing, Work Status, Population.

Introduction - Ageing in India is exponentially increasing due to the impressive gains that society has made in terms of increased life expectancy. With the rise in elderly population, the demand for holistic care tends to grow. By 2025, the geriatric population is expected to be 840 million in the developing countries[1]. It is projected that the proportion of Indians aged 60 and older will rise from 7.5% in 2010 to 11.1% in 2025. In 2010, India had more than 91.6 million elderly and the number of elderly in India is projected to reach 158.7 million in 2025.[2] An aging population puts an increased burden on the resources of a country and has raised concerns at many levels for the government in India. The aging population is both medical and sociological problem. The elderly population suffers high rates of morbidity and mortality due to infectious diseases. The demographic transition in India shows unevenness and complexities within different states. This has been attributed to the different levels of socio-economic development, cultural norms, and political contexts. Hence it will be a herculean task for policy makers to address the geriatric care that will take into account all these determinants. Care for the elderly is fast emerging as a critical element of both the public and private concern.

The apparent success of the medical science is invariably accompanied by several social, economic and psychological problems in older persons, in addition to the medical problems. It needs to be understood that many of these problems require lifelong drug therapy, physical therapy and long-term rehabilitation[3]. The elderly tend to be cared for in a variety of settings: home, nursing home, day-care centre, geriatric out-patient department, medical units or intensive care unit depending on the nature of the clinical problem. Care of elderly necessitates addressing several social issues. The needs and problems of the elderly vary significantly according to their age, socioeconomic status, health, living status and other such background characteristics. Their social rights are neglected and they are profusely abused which goes unreported.

Lack of Infrastructure - With increasing longevity and debilitating chronic diseases, many elder citizens will need better access to physical infrastructure in the coming years. Lack of physical infrastructure is a major deterrent to providing comfort to the aged. Many elder citizens need better access to physical infrastructure, both in their own homes and in public spaces. Unattended chronic disease, unaffordable medicines and treatment and malnutrition are part of old age life in India as there is no system of affordable health care. Emphasis on geriatrics in the public health system is limited with few dedicated geriatric services. The other issues of the public health system are lack of infrastructure, limited manpower, and poor quality of care and overcrowding of facilities due to insufficient focus on elderly care[4].

Changing Family Structure - The traditional Indian society with an age-old joint family system has been instrumental in safeguarding the social and economic security of the elderly people. The traditional norms and values of Indian society also laid stress on showing respect and providing care for the elderly. However with the emerging prevalence of nuclear family set-ups in recent years, the elderly are likely to be exposed to emotional, physical and financial insecurity in the years to come. There is an upward trend in

*Research Scholar (Political Science) Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Political Science) Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.) INDIA

the living arrangement pattern of elderly staying alone or with spouse only from 9.0% in 1992 to 18.7% in 2006 [5]. Family care of the elderly seems likely to decrease in the future with the economic development of the nation and modernization.

Lack of Social Support - The elderly in India are much more vulnerable because of the less government spending on social security system. The elderly in urban area rely primarily on hired domestic help to meet their basic needs in an increasingly-chaotic and crowded city. Social isolation and loneliness has increased[6]. Insurance cover that is elderly sensitive is virtually non- existent in India. In addition, the preexisting illnesses are usually not covered making insurance policies unviable for the elders. Pension and social security is also restricted to those who have worked in the public sector or the organized sector of industry. In a study by Lena et al.[7], almost half of the respondents felt neglected and sad and felt that people had an indifferent attitude towards the elderly. It was also found that 47% felt unhappy in life and 36.2% felt they were a burden to the family.

Social Inequality - Elderly are a heterogeneous section with an urban and rural divide. They are less vulnerable in rural areas as compared to their urban counterparts, due to the still holding values of the joint family system. All the elderly are not seen in the same view as the needs and problems of elderly are rejected to a vast extent as government classifies these people based on caste and other socio cultural dimensions. In a case study, it was found that a major proportion of the elderly women were poorer; received the lowest income per person; had the greatest percentage of primary level education; recorded the highest negative affective psychological conditions; were the least likely to have health insurance coverage and they recorded the lowest consumption expenditure[8].

Availability, Accessibility and Affordability of Health Care - Due to the ever increase trend of nuclear families, elder care management is getting more difficult, especially for working adult children who find themselves responsible for their parents' well-being. Managing home care for the elderly is a massive challenge as multiple service providers – nursing agencies, physiotherapists and medical suppliers – are small, unorganized players who extend sub-optimal care. In India, health insurance coverage is essentially limited to hospitalization. The concept of geriatric care has remained a neglected area of medicine in the country. Despite an aging population, geriatric care is relatively new in many developing countries like India with many practicing physicians having little knowledge of the clinical and functional implications of aging [9-11]. Not many institutes offer the geriatrics course, and even takers are few. Most of the government facilities such as day care centres, old age residential homes, counselling and recreational facilities are urban based. The geriatric outpatient department services are mostly available at tertiary care hospitals[12]. Reaching to 75% of the elderly that reside in rural areas with geriatric care will be challenging. Dhar[13] has pointed out the relative neglect in provision of facilities for patient care as well as training and development in geriatrics in the Indian context. As pointed by Dey et al.[14], the key challenges to access and affordability for elderly population include reduced mobility, social and structural barriers, wage loss, familial dependencies, and declining social engagement. The stigma of aging is another social barrier to access of health in addition to the health and social conditions the elderly commonly face such as dementia, depression, incontinence and widowhood[15].

Economic Dependency - As per the 52nd round of National Sample Survey Organization, nearly half of the elderly are fully dependent on others, while another 20 percent are partially dependent for their economic needs[16]. About 85% of the aged had to depend on others for their day to day maintenance. The situation was even worse for elderly females[17]. The elders living with their families are largely contingent on the economic capacity of the family unit for their economic security and well being. Elderly often do not have financial protection such as sufficient pension and other form of social security in India. The single most pressing challenge to the welfare of older person is poverty, which is a multiplier of risk for abuse[18]. Also due to their financial dependence, elderly persons though are most vulnerable to infections have low priority for own health. Migration of younger generation, lack of proper care in the family, insufficient housing, economic hardship and break-up of joint family have made the old age homes seem more relevant even in the Indian context[19].

It is important to understand the social aspects concerning aged in the country as they go through the process of ageing. Increased life expectancy, rapid urbanization and lifestyle changes have led to an emergence of varied problems for the elderly in India. It must be remembered that comprehensive care to the elderly is possible only with the involvement and collaboration of family, community and the Government. India should prepare to meet the growing challenge of caring for its elderly population. All social service institutions in the country need to address the social challenges to elderly care in order to improve their quality of life. There is a need to initiate requisite and more appropriate social welfare programmes to ensure life with dignity for the elderly. In addition, there is also a need to develop an integrated and responsive system to meet the care needs and challenges of elderly in India.

References :-

1. WHO (2002) Tufts University School of Nutrition and Policy. Keep fit for life: Meeting the nutritional needs of older persons. WHO, Geneva, Switzerland.
2. United Nations Department of Economic and Social Affairs, Population Division (2008) World Population Prospects (2008 Revision).
3. Yeolekar ME (2005) Elderly in India — Needs and Issues. JAPI.

4. FICCI-Deloitte (2014) Ensuring care for the golden years – Way forward for India.7th Annual Health Insurance Conference: Health Insurance 2.0: Leapfrogging beyond Hospitalization.
5. Kumar S, Sathyanarayana KM, Omer A (2011) Living Arrangements of Elderly in India: Trends and Differentials. International Conference on Challenges of Population Aging in Asia, UNFPA, New Delhi, India.
6. Rajan SI (2006) 'Population Ageing and Health in India', Centre for Enquiry into Health and Allied Themes, Mumbai.
7. Lena A, Ashok K, Padma M, Kamath V, Kamath A (2009) Health and Socio Problems of the Elderly : A Cross Sectional Study in Udupi taluk, Karnataka. Indian J Community Med 34: 131-134.
8. Hiremath SS (2012) The Health Status of Rural Elderly Women in India: A Case Study. International Journal of Criminology and Sociological Theory 5: 960-963.
9. Ingle G, Nath A (2008) Geriatric health in India: concerns and solutions. Indian J Community Med 33: 214-218.
10. Gangadharan KR (2003) Geriatric hospitals in India, today and in the future. J Aging Soc Policy 15: 143-158.
11. Krishnaswamy B, Sein U, Munodawafa D, Varghese C, Venkataraman K, et al. (2008) Ageing in India. Ageing International 32: 258-268.
12. Mane AB, Khandekar SV, Fernandez K (2014) India's Ageing Population: Geriatric Care Still in Infancy. J Gerontol Geriatr Res 3: 186.
13. Dhar HL (2005) Emerging geriatric challenge. J Assoc Physic India 53: 867-872.
14. Dey S, Nambiar D, Lakshmi JK, Sheikh K, Reddy KS (2012) Health of the Elderly in India: Challenges of Access and Affordability. In: National Research Council (US) Panel on Policy Research and Data Needs to Meet the Challenge of Aging in Asia; Smith JP, Majmundar M, editors. Aging in Asia: Findings From New and Emerging Data Initiatives. Washington (DC): National Academies Press (US).
15. Patel V, Prince M (2001) Ageing and mental health in a developing country: Who cares? Qualitative studies from Goa, India. Psychol Med 31: 29–38.
16. National Sample Survey Organisation (1998) Morbidity and Treatment of Ailments July, 1995- June, 1996 (NSS 52nd Round) Report No. 441, New Delhi, Government of India.
17. GOI (2011) Situation Analysis of the Elderly in India. Central Statistics Office Ministry of Statistics & Programme Implementation, Government of India.
18. Shenoy AS (2014) Social protection and social welfare of elders. South Asia Regional Co-operation Newsletter 1-8.
19. Bajwa A, Buttar A (2002) Principles of geriatric rehabilitation. In: Rosenblatt DE, Natarajan VS (eds). Primer on geriatric care, Cochin, Pixel studio 232-243.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Tulsi: The Queen of Herbs

Dr. Savita Chahar*

Abstract - Tulsi, also known as holy basil, is an aromatic perennial plant. It is native to Indian subcontinent and wide -spread as a cultivated plant throughout the Southern Asian tropics, and highly revered for its medicinal uses within the Ayurvedic and Siddha medical system.

I conducted a comprehensive literature review of research studies that reported as a clinical outcome after ingestion of tulsi.

The reviewed studies reinforce traditional uses and suggest tulsi is an effective treatment forfever, bronchitis, cancer, diabetes, ophthalmia, gastric disorder, skin diseases, genitourinary disorders and for mental stress.

Key Words - Tulsi, Holy basil, Ocimum sanctum.

Introduction - Plants are one of the most important sources of medicine. Among them tulsi is highly revered , culinary and medicinal aromatic herb. It is indigenous to the Indian subcontinent been used within Ayurvedic medicine more than 3000 years.

Tulsi is also known as, **"The elixir of life".**

Tulsi is an erect, branched subshrub, 30-80cm tall with hairy stems. Leaves are green Or purple; they are simple,petioled, with an ovate, up to 5cm- long blade, which usually. Has a slightly toothed margins; they are strongly scented and have a decussate phyllotaxy. The purplish flowers are placed in close whorls on elongated racemes. The three main monotypes cultivated in India and Nepal are Ram tulsi (the most common type, with broad bright green leaves that are slightly sweet), Krishna Tulsi (the less common purplish green-leaved) and the common wild Vana Tulsi.

Botanical Classification :

Kingdom	:	Plantae
Division	:	Magnoliophyta
Class	:	Magnoliopsida
Order	:	Lamiales
Family	:	Lamiaceae
Genus	:	Ocimum
Species	:	Sanctum (tenuiflorum)

Rama Tulsi

Krishna Tulsi **Vana Tulsi**

Tulsi is cultivated for religious and traditional medicine purpose , and also for its Essential oil. It is widely used as a herbal tea. Commonly used in Ayurveda, and has place. Within the Vaishanava tradition of Hinduism, in which devotees perform worship Involving holy basil plants .

Chemical Constituents - Studies found forty five compounds and oils in holy Tulsi. The main constituent in volatile oil from basilare rosmarinic acid (A strong antioxidant), linalool, methyl chavicol, methylcinnamate.
Its medicinal effects are mostly due to rhythmol, eugenol and camphor. The seeds contain an oil composed of fatty acids and sitosterol.

It is one of the healing herb that contain Vitamin A and Vitamin C that stimulate production of disease fighting antibodies by up to 20 percent as well as antioxidant that help to prevent cell damage that can lead to cancerous conditions.

Medicinal Properties - Ocimumsanctum has numerous pharmacological activities. The basil contains antioxidants like Beta carotene that helps in preventing cell damage.

The ability of Tulsi to protect against the damaging effect of various toxicants has been documented in

*Lecturer, Deptt. Of Botany, Govt. Meera Girls College, Udaipur (Raj.) INDIA

numerous experimental studies, these studies prove the ability of Tulsi to prevent liver, kidney and brain injury caused by pesticides and industrial chemicals.

Chewing the leaves relieves cold and flu.A decoction of the leaves of Tusi, cloves and salt gives immediate relief in influenza. The root of Tulsi plant should be crushed and boiled with turmeric powder, consuming. Two spoonfuls twice daily will cure SARS (Severe Acute Respiratory Syndrome). It balance blood sugar and insulin metabolism can reduce fasting blood gucose.

Antipyretic - It prevents and reduces fevers. Treatment for viral, malaria and typhoid. Tulsi oil is also used in as ear drops in case of pain.

Anti Microbial Effects - The leaves of this herb inhibits the growth of E.coli, worms and parasites, when the fresh juice is taken with honey.

Conclusion - Tulsi has been widely used for curing various ailments due to its great therapeutic potentials. Tulsi is a popular home remedy for fever, liver diseases, bronchitis, skin diseases, Cancer, Stress disorders. It has aromatic, stomachic, carminative, demulcent, diuretic, Vermifuge and febrifuge properties. The medicinal properties of this wonderful herb have been studied by various scientists .

These studies help in establishing a scientific basis for therapeutic uses of the queen of herb.

References :-

1. William son, Evens (1996) selection, preparation and pharmacological evaluation of plant material.(73).
2. Sen. P. Therapeutic potentials of Tulsi: from experience to facts. Drugs News & Views 1993; 1(2): 15-21.
3. Madal S, Das DN, Dey K, et. al. Ocimum sanctum Linn- A study on gastric ulceration and gastric secretion in rats. Indian J Physiol Pharmacol 1993; 37:91-92.
4. Batta SK, Santha kumara G. the anti-fertility effect of Ocimum sanctum and Hibiscuc Rosa Sinensis. Indian J Medical Research 197; 59: 777-781.
5. Das SK, Vasudevan DM. Tulsi: The Indian holy power plant. Natural Product Radiance. 5:2006, 279-83.
6. Pandey Govind, Madhuri S. Autochthonous herbal products in the treatment of cancer. Phytomedica 7:2006, 99-104.
7. Puri, Herbans Singh (2002). Rasayana: ayurvedic herbs for longevity and rejuvenation. Crc press. (272-280).
8. Simoons, Frederick J. (1998). Plants of life, plants of death. University of Wisconsin press. (7-40).

****

भारतीय नाट्य जगत में लोक नाटकों की यात्रा

डॉ. रचना बिमल*

प्रस्तावना - 'जिंदगी एक रंगमंच है, जहाँ हमें अपनी भूमिका निभानी ही पड़ती है। कभी यह भूमिका मनपसंद मिल जाती है तो कभी निर्देशक (ऊपर वाले) के निर्देशानुसार' मिलती है। यह संवाद दार्शनिकता की कोख से जन्मा हो या अज्ञात लेखक की कलम से पर इतना तय जरूर है कि नाटक और जीवन का गहरा सम्बन्ध रहा है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि नाटक जीवन की अनुकृति है और जीवन प्रत्यक्षत: नाट्यानुभूति। अनुभूति जितनी अधिक प्रगाढ़ होती है जीवन में कलात्मकता भी उतनी ही बढ़ जाती है। मनुष्य और कला का रिश्ता सम्भवत: सृष्टि में मानव के जन्म के साथ ही जुड़ा है, जिसने सृष्टि की कला को मानवीय हाथों के माध्यम से अनेक रूपाकार दिए हैं। समय पथ पर अग्रसर होते हुए मनुष्य ने ही- भोजन, घर, परिवार, व्यवसाय, कर्मकाण्ड, विश्वास, धर्म और कला आदि को जन्म दिया। कालक्रम में कौन सी घटना पहले घटित हुई यह तो निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता लेकिन यह अनुभूत किया जा सकता है कि जिस क्षण मानव ने पहली बार प्रकृति के विभिन्न तत्त्वों- सूरज, चाँद, तारे, वर्षा, तूफान, पेड़-पौधों, विविध जीव-जन्तुओं को देखा होगा उसी क्षण उसकी चेतना में वैविध्यधर्मी सौन्दर्य के क्षण भी अनुभूत हुए होंगे। अनुभूति के उन क्षणों को मानव ने अपने दूसरे साथी के साथ बाँटना भी चाहा होगा। उन आदिम क्षणों में जब मानव के पास कोई शाब्दिक भाषा भी नहीं थी तब सम्प्रेषण के लिए उसने निश्चित रूप से ध्वनि, मुद्रा, हाव-भाव और शारीरिक चेष्टाओं की भाषा से अभिव्यक्ति भी दी होगी। किसी सुन्दर सी तितली को देखकर हाथ-हिलाकर उसके पंखों सी अनुभूति, झूमकर हिलते-डुलते पेड़-पौधों का देखकर सिर से लेकर पाँव तक स्वयं झूमने की प्रक्रिया आदिम मानव की अभिव्यक्ति रही होगी। सभी आदि मानवों ने ऐसे अनुभव अनुभूत किए होंगे इसलिए इन्हें कलात्मक या नाट्यात्मक अनुभूति नहीं कहा जा सकता लेकिन जब किसी आदि मानव की भेंट किसी खूंखार जानवर या विषम परिस्थिति से हुई होगी और वह उन्हें पराजित कर अपने साथियों के पास लौटा तो उसने उसके साथ जो घटित हुआ, उसे दूसरों के साथ बाँटने की इच्छा ने ही, अनजाने में ही दुनिया की पहली नाट्य कला को जन्म दिया। संकेतों की भाषा में भावों की अभिव्यक्ति जो कथा सुना रही थी वही दुनिया का प्रथम लोक नाटक भी रहा होगा, जिसके विभिन्न रूप आज भी आदिवासियों की नृत्य-नाटिकाओं में देखने को मिलते हैं।

आरम्भ में कहने और दिखाने की कला अर्थात् कहानी और नाटक एक ही रही होगी लेकिन धीरे-धीरे दोनों के रूप पृथक हो गए। कहानी के विकास में जिज्ञासा महत्त्वपूर्ण होती है, जबकि नाटक अभिव्यक्ति का घनीभूत रूप है जो अभिनय के माध्यम से दर्शक की संवेदानाओं को भी घनीभूत कराकर अपने साथ एकाकार करा लेती है। यह एक सम्पूर्ण प्रक्रिया है जिसे नाटक के आदि शास्त्र- 'नाट्यशास्त्र' के रस-विवेचन के माध्यम से समझा जा सकता है। नाट्यशास्त्र के रचियता भरतमुनि के अनुसार- हर आदमी में स्थायी भाव के रूप में कुछ संवेदनाएँ आदिम काल से ही मौजूद है, लेकिन वे अपने आप में रस की कोटि तक नहीं पहुँच जाती अर्थात् स्थायी भाव को रस की ऊँचाई तक पहुँचाने के लिए पूरी एक प्रक्रिया चाहिए जिसे बाद में आचार्यों ने रस-निष्पति के नाम से विश्लेषित किया। यह रस-निष्पति ही वह अभिव्यक्ति है जो स्थायी संवेदना को अभिनय द्वारा कला में परिवर्तित कर अनुभव को भी स्थायित्व प्रदान करती है। भरतमुनि ने स्वयं नाट्यशास्त्र में लिखा है-

'योऽयं स्वभावो लोकस्य सुख: दुखसमन्वित:
सोऽङ्‌ गाद्यभिनयोपेतो नाट्याभित्यभिधीयते।'[1]

अर्थात् यह जो लोक का सुख-दु:ख भरा स्वभाव है, वहीं जब-तक अभिनय और नृत्त-गीतादि दूसरी कलाओं (अंग) से युक्त होकर (प्रस्तुत) होता है तो नाट्य कहलाता है। यहाँ 'लोक' शब्द को समझना समीचीन होगा। डॉ. विद्या निवास मिश्र के अनुसार- 'लोक का वैदिक अर्थ प्रकाश, खुली जगह, दृष्य जगत है और उसके बाद उसका अर्थ युक्त विचरण भी है। लोक शास्त्र विरुद्ध नहीं अपितु शास्त्रपूरक भी है।'[2] आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी- 'लोक' का सम्बन्ध नगरों और गाँवों की उस जनता से मानते हैं, जिसके ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं है। ये साधारण जन कृत्रिम जीवन से अभ्यस्त होते हुए परिष्कृत सभ्य लोगों की सुकुमारता और विलासिता के लिए आवश्यक वस्तु उत्पन्न करते है।'[3] अत: हम प्रेम शंकर सिंह के शब्दों में कह सकते हैं कि- 'लोक की अभिव्यक्ति में जीवन के जो तत्तव हैं वे हमारे साहित्य के विकास के अवरुद्ध मार्ग को नई गति प्रदान करते हैं। उसे सवंर्धित और संप्रेषित करने में अहम् भूमिका निभाते हैं।'[4] नौटंकी एक ऐसा ही लोक नाट्य रूप है।

नाटक के प्रयोग में संगीत, नृत्त या नृत्य की उपस्थिति दो प्रकार से सम्भव है-संश्लिष्ट और असंश्लिष्ट। पहले में संगीत, नृत्त या नृत्य, नाट्य-प्रयोग के आन्तरिक, अविभाज्य अंग बन जाते हैं, जैसे- मिट्टी से घड़ा बनाया जाता है या धागों में वस्त्र बुना जाता है। इसी प्रकार संगीत, नृत्त और नृत्य से 'नाट्य-प्रयोग' ऊँचाई को प्राप्त करता है। भरतमुनि के अनुसार संगीत और नृत्य-नाट्य की संरचना के आंतरिक और अविभाज्य अंग ही है। दूसरी स्थिति में संगीत और नृत्य ऊपर से जोड़े जाते हैं। किस नाटक में कौन सी स्थिति सही रहेगी यह विभिन्न नाट्य-दलों और नाट्य, निर्देशकों की विशिष्ट रुचि, विशिष्ट दक्षता और कथानक के अनुरूप निर्धारित होती है। अभिव्यक्ति और सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के लिए कभी संगीत तो कभी नृत्य तो कभी दृष्य कलाओं को नाटक की रीढ़ बनाया जाता है। ध्वनि, प्रकाश, मंचसज्जा, वेश-भूषा, भाषा, आदि नाट्य अभिव्यक्ति के अन्य अंग कहे जा

* स. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, सत्यवती महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय (दिल्ली) भारत

सकते हैं। इन सभी अंगों का समायोजन नाट्यशास्त्र के रचियता के अनुसार रम्यता है, जो अन्य काव्य रूपों में भी सर्वाधिक रम्य है।

लोकरंजन अर्थात् रम्यता के लिए ही संस्कृत में नाट्यलेखों के सिद्धान्त भी गढ़े गए जो नाटक को कलात्मक वैशिष्ट्य भी प्रदान करते हैं। भरतमुनि ने जब 'पंचमवेद' 'नाट्यशास्त्र' लिखा तब तक भारतीय समाज में वर्ग वैशम्य का आधिक्य हो चुका था। नाटकों ने इस द्वंद को दूर करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका भी निभाई स्वयं भरतमुनि नाट्य का उद्गम बताते हुए कहते हैं कि, 'यह नाट्य नामक पाँचवा वेद मनोरंजन का ऐसा दृष्य और श्रव्य साधन है जो धर्म, यश, आयु को बढ़ाने वाला, बुद्धि को उद्दीप्त करने वाला तथा लोक को उपदेश देने वाला होगा। न कोई ऐसा ज्ञान है, न शिल्प है, न विद्या है, न ऐसी कोई कला है, न कोई योग है और न ही कोई कार्य ही है जो इस नाट्य में प्रदर्शित न किया जाता हो। सामाजिक वैशम्य को दूर करने के लिए समय की मांग के अनुरूप 'पंचमवेद' को प्रतिष्ठित कराने हेतु भरतमुनि ने नाटक में सभी लोगों को सम्मिलित करने का अधिकार प्रदान कर निम्नवर्ग को सामाजिक मान्यता दिलाने का प्रयास किया। किन्तु उच्च वर्ग की महत्ता की उपेक्षा भी नहीं की जा सकती थी। भरतमुनि ने प्रेक्षागृह में ब्राह्मणों को ऊँचा आसन देकर और शुद्रों को नाटक देखने का अधिकार देकर सामंजस्य स्थापित करने में पूर्ण सफलता प्राप्त की। वे तीन प्रकार के प्रेक्षागृह-

त्रिविध: सनिवेशश्चशास्त्रत: परिकल्पित:।
विकृश्टश्च तुसूश्च त्रयसश्चैव तु मण्डप:।।

का निर्देश देते हैं तो चार प्रकार के स्तम्भों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) के निर्माण के साथ-साथ कथावस्तु, पात्र रस, संवाद, भाषा, रंगमंच का भी विषद् व्यवस्था का वर्णन करते हैं। भरतमुनि की कसौटियों पर ही संस्कृत के महान् नाटककार कालिदास, भास, शुद्रक आदि ने दुनिया के सर्वश्रेष्ठ शास्त्रीय नाटकों की रचना की। शताब्दियों तक नाट्य कला राजवंशों का आश्रय पाकर अभिजात्य वर्ग से लेकर सामान्य जन तक का मनोरंजन करती रही। यहाँ तक की कौटिल्य जैसे महान् राजनैतिक चिंतक ने भी 'अर्थशास्त्र' में नाटक तथा नाटकों की सुन्दर प्रस्तुतीकरण एवं उचित निर्देशन के लिए राज्य की ओर से नाट्याचार्यों की नियुक्ति का निर्देश दिया है। सामाजिक मर्यादा का ध्यान रखते हुए कौटिल्य के रंगमंच पर उन दृष्यों के प्रदर्शन पर प्रतिबन्ध लगाने का निर्देश किया है जो दर्शकों की मनोभूमि पर कुप्रभाव उत्पन्न करते हैं-

'कामं देश जाति गोत्र चरण मैथुना पहानेनर्मयेयु:।'[5]

सिद्धान्तों और बंधनों के कारण ही नाट्यकला धीरे-धीरे क्लिष्ट बनती गई। संस्कृत-नाटकों की अति साहित्यिकता और जन-साधारण के लिए लोकमंच का विकास हुआ। आरम्भ में लोक नाटकों के कथानक पौराणिक, ऐतिहासिक, सामाजिक आदि विषयों पर होते थे और इनमें प्राय: विश्रुत कथावस्तु का आश्रय लिया जाता था। इन नाटकों में शास्त्रीय तत्तवों के स्थान पर सात्विक अभिनय ही प्रमुख होता था। वैचारिक स्तर पर विशेष उच्च न होते हुए भी, रसात्मकता की दृष्टि ये नाटक विविधता-युक्त और प्रशंसनीय रहे। ये लोकनाटक प्रचलित आख्यानों तथा कथाओं महाभारत, रामायण, भागवत और हरिवंश जैसे पुराणों के प्रसंगों के गायन रूप थे। कवि जयदेव के बारहवीं शताब्दी में रचित 'गीत गोविन्द' ने नृत्य, संगीत कलाओं के साथ-साथ पारम्परिक नाट्यों की कथावस्तु को भी व्यापक रूप से प्रभावित किया है।

पंद्रहवी से सत्रहवीं शताब्दी के बीच भक्ति आंदोलन की प्रेरणा से जिन नाट्य प्रकारों का उदय हुआ उनसे पहले से चले आते नाट्य रूपों का नया संस्कार हुआ। वे एक धार्मिक आन्दोलन के अंग तो थे ही, विशिष्ट धार्मिक या धर्मपंथीय उद्देश्यों के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए भी उनका आयोजन हुआ। असम का अंकियानाट, महाराष्ट्र का दशावतार, तमिलनाडू का भागवतमेल, आंध्रप्रदेश का कुचिपुड़ि, केरल का कृष्णाट्टम, उत्तार प्रदेश की रामलीला और रासलीला ऐसे वैष्णव धार्मिक अनुष्ठान है जिनमें बहुत बार अभिनेता को भी मानव न मानकर 'अवतार' या 'स्वरूपय स्वीकार कर प्रदर्शन के दौरान ही 'पूजा' भी जाता है। मध्ययुगीन भक्तिकाल की वैष्णव भक्तिधारा ने इन लोकनाटकों की कथावस्तु के माध्यम से वैचारिक आंदोलन की पृष्ठभूमि तैयार करी। भगवान की लीलाओं ने विदेशी आक्रांताओं से त्रस्त भक्तों के भीतर आशा और उत्साह का संचार किया। लोक की आस्था बनी कि ईश्वर के मानवीय अवतार भक्तों के कष्टों का भी हरण कर लेंगे। देखते ही देखते वैष्णव भक्तिधारा में भगवान की लीलाओं का नाटकीय प्रस्तुतीकरण मनोरंजन की वस्तु नहीं, आध्यात्मिक उत्थान की युक्ति बन गई। अध्यात्म की इस लहर ने उत्तर से लेकर दक्षिण तक, पूर्व से लेकर पश्चिम तक के भारत को आलोड़ित कर दिया। उत्तर भारत में बनारस रामभक्ति का प्रमुख केन्द्र बना तो ब्रज कृष्ण भक्ति का क्योंकि ये दोनों क्षेत्र अपने-अपने अराध्यों की लीलाभूमि थे। राम के जीवन की घटनाओं पर आधारित रामलीला ने जनता को अत्याचारी रावण के रूप में आतताइयों के पराजय का संदेश दिया तो रासलीला ने कंस जैसे दुष्ट राजाओं का हँसते-हँसते अंत करने और विषमताओं एवं संघर्ष के बीच आनंद की बाँसुरी बजाने का कृष्णमय संदेश दिया। ब्रज में कृष्ण भक्ति के लिए संकीतर्न की परम्परा पहले से ही मौजूद थी। कीर्तन के मध्य नृत्य, गीत, वाद्य, ताल, राग आदि के समन्वय से रासलीला का सूत्रपात हुआ। इन रास लीलाओं की सरसता से प्रभावित होकर रास मंडिलियों को देश के अन्य क्षेत्रों में भी खूब आमंत्रित किया जाता था। भक्तिकाल के लोकनाटकों की सफलता में देश के अलग-अलग क्षेत्रों के वैष्णव भक्त कवियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। बिहार के विद्यापति तथा उमापति, बंगाल के चैतन्यदेव, आसाम में शंकरदेव वैष्णव भक्ति के सुप्रसिद्ध उपासक थे। इन भक्तों ने राधाकृष्ण की प्रेममय झाँकी को आधार बनाकर साहित्य सृजन किया लेकिन इन कवियों की प्रेरणा जयदेव द्वारा रचित 'गीतगोविंद' था। गीतगोविंद की अभिनय और संगीत पद्धति ने पूर्व से लेकर दक्षिण भारत के समस्त नाट्य रूपों को प्रभावित किया है। गीत गोविंद की प्रसिद्धि का आलम तो यह है कि सदियाँ बीत जाने के बावजूद आज तक उड़ीसा के विश्वप्रसिद्ध जगन्नाथ मंदिर में इसका मंचन होता है। बंगाल का लोक नाटक जात्रा जो मूलरूप में 'कृष्ण-यात्रा' से अभिहित था, जयदेव के गीतगोविंद के चरित्रों पर आधारित है। कृष्ण-राधा और दो सेविकाओं के चरित्रों पर आश्रित इस लोक नाटक के सभी संवाद कंठ-संगीत में होते हैं। आगे चलकर चैतन्यदेव के संकीर्तन का भी बंगाल के जनजीवन पर बहुत प्रभाव पड़ा। इन संकीर्तनों में भक्त देवता की अराधना के लिए जुलूसों में नाचते-गाते थे और देवता के जीवन चरित ही कथानक बन कीर्तन को रोचक बनाते थे।

आसाम के वैष्णव संत शंकरदेव जब अपने शिष्यों के साथ ब्रज की यात्रा पर आए तो उन्होंने वहाँ श्रीकृष्ण के जीवन पर आधारित लीलाओं का मंचन भी देखा। इन लीलाओं से वे बहुत प्रभावित हुए। लौटते हुए उन्होंने बंगाल में जात्रा और बिहार की कीर्तनियाँ (जो उमापति रचित पारिजातहरण नाटक पर आधारित थी) भी देखी। आसाम लौटने पर उन्होंने ब्रजबूली लोक नाट्य की रचना की। शंकरदेव ने तत्कालीन आसाम में सामाजिक चेतना और समरसता को भक्ति के द्वारा पुष्ट किया। दरअसल, शंकरदेव कालीन

आसाम राजनैतिक दृष्टि से अमर्यादित, असुरक्षित और आक्रमणकारियों के अमानवीय व्यवहार का केन्द्र बना हुआ था। त्रस्त और राजनीतिक हताशा की शिकार जनता को शंकरदेव ने वैष्णव भक्ति के द्वारा शांति और सुरक्षा का संबल प्रदान किया। घोर कर्मकांड और तंत्र साधना से जुड़े कामरूप क्षेत्र में शंकरदेव ने वैष्णव पाठ के द्वारा एक विकल्प भी प्रदान किया, जिसने आगे-चलकर जातिवादी रूढ़ियों को तोड़ने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस तथ्य से प्रभावित होकर पूर्वोत्तर भारत के अन्य संतों ने भी कृष्ण चरित पर आधारित वैष्णव भक्ति का प्रचार किया। आसाम से सटे अन्य राज्यों में भी, उनकी भाषा एवं शैली में कृष्ण लीलाओं के नाट्य रूप प्रचलित एवं प्रसिद्ध हुए। मणिपुर की गोड़ लीला के केन्द्र में भी श्रीकृष्ण ही हैं। लोक नृत्य पर आधारित इस कृष्ण लीला का प्रदर्शन वैष्णव मत के प्रचार और प्रसार के उद्देश्य से ही किया जाता है। मणिपुर की मैते परम्परा और गौड़िय चिंतनधारा के सम्मिलन से वहाँ 'गौरलीला' की परम्परा भी आरम्भ हुई। मणिपुर का एक और लोक नाट्य रूप है 'शुमांग लीला'। शुमांग अर्थात्- आँगन, आँगन में होने वाली लीला को ही शुमांग लीला कहा गया, जिसका आधार रामायण, महाभारत और अन्य पौराणिक आख्यान है किन्तु ये पौराणिक आख्यान सामाजिक संदर्भों से जुड़े होते हैं। पूर्वोत्तर के ही त्रिपुरा राज्य में भी कृष्ण विषयक लोक नाट्य 'ढबजात्रा' खेला जाता है जो वैष्णव भक्ति में पगा होता है।

वैष्णव भक्ति में पगे लोकनाटकों ने मध्यकाल में व्यापक बदलाव की बयार बहाई। इन्होंने अनेक सांस्कृतिक, धारणाओं को जन्म देकर सामाजिक परिवर्तन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन लोकनाटकों ने राजनैतिक उथल-पुथल से त्रस्त जनमानस को आशा का दीप दिखाया। समकालीन 'नेतृत्वहीन' समाज अतीत के गौरवशाली नायकों से प्रेरणा पाने लगा। संतों ने ईश्वर का मानवीकरण कर उसे जनमानस के मन-मंदिर में प्रतिष्ठित कर, आम आदमी को स्वयं पर विश्वास करने योग्य बनाया। ईश्वर की लीला और संघर्ष को देखकर जनमानस स्वयं की पीड़ा को भी जीवन के अनुभव के रूप में स्वीकार कर आगे बढ़ने लगा। जब जन के अराध्य को मनुज देह धारण करने पर घोर कष्टों से गुजरना पड़ता है तो आम आदमी को स्वयं का कष्ट भी कम अनुभूत होता है। इन नाटकों ने भारतीय समाज का मानसिक रेचन करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि भारत के इन पारम्परिक लोक नाट्य रूपों का स्वरूप एक दूसरे से मिलता-जुलता है। यही कारण है कि पारम्परिक लोक नाट्य रूप भारतवर्ष को एक सूत्र में बाँधने का महत्त्वपूर्ण कार्य निभाते हैं। कम पात्रों, साधारण किन्तु चमकीली वेशभूषा, सिंदूर, काजल, खड़िया, गेरू जैसी सामान्य श्रृंगार सामग्री, ढोलक-मंजीरा जैसे सरल किन्तु मधुर वाद्य यंत्रों के प्रयोग के कारण इन लोक नाट्यों को कहीं भी सरलता से खेला जा सकता है। इसलिए इनकी लोकप्रियता में खूब इजाफा हुआ, इन नाटकों की सात्विकता ने समाज का नैतिक मार्गदर्शन भी खूब किया।

सत्रहवीं शताब्दी के अंत तक वैष्णव भक्ति आंदोलन में शिथिलता आने लगी थी। फलत: 'जात्रा' जैसे नाट्य रूपों में शक्ति एवं शैवमत का प्रभाव- चंडीमंगल, महिशासुरमर्दिनी, शिवपार्वती इत्यादि कथानकों में दिखाई दिया। इसी समय हिन्दू-मुस्लिम धर्मों के मध्य टकराहट कम होने से धार्मिक अस्मिता की अनिवार्यता भी शिथिल हुई। समाज में आम आदमी का वैयक्तिक जीवन भी सहज होता गया, जिससे नाट्य रूपों का स्वरूप भी धार्मिक या साम्प्रदायिक होने के स्थान पर सांस्कृतिक होता गया। बंगाल की जात्रा, कनार्टक का यक्षगान, आंध्र का वीथि नाटक आदि नाट्य रूपों में धार्मिक कथानकों के साथ ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनैतिक कथानक भी प्रस्तुत होने लगे या उन्हें इस प्रकार दिखाया गया कि उनका धार्मिक पक्ष प्रमुख नहीं रहा। देखते ही देखते सामाजिक-राजनैतिक कथानक वाले लौकिक नाट्य रूप भी उभरने लगे।

'नौटंकी' उत्तर भारत की सर्वाधिक लोक प्रचलित लोकनाट्य शैली है जो हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, मध्यप्रदेश, बिहार आदि क्षेत्रों में आज भी अत्यन्त लोकप्रिय है। इस शैली का उद्देश्य धार्मिक भावना के स्थान पर लोक मानस की श्रृंगारपरक भावनाओं को हास्य एवं व्यंग्य के माध्यम से तृप्त करते हुए हमारी विसंगतियों और विद्रूपताओं को उजागर करना रहा है। स्वाँग, संगीत, भगत, नकल आदि नाट्य रूप भी नौटंकी के ही विविध रूप है। स्वाँग शब्द का तो अर्थ ही है-वेश धरना या नकल करना। विभिन्न प्रकार के भेष बनाकर लोकरंजन के नाट्य आयोजन को स्वाँग कहा जाता है।

नौटंकी और स्वाँग के सम्बन्ध में शिवकुमार मधुर कहते हैं कि 'निश्चित ही प्राचीन शब्द स्वाँग है जिसका सीधा अर्थ है- वेश बनाना या नकल करना - मानव की सहज अनुकरण प्रवृत्ति ने ही नाट्य और मंच को बल दिया है। विभिन्न प्रकार के भेष बनाकर लोक मनोरंजन के लिए प्राचीन समय में जो नाट्य आयोजन थे, उन्हें नाटक कहा जाता था।'[6] लोक नाट्य होने के कारण नौटंकी का कथानक भी लोक में प्रचलित धर्म, पुराण, इतिहास, समाज, कथाओं, घटनाओं आदि से जुड़ा होता है। कथानक के अनुरूप ही इसमें भक्ति रस, श्रृंगार रस, वीर रस आदि की प्रधानता होती है। जैसे हाथरस के सुप्रसिद्ध पंडित नत्थाराम शर्मा गौड़ द्वारा रचित वीर रस प्रधान 'सुल्ताना डाकू' की झलकी दृष्टव्य है-

(दोहा कवि का)

जिला एक बिजनौर है, यू.पी.के दरम्यान।
शहर नजीमाबाद को, लो उसमें ही जान।

चौबोला-

पैदा हुआ उसी के अन्दर एक डाकू सुल्ताना।
बड़ा चुस्त, बहादुर, लाजवाब, मरदाना।
था उसका ये काम अमीरों का बस लूट खजाना।
बेकस और गरीबों को आराम सदा पहुँचाना।[7]

पंजाब की सुप्रसिद्ध हीर-राँझा, लैला मजनू, शहजादी नौटंकी उर्फ फूल सिंह पंजाबी (कुछ लोग इसी कथानक से नौटंकी की उत्पत्तिा मानते हैं) पदमावती आदि को लेकर श्रृंगार रस के कथानक गढ़े गये। इन लोक नाटकों में कथानक के अनुरूप जीवंत अभिनय किया जाता है। नौटंकी भले ही छोटी सी कथावस्तु को लेकर आठ-दस घंटों में खत्म कर दी जाती है लेकिन उसका प्रभाव लोगों पर कई दिनों तक बना रहता है और वे अकेले में दोहों, चौबोलों को गाकर आनंद उठाते रहते हैं, क्योंकि वे सरलता से जन की जिह्वा पर विराजमान हो जाते हैं। इसीलिए जयदेव तनेजा लिखते हैं कि- 'वस्तुत: लोक नाटक सामान्य जन (कलाकार) द्वारा, सामान्य जन के लिए, अभिनय, अनौपचारिक, नृत्य, गीत और संगीतमय जीवंत एवं लोकरंजक अभिव्यक्ति का नाम है।'[8]

लोकनाटकों की लोकप्रिय शैली नौटंकी या स्वाँग का मध्यकाल में निर्गुण और सगुण मार्गीय भक्त कवियों कबीर, तुलसी और सूर आदि ने भी कई स्थानों पर उल्लेख किया है। कबीरदास जी को षिकायत थी कि लोग सारी-सारी रात स्वाँग देखते हैं लेकिन हरिकथा नहीं सुनते। अर्थात् भक्तिकाल में भी लोक जीवन की उद्दाम श्रृगारिक भावनाएँ इतनी प्रबल थी कि संत-सुधारकों की आलोचना के बावजूद लोकमंच पनपता रहा यहाँ तक कि

औरंगजेब की कट्टर सत्ता भी 'स्वाँग भगत' कला को नहीं रोक सकी। औरंगजेब के समकालीन, मौलाना गनीमत की पुस्तक 'नौरंगेइश्क' (सन् 1685) में दिल्ली में खेले जाने वाले स्वाँग-भगतबाजों के खेलों का रोचक वर्णन है। स्वाँग जब तक भक्ति भावना से परिपूर्ण रहे तब तक वे 'भगत' कहलाए परन्तु हरियाणा और मेरठ क्षेत्र के आस-पास की शृंगारपरक भावनाओं से आपूरित नाट्य प्रस्तुतियाँ नौटंकी नाम से प्रसिद्ध हो गई। आज भी नौटंकी की दो प्रमुख शैलियाँ है- हाथरस वाली शैली जिसके प्रणेता पंडित नत्थाराम शर्मा गौड़ है और रोहतक वाली शैली जिसके उन्नायक है- पंडित दीपचंद जिनकी परम्परा को नेताराम, हरदेवा, लक्ष्मीचंद और सरूपचंद ने खूब समृद्ध बनाया। वीररस और शृंगार रस की प्रधानता के कारण नौटंकी का मंच लोकजीवन में तेजी के साथ लोकप्रिय होता गया लेकिन यही लोकप्रियता नौटंकी विधा के लिए घातक भी सिद्ध हुई। सस्ते लोकमनोरंजन के नाम पर नौटंकी में जब अश्लील गानों और फूहड़ आँगिक प्रदर्शन का प्रवेश हुआ तो नौटंकी का रूप विकृत हो गया। रही सही कसर स्त्री पात्रों की भूमिका निभाने वाले सुकुमार और सुरीली आवाज वाले पुरुष कलाकारों और वेश्याओं के मंच प्रवेश ने पूरी कर दी। परिणाम स्वरूप सभ्य लोकमानस नौटंकी को अश्लील मान इससे दूर होने लगा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् लोकनाट्य समारोहों में नौटंकी को फिर से कलात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा। हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकारों ने इस विधा में नाटक भी लिखे, जिसमें श्री सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का 'बकरी', डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल का 'एक सत्य हरिशचन्द्र', मुद्राराक्षस का 'आला अफसर' प्रमुख है।

राजस्थान में लोकरंजन का सशक्त माध्यम रहा- लोकनाट्य 'ख्याल' जिसका आरम्भ गायकी के रूप में हुआ पर आगे चलकर काव्य एवं संगीत के साथ कथानक और अभिनय तत्तवों का भी समावेश होता गया और लोकमंच समृद्ध बनता गया। 'ख्याल' हिन्दू-मुस्लिम भाईचारे का भी प्रतीक है। इस शैली की खूबी है कि लोकप्रतिभाएँ अपने विचार हिन्दू, उर्दू, फारसी के सहज प्रचलित शब्दों को कविता की बंदिश में बाँधकर प्रस्तुत करती हैं और इस प्रकार की बंदिशों को बाँधने वाले कलाकारों के समूहों में भी खूब मुकाबला होता था। जैसे- 'सभा में तू ही तो करेगा निस्तारा (टेक)/बलने छलने ब्राह्मण बनाया/द्रौपदी सुता का चीर बढ़ाया/खंभ फाड़ प्रहलाद बचाया/हिरनाकुश को मारा (सभा में)/अलीबक्ष का गाँव मंडावर/कथ गोपाल करें न्योछावर/सब राजन में है टीकावर/मंदिर किया उजियारा (सभा में)[9]

ये ख्याल-खेल, तमाशा, संगीत, स्वाँग, माच, रम्मत आदि नामों से भी जाने जाते हैं। यद्यपि इन लोकनाटकों में प्राय: स्त्री पात्रों का अभिनय भी पुरुषों के द्वारा किया जाता है। यह लोक नाटक शृंगार प्रधान होते हैं और इन लोक नाटकों ने मनोरंजन के उद्देश्य से अश्लील संवाद और कहीं-कहीं भौंडे प्रदर्शन भी किए हैं। इसलिए हरियाणा जैसे प्रांतों में स्त्रियों और बच्चों को इन्हें देखने नहीं दिया जाता था। ऐसे लोकनाटक कहीं ना कहीं पितृसत्तात्मक सोच के दायरे में बँधकर अपयश भी कमा बैठे पर ऐसा नहीं है कि सभी लोक नाटक इस श्रेणी में समाहित थे।

भोजपुरी के शेक्सपीयर 'भिखारी ठाकुर' एक ऐसे लोक नाट्यकार के रूप में उभरकर सामने आते हैं जिसने अपने नाटकों में सामाजिक-आर्थिक समस्याओं को उठाकर आमजन को शिक्षित करते हुए सामाजिक परिवर्तन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। 'बिदेसिया' भिखारी ठाकुर का लोकप्रिय नाटक है, जो आज एक शैली के रूप में स्थापित हो चुका है। पलायन और प्रवास की समस्या को रेखांकित करता विदेशिया स्त्री जगत की विरह वेदना को भी उजागर करता है। क्षेत्रीय ग्राम्य गीतों में नए अर्थ भरकर, पात्र एक-दूसरे से संवाद करते हैं। देश, काल, परिस्थिति को देखते हुए भिखारी ठाकुर ने अनेक नाटक लिखें, जो अपने नाम से ही कथानक और उसमें उठाई गई समस्या की झलक दिखा जाते हैं। विधवा विवाह, भाई विरोध, गंगा स्नान, बेटी बेचना, पुत्र वध, कलियुग प्रेम (पियावा निसइल), नकल भांड आ नेटुआ के, राधेश्याम बहार, ननद-भउजाई जैसे नाटकों ने भोजपुरी समाज के बीच गहरी छाप छोड़ी है। लेकिन बीसवीं सदी के अंतिम दो दशकों ने लोक नाटकों के यश को क्षीण कर दिया।

आज जब दुनिया एक बाजार के रूप में हमारे सामने है और इंटरनेट की आभासी दुनिया ने मनोरंजन के नए रूप 'मोबाईल' में कैद कर हमारे हाथों में थमा दिए हैं, इससे लोकनाटकों की प्रवृत्ति में भी परिवर्तन आया है। वर्तमान में लोकप्रिय हो रहे 'नुक्कड़ नाटक' लोक नाट्य शैली का आधुनिक रूप ही तो है। भले ही वे अपने कथानक, चिंतन और मंचन शैली में परम्परागत लोकनाटकों से थोड़ा भिन्न स्वरूप लिए हुए है। जन नाटककार सफदर हाशमी का वक्तव्य इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। वे कहते हैं- 'हम क्यूँ निकले पारम्परिक शैलियों की तलाश में? वह परम्परा, परम्परा नहीं, जिसे चिराग ले आकर ढूँढना पड़े। परम्परा वही है जो हमारे वर्तमान परिवेश में, हमारे माहौल में विद्यमान है। ऐसी परम्परा खुद-ब-खुद हमारी रचना प्रक्रिया का हिस्सा बनती है।'[10] लेकिन इसमें कोई दो राय नहीं कि नुक्कड़ नाटकों की परम्परा का विकास लोकनाट्य विधा से ही हुआ है। समय की परिवर्तनशीलता और लोक रूचि के अनुसार इनके कथानक धर्म, पुराण, लोककथाओं के स्थान पर समकालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, नैतिक, सांस्कृतिक चेतना और चुनौतियों से जुड़े हैं किन्तु विषय का चुनाव मनोरंजन के साथ-साथ सूचना की प्रवृत्ति, बिना किसी ताम-झाम के अभिनय, प्रस्तुतीकरण की शैली घूम-घूम कर नाटकों का प्रदर्शन, जनता को इनके माध्यम से इक्ट्ठाकर उन्हें झकझोरते हुए मनोरंजन करना, पारम्परिक नाट्य शैलियों का ही प्रभाव है। इस रूप में समय के साथ-साथ लोक नाटकों का महत्त्व दिन-प्रति-दिन बढ़ता जा रहा है। मंचीय नाटकों को दर्शक मिले या ना मिलें पर लोकनाटकों को दर्शक सहज रूप में मिल जाते हैं, जो इनकी सफलता का प्रतीक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नाट्यशास्त्र- भरतमुनि (1/121)
2. लोक और लोकस्वर-विधानिवास मिश्र, प्रभात प्रकाशन, 2000 पृ. 92
3. विचार और वितर्क- डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, जनपद अंग-1, पृ. 65
4. मैथिली लोक नाट्य- प्रेम शंकर सिंह, समकालीन भारतीय साहित्य, जुलाई-अगस्त, 2002, पृ. 135
5. अर्थशास्त्र-कौटिल्य (4/76/1)

6-7.भारत के लोकनाट्य - शिवकुमार (मधुर), पृ. 26-27

8. हिन्दी रंग कर्म दशा और दिशा - जयदेव तनेजा, तक्षशिला प्रकाशन, पृ. 126

9-10.बदलता भारतीय परिदृष्य और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक, अमरचंद नाहरा, साहित्य संचय प्रकाशन, पृ. 65

****

Internally Displaced Persons: Unheard Cries

Anukriti Mishra*

Introduction - The world community has faced the problem of displaced population. The forcibly displaced population consists of refugees, asylum seekers, and Internally displaced persons (IDPs). The recognition of refugees and asylum seekers was done after World War II in 1950's excluding IDPs. The internally displaced persons are displaced from their habitual place of residence but have not crossed the borders of territory of nation. They have existed from centuries but were invisible to the world community deliberately or otherwise.

Even during and after world War internally displacement took place. The focus of the world was on refugees at that time. The United Nation and other international organizations were reluctant to make laws for displaced within the territory of a state.

The official recognition and definition of the term internally displaced persons happened almost 60 years after global acknowledgement of refugees as forcibly displaced persons.

Internally Displaced Persons (IDPs) are people who have not crossed an international border but have moved into different region than the one they call home within their own country.[1] World community must acknowledge the dire need to recognize and assist vulnerable class of IDPs.
This vulnerable class had to struggle for a long time to get any kind of identification or protection. The definition of internally displaced persons was given first time in form of UN guidelines in Guiding Principle on Internal Displacement 1998 is:[2]

For the purposes of these Principles, internally displaced persons are persons or group of persons who have been forced or obliged to flee or to leave their homes or places of habitual residence, in particular as a result of or in order to avoid the effects of armed conflict, situations of generalized violence, violations of human rights or natural or human-made disasters, and who have not crossed an internationally recognized State border.

Cause of displacement - The cause of displacement for IDP resembles refugees. Factors like Civil War, Insurgency, Conflict on grounds of religion, ethics, race, language, or violation of human rights etc. such disturbances are not easily dissolved many times they stretched to decades, many recurrences and continuation happens making existence extremely difficult for displaced. The above mentioned list is not exhaustive some factors like economic exploitation, political oppression, concentration of power marginalization also case internal displacement. [3]

A new category of internally displaced persons is also found across the world in form 'returnees'. Returnees are former refugees who had returned to their country of origin or habitual place of residence after time of exile. Returnees also need continuous support so that they rebuild their lives at home.

It is seen that after returning back homeland returnees often are not able to resettle in their place of origin. Many choose to settle at different place because of lack of access to land, housing, livelihood and even basic services like water, sanitation and health-care. Returnee may be back within the borders of their countries but may have not been able to achieve durable solution, they should be considered as IDPs.[4]

Hurdles in assisting IDPs - In regard to sovereignty UN declare all states are equal and sovereign[5]. And have complete right over their internal matters.

When a question was raised in 1997 why the United Nations had not been able to do more for internally displace persons, former UN High Commissioner for Refugees Sadako Ogata replied: "problem is sovereignty". [6]

Legal Backing - It was not that internal displacement was not seen before World War I and II however the condition of the internally displaced was very completely disregarded. The world community at that time was focused on millions of refugees the 1951 convention relation status of refugees and Statute of the Office of United Nations High Commissioner for Refugees 1950 was established. The statute was made to establishment a organization to assist with time limitation. The organization was intended to be a temporary organization for 3 years only, dealing with refugees only.[7]

Over the years the number of internally kept on increasing, with the snowballing of problem UN made efforts in this direction. UN took a number of initiatives to provide solution to the problem of internally displaced. The efforts consist on normative sides the adoption of Guiding Principles on Internal Displacement and on institutional side the establishment of Emergency Relief Coordinator as the

*Research Scholar, Hidayatullah National Law University, Raipur (C.G.) INDIA

Focal Point on the issue at Headquarter.[8]

With time UNHCR had increased its scope mandate to displaced persons may be internal or external. One can draw reasonable conclusion that the assistance for the displaced was also for the benefit of the internally displaced persons.[9]

The role of UNHCR expanded over a period of time along with it's functions and participation regarding the matter. It was realized that the internally displaced is very similar to that of refugees in the cause and consequences of their formation or their humanitarian need.

From 1950's the world community was not willing to form an enforceable law on internally displaced person. Adoption of Guiding Principles on Internal Displacement was also of opinion that rather than new convention on displaced persons who are already protected by humanitarian laws.[10] The principles can be considered as soft law.

Legal Instruments - Apart of Guidelines the international laws on different subjects extend protection to IDPs. The below mentioned instruments are some of the example.

United Nations Principles on housing and property[11](Pinheiro Principles) - Although these principles are not binding in nature, they are mere guidelines issued by UN. They are still very important as they deal with right of housing and property of IDPs and refugees.

Cartagena Declaration (1984) - The Cartagena Declaration is a regional declaration for protection of refugee but it also deals with internal displacement. The Colloquium has discussed the same.

To express its concern at the situation of displaced persons within their own countries. [12]

Humanitarian laws - Apart from international human rights laws a protection is extended to internally displaced persons by international humanitarian laws. However the term internally displaced person is not defined specifically. They are included in context to civilian displaced due to armed conflict. One of the main aims of humanitarian law is to protect civilian population from being uprooted which leads to internal displacement.

Humanitarian law play an important role in preventing displacement in first place. It prohibits displacement of people except it is necessary military reasons or protection of civilian themselves. Systematic displacement of civilian without justification constitutes crime against humanity.

There are various provisions of humanitarian laws which assist in defining international crime and provide indirect protection to the internally displaced persons.

The justifiable laws or enforceable law on idps does not exist at global level, however at the regional level binding international instruments are found.

- Pact on Security, Stability and Development in the Great Lakes Region (2006)

The foundation of the Pact was social and political balance of great lake region resulting from Rwanda genocide of 1994 and its aftermath. The conflict of Rwanda fuelled conflict in other states of the region. Vicious cycle of wars and massive displacement in the region started.

- Central to pact are the ten protocols .Two of Pact's ten Protocols are relevant to issue of internal displacement

1. Protocol on Protection and Assistance to Internally Displaced Persons
2. Protocol on the Property Rights of Returning Population[13]

- Convention for the Protection and Assistance of Internally Displaced Persons in Africa ('Kampala Convention') 2009

In Special Summit of heads of state and government on refugees, returnees and internally displaced persons in Africa, the African Union Convention on Protection and Assistance of Internally Displaced Persons in Africa (Kampala Convention) was signed in 2009.[14]

The convention was endorsed in 2009 at AU Special Summit in Kampala, Uganda and signed by 31 of 53 members of AU. The convention is a landmark as its first attempt to create a binding instrument for the issue of internally displaced persons. The convention is based on the Guiding Principles on Internal Displacement of UN.[15]

The objectives of the convention were to promoter protection measures for IDP at regional and national level, to establish legal frame work for prevention of internal displacement and protection of IDPs. It aims to define obligation on state parties and non-state actors regarding prevention of internal displacement and assistance of IDPs and assistance in situations of internal displacement. Along with it States Parties' obligations relating to sustainable reform, local integration, or relocation.

In addition convention sets out obligation on state to prevent as much as possible displacement due to projects carried by state or private actors. Convention obliges state parties to create an updated register of IDP and provide effective remedies to person affected.[16]

Problems faced by IDPs - With escalating number of IDPs aid and assistance for them have become an important issue for world community. At the same time IDPs fail to win support which is traditionally given to refugee because they do not possess ideological or geopolitical value as refugees.

Due to lack of universally recognized definition and clear set of laws for IDPs the international organizations staff often face difficulty in protecting IDPs whose security rests on human rights and humanitarian law. In addition human rights and humanitarian laws are derogable and could be restrained for national interest compounding problem of IDPs.

NGO's and other agencies - Due to lack of any institution which specifically works for the internally displaced persons, support to them is either through UNHCR, intergovernmental agencies through cluster approach, NGO's or IGO's or other international organizations. Although many international or national agencies are working for the IDPs

After Arab spring the series of African and neighboring countries have dealt with mass exodus or forced displacement. The Arab spring which started in year 2011 and created millions of forcibly displaced. The Arab spring went through transits and in 2015 it developed into Syrian Crisis. During this time frame millions of accounted and unaccounted IDPs were created.[17]

On witnessing an unprecedented level of forcible human movement across the world the world community paid especial attention to the crisis. In 2015 the numbers of forcibly displaced surpassed 244 millions. However, there were roughly 65 million forcibly displaced persons, including over 21 million refugees, 3 million asylum seekers and over 40 million internally displaced persons.

As the numbers itself suggests the IDPS were nearly twice than refugees. However they were extra vulnerable due to lack of any official mechanism to protect and assist them resulting in United Nation New York Declaration.

The New York Declaration for Refugees and Migrants reflects the political opinion of world leaders present in UN to save lives, protect rights and share responsibilities on global scale. At the UN Summit on 19 September, the world leaders were asked their commitment to assist Refugees, migrants. In addition to it those who assist displaced, and their host countries and communities were to be benefited[18] The declaration aimed to work with other humanitarian agencies to ensure everyone in need is assisted. The work will be guided by the same set of policies which are set out in working document of UNHCR's Strategic Directions 2017-2021.

To coordinate assistance to IDPs, we use a cluster approach. A cluster is when a group of agencies work together to set up and deliver an area of assistance, such as shelter, health care, camp management or protection. The New York Declaration did not used the term IDPs, in the declaration the term is referred only once. However the declaration indirectly provides assistance to the IDPs by assisting protection of human rights and assisting host communities.

The declaration have paved way for 2 Global compact 1 global compact for safe, orderly and regular migration and global compact for refugees. The instruments are none binding but it aims to provide assistance to vulnerable specifically children and women. With conventions the hope of positive changes for forcibly displaced can be revived

Conclusion - The IDPs are equally vulnerable as refugees. They flee the place of habitual residence due to fear of life and liberty. The world community have now along with various international organizations like International Federation of Red Cross and Red Crescent Societies (IFRC) and International Organisation for migration(IOM)[19] are coming together to assist the invisible displaced population.

References :-

1. *Categories of Displaced People*, UN, http://www.un.org/en/events/refugeeday/background.shtml (last visited 10.1.2018).
2. *Guiding Principles on Internal Displacement* , UNHCR(1998).
3. Roberta Cohen, Francis Mading Deng, Masses in Flight: The Global Crisis of Internal Displacement 5 (1998).
4. Elizabeth J. Rushing, Today's Returning Refugees, Tommow's IDPs http://www.internal-displacement.org/expert-opinion/todays-returning-refugees-tomorrows-idps last visited 12.1.2018
5. Art 2 United Nation Charter
6. Roberta Cohen Key Policy Debates in the Internal Displacement Field http://www.mcrg.ac.in/rw%20files/RW32/5.RCohen.pdf
7. Para 6 A (ii) Statute Of The Office Of United Nations High Commissioner For Refugees 1950.
8. *The Role of the United Nations High Commissioner for Refugees*, UNHCR (2000).
9. UNGA res. 3454(XXX)Dec 1975.
10. FRANCOIS BUGNION,*Refugees, Internally Displaced Persons, And International Humanitarian Law* Fordham International Law Journal ,Volume 28, Issue, Article 4, *1411, 2004*
11. E/CN.4/Sub.2/2005/17 28 June 2005
12. Colloquium Cartagena Declaration 1984 para 7
13. Pact on Security, Stability and Development in the Great Lakes Region 2006
14. mike asplet and megan Bradley, *Strengthened Protection For Internally Displaced Person In Africa: The Kampala Convention Comes Into Force,* American society of international law , volume:16 issue:36 www.asil.or/insights/volume/16/issue/6/strenghtened-protection-internally-displaced-persons-africa-kampala.
15. Special Rapporteur on Refugees, Asylum Seekers, Migrants and Internally Displaced Persons,http://www.achpr.org/sessions/52nd/intersession-activity-reports/refugees-and-internally-displaced-persons/ last visited 12.1.2018
16. Convention for the Protection and Assistance of Internally Displaced Persons in Africa 2009
17. Tamirace Fakhoury, Migration, Conflict and Security in the Post-2011 Landscape https://www.mei.edu/publications/migration-conflict-and-security-post-2011-landscape last visited 12.1.2018
18. New York Declaration for Refugees and Migrant, Resolution71/1
19. https://www.unhcr.org/internally-displaced-people.html

****

श्रीमद्भागवत कालीन शिक्षा प्रणाली

डॉ. बिहारी लाल मीना *

प्रस्तावना – भागवत सभ्यता और संस्कृति में शिक्षा का अत्यन्त महत्व समझा जाता था। शिक्षक तो शिष्य को शिक्षा देने के लिए समाज की रीढ़ था ही, वही पुत्र को शिक्षा प्रदान करना था। पिता का भी कर्तव्य था[1]। प्रजा को धर्ममार्ग की शिक्षा देना राजा का प्रमुख दायित्व था[2]। शिक्षा के प्रयोजन की ओर संकेत करते हुए भागवत का कथन है कि अपने पराये का झुठा आग्रह सिखाने वाली शिक्षा, शिक्षा नहीं होती[3]। वास्तविक शिक्षा वही है जो हृदय–ग्रन्थि का उच्छेद कर मृत्यु की फाँसी से मुक्त कर दें[4]। तात्पर्य यह है कि प्रकृत पुराण के अनुसार व्यक्ति मूलत: विराट चैतन्य स्वरूप है। आत्म दृष्टि से एक ही सत्ता सबके भीतर प्रकाशमान है। सबका मूल स्वरूप वही है। ऐसी स्थिति में व्यष्टि–समष्टि अपने–पराये का भेद भ्रम है, अविद्याजन्य है। अत: जो शिक्षा मनुष्य के अन्त:चक्षुओं को खोलकर अपने पराये का भेद मिटा दे वही भागवत के अनुसार वास्तविक शिक्षा है[5]। शिक्षा के शेष प्रयोजन उक्त प्रयोजन की सिद्धी के मार्ग में स्वत: ही व्यक्ति के व्यक्तित्व में समाविष्ट हो जाते हैं। उक्त स्थिति को ही भारतीय धर्म, दर्शन और संस्कृति में मोक्ष कहा गया है। अत: हम सार रूप में इस तरह कह सकते हैं कि भागवत संस्कृति में शिक्षा मोक्ष की साधक मानी जाती थी। ईशावास्योपनिषद में भी कहा गया है – विद्ययाऽमृतमश्नुते[6]। अन्यत्र भी कहा गया है – सा विद्या या विमुक्तये। विद्यार्थी जीवन के नियमों और शिक्षा के विषयों के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास शिक्षा का उद्देश्य था।

शिक्षण–संस्थान : गुरूकुल शिक्षा पद्धति – भागवत संस्कृति में शिक्षा गुरूकुलों के माध्यम से प्रदान की जाती थी। शिष्य उपनयन संस्कार के पश्चात् शिक्षा समाप्ति पर्यन्त गुरू के आश्रम में ही निवास करते थे[7]। स्वयं भगवान ऋषभदेवजी ने अवतार हाने के उपरान्त भी लोकसंग्रहार्थ गुरूकुल में शिक्षा ग्रहण की[8]। कृष्ण और बलराम ने अवन्तिपुरी में आचार्य सान्दीपनि मुनि के आश्रम में रहकर शिक्षा पायी[9]। गुरूकुल अज्ञान के अन्धकार से पार पाने और ज्ञातव्य वस्तु का ज्ञान प्राप्त करने के उपयुक्त स्थान समझे जाते थे[10]।

राजकुल के बालकों को राजमहल के पास ही पुरोहितों द्वारा भी शिक्षा प्रदान की जाती थी। सप्तम स्कन्ध से विदित होता है कि हिरण्यकशिपु के राजपुरोहित शुक्राचार्य के दो पुत्र शर्ण्ड और अमर्क हिरण्यकशिपु के द्वारा भेजे हुए बालक प्रहलाद और दूसरे पढ़ाने योग्य दैत्य बालकों को, राजमहल के पास ही रहकर, राजनीति, अर्थनीति आदि पढ़ाया करते थे[11]।

प्राचीन भारत में गुरूकुल प्रणाली के विद्यमान होने के ही बहुधा प्रमाण मिलते है। जातकों से भी यही सिद्ध होता है कि विद्यार्थी उपनयन संस्कार के तत्काल बाद ही नही, बल्कि 14 या 15 वर्ष की आयु में, जब वे इस योग्य हो जाते थे कि सुदूर स्थान में अपना ध्यान रख सके, गुरूकुलों में भेजे जाते थे। यह भी सम्भव है कि स्थानीय अभिभावक गुरूकुलों में निवास करने के लिए अपने बालकों को न भेजते रहें हो। किन्तु ऐसी घटनाएँ अधिक न रही होगी[12]।

शिक्षा का आरम्भ – शिक्षा का आरम्भ उपनयन नामक संस्कार से होता था। उपनयन संस्कार केवल ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य बालकों का ही होता था। इससे विदित होता है कि भागवतकालीन शिक्षा केवल तीन वर्णो के लिए विहित थी। शुद्रवर्ण को शिक्षा के अधिकर से वंचित रखा जाता था। उक्त संस्कार के बाद बालकों का द्वितीय जन्म माना जाता था[13]। दशम स्कन्ध में विवरण है कि यदुकुल के आचार्य गर्गजी से संस्कार करवाकर कृष्ण और बलराम द्विजत्व को प्राप्त हुए[14]। शतपथ ब्राह्मण में भी इस संस्कार की महत्ता निरूपित करते हुए कहा गया है कि जन्म से प्रत्येक वर्ण का बालक शुद्र पैदा होता है। इसके बाद ही वह द्विज की कोटि में प्रवेश करता है[15]। प्रकृत ग्रन्थ में भावगत धर्म इत्यादि पारमार्थिक प्रकरणों की शिक्षा दाम्भिक, नास्तिक, शठ, अश्रद्धालु, भक्तिहीन और उद्धत व्यक्ति को कदापि न देने की निर्देश है। अत: विदित होता है कि गुरू को पात्र शिष्य के चुनाव की स्वतन्त्रता थी[16]। जातक युग में भी जिसका चरित्र गिरा हुआ हो, वह किसी ज्ञान का अधिकारी नहीं माना जाता था। शीलवान को ही विद्यादान किया जाता था[17]। कालिदास युग में भी एक योग्य शिक्षक का श्रेय प्रखर बुद्धि शिष्य का चुनाव था[18]। भारतीय संस्कृति के मत में गुरू वह होता है जो शिष्य की पात्रता–अपात्रता का विचार कर शिष्य चुन सके। भागवत सभ्यता में भी शिक्षा का यही आर्दश था। इस अर्थ में आज का शिक्षक गुरू नहीं है, यह कटु सत्य है। किन्तु आज यक्ष प्रश्न यह भी है कि क्या आज का शिक्षक इस अधिकार का निष्पक्ष प्रयोग कर सकता है? इतिहास कहता है कि उसने इसका निष्पक्ष प्रयोग नही किया। द्रोणाचार्य ने एकलव्य का चयन नहीं किया क्योंकि वह शुद्र था। जो भी हो, इस विषय की गहराई मे जाना हमारा विषय नहीं है।

विद्यार्थी – जीवन – भागवत काल में विद्यार्थी उपनयन संस्कार के बाद से ही शिक्षा समाप्ति पर्यन्त गुरूकुल में ही निवास करता था। उसे मेखला, मृगचर्म, दण्ड, रूद्राक्ष की माला, यज्ञोपवीत और कमण्डलु इन आश्रमोचित चिन्हों को धारण करना होता था। विद्यार्थी को ब्रह्मचर्य आश्रम में अखण्ड ब्रह्मचर्य के नियमों का कठोरता से पालन करना होता था। प्रकृत पुराण में विद्यार्थी जीवन में पालनीय नियमों व आचारों का विस्तृत निरूपण हुआ है। संक्षेप में ब्रह्मचारी के कर्तव्यों में प्रात: एवं शायं सन्ध्योपासना, गायत्री मंत्र का जाप, भिक्षाटन, भोगविलास से दूर रहना और गुरूसेवा मुख्य थे[19]। ब्रह्मचारी के लिए कुछ बाते वर्जित थीं। गुरू–सेवा विद्यार्थी का मुख्य धर्म था[20]। भागवत के अनुसार गुरू के ऋण से मुक्त होने के लिए सच्चे शिष्यों का इतना ही कर्तव्य है कि वे विशुद्ध भाव से अपना सबकुछ यहाँ तक की तन भी गुरूदेव की सेवा में

* एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत राजकीय महाविद्यालय,गंगापुर सिटी (राज.) भारत

समर्पित कर दें[21]। गुरू की महिमा और विद्यार्थी द्वारा उसकी सेवाविधि को निर्दिष्ट करते हुए स्वयं भगवान कृष्ण का कथन है कि विद्यार्थी आचार्य को मेरा ही स्वरूप समझे कभी उनका तिरस्कार न करें और उन्हे साधारण मनुष्य न समझकर उनमें दोष न ढूढ़े[22]। पुनश्च आचार्य यदि जाते हो तो उनके पीछे पीछे चले, उनके सो जाने के बाद सोवे, थके हो तो चरण दबावें, बैठे हो तो उनके आदेश की प्रतीक्षा में पास में ही खड़ा रहे। इस प्रकार शिष्य गुरू के समक्ष स्वयं को अत्यन्त छोटा मानकर उनकी सेवा-शुश्रुषा में और आज्ञापालन में तत्पर रहे[23]। स्वयं भगवान कृष्ण और बलराम ने संसार के समक्ष गुरू-सेवा का आदर्श उपस्थित करने के लिए बड़ी भक्ति से इष्टदेव के समान आचार्य सान्दीपानि की सेवा की[24]। वैदिकयुग में भी आचार्य उपास्य देवता माना जाता था। जातक युग का आचार्य भी उपास्य देवता ही मान्य था[25]। उक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि भागवत सभ्यता और संस्कृति में विद्यार्थी के समक्ष गुरू सेवा, सम्मान, श्रद्धा व आज्ञापालन का जो आदर्श समुपस्थित किया गया है, वैसा विश्वसाहित्य में अन्यत्र दुर्लभ है। ब्रह्मचारी विद्यार्थी का तत्कालीन समाज में बड़ा आदर सत्कार था। अपने अखण्ड ब्रह्मचर्य, तपोमय और सदाचार सम्पन्न जीवन शैली के कारण उसके शरीर में दिव्य तेज होता था[26]। ब्रह्मचारी की माँग पर समाज और शासक उसके लिए बड़े से बड़ा त्याग करने में अपना अहोभाग्य समझते थे। बटु वेशाधारी वामन भगवान की याचना पर दैत्यराज बलि ने उन्हें त्रिलोकी का दान कर दिया था। इस कथा का विवरण श्रीमद्भागवत के सप्तम स्कन्ध में मिलता है। कौत्स की माँग पर राजा रघु ने उन्हे गुरूदक्षिणा हेतु चौदह करौड़ स्वर्ण मुद्राएँ दान की। आज का यक्ष प्रश्न है कि क्या आज का शासक विद्यार्थी की इतनी बड़ी माँग पुरी कर सकता है? क्या आज के विद्यार्थी में वह आत्मबल भी है? ये प्रश्न हमारी आज की शिक्षा प्रणाली पर चिंतन करने की प्रेरणा देते है। शिक्षा समाप्ति के उपरान्त विद्यार्थी आचार्य को दक्षिणा देकर व समावर्तन संस्कार को सम्पन्न करवाकर गुरू की आज्ञा लेकर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता था[27]।

गुरू-शिष्य सम्बन्ध – भारतीय संस्कृति में गुरू-शिष्य के मध्य पवित्र सम्बन्धों का बोध होता है। वैदिक शिक्षा में गुरू के प्रति शिष्य के मन में पूजा, श्रद्धा एवं भक्ति भाव के कारण गुरू-शिष्य में पूज्य पूजक सम्बन्ध विदित होता है। गुरू के प्रति श्रद्धाभाव के प्रसंगों से उपनिषद साहित्य भरा पड़ा है[28]। भागवत पुराण में भी हमें गुरू-शिष्य के बीच पूज्य-पूजक भाव के दर्शन होते हैं। कृष्ण-बलराम तथा सान्दीपनि के वर्णन में यही भाव स्पष्ट हुआ है[29]। यहाँ उनका गुरू के प्रति भक्ति, सेवा एवं आदरभाव प्रदर्शित हुआ है। विदित होता है कि गुरू भी शिष्यों का सम्मान करते थे। शिष्य के लिए गुरूवंश भी पूजनीय होता था[30]।

गुरू – शिक्षक वाची सभी शब्दों में गुरू शब्द विशिष्ट है। 'गुरू' शब्द 'गु' और 'रू' इन दो शब्दों के मेल से बना है। एक विद्वान् ने गुरू शब्द का निर्वचन इस प्रकार किया है– 'गृहणाति इति गु', 'राति ददाति इति रू' गुश्च रूश्च अति गुरू। इस आधार पर जो ज्ञान परम्परा रूप तपस्या से सीखता है और सीखे हुए ज्ञान को वितरित करता है वह गुरू है। श्रीमद्भागवत में एक उपमान प्रसंग से विदित होता है कि भागवत सभ्यता में ज्ञान के वितरणात्मक स्वरूप पर बल दिया जाता था। उसके अनुसार दूसरो को ज्ञान न देने वाले ज्ञानखल की विद्याका प्रकाश चारो ओर नहीं फैलता[31]। भागवत में वर्णाश्रमियों के तीन गुरू बताये हैं। उसके अनुसार इस संसार में शरीर का कारण जन्मदाता पिता मनुष्य का प्रथम गुरू होता है। उपनयन संस्कार के बाद सत्कर्मों की शिक्षा देने वाला दूसरा गुरू होता है। यह भगवान के समान ही पूजनीय माना जाता है और ज्ञान का उपदेश करके परमात्मा को मिलाने वाला तीसरा गुरू है। वह तो साक्षात भगवान का ही स्वरूप होता है[32]। भागवत युग में गुरूकुल में प्रवेश से पूर्व पिता पुत्र को शौच, अध्ययन, व्रत, नियम तथा गुरू और अग्नि की सेवा आदि ब्रह्मचर्य के आवश्यक कर्तव्यों की शिक्षा देता था[33]।

प्रकृत पुराण में वेदों का पारदर्शी, परब्रह्मनिष्ठ शान्तचित होना गुरू का लक्षण बताया गया है[34]। सच्चा गुरू वही है। जो अविद्या से मुक्तकर मनुष्य को मृत्यु की फाँसी से बचावें। मुक्तिमार्ग की क्रियात्मक शिक्षा गुरू ही दे सकता है[35]।

पाठ्यक्रम – भागवत सभ्यता में विद्यार्थियों को विषयचयन की स्वतन्त्रता थी। विविध विषयों के अनेक विद्वान आचार्य होते थे[36]। यदुकुल के बालको को शिक्षा देने के लिए अट्ठासी हजार आचार्य थे। भागवत के दशम स्कन्ध से विदित होता है कि गुरू सान्दीपनि ने कृष्ण और बलराम को वेद, वेदांग, उपनिषदों, मन्त्र सहित धनुर्वेद, धर्मशास्त्र, मीमांसा, आन्वीक्षिकी, तर्कविद्या, राजनीति और चौसठ कलाओं की शिक्षा दी[37]। इस प्रकार भागवत कालीन समाज में शिक्षा का पाठ्यक्रम अत्यन्त व्यापक था। भौतिक व आध्यात्मिक दोनों प्रकार के विषय पाठ्यक्रम के अंग थे।

शिक्षण-शुल्क – भागवत कालीन शिक्षा नि:शुल्क थी। शिष्य गुरू के लिए ईधन लाना जैसे कार्य अवश्य करते थे,[38] जो उनकी गुरू सेवा के भाग थे। शिक्षा समाप्ति के बाद सामर्थ के अनुसार गुरू को मुंहमांगी दक्षिणा दी जाती थी। कृष्ण और बलराम ने गुरू दक्षिणा के रूप में गुरू सान्दीपनि के प्रभास क्षेत्र के समुद्र में डूबकर मरे बालक को वापिस लाकर दिया[39]। वैदिक युग व जातककाल में भी आचार्य गुरू दक्षिणा प्राप्त करते थे[40]।

स्त्री-शिक्षा – वैदिक काल में स्त्री शिक्षा का पर्याप्त प्रसार था। ऋग्वेद में अनेक स्त्रियों एवं ऋषिकाओं का नाम आया है, जिन्होंने अनेक सुक्तों की रचना की[41]। भागवत पुराण में स्त्री-शिक्षा का प्रत्यक्षत: कोई विवरण नही मिलता। दशम स्कन्ध में यज्ञ पत्नियों के विषय में विवरण मिलता है कि उनके न तो यज्ञोपवीत संस्कार हुए थे न उन्होने गुरूकुल में ही निवास किया था[42]। इससे अनुमान होता है कि तत्कालीन समाज में स्त्री शिक्षा का कोई विधिवत रूप न था। फिर भी कुछ स्त्रियों के उच्च बोद्धिक स्तर का अवबोध करके अनुमान होता है कि तत्कालीन समाज में स्त्रियाँ भी शिक्षा पाती थीं। कुन्ती, सती आदि ऐसी ही सुशिक्षित नारियाँ थी। कुन्ती द्वारा कृष्ण की स्तुति में उसका गहन दार्शनिक चिंतन प्रकट होता है[43]। दक्ष की यज्ञ सभा में सती का व्याख्यान उसको शास्त्रज्ञान सम्पन्न विदुषी नारी सिद्ध करता है[44]। हस्तिनापुर की रमणियों के वार्तालाप से तत्कालीन समाज की सामान्य शिक्षा का पता चलता है। उनके वार्तालाप से विदित होता है कि उनको जीव, जगत, ब्रह्म, सृष्टि आदि विषयक तत्कालीन दार्शनिक विषयों का ज्ञान था[45]। बाणासुर के मन्त्री कुभाण्ड की पुत्री चित्रलेखा योगविद्या में निपुण व चित्रकला में पारंगत थी[46]।

निष्कर्ष – भागवतकालीन शिक्षा आज की तरह मूल्यविहीन व्यक्ति का निर्माण नहीं करती थी, अपितु उसका लक्ष्य व्यक्ति की आत्मा का परिष्कार कर उसमें समष्टिभाव जाग्रत करना था। गुरूकुल शिक्षा प्रणाली प्रचलित थी। गुरू शिष्य के बीच मधुर सम्बन्ध थे। शिक्षा एक व्यवसाय न होकर नि:शुल्क थी। विद्यार्थी समाज और शासन द्वारा गुरू का पूर्ण सम्मान किया जाता था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीमद्भागवत पुराण गीता प्रेस गोरखपुर 4.9.5-6
2. वही, 4.21.24

3. वही, 4.5.3
4. वही, 5.5.18
5. 'विद्यात्मनि भिदावादोय' वही, 11.19.40
6. ईशोपनिषद, 18
7. श्री.भा.पु. 11.17.22
8. वही. 5.4.8
9. वही, 10.45.31-36
10. वही, 10.80.31
11. वही, 7.5.1-2
12. जातक कालीन भारतीय संस्कृति पृष्ट 102
13. श्री.भा.पु. 11.17.22
14. वही, 10.45.29
15. प्राचीन भारत का सा.एवं आ. इतिहास पृष्ट 232
16. श्री. भा. पु. 11.29.30-31
17. जा.का.भा.सं. पृ0 99
18. कालिदास का भारत पृ. 375-76
19. श्री.भा.पु. 11.17.22.-26, 28 व 30
20. द्विजस्याचार्य सेवनम्। वही 11.18.42
21. वही , 10.80.40
22. वही, 11.17.27
23. वही, 11.17.29
24. वही, 10.45.32
25. जा.का.भा. संस्कृति पृ. 99
26. श्री.भा.पु. 8.18.24-25
27. वही, 11.17.37
28. भारतीय संस्कृति: प्रीतिप्रभा गोयल पृ. 118
29. श्री. भा.पु. 10.45.32-33
30. वही, 1.7.46
31. वही, 10.2.19
32. वही, 10.8.32
33. वही, 5.9.4-6
34. वही, 11.3.21-22
35. वही, 5.5.18.11.3.22
36. वही, 10.90.42
37. वही, 10.45.33-36
38. वही, 10.80.35
39. वही, 10.35.36-47
40. जा.का.भा.सस्कृति पृ. 98
41. ऋग्वैद 10.109,10.86.2-4
42. श्री.भा.पु. 10.23.42
43. वही, 1.8.18-43
44. वही, 4'.4.17
45. वही, 1.10.20-21
46. वही, 10.62.22-23 तथा 10.62.13-20

****

Study on Raja Rao's Kanthapura with Special Reference to Gandhian Ideology

Rakesh Kumar* Dr. Puran Singh**

Abstract - The present study reveals prominently the influence of Mahatma Gandhiji on the village of *Kanthapura*. *Kanthapura* is the microcosm of the Indian traditional society and what happened in *Kanthapura* was also happened in India during 1919-1930. It is not only a political novel, but also a novel which concerns with socio-religious and economic transformation during the struggle for independence. *Kanthapura* follows Gandhiji's doctrine and ideology of non-violence, Satyagraha, their views on untouchability and casteism etc. The novel can be considered Gandhiji-epic. Gandhiji aroused national awakening in Indians with his non-violent struggle for freedom movement which was strengthened by noncooperation and civil disobedience movement in *Kanthapura* village. Gandhiji's influential personality and his ideology is felt everywhere in the novel. Indeed, Gandhiji doesn't appear in this novel personally, but the plot of the novels revolves around his ideology. This research article, 'Gandhiji's Ideology: A Study of Raja Rao's *Kanthapura*' aims at how the Gandhiji's ideology influenced Raja Rao which resulted in the creation of the character of Moorthy. It also focuses on how Moorthy, under the influence of Gandhiji, tries to inspire the people towards the freedom struggle. Gandhiji is the way, the truth, life to Raja Rao. Similarly, Gandhiji's ideology is the way, the truth, and the life to Moorthy in the novel *Kanthapura*. The present paper emphasises the impact of Gandhijism on Raja Rao's *Kanthapura*.
Keywords - Gandhiji, ideology, raja rao, kanthapura.

Introduction - Gandhiji was the first Indian national leader to realize that it was not possible to revolutionize people without drawing upon the resources of their religion. The Gandhian impact on contemporary literature is intimate purposive and variegated. Raja Rao belongs to Gandhian era and his novel Kanthapura (1938) depicts the impact of Gandhiji who launched the Freedom Movement in the 1920s to liberate India from the slavery of the Britishers. M.K. Naik rightly opines that the novel is predominately political in inspiration and does not reveal the author's characteristic metaphysical preoccupations, except in a general way[1]. The novelist assiduously explores the Gandhian ideas of loving one's enemies, non-violence and abolition of untouchability. Mulk Raj Anand, R.K. Narayan and K.A. Abbas do not ignore the impact of Gandhian ideology. Raja Rao was greatly influenced by the ideology of Gandhiji. Rao spent a few days at Gandhiji's ashram at Sevagram. At the time of Quit India Movement Raja Rao was "associated with the underground activities of the young socialist leaders[2].

Raja Rao's confidence in Gandhian thought led him to idealize Mahatma Gandhiji as a true saint. In this novel, Rao depicts Mahatma Gandhiji as an emblem of divine power. Gandhiji is presented as an incarnation of Krishna who will assuage the distress of the Indians. Gandhiji would kill the snake of foreign rule as Krishna had killed the snake Kalia. As a leader, Gandhiji gives advice to spin yarn to the people of India in that if they do it, the money that goes to Britain will be retained in India to feed the hungry and cloth the nude. The novelist elevates the Gandhian movement to a mythological plan. Rao illustrates a fine analogy of Ram and Ravana- Ram for Mahatam Gandhiji and Ravana for the British Government. In this novel, Mother India or freedom is compared with Sita, Gandhiji is presented as Ram and Jawaharlal Nehru is considered to his brother Bharta.

The novelist alludes to Gandhiji's exiled existence. To liberate India Gandhiji leaves his home, roams the length and breadth of India and passes his banished life. Rao says Gandhiji, like Ram, will go to Britain, Lanka, and he will get us freedom, Sita. It is a struggle between the divine and devil K.R.S. Iyenger rightly says, "The reign of the Red-Man is as Asuric rule, and it is raised by the Devas, the Satyagrahis. The characters sharply divide into two camps: The Rulers (and their supporters) on the one hand and the Satyagrahis (and their sympathisers) on the other.[3]

As an apologist to Gandhian ideology, Rao believes that "the future of the world is in Gandhijism[4]. Moorthy obtains spiritual power in his very first meeting with Gandhiji, who primarily gives instruction to him in his political ideology. Moorthy says: "There is in it something of the silent communion of the ancient books" (52). He is spiritually influenced and states: "There is but one force in life and

*Research Scholar, OPJS University, Churu (Raj.) INDIA
** Department of English, OPJS University, Churu (Raj.) INDIA

that is truth, and there is but one God in life and that is the God of all" (52-53). In essence Moorthy explicates his faith in Gandhijism and acquires self-realization after catching a glimpse of the Mahatma. Inspired and influenced by the ideology of Gandhiji, Moorthy starts preaching Gandhian philosophy of non-violence, love of mankind and abolition of untouchability.

Gandhiji's axiom of non-violence presents an astonishing paradigm for the whole world as it is a "war without violence and battle without hatred[5]. Moorthy holds the Gandhian view that "good ends can be achieved only by good means[6]. Each individual observes the same abiding awareness underlying all jives, whether friends or friends or foes, hates none. In this novel Jayaramachar articulates the ideology of Gandhiji: "Fight, says he, but harms so soul. Love all says he, Hindu, Mohammedan, Christian or Pariah, for all are equal before God. Don't be attached to riches, says he, for riches create passions, and passions create attachment and attachment hides the face of the truth. Truth must you tell, he says, for Truth is God, and verily, it is the only God I know" (22).

Jayaramachar continues by saying that truth is God and, therefore, the countrymen should speak the truth. It has the tone of Bhagavad Gita, which emphasises truthfulness as a part of human behavior. Moorthy's opinion that he is just "a pebble among the pebbles of the river, and when the floods come, rock by rock may lay buried under" (100) implies that he is without arrogance. Moorthy's recitation of "Sivoham, Sivoham is vedantic in spirit. Rangamma inspires the Satyagrahis to face the oppression of the police boldly and preaches that no one can hurt the immortal soul: "No, sister, the sword can split asunder the body, but never the soul" (153). C.D. Narasimhaiah observes that the novel delinates the dynamic power of a living religious convention. He states that "religion seems to sustain the spirits of the people of Kanthapura."[7] The inhabitants of Kanthapura willingly pledge to spin yarn, maintain non-violence (Ahinsa) and speak truth. When Moorthy is arrested the villagers implore goddess Kenchamma to set him free: "The Goddess will never fail us- she will free him from the clutches of the Redman" (134). The inhabitants of Kanthpura go to Kenchamma Hill and invoke goddess Kenchamma to protect them from the savage assault of the British Government. Men and women are assaulted and arrested by the police. Most of the male freedom fighters are taken to prison but Moorthy is left out: "But Moorthy they would not take, and God left him still with us" (200). A large number of freedom fighters from other corners of the country come and join the movement in Kanthapura. The Satyagrahis, knowing that the soul is immortal and indestructible, come and jump into the ocean of death sans fear.

During his early years, Rao was influenced by the ideology of Gandhiji which is one of the most challenging ideologies of the 20th century. According to Jawaharlal Nehru Gandhiji is "like a powerful current of fresh air… like a beam of light that pierced the darkness and removed the scales from our eyes; like a whirlwind that upset many things, but most of all the working of people's minds."[8] Gandhiji gave the great weapon of non-violence to the people of India and strengthened it subsequently by the non-cooperation and civil disobedience movements in the thirties. Gandhiji, through this movement, not only sought political freedom but also aimed at economic liberty and spiritual regeneration. Gandhiji wanted all the people, the opulent and the indigent, to lead a dignified life sans exploitation of any sort.

Rao's faith in Gandhian thought led him to idealize Gandhiji as a true God. In Kanthapura Mahatma Gandhiji is depicted as an emblem of divine power as well as great reality. The theme of the novel, "Gandhiji and Our Village" has a mythical significance in that the past blends with the present. The ageold faith of the villagers that gods walk by lighted streets of Kanthapura during the month of Kartik indicates that the myth co-exists with the contemporary reality. As the gods pass by the potters' street and the weavers' street, lights are lit to see them pass by. This reference affirms the peasants'' perpetual faith in gods- a faith which is shared by the author with his characters. Rao lays stress on the role of religion in the struggle for independence. That is why religion and politics are interwoven in the novel. The importance of independence is delineated in a religious metaphor. The political activity of the inhabitants of Kanthapura gains power from their religious faith. Rao adroitly deals with the conventional mythology which is interlaced with contemporary reality. The recurrent reference to myth adds new dimensions to the struggle for freedom, for the "exaggeration of reality by myth is the necessary way of achieving the eternity in space."[9]

Thus, Raja Rao's maiden novel Kanthapura presents the Gandhian ideology of non-violence and the abolition of untouchability. The great importance given to caste, the mythical presentation of Gandhiji and mother India and the spiritualization of the freedom movement within the parameters of Indian cultural convention imply the tremendous impact of Gandhian ideology in Kanthapura.

References :-

1. Quoted by MK. Naik in Raja Rao 1972-1982; 75
2. Naik 6.
3. Srinivasa Iyengar KR. Indian Writing in English New Delhi, 1962-1983; 391.
4. Ratna Rao Shekhar. "Seventy Six Years of Solitude," Society (August 1985) 30.
5. Ramachandran G.Promotion of Gandhian Philosophy 1966-1973, 33.
6. Ramachandran 34
7. Narsimhaiah 47.
8. Jawaharlal Nehru. The Discovery of India 1961-1972, 358.
9. Swami Nityabodhananda, the Myths and Symbols in Indian Civilization Madras, 1980; 7.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018 E-Journal, VOl. IV, Issue XXI

Different Thermal Analysis Techniques for Characterization of Glasses

M. D. Sharma*

Abstract - In this paper I present techniques which are useful to deliver information about glass structure and properties. DSC and DTA techniques are discussed which leads information about atomic scale behaviour of glasses.
Key Words - Glass Structure, DSC, DTA, Atomic scale behaviour.

Introduction - Thermal analysis is a very helpful measurement technique in glass science which can deliver information about glass structure and properties over a wide range of length scales and application areas. Thermal analysis techniques are powerful tools for fundamental understanding as well as practical applications of glasses. The glass transition is most important thermal characteristic of any amorphous glassy material to determine its utility in various applications. It is defined as the temperature at which the material begins to behave as a super-cooled liquid. Differential scanning calorimetry (DSC), Differential thermal analysis (DTA) and thermo-gravimetric analysis (TGA) provide insight into atomic-scale behaviour and also useful in understanding the properties of glasses [1-2].

Various Techniques - Differential scanning calorimetry (DSC) is a very widely used technique providing a fast and easy method of obtaining many important information about a vast range of materials including glasses, polymers, plastics, foods and pharmaceuticals, ceramics, proteins and life science materials. In DSC technique the heat flow into a sample is measured as a function of temperature which can be used to detect glass transition, heat capacity, enthalpy and crystallization etc. When a sample undergoes a physical transformation such as a phase transition, a difference between heat flow to sample and reference pan occurs. This difference in the heat flow supplied to the reference and sample shows a maximum during the phase change from amorphous to crystalline or vice versa [1-3]. There are different types of DSC instruments available e.g. Heat flux DSC, Power compensated DSC, Modulated DSC, Hyper DSC and Pressure DSC [3]. A typical experimental curve is shown in following figure [1]:

Figure 1. (see in next page)

Differential thermal analysis (DTA) is a little bit different technique from DSC. In DTA the temperature difference between sample and reference pan is measured using thermo-couple. DTA is more useful than DSC at high temperature. The result analysis procedure is as same as DSC [2].

In thermo-gravimetric analysis (TGA) the changes in weight or mass of sample is measured as a function of sample temperature. This provides information on changes in sample composition, thermal stability and kinetic parameters for chemical reactions etc. In this method the sample is typically heated at a constant heating rate or it is held at a constant temperature. The change in mass occurs when the glass sample looses its content via one of several different ways e.g. evaporation of volatile constituents, Oxidation of metals, decomposition of organic substances, thermal decomposition with the formation of gaseous products, uptake or loss of water due to humidity or Heterogeneous chemical reactions [1, 4]. Due to this, peaks in TGA curve occurs. This technique can be used in characterization of thermal stability, material purity, determination of humidity, corrosion studies and other kinetic processes.

The simultaneous TGA/DTA is a modern technique n which DTA and TGA are processed simultaneously.

Applications of thermal analysis techniques - There are many advantages of thermal analysis of glasses comparing to other analytical methods e.g. the sample can be studied over a wide temperature range, one need only a small amount of sample for measurement, less time required to perform the measurement, these techniques are less costly [5]. The measurement of energy flow enables to identify the range of different transitions that may occur in the sample as it is heated or cooled. DSC, DTA and TGA techniques provide fast and convenient analysis of the glass characteristic temperatures such as T_g and temperatures of phase changes e.g. temperatures of de-vitrification and melting.

As stated earlier the glass transition is a most vital thermal characteristic of any amorphous material in determining its utility in various applications. Other theramal parameters are melting point (T_m), crystallization onset (T_x) and nucleation peak temperature (T_p). All three thermal parameters can be measured via above mentioned thermal analysis techniques. When the amorphous material undergoes the transition from solid to glassy state then there occurs a change in heat capacity, thus we can detect the glass transition temperature. Similarly if the material past its critical temperature then it starts to melt and at this melting temperature T_m a change in heat flow due to latent

* Department of Physics, Govt. Dungar College, Bikaner (Raj.) INDIA

heat of material is spotted in DSC/DTA curves [4]. Another important thermal property of glasses is its heat capacity which is a measure of the amount of thermal energy required to raise the temperature of the material by 1 K. The measurement of heat capacity provides an insight of phonon density of states in glassy material. It can be measured directly by DSC. It provides information for theoretical mathematical models and also provides accurate kinetic and other advanced calculations. The specific heat obtained form DSC can be utilized to obtain the enthalpy curves which are useful to understand the shape of transition curves [5].

Now we are giving some work done on glasses using different thermal analysis techniques to understand the importance of these techniques.

Glasses based on Sm^{3+} doped zinc fluoroborate have been synthesized and characterized using DSC and Scanning Electron Microscopy (SEM) to record the stability, density and refractive index for the glass samples with different concentrations of Sm^{3+} ranging between 0 to 3 mol% by Wagh*et al* [6]. Yttrium phosphate and dysprosium doped yttrium phosphate were synthesized and their thermal stability was studied using differential thermogravimetric analysis (DTA), thermogravimetric analysis (TGA), and differential scanning calorimetry (DSC) techniques by Bamzai et al [7].

The rare earth ions doped alumina-silicate (with low silica ~25 mol%) glasses are prepared and their properties are investigated using DTA and DSC by Dorsoz [8]. Crystallization of glasses of the Na_2O-Al_2O_3-SiO_2-LaF_3 system is studied using DTA/ and an analysis of the local atomic interactions in the structure of oxyfluoride glasses is performed DSC by ªroda*et al*. [9]

The kinetics of nucleation and crystal growth in a $Li_2B_4O_7$ glass are investigated using DTA and DSC by Koga and Sestak to report the glass transition region and other parameters of the glass [10].

SiO_2 glass with Cs clusters was investigated using DSC and thermo gravimetric differential analysis by Sato et al and their study suggest Cs clusters in smaller amount than the detection limit of thermal analysis [11]. The Li_2O–B_2O_3 system with 20.0–66.7 mol% lithia is studied by Ferreira *et al* by DSC method and several parameters of glass stability against crystallization determined to predict the glass-forming ability of oxide liquids on cooling. Then, borate glasses were prepared and tested, covering the. The glass stability parameters were calculated using characteristic glass transition, crystallization, and melting peaks of DSC thermo grams [12].

Alloys of $Se_{80-x}Te_{20}In_x$ glassy system are obtained and crystallization kinetics has been studied using DSC technique by Shukla *et al*. The glass transition temperature (T_g) and crystallization temperature (Tc) are analysed from DSC scans [13]. Thermal stability of Magnesium aluminium silicate glass ceramic systems is measured by thermo-gravimetry and differential thermal analysis (TG/DTA) technique which revealed that powder existed as MgO-Al_2O_3-SiO_2-H_2O in solid state and then transformed to MgO-Al_2O_3-SiO_2 [14].

Conclusions- The measurements taken using different techniques discussed above are found in good agreement with theoretical calculations available.

References :-

1. *Chalcogenide Glasses Preparation, properties and applications*, Adam J.-L. and Zhang X. (Eds), Woodhead Publishing Limited (Cambridge, UK, 2014).
2. *Modern Glass Characterization*, Affatigato M. (Eds), John Wiley & Sons, (New Jersey, USA, 2015).
3. Kodre K.V., Attarde S.R., Yendhe P.R., Patil R.Y., and Barge V.U., Research and Reviews: Journal of Pharmaceutical Analysis, Vol. 3, pp 11 (2014).
4. *Principles and applications of thermal analysis*, Gabbott P., (ed.), John Wiley & Sons, 2008.
5. Bhusnure O.G., World Journal of Pharmacy and Pharmaceutical Sciences, Vol. 5, pp 440-454 (2015).
6. Wagh, A., Ajithkumar, M.P. and Kamath, S.D., Energy Research Journal, Vol. 4, pp.52-58 (2014).
7. Bamzai, K.K., Kachroo, N., Singh, V. and Verma, S., J. Mater. Sci., *359514*, pp.1-8 (2013).
8. Dorosz D., Bulletin Polish Acad. Sciences : Technical Sciences, Vol. 56, pp103-111, (2008).
9. ªroda M., Waclawska I., Stoch L., Reben M., Journal of Thermal Analysis & Calorimetry, Vol. 77 Issue 1, p193 (2004).
10. Koga N. and Sestak J., J. Am. Ceram. Soc., 83 1753–1760 (2000).
11. Sato K., Murakami H., Ito K., Hirata K. and Kobayashi Y., Journal of Physics: Conference Series, Vol 225, 012046 (2010).
12. Ferreira E.B., Zanotto E., Feller S.A., Lodden G., Banerjee J., Edwards T., Affatigato M., J. Am. Chem. Soc. Vol 94, pp 3833–3841 (2011).
13. Shukla R., Agarwal P., KumarA., Journal of Crystallization Process and Technology, Vol. 2, pp 64-71 (2012).
14. Hussain S. Z., Durrani S. K., Saeed K., Hussain M, A., Hussain N. and Ahmad M., J. Pak. Mater. Soc.,Vol 4, pp 39 (2010).

Figure 1. Typical experimental curve obtained from DSC [1]

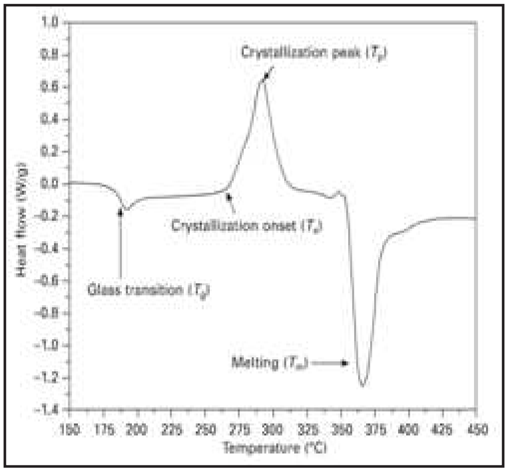

मुस्लीम कालखंडातील जालहनापूर

डॉ. श्रीनिवास सातभाई*

प्रस्तावना – सातवाहन, यादव काळात जालना शहराचे अस्तित्व होते याचे काही उल्लेख मिळतात.[1] जानकीपूर, जन्हूपूर, जाल्हणापूर, जालहनापूर, जालनापूर व जालना अशी नामानिधाने घेत जालना शहराने आपली वाटचाल मध्ययुगातही चालू ठेवली होती. जल्हण किंवा जालेराय या नावावरून या शहरास जालना असे नाव मिळाले, अशीही नामव्युत्पत्ती सांगितली जाते.

यादव काळानंतर या शहराने मुस्लीम, मराठा, निजाम या राजवटीही अनुभवल्या. मुस्लीम राजवटीपैकी एलिचपूरच्या ईमादशाहीशी जालना हे सर्वप्रथम संलग्न होते असे दिसते. यादवांच्या अस्तानंतर यादवांचा हस्तीदल प्रमुख जल्हण याचे घराणे जालना येथे वास्तव्य करून राहिले असावे, याच वंशातील जालेराय हा इमादशाहीत मोठ्या अधिकार पदावर असावा याबद्दल जालहनापूरचा हकिकत नामा यात पुढील उल्लेख मिळतो.

मौवजे मजकुरी जालेराव राजे भूमे राहत होते ती के ची गढी होती. ते हाताखाली ठेवले. आपला लष्करखानाचे हवेली आहे....... तेथे भोचारवर ते देऊळ होते. ते मोडून महेजद केली. त्याने पेठ वसविली. कसबा व परगणा काही नव्हता. त्याने नाव जालनापूर ठेवले. सबब हकमाचे नाव जालेराव म्हणून भोगवंटा 50 वर्षे चालले.[2]

पुढील काळात अहमदनरगच्या निजामशहाचा सरदार जमशेदखानाने आक्रमण करून वऱ्हाडच्या ईमादशाहीशी एकनिष्ठ असलेल्या जालेरायचा शेवट करून या शहरावर वर्चस्व मिळविले.[3] म्हणजे इ.स. 1574–75 च्या सुमारास निजामशाहीच्या वर्चस्वाखाली येण्यापूर्वी हा प्रदेश वऱ्हाडचा इमादशाहीशी निगडीत होता असे येथे जमशेदखानाने बांधलेल्या काही मशिद येथील 1576 च्या शिलालेखावरून स्पष्ट होते.[4]

इ.स. 1574 मध्ये मूर्तजा निजामशहाने वऱ्हाड प्रांत जिंकल्यावर जालना शहरावर निजामशाहीचा अंमल सुरू झाला व वऱ्हाडचा प्रशासक म्हणून जमशेदखनाची नियुक्ती निजामशहाने केली.[5] येथील वास्तव्यात त्याने अनेक इमारती बांधल्या, पेठा वसविल्या व जालन्याच्या विकासाचा पाया घातला. नहर पद्धती त्यानेच येथे सुरू केली, याच काळात जालना शहर लष्करीदृष्ट्या महत्त्वाचे ठिकाण बनले.

मोगल कालखंडात सम्राट अकबराने अहमदनगरची राणी चाँदबिबिवर आक्रमण केले. त्यावेळी अकबराचा सरदार अब्दुल रहिम खान खानान याचे वास्तव्य जालण्यास होते. वऱ्हाड व अहमदनगर यांच्या सरहद्दीवर असलेल्या जालन्यास राहून दौलताबाद घेण्याचा प्रयत्न खान खानान याने केला.

इ.स. 1597 मध्ये आष्टी (धोतरजोडा) जि. जालना येथे मोगल–निजामशाही संघर्षात मोगलांचा विजय झाला व येथूनच जालना शहर परगणा, सरकार बनून मुख्यालयाचे ठिकाण बनले. येथे काही अधिकाऱ्यांच्या नियुक्त्या मोगल काळात झाल्या या संबंधिचा पुढील उल्लेख पहा–

खान खानान साहेब वजीर पातशहा इकडे आले तेव्हा जालहनापूर प्रगणा केला / त्यावेळेस अवघे अधिकारी केले........ वजीर साहेबांनी सनद / व इनाम देऊन काजी करीम स्थापला व पेशकार निरख्याचा वडील जनार्दनपंत याचा आजा समाजी यास स्थापून योच ह म्हणजे जालना येथे पारसनविस, निरखनविस (निरखी, निरिक्षक) काजी, पेशकार, चिटणविस, सबनिस असे अधिकारी नियुक्त करून जालना परगण्याच्या प्रशासनाची व्यवस्था केली. एक प्रकारे प्रशासनाची चौकट मुस्लीम कालखंडात तयार झाली.[6]

औरंगजेब दक्षिणेचा सुभेदार असताना औरंगाबाद सुभ्यातील सरहद्दीवरील प्रमुख लष्करी ठाणे म्हणून जालना शहराला आगळे महत्त्व होते. औरंगाबाद सुभ्यामध्ये मोगल काळात जालना हे सरकार होते, त्याचा उल्लेख यजालनापूर सरकार म्हणून केला जात असे. जालना येथे असलेल्या सुफी संत जानुल्ला शहा यांची भेट सम्राट औरंगजेब याने घेतली होती व 500 बिघे जमीन त्यांना दान केली होती.[7] संत जानुल्ला हे कादिरी घराण्याचे होते म्हणून या परिसरास आजही काद्राबाद म्हणून ओळखले जाते. संत जानुल्ला यांचा दर्गा काद्राबाद वस्तीत आहे.

इ.स. 1664–66 मध्ये औरंगजेबाचा सरदार मिर्झा राजा जयसिंग हा जेव्हा छ. शिवाजी महाराजांच्या विरोधात मोहिमेवर दौलताबादला असताना जालना परगण्यातील हिरोजी व रामजी जगताप हे मोगल सैन्यास रसद पुरविण्याचे काम करीत होते. याबद्दल मिर्झा राजाने त्यांना जालनापूर येथे महानकी देण्याचे कबूल केले असा उल्लेख सापडतो.[8]

शाह आलम बहादूरशहाच्या काळात जालना येथे एक भुईकोट किल्ला बांधला गेला.[9] इ.स. 1737–38 मध्ये काबिलखान आसफजाही याने हा किल्ला कुंडलिका नदीच्या काठावर बांधला. बहादूरशहाच्या एका पा त जोलहनापूरचा पुढीलप्रमाणे उल्लेख येतो–

आपली हकीकत अस्टीस आल्यावर प।। जालनापूरचे ठाणे उठोन गेले[10] यावरून असे लक्षात येते की, मुस्लीम कालखंडात जालनापूर ही नुसतीच पेठ नव्हती तर वऱ्हाड, खानदेशात जाण्यायेण्याच्या मार्गावरील मोगल फौजेचे एक महत्त्वाचे ठाणे होते.[11]

कालौघात पुढे जालना परिसर कधी मराठे तर कधी निजाम (हैदराबाद) यांच्या संघर्षाची रणभूमी राहीली. भारतीय स्वातंत्र्यानंतर हैदराबादवरील लष्करी कारवाईने जालनाही भारतीय संघराज्याचा भाग बनले.

एकूणच, मुस्लीम कालखंडात जालना शहराच्या प्रशासनाची चौकट तयार होऊन व्यापारी, लष्करी व राजकीयदृष्ट्या जालना शहराचे महत्त्व वाढले. मोगल काळातच जालना शहरात भिन्न धर्मीय मिश्र संस्कृतीचा उदय झाला, विकास झाला.

* सहयोगी प्राध्यापक, इतिहास विभाग, शासकीय विदर्भ ज्ञान विज्ञान संस्था, अमरावती (महा.) भारत

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. देवगिरीचे यादव- ब्रह्मानंद देशपांडे, समर्थ प्रकाशन, औरंगाबाद, पृ.क्र. 23
2. जालहनापूरचा हकीकतनामा- शिवाजी गऊळकर, म. सा. प्रकाशन, पृ.5
3. उपरोक्त, पृ.5
4. काळी मशिद- जुना जालना, प्रवेशद्धारावरील शिलालेख
5. जालहनापूरचा हकीकतनामा
6. 18 व्या शतकातील दक्षिण भारत, सेतु माधवराव पगडी
7. शाह आलम बहादूरशहा गाझी यांचे जानुल्ला दर्गा ला दिलेले दानपत्र
8. जालना येथील किल्ल्याच्या प्रवेशद्धारावरील शिलालेख,
9. जालहनापूरचा हकीकतनामा
10. पेशवे दप्तर- सातारा जमाव, रूमाल क्र. 1677
11. विकास- जालना विशेषांक, प्रकाश कामतीकर

****